

दक्षिण भारत में जैन समाज के प्रखर नेता दानवीरशेठ
स्व० श्रीमान् ताराचंदजी साहेव गेलडाकी

जीवनझलक

दक्षिण भारत के प्रवास पर आये हुए किसी भी व्यक्ति के दिलमें, मद्रास जैसे शहर के जैन समाज की शिक्षण और-वैद्यकीय सस्थाओं का सुव्यवस्थित क्रम और प्रगथ देखकर आनंद हुए बिना नहीं रह सकता । और स्मृतः ही जैन समाज की दान-दिशा को इस ओर ले जाने वाले व्यक्तिके रूपमें दानवीर शेठ स्व० श्रीमान् ताराचंदजी साहेव गेलडाका नाम व व्यक्तित्व नजरमें आये बिना नहीं रहता ।

मध्यम ऊदका इरुहटा वदन, खादीकी धोती, खादीका कुरता और खादी की टोपी, पैरमें केन्वासके पादत्राण हाथमें छोटीसी लकड़ी-चमकती तेज आखे और ७० वर्ष की अवस्थामें भी-जवानों की तेजी-ये आप के अभिन्न गुणों के सूचक थे । उनके यह सादगी अत समय तक भी कायम रही थी ।

सन १९३७ में आप राजकोट पगारे ये वहा अनेक शिक्षण सस्थाओंको देखकर आपने अपने मनमें तय किया कि मैं मद्रास जाकर शिक्षाकी ऐसीही सस्थाएँ बनाउगा । उनके विचारों की पुष्टि के रूपमें श्रीमान् विरदीचंदजी सा मलेचाने ५००००) रूपया दान दिया और यहाकी श्री एस एस. जैन एज्युकेशन सोसायटी की स्थापना हुई । इस सोसायटी के प्रकास के लिये आपने अपने व्यापार से भी-निवृत्ति ले ली और-क्रमशः इसका विकास करते रहे । इस सोसायटी के तत्वावधानमें क्रमशः प्राथमरी स्कूल, गीर्डिंग होम, हाईस्कूल एव कॉलेज भी-स्थापित हुए और आज भी सुचारु रूपसे चल रहे हैं । जब तक ये सस्थाएँ पूर्णरूपसे आत्म-निर्भर नहीं हुईं तबतक आप सोसायटी के प्रारभ कालसे मंत्री बने रहे । इतनाही नहीं प्रत्येक सस्था के लिये आपने दान दिया था ही-किन्तु ताराचंद गेलडा जैन विद्यालयके लिये ३१०००) रु का भव्य दान दिया । इसके उपरांत भी २२००० रु. का और दान आपका होनेसे आप

भणवानुं ठेकाणु
श्री अ. ला. प्रवे. स्थानकेवासी
नेन शास्त्रोद्धार समिति,
ठे. गरेडिया कुवा रोड, श्रीन वीज
पासे, राजकोट, (सौराष्ट्र)

Published by *
Shri Akhil Bharat S S
Jain Shastrodhdhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W Ry, India



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञा,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैप यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्य निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते है तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान मे यह लायगा ॥ १ ॥

मूल्य ३. २५=००

प्रथम आवृत्ति प्रत १२००

पीर सप्त २४८६

द्वितीय सप्त २०१६

धसपीसन १६६३

मुद्रक

भणिलाल छगनलाल शाह
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,
धी काटा रोड, अमदावाद

७८ वर्ष की आयुमें आपका पंडित-मरण हुआ जो आपके यशस्वी जीवन की यशरत्नगी के समान था। अर्थात् यशस्वी पुरुषों के शिरोमणि थे।

आपके सुपुत्र श्रीमान् भागचंदजी सा गेलडा भी कर्मठ कार्यकर्ता हैं। जैन एन्ड नेशनल सोसायटी के आप सदस्य एव पदाधिकारी रह चुके हैं—वर्तमानमें आप सोसायटीके सभापति हैं। गोसेवा और पाजरापोल के कार्यके लिये आप घर २ जाकर चंदा करने में सक्रोच महमूस नहीं करते और विगत आठेक वर्षों से आप मद्रास पाजरापोलके मंत्री हैं और उसका बहुत ही विकास किया है। द्वितीय पुत्र श्री नेमचंदजी स्वर्गवासी हुए हैं किन्तु आप भी औपधालय निमित्त दस्ट करके गये हैं। तृतीय पुत्र श्री खुगालचंदजी व्यापार-कुशल हैं और कार्य-भार सम्हाले हुए हैं।

इस आगम प्रकाशन के लिये जब आपके पास डेप्यूटेशन पहुँचा तब इन सृष्टियोंने उदारता से ५००१) रु दिये हैं एतदर्थ धन्यवाद है। अन्य सज्जन भी उनका अनुकरण करे यही अभ्यर्थना है।

सेक्रेट्री
शास्त्रोद्धार समिति

सौसायटी के पेइन (सरक्षरू) बने। सन १९५६ में अ-पों को मी-कार्य संचालन का अनुभव हो एतय आप निरुत्त हुए, किन्तु अत समय तक सोसायटी के प्रत्येक कार्य के लिये आप मलाह देते रहे और उह समान का गौरव था कि आप जैसे कुशल एव विचक्षण सलाहकार मिले।

दानके प्रवाह को शुभ मार्गमे उहाने का आप का प्रयास अत्यंत अनुरणीय रहा। और मद्रास के जैन समाजने वैदकीय राहत क्षेत्रमें "जैन मेडिकल रिलीफ सोसायटी" स्थापित की-जिसके तन्त्रायानमे कई डीसपेंसरिया और एक प्रसूतिगृह चल रहा है। आप उसकी कार्य कारिणी के पदाधिकारी ब सदस्य रहे।

इतनाही नहीं आपने अपने व्यापार क्षेत्रको नहीं भूला और सैदापेट (भूदान) मे शुद्ध आयुर्वेदिक औषधलय-जिनेश्वर औषधालय खोला जिसके साथ आगे जा कर अपनी पत्नीके नामपर रामगुरजगई गेलडा प्रसूतिगृह भी खोला। एतदर्थ आपने अपने द्वितीय पुन स्व. नेमीचदजी की इच्छाके अनुसार अलग ट्रस्ट बना दिया है।

आपने अपनी जन्मभूमि कुचेरा के लिये भी कुठ करने के विचार से बहा पर भी छात्रालय शुरू १९४२ मे करवाया और उसके प्रारम्भकाल से आपकी ओर से २५० मासिक सहायता उसे दी जा रही है-जो अब भी चालू है।

तदुपरात ताराचद गेलडा ट्रस्ट भी आपने कायम किया जिससे कई उदीय मान जैन समाज के विद्यार्थियों की आशाओ को प्रोत्साहन दिया गया और दिया जा रहा है।

उनके अदम्य उत्साह और जोश के साथ उनके दृढ मनोबल का परिचय न दिया जावे तो उनका व्यक्तित्व अधूरा रहेगा। वे अपने आप आगे बढ़ने वाले थे। प्रहुत ही छोटी उम्र मे उन्होंने ने व्यापार किया और ताराचद गेलडा एन्ड सन्स, टी वी ज्वेलरीज एव महेन्द्र स्टोर्स आदि व्यापारिक फर्म चले। सामान्य पूजीसे लेकर वे लाखोपति बने। सामान्य शिक्षा ज्ञान के बाद भी चार भाषा की जानकारी और प्रबल व्यापारिक ज्ञान आपकी विशेषता थी।

आजीवन खादीत्रत, हाथघटी का पीसा हुआ धान और गायका दूध-धी फठिन व्रत वे आजीवन निभाते रहे। समान-सुधारणा भी आपने कई प्रकारसे की।

- १७ द्वितीय श्रुतस्कंधका उपक्रम
प्रथम वर्ग-पहला अध्ययन
- १८ कालीदेवीका वर्णन ।
दूसरा अध्ययन ७६१-८०६
- १९ रात्रीदेवीका वर्णन
तीसरा अध्ययन ८०६-८१०
- २० रजनी दारिका के चरित्रका निरूपण
दूसरा वर्ग ८११-८१४
- २१ शुभानिशुभादि देवीयोंके चरित्रका वर्णन
तीसरा वर्ग ८१५-८१९
- २२ अन्नादि देवियोंके चरित्रका वर्णन
चौथा वर्ग ८२०-८२५
- २३ रूपादि देवियों के चरित्रका वर्णन
पाचवा वर्ग ८२५-८२८
- २४ कमलादि देवियों के चरित्रका वर्णन
छठा वर्ग ८२९-८३३
- २५ उत्तरदिशाके इन्द्र महाकाल आदिकोंकी अग्रमहिपियों का वर्णन
सातवा वर्ग ८३४-८३६
- २६ सूर्यमादि देवियों के चरित्रका वर्णन
आठवा वर्ग ८३६-८३८
- २७ चन्द्रमादि देवियों के चरित्रका वर्णन
नववा वर्ग ८३९-८४२
- २८ पंचादिदेवियों के चरित्रका वर्णन
दशवां वर्ग ८४२-८४५
- २९ कृष्णादि देवियोंके चरित्रका वर्णन ८४६-८५१
- ३० शास्त्र प्रशस्ति ८५२

ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रं तृतीय भा की विषयानुक्रमणिका

क्रमाङ्क

विषय

११

पेज

चौदहवा अध्यायन

- | | | |
|---|--|---------|
| १ | तेतलीपुत्र प्रधानके चरित्रका वर्णन
पंद्रहवा अध्यायन | १-१६ |
| २ | नदिफलके स्वरूपका निरूपण
सोलहवा अध्यायन | ११-१३१ |
| ३ | धर्मरुचि अनगारके चरित्र निरूपण | १३२-१८२ |
| ४ | सुकुमारिका के चरित्रका वर्णन | १८३-२५१ |
| ५ | द्रौपदी के चरित्रका निरूपण | २५२-२९६ |
| ६ | द्रौपदी पूजा चर्चा | २९७-४२६ |
| ७ | द्रौपदी के चरित्रका वर्णन | ४२७-५८५ |

सत्रहवा अध्यायन

- | | | |
|----|---|---------|
| ८ | नावसे व्यापार करने वाले वणिजोंका वर्णन | ५८६-५९० |
| ९ | नावके निर्णामक का दिङ्मूढ होनेका कथन | ५९१-५९५ |
| १० | कालिक द्वीपमें सुवर्ण आदिका वर्णन | ५९५-५९६ |
| ११ | कालिक द्वीपमें हिरण्य आदिसे पोतकाभरना | ५९७-६०० |
| १२ | कालिक द्वीपमें रहे आकीर्णाश्वों का वर्णन | ६०१-६१९ |
| १३ | आकीर्णाश्वोंके द्रष्टाको दार्ष्टान्तिक के साथ योजना | ६२०-६३५ |

अठारहवा अध्यायन

- | | | |
|----|---|---------|
| १४ | सुसमा दारिका के चरित्रका वर्णन
उन्नीसवा अध्यायन | ६३८-७०५ |
| १५ | पुडरीक-कडरीक मुनिके चरित्रका वर्णन
द्वितीय श्रुतस्कथ | ७०८-७५२ |
| १६ | द्वितीय श्रुतस्कथ का मङ्गलाचरण | ७५३-७६८ |

- १७ द्वितीय श्रुतस्कंधका उपक्रम
प्रथम वर्ग-पहला अध्ययन
- १८ कालीदेवीका वर्णन ।
दूसरा अध्ययन ७६१-८०५
- १९ रात्रीदेवीका वर्णन
तीसरा अध्ययन ८०६-८१०
- २० रजनी दारिका के चरित्रका निरूपण
दूसरा वर्ग ८११-८१४
- २१ शुभानिशुभादि देवीयोंके चरित्रका वर्णन
तीसरा वर्ग ८१५-८१९
- २२ अळादि देवियोंके चरित्रका वर्णन
चौथा वर्ग ८२०-८२५
- २३ रूपादि देवियों के चरित्रका वर्णन
पाचवा वर्ग ८२५-८२८
- २४ कमलादि देवियों के चरित्रका वर्णन
छठा वर्ग ८२९-८३३
- २५ उत्तरदिशाके इन्द्र महाकाल आदिकोंकी अग्रमहिपियों का वर्णन
सातवा वर्ग ८३४-८३५
- २६ सूरप्रभादि देवियों के चरित्रका वर्णन
आठवां वर्ग ८३६-८३८
- २७ चन्द्रप्रभादि देवियों के चरित्रका वर्णन
नववा वर्ग ८३९-८४२
- २८ पद्मादिदेवियों के चरित्रका वर्णन
दशवां वर्ग ८४२-८४५
- २९ कृष्णादि देवियोंके चरित्रका वर्णन ८४६-८५१
- ३० शास्त्र प्रशस्ति ८५२

તા ૧૫-૭-૬૩ ના રોજ કલાસવાર

મેમ્બરોની સંખ્યા.

૨૭	આઘ મુરખીશ્રી, ૫૦૦૦ થી વધુ રકમ ભરનારા
૩૨	મુરખીશ્રી, ૧૦૦૦ થી વધુ રકમ ભરનારા
૧૩૩	સહાયક મેમ્બરો, ૫૦૦ થી વધુ રકમ ભરનારા
૫૮૬	લાઇફ મેમ્બરો, ૨૫૦ થી વધુ રકમ ભરનારા
૪૯	બીજાન બરના જુના મેમ્બરો, ૧૫૦ થી વધુ રકમ ભરનારા
૮૨૭	કુલ મેમ્બરો

રૂપિયા બસો પચાસ તથા રૂપિયા પાચસો-વાળા મેમ્બરો લેવાનું હવે બંધ છે ફક્ત રૂા ૧૦૦૧ થી મુરખીશ્રી માટે ૭૦ સીતેર જગ્યા ખાલી છે અને આઘ મુરખીશ્રી રૂા ૫૦૦૧ થી દાખલ કરવામા આવે છે.

મેમ્બરોની સખ્યા પૂરતા જ શાઓ છપાય છે જેથી પાછળથી દાખલ થનારને સૂત્રો મળવા મુશ્કેલ છે માટે જગાસુ બાઇઓ તથા બહેનોને અમારી વિનતી છે કે તેઓ મુરખીશ્રી અથવા આઘ મુરખીશ્રીમા પોતાનું નામ જલ્દી મોકલી આપે.

રાજકોટ

તા ૧૫-૭-૬૩

નમ્ર સેવક,

સાકરચ દ બાઇચ દ રોહ

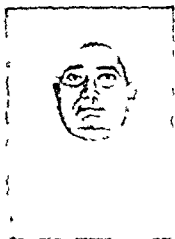
મત્રી

आद्यमुखर्वाश्री



शेठ साहेबश्री ताराचदजी साहेव. गेलडा
मद्रास

આવમુરુખીશ્રીઓ



(૨૫) ગેડશ્રી હનુમચ્છ કાલીદામ નાગ્વ્યા
લાણુનડ



ગેડશ્રી હનુગોવિદ લેચ દલાઈ
રાજકોટ.



ગેડશ્રી શાલિવાલ મ ગળદાસલાઈ
અમદાવાદ



(૨૬) ગેડશ્રી નાગ્લીલા J અનુલાલ
બારસી



(૨૭) ગેડશ્રી જાનવાલ શામળદામ લાવસા
અમદાવાદ

આદ્યમુખ્યશ્રીઓ

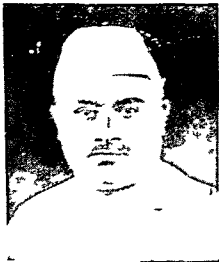


(૨૧) ગે. ગંગાજીભાઈ મોહનલાલ ગાદ
અમદાવાદ

૨૫ શ્રીમાન ગે.શ્રી મુન્નયદત્ત મા
બાલિયા પાલી માગવાડ.



(૨૫) ગે.શ્રી દિનેશભાઈ કાલિયાલ ગાદ
અમદાવાદ



ગે.શ્રી તેમિગભાઈ પોચાવાલભાઈ
અમદાવાદ



૨૬ ગે.શ્રી આત્માનંદ ભાવેન્દ્રાવ
અમદાવાદ.



(૨૫) ગેઠશ્રી શામલભાઈ વેવલભાઈ વીગણી
રાજકોટ



ગેઠશ્રી રામલભાઈ શામલભાઈ વીગણી
રાજકોટ.



(૨૬) વિનાદકુમાર વીગણી
રાજકોટ.
(દીઠા ઘીધા પહેના શાસ્ત્રાભ્યાસ કરતા)



ગેઠશ્રી મિશ્રીવાવલ લાલચદલ સા લુણિયા
તથા ગેઠશ્રી જ્ઞાનતરાજલ લાલચદલ સા

આદ્યમુરખીશ્રીઓ



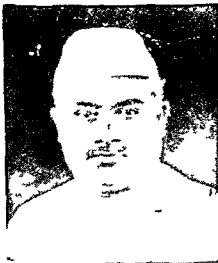
૨૧. શ્રીમાન ગે.શ્રી મુનુચંદ્ર મા
બાલિયા પાસી મારવાડ.



(૨૧) ગે.શ્રી ગજભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ



(૨૨) ગે.શ્રી દિનેશભાઈ કાલિલાલ શાહ
અમદાવાદ



શ્રીશ્રી નેમિગભાઈ ધોવાલાલભાઈ
અમદાવાદ



૨૧. ગે.શ્રી આત્માગમ માણેજીવાન
અમદાવાદ.

આદ્યમુરખીશ્રીઓ



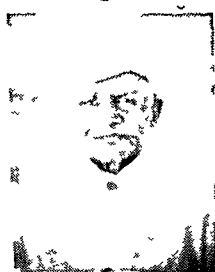
રોક સાહેબ શ્રી કીશનચ દલ સાહેબ
બેહરી દિલ્હી



સ્વ. ગૅશ્રી હરિવાલ અનોપચ દ ગાહ
ખલાત



૧ ખચે બેઠેલા મોટાભાઈ શ્રીમાન
મુનચ દલ જવાહીરલાલભ બરાડયા
ખાનુમા બેઠેલા મિશ્રીલાલભ
બરડિયા
૨ ઉભેલા સીધી નાનાભાઈ પૂનમચ દ
બરડિયા



શ્રી વૃજલાલ દુલભભ પારેખ
રાજકોટ.

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

श्रीजैनाचार्य जैनधर्मदिव्यारु-पूज्यश्री-घासीलालप्रतिभिरचितया अनगार-
धर्माभूतवर्षिण्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृत

श्री-ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रम्

तृतीयो भागः

अथ चतुर्दशा घयन प्रारभ्यते

अस्य व्याख्यायमानचतुर्दशाध्ययनस्य व्याख्यातेन त्रयोदशेनाध्ययनेन सहाय-
ममित्स्वन्धः-पूर्वस्मिन् अध्ययने सता गुणाना गुणाभिवर्द्धकमद्गुरुपदेशरूप-
सामग्र्यभावे हानिरुक्ता, इदं-तथाविधसामग्रीसद्भावे गुणसपदुपजायते, इत्यभि-
धीयते, इत्येव पूर्वेण सज्ञाभिवर्द्धस्यास्येदमादिसूत्रम्-‘ जज्ञण भते इत्यादि ।

मूलम्-जज्ञणं भते । समणेणं भगवया महावीरेण जाव
संपत्तेणं तेरसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते, चोद्-
समस्स णं भते । णायज्झयणस्स समणेणं भगवया महा-
वीरेणं जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते? एव खलु जवू ! तेणं

चौदहवा अध्ययन प्रारभः-

इस चौदहवें अध्ययन का तेरहवें अध्ययन के साथ इस प्रकार का
संबन्ध है-तेरहवें अध्ययन में जो यह बात कही गई है कि आत्मा में
सम्यग्दर्शन आदि प्रकट भी हो गये, हों परन्तु यदि उन को बढाने वाली
सद्गुरु आदि की उपदेश रूप सामग्री का अभाव रहे तो उन गुणों की
हानि हो जाती है । इस अध्ययन में अब सूत्रकार यह स्पष्ट करेंगे कि
यदि जीव को तथाविध सामग्री प्राप्त होती रहती है तो गुण संपत्ति
भी बढती रहती है.-‘ जज्ञण भते ’ इत्यादि ।

चौदसु अध्ययन प्रारभ-

चौदसा अध्ययनने तेग्मा अध्ययननी साथे आ लतने न भध ठे के
तेरमा अध्ययनमा ने आ वातनु स्पष्टीकरण करवामा आण्यु छे के आत्मा
सम्यग्दर्शन वगेरे प्रकट पण थछ गया डोय छता ने सद्गुरु वगेरेनी उप-
देश रूप तेमनु वर्धन करनार सामग्री डोय नछि तो ते शुष्णीनी हानि थछ
नय छे आ अध्ययनमा सूत्रकार छे ये ने वात स्पष्ट करवा भागे छे के
एवने ने तथाविध सामग्री मणती रछे ठे तो शुष् स पत्ति पण वधनी गछे छे

‘ जज्ञण भते ’ इत्यादि-

फालेणं तेणं समएण तेयलिपुरं नाम नगरं पमयवणे उजाणे
 कणगरहे राया । तस्स णं कणगरहस्स पउमावई देवी ।
 तस्स णं कणगरहस्स तेयलिपुत्ते णाम अमच्चे सामदंड-
 दक्खे । तत्थ ण तेयलिपुरे कलादे नाम मूसियारदारए होत्था
 अड्ढे जाव अपरिभूए । तस्स ण भद्दा नाम भारिया । तस्स
 ण कलायस्स मूसियारदारयस्स धूया, भद्दाए अत्तया
 पोट्टिला नाम दारिया होत्था रुवेण य जोव्वणेण य लाव-
 ण्णेण य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा । तएणं पोट्टिला दारिया
 अन्नया कयाइ णहांया सव्वालकारविभूसिया चेडियाचक्क-
 वालसपरिवुडा उप्पि पासायवरगया आगासतलगंसि कण-
 गमएण तिडूसएण कीलमाणीं विहरइ ॥ सू० १ ॥

टीका—जम्बूस्वामी पृच्छति—यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता महा-
 वीरेण यावत्सम्पाप्तेन त्रयोदशस्य ज्ञाताध्ययनस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तं चतुर्दशस्य खलु
 भदन्त ! ज्ञाताध्ययनस्य श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्सम्पाप्तेन कोऽर्थ

टीकार्थ—जम्बू स्वामी पूछते हैं कि (भते—जइण समणेण भगवया
 महावीरेण जाव सपत्तेण) हे भदत ! यदि श्रमण भगवान् महावीरने कि
 जिन्होंने सिद्धिगति नाम का स्थान प्राप्त कर लिया है (तेरसमस्स णाय-
 ज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते चोदसमस्स ण भते ! णायज्झयणस्स समणेण
 भगवया महावीरे ण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते) तेरहवें ज्ञाताध्ययन
 का पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्रज्ञप्त किया है—तो हे भदत ! चौदहवें ज्ञाता-
 ध्ययन वा उन्ही श्रमण भगवान् महावीर ने क्या अर्थ निरूपित किया

टीकार्थ—जम्बू स्वामी पूछे छे के (भते ! जइण समणेण भगवया महा
 वीरेण जाव सपत्तेण) हे भदत ! जे श्रमणु भगवान् महावीरे-के जेओ सिद्ध
 गति स्थानने भेजवी चूक्या छे

(तेरसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते, चोदसमस्स ण भते ! णायज्झ-
 यणस्स समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते)

तेरभा ज्ञाताध्ययनने पूर्वोक्त रूपे अर्थ निरूपित कथो छे तो हे भदत ! ते
 श्रमणु भगवान् महावीरे जे आ चौदभा ज्ञाताध्ययनने ओ अर्थ निरूपित कथो छे ?

प्रहसः । सुधर्मा स्वामी कथयति-एव खलु जन्मू । तस्मिन् काले तस्मिन् समये तैत्तिलिपुरं नाम नगरम् आसीत् । तत्र प्रमदवन नाम उद्यानमासीत् । तस्य नगरस्य कनकरथो नाम राजाऽसीत् । तस्य खलु कनकरथस्य राज्ञः पद्मावती नाम देवी । तस्य खलु कनकरथस्य राज्ञः तैत्तिलिपुरो नाम अमात्यः ' सामदडदक्खे ' साम दण्डदक्ष =अत्र सामदण्डग्रहणाद् दानभेदयोरपि ग्रहण तेन सामदानभेददण्डात्मक-चतुर्विंशोपायनिपुण इत्यर्थः आसीत् ।

तत्र खलु तैत्तिलिपुरे कलादे नाम ' मूसियारदारण ' मूषीकारदारकः= सुवर्णकारदारकः, ' मूषी ' इति मूषापर्यायः, गौरादित्वाद्द्वीप यत्र सुवर्णादि है ? (एव खलु जन्मू । तेण कालेण तेण समएण तेयलिपुर नाम नगर पमयवणे उज्जाणे कणगरहे राया, । तस्स ण कणगरहस्स पउमावई देवी) श्री सुधर्मा स्वामी अथ श्री जन्मू स्वामी के इस प्रश्न का उत्तर देने के अभिप्राय से कहते हैं-जन्मू !, सुनो-तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार से है-उस काल और उस समय में तैत्तिलिपुर नाम का नगर था । उस में प्रमदवन नाम का उद्यान था । उस नगर के राजा का नाम कनकरथ था । इस कनकरथ राजा की रानी का नाम पद्मावती देवी था । (तस्स ण कणगरहस्स तेयलिपुत्ते णाम अमन्चे सामदडदक्खे । तत्थ ण तेयलिपुरे कलादे नाम मूसियारदारण होत्या अड्डे जाव अपरिभूए) उस कनकरथ राजा का अमात्य या जिस का नाम तैत्तिलिपुत्र था । यह साम, दान, भेद और दड इन चार प्रकार की राजनीति में विशेष, पटु निपुण था । उसी तैत्तिलिपुर मे कलादे नाम का

(एव खलु जन्मू । तेण कालेण तेण समएण तेयलिपुर नाम नगर पमयवणे उज्जाणे कणगरहे राया । तस्स ण कणगरहस्स पउमावई देवी)

श्री सुधर्मास्वामी उच्ये श्री जन्मूस्वामीने आ प्रश्नोना ज्वाण आप्पवानी उच्यथी इड्डे छे डे डे ज्जु ! सालणे तमार प्रश्नोना ज्वाण आ प्रभाणे छे डे ते कणे अने ते मभये तैत्तिलिपुर नामे नगर इत्तु तेमा प्रमदवन नाम उद्यान इत्तु ते नगरना राजन्तु नाम कनकरथ इत्तु ते कनकरथ राजन्ती राणीन्तु नाम पद्मावती इत्तु

(तस्स ण कणगरहस्स तेयलिपुत्ते णाम अमन्चे सामदडदक्खे । तत्थ ण तेयलिपुरे कलादे नाम मूसियारदारण होत्या अड्डे जाव अपरिभूए)

ते कनकरथ राजाने अक अमात्य (मंत्री) इतो जेतु नाम तैत्तिलिपुत्र इत्तु ते साम, दान, भेद अने दड अने चारे प्रकारनी नीतिमा सविशेष निपुण-कुशल इतो ते तैत्तिलिपुरमा कलादे नामे मूषीकारदारक (सोनीने पुत्र)

कालेणं तेषां समणं तेयलिपुर नाम नगरं पमयवणे उज्जाणे कणगरहे राया । तस्स णं कणगरहस्स पउमावई देवी । तस्स णं कणगरहस्स तेयलिपुत्ते णाम अमच्चे सामदंड-दक्खे । तत्थ णं तेयलिपुरे कलादे नामं मूसियारदारए होत्था अड्ढे जाव अपरिभूए । तस्स ण भद्धानाम भारिया । तस्स णं कलायस्स मूसियारदारयस्स धूया, भद्दाए अत्तया पोट्टिला नाम दारिया होत्था रुवेण य जोव्वणेण य लाव-णणेण य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा । तएणं पोट्टिला दारिया अन्नया कयाइ ण्हाया सव्वालकारविभूसिया चेडियाचक्क-वालसपरिवुडा उप्पि पासायवरगया आगासतलगंसिकण-गमएणं तिंदूसएणं कीलमाणीं निहरइ ॥ सू० १ ॥ ७

टीका—जम्बूस्वामी पृच्छति—यदि खलु भदन्त! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्सम्प्राप्तेन त्रयोदशस्य-ज्ञाताध्ययनस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तं चतुर्दशस्य खलु भदन्त! ज्ञाताध्ययनस्य श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्सम्प्राप्तेन कोऽर्थ

टीकार्थ—जबू स्वामी पूछते हैं कि (भते—जइण समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण) हे भदत ! यदि श्रमण भगवान् महावीरेने कि जिन्होने सिद्धिगति नाम का स्थान प्राप्त कर लिया है (तेरसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते चोइसमस्स ण भते ! णायज्झयणस्स समणेण भगवया महावीरे ण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते) तेरहवें ज्ञाताध्ययन का पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्रज्ञप्त किया है—तो हे भदत ! चौदहवें ज्ञाताध्ययन वा उन्ही श्रमण भगवान् महावीरे ने क्या अर्थ निरूपित किया

टीकार्थ—जबू स्वामी पूछे छे डे (भते ! जइण समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण) छे भदत ! जे श्रमणु भगवान् महावीरे-डे जेणे सिद्ध गति स्थानने भेजवी बुद्धया छे

(तेरसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते, चोइसमस्स ण भते ! णायज्झयणस्स समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते)

तेरभा ज्ञाताध्ययनने पूर्वोक्त उपे अर्थ निरूपित कथ्ये छे तो छे भदत ! ते श्रमणु भगवान् महावीरे जे आ चौदभा ज्ञाताध्ययनने ये अर्थ निरूपित कथ्ये छे ?

‘चेडियाचक्रवालसपरिवुडा’ चेटिकाचक्रवालसपरिवृता=चेटिका:=दास्यस्तासा
यच्चक्रवाल मण्डल तेन सपरिवृता=सहिता दासीसमूहपरिवेष्टितेत्यर्थः, उपरिभासा-
दवरगता प्रासादोपरिस्थिता-आकाशतले=अनाट्टतमदेशे ‘छत्त’ इति प्रसिद्धे
कनकमयेन=स्वर्णनिर्मितेन ‘तिन्दूसएण’ तिन्दूसकेन=कन्दुकेन क्रीडन्ती र
विहरति ॥ सू० १ ॥

मूलम्-इमं च ण तेयलिपुत्ते अमन्त्रे षहाए आसखंधवरगए
महया भडचडगरवदपरिक्खित्ते आसवाहणियाए णिजायमाणे
कलायस्स मूसियारदारगस्स गिहस्स अदूरसामंतेण वीइव-
यइ। तएण से तेयलिपुत्ते मूसियारदारगस्स गिहस्स अदूरसामत्तेणं
वीइवयमाणेर पोट्टिलं दारिय उप्पि पासायवरगय आगासतलगंसि
कणगतिदूसएणं कीलमाणीं पासइ, पासित्ता पोट्टिलाए दारि-
याए रूवे य जाव अज्झोववन्ने कोडुवियपुरिसे सदावेइ,
सदावित्ता। एवं वयासी - एसा णं देवाणुप्पिया। कस्स
दारिया ? किं नामधेजा ?। तएणं कोडुवियपुरिसा तेयलिपुत्तं
एवं वयासी-एसा ण सामी। कलायस्स मूसियारदारगस्स
धूया, भद्दाए अत्तयापोट्टिला नाम दारिया रूवेण य जाव उक्किट्ट-
सरीरा। तएणं से तेयलिपुत्ते आसवाहणियाओ पडिनि यत्ते समाणे

विभूसिया चेडियाचक्रवालसपरिवुडा उप्पि पासायवरगया आगास
तलगंसि कणगमएण तिन्दूसएण कीलमाणी र विहरइ) एक दिन
की बात है कि यह स्नान कर के तथा समस्त आभरणों से विभूषित
हो करके अपनी दासियोंके साथ प्रासाद के ऊपर छत्त पर सुवर्ण निर्मि-
त कन्दुक (गेंद) से क्रीडा कर रही थी। सूत्र ॥ १ ॥

अेक द्विसे ते स्नान कर्या षाड पोताना षधा अणेने धरेष्वास्सेत्थी
शष्वादीने पोतानी दासीओनी साथे भडेलनी ढपइनी अगाशीमा सोनाथी
पनाववासा आवेली इदीथी रभी रही इती ॥ मत्र “ १ ”

गाल्यते सा, तां करोति=साधनमामश्रीत्वेन निष्पादयति, इतिव्युत्परया मूषीकार-
इति सुवर्णकारे योगारूढोऽय शब्दः । ' होत्या ' आसीत् । यो हि आढ्यो यावद-
परिभूतः । तस्य खलु कलादस्य मूषिकारदारकस्य दुहिता भद्राया आत्मजा
पोट्टिला नाम दारिका आसीत्, याहि रूपेण च=आकृत्या, यौवनेन च=तारुण्येन
च लावण्येन च=शरीरोत्कृष्टकान्ति विशेषेण उत्कृष्टा अतएव उत्कृष्टशरीराऽसीत् ।
ततः खलु पोट्टिला दारिका अ यदा ऋदाञ्चित् स्नाता सर्वालङ्कारविभूषिता

मूषीकार दारक-सुवर्णकार का पुत्र-रहना था । मूषी शब्द का अर्थ
सांचा है । इस में सुवर्णादि द्रव्य पिघलाये जाते हैं । इस सांचे को जो
बनाता है उस का नाम मूषीकार है । इस व्युत्पत्ति के अनुसार यह
शब्द सुवर्णकार (सोनार) में योगारूढ हुआ है । यह मूषीकार दारक
आढ्य यावत् अपरिभूत था । (तस्स ण भद्रा नाम भारिया, तस्स षं
कलायस्स मूसियारदारयस्स धूया, भद्राए अत्तया पोट्टिला नाम दारि-
या होत्या, रूवेण य जोवणेण य लावण्येण य उक्किट्ठा उक्किट्ठ
सरीरा) इस मूषिकार दारक कलाद-सौनी की अत्यन्त प्रिय पोट्टिला
नाम की लडकी थी जो इस की पत्नी भद्रा को कुक्षि से उत्पन्न हुई
थी । यह आकृति से, यौवन से एव लावण्य से-शारीरिक उत्कृष्ट कान्ति
से-बहुत ही अधिक मनोहर थी-अतः इस का शरीर बहुत अधिक
उत्तम था । (तएण पोट्टिला दारिया अन्नया कयाइ ण्हाया सव्वालङ्कार-

रहेतो हतो ' मूषी ' शब्दने अर्थ सांचो (पीणु) छे तेमा सोनु वगेरे
द्रव्यो 'योगाणवामा आवे छे आ सायाने पनावनारनु नाम मूषीकार छे आ
व्युत्पत्तिने लधने आ शब्द सुवर्णकार (सोनी) भाटे योगारूढ अर्थ गयो छे
ते मूषिकारदारक आढ्य (धनवान) यावत् अपरिभूत हते।

(तस्स ण भद्रा नाम भारिया तस्स ण कलायस्स मूसियारदारयस्स धूया
भद्राए अत्तया पोट्टिला नाम दारिया होत्या, रूवेण य जोवणेण य लावण्येण
य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा)

ते मूषिकारदारक कलाद सोनीनी भ्रूम न वडाही पोट्टिला नामे 'पुत्री' हती
ने तेनी पत्नी लडकी गलथी उत्पन्न अर्थ हती ते आकृतिथी, यौवनथी,
लौवण्यथी-शरीरनी उत्कृष्ट-कान्तिथी अहु न मनोहर हती, अथी तेनु शरीर
भ्रूम न उत्तम हतु

(तएण पोट्टिलादारिया अन्नयाकयाइ ण्हाया सव्वालङ्कारविभूषिया चेडिया
'चक्रवालसपरिवुडा उप्पि पासायवरगया आगासतलगसि कणमएण तिदुस-
एण कीलमाणी २ विद्दह)

रदारयस्स गिहाओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमिच्चा, जेणेव तेयलिपुत्ते अमच्चे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छत्ता, तेयलि-
पुत्तस्स अमच्चस्स एयमट्ट निवेदेति ॥ सू० २ ॥

टीका—‘इम च ण’ इत्यादि । अस्मिन् खलु समये तेतलिपुत्रोऽमात्यः स्नातः
‘आसखधवरगए’=अश्वस्फुधवरगतः=अश्वारूढः ‘महया भटचडगरवदपरिक्खित्ते’
महाभटचटकरवृन्दपरिक्षिप्त’ महान्तो भटचटकराः=भटसमूहाः तेषां वृन्दैः=समूहै
परिक्षिप्त =परिवृत’ सन् ‘आसवाहणियाए’ अश्ववाहणिकाये=अश्ववाहनेन क्रीड-
नायं ‘णिज्जायमाणे’=निर्यान्=निर्गच्छन् कलादस्य मृषीकारदारकस्य गृहस्य
अदूरसामन्तेन पार्श्वभागेन ‘वीइवयइ’=व्यतित्रजति=गच्छति । तत’ खलुःस
तेतलिपुत्रो मृषीकारदारकस्य गृहस्य अदूरसामन्तेन व्यतित्रजन् पोट्टिलां दारिकाम्

‘इम च ण तेयलि पुत्ते अमच्चे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(इम च ण) इसी समय (तेयलिपुत्ते अमच्चे) ण्हाए आमख-
धवरगए महया भटचडगरवदपरिक्खित्ते आसवाहणियाए णिज्जाय-
माणे कलायस्स मूसियारदारगस्स गिहस्स अदूरसामतेण वीइवयइ)
तेतलि पुत्र अमात्य स्नान से निवट कर घोड़े पर चढा हुआ बढे २। भट
समूहों के वृन्दों से घिग होकर अश्वक्रीडा के लिये मृषीकारदारक कला-
दके (सोनार) मकानके पास से निकला । (तएण से तेयलिपुत्ते मूसि-
यारदारगस्स गिहस्स अदूरसामतेण वीइवयमाणे २ पोट्टिल दारिय
उप्पि पासायवरगय आगासतलगसि कणगतिदसएणं कीलमाणी
पासइ) मृषीकारदारक कलाद के मकान के पास से होकर जाते हुए

इम च ण तेयलिपु अमच्चे’ इत्यादि—

टीकार्थ—(इम च ण) ते वपते

(तेयलिपुत्ते अमच्चे) ण्हाए आसखधवरगए महया भटचडगरवदपरिक्खित्ते
आसवाहणियाए णिज्जायमाणे कलायस्स मूसियारदारगस्स गिहस्स अदूरसाम-
तेण वीइवयइ)

तेतलिपुत्र अमात्य स्थानथी परवागीने घोडा (उपर सवार तथा) अने
त्यारपधी विशाण बटो (थोदाओ) ना समूहोथी वीटणाधने अश्वक्रीडा भाटे
मृषीकारदारक कलादना घरनी पासै थाने नीउत्था

(तएण से तेयलिपुत्ते मूसियादारगस्स गिहस्स अदूरसामतेण वीइवयमाणे २ पोट्टिल
दारिय उप्पि पासायवरगय आगासतलगसि कणगतिदसएणं कीलमाणी पासइ)

अभिन्तरट्टाणिजे पुरिसे सदावेइ, सदावित्ता, एव वयासी-
गच्छह णं तुव्भे देवाणुप्पिया । कलादस्स मूसियारदारयस्स
धूयं भद्दाए अत्तय पोट्टिलं दारियं मम भारियत्ताए वरेह ।
तएणं ते अब्भन्तरट्टाणिजा पुरिसा तेतलिणा एव वुत्ता समाणा
हद्धतुट्टा करयलपरिग्गहिय सिरसावत्त मत्थए अजलिं कट्टु
तहन्ति किच्चा ज्ञेणेव कलायस्स मूसियारस्स गिहे तेणेव उवा-
गया । तएणं से कलाए मूसियारदारए ते पुरिसे एज्जमाणे
पासइ, पासित्ता हट्टुट्टे आसणाओ अब्भुट्टेइ, अब्भुट्टित्ता सत्त-
ट्टपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता, आसणेणं उवणिमन्तेइ उव-
णिमित्तत्ता, आसत्थे वीसत्थे सुहासणवरगए एवं वयासी-
सदिसंतु ण देवाणुप्पिया । किमागमणपओयण ? तएण ते
अभिन्तरट्टाणिजा पुरिसा कलाय मूसियदारयं एव वयासी-
अम्हे णं देवाणुप्पिया । तव धूयं भद्दाए अत्तय पोट्टिल दारियं
तेयलिपुत्तस्स भारियत्ताए वरेमो, त जइ णं जाणासि देवाणु-
प्पिया । जुत्तं वा पत्तं वा सलाहणिज्जं वा सरिसो सजोगो ता
दिज्जउण पोट्टिला दारियां तेयलिपुत्तस्स, तो भण देवाणुप्पिय ।
किंदलामो सुक्क ? तएण कलाए मूसियारदारए ते अभिन्त-
रट्टाणिजे पुरिसे एव वयासी-एस चेव णं देवाणुप्पिया ! मम
सुक्के, जन्न तेयलिपुत्ते मम दारिया निमित्तेणं अणुग्गह करेइ ।
ते अभिन्तरट्टाणिजे पुरिसे विपुलेणं असणपाणखाइमसाइ-
मैणं पुप्फवत्थ जाव मल्लालकारेण सक्कारेइ, सम्माणेइ, सका
रित्ता सम्माणित्ता पडिविसज्जेइ । तएणं ते

यावत्-उद्वृष्टशरीरा अस्ति । तत खलु स तेतत्रिपुत्र अश्वमाह्निकायाः प्रति
 निवृत्त-प्रत्यागत सन् ' अर्द्धभतरठाणिज्जे ' अभ्यन्तरस्थानीयान्-अन्तरङ्गप्रेष्य
 पुरुषा शब्दयति, सन्दयित्वा एवमादद्-गच्छत खलु यूयं देवानुप्रियाः' कलादस्म
 मृषीकारदारकस्य दुहितर भद्राया आत्मजा पोष्टिला दारिका मम भार्यात्वेन
 वृणुत । हे देवानुप्रिया यूय तथा प्रयत इम्, यथा समृषीकारदारकः स्वदुहितर
 मम भार्यात्वेन मद्य दद्यादिति नाय । तत खलु ते अभ्यन्तरस्थानीया पुरुषास्ते-
 तत्रिणा एवमुक्ताः सन्तो हृष्ट तुष्टा' करतल्पपरिवृहीत शिर आवर्त्त मस्रकेऽङ्गुलि
 कृत्वा, ' सहति ' तथेति तथा सरिप्यामीति ' क्रिचा' कृत्वा=रुकीकृत्य यत्रैव कला

इस का नाम पोष्टिला है । रूप आदि से यह बहुत ही उत्कृष्ट शरीर
 वाली है । (तण्ण से तेयलिपुत्ते आसवाहणियाओ पडिनियत्ते समाणे
 अर्द्धभतरठाणिज्जे पुरिसे सदावेड, सदावित्ता एव वयासी, गच्छहणं
 तुब्भे देवानुप्पिया ! कलादस्म स्रियारदारकस्म धूय भदाए अत्तय
 पोष्टिल दारिय मम भारियत्ताए वरेह) इस के बाद वह तेतलि पुत्र
 अमात्य, अश्ववाहनिवा रो पीछे जा लौटा तो लौटते ही उसने अपने
 अन्तरग प्रेष्य पुष्पो को बुलाया-और बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा-
 हे देवानुप्रियो ? तुम लोग जाओ-और मृषीकार दारक कलाद की पुत्री
 जिसका नाम पोष्टिला है, जो भद्रा की कुक्षि से उत्पन्न हुई है उसे मेरी
 भार्यारूप से वरआओ । तात्पर्य उस का यह है कि तुमलोग वहा
 जाकर ऐसा प्रयत्न करो कि जिस से वह मृषीकारदारक कलाद अपनी
 पुत्री को पत्नी के रूप में मुझे दे देव । (तण्ण ते अर्द्धभतरठाणिज्जा
 पुरिसा तेतलिणा एव बुत्ता समाणा इट्ट तुट्ठा करयल परिग्हिय सिरसा

छे तेनु नाम पोष्टिला छे ते इय वगेरेथा भूमए उत्तुष्ट शरीरवाणी छे

(तण्ण से तेयलिपुत्ते आसवाहणियाओ पडिनियत्ते समाणे अर्द्धभतरठाणिज्जे
 पुरिसे सदावेड सदावित्ता एव वयासी गच्छह ण तुब्भे देवानुप्पिया ! कलादस्स
 मृसियारदारकस्स धूय भदाए अत्तय पोष्टिल दारिय मम भारियत्ताए वरेह)

त्यारपणी ते तेतलिपुत्र अमात्य अश्ववाहनिवाथी वर पाठे आब्भे
 त्याडे आवतानी माधे ए तेण्णे पोताना-अन्तर ग प्रेष्य पुत्रेणेने षोलाव्या अने
 षोलावीने तेभने आ प्रभाण्णे इधु डे हे देवानुप्रियो ! तमे तथो अने मृषी
 कारदारक उवाहनी पुत्री डे-डे तेनु नाम पोष्टिला छे, अने वे लदाना गमथी
 उत्पन्न थर्ष छे-तेने भार्या उपमा भने आपो तात्पर्य आ प्रभाण्णे छे डे तमे
 बोडो त्या वधने ओरी होजिग करे डे नेथी ते मृषीकारदारक उवाह पोतानी
 पुत्रीने पत्नी उपमा भने आपी हे

उपरि प्रासादद्वरगतामाराशतले कनकनिन्दसकेन क्रीडन्ती पश्यति, दृष्ट्वा, पोष्टि
 लाया दारिकाया रूपे च यौवने चलाय्ये च 'जात्र अज्ज्ञोवयन्ने' यावत्-मूर्च्छितः,
 वृद्ध, ग्रथितः, अध्युपपन्न' = अत्यन्तसक्ता इत्यर्थे कौटुम्बिकपुरुषात् शब्दयति,
 शब्दयित्वा, एमवदत्-एषा खलु देवानुप्रियाः । कस्य दारिका किं नामयेया ? ।
 ततः खलु कौटुम्बिकपुरुषा तेतलिपुत्रम् एमवदन्-एषा खलु स्वामिन् । कलादस्य
 मूषीकारदारकस्य दुहिता, भद्राया आत्मजा पोष्टिला नाम दारिका रूपेण च
 कसं तेतलिपुत्र अमात्य ने प्रासाद के ऊपर छत पर सुवर्ण की कन्दुकर
 (गेद) से क्रीडा करती हुई उस पोष्टिला दारिका को देखा । (पामित्ता
 पोष्टिलाए दारियाए रूपे य जात्र अज्ज्ञोवयन्ने कोट्टुवियपुरिसे महावेइ
 सहावित्ता एव वयासी-एसा ण देवाणुप्पिया कस्स दारिया ? किं नाम
 धेज्जा ?) देख कर वह उस पोष्टिला दारिका के रूप, यौवन एवं लावण्य में
 मूर्च्छित, वृद्ध, ग्रथित बनकर उस पर अत्यन्त आसक्ति से युक्त हो
 गया । उसी समय उस ने कौटुम्बिकपुरुषों को बुलाया-बुलाकर उन
 से इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रियो ! कहो यह कन्या किसकी है और
 इसका नाम क्या है ? (तएण कोट्टुवियपुरिसा तेयलिपुत्त एव
 वयासी-एसा ण सामी ! कलायस्स मूसियारदारगस्स धूया भद्दाए
 अत्तया पोष्टिला नाम दारिया रूपेण य जात्र उक्किट्टसरीरा) उन कौटु-
 म्बिक पुरुषों ने तेतली पुत्र से ऐसा कहा-हे स्वामिन् ! यह मूषीकार
 दारक कलाद की पुत्री है जो भद्रा भार्या की कुक्षि से उत्पन्न हुई है ।

मूषिकारदारक कलादनी घरनी पासे थयने जाता ते तेतलिपुत्र अमात्ये
 महेलना उपरनी अगाशी उपर सेनानी दडीथी रभती ते पोष्टिला दारिकाने जेध
 (पामित्ता पोष्टिलाए दारियाए रूपे य जात्र अज्ज्ञोवयन्ने कोट्टुवियपुरिसे महा-
 वेइ सहावित्ता एव वयासी एसा ण देवाणुप्पिया कस्स दारिया ? किं नामधेज्जा ?)
 ते पोष्टिला दारिकाने जेधने ते तेना रूप, यौवन अने लावण्यमा मूर्च्छित
 वृद्ध, ग्रथित अनीने अत्यन्त आसक्त थय गये तसत्त ज तेणे कौटुम्बिक
 पुश्येने ओलाव्या अने ओलावीने तेणे तेणेने आ प्रभाणे कल्लु के डे देवा
 नुप्रियो ! ओला, आ कन्या डेनी छे अने अने शु नाम छे ?

(तएण कोट्टुवियपुरिसा तेयलिपुत्त एव वयासी-एसा ण सामी । कलायस्स
 मूसियारदारगस्स धूया, भद्दाए अत्तया पोष्टिला नाम दारिया रूपेण य जात्र
 उक्किट्ट सरीरा)

ते कौटुम्बिक पुश्येअे तेतलिपुत्रने आ प्रभाणे कल्लु के डे स्वामिन् !
 ते मूषिकारदारक कलादनी पुत्री छे अने सद्भाभार्याता गर्भथी तेना जन्म थये।

यावत्-उत्कृष्टगरीरा अस्ति । तत खलु न तेतलिपुत्र अश्वमादनिकायाः प्रति निवृत्तः=प्रत्यागत सन् ' अर्धितरठाणिज्जे ' अभ्यन्तरस्थानीयान्=अन्तरङ्गप्रेष्य-पुरुषा गन्धयति, शब्दयित्वा एवमत्रदत्-गन्तुत खलु यूय देवानुप्रिया । कलादस्य मृषीकारदारकस्य दुहितर मद्राया आत्मजा पोद्विला दारिमा मम भार्यात्वेन वृणुत । हे देवानुप्रिया यूय तया प्रवत इत्, यथा समृषीकारदारक स्वदुहितर मम भार्यात्वेन मया दद्यान्तिनाम् । तत खलु ते आभ्यन्तरस्थानीया पुरुषास्ते-तत्रिणा एवमुक्ताः मनो हृष्ट तुष्टाः करतल्पगिगृहीत धिर आवर्त्तं मसन्केऽञ्जलिं कृत्वा, ' तदस्ति ' तथेति तथा करिष्यामीति ' किञ्चा ' कृत्वा=रीकृत्य यत्रैव यथा

इस का नाम पोद्विला है । रूप आदि से यह बहुत ही उत्कृष्ट गरीर वाली है । (तण्ण से तेयलिपुत्ते आमवाहणियाओ पडिनियत्ते ममाणे अर्धितरठाणिज्जे पुरिसे सदावेड, मदावित्ता एव चयासी, गन्तुहण तुब्भे देवाणुप्पिया । कलादस्म मृन्निवारदारयस्म धूय भद्दाण अत्तय पोद्विल दारिय मम भारियत्ताण वरेह) उस के बाद वह तेतलि पुत्र अमात्य, अश्ववाहनिका से पीछे जब लौटा तो लौटते ही उसने अपने अन्तरंग प्रेष्य पुरुषों को बुलाया-और बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा- हे देवानुप्रियों ? तुम लोग जाओ-और मृषीकार दारक कलाद की पुत्री जिमका नाम पोद्विला है, जो मद्रा की कुक्षि से उत्पन्न हुई है उसे मेरी भार्यारूप से बरआओ । तात्पर्य उस का यह है कि तुमलोग वहां जाकर जेना प्रयत्न करो कि जिम से वह मृषीकारदारक कलाद अपनी पुत्री को पत्नी के रूप में मुझे दे देव । (तण्ण ते अर्धितरठाणिज्जा पुरिसा तेतलिणा एव वुत्ता समाणा इडु तुष्टा करतल परिग्गहिय मिरमा

छे तेतु नाम पोद्विला छे ते इय वगेदथी अमन् उत्कृष्ट गरीरवाणी छे
(तण्ण से तेयलिपुत्ते आमवाहणियाओ पडिनियत्ते ममाणे अर्धितरठाणिज्जे पुरिसे सदावेड मदावित्ता एव चयासी गन्तुहण तुब्भे देवाणुप्पिया । कलादस्स मृन्निवारदारयस्म धूय भद्दाण अत्तय पोद्विल दारिय मम भारियत्ताण वरेह)

त्याप्यती ते तेतलिपुत्र अमात्य अश्ववाहनिजायी वे० पाठे आ०थे।
त्याओ आपतानी आवे ७ तेणे पोताना-अन्तरंग प्रेष्य पुत्रोने गोलाव्या अने गोलायीने तेभने आ प्रभाणे उद्यु डे डे देवानुप्रियो । तमे तब्भो अने मृषी कारदारक इलादनी पुत्री उ-के जेतु नाम पेद्विला छे, अने जे लडाना गमथी उत्पन्न थऽ छे-तेने लार्था उपमा भने आपो तात्पर्य आ प्रभाणे छे डे तमे बोडो त्या लडने अरी दोगिज डो डे जेरी ते मृषीकारदारक इलाद पोतानी पुत्रीने पत्नी उपमा भने आपी हे

दस्य मूषीकारदारकस्य गृह तत्रैव उवागताः । ता एतु म कथादो मूषीकारदारकः
तान् अभ्यन्तरस्थानीयान् पुरुषानेजमानान् पश्यति, हृष्टा एतुष्टोऽतिशयप्रमुदितः
आसनात् अभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय तान् सम्मानयितुं तेषामभिष्टुय गताष्टपदानि

वत्त मत्थण अजलिं ऋद्दु तहत्ति किञ्चा जेणेव कथायस्स मूसियारस्स
गिहे तेणेव उवागया) उस प्रकार तेतलि पुत्र के द्वारा कहे गये वे
अन्तरग प्रेष्य पुरुष हृष्ट तुष्ट होते हुए वहा से निकल कर मूषीकार
कलाद का जहा घर था वहा आये । आते समय उन्होंने तेतलि पुत्र
को दोनों हाथों की अजलि घनोर और उसे मस्तर पर रख कर नम
स्कार किया-और हम आपने जैसा कहा है वैसा ही करेगे इस बात
को उसे आश्वासन देकर स्त्रीकार किया था । (तएण से कलाए मूसि-
यारदारए ते पुरिसे एज्जमाणे पासइ, पासित्ता हृष्ट तुष्टे आसणाओ
अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइ अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता आसणे
ण उवणिमतेइ, उवणिमित्ता आसत्थे वीसन्थे सुहासणवरगए एव
वयासी सदिसत्तु ण देवाणुप्पिया । किमागमणपओयण-तएण ते अ-
र्हिभतरठाणिज्जा पुरिसा कलाय मूसियदारय एव वयासी) जब उस
मूषीकार दारककलादने उन पुरुषों को आपने घर की ओर आते हुए
देखा-तो वह देखकर हृष्ट तुष्ट हो अपने आमन पर से उठ बैठा-उठ

(तएण ते अब्भतरठाणिज्जा पुरिसा तेतलिणा एव वुत्ता नमाणा हृष्टुट्ठ
करयलरिग्गहिय सिरसावत्त मत्थण अजलिं ऋद्दु तहत्ति किञ्चा जेणेव कलायस्स
मूसियारस्स गिहे तेणेव उवागया)

आ रीते तेतलिपुत्रे जेओने आदेश आप्थे छे जेवा ते अतरग प्रेष्य
पुत्र हृष्ट तुष्ट यथा त्याथी रवाना थधने मूषीकार कलादनु न्या घर छत्तु त्या
पछेज्या तेतलिपुत्रनी पासिथी पाछा इरता तेओज्जे ण ने हाथीनी अजलि
पनावीने अने तेने मत्तके मूषीने नमस्कार कर्या अने अमे आपे जेम हुकुम कर्यो
छे तेने यथावत् पालन करीशु आ रीते तेमनी आज्ञा तेओज्जे स्त्रीकारी

(तएण से कलाए मूसियारदारए ते पुरिसे एज्जमाणे पासइ, पासित्ता
हृष्टुट्ठे आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइ अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता
आसणेण उवणिमतेइ, उवणिमित्ता आसत्थे सुहासणवरगए एव वयासी सदिसत्तु
ण देवाणुप्पिया । किमागमणपओयण-तएण ते अर्हिभतरठाणिज्जा पुरिसा
कलाय मूसियदारय एव वयासी)

मूषीकारदारक कलाद ने आरे ते पुत्रोने पोताना घर तरइ आवता जे
त्यारे ते जेधने हृष्ट तुष्ट थधने पोताना आसन उपरथी जियो थर् गयो अने

गत्वा तान्ग्रे कृत्वा स्वयम् 'अणुगच्छड' अनुगच्छति, तेषा पृष्ठवर्तीभूत्वा गच्छति, अनुगम्य, आसनेन उपनिमन्त्रयति=आसनदानेन तान् पुरुषानुपवेशयति, उपनि-
मन्त्र्य, आसन्स्य, विस्त्रस्थः एतेषाममात्यपुष्पाणा मत्कारो यथावज्जात इति
हेतोः स्वस्थमनाः भूत्वा सुखासनपरगतः=स्वयमपि स्वकीयासने सुखोपविष्टः
सन् एमवदत्-सदिशतु खलु हे देवानुप्रियाः! भवता किमागमनप्रयोजनम् ? ततः
खलु ते आभ्यन्तरस्थानीयाः पुरुषाः कलाद मूपीकारदारकम् एमवदन्-वय
खलु देवानुप्रिय ! तव दुहितर भद्राया आत्मजा पोष्टिला दारिका तेतलिपुत्रस्य
भार्यात्वेन वृणुम , तद् यदि खलु त्व 'जाणसि' जानासि=मन्यसे, हे देवानुप्रिय !
यद् अस्मारमेतत्कन्याविषयक वाचन ' जुत्त वा ' युक्त वा=उचितम् ' पत्त वा '
प्राप्त वा मनसिसलग्न वा ' सलाहणिज्ज वा ' श्लाघनीय वा=प्रशसनीय वा अपि च
'सरिसो वा सजोगो' सदृशो वा सयोगः तेतलिपुत्रेण सह तव कन्याया वैवाहिक

कर फिर वह सात आठ डग प्रमाण आगे उन का सत्कार करने के
लिये गया। वहा से उन्हें आगेकर के वह स्वय उनके पीछे २ आया।
आकर के फिर उसने उन्हें आसनों पर बैठाया-बैठा कर आश्वस्त
विश्वस्त होकर बाद में वह स्वय दूसरे अपने आसन पर शान्ति पूर्वक
बैठ गया। बैठ जाने के बाद फिर उसने इस प्रकार कहा- हे देवानुप्रि-
यो ! कहिये-किस कारण से आप यहा पधारे है-आपलोगों के आने
का क्या प्रयोजन है-इस प्रकार उसके पुत्रने पर उन अभ्यन्तर स्थानीय
पुरुषों ने उस सुवर्णकार के पुत्र कलाद से इस प्रकार कहा (अम्हे ण
देवाणुप्पिया । तव धूय भद्राए अत्तय पोष्टिल दारिय तेयलिपुत्तस्स
भारियत्ताए वरेमो, त जइण जाणसि देवाणुप्पिया । जुत्त वा पत्त वा
सलाहणिज्ज वा सरिसो वा सजोगो ता दिज्जउण पोष्टिला दारिया तेयलि

बोलो यद्यने तेमना स्वागत भाटे सात आठ पगला सामे गये। त्याथी तेणे
आवनाशब्बोने आगज करीने ओटले डे पोते तेब्बोनी पाछण पाछण आवतो
त्या आव्थो अने आवीने तेणे तेब्बोने आमने। उपर मेमाडया त्थारपछी
आश्वस्त विश्वस्त यद्यने ते पोते जीवत आमन उपर शातिपूर्वकं जेसी गये।
जेसीने तेणे तेब्बोणे विनय पूर्वकं कछु के डे देवानुप्रियो ! बोलेो, तमे शा कान्णुथी
अर्ही आव्थो ठो ? तमे शा प्रयोत्तथी आव्थो ठो ? आ रीते कलाद (सुव-
र्णकार) नी वात सालागीने ते आव्थ तर अधानीय पुत्रोणे तेने आ प्रभाणे कछु डे

(अम्हेण देवाणुप्पिया ! तव धूय भद्राए अत्तय पोष्टिल दारिय तेयलि पुत्तस्स
भारियत्ताए वरेमो, त जइण जाणसि देवाणुप्पिया ! जुत्त वा पत्त वा सलाहणिज्ज

सम्बन्धो योग्यो भवतीति, यदि जानासि तदा दीयता गच्छु पोष्टिना दारिका तेत-
लिपुत्राय 'तो' तर्हि भण=बूहि, हे देवानुप्रिय ! किं दन्नः । इत्थम् सम्मानपुरस्कारं
भवते किं समर्थयामः । ततः खलु कलाद्रो मूपीरदारक' अभ्यतरस्थानीयान्
पुरुषान् एवमप्रदत्-एतदेव खलु देवानुप्रियाः । मम शुभम्, यत्खलु तेतत्रिपुत्रो
मम दारिकानिमित्तेन अनुग्रह=दया करोति । त्व्युक्तनाऽमातान् अभ्यतरस्थानी-

पुत्रस्स तो भण देवाणुप्पिया ! किं दलामो सुक्क ? तएण कलाए मूसि
यार दारए ते अर्द्धिभतरठाणिज्जे पुरिस एव वयासी) हे देवानुप्रिय हम
लोग तुम्हारी पुत्री पोष्टिला दारिका को कि जो भद्राकी कुक्षि से उत्पन्न
हुई है तेतली पुत्र अमात्य की वह भार्या बने इस रूप से चरण करने
के लिये आये हुए है-तो यदि तुम हे देवानुप्रिय ! हमारी इस याचना
को उचित, प्राप्त, और इलायनीय-प्रदासनीय मानते हो और यह सम
झते हो कि यह तेतलिपुत्र के साथ तुम्हारी कन्या का वैवाहिक मवध
योग्य है-तो पोष्टिला दारिका तेतलि पुत्र के लिये प्रदान कर दो-और
साथ में यह भी कह दो कि हम आपके लिये इस निमित्त क्यों सम्मान
पुरस्कार दें। इस प्रकार उन सब की ऐसी बातें सुनकर उस सुवर्ण
कार पुत्र कलादने उन आये हुए अभ्यतर स्थानीय पुरुषों से इस प्रकार
कहा-(एस चैव ण देवाणुप्पिया ! मम सुक्के जन्म तेयलिपुत्ते-
मम दारिया निमित्तेण अणुगृह करेइ, ते अर्द्धिभतरठाणिज्जे पुरिसे

वा सरिसो वा सजोयो ता दिज्जउण पोष्टिला दारिया तेयलिपुत्तस्स तो भण
देवाणुप्पिया ! किंदलामो सुक्क तएण कलाए मूसियारदारए ते अर्द्धिभतरठाणिज्जे
पुरिस एव वयासी)

हे देवानुप्रिय ! तमारी भद्रा लायोना गर्लथी जन्म पायेवी तमारी
पोष्टिला दारिका अमात्य तेतलीपुत्रनी लार्था थाय आ लतनी भागणी करवा
अमे तमारी पासे आव्या छीजे हे देवानुप्रिय ! तमे तेतलिपुत्रनी भागणी
उचित, श्लाघनीय अने प्रदासनीय मानता होय तेमज्जेम पणु तमने थतु
होय के अमात्य तेतलिपुत्रनी साथेना आ लक्ष सपध योग्य छे तो तमे
अमात्य तेतलिपुत्रने पोष्टिलादारिका आपी हो अने ऐनी साथे तमे अमने
ऐम पणु जलुावी हो के तमने अमे ऐना गदल सम्मान पुरस्कारना रूपमा
शु आपीजे ? आ रीते तेओ अधानी वात साभणीने ते सुवर्णकारना पुत्र
कहाहे आव्य तर स्थानीय पुरुषो आ प्रभाणे कहु दे—

(एस चैव ण देवाणुप्पिया ! मम सुक्के जन्म तेयलिपुत्ते मम दारिया

યાન્ પુરુષાન્ વિપુલેન યજનપાનસ્વાયસ્રાત્રેન પુષ્પસ્તગન્દ્રમાલ્યાન્કારેણ ચ સત્ક
રોતિ, સમ્માનયતિ, સત્કૃત્ય સમ્માન્ય, પ્રતિવિસર્જયતિ । તત- સ્વલુ તે=આભ્યન્તર
સ્થાનીયા' પુષ્પા કૃત્યદસ્ય મૂર્ધ્વીકારદારસ્ય ગૃદ્વાત્ પ્રતિનિષ્ક્રામ્યન્તિ, પ્રતિનિષ્ક્રમ્ય
યત્રૈવ તેતલિપુત્રોડમાત્યસ્ત્રૈવોપાગન્દ્રન્તિ, ઉપાગત્ય તેતલિપુત્રાય યમાત્યાય ' ઇય
મદ્ ' એતમર્થમ્=ત્રિગાહસ્ય સ્ત્રીકૃતિરૂપમર્થ નિવેદયન્તિ ॥ સૂ૦૨ ॥

વિપુલેણ અસળપાણસ્વાડમસાઢમેણ પુષ્પવત્ય જાવ મલ્લાલકારેણ
સત્કારેઢ, સમ્માણેઢ, સત્કારિત્તા, સમ્માણિત્તા પઢિ વિસજ્જેઢ । ત્તણ્ણં
તે કલાયસ્મ મૃસિયારદારયસ્મ ગિહાઓ પઢિનિક્લમતિ, પઢિનિક્લ-
મિત્તા જેણેત્ર તેયલિપુત્તે અમચ્ચે, તેણેત્ર ઉવાગચ્છતિ, ઉવાગચ્છિત્તા
તેયલિપુત્તસ્ત અમચ્ચસ્ત ઇયમદ્દ નિવેદેતિ) હે દેવાનુપ્રિયો ! મેરા
સન્માન પુરસ્કાર યહી હૈ કિ જો તેતલિ પુત્ર દારિકા કે નિમિત્ત સે મેરે
ઝપર ણેસી દયા કર રહે હૈ-અર્થાત્ મેરી પુત્રી કો જો વે અપની પત્ની
વનાને કી ચાહના કર રહે યહી સત્ર સે ઘઢા ઉન કી ઓર સે મેરે લિયે
સન્માન પુરસ્કાર પ્રદાન ક્રિયા જા રહા હૈ । ઢસ પ્રકાર કહ કર ડસ
કલાદ ને ડન અન્યતરસ્થાનીય પુરુષોં કા વિપુલ અશન, પાન, સ્વાઘ,
સ્વાઘ સે ઇવ પુષ્પ, વજ્ર, ગઘ માલા ઇવ અલકારોં સે સ્વૂચ સત્કાર
ક્રિયા-સન્માન ક્રિયા । સત્કાર ઇવ સન્માન કરને કે ઘાદ ફિર ડસને
ડનેં વિસર્જિત કર દિયા । ઘઠા સે વિસર્જિત હોરુર વે અભ્યતર સ્થાનીય

નિમિત્તેણ અણુગઢ કરેઢ, તે ઝર્ઘિમતરઢ્ઢાણિજ્જે પુરિસે વિડલેણ અસળપાણસ્વાઢમ-
સાઢમેણ પુષ્પવત્ય જાવ મલ્લાલકારેણ સત્કારેઢ, સમ્માણેઢ, સત્કારિત્તા, સમ્મા-
ણિત્તા પઢિવિસજ્જેઢ । ત્તણ્ણ તે કલાયસ્મ મૃસિયારદારયસ્મ ગિહાઓ પઢિનિક્લ-
મતિ, પઢિનિક્લમિત્તા જેણેત્ર તેયલિપુત્તે અમચ્ચે, તેણેત્ર ઉવાગચ્છ તિ, ઉવાગ-ચ્છિત્તા
તેયલિપુત્તસ્ત અમચ્ચસ્ત ઇયમદ્દ નિવેદતિ)

હે દેવાનુપ્રિયો ! અમાત્ય તેતલિપુત્ર મારી દારિકાને સ્વીકારવા ડ્ઢ જે મારા
ડપર દયા ઇતાવી ઢહ્યા છે તે જ અરેખર મારા માટે સન્માન અને પુરસ્કારની
જ વસ્તુ છે એટલે કે તેઓ મારી પુત્રીને પોતાની પત્ની પત્ની તરીકે
ધ્ઢધી રહ્યા છે, એજ તેમના તરફથી મારા માટે સન્માન અને પુરસ્કાર ડ્ઢ
છે આ રીતે ઢહીને તે ઢલાહે આક્યતર સ્થાનીય પુરુષોના વિપુલ અશન, પાન,
ખાઢ, સ્વાઘથી અને પુષ્પ, વજ્ર, ગઘ, માળા અને અલ કારોથી ખૂમ જ સરસ
રીતે સત્કાર કર્યો અને તેમનુ સન્માન કર્યું સત્કાર અને સન્માન કર્યા પછી
તેણે તેમને વિદાય આપી ત્યારપછી તે આક્યતર સ્થાનીય પુરુષો તે સુવર્ણ

पोट्टिला दारिका स्नता सर्वाङ्गारभृषिता 'सीय' शिषिका दूरोहयति=भारोहयति, दूरोह=भारोह 'मित्तणाइ सपरिबुडे' मित्रताति सपरिगृत =मित्रताति स्वजनसपन्निप रिवेष्टितः, सर्वाङ्ग वैवाहिकान् मभारान्=विवाहसस्कारोचित सामग्रीन् गृहीत्या स्वकाद् गृहात् प्रतिनिष्क्राम्यति, प्रतिनिष्क्रम्य 'सन्विडूण सर्वाङ्गान्=सर्वप्रकारिकया ऋद्ध्या सह 'तेयलिपुर' तेतलीपुरम्य म-यमभ्येन निर्गच्छन् यत्रैव तेतलेगृह तत्रैव उपा गच्छति, उपागत्य पोट्टिला दारिका तेतलिपुराय स्वयमेव भार्यात्वेन ददाति । ततः खलु तेतलिपुरोऽमात्य. पोट्टिला दारिका स्वभार्यात्वेन 'उपणीय' उपनी-

पोट्टिल दारिय ण्हाय सञ्चालकारभूमिसिय मीय दुरुह्) शुभ तिथि नक्षत्र, मुहूर्त्त में पोट्टिला दारिका को स्नान करा कर समस्त अलकारों से विभूषित किया और विभूषित कर के फिर उसे शिषिका पर बैठा दिया-(दुरुह्त्ता मित्तणाइ सपरिबुडे सातो गिहाओ पडिनिस्खमद्, पडिनिस्खमित्ता सन्विडूण तेयली पुर मज्झ मज्झे ण जेणेव तेयलिस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोट्टिल दारिय तेयलिपुत्तस्स सयमेव भारियत्ताए दलयइ) बैठा कर फिर वह मित्र, जाति, स्वजन, सपन्धी परिजनों से परिवेष्टित होकर एव वैवाहिक समस्त सामग्री को लेकर अपने घर से निकला । निकल कर सर्व प्रकार की अपनी ऋद्धि के साथ २ तेतलि पुर के बीच से होता हुआ जहा तेतलि का घर था वहा पहुँचा । वहा पहुँच कर उसने अपनी पुत्री पोट्टिला दारिका को तेतलि पुत्र को अपने आप से भार्या रूप से प्रदान कर दी । (तण्ण

(सोहणसि विहिनस्खत्तमुहत्तसि पोट्टिल दारियं ण्हायं सञ्चालकार, भूमिसिय सीय दुरुह्इ)

शुभ तिथि नक्षत्र, मुहूर्त्तमा पोट्टिला दारिकाने स्नान करवीने भग्नी जतना अलकारेथी गणुगारीने तेने पावणीमा जेसाडी दीग्गी

(दुरुह्त्ता मित्तणाइसपरिबुडे सातो गिहाओ पडिनिस्खमद्, पडिनिस्ख मित्ता सन्विडूण तेयलीपुर मज्झ मज्झेण जेणेव तेयलिस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोट्टिल दारिय तेयलिपुत्तस्स सयमेव भारियत्ताए दलयइ)

जेसाडीने ते पोताना मित्र, जाति, स्वजन, सपन्धी अने परिजनोंनी साथे लग्गनी ण्धी साधन सामग्री लज्जेने पर्यी नीज्जये। नीकणीने ते सर्व प्रकारनी पोतानी ऋद्धिनी साथे तेतलिपुरनी वच्चे धमने ल्या तेतलिप्रधान म

मूलम्—तएणं कलाए मूसियारदारए अन्नया कयाइं सोहणंसि तिहिनम्बत्तमुहुत्तसि पोट्टिलं दारयं ण्हाय सव्वालकारभूसियं सीय दुरुहइ, दुरुहित्ता मित्तणाइसंपीरवुडे सातो गिहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता सट्ठिणीए तेयलीपुरं मज्झ मज्झेण जेणेव तेयलिस्सगिहे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, पोट्टिल दारियं तेयलिपुत्तस्स सयमेव भारियत्ताए दलयइ । तएण तेयलिपुत्तं पोट्टिल दारियं भारियत्ताए उवणीय पासइ, पासित्ता पोट्टिलाए सट्ठि पट्ठयं दूरुहइ, दूरुहित्ता सेयपीएहि कलसेहि अप्पाण मज्जावेइ, मज्जावित्ता अग्गिहोम करावेइ, करावित्ता पाणिग्गहणं करेइ, करित्ता पोट्टिलाए भारियाए मित्तणाइ जाव परिजणं विउलेणं असणपाणखाइम साइमेण पुप्फं जाव पडिविसज्जेइ । तएण से तेयलिपुत्ते पोट्टिलाए भारियाए अणुरत्ते अविरत्ते उरालाइ जाव विहरेइ ॥सू०३॥

टीका—‘तएण’ इत्यादि, तत् खलु कलादो मूषीकारदारकः अयदा कदाचित् ‘सोहणंसि’ शोभने=शुभात्वे विवाहयोग्ये ‘तिहिनम्बत्तमुहुत्तसि’ तिथिनक्षत्रग्रहत्वे

पुरुष उक्त सुवर्णकार पुत्र कलाद के घर से निकले और निकल कर जहा तेतलि पुत्र अमात्य या वहा आये—वहाँ आकर उन्होंने ने तेतलि पुत्र अमात्य को विवाह स्वीकृति रूप अर्थ की खबर दी । सूत्र ॥ २ ॥

“ तएण कलाए मूसियारदारए ” इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इस के बाद (मूसियारदारए) मूषीकार दारक ने (अन्नया कयाइ) किमी एक समय (सोहणंसि तिहिनम्बत्तमुहुत्तसि

कार पुत्र कलादना धरथी नीडज्या अने त्याथी अना अमात्य तेतलिपुत्र उतो त्या पडोअ्या अमात्य तेतलिपुत्रनी पासे ज्ज्जने तेओओ रकतस भध स्वीडा रवा इय भअर थापी ॥ सूत्र “ २ ” ॥

तएण कलाए मूसियारदारए’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) तयारपत्री (मूसियारदारए) मूषीकार दारके (अन्नया कयाइ) केई ओके वधते

‘पुष्पजाव’ पुष्पयानत्=पुष्पयान्नाग्निना यागन्माल्यालङ्कारादिना सत्कारयति, सत्कार्यं ‘पडिमिज्जेः’ प्रति मिमर्जयति । तत् खलु स तेतलिपुत्रोऽमात्यः पोट्टिलाय भार्यायाम् ‘अणुरक्ते’ अनुरक्तं=आमक्तः ‘अणुरक्ते’ अणुरक्तः=अत्यन्तानुरक्त इत्यर्थः, ‘उरा-13 जा’ उरागान् यावत्=उदारान् भोगभोगान्=विषयभोगान् भुञ्जानो विदरति ॥ सू०२ ॥

मूलम्—तएण से कणगरहे राया रज्जे य रट्टे य वले य वाहणे य कोमे य कोट्टानारे य अतेउरे य मुच्छिएथ जाए पुत्ते वियगेइ, अप्पेगइयाण हत्थगुलियाआ छिदइ, अप्पेगइयाणं हत्थगुट्टए छिदइ, एव पायगुलियाओ पायगुट्टएवि, कन्नसक्कुलीएवि, नासापुडाइ फालेइ, अगमगाइ वियंगेइ । तएणं तीसेपउमावईए देवीए अन्नया पुठवरत्तावरत्तकालसमवांसि अयमेयाख्वं अज्जत्थिएथ समुप्पज्जित्था—एव खलु कणगरहे राया रज्जे य जाव पुत्ते वियगेइ, जाव अंगमगाइ वियगेइ । त जइ अह दारय पयायामि, सेय खलु ममं त दारग कणगरहस्स रहस्सिय चेव सारखेमाणीए संगो-

पोट्टिला भार्या के मित्र, ज्ञाति, स्वजन सवन्धि परिजनों का अशन, पान, स्वाद्य एवं स्वाद्य रूप चतुर्विध आहार सं तथा पुष्प, वस्त्र यावत्-माल्य अलंकार आदि से सत्कार करवाया, सत्कार करवाने के बाद फिर उन सब को वहाँ से विदा कर दिया । इसके पश्चात् पोट्टिला भार्या में आसक्त एवं अनुरक्त होने हुए उन्म तेतलि पुत्र अमात्य ने उसके साथ पचेन्द्रिय सन्नयी सुखों का अनुभव करने लगा । सूत्र ॥ ३ ॥

पोट्टिला भार्याना मित्र ज्ञाति, स्वजन सवन्धि परिजनोंना अशन, पान, पाद्य अने स्वद्य रूप चतुर्विध आहारया तेमए पुष्प, वस्त्र यावत् माल्य अलंकार वगेथी सत्कार करवावडोथो अने अत्ताए करवावडोथो पडी तेणे णधाने पोताना देवथी विदाय अपी त्यारपडी पोट्टिला भार्यामा आमइत्त अने अनु रक्त थयेथो ते अमात्य तेतलिपुत्र तेनी भाये पचेन्द्रिय सवन्धि सुखेना

ताम् उपनयनीकृता पशति, दृष्ट्वा पोष्टिलाया साद्वं पट्टक दृग्गच्छति, दूरुह्य 'सेय
पीण्डि' श्वेतपीतै = रजतसुवर्गनिर्मितं, 'कलसेदि' कलशः=घटे आत्मान
'मज्जावेड' मज्जाति=गपयति, मज्जायित्वा अग्निताक्षिको विवाह इति हेतोः
'अग्निहोम करावेड' अग्निहोम कारयति, कारयित्वा 'पाणिग्रहण' पाणिग्रहण=
विवाह करोति, कृत्वा पोष्टिलाया भार्यायाः 'मित्तगाड जाय परिजण' मित्र
ज्ञातिस्वजनमभ्यन्त्रिपरिजनम् विपुलेन अशनयानपायस्याद्येन चतुर्विधादारेण

तेयलिपुत्ते पोष्टिल दारिय भारियत्ताण उवणीय पासड, पामित्ता पोष्टि
लाण सदिं पट्टय दुरुहड) तेतलिपुत्र अमात्य ने पोष्टिला दारिका को
अपनी भार्या रूप से अपने लिये प्रदान की हुई देखा तो देय कर वह
उस पोष्टिला दारिका के साथ पट्टक पर बैठ गया। (दुरुहिता सेयपीण्डि
कलसेदि अप्पाण मज्जावेड, मज्जायित्वा अग्निहोम करावेड, करावित्ता
पाणिग्रहण करेड करित्ता पोष्टिलाण भारियाण मित्तगाड जाय परिजण
विडलेण असण पाण स्वाइम साडमेण पुष्फ जाय पडिदिसज्जेड । तण्ण
से तेयलिपुत्ते पोष्टिलाण भारियाण अणुरत्ते अविरत्ते उरालाड जाय
विहरेड) बैठ कर फिर उसने रजत एव सुवर्ण से निर्मित कलशों द्वारा
अपना अभियेक करवाया। अभियेक करावा कर "अग्नि साक्षिक
विवाह होता है" इस रणाल से फिर उसने अग्नि में होम करवाया।
करवा कर बाद में उसने उस पोष्टिला दारिका का पाणि ग्रहण कर
लिया। विवाह हो चुकने के अनन्तर फिर उस तेतलि पुत्र अमात्य ने

(तएण तेयलिपुत्ते पोष्टिल दारिय भारियत्ताए उवणीय पासड, पामित्ता
पोष्टिलाए सदिं पट्टय दुरुहड)

तेतलिपुत्र अमात्ये पोष्टिला दारिकाने ते ही भार्या रूपमा आपेली जेधने
ते पोष्टिला दारिकानी साथे पट्टक उपर जेसी गये।

(दुरुहिता सेयपीण्डि कलसेदि अप्पाण मज्जावेड, मज्जायित्वा अग्निहोम
करावेड करावित्ता पोष्टिलाए भारियाए मित्तगाड जाय परिजण विडलेण असण
पाण स्वाइम साडमेण पुष्फ जाय पडिदिसज्जेड । तएण से तेयलिपुत्ते पोष्टिलाए
भारियाए अणुरत्ते अविरत्ते उरालाड जाय विहरेड)

जेसीने तेहे यादी अने येनाना जणशे वडे पोताने अलियेक
करावडाये अलियेक करावडावीने तेहे 'अग्नि साक्षिक लग्न थाय
छे' आभ विशरीने तेहे अग्निमा डवन करावडाये तारपत्री तेहे पोष्टिला
दारिकानु पाणि अडण्ड कथुं लग्ननी विधि पूरी थया गाड अमात्ये

करोतीति व्यङ्ग्यति=अद्गहीनान् करोति । ' विद्तेइ ' इति पाठे विरुर्वयति छिनत्ति इत्यर्थो बोध्य । तत्प्रकारमाह-अप्येकेपा=केपाचिद्वृत्पन्नाना पुत्राणा हस्ताङ्गुली- छिनत्ति, अप्येकेपा=केपाचित् गालाना हस्ताङ्गुष्ठान् छिनत्ति । एव पादाङ्गुलिकाः पादाङ्गुष्ठान् अपि, एव ' कण्णसकुलीए वि ' कर्णशङ्कुलीरपि=कर्णानपि तथा नासा- पुटानि च ' फालेइ ' पाटयति=छिनत्ति, इत्यर्थ । अनेन प्रकारेण एव कनकरथो राजा गालानाम् ' अगमगाड ' अद्गानि अगानि मर्गापद्गानि व्यङ्ग्यति=छिनत्ति । तत खलु अनेन प्रकारेण समुत्पन्नाना पुत्राणा विनाशानन्तरम् ' तीसे ' तस्याः कनकरथस्य राज्याः पद्मावत्या देव्या अन्यदा ' पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि ' पूर्वराजापरराजकालमयै=राज्ञेः पश्चिमे भागे अयमेतद्रूप आ यात्तिकः=आत्मगतो

उत्पन्न हुए अपने पुत्रों को अगहीन कर देता । (अप्पेगइयाण हत्थ गुलियाओ छिदइ, अप्पेगइयाण हत्थगुट्टण, छिदइ, एव पायगुलियाओ पायगुट्टण वि कन्नमन्कुलीए वि, नासापुडाइ फालेइ, अगमगाइ वियगेइ) किननेक गालकों के वह हाथों की अगुलियों को छेद देता था, किननेक घात्रकों के हाथों के अगुठों को-काट देता था, इसी तरह वह पैरों की अगुलियों को पैरों के अगुठों को, कानों को नासा पुटों को छेद देता था । इस तरह यह कनकरथ राजा गालकों के अंगों का भगकर देता था । (तएण तीसे पाउमावईए देवीए अन्नया पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि अयमेयाख्वे अज्जत्थिए ५ समुप्पज्जित्था) इस प्रकार समुत्पन्न पुत्रों के विनाश के बाद उस कनकरथ राजा की रानी पद्मावती देवी के किसी एक समय रात्रि के पश्चिम भाग में यह इस प्रकार का आयात्तिक याचन् मनोगत सकल्प उत्पन्न

(अप्पेगइयाण हत्थगुलियाओ छिदइ अप्पेगइयाण हत्थगुट्टण छिदइ, एव पायगुलियाओ पायगुट्टण वि कन्नमन्कुलीए वि, नासापुडाइ फालेइ, अगमगाइवियगेइ)

केटलाक भाण्डोनी ते डायोनी आगणीओ कपावी न भावतो डतो, केटलाक भाण्डोना डायोना अगुडोओ कपावी न भावतो डतो, आ रीने ते पगोनी आगणीओने, पगोना अगुडोओने, डानोने, नाउने कपावी न भावतो डतो आभ ते कनकरथ राज्ञे भाण्डोना अगोनु ते डेहन कपावी न भावतो डतो ।

(तएण तीसे पाउमावईए देवीए अन्नया पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि अयमेयाख्वे अज्जत्थिए ५ समुप्पज्जित्था)

आ प्रभावे अन्नेला पुत्रोना विनाश पत्री ते कनकरथ राज्ञी राक्षी पद्मावती देवीने डोर्ध ओक समये रात्रिना छेत्ता पडोरभा आ नतने आध्यात्मिक याचन् मनोगत सकल्प उत्पन्न थयो के—

वेमाणीए विहरित्तए तिकहुए एव सपेहेइ, संपेहित्ता तेयलि-
पुत्त अमच्च सदावेइ, मदावित्ता एव वयासी एव खलु देवा-
णुप्पिया । कणगरहे राया रज्जे य जाव वियगेइ, त जइ णं
अहं देवाणुप्पिया । दारगं पयायामि । तएण तुम देवाणु-
प्पिया । कणगरहस्स रहस्सियं चैव अणुपुब्बेणं सारक्खे-
माणे सगोवेमाणे सवड्ढेहि । तएणं से दारए उम्मुक्कत्राल-
भावे जोब्बणगमणुप्पत्ते तव य मम य भिक्खाभायणं
भविस्सइ । तएण मे तेयलिपुत्ते पउमावर्डए एयमट्ट पडि-
सुणेइ, पडिसुणित्ता पडिगए ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । तत्. खलु स कनकरथो राजा राज्ये च=राष्ट्रे
च=देशे वले=सैन्ये च, राहने=अश्वदिपु च कोशे=भाण्डारे च धान्यादीना
कोष्ठागारे च अन्तःपुरे च, ‘मुच्छिउए’ मुच्छित्तः=मोह प्राप्त, गृद्ध=आसक्तः
ग्रथितः=विशेषेणासक्त, अध्युपपन्न=सर्वथा तत्परायण, जाए २=जातान् २=
उत्पन्नान् २ पुत्रान् ‘वियगेइ’ व्यङ्गयति=विगतानि अङ्गानि येषा तान् व्यङ्गान्

‘तएण से कणगरहे राया’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से कणगरहे राया रज्जे य रट्टे य वले य
वाहणे य कोसे य कोष्ठागारे य अतेउरे य मुच्छिउए ४) वह कनकरथ
राजा राज्य में राष्ट्र में सैन्य में अश्वदि वाहन में, धान्यादिकों के
कोष्ठागार में एव अन्तःपुर में मुच्छित्त गृद्ध अ यत् अनुरक्त एव
अध्युपपन्न—सर्वथा तत्परायण बन गया । सो (जाए पुत्ते वियगेइ)

तएण से कणगरहे राया इत्यादि—

(तएण) त्थारभाइ

टीकार्थ—(से कणगरहे राया रज्जेय रट्टे य वले य वाहणे य कोष्ठागारे य
अतेउरे य मुच्छिउए ४)

ते कनकरथ राजा राज्य सैन्यमा, राष्ट्रमा, सैन्यमा, अश्व वगेरे वाह
नामा, धान्य वगेरेनी भाण्डतमा, कोष्ठागारमा अने रणुवासमा मूर्च्छित, गृद्ध,
धयो न आसक्त अने अध्युपपन्न अ पूर्णपणे तत्पर बर्ध गयो अथी (जाए
पुत्त वियगेइ) ते न-मेजा पीताना पुत्राने अ गडीत गनापी हेतो

‘अणुपुत्रेण’ आनुपूर्व्येण=यथाक्रमम् सरक्षन् भूतदृष्ट्यादितः सगोपायन् भूपकृतो पद्रवात् त दारक ‘सत्रङ्केड’ सत्रङ्केड, तस्य गालस्य वृद्धिमुपनय । ततः खलु स दारक ‘उम्मुक्कगालभावे’ उन्मुक्तगालभाव =उन्मुक्त परित्यक्तो गालभावो वाल्त्व येन स, ‘जोव्वणगमणुप्पत्ते’ यौवनक्रमनुभात् =प्राप्ततारुण्यः तव मम च

ण सारस्त्रेमाणे सगोवेमाणे सत्रङ्केहि । तएण से दारए उम्मुक्कगाल भावे जोव्वणगमणुप्पत्ते तव य मम य भिक्खाभायण भविस्सइ तएण से तेयलिपुत्ते पउमावडए एयमद्व पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता पडिगए) तो यदि मेरे यहां पुत्र उत्पन्न होता है—मैं पुत्र को उत्पन्न करती हूँ— तो मुझे यही योग्य है कि मैं राजा कनकरथ को खबर न पड़े इस रूप से उसकी रक्षा करूँ—उनकी दृष्टि से—उसे बचाकर रखूँ—ऐसा उसने मन से विचार किया । विचार कर फिर उसने अमात्य तेतलिपुत्र को बुलाया—बुलाकर उस से ऐसा कहा—हे देवानुप्रिय ! कनकरथ राजा राज्य आदि में इतना अधिक मूर्च्छित गृह—अत्यंत अनुप्रेत एव अध्युपपन्न बना हुआ है जो वह उत्पन्न हुए बालक को अग हीन कर देता है—उनके हाथों की अंगुलियों आदि अङ्गों को काट देता है । तो हे देवानुप्रिय ! यदि मैं पुत्र को उत्पन्न करती हूँ तो देवानुप्रिय तुम उसे राजा को खबर न पड़े इस रूप से रक्षित करते हुए और उनकी दृष्टि से बचाते हुए क्रमशः वृद्धिगत करो । जब वह बालक—क्रमशः सवर्द्धित होता हुआ बाल्यावस्था से रहित होकर यौवनावस्था वाला बन जायगा

माणे सगोवेमाणे सत्रङ्केहि । तएण से दारए उम्मुक्क गालभावे जोव्वणगमणु पत्ते तव य मम य भिक्खाभायण भविस्सइ तएण से तेयलिपुत्ते पउमावडए एयमद्व पडिसुणेइ पडिसुणित्ता पडिगए)

हुवे मने पुत्र उत्पन्न थवानो ज छे, तो मने जोज थोग्य लागे छे के कनकरथ राजने भणर पडे नडि ते रीते भाणकनी रक्षा करे तेमनी कुदृष्टिथी तेने अथापु आ प्रभावे तेवे मनमा विचार करी विचार करीने तेवे अमात्य तेतलिपुत्रने गोलाथी अने गोलाथीने तेने उहु के छे देवानुप्रिय ! राज कनकरथ राज्य वगेरेना काममा आटली भधा मूर्च्छित, गृह—भूषण आसकत अने अध्युपपन्न थर पडथे छे के ते जन्मेला भाणकेना अगे कपावी नाथे छे तेमना डायोनी आगणीओ वगेरे अगोने कपावी नाथे छे जे छे देवानुप्रिय ! हु पुत्रने जन्म थापु तो देवानुप्रिय तमे राजने भणर पडे नडी तेमे तेमनी कुदृष्टिथी भाणकनी रक्षा करता तेनु लरथु—पोपथु करणे, जे ते

विचारो यावत् मनोगत सत्त्वः, 'सगुण्यजित्था' मगुण्यत्त । सत्त्वप्रकार
माह—'एव खलु' इत्यादि—एव खलु कनकरथो राजा राज्ये च यावत् व्यङ्गयति ।
यावत् अङ्गानि अङ्गानि व्यङ्गयति जनेन प्रकारेण कृत्स्नतमारेण मारयति । तद्यदि
खलु अह दारु 'पयायामि' प्रजनयामि, सेय खलु मम त दारु कणगरहस्स
रहस्सिय चैव सारक्खेमाणीए सगोवेमाणीए विहरित्ते' श्रेय. खलु मम त दारु
कनकरथस्य 'रहस्सिय चैव' रहस्सियकमेव=गुणमेव आपद सरान्त्या 'सारख
माणीए' सरक्खन्त्या. भूपट्टपादे', 'सगोवेमाणीए' सगोपायन्त्या भूपट्टोप-
द्रवात् विहरिषुं, 'चित्ठु' इति कृत्वा=इति मनसि कृत्वा एव सपेक्षते=एव
विचारयति सपेक्ष=विचार्य तैतलिपुत्रममात्य प्रान शब्दयति, शब्दयित्वा
एवमवदत्—एव खलु देवानुप्रिय ! कनकरथो राजा 'रज्जेय जाव वियगेइ'
राज्ये च यावद् व्यङ्गयति=राज्यादिषु च मूर्च्छितो जातान पुत्रान् विकृताङ्गान्
करोति एव तेषामङ्गोपाङ्गानि खण्डयति । जनया रीत्या पुत्रान्मारयति, तद्यदि खलु
अह देवानुप्रिय ! दारु प्रजनयामि । तव खलु त्व कनकरथस्य रहस्सियकमेव

हुआ—(एव खलु कणगरहे राया रज्जे य जाव पुत्ते वियगेइ, जाव अङ्ग
मगाइ वियगेइ) यह कनकरथ राजा राज्य आदिमें मूर्च्छित गृह, अत्य-
न्त अनुरक्त एव अभ्युपपन्न अत्यन्त तत्पर वनकर पुत्रों को काट देता
हैं—बुरी तरह से उन्हें मार डालता है (त जइ अह दारु पयायामि,
सेय खलु मम त दारु कणगरहस्स रहस्सिय चैव सारक्खेमाणीए
सगोवेमाणीए विहरित्ते त्ति कट्टु एव सपेहेइ, सपेहित्ता, तेयलिपुत्त
अमच्च सदावेइ, सदाचित्ता एव वयासी—एव खलु देवाणुप्पिया ! कण
गरहे राया रज्जे य जाव वियगेइ त जइण अह देवाणुप्पिया ! दारुगं-
यायामि, तएण तुम देवाणुप्पिया ! कणगरहस्स रहस्सिय चैव अणुपुब्बे

(एव खलु कणगरहे राया रज्जे य जाव पुत्ते वियगेइ, जाव अङ्ग मगाइ वियगेइ)
कनकरथ राजा राज्ये च यावत् व्यङ्गयति अङ्गानि अङ्गानि व्यङ्गयति जनेन प्रकारेण कृत्स्नतमारेण मारयति । तद्यदि
खलु अह दारु 'पयायामि' प्रजनयामि, सेय खलु मम त दारु कणगरहस्स रहस्सिय चैव सारक्खेमाणीए
सगोवेमाणीए विहरित्ते त्ति कट्टु एव सपेहेइ, सपेहित्ता, तेयलिपुत्त अमच्च सदावेइ, सदाचित्ता एव वयासी—एव खलु देवाणुप्पिया ! कण
गरहे राया रज्जे य जाव वियगेइ त जइण अह देवाणुप्पिया ! दारुगं-यायामि, तएण तुम देवाणुप्पिया ! कणगरहस्स रहस्सिय चैव अणुपुब्बे

(त जइ अह दारु पयायामि, सेय खलु मम त दारु कणगरहस्स रह-
स्सिय चैव सारक्खेमाणीए सगोवेमाणीए विहरित्ते चित्ठु एव सपेहेइ, सपेहित्ता
तेयलिपुत्त अमच्च सदावेइ, सदाचित्ता एव वयासी—एव खलु देवाणुप्पिया !
कणगरहे, राया रज्जे य जाव वियगेई त जइण अह देवाणुप्पिया ! दारु पया
यामि, तएण तुम देवाणुप्पिया ! कणगरहस्स रहस्सिय चैव अणुपुब्बेण सारक्खे-

‘अणुपुत्रेण’ आनुपूर्व्येण=यथाक्रमम् सरक्षन् भूयत्प्रयादिनः सगोपायन् भूपकृतो पद्रवात् त दारक ‘सर्वद्वेड’ सर्वद्वय, तस्य बालस्य वृद्धिमुपनय । ततः खलु स दारक ‘उन्मुक्तबालभावे’ उन्मुक्तबालभाव=उन्मुक्त परित्यक्तो बालभावो बालत्व येन स, ‘जोव्वणगमणुप्पत्ते’ यौवनमनुमाप्त=प्राप्ततारूप्य. तत्र मम च

ण सारकखेमाणे सगोवेमाणे सर्वद्वेहिं । तएण से दारए उन्मुक्कबाल भावे जोव्वणगमणुप्पत्ते तत्र य मम य भिक्खाभायण भविस्सइ तएण से तेयलिपुत्ते पउमावडए एयमद्व पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता पडिगए) तो यदि मेरे यहां पुत्र उत्पन्न होता है—मैं पुत्र को उत्पन्न करती हूँ—तो मुझे यही योग्य है कि मैं राजा कनकरथ को खर न पड़े इस रूप से उसकी रक्षा करूँ—उनकी दृष्टि से—उसे बचाकर रखूँ—ऐसा उसने मन से विचार किया । विचार कर फिर उसने अमात्य तैत्तिरीयपुराण को बुलाया—बुलाकर उस से ऐसा कहा—हे देवानुप्रिय ! कनकरथ राजा राज्य आदि में इतना अविकसृष्टित गृह—अत्यंत अनुरक्त एव अद्युपपन्न बना हुआ है जो वह उत्पन्न हुए बालको को अग हीन कर देता है—उनके हाथों की अगुलियों आदि अङ्गों को काट देता है । तो हे देवानुप्रिय ! यदि मैं पुत्र को उत्पन्न करती हूँ तो देवानुप्रिय तुम उसे राजा को खर न पड़े इस रूप से रक्षित करते हुए और उनकी दृष्टि से बचाते हुए क्रमशः वृद्धिगत करो । जब वह बालक—क्रमशः सर्वद्वित होता हुआ बाल्यावस्था से रहित होकर यौवनावस्था वाला बन जायगा

माणे सगोवेमाणे सर्वद्वेहिं । तएण से दारए उन्मुक्कबालभावे जोव्वणगमणुप्पत्ते तत्र य मम य भिक्खाभायण भविस्सइ तएण से तेयलिपुत्ते पउमावडए एयमद्व पडिसुणेइ पडिसुणित्ता पडिगए)

इसे मने पुत्र उत्पन्न थवानो व छे, तो मने ओव्व योग्य लागे छे के कनकरथ राजने भणर पडे नडि ते रीते भाणवनी रक्षा कर तेमनी कुदृष्टिथी तेने अथावु आ प्रभावे तेखे मनमा विचार कर्यो विचार वनीने तेखे अमात्य तैत्तिरीयपुराणे जोलाव्यो अने जोलावीने तेने उहु के छे देवानुप्रिय ! राज कनकरथ राज्य वगेरेना राममा आटलो णथो भूद्विगत, गृह—भूषण आसकत अने अद्युपपन्न थउ पउथो छे के ते वन्नेदा भाणवना अगो कपावी नाणे छे तेमना हाथेनी आगणीओ वगेरे अगोने कपावी नाणे छे के छे देवानुप्रिय ! इ पुत्रने वन्म आपु तो देवानुप्रिय तमे राजने भणर पडे नडि तेम तेमनी कुदृष्टिथी भाणवनी रक्षा करता तेनु लखु—पोषण करणे, के ते

'भिक्षाभाषण' भिक्षाभाषणम्=भिक्षाया आशारभूतो भक्तिपति । ततः खलु स तेतलिपुत्र पद्मावत्याः एवमर्थं प्रतिशृणोति=स्वीकरोति, प्रतिश्रुत्य=स्वीकृत्य पद्मावत्या समीपात् प्रतिगत स्वगृहे गतवान् ॥ मृ० ५ ॥

मूलम्—तएण पउमावई य देवी पोट्टिला य अमच्ची सयमेव गव्भं गिण्हइ, सयमेव परिवहइ । तएण सा पउमावई नवण्ह मासाणं जाव पियदत्तणं सुख्ख दारग पयाया, ज रयणि च णं पउमावई दारय पयाया तं रयणि च ण पोट्टिला वि अमच्ची नवण्ह मासाणं विणिहायमावन्न दारिय पयाया । तएणं सा पउमावई देवी अम्मधाइ सदावेइ सदावित्ता एव वयासी—गच्छह णं तुमे अम्मो । तेतलिगिहे तेतलिपुत्तं अमच्च रहस्सियं चेव सदावेह । तएणं सा अम्मधाई तहत्ति पाडिसुणेइ, पाडिसुणित्ता अंतेउरस्स अवहारेण णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता, जेणेव तेतलिस्स गिहे जेणेव तेतलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव एव वयासी—एव खलु देवाणुप्पिया । पउमावई देवी सदावेइ । तएणं तेतलिपुत्तं अम्मधाई ए अतिए एयमद्व सोच्चा हट्टुट्टे अम्मधाई ए सद्धि साओ गिहाओ णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता अंतेउरस्स अवहारेण रहस्सियं चेव अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता जेणेव पउमावई देवी तेणेव

तो हमारे तुम्हारे दोनों के लिये भिक्षा पात्र-भिक्षा का आधार भूत-बन जायगा इम-प्रकार पद्मावती के इस कथन रूप अर्थ को उस तेत लिपुत्र अमात्यने स्वीकार कर लिया । और स्वीकार करके फिर वह पद्मावती देवी के पास से अपने घर पर चला आया ॥ सू० ४ ॥

भाणक आधरे मोटे थुं जशे अने भयपणु पटावीने लुवान थुं जशे तो भास अने तभास भनेने माटे लिक्षापात्र लिक्षानो आधारभूत थुं जशे आ रीते पद्मावतीना आ कथन इय अर्थने ते तेतलिपुत्र अमात्ये स्वीकार करीने ते पद्मावती देवीनी पासैथी विदाय लधने पोताने घर आवी गथे ॥ सू ४

उवागए करयलपरिग्गहियं दसणह सिरसावत्तं मत्थए अंजलि
 कट्टु एवं वयासी-सदिसत्तु णं देवाणुप्पिया । ज मए कायव्वं ?
 तएणं पउमावर्डं तैत्तलिपुत्त एवं वयासी-एवं खल्लु कणगरहे
 राया जाव वियगेइ, अहं च णं देवाणुप्पिया । दारग पयाया
 त तुम णं देवाणुप्पिया । एयं दारग गेणहाहि जाव तव मम
 य भिक्खाभायणे भविस्सइ त्तिऋट्टु तैत्तलिपुत्तं दलयइ । तएणं
 तैत्तलिपुत्ते पउमावर्डंए हत्थाओ दारग गेणहइ गिणहत्ता उत्त-
 रिज्जेणं पिहेइ, पिहित्ता अतेउरस्स रहस्सियं अवदारेणं गिग्गच्छइ,
 गिग्गच्छित्ता, जेणेव सये गिहे जेणेव पोट्टिला भारिया, तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोट्टिल एव वयासी-एवं खल्लु देवा-
 णुप्पिया । कणगरहे राया रज्जे य जाव वियगेइ, अय च णं दारए
 कणगरहस्सपुत्ते पउमावर्डंए अत्तए, त ण तुम देवाणुप्पिया ।
 इम दारग कणगरहस्स रहस्सिय चेव अणुपुठ्वेणं सारक्खाहि
 य सुगोवाहि य सवड्ढेहि य । तएणं एस दारए उमुक्कवालभावे
 तव य मम य पउमावर्डंए य आहारे भविस्सइ त्ति कट्टु पोट्टि-
 लाए पासे णिक्खिवइ, णिक्खिवित्ता, पोट्टिलाओ पासाओ विनि-
 हायमावन्निय दारिय गेणहइ, गेणहत्ता उत्तरिज्जेण पिहेइ, पिहित्ता
 अतेउरस्स अवदारेण अणुप्पविसइ अणुप्पविसित्ता जेणेव पउ-
 मावर्डं देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पउमावर्डंए देवीए
 पासे ठावेइ, ठावित्ता जाव पडिणिग्गए । तएण तीमे पउमा-
 वर्डंए अगपरियारियाओ पउमावर्डं देवि विणिहायमावन्न च

'भिक्षाभाषण' भिक्षाभाननम्=भिक्षाया आगारभूतो भक्षिपति । ततः खलु स तेतलिपुत्र पद्मावत्या. एकमर्थं प्रतिभृणोति=भ्रूरोति, प्रतिश्रुत्य=स्वीकृत्य पद्मावत्या समीभात् प्रतिगत स्वग्रहे गनयान् ॥पृ० ८॥

मूलम्—तएणं पउमावई य देवी पोट्टिला य अमच्ची सयमेव गब्भं गिण्हइ, सयमेव परिवहइ । तएण सा पउमावई नवण्ह मासाणं जाव पियदसणं सुख्खं दारग पयाया, ज रयणि च णं पउमावई दारय पयाया त रयणि च ण पोट्टिला वि अमच्ची नवण्ह मासाण विणिहायमावन्न दारिय पयाया । तएणं सा पउमावई देवी अम्मधाइं सदावेइ सदावित्ता एव वयासी—गच्छह ण तुमे अम्मो । तेतलिगिहे तेतलिपुत्त अमच्च रहस्सियं चैव सदावेह । तएण सा अम्मधाइं तहत्ति पाडिसुणेइ, पाडिसुणित्ता अतेउरस्स अवहारेण णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता, जेणेव तेतलिस्स गिहे जेणेव तेतलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव एव वयासी—एव खलु देवाणुप्पिया । पउमावई देवी सदावेइ । तएण तेतलिपुत्त अम्मधाइं ए अंतिए एयमट्ठ सोच्चा हट्टुट्टे अम्मधाइं ए सद्धि साओ गिहाओ णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता अतेउरस्स अवहारेण रहस्सियं चैव अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता जेणेव पउमावई देवी तेणेव

तो हमारे तुम्हारे दोनों के लिये भिक्षा पात्र—भिक्षा का आधार भूत— बन जायगा इस—प्रकार पद्मावती के इस कथन रूप अर्थ को उस तेत लिपुत्र अमांत्यने स्वीकार कर लिया । और स्वीकार करके फिर वह पद्मावती देवी के पास से अपने घर पर चला आया ॥ सू० ४ ॥

भाषक आपरे मोटे थर्ड जशे अने अथपणु वटावीने लुवान थर्ड जशे तो भारा अने तभारा अनेने माटे लिक्षापात्र लिक्षानो आधाग्लूत थर्ड जशे आ रीते पद्मावतीना आ कथन इप अर्थने ते तेतलिपुत्र अमात्ये स्वीकार करीने ते पद्मावती देवीनी पासैथी निदाय लधने पोताने घर आवी गथे । सू ४

उवागए करयलपरिग्गहियं दसणह सिरसावत्त मत्थए अंजलि
 कट्टु एव वयासी-सदिसत्तु णं देवाणुप्पिया । ज मए कायव्वं ?
 तएणं पउमावई तैत्तलिपुत्त एवं वयासी-एव खल्लु कणगरहे
 राया जाव वियगेइ, अहं च ण देवाणुप्पिया । दारग पयाथा
 त तुम णं देवाणुप्पिया । एय दारग गेणहाहि जाव तव मम
 य भिक्खाभायणे भविस्सइ त्तिक्कट्टु तैत्तलिपुत्तं दलयइ । तएणं
 तैत्तलिपुत्ते पउमावईए हत्थाओ दारग गेणहइ गिणहत्ता उत्त-
 रिज्जेणं पिहेइ, पिहित्ता अतेउरस्स रहस्सिय अवदारेणं गिग्गच्छइ,
 गिग्गच्छित्ता, जेणेव सये गिहे जेणेव पोट्टिला भारिया, तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोट्टिल एव वयासी-एवं खल्लु देवा-
 णुप्पिया । कणगरहे राया रज्जे य जाव वियगेइ, अय च णं दारए
 कणगरहस्सपुत्ते पउमावईए अत्तए, त ण तुम देवाणुप्पिया ।
 इम दारग कणगरहस्स रहस्सियं चैव अणुपुव्वेण सारक्खाहि
 य सगोवाहि य सवड्ढेहि य । तएणं एस दारए उमुक्कवालभावे
 तव य मम य पउमावईए य आहारे भविस्सइ त्ति कट्टु पोट्टि-
 लाए पासे णिक्खिवइ, णिक्खिवित्ता, पोट्टिलाओ पासाओ विन्नि-
 हायमावन्निय दारिय गेणहइ, गेणहत्ता उत्तरिज्जेण पिहेइ, ~~पिहेइ~~
 अतेउरस्स अवदारेण अणुप्पविसइ अणुप्पविमिन्ना ~~अणुप्पविमिन्ना~~

दारिय पासति, पासिता जेणेव कणगरह राया तेणेव उवाग
 च्छति उवागच्छिता ऋयलपरिगहिय दमनह सिगसावत्तं म-
 त्थेण अजलि कट्टु एव वयासी एव खलु सामी । पउमावई
 देवी मइल्लियं दारियं पयाया । तण्णं कणगरहे राया तीसे
 मइल्लियाए दारियाए नीहरण करेइ, वट्टणि लोइयाइं मयाकि-
 च्चाइ करेइ करिता कालेण विगयसाए जाए । तएण से तेत-
 लिपुत्ते कोडुवियपुरिसे सहावेइ, सहावित्ता, एव वयासी-खिप्पा-
 मेव चारगसोहण जाव ठिडवडिय, जम्हाण अम्ह एस दारए
 कणगरहस्स रजे जाए, त होउ ण दारए, नामेण कणगज्जए
 जाव भोगसुमत्थे जाए ॥ सू० ५ ॥

टीका—‘तएण’ इत्यादि । तत खलु पद्मावती च देवी पोट्टिला च अमात्या
 सममेव गर्भं शृणाति, सममेव गर्भं परिग्रहति=धारयति । तत खलु सा पद्मावती
 ‘नवण्ह मासाण जाव’ नवाना मासाना नयु मासेसु व्यतीतेषु यावत् सत्थु
 ‘पियदसण’ पियदर्शनम्=पिय चेतोहर दर्शनमवलोकन यस्य त = दर्शकजन-
 चेतोहादनकरु सुरूप दारक ‘पयाया’ प्रजाता=प्रजनितवती । यस्या रजन्या च

‘तएण पउमावई य देवी’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (पउमावई य देवी पोट्टिलाय अमच्ची
 सयमेव गर्भं शृणह) पद्मावती देवी और पोट्टिला अमात्या ने साथ ही
 गर्भ धारण किया । (तएण सा पउमावई नवण्ह मासाण जाव पियद
 सण सुरूव दारग पयाया) पद्मावती देवी ने जब नौ मास अच्छी तरह
 गर्भ के समाप्त हो चुके तब दर्शकजन चित्ताह्लाद जनक अच्छे रूप
 शाली पुत्र को जन्म दिया । (ज रयणि च ण पउमावई दारय पयाया

‘तएण पउमावई य देवी’ इत्यादि—

टीकार्थ—तएण) त्पारपथी (पउमावई य देवी पोट्टिला य अमच्ची सयमेव गर्भं
 शृणह) पद्मावती देवी अने पोट्टिला अमात्याके साथे साथे न गर्भधारण कथे
 (तएण सा पउमावई नवण्ह मासाण जाव पियदसण सुरूव दारग पयाया)
 न्यारे नव मास सारी रीते पसार धर गया त्पारे पद्मावती देवीके
 जेनाशके जेधने प्रसन्न धर जय जेवा इपाणा पुत्रने जन्म आपये।

खलु पद्मावती दारु प्रजाता तस्या रजन्या च खलु पोट्टिकापि अमात्यी ' नवण्ड-
मासाण ' नवाना मासानाम्=नवसु मासेषु व्यतीतेषु ' विणिहायमावन्न ' विनि-
घातमापन्नाम्=मृताम् दारिका प्रजाता=जनितवती । ' तएण ' तत्र खलु पुत्रजन्मा
नन्तर सा पद्मावती देवी अम्भधात्रीं शब्दयति, शब्दयित्वा एवमपद्-गच्छत
खलु यूयमम्भ ! ' तेतलिगिहे ' तेतलिगृहे=तेतलेरमात्यस्य गृहे तेतलिपुत्रसमात्य
रहस्विकम्=अन्यैरपरिज्ञातमेव शब्दयत=आह्वयत । ततः खलु सा अम्भधात्री तत्रेति
प्रतिश्रुति,=अङ्गीकरोति, प्रविश्रुत्य अन्त पुरस्य ' अवदारेण ' अपद्वारेण=पृष्ठ-
द्वारेण निर्गच्छति, निर्गत्य, यत्रैव तेतलेष्टुम्, यत्रैव तेतलिपुत्रस्तत्रैव उपा-
गच्छति, उपागत्य करतल यानद् अञ्जलिपुट कृत्वा एवमवादीत्-एवं खलु हे

त रयणिं च ण पोट्टिलावि अमची नवण्ड मोसाण विणिहायमावन्नं
दारिय पयाया) जिस रात्रि मे पद्मावती देवी ने पुत्र को जन्म दिया था
उसी रात्रि में पोट्टिला अमात्यी ने भी नौ मास व्यतीत हो जाने पर
एक मरी हुइ कन्या को जन्म दिया (तएण सा पउमावई अम्मवाय
सहावेह, सहावित्ता एव वयासी गच्छह ण तुमे अम्मो ! तेतलिगिहे
तेतलीपुत्त अमच्च रहस्सिय चेव सहावेह) हम के बाद उस पद्मावती
ने अम्भधात्री को बुलवाया और बुलवाकर उससे ऐसा कहा हे अम्म !
तुम तेतलि अमात्य के घर पर जाओ । और किसी को पत्ता न पड़े
इस रूप से तुम तेतलि पुत्र अमात्य को बुला लाओ । (तएण सा अ-
म्मवाई तहत्ति पडिसुणेह पडिसुणित्ता अतेउरस्स अवदारेण णिग्ग-
च्छह णिग्गच्छित्ता जेणेव तेतलिस्सगिहे जेणेव तेतलिपुत्ते तेणेव उवा-
गच्छह, उवागच्छित्ता करयल जाव एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया

(ज रयणिं च ण पउमावई दारय पयाया त रयणिं च ण पोट्टिला वि अमची
नवण्ड मासाण विणिहायमावन्न यारिय पयाया)

जे रात्रिजे पद्मावती देवीजे पुत्रने जन्म आये। ते ज रात्रिजे पोट्टिला
अमात्यीजे पणु नव मास पूण यवाथी जेउ भरेली कन्याने जन्म आये।

(तएण सा पउमावई अम्मवाय सहावेह, सहावित्ता एव वयासी गच्छह ण
तुमे अम्मो ! तेतलिगिहे तेतलिपुत्त अमच्च रहस्सिय चेव सहावेह)

त्यापधी ते पद्मावतीजे अम्भधात्रीने जोलावी अने जोलावाने तेने
आ प्रभाजे इहु डे डे अण ! तमे तेतलि अमात्यने घर आये अने डोठने
अपर पडे नहि तेम तेतलिपुत्र अमात्यने तमे अहाँ जोलावी लावे।

(तएण सा अम्मवाई तहत्ति पडिसुणेह, पडिसुणित्ता अतेउरस्स अवदारेण
णिग्गच्छह णिग्गच्छित्ता जेणेव तेतलिस्सगिहे जेणेव तेतलिपुत्ते तेणेव उवा-

देवानुप्रिय ! पद्मावती देवी भवन्त गच्छति । ततः गच्छु तेतलिपुत्रः ' अवधारण
अतिण ' अम्भधात्र्या भन्तिरे=अम्भधात्र्याः मन्नाशात् एतमथं श्रुत्वा हृष्टतुष्टोऽम्भ
धात्र्या साद्धं स्वकाद् गृहाद् निर्गच्छति, निर्गत्य अन्तपुरस्य अपद्वारेण रहस्विक-
मेव=प्रच्छन्नमेव अनुमतिशक्ति, अनुमतिशय, यत्रैव पद्मावती देवी तत्रैव ' उवागए'
उवागतः=समाप्तः करयलपरिगृहीत दशनख शिरसावर्त मन्तकेऽञ्जलि कृत्वा एवं=
वक्ष्यमाणप्रकारेण अयदत्-' सदिसतु ' सदिसतु=आत्तापयतु रातु हे देवानुप्रिये !

पउमावई देवी सद्वावेइ । तण्ण तेतलिपुत्ते अम्भधाईण अंतिण एयमइ
सोच्चा इट्ट तुट्टे अम्भधाईण मद्धि साओ गिहाओ णिगच्छइ) पद्मा
वती देवी के इस प्रकार वचन सुनकर उस अम्भधात्री ने तथेति
'कह कर उसकी आज्ञा को स्वीकार कर लिया । स्वीकार कर के फिर
वह अतः पुर के अपठार से-पीठे के दरवाजे से बाहिर निकली-निकल
कर जहाँ तेतलि का घर और उसमें भी जहाँ तेतलिपुत्र था वहाँ गई।
वहाँ जाकर पहिले उसने तेतलिपुत्र अमात्य को दोनों हाथ जोड़ कर
नमस्कार किया-वाद में योली-हे देवानुप्रिय ! आपको पद्मावती देवी
बुला रही हैं । अम्भधात्री के मुख से इस प्रकार वचन सुन कर व
तेतलि पुत्र हर्षित एव तुष्ट होता हुआ अम्भधात्री के साथ ही अपने
घर से निकला । (णिगच्छित्ता अतेउरस्स अवदारेण रहस्सि य चेव
अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता जेणेव पउमावई देवी तेणेव उवागए
करयलपरिगहिय दसणह सिरसावत्त मत्थए अजलि कट्टु एव वया

गच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव एव वयासी-एव खलु देवानुप्पिया ! पउमावई
देवी सद्वावेइ । तण्ण तेतलिपुत्ते अम्भधाईण अतिण एयमइ सोच्चा इट्टुट्टे अम्भ
धाईण मद्धि साओ गिहाओ णिगच्छइ)

आ रीते पद्मावती देवीनी वात सालणीने अ भधात्रीणे ' तथेति ' (साइ)
आम कहीने तेमनी आसा स्वीकारी लीधी स्वीकारीने ते रणुवासना पाछला
भारखेथी भडार नीउणी अने नीकणीने न्या तेतलिपुत्रनु घर अने तेमा पछ
न्या तेतलिपुत्र अमात्य डता त्या पडोथी त्या पडोथीने तेखे सी पडोला
अने हाथ जोडीने तेतलिपुत्रने नमस्कार कर्था अने त्यारपछी तेखे कथु के डे
देवानुप्रिय ! तमने पद्मावती देवी गोलावे छे अ भधात्रीना सुभथी आ नतनी
वात सालणीने तेतलिपुत्र हर्षित तेमए सतुष्ट थतो अ भधात्रीनी साथे
साथे ए ते पोताना घेरथी रणुवास तरइ रवाना थथे

(णिगच्छित्ता अतेउरस्स अवदारेण रहस्सिय चेव अणुप्पविसइ अणुप्प
विसित्ता जेणेव पउमावई देवी तेणेव उवागए, , , , , -दमणइ सिर-

‘ज मए कायव्व’ यन्मया कर्तव्यम्, ततः खलु पद्मावती देवी तेतलिपुत्रमेवमव-
दत् ‘एव खलु कणगरहे राया वियगेइ’ एव खलु कनकरथो राजा व्यङ्ग्यार्त=
हे देवाणुप्रिय ! मया पूर्वमेवकथित-यत्कनकरथ उत्पन्नान्पुत्रान् विकृताऽद्धान्
कृत्वा मारयति । अह च खलु देवानुप्रिय । दारक प्रजाता=प्रजनितवती, ‘त’
तस्मात् कारणात् त्व खलु देवानुप्रिय । एत दारक ष्ठाण यावत् तय च मम च

सी संदिसतु णं देवाणुप्पिया ! जंमए कायव्व ? तएणं पउमावई तेतलि
पुत्तं एव वयासी-एवं ग्वल्लु कणगरहे राया जाव वियगेइ, अह च णं
देवाणुप्पिया दारग पयाया त तुम णं देवाणुप्पिया ! एय दारग गेणहाहि)
चलकर वह अतः पुर के पृष्ठ भाग के द्वार से किसी को आने का पता
न लगे इस रूप से वहा प्रविष्ट हुआ । प्रविष्ट होकर जहाँ पद्मावती देवी
थी वहाँ गया । वहा जाकर उसने दोनों हाथ जिसमें जुडे हुए हैं और
दशौंनख जिसमें हैं ऐसी अजलिको दक्षिण तरफ से घुमाकर बाये
तरफ छेजाकर और मस्तकपर अजलि को रखकर कहा-अर्थात् नम-
स्कार कर पूजा हे देवानुप्रिये ! जो मुझे करने योग्य कार्य है उस के
करने की आप आज्ञा दीजिये । इस के बाद पद्मावती देवी ने तेतलिपुत्र
से इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय ! मैंने तुमसे पहिले ही कह रक्खा है
कि कनकरथ उत्पन्न हुए पुत्रों को विकृत अंग बनाकर मार डालता है ।
और मैंने हे देवानुप्रिय ! पुत्र को उत्पन्न किया है । इसलिये तुम हे देवा-

सावत्त मत्थए अजलिं वट्टु एव वयामी-स दिसतु ण देवाणुप्पिया ! जंमए कर-
णिज्ज तएण परमाणीइ देवी वयामी-एव खलु कणगरहे राया जार वियगेइ अइ
च ण देवानुप्रिया । दारग पयाया त तुम णदेवाणुप्पिया ! एव दारग गेणहाहि)

त्या पडोत्थीने खलुवासना पाछला आरखेथी कोधने अणर पडे नडि तेम
खलुवासना प्रविष्ट थऊ गये । प्रविष्ट थऊने ते न्या पद्मावती देवी छती त्या
पडोत्थे । त्या पडोत्थीने तेखे दृशे नणे । नेमा छे अेवा अने हाथ नेडीने
अजलि अनावीने तेने अमणी आणुथी ईरवीने डणी आणु तरइ लथ अधने
मस्तक उपर अजलि भूडीने आ प्रभाखे कहु-अेटवे नमस्कार करीने पूछ्यु
के-हे देवानुप्रिये ! मारे लायक ने कथ पणु काम होय ते मने कहे । तार
पथी पद्मावती देवीअे तेतलिपुत्रने आ प्रभाखे कहु के हे देवानुप्रिय ।
तमने मे पडेवेथी कही राण्यु छे के राज कनकरथ उत्पन्न थयेदा पुत्रने
अगहीन करी नाणे छे अने हे देवानुप्रिय ! मारे पुत्र थये छे हे देवा-
नुप्रिय ! अे आणकने तमे लथ नये ।

भिक्षाभोजनमपि भिक्षाभोजन, यथा भिक्षाभाजनं जीवनं निर्वाहयति तथाऽयमपि
जीवननिर्वाहको भविष्यति 'चिकटु' इति कृत्वाः इत्युक्त्वा 'तेतलिपुत्र' तेतलि-
पुत्राय प्राकृतत्वाद् द्वितीया ददाति=तेतलिपुत्रस्य हस्ते दारकमर्पयति। ततः खलु
तेतलिपुत्रः पश्चात्त्या हस्ताभ्यां दारकं गृह्णाति, गृहीत्वा उत्तरीयेण=उत्तरीयकलेन
तं 'पिहेइ' पिदधाति=आच्छादयति, 'पिहिता' पिधाय श्रन्तः-पुंस्य 'रहस्सिय'
रहस्सिय=प्रच्छन्न यथा स्पात्तथा अवहारेण निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव स्वकं पुत्र
यत्रैव पोहिला भार्या तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य पोहिलामेवमवादीत्-एव खलु
हे देवानुप्रिये ! कनकरथो राजा राज्ये च यावद् व्यद्वयति स्वपुत्रान् भारयति
अयं च खलु मम हस्तस्थितो दारकं कनकरथस्य पुत्रः पश्चात्त्या आत्मजो मया
ऽत्रानीतः, 'त' तस्मात् कारणात् खलु हे देवानुप्रिये ! इमं दारकं 'कणगरहस्स

नुप्रिये ! इमं बालकं को लेलो (जाव तत्र मम य भिक्षाभायणे भवि
स्सइत्ति कट्टु तेतलिपुत्त दलयइ) यावत् यह हमारे तुम्हारे लिये भिक्षा
का भाजन हो जायगा जिस प्रकार भिक्षा भाजन जीवन निर्वाहक होता
है-उसी तरह यह भी जीवन निर्वाहक होवेगा इस प्रकार कहकर उसने
तेतलिपुत्र के हाथमें अपने पुत्र को दे दिया। (तएण तेतलिपुत्ते पउमा-
वईए हत्थाओ दारग गेण्हइ) तेतलिपुत्र ने भी पद्मावती देवीके हाथसे
बालक को ले लिया। (गिण्हित्ता उत्तरिज्जेण पिहेइ, पिहिता अते उर-
स्सिय रहस्सिय अवहारेण णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव सए गिहे जेणेव
पोहिला भारिया-तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता-पोहिल एव वयासी
एव खलु देवानुप्रिये ! कणगरहे राया रज्जे य जाव वियगेइ, अय

(जाव तत्र मम य भिक्षाभायणे भविस्सइत्तिकट्टु तेतलिपुत्त दलयइ)

अे मारा अने तमारा भाटे ' भिक्षाभाजन ' थये अेट्ठे के नेम भिक्षातु
पात्र लवनने टकावनार डाय छे तेमअ आ भागक पणु लवन निर्वाहक थये
आ प्रभावे कहीने तेवे तेतलिपुत्रना हाथमा पोताना नव जत पुत्रने सोधी दीधा
(तएण तेतलिपुत्ते पउमावईए हत्थाओ दारग गेण्हइ)

तेतलिपुत्रे पणु पद्मावती देवीना हाथमाथी भागक लध वीधु

(गिण्हित्ता उत्तरिज्जेण पिहेइ पिहिता अतेउरस्सिय रहस्सिय अवहारेण
णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव सए गिहे जेणेव पोहिला भारिया-तेणेव उवा-
गच्छइ, उवागच्छित्ता, पोहिल एव वयासी, एव खलु देवानुप्रिये ! कणगरहे
राया रज्जे य जाव वियगेइ, अयं च ण दारकं कणगरहस्सियपुत्ते पउमावईए अस्सए

रहस्मिय चैव ' कनकरथस्य रहस्मिकमेव=कनकरथो यथा न जानीयात्तथैव ' अणु-
पुण्ड्रेण' आनुपूर्व्येण=अनुक्रमेण तत्कृतोपद्रवतश्च 'सारकवाहि य' सरक्ष्य कनकरथनृ-
पदष्टितः संगोपाय च तत्कृतोपद्रवतः, तथा संबद्धेहिय ' सपर्यय च=स्तन्यपानादि
नाऽस्य गालस्य वृद्धिमुपनय । ततः खलु एष दारकः उन्मुक्तगालमावः तत्र च मम
च पद्मावत्याश्च 'आहारे' आधार=आधारस्वरूपो भविष्यति ' तिकट्टु ' इतिकृत्वा

च ण दारए कणगरहस्स पुत्ते पडमावईण अत्तए, त णं तुम दारगं
कणगरहस्स रहस्मियं चैव अणुपुण्ड्रेण सारकवाहि य संगोवाहि य स-
बद्धेहिय) छेकर फिर उसे अपने दुपटे से ढक लिया और ढककर
प्रच्छन्न गुप्तरूप से अतः पुर के पीछे के दरवाजे से बाहर निकल गया ।
निकल कर जहा अपना घर और पोड़िला भार्या थी चहा गया । वहाँ
जाकर उसने पोड़िला भार्या से इस प्रकार कहा-देवानुप्रिये । कनकरथ
राजा राज्य आदि में इतना अधिक मूर्च्छित हो रहा है कि वह उत्पन्न
हुए अपने बालकों को अङ्ग विच्छेद कर मार डालता है । यह जो पुत्र
मेरे हाथ में है वह कनकरथ राजा का पुत्र है यह पद्मावती देवी की
कुक्षि से उत्पन्न हुआ है । इसलिये हे देवानुप्रिये ! तुम इस पुत्र को
कनकरथ को खबर न पड़े इस तरह प्रच्छन्न रूप से क्रमशः रक्षित
करती रहो-पालती रहो उसकी दृष्टि से बचाती रहो और स्तन्यपान
आदि से बढाती रहो । (तएणं एस दारए उन्मुक्कवालभावे तव य

त णं तुम देवानुप्रिया ! इमदारगं कणगरहस्स रहस्मिय चैव अणुपुण्ड्रेण सार-
कवाहि य संगोवाहि य संबद्धेहिय)

लडने तेले जेसमा ढाडी दीधु, अने ढाडीने छुपी रीते रणुवासता पाछला
भारलेथी भडार मीकणी गये। भडारनीउणीने न्या पोतानु धर अने मोट्टिला
'लार्थो छती न्या गये। त्या पडोचीने तेले 'पोट्टिला लार्थोने ज्येभ कड्डु जे-डे
देवानुप्रिये ! राज् कनकरथ राज् वगेरेनी भाभतमा अट्टेला भये। आसकत्त थय
गये छे के ते जन्म पाभेला पोताना भाणजेना अ गेने जपावीने मारी नाप्पे
छे मारा डाथमा जे भाणक छे ते पणु कनकरथ राज्नेना ज पुत्र छे पद्मावती
'देवीना गर्भ'मार्थी आने जन्म थये छे ज्येथी छे देवानुप्रिये ! कनकरथ राज्ने
अणु थाय नडि ते प्रभाले तमे छुपी रीते आ पुत्ररु रक्षणु करता रहे,
पोपणु करता रहे, राज्नी कुदष्टिथी ज्येने इर राभता रहे। ज्येने स्तन्यपान
अट्टे के इध वगेरे भिवडावीने ज्येने भोट्टा करे।

इत्युक्त्या पोद्दिलायाः पार्श्वे 'निशियमः' निशियति=स्थापयति, तथा पोद्दिलायाः पार्श्वत् ता 'विनिहायमावण्ण' विनिहातमापणा=मृतां दारिया गृह्णाति, गृहीत्वा उत्तरीयेण पिदधाति, पिधाय अन्नः पुरस्य अपद्वारेण अनुपमिगति, अनुप्रविश्य यत्रैव पञ्चावती देवी तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य पञ्चरत्याः देव्याः पार्श्वे स्थापयति, स्थापयित्वा तासु 'पडिनिग्गण' प्रतिनिर्गतः प्रतिनिय र्थं स्वगृह

मम य पउमावईए य आहारे भविस्सउत्ति कट्टु पोद्दिलाण पासे णिक्खिवड, णिक्खिवित्ता पोद्दिलाओ पासाओ विनिहायमावण्णियं दारिय गेण्हइ, गेण्हत्ता उत्तरिज्जेणं पिहेइ पिहत्ता, अत्तेउरस्स अवहारेण अणुप्पविसइ) इस तरह क्रमशः वृद्धिगत होना हुआ यह बालक जब बाल्यावस्था से रहित हो जावेगा तो हमारा तुम्हारा और पञ्चावती देवी का आधार होगा, ऐसा कहकर उस तेतलिपुत्र अमात्य ने उस पुत्र को पोद्दिला के पास रख दिया। और पोद्दिला के पास से मरी हुई कन्या को उठा लिया-उठाकर उसे अपने उत्तरियच्छ से ढँक लिया, ढँक कर फिर अतः पुर के पिठले दरवाजे से बहा आया (अणुप्पविसित्ता जेणेव पउमावई देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पउमावईए देवीए पासे ठावेइ, ठावित्ता जाव पडिनिग्गए) बहा आकर जहाँ पञ्चावती देवी थी बहा पहुँचा, वहाँ पहुँच कर उसने उस मृत कन्या को पञ्चावती देवी के

(तएण एस दारए उम्मुक्कणालभावे तव य मम य पउमावईए य आहारे भविस्सइ त्ति रुद्धु पोद्दिलाए, पासेणिक्खिवड, णिक्खिवित्ता पोद्दिलाओ पासाओ विनिहायमावण्णियं दारिय गेण्हइ, गेण्हत्ता उत्तरिज्जेणं पिहेइ, पिहत्ता, अत्तेउरस्स अवहारेण अणुप्पविसइ)

अने आ रीते अनुकमे भेटो थतो आ भाणके न्नारे णथपणु वटावीने सुवान थइ न्थे त्यारे आ मारे, तमारे अने पञ्चावती देवीने आधारे थसे आ प्रभाळे ळीने ते तेतविपुत्र अमात्ये ते बालकेने पोद्दिलानी पासे भूडी दीधे अने पोद्दिलानी पासेथी मरी गयेवी भाणकीने उपाडी वीधी उपाडीने तेने पोताना जेसथी ढाकी दीधी अने त्यारपछी ते रणुवासना पाछला आरुण्णथी पञ्चावती देवीना भडेलमा गये।

(अणुप्पविसित्ता जेणेव पउमावई देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, पउमावईए देवीए पासे ठावेइ, ठावित्ता जाव पडिनिग्गए)

त्या न्धने न्था पञ्चावती देवी इती त्या गये अने त्या भडोचीने तेणे ते मरी गयेवी भाणकीने पञ्चावती देवीना पउभाभा भूडी दीधी अने त्या भूडीने ते त्याथी पाछे इथी अने त्यारपछी ते पोताने बर आवी गये।

गतवान् । 'तएण' तत्र खलु तस्याः पद्मापत्याः 'अगपरियारियाओ' उद्गर्पति-
चारिका' = दाम्य' पद्मापतीदेवीं विनिघातमापन्ना प्राणरहितां दारिका च पश्यन्ति,
दृष्ट्वा यत्रैव कनकरथो राजा, तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य ऋतलपरिगृहीत दश-
नख शिर आवर्त्त मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा 'एव' = वक्ष्यमाणरीत्या अवदत्-हे
स्वामिन् ! पद्मापतीदेवी 'मडल्लिया' मृता दारिका 'पयाया' प्रजाता = प्रजनित-
वती । 'तएण' इति, तत्र खलु दामीमुखान्मृतगालिकाज मश्रयगानन्तर कनकरथो
राजा तस्या 'मडल्लियाए' मृतायाः दारिकाया 'नीहरण' निर्हरण' = निष्काशन
'करेइ' करोति, कृत्वा नहूनि लौकिकानि मृतकृत्यानि करोति, कृत्वा 'कालेण'

पास रख दिया । और रत्नकर फिर वह वहा से चल दिया चलकर
अपने घर आ गया । (तएण तीसे पडमावईए अगपरियारियाओ पड-
मावड देवि विणिहायमावन्न दारिय पासति, पासित्ता जेणेव कणगरहे
राया तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता करयलपरिगहिय दसनह
सिरसावत्त मत्यए अजलिं कट्टु एव वयासी एव खलु सामी पडमावई
देवी मडल्लिय दारिय पयाया) इसके बाद पद्मावती देवी की अगपरि-
चारिकाओं ने पद्मावती देवी को और मरी हुई उन्न कन्या को देखा देखा
कर वे सब जहा कनकरथ राजा थे वहाँ गई-वहा जाकर उन्होंने दो
नों हाथों की अजलि बना कर और उसे मस्तक पर घुमाकर-अर्थात्
नमस्कार कर इस प्रकार कहा हे स्वामिन ! पद्मावती देवी ने मृत कन्या
को जन्म दिया है । (तएण कणगरहे राया तीसे मडल्लियाए दारियाए नीह-
रण करेइ, वट्टणि लोइयाइ मयकिच्चाइ करेइ करित्ता कालेण विगयसोए
जाए) इस प्रकार उन के मुख से सुनकर कनकरथ राजाने उस मृत

(तएण तीसे पडमावईए अगपरियारियाओ पडमावड देवि विणिहायमावन्न
दारिय पासति पासित्ता जेणेव ऋणगरहे राया तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता
करयलपरिगहिय दसनह सिरसावत्त मत्यए अजलिं कट्टु एव वयासी-एव खलु
सामी पडमावईदेवी मडल्लिय दारिय पयाया)

त्याग्णाह पद्मावती देवीनी अग-परियागिआओओ पद्मावती देवी तेभज्ज
ते भरेली उन्धाने नेध नेधने तेओ अधी जया कनकरथ राजन् उता त्या गध
अने त्या जधने तेओ अने हाथोथी अजलि अनावीने अने तेने मस्तक
उपर इरेवीने आ प्रभाओ उछु उे उे स्वाभी ! देवी पद्मावताओ भरेली
कन्याने जन्म आये छे

(तएण ऋणगरहे राया तीसे मडल्लियाए दारियाए नीहरण करेइ, नहूणि
लोइयाइ मयकिच्चाइ करेइ करित्ता कालेण विगयसोए जाए)

इत्युक्त्वा पोद्विलायाः पार्श्वे 'निक्खिपयः' निक्षिपति=स्थापयति, तथा पोद्विलायाः पार्श्वत् ता 'विनिहायमावण्ण' विनिहातमावण्ण=मृतां दारिकां गृह्णाति, गृहीत्वा उत्तरीयेण पिदध्नाति, पिधाय अन्तः पुरस्य अपन्नायेण अनुप्रविशति, अनुप्रविश्य यत्रैव पद्मावती देवी तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य पद्मस्त्याः देव्याः पार्श्वे स्थापयति, स्थापयित्वा तां च 'पडिनिग्गए' प्रतिनिर्गतः प्रतिनिर्गम्य स्वप्न

मम य पउमावईए य आहारे भविस्सइत्ति कददु पोद्विलाए पासे णिक्खिचइ, णिक्खिचित्ता पोद्विलाओ पासाओ विनिहायमावण्णिय दारिय गेण्हइ, गेण्हित्ता उत्तरिज्जेण पिहेइ पिहित्ता, अतेउरस्स अवहारेण अणुप्पविसइ) इस तरह क्रमशः वृद्धिगत होता हुआ यह बालक जब बाल्यावस्था से रहित हो जावेगा तो हमारा तुम्हारा और पद्मावती देवी का आधार होगा, ऐसा कहकर उस तैतलिपुत्र अमात्य ने उस पुत्र को पोद्विला के पास रख दिया। और पोद्विला के पाम से मरी हुई कन्या को उठा लिया-उठाकर उसे अपने उत्तरियवज्ज से ढँक लिया, ढँक कर फिर अत. पुर के पिउळे दरवाजे से बहा आया (अणुप्पविसित्ता जेणेव पउमावई देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पउमावईए पासे ठावेइ, ठावित्ता जाव पडिनिग्गए) वहा आकर जहा पद्मावती देवी थी वहा पहुँचा, वहाँ पहुँच कर उसने उस मृत कन्या को पद्मावती देवी के

(तएण एस दारए उम्मुक्कमालभावे तव य मम य पउमावईए य आहारे भविस्सइत्ति कददु पोद्विलाए, पासेणिक्खिचइ, णिक्खिचित्ता पोद्विलाओ पासाओ विनिहायमावण्णिय दारिय गेण्हइ, गेण्हित्ता उत्तरिज्जेण पिहेइ, पिहित्ता, अतेउरस्स अवहारेण अणुप्पविसइ)

अने आ रीते अनुकमे मोटे। थतो आ णाणक न्यादे अथपणु वटावीने शुवान थथ न्थे त्यादे आ भारे, तभारे अने पद्मावती देवीने आधार थथे आ प्रभाळे उडीने ते तैतलिपुत्र अमात्ये ते णालकने पोद्विलानी पासे भूडी दीधे अने पोद्विलानी पासेथी मरी गयेवी णाणकीने उपाडी दीधी उपाडीने तेने पोताना जेसथी डाडी दीधी अने त्यारपथी ते रक्षुवासना पाठला आरंभेथी पद्मावती देवीना महेलमा गये।

(अणुप्पविसित्ता जेणेव पउमावई देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, पउमावईए देवीए पासे ठावेइ, ठावित्ता जाव पडिनिग्गए)

त्या जधने न्या पद्मावती देवी હતી त्या ગયે। અને ત્યા પહોચીને તેણે તે મરી ગયેલી ણાણકીને પદ્માવતી દેવીના પડખામા ભૂડી દીધી અને ત્યા ભૂડીને તે ત્યાથી પાછો ફર્યો અને ત્યારપછી તે પોતાને ઘેર આવી ગયે।

अस्माकमेव दारकः अनकरवत्य राज्ये जातः, 'त' तस्मान् भवतु खलु दारको नाम्ना 'अनकध्वजः' इति । अनन्तरमगौ दारकः क्रमेण वृद्धिं गच्छन् यावद् 'भोगसमर्थे जाए' भोगमगर्गे जात = तारुण्य प्राप्त इत्यर्थे ॥ सू० ५ ॥

मूलम्—तएणं सा पोट्टिला अन्नया कयाई तैत्तलिपुत्तस्स अणिट्ठा ५ जाया यावि होत्था, नेच्छइ य तैत्तलिपुत्ते पोट्टि लाए नाम गोत्तमवि सवणयाए, किपुणदरिसणं वा परिभोग वा ? । तएण तीसे पोट्टिलाए अन्नया कयाई पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुपज्जित्था—एव खलु अह तैत्तलिस्स पुर्विं इट्ठा ५ आसि इयाणिं अणिट्ठा ५ जाया, नेच्छइ य तैत्तलिपुत्ते मम नाम जाव परिभोग वा ओहयमणसकप्पं जाव झियायइ । तएण तैत्तलिपुत्ते पोट्टिल ओहयमणसकप्प जाव झियायमाणिं पासइ, पासित्ता एव वयासी—मा णं तुम देवाणुप्पिया । ओहयमणसंकप्पा जाव झियाहि । तुम च णं मम महाणससि विउल असणपाणखाइमसाइम उवक्खडावेहि, उवक्खडावित्ता वहुणं

भारी उत्तमव क्रिया । तथा भोजन आदि द्वारा मित्र ज्ञाति द्वारा प्रमुख जनों का सत्कार सम्मान करके फिर उसने उनके समक्ष इस प्रकार कहा—यह हमारा पुत्र कनक रथ राजा के राज्य में उत्पन्न हुआ है—इस लिये यह "अनकध्वज" इस नामसे प्रसिद्ध होवे । इस के बाद यह पुत्र क्रमशः वृद्धिगन्त हुआ यावत्—भोग समर्थ हो गया—अर्थात् जवान युवा—बन गया ॥ सू० ५ ॥

सुधी लारे अत्यव उन्नयो तेमज्ज भोजन वगेरेयी मित्र ज्ञानि वगेरे प्रमुख खोकेनो सत्कार अने सम्मान करीने तेहे तेजोनी समक्ष आ प्रभाषे कहु के आ अगारेो पुत्र राजा कनकथना राजसभा उत्तम थयो छे अथी अे "अनकध्वज" नामे प्रसिद्ध थाय त्याग पछी ते अनकध्वज समय यथाग यता धीमे धीमे मोटो यता यावत लोग स र्थ धर्य गयो अेट्ठे के जवान थर्ज गयो ॥ सू० ५ ॥

कालेन समये व्यतीते ' विगयसोण ' विगतशोकः=शोकरहितो जात' । तत्र सख
 स तेतलिपुत्र कौटुम्बिकपुरुषात् शक्यति, शक्यतिता एवमादत्- ' सिष्पामेव '
 क्षिपमेव ' चारगसोहण ' चारगशोधन=चन्द्रीजनमोक्षण याचमानो मानवर्द्धनम्
 पुत्रजन्मोत्सवनिमित्तक राजकर्मचारिणां वेतनवृद्ध्यादिना सम्कारमम्मानवर्द्धन
 कुरुते, इत्येव रूपामाज्ञां दत्त्वा स्वयं ' डिडवडिय ' ग्घितिपतिता कृन्मर्यादान्तर्गता
 पुत्रजन्मनिर्दशदिससाध्यमहोत्सवस्वर्पा प्रक्रिया करोति । पुनश्चाशनाग्निना मित्र
 ज्ञातिप्रमुखात् सत्कृत्य सम्मान्य तत्पुत्र एव वधयति-' जम्हाण ' यस्मात्सख

कन्या का निर्हरण-उमज्ञान में ले जाना-क्रिया । निर्हरण कर के फिर
 अनेक लौकिक मृतकृत्य क्रिये । मृत कृत्य कर चुकने के बाद धीरे २
 घे विगत शोक हो गये । (तएणसे तेतलिपुत्ते कौटुम्बियपुरिसे सद्दा-
 वेइ, सदावित्ता एव वयासी-सिष्पामेव चारगसोहण जाव डिडवडिय
 जम्हाण अम्हं एस दारण कणगरहस्म रज्जे जाए त होउण दारण नामेण
 कणगज्झए जाव भोगसमत्थे जाए) इस के बाद तेतलिपुत्र अमात्यने
 कौटुम्बिक पुरषो को बुलाया और बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा-शीघ्र
 ही तुम लोग चारक शोधन करो-चन्द्रीजनों को मुक्त करो यावत् मानो-
 म्मन का वर्द्धन, और पुत्र जन्मोत्सव के निमित्त को लेकर राज कर्म
 चारिय के वेतन की वृद्धि आदि करके उनके सम्मान का वर्द्धन करो-
 इस प्रकार आज्ञा देकर स्वयं उस तेतलिपुत्र अमात्यने अपनी कुल
 मर्यादा के अनुसार पुत्र का जन्म होने के कारण दश दिवस तक बड़ा

आ रीते सेभना सुभथी आ पात साअणीने कनकथ राअअे ते भरेली
 कन्याने श्मशाभमा पढोआडी अने त्यारण्णाह तेअे भरए पधीनी घएी क्रियाअे
 पूरी करी भरए क्रियाअेने पताअ्या पधी राअ कनकथ धीअे धीअे शोक
 शक्ति थअ गथा

(तएणंसे तेतलिपुत्ते कौटुम्बियपुरिसे सद्दावेइ, सदावित्ता एव वयासी-
 सिष्पामेव चारगसोहण जाव डिडवडियं, जम्हाणं अम्ह एस दारण कणगरहस्स
 रज्जे जाए त होउणं दारण नामेण कणगज्झए जाव भोगसमत्थे जाए)

त्यारण्णाह तेतली पुत्र अमात्ये पाताना कौटुम्बिक पुरुषेने जेलाअ्या
 अने जेलाअीने तेभने आ प्रभाअे कहु क्के-तअे लोके सत्तरे चारक शोधन
 करे-अेअेअे के जेलाअानामथी केहीअेने छोडी भूके यावत् भानोम्माननुं वर्द्धन
 तेभए पुत्र जन्मोत्सव पहल राअ्ज्मथारीअेना पणार वगेरेनी वृद्धि करीने
 सेभना स भाननु वर्द्धन करे आ रीते कौटुम्बिक पुत्रेने आज्ञा आअीने
 तेतलिपुत्रे अते पातानी कुल मर्यादा सुअण पुत्र जन्म होवा पहल दश दिवस

त्तकालसमए' पूर्वरात्रापररात्रकालसमये=रात्रेः पश्चिमे भागे ' इमेयारूवे ' अय
 मेतद्रूपः=वक्ष्यमाणप्रकारः ' अज्जत्थिए जाव ' आध्यात्मिको यावत् मनोगत
 सकल्पः ' समुप्पजित्था ' ममुदपघत, सफलप्रकारमाह-एव खलु अह ' तैत्तलिस्स '
 तैत्तलेः=तैत्तलिपुत्रस्यामात्यस्य पूर्वम् इष्टा, कान्ता, प्रिया, मनोज्ञा, मनोऽमा
 ' आसि '=आसम्, परन्तु ' इयाणि ' इदानीम् अनिष्टा यावद्-अमनोऽमा जाता।
 नेच्छति च तैत्तलिपुत्रः मम नाम यावत् परिभोग वा=मम नाम गोत्रमपि श्रोतु
 नेच्छति किंपुन मम दर्शन मया सह परिभोग वा। इत्यमेवा पोट्टिला ' ओहय-
 मणसकप्पा ' अपहतमनः सकल्पा=अपहतो=दुःखावेगवशाद् रुद्धो, मनः सकल्पो=
 मानसिको विचरो यस्या सा, ' जावझियायड ' यावद् ' यायति=यात्रार्तन्त्यान
 करोति। ततः खलु तैत्तलिपुत्र पोट्टिलामपहतमनः सकल्पा ' जाव झियायमाणि '

या कयाड पुत्रावरत्तकालसमयसि इमेयारूवे अज्जत्थिए जाव समुप्प-
 जित्था) जन पोट्टिलाने अपनी तरफ तैत्तलि पुत्र अमात्य की इतनी
 अधिक उपेक्षा-अनादरता देखी तो एक दिन किसी समय उसे रात्रि
 के मध्यभाग में इस प्रकार का आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प
 उत्पन्न हुआ-(एव खलु अह तैत्तलिस्स पुत्रिं इहा ५ आसिं, इयाणि
 अणिट्ठा ५ जाया नेच्छइ य तैत्तलिपुत्ते मम नाम जाव परिभोग वा ओ
 हयमणसकप्पा जाव झियायड) में तैत्तलि पुत्र अमात्य के लिये पहिले
 इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ एवं मनोम थी, परन्तु इस समय में-उन्हे
 अनिष्ट यावत् अमनोम बन रही हैं। वे तैत्तलि पुत्र अमात्य देखने और
 परिभोग करने की तो बात शौन कहे मेरे नामगोत्र तक को भी सुनना
 पसद नहीं करते हैं। इस तरह वह अपहतमनसकल्प हांकर यावत्

अज्जत्थिए जाव समुप्पजित्था)

न्यारे अमात्य तैत्तलिपुत्रने पोट्टिला ओ चोताना प्रत्ये आटली अधी
 उपेक्षा अने अनादरता लेई त्यारे डोई वणते ओउ द्विंस रात्रिना मध्यला
 गमा तेना मनमा आ नतने आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उत्पन्न येथा ने

(एव खलु अह तैत्तलिस्स पुत्रिं इहा ५ आसिं इयाणि अणिट्ठा ५ जाया
 नेच्छइ य तैत्तलिपुत्ते मम नाम जाव झियायड)

पडेवा हु तैत्तलिपुत्र अमात्यने भाटे गि, काल, प्रिय, मनोज्ञ अने मनोम
 इती पणु डमणु हु तेमना भाटेअनिष्ट यावत् अमनोम यऽ पडी हु तैत्तलि
 पुत्र अमात्य न्यारे मारु नाम गोत्र सुद्धा मालगणु धरुता नथी त्यारे मारी
 साथे लेवानी अने मारी साथे परिलोगनी तो वात न शी करवी ? आ रीते
 ते पोट्टिला अपहत मन सकल्प थडने यावत् आन ध्यान करती जेडी इती

समणमाहण जाव वणीमगाणं देवमाणी य दवावेमाणी य विहराहि। तएण सा पोट्टिला तेतलिपुत्तेणं एवं वुत्तासमाणा हट्टतुट्टा तेयलिपुत्तस्स एयमट्टं पडिसुणित्ता, कल्लाकल्लि महाणससि त्रिपूल असण जाव दवावेमाणी विहरड ॥सू०६॥

टीका—' तएण ' इत्यादि । ततः मल्ल म पोट्टिला अथवा कदाचित् केनापि कारणेन तेतलिपुत्रस्य अनिष्ट, अक्रान्ता, अप्रिया, अमनोशा, अमनोष्मा जाता चाप्यऽभवत् । नेच्छति च तेतलिपुत्रः पोट्टिलाया नाम गोत्रमपि ' सवण याए ' श्रमणतायै=श्रूयतेऽनेनेति श्रमणं कर्म', तस्य कर्म श्रमणता तस्य, श्रमण विषयोक्तुम् इत्यर्थं किं पुन तस्या ' दरिसण वा ' दर्शनं वा तथा महपरिमोग वा, वाञ्छेत, अपितु न । तत खलु तस्याः पोट्टिलाया अन्यदा कदाचित् पुनरुत्तावर

तएण सा पोट्टिला इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (सा पोट्टिला) वह प्रधानकी स्त्री पोट्टिला (अन्नया कयाइ) किसी समय—कोई निमित्त को लेकर—किसी भी कारण से—(तेतलिपुत्तस्स अणिट्ठा जाया यावि होत्था) तेतलिपुत्र के लिये अनिष्ट, अक्रान्त, अप्रिय, अमनोज्ञ एव अमनोम बन गई। (जे च्छइ तेतलिपुत्ते पोट्टिलाए नाम गोत्तमवि सवणयाए किं पुणदरिसण वा परिभोग वा) इस प्रकार वह तेतलिपुत्र उस पोट्टिला के नाम गोत्र तक को भी सुनना पसंद नहीं करता तो फिर उसके देखने और परिभोग पास जाने की तो बात ही क्या है। (तएण तीसे पोट्टिलाए अन्न

तएण सा पोट्टिला इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) त्थार पडी (सा पोट्टिला) ते अभात्यनी पत्नी पोट्टिली (अन्नया कयाइ) डोर्ध वभते गभेते कारणे (तेतलिपुत्तस्स अणिट्ठा ५ जाया यावि होत्था) तेतलि पुत्रने भाटे अनिष्ट, अक्रान्त, अप्रिय अमनोज्ञ अने अमनोम र्ध पडी

(जे च्छइ तेतलिपुत्ते पोट्टिलाए नाम गोत्तमवि सवणयाए किं पुणदरिसण वा परिभोग वा)

अथी तेतलिपुत्र अभात्यने तेनु नाम गोत्र सुद्धा साअणधु पणु पसद भत्तु न हंतु त्थारे तेने ज्जेवानी अने तेनी पासे ज्जेवानी तो बात ज्जे शी ?

(तएण तीसे पोट्टिलाए अन्नया कयाइ पुनरावरत्तकालमयसि इमेयारुवे

पोट्टिला तेतलिपुत्रेण 'एत्र' पूर्वोक्तप्रकारेण उक्ता सती हृष्टतुष्टा तेतलिपुत्रस्य 'एयमद्र' एतमर्थम्=अन्नदानरूपमभिप्राय 'पडिसुमइ' प्रतिश्रुणोति=स्वीकरोति, 'पडिसुणिता' प्रतिश्रुत्य=सोऽकृत्य, 'करलाकलि' करवालिप्य=प्रतिदिनम्, महानसे त्रिपुलम् 'असण जाव' अशन यावत्=अशनपानत्वायस्वाय चतुर्विधमाहारं सुपकार्यं ददती च 'दवावेमाणी' दापयन्ती च विहरति ॥ ६ ॥

मूलम्—तेणं कालेण तेणं समएणं सुव्वयाओ नामं अज्जाओ ईरिया समियाओ जाव गुत्तवभयारिणीओ बहुस्सुयाओ बहुपरिवाराओ पुव्वाणुपुव्विञ्चरमाणागामाणुगाम दुइज्जमाणा जेणामेव तेतलिपुरे णयरे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छिता, अहापडि-रूवं उग्गहं उग्गिण्हंति, उग्गिण्हिता, सजमेणं तवसां अप्पाणं भावेमाणिओ विहरति । तएण तासिं सुव्वयाणं अज्जाण एगे संघा-डए पढमाए पोरिसीए सज्झाय करेइ जाव अडमाणे तेतलिस्स गिह अणुपविट्ठे । तएण सा पोट्टिला ताओ अज्जाओ एज्जमाणीओ पासइ, पासित्ता, हट्टुट्टा आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता, वदइ, णमसइ, वदित्ता णमसित्ता, विउल असण जाव पडिलाभेइ, पडि-लाभित्ता, एव वयासी—एवं खलु अहं अज्जाओ तेतलिपुत्तस्स पुव्वं

से दिलवाओ । इस तरह तेतलिपुत्र अमात्यने जब उस पोट्टिला से कहा—तो वह बहुत अधिक प्रसन्न एवं सतुष्ट हुई । और उसने तेतलिपुत्रकी इस बातको मान लिया । मान करके वह प्रतिदिन भोजन शाला में चारो प्रकार का आहार बनवा कर उसे श्रमण, माहण आदि जनोके लिये स्वयं देने लगी और दूसरों से दिलवाने लगी ॥ सू० ६ ॥

यावत् याचकेने पोते आपो अने पीनयेने हुकम करीने अपावेो तेतलिपुत्र अमात्ये न्यारे आ प्रभावे पोट्टिलाने ष्ठु त्थारे ते भूण्ण प्रसन्न तेभन् सतुष्ट थं गं अने तेवे तेतलिपुत्रनी आ वात स्वीकारी दीधी अने ते दरेशेण भोजन शालाभा यारे नतना आहारो पनावडावीने श्रमणु प्राहणु वगेरे ने पोते आहार आपवादागी अने पीनयेने द्वारा अपाववा लागी सू०

यावद् भ्यायन्तीम्=यावदार्तध्यानं कुर्यात् तो पश्यति, दृष्ट्वा एवमादन्-मा खलु त्व
हे देवानुप्रिये ! अपहतमनः सरत्पा ' जात्र श्रियाहि ' यावद्भ्याय=यावदार्तध्याने
माकुरु । हे देवि । त्व च खलु मम ' महाणससि ' महाणसे=भोजनशालायाश्च
विपुलम् ' असण जात्र ' अशन यात्र=भजनपान खादिम खादिम चतुर्विधमाहारश्च
' उक्खडावेहि ' उपस्कारय, ' उक्खडावित्ता ' उपस्कार्य ' वृहण समण माहण
जात्र वणीपगाणं ' बहुभ्य श्रमणनात्मण यात्र् उनीपकेभ्य =यानकेभ्यः, स्वयं
देयमाणी ' ददती च, अन्यैः ' ददायेमाणी ' दापन्ती च विहर । तत' खलु सा

आर्तध्यान कर रही थी-(तएण तेतलिपुत्ते पोट्टिल ओहयमणसरूप
जात्र श्रियायमाणि पासइ, पासित्ता एव वयावी माण तुम देवाणुप्पिया
ओहयमणसरूप्या जात्र श्रियाहि, तुम च ण मम महाणससि विउल
असणपाण खाइम साइम उक्खडावेहिं, उक्खडावित्ता वृहण सम-
ण माहण जात्र वणीपगाण देयमाणी य दवावेमाणी य विहराहि, तएण
सा पोट्टिला तेतलीपुत्तेण एव बुत्ता समाणा इदु तुट्ठा तेयलिपुत्तस्स
एयमइ पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता कल्लाकल्लि महाणससि विपुल असण
जात्र दवावेमाणी विहरइ) इतने मे तेतलिपुत्र ने उस अपहतमनः
सकल्प होकर आर्तध्यान करती हुई पोट्टिला को देखा-तो देखकर उसने
उससे कहा-हे देवानुप्रिये तुम अपहतमन सकल्प होकर आर्तध्यान
मत करो-तुम तो मेरी भोजनशाला में विपुलमात्रा में अशन, पान,
खादिम एव स्वादिम इस तरह चतुर्विध अहार बनवाओ धनवाकर उसे
अनेक श्रमण ब्राह्मण याचत् याचकजनों के लिये स्वयं दो और दूसरों

(तएण तेतलिपुत्ते पोट्टिल ओहयमणसरूप्य जात्र श्रियायमाणि पासइ
पासित्ता एव वयावी माण तुमे देवाणुप्पिया ओहयमणसरूप्या जात्र श्रियाहि, तुम
च ण मम महाणससि विउल अमणपाण खाइम साइम उक्खडावेहिं, उक्खडावित्ता
वृहण समणमाहण जात्र वणीपगाण देयमाणी य दवावेमाणी य विहराहि तएण सा
पोट्टिला तेतलिपुत्तेण एव बुत्ता समाणा इदु तुट्ठा तेयतिपुत्तस्स एयमइ पडिसुणेइ,
पडिसुणित्ता कल्लाकल्लि महाणससि विपुल असण जात्र दवावेमाणी विहरइ)

आटलाभा अपहतमन सकल्प यधने आर्तध्यान करती ते पोट्टिलाने
अभात्य तेतलिपुत्रे जेध अने जेधने तेने आ प्रभाणु क्खु के-डे देवानुप्रिये !
तमे अपहतमनस इत्य यधने आर्तध्यान करे नहि-तमे भारी बोधन
शाणाभा जेधने पुच्छेण प्रभाणुभा अशन, पान, खादिम अने स्वादिम आरम
आर अतना आहारो जनापडाओ अने जनापडावीने तेने धणु श-

पोट्टिला तेतलिपुत्रेण 'एव' पूर्वोक्तप्रकारेण उक्ता सती हृष्टतुष्टा तेतलिपुत्रस्य 'एवमदृ' एतमर्थम्=अन्नदानरूपमभिप्राय 'पडिसुमइ' प्रतिश्रुणोति=स्वीकरोति, पडिसुणित्ता 'प्रतिश्रुत्य=स्वीकृत्य, 'करलाकलि' करयालिय=प्रतिदिनम्, महा-नसे त्रिपुलम् 'असण जाव' अशन यावत्=अशनपानखाद्यस्त्राय चतुर्भिधमाहारं सुपस्कार्यं ददती च 'दावेमाणी' दापयन्ती च विहरति ॥ ६ ॥

मूलम्—तेण कालेणं तेणं समएणं सुव्वयाओ नाम अज्जाओ ईरियासमियाओ जाव गुत्तवभयारिणीओ बहुस्सुयाओ बहुपरि-वाराओ पुव्वाणुपुव्वि०चरमाणागामाणुगाम दुइज्जमाणा जेणामेव तेतलिपुरे णयरे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता, अहापडि-रूव उग्गहं उग्गिण्हंति, उग्गिण्हित्ता, संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणिओ विहरंति । तएण तासिं सुव्वयाणं अज्जाण एगे सघा-डए पढमाए पोरिसीए सज्झाय करेइ जाव अडमाणे तेतलिस्स गिहं अणुपविट्ठे । तएण सा पोट्टिला ताओ अज्जाओ एज्जमाणीओ पासइ, पासित्ता, हट्टुट्टा आसणाओ अवमुट्ठेइ, अवमुट्ठित्ता, वदइ, णमंसइ, वदित्ता णमसित्ता, विउलं असण जाव पडिलाभेइ, पडि-लाभित्ता, एव वयासी—एवं खलु अहं अज्जाओ तेतलिपुत्तस्स पुव्वं

से दिलवाओ । इस तरह तेतलिपुत्र अमात्यने जब उस पोट्टिला से कहा—तो वह बहुत अधिक प्रसन्न एव सतुष्ट हुई । और उसने तेतलि-पुत्रकी इस बातको मान लिया । मान करके वह प्रतिदिन भोजन शाला में चारो प्रकार का आहार बनवा कर उसे श्रमण, माहण आदि जनोंके लिये स्वयं देने लगी और दूसरों से दिलवाने लगी ॥ सू० ६ ॥

यावत् यावडेने पोते आपो अने भीलओने हुकम डगीने अपावे तेतलि पुत्र अमात्ये न्यारे आ प्रभाणु पोट्टिलाने कलु त्यारे ते भूणञ प्रसन्न तेमञ सतुष्ट थध गध अने तेणु तेतलिपुत्रनी आ वात स्वीकारी लीधी अने ते दररोञ खोजन शाणामा त्तारे नतना आहारो णनावडवीने श्रमणु आहणु -ने-ने-ने-ने माहार आपवालागी अने भीलओ द्वारा अपाववा लागी सूइ

इट्टा ५ आसि, इयाणि अणिट्टा ५ जाव दसण वा परिभोगं वा,
 तं तुब्भेणं अज्जाओ सिक्खियाओ बहुनायाओ बहुपट्टियाओ
 बहूणि गामागर जाव आहिडह बहूणं राईसर जाव गिहाइ
 अणुपविसह, त अत्थि आइ भे अज्जाओ । केइ कहिंचि चुन्न
 जोए वा मंतजोए वा कम्मणजोए वा हिय उद्धावणे वा काउ
 डुवणे वा आभिओगिए वा वसीकरणे वा कोउयकम्मे वा
 भूइकम्मे वा मूले कदे छल्ली वल्ली, सिलिया वा गुलिया वा
 ओसहे वा भेसजे वा उवलद्धपुव्वे वा जेणाह तेतलिपुत्तस्स
 पुणरवि इट्टा ५ भवेज्जामि । तएणं ताओ अज्जाओ पोट्टिलाए
 एव वुत्ताओ समाणीओ दो वि हत्थे कच्चे ठवेति ठवित्ता,
 पोट्टिल एव वयासी—अम्हे ण देवाणुप्पिया । समाणीओ निग्गं-
 थिओ जाव गुत्तवभयारिणीओ, नो खल्लु कप्पइ अम्ह एयप्प-
 यारं कन्नेहि वि णिसामेत्तए, किमग पुण उवदिसित्तए वा
 आयरित्तए वा ? अम्हेणं तव देवाणुप्पिया । विचित्त केवलि-
 पन्नत्त धम्म पडिकहिज्जामो । तएण सा पोट्टिला ताओ अज्जाओ
 एव वयासी—इच्छामि णं अज्जाओ । तुम्ह अतिए केवलिपन्नत्त
 धम्म निसामेत्तए, तएण ताओ अज्जाओ पोट्टिलाए विचित्त
 धम्म परिकहेति । तएण सा पोट्टिला धम्म सोच्चा निसम्म
 हट्टुट्टा एव वयासी—सइहामि णं अज्जाओ । णिग्गंथ पावयण
 जाव से जहिय तुब्भे वयह, इच्छामि ण अह तुब्भ अतिए
 पचाणुव्वइय जाव गिहिधम्म पाडिवाज्जित्तए, तएण

सा पोष्टिला तासि अज्जाण अतिए पचाणुव्वइय जाव गिहि-
धम्म पडिवज्जइ, ताओ अज्जाओ वंदइ णमसइ, वडित्ता णे-
संसित्ता पडिविसज्जेइ । तएणं सा पोष्टिला समणोवासिया
जाया जाव पडिलाभेमाणी विहरइ ॥ सू० ७ ॥

टीका—‘तेण कालेण’ इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये सुत्रतानाम
आर्या ईर्यासमिता यावद् गुप्तब्रह्मचारिण्यो बहुश्रुता बहुपरिवाराः ‘पुत्राणुव्वि’
स्वानुपूर्व्या=तीर्थङ्करपरम्परया त्रिचरन्त्य ‘जेणामेव’ यत्रैव तेतलिपुर नगर तत्रैवो-
पागच्छति, उपागत्य ‘अहापडिरूव’ यथापतिरूपम्=यथाकल्पम् ‘उग्गह’
अवग्रहम्=त्रयत्यर्थमाज्ञाम् ‘उग्गिण्हति’ अग्रहन्ति=याचन्ते, अग्रह्य ‘सजमेण’
सयमेन समदशपिणेन, ‘तवसा’ तपसा द्वादशविधेन आत्मान भावयन्त्यो

‘तेण कालेणं तेण समएण’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) उस काल और उस समयमें
(सुव्वयाओ नाम अज्जाओ ईरिया समियाओ जाव गुत्तवभयारिणीओ
वहुस्सुयाओ बहुपरिवाराओ पुव्वानुपुव्वि० जेणामेव तेयलिपुरे णयरे तेणेव
उवागच्छइ) सुत्रता नामकी आर्या तीर्थंकर परपरा के अनुसार विहार
करती हुइ उस तेतलिपुर नगर में आई । ये ईर्यासमिति आदि पाच
समितियों की पालक थीं—गुप्त ब्रह्मचारिणी थीं । बहुश्रुत थीं । अनेक
परिवार से युक्त थीं । (उवागच्छित्तो अहा पडिरूव उग्गह उग्गिण्हति,
उग्गिण्हित्ता सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणीओ विहरति तएणं

तेण कालेण तेणं समएण इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) ते काले अने ते समये
(सुव्वयाओ नाम अज्जाओ ईरिया समियाओ जाव गुत्तवभयारिणीओ बहुस्सु
याओ बहुपरिवाराओ पुव्वानुपुव्वि० जेणामेव तेतलिपुरे णयरे तेणेव उवागच्छइ)
सुत्रता नामकी आर्या तीर्थंकर परपरा मुज्जम विहार करती तेतलिपुर
नगरमा आयी ते ईर्यासमिति वगेरे प (पाच) समितिओओ पावनकरनारी
हुती तेमज्ज शुभ ब्रह्मचारिणी हुती ते बहुश्रुत तेमज्ज वधु परिवारे थी
थी ट्ठयायेली हुती

(उवागच्छित्ता अहापडिरूव उग्गह उग्गिण्हति, उग्गिण्हित्ता सजमेणं तवसा

इष्टा ५ आसि, इयारिणि अणिट्टा ५ जाव दसण वा परिभोगं वा,
तं तुब्भेणं अज्जाओ सिन्निखयाओ बहुनायाओ बहुपट्टियाओ
बहुणि गामागर जाव आहिडह वहुणं राईसर जाव गिहाइ
अणुपविसह, त अरिथि आइ भे अज्जाओ । केइ कहिंवि चुन्न-
जोए वा मतजोए वा कम्मणजोए वा हिय उट्ठावणे वा काउ
डुवणे वा आभिओगिए वा वसीकरणे वा कोउयकम्मे वा
भूइकम्मे वा मूले कदे छल्ली वल्ली, सिलिया वा गुलिया वा
ओसहे वा भेसजे वा उवलद्वुपुव्वे वा जेणाह तेतलिपुत्तस
पुणरवि इट्टा ५ भवेज्जामि । तएणं ताओ अज्जाओ पोट्टिलाए
एव बुत्ताओ समाणीओ दो वि हत्थे कन्ने ठवेति ठवित्ता,
पोट्टिल एव वयासी—अम्हे ण देवाणुप्पिया । समणीओ निग्गं-
थिओ जाव गुत्तवभयारिणीओ, नो खलु कप्पइ अम्ह एयप्प-
यार कन्नेहि वि णिसामेत्तए, किमग पुण उवदिसित्तए वा
आयरित्तए वा ? अम्हेणं तव देवाणुप्पिया । विचित्त केवलि-
पन्नत्त धम्म पडिकहिज्जामो । तएण सा पोट्टिला ताओ अज्जाओ
एव वयासी—इच्छामि णं अज्जाओ । तुम्ह अतिए केवलिपन्नत्त
धम्म निसामेत्तए, तएणं ताओ अज्जाओ पोट्टिलाए विचित्त
धम्म परिकहेति । तएण सा पोट्टिला धम्म सोच्चा निसम्म
हट्टुट्टा एव वयासी—सहहामि णं अज्जाओ । णिग्गंथ पावयण
जाव से जहिय तुब्भे वयह, इच्छामि ण अह तुब्भ अतिए
पच्चाणुव्वइय जाव गिहिधम्म पाडिवाज्जित्तए, तएण

नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा, विपुलमशनपानखाद्यस्वाद्यरूपं चतुर्विधमाहार
'पडिलाभेड' प्रतिलम्भयति=ददाति, प्रतिलम्भ्य, एवमदत्-एव खलु अहं हे
आर्याः ! तैत्तलिपुत्रस्य पूर्वमिष्टा, कान्ता, प्रिया, मनोज्ञा, मनोऽमा, आसम्,
परन्तु 'इयार्णि' इदानीम् 'अणिट्टा' जाव दंसणं परिभोगं वा' अनिष्टा' यावत्
दर्शनं परिभोगं वा=साम्प्रत तैत्तलिपुत्रस्याऽहमनिष्टा अकान्ता, अप्रिया, अमनोज्ञा,
अमनोऽमा जाता, तस्मादेव तैत्तलिपुत्रो मम नामगोत्रमपि श्रोतुं नेच्छति, किं
पुनर्हं आर्याः ! स मम दर्शनं मया सह परिभोगं वा कथं शक्येत् ? । 'त तुम्हेण

अभुट्टेह) देखकर वह बहुत अधिक प्रसन्न हुई, और अपने स्थान से
उठी (अभुट्टित्ता वदह णमसइ, वदित्ता, णमसित्ता विउल अमण जाव
पडिलाभित्ता एव वयासी) उठकर उसने उसको घटना की-नमस्कार
किया । वन्दना नमस्कार करके फिर उसने उन्हें विपुल मात्रा में अशन
पान आदि चतुर्विध आहार दिया-और दे कर वह इस प्रकार करने
लगी-(एव खलु अह अज्जाओ । तैत्तलिपुत्तरस पुव्व इट्ठा ५ आसि,
इयार्णि अणिट्टा ५ जाव दंसणं वा परिभोगं वा-त तुम्हेणं अज्जाओ
सिक्खियाओ बहूनायाओ बहूपडियाओ बहूणि गामागर जाव अहिं-
डइ, वहूणं राईसर जाव गिहाइ अणुपविसइ) हे आर्याओ ! पहिले मैं
तैत्तलिपुत्र अमात्य के लिये बहुत ही इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ एव
मनोम थी परन्तु अब इस समय मैं उनके लिये अनिष्ट, अकान्त,
अप्रिय, अमनोज्ञ एव अमनोम बन रही हूँ । वे मेरा नाम गोत्र तक
भी सुनना पसंद नहीं करते हैं तो फिर मेरे साथ परिभोग करने की

(अभुट्टित्ता वदह णमसइ, वदित्ता, णमसित्ता विउल अमण जाव पडिलाभेड
पडिलाभित्ता एव वयासी)

७७१ थधने तेणु तेभने नमन कथां पदन अने नमन करीने तेणु तेभने
पुष्कण प्रभाणुमा अरान, पान वगेरे आर नतना आहारो आप्पा अने
आपीने ते आ प्रभाणु कडेवा लागी ठे—

(एव खलु अह अज्जाओ । तैत्तलिपुत्तरस पुव्व इट्ठा ५ आसि, इयार्णि ५
दंसणं वा परिभोगं वा त तुम्हेण अज्जाओ सिक्खियाओ बहूनायाओ बहूपडि-
याओ बहूणि गामागर जाव अहिंडइ, वहूणं राईसर जाव गिहाइ अणुपविसइ)

हे आ-र्याओ ! हुं पहले तैत्तलिपुत्र अमात्यना माटे पूष ७ छट, कात,
प्रिय, मनोज्ञ अने मनोम હતી પણ હવે હું તેમના માટે અનિષ્ટ, અકાત,
અપ્રિય, અમનોજ્ઞ અને અમનોમ થઈ પડી છું તેઓ મારા નામ ગોત્ર સુદ્ધા
સામળના ઇચ્છતા નથી ત્યારે મારી સાથે પરિભોગ કરવાની અને મને જોવાની

विहरन्ति । तत खलु तासा सुव्रतानामार्द्रांगामेकः सघाटकः प्रथमाया पौरुष्याम्
 स्वाध्याय=प्रप्रमूलपठनरूप करोति, 'जात्र अडमाणे' यावददन्त्याः, याव उच्चात्
 'द्वितीयस्यां पौष्ण्या मृत्रार्थचिन्तनरूप ध्यान करोति, तृतीयस्या पौरुष्यां
 सुव्रतामार्द्रांगामपृच्छ च उच्यते नीचमध्यमकुलेषु गृहमासुदानिकमिक्षार्थमदन् इत्यर्थो
 बोध्यः, तेतलेष्टुहमनुप्रविष्टः । तत खलु सा पोष्टिला ताः सघाटकस्याः आर्या
 एजमानाः पश्यति, दृष्ट्वा, हृष्टतृष्टा आसनात् अभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय रन्दते

तासि सुव्रायाण अज्जाणं एगे सघाटण पढमाण पोरिसीण सज्जाय करेइ,
 जाव अडमाणे तेतलिस्स गिहं अणुपविट्ठे) वहा आ कर उन्होने यथाकल्प
 ठहरने की आज्ञा मागी-मांग कर फिर वे १७ सतरह प्रकारके समयम और
 १२ बारह प्रकार के तपसे अपने आपको चामित करती हुई ठहर गई ।
 इन सुव्रता आर्या का एक सघाटक था जो प्रथम पौरुषी में स्वाध्याय
 करता-द्वितीय पौरुषीमें सूत्रार्थका चिन्तनरूप ध्यान करता और तृतीय
 पौरुषीमें सुव्रता आर्या की आज्ञासे ऊँच नीच एव मध्यम कुलोंमें भिक्षा
 के लिये अटन करता । इस तरह वह सघाटक (सघाटा) तृतीय पौरुषीमें
 इन उच्चादि घरों में भिक्षार्थ अटन करता हुआ तेतलिपुत्र अमात्य के
 घर पर आया (तएण सा पोष्टिला ताओ अज्जाओ एज्जमाणीओ पा
 सह) इनने में उस पोष्टिलाने उन सघाटकस्थ आर्याओ को ज्यों ही
 अपने घर पर आया हुआ देखा तो (पासित्ता हट्टतुट्ठा आसणाओ अ

अप्पाण भावेमाणीओ विहरति तएण तासि सुव्रायाण अज्जाण एगेसघाटण
 पढमाण पोरिसीण सज्जाय करेइ जाव अडमाणे तेतलिस्स गिह अणुपविट्ठे)
 त्या आवीने तेमण्णे यथाकल्प (साधुकल्प प्रमाणे) रडेवानी आज्ञा मागी अने
 त्थारपणी ते १७ नतना समय अने १२-नतना तप वडे पोता ॥ नतने
 वासित करता ते त्या रेकाथ सुव्रता आर्याना अेर सघाटक होने के प्रथम
 पौरुषीमा स्वाध्याय करते हुतो, द्वितीय पौरुषीमा सूत्रार्थनु चिन्तन रूप ध्यान
 करते अने तृतीय पौरुषीमा सुव्रता आर्यानी आज्ञा मेणवीने जिया, नीचा
 अने मध्यम कुलोमा गोचरी भाटे जाता हुता आ प्रमाणे ते सघाटक तृतीय
 पौरुषीमा उपदेश - जिया वगेरे कुलोना धरोमा गोचरी भाटे करता करता
 तेतत्रिपुत्र अमात्यने त्या आव्यो (तएण सा पोष्टिला ताओ अज्जाओ एज्ज
 माणीओ पासइ) पोष्टिलाअे नारे सघाटकस्थ आर्याओने पोताने घेर आवेवी
 ओथ त्थारे ते (पासित्ता हट्ट तुट्ठा आसणाओ असुदडेइ) ओसिने ते भूष न
 प्रसन्न थथ अने पोताना आसनथा जेथी थथ

नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा, त्रिपुलमशनपानस्वाद्यस्वाद्यरूप चतुर्विधमाहार
'पडिलाभेड' प्रतिबन्धयति=ददाति, प्रतिबन्धय, एवमदत्-एव खलु अह हे
आर्याः ! तैत्तलिपुत्रस्य पूर्वमिष्टा, कान्ता, प्रिया, मनोज्ञा, मनोऽमा, आसम्,
परन्तु 'इयार्णि' इदानीम् 'अणिट्टा ५ जाव दसणं परिभोग वा' अनिष्टा ५ यावत्
दर्शनं परिभोग वा=साम्प्रत तैत्तलिपुत्रस्याऽहमनिष्टा अकान्ता, अप्रिया, अमनोज्ञा,
अमनोऽमा जाता, तस्मादेव तैत्तलिपुत्रो मम नामगोत्रमपि श्रोतुं नेच्छति, किं
पुनर्हं आर्याः ! स मम दर्शनं मया सह परिभोगं वा कथं वाञ्छेत् ? । 'त तुब्भेण

व्मुट्टेह) देखकर वह बहुत अधिक प्रमत्त हुई, और अपने स्थान से
उठी (अच्छुट्टिता वदह णमंसइ, वदित्ता, णमसित्ता विउल असण जाव
पडिलाभित्ता एव वयासी) उठकर उसने उसको बदना की-नमस्कार
किया । वन्दना नमस्कार करके फिर उसने उन्हें त्रिपुल मात्रा में अशन
पान आदि चतुर्विध आहार दिया-और दे कर वह इस प्रकार करने
लगी-(एव खलु अह अज्जाओ ! तैत्तलिपुत्तरस पुव्व इट्ठा ५ आसि,
इयार्णि अणिट्टा ५ जाव दसणं वा परिभोग वा-सं तुब्भेण अज्जाओ
सिक्खियाओ बहुनायाओ बहूपडियाओ बहूणि गामागर जाव अहिं-
डइ, बहूण राईसर जाव गिहाइ अणुपविसइ) हे आर्याओ ! पहिले मैं
तैत्तलिपुत्र अमात्य के लिये बहुत ही इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ एव
मनोम थी परन्तु अब इस समय में उनके लिये अनिष्ट, अकान्त,
अप्रिय, अमनोज्ञ एव अमनोम बन रही हैं । वे मेरा नाम गोत्र तक
भी सुनना पसंद नहीं करते हैं तो फिर मेरे साथ परिभोग करने की

(अच्छुट्टिता वदह णमंसइ वदित्ता, णमसित्ता विउल असण जाव पडिलाभेड
पडिलाभित्ता एव वयासी)

श्री ७१३ यद्यने तेष्से तेभने नमन कर्या वदन अने नमन करीने तेष्से तेभने
पुब्बण प्रभाणुमा अरान, पान वजेरे आर वतना आहारो आभ्या अने
आपीने ते आ प्रभाणु कडेवा लागी ते—

(एव खलु अहं अज्जाओ ! तैत्तलिपुत्तरस पुव्व इट्ठा ५ आसि, इयार्णि ५
दसणं वा परिभोगं वा तं तुब्भेणं अज्जाओ सिक्खियाओ बहुनायाओ बहूपडि-
याओ बहूणि गामागर जाव अहिंडइ, बहूण राईसर जाव गिहाइ अणुपविसइ)

हे आर्याओ ! तु पडेला तैत्तलिपुत्र अमात्यना माटे भूषणं छेष्ट, कात,
प्रिय, मनोज्ञ अने मनोम छती पणु छेवे तु तेभना माटे अनिष्ट, अकान्त,
अप्रिय, अमनोज्ञ अने अमनोम थर पडी छु तेष्से आरा नाम गोत्र सुद्धा
साम्भणवा छेत्ता नथी त्यारे मारी साने परिभोग करवानी अने भने जेवानी

अज्जाओ ' इति, तत्=तस्मात् कारणात् यूयं खलु हे आर्याः ! 'मिन्विय्याओ' शिक्षिता=शिक्षां प्राप्ता, 'बहुणायाओ' बहुज्ञाताः=अनेकशास्त्रज्ञाननिपुणाः 'बहुपठियाओ' बहुपठिता=नानाविधविद्याकुशलाः स्थः पुनः 'बहणि गामागरजार अहिडह' बहूनि ग्रामाकर यावत् आदिण्ठय=बहुपु ग्रामाकरनगरादिपु परिभ्रमण कुरुथ । तथा च 'बहण राईसर जाव गिहाइ अणुपधिमइ' बहूना राजेश्वर यावद् गृहाणि अनुपविशथ=हे आर्याः ! यूयं बहूना राजेश्वर तत्परत्रेष्ठि सेनापत्यादीनां गृहे प्रवेश कुरुथ, 'त' तत्=तस्मात् कारणात् 'अत्थि अइ मे अज्जाओ' अस्ति आइ युप्पाकमार्या ! 'आइ' इति वाक्यालङ्कारे देशी शब्दः । हे आर्याः ! अस्ति 'केइ कहिं चि' कोऽपि कुत्रचित्=युप्पाक ज्ञानविषये 'चुन्नजोए वा' चूर्णयोगो वा=चूर्णानां द्रव्यचूर्णानां योगः, स्तम्भनादिकर्मकारी, 'मतजोए वा' मन्त्रयोगो वा=मन्त्राणां योगो व्यापारो वा वशीकरणादि मन्त्रयोग 'कम्मणजोए

और देखने की उनकी घात ही क्या कहें इस लिये हे आर्याओ ! आप सब तो शिक्षित हैं, बहुज्ञाता हैं-अनेक शास्त्रों के ज्ञानसे निपुण हैं-बहुपठित हैं-नाना प्रकार की विद्याओं में कुशल हैं-अनेक ग्राम, आकर आदि स्थानों में विहार करती रहती हैं, अनेक राजेश्वर आदिको के घरों में आती जाती रहती हैं (त अत्थिआइ मे अज्जाओ) तो हे आर्याओ ! (केइ कहिं चि चुन्नज्जोएवा) कहीं कोई चूर्ण योग - द्रव्य चूर्णों का स्तम्भनादि कर्मकारी योग (मतजोए वा कम्मणजोए वा हिय उड्डावणे वा, काउड्डावणे वा अभिओगिए वा वसीकरणे वा, कोउयकम्मे वा, भूइकम्मे वा मूले, कदे छल्ली, बल्ली, सिलिया, वा, गुलिया वा, ओसहे वा, भेसज्जे वा, उवलदपुव्वे वा जेणाह तेतलिपुत्तस्स पुणरवि इट्ठा ५ भवेज्जामि) मन्त्र योग-वशीकरण आदि मन्त्रों का

तो वात ७ क्या रही ? अर्थी हे आर्याओ ! तमे सौ शिक्षिता हो, बहुज्ञाता हो-अटलें के धणा शास्त्रोंना ज्ञानथी निपुण्य हो, बहुपठिता हो-अनेक ज्ञानकी विद्याओभा कुशल हो, धणा गाम, आकर स्थानोभा विहार करता रहे हो, अने धणा राजेश्वर वगैरेंना भड्डोभा आवण करता रहे हो (त अत्थिआइ मे अज्जाओ) तो हे आर्याओ ! (केइ कहिं चिचुन्नज्जोएवा) क्याक गमे ते चूर्ण योग-द्रव्य चूर्णोंना स्तम्भन वगैरेंना योग,

(मतजोएवा कम्मणजोए वा हिय उड्डावणे वा, काउड्डावणे वा अभिओगिए वा वसीकरणे वा, कोउयकम्मे वा, भूइकम्मे वा मूले कदे छल्ली बल्ली सिलिया, वा गुलिया वा, ओसहे वा, भेसज्जे वा उवलदपुव्वे वा जेणाह तेतलिपुत्तस्स पुणरवि इट्ठा ५ भवेज्जामि)

वा ' कर्मणयोगो वा=उच्चाटनादिकर्मयोगो वा, ' हिय उद्वावणे वा '=हृदयो-
 ङ्कायन वा=चित्कार्पकवस्तुविशेषो वा ' काउद्वायने वा ' कायोद्वायन वा=शरीरा-
 कर्पकवस्तुविशेषो वा ' आभियोगिण वा ' आभियोगिको वा,=पराभवकरणयोगो
 वा, ' वशीकरणे वा ' वशीकरण वा=वशीकरणयोगो वा, ' कौतुककर्म वा ' कौतुक-
 कर्म वा=सौभाग्यवर्द्धकस्नानादि वा ' भूतकर्म वा ' भूतिकर्म वा=मन्त्राभिमन्त्रित-
 भस्मप्रक्षेपण वा तथा-औषधीना ' मूले ' मूलम् ' कदे ' कन्दः ' छल्ली ' त्वक्
 ' लता ' लता ' सिलिया वा ' शिलिका=तृणविशेषः, ' गुलिया ' गुलिका=
 गुटिका ' मोसहे वा भेसज्जे वा ' औषध वा भैषज्य वा, इत्यादिक वस्तुजात
 युष्माभिः उपलब्धपुत्रे ' उपलब्धपूर्वम्=मातृपूर्वम्, हे आर्याः । भवत्य एषु किमपि
 उपलब्धपूर्वा अवश्य भवेयुः, तत्कृपया मह्यमर्पय, ' जेगाह' येनाहम्, यत्सेवनादह
 तैत्तिरीयपुराण पुनरपि इष्टा कान्ता प्रियामनोज्ञामनोऽमा भवेयम् । ततः खलु वा
 आर्याः पोट्टिलाया एवमुक्ताः सत्यो द्वापि हस्ती कर्णे स्थापयन्ति, स्थापयित्वा

योग कामेण योग-उच्चाटन आदि मन्त्रो का योग हृदयोद्वायन-
 चित्कार्पक वस्तु विशेष का योग, कायोद्वायन-शरीराकर्पक वस्तु
 विशेषका योग, आभियोगिक-पराभव करण का योग, वशीकरण-
 वशीकरण योग, कौतुक कर्म-सौभाग्यवर्द्धक स्नान आदि का योग,
 भूति कर्म-मन्त्रादि से अभिमन्त्रित भस्म के प्रक्षेपण करने रूप योग तथा
 औषधियों के मूल, कद त्वक-डाल तथा लता, शिलिका-तृण विशेष
 गोली, औषध-भैषज्य इत्यादि वस्तुओं का योग आरके देखने में अवश्य
 आया होगा-इस लिये कृपाकर इनमें से कोई न कोई योग आव हम्
 अवश्य-अवश्य प्रदान करे कि जिसमें म-जिम के सेवन से मैं-तैत्
 लिपुत्र को पुनरपि इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ एवं मनोम वन जाऊँ (तएण
 ताभा अज्जाओ पाट्टिलाए एव बुत्ताओ समाणाओ दावि हत्थे कन्ने ठवे ति,

मन्त्रयोग-वशाकरण वगैरे मन्त्रोना योग-कार्पकयोग, उच्चाटण वगैरे
 मन्त्रोना योग, हृदयोद्वायन-चित्कार्पक वस्तु विशेषना योग, आभियोगिक-
 पराभव करवाना योग, वशाकरण-वशीकरण योग, कौतुककर्म-सौभाग्यवर्द्धक
 स्नान वगैरेना योग, भूतिकर्म-मन्त्र वगैरथा अभिमन्त्रित करीने लम्भ
 (राणोडी) तु प्रक्षेपण रूप योग तेमन्त्र औषधीओना भूग, कद, त्वक (छाल)
 तेमन्त्र लता, शिलिका-तृण विशेष गोली, औषध, लैषज्य वगैरे वस्तुओना
 योग तनारा जेनामा चाकस आओये न हरो ओटला भाटे तमे कृपा करीने
 ओमावा गमे ते योग मन चाकस आपा क जेना सेवनथा हु करी तेतवि
 यतनी धरि. शत जिम यतनाः यत्ने मनोम थर्ष लोडि

अज्जाओ' इति, तत्त=तस्मात् कारणात् यूय रसु हे आर्याः ! 'मिन्त्रियाओ' शिशिता=शिक्षां प्राप्ता, 'बहुणायाओ' बहुज्ञाताः=अनेकशास्त्रज्ञाननिपुणाः 'बहुपठियाओ' बहुपठिता=नानाविधविद्याकुशलाः स्यः पुनः 'बहुणि गामागर जाय अदिहह' बहूनि ग्रामाकर यावत् आदिण्डय=बहुपु ग्रामाकरनगरादिषु परि भ्रमण कुरुष । तथा च 'बहुण राईसर जाय गिहाइ अणुपरिमड' बहूना राजेश्वर यावद् गृहाणि अनुप्रविश्य=हे आर्याः ! यूय बहूना राजेश्वर तत्परश्रेष्ठि सेना-पत्यादीना गृहे प्रवेश कुरुष, 'त' तत्=तस्मात् कारणात् 'अत्थि अइ मे अज्जाओ।' अस्ति आइ युष्माकमार्या ! 'आइ' इति वाक्यालङ्कारे देशी शब्दः । हे आर्याः ! अस्ति 'केइ कहिं चि' कोऽपि कुत्रचित्=युष्माक ज्ञानविषये 'चुन्नजोए वा' चूर्णयोगो वा=चूर्णानां द्रव्यचूर्णानां योगः, स्तम्भनादिकर्मकारी, 'मतजोए वा' मन्त्रयोगो वा=मन्त्राणां योगो व्यापारो वा वशीकरणादि मन्त्रयोग 'कम्मणजोए

और देखने की उनकी बात ही क्या कहें इस लिये हे आर्याओ ! आप सब तो शिक्षित हैं, बहुज्ञाता हैं—अनेक शास्त्रों के ज्ञानसे निपुण हैं—बहुपठित हैं—नाना प्रकार की विद्याओं में कुशल हैं—अनेक ग्राम, आकर आदि स्थानों में विहार करती रहती हैं, अनेक राजेश्वर आदिकों के घरों में आती जाती रहती हैं (त अत्थिआइ मे अज्जाओ) तो हे आर्याओ ! (केइ कहिं चि चुन्नज्जोएवा) कहीं कोई चूर्ण योग—द्रव्य चूर्णों का स्तम्भनादि कर्मकारी योग (मतजोए वा कम्मणजोए वा हिय उड्डावणे वा, काउड्डावणे वा आभिओगिए वा वसीकरणे वा, कोउयकम्मे वा, भूइकम्मे वा मूले, कदे छल्ली, वल्ली, सिलिया, वा, गुलिया वा, ओसहे वा, भेसज्जे वा, उवलद्वपुन्वे वा जेणाह तेतलिपुत्त स्स पुणरवि इट्ठा ५ भवेज्जामि) मन्त्र योग—वशीकरण आदि मन्त्रों का

तो बात क्या रही ? अथी हे आर्याओ तमे सौ शिक्षिता हो, बहुज्ञाता हो—अनेक के धरु शास्त्रोंना ज्ञानथी निपुण हो, बहुपठिता हो—अनेक ज्ञानानी विद्याओमा कुशल हो, धरु गाम, आकर स्थानोमा विहार करता रहे हो, अने धरु राजेश्वर वगेरना मडेलोमा आवण करता रहे हो (त अत्थि आइ मे अज्जाओ) तो हे आर्याओ ! (केइ कहिं चि चुन्नज्जोएवा) क्याक गमे ते चूर्ण योग—द्रव्य चूर्णोंना स्तम्भन वगेरना योग,

(मतजोएवा कम्मणजोए वा हिय उड्डावणे वा, काउड्डावणे वा अभि ओगिए वा वसीकरणे वा, कोउयकम्मे वा, भूइकम्मे वा मूले कदे छल्ली वल्ली सिलिया, वा गुलिया वा, ओसहे वा, भेसज्जे वा उवलद्वपुन्वे वा जेणाह तेतलि पुत्तस्स पुणरवि इट्ठा ५ भवेज्जामि)

वा 'कार्मणयोगो वा=उच्चाटनादिकर्मयोगो वा, 'ह्रिय उद्धावणे वा'=हृदयो-
 ङ्गायन वा=चित्तार्पकवस्तुविशेषो वा 'काउद्गायने वा' कायोद्गायन वा=शरीरा-
 कर्षकवस्तुविशेषो वा 'आभियोगिण वा' आभियोगिणो वा,=पराभवकरणयोगो
 वा, 'वशीकरणे वा' वशीकरण वा=वशीकरणयोगो वा, 'कौतुक-
 कर्म वा=सौभाग्यवर्द्धकस्नानादि वा 'भूइकर्म वा' भूतिकर्म वा=मन्त्राभिमन्त्रित-
 भस्ममन्त्रेण वा तथा-औषधीना 'मूले' मूलम् 'कदे' कन्दः 'छल्ली' त्वक्
 'बल्ल्डी' लता 'सिलिया वा' शिलिका=तृणविशेषः, 'गुलिया' गुलिका=
 गुटिका 'जोसहे वा भेसज्जे वा' औषध वा भेषज्य वा, इत्यादिक वस्तुजात
 युग्माभिः 'उपलद्धपुत्रे' उपलब्धपूर्वम्=प्राप्तपूर्वम्, हे आर्याः । भवत्य एषु किमपि
 उपलब्धपूर्वा अवश्य भवेयुः, तत्कृपया मह्यमर्षय, 'जेगाह' येनाहम्, यत्सेवनादह
 तैत्तिलिपुत्रस्य पुनरपि इष्टा कान्ता मियामनोज्ञामनोऽमा भवेयम् । ततः खलु वा
 आर्या. पोडिलीया एवमुक्ता. सत्यो द्वात्रपि हस्तो कर्णे स्यापयन्ति, स्थापयित्वा

योग कार्मण योग-उच्चाटन आदि मन्त्रो का योग हृदयोद्गीयन-
 चित्तार्पक वस्तु विशेष का योग, कायोद्गायन-शरीराकर्षक वस्तु
 विशेषका योग, आभियोगिक पराभव करन का योग, वशीकरण-
 वशीकरण योग, कौतुक कर्म-सौभाग्यवर्द्धक स्नान आदि का योग,
 भूति कर्म-मन्त्रादि से अभिमन्त्रित भस्म के प्रक्षेपण करने रूप योग तथा
 औषधियों के मूल, कद तक-डाल तथा लता, शिलिका-तृण विशेष
 गोली, औषध-भेषज इत्यादि वस्तुओं का योग आपके देखने में अवश्य
 आया होगा-इस लिये कृपाकर इनमें से कोई न कोई योग आप हन
 अवश्य-अवश्य प्रदान करे कि जिससे म-जिम के सेवन से मैं-तैत्त-
 लिपुत्र को पुनरपि इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ एव मनोम बन जाऊँ (तृण
 ताओ अज्जाओ पाटिलाए एव बुत्ताओ समाणाओ दावि ह्थे कग्ने ठवे ति,

मन्त्रयोग-वशाकरण वगैरे मन्त्रोना योग-कार्मणयोग, उच्चाटण वगैरे
 मन्त्रोना योग, हृदयोद्गायन-चित्तार्पक वस्तु विशेषना योग, आभियोगिक-
 पराभव करवाना योग, वशाकरण-वशीकरण योग, कौतुकर्म-सौभाग्यवर्द्धक
 स्नान वगैरेना योग, भूतिकर्म-मन्त्र वगैरथी अभिमन्त्रित करीने लम्भ
 (राजोडी) तु प्रक्षेपण रूप योग तेमज्ज औषधीओना मूल, कद, त्वक (छाल)
 तेनज्ज लता, शिलिका-तृण विशेष गोणी, औषध, भेषज्य वगैरे वस्तुओना
 योग तनारा तेवामा चाक्खल आओवा न हरे ओटला भाटे तमे कृपा करीने
 ओमावा गमे ते योग मन थोक्कम आपा डे नेना तेनथा हु करी तेतति
 चन्ती त्ति पात, प्रिय, मनोज्ञ अने मनोम थर्ष लडि

पोट्टिलाम् एवमवदन-य खलु हे देवानुप्रिये । श्रमण्यो निर्ग्रन्थ , वायाभ्यन्तरग्रन्थि
रहिता , यावद् गुप्तवह्नवारिण्यः, नो खलु कल्पतेऽस्मान्म् ' एयप्पयार ' एतत्क-
कार=मणोरपि ' निसामित्तए ' निशामयितु=श्रोतु न कल्पत इति पूर्वण सम्बन्धः ।
' अद्द इति सम्बोधने ' हे पोट्टिले ! किं=कथ पुन, ' उवदिसित्तए वा ' उपदेशदुम्
वा, स्वयम् ' आयरित्तए वा ' आचरित्तु या कल्पते । न कल्पतइत्यर्थः, तत्र खलु
तव हे देवानुप्रिये ! विचित्र केवलपन्नत्त धम्म पडिकरिज्जामो) ततः खलु सा पोट्टिला

ठावित्ता पोट्टिल एव वयासी-अम्हेण देवाणुप्पिया ! समणीओ निग्गधीओ
जाव गुत्तवभयारिणीओ, नो खलु कप्पइ अम्ह एयप्पयारकन्नेहि वि
निसामित्तए किमग उवदिसित्तए वा, आयरित्तए वा । अम्ह ण तव
देवाणुप्पिया ! विचित्र केवलपन्नत्त धम्म पडिकरिज्जामो) इस प्रकार
उस पोट्टिला के द्वारा कहीं गई उन आर्याओं ने अपने दोनों कानोंपर
हाथ रख लिये-और रख कर पोट्टिला से इस प्रकार कहने लगीं-हे
देवानुप्रिये ! हम तो निर्ग्रन्थ श्रमणियाँ हैं, नव कोटि से पूर्ण ब्रह्मचर्यको
हम पालती हैं । हमें तुम्हारी ऐसी याते कानों से सुनना भी कल्पित
नहीं हैं तो फिर हे पुत्रि ! हम इनका उपदेश तुम्हें कैसे दे सकते हैं-
और स्वयं भी इनका आचरण कैसे कर सकता हैं । अर्थात् इन बातों
का उपदेश देना और स्वयं इनको अपने आचरण में लाना यह सब
हमारे कल्प के अनुसार निषिद्ध है । हम तो हे देवानुप्रिये ! तेरे हितके

(तएण ताओ अज्जाओ पोट्टिलाए एववुत्ताओ समाणीओ दो वि हत्ये कन्ने
उवति, ठावित्ता पोट्टिल एव वयासी अम्हेण देवाणुप्पिया ! समणीओ निग्गधीओ
जाव गुत्तवभयारिणीओ, नो खलु कप्पइ अम्ह एयप्पयारकन्नेहि वि निसामित्तए
किमग उवदिसित्तए वा, आयरित्तए वा ! अम्ह ण तव देवाणुप्पिया ! विचित्र
केवलपन्नत्त धम्म पडिकरिज्जामो)

आ प्रभाण्णे पोट्टिलानी वात सालणीने ते आर्याओओ पोताना धने
धाने उपर हाथ मूडी दीधा अने मूडीने ओम उडेवा लागी डे देवानुप्रिये !
अने तो निर्ग्रन्थ श्रमण्योओ छोओ नववाद सडित ब्रह्मचर्यनु अने पालन
करीओ छोओ डे पुत्रि ! तमारी ओवी वाने अमारा माटे जनधी सालणवी
पणु योग्य वेणाय नहि त्यारे तेना विशेषे उपदेशनी वात तो साव अयोग्य
छे अने आ विशेषे तमने कोध पणु नतने उपदेश पणु आपी शक्रीओ नहीं
तो पछी नते आनु आथरणु केवी रीते करी शक्रीओ ? ओट्ठे के आ षाण
तने उपदेश आपणे तेमण पोते आनु आथरणु वरु ते

ता आर्या एवमवादीत्-इच्छामि खलु हे आर्याः । युष्माकमन्तिके केवलिप्रज्ञप्त धर्म निशामयितुम्=श्रोतुम् । ततः खलु सा पोष्टिला धर्म श्रुत्वा ' निसम्म ' निशम्य=हृदयेनाधार्य हृष्टतुष्टा एवमवादीत्-श्रद्धामि खलु हे आर्या ! नैर्ग्रन्थ्य प्रवचन यावत् ' से ' तत् तथैव यथैतद् यूय वदथ । हे आर्याः ! ' इच्छामिण ' इच्छामि खलु अह युष्माकमन्तिके ' पचाणुव्वइय जाव गिहिधम्म ' पञ्चाणुव्वतिक यावत् गृहिधर्म ' पडिवज्जित्तए ' प्रतिपत्तु=स्वीकर्तुम् । अनन्तर ता आर्या एवमवा

लिये विचित्र केवल प्रज्ञप्त धर्मका उपदेश कहते हैं (सो तू सुन)- (तएण सा पोष्टिला ताओ अज्जाओ एव वयासी इच्छामि ण अज्जाओ ! तुम्ह अतिण केवलपन्नत्ते धम्म निसामेत्तए-तएण ताओ अज्जाओ पोष्टिलाण विचित्तधम्म परिकहेति) उनकी इस प्रकार बात सुन कर उस पोष्टिलाने उनसे कहा-हे आर्याओ ! मैं आप लोगों के मुख से केवल प्रज्ञप्त धर्म सुनना चाहती हू । पोष्टिला की ऐसी प्रार्थना सुन कर उन आर्याओं ने उस पोष्टिला के लिये विचित्र केवल प्रज्ञप्त धर्म सुनाया (तएण सा पोष्टिला धम्म सोच्चा निसम्म हट्टतुट्टा एव वयासी) उन के मुखसे केवल प्रज्ञप्त धर्म सुन कर और उसे अपने हृदयमे अवघुत कर अत्यन्त हर्षित एव सतुष्ट हूई उस पोष्टिलाने उनसे ऐसा कहा (सदहामि ण अज्जाओ ! णिग्गथ पावयणं जाव से जहिय तुव्वे वयह, इच्छामि ण अह तुव्व अतिण पचाणुव्वइय जाव गिहिधम्म पडिवज्जित्तए-अहासुह, तएण सा पोष्टिला तासि अज्जाण अतिण पचाणुव्वइय

भुग्गथ अयोग्य गणाय छे छे देवानुप्रिये ! अमे तो तारा छित भाटे विचित्र केवलिप्रज्ञप्त धर्मने उपदेश आपीअे छीअे तेने तुं सालण

(तएण सा पोष्टिला ताओ अज्जाओ एव वयासी इच्छामि ण अज्जाओ ! तुम्ह अतिण केवलपन्नत्ते धम्म निसामेत्तए-तएण ताओ अज्जाओ पोष्टिलाण विचित्त धम्म परिकहेति)

तेमनी आ नतनी वात सालणीने ते पोष्टिलाअे तेमने अेम कहुं छे छे आर्याअे । तमारा भुग्गथी हुं देवणी प्रज्ञप्त धर्मने सालणवा धम्म छु पोष्टिलानी अेवी विनती सालणीने ते आर्याअेअे तेने विचित्र केवलिप्रज्ञप्त धर्मने उपदेश आअे । (तएण सा पोष्टिला धम्म सोच्चा निसम्म हट्ट-तुट्टा एव वयासी) तेमना भुग्गथी देवणी प्रज्ञप्त धर्मनु श्रवणु करीने तेने हृदयभा धारणु करीने भूण अे हर्षित अने सतुष्ट थती ते पोष्टिलाअे तेमने अेम कहुं छे

(सदहामिण अज्जाओ ! णिग्गथ पावयणं जाव से जहिय तुव्वे वयह, इच्छामि ण अह तुव्व अतिण पचाणुव्वइयं जाव गिहिधम्म पडिवज्जित्तए-अहा-

पोट्टिलाए एवमवदन-उय खलु इ देवानुप्रिये । अमण्यो निर्ग्रन्थ, प्राणाभ्यन्तरग्रन्थि
रहिता, यावद् गुप्तब्रह्मचारिण्यः, नो खलु कल्पतेऽस्माकम् 'एयप्पयार' पतव-
कार=अणोरपि 'णिसामित्तए' निशामयितु=श्रोतु न कल्पत इति पूर्ण सम्बन्धः ।
'अद्द इति सम्बोधने' हे पोट्टिले ! किं=कथ पुन 'उवदिसित्तए वा 'उपदेशदुष्-
वा, स्वयम् 'आयरित्तए वा' आचरितु या कल्पते । न कल्पतइत्यर्थः, वय खलु
तव हे देवानुप्रिये ! विचित्र केवलपन्नत्त धम्म परिक्खयामः । ततः खलु सा पोट्टिला

ठावित्ता पोट्टिल एव वयासी-अम्हेण देवाणुप्पिया । समणीओ निग्गथीओ
जाव गुत्तवभयारिणीओ, नो खलु कप्पइ अम्ह एयप्पयारकन्नेहि वि
निसामित्तए किमग उवदिसित्तए वा, आयरित्तए वा । अम्ह णं तव
देवाणुप्पिया ! विचित्त केवलपन्नत्त धम्म पडिक्खिज्जामो) इस प्रकार
उस पोट्टिला के द्वारा कहीं गईं उन आर्याओं ने अपने दोनों कानों पर
हाथ रख लिये-और रख कर पोट्टिला से इस प्रकार कहने लगीं-हे
देवानुप्रिये ! हम तो निर्ग्रन्थ अमणियाँ हैं, नव कोटि से पूर्ण ब्रह्मचर्यको
हम पालती हैं । हमें तुम्हारी ऐसी बातें कानों से सुनना भी कल्पित
नहीं हैं तो फिर हे पुत्रि ! हम इनका उपदेश तुम्हें कैसे दे सकते हैं-
और स्वयं भी इनका आचरण कैसे कर सकता हैं । अर्थात् इन बातों
का उपदेश देना और स्वयं इनको अपने आचरण में लाना यह सब
हमारे कल्प के अनुसार निषिद्ध है । हम तो हे देवानुप्रिये ! तेरे हितके

(तएण ताओ अज्जाओ पोट्टिलाए एववुत्ताओ समाणीओ दो वि हत्थे कन्ने
ठवेत्ति, ठावित्ता पोट्टिल एव वयासी अम्हेण देवाणुप्पिया ! समणीओ निग्गथीओ
जाव गुत्तवभयारिणीओ, नो खलु कप्पइ अम्ह एयप्पयारकन्नेहि वि निसामित्तए
किमग उवदिसित्तए वा, आयरित्तए वा ! अम्ह णं तव देवाणुप्पिया ! विचित्त
केवलपन्नत्त धम्म पडिक्खिज्जामो)

आ प्रमाणु पोट्टिलानी वात सालणीने ते आर्याओअे पोताना अने
दाने उपर हाथ भूझी दीधा अने भूझीने अेम कडेवा लागी डे देवानुप्रिये !
अने तो निर्ग्रन्थ अमण्योअे थीअे नववाड सद्धित प्रहाय्यर्यनु अने पालन
करीअे थीअे डे पुत्रि ! तमारी अेवी वाने अमारा माटे जनधी सालणीअे
पणु येअ्य लेआय नहि त्यादे तेना विशेषे उपदेशनी वात तो साव अयेअ्यअ
छे अने आ विशेषे तमने केअं पणु जतने उपदेश पणु आपी शकीअे नही
तो पछी जते आनु आयरणु केवी रीते करी शकीअे ? अेटले के आ आअ
तने उपदेश आपवे तेमअ पोते आनु आयरणु उरवं ते पणु अमारा कल्प

मूलम्—तएणं तीसे पोट्टिलाए अन्नया वयाइं पुव्वरत्तावर-
त्तवालस्मयसि वुडुवजागरिय जागरमाणीए अयमेयारुव्वे
अज्झत्थिए जाव समुप्पन्ने । एव खल्लु अह तेयलिपुत्तस्म पुट्ठि
इट्ठा ५ आसि, इयाणिं अणिट्ठा ५ जाव परिभांग वा, त सेय
खल्लु मम सुव्वयाणं अज्जाणं अतिए पव्वइत्तए, एव सपेहेइ,
सपेहिन्ता, कल्ल जाव पाउप्पभायाए जेणेव तेयलिपुत्ते तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छिन्ता, - कयलपरिग्गहिय दसनहं
सिरसावत्त मत्थए अंजलिं कट्ठु एवं वयासी — एव खल्लु
देवाणुप्पिया । मए सुव्वयाण अज्जाण अंतिए धम्मे णिसंते
जाव अब्भणुन्नाया पव्वइत्तए । तएण तेयलिपुत्ते पोट्टिले एव
वयासी—एव खल्लु तुमं देवाणुप्पिए । मुंडा पव्वइया समाणी
कालमासे काल किच्चा अन्नतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उव्व-
ज्जिहिसि, तं जइ णं तुम दवाणुप्पिए । मम ताओ देवलो
याओ आगम्म केवलि पन्नत्ते धम्मे चांहेहि, तोह विसज्जेमि,
अह णं तुम मम ण सवोहेसि, तो ते ण विसज्जेमि । तएण
सा पोट्टिला तेयलिपुत्तस्स एयमट्ठ पडिसुणेइ । तत. खल्लु नेत-
लिपुत्ते विपुल असण४ उव्वक्खडावेइ, उव्वक्खडावित्ता, मित्तणाइ
जाव आमतेइ, आमात्तिन्ता, जाव सम्माणेइ, सम्माणित्ता, पो-
ट्टिल पहाय जाव पुरिससहस्सवाहिणि सोय दुरूइ, दुरूहिन्ता।

लाभेमाणी विहरइ) इस् प्रकार अमणोपामिका वनी हुई वह पोट्टिला
निर्ग्रन्थ अमणज्जोक्कोएव निर्ग्रन्थ अमणियो को दान-चारों प्रकार का
आहार देती हुई अपना समय व्यतीत करने लगी ॥ सू० ७ ॥

दिपुः- अहामुह ' यथा सुख, हे देवानुप्रिये । । तत खलु सा पोट्टिला तासा
 मार्याणामतिके पञ्चाणुप्रतिक यावद् गृहधर्मप्रतिपद्यते, पुनस्ता आर्या वन्दते
 नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यत्या प्रतिविसर्जयति । ततः सा पोट्टिलाश्रमगोपासिका
 जाता, ' नात्र पडिलामेमाणि ' यावद् प्रतिलम्बयन्ती=निर्ग्रन्थेभ्यः श्रमणेभ्यः
 श्रमणीभ्यश्च चतुर्विधमाहार ददती विहरति ॥ मृ० ७ ॥

जाव गिहधम्म पडिवज्जेह, ताओ अज्जाओ चदह, णमसह वदित्ता
 णमसित्ता पडिविसर्जेह) हे आर्याओ ! म इस निर्ग्रन्थ प्रवचन पर
 श्रद्धा करती हू यावत् ऐसा मानती हू कि यह निर्ग्रन्थ प्रवचन जैसा
 आप कहती है वैसा ही है । अतः हे आर्याओ ! अथ में आपके पास
 पचाणु व्रत मात शिक्षाव्रत आदि रूप १२ चारह प्रकार का गृहस्थ धर्म
 को धारण करना चाहती हू । इस तरह पोट्टिला की भावना जान कर
 उन आर्याओ ने उससे कहा-यथा सुख देवानुप्रिये ! तुझे तिस तरह
 सुख हो वैसा तू कर-श्रयस्कर कर्ममें विलम्ब करना योग्य नहीं है-इस
 प्रकार उन आर्याओंकी आज्ञा प्राप्त कर उस पोट्टिलाने उन्हीं आर्याओं
 के पास से जावकधर्म पच अणुण पंच मात शिक्षाव्रतों को धारण कर
 लिया । इस प्रकार श्रमगोपासिका बनी हुई उस पोट्टिला ने उन आर्याओं
 को वन्दना एव नमस्कार की-वन्दना नमस्कार करके फिर उन्हें विस
 र्जित कर दिया । (तएण सा पोट्टिला समगोवासिया जाया जाव पडि

सुह तएण सा पोट्टिला तस्सि-अज्जाण आतेण पचाणुवश्य जाव गिहधम्म पडि
 वज्जेह ताओ अज्जाओ चदह, णमसह वदित्ता णमसित्ता पडिविसर्जेह)

हे आर्याओ ! आ निर्ग्रन्थ प्रवचन उपर हू श्रद्धा कर हू यावत्
 आ निर्ग्रन्थ प्रवचन जैसा आप कहती हैं वैसा ही है । अतः हे आर्याओ !
 अथ में आपके पास पचाणु व्रत मात शिक्षाव्रत आदि रूप १२ चारह प्रकार का
 गृहस्थ धर्म को धारण करना चाहती हू । इस तरह पोट्टिला की भावना जान कर
 उन आर्याओं ने उससे कहा-यथा सुख देवानुप्रिये ! तुझे तिस तरह
 सुख हो वैसा तू कर-श्रयस्कर कर्ममें विलम्ब करना योग्य नहीं है-इस
 प्रकार उन आर्याओंकी आज्ञा प्राप्त कर उस पोट्टिलाने उन्हीं आर्याओं
 के पास से जावकधर्म पच अणुण पंच मात शिक्षाव्रतों को धारण कर
 लिया । इस प्रकार श्रमगोपासिका बनी हुई उस पोट्टिला ने उन आर्याओं
 को वन्दना एव नमस्कार की-वन्दना नमस्कार करके फिर उन्हें विस
 र्जित कर दिया । (तएण सा पोट्टिला समगोवासिया जाया जाव पडि

रिय जागरमाणीए' कुडुम्नजागरिकां जाग्रत्या अयमेतद्गुण, 'अज्जत्थिए जाव' आध्यात्मिको यावत्=आध्यात्मिकः=आत्मगतो यावन्मनोगत सकल्प समुत्पन्नः। सकल्पप्रकारमाह-एव खलु अहं तैत्तिलिपुत्रस्य पूर्वम् इष्टा कान्ता प्रिया, मनोज्ञा मनोऽमा, आमम्, इदानीमनिष्टा, अकान्ता, अप्रिया, अमनोज्ञा, अमनोऽमा यावत् परिभोगं वा । अस्याभिप्रायः-अहो मनुष्याणां मनोवृत्तेरस्थिरता । पूर्व, यस्याद्गुण इष्टा कान्ता प्रियाऽदिकाऽसम्, सैवाहमस्यानिष्टाऽकान्ताऽप्रियादिका जाताऽस्ति । अयं तैत्तिलिपुत्रो मम नाम गोत्रश्रवणमपि नैच्छति किं पुनर्ममवर्दान् मया सह परिभोगं वाञ्छेत् अपितु नेत्यर्थः । 'त' तत्=तस्मात्कारणात् 'सेय' 'सि') रात्रि के पिछले भागमें (कुडुम्नजागरिय-जागरमाणीए अयमेत्या-रूवे अज्जत्थिए जाव समुत्पन्ने) कुडुम्न की, चिन्ता से जाग रहा थी इस प्रकार का आध्यात्मिक यावन्मनोगत सकल्प उत्पन्न हुआ- (एव, खलु अहं तैत्तिलिपुत्रस्य पूर्वम् इष्टा कान्ता प्रिया, मनोज्ञा एव मनोऽमा, आमम्, इदानीमनिष्टा, अकान्ता, अप्रिया, अमनोज्ञा, अमनोऽमा यावत् परिभोगं वा । तं सेय खलु मम सुव्ययाण अज्जाण अतिए पवइत्तए) मैं पहिले तैत्तिलिपुत्र को बहुत ही अधिक इष्ट, कान्त प्रिय, मनोज्ञ एव मनोम धी-परन्तु अब मैं ऐसी नहीं रही हूँ-अनिष्ट आदि बन गई हूँ । और बातों की बात ही क्या है-वे तो अब मेरा मुख तरु नहीं देखना चाहते हैं-देखो मनुष्यों की मनोवृत्ति कितनी अस्थिर है-पूर्व में जिसे इष्ट, कान्त, प्रिय, आदि रूप थी-अब वही मैं उसके लिये अनिष्ट अप्रिय आदि बन गई हूँ । यह तैत्तिलिपुत्र तो मेरा नाम गोत्र तक भी सुनना नहीं चाहता है तो फिर मेरे साथ रहने की तो चाहना ही

आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उत्पन्नो भवे

(एव खलु अहं तैत्तिलिपुत्रस्य पूर्वम् इष्टा कान्ता प्रिया, मनोज्ञा एव मनोऽमा, आमम्, इदानीमनिष्टा, अकान्ता, अप्रिया, अमनोज्ञा, अमनोऽमा यावत् परिभोगं वा तं सेय खलु मम सुव्ययाण अज्जाण अतिए पवइत्तए)

पडेला हु तैत्तिलिपुत्रने भूमणं धृष्टकाल, प्रिय, मनोज्ञ अने मनोम डट्टी पणु डट्टे हु तेमना मटे तेनी रडी नथी अनीए वगेरे थध पडी छु मारी साथे वातथीतनी वात तो हुं रडी पणु तेओ मारु मेा पणु लेवा मागता नथी भेरणर पुभोनी मनोवृत्ति डेट्टी अथी यथय डोय छे ? नेने पडेला ने हु धंठ, हात, प्रिय, वगेरेना इपम डट्टी, डवे तेने तेव हु अनिष्ट अप्रिय वगेरे थध पडी छु आ तैत्तिलिपुत्र मारा नामगोत्र सुद्धा साध प्णवा मागता नथी त्यारे अने लेवानी अने मारी साथे रहेवानी तो तेमने पाछवा पडेःरमा (कुडुम्नजागरिय जागरमाणीए अयमेत्यारूवे अज्जत्थिए जाव समुत्पन्ने) धर-गृहस्थीना विचाररती लागी रडी डट्टी तारे-आ जातनी

मित्तणाइ जाव संपरिवुडे सविविष्टिए जाव रवेणं नेयलिपुरस्स
 मज्झं मज्झेणं जेणेव सुव्वयाणं उवस्सए तेणेव उवागच्छइ ।
 पोट्टिला सीयाओ पच्चोरुहइ । तेतलिपुत्ते पोट्टिलं पुरओ कहु
 जेणेव सुव्वया अजाओ तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वंदइ
 नमसइ, वदित्ता नमसित्ता एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया ।
 मम पोट्टिला भारिया इट्ठा ४, एसणं, संसारभउव्विगा जाव
 पव्वइत्तए, पडिच्छतु णं देवाणुप्पिया ! सिस्सिणीभिकखं अहा-
 सुहं ना पडिवध करेहि । तएण सा पोट्टिला सुव्वयाहि अज्जाहि
 एवंवुत्ता समाणा हट्टुट्ठा उत्तरपुरत्थिम दिसीभाग अवक्कमइ,
 अवक्कमित्ता सयमेव आभरणमह्वालकार ओमुयइ, ओमुइत्ता,
 सयमेव पच्चमुट्टिय लोयं करेइ, करित्ता, जेणेव सुव्वयाओ तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वदइ, णमसइ, वदित्ता णमसित्ता,
 एव वयासी-आलित्ते णं भते-। लोए एव जहा देवाणदा जाव
 एक्कारसअगाइ अहिज्जइ, बहूणि वासाणि सामन्नरियागं पाउणइ,
 पाउणित्ता, मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झोसेत्ता सट्ठि भत्ताइ
 अणसणाए छेदित्ता, आलोइयपडिक्कता समाहिपत्ता कालमासे
 कालकिच्चा अणतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववण्णा ॥सू०८॥

टीका—‘तएणं तीसे’ इत्यादि । तत्र खलु तस्या पोट्टिलाया, ‘पुव्व
 रत्ताउरत्तकालसमयसि’ पूर्वरात्रापररात्रकालसमये=रात्रे पश्चिमेभागे ‘कुडुव नाग

तएण—‘तीसे पोट्टिलाए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (तीसे पोट्टिलाए) उम पोट्टिला के
 जघ कि वह (अन्नया क्याइ किमी एक दिन (पुव्वारत्तकालसम

‘तएण-तीस पोट्टिलालाए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) त्पार पथी (तीसे पोट्टिलाए) ते पोट्टिलाने-के न्यादे ते
 (अन्नया क्याइ) उध अेक द्विसे () सा

रिय जागरमाणीए' कुड्डुजागरियां जाग्रत्या अयमेतद्भूय 'अज्झत्थिए जाव' आध्यात्मिको यावत्=आध्यात्मिक=आत्मगतो यावन्मनोगत सकल्प समुत्पन्नः । सकल्पप्रकारमाह-एव खलु अहं तैत्तिलिपुत्रस्य पूर्वम् इष्टा कान्ता प्रिया, मनोज्ञा मनोऽमा आमम्, इदानीमनिष्टा, अकान्ता, अप्रिया, अमनोज्ञा, अमनोऽमा यावत् परिभोग वा । अस्याभिमान'-अहो मनुष्याणा मनोवृत्तेरस्थिरता । पूर्व, यस्याहम् इष्टा कान्ता प्रियाऽदिकाऽस्मि, सैवाहमस्यानिष्टाऽकान्ताऽप्रियादिका जाताऽस्मि । अयं तैत्तिलिपुत्रो मम नाम गोत्रश्रवणमपि नेच्छति किं पुनर्ममदर्शनं मया सह परिभोग वाञ्छेत अपितु नेत्यर्थ' । 'त' तत्=तस्मात्कारणात् 'सेय' यस्मि) रात्रि के पिछले भागमें (कुड्डुजागरिय-जागरमाणीए अयमेया-रूबे अज्झत्थिए जाव समुत्पन्ने) कुड्डुव की, चिन्ता से जाग रहा थी इस प्रकार का आध्यात्मिक यावन्मनोगत सकल्प उत्पन्न हुआ-(एव खलु अहं तैत्तिलिपुत्रस्स पुंवि इट्ठा ५ आसि इयाणिं अणिट्ठा ५ जाव परिभोग वा, त सेय खलु मम सुव्वयाण अज्जाण अतिए पव्वइत्तए) मैं पहिले तैत्तिलिपुत्र को बहुत ही अधिक इष्ट, कान्त प्रिय, मनोज्ञ एवं मनोम थी-परन्तु अब मैं ऐसी नहीं रही हूँ-अनिष्ट आदि बन गई हूँ । और बातों की बात ही क्या है-वे तो अब मेरा मुख तक नहीं देखना चाहते हैं-देखो मनुष्यों की मनोवृत्ति कितनी अस्थिर है-पूर्व मैं जिसे इष्ट, कान्त, प्रिय, आदि रूप थी-अब वही मैं उसके लिये अनिष्ट अप्रिय आदि बन गई हूँ । यह तैत्तिलिपुत्र तो मेरी नाम गोत्र तक भी सुनना नहीं चाहता है तो फिर मेरे साथ रहने की तो चाहना ही

आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उद्भवोऽपि ।

(एव खलु अहं तैत्तिलिपुत्रस्स पुंवि इट्ठा ५ आसि इयाणिं अणिट्ठा ५ जाव परिभोग वा त सेय खलु मम सुव्वयाण अज्जाण अतिए पव्वइत्तए)

पडेला हु तैत्तिलिपुत्रने भूमज धंधकात, प्रिय, मनोज्ञ अने मनोम हुती पणु हुवे हु तेमना मटे तेयी रही नथी अनीए वगेरे थध पडी हु भारी साथे वातथीतनी वात तो दूर रही पणु तेयो माइ भो पणु जेवा भागता नथी जेरपर पुन्धानी मनोवृत्ति केटली अथी यथा डोय छे ? जेने पडेला जे हु धंठ, कात, प्रिय, वगेरेना इपमा हुती, हुवे तेने तेज हु अनिष्ट अप्रिय वगेरे थध पडी हु आ तैत्तिलिपुत्र भारा नामगोत्र सुद्धा साल जेवा भागता नथी त्थारे भने जेवानी अने भारी साथे रहेवानी तो तेमने पाछवा पडेला (कुड्डुजागरिय जागरमाणीए अयमेयाहवे अज्झत्थिए जाव समपन्ने) मम-जागरमाणीना विचारवन्ती लगी रही हुती त्थारे-आ वातनी

श्रेयः=उचितं खलु मम सुव्रतानामार्याणामन्तिके प्रव्रजितुम्, एव सपत्नते=विचार
यति, सप्रेक्ष्य=विचार्य 'कल्ल जाव पाउप्पभायाए' कल्ल यावत् प्रादुप्पभावा
याम्=मातः सूर्योदयसमये यत्रैव तेतलिपुत्रस्तत्रैव उपागच्छति उपागम्य 'करयल-
परि०' करतलपरीगृहीत मस्तनेऽञ्जलिं कृत्वा एवमवदत्-एव खलु हे देवानुप्रिय !
मया सुव्रतानामार्याणामन्तिकेधर्मः 'णिसते' निशान्तः=श्रुत, 'जाव अमणु

उसे कैसे हो सकती है। इस लिये मुझे अब यही उचित है कि मैं
सुव्रता आर्यिका के पास प्रव्रजित हो जाऊँ। (एव सपेहेइ, सपेहिता
कल्ल जाव पाउप्पभायाए जेणेव तेयलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ) इस
प्रकार जब वह विचार कर चुकी तो विचार करके फिर जब प्रातः काल
हुआ और सूर्य का उदय हो चुका तब जहाँ तेतलिपुत्र था वहाँ पहुँची
(उवागच्छिता करयल० एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! मए
सुव्वघाणं अज्जाणं अतिए धम्मे णिसते जाव अब्भणुन्नाया पव्वइत्तए,
तएण तेयलिपुत्ते पोट्टिल एव वयासी-एव खलु-तुम देवाणुप्पिए !
मुंडा पव्वइया समाणी कालमासे काल किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु
देवत्ताए उववज्जिहिसि, त जइ ण तुम देवाणुप्पिए ! मम ताओ देवलो
याओ आगम्म, केवल्लिपन्नत्ते धम्मे वोहेहि तो ह विसज्जेमि) वहाँ जा
कर उसने दोनों हाथ जोड़ कर उस को नमस्कार किया-बाद में वह
इस प्रकार उससे कहने लगी हे देवानुप्रिय ! बात ऐसी है कि मैंने

हरकारे न शी डोय ? ऐधी भने डवे ऐन येय्य लाजे छे डे डे डु सुव्रता
आर्यिकाओनी पासे प्रव्रजित थय नउ

(एव सपेहेइ, सपेहिता कल्ल जाव पाउप्पभायाए जेणेव तेयलिपुत्ते तेणेव
उवागच्छइ)

आ रीते न्यारे तेणु येअस विचार करी वीधो त्यारे ते सवादे सूर्योदय
थता न्या तेतलिपुत्र अभात्य डतो त्या पडोय्थी

(उवागच्छिता करयल० एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! मए सुव्व
घाण अज्जाण अतिए धम्मे णिसते जाव अब्भणुन्नाया पव्वइत्तए, तएण तेयलिपुत्ते
पोट्टिल एव वयासी-एव खलु तुम देवाणुप्पिए ! मुंडा पव्वइया समाणी कालमासे
काल किच्चा अन्नतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववज्जिहिसि त जइणं तुम देवाणु
प्पिए ! मम ताओ देवलोयाओ आगम्म, केवल्लिपन्नत्ते धम्मे वोहेहि तो ह विसज्जेमि)

त्या न्धने तेणु तेभने णने हाथ नेडीने नमस्कार करी अने त्यारपथी
ते आ प्रभाणु कडेवा लागी डे डे देवानुप्रिय ! मे सुव्रता

णाया पञ्चइत्तए ' यात्रदभ्यनुज्ञाता प्रत्रजितुम्=स धर्मो मम मनसि रुचितः तस्माद् भवताऽभ्यनुज्ञातासती प्रत्रजितुमिच्छामीतिभावः । ततः खलु तेतलिपुत्रः पोट्टिला-मेवमत्रदत्-एव खलु त्व देवानुप्रिये ! मुण्टा प्रत्रजिता सती कालमासे कालं कृत्वाऽन्यतरेषु देवलोकेषु देवतया उपपत्स्यते । ' त ' तदा यदि खलु त्व देवानु प्रिये ! मा ततो देवलोकादागत्य केवलप्रज्ञप्त धर्मं बोधये , ' तोह ' तदाऽह त्वा ' विसज्जेमि ' प्रत्रजितुमाज्ञापयामि । ' अह ण ' अथ खलु यदि खलु त्व मा ' ण सवो-हेसि ' न सरोधयसि=केवलिप्ररूपित धर्मं बोधयितुं प्रतिज्ञां न करोपि ' तो ' तदा ' ते ' त्वा न प्रिसृजामि=प्रत्रजितुं नाज्ञापयामि । ' तएण ' तव खलु=तेतलिपुत्रस्य एतद्गचनश्रवणानन्तम् , सा पोट्टिला तेतलिपुत्रस्य ' एयमट्ट ' एतमर्थ=धर्मं प्रति बोधनरूपमर्थ ' पडिसुणेइ ' प्रतिश्रृणोति=स्वीकरोति । ततः खलु तेतलिपुत्रो विपुलमशनपानखात्रस्वाय चतुर्भिमाहासम् , ' उवक्खडावेइ ' उपस्कारयति= निपादयति , ' उवक्खडावित्ता ' उपस्कार्य ' मित्तणाइ जाव आमतेइ ' मित्रज्ञाति

सुव्रता आर्थिका के पास धर्म का उपदेश सुना है वह धर्म मुझे बहुत ही अधिक रुचिकर प्रतीत हुआ है । इस लिये मैं आपसे आज्ञा लेकर दीक्षित होना चाहती हूँ । पोट्टिला की ऐसी बात सुन कर तेतलिपुत्रने उससे कहा—देवानुप्रिये ! बात ऐसी है कि तुम दीक्षित हो कर जब काल अवसर काल करोगी (यह निश्चित है) अन्यतर देवलोक में देवता की पर्याय से उत्पन्न होओगी—तब यदि देवानुप्रिय ! मुझे वहां से आ कर तुम केवलिप्रज्ञप्त धर्म समझाओ—तो मैं तुम्हें प्रब्रजित होने के लिये आज्ञा दे सकना हूँ (अह ण तुम मम ण सरोहेसि तो ते ण विस ज्जेमि तएण सा पोट्टिला तेयलिपुत्तस्स एयमट्ट पडिसुणेइ, ततः खलु तेयलिपुत्ते विपुल असण ४ उवक्खडावेइ, उवक्खडावित्ता मित्तणाइ जाव

धर्मनो उपदेश साल्लये छे अने ते भने गभी गये छे, अट्टला भाटे हु तमारी आशा मेणीने दीक्षा अडणु करवा धरु छु पोट्टिलानी आ वतनी वात साल्लणीने तेतलिपुत्रे तेने कहु के छे देवानुप्रिये ! तमे दीक्षित थधने न्यारे काणना समये काण करथो अने अन्यतर देवलोकमा देवताना पर्यायथी जन्म पाभथो त्यारे जे तमे छे देवानुप्रिये ! त्याथी आणीने भने केवणि प्रज्ञप्त धर्म समझये तो हु तमने अत्यारे पुशीथी प्रवृत्त थवानी आशा आपी शकु तेम छु

(अह ण तुम मम णं सरोहेसि तो ते ण विसज्जेमि तएणं सा पोट्टिला तेयलि-पुत्तस्स एयमट्ट पडिसुणेइ, ततः खलु तेतलिपुत्ते विपुल अमण ४ उवक्खडावेइ, उवक्खडावित्ता, मित्तणाइ जाव आमतेइ, आमतिता, मित्तणाइ सम्माणित्ता पोट्टिल

श्रेयः=उचितं खलु मम सुव्रतानामार्याणामन्तिके प्रव्रजितुम्, पर मपक्षते=विचार
यति, सप्रेक्ष्य=विचार्य 'कल्ल जाव पाउप्पभायाए' कल्य यावत् प्रादुप्पभावा
याम्=मातः सूर्योदयसमये यत्रैव तेतलिपुत्रस्तत्रैव उपागच्छति उपागत्य 'करयल-
परि०' करतलपरीगृहीत मस्तत्रेऽञ्जलिं कृत्वा एवमवदत्-एव खलु हे देवानुप्रिय !
मया सुव्रतानामार्याणामन्तिके धर्मः 'णिसते' निशान्तः=श्रुत, 'जाव अब्भणु

उसे कैसे हो सकती है। इस लिये मुझे अब यही उचित है कि मैं
सुव्रता आर्थिका के पास प्रव्रजित हो जाऊँ। (एव सपेहेइ, सपेहिता
कल्ल जाव पाउप्पभायाए जेणेव तेयलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ) इस
प्रकार जब वह विचार कर चुकी तो विचार करके फिर जब प्रातः काल
हुआ और सूर्य का उदय हो चुका तब जहाँ तेतलिपुत्र था वहाँ पहुँची
(उवागच्छिता करयल० एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! मए
सुव्वघाणं अज्जाणं अतिए धम्मे णिसते जाव अब्भणुत्ताया पव्वइत्ताए,
तएण तेयलिपुत्ते पोट्टिल एव वयासी-एव खलु-तुम देवाणुप्पिए !
मुडा पव्वइया समाणी कालमासे काल किच्चा अनतरेसु देवलोणसु
देवत्ताए उववज्जिहिसि, त जइ ण तुम देवाणुप्पिए ! मम ताओ देवलो
याओ आगम्म, केवल्लिपन्नत्ते धम्मे वोहेहि तो ह विसज्जेमि) वहाँ जा
कर उसने दोनों हाथ जोड़ कर उस को नमस्कार किया-बाद में वह
इस प्रकार उससे कहने लगी है देवानुप्रिय ! बात ऐसी है कि मैंने

दरकारं शी डाय ? ओधी भने हवे ओण थोय्य लागे छे डे डे सुव्रता
आर्थिकाओनी पासे प्रव्रजित थछ भउ

(एव सपेहेइ, सपेहिता कल्ल जाव पाउप्पभायाए जेणेव तेयलिपुत्ते तेणेव
उवागच्छइ)

आ रीते न्यारे तेहे थोक्कस विचार करी लीघे। त्थारे ते सवारे सूर्योदय
थतां न्या तेतलिपुत्र अभात्य हतो त्या पडोथी

(उवागच्छिता करयल० एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! मए सुव्व
घाण अज्जाण अतिए धम्मे णिसते जाव अब्भणुत्ताया पव्वइत्ताए, तएण तेयलिपुत्ते
पोट्टिल एव वयासी-एव खलु तुम देवाणुप्पिए ! मुडा पव्वइया समाणी कालमासे
काल किच्चा अनतरेसु देवलोणसु देवत्ताए उववज्जिहिसि त जइणं तुम देवाणु
प्पिए ! मम ताओ देवलोयाओ आगम्म, केवल्लिपन्नत्ते धम्मे वोहेहि तो ह विसज्जेमि)

त्या न्धने तेहे तेभने भने हाथ न्धेने नमस्कार कथां भने त्थारपथी
ते आ प्रभाहे कडेवा लागी डे डे देवानुप्रिय ! मे सुव्रता आ ? पासेधी

‘द्रोहः’=आरोह ‘मित्रणाः जात्रे संपरिखुडे’ मित्रज्ञाति पात्र संपरिचृतः=मित्र-
ज्ञातिस्वजनसम्बन्धिपरिजनादिभिर्युक्तः ‘सन्विद्धोऽ’ सर्वद्वयो ‘जात्र रवेण’
‘यात्रद्रवेण’=मेर्यादिनिनादेन सह तैत्तलिपुरस्य मं यमध्येन यत्रैव सुप्रतानामुपाश्रय
स्तत्रैव उपागच्छति । सा पोट्टिला शिबिकातः ‘पंचोरुहइ’ प्रत्यंचरोहति=अवतरति ।
ततः स तैत्तलिपुर पोट्टिला पुरतः कृत्या यत्रैव सुप्रता आर्या तत्रैव उपागच्छति,
उपागत्य, वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवदत्-एवं खलु हे
देवानुप्रियाः मम पोट्टिलाभार्या इष्टा कान्ता प्रिया मनोज्ञा मनोऽमा, वर्तते,

बैठा कर मित्र, ज्ञाति स्वजन सम्बन्धी परिजनो से युक्त होकर अपनी
सम्बन्ध विभूति के अनुसार गाजे वाजेके साथ तैत्तलिपुर नगर के बीचो-
बीच चल कर वह जहाँ सुप्रता आर्यिका का उपाश्रय या वहा पहुँचा ।
(पोट्टिला सीयाओ पंचोरुहइ, तैत्तलिपुरते पोट्टिल पुरओ कट्टु जेणेव
सुप्रया अज्जाओ तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छत्ता, वदइ नमसइ वदित्ता
नमसित्ता एव वयासी, एव खलु देवाणुप्पिया । मम पोट्टिला भारिया इष्टा
५ एसण ससारभउव्विग्गा जाव पव्वइत्तए पडिच्छतु ण देवाणुप्पिया !
सिस्सिणीभिकख अहासुह मा पडिबध करेहि) पोट्टिला शिबिका से
उत्तरी-तैत्तलिपुर पोट्टिलाको आगे करके जहाँ सुप्रता आर्यिका थीं वहाँ
गया । जा कर उसने उनको वंदनाकी नमस्कार किया । वंदना नमस्कार
करके फिर इस प्रकार कहने लगी हे देवानुप्रिये ! यह मेरी पोट्टिला नाम
की पत्नी है । यह मुझे इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ एवं मनोम है । इसने

पालभीमा जेमाडीने मित्र, ज्ञाति, स्वजन सम्बन्धी परिजनोने सथे लधने
ते पोतानी सम्बन्ध विभूति सुप्रतानामुपाश्रयसाथे तैत्तलिपुर नगरनी
‘पंचोरुहइ’ यधने न्या ते सुप्रता आर्यिकोने उपाश्रय इतो त्या पडोऽथे
(पोट्टिला सीयाओ पंचोरुहइ, तैत्तलिपुरते पोट्टिल पुरओ कट्टु जेणेव सुप्रया अज्जाओ
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छत्ता, वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता एव वयासी एव
खलु देवाणुप्पिया । मम पोट्टिला भारिया इष्टा ५ एसण ससारभउव्विग्गा जाव
पव्वइत्तए पडिच्छतु ण देवाणुप्पिया । सिस्सिणीभिकख अहासुह मा पडिबध करेहि)
पोट्टिला पालभीमाथी नीथे उत्तरी पडी, तैत्तलिपुर अभात्य पोट्टिलाने
आश्रय राणीने न्या सुप्रता आर्यिको इती त्या गथे त्या जधने तेणे तेमने
‘वदना तेमज नमस्कार कया, वदना अने नमस्कार करीने तेणे आ प्रभाणु
कट्टु के हे देवानुप्रिये ! आ पोट्टिला नामे भारी पत्नी छे मने जे छिट्ठि कोत,
प्रिय, मनोज्ञ अने मनोम छे जेणे तमारी पासेथी धर्मनु श्रवणु क्युं छे

यावदामंत्रयति, मित्रज्ञातिस्वजनसम्बन्धिपरिजनान् आमंत्रयति, 'आमंत्रिता' आमन्त्रय 'जात्र समाण्ड' यावत्-समानपति=प्रशनेयानादि चतुर्विधाहारण समान्य, 'पोटिल प्हाय जात्र पुरिससहस्सवाहिणि सीअ' पोटिला स्नाता यावत् पुरुषसहस्रवाहिनी शिबिकाम्, 'दूरोहेइ' दूरोहपति=भारोहयति, 'दुस्सहिता'

आमतेइ आमत्तित्ता जाव सम्माण्ड, सम्माणित्ता पोटिल प्हाय जाव पुरिससहस्सवाहिणि सीय दुरूहइ, दुरूहित्ता मित्तणाइ जाव मपडिबुडे सन्विड्डीण जाव रवेण तेयलिपुरस्स मज्झ मज्जेण जेणेव सुव्याण उवस्सए तेणेव उवागच्छइ) यदि तुम मुझे समर्पित नहीं करोगी अर्थात् केवल प्रज्ञप्त धर्म को मुझे समझाने की प्रतिज्ञा नहीं करोगी तो मैं तुम्हे दीक्षित होने की आज्ञा नहीं दूंगा—इस प्रकार के तैतलिपुत्रके इस कथनको उस पोटिलाने स्वीकार कर लिया। अर्थात् मैं देवलोक में जाऊंगा तो वहा से आ कर आप को प्रतिघोध दूंगी इस प्रकार जब पोटिला ने स्वीकार कर लिया। इस के बाद तैतलिपुत्र ने विपुल मात्रा अनंशानादि रूप चारों प्रकार का आहार निर्वपण करवाया-करवा करके फिर उसने अपने मित्र, ज्ञाति, आदि जनो को आमंत्रित किया। मित्र, ज्ञाति, स्वजन सबन्धी परिजनोको आमंत्रित करके यावत् अशन पानादिरूप इस चतुर्विध आहार से उनका सम्मान करके उसने पोटिलाको स्नान करवा कर यावत् उसे पुरुष सहस्रवाहिनी शिबिका पर बैठाया, प्हाय जात्र पुरिससहस्सवाहिणि सीय दुरूहइ दुस्सहिता मित्तणाइ जात्र संपडिबुडे सन्विड्डीण जात्र रवेण तेयलिपुरस्स मज्झ मज्जेण जेणेव सुव्याण उवस्सए तेणेव उवागच्छइ)

जो तमने भने सभाधशे नडि ओट्ठे के जो तमने भने केवणि प्रशप्त धमने समभाववानी प्रतिज्ञा करशे नडि तो तमने हु कोअपणुस जोगोमा पणु हीक्षा स्वीकारवानी आसा आपीश नडि आ सीते कडेवाधी पोटिवाओ तैतलिपुत्रना कथनने स्वीकारी लीधु ओट्ठे के पोटिवाओ तेभने, आ प्रभाणु प्रतिज्ञाअळ थधने केळु के हु देवलोअभा जधश अने त्याधी आवीने तमने धमने ओध आपीश आम न्यारे पोटिलाओ स्वीकारी लीधु, त्यारपधी तैतलिपुत्रे पुअण प्रभाणुमा अशन वगेरेना इपमा आर नतना आहारो अनावडाय्या अने त्यारण्णाड तेणु पोताना मित्र, ज्ञाति, वगेरे स्वजनाने आमंत्रणु आण्यु मित्र, ज्ञाति, स्वजन सबन्धी परिजनाने आमंत्रणु आपीने यावत् अशन पान वगेरे आर नतना आहारोधी तेभनु सम्मान करीने तेणु पोटिलाने स्नान करावडाय्यु अने यावत् तेने पुरुष सहस्रवाहिनी शिबिका पर बैठाया, साडी.

दूरोह्य=आरोग्य ' मित्तणाह जात्र सपरिखुडे ' मित्रज्ञाति यात्रत् सपरिवृतः=मित्र-
 ज्ञातिस्वजनसम्बन्धिपरिजनादिभिर्युक्तः ' सन्विद्धोए ' सर्वद्वर्था ' जात्र रवेण '
 यात्रद्वेषेण=भेषादिनिनादेन सह तैतलिपुरस्य मयमध्येन यत्रैव सुत्रतानामुपोश्रय
 स्तत्रैव उपागच्छति । सा पोष्टिला शिविकातः ' पञ्चोर्हह ' प्रत्यवरोहति=अवतरति ।
 ततः स तैतलिपुत्र पोष्टिला पुरतः कृत्वा यत्रैव सुत्रता आर्या तत्रैव उपागच्छति,
 उपागत्य, पन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवदत्-एव खलु हे
 देवानुप्रियाः मम पोष्टिलाभार्या इष्टा कान्ता प्रिया मनोज्ञा मनोऽमा, वर्तते,

बैठा कर मित्र, ज्ञाति स्वजन सम्बन्धी परिजनो से युक्त होकर अपनी
 समस्त विभूति के अनुसार गाजे बाजेके साथ तैतलिपुर नगर के बीचो-
 बीच चल कर वह जहाँ सुत्रता आर्यिका का उपाश्रय था वहाँ पहुँचा ।
 (पोष्टिला सीयाओ पञ्चोर्हह, तैतलिपुत्रे पोष्टिल पुरओ कट्टु जेणेव
 सुव्रया अञ्जाओ तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता, वदइ नमसइ वदित्ता
 नमसित्ता एव वयासी, एवं खलु देवाणुप्रिया ! मम पोष्टिला भारिया इष्टा
 ५ एसण ससारभउव्विग्गा जाव पव्वइत्तए पडिच्छतु ण देवाणुप्रिया !
 सिस्सिणीभिव्व अहासुह मां पडिवध करेहि) पोष्टिला शिविका से
 उतरी-तैतलिपुत्र पोष्टिलाको आगे करके जहाँ सुत्रता आर्यिका थी वहाँ
 गया । जा कर उसने उनको चंदनाकी नमस्कार किया । वदना नमस्कार
 करके फिर इस प्रकार कहने लगा हे देवानुप्रिये । यह मेरी पोष्टिलानाम
 की पत्नी है । यह सुझे इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ एवं मनोम है । इसने

पालभीमा भेमाडीने मित्र, ज्ञाति, स्वजन सम्बन्धी परिजनोने सथे लधने
 ते पोतानी समस्त विभूति सुव्वं गान्तवान्गनी साथे तैतलिपुर नगरनी
 पञ्चोर्वच्य धधने न्या ते सुत्रता आर्यिकानो उपाश्रय उतो त्या पडोच्यो
 (पोष्टिला सीयाओ पञ्चोर्हह, तैतलिपुत्रे पोष्टिल पुरओ कट्टु जेणेव सुव्रया अञ्जाओ
 तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता, वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता एव वयासी एव
 खलु देवाणुप्रिया ! मम पोष्टिला भारिया इष्टा ५ एसण ससारभउव्विग्गा जाव
 पव्वइत्तए पडिच्छतु ण देवाणुप्रिया ! सिस्सिणीभिव्व अहासुह मां पडिवध करेहि)
 पोष्टिला पालभीमाथी नीचे उतरी पडी, तैतलिपुत्र अभात्य पोष्टिलाने
 आगण राभीने न्ना सुत्रता आर्यिका उती त्या गयो त्या न्धने तेणु तेभने
 वदना तेभन नमस्कार कयो, वदना अने नमस्कार करीने तेणु आ प्रभाणु
 कथु उ उ देवानुप्रिये ! आ पोष्टिला माभे भारी पत्नी छे भने ओ धृष्टकंत,
 प्रिय, मनोज्ञ अने मनोम छे ओणु 'तमारी पासेथी धर्मनु श्रवणु कथु' छे

एषा खलु भवतीना ममीपे धर्मे श्रुता, धर्मश्रवणजनितवैराग्यप्रशात् समारमयो द्विगना ' जाव पव्वइत्तए ' यात् प्रव्रजितुम् भोता जन्म मरणेभ्यो भवतीनामन्तिके प्रव्रज्या ग्रहीतुमिच्छति, तस्मात् ' पडिच्छतु ' प्रतीच्छन्तु=स्वीकुर्वन्तु खलु देवानु प्रियाः ! इमा शिष्याभिक्षाम्, सुत्रतार्या प्राह—यथासुखम् मा प्रतिवन्ध कुरुष्व । ततः खलु सा पोट्टिला सुत्रताभिरार्याभिरेवमुक्ता सती हृष्टतुष्टा उत्तरपौरस्त्य दिग्भागम्=ईशानसौगम् अवकाम्पति=गच्छति, अवकम्प स्वयमेव आभरणमाल्या लकारमवमुञ्चति, अवमुच्य स्वयमेव पञ्चमुष्टिक लोच करोति, कृत्वा यत्रैव सुव्रता आर्यास्तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमव दत्—' अलित्तेण भते ! लोए ' आदीप्तः खलु मदन्त ! लोकः—हे आर्ये ! एष लोको जन्मनरामरणादिभिर्दुःखैः प्रज्वलितः, ' एव ' अनेन प्रकारेण ' जहा देवाणदा ' यथा देवानन्दा=देवानन्देव एषाऽपि सुव्रतानामन्तिके प्रव्रजिता, यावत्—एकादश अङ्गानि अधीते, बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्याय पालयति, पालयित्वा मासिक्या

आपके पास धर्म सुना है सो उसके प्रभाव से यह ससार भय से उद्विग्न हो कर जन्म मरण से भीत, व्रस्त हो कर आपके पास दीक्षित होना चाहती है । इसलिये हे देवानुप्रिये ! आप मेरे द्वारा दी गई इस शिष्य भिक्षाको अगीकार कीजिये । तब सुव्रता आर्यिका ने कहा— यथा सुख मा प्रतिवध कुरुष्व—(तएण सा पोट्टिला—सुव्वयाहिं अज्जाहिं एव वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा उत्तरपुरत्थिम दिमीभागं अवक्कमइ, अवक्क मित्ता सयमेव आभरणमल्लालकार ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव, पच मुट्ठिय लोय करेइ, करित्ता जेणेव सुव्वयाओ तेणेव उवागच्छइ, उवा गच्छित्ता वदइ नमसइ, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी—अलित्ते ण भते । लोए एव जहा देवाणदा जाव एककारसअगाइ अहिज्जइ, बहूणि

तेना प्रलावधी अे ससारलयधी व्याकुण थधने जन्म-मरणधी भीत अने व्रस्त थधने तमागी पासेधी दीक्षा अडणु करवा छिछे छे अेटला भाटे छे देवानु प्रिये ! मारा वडे अपाती आ शिष्या इपी लिक्षानो स्वीकार करे। त्यारे जवाणमा सुव्रता आर्यिकाअे तेने कहुं के ' यथासुख मा प्रतिवध कुरुष्व ' (तएण सा पोट्टिला सुव्वयाहिं अज्जाहिं एव वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा उत्तर पुरत्थिमं दिमी भाग अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव आभरण-मल्लालकार ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव, पचमुट्ठिय लोय करेइ, करित्ता जेणेव सुव्वयाओ तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वदइ नमसइ, वदित्ता, णमसित्ता एव वयासी-अलित्तेण भते ! लोए एव जहा देवाणदा जाव एककारसअंगाइ अहिज्जइ, बहूणि

स लेखनया आत्मान जुष्टा पण्डि भक्तानि अनशनेन छिच्चा, ' आलोड्यपडिकता ' आलोचित प्रतिक्रान्ता ' समाधिपत्ता ' समाधिप्राप्ता कालमासे काल कृत्वा अन्य-तरेषु देवलोकेषु देवतया उपपन्ना । सू०८ ॥

घासाणि सामन्नपरियाग पाउणइ, पाउणिच्चा मासियाए सुलेहणाए अत्ताण झोसेत्ता सट्ठिभत्ताइ अणसणाए छेदिच्चा आलोड्यपडिकता समाधिपत्ता, कालमासे काल किच्चा अण्णतरेसु - देवलोएसु देवत्ताए उववण्णा) इस प्रकार सुव्रता आर्यिका के द्वारा कही गई वह-पोट्टिला बहुत अधिक हृष्टतुष्ट हुई। बाद में वह ईशान कोणमें गई। वहां जाकर उसने अपने हाथों से शरीर पर रहे हुए आभरण, माल्य एव अलंकारों को उतार दिया। उतार कर अपने आप पंचमुष्टिक केशों का लुचन किया-लुचन कर फिर वह जहां सुव्रता आर्या थीं वहां आई। आते ही उसने उन्हें वन्दना एव नमस्कार करके फिर वह इस प्रकार बोली— हे भदन्त ! यह लोक जरा मरण आदि दुःखों से प्रद्वलित हो रहा है, इस प्रकार से देवानदा की तरह यह सुव्रता आर्या के पास दीक्षित हो गई। याचत् उसने ११ अर्गों का अध्ययन भी कर लिया। बहुत वर्षों तक आमण्य पर्याय को पालन किया। प्रीतिपूर्वक अन्त में एक मास की सलेखना धारण कर ६०, भक्तों का अनशन द्वारा छेद

घासाणि सामन्नपरियागं पाउणइ, पाउणिच्चा मासियाए सलेहणाए अत्ताण झोसेत्ता सट्ठि भत्ताइ अणसणाए छेदिच्चा आलोड्यपडिकता समाधिपत्ता, कालमासे काल किच्चा अण्णतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववण्णा)

आ रीते सुव्रता आर्यिका वडे आसा अपयेडी पोड्डिला भूण न हृष्ट-तुष्ट थर्ध गध त्थारपणी ते धशान केणु तरइ गध अने त्या नधने तेणु पोताना डायथी न शरीर उपरना आलरणे, भाणाओ अने अल दारे ने उतार्या अने उतारीने पोतानी भेणे न पाय सुठी केशोनु तुयन कथुं तुयन कया पणी ते न्या सुव्रता आर्या छती त्या आवती रही त्या आवीने तेणु तेमने वदन अने नमस्कार कया, वदना अने नमस्कार करीने ते आ प्रमाणे विनती करवा लागी के डे लदन्त ! आ ससार नरा (धउपणु) भरखु वगेरे हु पोथी सणगी रहो छे आ रीते पोड्डिला देवानदानी नेम सुव्रता आर्यानी पास दीक्षित थर्ध गध अने अनुकमे तेणु अगियार अगोनु अध्ययन पणु करी वीधु तेणे धणुा वर्षो सुधी आमण्य पर्यायनु प लन कथुं छेवटे प्रीतिपूर्वक ओर आर्यानी सलेखना धारण करीने अनशन वडे साठ लक्षोनु छेदन कथु

एषा खलु भवतीना समीपे धर्मं श्रुत्वा, धर्मश्रवणजनितवैराग्यशशात् समात्मयो
द्विगना 'जाव पञ्चइत्तए' यावत् प्रप्रजितुम् भीता जन्म मरणेभ्यो भवतीनामन्तिके
प्रव्रज्या ग्रहीतुमिच्छति, तस्मात् 'पडिच्छत्तु' प्रतीच्छन्तु=स्वीकुर्वन्तु खलु देवानु
प्रियाः । इमा शिष्याभिक्षाम्, सुव्रतार्या प्राह—यथामुग्धम् मा प्रतिवन्ध कुरुव्व ।
ततः खलु सा पोट्टिला सुव्रताभिरार्याभिरेवमुक्ता सती हृष्टतुष्टा उत्तरपुरस्थ
दिग्भागम्=ईशानकोणम् अवक्राम्यति=गच्छति, अक्राम्य स्वयमेव आभरणमाल्या
लकारमवमुञ्चति, अवमुच्य स्वयमेव पञ्चमुष्टिक लोच करोति, कृत्वा यत्रैव सुव्रता
आर्यास्तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमव
दत्—'आलित्तेण भते । लोए' आदीप्तः खलु भदन्त ! लोकः—हे आर्ये ! एष
लोको जन्मनरामरणादिभिर्दुःखैः प्रज्वलितः, 'एव' अनेन प्रकारेण 'जहा देवाणदा'
यथा देवानन्द=देवानन्देव एषाऽपि सुव्रतानामन्तिके प्रव्रजिता, यावत्—एकादश
अङ्गानि अधीते, बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति, पालयित्वा मासिक्या

आपके पास धर्म सुना है सो उसके प्रभाव से यह सत्तार भय से
उद्विग्न हो कर जन्म मरण से भीत, व्रस्त हो कर आपके पास दीक्षित
होना चाहती है । इसलिये हे देवानुप्रिये ! आप मेरे द्वारा दी गई इस
शिष्य भिक्षाको अगीकार कीजिये । तत्र सुव्रता आर्यिका ने कहा—
यथा सुख मा प्रतिवध कुरुव्व—(तएण सा पोट्टिला—सुव्वयाहिं अज्जाहिं
एव वुत्ता समाणा हट्टतुट्ठा उत्तरपुरत्थिम दिसीभागं अवक्कमइ, अवक्क
मित्ता सयमेव आभरणमल्लालकार ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव, पच्च
मुट्टिय लोय करेइ, करित्ता जेणेव सुव्वयाओ तेणेव उवागच्छइ, उवा
गच्छित्ता वदइ नमसइ, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी—अलित्ते ण
भते । लोए एव जहा देवाणदा जाव एककारसअगाइ अहिज्जइ, बहूणि

तेना प्रभावधी से सत्तारलयधी व्याकुण धधने जन्म-मरणधी भीत अने व्रस्त
धधने तमागी पासेधी दीक्षा ग्रहण करवा छिठे छे अटला भाटे छे देवानु
प्रिये ! मारा वडे अपाती आ शिष्या इपी भिक्षानो स्वीकार करे त्यारे
जवाणमा सुव्रता आर्यिकासे तेने कछु के ' यथामुग्ध मा प्रतिवध कुरुव्व '
(तएण सा पोट्टिला सुव्वयाहिं अज्जाहिं एव वुत्ता समाणा हट्टतुट्ठा उत्तर-
पुरत्थिम दिसी भाग अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव आभरण-मल्लालकार
ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव, पच्चमुट्टिय लोय करेइ, करित्ता जेणेव सुव्वयाओ
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वदइ नमसइ, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी—
अलित्तेण भते । लोए एव जहा देवाणदा जाव एककारसअगाइ अहिज्जइ, बहूणि

जाव उवणेइ, उवणित्ता, एवं वयासी-एस णं देवाणुप्पिया !
 कणगरहस्स रणो पुत्ते पउमावईए अत्तए कणगज्झए नाम
 कुमारे अभिसेयारिहे रायलक्खणसंपन्ने मए कणगरहस्स रत्तो
 रहस्सियं सवट्ठिए, एयं णं तुव्भे महयार रायाभिसेएणं अभि-
 सिचह । सव्व च से उट्टाणपरियावणिय परिकहेइ । तएणं ते
 ईसर० कणगज्झयं कुमार महयार रायाभिसेएणं अभिसिचंति ।
 तएणं से कणगज्झए कुमारे राया जाए, महया हिमवंत मलय०
 वणणओ जाव रज्जं पसासेमाणे विहरइ । तएणं सा पउमा-
 वई देवी कणगज्झय रायं सदावेइ, सदावित्ता, एवं वयासी-
 एस णं पुत्ता । तव रज्जे य जाव अतेउरे य० तुम च तैत्तलि-
 पुत्तस्स अमच्चस्स पहावेण, तं तुमं ण तेयलिपुत्तं अमच्चं
 आढाहि परिजाणाहि सक्कारेहि सम्माणेहि इत अब्भुट्ठेहि, ठियं
 पज्जुवासाहि, वयंतं पडिससाहेहि, अच्चासणेणं उवणिमंतेहि
 भोग च से अणुवड्ढेहि । तएणं से कणगज्झए राया पउमावईए
 देवीए तहन्ति पडिसुणेइ जाव भोगं च से अणुवड्ढेइ ॥सू० ९॥

टीका—‘ तएण से ’ इत्यादि । ततः खलु स कनकरथो राजा अन्यदा
 कदाचित् । ‘ कालयम्मुगा सजुत्ते ’ काळवर्मेण सयुक्तः= मृतश्राप्यभयत् । ततः

‘तएण से कणगरहे राया’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (से कणगरहे राया अन्नया कयाइ)
 वह कनकरथ राजा किसी एक दिन काल कवलित हो गया (तएण

‘ तएण से कणगरहे राया ’ इत्यादि

टीकार्थ—(तएणं) त्या२५४ी (से कणगरहे राया अन्नया कयाइ) ते कनकरथ
 कवलित थय गयो अट्ठे के मृत्यु पाभ्ये

मूलम्—तएण से कणगरहे राया अन्नया कयाइ कालधम्मुण्ण
 सजुत्ते यावि होत्था । तएण राईसर जाव णीहरणं करेत्ति,
 करित्ता, अन्नमन्न एव वयासी—एव खल्ल देवाणुप्पिया । कणग-
 रहे राया रज्जे य जाव पुत्ते वियगित्था, अम्हेणं देवाणुप्पिया ।
 रायाहीणा रायाहिट्ठिया रायाहीणकज्जा अय च णं तेतली
 अमच्चे कणगरहस्स रत्तो, सव्वट्ठाणेसु सव्वभूमियासु लद्ध-
 च्छण दिन्नवियारे सव्वकज्जवट्ठावए यावि होत्था, त सेय खल्ल
 अम्ह तेतलिपुत्त अमच्चं कुमारं जाइत्तएत्ति कट्टु अन्नमन्नस्स
 एयमट्ट पडिसुणेत्ति, पडिसुणित्ता, जेणेव तेतलिपुत्ते अमच्चे
 तेणेव उवागच्छत्ति, उवागच्छिता, तेतलिपुत्त अमच्च एव
 वयासी—एव खल्ल देवाणुप्पिया । कणगरहे राया रज्जे य रट्ठे
 य जाव वियगेइ । अम्हे य णं रायाहीणा जाव रायाहीणकज्जा,
 तुम च णं देवाणुप्पिया । कणगरहस्स रण्णो सव्वट्ठाणेसु जाव
 रज्जधुराचितए, तं जइण देवाणुप्पिया । अत्थि केइ कुमारे
 सायलक्खणसपन्ने अभिसेयारिहे, तण्णं तुम अम्ह दलाहि ।
 जाणं अम्हे मह्यार रायाभिसेएणं अभिसिचामो । तएणं
 तेतलिपुत्ते तेसिं ईसर० एयमट्ट पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता, कण-
 गज्झय कुमार पहाय जाव सस्सिरीय करेइ, करित्ता तेसिं ईसर

दिया । छेद कर आलोचित प्रतिक्रान्त बनी हुई यह समाधि प्राप्त हो
 गई और काळ अवसर काल कर अन्यतर देवलोकमें देवता की पर्याय
 से उत्पन्न हो गई । सू० ८ ॥

छेदन करीने आलोचित प्रतिक्रान्त बनी हुई यह समाधि प्राप्त थी यह अनेक काल
 अवसर काल करीने अन्यतर देवलोकमें देवता की पर्याय थी अन्त पाभी सू० '८'

जाव उवणेइ, उवणित्ता, एवं वयासी—एस ण देवाणुप्पिया ।
 कणगरहस्स रण्णो पुत्ते पउमावईए अत्तए कणगज्झए नाम
 कुमारे अभिसेयारिहे रायलम्बणसंपन्ने मए कणगरहस्स रत्तो
 रहस्सियं सवड्ढिए, एयं णं तुव्वभे महयार रायाभिसेएणं अभि-
 सिचह । सव्व च से उट्टाणपरियावणिय परिकहेइ । तएणं ते
 ईसर० कणगज्झयं कुमारं महयार रायाभिसेएणं अभिसिचंति ।
 तएणं से कणगज्झए कुमारे राया जाए, महया हिमवंत मलय०
 वण्णओ जाव रज्जं पसासेमाणे विहरइ । तएणं सा पउमा-
 वई देवी कणगज्झय रायं सदावेइ, सदावित्ता, एव वयासी—
 एस णं पुत्ता । तव रज्जे य जाव अंतेउरे य० तुम च तेतलि
 पुत्तस्स अमच्चस्स पहावेण, त तुमं ण तेयलिपुत्त अमच्चं
 आढाहि परिजाणाहि सक्कारेहि सम्माणेहि इंत अब्भुट्ठेहि, ठियं
 पज्जुवासाहि, वयंतं पडिससाहेहि, अद्धासणेणं उवणिमंतेहि
 भोग च से अणुवड्ढेहि । तएणं से कणगज्झए राया पउमावईए
 देवीए तहत्ति पडिसुणेइ जाव भोग च से अणुवड्ढेइ ॥सू० ९॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततः खलु स कनकरथो राजा अन्यदा
 कदाचित् । ‘कालगम्भुगा सजुत्ते’ काञ्चवर्मेण सयुक्तः= मृतश्चाप्यभवत् । ततः

‘तएण से कणगरहे राया’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके घाद (से कणगरहे राया अन्नया कयाइ)
 वह कनकरथ राजा किसी एक दिन काल कवलित हो गया (तएण

‘तएण से कणगरहे राया’ इत्यादि

टीकार्थ—(तएणं) त्यारपधी (से कणगरहे राया अन्नया कयाइ) ते कनकरथ
 गन्न डोर्ध द्विसे कालकवलित थय गयो अटले के मृत्यु पाभ्ये ।

खलु 'राईसर० जाव' = राजेश्वर० यावत् = राजेश्वरतलवरमाडम्बिककौटुम्बिकादि
 सार्धवाहमभृतयः तस्य 'णीहरणं' निहरणं = मृतकृत्यं वुर्धन्ति, कृत्वा भ्रम्यो
 ऽन्यमेवमउदन्-एव खलु हे देवानुप्रियाः ! कृत्वा यो राजा 'रज्जे य जाव पुते'
 राज्ये च यावत् पुत्रान् = राज्यादिषु मूर्च्छित उत्पन्नान् पुत्रान् 'वियगित्था'
 अव्यङ्गयत् = विकृताङ्गान् कृतगान् मारितगानित्यर्थः । 'अम्हेण' वयं खलु देवानु
 प्रिया ! 'रायाहीणा' राजाधीनाः = राजशशवर्तिनः, 'रायाहिद्विया' राजाऽधि
 ष्ठिता = राजाश्रिता इत्यर्थः, 'रायाहीणकृज्जा' राजाधीनकार्याः, रायामधीन कार्य

राईसर जाव णीहरण करे नि, करिप्ता अन्नमन्न एव वयासी-एव खलु
 देवाणुप्पिए ! कणगरहे राया रज्जे य जाव पुत्ते वियगित्था) राजेश्वर,
 तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, सार्धवाह आदि व्यक्तियों ने मिल कर
 उसका दाह संस्कार किया । दाह संस्काररूप मृतक कृत्य करने के बाद
 फिर उन लोगों ने परस्पर में इस प्रकार का विचार किया । हे देवानु
 प्रियो ! देखो कनकरथ राजाने तो राज्य आदि में मूर्च्छित हो कर
 उत्पन्न हुए समस्त पुत्रों को विकृत अंग करके मार डोला है (अम्हे णं
 देवाणुप्पिया ! राया हीणा रायाहिद्विया रायाहीणकृज्जा अय च ण तेत
 लीअमच्चे कणगरहस्स रन्नो सव्वट्टाणेसु-सव्वभूमियासु लद्धपच्चए,
 दिन्नविचारे-सव्वकज्जवड्ढावए यावि होत्था) अब इस समय कोई राजा
 है नहीं अतः हम लोगों का क्या होगा क्यों कि हम लोग तो हे देवा
 नुप्रियो ! राजा वशवर्ती है, राजा के आश्रित ही रहते आये हैं, हमारा

(तएण राईसर जाव णीहरण करेति, करिप्ता अन्नमन्न एव वयासी-एव
 खलु देवाणुप्पिए ! कणगरहे राया रज्जे य जाव पुत्ते वियगित्था)

राजेश्वर, तलवर, माडम्बिक कौटुम्बिक, सार्धवाह वगैरे लोकोत्थे भणीने
 तेना अग्नि-संस्कार कथीं अग्नि-संस्कार आदि मृत्यु विधि पतावीने ते लोकोत्थे
 परस्पर भणीने आ प्रभाण्णे विचार कथीं के छे देवानुप्रियो ! बुद्धो, राज
 कनकरथे तो राज्य वगैरेनी भाषतमा लोडुप तेमञ्ज मोडित थधने उत्पन्न
 थयेला पेताना भधा पुत्राना अगो कापीने मारी नाभ्या छे

(अम्हेण देवाणुप्पिया ! राया हीणा रायाहिद्विया रायाहीणकृज्जा, अय च
 ण तेतलीअमच्चे कणगरहस्स रन्नो सव्वट्टाणेसु सव्वभूमियासु लद्धपच्चए, दि
 विचारे सव्वकज्जवड्ढावए यावि होत्था)

इवे अत्यारे कोष्ठं राज्ञं छे नहि तो अमारी शी दशा थशे ? हे
 देवानुप्रियो ! अमे तो राजाना वशवर्ती छीये, राजने अधीन रहेवाभा न

येषां ते तथा, सर्वमस्माकं कृत्य राजाधीन वर्त्तते इति भावः । अयं च खलु तेतलि
रमात्यः कनकरयस्य राज्ञ 'संव्यवहारेषु' सर्वस्थानेषु=सधिविग्रहादिषु सर्वेषु
कार्येषु, 'संव्यभूमिषु' सर्वभूमिषु = स्वाम्यमात्यराट्टूर्गकोपकृत्यहृत्पौर-
श्रेणिरूपाष्टविधासु 'लट्प्रत्यय' =लट्प्रत्यय-लट्=प्राप्त प्रत्ययो विश्वासो
यस्य सः, सफलजनविश्वासपात्रमित्यर्थः, 'दिनविचारे' दत्तविचारः, दत्तः=
राज्ञे त्रितोर्णः, विचारः=शोभनो विचारो येन म, लोकोपकारि विचारदायक इति-
भावः, 'संव्यवहारेषु' सर्वकार्यवर्द्धक =राज्ये समस्तकार्यसम्पादनश्चापि
'होत्या' अस्ति । 'त' तत्=तस्मात् कारणात् 'सेय' श्रेयः=उचितं खलु अस्माकं
तेतलिपुत्रममात्य कुमार 'जाइत्तए' याचितुम्, अयमभिप्रायः-यद्यममात्यो
राज्ञ सफलकार्यनिर्वाहकः, अतस्तत्समीपे गत्वा 'कोऽपि राजलक्षणसपन्न
कुमारो राजपदे स्थापनीयः' इति वार्तालापमुपक्रम्य, समागते प्रसङ्गे, तत्पुत्रो
राजपदे स्थापयितुं याचनीयः, 'त्तिकट्टु' इति कृत्वा=इति मनसि कृत्वा अन्यो-
ऽन्यस्य एतमर्थं 'पडिसुणेंति' प्रतिशृण्वन्ति=स्वीकुर्वन्ति, 'पडिसुणित्ता' प्रति-
श्रुत्य, यत्रैव तेतलिपुत्रोऽमात्यस्तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य, एवमवदन्-एव खलु

जितना भी कार्य होता है वह सब राजाधीन ही होता आया है । इस-
लिये तेतलिपुत्र जो अमात्य है चलो उनके पास चले क्यों कि वे ही
कनकरय राजाके लिये सधिविग्रह आदि समस्त कार्यों में एव स्वामी,
अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग कोश, बल, सुहृत् और पौरश्रेणीरूप आठ भूमियों
में विश्वसनीय थे । राजा के लिये वे ही लोकोपकारी कार्यों में सलाह
दिया करते थे और वे ही राज्यमें समस्त कार्यों के संपादक हैं (त सेय
खलु अम्ह तेतलिपुत्र अमच्चकुमार जाइत्तए त्तिकट्टु अन्नमन्नस्स एय
मद्द पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव तेतलिपुत्ते अमच्चे तेणेव उवाग-
च्छति, उवागच्छित्ता तेतलिपुत्त अमच्च एव वयासी-एव खलु देवाणु-

देवाधि गयेला धीजे अभास गधा कामे रत्नधीन न होय छे जेथी आला
आपणे सौ भगाने अमात्य तेतलिपुत्रनी पासि नथजे, उभके तेजो न राज
कनकरयना सधिविग्रह वगेरे गधा कामेमा अने स्वामी अमात्य, राष्ट्र दुर्ग,
कोश, सुहृत् अने पौर श्रेणिरूप आठ भूमिजोमा ते विश्वसनीय छे लोकाना
हित माटे तेतलिपुत्र अमात्य न सलाह आपता गेता इता तेम न राब्यना
गधा कामेने पार पाडनास पण तेजो न छे

(तसेय खलु अम्ह तेतलिपुत्र अमच्च कुमार जाइत्तए त्तिकट्टु अन्नमन्नस्स
एयमद्द पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव तेतलिपुत्ते अमच्चे तेणेव उवागच्छति,
उवागच्छित्ता तेतलिपुत्त अमच्च एव वयासी-एव खलु देवाणुष्पिया ! कंगरदे

हे देवानुप्रिय ! कनकरथो राजा राज्ये च राष्ट्रे च यावत् व्यह्वयति, त्रय च सत्य
हे देवानुप्रिय ! राजाधीना यावद् राजाधीनकार्यः, स्व च सत्य हे देवानुप्रिय !

पिया ! कणगरहे राया रज्जे य रद्वे य जाय वियगेइ, अम्हे य ण राया
हीणा जाव रायहीणकज्जा, तुम च ण देवाणुप्पिया । कणगरहस्स रण्णो
सव्वट्ठाणेसु जाव रज्जधुरा चितए—त जइण देवाणुप्पिया । अत्थि केइ
कुमारे रायलक्खणसपन्ने अभिसेयारिहे, तएण तुम अम्ह दलाहि)
इसलिये हमको उचित है कि हम तेतलिपुत्र अमात्य से कुमार की
याचना करें। तात्पर्य इस का यह है कि ये तेतलिपुत्र अमात्य राजा के
सकल कार्य निर्वाहक हैं—इसलिये उनके पास चलकर “कोई राज
लक्षण सपन्न कुमार राजपद में स्थापनीय है” इस बात की हम चर्चा
करें। इस चर्चा के प्रसंग में उनसे यह भी निवेदन करेंगे कि आप
अपने पुत्र की ही राज पद में स्थापित कर दीजिये। इस प्रकार का
विचार उन्होंने किया। जब विचार स्थिर हो चुका—तब सचने इस बात
को एक मत से स्वीकार कर लिया। स्वीकार कर के फिर वे सबके सब
जहा अमात्य तेतलिपुत्र थे वहा गये। वहा जाकर उन्होंने ऐसा कहा—
हे देवानुप्रिय ! कनकरथ राजाने राज्य और राष्ट्र आदि में विशेष मू
र्च्छित बनकर उत्पन्न हुए अपने समस्त पुत्रों को अगभग कर मारवाला

राया रज्जे य रद्वे य जाव वियगेइ, अम्हे य ण देवाणुप्पिया । कणगरहस्स रण्णो
सव्वट्ठाणेसु जाव रज्जधुरा चितए—त जइण देवाणुप्पिया । अत्थि केइ कुमारे
रायलक्खणसपन्ने अभिसेयारिहे, तएण तुम अम्ह दलाहि)

अथी अमने अये उचित लागे छे के अमे तेतलिपुत्र अमात्यनी पासे
जधने राजकुमारनी याचना करीअे जारणु के तेतलिपुत्र अमात्य राजाना अधा
कामेने सारी रीते पार पाडनारा छे, अटला भाटे तेमनी पासे जधने राज
धवा योग्य राज-लक्षण युक्त केई कुमार मणी शकें तेम छे के केम ? ते
विशे अर्था करीअे आ जतनी विचारणु करता करता अमे अधा तेमने अथी
विनती पणु करीअुं के तमे चोताना पुत्रने ज राजगादीअे असादी हो आम
ते लोकेअे मणीने विचार करीं आम विचार पाके थरु गये त्पारे सौअे
अेकमत थधने तेने स्वीकारी लीधा स्वीकार करीने तेअे अधा त्याधी अया
अमात्य तेतलिपुत्र डतो त्या गया, त्या जधने तेमणु तेतलिपुत्रने जहु के छे
हेवानुप्रिय ! कनकरथ राजअे राजअे अने राष्ट्र वगेरेमा अविशेष मूर्च्छित अणुके के
भोडवश थधने जन्म पावेला चोताना अधा ज पुत्राना अगे कधीने ने भारी

कनकरथस्य राज्ञः सर्वस्थानेषु यावत् 'रज्जधुरार्चितए' राज्यस्य धूः राज्यधुरा, तस्याधिन्तकः, राज्यभारनिर्वाहकश्चामि, तद् यदि खलु देवानुप्रिय ! अस्ति कोऽपि कुमारो राजलक्षणसपन्नः 'अभिसेयारिहे' अभिपेकार्थे राज्याभिपेक्याग्यः, 'त ण' त खलु त्वमस्मभ्य 'दलाहि' देहि 'जो' यस्मात् 'ण' त 'अम्हे' वय महता २ 'रायाभिसेएण' राज्याभिपेकेण=राजयोग्येनाभिपेकेण अभिपिञ्चामः राज्ये स्थापयाम इत्यर्थः। ततः खलु तेतलिपुत्रः तेषाम् 'ईसर०=ईश्वर०=ईश्वरतलपराभाडम्बिकादि सार्थवहप्रभृतीनाम् एतमर्थ 'पडिसुणेइ' प्ररिश्रुणोति=स्वीकरोति, प्रतिश्रुत्य=स्वाकृत्य, कनकरथज कुमार 'ण्हाय सस्सिरीय' स्नात यावत् सश्रीक, स्नात=कृतस्नानम्, यावत् सश्रीकम्=सर्वालङ्कारनिभूषित शोभासमन्वित च करोति, कृत्वा तेषाम् 'ईसर जाव' ईश्वर यावत्=ईश्वरादीना सम्मुखे 'उवणेइ' उपनयति, उपनीय एयमनादीत्-एय खलु हे देवानुप्रिया !

है। अब इस समय राज पद में कोई नहीं है। हमलोग तो हे देवानुप्रिय। राजाधीन यावत् राजाधीन कार्य वाले हैं। और देवानुप्रिय। कनक रथ राजा के लिये सधि विग्रह आदि समस्त स्थानों में एव स्वामी अमात्य आदि आठ भूमियों में विश्वसनीय रहें हैं। राजा के लिये लोकोपकारी कार्यों में आप सलाह देते रहे हैं। और आप ही राज्य भार के निर्वाहक हैं। इसलिये हमारी आपसे यह प्रार्थना है कि हे देवानुप्रिय ! यदि राज्यलक्षण सपन्न कोई कुमार राज्य पद में अभिपेक करने के योग्य होवे तो उसे आप हमें देवे। (जो ण अम्हे महयार रायाभिसेएण अभिसिचामो। तएण तेतलिपुत्ते तेसि ईसरएयमइ पडिसुणेइ, पडिसुगित्ता कणगज्झय कुमार ण्हाय जाव सस्मिरीय करेइ, करित्ता तेसि ईसर जाव उवणेइ, उवणित्ता एव वयासी) कि जिससे हम उसे

नाभ्या छे डवे अत्थारे राजपद भाटे कोरि रह्यु नथी छे देवानुप्रिय ! अम्हे लोको तो राजाधीन रह्येने ज रह्येता आभ्या छीअे अने छे देवानुप्रिय ! तम्हे राज कनकरथना सधिविग्रह वगेरे णधा कामेमा अेटवे के स्वामी अमात्य, विग्रह विगेरे तमाभ कामेमा ड मेशा विश्वासपात्र रह्या छे, खेडहितनी भाणनमा तम्हे राजने सलाह आपता रह्या छे, अने तम्हे शक्यना भधा कामेने पार पाउता आभ्या छे अथी अम्हे तम्हे अेवी विनति करीये छीअे के छे देवानुप्रिय ! राज-लक्षणेवाणे अने अलिपिकत यधने राजगादीअे जेसवा थोअ्य कोरि कुमार डाय तो तेने तम्हे अम्हने सोपो (जे ण अम्हे महया २ रायाभिसेएण अभिसिचामो। तएण तेतलिपुत्ते तेसि ईसर एयमइ पडिसुणेइ, पडिसुणेता कणगज्झय कुमार ण्हाय जाव सस्मिरीये करेइ, करित्ता तेसि ईसर जाव उवणेइ, उवणित्ता एव वयासी)

कनकरथस्य राज्ञः पुत्रः पद्मावत्या देव्या आत्मजः कनकरथजो नाम कुमारः अभिपेकार्ही राजलक्षणसम्पन्नो मया कनकरथस्य राज्ञो 'रहस्सिय' रहस्सियः=मन्त्रण यथा स्यात्तथा सवर्द्धित, एत खलु यूय महता २ राजाभिपेकेण अभिपिञ्चत । पुनः सः सर्वं च 'से' तस्य 'उद्गाणपरियावणिय' उत्थानपरियावणियम्=

राज योग्य अभिपेक द्वारा अभिपिक्त कर राज्य में स्थापित करें । इस तरह के उन ईश्वर, तलवर, माडम्यिक आदि सार्थवाह वगेरह के इस कथन रूप अर्थ को उस तैतलिपुत्र अमात्य ने स्वीकार कर लिया और स्वीकार करके कनक वज कुमार को उसने नष्ट युवाकर मर्वालकारों से विभूषित किया । विभूषित करके फिर वह उसे उन ईश्वर तलवर आदिकों के समक्ष ले आया । लकर के उनसे उसने ऐसा कहा—(एस ण देवानुप्पिया ! कणगरहस्स रण्णो पुत्ते पउमावईए अत्तए कणगज्झए णाम कुमारे अभिसेयारिहे रायलखणसपन्ने मए कणगरहस्स रण्णो रहस्सिय सवर्द्धिण एय ण तुब्भे महया महया रायाभिसेएण अभिसिचह) हे देवानुप्रियो ! यह कनकरथ राजा का पुत्र है जो पद्मावती की कुक्षि से जन्मा है । इसका नाम कनक वज कुमार है । अभिपेक के योग्य है और राजलक्षण सपन्न है । मैंने इसको कनकरथ राजा से छिपा कर पालापोषा है और वृद्धिगत किया है । इसे आपलोग बड़े भारी राजयोग्य अभिपेक के साथ राज्य में स्थापित कीजिये । (सव्व च से

के जेथी अन्ने तेने। राण्यासने अलिपेक करी शकीये आ रीने अमात्य तैतलिपुत्रे ते ईश्वर, तलवर, माडम्यिक, सार्थवाह वगेरेना कथनने स्वीकारुं अने स्वीकारीने तेछे कनकरथ कुमारने स्तोन करावु अने त्थारपणी णध्दा अलकारीथी तेने शष्णार्थी त्थारणाह अमात्य तैतलिपुत्रे सुमन्त्र थयेला कुमारने ईश्वर, तलवर वगेरेनी सामे लाव्थे अने तेज्जोने क्खु के—

(एसण देवाणुप्पिया ! कणगरहस्स रण्णो पुत्ते पउमावईए अत्तए कणगज्झए णाम कुमारे अभिसेयारिहे रायलखणसपन्ने मए कणगरहस्स रण्णो रहस्सिय सवर्द्धिण एय ण तुब्भे महया महया रायाभिसेएण अभिसिचह)

हे देवानुप्रियो ! आ कनकरथ राजने। पुत्र छे अने पद्मावती देवीना गर्भस्थी आने। जन्म थये छे कनकरथ कुमार आनु नाम छे आ कुमार राण्यासने भेसाडवा योग्य तेमन्त्र राजलक्षणार्थी युक्त छे राजा कनकरथने आ णाअतनी णथु नथी, मे आनु पालन तेमन्त्र रक्षक छुपी रीते क्युं छे तमे लारे भेडासवनी, माथे आ कुमारने राजगादीमे भेसाडे

उत्थान=जन्म, परियापनिका=जन्मानन्तरमयावधिका समर्द्धनादिपरिस्थितिः,
उत्थान च परियापनिका च=उत्थानपरियापनिकम्=जीवनचरित परिकथयति ।
तत खलु 'ईसर०' ईसरतलवरमाडम्विकादयः कनकध्वज कुमार महता २
राजाभिषेकेण अभिषिञ्चन्ति । ततः खलु स कनकध्वज' कुमारो राजा जातः, स
च कनकध्वजो राजा 'महया हिमवत०' महाहिमवत्=महाहिमवन्महामलय
मन्दरमहेन्द्रसारः '=महाहिमवन्महामलयमन्दरमहेन्द्राणा सार इव सारो यस्य सः,

उद्घाणपरियावणिय परिकहेइ, तएण ते ईसर० कणगज्जय कुमार महया
२ रायाभिसेएण अभिसिचति । तएण से कणगज्जए कुमारे राया
जाए, महया हिमवत मलय० वण्णओ जाव रज्जं पसासेमाणे विहरइ,
तएण सा पउमावई देवी कणगज्जय राय सहावेइ, सहावित्ता एव
वयासी) पेसा कहकर फिर उन तैत्तिलिपुत्र अमात्य ने उस कनकध्वज
कुमार का उत्थान-जन्म और परियापनी का-जन्म से लेकर अभी तक
की समस्त पालन पोषण सवर्द्धन आदि परिस्थिति रूप-जीवन चरित्र
उन्हें कह सुनाया-इस के बाद उन ईश्वर, तलवर, माडम्विक एव कौटु
म्बिक आदिकोंने कनकध्वज कुमार का बड़े जोर शोर के साथ राज्या
भिषेक किया । राज्य में अभिषिक्त होने के बाद वे कनकध्वज कुमार
अप राजा बन गये । इसका सार-बल लोकमर्यादा कारी होने के कारण
महा हिमवत् जैसा, यश और कीर्ति के फैलाव के कारण महामलय

इति सव्व च से उद्घाणपरियावणिय परिकहेइ, तएण ते ईसर०कणगज्जयं कुमार
महया २ रायाभिसेएणं अभिसिचति । तएण से कणगज्जए कुमारे राया जाए,
महया हिमवता मलय० वण्णओ जाव रज्जं पसासेमाणे विहरइ, तएण सा पउमा-
वई देवी कणगज्जय रायं सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी)

आ प्रम षे कहीने तैत्तिलिपुत्र अमात्ये ते कनकध्वज कुमारनु उत्थान-
जन्म अने परियापनिका अट्टे के जन्मथी भाडीने अत्यार सुग्रीनी पोषण
सवर्द्धन वगेरेनी एवन चरित्र सभधी मधी विगत अथधी धृति सुधी कही
सलणावी त्यारणाइ ते ईश्वर, तलवर, माडम्विक अने कौटुम्बिक वगेरे लोकेश्ये
कनकध्वज कुमारने महुं न भेटा पाया उपर उत्सव उज्ज्वीने राज्याभिषेक
कथी अभिषिक्त थवा भाइ कनकध्वज राजा थई गया हता तेमनु मण लोक
मर्यादाने रक्षनार होवा महुं महाहिमवत जेवु हतुं तेमना यश अने कीर्ति
शोभेर प्रसरेला हता तेथी ते महामलय जेवा हता तेमज तेज्या हू प्रति-

लोकमर्यादाकारित्वेन महाहिमरत्सदृश, प्रसूतपदाः कीर्तित्वेन महामलयतुल्य, दृढप्रतिज्ञत्वेन र्तव्यदिग्दर्शकत्वेन च मन्दरमहेन्द्रतुल्य, 'घण्टाभी' वर्णक विशेषरूपेण अन्यतोऽवसेयः, 'जात्र रज्ज पमासेमाणे' यात्राज्य प्रशामद् विहरति राज्य कुर्वन्नास्ते । ततः खलु सा पद्मावतीदेवी कनकध्वज राजान शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवदत्-एतत् खलु हे पुत्र ! तव 'रज्जे य जात्र अतेउरे य०' राज्य च यावदन्तः पुर च एतत्सर्वं तेतलिपुत्रस्य प्रभावेन र्त्तने 'त' तत्=कारणात् त्व खलु तेतलिपुत्रममात्य 'आढाहि' आद्रियस्व=आदर कुरुष्व 'परिजाणाहि, परिजानाहि=अवेक्षस्व तदनुमत्या सर्वं कार्यं सम्पादयेत्यर्थः सत्कार्यवत्त्वादिना, सम्मानय मालयादिना, 'इत' यन्तम्=भागच्छन्तमेत तेतलिपुत्रम् 'अञ्जुदेहि' अभ्युत्तिष्ठ=अभ्युत्थानादिना विनयप्रदर्शयेत्यर्थ 'ठिय पञ्जुवासाहि' स्थित पर्युपास्व=सेवस्व, 'वयत' व्रजन्त=गच्छन्तम् 'पडिसंसाहेहि' प्रतिसमाधय=अनुगमनादिना प्रसादय, तथा 'अद्दामणेण उवणिमतेहि' अर्पासनेन उपनिमन्त्रय=स्वस्यासने तमुमवेपय, भोग=सुखसामग्रीरूप च 'से' तस्य अनुवर्द्धय । ततः स कनकध्वज 'पउमावईए देवीए' पद्मावत्या देव्याः वचन 'तहत्ति'

के जैसा, दृढप्रतिज्ञा वाले एव कर्तव्य का दिग्दर्शन कराने वाले होने के कारण मन्दर महेन्द्र-मेरु के जैसा था। और भी इन राजा के विषय का विशेष वर्णन दूमरों शास्त्रों से जान लेना चाहिये। यावत् इस तरह ये कनकध्वज कुमार अपने राज्य के शासन करने में तत्पर बन गये। इसके बाद उस राजमाना पद्मावतीदेवी ने उन कनकध्वज राजाको अपने पास बुलाया-और बुलाकर फिर उनसे उसने इस प्रकार कहा-(तएण पुत्ता ! तव रज्जे य जात्र अतेउरेय० तुमच तेतलिपुत्तस्स अमच्चस्स पहावेण, त तुम ण तेतलिपुत्त अमच्च आढाहि, परिजाणाहि, सकारेहि, सम्माणेहि, इत अञ्जुदेहि ठिय पञ्जुवासाहि, वयत पडिससाहेहि, अद्दामणेण

शावणा अने कर्त्तव्यने जतावनार होवा जडल मन्दर महेन्द्र-मेरु जेवा हुता राजा कनकध्वज विशेष सविशेष वर्णन जीला शास्त्रोमा वर्णन-यु छे, एसासुज्याये त्याथी जण्णी लेखु जेधये आ प्रभावे ते कनकध्वज कुमार पोताना राजन्या वहीवटने सलाणवा भाटे सावध थध गथा त्यारपधी र जभाता पद्मवतीदेवीये कनकध्वज राजाने पोतानी पासे जेलाव्या अने जेलावीने तेमने आ प्रभावे उछु छे

(तएण पुत्ता ! तव रज्जे य जात्र अतेउरेय० तुम च तेतलिपुत्तस्स अमच्चस्स पहावेण, त तुम ण तेतलिपुत्त अमच्च आढाहि, परिजाणाहि. सकारेहि. मग्ग

तथैति= 'तथास्तु' इतिकृत्वा प्रतिश्रुणोति=स्वीकरोति प्रतिश्रुत्य तथैव कुर्वाण
वावद् भोगं च तस्य अनुवर्द्धयति ॥ ९ ॥

उवणिमतेहि, भोगं च से अणुवद्धेहि । तएण से कणगज्झए राया पउमाव-
ईए देवीए तहत्ति पडिसुणेइ, जाव भोगं च से अणुवद्धेइ) हे पुत्र ! यह तुम्हारा
राज्य और अतः पुर तथा तुम स्वयं यह जो कृत्तु है वह सब तैत्तिलिपुत्र
अमान्य के प्रभाव से ही है इसलिये तुम तैत्तिलिपुत्र अमात्य का आदर
करते रहो, उनकी अनुमति से काम किया करो उनका वस्त्रादि द्वारा
नमय २ पर सत्कार करते रहो, अभ्युत्थानादि सन्मान करते रहो और
जब तैत्तिलिपुत्र तुम्हें आते हुए दिखलाई दे तो तुम उठकर इनके प्रति
अपना विनय प्रदर्शित किया करो । जब ये जावे-तब तुम बैठ
कर इनकी सेवावृत्ति किया करो, जब ये चलने लगे तो तुम इनके पीछे
२ थोड़ी दूर तक अपने महलों में पहुँचाने जाया करो, अपने बैठने के
आसन पर इन्हें अर्धभाग में बैठाया करो और जो भी सुख साधनकी
सामग्री है यह इनकी बढ़ा दो । इस प्रकार राजमाता पद्मावती देवी के
घचनों को " तथास्तु " कहकर कनकवज राजाने स्वीकार कर लिया ।

णेहि इत् अणुवद्धेहि ठिय पज्जुवासाहि वय त पडिससाहेहि, अदामणेण उवणिम
तेहि, भोग च से अणुवद्धेहि । तएण से कणगज्झए राया पउमावईए देवीए
तहत्ति पडिसुणेइ, जाव भोग च से अणुवद्धेइ)

हे पुत्र ! आ तमाइ राज्य रज्जुवास तेमए तमे पोते आ णधु ने कथ
छे, ते सर्वे तैत्तिलिपुत्र अमात्यना प्रलावथी ए छे ज्येथी तमे ते
लिपुत्र अमात्यने सदा आदर करता रहे, दरेक काम तेमनी आज्ञाथी करता
रहे, वसो वजरे आपीने यथा नमय तेमने सत्कार करता रहे, तेमनु
सन्मान करता रहे अने अमात्य तैत्तिलिपुत्र तमने आवता देणाय त्तारे तमे
उलाथने तेमना प्रति विनय युक्त थधने व्यवहार करे न्यारे तेज्जा एवा
तैयार थाय त्तारे तमे जेसीने तेमनी सेवा करता रहे अने न्यारे तेज्जा
यालवा माडे त्तारे तमे तेमनी पाछण पाछण थोडे दूर सुधी पोताना भडेल
मात्र विहाय आपवा माटे तेमनु अनुसरणु करेता नज्जा तमे तेमने पोताना
आसनना अर्धभाग उपर जेसाडे अने तेमनी णधी सुभयगवडनी सामग्री
मा वधारे करी आपो आ रीते राज्यमाता पद्मावती देवीनी आज्ञाने कतक
धरने अने ' तथास्तु ' कहीने स्वीकारी लीधी, स्वीकार्या षठी तेज्जाओ ते

लोकमर्यादाकारित्वेन महाहिमस्तदृश, मस्तपशः कीर्तित्वेन महामलयतुल्य, दृढप्रतिज्ञत्वेन कर्तव्यदिग्दर्शकत्वेन च मन्दरमहेन्द्रतुल्यः, 'पष्णभो' वर्णक विशेष रूपेण अन्यतोऽवसेयः, 'जात्र रज्ज पमासेमाणे' यात्राज्य प्रणामद् विहरति राज्य कुर्वन्नास्ते । ततः खलु सा पद्मावतीदेवी कनकध्वज राजान शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवदत्-एतत् खलु हे पुत्र ! तत्र 'रज्जे य जात्र अतेउरे य०' राज्य च यावदन्त' पुर च एतत्सर्वं तेतलिपुत्रस्य प्रभावेन रक्षते 'त' तत्=कारणात् त्व खलु तेतलिपुत्रममात्य 'आदाहि' आद्रियस्य=आदर कुरुष्य 'परिजाणाहि, परिजानाहि=अवेक्षस्व तदनुमस्या सत्रं कार्यं सम्पादयेत्यर्थः सत्कार्य चत्वादिना, सम्मानय माल्यादिना, 'इत' यन्तम्=भागच्छन्तमेत तेतलिपुत्रम् 'अभ्युद्वेहि' अभ्युत्तिष्ठ=अभ्युत्थानादिना विनय प्रदर्शयेत्यर्थ 'ठिय पञ्जुवासाहि' स्थित पर्युपास्य=सेवस्य, 'वयत' व्रजन्त=गच्छन्तम् 'पडिसंसाहेहि' प्रतिसंभाष्य=अनुगमनादिना प्रसादय, तथा 'अद्वासणेण उवणिमतेहि' अर्धासनेन उपनि मन्त्रय=स्वस्यासने तमुपवेपय, भोग=मुखसामग्रीरूप च 'से' तस्य अनुवर्द्धय । ततः स कनकध्वज 'पउमावईए देवीए' पद्मावत्या देव्याः यचन 'तद्वत्ति'

के जैसा, दृढप्रतिज्ञा वाले एव कर्तव्य का दिग्दर्शन कराने वाले होने के कारण मन्दर महेन्द्र-मेरु के जैसा था। और भी इन राजा के विषय का विशेष वर्णन दूमरों शास्त्रों से जान लेना चाहिये। यावत् इस तरह ये कनकध्वज कुमार अपने राज्य के शासन करने में तत्पर बन गये। इससे बाद उस राजमाना पद्मावतीदेवी ने उन कनकध्वज राजाको अपने पास बुलाया-और बुलाकर फिर उनसे उसने इस प्रकार कहा-(तएण पुत्ता ! तत्र रज्जे य जात्र अतेउरेय० तुमच तेतलिपुत्तस्स अमच्चस्स पहा वेण, त तुम ण तेतलिपुत्त अमच्च आदाहि, परिजाणाहि, सक्कारेहि, सम्माणेहि, इत अब्भुद्वेहि ठिय पञ्जुवासाहि, वयत पडिससाहेहि, अद्वासणेण

शावणा अने कर्तव्यने पतावनार होवा पहल मन्दर महेन्द्र-मेरु जेवा हुता राजा कनकध्वज विशेष सविशेष वरुण धीन शास्त्रोभा वरुण्यु छे, अज्ञाभुओअे त्याथी लक्ष्मी लेवु लेधअे आ प्रभाओे ते कनकध्वज कुमार पोताना राज्यना पहीवटने सलाणवा भाटे सावध थध गया त्यारपही रज्जमाता पद्मवतीदेवीअे कनकध्वज राजाने पोतानी पासे जोलाव्या अने जोलावीने तेमने आ प्रभाओे कहु के

(तएण पुत्ता ! तत्र रज्जे य जात्र अतेउरेय० तुम च तेतलिपुत्तस्स अमच्चस्स पहावेण, त तुम ण तेतलिपुत्त अमच्च आदाहि, परिजाणाहि, सक्कारेहि, सम्मा

अव्भुट्टेइ, अणाढायमाणे, अपरियाणमाणे, अणव्भुट्टायमाणे,
परम्भुहे संचिड्डइ । तएणं तेतलिपुत्ते कणगज्झयस्स अज्जलिं
करेइ । तएणं से कणगज्झए राया अणाढायमाणे तुसिणीए
परम्भुहे संचिड्डइ । तएण तेतलिपुत्ते कणगज्झय विप्परिणयं
जाणित्ता भीए जाव संजायभए एव वयासी-रुट्टेण मम कण-
गज्झए राया हीणे णं मम कणगज्झए राया, अवज्झाए णं
ममं कणगज्झए, राया त ण नज्जइ णं मम केणइ कुमारेण
मारेहिइ त्ति कट्टु भीए तत्थे५ जाव सणिय२ पच्चोसकइ, पच्चो-
सक्कित्ता, तमेव आसखध दुरूहेइ, दुरूहित्ता, तेतलिपुर मज्झ-
मज्झेणं जेणेव सए गिहे, तेणेव पहारेत्थ गमणाए । तएणं
तेतलिपुत्त जे जहा ईसर जाव पासंति, ते तहा नो आढायति
नो परियाणंति नो अव्भुट्टेति नो अंजलिपरिग्गह करेति, इट्ठाहिं
जाव णो संलवति नो पुरओ य पिट्ठओ य पासओ य मग्गओ
य समणुगच्छंति । तएण तेतलिपुत्ते जेणेव सए गिहे तेणेव
उवागच्छइ । उवागच्छित्ता जावि य से तत्थ वाहिरिया परिस्ता
भवइ, त जहा—दासेइ वा पेसेइ वा भाइल्लएइ वा सावि य
णं नो आढाइ नो परियाणाइ नो अव्भुट्टेइ, जावियसे अदिभ-
तरिया परिस्ता भवइ, त जहा - पियाइ वा मायाइ वा
जाव सुणहाइ वा सावि य ण नो आढाइ, नो परियाणाइ,
नो अव्भुट्टेइ । तएणं से तेतलिपुत्ते जेणेव वासघरे जेणेव सए
सयणिजे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, सयणिज्जांसि णिसी-

मूलम्-तएणं से पोट्टिले देवे तेतलिपुत्तं अभिक्खणं २
 केवलपन्नत्ते धम्मे संवोहेइ, नो चेव णं से तेतलिपुत्ते संबु
 ज्झइ । तएणं तस्स पोट्टिलदेवस्स इमेयारूवे अज्झत्थिएए
 एवं खलु कणगज्झए राया तेतलिपुत्तं अढाइ जाव भोग च से
 वड्ढेइ तएणं से तेतलीपुत्ते अभिक्खणं २ सवोहिज्जमाणे वि धम्मे
 नो संबुज्झइ, त सेय खलु मम कणगज्झय रायं तेतलिपुत्ताओ
 विप्परिणामेत्तए तिकट्ठु एव सपेहेइ, सपेहिता, कणगज्झयं तेत-
 लिपुत्ताओ विप्परिणामेइ । तएणं तेतलिपुत्ते कल्लं णहाए जाव
 पायच्छित्ते आसखधवरगए वड्ढहि पुरिसेहिं सपरिवुडे साओ
 गिहाओ णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव कणगज्झए राया तेणेव
 पहारेत्थए गमणाए । तएणं० तेतलिपुत्त अमच्च जे जहा व्हवे
 राईसरतलवर जाव पभियाओ पासति, ते तहेव आढायंति,
 परिजाणति, अब्भुट्ठेति, आढाइत्ता, परिजाणित्ता, अब्भुट्ठित्ता,
 अंजलिपरिग्गहं करेति, इट्ठाहि कंताहि जाव वग्गूहि आल-
 वेमाणा य सलवेमाणा य पिट्ठओ य पासओ य मग्गओ य
 समणुगच्छति तएणं से तेतलिपुत्ते जेणेव कणगज्झए राया
 तेणेव उवागच्छइ । तएणं से कणगज्झए राया तेतलिपुत्त
 एज्जमाणं पासइ, पासित्ता, नो अढाइ, नो परियाणाइ, नो

स्वीकार करके फिर उन्होंने वैसा ही सब कुछ करते हुए तेतलिपुत्र
 अमात्य की यावत् सुख साधन सामग्री धरा दी ॥ सू० ९ ॥

प्रभाषित्वा णधु कस्ता तेतलिपुत्र अमात्यनी सुप्पसगवड वगेरेनी सामग्रीमा
 वधासे करी आप्थी ॥ सू० ९ ॥

रिए, तत्थ वि से धारा ओपछा को मेयं सदहिस्सइ । तैतलि-
पुत्तेणं पासगं गीवाए वंधेत्ता जाव रज्जू छिन्ना को मेय सदहि-
स्सइ ? तैतलिपुत्तेणं महइमहालयं जाव वंधित्ता अत्थाहे जाव
उदगसि, अप्पामुक्के, तत्थ वि य णं थाहे जाए को मेयं सद-
हिस्सइ ? तैतलिपुत्तेणं, सुक्कसि तणकूडासि अगणिकायं पक्खि-
वित्ता अप्पामुक्को तत्थ वि से अगणिकाए विज्झाए, को मेयं
सदहिस्सइ ? ओहयमणसंकप्पे जाव झियाइ ॥ सू० १० ॥

टीका—‘तएण से पोट्टिले’ इत्यादि । तत् खलु स पोट्टिलोदेवस्तेतलि-
पुत्रम् ‘अभिकखण २’ अभीक्षणम् २=पुनः पुनः केवलपन्नत्ते धर्मं सज्जयति ।
पान्तु नो चेव खलु स तैतलिपुत्र ‘सवुज्झइ’ सम्बुध्यते=प्रतिबोध प्राप्नोति ।
ततः खलु तस्य पोट्टिलदेवस्य ‘इमेयारूवे’ अयमेतद्वृष=पुरउच्यमानः ‘अज्झ-
त्थिए’ ५=आध्यात्मिकः चिन्तितः प्रार्थितः मनोगत सरूप, समुद्रपथत ।
सरूपप्रकारमाह—‘एव खलु’ इत्यादि । एव खलु रुक्कवज्जो राजा तैतलि-
पुत्र आद्रियते यावत् भोग च समर्द्धयति, ततः खलु स तैतलिपुत्रोऽभीक्षण २ मया

‘तएण से पोट्टिले’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से पोट्टिले देवे) वह पोट्टिलाका जीव देव
(तैतलिपुत्त अभिकखण २ केवलपन्नत्ते धम्मे संबोहेइ, नो चेव ण से
तैतलिपुत्ते सवुज्झइ) तैतलिपुत्र अमात्यको बार बार केवलपन्नत्त धर्ममें
प्रतिबोधित करने लगा परन्तु तैतलिपुत्र प्रतिबोध को प्राप्त नहीं हुआ ।
(तएण तस्स पट्टिलदेवस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ५—एव खलु कणज्झए
राया तैतलिपुत्त अदाइ, जाव भोग च संबद्धेइ, तएण से तैतलिपुत्ते अ-

तएण से पोट्टिले इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) त्थार पछी (से पोट्टिले देवे) ते पोट्टिलानो एव देव

(तैतलिपुत्त अभिकखण २ केवलपन्नत्ते धम्मे संबोहेइ नो चेव ण से तैतलि-
पुत्ते संबुज्झइ)

तैतलिपुत्र अमात्यने बारबार देवणि प्रज्ञमधर्ममा प्रतिबोधित करवा
लाग्यो पणु तैतलिपुत्रने प्रतिबोध प्राप्त थयो नडि

(तएण तस्स पोट्टिलदेवस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ५—एव खलु कणज्झए
राया तैतलिपुत्त अदाइ, जाव भोग च संबद्धेइ, तएण से तैतलिपुत्ते अभिकखणं

यइ, णिसीइत्ता, एवं वयासी-एव खलु अहं सयाओं गिहाओ
 णिग्गच्छामि, त चेव जाव अन्भितरिया, पुरिसा नो आढाइ
 नो परिजाणाइ, नो अब्भुट्टेइ, तं सेयं खलु मम अप्पाणं जी
 वीयाओ ववरोवित्तएत्तिकहु, एवं सपेहेइ, संपेहित्ता तालउडं विसं
 आसगंसि पक्खिवइ, से य विसे णो संरुमइ । तएणं तेतलि-
 पुत्ते नीलुप्पल जाव असिं खधंसि ओहरइ, तत्थ वि य से धारा
 ओपह्हा । तएणं से तेतलिपुत्ते जेणेव असोगवणिया तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पासगं गीवाए वधइ, वधित्ता अप्पाणं
 मुयइ, तत्थ वि य से रज्जू छिन्ना । तएणं से तेतलिपुत्ते महइ
 महालय सिल गीवाए वधइ, वधित्ता अत्थाहमतारमपोरिसि-
 यसि उदगंसि अप्पाणं मुयइ, तत्थ वि से थाहे जाए । तएणं
 से तेतलिपुत्ते सुक्कंसि तणकूडसि अगणिकाय पक्खिवइ, पक्खि-
 वित्ता मुयइ, तत्थ वि से अगणिकाए विज्झाए । तएण से
 तेतलीपुत्ते एव वयासी-सद्धेय खलु भो समणा वयंति, सद्धेय
 खलु भो माहणा वयति, सद्धेय खलु भो समणामाहणा वयति,
 अह एगो असद्धेयं वयामि, एव खलु अहं सहपुत्तेहिं अपुत्ते
 को मेय सदहिस्सेइ? सहमित्तेहिं अमित्ते, को मेय सदहिस्सइ,
 एव अत्थेणं दारेण दासेहिं परिजणेणं एव खलु तेतलिपुत्तेणं
 अमच्चे कणगज्झएणं रन्ना अवज्झाएणं समाणेणं तेतलिपुत्तेणं
 तालपुडगे विसे आसगसि पक्खित्ते, से वि य णो कमइ को
 मेय सदहिस्सइ ? तेतलिपुत्तेणं नीलुप्पल जाव खसिं, ओह-

रिए, तत्थ वि से धारा ओपल्ला को मेयं सदहिस्सइ । तैतलि-
 पुत्तेणं पासगं गीवाए वधेत्ता जाव रज्जू छिन्ना को मेयं सदहि-
 स्सइ ? तैतलिपुत्तेणं महइमहालयं जाव वंधित्ता अत्थाहे जाव
 उदगसि, अप्पामुक्के, तत्थ वि य णं थाहे जाए को मेयं सद-
 हिस्सइ ? तैतलिपुत्तेणं, सुक्कसि तणकूडासि अगणिकायं पक्खि-
 वित्ता अप्पामुक्को तत्थ वि से अगणिकाए विज्झाए, को मेयं
 सदहिस्सइ ? ओहयमणसंकप्पे जाव झियाइ ॥ सू० १० ॥

टीका—‘तएण से पोट्टिले’ इत्यादि । तत खलु स पोट्टिलोदेवस्तेतलि
 पुत्रम् ‘अभिक्षण २’ अभीक्षणम् २=पुनः पुनः केवलिप्रज्ञप्ते धर्मे सजो गयति ।
 परन्तु नो चैव खलु स तैतलिपुत्र ‘संबुज्झइ’ सम्बुध्यते=प्रतिबोध प्राप्नोति ।
 ततः खलु तस्य पोट्टिलदेवस्य ‘इमेयारूवे’ अयमेतद्रूप =पुरउच्यमानः ‘अज्झ-
 त्थिए’ ५=आध्यात्मिक चिन्तितः प्रार्थितः मनोगत सरूप. समुद्रपथत ।
 सरूपप्रकारमाह—‘एव खलु’ इत्यादि । एव खलु कनकवज्रो राजा तैतलि-
 पुत्र आद्रियते यावत् भोग च सवर्द्धयति, ततः खलु स तैतलिपुत्रोऽभीक्षण २ मया

‘तएण से पोट्टिले’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से पोट्टिले देवे) वह पोट्टिलाका जीव देव
 (तैतलिपुत्त अभिक्षण २ केवलिपन्नत्ते धम्मे संबोहेइ, नो चैव ण से
 तैतलिपुत्ते संबुज्झइ) तैतलिपुत्र अमात्यको चार चार केवलिप्रज्ञप्त धर्ममें
 प्रतिबोधित करने लगा परन्तु तैतलिपुत्र प्रतिबोध को प्राप्त नहीं हुआ ।
 (तएण तस्स पट्टिलदेवस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ५—एव खलु कणज्झए
 राया तैतलिपुत्त अदाइ, जाव भोग च सवर्द्धेइ, तएण से तैतलिपुत्ते अ-

तएण से पोट्टिले इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) त्थार पथी (से पोट्टिले देवे) ते पोट्टिलानो एव देव

(तैतलिपुत्त अभिक्षण २ केवलिपन्नत्ते धम्मे संबोहेइ नो चैव ण से तैतलि
 पुत्ते संबुज्झइ)

तैतलिपुत्र अमात्यने बारबार देवणि प्रज्ञप्तधर्मा प्रतिबोधित करवा
 लाग्ये। पथु तैतलिपुत्रने प्रतिबोध प्राप्त थये नडि

(तएण तस्स पोट्टिलदेवस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ५—एव खलु कणज्झए
 राया तैतलिपुत्त अदाइ, जाव भोग च संबर्द्धेइ, तएण से तैतलिपुत्ते अभिक्षणं

‘सगोहिज्जमाणेपि’ संतो यमानोऽपि धर्मो नो सद्युज्जहते=प्रतिबोध न प्राप्नोति ।
 ‘तं तत्’=यमान कारणात् श्रेयः खलु मम यनकध्वज राजान तेतलिपुत्राद् विपरि
 णमयितुम्=नेतश्चिपुत्रविषये कनकध्वजस्य मानसिको भावो यथा विपरिणतो भवे
 तथा कर्तुञ्चितम्, इतिरुत्ता=इति मनसि विचार्य एव समेतते विचारयति
 सप्रेक्ष्य कनकध्वज तेतलिपुत्राद् विपरिणमयति=विपरीत करोति । ततः खलु
 तेतलिपुत्र ‘कल्ल’ कल्ले द्वितीयस्मिन् दिने प्रायः ‘ण्हाण जात्र पायच्छित्ते’
 स्नानो यावत् प्रायश्चित्त =स्नात =रुनस्नानः यावत् पदन कृतयन्त्रिकर्मा=सकादि
 निमित्त कृतान्नभाग कृतकौतुकमागल्यप्रायश्चित्तः=रुतानि कौतुकानि दुःस्वप्नादि
 दोषनिवारणार्थं मपीपुण्ड्रादीनि-माङ्गल्यादीनि =मङ्गलकारणाणि दूर्वाक्षतादीनि
 =प्रायश्चित्तप्रदार्थं कर्तव्यानि येन सः, ‘आमसखधरगए’ अश्वस्कन्ध
 वरगत =अश्वारूढः गहुभि पुम्पै सपरिचृतः स्वस्माद् गृहाद् निर्गच्छति, निर्गम्य

भिक्षुखण २ सगोहिज्जमाणे वि धम्मे नो सद्युज्जह, त सेय खलु मम
 कणगज्झय राय तेतलिपुत्ताओ विपरिणमेत्तए त्ति कट्टु एव सपेहेइ)
 तत्र उस पाण्डिल देवको पेमा आ यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उत्पन्न
 हुआ कनकध्वज राजा तेतलिपुत्र अमात्यका आदर करते हैं यावत् वे
 उनके सुग्न साधनकी सामग्री बढ़ा दिया है-इसलिये मेरे द्वारा वार वार
 प्रतिबोधित करने पर भी वे धर्म में प्रतिबुद्ध नहीं बन रहे हैं-प्रतिबोध
 को प्राप्त नहीं हो रहे हैं । इसलिये मुझे अथ ऐसी करना चाहिये कि
 जिससे तेतलिपुत्र के विषय में कनकध्वज राजा का मानसिक विचार
 बदल जावे । इस प्रकार का विचार उस देवके मनमें जगा (सपेहिच्चा
 कणगज्झय तेतलिपुत्ताओ विपरिणामेइ, तएण तेतलिपुत्ते कल्ल ण्हाए

२ सगोहिज्जमाणे पि धम्मे नो सद्युज्जह, त सेय खलु मम कणगज्झय राय
 तेतलिपुत्ताओ विपरिणामेत्तए त्ति कट्टु एव सपेहेइ)

यारे ते देवउप पोड्डिलाना एव देवने ऐवे। आध्यात्मिक यावत् मनो
 गत सकल्प उ लब्धो के राज कनकध्वज अमात्य तेतलिपुत्रने। आदर करे छे
 यावत् तेओऐ तेमनी अधी नतनी सुभसगवडनी सामग्रीमा वधारो पल्लु
 कशी आये छे, ऐथी मारावडे वार वार प्रतिबोधित करवा छताऐ
 तेओ धर्ममा प्रतिबुद्ध थर नता नथी ऐटले के तेमने वार वार प्रेरणा
 आपवा छता प्रतिबोध थयो नथी ऐटला भाटे हु डवे ऐ प्रमावे कथक
 कउ के ऐथी राज कनकध्वजना मानसिक विचारो अमात्य तेतलिपुत्रने भाटे
 अतिक्रम थर लय ते देवे मनमा आ नतने विचार कर्ये

(सपेहिच्चा कणगज्झय तेतलिपुत्ताओ विपरिणामेइ तएण तेतलिपुत्ते कल्ले
 ण्हाए जान पायच्छित्ते आसखधरगए, बहुरिं पुरिसेहिं सपरिचुडे, गिहाओ,

प्रायः कनकध्वजो राजा तत्रैव 'पहारेत्य गमणाए' प्राधारयद् गमनाय-प्रस्थित-
वान् । तत खलु तेतलिपुत्रममात्य 'जेजहा' ये यथा=येन प्रकारेण बहवो 'राई
सरतलवरजावपभियाओ' राजेश्वरतलवर यात्रमभृतयः, राजेश्वरतलवरा यः पश्यन्ति,
ते तत्रैव तममात्यमाद्रियन्ते नमस्कारादिना परिजानन्ति=शुभागमनमित्यनुमो-
दयन्ति, अभ्युत्तिष्ठन्ति=अभ्युत्थान कुर्वन्ति, आदृत्य परिज्ञाय, अभ्युत्थाय अञ्जलि-
पत्रिह कुर्वन्ति, तथा इष्टाभिः कान्ताभिः यावत्-प्रियाभिर्मनोज्ञाभिर्मनोऽमाभिः'

जाव पायच्छित्त आसखधवरगए, यहृदि पुत्सिद्धि सपरिवुडे, साओ
गिहाओ, गिग्गच्छह, गिग्गच्छित्ता जेजेव कणगज्झए राया तेजेव
पहारेत्य गमणाए, तएण० तेतलिपुत्त अमच्चं जे जहा बहवे राईसरत
लवर जाव पभियाओ पासति ते तहेव आढायति परिघाणति, अब्भु-
द्धेति) इस विचार के आते ही उस देवने कनकध्वज राजा को तेतलि
पुत्र अमात्य के प्रति विपरीत परिणमादिया । जब द्वितीय दिन प्रातः
काल स्नान कर घलिकर्म, कर-काकादि निमित्त अन्न का विभाग कर,
कौतुक, मंगल, प्रायश्चित्त कर-दुःस्वप्न आदि दोषों को निवारण करने
के लिये मयी पुण्ड्रादि और मंगल कारक दूर्वाक्षतादि तथा प्रायश्चित्तकी
तरह आवश्यक कृत्य समाप्त कर-वह तेतलिपुत्र अमात्य घांड़े पर बैठ
कर जब अनेक पुरुषों के साथ साथ अपने घर से निकला तब निकल
कर वह ऊस ओर गया जहा कनकध्वज राजा थे । तेतलिपुत्र अमात्य
को ज्यों ही राजेश्वर आदि को ने आता हुआ देखा तो उन्होंने पहिले
की तरह ही उसका आदर किया, उसके आगमन की मराहना की

गिग्गच्छिद् गिग्गच्छित्ता जेजेव कणगज्झए राया तेजेव पहारेत्य गमणाए, तएण०
तेतलिपुत्त अमच्चं जे जहा बहवे राईसर तलवर जाव पभियाओ पासति ते
तहेव आढायति पभियाणति, अब्भुद्धेति)

आगतने विचार उत्पन्न यथाञ्च ते देवे अमात्य तेतलिपुत्र ने भाटे
राज कनकध्वजने प्रतिज्ञा अनानीदीधो भीज्ज हि मे सवार यथा स्नान, अ वि
कर्म, (कगडा वगेरे पक्षाओ भाटे अनलाग अपए) कौतुक, मंगल, प्राय
श्चित्त-ओटले डे दु स्वप्न वगेरेना दोषाना अनराभन भाटे मयी पुण्ड्र वगेरे
तेमञ्च मंगल वरक दुर्वा अक्षत (थाथा) वगेरेथी प्रायश्चित्त नी आवश्यक
विधिओ यतावनि धडा पुरुषोथो वीटणधने अमात्य तेतलिपुत्र घोडा उपर
सवार थधने न्या कनकध्वज रज्ज हुता त्या गथो अमात्य तेतलिपुत्रने आ-
पता नेतानी साथे न राजेश्वर वगेरे लोडोओ पडेलानी नेम न तेमने आहर
कथा नेमञ्च अमात्यनी सराडना करी अने अधाओ उलाथधने तेमनेवधावी लीधा

‘संगोहिज्जमाणेपि’ संरो यमानोऽपि धर्मो नो सवुञ्जइते=प्रतिबोध न प्राप्नोति ।
 ‘तं तत्=रमान कारणात् श्रेयः खलु मम यनरुपज राजान तेतलिपुत्राद् विगि
 णमयित्तुम्=तेतलिपुत्रपिये कनकरुजस्य मानसिको भावो यथा विपरिणतो भवे
 तथा कर्तुञ्चितम्, इतिफ्ता=इति मनसि विचार्य एव सपेहेते विचारयति
 सप्रेक्ष्य कनकरुज तेतलिपुत्राद् विपरिणमयति=विपरीत करोति । ततः खलु
 तेतलिपुत्र ‘कल्ल’ कल्पे द्वितीयस्मिन् दिने प्राय. ‘पहाण जात्र पायच्छित्ते’
 स्नानो यात्रात् पायचित्त=स्नात=कृनस्नातः यात्रा पदेन कृतप्रतिष्ठा=शान्ति
 निमित्त कृतान्नभागः कृतशौचकृमागल्यप्रायश्चित्तः=कृतानि कौतुमानि दु स्वप्नादि
 दोषनिवारणार्थं मपीपुण्ड्रादीनि-माङ्गल्यादीनि = मङ्गलकारणाणि दूर्वावतादीनि
 =प्रायश्चित्तप्रदं कर्त्तव्यानि येन सः, ‘आमखधरगए’ अश्वस्वध-
 वरगतः=अश्वारूढ बहुभि पुम्पै सपरिवृतः स्वस्माद् गृहाद् निर्गन्तति, निर्गस्य

भिक्षुण २ संगोहिज्जमाणे वि धम्मे नो सवुञ्जइ, त सेय खलु मम
 कणगज्झय राय तेतलिपुत्ताओ विपरिणमेत्तए त्ति कट्टु एव सपेहेइ)
 तव उस पाङ्किल देवको गेमा आ यात्मिक यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न
 हुआ कनकरुज राजा तेतलिपुत्र अमात्यका आदर करते हैं यावत् वे
 उनके सुख साधनकी सामग्री उदा दिया है-इसलिये मेरे द्वारा बार बार
 प्रतिबोधित करने पर भी वे धर्म में प्रतिबुद्ध नहीं बन रहे हैं-प्रतिबोध
 को प्राप्त नहीं हो रहे हैं । इसलिये मुझे अब ऐसा करना चाहिये कि
 जिससे तेतलिपुत्र के विषय में कनकरुज राजा का मानसिक विचार
 बदल जावे । इस प्रकार का विचार उस देवके मनमें जगा (सपेहिता,
 कणगज्झय तेतलिपुत्ताओ विपरिणामेइ, तएणं तेतलिपुत्ते कल्लं पहाए

२ संगोहिज्जमाणे पि धम्मे नो सवुञ्जइ, त सेय खलु मम कणगज्झय राय
 तेतलिपुत्ताओ विपरिणामेत्तए त्ति कट्टु एव सपेहेइ)

त्यारे ते देवउप पोद्धिलाना अत्र देवने ओवे आध्यात्मिक यावत् मनो
 गत संकल्प उल्लेख के राजा कनकरुज अमात्य तेतलिपुत्रने आदर उरे छे
 यावत् तेओओ तेमनी अधी नतनी सुभसगवडनी सामग्रीमा वधारो पणु
 कशी आओओ छे, ओथी भासवडे वारवार प्रतिबोधित करवा छताओ
 तेओओ धर्ममा प्रतिबुद्ध थई नता नथी ओटले के तेमने वारवार प्रेरणा
 आपवा छता प्रतिबोध थयो नथी ओटला भाटे हु डवे ओ प्रभाओ कर्क
 कडे के ओथी राजा कनकरुजना मानसिक विचारो अमात्य तेतलिपुत्रने भाटे
 प्रतिकूल थई नथ ते देवे मनमा आ नतने विचार कथी

(सपेहिता कणगज्झय तेतलिपुत्ताओ विपरिणामेइ तएणं तेतलिपुत्ते कल्लं
 पहाए जात्र पायच्छित्ते आसखधरगए, बहुहिं पुरिसेहिं सपरिवुडे, । गिहाओ,

माद्भुवन् 'अपरिजाणमाणे' अपरिजानन्, तदागमनमननुमोदयन् अनभ्युत्तिष्ठन्= अभ्युत्थानाद्यकर्तुन् 'परम्मुहे' पराद्भुवः=विभुव सन् सतिष्ठन्। ततः खलु तेतलिपुत्रः कनकध्वजस्य राजः ननुखे जञ्जलिं करोति। 'तएण' ततः खलु= तेतलिपुत्रेण अञ्जलिकरणानन्तरमपि स कनक वज्रो राजा अनाद्रियमाणः, अपरिजानन्, अनभ्युत्तिष्ठन् तप्णीक पराद्भुवः सतिष्ठते। ततः खलु तेतलिपुत्रः कनकध्वज विपरिणत=विपरीत ज्ञात्वा 'भीण जाय सजायभए' भीतो यावत् सजातभय, एवमपद्रत्=मनस्यकथयत्-रुष्टः खलु मम=मम विषये कनकवज्रो राजा,

उसका कोई आदर क्रिया-न उसके आनेकी कोई सराहना की और न उठकर उसे लिया ही। इस तरह अनादर अननुमोदन एव अनभ्युत्थान करते हुए वे राजा प्रत्युत उस ओरसे अपना मुँह फेर कर बैठ गये। (तएण तेतलिपुत्ते कणगज्जयस्स अजलिं करेइ) तेतलिपुत्र ने आते ही राजा कनकध्वज को नमस्कार किया-(तएण से कणगज्जए राया अणाढायमाणे तुमिणीए परम्मुहे सचिद्धइ) तौ भी उन कनक ध्वज राजा ने उस अजलि करने का भी कोई आदर नहीं किया केवल चुप चाप ही विमुख बना हुआ बैठा रहा-(तएण तेतलिपुत्ते कणगज्जय विप्परिणय जाणित्ता भीए सजायभए एव वयासी) तब तेतलिपुत्र ने कनक वज्र राजा को विपरीत जानकर भीत (भय पाया हुआ) यावत् सजात भय होकर मनमें ऐसा विचार किया-(रुठे ण मम कणगज्जए राया) कनकध्वज राजा मेरे ऊपर रुष्ट हो गये हैं। (हीणे ण मम कण-

आदर न कर्था, तेभना आववानी सराहना न करी अने उला थरने तेभने सत्कार्या पणु नहि आ गीते अनादर, अननुमोदन अनभ्युत्थान करता ते राजा तेभना तन्त्र थी मो देरवीने गेमी गया (तएण तेतलिपुत्ते कणगज्जयस्स अजलिं करेइ) तेतलिपुत्रे आवतानी साथे न राजा कनकध्वजने नमस्कार कर्था

(तएण से कणगज्जए राया अणाढायमाणे तुमिणीए परम्मुहे सचिद्धइ) छताये राजा कनकध्वजने तेभना नमस्कारने पण उचित मत्तर कर्था नहि देकत तेभो चुपचाप मोदेश्वीने गेमी न रहा।

(तएण तेतलिपुत्ते कणगज्जय विप्परिणय जाणित्ता भीए जाय सजायभए एव वयासी)

त्यादे तेतलिपुत्र अभात्ये राजा कनकध्वजने प्रतिकूलवर्ध गये वा (नाराज थयेला) लक्ष्मीने लयलीत यावत् सन्नतलय वाणा थना मनभा विचार कर्था के (रुठेण मम कणगज्जए राया) कनकध्वज राजा मेरा ऊपर नाराज

वाग्भिः आलपन्तः सलपन्तश्च=आलाप=संभाषणं, सलाप=परस्परसंभाषणं
 कुर्वन्तश्च पुरतः=अग्रं च पृष्ठतः=पश्चाद्भागतश्च, पार्श्वतः=पार्श्वभागतश्च, मार्गतः=
 यस्मान्मार्गात् तेतलिपुत्रो निर्गच्छति, तन्मार्गतश्च 'समणुगच्छति' समणुग-
 च्छन्ति । ततः खलु स तेतलिपुत्रो यत्रैव कनकध्वजस्तत्र उपागच्छति । ततः
 खलु स कनकध्वजो राजा तेतलिपुत्रमेजमानं पश्यति, दृष्ट्वा नो आद्विश्यते, नो परि-
 जानाति, नो अभ्युत्तिष्ठति । अनन्तरं 'अणाढायमाणे' अनाद्विश्यमाणः=तस्माद्दरं

सवने उठकर उसे लिया- (आढाइत्ता, परिजाणित्ता अब्भुट्टित्ता अजलि
 परिगह करेनि, इट्ठाहिं कंनारिं जाव वग्गुहिं आलवेमाणा य सलवे
 मागा य पुरओ य पिट्ठओ य पासओ य मग्गओ य समणुग छंति
 तएणं से तेतलिपुत्ते जेणेव कणगज्झए राया तेणेव उवागच्छइ, तएण
 से कणगज्झए राया तेतलिपुत्त एज्जमाण पासइ, पासित्ता नो आढाइ
 नो परियाणाइ, नो अब्भुट्टेइ, अणाढायमाणे अपरियाणमाणे अणब्भु
 ट्ठायमाणे परम्भुहे सच्चिइइ) आदर देकर शुभाग्मन की अनुमोदनाकर
 तथा उठकर उन सवने फिर दोनों हाथों की अजलि जोड़कर उसे
 नमस्कार किया । बाद में इष्ट, कान यावत् प्रिय-मनोज-मनोम
 वाणियों से आलाप-संभाषण, सलाप परस्पर संभाषण-करते
 हुए वे सबआगे, पीछे आजू बाजू होकर जिस मार्ग से वह आरहा
 था उसी मार्ग से उसके साथ साथ चले आये । चलते २ तेतलिपुत्र
 अमात्य जहाँ कनकध्वज राजा बैठे थे वहाँ आया । कनकध्वज
 राजा ने उन्हें आता हुआ देखा-तौभी पहिले की तरह देखकर न

(अढाइत्ता, परिजाणित्ता अब्भुट्टित्ता अजलि परिगह करेनि इट्ठाहिं, कंनारिं
 जाव वग्गुहिं आलवेमाणा य सलवेमाणा य पुरओ य, पिट्ठओ य, पासओ य,
 मग्गओ य, समणुगच्छति तएणं से तेतलिपुत्ते जेणेव कणगज्झए राया तेणेव
 उवागच्छइ, तएण से कणगज्झए राया तेतलिपुत्त एज्जमाण पासइ, पासित्ता
 नो आढाइ, नो परियाणाइ, नो अब्भुट्टेइ, अणाढायमाणे अपरियाणमाणे अणब्भु
 ट्ठायमाणे परम्भुहे सच्चिइइ)

तेमने आदर आपीने, शुभाग्मनने अनुमोदित करीने तेज्जे अथा उला
 थया अने त्थार पटी मने डायीनी अज्जणि अनावीने तेमने नमस्कार कर्या
 त्थार णाह धंए, कंत, यावत् प्रिय, मनोज अने मनोम वातोथा आलाप-
 सलापवु सलाप-परस्पर सलापवु करता तेज्जे सरे आगग, पाछग अने
 तेमनी अने णाजुअे थंने ने मार्गथी तेज्जे आवता डता ते मार्गथी ज तेनी
 साथे साथे आइवा साथे तेतलिपुत्र अमात्य आइता आइता अथा राज्ज कनकध्वज
 षेडा डता त्या आठ्या पवु कनकध्वज राजजे ती तेमने ने ५५

मानुवन् 'अपरिजाणमाणे' अपरिजानन्, तदागमनमनुमोदयन् अनभ्युत्तिष्ठन्=अभ्युत्थानाद्यकुर्वन् 'परम्मुहे' पराङ्मुखः=विमुख सन् सतिष्ठते। ततः खलु तैत्तलिपुत्रः कनकध्वजस्य राज्ञः प्रमुखे अङ्गिष्ठं करोति। 'तएण' ततः खलु=तैत्तलिपुत्रेण अञ्जलिकरणानन्तरमपि च कनक वज्रो राजा अनाद्रियमाणः, अपरिजानन्, अनभ्युत्तिष्ठन् तूष्णीं पराङ्मुखः सतिष्ठते। ततः खलु तैत्तलिपुत्रः कनकध्वज विपरिणत=विपरीत ज्ञात्वा 'भीणं जाय सजायभण्' भीतो यावत् सजातभय, एवमपदत्=मनस्यकथयत्-रुष्टः खलु मम=मम विषये कन वज्रो राजा,

उसका कोई आदर किया-न उमके आनेकी कोई सराहना की और न उठकर उसे लिया ही। इस तरह अनादर अननुमोदन एव अनभ्युत्थान करते हुए वे राजा प्रत्युत उस ओरसे अपना मुँह फेर कर बैठ गये। (तएण तैत्तलिपुत्ते कणगज्झयस्स अजलिं करेइ) तैत्तलिपुत्र ने आते ही राजा कनकध्वज को नमस्कार किया-(तएण से कणगज्झए राया अणाढायमाणे तुम्मिणीए परम्मुहे सच्चिद्ध) तौ भी उन कनक ध्वज राजा ने उस अजलि करने का भी कोई आदर नहीं किया केवल घुप चाप ही विमुख बना हुआ बैठा रहा-(तएण तैत्तलिपुत्ते कणगज्झयं विप्परिणय जाणित्ता भीणं सजायभण एव वयासी) तब तैत्तलिपुत्र ने कनकध्वज राजा को विपरीत जानकर भीत (भय पाया हुआ) यावत् सजात भय होकर मनमें ऐसा विचार किया-(रुष्टे ण मम कणगज्झए राया) कनक ध्वज राजा मेरे ऊपर रुष्ट हो गये हैं। (हीणे ण मम कण-

आदर न कर्था, तेमना आववानी सराहना न करी अने उला थधने तेमुने सत्कार्या पणु नहि आ गीते अनादर, अननुमोदन अनभ्युत्थान करता ते राजा तेमना तरद थी भो इश्वरीने जेमी गया (तएण तैत्तलिपुत्ते कणगज्झयस्स अजलिं करेइ) तैत्तलिपुत्रे आवतानी साथे न राजा कनकध्वजने नमस्कार कर्था (तएण से कणगज्झए राया अणाढायमाणे तुम्मिणीए परम्मुहे सच्चिद्ध) छताये राजा कनकध्वजे तेमना नमस्कारने पण उचित सत्कार कर्था नहि इच्छा तेजो उपथाप भोइश्वरीने जेमी न गहा

(तएण तैत्तलिपुत्ते कणगज्झय विप्परिणय जाणित्ता भीणं जाय सजायभण एव वयासी)

त्यारे तैत्तलिपुत्र अभात्ये राजा कनकध्वजने प्रतिक्रियवथर्ध गये वा (नाराज थयेला) जालीने लयलीत यावत् मन्तलय वाणा थता मनमा विचार कर्था वे (रुष्टेण मम कणगज्झए राया) कनकध्वज राजा मेरा उपर नाराज

'हीणे ण' हीनः खलु=प्रीतिहीनः खलु ममोपरि अनरु रजो राजा 'अवज्जाण' अपध्यात=दुर्भावमम्पन्नो जात खलु मम प्रिये अजाणो राजा 'त' तत्=तस्मात् 'न नज्जइ' न नायते खलु पप मा केन चीणेन कुमारेण=कृत्स्नितेन मारेण 'मारेहिइ' मारयिष्यति 'त्ति कट्टु' इति कृत्या=इति प्रिति-त्य भीतस्तः यावत्-प्रसितः, उद्विग्नः, स-ज्ञातमय मन् 'मणिय' 'गं' 'पचोमक्कइ' प्रत्यवस्वफले =प्रत्यवसर्पति=पश्चाद्-लनि प्रत्यवस्व-त्य, तमेव 'आसखध' =अथस्व-द्रो-हति, दृष्ट्वा 'तेतलिपुर' अत्र पण्यर्थे द्वितीया, तेतलिपुरस्येत्यर्थः, मध्यम-येन यत्रैव स्वरु गृह तत्रैव माधारयद् गमनाय । ततः खलु त तेतलिपुत्र 'जेणहा'

गज्जण राया) अनरुध्वज राजा मेरे ऊपर प्रीति से रहित हो गये हैं । (अवज्जाण ण मम कणगज्जण राया) अनरुध्वज राजा मेरे प्रिय में सद्भाव रहित बन गये हैं । (त ण नज्जइ ण मम केणइ कुमारेण मारे हिइ त्ति कट्टु भीण तत्ये पूजावमणिय २ पचोमक्कइ) तो न मालूम यह मुझे किस कुत्सित मरण से मरवा डाले, ऐसा विचार कर वह भीत (भययुक्त) हो गया अस्त यावत् सजात भयगोला बन गया । और धीरे २ वहाँ से पीटाहट कर चला आया-(पचोसक्किता तमेव आसखध दुरुहेइ, दुरुहिता तेतलिपुर मज्झ मज्जेण जेणेव सणगिहे तेणेव पहारेत्य गमणाए) आकर के वह अपने उसी घोड़े पर बैठकर तेतलिपुर के बीच से होता हुआ अपने घर की तरफ चल दिया (तएण तेतलिपुत्त जे जहा ईसर जाव पासति ते तहा नो आढायति, नो परिया

थर्ध गया छे (हीणेण मम कणगज्जण राया) अनरुध्वज राजाने छे वे मारा उपर प्रेम रह्यो नथी (अवज्जाण ण मम कणगज्जण राया) अनरुध्वज राजा मारा प्रत्ये सद्बलवना रहित थर्ध गया छे

(त ण नज्जइ ण मम केणइ कुमारेण मारेहिइ त्ति कट्टु भीण तत्ये जाव सणिय २ पचोमक्कइ)

तो कोणु लण्णे ज्यारे तेज्जेः मने क्कमाते मरावी न भावे आरीते विचार करीने ते लयलीत थर्ध गथो, ते अन्त यावत सन्त लयवाणो थर्ध गथो अने धीमेधीमे ल्याथी पाछे करीने आवतो रह्यो

(पचोसक्किता तमेव आसखध दुरुहेइ, दुरुहिता तेतलिपुर मज्झ मज्जेण जेणेव सण गिहे तेणेव पहारेत्य गमणाए)

त्याथी आवीने ते पोताना घोडा उपर सवार थर्धने तेतलिपुरनी वन्थे थर्धने पोताना घर तरई खाना थर्धे

तएण तेतलिपुत्त जे जहा ईसर जाव पासति ते तहा नो नो

ये यथा=ये यथास्थिताः ' ईमरजाव ' ई वर यावत्=ईश्वरतलवरमाडम्बिकादयः पश्यन्ति, ' ते तद्देव ' ते तथा स्थिता एव सन्तो नो आद्रियन्ते, नो परिजानन्ति, नो अभ्युत्तिष्ठन्ति, नो अजलिपरिग्रहं कुर्वन्ति, इष्टाभिर्भावद्वाग्भिर्नो सलपन्ति, नो पुरतश्च पृष्ठतश्च पार्श्वतश्च मार्गतश्च समनुगच्छन्ति । तत खलु तेतलिपुत्रो यत्रैव स्फुटं गृहं तत्रैव उपागच्छति । यापि च ' से ' तस्य ' तत्थ ' तत्र भवने प्राप्ता पण्डितं भवति, तद् यथा-' दासाइ वा ' दासाइति वा,

णति, नो अब्भुट्टेति) मार्ग में तेतलिपुत्र को आते हुए जिन ईश्वर तलवर, माडम्बिक आदिको ने देखा तो उन्होंने अब पहिले की तरह न उसका आदर किया न उसके आगमन की अनुमोदना की और न उसे देखकर वे उठे ही (नो अजलिपरिग्रहं करेति, इष्टाहिं जाव णो सलवति नो पुरओ य पिट्ठओय पासओय मग्गओय समणुग०) और न उसे हाथ जोड़ कर नमस्कार ही किया । न इष्ट प्रिय वाणियों से उससे आलाप, सलाप क्रिया, और न आजू वाजू से होकर वे उसके साथ मार्ग में ही चले । (तण्ण तेतलिपुत्ते जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) इस तरह चलता हुआ वह तेतलिपुत्र अमात्य अपने घर पर आ गया । उवागच्छित्ता जाविसे तत्थ वाहिरिया परिसा भवइ, तज्जहा दासेइ वा पेसेइ वा भाइलणइ वा सा वि य ण नो आडाइ, नो परियाणाइ, नो अब्भुट्टेइ) वहा पर भी जो दास घर के काम काज करने

परियाणति, नो अब्भुट्टेति)

मार्गमा जाता तेतलिपुत्रने ईश्वर तलवर माडम्बिक वगेरे लोकोञ्जे लोथे पणु कोथञ्जे पडेलानी जेम तेना आह० न उथी, तेना आगमननी अनुमोदना न-करी अने तेने लोथने तेञ्जे ठिमा न थया

(नो अजलि परिग्रहं करेति, इष्टाहिं जाव णो सलवति नो पुरओ य पिट्ठओ य पासओ य मग्गओ य समणुग०)

अने तेञ्जेञ्जे हाथ लोडीने तेने नमस्कार पणु न उथी धध, प्रिय, वयनोथी तेञ्जेञ्जे तेनी साथे आलाप न उथी, मलाप न कथी अने अने पाणुञ्जे थपने तेञ्जे मार्गमा तेनी साथे साथे आत्था पणु नडि (तण्ण तेतलिपुत्ते जेणेव सएगिहे तेणेव उवागच्छइ) आ प्रभाणु आलतो आलतो तेतलिपुत्र अमात्य पोताने घर आनी गथे।

(उवागच्छित्ता जाविसे तत्थ वाहिरिया परिसा भवइ, तज्जहा दासेइ वा पेसेइ वा भाइलणइ वा, सा वि य ण नो आडाइ नो परियाणाइ, न अब्भुट्टेइ) त्या पणु जे दासा-धरमा काम उरतारा नोडरी, त्रैथो-धरना काम भाटे

'हीणे ण' हीनः खलु=प्रीतिहीनः सत्रु ममोपरि वनरुवजो राजा 'अवज्ज्ञाप' अपध्यात =दुर्भावमम्पयो जात खलु मन विषये वनरुवजो राजा 'त' तत्= तस्मात् 'न नज्जइ' न नायते खलु पण मा केन तीज्जेन वमारेण=कुट्टिगतेन मारेण 'मारेहिइ' मारयिष्यति 'त्ति कट्टु' इति कृत्या=इति विविच्य भीतमन्मः यावत्- प्रसितः, उद्विग्नः, सज्जातभव मन् 'मणिय' शनः २ 'पचोमक्कइ' प्रत्ययस्वप्नते =प्रत्ययसर्पति=पश्चाद्गच्छति प्रत्ययस्वप्नय, तमेव 'प्रासवय' =भयमन्मन् द्रो- हति, दुरूह 'तेतलिपुर' अत्र पण्येयं द्वितीया, तेतलिपुरस्येत्यर्थः, मध्यमन्मेन यत्रैव स्वरु गृह तत्रैव प्राधारयद् गमनाय । ततः खलु त तेतलिपुर 'जेजहा'

गज्जण राया) कनकध्वज राजा मेर ऊपर प्रीति स रहित हो गये हैं । (अवज्ज्ञाप ण मम कणगज्जण राया) कनकध्वज राजा मेरे विषय में सद्भाव रहित बन गये हैं । (त ण नज्जइ ण मम केणइ कुमारेण मारे हिइ त्ति कट्टु भीण तत्ये पूजायमणिय २ पचोमक्कइ) तो न मालूम यह मुझे किस कुत्सित मरण से मरवा उाले, ऐसा विचार कर वह भीत (भययुक्त) हो गया वस्तु यावत् सजात भयत्राला बन गया । और धीरे २ वहाँ से पीडाहट कर चला आया—(पचोसक्किता तमेव आसखध दुरूहेइ, दुरूहित्ता तेतलिपुर मज्झ मज्झेण जेणेव सण्णिहे तेणेव पहारेत्य गमणाए) आकर के वह अपने उसी घोड़े पर बैठकर तेतलिपुर के बीच से होता हुआ अपने घर की तरफ चल दिया (तएण तेतलिपुत्त जे जहा ईसर जाव पासति ते तहा नो आढायति, नो परिया

थर्ध गया छे (हीणेण मम कणगज्जण राया) कनकध्वज राजानो छेवे भारा उपर प्रेम रह्यो नथी (अवज्ज्ञाप ण मम कणगज्जण राया) कनकध्वज राजा भारा प्रत्ये सद्व्यवस्था रहित थर्ध गया छे

(त ण नज्जइ ण मम केणइ कुमारेण मारेहिइ त्ति कट्टु भीण तत्ये जाव सणिय २ पचोमक्कइ)

तो कोणु लोखे उयारे तेज्यो भने कभोते भरावी न पावे आरीते विचार करीने ते लयलीत थर्ध गयो, ते वस्तु यावत् सजात लयवाणो थर्ध गयो अने धीमेधीमे त्याथी पाछो करीने आवतो रह्यो

(पचोसक्किता तमेव आसखध दुरूहेइ, दुरूहित्ता तेतलिपुर मज्झ मज्झेण जेणेव सण्णिहे तेणेव पहारेत्य गमणाए)

त्याथी आवीने ते चोताना घोडा उपर सवार थर्धने तेतलिपुरनी वन्धे थर्धने चोताना घर तरफ रवाना थयो

तएण तेतलिपुत्त जे जहा ईसर जाव पासति ते तहा नो , नो

ये यथा=ये यथास्थिताः ' ईसरजात्र ' ईश्वर यावत्=ईश्वरतत्त्वरमाडम्पिकादयः पश्यन्ति, ' ते तद्देव ' ते तथा स्थिता एव सन्तो नो आद्रियन्ते, नो परिजानन्ति, नो अभ्युत्तिष्ठन्ति, नो अजलिपरिग्रहं कुर्वन्ति, उष्ट्राभिर्यावद्वाग्भिर्नो सत्पन्ति, नो पुरतश्च पृष्ठतश्च पार्श्वतश्च मार्गतश्च समनुगच्छन्ति । तत खलु तैत्तिरीयो यत्रैव स्रक्तुं गृहं तत्रैव उपागच्छति । यापि च ' से ' तस्य ' तत्थ ' तत्र भवने गाथा परिपद् भवति, तद् यथा—' दासाः वा ' दासा इति वा,

पति, नो अब्भुद्वेति) मार्गं मे तैत्तिरीय को आते ह्ये जिन ईश्वर तत्त्वर, माडम्पिका आदिको ने देखा तो उन्होंने अत्र पहिले की तरह न उसका आदर किया न उसके आगमन की अनुमोदना की और न उसे देवकर वे लटे ही (नो अजलिपरिग्रहं करोति, इष्टार्हिं जाव णो सत्पति नो पुरओ य पिद्वओय पासओय मग्गओय समणुग०) और न उसे हाथ जोड़ कर नमस्कार ही किया । न इष्ट प्रिय वाणियों से उससे आलाप, संलाप किया, और न आजू बाजू से होकर वे उसके साथ मार्ग में ही चले । (तण्ण तैत्तिरीयुत्ते जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) इस तरह चलता हुआ वह तैत्तिरीय अमात्य अपने घर पर आ गया । उवागच्छिता जाति से तत्र वाहिरिया परिसा भवइ, तज्हां दासेइ वा पेसेइ वा भाइएइ वा सा चि य ण नो आहाइ, नो परियाणाइ, नो अब्भुद्वेइ) वहा पर भी जो दास पर के काम काज करने परियाणति, नो अब्भुद्वेति)

मार्गमा जाता तैत्तिरीयने ईश्वर तत्त्वर माडम्पिका वगैरे लोकोत्थे जेथे पणु कोउथे पडेलानी जेभ तेने आदर न उथे, तेना आगमननी अनुमोदना न करी अने तेने जेधने तेओ उला न थया

(नो अजलि परिग्रहं करोति, इष्टार्हिं जाव णो सत्पति नो पुरओ य पिद्वओय पासओ य मग्गओ य समणुग०)

अने तेओओे हाथ जोडीने तेने नमस्कार पणु न उथे धष्ट, प्रिय, वचनोधी तेओओे तेनी साथे आलाप न उथे, संलाप न उथे अने अने भावुओे थधने तेओओे मार्गमा तेनी साथे साथे आलाप पणु नहि (तण्ण तैत्तिरीयुत्ते जेणेव सएगिहे तेणेव उवागच्छइ) आ प्रभाणु आलतो आलतो तैत्तिरीय अमात्य पोताने घर आनी गथे

(उवागच्छिता जाति से तत्थ वाहिरिया परिसा भवइ, तज्हां दासेइ वा पासेइ वा भाइएइ वा, सा चि य ण नो आहाइ नो परियाणाइ, न अब्भुद्वेइ) तथा पणु जे दासो-धरमा काम करतारा नोकरे, प्रैथो-धरता काम भाटे

दासाः=गृहकार्यकारिणोभृत्याः, पेयाइसा' प्रयाइति सा, प्रयाः गृहकार्यं कर्तुमन्यत्र प्रेषणीया भृत्याः, 'भाइइएति सा' भाइइइति सा, 'भाइइ' इति देशीशब्द, हालिकः मागिनश्चेति तदर्थः हालिका=भूमिकर्षणार्थं नियुक्ता भृत्याः, मागिनः,=स्वव्ययेनाऽन्यस्य क्षेत्रे कृषिं कृत्वा उपजातान्नस्यार्धभागं ग्राहिन, एतद्रूपा या परिपत् साऽपि च एत नो आद्रियते, नो परिजानाति, नो अभ्युत्तिष्ठते । याऽपि च तस्य आम्बन्तिको परिपद् भवति, 'त जहा' तद् यथा 'पियाइ सा' पिताऽति सा, 'मायाइ वा' माता इति वा, 'जाव सुण्हाइ वा' यावत् स्तुपाइति वा, स्तुपा=पुत्रवध्व, तद्रूपापि च परिपद् एत नो आद्रियते, नो परिजानाति, नो अभ्युत्तिष्ठति । तत् खलु स तेतलिपुत्रो यत्रैव वासगृह यत्रैव स्वरु शयनीय तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य,

वाले नौकर प्रैष्य, घर के काम के लिये जिन्हे घोर भेजा जाता है ऐसे भृत्य, तथा भाइइ-हालिक-भूमि कर्षणार्थं नियुक्त भृत्य, अथवा भागीदार-अपने व्यय से अन्य के खेत में कृषिकरके उत्पन्न अन्न के अर्धभोग को लेने वाले बटियाजन इनरूप जो वाह्य परिपत् थी उम्ने भी उसका आदर नहीं किया, उसके आगमन की अनुमोदना नहीं की और न वह उसके आने पर अपने अधिष्ठित स्थान से उठे । (जाविय से अर्द्धितरिया परिसा भवइ-तजहा-पियाइ वा मायाइ वा जाव सुण्हाइ वा सा वि य ण नो आढाइ, नो परियाणाइ, नो अब्भुइइ) इसी तरह जो उसकी अन्तरग परिपद् थी जैसे पिता माता यावत् स्तुपा-पुत्रवध्व आदि जन इन्होंने भी उसका आदर नहीं किया, आगमन का अनुमोदन नहीं किया और न ये कोई भी उसके आने पर अपने स्थानसे

उठने पर उठने का आदेश देते थे, तथा लाइल-हालीके अर्द्धिक के भेजवा भाटे नियुक्त करायेला भृत्यो अथवा तो लागीदारी-के नो 'पोताना भंथे' नो पीजना भेतरमा अनाज वावे छे अने वणतरमा भेतरमा मादिक पासेथी अर्धालाग भेजवे छे-अवा नो आह्य परिपत् स भधी लोको हुता तेओ अ पणु तेना आहर कर्यो नहि, तेना आगमनने अनुमोदन आभ्यु नहि अने न तेना आववा भदल पोताना स्थानेथी सत्कार भाटे तेओ जिला थया

(जा वि य से अर्द्धितरिया परिसा भवइ-तजहा-पियाइ वा मायाइ वा जाव सुण्हाइ वा सा वि य ण नो आढाइ, नो परियाणाइ, नो अब्भुइइ) अने आ प्रमाहे नो तेनी अतरग परिपदना लोको नो के पिता माता यावत् स्तुपा-पेटा वहु-वगेरे लोकोअ पणु तेना आहर कर्यो नहि, तेना आगमनने अनुमोदन आभ्यु नहि अने तेओमाथी कोइ पणु तेना आववा भदल पोताना स्थानेथी जिला थया नहि.

शपनीये निपीदति, निपद्य, एवमप्रदत्त=मनस्वकथयन्-एव खलु=यथा अद्य
 तथैवान्यस्मिन्नपि द्विपसे, अहं स्वकाद् गृहान् निर्गच्छामि, ' त चेव जाव अर्भिम-
 तरिया परिसा नो आढाड, नो परियाणाड नो अब्भुट्टेड ' तदेव यावत् आभ्यन्तरिकी
 परिपद् नो आद्रियते, नो परिजानाति, नो अभ्युत्तिष्ठति, अस्यायमभिप्रायः-
 पूर्वस्मिन् दिवसे रात्रिप्रसन्ने मा दृष्ट्वा राजेश्वरादयः सर्वे आद्रियन्ते स्म, परिजाना-
 न्ति स्म अभ्युत्तिष्ठन्मि स्म, अत्रापि गृहनिर्गत मां ते तथैव सत्कारयन्तिस्म । परन्तु
 रात्रि अरुस्मात् अप्रसन्ने राजेश्वरतलपरमाडम्पिरुक्कौटुम्पिकप्रभृतयः तथा मदीय
 ब्राह्मभ्यन्तरा च परिपदपि सर्वेऽपि च मा नाद्रियन्ते, नो परिजानन्ति, नो

उठे । (तएण से तेतलिपुत्ते जेणेव वासघरे जेणेव सए सयणिज्जे
 तेणेव उवागच्छइ) इम तरह घर पर आरु वह तेतलिपुत्र अमात्य
 जहा अपना वासगृह और उसमें भी जहा अपनी शय्या थी वहां गया
 (उवागच्छिता सयणिज्जसि निसीयइ, णिसीइत्ता एव वयासी) वहा
 जाकर वह उस पर बैठ गया-और मनही मन विचार करने लगा-(एव
 खलु अहं सयाओ गिहाओ णिग्गच्छामि, त चेव जाव अर्भितरिया
 पुरिसा नो आढाड, नो परिजाणाड नो अब्भुट्टेड-तं सेय खलु मम अ-
 प्पाण जीवियाओ ववरोवित्तएत्ति वट्टु एव सपेहेइ) पहिले के दिनों में
 जब मैं अपने घर से निकलता था तो लोग-राजेश्वर आदि समस्त जन
 मुझ पर राजा की प्रसन्नता होने के कारण आता जाता हुआ देखकर
 मेरा आदर करते थे-मेरे आगमन आदि की अनुमोदन करते थे उठ-
 कर अपने विनय प्रदर्शित करते थे-तथा आज भी जब मैं घरसे निकल

(तएण से तेतलिपुत्ते जेणेव वासघरे जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ)

आ रीते घेर आवीने तेतलिपुत्र अमात्य न्या तेनी उडेवानी ओरडी
 अने तेमा पणु न्या पोतानी पथागी हुती त्यां गथे (उवागच्छिता सयणि-
 ज्जसि निसीयइ, णिसीइत्ता एव वयासी) त्या जठने ते तेना उपर जेभी गथे
 अने मनमा ज विचार करवा लाग्ये डे

(एव खलु अहं सयाओ गिहाओ णिग्गच्छामि, त चेव जाव अर्भितरिया
 पुरिसा नो आढाड, नो परिजाणाड, नो अब्भुट्टेड-तं सेय खलु मम अप्पाण जीवि-
 याओ ववरोवित्तएत्ति वट्टु एव सपेहेइ)

पहिला न्यारे हु घेरथी गडार नीकणतो हुतो त्यारे लोको-राजेश्वर
 वगेरे गधा लोको-राज भारा उपर भुश हुता ओटवी-आवता जता जेधने
 भारे आदर करता हुता, भारा आ मननु अनुमोदन करता हुता तेमज्ज लोका
 थधने विनय प्रदर्शित करता हुता अने आगे पणु हु न्यारे घेरथी नीकणाने

अभ्युत्तिष्ठन्ति । ' त ' तत=तस्मात् कारणात्, श्रेयः स्वतु मम आत्मान जीवि
ताद् व्यपरोपयितुम्, इति ऋत्या, एव समेक्षते, समेक्ष्य तात्पुट रिपम् ' आस-
गसि' आस्ये=मुखे प्रक्षिपति, रिप नो समाप्स्यति=रिपत्वेन नो परिणमति ।
ततः खलु स तेतलिपुत्रो ' नीलुष्पल जाव अस्ति ' नीलोत्पल यावदसि=नीलोत्पल
गवलगुलिकसमप्रभ=नीलोत्पल=नीलकमलम् गायल=माटिप शृङ्गम्, ' गुलिक'
नीलरङ्गविशेष, तै. समा प्रभातेतलि कान्तिर्यस्य स त तादृश यावदसि=तीक्ष्ण
खड्ग ' खत्रे ' स्कन्धे=मण्डपूछे ' ओहरइ ' अहरति=निपातयति । तत्राऽपि च

कर राजा के पास गया-तब भी इन सपलोगों ने पूर्ववत् मेरा आदर
आदि सब कुछ किया-परन्तु अकस्मान राजा के रुष्ट होने पर जब मैं
वहा से लौटकर वापिस अपने स्थान पर आने लगा-तो किमी ने भी
मेरा आदर आदि कुछ भी सत्कार नहीं किया । यहा तक कि जो मेरी
बाह्य और आभ्यन्तर परिपद है-भीतर बाहरके नौकर चाकर एव माता
' पिता आदि जन हैं-उसने भी आज इस समय आने पर मुझे कुछ
' नहीं समझा-अतः मुझे अब ऐसी स्थिति से मरना ही उत्तम है । इस
प्रकार का उसने अपने मन में विचार किया-(सपेहिता तालउड विस
आसगसि पत्रिखवइ, सेय विसे णो सकमइ, तएण से तेतलिपुत्ते नीलु
ष्पल जाव अस्ति खधसि ओहरइ, तत्य वि य से धारा ओपल्ला, तएण से
तेतलिपुत्ते जेणेव असोगवणिग्या तेणेव उ०) विचार करके उसने ताल
पुटविप को अपने मुख में डाला-परन्तु उसने अपना कुछ भी प्रभाव

राजानी पासे गये त्यारे पणु अे षधाअे पडेलानी जेमज मारे आहर
वगेरे षधु कथुं हुतुं पणु अेअिना राजने नाराज थर्ध जवा षदव नथारे
हु त्थाथी पाछे इरीने पोताने घेर आववा लाग्थे त्यारे के अे पणु मारे
आहर के सत्कार कथे नहि मारी बाह्य अने आभ्यतर परिषद अेटले के
षडारना नोकरे-आकरे अने माता पिता वगेरे-छे तेअेअे पणु आरे अत्यादे
मारा आववा षदल कर्ध पणु डिमत करी नहि अेथी अेरी परिस्थितिमा
भाइ भरणु ज उत्तम उपाय छे

(सपेहिता तालउड विस आसगसि पत्रिखवइ, सेय विसे णो सकमइ, तएण
से तेतलिपुत्ते नीलुष्पल जाव अस्ति खधसि ओहरइ, तत्यवि य से धारा ओपल्ला,
तएण से तेतलिपुत्ते जेणेव असोगवणिग्या तेणेव उ०)

आ नतनो विचार करीने तेअे तालपुट विष (अेर)

‘से’ तस्य खड्गस्य धारा ‘ओपल्ला’ कुण्डिता, ‘ओपल्ल’ इति देगी शब्दः तल्पुटेन त्रिपेण, कण्ठे निपातितेनामिनाऽपि च तदभिलपित मरण न जातम् । ततः खलु=तदनन्तर स तेतलिपुत्रो यत्रैव अशोकवनिका=अशोकवाटिका तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य पाणक ग्रीवाया वध्नाति, उद्धवा ‘स्वख’ वृक्ष ‘रुण्ड, दुरो इति=भारोहति, दूरुष्य, पाश वृक्षे वध्नाति, उद्धवा आत्मान ‘मुयड’ मुञ्चति=अधः पातयति । ‘तत्थवि’ तत्राऽपि=एतस्मिन् मरणोपाय कृतेऽपि च ‘से’ तस्य रज्जुच्छिन्ना=म यत् एव पाशस्रुटिन । ततः खलु स तेतलिपुत्रः ‘महद्महालय’ महातिमहतीम्=अति विशाला शिला ग्रीवाया वध्नाति, उद्धवा ‘अत्या-हमतरमपोमियसि’ अस्तात्रातागर्वाभ्ये=नास्ति स्त्रात्र’ यस्य तन् अस्तात्रम्=

नहीं दिखलाया-अर्थात् वह बिप रूप से परिणत नहीं हुआ । इसके बाद उस तेतलिपुत्रने नीलोत्पल गवला, गुलिक की प्रभा जैसी प्रभावाली अत्यन्त नीलवर्ण वाली-ऐसी तलवार को कि जिसकी धार बहुत तीक्ष्ण थी-अपनी गर्दन पर रखा-अर्थात् उसे गर्दन पर चलाई-परन्तु उसने भी अपना काम नहीं किया-वह भी-कुटित हो गई-इस तरह जब इन दोनों वस्तुओं से अपना अभिलपित मरण सा य नहीं हुआ-अब वह तेतलिपुत्र जहा अशोकवनिका-अशोक वाटिका-थी वहा गया (उवागच्छित्ता पासगगीवाण वधइ) वहा जाकर उसने अपनी ग्रीवामे फटा डाला-बाधा (वधित्ता अप्पाण मुयड, तत्थ वि से रज्जु छिन्ना) धार कर फिर वह वृक्ष पर चढ़ गया और वहा से अपने आपको नीचे लटका दिया परन्तु पहा पर भी उसकी रज्जु धीच में से टूट गई (तण्ण से तेतलिपुत्ते

मुण्णमा नाभ्यु पणु तेणु उधं अमर भतानी नडि अट्ठे के ते विर इण्णमा परिणुभ्यु नडि त्थार पणी ते तेतलिपुत्रे, नीलोत्पल गवला, गुलिकना जेवी प्रभावाणी तेमज्ज तीक्ष्ण धारवाणी तववाग्ने पोतानी डोक उपर भूडी अट्ठे के तेना वडे तेणु पोतानी डोक उपर धा उर्थे पणु तेनाथी पणु उधं जाम थयु नडि अट्ठे के तरवार पणु भूडी थधं गधं हुती ‘ओपल्ल’ आ कुण्डित (भूडी) अर्थं भाटे वपरथेत्ते इशी गण्ड छे न्यारे आ रीते ते जने वस्तुओथी तेनी ध्विण पुरी थधं नडि अट्ठे के तेनु भरणु थं यक्यु नडि त्थारे ते न्या अशोक वनिका-अशोक वाटिका-हुती त्या गथे (उवागच्छित्ता पासग गीवाण वधइ) त्या जधने तेणु पोतानी डोकमा क्षामे लेखीने भाभ्ये (वधित्ता अप्पाण मुयड तत्थ वि से रज्जु छिन्ना) भाधीने ते वृक्ष उपर चढी गथे अने त्यावी पोतानी भेजे ज ते लटकी गथे परन्तु अर्धी पणु क्षामान दोरउ वन्थेथी तूटी गयु हुतु

अभ्युत्तिष्ठति । ' त ' तत्=तस्मात् कारणात् , त्रेयः खडु मम आत्मान जीवि
ताद् व्यपरोपयितुम् , इति क्रत्या, एव समक्षते, समक्ष्य तात्पुट रिपम् ' आस-
गसि ' आस्ये=मुखे प्रक्षिपति, रिप नो मनाभ्यति=रिपत्वेन नो परिणमति ।
ततः खलु स तेतलिपुत्रो ' नीलुष्पत्र जाव अंसि ' नीलोत्पल यावदंसि=नीलोत्पल
गजलगुलिकसमप्रभ=नीलोत्पल=नीलकमलम् गज=माहिष शृङ्गम् , ' गुल्कि '
नीलरङ्गविशेष , तै. समा प्रभातेतलि कान्तिर्यस्य स त तादृश यावदंसि=तीक्ष्ण
खड्ग ' खत्रे ' स्कन्धे=स्फुटपूछे ' ओहरइ ' अहरति=निपातयति । तत्रापि च

कर राजा के पास गया-तब भी इन सपलोगों ने पूर्ववत् मेरा आदर
आदि सप कुत्र किया-परन्तु अरुस्मान राजा के रुष्ट होने पर जब मैं
वहा से लौटकर वापिस अपने स्थान पर आने लगा-तो किमी ने भी
' मेरा आदर आदि कुत्र भी सत्कार नहीं किया । यहा तक कि जो मेरी
बाह्य और आभ्यन्तर परिपद है-भीतर बाहरके नौकर चारु एव माता
' पिता आदि जन है-उसने भी आज इस समय आने पर मुझे कुत्र
' नहीं समझा-अतः मुझे अब ऐसी स्थिति से मरना ही उत्तम है । इस
प्रकार का उसने अपने मन में विचार किया-(सपेहिता तालउड विस
आसगसि पत्रिखवइ, सेय विसे णो सक्रमइ, तएण से तेतलिपुत्ते नीलु
ष्पल जाव अंसि खघसि ओहरइ, तत्य विय से धारा ओपल्ला, तएण से
तेतलिपुत्ते जेणेव असोगवणिघा तेणेव उ०) विचार करके उसने ताल
पुटविष को अपने मुख में डाला-परन्तु उसने अपना कुछ भी प्रभाव

राजनी पास गये त्परे पशु अे अघाअे पडेलानी जेभज भारे आदर
वगेरे अधु क्युं डतु पशु अेअिना राजने नाराज थई जवा अदव न्यारे
हु त्याथी पाछे इरीने पोताने घेर आववा लाग्ये त्परे डेअे पशु भारे
आदर डे सत्कार क्ये नडि भारी बाह्य अने आभ्यतर परिषड अेटले डे
अडारना नोकरे-आकरे अने माता पिता वगेरे-छे तेअेअे पशु आरे अत्यारे
भारा आववा अदव कई पशु डिमत करी नडि अेथी अेनी परिस्थितिभा
भाइ भरथु ज उत्तम उपाय छे

(सपेहिता तालउड विस आसगसि पत्रिखवइ, सेय विसे णो सक्रमइ, तएण
से तेतलिपुत्ते नीलुष्पल जाव अंसि खघसि ओहरइ, तत्य विय से धारा ओपल्ला,
तएण से तेतलिपुत्ते जेणेव असोगवणिघा तेणेव उ०)

आ नतने विचार करीने तेछे तालपुट विष (अेर) ने पोताना

दीत्=चित्त सगो य मनस्येनमकथयत्-भो चित्त ! श्रमणा यद् वदन्ति तत्स्वल्प
 श्रद्धेय=श्रद्धा योग्य, श्रद्धेय स्वल्प भोः ब्राह्मणा उदन्ति, श्रद्धेय स्वल्प भोः !
 श्रमण ब्राह्मणा उदन्ति । अय भात-जात्मपरलोकाद्यर्थ प्रतिबोधक श्रमणादीना वचन
 श्रद्धेय भवति, अतीन्द्रियस्याप्यात्म-परलोकादिरवरूपस्यानुमानादि प्रमाणविषय-
 तथा श्रद्धाविषयत्वात् । परन्तु अहमेतो असहायः अश्रद्धेयम् अश्विन्मनीय
 वदामि । यद्यपि मदीय वचन सर्वथा सत्यम्, तथापि अमम्भाव्यतया जनैः
 प्रत्येतुमशक्यम् । तदेवाह- ' एव स्वल्प ' इत्यादिना ' एव स्वल्प ' मयि अश्रद्धेय

चीच ही में बुझ गई । इस तरह इन समस्त अनभवनों की सभवना
 के बाद तेतलिपुत्रने अपने आपकी संबोधित करते हुए मन में विचार
 किया-हे चित्त ! श्रमणजन जो कहते हैं वह श्रद्धेय है । ब्राह्मणजन जो
 कहते हैं वह श्रद्धेय है इसी प्रकार श्रमणमाहणजन जो कहते हैं वह श्रद्धेय
 है । इसका भाव यह है कि आत्मा, परलोक आदि पदार्थ जो कि अतीन्द्रिय
 हैं वे अनुमान आदि प्रमाण कि विषयभूत हो जाते हैं-इसलिये ये श्रद्धाके
 विषय बन जाते हैं-अतः इन अतीन्द्रिय आत्म, परलोक आदि पदार्थों
 को प्रतिपादित करने वाले श्रमण माहण आदिकों के वचन भी श्रद्धेय
 हो जाते हैं, परन्तु मैं जो कह रहा हूँ वह अश्रद्धेय कह रहा हूँ एक
 असहाय हूँ-इसलिये-मुझे इस विषयमें किसी को भी सहायता मिलने
 वाली नहीं है । उन श्रमण माहण आदिजनों के वचनों के सहायक तो
 अनुमान आदि प्रमाण हैं-परन्तु मेरा सहायक कोई प्रमाण ही नहीं
 होता है, यद्यपि मैं सर्वथा सत्य कहता हूँ परन्तु वह मेरा वचन अस-
 भवित असहाय-होने की वजह से मनुष्यों के लिये श्रद्धेय नहीं बन

आ शीते आ जधा अम लवनेनी म लानना आदते तलिपुत्रे पोतानी नतनेन
 स बोधित उरता मनभा विचार कथो उ डे चित्त । श्रमणजनो ने उध कडे छे
 ते श्रद्धेय छे, ब्राह्मणो ने उध कडे छे ते श्रद्धेय छे आ प्रमाणे श्रमण माहणजनो
 ने उध कडे छे ते श्रद्धेय छे आने लावार्थ आ प्रमाणे छे के आत्मा परलोउ वगेरे
 पदार्थो नेओ उ अतीन्द्रिय छे-तेओ अनुमान वगेरे प्रमाणना विषयभूत थध नथ
 छे ओटला भाटे ते पार्थो श्रद्धाना विषय जनी नथ छे ओयी आ जधा
 अतीन्द्रिय आत्म, परलोउ वगेरे पदार्थोनु प्रतिपा न करनार श्रमण माहण
 वगेरेना वचनो पणु श्रद्धेय थध नथ छे, पणु हु ने कध उही रह्यो छे ते
 अश्रद्धेय कही रह्यो छु ओक असहाय छु ओथी भने आ ज्ञातमा केधनी
 भइ पणु मणी राजे तेम नथी ते श्रमण माहण वगेरेना वचनोना सहायक
 तो अनुमान वगेरे प्रमाणो छे पणु नारा कथननु सहायभूत थाय तेवु केध
 प्रमाणे न नथी ने उ हु ने कध पणु उही रह्यो छु ते स पूर्यु रीत यथार्थ
 मारा ते वचनो असलवित असहाय होवा भइ

अतलस्पर्शि, अतारम्=अतरणीयम्, अतीरुपेयम्=पुरुष प्रमाणं यस्य तत् पौरुषेयम्= न पौरुषेयम्=अपारुपेयम्=पुरुषप्रमाणरहितम्, एतेषां कर्मधारय, तस्मिन् अतिम-
म्भीरे इत्यर्थः, उदके आत्मान मुञ्चति । तत्राऽपि=तस्मिन्नुदकेऽपि च 'से'
तस्य=तेतलिपुत्रस्य 'थाहे' स्ताघो जातः । तत खलु स तेतलिपुत्रः शुष्के
तृणकूटे=तृणपुञ्जे 'अगणिकाय' अग्निकाय प्रक्षिप्य, तत्र आमान मुञ्चति ।
तत्रापि=शुष्के तृणेऽपि सो ऽग्निनायो 'विज्ञाण' विज्ञात =उपशान्त । 'तएण'
ततः खलु=एतस्य सर्वस्य असम्भाव्यस्य सम्भावनानन्तरम् स तेतलिपुत्र एवमवा

महइमहालय सील गीवाण-बधइ बधित्ता अत्याह मनारमपोरिमियसि
उदगसि अप्पाण सुयइ, तत्थ वि से थाहे जाण) इसके बाद उस तेत
लिपुत्र ने एक बहुत विशालकाय शिला को अपने गले में बांधा-और
बांध कर अपने आपको अथाह-अतार एव अपुन्प प्रमाग जल में छोड़
दिया-परन्तु वह जल भी उसके लिए रताध थाह युक्त-वन गद्या-(तएण
से तेतलिपुत्ते सुक्कसि तणकूडसि अगणिकाय पक्खिववइ पक्खिवित्ता
सुयइ, तत्थ वि से अगणिकाए विज्ञाए-तएण से तेतलिपुत्ते एव-
वयासी-सद्देय खलु भो समणा वयति सद्देय-खलु भो माहणा वयति,
सद्देय खलु भो समणमाहणा वयति, अह एगो असद्देय वयामि एव
खलु अह सह पुत्तेहि अपुत्ते को मेय सदहिससइ ? सहमित्ते हि अमित्ते
को मेय सदहिससइ) इसके बाद तेतलिपुत्रने शुष्क घासके ढेर में
अग्नि लगाई-और उममें अपने आपको डाल दिया-परन्तु वह भी

(तएण से तेतलिपुत्ते महइ महालय सिल गीवाए बधइ, वधित्ता अत्याहमतारम
पोरिमियसि उदगसि अप्पाण सुयइ, तत्थ वि से थाहे जाण)

त्यार पछी ते तेतलिपुत्रे अेक णडु भोठी भादे शिवा (पथरे) ने
घोतानी नतने अथाह-अतार अने अपुरुष प्रमाणे पाणीमा नाणी दीधी
परतु ते णडु पाणी पणु तेना भाटे थाह वाळु अेटले के छीछु थर् अथु

(तएण से तेतलिपुत्त सुक्कसि तणकूडसि अगणिकाय पक्खिववइ, पक्खिवित्ता
सुयइ, तत्थवि से अगणिकाए विज्ञाए-तएण से तेतलिपुत्ते एव वयासी सद्देय
खलु भो समणा वयति सद्देय-खलु भो माहणा वयति, सद्देय खलु भो समण
माहणा वयति, अह एगो असद्देय वयामि एव खलु अह सह पुत्तेहि अपुत्ते को
मेय सदहिससइ ? सह मित्तेहि अमित्ते को मेय सदहिससइ)

त्यार पछी तेतलिपुत्रे सूका घासना ढगलाभा अग्नि प्रगटाये अने
घोतानी नतने तेमा नाणी दीधी परतु ते पणु वअेथी अे । गध

दीत्=चित्त सञ्चो-य मनस्येनमक्रयत्-मो चित्त । श्रमणा यद् वदन्ति तस्खलु
 श्रद्धेय=श्रद्धा योग्य, श्रद्धेय गलु योः ब्राह्मणा वदन्ति, श्रद्धेय खलु भोः !
 श्रमण ब्राह्मणा वदन्ति । अय भाव-जात्मपरलोकाद्यर्प प्रतिबोधक श्रमणादीना वचन
 श्रद्धेय भवति, अतीन्द्रियस्याप्यात्मपरलोकादिरवस्वरूपस्यानुमानादि प्रमाणविषय-
 तया श्रद्धाविषयत्वात् । परन्तु असहायः असहायः अश्रद्धेयम् अविश्वमनीय
 वदामि । यद्यपि मदीय वचन सर्वथा सत्यम् , तथापि अमन्मान्यतया जनैः
 प्रत्येतुमशक्यम् । तदेवाह- ' एव गलु ' इत्यादिना ' एव खलु ' मयि अश्रद्धेय

चीच ही में बुझ गई । इस तरह इन समस्त अनुभवनों की सम्भवन
 के बाद तैतलिपुत्रने अपने आप-नो सञ्चोधित करते हुए मन में विचार
 किया-हे चित्त ! श्रमणजन जो कहते हैं वह श्रद्धेय है । ब्राह्मणजन जो
 कहते हैं वह श्रद्धेय है इसी प्रकार श्रमणमाहणजन जो कहते हैं वह श्रद्धेय
 है । इसका भाव यह है कि आत्मा, परलोक आदि पदार्थ जो कि अतीन्द्रिय
 हैं वे अनुमान आदि प्रमाण कि विषय-भूत हो जाते हैं-इसलिये ये श्रद्धाके
 विषय बन जाते हैं-अतः इन अतीन्द्रिय आत्म, परलोक आदि पदार्थों
 को प्रतिपादित करने वाले श्रमण माहण आदिकों के वचन भी श्रद्धेय
 हो जाते हैं, परन्तु मैं जो कह रहा हूँ वह अश्रद्धेय कह रहा हूँ एक
 असहाय हूँ-इसलिये-मुझे इस विषयमें किसी को भी सहायता मिलने
 वाली नहीं है । उन श्रमण माहण आदिजनों के वचनों के सहायक तो
 अनुमान आदि प्रमाण है-परन्तु मेरा सहायक कोई प्रमाण ही नहीं
 होता है, यद्यपि मैं सर्वथा सत्य कहता हूँ परन्तु वह मेरा वचन अस-
 भवित असहाय-होने की वजह से मनुष्यों के लिये श्रद्धेय नहीं बन

आ शीते आ षधा अम लवनेनी म लावना आदते तलिपुत्रे पोतानी नतनेन
 सञ्चोधित उक्ता मनमा विचार कथो उ डे चित्त । श्रमणजनो ने उध कडे छे
 ते श्रद्धेय छे आहणो ने उध कडे छे ते श्रद्धेय छे आ प्रमाणे श्र णु माहणुज्जो
 ने उध कडे छे ते श्रद्धेय छे आनो भावार्थ आ प्रमाणे छे के आत्मा परलोड वगेरे
 पदार्थो नेओ उ अतीन्द्रिय छे-तेओ अनुमान वगेरे प्रमाणना विषयभूत थरु नय
 छे अटला भाटे ते प थो श्रद्धाना विषय णनी नय छे ओथी आ षधा
 अतीन्द्रिय आत्म, परलोड वगेरे पदार्थोनु प्रतिपा न करनार श्रमणु माहणु
 वगेरेना वचनो पणु श्रद्धेय थरु नय छे, पणु हु ने कध उडी रखो छे ते
 अश्रद्धेय कही रखो छु ओउ असहाय छु ओथी मने आ भाणतमा डोर्धनी
 महड पणु मणी उडे तेम नथी ते श्रमणु माहणु वगेरेना वचनेना सहायक
 तो अनुमान वगेरे प्रमाणो छे पणु मारा कथनु सहायभूत थाय तेनु डेरु
 प्रमाणु न नथी ने उ हु ने उध पणु उडी रखो छु ते स पूर्ण रीत यथार्थ
 सत्य-कही रखो छु पणु मारा ते वचनो अम लवित असहाय डोवा षदत

वचने सती यदि अदमेर=एवभूत मत्यमपि यदामि, यत्-अह 'सहपृत्तेहि अपुत्र'
 सहपुत्रैरपि अपुत्रः=पुत्रेषु विद्यमानेऽपि अह पुत्ररहित पशामि 'ननादतत्तान् कः
 'मेय' ममेद=इद मदीय वचन 'मन्स्मिः' श्रद्धाम्यति=अत्येयति, न कोऽपि,
 तथा अह 'सहमितेहिअमिते' सहमितैरमिते=मितेषु विद्यमानेऽपि 'मित्-
 रहितोऽह' को 'मेद' ममेद वचन श्रद्धाम्यति ? एवम्=अनेन प्रकारेणैव अर्थेन
 दारै दासै. परिजनेन च सहितोऽपि, त रहितोऽस्मि, इद मदीय वचन क. श्रद्धा-
 स्यति, अपितु न कोऽपि । 'एव' अमुना प्रकारेण रा यद्यह व्रीमि-यत्
 'तेतलिपुत्रे' तेतलिपुत्र नामधेये खलु मयि अमात्ये कनकः प्रजेन राजा 'अव-
 ञ्चाएण समाएण' अपच्यातेन=दुश्चिन्तकेन सता, अर्थात् कनकध्वजो राजा

सकता है जैसा मैं यह सत्य भी कहूँ कि मैं पुत्रों के विद्यमान होने पर
 भी अपुत्र पुत्र रहित-हूँ, तो कौन मेरी इस बात को श्रद्धा से देखेगा-
 इसी तरह मैं यह कहूँ कि मैं मित्रों के विद्यमान होने पर भी मित्र
 रहित हूँ-तो कौन मेरे इन वचनों पर विश्वास करेगा-(एव अत्येण
 दारेण दासेहि परिजणेण एव खलु तेतलिपुत्रेण अमन्चे कणगज्झएण
 रत्ताअवज्झाएण समाणेण तेतलिपुत्रेण तालपुडगे विसे आसगसि
 पक्खित्ते से वि य णो कमइ को मेय सदहिस्सइ ? तेतलिपुत्रेण नीलुप्पल
 जाव खधसि ओहरिण तत्य वि से धारा ओपला को मेय सदहिस्सइ)
 इस तरह अर्थ, दारा, दास, परिजन, इन से युक्त होने पर भी मैं-इन
 से रहित हूँ, कौन मेरे इस वचन को मानेगा ? अर्थात् कोई नहीं मानेगा
 इसी तरह यदि मैं ऐसा कहूँ कि मुझे तेतलिपुत्र अमात्य के ऊपर कनक

भाष्यसे भाटे श्रद्धय अर्थ शडे तेम नथी जेम के हु अत्यारे आ नातनी
 साथी वात पणु कहु के पुत्रो डोवा छताये हु पुत्र वगरनो छु तो डोवा
 भारी आ वातने श्रद्धानी दष्टिजे जेशे ? आ प्रभावे ज हु कहु के मित्रो
 डोवा छताये हु मित्र वगरनो छु तो डोवा भारी आ वात उपर श्रद्धा धरावथे ?

(एव अत्येण दारेण दासेहि परिजणेण एव खलु तेतलिपुत्रेण अमन्चे कण
 गज्झएण रत्ता अवज्झाएण समाणेण तेतलिपुत्रेण तालपुडगे विसे आसगसि
 पक्खित्ते से वि य णो कमइ, को मेय सदहिस्सइ ? तेतलिपुत्रेण नीलुप्पल जाव
 खधसि ओहरिण तत्य वि से धारा ओपला को मेय सदहिस्सइ)

आ रीते अर्थ (धन), दाग (पत्नी) दाग, परिजन जे पधा डोवा
 छता पणु हु जेमना वगर छु भारी आ वात उपर डोवा विश्वास भूडवा
 तैयार थथे ? अटवे वे डोवा पणु विश्वास करथे न नहि आ रीते ज जे हु
 आभ कहु के भारी उपर गान जन धन नाराज थथ गया छता अटवा भाटे

तेतलिपुत्रे दुश्चिन्तको जात इतिहेतोः, तेतलिपुत्रेण तालपुटक विपम् 'आसगसि' आस्ये=मुखे प्रक्षिप्तम्, 'से वि प' तदपि च विप नो 'रुमड न क्राम्यति=विपत्वेन न परिणमति को जन 'मेद' ममेद मत्यमपि उचन श्रद्धास्यति न कोऽपि, तथा 'तेतलिपुत्रेण' नीलोत्पल जाव खरसि ओदरिए 'तेतलिपुत्रेण नीलोत्पल यावत् स्फुट्ये अपहतः=तेतलिपुत्रेण नीलोत्पलगवलगुलिकरुपमप्रभाऽसि 'स्फुट्ये कण्ठमूले 'अवहृत' प्रहृतः 'तत्त्वपि' तत्रापि=तस्मिन् मरणोपाये कृतेऽपि च' तस्य=भसेः धारा ओपल्ला=कुण्ठीभूता को 'मेद ममेद श्रद्धास्यति । एवमेव यद्यह द्रूयाम् यन्मया 'तेतलिपुत्रेण पामरं गीवाए उधेत्ता जाव रज्जुच्छिन्ना को मेय सहसिस्सइ' तेतलिपुत्रेण पागक ग्रीवाया उद्वा यावत् रज्जुच्छिन्ना, को ममेद श्रद्धास्यति ? तेतलिपुत्रेण अतिविशाला गिला यावद् वद्वा अस्ताधयाव-

श्वज राजा दुश्चितक वन गये-इसलिये मने तालपुट विप मुख में डाल दिया परन्तु वह विपरूप से परिणमित नहीं हुआ । मने विप खाया-पर में मरा नहीं-कौन मनुष्य मेरी इस सत्य बात को श्रद्धा की दृष्टी से देखेगा । तथा मैंने नीलोत्पल, गवल एव गुलिका की प्रभा जैसी प्रभाव वाली तीक्ष्ण तलवार अपनी गर्दन पर मरने के लिये चलाई-परन्तु वह भोटी धारवाली बन गई-कुण्ठित हो गई-उमसे मेरी गर्दन नहीं कटी-कौन मेरी इस बात को मानने के लिये तैयार हो सकेगा (तेतलिपुत्रेण पासग इत्यादि) इसी तरह यदि मे यह कहूँ कि मुझ तेतलिपुत्रने अपने गले में पाशक डाला और वृक्षपर चढकर वहा से नीचे में लटक पड़ा और फटा बीच में से टट गया तो कौन इन वचनो पर विश्वास करेगा । (तेतलिपुत्रेण महइमहालय जाव वधित्ता अथाह जाव उदगसि अप्पा

मे तालपु विप (ओर) भाधु डनु पणु ते विपना इपमा परिशुत थयु नथी ओटले के विप लक्ष्णु उरवा छताये हु मरणु पाभ्यो नडि आ वात उपर कथो भाणुस विन्धाम भूवा तैयार थथे ? तेमञ नीलोत्पल, गवल अने गुलिकाना जेवी प्रभावाणी तीक्ष्ण धारवाणी तत्वारने मे मरवा भाटे भारी डोक उपर धा डर्यो पणु ते तत्वार न्णूडी धारवाणी थड गध-कुठित थध गर्-तेनाथी भारी डोक उपाठ नडि भारी आ वात उपर डोणु विन्धाम क्वा तैयार थथे ? (तेतलिपुत्रेण पासग इत्यादि) आ रीते न्णु आभ न्णु के मे तेतलिपुत्रे योताना गणामा क्षामो नाभ्यो अने वृक्ष उपर थठरो वृक्ष उपर थडीने त्याथी नीचे लटकी पडरो पणु क्षामो वर्येरी न्णु गये तो डोणु भागी आ वात उपर विश्वास भूथे ?

(तेतलिपुत्रेण महइमहालय जाव वधित्ता अथाह जाव उदगसि अप्पा मुक्के,

दुदके आत्मा मुक्तः, तथापि च खलु रताघो जातः, को ममेद श्रद्धास्यति=मया स्वरूपे महाशिला बद्धा अगाधे उदके आत्मा मुक्तः, परन्तु तस्मिन्नुदकेऽपि मम तन्वस्पर्शो जातः, इति मम वचन कः श्रद्धास्यति ? पुनश्च-तेतलिपुत्रेण मया शुष्के तृणकृटे=तृणपुञ्जेऽग्निहाय प्रक्षिप्य प्रज्वलिते तस्मिन् आत्मा मुक्तः, परन्तु सोऽग्निहाय ' विज्ञाए ' विख्यातः=उपशान्त, इत्येवस्वपमपि मदीय वचनं कः श्रद्धास्यति ? न कोऽपि, इत्येव स तेतलिपुत्र. ' ओहयमणसरूपे ' अपहृतमनः सकल्प =भग्नोत्साह' सन् यावद् ध्यायति=आर्तध्यान करोति ॥मू० १०॥

मुक्को, तत्थ वि ण थाहे जाए को मेय सद्विस्सइ ? तेतलिपुत्तेण सुक्कसि तणकूडसि अगणिकाय पक्खिवित्ता अप्पा मुक्को तत्थ वि से अगणिकाए विज्झाए को मेय सद्विस्सइ ? ओहयमणसरूपे जाव झियायइ) मुक्क तेतलिपुत्रेण एक बहुत बड़ी शिला का गलेमें बांधी और तब में अथाह अतार अपुरुष प्रमाण जल में कूद पड़ा परन्तु वह जल कूदते ही थाह वाला बन गया अथाह नहीं रहा मेरी इस सत्य बात पर भी कौन श्रद्धा करेगा। इसी तरह मुक्क तेतलिपुत्रेण एक बड़े भारी शुष्क घास के ढेर में अग्नि लगाई और उस में अपने आप को प्रक्षिप्त कर दिया-परन्तु वह अग्नि बुझ गई उसने मुझे भस्म नहीं किया मेरी इस बात को कौन श्रद्धा रूप से स्वीकार करेगा। इस प्रकार अपहृत मन संकल्प वाला बन कर-उत्साह रहित होकर वह तेतलिपुत्र अमात्य आर्तध्यान में पड़ गया ॥ सू० १० ॥

तत्थ वि ण थाहे जाए को मेय सद्विस्सइ ? तेतलिपुत्तेण सुक्कसि तणकूडसि अगणिकाय पक्खिवित्ता अप्पा मुक्को तत्थवि से अगणिकाए विज्झाए को मेय सद्विस्सइ ? ओहयमणसरूपे जाव झियायइ)

मे तेतलिपुत्रे एक बहुत भारी मोटी शिला (पथरो) गजामा बांधी अने तार पत्री हुं अथाह (ठंडा) अतार अपुरुष प्रमाण नेटला पाणीमा कूदी गयो पथ इतानी साथे व पाणी थाहवाणु (छिछरु) थध गयु, अथाह (ठंडु) रहु नहि मारी आ वात उपर पथु केणु विश्वास भूकरो ? आ प्रमाणे व मे तेतलिपुत्रे एक बहुत मोटा भारी सूका घासना ढगलामा अग्नि प्रगटायो अने तेमा मे पोतानी जतने जपवावी दीधी पथु ते अग्नि ज्वालवाध गयो तेणे भने भस्म कयो नहि मारी आ वातने केणु श्रद्धेय मानीने स्वीकारवा तैयार थरो ? आ रीते ते अपहृतमन सद्विपवाणे (डताश) थधने निरुत्साही बनी गयो अने आर्तध्यानमा कूणी गयो ॥ " / " ॥

मृत्-तएणं से पोट्टिले देवे पोट्टिलारूव विउव्वइ, विउ-
 विवत्ता, तेतलिपुत्तस्म अदूरत्तामंते ठिच्चा एवं वयासी-ह
 भो । तेतलिपुत्ता । पुरओ पवाए पिट्टओ हत्थिभयं, दुहओ
 अचक्खुफासे, मज्जे सराणि वरिसंति, गामे पलित्ते रत्ते
 झियाइ, रत्ते पलित्ते गामे झियाइ । आउसो तेतलिपुत्ता ।
 कओ वयामो ? तएणं से तेतलिपुत्ते पोट्टिलं एव वयासी-
 भीयस्स खलु भो । पठ्वज्जा सरणं, उक्कठियस्स सद्देसगमणं
 लुहियस्स अन्न, तिसियस्स पाणं, आउरस्स भेसज्ज, माइ-
 यस्स रहस्स अभिजुत्तस्स पच्चयकरणं, अच्चाणपरिसंतस्स
 वाहणगमणं, तरिउकामस्स पवहणाकिच्चं, पर अभिउज्जिउ
 कामस्स सहायकिच्चं खतस्स दत्तस्स जिइदियस्स एत्तो
 एगमवि णं भवइ । तएणसेपोट्टिले देवे तेयलिपुत्तं अमच्च
 एव वयासी-सुट्ठु णं तुम तेयलिपुत्ता । एयमट्ट आयाणाहि
 त्तिकट्टु दोच्चपि तच्चंपि एवं वयइ, वइत्ता जामेव दिस
 पाउव्वभूए, तामेव दिस पडिगए ॥ सू० ११ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ‘तएण’ तत् खलु तेतलिपुत्रे आर्तध्यान
 रते सति स पोट्टिलोदेव’ ‘पोट्टिलारूव’ पोट्टिलारूप विकुर्वति=वैक्रियशक्त्या

‘तएण से पोट्टिले देवे’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से पोट्टिले देवे) उस पोट्टिल देवने
 (पोट्टिला रूव विउव्वइ) पोट्टिला के रूप की विकुर्वणा की—अर्थात् वैक्रिय
 शक्ति के प्रभाव से उसने पोट्टिला का रूप धारण किया (विउव्वत्ता

‘तएण से पोट्टिले देवे’ इत्यादि

टीकार्थ—(तएण) त्वा२ ५७ (से पोट्टिले देवे) ते पोट्टिलदेवे (पोट्टिला रूव
 विउव्वइ) पोट्टिलाना इपनी विकुर्वणा उरी अट्ठे के वैक्रिय शक्तित्वा प्रभावथी

दुदके आत्मा मुक्तः, तत्रापि च खलु गतात्रो जानः, को ममेद श्रद्धास्यति=मया स्वकण्ठे महाशिला पद्धा जगाये उदके आत्मा मुक्तः, परन्तु तस्मिन्नुदकेऽपि मम तन्वस्पर्शो जातः, इति मम पचन क' श्रद्धाम्यति ? पुनश्च-तेतलिपुत्रेण मया शुष्के तृणकूटे=वृणपुञ्जेऽग्निनाय प्रक्षिप्य प्रज्वलिते तस्मिन् आत्मा मुक्तः, परन्तु सोऽग्निनाय ' विज्ञाए ' विध्यातः=उत्साह, इत्येव रूपमपि मदीय वचनं कः श्रद्धास्यति ? न कोऽपि, इत्येव स तेतलिपुत्रः ' ओहयमणसरूपे ' अपहृतमनः सकल्प =भग्नोत्साह' सन् यावद् ध्यायति=आर्तध्यान करोति ॥सू० १०॥

मुक्को, तत्थ पि ण थाहे जाए को मेय सदहिस्सइ ? तेतलिपुत्तेण सुक्कसि तणकूडसि अगणिकाय पक्खिवित्ता अप्पा मुक्को तत्थ वि से अगणिकाए विज्झाए को मेय सदहिस्सइ ? ओहयमणसरूपे जाव झियायइ) मुक्क तेतलिपुत्रने एक वहुत बड़ी शिला का गलेमें बाधी और बाद में अथाह अतार अपुरुष प्रमाण जल में कूद पडा परन्तु वह जल कूदते ही थाह वाला बन गया अथाह नहीं रहा मेरी इस सन्य घात पर भी कौन श्रद्धा करेगा। इसी तरह मुक्क तेतलिपुत्रने एक बड़े भारी शुष्क घास के ढेर में अग्नि लगाई और उस में अपने आप को प्रक्षिप्त कर दिया- परन्तु वह अग्नि बुझ गई उसने मुझे भस्म नहीं किया मेरी इसबात को कौन श्रद्धा रूप से स्वीकार करेगा। इस प्रकार अपहृत मन संकल्प वाला बन कर-उत्साह रहित होकर वह तेतलिपुत्र अमात्य आर्तध्यान में पड़ गया ॥ सू० १० ॥

तत्थ पि ण थाहे जाए को मेय सदहिस्सइ ? तेतलिपुत्तेण सुक्कसि तणकूडसि अगणिकाय पक्खिवित्ता अप्पा मुक्को तत्थ वि से अगणिकाए विज्झाए को मेय सदहिस्सइ ? ओहयमणसरूपे जाव झियायइ)

मे तेतलिपुत्रे एक बहुत भारी शिला (पथर) गलामा बाधी अने तयार पड़ी हु अथाह (ठंडा) अतार अपुरुष प्रमाण जेटला पाणीमा कूदी गये पथ कूटानी साथे ज पाणी थाडवाणु (छीछरु) थध गयु, अथाह (ठंडु) रह्यु नहि भारी आ वात उपर पथु केणु विश्वास भूकेशे ? आ प्रभाणु ज मे तेतलिपुत्रे एक बहुत भारी शिला धारना ढगलामा अग्नि प्रगटान्ये अने तेमा मे पोतानी जतने ज पवावी दीधी पथु ते अग्नि ओलवाध गये तेणु अने लश्म कथे नहि भारी आ वातने केणु श्रद्धेय मानीने स्वीकान्वा तयार थथे ? आ रीते ते अपहृतमन सकल्पवाणे (डताश) थधने ' निरुत्साही बनी गये अने आर्तध्यानमा कूशी गये ॥ " सू " ॥

मेवमवादीत् 'भो' हे पोडिले ! भीतस्य खलु प्रव्रज्याशरण भगि तत्र दृष्टान्त-
 माह-यथा- ' उक्कडियस्म ' उत्कण्ठितगम्य=परदेशवर्ति-याद् सुकस्य स्वदेशगमन,
 ' दुडियस्म ' क्षुभितस्य अन्नम्, ' तिसियस्म ' तपितस्य पान, ' आउरस्म आतु-
 रस्य=रोगिण ' भैपज्य ' भैपज्य ' मायिस्म ' मायिकस्य=मायाविन. रहस्य=गोपनम्,
 ' अभिजुनस्म ' अभियुक्तस्य = दोषापवादयुक्तस्य ' पचयकरण = प्रत्ययकरण
 तन्निराकरणेन स्वविषये निर्दोषताप्रतीत्युत्पादनम्, ' अद्वाणपरिसतस्स ' अ-वपरिश्रान्त-
 न्तस्य=मार्गगमनपरिसिद्धस्य ' वाहणगमण ' वाहनगमन, शकटादिना गमन ' तरि
 तेतलिपुत्ते पोडिल एव वयासी-भीतस्म खलु भो पवज्जा-सरण-उक्क-
 डियस्म सदेसगमण दुडियस्म अन्न, तिसियस्स पाण, आउरस्स भैस
 ज्ज, माइयस्स रहस्स, अभिजुत्तस्स पचयकरण, अद्वाण परिसतस्स
 वाहणगमण, तरिउकामस्स पहवणकिच्च. पर अभिउजिउकामस्स
 सहायकिच्चं सनस्स दनस्स जिडदियस्स एत्तो एगमवि ण भवइ) इस
 प्रकार पोडिला की बात सुनकर तेतलिपुत्र अमात्य ने उससे ऐसा कहा
 हे पाडिले ! भो (भय युक्त) के लिये प्रव्रज्या शरण भूत होती है,
 जैसे-परदेश वर्ती उत्सुक व्यक्ति के लिये स्वदेश गमन शरण भूत
 होना है, भूखे के लिये अन्न शरण भूत होना है प्यासे के लिये पानी,
 आतुर रोगी के लिये भैपज्य, मायावी के लिये मायाचारी, अभियुक्त-
 दोषापवाद वाले के लिये दोषों के निराकरण से अपने विषय में निर्दो-
 षता की प्रतीति का उत्पादन, शरण भूत होना है । मार्ग आन्त के लिये
 वाहन से गमन, करना शरण भूत होता है, तैरने की इच्छा वाले के

(तएण से तेतलिपुत्ते पोडिल एव वयासी-भीतस्म खलु भो पवज्जासंण
 उक्कडियस्स सदेसगमण दुडियस्स अन्न तिसियस्स पाण, आउरस्स भैसज्ज,
 माइयस्स रहस्स, अभिजुत्तस्स पचयकरण, अद्वाणपरिसतस्स वाहणगमण, तरिउ
 कामस्स सहायकिच्च सतस्स जिडदियस्स एत्तो एगमवि ण भवइ)

आ रीते पोडिलानी वात सालाणीने तेतलिपुत्र अमात्ये तेने कहु ङे ङे
 पोडिले ! वयासीने थयेवाने माटे प्रव्रज्या शरण भूत होय छे-वेम-परदेशमा
 रहेती उत्सुक व्यक्तिने माटे पोताने हेरा पाछा इरवु शरण भूत होय छे भूष्या
 ने माटे अन्न शरण भूत होय छे आ प्रमाणे व तरस्थाने माटे पाणी, आतुर-
 रोग-ने माटे भैपज्य-हवा, मायावीने माटे माया य री अभियुक्त-दोषापवाद
 वाणा-ने माटे दोषोना निराकरणथी पोताना विरे निर्दोषतानी प्रतीतिउ उत्पादन
 शरण भूत होय छे मार्गमा आलता यात्री गयेवाने माटे वाहनसे उपयोग
 शरण भूत होय छे. तरवानी इच्छा धरावता माण्यने माटे नाव वगेरे जलयाम-

ધારયતિ, મિકુર્વિત્યા તેતલ્પુત્રસ્ય અદૂરસામન્ત=નાતિદૂરે નાતિનિમ્ન્ટે સ્થિત્વા
 એવમસાદીત્-હમો તેતલ્પુત્ર ! ' હમો ' इत्यामन्त्रणे, हे तेतल्लिपुत्र ! ' पुरओ '
 पुरतः=अग्रतः ' ' पत्राए ' प्रपातः=गतः, अतो निर्गमनमसम्भवि, पृष्टतः हस्ति
 भयम्, अतो मत्यावर्तन चासभवि, ' दुहमो ' उभयतः=उभयत=उभयोः
 पार्श्वयोः ' अचक्रुफासे' अत्रुस्पर्श'=अन्धकार, ' मज्जे ' म ये=यत्र प्रयमास्महे
 तत्र ' सराणि' शरा =शणा, ' वरिसति ' वर्षन्ति=निपतन्ति । ' गामे पलित्ते '
 ग्रामे प्रदीप्ते=प्रज्वलिते सति रण्णे ' अण्य=एन ' ज्ञियाः ' ध्यायति=गन्तु
 चिन्तयति, अरण्ये प्रदीप्ते ग्राम ध्यायति=गन्तु चिन्तयति, ' आउमो तेतल्लिपुत्ता '
 हे आयुष्मन् तेतल्लिपुत्र ! ' उभओ पलित्ते ' उभयत प्रदीप्ते=उभयस्मिन् प्रज्वलिते
 वय ' कओ वयामो ' कुतो प्रनाम'=रुगन्नाम । ततः गलु स तेतल्लिपुत्रः पोष्टिला

તેતલ્લિપુત્તસ્સ અદૂરસામતે ઠીચ્ચા એવ વયાસી) ધારણ કર કે વહ
 તેતલ્લિપુત્ર કે સમીપ ગયી । વહાં જાકર ઉસને ઉસમે ડસ પ્રકાર
 કહો—(હ મો તેતલ્લિપુત્તા ! પુરઓ પવાળ પિટ્ટઓ હતિયમય) અરે ઓ
 તેતલ્લિપુત્ર ! આગે પ્રપાત ત્વહ્વા હૈ ઓર પીઠે દાયી કા ભય હૈ । (દુહઓ
 અચક્રુફાસે, મજ્જે સરાણિ વરિસતિ) દોનો ઓર અન્ધેરા હૈ ઓર
 જહા હમલોગ ઠરે દુષ્ટ હૈ વહા ઘાણોં કી વૃષ્ટિ હો રહી હૈ । (ગામે
 પલિત્તે રણ્ણો જ્ઞિયાઈ, રત્તો પલિત્તે ગામે જ્ઞિયાઈ) ગ્રામ મેં આગલગને
 પર મનુષ્ય જગલ મેં ચલે જાને કો સોચતા હૈ—ઓર જગલ મેં આગ
 લગને પર ગ્રામ મે ચલે આને કે લિયે વિચારતા હૈ । (આઉસો તેતલ્લિ
 પુત્તા ! ઉભઓ પલિત્તે કઓ વયામો) પરન્તુ જન દોનો મેં આગ લગ
 જાવે તો હે આયુષ્મન તેતલ્લિપુત્ર ! કહો ! હમ કહા જાવે ? (તણ સે

સેણે પોષ્ટિલાનુ ડપ ધારણ કયુ (ત્રિવચિત્તા તેતલ્લિપુત્તસ્સ અદૂરસામતે ઠીચ્ચા
 એવ વયાસી) ધારણ કરીને તે તેતલ્લિપુત્રની પાસે ગઈ ત્યા જઈને તેણે તેને
 આ પ્રમાણે કહ્યું કે (હ મો તેતલ્લિપુત્તા ! પુરઓ પવાળ પિટ્ટઓ હતિયમય) અરે,
 ઓ ! તેતલ્લિપુત્ર ! તમારી સામે પ્રપાત-ધોધ છે અને તમારી પાછળ હાથીનો
 ભય છે (દુહઓ અચક્રુફાસે, મજ્જે સરાણિ વરિસતિ) અને તરફ અધાડ
 છે અને ન્યા અમે ઊભા છીએ ત્યા તીરે વર્ષો રહ્યા છે (ગામે પલિત્તે રણ્ણો
 જ્ઞિયાઈ રત્તો પલિત્તે ગામે જ્ઞિયાઈ) ગામમા આગ લાગતા માણુમ જગલમા
 નાસી જવાનો વિચાર કરે છે અને જગલમા આગ લાગતા ગામમા આવતા
 રહેવાનો વિચાર કરે છે (આઉસો તેતલ્લિપુત્તા ઉભઓ પલિત્તે કઓ વયામો)
 પણ ન્યારે અને તરફ આગ સળગી ઉઠે ત્યારે હે આયુષ્મન્ત તેતલ્લિપુત્ર !
 યોશિ, અમે કયા જઈએ ?

मेवमवादीत् ' भो ' हे पोडिले ! भीतस्य खलु प्रव्रज्याशरण भवति तत्र दृष्टान्त-
 माह-यथा-' उरु डियस्म ' उत्कण्ठितस्य=परदेशवर्ति-याद् सुप्तस्य स्वदेशगमन,
 ' लुहियस्म ' क्षुधितस्य अन्नम्, ' तिसियस्म ' तपितस्य पान, ' आउरस्म आतु-
 रस्य=रोगिण ' भैपज्य ' भैपज्य ' मायिस्म ' मायिकस्य=मायादिनः रहस्य=गोपनम् ;
 ' अभिजुतस्म ' अभियुक्तस्य = दोषापवादयुक्तस्य ' पञ्चयकरण = प्रत्ययकरणं
 तन्निराकरणेन स्वविषये निर्दोषताप्रतीत्युत्पादनम्, ' अद्वाणपरिसतस्स ' अत्र परिश्रान्त-
 न्तस्य=मार्गगमनपरिस्त्रियस्य ' वाहणगमण ' वाहनगमन शकटादिना गमन ' तरि
 तेतलिपुत्ते पोडिल एव वयामी-भीतस्म खलु भो पवज्जा-सरण-उक्कं-
 डियस्स सट्ठेसगमण लुहियस्म अन्न, तिसियस्स पाण, आउरस्स भेस
 ज्ज, माइयस्स रहस्स, अभिजुत्तस्स पञ्चयकरण, अद्वाण परिसतस्स
 वाहणगमण, तरिउकामस्स पट्टवणकिच्च पर अभिउ जिउकामस्स
 सहायकिच्च सतस्स दनस्स जिडदियस्स एत्तो एगमवि ण भवइ) इस
 प्रकार पोडिला की बात सुनकर तेतलिपुत्र अमात्य ने उससे ऐसा कहा
 है पाडिले ! भौन (भय युक्त) के लिये प्रव्रज्या शरण भूत होती है,
 जैसे-परदेश वर्ती उत्सुक व्यक्ति के लिये स्वदेश गमन शरण भूत
 होना है, भूखे के लिये अन्न शरण भूत होना है प्यासे के लिये पानी,
 आतुर रोगी के लिये भैपज्य, मायाची के लिये मायाचारी, अभियुक्त-
 दोषापवाद वाले के लिये दोषों के निराकरण से अपने विषय में निर्दो-
 षता की प्रतीति का उत्पादन, शरण भूत होना है । मार्ग श्रान्त के लिये
 वाहन से गमन, करना शरण भूत होता है, तैरने की इच्छा वाले के

(तएण से तेतलिपुत्ते पोडिल एव ययासी-भीतस्म खलु भो पवज्जासंरणं
 उक्कडियस्म सट्ठेसगमण लुहियस्स अन्न तिसियस्स पाण, आउरस्स भेसज्ज,
 माइयस्स रहस्स, अभिजुत्तस्स पञ्चयकरण, अद्वाणपरिसतस्स वाहणगमण, तरिउ
 कामस्स सहायकिच्च सतस्स जिडदियस्स एत्तो एगमवि ण भवइ)

आ रीते पोडिलानी वात सालणीने तेतलिपुत्र अमात्ये ते उद्धुं उ डे
 पोडिले ! लनलीन थयेवाने माटे प्रमज्जा रागु लूत डोय छे-नेम-परदेशमा
 रडेती उत्सुक व्यक्तिये माटे पोताने देश पाछा इरु शरषु लूत डोय छे भूभ्या
 ने माटे अन्न शरषु लूत डोय छे आ प्रमाणु न तरस्थाने माटे पाणी, आतुर-
 रोग-ने माटे भैपज्य-इवा, मायावीने माटे माया य री अभियुत्त-दोषापवाद
 पाणा-ने माटे दोषाना निराकरणथी पोताना विषे नि निरानी प्रतीतितु उत्पादन
 शरषु लूत डोय छे मार्गमा श्रान्तता याकी गयेवाने माटे वाहनने उपयोग
 शरषु लूत डोय छे, तरवानी इच्छा धरावता माणुमने माटे नाव वगेरे नलयाम

समेणं कम्मरचविकरणर अपुन्वकरण पविट्टस्स केवलवर-
णाणदसणे समुप्पणे ॥ सू० १२ ॥

टीका— 'तएण तस्म' इत्यादि । ततः खलु तस्य तेतलिपुत्रस्य शुभेन परिणामेण जातिस्मरणम्-पूर्वभवान समुपपन्नम् । ततः खलु तस्य तेतलिपुत्रस्य अयमेतद्दूष आध्यात्मिक मार्यितः विन्विताः कल्पितो मनोगतः सरन्पः समुद्रपद्यत एवं खलु अहम् इहेव जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वासे पुष्कलावती विजये पुण्डरी विन्ध्या राजधान्या महापद्मे नाम राजा आसम् । ततः खलु अहं स्यविराणामन्तिके मुडो भूत्वा यावत् 'चोद्दमपुव्वाइ०' चतुर्दशपूर्वाणि०=चतुर्दशपूर्वाणि अधीत वान् , बहूनि वर्षाणि 'सामन्नपरियाय' श्रामण्यपर्याय०=शारित्रपर्याय पालित

'तएण तस्स तेतलिपुत्तस्स' इत्यादि ॥

टीकार्थ-(तएण) इसके बाद (तेतलिपुत्तस्स) तेतलिपुत्र को (सुभेण परिणामेण जाइ सरणे समुप्पणे) शुभ परिणाम से जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया । (तएण तस्स तेतलिपुत्तस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए ५ समुप्पज्जित्था-एव खलु अह इहेव जम्बूद्वीपे दीपे महाविदेहे वासे पोक्खलावई विजए पौडरिगिणीए रायहाणीए महापद्मे नाम राया होत्था) उसके प्रभाव से उसने अपने पूर्वभव को जान लिया-उसने जाना कि मैं इसी जम्बूद्वीप नामके द्वीप में महाविदेह क्षेत्र में पुष्कलावती विजय में पुण्डरीकिणी नामकी राजधानी में महापद्म नाम का राजा था (तएण अहं येराण अतिण मुडे भवित्ता जाव चोद्दमपुव्वाइ० बहूणि

'तएण तस्स तेतलिपुत्तस्स' इत्यादि

टीकार्थ-(तएण) त्थारभाइ (तेतलिपुत्तस्स) तेतलिपुत्रने (सुभेण परिणामेण जाइ सरणे समुप्पणे) शुभ परिणामसे जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न थई गद्य (तएण तस्स तेतलिपुत्तस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए ५ समुप्पज्जित्था-एव खलु अह इहेव जम्बूद्वीपे दीपे महाविदेहे वासे पोक्खलावई विजए पौडरिगिणीए रायहाणीए महापद्मे नाम राया होत्था)

तेना प्रभावसे तेहे चेताना पूर्व भवने जण्णी दीपे तेने आ जततु ज्ञान थयु के ते आ जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा महा विदेह क्षेत्रमा पुष्क लावती विन्ध्या पुण्डरीकिणी नामनी राजधानीमा महापद्म नामे रा त इते ।

(तएण अहं येराण अतिण मुडे भवित्ता जाव चोद्दमपुव्वाइ० बहूणि वासाणि

वान् । अनन्तरं मासिभ्यां सलेखनया कालमासे काल कृत्वा ' महासुक्रे कल्पे ' महाशुक्रे कल्पे=सप्तमे देवलोके ' देवे ' देव =देवत्वेनोत्पन्नः । ततः खलु अहं तस्माद् देवलोकात् ' आयुस्त्वण ३ ' आयुः क्षयेण ३=आयुर्भवस्थिति क्षयानन्तरम् इहैव तैत्तिलिपुरे तैत्तलेरमात्यस्य भद्राया भार्याया ' दारगत्ताए ' दारस्त्वेन=पुत्रतया ' पञ्चायाए ' प्रत्यायात =उत्पन्नः, तत्=तस्मात् श्रेयः खलु मम पूर्वदृष्टानि=पूर्वभवपालितानि ' महव्याड ' महाप्रतानि=पञ्चमहाप्रतानि स्वयमेव उपसंपद्य विहर्तुम्, एव सपेहेड सपेहिता स्वयमेव महाप्रतानि आरोहति=स्वीकरोति, आरुह्य, यत्रैव प्रमद्वनम्=उद्यानं तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य असोगवरापाय-

वैसाणि सामन्नपरियाय० मासिभ्यां सलेहणाए महासुक्रे कल्पे देवे-तएण अहं ताओ देवलोयाओ आयुस्त्वण ३ इहैव तैत्तिलिपुरे तैत्तलिस्स अमच्चस्स भद्राए भारियाए दारगत्ताए पञ्चायाए) वहाँ मेंने स-विरो के पाम मुडित होकर दीक्षा धारण की थी और ग्यारह अर्गों का अध्ययन कर विशिष्ट तपस्या की थी अन्त में अनेक वर्षों तक श्रामण्य पर्यायिका पालन कर एक मासकी सलेखना धारण कर में काल अवसर काल कर सातवा महाशुक्रे कल्पमे देवकी पर्यायसे उत्पन्न हो गया । वहाँ की आयुष्य स्थिति भवस्थिति स्थितिके क्षयके अनन्तर में वहाँसे चलकर ईस तैत्तिलिपुर में तैत्तिलि अमात्य के यहा भद्रा भार्या की कुक्षि से पुत्र रूप में अवतरित हुआ । (त सेय खलु मम पुत्रदिट्ठाइ महव्याड सय मेव उवसपज्जिज्जाण विहरित्ताए-एव सपेहेड, सपेहिता सयमेव महव्याड आरुहेड, आरुहित्ता जेणेव पमयवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छटे,

सामन्नपरियाय० मासिभ्यां सलेहणाए महासुक्रे कल्पे देवे-तएण अहं ताओ देवलोयाओ आयुस्त्वण ३ इहैव तैत्तिलिपुरे तैत्तलिस्स अमच्चस्स भद्राए भारियाए दारगत्ताए पञ्चायाए)

त्या मे मुडित थधने स्थविरेणी पासेथी दीक्षा धारणु करी डती अने अगियार अणेणु अध्ययन करीने विजिण्ट तपसा करी डती एवटे धणु वर्षो सुधी श्रामण्य पर्यायणु पालन करीने ओड भडिनाणी भवेपना धारणु करी अने त्यार पछी काण अवसर काण करीने मातमा भडा शुके उत्पमा हेवना पर्यायथी ई जन्म पाये। त्यानी अवस्थिति उ (तणु) ना क्षय थवा गहत हुं त्याथी आवीने आ तैत्तिलिपुरमा तैत्तिलि अमात्यने तमा भद्रा भार्याना गर्भथी पुत्र रूपमा जन्म पाये।

(त सेय खलु मम पुत्रदिट्ठाइ महव्याड सयमेव उवसपज्जिज्जाण विहरित्ताए एव सपेहेड, सपेहिता सयमेव महव्याड आरुहेड, आरुहित्ता जेणेव पमयवणे

वस्स 'अशोकवरपायस्य=अशोकवृक्षस्य 'अह' अयः पणिगतशिलोपरि 'सुह
 निसन्नस्स' सुहनिपणस्य=सुहोपविष्टस्य 'अणुचित्तमाणस्स' अनुचिन्तयत =
 पूर्वभवे कृतमध्ययनादिक स्मरत 'पुग्वाहीयाइ' पूर्वाधीतानि=पूर्वभवे पठितानि
 सामायिकादीनि चतुर्दशपूर्वाणि सयमेव 'अभिसमन्नागयाइ' अभिसमन्नागतानि=
 ज्ञानविषयतया सजातानि । तत. सलु तस्य तेतलिपुत्तस्य अनगरस्य शुभेन परि
 णामेन 'जाव' यावत्-प्रशस्तैरभ्यसनायै, प्रशस्तागिर्लेडयामि विंधुद्वयमानामिः
 'तयावरणिज्जाण' तदावरणीयाना=ज्ञानावरणीयादीना वर्मणा 'सयोवसमेण'

उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे पुढविसिन्नापट्टयसि सुहनि-
 सन्नस्स अणुचित्तमाणस्स पुग्वाहीयाइ सामाइयमाइयाइ चोदसपुग्वाइ
 सयमेव अभिसमन्नागयाइ) इसलिये अब मुझे यही उचित है कि मैं
 पूर्व भव में पालित किये पंच महाव्रतों को अपने आप धारण करूँ।
 ऐसा उसने विचार किया। विचार करके फिर उसने अपने आपही
 महाव्रतों को धारण कर लिया। धारण करके फिर वह जहाँ प्रमदवन
 नामका उद्यान था वहाँ चला गया। वहाँ जाकर वह अशोक वृक्ष के
 नीचे रक्खे हुए पृथिवी शिलापट्टक पर पटाकार से परिणत शिला के
 ऊपर-आनन्द के साथ बैठ गया और पूर्व भव में कृत अध्ययन आदि
 का वारं चिन्तन करने लगा। इस तरह विचार करते-र उसके पूर्व भव
 में पठित सामायिक आदि चौदह पूर्व ज्ञान के विषय भूत बन गये।
 (तण्ण तस्स तेतलिपुत्तस्स अणमारस्स सुभेण परिणामेण जांव तथा-

उज्जाणे तेणेव उवागच्छट्ट, उवागच्छित्ता असोगवरपायस्स अहे पुढविसिन्ना
 पट्टयसि सुहनिसन्नस्स अणुचित्तमाणस्स पुग्वाहीयाइ सामाइयमाइयाइ चोदस
 पुग्वाइ सयमेव अभिसमन्नागयाइ)

ओटला भाटे डवे भने ओअ योअ लागे छे के पूर्व लवभा के
 पाथ महाव्रतोंने मे धारणु करेला तेने पोतानी भेजे अ धारणु करी लई
 आ रीते तेहे विचार कर्यो विचार कर्या गाह तेहे पोतानी भेजे अ पाथ
 महाव्रतो धारणु करी लीधा धारणु कर्या पट्टी ते न्या प्रमदवन नामे उद्यान
 हुत्तु त्या अतो रख्यो त्या अथने ते अशोक वृक्षनी नीचे भूजयेला पृथिवी
 शिला पट्टक ऊपर-पटाकार इपथी परिवृत शिला ऊपर-आनन्द अनुभवतो जेसी
 गयो अने पूर्व लवभा के कर्ध अध्ययन कर्युं हुत्तु तेनु वारवार चिंतन करवा
 लाग्यो आ रीते चिंतन करता करता पूर्वलवभा लखेला सामायिक वगेरे चौद
 पूर्वज्ञान तेने विषयभूत थर्ध गया

क्षशोपशमेन=उदिताना कर्मणा क्षयेण अनुदिताना कर्मणामुपशमेन=निरुद्धोदयत्वेन
 'कम्मरयविकरणकर' कर्मरजो विकरणकम् 'अपुव्वकरण' अपूर्वकरणम्=अष्टम
 गुणस्थानम् प्रविष्टस्य तस्य केवलरज्ञानदर्शन समुत्पन्नम् ॥सू० १२॥

मूलम्-तएण तेतलिपुरे नयरे अहा संनिहिएहि वाणमं-
 तरेहि देवेहि देवीहिय देवदुंदुभीओ समाहयाओ, दसद्धवन्ने
 कुसुमे निवाडिए, दिव्वे देवगीयगधव्वनिनाए कए यावि
 होत्था । तएणं से कणगज्झए राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे
 समाणे एव वयासी-एव खल्लु तेतलिपुत्ते मए अवज्झाए
 मुंडे भवित्ता पव्वइए, त गच्छामि ण तेतलिपुत्तं अणगार
 वंदामि नमंसामि वदित्ता नमसित्ता एयमट्ठ विणएणं भुज्जो
 २ खामेमि, एव संपेहेइ, सपेहित्ता पहाए० चाउरगणीए

वरणिजाण कम्माण खओवसमेण कम्मरयविकरणकर अपुव्वकरण
 पविट्ठस्स केवलवरणाणदसणे समुत्पण्णे) इस प्रकार शुभ परिणामों से
 यावत् प्रसस्त अथवसायों से विशुद्धमान लेश्याओ से, उसके ज्ञाना-
 वरणी आदि कर्मों का क्षयोपशम-उदित कर्मों का क्षय एव अनुदित
 कर्मों का उपशम-हो गया-सो इस के प्रभाव से वे कर्मरज को दूर
 करने वाले अष्टम अपूर्व करण नामके गुणस्थान में प्राप्त हो गये ।
 बाद में यादृक्वे गुणस्थान के अंत में और तेरह्वे गुणस्थान के प्रारंभ
 में उन्हें केवलज्ञान और केवलदर्शन उत्पन्न हो गया ॥सू० १२॥

(तएण तस्स तेतलिपुत्तस्स अणगारस्स सुभेण परिणामेण जाव तयावरणि-
 ज्ञाण कम्माण खओवसमेण कम्मरयविकरणकर अपुव्वकरण पविट्ठस्स केवल-
 वरणाणदसण समुत्पण्णे)

आ रीते शुभ परिणामोत्थी, यावत् प्रसस्त अथवसायोत्थी, विशुद्धमान
 लेश्याओत्थी तेना ज्ञानावशुभिय वगेरे कर्मोने क्षयोपशम-उदित कर्मोने क्षय
 अने अनुदित कर्मोने उपशम थर्ध गयो अने प्रभावथी तेओ कर्मरजने
 विकरञ्च करनारा अष्टम अपूर्व करण नामना शुभस्थानमा प्राप्त थर्ध गया तयार
 पछी प्रारंभ शुभस्थानना अतमा अने तेरमा शुभस्थानना प्रारंभमा तेभने
 केवलज्ञान अने केवल दर्शन उत्पन्न थर्ध गया ॥ सूत्र " १२ " ॥

वस्स 'अशोकवरपादपस्य=अशोकवृक्षस्य 'अहे' अधः परिणतशिलोपरि 'सुह
 निसन्नस्स' सुहनिपण्णस्य=सुहोपनिष्ठस्य 'अणुचित्तमाणस्स' अनुचिन्तपत्त =
 पूर्वभवे कृतमध्ययनादिकं स्मरत् 'पुव्वाहीयाइ' पूर्वाधीतानि=पूर्वभवे पठितानि
 सामायिकादीनि चतुर्दशपूर्वाणि स्वयमेव 'अभिसमन्नागयाइ' अभिमगन्त्यागतानि=
 ज्ञानत्रिपयतया सजातानि । तत. खलु तस्य तेतलिपुत्रस्य अनगारस्य भुमेण परि
 णामेण 'जाव' यावत्-प्रशस्तैरध्ययसायै, प्रशस्तागिर्लेइपामि विंशुद्वयमानामिः
 'तयावरणिज्जाण' तदावरणीयाना=ज्ञानावरणीयादीनां धर्मणा 'खयोवसमेण'

उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे पुढविंसिलापट्टसि सुहनि-
 सन्नस्स अणुचित्तमाणस्स पुव्वाहीयाइ सामाइयमाइयाइ चोइसपुव्वाइ
 सयमेव अभिसमन्नागयाइ) इसलिये अब सुझे यही उचित है कि मैं
 पूर्व भव में पालित किये पच महाव्रतो को अपने आप धारण कर लू।
 ऐसा उसने विचार किया। विचार करके फिर उसने अपने आपही
 महाव्रतो को धारण कर लिया। धारण करके फिर वह जहाँ प्रमदवन
 नामका उद्यान था वहाँ चला गया। वहाँ जाकर वह अशोक वृक्ष के
 नीचे रक्खे हुए पृथिवी शिलापट्टक पर पटाकार से परिणत शिला के
 ऊपर-आनन्द के साथ बैठ गया और पूर्व भव में कृत अध्ययन आदि
 का बार-बार चिन्तन करने लगा। इस तरह विचार करते-उसके पूर्व भव
 में पठित सामायिक आदि चौदह पूर्व ज्ञान के विषय भूत बन गये।
 (तण्ण तस्स तेतलिपुत्तस्स अणगारस्स सुभेण परिणामेण जाव तया-

उज्जाणे तेणेव उवागच्छत्, उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे पुढविंसिला
 पट्टसि सुहनिसन्नस्स अणुचित्तमाणस्स पुव्वाहीयाइ सामाइयमाइयाइ चोइस
 पुव्वाइ सयमेव अभिसमन्नागयाइ)

ओटला भाटे हुवे भने ओअ योग्य लागे छे के पूर्व लवभा के
 पाथ भडाव्रतोने मे धारणु करेला तेने पातानी भेजे अ धारणु करी लई
 आ रीते तेबु विचार कर्यो विचार कर्या आइ तेबु पातानी भेजे अ पाथ
 भडाव्रतो धारणु करी लीधा धारणु कर्या पत्री ते न्या प्रभस्वन नामे उद्यान
 हुतु त्या अतो रह्यो त्या अछने ते अशोक वृक्षनी नीचे भूजायेला पृथिवी
 शिला पट्टक उपर-पटाकार इथी परिणत शिला उपर-आनन्द अनुभवतो जेरी
 गये अने पूर्व लवभा के कछ अध्ययन क्युं हुनु तेतु वारवार चिंतन करवा
 लाग्यो आ रीते चिंतन करता करता पूर्वलवभा लखेला सामायिक वगेरे यीइ
 पूर्वज्ञान तेने विषयभूत थई गया

दशार्द्धवर्णानि=पञ्चवर्णाणि अचित्तपुण्याणि निपातितानि=वर्षितानि, दिव्यः=मनोहरः गीतगन्धर्व निनादः कृतश्चापि अभवत् । ततः खलु स कनकध्वजो राजा 'इमीसे कहाए लद्धट्टे समाणे' यस्याः कथाया लवार्थः मया दुष्टचिन्ता विषयी कृतस्तेतलिपुत्रः अमात्यं प्रव्रज्य प्रमदवने केवलपरज्ञानदर्शनसम्पन्नो जात इति वृत्तान्ताभिन्नः सन् एवमावादीत्-एव खलु तेतलिपुत्रो मया 'अवज्झाए' अपघ्यातः=दुष्टचिन्ताविषयीकृतः सन् मुण्डो भूत्वा प्रव्रजितः 'त' तत्=तस्मात् कारणात् नमस्यित्वा 'एयमट्ट' एतमर्थं=मया कृतमपमानरूपमर्थं विनयेन भूयो भूयः 'खामेमि' क्षमयामि, एव सप्रेक्षते सप्रेक्ष्य 'ण्हाए' स्नातः कृतस्नानः 'चाउरगिणीए सेणाए' चतुरङ्गिण्या सेनया सार्द्धं यत्रैव प्रमदवन उद्यान यत्रैव तेतलि-

होत्या) यथा सनिहित आसन्न भूत हुए चाण, व्यन्तर देवो ने और देवियो ने आकाश में देवदुन्दुभिया वजाई । पचवर्ण के अचित्त कुसुमो की वृष्टि की । मनोहर गीत गधर्व निदान भी किया । (तण्ण से कण गज्झाए राया इमीसे कहाए लद्धट्टे समाणे एव वयासी) जत्र यह समाचार कनकध्वज राजा को ज्ञात हुआ मेरो दुष्ट विचारणा के विषय भूत बने हुए, तेतलिपुत्र अमात्य ने दीक्षित होकर प्रमदवन में केवल ज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त कर लिया है-इस प्रकार का वृत्तान्त जब उसे मालूम पड़ा-तब उसने अपने मन में विचार किया (एव खलु तेतलिपुत्ते मए अवज्झाए मुडे भवित्ता पव्वएण, त गच्छामि ण तेतलिपुत्त अणगार वदामि नमसामि, वदित्ता नमसित्ता एयमट्ट विणएण भुज्जो र खामेमि एव सपेहेइ-सपेहित्ता ण्हाए० चाउरगिणीए सेणाए जेणेव पमयणे उज्जाणे जेणेव तेतलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तेतलि-

यथा सनिहित आसन्नभूत थयेत्वा वाणुयतर देवेअे अने देहीअे अे आकाशमा देवदुन्दुभियो वजाडी, पाय रगना अचित्त पुण्योनी वर्षा करी अण भनोहउ गीत गधर्व निनाद (ध्वनि) पयु करी (तण्ण से कणग जए राया इमीसे कहाए लद्धट्टे समाणे एव वयासी) अथारे आ भमाथारेनी नयु नंअ कनक ध्वजने थर्ष के भागी हुण विचरणा ने लीथे तेतलिपुत्र अमात्ये दीक्षित थर्षने प्रमदवनमा केवलज्ञान अने केवल दर्शन प्राप्त करी लीथा छे एवारे तेहे मनमा विचार करी छे

(एव खलु तेतलिपुत्ते मए अवज्झाए मुडे भवित्ता पव्वएण त गच्छामि ण तेतलिपुत्त अणगार वदामि नमसामि, वदित्ता नमसित्ता एयमट्ट विणएण भुज्जो र खामेमि एव सपेहेइ-सपेहित्ता ण्हाए० चाउरगिणीए सेणाए जेणेव पमयरणे उज्जाणे जेणेव तेतलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तेतलिपुत्त अणगार

सेणाए जेणेव पमयवणे उज्जाणे जेणेव तेतलिपुत्त तेणेव
 उवागच्छइ उवागच्छित्ता तेतलिपुत्तेअणगार वदइ नमंसइ
 वंदित्ता नमसित्ता एयमट्ट विणएण भुज्जो२ खामेइ, नच्चा-
 सेन्ने जाव पज्जुवासइ । तएणसे तेतलिपुत्ते अणगारे कण-
 गज्झयस्मं रत्तो तीसे य महइमहालयाए० धम्म परिकहेइ ।
 तएणं से कणगज्झए राया तेतलिपुत्तस्स केवलिस्स अतिए
 धेम्मं सोच्चा णिसम्म, पचाणुव्वडयं सत्तसिक्खावइयं सावग-
 धम्मं पडिवज्जइ, पडिवज्जित्ता समणोवासए जाए जाव
 अहिगयं जीवाजीवे । तएणं तेतलिपुत्ते केवली बहूणि वासाइ
 केवलिपरियाग पाउणित्ता जाव सिद्धे । एव खलु जंबू ।
 समणेणं भगवयां महावीरेणं जाव सपत्तेणं चोदसमस्स
 णायज्झयणस्स अयमट्टे पण्णत्ते तिवेमि ॥ सू० १३ ॥

॥ चउदस अज्झयणं समत्तं ॥

टीका— 'तएण' इत्यादि । तत खलु तेतलिपुरे नगरे 'अहासनिहिएहि'
 यथा सनिहितै' = भासनै, 'वाणमतरेहि' वाणव्यन्तरे, देवै देवीभिश्च देवदुन्दुभय
 समाहृता = आकाशे देवै, देवीभिश्च देवदुन्दुभयो वादिता इत्यर्थ, 'दसद्वयणे
 कुसुमे निवाडिए' दशोद्धरणं कुसुम निपातितम्, अत्र जाति त्रिवक्षायामेकवचनम्,

'तएण तेतलिपुरे नगरे' इत्यादि ॥

टीकार्थ— (तएण) इसके बाद (तेतलिपुरे नगरे) तेतलिपुर नगरमें
 (अहासनिहिएहि वाणमतरेहि देवेहि देवीहिश्च देवदुदुभीओ समाहृताओ,
 दसद्वेन्ने कुसुमे निवाडिए, दिव्वे देवगीयंगधव्वनिनाए कए यावि

'तएण तेतलिपुरे नगरे' इत्यादि—

टीकार्थ— (तएण) त्था२ पथी (तेतलिपुरे नगरे) तेतलिपुर नगरमें
 (अहासनिहिएहि वाणमतरेहि देवेहि देवीहिश्च देवदुदुभीओ समाहृताओ,
 दसद्वेन्ने कुसुमे निवाडिए, दिव्वे देवगीयंगधव्वनिनाए कए यावि,

दशार्द्धवर्णानि=पञ्चवर्णाणि अचित्तपुष्पाणि निपातितानि=वर्षितानि, दिव्यः=मनो
हरः गीतगन्धर्व निनादः कृतश्चापि अभवत् । ततः खलु स कनकध्वजो राजा
'इमीसे क्हाए लद्धेट्टे समाणे ' यस्याः कथाया लब्धार्थः मया दुष्टचिन्ता विषयी
कृतस्तेतलिपुत्र. अमात्यः प्रव्रज्य प्रमदवने केवलव्रजानदर्शनसम्पन्नो जात इति
वृत्तान्ताभिज्ञः सन् एवमादीत्-एव खलु तेतलिपुत्रो मया ' अवज्झाए ' अप-
घ्यातः=दुष्टचिन्ताविषयीकृतः सन् मुण्डो भूत्वा प्रव्रजितः 'त' तत्=तस्मात् कार-
णात् नमस्यत्वा ' एयमट्ट ' एतमर्थः=मया कृतमपमानरूपमर्थं विनयेन भूयो भूयः
' स्वामेमि ' क्षमयामि, एव सप्रेक्षते सप्रेक्ष्य ' ण्हाए ' स्नातः कृतस्नान. ' चाउ-
रगिणीए सेणाए ' चतुरङ्गिण्या सेनया सार्द्धं यत्रैव प्रमदवन उद्यान यत्रैव तेतलि-

होत्या) यथा सनिहित आसन्न भूत हुए चाण, व्यन्तर देवो ने और
दवियों ने आकाश में देवदुन्दुभियां बजाईं । पचवर्ण के अचित्त कुसुमो
की वृष्टि की । मनोहर गीत गधर्व निदान भी किया । (तएण से कण
गज्झए राया इमीसे क्हाए लद्धेट्टे समाणे एव वयामी) जब यह
समाचार कनक वज राजा को ज्ञात हुआ मेरी दुष्ट विचारणा के विषय
भूत बने हुए, तेतलिपुत्र अमात्य ने दीक्षित होकर प्रमदवन में केवल
ज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त कर लिया है-इस प्रकार का वृत्तान्त जब
उसे मालूम पड़ा-तब उसने अपने मन में विचार किया (एवं खलु तेत
लि पुत्ते मए अवज्झाए मुडे भवित्ता पव्वएण, त गच्छामि ण तेतलिपुत्त
अणगार वदामि नमसामि, वदित्ता नमसित्ता एयमट्ट विणएण भुज्जो र
स्वामेमि एव सपेहेइ-सपेहित्ता ण्हाए० चाउरगिणीए सेणाए जेणेव पमय
वणे उज्जाणे जेणेव तेतलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तेतलि

यथा सनिहित आसन्नभूत थयेत्ता वाणु०तर देवोअने देवीअने अ
आकाशमा देवदुन्दुभियां वगाडी, पात्र रगता अचित्त पुष्पेनी वर्षा करी अ
भने०१० गीत गधर्व निनाद (ध्वनि) पञ्च कथे (तएण से कणगज्झए राया
इमीसे क्हाए लद्धेट्टे समाणे एव वयासी) अथारे आ भमाथारेनी अयु रान्त
कनक ध्वजने थरु के मारी हुण विचरणाने लीधे तेतलिपुत्र अमात्ये दीक्षित
थरुने प्रमदवनमा केवलज्ञान अने केवल दर्शन प्राप्त करी लीधा छे थारे
तेले मनमा विचार कथे के

(एवं खलु तेतलिपुत्ते मए अवज्झाए मुडे भवित्ता पव्वएण त गच्छामि ण
तेतलिपुत्त अणगार वदामि नमसामि, वदित्ता नमसित्ता एयमट्ट विणएण भुज्जो र
स्वामेमि एव सपेहेइ-सपेहित्ता ण्हाए० चाउरगिणीए सेणाए जेणेव पमयवणे
उज्जाणे जेणेव तेतलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तेतलिपुत्त अणगार

पुत्रोऽनगारस्तत्रीय उपागच्छति, उपागत्य तेतलिपुत्रमनगार वन्दते नमस्यति,
 वन्दित्वा नमस्यन्वा एामर्थं=स्त्रुताज्परायलभण विनयेनभूयो भूयः क्षमयति=
 क्षमां कारयति, तथा ' नञ्चासन्ने० ' नास्यामन्ने नातिदूरे यावत् पर्युपास्ते=
 सेवां करोति । तत' खलु म तेतलिपुत्रोऽनगारः कनकध्वजाय राज्ञे तस्या च

पुत्र अणगार वदइ, नममइ, वदित्ता नमसित्ता एममट्ट विणएण भुज्जो
 २ खामेइ नञ्चासन्ने जाव पज्जुवामइ) मँने तेतलिपुत्र को अपनी दुष्ट
 चिन्ता का विषयभूत बनाया है-सो वह मुदित होकर दीक्षित हो गया
 है । इसलिये मैं अब उसके पास जाऊँ और उन तेतलिपुत्र अनगार को
 वदना करूँ-नमस्कार करूँ । वदना नमस्कार कर मैं अपने द्वारा किये
 अपमान रूप अपराधकी वडे विनय के साथ धार २ उनसे क्षमा मागूँ-
 इस प्रकार ज्योही उसने विचार किया-कि उसी समय वह उठा और
 स्नान किया-याह में अपनी चतुरगीनी सेना के साथ जहा प्रमदवन था
 -उसमें जहा तेतलिपुत्र अनगार विराजमान थे वहा पहुँचा-वहाँ पहुँच
 कर उसने तेतलिपुत्र अनगार को वदना की नमस्कार किया । वदना
 नमस्कार करके फिर अपने द्वारा कृत अपमान रूप अपराध की वडे
 विनय के साथ धार २ उनसे क्षमा कराई और समुचित म्यान पर बैठ
 कर उनकी सेवा सुश्रूषा की (तएण से तेतलिपुत्ते अणगारे कणगज्झ

वदइ, नममइ, वदित्ता नमसित्ता एममट्ट विणएण भुज्जो २ खामेइ नञ्चासन्ने
 जाव पज्जुवामइ)

तेतलिपुत्र अमात्यने मे चोतानी दुष्ट चिंताने विषयभूत (लक्ष्य)
 बनाये छे तेथी ज ते मुदित थरने दीक्षित थर गये छे अटला भाटे डवे
 हु तेनी पासे जड अने तेतलिपुत्र अनगारने वदन कइ नमस्कार कइ वदना
 अने नमस्कार करीने हु भारा वडे थर गयेला अमान इप अपराध भदल
 भहु ज नअपणे तेमनी पासेथी क्षमा याचना कइ आ रीते विचार थतानी
 साथे तरत ज ते छिने थये अने स्नान कथुं त्यार पछी चोतानी चतुर गिणी
 सेनाने साथे न्या प्रमदवन छतु अने तेमा पणु न्या तेतलिपुत्र अनगार
 विशजमान छता त्या पडे थये ता पडेथीने तेणे तेतलिपुत्र अनगारने
 वदना करी अने नमस्कार कर्या वदना अने नमस्कार करीने तेणे तेना वडे
 थर गयेला अपमान इप अपराधनी भहु ज नअपणे क्षमा मागी अने त्यार
 पछी तेणे उचित स्थान उपर बेसीने तेमनी सेवा तेम सुश्रूषा करी

(तएण से तेतलिपुत्ते अणगारे कणगज्झयस्स रणा तीसे य मइइ महाल
 याए० धम्म परिउहेइ)

‘महद्महालयाए०’ महातिमहत्या परिपदि धर्म ‘परिर्हेड’ परिकथयति= उपदिशति । ततः खलु स अनरु यज्ञो राजा तैतलिपुत्रस्य केवलिनोऽन्तिके धर्म श्रुत्वा निशम्य पञ्चाणुव्रतिक मत्तशिक्षात्रतिक इत्येव द्वादशविव श्रावकधर्म प्रतिपद्यते, प्रतिपद्य श्रमणोपासको जातः । कीदृश ?-अभिगत जीवा-जीवः=परिज्ञात-

यस्स रण्णो तीसे य महद्महालयाए० धम्म परिकहेइ) इसके बाद उन तैतलिपुत्र अनगार केवली ने कनकध्वजराजा को उपस्थित परिपद को विशाल धर्म का उपदेश दिया-(तएण से कणगज्जएण राया तैतलिपुत्तस्स केवलिस्स अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म पचाणुव्वइय सत्तसिक्खावइय सावगवम्म पडिवज्जड पडिवज्जित्ता समणोवासए जाए जाव अहिगयजीवाजीवे । तएण तैतलिपुत्ते केवली बहूणि वासाइ केवलिपरियाग पाउणित्ता जाव सिद्धे । एव खलु जवू । समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण चोदसमस्स णायज्जयणरस्स अयमट्ठे पणत्ते त्ति वेमि) उपदेश सुनने के बाद कनकध्वज राजाने तैतलिपुत्र केवलि के समीपश्रुतचारित्ररूप धर्म के प्रभाव से प्रेरित होकर और उस श्रुत धर्म का अच्छी तरह हृदय से विचार कर पाच अणुव्रत एवं सात शिक्षारूप श्रावक धर्म धारण कर लिया । वारण करके वे श्रमणोपासक बन गये-यावत् जीव और अजीव तत्त्व का क्या स्वरूप है इसके भी वे ज्ञाता हो गये । बाद में तैतलिपुत्र केवलीने अनेक वर्षों तक केवलि

त्यार पछी ते तैतलिपुत्र अनगार डेवणीअे कनकध्वज राजाने तेमअ उपस्थित परिषदने अविन्तए धर्म विषे उपदेश आये।

(तएण से कणगज्जएण राया तैतलिपुत्तस्स केवलिस्स अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म पचाणुव्वइय सत्तसिक्खावइय सावगवम्म पडिवज्जड पडिविसज्जित्ता समणोवासए जाए जाव अहिगयजीवाजीवे । तएण तैतलिपुत्ते केवलि बहूणि वासाइ केवलिपरियाग पाउणित्ता जाव सिद्धे । एव खलु जवू । समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण चोदसमस्स णायज्जयणरस्स अयमट्ठे पणत्ते त्तिवेमि!)

उपदेश सामग्रीने कनकध्वज राजाने तैतलिपुत्र केवलिना श्रुतचारित्ररूप धर्मना प्रभावशी प्रेरणने ते श्रुतचारित्र रूप धर्म विषे मनमा मागी गीते विचार कराने तेमनी प सेथी पाच अणुव्रत अने सात शिक्षारूप श्रावकधर्म धारण करी लीधा धारण करीने तेअे श्रमणोपासक थर्ध गया अने यावत् एव तेमअ अणुव्रतस्वतु स्वरूप शुद्धे ? तेनु पद्य तेअेने ज्ञान थर्ध गयु त्यार पछी तैतलिपुत्र केवलीअे षष्ठा वर्षो सुधी केवली पर्यायनु पालन उरु अने आम तेअेअे यावत् सिद्धपद

पुत्रोऽनगारस्तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य तेतलिपुत्रमनगार यन्त्रे नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यन्वा एामर्थं=स्मरुताज्याधक्षण विनयेनभूयो भूय' प्रमथति=क्षमां कारयति, तथा 'नच्चासन्ने०' नात्पासन्ने नातिदूरे यावत् पर्युपास्ते=सेवां करोति । ततः खलु म तेतलिपुत्रोऽनगारः कनकधनाय राज्ञे तस्या च

पुत्र अणगार वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता एमथट्ट विणएण भुज्जो २ खामेइ नच्चासन्ने जाव पज्जुवामइ) मैंने तेतलिपुत्र को अपनी दुष्ट चिन्ता का विषयभूत बनाया है—सो वह मुदित होकर दीक्षित हो गया है । हमलिये मैं अब उमके पास जाऊँ और उन तेतलिपुत्र अनगार को वदना कहूँ—नमस्कार कहूँ । वदना नमस्कार कर मैं अपने द्वारा किये अपमान रूप अपराधकी वडे विनय के साथ धार २ उनसे क्षमा मागू—इस प्रकार ज्योही उसने विचार किया—कि उसी समय वह उठा और स्नान किया—बाद में अपनी चतुरगीनी सेना के साथ जहा प्रमदवन था—उसमें जहा तेतलिपुत्र अनगार विराजमान थे वहा पहुँचा—वहाँ पहुँच कर उसने तेतलिपुत्र अनगार को वदना की नमस्कार किया । वदना नमस्कार करके फिर अपने द्वारा कृत अपमान रूप अपराध की वडे विनय के साथ धार २ उनसे क्षमा कराई और समुचित स्थान पर बैठ कर उनकी सेवा सुश्रूषा की (तएण से तेतलिपुत्ते अणगारे कणगज्झ वदइ, नममइ, वदित्ता नमसित्ता एमथट्ट विणएण भुज्जो २ खामेइ नच्चासन्ने जाव पज्जुवामइ)

तेतलिपुत्र अमात्यने मे चेतानी दुष्ट चिंताने विषयभूत (लक्ष्य) बनाये छे तेही ज ते मुदित थर्धने दीक्षित थर्ध गये छे अटला भाटे डवे हु तेनी पासे जठि अने तेतलिपुत्र अनगारने वदन कइ नमस्कार कइ वदना अने नमस्कार करीने हु मारा वडे थर्ध गयेला अमान रूप अपराध अदल जहु ज नअपणे तेमनी पासेही क्षमा याचना कइ आ रीते विचार थेतानी साथे तरत ज ते जिये थये अने स्नान क्युं त्पार पछी चेतानी चतुर गिणी सेनाने साथे न्या प्रमदवन डतु अने तेमा पञ्च न्या तेतलिपुत्र अनगार विराजमान डता त्या पडे थये त्या पडेथीने तेणे तेतलिपुत्र अनगारने वदना करी अने नमस्कार कर्था वदना अने नमस्कार करीने तेणे तेना वडे थर्ध गयेला अपमान रूप अपराधनी जहु ज नअपणे क्षमा मागी अने त्पार पछी तेणे उचित स्थान उपर बेथीने तेमनी सेवा तेमज सुश्रूषा करी

(तएण से तेतलिपुत्ते अणगारे कणगज्झयस्स रणा तीसे य महइ महाल याए० धम्म परिह्वेइ)

॥ अथ पञ्चदशमध्ययनं प्रारभ्यते ॥

गत चतुर्दशमध्ययन सम्पत्ति पञ्चदशमारभ्यते, पूर्वाययनेऽपमानाद् विषय-
त्यागः प्रदर्शितः, अत्र तु स जिनोपदेशाद् भवतीति प्रतिपादयिष्यतेऽतस्तस्य
सद्भावेऽर्थप्राप्तिः, असद्भावेऽनर्थप्राप्तिर्भवतीत्येव पूर्वेण सम्बन्धः तत्रोद्मा-
दिषूत्रम्—'जङ्घ भते' इत्यादि ।

मूलम्—जङ्घां भते । समणेणं भगवया महावीरेणं जाव
सपत्तेणं चोद्दसमस्स नायज्झणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते पन्नरस-
मस्स णं भंते णायज्झयणस्स समणेणं भगवया महावीरेणं
जाव संपत्तेण के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जंवू । तेण कालेणं
तेणं समएणं चपा नाम नयरी होत्था, पुन्नभदे चेइए जिय-
सत्तू राया । तत्थ ण चपाए नयरीए धण्णे णामं सत्थवाहे
होत्था अट्ठे जाव अपरिभूए । तीसे णं चंपाए नयरीए
उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए अहिच्छत्ता नाम नयरी होत्था,

—:नन्दिफल नामका पन्द्रहवा अध्यायन प्रारंभः—:

चौदहवा अध्यायन समाप्त हो चुका—अब पन्द्रहवा अध्यायन प्रारंभ
होता है । प्रथम अध्यायन में तैत्तिरीय प्रधान के आख्यान द्वारा अपमान से
भी विषयों का त्याग कर दिया जाता है यह बात समझाई गई है ।
इस अध्यायन में यह विषय त्याग जिनके उपदेश से होता है यह कहा
जावेगा । इस लिये उसके सद्भाव में अर्थ प्राप्ति और असद्भाव में
अनर्थ प्राप्ति होती है इस तरह से पूर्व अध्यायन के साथ इसका सम्बन्ध
बन जाता है.—जङ्घा भते । समणेण इत्यादि ॥

नन्दिफल नामके पन्द्रहवें अध्यायन प्रारंभ

चौदहवें अध्यायन पढ़े थिये छे इवे पन्द्रहवें अध्यायन शुरु थाय छे
पड़ेलाना अध्यायनमा तैत्तिरीयप्रधानना आख्यान वडे अे वात समन्वयनामा
आनी छे के अपमानथी पञ्च नियमोना याग करवामा आवे छे आ अध्यायनमा
आ विषय त्याग लेमना उपदेशाया थाय छे ते निये कडेवामा आवथे अेटला
भाटे तेना सद्भावमा अर्थ प्राप्ति अने असद्भावमा अनर्थ प्राप्ति होय छे,
आ शीते पूर्व अध्यायननी साथे आना सणध समञ्ज राकाय छे

टीका—'जङ्घा भते । समणेण' इत्यादि ।

सकलजीवानोचतत्रशाऽपि जातः । तत' खलु तेतलिपुत्रः केंदली बहूनि वर्षाणि
केवलपर्याय पालयित्वा यावत् सिद्ध =मोक्ष गत ।

सुधर्मास्वामी प्राह-एव खलु हे जम्बू ! श्रमणेन भगवता महावीरेण चतुर्दशस्य
ज्ञाताध्ययनस्य 'अयमद्वे' अयमर्थः=पूर्वोक्तो भाव प्रज्ञप्त =प्ररूपित, 'त्ति वेमि' इति
द्वितीयमि=भगवत्समीपे यथा श्रुत तथा त्वा प्रतिकथयामि । एतेन अध्ययनेन इद-
मायात यत्-प्राणिनो यावद् दु खं मानश्रश च न प्राप्नुवन्ति तावद् बहुश
प्रबोधिता अपि धर्मं न स्वीकुर्वन्ति, यथा तेतलिपुत्रः ॥ सू० १३ ॥

इति श्री-विश्वनिख्यात-जगद्गुरु-मसिद्धराचरुपञ्चदशभाषाकलितकलितक-
लापालापक-प्रविशुद्धगत्रपद्यनैरुग्रन्यनिर्मापक-रादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छ
त्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराज
गुरु-गालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री-घासीलाल-
प्रतिबिचरिचिताया 'ज्ञाताधर्मकथासूत्र' सूत्रस्यानगारधर्मासृत्व
पिण्याख्याया व्याख्यायां चतुर्दशमऽध्ययन सार्णम् ॥१४॥

पर्याय का पालन कर यावत् सिद्ध पद प्राप्त कर लिया । सुधर्मास्वामी
कहते हैं-हे जम्बू ! श्रमणभगवान महावीर ने इस चौदहवे ज्ञाताध्ययन
का यह पूर्वोक्तरूप से भाव अर्थ प्ररूपित किया है । सो जैसा मैंने उन
भगवान के समीप में सुना है यह वैसा ही तुमसे कहा है । इस अध्य-
यन से हमें यह ज्ञान हो जाता है कि समार में तेतलिपुत्र की तरह
ऐसे भी प्राणी हैं कि वे जब तक दु'ख और अपमान को नहीं पालते
हैं तब तक अनेक धार प्रतिबोधित करने पर भी-धर्म को स्वीकार
नहीं करते हैं ॥ सू० १३ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराज कृत
"ज्ञाताधर्मकथासूत्र" की अनगारधर्मासृत्वविषिणी व्याख्याका
चौदहवा अध्ययन समाप्त ॥ १४ ॥

शेणवी वीधु सुधर्मा स्वामी कहे छे के डे जम्बू ! श्रमणु भगवान महावीरे
आ चौदमा ज्ञाताध्ययनो पूर्वोक्त रूपथी भाव-अर्थ निरूपित कर्यो छे जेवो अर्थ
अ तेओश्री पासेथी सालज्यो छे तेवोअ तमने कहेओ छे आ अध्ययनथी
अमने आ ज्ञातनु ज्ञान थाय छे के ससारमा तेतलिपुत्रनी जेम जेवा पणु प्राणी
ओ छे के तेओ जथा सुधी दुभी अने अपमानित थता नथी त्या सुधी धणु
वधत प्रतिबोधित करवा छता धर्मने स्वीकारता नथी ॥ सूत्र ' १३ ' ॥

श्री जैनाचार्य घासीलालजी महाराज कृत ज्ञातासूत्रनी अनगारधर्मासृत्वविषिणी
व्याख्यातु चौदसु अध्ययन समाप्त ॥ १४ ॥

रिद्धिर्त्थिमियसमिद्धा वन्नओ । तत्थ णं अहिच्छत्ताए नय-
रीए कणगकेऊ नाम राया होत्था, महया वन्नओ । तस्स
धणणस्स सत्थवाहस्स अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालस-
मयसि इमेयारूवे अज्झत्थिए चित्तिए पत्थिए कप्पिए मणो-
गए सकप्पे समुप्पज्जित्थासेय खल्ल मम विपुल पणियभंड-
सायाए अहिच्छत्त नगरिं वाणिज्जाए गमित्तए, एव संपेहेइ
सपेहित्ता गणिमच४ चउत्विह भड गेणहइ, सगडीसागड
सज्जेइ सज्जित्ता सगडीसागड भरेत्तिर कोडुवियपुरिसे
सदावेइ सदावित्ता एव वयासी-गच्छह णं तुव्वे देवाणु-
प्पिया । चंपाए नगरीए सिघाडग जाव पहेसु घोसणं
घोसेह ॥ सू० १ ॥

टीका—जम्बूस्वामी पृच्छति—यदि खल्ल भदन्त ! श्रमणेन भगवता महा
वीरेण यावत् सिद्धिगतिमानधेय स्थान सम्प्राप्तेन चतुर्दशस्य ज्ञाताध्ययनस्य अय
मर्थ = पूर्वोक्तो भावः प्रज्ञप्त' तर्हि पञ्चदशस्य ज्ञाताध्ययनस्य श्रमणेन भगवता महा

टीकार्थ—जम्बूस्वामी पूछते हैं कि (जइण भते । समणेण भगवया महा
वीरेण जाव सपत्ते ण चोदसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते पन्नर-
समस्स ण भते णायज्झयणस्स समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्ते
ण के अट्ठे पण्णत्ते) भदत ! यदि श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो
मोक्षप्राप्त कर चुके है चौदहवें ज्ञाताध्ययन का यह पूर्वोक्त रूप से अर्थ
प्रतिपादित किया है—तो हे भदत ! मुक्ति प्राप्त हुए उन्ही श्रमण भगवान

७७ पू स्वामी पूछे छे के—

((जइण भते ! समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण चोदसमस्स नाय-
ज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते पन्नरसमस्स ण भते णायज्झयणस्स समणेण भगवया
महावीरेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते)

हे भदत ! जो श्रमणु लगवान महावीरे—के जेओ मोक्ष प्राप्त करी चुक्या
छे—सोइभा ज्ञाताध्ययनने आ पूर्वोक्त रूपी अर्थ प्रतिपादित करी छे तो हे
भदत ! मुक्ति प्राप्त करेला ते श्रमणु लगवान महावीरे पदरमा ज्ञाताध्ययनने
शो अर्थ निरूपित करी छे

वीरेण यापत्मन्नाप्तेन कोऽयः प्रज्ञतः सुधर्मस्वामी ऋथयति-एवं खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये चम्पा नाम नगरासीत् । तत्र पूर्णभद्र चैत्य जितशत्रु राजा चाभवत् । तत्र खलु चम्पाया नगर्या वन्यो नाम सार्थवाह आसीत् । स कीदृश ? इत्याह-आढयो यापद् अपरिभूतः प्रभूतशक्तिशालीत्यर्थः । तस्या खलु चम्पाया नगर्या उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे अहिच्छत्रा नाम नगर्यासीत् । सा कीदृशी? - त्याह-'रिद्धत्थिमियममिद्धा' ऋद्धस्तिमितसमृद्धा, तत्र ऋद्धा=नमः स्पशिवहु- प्रासादयुक्ता, स्तिमिता = स्वपरचक्रभयरदिता, समृद्धा=धनधान्यादि परिपूर्णा, 'वण्णओ' वर्णः=नगर्या वर्णनपाठोऽत्राच्य, स तु औपपातिस्त्रादवसेयः । तत्र खलु अहिच्छत्रार्या नगर्या कनककेतुर्नाम राजाऽऽसीत् । 'महया वण्णओ'

महावीर ने पन्द्रहवें ज्ञानाध्ययन का क्या अर्थ निरूपित किया है । (एवं खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण सम्पण चपानाम नयरी होत्था) इस प्रकार जम्बू स्वामी के प्रश्न के समाधान निमित्त श्री सुधर्मा स्वामी उन से कहते हैं कि जम्बू ! सुनो-तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है- उस काल और उस समय में चंपा नाम की नगरी थी (पुन्रभदे चेद्दए जियसत्तू राया, तत्थ ण चपाए नयरीए धण्णे नामे सत्थवाहे होत्था अद्दे जाव अपरिभूए) पूर्णभद्र नाम का उसमें उद्यान था । जितशत्रु नामका राजा उसमें रहता था । उसी चंपा नगरी में धन्य नामका सार्थ-वाह भी रहता था । यह जन धन धान्यादि संपन्न था । एव लोकमान्य भी था । (तीसे ण चपाए नयरीए उत्तर पुरत्थिमे दिसीभाए अहिच्छत्ता नामं नयरी होत्था, रिद्धत्थिमिय समिद्धा वण्णओ-तत्थण अहिच्छत्ताए

(एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण सम्पण चपा नाम नयरी होत्था)

आ रीते ज्जु स्वामीना प्रश्नना समाधान भाटे श्री सुधर्मा स्वामी तेमने कडे छे के छे ज्जु ! साल्लो, तमार प्रश्नने ज्जुवाअ आ प्रभाणे छे के ते कणे अने ते समथे च पा नामे नगरी हुती

(पुन्रभदे चेद्दए जियसत्तू राया, तत्थ ण चपाए नयरीए धण्णे नामे सत्थवाहे होत्था अद्दे जाव अपरिभूए)

तेमा पूष् लद्र नामे उद्यान हुतु तेमा जितशत्रु नामे राजा रहते। हुते। धन्य नामे एक सार्थवाह पणु ते च पा नगरीमा ज रहते। हुते। ते जन्, धन, धान्य, वगेश्थी स पन्न हुते, तेमज लोक मान्य पणु हुते।

(तीसेण चपाए नयरीए उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए अहिच्छत्ता नाम नयरी होत्था, रिद्धत्थिमिय समिद्धा वण्णओ-तत्थण अहिच्छत्ताए नयरीए कणगकेड नामं राया होत्था महया वण्णओ)

मिहा०वर्णक =स च 'महयाहिमवतमहतमलयमदरमहिंदसारे' महाहिमवन्महामलयमन्दरमहेन्द्रसार, इत्यादिरूपोऽत्र विज्ञेयः। तस्य धन्यस्य सार्धत्राहस्य अन्यदा कदाचित् पूर्वरात्रापररात्रमालसमये=रात्रे पश्चिमे प्रदेशे अयमेतद्रूप आध्यात्मिक-श्रित्तितः प्रार्थितः कल्पितो मनोगतः सकल्पः=विचारः समुदपत्रत-श्रेयः=उचित खलु मम त्रिपुल=प्रचुर 'पणियभडं' प्रणितभाण्ड=गणिमादिक्रय त्रिक्रयवस्तुभाण्डम् 'आयाए' आदाय=गृहीत्वा अहिच्छत्रा नगरीं वाणिज्याय गन्तुम्, गणिमादि पण्यवस्तुजात गृहीत्वा व्यापारायाहिच्छत्रा नगर्यां मया गन्तव्यमिति भावः। एष 'सपेहेइ' सप्रेक्षते=विचारयति, सप्रेक्ष्य गणिम ४-गणिम धरिम मेय परिच्छेय चेत्येवरूप चत्तर्निध भाण्ड=पण्यवस्तुजात गृह्णाति, गृहीत्वा 'सगडीसागड' शक्री

नगरीए कणगकेऊ नाम राया होत्था, महया वन्नओ) उस चपा नगरी के ईशान कोण में अहिच्छत्रा नामकी नगरी थी। यह नभस्तलस्पर्शी प्रासादों से युक्त स्वचक्र और परचक्र के भयसे रहित तथा धन धान्य आदि विभव से विशेष समृद्ध थी। नगरी के वर्णन का पाठ औपपातिक सूत्र में जैसा नगरी का वर्णन किया गया है वैसा ही यहा जनना चाहिये। उस अहिच्छत्रा नगरी में कनककेतु नामका राजा रहना था। इस राजा के वर्णन में "महया हिमवतमहतमलयमदरमहिंदसारे" इत्यादिरूप पाठ यहा लगा लेना चाहिये। (तस्स धन्नस्स सत्थवाहस्स अन्नया कयाइ पुच्चरत्तावरत्तकालसमयसि इमेयारूवे अज्झत्थिए चित्थिए पत्थिए, कप्पिए, मणोगए सकप्पे समुप्पज्जित्था-सेय खलु मम विउल पणियभडमायाए अहिच्छत्त नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए, एव सपेहेइ, सपेहित्ता गणिमच ४ चउच्चिइ भडे गेणइइ, सगडी सागड सज्जेइ म

ते च पा नगरीना ईशान कोणमा अहिच्छत्रा नामे नगरी इती आकाशने स्पर्शता एवा उंथा प्रासादोथी आ नगरी युक्त इती तेमए स्वचक्र अने परचक्र ना लयथी रहित तथा धन धान्य वगेरे वैलवथी आ नगरी सविशेष समृद्ध इती औपपातिक सूत्रमा नगरीना विधे वेतु वलुंन करवामा आण्यु छे तेतुं न अर्डी पण्य वाणी लेतु लेधये ते अहिच्छत्रा नगरीमा कनककेतु नामे राजा रहनेो इती, आ राजाना वलुंन भाटे (महया हिमवत-महत-मलय-मदर-महिंदसारे) वगेरे पाठ अर्डी समजवेो लेधये

(तस्स धन्नस्स सत्थवाहस्स अन्नया कयाइ, पुच्चरत्तावरत्तकालसमयसि इमेयारूवे अज्झत्थिए चित्थिए, पत्थिए कप्पिए, मणोगए सकप्पे समुप्पज्जित्था-सेय खलु मम विउल पणियभडमायाए अहिच्छत्त नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए, एव सपेहेइ, सपेहित्ता गणिम च ४ चउच्चिइ भडे गेणइइ सगडीसा

शाकट=लघुमहच्छकटसमूह सज्जयति,=पगुणी करोति सज्जयित्वा शकटीशाकट भरेति, भृत्वा कौटुम्बिकपुरुरान् शब्दयति=आह्वयति, आह्वय परमादीत्-गच्छत खलु यूय हे देवानुप्रिया ! चम्पाया नगर्याः 'सिंघाडगजापहेसु' शृङ्गाटक-त्रिकचतुष्क चत्वरमहापथयेषु घोषणाम्=घोषयत ॥ सू० १ ॥

जित्ता सगडीसागड भरेइ भरित्ता कोडुवियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-गच्छहण तुव्मे देवाणुप्पिया । चपाण नयरीण सिंघाडग जाव पहेसु घोसण घोसेह) एरु दिन की घान है कि उस धन्यसार्थवाह को रात्रि के पश्चिम प्रहर में यह इस प्रकार का आध्मात्मिक चिन्तित, प्रार्थित कल्पित मनोगत सकल्प उत्पन्न हुआ कि मैं गणिमादि रूप विपुल पण्य वस्तु को लेकर व्यापार के लिये जो अहिच्छत्रा नगरी में जाऊँ तो बहुत अच्छी घान है । इस प्रकार उसने विचार क्रिया-ऐसा विचार करके उसने गणिम, धारिम, मेय और परिच्छेद्य रूप चार प्रकार का भाण्ड लिया । भाण्ड लेकर फिर उसने गाड़ी और गाड़ों को तैयार करवाया-जय वे गाड़ी गोड़े तैयार हो चुके तब उसने उम पण्य (विक्रय वस्तु) को उनमें भरा-भर कर फिर उसने अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया बुलाकर उसने ऐसा कहा-हे देवानुप्रियों ! तुम लोग जाओ-और चपा नगरी के शृगाटक, त्रिक, चतुष्क, चत्वर, महापथ इन सब मार्गों में घोषणा करो । क्या घोषणा करना-यह घान नीचे के सूत्र से सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं ॥ सू० १ ॥

सगडीसागड भरेइ, भरित्ता कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव वयासी गच्छहण तुव्मे देवाणुप्पिया । चपाण नयरीण सिंघाडग जाव पहेसु घोसणं घोसेह)

એક દિવસે તે ધન્ય સાર્થવાહને રાત્રિના છેલા પહોરમાં આ બાતને આધ્યાત્મિક, ચિંતિત, પ્રાર્થિત, કલ્પિત, મનોગત સકલ્પ ઉત્પન્ન થયો કે પુષ્કળ પ્રમાણમાં ગણિમ વગેરે વેચાણની વસ્તુઓ લઈને વેપાર ખેડવા માટે જોઈ અહિંચ્છત્રા નગરીમાં જાઉં તો બહુ સારું થાય આ રીતે તેણે વિચાર કર્યો આવો વિચાર કરીને તેણે ગણિમ, ધરિમ, મેય અને પરિચ્છેદ્ય રૂપ ચાર પ્રકારની વસ્તુઓ વાસણોમાં ભરી ચારે બાતની વસ્તુઓ વાસણોમાં ભરીને તેણે ગાડી તેમજ ગાડાઓને તૈયાર કરાવ્યા જ્યારે ગાડી અને ગાડાઓ તૈયાર થઈ ચૂક્યા ત્યારે તેણે તે વેચાણની વસ્તુઓને ગાડી અને ગાડાઓમાં મૂકી ત્યાર પછી તેણે પોતાના કૌટુમ્બિક પુરુષોને બોલાવ્યા અને બોલાવીને તેમને આ પ્રમાણે કહ્યું કે હે દેવાનુપ્રિયો ! તમે જાઓ, અને ચપા નગરીના શૃગાટક, ત્રિક, ચતુષ્ક, ચત્વર, મહાપથ આ બધા માર્ગોમાં ઘોષણા કરો ઘોષણા કરતા શું કહેવું તે નીચેના સૂત્ર વડે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે ॥ સૂત્ર " ૧ " ॥

घोषणास्वरूमाह- ' एव खलु ' इत्यादि ।

मूलम्-एव खलु देवाणुप्पिया । धण्णे सत्थवाहे विउलं पणिय मायाए इच्छइ अहिच्छत्त नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए त जो णं देवाणुप्पिया । चरणे वा चीरिए वा चम्मसण्डिए वा भिच्छुडे वा पडुरगे वा गोयमे गोव्वइए वा गिहिधम्म- चित्तए वा अविस्सुद्व विस्सुद्वुमावगरत्तपडनिग्गथप्पभिइपा- सडत्थे वा गिहत्थे वा धण्णेण सत्थवाहेण सद्धिं अहिच्छत्त नगरि गच्छइ तस्स णं धण्णे सत्थवाहे अच्छत्तगस्स छत्तगं दलाइ अणुवाहणस्स उवाहणाओ दलयइ अकुडियस्स कुडियं दलयइ अपत्थयणस्स पत्थयण दलयइ अपमखेवगस्स पमखेव दलयइ अंतराऽविय से पडियस्स वा भग्गलुग्गस्स साहेज्जं दलयइ सुहसुहेण य ण अहिगच्छत्त सपावेइ तिकट्टु दोच्चपि तच्चपि घोसेह घोसित्ता मम एयमाणत्तिय पच्चप्पिणह, तएणं ते कोडुविय पुरिसा जाव एव वयासी-हदिसुणंतु भवतो चपानगरीवत्थव्वा वहवे चरगा य जाव पच्चपिणत्ति ॥सू०२॥

टीका—एव खलु हे देवानुप्पियाः ! धन्यं सार्थवाहं निपुलान् पणितभाण्डान् 'आयाए' आदाय इच्छति अहिच्छत्त नगरी 'वाणिज्जाए' वाणिज्याय=

' एव खलु देवाणुप्पिया ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(एव खलु देवाणुप्पिया ! धण्णे सत्थवाहे विउल पणिय मायाए इच्छइ अहिच्छत्त नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए) हे देवाणुप्पियो !

एव खलु देवाणुप्पिया इत्यादि ।

(एव खलु देवाणुप्पिया ! धण्णे सत्थवाहे विउल पणिय मायाए इच्छइ अहिच्छत्त नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए)

हे देवानुप्पियो ! तमे लोकेश्वरगणेशे वगरे भार्गोमा आ नतनी घोषणा

व्यापाराय गन्तु तद्=तस्मात् य. खलु हे देवानुप्रिया ! कोऽपि धन्येन सार्थवाहेन सार्द्धमहिच्छत्रा नगरीं 'गच्छती' त्युत्तरेण सम्बन्धः, कोऽसौ, यस्तेन सार्द्धं गच्छेदित्याह—'चरण' इत्यादिना 'चरण वा' चरक = गृहस्थस्य गृहे निष्पन्नस्योदनादे योऽग्रभागो दानार्थं पृथक्कृत्य स्वाप्यते तस्य भिक्षावृत्त्याग्राहक, 'चीरिए वा' चीरिकमार्गपतितशटितधीवरपरिधारक, 'चम्मखडिए वा' चर्मखण्डिकः=चर्मधारक, 'भिच्छुडे वा' भिक्षोण्ड =अन्यानीतभिक्षान्नभोजी, 'पडुरगे वा' पाण्डुराङ्गः=भस्मलिप्तशरीरः, 'गोयमे वा' गौतमः=वृषभमधिकृत्य कणभिक्षाग्राही, 'गोव्वडए वा' गोव्रतिकः=गोचर्यानुकारी यथा यथा गौ' स्वानासनादिक्रिया करोति तथा तथा सोऽपि करोतीति भाव, 'गिहिधम्मचितए वा' गृहिधर्मचिन्तकः=गृहिणो=गृहस्थस्य धर्मो गृहिधर्मस्त चिन्तयतीति तथा, 'गृहस्थधर्मएवश्रेयान् नान्यः' उक्तञ्च—

तुम लोग श्रृगाटक आदि मार्गों में खड़े होकर इस प्रकार की घोषणा करना—कि धन्य सार्थवाह विपुल मात्रा में पणित (विक्रय वस्तु) को लेकर अहिच्छत्रा नगरी में व्यापार के लिये जाना चाहता है (त जो ण देवाणुप्पिया ! चरण वा चीरिए वा चम्मखडिए वा भिच्छुडे वा पडुरगे वा गोयमे गोव्वडए वा गिहिधम्मचितए वा अविरुद्धविरुद्ध बुद्ध सावगरत्तपडनिग्गयप्पभिडपासउत्थे वा गिहत्ये वा धण्णेण सत्थवाहेण सद्धि अहिच्छत्त नयरिं गच्छइ तस्म ण धण्णे सत्थवाहे अच्छत्तगस्स छत्तग दलाइ) इसलिये हे देवाणुप्रियो ! जो भी कोई धन्य सार्थवाह के साथ अहिच्छत्रा नगरी जाना चाहता हो—चाहे वह चरक हो चीरिक हो, चर्मखडिारी हो, भिक्षोण्ड हो, पाण्डुराङ्ग हो, गौतम हो, गोव्रतिक हो, गृहस्थधर्म चिन्तक हो, अविरुद्ध हो, विरुद्ध हो, वृद्ध-

करी के धन्य सार्थवाह पुंशर प्रमाणमा पणित (देवाणुनी वन्तुओ) धर्मे अहिच्छत्रा नामे नगरीमा वेपार ओउवा भाटे ज्वा धिच्छे ठे

(त जो ण देवाणुप्पिया ! चरण वा चीरिए वा चम्मखडिए वा भिच्छुडे वा पडुरगे वा गोव्वडए वा गिहिधम्मचितए वा अविरुद्धविरुद्धबुद्धसावगरत्तपडनिग्गयप्पभिड पासउत्थे वा गिहत्ये वा धण्णेण सत्थवाहेण सद्धि अहिच्छत्त नयरिं गच्छइ तस्म ण ण्णेण सत्थवाहे अच्छत्तगस्स छत्तग दलाइ)

ओउवा भाटे ठे देवानुप्रियो ! धन्य सार्थवाहनी साथे जे केहि ज्वा धिच्छेता होय—सके ते चरक होय, चीरिउ होय, चर्म खड धारी होय, भिक्षोउ होय, पाण्डुरग होय, गौतम होय, गोव्रतिक होय, गृहस्थ धर्म चिन्तक होय,

घोषणास्वरूपाह—' एव खलु ' इत्यादि ।

मूलम्—एव खलु देवाणुप्पिया । धणणे सत्थवाहे विउलं पणियं मायाए इच्छइ अहिच्छत्त नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए त जो णं देवाणुप्पिया । चरण वा चीरिए वा चम्मसडिए वा भिच्छुडे वा पंडुरंगे वा गोयमे गोव्वइए वा गिहिधम्म-चित्तए वा अवरुद्ध विरुद्धवुद्धुमावगरत्तपडनिग्गयप्पभिइपा-संडत्थे वा गिहत्थे वा धणणेण सत्थवाहेण सुद्धिं अहिच्छत्त नगरि गच्छइ तस्स णं धणणे सत्थवाहे अच्छत्तगस्स छत्तगं दलाइ अणुवाहणस्स उवाहणाओ दलयइ अकुडियस्स कुडिय दलयइ अपत्थयणस्स पत्थयण दलयइ अपत्थेवगस्स पत्थेव दलयइ अतराऽविय से पडियस्स वा भग्गलुग्गस्स साहेज्जं दलयइ सुहसुहेण य ण अहिगच्छत्त सपावेइ तिक्कट्टु दोच्चपि तच्चपि घोसेह घोसित्ता मम एयमाणत्तिय पच्चप्पिणह, तएण ते कोडुविय पुरिसा जाव एव वयासी-हदिसुणत्तु भवतो चंपानगरीवत्थत्वा वहवे चरगा य जाव पच्चपिणत्ति ॥सू०२॥

टीका—एव खलु हे देवानुप्पियाः ! धन्यं सार्थं राह विपुलान् पणित्तभाण्डान् 'आयाए' आदाय इच्छति अहिच्छत्ता नगरी 'वाणिज्जाए' वाणिज्याय=

' एव खलु देवाणुप्पिया ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(एव खलु देवाणुप्पिया ! धणणे सत्थवाहे विउल पणियं मायाए इच्छइ अहिच्छत्त नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए) हे देवाणुप्पियो !

एव खलु देवाणुप्पिया इत्यादि ।

(एव खलु देवाणुप्पिया ! धणणे सत्थवाहे विउल पणियं मायाए, इच्छइ अहिच्छत्त नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए)

हे देवानुप्पियो ! तमे लोकं शृगाटक वगेरे भार्गोमा आ नतनी घोषणा

व्यापाराय गन्तु तत्=तस्मात् यः खलु हे देवानुप्रिया ! कोऽपि धन्येन सार्थवाहेन सार्द्धमहिच्छत्रा नगरीं 'गच्छती' त्युत्तरेण सम्बन्धः, कोऽसौ, यस्तेन सार्द्धं गच्छेदित्याह—'चरण' इत्यादिना 'चरण वा' चरक = गृहस्थस्य गृहे निष्पन्नस्यौदनादे योऽग्रभागो दानार्थं पृथक्कृत्य स्यात्तते तरय भिक्षाष्टत्याग्राहक, 'चीरिए वा' चीरिरुमार्गपतितशदितचीरपरिचारक, 'चम्मखडिए वा' चर्मखण्डिकः=चर्मधारक, 'भिच्छुडे वा' भिक्षोण्ड = अन्यानीतभिक्षान्नभोजी, 'पडुरगे वा' पाण्डुराङ्गः=भस्मलिप्तशरीरः, 'गोयमे वा' गौतमः=वृषभमधिकृत्य कणभिक्षाग्राही, 'गोव्वइए वा' गोव्रतिकः=गोचर्यानुकामी यथा यथा गौः स्थानासनादिक्रियां करोति तथा तथा सोऽपि करोतीति भाव, 'गिहिधम्मचितए वा' गृहिधर्मचिन्तकः=गृहिणो=गृहस्थस्य धर्मो गृहिधर्मस्त चिन्तयतीति तथा, 'गृहस्थधर्मएव-थेयान् नान्यः' उक्तञ्च—

तुम लोग श्रृगाटक आदि मार्गों में खड़े होकर इस प्रकार की घोषणा करना—कि धन्य सार्थवाह विपुल मात्रा में पणित (विक्रय वस्तु) को लेकर अहिच्छत्रा नगरी में व्यापार के लिये जाना चाहता है (त जो ण देवाणुप्पिया ! चरण वा चीरिए वा चम्मखडिए वा भिच्छुडे वा पडुरगे वा गोयमे गोव्वइए वा गिहिधम्मचितए वा अविरुद्धविरुद्ध बुद्धु सावगरत्तपडनिग्गथप्पभिडपासउत्थे वा गिहत्थे वा षण्णेण सत्थवाहेण सार्द्धं अहिच्छत्त नयरिं गच्छइ तस्म ण धण्णे सत्थवाहे अच्छत्तगस्स छत्तग दलाइ) इसलिये हे देवानुप्रियो ! जो भी कोई धन्य सार्थवाह के साथ अहिच्छत्रा नगरी जाना चाहता हो—चाहे वह चरक हो चीरिक हो, चर्मखडधारी हो, भिक्षोण्ड हो, पाण्डुरङ्ग हो, गौतम हो, गोव्रतिक हो, गृहस्थधर्म चिन्तक हो, अविरुद्ध हो, विरुद्ध हो, वृद्ध-

इसे के धन्य सार्थवाह पुण्डर प्रमाणमा पणित (देवाणुनी वन्तुओ) लधने अहिच्छत्रा नामे नगरीमा वेपार भेउवा भाटे ळवा धम्मि छे (त जो ण देवाणुप्पिया ! चरण वा चीरिए वा चम्मखडिए वा भिच्छुडे वा पडुरगे वा गोव्वइए वा गिहिधम्मचितए वा अविरुद्धविरुद्धबुद्धुसावगरत्तपडनिग्गथप्पभिड पासउत्थे वा गिहत्थे वा षण्णेण सत्थवाहेण सार्द्धं अहिच्छत्त नयरिं गच्छइ तस्म ण षण्णे सत्थवाहे अच्छत्तगस्स नत्तग दलाइ)
 भेउवा भाटे छे देवानुप्रियो ! धन्य सार्थवाहनी साथे ने केधं ळवा धम्मि छेते होय—लहे ते चरक होय, चीरिक होय, चर्म खडधारी होय, भिक्षाड होय, पाण्डुरग होय, गौतम छे य, गोव्रतिक होय, गृहस्थ धर्म चिन्तक होय,

घोषणास्वरूमाह—' एव खलु ' इत्यादि ।

मूलम्—एव खलु देवाणुप्पिया । धण्णे सत्थवाहे विउलं
पणिय मायाए इच्छइ अहिच्छत्तं नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए
त जो णं देवाणुप्पिया । चरए वा चीरिए वा चम्मखंडिए
वा भिच्छुडे वा पडुरगे वा गोयमे गोव्वइए वा गिहिधम्म-
चित्तए वा अविरुद्ध विरुद्धबुद्धसावगरत्तपडनिग्गथप्पभिइपा-
सडत्थे वा गिहत्थे वा धण्णेणं सत्थवाहेण सडिं अहिच्छत्त
नगरि गच्छइ तस्स णं धण्णे सत्थवाहे अच्चत्तगस्स छत्तं
दलाइ अणुवाहणस्स उवाहणाओ दलयइ अकुडियस्स कुडिय
दलयइ अपत्थयणस्स पत्थयण दलयइ अपक्खेवगस्स पक्खेव
दलयइ अंतराऽविय से पडियस्स वा भग्गल्लुग्गस्स साहेज्जं
दलयइ सुहंसुहेण य णं अहिगच्छत्त सपावेइ तिक्कट्टु दोच्चपि
त्तच्चपि घोसेह घोसित्ता मम एयमाणत्तिय पच्चप्पिणह,
तएणं ते कोडुविय पुरिसा जाव एव वयासी-हदिसुणत्तु भवतो
चंपानगरीवत्थव्वा वहवे चरगा य जाव पच्चपिणत्ति ॥सू०२॥

टीका—एव खलु हे देवानुप्पियाः । धन्य' सार्थवाह त्रिपुलान् पणितभाण्डान्
'आयाए' आदाय इच्छति अहिच्छन्ना नगरी 'वाणिज्जाए' वाणिज्याय=

' एव खलु देवाणुप्पिया ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(एव खलु देवाणुप्पिया ! धण्णे सत्थवाहे विउल पणिय
मायाए इच्छइ अहिच्छत्तं नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए) हे देवाणुप्पियो !

एव खलु देवाणुप्पिया इत्यादि ।

(एव खलु देवाणुप्पिया ! धण्णे सत्थवाहे विउल पणिय मायाए इच्छइ
अहिच्छत्तं नयरिं वाणिज्जाए गमित्तए)

हे देवानुप्पियो ! तमे लोके श्रृगाटक वगेरे भार्गोमा आ आतनी घोषणा

अथवा ' भग्लुगस्त ' भग्नरुग्णाय भग्नाय = त्रुटितहस्तपादाद्यत्रयवायु
 र्गणाय = रोगाक्रान्ताय रोगग्रस्ताय वा ' साहेज्ज ' साहाय्यम् = औषधो-
 पचारादि करणरूप ददाति, तथा - सुख - सुखेन = सुखपूर्वक च तम्
 अहिच्छत्रा नगरीं ' सपावेड ' संप्रापयति=संप्रापयिष्यतीत्यर्थः । ' तिरट्टु ' इति
 कृत्वा एतमुच्चार्य द्वितीयमपि तृतीयमपि त्रार घोषयत, घोषयित्वा मम ' एय
 माणत्तिये ' एतामाज्ञप्तिकाम्=एतद्रूपा ममाज्ञा ' पच्चप्पिणह ' प्रत्यर्पयत=मदुक्ता
 घोषणा कृत्वा पुनर्मह निवेदयतेत्यर्थः । ततः खलु ते कौडुम्बिकपुरीपाः ' तथाऽस्तु-

सुहसुहेण अहिच्छत्त सपावेड, त्ति कट्टु दोच्चपि तच्चपि घोसेह) पद
 घ्राण (जूना) रहित है तो जूना (पदघ्राण) देगा जलपात्ररहित होगा उसे
 जलपात्र देगा, कलेवा (भोजन) रहित है तो कलेवा (भोजन) देगा, शम्भ
 लपायेय पूरक द्रव्यसे रहित है तो उसे शम्भल पायेय-भाता पूरक द्रव्य
 देगा, अर्थात् चलतेर ग्रीच मार्गमे ही जिसका कलेवा (भोजन) समाप्त हो
 जावेगा उसे उसके योग्य द्रव्यप्रदान करेगा, मार्गके मध्यमें चलतेर यदि
 वह घोड़ेसे गिर गया होगा, अथवा पैदल चलतेर यदि वह पैर फिसल
 कर गिर गया होगा और इस तरह से उसके हाथ पैर आदि टूट गये
 होंगे तो उसकी सार सभाल करेगा-रोगी की दवाई करेगा, और घड़े
 आनन्द के साथ उसे अहिच्छत्रा नगरीमें पहुँचा देगा । इस प्रकार की
 इस घोषणा को तुम लोग दो तीन बार करना । और (घोसित्ता मम
 एयमाणत्तिय पच्चप्पिणह) करके फिर हमे पीछे इसकी खबर देना
 (तएण ते कौडुम्बियपुरिसा जाव एव वयासी हदि सुणतु भवतो चपा

भग्लुगस्त साहेज्ज दलयइ, सुह सुहेणं अहिच्छत्त सपावेड, त्ति कट्टु दोच्चपि
 तच्चपि घोसेह)

लेडा वगरनेा हुशे तेने लेडा आपशे, जभवानी सगवड हुशे नडि तेने
 जभवानी सगवड करी आपशे श भन-पाथेय-पूरड द्रव्य वगरनेा हुशे तेने
 श भल-पाथेय-पूरड द्रव्य आपशे ओटले के मार्गभा अधवन्थे लातु पलास
 थर्ध गयु हुशे तेने योग्य धन आपशे मार्गभा अधवन्थे आलता आलता
 ने ते घोडा छपरवी पडी जशे अथवा पगे आलता आलता ने ते पग लपभवार्थी
 पडी जशे अने तेथी तेना हाथ पग वगेरे लागी गया हुशे तो तेनी ते
 सुश्रूपा करशे-रोगनी हवा करशे अने सुणेरी तेने अहिच्छत्रा नगरीमा पडोआ-
 हुशे आ शीते तमे मे त्रयु वभत घोषणा करे अने (घोसित्ता मम एयमाण
 त्तिय पच्चप्पिणह) घोषणा करीने अने अमर आपे।

(तएण ते कौडुम्बियपुरिसा जाव एव वयासी हदि सुणतु भवतो चपानयरी

“गृहाधमसमो धर्मो, - न भूतो न भविष्यति ।

पालयति नराः शराः, क्षीरा पापण्डमाश्रिताः ॥ १ ॥”

इत्यभिसन्धाय तथा गिन्तनशीलः, ‘अग्निन्द्रिक्द्रुद्धुमागरक्तपटनिर्गम्य-
पभिऽपासडत्वे वा’ अत्रिक्द्रिक्द्रुद्धुमागरक्तपटनिर्गम्यप्रभृतिपापण्डस्यः तत्र-
‘अत्रिक्द्र’ अत्रिक्द्र’ त्रिक्द्र’ इत्यादयीत्यत्रिक्द्र = त्रिनयरादौ क्रीयादादीत्यर्थः,
परलोकाभ्युपगमात्, ‘त्रिक्द्र’ त्रिक्द्र. त्रिक्द्र = त्रिक्द्रादौऽस्यास्तीति-अर्थ
आदिवाद्च, त्रिक्द्रवादी आक्रियावादीत्यर्थः परलोमानभ्युपगमात्, ‘युद्धुमावग’
वृद्धश्रावकः=ब्राह्मण’, वृद्धः=वृद्धकालिको यः श्रावक. सः, भरतादिशले पूर्व
श्रावकसत्त्वेन पश्चाद् ब्राह्मणत्वभावात्, ‘रक्तपट’ रक्तपट= त्रिक्द्रस्यधारीपरि
वाजक’, ‘निर्गम्यपभिऽ’ निर्गम्यप्रभृति’ = सायुमभृतिरन्यः कोऽपिकपिलादि
पापण्डस्थो वा गृहस्थो वा, इति यदि एषु यः कोऽपि गन्त्रेत् तस्मै खलु धन्यः
सार्थवाह अच्छत्रकाय=छत्ररहिताय छत्रक ददानि=शस्यतीति भावः, एव सर्वत्र
चिन्नेयम् ‘अणुवाहणस्स’ अनुपानहे=पादत्राणरहिताय ‘उवाहणाओ’ उपानहौ
ददाति, अकुण्डिकाय=जलपात्ररहिताय कुण्डिका=जलपात्र ददाति । ‘अपत्यय
णस्स’ अपत्ययदनाय शम्भलरहिताय ‘पत्ययण’ पत्ययदन = शम्भल ददाति ।
‘अपक्खेवगस्स’ अपक्खेपकाय, प्रक्षेपकः = पूर्तिद्रव्य, तद्रहिताय मध्यमार्गे न्यून
शम्भलाय प्रक्षेपक=शम्भलपूरक द्रव्य ददाति । ‘अतराणिय’ अन्तराऽपि च=
मार्गान्तरालेऽपि च ‘से’ तस्मै पतिताय = वाहनाद् पादादिस्खलनेन वा, वा=

श्रावक हो, गैरिकवस्त्रधारी परिव्राजक हो, निर्गम्य हो, पाखडी हो,
चाहे गृहस्थ हो कोई भी क्यों न हो, उसके लिये धन्य सार्थवाह यदि
वह छत्ररहित है तो छत्र देगा (अणुवाहणस्स उवाहणाओ दलयइ अ
कुण्डियस्स कुण्डिय दलयइ अपत्ययणस्स पत्ययण दलयइ अपक्खेवगस्स
पक्खेव दलयइ अतराऽविय से पडियस्स वा भगल्लुग्गस्स साहेज्जं दलयइ,

अत्रिक्द्र डोय, त्रिक्द्र डोय, वृद्ध श्रावक डोय, गैरिक वस्त्र धारी परिव्राजक डोय,
निर्गम्य डोय, पाखडी डोय अने गृहस्थ डोय कोई पणु केम न डोय तेना
भाटे ले ते छत्र वगरने। डोय तेवाने धन्य सार्थवाह छत्र आये।

(अणुवाहणस्स उवाहणाओ दलयइ, अकुण्डियस्स कुण्डिय दलयइ अपत्ययणस्स
पत्ययण दलयइ अपक्खेवगस्स पक्खेव दलयइ अतराऽविय से वा

अथवा ' भगलुगस्म ' भग्नरुग्णाय भग्नाय = त्रुटितहस्तपादाद्यत्रयत्राय
 रुग्णाय = रोगाक्रान्ताय रोगप्रस्ताय वा ' साहेज्ज ' साहाय्यम् = औषधो-
 पचारादि करणरूप ददाति, तथा - सुख - सुखेन = सुखपूर्वक च तम्
 अहिच्छत्रा नगरीं ' सपावेड ' समापयति = समापयिष्यतीत्यर्थः । ' तिमट्टु ' इति
 कृत्वा एवमुच्चार्य द्वितीयमपि तृतीयमपि चार घोषयत, घोषयित्वा मम ' एय
 माणत्तिये ' एतामाज्ञप्तिकाम् = एतद्रूपा ममाज्ञा ' पच्चप्पिणह ' प्रत्यर्पयत = मट्टुक्ता
 घोषणा कृत्वा पुनर्मह्य निवेदयतेत्यर्थः । तत' खलु ते कौटुम्बिकरुपुरुषाः ' तथाऽस्तु-
 सुहसुहेण अहिच्छत्त सपावेड, त्ति रुट्टु दोच्चपि तच्चपि घोसेह) पद-
 घ्राण (जूता) रहित है तो जूना (पदघ्राण) देगा जलपात्ररहित होगा उसे
 जलपात्र देगा, कलेवा (भोजन) रहित है तो कलेवा (भोजन) देगा, शम्भ
 लपाथेय पूरक द्रव्यसे रहित है तो उसे शम्भल पाथेय-भाता पूरक द्रव्य
 देगा, अर्थात् चलतेर गीच मार्गमें ही जिसका कलेवा (भोजन) समाप्त हो
 जावेगा उसे उसके योग्य द्रव्यप्रदान करेगा, मार्गके मध्यमें चलतेर यदि
 वह घोड़ेसे गिर गया होगा, अथवा पैदल चलतेर यदि वह पैर फिसल
 कर गिर गया होगा और इस तरह से उनके हाथ पैर आदि टूट गये
 होंगे तो उसकी सार समाल करेगा-रोगी की दवाई करेगा, और बड़े
 आनन्द के साथ उसे अहिच्छत्रा नगरीमें पहुँचा देगा । इस प्रकार की
 इस घोषणा को तुम लोग दो तीन बार करना । और (घोसित्ता मम
 एयमाणत्तिय पच्चप्पिणह) करके फिर हमे पीछे इसकी खबर देना
 (तएण ते कौटुम्बियपुरिसा जाव एव वयामी हदि सुणतु भवतो चपा

भगलुगस्स साहेज्ज दलयइ, सुह सुहेण अहिच्छत्त सपावेड, त्ति रुट्टु दोच्चपि
 तच्चपि घोसेह)

जेडा वगरने हुशे तेने जेडा आपशे, जभवानी सगवड हुशे नडि तेने
 जभवानी सगवड करी आपशे शभल-पाथेय-पूरक द्रव्य वगरने हुशे तेने
 शभल-पाथेय-पूरक द्रव्य आपशे जेटले के मार्गमा अधवञ्चे लातु भलास
 थर्ध गयु हुशे तेने योग्य धन आपशे मार्गमा अधवञ्चे आलता आलता
 जे ते घोडा छपरयी पडी जशे अथवा पगे आलता आलता जे ते पग लपमवाथी
 पडी जशे अने तेथी तेना हाथ पगे वगेरे लागी गया हुशे तो तेनी ते
 सुश्रूषा करशे-रोगनी हवा करशे अने सुजेरी तेने अहिच्छत्रा नगरीमा पडोया-
 हुशे आ रीते तमे जे त्रय वपत घोषणा करी अने (घोसित्ता मम एयमाण
 त्तिय पच्चप्पिणह) घोषणा करीने अभने भभर आपो ।

(तएण ते कौटुम्बियपुरिसा जाव एव वयामी हदि सुणतु भवतो चपानयरी

इत्युक्त्वा चम्पानगर्यां शृङ्गाटकादिमहापथपथेषु समागम्य-ग्न्यमनादिषुः- 'हृदि'
 इत्यामन्त्रणे तेन हे लोकाः ' शृण्वन्तु-मन्तः-यत् चम्पानगरी यास्वव्या, बहवः
 ' चरगाय जाव. ' इति-चरकचीरिकादयो धन्येन सार्थवाहन सार्द्धमहिच्छत्रा नगरीं
 गच्छन्ति तेभ्यो धन्यः सार्थवाहश्छत्रादिकं सर्वं, दास्यति, मार्गं च स्वलितेभ्यो
 रोगादिग्रस्तेभ्यश्च औषधोपचारादिना साहाय्यं करिष्यति, सुरतपूर्वकमहिच्छत्रा
 नगरीं प्रापयिष्यति च, इत्यव-घोषयित्वा धन्यसार्थवाहाय ' पञ्चषिणति '
 प्रत्यर्पयति-निवेदयन्ति ॥ सू० २ ॥

नगरीवत्थव्या वहवे चरगा य जाव पञ्चषिणति) इस प्रकार धन्यसा-
 र्थवाह की बात को उन कौटुम्बिक पुरुषों ने "तयास्तु" कहकर स्वीकर
 लिया और चम्पानगरी में शृङ्गाटक आदि महापथ पर्यन्तके समस्त मार्गों
 में जाकर इस प्रकार की घोषणा की, हे लोको ! सुनो-जो कोई चम्पा
 नगरी का निवासी चरक आदि जन धन्य सार्थवाह के साथ अहिच्छत्रा
 नगरी को जाना चाहता हो उसके लिये धन्यसार्थवाह छत्रादि सब
 देगा तथा जो मार्ग में पतित हो जायेंगे अथवा रोगाक्रान्त बन जायेंगे
 उनकी औषधि आदि द्वारा सहायता भी करेगा और इस तरह वह
 उनके लिये सकुशल अहिच्छत्रा नगरी में पहुँचा देगा-इस प्रकार
 की घोषणा करके उन लोगों ने इसकी खबर धन्य सार्थवाह के पास
 भेज दी। गृहस्थ के घर निष्पन्न हुए औदनादिक खाद्य वस्तुओं का जो
 सर्व प्रथम हिस्सा दानके लिये पृथक् कर रख लिया जाता है, उस

वत्थव्या वहवे चरगा य जाव पञ्चषिणति)

आ रीते धन्य सार्थवाहनी आज्ञाने ते कौटुम्बिक पुरुषोऽप्ये स्वीकारी
 लीधी अने यथा नगरीना शृङ्गाटक वगेरे महापथेमा जधने आ रीते तेऽप्ये
 घोषणा करी के डे डोके ! सामगो, यथा नगरीमा रडेनार चरक, वगेरे गमे
 ते भाषुस धन्य सार्थवाहनी साथे अहिच्छत्रा नगरीमा ज तेने धन्य
 सार्थवाह छत्र वगेरे अधु आपथे, तेमज मार्गमा कोर्ध पडी जथे अथवा
 तो माहो, थर्ध जथे तो धन्य साथवाहनी तेनी भरोभर भावजत करावीने तेनी
 सहाय, करथे अने तेने सकुशल अहिच्छत्रा नगरीमा पडेयाडथे आ-रीते
 घोषणा करीने ते डोकेअ धन्य सार्थवाहने घोषणुत काम पुइ थर्ध जवानी
 भण्णर आपी गृहस्थने घेर तैयार करायेवा सात वगेरे भाघ वस्तुओनेा जे
 सो पडेला दान माटे जूहो करीने' राणवामा आवे छे ते लागने जे लीण
 आगीने स्रर्ध, जाय छे तेने अरिक् कडे छे, मार्गमा पडेला क्षटेला प्त्रो, जे

हिंसे को जो भिक्षा वृत्ति से ले जाते हैं उनका नाम चरिक है। मार्ग में गिरे हुए फटेचिटे वस्त्र को लेकर जो पहिनते हैं उनका नाम चीरिका है। चमड़े को जो अपने पहिरने के उपयोग में लाते हैं वे धर्म खडिक है। दूसरे के द्वारा लायी गई भिक्षा से जो अपना निर्वाह करते हैं वे भिक्षोण्ड हैं। अपने शरीर पर जो भस्म लपेटे रहते हैं वे पांडुरग हैं। बैल को लेकर जो दूसरों के घरों से अनाज मांगते हैं वे गौतम हैं। दिलीप राजा की तरह जो गायकी सेवा करने में लगे रहते हैं—जब वह बैठती है तब वे बैठते हैं—वह खड़ी होती है तो वे भी खड़े हो जाते हैं इत्यादि रूप से गोचर्यानुकारी जो जन होते हैं वे गोव्रतिक हैं। गृहस्थ धर्म ही श्रेष्ठ है, इस प्रकार मान कर जो उसमें रह रहते हैं वे गृहधर्म चिन्तक है। जैसे—गृहस्थाश्रम के समान धर्म न हुआ है और न आगे होगा ही। जो शूरवीर मनुष्य होते हैं वे ही इसे पालते हैं। पापकर्म को पालने वाले मनुष्य शूरवीर नहीं हैं किन्तु वे तो क्लीन-नपुंसक हैं। ऐसी इनकी मान्यता होती है। अविरोद्ध शब्द का अर्थ विरोद्ध नहीं रहते हैं सबका समानरूप से विनय करते हैं। विरोद्ध शब्द का अर्थ अक्रियावादी है। ये अक्रियावादी पर-

पड़े छे तेनु नाम थीरिछे छे आभडाने जे वस्त्र तरीडे पड़ेरवामा काममा वे छे ते यर्म अडित छे भीनयो वडे लाववामा आवेदी लिक्षायी जे पोतानु उदर पोषणु करे छे ते लिङ्गाड छे पोताना शरीर उपर जे राष योणे छे ते पाडुरग छे षण्डने साथे लधने जेयो भीनयोना धरोधी अनाना भागे छे तेयो गौतम कडेवाय छे राजा दिलीपनी जेम जेयो गायनी सेवा करवामा व्यस्त रहे छे—न्यारे गाय जेसे छे त्यारे तेयो जेसे छे, न्यारे गाय लीषी थाय छे त्यारे तेयो पणु लिला थरु नय छे वगेरे रुपमा जेयो गोथ- योनुकारी जन डोय छे तेयो गोव्रतिक कडेवाय छे गृहस्थ धर्म अ भरेभर उत्तम धर्म छे आम योक्कम पणु भानीने तेमा दत्त यित्त रहे छे तेयो गृहधर्म- सित्तक छे जेमके—गृहस्थाश्रम जेयो धर्म थयो नथी अने आगज लविष्यमा थवानी सलावना पणु नथी जेयो शूरवीर भाणुसे डोय छे तेयो न आ धर्मनु पालन करे छे पाण्डु धर्मने पालन करनारा भाणुमे शूरवीरो नथी पणु तेयो तो नपुंसक छे गृहस्थीयोनी आ लतनी मान्यता डोय छे अविरोद्ध शब्दने अर्थ अक्रियावादी छे जेम के जेयो जेठ पणु भाणुसथी विरोद्ध आथरणु करता नथी तेयो अधानी साथे सरणी रीते विनयपूणु व्यवहार करे छे- विरोद्ध शब्दने अर्थ अक्रियावादी छे अक्रियावादी लोकप्रसिद्ध जेवी वस्तुमा-

इत्युक्त्वा चम्पानगर्यां शृङ्गाटकादिमहापथपथेषु समागम्य-एतमवादिषुः- 'हृदि'
 इत्यामन्त्रणे तेन हे लोकाः । शृण्वन्तु-भगवन्त'-यत् चम्पानगरीं वास्तव्या, चरवः
 'चरगाय जाय' इति-चरकचीरिकादयो धन्येन सार्थवाहेन सार्द्धमहिच्छत्रां नगरीं
 गच्छन्ति तेभ्यो धन्यः सार्थवाहश्छत्रादिकं सर्वं दाम्यति, मार्गं च स्तलितेभ्यो
 रोगादिग्रंस्तेभ्यश्च औषधोपचारादिना माहागम्यं परिष्यति, सुखपूर्वकमहिच्छत्रां
 नगरीं प्रापयिष्यति च, इत्येव घोषयित्वा धन्यसार्थवाहाय 'पञ्चपिणति'
 प्रत्यर्पयति-निवेदयन्ति ॥ सू० २ ॥

नगरीवत्थव्या वहवे चरगा य जाव पञ्चपिणति) इम प्रकार धन्यसा-
 र्थवाह की'वात को उन कौटुम्बिक पुत्रों ने "तथास्तु" कहकर स्वीकर
 लिया और चम्पानगरी में शृङ्गाटक आदि महापथ पर्यंतके समस्त मार्गों
 में जाकर इस प्रकार की घोषणा की, हे लोको ! सुनो-जो कोई चम्पा
 नगरी का निवासी चरक आदि जन धन्य सार्थवाह के साथ अहिच्छत्रा
 नगरी को जाना चाहता हो उसके लिये धन्यसार्थवाह छत्रादि सब
 देगा तथा जो मार्ग में पतित हो जावेंगे अथवा रोगाक्रान्त बन जावेंगे
 उनकी औषधि आदि द्वारा सहायता भी करेगा और इस तरह वह
 उनके लिये सकुशल अहिच्छत्रा नगरी में पहुँचा देगा-इस प्रकार
 की' घोषणा करके उन लोगों ने इसकी खबर धन्य सार्थवाह के पास
 भेज दी। गृहस्थ के घर निष्पन्न हुए औदनादिक खाद्य वस्तुओं का जो
 सर्व प्रथम हिस्सा दानके लिये पृथक् कर रख लिया जाता है, उस

वत्थव्या वहवे चरगा य जाव पञ्चपिणति)

आ रीते धन्य सार्थवाहनी आगाने ते कौटुम्बिक पुरुषोऽप्ये स्वीकारो
 लीधी अने यथा नगरीना शृङ्गाटक वगेरे भङ्गापथोभा लधने आ रीते तेभ्योऽप्ये
 घोषणा करी के डे लोके । सामगो, यथा नगरीमा रडेनार चरक, वगेरे गभे
 ते भाषुस धन्य सार्थवाहनी साथे अहिच्छत्रा नगरीमा ल तेने धन्य
 सार्थवाह छत्र वगेरे अधु आपसे, तेमल मार्गमा डेध पडी लसे अथवा
 तो माहो थध लसे तो धन्य साथवाहनी तेनी अरौपर भावजत करावीने तेनी
 सहाय करसे अने तेने सकुशल अहिच्छत्रा नगरीमा पहुँचाइसे आ-रीते,
 घोषणा करीने ते लोकेऽप्ये धन्य सार्थवाहने घोषणु काम पुरे थध लवानी
 अथर आपी गृहस्थने घेर तैयार करायेला बात वगेरे भाध वस्तुआने ल
 ली पहुँला दान माटे लूहो करीने राषवामा आवे छे ते आगने ल लीध
 आगीने लध, लय छे तेने अरिक् कडे छे मार्गमा पहुँला इटैला वओ, ल

हिंसे को जो भिक्षा वृत्ति से ले जाते हैं उनका नाम चरिक है। मार्ग में गिरे हुए फटेचिटे वस्त्र को लेकर जो पहिनते हैं उनका नाम-
 चीरिक है। चमड़े को जो अपने पहिरने के उपयोग में लाते हैं वे
 धर्म खडिक है। दूसरे के द्वारा लायी गई भिक्षा से जो अपना निर्वाह
 करते हैं वे भिक्षोण्ड हैं। अपने शरीर पर जो भस्म लपेटे रहते हैं वे
 पांडुरग हैं। बैल को लेकर जो दूसरों के घरों से अनाज मांगते हैं वे
 गौतम हैं। दिलीप राजा की तरह जो गायत्री सेवा करने में लगे रहते-
 हैं—जब वह बैठती है तब वे बैठते हैं—वह खड़ी होती है तो वे भी खड़े
 हो जाते हैं इत्यादि रूप से गोचर्यानुकारी जो जन होते हैं वे गोव्रतिक
 हैं। गृहस्थ धर्म ही श्रेष्ठ है, इस प्रकार मान कर जो-उसमें
 रह रहते हैं वे गृहधर्म चिन्तक है। जैसे—गृहस्थाश्रम के समान
 धर्म न हुआ है और न आगे होगा ही। जो शूरवीर मनुष्य
 होते हैं वे ही इसे पालते हैं। पापद धर्म को पालने वाले मनुष्य शूरवीर
 नहीं हैं किन्तु वे तो क्लीब-नपुंसक हैं। ऐसी इनकी मान्यता होती है।
 अविरोद्ध शब्द का अर्थ विरोद्ध नहीं रहते हैं सबका समानरूप से विनय
 करते हैं। विरोद्ध शब्द का अर्थ अक्रियावादी है। ये अक्रिया वादी पर-

पडेरे छे तेनु नाम चीरिक छे आमडाने के वस्त्र तरीके पडेरेवामा काममा
 वे छे ते धर्म अडित छे भीनओ वडे लाववामा आवेदी लिक्षाथी के-
 पोतानु उद पोषणु करे छे ते लिक्षोड छे पोताना शरीर उपर के राभ योणे-
 छे ते पांडुरग छे अण्डने साथे लधने जेओ भीनओना धरोधी अनाज-
 मागे छे तेओ गौतम कडेवाय छे राजा दिलीपनी जेम जेओ गायत्री सेवा
 करवामा व्यस्त रहे छे—न्यारे गाय जेसे छे त्यारे तेओ जेसे छे, न्यारे गाय
 लक्षी थाय छे त्यारे तेओ पणु लिला थड जय छे वगेरे इपमा जेओ गाय-
 योनुकारी जन डोय छे तेओ गोमतिक कडेवाय छे गृहस्थ धर्म अण्डने-उत्तम
 धर्म छे आम योक्कस पणु भानीने तेमा दत्त चित्त रहे छे तेओ गृहधर्म-
 चिन्तक छे जेमके—गृहस्थाश्रम जेवे धर्म थयो नथी अने आगज लविध्यमा
 थवानी सलावना पणु नथी जेओ शूरवीर माणुसे डोय छे तेओ अण्ड
 धर्मनु पालन करे छे पाण्डु धर्मने पालन करनारा माणुमे शूरवीर नथी
 पणु तेओ तो नपुंसक छे गृहस्थीओनी आ नतनी मान्यता डोय छे अविरोद्ध
 शब्दने अर्थ कियावादी छे केम के जेओ डोई पणु माणुसथी विरोद्ध आचरण
 करता नथी तेओ अण्डानी साथे सरभी रीते विनयपूणु व्यवहार करे छे
 विरोद्ध शब्दने अर्थ अक्रियावादी छे अक्रियावादी-डोडोअपरडोड जेवी वस्तुमा-

इत्युक्त्वा चम्पानगरीं शृङ्गाटकादिमहापथपथेषु समागत्य-ण्यमत्रादिषु - 'हृदि'
 इत्यामन्त्रणे तेन हे लोकाः । शृण्वन्तु-भयन्तः-यत् चम्पानगरीं यास्त्वप्या, बहवः
 'चरगाय जाव' इति-चरकवीरिकादयो धन्येन सार्थवाहेन सार्द्धमहिच्छत्रां नगरीं
 गच्छन्ति तेभ्यो धन्यः सार्थवाहश्छत्रादिक सर्वं दास्यति, मार्गं च स्वल्पितेभ्यो
 रोगादिग्रस्तेभ्यश्च औषधोपचारादिना माहाग्यं परिष्पति, सुखपूर्वकमहिच्छत्रां
 नगरीं प्रापयिष्यति च, इत्येव घोषयित्वा धन्यसार्थवाहाय 'पञ्चपिणति'
 प्रत्युपगति-निवेदयन्ति ॥ सू० २ ॥

नगरीवत्थव्या बहवे चरगा य जाव पञ्चपिणति) इस प्रकार धन्यसा-
 र्थवाह की 'वात को उन कौटुम्बिक पुरुषों ने "तथास्तु" कहकर स्वीकर
 लिया और चपानगरी में शृङ्गाटक आदि महापथ पर्यंतके समस्त मार्गों
 में जाकर इस प्रकार की घोषणा की, हे लोको ! सुनो-जो कोई चपा
 नगरी का निवासी चरक आदि जन धन्य सार्थवाह के साथ अहिच्छत्रा
 नगरी को जाना चाहता हो उसके लिये धन्यसार्थवाह छत्रादि सब
 देगा तथा जो मार्ग में पतित हो जावेंगे अथवा रोगाक्रान्त बन जावेंगे
 उनकी औषधि आदि द्वारा सहायता भी करेगा और इस तरह वह
 उनके लिये सकुशल अहिच्छत्रा नगरी में पहुँचा देगा-इस प्रकार
 की घोषणा करके उन लोगों ने इसकी खबर धन्य सार्थवाह के पास
 भेज दी। गृहस्थ के घर निष्पन्न हुए औदनादिक खाद्य वस्तुओं का जो
 सर्व प्रथम हिस्सा दानके लिये पृथक कर रख लिया जाता है, उस

वत्थव्या बहवे चरगा य जाव पञ्चपिणति)

आ रीते धन्य सार्थवाहनी आशाने ते कौटुम्बिक पुरुषोऽप्ये स्वीकारी
 लीधी अने य पा नगरीना शृङ्गाटक वगेरे महापथोभा बंधने आ रीते तेजोऽप्ये
 घोषणा करी के डे डोके । सामणो, य पा नगरीमा रहनेपर चरक, वगेरे गमे,
 ते भाणुस धन्य सार्थवाहनी साथे अहिच्छत्रा नगरीमा ब तेने धन्य-
 सार्थवाह छत्र वगेरे ण्णु आपसे, तेमब मार्गमा केरि पडी बसे अथवा
 तो माहो, थरि बसे तो धन्य साथवाहनी तेनी भरेभर भावण्ट करावीने तेनी
 सहाय, करसे अने तेने सकुशल अहिच्छत्रा नगरीमा पहुँचावसे आ-रीते,
 घोषणा करीने ते लोकेऽप्ये धन्य सार्थवाहने घोषणु काम पुइ थरि बवानी
 भणर आपी गृहस्थने घेर तैयार करायेला बात वगेरे भाध वस्तुओना के
 सो पडेला दान माटे बूढो करीने । राभवामा आवे छे ते लागने के लीध
 भागीने लरि, लय छे तेने अणिके कडे छे । मार्गमा पडेला शेटेला, वओ, के

जणवय मज्झ मज्झेणं जेणेव देसगं तेणेव उवागच्छइ उवा-
गच्छित्ता सगडीसागड मोयावेइ मोयावित्ता सत्थणिवेस करेइ
करित्ता कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव वयासी-तुब्भे णं
देवाणुप्पिया। मम सत्थनिवेससि महया महया सदेणं उग्घोसेमाणा
२ एव वयह-एवं खलु देवाणुप्पिया । इमीसे आगमियाए
छिन्नावायाए दीहमद्धाए अडवीए बहुमज्झदेसभाए वहवे
णंदिफला नाम रुक्खा पन्नत्ता किण्हा जाव पत्तिया पुप्फिया
फलिया हरियगरेरिज्जमाणा सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणा
चिट्ठति मणुण्णावन्नेणं४ जाव मणुन्ना फासेणं मणुन्ना छायाए,
त जो णं देवाणुप्पिया । तेसि नदिफलाण मूलाणि वा । कद०
तय० पत्त० पुप्फ० फल० वीयाणि वा हरियाणि वा आहारेइ
छायाए वा वीसमइ तस्स णं आवाए भद्दए भवइ तओ पच्छा
परिणममाणा२ अकाले चेव जीवियाओ ववरोवेति, तं माणं
देवाणुप्पिया । वेइ तेसि नदिफलाणं मूलाणि वा जाव छायाए
वा वीसमउ, मा णं सेऽवि अकाले चेव जीवियाओ ववरो-
विज्जिस्सइ, तुब्भेणं देवाणुप्पिया । अन्नेसि रुक्खाण मूलाणि-
य जाव हरियाणि य आहारेह छायासु वीसमहत्ति घोसणं
घोसेह जाव पच्चप्पिणति, तएण से धण्णे सत्थवाहे सगडी-
सागड जोएइ२ जेणेव नदिफला रुक्खा तेणेव उवागच्छइ
उवागच्छित्ता तेसि नदिफलाण अदूरसामने सत्थणिवेस करेइ
करित्ता दोच्चपि तच्चपि कोडुवियपरिसे मदावेइ मदावित्ता

मूलम्-तएणं तेसिं कोडुविय पुरिमाण अतिए एयमहं
 सोच्चा णिसम्म चंपानयरी वत्थव्वा वहवे चरगा य जाव गिहत्था
 य जेणेव धणणे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छति तएणं से धणणे
 सत्थवाहे तेसिं चरगाण य जाव गिहत्थाण य अच्छत्तगस्स
 छत्त दलयइ जाव पत्थय ण दलाइ दलइत्ता एव वयासी-
 गच्छहं णं तुब्भे देवाणुप्पिया । चपाए नयरीए वहिया अग्गु-
 ज्जाणंसि मम पडिवालेमाणा चिट्टह, तएणं ते चरगा य जाव
 गिहत्था य धणणेणं सत्थवाहेणं एव बुत्ता समाणा जाव चिट्ठति,
 तएणं धणणे सत्थवाहे सोहणसि तिहिकरणनखत्तसि विउल
 असणं ४ उवक्खडावेइ उवक्खडावित्ता मित्तनाइ० आमतेइ
 आमंत्तित्ता भोयणं भोयावेइ भोयावित्ता आपुच्छइ आपुच्छित्ता
 सगडीसागड जोयावेइ जोयावित्ता चपानगरीओ निग्गच्छइ
 निग्गच्छित्ता चरगा य जाव गिहत्था य सद्धि घेत्तूण णाइवि
 प्पइट्ठेहिं अद्धाणेहि वसमाणेर सुहेहि वसहि पायरासेहि अंगं

लोक नहीं मानते हैं । वृद्धश्रावक-ब्राह्मण-अर्थ का वाचक है । क्यों कि
 ये पहिले भरत चक्रवर्ती के समय में श्रावक थे-पश्चात् ब्राह्मण बन
 गये इसलिये “ वृद्धकालिको यः श्रावकः ” इस व्युत्पत्ति के अनुसार
 वृद्धश्रावक शब्द ब्राह्मण अर्थ का वाची बन जाता है । वाकी अवशिष्ट
 शब्दों का अर्थ स्पष्ट है ॥ सू० २ ॥

विश्वास करता व नथी वृद्ध श्रावक-ब्राह्मण अर्थने स्पष्ट करे छे केम के अयेओ
 पहिला भरत चक्रवर्तीना वपते श्रावक इता त्मार पछी अयेओ ब्राह्मण थर्थ
 गया अटला भाटे ‘ वृद्ध कालिको य श्रावक स वृद्ध श्रावक ’ आ व्युत्पत्ति
 मुअम वृद्ध श्रावक शब्द ब्राह्मण अर्थना वाचक थर्थ नय छे भीन शेष
 सुपेना अर्थ तो स्पष्ट न छे ॥ सूत्र “ २ ” ॥

निगंथी वा जाव पव्वइए पचसु कामगुणेषु सज्जेइ सज्जित्तो
जाव अणुपरियद्विस्सइ जहा वा ते पुरिसा ॥ सू० ३ ॥

टीका— 'तएण तेसिं' इत्यादि । तत खलु तेपा कौटुम्बिकपुरुषाणा-
मल्लिके एतमर्थ=पूर्वोक्तमद्विच्छाननगरीगमनार्थघोषणारूपे भाव श्रुत्या=कर्म-
विषयीकृत्य, निश्चय=हृद्यवधार्य चम्पानगरी गन्तव्या अद्विच्छाननगरीगन्तुकामा
वहधरकाश्च यावद् दृग्स्थ्याश्च यत्रैव धन्य सार्थवाह-स्त्रैर्योपागच्छन्ति । ततः
खलु स धन्यः सार्थवाहस्तेषा चरकाणा च यावद् गृहस्थाना च मन्त्रे अच्छत्रकाय-
छत्र ददाति यावत् पव्वदन=गम्यल ददाति, एतमवादीत्=कथयति गच्छत खलु
युष हे देवानुप्रिया । चम्पाया नगर्या इहि 'अग्गुज्जाणमि' अग्रयोद्याने भा
'पडिवालेमाण्णा' प्रतिपात्यन्त =प्रतीक्षमाणास्तिष्ठत । तत खलु ते चरकाश्च=

—:नएण तेसिं इत्यादि!—

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (तेसिं कौटुम्बिकपुरिसाण अति ए एयमद्व
सोच्चा णिसम्म चपानगरी वत्थव्वा वहवे चरगाय जाव गिहत्था य जेणेव
धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छति) उन कौटुम्बिक पुरुषों के मुख से
इस घोषणारूप अर्थ को सुनकर और उसे हृदय में धारणकर चंपा
नगरी निवासी अनेक चरक से लेकर गृहस्थ पर्यंत मनुष्य जहां धन्य
सार्थवाहक था वहां आये (तएण से धण्णे सत्थवाहे तेसिं चरगाणं य
जाव गिहत्थाण अच्छत्तगस्स छत्त दलइ जाव पत्थयण दलाइ दलइत्ता
एव वयामी-गच्छह ण तुब्भे देवाणुप्पिया । चंपाए नगरीए पाहिया अ-
ग्गुज्जाणसि मम पडिवाले माणा च्चिद्वेह) इसके बाद धन्य सार्थवाह

' तएण तेसिं ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) त्थार पछी

(तेसिं कौटुम्बिक पुरिसाण अति ए एयमद्व सोच्चा णिसम्म चपानगरी वत्थव्वा
वहवे चरगाय जाव गिहत्था य जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छति)—

ते कौटुम्बिक पुरुषोना भुण्थी आ घोषणा-इय अथने-साक्षीने अने
तेने हृदयमा धारश्च करीने य पा नगरीना धण्णा अरकथी भाडीने गृहस्थ सुधीना
अथा भाषुसे न्या धन्य सार्थवाह इता त्या आव्या

(तएण से धण्णे सत्थवाहे तेसिं चरगाणं य जाव गिहत्थाण अच्छत्तगस्स
छत्त दलयइ, जाव पत्थयण दलाइ, दलइत्ता एव वयामी-गच्छह ण तुब्भे देवाणु-

१ एव वयासी-तुच्चेणं देवाणुप्पिया । मम सत्थनिवसंति महया
 २ महया सद्देणं उग्घोसेमाणा २ एव वयह-एणं देवाणुप्पिया ।
 ३ ते णंदिफला रुक्खा किण्हा जाव मणुन्ना छायाए त जो णं
 ४ देवाणुप्पिया । एएसिं णदिफलाण रुक्खाणः मूलाणि वा कंदं
 ५ पुप्फं तयं पत्तं फलं जाव अकाले चैव जीवियाओ ववरो-
 ६ व्वेइ, त माणं तुच्चे जाव दूरे दूरेणं परिहरमाणा वीसमह, मा
 ७ ण अकाले चैव जीवियाओ ववरोविस्सइ, अत्तेसिं रुक्खाण
 ८ मूलाणि य जाव वीसमहत्तिरुद्धु घोसणं जाव पच्चप्पिणति, तत्थ
 ९ णं अप्पेगइया पुरिसा धणस्स सत्थवाहस्स एयमट्टु सद्दहति
 १० पत्तियंति रोयति एयमट्टु सद्दहमाणा ३ तेसिं नंदिफलाणं ० दूरं
 ११ दूरेण परिहरमाणा २ अन्नेसि रुक्खाण मूलाणि य जाव वीसमति
 १२ तेसिं णं आवाए नो भद्दए भवइ, तओ पच्छा परिणममाणा २
 १३ सुहरूवत्ताए भुज्जा २ परिणमति, एवामेव समणाउसो । जो
 १४ अम्ह निगंथो निगथी वा जाव पच्चसु कामगुणेषु नो सज्जेइ नो
 १५ रज्जेइ से णं इह भवे चैव वहुणं समणाणं अच्चणिज्जे ५ परिलोए
 १६ नो आगच्छइ जाव वीइवइस्सइ, जहा य ते पुरिसा तत्थ णं
 १७ अप्पेगइया पुरिसा धणस्स सत्थवाहस्स एयमट्टु नो सद्दहति ३
 १८ धणस्स एयमट्टु असद्दहमाणा ३ जेणेव ते नदिफला तेणेव
 १९ उवागच्छति उवागच्छिता तेसिं नदिफलाण मूलाणि य जाव
 २० वीसमति तेसिं ण आवाए भद्दए भवइ तओ पच्छा परिणममाणा
 २१ जाव ववरोवेति, एवामेव समणाउसो । जो अम्ह

निगंथी वा जाव पव्वइए पचसु कामगुणेषु सज्जेइ सज्जित्तो जाव अणुपरियट्ठिस्सइ जहा वा ते पुरिसा ॥ सू० ३ ॥

टीका—'तएण तेसि' इत्यादि । तत खलु तेषा कौटुम्बिकपुरुषाणा-
मन्तिके एतमर्थ=पूर्वोक्तमहिच्छत्रानगरीगमनार्थोपणारूप भाव' श्रुत्या=कर्ण-
विषयोक्त्य, निश्चय=हृद्यवार्थ चम्पानगरी गन्तव्या अहिच्छत्रानगरीगन्तुकामा
बहवश्चरकाश्च यावद् गृहस्थाश्च यत्रैव धन्य सार्थवाह-स्त्रैवोपागच्छन्ति । ततः
खलु स धन्यः सार्थवाहस्तेषा चरकाणा च यावद् गृहस्थाना च मये अच्छत्रकाय-
छत्र ददाति यावत् पचदन=शम्भल ददाति, एतमभादीत्=कथयति गच्छत खलु
युय हे देवानुमिया ! चम्पाया नगर्या उहि 'अग्गुज्जाणसि' अद्योधाने मां
'पडिवालेमाणा' प्रतिपालयन्त =प्रतीक्षमाणास्तिष्ठत । ततः खलु ते चरकाश्च=

-तएण तेसि इत्यादि:-

टीकार्थ-(तएण) इसके बाद (तेसि कौटुम्बिकपुरिसाण अति ए एयमद्व
सोच्चा णिसम्म चंपानगरी वत्थव्वा वहवे चरगाय जाव गिहत्था य जेणेव
धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छति) उन कौटुम्बिक पुरुषों के मुखे से
इस घोषणारूप अर्थ को सुनकर और उसे हृदय में धारणकर चंपो
नगरी निवासी अनेक चरक से लेकर गृहस्थ पर्यंत मनुष्य जहां धन्य
सार्थवाहक था वहां आये (तएण से धण्णे सत्थवाहे तेसि चरगाण य
जाव गिहत्थाण अच्छत्तगस्स छत्त दलइ जाव पत्थयण दलाउ दलइत्ता
एव वयासी-गच्छह ण तुम्हे देवाणुप्पिया । चपाए नयरीए वाहिया अ-
ग्गुज्जाणसि मम पडिवाले माणा चिट्ठेह) इसके बाद धन्य सार्थवाह

'तएण तेसि' इत्यादि ।

टीकार्थ-(तएण) त्थार पछी

(तेसि कौटुम्बिक पुरिसाण अति ए एयमद्व सोच्चा णिसम्म चंपानगरी वत्थव्वा
वहवे चरगाय जाव गिहत्था य जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छति)-

ते कौटुम्बिक पुरुषाना मुखी आ- घोषणा ३५ अर्थने-साक्षीने अने
तेने हृदयमा धारण करीने यथा नगरीना धणा चरकथी भाडीने गृहस्थ सुधीना
अथा भाषणेन त्या धन्य सार्थवाह डता त्या आख्या

(तएण से धण्णे सत्थवाहे तेसि चरगाण य जाव गिहत्थाण अच्छत्तगस्स
छत्त दलयइ, जाव पत्थयण दलाइ, दलइत्ता एव वयासी-गच्छह ण तुम्हे देवाणु-
प्पिया' चपाए नयरीए वाहिया अग्गुज्जाणसि मम पडिवालेमाणा चिट्ठेह)

चरकादयो यावद् गृहस्था धन्येन सार्थवाहेन-एवमुक्ता स-नः 'जात्र' यावद्-
धन्य सार्थवाह प्रतीक्षमाणास्तिष्ठति । तत एतु धन्यः सार्थवाह' शोभने तिथि
करणनक्षत्रे=धुभदिनसे विपुलमशनादिक चतुर्विधाहारम् उपस्कारयति=निष्पादयति
चपस्कार्य मित्रज्ञातिस्वजनसम्बन्धिपरिजनान् आमन्त्रयति, भोजन भोजयति=कार

ने उन चरक आदि से लेकर गृहस्थ पर्यन्त के मनुष्यों में जिसके पास
छत्ता आदि नहीं या उसे छत्ता दिया यात्रत् जिस के पास कलेवा नहीं
था उसको कलेवा-मार्ग भोजन-दिया । याद में उसने उन सबसे कहा
हे देवानुप्रियो ! तुम यहाँ से चलो और मुख्य उद्यान में मेरी प्रतीक्षा
करते हुए ठहरे रहो-(तएण ते चरगाय जात्र गिहत्थाय य धण्णेण सत्थ
वाहेण एव वुत्ता समाणा जात्र चिद्धति, तएण धण्णे सत्थवाहे सोहणसि
त्तिहिकरणनक्वत्तसि विउल असण ४ उवक्खड्डावेइ, उवक्खड्डावित्ता
मित्तणाइ० आमतेइ, आमत्तित्ता भोयण भोयावेइ, भोयावित्ता आपु
च्छइ, आपुच्छित्ता सगडीसगड जोयावेइ, जोयवित्ता चंपानगरीओ
निग्गच्छइ) इस प्रकार धन्यसार्थवाह के द्वारा कहे गये वे चरकादि
गृहस्थ पर्यन्त समस्तजन वहा से चलकर मुख्य उद्यान में गये-और
धन्यसार्थवाह की प्रतीक्षा करते हुए वहाँ ठहर गये । धन्यसार्थवाह ने
शुभ तिथि, करण, एव नक्षत्र में विपुल मात्रा में अशन आदि रूप
चारों प्रकार का आहार निष्पन्न करवाया । जब आहार निष्पन्न हो

त्यार पछी धन्य सार्थवाहे तेओ अरक वगेरेथी भाडीने गृहस्थ मुधीना
अधा भावुसोभाथी जेनी पासे छत्री वगेरे न छती तेने छत्री वगेरे अने
जेनी-पासे मार्ग माटेनु लोअन न छतु तेने लोअन आभ्यु त्यार भाइ
तेओ अधा ने अहु के डे देवानुप्रियो ! तमे अडीथी मुष्य उद्यानमा जओ
अने त्या भारी प्रतीक्षा करे।

(तएण ते चरगाय जात्र गिहत्थाय धण्णेण सत्थवाहे ण एव वुत्ता समाणा
जात्र चिद्धति, तएण धण्णे सत्थवाहे सोहणसि त्तिहिकरणनक्वत्तसि विउल
असण ४ उवक्खड्डावेइ, उवक्खड्डावित्ता मित्तणाइ आमतेइ, आमत्तित्ता भोयण
भोयावेइ, भोयावित्ता आपुच्छइ, आपुच्छित्ता सगडीसगड जोयावेइ, जोयावित्ता
चंपानगरीओ निग्गच्छइ)

आ रीते धन्य सार्थवाह वडे आज्ञापित थयेवा अरक गृहस्थ वगेरे
अधा भावुसो त्याथी मुष्य उद्यानमा गया अने धन्य सार्थवाहनी राड जेता
तेओ त्या अ राकाया धन्य सार्थवाहे शुभ तिथि, करण, अने
पुष्कण प्रभावुमा अशन वगेरे इप यादे जतना आहार।

यति, भोजयित्वा आपुच्छइ' आपुच्छति=प्रदेशगमनार्थमाज्ञा प्रार्थयति, आपु-
 च्छइ=आज्ञा प्राप्य शकटीशाकट योजयति, योजयित्वा चम्पा नगरीतो निर्ग-
 च्छति=निस्सरति, निर्गत्य चरकान् यावत् गृहस्थांश्च सार्द्धं गृहीत्वा 'नाइविष्पगिद्वेहि'
 नातिविष्पगिद्वेहि=नातिदूरेषु यथोचितेषु 'अद्वाणेहि' अध्वसु=मार्गेषु 'वसमाणे २'
 वसन्-वसन् स्थाने स्थाने निवासं कुर्वन् 'सुहेहि' श्रुभैः=प्रशस्तैः 'वसहिपायरा-
 सेहि' वसतिमातराशैः = निवासस्थाने प्रातःकालीनरुधुभोजनैः सह अद्भजन-
 पदस्य=अद्भदेशस्य मय-मध्येन यज्ञैव 'देसगा' देशाद्यैः=अद्भदेशसीमा वर्तते
 तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य शकटीशाकट मोचयति, मोचयित्वा 'सत्थनिवेस'
 सार्थनिवेशं करोति, कृत्वा कौडुम्बिऋपुरुषान् शब्दयति=आह्वयति शब्दयित्वा=
 आहूय एवमादीत्-" हे देवानुपियाः ! यूय खलु मम सार्थनिवेशे महता-महता
 शब्देन=उच्चस्वरेण उद्घोषयन्तः=सन्तः एव=प्रक्षयमाणप्रकारेण वदत=कथयत-

शुका-तत्र उसने अपने मित्र, ज्ञानि आदि परिजनोको आमंत्रित किया।
 आमंत्रित करके फिर उन सबको उसने उस चतुर्विध आहारको भोजन
 कराया भोजन कराके फिर उन सबसे परदेश गमन करने की उसने
 आज्ञा मांगी। आज्ञाप्राप्त करके उसने गाड़ी और गाड़ों को जुनवाया
 जुनवा कर फिर वह चपा नगरी से बाहिर निकला। चरकादि गृहस्थ
 पर्यन्त समस्त जन को अपने साथ में ले लिया-(निग्गच्छित्ता चरगाय
 जाव गिहत्थाय सद्धि चेतूण णाडविष्पगिद्वेहि अद्वाणेणि वसमाणे २
 सुहेहि वसहिपायरासेहि अग जणवय मज्झ मज्जेण जेणेव देसगं
 तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सगडीसागड मोयावेइ मोयावित्ता
 सत्थनिवेस करेइ करित्ता कौडुम्बियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एवं
 वयासी — तुव्भेण देवाणुपिया ! मम सत्थनिवेससि महया २

आहारो तैयार थर्ध गया त्थारे तेण्णे पेताना मित्र, ज्ञानि वगेरे परिजनाने
 आमंत्रित कथा आमंत्रित करीने तेण्णे अधाने थारे बनना आहारो न्माउथा
 त्थार पडी तेण्णे सौनी पासैथी परदेशं न्वानी आज्ञा मांगी आम तेण्णे
 अधानी पासैथी आज्ञा भेजवीने गाडी तेमन् गाडाओ नेतराओ अने त्थार
 पडी ते थपा नगरीथी णडार नीउओ तेण्णे उग्रानमा राड नेतारा अधा
 थरक गृहस्थ वगेरे भाणुसोने पणु साथे वर लीधा हुता

(निग्गच्छित्ता चरगाय जाव गिहत्था य सद्धि चेतूण णाडविष्पगिद्वेहि
 अद्वाणेहि वसमाणे २ सुहेहि वसहिपायरासेहि अग जणवय मज्झ मज्जेण
 जेणेव देसगा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सगडीसागड मोयावेइ,
 मोयावित्ता सत्थनिवेस करेइ करित्ता कौडुम्बियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता

एत्र खलु हे देवानुप्रिया ! ' इमीसे ' अम्याः ' अगामियाण ' = ग्रामरहितायाः
 ' छिन्नावायाए ' छिन्नापातायाः ' छिन्न ' आपातो = जननशागे यत्र सा, तस्या
 जनसञ्चाररहितायाः ' दीहमद्वाए ' दीर्घाया - दीर्घः = बहुकाङ्गम्यः अद्या =
 मार्गो यत्र सा, तस्याः - चिरकालवृद्धनीयाया, एतादृश्या अटव्या ' बहुमध्यदेश-
 भागे = अतिमध्यभागे, ' एत्थ ण ' अत्र खलु बहवो नदिफलानामट्टाः प्रसन्नाः =
 लोकैः कथिताः । कीदृशास्ते ? इत्याह - ' णिहा ' इत्यादि = कृष्णाः = कृष्णवर्णाः,
 कृष्णावभासा = अतिनीलत्वेन कृष्ण-उटायम्पदाः यान्त-नीलादिवर्णयुक्ताः,

-सहेण उग्घोसेमाणा २ एव वयह-एव खलु देवानुप्रिया ! इमीसे अगा
 मिघाए छिन्नावायाए दीहमद्वाए अटवीए बहुमज्जदेशमाए बहवे णदिफ
 लानाम रुक्खा पन्नत्ता किण्हा जाव पत्तिगा, पुष्किया, फलिया हरियगरेरि
 ज्जमाणा सिरीए अईवर उवसोभेमाणा चिट्ठति) निकल कर नाति विप्र
 कृष्ट-यथोचित-मार्गोंमें ठहरता २ और वहां २ प्रातः कालीन कलेवा करता
 हुआ वह जहा अगदेश की सीमा थी वहा पर आया । वहां आकर के
 उसने अपने शकटी शकटों को ढील दिया और ढील करके फिर अपने
 सार्थ को ठहरा दिया । ठहरा देने के बाद फिर उसने अपने कौटुम्बिक
 पुरुषों को बुलाया-और उनसे इम प्रकार कहा-हे देवानुप्रियों ! तुम
 लोग हमारे सार्थनिवेश में बड़े जोर २ से घोषणा करते हुए ऐसा कहो
 कि-हे देवानुप्रियो ! सुनो जन सचार रहित दीर्घ मार्ग वाली इस आगे
 की अटवी के मध्यभाग में लोग कहते हैं कि अनेक नदीफल नाम के

एव वयासी. — तुक्केण देवानुप्रिया ! मम सत्थ निवेशसि महया, २
 सहेण उग्घोसेमाणा २ एव वयह-एव खलु देवानुप्रिया ! इमीसे अगामियाए
 छिन्नावायाए दीहमद्वाए, अटवीए बहुमज्जदेशमाए बहवे णदिफलानाम रुक्खा
 पन्नत्ता किण्हा जाव पत्तिगा, पुष्किया फलिया, हरियगरेरिज्जमाणा सिरीए
 अईव २ उवसोभेमाणा चिट्ठति) ।

12. त्याथी स्वाना थधने ते मार्गमा यथास्थाने नल्लक नल्लकना स्थणे उपर
 विश्राम करतो अने त्या सवार थता वलपान (नास्तो) वगेरे करतो ते
 अगदेशनी ढड उपर पडोव्यो र्ना पडोव्यीने तेणे गाडी अने गाडांजोने
 छोडी भूक्या अने त्या पोताना सार्थने शक्यो शक्यो पडी तेणे पोताना
 छोडी मुक पुडोवने गोलाव्या अने गोलावीने तेजोने आ प्रभावे कडु-डे-डे
 देवानुप्रियो ! आभारा सार्थ सनिवेशमा तमे दोडे ओटेथी आ प्रभावेनी
 घोषणा करता कडे के डे देवानुप्रियो ! साक्षणे ! डवे आगण आपतार
 भाषा मार्गवाणा निज्जन वनमा दोडे जेम कडे छे के तेमा धव्या नदिक्क

तथा- 'पत्तिया' पत्रिता = पत्रवहुला, 'पुष्पिया' पुष्पिता = पुष्पवहुला,
 'फलिया' फलिता = फलवहुला 'हरियागरेरिज्जमागा' हरितकरारज्यमाना =
 हरितकेन = दृग्गितवर्णेन भृश शोभमाना 'सिसीए' त्रिया = दृग्गितपल्लवादिशोभया
 अतीमातीव उपशोभमानास्तिष्ठन्ति = वर्तन्ते । पुन क्रीदशास्ते 'इत्याह-मनोज्ञा -
 वर्णेन, 'जाव' यावत्-ग-त्रेन, रसेन स्पर्शेन, मनोज्ञा^१ उच्यया, रम्यवर्णादिना
 रम्य छायाया च युक्ता इत्यर्थ, 'त' तत् = तस्मात् नन्दिदृग्भाणा सौन्दर्यादिकारण-
 वशात् 'जोण' यः खलु हे देवानुप्रिया ! तेषा नन्दिफलाना = नन्दिफलाभिधाना
 वृक्षाणा मूलानि वा कन्दानि वा त्वचो वा, पत्राणि वा, पुष्पाणि वा, फलानि वा,
 बीजानि वा, हरितानि वा 'आहारेड' आहारयति, तेषा जयाया वा 'वीस-
 मड' विश्राम्यति तस्य खलु आयाए' आपाते = पूरं भवणादि समये 'महए'

वृक्ष हैं। ये वृक्ष कृष्ण वर्णवाले हैं और देखने पर भी अति हरित होने
 के कारण कृष्ण ही प्रतीत होते हैं। पत्र, पुष्प एवं फलों से वे युक्त हैं।
 वे हरित वर्णसे बड़े सुहावने लगते हैं। उनके पल्लव आदि इन हरे र
 हैं। इससे उन की शोभा बड़ी नीराली पनी हुई है। (मणुणा वर्णेण
 ४ जाव मणुणा फासेण मणुणा जयाए, त जो ण देवानुप्पिया । तेषि
 नन्दिफलाण रुक्खाण मूलानि वा कद० तय० पत्त० पुष्फ० फल० बीयाणि
 वा हरियाणि वा आहारेड, जयाए वा वीसमड, तस्स ण आयाए महए
 भवड, तओ पच्छा परिणममाणा २ आकाले चैव जीवियाओ ववरीवेति)
 वर्ण, रस, गंध एवं स्पर्श से वे बड़े मनोज्ञ हैं। छाया भी उन की
 घटी मनोज्ञ है। इस लिये हे देवानुप्रियो ! जो कोई इन की सुन्दरता
 आदि कारण के वशसे आकृष्ट होकर इन नन्दिफल वृक्षों के मूलों को
 कटों को छालों को, पत्रों को, फलों को बीजों को अथवा हरित अकुरों

नाये वृक्षो ठे ते वृक्षो कृष्ण वर्णवाणां छे अने भ्रूणज लीला डोवाथी कृष्ण
 वर्णना जेवा ज लागे छे पत्रो, पुष्पो अने इणोथी तेओ समृद्ध छे लीला
 छम डोवाथी तेओ अत्यत सुदर लागे छे तेमना पत्रो वगेरे जथा लीला
 छे तेथी तेमनी शोला अकडम अनापी छे

(मणुणा वर्णेण ४ जाव मणुणा फासेण मणुणा जयाए त जो ण देवानु-
 प्पिया । तेषि नन्दिफलाण रुक्खाण मूलानि वा कद० तय० पत्त० पुष्फ० फल०
 बीयाणि, वा हरियाणि वा आहारेड, जयाए वा वीसमड तस्स ण आयाए महए
 भवड, तओ पच्छा परिणममाणा २ अकाले चैव जीवियाओ ववरीवेति)
 वर्ण, रस, गंध अने स्पर्शथी तेओ भ्रूणज मनोज्ञ छे छायाओ पल्ल
 तेओने अत्यत मनोज्ञ छे अटला माटे छे देवानुप्रियो ! कौछ पल्ल भावुस
 तेमनी सुदरता वगेरे आकृष्टथी आकृष्टने ते नन्दिफल वृक्षोना मूलाने, कटने
 छालने पादजाओने, पुष्पोने, जियाओने अथवा ते लीला कृष्णाने भाये छे

युय, खलु हे देवानुप्रिया। मम सार्थनिवेशे महता-नहता शब्दन उद्घोषयन्तः २
 एव उदत-“ एते खलु हे देवानुप्रियाः ! ते इमो नन्दिफलश्रुताः यद्ये, पूर्व
 पदिष्टम् कृष्णा यात्-मनोऽज्ञायता, तद् यो खलु हे देवानुप्रियाः ! एतेषां
 नन्दिफलाना वृक्षाणा मूलानि वा रुन्दानि वा पुष्पाणि वा, त्वरो वा, पत्राणि वा,
 फलानि वा, यावत्-तानि मूलरुन्दादीनि त जीविताद् व्यपरोपयन्ति, तत् मा
 खलु युय ' जाव ' यावत्-तेषा मूलरुन्दादीनि मा आहारयत, मा च तेषा छायासु
 विश्राम्यत किन्तु तान दूर-दूरेण=दूरत पर ' परिहरमाणा ' परिहरन्त =वनेयन्त

तीन बार घुलाया-बुलाकर उसने ऐसा कहा-हे देवानुप्रिया ! तुम मेरे
 सार्थ निवेश में जाकर जोर २ से ऐसी घोषणा करो-कि हे देवानुप्रिया
 जिन नदिफल वृक्षों के विषय में पहिले सूचना दी गई है-वे वही
 कृष्ण यावत छाया से मनोज्ञ नदिफल वृक्ष हैं। त जो ण देवाणुप्रिया
 एषसि णदिफलाण रुक्खाण मूलाणि वा कंदं पुष्पं तयं पत्रं फलं
 जाव अकाले चैव जीवियाओ ववरोवेड, त माणं तुभं जाव दूरं दूरेण
 परिहरमाणा वीसमहं माण अकाले चैव जीवियाओ ववरोविस्सइ, अ
 न्नेसि रुक्खाण मूलाणि य जाव वीसमहत्ति कइडु घोमण जाव पच्च
 प्पिणति) इस लिये हे देवानुप्रियो ! तुम लोग में से कोई भी व्यक्ति
 इन नदिफलवृक्षोंके नलोंको, कंदोंको, पुष्पोंको, छालोंको, फलोंको नहीं
 खावे और न वह इनकी छायामें विश्राम ही करे-नहींता वह अकालमें
 ही कालकवलिन अर्थात् मर जावेगा ही जावेगा। इस लिये इन्हे बहुत
 दूर छोड़कर दूसरी जगह तुम लोग विश्राम करो इससे जीवन से रहित

भारा सार्थ निवेशमा जधने मोटेथी तमे आ प्रभाषे घोषया कशे 'डे डे
 देवानुप्रियो। ये न दिक्षण वृक्षोना विषे पडेला तमने जलु 'करवाभा आवी डती
 ते जेज कृष्ण-तेमज छायाथी मनोज्ञ लागता नदिक्षण वृक्षो छे

(त जो ण देवाणुप्रिया ! एषसि णदिफलाण रुक्खाण मूलाणि वा कंदं
 पुष्पं तयं पत्रं फलं जाव अकाले चैव जीवियाओ ववरोवेड-त' माणं तुभं
 जाव दूरं दूरेण परिहरमाणा वीसमहं माण अकाले चैव जीवियाओ ववरोविस्सइ,
 अन्नेसि रुक्खाण मूलाणि य जाव वीसमहत्ति कइडु घोमण जाव पच्चपिणति)

जेटला भाटे डे देवानुप्रियो ! तमाराभाथी केअ पणु भाणुम नदिक्षण
 वृक्षोना मृणोने, क डोने, पुष्पोने, छालने, इणोने पाय-नडि अने, तेमनी
 छायाभा पणु, विभाभो ले नडि, नडितर ते अकाले जे भू
 जेअमनाथी भूण जे दूर रहीने विश्रामो लेसो

सन्तोऽन्यत्र 'वीसमद्' विश्राम्यत=विश्राम कुरुत तेन न खलु यूय जीवितान्द
 व्यपरोपिष्यध्वे, तथा-अ वेपां वृक्षाणा मूल्यानि च यावत्-कन्दादीनि आहारयत,
 छायासु विश्राम्यत" इति वृत्ता प्रोपणा घोषयत, यावत्-ते घोषणा घोषयित्वा
 धन्यसार्थवाहाय तदाता प्रन्यर्षयन्ति । तत्र=खलु सार्ये अप्पेके पुरुषा धन्यस्य सार्ये
 वाहस्य एतमर्थम्=एतद्वृषदेश श्रद्धति, प्रतिगति-रोचयन्ति, एतमर्थं श्रद्धयानाः=
 श्रद्धामिपि कुर्वाणाः प्रतिगन्त रोचयन्त तेषा नन्दिफलवृक्षाणा मूलादीनि छाया
 च दूर -दूरेण=दूरतएव परिहरन्तः=परिवर्जयन्तोऽन्येषा वृक्षाणा मूल्यानि च यावत्-
 कन्दादीनि आहारयन्ति, अन्यवृक्षाणा छायासु च विश्राम्यन्ति, तेषां खलु

नहीं होंओगे । तथा इनसे अनिरिक्त और जो दूमरे वृक्ष हैं उनके मूलों
 को यावत् कन्दादिको को खाओ और उनकी छाया मे विश्राम करो ।
 इस प्रकार की घोषणा कर दो-उन्हों ने धन्य सार्यवाह की आज्ञानुसार
 वैसा ही किया और इसकी उसे खबर भी दे दी । (तत्थ ण अप्पेग-
 हया पुरिसा धण्णस्स सत्थवाहस्स एयमट्ट सदहति, पत्तियति रोयति,
 एयमट्ट सदहमाणाइ तेसि नदिफलाण० दूर दूरेण परिहरमाणा २ अ-
 न्नेसि रक्खाण मूलाणि य जाव वीसमति) वहा सार्य में के कितनेके
 मनुष्यों ने धन्य सार्यवाहके इस सूचना रूप अर्थको स्वीकार कर लिया ।
 उस पर श्रद्धा जमाई उसे अपनी प्रतीति का विषय बनाया तथा उन्हें
 वह बात अच्छी तरह रुचि कर भी हुई । इसलिये इस बात पर श्रद्धा
 आदि सपत्त जने हुए उन लोगों ने उन नदि फल वृक्षों के मूलादिकों
 को और उनकी छाया को बहुत दूर से छोडकर अन्य वृक्षों के मूलादि

पणु सुशेखी नउशे नडि तेमळ आ वृक्षो सिवायना पीळ वृक्षो छे, तेमना
 मूण उह वगेरे तमे भाव अने तेमना छायाउभा विश्राम करे तेभाये
 धन्यसार्थवाहनी आज्ञा प्रभाषे व घोषणा करीने तेने अणर आपी

(तत्थ ण अप्पेगहया पुरिसा धण्णस्स सत्थवाहस्स एयमट्ट सदहति, पत्ति-
 यति, रोयति, एयमट्ट सदहमाणाइ तेसि नदिफलाण० दूर दूरेण परिहरमाणा
 २ अन्नेमि रक्खाण मूलाणि य जाव वीसमति)

त्या अर्थमा आवेला डेटलाड भाषुनोअे धन्यसार्थवाहनी सूचना इप
 आ वातने स्वीकारी लीधी अने तेने श्रद्धानी अपेक्षाअे पोताना लुहयभा
 स्थान आपता अरेगर तेनी उप प्रतीति जी लीधी ते बोडेने ते वंत
 इच्छिकर पणु धर्ष पडी आ नीते श्रद्धायुक्त थयेला ते बोडेअे ते नदिक्ष
 वृक्षोना मूण वगेरेनी अने तेमनी छायावी भूम व दूर रडीने पीळ वृक्षोना
 मूण तेमळ उह वगेरेने आधा तथा तेमनी छायाभा विसामे लीधी

युय खलु हे देवानुप्रिया । मम मार्यनिवेशे महता-महता शब्दन उद्गोपयन्तार
एव उदत-“ एते खलु हे देवानुप्रिया । ते इमो नन्दिफलाग्राः यद्ये, पूर्व
पदिष्टम् कृष्णा यावत्-मनोज्ञायाया, तद् यो सद्यु हे देवानुप्रिया । एतेषां
नन्दिफलाणां वृक्षाणां मूलानि वा कन्दानि वा पुष्पाणि वा, त्वग्ने वा, पत्राणि वा,
फलानि वा, यावत्-तानि मूलरन्दादीनि त जीयिताद् यपरोपयन्ति, तद् मा
खलु युय 'जाव' यावत्-तेषां मूलरन्दादीनि मा आहारयत, मा च तेषां ग्राह्या
विश्राम्यत किन्तु तान् दूर-दूरेण=दूरे पत्र 'परिहरमाणा' परिहरन्त =वनेयन्त

तीन बार घुलाया-बुलाकर उसने ऐसा कहा-हे देवानुप्रिया ! तुम मेरे
साथ निवेश में जाकर जोर २ से ऐसी घोषणा करो-कि हे देवानुप्रिया
जिन नन्दिफल वृक्षों के विषय में पहिले सूचना दी गई है-वे वही
कृष्ण यावत् छाया से मनोज्ञ नन्दिफल वृक्ष हैं । त जो ण देवानुप्रिया ।
एषसि नन्दिफलाण रक्खाण मूलाणि वा कन्द० पुष्प० तय० पत्र० फल
जाव अकाले चैव जीवियाओ ववरोवेइ, त माण तुग्मे जाव दूर दूरेण
परिहरमाणा वीसमह माण अकाले चैव जीवियाओ ववरोविस्सह, अ
न्नेसि रक्खाण मूलाणि य जाव वीसमहत्ति कइइ घोसण जाव पच्चपिणति) इस
लिये हे देवानुप्रियो ! तुम लोग में से कोई भी व्यक्ति
इन नन्दिफलवृक्षोंके नूलोंको, कंदोंको, पुष्पोंको, छालोंको, फलोंको नहीं
खावे और न वह इनकी छायामें विश्राम ही करे-नहींतां वह अकालमें
ही कालरुचलिन अर्थात् मर जावेगा हो जावेगा । इस लिये इन्हें बहुत
दूर छोड़कर दूसरी जगह तुम लोग विश्राम करो इससे जीवन से रहित

भारा साथ निवेशमा जधने भोटेथी तमे आ प्रभाणु घोषणा कुश डे डे
देवानुप्रियो । जे नन्दिफला वृक्षोना विषे पडेला तमने जाणु, करवाभा आवी छती
ते जेअ कृष्ण-तेमज छायाथी मनोज्ञ लागता नन्दिफला वृक्षो छे

(त जो ण देवानुप्रिया ! एषसि नन्दिफलाण रक्खाण मूलाणि वा कन्द०
पुष्प० तय० पत्र० फल जाव अकाले चैव जीवियाओ ववरोवेइ, त माण तुग्मे
जाव दूर दूरेण परिहरमाणा वीसमह, माण अकाले चैव जीवियाओ ववरोविस्सह,
अन्नेसि रक्खाण मूलाणि य जाव वीसमहत्ति कइइ घोसण जाव पच्चपिणति)

जेटला भाटे डे देवानुप्रियो । तभाराभाथी केअ पणु भाणुस नन्दिफला
वृक्षोना भूजोने, क दोने, पुष्पोने, छालने, श्जोने पाय नन्दि अने, तेमनी
छायाभा पणु, विसाभो ले नन्दि, नन्दितर ते अकाले ज भू, जे जे जे
अभनाथी भूण ज दूर रहिने विसाभो लेशो तेथी

सन्तोऽन्यत्र 'वीसमद्' विश्राम्यत=विश्राम कुरुत तेन न खलु यूय जीविताद् व्यपरोपिष्यथे, तथा-अ वेपा वृक्षाणा मूलाणि च यावत्-कन्दादीनि आहारयत, छायासु विश्राम्यत" इति वृत्ता प्रोषणां प्रोषयत, यावत्-ते प्रोषणा प्रोषयित्वा धन्यसार्थवाहाय तदाता प्रत्यर्पयन्ति। तत्र=खलु सार्थे अप्येके पुरुषा धन्यस्य सार्थे वाहस्य एतमर्थम्=एतद्वृषदेश श्रद्धति, प्रतिगति-रोचयन्ति, एतमर्थं श्रद्धधानाः=श्रद्धाविपयिकुर्वाणाः प्रतियन्तः रोचयन्तः तेषा नन्दिफलवृक्षाणा मूलादीनि छायां च दूर-दूरेण=दूरतएव परिहरन्तः=परिवर्जयन्तोऽन्येषा वृक्षाणा मूलाणि च यावत्-कन्दादीनि आहारयन्ति, अन्यवृक्षाणा त्रायासु च विश्राम्यन्ति, तेषां खलु

नहीं होंओगे। तथा इनसे अनिरिक्त और जो दूमरे वृक्ष हैं उनके मूलों को यावत् कन्दादिको को खाओ और उनकी छाया में विश्राम करो। इस प्रकार की घोषणा कर दो-उन्होंने धन्य सार्थवाह की आज्ञानुसार वैसा ही किया और इसकी उसे खबर भी दे दी। (तत्थ ण अप्पेगइया पुरिसा वण्णस्स सत्थवाहस्स एयमट्ट सदहति, पत्तिगति रोयति, एयमट्ट सदहमाणाइ तेसि नदिफलाण० दूर दूरेण परिहरमाणा २ अन्नेसि रुक्खाण मूलाणि य जाव वीसमति) वहा सार्थे में के कितनेके मनुष्यों ने धन्य सार्थवाहके इस सूचना रूप अर्थको स्वीकार कर लिया। उस पर श्रद्धा जमाई उसे अपनी प्रतीति का विषय बनाया तथा उन्हें वह बात अच्छी तरह रुचि कर भी हुई। इसलिये इस बात पर श्रद्धा आदि सपत्त बने हुए उन लोगों ने उन नदि फल वृक्षों के मूलादिकों को और उनकी छाया को बहुत दूर से छोड़कर अन्य वृक्षों के मूलादि

पणु मुरडेवी नउशे नडि तेमए आ वृक्षो सिवायना णीण वृक्षो छे, तेमना मृण उइ वगेरे तेमे णाप अने तेमना छायाउभा विश्राम करे। तेओओ धन्यसार्थवाहनी आशा प्रभाणे ए घोषणा करीने तेने अजर आपी

(तत्थ ण अप्पेगइया पुरिसा वण्णस्स सत्थवाहस्स एयमट्ट सदहति, पत्तिगति, रोयति, एयमट्ट सदहमाणाइ तेसि नदिफलाण० दूर दूरेण परिहरमाणा २ अन्नेमि रुक्खाण मूलाणि य जाव वीसमति)

त्या अर्थमा आवेला डेटलाउ भाणुओओ धन्यसार्थवाहनी सूचना इप आ वातने स्वीकारी लीधी अने तेने श्रद्धानी अपेक्षाओ पोताना हृदयमा स्थान आपता अरोणर तेनी उपर प्रतीति करी लीधी ते लोकोने ते व त इयिकर पणु थर्ष पडी आ गते श्रद्धायुक्त थयेला ते लोकोओ ते नदिक्ख वृक्षोना मृण वगेरेथी अने तेमनी छायाथी अणु ए इर ग्हीने णीण वृक्षोना मण तेमना वगेरेने णाधा तथा तेमनी छायाभा विसामे लीधे

भाषाते=पूर्वमाहारसमय नो भद्रक भवति=विशिष्टस्वादादिलाभो न भवति किन्तु ततः पश्चाद्=भक्षणान्तरामानन्तर परिणम्यमानानि २ रसादिरूपेण परिणतानि मूलकन्दादीदि शुभरूपतया=गद्रक्तया भूयो भूय परिणमन्ति ।

अथोपनय दर्शयन् सुधर्मस्वामी प्राह- ' एवामेव ' स्यादिना । ' एवामेव ' एवमेव=अनेनैव पूर्वोक्तप्रकारेण हे आयुष्मन्तः श्रमणाः ? योऽस्माकं निर्ग्रन्थो वा निर्ग्रन्थी वा ' जाय ' यावत्-आचार्योपाध्यायानामन्तिके मण्डो भूत्वा प्रजितस्ते पामुपदेशं श्रद्धधानः सन् पञ्चमृ धामगुणेषु=तदादिपियेषु ' नो सज्जेह ' नो

कों को यावत् कदों को खाया और उनकी छाया में विश्राम किया । (तेसि ण आवाण णो भए भवइ, तओ पच्छा परिणयमाणा २ सुह रूवत्ताए भुज्जो २ परिणमति, एवामेव समणाउसो जो अह निग्गंथो वा निग्गंथी वा जाय पचसु कामगुणेषु नो सज्जेह, नो रज्जेह, से ण इह भवे चेव वहुण समणाण ४ अच्चणिज्जे परलोण नो आगच्छइ, जाव वीइवयस्सइ, जहा वा ते पुरिसा) परन्तु इन पुरुषोंको उनके मूला दिकों के खाने के समय विशिष्ट स्वादादि को प्राप्तिरूप भद्रक का लाभ तो नहीं हुआ-किन्तु उसके बाद जब खाये हुए उन मूलादिकों का रसादि रूप से परिणमन हुआ तब उन्हें चार २ शुभ रूप परिणमन होने से आनन्द आया और जीवन सुरक्षित रहा-अब सुधर्मस्वामी इसका उपनय (दृष्टान्त के अर्थ को प्रकृति में जोड़ना) दिखलाते हुए कहते हैं कि इसी तरह से हे आयुष्मन्त श्रमणो । जो हमारे निर्ग्रन्थ श्रमण एवं श्रमणियाजन हैं वे आचार्य उपाध्यायके पास मुडित होकर दीक्षित हो जाते हैं और उनके उपदेश को श्रद्धा आदि का विषयभूत

(तेसि ण आवाण णो भए भवइ, तओ पच्छा परिणयमाणा २ सुहरूवत्ताए भुज्जो २ परिणमति, एवामेव समणाउसो जो अह निग्गंथो वा निग्गंथी वा जाय पचसु कामगुणेषु नो सज्जेह, नो रज्जेह, से ण इह भवे चेव वहुण समणाण ४ अच्चणिज्जे परलोण नो आगच्छइ, जाव वीइवयस्सइ जहा वा ते पुरिसा)

ते भाष्यसोने वृक्षोना भूण कइ वगेरे जाती वभते सविशेष स्वाह वगेरे रेनी अनुभूति तो थरु शकी नहि पणु भाधा पछी ते भूण कइ रस वगेरे इपमा परिशुत तथा त्यारे तेमने सुधर्म मण्यु अने साथे साथे तेमना उपनय पणु सुरक्षित रह्या सुधर्मा स्वामी हरे अने वातने दृष्टान्तना इपमा स्पष्ट करता कहे छे के हे आयुष्मन्त श्रमणो ! आ प्रभाषेण ते अमारा निअथ श्रमणीओ, आचार्य तेमण उपाध्यायनी पासे मुडित थधने ।

स्वजते=आसक्तो भवति, 'नो रज्जेद्' नो रज्यते नो अनुरक्तो भवति म खलु इह भवएव बहूना श्रमणाना श्रमणीना गहूना साधूना साधीना मध्ये-अर्चनीय=माननीयः सन् परलोके=भवान्तरे नो आगच्छति=जन्म न प्राप्नोति किन्तु-यावत्-अस्मिन्नेव भवे चातुरन्तसमारकात्तार व्यतिग्रजिष्यति=उलङ्घयिष्यति, मोक्ष प्राप्स्यतीत्यर्थः 'जहा वा ते पुरिसा' यथा वाते पुरुषाः-यथा वा=येन प्रकारेण धन्यसार्थवाहोपदेशश्च द्रया ते=नन्दिकलवृक्षमूलकन्दादि परिवर्जनेन तत्कथनानुसारसमाचरणशीलाः पुण्याः=सार्थपुरुषाः सुखपूर्वरुमहिच्छत्रा नगरीं प्राप्स्यन्ति तयेत्यर्थः । अथ श्रद्धा रहितान् वर्णयति-'तत्थ ण' इत्यादि । तत्र खलु सार्थे अप्येके=ये तेचित् पुरुषाः धन्यस्य सार्थवाहस्य एतमर्थं=नन्दिकलमक्षगादि निषेधरूप

बनाते हुए पात्र काम गुणों में-शब्दादि विषयों में आसक्त नहीं बनते हैं अनुरक्त नहीं बनते हैं वे इस भवमें ही अनेक साधु और साध्वियों के बीचमें माननीय होते हुए परलोक में जन्म से रहित हो जाते हैं-अर्थात् पुन उन्हें जन्म धारण नहीं करना पड़ता है । कारण वे इसी भव में चतुर्गति रूप इस संसार कान्तार को पार करने वाले बन जाते हैं-उन्हें मोक्ष प्राप्त हो जावेगा ऐसे वे तैयार हो जाते हैं । जिस प्रकार धन्य सार्थवाह के उपदेश पर श्रद्धा करने से ये सार्थ के कितनेक पुरुष नदि वृक्षों के मूलकन्दादिकों का परिहार-त्याग करते हुए और उसके कथनानुसार अपना आचरण बनाते हुए सकुशल अहिच्छत्रा नगरी को प्राप्त कर लेंगे ऐसे बन गये । अब जिन्होंने धन्य सार्थवाहके वचनों पर श्रद्धा नहीं की-उनकी क्या दशा हुई इस बात का वर्णन सूत्रकार करते हैं-(तत्थ ण अप्पेगइया पुरिसा धणस्स सत्थवाहस्स एय-

युक्त यद्यने पात्र काम गुणोभा शब्दादि विषयोभा-अनासक्त रहें छे अटले के अनुरक्त यथा नहीं, तेओ आ लवभा न धणा साधुओ तेमन साधीओनी पथ्ये सन्माननीय यथा परलोकभा नन्मरहित यद्यन्त छे अटले के इरी तेओनो नन्म यतो नहीं केमके तेओ आ लवभा न चतुर्गति इय आ संसार कान्तारने पार करवा लायक सामर्थ्य भेणवी छे तेओ मोक्ष भेणववा योग्य यद्यन्त छे, जेम धन्यसार्थवाहना उपदेश उपर श्रद्धा भूझीने सार्थना कंटलाउ पुइयोओ नदि वृक्षोना भूण कड वगेरेने त्यज्जेने तेनी सूचना सुज्ज आथ रक्षु करता अहिच्छत्रा नगरीमा पडोयी शडे तेवा यद्य गथा डवे जे पुइयोओ धन्यसार्थवाहनी वात उपर श्रद्धा भूझी नडि तेओनी शी डालत यद्य तेनु वण्णं करता सूत्रकार कडे छे-

(तत्थ ण अप्पेगइया पुरिसा धणस्स सत्थवाहस्स एयमट्ट नो सद्वति ३

नो श्रद्धयति नो रोचयन्ति नो प्रतियति। ने धन्यस्य-एतमर्थम् अश्रद्धयाना अरोचयन्तः, अपतियन्त यत्रैव नदिफला वृक्षान्त्रियोपागच्छन्ति, उपागत्य तेषां नदिफलाना मूलानि य यावत्-कन्दादीनि आहारयन्ति, तथा आयागु न विश्राम्यन्ति तेषां खलु आपातं=पूर्व फलभक्षणान्दिमगने भद्रक भानि=शुभम्यादादिलामोभवति किन्तु 'तत्रो पच्छा' ततः पश्चात्=फलभक्षणाद्यनन्तर परिणम्यमाना =रसादिरूपेण

मद्व नो मद्वति ३ धणस्य एयमद्व असद्वमाणा ३ जेणेव ते नदिफला तेणेव उवागच्छति उवागच्छत्ता तेसि नदिफलाण मूलाणि य जाव वीसमति, तेसि ण आयाण मद्वण भवत्त, तत्रो पच्छा परिणममाणा जाव वररोवेति एवामेव समणाउसो ! जो अमहं निग्गयो वा निग्गथी वा जाव पव्वइए पचसु कामगुणेसु सज्जेइ, सज्जित्ता जाव अणुपरियट्टिस्सइ जहा वा ते पुरिसा) वहा पर कित्तनेक पुरुषो ने धन्यसार्थवाह के इस कथन को कि नदिफल वृक्षो के कन्दमूलादि नहीं खाना चाहिये और न उनकी छायामें ही विश्राम करना चाहिये श्रद्धाकी दृष्टिसे नहीं देखा उस पर अपनी श्रद्धा नहीं जमाई, उसे अपनी रुचि का प्रतीति का विषय नहीं बनाया-वे पुरुष- धन्यसार्थवाह के इस कथन को अश्रद्धेय आदि मानकर जहा पर नदिफल वृक्ष थे- वहा गये वहा जाकर उन्होंने उनके मूल कदादि कों को खाया उनकी छाया में विश्राम किया उस समय उन्हें बड़ा आनन्द आया- स्वाद जन्य कोई अर्पूर्व सुख मिला -किन्तु जब उनका परिपक्व काल आया जब वे खाये हुए मूलकन्दादि

धणस्य एयमद्व असद्वमाणा ३ जेणेव ते नदिफला तेणेव उवागच्छति, उवागच्छत्ता तेसि नदिफलाण मूलाणि य जाव वीसमति, तेसि ण आयाण मद्वण भवत्त, तत्रो पच्छा परिणममाणा जाव वररोवेति एवामेव समणाउसो ! जो अमहं निग्गयो वा निग्गथी वा जाव पव्वइए पचसु कामगुणेसु सज्जेइ, सज्जित्ता जाव अणुपरियट्टिस्सइ, जहा वा ते पुरिसा)

त्या डेटलाक भाषुसोअे धन्यसार्थवाडना न दिक्का वृक्षोना कदमूणो वगेरे भावा जेधअे नडि तेमज ते वृक्षोनी छायाभा पणु विसामो लेवो नडि आ जतना उथन प्रत्ये श्रद्धावान थया नथी, तेना उपर विश्वास भूडयो नडि अने प्रतीतिपूर्वक तेभा पोतानी अबिड्थी जतावी नडि ते भाषुसो धन्यसार्थवाडना कथन अश्रद्धेय भानीने ज्या न दिक्का वृक्षो डता त्या गया त्या जधने तेमले तेमना भूण कद वगेरे भाधा अने तेमना छायाभा विसामो लीधो ते सभये तो तेमने भूण ज आनद प्राप्त थयो, इणोना स्वाडभा अपूर्व सुभ भउथु, पणु ज्यारे तेज्जोनी पाथन किया थवा भाडी, जेटले के भाषु वगेरे

परिणाम प्राप्नुवन्तः सन्तः वन्दाद्य यावत्-तान् जीविताद् व्यपरोपयन्ति ।
 'एवमेव' एवमेव=अनेनैव प्रकारेण हे आयुष्मन्त' श्रमणाः योऽस्माकं निर्ग्रन्थो
 वा निर्ग्रन्थी वा यावत् प्रव्रजितः सन् पञ्चमु नामणेषु=शब्दादिकामभोगेषु स्व-
 जते, रज्यते-कामभोगासक्तो भवति यावत्-स खलु उभवे वदूना श्रमण-श्रम-
 णीना, वदूना श्रावकश्राविकाना म'ये हिलनीयो, निन्दनीय', खिसनीयो भवति,
 परलोकै=च भवान्तरे चातुरन्तससारकान्तारम् अनुपर्यटिष्यति चातुर्गतिरससार
 एव स्यास्यति न तु मोक्ष प्राप्स्यतीत्यर्थ । येन प्रकारेण ते=धन्योपदेशमश्रद्धाणाः
 पुरुषाः=सार्थस्वित्ता जना नन्दिफलवृक्षमूलकन्दादिभक्षणो न तत्रैव म्रियन्ते नतु-
 अहिच्छत्रां नगरीं प्राप्नुवन्तीति भावः ॥ सू० ३ ॥

मूलम्—तएण से धणणे सत्थवाहे सगडीसागड जोयावेइ
 जोयावित्ता जेणेव अहिच्छत्ता नयरी तेणेव उवागच्छइ उवा-

रसादिरूप से पणिमने लगे-तय वे सब अपने२ जीवन से रहित हो गये
 -मर गये-। इसी तरह हे आयुष्मन्त श्रमणो । जो हमारा निर्ग्रन्थ व
 निर्ग्रन्थी सोधीजन यावत् प्रव्रजित होकर पचकाम गुणो मे-पचड न्द्रियों
 के शब्दादि विषयों मे-आसक्त बन जाता है-अनुरक्त हो जाता है, वह
 इस भवमें अनेक श्रमण श्रमणियोंके बीच हीलनीय, निन्दनीय एव खिस-
 नीय होता है एव वह भवान्तर में जो इस चतुर्गति रूप ससार कान्तार
 में ही घूमता रहेगा-मोक्ष प्राप्त नहीं करेगा । जिस प्रकार धन्य सार्थवाह
 के उपदेश पर श्रद्धा नहीं करने वाले सार्थ के ये कितनेक पुरुष नन्दिफल
 वृक्षों के मूलादि के खाने से वहीं पर मर गये-अहिच्छत्र नगरी नहीं
 जा सके ॥ सू० ३ ॥

रस वगेरे रूपमा परिणत थवा लाग्या त्यारे तेज्जो अथा निर्णव थर्ष गया,
 भूत्यु पाभ्या आ प्रमाणे न डे आयुष्मन्त श्रमणो ! जे अमारा निर्ग्रथ
 साधुजो हे निर्ग्रथ सधिवज्जो प्रणत थरने पाय काम शुल्लोमा अर्थात्
 पाये धन्दित्रोना शब्दादि विषयोमा आसक्त थर्ष पडे छे-जेटले हे अनुरक्त
 थर्ष जाय छे, ते आ लवमा धण्ण श्रमणो अने धण्णी श्रमणीज्जोनी वज्जे
 हीलनीय, निन्दनीय, अने खिसनीय जाय छे अने जीण लवमा पणु-आ
 चतुर्गति रूप ससार-जतारमा न प्रमणु करतो रहेशे तेने मोक्ष प्राप्त थशे
 नडि धन्यसार्थवाहना उपदेशने श्रद्धेय न भाननारा डेटलाड भाणुसे जेम नडि
 इण वृक्षोना मूल वगेरे जाधने त्याने त्याज भरणु पाभ्या, अहिच्छत्रा नग
 रीमा पडोथी राक्या नडि, तेमज तेज्जोनी पणु स्थिति थाय छे ॥ सू ३ ॥

नो श्रद्धयति नो रोयन्ति नो प्रतियति। ते धन्यस्य-एतन्मार्गम् श्रद्धयाना अरोच
यन्तः, अपतियन्त यत्रो नन्दिफला प्रथामार्गोपागच्छन्ति, उपागत्य तेषां नन्दि
फलाना मूलानि च यावत्-कन्दादीनि आहारयन्ति, तथा त्रयासु च विश्राम्यन्ति
तेषां सल्लु आपाते=पूर्व फलभक्षणादिमार्गे भद्रक भवति=धुम्रगदादिलामोभवति
किन्तु 'तत्रो पच्छा' ततः पश्चात्=फलभक्षणाद्यनन्तर परिणम्यमाना =सत्त्वरूपेण

मद्व नो मद्वहति ३ धन्यस्य एयमद्व असद्वमाणा ३ जेणेव ते नदिफला
तेणेव उवागच्छति उवागच्छिता तेषि नदिफलाण मूलाणि य जाव
वीसमति, तेषि ण आयाण भद्रण भवइ, तत्रो पच्छा परिणममाणा
जाव वररोवेति एवामेव समणाउसो ! जो अह निग्गयो वा निग्गयी
वा जाव पव्वडण पचसु कामगुणेषु सज्जेइ, सज्जिता जाव अणुपरिय
ट्टिस्सइ जहा वा ते पुरिसा) वहा पर क्खिनेक पुरुषो ने धन्यसार्थवाह
के इस कथन को कि नदिफल वृक्षों के कंदमूलादि नहीं खाना चाहिये
और न उनकी त्रयामें ही विश्राम करना चाहिये श्रद्धाकी दृष्टिसे नहीं
देखा उस पर अपनी श्रद्धा नहीं जमाई, उसे अपनी रुचि का प्रतीति
का विषय नहीं बनाया-वे पुरुष- धन्यसार्थवाह के इस कथन को अश्र-
द्धेय आदि मानकर जहा पर नदिफल वृक्ष थे- वहा गये वहा जाकर
उन्होंने उनके मूल कदादि कों को खाया उनकी छाया में विश्राम किया
उस समय उन्हें बड़ा आनन्द आया- स्वाद जन्य कोई अपूर्व सुख मिला
-किन्तु जब उनका परिपक्व काल आया जब वे खाये हुए मूलकन्दादि

धणसस एयमद्व अमद्वहमाणा ३ जेणेव ते नदिफला तेणेव उवागच्छति, उवा
गच्छिता तेषि नदिफलाण मूलाणि य जाव वीसमति, तेषि ण आयाण भद्रण,
भवइ, तत्रो पच्छा परिणममाणा जाव वररोवेति एवामेव समणाउसो ! जो अह
निग्गयो वा निग्गयी वा जाव पव्वडण पचसु कामगुणेषु सज्जेइ, सज्जिता
जाव अणुपरियट्टिस्सइ, जहा वा ते पुरिसा)

त्या डेटलाक भाष्यसोअे धन्यसार्थवाहना न दिक्ष्ण वृक्षोना कदमूलो वगेरे
भावा जेधअे नदि तेमए ते वृक्षोनी छायाभा पषु विसामो लेवो नदि आ
गतना कथन प्रत्ये श्रद्धावान थया नथी, तेना उपर विश्वास भूये नदि अने
प्रतीतिपूर्वक तेभा पीतानी अलिङ्गी भतावी नदि ते भाष्यसो धन्यसार्थवाहना
कथन अश्रद्धेय मानीने न्या नदिक्ष्ण वृक्षो डता त्या गया त्या जेधने तेमए
तेमना भूण कद वगेरे भाधा अने तेमना छायाभा विसामो लीधो ते समये
तो तेमने भूण ए आनंद प्राप्त थयो, इतोना स्वादभा अपूर्व सुख सत्तु,
पषु न्यारे तेओनी पायन किया थया भाडी, अेटले के भा' वगेरे,

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततः खलु म ध यः सार्थवाहः शरुटीगान्ठं योजयति, योजयित्वा यज्ञीयाच्छिञ्चन्ना नगरी तत्रोपागच्छति, उपागत्य अहिच्छन्ना प्राया नगर्या वहिः अद्योद्याने=मुख्योद्याने सार्थनिवेश करोति, कृत्वा शरुटी-शाकट मोचयति । ततः खलु स धन्य सार्थवाहः ‘मदत्थ’ महार्थ=महाप्रयो जनकः ‘मदग्ध’ महार्घ=महामूल्य, ‘महरिह’ मर्यादं=मदता योग्य ‘रायरिह’ राजाहं=राजयोग्य प्राप्त गृह्णाति, गृहीत्वा बहुभिः पुरुषैः सार्धं सपरिवृत अहिच्छन्ना नगरीं मध्यमज्येन अनुप्रविशति, अनुप्रविश्य यज्ञेन कनककेतू राजा तत्रोपागच्छति, उपागत्य ‘करयल जाय वडावेड’ करतल यावद् वर्धयति—कर-

‘तएण से धण्णे सत्थवाहे’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इमके वाद् (से धण्णे सत्थवाहे) उस धन्यसार्थवाहने (सगडी सागड जोयावेड जोयावित्ता जेणेव अहिच्छत्ता णयरी तेणेव उवागच्छइ) वहा से अपने गोडी और गाडों को जुनवाया और जुनवा कर जहा अहिच्छन्ना नगरी थी उस ओर चल दिया । (उवागच्छत्ता अहिच्छत्ताए नयरीए वहिया अगुज्जाणे सत्थनिवेश करेइ) धीरे धीरे अहिच्छन्ना नगरी में वह पहुँच गया । वहा पहुँच कर उसने बाहर रहे हुए प्रधान घनीचे में अपने सार्थ को ठहरा दिया । (करित्ता सगडी सागड मोयावेड) और वही पर अपनी गाडी और गाडों को ढील दिया । (तएण से धण्णे सत्थवाहे मदत्थ ३ रायरिह पाहुड गेण्हइ, गेण्हित्ता बहुहिं पुरिसेहिं सद्धिं सपरिवुडे अहिच्छत्त नयरिं मज्झ मज्झे ण अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता जेणेव कणगकेऊ राया तेणेव उवाग

तएण से धण्णे सत्थवाहे इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारभाड (से धण्णे सत्थवाहे) ते धन्यसार्थवाडे (सगडी सागड जोयावेड जोयावित्ता जेणेव अहिच्छत्ता णयरी तेणेव उवागच्छइ) त्याची पोतानी गाडीओ अने गाडाओने जेतरीनीने जे तरइ अहिच्छन्ना नगरी छती ते दिग्ग तरइ रवाना थये । (उवागच्छत्ता अहिच्छत्ताए नयरीए वहिया अगुज्जाणे सत्थनिवेश करेइ) अने धीमे धीमे अहिच्छन्ना नगरीमा पडोथी गये । त्या पडोथीने तेणे नगरीनी षडार आवेला प्रधान उद्यानमा पोताना सार्थने सुकाम नाथये । (करित्ता सगडीसागड मोयावेड) अने त्या जे पोतानी गाडीओ अने गाडाओने छेडाची नाथ्या ।

(तएण से धण्णे सत्थवाहे मदत्थ ३ रायरिह पाहुड गेण्हइ, गेण्हित्ता बहुहिं पुरिसेहिं सद्धिं सपरिवुडे अहिच्छत्त नयरिं मज्झ मज्झेण अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता

गच्छिता अहिच्छिताए णयरीए वहिया अग्गुज्जाणे सत्थनिवेसं
 करेइ करित्ता सगडीसागड मोयावेइ, तएण से धण्णे सत्थवाहे
 महत्थं३ रायरिहं पाहुड गेणहइ गेण्हत्ता बहुहि पुरिसंहिं सद्धिं
 संपरिवुडे अहिच्छत्त नयरिं मज्झ मज्झेणं अणुप्पविसइ अणुप्प-
 विसित्ता जेणेव कणगकेऊ राया तेणेउउवागच्छइ, उवागच्छिता
 करयल जाव वद्धावेइ, वद्धापित्ता तं महत्थं३ पाहुड उवणेइ,
 तएण से कणगकेऊ, राया हट्टुट्टुं धण्णस्स सत्थवाहस्स तं
 महत्थं३ जाव पडिच्छइ पडिच्छिता धण्ण सत्थवाह सक्कारेइ
 सम्माणेइ सक्कारित्ता सम्माणित्ता उस्सुक्क वियरइ २ पडिविस-
 ज्जेइ । तएणं से धण्णे सत्थवाहे भडविणिमयं करेइ करित्ता पडि-
 भड गेणहइ गेण्हत्ता सुहसुहेण जेणेउ चपानयरी तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छिता भित्तनाइ० अभिसमन्नागए विउलाइं माणुस्सगाइ
 कामभोगाइं भुजमाणे विहरइ, तेण कालेण तेणं समएण थेरा-
 गमपां धण्णे सत्थवाहे धम्मे सोच्चा जेट्टुपुत्ते कुडुव्वे ठावेत्ता
 पव्वइए सामाइयमाइयाइ एक्कारसअगाइ वद्धूणि वासाणि
 सामण्णपरियाग पाउणइ पाउणित्ता मासियाए सं० अन्नतरेसु
 देवलोएसु देवत्ताए उववन्ने महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ जाव
 अत्तं करेहिइ । एव खल्लु जंबू ! समणेण भगवया महावीरेण
 जाव सपत्तेण पन्नरसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्टे पण्णत्ते
 त्तिवेमि ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततः खलु म धन्यः सार्थवाह शकटीशान्द योजयति, योजयित्वा यज्ञीयाद्विच्छन्ना नगरी तर्जोपागच्छति, उपागत्य अहिच्छन्ना प्रायां नगर्यां वहिः अश्वयोद्याने=मुख्योद्याने सार्थनिवेश करोति, कृत्वा शकटी-शान्द मोचयति । ततः खलु स धन्य सार्थवाहः ‘महत्य’ महार्थं=महाप्रयो जनक. ‘महग्ध’ महार्थं=महामूल्य, ‘महरिह’ मर्हं=महता योग्य ‘रायरिह’ राजार्हं=राजयोग्य प्राप्तं गृह्णाति, गृहीत्वा बहुभिः पुरुषैः सार्धं सपरिवृत अहिच्छन्ना नगरीं मज्जम येन अनुप्रविशति, अनुप्रविश्य यज्ञीयं कनककेतू राजा तर्जोपागच्छति, उपागत्य ‘करयल जाय वद्धावेड’ करतल यायद् पर्ययति—कर-

‘तएण से धण्णे सत्थवाहे’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) हमके याद (से धण्णे सत्थवाहे) उस धन्यसार्थवाहने (सगडी सागड जोयावेड जोयावित्ता जेणेव अहिच्छत्ता णयरी तेणेव उवागच्छइ) वहा से अपने गोडी और गाडो को जुनवाया और जुनवा-कर जहां अहिच्छत्ता नगरी थी उस ओर चल दिया। (उवागच्छत्ता अहिच्छत्ताए नयरीए बहिया अगुज्जाणे सत्थनिवेश करेइ) धीरे धीरे अहिच्छत्ता नगरी में वह पहुँच गया। वहा पहुँच कर उसने बाहर रहे हुए प्रधान घगीचे में अपने सार्थ को ठहरा दिया। (करित्ता सगडी सागड मोयावेड) और वहीं पर अपनी गाडी और गाडों को ढील दिया। (तएण से धण्णे सत्थवाहे महत्थ ३ रायरिह पाहुड गेण्हइ, गेण्हत्ता बहूहिं पुरिसेहिं सद्धिं सपरिवुडे अहिच्छत्ता नयरीं मज्ज मज्जे ण अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता जेणेव कणगकेऊ राया तेणेव उवाग

तएण से धण्णे सत्थवाहे इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थवाह (से धण्णे सत्थवाहे) ते धन्यसार्थवाडे (सगडी सागड जोयावेड जोयावित्ता जेणेव अहिच्छत्ता णयरी तेणेव उवागच्छइ) तथा थी पोतानी गाडीओ अने गाडाओने जेतरीने जे तरइ अहिच्छत्ता नगरी छती ते दिसा तरइ खाना थये। (उवागच्छत्ता अहिच्छत्ताए नयरीए बहिया अगुज्जाणे सत्थनिवेश करेइ) अने धीमे धीमे अहिच्छत्ता नगरीभा पडोथी गये तथा पडोथीने तोले नगरीनी अडार आवेला प्रधान उधानभा पोताना सार्थने मुकाम नाथ्ये। (करित्ता सगडीसागड मोयावेड) अने तथा जे पोतानी गाडीओ अने गाडाओने छोडवी नाथ्ये।

(तएण से धण्णे सत्थवाहे महत्थ ३ रायरिह पाहुड गेण्हइ, गेण्हत्ता बहूहिं पुरिसेहिं सद्धिं सपरिवुडे अहिच्छत्ता नयरीं मज्ज मज्जेण अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता

तत्रपरिमृहीत शिरभारतं "गन्तव्यं मन्त्रं ऽत्रिंशत् इत्या राजानं जयविजयशब्देन
 वर्द्धयति, वर्द्धयिषा तन्महार्थं महार्थं महार्थं प्राप्नुयन् उपनयनि=राजं समीपे स्था
 पयति । तत खलु स कनककेतु राजा दृष्टुष्टदयो हर्षयग्निरिर्षदहयो धन्यस्य
 सार्थसाहस्य तमहार्थं ३ यावत् प्राप्नु । 'पडिच्छद्' प्रतीच्छति=स्वीकरोति,
 प्रतीप्य धन्य सार्थसाह सत्यायनि सम्मानयति, स ह्यय सम्मानय तामै 'उस्तुक्क'
 उच्छुक्क=शुलभाभायव 'केनापि राजपुत्रेणास्मात्परो न प्रागः' इत्येतरूपमा
 ज्ञापत्र वितरति=ददाति, वितीर्थ त प्रतिविसर्जयति ।

छद्, उवागच्छित्ता करयल जाव प्रानेड, वद्वावित्ता त महत्थ ३ पाहुड
 उवणेइ) इस के बाद उस धन्य सार्थसाह ने महार्थ साधक, महामूल्य
 एव महा पुरुषों के योग्य-प्राप्त-भेट को साथ में लिया, और ठेकर
 अनेक पुरुषों के साथ २ अछिच्छत्रा नगरी में बीच से होता हुआ प्रविष्ट
 हुआ । नगरी में प्रविष्ट होकर वह जहा कनक केतु राजा ये वहा गया
 वहाँ जाकर उसने राजा को दोनों हाथ जोड़ कर नमस्कार किया, और
 जय विजय शब्दों को उच्चारण करते हुए उन्हें बधाई दी । बधाई देकर
 उसने फिर राजा के समक्ष अपनी भेट रख दी । (तण से कणगकेऊ
 राया हृद् तुष्ट० धणगस सत्यवाहस्य त महत्थ ३ जाव पडिच्छद् पडि
 च्छित्ता धण सत्यवाह सकारेड सम्माणेड, सकारित्ता सम्माणित्ता
 उस्तुक्क वियरइ २ पडिविसज्जेइ) कनककेतु राजाने हर्षित एव सतुष्ट
 होकर धन्यसार्थसाह को उस महार्थ साधक महामूल्य राज योग्य भेट
 जेणेव वणगकेउ राया तणेव उवागच्छद्, उवागच्छित्ता करयल जाव वद्वावेइ,
 वद्वावित्ता त महत्थ ३ पाहुड उवणेइ)

त्यारपडी ते धन्यसार्थवाडे महार्थ साधक जहु किमती अने महा पुइ
 घेने योग्य भेट साथे लधने धणु माणुमेनी साथे अछिच्छत्रा नगरीनी
 वञ्चेना भागे (राजमार्ग) धधने नगरीमा प्रविष्ट थयो नगरीमा प्रवेशीने
 ते जथा कनककेतु रण डता त्या गथो त्या जधने तेखे रानने जने डाय
 नेडीने नमस्कार कर्था अने जय विजय शब्दो उच्चारण करता तेभने वधाई
 आपी वधाई आप्या पडी तेखे राननी साथे घेतानी भेट भूडी दीधी

(तण से कणगकेऊ राया हृद् तुष्ट० धणगस सत्यवाहस्य त महत्थ ३
 जाव पडिच्छद् पडिच्छित्ता धण सत्यवाह सकारेड सम्माणेड, सकारित्ता सम्मा
 णित्ता उस्तुक्क वियरइ २ पडिविसज्जेइ)

कनककेतु रानने हर्षित तेभ २ सतुष्ट थधने महार्थ साधक महामूल्य
 वाणी अने राननेने भाटे योग्य भेट स्वीकारी दीधी स्वीकारे आह

ततः खलु सधन्य सार्धवाहस्त्र 'भडविणिमय' भाण्डविनिमय = भाण्डानां = क्रयाणकवस्तुनां विनिमयम् = आदानप्रदानं करोति, कृत्वा 'पडिभड' प्रतिभाण्ड = विनिमयेन प्राप्त वस्तुजात गृह्णाति, गृहीत्वा शकटीशाकटे भरति भृत्वा शकटीशाकटे योजयति, योजयित्वा सुखं = सुखेन = सुखपूर्वक यत्रैव चम्पानगरी = स्वनिवासस्थानं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य मित्रज्ञातिस्वजनसम्बन्धि परिजनैः सह 'अभिसमन्नागए' अभिसमन्नागत = समिलितो त्रिपुलान् मानुष्यकान् कामभोगान् भुञ्जानो विहरति ।

को स्वीकार कर लिया। स्वीकार करके फिर उन्होंने ने धन्यसार्धवाह का सत्कार एवं सन्मान किया। सत्कार मन्मान करके "किसी भी राज पुरुष को इन से कर नहीं लेना चाहिये इम प्रकार का शुल्क भाध विषयक आज्ञा पत्र" उसके लिये प्रदान किया और प्रदान करके बाद में उसे वहा से बिदा कर दिया। (तण्ण से धण्णे सत्यवाहे भडविणिमयं करेइ, करित्ता पडिभड गेण्हइ, गेण्हित्ता सुहं सुहेण जेणेव चपा नगरी तेणेव उवागच्छइ) इसके बाद धन्यसार्धवाह ने वहा रह कर अपनी क्रयाणक वस्तुओं का विक्रय किया और उससे प्राप्त द्रव्य से और दूसरी वस्तुओ को खरीदा। खरीद कर उसने उन्हें गाडी और गाडों में भरा भरकर उन्हें जुनवाया और जुनवाकर फिर वह वहां से चपानगरी की ओर वापिस चल दिया। (उवागच्छित्ता मित्तनाइ० अ भिसमन्नागए विउलाइ माणुस्सगाइ कामभोगाइ भुजमाणे विहरइ)

तेमहे धन्यसार्धवाहने सत्कार तेमज सन्मान कथुं सत्कार अने सन्मान करीने शक्ये 'ठाण्पथु राजपुइय तेमनी पासेथी राजकर ले नडि' ते प्रभा-
लेनी व्यवस्था करता तेमने पुके भाइनु आज्ञापत्र लपी आप्थु त्थारपथी तेने त्थायी नवानी आज्ञा आपी

(तण्ण से धण्णे सत्यवाहे भडविणिमय करेइ, करित्ता पडिभड गेण्हइ, गेण्हित्ता सुह सुहेण जेणेव चपानगरी तेणेव उवागच्छइ)

त्थारथाइ धन्यसार्धवाहे त्था रुडीने पोतानी कयाणक वस्तुओने तेथी अने तेनाथी ने धन भण्थु तेनाथी भीण् वस्तुओ अरीही लीधी वस्तुओनी अरीह करीने तेहे अधी वस्तुओनी अरीही करीने तेहे अधी वस्तुओने गाडी तेमज गाडाओसा लरी अने त्थारपथी गाडी अने गाडाओने नेतराथीने त्थायी चपा नगरी तरइ पाछे खाना थयो

(उवागच्छित्ता मित्तनाइ० अभिसमन्नागए विउलाइ माणुस्सगाइ काम भोगाई भुजमाणे विहरइ)

तस्मिन् काले तस्मिन् समये स्थिरागमनम् । धन्यः सार्यमागे धर्मश्चा
 प्रतिबुद्धः सन् ज्येष्ठपुत्र कुटुम्बे स्थापयित्वा प्रवर्जितः, सामायिकादीनि पद्यान्ना
 ज्ञान्पपीते । बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति, पालयित्वा मासिग्या सले
 खनयाऽऽत्मानं जुष्टां पष्टिं भक्तानि अनशनेन श्रित्वा कालमासे गाल कृत्वा-

चपानगरी में आकर वह अपने मित्र, ज्ञानि, स्वजन, सखन्धी परिजनो
 से मिला और विपुल मनुष्य भव सखन्धी काम भोगों को भोगने लगा
 (तेण कालेण तेण समणण थेरागमणं, धण्णे सत्थवाहे धम्म सोच्चा
 जेट्ठ पुत्त कुट्टवे ठवेत्ता पव्वइए, सामाइयमाइयाइ एकारस अगाइ बहूणि
 वासाणि सामण्णपरियाग पाउणित्ता मासियाण सलेहणाण अन्नतरेसु
 देवलोएसु देवत्ताण उववन्ने महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ जाव अत्त
 करेहिइ । एव खलु जवू । समणेण भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेण
 पन्नरसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्तिवेमि) उसी काल और
 उसी समय में वहा पर स्थचिरों का आगमन हुआ । धन्यसार्यवाह ने
 उनसे धर्म का व्याख्यान सुना सुनकर वह प्रतिबुद्ध हो गया और
 प्रतिबुद्ध हो करके फिर वह कुटुम्ब में अपने ज्येष्ठ पुत्र को रखकर दीक्षित
 होकरके उसने सामायिक आदि ग्यारह अगोंका अध्ययन किया । अनेक
 वर्षों तक श्रामण्य पर्याय का पालन कर १ मास की सलेखना से ६०
 भक्तों का अनशन द्वारा छेदन करके काल अवसर काल करके देव

थ या नगरीमा आवीने ते पोताना मित्र ज्ञानि, स्वजन, सखन्धी
 परिजनोने भये। अने विपुल मनुष्य भवना कामभोगो लोगववा लाग्ये।

(तेण कालेण तेण समणण थेरागमण धण्णे सत्थवाहे धम्म सोच्चा जेट्ठ
 पुत्त कुट्टवे ठवेत्ता पव्वइए, सामाइयमाइयाइ एकारसअगाइ बहूणि वासाणि
 सामण्णपरियाग पाउणित्ता मासियाण सलेहणाण अन्नतरेसु देवलोएसु
 देवत्ताण उववन्ने महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, जाव अत्त करेहिइ । एव खलु जवू !
 समणेण भगवया महावीरेण जाव संपत्तेण पन्नरसमस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति वेमि)
 ते काले अने ते समये ते नगरीमा स्थचिरे। पद्यार्थो धन्यसार्यवाहे तेज्जाना
 सुभार्थो धर्मनु व्याख्यान साभल्यु अने साखन्धीने तेने प्रतिबोध थये। प्रतिबुद्ध
 थयने तेहे पोताना कुट्टुवना वडा तरीके पोताना भेटा पुत्रनीनीभणुक्क करीने
 दीक्षा अहणु करी दीक्षा अहणु करी जाइ तेहे सामायिक वगेरे अगियार अ गोन
 अध्ययन कथुं अने धण्णा वर्षो सुधी श्रामण्य पर्यायत्त पालन करीने अके
 भासनी सलेखनाथी ६० अक्षतोत्त अनशन वडे छेदन करीने, वयते

अन्यतरेषु देवलोकेषु 'देवताए' देवतया=देवत्येन उपपन्नः । महाविदेहे वर्षे
सेत्स्यति यावत्-सर्वदुःखानामन्त करिष्यति । एव खलु हे जम्बू । श्रमणेन भग-
वता महावीरेण यावत्-सिद्धिगतिनाम प्रेय स्थान सम्प्राप्तेन पञ्चदशस्य ज्ञाताध्यय-
नस्य अयमर्थ =पूर्वोक्तो भावः प्रज्ञप्त 'त्तिरेमि' इति ब्रवीमि व्याख्या पूर्ववत् ॥ सू० ४ ॥

इति श्री विश्वविख्यात - जगद्ब्रह्म-प्रसिद्ध पाचकपञ्चदशभाषाकलित-
ललितकलापालापरु -प्रथिथुद्वेगप्रपन्नैकग्रन्थनिर्मापरु-वादिमानमर्दक
श्रीशाहू उत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-
कोल्हापुरराजगुरु-पालब्रह्मचारि जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री
घासीलालप्रतिविरचिताया श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रस्यानगारधर्माभृ-
तवर्षिण्याख्याया व्याख्याया पञ्चदशमध्ययन समाप्त ॥ १५ ॥

लोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हो गया । महाविदेह क्षेत्र से यह
सिद्ध अवस्था को प्राप्त करेगा-यावत् समस्त दुःखों का अन्त करने वाला
होगा इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो सिद्धगति
नाम के स्थान को प्राप्त कर चुके हैं इस पदह्वे ज्ञाताध्ययन का यह
पूर्वोक्त भाव प्रज्ञप्त किया है । ऐसा मैंने उनके मुख से सुना है सो यह
वैसा तुमसे कहा है ॥ सू० ४ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराजकृत "ज्ञाता-
धर्मकथाङ्गसूत्र"की अनगारधर्माभृतवर्षिणी व्याख्याका पदहवां
अध्ययन समाप्त ॥ १५ ॥

क्षण करीने देवलोकेषु देवता पर्यायथी जन्म पाभ्ये । महाविदेह क्षेत्रथी ते
सिद्ध अवस्था प्राप्त करथे यावत् अथा दुःखेनो ते अन्त करनार थथे आ
रीते हे जम्बू ! श्रमणु लगवान् महावीरे के ज्ञेय्ये सिद्धिगति नामना
स्थानने भगवी वीरु छे-आ पदरमा ज्ञाताध्ययनने आ पूर्वोक्त भाव निरु
षित थथी छे मे जे प्रभाणु तेज्योश्रीना सुभथी सालज्यु छे ते प्रभाणु ज
तमानी आगण रजु कथु छे ॥ सूत्र ४ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजकृत ज्ञाताध्ययन सूत्रनी
अनगारधर्माभृतवर्षिणी व्याख्यानु पदरमु अध्ययन समाप्त ॥ १५ ॥

तस्मिन् काले तस्मिन् मगये स्थिरागमनम् । धन्यः सार्वपादो धर्मभ्या
प्रतिबुद्धः सन् ज्येष्ठपुत्रं कुटुम्बे स्थापयित्वा प्रव्रजितः, सामायिकातीति पताञ्जा
ज्ञान्यधीते । बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति, पालयित्वा मामिन्या सले-
खनया ५५त्मानं जुष्टां पष्टिं भक्तानि अनशनेन त्रिचा कालमासे जालं कृत्वा-

चपानगरी में आकर वह अपने मित्र, ज्ञाति, स्वजन, सधन्धी परिजनों
से मिला और विपुल मनुष्य भव सधन्धी काम भोगों को भोगने लगा
(तेण कालेण तेण समणण थेरागमणं, धण्णे सत्थवाहे धम्म सोच्चा जेठ
पुत्त कुट्टवे ठवेत्ता पव्वइए, सामाइयमाइयाइ एकारम अगाइ बहूणि
वासाणि सामण्णपरियाग पाउण्णित्ता मासियाण सलेहणाण अन्नतरेसु
देवलोएसु देवत्ताण उववन्ने महाविदेहे वासे सिञ्जिहिइ जाव अत्त
करेहिइ । एव खलु जवू । समणेण भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेण
पन्नरसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति वेमि) उसी काल और
उसी समय में वहाँ पर स्थविरो का आगमन हुआ । धन्यमार्थवाह ने
उनसे धर्म का व्याख्यान सुना सुनकर वह प्रतिबुद्ध हो गया और
प्रतिबुद्ध हो करके फिर वह कुटुम्ब में अपने ज्येष्ठ पुत्र को रखकर दीक्षित
होकरके उसने सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । अनेक
वर्षों तक श्रामण्य पर्याय का पालन कर १ मास की सलेखना से ६०
भक्तों का अनशन द्वारा छेदन करके काल अवसर काल करके देव

थ पा नगरीमा आवीने ते पोताना मित्र ज्ञाति, स्वजन, सधन्धी
परिजनाने भवथे अने विपुल मनुष्य भवना कामलोगे लोकाववा दाथे

(तेण कालेण तेण समणण थेरागमणं धण्णे सत्थवाहे धम्म सोच्चा जेठ
पुत्त कुट्टवे ठवेत्ता पव्वइए, सामाइयमाइयाइ एकारम अगाइ बहूणि वासाणि
सामण्णपरियाग पाउण्णित्ता मासियाण सलेहणाण अन्नतरेसु देवलोएसु
देवत्ताण उववन्ने महाविदेहे वासे सिञ्जिहिइ, जाव अत्त करेहिइ । एव खलु जवू ।
समणेण भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेण पन्नरसमस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति वेमि)
ते काले अने ते समये ते नगरीमा स्थविरो धर्मार्थवाह तेजोना
मुपधी धर्मनु व्याख्यान सांख्य अने सांख्यीने तेने प्रतिबोध थयो प्रतिबुद्ध
थधने तेले पोताना कुटुम्बना वडा तरीके पोताना मोटा पुत्रनीनीमल्लुक करीने
दीक्षा अर्हणु करी दीक्षा अर्हणु कर्या पाठ तेले सामायिक वगेरे अगियार अंगोनु
अध्ययन कथुं अने धणा वर्षो सुधी श्रामण्य पर्यायनु पालन करीने अक
भाक्षनी सलेखनाथी ६० भक्तोनु अनशन वडे छेदन करीने वधते

सुकुमाल जाव तेसि णं माहणाणं इट्टाओ ५, विपुले माणु-
 स्सए जाव विहरंति । तएण तेसिं माहणाण अन्नया कयाई
 एगयओ समुवागयाणं जाव इमेयारूवे मिहो कहासमुह्लावे
 समुप्पजित्था, एव खलु देवाणुप्पिया । अम्हं इमे विउले
 धणे जाव सावतेज्जे अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवसाओ
 पकाम दाउं पकाम भोत्तुपकामं परिभाएउं त सेय खलु अम्हं
 देवाणुप्पिया । अन्नमन्नस्स गिहेसु कल्लाकल्लि विउल असण
 पाण खाइम साइमं उवक्खडाविउ उवक्खडावित्ता परिभुज-
 माणाणं विहरित्तए, अन्नमन्नस्स एयमट्ट पडिसुणेति परिसु-
 गित्ता कल्लाकल्लि अन्नमन्नस्स गिहेसु विपुल असण४ उव-
 क्खडावेति, उवक्खडावित्ता परिभुजमाणा विहरति, तएणं
 तीसे नागसिरीए माहणीए अन्नया भोयणवारएजाए यावि
 होत्था, तएण सा नागसिरी विपुल असणं४ उवक्खडेति
 उवक्खडित्ता एगं महंसालइय तित्तालाउय बहुसभारसंजुत्तं
 णेहावगाढ उवक्खडेइ उवक्खडित्ता एग विट्ठय करयलसिं
 आसाएइ आसाइत्ता त खारं कडुयं अक्खज्ज अभोज्ज
 विसंवेभूय जाणित्ता एवं वयासी-धिरत्थु ण मम-नागसिरीए
 अहन्नाए अपुन्नाए दूभगाए दूभगसत्ताए दूभगणिबोलियाए
 जीएणं मए सालइए बहुसंभारसभिए नेहावगाढे उवक्ख-
 डिए, सुवहुदवक्खए, नेहक्खए य कए, तं जइणं ममं
 जाउयाओ जाणिस्सति तो णं मम खिसिस्सति त जाव
 ताव मम जाउयाओ ण जाणंति ताव मम सेय एयं साल-

॥ अथ षोडशाध्ययनं प्रारभ्यते ॥

उक्त पञ्चदशाध्ययनम्, तत्र विषयमद्भोऽनर्थस्य कारणमिन्युपदिष्टम् इह षोड्
शाध्ययने तु तद्विषयनिदानमनर्थस्य मूलं भवतीत्युच्यते, इत्येव संबन्धेन प्रसङ्गतः
प्राप्तस्यास्याध्ययनस्य प्रथमं सूत्रमाह—'जङ्घा भते !' इत्यादि ।

मूलम्—जङ्घा णं भते । समणेणं भगवया महावीरेणं जाव
सपत्तेण पन्नरसमस्त नायज्झयणस्त अयमट्टे पणत्ते सोल-
समस्त णं भते णायज्झयणस्त णं समणेण भगवया महा-
वीरेणं जाव सपत्तेणं के अट्टे पणत्ते ?, एवं खलु जवू ।
तेणं कालेणं तेणं समएण चपा नामं नयरी होत्था, तसिेणं
चपाए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमेदिसिभाए सुभूमिभांगे
उज्जाणे होत्था, तत्थ णं चपा नयरीए तओ माहणा भायरी
परिवसंति, तं जहा-सोमे सोमदत्ते सोमभूर्इ, अट्टा जाव
अपरिभूया रिउव्वेय जाव सुपरिनिट्टिया, तेसि ण माहणाणं
तओ भारियाओ होत्था, त जहा-नागसिरी भूयसिरी जक्खसिरी

सोलहवा अध्ययन प्रारभ

षोडहवा अध्ययन समाप्त हो चुका-अब सोलहवा अध्ययन प्रारभ
होता है । षोडहवे अध्ययन में विषयसंग 'अनर्थ' का कारण कहा गया
है-अब सोलहवे अध्ययन में 'विषय निदान' 'अनर्थ' का कारण होता है
यह स्पष्ट किया जायगा । इस संबन्ध से आया हुआ इस अध्ययन का
प्रथम सूत्र है 'जङ्घा भते ।' इत्यादि ।

सोणमु अध्ययन प्रारंभ

पहरमु अध्ययनं पुं थाय छे उवे-सोणमु अध्ययनं प्रारंभ थाय छे
पहरमा अध्ययनमा विषयसंगने अनर्थं तु कारुणं णताववामा-आण्यु छे उवे
सोणमा अध्ययनमा विषय-निदान अनर्थं तु कारुणं डोय छे, आ वात स्पष्ट
करवामा आवशे आ विषयने लगतु आ अध्ययनतु पडेवु सूत्र आ छे—

जङ्घा भते इत्यादि—

श्रीसुधर्मास्वामी कथयति—' एव खलु जन्वू ' इत्यादि । एव खलु हे जन्मूः ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये चम्पा नाम नगरी आसीत्, तस्याः खलु चम्पाया नगर्या वहिरुत्तरपारस्त्ये दिग्भागे सुभूमिभागनाममुद्यानमासीत्, तत्र खलु चम्पाया नगर्या त्रयो ब्राह्मणा भ्रातरः परिवसन्ति. तद् यथा—(१) सोम., (२) सोमदत्त., (३) सोमभूतिः, ते किं भूताः—आढ्याः—'यनवन्त' यावद्—अपरिभूता., तथा—' रिउब्वेय जाव ' ऋग्वेद—यजुर्वेदमामवेदाथर्ववेदेषु साङ्गोराङ्गेषु सुपरिनिष्ठिता. । तेषां खलु ब्राह्मणानां तिस्रोभार्या आसन्, तद् यथा—(१) नागश्रीः,

सोलहवे ज्ञाताऽयन का ह भदंत ? उन्ही श्रमण भगवान महावीरने कि जो सिद्धि गति नामक स्थान को प्राप्त हो चुके हैं क्या भाव अर्थ प्रतिपादित किया है ? इस प्रकार के जंजू स्वामी के प्रश्नका उत्तर देते हुए सुधर्मास्वामी उनसे कहते हैं कि जन्वू ! (तेणं कालेण तेण समएण चपा नामं नयरी होत्था, तीसेण चपाए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सुभूमिभागे उज्जाणे, होत्था, तत्थ ण चपाए नयरीए तओ माहणा भायरा परिवसति) उस काल और उस समय में चपा नामकी नगरी थी । उस चपा के बाहिर ईशान कोण में सुभूमि भाग नाम का उद्यान था । उसी चपा नगरी में तीन ब्राह्मण भाइ रहते थे (त जहा) उनके नाम ये हैं—(सोमे सोमदत्ते सोमभूई) सोम, सोमदत्त, और सोमभूति (अड्डा जाव अपरिभूया) ये सब धन धान्यादि सपन्न एवं जन मान्य (रिउब्वेय, जाव सुपरिनिष्ठिया) ये सबके सब ऋग्वेद आदि चारों वेदों

महावीर—के जेजो सिद्धिगति भेजणी चूक्या छे—सोणमा साताध्वयनने सो अर्थ निष्पित कर्था छे ? आ रीते जणू स्वामीना प्रश्नने सालणीने सुधर्मा स्वामी तेभने उत्तर आपता कडे छे जे छे जणू ।

(तेण कालेण तेण समएण चपा नाम नयरी होत्था, तीसेण चपाए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सुभूमिभागे उज्जाणे, होत्था तत्थ ण नयरीए तओ माहणा भायरा परिवसति)

ते काले अने ते समये चपा नामे नगरी छती ते चपा नगरीनी पहार धशान जेजुमा सुभूमिभाग नामे उद्यान छत्तु ते चपा नगरीमा त्रषु ब्राह्मणु भाधजो रहैता छता (तजहा) तेभना नाम आ प्रभाणु छे—(सोमे सोमदत्ते सोमभूई) सोम, सोमदत्त, अने सोमभूति (अड्डा जाव अपरिभूया) तेजो त्रषु धनधान्य वगेरेथी सपन्न तेभज जनमान्य छता (रिउब्वेय, जाव सुपरिनिष्ठिया) तेजो त्रषु ऋग्वेद वगेरे थारे वेदेन्ता थारा साता छता (तेसि माहणा ण तओ भारियाओ होत्था त जहा—नागसिरी, भूपसिरी

इयं तित्तालाउ य बहुसंभारणेहकयं एगते गोवेत्तए अन्न
 सालइयं महुरालाउयं जाव नेहावगाढं उवक्खडेत्तए, एवं
 संपेहेइ संपेहिता त सालइय जाव गोवेइ, अन्न सालइयं
 महुरालाउयं उवक्खडेइ, तेसिं माहणाणं ण्हायाणं जाव
 सुहासणवरगयाण तं विपुलं असणं४ परिवेसेइ, तएणं ते
 माहणा जिमियभुत्तुत्तरागया समाणा आयंता चोम्हा परम-
 सुइभूया सकम्मसपउत्ता जाया यावि होत्था, तएण ताओ
 माहणोओ ण्हायाओ जाव विभूसियाओ त विपुल असणं
 ४ आहारेति आहारित्ता जेणेव सयाइ२ गेहाइ तेणेव उवा-
 गच्छइ उवागच्छित्ता सकम्मसपउत्ताओ जायाओ ॥सू०१॥

टीका—श्रीजम्बूस्वामी श्रीसुधर्मस्वामिन पृच्छति—यदि खलु हे भदन्त ! =
 हे भगवन् श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनामयेय स्थान समाप्तेन
 पञ्चदशस्य अयम्—उक्तरूपः, अर्थः प्रज्ञप्तः, षोडशस्य खलु ज्ञाताध्ययनस्य श्रमणेन
 भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनामयेय स्थान समाप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ?

टीकार्थ—(जइण भते । समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण
 पन्नरसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते सोलसमस्स ण भते ? णाय
 ज्झयणस्सण समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ?
 एवं खलु जव् ?) श्री जम्बू स्वामी सुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि भदत ।
 श्रमण भगवान् महावीरने जो कि सिद्धि गति नामक स्थानको प्राप्त हो
 चुके हैं पन्द्रहवें ज्ञानाध्ययनका यह पूर्वोक्तरूपसे अर्थ निरूपित किया है—तो

टीकार्थ—(जइण भते । समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण पन्नरस-
 मस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते सोलसमस्स ण भते ! णायज्झयणस्स ण
 समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जव् !)

श्री जम्बू स्वामी सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के छे भदत । श्रमण लय
 वान महावीरे के—जेओ सिद्धिगति नामक स्थानने भेजवी बुक्या छे—पइरमा
 ज्ञाताध्ययनने आ पूर्वोक्त इपे अर्थ निरूपित कथे छे तो ते

प्रकाम दातु, प्रकाम भोक्तु प्रकाम परिभाजयितुम् ततः = तस्मात् श्रेय =
 श्रेयस्कर खलु अस्माक हे देवानुप्रिया ! अन्योन्यस्य = परस्परस्य गृहेषु
 'कल्लारुह्णि' कल्याणरूप प्रतिदिस विपुल = गहुलम्, अशन पान खाद्यं स्वाद्यं
 'उवक्खडाउ' उपस्कार्युपरिभुज्जानानां विहर्त्तुम् । अन्योन्यस्य=परस्परस्य एत-
 मये ते त्रयो भ्रातरो ब्राह्मणाः प्रतिश्रूयन्ति=स्वीकुर्वन्ति प्रतिश्रुत्य 'रुह्णारुह्णि'

वसाओ प्रकाम दाउ प्रकाम भोक्तु प्रकाम परिभाणउ-त सेय खलु
 अम्ह देवाणुप्पिया । अन्नमन्नस्स गिहेसु कल्लारुह्णि विउल अमण पाण
 एाइम साइम उवक्खडाविउ) हे देवानुप्रियो ! अपने पास विपुलमात्रा
 में, गणित, धरित, मेय, एव परिच्छेयरूप चारों प्रकार का धन है,
 यावत् पद्मराग आदिरूपस्वापत्य भी हैं, कनक, सुवर्ण, रत्न, मणिमौक्तिक
 आदि सब कुछ है-और वह इतना अधिक है कि सात पीढी तक भी
 यदि खूब दान दिया जावे, बैठ २ खूब खाया जावे-और उसका
 हिस्सा भाग भी कर दिया जावे-तौ भी वह समाप्त नहीं हो सकता है ।
 इसलिये हम लोगों को उचित है कि हम लोग प्रति दिन एक दूसरे के
 घर पर अशन, पान, खाद्य एव स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार विपुल मात्रा
 में बनवावे और (उवक्खडाविउत्ता परिभुज्जमाणाण विहरित्तए) धनवा
 कर उस का भोजन करे । (अन्नमन्नस्स एयमद्द पडिसुणेंति) इस प्रकार
 का आपस का विचार उन्होंने एक दूसरे का स्वीकार कर लिया ।

जाप आसत्तमाओ कुट्टमोओ प्रकाम दाउ प्रकाम भोक्तु प्रकाम परिभाणउ त सेय
 खलु अम्ह देवाणुप्पिया ! अन्नमन्नस्स गिहेसु कल्लारुह्णि विउल असण पाण खाइम
 साइम उवक्खडाविउ)

हे देवानुप्रियो ! आपसी पाने पुण्डण प्रमाणमा गणित, धरित, मेय,
 अने परिच्छेय रूप चारो नततु धन छे यावत् पद्मराग वगेरे इप स्वापत्य
 पणु छे कनक सुवर्ण, रत्न, मणि, मोती, वगेरे अणु छे-अने के कछ छे
 ते ओठलु अणु छे के सात पीढी सुधी पणु के पुण्डण प्रमाणमा दान करवामा
 आवे छता ते ष्टगे नडि ओथी अमने ओ योग्य लागे छे के अने अथा
 दरैअ ओठणीअने घेर अशन, पान, खाद्य अने स्वाद्यरूप चार नतना
 आहारो पुण्डण प्रमाणमा अनावडावीअे अने (उवक्खडाविउत्ता परिभुज्जमाणाण
 विहरित्तए) अनावडावीने अनीअे (अन्नमन्नस्स एयमद्द पडिसुणेत्ति) आ रीते
 अथाअे ओकमत थधने वात स्वीकारी वीधी

(२) भूतश्रीः, (३) यक्षश्रीश्च, ताः किं भूताः—सुकुमारपाणिपादा, यावन-सर्वाङ्ग-सुन्दर्यः, तेषां खलु ब्राह्मणानामिष्टाः=रुमतीयाः, त्रिपुलान् मानुष्यकान् यावत् कामभोगान् भुञ्जानां विहरन्ति ।

ततः खलु तेषां ब्राह्मणानामन्यदा यदापिदेवतः समुपागतानां यावत् अब मेतद्रूप-वदयमाणस्वरूपः, मिथ=परस्पर, कथामगुह्यापः=शांतालापः समुद्रप घत-एव खलु हे देवानुमियाः! अस्माकमिदं त्रिपुलं यत्र गणिमघरिममेयपरि-च्छेद्य भेदान्चतुर्विधं यावत् 'सावतेज्जे' स्वापतेय - पद्मरागादिरूपं वा, अब यावत्पद्मोध्य-वनसमुवर्णरत्नादिकं तथा-मौक्तिकादिकं च विघते, किंभूतं तदि-त्याह-'अलाहि' पर्याप्त=परिपूर्ण-यावत्-आसत्तमात् कुञ्चशात्=सप्तमवगपर्यन्त

के अच्छे जानकार थे । (तैसिण माहणाण तओ भारियाओ तैर्या-त जहा-नागसिरी, भूयसिरी, जखरसिरी, सुकुमाल जाव तैसि ण माहणाण इट्ठाओ ५ त्रिपुले मा० जाव विहरति) इन तीनों ब्राह्मणों की तीन स्त्रिया थी । उनके नाम ये हैं ।-नाग श्री, भूत श्री, और यक्ष श्री, ये सब सुकुमार करचरणवाली थी यावत् सर्वाङ्ग सुन्दर थीं । ये तीनों ब्राह्मण इनके साथ मनुष्यभव सवन्धी काम भागों को भोगते हुए आनन्द से रहते थे । (तण्ण तैसि माहणाण अन्नया कयाई एगय ओ समुवागयाण जाव इमेयारूवे मिहो क्हासमुल्लावे समुप्पज्जित्या) एक दिन की बात है कि जब ये तीनों भाई एक जगह बैठे हुए थे तब इनका परस्पर में इस प्रकार का विचार चला—(एव खलु देवाणुप्पिया । अम्ह इमे विडले धणे जाव सावतेज्जे अलाहि जाव आसत्तमाओ कुल-

जखसिरी, सुकुमार जाव तैसि ण माहणाण इट्ठाओ ५ त्रिपुले मा० जाव विहरति)
आ त्थे प्पाह्णुणे ने त्थे श्रीओ इती तेमना नामो आ 'प्रभाणे छे नागश्री, भूतश्री, अने यक्षश्री तेओ त्थे सुकैभण इत्थ अने पगवाणी इती अने ष्ठा अगो तेमना सुद्धर इता त्थे प्पाह्णुणे तेमनी साधे मनुष्य लवना धामभोगो लोगवता सुप्पेथी रहता इता

(तण्ण तैसि माहणाण अन्नया कयाई एगयओ समुवागयाण जाव इमेयारूवे मिहो क्हासमुल्लावे समुप्पज्जित्या)

એક દિવસની વત છે કે તેઓ ત્રણે ભાઈ એક સ્થાને બેઠા હતા ત્યારે તેઓ પરસ્પર આ બંધનો વિચાર કરવા લાગ્યા કે—

—(એવું જાણી પિયા ! અમ્હારે આ બંધનો વિચાર કરવા જાય //

आसादयति, अस्वाग्र तत् क्षार कडुक्रमस्याग्रमभोज्य विषभूत ज्ञात्वा एवमवादीत्-
धिगस्तु मा नागश्रियमन्यामपुण्या दुर्भगा 'दुभ'सत्ताए' दुर्भगसत्त्वा दुर्भग=निष्फल
सत्त्व=बल यस्याः सा ता व्यर्षपरिभगामित्यर्थः 'दुभगर्णिलोलिए' दुर्भगनिम्ब
गुलिकानिम्बफलिका, तद्वद् दुर्भगा ता=जनैरनादरणीयामित्यर्थः, जन द्वितीयार्थे
पक्षी माकृतत्वात्, 'जीए' यथा खलु मया शारदिक बहुसभारद्रव्यसभृत स्नेहाव-

(उक्त्वत्तुङ्गिता एग विदुय करयलसि आसाएइ) जब वह तैयार शाक
हो चुका-तब उसने उसमें से एक चिन्डु मात्र शाक अपनी हथेली पर
रखा और फिर उसे चखा-(आसाइत्ता त खार कडुय अक्खज्ज अभोज्ज
विसम्भूय जाणित्ता एव वयासी-विरत्थु ण मम नागसिरीए अहन्नाए,
अपुन्नाए दूरभगाए दुभगसत्ताए दुभगर्णिलोल्याए जीएण मए सालइए
बहुसभारसभिए नेहावगाढे उक्खडिए) चखकर उसे ज्ञात हुआ
कि यह शाक तो बहुत खारा है, बहुत अधिक कड़वा है। खाने के
योग्य नहीं है भोजन में लेने के लायक नहीं है, यह तो विष जैसा है
ऐसा जानकर उसने मन ही मन विचार किया उस विचार में उसने
कहा-मुझ नागश्री को धिक्कार है, मैं अधन्या और अपुण्या हूँ। जनो
के द्वारा आदर पाने योग्य नहीं हूँ। मेरे इस बल को बार २ धिक्कार
हो-मेरा यह बल बिलकुल निष्फल है मेने जो इस शाक के बनाने में
इतना उद्यम किया है वह मेरा सर्वथा निष्फल गया। जिस प्रकार नीम-

उपर धी तरतु डटु (उक्त्वत्तुङ्गिता एग विदुय करयलसि आसाएइ) न्यारे
शाक तैयार अर्ध गथु त्यारे तेहे तेमाथी इक्षत अेक टीपा नेटलु शाक पोतानी-
इथेणी उपर लज्जे आभ्यु

(आसाइत्ता त खार कडुय अक्खज्ज अभोज्ज विसम्भूय जाणित्ता एव
वयासी-विरत्थु ण मम नागसिरीए अहन्नाए, अपुन्नाए, दूरभगाए' दुर्भगसत्ताए
दुभगर्णिलोल्याए जीएण मए सालइए बहुसभारसभिए नेहावगाढे उक्खडिए)

आणवाथी तेने लाग्थु डे आ शाक तो भूण न भाइ छे, भूण न कडुं
छे, भावालायक नथी, लोन्नममा काम लागे तेवु नथी, आ तो अेर नेधुछे,
आम लक्ष्मीने तेहे पोताना मनमा न विचार कर्यो अने विचार करता तेहे
पोतानी लतने न आ प्रमाहे कछु डे-मने-नागश्रीने-धिक्कार छे, हुअरेपर
अधन्या तेमन अपुण्या छु हु लोके द्वारा आदर भेजववा लायक नथी
भारा आ भजने वारवार धिक्कार छे, भाइ आ भज साव नकाभु छे शाक
तैयार दरवामा नेटलो मे श्रम कर्यो छे ते भयो नकाभो गयो नेम लीम

कल्पमाकल्पं=मतिदिशसम् अन्वोन्यरप श्लेषु विपुत्रमगनादिकमुपस्कारयन्ति । उप
स्कार्य परिशुश्रूयाना विहरन्ति । ततः गच्छ तस्या नागश्रियो ब्राह्मण्या अन्यदा=
क्रदाचिदन्यस्मिन् समये ' भोजनवारण ' भोजनवारक =भोजयितु नियमितो त्रिवंशो
भोजनवारक जातः=समायातथाप्यभयत्, ततः सत्रु सा नागश्रीः विपुत्रमगनं
पान खाद्य स्वाद्यप्रस्करोति=निष्पादयति, उपस्कृत्य एक महत् ' सालर्ष '
सारचित-सारेण रसेन चित युक्त गदा-शरदिक-शरदुभव ' तित्तालाउअ '
तित्तालायुक्त=निष्पादयत् तित्तरसयुक्ततुम्बीफल, बहुसभारसयुक्त=उद्भिः=
अनेकविधैः सभारद्रव्यैः=शाकादी स्वादसुगन्धविशेषार्थं द्विदुमेथिमाजीरमादीनि
व्याधारद्रव्याणि निक्षिप्यन्ते, तैर्मिश्रित, ' षोढावगाढ ' स्नेहावगाढ=घृतादिश्लिषि
तम् (युक्तम्) ' उपक्वडेइ ' उपस्करोति, उपस्कृत्यैक त्रिन्दुक परवले समादाय

(पडिसुणित्ता कल्ला कल्लि अन्नमन्नस्स गिहेसु विउल अमण ४ उवक्ख
डावेति) स्वीकार करके अब वे एक दूसरे के घर पर विपुल मात्रा में
निष्पन्न हुए अशनादिरूप चतुर्विध आहार को खाने पीने लगे। (तएण
तीसे नागसिरीए माहणीए अन्नया भोजनवारण जाण यावि होत्था)
किसी एक दिन नागश्री ब्राह्मणी की भोजन बनाने की बारी आई
(तएण सा नागसिरी विउल असण ४ उवक्खडेति) तो उस दिन
उसने विपुल मात्रा में चारों प्रकार का आहार बनाया (उवक्खडित्ता
एग मह सालइय तित्तालाउअ बहुसभारसयुत्त षोढावगाढ उवक्खडेइ)
आहार बनाकर फिर उसने शरदकृतु में उत्पन्न हुई अथवा रस से
सरस बनी हुई तित्तरसतुम्बी का शाक बनाया-और उसमें स्वाद एवं
सुगंधि के निमित्त हींग, मैथी, जीरे आदि का बंधार दिया। उसे खूब
अधिक घृत में छोंका था-इसलिये घृत उसके ऊपर तैर रहा था।

(पडिसुणित्ता कल्ला कल्लि अन्नमन्नस्स गिहेसु विउल असण ४ उवक्खडावेति)

स्वीकारिने तेष्से अउणीअने घेर पुष्कण प्रभाषुमा अशनपान वगेरे चार
जतना आहारिने भावा-पीवा लाग्या

(तएण तीसे नागसिरीए माहणीए अन्नया भोजनवारण जाण यावि होत्था)

कैई अेक दिवसे नागश्री ब्राह्मणीने लोअन तैयार करवाने वारे आअ्ये
(तएण सा नागसिरी विउल असण ४ उवक्खडेति) तेष्से ते दिवसे पुष्कण
प्रभाषुमा चारे जतना आहारिने जनाव्या

(उवक्खडित्ता एग मह सालइय तित्तालाउअ बहुसभारसयुत्त षोढावगाढ उपक्वडेइ)

आहार जनावीने तेष्से शरद् ऋतुमा उत्पन्न थयेली अथवातो रसथी
सरस थयेली तित्तरसवाणी तुम्बीतु शाक जनाव्यु अने तेमा स्वाद अने
सुगंधीना भाटे हींग, मैथी, जीरे वगेरेने बंधार दीधे ते षे

आस्वादयति, अस्वाद्य तत् क्षार कटुकमस्त्रायमभोज्य विषभूत ज्ञात्वा एवमवादीत्-
धिगस्तु मा नागश्रियमयन्यामपुण्या दुर्भगा 'दुर्भगसत्ताए' दुर्भगसत्त्वा दुर्भग=निष्फल
सत्त्व=उल यस्याः सा ता व्यर्थपरिश्रमाभिव्यर्थः 'दुर्भगणिवोलिए' दुर्भगनिम्ब-
गुलिकानिम्बफलिका, तद्वद् दुर्भगा ता=जनैरनादरणीयामित्यर्थ, अत्र द्वितीयार्थे
पथी प्राकृतत्वात्, 'जीए' यथा खलु मया शारदिक बहुसभारद्रव्यसभृत स्नेहाव-

(उक्त्वखटिक्ता एग विदुय करयलसि आसाएइ) जब वह तैयार शाक
हो चुका-तब उसने उसमें से एक चिन्दु मात्र शाक अपनी हथेली पर
रखा और फिर उसे चखा-(आसाइक्ता त खार कडुय अक्खज्ज अभोज्ज
विसम्भूय जाणित्ता एव वयासी-धिरत्थु ण मम नागसिरीए अहन्नाए,
अपुन्नाए दूरभगाए दुर्भगसत्ताए दुर्भगणिवोलियाए जीएण मए सालइए
बहुसभारसभिए नेहावगाडे उक्त्वखटिण) चखकर उसे ज्ञात हुआ
कि यह शाक तो बहुत खारा है, बहुत अधिक कड़वा है। खाने के
योग्य नहीं है। भोजन में लेने के लायक नहीं है, यह तो विष जैसा है
ऐसा जानकर उसने मन ही मन विचार किया उस विचार में उसने
कहा-मुझ नागश्री को धिक्कार है, मैं अधन्या और अपुण्या हूँ। जनों
के द्वारा आदर पाने योग्य नहीं हूँ। मेरे इस बल को चार २ धिक्कार
हो-मेरा यह बल बिलकुल निष्फल है मने जो इस शाक के बनाने में
इतना उद्यम किया है वह मेरा सर्वथा निष्फल गया। जिस प्रकार नीम-

ઉપર થી તરતુ હતું (ઉક્ત્વખટિક્તા એગ વિદુય કરયલસિ આસાએઈ) બ્યારે
શાક તૈયાર થઈ ગયું ત્યારે તેણે તેમાંથી ફક્ત એક ટીપા બેટલું શાક પોતાની
હથેળી ઉપર લાંબે ચાખ્યું

(આસાઈક્તા ત ચાર કડુય અક્ખજ્જ અભોજ્જ વીસમ્ભૂય જાણિત્તા એવ
વયાસી-ધીરત્થુ ણ મમ નાગસિરીએ અહન્નાએ, અપુન્નાએ, દૂરભગાએ 'દુર્ભગસત્તાએ
દુર્ભગણિવોલિયાએ જીએણ મએ સાલએ' બહુસભારસભીએ નેહાવગાડે ઉક્ત્વખટિણ)
ચાખવાથી તેને લાગ્યું કે આ શાક તો ખૂબ જ ખાર છે, ખૂબ જ કડવું
છે, ખાવાલાયક નથી, ભોજનમાં કામ લાગે તેવું નથી, આ તો એવું છે,
આમ બહુને તેણે પોતાના મનમાં જ વિચાર કર્યો અને વિચાર કરતા તેણે
પોતાની બાતને જ આ પ્રમાણે કહ્યું કે-મને-નાગશ્રીને-ધિક્કાર છે, હું ખરેખર
અધન્યા તેમજ અપુણ્યા છું હું લોકો દ્વારા આદર મેળવવા લાયક નથી
મારા આ બળને વારવાર ધિક્કાર છે, મારું આ બળ સાવ નકામું છે શાક
તૈયાર થવામાં જેટલું મેં શ્રમ કર્યો છે તે બધું નકામું ગયું જેમ સીમ

ગાઢમુપસ્કૃત, તેન સુપ્તદ્રવ્યસયઃ-હિઠ્ઠનીરતાદિદ્રવ્યનાગઃ, સ્નેહસયઃ=ઘૃતાદિ
સયશ્ચકૃતઃ, તત્=તસ્માત્ યદિ સ્વહ મમ 'જાડયાઓ' યાત્રકઃ, ટેમરમાર્ષાઃ
જ્ઞાસ્યન્તિ, 'તોળ' તર્હિ સ્વહ મમ 'લિસિસ્મતિ' લિગિપ્યન્તિ-નિન્દ્યાં કોપ ચ
કરિપ્યન્તિ, તત્-તસ્માત્ યાગ્નમ યાત્રકા ન જાનન્તિ, તાગ્નમ શ્રેયઃ-ઉચિત્
એતત્ શારદિક તિત્કાલાબુક મધુમારસ્નેહકૃતમ્ એકાન્તે 'ગોવેત્તણ' ગોપયિતુમ્,
અન્યત્ શારદિક મધુરાલાબુક મધુરતુમ્બીફલ યાત્ર સ્નેહાચગાઢમુપસ્કૃતમ્ । એવ

કી નિવૌલી કિસી મનુષ્ય કી દષ્ટિ મેં આદર પાને યોગ્ય નહીં હોતી
હૈ ડસી પ્રકાર મેં ભી જનો ઢારા અનાદરણીય ઘની હૈ । જો મેંને શરદ
કાલિક અથવા સરસ હસ તુથી ફલ કા ઠિહ્ગુ, જીરકાદિ દ્રવ્યોં સે
યુક્ત ઓર ઘૃતાદિ સે યુક્ત શાક ઘનાગા હૈ (સુપ્તદ્રવ્યમ્સય, નેહક્ષણ
ય કણ) હસ કે ઘનાને મેં મેંને વ્યર્થ હી વ્રહ્ત સે ઠિહ્ગુ જીરે મેથી આદિ
દ્રવ્ય કા ઓર ઘૃત કા વિનાગ ક્રિયા હૈ । (ત જહ્ણ મમ જાડયાઓ
જાણિસ્સતિ, તો, ણ મમ લિસિસ્સતિ) હસ ઘાત કો ઘદિ મેરી દેવરાની
જાનેગી તો વે મેરે ડપર ગુસ્તા હોગી ઓર મેરી નિંદા કરેગી । (ત જાવ
તાવ મમ જાડયાઓ ણ જાણતિ તાવ મમ સેય ણ્ય સાલહયં તિત્કા
લાડય વહુસમ્ભારણેહ કય ણગતે ગોવેત્તણ) હસલિયે મુજ્જે અથ યહી ડચિત
હૈ કિ મેં હસ શારદિક તિત્કોલાબુ કે શાક કો જો વહુત સમ્ભાર એવ
ઘૃત ઢાલકર ઘનાયા હૈ કિસી એકાન્ત સ્થાન મેં છુપાકર રહ દૂ ઓર

ઢાની લીંબાળી માણસોની સામે આદર મેળવવા યોગ્ય ગણાતી નથી તે પ્રમાણે
હુ પત્તુ માણસો દ્વારા આદર પ્રાપ્ત કરવા લાયક રહી નથી એટલે કે હુ
લોકોની સામે અનાદરણીય થઈ ગઈ છુ મે શરદ કાલિક અથવા સરસ
તુળીના ફળનુ ઢીંગ, હર વગેરે દ્રવ્યોથી યુક્ત અને ઘી વગેરેથી યુક્ત શાક
ખનાઓ છે (સુપ્તદ્રવ્યમ્સય નેહક્ષણ ય કણ) અને તૈયાર કરવામા મે
વ્યર્થ ઢીંગ, હર, મેથી વગેરે તેમજ ઘી વગેરે વસ્તુઓનો દુર્વ્યથ વ્યર્થ છે
(ત જહ્ણ મમ જાડયાઓ જાણિસ્સતિ, તો ણ મમ લિસિસ્સતિ) એ મારા
દેશાણીને આ વાતની બાણુ થશે તો તેઓ ચોક્કસ મારા ડપર ગુસ્સે ઘશે અને
મારી નિંદા કરશે

(ત જાવ તાવ મમ જાડયાઓ ણ જાણતિ તાવ મમ સેય ણ્ય સાલહયં
તિત્કોલાડય વહુ સમ્ભારણેહકય ણગતે ગોવેત્તણ)

એથી અત્યારે મને એ જ યોગ્ય લાગે છે કે આ શારદિક તિત્કોલાબુ
(કરવી તુભડી) ના શાક ને-કે જે પૂખ જ સરસ ઘી નાખીને વધારવામા
આવ્યું છે-એક તરફ છુપાવીને મૂકી દઉં અને તેની જગ્યાએ

सपेक्षते=विचारयति, सप्रेक्ष्य तत् शारदिक यावद् तिकालाद्युक्त गोपयति=कचित् समाच्छाद्य धरति अन्यत् शारदिक मधुरालाउयमुपस्करोति=रन्धयति शेषगारा दिभिः संस्करोति । तेषां ब्राह्मणानां यावत् सुखासनवरगतानां निजनिजामने-सुखोपनिष्ठानां तद् विपुलमशनपानं स्वाद्य परिवेषयति=तेषां भोजनावसरे भोजनपात्रे ददातीत्यर्थः । ततः खलु ते ब्रह्मणाः 'जिमियभुत्तुत्तरगया' जमित-

उसके रानपर (अन्न सालइय महुरालाउय जाव नेहावगाढ उवक्ख डेत्तए) दूसरी शारदिक मधुर तुंबड़ी का शाक हींग, जीरे और मैथी का बघार लगाकर घृत में तैरता हुआ बनाल्ले (एव सपेहेइ, सपेहत्ता त सालइ य जाव गोपेइ अन्न सालइय महुरालाउय उवक्खडेइ तेसिं महणाण ष्हायाण जाव सुहासनवरगयाण त विपुल असण ४ परिवे सेइ) ऐसा उसने विचार किया-विचार करके उस शारदिक कडवी तुबली के बहुत सभार एव घृत युक्त शाक एकान्त में छुपाकर रख दिया-और दूसरी शारदिक मधुर तुंबड़ी - का शाक हींग जीरे और मैथी का बघार लगाकर घृत में तैरता हुआ बना लिया। इनने में वे तीनों ब्राह्मण स्नान आदि से निवृत्त कर भोजन शाला में आकर अपने २ आसन पर शांति के साथ बैठ गये। उनके बैठते ही उसने उन्हें अशन आदिरूप चारों प्रकार का आहार यालो में परोसा (तएण ते माहणा जिमिय भुत्तुत्तरागया समाणा आयता, चोक्खा परम सुइ-

महुरालाउय जाव नेहावगाढ उवक्खडेत्तए) भील शारदिक भीडी तुणडीनु धी उपर तरी र्खु छे अेवु शाक डींग, लइ अने मेथीमा ववारीने बनाउ (एव सपेहेइ, सपेहत्ता त सालाइ य जाव गोपेइ, अन्न सालइय महुराला-उय उवक्खडेइ, तेसिं माहणाणं ष्हायाणं जाव सुहासनवरगयाण त विपुल असण ४ परिवेसेइ)

आ नतनेो तेहे विचार कथे, विचार करीने ते शारदिक कडवी तुण डीना सरम धीमा वघारेला शाकने अेक तरइ छुपावीने भूडी दीधु अने भील शारदिक भीडी तुणडी-इधी-नु डींग, लइ अने मेथीनेो वघार करीने उपर धी तरतुं शाक बनाउयु अेटलाभा तो तेओ त्रहे प्राह्मणेो स्नान वगेरेथी परवारीने लोअनशाणाभा आवीने पोतपोताना आसन उपर शांतिथी अेसी गया तेभने अेसता अ तेहे तेओने अशन वगेरे इय चारे नतनेो आहार थाणीभा थीरस्थे।

ગાઢમુપમ્કૃત, તેન સુવદ્વદ્યમયઃ-શિદ્ધીરત્તિરુગ્મનાઃ,
 ક્ષયશ્કૃતઃ, તન્-તસ્માત્ यदि सतु मग 'जाउयाओ' या
 शास्पन्ति, 'तौण' तर्हि सतु मग 'तितिस्रति' त्रिगिर्याः
 करिष्यन्ति, तन्-तस्मात् याग्मग यात्का न जानन्ति, ताग्म.
 एतत् शारदिक तिक्तालायुक्त मधुगमारस्नेहकृतम् एकान्ते 'गोवेत्तए
 अन्यत् शारदिक मधुगालायुक्त मधुरस्तुम्बीफल याग् सौदायगाढमु

फी निवौली किसी मनुष्य की दृष्टि में आदर पाने योग्य
 है उसी प्रकार म भी जनो द्वारा अनादरणीय घनी हैं । जो
 कालिक अथवा सरस हम तुयी फल का हिद्गु, जीरकादि
 युक्त और घृतादि से युक्त शाक बनाया है (सुवद्वद्व्यमयण,
 य कए) इस के बनाने में मने व्यर्थ ही बहुत से हिद्गु जीरे
 द्रव्य का और घृत का बिनाज क्रिया है । (त जइण मम
 जाणिससति, तो, ण मम रिसिससति) इस घात को यदि मेरी
 जानेगी तो वे मेरे ऊपर गुस्सा होगी और मेरी निंदा करेगी
 ताव मम जाउयाओ ण जाणति ताव मम सेयं एय सालइ
 लाउय बहुसभारणेह कय एगते गोवेत्तए) इसलिये मुझे अब य
 है कि मैं इस शारदिक तिक्तालायु के शाक को जो बहुत से
 घृत डालकर बनाया है किसी एकान्त स्थान में छुपाकर रा

अनी क्षीणिणी भाषुसोनी सामे आदर भेजववा येअ्य गणुती नथी
 हु पणु भाषुसो द्वारा आदर प्राप्त करवा लायक रही नथी अ
 दोडोनी सामे अनादरणीय अर्थ गर्ह छु मे शरद कालिक अ
 तुणीना क्षणु डॉंग, अइ वगेरे द्रव्येथी शुक्त अने धी वगेरेथी
 णनाअ्यु छे (सुबहु द्रव्यकय ए नेहकय ए य कए) अने तैयार
 व्यर्थ डॉंग, अइ, मेथी वगेरे तेमए धी वगेरे वस्तुओने। हु०-
 (त जइण मम जाउयाओ जणिससति, तो ण मम रिसिससति)
 हेराणीने आ वातनी णणु थये तो तेओ योअस भारा उपर गुस्से
 भारी निंदा करे

(त जाव ताव मम जाउयाओ ण जाणति ताव मम सेय ए
 तिक्तालाउय बहु सभारणेहकय एगते गोवेत्तए)

अथी अत्यारे मने अए येअ्य लागे छे के आ शारदिक ति
 (इउवी तुणवी) ना शाक ने-के ने णुअ ए सरस धी नाणीने
 आअ्यु छे-अके तरक छुपावीने भूडी हई अने तेनी एअ

सप्रेक्षते=विचारयति, सप्रेक्ष्य तत् शारदिक यावद् तित्कालावुक्त गोपयति=कचित् समाच्छाद्य धरति अन्यत् शारदिक मधुरालावुक्तमुत्सरोति=रन्ययति शेषमारादिभिः संस्करोति । तेषां ब्राह्मणानां यावत् सुहासनवरगतानां निजनिनामने-सुखोपविष्टानां तद् विपुलमशनपान स्वाद्य स्वाद्य परिवेषयति=तेषां भोजनावसरे भोजनापाने ददातीत्यर्थः । ततः खलु ते ब्रह्मणाः 'जिमियधुत्तरगया' जिमित-

उसके रानपर (अन्न सालइय महुरालाउय जाव नेहावगाढ उवक्ख डेत्तए) दूसरी शारदिक मधुर तुण्डी का शाक हींग, जीरे और मैथी का वधार लगाकर घृत में तैरता हुआ बनाई (एव सपेहेइ, सपेहित्ता त सालइ य जाव गोपेइ अन्न सालइय महुरालाउय उवक्खडेइ तेसिं महणाण ष्हायाण जाव सुहासनवरगयाण त विपुल असण ४ परिवे सेइ) ऐसा उसने विचार किया-विचार करके उस शारदिक कडवी तुण्डी के बहुत सभार एवं घृत युक्त शाक एकान्त में छुपाकर रख दिया-और दूसरी शारदिक मधुर तुण्डी - का शाक हींग जीरे और मैथी का वधार लगाकर घृत में तैरता हुआ बना लिया । इनने में वे तीनों ब्राह्मण म्दान आदि से निवृत्त कर भोजन शाला में आकर अपने २ आसन पर शांति के साथ बैठ गये । उनके बैठते ही उसने उन्हें अशन आदिरूप चारों प्रकार का आहार यालों में परोसा (तएण ते माहणा जिमिय धुत्तरगया समाणा आयता, चोक्खा परम सुइ-

महुरालाउय जाव नेहावगाढ उवक्खडेत्तए) भीउ शारदिक भीडी तुण्डीतु धी उपर तरी रहु छे अेषु शाक हींग, एइ अने मेथीमा वधारीने बनाई

(एव सपेहेइ, सपेहित्ता त सालाइ य जाव गोपेइ, अन्न सालइय महुरालाउय उवक्खडेइ, तेसिं माहणाणं ष्हायाणं जाव सुहासनवरगयाण त विपुल असण ४ परिवेसेइ)

आ जतनेो तेह्ने विचार कथो, विचार करीने ते शारदिक कडवी तुण्डीना सरअ धीमा वधारेत्ता शाकने अेक तरइ छुपावीने भूडी हीधु अने भीउ शारदिक भीडी तुण्डी-इधी-तु हींग, एइ अने मेथीनेो वधार करीने उपर धी तरतु शाक बनाउयु अेरुत्तामा तो तेओो त्तेह्ने प्राह्मण्णेो स्नान वगेरेथी परधारीने लोअनशाणांमा आवीने चेतपोताना आसन उपर शांतिथी अेसी गया तेभने अेसतां अ तेह्ने तेओोने अशन वगेरे इप आरे जतनेो आहार

ગાદમુપમ્કૃત, તેન સુમદુદ્વ્યસય:-દિઘ્નીરારિઘ્નનાઃ, સ્નેહસય: = ઘૃતાદિ
 સયશ્ચકૃતઃ, તત્-તસ્માત્ યદિ સ્વઠ મમ 'જાડયાઓ' યાજઘા', દેવરામાયો:
 જ્ઞાસ્યન્તિ, 'તોળ' તર્દિ સ્વઠ મમ 'લિસિસ્મતિ' સિમિગ્યન્તિ-નિન્દા કોપ ચ
 કરિપ્યન્તિ, તત્-તસ્માત્ યાગ્મમ યાજૃકા ન જાનન્તિ, તાગ્મમ શ્રેય:-ઉચિતં
 એતત્ શારદિક તિત્કાલાણુક મધુમમાસ્નેહકૃતમ્ એકાન્તે 'ગોવેત્તણ' ગોપિતૃમ્,
 અન્યત્ શારદિક મધુરાલાણુક મધુરતૃમ્થીફલ યાગ્મ સ્નેહાયગાદમુપમ્સ્તૃમ્ । એ

કી નિચૌલી કિસી મનુષ્ય કી દષ્ટિ મેં આદર પાને ગોચ્ય નહીં હોતી
 હૈ ઉસી પ્રકાર મેં મી જનોં દ્વારા અનાદરણીય ઘની હૈ । જો મેંને શરદ
 કાલિક અથવા સરસ હસ તુમી ફલ કા દિઘ્નુ, જીરકાદિ દ્રવ્યોં સે
 યુક્ત ઓર ઘૃતાદિ સે યુક્ત શાક ઘનાયા હૈ (સુમદુદ્વ્યસય, નેહક્ષણ
 ય કણ) હસ કે ઘનાને મેં મેંને વ્યર્થ હી વદ્ધત સે દિઘ્નુ જીરે મથી આદિ
 દ્રવ્ય કા ઓર ઘૃત કા વિનાશ ક્રિયા હૈ । (ત જહ્ણ મમ જાડયાઓ
 જાણિસ્સતિ, તો, ણ મમ સિસિસ્સતિ) હસ પાત કો યદિ મેરી દેવરાની
 જાને મી તો વે મેરે ઉપર ગુસ્તા હોમી ઓર મેરી નિંદા કરેમી । (ત જાવ
 તાવ મમ જાડયાઓ ણ જાણતિ તાવ મમ સેય એય સાલહય તિત્કા
 લાડય વહુસમારણેદ કય એમતે ગોવેત્તણ) હસલિયે મુજે અવ ઘટી ઉચિત
 હૈ કિ મેં હસ શારદિક તિત્કોલાણુ કે શાક કો જો વદ્ધત સમાર એવ
 ઘૃત ઢાલકર ઘનાયા હૈ કિસી એકાન્ત સ્થાન મેં છુપાકર રલ દૂ ઓર

ઝાની લીંગાણી માણુસોની સામે આદર મેળવવા યોગ્ય ગણાતી નથી તે પ્રમાણે
 હુ પણ માણુસો દ્વારા આદર પ્રાપ્ત કરવા લાયક રહી નથી એટલે કે હુ
 લોકોની સામે અનાદરણીય થઈ ગઈ છુ મે શરદ કાલિક અથવા સરસ
 તુળીના જ્ઞાતુ ડીંગ, છૂર વગેરે દ્રવ્યોથી યુક્ત અને ઘી વગેરેથી યુક્ત શાક
 ઘનાવ્યુ છે (સુમદુદ્વ્યસય નેહક્ષણ ય કણ) એને તેયાર કરવામા મે
 વ્યર્થ ડીંગ, છૂર, મેથી વગેરે તેમજ ઘી વગેરે વસ્તુઓને દુર્વ્યથ ઝ્યોં છે
 (ત જહ્ણ મમ જાડયાઓ જાણિસ્સતિ, તો ણ મમ સિસિસ્સતિ) એ મારા
 દેશણીને આ વાતની જાણ થશે તો તેઓ ચોક્કસ મારા ઉપર ગુસ્સે થશે અને
 મારી નિંદા કરશે

(ત જાવ તાવ મમ જાડયાઓ ણ જાણતિ તાવ મમ સેય એય સાલહય
 તિત્કોલાડય વહુ સમારણેદકય એમતે ગોવેત્તણ)

એથી અત્યારે મને એ જ યોગ્ય લાગે છે કે આ શારદિક તિત્કોલાણુ
 (કઠલી તુળી) ના શાક ને-કે જે ખૂબ જ સરસ ઘી નાખીને વધારવામા
 આવ્યું છે-એક તરફ છુપાવીને મૂકી દઉં અને તેની જગ્યાએ (વાહ્ય)

उज्जाणे तेणेव उवागच्छति २ अहापडिरुवं जाव विहरंति,
परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिग्गया, तएणं
तेसिं धम्मघोसाणं थेराणं अंतेवासी धम्मरुई नाम अणगारे
ओराले जाव तेउलेस्से मासं मासेणं खममाणे विहरइ,
तएणं से धम्मरुई अणगारे मासखमणपारणगंसि पढमाए
पोरिसिए सज्झाय करेइ वीयाए पोरिसीए एव जहा गोयमसा-
मी तहेव उग्गाहेइ उग्गाहिन्ता तहेव धम्मघोसे थेरं आपुच्छइ
जाव चपाए नयरीए उच्चनीयमज्झिमकुलाइं जाव अडमाणे
जेणेव नागसिरीए माहणीए गिहे तेणेव अणुपविट्ठे, तएण
सा नागसिरी माहणी धम्मरुई एज्जमाण पासइ पासित्ता
तस्स सालइयस्स बहुसंभारसंभियस्स णेहावगाढस्स तित्त-
कडुयस्स पट्टवणट्टयाए हट्टुट्टा उट्टाए उट्टेइ उट्टित्ता जेणेव
भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता त सालइय तित्त-
कडुय च बहुसंभारसंभिय णेहावगाढ धम्मरुइस्स अणगा-
रस्स पडिग्गहसि सब्वमेव निसिरइ, तएणं से धम्मरुई
अणगारे अहापज्जत्तमितिकट्टु णागसिरीए माहणीए गिहाओ
पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता चपाए नयरीए मज्झ मज्झेणं
पडिनिक्खमइ जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे तेणेव उवाग-
च्छइ, उवागच्छित्ता धम्मघोसस्स अदूरसामते अन्नपाण
पडिलेहेइ पडिलेहित्ता अन्नपाण करयलसि पडिदमेइ, तएणं
ते धम्मघोसा थेरा सालइयस्सं जाव नेहावगाढस्स गवेणं

शुक्लोत्तरगताः भोजनानन्तरं रदिरागताः मन्तः ' आयना ' आगताः कृतचुलकाः
 ' चोक्त्वा ' चोक्त्वाः=मसालितहृन्मनुवाः परमशुभिः ' सक्मसपउत्ता '
 स्वर्गसमयुक्ता =स्वस्वकार्यसलग्ना जानागप्यभयत् । ततः सन्तु ताः ब्राह्मण्यः
 स्नाता यात्त् स्यालकारविभूषितास्तद् विपुत्रमशन पान खाद्य स्वाद्यम् आहार
 यन्ति=आहारकुर्यान्ति भुञ्जते स्म । आहृत्य, यत्रैव स्वानि स्वानि गृहाणि=
 आवासभवनानि तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य स्वर्गसमयुक्ता जाता ॥ सू० १ ॥

मूलम्-तेण कालेणं तेणं समपणं धम्मघोसा नाम धेरा
 जात्र बहुपरिवारा जेणेव चंपा नाम नयरी जेणेव सुभूमिभागे

भूया सकम्मसपउत्ता जाया यात्रि होत्या) आहार जत्र परोसा जा
 चुका-तत्र उन सवने उसे खाया पीया-और खा पीकर जत्र ये निपट
 चुके तत्र उन्नेने कुछा आदि कर अपने मुह का प्रक्षालन किया-और
 हाथो को साफ कर वे अपने २ कार्य में लग गये । (तएण ताओ माहः
 णीओ ण्हायाओ जात्र विभूसियाओ त विपुल असण ४ आहारेति,
 आहारित्ता जेणेव सयाइ-२ गेहाइ तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता
 सकम्म सपउत्ताओ जायाओ) इसके बाद उन ब्रह्मणियोंने जो कि
 पहिले से ही स्नान कर चुकी थी और अपने २ शरीर को सुन्दर वेष
 भूषा से सुसज्जित किये हुए थी, उस विपुल अशनादिरूप चतुर्विध
 आहार को खाया-और खाकर के फिर वे अपने २ वासभवनों में
 चली गई-वहा जाकर अपने २ वे सब काममें लग गई ॥ सूत्र १ ॥

(तएण, ते माहणा, जिमिय भुत्तुत्तरागया समाणा आयता, चोक्त्वा परमसु
 भूया, सकम्मसपउत्ता जाया यात्रि होत्या)

आहार न्याये पीरसाई गये । त्याये तेओ । त्रओ नभ्या अने नभी पर
 वारीने डोगणा वगेरे करीने हाथ मे साई कथी अने हाथ मे साई करीने
 तेओ त्रओ पोतपोताना डाम्भा परेवाई गया

(तएण ताओ माहणीओ ण्हायाओ जात्र विभूसियाओ त विपुल असण ४ आहारित्ता
 जेणेव सयाइ २ गेहाइ, तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता सकम्मसपउत्ताओ जायाओ)

त्यारभाडे ते ध्र हाणीओओ-केडेओओओ पडेला स्नान करीने पोताना
 शरीरने सुंदर वओथी शणुगार्थुं डतु-ते पुष्कण प्रभावुमा भनाववाभा आवेला,
 अंशन वगेरे इप बार नतने आहार कथी आहारथी परवारीने तेओ
 पोतपोताना वासभवनमा नवती रही अने त्या नधने तेओ सवे पोतपोताना
 हाथीमा परेवाई गई ॥ सू० १ ॥

उज्जाणे तेणेव उवागच्छति २ अहापडिरुवं जाव विहरति,
परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिग्गया, तएण
तेसिं धम्मघोसाण थेराणं अंतेवासी धम्मरुई नाम अणगारे
ओराले जाव तेउलेस्से मासं मासेण खममाणे विहरइ,
तएणं से धम्मरुई अणगारे मासखमणपारणगंसि पढमाए
पोरिसिए सज्जाय करेइ वीयाए पोरिसीए एव जहा गोयमसा-
मी तहेव उग्गाहेइ उग्गाहित्ता तहेव धम्मघोसे थेरं आपुच्छइ
जाव चंपाए नयरीए उच्चनीयमज्झिमकुलाइं जाव अडमाणे
जेणेव नागसिरीए माहणीए गिहे तेणेव अणुपविट्ठे, तएण
सा नागसिरी माहणी धम्मरुई एज्जमाण पासइ पासित्ता
तस्स सालइयस्स बहुसंभारसभियस्स णेहावगाढस्स तित्त-
कडुयस्स पट्टवणट्टयाए हट्टुट्टा उट्टाए उट्टेइ उट्टित्ता जेणेव
भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता त सालइय तित्त
कडुय च बहुसंभारसंभिय णेहावगाढ धम्मरुईस्स अणगा-
रस्स पडिग्गहसि सव्वमेव निसिरइ, तएण से धम्मरुई
अणगारे अहापज्जत्तमितिकट्टु णागसिरीए माहणीए गिहाओ
पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता चंपाए नयरीए मज्झ मज्झेणं
पडिनिक्खमइ जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे तेणेव उवाग-
च्छइ, उवागच्छित्ता धम्मघोसस्स अदूरसामते अन्नपाण
पडिलेहेइ पडिलेहित्ता अन्नपाण करयलसि पडिदम्मेइ, तएणं
ते धम्मघोसा थेरा सालइयस्स जाव नेहावगाढस्स गधेण

भुक्तोत्तरागताः भोजनानन्तरं रक्षिगताः गन्तः 'आगता' आनाताः कृतबुद्धकाः
 'चोक्त्वा' चोक्ताः=महाभारतमनुना परमशुचिभूताः 'गर्भमसपउत्ता'
 स्वर्गमसपउत्ता=स्वस्वकार्यतन्त्रना जाग्राद्यमर । ताः खलु ताः ब्राह्मण्यः
 स्नाता यास्तु प्रह्लादकारिभूषितास्तद् विपुलमन्नं पानं ग्राह्यं स्वाद्यम् आहार-
 यति=आहारकुर्यान्ति भुञ्जते स्म । आदित्य, यज्ञीयं स्वानि स्वानि गृह्याणि=
 आवासभवनानि तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य स्वर्गमसपउत्ता जाता ॥ सू० १ ॥

मूलम्-तेषां कालेण तेषां समपण धम्मघोसा नाम धेरा
 जाव बहुपरिवारा जेणेव चपा नाम नयरी जेणेव सुभूमिभागे

भूया सक्रमसपउत्ता जाया यात्रि होत्था) आहार जय परोसा जा
 चुका-तव उन सचने उसे ग्राया पीया-और ग्रा पीकर जत्र वे निपट
 चुके तत्र उन्होंने कुछा आदि कर अपने मुँह का प्रक्षालन किया-और
 हाथों को साफ़ कर वे अपने २ कार्य में लग गये । (तएण ताओ माह
 णीओ ण्हायाओ जाव विभूसियाओ त विपुल असण ४ आहारंति,
 आहारित्ता जेणेव सयाइ-२ गेहाइ तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता
 सक्रम सपउत्ताओ जायाओ) इसके बाद उन ब्रह्मणियोंने जो कि
 पहिले से ही स्नान कर चुकी थी और अपने २ शरीर को सुन्दर बेष
 भूया से सुसज्जित किये हुए थी, उस विपुल अशनादिरूप चतुर्विध
 आहार को खाया-और खाकर के फिर वे अपने २ वासभवनों में
 चली गई-वहा जाकर अपने २ वे सब काममें लग गई ॥ सूत्र १ ॥

(तएण ते माहणा जिमिय भुत्तुत्तरागया समाणा आयता, चोक्त्वा परमसुइ
 भूया, सक्रमसपउत्ता जाया यात्रि होत्था)

आहार न्यारे पीरसाई गये त्यारे तेओ ब्रह्मे नभ्या अने नमी पर
 वारीने डोगणा वगेरे करीने ढाथ मे साइ कथी अने ढाथ मे साइ करीने
 तेओ ब्रह्मे पोतपोताना काभुमा परेवाछ गया

(तएण ताओ माहणीओ ण्हायाओ जाव विभूसियाओ त विपुल असणं ४ आहारित्ता
 जेणेव सयाइ २ गेहाइ, तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता सक्रमसपउत्ताओ जायाओ)

त्यारणाह ते प्राक्षणीओओ-के न्येओओ पडेला स्नान करीने पोताना
 शरीरने सुहर वओथी शणुगार्हुं डतु-ते पुञ्जण प्रभाणुमा भनाववाभा आवेदी
 अशन वगेरे इप यार नतने आहार कथी आहारथी परवारीने तेओ
 पोतपोताना वासववनमा नती रही अने त्या नधने तेओ सवे पोतपोताना
 कथोमां परेवाछ गई ॥सू०१॥

उज्जाणे तेणेव उवागच्छति २ अहापडिरुवं जाव विहरति,
परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिग्गया, तएणं
तेसिं धम्मघोसाणं थेराणं अंतेवासी धम्मरुई नाम अणगारे
ओराले जाव तेउलेस्से मासं मासेणं खममाणे विहरइ,
तएणं से धम्मरुई अणगारे मासखमणपारणगंसि पढमाए
पोरिसिए सज्जाय करेइ वीयाए पोरिसीए एव जहा गोयमसा-
मी तहेव उग्गाहेइ उग्गाहिन्ता तहेव धम्मघोसे थेर आपुच्छइ
जाव चंपाए नयरीए उच्चनीयमज्झिमकुलाइं जाव अडमाणे
जेणेव नागसिरीए माहणीए गिहे तेणेव अणुपविट्ठे, तएण
हा नागसिरी माहणी धम्मरुई एजमाण पासइ पासित्ता
तस्स सालइयस्स बहुसंभारसंभियस्स णेहावगाढस्स तित्त-
कडुयस्स पट्टवणट्टयाए हट्टुट्टा उट्टाए उट्टेइ उट्टित्ता जेणेव
भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता त सालइय तित्त-
कडुय च बहुसंभारसंभियं णेहावगाढ धम्मरुईस्स अणगा-
रस्स पडिग्गहसि सव्वमेव निसिरइ, तएणं से धम्मरुई
अणगारे अहापज्जत्तमितिकट्टु णागसिरीए माहणीए गिहाओ
पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता चंपाए नयरीए मज्झ मज्झेणं
पडिनिक्खमइ जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे तेणेव उवाग-
च्छइ, उवागच्छित्ता धम्मघोसस्स अदूरसामते अन्नपाणं
पडिलेहेइ पडिलेहित्ता अन्नपाण करयलसि पडिदम्भेइ, तएणं
ते धम्मघोसा थेरा सालइयस्स जाव नेहावगाढस्स गधेण

अभिभूया समाणा तओ सालइयाओ जाव नेहावगाढाओ
 एगं विंदुणं गहाय करयलासि आमाएइ । तित्तगं एारं कडुय
 अखज्जं अभोज्जं विसभूयं जाणित्ता धम्मस्इ अणगारं एवं
 वयासी-जइणं तुमं देवाणुप्पिया ! एव सालइय जाव
 नेहावगाढ आहारेसि तो णं तुमं अकाले चेव जीवियाओ
 ववरोविज्जसि, त मा णं तुमं देवाणुप्पिया ! इमं सालइयं
 जाव आहारेहि, मा णं तुम अकाले चेव जीवियाओ वव-
 रोविज्जेहि, त गच्छ णं तुम देवाणुप्पिया ! इमं सालइयं
 एगंतमणावाए अच्चित्ते थडिले परिट्टवेहि परिट्टवित्ता अन्न
 फासुय एसणिज्ज असणंपाण खाइमं साइमं पडिगहित्ता
 आहार आहारेहि ॥ सू० २ ॥

टीका—‘ तेण कालेण ’ इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये धर्मघोषा
 नाम स्थविरा यावत्-बहुपरिवारा.-गहुसाधुपरिवारेण सहिता यत्रै चम्पा नाम
 नगरी, यत्रैव सुभूमिभागसुदान तत्रैवोपागच्छन्ति, अत्र ‘ धर्मघोषा ’ इति बहु-
 वचनमादरार्थं प्रयुक्तम्, उपागत्य यथा प्रतिरूप यावन्-अत्रगहमवगृह्य समयेन

तेण कालेण तेण समएण इत्यदि ॥

टीकार्थं-(तेण कालेण तेण समएण) उस काल औ उस समय में
 (धम्मघोसा नाम थेरा जाव बहुपरिवारा जेणेव चपा नाम नयरी जेणेव
 सुभूमिभागे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अहापडिरुव
 जाव विहरति-परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ परिसा पडिगया-तएण
 तेसि धम्मघोसाण थेराण अतेवासी धम्मरुई नाम अणगारे ओराळे

(ते ण कालेण तेण समएणं) इत्यादि ।

टीकार्थं-(तेण कालेण तेण समएण) ते क्षणे अने ते समये

(धम्मघोसा नाम थेरा जाव बहुपरिवारा जेणेव चपा नाम नयरी जेणेव
 सुभूमिभागे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अहापडिरुव जाव विहरति
 परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसापडिगया, तएण तेसि थेराण

तपसाऽऽत्मान भावयन्तो विहरति-आसतेस्म । परिषद् निर्गता धर्माः कथित =
 धर्मकथा कथिता परिषद् प्रतिगता=धर्मकथा श्रवणानन्तर प्रतिनिवृत्ता । ततः खलु
 तेषा धमघोषाणा स्थिराणामन्तैवासी धमरुचिर्नामानगारः उदारः प्रधानो यावत्
 सक्षिप्तविपुलतेजोलेख्यः=सक्षिप्ता शरीरान्त सकोचिता, विपुला=अनेकयोजन
 प्रमितक्षेत्रस्थितस्तुदहनसमर्था, तेजोलेख्या=विशिष्टतपोजन्यलब्धविशेषो येन सः

जाव तेउलेस्से माम मासेण खममाणे विहरइ) धर्मघोष नामके स्थविर
 यावत् अनेक परिवार से युक्त होकर जहा चपा नगरी, ओर उसमे जहां
 वह सुभूमिभाग नाम का उद्यान था वहां आये । वहा आकर के उन्हों
 ने वहां ठहरने के लिये अपने कल्पानुसार आज्ञा मांगी बाद मे वे वहा
 सपम और तप से आत्माको भावित करते हुए ठहर गये । चपानगरी
 के सम्बन्ध जन उनको बढना एव धर्मकथा सुनाने के लिये वहां आये ।
 उन्होंने श्रुतचारित्र्य रूप धर्मका उपदेश दिया । उपदेश श्रवण कर परिषद्
 अपने २ स्थान पर पीछे गई । इसके अनन्तर इन धर्मघोष स्थविर के
 अ तैवासी जिनका नाम धर्मरुचि अनागार या बडे उदार प्रकृति के थे
 विशिष्ट तपस्याओं को किया करते थे-उसके प्रभाव से इन्हें तेजोलेख्या
 की प्राप्ति हो गई थी और वह तेजोलेख्या इन्होंने अपने शरीर के भीतर
 सक्षिप्त कर रक्खी थी इस तेजोलेख्या का यह स्वभाव होता है कि जब
 वह शरीर से बाहर निकलती है तो अनेक योजन प्रमित क्षेत्र में रही
 हुए वस्तुओं को भस्मकर देती है । नास श्रवण की उपचास रूप तपस्या

अंतैवासी धर्मरुचि नाम अणगारे ओराले जाव तेउलेस्से मास मासेण खममाणे विहरइ

धर्मघोष नामना स्थविर पोताना धण्णा परिवारेणी साथे न्या चपा
 नगरी अने तेमा पणु न्या ते सुभूमिभाग नामे उद्यान इत्तु त्या आव्या
 त्या आनीने तेभुत्ते त्या शैलावानी पोताना आचार सुवण आव्या भागी
 त्थार छी तेज्जे त्या पोताना आत्माने तप अने सधमधी भावित उरता
 रहेता एव्या चपा नगरीना अधा बोडे तेमना वदन तेमज धर्मकथा श्रवण
 भाटे त्या आन्या तेज्जेथीजे श्रुतचारित्र्य रूप धर्मने उपदेश आव्यो उपदेश
 सावणाने बोडे पोतपोताना निवास स्थाने जाता रह्या त्थारपथी धर्मघोष
 स्थविरना अतैवासी-जेमनु नाम धर्मरुचि अनगार इत्तु, जेज्जे पूण ज
 उदार प्रकृतिना इत्ता, विशिष्ट तपस्याज्जे उरता रहेता इत्ता जेना प्रलावनी
 जेभुत्ते तेज्जेवेश्या मेणवी इती अने तेज्जेवेश्याने तेमभुत्ते पोताना शरीरमा ज
 सकेथी राणी इती आ तेज्जे-वेश्याने प्रलाव आ जतने डेय छे के न्यारे
 ते शरीरनीज्जे उदार नीकजे छे त्थारे धण्णा योजने सुधीना क्षेत्रमा भूखेवी
 वस्तुज्जेने भस्म करी नाजे छे-भासक्षपणुनी उपवास रूप तपस्याधी तेज्जे

अभिभूया समाणा तओ सालइयाओ जाव नेहावगाढाओ
 एगं विंदुणं गहाय करयलसि आसाएइ । तित्तगं एार कडुयं
 अखज्जं अभोज्जं विसभूयं जाणित्ता धम्मरुइ अणगार एवं
 वयासी-जइणं तुमं देवाणुप्पिया ! एव सालइय जाव
 नेहावगाढ आहारेसि तो णं तुमं अकाले चेव जीवियाओ
 ववरोविज्जसि, तं मा ण तुम देवाणुप्पिया ! इमं सालइय
 जाव आहारेहि, मा णं तुमं अकाले चेव जीवियाओ वव-
 रोविज्जेहि, त गच्छ णं तुम देवाणुप्पिया ! इम सालइय
 एगंतमणावाए अच्चित्ते थडिले परिट्टवेहि परिट्टवित्ता अन्न
 फासुय एसणिज्ज असणंपाण खाइम साइम पडिगहित्ता
 आहारं आहारेहि ॥ सू० २ ॥

टीका—'तेण कालेण' इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये धर्मघोषा
 नाम स्थविरा यावत्-बहुपरिवारा-बहुसाधुपरिवारेण सडिता यत्रैव चप्पा नाम
 नगरी, यत्रैव सुभूमिभागमुद्यान तत्रैवोपागच्छन्ति, अत्र 'धर्मघोषा' इति बहु
 वचनमादरार्थं प्रयुक्तम्, उपागत्य यथा प्रतिरूप यावत्-अवगहमवगृह्य समयेन

तेण कालेण तेण समएण इत्यदि ॥

टीकायं-(तेण कालेण तेण समएण) उस काल और उस समय में
 (धम्म घोसा नाम थेरा जाव बहुपरिवारा जेणेव चपा नाम नगरी जेणेव
 सुभूमिभागे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अहापडिरुव
 जाव विहरति-परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ परिसा पडिगया-तएण
 तेसि धम्मघोसाण थेराण अतेवासी धम्मरुई नाम अणगारे ओराळे

(ते ण कालेण तेण समएण) इत्यादि ।

टीकायं-(तेण कालेण तेण समएण) ते काले अने ते समये

(धम्मघोसा नाम थेरा जाव बहुपरिवारा जेणेव चपा नाम नगरी जेणेव
 सुभूमिभागे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अहापडिरुव जाव विहरति
 परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसापडिगया, तएण तेसि ५ थेराण

यावत्-पाया नगर्यां पुचनीचमध्यमकुशानि यावदटन् यत्रैव नागश्रिया ब्राह्मण्या
एव तत्रैवानुपनिष्टः ।

ततः गच्छ सा नागश्री ब्राह्मणी धर्मरुचिमनगारम् एजमानम्-आगच्छन्त
पश्यति, दृष्ट्वा तस्य 'सालइयस्स' शारदिकस्य तित्तरुडुकस्य=तित्तरुडुकतुम्ब-
कस्य बहुस भारस भृतस्य स्नेहावगाढस्य 'पट्टवणट्टयाए' प्रस्थापनार्थं=परिष्ठा-
पनार्थं हृष्टुष्टा 'उट्टाए' उत्थया=उत्थानक्रियया उत्तिष्ठति, उत्थाय यत्रैव भक्तगृह
तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य तद् शारदिक तित्तरुडुकतुम्बक बहुमभारसभृत
स्नेहावगाढ धर्मरुचेरनगारस्य 'पडिग्गहसि' पतदग्रहे-पात्रे, सर्वमेव 'निसिरइ'

जिस प्रकार गौतम स्वामी श्री महावीर स्वामी से पूछकर आहार लेने
के लिये जाते थे उसी प्रकार इन्होंने धर्मघोष स्थविर से आहार लाने
के लिये आज्ञा मागी । आज्ञा प्राप्तकर ये चंपानगरी में उच्च नीच एवं
मध्यमकुलो में भ्रमण करते हुए जहाँ नागश्री ब्राह्मणी का घर था वहाँ
गये । नागश्री ब्राह्मणी ने इन्हें ज्योही आने हुए देखा (पासित्ता तस्स
सालइयस्स बहु सभारसभियस्स णेहावगाढस्स तित्तरुडुकस्य पट्टवण-
ट्टयाए हृष्टुट्टा उट्टाए उट्टेइ उट्टित्ता जेणेव भत्तवरे तेणेव उवागच्छइ)
त्योही यह बहुसभार सभृत एव स्नेहावगाढ उसकडवी तुमडीका आहार
देने के लिये उत्थान क्रिया द्वारा-उठी-अर्थात् अपने में रही हुई उठने
की शक्ति से उठी और हृष्ट तुष्ट होनी हुई जहाँ भोजन-गृह था वहाँ
गइ । (उवागच्छित्ता तं सालइयतित्तरुडुकस्य च बहुसभारसभिय णेहा-
वगाढं धम्मरुडयस्स अणगारस्स पडिग्गहसि सत्त्वमेव निसिरइ) वहाँ

स्वामीने पूत्रीने आहार लाववा भाटे नीकणता हुता तेमन् तेओअ्ये पंथु
आहार लाववा भाटे धर्मघोष स्थविरनी पासे आज्ञा मागी आज्ञा भेगवीने
तेओ अंपा नगरीमा उच्चनीय अने मध्यम कुलोमा भ्रमणु करता न्या
नागश्री ब्राह्मणीतु घर हुतु त्या गया नागश्री ब्राह्मणीअे तेओने आवता न्येया
'(पासित्ता तस्स सालइयस्स बहुसभारसभियस्स णेहावगाढस्स तित्तरुडुकस्य
पट्टवणट्टयाए हृष्टुट्टा उट्टाए उट्टेइ, उट्टित्ता जेणेव भत्तवरे तेणेव उवागच्छइ)
'त्यारे तरतन् भरस चधारैवा धी तरने उडवी तुमडीने आहार आपवा
भाटे उत्थान क्रिया वडे जेषी थउ अेटवे के पोतानामा रडेवी जमा ववानी ताडातथी
ते जेषी वर्य अने हृष्ट तेमन् तुष्ट थती न्या भोजनशाणा हुती त्या गइ

(उवागच्छित्ता तं सालइय तित्तरुडुकस्य च बहुसभारसभिय णेहावगाढ ध-
म्मरुडयस्स अणगारस्स पडिग्गहसि सर्वमेव निसिरइ)

तथा, मास=त्रिंशद्द्वोरात्रात्मकं काल मासेन=मास-उपनेन मासोपवासरूपतः
 कर्मणा 'खममाणे' क्षपयन्=याययन् विदरति । ततः रत्न म धर्मरुचिनागरो
 मासक्षपणपारणके प्रथमाया पौरुषा 'सूत्राय' स्यान्नाय सूत्रपाठरूप करोति,
 द्वितीयाया पौरुष्या ध्यानम् सूत्रार्थचिन्तनरूप ध्यायति-करोति, एव यथा गौतम-
 स्वामी, तथैव गौतमस्वामीयत् तृतीयपौरुष्या भाजनरस्त्राणिपमार्जनति, प्रमार्ज्य
 भाजनानि 'उग्गाहेइ' अमृष्टहाति, अमृष्टयत्रैव धर्मघोषस्थविरागत्रैवोपागच्छति,
 उपागत्य तथैव श्रीमहावीरस्वामीन गौतमस्वामियदेव धर्मघोष स्थविरमापृच्छति,

से, ये अपने त्रिंशत् अहोरात्रात्मक काल को उम समय व्यतीत कर
 रहे थे । अर्थात् एक महीने की तपस्या इन्होंने उस समय कर रखे थे-
 (तएण से धम्मरूइ अणगारे मासखमणपारणगसि पढमाण पोरिसीए
 सज्झाय करेइ वीयाए पोरिसीए एव जहा गोयमसामो तहेव उग्गाहेइ,
 उग्गाहिता तहेव धम्मघोस थेर आपुच्छइ, जाव चपाए नयरीए उच्च
 नीय मज्झिमकुलाइ जाव अडमाणे जेणेव नागसिरीए माहणीए गिहे
 तेणेव अणुपविट्ठे, तएण सा नागसिरी माहणी धम्मरूइ एज्जमाण
 पासइ) ये धर्मरुचि अनगार मासक्षपण की पारणा के दिनप्रथम पौरुषी
 में सूत्रपाठ रूप स्वा याय, द्वितीय पौरुषी में सूत्रार्थ चिन्तन रूप ध्यान
 और तृतीय पौरुषी में गौतम स्वामी की तरह चस्त्रपात्रों का प्रमार्जन
 करते । इस तरह इन्होंने तृतीय पौरुषी में चस्त्र पात्रों का प्रमार्जन कर
 अपने पत्रों को उठाया और उठकर ये धर्मघोष स्थविर के पास गये ।

पोताना त्रिंशत् अहोरात्रात्मक कालने ते सभये पसार करी रखा छता-अट्ठे
 के तेओ ते सभये ओक मासनी तपस्या करी रखा छता

(तएण से धम्मरूइ अणगारे मासखमणपारणगसि पढमाण पोरिसीए स
 ज्झाय करेइ, वीयाए पोरिसीए एव जहा गोयमसामो तहेव उग्गाहेइ, उग्गाहिता
 तहेव धम्मघोस थेर आपुच्छइ, जाव चपाए नयरीए उच्चनीय मज्झिमकुलाइ जाव
 अडमाणे जेणेव नागसिरीए माहणीए गिहे तेणेव अणुपविट्ठे, तएण सा नागसिरी
 माहणी धम्मरूइ एज्जमाण पासइ)

धर्मरुचि अनगार गौतम स्वामीनी जेम प्रथम पौरुषीमा सूत्रपाठ रूप
 स्वाध्याय, द्वितीय पौरुषीमा सूत्रार्थ चिन्तन रूप ध्यान अने तृतीय पौरुषीमा
 वस्त्र अने पात्रोनु प्रमार्जन करता छता, मास क्षपणुना पोताना पारणुना
 द्विपसे पणु तेओओ तृतीय पौरुषीमा वस्त्र-पोतानु प्रमार्जन करीने पोताना
 पात्रोने वीधा अने वधने तेओ धर्मघोष स्थविरनी पास गौतम

तथा, मास=त्रिंशद्द्वाराशात्मक काल मासेन=मास-अपणेन मासोपवासरूपतः
 फर्मणा 'स्वमाणे' क्षययन्=यावयन् विहरति । ततः खलु म धर्मरुचिर्नगारो
 मासक्षणपारणके प्रथमाया पौरुष्या 'सूत्रयं' व्याख्याय सूत्रपाठरूप करोति,
 द्वितीयाया पौरुष्या ध्यानम् सूत्रार्थचिन्तनरूप ध्यायति-करोति, एव यथा गौतम-
 स्वामी, तथैव गौतमस्वामीत् तृतीयपौरुष्यां भाजान्स्त्राणिप्रमार्जयति, प्रमार्ज्यं
 भाजनानि 'उग्गाहेइ' अग्रगृह्णाति, अग्रगृह्यथैव धर्मघोषस्थविर्नगारोपागच्छति,
 उपागत्य तथैव श्रीमहावीरस्वामीन गौतमस्वामिप्रदेव धर्मघोष स्थविरमापृच्छति,

से, ये अपने त्रिंशत् अहोरात्रात्मक काल को उस समय व्यतीत कर
 रहे थे । अर्थात् एक महीने की तपस्या इन्होंने उस समय कर रखे थे-
 (तएण से धम्मरूइ अणगारे मासखमणपारणगसि पढमाण पोरिसीए
 सज्जाय करेइ वीयाए पोरिसीए एव जहा गोयमसामो तहेव उग्गाहेइ,
 उग्गाहिता, तहेव धम्मघोस थेर आपुच्छइ, जाव चपाए नयरीए उच्च
 नीय मज्झिमकुलाइ जाव अडमाणे जेणेव नागसिरीए माहणीए गिहे
 तेणेव अणुपविट्ठे, तएण सा नागसिरी माहणी धम्मरूइ एज्जमाण
 पासइ) ये धर्मरुचि अनगार मासक्षण की पारणा के दिनप्रथम पौरुषी
 में सूत्रपाठ रूप स्वाध्याय, द्वितीय पौरुषी में सूत्रार्थ चिन्तन रूप ध्यान
 और तृतीय पौरुषी में गौतम स्वामी की तरह वस्त्रपात्रों का प्रमार्जन
 करते । इस तरह इन्होंने तृतीय पौरुषी में सूत्र पात्रों का प्रमार्जन कर
 अपने पत्रों को उठाया और उठकर ये धर्मघोष स्थविर के पास गये ।

चोताना त्रिंशत् अहोरात्रात्मक कालने ते समये पसार करी रखा डता-अटके
 के तेओ ते समये ओक मासनी तपस्या करी रखा डता

(तएण से धम्मरूइ अणगारे मासखमणपारणगसि पढमाण पोरिसीए स
 ज्जाय करेइ, वीयाए पोरिसीए एव जहा गोयमसामो तहेव उग्गाहेइ, उग्गाहिता
 तहेव धम्मघोस थेर आपुच्छइ, जाव चपाए नयरीए उच्चनीय मज्झिमकुलाइ जाव
 अडमाणे जेणेव नागसिरीए माहणीए गिहे तेणेव अणुपविट्ठे, तएण सा नागसिरी
 माहणी धम्मरूइ एज्जमाण पासइ)

धर्मरुचि अनगार गौतम स्वामीनी नेम प्रथम पौरुषीमा सूत्रपाठ रूप
 स्वाध्याय, द्वितीय पौरुषीमा सूत्रार्थ चिन्तन रूप ध्यान अने तृतीय पौरुषीमा
 वस्त्र अने पात्रोतु प्रमार्जन करता डता, मास क्षणपुना चोताना पात्रोतुना
 द्विसे पवु तेओओ तृतीय पौरुषीमा वस्त्र-चोतानु प्रमार्जन करीने चोताना
 पात्रोने वीधा अने वधने तेओ धम घोष स्थविरनी पास । नेम गौतम

रुचिपनगारमेवमवदन् यदि खलु त्वं हे देवानुप्रिय । एतद् शारदिकं यावत्-
 तिक्रकटुकुम्भक यावत् स्नेहाप्रगाढम् आहारयसि=आहार करिष्यसि, तर्हि खलु
 त्वमकाले एव जीविताद् व्यपरोपिष्यसे' एतदशनेन मरणमशय प्राप्स्यसीत्यर्थ ।
 त्व=तस्मात् मा खलु त्वं हे देवानुप्रिय ! एतद् शारदिकं यावदाहाग, मा खलु

निकल कर चपानगरी के घीचो घीचसे होकर चल दिये सो जहा सुभू-
 मिभाग नाम का उग्रान था वहा आ गये । वहा आकर वे अपने आ-
 चार्य धर्मघोष स्वचिर के पास आये वहा आकर उन्होंने भिक्षामें प्राप्त
 हुआ आहार वताया और वताने के बाद उस शारदिक कडवी तु बडी
 के यावत् स्नेहाप्रगाढ शारु की गंध से अभिभूत होते हुए उन धर्मघोष
 आचार्य ने उस शारदिक यावत् स्नेहाप्रगाढ शारु में से एक घिन्दु मात्र
 को अपने हाथ की हथेली पर रख कर चखा (तित्तग खार कडुय
 अखज्ज अमोज्ज विसभूयं जाणित्ता धम्मरुड अणगार एव वयासी
 -इण तुम देवाणुप्पिया । एय सालइय जाव ने हावगाढ आहारेमि तो
 ण तुम अकाले चैव जीवियाओ ववरोविज्जसि) चखते ही " यह
 तिक्र है क्षार से युक्त है कटुक है अखाद्य एव अमोज्ज है तथा विषभून
 है " ऐसा जानर धर्मरुचि अनगार से उन्होंने ऐसा कहा हे देवानु-
 प्रिय । यदि तुम शारदिक कडवी तु बडी के बहुत सभार सभृत एवं
 स्नेहाप्रगाढ इस शारु का आहार करोगे-तो निश्चय से बिना मृत्यु के

नीकजीने था पा नगरीनी वर्येना भार्गधी पसार थना वना सुभूमिभाग
 नामे उग्रान इतु त्या आव्या त्या आवीने तेओ पोताना आचार्य धर्मघोष
 स्थनिरनी धामे आव्या अने त्या आवीने तेमछे भिक्षामा प्राप्त थयेला
 आहारने गताव्ये अने गतावीने ते शारदिक कडवी तूणडीना सरस वधारेला
 धी तरता शाकनी सुवासधी अलिभूत थता ते धर्मघोष आचार्ये ते शारदिक
 सरस वधारेला धी तरता शाकने डयेजी उपर भूडीने थाप्यु

(तित्तग खार कडुय अखज्ज अमोज्ज विसभूयं जाणित्ता धम्मरुड अणगार
 एव वयासी-इण तुम देवाणुप्पिया । एय सालइय जाव नेहावगाढ आहारेमि
 तो ण तुम अकाले चैव जीवियाओ ववरोविज्जसि)

आगता व " आ तिक्रत छे, भाइ छे, कडवु छे, अखाद्य तेमअ अलोअन्य
 छे तथा विषभूत छे " आवु वर्येनी धर्मरुचि अनगारने तेओअने आ प्रभाछे
 कडु के डे देवानुप्रिय ! जे तमे शारदिक कडवी तूणडीना सरस वधा
 रेला धीतरता शाकने आहार करथे तो थोअस तमे कमेते मरी वथे।

निष्कृति=परिष्ठापयति । ततः गच्छ म धर्मक्रीतनगर' 'अहापज्जत्त' यथा पर्याप्तम्-उदरपूर्तये पूर्णमेतद् इति कृत्वा=इति मनसि विभाष्य, नागश्रिया ब्राह्मण्या गृहात् प्रतिनिष्कामति-निर्गच्छति प्रतिनिष्कम्य चम्पाया नगर्या मध्यमत्वेन प्रति-निष्कामयति प्रतिनिष्कम्य यत्रैव सुभूमिभागप्रदान नैवोपागच्छति, उपागत्य धर्म घोषस्य स्थविरस्य 'अदूरसामन्ते =नातिदूरे नातिमदीये, अत्रपान 'पडिलेहेइ' प्रति लेखयति प्रतिलेख्य अत्रपान करतले पात्र म्त्वा प्रतिदर्शयति। ततः सल्लु ते धर्मोपाः स्थविरास्तस्य शारदिकस्य तित्तरुदुग्मस्य यात्रु स्नेहागगादस्य गधेनाऽभि भूतासन्तस्तस्माच्छारदिकाद् यात्रु स्नेहागगादेक विन्दुरु गृहीत्वा करतले कृत्वा आसादयति । तित्तरु क्षार कदुरुम् अवाद्यमभोज्य विपभूत तात्वा धर्म-

जाकर उसने उस शारदिक कडवी तुण्डी का चट्टु सभार सभृन एव स्नेहावगाढ शाक धर्मरुचि अनागार के पात्र में सघ का सघ डाल दिया (तएण सेधम्मरूइ अणगारे अहापज्जत्तमित्ति कदूडु णागसिरीए माह-णीए गिहाओ पडिनिक्खमइ) इसके बाद वे धर्मरुचि अनगार " यह उदर पूर्ति के लिये पर्याप्त है " ऐसा मन में समझ कर नागश्री ब्राह्मणी के घर से बाहर निकले पडिस्त्रामित्ता चपाण नयरीए मज्झ मज्झेण पडिनिक्खमइ, जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे - तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मघोसस्स अदूरसामते अन्नपोण पडिलेहेइ, पडिले हित्ता अण्णपाण करयलसि पडिदसेइ, तएण से धम्मघोसा येरा तस्स सालइस्स जाव नेहावगाढस्स गधेण अभिभूया समाणा ताओ साल इयाओ जाव नेहावगाढाओ एग विंदुग गहाय करयलसि आसाएइ)

त्या अस्मि तेष्णु ते शारदिक कडवी तुण्डीनु भूण अ सरस रीते वधा रेणु तेमन् धी तरुणु शाक लक्ष आपी अने त्यारपथी धर्मरुचि अनगारना पात्रमा णधु नापी द्विधु

(तएण धम्मरूइ अणगारे अहापज्जत्तमित्ति कदूडु णागसिरीए महिणीए गिहाओ पडिनिक्खमइ)

त्यारपथी ते धर्मरुचि अनगार " आ उदर पोषणु भाटे पर्याप्त छे " अेषु लक्ष्मिने नागश्री ब्राह्मणीना धेशी णडार नीडयथा

(पडिनिक्खमित्ता चपाण नयरीए मज्झ मज्झेण पडिनिक्खमइ, जेणेव सुभूमि भागे उज्जाणे-तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मघोसस्स अदूरसामते अन्न पाण पडिलेहेइ, पडिलेहिता अण्णपाण करयलसि पडिदसेइ, तएण से धम्म-घोसायेरा तस्स सालइस्स जाव नेहावगाढस्स गधेण अभिभूया समाणा ताओ सालइयाओ जाव नेहावगाढाओ एग विंदुग गहाय

रुचिमननारमेवमवदन् यदि खलु त्व हे देवानुप्रिय । एतद् शारदिकं यावत्-
 तित्तकडुकुतुम्भक यावत् स्नेहावगाढम् आहारयसि=आहार करिष्यसि, तर्हि खलु
 त्वमकाले एव जीविताद् व्यपरोपिष्यसे' एतदशनेन मरणमशय प्राप्त्यसीत्यर्थ ।
 तत्=वस्मात् मा खलु त्व हे देवानुप्रिय ! एतद् शारदिकं यावदाहाग्य, मा खलु

निकल कर चपानगरी के घीचो घीचसे होकर चल दिये सो जहा सुभू-
 मिभाग नाम का उद्यान था वहा आ गये । वहा आकर वे अपने आ-
 चार्य धर्मघोष स्थविर के पास आये वहा आकर उन्होंने भिक्षामें प्राप्त
 हुआ आहार बताया और बताने के बाद उस शारदिक कडवी तु बडी
 के यावत् स्नेहावगाढ शाक की गध से अभिभूत होते हुए उन धर्मघोष
 आचार्य ने उस शारदिक यावत् स्नेहावगाढ शाक मे से एक बिन्दु मात्र
 को अपने हाथ की हथेली पर रख कर चखा (तित्तग खार कडुय
 अखज्ज अभोज्ज विसभूय जाणित्ता धम्मरुइ अणगार एव वयासी
 -इण तुम देवाणुप्पिया । एय सालइय जाय ने हावगाढ आहारेमि तो
 ण तुम अकाले चैव जीवियाओ ववरोविज्जसि) चवते ही " यह
 तित्त हैं क्षार से युक्त है कडुक है अग्वाद्य एव अभोज्ज है तथा विपभूत
 है " ऐसा जानर धर्मरुचि अनगर से उन्होंने ऐसा कहा हे देवानु
 प्रिय । यदि तुम शारदिक कडवी तु बडी के बहुत सभार सभृत एवं
 स्नेहावगाढ इस शाक का आहार करोगे-तो निश्चय से बिना मृत्यु के

नीकगीने यथा नगरीनी वञ्चेना भार्गधी पसार यथा नना सुलभिलाग
 नामे उद्यान इतु त्या आव्या त्या आवीने तेज्जे पोताना आचार्य धर्मघोष
 स्थविरनी पासे आव्या अने त्या आवीने तेमहे भिक्षामा प्राप्त थयेला
 आहारने पताव्ये अने पतावाने ते शारदिक कडवी तु बडीना सरस पधारेला
 धी तरता शाकनी सुवासधी अलिभूत यथा ते धर्मघोष आचार्ये ते शारदिक
 सरस पधारेला धी तरता शाकने छथेणी उपर भूडीने आभ्यु

(तित्तग खार कडुय अखज्ज अभोज्ज विसभूय जाणित्ता धम्मरुइ अणगारं
 एव वयासी-इण तुम देवाणुप्पिया । एय सालइय जाय नेहावगाढ आहारेसि
 तो णं तुम अकाले चैव जीवियाओ ववरोविज्जसि)

आपता व " आ तित्त छे, भाइ छे, कडवु छे, अग्वाद्य तेमने अलोअन्य
 छे तथा विपभूत छे " आवु लक्ष्मीने धर्मरुचि अनगरने तेज्जेजे आ प्रभाहे
 कडु के छे देवानुप्रिय । जे तमे शारदिक कडवी तु बडीना सरस पधा
 आहार करथे तो थोळस तमे कमेते मरी नथे।

एवमन्नाद्यैः जीविनाद् व्यपरोक्षम्=मा निवस्य । तत्=नस्नाद् गच्छ सलु तं हे देवानुप्रिय । इदं शारदिक 'एगमणावाए' एगमन्ते=जनापाते=एकान्ते= निर्जनस्थाने, अनापाते=आपात.-हीन्द्रियादिप्राणिनां संयोगस्तद्वर्जिते, अचित्ते= जीवरहिते, स्थण्डिले=भूमौ 'परिद्वेदि' परिष्ठापय, परिष्ठाप्यान्यत् प्रासुकमेषणीय= द्वावत्वारिंशदोपरहित, शुद्धम्-अशनपानखाद्यस्याम् प्रतिगृह्य आहारमाहारया॥सू० २॥

मूलम्-तएणं से धम्मरुई अणगारे धम्मघोमेण थेरेणं एवं वुत्ते समाणे धम्मघोसस्स थेरस्स अंतियाओ पडिनिक्खमई, पडिनिक्खमित्ता सुभूमिभागाओ उज्जाणाओ अदूरसामते धडिह्ल

मरजाओगे-(त मा ण तुमं देवानुप्पिया । इमं सालइयं जाव आहारेहि मा ण तुम अकाले चैव जीवियाओ ववरोविज्जहि त गच्छण तुमं देवानुप्पिया । इम सालइयं एगमणावाए अचित्ते थडिले पडिद्वेदि, परिद्वित्ता अन्नं फासुय एमणिज्जं असणं पाणं खाइमं साइमं पडि गाहेत्ता आहार आहारेहि) इमन्निपे हे देवानुप्रिय ! तुम शारदिक कंडवी तुषडी के शाक किसी एकान्न स्थानमें कि जहा हीन्द्रियादि प्राणियोंको संचरण नहो-और जो अचित्त हो ऐसी भूमि पर परिष्ठापना कर आओ । और परिष्ठापना करके फिर प्रासुक एषणीय ४-४२ दोषो से रहित शुद्ध अशन, पान, खाद्य-स्वाद्य रूप द्मरे आहार को लेकर भोजन कर लो ॥ सू० २ ॥

(त मा णं तुमं देवानुप्पिया ! इम सालइयं जाव आहारेहि मा ण तुम अकाले चैव जीवियाओ ववरोविज्जहि त गच्छण तुमं देवानुप्पिया । इम सालइयं एगमणावाए अचित्ते थडिले पडिद्वेदि, परिद्वित्ता अन्नं फासुय एमणिज्जं असणं पाणं खाइमं साइमं पडिगाहित्ता आहार आहारेहि)

अथो हे देवानुप्रिय ! तमे आ शारदिक तूषडीना शाकने आशो नडि तेथी अडाणे तमोइ भरेणु पणु थरो मडि भाटे हे देवानुप्रिय ! तमे आ आ शारदिक कंडवी तूषडीना शाकनी डोषयणु अकाल-निर्जन स्थानभा के न्या हीन्द्रियादि प्राणीआनु संचरणु डोय नडि अने ने, अचित्त डोय अवी भूमि उपर परिष्ठापना कंरी आवो अने परिष्ठापना कथां पाड प्रासुक एषणीय ४२ दोषोथी रहित शुद्ध अशन, पान, खाद्य-स्वाद्य रूप पीजे आहार खावी ते आहार भइणु कंरी ॥ सूत्र " २ " ॥

पडिलेहेइ, पडिलेहिता तओ सालाइयाओ, एगं- विदुग गहेइ
 गहिता थंडिलंसि निसिरइ तो णं तस्स सालइयस्स तित्तकडु-
 यस्स वहुनेहावगाढस्स गंधेण वहुणि पिपीलियासहस्साणि पाउ-
 ँभूयाइ जा जहा य णं पिपीलिका आहारेइ सा तथा अकाले
 चेव जीवियाओ ववरोविज्जइ तएणं तस्स धम्मरुइस्स अणगा-
 रस्स इमेयारूवे अज्झरिथए ५ जाव ताव इमस्स सालइयस्स
 जाव एगंमि विदुगंमि पक्खित्तमि अणेगाइं पिपीलियासहस्साइं
 ववरोविज्जाति तं जइ णं अह एय सालइय थडिलसि सव्व
 निसिरामि तएणं वहुण पाणाणं ४ वहकारणं भविस्सइ, त
 सेय खल्ल ममेय सालइय जावगाढ सयमेव आहारेत्तए, मम
 चेव एएणं सररीरेणं णिज्जाउत्तिकट्टु एव संपेहेइ सपेहिता मुह-
 पोत्तिय पडिलेहेइ, पडिलेहिता ससीसोवरियं काय पमज्जेइ २ तं
 सालइय तित्तकडुयं वहुनेहावगाढ विलमिव पन्नगभूतणं अ-
 प्पाणेणं सव्व सररीरकोट्टुसि पक्खिवइ, तएणं तस्स धम्मरुइस्स
 त सालइय जाव नेहावगाढ आहारियस्स समाणस्स मुहुत्तरेण
 परिणममाणंसि सररीरगंसि वेयणा पाउंभूया उज्जला जाव दुरहि-
 यासा, तएण से धम्मरुची अणगारे अथामे अवुले अवीरिए
 अपुरिसक्कारपरक्कमे आधारणिज्जमितिकट्टु आयारभडग एगंते
 ठवेइ ठवित्ता थडिल्ल पडिलेहेइ, पडिलहिता दव्वभसंधारगं
 संथारेइ सथारित्ता दव्वभसंधारंग दुरुहइ, दुरुहित्ता पुरस्थाभि-
 मुहे सपलियकनिसन्ने करंयलपरिगगहिय एव वयासी-नमोऽथु,

स्वकारणैव जीविनाद् व्यपरोप्यन्व=मा त्रियस्य । तन्=तस्माद् गच्छ ससु त्वं
 हे देवानुप्रिय । इदं शारदिक ' एगनमणावाण ' पाकान्तेजनापाते=एकान्ते=
 निर्जनस्थाने, अनापाते-आपातः-द्वीन्द्रियादिप्राणिनां सयोगस्तद्वर्जिते, अचित्ते=
 'जीवरहिते, स्थण्डिले=भूमौ ' परिद्वेदि ' परिष्ठापय, परिष्ठाप्यान्यत् प्रासुकमेपर्णीयं=
 द्वाचत्वारिंशदोपरहित, शुद्धम्-अशनपानखाद्यस्यायम् प्रतिगृह्य आहारमाहारया॥सू०२॥

मूलम्-तएण से धम्मरुई अणगारे धम्मघोसेण थेरेण एवं
 बुत्ते समाणे धम्मघोसस्स थेरस्स अतियाओ पडिनिक्खमई,
 पडिनिक्खमित्ता सुभूमिभागाओ उज्जाणाओ अदूरस्सामते थडिह्हे

मरजाभोगे-(त मा ण तुमं देवानुप्पिया । इमं सालइय जाव आहारेहि
 मा ण तुम अकाले चिय जीवियाओ ववरोविज्जहि त गच्छण तुम
 देवानुप्पिया । इम सालइय एगनमणावाण अच्चित्ते थडिठे पडिद्वेदि,
 परिद्वित्ता अन्न फासुय एसणिज्ज असण पाण खाइम साइम पडि
 गाहेत्ता आहार आहारेहि) इमलिये हे देवानुप्रिय ! तुम शारदिक
 कडवी तुषडी के शाक किसी एकान्न स्थानमें कि जरा द्वीन्द्रियादि
 प्राणियोंको सचरण नहीं—और जो अचित्त हो ऐसी भूमि पर परि-
 ष्ठापना कर आओ । और परिष्ठापना करके फिर प्रांसुक एपर्णीय ४
 ४२-दोषों से रहित शुद्ध अशन, पान, आद्य-खाद्य रूप द्मरे आहौर
 को लेकर भोजन कर लो ॥ सू० २ ॥

(त मा ण तुम देवानुप्पिया । इम सालइय जाव आहारेहि मा ण तुम अकाले
 चिय जीवियाओ ववरोविज्जहि त गच्छण तुम देवानुप्पिया । इम सालइय एग
 नमणावाण अच्चित्ते थडिठे पडिद्वेदि, परिद्वित्ता अन्न फासुय एसणिज्ज असण
 पाण खाइम साइम पडिगाहेत्ता आहार आहारेहि)

अथी डे देवानुप्रिय ! तमे आ शारदिक तूणडीना शाकने पाशो नडि
 तैथी अकाले तमोइ भरलु पलु थशे नडि भाटे डि देवानुप्रिय ! तमे आ
 आ शारदिक कडवी तूणडीना शाकनी कोषपलु अकाले=निर्जन स्थानभा के न्या
 द्वीन्द्रियादि प्राणीओनु सचरणु डाय नडि अने ने अचित्त डाय अवी भूमि
 उपर परिष्ठापना करी आवो अने परिष्ठापना कर्या पाद प्रासुक अपर्णीय ४२
 दोषोधी रहित शुद्ध अशन, पान, आद्य-खाद्य रूप जीओ आहार खावी ते
 आहार अडलु करी ॥ सूत्र " २ " ॥

तिक्तकटुकस्य तुम्बुरुस्य बहुसमारसभृतस्य स्नेहावगाढस्य गन्धेन बहूनि पिपीलिका-
सहस्राणि प्रादुर्भूतानि, या यथा च 'ण' त=शारदिकस्य तिक्तकटुक तुम्बुरुस्य
विन्दुक पिपीलिका आहरति, सा तथा अकाले एव " जीवियाओ ववरोविज्जइ'
जीविताद् व्यपरोप्यते=प्राणेभ्यो वियुज्यते ' म्रियते ' इत्यर्थः, ततः खलु=पिपी-
लिकाविराधनमवलोक्य धर्मरुचेरनगारस्यायमेतद्रूपः=वक्ष्यमाणस्वरूपः आध्या-
त्मिकः=५ आत्मगतः चिन्तितः=स्मरणरूपः, प्रायितः=अभिलापरूपः, कल्पितः=
कल्पनारूपः, मनोगतः=अन्तः प्रकाशितः सकल्यो विचारः समुदपद्यत यदि तावदस्य
शारदिकस्य यावत्-तिक्त तुम्बुरुस्य एकस्मिन् विन्दुके प्रक्षिप्ते सति, अनेकानि
पिपीलिकासहस्राणि ' ववरोविज्जति ' व्यपरोप्यन्ते=प्राणेभ्यो वियुज्यते म्रियन्ते ।

स्स बहूनेहावगाढस्स गधेण घट्टणि पिपीलिगासहस्साणि पाउब्भूयाइ
जा जहायण पिपीलिका आहारेइ सा तथा अकाले चैव जीवियाओ ववरो
विज्जइ) और आरु के उन्होने सुभूमिभाग उद्यान से न अतिदूर
और न अति समीप भूमि की प्रतिलेखना की । प्रतिलेखना करके फिर
उन्होंने उस शारदिक-तिक्तकटु-तुयडी के शाक में से एक विन्दुमात्र
शाक लिया-और लेकर उसे भूमि पर डाल दिया । तो इतने में ही
शारदिक तिक्तकटवी तुयडी के उस बहुस्नेहावगाढ शाक की गध से
बहा हजारों कीड़िया एकट्टी-एकत्रित-हो गई । उनमें से जिस कीड़ीने
जिस समय उसे खाया वह कीड़ी उसी समय वहां मर गई । (तएणं
तस्स घम्मरुइयस्स अणगारस्स इमेयारुवे अज्झत्थिए ५-जइ ताव इम-
स्स सालइयस्स जाव एगमि विन्दुगमि पक्खित्तमि अणेगाइ पिपीलिया

सहस्साणि पाउब्भूयाइ जा जहायण पिपीलिका आहारेइ सा तथा अकाले चैव
जीवियाओ ववरोविज्जइ)

अने आवीने तेभे सुभूमिभाग उद्यानथी वधारे इर पणु नडि अने
वधारे नल्लक पणु नडि अवा स्थाने भूमिनी प्रतिलेखना करी प्रतिलेखना
करीने तेओओ ते शारदिक-तिक्त कटवी तूणडीना शाकमाथी ओक टीपा नेटवुं
शाक वीधु अने लधने ते भूमिभाग उपर नाथी वीधु नाथतानी साथे
था शारदिक तिक्त-कटवी तूणडीना थी तरता शाकनी सुवासथी हल्लरे कीडीओ
ओकडी थर्ध गध तेओओमाथी ओ ओ कीडीओ ते शाकने थाधु इत्तु ते ते-तरत
था भरी गध

तएणं तस्स घम्मरुइयस्स अणगारस्स इमेयारुवे अज्झत्थिए ५ जइ ताव इम-
स्स सालइयस्स जाव एगमि विन्दुगमि पक्खित्तमि अणेगाइ पिपीलिया सहस्साइ

णं अरहताण जाव संपत्ताणं, णसोऽत्थु णं धम्मघोसाणं थेराणं
सम धम्मायरियाण धम्मोवएसगाणं, पुट्ठिवपि णं मए धम्म-
घोसाणं थेराण अतिए सव्वेपाणाइवाए पच्चमत्थाए जावजीवाए
जाव परिग्गहे, इयाणिपि ण अह तेसिं चेत्र भगवंताण अंतियं
सव्व पाणाइवाइ पच्चमत्थामि जाव परिग्गह पच्चमत्थामि जाव-
जीवाए, जहा संदओ जाव चरिमेहिं उस्सासेहिं वोसिरामिति-
कट्टु आलोइयपडिक्कते समाहिपत्ते कालगए ॥ सू० ३ ॥

टीका—तत्र खत्रु स धर्मरुचिरनगारो धर्मघोषेण स्थिरिरेणैवमुक्तः सन् धर्म
घोषस्य स्थविरस्यान्वितान्=समीपात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य सुभूमिभागा
धानाद् अदूरसामन्ते=नानिदूरे नातीसमीपे स्थण्डिलं प्रतिलेपयति, प्रतिलेख्य
तत्र=स्माद् शारदिकात् तिक्करुद्रमात् तुम्भमादेक विन्दुकं गृह्णाति, दृष्टीत्वा
स्थण्डिले=भूमौ ' निसरइ ' निष्कृति=परिष्ठापयति । ततः खत्रु तस्य शारदिकस्य

तएण से धम्मरुई अणगारे इ यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इत्येके याद् (से धम्मरुई अणगारे धम्मघोसे ण
थेरेण एव बुत्ते समाणे धम्मघोसस्स थेरस्स अतियाओ पडिनिक्खमइ) वे
धर्म रुचि अनगार धर्म घोष से इस प्रकार कहे जाने पर धर्मघोष के
पास से चठे आये (पडिनिक्खमित्ता सुभूमिभागाओ उज्जाणाओ
अदूर सामन्ते थडिल पडिलेहेइ, पडिलेहिंत्ता तओ सालइयाओ एग विंदुग
गहेइ, गहिंत्ता थडिलसि निसरइ, तो ण तस्स सालइयस्स तित्त कडुय-

त एण से धम्मरुई अणगारे इत्यादि

टीकार्थ—(त एण) त्थारपथी

(से धम्मरुई अणगारे धम्मघोसेण थेरेण एव बुत्ते समाणे धम्मघोसस्स
थेरस्स अतियाओ पडिनिक्खमइ)

ते धर्मरुचि अनगार धर्मघोषनी आ वात सालणीने तेरणी पासेथी
आवता रद्धा

(पडिनिक्खमित्ता सुभूमिभागाओ उज्जाणाओ अदूरसामन्ते थडिल पडिले-
हेइ, पडिलेहिंत्ता तओ सालइयाओ एग विंदुग गहेइ, गहिंत्ता थडिलमि निसरइ,
तो ण तस्स सालइयस्स तित्तकडुयस्स बहुनेहायगाइस्स गधेण ५ विधीळिगा

तिक्तकटुकस्य तुम्बकस्य बहुसमारसंभृतस्य स्नेहावगाढस्य गन्धेन वहूनि पिपीलिका-
सहस्राणि प्रादुर्भूतानि, या यथा च 'ण' त=शारदिकस्य तिक्तकटुक तुम्बकस्य
विन्दुकं पिपीलिका आहरति, सा तथा अकाले एव "जीवियाओ ववरोविज्जइ"
जीविताद् व्यपरोप्यते=प्राणेभ्यो वियुज्यते 'त्रियते' इत्यर्थः, ततः खलु=पिपी-
लिकाविराधनमवलोक्य धर्मरुचेरनगारस्यायमेतद्रूपः=वक्ष्यमाणस्वरूपः आध्या-
त्मिकः=५ आत्मगतः चिन्तितः=स्मरणरूपः, प्रायितः=अभिलापरूपः, कल्पितः=
कल्पनारूपः, मनोगतः=अन्तः प्रकाशितः सकल्यो विचारः समुदपद्यत यदि तावदस्य
शारदिकस्य यावत्-तिक्त तुम्बकस्य एरुस्मिन् विन्दुके प्रक्षिप्ते सति, अनेकानि
पिपीलिकासहस्राणि 'ववरोविज्जति' व्यपरोप्यन्ते=प्राणेभ्यो वियुज्यते त्रियन्ते ।

स्स वज्जेहावगाढस्स गधेण घट्टणि पिपीलिगासहस्साणि पाउब्भूयाइ
जा जहायण पिपीलिका आहारेइ सा तथा अकाले चैव जीवियाओ ववरो
विज्जइ) और आकर के उन्होंने सुभूमिभाग उद्यान से न अतिदूर
और न अति समीप भूमि की प्रतिलेखना की । प्रतिलेखना करके फिर
उन्होंने उस शारदिक-तिक्तकटु-तुवडी के शाक में से एक विन्दुमात्र
शाक लिया-और लेकर उसे भूमि पर डाल दिया । तो इतने में ही
शारदिक तिक्तकटवी तुवडी के उस बहुस्नेहावगाढ शाक की गध से
वहा हजारों कीड़िया एकट्टी-एकत्रित-हो गई । उनमें से जिस कीड़ीने
जिस समय उसे खाया वह कीड़ी उसी समय वहां मर गई । (तएण
तस्स घम्मरुइयस्स अणगारस्स इमेयारुवे अज्झत्थिए ५-जइ ताव इम-
स्स सालइयस्स जाव एगमि विन्दुगमि पक्खित्तमि अणेगाइ पिपीलिया

सहस्साणि पाउब्भूयाइ जा जहायण पिपीलिका आहारेइ सा तथा अकाले चैव
जीवियाओ ववरोविज्जइ)

अने आवीने तेभञ्जे सुभूमिभाग उद्यानथी वधारे इर पणु नडि अने
वधारे नल्लक पणु नडि जेवा स्थाने भूमिनी प्रतिलेखना करी प्रतिलेखना
करीने तेजोअजे ते शारदिक-तिक्त कटवी तूणडीना शाकभाथी अेक टीपा जेटुं
शाक लीधु अने लधमे ते भूमिभाग उपर नापी छीधुं नापतानी साथे
था शारदिके तिक्त-कटवी तूणडीना घी तरता शाकनी सुवासथी हल्लरो डीडीअो
अेकडी थर्ध गधं तेजोभाथी जे जे डीडीअे ते शाकने पाधुं छतुं ते ते तरतअ
था भरी गधं

तएण तस्स घम्मरुइयस्स अणगारस्स इमेयारुवे अज्झत्थिए ५ जइ ताव इम-
स्स सालइयस्स जाव एगमि विन्दुगमि पक्खित्तमि अणेगाइ पिपीलिया सहस्साइ

तत्=तस्माद् यदि खल्वहमेतद् शारदिक 'थंडिलंसि' स्पष्टिच्छे=भूमौ सर्व
 'निसिरामि' निस्तजामि=परिष्ठापयामि, 'तोण' तर्हि खलु यहनां प्राणानां
 प्राणाः सन्त्येपामिति प्राणाः=प्राणान्तस्तेषां, तथाभूताना जीवाना तत्=तस्माद्
 श्रेयः=श्रेयस्करं खलु ममेदं शारदिकं तिक्तकडुकात्यायुकं यावत्-स्नेहावगाढ स्वप्-
 मेव आहारयितु=भोक्तुम्, ममैव 'एण्ण' एतेन=तिक्ततुम्यकारेण 'सरीरेण'
 शरीर खलु 'णिज्जाउ' निपातु=निर्गच्छतु नश्यतु 'त्तिम्ह' इति कृत्वा इति
 मनसि निधाय एण्ण=अनेन प्रकारेण सप्रेहते=पुनः पुनर्विचारेण शरीरनिर्माणं कर्तुं

सहस्साहं ववरोविज्जति, त जइणं अह एण्य सालइय थडलसि सब्ब
 'निसिरामि तएण बहुण पाणाण ४ वह कारण भविस्सइ त सेय खलु
 ममेय सालइय जाव गाढ समयमेव आहारेत्तए) इस तरह पिपीलिकाओं
 की विराधना, देखकर, धर्मरूचि अनगार को इस प्रकार आध्यात्मिक
 यावत् मनोगत सकल्प-विचार हुआ-यहा सरूपके चिन्तित, प्रार्थित,
 कल्पित इन तीन विशेषणों को ग्रहण कर ने के निमित्त सूत्र में ५ का
 अंक दिया है। जब इस शारदिक तिक्त कडवी तुबडी की शाक की
 एक बिन्दु मात्र जमीन पर डालने पर अनेक पिपीलिका सहस्र प्राणों
 से वियुक्त हो जाती हैं तो मैं जब इस शारदिक तिक्त कडवी तुबडी के
 शाकको पूरेरूपमें जमीन पर परिष्ठापित कर दूंगा तो अनेक प्राणियों
 के वह विराधना का कारण होगा इसलिये मुझे उचित है कि मैं ही
 इस शारदिक तिक्त कडवी तुबडी के इस बहुत मसालेदार एव स्नेहा-
 वगाढ बहुत घृतसे युक्त शाक को स्वयं आहार कर जाऊँ। (मम वेव
 एण्ण सरीरेण णिज्जाउत्तिकट्टु एवं सपेहेइ सपेहिच्चा मुहपोत्तिय २

ववरोविज्जति, त जइणं अह एण्य सालइय थडलसि सब्बं निसिरामि तएणं बहुणं
 पाणाणं ४ वह कारणं भविस्सइ त सेय खलु ममेय सालइय जाव गाढ समयमेव आहारेत्तए

आ प्रभाणु डीडीओनी विराधना जेधने धर्मरूचि अनगारने आ नतने।
 आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प-विचार-उद्भवयो अर्ही सकल्पना चिन्तित,
 प्रार्थित, कल्पित आ त्रणे विशेषणाना अडणु भाटे सूत्रमा प ने। अक आप
 वामा आये छे-के न्यारे आ शारदिक तिक्त कडवी तूणडीना शाकना इक
 अक टीपाने पृथ्वी उपर नाभवाथी धणु डीडीओ उन्तरे प्राणोथी वियुक्त
 थर् नय छे त्यारे हु शारदिक कडवी तूणडीना मधा शाकने पृथ्वी उपर
 नाभीश त्यारे ते अनेक प्राणोथी ४ नी विराधनानु कारणु थरे अथी भने
 अणु थोअ्य वागे छे के हु आ शारदिक तिक्त कडवी तूणडीना आ सरथ
 भस्मावाणा अने धी तरता शाकने थोते अ आर्ध नडि

निश्चिनुते । सप्रेक्ष्य- 'मुहपोत्तिय' मुखपोत्तिका=सदोरकमुखचक्रिका रजोहरणं च
 प्रतिलेखयति, प्रतिलेख्य 'ससीसोवरिय' सशीषोपरिक=चरणतलाद् मस्तकोपरि-
 भागपर्यन्त काय=शरीर, 'पमज्जेइ' प्रमार्जयति, प्रमार्ज्यं तद् शारदिक तिक्तकटुक
 बहुसभारसभृत स्नेहावगाढ विलमिव पन्नगभूतेन आत्मना सर्व शरीरकोष्ठके=उदरे
 प्रक्षिपति मुखस्य पार्श्वद्वयस्पर्शरहितमाहारयतीत्यर्थः । ततः खलु तस्य धर्मरुचेस्तद्

पडिलेहेइ, पडिलेहिता ससीसोवरिय काय पमज्जेइ पमज्जिता तं सा-
 लइय तिक्तकटुक्य बहुनेहावगाढ विलमिव पन्नगभूएण अप्पाणेण सव्वं
 सरीरकोट्टसि पक्खिवइ) मेरा ही शरीर इस तिक्त कटु तुवडी के
 आहार से नाश होवे इस प्रकार उन्होंने अपने मनमें बार २ सोचा
 सोचकर अपने शरीर के निर्माण करने का उन्होंने निश्चय कर लिया ।
 निश्चय करने के अनन्तर सदोरक मुखचक्रिका एव रजोहरण इनकी
 उन्होंने प्रतिलेखना करके फिर वे चरण तल से लेकर मस्तकोपरिभाग
 पर्यन्त तक के समस्त अपने शरीर की प्रमार्जना करके उन्होंने उस
 शारदिक तिक्त कटु तुवडी के बहुत मसाला से युक्त एव स्नेहावगाढ
 बहुत घी से युक्त समस्त शाक का आहार कर लिया-जिस प्रकार
 सपे जय विल में प्रविष्ट होता है तब विल के दोनों पार्श्वभागों को स्पर्श
 नहीं करता हुआ उसमें सीधा प्रविष्ट हो जाता है-उसी तरह वह
 शाक रूप सर्प भी मुख रूप विल के दोनों पार्श्वभागों को स्पर्श नहीं
 करता हुआ सीधा गले से होकर पेट में चला गया । (तएणं तस्स

(मम चेव एण्ण सरीरेण जिज्जाउत्ति कट्टु एव सपेहेइ, सपेहिता मुहपो-
 त्तिय २ पडिलेहेइ, पडिलेहिता ससिसोवरिय काय पमज्जेइ पमज्जिता त
 सालइय तिक्तकटुक्य बहुनेहावगाढ विलमिव पन्नगभूएण अप्पाणेणं सव्वं सरीर
 कोट्टसि पक्खिवइ)

माइ शरीर न आ तिक्त कटुवी तूणडीना आहारथी नष्ट थाय आ रीते
 तेणे पोताना मनमा वारवार विचार कथी विचारिने पोताना शरीरने नष्ट
 करवानो तेमणे मज्जम विचार कथां भाइ तेणे सदोरक मुखचक्रिका अने रणे-
 षुणी तेमणे प्रतिलेखना करी प्रतिलेखना करीने तेमणे पगना तजियाथी
 भांडीने मस्तक सुधीना पोताना आभा शरीरनी प्रमार्जना करी त्यारे तेमणे
 ते शारदिक तिक्त कटुवी तूणडीना सरस मसालावाणा अने उपर घी तरता
 भधा साकने आहार करी लीधो नेवी रीते साप न्यारे दरमा प्रवेशे छे
 त्यारे दरना अने पार्श्वलागने स्पर्श कथां वगर तेमा सीधो प्रविष्ट थइ
 नथ छे तेमने ते शाक इपी साप पणु सुभ इपी दरना अने पार्श्वलागने
 स्पर्श वगर सीधु गणाभा थइने पेटमा नटु रक्षु

एतत्-तस्माद् यदि खन्वहमेतद् शारदिकं 'थंडलसि' स्पण्डिछे=भूमौ सर्वे
 'निसिरामि' निष्जामि=परिष्ठापयामि, 'तौण' तर्हि खलु यद्नां प्राणानो-
 प्राणाः सन्त्येपामिति प्राणाः=माणयन्तस्तेषां, तथाभूतानां जीवानां तत्-तस्माद्
 श्रेयः=श्रेयस्कर खलु ममेदं शारदिकं तिक्तकडुकात्मायुक्तं यावत्-स्नेहावगाढ स्व-
 मेव आहारयितुं=भोक्तुम्, ममैव 'एण' एतेन=तिक्ततुम्प्रकाहारेण 'सरीरेण'
 शरीर खलु 'णिज्जाउ' निर्यातु=निर्गच्छतु नश्यतु 'तिग्दु' इति कृत्वा इति
 मनसि निधाय एयम्=अनेन प्रकारेण सप्रेक्षते=पुन' पुनर्विचारेण शरीरनिर्माणं कर्तुं

सहस्साहं चवरोविज्जति, त जइणं अहं एय सालइय थंडलसि सब्ब
 'निसिरामि तएण बहुण पाणाण ४ चह कारण भविस्सइ त सेय खलु
 ममेय सालइय जाव गाढ सयमेव आहारेत्तण) इस तरह पिपीलिकाओं
 की विराधना देखकर, धर्मरुचि अनगार को इस प्रकार आध्यात्मिक
 यावत् मनोगत सकल्प-विचार हुआ-यहा सकल्पके चिन्तित, प्रार्थित,
 कल्पित इन तीन विशेषणों को ग्रहण कर ने के निमित्त सूत्र में ५ का
 अंक दिया है। जब इस शारदिक तिक्त कडवी तुबडी की शाक की
 एक बिन्दु मात्र जमीन पर डालने पर अनेक पिपीलिका सहस्र प्राणों
 से वियुक्त हो जाती हैं तो मैं जब इस शारदिक तिक्त कटवी तुबी के
 शाकको पूरेरूपमें जमीन पर परिष्ठापित कर दूंगा तो अनेक प्रणियों ४
 के वह विराधना का कारण होगा इसलिये मुझे उचित है कि मैं ही
 इस शारदिक तिक्त कडवी तुबडी के इस बहुत मसालेदार एव स्नेहा-
 वगाढ बहुत घृतसे युक्त शाक को स्वयं आहार कर जाऊँ। (मम चैव
 एण सरीरेण णिज्जाउत्तिकद्दु एवं सपेहेइ सपेहित्ता मुहपोत्तिय २

ववरोविज्जति, त जइण अह एय सालइय थंडलसि सब्ब निसिरामि तएणं बहुणं
 पाणाणं ४वह कारणं भविस्सइ त सेय खलु ममेय सालइय जाव गाढं सयमेव आहारेत्तण

आ प्रभाणु श्रीडीओनी विशाधना न्नेधने धर्मरुचि अनगारने आ नतने।
 आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प-विचार-उद्भवयो अर्ही सकल्पना चिन्तित,
 प्रार्थित, कल्पित आ त्रणे विशेषणाना अडणु माटे सूत्रमा ५ ने अक आय
 वामा आण्ये छे-के न्यारे आ शारदिक तिक्त कडवी तूणडीना शाकना इत्त
 अक टीपाने पृथ्वी उपर नाभवथी धणु श्रीडीओ उन्दरे प्राणैथी वियुक्त
 थर्ध न्य छे त्यारे हु शारदिक कडवी तूणडीना मथा शाकने पृथ्वी उपर
 नाभीश त्यारे ते अनेक प्राणैथी ४ नी विशाधनाउ कारणु थशे अथी अने
 अणु योअ्य लागे छे के हु आ शारदिक तिक्त कडवी तूणडीना आ सरअ
 मसाहावाणा अने धी तरता शाकने चाते अ आर्ध नड

मित्यर्थः, एकान्ते 'सापयति, स्याद्विद्या रश्मिडल्ल=तत्तारभूमिं प्रातःकैव्यति,
 प्रतिलेख्य दर्शन स्तारक 'सधारेड' सरतृणानि=मात्तुत् ऋणेति सस्तीर्य, दर्भ-
 सस्तारक दूरोऽति=आरोदति, दूख्य पौरस्त्याभिमुत्त =पूर्वदिगभिमुत्त', 'मपलियं-
 कनिमन्ने' सपल्यङ्क निपण्णः=पञ्चामनमानिप्रिष्टः, 'रात्पयि वृत्तत=मगोजितहस्त
 तलद्वय मस्तारेऽशलि द्रुत्ता एव=रक्षयमाणप्रमाणेण अत्रातीत्=त्वमात्पुक्तवान्,

“ नमोऽत्युण अरिहताण जाव सपत्ताण,—

—णमोऽत्युण धम्मघोसाण थेराण मम धम्मयारियाण धम्मोवणमयाण ”
 नमोऽस्तु खलु अर्हद्भ्यो भगवद्भ्यो मातृ गमाप्तेभ्यः, नमोस्तु खलु धर्मयोषेभ्यः
 स्वयिरेभ्यो मम उपाचार्येभ्यो उपापदेशकेभ्यः, पूर्वमपि दीक्षागृहणशालेऽपि खलु
 मया उर्नघोपागा स्थविराणामन्तिके सर्वे प्राणानिपात प्रत्यारयातो यानज्जीव
 'यात् परिग्रहः' अत्र यावच्छब्देन-सो मृपायाद् सर्वमदत्तादान सर्वं मैयुन च
 प्रत्यारयातम्, तत्रा-सर्वं परिग्रहः प्रत्यारयातः। इदानीमपि खलु अहं तेषामेव
 भगवतामन्तिके सर्वं प्राणानिपातं प्रत्यारयामि या त् परिग्रहं प्रत्यारयामि याव
 प्रतिलेखना की प्रतिलेखना करके फिर उसके ऊपर उन्होंने दर्शन-
 स्तारक को निज्या-पिन्नाकर फिर वे उसपर बैठकर फिर पूर्वदिशा
 की ओर मुखकर पर्यङ्कामन से उस पर विराजमान हो गये
 विराजमान होकर उन्होंने अपने दोनों हाथों को जोड़ा ओर मस्तक पर
 उसकी अजलि रखकर इस प्रकार अपने मन ही मन वे कहने लगे-
 (नमोऽत्युण अरिहताण जाव सपत्ताण, णमोऽत्युण धम्मघोसाण थेराण
 मम धम्मयारियाण धम्मोवणमयाण पुब्बि पि ण मए धम्मघोसाण थेराण
 अतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावजीवाए जाव परिग्गहे इयारिणि
 पि अहं तेस्सिचेव भगवताण अतिव सव्व पाणाइवाए पच्चक्खामि जाव

लाडने-वस्त्र पात्र वज्रेने अर्कानमा भूडी दीधा भूकथा णाह तेज्याञ्जे सस्ता
 रक भूमिनी प्रतिकेणना कडी प्रतिकेणना करीने तेनी उपर तेमणे हलं सस्ता
 रक कथी हलंमन्तारक पाथरीने तेज्या तेनी उपर जेसीने पूर्वदिशा तरश्च मुण
 करीने पर्यङ्कसनया तेनी उपर विराजमान थरु गथा विराजमान थरने तेज्याञ्जे
 पोताना णने हाथीने जेडथा अने तेमनी अजली णतापीने मस्तक उपर
 भूडी अने पोताना मनमा ज ठेवा लाग्या

(नमोऽत्यु ण अरिहताण जाव सपत्ताण णमोऽत्युण धम्मघोसाण थेराण मम
 धम्मयारियाण धम्मोवणमयाण पुब्बि पि ण मए धम्मघोसाण थेराण अतिए सव्वे
 पच्चक्खाए जाव जीवाए जाव परिग्गहे, इयारिणि पि अहं तेस्सि चेव

आहारिक यावत्-स्नेहावगाढम् आहारिणस्य=धृक्तरतः, सतो मुहूर्तान्तरेण परिण-
 म्यमाने=आहारे परिणाम प्राप्ते सति शरीरे वेदना प्रादुर्भूता, सा कीदृशी? त्वा-
 उज्ज्वला=तीव्रा, यावत् 'दुरधियासा' दुरध्यासा=दुरधिसदा-अमङ्गल्यर्थः । ततः
 खलु स धर्मरुचिरनगारो ऽस्यामा, हीनपराक्रमः, अजलः=मनोबलरहितः अवीर्यः=
 हतोत्साहः अपुरुषकारपराक्रमः,=पुरुषार्थहीनः, 'अधारणिज्जमिति कट्टु' अपार-
 णीयमिति कृत्वा-धारयितुमशक्यमिदं शरीरमिति मनमि विचार्य 'आयारमडग'
 आचारभाण्डकम्-आचार्य आचारपाठनार्थं भाण्डक=भाण्डोपकरणं वस्त्रपात्रादिकं

धम्मरुइस्स त सालइय जाव नेहावगाढ आहारियस्स ममाणस्स मुहूर्त
 तरेण परिणममाणसि सरीरगंसि वेयणा पाउब्भूया उज्जला जाव दुर-
 हियासा-तण्ण से धम्मरुई अणगारे अथामे अथले अवीरिए अपुरिस
 ककारपरकमे अधारणिज्जमिति कट्टु अपारमडग एगते ठवेइ, ठवि
 ता थडिल्ल पडिलेहेइ, पडिलेहिता दब्भसथारग सथारेइ, सथारित्ता
 दब्भसथारग, दुरुइइ, दुरुहित्ता पुरत्थाभिमुहे सपलियकनिसन्ने कर-
 यल परिणगहिय एवं वयासी) शाक उन धर्मरुचि अनगार के पेट में
 पहुँचते ही एक मुहूर्त के बाद जब वह पचने लगा तब उनके शरीर
 में उज्ज्वल यावत् दुरधियासा वेदना प्रकट हुई । इस से वे धर्मरुचि
 अनगार पराक्रम से हीन, मनोबल से विहिन, हतोत्साह होकर पुरु-
 षार्थ रहित बन गये । यह शरीर अथ धारण करने से अशक्य हो रहा
 है ऐसा जब उन्होंने प्रतीत होने लगा तब उन्होंने अपने आचारभाण्डक
 पचविध आचार पालने के लिये जो - वस्त्र - पात्रादिक ये उनको
 एकान्त में रख दिया-रुक्कर फिर उन्होंने ने सस्ताररुभूमि की

(तण्ण तस्स धम्मरुइस्स त सालइय जाव नेहावगाढ आहारियस्स समा-
 णस्स मुहूर्ततरेण परिणममाणसि सरीरगंसि वेयणा पाउब्भूया उज्जला जाव
 दुरहियासा-तण्ण से धम्मरुई अणगारे अथामे, अजले अवीरिए अपुरिसकारपर-
 ककमे अधारणिज्जमिति कट्टु आयारमडग एगते ठवेइ, ठवित्ता थडिल्ल पडि-
 लेहेइ, पडिलेहिता दब्भसथारग सथारेइ, सथारित्ता दब्भसथारग दुरुइइ,
 दुरुहित्ता पुरत्थाभिमुहे सपलियकनिसन्ने करयलपरिणगहिय एवं वयासी)
 शाक ते धर्मरुचिना पेत्ता पडोयता ज्जे क मुहूर्तं प्रथी न्थारे तेनु
 पायन शइ थयु त्थारे तेमना शरीरमा उज्जल यावत् दुरधियासा वेदना थवा
 भांडी तेथी ते धर्मरुचि अनगार पराक्रम वगर, मनोबल वगर हतोत्साही
 थने पुरुषार्थ वगर थनी गया हुवे आ शरीर टकलु अशक्य थथ पइथु
 छे जेवी न्थारे तेज्जेने प्रतीति थवा लागी त्थारे तेमजे पे आचार

मित्यर्थः, एतन्ते तापयति, सपत्नित्वा ररिडि=सत्तार-मृमि प्रतिलेखयति, प्रतिलेख्य दर्शन स्तारक 'सधारेड' सत्तृणानि=मात्तृत् रणेति सस्तीर्य, दर्शन-सत्तारक दूरोरति=मारोहति, दृश्य पौरुष्याभिमुख =पूर्वदिगभिमुखः, 'सपत्नियं-कनिमन्ने' सपत्न्यङ्क निपणः=पञ्चामनसनिविट्, 'रालयि' पृथित=मपोजितहस्त तलद्वय मस्तकेऽललि र्त्ता एव=रुच्यगारप्रमाणे जगतीव=रुच्यगारमुक्तवान्,

“ नमोऽत्युण अरिहताण जाव सपत्ताण,—

—णमोऽत्युण धम्मघोसाण वेगण मम धम्मयारियाण धम्मोवएसयाण ”

नमोऽस्तु खलु अर्हद्भ्यो भगवद्भ्यो यावत् समाप्तंभ्यः, नमोऽस्तु खलु धर्मघोषेभ्यः स्थविरैभ्यो मम उपाचार्येभ्यो उपापदेयकेभ्यः, पूर्वमपि दीनापहणमालेऽपि खलु मया उपापदेयताया स्थविराणामन्तिके सर्व प्रागातिपात प्रत्याप्यातो यावज्जीव 'यावत् परिग्रहः' अत्र यावच्छब्देन-सपो मृतात् सर्वमदत्तादान सर्व मैयुन च प्रत्याप्यात्तम्, तथा-सर्व परिग्रह प्रत्याप्यातः। इदानीमपि खलु अह तपामेव भगवतामन्तिके सर्व प्रागातिपात प्रत्याप्यामि या त परिग्रह प्रत्याप्यामि याव प्रतिलेखना की प्रतिलेखना करके फिर उसके ऊपर उन्होंने दर्शन-स्तारक को पिछाया-पिछाकर फिर वे उसपर बैठकर फिर पूर्वदिशा की ओर मुसकर पर्यङ्कामन से उस पर विराजमान हो गये विराजमान होकर उन्होंने अपने दोनों हाथों को जोड़ा और मस्तक पर उसकी अजलि रखकर इस प्रकार अपने मन ही मन वे कहने लगे— (नमोऽत्युण अरिहताण जाव सपत्ताण, णमोऽत्युण धम्मघोसाण थेराण मम धम्मयारियाण धम्मोवएसयाण पुब्बि पि ण मए धम्मघोसाण वेगण अतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जाव जीवाए जाव परिग्गहे इयारिणि पि अह तेसिचेव भगवताण अतिव सव्व पाणाइवाए पच्चक्खामि जाव

आउठने-वस्त्र पात्र वगेरेने जेगतमा भूझी दीधा भूझ्या णाह तेज्जेजे मस्ता रक भूमिनी प्रतिलेखना करी प्रतिलेखना करीने तेनी उपर तेमणे दर्शन सस्ता रक करी दर्शन-स्तारक पाथनीने तेज्जे तेनी उपर जेसीने पूर्वदिशा तरश् सुध करीने पर्यङ्कामनया तेनी उपर विगलमान थर्य गया विराजमान थरने तेज्जेजे पोताना णने हाथीने जेउथा अने तेमनी अजली णतापीने मस्तक उपर भूझी अने पोताना मतमा ज उडेवा लाग्या

(नमोऽत्यु ण अरिहताण जाव सपत्ताण णमोऽत्युण धम्मघोसाण थेराण मम धम्मयारियाण धम्मोवएसयाण पुब्बि पि ण मए धम्मघोसाण वेगण अतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जाव जीवाए जाव परिग्गहे, इयारिणि पि अह तेसि चेव

ज्जीव, यथा-सन्दरुः=स्रन्दरुः यावच्चरामै-स्रन्दरुः, 'वोसिरामितिकद्दु'
 व्युत्स्रजामि=शरीर परित्यजामि' इति कृत्या 'आलोड्य पट्टिफले' आलोचितप्रति
 क्रान्तः=पूर्वकृत यदती तारजात तदाकाचित, पुनरकरणप्रतिज्ञया मतिक्रान्तं येन स
 तथाभूतः समाधिप्राप्तः=आत्मसमाधियुक्तः कालगतः=मरण प्राप्त ॥सू०३॥

मूलम्-तएण ते धम्मघोसा थेरा धम्मरुडं अणगारं चिरं
 गय जाणित्ता समणे निग्गथे सद्दोवेति सदावित्ता एववयासी

परिग्रह पञ्चस्वामि जाव जीवाण जहा खदओ जाव चरिमेहिं उस्सा
 सेहिं वोसिरामित्ति कद्दु आ-लोड्य पट्टिफले समाहिपत्ते कालगए)
 यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए अरिहन् भगवतो के लिये
 मेरा नमस्कार हो-धर्मोपदेशक मेरे धर्मोपाचार्य श्री धर्मोपस्थविर के
 लिये मेरी नमस्कार हो मैंने पहिले दीक्षा ग्रहण के समय उन धर्मोप
 स्थविर के समीप समस्त प्राणातिपात, समस्त मृपावाद, समस्त अद
 त्तादान, समस्त मैथुन तथा समस्त परिग्रह जीवन पर्यन्त प्रत्याख्यान
 कर दिया है । अब भी मैं उन्हीं भगवतो के समक्ष समस्त प्राणातिपात
 यावत् समस्त परिग्रह का यावज्जीव प्रत्याख्यात करता हूँ । यावत्
 अन्तिम श्वासोत्क स्कन्दककी तरह इस शरीरका परित्याग करता हूँ ।
 इस प्रकार मन ही मन कह कर वे धर्मरुचि अनागार आलोचित प्रति
 क्रान्त बनकर आत्मसमाधिमें तल्लीन होते हुए मरण प्राप्त हुवे ॥सू०३॥

भगवताण अतिय सव्व पागाइमाय पच्चक्खामि जाव परिग्गह पच्चक्खामि जाव
 जीवाए जहा खदओ जाव चरिमेहिं उस्सासेहिं वोसिरामित्ति कद्दु आलोड्यपट्टि-
 क्कते समाहिपत्ते कालगए)

यावत् सिद्धिगति भेजवेला अरिहन्त लगव तोना भाटे भारा नमस्कार छे
 धर्मोपदेशक भारा धर्मोपाचार्य श्री धर्मोपाच स्थविरना भाटे भारा नमस्कार छे
 पडेला दीक्षा ग्रहण करती वणते मे ते धर्मोपाच स्थविरनी पासे समस्त प्राणु
 तिपातो, समस्त मृपावादे, समस्त अदत्तादाने समस्त मैथुने तथा समस्त
 परिग्रहोनु प्रत्याख्यान कर्हुं कर्हुं अत्यारे पणु ते व लगव तोनी साभे समस्त
 प्राणुतिपात यावत् समस्त परिग्रहोनु यावज्जीव प्रत्याख्यान कइ छु एव-
 नना छेवला श्वास सुधी स्कन्दनी जेम आ शरीरने त्याग कइ छु आ रीते
 पोताना मनभा व कहीने ते धर्म-रुचि अनगार आलोचित प्रतिकृत धर्मे
 आत्मसमाधिमा तद्वीन यता मरुणु पाण्था ॥ सूत्र " ३ " ॥

—एव खलु देवाणुप्पिया । धम्मरुई अणगारे मासखमण-
 पारणगंसिं सालइयस्स जावगाढस्सणिासरणट्टयाए वहिया
 निग्गए चिरगए त गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया । धम्म-
 रुइस्स अणगारस्स सच्चओ समंता मग्गणगवेसणं करेह,
 तएणं ते समणा निग्गंथा जाव पडिसुणेति, पडिसुणित्ता
 धम्मघोसाणं थेराणं अंतियाओ पडिनिक्खमति, पडिनि-
 क्खमित्ता धम्मरुइस्स अणगारस्स सच्चओ समता मग्गण-
 गवेसणं करेमाणा जेणेव थंडिहं तेणेव उवागच्छति उवा-
 गच्छित्ता धम्मरुइस्स अणगारस्स सरीरगं निप्पाणं निच्चेट्ठं
 जीवविप्पजडं पासंति पासित्ता हा हा अहोअकज्जमितिकहु
 धम्मरुइस्स अणगारस्स परिनिट्वाणवत्तिय काउस्सग्ग करेति
 करित्ता धम्मरुइस्स आयारभडग गेणहति गेण्हित्ता जेणेव
 धम्मघोसा थेरा तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता गमणा-
 गमणं पडिक्कमांति पडिक्कमित्ता एव वयासी—एव खलु अम्हे
 तुब्भ अतियाओ पडिनिक्खमामो२ सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स
 परिपेरतेण धम्मरुइस्स अणगारस्स सच्च जाव करेमाणे जेणेव
 थडिह्हे तेणेव उवा०२ जाव इह हव्वमागया, त कालगए
 णं भते । धम्मरुई अणगारे इमे से आयारभडए, तएणं
 ते धम्मघोसा थेरा पुव्वगए उवओग गच्छति गच्छित्ता
 समणे निग्गथे निग्गथीओ य सदावेति सदावित्ता एव वयासी
 —एव खलु अज्जो ! मम अतेवासी धम्मरुची नाम अणगारे

ज्जीव, यथा-स्कन्दकः=स्कन्दस्वन् यावच्चरामै-स्कन्दगैः, 'वोमिरामितिकृद्' ध्युस्तजामि=शरीर परित्यजामि' इति कृत्या 'आलोच्य पट्टिकते' आलोचितप्रति क्रान्तः=पूर्वकृत यदतीतारजात तदालोचित, पुनरुत्तरणमतिहया प्रतिक्रान्तं येन स तथाभूतः समाधिपात =आत्मसमाधिपुक्तः कालगतः=मरण प्राप्त ॥सू०३॥

मूलम्-तएण ते धम्मघोसा थेरा धम्मरुद्धं अणगारं चिर
गय जाणित्ता समणे निग्गंथे सद्दोवेति सदावित्ता एववयासी

परिग्रह पञ्चकखामि जाव जीवाण जहा खदओ जाव चरिमेहिं उस्सा
सेहिं वोसिरामित्ति कट्टु आलोच्य पट्टिकते समाहिपत्ते कालगए)
यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए अरिहन् भगवतो के लिये
मेरा नमस्कार हो-वर्णपदेशक मेरे धर्माचार्य श्री धर्मगोपस्थविर के
लिये मेरी नमस्कार हो मैंने पहिले दीक्षा ग्रहण के समय उन धर्मगोप
स्थविर के समीप समस्त प्राणातिपात, समस्त मृषावाद, समस्त अद
त्तादान, समस्त मैथुन तथा समस्त परिग्रह जीवन पर्यन्त प्रत्याख्यान
कर दिया है । अब भी मैं उन्हीं भगवतो के समक्ष समस्त प्राणातिपात
यावत् समस्त परिग्रह का यावज्जीव प्रत्याख्यात करता हूँ । यावत्
अन्तिम श्वासोत्क स्कन्दककी तरह इस शरीरका परित्याग करता हूँ ।
इस प्रकार मन ही मन कह कर वे धर्मरुचि अनागर आलोचित प्रति
क्रान्त बनकर आत्मसमाधिमें तल्लीन होते हुए मरण प्राप्त हुवे ॥सू०३॥

भगवत्ताण अतिय सब्ब पागाइयाय पञ्चकखामि जाव परिग्रह पञ्चकखामि जाव
जीवाए जहा खदओ जाव चरिमेहिं उस्सासेहिं वोमिरामित्ति कट्टु आलोच्यपट्टि-
कते समाहिपत्ते कालगए)

यावत् सिद्धिगति भेजवेला अरिहत भगवतोना भाटे मारा नमस्कार छे
धर्मोपदेशक मारा धर्माचार्य श्री धर्मगोप स्थविरना भाटे मारा नमस्कार छे
पढेला दीक्षा ग्रहण करती वपते मे ते धर्मगोप स्थविरनी पासे समस्त प्राण
तिपातो, समस्त मृषावाद्दो, समस्त अदत्तादानो समस्त मैथुनो तथा समस्त
परिग्रहोनु प्रत्याख्यान कथुं हतुं अत्यादे पणु ते ज लगवतोनी साभे समस्त
प्राणातिपात यावत् समस्त परिग्रहोनु यावज्जीव प्रत्याख्यान कर छु एव
नना छेदला श्वास सुधी स्कन्दकनी जेम आ शरीरनो त्याग कर छु आ रीते
पोताना मनमा ज कहीने ते धर्म-रुचि अनगर आलोचित प्रतिक्रान्त यधने
आत्मसमाधिमा तल्लीन थता मरुणु पाभ्या ॥ सूत्र " ३ " ॥

शब्दयित्वा, एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण, अवादिपुः=उक्तवन्तः, एव खलु हे देवानु-
प्रियाः ! धर्मरुचिरनगारो मासक्षणपारणके शारदिकस्य तिक्तकटुस्तुम्बकस्य
यावत्-स्नेहावगाढस्य 'णिसिरणद्वयाए' निसृजनार्थं त्रिनिर्गतश्चिरगतः=तस्मिन्
गते सति बहुतरः जालो व्यतीत इत्यर्थः । तत्-तस्माद् गच्छत खलु यूयं हे देवानु-
प्रियाः ! धर्मरुचेरनगारस्य सर्वतः समन्ताद् मार्गणगवेपण=सम्यगन्वेपणं कुरु ।
तत् खलु ते श्रमणा निर्ग्रन्था यावत् प्रतिशृण्वन्ति=तथा करिष्यामीत्युक्त्वा तामाज्ञां
स्वीकुर्वन्ति, प्रतिश्रुत्य धर्मवोषाणां स्वार्थगणामन्तिकात् प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रतिनि-

वधासी-एव खलु देवाणुप्रिया ! धम्मरुई अणगारे मासखमणपारण
गसि सालइयस्स जाव गाढस्स णिसिरणद्वयाए वहिया निग्गए-चिरगए,
त गच्छह ण तुब्भे देवाणुप्रिया ! धम्मरुइयस्स अणगास्स सव्वओ
समता गवेसण करेह) श्रमण निर्ग्रन्थो को बुलाया । बुलाकर उनोने
ऐसा कहा-हे देवानुप्रियो ! धर्मरुचि अनगार आन मासखनण की
पारणा के दिन शारदिक तिक्त कटुनी तुम्ही का बहु सभार सभृत
शाक कि जिसके ऊपर घृत तैर रहा या लाये थे-मैंने उसे परिष्ठापन के
लिये उन्हे आज्ञा दिया सो वे उसे परिष्ठापन करने के लिये यहाँ
से बाहिर चले गये-गये उन्हे बहुत डेर हो गई-वे अभीतक नहीं
आये इसलिये हे देवानुप्रियो ! तुम लोग जाओ और धर्मरुचि
अनागार की सब तरफ चारों दिशाओं में मार्गणा एव गवेपणा करो ।
(तपण ते समणा निग्गया जाव पडिस्सुणेति, पडिस्सुणित्ता धम्मवोसाण

(समणे निग्गये सदावेति सदावित्ता एव वयासी-एव खलु देवाणुप्रिया !
धम्मरुई अणगार मासखमणपारणगसि सालइयस्स जाव गाढस्स णिसिरणद्वयाए
वहिया निग्गयाए-चिरगए, त गच्छह ण तुब्भे देवाणुप्रिया ! धम्मरुइस्स अण-
गारस्स सव्वओ समता मग्गणगवेसण करेह)

श्रमणु निर्ग्रथाने जोलाव्वा जोलावीने तेमने आ प्रभाणु कल्लु-डे डे
देवानुप्रियो ! धर्मरुचि अनगार आने मास गमणुनी पारणाना दिवसे शार-
दिक तिक्त कटुनी तुम्हीनु सरस वधारेलु उपर धी तरतुं साड आहार भाटे
लाव्वा डता तेज्जोने मे प्रतिष्ठापाननी आज्ञा आपी छे, तेज्जो परिष्ठापन
भाटे अर्द्धाधा अहार गया छे तेज्जोने अहार गयाने अहुं न वणत थयो छे,
अहुं तेज्जो आव्वा नथी जेथी छे देवानुप्रियो ! तमे लोडे जेज्जो अने
धर्मरुचि अनगाव्नी जेमेर मार्गणा तेमन् गवेपणा करो

(तपण ते समणा निग्गया जाव पडिस्सुणेति, पडिस्सुणित्ता धम्मवोसाण

पगइभङ्ग जाय पिणीए साम मानेणं अणिपिग्गत्तेण तवो
 कम्मणेण जाव नागसिरीए माहणीए गिहे अणुपविट्ठे, तएणं
 सो नागसिरी माहणी जाव निसीरउ, तएण से धम्मरुई
 अणगारे अहापजत्तमितिउहु जाव काल अणयक्कमेमाणे वि-
 हरति, से ण धम्मरुई अणगारे उहुणि वासाणि सामन्नप-
 रित्राग पाउणित्ता आलोइयपडिकंते समाहिपत्ते कालमासे
 काल किन्ना उहु सांत्तमजाव सव्वट्टसिहे महासिमाणे देव-
 त्ताए उववत्ते, तत्थ ण अजहणमणुक्कोसेणं तेत्तील साग-
 रोवमाइ ठिई पन्नत्ता, तत्थ धम्मरुइस्सनि देवस्स तेत्तीसं
 सागरोवमाइ ठिई पणत्ता से ण धम्मरुई देवे ताओ
 देवलोगाओ जाव महाविदेहे वामे सिज्झिहिड त विग्गथुणं
 अज्जो । णागसिरीए माहणीए अधन्नाए उपुन्नाए जाय णि
 वोलियाए जाए ण तहारुवे साहु धम्मरुई अणगारे मास-
 खमणपारणगमि सालइएण जाय गाढेण अह्मले चैव जीवि-
 याओ ववरोविए ॥ सू० ४ ॥

टीका—' तएणं त ' इत्यादि । तत' खलु=इतश्च ते धर्मघोषा स्यन्ति
 धर्मस्मिन्गार चिर गत उहुकाठवा गत ज्ञात्या श्रमणान् निर्ग्रन्थान् शब्दवति,

तएण ते धम्मघोसा थेरा इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (ते धम्मघोसा थेरा) उन-धर्मघोष
 स्थविरने(धम्मरुइ अणगार) धर्मरुचि अनगार को (चिरगय जाणित्ता)
 बहुत देर के मधे हुण जानकर (नमणे निग्गथे सदावैति, सदावित्ता एव

तएण ते धम्मघोसा थेरा इत्यादि

टीकार्थ—(तएण) त्याग्नाइ (ते धम्मघोसा थेरा) ते धर्मघोष स्थविर (धम्म
 रुइ अणगार) धर्मरुचि अनगारने (चिरगय जाणित्ता) बहु पणतथी अहार
 गथेसा ललीने

शब्दयित्वा, एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण, अवादिषुः=उक्तवन्तः, एव खलु हे देवानु-
प्रियाः ! धर्मरुचिरनगारो मासक्षणपारणके शारदिकस्य तिक्तकडुस्तुम्बकस्य
यावत्-स्नेहावगाढस्य ' गिसिरणद्वयाए ' निस्सजनार्थं तद्विनिर्गतश्चिरगतः=तस्मिन्
गते सति बहुतर* जालो व्यतीत इत्यर्थः । तत्-तस्माद् गच्छत खलु यूय हे देवानु-
प्रियाः ! धर्मरुचेरनगारस्य सर्वत* समन्ताद् मार्गणगवेपण=सम्यगन्वेपण कुरुत ।
तत खलु ते श्रमणा निर्ग्रन्था यावत् प्रतिशृण्वन्ति=तथा स्मरिष्यामीत्युक्त्वा तामाज्ञा
स्वीकुर्वन्ति, प्रतिश्रुत्य धर्मप्रोपाणां स्मरिष्याणामन्तिक्रात् प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रतिनि

वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! यन्नरुई अणगारे मासखमणपारण
गमि सालइयस्स जाव गाढस्स गिसिरणद्वयाए वहिया निग्गए-चिरगए,
त गच्छण तुब्भे देवाणुप्पिया ! धम्मरुइयस्स अणगास्स सब्बओ
समता गवेसण करेह) श्रमण निर्ग्रन्थो को बुलाया । बुलाकर उनोंने
ऐसा कहा-हे देवानुप्रियो ! धर्मरुचि अनगार आन मामखनण की
पारणा के दिन शारदिक तिक्त कडुयी तुमटी का बहु समार सभुत
शाक कि जिसके ऊपर घृत तर रहा या लाये थे-मैने उसे परिष्ठापन के
लिये उन्हे आज्ञा दिया मो वे उसे परिष्ठापन करने के लिये यहां
से बाहिर चले गये-गये उन्हे बहुत देर हो गई-वे अभीतर नहीं
आये इसलिये हे देवानुप्रियो ! तुम लोग जाओ और धर्मरुचि
अनगार की सत्र तरफ चारो दिशाओ मे मार्गणा एव गवेपणा करो ।
(तएण ते समणा निग्गया जाव पडिमुणेति, पडि सुणित्ता धम्मघोसाण

(समणे निग्गथे सदोवेति सदावित्ता एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया !
धम्मरुई अणगार मामखमणपारणगमि सालइयस्स जाव गाढस्स गिसिरणद्वयाए
वहिया निग्गयाए-चिरगए, त गच्छण तुब्भे देवाणुप्पिया ! धम्मरुइस्स अण-
गारस्स सब्बओ समता मग्गणगवेसण करेह)

श्रमणु निर्ग्रन्थाने गोलाव्वा गोलावीने तेभने आ प्रभाणु इधु-डे डे
देवानुप्रियो ! धर्मरुचि अनगार आने मास अमणुनी पारणाना दिवसे शार
दिक तिक्त कडुयी तूणडीतु भरस वधारेणु उपर धी तरतु गाड आहार भाटे
लाव्वा डता तेओने मे प्रतिष्ठापाननी आज्ञा आपी छे, तेओ परिष्ठापन
भाटे अर्थात् अहार गया छे तेओने अहार गयाने अहु व वपत थयो छे,
इधु तेओ आव्वा नवी ओयी डे देवानुप्रियो ! तमे लोडो लओ अने
धर्मरुचि अनगारानी ओमेर मार्गणा तेभञ्ज गवेपणा करो

(तएण ते समणा निग्गया जाव पडिमुणेति, पडिमुणित्ता धम्मघोसाण

पगइभदण जाय धिणीए मान मासेण अणिगिउत्तेणं तत्रो-
 कम्मेणं जाव नागसिरीए माहणीए गिहे अणुपविट्ठे, तएणं
 सा नागसिरी माहणी जाय निसीग्ढ, तएण से धम्मरुई
 अणगारे अहापजत्तमितिकट्टु जाय काल अणउकरोमाणे वि-
 हरति, से ण धम्मरुई अणगारे ब्रह्मणि वासाणि सामन्नप-
 रियाग पाउणिन्ता आलोडयपटिउंते समाहिपत्ते कालमासे
 काल किन्ना उड्ड साहभसजाव सब्बट्टसि ४ महाणिमाणे देव-
 ताए उअवत्ते, तत्थ ण अजहणमणुक्कोसेण तेत्तीस साग-
 रोवमाइ ठिई पन्नत्ता, तत्थ धम्मरुट्ठस्सुनि देवस्स तेत्तीसं
 सागरोवमाइ ठिई पणत्ता से ण धम्मरुट्ठं देव ताओ
 देवलोगाओ जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ त विरत्थुणं
 अज्जो । णागसिरीए माहणीए अधत्ताए अपुत्ताए जाय णि
 वोलियाए जाए ण तहारुवे साहू धम्मरुई अणगारे मास-
 खमणपारणमि सालइएण जाय गाढेण अकाले चैव जीवि-
 याओ ववरोविए ॥ सू० ४ ॥

टीका—' तएण ते ' इत्यादि । तत' खलु=इतश्च ते धर्मघोषा स्थविरा
 धर्मरुचिमन्गार चिर गत बहुकालतो गत ज्ञात्या श्रमणान् निर्ग्रन्थान् श-दयति,

तएण ते धम्मघोसा थेरा इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (ते धम्मघोसा थेरा) उन-धर्मघोष
 स्थविरने (धम्मरुई अणगार) धर्मरुचि अनगार को (चिरगय जाणिन्ता)
 बहुत देर के गये हुए जानकर (समणे निग्गथे सदावेत्ति, सदाविन्ता एव

तएण ते धम्मघोसा थेरा इत्यादि

टीकार्थ—(तएण) त्याख्याद (ते धम्मघोसा थेरा) ते धर्मघोष स्थविरा (धम्म
 रुई अणगार) धर्मरुचि अनगारने (चिरगय जाणिन्ता) बहु पणतथी अकार
 गथेसा अलीने

इतिकृत्वा—इतिखेद कृत्वा धर्मरुचेरनगारस्य 'परिनिव्वाणवत्तिय' परिनिर्वाण-
प्रत्ययिकं=परिनिर्वाण मरणं तत्र यन्मृतशरीरस्य परिष्ठापनं तदपि परिनिर्वाणमेव
तदेव प्रत्ययोद्देतुर्यस्य स परिनिर्वाणप्रत्ययिकः त तथा, मृतपरिष्ठापननिमित्तकमि-
त्यर्थः कायोत्सर्गं कुर्वन्ति, कृत्वा धर्मरुचेरनगारस्याऽऽचारभाण्डकं=वस्त्रपात्रादिकं
गृह्णन्ति, गृहीत्वा यत्रैव धर्मघोषाः स्थविरास्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य गमनागमनम्=
इर्यापथिकीं प्रतिक्रामन्ति, प्रतिक्राम्यैवमवादिषुः एव खलु हे स्वामिन् । वयं युष्मा-
कमन्तिक्रात् प्रतिनिष्क्रामामः=प्रतिनिर्गता', प्रतिनिष्क्रम्य सुभूमिभागस्योद्यानस्य

इस प्रकार कहकर उन्होंने वहीं पर मृत शरीर को दोसराने रूप कायो-
त्सर्ग किया । (करिस्ता० उवागच्छ०) कायोत्सर्ग करके फिर उन्होंने
उन धर्मरुचि अनागार के आचार भाण्डको को वस्त्र पात्रादिकों को—उठा
लिया—उठाकर वे जहाँ धर्मघोष स्थविर थे—वहाँ आये (उवागच्छिस्ता
गमणागमण पडिक्कमति, पडिक्कमित्ता एव वयासी—एव खलु अम्हे-
तुम्भ अतियाओ पडि निक्खमामो २ सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स परिपे-
रतेण धम्मरुहस्स अगगारस्स सव्व जाव करेमाणे जेणेव थडिल्ले तेणेव
उवा० २ जाव इह हव्वमागया, तं कालगण्ण भत्ते ! धम्मरुहं अणगारे
इमे से आयारभण्डए—तएणं ते धम्मघोसा थेरा पुव्वगए उवओग
गच्छति गच्छिस्ता समणे निग्गंये निग्गयोओ य सदावेति—सदावित्ता
एव वयासी) आकर के उन्होंने ईर्यापथिक प्रतिक्रमण किया ।
प्रतिक्रमण करके फिर इस प्रकार वे कहने लगे हे स्वामिन् । हम लोग
आपके पास से यहाँ से गये—और जाकर सुभूमिभाग उद्यान की चारों

रीते छड़ीने तेमण्णे त्याज्ज मृत शरीरने दोसराना इय कायोत्सर्गं कथ्ये
(कारिस्ता० उवागच्छ०) कायोत्सर्ग करीने तेण्णोअ्थे धर्मरुचि अनागारना आचार
भाण्डकाने तेमण्ण वञ्चोने लण्ठीथा अने लण्ठने न्या धर्मघोष स्थविर उता त्या आन्था
(उवागच्छिस्ता गमणागमण पडिक्कमति, पडिक्कमित्ता एव वयासी—एव
खलु अम्हे तुम्भ अतियाओ पडिनिक्खमामो २ सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स
परिपेरतेणं धम्मरुहस्स अगगारस्स सव्व जाव करेमाणे जेणेव थडिल्ले
तेणेव उवा० जाव इह हव्व—मागया त कालगण्णं भत्ते ! धम्मरुहं अणगारे
इमे से आयारभण्डए तएणं त धम्मघोसा थेरा पुव्वगए उवओग गच्छति
गच्छिस्ता समणे निग्गंये निग्गयोओ य सदावेति—सदावित्ता एव वयासी)
त्या आनीने तेमण्णे ईर्यापथिक प्रतिक्रमण कथ्ये प्रतिक्रमण करीने तेण्णो
आ प्रमाणे कडेवा लाग्या उ हे स्वामिन् । अमे बोडो अर्द्धाथी आपनी
पासेथी गया अने लण्ठने सुभूमिभाग उद्याननी चोभेर करता करता धर्मरुचि

कर्म्य धर्मरुचेरनगारस्य सर्वत समन्ताद् मार्गणगवेपणं कुर्यन्तो यत्रैव स्थण्डिलं-
स्थलं धर्मरुचेरनगारस्य कालकरणस्थानं तत्रोपागच्छन्ति, उपागत्य धर्मरुचेर-
नगारस्य शरीरक 'निष्पाण' निष्पाण=माणरहित, 'निच्चेद्' निष्प्रेष्ट=वेष्टार-
हितं 'जीवविष्पजड' जीव विष्पत्त=जीवहीन पश्यन्ति, दृष्ट्वा हा ! हा ! अहो !
इति खेदे, 'अकज्जं' अकार्यम्=अनिष्टं जातं यद् धर्मरुचिनगारो मृतः, 'विकद्दु'

येराण अतियाओ पटिनिक्खमति, पटिनिक्खमिच्चा धम्मरुइस्स-
अणगाहस्स सव्वाओ समता मग्गणगवेसणं करेमाणा जेणेव थडिल्ल
तेणेव उवागच्छति, उवागच्छिच्चा धम्मरुइस्स अणगारस्स सरीरग
निष्पाणं निच्चेद् जीवविष्पजडं पासति, पासिच्चा हा हा अकज्जमिच्चि
कद्दु धम्मरुइस्स अणगारस्स परि निव्वाणवत्तिय काउस्सग्ग-करेति)
उन निर्ग्रन्थ श्रमणों ने अपने धर्माचार्य की इस आज्ञा को यावत् स्वीकार
कर लिया । और स्वीकार करके फिर वे धर्मघोष स्थविर के पास से
निकले निकल कर उन्होंने धर्मरुचि अनागार की चारों दिशाओंमें सब
प्रकार से मार्गणा गवेपणा की । इस तरह मार्गण गवेपणा करते हुए
जहां वह स्थण्डिल था-धर्मरुचि अनागार की मृत्यु होने का स्थान था-
वहां आये वहां आकर के उन्होंने धर्मरुचि अनागार के शरीर को प्राण-
रहित, चेष्टा रहित और जीव रहित देखा । देखकर के सहसा उनके
मुख से हाय हाय यह खेद सूचक शब्द निकल पड़ा वे कहने लगे यह
बड़ा अनिष्ट हुआ-जो धर्मरुचि अनागार का देहावसान हो गया ।

येराण अतियाओ पटिनिक्खमति, पटिनिक्खमिच्चा धम्मरुइस्स अणगारस्स सव्व
ओ समता मग्गणगवेसणं करेमाणा जेणेव थडिल्ल तेणेव उवागच्छति उवाग-
च्छिच्चा धम्मरुइस्स अणगारस्स, सरीरग निष्पाणं निच्चेद् जीव विष्पजडं पासति,
पासिच्चा हाहा अकज्जमिच्चि कद्दु धम्मरुइस्स अणगारस्स परिनिव्वाणवत्तिय काउ
स्सग्गं करेति)

ते निर्ग्रन्थ श्रमणोऽपि योताना धर्माचार्यानी आज्ञाने स्वीकारि वीधी अने
स्वीकारिने तेऽपि धर्मघोष स्थविरानी पासिथी नीकणीने धर्मरुचि अनगारणी
अधी रीते यामेर मार्गणा तेभ्य गवेपणां कुरवा लाय्या आ रीते मार्गण
गवेपणं कुरता न्या ते स्थण्डिलं हंतु-धर्मरुचि अनगारना मृत्युत्तु स्थानं हंतुं
त्या आव्या त्या आवीने तेऽपि धर्मरुचि अनगारना शरीरने निष्प्राण
निष्प्रेष्टं अने निष्प्रेष्टं न्येत्तु आ दृश्यं नोतानी साथे न तेऽपि युधथी
हाय ! हाय ! ना जेह सूचकं शब्दो नीकणी पडया तेऽपि कडेवा लाय्या हे
आ अहुं न जोद्धं यत्तु हे-धर्मरुचि अनगारं

इतिकृत्वा-इतिखेद कृत्वा धर्मरुचेरनगारस्य 'परिनिव्वाणवत्तिय' परिनिर्वाण-
प्रत्ययिकं=परिनिर्वाण मरण तत्र यन्मृतशरीरस्य परिष्ठापन तदपि परिनिर्वाणमेव
तदेव प्रत्ययो हेतुर्यस्य स परिनिर्वाणप्रत्ययिकः त तथा, मृतपरिष्ठापननिमित्तकमि-
त्यर्थः कायोत्सर्गं कुर्वन्ति, कृत्वा धर्मरुचेरनगारस्याऽऽचारभाण्डक=वस्त्रपात्रादिकं
गृह्णन्ति, गृहीत्वा यत्रैव धर्मघोषाः स्थविरास्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य गमनागमनम्=
इर्यापथिकीं प्रतिक्रामन्ति, प्रतिक्राम्यैवमवादिषुः एव खलु हे स्वामिन् । वय युष्मा-
कमन्तिक्रात् प्रतिनिष्क्रामामः=प्रतिनिर्गताः, प्रतिनिष्क्रम्य सुभूमिभागस्योद्यानस्य

इस प्रकार कहकर उन्होंने वही पर मृत शरीर को दोसराने रूप कायो
त्सर्ग किया । (करिस्ता० उवागच्छ०) कायोत्सर्ग करके फिर उन्होंने
उन धर्मरुचि अनागार के आचार भाण्डको को वस्त्र पात्रादिकों को-उठा
लिया-उठाकर वे जहा धर्मघोष स्थविर थे-वहा आये (उवागच्छिस्ता
गमणागमण पडिक्कमति, पडिक्कमित्ता एव वयासी-एव खलु अम्हे-
तुवम अतियाओ पडि निक्खमामो २ सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स परिपे-
रतेण धम्मरुहस्स अगगारस्स सव्व जाव करेमाणे जेणेव थडिल्ले तेणेव
उवा० २ जाव इह हव्वमागया, तं कालगणं भत्ते ! धम्मरुहं अणगारे
इमे से आधारभण्डए - तएण ते धम्मघोसा थेरा पुव्वगए उवओग
गच्छति गच्छिस्ता समणे निग्गथे निग्गथोओ य सदावेति-सदावित्ता
एव वयासी) आकर के उन्होंने ईर्यापथिक प्रतिक्रमण किया ।
प्रतिक्रमण करके फिर इस प्रकार वे कहने लगे हे स्वामिन् ! हम लोग
आपके पास से यहां से गये-और जाकर सुभूमिभाग उद्यान की चारों

रीते कहीने तेमण्ण त्थान्ण मृत शरीरने दोसराना इप कायोत्सर्गं कथीं
(करिस्ता० उवागच्छ०) कायोत्सर्गं करीने तेण्णोअे धर्मरुचि अनागारना आचार
भाण्डकाने तेमण्ण वओने ल'लीथा अने ल'धने न्या धर्मघोष स्थविर उता त्या आओया
(उवागच्छिस्ता गमणागमण पडिक्कमति, पडिक्कमित्ता एव वयासी-एव
खलु अम्हे तुवमं अतियाओ पडिनिक्खमामो २ सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स
परिपेरतेण धम्मरुहस्स अगगारस्स सव्व जाव करेमाणे जेणेव थडिल्ले
तेणेव उवा० जाव इह हव्व-मागया त कालगणं भत्ते ! धम्मरुहं अणगारे
इमे से आधारभण्डए तएणं त धम्मघोसा थेरा पुव्वगए उवओग गच्छति
गच्छिस्ता समणे निग्गथे निग्गथोओ य सदावेति-सदावित्ता एव वयासी)
त्या आवीने तेमण्ण इर्यापथिक प्रतिक्रमण कथुं प्रतिक्रमण करीने तेण्णो
आ प्रमाणे कडेवा लाग्या के हे स्वामिन् ! अमे लोके अहीथी आपनी
पासेथी गया अने न'धने सुभूमिभाग उद्याननी दोभेर करता करता धर्मरुचि

पुत्रस्य धर्मरुचेरनगारस्य सर्वत गमन्ताद् मार्गणगवेपणं कुर्वन्तो यत्रैव स्थण्डिलं= स्थलं धर्मरुचेरनगारस्य कालकरणस्थानं तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य धर्मरुचेरनगारस्य शरीरक 'निष्पाण' निष्पाण=पाणरहितं, 'निच्चेद्' निश्चेष्ट=वेष्टारहितं 'जयन्निष्पन्न' जीव विप्लवक=जीवहीन पश्यन्ति, दृष्ट्वा हा ! हा ! अहो ! इति खेदे, 'अरुज्जं' अकार्यम्=अनिष्ट जातं यद्ध्यर्मरुचिनगारो मृतः, 'विक्रुद्'

धेराण अतियाओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमिच्चा धम्मरुहस्स-अणगाहस्स सव्वाओ समता मग्गणगवेसण करे माणा जेणेव थंडिल्ल तेणेव उवागच्छति, उवागच्छिच्चा धम्मरुहस्स अणगारस्स सरीरग निष्पाण निच्चेद्द जीवविप्पज्ज पासति, पासिच्चा हा हा अरुज्जमिच्चि कद्दु धम्मरुहस्स अणगारस्स परि निव्वाणवत्ति य काउस्सग्गं-करे ति) उन निर्ग्रन्थ श्रमणों ने अपने धर्माचार्य की इस आज्ञा को यावत् स्वीकार कर लिया । और स्वीकार करके फिर वे धर्मघोष स्थविर के पास से निकले निकल कर उन्होंने धर्मरुचि अनागार की चारों दिशाओंमें सब प्रकार से मार्गणा गवेपणा की । इस तरह मार्गण गवेपणा करते हुए जहां वह स्थण्डिल था-धर्मरुचि अनागार की मृत्यु होने का स्थान था-वहा आये वहा आकर के उन्होंने धर्मरुचि अनगार के शरीर को प्राणरहित, चेष्टा रहित और जीव रहित देखा । देखकर के सहसा उनके मुख से हाय हाय यह खेद सूचक शब्द निकल पड़ा वे कहने लगे यह बड़ा अनिष्ट हुआ-जो धर्मरुचि अनागार का देहावसान हो गया ।

धेराण अतियाओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमिच्चा धम्मरुहस्स अणगारस्स सव्व ओ समता मग्गणगवेसण करेमाणा जेणेव थंडिल्ल तेणेव उवागच्छति उवागच्छिच्चा धम्मरुहस्स अणगारस्स, सरीरग निष्पाण निच्चेद्द जीव विप्पज्ज पासति, पासिच्चा हाहा अरुज्जमिच्चि कद्दु धम्मरुहस्स अणगारस्स परिनिव्वाण वत्ति य काउस्सग्गं करे ति)

ते निर्ग्रन्थ श्रमणों ने चोताना धर्माचार्यनी आज्ञाने स्वीकारी लीधी अने स्वीकारीने तेज्जे धर्मघोष स्थविरनी पासिथी नीकणीने धर्मरुचि अनगारनी अधी रीते शोभेर मार्गणा तेभज गवेपणा करवा लाग्या आ रीते मार्गण गवेपण करता न्या ते स्थण्डिल छतु-धर्मरुचि अनगारना मृत्युनु स्थान छतु त्या आव्या त्या आवीने तेज्जे धर्मरुचि अनगारना शरीरने निष्पाण निश्चेष्ट अने निर्णव जेथु आ दृश्य जेतानी साथे ज तेज्जेना मुपथी हाय ! हाय ! ना जेद सूचक शब्दो नीकणी पड्या तेज्जे कडेवा लाग्या के आ अहुं ज जेदु थयु छे-धर्मरुचि अनगारनु

‘परिपेतेण’ परिपर्यन्तेन=चतुर्भु परिभ्रमन्तो धर्मरुचिर्नगरस्य ‘सञ्जान’ सर्वतः समन्ताद् मार्गणगवेपणं कुरीतो यत्र स्थण्डिलं तत्रोपागन्त्रामः, उपागस्य धावद् इह दृव्यमागताः म फात्रगाः खलु हे भद्रन्त । धर्मरुचिनगरः, इमानि ‘से’ तस्य, आचारभाण्डकानि । ततः सतु ते धर्मयोया स्थविराः ‘पुन्यग’ पूर्वगते=दृष्टिवादान्तर्गतश्रुताधिकारविशेषे उपयोग गच्छन्ति=लगयन्ति तत्र धर्मरुचिराहारमानेतु नगर्यां गतस्त्वदा वस्य गृहे गत ? केनेदमाशरदत्त’ मित्यादि ज्ञातु स्वकीयोपयोग नयन्तीत्यर्थ, गत्वा-स्वकीयोपयोगं लगयित्वा, श्रमणान् निर्ग्रन्थान् निर्ग्रन्थीश्च शब्दयित्वा एतन्मादीत्—एव खलु ह आर्याः । ममान्तेगसी=शिष्यः, धर्मरुचिर्नामाऽनगरः ‘पगद्दए’ प्रतिभद्रकः=प्रकृत्या

दिशाओ में फिरते २ धर्मरुचि अनगर की सर्व प्रकार से मार्गण, गवेपणा करने लगे । मार्गणा, गवेपणा करते हुए हम लोग फिर उस स्थान पर पहुँचे जहाँ धर्मरुचि अनगर का शर पड़ा हुआ था वहाँ से अभी २ हम लोग आ रहे हैं । हे भद्रन्त ! वे धर्मरुचि अनगर कालगत हो गये हैं—वे उनके आचार भाण्डक वस्त्र पात्र हैं । इस के बाद उन धर्मघोष स्थविर ने दृष्टिवाद के अतर्गत श्रुताधिकार विशेष में अपना उपयोग लगाया—तो उन्हें यह ज्ञात हो गया कि जब धर्मरुचि आहार छेने के लिये नगरी में गये तो वे किसके घर गये, किस ने यह आहार उन्हें दिया इत्यादि । अपने उपयोग से इस घात को जानकर उन्होंने निर्ग्रन्थ श्रमणों और निर्ग्रन्थ श्रमणियों को बुलाया और बुलाकर उनसे ऐसा कहा—(एव खलु अज्जो मम अतेवासी, धम्मरुई, णाम

अनगरानी षधी’ रीते मार्गण्णा गवेपण्णा करवा लाग्घ्या मार्गण्णा तेमज्ज गवेपण्णा करेता अमे दोडे ते जग्घाञ्जे पडोअ्या न्या धर्मरुचि अनगरसु भड्डु पडथु डंतु अमे दोडे अत्यारे लाशी ज् आवी रद्धा छीञ्जे डे लडत । ते धर्मरुचि अनगर मरुष् पाअ्या छे तेअ्जाश्रीना आ आचार लाडड वस्त्रपात्रे छे, लारपटी ते धर्मघोष स्थविरि दृष्टिवादाना अतर्गत श्रुताधिकार विशेषमा पोताने उपयोग लगाअ्ये तेमाथी तेअ्जाने आ वातनी जलु थध के अ्यारे धर्मरुचि आहार लाववा माटे नगरीमा गया डता, त्यारे तेअ्जे डेना घर गया डता, आ आहार तेमने डेअ्जे आअ्ये डते वगेरे पोताना उपयोगथी आ षधी विगत जाल्णी तेमले निर्ग्रन्थ श्रमणो अने निर्ग्रन्थ श्रमणीअ्जाने पोतानी पासे जोलावी अने जोलावीने तेमने आ प्रमाअ्जे कथु के—

(एव खलु अज्जो मम अतेवासी, धम्मरुई णाम अणगारे ।

स्वभावेन भद्रः-शान्तः, यावद्-यावत् करणादिद् द्रष्टव्यम्-पगइ उवसते, पगइ-पयणु कोहमाणमायालोहे, मिउमदवसपण्णे, आलीणे, भद्दए, इति । प्रकृत्यु-पशान्तः, प्रकृति प्रतनुक्रोधमानमाया लोभः, मृदु मार्दवसपन्नः, आलीनः, भद्रः, इति । विनीतः 'माम मासेण' मास व्याप्य मासेन=मामक्षपणनामकेन, अनिक्षि-प्तेन=अ-तरहितेन, अविश्रान्तनेत्यर्थः तपः कर्मणा विचरन् पारणरुदिने यावत्-नागश्रिया ब्राह्मण्यागृहमनुपविष्ट', ततस्वदनन्तर सा नागश्री ब्राह्मणी यावत्-शारदिकं तिक्कालाद्युरु 'निसिरइ' निमृजनि=पात्रे निक्षिपतिस्म । ततः धर्मरुचि-

अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए मास मासेण अणिक्रिवत्तेण तवोक-म्मेण जाव नागसिरीए माहणीए गिहे अणुपविष्टे तएण सो नागमिरी माहणी जाव निसीरइ, तएण से धम्मरुई अणगारे अहापज्जत्तमित्ति कइद्दु जाव काल अणवकखेमाणे विहरइ, सेण धम्मरुई अणगारे बहूणि वासाणि सामन्नपरियाग पउणित्ता आलोडयपडिक्कते समाहि पत्ते कालमासे काल किच्चा उड्डु सोहम्म जाव सव्वट्टसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववन्ने ठिई पण्णत्ता) आर्यो ! सुनो घात एसी है मेरे अन्ते वासी शिष्य-धर्मरुचि अनगार स्वभाव से ही भद्र परिणामी थे । यावत् शब्द से इस पाठ का यहा सग्रह हुआ है "पगइ उवसते पगइ पगणु कोहमाणमाया लोहे मिउमदवसपण्णे आलीणे भद्दए" । ये अविश्रान्त अतर रहित-मास मामखमण पारणा करते थे । आज उनके पारणा का दिन था-सो गोचरीके लिये भ्रमण करते हुए ये नागश्री ब्राह्मणीके घर

विणीए मास मासेण अणिक्रिवत्तेण तवो कम्मेण जाव नागसिरीए माहणीए गिहे अणुपविष्टे तएण सा नागसिरी माहणी जाव निसीरइ, तएण से धम्मरुई अणगारे अहापज्जत्तमित्ति कइ जाव काल अणवकखेमाणे विहरइ, सेण धम्मरुई अणगारे बहूणि वासाणि सामन्नपरियाग पउणित्ता अलोडयपडिक्कते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा उड्डु सोहम्म जाव सव्वट्टसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववन्ने ठिई पण्णत्ता) आर्यो ! साधुओ, वात अब्बी छे के मारा अतेवासी शिष्य-धर्मरुचि अनगार स्वभावथी के लद्द परिणामी हुता यावत् शब्दथी अर्ही आ पाठने स अइ थये छे-"पगइ उवसते" (पगइपयणुकोहमाणमायालोहे मिउमदव सपण्णे आलीणे भद्दए) तेओ अविश्रात-अतर रहित-(निरतर) मास भ्रमणु करता रहता हुता आणे तेभने पारणुनेो दिवस हुता, तेओ आहार भाटे भ्रमणु करता नागश्री ब्राह्मणीना घर गया हुता ब्राह्मणीओ शारदिक तिक्क

रुनगारो यथापर्याप्तमिति कृत्वा = उधानि वृत्तये पूर्णमिति मत्वा यावत्-कालम्
 'अत्रणरुखेमाणे' अननकादृप्तमाणः विहरति, स खलु धर्मरुचिरुनगारो बहूनि
 वर्षाणि श्रमण्यपर्याय पालयित्वा, आलोचित प्रतिक्रान्तः समाधिप्राप्तः कालमासे
 काल कृत्वा ऊर्ध्वं 'सोहम् जाव सञ्चद्रसिद्धे' सौधर्मादयो द्वादशदेवलोकाः, तत
 उर्ध्वं नवप्रैवेयकानि तदुपरि यावत् सर्वार्थसिद्धे, महाविमाने देवत्वेनोपपन्न = देवमत्वं
 प्राप्तवान्। तत्र = तस्मिन् सर्वार्थसिद्धिमाने, खलु 'अजहणमणुक्कोसेण' अत्रण-
 न्यानुत्कृष्टेन = जघन्योत्कृष्टवर्जितेन तत्र हि सर्वेषां देवानां स्थितिः समानैव भवति न
 तु न्यूनाधिककालतया विषमेतिभावः। त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमानि स्थितिः प्रकृता,
 तत्र धर्मरुचेरपि देवस्य त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमानि स्थितिः प्रकृता, स खलु धर्मरुचि
 देवस्तस्माद् देवलोकाद् = सर्वार्थसिद्धिमानाद् यावद् व्युत् सन् यावद् महाविदेहे
 वर्षे सिञ्चिहिहि' सेत्स्यति, सिद्धिं प्राप्स्यति। तत् = तस्माद् विगस्तु खलु हे

पहुंचे। यावत् उसने शारदिक तिक्त कठवे तुवे की शाक उनके
 पात्र में बोहराया वर्नरुचि अनगार ने उसको क्षुदानिवृत्ति के लिये
 पर्याप्त मान कर लिया। उन धर्मरुचि अनगारने अनेक वर्षों तक
 श्रमण्य पर्याय का पालन किया और पालन करके आलोचित
 प्रतिक्रान्त होकर वे समाधि में लीन हो गये। काल अवसर काल
 करके अब वे सौचर्न आदि १२ देवलोको से ऊपर नवप्रैवेय
 को से भी आगे जो सर्वार्थसिद्धि नाम का विमान है कि जिसमें ३३
 सागर की स्थिति है-और यह स्थिति जहा सब देवा की समान हैं उसमें
 ३३ सागर की स्थितिवाले देव हुए हैं। "अजहणमणुक्कोसेण" जघ-
 न्य और उत्कृष्ट तेजरीस सागरोपम की स्थिति है। (सं ण धम्महई
 देवे ताओ देवलोगाओ जाव महाविदेहे-बासे सिञ्चिहिहि, त विरत्यु

कडवी तूणडीतु शाक तेमना पात्रमा वडोराण्यु धर्मरुचि अनगारे
 तेने क्षुधा निवृत्ति भाटे पर्याप्त ऋशुने तेने स्त्रीकारी लीधु ते धर्मरुचि
 अनगारे धण्णा वर्षो सुधी श्रामण्य पर्यायतु पालन कथुं छे अने,
 पालन करीने आलोचित प्रतिक्रान्त थउने तेओ समाधिमा लीन थउ गया छे
 ढाण समथे ढाण करीने डवे तेओ सौधर्मा वगेरे भाए देवलोकाथो उपर नव
 प्रैवेयकोथी पशु आगण ने सर्वार्थसिद्धि नामे विमान छे ते नेमा उउ सागरनी
 स्थिति छे अने आ स्थिति नना णधा देवान्नी सरणी छे, तेओ तेमा उउ
 सागरनी स्थितिवाणा देव थथा छे "अजहणमणुक्कोसेण" जघन्य अने
 उत्कृष्ट उउ सागरोपमनी स्थिति छे

(सेण धम्महई देवे ताओ देवलोगाओ जाव महाविदेहे-बासे सिञ्चिहिहि,

आर्याः ! नागश्रिय ब्राह्मणीमधन्यामपुण्या यावद् दुर्भग निम्बगुलिकाम्, यथा-
खलु नागश्रिया ब्राह्मण्या तथारूपं प्रकृतिभद्रत्वादिगुणयुक्तः साधु धर्मरुचिरनगारो
मासखमणपारणके शारदिकेन तित्कालावुकेन यावत् स्नेहावगाडेनाऽकाल एव
जीविताद् व्यपरोपितः ॥ सू० ४ ॥

मूलम्-तएणं ते समणा निगंथा धम्मघोसाणं थेराण अंतिए
एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म चंपाए सिंघाडगतिग जाव बहुजणस्स
एवमाइक्खंति-धिरत्थु णं देवाणुप्पिया । नागसिरीए माहणीए
जाव णिवोलियाए जाए णं तहारूवे साहू साहूरूवे सालइएणं
जीवियाओ ववरोवेइ, तए णं तेसिं समणाण अतिए एयमट्ठं
सोच्चा णिसम्म बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ एव भासइ

ण अज्जो ! नागसिरीए माहणीए अधन्नाए, अपुन्नाए, जाव णिवोलियाए
जाए णं तहारूवे साहू धम्मरूई अणगारे मासखमणपारणगसि सालइए
णं जाव गाढेण अकाले चैव जीवियाओ ववरोविण) वे धर्मरुचि देव
इस देवलोक से चवकर यावत् महाविदेह क्षेत्र से सिद्धिको प्राप्त करेंगे
आर्यो ! अधन्य, अपुण्य यावत् दुर्भग निम्बगुलिका जैसी अनादरणीय
उस नागश्री ब्राह्मणी को धिकार हो-कि जिसने तथारूप, प्रकृति भद्र-
त्वादि गुणों से सपन्न साधु धर्मरुचि अनगर को मासखमण के पारणा
के दिन शारदिक तित्त कडवी तुषी का शाक यावत् स्नेहावगाढ अना-
कर दिया-कि जिससे वे अकाल में मरण को प्राप्त हुए ॥ सू० ४ ॥

त धिरत्थुण अज्जो ! नागसिरीए माहणीए अधन्नाए, अपुन्नाए, जाव णिवो लि
याए जाए ण तहारूवे साहू धम्मरूई अणगारे मासखमणपारणगसि सालइएण
जाव गाढेण अकाले चैव जीवियाओ ववरोविण)

ते धर्मरुचि देव ते देवलोउधी यवीने यावत् महाविदेह क्षेत्री सिद्धिने
भेणवसे हे आर्यो ! अधन्य, अपुण्य, यावत् दुर्भग निम्बगुलिका जैसी अना-
दरणीय ते नागश्री ब्राह्मणीने धिकार छे के जेहे तथारूप, प्रकृति भद्रत्व
वगेरे शुद्धोवाणा साधु धर्मरुचि अनगरने मास खमणना पारणाना द्विसे
शारदिक तित्त कडवी तुषीतु शाक-के जे सरस वधारेलु, जेनी उपर धी तरतुं
धतुं-वडोराउयु, जेने बीधि अकाले जे तेजोतु भरलु धयु. ॥ सू० "४" ॥

धिरत्थु षं नागसिरीए माहणीए जाव जीयियाओ ववरोविए,
तएणं ते माहणा चंपाए नयरीए बहुजणस्स अंतिए एयमहं
सोच्चा निसम्म आसुत्ता जाव भिसिमिसेमाणा जेणेव नागसिरी
माहणी तेणेव उवागच्छंति उवागच्छत्ता णागसिरी माहणी
एव वयासी—हं भो ! नागसिरी ! अपत्थिय पत्थिय दुरंत पत्-
लक्खणे हीणपुण्णचाउदसे धिरत्थु षं तव अधन्नाए अपुन्नाए
जाव णिवोलियाए जाव ण तुमं तहारूवे साहू साहूरूवे मास-
खमणपारणसि सालइएणं जाव ववरोविए, उच्चावयाहिं
अक्कोसणाहि अक्कोसेति उच्चावयाहिं उद्धंसणाहि उद्धसेति
उच्चावयाहि णिवभत्थणाहि णिवभत्थति उच्चावयाहि णिच्छोड-
णाहि निच्छोडेति तज्जेति तालेति तज्जेत्ता तालेत्ता सयाओ
गिहाओ निज्जुभंति, तएण सा नागसिरी सयाओ गिहाओ
निच्छूढा समाणी चंपाए नगरीए सिघाडगतियचउक्कचच्चर
चउम्मुह० बहुजणेणं हीलिज्जमाणी खिसिज्जमाणी निदिज्जमाणी
गरहिज्जमाणी तज्जिज्जमाणी पव्वहिज्जमाणी धिक्कारिज्जमाणी
धुक्कारिज्जमाणी कत्थइ ठाणं वा निलय वा अलभमाणीर दडि-
खडनिवसणा खडमल्लयखडघडगहत्थगया फुट्टहडाहडसीसा
मच्छियाचडगरेण अन्नज्जमाणमगागेह गेहेणं देह वलियाए
वित्ति कप्पेमाणी विहरइ, तएण तीसे नागसिरीए माहणीए
तवभवंसि चेव सोलस रोयायका पाउब्भूया, त जहा—सासे
कासे जोणीसूलं जाव कोडे, तएण सा नागसिरी माहणी

सोलसहि रोयायकेहि अभिभूया समाणी अट्टुहट्टवसट्टा काल-
मासे काल किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेणं वावीससागरो-
वमट्टिइएसु नेरएसु नेरइयत्ताए उववन्ना ॥ सू० ५ ॥

टीका— 'तएण ते' इत्यादि । ततः खलु ते श्रमणाः निर्ग्रन्था धर्मघोषाणां
स्थविराणामन्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निगम्य चम्पायां शृगाटक-यावन्महापथेषु बहु-
जनस्य एवमान्वयान्ति धिगस्तु खलु हे देवानुप्रियाः ! नागश्रिय ब्राह्मणी यावद्
दुर्मगनिम्नगुलिकाम्, यया खलु तथारूपः साधुः साधुरूपो धर्मरुचिरनगरः शार-
दिकेन यावत्तिकालाद्युक्तेन जीविताद् व्यपरोपितः। ततः खलु तेषां श्रमणानामन्तिके

'तएण ते समणा निग्गंथा' इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इमके घाद (ते समणा निग्गथा धम्मघोसा थेराण
अंतिएएयमट्ट सोच्चा निसम्म चपाए सिंघाडगतिग जाव बहुजणस्स एव
माइक्खति-धिरेत्थुणं देवाणुप्पिया । नागसिरीए जाव णिंबोलियाए जाएण
तहारूवे साहू साहूरूवे सालइएण जीवियाओ ववरोवेइ) उन श्रमण
निर्ग्रन्थोने धर्मघोष स्थविर के मुख से इस समाचार को सुनकर और
उसका हृदय में विचार कर चपानगरी में शृगाटक यावत् महापथो में
बहुजनों से ऐसा कहा हे देवानुप्रियों ! ब्राह्मणी नागश्री को धिकार है
यावत् निम्न की निचोली जैसी अनादरणीय है कि जिसने तथा रूप
साधु-साधुरूप धर्मरुचि अनगर को शारदिक यावत् कडवे तुम्हे का
शाक देकर जीवन् से रहित करदिया है । (तएणं तेसिं समणाण अं-

' तएण ते समणा निग्गथा ' इत्यादि—

टीकार्थ (तएण) त्थारणाद

(ते समणा निग्गथा धम्मघोसा थेराण अंतिए एयमट्ट सोच्चा निसम्म चपाए
सिंघाडगतिग जाव बहुजणस्स एव माइक्खति-धिरेत्थुणं देवाणुप्पिया । नाग
सिरीए माहणीए जाव णिंबोलियाए जाए ण तहारूवे साहू साहूरूवे सालइएण
जीवियाओ ववरोवेइ)

ते श्रमणु निर्ग्रन्थोने धर्मघोष स्थविरना सुभधी आ वात सामणीते
अने तेने हृदयमा धारणु करीने चपानगरीमा शृगाटक महापथो वगेरेमा धणु
माणुसोने आ प्रमाणु कणु के हे देवानुप्रियो ! ब्राह्मणी नागश्रीने धिक्कारु छे
अने ते लीमडानी ली जोणानी जेम अनादरणीय छे केभके तेबे तथाइप साधु साधु
इप धम इचि अनगरने शारदिक कडवी तणडीतु शाक आपीने मारी नाभ्या छे

एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य बहुजनोऽन्योन्यस्व-परस्परस्य णामाभ्याति-एव भावते
एव प्रज्ञापयति, एव प्ररूपयति धिगस्तु ग्लु नागभिगा ब्राह्मण्याः, यया धर्मरुचि-
नगर शारदिकेन यायद् जीविताद् व्यपरोपितः । ततः ग्लु ते ब्राह्मणा चपाया
नगर्या बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य, आधुक्ताः=त्रीं क्रोधाविष्टाः
यावत् मिसमिसन्त =क्रोधानलेन प्रज्वलत, यत्रैरनागश्रीब्राह्मणी, तत्रैवीपागच्छन्ति,

ति ए एयमद्द सोचा बहुजणे अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ, एवं भासइ
धिरत्थुणं नागसिरीए माहणीए जाव जीवियाओ ववरोविण, तण्णं ते
माहण चंपाए नयरीए बहुजणस्स अतिण एयमद्द सोच्चा निसम्म आ-
सुरत्ता जाव मिसिमिसेमाणा जेणेव नागसिरी माहणी तेणेव उवाग
च्छंति) उन श्रमणजनों के मुख से इस समाचार को सुनकर और
उसे हृदय में धारण करके अनेक मनुष्य आपस में इस प्रकार कहने
लगे घोलने लगे प्रज्ञापना करने लगे प्ररूपणा करने लगे कि ब्राह्मणी
नागश्री को धिक्कार है जिसने धर्मरुचि अनगर को शारदिक-तिक
कडवे तुंबे के शाक से जीवन रहित कर दिया है । इस प्रकार उन
ब्राह्मणों ने तथा सोम, सोमदत्त, सोमभूति आदि ने जय चपानगरी में
अनेक मनुष्यों के मुख से इस घात को सुना-तो वे सुनकर और उसे
अपने २ हृदय में धारण कर इकदम क्रोध से तम तमा उठे और
घावत् क्रोधानल से जलते हुए जहा नागश्री ब्राह्मणी थी वहा आये-

(तण्णं तेसिं समणाणं अति ए एयमद्द सोच्चा बहुजणे अन्नमन्नस्स एवमाइ
क्खइ, एव भासइ धिरत्थुण नागसिरीए माहणीए जाव जीवियाओ ववरोविण,
तण्णं ते माहणा चंपाए नयरीए बहुजणस्स अति ए एयमद्द सोच्चा निसम्म आसु
रत्ता जाव मिसिमिसेमाणा जेणेव नागसिरी माहणी तेणेव उवागच्छंति)
ते श्रमणु लोकेना सुभथी आ समाचार सावणीने अने तेने हृदयभा
धारणु करीने धणु भाणुसे अकणीजनी साथे आ रीते वातथीत करवा लाग्या,
प्रज्ञापना करवा लाग्या, प्ररूपणु करवा लाग्या के प्राहणु नागश्रीने धिक्कार
छे जेणे धर्मरुचि अनगरने शारदिक-तिकत कडवी तुण्डीना शाकथी मारी
नाथ्या आ रीते ते प्राहणुजे अकले के सोम, सोमदत्त अने सोमभूतिजे
न्यादे तथा नगरीना अनेक भाणुसेना सुभथी आ वात सावणी त्यादे तेजे
सावणीने अने तेने हृदयभा धारणु करीने अकडम क्रोधाविष्ट थई गया अने
क्रोधधी अग्निभा सजगता न्या नागश्री प्राहणु छती त्या आव्या.

उपागत्य नागश्रिय ब्राह्मणीमेवमादिपुः-उक्तान्तः, ह भो ! नागश्रीः । अप्रार्थित प्रार्थिके ! मरणाभिशापिणि ! दुरन्तप्रान्तलक्षणे ! हीनपुण्यचातुर्दशिके ! धिगस्तु खलु तव अधन्यायाः अपुण्यायाः यावद्-दुर्मगनिम्बगुलिकायाः, अत्र द्वितीयार्थे षष्ठी आर्षत्वात्, यया खलु त्वया तथारूपः साधु साधुरूपो धर्मरुचिरनगारो मासखमणपारणके शारदिकेन तित्कालागुकेन यावद् व्यपरोपितः, ' उच्चावयाहि ' उच्चावचाभिः=उच्चनीचाभिः ' अक्रोसणाहि ' आक्रोशनाभिः=निन्दावचैः नीचा ऽसि त्वमित्यादिभिर्वचनैः ' अक्रोसति ' आक्रोशन्ति-फटकारयन्ति उच्चावचाभिः उद्धं सनाभि ' दुष्कुलोत्पन्नाऽसित्यादिवचनैः, ' उद्धंसेति ' उद्धसयन्ति=कुलादि-

(उवागच्छित्ता णागसिरी माहणीं एव वयामी) ह भो ! नागसिरी ! अपत्थियपत्थिय दुरतपतलकखणे, हीण पुण्णचाउदसे धिरत्युण तव अधन्नाए अपुन्नाए जाव णिंवलियाए जाए ण तुमे तहारूवे साहू साहूरूवे मासखमणपारणंसि सालइएण जाव ववरोविए उच्चावण्याहि अक्रोसणाहि अक्रोसति उद्धसेति) वहा आकर न्होंने नागश्री ब्राह्मणीसे कहा अरीओ नागश्री ! अरी अप्रार्थित प्रार्थिके । हे दुरन्तप्रान्त लक्षणे । ओ हीन पुण्य चातुर्दशिके । तुझ अपुण्य अधन्या को धिक्कार हो ! तू दुर्मग निम्बगुलिका जैसी अनादरणीय है जो तूने मासखमणके पारणा के दिन घरपर आहार लेने के निमित्त आये हुए तथा रूप साधुरूप धर्मरुचि अनंगार को शारदिक तित्त कडवे तुंने का शाक देकर जीवन से रहित कर दिया है । तू बड़ी नीच है इत्यादि रूप ऊँच, नीच आक्रोश निन्दा-वचनों से उन्होंने ने उसे फटकारा तू नीच खानदान की

(उवागच्छित्ता णागसिरीं माहणीं एव वयासी-ह भो ! नागसिरी । अपत्थिय पत्थिय दुरतपतलकखणे, हीनपुण्णचाउदसे धिरत्यु ण तव अधन्नाए अपुन्नाए जाव णिंवलियाए जाए ण तुमे तहारूवे साहू साहूरूवे मासखमणपारणंसि सालइएण जाव ववरोविए उच्चावण्याहि अक्रोसणाहि अक्रोसति उद्धसेति) त्या आधीने तेमहे नागश्री प्राह्मणीने कथुं हे-हे मुर्ध्णो नागश्री ! अप्रार्थित प्रार्थिके ! हे दुरत प्रात लक्षणे ! ओ हीनपुण्य चातुर्दशिके ! तारा नेवी पापणी अधन्याने धिक्कार छे तु दुर्लंग निम्बगुलिका (विंजोणी नेवी अनादरणीय छे हेमके तेहे मास-अभयना पारणाना द्विसे घेर आहार देवा माटे आवेला तथाइप साधु साधुइप धर्मरुचि अनंगारने शारदिक तित्त कडवी तुमडीतु शाक आधीने मारी नाभ्या छे तु साव नीच छे, आभयणा उच्च-नीच आक्रोश-निन्दा-ना वचनोथी तेओओ तेने शिटकारी तु नीच

गौरवोत्पातयन्ति, उद्यानागिनिर्मग्ननाभिः=रुगणानैः ' गिन्मर्यति ' निर्मर्य-
 यन्ति, उद्यानागि ' गिन्मोदणाहि ' निश्छोदनाभिः=' अस्मद् गृहाम्बुहि
 निस्सर इत्यादि रचने ' निच्छोदति ' निश्छोदयन्ति = गृहादित्यागमबोला
 दनेन भीषयन्ति, ' तज्जेति ' तज्जयन्ति ' ज्ञाम्यसि पापे । ' इत्यादिवाक्यैरङ्गुली
 प्रदर्शनपूर्वक ताडनमय प्रदर्शयन्ति, ' तालेंति ' ताडयन्ति चपेटादिभिः, तज्जयिष्या
 तालेंयिष्या, स्वकाद् गृहाद् ' निच्छुभति ' निक्षिपन्ति = वेदिर्नि-सारयन्ति ।
 ततस्तेदन्न्तर सा नागश्रीः स्वकाद् गृहाद् ' निच्छुभ समाणी ' निक्षिप्तमती=नि
 सरितासंती, चम्पाया नगर्पा. शृङ्गाटक त्रिकुचतु रचत्परचतुर्मुग्महापयपयेषु यत्र यत्र

है इस तरह की ऊंची नीची घाणियों से उसे भला घुरां कहा कुलोदि
 के गौरव से उसे पतित कहा । (उद्यानागिं गिन्मर्यणाहिं गिन्मर्यति
 उच्छावयोहिं गिच्छोदणाहिं निच्छोदति, तज्जेति, तालेंति, तज्जेत्ता
 तालेंत्ता सयाओ गिहाओ निच्छुभति) ऊंचे नीचे कठोर वचनों से
 उसका तिरस्कार किया । भले घुरे वचनो से उसे डरवाया-हमारे घर
 से तू बाहिर निकल जा इत्यादि भयोत्पादक शब्दों से उसे भय
 दिखलाया । ओ पापिनी ! तूजे मालूम पड जायगा, इत्यादि वाक्यों से
 अङ्गुली दिखा २ कर उसे मारने का भय दिखलाया और चपेटा-थप्पड
 आदि से उसे पीटा भी । और पीटपाट कर उसे उन्होंने फिर अपने घर
 से बाहिर निकाल दिया । (तेषां सा नागसिरी सयाओ गिहाओ
 निच्छुभ समाणी चपाण नगरीण सिघाडगतिगचउक्कचरचउम्मुह०

भानदाननी छे, आ नतना उथा नीथा वचनोथी तेछे जोटी भरी स लणावी
 कुण वगेरेना गौरवथी तेछे पतिता कछे

(उच्छावयोहिं गिन्मर्यणाहिं गिन्मर्यति, उच्छावयोहिं गिच्छोदणाहिं निच्छो-
 दति, तज्जेति, तालेंति तज्जेत्ता तालेंत्ता सयाओ गिहाओ निच्छुभति)

उथा नीथा वचनोथी तेने तिरस्कार कथी, जोटा भरा वचनोथी तेने
 भीवडावी ' अमार घरथी तु अडार नीकणी न ' वगेरे लथोत्पादक वचनोथी
 तेछीने भीक अतावी ' अ पापछी ! तने भव अताववी दधुं ? ' वगेरे वच
 नोथी साभी आगणी करीने तेने मारी नाभवानी भीक अताववा लाग्या अने
 थप्पड लाक्षा वगेरेथी तेने मार पणु मार्यी, मार्यी करीने तेओअ तेने
 चेताना घरथी अडार डादी भूडी

(तेषां सा नागसिरी सयाओ गिहाओ निच्छुभ समाणी चपाण नगरीण
 सिघाडगतिगचउक्कचरचउम्मुह० बहुजणेण

गच्छति तत्र तत्र सर्वत्र बहुजनेन 'हीलिज्जमाणी' हील्यमाना-जात्याद्युद्धाटनेन,
'खिसिज्जमाणी' खिस्यमाना-परोक्षकुत्सनेन, 'निदिज्जमाणी' निघमाना-
तत्परोक्षम् 'गरहिज्जमाणी' गर्हमाना-तत्समक्षमेव 'तज्जिज्जमाणी' तर्ज्यमाना-
अङ्गुलीचालनेन भयमुत्पादयमाना 'पच्चहिज्जमाणी' पच्यमाना यद्यद्यादिता-
डनेन 'त्रिकारिज्जमाणी' त्रिक्रियमाणा 'धुक्कारिज्जमाणी' धुत्क्रियमाणा कुत्रापि

बहुजनेन हीलिज्जमाणी खिसिज्जमाणी निदिज्जमाणी, गरहिज्जमाणी,
तज्जिज्जमाणी, पच्चहिज्जमाणी, त्रिकारिज्जमाणी, धुक्कारिज्जमाणी,
कत्थइ ठाण वा निलय वा अलममाणी २ दडि खडा निवसणा खंड
खंडमल्लय खंड खंड घडगहत्थगया फुट्टुहडाहडसीसा म च्चियाउगरेणं
अग्निज्जमाणमग्गा गेह गेहेण देह उलियाए वित्तिक्कप्पेमाणी विहरइ)
अपने घर से बाहिर निकल कर वह नागश्री चपानगरी के शृंगाटक,
त्रिक, चतुष्क, चत्वर चतुर्मुख महापथ आदि मार्गों पर जहा २ गेई,
वर्हा २ सर्वत्र अनेक जनों ने उसकी " यह नीचजाति की है " इत्या-
दिरूप से हीलना की। सब के सब उसपर बहुत क्रोधित हुए सबने
उसकी परोक्ष में निंदा की। सामने सत्रने उसे मला बुरा कहा। अगुली
संचालन पूर्वक उसे मारने पीटने का भय दिग्बलाया। किन्हीं २ ने उसे
लकड़ी आदिसे मारा पीटा भी। अनेकोने उसे धिक्कारा। कितनेक
जनों ने उसे देखकर उसपर क्रूर भी दिया। इस तरह की परिस्थिति

निदिज्जमाणी, गरहिज्जमाणी, तज्जिज्जमाणी पच्चहिज्जमाणी, त्रिकारिज्जमाणी,
धुक्कारिज्जमाणी, कत्थइ ठाण वा निलय वा अलममाणी २ दडिखडा निव-
सणा खंडमल्लय खंड खंड घडगहत्थगया फुट्टुहडाहडसीसाम च्चियाउगरेणं
अग्निज्जमाणमग्गा गेह गेहेणं देह उलियाए वित्तिक्कप्पेमाणी विहरइ)

पोताना घेरथी णडार नीकणीने ते ता।थी यथा नगरिना शृगाटक,
त्रिक, चतुष्क, चत्वर, चतुर्मुख, महापथ वगेरे भागेणं उपर न्या गधं त्या
त्या णधे धणुा भाणुसोअे तेनी " आ नीथ जतनी छे " वगेरे वयने।थी
हीलना उरी णधा भाणुसो तेनी उरर थूण व श्रुसे थया तेनी गेर डाल
रीभा लोकोअे तेनी थुण निदा करी, तेनी सामे तेने णधाअे षरी भोटी
सभजावी, आगणी थी धी थी धीने तेनी सामे मारपीट करवानी भीक णता-
ववा लाअ्या कोअं डोअंअे तो तेने लाकडी वगेरेने। इटजे पणु भायेणं, धणु
अेअे तेने इटकारी, डेटलाक भाणुसोअे तेने लोअेने तेनी उपर सूकी डीधु.

स्थानं वा निरासार्थं निरप्य वा-अल्पशालिधामार्थस्थानम्, अल्पमाना २=अप्य-
 प्लुवती २, 'दन्तीखडनिवसगा' दण्डिगण्डनिवसगा=दण्डि-कृतमन्थान जीर्णवस्त्र,
 तस्य खण्ड, तदत्र निवसत-परिधान यस्याः सा तथा, 'खडमल्लपखडप्रडगात्ख-
 गया' खण्डमल्लक-खण्डप्रदस्तगता=खण्डमल्ल=मिश्रयं शराप्रखण्ड खण्डप्रद
 कष पानार्थं घटखण्ड, तद् द्वय दस्तगत यस्या सा तथा, 'कुट्टदडादृसीसा'
 स्फुटितदडादृशीर्षा-स्फुटित स्फुटितकेश 'दडादृष्टम्' अर्थं शीर्षं शिरो यस्याः
 सा तथा, प्रिकीर्णकेशतीत्यर्थं 'मच्छिगानहगरेण अग्निज्जमाणमग्गा' मक्षिका
 चटकरेण अन्वीयमानमार्गा मक्षिकासमूहेन अनुगम्यमानमार्गा शरीरवस्त्रादीना
 मलिनत्वान् मक्षिकास्तत्पृष्ठतो धारतीत्यर्थं. गेह गेहेण देह चक्षियाए' गृह गृहेण
 देहप्रलिक्रया=मतिगृह देहनिर्वाहहेतोः उदरपूर्यर्थमेवेत्यर्थं-टृप्ति 'कल्पेमाणी'
 फल्प्यमाना=कुर्वाणा सती विहरति । ततस्तदनन्तर खलु तस्या नागश्रिया ब्राह्मण्या
 स्वस्मिन् भवे एव षोडश रोगातङ्काः प्रादुर्भूताः, तद्वयथा-(१) श्वासः, (२)
 कास, (३) ज्वरः, 'जात्रकुटे' यावत्-कुष्ठम्, (४) दाह, (५) कुक्षिशूलम्, (६)

का सामना करती हुई वह कहीं पर भी बैठने के लिये स्थान को, और
 ठहरनेके लिये-विश्राम करनेके लिये-जगह भी को नहीं प्राप्त करती फटे
 हुए जीर्ण वस्त्र के टुकड़े को पहिरे हुए भिक्षा के लिये मिट्टी के खप्पर
 को और पानी के लिये फूटे घड़े के टुकड़े को हाथ में लिये हुए इधर
 उधर एक घर से दूसरे घर पर उदर पूर्ति के लिये फिरने लगी । इसके
 शिर के चाल इधर उधर चिखरे हुए रहते थे । शरीर और वस्त्रादिकों
 के मैले कुचैले होने के कारण मक्षिकाओं का समूह इसके पीछे पीछे २
 भागता रहता था । (तएण तीसे नागसिरीए माहणीए तब्भवसि चेष
 सोलसरोयायंका पाउब्भूया- त जहा सासे कासे जोणिसूले, जाव

आवी परिस्थितिने। मुकाभलो करती कैर्ष पणु स्थाने भिखवानी के शिकावानी
 के विश्राम करवानी लब्धा ते भेजवी शकी नडि, अने छपटे शटेला अना
 वस्त्रोना ककडाने वीटाणीने भिक्षाना भाटे भाटीनु अप्पर अने पाछीना भाटे
 झूटी भाटलीना ककडाने हाथमा लधने पेट भरवा भाटे आभतेम अेक घेरथी
 भीले घेर लभवा लागी तेना माधाना पाणे आभ तेम अस्त व्यस्त रहेता
 हुता, शरीर अने वस्त्रो वगेरे मेला डोवाने लीधि भाणीअेना टोयेटोया तेनी
 पाछण पाछण लभता रहेता हुता

(तएण तीसे नागसिरीए माहणीए तब्भवसि चेष सोलसरोयायंका पाउ
 भूया-त जहा सासे कासे जोणिसूले, जावकोडे तएण सा

भगवद्गीता, (७) अर्शः, (८) योनिशूलम्, (९) दृष्टिशूलम्, (१०) मूर्धशूलम्, (११) अरुचिः, (१२) अक्षिवेदना, (१३) कर्णवेदना, (१४) कण्ठ, (१५) जलोदरम्, (१६) कुष्ठम् । ततस्तदनन्तरं सा नागश्री ब्राह्मणी पौडशमी रोगातङ्कैरभिभूता-सती आर्तदुःखार्तिवशात्तां-शारीरिमानसिकदुःखत्रुक्ता कालमासे कालं कृत्वा षष्ठ्या पृथिव्याम् 'उक्कोसेण' उत्कृष्टतः, द्वाविंशति सागरोपमस्थितिकेषु नर-केषु-नरकावासेषु नारकत्वेन उपपन्ना-उत्पन्ना ॥ सू० ५ ॥

मूलम्-सा णं ततोऽणंतरंसि उव्वट्ठित्ता मच्छेसु उव्वन्ना,
तत्थ णं सत्थवज्झा दाहवक्कंतीए कालमासे कालं किच्चा
अहेसत्तमीए पुढवीए उक्कोसाए तेत्तीसु सागरोवमट्ठिईएसु
नेरइएसु उव्वन्ना, सा णं ततोऽणंतरं उव्वट्ठित्ता दोच्चपि

कोठे तएण सा नागसिरी माहिणी, सोलसहिं रोयायकेहिं अभिभूया
समाणी अट्टदुहट्टवसटा कालमासे काल किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसे
ण वावीससागरोवमट्ठिईएसु नरएसु नेरइयत्ताए उव्वन्ना) उस नागश्री
ब्राह्मणी को उसी भव में ये सोलह रोगातक प्रकट हो गये-(१) श्वास
(२) कास (३) ज्वर (४) दाह (५) कुक्षिशूल (६) भगवद्गीता (७) अर्श
(८) योनिशूल (९) दृष्टिशूल (१०) मूर्धशूल (११) अरुचि (१२) अक्षि-
वेदना (१३) कर्णवेदना (१४) कण्ठ (१५) जलोदर (१६) कुष्ठ । इन १६
सोलहरोगातको से अत्यन्त दुःखित हुई-शारीरिक एव मानसिक व्य-
थाओं से व्यथित हुई-वह नागश्री काल अवसर काचकर छठी पृथिवी
में २२ सागर की उत्कृष्ट स्थितिवाले नरकावासों नैरयिक को पर्यायसेमें
उत्पन्न हुई ॥ सू० ५ ॥

सोलसहिं रोयायकेहिं अभिभूया समाणी अट्टदुहट्टवसटा कालमासे काल किच्चा
छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेण वावीससागरोवमट्ठिईएसु नेरइयत्ताए उव्वन्ना)

ते नागश्री ब्राह्मणीने तेन भवमा आ सोण रोगातके प्रकट थया
(१) श्वास (२) कास (३) ज्वर (४) दाह (५) कुक्षिशूल (६) भगवद्गीता (७)
अर्श (८) योनिशूल (९) दृष्टिशूल (१०) मूर्धशूल (११) अरुचि (१२)
अक्षिवेदना (१३) कर्णवेदना (१४) कण्ठ (१५) जलोदर (१६) कुष्ठ आ सोण
रोगातकेथी अतीव दुःखी थयेती शारीरिक तेमन् मानसिक व्यथाओथी व्यथित
थती ते नागश्री काल अवसरे काल करीने छट्ठी पृथिवीमा वावीस सागरनी
उत्कृष्ट स्थितिवाणा नरकावासेमा नैरयिकनी पर्यायथी जन्म पाणी ॥ सू० ५ ॥

मच्छेसु उववज्जइ, तत्थ प्रिय ण सत्यग्गिज्जा दाहवक्कतीए
 दोच्चंपि अहे सत्तमीए पुटवीए उक्कोस तेत्तीसमागरोवम-
 द्विइएसु नेरइएसु उववज्जइ, सा णं तओहिंतो जाव उव-
 वट्ठिता तच्चंपि मच्छेसु उववन्ना तत्थ प्रिय णं सत्यग्गिज्जा
 जाव काल किच्चा दोच्चंपि छट्ठीए पुटवीए उक्कोमेणं०
 तओऽणंतर उववट्ठिता मच्छेसु उरएसु गव जहा गोसाले
 तहानेयव्व जाव रयणप्पभाओ सत्तसु उववन्ना तओ उव-
 वट्ठिता जाइं इमाइ राहवर पिहाणाइ जाव अटुत्तरं च णं खर
 वायर पुढविकाड यत्ताते तेसु अणेगसतसहम्मस खुत्तो ॥सू०६॥

टीका—‘ सा ण ’ इत्यादि । सा=नागश्री ब्राह्मणी खलु तत =पृथ्वा पृथिव्याः
 अनन्तरम्=आयुर्मयस्थितिक्षये गति ‘ उववट्ठिता ’ उद्वर्त्य—निम्सत्य मत्स्येपूषणा,
 तत्र खलु मत्स्यभवे सा ‘ सत्यग्गिज्जा ’ शस्त्रविद्धा ‘ दाहवक्कतीए ’ दाहव्युत्क्रा-
 न्त्या—दाहोत्पत्त्या, काळमासे काळरुद्राऽथ मत्स्य्या पृथिव्यामुत्क्रुत्तत्त्वयस्त्रि-
 त्सागरोपमस्थितिकेषु ‘ नेरइएसु ’ नैरयिकेषु उत्पन्ना । सा खलु तत =सप्तम्याः
 पृथिव्याः अनन्तरमुद्वर्त्य द्वितीयवारमपि मत्स्येपूषयन्ते । तत्रापि च खलु शस्त्र-

‘ सा ण तओ ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(सा) वह नागश्री (त ओऽणतरसि) उस उट्टी नरककी भव
 स्थिति समाप्त होने पर (उववट्ठिता) वहा से निकली—और निकलकर
 (मच्छेसु उववज्जा तत्थण सत्यग्गिज्जा दाहवक्कतीए कालमासे काल
 किच्चा अहे सत्तमीए पुटवीए उक्कोसाण तेत्तीस सागरोवमद्विइएसु
 नेरइएसु उववज्जा, सा ण ततोऽणतर उववट्ठिता दोच्चंपि मच्छेसु उवव

‘ सा ण तओ ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(सा) ते नागश्री (त ओ ऽ ण त र स ि) ते छडी नरकनी अवस्थिति
 पूरी थया बाद (उववट्ठिता) त्यागी नीकणी अने नीकणीने

(मच्छेसु उववज्जा तत्थण सत्यग्गिज्जा दाह वक्कतीए कालमासे काल किच्चा
 अहे सत्तमीए पुटवीए उक्कोसाए तत्तीस मागरोवमद्विइएसु नेरइएसु उववज्जा
 सा ण उववज्जइ)

दिष्टा दाहव्युत्क्रान्त्या द्वितीयवारमपि अधः सप्तम्या पृथिव्यामुत्कृष्टतत्त्वयस्त्रिंशत्सा-
गरोपमस्थितिकेषु नैरयिकेषूपपद्यते, सा खलु 'तओर्हितो' तस्याः=सप्तम्याः
पृथिव्याः, यावद् उद्वर्त्य 'तच्चपि' तृतीयवारमपि मत्स्येषु उत्पन्ना । तत्रापि च
खलु शस्त्रविद्धा 'जाव काल किञ्चा' यावत् दाहव्युत्क्रान्त्या कालमासे काल
कृत्वा द्वितीयवारमपि पृथिव्यामुत्कृष्टतो द्वाविंशतिसागरोपमस्थितिकेषु
नरकेषूपपन्ना, सा खलु तत =पृथिव्याः पृथिव्या अनन्तर 'उवद्वित्ता' उद्वर्त्य=
निस्सृत्य उरःपरिसर्पेषूपपन्नाः, तत्र गस्त्रव्या दाहव्युत्क्रान्त्यामुत्कृष्टतः सप्तदश-
सागरोपमस्थितिकेषूपपन्ना । एव यथा गोशालकस्तथा ज्ञातव्यम्=गोशालकनदस्या-

ज्जई) तिर्यग्गति में मच्छ की पर्याय से उत्पन्न हो गई । वहां वह
मत्स्य के भव में शस्त्र से विद्ध होकर दाह की उत्पत्ति से काल अवसर
काल कर मरी सो नीचे सप्तम नरक में ३३ तेतीस सागर की उत्कृष्ट
स्थितिवाले नरकावास मे नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हुई । वहां से
निकलकर फिर वह मत्स्य की पर्याय से उत्पन्न हुई । (तत्थ वि य णं
सत्थविज्जादाहवक्कतीण दोच्चपि अहे सत्तमीए पु०) वहां वह शस्त्र
से पुनः विद्ध होकर दाहकी व्युत्क्रान्ति से मरी और मरकर द्वितीयवार
भी सप्तम नरक में (उक्कोस तेतीससागरोवमद्विइणसु नेरइए उवव
ज्जई) उत्कृष्ट-तेतीस सागर की स्थिति छेकर नैरयिक की पर्याय में
उत्पन्न हुई । (सा ण तओर्हि तो जाव उववद्वित्ता तच्चपि मच्छेसु उव-
वन्ना, तत्थ वि य णं सत्थविज्जा जाव काल किञ्चा दोच्चपि छट्ठीए पुढ-
वीए उक्कोसे ण तओऽणतर उवद्वित्ता मच्छेसु उरएसु एव जहा गोसाले

तिर्यग् गतिमा मच्छथी पर्यायनी जन्म पाभी त्या ते मत्स्यना लवमा
शस्त्र वडे वी धाधने दाहथी पीडाधने काण अवमरे काण करीने भरणु पाभी अने
नीचे सातमा नरकमा उउ सागरनी उत्कृष्ट स्थितिवाणा नरकावासमा नैरयिकनी
पर्यायथी जन्म पाभी त्याथी नीऽणीने करी ते मत्स्यना पर्यायथी जन्म पाभी
(तत्थ वि य णं सत्थविज्जा दाहवक्कतीए दोच्चपि अहे सत्तमीए पु०)
त्या ते करी शस्त्र वडे विद्ध थधने दाहथी पीडाधने मरी अने मरीने
भीऽ वधत पणु स तमा नरकमा (उक्कोस तेतीससागरोवमद्विइणसु नेरइए उव-
वज्जई) उत्कृष्ट उउ सागरनी स्थिति लधने नैरयिकनी पर्यायमा जन्म पाभी
(सा ण तओर्हि तो जाव उववद्वित्ता तच्चपि मच्छेसु उववन्ना, तत्थ वि य णं
सत्थविज्जा जाव काल किञ्चा दोच्चपि छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेण तओऽणंतर

वर्णनं बोध्यमित्यर्थः, 'गारुण्यपभाष गत्तु उग्रमा' यावद् रत्नप्रभायां सम-
 द्युत्पन्ना=अयं भाव-उरः परिसर्पणरो नि द्युत्य पञ्चम्यां धूमप्रभाया पृथिव्या
 उत्कृष्टवः समदगसागरोपमस्थितिकेषु नैरयिकेपूत्पन्ना, ततो नि' द्युत्य द्वितीय
 वारसुरःपरिसर्पेपृत्पद्यते, तत्रापि पूर्वम् कान् कृत्या द्वितीयवारमपि पञ्चम्या पृथि

मेंहा नेयव्व जाव रयणपभाभो सत्तसु उचयद्या, तओ उव्वट्टित्ता जाइ
 ईमाइ खहायर विहाणाइ जाव अदुत्तरं च ण खरवायर पुढविकाइयत्ता
 ते तेसु अपणेगसतसहस्स खुत्तो) वहां से भय स्थिति समाप्त होते ही
 वह निकली-निकल कर तीसरी बार भी मत्स्य की पर्याय में उत्पन्न
 हुई। वहां शस्त्र विद्ध होकर दाह की व्युत्क्रान्ति से मरी सो मर कर
 दुयारा भी छठी ही पृथिवी में २२ घावीम सागर की उत्कृष्ट स्थिति छे
 कर उत्पन्न हुई। वहां की भवस्थिति समाप्त कर जब वह वहां से
 निकली तो उर परिसर्प की पर्याय में उत्पन्न हुई। वहां पर भी वह
 शस्त्र विद्ध होकर दाह की व्युत्क्रान्ति से-उत्पत्ति से काल अवसर काल
 कर धूमप्रभा नाम की पचम पृथिवी में नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न
 हुई। वहां सत्तरह सागर की उत्कृष्ट-स्थिति इसकी हुई। गोशालक
 की तरह इसका वर्णन जानना चाहिये। तात्पर्य इसका इस प्रकार है-
 १७ सागर की उत्कृष्टस्थिति वाले पचम नरक से निकल द्वितीय बार
 भी वह उरः परिसर्प की पर्याय से उत्पन्न हुई। वहां से पूर्व की तरह

उव्वट्टित्ता मच्छेसु उरएसु एव जहा गोसाले तहा नेयव्व जाव रयणप
 भाओ सत्तसु उववन्ना, तओ उव्वट्टित्ता जाइ इमाइ खहायरविहाणाइ जाव
 अदुत्तरं, च ण खरवायरपुढविकाइयत्ता ते तेसु अपणेगसतसहस्सखुत्तो)
 त्यानी अवस्थिति पूरी थता ज ते त्याथी नीकणी अने नीकणीने त्रील वार
 पणु भाछलीना पर्यायमा जन्म पाभी त्या शस्त्रथी वी धाधने तथा हाडथी
 पीडाधने भरणु पाभी अने ते वणते पणु छठी पृथिवीमा २२ सागरनी उत्कृष्ट
 स्थिति लधने उत्पन्न थध त्यानी अवस्थिति पूरी करीने न्यारे ते त्याथी
 नीकणी त्यारे ते उर परिसर्पना पर्यायमा जन्म पाभी त्या पणु ते शस्त्रथी
 वी धाधने अने हाडथी पीडाधने काण अवसरै काण करीने धूमप्रभा नामनी
 पचम पृथिवीमा नैरयिकना पर्यायथी जन्म पाभी त्या १७ सागरनी उत्कृष्ट
 स्थिति तेनी थध गोशालकनी जेम आनु पणुन न्णथी लेखु जेधजे मतलण
 आनी आ छे के १७ सागरनी उत्कृष्ट स्थितिवाणा पचम नरकथी नीकणीने
 भील वणत पणु ते उर परिसर्पना पर्यायथी जन्म पाभी त्याथी पणु पडे-
 लांनी जेमज काण अवसरै काण करीने भीलवार पणु आ पथिवीमा

व्यामुत्कृष्टतः सप्तदशसागरोपमस्थितिकेषु नैरयिकेपूत्पन्ना । ततो निःसृत्य तृतीयमारमपि उरः प्रतिसर्पेष्टपद्यते, अत्र पूर्ववत् कालं कृत्वा चतुर्थ्या पङ्कप्रभायां पृथिव्यामुत्कृष्टतो - दशसागरोपमस्थितिकेषु नैरयिकेपूत्पन्ना, ततो निःसृत्य सिंहेषूपद्यते, तत्रापि पूर्ववत् कालं कृत्वा द्वितीयमारमपि चतुर्थ्या पृथिव्यामुत्कृष्टतो दशसागरोपमस्थितिकेषु नैरयिकेपूत्पन्ना । ततश्चतुर्थ्याः पृथिव्या निःसृत्य द्वितीयमारमपि सिंहेषूपद्यते, तत्र पूर्ववत् कालं कृत्वा तृतीयाया वाहुकप्रभाया पृथिव्यामुत्कृष्टत सप्तसागरोपमस्थितिकेषु नैरयिकेपूत्पन्ना, ततो निःसृत्य पक्षिपूत्पद्यते, तत्र पूर्ववत् कालं कृत्वा द्वितीयमारमपि तृतीयाया पृथिव्यामुत्कृष्टतः

काल कर द्वितीयवार भी यह पचम पृथिवी मे १७ सागर की उत्कृष्ट स्थितिवाले नरकों में नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हुई। वहाँ की स्थिति समाप्त कर जब यह वहाँ से निकली-तो तीसरी वार भी यह उरः परिसर्पों में उत्पन्न हुई। वहाँ से पूर्व की तरह काल कर चौथी पङ्क प्रभा पृथिवी में कि जहा १० सागर की नैरयिकों की उत्कृष्ट स्थिति है वहाँ नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हुई। वहाँ से निकल कर यह सिंह की पर्याय में उत्पन्न हुई। पहिले की तरह वहाँ से भी मर कर द्वितीय वार भी यह चतुर्थ नरक में दश सागर की स्थिति वाले नरक में नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हुई। चतुर्थ नरक से निकल कर यह दुबारा भी सिंह की पर्याय से उत्पन्न हुई। वहाँ से अपने समय पर मर कर फिर यह बालुका प्रभा नाम की तीसरी पृथिवी में सात सागर की उत्कृष्ट स्थिति लेकर नैरयिक की पर्याय में उत्पन्न हुई। वहाँ से निकल कर फिर यह पक्षियों के कुल में उत्पन्न हुई। यहाँ से मर कर

१७ सागरनी उत्कृष्ट स्थितिवाणा नरकाभा नैरयिकना पर्यायथी जन्म पाभी त्यानी स्थिति पूरी करीने न्याये ते त्याथी नीकणी ते त्रील वार पद्य ते उर परिसर्पभा उत्पन्न थछ त्याथी पडेलानी जेम काण करीने बोथी पङ्क प्रभा पृथिवीभा-जे न्यां दशसागरनी नैरयिकोनी उत्कृष्ट स्थिति छे, त्या नैरयिकनी पर्यायथी उत्पन्न थछ, त्याथी नीकणीने ते सिद्धना पर्यायथी जन्म पाभी पडेलानी जेम त्याथी पद्य भरद्य पाभीने भीलवार पद्य अतुर्थ नरकभा दश सागरनी स्थितिवाणा नरकभा नैरयिकना पर्यायथी जन्म पाभी अतुर्थ नरकथी नीकणीने ते करी सिद्धना पर्यायथी उत्पन्न थछ त्याथी भरद्य पाभीने करी ते बालुकाप्रभा नामनी त्रील पृथिवीभा सात सागरनी उत्कृष्ट स्थिति लधने नैरयिकनी पर्यायभा जन्म पाभी, त्याथी नीकणीने ते करी ते पक्षीजोना कुणभ

सप्तसागरोपमस्थितिकेषु नैरयिकेषूपत्पन्ना । तत्रतृतीयायाः पृथिव्या नि मृत्यु
द्वितीयवारमपि पक्षिपूतपद्यते, तत्रापि पूर्वम् कालं तृतीयाया पृथिव्या
शर्करामायामुत्कृष्टतस्त्रिसागरोपमस्थितिकेषु नैरयिकेषूपत्पन्ना । ततो निमृत्य सरी-
सृपेपूतपद्यते, तत्रापि शम्भवेभ्या दाहव्युत्क्रान्त्या कालमासे कालं कृत्वा द्वितीयवार-
मपि द्वितीयायां पृथिव्यामुत्कृष्टतस्त्रिसागरोपमस्थितिकेषु नैरयिकेषूपत्पन्ना । ततो
द्वितीयायाः पृथिव्याः नि मृत्यु द्वितीयवारमपि सरीसृपेपूतपद्यते, तत्रापि पूर्वम्
कालं कृत्वा प्रथमाया पृथिव्या रत्नप्रभायामुत्कृष्टत एरुमागरोपमस्थितिकेषु नैर-
यिकेषूपत्पन्ना, ततो निः मृत्यु सतिषु, ततो निः मृत्याऽसन्निपूतपद्यते, ततो निः

फिर यह पुनः तीसरे नरक में सात सागर की उत्कृष्ट स्थिति वाले नैर-
यिकों में नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हुई । यहा से निकल कर पुनः
यह पक्षियों के कुल में उत्पन्न हुई । यहा से मर कर फिर यह दूसरी
पृथिवी जो शर्करा प्रभा है और जिसके नरकावासों में तीन सागर की
उत्कृष्ट स्थिति है वहां नैरयिकों की पर्याय से उनकी स्थिति लेकर उ-
त्पन्न हुई । वहां से निकल कर सरीसृपों में यह दाह की व्युत्क्रान्ति से
मरी तो मर कर द्वितीय वार भी द्वितीय पृथिवी के नरकावासों में
तीन सागर की उत्कृष्ट स्थिति लेकर उत्पन्न हुई । द्वितीय पृथिवी से
निकल कर दुबारा यह सरीसृप में उत्पन्न हुई । वहा से अपने समय
पर मर कर रत्नप्रभा नामकी प्रथम पृथिवी में उत्कृष्ट एक सागर की
स्थिति वाले नरकावासों में नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हुई । वहां की
भवस्थिति समाप्त होने पर यह वहा से निकलकर सजी जीवों में वहां

जन्म पाभी त्याथी भरषु पाभीने इरी ते त्रील नरकमा सात सागरनी
उत्कृष्ट स्थितिवाजा नैरयिकेमा नैरयिकेना पर्यायथी उत्पन्न यथ त्याथी नीक
जीने इरी ते पक्षीज्जाना कुणमा उत्पन्न यथ त्याथी भरषु पाभीने इरी ते
षील पृथिवी जे शर्कराप्रभा छे अने जेना नरकावासोमा त्रषु सागरनी उत्कृष्ट
स्थिति छे त्या नैरयिकेना पर्यायथी तेदली ज स्थिति लधने जन्म पाभी
त्याथी नीकजीने सरीसृपेमा ते उत्पन्न यथ त्या शम्भुथी वी धाधने तथा दाहथी
पीडाधने भरषु पाभी अने त्पारपछी षीलवार पषु षील पृथिवीना नरका
वासोमा त्रषु सागर जेटली उत्कृष्ट स्थिति लधने उत्पन्न यथ षील पृथिवी
नीकजीने षीलवार ते सरीसृपेमा उत्पन्न यथ त्याथी यथा समय भरषु पाभीने
रत्नप्रभा नामनी प्रथम पृथिवीमा उत्कृष्ट जेक सागरनी स्थितिवाजा नरका
वासोमा नैरयिकेना पर्यायथी उत्पन्न यथ त्यानी भवस्थिति पूरी करीने ते
त्याथी नीकजीने सरी-सृपेमा, त्याथी पषु भरषु पाभीने

सृत्य द्वितीयगारमपि प्रथमाया पृथिव्या पल्योपमस्याऽसरयेयभागस्थितिकेषु नैरयिकेषु नैरयिकतयोत्पन्ना ' इति ।

' तओ उग्रद्विचा ' तत उद्वर्त्य=रत्नप्रभातो निः सृत्य यानि इमानि ' खर-
यरप्रिहाणाइ ' खरप्रिधानानि चर्मपक्ष्यादीनि भवन्ति तेषु, यावत् ज्योत्तर च
खलु यानीमानि खरवादरपृथिवी कायिकप्रिमानानि तेषु खरवादरपृथिवीकायिक-
तयाऽनेकशतसहस्रकृत्वः समुत्पन्ना ॥ सू०६ ॥

मूलम्—सा णं तओऽणंतरं उव्वद्विच्चा इहेव जंबूद्वीवे दीवे
भारहेवासे चंपाए नयरीए सागरदत्तसस सत्थवाहस्स भहाए
भारियाए कुच्चिसि दारियत्ताए पच्चायाया तएणं सा भदा
सत्थवाही णवणहं मासाणं० दारियं पयाया सुकुमालकोमलिय
गयतालुयसमाण, तीसे दारियाए निव्वत्तवारसाहियाए अम्मा-
पियरो इमं एयारुवं गोन्न गुणानिप्फन्न नामधेज्जं करेति—जम्हा
णं अम्हं एसा दारिया सुकुमाला गयतालुयसमाणा त होउणं
अम्हं इमीसे दारियाए नामधेज्जे सुकुमालिया, तएण तीसे
दारियाए अम्मापियरो नामधेज्जं करेति सूमालियत्ति, तएणं
सा सूमालिया दारिया पंचधाई परिग्गहिया तं जहा—खीरधाईए

से भी मर कर असजी जीवों में और फिर वहा से मर कर फिर
दुधारा भी प्रथम पृथिवी में १ एक पल्य के असख्यात वे भाग प्रमाण
स्थितिवाले नरकावासों में नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हुई । उस रत्न
प्रभा पृथिवी से निकल कर फिर यह जितने ये पक्षिभेद हैं—चर्म पक्षी
आदि हैं—उनमें और उनके बाद जो ये सर—वादर—पृथिवीकायादि भेद
हैं उनमें खरवादर पृथिवीकायिकरूपसे लाखों वार उत्पन्न हुई ॥सू०६॥

अने इरी त्याधी भरलु पाभीने णीलुवार पलु पडेली पृथिविमा १ ओक पदयना
अस ज्योत्तर्मा लाग प्रमाणु स्थितिवाणा नरकावासोमा नैरयिकना पर्यायधी
जम्भ पाभी ते रत्नप्रला पृथिवधी नीकणीने इरी ते नेटला पक्षी लेहे छे-
चर्म पक्षी वगेरे छे—तेओमा अने त्यारपधी भर—आदर पृथिवीकाय वगेरे लेह
छे तेओमा भर—आदर पृथिवीकायिकना इपमा लाणो वार जम्भ पाभी सू० ६

‘पयाया’ प्रजाता=प्रजनितवती, किं भूता दारिकामित्याह—‘सुकुमालकोमलिय’ सुकुमारकोमलाम्—अतिमृदुलाम् गजतालुरुसमाना अङ्गस्यातिकोमलतया गजतालुतुल्यामित्यर्थः । तस्या दारिकाया ‘निवृत्तचारसाहियाए’ निवृत्तद्वादशाहिकायाः सम्प्राप्तद्वादशदिवसाया. अम्मापितरो=मातापितरो इदमेतद्रूप ‘गोणं’ गौणं=गुणेभ्य आगत=प्राप्त गुणनिष्पन्न=गुणबोधकं नामधेय कुरुतः कर्तृविचारयतः तथाहि यस्मात् खलु अस्माकमेवा दारिका सुकुमारा गजतालुरुसमाना जाता, तद्=तस्मात् भवतु खलु अस्माकमस्या दारिकाया नामधेयं ‘सुकुमारिका’ इति । ततः विचारकरणानन्तर खलु तस्या दारिकाया अम्मापितरो नामधेय कुरुतः ‘सुकुमारिका’ इति । तत खलु सा सुकुमारिका दारिका पञ्चधात्रीपरिगृहीता—पञ्चसंख्यकाभिर्धात्रीभिः=उपमावृभिः सुरक्षिता जाता, तद् यथा=तासा पञ्चानां धानीणा नामानि दर्शयति ‘खीरधाईए जाव गिरकदर’ इति । खीरधात्र्या=स्तन्य-

वाहिके गर्भ के नौ मास तथा साढे सात दिन रात पूर्णरूप से व्यतीत हो चुके तब उसने पुत्रीको जन्म दिया । यह पुत्री अत्यन्त कोमल अग-बाली थी इसी लिये गजका तालु भाग जिस प्रकार मृदुल होता है यह वैसी ही कोमल थी । जब यह १२ घण्टे दिन की हो चुकी—तब इस के मातापिताने इसका ‘यथा नाम तथा गुण’ इस कहावतके अनुसार गुणों को लेकर नाम सस्कार करने का विचार किया । विचार करने के बाद उन्होंने इस खयाल से कि यह हमारी पुत्री अत्यन्त सुकुमार और गज तालु का के जैसी मृदुल है अतः इसका नाम सुकुमारिका रहे (तएण तीसे दारियाए अम्मा पियरो नामधेज्ज करेति सूमालियत्ति) उस कन्या का नाम सुकुमारिका रख दिया (तएण सा सुकुमारियदारिया

लद्रा सार्थवाहीना गर्भाना नव मास अने साढे सात दिवस रात पूरा थई चूक्या त्थारे तेण्णे पुत्रीने जन्म आये। आ पुत्री अतीव नेमजागी छती छाथीना ताणवाने लाग जेवे सुकोमल छाय छे, ते तेवीज कोमल छती ज्यारे ते भार दिवसनी थई गळ त्थारे तेना मातापिताअे जेवुं नाम तेवा शुश्रुवाणी अे कडेवत मुज्जथ शुण्णेना आधारे तेना नाम सस्कार करवाने विचार कुर्यो विचार कुर्यां णाह तेअेअे पोतानी पुत्रीनी सुकोमल दृष्टि समक्ष राणीने अेटवे क तेअेअे आ प्रमाळे विचारीने ते आ भारी पुत्री छाथीना ताणवा जेवी सुकोमल छे माटे अेनु नाम सुकुमारी राणीअे

(तएण तीसे दारियाए अम्मापियरो नामधेज्ज करेति सूमालियत्ति)
ते कन्यानु नाम सुकुमारी राण्यु

जात्र गिरिकंदरमालीणा इत्र चपकलया निव्याए निव्याघायंसि
जात्र परिवद्दइ, तएणं सा सूमालियादारिया उम्मुद्धवालभावा
जात्र रूवेण य जोवणणेण य लावणणेण य उत्रिकट्टा उत्रिकट्ट
सरीरा जाया यावि हांत्था ॥ सू० ७ ॥

टीका—'सा ण तओ' इत्यादि । सा गलु नागश्री, ततोऽनंतरम् उद्धृत्य
जम्बूद्वीपे दीपे भारते वर्षे चम्पाया नगर्यां सागरदत्तस्य सार्धसाहस्य भद्रया मायायाः
कुक्षौ 'पञ्चायाया' प्रत्यायाता गर्भसमागता । ततः खलु मा भद्रा सार्धसाही
नवसु मासेषु बहुमतिपूर्णेणु अर्द्राष्टमेषु रात्रिन्दिशेषु चपतिक्रान्तेषु ससु दारिकां

'सा ण तओऽणतर' इत्यादि ।

टीकार्थ—(सा ण तओऽणतर उचट्टिता) इसके बाद वह नागश्री खर
पृथ्वी कायिका से निकल कर (इहेव जम्बूद्वीपे दीपे भारते वासे चपाए
नयरीए सागरदत्तस्स सत्थवाहस्स भद्राए भारियाए कुच्छिसिदारियात्ताए
पञ्चायाया) इसी जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में स्थित भारतवर्ष नामके क्षेत्र
में वर्तमान चपानगरी मे सागरदत्त सेठ की धर्मपत्नी-भद्रा की कुक्षि में
पुत्रीरूप से अवतरी (तएण सा भद्रा सत्थवाही नवण्ह मासाण दारिय
पयासा सुकुमालकोमलिय गयतालुयसमाण तीसे दारियाए निव्वत्त
धारिसाहियाए अम्मापियरो इम एयाख्व गोन्नं गुणनिप्फन्न नाम
चेज्ज करेति, जम्हाण अम्ह एसा दारिया सुकुमाला गयतालुय समाणा
त होउण अम्ह इमीसे दारियाए नामधेज्जे सुकुमालिया) भद्रा सार्ध

'सा ण तओऽणतर उचट्टिता' इत्यादि—

टीकार्थ—(सा ण तओऽणतर उचट्टिता) त्पारपथी ते नागश्री षर पृथिविका
यिकथी नीकणीने (इहेव जम्बूद्वीपे दीपे भारते वासे चपाए नयरीए सागरद
त्तस्स सत्थवाहस्स भद्राए भारियाए कुच्छिसि दारियात्ताए पञ्चायाया)
ओ ७ ७ पूद्वीप नामना द्वीपमा आवेला भारतवर्ष नामना क्षेत्रमा विद्यमान
चपानगरीमा सागरदत्त सेठनी धर्मपत्नी भद्राना उदरमा पुत्री रूपमा अवतरी
(तएण सा भद्रा सत्थवाही नवण्ह मासाण० दारिय पयाया सुकुमालकोम
लिय गयतालुयसमाण तीसे दारियाए निव्वत्तधारिसाहियाए अम्मापियरो इम
एयाख्व गोन्नं गुणनिप्फन्न नामधेज्ज करेति, जम्हाण अम्ह एसा दारिया सुकु
माला गयतालुयसमाणा त होउण अम्ह इमीसे दारियाए

भवइ तो णं अहं सागरस्स दारगस्स सूमालियं दलयामि-
तएणं से जिणदत्ते सत्थवाहे सागरदत्तेणं सत्थवाहेणं एवं बुत्ते
समाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्तां सांगे-
रदारगं सदावेइ सदावित्ता एवं वयासी-एवं खलु पुत्ता । साग-
रदत्ते सत्थवाहे मम एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया ।
सूमालिया । दारिया मम एगा एगजाया इट्ठा त चेव तं जइ
ण सागरदारए मम घरजामाउए भवइ ता दलयोमि, तएणं
से सागरए दारए जिणदत्तेणं सत्थवाहेणं एवं बुत्ते समाणे
तुंसिणीए, तएण जिणदत्ते सत्थवाहे अन्नया कयाइं सोहणंसि
तिहिकरणदिवसणम्वत्तमुहुत्तसि विउले असंणपाणखाइमसा-
इमं उवक्खडावित्ता मित्तणाइ० आमतेइ जाव सम्माणित्तां
सागरं दारगं पहायं जाव सव्वालंकारविभूसियं करेइ, करित्तां
पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दुरूहावेइ, दुरूहावित्ता मित्तणाइ
जाव सपरिवुडे सत्थिइणीए साओ गिहाओ निग्गच्छइ, निग्ग-
च्छित्ता चंपानयंरि मज्झंमज्झेणं जेणेव सागरदत्तस्स गिहे तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीयाओ पच्चोरुहावेइ, पच्चोरुहा-
वित्ता सागरगं दारगं सागरदत्तस्स सत्थ० उवणेइ, तएणं सां-
गरदत्ते सत्थवाहे विपुल असंणपाणखाइमसाइम उवक्खडा-
वेइ उवक्खडावित्ता जाव सम्माणित्ता सागरगं दारगं सूमालियांए
दारियाए सद्धिं पट्टय दुरूहावेइ दुरूहावित्ता सेयापीएहि कल-
सेहिं मज्जावेइ मज्जावित्ता अग्गिहोम करावेइ करावित्ता सागरं
दारयं सूमालियाए दारियाए पाणिं गिण्हावेइ ॥ सू० ८ ॥

से ?, तएणं ते कोडुवियपुरिसा जिणदत्तेण सत्थवाहेणं एवं
 बुत्ता समाणा हट्ट करयल जाव एवं वयासी-एस णं देवाणु-
 प्पिया ! सागरदत्तस्स सत्थवाहस्स धया भदाए अत्तया सूमा-
 ल्लिया नाम दारिया सुकुमालपाणिपाया जाव उक्किट्टसरीरा
 त्पणं से जिणदत्ते सत्थवाहे तेसिं कोडुवियाणं अंतिए एयमढं
 सोचा जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता णहाए
 जाव मित्तनाइ परिवुडे चंपाए० जेणेव सागरदत्तस्स गिहे तेणेव
 उवागच्छइ, तएणं सागरदत्ते सत्थवाहे जिणदत्तं सत्थवाहं
 एज्जमाणं पासइ पासित्ता आसणाओ अब्भुट्टेइ अब्भु-
 ट्ठित्ता आसणेणं उवणिमतेइ उवणिमंतिता आसत्थं वीसत्थं
 सुहासणवरगयं एवं वयासी-भण देवाणुप्पिया ! किमाग-
 म्मणपओयण ?, तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे सागरदत्तं
 सत्थवाहं एवं वयासी-एव खल्ल अह देवाणुप्पिया ! तव धूयं
 भदाए अत्तियं सूमालिय सागरस्स भारियत्ताए वरेमि, जइ णं
 जाणाह देवाणुप्पिया ! जुत्तं वा पत्तं वा सलाहणिज्जं वा सरिसो
 वा संजोगो दिज्जउण सूमालिया सागरस्स, तएणं देवा-
 णुप्पिया किं दलयामो सुक्क सुमालियाए?, तएण से सागर-
 दत्ते त जिणदत्त एव वयासी-एव खल्ल देवाणुप्पिया सूमालिया
 दारिया मम एगा एगजाया इट्ठा जाव किमग पुण पासणयाए
 त नो खल्ल अह इच्छामि सूमालियाए दारियाए खणमवि
 विप्पओगं तजइण देवाणुप्पिया ! सागरदारए मम घरजामाउए

भवइ तो णं अहं सागरस्स दारगस्स सूमालियं दलयामि-
तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे सागरदत्तेणं सत्थवाहेणं एवं बुत्ते
समाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्तो सांग-
रदारगं सदावेइ सदावित्ता एवं वयासी-एवं खलु पुत्ता । साग-
रदत्ते सत्थवाहे मम एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया ।
सूमालिया । दारिया मम एगा एगजाया इट्ठा तं चेव त जइ
णं सागरदारए मम घरजामाउए भवइ ता दलयामि, तएणं
से सागरए दारए जिणदत्तेणं सत्थवाहेणं एवं बुत्ते समाणे
तुंसिणीए, तएण जिणदत्ते सत्थवाहे अन्नया कयाइं सोहणंसि
तिहिकरणदिवसणक्खत्तमुहुत्तसि विउले असणंपाणखाइमसा-
इम उवक्खडावित्ता मित्तणाइ० आमंतेइ जाव सम्माणित्ता
सागरं दारगं पहायं जाव सव्वालंकारविभूसिय करेइ, करित्तीं
पुरिससहससवाहिणिं सीयं दुरूहावेइ, दुरूहावित्ता मित्तणाइ
जाव सपरिवुडे सन्विड्डीए साओ गिहाओ निग्गच्छइ, निग्ग-
च्छित्ता चंपानयरि मज्झमज्झेणं जेणेव सागरदत्तस्स गिहे तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीयाओ पच्चोरुहावेइ, पच्चोरुहा-
वित्ता सागरगं दारगं सागरदत्तस्स सत्थ० उवणेइ, तएणं सां-
गरदत्ते सत्थवाहे विपुलं असणपाणखाइमसाइम उवक्खडा-
वेइ उवक्खडावित्ता जाव सम्माणेत्ता सागरगं दारगं सूमालियाए
दारियाए सद्धिं पट्टय दुरूहावेइ दुरूहावित्ता सेयापीएहिं कल-
सेहिं मज्जावेइ मज्जावित्ता अग्गिहोम करावेइ करावित्ता सागरं
दारयं सूमालियाए दारियाए पाणिं गिणहावेइ ॥ सू० ८ ॥

टीका—'तस्य ण चपाण' इत्यादि । तत्र मनु नम्यायां नगरीा त्रिनदत्ते नाम सार्थवाह आदयो यावद् अपरिभूत भागीन्, तस्य त्रिनदत्तस्य भद्रा भार्या आसीत्-या किम्भूता-सुकुमारा इष्टा यावद् मानुषमात्र 'पञ्चणुन्भवमाणा' मत्पनुभवन्ती विहरति । तस्य मनु त्रिनदत्तस्य पुत्रो भद्राया भार्याया आत्मजः= अत्रजातः, सागरो नाम दारकः आसीत् स किम्भूतः-सुकुमारपाणिपादः, सर्व-लक्षणसम्पन्न' यावत्-सुरूपः । तत त्वन्तु म त्रिनदत्तसार्थवाहः अपदा कदाचित्

'तस्य ण चपाण' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तस्य णं चपाण नगरीए जिणदत्ते नाम सत्यवाहे अड्डे, तस्स णजिणदत्तस्स भद्रा भारिया, सुमाला इट्ठा जाव माणुस्सए काम भोए पञ्चणुन्भवमाणा विहरह) उक्त चपा नगरीमें त्रिनदत्त नामको एक सार्थवाह रहता था जो धनधान्य आदि से विशेष परिपूर्ण एव जन मान्य था । इसकी धर्मपत्नी का नाम भद्रा था । यह सर्वाङ्ग सुन्दरी थी । समस्त अग और उपाग इसके घड़े ही सुकुमार थे । यह अपने पतिको अत्यन्त इष्ट प्रिय थी । पति के साथ मनुष्य भव सम्बन्धी काम भोगों को भांगती हुई यह आनन्द के साथ अपने समय व्यतीत किया करती थी (तस्स ण जिणदत्तस्स पुत्ते भद्राए भारियाए अत्तए सागरए नाम दारए सुकुमाले जाव सुरूवे) भद्रा भार्या से उत्पन्न हुआ त्रिनदत्त सार्थवाहके एक पुत्र था-जिसका नाम सागर था । यह सुकुमाल यावत्

तस्य ण चपाण इत्यादि—

टीकार्थ—(तस्य णं चपाण नगरीए जिणदत्ते नाम सत्यवाहे अड्डे तस्स ण जिण दत्तस्स भद्रा भारिया, सुमाला इट्ठा जाव माणुस्सए कामभोए पञ्चणुन्भवमाणा विहरह) ते च पा नगरीमा लुनदत्त नामे अेक सार्थवाह रहेते। इते। ते धन धान्य वगेरेथी सविशेष सपन्न तेमन् सभाज्जमा पूछते। माणुस इते। तेनी धर्मपत्नीनु नाम लद्रा इत्तु, ते सर्वांग सुदरी इती तेना यथा अगे अने उपागे। णहुं अ सुकैमण इता, ते पोताना पतिने णहुं अ बडावी इती पतिनी साथे मनुष्य लवना कामलोगे भोगवती ते सुभेथी पोताने। वधत पसार करी रही इती

(तस्स णं जिणदत्तस्स पुत्ते भद्राए भारियाए अत्तए सागरए नाम दारए सुकुमाले जाव सुरूवे)

लद्रालार्याथी उत्पन्न थयेले। लद्रालार्याने अेक पुत्र इते। तेनु नाम सागर इत्तु। ते सुकुमार यावत् सुदर रूपवान इते।

स्वकाद् गृहात् प्रतिनिष्कामति=निर्गच्छति, प्रतिनिष्क्रम्य, सागरदत्तस्य गृहस्य
 'अदूरसामन्ते' = नातिदूरे नातिसमीपे 'वीईवयई' व्यतिप्रजति=गच्छति,
 'इमचण' अस्मिन् समये सुकुमारिका दारिका स्नाता=कृतस्नाना 'चेडियासघ-
 परिबुडा' चेडिकासघपरिवृता=दासीसमूहमध्यगता, उपरि आकाशतलके-प्रासाद-
 स्याद्यालिकोपरि 'कणगतेदूसकेण' कनकतेदुससयेन 'तेदुसय' इतिदेशीशब्दः,
 सुवर्णमयकन्दुकेन 'कीलमाणी २' विहरति, ततः खलु स जिनदत्तः सार्थवाहः
 सुकुमारिका दारिका पश्यति, दृष्ट्वा सुकुमारिकाया दारिकाया रूपे च यौवने च
 लावण्ये च 'जाय विम्हए' यावत् विस्मितः=आश्चर्ययुक्तः सन् कौडुम्बिकपुरूपान्=
 आज्ञाकारिण पुष्पान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-एषा खलु हे देवानु-
 मिया ! कस्य दारिका किं वा नामधेय 'से' इति तस्या ? , ततः खलु ते

अच्छे रूपचाला धा । (तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे अन्नया कयाई साओ
 गिहाओ पडिनिक्खमड पडिनिक्खमित्ता सागरदत्तस्स गिहस्स अदूर
 सामतेण वीईवयई) एक दिन जिनदत्त सार्थवाह अपने घरसे निकला
 और निकलकर सागरदत्तके घरके पाम से हो कर जा रहा था । (इम
 च ण सूमालिया दारिया ण्हाया चेडियासघपरिवुडा उप्पिआगा
 सतलगसि कणगतेदूसएणं कीलमाणी २ विहरइ , इसी समय सुकु-
 मारिका दारिका नहा धो कर अपने प्रासाद की छत पर दासी समूहके
 साथ २ सुवर्णमय कडुक (गेंद) से खेल रही थी । (तएण से जिण
 दत्ते सत्थवाहे सूमालिय दारिय पासइ पासित्ता सूमालियाण दारियाए
 रूवेय ३ जाय विम्हए कोडुविय पुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी
 एसण देवाणुप्पिया ! कस्स दारिया किं वा-नामधेज्ज से ? तएण ते

तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे अन्नया कयाई साओ गिहाओ पडिनिक्खमड
 पडिनिक्खमित्ता सागरदत्तस्स गिहस्स अदूरसामतेण वीईवयई)

એક દિવસે જીનદત્ત સાર્થવાહ પોતાને ઘરથી બહાર નીકળ્યો અને
 નીકળીને સાગરદત્તના ઘરની પાસે થઈને બંધ રહ્યો હતો।

(इम च ण सूमालिया दारिया ण्हाया चेडियासघपरिवुडा उप्पि आगास-
 तलगसि कणगतेदूसएणं कीलमाणी २ विहरइ)

ते वभते सुकुमारिका दारिका स्नान करीने पोताना भलेलनी अगाशी
 उपर दासी समूहनी साथे सुवर्णमय कडुक (गेंद) रभती હતી

(तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे सूमालिय दारिय पासइ पासित्ता सूमालियाए
 दारियाए रूवेय ३ जाय विम्हए कोडुविय पुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी
 एसण देवाणुप्पिया ! कस्स दारिया किं वा नामधेज्ज से ? तएण ते कोडुविय

टीका—'तत्थ ण चंपाण' इत्यादि । तत्र गच्छु चम्पायां नगरी जिनदत्तो नाम सार्थवाह आद्यो यावद् अपरिभूत आसीत्, तस्य जिनदत्तस्य भद्रा भार्या आसीत्-सा किम्भूता-बृहमारा इष्टा यावद् मानुषयान् 'पञ्चणुन्भवमाणा' प्रत्यनुभवन्ती विहरति । तस्य गच्छु जिनदत्तस्य पुत्रो भद्राया भार्याया आत्मजः= अद्भुतः, सागरो नाम दारकः आसीत् स किम्भूतः-बृहमारपाणिपादः, सर्वे लक्ष्मणसम्पन्नः यावत्-सुखः । तत गच्छु ग जिनदत्तसार्थवाहः अन्यदा कदाचित्

'तत्थ णं चंपाण' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तत्थ ण चंपाण नगरीण जिनदत्ते नाम सत्यवाहे अद्भुते, तस्स णजिनदत्तस्स भद्रा भारिया, सुमाला इष्टा जाव माणुस्सण कामभोण पञ्चणुन्भवमाणा विहरइ) उस चपा नगरीमें जिनदत्त नामको एक सार्थवाह रहता था जो धनधान्य आदि से विशेष परिपूर्ण एव जनमान्य था । इसकी धर्मपत्नी का नाम भद्रा था । यह सर्वाङ्ग सुन्दरी थी । समस्त अग और उपाग इसके घड़े ही सुकुमार थे । यह अपने पतिको अत्यन्त इष्ट प्रिय थी । पति के साथ मनुष्य भव सम्बन्धी काम भोगों को भांगती हुई यह आनन्द के साथ अपने समय व्यतीत किया करती थी (तस्स णं जिनदत्तस्स पुत्ते भद्राए भारियाण अत्तए सागरए नाम दारए सुकुमाले जाव सुखे) भद्रा भार्या से उत्पन्न हुआ जिनदत्त सार्थवाहके एक पुत्र था-जिसका नाम सागर था । यह सुकुमाल यावत्

तत्थण चंपाण इत्यादि—

टीकार्थ—(तत्थण चंपाण नगरीण जिनदत्ते नाम सत्यवाहे अद्भुते तस्सण जिनदत्तस्स भद्रा भारिया, सुमाला इष्टा जाव माणुस्सण कामभोण पञ्चणुन्भवमाणा विहरइ) ते च पा नगरीमा जनदत्त नामे अेक सार्थवाह रहते। हते। ते धनधान्य वगैरथी सविशेष संपन्न तेभञ्ज समाञ्जमा पूछते। भाषुस हते। तेनी धर्मपत्नीनु नाम भद्रा हतुं, ते सर्वो ग सुन्दरी हती तेना यथा अगे अने उपागे। अहुञ्ज सुकामण हता, ते पोताना पतिने अहुञ्ज वहादी हती पतिनी साथे मनुष्य लवना कामलोगे लोगवती ते सुभेथी पोताने। वधत पसार करी रही हती

(तस्सणं जिनदत्तस्स पुत्ते भद्राए भारियाए अत्तए सागरए नाम दारए सुकुमाले जाव सुखे)

भद्राभार्याथी उत्पन्न थयेले। भद्राभार्याने अेक पुत्र हते। तेनु नाम सागर हतुं ते सुकुमार यावत् सुन्दर इपवान हते।

ब्राह्मस्तेषा कौटुम्बिकानामन्तिके एतमर्थं श्रुत्वा यत्रैव स्वकं गृहं तत्रैवोपागच्छति,
 उपागत्य स्नातो यावद् मित्रजातिपरिवृतश्रम्पाया नगर्या मध्ये भूत्वा यत्रैव सागर-
 दत्तस्य गृहं तत्रैवोपागच्छति, ततस्तदनन्तरम् सागरदत्तः सार्थवाहं खलु जिनदत्त
 सार्थवाहम् एजमानम्=आगच्छन्त पश्यन्ति, दृष्ट्वाऽऽसनादुत्तिष्ठति, उत्थाय 'आम
 णेणं उवणिमंतेह' आसनेनोपनिमन्त्रयति=आसन उपवेशनार्थं प्रार्थयति, उपनि
 मन्त्र्य, आसनोपर्युपवेशनानन्तरम्, आस्यस्थ=मार्गश्रमापगमात् श्रान्तिरहित, विस्व-
 स्थ=विशेषतो विश्रान्तिमुपगतं, सुखासनवरगत=मुखेन विशिष्टासनोपविष्ट, तं

अतिए एयमद्व सोच्चा जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 ण्हाए, जाव मित्तणाइपरिवुडे चंपाए० जेणेव सागरदत्तस्स गिहे तेणेव
 उवागच्छइ, तएणं सागरदत्ते सत्थवाहे जिणदत्त सत्थवाह एज्जमाणं
 पासइ, पासित्ता आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता आसणेणं उवणि-
 मंतेइ उवणिमत्तित्ता आसत्थ सुहासणवरगय एव वयासी) जिनदत्त
 सार्थवाहने उन कौटुम्बिक पुरुषो के मुख से जब इस अर्थ को सुना तो
 सुनकर वह पहिले अपने घर गया—वहाँ जा कर उसने स्नान किया ।
 यावत् फिर वह अपने मित्र, जाति आदि परिजनो के साथ चपानगरी
 के बीच से हो कर जहाँ सागरदत्त का घर था वहा पहुँचा—सागरदत्तने
 ज्यों ही अपने घर पर आते हुए जिनदत्त सार्थवाहको देखा - तो वह
 जल्दीसे अपने स्थान से उठा—और उठकर " आप यहा बैठिये " इस
 प्रकार उनसे कहने लगा जब वे यथोचित स्थान पर बैठ चुके और आस्व

(तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे तेसिं कौटुम्बिक वियाण अतिए एयमद्व सोच्चा-
 जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ण्हाए, जाव मित्तणाइ परिवुडे
 चंपाए० जेणेव सागरदत्तस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ, तएण सागरदत्ते सत्थवाहे,
 जिणदत्त सत्थवाह एज्जमाण पासइ, पासित्ता आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता
 आसणेण उवणिमंतेइ उवणिमत्तित्ता आसत्थ गीसत्थ सुहासणवरगय एव वयासी)

अनदत्त सार्थवाहे ते कौटुम्बिक पुरुषोना सुभधी आ वात
 सासणीने सौ पडेइ। तेज्जा पोताने घेर गया त्या पडेइ। तेमणे
 स्नानं कर्तुं यावत् पथी ते पोताना मित्र, जाति वगेरे पग्गिनोनी साथे
 यथा नगरीनी वन्थे थधने न्या सागरदत्ततु घरं उतुं त्या पडेइ। सागर
 दत्त अनदत्त सार्थवाहने पोताने घेर आवता जेधने त्वराया ते पोताना
 आसन उपरथी जेजे थध गये अने जेजे थधने " तमे अर्द्धा जेसे "

કોટુમ્બિકપુરુષા જિનદત્તન સાર્થવાહેનેયુક્તા સત્તો દ્વણ્ણાઃ-અભિમુદિતાઃ ' કર-
યલ જાવ ' કરત્ત્વપરિશ્ચીતં શિર આચરત્ દ્વનમ્ મસ્તકેડુર્લિ કૃત્વા પત્રમથા;
દ્રિપુઃ-હે દેવાનુપ્રિયા ! एषા સાગરદત્તમ્પ માર્થવાહસ્ય ' ધૂયા ' દુહિતા-પુત્રી,
મદ્રાયા આત્મજા સુકુમારિરા નામ દારિકા સુકુમારપાણિપાદા યાવદ્-રૂપેણ ચ
યૌવનેન ચ લાવણ્યેન ચ ઉત્કૃષ્ટા ઉત્કૃષ્ટ સરીરા । તતઃ સ્વલુ સા જિનદત્તઃ સાર્થ

કોટુવિય પુરિમા જિનદત્તેણ સત્યવાહેણં एव યુત્તાસમાણા હૃદ્ધ કરયલ
જાવ एव વયાસી-एसण देवाणुपिया । सागरदत्तम्म मत्थवाहस्स धूया
मद्दाए अत्तिया सुमालिया नाम दारिया सुकूमालपाणिपाया जाव उक्कि
सरीरा) ऐलती हुई उस कुमारिका दारिका को जिनदत्त मार्यवाह ने
देखा-देखकर वे सुकुमारिका दारिका के रूप यौवन एव लावण्य में
आश्चर्यचकित हो गये-और आश्चर्य से युक्त होकर उन्होंने कौटुम्बिक
पुरुषों को बुलाया-बुलाकर वे उनसे इस प्रकार कहने लगे-हे देवानु-
प्रियो ! यह कन्या किमकी है इसका नाम क्या है । जिनदत्त सार्यवाह
के द्वारा पूछे गये उन कौटुम्बिक पुरुषों ने हर्षित हो कर और अपने
दोनों हाथो जोड़ कर बड़े विनय के साथ उनसे ऐसा कहा-हे देवानु-
प्रिय ! यह पुत्री सागरदत्त सार्यवाहकी है । मद्रा भार्या की कुक्षि से
यह जन्मी है । इसका नाम सुकुमारिका है । इसके कर चरण बड़े ही
सुकुमार हैं यावत् रूप, यौवन एव लावण्यसे यह सर्वोत्कृष्ट है और
सर्वाङ्ग सुन्दरी है । (तएणं से जिनदत्ते सत्यवाहे तेसिं कौटुम्बियाणं

પુરિપા જિનદત્તેણ સત્યવાહેણં एव યુત્તા સમાણા હૃદ્ધ કરયલ જાવ एव વયાસી-
एसण देवाणुपिया । सागरदत्तस्स मत्थवाहस्स धूया मद्दाए अत्तिया सुमालिया
नाम दारिया सुकूमालपाणिपाया जाव, उक्किहसरीरा)

શ્રમતી સુકુમાર દારિકાને જનદત્ત સાર્યવાહે ભેઠ ભેઠને તેઓ સુકુમાર
દારિકાના રૂપ, યૌવન અને લાવણ્યમા આશ્ચર્ય ચકિત થઇ ગયાં અને ત્યાર
પછી તેમણે કૌટુમ્બિક પુરુષોને બોલાવ્યા અને બોલાવીને તે તેમને આ
પ્રમાણે કહેવા લાગ્યા કે હે દેવાનુપ્રિયો ! આ કન્યા કેની છે ? એતુ નામ શું
છે ? જનદત્ત સાર્યવાહ વડે એવી રીતે પૂછાએલા તે કૌટુમ્બિક પુરુષોએ હર્ષિત
થઇને પોતાના બને હાથ ભેડીને બહુજ વિનયની સાથે તેમને આ પ્રમાણે
કહ્યું કે હે દેવાનુપ્રિય ! સાર્યવાહ સાગરદત્તની આ પુત્રી છે ભદ્રાભાર્યાના ઉદરથી
આને જન્મ થયો છે સુકુમારિકા આનુ નામ છે એના હાથપગ ખૂબ જ સુંદર
મળ યાવત્ રૂપ, યૌવન અને લાવણ્યથી આ સર્વો ઉત્કૃષ્ટ છે સુહરી

पात्र = 'कन्या योग्योऽय मत्पुत्रः सागर' इति, 'सलाहणिज्जं वा' श्लाघनीयं = प्रशसनीय या 'सरिसो वा सजोगो' सदृशो वा संयोगः-अय कन्यावरयो वैवाहिकः सम्बन्धः कुलेन रूपेण गुणेन वा तुल्य इति, 'तो' तर्हि 'दिज्जउ' ददातु भवान् खलु सुकुमारिका दारिकां सागराय=मत्पुत्रायेतिभावः । ततः खलु हे देवानुप्रिय ! ब्रूहि-किं दत्त-किं दद्यां, शुल्क=संमानार्थं द्रव्य सुकुमारिकाया दारिकायाः ? ततः खलु स सागरदत्तः सार्थंवाइस्त जिनदत्तमेवमवादीत्-एव खलु हे देवानुप्रिय ! सुकुमारिका दारिका ममैका एकजाता=एकैवोत्पन्ना, तथा-इष्टा-अनुकूला, यावत्-कान्ता=ईप्सिता, प्रिया=प्रीतिपात्रा, मनोज्ञा=मनोगता तथा-

कन्या के योग्य है यह सवन्ध प्रशसनीय है, कन्या और वर का यह वैवाहिक सवन्ध कुल रूप और गुणों के अनुरूप है तो आप अपनी पुत्री सुकुमारिका को मेरे पुत्र सागर के लिये प्रदान कर दीजिये-(तएण देवाणुप्पिया ! किं दल्ल्यामो सुक्क सुमालियाण ?) हे देवानुप्रिय ! साथ में यह भी कह दीजिये कि सुकुमारिका दारिका के समानार्थ हम क्या द्रव्य देवें (तएण से सागरदत्ते त जिणदत्त एव वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया ! सुमालिया दारिया मम एगा, एगजाया ईद्ढा जाव किमगपुण पासणयाए त नो खलु अह इच्छामि, सुमालियाए दारियाए खणमवि पिप्पओग त जइण देवाणुप्पिया ! सागरदारण मम धरजामाउए भवइ, तो ण अह सागरस्स सुमालिय दल्ल्यामि) सागरदत्तए ने जिनदत्त से तब इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय ! यह सुकुमारिका पुत्री मेरे यहा एक ही लड़की है और यह एक ही उत्पन्न हुई

छे, आ सणध सारे छे, कन्या तेमज वरने। आ लण सणध कुण इप अने शुद्धेने अनुइप छे तो तमे तभारी पुत्री सुकुमारिकाने भारा पुत्र सागरने भाटे आपो (तएण देवाणुप्पिया ! किं दल्ल्यामो सुक्क सुमालियाए ?) हे देवानुप्रिय ! साथे साथे ओ पणु अमने जइयावे के सुकुमारी दारिकाना समानार्थ अमे शु द्रव्य इपमा आपीअे ?

(तएण से सागरदत्ते त जिणदत्त एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ! सुमालिया दारिया मम एगा एग जाया इद्ढा जाव किमगपुण पासणयाए त नो खलु अह इच्छामि सुमालियाए दारियाए खणमवि पिप्पओग त जइण देवाणुप्पिया ! सागरदारण मम धरजामाउए भवइ, तो ण अह सागरस्स दारगस्स सुमालिय दल्ल्यामि) त्तारे सागरदत्ते लनदत्तने आ प्रभावे कहु के हे देवानुप्रिय ! आ सुकुमारिका दारिका भारे ओकनी ओक पुत्री छे अने आ ओक ज वरनी छे

जिनदत्त सार्धसाहमेव=रक्ष्यमाणप्रकारेणायादीत्-हे देवानुप्रिय ! भण=कथय, किमागमनप्रयोजनम्=कस्मै प्रयोजनाय समागतो भवान् ? ततः गच्छ स जिनदत्तः सार्धं वाह सागरदत्त सार्धसाहमेव=रक्ष्यमाणप्रकारेणायादीत्-एव गच्छ अह हे देवानुप्रिय ! तत्र दृष्टितर=पुत्री, भद्राया भात्मनां सुकृमारिणां=सुकृमारिकानाम्नी सागरस्य=सागरनामकस्य मत्पुत्रस्य भार्यात्वेन 'वरेमि' वृणोमि=यान्ग्रामि, यदि खलु त्व जानीहि हे देवानुप्रिय ! 'युक्त वा' युक्त वा=योग्य वा-'एतत् कार्यं समुचितं भवति' ति 'पत्त वा' पत्त वा=एतत् कार्यं कुलमर्यादाप्रनुप्राप्त वा,

स्यविश्वस्थ पत्त युक्ते-तत्र विशिष्ट आसन पर शातिके साध बैठे हुए उन जिनदत्त सार्धसाह से उम्ने इस प्रकार पूछा ।-(भण देवानुप्रिया ! किमागमणप्रयोजनम्) कहिये देवानुप्रिय ! यहा पधारने का आपका क्या प्रयोजन है ? किस प्रयोजन से आप यहा आये हैं-कहिये-(तएण से जिणदत्तसत्थवाहे सागरदत्त सत्थवाह एव वयासी-एव खलु अह देवानुप्रिया ! तव धूय भद्राए अतिय सूमालिय सागरस्स भारियत्ताए वरेमि जइण जाणाह देवानुप्रिया ! युक्त वा पत्त वा सलाहणिज्ज वा सरिसो वा सजोगो दिज्जउण सूमालिया सागरस्स) जिनदत्त सार्धवा हने सागरदत्त सार्धसाहसे तत्र इस प्रकार कहा हे देवानुप्रिय ! मैं आपकी सुभद्रा की कुक्षिसे उत्पन्न हुई सूमालिका पुत्री को अपने पुत्र सागर की भार्या बनाना चाहता हूँ । यदि आप इसे स्वीकार करे कि यह कार्य योग्य है-उचित है-कुल मर्यादा के अनुसार है अथवा मेरा पुत्र आपकी

आ रीते तेभने कडेवा लाओये न्यारे तेओ उचित स्थाने भेसी गया अने आस्वस्थ विश्वस्थ थरु थूक्या त्यारे विशिष्ट आसन उपर शातिपूर्वक बैठेवा ते अनदत्त सार्धवाहने तेणे आ प्रभाणे कहु-(भण देवानुप्रिया ! किमागमण प्रयोजनम्) हे देवानुप्रिय ! पतावे अही पधारवानी पाछण आपने शो उेतु छे ? क्या प्रयोजनथी आप अही आओया छे ?

(तएण से जिणदत्त सत्थवाहे सागरदत्त सत्थवाह एव वयासी-एव खलु अह देवानुप्रिया ! तव धूय भद्राए अतिय सूमालिय सागरस्स भारियत्ताए वरेमि जइण जाणाह देवानुप्रिया ! युक्त वा पत्त वा सलाहणिज्ज वा सरिसो वा सजोगो दिज्जउण सूमालिया सागरस्स)

अनदत्त सार्धवाहे सागरदत्त सार्धवाहने त्यारे आ प्रभाणे कहु के हे देवानुप्रिय ! हे तमारी सुभद्राना उदरथी न-भ पामेवी सुमालिका पुत्रीने मारा पुत्र सागरनी पत्नी बनववा छुंछु छु आप ने मारी भागणी उचित सम जाता छे, कुण-भयोडा योग्य तेभने मारे पुत्र तमारी माटे योग्य

पात्र = 'कन्या योग्योऽय मत्पुत्रः सागर' इति, 'सलाहणिज्जं वा' श्लाघनीयं = प्रशसनीयं वा 'सरिसो वा सजोगो' सदृशो वा संयोगः—अय कन्यावरयो वैवाहिकः सम्बन्धः कुलेन रूपेण गुणेन वा तुल्य इति, 'तो' तर्हि 'दिज्जउ' ददातु भवान् खलु सुकुमारिका दारिकां सागराय = मत्पुत्रायेतिभावः । ततः खलु हे देवानुप्रिय ! ब्रूहि—किं दत्त—किं दद्यां, शूलरू = समानार्थं द्रव्यं सुकुमारिकाया दारिकायाः ? ततः खलु स सागरदत्तः सार्यवाद्दत्तं जिनदत्तमेवमवादीत्—एव खलु हे देवानुप्रिय ! सुकुमारिका दारिका ममैका एकजाता = एकैवोत्पन्ना, तथा—इष्टा—अनुकूला, यावत्—कान्ता = ईप्सिता, प्रिया = प्रीतिपात्रा, मनोज्ञा = मनोगता तथा—

कन्या के योग्य है यह संबन्ध प्रशसनीय है, कन्या और घर का यह वैवाहिक संबन्ध कुल रूप और गुणों के अनुरूप है तो आप अपनी पुत्री सुकुमारिका को मेरे पुत्र सागर के लिये प्रदान कर दीजिये—(तएण देवाणुप्पिया ! किं दल्लयामो सुक्क सुमालियाए ?) हे देवानुप्रिय ! साथ में यह भी कह दीजिये कि सुकुमारिका दारिका के समानार्थं हम क्या द्रव्य दें (तएण से सागरदत्ते तं जिणदत्त एव वयासी—एव खलु देवाणुप्पिया ! सुमालिया दारिया मम एगा, एगजाया ईद्ढा जाव किमगपुण पासणयाए त नो खलु अह इच्छामि, सुमालियाए दारियाए खणमच्चि त्रिप्पओगं त जइणं देवाणुप्पिया ! सागरदारए मम धरजामाउए भवइ, तो ण अह सागरस्स सुमालिय दल्लयामि) सागरदत्तए ने जिनदत्त से तब इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय ! यह सुकुमारिका पुत्री मेरे यहा एक ही लड़की है और यह एक ही उत्पन्न हुई

छे, आ संबन्ध सारे छे, कन्या तेमए वरने। आ लग्न संबन्ध कुण इप अने शुद्धेने अनुइप छे तो तमे तभारी पुत्री सुकुमारिकाने भास पुत्र सागरने भाटे आये। (तएण देवाणुप्पिया ! किं दल्लयामो सुक्क सुमालियाए ?) हे देवानुप्रिय ! साथे साथे ओ पणु अमने जणुवावे के सुकुमारी दारिकाना समानार्थं अमे शु द्रव्य इपमा आपीअे ?

(तएण से सागरदत्ते त जिणदत्त एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ! सुमालिया दारिया मम एगा एग जाया इद्ढा जाव किमगपुण पासणयाए त नो खलु अह इच्छामि सुमालियाए दारियाए खणमच्चि त्रिप्पओगं त जइणं देवाणुप्पिया ! सागरदारए मम धरजामाउए भवइ, तो ण अह सागरस्स दारगस्स सुमालिय दल्लयामि) त्वादे सागरदत्ते लनदत्तने आ प्रभावे कहु के हे देवानुप्रिय ! आ सुकुमारिका दारिका भादे ओकनी ओक पुत्री छे अने आ ओकए जन्मी छे

मनोमा=मतसः स्थानभूता, किं पश्चात् उद्गमपुष्पप्रिय 'उद्गमपुष्प केनापि
 एषम्' इतिरत्न भरणरिपयत्वेन सा दर्शना, विमल । पुन-दर्शनविषयतया, तत्-
 तस्माद् नो खलु अहमिच्छामि सुकुमारिकाया दारिकायाः क्षणमपि विप्रयोग-
 वियोगम्, तत्=तस्माद् यदि खलु हे देवानुप्रिय । सागरदारगो मम 'घरजामा
 उप' गृहजामातृकाः=गृहवासीजामाता भवति 'तौण' तर्हि खलु अह सागररिप
 दारकाय सुकुमारिका ददामि । ततः खलु स जिनदत्तः सार्यगाढः सागरदत्तेन
 सार्यवाहेनैव मुक्त सन् यत्रैव स्वकं गृहं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सागरदारकं=
 स्वपुत्र शब्दयति, शब्दयित्वा परमशदीत्-एव खलु हे पुत्र । सागरदत्तः सार्य
 वाहो मम=मां प्रति, 'सम्बन्धसामान्ये पत्नी' एवं=अध्ययणप्रकारेण अवादीत्-
 एव खलु हे देवानुप्रिय । सुकुमारिका दारिका ममैका एव जाता इष्टा 'त चेव'

है । यह मेरे लिये ईष्ट याचतु मनोम है-कान्त है, प्रिय है और मनोज्ञ
 है । अनुकूल होने से इष्ट, ईप्सित होने से कान्त प्रीतिपात्र होने से
 प्रिय मनको रुचने वाली होने से मनोज्ञ एव मन का स्थान भूत होने
 से मनोज्ञ है । ज्यादा क्या कहूँ यह तो हमें उद्वर पुष्प के समान
 दर्शन दुर्लभ थी-सुनने की तो बात ही क्या । अतः मैं इसे देना नहीं
 चाहता हूँ । कारण इस सुकुमारिका दारिका के बिना मैं एक क्षण भी
 नहीं रह सकता हूँ इसलिए हे देवानुप्रिय । सागर यदि घरजमाई बन
 कर रहना चाहें तो मैं उन्हें यह अपनी सुकुमारिका पुत्री दे सकता हूँ ।
 (तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे सागरदत्तेण सत्थवाहेण एव बुत्ते समाणे
 जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सागरदारगं सहावेइ,
 सहावित्ता एव वयासी-एव खलु पुत्ता । सागरदत्ते सत्थवाहे मम एव

आ भने छष्ट यावत् मनोम छे-अटले डे कात छे, प्रिय छे, अने मनोम छे
 अनुकूल होवा अहल छष्ट, छप्सित होवाथी कात, प्रीतिपात्र होवा अहल प्रिय
 अने मनने अगे अथी होवाथी मनोज्ञ तथा मनने आश्रय होवाथी मनोम
 छे वधारे शु कहु । आ तो अभने उद्वर पुष्पनी नेम दर्शन-दुर्लभ इती
 साक्षणवानी तो बात अ शी करवी । अथी आने हु आपवा छिछतो नथी
 करेछु डे अना वगर हु क्षणवार पणु रहीं शकतो नथी अटला भाटे डे देवा
 नुप्रिय । सागर ने घर अभाई थधने भारी पासे रहेवा छिछतो होय तो हु
 आ भारी सुकुमारिका पुत्री तेभने आपी शकु तेम छु

(तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे सागरदत्ते णं सत्थवाहे ण एव बुत्ते समाणे
 जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सागरदारगं सहावेइ, सहावित्ता
 एव वयासी-एव खलु पुत्ता । सागरदत्ते सत्थवाहे मम

तदेव=पूर्वोक्तवर्णनमेवात्रोच्य यावत्-तस्माद् नो खल्वहमिच्छामि सुकुमारिकाया दारिकायाः क्षणमपि विप्रयोग, तत्=तस्माद् यदि खलु सागरदारको मम 'घर-जामाउए' गृहजामाउकाः=गृहवासी जामाताभवति, तर्हि ददामि । ततः खलु त सागरको दारको जिनदत्तेन तार्थवाहेनैवमुक्तः तन् तूष्णीकः=मौनावलम्बी सन् संतिष्ठते ।

वयासी-एव खलु देवाणुपिया । सुमालिया दारिया मम एगा एगजाया इहा त चेव जइण सागरदारण मम घरजमाउए भवइ ता दलयामि) इस प्रकार सागरदत्त सार्थवहके कहे जाने पर जिनदत्त सार्थवाह जहा अपना घर था वहाँ आया-वहाँ आकर उसने अपने सागर पुत्र को बुलाया । बुला कर फिर उससे उसने ऐसा कहा-हे पुत्र-सागरदत्त सार्थवाह ने मुझसे ऐसा कहा है कि आपका पुत्र सागर यदि मेरे घर जमाई बन कर रहना चाहें तो मैं अपनी सुकुमारिका उन्हें दे सकता हूँ । उनका घरजमाई बनाने का कारण यह है कि यह सुकुमारिका पुत्र पुत्री उसके एक ही पुत्री है-और एक ही उत्पन्न हुई हैं । यह उसे बहुत ही अधिक इष्ट यावत् मनोम है । इस तरह सागरदत्त का कहा हुआ समस्त कथन जिनदत्त ने अपने पुत्र सागर को सुना दिया । इसलिये वह उसका एक क्षण भी वियोग सहन नहीं कर सकता है । अतः वह

देवाणुपिया ! सुमालिया दारिया मम एगा एगजाया इहा त चेव जइण सागर-दारण मम घरजमाउए भवइ ता दलयामि)

आ रीने अनदत्त सार्थवाड तेमनी आ वात साबणीने ते अनदत्त सार्थवाड न्या पोतानु घर इतु त्या आव्या. त्या आवीने तेणे पोताना सागरपुत्रने गोलाव्ये गोलावीने तेणे तेने आ प्रभाळे कडु के डे पुत्र । सागरदत्त सार्थवाडे भने आ प्रभाळे कडु छे के तभारे पुत्र सागर ने भारे घर नभार्थ रडेवा कपूलतो डाय तो हु भारी पुत्री सुकुमारिका तेमने आपवा तयार छु तेओ तभने घर नभार्थ बनाववा अटला भाटे धन्छे छे के सुकु-मारिका दारिका तेमनी अकनी अक पुत्री छे ते तेमने अतीव धष्ट यावत् मनोम छे आ रीते सागरदत्ते ने कथ कडु इतु ते भधु तेमणे पोताना पुत्र सागर आगण रणू कर्तु अणे छेवटे कडु के अटला भाटे न ते अक क्षण पणु पोतानी पुत्रीने वियोग सही शकतो नथी तभने ते आ कारबुधी न घर नभार्थ बनाववा धन्छे छे

मनोमा=गतसः स्थानभूता, किं यद्वा उद्गमपुष्पमिव 'उद्गमपुष्पं केनापि
 एष्यं' इति यत् श्रवणमिषयत्वं सा दुर्भा, किमत्र ! पुन-दर्शनविषयतया, तत्-
 तस्माद् नो खलु अहमिच्छामि सुकुमारिकाया दारिकायाः क्षणमपि विप्रयोगं-
 वियोगम्, तत्=तस्माद् यदि खलु हे देवानुप्रिय ! सागरदारको मम 'घरजामा
 उपे' गृहजामावृकाः=गृहवासीजागता मयति 'शोण' तदि खलु अहं सागराय
 दारिकाय सुकुमारिका ददामि । ततः खलु स जिणदत्तः सार्थवाहः सागरदत्तेन
 सार्थवाहेनैव मुक्त सन् यत्रैव स्वक गृह तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सागरदारकं-
 स्वपुत्र शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-एव खलु हे पुत्र ! सागरदत्तः सार्थ-
 वाहो मम=मा मति, 'सम्यन्धसामान्ये पृष्ठी' एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्-
 एव खलु हे देवानुप्रिय ! सुकुमारिका दारिका ममेका एक जाता इष्टा 'त चेव'

हे । यह मेरे लिये ईष्ट यावत मनोम है-कान्त है, प्रिय है और मनोज
 है । अनुकूल होने से इष्ट, ईप्सित होने से कान्त प्रीतिपात्र होने से
 प्रिय मनको रुचने वाली होने से मनोज एव मन का स्थान भूत होने
 से मनोज है । ज्यादा क्या कहूँ यह तो हमें उद्गम पुष्प के समान
 दर्शन दुर्लभ थी-सुनने की तो बात ही क्या । अतः मैं इसे देना नहीं
 चाहता हूँ । कारण इस सुकुमारिका दारिका के बिना मैं एक क्षण भी
 नहीं रह सकता हूँ इसलिए हे देवानुप्रिय । सागर यदि घरजमाई बन
 कर रहना चाहे तो मैं उन्हें यह अपनी सुकुमारिका पुत्री दे सकता हूँ ।
 (तएण से जिणदत्ते सत्यवाहे सागरदत्तेण सत्यवाहेण एव वुत्ते समाणे
 जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सागरदारगं सदावेइ,
 सदावित्ता एव वयासी-एव खलु पुत्ता ! सागरदत्ते सत्यवाहे मम एव

आ भने छंष्ट यावत् मनोम छे-अटले के कात छे, प्रिय छे, अने मनोम छे
 अनुकूल होवा पहल छंष्ट, छिप्सित होवाथी कात, प्रीतिपात्र होवा पहल प्रिय
 अने मनने गमे अेवी होवाथी मनोज तथा मनने आश्रय होवाथी मनोम
 छे वधारे शु कहु ! आ तो अभने उद्गम पुष्पनी नेम दर्शन-दुर्लभ हुती
 साक्षणवानी तो वात न शी करवी । अेथी आने हु आपवा छिच्छतो नथी
 कारणे के अेना वगेरे हु क्षणवार पथु रंही शकतो नथी अेटला भाटे हे देवा
 नुप्रिय ! सागर ने घर न भाई थधने भारी पासै रहेवा छिच्छतो होय तो हु
 आ भारी सुकुमारिका पुत्री तेभने आपी शकु तेभ छु

(तएण से जिणदत्ते सत्यवाहे सागरदत्ते ण सत्यवाहे ण एव वुत्ते समाणे
 जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सागरदारगं सदावेइ, सदावित्ता
 एव वयासी-एव खलु पुत्ता ! सागरदत्ते सत्यवाहे मम एव

तदेव=पूर्वोक्तवर्णनमेवात्रोच्य यावत्-तस्माद् नो खल्वहमिच्छामि सुकुमारिकाया दारिकायाः क्षणमपि विप्रयोग, तत्=तस्माद् यदि खलु सागरदारको मम 'घर-जामाउए' गृहजामाउकाः=गृहवासी जामाताभवति, तर्हि ददामि । ततः खलु त सागरको दारको जिनदत्तेन तार्यवाहेनैवमुक्तः तन् तूष्णीरुः=मौनावलम्बी सन् संतिष्ठते ।

वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया । सूमालिया दारिया मम एगा एगजाया इट्ठा त चेव जइण सागरदारए मम घरजमाउए भवइ ता दलयामि) इम प्रकार सागरदत्त सार्थवाहके कहे जाने पर जिनदत्त सार्थवाह जहा अपना घर धा वहाँ आया-वहाँ आकर उसने अपने सागर पुत्र को बुलाया । बुला कर फिर उससे उसने ऐसा कहा-हे पुत्र-सागर-दत्त सार्थवाह ने मुझसे ऐसा कहा है कि आपका पुत्र सागर यदि मेरे घर जमाई बन कर रहना चाहें तो मैं अपनी सुकुमारिका उन्हें दे सकता हूँ । उनका घरजमाई बनाने का कारण यह है कि यह सुकुमारिका पुत्र पुत्री उसके एक ही पुत्री है-और एक ही उत्पन्न हुई हैं । यह उसे बहुत ही अधिक इष्ट यावत् मनोम है । इस तरह सागरदत्त का कहा हुआ समस्त कथन जिनदत्त ने अपने पुत्र सागर को सुना दिया । इसलिये वह उसका एक क्षण भी विधोग सहन नहीं कर सकता है । अतः वह

देवाणुप्पिया ! सूमालिया दारिया मम एगा एगजाया इट्ठा त चेव जइण सागर-दारए मम घरजमाउए भवइ ता दलयामि)

आ रीने अनदत्त सार्थवाह तेमनी आ वात साबणीने ते अनदत्त सार्थवाह न्या पोतानु घर डतु त्या आव्या, त्या आवीने तेणे पोताना सागरपुत्रने जोलाव्या जोलावीने तेणे तेने आ प्रभाणे कहु के डे पुत्र ! सागरदत्त सार्थवाहने मने आ प्रभाणे कहु छे के तभारे पुत्र सागर ने भारे घर नभार्थ रहेवा कपूलतो डोय तो हु भारी पुत्री सुकुमारिका तेमने आपवा तयार छु तेणे तभने घर नभार्थ पनाववा अटला भाटे छिछे छे के सुकु-मारिका दारिका तेमनी अकनी अक पुत्री छे ते तेमने अतीव इष्ट यावत् मनोम छे आ रीते सागरदत्ते ने कथ कहु डतु ते पधु तेमणे पोताना पुत्र सागर आगण रणू कथु अणे छेवटे कहु के अटला भाटे न ते अक क्षण पणु पोतानी पुत्रीने विधोग सहि शकतो नथी तभने ते आ कारवथी न घर नभार्थ पनाववा भवइ छे

मनोमा=मतसः स्यान्भूता, किं यद्ना उद्गृह्यापुपमिष 'उद्गृह्यरपुप केनापि एष्टम्' इति यत् श्रमणरिपयत्नेन मा दुर्भवा, किमहम् । पुन-दर्शनविषयतया, तत्-तस्माद् नो खलु अहमिच्छामि सुकुमारिकाया दारिकायाः क्षणमपि विप्रयोग-वियोगम्, तत्=तस्माद् यदि खलु हे देवानुमिय ! सागरदारको मम 'घरजामा उप' गृहजामातृकः=गृहवासीजामाता भवति 'तौण' तर्हि खलु अह सागराय दारिकाय सुकुमारिका ददामि । ततः खलु स जिनदत्तः सार्यराहः सागरदत्तेन सार्यवाहेनेन युक्त सन् यज्ञैव स्वक गृह तत्रोपागच्छति, उपागत्य सागरदारकं=स्वपुत्र शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-एव खलु हे पुत्र ! सागरदत्तः सार्यवाहो मम=मां प्रति, 'सम्बन्धमामान्ये पठ्ठी' एव=वक्ष्यमाणमकारेण अवादीत्-एव खलु हे देवानुमिय ! सुकुमारिका दारिका ममैका एव जाता उष्टा 'त वेव'

हे । यह मेरे लिये ईष्ट यावत् मनोम है-कान्त है, प्रिय है और मनोज है । अनुकूल होने से इष्ट, ईप्सित होने से कान्त प्रीतिपात्र होने से प्रिय मनको रुचने वाली होने से मनोज एव मन का स्थान भूत होने से मनोज है । ज्यादा क्या कहूँ यह तो हमें उदुहर पुष्प के समान दर्शन दुर्लभ थी-सुनने की तो घात ही क्या । अतः मैं इसे देना नहीं चाहता हूँ । कारण इस सुकुमारिका दारिका के बिना मैं एक क्षण भी नहीं रह सकता हूँ इसलिए हे देवानुमिय ! सागर यदि घरजमाई बन कर रहना चाहे तो मैं उन्हें यह अपनी सुकुमारिका पुत्री दे सकता हूँ । (तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे सागरदत्तेण सत्थवाहेण एव बुत्ते समाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सागरदारगं सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी-एव खलु पुत्ता ! सागरदत्ते सत्थवाहे मम एव

आ भने छष्ट यावत् मनोम छे-अटले डे कात छे, प्रिय छे, अने मनोम छे अनुकूल होवा अद्वल छष्ट, छप्पित होवाथी कात, प्रीतिपात्र होवा अद्वल प्रिय अने मनने गमे अेवी होवाथी मनोज तथा मनने आश्रय होवाथी मनोम छे वधारे शु णु ! आ तो अभने उद्गृह्यर पुष्पनी नेम दर्शन-दुर्लभ डती सालणवानी तो वात न शी करवी ! अेथी आने हु आपवा छिछतो नथी केरषु के अेना वगेर हु क्षणवारे पणु रेही शकतो नथी अेटला भाटे डे देवा नुप्रिय ! सागर ने घर न भाई थपने भारी पासे रहेवा छिछतो होय तो हु आ भारी सुकुमारिका पुत्री तेभने आपी शकु तेम छु

(तएण से जिणदत्ते सत्थवाहे सागरदत्ते ण सत्थवाहे ण एव बुत्ते समाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सागरदारगं सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी-एव खलु पुत्ता ! सागरदत्ते सत्थवाहे मम

सम्मानयति समान्य सागर दारक स्नात यावत् सर्वालङ्कारविभूषित कारयति, कारयित्वा पुरुषसहस्रवाहिनीं शिविकां दूरोहयति=आरोहयति, दूरोह मित्रज्ञाति स्वजन-सम्बन्धिभिर्यावत् परिष्टतः सर्वद्वर्षा सकलविभवेन स्त्रकाद् गृहाद् निर्गच्छति, निर्गत्य चम्पाया नगर्या म यम-येन=मध्येभूत्वा यत्रैव सागरदत्तस्य गृह तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य शिविकातः 'पञ्चोरुहावेड' प्रत्यवरोहयति, सागरदारकं स्वपुत्र प्रत्यवतारयति, प्रत्यवरोह सागरक दारक सागरदत्तस्य सार्थवाहस्य उपनयति=ममीपमानयति ।

ततः खलु सागरदत्तः सार्थवाहो विपुलमशन पान खात्रं स्वाध=चतुर्विधमाहारम् उपस्कारयति=निष्पादयति, उपस्कार्य यावत् = मित्रादिसहित जिनदत्तमामन्व्य भोजयित्वा, सत्कृत्य, समानयति, समान्य सागरक दारक सुकुमारिकाया दारिकाया सार्थ 'पट्टय' पट्टक 'दुरूहावेड' दूरोहयति=आरोहयति, दुरूह श्वेतपीतः=

सवका चन्द्रादिक से सत्कार किया सत्कार करके फिर उनका स्वागत यचानादिको द्वारा सन्मान किया- । सन्मान कर के बाद में उसने अपने सागरपुत्रको स्नान कराया- । स्नान कराकर उसने उसे समस्त अलकारो से विभूषित कराया । विभूषित कराकर बाद में उसने उसे पुरुष सहस्रवाहिनी शिविका पर चढाया चढाकर मित्र, ज्ञाति, स्वजन सबधियो को साथ लेकर फिर वह सकल विभवके अनुसार अपने घर से निकला -निकलकर चपानगरी के बीचो बीच से होता हुआ सागरदत्त का जहाँ घर था वहाँ पहुँचा । (उवागच्छित्ता सीयाओ पञ्चोरुहावेड, पञ्चोरुहावित्ता सागरग दारग सागरदत्तस्स सत्थ० उवणेड, तएण, सागरदत्ते सत्थवाहे विपुल असणपाण खाइम साइम उवक्खडावेड, उवक्खडावित्ता जाव सम्माणत्ता सागरग दारग सुमालियाए दारियाए सद्धि पट्टय

३।ने अधाने वओ वगेरे आपीने सत्कार कथी, सत्कार करीने तेहे तेमनु स्वागत पथने। वडे सन्मान कथु' सन्मान कथा भाड तेहे पोताना सागर पुत्रने स्नान करांयु स्नान करावीने तेहे तेने अधा अथ उरेशी शबुगारी, शबुगारीने तेहे तेने पुत्र-सहस्रवाहिनी पालणीमा जेसाउथे त्यापणी मित्र, ज्ञाति, स्वजन सबधीओने साथे लधने ते पोताना स पूषु वैलवणी साथे पोताना घेरथी नीकथी-नीकथीने यथा नगरीनी वच्चे थधने ते न्या सागरदत्तनु धर हुतु त्या पडोअथे।

(उवागच्छित्ता सीयाओ पञ्चोरुहावेड, पञ्चोरुहावित्ता सागरग दारग सागरदत्तस्स सत्थ० उवणेड, तएण, सागरदत्ते सत्थवाहे विपुलअसणपाणखाइम साइम उवक्खडावेड, उवक्खडावित्ता जाव सम्माणत्ता सागरग दारग सुमालियाए

ततः सलु निनत्तः तार्थवाहो ऽन्यथा कदाचित् प्रोमने=शुभकारके,
 तिथिकरणनक्षत्रगुहर्त विपुलमग्न पां गाय साद्यष्टपन्धारयति, निपादयति,
 उपस्कार्य मित्रज्ञातिप्रभृतिनामन्त्रयति, आमन्त्र्य 'जाय सम्माणेऽ' यात् सम्मा
 नयति भोजयति, भोजयित्वा ग्नादिभि म करोति, महत्स्य स्वागतवचनादिना
 तुम्हें घरजमाई बनाना चाहता है । (तण्णं से सागरण दारण जिणदत्ते
 ण सत्थवाहेण एव तुत्ते समाणे तुमिणीए सच्चिद्दह, तण्णं जिणदत्ते सत्थ
 वाहे अन्नया कयाइ सोहणसि तिहिकरणदिवसणग्गत्तामुहत्तसि
 विउल असण पान खाइम साइम उवक्खडावेइ, उवक्खडावित्ता
 मित्तणाइ०आमतेइ, जाव सम्माणित्ता सागर दारण ण्हाय जाव सव्वा
 लकारविभूसिय करेइ, करित्ता पुरिससहस्मवार्हिणिं सीय दुरूहावेइ,
 दुरूहावित्तामित्तणाइ जाव सपरिवुडे सच्चिद्दीए साओ गिहाओ निग्ग
 च्छइ निग्गच्छित्ता चपा नयर्हि मज्झ मज्झेण जेणेव सागरदत्तस्स गिहे
 तेणेव उवागच्छइ) जिनदत्त सार्थवाह के द्वारा इस प्रकार कहा जाने
 पर वह सागर दारक चुपचाप रह गया उसने कुछ भी उत्तर नहीं दिया ।
 एक दिन जिनदत्त ने शुभ, तिथि करण, दिवस नक्षत्र सुहृत्तमें विपुल
 मात्रा में अशन, पान, स्वाद्य और स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार बनवाया
 -बनवाकर उसने अपने मित्र ज्ञाति आदिमन्धुओं को आमन्त्रित किया
 आमन्त्रित करके फिर उसने उन सबको भोजनकराया-भोजन कराकर

(तण्णं से सागरण दारण जिणदत्ते ण सत्थवाहे ण एव तुत्ते समाणे तुमि
 णीए सच्चिद्दह, तण्णं जिणदत्ते सत्थवाहे अन्नया कयाइ सोहणसि तिहिकरणदिव
 सणक्खत्तमुहत्तसि, विउल असणपान खाइम साइम उवक्खडावेइ, उवक्खडावित्ता
 मित्तणाइ आमतेइ, जाव सम्माणित्ता सागर दारण ण्हाय जाव सव्वालकारविभू
 सिय करेइ, करित्ता पुरिससहस्मवार्हिणिं सीय दुरूहावेइ, दुरूहावित्ता मित्तणाइ
 जाव सपरिवुड सच्चिद्दीए साओ गिहाओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता चपा नयर्हि
 मज्झ मज्झेण जेणेव सागरदत्तस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ)

अनन्त सार्थवाह वडे आ प्रभावे कडेवायेदो सागर पुत्र ऐकदम थूप
 थधने ऐसी न रही तेवे केअ पणु नतनेो न्वाअ आयेो नहि ऐक दिवस
 अनन्ते शुभतिथि, करण, दिवस, नक्षत्र सुहृत्तमा पुच्छण प्रभाणुमा अशन,
 पान, पाद्य अने स्वाद्य इप आर नतनेो आहार बनावडायेो बनावडावीने
 तेवे पाताना मित्र, ज्ञाति वगेरे सबधीअने आमन्त्रित कर्था
 आमन्त्रित करीने तेवे ते अथा आवेला सबधीअने नभाउथा नभा

मूलम्—तएण सागरदारए सूमालियाए दारियाए इम
 एयारूवं पाणिफास पडिसंवेदेइ से जहा नामए असिपत्तेइ
 वा जाव मुम्पुरेइ वा एत्तो अणिट्टतराए चेव० पाणिफासं
 पडिसंवेदेइ, तएणं से सागरए अकामए अवसव्वसे मुहु-
 त्तमित्तं सच्चिट्ठइ, तएणं से सागरदत्ते संत्थवाहे सागरस्स
 दारगस्स अम्मापियरो मित्तणाइ० विउलेण असणपाणखा-
 इमसाइमं पुप्फवत्थे जाव सम्माणेत्ता पडिविसंज्जइ, तएणं
 सागरए दारए सूमालियाए सद्धिं जेणेव वासघरे तेणेव उवाग-
 गच्छइ उवागच्छित्ता सूमालियाए दारियाए सद्धिं तलिंगंसि
 निवज्जइ, तएणं से सागरए दारियाए सूमालियाए दारि-
 याए इमं एयारूव अगफासं पडिसवेदेइ, से जहा नामए
 असिपत्तेइ वा जाव अमणामयराग चेव अगफास पच्चणु-
 वभवमाणे विहरइ, तएणं से सागरए अगफास असहमाणे
 अवसव्वसे मुहुत्तमित्तं सच्चिट्ठइ, तएणं से सागरदारए सूमा-
 लियं दारियं सुहपसुत्तं जाणित्ता सूमालियाए दारियाए
 पासाउ उट्टेइ, उट्टित्ता जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवाग-
 च्छइ, उवागच्छित्ता सयणीयसि निवज्जइ, तएणं सूमालिया
 दारिया तओ मुहुत्तरस्स पडिवुद्धा समाणी पइव्वया पइ-
 मणुरत्ता पतिं पासे अपस्समाणी तलिमाउ उट्टेइ, उट्टित्ता
 जेणेव से सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सागरस्स
 पासे णुवज्जइ, तएणं से सागरदारए सूमालियाए दारियाए

राजतसौर्यं कलशै = तारिपूर्णघटैर्मज्जयति = मज्जयति, मज्जयित्वा अग्निहोमं कारयति, कारयित्वा मागं शरत्सुकुमारिकाया दारियाया पार्णिप्रायति ॥ ४ ॥

दुरूहावेह, दुरूहावित्ता सेयापीण्हि कलसेहि मज्जावेह, मज्जावित्ता अग्निहोम करोवेह, करावित्ता सागरदारय मूमालियाए दारियाए पार्णि गिण्हावेह) वहा पहूँकर उसने अपने पुत्र सागर को पालवी से नीचे उतारा और उतारकर सागरदत्त सार्थवाह के पास उसे लेभाया । सागरदत्त सार्थवाहने भी पहिलेसे ही त्रिपुलमात्रा में अशन, पान, स्वाध, एव स्वारूप चतुर्विध आहार तैयार करवालियो था मो उमसे मित्रादि सहित जिनदत्त सार्थवाह को आनद के साथ गिलाया गिलाकर सबका सत्कार किया सन्मान किया । सत्कार सन्मान करने के बाद फिर सागरदत्तने सागर दारक को अपनी पुत्री सुकुमारिका के साथ एक पट्टक पर बैठाया-बैठाकर सुवर्ण चांदी के कलशोंसे उनका अभिषेक कराया अभिषेक हो जाने के बाद अग्निहोम कराया 'अग्निहोम जब हो चुका तब सागरदत्तने अपनी पुत्री सुकुमारिका का सागर के हाथ में हस्तमिलाप किया-अर्थात् लग्न कर दिया ॥ सू० ८ ॥

दारियाए सद्धि पट्टय, दुरूहावेह, दुरूहावित्ता सेयापीण्हि कलसेहि मज्जावेह, मज्जावित्ता अग्निहोम करावेह, करावित्ता सागरदारय मूमालियाए दारियाए पार्णि गिण्हावेह)

त्या पडोथीने तेण्णे पोताना पुत्र सागरने पालवीमाथी नीचे उताये अने उतारीने सागरदत्त सार्थवाहनी पासे लध गये । सागरदत्त सार्थवाहने पण्ण पडोलेथी व पुष्कण प्रमाणुमा अशन, पान, स्वाध अने स्वाध इप आर जातने आहार तैयार करावीने राधये हुतो । तेण्णे मित्र वगेरे दोडोनी साथे अनदत्त सार्थवाहने आनदनी साथे वभाडया अने तयारपडी, तेण्णे सोना सत्कार तेमव सन्मान कर्था । सत्कार अने सन्मान कर्था जाड सागरदत्ते सागर दारकने पोतानी पुत्री सुकुमारिकानी साथे जेक पट्टक उपर जेसाडये । जेसाडीने सोना-चाडीना कणशेथी तेमने । अभिषेक करावडावये । अभिषेकतु काम पुर्न थया जाड तेण्णे अग्निहोम करावये । अग्निहोमनी विधि पूरी थध गर्ध त्यादे सागरदत्ते पोतानी पुत्री सुकुमारिकाने सागरनी साथे हस्तमेलनाप करावी दीधो । अटले के लभ करावी दीधो ॥ सू० ८ ॥

मूलम्—तएण सागरदारए सूमालियाए दारियाए इम
 एयारूवं पाणिफास पडिसंवेदेइ से जहा नामए असिपत्तेइ
 वा जाव मुम्पुरेइ वा एत्तो अणिट्टतराए चेव० पाणिफासं
 पडिसंवेदेइ, तएणं से सागरए अकामए अवसव्वसे मुहु-
 त्तमित्तं सचिट्ठइ, तएणं से सागरदत्ते संत्थवाहे सागरस्स
 दारगस्स अम्मापियरो मित्तणाइ० विउलेण असणपाणखा-
 इमेसाइमं पुप्फवत्थे जाव सम्माणेत्ता पडिविसंज्जइ, तएणं
 सागरए दारए सूमालियाए सद्धिं जेणेव वासघरे तेणेव उवाग-
 गच्छइ उवागच्छित्ता सूमालियाए दारियाए सद्धिं तलिंगंसि
 निवज्जइ, तएण से सागरए दारियाए सूमालियाए दारि-
 याए इमं एयारूव अंगफासं पडिसवेदेइ, से जहा नामए
 असिपत्तेइ वा जाव अमणामयराग चेव अगफास पच्चणु-
 वभवमाणे विहरइ, तएणं से सागरए अगफास असहमाणे
 अवसव्वसे मुहुत्तमित्तं सचिट्ठइ, तएण से सागरदारए सूमा-
 लिय दारिय सुहपसुत्तं जाणित्ता सूमालियाए दारियाए
 पासोउ उट्टेइ, उट्टित्ता जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवाग-
 च्छइ, उवागच्छित्ता सयणीयसि निवज्जइ, तएणं सूमालिया
 दारिया तओ मुहुत्तरस्स पडिवुद्धा समाणी पइव्वया पइ-
 मणुरत्ता पतिं पासे अपस्समाणी तंलिमाउ उट्टेइ, उट्टित्ता
 जेणेव से सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सागरस्स
 पासे णवज्जइ, तएण से सागरदारए सूमालियाए दारियाए

दुच्चंपि इमं एयारूपं अंगफासं पडिसंवेदेइ जाव अकामए
 अवसव्वसे सुहुत्तमित्तं संधिदुइ, तएणं सेसागरदारणसूमा-
 लियं दारियं सुहपमुत्तं जाणित्तासयणिज्जाओ उट्टेइ उट्टित्ता
 वासघरस्स दार विहाडेइ विहाडित्ता मारामुम्के विव काए
 जामेव दिंसि पाउव्वभूए तामेव दिंसि पडिगए ॥ सू०९॥

टीका—‘तएणं’ इत्यादि । ततः खलु सागरदारणः सुकुमारिकाया दारि-
 काया इममेतद्रूपं=रक्ष्यमाणमकार पाणिस्पर्शं=करस्पर्शं प्रतिसंवेदयति=अनुभवति,
 कीदृशः स करस्पर्शः इति सदृष्टान्तमाह—‘से जहानामए’ इत्यादि । तद् यथा
 नामरूपं=यथा दृष्टान्तम्-दृष्टान्तं प्रदर्शयति—‘असिपत्तेइ वा’ इत्यादि । असि-
 पत्रमिति वा=असिपत्र-खड्गः, यथा खड्गधारायाः स्पर्शः सोढुमशक्यस्तद्वत् सुकु-
 मारिका दारिकायाः करस्पर्शं प्रतिसवेद्यत इति भावः । ‘जाव मुग्गुरे इ वा०’
 यावत् मुग्गुरेति वा=अत्र यावत् करणादिद बोध्यम्—‘करपत्तेइ वा सुरपत्तेइ वा

‘तएण सागरदारण’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद—अर्थात् सागरदारणने जब हस्तमिलाए
 क्रिया तथ (सागरदारण) उस सागर को (सूमालियाए दारियाए) सुकु-
 मारिकादारिकाका (पाणिपास) वह हस्तका स्पर्श (इम एयारूप पडिसवे
 देइ) इस प्रकार से लगा (से जहा नामए असिपत्तेइ वा जाव मुग्गुरे-
 इवा, एत्तो अणिदुत्तराए चव० पाणिफासं पडिसवेदेइ) जैसे वह
 असिपत्र तलवार का स्पर्श हो यावत् अग्नि कणमिश्रित भस्म का स्पर्श
 हो । यहा यावत् शब्दसे “कर पत्तेइ” वा सुर पत्तेइवा, कलय चीरिया

‘तएण सागरदारण’ इत्यादि

टीकार्थ—(तएण) त्पारप ग्री अष्टके के सागरदारके न्यारे उस्तमेजाप कथे त्पारे
 (सागरदारण) ते सागरने (सूमालियाए दारियाए) सुकुमार दारिकाने (पाणि
 पास) ते हाथने स्पर्श (इमएया रूप पडिसवेदेइ) आ प्रभाणे लागे के
 (से जहा नामए असि पत्तेइ वा जाव मुग्गुरेइ वा, एत्तो अणिदुत्तराए चव
 पाणिफासं पडिसवेदेइ)

जाणे ते असिपत्र-तलवार-ने स्पर्श न होय, यावत् अश्लिष्य मिश्रित
 भस्मने स्पर्श न होय अर्ही ‘यावत्’ शब्दही

(करपत्तेइ वा सुरपत्तेइ वा, कलयचीरियापत्तेइ वा सत्ति

फलवचीरियापत्तेः वा सत्तिअग्गेइ वा कोतग्गेइ वा तोमरग्गेइ वा भिंडिमालग्गेइ वा सूचिकलावण्ड वा विच्छुयडकेइ वा कपिरुच्छुइ वा इगालेइ वा मुम्मुरेइ वा अच्चोइ वा जालेइ वा आलाइ वा सुद्धागणीइ वा भवेयारुवेसिया ?, नो इणट्टे समट्टे, करपत्रमिति वा क्षुरपत्रमिति वा कदम्बचीरिकापत्रमिति वा शक्यग्रमिति वा कुन्ताग्रमिति वा तोमराग्रमिति वा भिन्दिपालाग्रमिति वा वृश्चिकदश इति वा कपिरुच्छुरिति वा अङ्गार इति वा मुर्मुर् इति वा अर्चिरिति वा ज्वालेति वा, अलातमिति वा सुद्धाग्निरिति वा भवेदेतद्रूप -स्यात् ?, नायमर्थः समर्थः, इति । तत्र करपत्र= करकचं ' करवत् ' इति प्रसिद्ध क्षुरपत्रम्=' उस्तरा ' इति प्रसिद्धम्, कदम्बचीरिकापत्रम्-कदम्बचीरिका-तृणविशेष, अस्या अग्रभागोऽतितीक्ष्णो भवति तस्य पत्र, शक्तिः=शस्त्रविशेषः-त्रिशूल वा तस्या अग्रभागः स्व कुन्तः ' भाला ' इति प्रसिद्ध शस्त्रविशेषः, तदग्रभागः, तोमरः=वाण विशेषस्तदग्रभागः, भिन्दिपालः=शस्त्रविशेषः सूचीकलापकं सूचीसमूहस्तस्याग्रभागः, वृश्चिकदशः=वृश्चिक कण्टकः, कपिरुच्छुः-खजुरी वनस्पतिविशेषः, अङ्गारः=ज्वालारहितोऽग्नि, मुर्मुर्=अग्नि-

पत्तेइ वा, सत्ति अग्गेइवा कोतग्गेइवा तोमरग्गेइ वा, भिंडिमालग्गे वा सूचिकलावण्डवा विच्छुय डकेइ वा कवि रुच्छुइवा इगालेइ वा मुम्मुरेइ वा अच्चोइ वा जालेइ वा आलाइ वा सुद्धागणीइ वा भवेयारु वेसिया ? नो इणट्टे समट्टे) कर पत्र-कर वत, क्षुर पत्र-उस्तरा कदम्बचीरिका पत्र छुहिया घास-जिसका अग्रभाग अधिक तीक्ष्ण होतो है शक्ति-अग्र-शक्ति-त्रिशूल अथवा आयुधविशेष का अग्रभाग कुन्ताग्र भाले की नोक तोमराग्र-वाण की अनी भिन्दिपाल-शस्त्र विशेष-का अग्रभाग-सूची कलापका अग्रभाग-विच्छु का डक कपिरुच्छु-करेच-जिसके स्पर्श होनेपर खुजली आती है-ज्वाला रहित अग्नि, मुर्मुर्-अग्निकणमिश्रित

तोमरग्गेइ वा, भिंडिमालग्गे वा सूचिकलावण्ड वा विच्छुय डकेइ वा, कपिरुच्छुइ वा इगालेइ वा, मुम्मुरेइ वा अच्चोइ वा जालेइ वा, आलाइ वा सुद्धागणीइ वा भवेयारुवे सिया ? नो इणट्टे समट्टे)

करपत्र-करवत, क्षुरपत्र - अश्वी, कदम्बचीरिका पत्र-क्षुरिका के जेने अग्रभाग जेठहम तीक्ष्ण होय छे, शक्ति-अश्व-शक्ति, -त्रिशूल अथवा आयुध विशेषने अग्रभाग, कुन्ताग्र-भालानी अश्वी, तोमराग्र-तीरनी अश्वी, बिन्दिपाल-विशेषने अग्रभाग, सूचीकलापने अग्रभाग, वीजीने उ अ, कपिरुच्छु-करेच-जेने स्पर्शथी अ न्वाण आवे छे, न्वाणा रहित अग्नि, मुर्मुर्-अग्निजल मिश्रित अश्व, अश्वि-ताकडाओथी सणगती न्वाणा, न्वाणा-ताकडा वगरनी

दुच्चंपि इमं एयारुचं अंगफास पडिसंपेदेइ जात्र अकामए
 अवसवसे मुहुत्तमित्तं संचिट्टइ, तएण मेसागरदारए,सूमा-
 लियं दारियं सुहपसुत्तं जाणित्तासयणिज्जाआं उट्टेइ उट्टित्ता
 वासघरस्स दार विहाडेइ विहाडित्ता मारामुक्के त्रिव काए
 जामेव दिस्सिं पाउव्भूए तामेव दिस्सिं पडिगए ॥ सू०९॥

टीका—‘तएण’ इत्यादि । ततः ग्लु सागरदारकः सुहमारिकाया दारि-
 काया इममेतद्भूप=रक्ष्यमाणमकार पाणिस्पर्श=करस्पर्श प्रतिसवेदयति=अनुभवति,
 कीदृशः स करस्पर्शः इति राट्टान्तमाह—‘से जहानामए’ इत्यादि । तद् यथा
 नामम्भू=यथा दृष्टान्तम्-दृष्टान्त प्रदर्शयति—‘असिपत्तेइ वा’ इत्यादि । असि-
 पत्रमिति वा=असिपत्र-खड्गः, यथा खड्गधारायाः स्पर्शः सोढुमशयस्त्वद्दत्तं सुह-
 मारिका दारिकायाः करस्पर्शं प्रतिसवेद्यत इति भावः । ‘जात्र मुग्गुरे इ वा०’
 यावत् मुग्गुरेति वा=अत्र यावत् करणादिद बोध्यम्—‘करपत्तेइ वा सुरपत्तेइ वा

‘तएण सागरदारए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद—अर्थात् सागरदारकने जब हस्तमिलाप
 किया तब (सागरदारण) उस सागर को (सूमालियाए दारियाए) सुकु-
 मारिका दारिकाका (पाणिपास) वह हस्तका स्पर्श (इम एयारुच पडिसवे-
 देइ) इस प्रकार से लगा (से जहा नामए असिपत्तेइ वा जात्र मुग्गुरे-
 इवा, एत्तो अणिट्टतराए चेव० पाणिफास पडिसवेदेइ) जैसे वह
 असिपत्र तलवार का स्पर्श हो यावत् अग्नि कणमिश्रित भस्म का स्पर्श
 हो । यहा यावत् शब्दसे “कर पत्तेइ” वा खुर पत्तेइवा, कलत्र चीरिया

‘तएण सागरदारए’ इत्यादि

टीकार्थ—(तएण) त्थारप श्री अट्ठे के सागरदारके न्यारे उस्तमेजाप कथीं त्यारे
 (सागरदारए) ते सागरने (सूमालियाए दारियाए) सुकुमार दारिकाने (पाणि
 पास) ते हाथने स्पर्श (इमएया रुच पडिसवेदेइ) आ प्रभाए लाये के
 (से जहा नामए असि पत्तेइ वा जात्र मुग्गुरेइ वा, एत्तो अणिट्टतराए चेव
 पाणिफास पडिसवेदेइ)

अए ते असिपत्र-तरवार-ने स्पर्श न होय, यावत् अग्निषु मिश्रित
 भस्मने स्पर्श न होय अर्ही ‘यावत्’ शब्दधी

(करपत्तेइ वा खुरपत्तेइ वा, कलत्रचीरियापत्तेइ वा सत्ति वा कौतमोइ

रिजनाथ त्रिपुलेनाशनपानखाद्यस्वाद्येन पुष्पस्रग्गन्धमाल्यालङ्कारेण सत्करोति
समानयति सत्कृत्य समान्य प्रतिप्रिसर्जयति = प्रस्थापयति । ततः खलु सागरको
दारकः सुकुमारिकाया सार्धं यत्रैव वासगृह-शयनगृहं तत्रैवोपागच्छति उवागत्य
सुकुमारिकाया दारिकाया सार्धं 'तलिमसि' तलिमे देशीयोऽयशब्दः तल्पे-शयनीये
'निवज्जइ' निपीदति । ततः खलु स सागरदारकः सुकुमारिकाया दारिकाया
इममेतमद्रूपमद्गरपशं प्रतिसवेदयति-तद् यथानामक=तत् प्रतिसवेदन दष्टान्तोपन्या-
सपूर्वक प्रदर्शयते-असिपत्र वा यावद् अमनोमतरमेव सुकुमारिकाया अद्रस्पशं

अम्मापियरो मित्तणाइ० विउटेण असण पाणखाइम भाइम पुष्कवत्थ
जाव सम्माणेत्ता पडिविसज्जति) अतः वह सागर उसमें अभिलाषा
से रहित बन गया । फिर भी वह विवश होकर वह कुछ समय तक
ठहरा रहा । सागरदत्त सार्धवाह ने सागर दारक के मातापिता का तथा
उसके मित्र, ज्ञाति स्वजन, सखी परिजनो का विपुल अशन, पान,
खाद्य और स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार से एते पुष्प वस्त्र, गन्ध, माला
तथा अलंकार से खूब सत्कार किया-सन्मान किया । सत्कार सन्मान
करके फिर उसने सबको अपने यहाँ से विदा कर दिया । (तर्ण
सागरए दारए सुमालियाए सद्धि जेणेव वासगिहे तेणेव उवागच्छइ
उवागच्छिता सुमालियाए दारियाए सद्धि तलिगसि निवज्जइ, तर्ण
से सागरए दारए सुमालियाए दारियाए इम एयाह्व अगफास पडि-
सवेदेइ से जहानामए असि पत्तेइवा जाव अमणामघरागचेव अगफास

गरदत्ते सत्यवाहे सागरस्स दारगस्स अम्मापियरो मित्तणाइ० विउलेण अमण पाण
खाइम साइम पुष्कवत्थ जाव सम्माणेत्ता पडिविसज्जति)

अतएवा भाटे ते सागर तेना अलिवापाथी रहित भनी गथे छताअे
ते त्या वाचार धरने थोडा वधत सुधी राजथे। सागरदत्त सार्धवाहे सागर
दारकना मातापिताने तेभञ्ज तेना मित्र, ज्ञाति, स्वजन, सखी परिजनाने।
विपुल अशन, पान, खाद्य अने स्वाद्य इय आर जातना आहारथी अने पुष्प
वस्त्र, गंध, भाणा तेभञ्ज अलंकारथी अहु सत्कार अने सन्मान कथुं सत्कार
तेभञ्ज सन्मान करीने तेहे सौने पिताने त्याथी विहाय कथा

(तर्ण सागरए दारए सुमालियाए सद्धि जेणेव वासगिहे तेणेव उवागच्छइ
उवागच्छिता सुमालियाए दारियाए सद्धि तलिगसि निवज्जइ, तर्ण से सागरए
दारए सुमालियाए दारियाए इम एयाह्व अगफास पडिमवेदेइ से जहा नामए
असिपत्तेइ वा जाव अमणामघराग चेव अगफास पच्चयु० मवमाणे विहरइ तर्ण

पणमिश्रितभस्म अग्नि = १-पन प्रतिपदा ज्वाला, ज्वाला-इन्धन-उत्पत्ति-ज्वाला, आका
 तम् = उल्मुक, शुद्धाग्निः लोहपिण्डस्थग्निः । असिपत्रादि-शुद्धाग्निपर्यन्तानां स्पर्श
 इव सुकुमारिकायाः परस्पर्शो भवेत्प्रयश्चिद्विद्युत्? नागमर्गं समर्थं = अत्र दृष्टातममूर
 परस्पर्शो साम्यं प्राप्तुं न समर्थः नहि कीदृशः ? इत्याह 'पक्षो भणित्वतराप चैव'
 एतरमाद् असिपात्रदीना स्पर्शादनिष्टतरक एव, अयान्तरक एव = अत्यन्तमक
 मनीय एव, अप्रियतरक एव = अतिदुःखजनक एव अमनोजतरक एव = अतिशयेन मनो
 विकृतिकारक एव अमनोमतरक एव = अतिशयेन मनः प्रतिकूल एव वर्तते, तमेवमूर्त
 पाणिस्पर्शं सुकुमारिकादारिकायाः परस्पर्शं प्रतिस्पन्दयति = अनुभवति ।

तत खलु स सागरदारकः अकामकः = निरमिलापः 'असञ्चसे' अपम्ववसः =
 अपगतरथातन्व्यः विरशः सन् गृह्वमात्र = स्तोत्रकाल सतिष्ठते (ततः खलु स
 सागरदत्तः सार्थवाह सागरस्य दारकस्य अग्नापितरी मिताशातिस्त्रजनमम्बन्धिष

भस्म अग्नि-इन्धन प्रतिपदा ज्वाला, ज्वाला-इन्धन से रहित ज्वाला
 अलात-उल्मुक शुद्धाग्नि-लोहपिण्डस्थ अग्नि । इन असिपत्र से लेकर
 शुद्धअग्नि पर्यन्त पदार्थों का स्पर्श जैसा होता है वैसा ही सुकुमारिका
 के कर का स्पर्श हो सकता था-परन्तु यहाँ यह अर्थ समर्थित नहीं है
 -अर्थात् उसके सुकुमारिका के कर स्पर्श में इन दृष्टान्तों के स्पर्श की
 समानता नहीं मिल सकती है क्योंकि वह स्पर्श तो इनके स्पर्श से भी
 अधिक अनिष्टतर ही था, अकान्ततरक ही था-अत्यन्त अकमनीय था,
 अप्रिय तरकही था-अत्यन्त दुःखजनक ही था, अमनोजतरक ही था
 -अत्यन्त मनो विकृतिजनक ही था, अमनोमतरक ही था-अत्यन्त
 मनः प्रतिकूल ही था । (तएण से सागरए अकामए अवसव्वसे
 सुहृत्तमित्त सच्चिद्वइ, तएण से सागरदत्ते सत्थवाहे सागरस्स दारगस्स

ज्वाला, अलात-उल्मुक, शुद्ध अग्नि-लोहपिण्डस्थ अग्नि-आटली वस्तुओंतु अक्षु
 करतु जेधजे आ असिपत्रथी भाडीने शुद्ध अग्नि सुधीना पदाथीने जे लतने
 स्पर्श होय छे तेवे ज सुकुमारिकाना हाथने पण स्पर्श हते

पण उड्डीकतमा तो आ वस्तुओंनी समानता पण तेना तीक्ष्ण स्पर्शनी साथे
 करी शकय तेम नथी केमके तेना हाथने स्पर्श तो उक्त वस्तुओंना स्पर्श
 करता पण पधारे अनिष्टतर हते, अकान्ततरक हते, अतीव अकमनीय हते,
 अप्रियतरक हते, अत्यन्त दुःखजनक हते, अमनोमतरक हते, अत्यन्त मनो
 विकृतिजनक हते, अमनोम तरक हते, अहु ज मन प्रतिकूल हते

(तएण से सागरए अकामए असव्वसे सुहृत्तमित्त सच्चिद्वइ - एण से सा

रिजनांश्च त्रिपुलेनाशनपानखाद्यन्माद्येन पुष्पवस्त्रगन्धमाल्यालङ्कारेण सत्करोति
समानयति सत्कृत्य समान्य प्रतिप्रसर्जयति = प्रस्थापयति । ततः खलु सागरको
दारुः सुकुमारिकया सार्धं यत्रैव वासगृह-शयनगृहं तत्रैवोपागच्छति उवागत्य
सुकुमारिकया दारिकया सार्धं 'तलिमसि' तलिमे देशीयोऽयशब्दः तल्पे-शयनीये
'निवज्जइ' निपीदति । ततः खलु स सागरदारुः सुकुमारिकाया दारिकाया
इममेतमद्रूपमद्गुरुपर्यं प्रतिसवेदयति-तद् यथानामरु-तत् प्रतिसवेदन दष्टान्तोपन्या-
सपूर्वक प्रदर्शयते-असिपत्र वा यावद् अमनोमतरमेव सुकुमारिकाया अङ्गस्पर्श

अम्भापियरो मित्तणाइ० विउट्टेण असण पाणखाइम साइम पुष्पवत्थ
जाव सम्माणेत्ता पडिविसज्जति) अतः वह सागर उसमें अभिलाषा
से रहित बन गया । फिर भी वहा विवश होकर वह कुछ समय तक
ठहरा रहा । सागरदत्त सार्धं याह ने सागर दारु के मातापिता का तथा
उसके मित्र, ज्ञाति स्वजन, संबन्धी परिजनो का विपुल अशन, पान,
खाद्य और स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार से एवं पुष्प वस्त्र, गन्ध, माला
तथा अलङ्कार से खूब सत्कार किया-सन्मान किया । सत्कार सन्मान
करके फिर उसने सबको अपने यहा से विदा कर दिया । (तण्णं
सागरए दारए सुमालियाए सद्धि जेणेव वासगिहे तेणेव उवागच्छइ
उवागच्छिता सुमालियाए दारियाए सद्धि तल्लिगसि निवज्जइ, तएण
से सागरए दारए सुमालियाए दारियाए इम एयाह्व अगफासं पडि-
सवेदेइ से जहानामए असि पत्तेइवा जाव अमणामयरागचेव अगफास

गरदत्ते सत्यवाहे सागरस्स दारगस्स अम्भापियरो मित्तणाइ० विउलेण असण पाण
खाइम साइम पुष्पवत्थ जाव सम्माणेत्ता पडिविसज्जति)

अटला भाटे ते सागर तेना अलिवापाथी रहित भनी गथे। छताये
ते त्या वाचार थडने थोडा वभत सुधी शोकाथे। सागरदत्त सार्धं वाडे सागर
दारुकेना मातापिताने तेमज्ज तेना मित्र, ज्ञाति, स्वजन, संबन्धी परिजनोने।
विपुल अशन, पान, आद्य अने स्वाद्य रूप आर नतना आहारथी अने पुष्प
वस्त्र, गंध, माला तेमज्ज अलङ्कारथी अहु सत्कार अने सन्मान कथुं सत्कार
तेमज्ज सन्मान करीने तेणे सोने पोताने त्याथी विहाय कथा

(तण्णं सागरए दारए सुमालियाए सद्धि जेणेव वासगिहे तेणेव उवागच्छइ
उवागच्छिता सुमालियाए दारियाए सद्धि तल्लिगसि निवज्जइ, तण्णं से सागरए
दारए सुमालियाए दारियाए इम एयाह्व अगफास पडिसवेदेइ से जहा नामए
असिपत्तेइ वा जाव अमणामयराग चेव अगफास पञ्चगुणव्रमाणे विहरइ तण्णं

मयत्तुमन् विहरति। ततः यत्तु म सागरदारकम्भगा अङ्ग स्पर्मममदमानोऽपस्व
 यतः=भरगा सानन्ग', गन सुहृमात्र मतिष्ठो। ता यत्तु म सागरदारकः
 सुकुमारिका दारिका सुवपसुतां शान्ता सुहृमारिकाया दारिकायाः पार्श्वत उत्तिष्ठति,
 उत्थाय यत्रैव स्वक शयनीयं तत्रोपागन्ति, उपागन्त्य शयनीये, ' निवृत्तम् '
 निषीदति स्वपितीत्यर्थः। तत यत्तु सुहृमारिका दारिका ततो मूर्तान्तरे पति-
 पुद्गा=नागरिका सति पतिप्रता ' पद्मपुरता ' प्रत्यनुक्ता स्वपति प्रत्यनुतागिनी,
 पार्श्वे पतिमपश्यन्ती ' तलिमाउ ' तन्वात्=शयनीयात् उत्तिष्ठति, उत्थाय यत्र
 पच्चणुम्भप्रमाणे विहरत तण्ण से सागराग अगफासं अमहमाणे अब
 सन्वसे मुहुत्तमित्त सचिद्वह) इसके बाद सागरदारक सुकुमारिका के
 साथ जहा वासगृह-शयन पर-वा उहाँ गया रहा जाकर वह उस सुकु-
 मारिकाके साथर एक शय्यापर बैठ गया। बैठ जाने पर उस सागरदारक
 को सुकुमारिका दारिकाका अगस्पर्श इमरूपसे प्रीत हुआ-जैसे मानो
 असिपत्र आदिका स्पर्श हो। इन असिपत्र (स्वर्गको यावत्) आदिको
 के स्पर्श से भी उसका वह अगस्पर्श यावत् अननामतरक ही था। इस
 प्रकार का उसका अगस्पर्श अनुभूयता हुआ वह सागरदारक विवश
 बनकर वहा कुछ समय तक ठहरो बाद में जब उससे सहन नहीं
 हुआ तो। (तण्ण से सागरदारक सुमालिय दारिय सुहृपसुत्त
 जाणित्ता सुमालियाए दरियाए पासो उद्वेह, उद्वित्तां जेणेव सए सय
 णिज्जे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सयणीयसि निवज्जइ, तण्ण
 सुमालिया दारिया तओ मुहत्ततरस्स पडिबुद्धा समाणी पइव्वया पइ

से सागराग अगफास असहमाणे अवसन्वसे मुहुत्तमित्त सचिद्वह)

त्यारपणी सागर दारक सुकुमारिकाणी साथे न्या वासगृह-शयनघर उतु
 त्या गथो, त्या न्धने ते सुकुमारिकाणी साथे एक शय्या उपर भेसी गथो
 गेका भाव ते सागर दारकने सुकुमारिका दारिकानो अग-स्पर्श' एवा प्रकारेनो
 न्धुथो के ते असिपत्र - तरवार वगेरेनो स्पर्श' न होय। असिपत्र
 वगेरे करता पणु तेनो अग स्पर्श' यावत् अभनोभतरक हतो आ रीते तेना
 अग स्पर्श'ने अनुभवतो सागर दारक लायार थधने त्या थोडा वधत बुधी
 रोकाथो अने त्यारभाह न्यारे तेने ते स्पर्श' असह थध पडथो त्यारे

(तण्ण से सागरदारक सुमालिय दारिय सुहृपसुत्त जाणित्ता सुमालियाए
 दरियाए पासो उद्वेह, उद्वित्तां जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ, उवा-
 गच्छित्ता सयणीयसि निवज्जइ, तण्ण सुमालिया)

'से' तस्य शयनीयं तत्रैषोपागच्छति उपागत्य सागरदारकस्य पार्श्वे (निवृज्जई)
 निपीदति=स्वपिति । ततः खलु स सागरदारकः सुकुमारिकाया दारिकाया
 'दुच्चपि' द्वितीयशरमपि इममेतद्रूपम् पूर्वोक्तप्रकारम् अङ्गस्पर्शं प्रतिसवेदयति
 यावद्-अक्रामोऽपस्वशो मुहूर्तमात्रं सतिष्ठति, ततः खलु स सागरदारकः
 सुकुमारिका दारिका सुखप्रसुप्ता ज्ञात्वा शयनीयात्=गम्यात् उत्तिष्ठति, उत्थाय
 वासगृहस्य=शयनगृहस्य द्वार 'विहाडेड' गिपाटयति = उद्घाटयति विघाटय
 'मारामुक्के विव काए' मारामुक्त इव कारुः=मार्यन्ते प्राणिनो यस्या सा मारा

मणुरत्ता पतिं पासे अपस्समाणी तलिमाउ उट्टेइ उट्टित्ता उवागच्छइ)
 वह सागरदारक उस सुकुमारिका दारिका को सुखसे सोई हुई जानकर
 उस सुकुमारिका दारिका के पास से उठ बैठा-और उठकर जहाँ अपनी
 शय्या थी वहाँ चला गया । वहाँ आकर उस पर पड़ गया इतने में ही
 एक मुहूर्त के बाद वह पति में अनुरक्त बनी हुई पतिव्रता सुकुमारिका
 दारिका जग गई और अपने पास पति को न देखकर अपने पलंग से
 उठ बैठी । उठकर वह जहाँ सागरदारक का पलंग था वहाँ गई ।
 (उवागच्छित्ता सागरस्स पासे णुवज्जइ) वहाँ जाकर वह उसके पास
 सो गई । (तएण से सागरदारए सुमालियाए दारियाए दुच्चपि इम
 एयारूवं अंगफासं पडिसवेदेइ जाव अक्रामए अवसव्वसे मुहुत्त
 मित्त सच्चिदइ, तएण से सागरदारए सुमालिय दारिय सुहपसुत्त

पडिबुद्धा समाणी पइवया पइमणुरत्ता पत्तिपासे अपस्समाणी तलिमाउ उट्टेइ
 उट्टित्ता उवागच्छइ)

ते सागर दारक ते सुकुमारिका दारिकाने सुभेधी सूतेवी नएणीने तेनी
 'पासेधी उठयो, अने उठीने न्या पोतानी शय्या इती त्या नतो रहो त्या
 नधने ते तेनी उपर पडी गयो अटलाभा अक मुहूर्त पडी पतिमा अनुरक्त
 भनेवी पतिव्रता सुकुमारिका दारिका नगी गध अने पोतानी पासे पति न नेता
 पोतानी शय्या उपरयी उठी अने जेठी गध त्थारपडी ते उठीने न्या सागर
 दारकनी शय्या इती त्या गध (उवागच्छित्ता सागरस्स पासे णुवज्जइ) त्थां
 नधने ते तेना पडभाभा सूध गध

(तएण से सागरदारए सुमालियाए दारियाए दुच्चपि इम एयारूवं अंगफासं
 पडिसवेदेइ जाव अक्रामए अवसव्वसे मुहुत्तमित्त सच्चिदइ, तएण से सागरदारए सुमा
 लिपि-रियं सुहपसुत्त जाणिचा सयणिज्जाओ उट्टेइ, उट्टित्ता वासवरस्स दार विहा-

प्रयत्नुमात् विहरति । ततः सन्तु म सागरदारकाभ्या अङ्ग स्वर्गममदमानोऽपस्व
 यतः=अभगा सातन्त्र्य , गत मुहूर्तमात्र गतिष्ठं । ततः सन्तु म सागरदारकः
 सुकृमारिकां दारिकां सुवपयुक्तां सागरा सुकृमारिकाया दारिकायाः पार्श्वत उतिष्ठति,
 उत्थाय यत्रैव स्वरु शयनीयं तत्रोपागच्छति, उवाग य शयनीये, ' निवृत्तम् '
 निषोदति स्वगितीत्यर्थः । ततः सन्तु सुकृमारिका दारिका तत्रो मूर्तान्तरे प्रति-
 बुद्धा=जागरिता सति पतिव्रता ' पश्यन्तरा ' प्रयनुक्ता स्वपति प्रत्यनुरागिनी,
 पार्श्वे पतिमपश्यन्ती ' तस्मात् ' तन्वात्=तयनीयाद् उतिष्ठति, उत्थाय यत्र

पच्चणुम्भप्रमाणे विहरत तएण से सागरण अंगफामं असहमाणे अब
 सन्वसे मुहुत्तमित्त भण्डिदइ) इसके बाद सागरदारक सुकृमारिका के
 साथ जहा वासगृह-शयन घर-था बर्ण गया रहा जाकर वह उस सुकृ
 मारिकाके साथर एक शय्यापर बैठ गया । बैठ जाने पर उस सागरदारक
 को सुकृमारिका दारिकाका अगस्पर्श इस रूपसे प्रनीत हुआ-जैसे मानो
 असिपत्र आदिका स्पर्श हो । इन असिपत्र (सर्दगको यात्रत) आदिको
 के स्पर्श से भी उसको वह अगस्पर्श यावन् अननामतरक ही था । इस
 प्रकार का उसका अगस्पर्श अनुभवता हुआ वह सागरदारक विवश
 बनकर वहा कुछ समय तक ठहरो बाद में जब उससे सहन नही
 हुआ तो । (तएण से सागरदारण सूमालिय दारिय सुहपसुत्त
 जाणित्ता सूमालियाए दरियाण पासउ उद्वेइ, उद्वित्तां जेणेव सए सय
 णिज्जे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सयणीयसि निवज्जइ, तएण
 सूमालिया दारिया तओ मुहत्ततरस्स पडिबुद्धा समाणी पहव्वया पइ

से सागरण अंगफास असहमाणे अबसन्वसे मुहुत्तमित्त संविदइ)

त्यारपधी सागर दारक सुकृमारिकानी साथे न्या वासगृह-शयनघर छु
 त्या गथे, त्या न्धने ते सुकृमारिकानी साथे एक शय्या ' उपर भेसी गथे
 ठेका भाइ ते सागर दारकने सुकृमारिका दारिकाने अग-स्पर्श' जेवा प्रकारने
 न्धायो के ते असिपत्र - तरवार वगेरेने स्पर्श' न होय । असिपत्र
 वगेरे करता पण तेने ' अग स्पर्श' यावत अभनेमतरक हुते आ रीते तेना
 अग स्पर्शने अनुभवते सागर दारक लायार थधने त्या थोडा वधत सुधी
 शेकाये अने त्यारभाइ न्यारे तेने ते स्पर्श' असह्य थध पडयो त्यारे

(तएण से सागरदारण सूमालिय दारिय सुहपसुत्त जाणित्ता सूमालियाए
 दरियाए पासउ उद्वेइ, उद्वित्तां जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ, उवा
 गच्छित्ता सयणीयसि निवज्जइ, तएण सूमालिया

‘से’ तस्य शयनीय तत्रैरोपागच्छति उपागत्य सागरदारकस्य पार्श्वे (निवृज्जई) निपीदति=स्वपिति । ततः खलु स सागरदारकः सुकुमारिकाया दारिकाया ‘दुच्चपि’ द्वितीयवारमपि इममेतद्रूपम् पूर्वोक्तप्रकारम् अङ्गस्पर्शं प्रतिसवेदयति यावद्—अकामकोऽपस्वयशो मुहूर्तमात्रं सतिष्ठति, ततः खलु स सागरदारकः सुकुमारिका दारिका सुखप्रसुप्ता ज्ञात्वा शयनीयात्=शय्यात् उत्तिष्ठति, उत्थाय वासगृहस्य=शयनगृहस्य द्वारं ‘विधाढेड’ विपाटयति = उद्घाटयति विधाटय ‘मारामुक्के त्रिं काए’ मारामुक्त इव काकः=मार्यन्ते प्राणिनो यस्या सा मारा

मणुरत्ता पतिं पासे अपस्समाणी तलिमाउ उट्टेइ उट्टित्ता उवागच्छइ) वह सागरदारक उस सुकुमारिका दारिका को सुखसे सोई हुई जानकर उस सुकुमारिका दारिका के पास से उठ बैठा—और उठकर जहा अपनी शय्या थी वहाँ चला गया । वहाँ आकर उस पर पड़ गया इतने में ही एक मुहूर्त के बाद वह पति में अनुरक्त बनी हुई पतिव्रता सुकुमारिका दारिका जग गई और अपने पास पति को न देखकर अपने पलंग से उठ बैठी । उठकर वह जहा सागरदारक का पलंग था वहा गई । (उवागच्छित्ता सागरस्स पासे णुवज्जइ) वहा जाकर वह उसके पास सो गई । (तण्ण से सागरदारए सुमालियाए दारियाए दुच्चपि इमं एयारूव अंगफास पडिसवेदेइ जाव अकामए अवसव्वसे मुहुत्तमित्त सच्चिद्धइ, तण्ण से सागरदारए सुमालिय दारिय सुहपसुत्त

पडिसुद्धा समाणी पडिवया पइमणुरत्ता पत्तिपासे अपस्समाणी तलिमाउ उट्टेइ उट्टित्ता उवागच्छइ)

ते सागर दारक ते सुकुमारिका दारिकाने सुपेथी सूतेवी नणीने तेनी पासेथी उड्ये, अने उडीने न्या पोतानी शय्या इती त्या नते रखो त्या नधने ते तेनी उपर पडी गये अट्टाभा अेक मुहूर्त पडी पतिमा अनुरक्त अनेवी पतिव्रता सुकुमारिका दारिका नगी गध अने पोतानी पासे पति न नेता पोतानी शय्या उपरथी उडी अने पेडी गध त्यारपडी ते उडीने न्या सागर दारकनी शय्या इती त्या गध (उवागच्छित्ता सागरस्स पासे णुवज्जइ) त्यां नधने ते तेना पडभाभा सुध गध

(तण्ण से सागरदारए सुमालियाए दारियाए दुच्चपि इम एयारूव अंगफासं पडिसवेदेइ जाव अकामए अवसव्वसे मुहुत्तमित्त सच्चिद्धइ, तण्ण से सागरदारए सुमालिय दारिय सुहपसुत्त जाणित्ता सयणिज्जाभो उट्टेइ, उट्टित्ता वासवरस्स दार विहा-

दना यथम्यान, तस्यामुक्तो निर्गताः काहः इव, 'दा-मागदू=मा-कपुम्पाशमुक्तः
=निर्मुक्त विन्दुद्विः काहो यथा वेगतो निर्गच्छति तद्वद्, यस्या पत्र दिग्मः
मादुर्भूतस्वामेर दिन प्रतिगतः ॥ सू० ९ ॥

मूलम्-तएणसूमालिया दारिया तओ मुहुत्तंतरस्स पडिबुद्धा
पइवया जाव अपासमाणी मयणिजाओ उट्टेड सागरस्स
दारियाए सब्बओ समता मग्गणगवेसुणं करेमाणीर वासघ
रस्स दार विहाडियं पासइ पामित्ता एव वयासी-गए से

जाणित्ता सयणिज्जाओ उट्टेड, उट्टित्ता वासघरस्स दार विहाडेई,
विहाडेत्ता मारामुक्के विव काए जामेव दिस्सि पाउब्भूए तामेव दिस्सि
पडिगए) सागरदारक को सुहुमारिका दारिका का अगरगजं दुवा
राभी वैया ही पूर्वोक्तरूप से अनुमत्र में आया-अन. उसके पास सोने
की इच्छा न होने पर भी वह विवशतोकर कुछ समय तक उसके पास
सोता रहा-जब वह अच्छी तरह सो गई-तब वह उसे सुरत प्रसुप्तजा
नकर उसके पास से उठा-और उठकर उसने उस वास गृह के दरवाजे
को खोला खोलकर जिस प्रकार 'मारामुक्त' काह घड़े वेगसे निकलता है
-उसी तरह यह भी बहुत जल्दी वहा से निकलकर जिस दिशा से
प्रकट हुआ था-उसी दिशा तरफ चोपिस चला गया। जिस में प्राणी
मारे जाते हैं उसका नाम मारा-शुना- वधस्थान है। इस मारा से
निकला हुआ अथवा मारनेवाले पुरुष के हाथ से छूटा हुआ-ऐसे ये दो
अर्थ " मारमुक्त " इस शब्द के हो सकते हैं। सू० ९

देई,विहाडित्ता मारामुक्के विव काए जामेव दिस्सि पाउब्भूए तामेव दिस्सि पडिगए)

सागर दारकने सुहुमारिकाने भीलवारने अग स्पशं पधु पडेलानी
नेमज लाये अटला भाटे तेनी पासे सूवानी धच्छा न होवा छत अे ते
विवश यधने थोडीवार सुधी तेनी पासे पडी रह्यो न्यारे ते सारी रीते सुधं
गर्ध त्यारे ते तेने सुभेथी सूती नालीने तेनी पासेथी उठ्यो अने उडीने
सेबु ते वासगृहना पारधुने उघाड्यु उघाडीने नेम मारा-मुक्ता कागडे नव्ही
नीकणी नय छे तेमज ते पधु नहु न त्वराथी त्याथी नीकणीने ने दिशा तरक्यी
आये छतो ते न दिशा तरक पाछे नतो रह्यो ने स्थाने प्राणीओ भारी
नाभवामा आवे छे तेनु नाम " मारा " (वधस्थान) छे आ ' मारा ' थी
पूडीने आम जे अर्थो ' मारामुक्त ' शब्दना थध शके छे ॥ अत्र ६ ॥

सागरे त्तिकट्टु ओहयमणसंरुप्पा जाव झियायइ, तएणं सा
 भदा सत्थवाही कळं पाउ० दास चेडियं सदावेइ सदावित्ता
 एवं वयासी-गच्छह णं तुम देवाणुप्पिए । बहुवरस्स मुह-
 धोवणियं उवणेहि, तएण सा दासचेडी भदाए एवं वुत्ता
 समाणी एयमट्ठं तहत्ति पडिसुणति, मुहधोवणिय गेणहइ
 गेणहत्ता जेणेव वासघरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 सूमालियं दारियं जाव झियायमाणिं पासइ पासित्ता एवं
 वयासी - किन्नं तुम देवाणुप्पिया । ओहयमणसंरुप्पा
 जाव झियाहिसि ?, तएणं सा सूमालिया दारिया तं दास-
 चेडी एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया । सागरए दारए
 मम सुहपसुत्तं जाणित्ता मम पासाओ उट्टेइ उट्टित्ता वास-
 घरदुवार अवगुणइ जाव पडिगए तएण तओ अह मुहुत्तं-
 तरस्स जाव विहाडियं पासामि, गए ण से सागरएत्तिकट्टु
 ओहयमण जाव झियायामि, तएण सा दासचेडी सूमालि-
 याए दारियाए एयमट्टु सोच्चा जेणेव सागरदत्ते तेणेव उवा-
 गच्छइ उवागच्छित्ता सागरदत्तस्स एयमट्टु निवेएइ, तएणं
 से सागरदत्ते दासचेडीए अतिए एयमट्टु सोच्चा निसम्म
 आसुरुत्ते जेणेव जिणदत्तस्स सत्थवाहस्स गिहे तेणेव उवाग-
 च्छइ उवागच्छित्ता जिणदत्तं एव वयासी-किण्णं देवाणु-
 प्पिया । एव जुत्तं वा पत्तं वा कुलाणुरूव वा कुलसरिसं
 वा जन्न सागरदारए सूमालियं दारिय अदिट्टुदोस पइवयं

विष्पजहाय इहमागओ ऋहृहिं सिञ्जणियाहि यं कंटणियाहि
य उवालभइ, तएणं जिणदत्ते सागरदत्तस्स एयमट्ट सोञ्चा
जेणेव सागरए दारए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता साग-
रयं दारयं एवं वयासी—दट्टुण पुत्ता ! तुमे कय सागरदत्तस्स
गिहाओ इह हव्यमागते, तेणं तं गच्छह णं तुमं पुत्ता !
एवमवि गए सागरदत्तस्स गिहे, तएणं से सागरए जिणदत्तं
एव वयासी—अवि आइ अह ताओ । गिरिपडणं वा तरुप
डणं वा मरुप्पवायं वा जलप्पवेस वा जलणप्पवेसं वा
विसभक्खणं वा सत्थोवाडण वा वेहाणस वा गिद्धापिट्टु वा
पवज्ज वा विदेसगमण वा अब्भुवगच्छिज्जामि नो खल्ल अहं
सागरदत्तस्स गिहं गच्छिज्जा, तएण से सागरदत्ते सत्थवाहे
कुडुतरिए सागरस्स एयमट्ट निसामेइ निसामित्ता लज्जिए
विलीए विडे जिणदत्तस्स गिहाओ पडिनिक्खमइ पडिनि-
क्खमित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
सुकुमालिय दारिय सदावेइ सदावित्ता अके निवेसेइ निवे-
सित्ता एव वयासी—किण्ण तुम पुत्ता ! सागरएण दारएणं
मुक्का ? अहणं तुम तस्स दाहामि जस्स णं तुम इट्ठा जावं
मणामा भविस्ससित्ति सूमालिय दारिय ताहि इट्ठाहि वग्गूहि
समासासेइ समासासित्ता पडिविसज्जेइ ॥ सू० १० ॥

टीका—‘ तएण ’ इत्यादि । ततः=तन्निर्गमनानन्तर खल्ल सुकुमारिका
दारिका ततो म्हुर्गन्वरे प्रतिबुद्धा=जागरिता सतो पतिव्रता यावत् पतिमपश्यन्ती

शयनीयात्=शय्यात् उच्छिष्टति, उक्त्वाय सागरस्स दारकस्य सर्वतः समन्ताद् मार्ग
णगवेपण कुर्वतीर वासगृहस्य=शयन-गृहस्य द्वार विनाटितम्=उद्धाटित पश्यति,
दृष्ट्वा एवमत्रादीत्-गतः स सागरद्वाराः, इति कृत्वा 'ओहयमणसरूपा' अपह
तमनः सरूपा=नष्टमगोरगा, यावत् ध्यायति=भार्त-ध्यान करोतिस्म । ततस्तदन
न्तर भद्रा सार्थवाही 'रूढ' कल्पे=द्वितीयदिग्से प्रादुः प्रभातार्यां रजन्या यावत्
तेजसा ज्वलति=दीपमाने सूर्ये उदिते दामचेटीना=दामपुरीं शब्दयति, शब्दयित्वा

'तएण सूमालिआ दारिया' इत्यादी ।

टीकार्य-(तएण) उसके बाद (सूमालिया दारिया) सुकुमारिका दारिका
(तओ मुहुत्तरस्स पडिबुद्धा पइयया जाव अपासमाणी) एक मुहुत्त
के बाद जग पडी-सो उम पतिव्रता ने बहा अपने पतिको जय नहीं देखा
तब (सयणिज्जाओ उट्टेइ, सागरस्स दारगस्स सब्बाओ समता मग्गण
गवेसण करेमाणी २ वासघरस्स दार विहाडिय पासइ, पासित्ता एव
वयासी) पलग से उठी उठकर उसने सागर दारक की वही पर सब
और घर २ मार्गण गवेपणा की- । जब उसने शयन गृह के दरवाजे
को उवड़ा हुआ देखा-तब उसे विचार आया कि (गये से सागरे त्ति
कहु ओहयमणसरूपा जाव झियायइ, तएण सा भद्दा सत्थवाही कल्ल
पाउ० दामचेडिय सदावेइ) कि सागर चले गये हे । इस प्रकार अप-
हतमनःसरूप होकर वह विचार में पड़ गई, इतने में भद्रा सार्थवा

(तएण सूमालिया दारिया इत्यादि—

टीकार्य-(तएण) त्थारणाइ (सूमालिया दारिया) सुकुमारिका दारिका
(तओ मुहुत्तरस्स पडिबुद्धा पइयया जाव अपासमाणी) एक मुहुत्त पडी
जगी गध ते पतिव्रताओ त्या पानाना पतिने न्यारे नेथा नडि त्यारे
(सयणिज्जाओ उट्टेइ, सागरस्स दारगस्स सब्बाओ समता मग्गणगवेसण
करेमाणी २ वासघरस्स दार विहाडिय पासइ, पासित्ता एव वयासी)

राध्या उपरधी जिली थध अने लारथली तेले त्याज आरुपाम थोमेर
सागर दारकनी मार्गणा-गवेपणा करी न्यारे तेले शयनगृहना पारखाने
उघारेले नेथु त्यारे तेने विचार आव्यो डे

(गए से सागरे त्तिरूहुओहयमणसरूपा जाव झियायइ, तएण मा
भद्दा सत्थवाही कल्ल पाउ दामचेडिय सदावेइ)

साग० जाता रह्या छे आ रीते अपहत मन सकल्पवाणी धधने ते

विष्पजहाय इहमागओ वृहृहिं सिञ्जणियाहि य कंटणियाहि
य उवालभइ, तएणं जिणदत्ते सागरदत्तस्स एयमट्ठ सोच्चा
जेणेव सागरए दारए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता साग-
रयं दारयं एवं वयासी-दट्ठुण पुत्ता ! तुमे कयं सागरदत्तस्स
गिहाओ इहं हव्वमागत्ते, तेणं तं गच्छह णं तुमं पुत्ता !
एवमवि गए सागरदत्तस्स गिहे, तएणं से सागरए जिणदत्तं
एव वयासी-अवि आइ अह ताओ ! गिरिपडणं वा तरुप
डण वा मरुप्पवाय वा जलप्पवेस वा जलणप्पवेस वा
विसभक्खण वा सत्थोवाडण वा वेहाणसं वा गिद्धापिट्ट वा
पवज्ज वा विदेसगमण वा अब्भुवगच्छिज्जामि नो खल्ल अहं
सागरदत्तस्स गिहं गच्छिज्जा, तएण से सागरदत्ते सत्थवाहे
कुडुतरिए सागरस्स एयमट्ठ निसामेइ निसामित्ता लज्जिए
विलीए विड्ढे जिणदत्तस्स गिहाओ पडिनिक्खमइ पडिनि-
क्खमित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
सुकुमालिय दारिय सहावेइ सहावित्ता अके निवेसेइ निवे-
सित्ता एव वयासी-किण्णं तुम पुत्ता ! सागरएण दारएणं
मुक्का ? अहंणं तुम तस्स दाहामि जस्स णं तुम इट्ठा जावं
मणामा भविस्ससित्ति सूमालिय दारिय ताहि इट्ठाहि वग्गूहि
समासासेइ समासासित्ता पडिविसज्जेइ ॥ सू० १० ॥

टीका—‘ तएण ’ इत्यादि । ततः=तन्निर्गमनानन्तर खल्ल सुकुमारिका
दारिका ततो ब्रह्मवर्षान्तरे प्रतिबुद्धा=जागरिता सती पवित्रता यावत् पतिमपश्यन्ती

शयनीयात्=गत्यात् उच्छिष्टति, उत्थाप सागरस्स दारकस्य सर्पतः समन्ताद् मार्ग
णगवेपण कुर्वती वासगृहस्य=शयन-गृहस्य द्वार विधाटितम्=उद्धाटित पश्यति,
दृष्ट्वा एवमवादीत्-गतः स सागरदा-रः, इति कृत्वा 'ओहयमणसकृपा' अपह
तमनः सकल्पान्नष्टमगोरथा, यावत् ध्यायति=भार्त-यान करोतिस्म । तत्रतदन
न्तर भद्रा सार्धवाणी 'रुह' कल्पे=द्वितीयदिग्से प्रादुः प्रमातार्या रजन्था यावत्
तेजसा ज्वलति=दीप्यमाने ग्र्ये उदिते दामचेटीना=दामपुत्री शब्दयति, शब्दयित्वा

'तएण सुमालिया दारिया' इत्यादी ।

टीकार्थ-(तएण) इसके बाद (सुमालिया दारिया) सुकुमारिका दारिका
(तओ मुहुत्तरस्स पडिबुद्धा पइवया जाव अपासमाणी) एक मुहुत्त
के बाद जग पडी-सो उस पतिव्रता ने वहा अपने पतिको जय नहीं देखा
तथ (सयणिज्जाओ उट्टेइ, सागरस्स दारगस्स सब्वाओ समता मग्गण
गवेसण करेमाणी २ वासपरस्स दार विहाडिय पासइ, पासित्ता एव
वयासी) पलग से उठी उठकर उसने सागर दारक की वही पर सव
और धार २ मार्गण गवेपणा की- । जय उसने शयन गृह के दरवाजे
को उघड़ा हुआ देर 1-तब उसे विचार आया कि (गये से सागरे त्ति
कहु ओहयमणसकृपा जाव झियायइ, तएण सा भद्दा सत्यवाही कल्ल
पाउ० दासचेडिय सदावेइ) कि सागर चले गये हैं । इस प्रकार अप-
हतमनःसकल्प होकर वह विचार में पड गई, इतने में भद्रा सार्धवा

(तएण सुमालिया दारिया इत्यादि—

टीकार्थ-(तएण) त्याख्या (सुमालिया दारिया) सुकुमारिका दारिका
(तओ मुहुत्तरस्स पडिबुद्धा पइवया जाव अपासमाणी) एक मुहुत्त पडी
लगी गर्ध ते पतिव्रताओ त्या पेताना पतिने न्यारे जेथा नहि त्यारे

(सयणिज्जाओ उट्टेइ, सागरस्स दारगस्स सब्वाओ समता मग्गणगवेसण
करेमाणी २ वासपरस्स दार विहाडिय पासइ, पासित्ता एव वयासी)

शय्या उपरथी लली गर्ध अने त्यारपथी तेणे त्याज आरुपास ओमेर
सागर दाकनी मार्गणा-गवेपणा करी न्यारे तेणे शयनगृहना पारणाने
उघारेणु जेथु त्यारे तेने विचार आये २

(गए से सागरे त्तिरुहुओ ओहयमणसकृपा जाव झियायइ, तएण सा
भद्दा सत्यवाही कल्ल पाउ दासचेडिय सदावेइ)

सागर जाता रह्या छे आ रीते अपडत मन सकल्पवाणी गर्धने ते

विष्पजहाय इहमागं वृहृहिं रिज्जणियाहि यं रुंणियाहि
य उवालभइ, तण्णं जिणदत्ते सागरदत्तस्स एयमट्ट सोच्चा
जेणेव सागरए दारए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता साग-
रयं दारय एवं वयासी-दट्टुणं पुत्ता ! तुमे कय सागरदत्तस्स
गिहाओ इह हव्यमागते, तेणं तं गच्छह णं तुमं पुत्ता !
एवमवि गए सागरदत्तस्स गिहे, तण्णं से सागरए जिणदत्त
एवं वयासी-अवि आइ अह ताओ ! गिरिपडणं वा तरुप
डण वा मरुपवायं वा जलप्पवेसं वा जलणप्पवेस वा
विसभक्खणं वा सत्थोवाडण वा वेहाणस वा गिद्धापिट्ट वा
पवज्ज वा विदेसगमणं वा अब्भुवगच्छिज्जामि नो खल्ल अहं
सागरदत्तस्स गिहं गच्छिज्जा, तण्ण से सागरदत्ते सत्थवाहे
कुडुतरिए सागरस्स एयमट्ट निसामेइ निसामित्ता लज्जिए
विलीए विडुं जिणदत्तस्स गिहाओ पडिनिक्खमइ पडिनि-
क्खमित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
सुकुमालिय दारिय सदावेइ सदावित्ता अके निवेसेइ निवे-
सित्ता एव वयासी-किण्णं तुम पुत्ता ! सागरएण दारएणं
मुक्का ? अहंणं तुम तस्स दाहामि जस्स णं तुम इट्ठा जाव
मणामा भविस्ससित्ति सूमालिय दारिय ताहि इट्ठाहि वग्गूहि
समासासेइ समासासित्ता पडिविसज्जेइ ॥ सू० १० ॥

टीका—‘ तण्ण ’ इत्यादि । ततः=तन्निर्गमनानन्तर खल्ल सुकुमारिका
दारिका ततो मूर्ध्वान्तरे प्रतिबुद्धा=जागरिता सतो पतिव्रता यावत् पतिमपश्यन्ती

हे देवानुप्रिये ! हे सुकुमारिके ! किं=कृतः खलु त्वम् अपहतमनः सकल्पा यावत्
ध्यायसि ?, ततस्तदनन्तर सा सुकुमारिका दारिका ता दामचेटीमेवमादीत्-हे
देवानुप्रिये ! एव खलु सागरको दारको मा सुखमसुप्ता ज्ञात्वा मम पार्श्वोदुत्तिष्ठति,
उत्थाय वासगृहद्वारम् ' अत्रगुणइ ' जागुणयति=अपाट्टणोति उद्पाटयति, 'यावत्
प्रतिगत ' यस्याः एव दिशः प्रादुर्भूतस्तामेव दिश प्रतिगत । ततस्तदनन्तर खलु
' तओ ' ततो मुहूर्तान्तरेऽह यावत्-प्रतिबुद्धा सती सागरदारकमपश्यन्ती शयना
दुत्तिष्ठामि, उत्थाय तस्य मार्गणगवेपण कुर्वती वासगृहस्य द्वार विपाटित पश्यामि
गतः खलु स सागरकः ' इति कृत्वा=इति हेतोरहम् अपहतमनः सकल्पा यावद-

चिन्ता मग्न देखा-देखकर उसने उससे पूछा कि हे देवानुप्रिये ! क्या
कारण है जो आप अपहतमन' सकल्पा होकर चिन्ता मग्न बनी हुई
हो ? इस दासचेटी के प्रश्नको सुनकर उस सुकुमारिका ने उस से
कहा-देवानुप्रिये-सुनो-सागरदारक मुझे सुग्न प्रसुप्त जानकर मेरे
पास से उठे और उठकर वासगृह के दरवाजे को गोलकर जहा
से आये थे वहाँ चले गये हैं । (तए ण तओ अह मुहुत्तरस्म
जाव विहाडिय पासामि गएण से सागरए त्तिकहु ओहयमाण
जाव झियायामि, तए ण सा दासचेडी सुमालियाए दारियाए एयमट्ट
सोच्चा जेणेव सागरदत्ते तेणेव उवागच्छइ) उसके बाद ज्योही में
जगी-तो मैंने जब सागर दारक को अपने पास नहीं देखा-तो मैं शय्या
से उठ बैठी-और उठकर मेने उनकी यही पर सब तरफ मार्गण गवे-
पणाकी उसमे मेने वासगृह के दरवाजे उघडा पाया-तब मैं समझ

जधने तेणे सुकुमारिका दारिकाने चिन्तामा गमगीन जेध जेधने तेणे तेने
पूछथु के हे देवानुप्रिये ! सा दारणथा तमे अपहत मन सकल्पा थधने
चिन्तामा जेडा छे ? दासचेटीना प्रश्नने सालणीने ते सुकुमारिका जे तेने कथु-
के हे देवानुप्रिये ! सालणी, सागर दारक भने सुपेयी सती जण्णीने भारी
पासेथी उला थया अने उला थधने वासगृहना पारणाने उधाडीने न्याथी
आव्या छता, त्या जता रक्षा छे

(तएण तओ अह मुहुत्तरस्म जाव विहाडिय पासामि गएण से सागरए
त्तिकहु ओहयमाण जाव झियायामि, तएण सा दासचेडी, सुमालियाए दारियाए
एयमट्ट सोच्चा जेणेव सागरदत्ते तेणेव उवागच्छइ)

त्यार पछी न्यारे हु जग्री त्यारे मे सागर दारक ने भारी पासे जेये
नहि, हु शय्या उपर उडा अने जेडी थध गध अने त्यार पछी मे अर्डी ज
तेमनी जधे मार्गण-गवेपणा करी मे न्यारे वासगृहना पारणाने उधाडु जेथु
के तेजे आव्या गया छे आ विद्याथी ज हु अपहत

एवमसादीन्-हे देवानुभिरे ! मन्त्र मन्त्र ता ' मन्त्ररस्य ' मन्त्रयो ' मन्त्रिणे
 ' मुहधोवणिय ' गुण मन्त्रिणं=दन्त मन्त्रिणात् ' उरणेहि ' उपनय=प्रापय ।
 ततः तलु सा दासचेटी भद्रा साधराणा एवमुक्तामती ' एवमद्र ' एतमर्थम्=
 एतद्वचन ' तथा ऽनु ' इति ग मन्त्रिणोनि, प्रतिश्रु य ' मुहधोवणिय ' मुख
 धावनिनां वृत्तानि, गृहीत्वा गैत्रेण तासणः तैरोरागन्तनि, उवागन्त्य सुकुमारिकां
 दारिकामेकाकिनी यासु प्रायती-भार्त यान र्ती पश्यति दृष्ट्वा एवमसादीन्-
 हीने द्वितीय दिन प्रातः काल गेते ही दासपुत्री को पुलाया (महाविष्ठा
 एव वयासी गच्छत ए तुम देवाणुप्पिए । मन्त्ररस्य मुहधोवणिय उवणेहि
 तएण सा दासचेटी भद्रा एव युक्ता समानी एवमद्र तहत्ति पडि
 सुणति मुहधोवणिय गेण्हइ, उवागच्छित्ता, सुमालिय दारिय जाव
 झियायमार्णि पासइ, पासित्ता एव वयासी-किन्न तुम देवाणुप्पिया ।
 ओहमणसकृपा जाव झियादिसि ? तएण सा सुमालिया दारिया त
 दासचेटी एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया सागरण दारण मम
 सुहपसुत्त जणित्ता मम पासोओ उट्टेइ, उट्टित्ता वासघरदुवार अवगु
 णइ, जाव पडिगए) बुलाऊर उससे ऐसा कहा कि हे देवाणु प्रिय 'तूजा,
 और बधुवर के पास इस दन्त धावन आदिरूप मुख धावनिका को लेजा
 भद्रा के इस कथन को उस दासचेटी ने " तहत्ति " कहकर स्वीकार
 कर लिया-और मुख धावनीको को ले लिया-और लेकर फिर वह जहाँ
 वासगृह था-वहाँ गई । वहाँ पहुँचकर उसने सुकुमारिका दारिका को

थिताभा गभगीन थध गध अटलाभा भीन दिवसे सवारे लद्रासार्थवाडीअ
 दासपुत्रीने बोलावी

(सहाविष्ठा एव वयासी गच्छत ए तुम देवाणुप्पिए ! बहुरस्य मुहधोवणिय
 उवणेहि, तएण सा दासचेटी भद्रा एव युक्ता समानी एवमद्र तहत्ति पडिसुणति
 मुहधोवणिय गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेण वासघरे तेणेण उवागच्छत, उवागच्छित्ता,
 सुमालिय दारिय जाव झियायमार्णि पासइ पासित्ता एव वयासी-किन्न तुम
 देवाणुप्पिया ओहमणसकृपा जाव झियादिसि ? तएण सा सुमालिया दारिया
 त दासचेटी एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! सागरण दारण मम सुहपसुत्त
 जणित्ता मम पासोओ उट्टेइ, उट्टित्ता वासघरदुवार अवगुणइ, जाव पडिगए)

बोलावाने तेने आ प्रभाणे कहु उे उे देवानुप्रिये ! तु वरवधुनी पासे
 आ इतधावन वगेरे भुभधावनिका लधे ल लद्राना आ कथनेने साभणीने
 ते दासचेरीअ " तहत्ति " कहीने तेने स्वीकारी लीधु अने भुभधावनिका
 (दातणु) ने लधे लीधु अने लधेने ने न्या वानगृह उंतु आ गध आ

विप्रहाय=त्यन्तया इहागतः-कथमेतद् युक्त, यत् निर्दोषा सुकुमारिका विहाय सागरदारकोऽत्र समायात इति । एव गृहोभिः ' खिञ्जणियादि य ' खेदनिकामिः= खेदपूर्णाभिस्तथा ' स्तणियादि य '=स्तणियाभिः देशीयोऽय गच्छः, रोदनक्रियायुक्ताभिः वाग्भिः उपात्तभते=सागरदत्तो जिनदत्तस्य उपात्तम् करोतीत्यर्थः ।

तत खलु जिनदत्तः सार्धं गृह सागरदत्तस्य सार्धं गच्छन्त्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निश्चय्य यत्रैव सागरदारकस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सागरक दारकं स्वपुत्रमेव= वक्ष्यमाणप्रकारेण अत्रादीत्-हे पुत्र ! त्वया खलु दुष्टु=अशोभन कृतम् यत्-सागरदत्तस्य सार्धं गृहस्य गृहादिह हव्यमागतः, तत्=तस्माद् गच्छ खलु त्व हे पुत्र ! एवमपि=यथास्थितस्तत्रैव सागरदत्तस्य सार्धं गृहस्य गृहम् । सागरदारको जिनदत्तं सार्धं गृहमेवमादीत्-हे तात ! अपि=निश्चयेन ' आइ ' इति वाक्यालंकारे अह

दारिय अदिद्वदोस पहवय विप्पजहाय इह मागओ बहृहिं खिञ्जणियादि य रुट्टणियादि य उवाळभइ) हे देवानुप्रिय ! क्या यह धान योग्य है-अथवा कुलमर्यादा के लायक है, या कुल की योग्यता के अनुसार है या कुल को शोभित करे ऐसी है, जो सागरदारक बिना किसी दोषके देखे-पतिव्रता सुकुमारिका दारिका को छोड़कर यहा आ गया है इस प्रकार अनेक खेदपूर्ण एवं रोदनक्रिया युक्त वचनोंसे सागरदत्तने अपने सन्धी जिनदत्तको ठपका-उलाहना दिया । (नण्णं जिणदत्ते सागरदत्तस्स एयमट्ट सोच्चा जेणेव सागरए दारए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सागरय दारय एववयासी-दुट्टुण पुत्ता तुमे कय, सागरदत्तस्स गिहाओ इह हव्वमागए, तेण त गच्छइ ण तुम पुत्ता ! एवमविगए, सागरदत्तस्स गिहे, तएण से सागरए जिणदत्त एव वयासी-अवि आइ अह ताओ !

हे देवानुप्रिय ! शु आ वात वाग्णी छे ? कुण भयादाने लायक छे ? अथवा तो कुणनी योग्यता मुग्ण छे ? कुणने शोभावनारी छे ? ते ते सागर दारक देअ पणु नतना दोष नेया वगर पतिव्रता सुकुमारीअ दारिकाने त्यलने अर्ही आवी गथे छे ? आ गीते मनने दुवावनारा तेमग् गणगणा यनि रउता रउता धणुा वथनेअथी सागरसे पोताना वेवाअ जिनदत्तने षपडे आथे । (तएण जिणदत्ते सागरदत्तस्स एयमट्ट सोच्चा जेणेव सागरए दारए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सागरय दारय एव वयासी-दुट्टुण पुत्ता तुमे कय सागरदत्तस्स गिहाओ इह हव्वमागए, तेण त गच्छइ ण तुम पुत्ता ! एवमविगए, सागरदत्तस्स गिहे, तएण से सागरए जिणदत्त एव वयासी-अवि आइ अह

आर्तध्यानभ्यायामि । ततः सत्रु सा सागरेटी सुकृमारिकाया गणिकाया अन्तिके
 एतमर्थं श्रुत्वा, तत्रैव सागरदत्त सार्थगाह=सुकृमारिकाया पिता, तत्रैवोपा
 गच्छति, उपागत्य त सागरदत्तमेतमर्थं निवेदयति । ततस्तदनन्तरं स सागरदत्तः
 सार्थवाहो दासचेटीया अन्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निश्चय्य आशुम्पत्.=गीघ्र क्रोधाभिष्टः
 सन्न यत्रैव जिनदत्तस्य सार्थगाहस्य गृहं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य जिनदत्त
 सार्थगाहमेतमवादीत्-हे देवानुमिय ! किं=कथं सत्रु पय युक्तम्=उत्तित वा प्राप्त=
 कुलमर्यादामनुभाप्त वा कुलानुरूप=कुलयोग्यतानुरूप वा कुलवदृश्य=कुलमाम्यापन्न
 वा, यत् सल्ल सागरो द्वारः सुकृमारिका गारिकामदृशोपा=निर्दोषा पतिव्रता

गई किं वे चले गये है इम विचार से में अपहृतमनः सरूप होकर
 आर्तध्यान-चिन्ता-में पड़ रही हूँ । इस प्रकार सुकृमारिका की बात
 सुनकर वह दासचेटी बहुत सोच विचार करके वहाँ से सागरदत्त
 के पास आई । (उवागच्छित्ता सागरदत्तस्त एयमदृ निवेण्ड-तण्ण
 से सागरदत्ते दासचेटीण अतिण एयमदृ सोच्चा निसम्म आसुरत्ते
 जेणेव जिनदत्तस्त सत्थवाहस्त गिहे तेणेव उवागच्छह-उवागच्छित्ता
 जिनदत्त एव वयासी) वहाँ आकर उसने सागरदत्त से इस बात को
 कहा-। इस तरह दासचेटी के मुख से इस बात को सुनकर और उसे
 हृदय में धारण कर सागरदत्त बहुत अभिष-क्रुद्ध हुआ-और उसी
 समय जहाँ जिनदत्त सार्थगाह का घर था वहाँ गया । वहाँ जाकर
 उसने जिनदत्त से इस प्रकार कहा-(किण्ह देवाणुप्पिया ! एव जुत्त
 वा पत्त वा कुलाणुरूप वा कुलसरिस वा जन्न सागरदारणं समालिय

मन सकल्प यधने आर्तध्यान-चिन्ता-मा पडी छु आ रीते सुकृमारिकाणी वात
 साभणीने ते दास चेटी भूषण विचार करीने त्याथी सागरदत्तणी पास गई
 उवागच्छित्ता सागरदत्तस्य एयमदृ निवेण्ड=तण्ण से सागरदत्ते दासचेटीए
 अतिण एयमदृ सोच्चा निसम्म आसुरत्ते जेणेव जिनदत्तस्त सत्थवाहस्त गिहे
 तेणेव उवागच्छह-उवागच्छित्ता जिनदत्त एव वयासी)

त्या आवी ने तेले सागरदत्तने आ वात करी आ रीते दास चेटीना
 भुषणी भधी विगत साभणीने अने तेने हृदयमा धारण करीने सागर दत्त
 अत्यंत गुस्से थये अने तरत न न्या जिनदत्त सार्थवाहनु घर छतु त्या
 गये त्या नधने तेले जिनदत्त सार्थवाहने आ प्रभावे कहु के

(किण्ह देवाणुप्पिया ! एव जुत्त वा पत्त वा कुलाणुरूप वा कुलसरिस वा
 जन्न सागरदारणं समालिय दरियं अदिद्वदोस पइयय विप्पजहाय इहमागओ
 वहुहिं खिज्जणियाहि य रूणिियाहि य उवालमइ)

विप्रदाय=त्यक्त्वा इहागतः-ऋथमेतद् युक्तं, यत् निर्दोषा सुकुमारिका विहाय सागरदारकोऽत्र समायात इति । एव गृहीभिः 'खिञ्जणियाहि य' खेदनिकामिः=खेदपूर्णाभिस्तथा 'रुटणियाहि य' =रुटणियाभिश्च देशीयोऽयं शब्दः, रोदनक्रियायुक्ताभिः वाग्भिः उपालभते=सागरदत्तो जिनदत्तस्य उपालम्भ करोतीत्यर्थः ।

तत खलु जिनदत्तः सार्थवाह सागरदत्तस्य सार्थवाहस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य यत्रैव सागरदारकस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सागरक दारक स्वपुत्रमेव=वक्ष्यमाणप्रकारेण अत्रादीत्-हे पुत्र ! त्वया खलु दुष्टु=अशोभन कृतम् पत-सागरदत्तस्य सार्थवाहस्य गृहादिह हव्यमागतः, तत्=तस्माद् गच्छ खलु त्व हे पुत्र ! एवमपि=यथास्थितस्तत्रैव सागरदत्तस्य सार्थवाहस्य गृहम् । सागरदारको जिनदत्तं सार्थवाहमेवमत्रादीत्-हे तात ! अपि=निश्चयेन 'आइ' इति वाक्यालकारे अह

दारिय अदिद्वदोस पद्वय विप्पजहाय इह मागओ वहुहिं खिञ्जणियाहि य रुटणियाहि य उवालभइ) हे देवानुप्रिय ! क्या यह धान योग्य है-अथवा कुलमर्यादा के लायक है, या कुल की योग्यता के अनुसार है या कुल को शोभित करे ऐसी है, जो सागरदारक बिना किसी दोषके देखे-पतिव्रता सुकुमारिका दारिका को छोड़कर यहा आ गया है इस प्रकार अनेक खेदपूर्ण एव रोदनक्रिया युक्त वचनोंसे सागरदत्तने अपने सबधी जिनदत्तको ठपका-उलाहना दिया । (तएणं जिणदत्ते सागरदत्तस्स एयमद्व सोच्चा जेणेव सागरए दारए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सागरय दारय एववयासी-दुट्टुण पुत्ता तुमे कय, सागरदत्तस्स गिहाओ इह हव्वमागए, तेण त गच्छह ण तुम पुत्ता ! एवमविगए, सागरदत्तस्स गिहे, तएण से सागरए जिणदत्त एव वयासी-अवि आइ अह ताओ !

हे देवानुप्रिय ! शु आ बात वाञ्छी छे ? कुण भयादाने लायक छे ? अथवा तो कुणनी योग्यता मुञ्च छे ? कुणने शोभावनारी छे ? ते जे सागर दारक ठाई पणु नतना दोष जेया वगर पतिव्रता सुकुमारिका दारिकाने त्यजने अर्ही आवी गये छे ? आ रीते मनने दुणावनारा तेभज गणगणा यधने रउता रउता धणु वचनेथी सागरसे पोताना वेवाधं जिनदत्तने ठपडे आथे । (तएण जिणदत्ते सागरदत्तस्स एयमद्व सोच्चा जेणेव सागरए दारए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सागरय दारय एव वयासी-दुट्टुण पुत्ता तुमे कय सागरदत्तस्स गिहाओ इह हव्वमागए, तेण त गच्छह ण तुम पुत्ता ! एवमविगए, सागरदत्तस्स गिहे, तएण से सागरए जिणदत्त एव वयासी-अवि आइ अह

तमाप्या गिरिपवन वा तरुपवन वा मरुपपान वा=निर्जलप्रदेशगमन वा जल्पपात
 वा=अगाधजले पतन वा, जलनप्रवेश वा जलप्रदेश प्रवेश वा विपमक्षणं वा,
 'सत्योवाडण वा' यथापवाटन वा=जो वा जलसंरक्षण वा, 'वेदाणस वा'
 वैहायस वा पण्डे पाशप्रक्षण वा, तथा-वृणापृष्ठ=टां: स्पर्शनं मया गोप्या
 दीना कलेसरे प्रवेक्षितस्य गरीस्य मृानुडम मृर्मभक्षण, यथा प्रवज्या वा, विदश-

गिरिपडण वा तरुपडण वा मरुपपान वा जलपवेस वा जलणपवेस वा
 विसमक्षण वा सत्योवाडण वा वेदाणस वा गिद्धापिट्ट वा परज्ज वा
 विदेसगमण वा अब्भुवगच्छिज्जामि, नो खलु अह सागरदत्तस्स गिह गच्छिज्जामि)
 जिनदत्त सागरदत्त के इस उल्लाहने रूप अर्थ को सुन
 करके जहाँ सागरदारक था वहाँ गया-वहाँ जाकर उसने सागर दारक
 से इस प्रकार कहा-हे पुत्र ! यह तुमने अच्छा नहीं किया-जो तुम
 सागरदत्त के घर से यहाँ इतने जल्दी आ गये । इमलिये हे बेटा !
 तुम जैसे यहाँ बैठे हो वैसे ही सागरदत्त के घर चले जाओ । तब
 सागरदारकने अपने पिता जिनदत्त से इन् प्रकार कहा-पिताजी ! मैं
 आपकी आज्ञा से पर्वत से गिरना स्वीकार कर सकता हूँ, वृक्ष से
 नीचे पड़जाना स्वीकारकर सकता हूँ-मरुप्रपात-निर्जलप्रदेश में जाना
 अगीकारकर सकता हूँ, अगाधजल में डूबकर मरसकता हूँ तथा जलती
 हुई अग्नि में प्रवेश करना, विपकाभक्षण करना, शस्त्र से शरीर का

ताओ । गिरिपडण वा तरुपडणं वा मरुपपानाय वा जलपवेस वा जलणपवेस
 वा विसमक्षण वा सत्योवाडण वा वेदाणस वा गिद्धापिट्ट वा परज्ज वा
 विदेसगमण वा अब्भुवगच्छिज्जामि, नो खलु अह सागरदत्तस्स गिह गच्छिज्जामि)
 जिनदत्त सागरदत्तना आ कपकाने सालणीने न्या सागर दारक छेता
 त्या गथे अने त्या जधने तेछे सागर दारकने आ प्रभाण्णे कहु के छे पुत्र !
 तमे आ जे कर्ध कर्धुं छे, ते सारु न कडेवाय तमे सागरदत्तना घेरथी
 आटला जेही आवता रखा आ ठीक नथी जेथी छे जेटा । तमे अत्यारे
 जेवी स्थितिमा छे तेवी अ स्थितिमा सागरदत्तने घेर जता रडेा त्यारे
 सागर दारके पोताना पिताने आ प्रभाण्णे कहु के छे पितथी ! तभारी आ
 साथी हु पर्वत उरथी नीचे गणडी पडवु स्वीकारी शकु छु, वृक्ष उपरथी
 नीचे पडी जवुं स्वीकारी शकु छु, मरुप्रपात-निर्जल प्रदेशमा जवु स्वीकारी
 शकु छु, छिडा पाणीमा सूथीने भरी शकु छु, तेमज सजगता अग्निमा
 प्रवेशवु, विपकु लक्षणु करवु, शस्त्राघाथी शरीर ने कापवु, गणा तो

गमन वा अभ्युपगच्छामि=स्वीकरोमि किंतु खलु=निश्चयेन सागरदत्तस्य सार्थवाहस्य
 गृहे नैवगच्छामि । ततस्तदा-स सागरदत्तः सार्थवाहः कुडयान्तरित = भित्तिव्य-
 वधानेन स्थितः सागरस्य दारकस्य एतमर्थम्=उक्त उचन निशामयति=शृणोति,
 निशाम्य लज्जित स्वयं, व्रीडितः परतः ' विडे ' गिडुः=देहीयोऽय शब्दः स्वप-
 रतोलज्जितः, जिनदत्तस्य गृहात् प्रतिनिष्क्रामति=निर्गच्छति । प्रतिनिष्क्रम्य
 यत्रैव स्वरु गृह तत्रोपगच्छति, उपागत्य सुकुमारिका दारिका शब्दयति, शब्द-
 पित्वा अङ्के=उत्सदे ' निवेसेऽ ' निवेशयति= उपवेशयति, निवेश एवमादीत्-हे
 पुत्री । किं=केन कारणेन खलु त्वं सागरण दारकेण ' मुक्ता ' मुक्ता=त्यक्ता ? ।

विदारण करना गले में फासी लगाकर घरजाना, गज, उष्ट्र आदि के
 मृतकलेवर में मैं अपने आपको प्रद्विष्ट कराकर उस शरीरको नृत्यबुद्धि
 की कल्पना से गृह पक्षियों द्वारा भक्षण करवाना यह सब मैं स्वीकार
 कर सकती हूँ, इमी तरह दीक्षागृहण करना जवना विदेश में चलेजाना
 भी स्वीकारकर सकती हूँ-परन्तु मैं सागरदत्त के घरजानास्वीकार नहीं
 कर सकती हूँ । अर्थात् ये सब पूर्वोक्त आपकी आज्ञाएँ मुझे विना किसी
 सकोचके या विचारके मान्य हैं परन्तु सागरदत्तके घरजाना मुझे मान्य
 नहीं है । (तएण से सागरदत्ते सत्यवाहे कुडुतरिण सागरस्स एयमद्व नि
 सामेड, निसामित्ता लज्जिए, विलीए, विडे जिनदत्तस्स गिहाओ पडिनि-
 क्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
 सुकुमालियं दारिय सदावेड, सदावित्ता अकेनिवेसेड, निवेशित्ता एव
 वयासी, किण्ण तुम पुत्ता सागरएण दारएण मुक्का? अह ण तुम तस्स

लेखनीने मरु, हाथी छोट वगेरेना भरेका शरीरमा प्रवेश करी मास शरी
 रने मृत्युबुद्धिनी कल्पनाथी गीध पक्षीओने जवडावलु आ जधु हु स्वीकारी
 शकु तेम छु, तेवी ज रीते दीक्षा अहणु करवी अथवा तो परदेराभा जता
 रहेवु पणु हु स्वीकारी शकु छु पणु हु सागरदत्तना घेर जलु स्वीकाग्वा तैयार
 नथी ओटके के आ जधी उपरनी तभारी आज्ञाओ भने डोअं पणु जतना
 विचार कथा वगर मान्य छे, पणु सागरदत्तने त्या जलु मान्य नथी

(तएण से सागरदत्ते सत्यवाहे कुडुतरिण सागरस्स एयमद्व निमामेड, निसामित्ता
 लज्जिए, विलीए, विडे, जिनदत्तस्स गिहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता
 जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सुकुमालियं दारिय सदावेड,
 सदावित्ता अके निवेसेड, निवेशित्ता एव वयासी किण्ण पुत्ता सागरएण दारएण

तथापि गिरिपतन वा तरुपतन वा मरुप्रपात वा=निर्जलप्रदेशगमन वा जम्प्रपात
 वा=अगाधजले पतन वा, जलप्रवेश वा जम्प्रदेश मंत्र वा विपमक्षणं वा,
 'सत्योवाडण वा' शूद्रावाडण वा=उभेन शरीरविचारण वा, 'वेदाणम वा'
 वैहापस वा कण्ठे पाशमग्रहण वा, तथा-शृणाप्यष्ट=शृणाः स्पर्शन मया गनोप्रा
 दीना कलेररे प्रवेगितस्य गरीरस्य शृणाप्यष्ट वा शृणाप्यष्ट, तथा प्रवज्या वा, विद्वज्

गिरिपडण वा तरुपडण वा मरुप्रपाय वा जलप्रवेश वा जलणप्रवेश वा
 विममन्वण वा सत्योवाडण वा वेदाणम वा गिद्रापिड वा पवज्ज वा
 विदेसगमण वा अश्रुवगच्छिज्जामि, नो खलु अह सागरदत्तस्म गिह
 गच्छिज्जामि) जिनदत्त सागरदत्त के इस उल्लारने रूप अर्थ को सुन
 करके जहाँ सागरदारक था चला गया-वहाँ जाकर उमने सागर दारक
 से इस प्रकार कता-हे पुत्र ! यह तुमने अच्छा नहीं किया-जो तुम
 सागरदत्त के घर से यहा इतने जल्दी आ गये । इमलिये हे बेटा !
 तुम जैसे यहा बैठे हो वैसे ही सागरदत्त के घर चले जाओ । तब
 सागरदारकने अपने पिता जिनदत्त से इस प्रकार कहा-पिताजी ! मैं
 आपकी आज्ञा से पर्वत से गिरना स्वीकार कर सकता हूँ, वृक्ष से
 नीचे पड़जाना स्वीकारकर सकता हूँ-मरुप्रपात-निर्जलप्रदेश में जाना
 अंगीकारकर सकता हूँ, अगाधजल में डूबकर मरसकता हूँ तथा जलती
 हुई अग्नि में प्रवेश करना, विपकामक्षण करना, शस्त्र से शरीर का

ताओ ! गिरिपडण वा तरुपडण वा मरुप्रपाय वा जलप्रवेश वा जलणप्रवेश
 वा विममन्वण वा सत्योवाडण वा वेदाणम वा गिद्रापिड वा पवज्ज वा
 विदेसगमण वा अश्रुवगच्छिज्जामि, नो खलु अह सागरदत्तस्म गिह गच्छिज्जामि)
 जिनदत्त सागरदत्तना आ ४५४कने साबणीने न्या सागर दारक डतो
 त्या गथे अने त्या जधने तेणे सागर दारकने आ प्रभाणे कछु के डे पुत्र !
 तमे आ जे कर्ष कर्षुं छे, ते सारु न कडेवाय तमे सागरदत्तना घेरथी
 आटला जट्टी आवता रहा आ हीक नथी अथी डे जेटा ! तमे अत्यारे
 जेवी स्थितिमा छे तेवी अ स्थितिमा सागरदत्तने घेर जाता रडे। त्यारे
 सागर दारके पोताना पिताने आ प्रभाणे कछु के डे पितथी ! तभारी आ
 साथी हु पर्वत उरथी नीचे गभडी पडवु स्वीकारी शकु छु, वृक्ष उपरथी
 नीचे पडी जवु स्वीकारी शकु छु, मरुप्रपात-निर्जल प्रदेशमा जवु स्वीकारी
 शकु छु, छिडा पाणीमा डूणीने मरी शकु छु, तेमज सगता अग्निमा
 प्रवेशवु, विषवु लक्षवु करवु, शस्त्रनाघाथी शरीर ने जपवु, गजामा

जाव अन्निज्जमाणमग्ग, तएण से सागरदत्ते कोडुवियपुरिसे
सद्वावेइ सद्वावित्ता एवं वयासी-तुब्भे ण देवाणुप्पिया ।
एय दमगपुरिस विउलेण जमणपाणखाइमसाइम पलोभेहि
पलोभित्ता गिह अणुप्पवेमेह अणुप्पवेसित्ता खडगमल्लग
खडघडग ते एगते एडेह एडित्ता अलकारियकम्म कारेह
कारित्ता ण्हाय कयवलि० जाव सव्वालकारविभूसिय करेह
करित्ता मणुण्णं असणपाणखाइमसाइम भोयावेह भोया-
वित्ता मम अतिय उवणैह, तएण कोडुवियपुरिसा जाव
पडिसुणेंति पडिसुणित्ता जेणेव से दमगपुरिसे तेणेव उवा
गच्छइ उवागच्छित्ता तं दमग असण उवप्पलोभेंति उवप्प-
लोभित्ता सय गिह अणुपवेसिति अणुपवेसित्ता त खडगम-
ल्लग खडगघडग च तस्स दमगपुरिसस्स एगते एडति,
तएण से दमगे तसि खडमल्लगंसि खडघडगंसि य एगंते
एडिज्जमाणसि महयार सद्देण आरसइ, तएण से सागरदत्ते
तस्स दमगपुरिसस्स त महयार आरसियसद्द सोच्चा निसम्म
कोडुवियपुरिसे एव वयासी-किण्ण देवाणुप्पिया । एस
दमगपुरिसे महया महया सद्देण आरसइ ? तएण ते कोडु-
वियपुरिसा एव वयासी-एस णं सामी । तसिखडमल्लगनि
खडघडगसि एगते एडिज्जमाणसि महया महया सद्देण
आरसइ, तएण से सागरदत्ते सत्थ० ते कोडुवियपुरिसे एव
वयासी-मा ण तुब्भे देवाणुप्पिया । एयस्स दमगस्स त

अह खलु त्वां तन्ने दास्यामि गम्य गच्छ त्वमिहा=भविष्यति ताता प्रिया मनोज्ञा
मनोमा=मनोगता भविष्यति, इति=एव मुकुमारिका दारिकां तामिमिष्टामिष्टान्मि
'समामासेह' समाधातरति गणाभास्य प्रीतिगर्जयति=प्रस्थापयति ॥ १० ॥

मूलम्-तदण से मागरदत्ते एग महं दमगपुत्रिस् पासइ
दडिसडनिवसणस्यडगमहगघउगहृथगयं मच्छियामहस्सेहि

दहामि जस्स ण तुम इट्ठा जाय मणामा भविस्समिच्छि सुमालिय दारिय
ताहि इट्ठाहिं उग्गुहिं समासासेइ, समसासित्ता पडिविसज्जेइ) वहाँ
भित्ति के पीछे छुपा हुआ नागरदत्त सार्धं वाह सागर-के उन वचनों को
सुन रहा था । सो सुनकरके स्वयं वहा लज्जित हुआ तथा दूसरोंसे भी
उसे वही शर्म आई इस तरह स्व और पर से लजाना हुआ वह जिन
दत्त के घर से बाहर निकल गया । और जाकर अपने पर पहुँचा ।
वहा पहुँच कर उसने अपनी पुत्री सुकुमारिका दारिका को बुलाया
-बुलाने पर जब वह आ गई तब उसे उसने अपनी गोदी में बैठा लिया
बैठानेके बाद फिर उसने उससे पूछा बेटी । सागरने तुम्हें किस कारण
से छोड़ दिया है मैं तुम्हें उसी के दूगा । कि जिन के लिये तुम अच्छी
तरह इष्टा, कान्ता, प्रिया, मनोज्ञा एव मनोमा होओगी, इस प्रकार उसने
सुकुमारिका दारिकाको उनर इष्ट वचनों द्वारा अच्छी तरह आश्वासन
दिया-धैर्य बँधाया-और आश्वासन देकर उसे विसर्जित करदिया । सू०१०

मुक्का ? अह ण तुम तस्स दाहामि जस्सण तुम इट्ठा जाय मणामा भविस्समिच्छि
सुमालिय दारिय ताहि इट्ठाहिं उग्गुहिं समासासेइ, समसासित्ता पडिविसज्जेइ)
त्या न लीतनी पाछण छुपाधने मागरदत्त सार्धं वाह सागरनी ते अधी
वातने सालणी रह्यो डते। साक्षणी ते अहुञ्ज लज्जित थयो तेमञ्ज भील
अथी पणु ते भूणञ्ज लज्जित थयो आ रीते 'जते' अने भीलअथी
लज्जतो ते जिनदत्तना घेरथी अडार नीकणी गयो अने नीकणीने पोताने घेर
पडोअथो त्या अधने तेण्णे पोतानी पुत्री सुकुमारिका दारिकाने ओलावी न्यारे
ते सुकुमारिका दारिका आवी गधं त्पारे तेने पोताना ओलाभा ओसाडी वीधी
ओसाडीने तेण्णे तेने पूछ्यु डे भेटी । शा कारणथी सागरे तने त्यल्ल छे ? तने
हु ते पुटुधने न् आपीण डे जेना भाटे तु आरी रीते धण्टा, डाता प्रिया,
मनोज्ञा अने मनोमा थयो आ रीते तेण्णे सुकुमार दारिकाने पोताना धण्ट वच
नोथी सारीरीते आश्वासन आप्पु अने त्पार पथी तेने विहाय आपी ~ १०॥

जाव अन्निज्जमाणमग्गं, तएण से सागरदत्ते कोडुवियपुरिसे
सद्दावेइ सद्दावित्ता एव वयासी-तुब्भे णं देवाणुप्पिया ।
एयं दमगपुरिस विउलेण अमणपाणखाइमसाइम पलोभेहि
पलोभित्ता गिह अणुप्पवेमेह अणुप्पवेसित्ता खडगमल्लग
खडघडग ते एगते एडेह एडित्ता अलकारियकम्म कारेह
कारित्ता पहाय कयवलि० जाव सव्वालकारविभूसिय करेह
करित्ता मणुण्णं असणपाणखाइमसाइम भोयावेह भोया-
वित्ता मम अतिय उवणेह, तएण कोडुवियपुरिसा जाव
पडिसुणेति पडिसुणित्ता जेणेव से दमगपुरिसे तेणेव उवा
गच्छइ उवागच्छित्ता त दमग असण उवप्पलोभेति उवप्प-
लोभित्ता सय गिह अणुपवेसिति अणुपवेसित्ता त खडगम-
ल्लग खडगघडग च तस्स दमगपुरिसस्स एगते एडति,
तएण से दमगे तसि खडमल्लगंसि खडघडगंसि य एगते
एडिज्जमाणसि महयार सद्देण आरसइ, तएण से सागरदत्ते
तस्स दमगपुरिरास्स तं महयार आरसियसइ सोच्चा निसम्म
कोडुवियपुरिसे एव वयासी-किण्णं देवाणुप्पिया । एस
दमगपुरिसे महया महया सद्देण आरसइ ? तएणं ते कोडु-
वियपुरिसा एव वयासी-एस ण सामी । तसिखडमल्लगनि
खडघडगसि एगते एडिज्जमाणसि महया महया सद्देण
आरसइ, तएण से सागरदत्ते सत्थ० ते कोडुवियपुरिसे एव
वयासी-मा ण तुब्भे देवाणुप्पिया । एयस्स दमगस्स त

खंड जाव एडेह पासे ठयेह जहा णं पत्तिय भवइ, ते वि
 तहेव ठविति. तएणं ते कोटुवियपुगिसा तस्स दमगस्स
 अलंकारियम्मकरेति करित्ता सयपागसहस्मपागेहिं तिछेहिं
 अवभगेति अवभंगिए. सुमाणे सुग्भिगधुच्चट्टणेणं गाय उव्व-
 ट्ठित्तिर उसिणोदगेणं गधोदगेण सीतोदगेणं ष्हारणेति पम्हल
 सुकुमाल गंधकासाइयाण । गायाइ ल्हहति ल्हहित्ता हंमल-
 क्खणं पट्टसाडगं परिहेति परिहित्ता सव्वालकारविभूमियं
 करेति करित्ता त्रिउल असणपाणखाइमसाइमं भोयावेति
 भोयावित्ता सागरदत्तस्स उव्वणेति, तएण पागरदत्ते सूमा-
 लिय दारिय ष्हाय जाव सव्वालकारविभूमियं करित्ता त
 दमगपुरिस एव वयासी-देवाणुप्पिया। मम धूया इट्ठा एय
 णं अह तव भारियत्ताए दलामि भद्वियाए भद्वओ भवि-
 ज्जासि, तएण से दमगपुरिसे सागरदत्तस्स ण्यमट्ट पडिसु-
 णेति पडिसुणिता सूमालियाए दारियाए सद्धिं वासघर
 अणुपविसइ अणुपविसित्ता सूमालियाए दारियाए सद्धि
 तलिमसि निवज्जइ, तएण से दमगपुरिसे सूमालियाए इम
 एयारूव अगफास पडिसवेदेइ, सेसं जहा सागरस्स जाव
 सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता वासघराओ निग्गच्छइ
 निग्गच्छित्ता खंडमल्लग खडघडगं च गहाय मारामुक्के विव
 काए जामेव दिस पाउब्भूए तामेव दिस पडिगए, तएण
 सा सूमालिया जाव गएणं से दमगपुरिसे त्तिकट्टु ओहय-
 मण जाव जियाउइ ॥ सू० ११ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततस्तदनन्तर खलु स सागरदत्त सार्यमा होऽन्यदा=अन्यस्मिन् कस्मिञ्चित् काले ‘उर्षि आगासतलगसि’ उपरि आकाशतलके=प्रासादोपरिभागे, सुहनिसण्णे ‘सुखेनोपविष्ट’, राजमार्गमरलोकमानः २ तिष्ठति । तत खलु स सागरदत्त एक महान्त ‘दमगपुरिस’ द्रमनपुरुष ‘दमग’ इति देशीयः शब्दः दरिद्रपुरुष पश्यति, किम्भूतम् ? इत्याह—‘दडिखंड निवसण’ दण्डिखण्डनिवसन=दण्डि—कृतसन्धान जीर्णवस्त्र तस्य खण्ड तदेव निवसन परिधानवस्त्र यस्य स दण्डिखण्डनिवसनस्तम्, तथा—, खडमल्लग घडगहत्थगय’ खण्डमल्लरुघटरुहस्तगत=खण्डमल्लरु—खण्डशराव स्फुटितशराव मिश्रापात्र, तथा खण्डघटरुघट=खण्डरूपो घट’ स्फुटितस्य घटस्य भागः स एव जल्पपात्र, एतद् द्वय हस्तगत यस्य तम्, ‘मच्छियामहस्सेहिं जाव अनिज्जमाणमग्ग’ मक्षिकास इति यावत् अन्वीयमानमार्गं, शरीरवस्त्रादेर्मलिनत्वात् तत्पृष्ठतो मक्षिका आप

‘तएण से सागरदत्ते’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण से सागरदत्ते) इसके बाद सागरदत्तने किसी एक समय “उर्षि आगासतलगसि” अपने प्रासाद के ऊपर सुख पूर्वक बैठी हुई स्थिति में राजमार्ग का अवलोकन करते समय (एग मह दमगपुरिस पासइ) एक अत्यंत दरिद्र पुरुष को देखा (दडिखडनिवसण खंडगम ललगघडगहत्थगय मच्छियासहस्सेहिं जाव अनिज्जमाणमग्ग) जो जीर्णवस्त्र के जुड़े हुए चियडे को पहिने था और जिसके हाथ में खडमल्लकया—फुटा हुआ मिट्टि के खप्पर था—तथा पानी पीने के लिये फुटे हुए घट का एक खप्पर था । हजारों मक्षिखया जिसके पीछे पीछे, शरीर और वस्त्रों के मलिन होने से भिन्न ० करती हुई उड़ रही

‘तएण से सागरदत्ते’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण से सागरदत्ते) त्पार आह सागरदत्त के उर्षि एक वपथ (उर्षि आगा सतलगसि) पीताना भडेलनी उपर सुपेथी पेसीने राजमार्गनु अवलोऽनऽरतो हुतो त्पारे तेवु (एग मह दमगपुरिस पासइ) उऽ षूणअ दरिद्र—क गाण—पुरुपने जेथे (दडिखडनिवसण खडगमल्लगघडगहत्थगय मच्छियासहस्सेहिं जाव अनिज्जमाणमग्ग) तेवु जूना वस्त्रना र्थिथराओ पडेरेला हुता अने तेना हाथमा “अऽमल्लक हुतु” उऽते के कुटी गथेला भाटीना वासणुने उऽ ककडे हुते तेमज्जपाष्ठी पीवा भाटे कुटेली भाटलीतु उऽ षणपर हुतु हुतरा भाष्ठीओ तेनीपाष्ठा पाष्ठा—शरीर अने वस्त्रोनी भलीनताने लीधे उडी रही हुती,

तन्तीत्यर्थः । ततः गन्तुं ग मागरदत्तं कोट्टुपियपुरिसं सदावेह, सदावित्ता एवं
 पयसादीत् हे देवानुप्रियाः । एयं दमगपुरिसं विउलेण अमणपाण-
 नपानत्ताघसराणेन प्रलोभयत प्रलोभ्यं गृहमनुमोदयत, अनुमोदयं खड्गमल्ल-
 खण्डशराय खण्डघटक=रानीयपादा ' से ' तस्य दमगपुरिसस्य एकान्ते=एकान्त
 स्थाने ' एदेह ' निक्षेपयत, निक्षेप्य अलंकारिककर्म = केशनसन्नेदनादिक
 नापितादिभिः काययत, काययित्वा स्नात छतमलिकर्माणं यावत् सर्वालङ्कार-

धी । (तएण से सागरदत्ते कोट्टुपियपुरिसं सदावेह, सदावित्ता एवं
 वयासी-तुव्वेण देवानुप्रिया ! एयं दमगपुरिसं विउलेण अमणपाण-
 खाइम साइम पलोभेइ, पलोभित्ता गिह अणुपवेसेह, अणुपवेसित्ता
 खड्गमल्लग खड्गधटग त एगते एदेह एडित्ता अलंकारिकम्म कारेह
 कारित्ता ण्हाय कययलि० जाव सन्वालकारविभूसिय करेह करित्ता मणु
 ण अमणपाणखाइमसाइम भोयावेह, भोयावित्ता मम अतिय उवणेह)
 इसके बाद सागरदत्तने आज्ञाकारी पुरुषों को बुलाया । जुलाकर उसने
 इस प्रकार कहा देवानुप्रियो । तुम लोग इस दरिद्र पुरुषको विपुल अशन,
 पान, खाद्य और स्वात्परूप चतुर्विध आहारका प्रलोभन दो-प्रलोभन देकर
 फिर इसे घर में भीतर करलो । जब यह घरके भीतर हो जावेगा तब
 तुमलोग इसके ये खड्गमल्ल (फटी लगीटी) और खड्गधटक इससे छुड़ा
 कर किसी एकान्त-सुरक्षित-स्थान में रखदो । बाद में नापित (नाई)
 को बुलाकर इसके सुन्दर ढग से बाल घनबाओ नखआदि जो बढ़ रहे

(तएण से सागरदत्ते कोट्टुपियपुरिसं सदावेइ, सदावित्ता एय वयासी-तुव्वेण देवा
 नुप्रिया ! एयं दमगपुरिसं विउलेण अमणपाणखाइमसाइम पलोभेइ, पलोभित्ता गिह
 अनुपवेसेह, अणुपवेसित्ता खड्गमल्लग खड्गधटग त एग ते एदेह, एडित्ता अल
 कारिकम्म कारेह कारित्ता ण्हाय कययलि० जाव सन्वालकारविभूसिय करेह करित्ता
 मणुण अमणपाणखाइमसाइम भोयावेह, भोयावित्ता मम अतिय उवणेह)
 त्थारपथी सागरदत्ते आज्ञाकारी पुरुषोने जालाव्या जालावीने तेभने आ
 प्रभाण्णे कहु-डे हे देवानुप्रियो । तमे लोडे आ दरिद्र पुरुषने पुष्कण प्रभा
 णुमा अशन, पान, भाद्य अने स्वाद्य इय आर नतना आहारनी लालय आपो
 लालय आपीने तेने घरनी अहर जालावी लो न्यारे ते घरमा आवी नय
 त्तारे तमे तेनी पासैना अउमहल अने अउधटक लधने तेने अज्जात सुरक्षित
 स्थानमा भूडी हे त्थारपथी उलभने जालावीने तेना सरस रीते वाण कपावी
 नाणो अने वधी गयेला नथ वगेरेने कपावी नाणो त्थार तेने स्नान

विभूषित कुरुत कृत्वा ' मणुष्ण ' मनोज्ञ=रुचिरम् अशनपानस्वाद्यस्वाद्य भोजयत भोजयित्वा ममान्तिरु=समीपप्रपनयत । ततः खलु कौटुम्भिकपुरुषा यावत्-प्रति-शृण्वन्ति=' तयाऽस्तु ' इति कृत्वा तदाज्ञा स्वीकुर्वन्ति प्रतिश्रुत्य यत्रैव स द्रमरूप रूपः=रङ्गपुरुषः, तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य त द्रमरु रुचिरेण विपुलेनाशनादिना प्रलोभयन्ति प्रलोभ्य स्वरु गृहमनुप्रवेशयन्ति, अनुप्रवेश्य त खण्डरुमलरु खण्डरु-घटरु च तस्य द्रमरुपुरुषस्यैकान्ते ' एडति ' निक्षेपयन्ति, तत खलु स द्रमरु स्तस्मिन् खण्डमल्लके खण्डघटके च एकान्ते ' एडिज्जमाणसि ' निक्षेप्यमाणे सति महता २ शब्देन ' आरसइ ' आक्रन्दति । ततः खलु स सागरदत्तस्तस्य द्रमरुपुरुषस्य त महान्त ' आरसियइ सह ' आक्रन्दनशब्द श्रुत्वा निश्चय्य कौटु

हैं उन्हें कटवाओ । उमके प्रश्नात् इसे स्नान कराओ । बाद मे इससे पशु पक्षी आदिको अनादिका भागरूप बलिकर्म आदिकरवाओ-जब यह बलिकर्म आदिकर चुके तब तुमलोग इसे समस्त अलकारो से विभूषित करो, विभूषित करके फिर इसे मनोज्ञ अशन, पान, खाद्य, एव स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार खिलाओ-खिलाकर के बाद मे फिर हमारे पास इसे ले आओ । (तएण कौटुवियपुरिसा जाव पडि-सुणेंति, पडिसुणित्ता, जेणेव से दमगपुरिसे तेणेव उवागच्छइ, उवाग च्छित्ता त दमग असण उवप्पलोभेंति, उवप्पलोभित्ता सय गिह अणुपवेसिति अणुपविसित्ता, त खडमल्लग खडगघडग च तस्स दम-गपुरिसस्स एगते एडेंति, तएण से दमगे तसि खडमल्लगसि, खड घटगसि य एगते एडिज्जमाणसि महया २ सद्देणं आरसइ, तएण से सागरदत्ते तस्स दमगपुरिसस्स त महयार आरसियसइ सोच्चो

करावे। स्नान कराव्या जाह तेना डाथेथी पशु-पक्षी वगेरेने। अन्न वगेरेने। भाग आपवा इय अलिकर्म करावडावे। न्यारे अलिकर्मनी विधि पती नय त्यारे तमे लोकां अने अथी नतना अल कारेथी शशुगारे। शशुगारीने तेने मनोज्ञ, अशन, पान, खाद्य अने स्वाद्य इय आर नतना आकारे अभाडे। अभाडेया पथी तेने अभाडी पासे लई आवे।

(तएण कौटुवियपुरिसा जाव पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव से दमग-पुरिसे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता त दमग असण उवप्पलोभेंते उवप्पलो-भित्ता सयगिह अणुपवेसिति, अणुपविसित्ता, त खडमल्लग खडगघडग च तस्स दमगपुरिसस्स एगते एडेंति तएण से दमगे तसि खडमल्लगसि, खडघड-गसि य एगते एडिज्जमाणसि महया २ सद्देणं आरसइ, तएण से सागरदत्ते तस्स दमगपुरिसस्स त महयार आरसियसइ सोच्चा नितम्प कौटुवियपुरिसे एव वयासी)

तन्तीत्यर्थः । तत' खटु म मागदत्त पात्रुगिरपुरुषात् शङ्क्यति, अन्वपित्ता एवमादीत् हे देवानुप्रियाः ! त्वय मलु मत्त द्रमगपुरुष = इद्रपुरुष, त्रिपुलेन अन्नपानखाद्यस्यान्नेन प्रयोगयत मन्त्रोभ्य गृहमनुपयोगयत, अनुपयोग्य यं द्रकमल्लङ्घनं = खण्डगराव खण्डयद्रक = वानीयपात्र ' से ' तस्य द्रमगपुरुषस्य पठान्ते = एका त स्थाने ' एदेह ' निभषयत, निक्षेप्य अलकारिकर्म = केशनपन्नेदनादिक नापित्तादिभिः काययत, कारयित्वा स्नात कृतवलिधर्माण यावन् सर्वालङ्कारधी । (तण ण मे सागरदत्ते कोट्टुपियपुरिसं सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-तुम्भे ण देवानुप्रिया ! एय दमगपुरिस त्रिउलेणं अमणपाण खाइम साइम पलोभेइ, पलोभित्ता गिह अणुपवेसेह, अणुपवेसित्ता खडगमल्लग खडघटग त एगते एदेह एडित्ता अलकारिकम्म कारेह कारित्ता ण्हाय कययलि० जाव सन्वाल्कारविभूसिय करेह करित्ता मणुण्ण असणपाणखाइमसाइम भोयावेह, भोयावित्ता मम अतियउवणेह) इसके बाद सागरदत्तने आज्ञाकारी पुरुषों को बुलाया । बुलाकर उसने इस प्रकार कहा देवानुप्रियो । तुम लोग इस दरिद्र पुरुषको त्रिपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्यरूप चतुर्विध आहारका प्रलोभन दो-प्रलोभन देकर फिर इसे घर में भीतर करलो । जब यह घरके भीतर हो जावेगा तब तुमलोग इसके ये खडमल्ल (फटी लगेटी) और खडघटक इससे छुड़ा कर किमी एकान्त-सुरक्षित-स्थान में रखदो । बाद में नापित (नाई) को बुलाकर इसके सुन्दर ढग से चाल घनवाओ नखआदि जो बढ़ रहे

(तण से सागरदत्ते कोट्टुपियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-तुम्भेण देवानुप्रिया ! एय दमगपुरिस त्रिउलेण असणपाणखाइमसाइम पलोभेइ, पलोभित्ता गिह अणुपवेसेह, अणुपवेसित्ता खडगमल्लग खड घटग त एग ते एदेह, एडित्ता अलकारिकम्म कारेह कारित्ता ण्हाय कययलि० जाव सन्वाल्कारविभूसिय करेह करित्ता मणुण्ण असणपाणखाइमसाइम भोयावेह, भोयावित्ता मम अतिय उवणेह)
 त्पारपथी सागरदत्ते आज्ञाकारी पुरुषोंने जोलाव्या जोलावीने तेभने आ प्रभाण्णे क्खु-डे हे देवानुप्रियो । तमे वोडे आ दरिद्र पुरुषने पुण्ण प्रभाण्णुमा अशन, पान, आद्य अने स्वाद्य रूप आर नतना आहारनी लालय आपो लालय आपीने तेने घरनी अहर जोलावी वो न्यारे ते घरमा आवी नथ त्यारे तमे तेनी पावेना अउमल्ल अने अउघटक लधने तेने अकाल सुरक्षित स्थानमा भूडी हे । त्पारपथी उन्नमने जोलावीने तेना सरस रीते वाण कपावी नाणो अने वधी गयेला नथ वजेरेने कपावी नाणो त्पारपथी तेने स्नान

विभूषित कुरुत कृत्वा ' मणुष्ण ' मनोज्ञ=रुचिरम् अशनपानखाद्यस्याद्य भोजयत
 भोजयित्वा ममान्तिरु=समीपमुपनयत । ततः खलु ऋदुम्बिकपुरुषा यावत्-प्रति-
 शृण्वन्ति=' तथाऽस्तु ' इति कृत्वा तदाज्ञा स्वीकुर्वन्ति प्रतिश्रुत्य यत्रैव स द्रमरु-
 रूपः=रङ्गपुरुषः, तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य त द्रमरु रुचिरेण विपुलेनाशनादिना
 प्रलोभयन्ति प्रलोभ्य स्वक गृहमनुप्रवेशयन्ति, अनुप्रवेश्य त खण्डकमलक खण्डरु-
 घटक च तस्य द्रमरुपुरुषस्यैकान्ते ' एडति ' निक्षेपयन्ति, तत खलु स द्रमरु-
 सस्मिन् खण्डमलके खण्डघटके च एकान्ते ' ' एडिज्जमाणसि ' निक्षेप्यमाणे
 सति महता २ शब्देन ' आरसड ' आक्रन्दति । ततः खलु स सागरदत्तस्तस्य
 द्रमरुपुरुषस्य त महान्त ' आरसियड सद् ' आक्रन्दनशब्द श्रुत्वा निगम्य कौडु-

हैं उन्हें कटवाओ । उसके प्रश्नात् इसे स्नान कराओ । बाद में इससे पशु
 पक्षी आदिको अ नादिका भागरूप बलिकर्म आदिकरवाओ-जन यह
 बलिकर्म आदिकर चुके तब तुमलोग इसे समस्त अलंकारों से विभूषित
 करो, विभूषित करके फिर इसे मनोज्ञ अशन, पान, खाद्य, एवं
 स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार खिलाओ-गिलाकर के बाद में फिर
 हमारे पास इसे ले आओ । (तएण कोडुविघपुरिसा जाव पडि-
 सुणेंति, पडिसुणित्ता, जेणेव से दमगपुरिसे तेणेव उवागच्छइ, उवाग
 च्छित्ता त दमगं असण उवप्पलोभेंति, उवप्पलोभित्ता सयं गिहं
 अणुपवेसित्ति अणुपविसित्ता, त खडमल्लग खडगघडग च तस्स दम-
 गपुरिसस्स एगते एडेंति, तएण से दमगे तसि खडमल्लगसि, खड
 घडगसि य एगते एडिज्जमाणसि महया २ सद्देणं आरसइ, तएण
 से सागरदत्ते तस्स दमगपुरिसस्स त महया २ आरमियसद् सोच्चा

करोओ स्नान करोओ आह तेना हाथेथी पशु-पक्षी वगेरेने अन्न वगेरेने
 लाग आपवा इप अलिकर्म उगवडावे न्यारे अलिकर्मनी विधि पती नय
 थारे तमे दोके अने अधी नतना अलकारेथी शणुगारे शणुगारीने तेने
 मनोज्ञ, अशन, पान, आद्य अने स्वाद्य इप आर नतना आहारो जभाडे
 जभाडथा पधी तेने अमारी पामे लध आवे

(तएण कोडुविघपुरिसा जाव पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव से दमग-
 पुरिसे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता त दमग असण उवप्पलोभेंते उवप्पलो-
 भित्ता सयगोइ अणुपवेसित्ति, अणुपविसित्ता, त खडमल्लग खडगघडग च
 तस्स दमगपुरिसस्स एगते एडेंति तएण से दमगे तसि खडमल्लगसि, खडघड-
 गसि य एगते एडिज्जमाणसि महया २ सद्देण आरसइ, तएण से सागरदत्ते तस्स
 दमगपुरिसस्स त महया २ आरमियसद् सोच्चा निसम्म कोडुविघपुरिसे एव वयासी)

मिथरुपुम्पानेयमादीन्-इ देवानुमियाः । ति=तेन कारणेन खलु एव दमरुपुम्पो महता २ शब्देन आरगति=आरन्दति ? । ततः खलु ते कौटुम्बिकपुरुषाः एव मयद्-एव खलु हे स्वामिन ! तस्मिन् खड्गघटके गण्डघटके गण्डान्ने निष्कल्पमाणे महता २ शब्देन आरगति=आरन्दति । ततः खलु ग मागदतः सार्थवाहस्तान् कौटुम्बिकपुरुषान् एवमादीन्-इ देवानुमियाः । गा खलु यूय पतस्य

निसम्म कौटुम्बिकपुरिसे एव वयासी) इस प्रकार की उन कौटुम्बिक ने सागरदत्त सेठ की इस आज्ञा को अच्छी तरह स्वीकार लिया और स्वीकारकर घटा जाकर उन्होंने उस दमक को अशन पान आदिरूप चतुर्विध आहार से घार २ लुमाया लुमाकर ये उसे अपने घर तक ले आये और अत में अपने घर में उसे प्रवेश कराया । बाद में उन लोगोंने उस दमक पुरुष के फूटे हुए मिट्टी के दीपक के खड को, तथा फूटे हुए घड़े के सप्पर को उससे लेकर किसी सुरक्षित स्थान में रख दिया । जब उस दमकपुरुषने अपने खडमल्लक(फटी लंगोटी) को और खडघटको अपने से लेकर एकान्त स्थानमें रखा जाता हुआ देखा-तो वह जोर जोरसे रोने लगा-उसके उस रोनेकी आज्ञाको सुनकर और उसे अपने चित्त में धारण कर सागरदत्तने कौटुम्बिक पुरुषो से इस प्रकार कहा-(किण्ण देवाणुप्पिया ! एसदमगपुरिसे महया २ सहेण आरसह ३ तण्ण ते कौटुम्बिकपुरिसा एव वयासी एसण सामी ! तसि खडमल्लगसि खडघडगसि एगते एडिज्जमाणसि महया २ सहेण

आ नतनी सागरदत्तनी आज्ञाने ते कौटुम्बिक पुरुषोके सारी रीते स्वीकारी लीधी स्वीकार्यो जाह तेओ हरिद्र भाणुसनी पासो गया त्या नधने तेमणे तेने जोलाओये अने अशन, पान वगेरे इय चार नतना आहारनी वारवार लालच्य आपी ललचावीने तेओ तेने घर सुधी लर्ध आव्या अने छेवटे तेने घरमा हाणल करी दीधो त्यारपणी ते लोकोओ ते हरिद्र भाणुसनी पासोधी कूटेला भाटीना वासणुने कटको तेमण कूटेला भाटलाना अप्परने लधने सुरक्षित स्थाने भूकी दीधु न्यारे ते हरिद्र भाणुसे ये ताना अउमलकने अने अउघटने पोतानी पासोधी छीनवीने ओकात स्थानमा भूउता जेथु त्यारे ते ओटेथी घाटा पाडीने उवा लाओये तेना उवाना आवाजने सालणीने अने तेने पोताना चित्तमा धारण करीने सागरदत्ते कौटुम्बिक पुरुषोने आ प्रमाणे कछु

(किण्ण देवाणुप्पिया ! एस दमगपुरिसे महया २ सहेण आरसह, तण्ण ते कौटुम्बिकपुरिसा एव वयासी एसण सामी ! तसि खडमल्लगसि खडघडगसि एगते एडिज्जमाणसि महया २ सहेण आरसह, तण्ण से

द्रमकपुरुषस्य तत् खण्डमल्लक खण्डघट्टक यावत्-एकान्ते 'एडेह' निक्षेपयत अस्य परोक्षे मा स्थापयतेत्यर्थ, किन्तु पार्श्वे स्थापयत, यथा खलु 'पत्तिय' प्रत्ययः= विश्वामो भवति । तेऽपि कौटुम्बिकपुरुषास्तथैव स्थापयन्ति । तत खलु ते कौटु-

आरसह, तएण से सागरदत्ते मत्थवाहे ते कौडुविय पुरिसे एव वयासी) हे देवानुप्रियो ! क्या कारण है जो यह दमक पुरुष जोर २ से रो रहा है ? तत्र उन कौटुम्बिक पुरुषों ने ऐसा कहा कि हे स्वामिन् ! इसने ज्योही अपने खडमल्लक को और घटखड को लेकर एक ओर सुरक्षित स्थान में रखे जाते हुए देखा जैसे ही यह बड़े जोर २ से रोने लगा है । ऐसा सुनकर सागरदत्त ने उन कौटुम्बिक पुरुषों से इस प्रकार कहा- (माण तुभे देवाणुप्पिया ! एयस्स दमगस्म त खड जाव एडेह, पासे ठवेह, जहाण पत्तिय भवइ, ते वि तहेव ठवेति, तएण ते कौडुविय पुरिसा तस्स दमगस्स अलकारियकम्म करेति, करित्ता सयपांग सहस्सपागेहिं तिल्लेहिं अब्भगेति, अब्भगिए समाणे सुरभिगधुव्वट्टणेण गाय उव्वट्ठिति, २ उस्सिणोदगेण गधोदगेण सीतोदगेण ण्हावेति) हे देवानुप्रियो ! तुम लोग इस दमक पुरुष के फूटे हुए मिट्टी के दीपक के खड को और फूटे हुए घडे के खप्पर को इससे लेकर परोक्ष में- अदृश्य स्थान में-मत रखो किन्तु इस के पास में ही-समक्षरखो, जिससे इसे अपना विश्वास बना रहे । इस प्रकार सागरदत्त की बात

कौडुविय पुरिसे एव एव वयासी)

हे देवानुप्रियो ! शा करिअथी आ हरिद्र भाणुस मोटेथी घाटा पाडी पाडीने रडी रड्ढो छे ? त्तारे ते कौटु गिअ पुअपोअे आ प्रभाणे उड्ढु के छे स्वामिन् ! पोताना अउमत्तलअ अने अउधट्टकने तेनी पामेथी लधने पीअ सुरक्षित स्थाने लध जता नेअने आ हरिद्र भाणुस मोटेथी उड्ढा लाग्थो छे आ प्रभाणे सालणीने सागरदत्ते कौटु गिअ पुअपोअे आ प्रभाणे उड्ढु के-

(माण तुभे देवाणुप्पिया ! एयस्स दमगस्स त खड जाव एडेह पासे ठवेह, जहाण पत्तिय भवइ, ते वि तहेव ठवेति, तएण ते कौडुवियपुरिसा तस्स दमगस्स अलकारियकम्म करेति, करित्ता सयपांगसहस्सपागेहिं तिल्लेहिं अब्भगेति अब्भगिए समाणे सुरभिगधुव्वट्टणेण गाय उव्वट्ठिति २ उस्सि णोदगेण गधोदगेण सीतोदगेण ण्हावेति)

हे देवानुप्रियो ! तमे लोडो आ हरिद्र पुअपना कूटेला माटीना दीपकना कट्टकने अने कूटेला घडाना अण्णरने अनी पामेथा लधने हर अेकालमा भूअथो नडि पणु अनी पासे अ-अनी सामे अ भूअी राणो जेथी अने विश्वास रडे

श्विकपुत्रपाने गगरीत्-ह देवाभियाः ! त्रिंशो वाग्णेन गन्तुं पण्डितपुत्रो
 महता २ शब्देन आरसति=भ्राजन्ति ? । ततः गन्तुं ते कौटुम्बिकपुरुषा' एव
 मयदन्-एव खलु हे स्वामिन् ! तस्मिन् गन्तव्ये गन्तव्ये गन्तव्ये निश्चे-
 माणे महता २ शब्देन आरसति=भ्राजन्ति । ततः गन्तुं ग गगन्तव्यः साग्वाह
 स्तान् कौटुम्बिकपुरुषान् परमवाग्ने-हे देवाभिया' । गा खलु यूय पतस्य

निसम्म कौटुम्बिकपुरिसे एव वयासी) इस प्रकार को उन कौटुम्बिक
 ने सागरदत्त सेठ की इस आज्ञा को अच्छी तरह स्वीकार लिया और
 स्वीकार कर चहा जाकर उन्होंने उस दमक को अशन पान आदिरूप
 चतुर्विध आहार से पार २ दुभाया लुभाकर वे उसे अपने घर तक
 ले आये और अत में अपने घर में उसे प्रवेश कराया । बाद में उन
 लोगोंने उस दमक पुरुष के फूटे हुए मिट्टी के दीपक के गड को, तथा
 फूटे हुए घड़े के स्वप्पर को उससे लेकर किसी सुरक्षित स्थान में रख
 दिया । जब उस दमकपुरुषने अपने खडमल्लक, फटी लगीटी) को और
 खडघटकको अपने से लेकर एकान्त स्थानमें रखा जाता हुआ देखा-तो
 वह जोर जोरसे रोने लगा-उसके उस रोनेकी आवाजको सुनकर और
 उसे अपने चित्त में धारण कर सागरदत्तने कौटुम्बिक पुरुषों से इस
 प्रकार कहा-(किण्ण देवाणुप्पिया ! एसदमगपुरिसे महया २ सहेण
 आरसइ ३ तएण ते कौटुम्बिकपुरिसा एव वयासी एसण सामी ! तसि
 खडमल्लगसि खडघडगसि एगते एडिज्जमाणसि महया २ सहेण

आ जतनी सागरदत्तनी आज्ञाने ते कौटुम्बिक पुरुषोच्चे सारी रीते
 स्वीकारी लीधी स्वीकार्यो आइतेओ इन्द्रि भाणुसनी पासे गया त्या लधने
 तेभणु तेने जोलाओये अने अशन, पान वगेरे इय चार जतना आहारनी
 बार बार लालच आपी ललचावीने तेओ तेने घर सुधी लध आओया अने
 छेवटे तेने घरमा हाणल करी दीधो त्यारपछी ते लोकोओ ते इन्द्रि भाणुसनी
 पासेधी कूटेला माटीना वासणुने कटको तेभणु कूटेला माटलाना अण्णरने लधने
 सुरक्षित स्थाने भूकी दीधु न्यारे ते इन्द्रि भाणुसे येताना अउमत्तकने अने
 अउघटकने चोतानी पासेधी छीनवीने ओजत स्थानमा मूत्ता ओथु त्यारे ते
 ओठेधी घाटा पाडीने उवा लाओये तेना उवाना आवाजने साळणीने अने
 तेने चोताना चित्तमा धारण करीने सागरदत्ते कौटुम्बिक पुरुषोच्चे आ प्रमाणे कहु
 (किण्ण देवाणुप्पिया ! एस दमगपुरिसे महया २ सहेण आरसइ, तएण
 ते कौटुम्बिकपुरिसा एव वयासी एसण सामी ' तसि खडमल्लगसि खडघडगसि
 एगते एडिज्जमाणसि महया २ सहेण आरसइ, तएण से सागरदत्ते सत्यवाहे ते

रूपयित्वा 'हंसलक्षण' हंसलक्षण = हंसस्वरूप तदिव शुक्ल स्वरूप यस्य तत्, 'पट्टसाडगं' पट्टशाटक=क्षौमवस्त्र 'परिहेंति' परिधापयन्ति परिधाप्य सर्वालंकार-विभूषित कुर्वन्ति, कृत्वा विपुलमशनपानखाद्यस्वाद्य भोजयन्ति, भोजयित्वा सागरदत्तस्योपनयन्ति । ततः खलु सागरदत्तः सुकुमारिका दारिद्र्या स्नाता यावत्-सर्वालङ्कारभूषिता कृत्वा तं दमकपुरुषम् एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण अयादीत्-हे देवानुप्रिय ! एषा खलु मम दुहिता इष्टा, एता खलु अहं तव भार्यात्वेन ददामि

पट्टसाडगं परिहेंति, परिहित्वा सञ्चालकारविभूषियं करेति, करित्वा विडल असनपाणसाइमसाइम भोजयेंति, भोजयित्वा सागरदत्तस्त उवर्णेंति) जब शारीरिक प्रत्येक अवयव ठीक २ अच्छी तरह से पोंछाजा चुका-तब फिर उन्होंने हंस चिह्नवाला अथवा हंस के जैसा शुभ्रपट्टशाटक-क्षौमवस्त्र उसको पहिराया । क्षौमवस्त्र पहिराकर फिर उसको विपुल, अशन, पान, खाद्य एव स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार का भोजन कराया । भोजन कराकर फिर वे उसको सागरदत्त के पास ले गये (तएण सागरदत्ते मूमालिय दारिय ण्हाय जाव सञ्चालकार विभू सिय करित्ता त दमगपुरिस एव वयासी-एसण देवाणुप्पिया ! मम धूया इट्ठा एय ण जह तव भारियत्ताए ददामि) सागरदत्त ने अपनी सुकुमारिका दारिका को स्नान कराकर यावत् समस्त अलंकारो से विभूषित करके उस दमक पुरुष से इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय ! यह मेरी लड़की है । और मुझे बहुत ही अधिक इष्ट, प्रिय, कान्त

(ल्हित्ता हंसलक्षणपट्ट साडग परिहेंति, परिहित्वा,सञ्चालकारविभूषिय करे ति, करित्ता विडल असनपाणसाइमसाइम भोजयेंति,भोजयित्वा,सागरदत्तस्त उवर्णेंति)

अथारे शरीरना जवा अणे सरस रीते लुछाई गया त्याटे तेज्याजे हंसचित्रित अथवा तो हंस जेवु स्वरु धोणु पट्टसाटक-क्षौम वस्त्र पहिराव्यु क्षौम वस्त्र पहिरावीने तेने विपुल अशन, पान, खाद्य अने स्वाद्य रूप आर जतना आहारो जभाउया जभाउया पजी तेज्या तेने सागरदत्तनी पाने लई गया

(तएण सागरदत्ते मूमालिय दारिय ण्हाय जाव सञ्चालकारविभूषिय करित्ता त दमगपुरिस एव वयासी-एसण देवाणुप्पिया ! मम धूया इट्ठा एय ण अहं तव भारियत्ताए ददामि)

सागरदत्ते पोटानी सुकुमारिका दारिकाने स्नान करावीने यावत् अधी जतना अलंकारोधी शष्पगारीने ते हरिद्र माण्डसने आ प्रभाषे कहुं हे हे देवानुप्रिय ! आ भारी पुत्री छे अने मने णहुं ज छि, प्रिय, कान्त, भनोम

स्त्रियपुरुषास्त्वग्य द्रवगम्य=रुद्रुपपय्य भ्रमरारिहर्म काश्यपि नारयिमा अत्र
पाक मह्यपाकस्तर्लभ्यद्वयति मर्त्यनि । अभ्यङ्गितः सत् गुरभिगन्तोद्वर्तनेन
सुगन्धिपिष्टकेन गात्रमुर्जयति, उज ये उष्णोक्तेन गन्धोदकेन शीतोदकेन
स्नपयन्ति, स्नपयित्वा 'पम्हलसुकुमारगधकासाइयाए' प, मठसुकुमारगध-
कासायिकया=पद्मल=र, मरुती मद्रुरोमयुक्त भ्रमर गुटुमारा तथा कपायेण
रक्ता साटी शाययिरा तथा मात्राणि 'लूहि' लूहिगति = प्रोच्छपति,

सुनकर उन आदेशकारी पुरुषों ने पैसा ही किया-अर्थात् उमके मल्लक
गद और प्रथमउ दोनो गो ही उमके समस्त उन्गोने रग दिया ।
हमके बाद उन कौटुम्बिक पुरुषोंने उस दमक पुरुषका भालकारिक कर्म
करवाया । अब उमका अन्त्री तरफ अलकारिक कर्म निष्पन्न हो चुका-
तब उसके बाद उम दमक पुरुष केशरीर की उन लोगों ने जानपाक और
महद्य पाकवाले तैय से माञ्जि शकी-मालिश करनेके पश्चात्, सुगन्धि
पिष्टक-सुगन्धितपिटी-से उमके शरीर का उपहन क्रिया उस सुगन्धित
पिटी को उसके शरीर पर रगड़ र कर मला इससे जो उसके शरीर
पर मल जमा हुआ था वह चिकनाट्ट के सवन्ध से उस पिटीद्वारा
निकल गया । जब उनके शरीर का उद्वर्त्तन हो चुका-तब फिर उन
लोगों ने उसे उष्णोदक से गर्वोदक से, पच शीतोदक से स्नान कराया ।
स्नान कराकर बाद में उसका शरीर (पम्हलसुकुमारगधकासाइयाए
गायाइ लूहति) पद्मल-रूँवाली-सुद्रुरोमयुक्त-सुकुमार-नरम, रंगी
हुई दवाल से-अगोठी-से-तौलिया से पोंडा । (लूहिता हँसलकखण

आ रीते सागरदत्तनी वात साखणीने ते आजाजागी पुत्र्येये ते प्रभाषे न
कथुं अन्वे के तेना मलकण्ड अने घटण्डने तेनी सामे न मूडी दीधा
त्यारपणी ते कौटुम्बिक पुत्र्येये ते हरिद्र भाषुसना वाण अने नभ कपाव्या
न्यारे आकाम सरस रीते पुत्र थर्ध गथु त्यारे तेव्याये हरिद्र भाषुसना
शरीरने शतपाक अने सडस्रपाकवाणा तेतथी मालिश कर्था भाह
सुगन्धिपिष्टक-सुगन्धित पीडी-तेना शरीरे बोणीने उपन कथुं अथी तेना
शरीर उपर नेटवो मेल हुतो ते पीडीनी स्निग्धताने लीधे साइ थर्ध गथे
न्यारे तेना शरीरे पीडी बोणाध गध त्यारे ते दोकेये तेने गरम पाणीथी,
सुवासित पाणीथी अने ठंडा पाणीथी स्नान कराव्यु स्नान करावा भाह तेना
शरीरने (पम्हल सुकुमार गध कासाइयाए गायाइ लूहति) पद्मल-इवाटावाणा
मुकोभण, नरम रंगीन दुवालथी लूह्यु

रूपयित्वा 'हसलक्षण' इसलक्षण = हमस्वरूप तदिव शुक्ल स्वरूप यस्य तत्, 'पट्टसाडगं' पट्टशाटक=क्षौमवस्त्र 'परिहेंति' परिधापयन्ति परिधाप्य सर्वालंकार-विभूषित कुर्वन्ति, कृत्वा त्रिपुलमशनपानखाद्यस्वाद्य भोजयन्ति, भोजयित्वा सागरदत्तस्योपनयन्ति । ततः खलु सागरदत्तः सुकुमारिका दारिद्र्या स्नाता यावत्-सर्वालङ्कारभूषिता कृत्वा त द्रमगपुरुषम् एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण अयादीत्-हे देवानुप्रिय ! एषा खलु मम दुहिता इष्टा, एता खलु अहं तव भार्यात्वेन ददामि

पट्टसाडगं परिहेंति, परिहित्वा सञ्चालकारविभूषितं करेति, करित्वा त्रिउल असनपाणगाडमसाडम भोजयेंति, भोजयित्वा सागरदत्तस्त्व उवर्णेति) जब शारीरिक प्रत्येक अवयव ठीक २ अच्छी तरह से पोंछाजा चुका-तब फिर उन्होंने हँस चिह्नवाला अधवा हँस के जैसा शुभ्रपट्टशाटक-क्षौमवस्त्र उसको पहिराया । क्षौमवस्त्र पहिराकर फिर उसको विपुल, अशन, पान, खाद्य एव स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार का भोजन कराया । भोजन कराकर फिर वे उसको सागरदत्त के पास ले गये (तएण सागरदत्ते ममालिय दारिय ण्हाय जाव सञ्चालकार विभू सिय करित्ता त दमगपुरिस एव वयासी-एसण देवाणुप्पिया ! मम धूया इट्ठा एय ण अहं तव भारियत्ताए ददामि) सागरदत्त ने अपनी सुकुमारिका दारिका को स्नान कराकर यावत् समस्त अलंकारों से विभूषित करके उस दमक पुरुष से इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय ! यह मेरी लड़की है । और मुझे बहुत ही अधिक इष्ट, प्रिय, कान्त

(लूहित्वा हसलक्षणपट्ट साडगं परिहेंति, परिहित्वा, सञ्चालकारविभूषितं करेति, करित्वा त्रिउल असनपाणगाडमसाडम भोजयेंति, भोजयित्वा, सागरदत्तस्त्व उवर्णेति)

न्याये शरीरना जवा अजो सरस रीते लुछाई गया त्याडे तेज्याजे इ सञ्चित अथवा तो इ म जेबु २२७ धाणु पट्टशाटक क्षौम वस्त्र पहिरावधु क्षौम वस्त्र पहिरावीने तेने त्रिपुल अशन, पान, खाद्य अने स्वाद्य इय चार नतना आडाशे जभाडया जभाडया पटी तेज्या तेने सागरदत्तनी पाने लछ गया

(तएण सागरदत्ते ममालिय दारिय ण्हाय जाव सञ्चालकारविभूषितं करित्वा त दमगपुरिस एव वयासी-एसण देवाणुप्पिया ! मम धूया इट्ठा एय ण अहं तव भारियत्ताए ददामि)

सागरदत्ते पोतानी सुकुमारिका दारिकाने स्नान करावीने यावत् अथी नतना अलंकाराधी शब्दगारीने ते दरिद्र भावुसने आ प्रभाषे कछु के देवानुप्रिय ! आ भारी पुत्री छे अने मने णहु ज छिट, प्रिय, कान्त, मनोहर

'भद्रियाण' भद्रिक्रया=भाग्यशास्त्रिण्याजनयान्त्रमणि भद्रतो भाग्यशाली भद्रिण्यसि ।
 वतः खलु स दमकपुरुषः मागन्तत्तस्यैतमव्यं पतिगुणोनि=प्रीत्येति, प्रतिश्रुत्य
 सुकुमारिकया दारिकया सार्धं सासगृहमनुप्रतिगति, सुकुमारिकया दारिकया सार्धं
 'तलिगसि' तस्ये=गयनीये 'नीरञ्ज' निधीदति उपविशति । नत' गलु स दमक
 पुरुष सुकुमारिकाया इम=पूर्वोक्तम् एतदुप=पूर्वोक्तस्वरूपम् अहन्पुत्रं पटिमंवेदेई'
 प्रतिसवेदयति=प्रत्यनुगच्छति शेषं यथा सागरस्य=शेदवर्णन सागरद्वारात् प्रोध्यम्,
 यावत्-अत्र यावत्-आदिद द्रष्टव्यम्-'अगिपत्रादीना स्पर्शादप्यनिष्ठतर तदत्र
 स्पर्श इत्या सागरदारवत् दमकपुरुषोऽपि तां सुकुमारिका सुगममुत्ता प्रान्ता,
 शयनीयादतिष्ठति, अभ्युत्थाय रामट्टहाद् निर्गच्छति, निर्गम्य ताम् उम्हृत्=फुटि

मनोज पव मनोम है । में अपनी इस पृथी को तुम्हे तुम्हारी भार्या के
 रूप में प्रदान करता हूँ (भद्रियाण भद्रओ भद्रिञ्जसि, तण्ण से दमग
 पुरिसे सागरदत्तस्म एयमद्व पडि०२ सुमालियाण दारियाण सद्धिं वास
 घर अणुपविसइ, अणुपविसिच्चा सुमालियाए दारियाण सद्धिं तलिगसि
 निवज्जइ) इस भाग्यशालिनी से तुम भी भाग्यशाली बनजाओगे ।
 दमकपुरुष ने सागरदत्त के इस कवनरूप अर्थ को अंगीकार कर लिया,
 और फिर वह उस सुकुमारिका दारिका के साथ वासगृह में प्रविष्ट
 हुआ । वहा जाकर वह उस सुकुमारिका दारिका के साथ साथ एक ही
 पल ग पर-बैठ गया-सोगया (तण्ण से दमगपुरिसे सुमालियाण इम
 एयारुव अगफास पडि सवेदेइ, सेम जहा सागरस्म जाव मयणिज्जाओ
 अब्भुद्वेइ, अब्भुद्वित्ता वासघराओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता खडमल्लग

अने मनोम छे हु भागी आ पुरीने तमने तमारी पत्नीना इपमा अपुं धु ।
 भद्रियाए भद्रओ भद्रिञ्जसि, तण्ण से दमगपुरिसे सागरदत्तस्म एयमद्व पडि० २
 सुमालियाए दारियाए सद्धिं वासघर अणुपविसइ, अणुपविसिच्चा सुमालियाए
 दारियाए सद्धिं तलिगसि निवज्जइ)

आ भाग्यशालिनी तमे पणु भाग्यशाली थरु जशे ते दरिद्र पुत्रे
 सागरदत्तानी ये वातने स्वीकारी दीधी अने त्यारणाह ते सुकुमारिका दारिकानी
 साथे वासगृहमा प्रविष्ट थये त्या जधने ते दरिद्र माणुस सुकुमारिका दारि
 कानी साथे अेक ज शय्या उपर जेसी गये।

(तण्ण से दमगपुरिसे सुमालियाए इम एयारुव अगफास पडिसवेदेइ,
 सेम जहा सागरस्म जाव मयणिज्जाओ अब्भुद्वेइ, अब्भुद्वित्ता वासघराओ निग्ग
 च्छइ निग्गच्छित्ता खडमल्लग खडघडग च गहाय म

तमिक्षापात्र, खण्डघटक=स्फुटितपानीयपात्र च गृहीत्वा 'मारासुक्ते विप्र काए' मारासुक्तइय काकः मारा-शूना प्राणिवधरान ततो मुक्तः निःसृतः काक इव, अथवा-माराद्-मारकपुरुषात् तदीयहस्तादित्यर्थः. मुक्त-विच्छुटित काक इव शीघ्रतया यस्या एव दिशः प्रादुर्भूतत्वामेव दिशः प्रतिगतः । ततः खलु सा सुकुमारिका यावद्-ततो मृहृत्तान्तर प्रतिपुडा मती पतिमपश्यन्ती शयनीयादुत्तिष्ठति, उत्थाय द्रमकपुरुषस्य मार्गणगवेषण कुर्वाणा वामगृहस्य द्वार विधाटित पश्यति

एडपडग च गहाय मारासुक्ते विप्र काए जामेव दिस पाउब्भूण तामेव दिस पडिगण) उस समय उन दमक पुरुष को उस सुकुमारिका दारिका का वह पूर्वोक्त तथा पूर्वोक्त स्वरूपवाला अगस्पर्श अनुभव में आया । शेष वर्णन सागरदारक की तरह जानना चाहिये । हम तरह वह दमक पुरुष भी अमिषत्रादिकों के स्पर्श से भी अतिक्रान्तिष्ट उसके अगस्पर्श को जानकरके, सागरदारक की तरह, सुख प्रसुप्त उस सुकुमारिका दारिका को जान उसे छोड़ने के लिये पलंग से उठा और उठकर उस वास घर से बाहर निकला-निकलकर खडमटलक-फूटे हुए भिक्षापात्र को तथा खडपटक-फूटे हुए पानी पीने के पात्र को-लेकर वयस्थान से अथवा मारक पुरुष के हाथ से मुक्त हुए काक की तरह वह बहुत जल्दी जहा से आया या उसी ओर चलदिया (तण्ण सा मूमालिया जाव गण्णं से दमगपुरिसे त्ति कहुहु ओहयमण जाव श्लियायइ) इसके थोड़ीदेर बाद वह सुकुमारिका दारिका जगी और पनिको अपने पास न

दिस पाउब्भूण तामेव दिस पडिगण)

ते वणते ते दग्धिं भाणुसने सुकुमारिका दारिकाना अगोने स्पर्शं पडेत्ता पणुंन उरवाभा आण्वा प्रमाणुने कठोरं ज लाग्थे (अर्द्धी सागरदारक जेवुं ज पणुंन समञ्जं जपु जेधञ्जे) आ रीते ते दग्धिं भाणुस पणु तरवारना स्पर्शं करता पणु वधारे अनिष्टकर तेना स्पर्शं जण्णीने सागर दारकनी जेमज सुभेथी सूध गथेदी ते सुकुमारिका दारिकाने जेजिने, तेना त्याग उरवा भाटे पलंग उपरथी जितो थथे अने जितो थजिने वागगुडनी णडार नीकज्थो अने नीकणीने अ उमत्तलक-फूटेला भिक्षापात्र तेमज अ उधग्क-फूटेला पाण्णी पीवा भाटेना पात्रने लठने वधस्थानथी अथवा तो भाग्क (डिमक) पुइयना हाथथी मुक्त थथेला जगडानी जेम ते तराथी न्याथी ते आण्थे डने ते तरइ ज जतो रद्धो (तण्ण सा मूमालिया जाव गण्णं से दमगपुरिसे त्ति कहुहु ओहयमण जाव श्लियायइ) थोडा वणत पथी ते सुकुमारिका दारिका जगी अने पतिने पेतानी यासे न जेधने

'भद्रियाण' भद्रिया=भाग्यायान्ग्याऽन्याऽन्यमपि भद्रतो भाग्यदार्त्री भद्रियमि ।
 ततः खलु स दमगपुरुषः सागरदत्तस्य तमर्थं प्रतिगृह्णाति=स्वीकरोति, प्रतिश्रुत्य
 सुकुमारिकाया दारिकाया साथं सागरदत्तप्रदिति, सुकुमारिका दारिकाया साथं
 'तलिगसि' तत्ये=गयनीये 'नीयन्ः' निषीदति उपनिगति । नत' खलु स दमक
 पुरुष सुकुमारिकाया इम=पूर्वोक्तम् एतत्पु=पूर्वोक्तमप्यम् अहम्पशं पडिमवेदेइ
 प्रतिसंवेदयति=प्रत्यनुभवति शेष यथा सागरदत्त=शेषवर्णन सागरदत्तस्य दू मोघ्यम्,
 यावत्-अत्र यावत्-व्यादिति द्रष्टव्यम्-' जगिपत्रार्थिनां स्वर्शादप्यनिष्टतर तदत्र
 स्पर्शं ज्ञात्वा सागरदत्तस्य दमकपुत्रपौत्रपि ता सुकुमारिका सुमप्रसुता पान्वा,
 शयनीयादक्षिणति, अभ्युदयाय सागृहात् निर्गच्छति, निर्गत्य साटमृष्टम्=फुटि

मनोज्ञ एवं मनोम है । मैं अपनी इस पुत्री को तुम्हें तुम्हारी भार्या के
 रूप में प्रदान करता हूँ (भद्रियाण भद्रओ भद्रिज्जसि, तण्णं से दमग
 पुरिसे सागरदत्तस्स एयमदृ पडि०२ सुमालियाण दारियाण सद्धि वास
 घर अणुपविसइ, अणुपविसित्ता सुमालियाण दारियाण सद्धि तलिगंसि
 निवज्जइ) इस भाग्यशालिनी से तुम भी भाग्यशाली बनजाओगे ।
 दमकपुरुष ने सागरदत्त के इस कनकरूप अर्थ को अंगीकार कर लिया,
 और फिर वह उस सुकुमारिका दारिका के साथ वासगृह में प्रविष्ट
 हुआ । वहा जाकर वह उस सुकुमारिका दारिका के साथ साथ एक ही
 पलंग पर-बैठ गया-मोगया (तण्णं से दमगपुरिसे सुमालियाण इम
 एयारुव अगफास पडि सवेदेइ, सेस जहा सागरदत्त जाव सयणिज्जाओ
 अब्भुद्वेइ, अब्भुद्वित्ता वासघराओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता खडमल्लग

अने मनोम छे हुं भारी आ पुरीने तमने तमारी पत्नीना इपमा अर्पुं धु,
 भद्रियाण भद्रओ भद्रिज्जसि, तण्णं से दमगपुरिसे सागरदत्तस्स एयमदृ पडि० २
 सुमालियाण दारियाण सद्धि वासघर अणुपविसइ, अणुपविसित्ता सुमालियाण
 दारियाण सद्धि तलिगंसि निवज्जइ)

आ लाज्यशीलाधी तमे पपु लाज्यशाली थर्थ जेशो ते दरिद्र पुत्रे
 सागरदत्तनी अे वातने स्वीकारी वीधी अने त्यारणात् ते सुकुमारिका दारिकानी
 साथे वासगृहमा प्रविष्ट थथे त्या जधने ते दरिद्र भायुस सुकुमारिका दारि
 कानी साथे अेक ज शय्या उपर जेसी गथे।

(तण्णं से दमगपुरिसे सुमालियाण इम एयारुव अगफास पडिसवेदेइ,
 सेस जहा सागरदत्त जाव सयणिज्जाओ अब्भुद्वेइ, अब्भुद्वित्ता वासघराओ निग्ग
 च्छइ निग्गच्छित्ता खडमल्लग खडघडगं च गहाय मारासुम्के)

तेजसा ज्वलति सूर्ये-उदिते दासचेटीं शब्दयति, शब्दयित्वा एवमत्रादीत्-यावत् सागरदत्तरयैतमर्थं निवेदयति, अत्र यावच्छब्देन पूर्वसूत्रोक्तवर्णनमनुमन्वेयम्, तथा-वधूवरयोर्मुखधावनिकामुपनयेति । एवमुक्तासती दासचेटी वासगृहमुपागत्य सुकुमारिकामार्तध्यानं ध्यायन्ती पश्यति, दृष्ट्वा एवमत्रादीत्-हे देवानुप्रिये ! किं खलु त्वम् अपहतमनः संकल्पा ध्यायसि ? ततः सुकुमारिका ता दासचेटीमेवमत्रादीत्-स द्रमरूपुरूपो मा मुरामसुप्ता ज्ञात्वा मम पार्श्वार्धदुत्थाय निर्गतः, ततोमुहूर्त्तान्तरेऽहमुत्थाय तमपश्यन्ती ' गतः सद्रमरूपुरूप, इति कृत्वा ऽऽर्त-यानं ध्यायामि

सद्वावेह, सद्वावित्ता एव वयासी जाव सागरदत्तस्स एयमह्ण निवेदेह) सुकुमारिका दारिकाकी माता उस भद्रा ने द्वितीय दिन जब प्रातः काल हो गया था-और सूर्य उदित हो चुका था-तब अपनी दासचेटी को बुलाया-बुलाकर उससे ऐसा कहा-यहा यावत् शब्द से यह पूर्वसूत्र गत वर्णन जोड़लेना चाहिये जैसे, भद्राने बुलाकर उससे ऐसा कहा कि तू वधू और वर के लिये यह मुख बोलने की सामग्री दतौन आदि-लेजा जब भद्रा ने उससे ऐसा कहा तब वह दासचेटी वासगृह में गई-और वहां जाकर उसने सुकुमारिका को आर्तध्यान करती हुई देखा तब देखकर उसने उससे ऐसा कहा-देवानुप्रिये । क्या कारण है जो अपहतमनः संकल्प होकर तुम आर्तध्यान कर रही हो-तब सुकुमारिका दारिका ने उस दासचेटी से इस प्रकार कहा-वह दमक पुरूप मुझे यहा सुख प्रसुप्त जान छोडकर चला गया है ! जब मैं थोडी देरबाद उठी तो मैंने उसे अपने पास नहीं देखा, वासभवन का द्वार खुला हुआ

वित्ता, एव वयासी जाव सागरदत्तस्स एयमह्ण निवेदेह) सुकुमारिका दारिकानी माता लद्राये पीना दिवसे न्यारे सवार थर्ष गथु अने सूर्य उच्य पाभ्यो त्यारे तेष्णे दासीने जोलावी अने जोलावीने आ प्रभाणे कछु-अर्धी यावत् शण्ठथी पडेलाना सूत्रनी नेम न वरुण नमश्च लेवु नेधये नेमके लद्राये तेने जोलावीने आ प्रभाणे कछु के वधू अने वरना मुष्ण प्रक्षासन भाटे हातयु वगेरे लध न न्यारे लद्राये तेने आ प्रभाणे कछु त्यारे ते दासी वासगृहमा गध अने त्या नर्धने तेष्णे सुकुमारिका दारिकाने आर्तध्यान करती नेध त्यारे आ प्रभाणे तेनी डालत नेधने तेष्णे कछु के डे देवानुप्रिये ! शा कारणथी तमे अपहतमनः संकल्प थर्धने आर्तध्यान करी रह्या छे त्यारे सुकुमार दारिकाये ते दाम्नीने आ प्रभाणे कछु-के ते दरिद्र भावुभ मने अर्धी सुषेथी सूतेवी छोडीने नतो रह्यो छे न्यारे थोडा वषत पछी हु नगी त्यारे मे तेने-मारी पासे नेथे नडि अने मे वासगृहना पारणाने पष्ण शुद्ध

दृष्ट्वा एवमवादीत् '—इति कृत्वा, अरुणमन मन्त्रा यावद्—आर्तध्यान
ध्यायति ॥ सू० ११ ॥

मूलम्—तएणं सा भद्रा कल्ल पाउ० दासचेडिं सदावेइ सदा-
वित्ता एवं वयासी जाव सागरदत्तस्स एयमट्ट निवेदेइ, तएणं
से सागरदत्ते तहेव संभते ममाणे जेणेव वासहरे तेणेव उवा
गच्छइ उवागच्छित्ता सूमालिय दारियअकेनिवेसेइ निवेसित्ता
एवं वयासी—अहो ण तुम पुत्ता ! पुरा पोराणा णं जाव पच्चणु-
वभवमाणी विहरसि त मा ण तुम पुत्ता ! ओहयमण जाव
झियाहि तुम ण पुत्ता मम महाणससि त्रिपुल असणं जहा
पुट्टिला जाव परिभाएमाणी विहराहि, तएण सा सुमालिया
दारिया एयमट्ट पडिसुणेइ पडिसुणित्ता माहणससि त्रिपुल
असणं जाव दलमाणी विहरइ ॥ सू० ११ ॥

टीका—' तएण सा ' इत्यादि । ततः खलु सा भद्रा सार्धत्राही=मुकुमारिका
दारिकाया जननी ' कल्ल ' कल्पे द्वितीयद्विसे प्रादुः प्रभाताया रजन्या यावद्-

देखकर पलंग से उठी । उठकर उसने उस दमकपुरुषकी मार्गणा एव
गवेषणा की । उसमें उसने वासगृह के द्वार को खुला हुआ देखा । देख
कर उसने विचारा कि वह दमक पुरुष अब चला गया है । ऐसा सोचकर
वह अपहृत मन, सकल्प होकर यावन् आर्त ध्यान करने लगी ॥ सू० ११ ॥

' तएण सा भद्रा कल्ल ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (सा भद्रा कल्लं पाउ० दासचेडिं

शय्या उपरथी जल्ली थर्ध जल्ली थर्धने तेषु ते हरिद्रि भाषुसनी शोध जेण करी
तेषु विचार कर्यो के ते हरिद्रि भाषुस तो जतो रह्यो छे आ रीते विचार करीने
ते अपहृतमन सकल्पा थर्धने यावत् आर्तध्यानमा इप्पी गध ॥ सूत्र ११ ॥

' तएण सा भद्रा कल्ल ' इत्यादि

टीकार्थ—(तएण) त्पारभाद (सा भद्रा कल्ल पाउ० दासचेडिं) सर

तेजसा उजलति सूर्ये-उदिते दासचेटीं शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-यावत् सागरदत्तस्यैतमर्थं निवेदयति, अत्र यावच्छब्देन पूर्वसूत्रोक्तवर्णनमनुमन्वेयम्, तथा-वधुवरयोर्मुखधावनिकामुपनयेति । एवमुक्तासती दासचेटी वासगृहमुपागत्य सुकुमारिकामार्तध्यानं ध्यायन्तीं पश्यति, दृष्ट्वा एवमवादीत्-हे देवानुप्रिये ! किं खलु त्वम् अपहतमनः सरूपा ध्यायसि ? ततः सुकुमारिका ता दासचेटीमेवमवादीत्-स द्रमरूपुरुषो मां सुरप्रसुप्तां ज्ञात्वा मम पार्श्वोदुत्थाय निर्गतः, ततोमुहूर्तान्तरेऽहमुत्थाय तमपश्यन्ती ' गतः सद्रमरूपुरुषः, इति कृत्वा ऽऽर्त-यानं ध्यायामि

सद्वायेह, सद्वावित्ता एव वयासी जाव सागरदत्तस एवमह निवेदेह) सुकुमारिका दारिकाकी माता उस भद्रा ने द्वितीय दिन जब प्रातः काल हो गया था-और सूर्य उदित हो चुका था-तब अपनी दासचेटी को बुलाया-बुलाकर उससे ऐसा कहा-यहां यावत् शब्द से यह पूर्वसूत्र गत वर्णन जोड़लेना चाहिये जैसे, भद्राने बुलाकर उससे ऐसा कहा कि तू वधु और वर के लिये यह मुख बोन की सामग्री दतौन आदि-लेजा जब भद्रा ने उससे ऐसा कहा तब वह दासचेटी वासगृह में गई-और वहां जाकर उसने सुकुमारिका को आर्तध्यान करती हुई देखा तब देखकर उसने उससे ऐसा कहा-देवानुप्रिये । क्या कारण है जो अपहतमनः सरूप होकर तुम आर्तध्यान कर रही हो-तब सुकुमारिका दारिका ने उस दासचेटी से इस प्रकार कहा-वह दमरु पुरुष मुझे यहा मुख प्रसुप्त जान छोड़कर चला गया है ! जब मैं थोड़ी देर बाद उठी तो मैंने उसे अपने पास नहीं देखा, वासभवन का द्वार खुला हुआ

वित्ता, एव वयासी जाव सागरदत्तस एवमह निवेदेह) सुकुमारिका दारिकानी माता भद्राञ्च जीवत द्विवसे न्यारे सवार थर्त गयु अने सूर्य उच्य पाञ्चो त्यारे तेणे दासीने जोलावी अने जोलावीने आ प्रभाणे कहु-अर्डी यावत् शण्ठी पडेलांना सूत्रनी जेम ज वर्षान सभल्य लेवु जेधजे जेमके भद्राञ्च तेने जोलावीने आ प्रभाणे कहु के वधु अने वरना मुण प्रक्षासन भाटे हातणु वगेरे लर्त ल न्यारे भद्राञ्च तेने आ प्रभाणे कहु त्यारे ते दासी वासगृहभा गध अने त्या जर्धने तेणे सुकुमारिका दारिकाने आर्तध्यान करती जेध त्यारे आ प्रभाणे तेनी डालत जेधने तेणे कहु के हे देवानुप्रिये । या कारणुथी तमे अपहतमन सकल्प थर्धने आर्तध्यान करी रह्या छे त्यारे सुकुमार दारिकाञ्च ते दासीने आ प्रभाणे कहु-के ते दरिद्र भाणुन मने अर्डी मुण्ठी सूतेवी छोडीने जतो रह्यो छे न्यारे थोडा वषत पछी हु लगी त्यारे मे तेने-भासी पासे जेथे नहि अने मे वासगृहना पारणाने पण पुण्ड

ततः सा दासचेटी सागरदत्तस्य सार्धसाहस्य गभीरमागमैगमर्षे निवृत्तनीति
 योजना बोध्या । तत एव त सागरदत्तस्यैव ' गमते ' सभ्रान्त = उद्विग्नः
 सन् यत्रैव गमगृह तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सुकृमारिका दारिकाम् निवृत्तयति,
 निवेश्य गमगृहोन्-भद्रो । इत्याद्यर्थं एतद् हे पुत्रि ' त्व ' पुत्रा ' पुरा = पूर्वमेव
 ' पौराणान ' पुराणानाम् = भतीतकालकृतानां, यात्र = भ्रम यात्र उदनेद
 बोध्यम् - ' दृशिणाणं दृश्यण वाण पट्टाणां पात्राण कम्पाण पात्राण पत्रविति

देखा तथैव समस्त गद्दं किं यत् यथा से चला गया है । इस प्रकार मैं
 चिन्ता में पड़ रही हूँ । सुकृमारिका को इस घात को सुनकर दासचेटी
 ने उगी समय घात से चापिस आकर सागरदत्त को इन घात की
 खबर दी - " इस प्रकार यह पूर्वोक्त पाठ यथा लगा लेना चाहिये - (तर्ण
 से सागरदत्त तद्देव सभते समाणे जेणेव वासहरे तेणेव उवागच्छइ, उवाग
 च्छित्ता सूमालिय दारिय अके निवेशेइ, निवेशित्ता एव वयासी,
 अहोण तुम पुत्ता पुरा पौराणान जाव पच्चणुम्भवमाणी विहरसि त माण
 तुमं पुत्ता ओदयमण जाव क्षियाहि - तुम ण पुत्ता मम महाणससि विपुल
 असण ४ जहा पुट्टिला जाव परिभाणमाणो विहराहि) इसके बाद वह साग
 रदत्त पहिले जैसा उद्विग्न चित्त होकर जहा वासगृह या चला गया । वहाँ जा
 कर उसने सुकृमारिका दारिका को अपनी गोदमें बैठा लिया और बैठाकर
 कहने लगा - हे पुत्रि ! तुमने पहिले भयोंमें जो दृश्चीर्ण दृष्पराक्रान्त, (कठिन
 तार्ईसे भोगने योग्य एव कृत ज्ञानावरणीय आदि अशुभ कर्म उपार्जित

लेखु त्वारे भने श्लक्ष्णपले जानी थई गध ई ते अडीधी चाट्यो गयो छे
 आ रीते हु यितामा पडी छु सुकृमारिकानी आ वात सालगीने दासीअ तरत अ
 सागरदत्तने अणर आयी आ रीते अडी पडेलानो पाठ अखी देखे लेईअ
 तर्ण से सागरदत्त तद्देव सभते समाणे, जेणेव वासहरे तेणेव उवागच्छइ, उवाग
 च्छित्ता सूमालिय दारिय अके निवेशेइ, निवेशित्ता एव वयासी अहो ण तुम पुत्ता ।
 पुरा पौराणान जाव पच्चणुम्भवमाणी विहरसि त माण तुम पुत्ता ओदयमण जाव
 क्षियाहि - तुम ण पुत्ता मम महाणससि विपुल असण ४ जहा पुट्टिला जाव परिभाण
 माणी विहराहि)

त्यारपछी सागरदत्त पडेलानी जेभ व्याकुल चित्तवाणो थईने अथा वास
 गृह उतु त्या आव्यो त्या आवीने तेखे सुकृमारिका दारिकाने ये ताना जेणामा
 जेसाडी लीधी अने जेसाडीने उडेवा लाग्ता के छे पुत्रि ! ते पडेला भवमा
 ने कर्ष दृश्चीर्ण, दृष्पराक्रान्त अने कृतज्ञानावरणीय वगेरे भाँ ७५

प्रियसे ' इति-दुश्चीर्णाना-दुश्चरिताना गार्हमनोजनित मृपात्रादादिकर्मणामित्यर्थः, किं भूताना तेषां दुष्पराक्रान्ताना-कायिकानां प्राणिर्हिंसाऽदत्तादानादीना, कृताना प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशभेदेन ब्रह्मणा पापाना=अशुभाना यमर्षणा=ज्ञानावरणीयादीना पापकर्म-अशुभ, फलवृत्तिविशेषम्, प्रत्यनुभवन्ती=वेदयन्ती विहरसि=उत्तसे तत्=तस्माद् मा खलु त्व हे पुत्रि ! अपहतमनःमरुत्पा याद्द्ध्यय=आर्तव्यान मा कुरु इत्यर्थः, त्व खलु हे पुत्रि ! मम ' महानससि ' महानसे-पात्रशालाया विपुलमशन पान खाद्य स्वाद्य यथा पोष्टिला यावत् परिभाजयन्ती=श्रमणादिभ्यः प्रतिभाग कुर्वती ' विहराहि ' विहर=तिष्ठ । ततः खलु सा सुकु-

क्रिये-प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश व प्रकृति भेदसे बांधे हैं-उन्हीं पुराने अशुभ ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के तुम अशुभ फल विशेष को इस समय भोग रही हो । पूर्व भवों में जो पाप किये हैं वेही यहां " "पुराण " शब्द से गृहीत हुए हैं । पाप शब्द यहां अशुभ ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का बोधक है । ये अशुभ ज्ञानावरणीय आदि कर्म जीव अशुभ मन, वचन और काय की प्रवृत्ति से जन्य मृपात्राद आदि क्रियाओं से, तथा प्राणिर्हिंसा, अदत्तादान आदि कुकृत्यों से बाधता है । बांधते समय इनमें प्रकृति, स्थिति अनुभाग और प्रदेश वधरूप विभाग हो जाता है । अधिक स्थिति और अधिक अनुभाग वध इनमें सकलेश परिणामो से पडता है । इसलिये हे पुत्रि ! तुम अपहतमन' सकल्प होकर यावत् आर्तव्यान मत करो । तुम तो मेरी भोजन शाला में चतुर्विध आहार तैयार करा कर पोष्टिला की तरह श्रमण आदि

श्रित उर्था हता-प्रकृति, स्थिति, अनुभाग अने प्रदेश वधना लेखी जाव्या छे अत्यारे तु तेज पडेलाना अशुभ ज्ञानावरणीय वगेरे कर्मोना अशुभ कृण विशेषने लागवी रही छे पूर्व लवभा ले पाप करवाभा आव्या होय तेने अर्द्धा " पुराण " शब्दवी अर्द्ध कर्वाभा आव्या छे अर्द्धी पाप गण्ड अशुभ ज्ञानावरणीय वगेरे उर्ध्वेने स्पष्ट करे छे आ अथा अशुभ ज्ञानावरणीय वगेरे कर्मो एव अशुभ-मन, वचन, अने कायनी प्रवृत्तिथी जन्य मृपात्राद वगेरे क्रियाओथी तेमज प्राप्तिओ री हिंसा, अदत्तादान वगेरे कुर्मोवी बाधे छे बाधती वधते ओओभा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग अने प्रदेश वधउप विलाग थथ लय छे अधिक स्थिति अने अधिक अनुभाग वध तेओभा सकलेश परिणामोथी पडे छे ओथी हे पुत्रि ! तने अपहत मन सक प थने यावत्

ततः सा दासचेटी सागरदत्तस्य सार्धमाह्वय गणोपमाग गैरमर्षं निवृत्तनीति
 योजना बोध्या । तत एत स सागरदत्तस्यैव ' समते ' सभात्त = उद्दिग्ः
 सन् यत्रैव सागमृदतर्जोपाग-त्रिति, उपागत्य सुकृमारिणं दारिद्रामङ्गे निवृत्तयति,
 निवेद्य एवमादीन्-भर्ते । इत्यागर्षं मलु हे पुत्रि ' त्व ' पुरा ' पुरा=पूर्वमवेष्टु
 ' पोरानाण ' पुगणानाम्=भतीतकालकृताना, यावन्=अत्र याव-उद्भवेद
 बोध्यम्-' द्रुचिष्णाण द्रुष्पराण ताण कङ्गाण पात्राण कम्भाण पात्राण कत्रिति

देखा तथ म समझ गई कि यह यहा से चला गया है । इस प्रकार म
 चिन्ता में पड़ रही हैं । सुकृमारिका की इस घान को सुनकर दामचेटी
 ने उगी समय वहा से चापिस आकर सागरदत्त को इस घान की
 खबर दी-" इस प्रकार यह पूर्वोक्त पाठ यहा लगा लेना चाहिये-(तएण
 से सागरदत्ते तहेव सभते समाणे जेणेव चामहरे तेणेव उवागच्छइ,
 उवागच्छित्ता सुमालिय दारिय अके निवेसेइ, निवेसित्ता एव वयासी,
 अहोण तुम पुत्ता पुरा पोरानाण जाव पच्चणुब्भयमाणी विहरसि त माण
 तुम पुत्ता ओहयमण जाव झियाहि-तुम ण पुत्ता मम महाणससि विपुल
 असण ४ जहा पुट्टिला जाव परिभाणमाणी विहराहि) इसके बाद वह साग
 रदत्त पहिले जैसा उद्दिग्ग चित्त होकर जहा वासगृह या वहा गया । वहां जा
 कर उसने सुकृमारिका दारिका को अपनी गोद में बैठा लिया और बैठाकर
 कहने लगा-हे पुत्रि । तुमने पहिले भयोंमें जो दुश्चोर्ण दुष्परान्तान्त, (कठिन
 तार्से भोगने योग्य एव कून ज्ञानावरणीय आदि अशुभ कर्म उपार्जित

लेखु त्पारे भने बोधसपले आत्री थई गई हे ते अर्द्धीधी आत्थे गये छे
 आ रीते हु चिंताभा पडी छु सुकृमारिकानी आ वात सावगीने दासीअे तरत न
 सागरदत्तने अणर आपी आ रीते अर्द्धी पडेलाने पाठ नाथी देवे लेईअे
 तएण से सागरदत्ते तहेव सभते समाणे, जेणेव तसहरे तेणेव उवागच्छइ, उवाग
 च्छित्ता सुमालिय दारिय अके निवेसेइ, निवेसित्ता एव वयासी अहो ण तुम पुत्ता !
 पुरा पोरानाणं जाव पच्चणुब्भयमाणी विहरसि त माण तुम पुत्ता ओहयमण जाव
 झियाहि-तुम ण पुत्ता मम महाणससि विपुल असण ४ जहा पुट्टिला जाव परिभाण
 माणी विहराहि)

त्यारपधी सागरदत्त पडेलानी नेम व्याकुल चित्तवणे थईने न्या वास
 गृह छर्तु त्या आत्थे त्या आनीने तेले सुकृमारिका दारिकाने ये ताना जोणाभा
 वेसाडी लीधी अने वेसाडीने कडेवा लाग्ना के हे पुत्रि ! ते पडेला एवमा
 ने कर्ष दुश्चोर्ण, दुष्परान्तान्त अने कृतज्ञानावरणीय वगेरे भाँ छपा

मिसेस ' इति-दुश्चीर्णाना-दुश्चरिताना गार्हमनोजनित मृषानादादिकर्मणामित्यर्थः,
किं भूताना तेपा? दुष्पराक्रान्ताना-कायिकाना प्राणिहिंसाऽदत्तादानादीना, कृतानां
प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशभेदेन चदाना पापाना=अशुभाना कर्मणा=ज्ञानावरणी-
यादीना पापम्-अशुभ, फलवृत्तिविशेषम्, प्रत्यनुभवन्ती=वेदयन्ती विहरसि=
उत्तसे तत्=तस्माद् मा खलु त्व हे पुत्रि! अपहृतमनःमरुत्पा याद् ध्याय=
आर्तयान मा कुरु इत्यर्थः, त्व खलु हे पुत्रि! मम ' महागससि ' महानसे-
पाकशालाया विपुलमशनं पान खाद्य स्वाद्य यथा पोष्टिला यावत् परिभाजयन्ती=
श्रमणादिभ्यः प्रविभाग कुर्वती ' विहरादि ' विहर=तिष्ठ। ततः खलु सा सुकु-

किये-प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश वधके भेदसे बांधे हैं-उन्हीं
पुराने अशुभ ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के तुम अशुभ फल विशेष को
इस समय भोग रही हो। पूर्व भवों में जो पाप किये हैं वेही यहा ”
“पुराण ” शब्द से गृहीत हुए हैं। पाप शब्द यहाँ अशुभ ज्ञानावर-
णीय आदि कर्मों का बोधक है। ये अशुभ ज्ञानावरणीय आदि कर्म
जीव अशुभ मन, वचन और काय की प्रवृत्ति से जन्य मृषानाद आदि
क्रियाओं से, तथा प्राणिहिंसा, अदत्तादान आदि क्रूरुत्वों से गंधता
है। बांधते समय इनमें प्रकृति, स्थिति अनुभाग और प्रदेश वधरूप
विभाग हो जाता है। अधिक स्थिति और अधिक अनुभाग वध इनमें
सकलेश परिणामों से पडता है। इसलिये हे पुत्रि। तुम अपहृतमनः
सकल्प होकर यावत् आर्तध्यान मत करो। तुम तो मेरी भोजन शाला
में चतुर्विध आहार तैयार करा कर पोष्टिला की तरह श्रमण आदि

मृत धर्मा उता-प्रकृति, स्थिति, अनुभाग अने प्रदेश वधना लेटथी बांध्या
छे अत्यारे तु तेज पडेलाना अशुभ ज्ञानावरणीय वगेरे कर्मना अशुभ इण
विशेषने लागवी रही छे पूर्व लवमा ले पाप उरवाभा आव्या डोय तेने
अर्ही “ पुराण ” शब्दथी अडणु करवाभा आव्या छे अर्ही पाप गण्ड अशुभ
ज्ञानावरणीय वगेरे उमेनि स्पष्ट करे छे आ वधा अशुभ ज्ञानावरणीय वगेरे
कर्मो एव अशुभ-मन, वचन, अने कायनी प्रवृत्तिथी जन्य मृषावाट वगेरे
डियाओथी तेमत्र प्राप्तिओनी हिंसा, अदत्तादान वगेरे दुर्मेयी बाधे छे बाधनी
वधते ओओमा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग अने प्रदेश वधरूप विभाग यध
वध छे अधिक स्थिति अने अधिक अनुभाग वध तेओमा सकलेश परि-
णामोथी पडे छे ओथी हे पुत्रि! तमे अपहृत मन सक य धने यावत्

मारिका दारिका एतन्मर्थे मनिगुगोति=स्तोस्तोति, मनिश्रुत्य महानमे विपुलमत्र
नपानत्ताय त्वाय यावत् ' दम्पाणी ' ददी विहरति=आस्ते म् ॥ ४०१२ ॥

मूप्-तेण कालेण तेणं सुनाणं गोवालियाओ अजाओ
बहुस्सुयाओ एवं जहेव तेयलिणाए सुव्वयाओ तहेव सनोस
ड्वाओ तहेव संघाडओ जाव अणुपदिडे तहेव जाव सूमालिया
पडिलाभित्ता एव वयासी-एवं सल्लु अजाओ । अह सागरस्स
अणिट्ठा जाव अमणामा नेच्छइ णं सागरण मम नाम वा जाव
परिभोगं वा, जस्स २ वि य णं दिज्जामि तस्स २ वि य णं
अणिट्ठा जाव अमणामा भवामि, तुव्वे य णं अजाओ । बहु-
नायाओ एव जहा पुट्टिला जाव उवल्लहे जे ण अह सागरस्स
दारियाए इट्ठा कता जाव भवेज्जामि, अजाओ तहेव भणंति
तहेव साविया जाया चित्ता तहेव सागरदत्त सत्थवाहं आपु-
च्छइ जाव गोवालियाणं अतिए पव्वइया, तएण सा सूमा-

जनों के लिये वितरण करती रहो (तएण सा सूमालिया दारिया एय
मट्ट पडिसुणेइ पडिसुणित्ता महाणससि विपुल असण जाव दलमाणी
विहरइ) इस तरह पिता सागरदत्त के समझाने पर उम सुकुमारिका
दारिका ने अपने पिता के इस कथन को स्वीकार कर के वह महानस
भोजन शाला में निष्पन्न चतुर्विध आहार को श्रमणादि जनों के लिये
वितरण भी करने लगी ॥ सूत्र १२ ॥

आर्तध्यान करीश नडि तु भारी बोजन शाणामा थार लतना आडासे
तैथार करावडावीने पोड्डिलानी जेम श्रमणु वगेरे जेनेने आपती रहे
(तएण सा सूमालिया दारिया एयमट्ट पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता महाणससि
विपुल असण जाव दलमाणी विहरइ)

आ रीते पिता सागरदत्त वडे समन्वयवामा आवेदी ते सुकुमाक दारि
काओ पोताना पिताना कथनने स्वीकारी वीधु अने स्वीकारीने ते बोजनशाणामा
तैथार थयेला थारे लतना आडासेने श्रमणु वगेरेने आपता ५ २२

लिया अज्जा जाया ईरियासमिया जाव गुत्तवंभयारिणी बहूहिं
 चउत्थछट्टुम जाव विहरइ, तएणं सा सुमालिया अज्जा
 अन्नया कयाइ जेणेव गोवालियाओ अज्जाओ तेणेव उवाग-
 च्छइ उवागच्छित्ता वदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता एववयासी-
 इच्छामि णं अज्जाओ । तुब्भेहि अब्भणुत्ताया समाणी चंपाओ
 वाहि सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामंते छट्टंछट्टेणं अणि-
 विवत्तेणं तवोकम्मेषं सूराभिमुही आयावेमाणा विहरित्तए,
 तएण ताओ गोवालियाओ अज्जाओ सुमालिय एवं वयासी-
 अम्हे ण अज्जे । समणीओ निगंथीओ ईरियासमियाओ जाव
 गुत्तवंभयारिणीओ नो खलु अम्ह कप्पइ बहिया गामस्स जाव
 सण्णिवेसस्स वा छट्टर जाव विहरित्तए, कप्पइ ण अम्ह अतो
 उवस्सयस्स विइपरिविखत्तस्स सघाडिवद्धियाए णं समतल
 पइयाए आयावित्तए, तएणं सा सुमालिया गोवालियाए एय-
 सट्ट नो सद्दहइ नो पत्तियइ नो रोएइ एयमट्टं अ०३ सुभूमि-
 भागस्स उज्जाणस्स अदूरसामते छट्टं छट्टेणं जाव विहरइ ॥सू०१३॥

टीका—‘ तेण कालेण ’ इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये ‘ गोवा-
 लियाओ अज्जाओ ’ गोपालिमा=गोपालिमानाम्यः आर्याः=साध्यः, ‘ बहुस्सु-
 याओ ’ बहुश्रुता =श्रुतपारगामिन्य, एवम्=अनेन प्रकारेण यथैव ‘ तेतल्लिणाए ’
 तेतल्लिजाते=चतुर्दशे तेतल्लिपुत्राध्ययने वर्णिताः ‘ सुव्वयाओ ’ सुप्रताः=सुव्रता-

‘ तेण कालेण तेण मनएण ’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तेण कालेण-तेण समएण) उस काल और उस समय में
 (गोवालियाओ अज्जाओ बहुस्सुयाओ एव जहेव तेयल्लिणाए सुव्वयाओ

‘ तेण कालेण-तेण समएण ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तेण कालेण-तेण समएण) ते काले अने ते समये
 (गोवालियाओ अज्जाओ बहुस्सुयाओ एव जहेव तेयल्लिणाए सुव्वयाओ

मारिका दारिका एनमर्थं प्रतिश्रुति=मोरोनि, प्रतिश्रुत्य महानमे विपुलमस
नपानखाद्य खाद्य याम् ' दलमाणी ' इदती विहरति=आस्ते म् ॥ ४०१२ ॥

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं सुनणं गोवालियाओ अजाओ
वहुस्सुयाओ एवं जहेव तेयलिणाण सुव्वयाओ तहेव सुनोस
ह्वाओ तहेव संघाडओ जाव अणुपविट्ठे तहेव जाव सूमालिया
पडिलाभित्ता एव ययासी—एवं खलु अजाओ ! अह सागरस्स
अणिट्ठा जाव अमणामा नेच्छइ णं सागरए मम नामं वा जाव
परिभोग वा, जस्स २ वि य णं डिज्जामि तस्स २ वि य णं
अणिट्ठा जाव अमणामा भवामि, तुव्वे य णं अजाओ । बहु-
नायाओ एव जहा पुट्टिला जाव उवलद्वे जे णं अह सागरस्स
दारियाए इट्ठा कता जाव भवेज्जामि, अजाओ तहेव भणंति
तहेव साविया जाया चित्ता तहेव सागरदत्त सत्थयाहं आपु-
च्छइ जाव गोवालियाणं अतिए पव्वइया, तएणं सा सूमा

जनों के लिये वितरण करती रहो (तएण सा सूमालिया दारिया एय
मट्ट पडिसुणेइ पडिसुणित्ता महाणससि विपुल असण जाव दलमाणी
विहरइ) इस तरह पिता सागरदत्त के समझाने पर उन्न सुकुमारिका
दारिका ने अपने पिता के इस कथन को स्वीकार कर के वह महानस
भोजन शाला में निष्पन्न चतुर्विध आहार को भ्रमणादि जनों के लिये
वितरण भी करने लगी ॥ सूत्र १२ ॥

आर्तध्यान करीश नडि तु भारी बोझन शाणामा थार नतना आडारे
तैयार करावशायीने पोट्टिलानी नेम भ्रमणु वगेरे ननोने आपती नडे
(तएण सा सूमालिया दारिया एयमट्ट पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता महाणससि
विपुल असण जाव दलमाणी विहरइ)

आ रीते पिता सागरदत्त वडे समभववामा आवेली ते सुकुमाक द्वारि
द्वारे पोताना पिताना कथनने स्वीकारी वीधु अने स्वीकारीने ते बोझनशाणामा
तैयार थयेला थारे नतना आडारेने भ्रमणु वगेरेने आपता ला ॥ १२

लिया अज्जा जाया ईरियासमिया जाव गुत्तवंभयारिणी वडूहिं
 चउत्थच्छट्टम जाव विहरइ, तएणं सा सूमालिया अज्जा
 अन्नया कयाइ जेणेव गोवालियाओ अज्जाओ तेणेव उवाग-
 च्छइ उवागच्छित्ता वंदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-
 इच्छामि णं अज्जाओ ! तुवमेहि अब्भणुन्नाया समाणी चंपाओ
 वाहि सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामंते छट्टंछट्टेणं अणि-
 खित्तेणं तवोकम्मेणं सूराभिमुही आयावेमाणा विहरित्तेण,
 तएण ताओ गोवालियाओ अज्जाओ सूमालिय एवं वयासी-
 अम्हे ण अज्जे । समणीओ निगंथीओ ईरियासमियाओ जाव
 गुत्तवंभयारिणीओ नो खल्लु अम्ह कप्पइ वहिया गामस्स जाव
 सण्णिवेसस्स वा छट्टं जाव विहरित्तेण, कप्पइ ण अम्ह अतो
 उवस्सयस्स विइपरिविखत्तस्स संघाडिवद्धियाए णं समतल
 पइयाए आयावित्तेण, तएणं सा सूमालिया गोवालियाए एय-
 मट्ट नो सद्दहइ नो पत्तियइ नो रोएइ एयमट्ट अ०३ सुभूमि-
 भागस्स उज्जाणस्स अदूरसामते छट्टं छट्टेणं जाव विहरइ ॥सू०१३॥

टीका—‘ तेण कालेण ’ इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये ‘ गोवा-
 लियाओ अज्जाओ ’ गोपालिमा=गोपालिमानाम्भ्यः आर्याः=साध्यः, ‘ गहुस्सु-
 याओ ’ गहुथुता=श्रुतपारगामिन्य, एवम्=अनेन प्रकारेण यथैव ‘ तेतलिणाए ’
 तेतलिजाते=चतुर्दशे तेतलिपुराध्ययने वर्णिताः ‘ सुव्वयाओ ’ सुप्रताः=सुव्वता-

‘ तेण कालेण तेण समएण ’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तेण कालेण-तेण समएण) उस काल और उस समय में
 (गोवालियाओ अज्जाओ गहुस्सुयाओ एव जहेव तेयलिणाए सुव्वयाओ

‘ तेण कालेण-तेण समएण ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तेण कालेण-तेण समएण) ते काले अने ते समये
 (गोवालियाओ अज्जाओ गहुस्सुयाओ एव जहेव तेयलिणाए सुव्वयाओ

नाम्न्य साध्व्यः, 'तद्देव समोमद्वाओ' तथैव सगरस्य=नुतनारद् गोपालिकाः
समागता । 'तद्देव सगाडओ जाव अणुपचिट्ठे' तथैव सगाडओ यावत् अनुप
चिट्ठे गोपालिकानामार्याणामेव सगाडः गावत् सुकुमारिकाया ज्जेऽनुपचिट्ठः ।
तथैव यावत् सुकुमारिका ता आर्या अगनादिना प्रतिलम्ब्य एव=प्रत्यमाणपका
रेण आदीत्-हे आर्या ! एव यत्तु अह सागरस्य दारदम्प्यानिष्ठा यावत्=
अकान्ता अप्रिया अमनोमा अमनोमा मन प्रीत्याऽग्नि, नेच्छति गलु साग
रको मम नाम वा गोत्र वा श्रोतुम्, किं पुनर्यावत् मया गत् परिभोग वा, यत्
मम नामाऽपि श्रोतु नेच्छति तत्र का यत्ता परिभोगस्य, अह तु तेन सर्वथा परि,
स्यक्तेति भावः । अपि च यस्मै यस्मै खलु 'दिज्जामि' दीये=स्वपित्रा प्रदत्ता
भवामि, तस्य तस्यापि च खलु अनिष्ठा यावत् अमनोमा=मनः प्रतिलला भवामि,
हे आर्या ! यूयं च खलु 'बहुनापाओ' बहुजाताः ज्ञानातिगपयुक्ताः, 'एवं

तद्देव समोमद्वाओ तद्देव सगाडओ जाव अणुपचिट्ठे तद्देव जाव सुमा
लिया पडिलभित्ता एव वपासी) गोपालिका नामकी आर्यिका जो श्रुत
पारगामिनी थीं इस प्रकार से कि जिस प्रकार से तैतलि प्रधान नामक
चौदहवें अध्यायन में सुप्रता माध्वी वर्णित हुई है-थीं-वे उसी तरह से
वहा आई । इनका एक सगाडा था, यावत् सुकुमारिका के घर में
गोचरी के लिये प्रवेश किया । सुकुमारिका ने बड़ी भक्ति के साथ
उन्हें आहार पानी दिया-और देकर वह फिर इस प्रकार से उनसे
कहने लगी-(एवखलु अजाओ ! अह सागरस्य अणिट्ठा, जाव अम
णांमा, नेच्छइ ण सागरण मम नाम वा जाव परिभोग वा जस्स २ वि
य ण दिज्जामि तस्स-तस्स वि य ण अणिट्ठा, जाव अमणांमा भवामि
तुब्भे य ण अजाओ ! बहुनापाओ, एव जहा पुट्टिला जाव उवल्ले
तद्देव समोमद्वाओ तद्देव सगाडओ जाव अणुपचिट्ठे तद्देव जाव सुमालिया पडि
लभित्ता एव वपासी)

गोपालिका नामे आर्यिका हे जे श्रुत पारगामिनी હતી તેતલીપ્રधान
નામના ચૌદમા અધ્યયનની સુપ્રતા માધ્વી જેવી હતી તેવા જ તે પણ હતી
સુપ્રતા સાધ્વીની જેમ જ તે યાવત્ સુકુમારિકાના ઘેર તે ગોચરી માટે ગઈ
સુકુમારિકાએ ખૂબ જ ભક્તિ-ભાવથી તેમને આહારપાણી આપ્યું અને આપીને
તે તેમને આ પ્રમાણે કહેવા લાગી—

(એવં સ્વલુ અજ્જાઓ અહ સાગરસ્સ અણિટ્ઠા, જાવ અમણામા નેચ્છઈ ણ
સાગરણ મમ નામ વા જાવ પરિભોગ વા જસ્સ ૨ વિ ય ણ દિજ્જામિ તસ્સ તસ્સ
વિ ય ણ અણિટ્ઠા, જાવ અમણામા ભવમિ તુબ્ભે ય ણ)

यथा पोट्टिला याद् उपलब्धम् अयमर्थः—यथा तेतलिपुत्रभोर्या पोट्टिला स्वमर्त-
वरीकरणोपायमदर्शनार्थं सुव्रता साध्वी पृच्छतिस्म, तथा—सुकुमारिका दारिका
गोपात्रिका मन्त्राटक पृच्छती, तादृश चूर्णयोगादिस्म्युपलब्ध=ज्ञात त्रिम् ? येनाह
सागरस्य दारकस्येष्टा कान्ता यावद् भवेय आर्यास्तथैव भणन्ति=यथा पोट्टिलि

जे ण अह सागररस दारगस्स इट्ठा कता जाव भवेज्जामि, अज्जाओ
तहेव भगति, तहेव मायिया जाया, तहेव चिंता, तहेव सागरदत्त सत्त्व-
वाह आणुच्छड जाव गोवालियाण अनिण पव्वइया) हे आर्याओ !
मैं अपने पति सागर दारक के अनिष्ट वनी ह यावत् अकान्त
अप्रिय अमनोज्ञ एव अमनोम मनः प्रतिकूल वनी हुई हूँ । वे मेरा नाम
गोत्र कुछ भी सुनना नहीं चाहते हैं । तो फिर उनके साथ परिभोग
करने की तो बात ही क्या है । मुझे तो उन्होंने सर्वथा ही जोड़ दी है ।
अपिच—मेरे पिता मुझे जिस २ व्यक्ति के लिये देते ह—मैं उस २ व्यक्ति
के लिये भी अनिष्ट आदि मन जाती हूँ । हे आर्याओ ! आप तो बहु-
श्रुत ह अनेक शास्त्रों की ज्ञाता है—ज्ञान के अतिराज से सपन्न हैं ।
इस प्रकार उस सुकुमारिका ने पोट्टिला की तरह अपने पति को वश
में करने के विषय में उनसे उपाय पूछा पोट्टिलाने अपने पति तेतलिपुत्र
को वशमें करने को पहिले जैसे सुव्रता साध्वी के सगाटेसे उपाय पूछा
था—और कहा आपको यदि कोई ऐसा चूर्ण आदि का प्रयोग उपलब्ध

एव जहा पुट्टिला जाव उपलब्धे जेग अह सागरस्स दारगस्स इट्ठा कता जाव
भवेज्जामि, अज्जाओ तहेव भगति, तहेव सायिया जाया, तहेव चिंता,
तहेव सागरदत्त सत्त्ववाह आणुच्छड जाव गोवालियाण अनिण पव्वइया)

हे आर्याओ ! मेरा पति सागरदारक भाटे हू अनिष्ट थर्ष गयेली हू
यावत् अकान्त, अप्रिय, अमनोज्ञ अने अमनोम थर्ष थूकी हू तेओ मेरा
नाम गोत्र कछ पणु सालणया धिंठना नथी त्थारे तेमनी माये परिभोग
करवानी तो वात न शी करवी तेओओ मने ओकदम न ने छोडी दीधी छे
अने मेरा पिताओ मने ने ने माणुसने आपे छे ते जधा भाटे पणु हुं अनिष्ट
पगेरे थर्ष लडि हू हे आर्याओ ! तमे तो गहुंश्रुन छे, धणु शाओने
लणुओ छे, ज्ञान स पन्न छे आ रीते पोट्टिवानी नेम न सुकुमारिका दारि-
काओ पणु पतिने वशमा करवा भाटेना उपायेनी पूछपरछ करी पोट्टिलाओ
पोताना प ते तेतत्रिपुत्रने वशमा करवा भाटे पडेवा सुव्रता साध्वीना सधा
शधी नेम उपायो पूछना डता तेमन तेओ पणु तेमने कहुं छे—ने ओवे

कया पृष्ठा सुप्रतायाः सपाटस्थिताः मा-प्यन्तामरोचन्, तथैव गोपालिका
 सपाटस्थाः आर्या भणन्ति-रदन्ति स्मे दर्थ । ' तदेव गात्रिया जाया ' तथैव
 श्राविका जाता=पोट्टिला वन् सुकुमारिका दारिकाऽपि श्राविका जाता । तथैव
 चिन्ता-पोट्टिलायदेव पशान्=मन्त्रज्यां गृहीतुं गिन्वा सुकुमारिकाया मनसि प्रादु
 र्भूता । सुकुमारिका सागरदत्त सार्धं गच्छन्त्यपितर तथैव=पया स्वपतिं पोट्टिला,
 तद्वद् आपृच्छति, यावद् गोपालिकानामन्तिके मन्त्रिता-द्रीया गृहीतवती । ततः
 खलु सा सुकुमारिका आर्या=साध्वी जाता सा किं भूता-ईर्यासमिता यावद् गुप्त
 हो तो भी पता दीजिये कि जिससे मैं अपने पति सागरदारक को
 इष्ट, कान्त यावत् मनोम पनजाऊँ । गोपालिका के सपाटके की इन
 आर्याओं ने सुकुमारिका को, पोट्टिला को सुव्रता सात्री की तरह
 समझाया-वह उसी तरहसे श्राविका बन गई । पोट्टिला की तरह इस
 सुकुमारिका ने भी बाद में दीक्षा लेने का मन में विचार किया-
 पोट्टिलाने जिस तरह अपने पति से आज्ञा लेकर दीक्षा धारण की
 थी-उसी प्रकार इस सुकुमारिका ने भी अपने पिता सागरदत्त से
 पूछकर गोपालिका आर्या के समीप दीक्षा धारण कर ली । (तएण सा
 सुमालिया अज्जा जाया ईरिया समिघा जाय गुत्तवभयारिणी बहूहिं
 चउत्थ छट्ठम जाव विहरइ, तएण सा सुमालिया अज्जा अन्नया कयाइ
 जेणेव गोवालिया अज्जाओ तेणेव उवागच्छइ) इस तरह वह सुकुमा
 रिका आर्या बन गई । वह ईर्यासमिति आदि का पालन करने लगी

कोई अर्थुं वगेरेना प्रयोग भणी शके तो पशु भने पतावी हो के जेथी हु
 भारा पति सागरदारकना भाटे इरी छोट, कात, यावत् मनोम यर्थ लउ
 गोपालिका सघाडानी ते आर्याओओ-सुप्रता-साध्वीओ जेभ पोट्टिलाने सभ
 लयी तेमन् सभलवी अने छेवटे ते श्राविका भनी गछ पोट्टिलानी जेभन्
 ते सुकुमारिकाओ पशु त्यारपछी दीक्षा लेवाने मनभा मच्छम विचार करी लीथी
 पोट्टिलाओ जेभ पोताना पतिनी आज्ञा लधने दीक्षा धारण करी हती तेमन्
 सुकुमारिकाओ पशु पोताना पति सागरदत्तने पूछीने गोपालिका आर्यानी
 पासैथी दीक्षा धारण करी लीथी

(तएण सा सुमालिया अज्जा जाया ईरिया जाव गुत्तवभयारिणी बहूहिं
 चउत्थ छट्ठम जाव विहरइ, तएण सा सुमालिया अज्जा अन्नया कयाइ जेणेव
 गोवालियाओ अज्जाओ तेणेव उवागच्छइ)

आ रीते : आर्या यर्थ गछ, ते धर्या समिति वगेरेनु पालन
 करवा लागी, मंडावतनी रक्षा

ब्रह्मचारिणी सा बहुभिश्चतुर्थपष्ठाष्टमभक्तैर्यात्-तप कर्मभिरात्मान भावयन्ती
 विहरति=भास्तेस्म । ततः खलु सा सुकुमारिका आर्या अन्यदा कदाचिद् यत्रैव
 गोपालिका आर्यास्तत्रोपागच्छति उपागत्य वन्दते नमस्यति, उन्दित्वा
 नमस्यित्वा एवमवादीत्=हे आर्या ! इच्छामि खलु युष्माभिरभ्यनुज्ञाता सती
 चम्पानगर्या वहिः सुभूमिभागस्योद्यानस्यादूरसामन्ते = नातिदूरे नातिनिकटे
 पष्ठपष्ठेन-पष्ठमक्तानन्तर पुन पष्ठभक्तेन ' अणिक्रियत्तेण ' अनिक्रियत्तेन
 =अविश्रान्तेन-अन्तररहितेन, तप.कर्मणा ' सूरामिमुही ' सूर्याभिमुग्धी ' आया
 वेमाणी ' आतापयन्ती-आतापना कुर्वती विहर्तुम् ' इति । ततस्तदनन्तर
 ता गोपालिका आर्याः सुकुमानिकामार्यामेवमवादिपुः-हे आर्ये ! त्रय खलु श्रमण्यो

और नौ कोटी ब्रह्मचर्य से महाव्रत की रक्षा करने लगी । अनेक चतुर्थ,
 पष्ठ, अष्टम, भक्त आदि तपस्याओं से अपने आपको भावित
 भी करने लगी । एक दिन की बात है कि वह सुकुमारिका आर्या
 साध्वी-जहा गोपालिका आर्या विराज मान थी वहा गई-(उवाग-
 च्छिता वदह, नमसह, वदित्ता नमंसित्ता एव वयासी, इच्छामि ण अ-
 ज्जाओ ! तुभेहिं अभणुन्नाया समाणी चपाओ वारिं सुभूमिभागस्स
 उज्जाणस्स अदूर सामते छट्ट छट्टेण अणिक्रियत्तेणं तवोकम्मे ण सूर
 भिमुही आयावेमाणी विहरित्तए) वहां जाकर उसने उन्हें वदना
 की, नमस्कार किया ' वदना एव नमस्कार कर फिर वह इस-
 प्रकार कहने लगी-हे भद्रत । मे आप से आज्ञा प्राप्त कर चपा नगरी से
 बाहिर सुभूमिभाग नाम के उद्यान के समीप अतररहित छट्ट छट्ट
 की तपस्या से सूर्याभिमुखी होकर आतापना करना चाहती हूँ ।
 (तएण ताओ गोवालियाओ अज्जाओ सुमालिय एव वयासी-अम्हेण

अतुथ, पष्ठ, अष्टम लक्ष्म वगेरे तपस्याओथी पोताने लापित पणु करवा
 लागी ओक द्विवसनी वात छे के ते सुकुमारिका आर्या साध्वी न्या गोपालिका
 आर्या विश्रमान डती त्या गथ (उवागच्छिता वदह, नमसह, वदित्ता, नम-
 सित्ता एव वयासी, इच्छामि ण अज्जाओ ! तु भेहिं अभणुन्नाया समाणी च पाओ
 वारिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामते छट्ट छट्टेण अणिक्रियत्तेणं तवो
 कम्मेण सूरामिमुही आयावेमाणि विहरित्तए) त्या लधने तेणु तेभने वदना करी
 नमस्कार कर्वा वदना तेभल नमस्कार करीने तेणु आ प्रभाणु कणु के छे
 लदत । आपनी आज्ञा मेणवीने हु अ पा नगरीमा लक्षार सुभूमिभाग नामना
 उद्याननी पाने अतर रहित छट्ट छट्टनी तपस्या करता सूर्याभिमुखी थधने
 आतापना करवा धिच्छु छु (तएण ताओ गोवालियाओ अज्जाओ सुमालिय

कया पृष्टा सुमनायाः सघाटकस्थिताः सा यथानामनीनन्, तथैव गोपालिका
 सघाटस्था आर्या भणन्ति=रहित स्मेरार्थ । ' नदेव श्राविका जाता ' तथैव
 श्राविका जाता=पोटिका यन् सुकुमारिका दारिकाऽपि श्राविका जाता । तथैव
 चिता-पोटिलापदेव पधान्=प्रवर्ज्या गद्दीउ तिन्ठा सुकुमारिकाया मनमि प्रादु
 भूता । सुकुमारिका मागरदत्त सार्थसाद=प्रवितर तथैव=यथा स्वपति पोटिका,
 तद्वद् आपृच्छति, यादु गोपालिकानामन्तिके प्रवर्जिता=श्रीया गद्दीतततो । ततः
 खलु सा सुकुमारिका आर्या=माया जाता सा किं भूता-ईर्यासमिता यादु गुप्त
 हो तो भी घता दीजिये कि जिससे मैं अपने पति सागरदारक को
 इष्ट, कान्त यावत् मनोम भनजाऊँ । गोपालिका के सघाटे की इन
 आर्याओं ने सुकुमारिका को, पोटिका को सुमना सात्री की तरह
 समझाया-वह उसी तरहसे श्राविका बन गई । पोटिका की तरह इस
 सुकुमारिका ने भी घाट में दीक्षा लेने का मन में विचार किया-
 पोटिलाने जिस तरह अपने पति से आज्ञा लेकर दीक्षा धारण की
 थी-उसी प्रकार इस सुकुमारिका ने भी अपने पिता सागरदत्त से
 पूछकर गोपालिका आर्या के समीप दीक्षा धारण कर ली । (तएव सा
 सुमालिया अज्जा जाया ईरिया समिया जाय सुत्तवभयारिणी बहूहि
 चउत्थ छट्टट्टम जाव विहरइ, तएण सा सुमालिया अज्जा अन्नया कयाइ
 जेणेव गोवालिया अज्जाओ तेणेव उवागच्छइ) इस तरह वह सुकुमा
 रिका आर्या बन गई । वह ईर्यासमिति आदि का पालन करने लगी

कैथं थुण्णं वगेरेना प्रयोग मणी राके तो पणु भने जतावी हो के नेथी हु
 मारा पति सागरदारकता भाटे इरी छण्ट, कात, यावत् मनोम थर्ध नउ
 गोपालिका सघाटानी ते आर्याओओ-सुमता-साध्वीओ नेम पोटिलाने सम
 नवी तेमज्ज समनवी अने छेवटे ते श्राविका जनी गध पोटिलानी नेमज्ज
 ते सुकुमारिकाओ पणु त्थारपछी दीक्षा देवानो मनमा भक्कम विचार करी लीधो
 पोटिलाओ नेम पोटाना पतिनी आज्ञा लधने दीक्षा धारणु करी हती तेमज्ज
 सुकुमारिकाओ पणु पोटाना पति सागरदत्तने पूछीने गोपालिका आर्यानी
 पासैथी दीक्षा धारणु करी लीधी

(तएण सा सुमालिया अज्जा जाया इरिया जाय सुत्तवभयारिणी बहूहि
 चउत्थ छट्टट्टम जाव विहरइ, तएण सा सुमालिया अज्जा अन्नया कयाइ जेणेव
 गोवालियाओ अज्जाओ तेणेव उवागच्छइ)

आ रीते सुकुमारिका आर्या थर्ध गध, ते धर्या समिति वगेरेनु पालन
 करवा लागी अने नवकैटीथी अक्षय्य मंडावतनी रक्षा

ब्रह्मचारिणी सा बहुभिश्चतुर्थपष्ठाष्टमभक्तैर्यात्-तप कर्मभिरात्मान भावयन्ती
 विहरति=भास्तेस्म । ततः खलु सा सुकुमारिका आर्या अन्यदा रुदाचिद् यत्रैव
 गोपालिका आर्यास्तत्रोपागच्छति उपागत्य वन्दते नमस्यति, रन्दित्वा
 नमस्यित्वा गवमसादीत्=हे आर्या ! इच्छामि खलु युष्माभिरभ्यनुज्ञाता सती
 चम्पानगर्या वदिः सुभूमिभागस्योधानस्यादूरसामन्ते = नातिदूरे नातिनिकटे
 पष्ठपष्ठेन-पष्ठमक्तानन्तर पुन पष्ठमन्तेन ' अणिक्वित्तेण ' अनिक्त्तेन
 =अविश्रान्तेन-अन्तररहितेन, तप.कर्मणा ' सुराभिमुही ' सूर्याभिमुही ' आया
 वेमाणी ' आतापयन्ती-आतापना कुर्वती विहर्तुम् ' इति । ततस्तदनन्तर
 ता गोपालिका आर्याः सुकुमानिकामार्यामेवमसादिषु.-हे आर्ये ! त्रय खलु श्रमण्यो

और नौ कोटी ब्रह्मचर्य से महाव्रत की रक्षा करने लगी। अनेक चतुर्थ,
 पष्ठ, अष्टम, भक्त आदि तपस्याओं से अपने आपको भावित
 भी करने लगी। एक दिन की बात है कि वह सुकुमारिका आर्या
 साध्वी-जहा गोपालिका आर्या विराज मान थी वहा गई-(उवाग-
 च्छित्ता वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता एव वयासी, इच्छामि ण अ-
 ज्जाओ ! तुभेहिं अब्भणुन्नाया समाणी चपाओ वाहिं सुभूमिभागस्स
 उज्जाणस्स अदूर सामन्ते छट्ट छट्टेण अणिक्वित्तेणं तवोकम्मे ण सुरा
 भिमुही आयावेमाणी विहरित्तए) वहा जाकर उसने उन्हें वदना
 की, नमस्कार किया ! वदना एव नमस्कार कर फिर वह इस-
 प्रकार कहने लगी-हे भद्र ! मे आप से आज्ञा प्राप्त कर चपा नगरी से
 बाहिर सुभूमिभाग नाम के उद्यान के समीप अतररहित छट्ट छट्ट
 की तपस्या से सूर्याभिमुखी होकर आतापना करना चाहती हूँ ।
 (तएण ताओ गोवालियाओ अज्जाओ सुमालिय एव वयासी-अम्हेण

चतुर्थं, पष्ठ, अष्टम भक्त वगैरे तपस्याओधी पोताने भावित पणु करवा
 लागी ओक द्विवसनी वात छे के ते सुकुमारिका आर्या साध्वी न्या गोपालिका
 आर्या विराजमान छती त्या गथ (उवागच्छित्ता वदइ, नमसइ, वदित्ता, नम-
 सित्ता एव वयासी, इच्छामि ण अज्जाओ ! तुभेहिं अब्भणुन्नाया समाणी चपाओ
 वाहिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामन्ते छट्ट छट्टेण अणिक्वित्तेणं तवो
 कम्मेण सुराभिमुही आयावेमाणि विहरित्तए) त्या नधने तेणु तेभने वदना करी
 नमस्कार कर्या वदना तेभण नमस्कार करीने तेणु आ प्रभाणु कहु के छे
 भदत ! आपनी आज्ञा भेणवीने हु य पा नगरीमा अहार सुभूमिभाग नामना
 उद्यानगी पाये अतर रहित छट्ट छट्टनी तपस्या करता सूर्याभिमुखी यधने
 । धिंशु छु (तएण ताओ गोवालियाओ अज्जाओ सुमालिय

निर्ग्रन्थः ईर्ष्यामित्रा = ईर्ष्यामित्रियुक्ताः, गार्ह-गुतास्रारिणः स्म-
 तस्माद् नो खलु गार्हाक-कारण-परिणामात् ' यदिः-ग्रामाद् गार्ह-सन्निवेशाद्
 पृष्ठ पृष्ठेन ' जाव विहरित्वा ' गार्ह विहरित्वा प्रामाद्ये यदि मन्त्रे गाध्वीना
 स्थितिः शीलभगादिधारण मन्वीति भावः । विष्णु-पते खलु अन्माम् 'जा'
 अन्तः=अभ्यन्तर ' उवस्तयस्त ' उपाश्रयस्य=रगतः, विष्णुस्य ' वित्परि-
 क्लित्तस्त ' वृत्तिपरिसिक्तस्य=भित्त्यादिना सर्वा. समाष्टास्य, ' सवाडिचद्वियाए'
 सह्यादिका मत्तिवद्वायाः=मत्तिवद्वाटिकायाः मर्षयाऽनुदाटितगात्राया इत्यर्थे
 ' समतलपइयाए ' समतलपदिकाया =भूमौ समतलपया स्थापितवरणपुगत्याया
 आयावित्तए ' आतापयितुम्=आतापना कर्त्तुं यन्पते इति पूर्ण मध्यन्त्रः । ततः

अञ्जे ! समणीओ निगथीओ ईरियासामियाओ जाव गुत्तप्रभचारि
 णीओ,नो खलु अम्ह कप्पइ बहियागामस्त जाव सण्णिवेसस्स वा छट्ठं
 जाव विहरित्तए) इस प्रकार सुकुमारिका साध्वी का कथन सुनकर
 गोपालिका आर्या ने उस सुकुमारिका आर्या से इस प्रकार कहा है
 आर्ये ! हम लोग निर्ग्रन्थ श्रमणिया हैं । ईर्ष्या आदि समितियों का
 पालन करती हैं । और नौ कोटि से जलचर्य की रक्षा करती ह । इस
 लिये हम लोगो को ग्राम से यावत् सन्निवेश से बाहिर रह कर पष्ठ पष्ठ
 की तपस्या करना यावत् सूर्याभिमुखी होकर आतापन योग धारण
 करना कल्पित नहीं है । कारण-ग्रामादि के बाहिरी प्रदेश में साध्वियों
 का रहना शीलभग आदि का निमित्त बन जाता है । (कप्पइ ण अम्ह
 अंतो उवस्तयस्त विष्णुपरिक्खत्तस्स सवाडिचद्वियाए ण समतल पइ
 याए आयावित्तए) हमें तो यही कल्पित है कि हम लोग उपाश्रय के

एव वयासी-अम्हेण अञ्जे ! समणीओ निगथीओ ईरिया सामियाओ जाव गुत्त
 प्रभचारिणीओ, नो खलु अम्ह कप्पइ बहियागामस्त जाव सण्णिवेसस्स वा छट्ठं
 जाव विहरित्तए) आ रीते सुकुमारिका साध्वीनु कथन सालाणीने गोपालिका
 आर्याओ सुकुमारिका आर्याने आ प्रभाणु कहुं के आर्ये ! आपणु निग्रथ
 श्रमणीओ छीओ धर्या वगेरे समित्तिओनु पालन करीओ छीओ, अने नव
 कोटिथी प्रक्षयर्थनु रक्षणु करीओ छीओ ओथी आपणु गामथी यावत्
 सन्निवेशथी णडार रहीने पष्ठ पष्ठनी तपस्या करणी यावत् सूर्याभिमुखी यधने
 आतापन योग धारणु करयो कल्पित नथी कारणु के-गाम वगेरेथी णडारना प्रदे-
 शमा साध्वीओओ रडेवु शीलभग विगेरेनु निमित्त थर्ध बन छे (कप्पइ ण
 अम्ह अतो उवस्तयस्त विष्णुपरिक्खत्तस्स सवाडिचद्वियाए ण समतलपइयाए आया
 वित्तए) आपणुने तो ओ न कल्पित छे के आपणु भीत,

खलु सा सुकुमारिका गोपालिनामार्याणामेतमर्थं नो श्रद्धाति ' नो पत्तियइ ' नो पत्येति=नो विश्वसिति, ' नो रोएइ ' नो रोचते, एतमर्थम् अश्रद्धाना अपत्तियन्ती, अरोचमाना सति सुभूमिभागस्य उद्यानस्य अदूरसामन्ते पष्ट-पष्टेन यावत्-तप र्मणा सूर्याभिमुखी भूत्या-आतापना कुर्वती विहरति ॥ सू० १३ ॥

मूलम्-तत्थ णं चंपाए ललिया नाम गोट्टी परिवसइ, नरवइ दिण्णवियारा अम्मापिइनिययनिप्पिवासा वेसविहारकयनिकेया नाणाविहअविणयप्पहाणा अड्डा जाव अपरिभूया, तत्थ ण चंपाए देवदत्ता नामंगणिया हात्था सुकुमाला जहा अंडणाए, तएणं तीसे ललियाए गोट्टीए अन्नया पच गोट्टिलगपुरिसा देवदत्ताए गणियाए सद्धिं सुभूमिभागस्स

कि जो भित्ति आदि से सब तरफ से परिक्षिप्त है भीतर ही अपने शरीर को शाटिका से अच्छी तरह सवृत्त करती हुई और भूमि पर दोनों चरणों को बराबर स्थापित कर आतापना ले (तएण सा सुमालिया गोवालियाए एयमट्ट नो सदहइ, नो पत्तियइ नो रोएइ एयमट्ट अ० ३ सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामन्ते छट्ट छट्टेण जाव विहरइ) इस गोपालिका आर्याके कथन ऊपर उक्त सुकुमारिका आर्या को श्रद्धा नहीं जमी उस पर उसे विश्वास नहीं आया, वह उसे रुचा नहीं । इस तरह वह उसे अश्रद्धा अप्रतीति और अरुचि का विषय बनाती हुई सुभूमिभाग नामक उद्यान के पास पष्ट पष्ट भी तपस्या करती हुई वह सूर्याभिमुख होकर आतापना करने लगी ॥ सू० १३ ॥

परिक्षिप्त उपाग्रयनी अदरव चोताना शरीरने शाटिका-साडीना मगी गीते ढाडीने अने भूमि उपर णने चरणोने बराबर स्थापित करीने आतापना लधये (तएण सा सुमालिया गोवालियाए एयमट्ट नो सदहइ नो पत्तियइ नो रोएइ, एयमट्ट अ० ३ सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामन्ते छट्ट उट्टेण जाव विहरइ) गोपालिका आर्याना कथन उपर सुकुमार आर्याने श्रद्धा थरि न्हि, तेना उपर तेने विश्वास थये न्हि ते तेने गन्धु पणु न्हि आ गीते ते ते कथन प्रत्ये अश्रद्धा, अप्रतीति अने अरुचि धरावती सुभूमिभाग नामना उद्याननी पामे पष्ट पष्टनी तपस्या करती सूर्याभिमुखी थरिने आतापना करवा लागी ॥ सूत्र १३ ॥

निर्ग्रन्थः ईर्यामितीति = ईर्यामिति युक्ता, यावत्-गुणवत्त्वात्परिष्कृतः स्म, तस्माद् नो खलु अस्माकं कर्तव्यं- 'वदित्या' यदिः-प्रामादु यावत् सन्निवेशाद् पठ्यते 'जाव विहरित्तए' यावत् विदितुम् प्रामादे र्थाद् मन्त्रे गाधीना स्थितिः शीलभगदिनारण मतीति भावः । विदुः कल्पते खलु अस्माकम् 'जतो' अन्तः=अभ्यन्तर 'उवस्सयस्स' उपाश्रयस्य=उपश्रयः, विदुः कल्पते 'वित्तिपरि विखत्तस्स' वृत्तिपरिसिद्धस्य=मित्र्यादिना मर्षतः समाश्रयस्य, 'सघाडिवद्वियाए' सद्वाटिका मतिरद्वाया =मतिरद्वाटिकायाः मर्षवाऽनुदाटितगात्राया स्वर्थे 'समतलपइयाए' समतलपदिकाया =भूमौ समतलउया स्थापितपरणयुगलाया आयावित्तए' आतापवित्तुम्=आतापना कर्त्तुं कल्पते इति पूर्वेण सम्बन्धः । ततः

अज्जे ! समणीओ निग्गथोआ ईरियासामियाओ जाव गुत्तपमचारिणीओ, नो खलु अम्ह कप्पइ वदियागामस्स जाव सण्णिवेसस्स वा छट्ठं जाव विहरित्तए) इस प्रकार सुकुमारिका साध्वी का कथन सुनकर गोपालिका आर्या ने उस सुकुमारिका आर्या से उम प्रकार कहा है आर्ये ! हम लोग निर्ग्रन्थ श्रमणियाँ हैं । ईर्या आदि समितिगो का पालन करती हैं । और नौ कोटि से ब्रह्मचर्य की रक्षा करती ह । इस लिये हम लोगो को ग्राम से यावत् सन्निवेश से बाहिर रह कर पठ पठ की तपस्या करना यावत् सूर्याभिमुखी होकर आतापन योग धारण करना कल्पित नहीं है । कारण-त्रामादि के बाहिरि प्रदेश में साध्वियों का रहना शीलभग आदि का निमित्त बन जाता है । (कप्पइ ण अम्ह अंतो उवस्सयस्स विदुपरिक्खत्तस्स सघाडिवद्वियाए ण समतल पइ याए आयावित्तए) हमें तो यही कल्पित है कि हम लोग उपाश्रय के

एव वयासी-अम्हेण अज्जे ! समणीओ निग्गथोओईरिया सामियाओ जाव गुत्तपमचारिणीओ, नो खलु अम्ह कप्पइ वदिया गामस्स जाव सण्णिवसस्स वा छट्ठं जाव विहरित्तए) आ रीते सुकुमारिका साध्वीनु कथन सालणीने गोपालिका आर्याओ सुकुमारिका आर्याने आ प्रमात्ते कथु के आर्ये ! आपत्ते निर्ग्रन्थ श्रमणीओ छीओ धर्या वगेरे समितिओनु पालन करीओ छीओ, अने नव कोटिओ ब्रह्मचर्यनु रक्षत्तु करीओ छीओ अथी आपत्ते गाभधी यावत् सन्निवेशथी णडार रलीने पथ पथनी तपस्या करवी यावत् सूर्याभिमुखी यधने आतापन योग धारत्तु करवो कल्पित नथी करत्तु के-गात्र वगेरेथी अडारना प्रदे शमा साध्वीओओ रडेवु शीलभग विगेरेनु निमित्त थर्ध लन छे (कप्पइ ण अम्ह अतो उवस्सयस्स विदुपरिक्खत्तस्स सघाडिवद्वियाए ण समतलपइयाए आया वित्तए) आपत्तेनु तो ओ न कल्पित छे के आपत्ते भौत ११ ओअरे

वेश्याविहारकृतनिकेता - वेश्यागृहकृतनिवासा, तथा- 'नाणाविहअविणयप्पहाणा' नानाविधाऽविनयप्रधाना, तथा-भाहवा=धनधान्यसम्पन्ना, यावद् अपरिभूता=परैरनभिभूता, आसीत् । तत्र खलु चम्पाया नगर्यां देवदत्ता नाम 'गणिया' गणिका=वेश्या, आसीत्, सा किम्भूतेत्याह-सुकुमारपाणिपादा, चतुष्पण्डितकलाविशारदा 'जहा अडणाए' यथा अण्डज्ञाते=अण्डनामके तृतीये ज्ञाताऽन्यने यथाऽस्यावर्णनं तद्वदिह बोध्यम् । ततः खलु तस्या ललिताया गोष्ठ्या अन्यदा=अन्यस्मिन् कस्मिंश्चित्तममये, पञ्च 'गोष्ठिहगपुरिसा' गोष्ठिकपुरुषा=मण्डलीपुरुषाः समानवयस्का इत्यर्थः देवदत्तया गणिकया नार्थं सुभूमिभागस्योद्यानस्योद्यानश्रिय=उद्यानगोभा मत्पुत्रुभवन्तो विहरन्ति । तत्र खलु एते गोष्ठिकपुरुषो देवदत्ता

नाणाविह अविणयप्पहाणा, अड्ढा जाव अपरिभूया) इसने अपनी सेवासे राजानो प्रसन्न कर रखा था-सो उसकी कृपा से यह बिलकुल स्वच्छन्द थे । अपने माता पिता आदि कुटुम्बी जनो की यह परवाह नही किया करते थे-उनको इन पुत्रों से बिलकुल भय नही था । वेश्याओं के घर में पड़े रहना-यही इनका एक काम था । अनेक प्रकार के अविनय प्रधान रूप अनाचारों का सेवन करना यही उनका काम था । पैसे की-द्रव्यही उनके- पाम कमी नही थी । कोई इनको कुछ कह सुन नही सकता था । (तत्थ ण चपाण देवदत्ता नाम गणिया होत्वा, सुकुमाला, जहा अडणाए, तएण तीसे ललियाए गोठीए अन्नया पच 'गोष्ठिहगपुरिसा देवदत्ताए गणियाए सद्धि सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिंरि पच्चणुभवमाणा विहरति) उसी चपा नगरी में

जाव अपरिभूया) ते भउणीअे ये तानी मेवाथी सल्लने प्रसन्न करेलेो हतेो तेभनी कृपाथी ते भउणी अेउदम स्वच्छदपणु आथरती हती पोताना माता पिता वगेरे कुटुम्बी लेोनी पणु तेअो दरकार करता न हता तेअोने आ वडीलेोनी जेधपणु ज्ञाननी णीउ हती नडि, वेश्याअोना घेर पठया रहेपु इक्षत अेअ अेभनु अेक मात्र जम हतु अनेक प्रकारना अविनयपूरु आथरलेो उरवा अेअ तेअोना लवननु मुभ्य काम हतु धननी तेअोनी पामे पोठ हती नडि केधपणु नागरिकनी अेटली पणु ताकात नडोती ते तेअो तेभने कधपणु कडे । (तत्थ ण चपाण दे-दत्ता नाम गणिया होत्वा, सुकुमाला, जहा अडणाए, तएण तीसे ललियाए गोठीए अन्नया पच गोष्ठिहगपुरिसा देवदत्ताए गणियाए सद्धि सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिंरि पच्चणुभवमाणा विहरति) तेअ अ पा

उज्जाणस्स उज्जाणसिर्णि पञ्चणुत्तममाणा विहरति, तत्थ ण
एगे गोट्टिलगपुरिस देवदत्तं गणियं उच्छंगे भरइ एगे पिट्टओ
आयत्त धरंइ एगे पुष्फपुरयं रणउ एगे पाण रणइ एगे
चामरुत्तसेवं करेइ तएण मा सुमालिया अज्जा देवदत्तं गणिय
तेहिं पंचहिं गोट्टिलगपुरिसेहिं सत्ति उरालाडं माणुस्सगाइ
भोगभोगाइ भुंजमाणी पासइ तएण तीसे इमेयारूपेसंकप्पे
समुप्पज्जित्था-अहो णंइमा इत्थिया पुरा पौराणाणं कम्माणं
जाव विहरइ, तं जइ णं वेइ इमस्स सुचरियस्स तव-
नियमवभचेरासस्म कल्लाणे फलवित्तिविममे अरिय तो
णं अहमत्ति आगमिस्सेणं भग्गहणेणं इमेयारूपाइ उरा-
लाइ जाव विहरिज्जामि त्तिट्ठु नियाणं करेइ करित्ता
आयावणभूमिओ पच्चोरुहइ ॥सू० १४॥

टीका—‘ तत्थ ण चपाए ’ इत्यादि । तत्र खलु चम्पाया नगर्यां ललिता
नाम्नी ‘ गोष्ठी ’ गोष्ठी=मण्डली परिवसति किं भूतो सा गोष्ठीत्याह—‘ नरवइदिण्ण
नियारा ’ नरपत्तिदत्तविचारा नरपतिना दत्तो विचारः समतिर्यस्यै सा तथा—सेवा
दिना सन्तुष्टान्नरपतेर्लब्धस्वतन्त्रता, तथा—‘ अम्मापिइ निययनिप्पिवासा ’
अम्बापितृनिजकृनि पिपासा=मातापितादि निरपेक्षा, ‘ वेसविहारकय निकेया ’

‘ तत्थ ण चपाए ललिया नाम ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तत्थ ण चपाए ललिया नाम गोष्ठी परिवसइ) उस्स
चपानगरीमें ‘ ललिता ’ इस्स नामकी गोष्ठी-मण्डली-रहती थी । (नरवइ
दिण्णविचारा, अम्मापिइ नियय निप्पिवासा वेसविहारकयनिकेया,

‘ तत्थ ण चपाए ललिया नाम ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तत्थ ण चपाए ललिया नाम गोष्ठी परिवसइ) ते यथा
नगरीमा ‘ ललिता ’ नामे गोष्ठी ‘ मण्डली रहती हुती (नरवइ, दिण्णविचारा
अम्मापिइ निययनिप्पिवासा, वेसविहारकयनिकेया, नाणाविहअविणयपरहाणा, अइत्ता

पुत्रौ मार्यमुदारान्=पेटान् भोगान् सुज्ञाना-कुर्वीतौ पश्यति, ततस्वरयाः सुकुमा
 रिकाया जयमेतदप = वक्ष्यमाणस्वरूपः संख्य = विचारः समुद्रपद्यत-अहो ! खलु
 इयं सो दुःख=पूर्वमेव ' पौराणान् ' पुराणानाम्-पुरातनाना मचिताना कर्मणां
 पुत्रकर्मणा यावत्=कृतवृत्तिविशेष प्रत्यनुभवन्ती विहरति तत्=तस्मात् कारणाद्
 यदि खलु कोऽप्यस्य सुचरितस्य तपोनिमग्नत्वचर्चामस्य नल्याण =ऽष्टः शुभ-
 रूप, फलवृत्तिविशेषः अस्ति, ' तो ' तर्हि खलु अहमपि ' आगमिस्तेण '
 आगामिना भवग्रहणेन उमान् एतद्वृषान् उदारान् भोगान् यावद् सुज्ञाना ' विह-

उस पर चमर होरे। इस तरह से उस सुकुमारिका आर्या ने उन
 मडली के पाच पुरुषों के साथ उस देवदत्ता गणिका को उदार मनुष्य
 भव सपत्नी काम भोगों को भोगते हुए देखा। (तपण तीसे इमेया-
 रूपे सकृपे समुद्रपञ्जिता-अहो ण इमा इतियया पुरा पौराणान् कम्माण
 जाव विहरइ) ता उम सुकुमारिका आर्या को इस प्रकार का यह
 विचार उत्पन्न हुआ-अहो ! इस स्त्री ने पूर्वभव में जो पुण्य कर्म कमाये
 हैं उन्हीं पुराने पुण्य कर्मों के यावत् फलवृत्ति विशेष को यह भोग रही
 है। (त जइ ण केइ इमस्स सुचरियस्स तव नियममभचेरवासस्स कल्लणे
 फलवित्तिविसेसे अतिय तो ण अहमवि आगमिस्तेण भवग्गहणेण
 इमेयारूपाइ उराणाइ जाव विहरिज्जामि, त्ति कइडु नियण करेइ, करित्ता
 आयावगभूमिओ पच्चोरुइ) इसलिये यदि इन पालिन तप, नियम
 एव ब्रह्मचर्य व्रतों का कोई शुभरूप फलवृत्त विशेष है तो मैं भी
 आगामी भव में इसी तरह के उदार प्रनु य भव सम्पत्ती काम भोगों

देखा था सीते ते सुकुमारि आर्याओ मडलीना पाचे भाषुसेानी साथे ते
 देवदत्ता गणिकाने उदार मनुष्यलवना कामलोगो लोगवता लेथा (तपण
 तीसे इमेयाहने सकृपे समुद्रपञ्जिता-अहो ण इमा इतियया पुरा पौराणान्
 कम्माण जाव विहरइ) तयारे ते सुकुमार आर्याने था नतने। विचार क-
 लोयो के अडो ? आ स्त्रीओ पूर्वलवमा ने पुण्यकर्म कथां छे तेमने लीधेन
 ओटले के ते च पूर्वलवना पुण्य-ओने ना यावत् क्षणविशेषने आ लोगवी रडो
 छे (त जइ ण केइ इमस्स सुचरियस्स तव नियम मभचेरवासस्स कल्लणे फल
 वित्तिविसेसे अतिय तो ण अहमवि आगमिस्ते ण भवग्गहणेण इमेयाहनाइ उरा
 णाइ जाव विहरिज्जामि, त्ति कइडु नियण करेइ, करित्ता आयावगभूमिओ
 पच्चोरुइ) आ पथा भारा वडे आचरनामा आवेल तप, नियम अने
 प्रद्वयर्थ नतीनु शुभ क्षण छे तो हु पयु आवना लवमा आ नतना न उदार
 सपत्नी कामलोगाने लोगवु आ प्रभाषे विचार करीने तेबु निदान

ગણિકામુક્તકે ધરતિ એક 'વિટ્ઠ્ઠો' પુત્રઃ 'આયવન' આપાન્ન-વ્ર ધરતિ, એકઃ 'પુષ્પવૃચં' પ્રાપ્તવચ-પુષ્પાના રાનાતિએષ 'ગર્ભ' રચયતિ, ધર્મઃ પાદૌ-અલ્પકાદિના રજાયતિ । ધર્મઃ 'ચામકારો' 'ચામરે' ઇવ-ચામરીજનં કરોતિ । તત્ 'વલુ મા મૃદુમાગિષા આર્થા દેવતા ગણિકા તે 'પત્નમિર્ગોષ્ટક દેવદત્તા નામ કી એક ગણિકા રાતી થી । યત્ 'ચૌમ્ત કલાઓ મેં નિષ્ણાત થી । દસકે પાથ પેર આદિ મપ હી અવયવ ધરુન તેં અધિક સુકુમાર ધે । મયૂર અટ નામ કે તૃતીય જ્ઞાતાધ્યયન મેં ઉમરા જૈસા ધર્ષન કિયા ગયા છે-ધૈમા હી ધર્ષન દસકા યતાં જાનના વાહિયે । એક સમય કી ઘાત હૈ કિ ગોષ્ટી કે પ, પુરુપ કિ જો મમાન વચસવાહે ધે દેવદત્તા ગણિકા કે સાથે ઉસ સુભૂમિભાગ ઉગ્રાન મેં આયે-ઔર ઘરા કી ઉધાન કી જોમા કા નિરીક્ષણ કરતે હુન ઇધર-ઇધર ધૂમને લગે-(તત્થ ણ ણે ગોટ્ટિલ્લગ પુરિસે દેવદત્તા ગણિય ઉચ્છને ધરદ, ણે વિટ્ઠ્ઠો આયવત્ત ધરેદ, ણે પુષ્પવૃચ રણદ, ણે પાણ રણદ, ણે ચામરુવલેવ ધરેદ, તણ સા સૂમાલિયા અજ્ઞા દેવદત્તા ગણિય તેહિ પચહિ ગોટ્ટિલ્લગપુરિસેહિ સદ્દિ ઉગલાદ માણુસસગાઠ મોગમોગાઠ મુજ માણી પાસદ) ઘરા એક ઉસ મહલી કે પુરુપ ને દેવદત્તા ગણિકા કો અપની ગોદી મેં વૈઠાયા, એક દૂસરે-મટલી કે પુરુપ ને ઉસકે પીઠે સે ઉમકે ઉપર છત્તો તાના, એક તૈસરે પુરુપને ઉમકે નિમિત્ત પુષ્પોં કી રચના રચી, ચૌથે પુરુપ ને ઉમકે દોનોં પૈરોં મેં માનુર લગાત્રા પાચવેં ને

નગરીમા દેવદત્તા નામે એ ગણિકા રહેતા હતી તે ૬૪ કળાઓમા નિપુણ હતી, તેના હાથ-પગ વગેરે ગદ્યા અગો અતીવ મુઠોમળ હતા મયૂરી અહ નામના ત્રીજા અધ્યયનમા દેવદત્તાનુ જેવુ વર્ણન કરવામા આવ્યુ છે તેવુ જ વર્ણન અહીં પણ લાણી લેવુ જોઇએ એક દિવસની વાત છે કે ગોષ્ટી-મહળીના પાથ માણુસે કે જેઓ સરખા ઉમરવાળા હતા-દેવદત્તા ગણિકાની સાથે તે સુભૂમિભાગ ઉગ્રાનમા ગયા અને ત્યાની ઉધાન શોભાનુ નિરીક્ષણ કરતા આમ તેમ કરવા લાગ્યા (તત્થ ણ ણે ગોટ્ટિલ્લગ પુરિસે દેવદત્તા ગણિય ઉચ્છને ધરદ, ણે વિટ્ઠ્ઠો આયવત્ત ધરેદ, ણે પુષ્પવૃચ રણદ, ણે પાણ રણદ, ણે ચામરુવલેવ ધરેદ તણ સા સૂમાલિયા અજ્ઞા દેવદત્તા ગણિય તેહિ પચહિ ગોટ્ટિલ્લગ પુરિસેહિ સદ્દિ ઉગલાદ માણુસસગાઠ મોગમોગાઠ મુજ માણી પાસદ) ત્યા તે મહળીના એક માણુસે દેવદત્તા ગણિકાને પોતાના પોળામા બેસાડી ધીમ માણુસે તેની ઉપર છત્રી તાણી, ત્રીજા માણુસે તેના માટે પુષ્પોં ની રચના કરી, ચોથા માણુસે તેના પગમા લાલ રંગ લગાવ્યો, પાચમા માણુસે તેના ઉપર ચામર

माणीए इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था, जयाणं
 अह अगारवासमज्जे वसामि तथा णं अह अप्पवसा, जया
 णं अह मुंडे भवित्ता पव्वइया तथा णं अहं परवसा, पुव्वि च
 णं ममं समाणीओ आढायतिर इयाणि नो आढंतिर त सेयं
 खल्ल मम कल्ल पाउ० गोवालियाण अतियाओ पडिनिक्खमित्ता
 पाडिएक्क उवस्सय उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए त्तिकट्टु एव
 संपेहेइ संपेहित्ता कल्ल पा० गोवालियाणं अज्जाणं अंतियाओ
 पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता पडिएक्कं उवस्सय उवसपज्जि-
 त्ताणं विहरइ, तएणं सा सूमालिया अज्जा अणोहट्टिया
 अनिवारिया सच्छदमई अभिक्खण अभिक्खणं हत्थे धोवेइ
 जाव चेएइ तत्थ वि य णं पासत्था पासत्थविहारी ओसण्णा
 ओसण्णविहारी कुसीलार संसत्तार वहुणि वासाणि सामण्ण-
 परियागं पाउणइ अद्धमासियाए सलेहणाए तस्स ठाणस्स
 अणालोइयअपडिक्कंता कालमासे काल किच्चा ईसाणे कप्पे
 अपणयरसि विमाणसि देवगणियत्ताए उववण्णा, तत्थेगइयाण
 देवीणं नव पलिओवमाइं ठिई पणत्ता, तत्थ णं सूमालियाए
 देवीए नव पलिओवमाइं ठिई पन्नत्ता ॥ सू० १५ ॥

टीका—‘तएण सा’ इत्यादि । ततः खल्ल सा सुकुमारिका आर्या ‘सरीर

‘तएण सा सूमालिया अज्जा’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इस के बाद (सा सूमालियाए अज्जा सरीर वडसा

‘तएण सा सूमालिया अज्जा’ इत्यादि—

(तएण) त्या२५४ (सा सूमालिया अज्जा सरीरवडसा जाया चावि

रिज्जामिति वट्ट ' विहरामि ' इति कृत्वा ' निदान ' निदान करोति, कृत्वा
आतापनभूमितः प्रत्ययोऽति-आतापना पत्तिगति ॥ सू० १४ ॥

मूलम्-तएणं सा सूमालिया अज्जा सरीरवउत्ता जाया
यावि होत्था, अभिक्खण अभिक्खणंर हत्थे धोवेइ पाए धोवेइ
सीसं धोवेइ मुहं धोवेइ थणंतराड धोवेइ कम्मंतराड धोवेइ
गोज्झतराइ धोवेइ जत्थ णं ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा
चेएइ तत्थ वि च णं पुग्गामेव उदएणं अब्भुक्खइत्ता तओ
पच्छा ठाणं वाइ चेइए, तएणं ताओ गोवालियाओ सूमालियं
अज्ज एव वयासी-एव खल्ल देवाणुप्पिया । अज्जे अम्हे सम-
णीओ निग्गंथीओ ईरियासमियाओ जाव वभचेरधारिणीओ
नो खल्ल कप्पइ अम्हं सरीरवाउसियाए होत्तए, तुम च णं
अज्जे ! सरीरवाउसिया अभिक्खणं अभिक्खण हत्थे धोवेसि
जाव चेएसि, तं तुम णं देवाणुप्पिए । तस्स ठाणस्स आलो-
एहि जाव पडिवज्जाहि, तएण सा सूमालिया गोवालियाणं
अज्जाणं एयमट्ट नो आढाइ नो परिजाणइ अणाढायमाणी
अपरिजाणमाणी विहरइ, तएण ताओ अज्जाओ सूमालिय
अज्जं अभिक्खणं अभिक्खणं अभिहीलति जाव परिभवति,
अभिक्खणं अभिक्खण एयमट्ट निवारेंति, तएणं तीए सूमा-
लियाए समणीहिं निग्गंथीहि हीलिज्जमाणीए जाव वारिज्ज-

को भोग्य । ऐसा विचार कर उसने निदान बध किया और करके फिर
वह आतापन भूमि से आतापना लेकर अपने स्थान आगई ॥ सू० १४ ॥

अथ इथो अने करीने ते आतापन भूमिथी आतापना लधने पोताना स्थाने
आवी गध ॥ सूत्र १४ ॥

माणीए इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था, जयाणं
 अह अगारवासमज्जे वसामि तथा णं अह अप्पवसा, जया
 णं अहं मुंडे भवित्ता पव्वइया तथा णं अहं परवसा, पुव्वि च
 णं मम समाणीओ आढायत्तिर इयाणि नो आढत्तिर त सेयं
 खलु मम कल्ल पाउ० गोवालियाणं अतियाओ पडिनिम्बमिन्ता
 पाडिएक उवस्सयं उवसपज्जित्ताण विहरित्तए त्तिकट्टु एव
 संपेहेइ संपेहित्ता कल्लं पा० गोवालियाणं अज्जाणं अंतियाओ
 पडिनिम्बमइ पडिनिम्बमिन्ता पाडिएकं उवस्सय उवसपज्जि-
 त्ताणं विहरइ, तएण सा सूमालिया अज्जा अणोहट्टिया
 अनिवारिया सच्छदमई अभिक्खण अभिक्खणं हत्थे धोवेइ
 जाव चेएइ तत्थ वि य णं पासत्था पासत्थविहारी ओसण्णा
 ओसण्णविहारी कुसीलार संसत्तार बहूणि वासाणि सामण्ण-
 परियागं पाउणइ अद्धमासियाए सलेहणाए तस्स ठाणस्स
 अणालोइयअपडिक्कंता कालमासे काल किच्चा ईसाणे कप्पे
 अण्णयरसि विमाणसि देवगणियत्ताए उववण्णा, तत्थेगइयाणं
 देवीणं नव पलिओवमाइं ठिई पणत्ता, तत्थ णं सूमालियाए
 देवीए नव पलिओवमाइं ठिई पन्नत्ता ॥ सू० १५ ॥

टीका—' तएण सा ' इत्यादि । ततः खलु सा सुकुमारिका आर्या ' चरीर

' तएण सा सूमालिया अज्जा ' इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इस के बाद (सा सूमालियाए अज्जा सरीर घउसा

' तएण सा सूमालिया अज्जा ' इत्यादि—

(तएण) त्या२५७ (सा सूमालिया अज्जा सरीरघउसा जाया यावि

रिज्जामिति षट् ' ' विहरामि ' इति कृत्वा ' निगणं ' निदान करोति, कृत्वा
आतापनभूमित् प्रत्ययरोदति आतापना पठित्वाजि ॥ १०१४ ॥

मूलम्-तएण सा सूमालिया अज्जा सरीरवउत्ता जाया
यावि होत्था, अभिक्खण अभिक्खणर हत्थे धोवेइ पाए धोवेइ
सीसं धोवेइ सुह धोवेइ धणंतराइ धोवेइ कम्मतराइं धोवेइ
गोज्झतराइ धोवेइ जत्थ ण ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा
चेएइ तत्थ वि य णं पुब्बामेव उदएणं अब्भुक्खइत्ता तओ
पच्छा ठाणं वा३ चेइए, तएण ताओ गोवालियाओ सूमालिय
अज्ज एव वयासी-एव खल्ल देवाणुप्पिया । अज्जे अम्हे सम-
णीओ निग्गंथीओ ईरियासमियाओ जाव वभचेरधारिणीओ
नो खल्ल कप्पइ अम्हं सरीरवाउसियाए होत्तए, तुम च णं
अज्जे ! सरीरवाउसिया अभिक्खण अभिक्खणं हत्थे धोवेसि
जाव चेएसि, तं तुमं ण देवाणुप्पिए । तस्स ठाणस्स आलो-
एहि जाव पडिवज्जाहि, तएण सा सूमालिया गोवालियाणं
अज्जाणं एयमट्ठं नो आढाइ नो परिजाणइ अणाढायमाणी
अपरिजाणमाणी विहरइ, तएण ताओ अज्जाओ सूमालियं
अज्जं अभिक्खणं अभिक्खणं अभिहीलति जाव परिभवति,
अभिक्खणं अभिक्खण एयमट्ठ निवारोति, तएणं तीए सूमा-
लियाए समणीहिं निग्गंथीहिं हीलिज्जमाणीए जाव वारिज्ज-

को भोग्य । ऐसा विचार कर उसने निदान बध किया और करके फिर
वह आनापन भूमि से आतापना लेकर अपने स्थान आगई ॥ सू० १४ ॥

अथ कथं अने करीने ते आतापन भूमिथी आतापना लधने पाताना स्थाने
आवी गध ॥ सूत्र १४ ॥

ततः खलु गोपात्रिका आर्याः सुकुमारिकामार्यामेवमत्रादिषुः एव खलु हे देवानुप्रिये ! आर्ये ! त्वं श्रमण्य-तपस्विन्यः निर्ग्रन्थ्यः ब्राह्मण्यन्तरग्रन्थि-रदिताः ईर्ष्यासमिता चावद् गुह्यब्रह्मचर्यधारिण्य' स्म', नो खलु क्लृप्तेऽम्भारु सरीरवाउसियाए' शरीरवाउसिया ' होत्तए' भवितुम् इति त्वं च खलु हे आर्ये ! शरीरवाउसिका जाता असोऽण=पुन पुनरतिगयेन हस्तौ धामि =प्रज्ञान्यसि, यावत्-स्थान वा शय्या वा म्या-श्यायभूमि वा जलेनाभ्युक्ष्य ' चेणसि' चेतयसि स्वानादिकं करोषीत्यर्थः । तत्=तस्मात् त्वं खलु हे देवानु प्रिये ! तत् स्थानम् ' आलोएहि' आलोचय, स्वातिचार प्रकाशयेत्यर्थः । यावत् ' पडिवज्जाहि' प्रतिपत्त्यस्व=प्रायश्चित्त स्वीकुरु' इत्यर्थः । ततः खलु सा सुकु-

लिका आर्या ने उस सुकुमारिका आर्या से कहा-(एव खलु देवाणुप्पिया ! अज्जे अम्हे समणीओ निर्गंधीओ ईरियाउसियाओ जाव यमचेर धारिणिओ, नो खलु कप्पइ अम्ह सरीरवाउसियाए होत्तए, तुमच णं अज्जे सरीरवाउसिया, अभिक्खण २ हत्थे धोवेसि, जाव चेणसि) हे देवानुप्रिये ! हम आर्याणि निर्ग्रन्थ श्रमणिया हैं । ईर्ष्या आदि पांच समि- निर्योका पालन करती हैं । नौकोटि ब्रह्मचर्य सहितमहाव्रतको पालन करती ह । अतः हम लोगों को अपने शरीर के संस्कार करने में परा- यण बनना कल्पित नहीं हैं । हे आर्ये ! तुम शरीर संस्कार करने में परायण बन चुकी हो । वार २ तुम हाथों को धोनी हो यावत् स्थान को शय्या को, और स्वाश्याय भूमि को पहिले से ही पानीसे धोकर नियत करती हो (त तुम णं देवाणुप्पिए ! तस्स ठाणस्स आलोएहि, जाव पडिवज्जाहि) इस लिये हे देवानुप्रिये ! तुम उस स्थान की आलोचना करो-अपने अतिचारों को प्रकाशित करो यावत् उनका प्रायश्चित्त लो ।

सुकुमारिका आर्याने आ प्रमाद्ये षड्धु वे-(एव खलु देवाणुप्पिया ! अज्जे अम्हे समणीओ निर्गंधीओ ईरियाउसियाओ जाव यमचे धारिणिओ ने खलु कप्पइ अम्हे सरीरवाउसियाए होत्तए, तुम च णं अज्जे सरीरवाउसिया, अभिक्खण २ हत्थे धोवेसि जाव चेणसि) हे देव अनुप्रिये ! अमे आर्याओ निर्ग्रन्थ श्रम णीओ धीओ, धर्था वगेरे पाथ अभित्थीओतु अने पालन करीओ गीओ, नव कौटिली ब्रह्मचर्य गहाव्रत धारण करीओ छाओ अथा पोताना गरीरने स-कार करवे ओ आपणु माटे योग्य गत्याय नडि हे आर्ये ! तमे यनीन्ना सस्स म्हा परायण अनी वृथी हो । तमे वारवा हाथिने धुओ हो यावत् स्थानने, शय्याने अने स्वाश्यायभूमिने पहिलेथी च पाणीथी धोएने नडी वनी हो । ओ (त तुम णं देवाणुप्पिए ! तस्स ठाणस्स आलोएहि, जाव पडिवज्जाहि) खलु

घउत्ता ' शरीरवृद्धता शरीरगन्तव्यताया नागा गणनात्, अतीक्ष्ण २ पुनः पुनः दृशो ' धावेइ ' धारति=वृत्तालयति, पाशो धारति ' सीग ' शीपं=त्रि' धारति, गुं धारति, ' भगाराइ ' भागांतराणि धारति ' कर्त्तागइ ' कृत्ता न्तराणि धारति, ' गोऽन्तायाः ' गुणान्तराणि गुणवदेश भागि, यत्रगुडु ' ठाण वा ' स्थानम्-उपवेगनाथे स्थान ' सेज्ज वा ' शय्या वा ' निसीहिय वा ' नेपे- धिकी स्वाध्यायभूमि वा ' चेणइ ' चेतयति-इरोति, तत्रापि च गुडु पूर्वमेतदकेन ' अब्भुक्खइत्ता ' अब्भुक्ख=अभिपिच, ता पभात् ' ठाण वा ' स्थान वा शय्या वा नेपेधिरी वा चेणइ ' चेतयति-इरोति ।

जाया यात्रि होत्था-अभिक्षण २ हत्थे धोवेइ, पाण धोवेइ, सीस धोवेइ, मुह धोवेइ, धणतराइ धोवेइ, कक्खतराइ धोवेइ, गोऽन्नतराइ धोवेइ) वह सुकुमारिका आर्या शरीर सस्कार करने में भी तत्पर बन गई। चार २ वह हाथ रोने लगी, पैर धोने लगी, शिर धोने लगी, मुख धोने लगी, स्तनातरों को धोने लगी, कक्षाओं को धोने लगी और गुल्य प्रदेश को धोने लगी। (जत्थ ण ठाण वा सेज्ज वा निसीहिय वा चेणइ तत्थ वि य ण पुब्बामेव उदएण अब्भुक्खइत्ता तओ पच्छा ठाण वा ३ चेणइ, तएण ताओ गोवालियाओ अज्जाओ सूमालिय अज्ज एव वयासी) इसी तरह वह जहां अपना बैठने के लिये स्थान बनाती, शय्या-पाथरती, स्वाध्याय स्थान करती, वहां भी वह पहिले से ही उसे जल से सींच देती-तब जाकर वहां बह अपना स्थान, शय्या एव स्वाध्याय भूमि नियत करती। इस प्रकार की परिस्थिति देख कर गोवा

होत्था-अभिक्षण २ हत्थे धोवेइ, पाण धोवेइ, सीस धोवेइ, मुह धोवेइ, धणतराइ धोवेइ, कक्खतराइ धोवेइ गोऽन्नतराइ धोवेइ) ते सुकुमारिका आर्या शरीर-संस्कारना काममा परेवाधं गधं चारवार हाथ धोवा लागी, पग धोवा लागी, माथु धोवा लागी, मुख धोवा लागी, स्तनाना वस्त्रेना स्थानने धोवा लागी, अंगुलीने धोवा लागी, अने शुभ स्थानने धोवा लागी (जत्थ ण ठाण वा सेज्जवा निसी हिय वा चेणइ तत्थ वि य ण पुब्बामेव उदएण अब्भुक्खइत्ता तओ पच्छा ठाण वा ३ चेणइ तए ण ताओ गोवालियाओ अज्जाओ सूमालिय अज्ज एव वयासी) आ भ्रमाणु ञ ते जना पोतानु णेसवानु स्थान नक्की करती, के पथ री पाथरती अथवा तो स्वाध्याय आटे णेसवानु स्थान नक्की करती त्या पडेयेधी ञ ते स्थानने पाणी छोटती हुती अने त्यारपणी ते त्या पोतानु स्थान-शय्या अने स्वाध्याय स्थान नक्की करती हुती आ न्ततनी परिस्थिति भेधने गोपालिका ते

भूतः, यदा=यावत् काल खलु अहमनारवासमभये वमामि, तदा=तावत् काल खल्वह 'अप्पसा' आत्मवशा स्वाधीना आसम्, यदा खल्वह मुण्डा भूत्वा प्रव्रजिता तदा खल्वह परवशा पराधीना जाता । 'पुर्व्वि' पुरा पूर्व्वस्मिन् काले च खलु 'मम' मा श्रमण्यः 'आदायति' २ आद्रियन्त, तथा परिजानन्ति, उदानीं नो आद्रियन्ते नो परिजानन्ति, 'त' तत्=तस्मात् श्रेयः खलु मम कल्ये प्रादुर्भूत प्रभातया रजन्या यावज्ज्वलति सूर्ये अभ्युदते गोपालिकानामार्याणामन्तिभात् प्रतिनिष्क्रम्य 'पाडिणक्क' पार्थक्य=पार्थक्याश्रय पृथग्भूतम् अन्प्रमित्यर्थः 'उव-

यह आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उत्पन्न हुआ-(जयाण अम्ह आगारवासमज्जे वसामि तयाण अह अप्पसा जयाण अह मुडे भवित्ता पव्वइया तयाण अह परवसा, पुर्व्वि च ण मम समणीओ आदायन्ति, इयाणि णो आदति २ तं सेय खलु मम कल्ल पाउंगोवालियाणं अतियाओ पडिनिक्खमित्ता पडिणक्क उवस्सयं उवसपज्जित्ताणं विहरित्तए त्ति कट्टु एव सपेहेइ) जब तक मे घर में रही तब तक स्वाधीन रही-और अब जब से मुंडित होकर प्रव्रजित हुई हूँ तब से पराधीन बन रही हूँ । पहिले ये श्रमणिया मेरा आदर करती थी-मेरी बात मानती थी परन्तु अबतो कोई भी न मेरा आदर करती है-और न मेरी बात ही मानती है । इस लिये मुझे अब वही उचित होगा कि मैं दूसरे दिन जब प्रातः काल होने पर सूर्य प्रकाश से चमकने लगे-तब मैं गोपालिको आर्याके पास रो निकल कर किसी दूसरे भिन्न उपा

देक टोड ठरी त्यारे तेने आ नतने आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उद्भव्ये उ (जयाण अम्ह आगारवासमज्जे वमामि तयाण अह अप्पसा जयाण अह मुडे भवित्ता पव्वइया तयाण अह परवसा पुर्व्वि च ण मम समणीओ आदायन्ति, इयाणि णो आदति २ तं सेय खलु मम पाउंगोवालियाणं अति याओ पडिनिक्खमित्ता पडिणक्क उवस्सयं उवसपज्जित्ताणं विहरित्तए त्ति कट्टु एव सपेहेइ) तथा मुधी हु घरमा रही त्या मुधी स्वाधीन रही पणु न्यारथी मुडित थर्धने प्रव्रजित थर्ध हु त्यारथी पराधीन थर्ध थर्ध हु पडेला आ श्रमणीओ भारे आदर करती हती, भारी बात मानती हती पणु अत्यारे तो केध पणु भारे आर नथी करतु अने भारी बात पणु मानतु नथी तेथी भारे भाटे अे उ उचित उ के णीरे दिवसे भवारे सूर्य उदय पावता अे हु गोपालिका आर्यानी पासैथी नीठणीने केध णीला उपाश्रये वती रहु नतने तेले विचार कथी (सपेहिचा) विचार करीने ते (कल्लपा०

मारिका आर्या गोपालिकानामार्याणामेवमर्थे 'नो आढाह' नाद्रियते, नो परिजानीते तद्दाने ध्यान न ददाति, । अनाद्रियमाणा=भ्रान्तर कुरती, अपरि जानाना=पानमददाना विहरति=प्राप्तो । तन् गलु ताः गोपालिका आर्याः सुकुमारिकामार्यामभीक्ष्णं=पुनः पुनरभिधीति विवन्ति निद्रति यावत् परि भवन्ति । अभीक्ष्णं=पुनः पुनः, 'एयमट्टं' एतमर्थम् उक्तमर्थं शरीरशोभाकरण जलमक्षेपादिकु निवारयन्ति=मनिषेयन्ति । तन् गलु 'तीण' तम्याः सुकुमारि काया श्रमणीभिर्निग्रन्थीभिः दीन्यमानाया यावत् सार्थमाणाया अयमेतदूषः= वक्ष्यमाणस्वरूप' आध्यात्मिको यावन्नमोगतः सक्न्पो-तिचारःसमुद्रपघत=माह

(तएण सा सुमालिया गोवालियाण अज्जाण एयमट्ट नो आढाह, नो परिजाणाह, अणाढायमाणी, अपरिजाणमाणी, विहरइ) सुकुमारिका आर्या ने गोपालिका आर्या के इम कथन रूप अर्थ को आदर की दृष्टि से नहीं देखा, उनके चर्चों पर उमने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। इस तरह उनके चर्चों का अनादर और उन पर ध्यान नहीं देती हुई बह रहने लगी (तएणं ताओ अज्जाओ सुमालिय अज्ज अभिक्खण २ एयमट्ट निवारंति, तएण तीसे सुमालियाण समणीहि निग्गधीहि हीलि उज्जमाणीए जाव वारिज्जमाणीए इमेयाक्खे अज्जत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) इस के पश्चात् उन गोपालिका आर्या ने उस सुकुमारिका आर्या की वार २ अवहेलना की, उस पर वे गुस्सा भी हुई उमकी निंदा भी की यावत् उसका तिरस्कार भी किया। वार २ उसे शरीर की शोभा करने से और जल का सिंचन करने से रोका। तए उसे इस प्रकार का

उ हेवानुप्रिये । तमे ते स्थाननी आलोचनया करे-पेताना अतिथारने प्रक शित करे यावत् तेना भाटे प्रायश्चित्त करे (तएण सा सुमालिया गोवालियाण अज्जाण एयमट्ट नो आढाह, नो परिजाणाह, अणाढायमाणी, अपरिजाणमाणी, विहरइ) सुकुमारिका आर्यांश्च गोपालिका आर्याणां आ कथनरूप अर्थने आदरनी दृष्टिर्था ज्ञेये नहि, तेभना वचनेण उपर तेणु कथं पणु विचार कथे नहि आ रीते तेभना वचनेणे अनादर अने ते प्रत्ये अदरकार थने ते पेताने वपत्त पसार करवा लागी (तएण ताओ अज्जाओ सुमालिय अज्ज अभिक्खण २ एयमट्ट निवारंति, तएण तीसे सुमालियाण समणीहि निग्गधीहि हीलिउज्जमा णीए जाव वारिज्जमाणीए इमेयाक्खे अज्जत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) तएरपधी ते गोपालिका आर्यांश्च ते सुकुमारिका आर्याणी वारवार अवहेलना करी, तेनी तरइ तेभणु गुस्से पणु पताण्ये, तेना निंदा करी यावत् तेना तिरस्कार पणु कथे तेने वारवार शरीरने शोभाववा अदल तेभञ्जणत्त नि अदल

सस्य ' उपाश्रयम् उपसंषय विद्वुमितिः' वा पर मंप्रेक्ष्य दन्त्ये मादुर्भूतमभा-
 ताया रजन्या यापञ्चनिस्ये उदिते ति गोपालिका नामार्थाणामन्तिमान् प्रति
 निष्प्रामति, प्रतिनिष्प्रम्य ' पाडिण्ड ' मार्थम्य-पृथग्भूतमन्यमुपाश्रयमुपसपय
 खलु विहरति-आगत स्म ।

ततः खलु ता सुकुमारिका आर्या ' अणोहट्टिया ' अनप्यघट्टिका अपवास्व
 रहिता-उच्छद्गला भविनयतीति यात्र ' अनियागिया ' अनियाया दुर्निवा
 ' सच्छदमई ' सच्छदमतिः-गरित्रधर्मान्तुगेधरदितमात्, अमील्ल-पुन. पुन-
 ईस्तो धावति=प्रक्षालयति गावत्=स्थान या शय्या या नैपेधिर्वा वा जलेनाभ्युक्ष्य-
 चेतयति=स्थानादिक करोतीत्यर्थः। तत्रापि च खलु पार्श्वस्था, पार्श्वम्यविहारिणी,

अथ मे चली जाऊँ इस प्रकार का उमने विचार किया (मपेहिज्ञा)
 ऐसा विचार करके (करल पा० गोपालियाण अज्जाण) दूसरे ही दिन
 प्रातः काल जब सूर्योदय हो गया-तब वह गोपालिका आर्या के (अति-
 याओ) पास से (पडिनिक्खमिच्चा) निकल कर-(पडिण्णक) भिष,
 दूसरे (उवस्सय) उपाश्रय को (उवसपज्जिच्चाण विहरइ) प्राप्तकर,
 वहा रहने लगी-अर्थात् दूसरे उपाश्रय में चली आई। (तण्ण सा
 सुमालिया अज्जा अणोहट्टिया अनिवारिया सच्छदमई अभिक्खण
 अभिक्खण हत्थे धोवेइ जाव चेणइ) यहा वर सुकुमारिका आर्या बिना,
 किसी रोक टोक के स्वच्छद धनकर रहने लग गई। वहाँ उसे कोई
 रोकने वाला रहा नहीं-सो जो मन में आया वह करने लग गई-इस
 तरह वह चोरित्र धर्म के भाव से रहित बन गई। चार २ अपने हाथों
 को धोती यावत् स्थान, शय्या, और स्वाध्याय की भूमि को धोकर वहा

गोपालियाण अज्जाण) भीजे द्विसे सवारे न्यारे सूर्य उदय पाभ्ये त्यारे ते
 गोपालिका आर्यानी (अतियाओ)... पासेधी (पडिनिक्खमिच्चा) नीकणीने (पडिण्णक)
 भील (उवस्सय) उपाश्रयने (उवसपज्जिच्चाण विहरइ) भेणवीने त्या रडेवा
 लागी, अेटले के भील उपाश्रयमा जाती रही (त एण सा सुमालिया अज्जा
 अणोहट्टिया अनिवारिया सच्छदमई अभिक्खण हत्थे धोवेइ जाव चेणइ) त्या
 ते सुकुमारिका आर्या केरपणु नतनी रोक टोक वगर स्वच्छतापूर्वक रडेवा
 लागी त्या तेने केर रोक-टोक करनार इतु नडि अेटले ने प्रभाळे तेनी
 छच्छा थती ते प्रभाळे न ते आचरती इती आ रीते ते आश्रित धर्माना
 भावथी रहित णनी गध वारवार ते पोताना हाथेने धोती इती यावत् स्थान,
 पथारी अने स्वाध्यायना स्थानने धोधने त्या पोतानु स्थान नच्छी करती इती

अवसन्ना, अवसन्नविहारिणी, कुशीला कुशीलविहारिणी, समक्ता, ससक्तविहारिणी, बहूनि वर्षाणि आमण्यपर्याय पालयति, पालयित्वा अर्धमासिकया सलेखनया तस्य स्थानस्याऽनालोचिता अप्रतिक्रान्ता कालमासे काल कृत्वा, ईशाने कल्पेऽन्यत मस्मिन् विमाने माधुर्यादि ताचनाममये आचार्याणां विमानसख्याया विस्मरणेन निश्चयाभावादन्यतमस्मिन्नित्युक्तम्, देवगणित्तया उपपन्ना । तत्रैकैकासा-देवीना नवपल्योपमानि स्थितिः प्रथमा ॥ सू० १५ ॥

अपना स्थान नियत करती । इस प्रकार (तत्त्र विद्य ण पासत्था पासस्थ विहारी, ओसग्णा ओसण्णविहारी कुमीला२ समत्ता२ बहूणि वासाणि सामण्यपरियाग पाउण्ड) वहा उम सुकुमारिका ने पार्श्वस्था पार्श्वस्थ विहारिणी, अवसन्ना, अवसन्न विहारिणी, कुशीला, कुशील विहारिणी, समक्ता, ससक्त विहारिणी बनकर अनेक वर्षों तक आमण्य पर्याय का पालन किया (पाउणिस्ता अद्धमासियाए) पालन करके वह अर्धमास की सलेखना धारण कर (कालमासे) अपनी मृत्यु के अगसर (काल किच्चा) पर मरी-सो मरकर (अणालोइय अपडिक्कता) अपने पापों की अनालोचना करने से वह प्रतिक्रान्त नहीं बन सकने के कारण (ईसाणे कप्पे) ईशानकल्प में (अण्णयरसि विमाणसि) किसी एक विमान में (देवगणियत्ताए उववण्णा) देवगणिका के रूप में उत्पन्न हुई । (तत्थेगइयाण देवीण नवपलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता, तत्थण सूमालियाए देवीए नव पलिओवमाइ ठिइ पण्णत्ता) वहा कितनिक देवियों

आ रीते (तत्त्र विद्य ण पासत्था पासस्थविहारी ओसग्णा ओसण्णविहारी कुशीलाऽससत्ता २ बहूणि वासाणि सामण्यपरियाग पाउण्ड) त्या ते सुकुमारिकाये पार्श्वस्था, पार्श्वस्थ विहारिणी, अवसन्ना, अवसन्न विहारिणी, कुशीला, कुशील विहारिणी, समक्ता, ससक्त विहारिणी थधने धणा वर्षो सुधी आमण्य पर्याय पालन कर्तुं (पाउणिस्ता अद्धमासियाए) पालन करीने ते अर्धमासिकनी सलेखना धारण करीने (कालमासे) पोताना मृत्यु काणे (काल किच्चा) ते मरुणु पाभी अने मरुणु पाभीने (अणालोइय अपडिक्कता) पोताना पापानी आवोचन्ता न करवाथी प्रतिक्रान्त न बननी शक्यना कारणे ते (ईसाणे कप्पे) ईशान कल्पमा (अण्णयरसि विमाणसि) कैथ अेक विमानमा (देवगणियत्ताए उववण्णा) देवगणिकाना रूपमा जन्म पाभी (तत्थे गइयाण देवी ण नवपलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता, तत्थण सूमालियाए देवीए नव पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता) त्या उटलीक देवीओनी स्थिति नव पद्योपननी कडे

मूलम्—तेर्ण कालेण तेण समणं दहेव जवुदीवे भारहे वासे
 पंचालेसु जणवएसु कपिलपुरे नाम नयरे होत्था, वन्नओ तत्थ
 णं दुवए नामं राया होत्था, वन्नओ, तस्स णं चुलणीदेवी
 धट्टज्जुणे कुमारे जुवराया, तएणं सा सूमालियादेवी ताओ
 देवलोयाओ आउम्वएणं जाव चइत्ता इहं व जं वुदीवे द्वीवे भारहे
 वासे पंचालेसु जणवएसु कपिलपुरे नयरे दुपयस्स रण्णो चुल-
 णीए देवीए कुच्छिसि दारियत्ताए पच्चायाया, तएण सा चुल-
 णीदेवी नवण्ह मात्ताण जाव दारियं पयाया, तएणं सा तीसे
 दारियाए निव्वत्तारसाहियाए इम एयाख्व गोणं गुणणिप्फणं
 नामधेज्जं जम्हाण एस दारिया दुवयस्स रण्णो धूया चुलणीए
 देवीए अत्तया त होउ णं अम्ह इमीसे दारियाए नामधिज्जे
 दोवई, तएणं तीसे अम्मापियरो इम एयाख्व गुणण गुणनि
 प्फन्न नामधेज्ज करिति दोवई, तएण सा दोवई दारिया पंच
 धाइपरिग्गहिया जाव गिरिकदरमह्छाण इव चपगलया निवाय

की स्थिति नौ पल्योपम की कही गई है—सो इस सुकुमारिकादेवी की
 वहा नौ पल्योपम की स्थिति हुई। यहा जो " किसी एक विमान में "
 ऐसा अनिश्चयात्मक पदआयो है उसका तात्पर्य यह है कि माधुर्यादि
 वाचना के समय में आचार्यों को विमान सख्या का विस्मरण हो जाने
 से उसका निश्चय नहीं रहा। अतः ऐसा कहा गया है ॥ सू० १५ ॥

वामा आधी छे ते ते सुकुमारिका देवीनी पणु त्या नवपत्थोपमनी स्थिति
 थध अडी जे " कोठ ओक विमानमा " आ जतनु अनिश्चयात्मक पद आणु
 छे तेनु कारण आ प्रभाणु छे के माधुर्यादि वाचनाना समये आचार्योनि विमान
 सख्यानु विस्मरण थध जवाधी ते विषे निश्चय रह्यो नहि ओथी आ प्रभाणु
 उडेवामा आणु छे ॥ सूत्र १५ ॥

निष्वाघायंसिसुहंसुहेणं परिवड्डइ । तएणं सा दोवई रायवरकन्ना
उम्मुक्कवालभावा जाव उक्किट्टसरीरा जाया जावि होत्था, तएणं
तं दोवई रायवरकन्नं अण्णया कयाई अंतेउरियाओ ण्हायं
जाव विभूसिय करोति करित्ता दुवयस्स रण्णोपाएवंदिउं पेसति
तएण सा दोवइ राय० जेणेव राया तेणेव उवागच्छइ उवा-
गच्छित्ता दुवयस्स रण्णो पायग्गहण करेइ, तएणं से दुवए
राया दोवइ दारिय अके निवेसेइ निवेसित्ता दोवइए रायवर-
कन्नाए रुवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जायविम्हए दोवइ
रायवरकन्नं एव वयासी-जस्स णं अहपुत्ता । रायस्स वा जुवरायस्स
वा भारियत्ताए सयमेव दलइस्सामि तत्थ ण तुम सुहिया वा
दुक्खिया वा भविज्जासि, तएण मम जावजीवाए हिययडाहे
भविस्सइ, तं ण अहं तव पुत्ता । अज्जयाए सयंवर विरयामि,
अज्जयाए ण तुम दिण्णसयवरा जण्णं तुम सयमेव रायं वा
जुवराय वा वरेहिसि से ण तव भत्तारे भविस्सइ त्तिरुट्टु ताहिं
इत्ताहिं जाव आसासेइ आसासित्ता पडिविसज्जेइ ॥ सू० १६ ॥

टीका—‘ तेण कालेण ’ इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये इहैव
जम्बूद्वीपे भारते वर्षे पञ्चालेषु जनपदेषु काम्पिल्यपुर=काम्पिल्यपुरनामक नगर

‘ तेण कालेण तेण समएण ’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) उस काल और उस
समय में (इहैव जम्बूद्वीपे भारते वासे पञ्चालेषु जनपदेषु कपिलपुरे नाम
नगरे होत्था) इसी जम्बूद्वीप में भारत वर्ष में पांचाल जनपद में

तेण कालेण तेण समएण इत्यादि—

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) ते काले अने ते समये (इहैव जम्बूद्वीपे
भारतवासे पञ्चालेषु जनपदेषु कपिलपुरे नाम नगरे होत्था) आ जम्बूद्वीपभा
भारत वर्षभा पांचाल जनपदभा कपिलपुर नामे नगर इत्तु (वत्रओ) आ
नगरतु वत्थुंन औपपातिक सूत्रभा करवाभा आण्यु छे त्याथी पाठकेअने नक्षी

मासीत्, वर्गक=अस्य नगरस्य वर्णनमीपपातिकप्रसाद बोध्यम् । तत्र सद्यः
 मुपदो नाम राजाऽऽसीत्, चुळनी नाम्नी त्री मायाऽऽभवत्, तस्या पुत्रः 'धृष्ट-
 ज्युणे' धृष्टद्युम्नो नाम तुमारी युवराजोऽभवत् ।

ततः खलु सा सृष्टमारिका देवी तस्मात् देवलोकादायु क्षयग यावत्-
 च्युत्वा इष्टैः जम्बूद्वीपे द्वीपे भारतं त्रिं पचालेषु जनपदेषु काण्डिपपुरे नगरे
 मुपदस्य राज्ञ=चुळन्या देव्याः कुक्षी दारिद्र्यतया=पुत्रीत्वेन 'पचायाया' प्रया-
 याता=नमुत्पन्ना । तत खलु सा चुळनीदेवी नमाना मायानां यदुपतिष्ठाना
 यावद् दारिका पुरीं गन्ता=प्रजनितवती । तत खलु सा तस्या दारिकाया

कापिल्यपुर नाम का नगर था । (वनश्री) उम नगर का वर्णन औप-
 पातिक सूत्र में किया गया है जो तर्का से जान लेना चाहिये । (तत्प-
 ण दुवए नाम राया होत्या वन्नओ तस्म ण चुळणीदेवी, धृष्टज्युणे कुमार
 जुवराया, तएण सा सुमालिया देवी ताओ देवलोकाओ आउत्तवण
 जाव चइत्ता इहेव जवुहीवे दीवे, भारहे वासे पचालेसु जणवएसु कपि
 ल्लपुरे नगरे दुवयस्स रण्णो चुलणीए देवीए कुच्छिसि दारियत्ताए
 पचायाया) वहाके राजाका नाम मुपद था । राजाका वर्णन भी पहिले
 जैसा ही जानना चाहिये । इस की रानी का नाम चुलनीदेवी था ।
 कुमार का नाम धृष्टद्युम्न था-यह युवराज था । वह सुकुमारिका आर्या
 का जीव उस दूसरे ईशान देवलोक से आयु आदि क्षय हो जाने के
 कारण चक्कर इसी जंबूद्वीप नाम के द्वीप में भरत क्षेत्र में, पाचाल
 जनपद में कापिल्यपुर नगर में मुपद राजा की चुलनीदेवी की कुक्षि में
 पुत्री रूपसे अवतरित हुआ । (तएण सा चुलणीदेवी नवण्ह मासाण जाव

देवु लेधञ्जे (तत्प ण दुवए नाम राया होत्या, वन्नओ, तस्मण चुलणी देवी
 धृष्टज्युणे कुमारे, जुवराया, तएण सा सुमालिया देवी ताओ देवलोकाओ आ-
 उत्तवण जाव चइत्ता इहेव जवुहीवे दीवे भारहे वासे पचालेसु जणवएसु कपिल
 पुरे नगरे दुवयस्स रण्णो चुळणीए देवीए कुच्छिसि दारियत्ताए पचायाया) त्वाना
 राजानु नाम मुपद इत्तु राजानु वरुण पथु औपपातिक सूत्रमा वञ्चित कोषिक
 राजनी लेभञ्ज लणी देवु लेधञ्जे -तेनी,राणीनु नाम सुलनी, देवी इत्तु तेना
 पुत्रनु नाम धृष्टद्युम्न इत्तु धृष्टद्युम्न, युवराज इतो, सुकुमारिका आर्याना एव
 ते त्वाना देवलोकथी आयु वगेरे क्षय थवा गहल युवीने आण जम्बूद्वीप
 नामना, द्वीपमा, भरत क्षेत्रमा, पाचाल्य जनपदमा, कापिल्यपुर नगरमा मुपद
 राजनी सुलनी देवीना उदरमा पुत्री इये अवतरित थये । (त एण सा चुलणी

'निव्वत्तारसाहियाए' निवृत्तद्वादशाहिकाया=द्वादशेऽहनि सप्ताध्ते इदमेतद्रूप नाम कृतवती यस्मात् खलु एषा दारिका दुपदस्य राज्ञो 'धूया' दुहिता-पुत्री चुलन्या देव्या 'अत्तिया' आत्मजा=अहजाता, तस्माद् भवतु खल्वस्माकमस्या दारिकाया नामधेय 'द्रौपदी' इति । ततः खलु तस्या अम्बापितरौ इममेतद्रूप गेणं=गुणं प्राप्त गुणनिष्पन्न=गुणसपन्न, नामधेय कुरुतः । ततः सा द्रौपदी दारिका पञ्चधात्रीभिर्यावद् गिरिकन्दरमालीने चम्पकृता निर्वाणनिर्व्याघाते सुखे सुखेने परिवर्धते स्म ।

दारिय पयाया तएण सा तीसे दारियाए निव्वत्तारसाहियाए इम एया ख्व गोण गुणणिष्फण नामधेज्ज जम्हाण एस दारिया दुवयस्स रण्णो धूया चुलणीए देवीए अत्तया त होउण-अम्ह इमीसे दारियाए नामधिज्जे दोवई) गर्भ के जब नौ मास अच्छी तरह समाप्त हो चुके तब, चुलनी-देवी ने एक पुत्री को जन्म दिया । पुत्री को उत्पन्न हुए १२ वां दिन लगा-तब चुलनी मानाने उसका इस रूप से गुणनिष्पन्न नाम रखवा क्यों कि यह दुपद्राजा की पुत्री है और सुख चुलनी के उदर से उत्पन्न हुई है-इसलिये इस हमारी कन्या को नाम द्रुपदी रहो इस तरह के विचार-से (तीसे अम्मा पियरो) माता पिता ने उसका (इम एयाख्व गुण गुणनिष्फन्न नामधेज्ज करिंति दोवई) इस तरह का गुणनिष्पन्न नाम द्रौपदी रख दिया । (तएण) इसके बाद-(सा दोवई दारिया पचधाह परिगहिया जाव गिरिकन्दरमल्लीणइव चपगलया निवापनिव्याघायसि सुह सुहेण परिवड्डेइ) वह द्रौपदी दारिका पाच धायमानाओं से सुक्त

देवी नवण्ह मासाण जाव दारिय पयाया तएण सा तीसे दारियाए निव्वत्तार साहियाए इम एयाख्व गोण गुणणिष्फण नामधेज्ज जम्हाण एस दारिया दुवयस्स रण्णो धूया चुलणीए देवीए अत्तया त होउण अम्ह इमीसे दारियार नामधिज्जे दोवई) गर्भना नवमास न्यारे 'स'पुण्ये सभास धया त्यारे चुलनी देवीये अक पुत्रीने जन्म आये। पुत्रीना जन्म पथी न्यारे अगि यांर द्विमं पूरा धया अने गारभा निवम गउ थये त्यारे चुलनी माताये विचार कथे उ दुपदं रज्जनी आ कन्यापुत्री ठे अने भास गर्भथा जन्म पाभी छे आ प्रभाये आनु नाम द्रौपदी राभीये तो साइ आभ विचारिने (तीसे अम्मापियरो) मातापिताये ' (इम एयाख्व गुण गुणनिष्फन्न नाम धेज्ज करिंति दोवई) आ जीते से कन्यानु शुण निष्पन्न नाम द्रौपदी पाउथु (तएण) त्यारपथी (सा दोवई दारिया पचधाहपरिगहिया जाव गिरिकन्दर मल्लीण इव चपगलया निवापनिव्याघायसि सुह सुहेण परिवड्डेइ)

मासीत्, वर्णकः=अस्य नगरस्य वर्णनशीपपातिरुग्रप्राद् घोष्यम् । तत्र 'सह
द्रुपदो नाम राजाऽऽसीत्, चुलनी नाम्नी देवी भार्याऽभवत्, तस्य पुत्रः 'धृष्ट-
ज्युणे' धृष्टद्युम्नो नाम कुमारो युरराजोऽभवत् ।

ततः खट्वु गा सुकृमारिका देवी तस्माद् देवलोकादायु क्षेपेण यावत्-
व्युत्वा इष्टैर् जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते तं पचालेषु जनपदेषु काम्पिल्यपुरे नगरे
द्रुपदस्य राज्ञः=चुलनी देव्या. कुक्षी दारिकतया=पुत्रीत्यन 'पश्यायाया' मया
याता=गमुत्पचा । तत गट् ना चुलनीदेवी नमाना भोगानां यदप्रतिष्ठापना
याम् दारिका पुरीं मजाता=प्रजनितवती । तत' खलु गा तस्या दारिकाया

काम्पिल्यपुर नाम का नगर था । (चन्नजो) उम नगर का वर्णन औष-
पातिक सूत्र में किया गया है जो तर्का में जान लेना चाहिये । (तत्प-
ण दुवए नाम राया होत्या वन्नजो तस्मि ण चुलनीदेवी, धृष्टज्युणे कुमारे
जुवराया, तण्ण सा सुमालिया देवी ताओ देवलोकाओ आडुक्खण
जाव चइत्ता इहेव जमुहीवे दीवे, भारहे वासे पचालेसु जणवएसु कपिल-
लपुरे नगरे दुवयस्स रण्णो चुलणीए देवीए कुच्छिसि दारियत्ताए
पच्चायाया) वहाके राजाका नाम द्रुपद था । राजाका वर्णन भी पहिले
जैसा ही जानना चाहिये । इस की रानी का नाम चुलनीदेवी था ।
कुमार का नाम धृष्टद्युम्न था-यह युवराज था । वह सुकृमारिका भार्या
का जीव उस दूसरे ईशान देवलोक से आयु आदि क्षय हो जाने के
कारण चवकर इसी जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में भरत क्षेत्र में, पचाल
जनपद में काम्पिल्यपुर नगर में द्रुपद राजा की चुलनीदेवी की कुक्षि में
पुत्री रूपसे अवतरित हुआ । (तण्ण सा चुलणीदेवी नवण्ह मासाण जाव

वेसु नेधञ्जे (तत्प ण दुवए नाम राया होत्या, वन्नजो, तस्मि ण चुलणी देवी
धृष्टज्युणे कुमारे, जुवराया, तण्ण सा सुमालिया देवी ताओ देवलोकाओ आ-
डुक्खण जाव चइत्ता इहेव जमुहीवे दीवे भारहे वासे पचालेसु जणवएसु कपिल-
पुरे नगरे दुवयस्स रण्णो चुलणीए देवीए कुच्छिसि दारियत्ताए पच्चायाया) ताना
राजानु नाम द्रुपद इत्तु राजानु वर्णन पथु औषपातिक सूत्रमा वरिंत्त ओषिक
राजानी नेमञ्ज जण्णी वेसु नेधञ्जे-तेनी, राष्ठीनु नाम चुलनी देवी इत्तु तेना
पुत्रनु नाम धृष्टद्युम्न इत्तु धृष्टद्युम्न, युवराज् इतो, सुकृमारिका भार्याना एव
ते जाना देवलोकथी आयु वगेरे क्षय थवा अहल चवीने आर्य जम्बूद्वीप
नामनाः द्वीपभा, भरतक्षेत्रभा, पचाल-जनपदभा, काम्पिल्यपुर नगरभा द्रुपद
राजानी चुलनी देवीना उदरभा पुत्री इपे अवतरित थये । (त वर्ण सा चुलणी

निवेशयति, निवेश्य द्रौपद्या राजवरकन्याया रूपेण च योवनेन च लावण्येन च 'जायविम्हए' जातविस्मयः=आश्चर्य प्राप्तः स द्रुपदो द्रौपदीं राजवरकन्या मेवमवादीत्-हे पुत्रि ! यस्य खलु अह राज्ञो वा युवराजस्य वा भार्यात्वेन स्वय मेव दास्यामि, तत्र खलु त्व सुखिता वा दुःखिता वा भविष्यसि, तत खलु मम 'जाव जीवाए' यावज्जीव 'हिययडाहे' हृदयदाहः-मनोदुःख भविष्यति ।

तएण से दुवए राया दोवड दारिय अके निवेशेइ, निवेशित्ता, दोवईए रायवरकन्नाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जायविम्हए दोवड, रायवरकन्न एव वयासी) सो वह राजवर कन्या द्रौपदी जहा द्रुपद राजा था वहा आई। वहा आकर उसने वदना करने के लिये द्रुपद राजा के ज़ोही दोनो पैरो को पकड़ा कि इतने में उस द्रुपद राजाने उस द्रौपदी दारिका को अपनी गोदमें बैठा लिया। द्रौपदी के बैठते ही वह राजा उस राजवर कन्या द्रौपदी के रूप, यौवन और लावण्य से विशेष विस्मित हुआ-सो विस्मित होकर उसने उस राजवर कन्या द्रौपदी से इस प्रकार कहा-(जस्स ण अह पुत्ता ! रायस्स वा जुवरायस्स वा भारियत्ताए सयमेव दलइस्सामि, तत्थ ण तुम सुहिया वा दुक्खिया वा भविज्जासि तएण मम जाव जीवाए हिययडाहे भविस्सइ) हे पुत्रि ! मैं स्वय तुम्ह जिस राजा को, अथवा युवराज को भार्या के रूप में दूँगा वहाँ तुम सुखी और दुःखी दोनो भी हो सकती हो। तो इससे मुझे यावज्जीव हृदय दाह-मानसिक दुःख रहेगा। (त ण अह पुत्ता !

से दुवए राया दोवड दारिय अके निवेशेइ, निवेशित्ता, दोवईए रायवरकन्नाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जायविम्हए दोवड रायवरकन्न एव वयासी) ते राजवर कन्या द्रौपदी कन्या राज्ञे द्रुपद उता त्या गर्ध त्या ज्जने तेहे द्रुपद राज्ञे वदन करवा भाटे जने पगे। पडया त्यारे तेज्जाजे द्रौपदी दारि-काने पोताना जेज्जाभा मेसाडी द्रौपदी कन्यारे जेज्जाभा मेसी गर्ध त्यारे राज ते राजवर कन्या द्रौपदीना इय, यौवन ज्जने लावण्यथी सविशेष विस्मित थये ज्जने विस्मित थजने तेहे ते राजवर कन्या द्रौपदीने आ प्रभाहे उद्धु— (जस्स ण अह पुत्ता ! रायस्स वा जुवरायस्स वा भारियत्ताए सयमेव दलइस्सामि, तत्थण तुम सुहिया वा दुक्खिया वा भविज्जासि तएण मम जाव जीवाए हिय यडाहे भविस्सइ) हे पुत्रि ! तु तने जे राज्ञे उ युवराज्जने लार्थाना इपभा आपीश त्या तुं सुभी पणु थर्ध शके तेम छे ज्जने इ भी पणु तेथी ज्जने

निवेशयति, निवेश्य द्रौपद्या राजवरकन्यायां रूपेण च यौवनेन च लावण्येन च 'जायविष्णुए' जातप्रिस्मयः=आश्चर्य प्राप्तं स द्रुपदो द्रौपदीं राजवरकन्यामेवमवादीत्-हे पुत्रि ! यस्य खलु अहं राज्ञो वा युवराजस्य वा भार्यात्वेन स्वयमेव दास्यामि, तत्र खलु त्वं सुखिता वा दुःखिता वा भविष्यसि, ततः खलु मम 'जाव जीवाए' यावज्जीव 'हिययडाहे' हृदयदाहः-मनोदुःखं भविष्यति ।

तएण से दुवण राया दोवड दारिय अके निवेशेइ, निवेशित्ता, दोवईण रायवरकन्नाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जायविम्हए दोवड, रायवरकन्न एव वयासी) सो वह राजवर कन्या द्रौपदी जहा द्रुपद राजा था वहा आई । वहा आकर उसने वदना करने के लिये द्रुपद राजा के ज्योंही दोनो पैरो को पकड़ा कि इतने में उस द्रुपद राजाने उस द्रौपदी दारिका को अपनी गोदमें बैठा लिया । द्रौपदी के बैठते ही वह राजा उस राजवर कन्या द्रौपदी के रूप, यौवन और लावण्य से विशेष विस्मित हुआ-सो विस्मित होकर उसने उस राजवर कन्या द्रौपदी से इस प्रकार कहा-(जस्स ण अहं पुत्ता ! रायस्स वा जुवरायस्स वा भारियत्ताए सयमेव दलडस्सामि, तत्थ ण तुम सुहिया वा दुक्खिया वा भविज्जासि तएण मम जाव जीवाए हिययडाहे भविस्मइ) हे पुत्रि ! मैं स्वयं तुम्हें जिस राजा को, अथवा युवराज को भार्या के रूप में दूँगा वहाँ तुम सुखी और दुःखी दोनो भी हो सकती हो । तो इमसे मुझे यावज्जीव हृदय दाह-मानसिक दुःख रहेगा । (न ण अहं पुत्ता !

से दुवए राया दोवड दारिय अके निवेशेइ, निवेशित्ता, दोवईण रायवरकन्नाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जायविम्हए दोवड रायवरकन्न एव वयासी) ते राजवर कन्या द्रौपदी कन्या राजा द्रुपद होता त्या गर्ध त्या जधने तेहे द्रुपद राजाने वदन करवा भाटे णने पगे। पडउया त्यारे तेज्जोअे द्रौपदी दारिकाने पोताना भोणाभा भेसाडी द्रौपदी कन्यारे भोणाभा भेसी गर्ध त्यारे राजा ते राजवर कन्या द्रौपदीना रूप, यौवन अने लावण्यथी भविशेष विस्मित थये। अने विस्मित थधने तेहे ते राजवर कन्या द्रौपदीने आ प्रभाहे कहु— (जस्स ण अहं पुत्ता ! रायस्स वा जुवरायस्स वा भारियत्ताए सयमेव दलडस्सामि, तत्थण तुम सुहिया वा दुक्खिया वा भविज्जासि तएण मम जाव जीवाए हिय यडाहे भविस्सइ) हे पुत्रि ! हु तने जे राजाने के युवराजने भाथोना रूपमा आपीश त्या तुं सुणी पणु थर्ध शके तेम छे अने दुणी पणु तेथी भने

तत खलु सा द्रौपदी राजवरकन्या उन्मुक्कवाल्भारा यावत् दरुष्टा, उत्कृष्ट
 घरीरा जाता चाप्यमवत् । ततः खलु तां द्रौपदीं राजवरकन्यामन्यदा क्वचिद्
 'अते उरियाओ' आन्तः पुगिय = अन्तः पुगिनियः स्त्रियः स्नातां यावत्-वत्सा
 ककारविभूषिता कुर्यन्ति कृन्वा दुपदस्य राग पाणी नन्दितु 'पेसति' प्रेषयन्ति,
 ततः खलु सा द्रौपदी राजवरकन्या यत्रैव दुपदो राजा तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य
 दुपदस्य रागः पादग्रहणं करोति, ततः खलु स दुपदो राजा द्रौपदीं दारिकामङ्गे

होकर हम तरह पलने पुपने लगी कि जिम तरह गिरि की कदरा के
 प्रवेशमें उत्पन्न हुई चपकलता वा रहित निरुपद्रव स्थान में आनन्द के
 साथ पलती पुपती है । (तएण सा दोवई रायवरकन्या उन्मुक्कवाल
 भावा, जाव उक्किट्टसरीरा जाया यावि होत्था, तएण त दोवई रायव
 रकन्न अण्णया कयाई अते उरियाओ ण्हाय जाव विभूसिय करेति,
 करिस्ता दुवयस्स रण्णो पाए वदिउ पेसति) यह राजवर कन्या द्रौपदी
 बालभाव रहित होकर जय यौवन अवस्था वाली हो चुकी तब इस के
 शरीर में लावण्य की चमक से विषय सौन्दर्य आ गया-अतः उस समय
 यह विशेषरूप से उत्कृष्ट शरीर वाली बन गई । किसी एक दिन की बात
 है कि अतः पुर की स्त्रियों ने द्रौपदी को स्नान कराकर यावत् बखाल
 कार से विभूषित किया-और विभूषित कर के दुपद राजा की चरण
 बंदना करने के लिये भेज दिया (तएण सा दोवई राय० जेणेव दुवए
 राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता, दुवयस्स रण्णो पायगग्हण करेइ,

दारिका पाय धायभाताओथी युक्त यधने आ प्रभाण्णे दाहित पाहित थवा
 भाडी जेभके पर्वतनी कदराना प्रदेशभा उन्पन्न थयेली चपकलता निर्वात,
 निरुपद्रव स्थानभा सुणेथी भोठी थती न डोय ! (तएण सा दोवई रायवर
 कन्या उन्मुक्कवालभावा जाव उक्किट्टसरीरा जाया यावि होत्था, तएण त दोवई
 रायवरकन्न अण्णया कयाई अते उरियाओ ण्हाय जाव विभूसिय करेति करिस्ता
 दुवयस्स रण्णो पाए वदिउ पेसति) ते राजवर कन्या, द्रौपदी अथवायु वटावीने
 कथादे युवावस्था सपन्न थई गधं त्यादे तेना शरीरभा लावण्यना यमकथी
 सविशेष सौंदर्य दीपी उठ्यु तेथी ते वधते ते विशेष इथी उत्कृष्ट शरीर
 वाली थई गधं उती कौथं जेक दिवसनी वात छे के रणुवासनी स्त्रीओओ द्रौप
 दीने स्नान कराओयु यावत् पन्नलकाशेथी विभूषित करी अने विभूषित करीने
 दुपद राजानी अथवायु वट्या करवा भाटे भोकेली (तएण सा दोवई राय० जेणेव
 दुवए राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता, दुवयस्स रण्णो पाए तएण

निवेगयति, निवेश्य द्रौपद्या राजवरकन्याया रूपेण च यौवनेन च लावण्येन च 'जायविष्णुए' जातविस्मयः=आश्चर्य प्राप्तं स द्रुपदो द्रौपदीं राजवरकन्या मेवमवादीत्-हे पुत्रि ! यस्य खलु अह राज्ञो वा युवराजस्य वा भार्यात्वेन स्वयं मेव दास्यामि, तत्र खलु त्वं सुखिता वा दुःखिता वा भविष्यसि, तत खलु मम 'जाव जीवाए' यावज्जीव 'हिययडाहे' हृदयदाहः-मनोदुःखं भविष्यति ।

तएण से दुवण राया दोवड दारिय अके निवेशेइ, निवेशित्ता, दोवईए रायवरकन्नाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जायविष्णुए दोवड, रायवरकन्न एव वयासी) सो वह राजवर कन्या द्रौपदी जहा द्रुपद राजा था वहां आई। वहा आकर उसने वदना करने के लिये द्रुपद राजा के उधोही दोनो पैरो को पकड़ा कि इतने मे उम द्रुपद राजाने उस द्रौपदी दारिका को अपनी गोदमें बैठा लिया। द्रौपदी के बैठते ही वह राजा उस राजवर कन्या द्रौपदी के रूप, यौवन और लावण्य से विशेष विस्मित हुआ-सो विस्मित होकर उसने उस राजवर कन्या द्रौपदी से इस प्रकार कहा-(जस्स ण अह पुत्ता ! रायस्स वा जुवरायस्स वा भारियत्ताए सयमेव दलइस्सामि, तत्थ ण तुम सुहिया वा दुक्खिया वा भविज्जासि तएण मम जाव जीवाए हिययडाहे भविस्सइ) हे पुत्रि ! मैं स्वयं तुम्हें जिस राजा को, अथवा युवराज को भार्या के रूप में दूंगा वहां तुम सुखी और दुःखी दोनो भी हो सकनी हो। तो इससे मुझे यावज्जीव हृदय दाह-मानसिक दुःख रहेगा। (तं ण अह पुत्ता !

से दुवए राया दोवड दारिय अके निवेशेइ, निवेशित्ता, दोवईए रायवरकन्नाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जायविष्णुए दोवड रायवरकन्न एव वयासी) ते राजवर कन्या द्रौपदी न्या राज्ञ द्रुपद उता त्या गर्ध त्या जघने तेहे द्रुपद राजाने वदन करवा माटे अने पगे। पकडया त्यारे तेओओ द्रौपदी दारिकाने पीताना ओणाभा ओसाडी द्रौपदी न्यारे ओणाभा ओसी गर्ध त्यारे राज ते राजवर कन्या द्रौपदीना रूप, यौवन अने लावण्यथी सविशेष विस्मित थयो अने विस्मित थधने तेहे ते राजवर कन्या द्रौपदीने आ प्रभाहे कहु— (जस्स ण अह पुत्ता ! रायस्स वा जुवरायस्स वा भारियत्ताए सयमेव दलइस्सामि, तत्थ ण तुम सुहिया वा दुक्खिया वा भविज्जासि तएण मम जाव जीवाए हिय यडाहे भविस्सइ) हे पुत्रि ! तु तने ओ राजाने के युवराजने लार्थाना रूपमा आपीश त्या त आपी पण गर्ध शके तेम छे अने दु भी पणु तेथी भने

=तत्त्वस्मात् खल्वहं पुत्रि ! तत्र ' अज्जयाण ' अपजया-ण्णु दिग्गसेषु अण्णेषु
 दिग्गसेषु इत्यर्थः स्वयंवरं वर्यामि-कार्यामि अज्ञानया मन्वद्विजयसेष्वेव गच्छत्व
 ' दिग्गसयवरा ' दत्तस्वयवरा=द्वियते इति वरः, मन्वया मय्य वृतः स्वयवरः, स
 दत्त कन्याया पित्रादिना मन्वे । दत्तस्वयवरा मरिष्यतीति भावः । 'दत्तस्वय
 वरा' इतिपद व्यानक्षान पधर्यात- जण तुम' इत्यादि । य गच्छ त्व स्वयमेव रा
 जान वा युवराज या मरिष्यसि, स खलु तत्र भर्ता मरिष्यति ' इतिक्रिया=उत्पु-
 फत्वा ताभिरिष्टाभिर्यावत्=गान्भिराश्रासपति, आश्राम्य प्रतिमिर्मर्जयति ॥ मू० १६ ।

मूलम्-तएण से दुवण् राया दूयं सदावेइ सदावित्ता एव
 वयासी-गच्छ ण तुम देवाणुप्पिया । वारवइ नयरि तत्थ ण
 तुम कण्ह वासुदेवं समुद्विजयपामोस्सखे दस दसारे वलदेव-
 पामुक्खे पचमहावीरे उग्गसेणपामोस्सखे सोलसरायसहस्से
 पज्जुण्णपामुक्खाओ अद्दधुट्ठाओ कुमारकोडीओ सवपामोस्खाओ

अज्जयाए सयवर विरयामि, अज्जयाए ण तुम दिग्ग सयवरा जण्ण
 तुम सयमेव राय वा जुवराय वा वरेहिसि से ण तव भत्तारे भविस्सइ
 त्ति कद्दु ताहिं इट्ठाहिं जाव आसासेइ, असासित्ता पडिविसज्जेइ)
 इस लिये हे पुत्रि ! मैं थोड़े ही दिनों में तुम्हारा स्वयवर करवाने
 वाला हूँ । तुम इन दिनों में दत्तस्वयवरा हो जाओगी, सो तुम जिस
 राजाको या युवराज को अपनी इच्छानुसार चरोगी वही तेरा भर्ता
 बन जायगा । इस तरह कहकर राजा ने अपनी पुत्री को इष्ट आदि
 विशेषणों वाली चाणी से आश्वासित किया और फिर आश्वासित
 करके उसे वहाँ से भेज दिया ॥ मू० १६ ॥

एवमप्यर्थ-त दु भ थया करेशे (त ण अह पुत्ता ! अज्जयाए सयवर विर
 यामि, अज्जयाए ण तुम दिग्गसयवरा जण्ण तुम सयमेव राय वा जुवराय
 वा वरेहिसी से ण तत्र भत्तार भविस्सइ, ति कद्दु ताहिं इट्ठाहिं जाव आसासेइ
 आसासित्ता पडिविसज्जेइ) हे पुत्रि ! थोडा दिवसोभा ज् दु तभारा भाटे
 स्वय वर करवानो छु त्तारे तु स्वय वरभा दत्त स्वय वरा थर्थ ज्शे ने राज
 के युवराजने तु तारी पस इगी आपशे तेज् ताशे पति थशे आ प्रभाणे
 कहीने राज्जे पोतानी पुत्रीने छष्ट वगेरे विशेषणोथी युक्त वथने। वडे
 आश्वासनथी आश्वासित करीने तेने त्याथी विहाय करी ॥ मत्र-१६ ॥

सट्टि दुइंतसाहस्सीओ वीरसेणपामोक्खाओ इक्कवीसं वीरपुरिस-
साहस्सीओ महसेणपामोक्खाओ छप्पन्नं वलवगसाहस्सीओ
अन्ने य वहवे राईसरतलवरमाडंविक्खोडुवियडब्भसिट्ठिसेणा-
वइसत्थवाहपभिइओ करयलपरिग्गहिय दसनह सिरसावत्त
अंजलि मत्थए कट्टु जएण विजएण वद्धावेहि वद्धावित्ता एव
वयाहि—एव खलु देवाणुप्पिया । कपिल्लपुरे नयरे दुवयस्स
रण्णो धूयाए चुल्लणीए देवीए अत्तयाए धट्टुज्जुणकुमारस्स
भगिणीए दोवईए रायवरकण्णाए सयवरे भविस्सइ त ण
तुब्भे देवाणुप्पिया । दुवयं राच अणुगिणहेमाणा अकालपरि-
हीणं चैव कपिल्लपुरे नयरे समोसरह, तएण से दूए करयल
जाव कट्टु दुवयस्स रण्णो एयमट्टु पडिसुणेति पडिसुणित्ता
जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता कोडुवियपुरिसे
सदावेइ सदावित्ता एव वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ।
चाउग्घंट आसरह जुत्तामेव उवट्टुवेह जाव उवट्टुवेति, उवट्टुवित्ता
तएण से दूए ण्हाए जाव अलकार० सरीरे चाउग्घंट आसरह
दुरुहइ दुरुहित्ता बहूहि पुरिसेहि सन्नद्ध जाव गहियाऽऽउह पह-
रणेहि सट्ठि सपरिवुडे कपिल्लपुर नयरं मज्झ मज्झेणं निग्गच्छइ
पचालजणवयस्स मज्झ मज्झेण जेणेव देसप्पते तेणेव उवाग-
च्छइ, सुरट्टाजणवयस्स मज्झमज्झेणं जेणेव वारवइ नयरी तेणेव
उवागच्छइ उवागच्छित्ता वारवइ नयरिं मज्झ मज्झेण अणुप-
विसइ अणुपविसित्ता जेणेव कण्हस्स वासुदेवस्स वाहिरिया

उवट्टाणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता चाउघंट आस-
 रहं ठयेइ ठवित्ता रहाओ पच्चोणइ पच्चोरुहिता नणुस्सणु-
 रापरिखित्ते पायविहारचारेणं जेणप कण्हं वासुदेवे तेणेव
 उवागच्छइ उवागच्छिता कण्हं वासुदेवे समुद्धविजयपामुक्खे
 य दस दसारे जाव बलवगसाहस्तीओ करयल तं चेव जाप
 समोसरह । तएण से कण्हं वासुदेवे तस्स दूयस्स अतिए
 एयमद्व सोच्चा निसम्म हट्ट जाव हियएतं दूय सक्को इ सम्मा-
 णेइ सम्माणित्ता पडिविसज्जेइ ॥ सू० १७ ॥

टीका— ' तएण से ' इत्यादि । ततश्चादनन्तर स दुपदो राजा दूत शब्द
 यति, शब्दयित्वा एवमरात्रीन्-गच्छ खलु त्व हे देवानुमिय । द्वारती=द्वारकां
 नगरीम्, तत्र खलु त्व कृष्ण वासुदेव, समुद्रविजयप्रमुखान् दश दशार्हीन्, बलदेव
 प्रमुखान् पञ्च महावीरान्, उग्रसेनप्रमुखान् षोडश राजसहस्राणि, प्रयुन्नप्रमुखाः
 अर्धचतुर्थी. कुमारकोटीः=प्रयुन्नप्रमुखान् सार्धत्रिंशोऽपिराजकुमारान्, साम्बप्रमुखाः
 पण्डितुर्दान्तसाहसी =साम्बप्रमुखान् पण्डितसहस्रदुर्दान्तान्, वीरसेनप्रमुखान् एक
 त्रिंशतिवीरपुरुषसाहसी =वीरसेनप्रमुखान् एकत्रिंशतिसहस्रवीरपुरुषान्, महासेन

' तएणं से दुवण ' इत्यादि ॥

टीकार्थ-(तएणं से दुवणं राया दूय सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी
 गच्छ ण तुम देवाणुप्पिया ! वारवइ नयरिं-तत्थण तुम कण्हं वासुदेव समु-
 द्दविजय पामोक्खे दसदसारे बलदेव पामोक्खे पच महावीरे उगसेन पामो
 क्खे सोलसरायसहस्से पज्जुणपामोक्खाओ अद्धुत्ताओ कुमारकोडीओ
 सबपामोक्खाओ सट्ठि दुद्धत साहस्तीओ वीरसेन पामोक्खाओ इक्करीसं

' तएण से दुवण ' इत्यादि—

टीकार्थ-(तएण से दुवणं राया दूय सहावेइ सहावित्ता एव वयासी-गच्छ ण
 तुम देवाणुप्पिया ! वारवइ नयरिं-तत्थण तुम कण्हं वासुदेवसमुद्ध विजयपामोक्खे
 दसदसारे वरुदेवपामोक्खे पच महावीरे उगसेनपामोक्खे सोलसरायसहस्से पज्जुण
 पामोक्खाओ अद्धुत्ताओ कुमारकोडीओ सबपामोक्खाओ सट्ठि दुद्धत साहस्तीओ वीर
 सेन पामोक्खाओ इक्करीस वीरपुरिससाहस्तीओ मत्त बलव

प्रमुखाः पट्टपञ्चाशत् बलवत्साहस्रीः=महासेनप्रमुखान् पट्टपञ्चाशत्सप्तममितबल
वतो राज्ञः, अन्याश्च गृह्णन् राजेश्वरतलवग्माडपिककौटुम्बिकेभ्यश्चेष्टिसेनापति सार्य-
वहप्रभृतीन् करतलपरिगृहीत दशनख शिर आवर्तमञ्जलि मस्तके कृत्वा जयेन विज-
येन=जयविजयशब्देन 'वद्धावेहि' वर्धय=अभिनन्दय वर्धयित्वा एव ब्रूहि-हे
देवानुप्रिया' । एष खलु काम्पिल्यपुरे नगरे द्रुपस्य राज्ञो दुहितुः=पुत्र्या, चुल्न्या
देव्या आत्मजाया वृष्ट्युन्नकुमारस्य भगिन्या', द्रौपद्या राजवरकन्यकाया स्वय

वीर पुरिसस्ताहस्सीभो महासेनपामोक्त्वाओ छप्पन्न बलवगसाहस्सी
ओ अन्नेय बहवे राई सरतलवरमाडवियकोडुंघियह्वभसेद्विसेणावह
सत्थवाहपभिइओ करयलपरिगहिय दसनह सिरसावत्त अजलिं
मत्थए कट्टु जण्ण विजण्ण वद्धावेहि वद्धावित्ता एव वयाहि) इत्त
द्रुपद राजाने अपने एक दूत को बुलाया और बुलाकर उससे ऐसा
कहा-देवानुप्रिय ! तुम द्वारका नगरीको जाओ वहा तुम कृष्ण पासुदेव
को, समुद्र विजय प्रमुख दश दशार्हों को, बलदेव प्रमुख पाच महावीरों
को, उग्रसेन प्रमुख सोलह हजार राजाओ को प्रद्युम्न प्रमुख ३॥)
साठे तीन करोड राजकुमारों को ६० हजार दुर्दान्त, साम्ब प्रमुखो
को २१ हजार वीरसेन प्रमुख वीरों को ५६ हजार महासेन प्रमुख
उलिष्ठ राजाओ को, तथा और भी अनेक राजेश्वर तलवर, माडपिक,
कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्यवाह आदिको को दोनों अपने
हाथो की दशनखो वाली अजलि बनाकर और उसे मरतक से घुमाकर
नमस्कार करना तथा "जय विजय" शब्दोच्चारण करते हुए उन्हें
बधाई देना-उनका अभिनन्दन करना। बधाई देकरके फिर उन से ऐसा

गसाहस्सीओ अन्ने य बहवे राईसरतलवरमाडवियकोडुंघियह्वभसेद्विसेणावहसत्थवाह
पभिइओ करयल परिगहिय दसनह सिरसावत्त अजलिं मत्थए कट्टु जण्ण विज
ण्ण वद्धावेहि, वद्धावित्ता एव वयाहि) त्थारपथी द्रुपद राज्ञे पोताना अज
इतने पोताओये। अने पोतावीने तेने कहुं डे डे देवानुप्रिय ! तमे द्वारका
नगरीमा जओ। त्या तमे कृष्णवासुदेवने, अजह्व प्रमुअ पाच महावीराने,
उग्रसेन प्रमुअ सोण इत्तर राज्ञेने, प्रद्युम्न प्रमुअ साठ त्रणु करेड राज
कुमाराने, ६० इत्तर दुर्दान्तसाअ प्रमुअने, २१ इत्तर वीरसेन प्रमुअ वीराने,
५६ इत्तर महासेन प्रमुअ अलिष्ठ राज्ञेने तेभए पीण पणु अथा गजेश्वर,
तलवर, माडपिक, कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सायवाह वगेदने पोताना
अने दश नपोवाणा छाथेनी अजलि अतावीने तेने मस्तके भूईने नमस्कार
करेने तथा 'जय विजय' शब्दोच्चारण करता अथाने तमे अभिनन्दित

उवट्टाणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता चाउघट आस-
 रहं ठवेइ ठवित्ता रहाओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहिता मणुस्सवणु-
 रापरिनिखत्ते पायविहारचारेणं जेणेव कण्हं वासुदेवं तेणेव
 उवागच्छइ उवागच्छिता कण्हं वासुदेवे समुद्विजयपामुक्खे
 थ दस दसारे जाव बलवगसाहस्सीओ कग्गल त चेव जाव
 समोसरह । तएण से कण्हं वासुदेवे तस्स दूयस्स अतिए
 एयमद्व सोच्चा निसम्म दट्ट जाव हियएत दूय सक्के इ सम्मा-
 णेइ सम्माणित्ता पडिविसज्जेइ ॥ सू० १७ ॥

टीका—‘ तएण से ’ इत्यादि । तस्साटनन्तर स द्रुपदो राजा दूत शब्द
 यति, शब्दयित्वा एमरादीत्-गच्छ खलु त्व दे देवानुमिय । द्वारपती=द्वारका
 नगरीम्, तत्र खलु त्व कृष्ण वासुदेव, समुद्विजयप्रमुखान् दश दशार्हान्, बलदेव
 प्रमुखान् पञ्च महावीरान्, उग्रसेनप्रमुखान् षोडश राजसहस्राणि, प्रयुन्नप्रमुखाः
 अर्धचतुर्थी. कुमारकोटीः=प्रयुन्नप्रमुखान् सार्धत्रिंशत्तिराराजकुमारान्, साम्बप्रमुखाः
 पण्डितदुर्दान्तमाहस्त्री.=साम्बप्रमुखान् पण्डितसहस्रदुर्दान्तान्, वीरसेनप्रमुखान् एक
 विंशतिवीरपुरुषमाहस्त्री=वीरसेनप्रमुखान् एकविंशतिसहस्रवीरपुरुषान्, महासेन

‘ तएण से दुवण ’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण से दुवण राया दूय सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी
 गच्छ ण तुम देवाणुप्पिया ! वारवइ नयरिं-तएण तुम कण्ह वासुदेव समु
 द्विजय पामोक्खे दसदसारे बलदेव पामोक्खे पच महावीरे उगसेन पामो
 क्खे सोलसरायसहस्से पज्जुणपामोक्खाओ अद्दुट्टाओ कुमारकोडीओ
 सबपामोक्खाओ सट्ठि दुद्धत साहस्सीओ वीरसेन पामोक्खाओ इक्कणीस

‘ तएण से दुवण ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण से दुवण राया दूय सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी-गच्छ ण
 तुम देवाणुप्पिया ! वारवइ नयरिं-तएण तुम कण्ह वासुदेवसमुद्विजयपामोक्खे
 दसदसारे बलदेवपामोक्खे पच महावीरे उगसेनपामोक्खे सोलसरायसहस्से पज्जुण
 पामोक्खाओ अद्दुट्टाओ कुमारकोडीओ सबपामोक्खाओ सट्ठि दुद्धत साहस्सीओ वीर
 सेन पामोक्खाओ इक्कणीस वीरपुरिससाहस्सीओ महासेनपामोक्खाओ छप्पन बलव

स्नातः यावत्-सर्वालङ्कारविभूषितशरीरश्चतुर्घण्टमश्वरथ 'दुरुहइ' दूरोहति-आरो-
 हति । दूरुह्य बहुभिः पुरुषैः कीदृशैः पुरुषैरित्याह-'सन्नद्ध जाव गहिया' इति
 अत्र यावत्-उद्देनेव गोध्यम्-सन्नद्धवद्ववभिमयकवपदि, उष्पीलियसरासनपट्टगेहिं,
 पिणद्धगेविज्जगमद्दाविद्धिमिलवरचिन्धपट्टेहिं, गहियाऽऽउहपरणेहिं इति । सन्नद्ध-
 वद्ववमितरुवचैः उत्पीडितशरासनपट्टकै, पिणद्धग्रैवेयकवद्वविद्धिमिलवरचिह्न-
 पट्टैः गृहीतायुधमहरणै, सन्नद्धाः सज्जीकृता, वद्धा'='कशाग्रन्धनेन सवद्धा,
 वर्मिता.=अङ्गे परिहिताः रुवचा यै स्ते सन्नद्धवद्ववमितरुवचास्तै, तथा-उत्पीडि-
 तशरासनपट्टकै. उत्पीडितानि=गुणारोपणेन वक्रीकृतानि शरासनपट्टानि धनुः
 प्रकाण्डानि यैस्ते उत्पीडितशरासनपट्टका रज्ज्वारोपणवक्रीकृतधनुर्वारिणस्तैः,

वह जहा अपना घर था वहाँ आया । वहा आकर उसने कौटुम्बिक
 पुरुषों को बुलाया बुलाकर उनसे ऐसा कहा हे देवानुप्रियों ! तुम लोग
 शीघ्र ही चार घटों से युक्त अश्वरथ को घोड़े जोतकर यहा ले आओ ।
 उन्होंने आज्ञानुसार ऐसा ही किया । वे चार घटा वाले उस रथ में
 घोड़े जोतकर उसे वहा ले आये (तएण से दूण ष्हाए जाव अलकार०
 सरीरे चाउग्घट आसरह दुरुहइ, दुरुहित्ता वहुहिं पुरिसेहिं सन्नद्ध जाव
 गहियाऽऽउहपहरणेहिं सिद्धि सपरिवुडे कपिलपुरनयर मञ्ज मञ्जे ण
 निग्गच्छइ) इस के बाद दूतने स्नान किया, यावत् अपने शरीर को
 समस्त अलकारों से विभूषित किया । बाद में वह उस चतुर्घट वाले
 अश्वरथ पर सवार हो गया । उस के साथ सजाकर अपने शरीर पर
 कवच पहिर रखा है ऐसा अनेक पुरुष थे जयापर घाण को आरोपित
 करने से वक्री भूत हुआ धनुष जिनके हाथों में है ऐसे अनेक धनुर्धारी

पोतानु धर इतु त्या आण्ये। त्या आवीने तेबु डौटु जिउ पुइधेने भेलाव्या
 अने भेलावीने तेभने कहु के डे देवानुप्रिय ! तमे सत्तरे आर घटडीओवाणे।
 अश्वरथ नेतरीने अर्ही आवे। डौटु जिउ पुइधेओ तेमज्ज कथुं आर घटडी
 ओवाणे। अश्वरथ नेतरीने त्या लधं आव्या। (तएण से दूण ष्हाए जाव
 अलकार० सरीरे चाउग्घट आसरह दुरुहइ, दुरुहित्ता वहुहिं पुरिसेहिं सन्नद्ध
 जाव गहियाऽऽउहपहरणे हिं सिद्धि सपरिवुडे कपिलपुरनयर मज्ज मञ्जेण
 निग्गच्छइ) त्यारभाइ इते स्नान कथुं यावत् पोताना शरीरने णधी ततना
 अलकारेथी गणुगार्थुं त्यारपथी ते इत चतुर्घटवाणा अश्वरथ उपर सवार
 थधं गये। ते इतनी नाये णभतरथी सुमज्ज थयेला धणु पुइधे इता
 अथवा-उपर णणु थदाववाथी वक थधं गयेला धनुषे नेभना हाथेमा छे

रसे भविष्यति, तत्=तस्मान् रात्रु यूय हे देवानुप्रियाः । द्रुपद् राजानमनुवृत्त
 'अकालपरिहीण चैव' कालचित्स्वरहितमेव काम्पिन्यपुरे नगरे समग्रगत, ततः
 खलु स दूतः करग्रलं यावत्-अत्रिं मन्त्रके कृत्वा द्रुपदस्य रात्रं प्तमर्थं प्रति
 शृणोति, प्रतिश्रुत्वा यैव स्वयं गृहं तत्रैवोपागच्छति उपागत्य कीदृश्विषयपुरुषान्
 शब्दयति शब्दयित्वा एवमत्रादीत्-गिरमेव भो देवानुप्रिया चतुर्थेष्ट=पत्राचतु
 ष्ठयुक्तम् अक्षरय युक्तमेवोपस्थापयत । यावत्-उपस्थापयति । ततः खलु स दूतः

कहना-(एव खलु देवानुप्रिया ! कपिलपुरे नगरे दुवयस्स रण्णो धूयाण
 चुल्लीणीए देवीए अत्तयाए धट्टज्जुणकुमारस्स भगिणीए दोवईए रायवर
 कण्णाए सयवरे भविस्सई, त ण तुव्भे देवानुप्रिया ! दुवय राय अणु
 गिण्हे माणा अकालपरिहीण चैव कपिलपुरे नगरे समोत्तरह) हे देवा
 नुप्रियो ! कपिलपुर नगर में द्रुपद् राजा की पुत्री, चुलनी देवी की
 आत्मजा, धृष्टद्युम्न कुमार की भगिनी राजवर कन्या द्रौपदी का स्वयवर
 होनेवाला है, इसलिये हे देवानुप्रियो ! आप लोग द्रुपद् राजाके ऊपर
 अनुग्रह करके बहुत ही शीघ्र कपिलपुर नगर में पधारे । (तण से
 दूए करग्रल जाव कद्दु दुवयस्स रण्णो एवमट्ट पडिसुण्णंति पडिसुणित्ता
 जेणेव सए गिह्हे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कोडुवियपुरिसे सहा-
 वेइ, सहावित्ता एव वयासी, सिप्पामेव भो देवानुप्रिया ! चाउग्घट
 आसरह जुत्तामेव उवट्टवेइ जाव उवट्टवेंति) दूतने द्रुपद् राजा के इस
 कथन की दोनों हाथ जोड़कर स्वीकार कर लिया । स्वीकार करके फिर

करने अखिनहित कथां पाह तमे तेओने आ प्रभाहे विनती करणे (एव
 खलु देवानुप्रिया ! कपिलपुरे नगरे दुवयस्स रण्णो धूयाण चुल्लीणीए देवीए
 अत्तयाए धट्टज्जुणकुमारस्य भगिणीए दोवईए रायवरकण्णाए सयवरे भविस्सई, त
 ण तुव्भे देवानुप्रिया ! दुवय राय अणुगिण्हेमाणा अकालपरिहीण चैव कपिल
 पुरे नगरे समोत्तरह) हे देवानुप्रियो ! कपिलपुर नगरमें द्रुपद् राजाकी पुत्री
 चुलनी देवीकी आत्मजा, धृष्टद्युम्नकुमारकी पाडेन राजवर कन्या द्रौपदीकी
 स्वयवर थवानो छे ओथी छे देवानुप्रियो ! तमे द्रुपद् राजा उपर कृपा करीने
 सत्तरे कपिलपुर नगरमें पधारे । (तण से दूए करग्रल जाव कद्दु दुवयस्स
 रण्णो एवमट्ट पडिसुण्णंति, पडिसुणित्ता जेणेव सए गिह्हे तेणेव उवागच्छइ, उवा
 गच्छित्ता कोडुवियपुरिसे सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी सिप्पामेव भो देवा
 नुप्रिया ! चाउग्घट आसरह जुत्तामेव उवट्टवेइ जाव उवट्टवेंति) द्रुपद् राजाकी
 आज्ञाने इते अने हाथ जोडीने स्वीकारी लीधी स्वीकार कथां ते अथा

स्नातः यावत्-सर्वालङ्कारविभूषितशरीरश्चतुर्घटमश्वरथ 'दुरुहइ' दूरोहित-आरो-
 हति । दूरुह्य बहुभिः पुरुषैः कीदृशैः पुरुषैरित्याह-'सन्नद्ध जाव गहिया' इति
 अत्र यावत्-उद्देनैव गोध्यम्-सन्नद्धवद्धवग्मियरूपएहिं, उष्पीलियसरासनपट्टगेहिं,
 पिणद्धगेविज्जगवद्धाविद्धविमलवरचिन्धपट्टेहिं, गहियाऽऽउहपरणेहिं इति । सन्नद्ध-
 वद्धवर्मितरुवचैः उत्पीडितशरासनपट्टकैः, पिणद्धग्रैवेयरुवद्धविद्धविमलवरचिह्न-
 पट्टैः गृहीतायुधप्रहरणैः, सन्नद्धा. सज्जीकृता, वद्धा = कशाग्रन्धनेन सन्नद्धा,
 वर्मिताः = भङ्गे परिहिताः रुवचा यै स्ते सन्नद्धवद्धवर्मितरुवचास्तैः, तथा-उत्पीडि-
 तशरासनपट्टकैः उत्पीडितानि = गुणारोपणेन वक्रीकृतानि शरासनपट्टकानि धनुः
 प्रकाण्डानि यैस्ते उत्पीडितशरासनपट्टका रज्ज्वारोपणवक्रीकृतधनुर्वारिणस्तैः,

वह जहा अपना घर था वहाँ आया । वहाँ आकर उसने कौटुम्बिक
 पुरुषों को बुलाया बुलाकर उनसे ऐसा कहा हे देवानुप्रियों ! तुम लोग
 शीघ्र ही चार घटों से युक्त अश्वरथ को घोड़े जोतकर गहा ले आओ ।
 उन्होंने आज्ञानुसार ऐसा ही किया । वे चार घटा वाले उस रथ में
 घोड़े जोतकर उसे गहा ले आये (तएण से दूण पहाए जाव अलकार०
 सरीरे चाउग्घट आसरह दुरुहइ, दुरुहत्ता बहूहिं पुरिसेहिं सन्नद्ध जाव
 गहियाऽऽउहपरणेहिं सिद्धिं सपरिवुडे कपिलपुरनयर मज्झ मज्जेण
 निग्गच्छइ) इस के बाद दूतने स्नान किया, यावत् अपने शरीर को
 समस्त अलकारों से विभूषित किया । बाद में वह उस चतुर्घट वाले
 अश्वरथ पर सवार हो गया । उस के साथ सजाकर अपने शरीर पर
 कवच पहिर रखा है ऐसा अनेक पुरुष थे ज्योपर बाण को आरोपित
 करने से वक्री भूत हुआ धनुष जिनके हाथों में हैं ऐसे अनेक धनुर्धारी

पोतानु धर इतु त्या आण्ये त्या आवीने तेष्णे औट्टु भिक् पुश्पोने भोलाण्य
 अने भोलावीने तेभने क्खु के डे देवानुप्रिय । तमे सत्तणे चार घट्टीओवाणे।
 अश्वरथ नेतरिने अर्ही आवे। औट्टु भिक् पुश्पोअे तेभण क्खुं चार घट्टी
 ओवाणे। अश्वरथ नेतरिने त्या लध आव्या (तएण से दूण पहाए जाव
 अलकार० सरीरे चाउग्घट आसरह दुरुहइ दुरुहत्ता बहूहिं पुरिसेहिं सन्नद्ध
 जाव गहियाऽऽउहपरणे हिं सिद्धिं सपरिवुडे कपिलपुरनयर मज्झ मज्जेण
 निग्गच्छइ) त्थारमाह इते स्नान क्खुं यावत् पोताना शरीरने णधी नततना
 अलकारोथी गणुगार्थुं त्थारपणी ते इत चतुर्घटवाणा अश्वरथ उपर सवार
 थध गये। ते इतनी नाये णभतरथी सुमण्ण थयेला धण्णा पुश्पो इता
 प्रत्यया उपर णाणु यदाववाथी वक थध गयेला धनुषो नेमना डायोमा छे

उरो भविष्यति, तन्=तस्मान् राहु युय हे देवानुप्रियाः । इपद राजानमनुग्रहन्व
 ' अकालपरिहीण चैव ' कात्रवित्स्वरहितमेव काम्पिल्यपुरे नगरे समवसरत, ततः
 खलु स दूतः करतल० यायन्-अग्रलि मन्त्रके कृत्वा इपदस्य राज गतमर्थं प्रति
 शृणोति, प्रतिश्रुत्व यत्रैव स्वय गृह तत्रैवोपाग-उति उपागत्य कीदृमिकपुरुषान्
 शब्दयति शब्दयित्वा परमवादीत्-भिषगेव भो देवानुप्रिया, चतुर्षट्=पञ्चाक्षु
 ष्टययुक्तम् अश्वरवं युक्तमेवोपस्थापयत । यायन्-उपस्थापयति । तत खलु स दूत.

कहना-(एव खलु देवानुप्रिया ! कपिलपुरे नगरे दुवयस्म रण्णो घूयाए चुलणीए देवीए
 अत्तयाए धट्टज्जुणकुमारस्म भगिणीए दोउईए रायवर कण्णाए सयवरे भविस्सइ, त ण तुम्हे देवानुप्रिया । दुवय राय अणु
 गिण्हे माणा अकालपरिहीण चैव कपिलपुरे नगरे समोसरह) हे देवा
 नुप्रियो ! कापिल्यपुर नगर में इपद राजा की पुत्री, चुलनी देवी की
 आत्मजा, धृष्टद्युम्न कुमार की भगिनी राजपर कन्या द्रौपदी का स्वयवर
 होनेवाला है, इसलिये हे देवानुप्रियो ! आप लोग इपद राजाके ऊपर
 अनुग्रह करके बहुत ही शीघ्र कापिल्यपुर नगर में पधारें । (तएण से
 दूए करयल जाव कइइ दुवयस्स रण्णो एयमट्ट पडिसुणेंति पडिसुणित्ता
 जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कीडुवियपुरिसे सहा-
 वेइ, सहावित्ता एव वयासी, खिप्पामेव भो देवानुप्रिया ! चाउग्घट
 आसरह जुत्तामेव उवट्टवेइ जाव उवट्टवेति) दूतने इपद राजा के इस
 कथन को दोनों हाथ जोड़कर स्वीकार कर लिया । स्वीकार करके फिर

करने अलिखित कथां पाठ तमे तेअने आ प्रभाण्णे विनती करणे (एव
 खलु देवानुप्रिया ! कपिलपुरे नगरे दुवयस्स रण्णो घूयाए चुलणीए देवीए
 अत्तयाए धट्टज्जुणकुमारस्य भगिणीए दोउईए रायवरकण्णाए सयवरे भविस्सइ, त
 ण तुम्हे देवानुप्रिया । दुवय राय अणुगिण्हेमाणा अकालपरिहीण चैव कपिल
 पुरे नगरे समोसरह) हे देवानुप्रियो ! कापिल्यपुर नगरमा इपद राजनी पुत्री
 चुलनी देवीनी आत्मजा, धृष्टद्युम्नकुमारनी गडिन् राजवर कन्या द्रौपदीनी
 स्वयवर थवानो छे अथी हे देवानुप्रियो । तमे इपद राज उपर कृपा करीने
 सत्तरे कापिल्य नगरमा पधारो (तएण से दूए करयल जाव कइइ दुवयस्स
 रण्णो एयमट्ट पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवा
 गच्छित्ता कीडु वियपुरिसे सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी खिप्पामेव भो देवा
 नुप्रिया ! चाउग्घट आसरह जुत्तामेव उवट्टवेइ जाव उवट्टवेति) इपद राजनी
 आज्ञाने इते ण ने हाथ नेडीने स्वीकारी वीधी स्वीकार कथां पाठ ते अथा

वाहिरुपरस्थानशाला-आस्थानमण्डपः, तत्रौपागच्छति, उपागत्य चातुर्घण्टमश्वरथ
स्थापयति, स्थापयित्वा 'रहाओ' रथात् 'पञ्चोरुहइ' प्रत्यवरोहति-प्रत्यवत्-
रति, प्रत्यवस्थ 'मनुस्सवग्गुरापारिक्खित्ते' मनुष्यवागुरापारिक्षित्तः=मनुष्यसमूह
परिवृतः, स दूतः पादविहारचारेण=पादाभ्यां गमनेन यत्रैव कृष्णवासुदेवस्तत्रैवो
पागच्छति, उपगत्य कृष्ण वासुदेव ममुद्रविजयप्रमुखश्च दशदशार्हान् यावत्
वलवगसाहस्सी, अस्तपरिगृहीतदशनख शिरावर्त मस्तके अञ्जलिं कृत्वा
एवमवादीत्-'त चेव' तदेव-अत्र पूर्वोक्तमेव वर्णनं योऽयम् यावत्-समसंरत

वासुदेवस्त वाहिरिया उवट्टाण साला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
चाउवट आसरह ठवेइ, ठवित्ता रहाओ पञ्चोरुहइ, पञ्चोरुहित्ता
मणुस्सवग्गुरापारिक्खित्ते पायविहारचारेण जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव
उवागच्छइ) वहा आकर द्वारावती नगरी में बीचोंबीच के मार्ग से
होता हुआ प्रविष्ट हो कर वह जहां कृष्ण वासुदेव की वाहिर में उप
स्थानशाला-सभामण्डप या वहा गया । वहां पहुंचकर उसने अपने चार
घटावाले अश्वरथ को खड़ा कर दिया । रोक दिया-उसके मकते ही वह
उससे नीचे उतरा । उतर कर वह मनुष्योंके समूहसे परिक्षित (युक्त) हो
कर पैदल ही जहा कृष्ण वासुदेव थे वहा गया । (उवागच्छित्ता कण्ह
वासुदेवममुद्रविजयपामुक्खे य दस दसारे जाय वलवगसाहस्सीओ
करयल त चेव जाव नमोसरह) वहां जा करके उसने कृष्ण वासुदेव को
समुद्रविजय प्रमुख दश दशार्होंको यावत् महासेन प्रमुख २६, हजार व-
लिष्ट राजाओंको दोनो हाथों की अजलि कर और उसे मस्तक पर रखकर

वैरस्त वाहिरिया उवाट्टाणमाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउवट आस
रह ठवेइ, ठवित्ता रहाओ पञ्चोरुहइ पञ्चोरुहित्ता मणुस्सवग्गुरापारिक्खित्ते पाय
विहारचारेण जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ) त्या आनीने ते द्वारा
वती नगरीना मध्यमार्ग थधने नगरमा प्रविष्ट थये अने त्थारपणी ते न्थ्या
कृष्ण-वासुदेवनी भाह्य उपस्थानशाणा-दीवाने आभ-(मत्ता म ७५) छती त्या
गथे त्या पडोळीने तेणे पोताना थार घट्टीओवाणा रथने ओभो राभ्ये
अने पोते नीचे उतर्यो उतर्यो पणी ते पोताना नोकरो-सेवकनी साथे न्था
कृष्ण-वासुदेव छता त्या गथे । (उवागच्छित्ता कण्ह वासुदेवसमुद्रविजयपामुक्खे
य दस दसारे जाय वलवगसाहस्सीओ करयल त चेव जाव नमोसरह) त्या
जधने तेणे कृष्ण-वासुदेवने समुद्र विजय प्रमुख दशार्होने यावत् महासेन
प्रमुख २६ हजार अलिष्ट राजाओने थने छायनी अजलि भतापीने तेने

तथा-पिनद्वैत्रेयवत्तद्वारिडिमलसिद्धिपट्टे - पिनदानि - परिश्रुतानि त्रैत्रेय
 काणि-कण्ठभूषणानि यै स्ते तथा, यद्. = भारोपित सयोनितः आविद्ध' = मस्तकं
 परिश्रुत. त्रिमलः = स्वच्छ. त्रः त्रिपदः - स्वपक्षोपधकचिह्न : यैस्ते तथा,
 ततो द्विपदरुमधारय'. तथा-शुद्धीनायुधमार्गं. = आयुधानि अस्त्राणि, महारणानि-
 शस्त्राणि शुद्धीवानि यैस्ते शुद्धीतायुधमहारणा यै, सार्धं संपरिश्रुतः काष्पिन्यपूर
 नगर मध्यमभयेन मध्यमार्गेण निर्गच्छति, पञ्चालजनपदस्य म'यमभयन यत्रैव
 ' देसप्यते ' देशप्रान्त-देशसीमा तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य 'सुरद्वाराजणवयस्य'
 सौराष्ट्रजनपदस्य म'यमभयेन यत्रैव द्वारवती नगरी तत्रैवोपागच्छति उपागत्य
 द्वारवती नगरीं मध्यमभयेन अनुप्रविशति, अनुप्रविश्य यत्रैव ऋणाय वानुदेवस्य

पुरुष थे, जिन्होंने गले में आभूषणों को पहिरकर ले है और मस्तक के
 ऊपर स्वच्छ, स्वपक्षपोधक चिह्न धारण किया है ऐसे अनेक व्यक्ति
 थे। तथा आयुध एवं प्रहरणों को लेकर अनेक सैनिक जन इसके
 आसपास हो कर चल रहे थे। सो वह दूत इन सब के साथ २ उस
 काष्पिन्यपुर नगर के बीचोंबीच से लेकर निकला। (पञ्चालजनवयस्य
 मज्ज मज्जेण जेणेव देसप्यते तेणेव उवागच्छइ-सुरद्वारा जणवयस्य मज्ज
 मज्जेण जेणेव द्वारवड नगरी तेणेव उवागच्छइ) चलते २ वह पाचाल
 जनपदके बीचोंबीच से होता हुआ जहा पर अपने देशकी सीमा का
 अन्त था वहा आया। वहा आकर वह सौराष्ट्र देशके बीचसे निक
 लता हुआ जहा द्वारावती नगरी थी वहा आया-(उवागच्छित्तो वार
 वड नगरी मज्ज मज्जेण अणुपविसइ, अणुपविसित्ता जेणेव कण्हस्स

येवा धव्वा धनुर्धरो तेनी साथे उता, जेजेजे गणामा आभूषणो पडेरला
 अने मस्तक उपर स्वच्छ स्वपक्ष पोधक चिह्न पटो धाधी शभेया येवा पपु
 अनेक पुत्रयो तेनी साथे उता आयुध अने प्रहरणोने उथकीने पणु धव्वा सैनिको
 तेनी अने आबुजे आली रक्षा उता आ रीते ते इत तेजे अधानी साथे
 काष्पिन्यपुर नगरी वर्ये थधने नीकये (पचाल जणवयस्य मज्ज मज्जेण
 जेणेव देसप्यते तेणेव उवागच्छइ सुरद्वारा जणवयस्य मज्ज मज्जेण जेणेव द्वारवड नगरी
 तेणेव उवागच्छइ) आभ पोतानी यात्रा पूरी करीने ते इत पाचाल जनपदनी
 वर्येवर्ये नया पोताना देशनी उद पूरी थती उती त्या आये। त्या आधीने
 ते सौराष्ट्र देशनी वर्ये थधने नया द्वारावती नगरी उती त्या आये। (उवाग
 च्छित्ता वारवड, नगरिं मज्ज मज्जेण, अणुपविसइ, ७

वाहिस्पत्यनशाला-आरथानमण्डपः, तत्रौपागच्छति, उपागत्य चातुर्घण्टमश्वरथं
स्थापयति, स्थापयित्वा 'रहाओ' रथात् 'पचोरुहइ' मत्पयरोहति-प्रन्यवत्त-
रति, प्रत्यवन्त्य 'मनुस्सवग्गुरापारिक्खित्ते' मनुष्यवागुरापारिक्खित्तः=मनुष्यसमूह
परिवृतः, स दूतः पादविहारचारेण=पादाभ्यां गमनेन यत्रैव कृष्णवासुदेवस्तत्रौ-
पागच्छति, उपगत्य कृष्ण वासुदेव समुद्रविजयप्रमुखाश्च दशदशार्हान् यावत्
वलवत्साहसीः, वरतत्परिशृष्टीतदशनख शिरआवर्त मस्तके अजलिं कृत्वा
एवमादीत्-'त चेव' तदेव-अत्र पूर्वोक्तमेव वर्णनं गो-न्यम् यावत्-सभवत्सरत्

वासुदेवस्स वाहिरिया उवट्टाण साला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
चाउवट आसरह ठवेइ, ठवित्ता रहाओ पचोरुहइ, पचोरुहत्ता
मणुस्सवग्गुरापारिक्खित्ते पायविहारचारेण जेणेव कण्ठे वासुदेवे तेणेव
उवागच्छइ) वहा आकर धारावती नगरी में बीचोंबीच के मार्ग से
होता हुआ प्रविष्ट हो कर वह जहा कृष्ण वासुदेव की वाहिर में उप-
स्थानशाला-सभामण्डप या वहाँ गया । वहाँ पहुँचकर उसने अपने चार
घटावाले अश्वरथ को खडा कर दिया । रोक दिया-उसके मकते ही वह
उससे नीचे उतरा । उतर कर वह मनुष्योंके समूहसे परिक्षित (युक्त) हो
कर पैदल ही जहाँ कृष्ण वासुदेव थे वहा गया । (उवागच्छित्ता कण्ठे
वासुदेवसमुद्रविजयपामुक्खे य दम दसारे जाव वलवगसाहसीओ
करयल त चेव जाव नमोसरह) वहाँ जा करके उसने कृष्ण वासुदेव को
समुद्रविजय प्रमुख दश दशार्होंको यावत् महासेन प्रमुख ५६, हजार ब-
लिष्ठ राजाओंको दोनों हाथों की अजलि कर और उसे मस्तक पर रखकर

देवस्स वाहिरिया उवाट्टाणमाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउवट आम-
रह ठवेइ, ठवित्ता रहाओ पचोरुहइ पचोरुहत्ता मणुस्सवग्गुरापारिक्खित्ते पाय
विहारचारेण जेणेव कण्ठे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ) त्या आनीने ते धारा
वती नगरीना मध्यभागे थधने नगरमा प्रविष्ट थये अने त्यारपछी ते न्या
दृष्यु-वासुदेवनी आद्य उपस्थानशाणा-दीवाने आभ-(सभा मंडप) इती त्या
गथे त्या पडोथीने तेहे पोताना आर घट्टीओवाणा रथने ओलो राभ्ये
अने पोते नीचे उतये उतयां पछी ते पोताना नोकरे-नेवकनी माथे न्या
दृष्यु-वासुदेव इता त्या गथे (उवागच्छित्ता कण्ठे वासुदेवसमुद्रविजयपामुक्खे
य दम दसारे जाव वलवगसाहसीओ करयल त चेव जाव नमोसरह) त्या
वधने तेहे दृष्यु-वासुदेवने समुद्र विजय प्रमुख दशार्होने यावत् महासेन
असुभ ५६ हजार बलिष्ठ राजाओने पने हाथनी अजलि अताथीने तेने

इति पर्यन्तम्, अयमर्थः—काम्पिल्यपुरनगरे द्रुपदस्य गङ्गा पुत्र्या द्रौपद्याः स्वयंवरो भविष्यति, तस्माद् गृह्य द्रुपदः राजानमनुग्रहन्तं कालस्त्रिम्बरहितं काम्पिल्यपुरे नगरे समागन्तुं तैति सा दूतः प्रोक्तवान् इति ।

ततः खलु स कृष्णो वासुदेवस्य दूतम्यान्तिके पतमर्थं श्रुत्वा निश्चयं हृष्टतुष्टः यावत्-दर्पश्रेण विसर्पः हृदयस्त दूतं गत्वाम्पति तथा समानपति, सत्कार्यं समान्य प्रतिविमर्जयति ॥ सू० १७ ॥

मूलम्—तएण से कण्हे वासुदेवे कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव वयासी-गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया । सभाए सुहम्माए सामुदाइय भेरिं तालेहि, तएण से कोडुवियपुरिसे कर यल जाव कणहस्स वासुदेवस्स एयमट्ट पडिसुणेइ पडिसुणित्ता

नमस्कार क्रिया । यहा पर 'एव खलु देवाणुप्पिया,' से लेकर समोसरह "तक्का पूर्वोक्त पाठ इसके द्वारा कहा गया लगा लेना चाहिये—जिसका तात्पर्य यह है कि काम्पिल्यपुर नगर में द्रुपद राजा की पुत्री द्रौपदी का स्वयंवर होने वाला है सो आपलोग द्रुपद राजा के ऊपर कृपा कर के उसमें शीघ्र पधारें । इस प्रकार (तएण से कण्हे वासुदेवे तस्स दूयस्स अतिए एयमट्ट सोच्चा निसम्म हट्ट जाव हियण त दूय सक्कारेइ सम्मा णेइ सक्कारित्ता सम्माणित्ता पडिविसज्जेइ) कृष्ण वासुदेव ने उस दूत के मुखसे जय इस समाचार को सुना-तो वे खुनकर और उसे हृदयमें धारण कर बहुत ही अधिक हर्षित एवं सतुष्ट हुए । दूतका उन्होंने सत्कार किया, सम्मान किया । बादमें उसे वहा से विसर्जित कर दिया ॥ सू० १७ ॥

भस्तके भूझीने नमस्कार कर्था अर्धी ' एव खलु देवाणुप्पिया ' थी समोसरह ' सुधीने पाठ इत वडे कडेवाभा आवेवो छे ज्येभ सभल्ले वेवु ज्येधज्ये तेनी भतल्ले ज्ये छे के काम्पिल्यपुर नगरभा द्रुपद राजनी पुत्री द्रौपदीने स्वयंवर थवानो छे तो आप सौ द्रुपद राजा उपर भडेरणानी करीने तेभा सात्वरे पधारो आ रीते (तएण से कण्हे वासुदेवे तस्स दूयस्स अतिए एयमट्ट सोच्चा निसम्म हट्ट जाव हियण त दूय सक्कारेइ सम्माणेइ सक्कारित्ता सम्माणित्ता पडिविसज्जेइ) कृष्ण-वासुदेवे इतना सुभथी आ नतना सभाथारे साल्लथा थारे सालणीने अने तेज्जोने षरेअर हृदयभा धारण करीने अत्यंत हर्षित तेभल्ले सतुष्ट थर्धने तेभल्ले इतने सत्कार तेभल्ले सम्मान कर्था थारपथी तेभल्ले इतने विहाय कथो ॥ सूत्र १७ ॥

जेणेव सभाए सुहम्भाए सामुदाइया भेरी तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छिता सामुदाइय भेरि महया महया सदेणं तालेइ
 तएणं ताए सामुदाइयाए भेरीए तालियाए समाणीए समु-
 द्दविजयपामोक्खा दस दसारा जाव महसेणपामुक्खाओ
 छप्पणं वलवगसाहस्तीओ पहाया विभूसिया जहा विभव
 इड्डिसकारसमुदएणं अप्पेगइया जाव पायविहारचारेण
 जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छति उवागच्छिता कर-
 यल जाव कण्हे वासुदेवे जएणं विजएणं वद्धावेति, तएणं
 से कण्हे वासुदेवे कोडुवियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एव वया-
 सी-खिप्पामेव भो । देवाणुप्पिया । अभिसेक्क हत्थिरयण
 पडिकप्पेह हयगय जाव पच्चपिणंति, तएणंसे कण्हे वासुदेवे
 जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता समुत्तजा-
 लाकुलाभिरामे जाव अंजणगिरिकूडसन्निभ गयवइ नरवई
 दुरूढे, तएणं से कण्हे वासुदेवे समुद्दविजयपामुक्खेहिदसहि
 दसारेहि जाव अणंगसेणापामुक्खेहि अणेगाहि गणियासाह-
 स्तीहि सद्धि सपरिवुडे सव्विड्डीए जाव रवेण वारवइनयरि
 मज्झंमज्झेण निग्गच्छइ निग्गच्छिता सुरट्टाजणवयस्स मज्झं
 मज्झेण जेणेव देसप्पते तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता
 पंचालजणवयस्स मज्झंमज्झेण जेणेव कंपिल्लपुरे नयरे
 तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥ सू० १८ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । नतं गल्लु म ऋणो वासुदेवः कौटुम्बिक
 पुरुष शब्दयति, गच्छयित्वा पत्रमार्दीन-गच्छयित्वा त्व हे देवानुप्रिय । समाया
 सुधर्माया ‘सामुदाइय’ सामुदायिकि भेरि ताडय, नतः गल्लु स कौटुम्बिक
 पुरुष करतत्तं वासु-मस्तकेऽत्रिं ऋणा गाम् ऋणस्य वासुदेवस्वैतमर्थं
 मतिश्रुणोति, मतिश्रुत्य यत्रैव मभाया सुधर्माया ‘सामुदाइया’ सामुदायिकी
 भेरी तत्रैवोपागच्छति, उपागन्त्य तासुदायिणी भेरी महया २ शब्देन ताडयति,
 येन महाशब्दो भवति, तथा भेरी ताडयति स्मे’ इत्यर्थः, ततस्तदनन्तर खलु तस्या

‘तएण से कण्हे वासुदेवे’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण इसके बाद (से कण्हे वासुदेवे) उन कृष्ण वासुदेवने
 (कौटुम्बियपुरिस सहावेइ) अपने कौटुम्बिक पुरुष को बुलाया, बुला
 कर (एव वयासी) उनसे ऐसा कहा- (गच्छह ण तुम देवाणुप्पिया !
 सभाए सुहम्माए सामुदाइय भेरिं तालेहि) हे देवानुप्रिय तुम सुधर्मा
 ममामें जाओ और वहा जाकर सामुदाय की भेरी को बजाओ (तएण
 से कौटुम्बिय पुरिसे करयल जाव कण्हस्स वासुदेवस्स पयमदु पडि
 सुणेइ, पडिसुणित्ता जेणेव सभाए सुहम्माए सामुदाइया भेरी तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सामुदाइय भेरिं महया २ सहेण तालेइ) इस
 प्रकार की कृष्ण वासुदेव की आज्ञा को उस पुरुष ने बड़े विनय के साथ
 अपने दोनों हाथों को मस्तक पर रखकर स्वीकार कर लिया-और
 स्वीकार करके फिर वह सुधर्मा सभा मे जहा वह सामुदायिकी भेरी थी
 वहा आया । वहा आकर उसने उस सामुदायिकी भेरी को इसतरह से

‘तएण से कण्हे वासुदेवे’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारपणी (से कण्हे वासुदेवे) ते कृष्ण-वासुदेवे (कौटुम्बिय
 पुरिस सहावेइ) पौताना कौटुम्बिक पुरोधेने ओलाव्या अने ओलावीने (एव
 वयासी) तेभने आ प्रभाण्णे कल्लु के- (गच्छह ण तुम देवाणुप्पिया ! सभाए
 सुहम्माए सामुदाइय भेरिं तालेहि) हे देवानुप्रिय ! तभे सुधर्मा सभाया जण्णे
 अने त्या जण्णे सामुदायिकी भेरी वगाडे (तएण से कौटुम्बियपुरिसे कर
 यल जाव कण्हस्स वासुदेवस्स पयमदु पडिसुणेइ पडिसुणित्ता जेणेव सभाए
 सुहम्माए सामुदाइया भेरी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सामुदाइय भेरिं महया २
 सहेण तालेइ) मतनी कृष्ण-वासुदेवनी आज्ञाने ते पुरवे पूणज नअ
 पण्णे अने भूमीने स्वीकारी वीधी, स्वीकार कर्था पणी ते त्याधी
 न्या सुधर्मा भेरी उनी त्या जण्णे तेण्णे भोटो अवाज
 थाय वगाडी (तएण ताए भेरीए

सामुदायिक्या भेर्या/ताडिताया सत्या समुद्रविजयप्रमुखा दश दशार्हा यावत्-
महासेन प्रमुखा पट्टपञ्चाशद्वलवत्साहस्रद्याः=पट्टपञ्चाशत्-सहस्रप्रमिता बलवन्तो
राजानः स्नाता यावद्-सर्वालकारविभूषिता यथाविभवर्द्धिसत्कारसमुदयेन
'अप्येगइया' अप्येके-यावद्=केचिद् हयारूढा=भ्रवारूढाः केचिद् गजारूढाः,
केचिद् रथारूढा, केचिद् पादविहारचारेण यत्रैव कृष्णो वासुदेवस्तत्रैवोपाग-
च्छति, उपागत्य करतल० यावत् कृष्ण वासुदेव जयेन विजयेन=जयविजय
शब्देन वर्धयन्ति । ततः खलु कृष्णो वासुदेव कौटुम्भिकपुरुषान् शब्दयति, शब्द-
यित्वा एवमवादीन्-भो देवानुप्रियाः ! क्षिप्रमेव 'अभिसेकं' आभिषेक्य गज

बडे तल से बजायी कि जिससे उससे बड़ी भारी आवाज निकली
(तएण ताए सामुदाइयाए भेरीए तालियाण समाणीए समुद्रविजय
पामोःखा दस दसारा जाव महासेण पामुक्खाओ छप्पण बलवगसाह
स्सीओ ण्हाया जाव विभूसिया जहा विभव इड्डी सक्कारसमुदएण
अत्थेगइया जाव पायविहारचारेण जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवाग
च्छति) इस तरह उस सामुयिकी भेरी के बजने पर समुद्रविजय आदि
दश दशार्ही ने यावत् ५६ हजार महासेन प्रमुख बलिष्ठ राजाओ ने
स्नान किया । यावत् समस्त अलकारों से विभूषित होकर एव सबके
सब अपने विभव ऋद्धि और सत्कार के अनुसार जहा कृष्ण वासुदेव
थे वहा आये । इनमे कितनेक घोडों पर कितनेक हाथियों पर कितनक
रथों पर बैठकर आये और कितनेक पैदल ही चलकर आये (उवाग-
च्छित्ता करयल जाव कण्ह वासुदेव जएण विजएण बद्धावेति, तएणं से
कण्हे वासुदेवे कोडुमिय पुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव वयासी, खिप्पामेव

तालियाए समाणोए समुद्रविजयपामोःखा दस दसारा जाव महासेण पामु
ण्खाओ छप्पण बलवगसाहस्सीओ ण्हाया जाव विभूसिया जहा विभव इड्डी
सक्कारसमुदएण अप्येगइया जाव पायविहारचारेण जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव
उवागच्छति) आ रीते ते सामुयिकी भेरी वगाडवाभा आवी त्यारे समुद्र विजय
वगेरे दश दशार्होये यावत् ५६ हजार महासेन प्रमुख बलिष्ठ राजाओये
स्नान उरुं यावत् तेओ सबे समस्त अन्नकारोथी सुसन्न थडने पोताना
विसव अने सत्कारनी साथे न्था कृष्ण-वासुदेव उता त्या गमा आभा डेटलाड
घोडाओ ७पर, डेटलाड हाथीओ ७पर, डेटलाड रथे ७पर अवार थडने त्या
पडोअ्या उता ते डेटलाड पगे आवीने न कृष्ण-वासुदेवनी पामे ६७२ तथा
उता (उवागच्छित्ता करयल जाव कण्ह वासुदेव जएण विजएण बद्धावेति
तएण से कण्हे वासुदेवे कोडुमियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव वयासी खिप्पा

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततः गउ म ऋणो वासुदेवः कौटुम्बिक
 पुरुष शब्दयति, शब्दयित्वा एवमसादीन्-गउ गउ स्व णं देवानुप्रिय । समाया
 सुधर्माया ‘सामुदाइय’ सामुदायिकि भेरि ताडय, ततः गउ म कौटुम्बिक
 पुरुष कस्तउ० यावद्-मस्तकउज्जि ऋणा गात् ऋणस्य वासुदेवस्यतमर्थ
 पतिश्रुणोति, पतिश्रुत्य यत्रैव समाया सुधर्माया ‘सामुदाइया’ सामुदायिकी
 भेरी तत्रैवोपागच्छति, उपागन्व गा मुदायिकी भेरी महया २ शब्दन ताडयति,
 येन महाशब्दो भवति, तथा भेरी ताडयति स्मै’ त्यर्थः, ततस्तदनन्तरं सउ तस्या

‘तएण से कण्हे वासुदेवे’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण इसके बाद (से कण्हे वासुदेवे) उन कृष्ण वासुदेवने
 (कौटुम्बियपुरिस सहावेइ) अपने कौटुम्बिक पुरुष को बुलाया, बुला
 कर (एव बयासी) उनसे ऐसा कहा- (गच्छउ ण तुम देवानुप्रिया !
 सभाण सुहम्माण सामुदाइय भेरिं तालेहि) हे देवानुप्रिय तुम सुधर्मा
 समामें जाओ और वहा जाकर सामुदाय की भेरी को बजाओ (तएण
 से कौटुम्बिय पुरिसे करयल जाव कण्हस्स वासुदेवस्स एयमदु पडि
 सुणेइ, पडिसुणित्ता जेणेव ‘सभाण सुहम्माण सामुदाइया भेरी तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सामुदाइय भेरिं महया २ सहेण तालेइ) इस
 प्रकार की कृष्ण वासुदेव की आज्ञा को उस पुरुष ने बड़े विनय के साथ
 अपने दोनों हाथों को मस्तक पर रखकर स्वीकार कर लिया-और
 स्वीकार करके फिर वह सुधर्मा सभा में जहा वह सामुदायिकी भेरी थी
 वहा आया । वहा आकर उसने उस सामुदायिकी भेरी को इसतरह से

‘तएण से कण्हे वासुदेवे’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारपणी (से कण्हे वासुदेवे) ते कृष्ण-वासुदेवे (कौटुम्बिय
 पुरिस सहावेइ) पोताना कौटुम्बिक पुरुषेने जोलाव्वा अने जोलावीने (एव
 बयासी) तेभने आ प्रभाणे कहुं के- (गच्छउ ण तुम देवानुप्रिया ! सभाण
 सुहम्माण सामुदाइय भेरिं तालेहि) हे देवानुप्रिय । तमे सुधर्मा सभाभा जग्गे
 अने त्या जग्गेने सामुदायिकी भेरी वगाओ (तएण से कौटुम्बियपुरिसे कर
 यल जाव कण्हस्स वासुदेवस्स एयमदु पडिसुणेइ पडिसुणित्ता जेणेव सभाण
 सुहम्माण सामुदाइया भेरी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सामुदाइय भेरिं महया २
 सहेण तालेइ) आ जतनी कृष्ण-वासुदेवनी आज्ञाने ते पुरुषे पूज्य नअ
 पणे अने जाथेने मस्तके भूषिने स्वीकारी लीधी, स्वीकार क्यो पणी ते त्याधी
 न्था सुधर्मा सभाभा सामुदायिकी भेरी उती त्या जग्गेने तेणे मोटो अवाज
 थाय तेम ते सामुदायिकी भेरीने वगाडी (तएण ताए भेरीय

वासुदेव समुद्रविजयप्रमुखैर्दशार्है र्यावत् अनङ्गसेनाप्रमुख्वाभिरनेवाभिर्गणिका साहस्त्रीभिः सार्धं सपरिवृतः सर्वद्वर्था=छत्रादिराजचिह्नरूपया यावत्-शङ्खपणवपटहभेर्यादिरवेण द्वारवती नगर्या मध्यमध्येन=निर्गच्छति, निगत्य सौराष्ट्रजनपदस्य मध्यमध्येन यत्रैव देशप्रान्त-देशमीमा तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य पञ्चालजनपदस्य मध्यमध्येन यत्रैव शम्पित्यपुर नगर तत्रैव प्राधारयद् गमनाय= गतु प्रवृत्तः ॥ सू०१८ ॥

कृष्ण वासुदेव जहा स्नान घर था वहा गये-वहा जाकर उन्होने मुक्ताओं सहित गवाक्षो से गुन्दर उम स्नान घर में स्नान किया-स्नान करके फिर सर्व अलकारो से विभूषित होकर वे नरपति अजन गिरि के शिखर जैसे-विशाल कृष्णवर्ण वाले गजपति पर आरूढ हो गये । (तर्ण से कण्ठे वासुदेवे समुद्रविजयपामोक्खेहिं दसहिं दसारेहिं जाव अणग सेणा पामुक्खेहिं अणेगाहिं गणिया साहस्त्रीहिं सद्धि सपरिवुडे सव्व ड्डीए जाव रवेण दारवडनयरिं मञ्ज मज्जेण निग्गच्छइ, निग्गच्छिता सुरट्टा जणवयस्स मञ्ज मज्जेण जेणेव देसप्पते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता पचाल जणवयस्स मञ्ज मज्जेण जेणेव कपिल्लपुरे नयरे तेणेव पहारेत्त गमणाण) आरूढ होकर वे कृष्ण वासुदेव समुद्र विजय आदि दश दशार्हो यावत् अगसेना प्रमुख हजारों गणिकाओं के साथ २ उद्य आदि राज चिह्नरूप विभूति से युक्त होकर शङ्ख, पणव, पटह, भेरी आदि बाजो की तुमुल ध्वनि पूर्वक द्वारावती नगरी के बीच से

त्याग्धी ते वृष्ण-वासुदेव न्या स्नानघरं छतु त्या गया त्या वेऽने तेमत्ते भोती वडेवा गवाक्षोथी शम्पित्य लागता स्नानघरमा स्नानं कथु अन्ये त्याग्धी मथा अलकारोथी विभूषितं यधने-नरपति अजनगिरिना शिखरं वेवा विगानं वृष्ण वरुणाणा गजपति उपरं भवारं यत्तं गया (तर्ण से कण्ठे वासुदेवे समुद्रविजयपामोक्खेहिं दसहिं दसारेहिं जाव अणगसेणा पामुक्खेहिं अणेगाहिं गणियासाहस्त्रीहिं सद्धि सपरिवुडे सव्विड्डीए जाव रवेण दारवडनयरिं मञ्ज मज्जेण निग्गच्छइ निग्गच्छिता सुरट्टा जणवयस्स मञ्ज मज्जेण जेणेव देसप्पते तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता पचालजणवयस्स मञ्ज मज्जेण जेणेव कपिल्लपुरे नयरे तेणेव पहारेत्त गमणाण) भवारं यधं ने तेज्जां समुद्र विजय वगेरे दश दशार्हो यावत् अगसेना प्रमुखं छन्दो गणिकाभ्यानी साथे छत्र विगेरे राजचिह्न उप विभूतिथी युक्तं यधने शम्पित्य, पणव, पटह, भेरी वगेरे तुमुल ध्वनि स्थाने द्वारावती नगरीनी वरुणे यधने पसारं यथा त्याथी पसार

रत्न=मम सुगन्धस्तिन परिस्पर्षयत-गज शिखर, ह्यगगग्यपदातिरूप चतुरङ्गवत्
 सज्जीकृत, एतां गमाणा मत्स्पर्षयत, इति तन्मो पीटुम्बिरुपृण्वाः ' तथास्तु '
 इत्युत्त्वा तदाज्ञा स्वीकृत्य सर्व सपाय वाहन यत् न मां गज्जोक्तमस्माभिरिति
 यावत् मत्स्पर्षयन्ति=निर्दूयन्ति स्म । तत. गच्छ म कृणो तामुद्येयो यीर मज्जन
 गृह तर्जोपाग-उत्ति, मज्जनगृह स्वीकृतमित्याह-' समुत्तजालाकुलाभिरामे ' समु
 क्तजालाकुलाभिराम युक्ताभिः गरितानि जालानि गया ताम्बेरादु गृक्तमतप्रा
 भिराम सुन्दरम्, उपागत्य म तत्र स्नान कृत्वा यावत्-मर्शलकारभ्रूपित,
 अन्ननगिरिकूटसन्निभम्=उन्नतर द्यामार्णभित्त्यर्थ, गजपनि=रस्तिषु सुगन्ध हस्तिन
 नरपति.=श्री कृष्णवासुदेव. ' द्रुष्टे ' द्रुष्टः=गमाष्टः, तत. गच्छ स कृणो

भो देवाणुप्पिया ! अभिसेरक हत्थिरयण पडिकप्पेह, ह्यगग जाव
 पच्चप्पिणति) वहा आकर उन्शेने दोनों हाथ जोड़कर कृष्ण वासुदेव
 को नमस्कार करते हुए जय विजय शब्दों द्वारा चर्चाई दी-इसके बाद
 उन कृष्ण वासुदेव ने कौटुम्बिक पुरुषों को गुलाया-गुलाकर उससे इस
 प्रकार कहा-भो देवानुप्पियो ! तुमलोग जीव ही मेरे सुगन्ध हाथी को
 सजाओ-तथा-हय, गज, रथ और पदातिरूप चतुरग युक्त सेना को भी
 सजाकर तैयार करो । पीछे हमको इसको खबर दो । इसके बाद उन
 कौटुम्बिक पुरुषों ने-" तथास्तु " कहकर उनकी आज्ञा को स्वीकार लिया
 और स्वीकार करके चल और वाहन सब हमने सज्जित कर दिये हैं
 इस प्रकार की खबर उन्हें पीछे कर दी । (तण्ण से कण्हे वासुदेवे जेणेव
 मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समुत्तजालाकुलाभिरामे
 जाव अजणगिरि कूडसन्निभ गयवइ नरवई दुरूढे) इसके पश्चात् वे

मेव भो देवाणुप्पिया ! आभिसेक हत्थिरयण पडिकप्पेह, ह्यगगजाव पच्चप्पिणति)
 त्या वर्धने तेज्जोअे अने डाथ लेडीने ' जयविजय ' शब्दोधी कृष्ण-वासुदेवने
 नमस्कार करता अलिनिहित कथां त्यारपडी कृष्ण-वासुदेवे कौटुम्बिक पुरुषोंने
 जोलाव्या अने जोलावीने तेज्जोने आ प्रभाण्णे कळु के डे डे देवानुप्पियो ! सत्परे
 तमे मारा सुप्प्य डाथीने तेमज्ज जीण्ण पण्ण घोडा, डाथी, रथ अने पायदलनी
 चतुर गिष्ठी सेनाने सुमन्ज कशे अने सेना सुमन्ज थर्ध जय त्यारे अभने पणर
 आपो त्यारपडी कौटुम्बिक पुरुषोअे ' तथास्तु ' कहीने तेमनी आज्ञा स्वीकारी
 लीधी अने स्वीकारीने तेज्जो पोताना काममा पशेवाध गया ज्यारे काम थर्ध
 गयु त्यारे तेज्जोअे " सेना अने वाहन तैयार छे " आ नतनी पणर आपी
 (तण्ण से कण्हे वासुदेवे जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 समुत्तजालाकुलाभिरामे जाव अजणगिरिकूडसन्निभ गयवइ नरवई दुरूढे)

वासुदेव समुद्रविजयप्रमुखैर्दशार्है र्थावत् अनङ्गसेनाप्रमुखवाभिरनेकाभिर्गणिका साहस्रीभिः सार्धं सपरिवृतः सर्वद्वर्गा=छत्रादिराजचिह्नरूपया यावत्-शङ्खपण-वपटहभेर्यादिरवेण द्वारवती नगर्या मध्यमध्येन=निर्गच्छति, निर्गत्य सौराष्ट्रजन पदस्य मध्यमध्येन यत्रोप देशप्रान्त-देशमीमा तत्रैवोपागत्यति, उपागत्य पञ्चालजनपदस्य मध्यमध्येन यत्रोप राग्निलयपुर नगर तत्रैव माधारयद् गमनाय= गतु मृतः ॥ सू० १८ ॥

कृष्ण वासुदेव जहां स्नान घर था वहा गये-वहा जाकर उन्होंने मुक्ताओं सहित गवाक्षों से सुन्दर उम स्नान घर में स्नान किया-स्नान करके फिर सर्व अलंकारों से विभूषित होकर वे नरपति अजन गिरि के शिखर जैसे-विशाल कृष्णवर्ण वाले मज्जपति पर आरूढ हो गये) (तण्ण से कण्हे वासुदेवे समुद्रविजयपामोक्तेहिं दसहिं दसारेहिं जाव अणंग सेणा पामुक्खेहिं अणेगाहिं गणिया साहस्सीहिं सद्धिं सपरिवुडे सव्व ड्डीए जाव रवेण द्वारवडनपरिं मज्ज मज्जेण निग्गच्छइ, निग्गच्छिता सुरट्टा जणवयस्स मज्ज मज्जेण जेणेव देसप्पते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता पचाल जणवयस्स मज्ज मज्जेण जेणेव कपिलपुरे नयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाण) आरूढ होकर वे कृष्ण वासुदेव समुद्र विजय आदि दश दशार्हों यावन अगमेना प्रमुख हजारों गणिकाओं के साथ २ उत्र जादि राज चिह्नरूप विभूति से युक्त होकर शङ्ख, पणच, वपट, भेरी आदि वाजों की तुमुल ध्वनि पूर्वक द्वारावती नगरी के बीच से

त्यागपथी ते दृष्य-वासुदेव त्था स्नानघरं छतु त्या गया त्या जेने तेमळे मोती जेव्हा गवाक्षी रमणीय लागता स्नानघरमा स्नान उद्यु अने त्यार पथी भवा अथ जारेथी विभूषित थाने-नरपति अजनगिगिता शिखर जेवा विशाल दृष्य वर्णवाणा मज्जपति उपर भ्रमर थर गया (तण्ण से कण्हे वासुदेवे समुद्रविजयपामोक्तेहिं दसहिं दसारेहिं जाव अणंगसेणा पामुक्खेहिं अणेगाहिं गणियामाहस्सीहिं सद्धिं सपरिवुडे सत्त्रिणीण जाव रवेण द्वारवडनपरिं मज्ज मज्जेण निग्गच्छइ निग्गच्छिता सुमट्टा जणवयस्स मज्ज मज्जेण जेणेव देसप्पते तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता पचालजणवयस्स मज्ज मज्जेण जेणेव कपिलपुरे नयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाण) मत्तार यथ ने तेजो मसुद्र विजय वगेरे दश दशार्हों यावत् अगमेना प्रमुख छत्रादि गणिकाओंनी साथे छत्र विगेरे गच्छिद् उप विभूतिथी युक्त थाने शङ्ख, पणच, वपट, भेरी वगेरे तुमुल ध्वनि स्थाने द्वारावती नगरीनी वन्धे वने पसार थया त्याथी पसार

मूलम्—तएण से दुवण राया दोअं दूयं सदावेइ सदावित्ता एव वयासी—गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया ! हत्थिणाउर नयरं तत्थ ण तुमं पंडुरायं सपुत्तय जुह्मिठित्तलं भीमणेण अज्जुण नउल महदेव दुज्जोहणं भाइसयसमग्ग गगेय त्रिदुर टाणं जयइह सउणी किवं आमत्थाम करयल जाव कट्टु तहेव समोसरह, तएण से दूण एव वयासी जहा वामुदेवे नवर भेरी नत्थि जाव जेणेव कपित्तपुरे नयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाएर । एएणेव कमेणं तच्चं दूय चंपानयरिं तत्थ णं तुमं कण्ह अग- राय सेह नदिराय करयल तहेव जाव समोसरह । चउत्थ दूय सुत्तिमइ नयरिं तत्थ ण तुमं तिसुपाल दमघोसमुय पचभाइ- सयसपग्गिबुड करयल तहेव जाव समोसरह । पंचमग दूय हत्थसीसनयर तत्थ ण तुमं दमदत्त राय करयल तहेव जाव समोसरह । छट्टु दूयं महुर नयरिं तत्थ ण तुम धरं राय करयल जाव समोसरह । सत्तम दूयं रायगिहं नयरं तत्थ ण तुम सह- देव जरासिधुसुय करयल जाव समोसरह । अट्टम दूय कोडिण्ण नयर तत्थ ण तुम रुप्पि भेसगसुय करयल तहेव जाव समो सरह । नवम दूय विराडनयर तत्थ ण तुम कीयग भाउसय समग्गं करयल जाव समोसरह । दसमं दूय अवसेसेसु य गामागार

होते हुए निकले । निकलकर वे सौराष्ट्र देश के बीचो बीच से चलकर घरा आये जहाँ देश की सीमा थी । उस सीमा पर आकर के फिर वे पाचाल जनपद के मध्यसे होते हुए जहा कापिल्य पुर नगर था उस और चल दिये ।

थधने

थधने पोताना देशनी डंड मुथ्री पडोया

थधने जना क्षपित्यपुर नगर डंड ते

नगरेसु अणेगाइ रायसहस्साइ जाव समोसरह । तएण से दूए
तहेव निग्गच्छइ जेणेव गामागर जाव समोसरह । तएण ताइं
अणेगाइं रायसहस्साइ तस्स दूयस्स अतिए एयमट्ट सोच्चा
निसम्म हट्टु० तं दूय सक्कारेति सक्कारित्ता सम्माणेति सम्मा-
णित्ता पडिविसज्जिति, तएणं ते वासुदेवपामुक्खा वहवे रायस-
हस्सा पत्तेय२ ण्हाया सन्नद्धहत्थिखंधवरगया हयगचरह० महया
भडचडगररहपहकर० सएहितो२ नगरेहितो अभिनिग्गच्छति२
जेणेव पंचाले जणवए तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥ सू० १९ ॥

टीका—‘ तएण से’ इत्यादि । तत् गलु स द्रुपदो राजा द्वितीय दूत शब्द-
यति, शब्दयित्वा एवमगादीत्-गत् गलु त्व पाण्डु राज मपुत्रन्=पुत्रै महित

‘ तएण से द्रुवण राया ’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) उस के बाद (से द्रुवण राया) उस द्रुपद राजाने
(दोच्च दूय सदावेइ) अपने दूनरे दूनको बुलाया (महावित्ता एव वयासी)
बुलाकर उससे ऐसा कहा—गच्छण तुम देवाणुप्पिया हत्थिणाउर नयर
तत्थ ण तुम पडुराय मपुत्तय जुहिट्टिल्ल भीमसेण अज्जुण नडल सह-
देव दुज्जोहण भाइसयसमग्ग गगेय त्रिदुर दोण जयहह मउणीक्किव
आसत्थाम करयल जाव कइडु तहेव समोसरह) बुलाकर उससे ऐसा
कहा हे देवानुप्रिय ! तुम हस्तिनापुर नगर जाओ—वहा जाकर तुम पुत्र

‘ तएण से द्रुवण राया ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्याग्यती (से द्रुवण राया) ते द्रुपद राजाने (दोच्च दूय
सदावेइ) योताना श्रीन दूतने योलाय्ये (सदावित्ता एव वयासी) योला
वीने तेने आ प्रभाणे उद्यु वे (गच्छण तुम देवाणुप्पिया हत्थिणाउर नयर,
तत्थ ण तुम पडुराय मपुत्तय जुहिट्टिल्ल भीमसेण अज्जुण नडल सहदेव दुज्जो
हण भाइसयसमग्ग गगेय त्रिदुर दोण जयहह सउणी क्किव आसत्थाम करयल
जाव कइडु तहेव समोसरह) हे देवानुप्रिय ! तमे हस्तिनापुर नगरमां लभ्ये

मूलम्—तएण से दुणए गया दोअं दूयं सदावेइ सदावित्ता
 एव वयासी-गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया । हत्थिणाउर नयरं
 तत्थ णं तुम पंडुराय सपुत्तय जुह्मिठिल्ल भीमणेणं अज्जुण
 नउल महदेव दुज्जोहणं भाइसयसमग्गं गंगेयं विटुर दोणं
 जयद्धह सउणी किव आमत्थाम करयल जाव कट्टु तहेव समो
 सरह, तएण से दूण एव वयासी जहा वामुदेवे नवर भेरी
 नत्थि जाव जेणेव कपिल्लपुरे नयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए२ ।
 एएणेव कमेणं तच्चं दूय चंपानयरिं तत्थ णं तुमं कण्ह अंग-
 राय सेह्ठ नदिराय करयल तहेव जाव समोसरह । चउत्थ दूय
 सुत्तिमइ नयरिं तत्थ णं तुम सिसुपाल दमघोसमुय पंचभाइ
 सयसपग्गिबुड करयल तहेव जाव समोसरह । पचमग दूय
 हत्थसीसनयर तत्थ ण तुम दमदत्त राय करयल तहेव जाव
 समोसरह । छट्ट दूयं महुर नयरिं तत्थ ण तुम धर राय करयल
 जाव समोसरह । सत्तम दूय रायगिहं नयर तत्थ ण तुम सह-
 देव जरासिधुसुय करयल जाव समोसरह । अट्टम दूय कोडिण
 नयर तत्थ ण तुम रुप्पि भेसगसुय करयल तहेव जाव समो
 सरह । नवम दूय विराडनयर तत्थ णं तुम कीवग भाउसय
 समग्गं करयल जाव समोसरह । दसम दूय अवसेसेसुय गामागार

होते हुए निकले । निकलकर वे सौराष्ट्र देश के बीचो बीच से चलकर
 घहा आये जहाँ देश की सीमा थी । उस सीमा पर आकर के फिर वे
 पांचाल जनपद के मध्य से होते हुए जहा कापिल्य पुर नगर था उस
 और चल दिये । सू० १८

थधने तेओ सौराष्ट्र देशनी वच्चे थधने पोताना देशनी छट्ट सुभी पडोअ्या
 त्याथी तेओ पांचाल जनपदनी वच्चे थधने नरा कापिल्यपुर नगर छतु ते
 तरइ रवाना थया ॥ सूत्र १८ ॥

नयरे तेणेव पहारेत्य गमणाए २ एणेव कमेण तच्च दूय चपानयरिं
 तत्थ ण तुम कण्ण अग्राय सेल्ल नदिराय करयल तहेव जाव समोसरह
 चउत्थ दूय सुत्तिमइ नयरिं, तत्थ ण तुम सिंसुपाल दमघोमसुय पच-
 भाइसयसपरिवुड करयल तहेव जाव समोसरह) इस के बाद दूत
 अपने राजा की आज्ञा प्रमाण कर वहा से हस्तिनापुर को चला गया ।
 वहाँ पहुँच कर उसने पांडुराजा आदि से बड़े विनय पूर्वक इस प्रकार
 कहा—कापिल्यपुर में द्वैतपदी का स्वयंवर होगा—सो आप सब कृपाकर
 शीघ्रातिशीघ्र बहा पारें । इस तरहके समाचार देकर वह दूत पांडुराजा
 आदि से सन्मानित होकर वहा से वापिस हो गया । पांडुराज आदि
 स्नान कर सर्वालकारों से विभूषित होकर गजालूढ हो, चतुरगिणी
 सेना के साथ अपनी ऋद्धि आदि के अनुसार यावत् जहा कापिल्यपुर
 नगर था उस ओर चल दिये । इस तरह कृष्ण वासुदेव की तरह यहाँ
 पर सब पाठ लगा लेना चाहिये । उस पाठ से इस में विशेषता केवल
 इतनी है कि वे सब जब द्वारावती नगरी से कापिल्यपुर नगर को जाने
 के लिये निकले तो उनके साथ भेरी थी—यहा वह नहीं है । इसी क्रम
 से द्रुपद ने तीसरे दूत को बुलाया—बुलाकर उससे भी इसी प्रकार से

पुरे नयरे तेणेव पहारेत्य गमणाए २ एणेव कमेण तच्च दूय चपानयरिं
 तत्थ ण तुम कण्ण अग्राय सेल्ल नदिराय करयल तहेव जाव समोसरह चउत्थ
 दूय सुत्तिमइ नयरिं तत्थ ण तुम सिंसुपाल दमघोमसुय पचभाइसयसप-
 रिवुड करयल तहेव जाव समोसरह) त्पारपथी इत पोताना राजनी आज्ञा
 प्रभाणु त्पार्थी हस्तिनापुर तरङ्ग रवाना थय गये त्पार्थी पडोथीने तेणु पाडु
 राज वगेरे राजाओने नम्रपणु आ रीते विनति करी के—कापिल्यपुरमा
 द्वैतपदीने स्वयंवर थये तो आप सौ कृपा करीने सत्वरे त्पार्थी पधारो आ
 रीते समाचारो आपीने ते इत पाडुराज वगेरेथी सन्मान पागीने त्पार्थी
 पाठो इथी पाडुराज वगेरे अधाओ पणु स्नान वगेरेथी परवारीने तेमज सर्वा
 ल कारोथी सुमन्ज थयने हाथीओ उपर सवार थया अने पोत पोतानी यतु-
 रगिणी सेना तेमज ऋद्धिनी साथे यावत् जे तरङ्ग कापिल्यपुर नगर हर्तु
 ते तरङ्ग रवाना थया आ प्रभाणु कृष्ण-वासुदेवनी तेमज अर्धी पणु वरुन
 समणु लेखु लेखुओ कृष्ण-वासुदेवना पाठमा पाडुराज उरता अटली विशेषता
 हती के तेओ त्पार्थी द्वारावती नगरीनी अहार नीऊथ्या त्पार्थी तेमनी साथे
 लेरी पणु हनी, पाडुराजनी साथे लेरी न हती आ प्रभाणु द्रुपद राजाओ
 राज इतने जेलाओ अने तेने पणु आ रीते कणु के डे देवानुप्रिय । तमे

युधिष्ठिर भीमसेनम् अर्जुनं नकुलं गादेयं दुर्योधनं भातगतममम् = तत्र भ्रातृभिः सहितं, गादेयं = भीष्म, विदुरं द्रोणं जयद्रथं शकुनिं ' किय ' उपमन्त्र्य कृपाचार्यं, अश्वत्थामानं परतल० गात्रं मस्तकेऽङ्गुलिं कृत्वा, तथैव गमनगतं यथा पूर्वमुक्तं तथैवात्र ' समग्रतरत ' इति पर्यन्तं योग्यम् अथ गात्रः - जयप्रियवशब्देन परिचितं एव द्रुहि - कापिल्यपुरे नगरे द्रुपदस्य राज्ञः पुत्र्या द्रौपद्याः स्वयं सरो भविष्यति तस्माद् खलु हे देवानुप्रियाः ! यूयं द्रुपदं राजानमनुगृह्यन्तः कालप्रियम्बरहितमेव कापिल्यपुरे नगरे समग्रतरत । ततः स दूतो द्रुपदस्य यत्नस्वीकृत्य हस्तिनापुरं गत्वा पाण्डुराजादिषु मेरुमादीत् = ' कापिल्यपुरे द्रौपद्या ' स्वयं सरो भविष्यति तत्र शीघ्रमागच्छत ' इति ततोऽसौ दूतः पाण्डुराजादिना सम्मानितो विमर्शितश्च ' जहा वासुदेवे ' यथा - गादेयः कृष्णस्तद्वदत्रापि विद्येयम् - ' नवर ' विशेषस्तु ' भेरी नत्थि ' भेरीनारिष्ठ, कृष्णवासुदेव इव पाण्डुराजादिः स्नात मर्वाल्फार विभूषितो गजार्द्धश्चतुरङ्गसेनया सपरिवृतः सर्वदुर्घा युक्तो यावत् यज्ञेय कापिल्यपुरं नगरं तत्रैव प्राधारयद् गमनाय = गन्तुं प्रवृत्तः ।

सहित पाण्डुराज को, युधिष्ठिर को, भीमसेन को, अर्जुन को नकुल को, सहदेव को, सौभार्द्रयो सहित दुर्योधन को, गागेय भीष्म पितामह को विदुर को, द्रोण को जयद्रथ को, शकुनि को, कृपाचार्य को, और द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा को पहिले दोनों हाथों की अङ्गुलि बनाकर और उसे मस्तक पर रखकर नमस्कार करना उन सबको जय विजय आदि शब्दों से यथा देना । वधाकर फिर इस प्रकार कहना कि कापिल्य पुर नगर में द्रुपद राजा की पुत्री द्रौपदी का स्वयंवर है, इस लिये हे देवानुप्रियों ! आप सब द्रुपद राजा के ऊपर कृपा करके बिना किसी विलम्ब के शीघ्रही कापिल्यपुर नगर में पधारें। (तएण से दृष्ट एव वधासी - जहा वासुदेवे नवर भेरी नत्थि, जाव जेणेव कापिल्यपुरे

अने त्या जधने तसे पुत्रे सहित पाण्डुराजने, युधिष्ठिरने, भीमसेनने, अर्जुनने नकुलने सहदेवने, सौ भ्रातृयो सहित दुर्योधनने, गागेय भीष्म पितामहने, विदुरने, द्रोणने, जयद्रथने, शकुनिने, कृपाचार्यने अने द्रोणाचार्यना पुत्र अश्वत्थामाने सौ पहिले दोन्ही हाथों की अङ्गुलि बनाकर तेने मस्तकें भूषित करणे अने ' जय विजय ' शब्दोथी तेज्याने अलिखित करणे त्यारपरी तसे तेमने या प्रमाणे विनती करणे के कापिल्यपुर नगरमा द्रुपद राजानी पुत्री द्रौपदीना स्वयंवर थावना छे अथी हे देवानुप्रियो ! आप सौ द्रुपद राजा ऊपर भडेरणानी करीने सत्वरें कापिल्य पुर पधारें। (तएण से दृष्ट एव वधासी - जहा वासुदेवे नवर भेरी नत्थि

नयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए २ एएणेव कमेण तच्च दूय चपानयरिं
 तत्थ ण तुम कण्ण अगाराय सेल्ल नदिराय करयल तहेव जाव समोसरह
 चउत्थ दूयं सुत्तिमइ नयरिं, तत्थ ण तुम सिंसुपाल दमघोमसुय पच
 भाइसयसपरिवुड करयल तहेव जाव समोसरह) इस के बाद दूत
 अपने राजा की आज्ञा प्रमाण कर वहा से हस्तिनापुर को चला गया ।
 वहाँ पहुँच कर उसने पांडुराजा आदि से बड़े विनय पूर्वक इस प्रकार
 कहा—कापिल्यपुर में द्रौपदी का स्वयंवर होगा—सो आप सब कृपाकर
 शीघ्रातिशीघ्र वहा पवारे । इस तरहके समाचार देकर वह दूत पांडुराजा
 आदि से नन्मानित होकर वहाँ से वापिस हो गया । पांडुराज आदि
 स्नान कर सर्वालकारो से विभूषित होकर गजावृढ हो, चतुरगिणी
 सेना के साथ अपनी क्रुद्धि आदि के अनुसार यावत् जहा कापिल्यपुर
 नगर या उस ओर चल दिये । इस तरह कृष्ण वासुदेव की तरह यहा
 पर सब पाठ लगा लेना चाहिये । उस पाठ से इस में विशेषता केवल
 इतनी है कि वे सब जय द्वारावती नगरी से कापिल्यपुर नगर को जाने
 के लिये निकले तो उनके साथ भेरी भी—यहा वह नहीं है । इसी क्रम
 से द्रुपद ने तीसरे दूत को बुलाया—जुलाकर उससे भी इसी प्रकार से

पुरे नयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए २ एएणेव कमेण तच्च दूय चपानयरिं
 तत्थ ण तुम कण्ण अगाराय सेल्ल नदिराय करयल तहेव जाव समोसरह चउत्थ
 दूयं सुत्तिमइ नयरिं, तत्थ ण तुम सिंसुपाल दमघोमसुय पचभाइसयसप-
 रिवुड करयल तहेव जाव समोसरह) त्या२प७ी इत पोताना राजनी आज्ञा
 प्रभाळे त्याथी हस्तिनापुर तरक्ष रवाना थय गये। त्या पडोळीने तेळे पाडु
 राज वगेरे राज्याने नम्रपळे आ रीते विनति करी के—कापिल्यपुरमा
 द्रौपदीने स्वयंवर थये तो आप सौ कृपा करीने सत्वरे त्या पधारो आ
 रीते समाचारो आपीने ते इत पाडुराज वगेरेथी सन्मान पाभीने त्याथी
 पाळे इथी पाडुराज वगेरे अधाळो पळु स्नान वगेरेथी परवारीने तेमज सर्वा
 लकारोथी सुसज्ज थयने हाथीओ उपर सवार थया अने पोत पोतानी यतु
 रगिणी सेना तेमज क्रुद्धिनी साथे यावत् जे तरक्ष कापिल्यपुर नगर हर्तुं
 ते तरक्ष रवाना थया आ प्रभाळे कृष्ण-वासुदेवनी जेमज अर्ही पळु वर्षुन
 समळ लेवु जेथळे कृष्ण-वासुदेवना पाठमा पाडुराज करता अेटवी विशेषता
 हती के तेओ न्यारे द्वारावती नगरीनी अडार नीकल्या त्यारे तेमनी साथे
 लेरी पळु हती, पाडुराजनी साथे लेरी न हती आ प्रभाळे द्रुपद राज्या
 राज इतने जालाओ अने तेने पळु आ रीते कधु के डे देवानुप्रिय । तरे

पतनैः क्रमेण तृतीय दूत शब्दयति, शब्दयिष्या षमयादीन्-गच्छ गच्छ त्व
 हे देवानुप्रिय ! चम्पानगरीम्, नत्र गच्छ कर्ण = कर्णनामसम्-अहराजम् = अहरदेश-
 स्याधिपति, तथा ' जेल ' द्रोण्य = शै-पनामस. नन्दिगण = नन्दिदेशाधिप करतल
 परिगृहीत दशनम्ब गायन्-मन्त्रकेऽङ्गलि कृत्वा जये विजयेन पर्ययिन्ता एव
 द्रुहि- ' तहै ' तथैय = पूर्वराज बोध्यम्-तत् यथा- " काम्पिन्यपुरे नगरे द्रुपदस्य
 राम पुत्र्या द्रौपद्या स्वयवरो भविष्यति, तस्माद् गच्छ हे देवानुप्रियाः । गृह्य
 द्रुपद राजानमनुगृह्य त गोघमेय काम्पिन्यपुरे नगरे गमयसरत " इति एव द्रुपदो
 राजा चतुर्थं दूत शब्दयित्वा षमयादीन्-गच्छ गच्छ त्व शुक्तिमती नगरीं, तत्र
 गच्छ त्व शिशुपाल दमघोषमुत्र पञ्चभ्रातृवत्पण्डित करतल० यावन्मस्तकेऽञ्जलि
 कृत्वा द्रुहि- ' तथैय यावत् समयसरत ' यथा पूर्वमुक्त तद्वदत्र ' गमयसरत ' इति

कहा-कि हे देवानुप्रिय ! तुम चम्पानगरी जाओ वना अगदेश के अधि
 पति कर्ण राजा को तथा नन्दिदेश के अधिपति शै-यराजा को कर
 तल परिगृहीत दशनम्बवाली अजलि मस्तक पर रखकर नमस्कार करना
 बाद में जय विजय शब्दों से उन्हें चर्चाई देकर पूर्व की तरह ऐसा
 कहना-कि कापिल्यपुर नगर में द्रुपद राजा की पुत्री द्रौपदी का स्वयवर
 होने वाला है, सो हे देवानुप्रियों ! आपलोग द्रुपद राजा पर कृपा करके
 जल्दी से जल्दी कापिल्यपुर नगर पधारें । इसी तरह द्रुपद ने चौथे दूत
 को बुलाकर उससे ऐसा ही कहा-कि तुम शुक्तिमती नगरी में जाओ
 वहा जाकर दमघोष के पुत्र तथा पाचसौ अपने भाइयों से युक्त
 शिशुपाल राजा से करतल परिगृहीत दशनम्बवाली अजलि मस्तक
 पर रखकर कहना, पहिले की तरह ऐसा कहना कि कापिल्यपुर नगरमें

यथा नगरीमा लब्ध्वा, त्या अग देशना अधिपति कर्ण राजने तेमज नदि
 देशना अधिपति सौत्यराजने छाथैनी अजलि पनावीने तेने मस्तके भूझीने
 नमस्कार करणे अने जय-विजय शब्दोथी तेमने अलिनिहित करणे त्पारपथी
 तेमने विनती करणे के कापिल्यपुर नगरमा द्रुपद राजनी पुत्री द्रौपदीने
 स्वयवर थवानो छे तो हे देवानुप्रियो तमे सौ द्रुपद राजा उपर कृपा करीने
 अविलण कापिल्यपुर नगरमा आवो आ रीते द्रुपद राजने थोथा इतने
 जोलाव्यो अने तेने पणु आ प्रभाणु कछु के तमे शक्तिमती नगरमा लब्ध्वा
 अने त्या जधने इमयोपना पुत्र शिशुपाल राजने ज चोताना, पाचसौ
 लोभ्यो सहितकरणद्ध थधने अजलि मस्तके भूझीने विनती आ
 प्रभाणुना समाचार आपणे के कापिल्यपुर नगरमा द्रुपद २

पर्यन्त वाच्यमित्यर्थ । एष द्रुपदो राजा पञ्चमरु दूत शब्दयित्वा एवमवादीत्-
 गच्छ खलु त्व हस्तिशीर्षनगर, तत्र खलु त्व दमदन्त=दमदन्तनामक राजान कर-
 तल्पपरिशुद्धीतदशनम् यावन्मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा ब्रूहि—‘ तथैव यावत् समवसरत ’
 इति पूर्ववदेवात्रापि ‘ समवसरत ’ इतिपर्यन्त वान्यम् एव स द्रुपदो राजा पृष्ठ दूत
 शब्दयित्वाऽवादीत्-गच्छ खलु त्व मथुरा नगरी, तत्र खलु त्व धर=रनामक
 राजान ‘ करतल० यावत् समवसरत ’ अत्रापि पूर्ववद्दूतगमनादिक बो-यम्, एव
 सप्तम दूत शब्दयित्वा एवमवदत्-गच्छ खलु त्व राजगृह नगरम्, तत्र खलु त्व
 सहदेव जरासिन्धुसुत्र ‘ करतल० यावत् समवसरत ’ इति पूर्ववत्-द्रौपद्याः स्वय-
 वरस्य वार्ता कथयित्वा ‘ काम्पिल्यपुरे नगरे समवसरत ’ इति ब्रूहि । तत्र स

द्रुपद राजा की पुत्री द्रौपदी का स्वयवर होने वाला है-सो आप कृपा
 करके शीघ्र ही वहा पधारें । (पचमग दूय हत्थिसीसनयर तत्थ ण तुम
 दमदन्त राय करयल तहेव जाव समोसरह, छट्ट दूय महुर नयरिं तत्थ ण
 तुम धर राय करयल जाव समोसरह सत्तम दूय रायगिह नयर तत्थण
 तुम सहदेव जरासिन्धुसुय करयल जाव समोसरह, अट्टम दूय कोडि-
 ण्णं नयर तत्थण तुम रुप्पि भेसगसुय करयल तहेव जाव समोसरह,
 नवम दूय विराडनयर तत्थ णं तुम कीयग भाउसयसमग्ग करयल जाव
 समोसरह, दसम दूय अवसेसेसु गामागरनगरेसु अणेगाइ रायसहत्साइ
 जाव समोसरह) इसी तरह पाचवे दूत को हस्तिशीर्षनगर में दमदन्त
 नाम के राजा के पास छठे दूत को मथुरा नगरी में धर राजा के पास,
 सातवे दूत को राजगृह नगर मे जरासिन्धु के पुत्र सहदेव के पास

दीने। स्वयं पर थवाने छे अथी तमे वृथा करीने अविशय त्या पधारै।
 (पचमग दूय हत्थिसीसनयर तत्थ ण तुम दमदन्त राय करयल तहेव जाव
 समोसरह छट्ट दूय महुर नयरिं तत्थण तुम धर राय करयल जाव समोसरह
 सत्तम दूय रायगिह नयर तत्थ ण तुम सहदेव जरासिन्धु सुय करयल जाव
 समोसरह अट्टम दूय कोडिण्णं नयर तत्थण तुम रुप्पि भेसगसुय करयल
 तहेव जाव समोसरह नवम दूय विराडनयर तत्थ णं तुम कीयग भाउसय
 समग्ग करयल जाव समोसरह, दसम दूय अवसेसेसु गामागर नगरेसु अणेगाइ
 रायसहत्साइ जाव समोसरह) आ प्रभाषे पाचमा इतने हस्तिशीर्ष नगरमा
 दमदन्त नामना राजानी पासे, छट्ठा इतने मथुरा नगरीमा धर राजानी पासे,
 सातमा इतने राजगृह नगरमा जरासिन्धुना पुत्र सहदेवनी पासे, आठमा
 इतने डीर्घित्य नगरमा वीरभद्रना पुत्र इतिभ राजानी पासे, नवमा इतने

पतन्वै क्रमेण तृतीय दूत शब्दयति, शब्दयिता षमसादीन्-गच्छ गच्छ त्वं हे देवानुमिय । चम्पानगरीम्, तत्र गच्छ कर्ण=कर्णनामम्-अहाराजम्=अहरेदेश-स्याधिपति, तथा 'नेलु' शैल्य=शैल्यनामम्. नन्दिगता=नन्दिदेशाधिप करतल-परिशुहीत दशानम् यावन्-मस्तकेऽञ्जलि कृत्वा जयेन विजयेन र्वयिता एव द्रुपि- 'तथैव' तथैव=पूर्वम्-तद् यथा-'' काम्पिल्यपुरे नगरे द्रुपदस्य रामः पुत्र्या द्रौपयाः स्वयरां भार्य्यति, तस्माद् गच्छ हे देवानुमिया । यूय द्रुपद राजानमनुश्रुतः शीघ्रमेव काम्पिल्यपुर नगरे ममसरत'' इति एव द्रुपदो राजा चतुर्थं दूत शब्दयित्वा षमसादीत्-गच्छ गच्छ त्वं शुक्तिमती नगरी, तत्र गच्छ त्वं शिशुपाल दमघोषपुत्र पञ्चभ्रातृगतमपगृह्यत करतय० यानन्मस्तकेऽञ्जलि कृत्वा द्रुपि- 'तथैव यावत् समसरत' यथा पूर्वमुक्तं तद्दत्तं 'ममसरत' इति

कहा-कि हे देवानुमिय । तुम चम्पानगरी जाओ वहा अगदेश के अधिपति कर्ण राजा को तथा नन्दिदेश के अधिपति शैल्यराजा को करतल परिशुहीत दशानम्वाली अजलि मस्तक पर रखकर नमस्कार करना बाद में जय विजय शब्दों से उन्हें बधाई देकर पूर्व की तरह ऐसा कहना-कि काम्पिल्यपुर नगर में द्रुपद राजा की पुत्री द्रौपदी का स्वयवर होने वाला है, सो हे देवानुमियों ! आपलोग द्रुपद राजा पर कृपा करके जल्दी से जल्दी काम्पिल्यपुर नगर पधारें । इसी तरह द्रुपद ने चौथे दूत को बुलाकर उससे ऐसा ही कहा-कि तुम शुक्तिमती नगरी में जाओ वहा जाकर दमघोष के पुत्र तथा पाचसौ अपने भाइयों से युक्त शिशुपाल राजा से करतल परिशुहीत दशानम्वाली अजलि मस्तक पर रखकर कहना, पहिले की तरह ऐसा कहना कि काम्पिल्यपुर नगरमें

यथा नगरीमा ज्ञान्ते, त्या अग हेराना अधिपति कर्ण राजाने तेमज नदि देशना अधिपति शैल्यराजने छाथेानी अजलि जनावीने तेने मस्तके भूडीने नमस्कार करन्ते अने जय-विजय शब्दोथी तेमने अलिनि दित करन्ते त्यारपधी तेमने विनती करन्ते के काम्पिल्यपुर नगरमा द्रुपद राजनी पुत्री द्रौपदीने स्वयवर थवानो छे तो छे देवानुमियो तमे सो द्रुपद राजा उपर कृपा करीने अविलग काम्पिल्यपुर नगरमा आवो आ रीते द्रुपद राजाने बोधा इतने जालाव्यो अने तेने पञ्च आ प्रभाञ्जे कछु के तमे शक्तिमती नगरमा ज्ञान्ते अने त्या जधने दमघोषना पुत्र शिशुपाल राजाने ज चेताना, पाचसो भाइव्यो सहितकरणद्ध थधने अजलि मस्तके भूडीने विनती करता आ प्रभाञ्जेना सभाचार आपन्ते के काम्पिल्यपुर नगरमा द्रुपद

सरति, निर्गत्य यत्रैव ग्रामाकरनगरेषु अनेकानि राजसदृसाणि, तत्रैवोपागच्छति
 उपागत्य यावत्-समवसरत, ' समवसरत ' इति पर्यन्त दूतवाक्य पूर्ववद् बोध्यम् ।
 ततः खलु तानि अनेकानि राजसदृसाणि तस्य दूतग्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा
 निशम्य हृष्टतुष्टाः सन्तः दूत सत्कारयन्ति=सत्कृत कुर्वन्ति समानयन्ति, सत्कार्यं,
 समान्य प्रतिविसर्जयन्ति ।

ततः खलु ते वासुदेवमुखा बहुसदृससरयका राजानः,=प्रत्येक २ स्नाताः

जेणेव गामागर जाव समोसरह) वह दशवा दूत उसी तरह से-
 पहिले के दूतों के समान कापिल्य नगर से निकला और निकल कर
 जहाँ ग्राम आकर और नगर थे-वहा पर अनेक राजसदृस्यों के पास
 गया-वहा जाकर शिष्टाचार पूर्वक उसने सब से इस प्रकार कहा कि
 काम्पिल्यपुर नगर में द्रुपद राजा की पुत्री द्रौपदी का स्वयवर होने वाला
 है-सो आपमत्र लोग द्रुपद राजा के ऊपर कृपा करके जल्दी कांपिल्य
 पुर नगर पधारे (तएण ताइ अणेगाइ रायसदृसाइ तस्स दूयस्स
 अतिए एयमदु सोच्चा निसम्म हट्टुं त दूय सत्कारेति, सक्कारित्ता
 सम्माणेति, सम्माणित्ता पडिविसज्जेति) इस प्रकार वे अनेक सदृस्र
 राजा उस दूत के मुख से इस समाचार को सुन कर और उसे अपने
 अपने २ हृदयों में अदधारित कर यज्ञ ही अधिक आनन्द से प्रमुदित
 बनकर परम सतोष को प्राप्त हुए । उन्होंने उस दूत का सत्कार क्रिया
 सत्कार करके सन्मान किया और सन्मान करके फिर उसे पीछे विसर्जित
 कर दिया-भेज दिया । (तएण ते वासुदेवपामुक्खा बहवे रायसदृसा पत्तेय

समोसरह) ते दशमे दूत अधानी जेम कापील्य नगरथी नीकल्ये अने
 नीकलीने जया ग्राम आकर अने नगर छता त्या अनेक सदृस्यो राजाओनी
 पासे गये त्या जधने नअपणे तेणे सहने आ प्रभाणे कहु के कापिल्य
 नगरमा द्रुपद राजनी पुत्री द्रौपदीने स्वयवर थवाने छे तो आप सौ द्रुपद
 राजा उपर कृपा करीने अविलम्ब कापिल्य नगरमा पधारे (तएण ताइ
 अणेगाइ रायसदृसाइ तस्स दूयस्स अतिए एयमदु सोचा निसम्म हट्टुं त
 दूय सकारेति सकारित्ता, सम्माणेति, सम्माणित्ता, पडिविसज्जेति) आ रीते
 सदृस्यो राजाओ ते हतना मुखथी आ प्रभाचार सावणीने अने तेने
 पोताना हृदयमा धारण करीने अमत्र तेमत्र परम मनुष्य थया
 तेओअे हतने सत्कार कर्यो अने सन्मान कर्युं त्यारपठी हतने तेओअे
 विहाय (तएण ते वासुदेवपामुक्खा बहवे रायसदृसा पत्तेय २ पद्या

द्रुपदो राजा अष्टम दूत शब्दपितृवाऽप्रादीन्-गन्तुं गन्तुं न कौण्डिन्यनगरं तत्र खलु तत्र 'रुद्रि' रुद्रिगण=रुद्रिगणनामक भोग्यवस्तु परतल तत्रैव यावत् समस्त सप्त पूर्वात् 'समस्तगत' इति पर्यन्तं तावत् । एतत् द्रुपदो राजा नाम दूत शब्दपितृवाऽप्रादीन्-गन्तुं गन्तुं तत्र विराटनगरं, तत्र गन्तुं तत्र 'कीचक' कीचक-कीचकनामक राजानं गतभातृगदितं करतल यावत् समस्तगतं अत्रापि व्याख्या पूर्वात् । एतत् द्रुपदो राजा दशम दूत शब्दपितृवाऽप्रादीन्-अत्रोपपुत्रग्रामात् नगरेषु अनेकानि राजनदस्ताणि यावत् समस्तगतं, अत्रापि व्याख्या पूर्वात्, ततस्त्वदनन्तरं खलु स द्रुपदीय=द्रुपदीयनिर्गन्तुं कौण्डिन्यनगरं ता नि-

में आठवें दूत को कौण्डिन्य नगर में भीष्मक के पुत्र रुद्रि राजा के पास में नौवें दूत को विराट नगर में मौं भाइयो से युक्त कीचक के पास में, और दशम दूत को अजिष्ठ ग्रामों में आरुओं में एत नगरों में हजारों राजाओं के पास जाने के लिये कहा। इन दूतों को राजा द्रुपद ने यह समझा दिया कि तुम लोग जब इन राजाओं के पास जाओ तब पहिले उन्हें दानों दाय जोड़कर नमस्कार करना और कहना कि कापिल्य पुर नगर में द्रुपदकी पुत्री द्रौपदी का स्वयंवर होने वाला है सो आप लोग उस में द्रुपद राजा उपर दया कर के शीघ्र से शीघ्र पधारें। राजाकी आज्ञालुमार तीसरे दूतसे लेकर नौवें दूत तक समस्त दूत जिन्हे २ जहाँ २ जाने को कहा था-वे वहाँ चले गये। वहाँ जाकर उन्होंने जैसा द्रुपद राजा ने इन से करने एव कहने को कहा था-वैसा ही उन्होंने वहाँ २ किया और कहा। इस तरह पहिले की तरह यहाँ तक सब व्याख्या समझलेनी चाहिये। (तण्ण से दूए तहेव निगच्छइ,

विराट नगरमा सो बाधयोथी युक्त डीयकनी पासे अने दशमा इतन भाडी रही गयेला भीष्म आभेमा आकरेमा अने नगरेमा डंभरे। राजयोनी पासे जवा हुकम क्यो आ जधा इतोने राज द्रुपदे जवा पडेला आ वात सरस शीते समजवी दीधी डती के ज्यारे तमे राजयोनी पासे जयो त्यारे सो पडेला पोताना जने हाथ जोडीने तेजोने नमस्कार करजे अने त्यारपछी तमे तेमने विनती करजे के कापिल्य नगरमा द्रुपदनी पुत्री द्रौपदीने स्वयंवर थवाने छे तो आप सो द्रुपद राज उपर दूया करीने अविलज त्या पधारो राजनी आज्ञा सुज्ज वीज इतथी भाडीने नवमा इत सुरीना जधा इतो जवा जवा तेजोने जवातु डंतु त्या त्या पडेला त्या पडेथीने तेजोये द्रुपद राजजे जेभ आज्ञा करी डती तेमजे तेजोये क्युं अने वहु, अर्द्धी जनी जेभजे समस्त डेवु जोधजे (तण्ण से दूए तहेव निगच्छइ, जाव

सरति, निर्गत्य यत्रैव ग्रामाकरनगरेषु अनेकानि राजसहस्राणि, तत्रैवोपागच्छति
उपागत्य यावत्-समवसरत, 'समवसरत' इति पर्यन्त दत्तवाक्य पूर्ववद् बोध्यम् ।
ततः खलु तानि अनेकानि राजसहस्राणि तस्य दत्तम्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा
निशम्य हृष्टतुष्टाः सन्तः दूत सत्कारयन्ति=सत्कृत कुर्वन्ति समानयन्ति, सत्कार्यं,
समान्य प्रतिविमर्जयन्ति ।

ततः खलु ते वासुदेवप्रमुखा बहुसहस्रसख्यका राजानः, =प्रत्येकं २ स्नाताः

जेणेत्र गामागर जाव समोसरह) वह दशवां दूत उसी तरह से-
पहिले के दूतों के समान कापिल्य नगर से निकला और निकल कर
जहां ग्राम आरुर और नगर थे-वहां पर अनेक राजसहस्रों के पास
गया-वहा जाकर शिष्टाचार पूर्वक उसने सब से इस प्रकार कहा कि
काम्पिल्यपुर नगर में द्रुपद राजा की पुत्री द्रौपदी का स्वयवर होने वाला
है-सो आपमत्र लोग द्रुपद राजा के ऊपर कृपा करके जल्दी कांपिल्य
पुर नगर पधारे (तएण ताड अणेगाइ रायसहस्साइ तस्स दूयस्स
अत्तिए एयमट्ट सोच्चा निसम्म हट्टं त दूय सक्कारेत्ति, सक्कारित्ता
सम्माणेत्ति, सम्माणित्ता पड्विसज्जेत्ति) इस प्रकार वे अनेक सहस्र
राजा उस दूत के मुख से इस समाचार को सुन कर और उसे अपने
अपने २ हृदयों में अवधारित कर उद्वृत्त ही अधिक आनन्द से प्रमुदित
बनकर परम सतोष को प्राप्त हुए । उन्होंने उस दूत का सत्कार किया
सत्कार करके सन्मान किया और सन्मान करके फिर उसे पीछे विसर्जित
कर दिया-भेज दिया । (तएण ते वासुदेवपामुक्खा नहवे रायसहस्सा पत्तेय

समोसरह) ते दशमे इत अधानी जेम कापील्य नगरथी नीकल्ये अने
नीकणीने न्या ग्राम आरुर अने नगर छता त्या अनेक महस्रो सान्त्योनी
पामे गथे त्या बधने नअपण्णे तेण्णे सडुने आ प्रभाण्णे कथ्थु के कापिल्य
नगरमा द्रुपद सान्तनी पुत्री द्रौपदीने स्वयवर थवाने छे तो आप औ द्रुपद
राज उपर कृपा करीने अविजय कापिल्य नगरमा पवारे (तएण ताड
अणेगाइ रायसहस्साइ तस्स दूयस्स अत्तिए एयमट्ट सोच्चा निसम्म हट्टं त
दूय सक्कारेत्ति सक्कारित्ता, सम्माणेत्ति, सम्माणित्ता, पड्विसज्जेत्ति) आ रीते
सहस्रो सान्त्यो ते इतना सुभथी आ मन्माचार सालणीने अने तेने
चेताना इद्वयमा धारण्ण करीने अज्ज प्रमन्न तेमन् पग्ग मत्तुए थया
तेण्णे इतने अत्कार कर्ये अने सन्मान कर्युं त्थारपटी इतने तेण्णे
विहाय आपी (तएण ते वासुदेवपामुक्खा नहवे रायसहस्सा पत्तेय २ ण्वाया

सन्नद्धद्वयमित्यस्या यावत् सृष्टीतामुत्प्रसङ्गा इतिग्य भवरगता ह्यग्नयः
 महाभटचट्टरमकरगन्परिसिता ॥ २ ॥ गन्तव्यमक्षुण्डममृदपरिगता, म्रक्रेभ्यः
 म्रक्रेभ्योमभिनिर्गच्छन्ति, अभिनिर्गन्त्य यत्रैव पञ्चाग्रे जनपदस्तत्रैव माधायन्
 गमनाय=गन्तु मृत्ताः ॥ सू० १९ ॥

मूलम्—तण्ण से दुवण् राया कोडुवियपुरिमे महावेइ सद्दा
 वित्ता एव वयासी—गच्छहणं तुमं देवाणुप्पिया । कंप्पिल-
 पुरे नयेरे वहिया गगाए महानदीए अदूरसामते एग मह
 सयवरमंडव करेह अणेगखंभसयसन्नित्तिट्टं लीलट्टिय साल
 भजिआग जाव पच्चप्पिणाति, तण्ण से दुवण् राया दोच्चंपि
 कोडुवियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव

रण्याया सन्नद्ध इतिग्यभवरगता ह्यग्नयः ० महया भटचडगररहप
 हकर ० मण्डितो २ नगरेहितो अभिनिग्गच्छति २ जेणेव पाचाळे जण
 वण तेणेव पद्दारेत्य गमणाए) यादमें जय दून समाचार देकर वापिस
 कापिल्य पुर नगर में आचुके तत्र वासुदेव प्रभुस्व वे अनेक शस्त्र राजा
 प्रत्येक स्नान से निषटे, और मज्जार अपने शरीर पर कत्रच पहिरा,
 यादत् प्रायुष और प्रहरणों को अपने २ साथ लिया, अपने २ प्रधान
 हाथि नों पर चढे और बाधी घोडे रथ और महाभटों क समुदाय से
 त्रिर हुए होकर ये सब अपने राज महलोंसे—नगरों से—निकले—निलकर
 जहा पांचाल जनपद या उस ओर चल दिये ॥ सू० १९

सन्नद्धद्वयमित्यस्या ह्यग्नयः ० महया भटचडगररहपहकर ० मण्डितो ०
 नगरेहितो अभिनिग्गच्छति २ जेणेव पाचाळे जणवण तेणेव पद्दारेत्य गमणाए)
 त्यासपडी ज्यारे यथा इती समाचार आपीने कापिल्यपुर नगर पाछा
 आवी गया त्यारे वासुदेव प्रभुष धष्ठा हुन्दरे राजज्योत्ये स्नान क्यो
 अने त्यारथाड पोताना शरीर उपर कपथो धारणु कर्वा यावत् आयुषी अने
 प्रहरणोने पोतानी साथे लीधा त्यासपडी तेज्यो यथा पोतपोताना प्रधान
 हाथीज्यो ७) अने हाथी, घोडा, रथ अने महाभटोना समु
 दायनी सा १-नगरेथी नीकपना अने नीकपुनीने ज्या
 ना थया ॥ सूत्र १६

भो देवाणुप्पिया । वासुदेवपामुक्खाण वहूणं रायसहस्साणं
 आवासे करेह तेवि करेत्ता पच्चप्पिणांति, तएण दूवए
 वासुदेवपामुक्खाण वहूणं रायसहस्साण आगम जाणेत्ता
 पत्तेयर हत्थिखध जाव परिवुडे अग्घ च पज्ज च गहाय सवि-
 ङ्घिए कपिल्लपुराओ निग्गच्छइ निग्गच्छित्ता जेणेव ते वासु-
 देवपामुक्खा वहवं रायसहस्सा तेणेव उवागच्छइ उवाग-
 च्छित्ता ताड वासुदेवपामुक्खाइ अग्घेण य पज्जेण य सक्कारेइ
 सम्माणेइ सक्कारित्ता सम्माणित्ता तेसि वासुदेवपामुक्खाण
 पत्तेयर आवासे वियरइ, तएणं ते वासुदेवपामोक्खा जेणेव
 सचार आवासा तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता हत्थिख-
 धाहितो पच्चोरुहति पच्चोरुहित्ता पत्तेय खधावारनिवेस
 करेति करित्ता मएर आवासे अणुपविसति अणुपविसित्ता
 मएसुर आवासेसु य आसणेसु य सयणेसु य सन्निसन्ना य
 सत्तुयट्ठा य वट्ठहि गधब्बेहि य नाडएहि य उवगिज्जमाणा य
 उवणच्चिज्जमाणा य विहरति, तएणं से दुवए राया कपिल्ल-
 पुर नगर अणुपविसइ अणुपविसित्ता विउल असण४ उवक्ख-
 डावेइ उवक्खडावित्ता कोडुवियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एव
 वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया । विउल असण४ सुर
 च मज्ज च मम च सीधु च पसण्ण च सुवहुपुप्फवत्थगंधम-
 ल्लालकार च वासुदेवपामोक्खाण रायसहस्साण आवासेसु
 साहरह, तेवि साहरति, तएण त वासुदेवपामुक्खा त विउलं

सन्नद्धमिदमित्यत्र यावद् सृष्टीनामृत्प्रसङ्गाः इति न्यक्तवत्प्रगता इत्यत्रय
 महाभट्टवद्वत्प्रसङ्गपरिज्ञानाः=भट्टान्तर्यमहासुगुप्तमृत्परिज्ञानाः, स्वकेभ्यः
 स्वकेभ्योऽभिनिर्गच्छन्ति, अभिनिर्गत्य यत्र पश्चात्तो जनपदस्तत्रैव प्राधायन्
 गमनाय=गन्तुं प्रगताः ॥ सू० १९ ॥

मूलम्—तण्ण से दुवण् राया कोडुं वियपुरिसे महावेड् सदा
 वित्ता एव वयासी—गच्छहण तुमं देवाणुप्पिया । कपिल्ल
 पुरे नयरे वहिया गंगाण महानदीण अदूरसामंते एग मह
 सयपरमडव करेह अणेगखंभसयसच्चिविद्ध लीलद्विय साल
 भजिआग जाव पच्चप्पिणति, तण्णं से दुवण् राया दोच्चंपि
 कोडुवियपुरिसे सदावेड् सदावित्ता एव वयासी—खिप्पामेव

२०१५या सन्नद्ध इति न्यक्तवत्प्रगता इत्यत्रय ० महया भट्टचडगररहप-
 हकृत् ० सपत्तितो २ नगरेहितो अभिनिर्गच्छति २ जेणेव पाचाले जण
 वण तेणेव पहारेल्य गमणाए) यादमें जय दून समाचार देकर वापिम
 कापिल्ल पुर नगर में आचुके तत्र वासुदेव प्रमुख वे अनेक शास्त्र राजा
 प्रत्येक स्नान से निवृत्ते, और मज्जाकर अपने २ शरीर पर कवच पहिरा,
 यावत् प्रायुध और प्रहरणों को अपने २ साथ लिया, अपने २ प्रधान
 हाथी में पर चढे और हाथी घोडे रथ और महाभटों क समुदाय से
 त्रिरे हुए होकर ये सब अपने राज महलोंसे-नगरों से-निकले-निलकर
 जहा पांचाल जनपद या उस ओर चल दिये ॥ सू० १९

सन्नद्ध इति न्यक्तवत्प्रगता इत्यत्रय ० महया भट्टचडगररहपहकर ० सपत्तितो २
 नगरेहितो अभिनिर्गच्छति २ जेणेव पाचाले जणवण तेणेव पहारेल्य गमणाए)
 तयारपथी न्यारे षथा इतो समाचार आपीने कापिल्लपुर नगर पाछा
 आवी गया तयारे वासुदेव प्रमुख धरुा डुणरो रात्तओओ स्नान कया
 अने तयारभाड पोताना शरीर उपर कवचो धारणु कया यावत् आयुधी अने
 अडरओने पोतानी साथे लीधा तयारपथी तेओो षथा पोतपोताना प्रधान
 हाथीओो उपर सवार थया अने हाथी, घोडा, रथ अने भडा मगेना ससु
 हायनी साथे पोताना राजमहलथी-नगरेथी नीकणा अने नीकणीने न्या
 पाचाल जनपद इतो ते तरफ रवाना थया ॥ सूत्र १६ ॥

काङ् आसणाङ् अत्थुषपच्चत्थुयाङ् रएहर एयमाणत्तिय पच्च-
 प्पिणह, ते वि जाव पच्चप्पिणांति, तएणं ते वासुदेवपामुक्खा
 वहवे रायसहस्सा कल्ल पाउ० णहाया जाव विभूसिया हत्थि-
 खंधवरगया सकोरट० सेयवरचामराहि हयगय जाव परिवुडा
 सव्विद्धीए जाव रवेणं जेणेव सयंवरे तेणेव उवागच्छइ उवाग-
 च्छित्ता जणुपविमति अणुपविसित्ता पत्तेयर नामक्किएसु आस-
 णेसु निनीयति ढोवड रायवरकण्ण पडिवालेमाणा चिद्धति,
 तएण से पडुए राया कल्ल णहाए जाव विभूसिए हत्थिखध-
 वरगए सकोरट० हयगय० कपित्तपुरे मज्झमज्झेण निग्गच्छंति
 जेणेव सयवरमडवे जेणेव वासुदेवपामुक्खा वहवे रायसहस्सा
 तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता तेसि वासुदेवपामुक्खाण
 करयल० वद्धावेत्ता कणहस्स वासुदेवस्स सेयवरचामर गहाय
 उववीयमाणे चिद्धति ॥ सू० २० ॥

टीका—‘ तएण से ’ इत्यादि । ततः खलु स द्रुपदो राजा कौटुम्बिकपुर-
 पान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्—गच्छत खलु यूय इ देवानुप्रिया ।
 काम्पिल्यपुरस्य नगरस्य वहि प्रदेशे गङ्गाया महानया अदूरसामन्ते=नातिदूर-
 नातिमनापे एह महान्त समवरमडव कुर्वत कोटशनित्याह—‘ अणेग ’ इत्यादि ।

‘ तएण से दूवए राया कोडुविय पुरि से ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (दूवए राया) द्रुपद राजा ने (कोडुविय
 पुरिसे सदावेइ) कौटुम्बिकपुरको को बुलाया (सदाविता एव वयासी)
 बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा—(गच्छह ण तुम देवाणुप्पिया) कपित्तपुरे
 नगरे वहिया गगाए महानईए अदूरसामते एग मह सयवरमडव करेह,

‘ तएण से दूवए राया कोडुविय पुरिसे ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्था२५७ (दूवए राया) ६५. २१-२२ (कोडुवियपुरिसे
 सदावेइ) कौटुम्बिक पुरकोने बोलाया. (सदाविता एव वयासी) बो-
 लानेने आ प्रभाषे कलु के (गच्छह ण तुम देवाणुप्पिया) कपित्तपुरे नगरे
 वहिया गगाए महानईए अदूरसामते एग मह समवरमडव करेह, अणेगसम-

असणध जाव पसन्नं च आसाणमाणाध विहरति, जिमियाभुत्तु-
 त्तरागया वि य णं समाणा आयता जाव मुहासणवरगया
 वहूहि गधव्वेहि जाव विहरति, तण्णं मे दुवण गया पुव्वाव-
 रण्हकालसमयांसि कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव वयासी
 गच्छह णं तुम देवाणुप्पिया । कपिल्लपुरं सघात्तग जाव पहे
 वासुदेवपामुक्खाण य रायसहस्साण आवासेमुहत्थिखधवरगया
 महयार सहेण जाव उग्घासेमाणां एव वदह-एव खल्ल देवा-
 णुप्पिया कल्ल पाउं दुवयस्स रण्णो धूयाए चुलणीए देवीए
 अत्तयाए धट्टज्जुणस्स भगिणीए दोवईए रायवरकण्णाए
 सयवरे भविस्सइ, त तुव्वे ण देवाणुप्पिया । दुवच रायाणं
 अणुगिणहेमाणा पहाया जाव विभूसिया हत्थिखधवरगया सको-
 रटं सैयवरचामरं हयगयरहं महया भडचडगरेण जाव
 परिक्खित्ता जेणेव सयवरमटवे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 पत्तेय २ नामकिएसु आसणेसु निसीयहर दोवइ रायकण्णपडि-
 वालेमाणार चिट्ठह, घोसण घोसेहर मम एयमाणत्तियं पच्च-
 प्पिणह, तएण ते कोडुविया तहेव जाव पच्चप्पिणति, तएण
 से दुवए राया कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव वयासी
 -गच्छह ण तुव्वे देवाणुप्पिया । सयवरमडप आसियसमज्जि-
 ओवलित्तं सुगंधवरगंधियं पंचवण्णपुप्फपुजोवयारकलिय काला-
 गरुपवरकुदुरुक्कतुरुक्क जाव गधवट्ठिभूय संचाइमचकलिय करेह
 करित्ता वासुदेवपामुक्खाण वहुण रायसहस्साण

अनेकस्तम्भगतमनिविष्ट=भौतशास्त्रानुक्त, 'लीलट्टियसालभजियाग जाव पच्चपिणति) लीला स्थितशालभजिय=श्रीलया गिया भाउभजिया-पुत्तलिना गमिस्तादृशं, राम- 'तथास्तु' इति क्त्वा ते काटुम्बिकपुरुषाणमशा स्त्रीभ्य तथैव सपाद्य, प्रत्यर्पयन्ति=मण्डपोनिर्मित इति निर्देशयन्ति। ततः अष्टमद्रुपयो राजा 'दोचपि' द्वितीयवारमपि काटुम्बिकपुरुषाणां भ्राता, अष्टमद्रुपयो परमराजीव-हे देवानु प्रियाः ' भिप्रमेव रामुदेवपुत्राणां ब्रह्मा राजमहमागाम् आशास-रामस्थान कुरुत=चपत, तंऽपि काटुम्बिकपुरुषा 'परता' क्त्वा=रामुदेवरादीना निवापार्थं पृथक् पृथक् योग्य रासस्थान विधाय मत्प्रर्पयन्ति=द्रुपयाय राते न्ययन्ति। ततः अनेग यमसयसत्रिविष्ट लीलट्टियसालभजियाग जाव पच्चपिणति) हे देवानुप्रियो ! तुमलोग जाओ-और कापित्यपुरनगरके बाहिर गंगा महा नदी के नअतिदूर और न अति समीप-उचित स्थान-में एक बड़ाभारी स्वयंवरमंडप बनाओ। जो अनेक नई नई हाथोंसे युक्त हो तथा जिसमें विविध प्रकार की क्रीडा करती हुई पुत्तलिकाएँ सजा कर लगाई गई हों। यावत् " तथास्तु " कह कर उन लोगों ने राजा की इस आज्ञा को मान लिया और उसी आज्ञाके अनुसार स्वयंवर मंडप बना कर इसको खबर राजाको कर दी। (तएण से दुवण राया दोचपि कोट्टु मिय पुरिसे सदावेह सदावित्ता एव वयासी-खिप्पामेव देवाणुप्पिया। वासुदेव पासु क्खण ष्हण रायसहस्साण आवासे करह ते त्रि करेत्ता पच्चपिणति इसके बाद द्रुपद राजा ने दूसरे काटुम्बिक पुरुषों का बुलाया-बुलाकर उनसे ऐसा कहा-हे देवानुप्रियो ! तुम लोग शीघ्रातिशीघ्र वासुदेव

यसत्रिविष्ट लीलट्टियसालभजियाग जाव पच्चपिणति) हे देवानुप्रियो ! कापित्य पुरनगरनी गडार मडा नदी ग गाथी वधारे हर नही तेमन् वधारे नउठ पणु नडि जेवा योग्य स्थणे जेक लारे विशाण स्वयंवर मंडप तैयार करे के जे ब्रह्मा से कडा थाललाओवाणे छाय, तेमन् जेमा अनेक नतनी डीडा करती पूत जीओ सनपीने भूठवामा आवी छाय ते लोकोजे पणु ' तथास्तु ' कहीने राजानी आज्ञा स्वीकारी लीधी अने तयारपछी तेमनी आज्ञा सुनज ज स्वयं वर मंडप तैयार करीने राजने तेनी गणर आवी (तएण से दुवण राया दोचपि कोट्टु मियपुरिसे सदावेह, सदावित्ता एव वयासी-खिप्पामेव देवाणुप्पिया। वासुदेव पासुक्खण ष्हण रायसहस्साण आवासे करह, ते त्रि करेत्ता पच्चपिणति) तयारपछी दुपद राजजे पीम कोट्टु मिक पुत्ताने जोलाव्या अने जोलावीने तेमने कछु के हे देवानुप्रियो ! तमे लोको अविलम्ब वासु सणु

खलु दुपदो राजा वासुदेवप्रमुखाणा वहना राजसहस्राणाम् आगम=भागमन
 ज्ञात्वा प्रत्येक २ हस्तिस्कधरगतः, ह्यगजरथमहाभटमवूहपरिभृत, ज-र्थ=
 पानार्थं जल पार्थ=चरणप्रक्षालनार्थमुदकं च गृहीत्वा सर्पद्वर्षां छत्रचामरादिरूपया
 काम्बिल्यपुरतो निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव ते वासुदेवप्रमुखा बहुसहस्रमुख्याका-
 रानानस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य तानि वासुदेवप्रमुखाणि बहूनि राजमन्त्राणि=
 तान् बहुसहस्रसख्याकान् वासुदेवप्रमुखान् राज्ञः, अर्धेण च पात्रेण च सत्कार-

प्रमुख अनेक सहस्र राजाओं को बैठने के लिये पृथक् २ स्थान बनाओ ।
 उन्होंने राजाकी आज्ञानुसार बैसा ही किया और इसकी खबर राजा को
 कर दी । (तत्रण दृवण वासुदेव प्रमुखान् वृण रायसहस्राण आगम
 जाणेत्ता पत्तेय २ हस्तिस्त्रय जाव पडिबुडे अग्व च पज्ज च गहाय सव्वि
 ड्डीए-कपिल्लपुगओ निगगच्छइ, निगच्छित्ता जेणेव ते वासुदेव पामोक्खा
 वहवे रायसहस्रा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ताइ वासुदेवामु-
 क्खाइ अग्घेण य पज्जेण य सक्कारेइ, सम्माणेइ) इसके बाद दुपद
 राजा वासुदेव प्रमुख हजारों राजाओं को आगमन जानकर अपने प्रधान
 हस्ती पर आरूढ़ हो हय, गज, रथ तथा महाभटों के समूह के साथ २
 प्रत्येक राजा के लिये अर्ध-पीने के लिये पानी, पात्र-चरण प्रक्षालन के
 जल-लेकर छत्रचामर आदि अपनी राजविभूतियोंसे युक्त होकर काम्बिल्य
 पुर नगर से निकले-निकलकर जहां वासुदेव प्रमुख हजारों राजा ये बहा
 गये । वहां जाकर उन्होंने उन वासुदेव प्रमुख हजारों राजाओं का अर्ध

इन्होंने राजाओंके लियेसवा भाटे खुद खुद स्थान तैयार करे ते दोठोठे पखु
 राजनी आज्ञा सुणन न् पखु काम पतावी दीनु अने काम थक गयानी भ्रमर
 राज सुधी पडोआडी दीधी (तएग दुनर वासुदेवामुक्खाण वहुण राय
 सहस्राण आगम जाणेत्ता पत्तेय २ हस्तिस्त्रय जाव पडिबुडे अग्व च पज्ज च
 गहाय सव्विड्डीए कपिल्लपुराओ निगगच्छइ, निगच्छित्ता जेणेव ते वासुदेवामोक्खा
 वहवे रायसहस्रा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ताइ वासुदेवामुक्खाइ
 अग्घेण य पज्जेण य सक्कारेइ, सम्माणेइ) त्थारउओ वासुदेव प्रमुख इन्होंने
 राजाओंको आगमन साक्षात्ताने दुपद राजा पौतना प्रधान हाथी उपर सवार
 थया अने घोडा, हाथा, रथ तेमन मडालटोना समूहनी साथे हरेके हरेके
 राजने भाटे अर्ध-पीना भाटे पाली-वधने छत्र चामर वगेरे पौतानी राज-
 विभूतियों युक्त थधने काम्बिल्यपुरथी पडार नीगगना अने नीगगीने तथा
 वासुदेव प्रमुख इन्होंने राजाओंके लिये तना पडोआया तथा लज्जने तेमने ते

यति, समानयति, सत्कार्यं गत्कारु ॥, नान्य विषां ता द्वेषाम् तागा प्रत्यकर
 पृथक् - आराम 'विपद' विरति । १।। ननु ते वासुदेवमनुजा यत्रैव सदा
 = निजा २ आवासान्त्रैरापागच्छन्ति, उवासा य इति मन्त्रेणार् पन्त्रगोडन्ति
 प्रत्यरुह्य प्रत्येक २ स्कन्धारनिवेश कृत्वा, ७-ता स्के स्के आवासेषु प्रवि
 शन्ति, अनुपविश्य चक्रेषु स्वकषु जायतेषु-आवासेषु च यजनेषु च सन्निपन्ना
 उपविष्टाश्च तथा 'सनुपद्या' ता सर्वाणि। परिवर्तितवार्था १ तदुर्निर्णयैश्च 'नाड
 एहि य' नाडीश्च 'उरगिज्जमाणा य' उपगीयमानायाः 'उरगिज्जमाणा य'

और पाय से सत्कार किया-सन्मान किया। (सत्कारित्ता, सम्मानित्ता,
 तैस्ति वासुदेवमनुज्याण पत्तय २ आवासे विपद, तण्ण ते वासुदेव
 पासुस्या जेणेव सया २ आवासा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता इत्थि
 सधाहि तो पच्चोरुहति, पच्चोरुहित्ता पत्तय उवागारनिवेश करेति)
 सत्कार सन्मान करके उन्होंने उन नव वासुदेव प्रभुओं का प्रत्येक के
 लिये पृथक् आवास-स्थान-दिया,। इसके पश्चात् वे वासुदेव प्रभुलराजा
 जहाँ अपना २ स्थान नियत या-दला गये। वहाँ जाकर के अपने २
 हाथियों पर से नीचे उतरे और उतर करके उन्होंने अपनी २ स्कन्धा
 वार स्थापित कर दी-अर्थात् सैन्य को ठहरा दिया। (करित्ता सए २
 आवासे अणु०) ठहरा कर फिर वे अपने २ आवासों में प्रविष्ट हुए
 (अणुपविसित्ता सएसु २ आवासेसु य आसणेसु य सयणेसु य सन्नि
 सन्ना य सनुपद्या य बह्वहि गध्वेहि य नाडएहि य उरगिज्जमाणा य

वासुदेव प्रभुषु छन्दो रान्त्योऽनु अर्थ्यं अने पाद्यधी सत्कार तेभञ्ज सन्मान
 कर्तुं (सत्कारित्ता सम्मानित्ता तैस्ति वासुदेवमनुज्याण पत्तय २ आवासे विपद,
 तण्ण ते वासुदेवपासुस्या जेणेव सया २ आवासा तेणेव उवागच्छइ, उवा
 गच्छिता इत्थिसधाहितो पच्चोरुहति, पच्चोरुहित्ता पत्तय उवागारनिवेश
 करेति) सत्कार तेभञ्ज सन्मान करीने तेभञ्जे वासुदेव प्रभुषु द्वेदे द्वेदे
 रान्तने लुङ् लुङ् आवास स्थान आण्यु त्थारपछा वासुदेव प्रभुषु रान्त्यो
 न्या चोतपोतानु आवास स्थान नञ्ज करवाभा आण्यु छतु त्या गया त्या
 न्धने तेओ चोतपोताना छाथीओ उपरथी नीचे उतर्या अने उतरीने तेओओ
 चोतपोतानी स्कन्धावार-छावणी स्थापित करी ओटवे के संतानो पडाव नाण्यो
 (करित्ता सए २ आवासे अणु०) छावणी नाभीने तेओ चोतपोताना आवास
 स्थानभा प्रविष्ट थया (अणुपविसित्ता सएसु २ आवासेसु य आसणेसु य सयणे
 सु य सन्नि सन्ना य सनुपद्या य बह्वहि गध्वेहि य नाडएहि य

यति, समानयति, सत्कारार्थं सत्कारं कृत्वा, समान्य तेषां वासुदेवप्रसन्न्याया प्र यत्कर
 पृथक् २ आवासे 'त्रिपरद' स्तिरति । ततः यत्तु ते वासुदेवप्रसन्न्याया यत्रैव स्यात्
 २=निजा २ आवासास्त्रयोपागच्छन्ति, उपागन्त्य इति स्वरूपान् पश्यन्तौ इति
 प्रत्ययस्य प्रत्येकरे स्वरूपात्तरनिवेशं कुर्यात्, कृत्वा स्वके स्वके जायमानेऽनुप्रवि-
 शन्ति, अनुप्रविश्य स्वकेषु स्वक्षेषु जायमानेषु-जायमानेषु च यद्यनेषु च मनिषणा
 उपविष्टाश्च तथा 'सतुपट्टा' सत्प्रवर्तिताः परिवर्तितवार्थाः । यद्बुर्भिर्गन्त्रैश्च 'नाड
 एहि य' नाडौश्च 'उपगिञ्जमाणा य' उपगीयमानाः । 'उपगिञ्जमाणा य'

और पाव से सत्कार क्रिया-सन्मान क्रिया । (सत्कारित्ता, सम्मानित्ता,
 तेषां वासुदेववासुदेव्याण पत्तय २ आवासे त्रिपरद, तएण ते वासुदेव
 वासुदेव्या जेणेव सया २ आवासा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता इति
 खधाहिं तो पचचोरुहति, पचचोरुहित्ता पत्तय स्ववात्तरनिवेश
 करेति) सत्कार सन्मान करके उन्होंने उन नय वासुदेव प्रसन्न्या को प्रत्येक के
 लिये पृथक् आवास-स्थान-दिया, । इसके पश्चात् वे वासुदेव प्रसन्न्या राजा
 जहा अपना २ स्थान नियत या-दहा गये । वहा जाकर के अपने २
 हाथियों पर से नीचे उतरे और उतर करके उन्होंने अपनी २ स्कन्धा-
 वार स्थापित कर दी-अर्थात् सैन्य को ठहरा दिया । (करित्ता सए २
 आवासे अणु०) ठहरा कर फिर वे अपने २ आवासों में प्रविष्ट हुए
 (अणुप्रविसित्ता सएसु २ आवासेसु य आसणेसु य सयणेसु य सन्नि-
 सन्ना य सतुपट्टा य बहूहिं गण्वेहिं य नाडएहिं य उपगिञ्जमाणा य

वासुदेव प्रसुभ छजरे रालओतु अर्धे अने पाधथी सत्कार तेमज सन्मान
 कर्थुं (सकारित्ता सम्मानित्ता तेषां वासुदेववासुदेव्याण पत्तय २ आवासे त्रिपरद,
 तएण ते वासुदेववासुदेव्या जेणेव सया २ आवासा तेणेव उवागच्छइ, उवा
 गच्छित्ता इति खधाहिं तो पचचोरुहति, पचचोरुहित्ता पत्तय स्ववात्तरनिवेश
 करेति) सत्कार तेमज सन्मान करीने तेमजे वासुदेव प्रसुभ हरेके हरेके
 रालने लुड लुड आवास स्थान आण्यु त्पारपछी वासुदेव प्रसुभ रालओ
 ल्या पोतपोतानु आवास स्थान नछा करवाभा आण्यु छतु त्या गया त्या
 न्छने तेओ पोतपोताना हाथीओ उपरथी नीचे उतरथी अने उतरीने तेओओ
 पोतपोतानी स्कन्धावार-छावणी स्थापित करी ओटले के संनाने पडाव नाण्ये
 (करित्ता सए २ आवासे अणु०) छावणी नाण्येने तेओ पोतपोताना आवास
 स्थानमा प्रविष्ट थया (अणुप्रविसित्ता सएसु २ आवासेसु य आसणेसु य सयणे
 सु य सन्निसन्ना य सतुपट्टा य बहूहिं गण्वेहिं य नाडएहिं य

पविष्टा बहुभिर्गन्धर्वैर्याद् नाट्यैश्चोपगीयमाना उपन्तःप्रसन्नाश्च विहरन्ति=
आसते स्म इत्यर्थः ।

तत रत्न स मुण्दी राजा पूर्वापराहजालसमये कौटुम्बिकपुरूपान् शब्दयति,
शब्दयित्वा एवमनादीत्-गच्छत खलु हे देवानुमियाः ! काम्पित्यपुरे नगरे शृगा-
टक यावत्-त्रिचतुश्चत्तर महापथयेषु वासुदेवप्रसुखाणा च रात्रमहस्राणाणावा
सेषु आवासस्थानेषु हस्तिस्त्रयसरगता मत्ता २ शब्देन=उच्चैः न्यरेण यावद्
उद्गोपयन्तः २ एव वदन्-एव खलु हे देवानुमियाः ! इत्ये-आनामीनि द्वितीय

गधर्वो ने नाना प्रकार के स्तुत्यात्मक गीत गाये और नाट्यकारो ने
नृत्य दिखलाये । (तपण से द्रुप राधा पुञ्जावर्णकालसमयमि कौटु
म्बिकपुरिसे सदावेद, सदावित्ता एव ब्यासी, गच्छत ण तुमे देवाणुपिया ।
कपिलपुरे विघोटाग जाव पहेसु वासुदेवप्रासुखाण य राय महस्माण
य आदासेसु हस्तिस्त्रयसरगया महया २ मद्देण जाव उग्घोसेमाणा २
एव वदन्, एव खलु देवानुपिया ! तल पाउ० द्रुपस्म रणगो ध्रुयाए
चुलणीए देयीए अत्तयाए वदुजुणरत्न भगिणीए दोवईए रायवरकन्नाए
सयवर भविस्मइ) हमके बाद द्रुप राजा ने पूर्वापराह जाल के समय
में कौटुम्बिक पुरों को बुलाया और बुलाकर उनसे ऐसा कहा-हे
देवानु मियों ! तुमलोग हारी पर प्रेक्षकर काम्पित्यपुर नगर में जाओ
और वग शृगाटक यावत् त्रिच चतुश्चत्तर महापथ आदि मार्गों में
जो वासुदेव प्रसुख राजा के आवासस्थान हैं उनके समीप वड़े जोर २

उपर शांतिपूर्वक गेयी गया तेमना भनो-दिनोद भाटे गधर्वोञ्जे अनेक
जतना स्तुत्या मद्र जीनेा गाया अने नाट्यकारोञ्जे नृत्य करी जताव्या

(तपण से द्रुप राधा पुञ्जावर्णकालसमयमि कौटुम्बिकपुरिसे सदावेद,
सदावित्ता, एव ब्यासी, गच्छत ण तुमे देवाणुपिया । कपिलपुरे सप्राटग जाव
पहेसु वासुदेवप्रासुखाण य महया २ मद्देण जाव उग्घोसेमाणा २ एव वदन्,
एव खलु देवानुपिया ! तल पाउ० द्रुपस्म रणगो ध्रुयाए चुलणीए देयीए
अत्तयाए वदुजुणरत्न भगिणीए दोवईए रायवरकन्नाए सयवर भविस्मइ)

त्यारपछो दुप शब्दोञ्जे पूर्वापराह जालना समये कौटुम्बिक पुञ्जोने
जोताव्या अने जोला निने तेमने जा प्रभासे उल्लु के से देवानुमियो । तमे
दोडके जाली उपर गेयीने काम्पित्यपुर नगरमा जतयो अने त्याना शृगाटक
यावत् त्रिच चतुश्चत्तर महापथ वगेरे भार्गोभा-के भार्गोनी पासो वासुदेव
प्रसुख रात्रमोना आवास घरा छे तेनी याने जहु भोटा सादे आगतनी

ततः खलु ते वासुदेवप्रमुखास्तद् विपुलम्, असन पान ग्वाघ स्वाघ यावत् प्रसन्ना च ' आसायमाणा ' आसायान्तो विहरन्ति, अपि च खलु ' जिमिया ' जिमिताः-भुक्तवन्तः, ' भुत्तुत्तरागया ' शुकोत्तरागताः शुकोत्तर=भोजनानन्तरम् आगताः शुवतेत्यत्र भावे क्तः भोजनस्थानादासप्रवदेजे मुखप्रक्षालनार्थमागताः सन् ' आयता ' आचान्ताः-कृतचुल्लुगा, यावत्-मुखामनसरगताः=आगनपरं सुखो-

अशन, पान, त्वाघ स्वाघरूप चतुर्विध आहार को सुरा मद्य, मीधु और प्रसन्न मदिरा को और अनेक विध इन पुष्पों को चन्द्रों को गन्धमाल्य एवं अलङ्कारों को वासुदेव प्रमुख राजसहस्रों के आवास स्थानों पर ले जाओ। (ते वि साहरति) राजा की आज्ञानुसार वे सब उन अशनादिवस्तुओं को चहा पर ले गये। (तएण ते वासुदेवपामुक्खा त विउल असण ४ जाव पसन्न च आसायमाणा ४ विहरति) इससे बाद उन वासुदेव प्रमुख राजाओं ने उस आनीन विपुल अशनादिरूप प्रसन्ना मदिरा तरु की आहार की सामग्री को ग्वाघा (जिमिया भुत्तुत्तरागया वि य ण समाणा जाव सुहायणवरगया चहृहिं गधव्वेहिं जाव विहरति) खा पी कर जब वे निश्चिन्त हो चुके और मुख प्रक्षालन के लिये भोजन स्थान से उठकर दूसरे निकट स्थान पर आये-तब उन्होंने कुल्ला किया-और फिर सुन्दर अपने २ आसनों पर शांति पूर्वक आकर बैठ गये। इनके बैठते ही मनोविनोद के लिये

दोहा नत्थो अने आ अशन, पान, भाघ, स्वाघ इय चार नतना आडा रने सुरा, मध, भास, मीधु अने प्रसन्न मदिराने अने घण्टी नतना आ पुणोने, वञ्चोने, गधमाय अने अलङ्कारोने वासुदेव प्रमुख राजसहस्रोना आवास स्थाने पडोआओ (ते वि साहरति) राजनी आज्ञा प्रमाणे तेओ भद्राओ ते भाघ पढाओने राजओना आवास स्थाने पडोआओ दीधा (तएण ते वासुदेवपामुक्खा त विउल असण ४ जाव पसन्न च आसायमाणा ४ विहरति) त्थारपणी ते वासुदेव प्रमुख राजओओ त्था पडोआओवामा आवेला पुण्ण प्रमाणमा अशन वगेरेथी भाडीने प्रसन्न मदिरा सुधीना भधी नतना आडार सागथी वगेरेसु पूण इयिपूर्वक पान उयुं

(जिमिया भुत्तुत्तरागया वि य ण समाणा आयता जाव सुहायणवरगया चहृरिं गधव्वेहिं जाव विहरति)

जमी परिवारीने न्यादे तेओ निश्चित थछ चूक्या त्थारे तेओ सुभ प्रक्षालन माटे लोअन त्थानथी जिला धधने भीअ पासेना त्था तेओओ डोअणा थयो अने त्थारपणी तेओ हरी चेतये।

मण्डपस्तौरोपागच्छत, उपागत्य प्रत्येक ' नामकिण्ठु ' नामाङ्कितेषु स्व स्व नामान्तरयुक्तेषु आमनेषु निपीदत, निपद्य द्रौपदीं राजकन्या ' पडिवालेमाणा २ ' प्रतिपाद्यन्त, २ प्रतीक्षमाणा २ तिष्ठत इति घोषणा घोषयत, घोषयित्वा ममैताम्भक्तिं प्रत्यर्पयत, ततः खलु ते काण्डुभिन्नास्तथैव यावत् प्रत्यर्पयन्ति । ततः खलु स द्रुपदो राजा काण्डुभिन्नुपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-गच्छत खलु यूय हे देवानुप्रियाः ! सयवरमण्डपम् " आमियसम-ज्जियोवलि " आसिक्तसमार्जितोपलित्तम्=आसिक्तम्-जम्प्रक्षेपेणाद्रीकृत, समा-र्जित-कवचरात्रपनयनेन सशोधितम्, उपलित्त-मृद्गोमयादिभिरनुलित्त, तथा-सुगन्धरगन्धिय सुगन्धरगन्धिय-अगुरुगुणुठरुठरसरलदाहादिजनितसुगन्धयुक्त, ' पञ्चवर्गपुष्पजोवयारकलिय ' पञ्चवर्णपुष्पपुञ्जपचारमन्त्रिन । ' कालागुरुपवर-कुण्डुरुहव-ताव ग-गद्विभूष ' कालागुरुपवरकुण्डुरुह कुरुकुरु-यावद्-गन्धवर्ति-भूत, अत्र यावत्तुवेन-प्राडञ्जनमनपनगन्धुद्गुयाभिराम ' इति बोध्यम् ।

सब व साथ हो । मण्डप में आकर प्रत्येक जन अपने अपने नामवाले आसन पर बैठजावे । बैठकर फिर वहा वहा राजवर कन्या द्रौपदी की प्रतीक्षा करें । (घोसण पोसेह २ मम एयमाणत्तिय पच्चपिणह) इस प्रकार की घोषणा करो और जन तुमलोग ऐसी घोषणा कर चुको तब इसकी हमें पीछे खबर दो । (तएण ते कोडुत्रिया तहेव जाव पच्च पिणति) उन काण्डुभिक पुरुषों ने नृपाज्ञानुमार ऐसा ही क्रिया-वाद् में हमलोग आपकी आज्ञानुसार घोषणा कर चुके हैं ऐसी सूचना राजा के पास भेज दी । (तएण से द्रुवण राया काण्डुत्रिय पुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-गच्छह ण तुव्भे देवाणुपिया । सयवरमण्डव आसिधमज्जियओवलित्त सुगंधवरगन्धिय पच्चवण्णपुष्पजोवयार-कलिय कालागुरुपवरकुण्डुरुहकुरुकुरु जाव गधवद्विभूष मचाइमचकलियं

म उपमा आनीने हरेडे हरेड पोतपोताना नामवाणा आसन उपर जेभी नय त्या जेभीने तेओ राजवर कन्या द्रौपदीना आगमननी प्रतीक्षा करे (घोसण पोसेह २ मम एयमाणत्तिय पच्चपिणह) आ रीने तमे घोषणा करे अने आम धर्य नय त्यारे भने अमर आपे (तएण ते कोडुत्रिया तहेव जाव पच्चपिणति) ते कोडुभिक पुरियोओ राजनी आज्ञा प्रभाणे न णधु काम पनावी दीधु अने ' अमे होडोओ आपनी आज्ञा अनुसार घोषणा करी छे ' ओवा अमर नाननी पासे पडोआदी दीवी

(तएण से द्रुवण राया कोडुत्रियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-गच्छह ण तुव्भे देवाणुपिया ! मयवरमण्डव आमियसमज्जियओवलित्तं सुगन्धर-गन्धिय पच्चवण्णपुष्पजोवयारकलिय कालागुरुपवरकुण्डुरुहकुरुकुरु जाव गधवद्वि-

दिवसे प्रादुर्भूतप्रभाताया रज या तेजसा ज्वलति सूर्येऽभ्यदृते द्रुपदस्य रामो
 दुहितुः=पुत्र्या, चुलन्यादेव्या आत्मजाया, धृष्टद्युम्नस्य भगिन्या द्रौपद्या राजर-
 फ्न्याया स्वयवरो भगिन्यति, तद=रमात् रत्न हे देवानुप्रिया । गृग द्रुपद
 राजान्गनुसृष्टतः रनाता यावत्-सर्गलङ्कारविभूषिता-हस्तिश्वधरगताः सको-
 रण्टमाल्यदाना छत्रेण ध्रियमाणेन श्वेतचामरैरदधूगमानिश्च युक्ताः द्यग-
 जरथमहाभटकरेण चतुरङ्गवलेन यावत् परिक्षिप्ता=परिवृता यज्ञेय स्वयवर-

से ऐसी घोषणा करते हुए कहो-कि हे देवानुप्रिय ! कल नृयोदय होने
 पर द्रुपद राजा की पुत्री चुलनी देवी की आत्मजा और धृष्टद्युम्न की
 बहिन राजवर कन्या-द्रौपदी का स्वयवर होगा (त तुम्हेण देवानुप्रिया ।
 दुष्य रायाण अणुगिण्हेमाणा ण्हाया जाव विभूसिया हत्थिखधवरगया
 सकोरण्ट० सेयवर चामर० ह्य गयरह० महया भटचटगरेण जाव
 परिविखत्ता जेणेव सयवर मडवे तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता पत्तेयर
 नामकिण्णु आसणेसु निसीयह २ दोवट्ठ रायकण्ण पडिवालेमाणा २
 चिट्ठह) इस लिये हे देवानुप्रियो ! आपलोग द्रुपदराजा के ऊपर कृपा
 करके स्नान आदि से निवट कर एव समस्त अलकारों से विभूषित
 होकर जहाँ स्वयवर मंडप है वहाँ पधारे । आते समय हाथियों पर
 बैठकर आवे । कोरण्ट पुष्पों की मालाओं से सुशोभित छत्र उभ
 समय आप सब के ऊपर तने हों और श्वेत सुन्दर चामर ऊपर ढोरे जा
 रहे हों । ह्य, गज, रथ एव महाभटों का समूहरूप चतुरगदल आप

घोषणा करे के हे देवानुप्रियो ! आवती कावे सवार तथा द्रुपद राजनी पुत्री
 चुलनी देवीनी आत्मजा अने धृष्टद्युम्ननी गहेन राजवर कन्या द्रौपदीने।
 स्वयवर थसे

(त तुम्हेण देवानुप्रिया ! दुष्य रायाण अणुगिण्हेमाणा ण्हाया जाव विभू
 सिया हत्थिखधवरगया सकोरण्ट० सेयवरचामर० ह्य गयरह० महया भटचड-
 गरेण जाव परिविखत्ता जेणेव सयवरमडवे तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता
 पत्तेय नामकिण्णु आसणेसु निसीयह २ दोवट्ठ रायकण्ण पडिवाले माणा २ चिट्ठह)

अथी हे देवानुप्रियो ! तमे लोकें द्रुपद राजा ऊपर भडेरजानी करीने
 स्नान वगेरेथी परवारीने तथा समस्त अलकारेथी विभूषित थधने न्या
 स्वयवर मडप छे, त्या हाथीअेण ऊपर सवार थधने पधारे । केरट पुष्पोनी
 भाजाओनी शोभतु छत्र ते वथते तभारा ऊपर ताण्णु डोवु जेधजे अने
 सड्ढेथ अमरो पणु तभारा ऊपर डोवाणा डोवा जेठजे हाथी, रथ अने मडा
 लोटाणा समूड ३५ अतुरगिणी सेना तभारी साथे डोवी २

मण्डपस्त्रैरोपागच्छत. उपागत्य प्रत्येक ' नामकिण्वसु ' नामाङ्कितेषु स्व स्व नामाक्षरस्युक्तेषु आसनेषु निषीदत, निषद्य द्रौपदी राजकन्या ' पङ्क्तिवालेमाणा २ ' प्रतिपालयन्त २ प्रतीक्षमाणा. २ तिष्ठन् इति घोषणा घोषयत, घोषयित्वा ममैतामाज्ञप्तिका प्रत्यर्पयत, ततः खलु ते कौटुम्बिकारतथैव यावत् प्रत्यर्पयन्ति । तत खलु स द्रुपदो राजा कौटुम्बिकपुरूपान् शब्दयति, शब्दयित्वा एतन्नादीन्-गच्छन् खलु यूय हे देवानुप्रिया. ! सयवरमण्डपम् " आमियसम-ज्जिओवलिन " आसित्तसमार्जितोपलित्तम्=आसित्तम्-जन्मप्रक्षेपेणार्जितम्, समा-र्जित-कवचरायपनयनेन सशोभितम्, उपलित्त-मृद्गोमयादिभिरनुलित्त, तथा-सुगन्धगन्धिय सुगन्धगन्धिवन-अगुरुगु-गुरुकूर्परत्तरलदाहादिजनितसुगन्धयुक्त, ' पञ्चवर्णपुष्पजोवयारकलिय ' पञ्चवर्णपुष्पपुञ्जापचारमन्त्रित । ' कालागुरुपवर-कुटुम्बिकुरव-जाव गन्धवद्विभूय ' कालागुरुपवरकुटुम्बिकुरुकुरुकुरु-यावद्-गन्धवर्ति-भूत, अत्र यावत्कवेन-मृदङ्गज्ञापनप्रवणन्दुद्गुयाभिराम ' इति शोध्यम् ।

सब क साय हो । मण्डप में आकर प्रत्येक जन अपने अपने नामवाले आसन पर बैठजावे । बैठकर फिर वहा वहा राजवर कन्या द्रौपदी की प्रतीक्षा करें । (घोसण घोसेह २ मम एयमाणत्तिय पञ्चपिणह) इस प्रकार की घोषणा करो और जब तुमलोग ऐसी घोषणा कर चुको तब इसकी हमें पीछे खबर दो । (तण्ण ते कोट्टुत्रिया तहेव जाव पञ्च पिणत्ति) उन कौटुम्बिक पुरुषों ने नृपाजानुमार ऐसा ही किया-बाद में हमलोग आपको आजानुसार घोषणा कर चुके हैं ऐसी सूचना राजा के पास भेज दी । (तण्ण से दुवए राया कोट्टुत्रिय पुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-गच्छह ण तुम्भे देवाणुप्रिया । सयवरमण्डव आसित्तसमज्जिओवलित्त सुगन्धवरगन्धिय पञ्चवर्णपुष्पपुजोवयार-कलिय कालागुरुपवरकुटुम्बिकुरुकुरुकुरु जाव गन्धवद्विभूय मचाइमचकलियं

मण्डपमा आसीने हरेके हरेड पोतपोताना नामवाणा आसन उपर जेनी लय त्या जेनीने तेओ राजवर कन्या द्रौपदीना आगमननी प्रतीक्षा करे (घोसण घोसेह २ मम एयमाणत्तिय पञ्चपिणह) आ सीते तमे घोषणुा करे अने आम थर्ध लय त्यारे अने अमर आपे । (तण्ण ते कोट्टुत्रिया तहेव जाव पञ्चपिणत्ति) ते कौटुम्बिक पुरुषोअे राजनी आज्ञा प्रमाणे व णधु काम पतावी दीधु अने ' अमे बोकेअे आपनी आज्ञा अनुसार घोषणुा करी छे ' जेवा अण्ण राजनी पासे पडोआडी दीवी

(तण्ण से दुवए राया कोट्टुत्रियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-गच्छह ण तुम्भे देवाणुप्रिया ! सयवरमण्डव आमियसमज्जिओवलित्त सुगन्धवर गन्धिय पञ्चवर्णपुष्पपुजोवयारकलिय कालागुरुपवरकुटुम्बिकुरुकुरुकुरु जाव गन्धवद्वि-

ध्रुवदशमानमघमघायमानगन्धोद्भृताभिराम, तत्र कालागुरु कृष्णागुरु, प्रवर-
 कुन्दुरु-चीडानामको गन्धद्रव्यविशेषः, तुल्यक च सितकः, भृशत्र गन्धद्रव्यसयो
 गन इति द्वन्द्वः, यद्वा-इतत्प्रमन्त्री यो ध्रुवध्वस्य दत्तानस्य च सुरभिर्ममना
 यमानः-भतिशमवान्, गन्ध उद्भूतस्तेनाभिरामो रमणीय स तथा त तथा-
 ग रार्तिभूग रार्ति-ग र्ध्वगुडिकातद्भूत-तत्सहामोभ्यातिशयात् तथा-
 'मचाइमचकलिय' मञ्जातिमञ्जकलित कुरत, कृत्वा यामुदेवमुत्वाणा नहूनां

करेह, करिस्ता वासुदेव पासुखलाग बहूग रायसहस्ताग पतेय २ नाम
 काइ आसगाइ अत्युपपच युगाइ रएइ २ एवमाणत्ति पचवपिगह)
 इसके बाद भुवदराजा न कौटुम्भिक पुरुवा को बुझाया और जुलाकर
 उनसे ऐसा कहा-हे देवानुप्रेया ! तुम लोग जाना-श्रीर स्वयंवर मंडप
 को आसित्त कर-जलखिवन से जाईं रुगे, समार्जित करा-
 कचर आदि को उससे बाहिर कर उसे साक करो एव उपलित
 करो मित्रे तथा गावर से उसे लीयो । सुगधर गधिन करो उसमे-
 अगुरु, गुग्गुलु, कपूर आदि को जलाकर उनकी गन्ध से उसे सुगध
 युक्त बनाओ पचरग क पुष्पा क पुज उसमें जगह २ रखो । कृष्णा-
 गुरु प्रवर कुन्दुरुक, तुल्यकओमान इनके चूर्ण को वहाँ आग्न में
 खूब जलाकर उनके गन्ध से उसे बहुत ही अधिक मनोभिराम
 बनाओ ज्यादा देवा-उस एसा करदा कि जेसस ऐसा ज्ञान हा कि
 यह एक सुगन्धित द्रव्य को वर्तिका है । वही मचा के ऊपर मचो को

भूय मचाइमचकलेय करेह, करिस्ता वासुदेवपासुखलाग बहूग रायसहस्ताग पतेय
 २ नामकाइ आसगाइ अत्युपपच युगाइ रएइ २ एवमाणत्ति पचवपिगह)

त्यारपछी इप० सल्ले छोडुमिक पुश्चोने गोलावा अने गोलावीने
 कछु के डे देवानुप्रेयो । तमे बोका ललेओ अने स्वयंवर मंडपने आनिक्त
 करा-पाणी छोडो, समार्जित करो, कचरा वगेरे साइ करो, अने उपलित
 करो, अटले के भाटी तेमज छावुथी लीयो सुगधर गधिन करो अटले क
 ते स्थाने अगुरु, गुग्गुलु, कपूर वगेरेना धूप करीने तेनी सुगधथी ते स्थानने
 सुवासित्त करो पचरवर्षुना पुष्पपुजना समूछो स्थाने स्थाने गोठवने तमे मंडपनी
 शोलामा अलिवृद्धि करो कृष्णागुरु, प्रवर, कुन्दुरुक, तुल्यक, लोणान आ
 गधा पदाथेना चूर्णने अग्निमा नापीने ते स्थानने सुगधथी भूषण रम
 णीय बनावी हो ते स्थानने तमे अेषु मन्स सुगधमय बना । ते लेथी
 ते सुगन्धित द्रव्योनी वर्तिका (अगुरुकत्ता) लेखु लागे २

राजमहत्ताना प्रत्येक २ नामाङ्कितान्यासनानि ' जत्पुयपच्चत्पुपाड ' आस्तृत
 प्रत्यवस्तृतानि=आच्छादित प्रत्याच्छादितानि ' रणह ' रचयत, रचयिन्ना एतामा
 इतिहा प्रत्यर्पयत, तेऽपि=कौटुम्बिकपुरुषाः, यायत् प्रत्यर्पयन्ति । ' तएण ते '
 वासुदेवप्रभुवाः बहुमहत्समलषकाराजान ' कठ ' कल्पे प्रादुर्भूतप्रमाताया रजन्वा
 यावन् तेजना ज्यञ्जति मूर्धञ्भ्युग्गते स्नाता यायत् सर्गैलकारविभूषिता हस्ति-
 रक्तचरगता सक्कोरष्टमाल्यदान्ना उोग प्रियमाणेन चेतपरचामरगुड्प्रयमानैव
 उक्ता ह्य गज-यायत्-रूपदानिममूहेन परिवृता सर्पद्वर्पा यायत् ' शङ्खणहपट
 हादीनां रवेण यत्रेन स्थाने स्वययरण्डपस्तत्रोयोगञ्जन्ति, उपागत्यानुपविशन्ति,
 अनुपविश्य प्रत्येक २ ' नामक्रिएसु ' नामाङ्कितेषु=स्वररनामाक्षरस्युक्तेषु नापनेषु
 निपीदन्ति=उपनिशन्ति, निपय द्रौपदी राजररुन्वा ' पडिवालेमाणा ' प्रति-
 पालयन्त =प्रतीक्षमाणास्तिष्ठन्ति ।

रखो । उन पर वासुदेव प्रभुव राजाओ के प्रत्येक के नाम क आसनो
 को आरतुन-शुभ्रवस्त्र से ढरकर प्रत्यवस्तृत-और छितीय शुभ्रवस्त्र से
 आच्छादित कर रखो । रख कर फिर हमें पीठे इस सब कार्य के समाप्त
 होने की खबर दो । (ते वि जाव पच्चप्पिणति) इस प्रकार राजा की
 आज्ञानुसार उन कौटुम्बिक पुरुषों ने सब कार्य उचित रूप में करके
 पीठे राजा को " सब कार्य आज्ञानुसार यथोचित हो चुका है " ऐसी
 खबर करदी । (तएण ते वासुदेवपासुक्त्वा बहवे रायसहस्सा कल्ल
 पाउ० ण्हाया जाव विन्नमिया हत्थियवधवगया सक्कोरट० सेयवर-
 चामरार्हि ह्य गय जाव परिवुडा सच्चिड्डीए जाव रवेण जेणेव सयवरे
 तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अणुपविससि, अणुपविससित्ता पत्तेय
 नामक्रिएसु आसणेसु निसीयति, दोवइ रायवररुण्ण पडिवालेमाणा २

मथोनी गोडवणु करे । त्या तमे वासुदेव प्रभुष दरडे दरक राजना नामथी
 अकित थयेवा आसनोने आस्तृत-स्व०७ वस्त्रथी ढाडीने, प्रत्यावस्तृत अने
 भीम स्व०७ वस्त्रथी ढाडे । आ णु काम पतावीने तमे अमने णयर आपो
 (ते वि जाव पच्चप्पिण ति) आ गीते राजनी आशा मालणीने ते कौटुम्बिक
 उडधेअे ते सुज्जण णु काम पतावी दीधु अने लारपजी ' तमारी आशा
 सुज्जण काम णु पती जयु छे ' अेनी णयर राजनी पासे पडोआडी

(तएण ते वासुदेवपासुक्त्वा बहवे रायसहस्सा कल्ल पाउ० ण्हाया जाव
 विभूसिया हत्थियवधवरगया सक्कोरट० सेयवरचामरार्हि ह्य गय जाव परिवुडा
 सच्चिड्डीए जाव रवेण जेणेव सयवरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अणुपवि-
 सति, अणुपविससित्ता पत्तेय नामक्रिएसु आसणेसु निसीयति, दोवइ रायवररुण्ण

ततः सल्लु 'पट्ट' पाण्डु नामको राजा 'कल्लु' वस्य-पात. काळे स्नातो
 यासन् सर्वाङ्गकारिभूपितो हस्तिस्वप्नरगत' सकोरण्टमात्प्रदाग्ना छत्रेण त्रिय
 माणेन श्वेतारचामरैरुद्धूयमानेश्च युक्तो ह्यगजरथपदातिनमूहेन परित्त. सर्प-
 द्वर्षा यासत्-रवेण काम्पिल्यपुरस्य नगरस्य मध्यम येन म प्रभूत्या निर्गच्छति,
 निर्गत्य यत्रैव स्वयंरमण्डपो यत्रैव वासुदेवप्रमुखा मनुजदक्षतरयका राजानम्व-
 र्जोवोपागच्छति, उपागत्य तेषा वासुदेवप्रमुखाणा करतल्पमिन्द्रीतदशनस

चिह्निति) इस के बाद वे वासुदेव प्रमुख हजारों राजा दूसरे दिन जब
 रात्रि समाप्त हो चुकी प्रातः काल हो गया-सूर्य उदित हो चुका तब
 स्नान यासत् समस्त अलकारों से विभूषित होकर, हाथियों पर चढे
 हुए ध्रियमाण कोरट पुष्पों की माला से विराजित छत्र से युक्त होते
 हुए उद्धूयमान श्वेत वरचामरो से वीज्यमान होते हुए एव ह्य, गज
 यासत् रथ पदाति समूह से परिवृत्त होते हुए अपनी राज विभूति के
 अनुमार यासत् शत्रु पणव पट्ट आदि के साथ २ जटा वह स्वयंवर
 मंडप था-वही आये। वहा आकर वे सत्र उसके भीतर प्रविष्ट हुए।
 प्रविष्ट होकर वे प्रत्येक जन अपने २ नाम से अग्नि आसनों पर पृथक
 २ बैठ गये और राजवर कन्या द्रौपदी की प्रतीक्षा करने लगे। (तएण
 से पट्टण रागा कल्लु पहाण जाय विभूसिण सकारटं ह्यगयं कपिल्लपुर
 मज्जमज्जेण निगच्छति-जेणेव मयवरमडवे जेगेव वासुदेव पाण्डु
 प्राया वहवे रायमहस्सा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तेनि वासुदेव

पट्टियालेमाणा २ चिह्निति)

त्यारपछी वासुदेव प्रमुख हजारों राजाओं की २ दिवसे न्यारे रात्रि
 पसार थई गई अने सवार थता सूर्य उदय पाभ्यो त्यारे स्नान वगेरेथी
 परवारीने पोताना गरीरने पधा आलूषण्णोथी शल्लुगारीने, हाथ्याओ उपर
 सवार थ 'ने, सुग धित कोरट पुष्पोनी भाणाओथी शोलित अने छत्रथी युक्त
 थई उत्तम श्वेत आभरेथी वीज्यमान थता तेमज घोडा, हाथी यावत् रथ
 पदाति समूहथी परिवृत्त थता पोताना राजन पैलव अनुसार यावत् शत्रु
 पणव पणव वगेरे वासुदेव साथे न्या स्वयंवर मंडप हुतो त्या गया
 त्या न्छने तेओ प्रविष्ट थया अने प्रविष्ट थईने तेओ पोत
 पोताना न ि गगनेओ उपर जेथी गया अने राजवर कन्या
 द्रौपदीनी

जाय विभूसिए हस्तिखधरगए सकी
 पायुक्त्वा वहवे रायमहस्ता तेणेव

शिर आदत्तं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा जयेन विजयेन वर्धयित्वा कृष्णस्य वासुदेवस्य श्वेतवराचामरं वृहीत्या 'उपवीयमाणे' उपवीजयन् चामराद्धननेन सेवमानं स्तिष्ठति ॥ सू० २१ ॥

पानुमत्याण करयलवद्धाघित्ता कृष्णस्य वासुदेवस्य सेववरचामर गहाय उपवीयमाणे चिह्नति) इस के घाट पाटु नामक राजा प्रातः काल स्नान से निघट कर और समस्त अलङ्कारों से विभूषित होकर अपने पट्ट गजराज पर चढ़ कर कापिल्य पुर नगर के बीच से होते हुए उस स्वयवर मठप में आये। जत्र ये गजराज पर चढ़े हुए आरहे थे उस समय इन के ऊपर कोरट पुष्पों की माला से विरजित छत्र, छत्रधारियों ने तान रखा था। चामर ढोरने वाले शुभ्र चामर ढोर रहे थे। हय, गज, रथ एक पदादि समूहरूप चतुरगिणी सेना इनके साथ चल रही थी। राजसी हाटगाट से ये सुसज्जित थे। विविध राजे साथ में व्रजते हुए आरहे थे। मठप में आकर ये जहां वासुदेव प्रमुख हजारों राजा बैठे हुए थे-बहा गये। बहा जाकर उन्होंने उन वसुदेव प्रमुख हजारों राजाओं को दोनों हाथ जोड़ कर बड़ी नम्रता के साथ नमस्कार किया। जय विजय शब्दों द्वारा उन्हें बधाई दी। बधाई देकर फिर ये कृष्ण वासुदेव के ऊपर श्वेतचामर लेकर ढोरते हुए बहा बैठ गये ॥ सू० २० ॥

उवागच्छद्, उवागच्छित्ता तेषां वासुदेवपामुक्त्वाण करयलवद्धाघित्ता ऋषभस्य वासुदेवस्य सेववरचामर गहाय उपवीयमाणे चिह्नति)

त्यारपछी पाटु नामक राजा सवारे स्नानधी परवागीने समस्त अलङ्कारों से विभूषित होकर कापिल्यपुर नगरनी वर्येटी पमार थरुने स्वयवर मठपमा आग्या ब्यारे तेओ गजराज उपर भेगीने आवता छता त्यारे जोगट पुष्पोंनी भाणा ओधी शोभित छत्र छत्रधारीओओ ताछेवु छतु आमर ढोणनाराओ श्वेत आमरे ढोणी रक्षा छता, घोडा, हाथी, रथ अने पट्टाति समूह रूप चतुरगिणी सेना तेमनी साथे साथे आली ग्ही छती राजसा हाथी तेओ सुमन्जित छता, अनेक नतना वान्तओ वागी रक्षा छता मठपमा आवीने तेओ ब्या वासुदेव प्रमुख छतरों राजओ भेडेला छता त्या गया ब्या वासुदेव प्रमुख राजओ भेडेला छता त्या तेमनी पाने बर्तने तओओ वासुदेव प्रमुख सर्व राजओने भूषण नमस्कारे अने हाथ जोडीने नमस्कार कया ब्य विजय शब्दोधी तेओने अलिनहित कया अलिनहित कया भाह तेओ कृष्ण वासुदेवनी उपर श्वेत आमर ढोणता त्या भेसी गया ॥ सू० २० ॥

ततः सख 'पडुए' पाण्डु नामको राजा 'कल्ल' गल्ये-भा. काळे स्नातो यावत् सर्वालङ्कारविभूषितो दस्तिस्त्रयसरगत सकोरण्टमाल्यदाम्ना श्रेण गिय माणेन श्वेतत्रचामरैरुद्भूयमानेश्च युक्ता ह्यगजरथपदातिममूढेन परिवृतः सर्वा द्वर्वा यावत्-रजेण काम्पिल्यपुरस्य नगरस्य मध्यम येन मयेभूत्या निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव सपरमण्डपो यत्रैव वासुदेवप्रमुखो बहुमहस्रस्यका राजानमन्त-त्रैवोपागच्छति, उपागत्य तेषा वासुदेवप्रमुखाणा करतल्पमिन्द्रीतशसन

चिह्निति) इस के बाद वे वासुदेव प्रमुख हजारों राजा दूसरे दिन जब रात्रि समाप्त हो चुकी प्रातः काल हो गया-सूर्य उदित हो चुका तब स्नान यावत् समस्त अलंकारों से विभूषित होकर, हाथियों पर चढ़े हुए ध्रियमाण वोरट पुष्पों की माला से विराजित छत्र से युक्त होते हुए उद्भूयमान श्वेत वरचामरों से वीज्यमान होते हुए एव ह्य, गज यावत् रथ पदाति समूह से परिवृत्त होते हुए अपनी राज विभूति के अनुमार यावत् शश्व पणव पट्ट आदि के साथ २ जहा वह स्वयंवर मंडप था-वहाँ आये। वहाँ आकर वे सब उसके भीतर प्रविष्ट हुए। प्रविष्ट होकर वे प्रत्येक जन अपने २ नाम से अर्कित आसनों पर पृथक् २ बैठ गये और राजवर कन्या द्रौपदी की प्रतीक्षा करने लगे। (तएण से पडुए राया कल्ल ण्हाण जाव विभूसिए सकारटं ह्यगयं कपिल्लपुर मज्झमज्झेण निग्गच्छति-जेणेव सपरमण्डवे जेणेव वासुदेव पावु कत्वा वहवे रायमहस्सा तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता तेमि वासुदेव पडिवालेमाणा २ चिह्निति)

त्यारपणी वासुदेव प्रमुख हजारों राजाओं की २ दिवसे कन्या के रात्रि पसार यहाँ यहाँ आने सवार यथा सूय उदय पाभ्यो त्यारे स्नान वज्रेथी परवारीने पोताना शरीरने अधा आलूषण्णोधी शश्वगानीने, हाथियों के उपर सवार थे 'ने, सुग धित केरट पुष्पोनी भाजाओधी शोषित आने छत्रधी युक्ता यर्ध उत्तम श्वेत चामरैधी वीज्यमान यथा तेभज घोडा, हाथी यावत् रथ पदाति समूहधी परिवृत यथा पोताना राजन वैभव अनुसार यावत् शश्व पणव पट्ट वज्रे वाज्जओनी साथे कन्या स्वयंवर मंडप उदितो त्या गया त्या जर्धने तेओ अधा मंडपमा प्रविष्ट थया आने प्रविष्ट थर्धने तेओ पोत पोताना नामाकित लुह लुहा गगनेओ उर जेभी गया आने राजवण कन्या द्रौपदीनी प्रतीक्षा करवा लाग्या

(तएण से पडुए राया कल्ल ण्हाण जाव विभूसिए हतिस्त्रयसरगत सकी रंठं ह्य गयं सयवरमण्डवे जेणेव वासुदेव पावुक्त्वा वहवे ।

शिर आहतं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा जयेन विजयेन वर्धयित्वा कृष्णस्य वासुदेवस्य
 श्वेतवर्चामर रूहीचा ' उन्नीयमाणे ' उपवीजयन् चामराद्घुननेन सेवमान
 रित्प्रति ॥ सू० २१ ॥

पामुग्वाण करयल वद्वाविता कण्ठरम वासुदेवस्त सेयवरचामर गदाय
 उन्नीयमाणे चिह्नति) इस के घट पाहु नामक राजा प्रातः काल स्नान
 से निघट कर और समस्त अलकारो से विभूषित होकर अपने पट्ट
 गजराज पर चढ़ कर कांपिल्य पुर नगर के बीच से होते हुए उस स्व-
 यवर मटप में आये । जब ये गजराज पर चढ़े हुए आरहे थे उस समय
 इन के ऊपर कोरट पुष्पों की माला से विरजित छत्र, छत्रधारियों ने
 तान रखा था । चामर ढोरने वाले शुभ्र चामर ढोर रहे थे । हय, गज,
 रथ एक पदादि समूहरूप चतुरगिणी सेना इनके साथ चल रही थी ।
 राजसी हाटगाट से ये सुसज्जित थे । विविध राजे साथ में वजते हुए-
 आरहे थे । मटप में आकर ये जहा वासुदेव प्रमुख हजारों राजा बैठे
 हुए थे-वहां गये । जहा जाकर उन्होंने उन वसुदेव पामुग् हजारों राजाओं
 को दोनों हाथ जोड़ कर बटी नम्रता के साथ नमस्कार किया । जब
 विजय शब्दों द्वारा उन्हें ब माई थी । बधाई देकर फिर ये कृष्ण वासुदेव
 के ऊपर श्वेतचामर लेकर टोरते हुए वहा बैठ गये ॥ सू० २० ॥

उवागन्त्रद्, उवागन्त्रित्ता तैर्मि वासुदेवपामुग्वाण करयल वद्वाविता कण्ठरम
 वासुदेवस्त सेयवरचामर गदाय उन्नीयमाणे चिह्नति)

त्यारपछी पाहु नामक राजा सवारे स्नानथी परवारीने समस्त अलका-
 रेशी पोताना सरीरने शङ्खगारीने अने पोताना मुष्ण गजराज उपर सवार
 थपुने कांपिल्यपुर नगरनी वच्चेदी पमार थपुने स्वयंवर मटपमा आब्या
 न्यारे तेज्जो गजराज उपर जेमीने आवता हुता त्यारे कोरट पुष्पेनी भाणा
 ओधी शोभित छत्र छत्रवागीज्जोये ताणिवु हुतु चामर ढोरनाराज्जो श्वेत
 चामरें ढोणी रक्षा हुता, घोरा, हाथी, हय अने पदादि समूह उप चतुरगिणी
 सेना तेमनी साथे साथे आली ग्ही हुती गजराज हाठथी तेज्जो सुसज्जित
 हुता, अने उन्नतना वालज्जो वागी रक्षा हुता मटपमा आवीने तेज्जो न्या
 वासुदेव प्रमुख हुनरें राज्जो जेठेवा हुता त्या गया न्या वासुदेव प्रमुख
 गजराजो जेठेवा हुता त्या तेमनी पाये जधने तेज्जोये वासुदेव प्रमुख सर्व
 राज्जोने भूषण न नम्रपणे अने साथ जेडीने नमस्कार कथा नथ विजय
 शब्दोधी तेज्जोने अलिनहित कथा अलिनहित कथा जाह तेज्जो कृष्ण वासु
 देवनी उपर श्वेत चामर ढोणता त्या जेसी गया ॥ सूत्र २० ॥

ततः खलु 'पट्ट' पाण्डु नामको राजा 'कृष्ण' पत्न्य-भागं प्रापे स्नातो
 यावत् सर्वाङ्गहारविभूषितो दक्षिणस्वयं गतः, तत्रोत्थमाल्यदायना मन्त्रेण त्रिय
 माणेन श्वेतरचामरैरुद्धूयमानेन युक्ता हयगजस्यपदातिनमृदेन परिवृतः सर्व
 द्वर्चा यावत्-स्त्रेण काम्पिल्यपुरस्य नगरस्य मध्यमं येन मं वैभूत्या निर्गच्छति,
 निर्गत्य यत्रैव स्वयंरमण्डपो यत्रैव वामुदेयप्रसूत्या बभूवन्मत्स्यका राजानमत्-
 र्जीवोपागच्छति, उपागत्य तेषां वामुदेयप्रसूत्या वरतन्पद्मिणीतन्मनसः

चिह्नित) इस के बाद वे वासुदेव प्रमुख हजारों राजा दूसरे दिन जब
 रात्रि समाप्त हो चुकी प्रातः काल हो गया-सूर्य उदित हो चुका तब
 स्नान यावत् समस्त अलंकारों से विभूषित होकर, हाथियों पर चढ़े
 हुए त्रियमाण बोरट पुष्पों की माला से विराजित छत्र से युक्त होते
 हुए उद्धूयमान श्वेतरचामरों से वीज्यमान होते हुए पथ हय, गज
 यावत् रथ पदाति समूह से परिवृत्त होते हुए अपनी राज विभूति के
 अनुसार यावत् शय्य पणव पट्ट आदि के साथ २ जरा वह स्वयंवर
 मंडप था-वहाँ आये। वहाँ आकर वे सब उसके भीतर प्रविष्ट हुए।
 प्रविष्ट होकर वे प्रत्येक जन अपने २ नाम से अंकित आसनो पर पृथक्
 २ बैठ गये और राजवर कन्या द्रौपदी की प्रतीक्षा करने लगे। (तएण
 से पट्टे राया कल्ल ण्हाण जाव विभूत्तिण सकारटं० हयगयं० कपिल्लपुर
 मज्झमज्झेण निग्गच्छति-जेणेव सयवरमडवे जेणेव वामुदेय पाहु
 क्खा बहवे रायमहस्सा तेणेव उवागच्छह, उवागच्छत्ता तेसिं वामुदेव
 पडिवालेमाणा २ चिह्नित)

त्यारपणी वामुदेव प्रमुख हजारों राजाओं की भाँति द्विसे न्याये रात्रि
 पसार थई गई अने सवार थता सूर्य उदय पाये। त्पारे स्नान वगेरेथी
 परवारीने पोताना शरीरने भधा आलुषण्णोथी शय्यगारीने, हाथीओ उपर
 सवार थ'ने, सुग धित डेरट पुंपोनी माणाओथी शोभित अने छरथी युक्त
 थई उत्तम श्वेत थामरैथी वीज्यमान थता तेभय घोडा, हाथी यावत् रथ
 पदाति समूहथी परिवृत थता पोताना राजन वैभव अनुसार यावत् शय्य
 पणव पट्ट वगेरे वान्णोनी साथे जना स्वयंवर मंडप इतो त्या जना
 त्या ज्जने तेओ भधा मंडपमा प्रविष्ट थया अने प्रविष्ट थठने तेओ पोत
 पोताना नामाडित लुढ लुढा प्रासने उपर बेभी गरा अने राजवर कन्या
 द्रौपदीनी प्रतीक्षा करवा लाग्या

(तएण से पट्टे राया कल्ल ण्हाण जाव विभूत्तिण दक्षिणस्वयं गत
 र्दं० हय गयं० सयवरमडवे जेणेव वामुदेय वामुक्खा) तेणेव

वस्त्राणि परिधाय ' जिणपटिमाण अञ्चणं करेइ ' जिनप्रतिमाना, कामदेव प्रति-
मानामर्चन करोति विवाहविधि निर्विघ्न सपत्नार्थ मिति भावः ' करिच्चा ' कृत्वा
' जेणेव अतेउरे तेणेव उवागच्छइ ' यत्रैवा-तःपुर तत्रैवो- पागच्छति ॥ सू० २१ ॥

द्रौपदीचर्चा

यत्तु—“ जिणपटिमाण अञ्चणं करेइ ” इति पाठ समाश्रित्य भगवतोऽर्हतः
पूजन जैनधर्मानुयायिभिः कर्तव्यमित्याहुस्तमित्यात्वविलसितम्, अस्य पाठस्य
चरितानुवादरूपत्वेन विधायकत्वासम्भवात् । विधिवाक्य द्वि जिनाज्ञाया बोधक
त्वेन विधायकं भवति, यथा—भगवता विधेयतयोपदिष्ट पशुविधावश्यक चतुर्विध-

जिन प्रतिमा का कामदेव की प्रतिमा का निर्विघ्न विवाहकार्य के लिये
अर्चन करती है अर्चन कर के फिर वह (जेणेव अते उरे तेणेव उवा-
गच्छइ) जहाँ अत पुर था चला चली गई ॥ सू० २१ ॥

द्रौपदी चर्चा

जो “जिणपटिमाणं अञ्चणं करेइ” इस पाठका आश्रय लेकर प्रति-
मापूजन की उपयोगिता कहते हुए यह कहते हैं, कि “ अर्हत भगवान
की प्रतिमा की पूजा जैनधर्म के पालकों को करना चाहिये” यह उनका
कथन मित्यात्व का विलास ही है । क्यों कि यह “ जिणपटिमाण ”
इत्यादि वाक्य चरित का ही अनुवादक है—अतः ऐसे वाक्य किसी
सुर्य अर्थ के विधायक नहीं हुआ करते हैं । चारितानुवाद से तो सिर्फ
जिस व्यक्ति ने जो २ आचरण किया है उसका ही बोध होता है । शास्त्र
विहित मार्गके निर्देशक विधिवाक्य हुआ करते हैं—क्यों कि कि ऐसे
वाक्य जिन भगवान की आज्ञाके विधायक होते हैं । जिस प्रकार पट्ट

प्रतिमानु जामहेवनी प्रतिमानु निर्विघ्ने विवाहकार्यं सपत्नं यवानां हेतुथी
अर्थानं करे छे, अर्थानं उरीने (जेणेव अतेउरे तेणेव उवागच्छइ)
न्या रणुवास छे ते तरइ नती रही ॥ सूत्र २१ ॥

द्रौपदी अर्थो

केटलाक “जिणपटिमाण अञ्चणं करेइ” आ पाठना आधारे प्रतिमा पूज
ननी उपयोगिता सिद्ध करता आ प्रमाणे कहे छे के “ अर्हत लोगवाननी
प्रतिमानु पूजन जैनधर्म पालन करनाराओये करवुं ओधओ ” तेमनु आ
कथन सत्यथी गहुं हर छे ओटले के आ वात साव असत्यथी पूणुं छे केमके
आ “ जिणपटिमाण ” वगेरे वाक्य अर्जितना न अनुवादक छे ओटला भाटे
ओवा वथनो कोध विशेष अथने स्पष्ट करनारा होता नथी अस्तितानुवादथी
तो इक्षत ने माओये ने ते आथरण उरुं छे, इक्षत तेनु न ज्ञान थाय तेम
छे शास्त्रविहित मार्गने पतावनारा तो विधि वाक्यो न थाय छे नेवी शीते

मूलम्—तएण सा दोवई रायवरकन्ना जेणेव मज्जणघरे
 तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पहाया कयवलिकम्मा कय-
 कोउयमगलपायच्छित्ता सुद्धप्पावेमाइ मंगल्लाइ वत्थाइं
 पवरपरिहिया जिणपडिमाण अच्चण करेइ, करित्ता जेणेव
 अंतेउरे तेणेव उवागच्छइ ॥ सू० २१ ॥

टीका—‘तएण सा’ इत्यादि । ततस्तदनन्तर सा द्रौपदी राजवरकन्या
 यत्रैव मज्जनगृह तत्रौपागच्छति, उपागत्य स्नाता ‘कयवलिकम्मा’ कृतवलि
 कर्मा अत्रादिषु रायसादिप्राणिनां सविभागो वलिकर्म तन् कृत यथा सा तथा
 कृतवौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ता ‘सुद्धप्पावेमाइ’ शुद्धप्रवेश्यानि शुद्धानि स्वच्छानि
 प्रवेशानि—सभाया प्रवेष्टु योग्यानि, यत्परिधानेन सभाया लोकाः प्रवेष्टुमर्हन्ती
 त्यर्थः, मङ्गलानि=शुभानि वस्त्राणि ‘पवरपरिहिय’ प्रवरपरिहिता—प्रवरविधिना
 प्रवरेण शोभाकारेण विधिना परिहिता=परिधानेन धृतवती आर्पत्यात् वर्तन्ति,

‘तएण सा दोवई रायवर कन्ना’ इत्यदि ॥

टीका र्थ—(तएण) इस के बाद (सा दोवई रायवर कन्ना) वह राजवर
 कन्या द्रौपदी (जेणेव मज्जणघरे) जहा स्नान घर था (तेणेव उवागच्छइ)
 उस ओर गई (उवागच्छित्ता पहाया कयवलिकम्मा कयकोउयमगल
 पायच्छित्ता) वहा जाकर २ उसने स्नानघरमें स्नान किया, वतकर फिर
 उसने कारु पक्षि आदि को अत्रादि का भाग देने रूप वलि कर्म किया
 कौतुक मंगल प्रायश्चित्त क्रिये । (सुद्धप्पावेमाइ मगल्लाइ वत्थाइ पवर
 परिहिया) सभा में प्रवेश के योग्य ५ शुद्ध स्वच्छ मांगलिक वस्त्र
 अच्छी तरह विधि के अनुसार पहिरी हुई (जिणपडिमाण अच्चण करेइ)

‘तएण सा दोवईरायवरकन्ना’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्य २५छी (सा दोवई रायवरकन्ना) ते रायवर कन्या द्रौपदी
 (जेणेव मज्जणघरे) जया स्नानघर छतु (तेणेव उवागच्छइ) त्या गर्व
 (उवागच्छित्ता पहाया कयवलिकम्मा कय कोउयमगलपायच्छित्ता) त्या अर्थने
 तेणे स्नानघरमा स्नान कथुं स्नान वर्या भाद तेणे कागडा वगे २ पक्षीओने
 अन्न वगेदेने भाग अर्पाने पलिकर्म कथुं—कौतुक मंगल प्रायश्चित्त कथा
 (सुद्धप्पावेमाइ मगल्लाइ वत्थाइ पवरपरिहिया मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ)
 सभाया प्रवेशया योग्य स्वच्छ मांगलिक वस्त्रो तेणे सरम रीते पडेया,
 त्या २५छी ते स्नानघरथी अडार नीकणी (जिणपडिमाण अच्चण

वस्त्राणि परिधाय ' जिणपटिमाण अञ्चणं करेइ ' जिनप्रतिमाना, कामदेव प्रति-
मानामर्चनं करोति विवाहविधि निर्विघ्न सपन्नार्थं मिति भावः ' करिच्चा ' कृत्वा
' जेणेव अतेउरे तेणेव उवागच्छइ ' यत्रैवा-तःपुर तत्रैवो- पागच्छति ॥ सू० २१ ॥

द्रौपदीचर्चा

यत्तु—“ जिणपटिमाण अञ्चणं करेइ ” इति पाठ समाश्रित्य भगवतोऽर्हतः
पूजनं जैनधर्मानुयायिभिः कर्तव्यमित्याहुस्तन्मिथ्यात्वविलस्तिम्, अस्य पाठस्य
चरितानुवादरूपत्वेन विधायकत्वासम्भवात् । विधिवाक्यं हि जिनाज्ञाया बोधक
त्वेन विधायकं भवति, यथा—भगवता विधेयतयोपदिष्ट पञ्चविधावश्यकं चतुर्विध-

जिन प्रतिमा का कामदेव की प्रतिमा का निर्विघ्न विवाहकार्य के लिये
अर्चन करती है अर्चन कर के फिर वह (जेणेव अते उरे तेणेव उवा-
गच्छइ) जहाँ अत पुर था वहाँ चली गई ॥ सू० २१ ॥

द्रौपदी चर्चा

जो “जिणपटिमाण अञ्चणं करेइ” इस पाठका आश्रय लेकर प्रति-
मापूजन की उपयोगिता कहते हुए यह कहते हैं, कि “ अर्हत भगवान
की प्रतिमा की पूजा जैनधर्म के पालको को करना चाहिये” यह उनका
कथन मिथ्यात्व का विलास ही है । क्यों कि यह “ जिणपटिमाण ”
इत्यादि वाक्य चरित का ही अनुवादक है—अतः ऐसे वाक्य किसी
सुर्य अर्थ के विधायक नहीं हुआ करते हैं । चारितानुवाद से तो सिर्फ
जिस व्यक्ति ने जो २ आचरण किया है उसका ही बोध होता है । शास्त्र
विहित मार्गके निर्देशक विधिवाक्य हुआ करते हैं—क्यों कि कि ऐसे
वाक्य जिन भगवान की आज्ञाके विधायक होते हैं । जिस प्रकार पट्ट

प्रतिमानु कामदेवनी प्रतिमानु निर्विघ्ने विवाहकार्यं सपन्नं यवानां डेतुयी
अर्थानं करे छे, अर्थानं उरीने (जेणेव अतेउरे तेणेव उवागच्छइ)
न्या २६वास छे ते तरइ नती रही ॥ सूत्र २१ ॥

द्रौपदी अर्था

केटलाऽ “जिणपटिमाण अञ्चणं करेइ” आ पाठना आधारे प्रतिमा पूज
ननी उपयोगिता सिद्ध करता आ प्रमाणे कहे छे के “ अर्हतं लजवाननी
प्रतिमानु पूजनं जैनधर्मं पालनं करनाराओये करवुं लोभये ” तेमनु आ
कथन सत्यथी अहुं हर छे ओटले के आ वात साव अनत्यथी पूछुं छे केमके
आ “ जिणपटिमाण ” वगेरे वाक्य अगितना न अनुवादक छे ओटला भाटे
ओवा वचनेा के छे विशेष अर्थने स्पष्ट करनारा डोता नथी चरितानुवादथी
तो इत्ता ने माणसे ने ते आचरण उरुं छे, इत्ता तेनु न ज्ञान थाय तेम
छे शास्त्रविहित मार्गने अताचनारा तो विधि वाक्यो न थाय छे नेवी रीते

मूलम्—तएणं सा दोषई रायवरकन्ना जेणेव मज्जणघरे
तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता ण्हाया कयवलिकम्मा कय-
कोउयमंगलपायच्छित्ता सुद्धप्पावेमाइ मंगल्लाइ वत्थाइ
पवरपरिहिया जिणपटिमाण अच्चण करेइ, करित्ता जेणेव
अतेउरे तेणेव उवागच्छइ ॥ सू० २१ ॥

टीका—‘तएण सा’ इत्यादि । ततस्तन्मन्तर सा द्रौपदी राजरसन्त्या
यत्रैव मज्जनगृह तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य स्नाता ‘कयवलिकम्मा’ कृतवलि-
कर्मो अत्रादिषु त्रायसादिप्राणिना संविभागो उलिकर्म तन् कृत यथा सा तथा
कृतवौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ता ‘सुद्धप्पावेमाइ’ शुद्धप्रवेश्यानि शुद्धानि स्वच्छानि
प्रवेशानि—सभाया प्रवेष्टु योग्यानि, यत्परिवानेन सभाया लोकाः प्रवेष्टुमर्हन्ती
त्यर्थः, मङ्गलानि=शुभानि वस्त्राणि ‘पवरपरिहिय’ प्रवरपरिहिता—प्रवरत्रिधिना
प्रवरेण शोभाकारेण विविना परिहिता=परि गणेन धृतवती आर्पत्वात् वर्तारिक्तः,

‘तएण सा दोषई रायवर कन्ना’ इत्यादि ॥

टीका—(तएण) इस के नाद (सा दोषई रायवर कन्ना) वह राजवर
कन्ना द्रौपदी (जेणेव मज्जणघरे) जहा स्नान घर था (तेणेव उवागच्छइ)
उम ओर गई (उवागच्छित्ता ण्हाया कयवलिकम्मा कयकोउयमंगल
पायच्छित्ता) वहा जाकर २ उसने स्नानघरमें स्नान क्रिया, नहाकर फिर
उसने कारु पक्षि आदि को अन्नोदि का भाग देने रूप उक्ति कर्म किया
कौतुक मंगल प्रायश्चित्त किये । (सुद्धप्पावेमाइ मंगल्लाइ वत्थाइ पवर
परिहिया) सभा में प्रवेश के योग्य ५ शुद्ध स्वच्छ मांगलिक वस्त्र
अच्छी तरह विधि के अनुसार पहिरी हुई (जिणपटिमाण अच्चण करेइ)

‘तएण सा दोषईरायवरकन्ना’ इत्यादि—

टीका—(तएण) त्य २५७ी (सा दोषई रायवरकन्ना) ते राजवर कन्ना द्रौपदी
(जेणेव मज्जणघरे) कन्ना स्नानघर छतु (तेणेव उवागच्छइ) त्या गई
(उवागच्छित्ता ण्हाया कयवलिकम्मा कय कोउयमंगलपायच्छित्ता) त्या अर्थने
तेणे स्नानघरमा स्नान कथुं स्नान करी जाइ तेणे कागडा वगे पक्षीओने
अन्न वगेरेने भाग अर्पाने पक्षिअं कथुं—कौतुक मंगल प्रायश्चित्त कथी
(सुद्धप्पावेमाइ मंगल्लाइ वत्थाइ पवरपरिहिया मज्जणघराओ पडिनिवत्तमइ)
सभाया प्रवेशया योग्य स्वच्छ मांगलिक वस्त्रो तेणे सरस रीते पडेयो,
त्या २५७ी ते स्नानघरथी जहार नीकगी (जिणपटिमाण अच्चण करेइ) ७७

चारितानुवादवचनस्य विधायकत्वाङ्गीकारे सूर्याभदेवचरिते शस्त्रादिवस्तु-
नामर्चनस्य श्रूयमाणतया तन्मते तदपि विधेयं स्यात् ।

द्रौपद्यऽपि तत्र रज्जु प्रतिमाया भगवतोऽर्हतः पूजनं न कृतम्, जैनप्रवचने
प्रतिमापूजनस्य विधानाभावात्, प्रतिमापूजनस्य पट्टकायजीवर्हिंसासा-यतया जैन
धर्मत्वाभावाच्च ।

तथाहि—प्रतिमापूजाऽङ्गीकारे तदर्थं पट्टकायर्हिंसाऽवश्यभाविनी, एव च
जाता है कि वह उन्हीं में चित्त लगाकर और मन को तन्मय करके
इसे उभय काल में अवश्य करें ।

चरित के अनुवादक कथन करने वाले—वाक्य को यदि विधेय रूप
से स्वीकार किया जाय तो सूर्याभदेवके चरित में सङ्गादि शस्त्र आदि
वस्तुओं की भी पूजा सुनी जाती है—अन' उनमें भी पूज्यता आजानो
चाहिये और इस प्रकार से पूजन के पक्षपातियों को उनका पूजन भी
विधेय कोटि में मान लेना चाहिये ।

द्रौपदी ने भी वहा प्रतिमा में जो भगवान अर्हत की पूजन नहीं
की उसका कारण यह है कि एक तो जैन प्रवचन में प्रतिमा पूजन के
विधान का अभाव है और दूसरे—यह प्रतिमा पूजन पट्ट काय के जीवों
की विराधना द्वारा साध्य होती है, इसलिये इस प्रतिमा पूजन में जिने-
न्द्र द्वारा प्रतिपादित—धर्म आत्मकल्पणसाधकरूप सम्यग्दर्शनादिक का
अभाव है । पट्ट काय के जीवों की विराधना से जो साध्य हुआ करता
है वहा सच्चे धर्म के दर्शन तक भी दुर्लभ हैं अतः प्रतिमा पूजन

न होय तेनी अे इरज थध पडे छे के ते तेओमा ज पोतानु चित्त परेवीने
भनने तव्हीन करीने तेने भने काणमा अवश्य आचरे

अरितने अनुवादक इपे भतावनार वाक्यने जे विधेय इपमा स्वीकारवामा
आवे तो सूर्याभदेवना अरितमा शस्त्र वगेरे वस्तुओनी पणु पूजनी वात
साभणवामा आवे छे ओथी तेभनामा पणु पूज्यता आवी जनी जेधओ अने
आ रीते पूजनना पक्षपातीओओ तेभनी पूज पणु विधेयना इपमा भान्य
करवी जेधओ

द्रौपदीओ पणु त्या प्रतिमामा लगवान अर्हतनु पूजन कथुं नथी
तेनु कारण ओ छे के प्रथम तो जैन प्रवचनमा प्रतिमा—पूजननु विधान नथी
अने पीणु आ प्रतिमा पूजन पट्टकायना ओवीनी विराधना द्वारा सपन्न होय
छे, तेथी आ प्रतिमा पूजनमा जेनेन्द्र वडे प्रतिपादित धर्म—आत्मकल्याण
साधक इप सम्यग्—दर्शन वगेरेना अलाप छे पट्टकायना ओवीनी विराधनाथी

सघस्य कर्तव्य भवति ।

तथा चोक्तम्—समणेण सावणं य अस्सकायवयं इत्थं जम्हा ।

अतो अहोनिस्सत्त य, तम्हा आरम्मय नाम ॥ १ ॥ इति (अनुयोगट्ठा०)

छाया—श्रमणेन श्रावकेण च अवश्यकर्तव्यक भवति यस्मात् ।

अन्तेऽहर्निशस्य च तस्माद् आरम्भक नाम ॥ १ ॥

“ ज इम समणे वा समणी वा सावणं वा साविया वा ।

तच्चित्ते तम्मणे जाव उभओकालं छव्विह आरस्सयं करेति (अनु०)

छाया—यदिदं श्रमणो वा श्रमणी वा श्रावको वा श्राविका वा ।

तच्चित्तः तन्मना यावद् उभयकालं पइविधमारम्भक नाम ॥ २ ॥

आवश्यक कार्यों को प्रतिपादन करने वाले वाक्य जिन प्रभु की आज्ञा के निर्देशक होने से साधु साध्वी श्रावक श्राविकारूप चतुर्विध सघ को उपादेय माने जाते हैं । शास्त्र में भी यही बात कही गई है

‘ समणे ण सावणं य ’ इत्यादि

शास्त्र विहित पट्ट आवश्यक कर्तव्य चतुर्विध श्रीसघ को रात्री एव दिनके अतिम भागमें अवश्य करन चाहिये । उनके किये बिना मुनि का मुनिपन नहीं और श्रावकका श्रावकपन नहीं । अतः पट्ट आवश्यक कार्य अवश्य करने योग्य होनेसे आवश्यक रूप से प्रतिपादित हुए हैं ।

“ ज इम समणे वा समणी वा सावणं वा साविया वा तच्चित्ते तम्मणे वा जाव उभओ कालं ” इत्यादि ।

इसलिये जब ये आवश्यक हैं तब चाहे साधु हो या साध्वी हो श्रावक हो या श्राविका हो कोई भी क्यों न हो उसका यह कर्तव्य हो

छ आवश्यक कार्यों का प्रतिपादन करनेवाले वाक्यों जिन प्रभु की आज्ञा के निर्देशक होवने से साधु साध्वी श्रावक श्राविका रूप चतुर्विध सघना भाटे योग्य गणुय छे शास्त्रमा पणु आ प्रभाणु कडेवामा आवु छे —

“ समणेण सावणं य ’ इत्यादि

शास्त्रविहित छ प्रवर्तना आवश्यक कर्तव्यो चतुर्विध सघने रात्रि तेमज्ज दिवसना अतिम भागमा योक्कस पणु आरम्भवा जेठ्ठये तेना आरम्भणं वगरं मुनिपणु नथी अने श्रावकणु श्रावकपणु नथी अटला भाटे छ आवश्यक कार्य योक्कस करवा योग्य होवथी आवश्यक उपथी प्रतिपादित करवामा आवु छे

“ ज इम समणे वा समणी वा सावणं वा साविया वा तच्चित्ते तम्मणे जाव उभओ कालं इत्यादि—आ प्रभाणु ज्यारे तेओ ‘ आवश्यक ’ छे, त्यारे लखे साधु होय छे साध्वी होय तेमज्ज श्रावक होय छे श्राविका होय

चारितानुवादवचनस्य विधायस्त्वाङ्गीकारे सूर्याभदेवचरिते शस्त्रादिवस्तु-
नामर्चनस्य श्रूयमाणतया तन्मते तदपि विधेय म्यत् ।

द्रौपद्यऽपि तत्र खलु प्रतिमाया भगवतोऽर्हतः पूजन न कृतम्, जैनप्रवचने
प्रतिमापूजनस्य विधानाभावात्, प्रतिमापूजनस्य पट्टकायजीवर्हिंसासा-यतया जैन
धर्मत्वाभावाच्च ।

तथाहि—प्रतिमापूजाऽङ्गीकारे तदर्थं पट्टकायर्हिंसाऽवश्यभाविनी, एव च
जाता है कि वह उन्हीं में चित्त लगाकर और मन को तन्मय करके
इसे उभय काल में अवश्य करें ।

चरित के अनुवादक कथन करने वाले—वाक्य को यदि विधेय रूप
से स्वीकार किया जाय तो सूर्याभदेवके चरित में सद्गदादि शस्त्र आदि
वस्तुओं की भी पूजा सुनी जाती है—अनः उनमें भी पूज्यता आजानी
चाहिये और इस प्रकार से पूजन के पक्षपातियों को उनका पूजन भी
विधेय कोटि में मानलेना चाहिये ।

द्रौपदी ने भी वहा प्रतिमा में जो भगवान अर्हत की पूजन नहीं
की उसका कारण यह है कि एक तो जैन प्रवचन में प्रतिमा पूजन के
विधान का अभाव है और दूसरे—यह प्रतिमा पूजन पट्ट काय के जीवों
की विराधना द्वारा साध्य होती है, इसलिये इस प्रतिमा पूजन में जिने-
न्द्र द्वारा प्रतिपादित—धर्म आत्मकल्पणसाधकरूप सम्यग्दर्शनादिक का
अभाव है । पट्ट काय के जीवों की विराधना से जो साध्य हुआ करता
है वहा सच्चे धर्म के दर्शन तक भी दुर्लभ हैं अतः प्रतिमा पूजन

न डोय तेनी अे इरज थध पडे छे के ते तेओभा न पोतानु चित्त परेवीने
भनने तटलीन उरीने तेने अने जणभा अवश्य आचरे

अरितने अनुवादऽ इपे जतावनार वाक्यने जे विधेय इपमा स्वीकारवामा
आवे तो सूर्याभदेवना अरितमा शस्त्र वगेरे वस्तुओनी पखु पूजनी वात
भाखणवामा आवे छे ओथी तेभनामा पखु पूज्यता आवी नवी नेधअे अने
आ रीते पूजनना पक्षपातीओअे तेमनी पूज पखु विधेयना इपमा भान्य
करवी नेधअे

द्रौपदीअे पखु त्या प्रतिमामा लगवान अर्हतनु पूजन कथुं नथी
तेनु कारण अे छे के प्रथम तो जैन प्रवचनमा प्रतिमा—पूजननु विधान नथी
अने भीनु आ प्रतिमा पूजन पट्टकायना ओवीनी विराधना द्वारा स पत्र डोय
छे, तेथी आ प्रतिमा पूजनमा जेनेन्द्र वडे प्रतिपादित धर्म—आत्मकल्याण
साधक इप सम्यग्—दर्शन वगेरेने अलाव छे पट्टकायना ओवीनी विराधनाथा

सघस्य कर्तव्य भवति ।

तथा चोक्तम्—समणेण सावणं य अस्सकायवयं इत्थं जम्हा ।

अतो अहोनिस्स य, तम्हा आवस्सय नाम ॥ १ ॥ इति (अनुयोगद्रा०)

छाया—श्रमणेन श्रावकेण च अवश्यकर्तव्यक भवति यस्मात् ।

अन्तेऽहर्निशस्य च तस्माद् आवश्यक नाम ॥ १ ॥

“ ज इम समणे वा समणी वा सावणं वा साविया वा ।

तच्चित्ते तम्मणे जाव उभओकालं छव्विह आवस्सय करेति (अनु०)

छाया—यदिदं श्रमणो वा श्रमणी वा श्रावको वा श्राविका वा ।

तच्चित्तः तन्मना यावद् उभयकालं पइविधमावश्यकं नाम ॥ २ ॥

आवश्यक कार्यो को प्रतिपादन करने वाले वाक्य जिन प्रभु की आज्ञा के निर्देशक होने से साधु साध्वी श्रावक श्राविकारूप चतुर्विध सघ को उपादेय माने जाते हैं । शास्त्र में भी यही बात कही गई है

‘ समणे ण सावणं य ’ इत्यादि

शास्त्र विहित पट्ट आवश्यक कर्तव्य चतुर्विध श्रीसघ को रात्री एव दिनके अतिम भागमें अवश्य करन चाहिये । उनके किये बिना मुनि का मुनिपन नहीं और श्रावकका श्रावकपन नहीं । अतः पट्ट आवश्यक कार्य अवश्य करने योग्य होनेसे आवश्यक रूप से प्रतिपादित हुए हैं ।

“ ज इम समणे वा समणी वा सावणं वा साविया वा तच्चित्ते तम्मणे वा जाव उभओ कालं ” इत्यादि ।

इसलिये जब ये आवश्यक हैं तब चाहे साधु हो या साध्वी हो श्रावक हो या श्राविका हो कोई भी क्यों न हो उसका यह कर्तव्य हो

छ आवश्यक कार्योंना प्रतिपादन करना वाक्यो एत प्रभुनी आज्ञाना निर्देशक होवाने कारणे साधु साध्वी श्रावक श्राविका इय चतुर्विध सघना भाटे योग्य गणाय छे शास्त्रभा पणु आ प्रभाणु कडेवाभा आण्यु छे —

“ समणेण सावणं य ’ इत्यादि

शास्त्रविहित छ प्रकारना आवश्यक कर्तव्यो चतुर्विध सघने रात्रि तेमज्ज दिवसना अतिम भागभा योक्कस पणु आयरवा नेधंअ तेना आयरणु वगर मुनिनु मुनिपणु नथी अने श्रावकनु श्रावकपणु नथी अटला भाटे छ आवश्यक कार्यो योक्कस करवा योग्य होवाथी आवश्यक इयथी प्रतिपादित करवाभा आण्यु छे

“ ज इम समणे वा समणी वा सावणं वा साविया वा तच्चित्ते तम्मणे जाव उभओ कालं इत्यादि—आ प्रभाणु न्यारे तेओ ‘ आवश्यक ’ छे, त्यारे लहे साधु होय छे साध्वी होय तेमज्ज श्रावक होय छे श्राविका होय ”

चारितानुवादवचनस्य विधायकत्वाद्गीकारे सूर्याभदेवचरिते शस्त्रादिवस्तु-
नामर्चनस्य श्रूयमाणतया तन्मते तदपि विवेय स्यत् ।

द्रौपद्यऽपि तत्र रत्न प्रतिमाया भगवतोऽर्हतः पूजन न कृतम्, जैनप्रवचने
प्रतिमापूजनस्य विधानाभावात्, प्रतिमापूजनस्य पट्टकायजीवर्हिंसासा-यतया जैन
धर्मत्वाभावाच्च ।

तथाहि—प्रतिमापूजाऽङ्गीकारे तदर्थं पट्टकायर्हिंसाऽवश्यभाविनी, एव च
जाता है कि वह उन्हीं में चित्त लगाकर और मन को तन्मय करके
इसे उभय काल में अवश्य करें ।

चरित के अनुवादक कथन करने वाले—वाक्य को यदि विधेय रूप
से स्वीकार किया जाय तो सूर्याभदेवके चरित में सङ्गादि शस्त्र आदि
वस्तुओं की भी पूजा सुनी जाती है—अन' उनमें भी पूज्यता आजानी
चाहिये और इस प्रकार से पूजन के पक्षपातियों को उनका पूजन भी
विधेय कोटि में मानलेना चाहिये ।

द्रौपदी ने भी वहा प्रतिमा में जो भगवान अर्हत की पूजन नहीं
की उसका कारण यह है कि एक तो जैन प्रवचन में प्रतिमा पूजन के
विधान का अभाव है और दूसरे—यह प्रतिमा पूजन पट्ट काय के जीवों
की विराधना द्वारा साध्य होती है, इसलिये इस प्रतिमा पूजन में जिने-
न्द्र द्वारा प्रतिपादित—धर्म आत्मकल्पणसाधकरूप सम्यग्दर्शनादिक का
अभाव है । पट्ट काय के जीवों की विराधना से जो साध्य हुआ करता
है वहा सच्चे धर्म के दर्शन तक भी दुर्लभ हैं अतः प्रतिमा पूजन

न डोय तेनी अे इरञ्च थछ पडे छे के ते तेओभा न पोतानु चित्त परेवीने
मनने तटलीन करीने तेने अने डालभा अवश्य आचरे

अरितने अनुवादक इपे अतावनार वाक्यने जे विधेय इपमा स्वीकारवामा
आवे तो सूर्याभदेवना अरितमा शस्त्र वगेरे वस्तुओनी पणु पूजनी वात
साक्षणवामा आवे छे अेथी तेमनामा पणु पूज्यता आवी नवी जेधअे अने
आ रीते पूजनना पक्षपातीओअे तेमनी पूज पणु विधेयना इपमा मान्य
करवी जेधअे

द्रौपदीअे पणु त्या प्रतिमाभा लगवान अर्हंतनु पूजन कथुं नथी
तेनु कारण अे छे के प्रथम तो जैन प्रवचनमा प्रतिमा—पूजननु विधान नथी
अने भीणु आ प्रतिमा पूजन पट्टकायना एवोनी विराधना द्वारा सपन्न डोय
छे, तेथी आ प्रतिमा पूजनमा अनेन्द्र वडे प्रतिपादित धर्म—आत्मकल्याण
साधक इप सम्यग्—दर्शन वगेरेने अलाव छे पट्टकायना एवोनी विराधनाथा

પ્રાણાતિપાતરિમળવ્રતિના મુનીના પ્રતિમાપૂજોપદેશે સ્વધર્મસ્ય મૂલોચ્છેદ સ્યા
 દેવ । અતઃપૃ-જિનમણીતાગમે પ્રતિમાપૂજાયાપિધિર્નોવલભ્યતે । પ્રતિમાસ્થાપનાર્થ
 ધર્મીકાર કરને મેં ઉસ પૂજન કે સમય મેં પદ્ કાય કે જીવોં કી વિરા-
 ધના જય અવશ્યભાવી હૈ તપ્ ભલા । જમ હસે વિધેય માર્ગ કેસે માન
 સકતે હૈ, ઓર કેસે યહ સ્વીકાર ક્રિયા જા સકના હૈ કિ હસ પૂજન
 કા કર્તા સચ્ચે ધર્મ કા ઉપામક હૈ તથા પ્રતિમાપૂજન કો ધર્મ માના
 જાવે તો એક વડા ભારી દોષ યહ મી આકર ઉપસ્થિત હોતા હૈ કિ સર્વ
 પ્રકાર કે હિંસાદિક પાપોં સે સર્વથા વિરક્ત મહાવ્રતી મુનિજન જય હસ
 પ્રતિમાપૂજનરૂપ ધર્મ કા ઉપદેશ કરેંગે તવ વે મી કારિતાદિરૂપ કરાને
 આદિ રૂપ સે હસકે કર્તા હોને કે કારણ અપને મુનિધર્મ કે મૂલતઃ હી
 વિધ્વસક માને જાયેંગે । મુનિજન હિંસાદિક સાવધ વ્યાપારોં કે કૃત,
 કારિત એવ અનુમોદના હન ત્રીન કરણ એવ ત્રીન યોગ સે ત્યાગી હુઆ
 કરતે હૈ । જય વે પ્રતિમાપૂજન રૂપ ધર્મ કા ગૃહસ્થો કે લિયે વ્યાખ્યાન
 દેંગે તવ ઉનકે વ્યાખ્યાન સે પ્રેરિત હો ગૃહસ્થ જન ઉસ ઓર અપની
 પ્રવૃત્તિ ચાલૂ કરને વાલે હોંગે, ઓર ઉસ પ્રકાર કે ઉનકે વ્યવહાર સે
 હસ કાર્ય મેં પદ્કાય કે જીવોં કી વિરાધના હોને સે ઉસ વિરાધના

ને સાધ્ય થાય છે તેમા તેા સાચા ધર્મના દર્શન સુદા હુલ્લ છે એટલા
 માટે પ્રતિમા-પૂજન સ્વીકારવામા તે પૂજન કરતી વખતે પદ્કાયના જીવોની
 વિરાધના જ્યારે ચોક્કસપણે થવાની છે ત્યારે અમે તેને વિધેય માર્ગ કયા
 આધારે માન્ય કરીએ અને જોની સાથે સાથે અમે એ પણ કેવી રીતે સ્વીકાર
 કરીએ કે આ જાતનુ પૂજન કરનાર સાચા ધર્મનો ઉપાસક છે ? જે પ્રતિમા
 પૂજનને ધર્મ રૂપે સ્વીકારીએ તો એમા એક ભારે દોષ એ છે કે સર્વ પ્રકાર
 રના હિંમા વગેરે પાપોથી સવથા વિરક્ત મહાવ્રતી મુનિજનો જ્યારે આ
 પ્રતિમા પૂજન રૂપ ધર્મનો ઉપદેશ આપશે ત્યારે તેઓ પણ કારિતાદિ રૂપ
 કરાવવા વગેરે રૂપથી એના કર્તા રૂપે હોવા બદલ પોતાના મુનિ ધર્મના મૂલત
 વિધ્વ સક ગણાશે મુનિજનો હિંસા વગેરે સાવધ વ્યાપારોના કૃત, કારિત અને
 અનુમોદના આ ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગના ત્યાગી હોય છે જ્યારે તેઓ
 પ્રતિમા-પૂજન રૂપ ધર્મનુ ગૃહસ્થોને માટે વ્યાખ્યાન આપશે ત્યારે તેમના
 વ્યાખ્યાનથી પ્રેરાઈને ગૃહસ્થો તે પ્રમાણે આચરશે જ અને આ જાતના તેમના
 આચરણોથી આ કામમા પદ્કાય જીવોની વિરાધના હોવાથી તે વિરાધનાને
 કરાવનારા આ ઉપદેશક મુનિઓ જ ગણાશે ત્યારે એમના અહિંસા વગેરે મહા
 મતો ત્રિયોગ અને ત્રિકરણ વિશુદ્ધ રૂપે કેવી રીતે રહી શકશે ? એથી ધર્મ
 ભાષને ધ્વજતા પણ તેઓ આ જાતના વિચારોની ભૂલમા જ ને ।

देवायतनप्रतिमाऽऽरामकूपादिकरणे तदुपदेशदाने च पृथिवीकायर्हिंसाया अव-
श्यम्भाव. । देवायतनादिकरणे पूजाङ्गतयास्नान प्रतिमास्नपनप्रसन्नक्षालनादिक-
रणे च तदुपदेशदाने चाप्रकायविरामनमपि, तथा-पूजाङ्गधूपदीपारात्रिकसम्पा-
दन चाग्निकायविराधनया विना न सम्भवति, वायुकायर्हिंसन तु धूपदीपारात्रिका

के कराने चाले ये उपदेशक मुनिजन माने जायेगे-तब इनके अर्हिंसादि
महाव्रत त्रियोग और त्रिकरण विशुद्ध कैसे रह सकेंगे ? अतः लाभ की
चाहना में इन विचारों की भूल में ही बड़ी भारी भूल होने से ये
अपने धर्म के सच्चे आराधक नहीं माने जा सकेगे। इसलिये यह
घात अवश्य माननी चाहिये कि जिन प्रणीत आगम में प्रतिमापूजन
की विधि नहीं पाई जाती है।

इसी प्रकार प्रतिमा स्थापन, प्रतिमा प्रतिष्ठा करवाना, मंदिर वगैरह
बनवाना एव उस प्रतिमा की पूजा निमित्त वगीचा तथा कुआ आदि
का करवाना ये वाते पृथिवी कायिक जीवों की हिंसा के कारण हैं अतः
त्याज्य है। इनके बनवाने आदि का जो उपदेश करते हैं वे भी
पृथिवीकायिक जीवों की हिंसा से मुक्त नहीं हो सकते हैं। इसी प्रकार
पूजन का अग होने से स्नान, प्रतिमा के अभिषेक तथा पूजन के दस्त्रों
के धोने साफ करने में और उसके उपदेश देने में अप्रकाय के जीवों
की विराधना होती है, धूपखेना, दीपक जलाना, आरती उतारना
ये सब वातें अग्निकायिक जीवों की विराधना के विना नहीं हो सकती
है अर्थात् इनमें अग्निकायिक जीवों की विराधना अवश्यभाविनी है।

जैसे अने तेजो पोताना धर्मना साथ आराधक गणेशे नडि जेटला भाटे
आ वात योछसपण्णे भानी न लेवी जेधजे डे 'एन प्रणीत' आगमभा
प्रतिमा-पूजननी विधि भणती नथी

आ प्रभाण्णे प्रतिमा-स्थापन, -प्रतिमा-प्रतिष्ठा कराववी, मंदिर वगेरे
बनाववा अने ते प्रतिमान्नी पूज्ज भाटे उद्यान तेमज वाव वगेरे तैयार
कराववा जे पृथिव-कायिक जिवोनी हिंसाना कारण छे-जेटला भाटे त्याज्य
छे तेने बनवाववा भाटे जे लोको उपदेश आपे छे तेजो पण्ण पृथिव-कायिक
जिवोनी हिंसाथी मुक्त थर्ध शकता नथी आ रीते न पूजनने भाटे स्नान,
प्रतिमानो अलिषेक तेमज पूजनना वज्जोने घोवामा अने तेना उपदेशमा पण्ण
अप्रकायना जिवोनी विराधना डाय छे धूप करवो, दीपक करवो, आरती
उतारवी आ जधी विधिजो अग्नि-कायिक जिवोनी विराधना वगर सलवी
शके तेम नथी जेटले डे तेजोमा अग्नि-कायिक जिवोनी विराधना योछसपण्णे

प्राणातिपातविरमणप्रतिना मुनीना प्रतिमापूजोपदेशे स्वर्मस्य मूलोच्छेद स्या
देव । अत एव-जिनमणीतागमे प्रतिमापूजायाविधिर्नोपलभ्यते । प्रतिमास्थापनार्थे

अगीकार करने में उस पूजन के समय में घट फाय के जीवों की विरा
धना जय अवश्यभावी है तब भला । हम इसे विधेय मार्ग कैसे मान
सकते हैं, और कैसे यह स्वीकार किया जा सकता है कि इस पूजन
का कर्त्ता सच्चे धर्म का उपामक है तथा प्रतिमापूजन को धर्म माना
जावे तो एक बड़ा भारी दोष यह भी आकर उपस्थित होता है कि सर्व
प्रकार के हिंसादिक पापों से सर्वथा विरक्त महाव्रती मुनिजन जय इस
प्रतिमापूजनरूप धर्म का उपदेश करेंगे तब वे भी कारितादिरूप कराने
आदि रूप से इसके कर्त्ता होने के कारण अपने मुनिधर्म के मूलतः ही
विध्वंसक माने जायेगे । मुनिजन हिंसादिक सावध व्यापारों के कृत,
कारित एव अनुमोदना इन तीन करण एव तीन योग से त्यागी हुआ
करते हैं । जय ये प्रतिमापूजन रूप धर्म का गृहस्थो के लिये व्याख्यान
देंगे तब उनके व्याख्यान से प्रेरित हो गृहस्थ जन उस ओर अपनी
प्रवृत्ति चालू करने वाले होंगे, और उस प्रकार के उनके व्यवहार से
इस कार्य में घटकाय के जीवों की विराधना होने से उस विराधना

ने साध्य थाय छे तेमा ते साया धर्मना दर्शन सुद्धा दुर्लभ छे अटला
भाटे प्रतिमा-पूजन स्वीकारवाभा ते पूजन करती वधते घटकायना छुवानी
विराधना न्यारे थोक्कसपण्णे धवानी छे त्यारे अमे तेने विधेय भागं कथा
आधारे मान्य करीअे अने अेनी साथे साथे अमे अे पणु केवी रीते स्वीकार
करीअे के आ नतनु पूजन करनार साया धर्मना उपासक छे ? अे प्रतिमा
पूजनने धर्म इये स्वीकारीअे तो अेमा अेक लारे दोष अे छे के सर्व प्रकार
रना हिंसा वगेरे पापेथी सर्वथा विरक्त महाव्रती मुनिजनो न्यारे आ
प्रतिमा पूजन इय धर्मना उपदेश आपसे त्यारे तेअे पणु कारितादि इय
कराववा वगेरे इयथी अेना कर्त्ता इये होवा महल पोताना मुनि धर्मना मूलत
विध्वंसक गण्णारी मुनिजनो हिंसा वगेरे सावध व्यापाराना कृत, कारित अने
अनुमोदना आ त्रणु करणु अने त्रणु योगना त्यागी होय छे न्यारे तेअे
प्रतिमा-पूजन इय धर्मनु गृहस्थाने भाटे व्याख्यान आपसे त्यारे तेमना
व्याख्यानथी प्रेरार्थने गृहस्थो ते प्रभाण्णे आचरसे न अने आ नतना तेमना
आचरण्णोथी आ काममा घटकाय छुवानी विराधना होवाथी ते विराधनाने
करावनारा आ उपदेशक मुनिअे न गण्णारी त्यारे अेमना अहिंसा वगेरे महा
व्रती त्रियोग अने त्रिकरणु विशुद्ध इये केवी रीते रही शकसे ? अेथी धर्म-
हासने धम्भता पणु तेअे आ नतना विचारानी भूलमा न

देवायतनप्रतिमाऽऽरामकृपादिकरणे तदुपदेशदाने च पृथिवीकायर्हिसाया अवश्यभावः । देवायतनादिकरणे पूजाङ्गतयास्नान प्रतिमास्नपनपुष्पक्षालनादिकरणे च तदुपदेशदाने चापूकायविरावनमपि, तथा-पूजाङ्गवृषदीपारात्रिकसम्पादन चाग्निकायविराधनया विना न सम्भवति, वायुकायर्हिसन तु धूपदीपारात्रिका

के कराने चाले ये उपदेशक मुनिजन माने जायेगे-तब इनके अहिंसादि महाव्रत त्रियोग और त्रिकरण विशुद्ध कैसे रह सकेंगे ? अतः लाभ की चाहना मे इन विचारों की भूल में ही बड़ी भारी भूल होने से ये अपने धर्म के सच्चे आराधक नहीं माने जा सकेगे । इसलिये यह बात अवश्य माननी चाहिये कि जिन प्रणीत आगम में प्रतिमापूजन की विधि नहीं पाई जाती है ।

इसी प्रकार प्रतिमा स्थापन, प्रतिमा प्रतिष्ठा करवाना, मंदिर बगैरह बनवाना एव उस प्रतिमा की पूजा निमित्त बगीचा तथा कुआ आदि का करवाना ये बातें पृथिवी कायिक जीवों की हिंसा के कारण हैं अतः त्याज्य हैं । इनके बनवाने आदि का जो उपदेश करते हैं वे भी पृथिवीकायिक जीवों की हिंसा से मुक्त नहीं हो सकते हैं । इसी प्रकार पूजन का अग होने से स्नान, प्रतिमा के अभिषेक तथा पूजन के बर्तनों के धोने साफ करने मे और उसके उपदेश देने में अपूकाय के जीवों की विराधना होती है, धूपखेना, दीपक जलाना, आरती उतारना ये सब बातें अग्निकायिक जीवों की विराधना के विना नहीं हो सकती है अर्थात् इनमें अग्निकायिक जीवों की विराधना अवश्यभाविनी है ।

अस्ये अने तेअो चोताना धर्मना साथ आराधक गणुअे नडि अेटला माटे आ वात बोधसपणुे मानी न लेवी नोधअे के ' एत प्रणीत ' आगममा प्रतिमा-पूजननी विधि भणती नथी

आ प्रमाणुे प्रतिमा-स्थापन, -प्रतिमा-प्रतिष्ठा कराववी, मंदिर बगेरे बनाववा अने ते प्रतिमानी पूज माटे उधान तेमन वाव बगेरे तैयार कराववा अे पृथिव-कायिक एवोनी हिंसाना कारणुे अे-अेटला माटे त्याज्य अे तेने बनाववा माटे न लेको उपदेश आपे अे तेअो पणु पृथिव-कायिक एवोनी हिंसाथी मुक्त थध शकता नथी आ रीते न पूजनने माटे स्नान, प्रतिमानो अभिषेक तेमन पूजनना वओने घोवाभा अने तेना उपदेशमा पणु अपूकायना एवोनी विराधना होय अे धूप करवो, दीपक करवो, आरती उतावनी आ पधी विधिअो अग्नि-कायिक एवोनी विराधना वगर सलवी शके तेम नथी अेटले के तेअोभा अग्नि-कायिक एवोनी विराधना बोधसपणुे

दिभिधामरादिबीजनैर्नृत्पगीतवादित्रैथ सप्रिशद् भवति, वनस्पतिः प्रायः पिराग्न च प्रतिमापूजानिमित्तकेऽनन्तकायकोमलप्रिप्रिकल्पुण्यपत्रसप्रहे नियत भवति । पृथिवीकायाद्याधिता बहुविधनिरपगधहीनदीनदुर्बलप्रकृतिमीरुसगोपिशरीरा द्वीन्द्रियादि पञ्चेन्द्रियान्तास्त्रमा जीरा अपि छेदाभेदनस्याभयप्रिनाशजनितानन्तदुःखैस्तीप्रतरवेदनामुपलभ्येतस्ततः स्वखितपतिता त्रिपन्ते ।

धूपकेधु आ से, दीप तथा आरती की ज्योति से चमर आदि के ढोरने से, नृत्य काने से, गीत गाते समय मुद्र से निकले हुए गर्म वायु से, एव वाजों के बजाने से वायुकायिक जीवों की विराधना होती हुई स्पष्ट मालूम देती है । वनस्पति कायिक जीवों की विराधना भी उस समय इस प्रकार से होती है, कि-मूर्ति पूजन के लिये उसके पूजक अनन्त कायिक ऐसे कोमल अनेक प्रकार के फल, पुष्प और पत्रों का संग्रह जो करता है इस प्रकार इस पूजन में पट्टकायिक जीवों को हिंसा का आरम्भ स्पष्ट देखा जाता है । तथा व्रस कायिक जीवों का भी इसके निमित्तहनन होता है और वह इस प्रकार से-कि जय पृथिवीकायिक कादि जीवों का आरम्भ प्रतिमा आदि के निर्माण में या देव आयतन (मन्दिर) आदि के कराने में किया जाता है तो उस समय उसके आश्रित जो बहुत से अनेक जाति के निरपराधी, हीन, दीन, दुर्बल, प्रकृति से भयशील तथा सगोपित शरीरवाले ऐसे द्वीन्द्रियादिकसे लेकर पञ्चेन्द्रिय तक जितने भी व्रस जीव रहते हैं वे सब के सब छेदन, भेदन, एव स्वाश्रय के विनाश जनित अनन्त दुःखों से सतप्त होकर

थवानी न छे धूपना धूमासाथी दीपक अने आरतीनी न्येताथी चमर वगेरेने ढाणवाथी तेमन वान्तयेा वगाडवाथी वायुकायिक ज्योनी विराधना थाय छे तेनी दरेकने स्पष्ट प्रतीति थती न रहे छे वनस्पति-कायिक ज्योनी विराधना पणु ते वणते आ प्रभाणु थाय छे के मूर्ति-पूजन भाटे पूज करनारायेा अनन्त-कायिक ज्येा डोमण धणी नतना इणो, पुण्ये अने पत्राने ज्येकडा करे छे आभ आ पूजमा पडू-कायिक ज्योनी हिंसा स्पष्टपणु देभाय छे व्रस-कायिक ज्योनु पणु तेने लीधे डनन डोय छे जेभके न्यारे पृथिव-कायिक वगेरे ज्योनेा आरल प्रतिमा वगेरेना निर्माणमा अथवा तो देव-आयतन (मन्दिर) वगेने जनाववाभा करवाभा आवे छे त्यारे तेना आश्रित जे धणु अनेक नतना निरपराधि, हीन, दीन, दुर्बल, प्रकृतिथी णीकणु तेमन सगोपित शरीरवाण ज्येा द्वीन्द्रियादिकथां भाडीने पञ्चेन्द्रिय सुधीना व्रस ज्यो रहे छे तेजेा सवे छेदन, भेदन अने स्वाश्रयना

धर्मस्य लक्षणं हि-जिनाज्ञापयोज्यप्रवृत्तिवत्त्वम्, "आणाए मामग धम्म" इति भगवद्वचनात्, किं च-अगारानगारभेदेन धर्मस्य द्वैविध्यमभिधाय-भगवता-"अणगारधम्मो ताव" इत्यादिना सर्वप्राणातिपातविरमणादि-रात्रिभोजनान्तान् अनगारधर्मानुपदिश्य तदनन्तरमिदं कथितम्—

'अयमाउसो ! अणगारसामइए धम्मं पणत्ते एयस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए निग्गये वा निग्गयी वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ' (औपपातिसूत्रम्)

अयमायुप्पमन् ! अनगारसामायिकरुः=अनगारसिद्धान्तविषयः, धर्मः प्रज्ञप्तः । एतस्य धर्मस्य 'शिक्षायामुपस्थितः'=आराधकः, निर्ग्रथो वा निर्द्वयी वा विहर-

और वहा से गिर पड़कर अन्त में मर जाते हैं ।

जिनेन्द्र की आज्ञा में प्रवृत्ति करना यही धर्म का लक्षण है । भगवान का भी आचाराङ्गसूत्र अ-६ उ २ सू-८ में यही कथन है "आणाए मामग धम्म" इति । प्रभु ने जिस समय धर्म का उपदेश दिया उस समय उन्होंने इस धर्मके दो भेद कहे हैं इनमें एक-१ सागारी गृहस्थका धर्म और दूसरा अनगार-मुनिका धर्म । "अनगार धम्मो ताव" इत्यादि सूत्र से समस्त जीवों की विराधना आदि से विरक्त होना यहा से लगाकर रात्रिभोजन का सर्वथा परिहार करना यहा तक जो कुछ कहा है वह सब अनगार धर्म को लेकर कहा गया है उसके बाद उन्होंने औपपातिक सूत्र में यह कहा है कि "अयमाउसो अणगारसामइए धम्मं पणत्ते, एयस्स धम्मस्स सिक्खाए, उवट्ठिए निग्गये वा निग्गयी वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ" हे आयुमन् ! यह अनगारसामायिकरु-मुनियो का सिद्धान्त विषयक

इ ज्योवा न तस थरने अने त्याधी पडी जरने, प्रष्ट थरने अते मृत्युने लेटे ठे

एने-इनी आदा प्रभाणे अनुसरु येन धर्मं तु वदथु छे आचाराग सूत्र अ-६, उ-२, सू-८ भा पथु लगवाने आ प्रभाणे उछु छे ठे "आणाए मामग धम्म इति" प्रभुये न्यारे धर्म विषे उपदेश आये। त्यारे तेभछु आ धर्मना ये लेट भताव्या ठे १ आगार गृहस्थनो धर्म अने २ अनगार मुनिनो धर्म "अनगारधम्मो ताव" वगेरे सूत्रथी नभन्त एवेनी विराधना वगेरेथी विरक्त थवु अर्हीथी भाडी रात्रि-भोजननो सपूर्वपथे त्याग करवो अर्ही सुधी ने उठ उछु छे ते मधु अनगार धर्मने उदेगीने कडेवाभा आव्यु ठे त्यारपथी औपपातिक सूत्रभा तेज्योश्रीये आ प्रभाणे उछु छे ठे— (अयमाउसो अणगारसामइए धम्मं पणत्ते, एयस्स धम्मस्स सिक्खाए, उवट्ठिए निग्गये वा निग्गयी वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ) छे आयुमन् ।

દિભિશ્ચામરાદિવીજનેનૃત્વગીતવાન્ત્રિથ સચિદ મયતિ, વનસ્પતિઝાયવિરાધન વ પ્રતિમાપૂજાનિમિત્તકેઽનન્તકાયકોમલત્રિપ્રિફલપુષ્પવત્સપદે નિયત મયતિ । પૃથિ વીકાયાઘાશ્રિતા વહુત્રિધનિરપરાધહીનદીનદુર્બલપ્રકૃતિગીરુસગોપિતગરીરા ટ્રીન્દ્રિયાદિ પચ્ચેન્દ્રિયાન્તાક્ષમા જીરા અપિ છેદનભેદનસ્રાગયત્રિનાશજનિતાનન્તદુઃ સ્તીત્રતરવેદનામુપલભ્યેતસ્તતઃ સ્વલિતપતિતા મ્નિવન્તે ।

ધૂપકેધુ આ સે, દીપ તથા આરતી કી જ્યોતિ સે ઘમર આદિ કે દોરને સે, નૃત્ય કાને સે, ગીત ગાતે સમય મુગ સે નિકલે હુગ ગર્મ વાયુ સે, એવ વાજોં કે વજાને સે વાયુકાયિક જીવોં કી વિરાધના હોતી હુઈ સ્પષ્ટ માલુમ દેતી હૈ । વનસ્પતિ કાયિક જીવોં કી વિરાધના ખી હસ સમય હસ પ્રકાર સે હોતી હૈ, કિ-મૂર્તિ પૂજન કે લિયે ઉસકે પૂજક અનન્ત કાયિક એસે કોમલ અનેક પ્રકાર કે ફલ, પુષ્પ ઓર પત્રોં કા સગ્રહ જો કરતા હૈ હસ પ્રકાર હસ પૂજન મેં પદ્ધકાયિક જીવોં કી હિંસા કા આરમ સ્પષ્ટ દેખા જાતા હૈ । તથા ઘસ કાયિક જીવોં કા ખી હસકે નિમિત્તહનન હોતા હૈ ઓર વહ હસ પ્રકાર સે-કિ જવ પૃથિવીકાયિકાદિ જીવોં કા આરમ પ્રતિમા આદિ કે નિર્માણ મેં યા દેવ આગતન (મન્દિર) આદિ કે કરાને મેં કિયા જાતા હૈ તો ઉસ સમય ઉસકે આશ્રિત જો વહુત સે અનેક જાતિ કે નિરપરાધી, હીન, દીન, દુર્બલ, પ્રકૃતિ સે મયશીલ તથા સગોપિત શરીરવાળે એસે ટ્રીન્દ્રિયાદિકસે લેકર પચ્ચેન્દ્રિય તક જિતને ખી ઘસ જીવ રહતે હૈં વે સવ કે સવ છેદન, ભેદન, એવ સ્વાશ્રય કે વિનાશ જનિત અનત દુઃખોં સે સતસ હોકર

થવાની જ છે ધૂપના પૂમાડાથી દીપક અને આરતીની ન્યૈતથી ઘમર વગેરેને ટાળવાથી તેમજ વાલ્મ્યો વગાડવાથી વાયુકાયિક જીવોની વિરાધના થાય છે તેની દરેકને સ્પષ્ટ પ્રતીતિ થતી જ રહે છે વનસ્પતિ-કાયિક જીવોની વિરાધના પણ તે વખતે આ પ્રમાણે થાય છે કે મૂર્તિ-પૂજન માટે પૂજ કરનારાઓ અનત-કાયિક એવા કોમળ ઘણી બાતના રૂણો, પુષ્પો અને પત્રોને એકઠા કરે છે આમ આ પૂજના પદ્ધ-કાયિક જીવોની હિંસા સ્પષ્ટપણે દેખાય છે ત્રસ-કાયિક જીવો પણ તેને લીધે હનન હોય છે જેમકે ન્યારે પૃથિવ-કાયિક વગેરે જીવોનો આરભ પ્રતિમા વગેરેના નિર્માણમાં અથવા તે દેવ-આગતન (મન્દિર) વગેરે બનાવવામાં કરવામાં આવે છે ત્યારે તેના આશ્રિત જે ઘણા અનેક બાતના નિરપરાધિ, હીન, દીન, દુર્બલ, પ્રકૃતિથી ખીકણ તેમજ સગો પિત શરીરવાળા એવા ટ્રીન્દ્રિયાદિકથી માડીને પચ્ચેન્દ્રિય સુધીના જેટલા ત્રસ જીવો રહે છે તેઓ સર્વે છેદન, ભેદન અને સ્વાશ્રયના વિનાશથી અનત

धर्मस्य लक्षणं हि-जिनाज्ञापयोज्यप्रवृत्तिवत्त्वम्, “आणाए मामग धम्म” इति भगवद्भवनात्, किं च-अगारागारभेदेन धर्मस्य द्वैविध्यमभिधाय-भगवता-“अणगारधम्मो ताव” इत्यादिना सर्वप्राणातिपातविरुणादि-रात्रिभोजनान्तान् अनगारधर्मानुपदिश्य तदनन्तरमिदं कथितम्—

‘अयमाउसो ! अणगारसामइए धम्मं पणत्ते एयस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्टिए निग्गये वा निग्गयी वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ’ (औपपातिसूत्रम्)

अयमायुप्पमन् ! अनगारसामायिकः=अनगारसिद्धान्तविषयः, धर्मः प्रज्ञप्तः । एतस्य धर्मस्य ‘शिक्षायामुपस्थितः’=आराधकः, निर्ग्रथो वा निर्ग्रथी वा विहर-
ओर वहा से गिर पड़कर अन्त में मर जाते हैं ।

जिनेन्द्र की आज्ञा में प्रवृत्ति करना यही धर्म का लक्षण है । भगवान का भी आचाराङ्गमूत्र अ-६ उ २ सू-८ में यही कथन है “आणाए मामग धम्मं” इति । प्रभु ने जिस समय धर्म का उपदेश दिया उस समय उन्होंने इस धर्मके दो भेद कहे हैं इनमें एक-१ खागारी गृहस्थका धर्म और दूसरा अनगार-मुनिका धर्म । “अनगार धम्मो ताव” इत्यादि सूत्र से समस्त जीवों की विराधना आदि से विरक्त होना यहा से लगाकर रात्रिभोजन का सर्वथा परिहार करना यहा तक जो कुछ कहा है वह सब अनगार धर्म को लेकर कहा गया है उसके बाद उन्होंने औपपातिक सूत्र में यह कहा है कि “अयमाउसो अणगारसामइए धम्मं पणत्ते, एयस्स धम्मस्स सिक्खाए, उवट्टिए निग्गये वा निग्गयी वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ” हे आयुमन् ! यह अनगारसामायिक-मुनियो का सिद्धान्त विषयक

इ ज्योथा न तप्त थठने अने त्याथी पडी जठने, प्रष्ट थठने अ ते मृत्युने लेटे ठे

एने-द्रनी आदा प्रभाए अनुसरतु ज्येज धर्मं तु लक्षणं छे आचाराग सूत्र अ-६, उ-२, सू-८ मा पणु लगवाने आ प्रभाए उछु छे डे “आणाए मामग धम्म इति” प्रभुजे न्यारे धर्मं विजे उपदेश आये त्याजे तेभजे आ धर्मना जे लेट भताव्या ठे १ मागार गृहस्थनो धर्मं अने २ अनगार मुनिनो धर्मं “अनगारधम्मो ताव” वगेरे सूत्रथी सभस्त एवोनी विराधना वगेरेथी विरक्त थतु अर्हीथी माडी रात्रि-लोचननो सपूर्वपणु त्याग करवो अही सुधी जे कठ उछु छे ते अधु अनगार धर्मने उदेराने उडेवामा आव्यु छे त्पारपडी औपपातिक सूत्रमा तेओश्रीजे आ प्रभाए उछु छे डे—
(अयमाउसो अणगारसामइए धम्मं पणत्ते, एयस्स धम्मस्स सिक्खाए, उवट्टिए निग्गये वा निग्गयी वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ) डे आयुमन् !

दिभिश्चापरादिवीजनैर्नृत्त्यगीतवादिभ्यश्च सप्रियद् भवति, वनस्पतिः प्रायः विराधनं च प्रतिमापूजानिमित्तकेऽनन्तकायकोमलप्रियमिन्द्रियफल्गुणपत्रसमूहे नियतं भवति । पृथिवीकायाद्याध्रिता बहुविधनिरपराधहीनदीनदुर्बलप्रकृतिमीरुसगोपितासीत् । द्वीन्द्रियादि पञ्चेन्द्रियान्ताह्वया जीवा अपि छेदाभेदनस्वाश्रयविनाशजनितानन्तदुःखैस्तीव्रतरवेदनामुपलभ्येतस्ततः स्तब्धितपतिता प्रियन्ते ।

धूपकेधु आ से, दीप तथा आरती की ज्योति से चमर आदि के दोरने से, नृत्य करने से, गीत गाते समय मुग्ध से निकले हुए गर्म वायु से, एवं वाजों के धजाने से वायुकायिक जीवों की विराधना होती हुई स्पष्ट मालूम देती है । वनस्पति कायिक जीवों की विराधना भी इस समय इस प्रकार से होती है, कि-मूर्ति पूजन के लिये उसके पत्ररु अनन्त कायिक ऐसे कोमल अनेक प्रकार के फल, पुष्प और पत्रों का संग्रह जो करता है इस प्रकार इस पूजन में पट्टकायिक जीवों की हिंसा का आरम्भ स्पष्ट देखा जाता है । तथा इस कायिक जीवों का भी इसके निमित्तहनन होना है और वह इस प्रकार से-कि जब पृथिवीकायिक आदि जीवों का आरम्भ प्रतिमा आदि के निर्माण में या देव आश्रयन (मन्दिर) आदि के कराने में किया जाता है तो उस समय उसके आश्रित जो बहुत से अनेक जाति के निरपराधी, हीन, दीन, दुर्बल, प्रकृति से भयशील तथा सगोपित शरीरवाले ऐसे द्वीन्द्रियादिकसे लेकर पञ्चेन्द्रिय तक जितने भी इस जीव रहते हैं वे सब के सब छेदन, भेदन, एवं स्वाश्रय के विनाश जनित अनन्त दुःखों से सतप्त होकर

थवानी ज छे धूपना धूमाड्याही दीपक अने आरतीनी ज्योतधी चमर वगेरेने ढाणवाधी तेमज वाजवो वगाडवाधी वायुकायिक ज्योनी विराधना थाय छे तेनी दरेकने स्पष्ट प्रतीति थती ज रडे छे वनस्पति-कायिक ज्योनी विराधना पणु ते वधते आ प्रभाणु थाय छे के मूर्ति-पूजन भाटे पूज करानाज्यो अनन्त-कायिक ज्यो व कोमल धणी जतना इणो, पुष्पो अने पत्रोने ज्येकडा करे छे आभ आ पूजभा पर-कायिक ज्योनी हिंसा स्पष्टपणु हेप्याय छे त्रस-कायिक ज्योनु पणु तेने लीधे डन डोय छे जेभके ज्योरे पृथिव-कायिक वगेरे ज्योने आरल प्रतिमा वगेरेना निर्माज्यो अथवा तो देव-आश्रयन (मन्दिर) वगेने जनाववाभा करवामा आवे छे त्यारे तेना आश्रित जे धणी अनेक जतना निरपराधि, हीन, हीन, दुर्बल, प्रकृतिही पीकणु तेमज सगोपित शरीरवाणा ज्यो द्वीन्द्रियादिकधी भाडीने पञ्चेन्द्रिय सुधीना जेटला त्रस ज्यो रडे छे तेजो सवे छेदन, भेदन अने स्वाश्रयना विनाशधी अनन्त

छाया—अयमायुष्मन् ! अगारसामयिको धर्मः प्रज्ञप्तः, एतस्य धर्मस्य शिक्षायामुपस्थितः—आराधकः श्रमणोपासको वा श्रमणोपासिका वा विहरमाणा आज्ञाया आराधको भवति । इति ॥

अत्रापि एतस्य द्वादशविधस्य धर्मस्याराधक एव श्रमणोपासक आज्ञाया आराधक इति बोधयताऽऽज्ञैव धर्मस्य मूलमिति बोधितम् ।

आचाराङ्गसूत्रेऽपि प्रथमाऽयने तृतीयोदेशे भगवताऽभिहितम्—“ जाण सद्दाए णिक्खते तमेवमणुपालिज्जा—विजहिता विमोत्तिय पुव्वसंजोग । पणया वीरा महावीहिं । लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय । ” इति

आयुष्यमन् ! यह गृहस्थ का धर्म रूढ़ा गया है । इस धर्म की शिक्षा में उपस्थित-श्रमणोपासक-मुनिजनों के भक्त ऐसे श्रावकजन अथवा श्राविकाजन तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा के आराधक माने जाते हैं । इस सूत्र में भी यही प्रकट किया गया है कि इस १२ प्रकार के धर्म का आराधक ही श्रमणोपासक-श्रावक, श्राविका तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा का आराधक है इस प्रकार समझानेवाले श्री जिनेन्द्र देव ने आज्ञा ही धर्म का मूल है यह समझाया है ।

आचाराग सूत्र के प्रथम अ ययनके तृतीय उद्देशे में भगवान ने यह रूढ़ा है “ जाण सद्दाए णिक्खते तमेव मणुपालिज्जा विजहिता विसोत्तिय पुव्वसजोग । पणया वीरा महावीहिं लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय ’ कि जिस श्रद्धा उत्साह से “अहंत प्रभु द्वारा प्रतिपादित सम्यग्दर्शनादिक मोक्षके मार्ग है या नहीं है” इस प्रकार सर्व

आणाए आराहए मयइ” हे आयुष्मन्त ! आ गृहस्थ धर्म अताववामा आण्ये छे आ धर्मनी शिक्षामा उपस्थित श्रमणोपासक मुनियोना बकतजन-श्रावको अथवा तो श्राविकाओ तीर्थंकर प्रभुनी आज्ञाना आराधक गणाय छे आ सूत्रमा पणु आ प्रमाणु ए स्पष्ट उरवामा आण्यु छे उ १२ प्रकारना धर्मना आराधके ए श्रमणोपासक श्रावक श्राविका तीर्थंकर प्रभुनी आज्ञाने आराधके छे आ रीते समनवनाना श्री जिनेन्द्रदेवे आज्ञा ए धर्मनु भूण छे आम समन-यु छे आचाराग सूत्रना पडेला अध्येयनना त्रीण उदेशकमा लगवाने आ प्रमाणु उल्लु छे—“ जाण सद्दाए णिक्खते तमेवमणुपालिज्जा विजहिता विसोत्तिय पुव्व सजोग । पणया वीरा महावीहिं लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय ” के ने श्रद्धा-उत्साहथी “ अहंत प्रभु वडे प्रतिपादित सम्यग् दर्शन वगेरे मोक्षना मार्गो छे के नहि ” आ रीते सर्व आगम विषयक धर्म राहा तेमण

માણ આજ્ઞાયા આરાધકો ભવતિ । એતન્મ ધર્મસ્યારાધક પવાજ્ઞાયા આરાધક
 ઇત્યુક્ત્યાડ્ઽઽઞ્ચૈવ ધર્મસ્ય પ્રકાશકતવા મૂલમિતિ ચોધિતમ્ । તદનન્તર ચ ભગવતા-

“ અગારધમ્મ દુવાલસવિહ આદ્ઽસ્વહ । ત જહા—પચ અણુવ્વયાઈ, તિણ્ણિ-
 ગુણવ્વયાઈ ચત્તારિ સિક્ખાવયાઈ ” ઇત્યાદિના દ્વાદશવિધં ધર્મં નિરુપ્ય કથિતમ્ ।

‘ અયમાડમો । અગારસામણ્ણે ધમ્મે પળ્ણત્તે ’ એયસ્સ ધમ્મસ્સ સિક્ખણ્ણે ઉવ
 ટ્ઠિણે સમણોવાસણે વા સમણોવાસિયા વા વિહરમાણે આણાણે આરાહણે ભવહ ” ઇતિ ।

ધર્મ કહા ગયા હૈ—અર્થાત્ મુનિયોં કા ગૃહ ધર્મ કહા ગયા હૈ । ઇસ
 ધર્મ કી શિક્ષા મેં જો ઉપસ્થિત હોતા હૈ અર્થાત્ જો ઇમ ધર્મ કી-
 આરાધના કરતે હૈ—ચાહે વે સાધુ હોં ચાહે સાધ્વી હોં કોઈ મી હો વે
 જિનેન્દ્ર ભગવાન કી આજ્ઞા કે આરાધક હોતે હૈ । ઇસ ધર્મ કી આરા
 ધના કરનેવાલા જીવ હી જિનેન્દ્ર કી આજ્ઞા કા આરાધક માના ગયા હૈ
 ઇસ કથન સે “ જિસ વાત મેં ભગવાન કી આજ્ઞા હો વહી ધર્મ કા મૂલ
 હૈ અન્ય આજ્ઞા વિરુદ્ધ પ્રવૃત્તિ હૈ ” યહ વાત સમજાઈ ગઈ હૈ ઇસ કે
 વાદ ભગવાન ને “ અગારધમ્મ દુવાલસવિહ આદ્ઽસ્વહ તં જહા—પચ
 અણુવ્વયાઈ, તિણ્ણિગુણવ્વયાઈ ચત્તારિ સિક્ખાવયાઈ ” ઇસ સૂત્ર સે યહ
 પ્રકૃટ કિયા હૈ કિ ગૃહસ્થ કા ધર્મ ૧૨ પ્રકાર કા હૈ ૫ અણુવત, ૩ ગુણ
 વ્રત ઓર ૪ શિક્ષાવ્રત । ઇસ પ્રકાર સે કથન કર “ અયમાડસો અગાર
 સામણ્ણે ધમ્મે પળ્ણત્તે એયસ્સ ધમ્મસ્સ સિક્ખણ્ણે, ઉવટ્ઠિણે, સમણોવાસણે
 વા સમણોવાસિયા વા વિહરમાણે આણાણે આરાહણે ભવહ ” ઇતિ—હે

આ અનગાર સામાયિક મુનિયોનો સિદ્ધાન્ત વિષયક ધર્મ કહેવામા આંચો છે
 એટલે કે આ મુનિઓનો ધર્મ કહેવામા આંચો છે આ ધર્મની શિક્ષામા જે
 ઉપસ્થિત હોય છે એટલે કે આ ધર્મની આરાધના કરે છે—ભલે તેઓ સાધુ
 હોય કે સાધ્વીઓ ગમે તે કેમ ન હોય તેઓ જીનેન્દ્ર ભગવાનની આજ્ઞાના
 આરાધકો હોય છે આ ધર્મની આરાધના કરનારો જીવ જીનેન્દ્રના આરા
 ધક ગણાય છે આ કથનથી એ વાત સમજાવવામા આવી છે કે જે વાતમા
 ભગવાનની આજ્ઞા હોય તે જ ધર્મ છે, આજ્ઞા વિરુદ્ધ ધીન્વ આચરણ અધર્મ
 છે ત્યારપછી ભગવાન વડે “ અગારધમ્મ દુવાલસવિહ આદ્ઽસ્વહ ત જહા પચ
 અણુવ્વયાઈ, તિણ્ણિ ગુણવ્વયાઈ ચત્તારિ સિક્ખાવયાઈ ” આ સૂત્ર દ્વારા એ સ્પષ્ટ
 કરવામા આંચુ છે કે ગૃહસ્થનો ધર્મ ૧૨ પ્રકારનો છે—૫ અણુવત, ૩ ગુણવ્રત
 અને ૪ શિક્ષાવ્રત આ રીતે “ અયમાડસો અગારસામાણ્ણે ધમ્મે પળ્ણત્તે એયસ્સ
 ધમ્મસ્સ સિક્ખણ્ણે ઉવટ્ઠિણે, સમણોવાસણે વા સમણોવાસિયા વા

छाया—अयमायुष्मन् ! अगारसामयिको धर्मः प्रज्ञप्तः, एतस्य धर्मस्य शिक्षायामुपरिस्थितः—आराधकः श्रमणोपासको वा श्रमणोपासिका वा विहरमाणा आज्ञाया आराधको भवति । इति ॥

अत्रापि एतस्य द्वादशविधस्य धर्मस्य आराधक एव श्रमणोपासक आज्ञाया आराधक इति बोधयताऽऽज्ञैर् धर्मस्य मूलमिति बोधितम् ।

आचाराङ्गसूत्रेऽपि प्रथमाध्ययने तृतीयोद्देशे भगवताऽभिहितम्—“ जाए सद्दाए णिक्खते तमेवमणुपालिज्जा—विजहिता विमोत्तिय पुव्वसंजोग । पणया वीरा महावीहिं । लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय । ” इति

आयुष्मन् ! यह गृहस्थ का धर्म रूढा गया है । इस धर्म की शिक्षा में उपस्थित—श्रमणोपासक—मुनिजनों के भक्त ऐसे श्रावकजन अथवा श्राविकाजन तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा के आराधक माने जाते हैं । इस सूत्र में भी यही प्रकट किया गया है कि इस १२ प्रकार के धर्म का आराधक ही श्रमणोपासक—श्रावक, श्राविका तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा का आराधक है इस प्रकार समझानेवाले श्री जिनेन्द्र देव ने आज्ञा ही धर्म का मूल है यह समझाया है ।

आचाराङ्ग सूत्र के प्रथम अ ध्ययनके तृतीय उद्देशे में भगवान ने यह रूढा है “ जाण सद्दाए णिक्खते तमेव मणुपालिज्जा विजहिता विसोत्तिय पुव्वसंजोग । पणया वीरा महावीहिं लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय ’ कि जिस श्रद्धा उत्साह से “अर्हंत प्रभु द्वारा प्रतिपादित सम्पद्दर्शनादिक मोक्षके मार्ग है या नहीं है” इस प्रकार सर्व

आणाए आराहण भवइ” हे आयुष्मन्त । आ गृहस्थ धर्म अतएवमा आण्ये छे आ धर्मनी शिक्षाया उपस्थित श्रमणोपासक मुनिजाना भक्तजन—श्रावको अथवा तो श्राविकाजो तीर्थंकर प्रभुनी आज्ञाना आराधक गणाय छे आ सूत्रमा पणु आ प्रमाणे व स्पष्ट उरवामा आण्यु छे के १२ प्रकारना धर्मना आराधको व श्रमणोपासक श्रावक श्राविका तीर्थंकर प्रभुनी आज्ञाने आराधको छे आ रीते अभजतवनाना श्री जिनेन्द्रदेवे आज्ञा व धर्मतु भूण छे आम समजान्यु छे

आचाराङ्ग सूत्रना पढेला अध्ययनना तीज उद्देशकमा लगवाने आ प्रमाणे छु छे—“ जाण सद्दाए णिक्खते तमेवमणुपालिज्जा विजहिता विसोत्तिय पुव्वसंजोग । पणया वीरा महावीहिं लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय ” हे ने श्रद्धा—उत्साहथी “ अर्हंत प्रभु वडे प्रतिपादित सम्पद् दर्शन वगेरे मोक्षना मार्गो छे के नहि ” आ रीते सर्व आगम विषयक सर्व रूढा तेमज

माण आज्ञाया आराधको भवति । एतस्य धर्मस्याराधक पवाज्ञाया आराधक इत्युक्त्वाऽऽज्ञैव धर्मस्य प्रकाशकतया मूलमिति घोषितम् । तदनन्तरं च भगवता-

“अगारधम्म दुवालसविह आइखइ । त जहा—पच अणुव्याइ, तिण्णिगुणव्याइ चत्तारि सिक्खाव्याइ” इत्यादिना द्वादशविध धर्मं निरूप्य कथितम् ।

‘अयमाउसो । अगारसामइए धम्मो पणत्ते’ एयस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्टिए समणोवासए वा समणोवासिया वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ” इति ।

धर्म कहा गया है—अर्थात् मुनियों का यह धर्म करा गया है । इस धर्म की शिक्षा में जो उपस्थित होता है अर्थात् जो इस धर्म की आराधना करते हैं—चाहे वे साधु हों चाहे साध्वी हों जोड़ भी हो ये जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा के आराधक होते हैं । इस धर्म की आराधना करनेवाला जीव ही जिनेन्द्र की आज्ञा का आराधक माना गया है इस कथन से “जिस बात में भगवान की आज्ञा हो वही धर्म का मूल है अन्य आज्ञा विरुद्ध प्रवृत्ति है” यह बात समझाई गई है इस के बाद भगवान ने “अगारधम्म दुवालसविह आइखइ त जहा—पच अणुव्याइ, तिण्णिगुणव्याइ चत्तारि सिक्खाव्याइ” इस सूत्र से यह प्रकट किया है कि गृहस्थ का धर्म १२ प्रकार का है ५ अणुवत्, ३ गुणवत् और ४ शिक्षावत् । इस प्रकार से कथन कर “अयमाउसो अगारसामइए धम्मो पणत्ते एयस्स धम्मस्स सिक्खाए, उवट्टिए, समणोवासए वा समणोवासिया वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ” इति—हे

आ अगार सामाधिक मुनियोनो सिद्धान्त विषयक धर्म कहेवाभा आओये छे ओटले के आ मुनियोनो धर्म कहेवाभा आओये छे आ धर्मनी शिक्षाभा ने उपस्थित होय छे ओटले के आ धर्मनी आराधना करे छे—बले तेओ साधु होय के साध्वीओ गमे ते केम न होय तेओ अनेन्द्र भगवाननी आज्ञाना आराधके होय छे आ धर्मनी आराधना करनाओ एव न अनेन्द्रना आराधक गणाय छे आ कथनथी ओ बात समझववाभा आवी छे के ने बातभा भगवाननी आज्ञा होय ते न धर्म छे, आज्ञा विरुद्ध थीलु आयरणु अधर्म छे त्पारपधी भगवान वडे “अगारधम्म दुवालसविह आइखइ त जहा पच अणुव्याइ, तिण्णिगुणव्याइ चत्तारि सिक्खाव्याइ” आ सूत्र द्वारा ओ २५४ करवाभा आओये छे के गृहस्थनो धर्म १२ प्रकारनो छे—५ अणुवत्, ३ शुणुवत् अने ४ शिक्षावत् आ रीते “अयमाउसो अगारसामाइए धम्मो पणत्ते एयस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्टिए, समणोवासए वा समणोवासिया वा विहरमाणे

યયા શ્રદ્ધયા-સમ્યક્ત્વેન ' વિગોષિય ' વિમ્બોતસિયાં=ગદ્દાં-સર્વશક્તિં દેશ
શક્તિ ચેત્યર્થઃ, યથા- ' ક્ષિમાર્હતો મોક્ષમાર્ગોઽસ્તિ ન તા ' ઇતિ સર્વાગમત્રિપયિકા
શક્તિ સર્વશક્તિ, તથા- " ક્ષિમપ્કાયાઽયો જીવાઃ સન્તિ ન તા " ઇતિ દેવશક્તિ ।
તથા ' પુવ્રસન્નોગં ' પૂર્વસંયોગ=માતાપિત્રાદિસમ્યન્ધં ધનધાન્યાગ્રજનાદિસમ્યન્ધ
વા, ઇદમુપલક્ષણ-તેન પશ્ચાત્સયોગમપિ શ્વશુરાદિક્રત, ' ત્રિજષ્ટિત્વા ' ત્રિયાય=પરિ
ત્યજ્ય ' ણિશ્ચલ્લે ' નિષ્ક્રાન્તઃ=પવ્ત્રજિતઃ । ' ત ' તા શ્રદ્ધામ્ ' અણુપાલિજ્ઞા
ણ્વ ' અનુપાલયેદેવ-નિરતિચાર રક્ષેદિત્યર્થઃ ।

અથ- ' પરિશીલિતમાર્ગોઽનુગમ્યતે ' ઇતિ લોકરીત્યા શિષ્યશ્રદ્ધાદૃઢીકરણાય
પૂર્વમહાપુરુષાચરિતોઽય માર્ગ ઇતિ ।

વીરાઃ—ભાવવીરાઃ સંયમાનુષ્ઠાને ધીર્યવન્તઃ ' મહાવીરિ ' મહાવીરિ=
મહાવીરિ-સમ્યગ્દર્શનાદિલક્ષણો મહામાર્ગઃ મહાપુરુષસેવિતત્વાત્, તામહાવીરિયિ

આગમ વિષયક સર્વશક્તિ ક્ષા તથા " અપ્ કાચિકાદિક્ર જીવ હૈ યા
નહી " ઇસ પ્રકાર કી દેશશક્તિ ઓર માતા પિતા આદિ કે સાથ કે
સબધરૂપ પૂર્વ સયોગ ઈવ ધન, ધાન્ય, સ્વજન આદિ સબધ, ઉપલક્ષણ
સે શ્વશુર આદિરૂપ પ્રશ્નાત્ સયોગ કા પરિત્યાગ કર ઘટ્ જીવ સસાર
આદિ પદાર્થ કો હેય સમજ્ઞ ઉનસે સર્વથા વિરક્ત હો જાતા હૈ ઉસ
શ્રદ્ધા કા અતિચાર આદિ કો સે રક્ષા કરની ચાહિયે-ઉસ શ્રદ્ધા કા
અતિચાર રહિષ્ક હોકર મુનિ કો પાલન કરના ચાહિયે । જો માર્ગ પરિ-
શીલિત હોતા હૈ ઉસ પર અનેક પ્રાણી ચલતે હૈ યદ્ લૌકિકરીતિ હૈ ।
હસીરીતિ કે અનુસાર શિષ્યો કી શ્રદ્ધા કો દૃઢ કરને કે લિયે " યદ્
માર્ગ પૂર્વ મેં મહાપુરુષોં દ્વારા સેવિત ક્રિયા ગયા હૈ " હમ્નેં સમજ્ઞાને કે
લિયે સૂત્રકાર " પળયા વીરા મહાવીરિ " ઇસ અશ્ક કા કથન કરતે હૈ

" અપ્કાચિક વગેરે જીવો છે કે નથી " આ બતાવી દેશ શક્તિ અને માતા
પિતા વગેરેની સાથેના સબધ રૂપ પૂર્વ સયોગ અને ધન, ધાન્ય, સ્વજન
વગેરે સબધ ઉપલક્ષણથી ' શ્વશુર ' વગેરે રૂપ પશ્ચાત્ સયોગનો પરિત્યાગ
કરીને આ જીવ સસાર વગેરે પદાર્થોને હેય સમજીને તેમના તરફ મૂળપણે
વિરક્ત થઈ બંધ છે તે શ્રદ્ધાની અતિચાર વગેરેથી રક્ષા કરવી જોઈએ તે
શ્રદ્ધાનું પાલન મુનિએ અતિચાર વગર થઈને ડરકું જોઈએ જે માર્ગ પરિ-
શીલિત હોય છે તે તરફ ધણા પ્રાણીઓ બંધ છે, આ લૌકિક પ્રથા છે આ પ્રથા
પ્રમાણે શિષ્યોની શ્રદ્ધાને મજબૂત બનાવવા માટે " આ માર્ગ મહા પુરુષો
વડે સેવવામા આવ્યો છે " આ વાત સમજાવવા માટે સૂત્રકાર
" પળયા વીરા મહાવીરિ " આ વચનને ટાકે છે વીર જે પ્રકાર

‘पणया’ प्रणया = प्राप्ताः कठिनतरतप सयमाराधनेन प्राप्तवन्त इत्यर्थः । अयमेव मार्गो मोक्षोपातिकरः शेषसयमिसेवितत्वात्, तीर्थङ्करादिमहापुरुषा अपि मार्गमिममनुशीलितवन्त इति विश्वसनीयतया शिष्याणा श्रद्धापूर्वक प्रवृत्तिर्यथा स्यादिति भाव ।

कश्चिन्मन्दधीः शिष्योऽनेकदृष्टान्तैर्ज्ञेयमानोऽपि अप्कायादिजीवेषु न श्रद्धातीति तमुद्दिश्य कथयति—हे शिष्य ! तव मतिर्यद्यपि अप्कायजीवपये न

वीर दो प्रकार के होते हैं ? द्रव्यवीर और दूसरे भाववीर । सयम के अनुष्ठान करने में जो शक्तिसम्पन्न हैं वे भाववीर ह । ये जीव सम्यग्दर्शन आदि लक्ष्यरूप इस महाविस्तृतमार्ग को कि जो महापुरुषों द्वारा सेवित हुआ है कठिनतर तप और सयम की आराधना से प्राप्त कर लिया करते हैं । कहनेका सार यहो है कि भाववीर यही अपने चित्तमें विचार किया करते हैं कि सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्चोरित्र और सम्यगतप रूप ही मार्ग है क्योंकि इसी से मुक्ति की प्राप्ति होती है—इसलिये इस मार्गका समस्त सयमीजीवोंने पूर्व में सेवन किया है और तो क्या स्वयं तीर्थङ्कर प्रभु ने भी इसी मार्ग की परिशीलना की है । इसलिये इस मार्ग में प्रवृत्ति सर्वहित विधायी है इस प्रकार यह मार्ग विश्वास योग्य होने से शिष्यजन भी श्रद्धापूर्वक इसमें प्रवृत्ति करे ।

कोई मन्दबुद्धिवाला शिष्य अनेक दृष्टान्तों द्वारा समझाये जाने पर भी यदि अप्काय आदि जीवों की श्रद्धा से रहित होता है तो उसे

१ द्रव्य-वीर, २ भाव-वीर सयमना अनुष्ठानमा के शक्तिशास्त्री छे ते भाव वीर छे आ भधा लुवे सम्यग्-दर्शन वगेरे लक्ष्य रूप आ विस्तृतमार्गने के ले मङ्गापुरयो वडे सेवनामा आब्यु छे—कठलु तप अने सयमनी आरा धनाथी भेजनी ले छे कडेवानी मतलब अे छे के भाव-वीरों पोताना मनमा आ प्रभाषे न विचारो करता रहे छे के भरी रीने सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन, सम्यग् चारित्र रूप न मार्ग छे केमके मुक्तिनी प्राप्ति अेनाथी न थाय छे अेटला भाटे न पडेला थर्ष गयेला भधा लुवेअे आ मार्गनु न अनुसरलु क्युं छतुं तीर्थंकर प्रलुअे लते पलु आ मार्गनी न परिशीलता करी छे अेथी आ मार्गमा प्रवृत्त थपु ते भधी रीते डितावड छे आ प्रभाषे आ मार्ग विश्वसनीय होवा भडल शिष्यो पलु श्रद्धा राभीने तेमा प्रवृत्त थाथ केअक मठ बुद्धि धरावनार शिष्य धल्ला दृष्टते वडे स्पष्ट करवामा आववा छता पलु ले अप्काय वगेरे लुवेनी श्रद्धाथी रहित होय छे तो

परिस्फुरति, तद्विषये विशेषज्ञानाभावात्, तथापि भगवदाज्ञया श्रद्धा नितरां विधेयेत्याशयेनाह—“लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय” इति ।

“लोग” लोकरुम् अत्र लोकशब्देन प्रकरणशब्दात्काय लोक एव गृह्यते, तमपूकायलोक, च शब्देन अन्याथापूकायाश्रितान् जीवान् “आणाए” आणया तीर्थंकर वचनेन “अभिसमेच्चा” अभिसमेत्य आभिगृह्येन सम्यग्ज्ञात्वा, अपूकायादयो जीवा सन्तीत्येवमयु वेत्पर्यः, “अकुतोभय” नास्ति कुतश्चित्

समझानेके लिये सूत्रकार कहते हैं कि हे शिष्य ! तुम्हारी बुद्धि अपूकायिक आदि जीवोंकी श्रद्धा करनेमें उन विषयक विशेषज्ञानके अभावसे यदि समर्थ नहीं है, तौ भी भगवान् की आज्ञा से तुम्हें उनके विषय में अपनी श्रद्धा को दूषित नहीं होने देना चाहिये—अर्थात् भगवान् की आज्ञा प्रमाण मानकर तुम्हें उनके विषय में अपनी अतिशय श्रद्धा जाग्रत करनी चाहिये । सूत्रकार इसी अभिप्राय से कहते हैं कि “लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय” इति । अपूकाय रूप लोक को तथा “च” शब्द से अन्य अपूकाय के अश्रित जीवों को तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा से अच्छी तरह जानकर उनकी आज्ञानुसार उनका अस्तित्व मानकर आत्मकल्याण के अभिलाषी मुनियों को सयम का पालन करना चाहिये । सूत्रस्थलोक शब्द यहा प्रकरण के वश से अपूकाय का बोधक है । “च” शब्द से तदाश्रित अन्य जीवों का ग्रहण हुआ है । “अकुतोभय” शब्द का अर्थ सयम है कहीं से भी किसी

तेने समझववा माटे सूत्रकार कडे छे डे डे डे शिष्य ! तमारी बुद्धि अपूकायिक वगेरे लुवोनी श्रद्धा करवामा तेमना विषे सविशेष ज्ञानना अभावना लीधे जे समर्थ नहीं तो पणु लगवाननी आज्ञाथी ते प्रत्ये तमे पोतानी श्रद्धाने दूषित थवा हेसो नडि ज्येठवे डे लगवाननी आज्ञा प्रमाण मानीने मड बुद्धिवाणा शिष्येजे तेमना प्रत्ये पोतानी वधारेमा वधारे श्रद्धा लभत करवी जेधजे सूत्रकार आ प्रथेज्जन्थी ज कडे छे डे “लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय” इति । अपूकाय रूप लोकने तेमज्ज ‘च’ शब्दथी पील अपूकायाश्रित लुवोने तीर्थंकर प्रभुनी आज्ञाथी सारी चेठे समलने तेमनी आज्ञा मुज्ज तेमनु अस्तित्व मानीने आत्मकल्याणने धर्यनारा मुनिज्येजे सयमनु पालन करवु जेधजे सूत्रमा आवेलो ‘लोक’ शब्द अर्ही प्रकरण वशात् अपूकायनेा वाचक छे ‘च’ शब्दथी तदाश्रित पील लुवोनु श्रद्ध लु थु छे ‘अकुतोभय’ शब्दनेा अर्थ सयम छे काँ पणु जग्गा ज्येथी काँ पणु रीते लुवोने जेनाथी लय छोटो नहीं ते अ

केनापि प्रकारेण प्राणिना भय यस्मात् सोऽकुतोभयः=सयमस्तम्, "अणुपालिज्जा" अनुपालयेत् इति पूर्वोक्तेन सम्बन्धः । सर्वदा जीवाभिरक्षणरूपसयमानुपालने सावधानतया यत्नः कार्यः इत्यर्थः ।

अत्र "जाए सद्वाए निक्खते तमेवमणुपालिज्जा विजहिता विसोत्तियं पुब्बसजोग" इत्यनेन श्रद्धाया आराध्यत्वे जिनाज्ञायाः सद्भावात् श्रद्धाया धर्मत्व सिद्धम् ।

श्रद्धादृढीकरणमपि च धर्मस्तदर्थं "पणया वीरा महावीहि" इति भगवदुपदेशस्य सद्भावात् ।

"लोग च आणाए अभिसमेच्चा" इत्यनेनाज्ञायाः पट्टकायजीवतत्त्वज्ञान-हेतुत्वेन वर्णनात् तत्त्वज्ञानस्य धर्मत्वम् ।

भी प्रकार से जीवो को जिससे भय नहीं होता है वह अकुतोभय-सयम है भाव इसका यही है कि आत्म कल्याण के इच्छुक मुनियों को जीवों के सरक्षण रूप सयम की आराधना करने में सावधानता पूर्वक प्रयत्नशील रहना चाहिये । यहा "जाए सद्वाए निक्खते तमेवमणुपालिज्जा, विजहिता विसोत्तिय पुब्बसजोग" इस सूत्राश से यह बात समझाई गई है कि श्रद्धा की आराधना में जिनेन्द्र की आज्ञा का सद्भाव है अनः वहा धर्म है । अपि च श्रद्धा की दृढता करना यह भी धर्म है । इसी निमित्त "पणया वीरा महावीहि" यह भगवान का उपदेश है ।

"लोग च अणाए अभिसमेच्चा" इस सूत्राश से यह प्रकट होता है कि जब जिनेन्द्र की आज्ञा पट्ट कायिक जीवों के वास्तविक ज्ञान होने में हेतुरूप से वर्णित हुई है तो इस स्थिति में तत्त्वज्ञान धर्म है ।

छे मतलब अे छे के आत्मकल्याण धरुनारा मुनियोने लुवेनी रक्षा रुप सयमनी आगधना करवामा सावधान थधने प्रयत्न करता रहेलु लेधअे अर्डी "जाए सद्वाए निक्खते तमेवमणुपालिज्जा, विजहिता विसोत्तिय पुब्बसजोग" आ सूत्राश वडे आ वात स्पष्ट करवामा आवी छे के श्रद्धानी आराधनामा लुनेन्द्रनी आज्ञाने मइलाव छे अेटला भाटे तेर धर्म छे अने श्रद्धाने मज्जुत पनाववी ते पणु धर्म छे आ निमित्त ल "पणया वीरा महावीहि" आ भगवानने उपदेश छे

"लोगच आणाए अभिसमेच्चा" आ सूत्राश वडे आ वात स्पष्ट थाय छे के ल्यारे लुनेन्द्रनी आज्ञा पट्टकायिक लुवे विवे वास्तविक ज्ञान करववा भाटे ल करवामा आवी छे ल्यारे आवी परिस्थितिमा तत्वज्ञान धर्म छे,

परिस्फुरति, तद्विषये विशेषज्ञानाभावात्, तथापि भगवदाशया श्रद्धा नितरां विधेयेत्याशयेनाह—“लोग च आणाए अभिसमेचा अकुतोभय” इति ।

“लोग” लोकरुम् अत्र लोकरुशब्देन प्रकरणशब्दादप्याय लोकरु एव गृह्यते, तमपूकायलोकरु, च शब्देन अन्याथाप्रायाश्रितान् जीवान् “आणाए” आश्रया तीर्थकर वचनेन “अभिसमेचा” अभिसमेत्य आभिमुख्येन सम्यग्ज्ञात्या, अपूकायादयो जीवा सन्तीत्येवमत्रु वेत्यर्थः, “अकुतोभय” नास्ति कुतश्चित्

समझानेके लिये सूत्रकार कहते हैं कि हे शिष्य ! तुम्हारी बुद्धि अपूकायिक आदि जीवोकी श्रद्धा करनेमें उन विषयक विशेषज्ञानके अभावसे यदि समर्थ नहीं है, तौ भी भगवान् की आज्ञा से तुम्हें उनके विषय में अपनी श्रद्धा को दूषित नहीं होने देना चाहिये—अर्थात् भगवान् की आज्ञा प्रमाण मानकर तुम्हें उनके विषय में अपनी अतिशय श्रद्धा जाग्रत करनी चाहिये । सूत्रकार इसी अभिप्राय से कहते हैं कि “लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय” इति । अपूकाय रूप लोकरु को तथा “च” शब्द से अन्य अपूकाय के अश्रित जीवों को तीर्थकर प्रभु की आज्ञा से अच्छी तरह जानकर उनकी आज्ञानुसार उनका अस्तित्व मानकर आत्मकल्याण के अभिलाषी मुनियों को सयम का पालन करना चाहिये । सूत्रस्थलोक शब्द यहा प्रकरण के वश से अपूकाय का बोधक है । “च” शब्द से तदाश्रित अन्य जीवों का ग्रहण हुआ है । “अकुतोभय” शब्द का अर्थ सयम है कही से भी किसी

तेने समझवया भाटे सूत्रकार कहे छे छे छे शिष्य ! तमारी बुद्धि अपूकायिक वगेरे लुवेनी श्रद्धा करवामा तेमना विषे सविशेर ज्ञानना अलावना लीधे ने समर्थ नथी ते पणु भगवाननी आज्ञाथी ते प्रत्ये तमे पोतानी श्रद्धाने दूषित थवा हेरो नहि छेटवे छे भगवाननी आज्ञा प्रमाण मानीने भद बुद्धिवाणा शिष्योच्चे तेमना प्रये पोतानी वधारेमा वधारे श्रद्धा जाग्रत करवी नेधच्चे सूत्रकार आ प्रयेव नथी न कहे छे छे “लोग च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभय” इति । अपूकाय रूप लोकरुने तेमन ‘च’ शब्दथी पीण अपूकायाश्रित लुवेने तीर्थकर प्रभुनी आज्ञाथी सारी पेटे समलने तेमनी आज्ञा मुज्ज तेमनु अस्तित्व मानीने आत्मकल्याणने ध्येनारा मुनि-ओच्चे सयमनु पालन करवु नेधच्चे सूत्रमा आवेला ‘लोक’ शब्द अही प्रकरण वशात् अपूकायना वाचक छे ‘च’ शब्दथी तदाश्रित पीण लुवेनु श्रद्ध लु थयु छे ‘अकुतोभय’ शब्दने अर्थ सयम छे कौध पणु ज्ञान-ओथी कौध पणु रीते लुवेने नेनाथी लय डोतो नथी ते

सर्वे पाणा, सर्वे भूया, सर्वे जीवा, सर्वे सत्ता न हतव्या न अज्जावेयव्या, न किलायव्या, न उद्देव्यव्या ।

एस धम्मे सुद्धे णितिण सासए, समेच्चा लोयं खेयन्नेहिं पवेइए ।

आर्हतधर्मएय श्रद्धेय इति बोधयितु श्रीसुधर्मास्वामीप्राह—“ से वेमि ” इत्यादि । तीर्थंकरै स्वस्वशिष्येभ्यो यत् सम्यक्त्वमुक्त तदहं ब्रवीमि । यद्वा— ‘से’ इत्यस्य ‘स’ इतिच्छाया । येन मया भगवतः श्री वर्धमानरवामिनरतीथ-करस्य सषाशे तद्वचनतरतन्वज्ञान लब्ध, सोऽहं ब्रवीमि ।—भगदुक्तार्थमेव कथयामि, तस्मान्मम वाक्य श्रद्धेयमितिभावः ।

पाणा, सर्वे भूया, सर्वे जीवा, सर्वे सत्ता न हतव्या, न अज्जावेयव्या, न परिघेत्तव्या, न परितावेयव्या न किलामेयव्या, न उद्देव्यव्या । एस धम्मे सुद्धे णितिण समेच्चा लोयं खेयन्नेहिं पवेइए ” (आ. सू० अ-४ उ १ सू० १) श्री सुधर्मा स्वामी इमं सूत्रं द्वारा जम्बूस्वामी को यह समझाते हैं कि अर्हतप्रभु द्वारा प्रतिपादित धर्म ही श्रद्धा करने योग्य हैं—वे इसमें कहते हैं कि तीर्थंकर देवो ने अपने २ शिष्यों के लिये जिस सम्यक्त्व का कथन किया है वही तत्त्व उन तीर्थंकर प्रभुके वचनो द्वारा श्रवण कर मैं तुम्हें समझाता हूँ अर्थात् मैं अपनी निजी कल्पना से इस विषय में कुछ भी न कह कर जो कुछ तुम्हें समझाऊँगा वह तीर्थंकर प्रभु की मान्यतानुसार ही समझाऊँगा अत इस में सदेह के लिये थोड़ी सी भी जगह नहीं है—इसलिये इस मेरे कथन का मूल-स्रोत जब श्री तीर्थंकर प्रभु का उपदेशश्रवण है तब यह श्रद्धेय—श्रद्धा करने योग्य आवश्यक है भगवान् का यह आदेश है—कि जितने भी

पाणा, सर्वे भूया, सर्वे जीवा, सर्वे सत्ता न हतव्या, न अज्जावेयव्या, न परिघेत्तव्या, न परितावेयव्या, न किलामेयव्या, न उद्देव्यव्या । एस धम्मे सुद्धे णितिण समेच्चा लोयं खेयन्नेहिं पवेइए ” (आ सू अ ४ उ १ सू १) श्री सुधर्मा स्वामी आ सूत्र वडे श्री जम्बू स्वामीने आ प्रभाषे समन्तवे छे के अर्हत प्रभु वडे प्रतिपादित धर्म ज श्रद्धेय छे, तेज्जो आ सूत्रमा कडे छे के तीर्थंकर देवोअे चोतचोताना शिष्यो भाटे ज सम्यक्त्वतु निइपण्य क्युं छे ते ज तत्त्व तीर्थंकर प्रभुना सुभथी श्रवण्य ज्यो जाह हु तमने समन्तवी रह्यो छु अेटले के हु चोतानी भेणे आमा उछ पण उभेयां वगर तीर्थंकर प्रभुनी मान्यता सुजण ज तमने समन्तवीण अेनी अ मा राकाने भाटे मडेज पण स्थान नथी आ प्रभाषे ज्यारे मारा कथननो भूण स्रोत श्री तीर्थंकर प्रभुतु उपदेश छे त्तारे ते श्रद्धेय ज छे लगवाननी आ प्रभाषे आशा छे के

‘ અક્રુતોભય ’ इत्यस्य—“ अणुपालिञ्जा ” इत्यनेनान्यथाद् अकृतोभय-सयमम् अनुपालयेदित्यपि भगवदाक्षैर, तथा च सयमस्याऽऽराध्यतया विरानात् सयमस्य धर्मत्वं चोच्यम् ।

अपर च—उत्तराध्ययनसूत्रे—“ धम्माण कासवो मुह ” इत्युक्तम् “ धम्माण ” धर्माणां श्रुतधर्माणां चारित्र्यमाणा च “ कासवो ” काश्यपः काश्यपगोत्रीयः श्रीमहावीरवर्धमानस्वामी “ मुह ” मुख उक्ता उर्वते ।

अहिंसादौ खलु भगवतोऽर्द्धत आज्ञा उर्वते, पश्यागमेपु । यथा—आचाराङ्गसूत्रे—

“ से वेमि—जे य अतीता, जे य पडुप्पन्ना, जे य आगमिस्सा अरहता भगवतो, ते सन्वेवि एवमाइस्खति एव भासति एव पण्णवेति एव पल्लवेति—

‘ अकृतोभय ’ इस पद का “ अणुपालिञ्जा ” इस क्रियापद के साथ अन्वय करने से यह अर्थ होता है कि अकृतोभयरूप सयम का पालन करना चाहिये, यह भी जब भगवान को आज्ञा ही है तो इससे यह जान स्पष्ट हो जाती है कि भगवान को आज्ञा से सयम आराधन करने लायक होने से धर्म रूप है । अपर च—उत्तराध्ययन सूत्र में “ धम्माण कासवो मुह ” यह कहा है इसका भाव यह है कि श्रुत एवं चारित्र्य धर्मों के मुख-वक्ता-काश्यप गोत्रीय श्री महावीर वर्धमान स्वामी हैं । देखो उन्हो ने आगमों में अहिंसादिक महावतों के पालने का मुमुक्षुओं= मोक्षाभिलाषियों के लिये इस प्रकार आज्ञा प्रदान की है “ से वेमि—जे य अतीता जे य पडुप्पन्ना जे य आगमिस्सा अरहता भगवतो ते सन्वे वि एवमाइस्खति एव भासति एव पण्णवेति एव पल्लवेति ” सन्वे

‘ અક્રુતોભય ’ આ પદનો ‘ અણુપાલિજ્ઞા ’ આ ક્રિયાપદની સાથે અન્વય કરવાથી આ પ્રમાણે અર્થ થાય છે કે અક્રુતોભય રૂપ સયમનું પાલન કરવું જોઈએ આ પણ ભગવાનની જ આજ્ઞા છે તે જોનાથી આ વાત સ્પષ્ટ થઈ જાય છે કે ભગવાનની આજ્ઞાથી ‘ સયમ ’ આરધવા યોગ્ય હોવાથી ધર્મરૂપ છે અને વળી ‘ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર ’ માં “ ધમ્માણ કાસવો મુહ ” આ પ્રમાણેનો ઉલ્લેખ છે એનો અર્થ એમ થાય છે કે શ્રુત અને ચારિત્ર ધર્મોના મુખ્ય-વક્તા-કાશ્યપ ગોત્રીય શ્રી મહાવીર વર્ધમાન સ્વામી છે તેઓશ્રીએ અહિંસા વગેરે મહાવ્રતોના પાલન કરનારા મોક્ષ ઇચ્છનારા લોકોને માટે આગ-જ્ઞાના આ જાતની આજ્ઞા કરી છે કે —

“સે વેમિ—જે ય અતીતા જે ય પડુપ્પન્ના જે ય આગમિસ્સા અરહતા ભગવંતો છે સન્વે વિ એવમાઈસ્સ્વતિ એવ ભાસતિ એવ પણ્ણવેતિ એવ સન્વે

तयोरपि ग्रहणम्, तथा च-‘ एवमाचख्यु, एवमाख्यास्यन्ति ’ इत्यपि योजनीयम् । एवं सर्वासु क्रियासु योजनीयम् । तथा-एव “ भासन्ति ” भाषन्ते=सुर-
नरपरिपदि सर्वजीवाना स्वस्वभाषापरिणामिन्याऽर्धमागध्या भाषया ब्रुवन्ति ।
तथा-एव “ पणवेति ” प्रज्ञापयति=हेतुदृष्टान्तादिना प्रकरणेण बोधयन्ति । तथा-
एव ‘ प्ररुवेति ’ प्ररुपयन्ति=तत्तद्भेद प्रदर्श्य प्रकरणेण निर्णयन्ति ।

ननु सर्वेऽप्यर्हन्तो भगवन्तः-किमाख्यान्तीत्यादिजिज्ञासायामाह-‘ सन्वे-
पाणा ’ इत्यादि । सर्वे=निरपेक्षाः, प्राणाः=प्राणिनः, पृथिव्यादयः स्थावरा

कर परिग्रह रूप से सग्रह करने योग्य, अन्न, पान आदि के निरोध एव
गर्मासर्दी आदिमें रखने से कभी भी पीडा पहुँचाने योग्य और विषप्र-
दान एव शस्त्र के आघात से विनाश करने योग्य नहीं हैं ।

सूत्र में “ आइकस्वति-आख्यान्ति ” यह वर्तमानकालिक-क्रिया
पद अतीत और अनागतकालिक क्रियापद का उपलक्षक है । अतः
इस से यह अर्थ प्रतीत होता है कि उन तीर्थकर प्रभुओं ने वर्तमान
में जैसा कहा है वैसा ही उन्होंने ने या अन्य भूत कालिक तीर्थकरों
ने भूत काल में भी कहा है एव आगामी कालमें भी वे वैसा ही कहेंगे ।
इसी प्रकार “ भासति, पणवेति ” इत्यादि क्रियापदों के साथ भी
अतीत और अनागत कालिक क्रियापदोंका सम्बन्ध कर लेना चाहिये । इस
कथन से सूत्रकार ने उनके कथन में परस्पर में विरुद्ध अर्थकी प्ररूपणा
का अभाव प्रदर्शित किया है जो कुछ उन्हो ने कहा है । वह भूत,
भविष्यत और वर्तमान काल में से किसी भी काल में किसी भी

ज्येष्ठ सभञ्जने परिग्रह इपथी सग्रह करवा योग्य, के अन्न, पान वगैरेना
निरोध अने गर्मी, ठडी वगैरेमा राभीने डोळ पणु वणते पीडित करवा योग्य
अने विष आपीने तेमन् शस्त्रना आघातथी विनाश करवा योग्य नथी

सूत्रमा “ आइकस्वति आख्यान्ति ” आ वर्तमानकालिक क्रियापद अतीत
तेमन् अनागत कालिक क्रियापदसु उपलक्षक छे ज्येथी जेना वडे आ जतना
अर्थनी प्रतीति थाय छे के ते तीर्थकर प्रभुज्येजे वर्तमानकालमा जे प्रभाञ्जे
कहु छे, ते प्रभाञ्जे जे तेज्येजे अथवा तो जीन्त भूतकालिक तीर्थकरेजे भूत-
कालमा पणु कहु छे अने लविध्यकालमा पणु तेज्ये ते प्रभाञ्जे जे कडेसे आ
रीते “ भासति, पणवेति ” वगैरे क्रियापदोनी साथे पणु अतीत अने अना-
गत कालिक क्रियापदोना सम्बन्ध जेडवे जेधजे आ कथनथी सूत्रकारे तेमना
कथनमा परस्परमा विरुद्ध अर्थनी प्ररूपणा अभाव जताज्ये छे तेमजे जे

મગપદુક્તાર્થમાદ-“ જે ય અતીતા ” ઇત્યાદિ । યે ચ અતીતાઃ=અતીતકા
 લિષાઃ, યે ચ ‘ પદુપ્પન્ના ’ પ્રત્યુત્પન્નાઃ=વર્તમાનકારિકાઃ પશ્ચમરતેષુ પશ્ચ
 વતેષુ પશ્ચમદ્વાપિદેહેષુ વર્તમાનાઃ, યે ચ “ આગમિસ્મા ” આગમિનઃ=મવિવ્યત્
 કાલમાવિનઃ, તે સર્વેઽપિ અર્હન્તો મગવન્તઃ, ૧=૩૬૫માણમકારેણ “ આદિશ્ચતિ ”
 આહ્યાન્તિ=પરમશ્ચારસરે કથયન્તિ । અત્ર વર્તમાનગ્રહણમુપલક્ષણં તેનાતીતાનાગ-

ભૂતકાલ મેં તીર્થકર હુજ હેં, વર્તમાન કાલ મેં મી પાંચ ભરત, પાચ
 યેરવત તથા પાંચ મદ્વાપિદેહ સમ્પન્થી જિતને મી તીર્થકર હેં ઓર
 મવિવ્યત કાલ મેં જો તીર્થકર હોંમે ડન મય ને જચ ડનસે કિમી ને
 પ્રશ્ન ક્રિયા, તો ઁક યહી ડત્તાર દિયા હૈ દેવ ઁવ મનુષ્યોં કો સમા મેં
 અપની સર્વભાષા મેં પરિણમિત હુઈ અર્ધમાગધીરુપ દિવ્યધ્વનિ દ્વારા
 ડન્હો ને સમસ્ત જીવો કો યહી સમજ્ઞાયા હૈ, ઓર હેતુ, દૃષ્ટાન્નો દ્વારા
 હસી ઘાત કી પુષ્ટિ કી હૈ । વક્તવ્ય વિષય કે ભેદ ઓર પ્રભેદોં કો
 પ્રકટ કરતે હુજ ડન્હોં ને અચ્છી તરહ સે યહી પ્રરુપણા કી હૈ કિ
 સમસ્ત પ્રાણી પૃથિવી આદિક ઁકેન્દ્રિય સ્થાવર જીવોં સે લેકર દ્વીન્દ્રિ
 યાદિક પચેન્દ્રિય જીવ પર્યન્ત ઘસ જીવ, ચતુર્દશ ભૂતગ્રામરુપ સમસ્ત
 ભૂત, નરકગતિ, તિર્યજ્જગતિ, મનુષ્યગતિ ઁવ દેવગતિ કે સમસ્ત જીવ,
 ઁવ અપને દ્વારા ક્રિયે ગયે કર્મોં કે ડદય કે ફલ સ્વરુપ સુખ દુઃખ
 આદિ કા અનુભવ કરને વાલે સમસ્ત સત્વ ડળડ આદિ દ્વારા કર્મોં મી
 તાડન કરને યોગ્ય, ઘાત કરને યોગ્ય, યે મેરે આધીન હેં ઁમા હ્યાલ

ભૂતકાળમા જેટલા તીર્થ કર થયા છે, વર્તમાનકાળમા પણ પાચ ભરત, પાચ
 ઐરવત તથા પાચ મહાવિદેહ સમ્પન્થી જેટલા તીર્થ કરો છે અને ભવિવ્યકાળમા
 જેટલા તીર્થ કરો થશે તે બધામાથી બ્યારે કોઈએ પ્રશ્ન કર્યો ત્યારે એક જ
 ઉત્તર આપ્યો છે, દેવ અને માણસોની મલામા પોતાની સર્વ ભાષામા પરિ
 ભુમિત થયેલી અર્ધ માગધી રૂપ દિવ્યધ્વનિમા તેઓએ બધા જીવોને એજ
 વાત સમજાવી છે અને હેતુ તેમજ દૃષ્ટાતો વડે આ વાતનુજ સમર્થન કર્યું
 છે વક્તવ્ય વિષયને ભેદ અને પ્રભેદોને સ્પષ્ટ કરતા તેઓએ સરમ રીતે
 એજ પ્રરૂપણા કરી છે કે સમસ્ત પ્રાણીઓ પૃથિવ વગેરે એકેન્દ્રિય સ્થાવર
 જીવોથી માડીને દ્વીન્દ્રિય વગેરે પચેન્દ્રિય જીવ સુધીના ઘસ જીવ, ચતુર્દશ
 ભૂતગ્રામ રૂપ સમસ્ત ભૂત, નરક ગતિ તિર્યજ ગતિ, મનુષ્ય ગતિ અને દેવ
 ગતિના બધા જીવો, અને પોતાના વડે કરવામા આવેલા કર્મોના ઉદયના રૂપ
 સ્વરૂપ સુખ દુઃખ વગેરેને અનુભવતા બધા સત્વો હડ જે કોઈ પણ
 વખત તાડન કરવા યોગ્ય કે ઘાત યોગ્ય, કે એઓ /

तयोरपि ग्रहणम्, तथा च—‘ एवमाचख्यु, एवमाख्यास्यन्ति ’ इत्यापि योजनीयम् । एवं सर्वासु क्रियामु योजनीयम् । तथा—एव “ भासन्ति ” भावन्ते=सुरनरपरिपदि सर्वजीवाना स्वस्वभावापरिणामिन्याऽर्धमाग्न्या भाषया ब्रुवन्ति । तथा—एव “ पणवेति ” प्रज्ञापयन्ति=हेतुदृष्टान्तादिना प्रकरणेण रोधयन्ति । तथा—एव ‘ पख्वेति ’ प्ररूपयन्ति=तत्तद्भेद प्रदर्श्य प्रकरणेण निर्णयन्ति ।

ननु सर्वेऽप्यर्हन्तो भगवन्तः—किमाख्यान्तीत्यादिजिज्ञासायामाह—‘ सन्वेपाणा ’ इत्यादि । सर्वे=निस्वशेषाः, प्राणाः=प्राणिनः, पृथिव्यादयः स्थावरा

कर परिग्रह रूप से सग्रह करने योग्य, अन्न, पान आदि के निरोध एव गर्मासर्दी आदिमें रखने से कभी भी पीडा पहुँचाने योग्य और विप्रदान एव शस्त्र के आघात से विनाश करने योग्य नहीं है ।

सूत्र में “ आइस्त्वति-आख्यान्ति ” यह वर्तमानकालिक-क्रिया पद अतीत और अनागतकालिक क्रियापद का उपलक्षक है । अतः इस से यह अर्थ प्रतीत होता है कि उन तीर्थकर प्रभुओं ने वर्तमान में जैसा कहा है वैसा ही उन्होंने ने या अन्य भूत कालिक तीर्थकरों ने भूत काल में भी कहा है एव आगामी कालमें भी वे वैसा ही कहेंगे । इसी प्रकार “ भासन्ति, पणवेति ” इत्यादि क्रियापदों के साथ भी अतीत और अनागत कालिक क्रियादोंका संबध कर लेना चाहिये । इस कथन से सूत्रकार ने उनके कथन में परस्पर में विरुद्ध अर्थकी प्ररूपणा का अभाव प्रदर्शित किया है जो कुछ उन्हो ने कहा है । वह भूत, भविष्यत और वर्तमान काल में से किसी भी काल में किसी भी

श्रेषु समलने परिग्रह इपथी सग्रह करवा योग्य, उ अन्न, पान वगेरेना निरोध अने गर्मी, ठडी वगेरेमा शशीने कोर्ध पणु वषते पीडित करवा योग्य अने विष आपीने तेमञ् शस्त्रना आघातथी विनाश करवा योग्य नथी

सूत्रमा “ आइस्त्वति आख्यान्ति ” आ वर्तमानकालिक क्रियापद अतीत तेमञ् अनागत कालिक क्रियापदतु उपलक्षक छे अथी अना वडे आ नतना अर्थनी प्रतीति थाय छे डे ते तीर्थ कर प्रभुओअे वर्तमानकालमा ने प्रभाछे कछु छे, ते प्रभाछे न् तेओअे अथवा तो पीन भूतकालिक तीर्थ करेओे भूत कालमा पणु कछु छे अने भविष्यकालमा पणु तेओे ते प्रभाछे न् कछेशे आ रीते “ भासन्ति, पणवेति ” वगेरे क्रियापदोनी साथे पणु अतीत अने अनागत कालिक क्रियापदोना संबध जेडवे जेधअे आ कथनथी सूत्रकारे तेमना कथनमा परस्परमा विरुद्ध अर्थनी प्ररूपणाने अभाव भताओे छे तेमछे ने

ભગવદુક્તાર્થમાદ-“ જે ચ અતીતા ” ઇત્યાદિ । ચે ચ અતીતાઃ=અતીતકાલિયાઃ, ચે ચ ‘ પદ્મપદ્મા ’ પ્રત્યુત્પન્નાઃ=વર્તમાનકાલિકાઃ પશ્ચમરતેષુ પશ્ચિરવતેષુ પશ્ચમદાવિદેહેષુ ર્તમાનાઃ, ચે ચ “ આગમિસ્મા ” આગામિનઃ-ભવિષ્યત્કાલમાવિનઃ, તે સર્વેઽપિ અર્હન્તો ભગવન્તઃ ॥ ૧ ॥ =વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ “ આશ્વત્થિ ” આશ્વાન્તિ=પરમશ્રાવસરે વ્યથન્તિ । અત્ર વર્તમાનગ્રહણમુપલક્ષણ તેનાતીતાનામ-

ભૂતકાલ મેં તીર્થ કર હુવ હે, વર્તમાન કાલ મેં મી પાચ ભરત, પાચ ઐરવત તથા પાચ મહાવિદેહ સમ્પન્થી જિતને મી તીર્થકર હેં ઓર ભવિષ્યત કાલ મે જો તીર્થકર હોંગે ઉન સવ ને જય ઉનસે કિસી ને પ્રશ્ન કિયા, તો એક યહી ઉત્તર દિયા હે દેવ ઇવ મનુષ્યોં કી સભા મેં અપની સર્વભાષા મેં પરિણમિત હુઈ અર્ધમાગધીરૂપ દિવ્યધ્વનિ દ્વારા ઉન્હો ને સમસ્ત જીવોં કો યહી સમજાયા હે, ઓર હેતુ, દૃષ્ટાન્તો દ્વારા હસી યાત કી પુષ્ટિ મી હે । વક્તવ્ય વિષય કે ભેદ ઓર પ્રભેદોં કો પ્રકટ કરતે હુવ ઉન્હોં ને અચ્છી તરહ સે યહી પ્રરૂપણા કી હે કિ સમસ્ત પ્રાણી પૃથિવી આદિક એકેન્દ્રિય સ્થાવર જીવોં સે લેકર દ્વીન્દ્રિયાદિક પચેન્દ્રિય જીવ પર્યન્ત ત્રસ જીવ, ચતુર્દશ ભૂતગ્રામરૂપ સમસ્ત ભૂત, નરકગતિ, તિર્યચ્ચગતિ, મનુષ્યગતિ ઇવ દેવગતિ કે સમસ્ત જીવ, ઇવ અપને દ્વારા કિયે ગયે કર્મોં કે ઉદય કે ફલ સ્વરૂપ સુખ દુઃખ આદિ ક્ષા અનુભવ કરને વાલે સમસ્ત સત્વ દળદ આદિ દ્વારા કર્મોં મી તાહન કરને યોગ્ય, યાત કરને યોગ્ય, ચે મેરે આધીન હેં એસા સ્થાલ

ભૂતગ્રામમા જેટલા તીર્થ કર થયા છે, વર્તમાનગ્રામમા પણ પાચ ભરત, પાચ ઐરવત તથા પાચ મહાવિદેહ સમ્પન્થી જેટલા તીર્થ કરે છે અને ભવિષ્યગ્રામમા જેટલા તીર્થ કરે થશે તે બધામાથી જ્યારે કોઈએ પ્રશ્ન કર્યો ત્યારે એક જ ઉત્તર આપ્યો છે, દેવ અને માણસોની સભામા પોતાની સર્વ ભાષામા પરિણમિત થયેલી અર્ધ માગધી રૂપ દિવ્યધ્વનિમા તેઓએ બધા જીવોને એજ વાત સમજાવી છે અને હેતુ તેમજ દૃષ્ટાન્તો વડે આ વાતનું જ સમર્થન કર્યું છે વક્તવ્ય વિષયનો ભેદ અને પ્રભેદોને સ્પષ્ટ કરતા તેઓએ સરસ રીતે એજ પ્રશ્નજવા કરી છે કે સમસ્ત પ્રાણીઓ પૃથિવ વગેરે એકેન્દ્રિય સ્થાવર જીવોથી માંડીને દ્વીન્દ્રિય વગેરે પચેન્દ્રિય જીવ મુધીના ત્રસ જીવ, ચતુર્દશ ભૂતગ્રામ રૂપ સમસ્ત ભૂત, નરક ગતિ તિર્યચ ગતિ, મનુષ્ય ગતિ અને દેવ ગતિના બધા જીવો, અને પોતાના વડે કરવામા આવેલા કર્મોના ઉચ્ચત્ત્વ રૂપ સ્વરૂપ સુખ દુઃખ વગેરેને અનુભવતા બધા સત્વો હક વગેરે કોઈ પણ વખત તાહન કરવા યોગ્ય કે યાત કરવા યોગ્ય, કે એઓ

तयोरपि ग्रहणम्, तथा च- ' एवमाचख्यु, एवमारयास्यन्ति ' इत्यपि योजनीयम् । एव सर्वासु क्रियामु योजनीयम् । तथा-एव " भासन्ति " भाषन्ते=सुरनरपरिपदि सर्वजीवाना स्वस्वभावापरिणामिन्याऽर्धमागध्या भाषया ब्रुवन्ति । तथा-एव " पण्वेति " प्रज्ञापयन्ति=हेतुदृष्टान्तादिना प्रकर्षेण बोधयन्ति । तथा-एव ' पख्वेति ' प्ररूपयन्ति=तत्तद्भेद प्रदर्श्य प्रकर्षेण निर्णयन्ति ।

ननु सर्वेऽप्यर्हन्तो भगवन्तः-किमाख्यान्तीत्यादिजिज्ञासायामाह-' सन्वेपाणा ' इत्यादि । सर्वे=निखशेषाः, प्राणाः=प्राणिनः, पृथिव्यादयः स्थावरा

कर परिग्रह रूप से सग्रह करने योग्य, अन्न, पान आदि के निरोध एव गर्मीसर्दी आदिमें रखने से कभी भी पीडा पहुँचाने योग्य और विषप्रदान एव शस्त्र के आघात से विनाश करने योग्य नहीं है ।

सूत्र में " आइकखति-आख्यान्ति " यह वर्तमानकालिक-क्रियापद अतीत और अनागतकालिक क्रियापद का उपलक्षक है । अतः इस से यह अर्थ प्रतीत होता है कि उन तीर्थकर प्रभुओं ने वर्तमान में जैसा कहा है वैसा ही उन्होंने ने या अन्य भूत कालिक तीर्थकरों ने भूत काल में भी कहा है एव आगामी कालमें भी वे वैसा ही कहेंगे । इसी प्रकार " भासन्ति, पण्वेति " इत्यादि क्रियापदों के साथ भी अतीत और अनागत कालिक क्रियापदोंका संबन्ध हर लेना चाहिये । इस कथन से सूत्रकार ने उनके कथन में परस्पर में विरुद्ध अर्थकी प्ररूपणा का अभाव प्रदर्शित किया है जो कुछ उन्हो ने कहा है । वह भूत, भविष्यत और वर्तमान काल में से किसी भी काल में किसी भी

अधु सभञ्जने परिग्रह इपथी सग्रह करवा योग्य, के अन्न, पान वगेरेना निरोध अने गर्मी, ठडी वगेरेमा राष्ठीने कोर्ध पणु वषते पीडित करवा योग्य अने विष आपीने तेमञ् शस्त्रना आघातथी विनाश करवा योग्य नथी

सूत्रमा " आइकखति धारयन्ति " आ वर्तमानकालिक क्रियापद अतीत तेमञ् अनागत कालिक क्रियापदनु उपलक्षक छे अथी अना वडे आ नतना अर्थनी प्रतीति थाय छे के ते तीर्थकर प्रभुओंके वर्तमानकालमा जे प्रभाषे कछु छे, ते प्रभाषे जे तेओंके अथवा तो जीन लूतकालिक तीर्थ करेओंके भूत कालमा पणु कछु छे अने लविष्यकालमा पणु तेओंके ते प्रभाषे जे कछेशे आ रीते " भासन्ति, पण्वेति " वगेरे क्रियापदोनी साथे पणु अतीत अने अनागत कालिक क्रियापदोना संबन्ध न्नेडवे न्नेडवे आ कथनथी सूत्रकारे तेमना कथनमा परस्परमा विरुद्ध अर्थनी प्ररूपणाना अलाव अतांये छे तेमणु जे

દીન્દ્રિયાદિપદ્મોન્દ્રિયપર્યંતારસાથેત્યર્થઃ, દ્વિન્દ્રિયાદિમાણાના યથાસમ્ભવધારણાત્ તેષુ માણિત્વમસ્તીતિ ભાવઃ । તથા-સર્વે ' શૂયા ' શૂતાઃ=મરન્તિ મરિવિપ્યન્ત્યશૂગ્નિતિ શૂતાઃ-ચતુર્દશભૂતગ્રામરૂપાઃ, તથા-સર્વે જીવા=જીવન્તિ જીવિવ્યત્યજીવિષુ રિતિજીવાઃ-નારકતિર્યદ્મનુવ્યદેવાઃ, તથા-સર્વે "સત્તા" સત્તાઃ=

પ્રમાણ દ્વારા ઘાઘિત નહીં હો સકને સે પૂર્વાપર વિરોધ રહિત હી કહા હૈ । "પ્રાણ" શબ્દ સે સૂત્રકાર ને ઘસ ઓર સ્થાવર પ્રણિયો કા ઘરણ કિયા હૈ । કયો કિ ૧૦ દ્રવ્ય પ્રાણો મેં સે ડનકો અપને ૨ યોગ્ય પ્રાણો કા સદ્ભાવ પાયા જાતા હૈ । અતઃ ડનકે સદ્ભાવ સે હી યે પ્રાણી કહે જાતે હેં । " મરન્તિ, મરિવિપ્યન્તિ, અમૂવન્ "યહ ભૂત શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ હૈ । ડસકા ભાવ યહી હૈ કિ જો વર્તમાન મેં સત્તા વિશિષ્ટ હૈ, આગામી કાલ મેં સત્તા વિશિષ્ટ રહેંગે ંવ ભૂતકાલ મેં મી જો સત્તા વિશિષ્ટ યે । ડસ વ્યુત્પત્તિ સે સૂત્રકાર ને યહ પ્રદર્શિત કિયા હેં કિ પ્રત્યેક જીવાદિક પદાર્થ કિસી મી કાલ મેં ઉત્પાદ ઓર વ્યય ધર્મ વિશિષ્ટ હોતે હુગ મી અપની ૨ સત્તા સે રહિત નહીં હોતે હેં । કયો કિ દ્રવ્ય કા " ઉત્પાદવ્યયધ્રોવ્ય સત્ " ઉત્પાદ, વ્યય ઓર ધ્રોવ્ય યે સ્વભાવ હૈ । ડસસે યહ વાત નિશ્ચિત કોટિ મેં આતા હૈ કિ કિસી મી નવીન પદાર્થ કા ઉત્પાદ નહીં હોતા હૈ ઓર ન સત્ પદાર્થ કા વિનાશ હી હોતા હૈ । " સતો વિનાશઃ અસતશ્ચોત્પાદો ન " " જીવન્તિ, જીવિવ્યન્તિ, અજીવિષુ " યહ જીવ શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ હૈ ।

કઈ કણુ છે તે ભૂત ભવિષ્યત અને વર્તમાનકાળમાથી કોઈ પણ કાળમા ગમી તે પ્રમાણ દ્વારા ઘાઘિત નહિ હોવા બદલ પૂર્વાપર વિરોધ રહિત જ કહુ છે, " પ્રાણ " શબ્દ વડે સૂત્રકારે ઘસ અને સ્થાવર પ્રાણીઓનુ અહણુ કણુ છે કેમકે ૧૦ દ્રવ્ય પ્રાણીમાથી એમનામા પોતપોતાને યોગ્ય પ્રાણીને સદ્ભાવ મળે છે એથી એમના સદ્ભાવથી જ તેઓ પ્રાણી રહેવાય છે " મરન્તિ, મરિવિપ્યન્તિ, અમૂવન્ " આ ભૂત શબ્દની વ્યુત્પત્તિ છે એનો અર્થ આ પ્રમાણે છે કે વર્તમાનકાળમા જેઓ સત્તા વિશિષ્ટ છે, તેઓ ભવિષ્યકાળમા સત્તા વિશિષ્ટ રહેશે અને ભૂતકાળમા પણ જેઓ સત્તા વિશિષ્ટ હતા આ વ્યુત્પત્તિ વડે સૂત્રકારે એ બતાવ્યુ છે કે દરેકે દરેક જીવ વગેરે પદાર્થ કોઈ પણ કાળમા એને વ્યયધર્મ વિશિષ્ટ હોવા છતાએ પોતપોતાની સત્તાથી રહિત હોતા કે દ્રવ્યને " ઉત્પાદવ્યયધ્રોવ્ય સત્ " ઉત્પાદ, વ્યય અને ધ્રોવ્ય એથી એ વાત ચોક્કસ રીતે સ્પષ્ટ થાય છે કે કોઈ પણ નવીન યતો નથી અને સત્ પદાર્થને વિનાશ પણ યતો નથી અસતશ્ચોત્પાદો ન " " જીવન્તિ, જીવિવ્યન્તિ, અજીવિષુ " આ

સ્વકૃતકર્મજન્યસુખદુઃસાનુભવિનઃ । અત્ર સર્વપ્રાણિણુ પુન પુનર્દયાકરણાય
પર્યાયશબ્દપ્રયોગઃ ।

‘ ન હત્ત્વ્યા ’ ન હન્ત્ત્વ્યા: = ઢ્ણડાદિભિર્ન તાડયિત્ત્વ્યા इत्यर्थ, “ ન અજ્ઞા-
વેયવ્યા ” નાનાપયિત્ત્વ્યા: = ન પ્રાપયિત્ત્વ્યા इत्यर्थ:, “ ન પરિવેત્ત્વ્યા ” ન પરિ-
પ્રહીત્ત્વ્યા = હમે મમાયત્તા इति कृत्वा परिग्रहरूपेण न स्वीकर्तव्या, “ ન પરિતા-

જો જીતે છે, જીવેંગે ઓર જિયે છે, ઇસ કથન સે સૂત્રકાર ને જીવ મેં
ત્રિકાલ મેં ઓ જીવનત્વ વર્મ કા અભાવ નહીં હોતા છે વહ પ્રદર્શિત
કિયા છે ઓહી જીવ ંકુ ઇન્દ્રિય અવસ્થાવાલા ઓ હો તો ઓ વહ જીવન
અવસ્થા સે રહિત નહીં હોતા છે ઇસસે વૃક્ષાદિકો મેં અચેતનતા માનને
વાલે ઘોદ્ર આદિકો કા મન્તવ્ય ક્ષડિત હોતા છે ।

સૂત્ર મેં પ્રાણી, ભૂત, ંર સત્ત્વ ઇન ંકાર્યક પર્યાયવાચી શબ્દો કા
જો સૂત્રકાર ને પ્રયોગ કિયા છે ંનકા મુખ્ય પ્રયોજન “ સમસ્ત જીવો મેં
વારવાર દયા કરની ઓહિયે ” છે ।

વહ વીતરાગપ્રભુ દ્વારા પ્રતિપાદિત પ્રાણાતિપાતવિરમણરૂપ ધર્મશુદ્ધ
પાપાનુબન્ધ રહિત છે । ઇસ કથન સે સૂત્રકાર ને ઇસ વાત ની પુષ્ટિ કી
છે જો અવીતરાગ-શાન્ત્ય આદિ દ્વારા ધર્મરૂપ સે પ્રતિપાદિત હુઆ છે
તથા જિસે ંન્હોને ધર્મરૂપ સે સ્વીકાર કિયા છે વહ વાસ્તવિક ધર્મ નહીં
છે । કારણ કિ ઇનમેં હિંસાદિક દોષો કા સદ્ભાવ પાયા જાતા છે ઇનકે

જીવ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ છે જેઓ જીવે છે, જીવશે અને જીવ્યા છે આ કથન
વડે સૂત્રકારે જીવમા ત્રિકાળમા પણ જીવનત્વ ધર્મને અભાવ થતો નથી આ
વાત સ્પષ્ટ કરી છે ભલે તે જીવ એક ઇન્દ્રિય અવસ્થાવાળો હોય છતાંએ તે
જીવન અવસ્થાથી રહિત થતો નથી આ કથનથી વૃક્ષ વગેરેમા અચેતનતા
માનનારા ઘોદ્ર વગેરેના મતનુ ખડન થઈ જાય છે

સૂત્રકારે સૂત્રમા જે પ્રાણી, ભૂત અને સત્ત્વ આ બધા એકાર્થક પર્યાય
વાચી શબ્દોને જે પ્રયોગ કર્યો છે તેનુ ખાસ કારણુ “ બધા જીવોમા વારવાર
સદ્ય રહેવું જોઈએ ” તે જ છે

વીતરાગ પ્રભુ વડે પ્રતિપાદિત પ્રાણાતિપાત વિરમણુ રૂપ આ ધર્મ શુદ્ધ
પાપાનુબન્ધ રહિત છે આ કથનથી સૂત્રકારે એ વાતને પુષ્ટ કરી છે કે જે
અવીતરાગ-શાન્ત્ય વગેરે દ્વારા ધર્મ-રૂપથી પ્રતિપદિત થયો છે તેમજ તેમણે
જેને ધર્મ-રૂપથી સ્વીકાર્યો છે તે ખરેખર ધર્મ નથી કેમકે તેમા હિંસા વગેરે
દોષોનો સદ્ભાવ છે અસર્વજ તથા રાગચુક્રા લોકો દ્વારા પ્રતિપાદિત હોવાને

દ્વીન્દ્રિયાદિપન્નેન્દ્રિયપર્પ-તાત્સાથેત્યર્થઃ, ઈન્દ્રિયાદિપ્રાણાનાં યથાસમ્ભવધાર-
ણાત્ તેષુ પ્રાણિશ્વમસ્તીતિ ભાવઃ । તથા-સર્વે ' મૂયા ' મૂતાઃ=મરન્તિ મવિપ્ય-
ન્ત્યમૂવન્નિતિ મૂતાઃ-ચતુર્દશમૂતગ્રામરૂપાઃ, તથા-સર્વે જીવા=જીવન્તિ જીવિ-
પ્યત્યજીવિષુ રિતિ જીવાઃ-નારકતિર્યદ્મનુપ્યદેવાઃ, તથા-સર્વે "સત્તા" સત્તાઃ=

પ્રમાણ દ્વારા ગ્રાહિત નહીં હો સકને સે પૂર્વાપર વિરોધ રહિત હી કહા
હૈ । "પ્રાણ" શબ્દ સે સૂત્રકાર ને વ્રસ ઓર સ્થાવર પ્રણિયો કા
ગ્રહણ કિયા હૈ । ક્યો કિ ૧૦ દ્રવ્ય પ્રાણો મેં સે ઇનકો અપને ૨
યોગ્ય પ્રાણો કા સદ્ભાવ પાયા જાતા હૈ । અતઃ ઇનકે સદ્ભાવ સે હી
યે પ્રાણી કહે જાતે હૈં । " મવન્તિ, મવિપ્યન્તિ, અમૂવન્ "યહ
મૂત શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ હૈ । ઇસકા ભાવ યહી હૈ કિ જો વર્તમાન
મેં સત્તા વિશિષ્ટ હૈં, આગામી કાલ મેં સત્તા વિશિષ્ટ રહેંગે યવ મૂત-
કાલ મેં મી જો સત્તા વિશિષ્ટ યે । ઇસ વ્યુત્પત્તિ સે સૂત્રકાર ને યહ
પ્રદર્શિત કિયા હૈં કિ પ્રત્યેક જીવાદિક પદાર્થ કિસી મી કાલ મેં ઉત્પાદ
ઓર વ્યય ધર્મ વિશિષ્ટ હોતે હુણ મી અપની ૨ સત્તા સે રહિત નહીં
હોતે હૈં । ક્યો કિ દ્રવ્ય કા " ઉત્પાદવ્યયધૌવ્ય સત્ " ઉત્પાદ, વ્યય
ઓર ધૌવ્ય યે સ્વભાવ હૈ । ઇસસે યહ વાત નિશ્ચિત કોટિ મેં આતા હૈ
કિ કિસી મી નવોન પદાર્થ કા ઉત્પાદ નહીં હોતા હૈ ઓર ન સત્
પદાર્થ કા વિનાશ હી હોતા હૈ । " સતો વિનાશઃ અસતશ્ચોત્પાદો ન "
" જીવન્તિ, જીવિપ્યન્તિ, અજીવિષુ " યહ જીવ શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ હૈ ।

કઈ કહ્યુ છે તે ભૂત ભવિધ્યત અને વર્તમાનકાળમાથી કોઈ પણ કાળમા ગમે
તે પ્રમાણ દ્વારા ગ્રાહિત નહિ હોવા બદલ પૂર્વાપર વિરોધ રહિત જ કહ્યુ છે,
" પ્રાણ " શબ્દ વડે સૂત્રકારે વ્રસ અને સ્થાવર પ્રાણીઓનુ ગ્રહણ કર્યુ છે
કેમકે ૧૦ દ્રવ્ય પ્રાણોમાથી એમનામા પોતપોતાને યોગ્ય પ્રાણોને સદ્ભાવ
મળે છે એથી એમના સદ્ભાવથી જ તેઓ પ્રાણી કહેવાય છે " મવન્તિ,
મવિપ્યન્તિ, અમૂવન્ " આ ભૂત શબ્દની વ્યુત્પત્તિ છે એનો અર્થ આ પ્રમાણે
છે કે વર્તમાનકાળમા જેઓ સત્તા વિશિષ્ટ છે, તેઓ ભવિધ્યકાળમા સત્તા
વિશિષ્ટ રહેશે અને ભૂતકાળમા પણ જેઓ સત્તા વિશિષ્ટ હતા આ વ્યુત્પત્તિ
વડે સૂત્રકારે એ બતાવ્યુ છે કે દરેકે દરેક જીવ વગેરે પદાર્થ કોઈ પણ કાળમા
ઉત્પાદ અને વ્યયધર્મ વિશિષ્ટ હોવા છતાંયે પોતપોતાની સત્તાથી રહિત હોતા
નથી કેમકે દ્રવ્યને " ઉત્પાદવ્યયધૌવ્ય સત્ " ઉત્પાદ, વ્યય અને ધૌવ્ય
સ્વભાવ છે એથી એ વાત ચોક્કસ ગીતે સ્પષ્ટ થાય છે કે કોઈ પણ નવોન
પદાર્થને ઉત્પાદ થતો નથી અને સત્ પદાર્થને વિનાશ પણ નથી
" સતો વિનાશઃ અસતશ્ચોત્પાદો ન " " જીવન્તિ, જીવિપ્યન્તિ, અજીવિષુ " આ

स्वकृतकर्मजन्यसुखदुःसानुभविनः । अत्र सर्वप्राणिषु पुन पुनर्दयाकरणाय पर्यायशब्दप्रयोगः ।

‘न हतव्या’ न हन्तव्याः=दण्डादिभिर्न ताडयितव्या इत्यर्थ, “न अज्जावेयव्या” नातापयितव्याः=न तातपितव्या इत्यर्थः, “न परिवेत्तव्या” न परिग्रहीतव्या =इमे ममायत्ता इति कृत्वा परिग्रहरूपेण न स्वीकर्तव्या, “न परिता-

जो जीते हं, जीवेंगे और जिये है, इस कथन से सूत्रकार ने जीव में त्रिकाल में भी जीवनत्व वर्म का अभाव नहीं होता है यह प्रदर्शित किया है चाहे जीव एक इन्द्रिय अवस्थावाला भी हो तो भी वह जीवन अवस्था से रहित नहीं होता है इससे वृक्षादिकों में अचेतनता मानने वाले बौद्ध आदिकों का मन्तव्य खंडित होता है ।

सूत्र में प्राणी, भूत, और मत्त्व इन एकार्थक पर्यायवाची शब्दों का जो सूत्रकार ने प्रयोग किया है उनका मुख्य प्रयोजन “समस्त जीवों में चारवार दया करनी चाहिये” है ।

यह वीतरागप्रभु द्वारा प्रतिपादित प्राणातिपातविरमणरूप धर्मशुद्ध पापानुन्ध रहित है । इस कथन से सूत्रकार ने इस बात की पुष्टि की है जो अवीतराग-शास्त्र आदि द्वारा धर्मरूप से प्रतिपादित हुआ है तथा जिसे उन्होंने धर्मरूप से स्वीकार किया है वह वास्तविक धर्म नहीं है । कारण कि इनमें हिंसादिक दोषों का सद्भाव पाया जाता है इनके

एव शब्दनी व्युत्पत्ति छे जेओ एवे छे, एवगे अने एव्या छे आ अथन वडे सूत्रकारे एवमा त्रिकाणमा पणु एवनत्व धर्मने अभाव थतो नथी आ वात स्पष्ट करी छे लये ते एव ओक इन्द्रिय अवस्थावाणो होय छताओ ते एवन अवस्थाधी रहित थतो नथी आ अथनथी वृक्ष वगेरेमा अचेतता माननारा भौद्ध वगेरेना मतनु अडन थर्ध लय छे

सूत्रकारे सूत्रमा जे प्राणी, भूत अने सत्व आ अथा ओकार्थक पर्याय वाची शब्दोना जे प्रयोग कर्यो छे तेनु भास करणु “अथा एवोमा वारवार सह्य रहवु नोछओ” ते न छे

वीतराग प्रभु वडे प्रतिपादित प्राणातिपात विरमणु इय आ धर्म शुद्ध पापानुन्ध रहित छे आ अथनथी सूत्रकारे ओ वातने पुण करी छे के जे अवीतराग-शास्त्र वगेरे द्वारा धर्म-इपथी प्रतिपादित थयो छे तेमन तेमणे जेने धर्म-इपथा स्वीकार्यो छे ते अरेपर धर्म नथी केमके तेमा हिंसा वगेरे दोषोना सहलाव छे असर्वज्ञ तथा रागयुक्त होके द्वारा प्रतिपादित होवाने

વેચ્યા” ન પરિતાપયિતવ્યા =અન્નપાનાદ્યરોધનેન પ્રીત્ત્વાતપાદો સ્થાપનેન ચ ન પીડનીયાઃ, “ ન કિત્રામેચ્યા ” ન ક્રામયિતવ્યા:=ન સ્વેદયિતવ્યા:=ન વિપ શસ્ત્રાદિના મારયિતવ્યાઃ ।

एषः=अनन्तरोक्तः सर्वार्हद्भगवत्प्ररूपितः, धर्मः=धर्ममाणिप्राणातिपातविरमण रूपः, शुद्धः=निर्मलः-पापानुबन्धरहित-इत्यर्थ । आर्हतसर्माटन्पस्तु धर्मत्वेन यः शाक्यादेरमितः स खलु असर्वज्ञसरागोपदिष्टत्वेन द्विसाद्विदोपसद्भावेन च न शुद्ध इति भावः । अत एव-एष नित्यः=अविनाशी, सर्वदा पञ्चमु महाविदेहेषु

સદ્ભાવ કા કારણ ઉસમેં અસર્વજ્ઞ ઓર સરાગિયોં ઠારા પ્રણીતતા હી હૈ પૂર્ણ જ્ઞાનીયો દ્વારા પ્રદર્શિત માર્ગ હી શુદ્ધ હોતા હૈ ડસકા કારણ ઉનમેં રાગ દ્વેષ કા સર્વથા અભાવ હી હોતા હૈ । અસર્વજ્ઞ યા રાગદ્વેષકલુપિત-ચિત્તવાલોં દ્વારા પ્રદર્શિત માર્ગ ડસલિયે શુદ્ધ નહીં હોતા હૈ કિ વે ઇક તો ઉસ વિષય કે પૂર્ણ જ્ઞાતા નહીં હોતે, ડસરી અપની રાગદ્વેષમયી પ્રવૃત્તિ કો પુષ્ટ કરને કે લિયે ઉસકી અન્યથા ખી પ્રરૂપણા કર દેતે હૈ । ઁસા ધર્મ શાશ્વતિક નિત્ય નહીં હોતા હૈ-ત્રયોં કિ ઁસા ધર્મકા વિશિષ્ટ જ્ઞાનિયોં-કેવલજ્ઞાનિયો દ્વારા જીવોં કા કલ્યાણ કી કામના સે નિરાકરણ કર દિયા જાતા હૈ । વીતરાગપ્રતિપાદિત ધર્મ હી અવિનાશી રહતા હૈ, ઓર ઉસીસે જીવોં કા સદા કલ્યાણ હોતા રહતા હૈ । ડસમે અન્ય યાપ્રરૂપણાકે લિયે થોડી સી ખી જગહ નહી મિલતી હૈ । પચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રોંમેં અવ ખી ડસ શુદ્ધ ધર્મકા સદ્ભાવ હૈ । ડસી અપેક્ષા ડસે સૂત્રકારને નિત્ય-અવિનાશી કહા હૈ । શાશ્વતગતિરૂપ મુક્તિ કા કારણ હોને સે

લીધે જ તેમા દ્વિસા વગેરે સદોપતા છે પૂર્ણજ્ઞાનીઓ વડે પ્રદર્શિત માર્ગે જ શુદ્ધ હોય છે કેમકે તેઓમા સપૂર્ણપણે રાગદ્વેષને અભાવ જ હોય છે અસર્વજ્ઞ કે રાગદ્વેષ કલુપિત ચિત્તવાળા લોકો વડે પ્રતિપાદિત માર્ગ શુદ્ધ એટલા માટે હોતો નથી કે તેઓ પ્રથમ તો તે વિષયને સપૂર્ણપણે જાણતા નથી અને ઘીબુ તેઓ પોતાની રાગદ્વેષમયી પ્રવૃત્તિને પુષ્ટ કરવા માટે તેની અન્યથા પ્રરૂપણા પણ કરી જોસે છે એવો ધર્મ શાશ્વતિક-નિત્ય હોતો નથી કેમકે એવા ધર્મનું વિશિષ્ટ જ્ઞાનીઓ-કેવલજ્ઞાનીઓ-વડે જીવોની કલ્યાણ કામનાથી પ્રેરણને નિરાકરણ કરવામા આવે છે વીતરાગ પ્રતિપાદિત ધર્મ જ અવિનાશી રહે છે, અને તેથી સર્વદા જીવોનું કલ્યાણ થતુ રહે છે આમા અન્યથા પ્રરૂપણા માટે અવકાશ જ નથી અત્યારે પણ પચવિદેહ ક્ષેત્રમા આ શુદ્ધ ધર્મનો સંભાવ છે આ ધર્મને આ દૃષ્ટિથી જ સૂત્રકારે નિ, ૧ કહ્યો છે શાશ્વત ગતિ રૂપ મુક્તિને હોવાથી આ ધર્મ

सद्भावत् । तथा-शाश्वतः=शाश्वतगतिकारणत्वात् । यद्वा-यतो नित्यस्तस्माच्छाश्वत इति । अयमेव धर्मः श्रद्धेयो ग्राह्यश्चेत्यत्र हेतु प्रदर्शयन् विशेषणान्तरमाह-समेत्य इत्यादि । लोक पट्ट जीवनिर्काय दुःखदावानलान्त, पतित, समेत्य=केवलज्ञानेन प्रत्यक्षतया विज्ञान, खेदज्ञैः=सर्वप्राणिदुःखाभिन्नैस्तीर्थकरैः प्रवेदितः=आदिष्ट । 'प्रवेदित' इत्यनेन धर्मोऽयं मया न स्वमनीषया कल्पितः' इति च सुधर्मस्वामिना शिष्यमुद्दिष्य सूचितम् । अनुयोगद्वारे—

यह शाश्वत माना गया है अथवा हेतु हेतुमद्भाव से भी यों कह सकते हैं कि जिस कारण से यह नित्य है इसी कारण से यह शाश्वत माना गया है । अतः प्रत्येक सुसुक्ष्म जीवों द्वारा यह धर्म श्रद्धेय श्रद्धा करने योग्य एव ग्राह्य-आराधन करने योग्य है इस विषय में पूर्वोक्तरूप से सूत्रकार हेतु का कथन कर उस धर्म की प्ररूपणा करने के कारण का प्रदर्शन करते हुए "समेत्य लोक खेदज्ञैः प्रवेदितः" कहते हैं कि समस्त प्राणियों के दुःखों के वेत्ता केवलज्ञानी प्रभु ने इस पट्टजीव निर्कायरूप लोक को प्रत्यक्षरूप से साक्षात् दुःखरूपी दावानल से जलता हुआ देखकर इस शुद्ध, शाश्वतिक धर्म का कथन किया है ।

भावार्थ-अनंत सासारिक दुःखों से सतस्र समस्त ससारी जीवों को साक्षात् हस्तामलकवत् देखकर दुःखों से उनके उद्धार के निमित्त वीतराग केवलज्ञानियों ने ही इस धर्म की प्ररूपणा की है । मैं ने अपनी ओर से इसका कथन नहीं किया है । इस प्रकार श्री सुधर्मास्वामी अपने शिष्य जम्बूस्वामी को समझाते हैं ।

वामा आये छे अथवा डेतु-डेतु भइभावथी पणु जेम कडी शकाय छे के जे कारणुने लधने आ नित्य छे ते डारणुथी न आ शाश्वत मानवामा आये छे जेथी हरेड मोक्षने धञ्जनारा लवे वडे आ धर्म श्रद्धेय-श्रद्धा करवा योअ अने ग्राह्य आराधवा योग्य छे आ विषे सूत्रकार पूर्वोक्त इपे डेतुव कथन करीने ते धर्मनी प्रइपणु करता "समेत्य लोक खेदज्ञै प्रवेदित" कडे छे के जधा प्राणीजोना हु जेने जणुनारा केवणज्ञानी प्रभुअ आ पदलव निकाय इप लोकेने प्रत्यक्ष इपमा साक्षात् हु अ इपी दावानलमा सणगत लधने शुद्ध, शाश्वतिक धर्मनु कथन कयुं छे—

भावार्थ—ससारना जधा लवेने अनंत सासारिक हु जेथी हुस्ता भलकवत् सतस्र लधने तेमना उद्धार माटे वीतराग केवणज्ञानीअे जे न आ धर्मनु निइपणु कयुं छे जे चोतानी जेजे आ कथन कयुं नथी श्री सुधर्मास्वामी चोताना शिष्य न भू स्वामीने आ प्रभाणु समजवे छे

વેચ્યા” ન પરિતાપયિતવ્યા =અન્નપાનાદયરોપનેન ધીન્માતપાદૌ સ્થાપનેન ચ ન પીડનીયાઃ, “ ન કિત્રામેચ્યા ” ન ક્રામયિતવ્યાઃ=ન સેદયિતવ્યાઃ=ન ત્રિષ શસ્ત્રાદિના મારયિતવ્યાઃ ।

एषः=अनन्तरोक्तः सर्वादिद्भगवत्प्ररूपितः, धर्मः=धर्ममाणिप्राणातिपातविरमण रूपः, शुद्धः=निर्मलः-पापानुबन्धरहित-इत्यर्थ । आर्हतपरमादन्यस्तु धर्मत्वेन यः शाक्यादेरभिमतः स खलु असर्जनसरागोपदिष्टत्वेन हिंसादिदोषसद्भावेन च न शुद्ध इति भावः । अत एव-एव नित्यः=अविनाशी, सर्वादा पञ्चसु महाविदेहेषु

સદ્ભાવ કા કારણ ઉસમેં અસર્વજ્ઞ ઓર સરાગિયોં ઠારા પ્રણીતતા હી હૈ પૂર્ણ જ્ઞાનીયો દ્વારા પ્રદર્શિત માર્ગ હી શુદ્ધ હોતા હૈ ડસકા કારણ ઉનમેં રાગ દ્વેષ કા સર્વથા અભાવ હી હોતા હૈ । અસર્વજ્ઞ યા રાગદ્વેષકલુપિત-ચિત્તવાલોં દ્વારા પ્રદર્શિત માર્ગ ડસલિયે શુદ્ધ નહીં હોતા હૈ કિ વે ઇક તો ઉસ વિષય કે પૂર્ણ જ્ઞાતા નહીં હોતે, ડસરી અપની રાગદ્વેષમયી પ્રવૃત્તિ કો પુટ કરને કે લિયે ઉસકી અચયા ખી પ્રરૂપણા કર દેતે હૈ । ઇસા ધર્મ શાશ્વતિક નિત્ય નહીં હોતા હૈ-ત્રયોં કિ ઇસા ધર્મકા વિશિષ્ટ જ્ઞાનિયોં-કેવલજ્ઞાનિયો દ્વારા જીવોં કા કલ્યાણ કી કામના સે નિરાકરણ કર દિયા જાતા હૈ । વીતરાગપ્રતિપાદિત ધર્મ હી અવિનાશી રહતા હૈ, ઓર ઉમ્મીસે જીવોં કા સદા કલ્યાણ હોતા રહતા હૈ । ડસમે અન્ય ધાપ્રરૂપણાકે લિયે ધોડી સી ખી જગહ નહી મિલતી હૈ । પચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રોંમેં અચ ખી ડસ શુદ્ધ ધર્મકા સદ્ભાવ હૈ । ડસી અપેક્ષા ડસે સૂત્રકારને નિત્ય-અવિનાશી કહા હૈ । શાશ્વતગતિરૂપ મુક્તિ કા કારણ હોને સે

લીધે જ તેમા હિંસા વગેરે સદોપતા છે પૂર્ણજ્ઞાનીઓ વડે પ્રદર્શિત માર્ગે જ શુદ્ધ હોય છે કેમકે તેઓમા મપૂર્ણપણે રાગદ્વેષને અભાવ જ હોય છે અસર્વજ્ઞ કે રાગદ્વેષ કલુપિત ચિત્તવાળા લોકો વડે પ્રતિપાદિત માર્ગ શુદ્ધ એટલા માટે હોતો નથી કે તેઓ પ્રથમ તો તે વિષયને સપૂર્ણપણે બાણતા નથી અને ધીબુ તેઓ પોતાની રાગદ્વેષમયી પ્રવૃત્તિને પુટ કરવા માટે તેની અન્યથા પ્રરૂપણા પણ કરી જોસે છે એવો ધર્મ શાશ્વતિક-નિત્ય હોતો નથી કેમકે એવા ધર્મનુ વિશિષ્ટ જ્ઞાનીઓ-કેવળજ્ઞાનીઓ-વડે જીવોની કલ્યાણ કામનાથી પ્રેરાધને નિરાકરણ કરવામા આવે છે વીતરાગ પ્રતિપાદિત ધર્મ જ અવિનાશી રહે છે, અને તેથી સર્વદા જીવોનુ કલ્યાણ થતુ રહે છે આમા અન્યથા પ્રરૂપણા માટે અવકાશ જ નથી અત્યારે પણ પચવિદેહ ક્ષેત્રમા આ શુદ્ધ ધર્મનો સદ્ભાવ છે આ ધર્મને આ દૃષ્ટિથી જ સૂત્રકાર નિ કહ્યો છે શાશ્વત ગતિ રૂપ મુક્તિનો ક. હોવાથી આ ધર્મ

सद्भावत् । तथा-शाश्वतः=शाश्वतगतिकारणत्वात् । यद्वा-यतो नित्यस्तस्माच्छा-
श्वत इति । अयमेव धर्मः श्रद्धेयो ग्राह्यश्चेत्यत्र हेतु प्रदर्शयन् विशेषणान्तरमाह-
समेत्य इत्यादि । लोक पट्ट जीवनिकाय दुःखदावानलान्तःपतित, समेत्य=केव-
लज्ञानेन प्रत्यक्षतया विज्ञान, खेदज्ञैः=सर्वप्राणिदुःखाभिन्नैस्तीर्थकरैः प्रवेदितः=
आदिष्ट । ' प्रवेदितः ' इत्यनेन धर्मोऽयं मया न स्वमनीषया कल्पितः ' इति च
सुधर्मस्वामिना शिष्यमुद्दिष्य सूचितम् । अनुयोगद्वारे—

यह शाश्वत माना गया है अथवा हेतु हेतुमद्भाव से भी यों कह
सकते हैं कि जिस कारण से यह नित्य है इसी कारण से यह शाश्वत
माना गया है । अतः प्रत्येक मुमुक्षु जीवों द्वारा यह धर्म श्रद्धेय श्रद्धा
करने योग्य एव ग्राह्य-आराधन करने योग्य है इस विषय में पूर्वोक्त-
रूप से सूत्रकार हेतु का कथन कर उस धर्म की प्ररूपणा करने के
कारण का प्रदर्शन करते हुए " समेत्य लोक खेदज्ञैः प्रवेदितः " कहते
हैं कि समस्त प्राणीयों के दुःखों के वेत्ता केवलजानी प्रभु ने इस पट्टजीव
निकायरूप लोक को प्रत्यक्षरूप से साक्षात् दुःखरूपी दावानल से जलता
हुआ देखकर इस शुद्ध, शाश्वतिक धर्म का कथन किया है ।

भावार्थ-अनन्त सासारिक दुःखों से सतप्त समस्त ससारी जीवों
को साक्षात् हस्तामलकवत् देखकर दुःखों से उनके उद्धार के निमित्त
यौतराग केवलजानियोंने ही इस धर्म की प्ररूपणा की है । मैंने अपनी
ओर से इसका कथन नहीं किया है । इस प्रकार श्री सुधर्मास्वामी
अपने शिष्य जम्बूस्वामी को समझाते हैं ।

वामा आन्व्ये छे अथवा हेतु-हेतु मद्भावधी पणु अेम कही शक्य छे के
ने कारणने लधने आ नित्य छे ते कारणधी न आ शाश्वत मानवामा आन्व्ये
छे अथी दरैड मोक्षने उच्छनारा लुवे वडे आ धर्म श्रद्धेय-श्रद्धा करवा
योग्य अने ग्राह्य आराधवा योग्य छे आ विषे सूत्रकार पूर्वोक्त रूपे हेतुतु
कथन करीने ते धर्मनी प्ररूपणा करता " समेत्य लोक खेदज्ञैः प्रवेदित " उडे
छे के अधा प्राणीअेना दुःखेने लणुनारा केवजज्ञानी प्रभुअे आ पट्टलव
निकाय रूप लोकने प्रत्यक्ष रूपमा साक्षात् दुःख रूपी दावानलमा सगगता
नेधने शुद्ध, शाश्वतिक धर्मतु कथन कयुं छे—

भावार्थ-ससारना अधा लुवेने अनन्त सासारिक दुःखेथी हस्ता
मलकवत् सतप्त नेधने तेमना उद्धार भाटे वीतराग केवजज्ञानीअे अे न आ
धर्मतु निरूपण कयुं छे अे पोतानी भेजे आ कथन कयुं नथी श्री सुधर्मा
स्वामी पोताना शिष्य नथु स्वामीने आ प्रभाषे समजवे छे

“ जह मम ण पिय दुःख जाणिय एमेव सव्वजीवाण ।
न हणइ न हणावेइ य, सममणइ तेण सो समणो । इति ”

छाया—यथा मम न प्रिय दुःख, ज्ञात्वा एमेव सर्वजीवानाम् ।
न इन्ति न घातयन्ति च समम् अणति तेन स समणः ॥

च शब्दात् घनतथान्यान्न समणुजानीत इत्यनेन प्रकारेण ‘सममणति’ ति
सर्वजीवेषु तुल्य उच्यते यतस्तेनासौ श्रमण इति गाथार्थः ।

‘एस धम्मो सुद्धे’ इत्यनेन आर्हत धर्मस्य द्विसाद्वि दोषाभावाद्भगवता शुद्ध
त्वमुक्तम् । शुद्धधर्मबोधकत्वाच्च द्वादशाङ्ग्याः प्रवचनप्रमाणत्वं सर्वोत्कृष्टत्वं
च सिध्यति । प्रवचनस्य स्वरूप माहात्म्य चाऽऽगमेषु भगवताऽभिहितम् ।

अनुयोगद्वार में—

जह मम ण पिय दुःख जाणिय एमेव सव्वजीवाण ।

न हणइ न हणावेइ य सममणइ तेण सो समणो ॥ इति ।

जिस प्रकार दुःख मुझे इष्ट नहीं है, उसी तरह वह दुःख किसी भी
संसारी जीवो को इष्ट नहीं है ऐसा समझ कर जो जीवो की विराधना
स्वयं नहीं करता और न दूसरों से करवाता है तथा समस्त जीवों में
तुल्यता की भावना रखता है वही श्रमण है । श्रमण होने में ये
पूर्वोक्त बातें हेतु-कारण हैं ।

“ एस धम्मो सुद्धे ” इस सूत्रांश से श्री सुधर्मास्वामी ने तीर्थंकर
कथिन वर्ग में द्विसाद्विक दोषों के अभाव से शुद्धता का कथन किया
है । इस शुद्ध धर्म का बोधक-बोध करानेवाली होने से ही द्वादशांगी
में प्रवचनता, आगमता एवं सर्वोत्कृष्टता सिद्ध होती है । भगवान ने

अनुयोगद्वारमा—जह मम ण पिय दुःख जाणिय एमेव सव्वजीवाण ।

न हणइ न हणावेइ य सममणइ तेण सो समणे ॥ इति ।

जैम भने दुःख गमंतुं नहीं तेमज ते दुःख ससारना डोए पणु एवने
गमे न नहि आभ समणने जेओ एवोनी विराधना पोते करता नहीं अने
धीनजोधी कषावता नहीं तेमज अथा एवोमा तुल्यता (समानता) नी इष्टि
राजे छे तेओ न ‘श्रमणु’ छे आ उपरनी वातो श्रमणु थवा भाटेडेतु कारणु छे

“ एस धम्मो सुद्धे ” आ सूत्रांशथी श्री सुधर्मास्वामीजे तीर्थंकर कथित
धर्ममा द्विसा वगेरे दोषोना अभावथी शुद्धतातु कथन कथुं छे आ शुद्ध धर्मना
बोधक-बोध करानारी डोवाथी न द्वादशांगीमा प्रवचनता आगमता सर्वो-
त्कृष्टता सिद्ध थाय छे भगवाने आगमोर्मा प्रवचनतु स्वरूप

यथा भगवतीसूत्रे—

पवयण भते ! पवयण, पावयणी पवयण ? । “ गोयमा ! अरहा ताव णियमा पावयणी । पवयणं पुण दुवालसंगे गणिपिटगे । त जहा—आयारो० जाव दिट्ठिवाओ । इति, (श० २० उ०८)

भते ! हे भदन्त ! “ पवयण ” प्रवचन—किं प्रवचन, उत—“ पावयणी ” प्रवचनी प्रवचनम् ? । “ गोयमा ! ” हे गौतम ! ‘ अरहा ’ अर्हन् ‘ ताव ’ तावत् नियमात्प्रवचनी । प्रवचन पुन ‘ दुवालसंगे ’ द्वादशाङ्गी “ गणिपिटगे ” गणिपिटकम् । तद् यथा—“ आयारो जाव दिट्ठिवाओ ” आचाराङ्गादि यावत् दृष्टिवादः । इति,

पुनस्तत्रैव—“ से नृण भते ! तमेव सच्च नीसक ज जिणेहिं पवेइय ? ।

प्रवचन का स्वरूप और उसका प्रभाव—माहत्म्य आगमों में कहा है । जैसे भगवती सूत्र में “ पवयण भते ! पवयण, पावयणी पवयण ? गोयमा ! अरहा ताव णियमा पावयणी । पवयण पुण दुवालसंगे गणिपिटगे । त जहा—आयारे जाव दिट्ठिवाओ । इति (श० २० उ०८)

भावार्थ—गौतमस्वामी पूछते हैं हे भगवन् ! प्रवचन प्रवचन है—या प्रवचनी प्रवचन है ? इस अश का समाधान करते हुए भगवान् कहते हैं—हे गौतम ! गणिपिटक जो आचारांग से लेकर दृष्टिवाद तक द्वादशांग आगम है वह समस्त प्रवचन है । इस प्रवचन को अर्थत प्रकट करनेवाले श्री तीर्थकर प्रभु प्रवचनी हैं । उसी भगवती सूत्र में और भी यह कहा है कि—“ से नृण भते ! तमेव सच्च निसक ज जिणेहिं पवेइय ! हता गोयमा ! तमेव सच्च से नृण भते ! एव मणे

भाडात्म्य ढधो छे नेभके भगवती सूत्रमा “ पवयण भते ! पवयण पावयणी पवयण ? गोयमा ! अरहा ताव णियमा पावयणी । पवयण पुण दुवालसंगे गणिपिटगे । त जहा—आयारो जाव दिट्ठिवाओ । इति (श २० उ ८)

भावार्थ—गौतम स्वामी पूछे छे के छे भगवन् ! प्रवचन प्रवचन छे के प्रवचनी प्रवचन छे ? या शब्दनु समाधान करता भगवान् कहे छे—के छे गौतम ! गणिपिटक—के छे आचारागथी भाडीने दृष्टिवाद सुधी द्वादशांग आगम छे ते भभन्त प्रवचन छे अर्थत या प्रवचनने प्रकट करनारा श्री तीर्थकर प्रभु प्रवचनी छे ते भगवती सूत्रमा न् या प्रभावे कहेवामा आच्यु छे के—(से नृण भते तमेव सच्च नीसक ज जिणेहिं पवेइय ! हता गोयमा ! तमेव सच्च से नृण भते ! एव मणे धारेमाणे एव पकरेमाणे आणाए आराहए

“ જહ મમ ણ પિય દુઃખ જાણિય એવેવ મગ્ગજીવાણ ।

ન હણહ ન હણાવેહ ય, સમમણહ તેણ સો સમણો । ડત્તિ ”

છાયા-યથા મમ ન પ્રિય દુઃખ, ઘાત્વા એમેવ સર્વજીવાનામ્ ।

ન દન્તિ ન ઘાતયન્તિ ચ સમમ્ અણતિ તેન સ સમણઃ ॥

ચ શબ્દાત્ ઘનતથાયાન્ન સમણુજાનીત ઇત્યનેન પ્રકારેણ ‘સમમણતિ’ તિ સર્વજીવેષુ તુલ્ય યત્તે યતસ્તેનાસી શ્રમણ ડત્તિ ગાથાર્થ ।

‘એસ ધમ્મે સુદ્ધે’ ઇત્યનેન આર્હત ધર્મસ્ય દ્વિતાદિ ટોષામાનાઙ્ગમતા શુદ્ધ સ્વમુક્તમ્ । શુદ્ધધર્મબોધકત્વાન્ન ચ દ્વાદશાઙ્ગયાઃ પ્રવચનત્વમાગમત્વ સર્વોત્કૃષ્ટત્વ ચ સિદ્ધયતિ । પ્રવચનસ્ય સ્વરૂપ માહાત્મ્ય ચાઽઽગમેષુ ભગવતાઽભિદિતમ્ ।

અનુયોગદ્વાર મેં-

જહ મમ ણ પિય દુઃખ જાણિય એવેવ સવ્વજીવાણ ।

ન હણહ ન હણાવેહ ય સમમણહ તેણ સો સમણો ॥ ડત્તિ ।

જિસ પ્રકાર દુઃખ સુદ્ધે ઇષ્ટ નહીં હૈ, ડસી તરહ વહ દુઃખ કિસી મી સસારી જીવો કો ઇષ્ટ નહીં હૈ એસા સમજ્ઞ કર જો જીવોં કી વિરાધના સ્વય નહી કરતા ઓર ન દૂસરોં સે કરવાતા હૈ તથા સમસ્ત જીવોં મેં તુલ્યતા કી ભાવના રખતા હૈ વહી શ્રમણ હૈ । શ્રમણ હોને મેં યે પૂર્વોક્ત ઘાતે હેતુ-કારણ હૈ ।

“ એસ ધમ્મે સુદ્ધે ” ડસ સૂત્રાશ સે શ્રી સુધર્માસ્વામી ને તીર્થકર કથિન વર્મ મે હિંસાદિક દોષો કે અભાવ સે શુદ્ધતા કા કવન ક્રિયા હૈ । ડસ શુદ્ધ ધર્મ કા બોધક-બોધ કરાનેવાલી હોને સે હી દ્વાદશાગી મેં પ્રવચનતા, આગમતા એવ સર્વોત્કૃષ્ટતા સિદ્ધ હોતી હૈ । ભગવાન ને

અનુયોગદ્વારમા—જહ મમ ણ પિય દુઃખ જાણિય એવેવ સવ્વજીવાણ ।

ન હણહ ન હણાવેહ ય સમમણહ તેણ સો સમણે ॥ ડત્તિ ।

જેમ મને દુઃખ ગમતું નથી તેમજ તે દુઃખ સસારના કોઈ પણ જીવને ગમે જ નહિ આમ સમજીને જેઓ જીવોની વિરાધના યોતે કરતા નથી અને ખીલજોથી કરાવતા નથી તેમજ બધા જીવોમા તુલ્યતા (સમાનતા) ની દૃષ્ટિ રાખે છે તેઓ જ ‘શ્રમણ’ છે આ ઉપરની વાતો શ્રમણ થવા માટેહેતુ કારણ છે

“ એસ ધમ્મે સુદ્ધે ” આ સૂત્રાશથી શ્રી સુધર્મા સ્વામીએ તીર્થ કર કથિત ધર્મમા હિંસા વગેરે દોષોના અભાવથી શુદ્ધતાનુ કથન કર્યું છે આ શુદ્ધ ધર્મના બોધક-બોધ કરાવનારી હોવાથી જ દ્વાદશાગીમા પ્રવચનતા આગમતા અને સર્વોત્કૃષ્ટતા સિદ્ધ થાય છે ભગવાને આગમોર્થ પ્રવચનનુ સ્વરૂપ અને વચ

छाया—इदमेव निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्यम् अनुत्तर, कैवलिक, प्रतिपूर्ण, नैया-
यिक, सशुद्ध, शल्यकर्त्तन, सिद्धिमार्गः, मुक्तिमार्गः, निर्याणमार्गः, निर्वाणमार्गः,
अवितथम्, अमन्दिग्धम्, अत्र स्थिता जीवाः सिद्धयन्ति, बुध्यन्ते, मुच्यन्ते,
परिनिर्वाणन्ति, सर्वे दुःखानामन्त कुर्वन्ति ।

अन्यच्च—इमं च ण सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठाय पावयण भगवया सुक-
हिय ” इति (प्रश्न० संवर०)

छाया—‘ इदं च खलु सर्वजगज्जीवरक्षणदयार्थाय प्रवचनं भगवता
सुकथितम् ’ इति ।

धर्मध्यानस्याऽऽज्ञाविचयादि भेदेन चातुर्विध्यं प्रदर्शयता भगवता—प्राधान्या-
दाज्ञाविचयः प्राथम्येन प्रोक्तः ।

भावार्थ—इस का स्पष्ट है। इसमें सूत्रकार ने मुख्यरूप से यही बात
प्रकट की है कि इस निर्ग्रन्थ प्रवचन मार्ग में स्थित जीव अष्ट कर्मोंका
विनाश कर सिद्धदशासपन्न हो जाते हैं। इस अवस्थाकी प्राप्ति होना
ही जीवों के समस्त दुःखों का विनाश है।

अन्यच्च—इमं च ण सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठाय पावयण भगवया
सुकहिय ” इति—(प्रश्न संवर०)

इस प्रवचन की प्ररूपणा करने का श्री तीर्थकर प्रभु का यही एक
उद्देश रहा है कि समस्त ससारीजन इस प्रवचन के अभ्यास से सर्व
जगत के जीवों की रक्षा करे और उनकी दया पाएँ।

ध्यान का वर्णन करते हुए भगवान ने उस ध्यान के ४ भेद कहे
हैं। उनमें धर्मध्यान के आज्ञाविचय आदि जो ४ पाये प्रकट किये

आ ज्थनने लोवार्थं स्पष्टं छे आभा भास करीने सूत्रकारे जे ज
वात स्पष्ट रीते भतावी छे ते आ निर्ग्रन्थ प्रवचन मार्गमा स्थित एव अष्ट
कर्मोना विनाश करीने सिद्धि दशा सपन्न थर्ध न्त्य छे आ अवस्था मेण
वपी जे ज एवोना सधणा दुःखेना विनाश छे

अन्यच्च—इमं च ण सव्व जगज्जीवरक्खणदयट्ठाय पावयण भगवया सुकहीय
“ इति—(प्रश्न० संवर०)

श्री तीर्थं कर प्रभुने आ प्रवचननी प्ररूपणा करवाने जे ज उद्देश रक्षो
छे ते तथा ससारीजने आ प्रवचनना अभ्यासथी जगतना सर्वे एवोनी
रक्षा करे अने तेमनी दया पाणे

ध्याननुं वर्णन करता भगवाने तेना चार भेदे वरुण्ये छे तेजोभा
धर्मध्यानना आज्ञा-विचय वगेरे आ उपलक्षेदे स्पष्ट करवाने आव्या छे

हता गोयमा ! तमेव सच्चं । से नून भते ! एष मणे धारेमाणे एष पकरेमाणे
आणाए आराहए भइ ? । हता गोयमा ! त चेव " ति ।

छाया—अथ नून भदन्त । तदेव सत्य निश्चङ्क यजिनैः प्रवेदितम् ? ।
हन्त गौतम ! तदेव सत्यम् । अथ नून भदन्त ? एव मनसि धारयन् एव प्रकुर्वन्
आज्ञाया आराधको भवति ? हन्त गौतम ! तदेव " इति ।

आवश्य सूत्रेऽपि—“इणमेव निग्गय पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडि-
पुन्न नेयाउय समुद्ध सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग
अवित्तहमसदिद्ध । इत्थ ठिया जीवा सिज्झति बुज्झति मुच्चति परिणिव्वाएति
सव्वदु खाणमंत करति ।

धारेमाणे एव पकरेमाणे आणाए आराहए भवइ ! हता गोयमा ! त
चेव इति " इस सूत्र का भावार्थ यह है कि प्रत्येक मुमुक्षु (मोक्षाभि-
लापी) जन को अपने हृदय में इस बात का पूर्णदृढ विश्वास रखना
चाहिये कि जो जिनेन्द्र देव ने प्रतिपादित किया है वही वास्तविक तत्त्व
है—उसमें किसी भी प्रकार की शका के लिये स्थान नहीं है इस प्रकार
के दृढ विश्वास से उसे अपने मन में धारण करनेवाला और उसके
अनुसार ही अपनी प्रवृत्ति करनेवाला मोक्षाभिलापीजन तीर्थंकरप्रभुकी
आज्ञाका आराधक होता है आवश्यक सूत्रमें भी यही बात कही गई है

“ इणमेव निग्गय पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडिपुन्न नेया
उय समुद्ध सल्लगत्तण सिद्धिमग्गं मुत्तिमग्गं निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग
अवित्तहमसदिद्ध । इत्थ ठिया जीवा सिज्झति बुज्झति मुच्चति परिणि
वाएति सव्वदु खाणमत करति ।

भवइ ! हता गोयमा ! त चेव इति) आ सूत्रने भावार्थ आ प्रभावे छे के
दरेक मोक्ष धरुनारी व्यक्तिये पोताना हृदयमा संपूर्णपणे आ वातनी आतरी
थवी जेधेके के जे जिनेन्द्र देवे प्रतिपादित कथुं छे ते जे वास्तविक तत्व
छे तेमा लगीरे शक नथी आ ज्ञाना दृढ विश्वासथी तेने पोताना मनमा
करनार अने ते मुग्गज्ज अन्तरणु करनारी मोक्षने धरुनारी व्यक्ति प्रभुनी
आज्ञानी आराधक होय छे आवश्यक सूत्रमा पणु अने जे वात कडेवाभा आवी
छे—(इणमेव निग्गय पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडिपुन्न नेयाउय समुद्ध
सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग अवित्तहमसदिद्ध ।
इत्थ ठिया जीवा सिज्झति बुज्झति मुच्चति परिणिवाएति सव्वदु खाणमत करति ।

छाया—इदमेव निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्यम् अनुत्तर, कैवलिक, प्रतिपूर्ण, नैया-
यिक, सशुद्ध, शल्यकर्त्तन, सिद्धिमार्गः, मुक्तिमार्गः, निर्याणमार्गः, निर्वाणमार्गः,
अवितयम्, अमन्दिग्धम्, अत्र स्थिता जीवाः सिद्धयन्ति, बुध्यन्ते, मुच्यन्ते,
परिनिर्वाणन्ति, सर्वे दुःखानामन्त कुर्वन्ति ।

अन्यच्च—इमं च ण सव्वजगजीवरक्खणदय्याए पावयण भगवया सुक-
हिय” इति (प्रश्न० सवर०)

छाया—‘ इदं च खलु सर्वजगज्जीवरक्षणदयार्याय प्रवचनं भगवता
मुकथितम्’ इति ।

धर्मध्यानस्याऽऽज्ञाविचयादि भेदेन चातुर्विध्यं प्रदर्शयता भगवता—प्राधान्या-
दाज्ञाविचयः प्रोथम्येन प्रोक्तः ।

भावार्थ—इस का स्पष्ट है। इसमें सूत्रकार ने मुख्यरूप से यही बात
प्रकट की है कि इस निर्ग्रन्थ प्रवचन मार्ग में स्थित जीव अष्ट कर्मोंका
विनाश कर सिद्धदशासपन्न हो जाते हैं। इस अवस्थाकी प्राप्ति होना
ही जीवों के समस्त दुःखों का विनाश है।

अन्यच्च—इमं च ण सव्वजगजीवरक्खणदय्याए पावयण भगवया
सुकहियं” इति—(प्रश्न सवर०)

इस प्रवचन की प्ररूपणा करने का श्री तीर्थकर प्रभु का यही एक
उद्देश रहा है कि समस्त सत्सारीजन इस प्रवचन के अभ्यास से सर्व
जगत के जीवों की रक्षा करे और उनकी दया पावे।

ध्यान का वर्णन करते हुए भगवान ने उस ध्यान के ४ भेद कहे
हैं। उनमें धर्मध्यान के आज्ञाविचय आदि जो ४ पाये प्रकट किये

आ अथनो भावार्थ स्पष्ट है आमा भास करीने सूत्रकारे ओ न
वात स्पष्ट रीते अतापी है ओ आ निर्ग्रन्थ प्रवचन मार्गमा स्थित एव अष्ट
कर्मोना विनाश करीने सिद्धि दशा सपन्न थर् अन्त छे आ अवस्था भेण
वपी ओ न एवोना सधणा दुःखोना विनाश छे

अन्यच्च—इमं च ण सव्व जगजीवरक्खणदय्याए पावयण भगवया सुकहीय
“ इति—(प्रश्न० सवर०)

श्री तीर्थ कर प्रभुने आ प्रवचननी प्ररूपणा करवानो ओ न उद्देश रह्यो
छे हे अथा सभागीजनो आ प्रवचनना अभ्यासथी जगतना सर्वे एवोनी
रक्षा करे अने तेभनी दया पाणे

ध्यानर्तु वर्णन करता भगवाने तेना चार भेदो वर्णव्या छे तेओमा
धर्मध्यान, आज्ञाविचय, आदि जो ४ पाये प्रकट किये

हता गोयमा ! तमेव सच्च । से नून भते ! एव मणे धारेमाणे एव पकरेमाणे
आणाए आराहए भवइ ? । हता गोयमा ! त चेव ” इति ।

छाया—अथ नून भदन्त । तदेव सत्य निश्चयं यजिनैः प्रवेदितम् ? ।
हन्त गौतम ! तदेव सत्यम् । अथ नून भदन्त ? एव मनसि धारयन् एव प्रकुर्वन्
आज्ञाया आराधको भवति ? इति गौतम ! तदेव ” इति ।

आवश्य सूत्रेऽपि—“इणमेव निग्गथ पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडि-
पुन्न नेयाउय समुद्ध सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग
अवित्तहमसदिद्ध । इत्थं ठिया जीवा सिज्झति वुज्झति मुच्चति परिणिव्वाएति
सव्वदु ख्वाणमंत करति ।

धारेमाणे एव पकरेमाणे आणाए आराहए भवइ । हता गोयमा ! त
चेव इति ” इस सूत्र का भावार्थ यह है कि प्रत्येक मुमुक्षु (मोक्षाभि-
लापी) जन को अपने हृदय में इस बात का पूर्णदृढ विश्वास रखना
चाहिये कि जो जिनेन्द्र देव ने प्रतिपादित किया है वही वास्तविक तत्त्व
है—उसमें किसी भी प्रकार की शका के लिये स्थान नहीं है इस प्रकार
के दृढ विश्वास से उसे अपने मन में धारण करनेवाला और उसके
अनुसार ही अपनी प्रवृत्ति करनेवाला मोक्षाभिलापीजन तीर्थकरप्रभुकी
आज्ञाका आराधक होता है आवश्यक सूत्रमें भी यही बात कही गई है

“ इणमेव निग्गथ पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडिपुन्न नेया
उय समुद्ध सल्लगत्तण सिद्धिमग्गं मुत्तिमग्गं निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग
अवित्तहमसदिद्ध । इत्थं ठिया जीवा सिज्झति वुज्झति मुच्चति परिणि
वाएति सव्वदु ख्वाणमंत करति ।

भवइ । हता गोयमा । त चेव इति) आ सूत्रने भावार्थ आ प्रमाणे छे के
दरेक भोक्ष धम्भनारी व्यक्तिये पोताना हृदयभा स पूर्णपणे आ वातनी आतरी
थवी लेधये के ले छिनेन्द्र देवे प्रतिपादित कथुं छे ते वास्तविक तत्व
छे तेभा लगीरे शका नथी आ जतना दृढ विश्वासथी तेने पोताना मनभा
करनार अने ते मुग्गण वा आचरण करनारी भोक्षने धम्भनारी व्यक्ति प्रलुनी
आज्ञानी आराधक होय छे आवश्यक सूत्रभा पणु अये वात उडेवाभा आवी
छे—(इणमेव निग्गथ पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडिपुन नेयाउय समुद्ध
सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग अवित्तहमसदिद्ध !
इत्थं ठिया जीवा सिज्झति वुज्झति मुच्चति परिणिवाएति सव्वदु ख्वाणमंत करति ।

छाया—इदमेव निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्यम् अनुत्तर, कैवलिक, प्रतिपूर्ण, नैया-
यिक, सधृद्ध, शल्यकर्त्तन, सिद्धिमार्गः, मुक्तिमार्गः, निर्याणमार्गः, निर्वाणमार्गः,
अवितथम्, अमन्दिग्धम्, अत्र स्थिता जीवाः सिद्धयन्ति, बुध्यन्ते, मुच्यन्ते,
परिनिर्वान्ति, सर्वे दुःखानामन्त कुर्वन्ति ।

अन्यच्च—इम च ण सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठाए पावयण भगवया सुक-
हिय ” इति (प्रश्न० सवर०)

छाया—‘ इद च खलु सर्वजगज्जीवरक्षणदयार्याय प्रवचन भगवता
सुकथितम् ’ इति ।

धर्मध्यानस्याऽऽज्ञाविचयादि भेदेन चातुर्विध्य प्रदर्शयता भगवता-प्राधान्या-
दाज्ञाविचयः प्रथम्येन प्रोक्त ।

भावार्थ—इस का स्पष्ट है। इसमें सूत्रकार ने मुरयरूप से यही बात
प्रकट की है कि इस निर्ग्रन्थ प्रवचन मार्ग में स्थित जीव अष्ट कर्मोंका
विनाश कर सिद्धदशासपन्न हो जाते हैं। इस अवस्थाकी प्राप्ति होना
ही जीवों के समस्त दुःखों का विनाश है।

अन्यच्च—इम च ण सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठाए पावयण भगवया
सुकहिय ” इति—(प्रश्न सवर०)

इस प्रवचन की प्ररूपणा करने का श्री तीर्थकर प्रभु का यही एक
उद्देश रहा है कि समस्त सत्सारीजन इस प्रवचन के अभ्यास से सर्व
जगत के जीवों की रक्षा करे और उनकी दया पाएँ।

ध्यान का वर्णन करते हुए भगवान ने उस ध्यान के ४ भेद कहे
हैं। उनमें धर्मध्यान के आज्ञाविचय आदि जो ४ पाये प्रकट किये

आ इथनने लावार्थं स्पष्ट छे आमा पाम करीने सूत्रकारे जे ल
वात स्पष्ट रीते जतावी छे ते आ निर्ग्रन्थ प्रवचन मार्गमा स्थित लव अष्ट
कर्मोंने विनाश करीने सिद्धि दगा सपन्न थर्ध जय छे आ अवस्था भेज
ववी जे ल लवोना सधणा दु जने विनाश छे

अन्यच्च—इम च ण सव्व जगजीवरक्खणदयट्ठाए पावयण भगवया सुकहिय
” इति—(प्रश्न० सवर०)

श्री तीर्थ कर प्रभुने आ प्रवचननी प्ररूपणा करवाने जे ल उद्देश रक्षो
छे ते जधा सत्सारीजने आ प्रवचनना अभ्यासथी जगतना सर्वे लवोनी
रक्षा करे अने तेमनी दया पाणे

ध्यानर्तुं वर्णन करता भगवाने तेना चार भेदो वर्णुंवा छे तेजोमा
धर्मध्यानना आज्ञा-विचय वर्गेरे आ उषभेदो स्पष्ट करवाभा आवा छे

हता गोयमा ! तमेव सच्च । से नृण भते ! एव मणे धारेमाणे एव पकरेमाणे
आणाए आराहए भवइ ? । हता गोयमा । त चेव ” त्ति ।

छाया—अथ नून भदन्त । तदेव सत्य निश्शङ्क यज्जिनैः प्रवेदितम् ? ।
हन्त गौतम ! तदेव सत्यम् । अथ नून भदन्त ? एव मनसि धारयन् एव प्रकुर्वन्
आज्ञाया आराधको भवति ? हन्त गौतम ! तदेव ” इति ।

आवश्य सूत्रेऽपि—“इणमेव निग्गय पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडि-
पुन्न नेयाउय समुद्ध सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग
अवितहमसदिद्ध । इत्थ ठिया जीवा सिज्झति बुज्झति मुच्चति परिणिच्चाएति
सव्वदु खाणमत करति ।

धारेमाणे एवं पकरेमाणे आणाए आराहए भवइ । हता गोयमा । त
चेव इति ” इस सूत्र का भावार्थ यह है कि प्रत्येक मुमुक्षु (मोक्षाभि-
लाषी) जन को अपने हृदय में इस बात का पूर्णदृढ विश्वास रखना
चाहिये कि जो जिनेन्द्र देव ने प्रतिपादित किया है वही वास्तविक तत्त्व
है—उसमें किसी भी प्रकार की शका के लिये स्थान नहीं है इस प्रकार
के दृढ विश्वास से उसे अपने मन में धारण करनेवाला और उसके
अनुसार ही अपनी प्रवृत्ति करनेवाला मोक्षाभिलाषीजन तीर्थकरप्रसुकी
आज्ञाका आराधक होता है आवश्यक सूत्रमें भी यही बात कही गई है

“ इणमेव निग्गय पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडिपुन्न नेया
उय समुद्ध सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग
अवितहमसदिद्ध । इत्थ ठिया जीवा सिज्झति बुज्झति मुच्चति परिणि
च्चाएति सव्वदुःखाणमत करति ।

भवइ । हता गोयमा । त चेव इति) आ सूत्रेना भावार्थ आ प्रभावे छे के
दरेक मोक्ष धञ्छनारी व्यक्तिते पोताना हृदयमा स पूर्णपणे आ वातनी आतरी
थयी लेधणे के जे जनेन्द्र देवे प्रतिपादित कथुं छे ते ज वास्तविज तत्व
छे तेमा लगीरे शका नथी आ जतना दृढ विश्वासथी तेने पोताना मनमा
करनार अने ते मुख्य ज आवश्यक करनारी मोक्षने धञ्छनारी व्यक्ति प्रबुद्धी
आज्ञानी आराधक होय छे आवश्यक सूत्रमा पणु अे ज वात उडेवाभा आधी
छे—(इणमेव निग्गय पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडिपुन्न नेयाउय समुद्ध
सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वाणमग्ग अवितहमसदिद्ध ।
इत्थ ठिया जीवा सिज्झति बुज्झति मुच्चति परिणिच्चाएति सव्वदुःखाणमत करति ।

छाया—इदमेव निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्यम् अनुत्तर, कैवलिक, प्रतिपूर्ण, नैयायिक, सशुद्ध, शल्यकर्त्तन, सिद्धिमार्गः, मुक्तिमार्गः, निरणमार्गः, निर्वाणमार्गः, अवितथम्, अमन्दिग्यम्, अत्र स्थिता जीवाः सिद्धयन्ति, पुध्यन्ते, मुच्यन्ते, परिनिर्वाणन्ति, सर्वे दुःखानामन्त कुर्वन्ति ।

अन्यच्च—इमं च ण सच्चजगज्जीवरक्षणदयद्वयाए पावयण भगवया सुकहिय” इति (प्रश्न० संवर०)

छाया—‘ इदं च खलु सर्वजगज्जीवरक्षणदयार्थाय प्रवचनं भगवता मुकथितम्’ इति ।

धर्मध्यानस्याऽऽज्ञाविचयादि भेदेन चातुर्विध्यं प्रदर्शयता भगवता—प्राधान्यादाज्ञाविचयः प्रोथम्येन प्रोक्तः ।

भावार्थ—इस का स्पष्ट है। इसमें सूत्रकार ने मुख्यरूप से यही बात प्रकट की है कि इस निर्ग्रन्थ प्रवचन मार्ग में स्थित जीव अष्ट कर्मोंका विनाश कर सिद्धदशासपन्न हो जाते हैं। इस अवस्थाकी प्राप्ति होना ही जीवों के समस्त दुःखों का विनाश है।

अन्यच्च—इमं च ण सच्चजगज्जीवरक्षणद्वयाए पावयण भगवया सुकहिय” इति—(प्रश्न संवर०)

इस प्रवचन की प्ररूपणा करने का श्री तीर्थकर प्रभु का यही एक उद्देश रहा है कि समस्त ससारीजन इस प्रवचन के अभ्यास से सर्व जगत के जीवों की रक्षा करे और उनकी दया पाएँ।

ध्यान का वर्णन करते हुए भगवान ने उस ध्यान के ४ भेद कहे हैं। उनमें धर्मध्यान के आज्ञाविचय आदि जो ४ पाये प्रकट किये

आ दथनेना लावार्थं स्पष्टं छे आभा भास करीने सूत्रकारे छे ण वात स्पष्ट रीते भतावी छे छे आ निर्ग्रन्थ प्रवचन मार्गमा स्थितं छे अष्ट कर्मोना विनाश करीने सिद्धि दशा सपन्नं थर्त्तं लय छे आ अवस्था भेण पवीं छे ण लवोना सधणा दुःखेना विनाश छे

अन्यच्च—इमं च ण सच्च जगज्जीवरक्षणदयद्वयाए पावयण भगवया सुकहिय “ इति—(प्रश्न० संवर०)

श्री तीर्थकर प्रभुने आ प्रवचननी प्ररूपणा करवाने छे ण उद्देश रक्षो छे छे अधा ससारीजेना आ प्रवचनना अभ्यासथी जगतना सर्वे लवोनी रक्षा करे अने तेभनी दया पाणे

ध्यानर्तुं वलुंन करता लगवाने तेना आर लेहो वलुंन्या छे तेआभा धर्मध्यानना आज्ञा-विचय वगेरे आ० उपभेदो स्पष्ट करवाना आव्या छे

हता गोयमा ! तमेव सच्च । से नृण भते ! ण्य मणे धारेमाणे ण्य पकरमाणे
आणाण आराहए भवइ ? । हता गोयमा । त चेव ” इति ।

छाया—अथ नून भदन्त । तदेव सत्य निश्शङ्क यज्जिनैः प्रवेदितम् ? ।
हन्त गौतम ! तदेव सत्यम् । अथ नून भदन्त ? एव मनसि धारयन् एव प्रकुर्वन्
आज्ञाया आराधको भवति ? हन्त गौतम ! तदेव ” इति ।

आवश्य सूत्रेऽपि—“इणमेव निग्गय पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडि-
पुन्न नेयाउय ससुद्ध सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वानमग्ग
अवित्तहमसदिद्ध । इत्थ ठिया जीवा सिज्झति युज्झति मुच्चति परिणिव्वाएति
सव्वदु खाणमत करति ।

धारेमाणे एव पकरमाणे आणाण आराहए भवइ । हता गोयमा । त
चेव इति ” इस सूत्र का भावार्थ यह है कि प्रत्येक मुमुक्षु (मोक्षाभि-
लाषी) जन को अपने हृदय में इस बात का पूर्णदृढ विश्वास रखना
चाहिये कि जो जिनेन्द्र देव ने प्रतिपादित किया है वही वास्तविक तत्त्व
है—उसमें किसी भी प्रकार की शका के लिये स्थान नहीं है इस प्रकार
के दृढ विश्वास से उसे अपने मन में धारण करनेवाला और उसके
अनुसार ही अपनी प्रवृत्ति करनेवाला मोक्षाभिलाषीजन तीर्थकरप्रभुकी
आज्ञाका आराधक होता है आवश्यक सूत्रमें भी यही बात कही गई है

“ इणमेव निग्गय पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडिपुन्न नेया
उय ससुद्ध सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वानमग्ग
अवित्तहमसदिद्ध । इत्थ ठिया जीवा सिज्झति युज्झति मुच्चति परिणि
वाएति सव्वदुःखाणमत करति ।

भवइ । हता गोयमा । त चेव इति) आ सूत्रने भावार्थ आ प्रभावे छे के
दरेक भोक्ष धञ्छनारी व्यक्तिये पोताना हृदयभा स पूरुं पण्णे आ वातनी भातरी
थवी नेधञ्छे के जे ज्जिनेन्द्र देवे प्रतिपादित कयुं छे ते ज वास्तविक तत्व
छे तेभा लगीरे शका नथी आ नतना दढ विश्वासथी तेने पोताना मनभा
करनार अने ते मुज्जथ ज आचरथु करनारी भोक्षने धञ्छनारी व्यक्ति प्रलुनी
आज्ञानी आराधक होय छे आवश्यक सूत्रभा पण्णे जे ज वात कडेवाभा आवी
छे—(इणमेव निग्गय पावयण सच्च अणुत्तर केवलिय पडिपुन्न नेयाउय ससुद्ध
सल्लगत्तण सिद्धिमग्ग मुत्तिमग्ग निज्जाणमग्ग निव्वानमग्ग अवित्तहमस दिद्ध !
इत्थ ठिया जीवा सिज्झति युज्झति मुच्चति परिणिवाएति सव्व दु, करति ।

है, अनवद्य है, इसमें प्रत्येक जीवादिक पदार्थ का विवेचन बहुत ही अच्छी तरह से किया गया है अतः यह महार्थ है इसका प्रभाव भी अद्वितीय है इसकी छत्रछाया में आने से प्रत्येक भव्य जीव आत्मक त्याग के अपने अन्तिम लक्ष्य की सिद्धि कर लिया करते हैं। इसमें प्रतिपादित तत्त्व सामान्यजन नहीं ज्ञात कर सकते हैं—द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नद्यरूप दो दृष्टियाँ जिनके पास हैं—वे ही इसमें प्रतिपादित विषय को अच्छी तरह ज्ञात कर सकते हैं। इसमें जो भी कुछ कथन सर्वज्ञ भगवान् ने किया है वह इन्द्रो दो दृष्टियों को सामने रखकर किया गया है यदि एक दृष्टि को ही प्रधान रखकर इसके तत्त्व को समझने की चेष्टा की जाय तो वह प्रतिपाद्य विषय ठीक २ नहीं समझा जा सकता है। तथा इस प्रकार की प्ररूपणा अन्यथा भी ज्ञात होने लगती है इसलिये दूसरी दृष्टि को सामने रखकर ही वह विषय ठीक २ रीति से समझ में आ सकता है, अतः इसी अभिप्रायसे इसे निपुण जनवेद्य कहा है तथा इसमें प्रत्येक पदार्थ को उत्पादन व्यय और ध्रौव्य आत्मक कहा गया है—वह भी द्रव्य और पर्याय की अपेक्षा से ही कहा गया है द्रव्य की अपेक्षा से प्रत्येक जीवादिक पदार्थ ध्रौव्यरूप

अतीवकुशल छे दरु दरु छेवे नो आ हीतकारी छे अनवद्य छे, ओमा दरुके दरुके छेव वगेरे पदार्थनु विवेचन गहुण सूक्ष्मता पूर्वक करवामा आओ छे ओथी आ भुहार्य छे आने प्रभाव पणु अद्वितीय छे, आनी छत्र-छायामा आववाथी दरुके लव्यलव आत्मकदथाणु विषयक पोतानी अतिम लक्ष्मनी सिद्धि प्राप्तकारी ले छे आमा प्रतिपादित तत्त्व सामान्य बोको लक्ष्मी शकता नथी द्रव्यार्थिक तेमण पर्यायार्थिक नद्यरूप के दृष्टिओ जेनी पासे छे तेओ न आमा प्रतिपादित विषयने सारी पेठे समल शके छे सर्वज्ञ लगवाने आमा जे कछ कछु छे ते गणु आ पूर्वोक्त गने दृष्टिओ ने पोतानी सामे राणीने न कछु छे जे ओज-दृष्टिने न प्रधान समलने तेना तत्त्वने लक्ष्मणी चेट्टा करवामा आवे तो ते प्रतिपाद्य विषय यथावत् समल शकय न नहि तेमण आ लक्ष्मणी अणुपणु अ यथा पणु भाडुम थवा भाडे छे ओथी जील दृष्टिने पोतानी सामे राणीने न विचार करीओ तो विषय मरस रीते समल शकय तेम छे आ प्रयोजनथा न आने 'निपुणजन-वेद्य' कडेवामा आओ छे तेमण आमा जे दरुके पदार्थने उत्पाद, व्यय अने ध्रौव्य आत्मक कडेवामा आओ छे तेमणु द्रव्य अने पर्यायनी अपेक्षाथी न कडेवामा आओ छे द्रव्यनी

યથા ભગવતી સૂત્રે--(શ્લો ૨૫ ૩૦ ૭)

“ ધમ્મે જ્ઞાણે ચરુચ્ચિહે પણ્ણત્તે, ત જહા-આણાવિચ્છ ” અચાયવિચ્છ, વિવાગવિચ્છ, સઠાણવિચ્છ ॥

છાયા—ધર્મધ્યાન ચતુર્વિધ પ્રસન્નમ્ । તદ્ યથા-આજ્ઞાવિચયઃ, અપાય વિચય, વિપાકવિચયઃ, સસ્થાનવિચયઃ ।

અત્ર પ્રસન્નવશાદ્ આજ્ઞાવિચય એવ વ્યાખ્યાયતે—

આજ્ઞાવિચયશ્ચ-આજ્ઞાયાઃ પર્યાલોચન, આજ્ઞા-સર્વજ્ઞપ્રણીત આગમ, તમાજ્ઞા મિત્ય વિચિન્નુયાત્=પર્યાલોચયેત્ - પૂર્વાપરવિશુદ્ધમતિનિપુણામગ્રેપજીવકાયહિતા

હૈં ઉન મેં સર્વ પ્રથમ આજ્ઞાવિચય કો જો કહા હૈં ઉસકા કારણ યરી હૈં કિ શોષ ત્રીન પાયોં (ભેદોં) મેં પ્રધાન હૈં । ભગવતી સૂત્ર શ. ૨૫ ૩-૭ મેં દેલો યહ વર્ણન ઇસ પ્રકાર સે હુઆ હૈં-ધમ્મે જ્ઞાણે ચરુચ્ચિહે પણ્ણ ત્તે, ત જહા-આણાવિચ્છ, અચાયવિચ્છ, વિવાગવિચ્છ, સઠાણવિચ્છ ॥

અર્થ—ધર્મધ્યાન ૪ પ્રકાર કા હૈં (૧) અજ્ઞાવિચય (૨) અપાયવિચય (૩) વિપાકવિચય (૪) સસ્થાનવિચય ।

પ્રસન્નવશ યહાં આજ્ઞાવિચય પર વિવેચન કિયા જાતા હૈં-તીર્થંકર પ્રભુ કી આજ્ઞા કા વિચય-પર્યાલોચન-વિચાર કરના સો આજ્ઞાવિચય હૈં સર્વજ્ઞ કથિત આગમ કા નામ આજ્ઞા હૈં । ઉસ આગમરૂપ આજ્ઞા કા ઇસ પ્રકાર સે વિચાર કરના ચાહિયે-યહ પ્રભુ પ્રતિપાદિત આગમ પૂર્વા-પર વિરોધ રહિત હોને સે વિશુદ્ધ હૈં, પ્રત્યેક સૂક્ષ્મ અન્તરિત ઓર દૂરાર્થ કે પ્રતિપાદન કરને મેં અતિનિપુણ હૈં, પ્રત્યેક જીવોં કા યહ હિતકારી

તેઓના બે સૌ પ્રથમ આજ્ઞા વિચયને બે ઉલ્લેખ કરવામા આવ્યો છે તેનું કારણ એ બે છે કે બાકી રહેલા ત્રણ ઉપલેદોમા તે મુખ્ય છે ભગવતી સૂત્ર શ ૨૫ ૩ ૭ માં એના માટે બેબે બેબે ત્યાં આનું વર્ણન કરવામા આવ્યું છે-ધમ્મે જ્ઞાણે ચરુચ્ચિહે પણ્ણત્તે, ત જહા-આણાવિચ્છ, અચાયવિચ્છ, વિવાગવિચ્છ, સઠાણવિચ્છ ॥

અર્થ—ધર્મધ્યાનના ચાર પ્રકાર છે (૧) આજ્ઞા-વિચય, (૨) અપાય વિચય, (૩) વિપાક વિચય, (૪) સસ્થાન વિચય

પ્રસન્નવશ અહીં આજ્ઞાવિચય વિષે વર્ણન કરવામા આવે છે તીર્થંકર પ્રભુની આજ્ઞાને વિચય-પર્યાલોચન-વિચાર કરવો તે આજ્ઞાવિચય છે સર્વ જ્ઞકથિત આગમનું નામ આજ્ઞા છે તે આગમરૂપ આજ્ઞાને આ રીતે વિચાર કરવો બેબેબે કે આ પ્રભુ પ્રતિપાદિત આગમ પૂર્વાપર વિરોધ અહલ વિશુદ્ધ છે, દરેક સૂક્ષ્મ અન્તરિત અને દૂરાર્થના

है, अनन्य है, इसमें प्रत्येक जीवादिक पदार्थ का विवेचन बहुत ही अच्छी तरह से किया गया है अतः यह महार्थ है इसका प्रभाव भी अद्वितीय है इसकी छत्रछाया में जाने से प्रत्येक भव्य जीव आत्मक त्याग के अपने अन्तिम लक्ष्य की सिद्धि कर लिया करते हैं। इसमें प्रतिपादित तत्त्व सामान्यजन नहीं ज्ञात कर सकते हैं—द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयरूप दो दृष्टियाँ जिनके पास हैं—वे ही इसमें प्रतिपादित विषय को अच्छी तरह ज्ञात कर सकते हैं। इसमें जो भी कुछ कथन सर्वज्ञ भगवान् ने किया है वह इन्हीं दो दृष्टियों को सामने रखकर किया गया है यदि एक दृष्टि को ही प्रमान रखकर इसके तत्त्व को समझने की चेष्टा को जाय तो वह प्रतिपाद्य विषय ठीक २ नहीं समझा जा सकता है। तथा इस प्रकार की प्ररूपणा अन्यथा भी ज्ञात होने लगनी है इसलिये दूसरी दृष्टि को सामने रखकर ही वह विषय ठीक २ रीति से समझ में आ सकता है, अन इसी अभिप्रायसे इसे निपुण जनवेद्य कहा है तथा इसमें प्रत्येक पदार्थ को उत्पादन व्यय और ध्रौव्य आत्मक कहा गया है—वह भी द्रव्य और पर्याय की अपेक्षा से ही कहा गया है द्रव्य की अपेक्षा से प्रत्येक जीवादिक पदार्थ ध्रौव्यरूप

अतीवकुशल छे दररे दररेक लुवे ने आ हीतकारी छे अनवध छे, जेभा दररेके दररेक लुव वगेरे पदार्थनु विवेचन जहुँव सूक्ष्मता पूर्वक ठरवाभा आब्यु छे जेथी आ भुद्धार्थ छे आने प्रलाव पणु अद्वितीय छे, आनी छत्र-छायाभा आपवाथी दररेक लव्यलुव आत्मकदयाणु विषयक पोतानी अतिम लक्षणी सिद्धि प्राप्तकरी ले छे आभा प्रतिपादित तत्त्व सामान्य बोको जलुषी शकता नथी द्रव्यार्थिक तेमज पर्यायार्थिक नयरूप के दृष्टिओ जेनी पास छे तेओ जे आभा प्रतिपादित विषयने सारी पेठे समलु शके छे सर्वज्ञ लगवाने आभा जे कछ कहु छे ते जहु आ पूर्वोक्त जने दृष्टिओ ने पोतानी सामे राभीने जे कहु छे जे ओक-दृष्टिने जे प्रधान समलुने तेना तत्त्वने जलुषुवानी ओटा ठरवाभा आवे तो ते प्रतिपाद्य विषय यथावत् समलु शकय जे नहि तेमज आ जलतनी अज्ञपणु अन्यथा पणु मालुम थवा भाडे छे जेथी जीलु दृष्टिने पोतानी सामे राभीने जे विचार करीजे तो विषय सरस रीते समलु शकय तेम छे आ प्रयोजनथी जे आने 'निपुणजन-वेद्य' कडेवाभा आब्ये छे तेमज आभा जे दररेक पदार्थने उत्पाद, व्यय अने ध्रौव्य आत्मक कडेवाभा आब्ये छे ते पणु द्रव्य अने पर्यायनी अपेक्षाथी जे कडेवाभा आब्ये छे द्रव्यनी

मनवर्थां महार्थां महानुभार्यां निपुणजनविज्ञेया द्रव्यपर्यायप्रपञ्चवतीमनाग्रनि
धनाम् । अस्य प्रवचनस्याऽऽद्यन्तरहितत्व च भगवता नन्दीसूत्रे निगदितम्—

“ इच्छेद्य दुवालसग गणिपिडग न कयाइ णासी ॥ ”

इत्येतद् द्वादशाङ्ग गणिपिटक न कदापि नासीत् ॥ इत्यादि ।

है और पर्याय की अपेक्षा से उत्पादन व्ययरूप है, इसलिये भी जिन प्रतिपादित आगमरूप आज्ञा स्वयं द्रव्य और पर्याय के विस्तार वाली है। अथवा जीवादिक ममन्त ६ द्रव्यो की त्रिकालवर्ती समस्त पर्यायें इसमें प्रतिपादित हुई हैं, अथवा कोई भी द्रव्य कभी भी पर्याय रहित नहीं हो सकता है—स्वभाव पर्यायों और व्यञ्जन पर्यायों, विभाव पर्यायों और अर्थपर्यायों प्रत्येकक्षण में समस्तद्रव्यों में होती रहती हैं, इत्यादिरूप से द्रव्य और पर्यायों का प्रतिपादन इस आज्ञा में भगवान ने प्रदर्शित किया है इस अपेक्षा भी यह द्रव्य और पर्याय के विस्तार वाली मानी गई है तथा यह अनादि अनन्त है न कभी इस आज्ञा की आदि हुई है और न कभी इसका विनाश होगा। नदीसूत्र में भी प्रवचन की अनादि अनन्तता के विषय में “ इच्छेद्य दुवालसग गणिपिडग न कयाइनासी” यही कहा है—ऐसा कोई सा भी काल नहीं था कि जिस काल में इस द्वादशाङ्गरूप गणिपिटकका सङ्काव नहीं था।

अपेक्षाधी दरेक ७५ वगेरे पदार्थ ध्रौव्यरूप छे अने पर्यायनी अपेक्षाधी उत्पाद व्ययरूप छे अटला भाटे पञ्च जिन प्रतिपादित आगामरूप आज्ञा पोते द्रव्य अने पर्यायना प्रपञ्च (विस्तार) वाणी छे अथवा तो ७५ वगेरे अथा ६ द्रव्योना त्रिकाल वर्ती समस्त पर्यायो आभा प्रतिपादित थया छे, अथवा कोर्य पञ्च द्रव्य कोर्य पञ्च दिवसे पर्याय रहित थछ शकतु नथी स्वभाव पर्यायो अने व्यञ्जन पर्यायो, विभाव पर्यायो अने अर्थ पर्यायो दरेक क्षणमा अथा द्रव्योभा थती रहि छे इत्यादि रूपधी द्रव्य अने पर्यायोतु प्रतिपादन आ आज्ञाभा लगवाने अताव्यु छे आ अपेक्षाधी पञ्च आ द्रव्य अने पर्यायना प्रपञ्च (विस्तार) वाणी मानवामा आवी छे तेमज आ अनादि अनन्त छे कोर्य दिवस आज्ञानी आदि थछ नथी अने कोर्य पञ्च दिवसे आने विनाश थशे नछि नदीसूत्रभा पञ्च प्रवचननी अनादि अनन्तताने लगती (इच्छेद्य दुवालसग गणिपिडग न कयाइनासी) अेज वात कडेवाभा आवी छे आवे कोर्य पञ्च काण छतो नछि के ते काणे आ द्वादशाङ्ग रूप गणिपिटकने सङ्काव छतो नछि आ रीते आ आगमनी भक्षता अथवा तो

इत्थ चागममाहात्म्यपर्यालोचनरूपस्य धर्मध्यानस्याऽऽ - र्हताऽऽज्ञाविषयत्वाद् धर्मध्यानस्य धर्मत्व सिद्धम् । तथा-र्हिंसादि-दोषलेशेनाप्यसंपृक्तस्य शुद्ध धर्मस्य बोधकत्वादर्हिंसाप्रधानस्य प्रवचनस्य श्रद्धेयत्व च सिद्धम् ।

अर्हिंसायामर्हतो भगवत आज्ञा प्रदर्शिता, एव सयमेपि तदाज्ञा वर्तते । यथा-ज्ञाताधर्मकथाऽङ्गसूत्रे-(प्रथमा ययने)

“ तएण समणे भगव महावीरे मेह कुमार सयमेव पव्वावेइ, जाव सयमेव आयार जाव धम्ममाइक्खइ एव खलु देवाणुप्पिया ! गतव्व चिट्ठियव्व णिसीइयव्व

इस प्रकार इस आगम की महत्ता अथवा उसके महात्म्य का विचार करना यही आज्ञाविषय नामक धर्मध्यान का प्रथम भेद है । इस ध्यान में अर्हतप्रभु की आज्ञा का ही विचार होता है-अतः इस ध्यान में उन की आज्ञा का विषय करनेवाला होने से धर्मरूपता सिद्ध है तथा हिंसादिक दोष के लेश से भी रहित ऐसे शुद्ध धर्म का बोधक होने से अर्हिंसाप्रधान इस प्रवचन में श्रद्धेयता सिद्ध होती है ।

इस पूर्वोक्त प्रकार से अर्हिंसा में अर्हत भगवान् की आज्ञा का प्रदर्शन कर अब सयममें भी उनकी आज्ञा इसी प्रकार की है यह प्रकट करने के लिये सर्व प्रथम ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्र से इस विषय की पुष्टि करते हुए सूत्रकार कहते हैं ।

“ तएण समणे भगव महावीरे मेहकुमार सयमेव पव्वावेइ, जाव धम्ममाइक्खइ, एव खलु देवाणुप्पिया ! गतव्व चिट्ठियव्व णिसी-

त्थने लगतो विचार करवो ओ व आज्ञा-विषय नामक धर्मध्यानना प्रथम भेद छे आ ध्यानमा अर्हत प्रभुनी आज्ञा विषे व विचार होय छे तेथी आ ध्यानमा तेमनी आज्ञानो विषय प्रतिपादित थयो छे माटे आमा धर्म रूपता सिद्ध छे तेमव हिंसा वगैरे दोषोथी पणु रहित शुद्ध कर्मना बोधक होवाने कारणे अर्हिंसा प्रधान आ प्रवचनमा श्रद्धेयता सिद्ध थाय छे

आ प्रमाणे पूर्वोक्त रीते अर्हत भगवाननी अर्हिंसाना विषे आज्ञा प्रतापीने उवे आगण सूत्रकार सयम माटे पणु तेओश्रीनी आज्ञा आ रीते व छे आ वात स्पष्ट करवाने माटे सौ प्रथम ज्ञाता-धर्मकथाङ्ग सूत्रथी आ विषयनी पुष्टि करता कडे छे-

“ तए ण समणे भगव महावीरे मेहकुमार सयमेव पव्वावेइ, जाव सयमेव आयार जाव धम्ममाइक्खइ, एव खलु देवाणुप्पिया ! गतव्व चिट्ठि-

तुयट्टियञ्च भुजियञ्च भासियञ्च, एण उट्टाय उट्टाय पाणेहिं भूयेहिं जीवेहिं सत्तेहिं सजमेण सजमियञ्चं, अस्सि च ण अट्टे णो पमाएयञ्च " इति, ।

ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरो मेघ कुमार स्वयमेव प्रराजयति, यावत् स्वयमेव आचार यावद् धर्ममारयाति-एण खलु हे देवानुप्रिय ! गन्तव्य, स्यात्तव्य' निपत्तव्य, रत्नगुणवितव्य भोक्तव्य भाषितव्यत्, एणमुत्था य उत्याय पाणेपु भूतेषु जीवेषु सत्त्वेपु सयमेन सयन्तव्यम्, अस्मिन्न खलु अर्थे नो प्रमादयितव्यम् । इति,

दशवैकालिक सूत्रे ऽपि—

“ जय चरे जय चिट्ठे जयमासे जय सए ।
जय भुंजतो भासतो पापरुम्म न वधई ॥ ”

इयञ्च तुयट्टियञ्च भुजियञ्च भासियञ्च एण उट्टाय उट्टाय पाणेहिं भूयेहिं जीवेहिं सत्तेहिं सजमेण सजमियञ्च, अस्सिच ण अट्टे णो पमाएयञ्च”

श्रमण भगवान् महावीर ने स्वय अपने ही शार्थों से मेघकुमारको जय भागवती दीक्षा प्रदान की उनके लिये मुनि विषयक आचार आदि का जय उन्हो ने उपदेश दिया तब उन्होने उसे यही समझाया कि हे देवानुप्रिय ! चलते, ठहरते, बैठते, छेदते, आहारकरते और बात चित करते समय प्राणियो, भूतो, जीवो, और सत्वो में सदा सयम से ही प्रवृत्ति करनी चाहिये । मुनि का यही कर्तव्य है कि वह प्रत्येक शारीरिक एव वाचनिक क्रियाओ में, सयमित प्रवृत्ति करें । इस प्रकार की प्रवृत्तिशील होने से ही मुनि द्वारा अपने सयम की रक्षा होती है इस विषय में मुनि को कभी भी प्रमाद नहीं करना चाहिये । दशवैकालिक सूत्र में भी यही कहा है—“ जय चरे जय चिट्ठे जयमासे जय

यञ्च णिसीइयञ्च तुयट्टियञ्च भुजियञ्च, भासियञ्च, एण उट्टाय उट्टाय पाणेहिं भूयेहिं जावेहिं सत्तेहिं सजमेण सजमियञ्च अस्सि च ण अट्टे णो पमाएयञ्च ”
श्रमणु भगवान् महावीरे नते चेताना हाथथी न मेघकुमारने न्यादे लागवती दीक्षा आपी अने तेने मुनिविषयक आचार वगेरेने लगते उपदेश आथे त्यारे तेज्याश्रीअ तेने उपदेशमा अे न वात समजवी के डे देवानु प्रिय ! आलता जिहा रहेता, जेसता, सुध नता, आहार करता अने वातथीत करता प्राणीअ, भूतो, जीवो अने सत्वोमा ड मेशा सयमथी न प्रवृत्ति करता रहेवु न्नेधअे मुनिनीअे न इरन छे के ते इरेक शारीरिक अने वाचनिक क्रिया अेमा सयमित प्रवृत्ति करे आ रीते प्रवृत्तिशील यधने रहेवाथी न मुनिअे वडे सयमनी रक्षा थाय छे आ पाणतमा मुनिअे केअ पणु दिवसे प्रमाद करवे न्नेधअे नहिं दशवैकालिक सूत्रमा पणु अेन वात छडेवामा १ छे जय चरे जय चिट्ठे जयमासे जय सए, जय भुंजतो भासतो

छाया-यत्तं चरेत् यत् तिष्ठेत्, यत्मासीत् यत् शयीत् ।

यत् भुञ्जानो भाषमान पापकर्म न व्रताति ॥ १ ॥ इति ।

तत्रैव- 'संजम निहुओ चर' इत्यादि । छाया-सयम निभृतश्चर' इति ।

सयमे तीर्थंकरस्याज्ञा प्रदर्शिता, इदानीं तपसि तदाज्ञा प्रदर्श्यते । यथा-दश

वैकालिक सूत्रे-(द्वितीयाध्ययने)

“आयावयाही चय सोगमल्ल” इति । “आयावयाही” आतापय=आतापनारूपतपोधर्माराधनेन तनु शोषय, “सोगमल्ल” सौकुमार्यं “चय” त्यज्ज परिहर ।

सण, जय भुजतो भासतो पावकम्म न वधई” सकल सयमियो को पूर्ण सावधानता पूर्वक ही चलना चाहिये और पूर्ण सावधानता पूर्वक ही बैठना चाहिये । उठने बैठने में तथा आहारादि क्रिया करने और चोलने चालने में सदा उसे अपनी यानाचारमय प्रवृत्ति पर ही लक्ष्य रखना चाहिये । इस प्रकार की प्रवृत्ति करने से वह साधु पापकर्म का वध नहीं करता है । इसलिये हे मेघकुमार ! तुम “सयम निभृतश्चर” इस सकल सयम की अच्छी तरह से-यत्नाचारमय प्रवृत्ति से रक्षा करो-पालन करो । उस प्रकार से सयम की आराधना में तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा का प्रदर्शन सूत्रकार ने किया है । अब तप के आराधन करने में उनकी क्या आज्ञा है-वे यह स्पष्ट करते हैं “आयावयाही चय सोगमल्ल” (दशवैकालिक द्वितीय अध्ययन) ‘हे मुने ! सुकुमालपने को छोड़ आतापनाछे’ आतापनारूप तपधर्म की आराधना से मुनि को चाहिये

जथा सयमी खोजेजे स पूर्णपणे सावधान थडनेज् आलवुं जेधजे अने पूर्ण सावधान थडने ज् जेसवु जेधजे उठवा जेसवामा तेमज् आहार वगेरे डिया उरवामा अने जेअलवा आलवामा ह मेशा तेने पोतानी यत्नायाग्मय प्रवृत्ति उपर ज् लक्ष्य आपवु जेधजे आ गीते प्रवृत्ति उरवाथी ते साधु पाप-कर्मना पध उरतो नथी जेथी हे मेघकुमार ! तजे “सयम निभृतश्चर” आ सकल सयमनी सारी रीते यत्नायाग्मथी प्रवृत्ति वडे रक्षा उरे-आनु पालन करे । आ रीते सूत्रकारे सयमनी आराधना विषे प्रभुनी आज्ञानु प्रदर्शन कर्तुं छे हने तपनी आराधना उरवामा तेज्जिशीनी आज्ञा गी छे ? ते सूत्रकार अर्धी स्पष्ट करे छे-“आयावयाही चय सोगमल्ल” (दशवैकालिक द्वितीय अध्ययन) हे मुनि ! सुकुमलपने त्थने आतापना न्थीउरे आतापना उप तपधर्मना आराधनाही मुनि पोताना गरीरने कृथ (हुणं) जनावे अने गागीरिउ

तुयद्वियव्व भुजियव्व भासियव्व, एउ उट्टाय उट्टाय पाणेहिं भूयेहिं जीवेहिं सत्तेहिं सजमेण सजमियव्व, अस्सि च ण अट्टे णो पमाएयव्व " इति, ।

ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरो मेघ कुमार स्वयमेन प्रराजयति, यावत् स्वयमेव आचार यावद् धर्ममाख्याति—एउ खलु हे देवानुप्रिय ! गन्तव्य, स्यात्तव्यं निपत्तव्य, तत्रैवार्थयितव्य भोक्तव्य भाषितव्यत्, एउमुत्था य उत्थाय पाणेषु भूतेषु जीवेषु सत्त्वेषु सयमेन सयन्तव्यम्, अस्मिन् खलु अर्थे नो प्रमादयितव्यम् । इति, दशवैकालिक सूत्रे ऽपि—

“ जय चरे जय चिट्ठे जयमासे जय सए ।

जय भुजतो भासतो पावरुम्म न उधई ॥ ”

इयव्व तुयद्वियव्व भुजियव्व भासियव्व एउ उट्टाय उट्टाय पाणेहिं भूयेहिं जीवेहिं सत्तेहिं सजमेण सजमियव्व, अस्सि च ण अट्टे णो पमाएयव्व ”

श्रमण भगवान महावीर ने स्वय अपने ही हाथों से मेघकुमारको जय भागवती दीक्षा प्रदान की उनके लिये मुनि विषयक आचार आदि का जय उन्होने उपदेश दिया तब उन्होने उसे यही समझाया कि हे देवानुप्रिय ! चलते, ठहरते, बैठते, लेटते, आहार करते और बात चित करते समय प्राणियो, भूतो, जीवो, और नत्वो में सदा सयम से ही प्रवृत्ति करनी चाहिये। मुनि का यही कर्तव्य है कि वह प्रत्येक शारीरिक एव वाचनिक क्रियाओ में, सयमित प्रवृत्ति करें। इस प्रकार की प्रवृत्तिशील होने से ही मुनि द्वारा अपने सयम की रक्षा होती है इस विषय में मुनि को कभी भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। दशवैकालिक सूत्र में भी यही कहा है—“ जय चरे जय चिट्ठे जयमासे जय

यव्व णिसीइयव्व तुयद्वियव्व भुजियव्व, भासियव्व, एउ उट्टाय उट्टाय पाणेहिं भूयेहिं जावेहिं सत्तेहिं सजमेण सजमियव्व अस्सि च ण अट्टे णो पमाएयव्व ”

श्रमणु लगवान महावीरे जते पोताना हाथथी ए मेघकुमारने न्यारे लागवती दीक्षा आपी अने तेने मुनिविषयक आचार वगेरेने लगतो उपदेश आये। त्तारे तेज्याश्रीजे तेने उपदेशमा जे ए वात समजवी के हे देवानु प्रिय ! आलता जिला रडेता, जेसता, सुध जता, आहार वरता अने वातथीत करता प्राणीजो, भूतो, जिवो अने सत्त्वोमा उ भेशा सयमथी ए प्रवृत्ति करता रडेवु जेधजे मुनिनी जे ए इरज छे के ते इरेक शारीरिक अने वाचनिक क्रिया जेमा सयमित प्रवृत्ति करे आ रीते प्रवृत्तिशील यधने रडेवाथी ए मुनिजो यडे सयमनी रक्षा थाय छे आ ज्ञानतमा मुनिजे केध पणु द्विसे प्रमाद करवो जेधजे नहिं दशवैकालिक सूत्रमा पणु जेए वात कडेवामा आवी छे (जय चरे जय चिट्ठे जयमासे जय सए, जय भुजतो भासतो

छाया-यत् चरेत् यत् तिष्ठेत्, यत्मासीत् यत् शयीत् ।

यत् भुञ्जानो भाषमान' पापकर्म न व्रजति ॥ १ ॥ इति ।

तत्रैव- 'संज्ञम निहुओ चर' इत्यादि । छाया-सयम निभृतश्चर' इति ।

सयमे तीर्थंकरस्याज्ञा प्रदर्शिता, इदानीं तपमि तदाज्ञा प्रदर्श्यते । यथा-दश-

दशकालिक सूत्रे-(द्वितीयाध्ययने)

" आयावयाही चय सोगमल्ल " इति । " आयावयाही " आतापय=आतापनारूपतपोधर्मारोधनेन तनु शोषय, " सोगमल्ल " सौकुमार्यं " चय " त्यज=परिहर ।

सग, जयं भुजतो भासतो पावकम्म न वधई" सकलसयमियो को पूर्ण सावधानता पूर्वक ही चलना चाहिये और पूर्ण सावधानता पूर्वक ही बैठना चाहिये । उठने बैठने में तथा आहारादि क्रिया करने और घोलने चालने में सदा उसे अपनी यत्नाचारमय प्रवृत्ति पर ही लक्ष्य रखना चाहिये । इस प्रकार की प्रवृत्ति करने से वह साधु पापकर्म का वध नहीं करता है । इसलिये हे मेघकुमार ! तुम " सयम निभृतश्चर " इस सकल सयम की अच्छी तरह से-यत्नाचारमय प्रवृत्ति से रक्षा करो-पालन करो । इस प्रकार से सयम की आराधना में तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा का प्रदर्शन सूत्रकार ने किया है । अब तप के आराधन करने में उनकी क्या आज्ञा है-वे यह स्पष्ट करते हैं " आयावयाही चय सोगमल्ल " (दशवैकालिक द्वितीय अध्ययन) ' हे मुनि ! सुकुमालपने को छोड़ आतापनाल्ले ' आतापनारूप तपधर्म की आराधना से मुनि को चाहिये

जथा सयमी लोडोअे स पूर्णपणे सावधान थानेज् यालवु लोडोअे अने पूरु सावधान थाने ज् जेमवु लोडोअे उठवा भेसवाभा तेमज् आडार वगेरे डिया उरवाभा अने जोलवा यालवाभा ह् भेशा तेने पोतानी यत्नायान्मय प्रवृत्ति उपर ज् लक्ष्य आपवु लोडोअे आ गीते प्रवृत्ति उरवाथी ते साधु पाप-कर्मनेा वध उरतो नथी अेथी हे भेघकुमार ! तमे " सयम निभृतश्चर " आ सकल सयमनी सारी रीने यत्नायान्मयी प्रवृत्ति वडे रक्षा उरै-आनु पालन उरै आ गीते सूत्रकारे सयमनी आराधना विषे प्रभुनी आज्ञानु प्रथान कथुं छे हने तपनी आराधना उरवाभा तेअेथीनी आज्ञा गी छे ? ते मूत्रदार अर्ही स्पष्ट करे छे-" आयावयाही चय सोगमल्ल " (दशवैकालिक द्वितीय अध्ययन) हे मुनि ! सुकुमालपने त्यजने आतापना म्नीउरै आतापना उप तपधर्मनी आराधना गी मुनि पोताना शरीरने कृथ (दुर्गण) जनावे अने शारीरिक

किंच श्रमणस्य क्षान्त्यादिदशविधे धर्मे तपसः पाठो वर्तते, तस्मात् तपोधर्म इति विज्ञायते । तथाचोक्तं समवायाऽङ्गसूत्रे—(समवाय १०)

“ दसविधे समणधर्मे पण्णत्ते, त जहा—(१) खंती, (२) मुत्ती (३) अज्जवे (४) महवे (५) लाघवे (६) सच्चे (७) संजमे (८) तवे (९) चियाण (१०) वंभचेरवासे ।

अहिंसादीना जिनाज्ञाप्रयोज्यप्रवृत्तिकृत्परूपस्य धर्मलक्षणस्य सद्भावाद् धर्मत्व सिद्ध ।

उक्त धर्मस्य लक्षण, लक्ष्या अहिंसादयश्च प्रोक्ताः, तत्राहिंसासयमतपोरूपो धर्म उत्कृष्ट मङ्गल बोध्यम् ।

तथाचोक्तं दशवैकालिकसूत्रे—(प्र० अ० १)

“ धम्मो मगलमुक्खिट्ठ 'अहिंसा संजमो तवो ।

देवावि त नमसति जस्स धम्मे सया मणो ॥ ”

किं वह अपने शरीर को कृश करें एव शारीरिक सुकुमारता का मोह छोड़े । उत्तम क्षमा आदिक जो श्रमणों के दशप्रकार के धर्म कहे गये हैं, उनमें तप का भी कथन आया है, अतः तप में धर्मरूपता सिद्ध ही होती है । समवायाग सूत्र में श्रमण के दश प्रकार के धर्मों का कथन करते हुए सूत्रकार ने यही कहा है—“ दसविधे समणधर्मे पण्णत्ते, त जहा—खती, मुत्ती, अज्जवे, महवे, लाघवे, सच्चे, संजमे, तवे, चियाए वंभचेरवासे ।

इन अहिंसादिक महाव्रतों में धर्मरूपता इसलिये सिद्ध होनी है कि वहा पर जिनेन्द्र प्रभु की आज्ञा प्रयोज्य प्रवृत्तिरूप धर्म के लक्षण का सद्भाव पाया जाता है इस प्रकार धर्म का लक्षण और उसके लक्ष्यभूत अहिंसादिकों का कथन है । ये अहिंसा, सयम और तपरूप धर्म ही

सुकुमारतानो मोहं त्यज्ते ते उत्तम क्षमा वगेरे श्रमणाना दश प्रकारना धर्मं कडेवामा आणा छे तेओमा तपनु कथन छे अथी तपमा धर्मरूपता सिद्ध थाय न छे सूत्रकारे समवायाग सूत्रमा श्रमणाना दश प्रकारना धर्मनु कथन करता आ प्रभावे न कहु छे—

“ दसविधे समणधर्मे पण्णत्ते—त जहा—खती, मुत्ती, अज्जवे, महवे, लाघवे, सच्चे संजमे, तवे चियाए वंभचेरवासे । ”

आ अहिंसा वगेरे महाव्रतोमा धर्मरूपता अेटला भाटे सिद्ध थाय छे तेओमा जिनेन्द्र प्रभुनी आज्ञा प्रयोज्य प्रवृत्ति रूप धर्मना लक्षणाने सद्भावा छे आ शीते धर्मनु लक्षणु अने तेना लक्ष्यभूत अहिंसा— छे अहिंसा, सयम अने तप रूप धर्म—उत्कृष्ट मगल

ઝાયા—ધર્મો મહ્નલમુક્ષુષ્ટમ્ અહિંસા સંયમસ્તપઃ ।

દેવા અપિ ત નમસ્યન્તિ, યસ્ય ધર્મે સદા મનઃ ॥

નન્વહિંસા-સંયમ-તપો-રૂપો ધર્મો મહ્નલમુક્ષુષ્ટમિત્યેતદ્વચઃ ક્ષિમાજ્ઞાસિદ્ધમ્
આહોસ્વિદ્ યુક્તિસિદ્ધમપિ ?

અજોચ્યતે—ઉભયસિદ્ધમપિ, તથાહિ-જિનવચનત્વા-દાજ્ઞાસિદ્ધમ્ અનુમાનમ-
પ્યત્વર્તતે-‘ અહિંમાસયમતપોરૂપો-ધર્મો મહ્નલમુક્ષુષ્ટમ્ ઇતિ પ્રતિજ્ઞા, ‘ દેવાદિ

ઉત્કૃષ્ટ મગલરૂપ હૈં દશવૈકાલિકસૂત્ર મેં યહી કહા હૈં “ ધમ્મો મગલ-
મુક્ષિટ્ઠ અહિંસા સજમો તવો । દેવા વિ ત નમસતિ જસ્સ ધમ્મે સયા-
મણો ” ધર્મ હી ઉત્કૃષ્ટ મગલ હૈં । અહિંસા સયમ ઓર તપ યે હી ધર્મ
હૈં । જિસકા અન્તઃ ફરણ ઇસ ધર્મ સે સદા યુક્ત રહતા હૈં ડસકે લિયે
દેવ ઓ નમસ્કાર કરતે હૈં ।

શકા-અહિંસા, સંયમ ઓર તપરૂપ ધર્મ મેં જો ઉત્કૃષ્ટ મગલરૂપતા
કહી હૈં વહ આજ્ઞાસિદ્ધ હૈં ઇસલિયે કહી હૈં કિ યુક્તિ સે સિદ્ધ હૈં ઇસ-
લિયે કહી હૈં ? ધર્માર્થ-અહિંસાદિકોં મેં ઉત્કૃષ્ટમગલતા કિસ પ્રમાણ સે
સિદ્ધ હૈં ? આગમ સે યા અનુમાન સે ?

ઉત્તર-ઇનમેં ઉત્કૃષ્ટ મગલરૂપતા આગમ ઓર યુક્તિ ડોનોંસે સિદ્ધ
હૈં । જિનેન્દ્ર કે વચન હોને સે ઇનમેં આજ્ઞાસિદ્ધતા હૈં તથા અનુમાન સે
પ્રસિદ્ધ હોને સે યુક્તિ સિદ્ધતા હૈં । “ ધમ્મો મગલમુક્ષિટ્ઠ ” ઇત્યાદિ
ગાથા ઢ્વારા ઇનમેં જિનેન્દ્રવચનરૂપ આગમતાં પૂર્વ મેં હી પ્રદર્શિત કી જા
ચુકી હૈં અનુમાન પ્રસિદ્ધતા ઇમ પ્રકાર હૈં-અનુમાન કે પાંચ અગ હોતે

સૂત્રમા એ જ વાત કહેવામા આવી છે-“ ધમ્મો મગલમુક્ષિટ્ઠ-અહિંસા સજમો
તવો । દેવા વિ ત નમસતિ જસ્સ ધમ્મે સયા મણો ” ધર્મ જ ઉત્કૃષ્ટ મગળ
છે અહિંસા સયમ અને તપ એ જ ધર્મ છે જેનુ અન્ત ડરણ આ ધર્મથી
સદા યુક્ત રહે છે તેને દેવો પણ નમન ડરે છે

ગકા-અહિંસા, સયમ અને તપ રૂપ ધર્મને જે ઉત્કૃષ્ટ મગળ રૂપ
કહેવામા આવ્યો છે તે આજ્ઞાસિદ્ધ છે માટે કહેવામા આવેલ છે કે યુક્તિથી
સિદ્ધ છે એટલા માટે કહેવામા આવે છે ? ભાવાર્થ-અહિંસા વગેરેમા ઉત્કૃષ્ટ
મગળતા કયા પ્રમાણથી સિદ્ધ છે ? આગમથી કે અનુમાનથી ?

ઉત્તર-આમા ઉત્કૃષ્ટ મગલરૂપતા આગમ અને યુક્તિ બનેથી સિદ્ધ છે
જિનેન્દ્રનાવચનો હોવાથી આમા આજ્ઞા સિદ્ધતા છે તેમજ અનુમાનથી પ્રસિદ્ધ
હોવા બદલ યુક્તિ સિદ્ધતા છે “ ધમ્મો મગલમુક્ષિટ્ઠ ” વગેરે ગાથા વડે
આમા જિનેન્દ્ર પ્રવચનરૂપ આગમતા પહેલા બતાવવામા આવી જ છે અને અનુ-

किंच श्रमणस्य क्षान्त्यादिदशविधे धर्मे तपसः पाठो वर्तते, तस्मात् तपोधर्म इति विज्ञायते । तथाचोक्त समवायाऽङ्गसूत्रे—(समवाय १०)

“ दसविधे समणधर्मे पणत्ते, त जहा—(१) खती, (२) मुत्ती (३) अज्जवे (४) महवे (५) लाघवे (६) सच्चे (७) सजमे (८) तवे (९) चियाण (१०) वंभचेरवासे ।

अहिंसादीनां जिनाज्ञाप्रयोज्यप्रवृत्तिस्वरूपस्य धर्मलक्षणस्य सद्भावो धर्मत्व सिद्ध ।

उक्त धर्मस्य लक्षण, लक्ष्या अहिंसादयश्च प्रोक्ताः, तत्राहिंसासयमतपोरूपो धर्म उत्कृष्ट मङ्गल बोध्यम् ।

तथाचोक्त दशवैकालिकसूत्रे—(प्र० अ० १)

“ धम्मो मगलमुक्खिद्ध अहिंसा संजमो तवो ।

देवाणि त नमसति जस्स धम्मो सया मणो ॥ ”

किं वह अपने शरीर को कृश करें एव शारीरिक सुकुमारता का मोह छोड़े । उत्तम क्षमा आदिक जो श्रमणों के दशप्रकार के धर्म कहे गये हैं, उनमें तप का भी कथन आया है, अतः तप में धर्मरूपता सिद्ध ही होती है । समवायाग सूत्र में श्रमण के दश प्रकार के धर्मों का कथन करते हुए सूत्रकार ने यही कहा है—“ दसविधे समणधर्मे पणत्ते, तं जहा—खती, मुत्ती, अज्जवे, महवे, लाघवे, सच्चे, सजमे, तवे, चियाण वंभचेरवासे ।

इन अहिंसादिक महाव्रतों में धर्मरूपता इसलिये सिद्ध होनी है कि वहा पर जिनेन्द्र प्रभु की आज्ञा प्रयोज्य प्रवृत्तिरूप धर्म के लक्षण का सद्भाव पाया जाता है इस प्रकार धर्म का लक्षण और उसके लक्ष्यभूत अहिंसादिकों का कथन है । ये अहिंसा, सयम और तपरूप धर्म ही

सुकुमारतानो मोड त्यल्ल हे उत्तम क्षमा वगेरे श्रमणाना दश प्रकारना धर्म कडेवामा आणा छे तेआमा तपनु कथन छे अथी तपमा धर्मरूपता सिद्ध थाय न छे सूत्रकारे समवायाग सूत्रमा श्रमणाना दश प्रकारना धर्मनु कथन करता आ प्रमाणे न कहु छे—

“ दसविधे समणधर्मे पणत्ते—त जहा—खती, मुत्ती, अज्जवे, महवे, लाघवे, सच्चे सजमे, तवे चियाण वंभचेरवासे । ”

आ अहिंसा वगेरे मडावतोमा धर्मरूपता अटला भाटे सिद्ध थाय छे हे तेआमा जिनेन्द्र प्रभुनी आज्ञा प्रयोज्य प्रवृत्ति रूप धर्मना लक्षणाना सद्भाव छे आ रीते धर्मनु लक्षण अने तेना लक्ष्यभूत अहिंसा व अहिंसा, सयम अने तप रूप धर्म न त्रिभट मगण न छे

“ वर्माधर्मव्यवस्थाया, शास्त्रमेव नियामकम् ।
तदुक्ताऽऽसेवनाद् धर्मस्त्वधर्मस्तद्विपर्ययात् ॥ ” इति,

आगम से ही जात कर सकते हैं। घटपटादिकों की तरह उसे स्पष्ट रूप से देग्वनहीं सकते हैं। इसीलिये वह दुर्ज्ञेय है। जो अनुमान और आगम से गम्य होता है वह अग्नि आदि की तरह किसी न किसी के प्रत्यक्ष होता है यह स्पष्ट सिद्धान्त है। तीर्थंकर प्रभु ने कि जो राग और द्वेष से सर्वथा रहित हैं, त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थोंको जो हस्तामलक वत् स्पष्ट जानते हैं, २५ वाणी के अतिशय से जो युक्त हैं अपने केवलज्ञान लपी आलोक से उसे विशदरूप से जान लिया है। हम छद्मस्थों के लिये इनके वचनों के सिवाय इस विषय का नियामक और कुछ नहीं है। अतः उनके कथनानुसार ही धर्म और अधर्म का स्वरूप हम ससारी जीव जान सकते हैं या जानते हैं। “ धर्माधर्मव्यवस्थाया शास्त्रमेव नियामक, तदुक्ता सेवनात् धर्मस्त्वधर्मस्तद्विपर्ययात् ”-धर्म और अधर्म के स्वरूप की व्यवस्था करने वाले केवल सर्वज्ञभगवान् के वचन स्वरूप आगम ही हैं। अतः उनके द्वारा प्रदर्शित मार्ग का सेवन करना धर्म और उससे विपरीत मार्ग का सेवन करना अधर्म है

भावार्थ-जीवोंको धर्मकी प्राप्ति सर्वज्ञ भगवान द्वारा प्रदर्शित मार्ग

समस्त शक्ये छीये ‘ घट पट ’ वगेरेनी जेम तेने स्पष्ट पछे जेध शकता नथी जेथी ज ते दुर्ज्ञेय छे जे अनुमान अने आगमथी गम्य डोय छे ते अग्नि वगेरेनी जेम केधने केधने प्रत्यक्ष डोय छे आ जेक स्पष्ट सिद्धांत छे राग अने द्वेषथी संपूर्ण पछे रहित जेवा तीर्थंकर प्रभुज्ये-के जेजो त्रिकालवर्ती जधा पदार्थोंने हस्तामलकवत् स्पष्ट रीते जळ्छे छे, उप वाणीना अतिशयथी जेजो युक्त छे-पोताना केवलज्ञान इपी आवेडथी तेने विशद इपथी जळ्छी लीधु छे अमारा जेवा छद्मस्थोंने भाटे जेमना पचने सिवाय आ विषयने नियामक जेजो जेध नथी जेथी अजे तेमना कछा सुज्ज ज धर्म अने अधर्मनु स्वइप जळ्छी शक्ये छीये “ धर्माधर्म-व्यवस्थाया शास्त्र मेव नियामक, तदुक्तासेवनात् धर्मस्त्वधर्मस्तद्विपर्ययात् ” धर्म अने अधर्मना स्वइपनी व्यवस्था करनार इकत सर्वज्ञ भगवानना पचन स्वइप आगामे ज छे जेथी तेमना वडे दर्शाववाभा आवेला भागेंनु सेवन करवु जेध धर्म अने तेथी विरुद्ध भागेंनु सेवन करवु अधर्म छे लावार्थ-सर्वज्ञ भगवान द्वारा

मान्यत्वात्, इति हेतुः। अर्हदादिवत् इति दृष्टान्तः इह यो यो देवादिमान्यः स स उत्कृष्ट मङ्गल यथाऽर्हदादयः, 'तथा चाय धर्मः' इत्युपनयः, तस्माद् देवादि मान्यत्वादुत्कृष्ट मङ्गलमिति निगमनम्।

वस्तुतस्तु धर्माधर्मस्वरूप सूत्रमत्राच्छ्रथैर्दुर्ज्ञेय, केवल सर्पेण रागादिदोष रहितेन पञ्चत्रिंशद्वचनातिशयसप नेन केवलिना तीर्थकोण केवलालोकेन सुब्रह्म भवति। छद्मस्थानां तु भगवद्वचनमेव नियामक, तथाचोक्तम्—

हैं—१ प्रतिज्ञा, २ हेतु, ३ दृष्टान्त, उपनय ४ और ५ निगमन। अर्हन्त भगवान की तरह देवादिकों द्वारा मान्य होने से अहिंसा, तप और सयमरूप धर्म उत्कृष्ट मंगल हैं।

इस अनुमान वाक्य में "अहिंसा, सयम और तप रूप धर्म उत्कृष्टमंगल है" यह प्रतिज्ञा है "देवादिकों द्वारा मान्य होने से" यह हेतु है। "अर्हन्त की तरह" यह दृष्टान्त है पक्ष में हेतु के दुहराने से उपनय और प्रतिज्ञा के दुहराने से निगमन सिद्ध हैं जैसे—"जो जो देवादिकों द्वारा मान्य होता है वह २ उत्कृष्ट मंगल होता है जैसे अर्हन्त प्रभु—ये भी देवादिकों द्वारा मान्य हैं। इस प्रकार पक्ष में हेतु के दुहराने रूप उपनय है इसलिये "वे भी उत्कृष्ट मंगल स्वरूप हैं" इस प्रकार प्रतिज्ञा के दुहराने रूप निगमनवाक्य है।

वास्तव में तो धर्म और अधर्म का स्वरूप सूक्ष्म होने से हम उच्च स्थों के लिये अत्यन्त परोक्ष है—इस लिये हम उसे सिर्फ अनुमान या

मान प्रसिद्धता आ प्रभाषे समन्वी लोभञ्जे अनुमानना पाय अगो डोय छे—प्रतिज्ञा १, हेतु २, दृष्टान्त ३, उपनय ४, अने निगमन ५,

अर्हन्त भगवान्नी जेम देव वगेरे द्वारा मान्य डोवा षडल अहिंसा, तप अने सयम इप धर्म उत्कृष्ट—मंगल छे

आ अनुमान वाक्यमा "अहिंसा, सयम अने तप इप उत्कृष्ट मंगल छे" आ प्रतिज्ञा छे "देव वगेरे द्वारा मान्य डोवाथी आ हेतु छे अर्हन्तनी जेम" आ दृष्टान्त छे पक्षमा हेतुने जेवडाववाथी उपनय अने प्रतिज्ञाने जेवडाववाथी निगमन सिद्ध छे जेमके "देव वगेरे द्वारा जे जे मान्य डोय छे ते ते उत्कृष्ट—मंगल डोय छे जेम अर्हन्त प्रभु पण्य देव वगेरे द्वारा मान्य छे आरीते पक्षमा हेतुने जेवडाववाथी उपनय छे, भाटे "तेजो पण्य उत्कृष्ट मंगल स्वरूप छे" आरीते प्रतिज्ञाने जेवडाववा इप निगमन वाक्य छे

वस्तुत धर्म तेमज अधर्मनु स्वरूप सूक्ष्म डोवाथी अभासा जेवा छद्मस्थो भाटे ते अतीव परोक्ष छे जेथी अने इकेन तेने अनुमान के आगमथी

સ્વયમેવ ભગવતા-અહિંસાસંયમતપસાં વર્મત્વ, તથા - તેપામુત્કૃષ્ટમદ્ગ્લસ્વરૂપ-
ત્વેન પ્રાધાન્ય ચ વર્ણિત, તત્રાપ્યહિંસાયા.-સર્વવર્મમૂલત્વેન પ્રાધાન્યાત્ પ્રથમ સ્થાન
પ્રદત્તમ્ । તસ્ય સર્વપ્રધાનસ્યાઽહિંસાધર્મસ્ય પટ્ટકાયોપમર્દનસાધ્યે મૂર્તિપૂજને
મૂલતઃ સમુચ્છેદ કેવલાલોકેન સાક્ષાત્ પશ્યન્ ભગવાનર્હન્ મૂર્તિપૂજનાર્થમાજ્ઞા પ્રદ
ધાદિત્યાકાશકુતુમમિયાત્યન્તમસદેવ વોભ્યમ્ ।

સ્પષ્ટ રૂપ સે જ્ઞાન કે વિષય નહીં હો સકતે હિં । અતઃ, એસે વિષયો
મેં સર્વજ્ઞ કે વચન હી પ્રમાણ કોટિ મેં અગીકાર કરનાં ચાહિયે ।

ભગવાન ને સ્વયં હી અહિંસા, સયમ ઓર તપ મેં ધર્મરૂપતા તથા
ઉત્કૃષ્ટ મગ્નરૂપ હોને સે પ્રધાનતા કહી હી । અહિંસા મેં જો પ્રધાન
રૂપતા કહી ગઈ હી ઉસકા મુખ્ય કારણ યહ હી કિ વહ સમસ્તવર્મો
કા મૂલ હી ઓર હસીલિયે ઉસે ઉન્હો ને સર્વપ્રયત્નસ્થાન દિયા હી જત્ર
યહ વાત હી તો વિચારના ચાહિયે કિ ભગવા મૂર્તિપૂજા કી આજ્ઞા કૈસે
દે સકને હિં । વર્ષો કિ વહ પૂજા પટ્ટકાય કે જીવો કી વિરાધના સે
સા ય હોતી હી । હસ વિચારના મેં અહિંસા ધર્મ કા મૂલતઃ હી અભાવ
સમાયો હુઆ હી । અર્થાત્ મૂર્તિપૂજા મેં ઉસ પ્રમુપતિપાદિન અહિંસા ધર્મ
કા સર્વયા ઉચ્છેદ હો હો જાતા હી-મૂર્તિપૂજા કરને વાલા પૂજક અહિંસા
ધર્મ કા રક્ષક નહીં હો સકતા હી-પ્રત્યુત ઉસે હિંસા કા હી દોષ લગતા
હી હસ પ્રકાર સ્વયં ભગવાન જય અપને કેવલ જ્ઞાન સે હસ વાત કો

તેમ નથી એથી એવી બાબતોમા સર્વજ્ઞ ના વચનો જ પ્રમાણ રૂપમા સ્વીકારવા બેઠએ

ભગવાનને પોતે જ અહિંસા, સયમ અને તપમા ધર્મ રૂપતા તેમજ
ઉત્કૃષ્ટ મગ્નરૂપ હોવાથી પ્રધાનતા બનવી છે અહિંસામા જે પ્રધાન રૂપતા
દર્શાવવામા આવી છે, મુખ્યત્વે તેનુ કારણ આ પ્રમાણે છે કે તે બધા ધર્મોનુ
મૂળ છે અને એથી તેને યોગે સૌ પ્રથમ સ્થાન અપ્યું છે બ્યારે એવી
વાત છે બ્યારે આપણે વિચારવુ બેઠએ કે ભગવાન મૂર્તિપૂજની આજ્ઞા ટેવી રીતે
આપી શકે તેમ છે ? કેમ કે તે પૂજા તો પટ્ટકાયના જીવોની વિરાધનાથી સાધ્ય
હોય છે આ વિરાધનામા અહિંસા ધર્મનો મુખ્યત્વે અભાવનો જ સમાવેશ
થયો છે તેમ કહી શકાય છે એટલે કે મૂર્તિપૂજમા તે પ્રમુ પ્રતિપાદિત અહિંસા
ધર્મનો સંપૂર્ણ પણે ઉચ્છેદ જ થઈ જાય છે મૂર્તિપૂજ કરનાર પૂજારી અહિંસા
ધર્મનો રક્ષક થઈ શકતો નથી અને બીજી રીતે તો તેને હિંસાનો દોષ જ
ઓદવો પડે છે આ રીતે બ્યારે પોતે ભગવાન પોતાના કેવલજ્ઞાનથી આ

पर चलनेसे ही हो सकती है, इससे विपरीत मार्ग पर चलने से नहीं। अतः जो जीव धर्म को साक्षात्कार करना चाहते हैं उनका कर्तव्य है कि वे सर्वज्ञ भगवन द्वारा कथित मार्ग का सेवन करे और उस से भिन्न मार्ग का परित्याग करे। इस प्रकार की प्रवृत्ति से वे धर्म और अधर्म के स्वरूप के ज्ञाता बन जाते हैं। इस कथन से शकाकार की इस आशकाका यहाँ परिहार किया गया है कि जो उसमें पहिले यह प्रश्न किया कि अहिंसादिकों में जो उत्कृष्ट मगलरूपता है वह किस प्रमाण से है। सूत्रकारने आगम और अनुमान दोनो प्रमाणों से उनमें उत्कृष्ट मगलता सिद्ध की है इस कथन से एक बात और हमें यह ज्ञात होती है कि सर्वज्ञ कथित सिद्धान्त की जाच के लिये जयतक तर्क का जोर चलता रहे बुद्धिमान तयतक अपनी तर्कणा की कसौटी पर उसे कसता रहे—पर जय तर्क की समाप्ति हो जावे—तर्कणा शक्ति कुठित हो जावे—तो उस व्यक्ति का कर्तव्य है वह आगम प्रमाण से ही उस सिद्धान्त का अनुसरण करे। फिर उसे उस विषय में तर्क करने की आवश्यकता नहीं है क्यों कि सूक्ष्मादिक पदार्थ सर्वज्ञ के सिवाय छद्मस्थों के

प्रदर्शित भाग उपर आलवाधी न लगे ने धर्मनी प्राप्ति थड शके तेम छे ,
 जेनाथी विरुद्ध भागना सेवन थी नहि जेथी ने लगे धर्मनु प्रत्यक्ष दर्शन
 ध्विछताडोय तेमनी करज छे के तेजो सर्वज्ञ भगवान द्वारा कथित भागनु
 सेवन करे अने तेना विरुद्ध भागना त्याग करे आ नतनी प्रवृत्तिथी तेजो
 धर्म अने अधर्मना स्वइपने नलुनारा थड नय छे आ कथनथी शकाकारनी
 जे आशकाने अही परिहार करवामा आव्यो छे के ने तेमा पडेला आ
 पश्च करवामा आव्यो छे के अहिंसा वगेरे मा ने उत्कृष्ट मगल रूपता छे ते
 क्या प्रमाणना आधारे छे ? सूत्रकारे आगम तेमन अनुमान जने—प्रमाणो थी
 तेजोमा उत्कृष्ट मगलता सिद्ध करी छे जे कथन वडे नील आ वातनु पलु
 ज्ञान थाय छे के सर्वज्ञ—कथित सिद्धान्तनी परीक्षा माटे न्या सुधी तर्कनी
 शक्ति कायम रहे बुद्धिमानो त्या सुधी पोतानी तर्कलुानी कसौटी उपर कसता
 रहे—पलु न्यारे तर्कनी शक्ति मद थड नय—तर्कलुा शक्ति कुठित थड नय
 त्यारे ते व्यक्ति नी करज छे के ते आगल प्रमाणथी न ते सिद्धान्त नु अनु
 सरण करे पछी ते विषयमा न तेने भीनमेप करवी जेधजे नहि केम के
 सूक्ष्म वगेरे पदार्थो सर्वज्ञ सिवाय छद्मस्थेना माटे स्पष्ट रूपथी नलु शकाय

સ્વયમેવ ભગવતા-અહિંસાસંયમતપસાં ધર્મત્ત, તથા - તેપામુત્કૃષ્ટમજ્જલસ્વરૂપ-
ત્વેન પ્રાધાન્ય ચ વર્ણિત, તત્રાપ્યહિંસાયા.-સર્વધર્મમૂલત્વેન પ્રાધાન્યાત્ પ્રથમ સ્થાન
પ્રદત્તમ્ । તસ્ય સર્વપ્રધાનન્યાઽહિંસાધર્મસ્ય પટ્ટકાયોપમર્દનસાધ્યે મૂર્તિપૂજને
મૂલતઃ સમુચ્ચેદ કેવલાલોકેન સાક્ષાત્ પશ્યન્ ભગવાનર્હન્ મૂર્તિપૂજનાર્થમાજ્ઞા પ્રદ-
દ્યાદિત્યાકાશકુસુમમિત્રાત્યન્તમસદેવ ગ્રોધ્યમ્ ।

સ્પષ્ટ રૂપ સે જ્ઞાન કે વિષય નહીં હો સકતે હૈં । અતઃ એસે વિષયોં
મેં સર્વજ્ઞ કે વચન હી પ્રમાણ કોટિ મેં અગીકાર કરનાં ચાહિયે ।

ભગવાન ને સ્વયં હી અહિંસા, સયમ ઓર તપ મે ધર્મરૂપતા તથા
ઉત્કૃષ્ટ મગલરૂપ હોને સે પ્રધાનતા કહી હૈં । અહિંસા મેં જો પ્રધાન
રૂપતા કહી ગઈ હૈં ડસકા મુખ્ય કારણ યહ હૈં કિ વહ સમસ્તધર્મો
કા મૂલ હૈં ઓર હસીલિયે ડસે ડન્હો ને સર્વપ્રથમસ્થાન દિયા હૈં જય
યહ યાત હૈં તો વિચારના ચાહિયે કિ ભગવા મૂર્તિપૂજા કી આજ્ઞા કૈસે
દે સકને હૈં । ક્યોં કિ વહ પૂજા પટ્ટકાય કે જીયોં કી વિરાધના સે
સાય હોતી હૈં । ડસ વિરાધના મેં અહિંસા ધર્મ કાં મૂલતઃ હી અભાય
સમાયા હુઆ હૈં । અર્થાત્ મૂર્તિપૂજા મેં ડસ પ્રમુપ્રતિપાદિત અહિંસા ધર્મ
કા સર્વયા ડચ્ચેદ હો હો જાતા હૈં-મૂર્તિપૂજા કરને વાલા પૂજક અહિંસા
ધર્મ કા રક્ષક નહીં હો સકના હૈં-પ્રત્યુત ડસે હિંસા કા હી દોષ લગતા
હૈં હસ પ્રકાર સ્વયં ભગવાન જય અપને કેવલ જ્ઞાન સે ડસ વાત કો

તેમ નથી એથી એવી બાબતોમા સર્વજ્ઞ ના વચનો જ પ્રમાણ રૂપમા સ્વીકાર-
વા બોધ્યે

ભગવાનને પોતે જ અહિંસા, સયમ અને તપમા ધર્મ રૂપતા તેમજ
ઉત્કૃષ્ટ મગલરૂપ હોવાથી પ્રધાનતા બનવી છે અહિંસામા જે પ્રધાન રૂપતા
દર્શાવવામા આવી છે, મુખ્યત્વે તેનુ કારણ આ પ્રમાણે છે કે તે બધા ધર્મોનુ
મૂળ છે અને એથી તેને મૌએ સૌ પ્રથમ સ્થાન અર્પ્યું છે બ્યારે એવી
વાત છે ત્યારે આપણે વિચારવુ બોધ્યે કે ભગવાન મૂર્તિપૂજાની આજ્ઞા ડેવી રીતે
આપી શકે તેમ છે ? ડેમ કે તે પૂજા તો પટ્ટકાયના છવોની વિરાધનાથી સાધ્ય
હોય છે આ વિરાધનામા અહિંસા ધર્મતો, મુખ્યત્વે અલાવનો જ સમાવેશ
થયો છે તેમ કહી શકાય છે એટલે કે મૂર્તિપૂજામા તે પ્રભુ પ્રતિપાદિત અહિંસા
ધર્મનો સપૂર્ણ પણે ઉચ્ચેદ જ થઈ બાય છે મૂર્તિપૂજા કરનાર પૂજારી અહિંસા
ધર્મનો રક્ષક થઈ શકતો નથી અને બીજી રીતે તો તેને હિંસાનો દોષ જ
બોધવો પડે છે આ રીતે બ્યારે પોતે ભગવાન પોતાના કેવલજ્ઞાનથી આ

પર ચલનેસે હી હો સકતી હૈ, ઇસસે ત્રિપરીત માર્ગ પર ચલને સે નહીં । અતઃ જો જીવ ધર્મ કો સાક્ષાત્કાર કરના ચાહતે ઈં ઉનકા કર્તવ્ય હૈ કિ વે સર્વજ્ઞ ભગવન દ્વારા કથિત માર્ગ કા સેવન કરે ઓર ઉસ સે ભિન્ન માર્ગ કા પરિત્યાગ કરે । ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે વે ધર્મ ઓર અધર્મ કે સ્વરૂપ કે જ્ઞાતા ઘન જાતે હિં । ઇસ કથન સે શકાકાર કી ઇસ આશકાકા યર્ષા પરિહાર ક્રિયા ગયા હૈ કિ જો ઉસમેં પહિલે યહ પ્રશ્ન ક્રિયા કિ અહિંસાદિકોં મેં જો ઉત્કૃષ્ટ મગલરૂપતા હૈ વહ કિસ પ્રમાણ સે હૈ । સૂત્રકારને આગમ ઓર અનુમાન દોનો પ્રમાણોં સે ઉનમેં ઉત્કૃષ્ટ મગલતા સિદ્ધ કી હૈ ઇસ કથન સે એક યાત ઓર હમેં યહ જ્ઞાત હોતી હૈ કિ સર્વજ્ઞ કથિત સિદ્ધાન્ત કી જાચ કે લિયે જઘતક તર્ક કા જોર ચલતા રહે બુદ્ધિમાન તચતક અપની તર્કણા કી કસૌટી પર ઉસે કસતા રહે-પર જય તર્ક કી સમાપ્તિ હો જાવે-તર્કણા શક્તિ કુટિત હો જાવે-તો ઉસ વ્યક્તિ કા કર્તવ્ય હૈ વહ આગમ પ્રમાણ સે હી ઉસ સિદ્ધાન્ત કા અનુસરણ કરે । ફિર ઉસે ઉસ વિષય મેં તર્ક કરને કી આવશ્યકતા નહીં હૈ ક્યોં કિ સૂક્ષ્માદિક પદાર્થ સર્વજ્ઞ કે સિવાય હ્યમસ્થોં કે

પ્રદર્શિત માર્ગ ઉપર ચાલવાથી જ જીવો ને ધર્મની પ્રાપ્તિ થઈ શકે તેમ છે એનાથી વિરુદ્ધ માર્ગના સેવન થી નહિ એથી જ જીવો ધર્મનું પ્રત્યક્ષ દર્શન ઈચ્છતાહોય તેમની ફરજ છે કે તેઓ સર્વજ્ઞ ભગવાન દ્વારા દર્શિત માર્ગનું સેવન કરે અને તેના વિરુદ્ધ માર્ગનો ત્યાગ કરે આ જાતની પ્રવૃત્તિથી તેઓ ધર્મ અને અધર્મના સ્વરૂપને જાણનારા થઈ જાય છે આ કથનથી શકાકારની એ આશકાનો અહીં પરિહાર કરવામા આવ્યો છે કે જે તેમા પહેલા આ પક્ષ કરવામા આવ્યો છે કે અહિંસા વગેરે મા જે ઉત્કૃષ્ટ મગળ રૂપતા છે તે કયા પ્રમાણના આધારે છે ? સૂત્રકારે આગમ તેમજ અનુમાન બંને-પ્રમાણો થી તેઓમા ઉત્કૃષ્ટ મગળતા સિદ્ધ કરી છે એ કથન વડે ખીજા આ વાતનું પણ જ્ઞાન થાય છે કે સર્વજ્ઞ-કથિત સિદ્ધાન્તની પરીક્ષા માટે જ્યાં સુધી તર્કની શક્તિ કાયમ રહે બુદ્ધિમાનો ત્યાં સુધી પોતાની તર્કણાની કસોટી ઉપર કસતા રહે-પણ જ્યારે તર્કની શક્તિ મદ થઈ જાય-તર્કણા શક્તિ કુટિત થઈ જાય ત્યારે તે વ્યક્તિ ની ફરજ છે કે તે આગળ પ્રમાણથી જ તે સિદ્ધાન્ત નું અનુસરણ કરે પછી તે વિષયમા જ તેને મીનમેળ કરવી જોઈએ નહિ કેમ કે સૂક્ષ્મ વગેરે પદાર્થોં સર્વજ્ઞ સિવાય હ્યમસ્થોના માટે સ્પષ્ટ રૂપથી જાણી શકાય

સ્વયમેવ ભગવતા-અહિંસાસંયમતપસાં ધર્મત્વ,તથા - તેપામુલ્કુષ્ટમગ્ગલસ્વરૂપ
ત્વેન પ્રાવાન્ય ચ વર્ણિત, તત્રાપ્યહિંસાયા -સર્વ ધર્મમૂલ્ત્વેન પ્રાર્થાન્યાત્ પ્રથમ સ્થાન
પદત્તમ્ । તત્પ સર્વપ્રધાનન્યાઽહિસાધર્મસ્ય પદ્મકાયોપમર્દનસાધ્યે મૂર્તિપૂજને
મૂલતઃ. સમુચ્ચેદ કેવલાલોકેન સાક્ષાત્ પશ્યન્ ભગવાનર્હન્ મૂર્તિપૂજનાર્થમાજ્ઞા પ્રદ-
ધાદિત્યાકાશકુસુમમિત્રાત્યન્તમસદેવ વૌખ્યમ્ ।

સ્પષ્ટ રૂપ સે જ્ઞાન કે વિષય નહીં હો સકતે હૈ । અતઃ. એસે વિષયોં
મેં સર્વજ્ઞ કે વચન હી પ્રમાણ કોટિ મેં અગીકાર કરના ચાહિયે ।

ભગવાન ને સ્વય હી અહિંસા, સંયમ ઓર તપ મે ધર્મરૂપતા તથા
ઉલ્કુષ્ટ મગ્ગલરૂપ હોને સે પ્રધાનતા કહી હૈ । અહિંસા મેં જો પ્રધાન
રૂપતા કહી ગઈ હૈ ઉસકા મુખ્ય કારણ યહ હૈ કિ વહ સમસ્તધર્મો
કા મૂલ હૈ ઓર હસીલિયે ઉસે ડહો ને સર્વપ્રથમસ્થાન દિયા હૈ જય
યહ યાત હૈ તો વિચારના ચાહિયે કિ ભગવા મૂર્તિપૂજા કી આજ્ઞા કૈસે
દે સકતે હૈ । યયોં કિ વહ પૂજા પદ્મકાય કે જીયો કી વિરાધના સે
સા ય હોતી હૈ । ઇસ વિરાધના મેં અહિંસા ધર્મ કા મૂલતઃ હી અભાવ
સમાપો હુઆ હૈ । અર્થાત્ મૂર્તિપૂજા મેં ઉસ પ્રભુપ્રતિપાદિત અહિંસા ધર્મ
કા સર્વયા ઉચ્ચેદ હો હો જાતા હૈ-મૂર્તિપૂજા કરને વાલા પૂજક અહિંસા
ધર્મ કા રક્ષક નહી હો સકતા હૈ-પ્રત્યુત ઉસે હિંસા કા હી દોષ લગતા
હૈ ઇસ પ્રકાર સ્વય ભગવાન જય અપને કેવલ જ્ઞાન સે ઇસ યાત કો

તેમ નથી એથી એવી બાબતોમા સર્વજ્ઞ ના વચનો જ પ્રમાણ રૂપમા સ્વીકાર
વા બેધબે

ભગવાનને પોતે જ અહિંસા, સયમ અને તપમા ધર્મ રૂપતા તેમજ
ઉલ્કુષ્ટ મગ્ગરૂપ હોવાથી પ્રધાનતા બનાવી છે અહિંસામા જે પ્રધાન રૂપતા
દર્શાવવામા આવી છે, મુખ્યત્વે તેનું કારણ આ પ્રમાણે છે કે તે બધા ધર્મોનું
મૂળ છે અને એથી તેને યોગ્યે યો પ્રથમ સ્થાન અર્પ્યું છે બ્યારે એવી
વાત છે બ્યારે આપણે વિચારવું બેધબે કે ભગવાન મૂર્તિપૂજાની આજ્ઞા કેવી રીતે
આપી શકે તેમ છે ? કમ કે તે પૂજા તો પદ્મકાયના છાવેની વિરાધનાથી સાધ્ય
હોય છે આ વિરાધનામા અહિંસા ધર્મતો, મુખ્યત્વે અલાવનો જ સમાવેશ
થયો છે તેમ કહી શકાય છે એટલે કે મૂર્તિપૂજામા તે પ્રભુ પ્રતિપાદિત અહિંસા
ધર્મનો સ પૂર્ણ પછે ઉચ્ચેદ જ યદ બય છે મૂર્તિપૂજા કરનાર પૂજારી અહિંસા
ધર્મનો રક્ષક થઈ શકતો નથી અને બીજી રીતે તો તેને હિંસાનો દોષ જ
ઓઢવો પડે છે આ રીતે બ્યારે પોતે ભગવાન પોતાના કેવલજ્ઞાનથી આ

एव लक्ष्याः समालोचिताः, इदानीमलक्ष्या उच्यन्ते—हिंसादौ जिनाज्ञाविरुद्धा प्रवृत्तिर्भवति लोकाना तस्माद्धर्मा हिंसादय एव तस्य धर्मलक्षणस्यालक्ष्या भवन्ति। धर्माधर्मस्वरूपबोधनाय हि भगवताऽऽवश्यके नाम-स्थापनाद्रव्यभावभेदेन चतुर्विधो निक्षेपः प्रदर्शितः। तत्र भावार्थ्यके एव तीर्थकराज्ञायाः सद्भावाद्

साक्षात् जानते हैं तो फिर वे ही मूर्तिपूजा करने की आज्ञा देंगे यह मान्यता भाकाशपुष्पकी तरह सर्वथा असत्य ही है यह स्वयं समझने जैसी बात है जहाँ हिंसा है वहाँ धर्म नहीं है अहिंसामें ही सच्चाधर्म है।

इस प्रकार धर्म के लक्षणभूत अहिंसा आदि का यहाँ तक विचार किया। अब उससे विपरीत हिंसादिकों का विचार करते हैं—

हिंसा आदि पाप हैं—इन में प्रवृत्ति करने की आज्ञा जिन भगवान ने नहीं दी है फिर भी जो प्रवृत्ति करते हैं वे उस आज्ञा से बहिर्भूत हैं। अतः, जिनाज्ञा से विरुद्ध प्रवृत्ति होने से जीवों के लिये धर्म प्राप्ति के बदले इनसे अधर्म की ही प्राप्ति होती है। जिन से जीवों को अधर्म की प्राप्ति होती हो, वे स्वयं अधर्म हैं। हिंसादिक पापों में अधर्मता होने का कारण उनमें धर्म के लक्षण का अभाव है। इसीलिये ये धर्म के लक्षण के अलक्ष्य हुए हैं। इस धर्म और अधर्म के स्वरूप को समझाने के लिये भगवान ने आवश्यकसूत्र में नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव

વાતને સ્પષ્ટપણે પ્રલક્ષ્યરૂપમાં બાણે છે તે પછી તેઓ જ મૂર્તિપૂજા કરવાની આજ્ઞા આપે એવી માન્યતા આકાશ પુષ્પની જેમ સંપૂર્ણપણે અસત્ય જ સિદ્ધ થાય છે આપણે પોતે પણ આ વાત સમજી શકીએ તેમ છીએ કે બધા હિંસા છે ત્યાં ધર્મ નથી અહિંસામાં જ સાચો ધર્મ છે

આ રીતે ધર્મના લક્ષ્યભૂત અહિંસા વગેરે ને માટે અહીં સુધી વિચાર કરવામાં આવ્યો છે હવે આગળ તેથી વિરુદ્ધ હિંસા વગેરેની બાબતમાં વિચાર કરવામાં આવે છે—

હિંસા વગેરે પાપ છે—આમાં પ્રવૃત્ત થવાની આજ્ઞા જિન ભગવાનને કોઇને પણ આપી નથી છતાં જેઓ તેમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તેઓ તે આજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે એથી જિનાજ્ઞાની પ્રતિકૂળ પ્રવૃત્તિ હોવાથી જીવોને ધર્મ પ્રાપ્તિના સ્થાને એમનાથી અધર્મની જ પ્રાપ્તિ થાય છે જીવોને જેનાથી અધર્મની પ્રાપ્તિ થાય છે તે પોતે અધર્મ છે હિંસા વગેરે પાપોમાં અધર્મતા હોવાને લીધે તેઓમાં ધર્મના લક્ષણોને અલાભ છે એટલા માટે જ તેઓ ધર્મના લક્ષણથી અલક્ષ્ય થયા છે આ ધર્મ અને અધર્મના સ્વરૂપને સમજાવવા ને

धर्मत्वम्, अन्यविधेष्वभावशयकेषु रागद्वेषहिंसादिदोषसद्भावेन मोक्षमार्गोपदेशे प्रवृत्तरय तीर्थंकररय चाऽऽज्ञाया अभावेन न तत्र धर्मलक्षण समनुगच्छति, तेषां मोक्षसाधकत्वाभावाज्जैनधर्मपद लब्धु-मनर्हत्वात् । तथाचोक्तमनुयोगद्वारे--

“से किं त नामावस्सय ? । नामावस्सयं जस्स ण जीवस्स वा अजीवस्स वा

के भेद से ४ चार निक्षेपों का कथन किया है उनमें नाम स्थापना और द्रव्यरूप धर्म निक्षेप के आराधन करने की भगवान ने जीवों को आज्ञा नहीं दी है वयो कि इनसे जीवों को धर्म की प्राप्ति नहीं होती है । धर्म की प्राप्ति कराने वाला केवल भाव निक्षेपरूप आवश्यक है । इसकी आराधना से ही जीवों को धर्म प्राप्त हुआ करता है-अतः इस में ही धर्मरूपता प्रकट की गई है घांकी के इसके अतिरिक्त निक्षेपों में-आवश्यकों में रागद्वेष और हिंसा आदि दोषों का सद्भाव होने से एव मोक्ष मार्ग के उपदेशप्रदान करने में प्रवृत्त तीर्थंकरों की इनके आराधन करने में आज्ञा का अभाव होने से धर्म के लक्षण का समन्वय ही नहीं होता है । मुक्ति का जो साधक होता है वही जैन-धर्म है । इन ३ निक्षेपरूप आवश्यकों में मुक्ति की साधकता का अभाव है-इसलिये ये जैनधर्म के पदको स्वप्न में भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं ।

अनुयोगद्वार में यही बात कही गई है--

से किं त नामावस्सय ? नामावस्सय जस्स ण जीवस्स अजीवस्स

आवश्यकसूत्रमा नाम, स्थापना द्रव्य अने लावना भेदधी आर निक्षेपो नु कथन कथुं छे तेओमा नाम, स्थापना, अने द्रव्यरूप धर्म निक्षेपने आगधवानी भगवाने एवोने आज्ञा आपी नथी केम के ओमनाधी एवोने धर्मनी प्राप्ति थती नथी धर्मनी प्राप्ति उरावनारे केवण लावनिक्षेपइप आवश्यक छे ओनी आराधनाधी न एवोने धर्मनी प्राप्ति थाय छे ओधी आमा न धर्मरूपता भताववामा आवी छे ओना सिवायना भीन निक्षेपोमा-आवश्यकोमा-रागद्वेष अने हिंसा वगेरे होषोने सद्भाव होवाधी अने भेक्ष मार्गना उपदेश आप वामा प्रवृत्त तीर्थंकरोनी ओमनी आराधना करवानी आज्ञानो अभाव होवाधी धर्मना लक्षणोने समन्वय न थतो नथी मुक्तिनो ने साधक होय छे ते न जैन-धर्म छे आ उ निक्षेपइप आवश्यकोमा मुक्तिनी साधकतानो अभाव छे भाटे ओओ जैन धर्मना पढने स्वप्नभाये भेणवा शके नेम नथी

अनुयोगद्वारमा ओ न वात कडेवामा आवी छे--

से किं त नामावस्सय ? नामावस्सय जस्स ण जीवस्स अजीवस्स वा जीवाण वा

जीवाण वा अजीवाण वा तदुभयस्म वा तदुभयाण वा आवस्सएत्ति नाम कज्जइ, से त नामावस्सय ।

अथ किं तत् नामावश्यकं ? नामावश्यकं—यस्य खलु जीवस्य वा अजीवस्य वा जीवाना वा अजीवानां वा, तदुभयस्य वा तदुभयेर्पा वा आवश्यकमिति नाम क्रियते तदेतन्नामावश्यकम् ।

“ से किं त ठवणावस्सय ? जण्ण कट्टकस्मि वा पोत्थकस्मि वा चित्तकस्मि वा लेप्पकस्मि वा गथिमे वा वेदिमे वा पूरिमे वा सघाइमे वा अवखे वा वराडए वा एगो वा अणो गो वा सव्भावठवणा वा असव्भावठवणा वा आवस्सएत्ति ठवणा ठविज्जइ, से त ठवणावस्सय ।

छाया—अथ किं तत् स्थापनावश्यकम् ? स्थापनावश्यकं यत् खलु काठकर्म वा पुस्तकर्म वा चित्रकर्म वा लेप्यकर्म वा ग्रथिम वा वेष्टिम वा पृथिम वा सङ्घातिम

वा जीवाण वा अजीवाण वा तदुभयस्स वा तदुभयाण वा आवस्सएत्ति नाम कज्जइ से त नामावस्सय ।

से किं त ठवणावस्सय ? जण्ण कट्टकस्मि वा पोत्थकस्मि वा चित्तकस्मि वा लेप्पकस्मि वा गथिमे वा वेदिमे वा पूरिमे वा सघाइमे वा अवखे वा वराडए वा एगो वा सव्भावठवणा वा असव्भावठवणा वा आवस्सएत्ति ठवणा ठविज्जइ, से त ठवणावस्सय

भावार्थ—जीव, अजीव अथवा तदुभय स्वरूप आदि पदार्थों में “ यह आवश्यक है ” इस प्रकार नाम सस्कार करना वह जीव अजीव आदि नाम आवश्यक है इस नाम आवश्यक में आवश्यक के वास्तविक गुणादि कुछ भी नहीं होते हैं—सिर्फ लोक व्यवहार के लिये ही इस प्रकार की वहा पर निक्षेपविधि करली जाती है काष्ठ, पुस्तक चित्र

अजीवाण वा तदुभयस्स वा तदुभयाण वा आवस्सएत्ति नाम कज्जइ से त नामावस्सय ।

से किं त ठवणावस्सय ? जण्ण कट्टकस्मि वा पोत्थकस्मि वा चित्तकस्मि वा लेप्पकस्मि वा गथिमे वा वेदिमे वा पूरिमे वा सघाइमे वा अवखे वा वराडए वा एगो वा अणो गो वा सव्भावठवणा वा असव्भावठवणा वा आवस्सएत्ति ठवणा ठविज्जइ, से त ठवणावस्सय ।

भावार्थ—जीव, अजीव अथवा तदुभय स्वरूप वगैरे पदार्थों में “ आ आवश्यक है ” आ दीते नाम सस्कार करेवा ने जीव अजीव वगैरे “ नाम आवश्यक ” छे आ नाम आवश्यकना आवश्यकना वास्तविकगुण वगैरे कुछ न होता नथी इतना लोकव्यवहार ना भाटे न आ नतनी ला निक्षे

वा अक्ष वा वराटक वा एको वा अनेको वा सद्भावस्थापना वा अतद्भावस्थापना वा 'आवश्यक'—मिति स्थापना स्थाप्यते, तदेतत् स्थापनावश्यकम् ।

भावावश्यकस्वरूपान्ये गोपालदारकादी आवश्यकैति नामकरणे नामना-
नाममात्रेणावश्यक नामावश्यक गोपालदारकादिर्भवति। स्थापनाऽपि भावावश्यक

एव अक्ष-शतरज की गोटी आदि में एक अथवा अनेक आवश्यक क्रिया करने वाले श्रावक आदि को तदाकार अथवा अतदाकार लिखित चित्र स्थापना आवश्यक (निक्षेप) है यह स्थापना दो प्रकार की है एक सद्भाव स्थापना और २ दूसरी असद्भावस्थापना। सद्भाव स्थापना में जिसकी स्थापना की जाती है उसकी सर्व आकृति कोतरी रहती है असद्भाव स्थापना में इस प्रकार की आकृति आदि नहीं रहती है वहाँ पर केवल सकेत ही है जैसे शतरज की गोटीया में यह प्यादा है यह घजीर है, यह हाथी है इत्यादि सिर्फ कल्पना ही कल्पना रहती है—वहाँ उनका कोई भी आकार कोतरा नहीं रहता है। नाम निक्षेप में जिस प्रकार भाव आवश्यक शून्यता रहती है उसी प्रकार स्थापना में भी यही बात रहती है किसी गोपाल (ग्वालिये) के लड़के का "आवश्यक" इस प्रकार का नाम जिस प्रकार भाव आवश्यक रहित नाम निक्षेप में है उसी प्रकार भाव आवश्यक के स्वरूप से शून्य स्थापना निक्षेप में भी "यह आवश्यक है" यह स्थापना निक्षेप है।

आवे छे, काष्ठ, पुरतक, चित्र अने अक्ष-शतरज नी सोगडी वगेरेमा अेक के अनेक आवश्यक जिया करनार श्रावक वगेरेनु तदाकार के अतदाकार लेखित चित्र-स्थापन आवश्यक (निक्षेप) छे आ स्थापना छे प्रदरनी छे अेक सद्भाव स्थापना अने अीछ अमद्भाव स्थापना सद्भाव स्थापनामा नेनी स्थापना करवामा आवे छे तेनी आकृति स पूछु पछे कैतरेल डोय छे अमद्-
भाव स्थापनामा आ नतनी आकृति वगेरे रडेती नथी त्या इक्षत मकेत न छे नेम शतरजनी सोगडीअेमा आ पायदण छे, आ वल्ल छे, आ हाथी छे वगेरे इक्षत केरी इक्षत न डोय छे तेमा तेमनी कोष्ठपछु नतनी आकृति कैतरेली डोती नथी नाम निक्षेपमा नेम लाव आवश्यक शून्यता रडे छे तेमन स्थापनामा पणु अे न वात डोय छे कोष्ठ गोवाजियाना पुत्रनु 'आवश्यक' आ नतनु नम नेम लाव आवश्यक रहित नाम निक्षेपमा छे ते प्रमाछे न लाव आवश्यकता स्वरूपथी शून्य स्थापना निक्षेपमा पछु "आ आवश्यक छे" आ स्थापना निक्षेप छे

સ્વરૂપશૂન્યે કાષ્ટકર્માદૌ ક્રિયતે । અતો મા-શૂન્યે ઘ્રિયમાણત્વાદિશેપાદનવો
નાસ્તિ કશ્ચિદ્ ભેદ इत्याशयेनाह—

“ ણામદ્વવણાણ કો પડવિસેસો ? । છાયા-નામસ્થાપનયોઃ યઃ પ્રતિવિશેષઃ ।
અત્રોત્તરમુચ્યતે—

‘ ણામ આવકહિઅ, ઠવણા ઇત્તરિઆ વા હોજ્જા આવકહિઆ વા ’ ॥ છાયા-
નામ-યાવત્કથિક, સ્થાપના-ઇત્વરિકા વા ભવેદ્ યાવત્કથિકા વા ।

‘ ણામ આવકહિય ’ નામ યાવત્કથિક-સ્વાશ્રયદ્રવ્યસ્યાસ્તિત્વકથા યાવ
દનુવર્તતે इत्यर्थઃ, સ્થાપના તુ ‘ ઇત્તરિયા વા ’ ઇત્વરિકા વા અલ્પકાલસ્થાયિની
વા ‘ હોજ્જા ’ સ્યાત્, યાવત્કથિકા વા, અય ભાવઃ—કાચિત્-સ્થાપના સ્વાશ્રય
દ્રવ્યસ્ય સદ્ભાવેડપિ, મધ્યકાલ એવ નિવર્તતે, વાચિત્-તત્સત્તા યાવદવતિષ્ઠતે

શકા—જિસ પ્રકાર ભાવ આવશ્યક કે સ્વરૂપ સે શૂન્ય ગાપાલ કે
લડકે આદિ મેં “ આવશ્યક ” ઇસ પ્રકાર કા નામનિક્ષેપરૂપ આવશ્યક
હે ઉસી પ્રકાર ભાવ આવશ્યકકે સ્વરૂપસે શૂન્ય કાષ્ટધર્મ આદિકોં મેં મી
યહી ઘાત હે । અતઃ ભાવ આવશ્યકકે સ્વરૂપકી શૂન્યતાકી અપેક્ષા સે
ઇન દોનોમેં કોઈ મી અન્તર નહી હે । તો ફિર ઇન દોનોમેં કયા ભેદ હે !

ઉત્તર—“ ણામ આવકહિય ઠવણા ઇત્તરિયા વા હોજ્જા આવકહિઆ-
વા ” ઇસ પ્રકાર કી શકા ઠીક નહીં—કયોં કિ નામ યાવત્કથિત હોતા
હે સ્થાપના ઇત્વરિક ઓર યાવત્કથિક દોનોં પ્રકાર કી હોતી હે । અપને
આશ્રયભૂત દ્રવ્યકા જવતક અસ્તિત્વ-સદ્ભાવ રહતા હે તવતક નામનિ
ક્ષેપ રહતા હે ! ઇત્વરિક શબ્દ કા અર્થ અલ્પકાલીન હે ચિત્ર એવ અક્ષ
આદિકોં મેં યહ સ્થાપના અલ્પકાલીન હોતી હે । ઇસ પ્રકાર નામ ઓર

શકા—એમ ભાવ આવશ્યકના સ્વરૂપથી શૂન્ય ગોવાળિયાના પુત્ર વગે
રેમા “ આવશ્ય ” આ બાતનુ નામ નિક્ષેપ રૂપ આવશ્યક છે તેમજ ભાવ
આવશ્યકના સ્વરૂપથી શૂન્ય કાષ્ટધર્મ વગેરેમા પણ એ જ વાત છે એથી ભાવ
આવશ્યકના સ્વરૂપની શૂન્યતાની દૃષ્ટિએ આ બનેમા કોઈ પણ બાતનેા તકાવત
નથી, ત્યારે આ બનેમા ભેદ શો છે ?

ઉત્તર—(ણામ આવકહિય ઠવણા ઇત્તરિયા વા હોજ્જા આવકહિઆ વા)
શકા યોગ્ય નથી કેમકે નામ યાવત્ કથિત હોય છે સ્થાપના ઇત્વરિક અને
યાવત્કથિત બને પ્રકારની હોય છે પોતાને આશ્રયભૂત દ્રવ્યનુ બધા સુધી સદ્
‘ ભાવ-અસ્તિત્વ રહે છે ત્યા લગી નામ નિક્ષેપ રહે છે । ઇત્વરિક શબ્દનેા અર્થ
અલ્પકાલીન છે ચિત્ર અને અક્ષ (રમવાના પાસા) વગેરેમા એ સ્થાપના
અલ્પકાળ માટે હોય છે આ રીતે નામ અને સ્થાપનામા

इति। एव च—नामस्थापनयोर्भाष्यशून्यत्वेनाधारसाम्येऽपि भेदः स्वस्वावस्थानकाल-
कृत एव भगवता प्रदर्शित । यद्यपि गोपालदारकादौ विद्यमानेऽपि कदाचिद्-
नेकनामपरिवर्तन लोके क्वचिद् दृश्यते, तथा च कालकृतोऽपि भेदो नास्ति,
तथापि—उद्दृशः स्थले नाम्नो यावत्कथिकत्वमेव दृश्यते, नाम्नः परावर्तन तु
क्वचिद्विरलतयोपलभ्यते । अतोऽल्पस्थलव्यापित्वेन नाम्न इत्वरिकता भगवता
न विप्रक्षिता । नाम्नोऽल्पकालिकताकल्पने तृप्तमृत्प्ररूपणापत्तिरिति बोध्यम् ।

स्थापनामें भावनिक्षेपकी शून्यताकी अपेक्षासे समानता आती है तो भी
अपने२ कालकी अपेक्षासे इनमें हम प्रकार भेद-अन्तर माना गया है ।

शका—नामनिक्षेप में जो यावत्कथिकता प्रदर्शित की गई है, वह
ठीक नहीं है—कारण कि हम देखते हैं नामवान् द्रव्य-गोपालदारक
आदि के विद्यमान रहते हुए भी उस में अनेक नामों का परिवर्तन
होता रहता है । कभी उसका “ आवश्यक ” यह नाम होता है, तो
“ इन्द्र ” यह नाम रख लिया जाता है । फिर “ आवश्यक ” इस नाम
निक्षेप में यावत्कथिकता कैसे आ सकती है ?

उत्तर—शका ठीक है इस प्रकार से विचार करने पर कालकृत
अन्तर यद्यपि उन दोनों में नहीं मालूम होता है—तौ भी इस बात की
यहां पर विप्रक्षा नहीं है इसका कारण यही है कि यह नामपरिवर्तन
अल्पस्थलवर्ती होनेसे व्याप्य है । यह बात सब जगह नहीं होती । कहीं
२ ही होती है यह सामान्यकथन है—विशेष नहीं । सामान्यरूप से नाम

शून्यतानी अपेक्षाधी समानता आवी नथ छे, छताये पातपाताना काणनी
अपेक्षाधी तेओमा आ नतनेओ लेद अन्तर मानवामा आव्ये छे

शका—नाम निक्षेपमा जे यावत्कथिकता भताववामा आवी छे, ते उचित
नथी कारण के नामवाणु गोपालदारक वगेरेना विद्यमान रहेता पणु तेमा
अनेक नामानु परिवर्तन थतु रहे छे कोछ वण्णते तेतु नाम ‘ आवश्यक ’
राभवामा आवे छे तो कोछ वण्णत ‘ इन्द्र ’ नाम राभवामा आवे छे तो
पणु ‘ आवश्यक ’ आ नाम निक्षेपमा यावत्कथित केवी रीते आवी शके छे ?

उत्तर—शका उचित छे आ रीते विचार करवाथी जे के काणकृत अन्तर
तेओ भनेमा वण्णतु नथी छताये आ वातनी अर्ही विवक्षा नथी अनेतु
कारण आ प्रभावे छे के आ नाम परिवर्तन अल्प-स्थलवर्ती होवाथी व्याप्य
छे, आ वात भधे स्थाने होती नथी कोछके कोछके स्थाने व होय छे अर्ही

યત્તુ-ઉપલક્ષણમાત્ર ચેદ કાલમદનેતયોર્ભેદકવનમ્-અપરસ્યાપિ વદુમકાર-
ભેદસ્ય સમ્ભવાત્, इत्युक्त, तदुत्सृष्टप्ररूपणम् यद्योत्सृष्टप्ररूपणभियानामनिक्षेपे
इत्वरिकताया. यत्रचित् सभवेऽपि भगवताऽनुक्तत्वादुपलक्षणमिति न स्वीकृत तथैव
स्थापनाया कालातिरिक्तस्य भेदहेतोः कल्पनेऽप्युत्सृष्टप्ररूपण प्रसज्येत कालान्यकृत

યાવત્કથિક હી હોતા હૈ । હસી અપેક્ષા કો લક્ષ્ય મેં રત્નકર ભગવાન ને
ઉસમે ઇત્વરિકતા કા કવન ન કર કેવલ યાવત્કથિકતા કા હી કવન
કિયા હૈ યદિ નામ મેં જો કેવલ ઇત્વરિકતા હી માની જાવેગી-તો યહ
વાત સિદ્ધાન્ત સે યહિર્ભૂત હોને સે માનને વાલે કે લિયે ઉત્સૂત્રપ્રરૂપણા
કરને કી આપત્તિ કા દોષ આવેગા-ક્યોં કિ શાસ્ત્ર મેં ભગવાન ને નામ
નિક્ષેપ મેં કેવલ યાવદ્રવ્ય ભવિતા હી પ્રદર્શિત કી હૈ ।

જો વ્યક્તિ હસ શકા કા ડસ પ્રકાર સે સમાધાન કરતે હૈં કિ
“ કાલ કે ભેદ સે જો નામ ઓર સ્થાપના મે ભેદ કહા ગયા હૈ વહ
કેવલ ઉપલક્ષણ માત્ર હૈ-હસસે અન્ય અનેક પ્રકારોં સે હી ઇન દોનોં મેં
પરસ્પર ભેદ હૈ યહ વાત જાની જોતી હૈ ” સો ડનકા યહ કવન શાસ્ત્ર-
મર્યાદા કે વિરુદ્ધ હૈ જિસ પ્રકાર નામ નિક્ષેપ મેં કહી ૨ ઇત્વરિકતા
હોને પર હી ભગવાન દ્વારા સ્વીકૃત ન હોને સે વહ ઉપલક્ષણરૂપ સે
સ્વીકૃત નહીં કી ગઈ હૈ-ડસી પ્રકાર સ્થાપના મેં હી કાલકૃત ભેદ કે

સામાન્ય કથન છે વિશેષ નહિ સામાન્ય રૂપથી નામ યાવત્ કથિત જ હોય
છે આ વાતને સામે રાખીને જ ભગવાને તેમા ઇત્વરિકતાનુ કથન ન કરતા
ફક્ત યાવત્કથિકતાનુ કથન કર્યું છે જે નામમા ફક્ત ઇત્વરિકતા જ માનવામા
આવશે તે આ વાત સિદ્ધાન્તની બહાર હોવાથી માનનાર માટે ઉત્સૂત્ર પ્રદ
પણા કરવા રૂપ દોષ આવશે કેમકે શાસ્ત્રમા ભગવાને નામ નિક્ષેપમા ફક્ત
યાવદ્-દ્રવ્ય-ભવિતા જ બતાવી છે

જે માણસો આ શકાનુ સમાધાન આ પ્રમાણે કરે છે કે “ કાલના
લેક્ષી જે નામ અને સ્થાપનામા તક્ષવત બતાવવામા આવ્યો છે તે ફક્ત
ઉપલક્ષણ માત્ર છે એથી બીજા અનેક પ્રકારથી પણ આ બનેમા પરસ્પર
તક્ષવત છે આ વાત સ્પષ્ટ થાય છે “ જેથી તેમનુ આ કહેવું શાસ્ત્ર-મર્યાદાથી
વિપરીત છે જેમ નામ-નિક્ષેપમા કોઈક કોઈક ઠેકાણે ઇત્વરિકતા હોવા છતાંયે
ભગવાન વડે સ્વીકૃત ન હોવાથી તે ઉપલક્ષણ રૂપથી સ્વીકારવામા આવી નથી,
તેમ સ્થાપનામા પણ કાલકૃત લેહ સિવાય બીજા વડે

भेदस्य भगवताऽनुक्तत्वात् । एतेन—“ यत् कौञ्चिदुक्तं यथा प्रतिमा रूपस्थापनादर्शनाद् भावः समुल्लसति नैव नामश्रवणमागच्छति नामान्ध्यापनयोर्भेदः, यथा चेन्द्रादेः प्रतिमारूपस्थापनाया, लोकास्योपपाचितेन्द्रा पूजाप्रवृत्ति समीहितलाभाद्योद्दृश्यन्ते, नैव नामेन्द्रादी, इत्यपि तयोर्भेदः । एवमन्यदपि साध्यमिति तदुत्सृज्यप्रह

सिवाय अन्य द्वारा अन्तर भेद मानने में उत्सृज्य प्ररूपणा करने का दोष आता है, कारण कि भगवान ने कालकृत भेदके सिवाय स्थापना निक्षेप में अन्य और किसी दूसरी अपेक्षा से भेद का कथन नहीं किया है इस प्रकार के कथन से “ यह बात भी जो दूसरों ने कही है कि नाम और स्थापना में इस प्रकार से भी भेद है—कि “ जिस प्रकार अर्हत की प्रतिमारूपस्थापना के देवने-दर्शन करने से भावों की जागृति होती है, उस प्रकार नाम निक्षेपरूप अर्हत नाम के सुनने से भावों की जागृति नहीं होती है । अथवा—इन्द्रादिक की प्रतिमारूप स्थापना में जिस प्रकार से लौकिकजनों की उस प्रतिमा से कुछ मागने की इच्छा उसके पूजन करने की भावना और उस प्रतिमा द्वारा उनके अभिलषित मनोरथों की पूर्ति होती हुई देखी जाती है उस प्रकार नामरूप इन्द्र में उनकी इस प्रकार की प्रवृत्ति और अभिलषित मनोरथों की पूर्ति होती हुई नहीं देखी जाती है । इसी तरह और भी ऐसी कई बातें हैं जो नाम और स्थापना में अन्तर कराती है । यह सब कालकृत भेद के सिवाय

उत्सृज्य प्ररूपण इयं दोष यद्यं नयं छे कारण के लगवाने कालकृत लेद सिवाय स्थापना निक्षेपमा भीछ डोर्ध अन्य दृष्टिसे लेद—कथन कथुं नथी आ नतना कथनथी “ आ वात पणु जे णीनञ्चोञ्चे कडुी छे के नाम अने स्थापनामा आ रीते पणु तक्षावत छे के “ जेम अर्द्ध तनी प्रतिमा इय स्थापनाने लेवा ओटवे के दर्शन करवाथी लावोनी नगृति थाय छे, तेम नाम निक्षेप इय अर्द्धतना नामन साक्षणवाथी पणु लावोनी नगृति छोती नथी अथवा ते इन्द्र वगेरेनी प्रतिमा इय स्थापनामा जेम लौकिक भाणुओनी ते प्रतिमाथी कथंक भागणुी करवानी छिञ्छ, तेनी पूज करवानी लावना अने ते प्रतिमा वडे तेमना अलिखित मनोरथोनी पूर्ति थती देणाय छे तेम नाम इय इन्द्रमा तेमनी आ नतनी प्रवृत्ति अने अलिखित मनोरथोनी पूर्ति थती लेवामा आवती नथी आ प्रमाणु भीछ पणु धणुी भाणतो छे जे नाम अने स्थापनामा अन्तर करावे छे.

पणा जनितानन्तसमारजनकम् । आगमे यदिदमुत्थयते—“ तद्वाखाण अरहताण भगवताण नामगोयसवणयाए महाफलं ।” इति, तत्र नास्ति नामनिक्षेपस्य विषयः । “ अरहताण भगवताण ” इत्युक्त्या तस्मिन्मध्ये प्रयुक्तस्य नाम्न एव श्रवणेन महाफलसम्भवात्, गोपालदारकादौ प्रयुक्तस्य नाम्न श्रवणेन तु गोपालदारकाद्यर्थस्यैव बोधादात्मपरिणामभुद्धिहेतुत्वं तस्य नास्तीति । नामनिक्षेपस्थले भगवतोऽर्हतः स्मरणासम्भवः, तस्य भावयून्यत्वात्, अत्र तु नामगोत्राभ्यां भगवदर्हतः सम्बन्धपठ्यन्तपदप्रयोगादेव दर्शयता भगवता नामनिक्षेपो न विवक्षितः । भावजिन

नाम और स्थापना में भेद कल्पना का कथन उत्सूत्र प्ररूपक होने से अनन्त ससार का जनक है अतः हेय है । “ तद्वाखाण अरहताण भगवताण नामगोयसवणयाए महाफल ” आगम में जो यह सूत्र लिखा हुआ देखा है उसका अभिप्राय नामनिक्षेप परक नहीं है । अर्थात्-इस सूत्र से नाम निक्षेप की पुष्टि नहीं होती है । यदि सूत्रकार को इस सूत्र से जो नामनिक्षेप की पुष्टि करना इष्ट होता तो “ अरहताण भगवताण इस पद के स्वतन्त्र देने की कोई खास आवश्यकता नहीं थी । अतः यह यान माननी चाहिये कि अरहत भगवान के ही नामगोत्र के श्रवण से महाफल होता है । किसी गोपाल के लड़के में निक्षिप्त “ अरहत ” इस नाम के सुनने से नहीं । उस में प्रयुक्त भी उस नाम के श्रवण से तो केवल उस गोपाल दारकरूप अर्थ का ही बोध होता है । “ अरहत ” यह नाम जिसरूप के सकेत से अरि-

आ णधु कालकृत लेख सिवाय नाम अने स्थापनामा लेख कल्पनातु कथन उत्सूत्र प्ररूपक होवाथी अनन्त ससारतु जनक छे अथी त्यान्य छे “ तद्वाखाण अरहताण भगवताण नाम गोयसवणयाए महाफलं ” आगममा ले आ सूत्र भजे तेना अलिप्राय नामनिक्षेपपरक नथी अथेले के आ सूत्र पडे नाम निक्षेप-पुष्टि थती नथी ले सूत्रकारने आ सूत्र पडे नाम-निक्षेपनी पुष्टि करवुं इष्ट लागतु होत तो “ अरहताण भगवताण ” आ पढने स्वतन्त्र रूपमा भूकवानी कोर्ध भास आवश्यकता छती नछि अथी आ वात मानी लेवी लेधअे के अरहत भगवानना नाम गोत्र-श्रवणथी महाफल प्राप्त होय छे कोर्ध गोपालना पुत्रमा निक्षिप्त “ अरहत ” आ नामने साक्षात्वाथी नछि तेमा प्रयुक्त पण ते नामना श्रवणथी तो इक्षत ते गोपालना पुत्र इय अर्थ-ना न बोध होय छे “ अरहत ” आ नाम ले इपना सकेतथी अरहित प्रभुमा सकेतित थयु छे-ते इपना सकेतथी न गोपालना

हंत प्रभु में मकेतित हुआ है—उसी रूप से सकेत से गोपाल के पुत्र में मकेतित नहीं हुआ है। लौकिक व्यवहारके लिये ही केवल “अरहत” ऐसा उसका नाम करलिया गया है। नाम निक्षेप में जिसका निक्षेप किया जाता है उस जाति के द्रव्य, गुण और कर्म-क्रिया आदि निमित्त की अनपेक्षा रहती है हम निमित्त के सद्भाव में वह नाम निक्षेप का विषय नहीं माना जाता है। भाव निक्षेप का ही वह विषय होता है अतः यह निश्चित होता है कि अरहत भगवान के ही नाम गोत्र के श्रवण के महाफल सूत्रकार ने प्रकट किया है यदि नामनिक्षेप से यह फल प्राप्त होने लगता तो फिर भावनिक्षेप की आवश्यकता ही क्या थी। उसके श्रवण मात्र से ही जीवों के आत्मिक भावों में शुद्धिरूप महाफल का लाभ होने लगता। तथा जिसका “अरिहन्” यह नाम है वह स्वयं अरिहन् प्रभु की तरह महापवित्र, ३४ अतिशयोक्ति सहित ८ प्रतिहार्य आदि विभूति संपन्न हो जाना। परन्तु ऐसा नहीं होता है अतः यह मानना चाहिये कि यह सूत्र भावनिक्षेप की ही पुष्टि विधायक है—नामनिक्षेप का नहीं। नामनिक्षेप से भगवान अरिहन् की स्मृति भी नहीं कराई जाती है—कारण कि वह नामनिक्षेप स्वयं उस प्रकार के भावों से शून्य है। अनुभूत पदार्थ की स्मृति हुआ करती

यद्यु नथी लौकिक व्यवहार भाटे कृत “अरहत” आवु नाम पाडवामा नामनिक्षेपमा लेना निक्षेप करवामा आवे छे ते जतिना द्रव्य, गुण अने कर्म-क्रिया वगेरे निमित्तनी अपेक्षा रहे छे आ निमित्तना महत्त्वावमा ते नाम-निक्षेपना विषय मानवामा आवतो नथी भाव निक्षेपना ज ते विषय होय छे ओथी ओ मिद्ध थाय छे के अरहत लगवानना ज नाम गोत्रना श्रवणथी ज सूत्रकारे महाक्षण जाताव्यु छे जे नामनिक्षेपथी आ एण मणी शक्यु होत तो पछी भावनिक्षेपनी आवश्यकता ज, शी हुती ? तेना श्रवण मात्रथी ज एवोनी आत्मिक भावोमा शुद्धि रूप महाक्षणना लाभ तथा भाडतो तेमज जेसु “अरिहत” आ नाम छे ते पोते अरिहत प्रभुनी जेम महा पवित्र, ३४ अतिशयोक्ति सहित, ८ प्रतिहार्य वगेरे विभूतिओथी संपन्न थछे जात, पणु आवु यनु नथी ओथी ओम समल्ल लेवु जेछेके के आ सूत्रथी भावनिक्षेपनी ज पुष्टि थाय छे—नाम निक्षेपनी नहि नाम निक्षेपथी लगवान अरिहतनी स्मृति पणु करवामा आवती नथी कारण के ते नाम-निक्षेप जाते ते जानना भावोथी रहत छे अनुभूत पदार्थसु स्मरण थया करे छे जेसु

हे जिसका "अरिहंत" यह नाम रखा गया है उसके देवने से अरिहंत की स्मृति हो भी कैसे सकती है—स्मृति तो अरिहंत की जब हो सकती कि जब उसमें उनकी स्मृति के विह्व होते—वह स्वयं उस प्रकार के हेतु हो सकती है माना कि श्रवण कर्त्ता शारत्र आदिकों में अरिहंतप्रभु के गुणों का वर्णन पढ़कर चित्त में उकेर कर भले ही "अरिहंत" हम नामके श्रवण से उनका स्मरण कर सकता है। परंतु गोपालदारकाही में कुत्र नाम से उनका स्मरण उसे नहीं हो सकता—उस नाम से तो उसमें ही संकेतित उस शब्द से उस गोपाल दाररूप अर्थ का ही उसे बोध होगा। यदि अरिहंत नाम के सुनने से सुनने वाले को अरिहंत पदार्थ का भान होता है तो वह नाम निक्षेप का विषय नहीं माना गया है भावनिक्षेप का ही वह विषय है। थोड़ा बहुत भी किमी अपेक्षा से सादृश्य होने पर एक पदार्थ को देखकर सदृश दूसरे पदार्थ का स्मरण हो जाता है परन्तु प्रकृत में गोपालदाररूप अरिहंत नामनिक्षेप में ऐसा कौन सा सादृश्य है जो वह अरिहंत का स्मरण करा सके। अतः नाम और गोत्र के साथ साक्षात् भगवान् अरिहंत का सब्र पण्ठी विभक्ति द्वारा प्रदर्शित करने वाले सूत्रकार ने इस सूत्र में नामनिक्षेप का कोई

"अरिहंत" आ नाम राभवाभा आ०यु छे तेने जेवाथी अरिहंत स्मृति पणु केवी रीते थछ शके तेम छे? स्मृति तो अरिहंतनी त्पारे न थछ शके के त्पारे तेमा तेमनी स्मृतिना बिह्वो छेय, ते पोते आ नतना लावाथी रहित थयेले छेय त्पारे ते केवी रीते तेमनी स्मृतिनु कारणु थछ शके छे? आ वात आपणु स्वी कारी राकीये तेम छीये के श्रवणु—कर्त्ता शास्त्र वगेरेमा अरिहंत प्रभुना गुणानु वर्णन वाथीने चित्तमा धारणु करीने लये 'अरिहंत' आ नामना श्रवणुथी तेमनु स्मरणु करी राके छे पणु गोपाणदारक वगेरेमा कृत नामथी तेनु स्मरणु थछ शकतुं नथी ते नाम वडे तो तेमा न संकेतित ते शणुथी ते गोपाणदारक रूप अर्थना न ते बोध थशे जे अरिहंत नाम श्रवणुथी साबाणनारने अरिहंत पदार्थानु ज्ञान थाय छे त्पारे ते नामनिक्षेपना विषय भानवाभा आ०ये नथी लावनिक्षेपना न ते विषय छे केछ पणु रीते थोडु पणु सरणापणु लावाथी जेक पदार्थने जेछने तेना सरणा जीम पदार्थनु स्मरणु थछ लय छे पणु प्रकृतमा गोपाणदारक रूप अरिहंत नामनिक्षेपमा जेवु कछ नतनु सरणापणु छे के न ते अरिहंतनु स्मरणु करावी शके? जेथी नाम अने गोत्रनी साथे साक्षात् भगवान् अरिहंतना संबध पछी विवकित वडे दर्शावनारा सूत्रकारे आ सूत्रमा नामनिक्षेपना केछ पणु विषय प्रनिपात्ति कथी नथी ।

बोधकर्म्य नाम्न एव श्रवणेन महाकठममः । एव स्थापनापि भावस्वरूपान्या,
स्थापनया भावस्वरूपस्य नास्ति कोऽपि मन्वन् । भावजिनशरीरवर्तिनी याऽऽ-
कृतिरामीत्, तस्या आश्रयाश्रयिमात्त्वमन्वन्तो भावजिनेन सह तदानीं विप्र-
मान आसीत् । यया भावजिन पदरासनदानीं भावोह्यासोऽपि कस्यचित् सजातः,

भी विषय प्रतिपादित नहीं किया है । भावनिक्षेप का ही विषय इसमें
कहा है इसलिये भावजिन का बोध कराने वाले जिन 'अरिहत' आदि
नामों के सुनने से ही महाकल होता है ऐसा मानना चाहिये ।

इसी प्रकार स्थापना निक्षेप भी भावरूप अर्थ से शून्य है कारण
कि इसका उसके मान कोई समय नहीं है भावजिन की अवस्था की
आकृति पापाण आदि की मूर्ति में " यह वही है " इस प्रकार की
कल्पना करने का नाम स्थापना है तीर्थंकर प्रकृति के उदयसे समवस-
रणादि विभूति सहित आत्मा का नाम भाव जिन है इस भाव जिन के
शरीर की जो आकृति है उसका समय विचारिये उस पापाण आदि की
प्रतिमा में कैसे आमकता है । क्यों कि इस आकृति का समय आश्रय
आश्रयी भावसे वे जिन जिसकाल में थे उसी काल में उनके साथ या ।
उनके नहीं रहने पर पापाण आदि में इस तरह का आश्रय आश्रयी
भाव सवध मानना उचित कैसे कहा जा सकता है, भावजिन के
सहाय में जिन प्रकार उनके साक्षात् दर्शन से प्राणियों को एक प्रकार

ने ज विषय तेमा जताव्ये छे अर्थी अनतो बोध कवनार अन " अरि
हत " वगेरे नाम श्रवणुथी महाक्षण प्राप्त होय छे आम मभवु जेजे
आ प्रभाणे स्थापना निक्षेप पणु लाव इप अर्थी रहित छे कारण
के आने तेनी साथे डोई पणु जतने सभव नहीं लावलतनी अवस्थानी
आकृति पथर वगेरेनी मूर्तिमा " आ तेजो ज छे " आ जतनी कल्पना
वेषानु नाम स्थापना छे तीर्थ करनी प्रकृतिना उदयथी समवसरणु वगेरे
विभूति सहित आत्मानु नाम लावलत छे आ लावलतना शरीरनी जे
आकृति छे तेना विषे आपणे पणु विचार करीये उ पथर वगेरेनी प्रतिमाभा
तेना मणध डेवी जीते आवी शडे छे ? केमके ते आकृतिना मणध आश्रय
आश्रयी लावथी ते अन जे जणमा हुता ते जणमा ज तेमनी साथे हुतो
तेमनी गेरहाजगीमा पथर वगेरेमा आ जतने आश्रय-आश्रयी लाव सणध
मान्य राणयो डेवी जीते योग्य कही शक्य तेम छे ? भावलतना सहवायमा
जेम तेमना सहात दर्शनथी प्राणियोंमा अेक जतने लावोत्सारा उणुणारे

તથા ભક્ત્યા તામાકૃતિ સ્મરતો જનસ્ય ભાગ્યોહાસઃ સમચતુઃ તદાઽઽકૃતેર્ભાવજિનેન સવન્ધાત્, પરતુ સ્થાપનાયા આશ્રયાશ્રયિભાવસમ્યન્થો નાસ્તિ ભાવજિનેન સહ । ભાવજિનાત્મનસ્તત્રાગ્રહન રથાપનંતુ જિનાગાગ્રહ પ્રચનવિમુદ્ધ કર્તુમશક્ત્ય, કથ તર્હિ-ભાવજિનસમ્યન્ધાભાવે પ્રતિમા ભાવજિનતદ્ગુણ વા સ્મારયિતુ શક્તા મવેત ।

કા ભાવોહાસ હોતા હૈ, ડની પ્રકાર સે ભક્તિ કે આવેશ સે ખી ડનકી ડસ આકૃતિ કા ડસ સમય સ્મરણ કરને વાલે પ્રાણી કો ડસ પ્રકાર કે ભાવોહાસ કા સદ્વાવ હો શક્તા હૈ । ડસકા નિપેધ નહી હૈ । ડયોં કિ સ્મૃતિ કે આધારભૂત જિન પરમાત્મા ડસ કાલ મેં સ્વય વિદ્યમાન હૈં । ડન કે અમાવ મેં ડહેં નહી દેવને વાલે પ્રાણિયોંકો ખી ડનકી ડસ પ્રતિમા સે ડસી પ્રકાર કા ભાગ્યોહાસ હોતા હૈ યહ માન્યતા કેવલ ંક કલ્પના માત્ર હૈ વાસ્તવિક નહીં । ડસકે સમાધાન કે નિમિત્ત જો યહ કહા જાતા હૈ કિ ડસ પાપાણ પ્રતિમા મેં જિન ભગવાન કી આત્મા કા મત્રાદિકોં દ્વારા આહ્વાન કિયા જાતા હૈ અતઃ ડસ પ્રતિમા કે દર્શન સે સાક્ષાત્ ભાવ જિનકે હી દર્શન હોતે હૈ સો યહ માન્યતા સર્વથા અસત્ય હૈ-કારણ કિ મોક્ષ મેં પ્રાપ્ત આત્માઓં કા પાપાણ આદિ પ્રતિમાઓં મેં અપની માન્યતા સિદ્ધ કરને કે લિયે આહ્વાન આદિ માનના ગર્વથા જિનસિદ્ધાન્ત સે વિરુદ્ધ હૈ મોક્ષ પ્રાપ્ત આત્માં કહી પર ખી કિસી ખી કાલ મેં આહ્વાન કરને સે નહી આતી હૈં ંસી જિન શાસન કી આજ્ઞા હૈ ડસ તરહ સે ડસ પાપાણ આદિ કી આત્માઓં કા

છે, તેમ ભક્તિના આવેશથી પણ તેમની એ આકૃતિનુ તે સમયે સ્મરણ કરનાર પ્રાણીને તે ભક્તિના ભાવોહાસની અનુભૂતિ થઈ શકે છે આને નિપેધ નથી કેમકે સ્મૃતિમા તે આકૃતિના આધારભૂત જન પરમાત્મા તે કાળમા ભતે વિદ્યમાન છે તેમના અભાવમા તેમને નહિ જોનારા પ્રાણીઓને પણ તેમની તે પ્રતિમાથી તે પ્રમાણેનો જ ભાવોહાસ થાય છે, આ માન્યતા ક્ષુદ્ર એક કોરી કલ્પના જ છે, વાસ્તવિક નથી એના સમાધાન માટે જે આમ કહેવામા આવે છે કે તે પથ્થરની પ્રતિમામા જન ભગવાનના આત્માનુ મત્રો વગેરેથી આવાહન કરવામા આવે છે, એથી તે પ્રતિમાના દર્શનથી પ્રત્યક્ષ ભાવજન ના જ દર્શન થાય છે, તે આ માન્યતા સાવ અસત્ય છે કારણ કે મોક્ષમા પ્રાપ્ત આત્માઓનુ પથ્થર વગેરે પ્રતિમાઓમા પોતાની માન્યતા સિદ્ધ કરવા માટે આહ્વાહન વગેરે માનવુ તે તે જન સિદ્ધાન્તથી સાવ વિરુદ્ધ છે મોક્ષ પ્રાપ્ત આત્માઓ કોઈ પણ સ્થાને અને કોઈ પણ કાળે આવાહન કરવાથી આવતા નથી, એવી જન શાસનની આજ્ઞા છે આ રીતે તે પથ્થર ના

सर्वथा कुमावचनिकद्रव्यावश्यकत्वं प्रतिमापूजनं कुर्वन्तः कारयन्तश्च मिथ्या-
दृष्टित्वं प्राप्नुवन्ति न तु सम्यक्त्वमिति ।

द्रव्यावश्यक-द्विविध-आगमतो नोआगमतश्च । यस्य जन्तोरावश्यकशास्त्र
शिक्षितादिगुणोपेतं भवति, स जन्तुस्तत्रावश्यकशास्त्रे शिक्ष्याध्यापनरूपया वाचनया
गुरु प्रतिप्रश्नलक्षणया प्रच्छनया, पुनः पुनः सूत्रार्थाभ्यासरूपया परावर्तनया, तथा

अह्वान होने से आना मान लिया जाय तो फिर उस प्रतिमा में सजी-
वता मानने में क्या दोष है इसलिये यह स्वीकार करना ही चाहिये ।
कि भावजिन के अभाव में वह प्रतिमा भावजिन एव उनके गुणों का
स्मरण करवाने में सर्वथा समर्थही है । जय यह निश्चित सिद्धान्त है तो
फिर इसकी पूजनादि करने कराने से जो मनुष्य समकित की प्राप्ति
होना मानते हैं वे उस विधवा कि दशा जैसे हैं जो अपने पति की
फोटो या मूर्ति के दर्शन एव सहवास आदि से सन्तान की उत्पत्ति की
कामना करती हो । इसलिये कुमावचनिक द्रव्य आवश्यक की तरह
यह प्रतिमापूजनादि कर्म करने कराने वाले दोनों ही जन मिथ्यात्वरूप
दृष्टि के ही पात्र हैं, सम्यक्त्व के नहीं ।

द्रव्य निक्षेपरूप आवश्यक, आगम और नोआगम के भेद से दो
प्रकार का है । उसमें जिस प्राणी के आवश्यक शास्त्र शिक्षितादिगुणों
से युक्त है वह प्राणी उस आवश्यक शास्त्र में, शिष्यों का पढानेरूप

ते आत्माओतु आवाहनं होवाथा आवु भानी लछञ्जे तो पछी ते प्रति
माने सल्लव मानवामा शो वाधो छे ? ओटवा माटे आपणु आ वात -वीका
रवी न लोपञ्जे के लावल्लनना अलावमा ते प्रतिमा लावल्लन अने तेमना
शुणोतु स्मरणं उरववामा म पूरुपणु समर्थं न छे न्यारे आ निधान्त निश्चित
इपे मान्य थयेदो छे त्याञ्जे तेतु पूजनं वगेरे कराववाथी जे दोको ममदितनी
प्राप्ति थवी माने छे तेमनी तो विधवा जेवी दशा छे के जे पोताना पतिनी
छणी के मूर्तिना दर्शन अने सहवास वगेरेथी सतान गेणववानी छञ्छा करती
होय । ओटवा माटे कुमावचनिक द्रव्य आवश्यकनी जेम आ प्रतिमा पूजनं
वगेरे कार्यं करनार तेमज करानार अने भाणुसो मिथ्यात्व इप दृष्टिना न
पात्र छे, सम्यक्त्वना नथी

द्रव्य निक्षेप उप आवश्यक आगम तेमज नोआगमना लेदथी जे
प्रकार छे तेमा जे प्राणी आवश्यक शास्त्र शिक्षित वगेरे शुणोथी युक्त छे ते
प्राणी ते आवश्यक शास्त्रमा गिण्येने लण्णववा इप पायनाथी, शुद्ध-प्रति तद्

धर्मरूयया वर्तमानोप्यनुपयोगे सति आगततो द्रव्यावश्यकम्, 'अनुपयोगो द्रव्य' इति उच्यते । अनुपयोगो भावशून्यता ।

वाचना से, गुरु के प्रति तद्विषयक प्रश्न लक्षणरूप पृच्छना से बार बार सूत्र और अर्थ के अभ्यासरूप परावर्तन से तथा धर्मरूयया से वर्तमान होता हुआ भी अनुपयुक्त अवस्थासपन्न होने से आगम की अपेक्षा द्रव्य आवश्यक है । अनुपयोग का नाम ही द्रव्य है ।

भावार्थ—“ भूतस्य भाविनो वा भावस्य हि कारण तु यल्लोके तद्द्रव्यम् ” यह द्रव्यनिक्षेप का लक्षण है । भूतपर्याय या भविष्यत् पर्याय का जो कारण आधार होता है, वह द्रव्य है जिस प्रकार किसी राजा के युवराज को राजा कह दिया जाता है यद्यपि वह अभी वर्तमान में राजारूपपर्याय से युक्त नहीं है—आगे उसे राजपर्याय प्राप्त होगी, परन्तु फिर भी उसे व्यवहार में लोग राजा कहते हैं । यह भविष्यत् पर्याय की अपेक्षा द्रव्य निक्षेपका विषय है । जो पहिले राजा था—कारण वश जब वह राजागद्दी का परित्याग कर देता है—तब भी लोग उसे राजा कहते हैं । यहा उस राजा में यद्यपि वर्तमान समय में राजपर्याय से युक्तता नहीं है तौ भी भूतकाल की अपेक्षा से ही उसे राजा कहा जाता है । यह भूतकाल की अपेक्षा से राजपर्याय का आधार होने के कारण द्रव्य निक्षेप का विषय है प्रकृत में इस निक्षेप की आयोजना इस प्रकार से

विषयक प्रश्न लक्षणम् इयं पृच्छनाथी, वारवार सूत्रं चाने अर्थानां अख्यास इयं परावतनथी तथा धर्मउथाथी वर्तमानं होवा छताये अनुपयुक्त अवस्था सपन्न होवाथी आगमनी अपेक्षा द्रव्य आवश्यक छे, अनुपयोगतु नाम न द्रव्य छे

भावार्थ—“ भूतस्य भाविनो वा भावस्य हि कारण तु यल्लोके तद्द्रव्यम् ” आ द्रव्य निक्षेपतु लक्षणम् छे भूत-पर्याय के भविष्यत् पर्यायनो के कारण आधार होय छे, ते द्रव्य छे जेम कोठे राजाना युवराजने राज कडी देवामा आवे छे जे उ ते वर्तमानमा राज इय पर्यायथी युक्त नथी आगण तेने राज पर्याय प्राप्त थये, छताये तेने व्यवहारना लोको राज कडे छे आ भविष्यत् पर्यायनी अपेक्षा द्रव्य निक्षेपने विषय छे जे पडेलो राज उतो—पणु कोठे कारणसर राजगडिने ते परित्याग करी दे छे, त्यारे पणु लोको तेने राज कडे छे अर्डी ते राजमा जे के वर्तमान समयमा राज पर्यायथी युक्तता नथी छताये भूतकालनी अपेक्षाथी तेने राज कडेवामा आवे छे आ भूतकालनी अपेक्षाथी तेने राज उडेवामा आवे छे आ भूतकालनी अपेक्षाथी राजपर्यायनो आधार होवा पडेल द्रव्य निक्षेपने विषय छे प्रकृतमा आ

जब नो जागमतो द्रव्यावश्यकमुच्यते—अत नो शब्द सर्वथा प्रतिपेधे देशतः प्रतिपेदेऽपि च वर्तते । तथा च सर्वथा—जागमाभावमाश्रित्य द्रव्यावश्यक, तथा होती है कि जो वर्तमान में आवश्यक शास्त्र का ज्ञान नहीं है आगे भविष्यत् काल में उस शास्त्र का ज्ञान होगा उसे तथा जो मृतकाल में उस शास्त्र का ज्ञान था अत वर्तमान काल में उसका ज्ञान नहीं है—उसे आवश्यक इस प्रकार जानना या कहना यह द्रव्यनिक्षेप की अपेक्षा आवश्यक है । इसके मूल में दो भेद हैं ? आगम द्रव्य निक्षेप और दूसरा नोआगमद्रव्यनिक्षेप । आवश्यक शास्त्र आदि का जो ज्ञान हो, शिष्यों को जो उसे पढ़ाता हो, उस विषयक गुरु आदि के निकट जो तात्त्विक चर्चा आदि भी करता हो इस प्रकार वाचना, प्रच्छन्ना-पर्यटना अनुप्रेक्षा और धर्मोपदेशरूप पाचो प्रकार के स्वाध्याय से जो उसकी पर्यालोचना कर रहा है—परन्तु उसमें उपयोग नहीं है—अनुपयुक्त है वह जागम की अपेक्षा द्रव्य आवश्यक है । इसमें आवश्यक शब्द के अर्थ का ज्ञान ही आगमरूप से विवक्षित है । अतः आवश्यक शास्त्र का ज्ञान होता हुआ भी उसमें अनुपयुक्त आत्मा आगम की अपेक्षा द्रव्य आवश्यक है यह बात निश्चित हुई ।

नो आगम की अपेक्षा द्रव्य आवश्यक इस प्रकार है—जहा आगम का सर्वथा अभाव या आगम के एक देश का अभाव विवक्षित होता

जना ये रीते होय छे के वर्तमानमा के आवश्यक शास्त्रनो ज्ञाना नथी, लवियकाणमा ते शास्त्रनो ज्ञाना थये तेने तेमज के भूतकाणमा ते शास्त्रनो ज्ञाना छतो । उगण्ठा वर्तमानकाणमा तेनो ज्ञाना नथी तेने, 'आवश्यक' या रीते लवणु के कडेषु या द्रव्यनिक्षेपनी अपेक्षाये आवश्यक छे जेना भूण रूपे जे लेहो छे—१ आगम द्रव्य निक्षेप अने गीते नोआगम द्रव्य निक्षेप आवश्यक शास्त्र वगेरेनो के ज्ञाना होय, जे शिष्येने लवणावतो होय, तद् विषयक सुइ वगेरेनी पासे जेने के तात्त्विक अर्था वगेरे यणु करतो होय, या गीते वाचना, प्रच्छन्ना, पर्यटना, अनुप्रेक्षा अने धर्मोपदेश रूप पाये ज्ञानना स्वाध्यायथी के तेनी पर्यालोचना करी रह्यो छे, यणु तेमा तेनो उपयोग नथी, अनुपयुक्त छे, ते आगमनी अपेक्षाद्रव्य 'आवश्यक' छे जेमा आवश्यक राषटना अर्थानु ज्ञान जे आगम रूपथी विवक्षित छे जेथी आवश्यक शास्त्रना ज्ञाना होवा छताये तेमा अनुपयुक्त आत्मा आगमनी अपेक्षा द्रव्य आवश्यक छे, या बात सिद्ध थछे छे

नोआगमनी अपेक्षा द्रव्य आवश्यक जे प्रमाणे छे के नया आगमनो संपूर्णपणे अभाव के आगमना जेद देशनो अभाव विवक्षित होय छे ते नो

ધર્મક્રયા વર્તમાનોપ્યનુપયોગે સતિ આગમતો દ્રવ્યાપદપદ્મ, 'નણુપયોગો દ્રવ્ય' इति वचनात् । अनुपयोगो भावगुण्यता ।

વાચના સે, ગુરુ કે પ્રતિ તદ્વિષયક પ્રક્ર્મ લક્ષણરૂપ વૃત્તના સે તાર ચાર સુત્ર ઓર અર્થ કે અભ્યાસરૂપ પરાવર્તન સે તયા ધર્મક્રયા સે વર્તમાન હોતા હુઆ મી અનુપયુક્ત અસ્થાસપત્ર હોને સે આગમ કી અપેક્ષા દ્રવ્ય આવશ્યક હૈ । અનુપયોગ કા નામ હી દ્રવ્ય હૈ ।

ભાવાર્થ—“ ભૂતસ્ય ભાવિનો વા ભાવસ્ય હિ કારણ તુ યહ્લોકે તદ્ દ્રવ્યમ્ ” યહ દ્રવ્યનિક્ષેપ કા લક્ષણ હૈ । ભૂતપર્યાય યા ભવિષ્યત્ પર્યાય કા જો કારણ આધાર હોતા હૈ, વહ દ્રવ્ય હૈ જિસ પ્રકાર કિસી રાજા કે યુવરાજા કો રાજા કહ દિયા જાતા હૈ યત્પિ વહ અમી વર્તમાન મેં રાજારૂપપર્યાય સે યુક્ત નહીં હૈ—આગે ઉસે રાજપર્યાય પ્રાપ્ત હોગી, પરન્તુ ફિર મી ઉસે વ્યવહાર મેં લોગ રાજા કહતે હૈ । યહ ભવિષ્યત્ પર્યાય કી અપેક્ષા દ્રવ્ય નિક્ષેપકા વિષય હૈ । જોપહિલે રાજા થા—કારણ વગ જગ વહ રાજાગદી કા પરિત્યાગ કર દેતા હૈ—તવ મી લોગ ઉસે રાજા કહતે હૈ । યહાં ઉસ રાજા મેં યત્પિ વર્તમાન સમય મે રાજપર્યાય સે યુક્તતા નહીં હૈ તૌ મી ભૂતકાલ કી અપેક્ષા સે હી ઉસે રાજા કહા જાતા હૈ । યહ ભૂતકાલ કી અપેક્ષા સે રાજપર્યાય કા આધાર હોને કે કારણ દ્રવ્ય નિક્ષેપ કા વિષય હૈ પ્રકૃત મેં હસ નિક્ષેપ કી આયોજના હસ પ્રકાર સે

વિષયક પ્રશ્ન લક્ષણુ રૂપ પૃચ્છતાથી, વારવાર સૂત્ર અને અર્થના અભ્યાસ રૂપ પરાવર્તનથી તથા ધર્મક્રયાથી વર્તમાન હોવા છતાંયે અનુપયુક્ત અવસ્થા સપત્ર હોવાથી આગમની અપેક્ષા દ્રવ્ય આવશ્યક છે, અનુપયોગતુ નામ જ દ્રવ્ય છે

ભાવાર્થ—“ ભૂતસ્ય ભાવિનો વા ભાવસ્ય હિ કારણ તુ યહ્લોકે તદ્ દ્રવ્યમ્ ” આ દ્રવ્ય નિક્ષેપતુ લક્ષણુ છે ભૂત-પર્યાય કે ભવિષ્યત પર્યાયનો જે કારણુ આધાર હોય છે, તે દ્રવ્ય છે જેમ કોઈ રાજાના યુવરાજાને રાજા કહી દેવામા આવે છે તે કે તે વર્તમાનમા રાજા રૂપ પર્યાયથી યુક્ત નથી આગળ તેને રાજા પર્યાય પ્રાપ્ત થશે, છતાંયે તેને વ્યવહારમા લોકો રાજા કહે છે આ ભવિષ્યત પર્યાયની અપેક્ષા દ્રવ્ય નિક્ષેપનો વિષય છે જે પહેલાં રાજા હોતો—પણુ કોઈ કારણુસર રાજાગદિનો તે પરિત્યાગ કરી દે છે, ત્યારે પણુ લોકો તેને રાજા કહે છે અહીં તે રાજામા જે કે વર્તમાન સમયમા રાજા પર્યાયથી યુક્તતા નથી છતાંયે ભૂતકાળની અપેક્ષાથી તેને રાજા કહેવામા આવે છે આ ભૂતકાળની અપેક્ષાથી તેને રાજા કહેવામા આવે છે આ ભૂતકાળની અપેક્ષાથી રાજાપર્યાયનો આધાર હોવા બદલ દ્રવ્ય નિક્ષેપનો વિષય છે પ્રકૃતમા આ

जब नो आगमतो द्रव्यावश्यकमुच्यते—जानो शब्द 'सर्वथा' प्रतिपेधे देशतः प्रतिपेधेऽपि च वर्तते। तथा च सर्वाथा—आगमाभावमाश्रित्य द्रव्यावश्यक, तथा होती है कि जो वर्तमान में आवश्यक शास्त्र का ज्ञान नहीं है आगे भविष्यत् काल में उस शास्त्र का ज्ञान होगा उसे तथा जो भूतकाल में उस शास्त्र का ज्ञान था अथ वर्तमान काल में उसका ज्ञान नहीं है—उसे आवश्यक इस प्रकार जानना या कहना यह द्रव्यनिक्षेप की अपेक्षा आवश्यक है। इसके मूल में दो भेद हैं? आगम द्रव्य निक्षेप और दूसरा नोआगमद्रव्यनिक्षेप। आवश्यक शास्त्र आदि का जो ज्ञान हो, शिष्यों को जो उसे पढ़ाता हो, उस विषयक गुरु आदि के निकट जो तार्त्विक चर्चा आदि भी करता हो इस प्रकार वाचना, प्रच्छना-पर्यटना अनुप्रेक्षा और धर्मोपदेशरूप पांचो प्रकार के स्वाध्याय से जो उसकी पर्यालोचना कर रहा है—परन्तु उसमें उपयोग नहीं है—अनुपयुक्त है वह आगम की अपेक्षा द्रव्य आवश्यक है। इसमें आवश्यक शब्द के अर्थ का ज्ञान ही आगमरूप से विवक्षित है। अतः आवश्यक शास्त्र का ज्ञान होता हुआ भी उसमें अनुपयुक्त आत्मा आगम की अपेक्षा द्रव्य आवश्यक है यह बात निश्चित हुई।

नो आगम की अपेक्षा द्रव्य आवश्यक इस प्रकार है—जहा आगम का सर्वथा अभाव या आगम के एक देश का अभाव विवक्षित होता

जना ये शीते होय छे के वर्तमानमा के आवश्यक शास्त्रनो ज्ञाता नथी, भविष्यकालमा ते शास्त्रनो ज्ञाता थसे तेने तेमज के भूतकालमा ते शास्त्रनो ज्ञाता छतो। छमणुा वर्तमानकालमा तेनो ज्ञाता नथी तेन, 'आवश्यक' आ शीते लक्षणु के छडेणु आ द्रव्यनिक्षेपनी अपेक्षाये आवश्यक छे जेना भूण रुपे जे छेदे छे—न आगम द्रव्य निक्षेप अने भीजे नोआगम द्रव्य निक्षेप आवश्यक शास्त्र वगेरेनो जे ज्ञाता होय, जे शिष्योने लक्षणुवतो होय, तद् विषयक गुड वगेरेनी पास जेधने जे तार्त्विक अर्था वगेरे पणु करतो होय, आ शीते वाचना, प्रच्छना, पर्यटना, अनुप्रेक्षा अने धर्मोपदेश रुप पाये जतना स्वाध्यायथी जे तेनी पर्यालोचना करी रह्यो छे, पणु तेमा तेनो छे योग नथी, अनुपयुक्त छे, ते आगमनी अपेक्षाद्रव्य 'आवश्यक' छे जेमा आवश्यक राषटना अर्थानु ज्ञान ज आगम रुपथी विवक्षित छे जेथी आवश्यक शास्त्रनो ज्ञाता होवा छताये तेमा अनुपयुक्त आत्मा आगमनी अपेक्षा द्रव्य आवश्यक छे, आ बात सिद्ध थछे छे

नोआगमनी अपेक्षा द्रव्य आवश्यक जे प्रमाणे छे के जया आगमनो स पूणुपणु अलाव के आगमनो जेस देशनो अलाव विवक्षित होय छे ते नो

देशत आगमाभासमाश्रित्य द्रव्यावश्यकं न-नो-आगमनो द्रव्यावश्यकम् । तत्-त्रिविधम्-जशरीरद्रव्यावश्यकं, भव्यशरीरद्रव्यावश्यकं, तद्व्यतिरिक्तं द्रव्यावश्यकं चेति ।

है-वह नो आगम की अपेक्षा से द्रव्य आवश्यक माना गया है । " नो आगम " में नो शब्द सर्वथा आगम के अभाव का अर्थ उसी के एक देश के अभाव का बोधक है । इसके जशरीरद्रव्यावश्यक, भव्यशरीर-द्रव्यावश्यक, और तद्व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक, इन प्रकार तीन भेद हैं । आवश्यक शास्त्र का जो पहिले (भूतकाल में) ज्ञाता या-तथा दूसरों के लिये इस शास्त्र का उपदेश आदि भी जिसने पहिले दिया है उसे जीव का अचेतन शरीर जशरीरद्रव्यावश्यक है जो जीव इस समय आवश्यक शास्त्र का ज्ञाता नहीं है भविष्यत् काल में उसका ज्ञाता बनेगा उसका वह सचेतन शरीर भविष्यत् काल में आवश्यक शास्त्र के ज्ञान का आधार होने की अपेक्षा से, भव्यशरीरद्रव्यावश्यक है । तद्व्यतिरिक्तद्रव्यावश्यक लौकिक कुप्रावचनिक और लोकोत्तर के भेद से ३ प्रकार का है । लौकिकजनों द्वारा आचरित आवश्यक कर्म लौकिक द्रव्यआवश्यक है । जैसे राजसभा में जाने वाले राजा, युवराज, तलवर (कोटपाल) आदि जन प्रातः काल में उठकर राजसभा में जाने के लिये प्रथम प्राभातिक विधियों से निपटते हैं-मुग्ध धोते हैं, दानों को

आगमनी अपेक्षाथी द्रव्य आवश्यक मानवामा आये छे " नोआगम " भा नो शब्द आगमना संपूर्णपणे अभावना के तेना अेक देशना अभावना बोधक छे तेना जशरीर द्रव्यावश्यक, भव्यशरीर द्रव्यावश्यक अने तद्व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक आ प्रमाणे त्रय भेदो छे आवश्यक शास्त्रना के पहिला (भूतकालमा) ज्ञाता छतो तेभज् णीज्ज्मा माटे आ शास्त्रना उपदेश वगेरे पणु केके पहिला आप्थो छे अेवा एवमु अचेतन शरीर ज शरीर द्रव्यावश्यक छे के एव अत्यारे आवश्यक शास्त्रना ज्ञाता नथी, भविष्यकालमा तेना ज्ञाता थथे तेनु ते सचेतन शरीर भविष्यकालमा आवश्यक शास्त्रना ज्ञानना आधार होवाने कारणे भव्य शरीर द्रव्यावश्यक छे तद्व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक लौकिक कुप्रावचनिक अने लोकोत्तर अेभ त्रय प्रकारना छे लौकिक भाषुसे वडे आचरित आवश्यक कर्म लौकिक द्रव्य आवश्यक छे केभ राजसभामा जनारा राजा, युवराज, तलवर (कोटपाल) वगेरे लोको सवारे छडीने राजसभामा न्वा माटे प्रथम प्राभातिक विधियोथी परवारे छे, मुग्ध धुजे छे,

ज्ञातगामिति-ज्ञ, तस्य शरीर त्रशरीर तदेव द्रव्यावश्यकमिति विग्रहः । जीव परित्यक्तमावश्यकशास्त्रानवतः शरीर त्रशरीरद्रव्यावश्यकम् । यः कश्चिद् जीवः जन्मकालादारभ्य अनेनैव आत्मेन - गृहीतेन शरीरसमुद्भूतैः, चिनोपदिष्टेन भावेन आवश्यकमित्येतत् पद=ज्ञान आगामिनि माले शिषिप्यते न तावच्छिष्यते, तज्जीवाविष्ठित शरीर भव्यशरीरद्रव्यावश्यकमिति । त्रशरीर-भव्यशरीरव्यति रिक्त द्रव्यावश्यक त्रिविधम्-लौकिक, कुमावचनिक, लोकोत्तरिक चेति ।

लौकिक द्रव्यावश्यकम् ' ये राजेश्वरतलवरादय प्रभातसमये-मुखधावन-दन्तप्रक्षालन-तैल-रुद्धतरु-मर्षप-दूर्वा-दर्पण-धूप-पुष्प-मात्स्य-गन्ध-ताम्रमूल-वस्त्रादिकानि द्रव्यावश्यकानि कुर्वन्ति, कृत्वा पश्चाद् राजकुलदेवकुलादौ गच्छन्ति, तत्-तेषा सम्बन्धिमुखधारनादि ।

कुमावचनिक द्रव्यावश्यकम् ' ये इमे चरकचीरिकादयः पापण्डस्था, इन्द्र-स्कन्द-रुद्र-शिव-वैश्रवण-देव-नाग-यक्ष-भूत-मुकुन्दाऽऽर्या-दुर्गा-कोटिक्रियाणाम् - उपलेपनसमार्जनाऽऽवर्षणधूपपुष्पगन्धमाल्यादिकानि द्रव्यावश्यकानि कुर्वन्ति तेषा तद् इन्द्रस्कन्दादेरुपलेपनादि । कुत्सित भवचन येषा ते कुमावचना स्तेषामिदं कुमावचनिकम् । उपलेपन चन्दनपङ्केन, समार्जन-स्नपनानन्तर वस्त्रेण जलप्रोज्ज्वलनम् आवर्षण=गन्धोदकेन, ' गुलावजल ' इत्यादि भाषाप्रसिद्धेन ।

नामावश्यकम्-आवश्यकनामको गोपालदारकादिः, स्थापनावश्यकम्-आव साफ करते हैं, स्नान करते हैं । सुगन्धित तैल लगाते हैं इत्यादि आवश्यक कार्य करते हैं । पीछे राजसभा में या देवकुल में जाते हैं । उनका यह मुख धावन आदि कार्य लौकिक द्रव्य आवश्यक है । चरक चीरिक आदि पाखण्डियों द्वारा जो इन्द्र, स्कन्द, रुद्र, वैश्रवण, देव, नाग और यक्षादिकों की मूर्तियों का चन्दन से लेपन, अभिषेक कराने के बाद वस्त्र से मूर्तिस्थ जल का पोछना मंदिर में या उन मूर्तियों पर गुलाव जल का छिड़काव आदि करना ये सब कुमावचनिक द्रव्यावश्यक हैं ।

दात साक्ष करे छे, स्नान करे छे, सुगन्धित तेल लगावे छे, वगेरे आवश्यक कार्यों करे छे त्यारपणी राजसभामा अथवा तो देवकुलमा अथ छे तेमनु सुभ धावु वगेरे काम लौकिक-द्रव्य आवश्यक छे अरक चीरिक वगेरे पाप डीओ वडे के छन्द, स्कन्द, रुद्र, शिव, वैश्रवण देव, नाग अने यक्षी वगेरेनी मूर्तियोंनु अहनथी अलिषेड कराय्या गाड वस्त्रथी मूर्तिना पादोंने लुधु, मंदिरमा डे ते मूर्तियों उपर गुलाबजलनु सिन्धन वगेरे करवु आ अथु कुमावचनिक द्रव्यावश्यक छे आ प्रभाण्डे नाम स्थापना अने द्रव्यना लेवथी आ

इयकक्रियायत कस्यचित् का'टर्ममदिगु प्रतिभृतिः, द्रव्यावश्यक च आवश्य
कोपयोगगन्या देहानमक्रिया, ण्यावश्यकेषु उपयोगाभावेन चरणगुणरहितत्वेन
च कर्मनिर्जराजनकत्वाभावादायावन्व नानाज्ञा नास्ति, तस्मादेतत् त्रिभिर्मात्र
इयक धर्मपदवाच्य न भवतीति निश्चयादव्यमेव । लोकोत्तरिकद्रव्यावश्यक प्रव

इस प्रकार नाम, स्थापना और द्रव्य के भेद से यह आवश्यक तीन
प्रकार का होता है। किसी गोपाल के पुत्र का "आवश्यक" इस प्रकार
का कृतनाम संस्कार नाम आवश्यक है। आवश्यक क्रियाओं से युक्त
किसी व्यक्ति की क्रांति आदि में तदाकार रूप से या अतदाकाररूप से
प्रतिभृति को रूपना करना या उसे बना लेना यह स्थापना आवश्यक है।
आवश्यक में उपयोग से शून्य प्राणी की जो भी आगम और नो आगम
की अपेक्षा से क्रियाएँ हैं वे सब द्रव्य आवश्यक हैं। इन तीनों आव
श्यको में उपयोग-भाव-भाव-आवश्यक के अभाव से तथा चारित्र्यगुण
तदनुकूल प्रवृत्ति के आचरण से रहित होने से कर्मों की निर्जरा कराने
में साधकपना नहीं है। अतः जिनेन्द्रदेव ने इनके आराधन करने की
आज्ञा प्रदान नहीं की है। धर्म को ही आराधन करने की उन्होंने आज्ञा
दी है क्योंकि वही कर्मों की निर्जरा कराने में साधक है। इन तीनों
में कर्मों की निर्जरा कराने का अभाव होने से धर्मस्वरूपता नहीं है।
धर्मपद वाच्य भी ये नहीं हैं। इसीलिये ये तीनों धर्म के लक्षण से शून्य
होने से उसके अलक्ष्य हैं, ऐसा समझना चाहिये। लोकोत्तरिक द्रव्य

आवश्यक त्रय प्रकारनु होय छे कोछ गोपाणना पुत्रनो ' आवश्यक ' आ
रीते करेवो। संस्कार नाम आवश्यक छे आवश्यक क्रियाओधी युक्त कोछ
व्यक्तिनी जछ वगेरेमा तदाकार इपधी के अतदाकार इपधी प्रतिभृतिनी कल्पना
करवी के प्रतिभृतिनु निर्माण करवु ते स्थापना आवश्यक छे आवश्यकमा
उपयोगधी रहित प्राणीनी जे कल्पण आगम अने नो आगमनी अपेक्षाधी
क्रियाओ छे ते पधी द्रव्य आवश्यक छे आ त्रये आवश्यकमा उपयोग लाव
इप आवश्यकना अभावधी तेमज चारित्र्यगुण तदनुकूल प्रवृत्तिना आचरण वगर
थर जवाधी कर्मोनी निर्जरा कराववामा साधकपणु नथी तेथी जनेन्द्र देवे
तेमना आराधननी आज्ञा आपी नवी धर्मनी आराधना करवानी ज तेओ
श्रीओ आज्ञा आपी छे केनजे धर्मज कर्मोनी निर्जरा कराववामा साधक छे
आ त्रयेमा कर्मोनी निर्जरा कराववानो अभाव होवाने कारणे धर्मस्वरूपता
नथी ओ धर्मपद वाच्य पणु नथी तेथी आ त्रये धर्मना लक्षणधी रहित
होवाने कारणे तेना अलक्ष्य छे ओम समजवु जेधओ सामायिक वगेरे बोडो।

चनोक्त सदपि जिनाज्ञायाद्यै स्त्रन्द्विहारिभिर्मूलोत्तरगुणरहितै पट्कायनिरनु
कम्पैरनुपयोगपूर्वक क्रियमाण सामाधिकारिकम् तच्च धर्मपदवाच्य न भवितुमर्हति,
तत्रापि निर्जराजनरुत्वाभावेन विवेयतया जिनाज्ञाया आभावात् ।

एवमेव-नामजिनः स्थापनाजिनस्तथा द्रव्यजिनश्च निर्जराजनरुत्वाभावा
दाराध्यत्वेन जिनाज्ञाया अभावात् । तदाराजन धर्मपदवाच्य न भवितुमर्हति ।

आवश्यक समाधिक आदि हे इनके करने का विधान यद्यपि प्रवचन
शास्त्र में विहित है तो भी उसे जो धर्म का अलक्ष्य बनाया गया है
उसका कारण यह है कि ये जन्म जिनदेव की आज्ञा से उत्पन्न बने
हुए, स्वेच्छाचारी, मूलगुण और उत्तर गुणों से रहित एव पट्काय
के जीवों की रक्षा करने में आसौवधान मनुष्यों द्वारा अनुपयोगपूर्वक
करने में आते हैं तब ये द्रव्य आवश्यक रूप से कहे जाते हैं। और
इसीलिये ये धर्मपद के वाच्य नहीं हैं अर्थात् धर्मरूप नहीं हैं। जहां
धर्मरूपता नहीं है वहां कर्मों की निर्जरा कारकत्व भी नहीं है। यह
सर्व सम्मत सिद्धान्त है। भगवान ने जो इस अवस्था में इन्हें विधेय
नहीं कहा है उसका यही कारण है। अतः जिस प्रकार नाम आव-
श्यक, स्थापना आवश्यक और द्रव्य आवश्यक ये तीन निक्षेप आरा-
धरूप से तीर्थंकर प्रभु ने अनविधेय कहे हैं, उसी प्रकार से नामजिन
स्थापनाजिन तथा द्रव्यजिन भी आराध्य नहीं हैं। इनकी आराधना
करने में जो धर्म की प्राप्ति होना कहते हैं या मानते हैं उन्हें जिन

त्तर द्रव्य आवश्यक छे प्रवचन शास्त्रमा अभिमाना आवश्यकतु विधान विहित
छे छताये अने जे धर्मना अलक्ष्य रूपमा अताववामा आव्ये छे तेनी मत
लभ अे छे जे न्याये ते अनदेवनी आज्ञाधी अडिभूत अनेवा स्वेच्छाचारी,
मूलगुण तेमज उत्तर गुणोधी रहित अने पटकाय लोनी रक्षा
करवामा असावधान भाष्ये वडे अनुपयोग पूर्वक आवश्यकता आवे
त्यारे ते द्रव्य आवश्यक रूपमा उडेवाय छे अथी ते धर्मपद वाच्य
नथी अेटवे जे धर्म रूप नथी न्या धर्मरूपता नथी त्या कर्मोनी निर्जरा
कारता पणु नथी आ सर्वमा य सिद्धान्त छे लगवाने जे आ अवस्थामा
अभने विधेय कछा नथी तेनु कारण पणु अे जे अेटला भाटे जेम नाम
आवश्यक, स्थापना आवश्यक अने द्रव्य आवश्यक आ त्रण निक्षेपोने आराध्य
रूपधी तीर्थंकर प्रभुअे अविधेय कछा छे, तेमज नाम जिन, स्थापना जिन
तेमज द्रव्यजिन पण आराध्य नथी अभनी आराधना करवामा जे धर्मनी
प्राप्ति थवी अताववामा आवे छे जे मानवामा आवे छे, तेमने जिनलगवाननी

एव च प्रतिमापूजनमपि धर्मलक्षणस्य लक्ष्यं न भवति, तत्र धर्मत्वाभाव निश्चयात् । 'मोक्षकामो जिनप्रतिमा पूजयेत्' इत्येवमर्हतो भगवन् आज्ञायाः प्रबन्धे-
ऽनुपलब्धेः । धर्मविषये सर्वत्र भगवद्वाणीपलभ्यते-दृश्यते हि आश्रयकार्यं भगव-

भगवान् की आज्ञा से बहिष्कृत ही समझना चाहिये । यदि इन निक्षेपों की या स्थापनानिक्षेप की आराधना करने से आराधक जीवों को धर्म का लाभ होता तो वे उनकी आराधना करने का मन्व्य जीवों को अब श्य २ उपदेश देते । इस प्रकार की स्वमनः कृत्पित प्रवृत्ति से उनकी पूजा आदि करने में पट्टकाय के जीवों की कितनी विराधना होती है यह एक स्वानुभवगम्य बात है । अतः जहाँ आरम्भ है वहाँ धर्म नहीं है । जहाँ धर्म नहीं है उसकी आराधना से कर्मों की निर्जरा भी नहीं हो सकती है । इस प्रकार से नाम स्थापना और द्रव्यजिन आदि तीन निक्षेप भी धर्म के लक्षण से शून्य होने से उसके अलक्ष्य माने गये हैं । जब स्थापना जिन ही उसका अलक्ष्यभूत है, तो फिर जिन की प्रतिमा बनाकर उसकी पूजा आदि कार्य भी धर्मलक्षण से शून्य होने से वह भी उसका अलक्ष्य है ऐसा निश्चित हो जाता है भगवान् ने इस प्रकार की आज्ञा शास्त्र में कहीं भी नहीं दी है "मोक्षकामो जिन प्रतिमा पूजयेत्" कि मुक्ति की अभिलाषा वाला प्राणी जिन प्रतिमा की पूजा करें । धर्मकी आराधना करने की ही उन्होंने ने आगम में आज्ञा

आज्ञाधी षड्विधूत न समन्वा जेधञ्जे आ निक्षेपोनी डे स्थापना निक्षेपोनी
आराधना करवाधी आराधक लुवेने धर्मने लाल थतो होय त्यारे तो तेञ्जे
तेमनी आराधना करवा माटे लव्य लुवेने शोळस उपदेश आपता आरीते
पोताना मनथी न कल्पना करीने तेमनी पूज वगेरे करवाभा पट्टकाय लुवेनी
कैटली अधी विराधना होय छे ते जतेन अनुभववा जेवी वात छे जेटला
माटे न्या आर ल छे त्या धर्म तो नथी न अने न्या धर्म नथी तेनी आरा
धनाधी कर्मोनी निर्जरा पणु थर् शके तेम नथी आरीते नाम स्थापना अने
द्रव्य जिन वगेरे त्रषु निक्षेपो पणु धर्मना लक्षणथी रक्षित होवा गदल तेने
अलक्ष्य मानवाभा आव्या छे न्यारे स्थापना जिन न तेना माटे अलक्ष्यरूप
छे, त्यारे जिननी प्रतिमा जनवापने तेनी पूज वगेरे कार्यो पणु धर्मलक्षणथी
रक्षित होवाधी ते पणु तेना माटे अलक्ष्यरूप छे आवी शोळस आत्री थध
लय छे भगवाने आ जतनी आज्ञा शास्त्रमा डोर् पणु स्थाने करी नथी
"मोक्षकामो जिनप्रतिमा पूजयेत्" डे मोक्षनी ध्विछा राभनाने प्राणी जिन
प्रतिमानु पूजन करे धर्मनी आराधना करवानी न तेञ्जेथीञ्जे 'आज्ञा

दाज्ञा, दर्शनार्थं ज्ञानार्थं च भगवदाज्ञा पुनरहिंसासयमतपःसवरादिविधिरपि शास्त्रे प्रदर्शितः परंतु प्रतिमापूजनार्थमाज्ञा क्वापि नोपलभ्यते शास्त्रेषु, प्रत्युत कुप्रावचनिकद्रव्यावश्यकलक्षणाक्रान्तत्वेन प्रतिमापूजन जैनागमविरुद्धमिति सूचितम्। इन्द्रादिपूजन हि कुप्रावचनिकस्य नोआगमतो द्रव्यावश्यकस्योदाहरणतया भगवता प्रदर्शितम्। तेन सर्वं प्रतिमापूजन कुप्रावचनिक तादृशद्रव्यावश्यकै भगवता निक्षिप्तमिति सुस्पष्टं प्रतीयते। पट्टकायहिंसासाध्यायाः पूजाया

प्रदान की है जैसे-आवश्यक, दर्शन और ज्ञान की आराधना प्रत्येक मोक्षाभिलाषी भव्य जन को करना चाहिये-इस प्रकार के आवश्यक आदि की आराधना करने का स्पष्ट उल्लेख आगमों में मिलता है-तथा जिस प्रकार उन्होंने अहिंसा, सयम, तप और सवर आदि की विधि शास्त्रों में प्रदर्शित की है-उस प्रकार न तो उन्होंने प्रतिमा पूजन की कहीं न आज्ञा प्रदान की है और न उस की विधि ही कही है कुप्रावचनिक द्रव्य आवश्यक के लक्षण से युक्त होने से प्रत्युत प्रतिमापूजन को जैन आगम से विरुद्ध ही सूचित किया है। कुप्रावचनियों द्वारा मान्य इन्द्रादिकों के पूजन को भगवान नो आगम की अपेक्षा से द्रव्य आवश्यक के उदाहरण रूप में प्रकट किया है इससे ही यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उन्होंने अन्य समस्त प्रतिमा पूजन को भी इसी कुप्रावचनिक द्रव्य आवश्यक की तरह द्रव्य आवश्यक में रखा है। प्रवचन में कुत्सितता-खोटापन कुशास्त्रता हिंसादिक मोध्य पूजा आदि कार्यो

करी छे जेभ आवश्यक, दर्शन अने ज्ञाननी आराधना दरेडे दरेक मोक्ष धरुणारा लभ्य जनने करवी घटे छे जेभ आवश्यक वगेरेनी आराधनाकरवा विधेने उल्लेख आगमोभा भणे छे, तेमज्ज जेभ तेमजे अहिंसा, सयम, तप अने सवर वगेरेनी विधि शास्त्रोभा गतावी छे तेम तेमजे डोध पणु स्थाने प्रतिमा पूजननी आज्ञा करी नथी अने तेनी विधि पणु गतावी नथी प्रतिमा पूजने कुप्रावचनिक द्रव्य आवश्यकना लक्षणथी युक्त होवा गदल जैन आगमोथी विरुद्धज्ज गताववाभा आवी छे कुप्रावचनीज्जो वडे मान्य धन्द्र वगेरेना पूजनने लगवाने आगमनी अपेक्षाजे द्रव्य आवश्यकना उदाहरण रुपभा गतावु छे जेथी आ वात स्पष्ट समल्ल शक्य तेम छे के तेमजे भील पणु अथी प्रतिमा पूजने पणु आ कुप्रावचनिक द्रव्य आवश्यकनी जेभ द्रव्य आवश्यकभा ज्ज स्थान आभ्यु छे प्रवचनभा कुत्सितता कुशास्त्रता हिंसा वगेरे साध्य पूजा वगेरे कार्योनी पुष्टि करवाथी ज्ज सलवे छे भील अरद

विधायकतया प्रवचनस्य कृत्स्नतत्त्व, तेनैव चेन्द्रादिपूजनस्य कुप्रावचनित्वं भवति । एव प्ररूपयतो भगवतोऽर्हतः प्रतिमाया पूजनस्य प्रमद् एव तदानीं नासीत्—हिंसामयत्वात्पूजनस्य, तेन प्रवचने भगवता प्रतिमापूजनप्रतिषेधो विशिष्य नोक्त । प्रतिषेधवाक्य हि तदैव सार्थकं, यदाप्रतिषेधग्रन्थोऽर्थः कथञ्चित् प्रसक्तो भवति । जिनप्रतिमापूजन हि न तात्त्विकिकद्रव्यावश्यक, नापि लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक, जिनो हि लोकोत्तरो देवस्तत्पूजनमपि स्याच्चेत् लोकोत्तरिकमेव

की पुष्टि करने से ही आती है । अन्य चरक आदि समस्त प्रवचनों में इन्हीं हिंसादिक कर्मों के करने का विधान स्पष्टरूप से पाया जाता है । इसीलिये ये कुप्रवचन माने गये हैं । इनके द्वारा प्रदर्शित इन्द्रादिक पूजन भी इसी निमित्त से कुप्रावचनिक कहा गया है । जैन शास्त्रों में प्रतिमापूजन के निषेध का स्पष्ट उल्लेख जो देगने में नहीं आता है, उसका यह कारण है कि जिस समय प्रभु ने इन्द्रादिक के पूजन का कुप्रावचनिक रूप मानकर निषेध किया उस समय उनके समक्ष अर्हत की प्रतिमा के पूजन का प्रसंग ही नहीं था, नहीं तो इसका भी वे स्वतन्त्र रूप से निषेध करते—दूसरे—प्रतिमा पूजन कार्य हिंसामय कार्य है—भगवान ने धर्म के लिये भी हिंसा करने का आदेश नहीं दिया है अतः जब वीतराग शास्त्र में हिंसा का विधान ही नहीं है—तब इसका भी विधान कैसे वे करते प्रतिषेध वाक्य उसी समय सार्थक माना जाता है जब प्रतिषेध्यरूप पदार्थ किसी भी रूप से प्रसक्त होता है ।

शीरिक् वगेरे अधा प्रवचनोभा अे न हिंसा वगेरे कर्मोने ऽस्वानु विधान स्पष्ट इप जेवाभा आवे छे अेथी आ अधा कुप्रावचनिक मानवाभा आवे छे अेभना वडे प्रदर्शित छेन्द्र वगेरेनु पूजन पणु आ कारणुने लीधे न कुप्रावचनिक कडेवाय छे जैन शास्त्रोभा प्रतिमा पूजनना निषेधनो स्पष्टपणु ने उल्लेख जेवाभा आवतो नथी तेनु कारणु पणु अे छे के न्यारे प्रभुअे छेन्द्र वगेरेना पूजनने कुप्रावचनिक इप भानीने निषेध कथो त्यारे तेभनी सामे अडं तनी प्रतिमाना पूजननी वात न न छती, नडितर तेअेश्री अे तेने पणु स्वतंत्र इपथी निषेध कथो डोत गील वात अे छे के प्रतिमा पूजननु कार्य हिंसा मय छे, लगवाने धर्मना भाटे पणु हिंसा करवानी आज्ञा ऽरी नथी अेटला भाटे न्यारे वीतराग शास्त्रभा हिंसा विषेनु विधान न नथी त्यारे आनु विधान पणु तेअे केवी रीते करे प्रतिषेध वाक्य त्यारे न सार्थक छे न्यारे प्रतिषेध्यरूप पदार्थ डोत पणु इपथी प्रसक्त डोत छे

स्यात् लोके तु तस्य समावेशानर्हत्तया लौकिकत्वासम्भवात् । प्रवचने भगवता यत् सामायिकादि पद्मविधावश्यकं प्ररूपितं तदेव स्वच्छन्दविहारिभिः पट्टकायर्द्धि-सकैर्जिनाज्ञानाद्यैः क्रियमाणं लोकोत्तरिक-द्रव्यावश्यकम् । तत्र पद्मविधावश्यकं निनप्रतिमा पूजनस्य प्रवेशात् तस्य लोकोत्तरिक-द्रव्यावश्यकं समावेशो न सम्भवति ।

यह प्रतिमापूजनरूप कार्य न लौकिक द्रव्य आवश्यक है और न लोकोत्तर द्रव्य आवश्यक ही है ।

शका—प्रतिमा पूजन लौकिक द्रव्य आवश्यक नहीं है यह तो आप का कहना ठीक है, क्यों कि यह लौकिक द्रव्य आवश्यक से सर्वथा भिन्न है । परन्तु इसे लोकोत्तरिक द्रव्य आवश्यक मानने में आपको क्या विवाद है । क्यों कि प्रभु स्वयं लोकोत्तर देव माने जाते अतः उनका पूजन भी लोकोत्तरिक ही मानना चाहिये ?

उत्तर—प्रवचन में भगवान् जो सामायिक आदि छह प्रकार के आवश्यकों का वर्णन किया है—वे जिन जिन आज्ञा पाद्य-स्वच्छन्दविहारी और पट्टकाय की विराधना करने में निरत अनुपयुक्त पुरुषों द्वारा करने में आते हैं लोकोत्तरिक द्रव्य आवश्यक रूप से प्रतिपादित किये गये हैं । इन पद्मप्रकार के आवश्यकों में प्रतिमापूजन का कोई अधिकार ही नहीं है । अतः इसे कैसे लोकोत्तरिक आवश्यक माना जा सकता है ।

पूजनरूप कार्य भाटे न तो लौकिक द्रव्य आवश्यक छे अने न तो लोकोत्तर द्रव्य आवश्यक छे

शका—प्रतिमा पूजन लौकिक द्रव्य आवश्यक नहीं तमारी आ वात तो उचित छे केम के आ लौकिक द्रव्य आवश्यकोथी न पूर्युं पद्ये सिन्न छे पद्ये अने लोकोत्तरिक द्रव्य आवश्यक मानवामा तमने शो वाधो छे ? केमके प्रभु जते लोकोत्तर देव बनाय छे त्यारे तेमनु पूजन पद्ये लोकोत्तरिक न मानवु नेधये ?

उत्तर—प्रवचनमा भगवाने जे सामायिक वगेरे छ जतना आवश्यकोनु पद्युं न कर्युं छे तेज्यो त्यारे जिन-आज्ञा पाद्य स्वच्छन्द विहारी अने पट्टकायनी विराधना करवामा निरत अनुपयुक्त पुरुषो वडे आचरवामा आवे छे लोकोत्तरिक द्रव्य आवश्यक इपथी प्रतिपादित करवामा आवे छे आ छ जतना आवश्यकोमा प्रतिमा पूजनने कोध अधिकार न नथी अटला भाटे लोकोत्तरिक आवश्यक केवी रीते मानी शक्य ?

ત્રિધાયકૃતયા પ્રવચનસ્ય કૃત્મિતત્વ, તેનેય ચેન્દ્રાદિપૂજનસ્ય કુપ્રાવચનિક્ત્વ
 ભવતિ । એ પ્રરૂપયતો ભગવતોર્હૃતઃ પ્રતિમાયા પૂજનસ્ય પ્રમદ્ન એ તદાની
 નાસીત્-હિંસામયદયાત્પૂજનસ્ય, તેન પ્રવચને ભગવતા પ્રતિમાપૂજનપ્રતિપદ્ધો વિગિષ્ય
 નોક્ત । પ્રતિપેધમાયય દિ તદૈવ સાર્થક, યદાપ્રતિપે-યન્પોર્ધઃ કયચિત્ પ્રસક્તો
 ભવતિ । જિનપ્રતિમાપૂજન દિ ન તાયહ્નીકિકદ્રવ્યાપશ્યક, નાપિ લોકોત્તરિક
 દ્રવ્યાવશ્યક, જિનો દિ લોકોત્તરો દેવસ્તત્પૂજનમપિ સ્યાન્ચેત્ લોકોત્તરિકમેવ

કો પુષ્ટિ કરને સે હી આતી હૈ । અન્ય ચરક આદિ સમસ્ત પ્રવચનો મે
 હન્દી હિંસાદિક કર્મો કે કરને કા ત્રિધાન સ્પષ્ટરૂપ સે પાયા જાતા હૈ ।
 હસીલિયે યે કુપ્રવચન માને ગયે હિં । હનકે દ્વારા પ્રદર્શિત હન્દ્રાદિક
 પૂજન મી હસી નિમિત્ત સે કુપ્રાવચનિક કહા ગયા હૈ । જૈન શાસ્ત્રો મે
 પ્રતિમાપૂજન કે નિપેધ કા સ્પષ્ટ ઉલ્લેખ જો દેગ્વને મે નહી આતા હૈ,
 હસકા યહ કારણ હૈ કિ જિસ સમય પ્રમુ ને હન્દ્રાદિક કે પૂજન કા
 કુપ્રાવચનિક રૂપ માનકર નિપેધ કિયા હસ સમય હનકે સમક્ષ અર્હત
 કી પ્રતિમા કે પૂજન કા પ્રસંગ હી નહી યા, નહી તો હસકા મી કે
 સ્વતન્ત્ર રૂપ સે નિપેધ કરતે-દુસરે-પ્રતિમા પૂજન કાર્ય હિંસામય કાર્ય
 હૈ-ભગવાન ને ધર્મ કે લિયે મી હિંસા કરને કા આદેશ નહી દિયા હૈ
 અતઃ જબ વીતરાગ શાસ્ત્ર મે હિંસા કા વિધાન હી નહી હૈ-તય હસકા
 મી વિધાન કૈસે કે કરતે પ્રતિપેધ વાક્ય હસી સમય સાર્થક માના
 જાતા હૈ જબ પ્રતિપેધ્યરૂપ પદાર્થ કિસી મી રૂપ સે પ્રસક્ત હોતા હૈ ।

ચીરિક વગેરે બધા પ્રવચનોમા એ જ હિંસા વગેરે કર્મોને કરવાનું વિધાન
 સ્પષ્ટ રૂપ જોવામા આવે છે એથી આ બધા કુપ્રાવચનિક માનવામા આવે છે
 એમના વડે પ્રદર્શિત ઈન્દ્ર વગેરેનું પૂજન પણ આ કારણને લીધે જ કુપ્રાવચ
 નિક કહેવાય છે જૈન શાસ્ત્રોમા પ્રતિમા પૂજનના નિપેધનો સ્પષ્ટપણે જે ઉલ્લેખ
 જોવામા આવતો નથી તેનું કારણ પણ એ છે કે જ્યારે પ્રભુએ ઈન્દ્ર વગેરેના
 પૂજનને કુપ્રાવચનિક રૂપ માનીને નિપેધ કર્યો ત્યારે તેમની સામે અહંતની
 પ્રતિમાના પૂજનની વાત જ ન હતી, નહિતર તેઓશ્રી એ તેના પણ સ્વતન્ત્ર
 રૂપથી નિપેધ કર્યો હોત યીજી વાત એ છે કે પ્રતિમા પૂજનનું કાર્ય હિંસા
 મય છે, લગવાને ધર્મના માટે પણ હિંસા કરવાની આજ્ઞા કરી નથી એટલા
 માટે જ્યારે વીતરાગ શાસ્ત્રમા હિંસા વિષેનું વિધાન જ નથી ત્યારે આનું
 વિધાન પણ તેઓ કેવી રીતે કરે પ્રતિપેધ વાક્ય ત્યારે જ સાર્થક ગણાય છે
 જ્યારે પ્રતિપેધ્યરૂપ પદાર્થ કોઈ પણ રૂપથી પ્રસક્ત હોય છે /

चित्रादय इति प्ररूपितम् । एष च जिनपूजन-कुप्रावचनिक-नोआगमतो द्रव्या-
वश्यक प्रतिमाया क्रियमाणत्वात्, इन्द्रादिपूजनवत्, अन्यनुमानेनापि कुप्रावचनिक
द्रव्यावश्यकतया धर्मपदवाच्य न भवतीति ।

उत्तर—यद्यपि कुप्रावचन में प्रतिमा पूजा का विधान स्वतन्त्ररूप
से नहीं किया गया है, तो भी कामपूरु प्रणियों के मनोरथ को पूर्ण
करने वाले-मनुष्य के मृत-निर्जीव देह की पूजा की तरह प्रतिमा में
होनी हुई पूजा भी कुप्रावचनिकी है ।

इस प्रकार हम अनुमानसे कह सकते हैं । उसमें प्रवचनमें पूजाके
आधार का निर्णय करते समय सामान्यरूप से पूजा के आधारभूत
जितने भी प्रतिमा चित्र आदि पूज्य हैं वे सब गृहीत हुए हैं । इस
प्रकार प्रतिमा की सर्व पूजा का आधार प्रतिमा और चित्र आदि है ।
इसलिये वह कुप्रावचनिक है । इस प्रकार हम कहते हैं । इस कथन से
यह व्याप्ति सिद्ध होती है कि इन्द्रादिक पूजन की तरह प्रतिमा में जो
जो पूजाएँ की जाती हैं वे सब कुप्रावचनिकी हैं । अतः जिन पूजन भी
प्रतिमा में किये जाने पर नोआगम की अपेक्षा से कुप्रावचनिक द्रव्य
आवश्यक ही है, और इसीलिये वह धर्मपद का वाच्य नहीं है यह बात
स्पष्टरूप से सिद्ध हो जाती है इसमें अनुमान प्रयोग उस प्रकार से
करना चाहिए ।

उत्तर — जे के कुप्रावचनमा प्रतिमा पूजननु विधान स्वतन्त्र रूपमा कर
वाभा आब्यु नथी छताय भानवीना मनोरथाने पूर्ण करनारा-भाषुमना मृत
निर्जीव शरीरनी पूजनी जेभज प्रतिमानी उरवाभा आवेली पूज पण कुप्रा
वचनिकी छे आभ अमे अनुमानथी उही शकीजे छीजे ते कुप्रावचनमा
पूजना आधारने निर्णय करती वणते सामान्य रूपथी पूजना आधारभूत
जेटला प्रतिमा चित्र वगेरे पूज्य छे तेजे सर्वेनु उडणु थयु छे

आ रीते प्रतिमानी सर्व पूजना आधार प्रतिमा अने चित्र वगेरे छे
जेटला माटे ते कुप्रावचनिक छे आभ अमे उही शकीजे छीजे आ कथनथी जे
व्य सिद्धि थय छे के इन्द्र वगेरेना पूजननी जेभ प्रतिमाजोभा जे जे
पूजजे करवाभा आवे छे तेजे सर्वे कुप्रावचनिकी छे जेटला माटे जिन
पूज पण प्रतिमाभा आवती होवाथी आगमनी अपेक्षाथी कुप्रावचनिक द्रव्य
आवश्यक छे अने जेथी ते धर्मप वाच्य नथी आ वात स्पष्टपणु सिद्ध
थर्म नर छे आभा अनुमानप्रयोग आ प्रभाणु उही गडार तेभ छे

कुप्रवचनेऽर्हत पूजाविधान विनिश्चयनात् नथापि मागपूररुमृतमनुष्यपूजनवत् तस्य पूजा प्रतिमाया क्रियमाणा कुप्रायचिनिकीति यजुः शत्रयते । तस्मिन् कुप्रवचने हि पूजाधारनिर्णयावगरे सामान्यतः पूज्यस्य सर्वस्यापि पूजाधारः प्रतिमा

भाचार्य-शकाकार ने प्रतिमापूजन को लोकोत्तरिक आवश्यक मानकर द्रव्य आवश्यक में जो उसका समावेश करना चाहा है सो उसकी इस आशका का समाधान करते हुए सूत्रकारने यह कहा है कि जिन आज्ञा बाह्य एव सामायिक आदि में अनुपयुक्त पुरुषो द्वारा किये गये सामायिक आदि पट्ट विध आवश्यक कार्य ही लोकोत्तरिक द्रव्य आवश्यक में परिगणित किये गये हैं । इनमें प्रतिमा पूजा को कोई सबध ही नहीं है-प्रतिमा पूजा पट्ट विध आवश्यक कार्यों में परिगणित ही नहीं हुई है । अतः उसका चहा पर किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होने से उसे लोकोत्तरिक द्रव्य आवश्यक में नहीं गिना जा सकता है अतः इसका समावेश केवल कुप्रायचनिक द्रव्य आवश्यक में ही हुआ है ऐसा मानना चाहिये ।

शका-कुप्रवचन में इन्द्रादिकों की पूजा करने के विधान की तरह प्रतिमा पूजा का विधान तो पाया नहीं जाता है फिर आप इसे कुप्रायचनिक में अन्तर्भूत कैसे कह सकते हैं ?

भाचार्य - शकाकारे प्रतिमा पूजनने लोकोत्तरिक आवश्यक मानीने द्रव्य आवश्यकता तेना समावेश करवानी जे धृष्ट्या अतावी छे तेनी ते शकानु समाधान करता सूत्रकारे आ प्रमाणे कहु छे के जिन आज्ञा बाह्य अने सामायिक वगेरेमा अनुपयुक्त पुरुषो पडे करवामा आवेला सामायिक वगेरे छे अतना आवश्यक कार्यो जे लोकोत्तरिक द्रव्य आवश्यकता परिगणित करवामा आव्या छे अनाथी प्रतिमा पूजनने कोठ सभध जे नथी प्रतिमा पूजा पट्टविध आवश्यक कार्योमा परिगणित जे थध नथी अटला भाटे त्या तेना कोठ पणु रीते सभध नहि छोवाथी लोकोत्तरिक द्रव्य आवश्यकता तेनी गणुना थध शके तेम नथी अथी इक्त द्रव्य आवश्यकता जे थयो छे आम मानी लेवु जेधअ

शका - कुप्रवचनमा धन्द्र वगेरेनी पूजा करवाना विधाननी जेम प्रतिमा पूजननु विधान तो भणतु नथी त्यारे तमे अने कुप्रायचनिकमा कवी रीते क्षमाविष्ट करी शके ?

चित्रादय इति प्रल्पितम् । एव च जिनपूजन-कुप्रावचनिक-नोआगमतो द्रव्या-
वश्यक प्रतिमाया क्रियमाणत्वात्, इन्द्रादिपूजनवत्, इत्यनुमानेनापि कुप्रावचनिक
द्रव्यावश्यकतया धर्मपदवाच्य न भवतीति ।

उत्तर—यद्यपि कुप्रवचन में प्रतिमा पूजा का विधान स्वतन्त्ररूप
से नहीं किया गया है, तो भी कामपूरक प्रणियों के मनोरथ को पूर्ण
करने वाले-मनुष्य के मृत-निर्जीव देह की पूजा की तरह प्रतिमा में
होनी हुई पूजा भी कुप्रावचनिक की है ।

इस प्रकार हम अनुमानसे कह सकते हैं । उसमें प्रवचनमें पूजाके
आधार का निर्णय करते समय सामान्यरूप से पूजा के आधारभूत
जितने भी प्रतिमा चित्र आदि पृथक् ह वे सब गृहीत हुए ह । इस
प्रकार प्रतिमा की सर्व पूजा का आधार प्रतिमा और चित्र आदि है ।
इसलिये वह कुप्रावचनिक है । इस प्रकार हम कहते हैं । इस कथन से
यह व्याप्ति सिद्ध होती है कि इन्द्रादिक पूजन की तरह प्रतिमा में जो
जो पूजाएँ की जाती हैं वे सब कुप्रावचनिकी हे । अतः जिन पूजन भी
प्रतिमा में किये जाने पर नोआगम की अपेक्षा से कुप्रावचनिक द्रव्य
आवश्यक ही है, और इसीलिये वह धर्मपद का वाच्य नहीं है यह बात
स्पष्टरूप से सिद्ध हो जाती है इसमें अनुमान प्रयोग उस प्रकार से
करना चाहिए ।

उत्तर—जे के कुप्रवचनमा प्रतिमा पूजनतु विधान स्वतन्त्र रूपमा कर
वाभा आण्यु नथी छताय मानवीना मनोरथाने पूर्ण करनारा-भाणुमना मृत
निर्णव शरीरनी पूजननी जेमज प्रतिमानी करवाभा आवेली पूज पणु कुप्रा
वचनिकी छे आभा अमे अनुमानथी कही शकीजे छीजे ते कुप्रवचनमा
पूजना आधारने निर्णय करती वणते सामान्य रूपथी पूजनना आधारभूत
जेटला प्रतिमा चित्र वगेरे पूज्य छे तेजे सर्वेनु अहणु थयु छे

आ शीते प्रतिमानी सर्व पूजनने आधार प्रतिमा अने चित्र वगेरे छे
जेटला भाटे ते कुप्रावचनिक छे आभा अमे उही शकीजे छीजे आ कथनथी जे
व्यसिनिद्ध थाय छे के इन्द्र वगेरेना पूजननी जेम प्रतिमाजोभा जे जे
पूजजे करवाभा आवे छे तेजे सर्वे कुप्रावचनिकी छे जेटला भाटे जिन
पूज पणु प्रतिमाभा आवती होवाथी आगमनी अपेक्षाथी कुप्रावचनिक द्रव्य
आवश्यक छे अने जेथी ते धर्मपद वाच्य नथी आ बात स्पष्टपणु निद्ध
थर्य मन छे आभा अनुमानप्रयोग आ प्रमाते कही शकान तेम छे

અથ ભાવાવશ્યકમુચ્યતે-વિરખિતક્રિયાનુભવયુક્તો ચોર્ધ' ન માત્ર, ભાવ તદ્વતોરભેદોપચારાદ્ માત્રઃ । યથા-ऐश्वर्यरूपायाइन्द्रनक्रियाया अनुभवात्इन्द्रो भाव उच्यते । भावश्चासौ आवश्यक च, भावमाश्रित्य वा आवश्यक भावावश्यम् ।

“ જિનપૂજન નો આગમતો કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક પ્રતિમાયાં ક્રિયમાણત્વાન્ ઇન્દ્રાદિપૂજનવત્ ” । અતઃ ઇમ સમસ્ત પ્રવૈક્ત કથન સે યહ ઘાત સ્પષ્ટ હો જાતી હૈ કિ વહ પ્રતિમાપૂજન કાર્ય લોકોત્તરિક દ્રવ્ય આવશ્યક રૂપ સે મી પ્રસક્ત હોતા તો મગવાન્ હસકા અવશ્ય પ્રતિ પેઘ કરતે ।

અથ ભાવાવશ્યકમુચ્યતે - અથ ભાવ આવશ્યક ત્યા હૈ ઇસકા કથન સૂત્રકાર કરતે હૈ-વર્તમાન સમય મેં ઉસ વિવક્ષિતરૂપ પર્યાય સે યુક્ત દ્રવ્ય કા નામ ભાવ હૈ । ભાવ યત્પિ વર્તમાન ક્રિયા રૂપ માના ગયા હૈ, ફિર મી યહાં પર ઉસ ક્રિયા સે યુક્ત દ્રવ્ય કો જો ભાવ કહા હૈ ઉસકા કારણ દ્રવ્ય ઓર પર્યાય કા અભેદ સમઘ હૈ । મગવાન દ્રવ્ય કે વિના નહી રહ સકતા હૈ । ભાવ દ્રવ્ય કો ઁક પર્યાય હૈ, વહ નિરાશ્રય હોની નહીં હૈ-અતઃ જિસ દ્રવ્ય કે આશ્રય વહ રહેગી ઉન દોનો મેં અભેદોપચાર સે ઉસ પર્યાય સે ઉપલક્ષિત ઉસ દ્રવ્ય કો હી ભાવ કહ દિયા હૈ । જિસ પ્રકાર ऐश्वर्यरूप उदन (देदीप्यमान होना)

“ જિનપૂજન નો આગમતો કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક પ્રતિમાયા ક્રિયમાણ ત્વાત્ ઇન્દ્રાદિપૂજનવત્ ”

એટલા માટે આ પૂવોક્ત કથનથી આ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે તે પ્રતિમા પૂજન કાર્ય લોકોત્તરિક દ્રવ્ય આવશ્યક પણ નથી જો તે લોકોત્તરિક દ્રવ્ય આવશ્યકરૂપે પણ પ્રસક્ત હોત તો ભગવાન તેનો ચોક્કસ પ્રતિપેઘ કરત

‘ અથ ભાવાવશ્યકમુચ્યતે ’ —હવે આવશ્યક શુ છે એનુ સ્પષ્ટીકરણ સૂત્રકાર કરે છે-વર્તમાન સમયમા તે વિવક્ષિત રૂપ પર્યાયથી યુક્ત દ્રવ્યનુ નામ ભાવ છે જો કે ભાવ વર્તમાન ક્રિયારૂપ માનવામા આવ્યો છે, છતાય અહીં તે ક્રિયાથી યુક્ત દ્રવ્યને જ ભાવ બતાવ્યો છે તેનુ કારણ દ્રવ્ય અને પર્યાયનો અલેદ સબઘ છે ભાવ ભગવાન દ્રવ્ય વગર રહી શકતો નથી ભાવ દ્રવ્યની એક પર્યાય છે, તે નિરાશ્રય હોતીજ નથી એથી જો દ્રવ્યના આશ્રયે તે રહેશે તેમા અનેમા અભેદોપચારથી તે પર્યાયથી ઉપલક્ષિત તે દ્રવ્યને જ ભાવ કહી દીધો છે જેમ ऐश्वर्य उदन (देदीप्यमान થવુ) ક્રિયાના અનુભ

तद् द्वित्रिधम्- (१) जागमत = जागममाश्रित्य, (२) नो-जागमतः = आगमाभावमाश्रित्य ।

आगमतो भावावश्यकमाह—

“ से किं त आगमो भावावस्तय ? आगमो भावावस्तय जाणए उवउत्ते, सेत आगमो भावावस्तय ” । (अनुयोग०)

अथ किं तदागमतो भावावश्यकम् ? उत्तरमाह—“ ज्ञायक उपयुक्त ” आगमतो भावावश्यकम् ।

अपरमर्थ—आवश्यकपदार्थज्ञानजनितसवेगेन विशुद्धमानपरिणामस्ता चोपयुक्त साव्वादिरागमतो भावावश्यकम्, अत्रावश्यकार्थज्ञानरूपन्यागमस्यात्र

क्रिया के अनुभव से उपलक्षित शचीपति भाव इन्द्र रूपा जाता है । इसी प्रकार जो आवश्यक रूप क्रिया के अनुभवसे युक्त है वही आत्मा भावावश्यक रूपा जाता है । भावरूप जो आवश्यक है वह, अथवा भाव को आश्रय करके जो आवश्यक है वह भावावश्यक है ।

यह भाव आवश्यक भी दो प्रकार का है—१ आगम की अपेक्षा भाव आवश्यक और दूसरा नो आगम की अपेक्षा भाव आवश्यक । इनमें “ ज्ञायक उपयुक्त आगमतो भावावश्यक ” ज्ञायक उपयुक्त आत्मा आगम की अपेक्षा से भाव आवश्यक माना गया है । आवश्यकरूप पदार्थ का जो ज्ञाता है उसका नाम ज्ञायक है । आवश्यकरूप पदार्थ के ज्ञान से जनित सवेग द्वारा विशुद्ध हुए परिणामों का नाम उपयोग है । इस उपयोग से विशिष्ट जो साधु आदि जन हैं वे आगम की अपेक्षा से भाव आवश्यक हैं । क्यों कि इनमें आवश्यकरूप पदार्थ

वही उपलक्षित शचीपति भाव इन्द्र कडेवाय छे तेभन्ने आवश्यकरूप क्रियाना अनुभवधी युक्त छे ते आत्मा भावावश्यक कडेवाय छे भावइप ने आवश्यक छे ते अथवा भावने आश्रय करीने ने आवश्यक छे ते भावावश्यक छे

आ भाव आवश्यक पद्यु छे प्रकाशने छे-१, आगमननी अपेक्षा भाव आवश्यक अने २, नो आगमननी अपेक्षा भाव आवश्यक ज्येभनाभा “ज्ञायक उपयुक्त आगमतो भावावश्यक ” ज्ञायक उपयुक्त आत्मा आगमनी अपेक्षाथा भाव आवश्यक मानवामा आन्थे छे आवश्यकरूप पदार्थना ने ज्ञाता छे तेनु नाम ज्ञायक छे आवश्यकरूप पदार्थना ज्ञानधी जनित सवेगवटे विशुद्धि पाभेता परिणामेनु नाम उपयोग छे आ उपयोगधी विशिष्ट ने साधु वगेरे बोडो छे तेन्ना आगमनी अपेक्षाधी भाव आवश्यक छे केभडे तेन्नाभा भाव-

सत्त्वात्, भावावश्यकता चात्रावश्यकार्थज्ञानजनितोपयोगपरिणामसत्त्वाद्भा-
माश्रित्यावश्यकमिति व्युत्पत्तेः । इत्थमुक्त भवति आवश्यकार्थस्य आवश्यकोप-
योगपरिणाम आगमतो भावावश्यक, सा-गदिस्तु तादृशपरिणामसत्त्वाद्भागमतो
भावावश्यकमुच्यते । इदमावश्यकोपयोगपरिणामस्य भावावश्यक धर्मपदवाच्य,
श्रुतधर्मान्तर्गतत्वात्, अत्र जिनाज्ञायाः सत्त्वात् ।

नोआगमतोभावावश्यक विविध-लौकिक, कुमावचनिक, लोकोत्तरिक चेति
लौकिक भावावश्यक पूर्वाह्णे भारतस्य वाचन श्रवण वा, अपराह्णे रामायणस्य

के ज्ञानरूप आगम का सद्भाव पाया जाता है । इसलिये साधु आदि
जनों में आगम की अपेक्षा से आवश्यकता और इस आवश्यक के
अर्थ ज्ञान से जनित उपयोगरूप परिणामों की विशिष्टता होने से भाव
रूपता आती है । अतः “ भाव को आश्रित करके जो आवश्यक है वह
भाव आवश्यक है ” यह कथन सुसगत हो जाता है

भावार्थ-“आवश्यक” इस पद के अर्थज्ञान से विशिष्ट तथा तद-
नुकूल उपयोग परिणति सपन्न आत्मा ही आगम की अपेक्षा से भावा-
वश्यक कहा गया है । ये भावावश्यक साधु आदि हैं । क्यों कि ये ही
उस प्रकार की परिणति वाले होते हैं । अतः श्रुतधर्म के अन्तर्गत होने
से यह भावावश्यक ही धर्म पद का वाच्य कहा गया है और ऐसे ही
धर्म की आराधना करने की भगवानने आज्ञा प्रदान की है ।

नो आगम की अपेक्षा से भाव आवश्यक तीन प्रकार का माना
गया है । (१) लौकिक (२) कुमावचनिक और लोकोत्तरिक । पूर्वाह्ण में

शक्यपदार्थना ज्ञानरूप आगमने सदभाव भजे छे अटला भाटे साधु
वगेरे लोकोत्तर आगमनी अपेक्षाधी आवश्यकता अने आ आवश्यकताना अर्थ
ज्ञानधी जनित उपयोगरूप परिणामोनी विशिष्टता लोकोत्तर भावसत्ता आवे
छे अटला भाटे “ लावने आश्रित करीने के आवश्यक छे ते भाव आवश्यक
छे ” आ कथ सुसगत थई पडे छे

भावार्थ — “ आवश्यक ” आ पदना अर्थ ज्ञानधी विशिष्ट तेमज तद
नुकूल उपयोग परिणति सपन्न आत्मा न आगमनी अपेक्षासे भाव आवश्यक
साधु वगेरे छे केभडे अे लोकोत्तर आ अन्तनी परिणतिवाणा लोकोत्तर अे
श्रुतधर्मना अतगत लोकोत्तर भाव आवश्यक न धर्म पदवाच्य कहेवामा
आव्ये छे अने आ अन्तना धर्मनी आराधना करवानी लगवाने पणु आज्ञा करी छे

नो आगमनी अपेक्षासे भाव आवश्यकता त्रय प्रकारे छे - (१) लौकिक
(२) कुमावचनिक (३) अने लोकोत्तरिक पूर्वाह्णमा भारतस्य वाचन श्रवण

वाचनं श्रवणं वा । लोके हि भारतस्य वाचनं श्रवणं पूर्वाह्ने एव क्रियमाणं दृश्यते, तथा रामायणस्य वाचनं श्रवणमपराह्ण एव क्रियमाणं दृश्यते, विपरीत्ये दोषदर्शनात् । ततश्चेत्थ लोकेऽपश्यत्तुणीयतयाऽऽपश्यत्तु तद्वाचकस्य श्रोतुश्च तदर्थोपयोगपरिणामसत्त्वाद् भावत्वं, तद्वाचकं पुस्तकरूपत्रादिपरावर्तनरूपया हस्ताभिनयरूपया च क्रियया युक्तो भवति, श्रोतापि च गात्रसयतत्वं-रससंपुटीकरणादि

भारत का वाचना अथवा सुनना, अपराह्ण में रामायण का वाचना या सुनना ये सब लौकिक भाव आवश्यक हैं । लोक में भारत का वाचना अथवा सुनना पूर्वाह्णमें ही किया जाता है । रामायणका वाचन और श्रवण अपराह्ण में ही होता हुआ देखा जाता है । इससे विरुद्ध प्रवृत्ति करने से अनेक प्रकार के दोषों का भोजन बनना पड़ता है, इस प्रकार लोक में भारतादिक ग्रन्थों का वाचना आदि कार्य नियमित समय में अवश्य करने योग्य होने की वजह से आवश्यक रूपमें माना गया है । अतः इसमें इस प्रकार से आवश्यक रूपना आ जाता है । तथा इनके वाचने वालों में या सुनने वालों में उनके अर्थ के प्रति उपयोगात्मक परिणाम के सद्भाव से भावरूपता आती है । क्यों कि जबतक उनके वाचने वाले में उनके अर्थ के प्रति उपयोगात्मक परिणाम की जागृति नहीं होगी तब तक वे उन पुस्तकों के पत्रों आदि का परावर्तन करने रूप क्रिया और श्रोताओं को अनेक अर्थ की संगति बैठाने के लिये हस्त आदि के संचालनरूप अभिनय क्रिया का उपयोग ही

अपराह्णमा रामायणतु वाचनं के श्रवणं वा अथु लौकिक भाव आवश्यक छे लोकमा भारततु वाचनं अथवा तो श्रवणं पूर्वाह्णमा एव करवामा आवे छे रामायणतु वाचनं अने श्रवणं अपराह्णमा एव थतु नेवामा आवे छे अथी विरुद्ध आशयशु करवाथी भावसु घड़ी नतना होपेने पात्र थथ पडे छे आ प्रभावे भारत वगेरे अथेतु वाचन वगेरे कार्य नियमित समयमा आवश्यक करवा योग्य होवा महल आवश्यक रूपमा मानवामा आवे छे अथी आमाआ गीते आवश्यकपणु आवी नय छे तेमए अमनु वाचनं उरनाराओमा तेमना तरङ्ग उपयोगात्मक परिणामना सद्भावथी भावरूपता आवे छे केभके न्यासुधी तेमनु वाचनं उरनाराओमा तेमना अर्थ प्रत्ये उपयोगात्मक परिणामनी नगृति थथे नहि, त्या सुधी तेओ ते पुस्तकना पत्रा वगेरेना परावर्तन करवा रूप क्रिया अने श्रोताओना भाटे अनेक नतना अर्थनी संगति जेसाउवा भाटे साथ वगेरेना हलनयहनरूप अभिनय क्रिया उपयोग एव केवी रीते करी थके.

ક્રિયાયાન્ ભગતિ, એ તયોઃ ક્રિયાવચ્ચેન નોઆગમત્વ, “કિરિયાઽગમો નહોઈ”
 इति वचनात् । क्रियारूपे देशे आगमाभावाद् नोआगमत्वमपि, अत्र नो शब्दस्य
 देशनिषेधबोधकत्वात् । लोके भारतादायागमत्वं व्यवह्रियते, तस्माद्देशत आगमो
 ऽस्त्यपि । तस्माद् पूर्वाह्नेऽपराह्णे यथानिर्दिष्टकाले भारताद्युपयुक्तो यदत्रय भारतादि
 वाचयति शृणोति या, तद् वाचन श्रवण च लौकिक भाषाव्यवयमिति बोध्यम् ।

કેસે કર સકતે હૈ । પરન્તુ ડસ સમય ઇસ પ્રકાર કી ટે સમસ્ત ક્રિયાઈ
 उनमें प्रत्यक्ष ही देखने में आती है । इसी प्रकार श्रोताजन भी अटल
 होकर उनके सुनने में तन्मय हो जाते हैं । समय २ पर हाथ जोड़ने
 रूप क्रियाएँ भी करते हैं । इस प्रकार की क्रियाएँ में युक्त होने से उन
 सुनने वाचने वालों में नो आगमता भी है क्योंकि “ किरिया आगमो
 न होइ ” क्रिया आगम नहीं मानी जाती है ऐसा सिद्धांत का कथन
 है । “ नो आगम ” में नो शब्द आगम के एक देश का वाचक है ।
 इसलिये क्रियारूप एक देश में पूर्णरूप से आगम का अभाव होने से
 आगम की एक देशता उसमें मानने में आती है । भारतादिक पुस्तकों
 में आगमता का कथन लोक की अपेक्षा से ही किया गया जानना
 चाहिये । क्यों कि लोक में अन्य व्यवहारी जन इनमें आगमता का
 व्यवहार करते हुए देखे जाते हैं । इस प्रकार पूर्वाह्न या अपराह्न में
 किसी भी निर्दिष्ट समय में भारतादिक ग्रन्थों का ज्ञाता उनमें उपयुक्त
 होकर जो उनका वाचना आदि कार्य करता है—या जो श्रोताजन उप

પણ તે વખતે આ બતની આ બધી ક્રિયાઓ તેઓના પ્રત્યક્ષરૂપે જોવામાં
 આવે છે આ રીતે શ્રોતાઓ પણ તત્કાલીન થઈને સાલળવા માટે જે ચોગ્ય
 સમયે તેઓ હાથ જોડવારૂપ ક્રિયાઓ પણ કરે છે આ બતની ક્રિયાઓથી
 યુક્ત હોવા બદલ તે વાચનારા તેમજ સાલળનારાઓમાં નો આગમતા પણ
 છે કેમકે “ કિરિયા આગમો ન હોઈ ” ક્રિયા આગમ માનવામાં આવતી નથી
 આ સિદ્ધાન્તનું કથન છે “ નો આગમ ” માં નો શબ્દ આગમના એક દેશનો
 વાચક છે એટલા માટે ક્રિયારૂપ એકદેશમાં આગમનો સંપૂર્ણપણે અભાવ
 હોવાથી તેમાં આગમની એકદેશતા માનવામાં આવે છે ભારત વગેરે શ્રેયોમાં
 આગમતાનું કથન લોકની અપેક્ષાથી જ કરવામાં આવ્યું છે કેમકે લોકમાં
 જીલ્લો વ્યવહારી લોકો પણ એમાં આગમતારૂપ વ્યવહાર કરતા જોવાય છે આ
 રીતે પૂર્વાહ્ન કે અપરાહ્નમાં કોઈ પણ નિર્દિષ્ટ સમયમાં ભારત વગેરે શ્રેયો નો
 જ્ઞાતા તેઓમાં ઉપયુક્ત થઈને જે તેમનું વાચન વગેરે કામ કરે છે । તે

કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યમ્ન્યતે—યે ઇમે ચરકચીરિકાદયો યાવત્ પાપ્પડસ્થા
 ઉપયુક્તો યથાવસર ચદવશ્યમ્—ઈન્ડ્યા-જ્જલિ-હોમ-જપો-ન્દુરુક્કનમસ્કારાદિક ભાવ
 રૂપમાવશ્યક કુર્વન્તિ તેષા તત્ કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકમ્ ।

તત્ર-ઈન્ડ્યા-સન્ધ્યોપાસનમ્, અજ્જલિ-જલાજ્જલિ સૂર્યાય દીયતે, હોમ-
 નિત્યહવનમ્, જપ-ગાયત્રી, ઉન્દુરુક્ક-અય દેશીયઃ શબ્દ ધૂપાર્યકઃ, નમ-
 સ્કારઃ=વન્દનમ્, एतेषा चरकादिभि पापपण्डस्यैरवश्य क्रियमाणत्वादावश्य-
 कतम् । तदर्थोपयोगश्चादिपरिणामसद्भावात् भावत्वम् । चरकादीना तदर्थोप-

યુક્ત હોકર ઉન્હે સુનતે હેં વહ સત્ર વાચના સુનના આદિ કાર્ય નો
 આગમ કી અપેક્ષા સે લોકિક ભાવ આવશ્યક હૈ ।

જો ચરક ચીરિકાદિ જન ઉપયુક્ત હોકર અપને આવશ્યક કાર્ય
 સ્વરૂપ ઇન્ડ્યા, જ્જલિ, હોમ જપ, ઉન્દુરુક્ક, ઓર નમસ્કાર આદિ ભાવ
 રૂપ આવશ્યક કરતે હેં, ડનકે વે સત્ર કાર્ય કુપ્રાવચનિક ભાવ આવ
 શ્યક હેં સ.યા કી ઉપાસના કરના ઇન્ડ્યા હૈ, સૂર્ય કે લિયે જલકી
 અજલિ દેના અજ્જલિ હૈ, નિત્ય હવન કરના હોમ, ગાયત્રી કા પાઠ
 કરના જપ, ધૂપ કા યેના ઉન્દુરુક્ક ઓર નમસ્કાર કરના વન્દના
 કર્મ હ । વે સત્ર કાર્ય ચરકાદિ જનો દ્વારા પ્રતિદિન અવશ્ય કરને
 યોગ્ય હોને હેં-અતઃ ડનમેં ડન્હી કી માન્યતાનુસાર આવશ્યકપના
 કહા ગયા હૈ ડનકે કરને મેં ડનકે અન્તઃ કારણ મેં ડનકે અર્થ કે પ્રતિ
 ઉપયોગ ઇવ શ્રદ્ધા ઓદિરૂપ પરિણતિ કા સદ્ભાવ પાયા જાતા હૈ । ઇસ

ને શ્રોતાઓ ઉપયુક્ત થઈને તેમણે શ્રવણ કરે છે તે બધું વાચન શ્રવણ
 વગેરે ઢર્થ નો આગમની અપેક્ષાએ લોકિક ભાવ આવશ્યક છે

ને ચરક ચારિક વગેરે લોકો ઉપયુક્ત થઈને આવશ્યક કાર્યસ્વરૂપ
 ઇન્ડ્યા, અજ્જલિ, હોમ, જપ, ઉન્દુરુક્ક અને નમસ્કાર વગેરે ભાવરૂપ
 આવશ્યકો કરે છે, તેઓના આ બધા કાર્યો કુપ્રાવચનિકભાવ આવશ્યક
 છે મધ્યાની ઉપાસના કરવી એ ઇન્ડ્યા છે, સૂર્યને માટે પાણીની અજ્જલિ
 આપવી તે અજ્જલિ છે, દરરોજ હવન કરવો તે હોમ, ગાયત્રી પાઠ કરવો
 તે જપ અને ધૂપ કરવો તે ઉન્દુરુક્ક અને નમસ્કાર એ વદના કર્મ છે
 આ બધા ઢર્થો ચરક વગેરે લોકો વડે હમેશા અવશ્ય કરવાયોગ્ય હોય છે
 એટલા માટે આમા તેમની માન્યતા સુજ્ઞ બ આવશ્યકપણુ કહેવામા આવ્યુ
 છે એમના આચરણથી તેમના હૃદયમા તેના અર્થ પ્રત્યે ઉપયોગ અને શ્રદ્ધા
 વગેરે રૂપ પરિણતિ નો સદ્ભાવ મળે છે આ અપેક્ષાએ ત્યા ભાવતા અને

યોગરૂપો દેશ આગમ, કરશિરઃ સયોગાદિદ્વિયારૂપો દેશમ્તુ નોઆગમ, તથા ચ દૈશિકાગમાભાવમાત્રિત્ય નો આગમત્વમપિ, નોશબ્દસ્યાત્ત્રાપિ દેગનિષ ધપરત્વાત્ ।

લૌકિક કુમાવચનિક ચ નોઆગમતો ભાવાવશ્યક ન ધર્મપદવાચ્યમ્, તત્ત્વ જિનાજ્ઞાયા અભાસાદિતિ ચોચમ્ ।

અથ કિં લોકોત્તરિક નોઆગમતો ભાવાવશ્યકમ્ ? ઉચ્યતે અનુયોગદ્વારે ।

“ જળ્ણ ઇમે સમણે વા સમણી વા સાવઓ વા સાવિયા વા તચ્ચિત્તે તમ્મણે

અપેક્ષા સે વર્હા ભાવતા ઓર ંકદશ સે આગમતા ંહી હૈ । ંયોં કિ હાથોં કા જોડના નમસ્કાર કરના આદિ રૂપ જો ંહી ક્રિયાં હૈ ંે મથ નો આગમ હૈ । ંસ અપેક્ષા ંનમૈં પૂર્ણરૂપ સે આગમપનો ન હોકર આગમ કી ંક દેશતા હી હૈ ચરક ચીરીકાદિ ંદારા માન્ય ગ્રન્થોં કી નિર્દિષ્ટ ક્રિયાઓં કા હી વહા સદ્ભાવ હૈ ંર ંહીં કૈ અર્થ મૈ ંનકા ઉપયોગાદિરૂપ પરિણામ હૈ । ંસલિયે ંે મત્ત ચરક ચીરીકાદિ કી ક્રિયાં નો આગમ કી અપેક્ષા સે ભાવ આવશ્યક હૈ । ંહા પર ંહી નો શબ્દ દેશ નિષેધ પરક હૈ અર્થાત્ આગમ કૈ ંક દેશ કા વાચક હૈ ંે લૌકિક ંર કુપ્રાવચનિક જિન્હૈં નો આગમ કી અપેક્ષા સે ભાવાવશ્યક રૂપ મૈં પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ંર્મપદ કૈ વાચ્ય નહીં હૈ । ંયોં કિ ંન કી આરાધના સે જીવોં કૈ કર્મોં કી નિર્જરા નહીં હોતી હૈ । અતઃ તીર્થ કર પ્રભુ ને ંનકૈ આરાધન કરને કી આજ્ઞા પ્રદાન નહીં કી હૈ ।

નો આગમ કી અપેક્ષા સે લોકોત્તરિક ભાવ આવશ્યક ંસ પ્રકાર

એકદેશથી આગમતા પણ છે કેમકે હાથ જોડવા, નમસ્કાર કરવા વગેરે રૂપ જે ક્રિયાઓ છે તે સર્વે નોઆગમ છે આ દૃષ્ટિએ એમનામા આગમતા સપૂજ્ય પણ નથી શકત આગમ ॥ એકદેશના જ છે ચરક ચીરિક વગેરે વડે માન્ય થયોની નિર્દિષ્ટ ક્રિયાઓનો જ ત્યા સદ્ભાવ છે અને તેમના જ અર્થમા તેમનો ઉપયોગ વગેરેરૂપ પરિણામ છે એટલા માટે આ બધા ચરક ચીરિકા વગેરેની ક્રિયાઓ નો આગમની અપેક્ષાથી ભાવ આવશ્યક છે અહીં પણ નો શબ્દ દેશનિષેધ પરક છે એટલે કે આગમના એકદેશનો વાચક છે આ લૌકિક અને કુપ્રાવચનિકો જેમને નો આગમની દૃષ્ટિએ ભાવાવશ્યક રૂપમા પ્રગટ કરવામા આગમ છે-ધર્મપદના વાચ્ય નથી કેમકે એમની આરાધનાથી જીવોના ંર્મોની નિર્જરા થતી નથી, એટલા માટે તીર્થકર પ્રભુએ એમને આરાધવાની આજ્ઞા કરી નથી

નો આગમની અપેક્ષાએ લોકોત્તરિક ભાવ આવશ્યક આ પ્રમાણે છે — જળ્ણ ઇમે સમણે વા સમણી વા સાવઓ વા સાવિયા વા તચ્ચિત્તે તલ્લેસે

तल्लेसे तदञ्जवमिए तत्तिव्वञ्जवसाणे तदद्वोउत्ते तदप्पियरुणे तव्भावाणा
मात्रिए अण्णत्थ कत्थइ मण अरुरेमाणे उभभोकाल आवस्सय करेइ, से त लोगु
त्तरिय भावावस्सय, से त नोआगमतो भावावस्सय, से त भावावस्सय ॥'

उया-यत्पलु श्रमणो वा श्रमणी वा श्रावको वा श्राविका वा तच्चित्तस्तन्म-
नस्कस्तल्लेश्यस्तद्व-वासित्तस्तत्तीत्रा यस्सायस्तदयोपयुक्तस्तदपित्तरणस्तद्भावना-
भावित अन्वय कुत्रचिन्मनोऽकुर्वन् उभयकाल यत् आवश्यक सामायिकादि करोति
तेषां तल्लोकोत्तरिक भावावस्सयम् । तेषां तद् नोआगमतो भावावस्सयम् तदे-
तद्भावावस्सयम् ।

अत्राप्यवश्य करणीत्वादावश्यकं च, तदर्थं वियोगश्रद्धादिपण्डिगामन्य तद्भा-
वाद् भावत्वम्, रजोत्तरणप्रमार्जिनाव्यापारयथारत्तिरुच्यन्दनररणानन्तर सन्निधि

है-जण्ण इमे ममणे वा ममणी वा सायओ वा साविया वा तच्चित्ते
तम्मणे तल्लेसे तदञ्जवमिए तत्तिव्वञ्जवसाणे तदद्वोउत्ते तदप्पिय-
करणे तव्भावाणा मात्रिए अण्णत्थ कत्थइ मण अरुरेमाणे उभभोकाल
आवस्सय करेति, से त लोगुत्तरिय भावावस्सय, से त नो आगमतो
भावावस्सय से त भावावस्सय (अनुयोगद्वार)

श्रमण अथवा श्रमणी श्रावक अथवा श्राविका जो सामायिक आदि
आवश्यक क्रियाओं को तच्चित्त होकर (उनमें ही चित्त लगाकर) तद्भन
होकर उनमें ही अन्त करणको एकाग्ररूप उत्पत्ति सूत्रमें कथित विधिके
अनुसार दोनों वालों में करतेहैं वह उनकी कार्य नो आगम की अपेक्षा
से लोकोत्तरिक भाव आवश्यक है । ये सामायिक आदि क्रियाओं
अवश्य करने योग्य होने से आवश्यक है । कर्त्ता का उनके अर्थ में
उपयोग रूप एव श्रद्धा आदि रूप परिणाम का सङ्गात होने से उनमें

तदञ्जवमिए तत्तिव्वञ्जवसाणे तदद्वोउत्ते तदप्पियकरणे तव्भावाणा मात्रिए
अण्णत्थ कत्थइ मण अरुरेमाणे उभभोकाल आवस्सय करेति, से त लोगुत्तरिय
भावावस्सय, से त नो आगमतो भावावस्सय, से त भावावस्सय (अनुयोगद्वार) ।

श्रमण अथवा श्रमणी श्रावक अथवा श्राविका जो सामायिक आदि आवश्यक
क्रियाओंके तच्चित्त धरने (तेमनामा भन पराधीने) तच्चित्त धरने
तेमनामा भन लगावीने वगेरे सूत्रमें उचित विधि मन्थन अने व
कर छे तेमनु ते अर्थ नो आगमनी अपेक्षाके क्षेत्रान्ति आव
छे आ सामायिक वगेरे क्रियाओंके अवश्य तथा योग्य होवानी आवश्यक छे
कर्त्तानो तेमना अर्थमा उपयोग्य पण्डिगामनो अभाव होवानी आवश्यक
भावता पण्ण छे रणेत्तरणया भूमि वगेरेनु प्रमाणे उक्त, उक्त उक्त

योगरूपो देश आगम, करशिरः गयोगार्दिगारूपो देशस्तु नोआगम, तथा च देशिकागमाभावमाश्रित्य नो आगमत्वमपि, नोशब्दम्यात्रापि देशनिषेधपरत्वात् ।

लौकिक कुप्रावचनिक च नोआगमतो भावावश्यक न धर्मपदवाच्यम्, तत्र जिनाज्ञाया अभावादिति बोध्यम् ।

अथ किं लोकोत्तरिक नोआगमतो भावावश्यकम् ? उच्यते अनुयोगद्वारे ।

“ जण्ण इमे समणे वा समणी वा सावओ वा साविया वा तच्चित्ते तम्मणे

अपेक्षा से वहाँ भावता और एकदश से आगमता भी है । क्यों कि हाथों का जोड़ना नमस्कार करना आदि रूप जो भी क्रियाएँ हैं वे मघ नो आगम हैं । इस अपेक्षा इनमें पूर्णरूप से आगमपना न होकर आगम की एक देशता ही है चरक चीरीकादि द्वारा मान्य ग्रन्थों की निर्दिष्ट क्रियाओं का ही वहाँ सङ्गात है और उर्त्तों के अर्थ में उनका उपयोगादिरूप परिणाम है । इसलिये ये मघ चरक चीरीकादि की क्रियाएँ नो आगम की अपेक्षा से भाव आवश्यक हैं । यहा पर भी नो शब्द देश निषेध परक है अर्थात् आगम के एक देश का वाचक है ये लौकिक और कुप्रावचनिक जिन्हें नो आगम की अपेक्षा से भावावश्यक रूप में प्रकट किया गया है धर्मपद के वाच्य नहीं हैं । क्यों कि इन की आराधना से जीवों के कर्मों की निर्जरा नहीं होती है । अत तीर्थ कर प्रभु ने इनके आराधन करने की आज्ञा प्रदान नहीं की है ।

नो आगम की अपेक्षा से लोकोत्तरिक भाव आवश्यक इस प्रकार

એકદેશથી આગમતા પણ છે કેમકે હાથ જોડવા, નમસ્કાર કરવા વગેરે રૂપ જે ક્રિયાઓ છે તે સર્વે નોઆગમ છે આ દૃષ્ટિએ એમનામા આગમતા સપૂણ્ણપણ્ણે નથી રૂકત આગમ ॥ એકદેશતા જ છે ચરક ચીરિક વગેરે વડે માન્ય ગ્રંથોની નિર્દિષ્ટ ક્રિયાઓનો જ ત્યા સદ્ભાવ છે અને તેમના જ અથ મા તેમનો ઉપયોગ વગેરેરૂપ પરિણામ છે એટલા માટે આ બધા ચરક ચીરિકા વગેરેની ક્રિયાઓ નો આગમની અપેક્ષાથી ભાવ આવશ્યક છે અહીં પણ નો શબ્દ દેશનિષેધ પરક છે એટલે કે આગમના એકદેશનો વાચક છે આ લૌકિક અને કુપ્રાવચનિકો જેમને નો આગમની દૃષ્ટિએ ભાવાવશ્યક રૂપમા પ્રગટ કરવામા આવ્યા છે—ધર્મપના વાચ્ય નથી કેમકે એમની આરાધનાથી જીવોના કર્મોની નિર્જરા થતી નથી, એટલા માટે તીર્થકર પ્રભુએ એમને આરાધવાની આજ્ઞા કરી નથી

નો આગમની અપેક્ષાએ લોકોત્તરિક ભાવ આવશ્યક આ પ્રમાણે છે —
જણ્ણ इमे समणे वा समणी वा सावओ वा साविया वा तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे

पदविधायक्यकरणपायाः क्रियाया अनागमत्तान्नोभागमन्व गोप्यम्, अत्रापि नो-गच्छन् वेगाः मगिषेधस्तान् । इदम् ओशोरिक नो आगमतो भागव इत्यक धर्मपदवा-पम् तत्र विप्रेतया भगवतोऽर्जुन आतायाः यद्गारान् । मन्वेऽपि धर्मलक्षणमेवमाहुः—

“ वाचनाद्विद्वान्नुष्ठान यथोदितम् ।

मैत्र्यादिभासमिथं तद्धर्म इति कीर्त्यते ” ॥ १ ॥

भासना भी है रजोहरण से भूमि आदि का प्रमाजन करना, वटना आदि कृति कर्म करना आदि विधि पूर्वक जो पद विर आवश्यक करने रूप क्रियाएँ हैं वे नए “ क्रिया आगमो न होइ ” इस नियम के अनुसार आगम नहीं हैं। अतः इन में आगम के एक देश अभाव ही अपेक्षा से नो आगमता है। यहाँ पर भी नो लब्ध सम्पूर्ण रूप से आगमका प्रतिपे १ परक न होकर उसके एक देश का ही प्रतिपे १क है। अन के सामायिक ज्ञानि पदविर आवश्यक नोआगम की अपेक्षा से लोकात्तरीक भास आवश्यक है और इनके ही आराधन करने की जिनेन्द्र देवने मन्व जीवों को आज्ञा दी है। कारण कि ये धर्मपद के वाच्य है इनकी आराधना से मन्वजीवों के कर्मों की निर्जरा होती है।

दूसरों ने भी इस प्रकार धर्म का लक्षण कहा है—

वाचनाद्विद्वान्नुष्ठान यथोदितम् ।

मैत्र्यादिभासमिथं तद्धर्म इति कीर्त्यते ॥

कर्म वाच्य वा वगेऽ विधिपूर्वक वे पदविध आवश्यक करवाइय डिजाओ छे तेओ सर्वे “क्रिया आगमो न होइ” आ नियम मुज्जण आगम नथी अटल भाटे अमनामा आगमना अकदेश अलावनी अपेक्षाधी नो आगमता छे अर्ही पण नो शण्ड सपूर्ण इथी आगमना प्रतिषेध परउ नथी पण तेना अकदेशनो अ प्रतिषेधक छे अटला भाटे सामायिक वगेरे आ पदविध आवश्यको नो आगमनी अपेक्षा अ लोकात्तरि अलाव आवश्यक छे अगे जिनेन्द्र देवे अमनी आराधना करवानी अ लव्य लुपोने आज्ञा करी छे उसके आ अधा धमपना वाच्य छे अमनी आराधनाथी लव्य लुपोना कर्मनी निर्जरा थाय छे

“ अये पण आ रीते धर्मनु लक्षण अताओ छे —

१. वाच्यत्व २. अन यथोदितम् ।

“ भासमिथं तद्धर्म इति कीर्त्यते ॥

अस्यव्यारवाचननादिति न्यग्रलोपे पञ्चमी, वचनमनुसृत्येत्यर्थः । वचनम्—
अमागः । कीदृशाद् वचनादिन्या— अविच्छेदात्—वपच्छेदतापेषु अविप्रयमानात्,
तत्र विधिप्रतिषेधयोर्वाङ्मनेनोपवर्णनं यदशुद्धिः, परे पदे तद्योगक्षेमकारिक्रियोपद-
र्शनं हेदशुद्धिः, मित्रिप्रतिषेधवद्विषयाणां जीवादिपदार्थानां च स्याद्वादपरीक्षया
याथात्म्येन समर्थनं तापशुद्धिः । तन्वाविरुद्धं वचनं जिनप्रणीतमेव, निमित्तशुद्धेः

अविच्छेद आगम से प्रयुक्त एव मैत्री आदि भावनाओं से मिश्रित
जो अनुष्ठान है वह धर्म है । उपसर्ग—वचन शब्द का अर्थ आगम है ।
आगम में अविच्छेदता रूप, ताप, और छेद द्वारा परीक्षित होने पर ही
आती है । जिस प्रकार सुवर्ण की परीक्षा कप-कमाटी पर करने से
ताप-अग्नि से तपाने से और छेद-छैनी वगैरह द्वारा काटने से होती
है, उसी प्रकार आगम की शुद्धि की परीक्षा भी इन तीन उपायों द्वारा
की जाती है । विधि और प्रतिषेध का वदुलना से जिस शास्त्र में
वर्णन है, वह शास्त्ररूप से शुद्ध कहा जाता है । पद पद पर जिस
शास्त्र में उनके योग और क्षेमकरि क्रियाओं का कथन क्रिया गया
मिलता है वह शास्त्र छेदसे शुद्धमाना जाता है । विधि एवं प्रतिषेध तथा
इन के विषयभूत जीवादिक पदार्थों का स्याद्वाद ढग से जहा पर यथार्थ
समर्थन क्रिया जाता है सप्तभगी द्वारा जहा पर इनका सुन्दर शैली से
विवेचन करने में आता है वह शास्त्र तप उपायद्वारा शुद्ध माना जाता

अविच्छेद आगमथा यथोक्तं अने मैत्री वगैरे भावनाओधी मिश्रित के
अनुष्ठान छे ते धर्म छे उपसर्ग—वचन शब्दने अथ आगम छे आग
ममा अविच्छेदता, रूप, ताप अने छेद वडे परीक्षित तथा पछी न आवे छे
नेम मोनानी परीक्षा कप-कमाटी उपर तसवाधी ताप अग्नि उपर तपाववाधी
अने छेद-छीण्णी वगैरेधी उपवाधी होय छे, तेमन आगमनी शुद्धिनी परीक्षा
पद्यु आ त्रणे उपयो वडे उरवामा आवे छे विधि अने प्रतिषेधनु मोटा
प्रमाणमा के शास्त्रमा वर्णन छे, ते शास्त्र न्ययी शुद्ध उडेवाय छे उगले ने
पगले के शास्त्रमा अमेना योग अने क्षेमकरि क्रियाओनु ध्यान उरवामा
आव्यु छे ते शास्त्र उदधी शुद्ध मानवामा आवे छे विधि अने प्रतिषेध
तेमन अमेना विषयभूत एव वगैरे पदार्थाने स्याद्वादना इपधी न्या यथार्थ
वर्णन उरवामा आवे छे, सप्तभगी वडे न्या सुन्दर शैलीमा अमेनु विवेचन
उरवामा आवे छे, ते शास्त्र तप उपायवडे शुद्ध मानवामा आवे छे आ त्रणे

पट्टविधापश्यकरुणरूपाया' क्रियाया अनागम'रान नोभागमन्व गो-यम्, अत्रापि नो-शब्दस्य देशतः प्रतिषेधस्तान् । उदम् लोकोत्तरिक नो भागमतो भावात् श्यक धर्मपदवाच्यम् तत्र विप्रेयतया भगवतोऽर्हत आतावा' गद्गातान् । अन्येऽपि धर्मलक्षणमेवमाहुः—

“ उचनादविरुद्धाद्य-दनुष्ठान यथोदितम् ।

मैत्र्यादिभाषसमिश्रं तद्धर्म इति कीर्त्यते ” ॥ १ ॥

भावता भी है रजोहरण से भूमि आदि का प्रमाज्जन करना, बदना आदि कृति कर्म करना आदि विधि पूर्वक जो पट्ट विध आवश्यक करने रूप क्रियाएँ हैं वे नर “ किरिया आगमो न होइ ” इस नियम के अनुमार आगम नहीं हैं। अत इन में आगम के एक देश अभाव की अपेक्षा से नो आगमता है। यहाँ पर भी नो लब्ध सम्पूर्ण रूप से आगमका प्रतिषेध परक न होकर उसके एक देश का ही प्रतिषेधक है। अत ये सामायिक आदि पट्टविध आवश्यक नो आगम की अपेक्षा से लोकोत्तरीक भाव आवश्यक है' और इनके ही आराधन करने की जिनेन्द्र देवने भव्य जीवों को आज्ञा दी है। कारण कि ये धर्मपद के वाच्य है इनकी आराधना से भव्यजीवों के कर्मों की निर्जरा होती है।

दूमरों ने भी इस प्रकार र्म का लक्षण कहा है—

उचनादविरुद्धाद्यदनुष्ठान यथोदितम् ।

मैत्र्यादिभाषसमिश्रं तद्धर्म इति कीर्त्यते ॥

कर्म आथ वा वगेरे विधिपूर्वक नो पट्टविध आवश्यक करवाइय कियाओ छे तेओ सर्वे “ किरिया आगमो न होइ ” आ नियम मुज्जण आगम नहीं ओटला भाटे ओमनामा आगमना ओकदेश अलावनी अपेक्षाधी ना आगमता छे अर्ली पल नो शब्द संपूर्ण इथी आगमना प्रतिषेध परक नहीं पल तेना ओकदेशनो न प्रतिषेधक छे ओटला भाटे समाधिउ वगेरे आ पट्टविध आवश्यक नो आगमनी अपेक्षा ओ लोकोत्तरिक भाव आवश्यक छे अने जिनेन्द्र देवे ओमनी आराधना करवानी न लब्ध ओवोने आज्ञा करी छे उभके आ अधा धर्मप ना वाच्य छे ओमनी आराधनाधी लब्ध ओवोना कर्मोनी निर्जरा थय छे

भीनओओ पल आ रीते धर्मनु लक्षण पताओ छे —

उचनादविरुद्धाद्यदनुष्ठान यथोदितम् ।

मैत्र्यादि भवसमिश्रं तद्धर्म इति कीर्त्यते ॥

कारणस्वरूपानुविधायि कार्यं, तत्र दुष्टकारणाऽऽख्य कार्यमदुष्ट भवितुमर्हति, निम्नरीजादिषु यष्टिरिवेति । अन्यथा-कारणव्यवस्थोपरमप्रसङ्गात् ।

यच्च-यदृच्छाप्रणयनप्रवृत्तेषु तीर्थान्तरीयेषु रागादिमत्स्वपि घृणाक्षरोत्किरण

रागद्वेषमोहरूपान् अन्तरगरिषून् इति जिनः ” राग द्वेष आदिक जो अन्तरग शत्रु है इन पर जिसने विजय पायी है वे ही जिन कहलाते हैं जिस प्रकार तपन (सूर्य) दहन (अग्नि) आदि शब्द यथोनाम तथा गुण वाले हुआ करते हैं, इसी प्रकार “ जिन ” यह नाम भी यथा नाम तथा गुण वाला है यथा नाम तथा गुण का होना ही नाम की सार्थकता है । जिन्होंने इन अन्तरग शत्रुओं को परास्त नहीं किया उनके वचनो में परस्पर अविरोद्धार्थता नहीं आसकती है-ज्यो कि वहा पर निमित्त की शुद्धि नहीं हैं । इसीलिये अजिन प्रणीत वचन अविरोद्ध नहीं होते हैं । लोक में भी जिस प्रकार नीम के बीज से इक्षु की उत्पत्ति देखने में नहीं आती उसी प्रकार सदोष कारण से उत्पन्न हुआ कार्य भी निर्दोष नहीं होना है । कार्य में निर्दोषता कारण कि निर्दोषता पर आधार रखती है । न्याय शास्त्र का भी यही सिद्धान्त है “ कारण स्वरूपानुविधायि कार्य ” कि कार्य, कारण के स्वरूप का अनुविधायक होता है । यदि इस प्रकार की व्यवस्था न मानी जावे तो फिर कार्य कारण भाव की व्यवस्था ही नहीं बन सकती है । हर एक पदार्थ

“ जयति रागद्वेषमोहरूपान् अन्तरगरिषून् इति जिन ” रागद्वेष वगैरे के अन्तरग शत्रुओं के तेमना उपर जेभले विजय भेजव्यो के तेओ न जिन कडेवाय के जेम तपन (सूर्य) दहन (अग्नि) वगैरे शब्दो नाम जेवा न गुणवाणा डाय के, ते प्रभावे न “ जिन ” आ नाम पण नाम प्रभावे न गुणवाण के जेवु नाम तेवा गुणो डोवा के न नामनी सार्थकता के जेभले आ अन्तरग शत्रुओने डराव्या नथी तेमना वचनोभा परस्पर अविरोद्धार्थता आवी शकती नथी जेम के त्या निमित्तनी शुद्धि नथी अटला भाटे अजिन प्रणीत वचनो अविरोद्ध डोना नथी लोकमा पण जेम बीमडाना पीथी शेरडीनी उत्पत्ति जेवामा आवती नथी तेमन सदोष कारणथी उत्पन्न थयेतु कार्य पण निर्दोष डोतु नथी कार्यमा निर्दोषता कारणनी निर्दोषता उपर आधारित डाय के न्यायशास्त्रनो पण अे सिद्धात के, “ कारणस्वरूपानुविधायिकार्य ” के कार्य कारण भाव स्वरूपनो अनुविधाता डाय के जे आ जगतनी व्यवस्था मानवामा आवे

वचनस्य हि वक्ता निमित्तमन्तरङ्गम्, तस्य च रागद्वेषमोहपारगन्ध्यमशुद्धिः, तेभ्यो वितथवचनप्रवृत्ते, न चैषाऽशुद्धिर्जिने भगति, जिनत्वविरोधात्, जयति रागद्वेष मोहरूपान्तरज्ञान विपूनिति शब्दादीनिपपत्ते. तपनदहनादिशब्दात्, अन्यर्थतया चास्याभ्युपगमात्, निमित्तशुद्ध्यभावाद् नाजिनप्रणीतवचनमविरुद्धम् । यत—
है । इन तीनों उपायों से परीक्षित आगम ही परिशुद्ध कहा गया है ।
अविरुद्ध वचन का नाम ही आगम है ।

इन कथादिकों से जो आगम में शुद्धता आती है उसका कारण निमित्त की शुद्धि है । निमित्त शुद्ध जिन प्रणीत वचन ही हैं । अन्य प्रणीत वचन नहीं । निमित्त में भी शुद्धि का कारण राग, द्वेष और मोह का अभाव है । वचन का अन्तरंग कारण वक्ता ही हुआ करता है वक्ता की प्रमाणता से ही वचन-आगम में प्रमाणता आती है इसी लिये राग द्वेष आदि से क्लृप्तित व्यक्तियों के वचन प्रमाण कोटि में नहीं आते हैं । क्यों कि राग द्वेष आदिक सद्भाव में वचनों में परस्पर विरुद्ध अर्थ की प्ररूपकता स्वयं ही आ जाती है अतः यह निश्चित सिद्धान्त है कि जहाँ पर इनका सर्वथा अभाव है वही सच्चा आगम का प्रणेता हो सकता है । और उसी आगम में अविरुद्धता है । ऐसा अविरुद्ध आगम जिन प्रणीत ही हो सकता है क्यों कि उनमें पूर्वोक्त राग द्वेष आदि द्वारा अशुद्धि का सर्वथा अभाव हो चुका है इस के सर्वथा दूर होने से ही वे “जिन” इस प्रकार की सज्ञा वाले हुए हैं । “जयति

उपायोऽथी परीक्षित आगम च परिशुद्ध इडेवामा आन्धे छे अविरुद्ध वचनतु नाम च आगम छे कथ वगेरेथी आगममा जे शुद्धता आवे छे तेतु कारण निमित्तनी शुद्धि छे जिन प्रणीत वचनो च निमित्तशुद्ध छे धीनन्धे वडे प्रणीत वचनो नहि निमित्तमा पणु शुद्धितु कारण राग द्वेष अने मोहने। अलाव छे वचनतु अतरंग कारण मोहनार च होय छे मोहनारा (वक्ता) नी प्रमाणताथी च वचन-आगममा प्रमाणता आवे छे अटला भाटे च राग द्वेष वगेरेथी क्लृप्तित भाणुसोना वचनो प्रमाणु कोटिमा आवता नथी केमके रागद्वेष वगेरे महुलाव वचनोमा परस्पर विरुद्ध अर्थनी प्ररूपता नते च आवी नय छे अटला भाटे आ निश्चित सिद्धात छे के न्यां अमनो स पूरुं अलाव छे ते च साथे आगमनो प्रणेतता थर् शके छे अने ते आगममा च अविरुद्धता छे अेषु अविरुद्ध आगम जिनप्रणीत च थर् शके छे केमके तेमनामा पूर्वोक्त रागद्वेष वगेरे वडे अशुद्धिने। स पूरुं पणु अलाव थर् शक्यो छे अशुद्धि सर्व रीते मटी चवाथी तेन्धे ‘जिन’ सर छे

कीदृशमनुष्ठान धर्म ? इत्याह—‘ यथोदितम् ’ यथा येन प्रकारेण काग्या
 यानानुसाररूपेण—उदित=प्रतिपादित, तत्रैवाविरुद्धरचने इति गम्यम् ।

अन्यच्च—

जो जह्वाय न गुणइ, मिच्छादिद्वी तनो उ को अनो ? ।

वड्डेइ मिच्छत्त, परस्स सक जणेमाणो ॥ इति ।

आया—यो यथावाद न करोति, मिच्छादृष्टिस्ततस्तु कोऽन्यः ।

वर्धयति मिच्छात्त्वं परस्य गङ्गाजनयन् ॥ इति ।

पुनरपि कीदृशमित्याह—‘ मैत्र्यादिभावसमिश्रम् ’ इति । मैत्र्यादयः=मैत्री
 मुदिता करुणा माध्यस्थलक्षणा ये भावाः=अन्तःकरणपरिणामा, तत्पूर्वकाश्च

न्याय से कही २ अविच्छेद अर्थ प्रतिपादकता सो वह उनकी निज की
 घर की वस्तु नहीं है—उसका मूल लोत अविच्छेद अर्थ का प्ररूपक जिन
 प्रणित आगम ही है । यही बात मार्गानुसारी बुद्धिवाले व्यक्ति में भी
 समझ लेनी चाहिये । वह जो कुछ नी सत्यार्थ कहता है उसका मूल
 कारण जिनप्रणीत आगम का महारा ही है । श्लोक कथित “यथोदित”
 पद इस बात का समर्थन करता है कि देश काल आदि की आराधना
 के अनुसार जो आचार-अनुष्ठान प्रतिपादित किया गया है । उससे जो
 अविच्छेद रहा गया है—वही धर्म है इससे विपरीत नहीं । “ मैत्र्यादि
 भाव समिश्रम् ” इस पद द्वारा सूत्रकार यह प्रतिपादित करते हैं कि
 वह अनुष्ठान मैत्री, मुदिता, करुणा और माध्यस्थ इन चार लक्षणों से
 युक्त होता है । ये धर्म के ग्राह्य चिह्न हैं । इनके सङ्घाव से आत्मा में

अर्थ प्रतिपादकता पणु उ ते तेमनी पोतानी वस्तु तो नथी न उमके तेना
 भूणिया तो अविच्छेद अर्थना प्रइपक जिनप्रणीत आगममा न छे अे न वात
 मार्गानुसारी बुद्धिवाणी व्यक्तिमा पणु समल लेणी नेछये ते ने कछ पणु
 सत्यार्थ कहे उ तेतु भूण कारण जिन प्रणीत आगम न उ श्लोक कथित
 “ यथोदित ” पद आ वात ने स्पष्ट उरे छे उ देशकाल वगेरेनी आराधना
 मुज्ज न्ने आच्छान-अनुष्ठान-प्रतिपादित करवामा आण्ये छे, तेनाथी ने अ-
 विच्छेद कहेवामा आण्ये छे ते धर्म छे अेनाथी विपरीत नहि “ मैत्र्यादि
 भावसमिश्रम् ’ आ पवडे सूत्रकार आ वात स्पष्ट उरे छे के ते अनुष्ठान
 मैत्री, मुदिता, करुणा अने माध्यस्थ आ चार लक्षणोथी युक्त होय छे आ
 अथा धर्मना ग्राह्य चिन्हो छे अेमना सङ्घावथी आत्माभा धर्मनु अस्तित्व

व्यवहारेण क्वचित् किंचिदपिरुद्धमपि वचनमुपलभ्यते, मार्गानुसंगिगुद्धौ वा प्राणिनि क्वचित्, तदपि जिनमणीतमेव, तन्मूलकत्वात् तस्य ।

हर एक का कार्य और कारण हो जायगा । अतः आगमस्य कार्य की शुद्धि के लिये निमित्त रूप कारण शुद्धि का होना अवश्य आवश्यकीय माना गया है ।

प्रश्न—आपने जो कहा कि आगम में अविरुद्धता उसके कारणभूत प्रणेता के अधीन है—मो घट वात रमें मान्य है । परन्तु इससे यह वात तो सिद्ध नहीं होती है कि वे अविरुद्ध वचन जिन भगवान के ही हैं' अन्य के नहीं—कारण कि अन्य सिद्धान्तकारों के वचनों में भी किसी अंशसे अविरुद्धार्थता देखी जाती है । अतः उन्हें सदीप मान कर आप जो उनमें अनाप्तता सिद्ध करते हैं मो घट वात कैसे मान्य हो सकती है ?

उत्तर—शका तो ठीक है—परन्तु विचार करने से इतका उत्तर भी सहजरूप में मिल जाता है । अन्य सिद्धान्तकारों ने जो कुछ रचनाएँ की हैं—वे सब उन्होंने ने अपनी इच्छानुसार ही की हैं । अपनी निज कल्पना में जो कुछ उन्हें सूझा वही उन्होंने ने लिखा है । उनकी रचनाओं में पूर्वापर विरोध स्पष्ट प्रतीत होता है इससे उनमें रागादिक दोषों का अस्तित्व सिद्ध होता है । अब रही उनके वचनों में घुणाक्षर

नहि तो त्रयं कारणं तावन्ती व्यवस्था णी शके तेम नथी दरेड पकार्थं दरे डनु कार्यं अने कारणं यथं जशे अेटला भाटे आगमउप कार्यनी शुद्धि भाटे निमित्तइप कारणं शुद्धि यवी अोच्छसपले आवश्यकीय मानवामा आवी छे

प्रश्न—तमे कछु डे आगममा अविरुद्धता तेना कारणभूत प्रणेताना अधीन छे—अे वात अेमने मान्य छे पणु अेनाथी आ वात तो सिद्ध थती नथी डे ते अविरुद्ध वचनो जिन भगवानना ज छे, णीनअेना नहि डेमके णीन सिद्धांतकारोना वचनोमा पणु डेअं पणु अशे अविरुद्धार्थता जेवामा आवे छे अेटला भाटे तेमने दोषयुक्त भानीने तमे जे तेमनामा अनाप्तता सिद्ध करे छे आ वात केवी रीते मान्य थधं राटे तेम छे !

उत्तर—शका तो हीन छे, पणु विचार करवाथी आने जवाण पणु सरण रीते भणी शके तेम छे णीन सिद्धान्तकारोने जे रचनाओ करी छे ते अधी तेमछे पोतानी ध्विछा मुजण ज करी छे पोतानी कल्पनाथी जे कधं तेमने योग्य लाग्यु ते तेमछे लज्यु छे तेमनी रचनाओमा पूर्वापर विरोध स्पष्ट रीते देखाअं आवे छे अेनाथी तेओमा राग वगेरे दोषो छे अेवी वात सिद्ध थाय छे डवे घुणाक्षर न्यायथी डेअंके डेअंके रवाने तेमना

पञ्चमी, तथा च-उचनप्रयोज्यप्रवृत्तिरत्व लक्षणमिति न कुत्राप्यव्याप्तिदोषावशाशः
प्रीतिभक्त्यसद्गानुष्ठानानामपि उचनप्रयोज्यत्वाऽनपायादिति ।

किं च--हिंसादिपापपरिहारो वर्मसिद्धेरिन्द्रिमित्यार्हता स्वीकुर्वति ।
तथा चोक्तम्-

औदार्यं दाक्षिण्य पापजुगुप्साऽथ निर्मलो बोधः ।

लिङ्गानि धर्मसिद्धेः, प्रायेण जनप्रियत्व च ॥ इति ।

पापजुगुप्सा=पापपरिहारः ।

पदकायत्रयमाध्य प्रतिमापूजन कुर्वता धर्मसिद्धि कथं स्यादिति विचारयन्तु
सुधिय । अपर च -

प्रतीत नहीं होता है क्यों कि वचनानुष्ठान धर्म का अर्थ वचन के
अनुसार होने वाला अनुष्ठान धर्म है उसमें कोई जातका दोष
नहीं आता है । ”

किंच--हिंसादिक पांच पापों का परित्याग वर्म सिद्धि का चिह्न
है इस प्रकार की मान्यता जैनियों की है । शास्त्रान्तर में यही बात
प्रकट की गई है-

औदार्यं दाक्षिण्य पापजुगुप्साऽथ निर्मलो बोधः ।

लिङ्गानि धर्मसिद्धेः प्रायेण जनप्रियत्व च ॥ (पोडश-ग्रन्थ ४ प्रकरण)

उदारता-हृदय की विपालता, दाक्षिण्य-सर्व जीवों के अनुकूल
प्रवृत्ति, पापजुगुप्सा-पाप का परित्याग, निर्मलबोध-तत्त्वज्ञान, और
जन प्रियत्व ये ५ धर्मसिद्धि के लक्षण हैं । अब यहाँ पर विचारने की
बात यह है कि जब पाप का परिहार करना यह वर्मसिद्धि का लक्षण

आवश्यकता नष्टाती नथी उमडे वचनानुष्ठान धर्मनो अर्थ वचन मुज्जय थनार
अनुष्ठान धर्म छे आभा ठोछ पणु जतनो दोष नथी

किंच--हिंसा वगैरे पाप पापेनो परित्याग धर्मसिद्धितु चिह्न छे आ
जतनी मान्यता जैनीजोनी छे शास्त्रा तरभा पणु अे न वात स्पष्ट
रवाभा आवी छे -

औदार्यं दाक्षिण्य पापजुगुप्साऽथ निर्मलो बोधः ।

लिङ्गानि धर्मसिद्धेः प्रायेण जनप्रियत्व च ॥ (पोडशग्रन्थ ४ प्रकरण)

उदारता-हृदयनी निशालना, दाक्षिण्य-अधा लोवोने अनुकूल यध पडे
तेवी प्रवृत्ति, पाप जुगुप्सा-पापनो त्याग, निर्मल बोध - तत्त्वज्ञान, अने
जनप्रियत्व आ पाये धर्मसिद्धिना लक्षणो छे, ह्ये आपणी सामे आ वात
विचार रवायोय्य छे के न्यादे पापनो परिहार रवेओ अे वर्मसिद्धितु लक्षण

વાઘવેષ્ટાવિશેષાઃ, તૈઃ સમિશ્ર=સપ્રુક્ત, મૈત્ર્યાદિમાયાના નિ શ્રેયસામ્યુદયધર્મમ્
લત્વેન શાસ્ત્રાન્તરેષુ પ્રતિપાદનાત્ । તત્પ્રેરિતમનુષ્ટાન ધર્મ ઇતિ કીર્ત્યંતે
શબ્દતે સુધીભિરિતિ ।

નન્વેવ વચનાનુષ્ટાન ધર્મ ઇતિ પ્રાપ્ત, તથા વ પ્રીતિભક્ત્યસાધ્નાનુષ્ટાનેષ્વ
વ્યાપ્તિરિતિ ચેન્ન-ઇદ ત્ વચનાદિત્યત્ર વેદાત્ પ્રવૃત્તિગિત્યત્રેવ પ્રયોજ્યત્વાર્થિકા

ધર્મ કા અસ્તિત્વ જાના જાતા હૈ અન્ય મિદ્ધાન્તકારો ને મી ઇન્ને નિ.
શ્રેયસ ઓર સ્વર્ગ કે કારણભૂત ધર્મ કા મૂલ કહા હૈ । અતઃ જો
આગમ સે અવિરુદ્ધ હૈ, કાલ ઓદિ કી ધારાધના કે અનુસાર જો
આરાધિત હોતા હૈ ઓર જો મૈત્રી આદિ વાર ભાવનાઓ સે ગર્ભિત હૈ
એસા અનુષ્ટાન હી ધર્મ હૈ । એસે હી ધર્મ કી ધારાધના કરને કા ગણ
ધર આદિ કા આદેશ હૈ ।

ભાવાર્થ-તીર્થકર કથિત આગમ કે અનુસાર હોને વાલે અનુષ્ટાન કા
નામ ધર્મ હૈ । હસકા ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ જિસ અનુષ્ટાન મે તીર્થકર
પ્રભુ દ્વારા કથિત આગમ સે વિરોધ નહીં જાના હૈ વહી ધર્મ હૈ । તથા
ચ-પ્રીતિ ભક્તિ ઓર અસગ રૂપ અનુષ્ટાનો મેં હસ લક્ષણ કી અપ્રાપ્તિ
નહીં હોતી હૈ ક્યોં કિ વહા પર મી હસ લક્ષણ કા સદ્ભાવ પાયા જાતા
હૈ “ વાચનાનુષ્ટાન ધર્મઃ ” ઇન્ન પ્રકાર કે કથન મે “ વેદાત્ પ્રવૃત્તિઃ ”
કી તરહ પ્રયોજ્ય અર્થ મેં પચમી વિભક્તિ હુઈ હૈ અત જિસ પ્રવૃત્તિ કા
પ્રયોજ્ય વચન હૈ વહ ધર્મ હૈ । (વચનાનુષ્ટાન ધર્મ) યહા સે લેકર
(પ્રીતિ ભક્તિ અસગાનુષ્ટાન ઇત્યાદિ તક) લિખને કી આવશ્યકતા

બાલુવામા આવે છે ખીલ સિદ્ધાંતકારોએ પણ આ જાણને નિ શ્રેયસ અને
સ્વર્ગના કારણભૂત ધર્મનું મૂળ બતાવ્યું છે એથી જે આગમથી અવિરુદ્ધ છે
કાળ વગેરેની આરાધના મુજબ જે આરાધિત હોય છે અને જે મૈત્રી વગેરે
આર ભાવનાઓથી યુક્ત છે એવું અનુષ્ટાન જ ધર્મ છે એવા જ ધર્મની
આરાધના કરવા માટે ગણધર વગેરેનો આદેશ છે

ભાવાર્થ — તીર્થકર કથિત આગમમુજબ આદ્યારાધેવા અનુષ્ટાનનું નામ
ધર્મ છે એનો અર્થ આ પ્રમાણે ક્ષિત થયો છે કે જે અનુષ્ટાનમા તીર્થકર પ્રભુ
વડે કથિત આગમથી વિરોધ જણાતો નથી તે જ ધર્મ છે તેમજ પ્રીતિ,
ભક્તિ અને અસગ રૂપ અનુષ્ટાનોમા આ લક્ષણની અપ્રાપ્તિ પણ હોતી નથી
કેમકે ત્યા પણ આ લક્ષણનો સદ્ભાવ મળે છે “ વાચનાનુષ્ટાન ધર્મ ” આ
બાતના કથનમા “ વેદાત્ પ્રવૃત્તિ ” ની જેમ પ્રયોજ્ય અર્થમા પચમી વિભક્તિ
થઈ છે એટલા માટે જે પ્રવૃત્તિનું પ્રયોજ્ય વચન છે તે ધર્મ છે (વચના
નુષ્ટાન ધર્મ) અહીંથી માંડીને પ્રીતિ ભક્તિ અસગાનુષ્ટાન વગેરે

पञ्चमी, तथा च-वचनप्रयोज्यप्रवृत्तिरत्व लक्षणमिति न कुत्राप्यव्याप्तिदोषावसाशः
 प्रीतिभक्त्यसद्गानुष्ठानानामपि वचनप्रयोज्यत्वाऽनपायादिति ।

किं च--हिंसादिपापपरिहारो वर्मसिद्धेरिद्धमित्यार्हता' स्वीकुर्वति ।
 तथा चोक्तम्-

औदार्यं दाक्षिण्य पापजुगुप्साऽथ निर्मलो बोधः ।

लिङ्गानि धर्मसिद्धेः, प्रायेण जनप्रियत्व च ॥ इति ।

पापजुगुप्सा=पापपरिहारः ।

पदकागवधमाध्य प्रतिमापृजन कुर्वता धर्मसिद्धि कत्र स्यादिति विचारयन्तु
 सुधिय । अपर च--

प्रतीत नहीं होता है वर्यो कि वचनानुष्ठान धर्म का अर्थ वचन के
 अनुसार होने वाला अनुष्ठान धर्म है इसमें कोई जातका दोष
 नहीं आता है । ”

किंच—हिंसादिक पांच पापों का परित्याग वर्म सिद्धि का चिह्न
 है इस प्रकार की मान्यता जैनियों की है । शास्त्रान्तर में यही बात
 प्रकट की गई है—

औदार्यं दाक्षिण्य पापजुगुप्साऽथ निर्मलो बोधः ।

लिङ्गानि धर्मसिद्धेः प्रायेण जनप्रियत्व च ॥ (पोडश-ग्रन्थ ४ प्रकरण)

उदारता—हृदय की विपालता, दाक्षिण्य—सर्व जीवों के अनुकूल
 प्रवृत्ति, पापजुगुप्सा—पाप का परित्याग, निर्मलबोध—तत्त्वज्ञान, और
 जन प्रियत्व ये ५ धर्मसिद्धि के लक्षण हैं । अब यहाँ पर विचारने की
 बात यह है कि जब पाप का परिहार करना यह धर्मसिद्धि का लक्षण

आवश्यकता लुप्त होती नहीं उभेके वचनानुष्ठान धर्मने अर्थ वचन मुञ्जथनार
 अनुष्ठान धर्म छे आमा डोछ पणु जतनेो दोष नहीं

किंच—हिंसा वजेठे पाप पापेनेो परित्याग धर्मसिद्धितु चिह्न छे आ
 जतनी मान्यता जैनीओनी छे शास्त्रा तरमा पणु ओ न वात स्पष्ट
 इरवामा आधी छे —

औदार्यं दाक्षिण्य पापजुगुप्साऽथ निर्मलो बोधः ।

लिङ्गानि धर्मसिद्धेः प्रायेण जनप्रियत्व च ॥ (पोडशग्रन्थ ४ प्रकरण)

उदारता—हृदयनी विशालता, दाक्षिण्य—अधा लुवेने अनुकूल थछ पडे
 तेवी प्रवृत्ति, पाप जुगुप्सा—पापनेो त्याग, निर्मल बोध—तत्त्वज्ञान, अने
 जनप्रियत्व आ पापे धर्मसिद्धिना लक्षणो छे, इये आपणी सामे आ वात
 विचार इरवायेग्य छे के न्यारे पापनेो पण्डित इरवेो ओ धर्मसिद्धितु लक्षणु

एकेन्द्रियात्पदजीवनिकायजीवना रक्षणं धर्मज्ञ मूलमिति यन्तामर्ता
पदकायविराधनासाध्यायाः प्रतिमापूजाया अज्ञीयारे जनतामेव नश्यति, जन
धर्मस्य मूलवस्तत्र समुच्छेदात् ।

तथा चोक्तम्-जीवद्यसच्चयण, परधनपरिवज्जण सुसील च ।

स्वती पचिदियनि-गगहो य धम्मस्स मूलाइ ॥ दर्शनशुद्धि-२ तत्त्व)

है तो प्रति मा का पूजन करने वाले के इसका परिहार कैसे हो सकता
है । क्यों कि यह पहिले ही प्रकट किया जा चुका है कि यह प्रतिमा
पूजन धर्म पद काय के आरम्भ के बिना साध्य हो ती नहीं सकता ।
अतः प्रतिमापूजन वाले को धर्ममिद्वि का लाभ मानना यह एक मनग
ढन कल्पना ही है-शास्त्रोप कल्पना नहीं । शास्त्र में तो यही जिनेन्द्र
देव की आज्ञा है कि एकेन्द्रिय आदि पद निकाय के जीवों की रक्षा
करना ही प्रत्येक जैन मात्र का कर्तव्य है, और यही धर्म का मूल है
जब इस प्रकार की वीतराग प्रभु की आज्ञा है-तो फिर यह तो सोचो
की पदनिकाय की विरायना से साध्य इस प्रतिमापूजन की मान्यता में
जैनत्व का रक्षण ही कैसे हो सकता है-। प्रत्युत जैनधर्म का इस प्रकार
की मान्यता मे समूलत नाश ही हो जाता है ।

जीवद्यसच्चयण परधनपरिवज्जण सुसीलच ।

स्वती पचिदिय निगगहोय यम्मस्स मूलाइ ॥ (दर्शन शु २ तत्त्व)

छे त्यारे प्रतिमानी पूजा वरताराओ भाटे आने परिहार देवी रीते थई शके
तेम छे, उभडे आ वात पडेला न प्रगट करवाभा आवी छे के आ प्रतिमा
पूजन धर्म पदकायना आरम्भ वगै साध्य थई शके तेम नथी ओधी प्रतिमा
पूजनवाणा भाटे धर्मसिद्धिने लाल समल देवे आ ओके जोटी कटपना
मात्र छे शास्त्रीय कटपना नथी शास्त्रमा तो जिनेन्द्रदेवनी ओ न आज्ञा छेके
ओकेन्द्रिय वगेरे पदकायना लुवानी रक्षा करवी न हरेके हरेके जैननु कर्तव्य
छे अने ओ न धर्मनु भूण छे न्यारे आ नतनी वीतराग प्रभुनी आज्ञा छे
त्यारे आ वात उपर तो विचार करीओ के पदकाय निकायनी विराधनाथी साध्य
आ प्रतिमा पूजननी मान्यतामा जैनतनु रक्षल न देवी रीते थई शके छे
आ नतनी मान्यताथी तो जैन धर्मने भूणइपे विनाश न थई नथ छे

जीवद्यसच्चयण परधनपरिवज्जण सुसील च ।

स्वती पचिदियनिगगहोय धम्मस्स मूलाइ ॥ (दर्शन -तत्त्व)

जीवाश्चेतनादिलिङ्गव्यङ्ग्या एकेन्द्रियादय तेषा दया=रक्षणं जीवदयेति ।
इस्त्व प्राकृतप्रभम् । धर्ममूल भवति ति सर्वत्र क्रियाऽध्याहारः कार्यः ।

प्रतिमापूजन विशुद्धपरिणामज्ञत्वादुपादेयमितिकथन निर्मूलम्--

धर्माङ्गेषु दयायाः प्राधान्यात् प्राथम्य वर्तते । हिंसासाध्याया प्रतिमापूजाया
दयाया अभावाद् धर्माङ्गत्व न सि्यति । तथा च विशुद्धात्मपरिणामरूप धर्म
प्रति कारणत्व प्रतिमापूजनस्य न सम्भवति । अन्यच्च--

इस लोके में यही बात कही गई है । जीवों की दया करना सत्य
बोलना, पर धन के हरण करने का त्याग करना, कुशील का त्यागना,
क्षमाभाव रखना, पाचों इंद्रियों को बश में रखना ये सब धर्म के मूल
हैं । जिस प्रकार दिना मूल-जड़ के वृक्ष की स्थिति आदि नहीं हो
सकती है-उसी प्रकार उनके बिना भी धर्मरूपी महावृक्ष की जीवात्मा
और में स्थिरता नहीं हो सकती है जो व्यक्ति " प्रतिमा के पूजने से
विशुद्ध परिणामों की आत्मा में जागृति होती है " इस बात का सम-
र्थन करते हुए उपयोगिता सिद्ध करते हैं उनका यह कथन बिलकुल ही
निर्मूल है क्योंकि धर्म में सर्वप्रथम स्थान दया को ही दिया गया है
जीवों की हिंसा से साध्य इस प्रतिमापूजन में उस दया का संरक्षण
ही नहीं होता है-इसलिये उसे धर्म का अंग कैसे माना जा सकता है
जो धर्म का ही अंग नहीं बनता है उससे कैसे परिणामों में विशुद्धता
की जागृति हो सकती है अतः यह प्रतिमापूजन धर्म प्राप्ति में कारण
नहीं है ऐसा मानना चाहिये ।

आ प्रबोद्धमा एव वात भतापवामा आवी छे के एव उपर दया
करवी, सत्य बोलवु, पारकाना धनने लर्ष लेवानी वृत्तिने इर करवी, कुशीलने
त्याग करवो, क्षमाभाव राखवो, पाच इंद्रियोने वशमा राखवी आ अधा
धर्मना भूण छे नेम भूण-जड वगरना वृक्षनी स्थिति वगेरे ए यर्ष शके
तेम नथी तेमने ऐमना वगर पणु धर्मरूपी महावृक्षनी एवात्माआमा स्थिरता
यर्ष गडे तेम नथी ने व्यष्टित " प्रतिमाना पूजनथी विशुद्ध परिणामोनी
आत्माआ जागृति थाय छे " आ वातने योग्य मानीने आनी उपयोगिता
सिद्ध करे छे, तेमनु आ कथन साव निर्भूण-व्यर्थ छे उभडे धर्ममा सौ
प्रथम स्थान दयानेए आपवामा आवे छे एवोनी हिंसाथी साध्य आ प्रतिमा
पूजनमा ते दयानी रक्षा ए थती नथी ऐटला भाटे आने धर्मनु अग डेवी
रीते मानी शनीये अने ने धर्मनु ए अग यर्ष शर्तुं नथी तेनाथी डेवी रीते
परिणामोमा विशुद्धतानी जागृति यर्ष शके ऐटला भाटे आ प्रतिमापूजन
धर्मप्राप्तिमा कारण नथी आम मानी लेवु लोर्षये

ધર્માલમ્બનાનિ સ્થાનાદ્ગૂત્રે ભગવતા પ્રજ્ઞાનિ--

“ ધમ્મ ણ ચરમાણસ્સ પઞ્ચ નિસ્સાટાણા પળ્લત્તા ।

ત જહા--હાયા, ગણો, રાયા, ગિહવર્હ, સરીર ” ॥ ૩તિ ।

ભગવતા ધર્માલમ્બનાનિ પચ્ચેય કથિતાનિ । તત્ર “ છાયા ” ઇત્યુક્ત્યા ગણરાજાદીનામપિ સગ્રહે સત્યપિ પુનસ્તેપા ત્રિશિષ્યોપન્યાસઃ પ્રાધાન્યરયોપનાર્થઃ

અન્યત્ત--“ ધમ્મ ચરમાણસ્સ પચ્ચ નિસ્સાટાણા પળ્લત્તા-તજહા-છાયા, ગણો, રાયા, ગિહવર્હ, સરીર ” ઇતિ-ભગવાન ને ધર્મ કે છહકાય, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ ઓર શરીર હસ પ્રકાર યે છહ આલમ્બન સ્થાન સ્થાનાદ્ગૂત્ર મેં કહે હેં । ઇનમેં જિન પ્રતિમા કા કથન નહીં ક્રિયા હેં-હસસે યહ ભલીભાતિ વિદિત હો જાતા હેં કિ જિન પ્રતિમા ઓર હસકા પૂજન ધર્મ કા અવલમ્બન રૂપ નહીં હેં યદિ જિન પ્રતિમા કા પૂજન કાર્ય ધર્મ કા અવલમ્બનરૂપ સિદ્ધાન્તકારોં કી દષ્ટિ મેં માન્ય હોતા તો યે અવશ્ય ઇન સ્થાનોં કે કથન કરતે-જિસ પ્રકાર છહકાય, ગણ, રાજા હત્યાદિ કા કથન ક્રિયા હેં । યદ્યપિ “ છહકાય ” હસ એક પદ સે હી ગણ, રાજા આદિ કા સ્વતઃ કથન સિદ્ધ હોજાતા હેં, ય્યો કી ઇન સબ કા સમાવેશ હસી એક પદ મેં હો જાતા હેં । ફિર ભી ઇનકા ભિન્ન ૨ રૂપ સે જો નામ નિર્દેય ક્રિયા હેં હસકા કારણ યે ધર્મ કે પ્રધાન આલમ્બન રૂપ હેં હસ વાત કો પ્રકટ કરને કે લિયે હી ક્રિયા ગયા હેં । હસી પ્રકાર

અને ધીરુ પશુ કહ્યુ છે કે “ ધમ્મ ચરમાણસ્સ પચ્ચ નિસ્સાટાણા પળ્લત્તા-ત જહા છાયા, ગણો, રાયા, ગિહવર્હ, સરીર ” ઇતિ, ભગવાને ધર્મના છ કાય, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ અને શરીર આ રીતે છ આલમ્બનસ્થાન સ્થાનાગ સૂત્રમાં કહ્યા છે આ બધામાં જિન પ્રતિમાનુ કથન કરવામાં આવ્યું નથી એનાથી આ સ્પષ્ટ રીતે જણાય છે કે જિનપ્રતિમા અને તેનું પૂજન ધર્મનું અવલમ્બન નથી બે સિદ્ધાન્તકારોની દષ્ટિમાં જિન પ્રતિમાના પૂજનનું કાર્ય ધર્મના અવલમ્બન રૂપમાં માન્ય હોત તો તેઓ ચોક્કસ આ સ્થાનોના કથનની સાથે સાથે તેમનું પણ કથન જેમ છ કાય, ગણ રાજા વગેરેનું કથન કર્યું છે તેમ કર્યું હોત બે કે “ પદકાય ” આ એક પદથી જ ગણ, રાજા વગેરેનું સ્વતઃ કથન સિદ્ધ થઈ જાય છે, કેમકે આ બધાનો સમાવેશ તે એક પદમાં જ થઈ જાય છે, છતાં આ બધાનો સ્વતઃ રૂપમાં જે નામ નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો છે તેનું કારણ આ છે કે તે સર્વે ધર્મના પ્રધાન આલમ્બનરૂપ છે, આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે જ કરવામાં આવ્યો છે આ પ્રમાણે બે

दर्शनवन्दनपूजनादिना जिनप्रतिमायाः सम्यक्त्वशुद्धिहेतुत्वाऽष्टकर्मक्षयहेतुत्वं स्वीकारे तु अस्या अपि निश्रास्थानत्वेन निश्रास्थानेषु विशिष्य तदुपन्यासमकृत्वा “पच निस्साठाणा पणत्ता” इति कथन विरुध्यते । तस्मात् जिनप्रतिमाया निश्रास्थानेष्वनभिधानात् प्रतिमाया र्मालम्बनत्व न सिध्यति । एव च तत्पूजन कुशलात्मपरिणामविशेषस्य धर्मस्य कारण नास्तीति विश्वसनीयम् ।

प्रतिमापूजायामारम्भः परिग्रहश्चावश्य भावी । ताभ्या विना पूजाया अस भवात् तथाऽपि—प्रतिमापूजोपदेशकाः एव वदन्ति—

यदि जिन प्रतिमा भी दर्शनवन्दना और पूजादिक द्वारा सम्यक्त्वशुद्धि एव अष्टकर्मों के क्षय का कारण होती तो उसका भी धर्म का आलम्बनरूप होने से यहा पर विशेषरूप से शास्त्रकार को कथन करना चाहिये था ! परन्तु ऐसा तो सूत्रकार ने किया नहीं है । फिर भी यदि उसे धर्म का अवलम्बनरूप स्वीकार किया जाय तो इस सूत्र में प्रतिपादित ‘ पाच ही निश्रास्थान हैं ’ इस कथन से विरोध आता है कारण कि उन स्थानों से अतिरिक्त एक और जिनप्रतिमापूजन धर्म का आलम्बन रूप स्थान वह जाता है अतः ‘ पच निस्साठाणा पणत्ता ’ इस सूत्र प्रदर्शित उपन्यास से यह बात पुष्ट होती है कि जिन प्रतिमा धर्म का आलम्बन स्थान नहीं है । यह तो उस के पक्षपातियों के ही दिमाग की एक उटपटाग सूझ है यह जानते हुए भी कि जिनप्रतिमापूजन में आरम्भ और परिग्रह अवश्यभावी है, इनके विना वह कथमपि साध्य हो नहीं सकती है, तो भी जिनपूजाके उपदेशक खेद है कि जनता को

दर्शन वन्दना अने पूजा वगैरे वडे सम्यक्त्व शुद्धि अने अष्ट कर्मोना क्षयतु कारण छोट तो धर्मना आलम्बनरूप छेवा भदल अही विशेषरूपमा शास्त्र गारे वडे तेनु कथन करतु लेछिअ पण सूत्रगरे आवु कछ कथुं नथी छताय ले तेने धर्मना अवलम्बनरूपे स्वीकारिये तो आ सूत्रमा प्रतिपादित “ पाच न निश्रास्थानो छे “ आ कथनथी विरोध लेलो थाय छे केमके ते स्थानोथी अतिरिक्त अेक जील जिनप्रतिमा पूजन धर्मना आलम्बनरूप स्थाननी वृद्धि थछि लय छे अथी “ पच निस्साठाणा पणत्ता ” आ सूत्र प्रदर्शित उपन्यासथी आ वात पुष्ट थाय छे के जिनप्रतिमा धर्मनु आलम्बन स्थान नथी आ तो इकत तेना तरङ्गदारीअोना भरित्कनी न व्यर्थनी कल्पना छे जिनप्रतिमा पूजनमा आरल अने परिग्रह अवश्य लावी छे अेना वगर ते कछि पणु सलेगे साध्य थछि शके तेम नथी आवु लणुवा छता भडु इअ साये कछेवु पडे छे के जिन पूजना उपदेशके समानने “ पूयाए काय

ધર્માલમ્બનાનિ સ્થાનાઙ્ગસૂત્રે ભગવતા પ્રણતાનિ--

“ધમ્મ ણ ચરમાણસ્સ પઠ નિસ્સાઠાણા પળ્ણત્તા ।

ત જહા-ઉક્કાયા, ગણો, રાયા, ગિહવર્હ, સરીર ” ॥ ઇતિ ।

ભગવતા ધર્માલમ્બનાનિ પશ્ચેત્ર કથિતાનિ । તત્ર “ ઉક્કાયા ” ઇત્યુક્ત્યા ગણરાજાદીનામપિ સગ્રહે સત્યપિ પુનસ્તેષા ત્રિશિષ્યોપન્યાસઃ પ્રાધાન્યરયોપનાર્થઃ

અન્યથ-“ ધમ્મ ચરમાણસ્સ પઠ નિસ્સાઠાણા પળ્ણત્તા-તજહા-છ ક્કાયા, ગણો, રાયા, ગિહવર્હ, સરીર ” ઇતિ-ભગવાન ને ધર્મ કે છહ્કાય, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ ઓર શરીર ઇસ પ્રકાર વે છહ આલમ્બન સ્થાન સ્થાનાઙ્ગસૂત્ર મેં કહે હૈં । ઇનમેં જિન પ્રતિમા કા કથન નહીં કિયા હૈ-ઇસસે વહ ભલીભાતિ વિદિત હો જાતા હૈ કિ જિન પ્રતિમા ઓર ઉસકા પૂજન ધર્મ કા અવલમ્બન રૂપ નહીં હૈ યદિ જિન પ્રતિમા કા પૂજન કાર્ય ધર્મ કા અવલમ્બનરૂપ સિદ્ધાન્તકારોં કી દૃષ્ટિ મેં માન્ય હોતા તો વે અવશ્ય ઇન સ્થાનોં કે કથન કરતે-જિસ પ્રકાર છહ્કાય, ગણ, રાજા ઇત્યાદિ કા કથન ક્રિયા હૈ । યદ્યપિ “ છહ્કાય ” ઇસ એક પદ સે હી ગણ, રાજા આદિ કા સ્વતઃ કથન સિદ્ધ હો જાતા હૈ, સ્યો કી ઇન સ્વકા સમાવેશ ઉસી એક પદ મે હો જાતા હૈ । ફિર ખી ઇનકા ભિન્ન ૨ રૂપ સે જો નામ નિર્દેશ કિયા હૈ ઉસકા કારણ વે ધર્મ કે પ્રધાન આલમ્બન રૂપ હૈં ઇસ વાત કો પ્રકટ કરને કે લિયે હી કિયા ગયા હૈ । ઇસી પ્રકાર

અને ખીજુ પશુ કહ્યુ છે કે “ધમ્મ ચરમાણસ્સ પઠ નિસ્સાઠાણા પળ્ણત્તા-ત જહા છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગિહવર્હ, સરીર ” ઇતિ, ભગવાને ધર્મના છ કાય, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ અને શરીર આ રીતે છ આલમ્બનસ્થાન સ્થાનાંગ સૂત્રમાં વહ્યા છે આ બધામાં જિન પ્રતિમાનું કથન કરવામાં આવ્યું નથી એનાથી આ સ્પષ્ટ રીતે જણાય છે કે જિનપ્રતિમા અને તેનું પૂજન ધર્મનું અવલમ્બન નથી જે સિદ્ધાન્તકારોની દૃષ્ટિમાં જિન પ્રતિમાના પૂજનનું કાર્ય ધર્મના અવલમ્બન રૂપમાં માન્ય હોત તો તેઓ ચોક્કસ આ સ્થાનોના કથનની સાથે સાથે તેમનું પણ કથન જેમ છ કાય, ગણ, રાજા વગેરેનું કથન કર્યું છે તેમ કર્યું હોત જે કે “ ષટ્કાય ” આ એક પદથી જ ગણ, રાજા વગેરેનું સ્વતઃ કથન સિદ્ધ થઈ જાય છે, કેમકે આ બધાનો સમાવેશ તે એક પદમાં જ થઈ જાય છે, છતાં આ બધાનો સ્વતઃ રૂપમાં જે નામ નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો છે તેનું કારણ આ છે કે તે સર્વે ધર્મના પ્રધાન આલમ્બનરૂપ છે, આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે જ કરવામાં આવ્યો છે આ પ્રમાણે જે

‘दो द्वाणाइ’ द्वे स्थाने=द्वे प्रस्तुती ‘अपरियाणिचा’ अपरिवाय=अपरित्याय
 ‘एतात्रारम्भपरिग्रहावनर्थाय’ इत्यविज्ञाय अल ममाभ्यामिति परिहाराभिमुख्य-
 द्वारेण प्रत्याख्यानपरित्याय अप्रत्याख्याय च ब्रह्मदत्तान् तयो प्रवृत्तः, ‘आया’
 आत्मा=जीव, नो केवलिप्रज्ञप्त=जिनोक्त धर्म लभेत श्रवणतया-श्रवणभावेन
 श्रोतुमित्यर्थः । जैनधर्मश्रवणानर्हो भवतीति भावः । तद् यथा आरम्भः-प्राणा
 तिपातादिरूप, पापस्थानम् परिग्रहः-वनधान्यादिसंग्रहः ।

द्वे स्थाने अपरिज्ञाय - अपरित्यायानर्थकारणमज्ञात्वा प्रत्याख्यानपरिज्ञया
 अप्रत्याख्याय च तत्र प्रवृत्तः ‘आया’ आत्मा-जीवः केवल बोधि=अर्थात्
 सम्यक्त्व न बुध्येत=न प्राप्नुयादित्यर्थः ।

पाने के भी योग्य वन सकती है ” यह सूत्र हमें यह शिक्षा देता है कि
 भलो जिस परिग्रह और आरभयुक्त आत्मामें केवल प्रज्ञस धर्म सुनने
 तक की भी योग्यता नहीं है और न जिसमें सम्यक्त्व का अनुभव है,
 है उस आत्मा में “ वह प्रतिमा सम्यक्त्व की शुद्धि का कारण होता
 ” इस प्रकार की मान्यता आकाश के फूल के समान एक कल्पना
 मात्र ही है । अतः यह सिद्धान्त निश्चित होता है कि इस प्रतिमापूजन
 में न तो धर्म के कोई मौलिकत्व का समावेश है और न धर्म का कोई
 अंग ही है । यह न तो धर्म का आलम्बनरूप है और न धर्म के लक्षण
 से ही युक्त है । फिर भी इसे धर्म पद का वाच्य मानना केवल स्पष्ट
 रूप से उत्सृज्य गुरुपणामात्र है इस प्रकार शास्त्रीयमर्यादा के विरुद्ध इस
 प्रतिमा पूजन का उपदेश देने वाले तथा प्रतिमापूजन कराने वाले उप-

पनी शके तेम नथी “ आ सूत्र अभने आ नतनी ललाभपु करे छे डे ने
 परिग्रह अने आरभयुक्त आत्मामा देवति प्रज्ञत्व धर्म आलणवा सुधीनी
 पणु योग्यता नथी अने जेमा सम्यक्त्वनी अनुभूति पणु नथी ते आत्मामा
 “ ते प्रतिमा सम्यक्त्वनी शुद्धिनु कारणु छाय छे ” आ नतनी मान्यता आका
 शना पुष्पनी जेम अेक जोटी कल्पना मात्र न नथी तो णीनु शु छे ? अेटला
 भाटे अे सिद्धान्त निश्चित थाय छे डे आ प्रतिमापूजनमा धर्मना न कोर
 मौलिक तत्त्वानो समावेश छे अने न तो ते धर्मनु कोर पणु अेक अंग छे आ
 धर्मनु आव मनइप नथी अने धर्मना लक्षणथी युक्त पणु नथी छता य तेने
 धम पदवाच्य मानवु ते स्पष्ट रीते उत्सृज्य प्रइपणु मात्र छे आ रीते शास्त्री
 मर्यादाधी विपरीत आ प्रतिमा पूजनो उपदेश आपनाराओ तेमन प्रतिमा

अपि च—“ पूयाए कायवहो, पडिक्कुट्ठो सो उ किं तु जिणपूया ।

सम्मत्तसुद्धिहेउ, त्ति भावणीया उ गिरवज्जा ” ॥१॥

ज्याया-पूजाया कायवधः प्रतिक्कुष्टं सतु रिन्तु जिणपूजा ।

सम्पत्त्वधुद्धिहेतु-रिति भावनीया त निरवघा ॥१॥

सर्वमेतदुत्सृज्यप्ररूपणम्—श्रूयतां प्रवचनं तावत्—

दो दृष्टाणाइ अपरियाणित्ता आया णो केवलिपणत्त धम्म लभेज्ज सवणयाए ।

त जहा-आरभे चेव परिग्गहे चेव । दोदृष्टाणाइ अपरियाणित्ता आया णो केवल बोधिं बुज्झिज्जा । त जहा-आरभे चेव परिग्गहे चेव ॥ (स्था २ ठा १उ.) इति

“ पूयाए कायवहो पडिक्कुट्ठो सो उ किं तु जिणपूया । सम्मत्तसुद्धिहेउ, त्ति भावणीया उ गिरवज्जा ॥ १ ॥ इस प्रकार की उत्सृज्य प्ररूपणा द्वारा भ्रम में ही डालते रहते हैं। हमें तो बुद्धि पर तरस आता है कि वे क्यों नहीं इस सिद्धान्त को समझने की चेष्टा करते हैं कि—“ दोदृष्टाणाइ अपरियाणित्ता आया णो केवलिपणत्त धम्म लभेज्ज सवणयाए । त जहा-आरभे चेव परिग्गहे चेव । दोदृष्टाणाइ अपरियाणित्ता आया णो केवल बोधिं बुज्झिज्जा त जहा-आरभे चेव परिग्गहे चेव (स्था २ ठा १ उ.) ये दो धनधान्य आदि रूप परिग्रह और प्राणातिपात आदि रूप आरभ स्थान अनर्थ के कारण हैं । जब तक आत्मा ज परिज्ञा से इन्हें जान कर और प्रत्याख्यान परिज्ञा से इनका परित्याग नहीं कर देती है तब वह ब्रह्मदत्त की तरह केवलि द्वारा कथित धर्म के सुननेका अधिकारी नहीं हो सकती है और न इन दोनों के त्याग किये बिना चक्र सम्यक्त्व को

वहो पडिक्कुट्ठो सोउ किं तु जिणपूया । सम्मत्तसुद्धिहेउ, त्ति भावणीया उ गिर वज्जा ॥ १ ॥ आ ज्ञातनी उत्सृज्य प्ररूपणा वडे भ्रमभा ज नाभी राजे छे अभने तो तेमनी बुद्धि उपर दया आवे छे के तेज्यो आ सिद्धातने सम जववानी दोशिश केम नडि करेता डोय ? केमडे “ दो दृष्टाणाइ अपरियाणित्ता आयाणो केवलिपणत्त धम्म लभेज्ज सवणयाए । त जहा-आरभे चेव परिग्गहे चेव । दो दृष्टाणाइ अपरियाणित्ता आया णो केवलिवोधि बुज्झिज्जा त जहा-आरभे चेव परिग्गहे चेव (स्था० २ ठा० १ उ०) आ ये धन धान्य वगेरे रूप परिग्रह अने प्राणातिपात वगेरे रूप आरभ स्थान अनर्थना कारण छे न्या सुधी आत्मा ज परिज्ञा वडे अभने ज्ञानी अने प्रत्याख्यान परिज्ञावडे अभने परित्याग करती नथी त्या सुधी ते ब्रह्मदत्तनी जेम डेवखिवडे कथित धर्मने सालजवा भाटे अधिकारी (योग्य पात्र) गणुए नथी अने ते अभने न्या सुधी त्याग करे नडि त्या सुधी ते सम्यक्

‘दो द्वाणाड’ द्वे स्थाने=द्वे रस्तुनी ‘अपरियाणित्ता’ अपरिज्ञाय=अपरिज्ञया
 ‘एतावारम्मपरिग्रहावनर्थाय’ इत्यविज्ञाय अल ममाभ्यामिति परिहाराभिमुख्य
 द्वारेण प्रत्याख्यानपरिज्ञया अप्रत्याख्याय च ब्रह्मदत्तान् तयो प्रवृत्तः, ‘आया’
 आत्मा=जीव, नो केरलिभ्रज्ञप्त=जिनोक्त वर्म लमेत श्रयगतया-श्रयणभावेन
 श्रोतुमित्यर्थः । जैनवर्मश्रयणानहो भवतीति भावः । तद् यथा आरम्भः-प्राणा
 तिपावादिरूप, पापस्थानम् परिग्रहः-वनवान्यादिसग्रहः ।

द्वे स्थाने अपरिज्ञाय - अपरिव्याप्त्यर्थकारणमज्ञात्वा प्रत्याख्यानपरिज्ञया
 अप्रत्याख्याय च तत्र प्रवृत्तः ‘आया’ आत्मा-जीवः केवल शोचि=अर्थात्
 सम्यक्त्व न बुध्येत=न प्राप्नुयादित्यर्थ ।

पाने के भी योग्य वन सकती है ” यह सूत्र हमें यह शिक्षा देता है कि
 भलों जिस परिग्रह और आरभयुक्त आत्मामें केरलि प्रज्ञप्त वर्म सुनने
 तक की भी योग्यता नहीं है और न जिसमें सम्यक्त्व का अनुभव है,
 है उस आत्मा में “ वह प्रतिमा सम्यक्त्व की शुद्धि का कारण होता
 ” इस प्रकार की मान्यता आकाश के फूल के समान एक कल्पना
 मात्र ही है । अतः यह सिद्धान्त निश्चित होता है कि इस प्रतिमापूजन
 में न तो धर्म के कोई मौलिकतत्त्व का समावेश है और न धर्म का कोई
 अंग ही है । यह न तो धर्म का आलम्बनरूप है और न धर्म के लक्षण
 से ही युक्त है । फिर भी इसे धर्म पद का वाच्य मानना केवल स्पष्ट
 रूप से उत्सूत्ररूपणामात्र है इस प्रकार शास्त्रीयमर्यादा के विरुद्ध इस
 प्रतिमा पूजन का उपदेश देने वाले तथा प्रतिमापूजन कराने वाले उप-

पनी शब्दे तेभ नथी “ आ सूत्र अमने आ नतनी ललाभपु करे ठे ठे ठे
 परिग्रह अने आरभयुक्त आत्माभा देवलि प्रज्ञप्त धर्म आलणवा सुधीनी
 पणु योग्यता नथी अने जेभा सम्यक्त्वनी अनुभूति पणु नथी ते आत्माभा
 “ ते प्रतिमा सम्यक्त्वनी शुद्धिनु कारणु छेय छे ” आ नतनी मान्यता आका-
 शना पुष्पनी जेभ अेठ जोटी कल्पना मात्र न नथी तो धीनु शु ठे ? अेटला
 भाटे अे सिद्धान्त निश्चित थाय छे ठे आ प्रतिमापूजनभा धर्मना न केअ
 मौलिक तत्त्वोना समावेश छे अने न तो ते वर्मनु केअ पणु अेक अंग ठे आ
 धर्मनु आलम्बनरूप नथी अने धर्मना लक्षणथी युक्त पणु नथी छता य तेने
 धर्मपदवाच्य मानवु ते स्पष्ट रीते उत्सूत्र प्रज्ञपणु मात्र छे आ रीते शास्त्री
 मर्यादा-विपरीत आ प्रतिमा पूजनो उपदेश आपनाराओ तेभन प्रतिमा

अपि च—“ पूयाए कायग्रहो, पडिक्कट्ठो सो उ किं तु जिणपूया ।

सम्मत्तसुद्धिहेउ, ति भावणीया उ गिरवज्जा ” ॥१॥

जया—पूजाया कायवधः प्रतिशुष्ठः सनु किन्तु जिनपूजा ।

सम्पक्त्वशुद्धिहेतु—रिति भावणीया त निरग्रया ॥१॥

सर्वमेतदुत्सृज्यमरूपणम्—भूयतां प्रयचन तात्—

दो दृष्टाणइ अपरियाणित्ता आया णो केवल्लिपणत्त धम्म लभेज्ज सवणयाए ।

त जहा—आरभे चेव परिग्गहे चेव । दोदृष्टाणइ अपरियाणित्ता आया णो केवल्ल बोधिं बुज्झिज्जा । त जहा—आरभे चेव परिग्गहे चेव ॥ (स्था. २ ठा १उ) इति

“ पूयाए कायग्रहो पडिक्कट्ठो सो उ किं तु जिणपूया । सम्मत्तसुद्धिहेउ, ति भावणीया उ गिरवज्जा ॥ १ ॥ इस प्रकार की उत्सृज्य प्ररूपणा द्वारा भ्रम में ही डालते रहते हैं । हमें तो बुद्धि पर तरस जाता है कि वे क्यों नहीं इस सिद्धान्त को समझने की चेष्टा करते हैं कि—“ दोदृष्टाणइ अपरियाणित्ता आया णो केवल्लिपणत्त धम्म लभेज्ज सवणयाए । त जहा—आरभे चेव परिग्गहे चेव । दोदृष्टाणइ अपरियाणित्ता आया णो केवल्ल बोधिं बुज्झिज्जा त जहा—आरभे चेव परिग्गहे चेव (स्था २ ठा १ उ.) ये दो धनधान्य आदि रूप परिग्रह और प्राणातिपात आदि रूप आरभ स्थान अनर्थ के कारण है । जब तक आत्मा ज्ञ परिज्ञा से इन्हें जान कर और प्रत्याख्यान परिज्ञा से इनका परित्याग नहीं कर देती है तब वह ब्रह्मदत्त की तरह केवल्लि द्वारा कथित धर्म के सुननेका अधिकारी नहीं हो सकती है और न इन दोनों के त्याग किये बिना वक्र सम्यक्त्व को

वही पडिक्कट्ठो सोउ किं तु जिणपूया । सम्मत्तसुद्धिहेउ, ति भावणीया उ गिर वज्जा ॥ १ ॥ आ ज्ञतनी उत्सृज्य प्ररूपणां वडे प्रभभा ज नाभी राभे छे अभने तो तेभनी बुद्धि उपर दया आवे छे के तेओ आ सिद्धातने सभ ज्ञववानी के शिश के भ नडि करता डाय ? केभके “ दो दृष्टाणइ अपरियाणित्ता आयाणो केवल्लिपणत्त धम्म लभेज्ज सवणयाए । त जहा—आरभे चेव परिग्गहे चेव । दो दृष्टाणइ अपरियाणित्ता आया णो केवल्लिबोधि बुज्झिज्जा त जहा—आरभे चेव परिग्गहे चेव (स्था० २ ठा० १ उ०) आ जे धन धान्य वगेरे रूप परिग्रह अने प्राणातिपात वगेरे रूप आरभ स्थान अनर्थना कारण छे त्या सुधी आत्मा ज परिज्ञा वडे अभने ज्ञानी अने प्रत्याख्यान परिज्ञा वडे अभने परित्याग करती नहीं त्या सुधी ते ब्रह्मदत्तनी जे भ उवल्लिवडे कथित धर्मने सालणवा माटे अधिकारी (योग्य पात्र) गण्ठाछि वडे तेभ नहीं अने ते जनेने त्या सुधी त्याग करे नडि त्या सुधी ते सम्यक्त्व २ योग्य

तथा-सम्यक्त्वशुद्धयर्थं कर्मक्षयार्थं च प्रतिमापूजने प्रवृत्तस्य जीवस्य पट्टकायो पमर्दनसाध्यपूजया ज्ञानावरणीयस्य दर्शनमोहनीयस्य च कर्मणो वृद्धौ सत्या सम्यक्त्वम्य केवलिप्रज्ञस्य कर्मन्याऽपि प्राप्तिः कालत्रयेऽपि न सम्भवति किंपुन कर्मक्षयाशा

सम्यक्त्वमात्मनः क्षायोपशमिको भावः । प्रतिमा तु न क्षयोपशमस्वरूपा, न चापि क्षयोपगमहेतुः, ज्ञानावरणीयदर्शनमोहनीयकर्मनिर्जराजनकत्वाभावात्, देशतः कर्मक्षयो हि निर्जरा ता प्रतिपत्स एव कारणत्वात् । उक्तं चोत्तराध्ययनसूत्रे-

प्रकार सम्यक्त्व की शुद्धि अथवा कर्मों का विनाश प्रतिमापूजनसे नहीं होता है, प्रत्युत जिन प्रकार वह चिरयुक्त वस्त्ररुधिर से साफ किये जाने पर अधिक मलिन हो जाता है उसी प्रकार पट्टकाय की विराधना साध्य इस प्रतिमापूजन में लवलीन जीव भी ज्ञानावरणीय और दर्शन मोहनीय कर्म की वृद्धि करता हुआ अधिकाधिक मलिन होता रहता है वह कभी भी इनकी वृद्धिमें सम्यक्त्व और केवलिप्रज्ञस्य वर्म का पाने वाला नहीं बन सकता है । इसलिये कर्मों के क्षय करने की आशा से प्रतिमापूजन में लवलीन मनुष्य अपने कर्मों का इस कार्यसे क्षय करता है यह एक दुराशामात्र है अरे ! जत्र इस कार्य से जीव सम्यक्त्व और केवलिप्रज्ञस्य धर्म तक के भी लाभ से सदा वंचित रहता है तो उससे फिर कर्म क्षय मानना यह कोरी कल्पना मात्र ही है । सम्यक्त्व यह जीव का क्षायोपशमिक भाव है । प्रतिमा न क्षयोपशम स्वरूप है और न उस क्षयोपशम में कारण रूप ही है । कारण कि इस से ज्ञानावरणीय और दर्शनमोहनीय कर्म की निर्जरा नहीं होती है । कर्मों का

परउत्थेवु वस्त्र लोड़ीवडे माद उरवाथी मलिन धर्ष लय छे तेमज पट्टकायनी विराधना साध्य आ प्रतिमापूजनमा तवलीन थयेवो एव पणु ज्ञानावरणीय दर्शन मोहनीय कर्मनी वृद्धि करतो करतोवधारे वधारे मलिन थतो लय छे ते डोध पणु समये ज्येमनी वृद्धिमा सम्यक्त्व अने केवलिप्रज्ञस्य धर्मने जेणवी शकना उर्थ शकतो नथी ज्येवला माटे कर्मोने क्षय करवानी आशाथी प्रतिमा पूजनमा तवलीन माणुस चोताना कर्मोने आ उर्थ (प्रतिमापूजन) थी क्षय करवा माणे छे ते उक्त दुराशा मात्र छे ल्यारे आ जयथी एव सम्यक्त्व अने केवलिप्रज्ञस्य धर्मना लाभथी पणु सदा हर रहे छे ल्यारे तेनाथी उर्म क्षयनी आशा राणवी ते जोटी उद्वपना मात्र ज छे सम्यक्त्व एवनेो क्षयोपशमिक भाव छे उवे न तो प्रतिमा क्षयोपगम न्वउप छे अने न ते क्षयोपशममा कारण इपे छे जेभडे ज्येनाथी ज्ञानावरणीय अने दर्शनमोहनीय

यत्र केवलप्रज्ञधर्मस्य श्रवणायापि योग्यता न भवति, सम्यक्त्वस्य च नानुभवः, तत्र सम्यक्त्वशुद्धिहेतुत्वं गगनहृत्सुमनसमनोरिक्तपमानम् । यस्य प्रतिमा पूजनस्य नास्ति धर्ममूलत्वं न चास्ति धर्माङ्गत्वं, नापि धर्मालम्बनत्वं, न चापि धर्मलक्षणसमन्वितं, तस्य धर्मपदान्यत्ववत्त्वेन — गुस्पष्टमेतौत्सृज्यप्ररूपणम् । भगवताऽर्हता-भयचने अनुपदिष्टस्य प्रतिमापूजनस्योपदेशकरणेन भ्रान्तिजनयतां प्रतिमापूजनकारयता च का गतिः स्यादिति समालोचनीयं मुधीभिः । अपर च—
दोहिं ठाणेहिं आया केवलपन्नत्त धम्म लभेज्जा सवणयाए त जहा खण्ण वेव उउसमेण चैव एव जाय मणपज्जयनाण उप्पाडेज्जा त जहा—खण्ण वेव उउसमेण चैव । (स्था० २ ठा० ४ उ०)

“खण्ण चैव” इति ज्ञानावरणीयस्य दर्शनमोहनीयस्य च कर्मण उदय प्राप्तस्य क्षयण, अनुदितस्य चोपशमेन=क्षयोपशमेनेत्यर्थः । अत्र पदद्वयेन क्षयोपशमरूपोऽर्थो गृह्यते । यावत् कारणात्—“केवल रोहिं शुद्धेज्जा ।”

केवलप्रज्ञधर्मस्य श्रवण तथा सम्यक्त्व च ज्ञानावरणीयस्य दर्शनमोहनीयस्य च कर्मण, क्षयोपशमादेव लभ्यते इति भगवता प्रतिशोधितम् । इदमत्र बोध्यम् नहि रुधिरलिप्तवस्त्रस्य रुधरेण पक्षालने शुद्धिर्भवति प्रत्युत मलिनतरत्वमेव,

देशक तथा प्रेरक की वास्तविक वस्तुस्थिति से जनता को अधिकार में रखने के कारण क्या गति होगी यह स्वयं बुद्धिमानों को विचार ने जैसी बात है ।

अपर च—दोहिं ठाणेहिं आयाके वलिपन्नत्त धम्म लभेज्जा सवण याए—त जहा इत्यादि सूत्र—

इसका भावार्थ यह है—जीव केवलियों द्वारा प्रज्ञधर्म का श्रवण तथा सम्यक्त्व का लाभ ज्ञानावरणीय और दर्शनमोहनीय कर्म के क्षय और क्षयोपशम से ही करता है प्रतिमापूजन से नहीं । जिस प्रकार रुधिर से मैले वस्त्र की सफाई रुधिर में ही धोने से नहीं होती, उसी

पूजन करावनासे उपदेशके प्रेरकरूप यद्यने यथार्थ वस्तुस्थितिही समाजने आधारमा राणे छे ते अद्वल तेमनी शी दशा थशे ते विद्वानो भमल शके छे

अने भीशु पणु के—दोहिं ठाणेहिं आया केवलपन्नत्त धम्म लभेज्जा सवणयाए—त जहा—इत्यादि सूत्र—

आने भावार्थ आ प्रभाणे छे के केवलियो वडे प्रज्ञधर्मतु श्रवण तेमल सम्यक्त्वने लाल एव ज्ञानावरणीय अने दर्शन मोहनीय कर्माना क्षय अने क्षयोपशमथी करे छे प्रतिमापूजनथी नहिं जेम दोहीथी परउत्थेला पखनी साक्षरुही दोही वडे धोवाथी थती नथी तेमल सम्यक्त्वनी शुद्धि अथवा तो कर्मोना विनाथ प्रतिमापूजनथी थतो नथी अउके जेम ते दोहीथी

तथा-सम्यक्त्वशुद्ध्यर्थं कर्मक्षयार्थं च प्रतिमापूजने प्रवृत्तस्य जीवस्य पट्टकायो पमर्दनसाध्यपूजया ज्ञानावरणीयस्य दर्शनमोहनीयस्य च कर्मणो वृद्धौ सत्यां सम्यक्त्वस्य केवलप्रज्ञधर्मस्याऽपि प्राप्तिः कालत्रयेऽपि न सम्भवति किंपुन कर्मक्षयाशा

सम्यक्त्वमात्मनः क्षायोपशमितो भावः । प्रतिमा तु न क्षयोपशमस्वरूपा, न चापि क्षयोपशमहेतु, ज्ञानावरणीयदर्शनमोहनीयकर्मनिर्जराजनकत्वाभावात्, देशतः कर्मक्षयो हि निर्जरा ता प्रति तपस एव कारणत्वात् । उक्त चोत्तराध्ययनसूत्रे-

प्रकार सम्यक्त्व की शुद्धि अथवा कर्मों का विनाश प्रतिमापूजनसे नहीं होता है, प्रत्युत जिन प्रकार वह लपरियुक्त वस्त्ररुधिर से साफ किये जाने पर अधिक मलिन हो जाता है उसी प्रकार पट्टकाय की विराधना साध्य इस प्रतिमापूजन में लवलीन जीव भी ज्ञानावरणीय और दर्शन मोहनीय कर्म की वृद्धि करता हुआ अधिकाधिक मलिन होता रहता है वह कभी भी इनकी वृद्धिमें सम्यक्त्व और केवलप्रज्ञधर्म का पाने वाला नहीं बन सकता है । इसलिये कर्मों के क्षय करने की आशा से प्रतिमापूजन में लवलीन मनुष्य अपने कर्मों का इस कार्यसे क्षय करता है यह एक दुराशामात्र है अरे ! जब इस कार्य से जीव सम्यक्त्व और केवलप्रज्ञधर्म तक के भी लाभ से सदा वंचित रहता है तो उससे फिर कर्म क्षय मानना यह कोरी कल्पना मात्र ही है । सम्यक्त्व यह जीव का क्षायोपशमिक भाव है । प्रतिमा न क्षयोपशम स्वरूप है और न उस क्षयोपशम में कारण रूप ही है । कारण कि इस से ज्ञानावरणीय और दर्शनमोहनीय कर्म की निर्जरा नहीं होती है । कर्मों का

अरुणायैतु वस्त्र लोडीवडे मात्र दर्वाथी मलिन र्थ नय छे तेमज पट्टकायनी विराधना साध्य आ प्रतिमापूजनमा तद्वलीन थयेवो एव पणु ज्ञानावरणीय दर्शन मोहनीय कर्मनी वृद्धि करतो करतोवधारे वधारे मलिन थतो नय छे ते कोष्ठ पणु समये ऐमनी वृद्धिमा सम्यक्त्व अने केवलप्रज्ञधर्मने मेणवी शकनार र्थ शकतो नथी अटका माटे कर्मने क्षय दर्वाथी आशाथी प्रतिमा पूजनमा तद्वलीन माणुस पोताना कर्मने आ कार्य (प्रतिमापूजन) थी क्षय करवा भागे छे ते इकत दुराशा मात्र छे न्यारे आ कार्यथी एव सम्यक्त्व अने केवलप्रज्ञधर्मना लाभथी पणु सदा हर रहे छे त्यारे तेनाथी कर्म क्षयनी आशा राणवी ते जोटी कल्पना मात्र न छे सम्यक्त्व एवने क्षयोपशमिक भाव छे हुवे न तो प्रतिमा क्षयोपशम स्वरूप छे अने न ते क्षयोपशममा काणु इये छे केमके ऐनाथी ज्ञानावरणीय अने दर्शनमोहनीय

“ભવકોઢીસંચિય કમ્મ તપસા નિઙ્ગરિઙ્ગઙ્ગ” (અ ૩૦, ગા ૬) તત્પાર્થ સૂત્રેડવિ—

“તપસા નિર્જરા ચ” (૫૦ ૧ સુ ૪)

અત્ર ચકારઃ સવરમ્મુચ્યપાર્થઃ । મમિતિગુપ્તિધર્માનુપ્રેક્ષાપરીપદનયચારિત્રૈઃ સવરો ભવતિ, તપસા તુ નિર્જરા સવરોડવિ ચેતિ માત્રઃ સમ્યક્ત્વ ામ સમ્યગ્દર્શન, તદ્ ચ સ્થાનાઙ્ગસૂત્રમ્— (સ્વા૦ ૨૩૦ ૧) દ્વિવિત્ર પ્રોક્ત । નિર્મર્ગસમ્યગ્દર્શનમ્ અભિગમમમ્યગ્દર્શન ચેતિ । નિર્મર્ગતઃ=સ્વભાવતઃ—ન પરોપદેશતો યદુત્પપતે, તન્નિર્મર્ગતમ્યગ્દર્શનમ્ । અભિગમાત્—મદ્ગુરુપદેશતો યદુત્પપતે, તદ્અભિગમ સમ્યગ્દર્શનમ્ ।

एक देश क्षय होना निर्जरा है । इस निर्जरा के प्रति कारणता तो तप में बतलाई गई है । देखो उत्तराध्ययन सूत्र में यही बात कही है—

‘ भवकोठी सचिद्य कम्म तपसा निङ्गरिङ्गङ्ग ’ करोड़ों भजों में सचित कर्मों की जीव तप से निर्जरा कर दता है । तत्पार्थ सूत्र में भी “ तपसा निर्जरा च ” इस सूत्र द्वारा यही बात कही गई है—तप से निर्जरा और सवर दोनों होते हैं । सूत्रम्य “ च ” शब्द से सवर का ग्रहण हुआ है ।

भावार्थ—इसका यही है कि पाच समिति, ३ गुप्ति, १० यतिधर्म १२, अनुप्रेक्षा, २२ परीपठों का जीतना एव ५ प्रकार का चारित्र्य पालना—इनसे सवर होता है और तप से सवर एव निर्जरा दोनों ही होते हैं । स्थानाङ्गसूत्र में सम्मगदर्शन दो प्रकार का कहा गया है—१ निसर्ग

કર્મનાં નિર્જરા થઈ શકે તેમ નથી કર્મોના એકદેશને ક્ષય થવો તે નિર્જરા પ્રત્યે ડારણ્યતા તો તપમા બતાવવામા આવી છે, જુઓ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રમા એ જ વાત સ્પષ્ટ કરી છે—

“ ભવકોઢી સચિય કમ્મ તપસા નિઙ્ગરિઙ્ગઙ્ગ ” કરોઢો ભવોમા સચિત કર્મોની નિર્જરા જીવ તપથી કરી નાખે છે તત્પાર્થ સૂત્રમા પણ “ તપસા નિર્જરા ચ ” આ સૂત્રવડે એ જ વાત કહેવામા આવી છે કે તપથી નિર્જરા તેમજ સવર બને થાય છે “ સૂત્રમા આવેલ “ ચ ” શબ્દથી સવરનુ શ્રદ્ધે કરવામા આવ્યુ છે

ભાવાર્થ—આનો આ પ્રમાણે છે કે પાચ સમિતિ, ૩ ગુપ્તિ, ૧૦ યતિધર્મ, ૧૨ અનુપ્રેક્ષા ૨૨ પરીપઢોને જીતવા અને ૫ પ્રકારના ચારિત્રનુ પાલન કરવુ આ બધાથી સવર થાય છે અને તપથી સવર અને નિર્જરા બને થાય છે સ્થાનાંગસૂત્રમા સમ્યગ્દર્શન બે પ્રકારનુ બતાવવામા આવ્યુ૦

केचित्तु--अत्राभिगमशब्दार्थो निमित्तमपि, तच्च प्रतिमादि उच्यते
 उच्यते, तन्मोहनीयकर्मोदयविलम्बितम् -- अभिगमसम्यग्दर्शने हि प्रतिमानि-
 मित्तकृत्य न सम्भवति श्रवणादिना श्रयोपशमहेतोरपि सद्गुण्यपदेशम्यात्राभिगमन
 और दूसरा अभिगम । जो सम्यग्दर्शन जीवों को स्वभाव से ही होता
 है । सद्गुरु के उपदेश से जो जीव को प्राप्त होता है वह अभिगम
 सम्यग्दर्शन है । निरर्ग और अभिगम में अन्तरग कारणदर्शन मोह
 नीय कर्म का क्षयोपशम आदि समान है परन्तु इसके होने पर भी जो
 जीव को सद्गुरु के उपदेश से प्राप्त होता है वह अभिगम और जो
 इसके बिना प्राप्त होता है वह निरर्ग सम्यग्दर्शन है कोई २ व्यक्ति
 अभिगम शब्द का अर्थ निमित्त परक भी करते हैं और वह निमित्त
 "प्रतिमा आदि है" ऐसा मानते हैं । परन्तु यह उनका कथन केवल
 मोह कर्म का ही विलम्ब है क्योंकि अभिगम सम्यग्दर्शन में प्रतिमा
 रूप निमित्त कला सम्भवित नहीं होती है--वहा तो श्रवण आदि से
 दर्शन मोहनीय कर्म के क्षयोपशम के कारणरूप सद्गुण के उपदेश का
 ही अभिगम शब्द से ग्रहण हुआ है । यदि सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति
 में वह कारण होता तो उस का ग्रहण निमित्तरूप से होता परन्तु ऐसा
 तो होता नहीं है--कारण कि वह अचेतन है उस से प्रवचन के अर्थ
 का उपदेश होता नहीं है । प्रवचन के अर्थ के उपदेश होनेबिना श्रोता-
 ओं को प्रवचन का अर्थ ज्ञान कैसे हो सकता है ? अर्थज्ञान हुए बिना

छे १ निसर्ग अने २ अलिगम सद्गुरुना उपदेशथी नहि पणु उच्यते
 स्वभावथी न ले सम्यग्दर्शन थाय छे ते निसर्ग सम्यग्दर्शन छे सद्गुरुना
 उपदेशथी ले उच्यते सम्यग्दर्शन प्राप्त थाय छे ते अलिगम सम्यग्दर्शन छे
 निसर्ग अने अलिगममा अतरग कारण दर्शनमोहनीय कर्मनो क्षयोपशम
 वगेरे समान न छे पणु अना होवा छताय उच्यते ले सद्गुरुना उपदेशथी
 भणे छे ते अलिगम अने ले अना वगर भणे ते निसर्ग सम्यग्दर्शन छे
 केटवीड व्यक्तिओ अलिगम शब्दनो अथ निमित्त परठ पणु उच्यते अने ते
 निमित्त "प्रतिमा वगेरे छे" अबु माने छे पणु आवु उच्यते तेमना उच्यते
 मोह कर्मनो न विलम्ब छे केमके अलिगम सम्यग्दर्शनमा प्रतिमा उप निमि-
 त्तता सम्भवित थछ गडे तेम नथी त्या तो श्रवण वगेरेथी दर्शनमोहनीय
 कर्मना क्षयोपशमना कारणरूप सद्गुणना उपदेशतु न अलिगम उपदेशथी अहणु
 थयु छे ले सम्यग्दर्शननी उत्पत्तिमा ते कारण होत तो तेनु अहणु निमित्त
 उपदेश थात पणु आवु नतु नथी केमके ते अचेतन छे तेनाथी प्रवचनना
 अर्थनो उपदेश थछ शब्दो नथी प्रवचनना अर्थनो उपदेश मालज्या बिना

शब्देन ग्रहणात् सम्यक्त्वं हि तत्त्वार्थश्रद्धानरूपं, तच्च प्रवचनार्थज्ञानादेव, प्रवचनार्थज्ञान च निर्जैरामूलक, निर्जैरा च विनयवैयावृत्यस्वाध्यायरूपतपोविशेषेभ्य, तत्र च सदगुरुरूपदेश कारण, न तु प्रतिमा । सो हि सदगुरुत्त्वं प्रवचनार्थमुपदेशदुमसमर्था, तस्या जडत्वात्, । नापि सा निर्जैराहेतुः, विनयादितपोरूपकर्मा की निर्जैरा नहीं हो सकती है । निर्जैरा के अभाव में दर्शन मोहनीय कर्म के क्षय उपशम आदि रूप सम्यक्त्व की उत्पत्ति सम्भवित नहीं है । अतः अभिगम सम्यग्दर्शन में सदगुरु का उपदेश ही निमित्त माना गया है और उसीका ग्रहण वत्ता पर उस शब्द से हुआ है प्रतिमा का नहीं-इसी का खुलाशा " सम्यक्त्व हि तत्त्वार्थश्रद्धानरूप, तच्च प्रवचनार्थज्ञानादेव, प्रवचनार्थज्ञान च निर्जैरामूलक - निर्जैरा च विनयवैयावृत्यस्वाध्यायरूपतपोविशेषेभ्य, तत्र च सदगुरुरूपदेशः कारण न तु प्रतिमा " अर्थ इन पक्तियों में लिखा गया है । तत्त्वार्थ का श्रद्धान करना सम्यक्त्व है । वह श्रद्धान प्रवचन के अर्थज्ञान से ही होता है और उस अर्थज्ञानका मूल कारण निर्जैरा मानी गई है अपना प्रतिपक्षी कर्मों की निर्जैरा हुए विना तत्त्वज्ञान हो ही नहीं सकता है विनय, वैयावृत्य, स्वाध्यायरूपतप विशेष निर्जैरा के कारण हैं तप की आराधना में सदगुरु का उपदेश कारण है इस प्रकार परम्परा सबध से अभिगम सम्यग्दर्शन में सदगुरु का उपदेश ही निमित्तरूप से गृहीत हुआ है प्रतिमा नहीं-कारण वह सदगुरु के उपदेश की तरह प्रवचन

श्रोताओंने प्रवचनतु अर्थज्ञान केवी शैते थछ शडे ? अर्थज्ञान वगर उर्भोनी निर्जैरा पणु थछ शकती नथी निर्जैरा विना दर्शनमोहनीय कर्मना क्षय उपशम वगेरे इप सम्यक्त्वनी उत्पत्ति सलपित नथी ओटला भाटे अबिगम सम्यग्दर्शनमा सदगुरुने उपदेश न निमित्तइपे मानवामा आये छे अने ते शब्दथो तेनु न श्रद्धणु थयु छे प्रतिमातु नहि आनु न स्पष्टीकरणु " सम्यक्त्व हि तत्त्वार्थश्रद्धानरूप, तच्च प्रवचनार्थज्ञानादेव, प्रवचनार्थज्ञान निर्जैरामूलक निर्जैरा च विनयवैयावृत्यस्वाध्यायरूपतपोविशेषेभ्य, तत्र च सदगुरुरूपदेश कारण न तु प्रतिमा " आने अर्थ आ प्रमाणे छे, के ते तत्त्वार्थनु श्रद्धान करणु ते सम्यक्त्व छे ते श्रद्धान प्रवचनार्थज्ञानतु भूण करणु निर्जैरा न मानवामा आवे छे चोताना प्रतिपक्षी कर्मोनी निर्जैरा थथा वगर तत्त्वज्ञान थछ न शकतु नथी विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय इप तप विशेष निर्जैराना करणु छे तपनी आराधनामा सदगुरुने उपदेश करणु छे आ शैते पर परा सबधथी अबिगम सम्यग्दर्शनमा सदगुरुने उपदेश न निमित्त उपमा गृहीत थयो छे नहि के प्रतिमा केभडे ते सदगुरुना उपदेशनी नेभ

त्वाभावात्, कथं तद्दि सम्यक्त्व प्रतिमायाः सम्भवति ? यथमपि नहि । अत एवो
पदेशस्य सम्यक्त्व प्रति कारणत्व प्रदर्शयन् भगवानवादीत्-उत्तराऽयनसूत्रे-
(अ० २८ गा० १५)

“ तद्वियाण तु भावाण सवभावे उपएसण ।

भावेण सद्वहतस्स सम्मत्त त वियाहिय ॥ इति ।

उाया—तयाना तु भावाना सद्भावे उपदेशनम् ।

भावेन श्रद्धतः सम्यक्त्व तद् व्याख्यातम् ॥

जीवाजीवादिपदार्थानां सद्भावे यद् उपदेशन=गुरोरुपदेशः, तद् भावेन-
अन्तःकरणेन यत् प्रत मोहनीयरुर्मणः क्षयेण क्षयोपशमेन वा याऽभिरुचिरुत्पद्यते,
तत् सम्यक्त्व तीर्यकरैर्व्याख्यातम् ।

के अर्थ का उपदेश करने में अचेतन होने से सर्वथा असमर्थ हे कर्मों
की निर्जरा में भी वह हेतु रूप नहीं होती है-कारण कि कर्मों की
निर्जरा के हेतु तो विनयादिक तप ही माने गये हैं, प्रतिमा विनयादि
तप स्वरूप नहीं है । अत प्रतिमा में सम्यक्त्व की उत्पत्ति में कारणता
किसी भी प्रकार सम्भवित नहीं होती है-उत्तरा यन सूत्र में सदगुरु
के उपदेश को सम्यक्त्व के प्रति कारण प्रकट करते हुए सिद्धान्तकार
कहते हैं कि-तद्वियाण तु भावा ण सवभावे उपएसण ।

भावेण सद्वहतस्स सम्मत्त त वियाहिय ॥ इति ॥

जीव और अजीव आदि पदार्थों का सदगुरु ने जो यथावस्थित
स्वरूप प्रकट किया है, उमका उसीरूप से अन्तःकरण से श्रद्धान
करने वाले प्राणी के दर्शन मोहनीय कर्म के क्षय अथवा क्षयोपशम

प्रवचनना अर्थाने उपदेश उरवाभा अचेतन होवा पहल स पूर्णपणे असमर्थ
छे उरषु के कर्मोनी निर्जराणा हेतु तो विनय वगेरे तपोव मानवाभा आव्या
छे प्रतिमा विनय वगेरे तप स्वरूप नहीं, अटला भाटे प्रतिमाभा सम्यक्त्वनी
उत्पत्तिमा उरषुता कोछ पणु रीते सलवी शके तेम नहीं उत्तराध्ययन सूत्रमा
सद्गुरुणा उपदेशने सम्यक्त्वना प्रति कारणता सिद्धान्तकार कहे छे—

तद्वियाण तु भावाण सवभावे उपएसण ।

भावेण सद्वहतस्स सम्मत्त त वियाहिय ॥ इति ॥

एव अने अएव वगेरे पदार्थानु के यथावस्थित स्वरूप सद्गुरुके प्रकट
क्युं छे तेनु ते रूपथी अत उरषुथी श्रद्धा न करनारा प्राणीना दर्शन मोह
नीय कर्मना क्षय के क्षयोपशमथी के इत्थि उत्पन्न थाय छे, तेनु नाम व

शब्देन ग्रहणात् सम्यक्त्व हि तत्त्वार्थश्रद्धानरूप, तच्च प्रवचनार्थज्ञानादेव, प्रवचनार्थज्ञानं च निर्जरामूलक, निर्जरा च विनयवैयावृत्यस्वाध्यायरूपतपोविशेषेभ्यः, तत्र च सद्गुरुरूपदेश कारण, न तु प्रतिमा । सा हि सद्गुरुर्या प्रवचनार्थमुपदेशदुमसमर्था, तस्या जडत्वात्, । नापि सा निर्जराहेतु' विनयादितपोस्य कर्मों की निर्जरा नहीं हो सकती है । निर्जरा के जमाव में दर्शन मोहनीय कर्म के क्षय उपशम आदि रूप सम्यक्त्व की उत्पत्ति सम्भवित नहीं है । अतः अभिगम सम्यग्दर्शन में सद्गुरु का उपदेश ही निमित्त माना गया है और उसीका ग्रहण चला पर उम शब्द से हुआ है प्रतिमा का नहीं-इसी का खुलासा " सम्यक्त्व हि तत्त्वार्थश्रद्धानरूप, तच्च प्रवचनार्थज्ञानादेव, प्रवचनार्थज्ञानं च निर्जरामूलक - निर्जरा च विनयवैयावृत्यस्वाध्यायरूपतपोविशेषेभ्यः, तत्र च सद्गुरुरूपदेशः कारण न तु प्रतिमा " अर्थ इन पक्तियों में लिखा गया है । तत्त्वार्थ का श्रद्धान करना सम्यक्त्व है । वह श्रद्धान प्रवचन के अर्थज्ञान से ही होता है और उस अर्थज्ञानका मूल कारण निर्जरा मानी गई है अपना प्रतिपक्षी कर्मों की निर्जरा हुए बिना तत्त्वज्ञान ही ही नहीं सकता है विनय, वैयावृत्य, स्वाध्यायरूपतप विशेष निर्जरा के कारण हैं तप की आराधना में सद्गुरु का उपदेश कारण है इस प्रकार परम्परा स्वयं से अभिगम सम्यग्दर्शन में सद्गुरु का उपदेश ही निमित्तरूप से गृहीत हुआ है प्रतिमा नहीं-कारण वह सद्गुरु के उपदेश की तरह प्रवचन

श्रोताओं ने प्रवचननु अर्थज्ञान देवी रीते थो शकते? अर्थज्ञान वगर उर्मोनी निर्जरा पणु थो शकती नहीं निर्जरा बिना दर्शनमोहनीय कर्मना क्षय उपशम वगेरे रूप सम्यक्त्वनी उत्पत्ति सम्भवित नहीं जेटला भाटे अभिगम सम्यग्दर्शनमा सद्गुरुने उपदेश न निमित्तरूपे मानवामा आये छे अने ते शब्दथो तेनु न थडणु थयु छे प्रतिमानु नहि आनु न स्पष्टीकरणु " सम्यक्त्व हि तत्त्वार्थश्रद्धानरूप, तच्च प्रवचनार्थज्ञानादेव, प्रवचनार्थज्ञान निर्जरामूलक निर्जरा च विनयवैयावृत्यस्वाध्यायरूपतपोविशेषेभ्यः, तत्र च सद्गुरुरूपदेश कारण न तु प्रतिमा " आने अर्थ आ प्रमाणे छे, के ते तत्त्वार्थनु श्रद्धान करणु ते सम्यक्त्व छे ते श्रद्धान प्रवचनार्थ अर्थज्ञाननु मूल कारणु निर्जरा न मानवामा आवे छे पोताना प्रतिपक्षी कर्मोनी निर्जरा थया वगर तत्त्वज्ञान थो न शकतु नहीं विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय रूप तप विशेष निर्जराना कारणु छे तपनी आराधनामा सद्गुरुने उपदेश कारणु छे आ रीते पर परा स थ थयी अभिगम सम्यग्दर्शनमा सद्गुरुने उपदेश न निमित्त रूपमा गृहीत थयो छे नहि के प्रतिमा उभके ते सद्गुरुने उपदेशनी नभ

त्वाभावात्, कथं तद्दि सम्यक्त्व प्रतिमायाः सम्भवति ? इयमपि नहि । अत एवो
पदेशस्य सम्यक्त्व प्रति कारणत्व प्रदर्शयन् भगवानवादीत्—उत्तराध्ययनसूत्रे—
(अ० २८ गा० १५)

“ तद्वियाण तु भावाण सवभावे उपएसण ।

भावेण सदहत्तस्स सम्मत्त त विघाहिय ॥ इति ।

उया—तव्याना तु भावाना सद्भाव उपदेशनम् ।

भावेन श्रद्धतः सम्यक्त्व तद् व्याख्यातम् ॥

जीवाजीवादिपदार्थाना सद्भावे यद् उपदेशन=गुरोरुपदेशः, तद् भावेन—
अन्तःकरणेन श्रद्धत मोहनीयकर्मणः क्षयेण क्षयोपशमेन वा याऽभिरुचिरुत्पद्यते,
तत् सम्यक्त्व तीर्थकरैर्व्याख्यातम् ।

के अर्थ का उपदेश करने में अचेतन होने से सर्वथा असमर्थ है कर्मों
की निर्जरा में भी वह हेतु रूप नहीं होती है—कारण कि कर्मों की
निर्जरा के हेतु तो विनयादिक तप ही माने गये हैं, प्रतिमा विनयादि
तप स्वरूप नहीं है । अत प्रतिमा में सम्यक्त्व की उत्पत्ति में कारणता
किसी भी प्रकार सम्भवित नहीं होती है—उत्तराध्ययन सूत्र में सद्गुरु
के उपदेश को सम्यक्त्व के प्रति कारण प्रकट करते हुए सिद्धान्तकार
कहते हैं कि—तद्वियाण तु भावाण सवभावे उपएसण ।

भावेण सदहत्तस्स सम्मत्त त विघाहिय ॥ इति ॥

जीव और अजीव आदि पदार्थों का सद्गुरु ने जो यथावस्थित
स्वरूप प्रकट किया है, उसका उसीरूप से अन्तःकरण से श्रद्धान
करने वाले प्राणी के दर्शन मोहनीय कर्म के क्षय अथवा क्षयोपशम

प्रपचनना अर्थानो उपदेश उरवाभा अचेतन होवा अदल स पूर्णपणे असमर्थ
छे कारण छे दर्शनी निर्जराणा हेतु तो विनय वगेरे तपोन मानवाभा आव्या
छे प्रतिमा विनय वगेरे तप स्वरूप नहीं, अटला भाटे प्रतिमाभा सम्यक्त्वनी
उत्पत्तिभा कारणता दोष पणु शीते मलवी शके तेम नहीं उत्तराध्ययन सूत्रभा
सद्गुरुना उपदेशने सम्यक्त्वना प्रति कारणता सिद्धान्तकार कहे छे—

तद्वियाण तु भावाण सवभावे उपएसण ।

भावेण सदहत्तस्स सम्मत्त त विघाहिय ॥ इति ॥

अप अने अजिव वगेरे पदार्थोनु जे यथावस्थित स्वरूप सद्गुरुने प्रकट
कथ्ये छे तेनु ते इपथी अत कारणथी श्रद्धा न करनारा प्राणीना दर्शन मोह
नीय कर्मना क्षय छे क्षयोपशमथी जे इथि उत्पन्न थाय छे, तेनु नाम ज

यदि प्रतिमाऽपि सम्यक्त्वगमे निमित्त स्यात्तर्हि भगवता स्थानाद्भूमौ प्रतिमानिमित्तत्वेन सम्पद्गर्भनस्य तृतीयभेदोऽपि प्राग्य., तस्यानुक्तत्वात् प्रतिमायाः सम्यक्त्वगमे निमित्तत्व नास्तीति यो यम् । किं च—

प्राणातिपातसा याया. प्रतिमापूजायाः सम्यक्त्वशुद्धिहेतुत्व परन्तः स्व दुर्गतिं न पश्यन्ति मोहान्ध्राः, स्थानाद्भूमौ हि प्राणातिपातस्य दुर्गतिहेतुत्व प्रदर्शितम्—

पचहिं ठाणेहिं जीवा दुग्गइ गच्छति । त तद्दा-पाणाइयाएण, मुत्तायाएण, अदिन्नादाणेण, मेहुणेण, परिग्गहेण ” इति । (स्था ५ ठा १ उ)

से जो रुचि उत्पन्न होती है उसी का नाम सम्यग्दर्शन है ऐसा तीर्थकर प्रभुने कहा है यदि सम्यक्त्व की प्राप्ति में प्रतिमा निमित्त होती तो स्थानाद्भूमौ में जो “ दोहिं ठाणेहिं आया केवलि पन्नत्त वम्म लभेज्जा स्वणयाए ” ऐसा कहा है वहा यदि सम्यक्त्व के लाभ में प्रतिमा भी निमित्त होती तो उसके निमित्त होने से दो स्थानों की जगह सम्यक्त्व की प्राप्ति में तीन स्थानों का कथन सूत्रकार को करना चाहिये या परन्तु वहा दो स्थानों के अतिरिक्त तृतीयस्थान का कथन हुआ नहीं है, अतः इससे यह सिद्धान्त निश्चित होता है कि सम्यक्त्व के लाभ में प्रतिमा निमित्त नहीं है । फिर भी प्राणातिपात द्वारा साध्य प्रतिमा पूजन को मोह के आवेश से ऊधे हुए व्यक्ति सम्यक्त्व की शुद्धि का कारण बत लाते हुए अपनी दुर्गति का कुछ भी ख्याल नहीं करते ह यही एक बड़े आश्चर्य की बात है देवो प्राणातिपात को स्थानाद्भूमौ में दुर्गति

सम्यग्दर्शन है, आम तीर्थ कर प्रभुने कहु छे जे सम्यक्त्वनी प्राप्तिमा निमित्त इपे डोत तो स्थानाग-सूत्रमा जे “ दोहिं ठाणेहिं आया केवलिपन्नत्त वम्म लभेज्जा स्वणयाए ” आ प्रभावे कहु छे, त्या जे सम्यक्त्वना लालमा प्रतिमा पण निमित्त थड शकत तो तेने निमित्त इपे थवा गदल जे स्थानोनी जग्याजे सम्यक्त्वनी प्राप्तिमा तण स्थानोनु कथन सूत्रकारे करवु जेधतु छंतु, पण त्या तो जे स्थानो सिवाय त्रीन स्थाननु कथन थयु न थी जेथी आ सिद्धा तनी भात्री थाय छे जे सम्यक्त्वना लालमा प्रतिमा निमित्त नथी छता ये प्राणातिपात वडे “साध्य प्रतिमा पूजनने अज्ञाननी निद्रामा पडेली व्यक्तिको सम्यक्त्वनी शुद्धिनु कारण भतावती पोतानी दुस्वस्था तरइ सडेज पण जेती नथी ते जेक अहु नवाध जेवी वात छे जेजो प्राणातिपातने स्थानागसूत्रमा दुर्गतिनु न कारण भताववामा आण्यु छे—(पचहिं ठाणेहिं

किं च-यथा लोके सुगाना सुवर्णमात्रसाम्येना शुद्धसुवर्णेऽपि प्रवृत्तिमवलोक्य शुद्धशुद्धपरीक्षणाय त्रिकक्षणः कृपच्छेदतापा आद्रियन्ते, तथाऽत्रापि परीक्षणीये श्रुतचारित्र्यरूपे वर्मे कृपादय समादरणीया भवन्ति ।

प्राणिव्यादीना पापस्थानाना यस्तु शास्त्रे प्रतिषेधः, तथा स्वाध्यायध्यानादीना यत्र तत्र विधि स धर्मरूप । प्राणिव्रतमपकर्षति पूजने तु धर्मत्वमुद्धिर्मोहवशादेव भवति, शास्त्रे प्राणिव्रतस्य प्रतिषेधात् । अतस्तत्र नास्ति कृपशुद्धिः ।

का ही कारण कहा है " पचहिं ठाणेहिं जीवा दुग्गह गच्छति-त जहा-पाणाइवाएण, सुत्तावाएण, अदिन्नादाणेण, मेहुणेण, परिग्गहेण इति । (स्था ५ ठा १ उ) उन पाचो स्थानो से जीव दुर्गति के पात्र बनते हैं - प्राणातिपात से, मृषावाद से, अदत्तादान से मैथुन से और परिग्रह से । किञ्च-लोक में जिस में जिस प्रकार भोले भाले व्यक्तियों की सुवर्णनात्र की समानता से अशुद्ध स्वर्ण में भी यह सच्चा सुवर्ण है इस प्रकारकी प्रवृत्ति को देखकर सुवर्णपरीक्षक जन उसके सम्यक्त्व और असम्यक्त्व परीक्षाके लिये कृप छेद और तप रूप उपायों का अत्यल्पन करते हैं उसी प्रकार परीक्षणीय इस श्रुतचारित्र्यरूप वर्म की परीक्षा के लिये सूत्रकारों ने कृपादिक परीक्षा के साधनों का उपयोग किया है प्राणिव्यादिक पापस्थानों का शास्त्र में जो निषेध का विधान हुआ है तथा स्वाध्याय एवं अध्ययन आदि का जो वहा पर विधान किया गया है यही वर्म का रूप है पूजन में यह धर्म कृप नहीं है क्यों कि वह प्राणि वध के सर्पक से दूषित है-अतः फिर भी जो उसमें धर्म

जीवा दुग्गह गच्छति-त जहा-पाणाइवाएण, सुत्तावाएण, अदिन्नादाणेण, मेहुणेण परिग्गहेण इति) (स्था ५, ठा १ उ) या पाचो स्थानोऽथ दुर्गतिने योग्य इति छे-प्राणुतिपातथी, मृषावादथी, अदत्तादानथी, मैथुनथी अने परिग्रहथी अने भीलु पणु के लोकभा जेम लोणा भाणुसोनी सुवर्णभात्रनी समानताथी अशुद्ध सुवर्णभा पणु ' या सोनु अइ छे, ' या जतनी प्रवृत्ति जेधने सुवर्ण परीक्षके तेना अरा-जोटाणी परीक्षा भाटे उप, छेद अने ताप इप उपायोना आसरे वे छे तेमज परीक्षणीय या श्रुतचरित्र इप धर्मनी परीक्षा भाटे सूत्रकारोअे कृप वगेरे परीक्षाना साधनेना उपयोग कथी छे पापि वध वगेरे पापस्थानोनु शास्त्रभा जे निषेध उप विधान थयु छे तेमज स्वाध्याय अने अध्ययन वगेरेनु जे त्या विधान उरवामा आण्यु छे ते ज धर्मनी उसोटी-उप छे पूजनभा या धर्म कृप नहीं केमके ते प्राणिवधना सर्पकथी दूषित छे छता य तेमा धर्मत्वनी शुद्धि राभवामा आवे छे ते इक्षत

યત્ર વિધિ' પ્રતિષેધપ્રતિ દ્વય કદાચિન્ સ્વરૂપતો વિપરીત્યન યાતિ, જયાંત્-
સ્વાધ્યાય યાનાદીં નિયમતઃ પ્રવૃત્ત્યા વિધિપરિશુદ્ધિઃ, તથા દિંમાદોં નિયમતો
નિવૃત્ત્યા પ્રતિષેધપરિશુદ્ધિર્ભવતિ, સ ધર્મ-ત્રેદ ઉચ્યતે । પ્રતિમાપૂજાયા તુ નાસ્તિ
ત્રેદશુદ્ધિઃ, તમ્યાઃ પદ્મકાયોપમર્દનસાધ્યત્વેન પ્રતિપત્તિપરિશુદ્ધિપ્રમાણાત્ ।

પ્રવચને જીવાજીવાદીના તત્ત્વાના યથાવસ્થિતસ્વરૂપનિરૂપણ મોક્ષસાધક
મિત્યેષ નિશ્ચયસ્તાપશુદ્ધિઃ । યથા વહ્ની તાપનેન દુર્ગત્ય યથાવસ્થિતસ્વરૂપાવિ
ર્ભાત તથા-પ્રવચનોક્તતત્ત્વાનુમન્થાનેન ધર્મસ્ય સ્વરૂપમાવિર્ભવતિ । એવ પ્રતિમા
પૂજાયાં પ્રવચનોક્તસત્તરનિર્જરાતત્ત્વલક્ષણાનાક્રાન્તત્ત્વાનામ્તિ તાપશુદ્ધિઃ ।

ત્વક્ષી વુદ્ધિ હોતી હૈ વહ કેવલ મોહકા હી આવેજા હૈ । પ્રાણિવધ શાસ્ત્ર
સે નિષિદ્ધ હૈ । જહાં પર વિધિ ઓર પ્રતિષેધ યે દોનોં કમી મી અપને
સ્વરૂપ સે વિપરીતપને કો પ્રાપ્ત નહીં હોતે હૈ વહા પર ત્રેદ સે શુદ્ધિ
માની જાતી હૈ જિસ પ્રકાર સ્વાધ્યાય ઓર અધ્યયન આદિ શુભ કાર્યોં
મેં નિયમ સે શાસ્ત્ર મેં પ્રવૃત્તિ પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ ઓર હિંસાદિ કાર્યોં
સે ડસમે નિયમ સે નિવૃત્તિ કહી ગઈ હૈ । પ્રતિમા પૂજન મેં યહ છેદ
શુદ્ધિ નહી હૈ । ક્યો કિ ડસમેં પ્રતિષેધ સે પરિશુદ્ધિ કા અભાવ હૈ ડસ
કાં કારણ યહ હૈ કિ વત્ પદ્મકાય કે જીવોં કે ઘાત સે સાધ્યકાર્ય હૈ ।
પ્રવચન મેં જીવ ઓર અજીવ આદિ તત્ત્વોં કે યથાવસ્થિત સ્વરૂપ કા
વર્ણન હી મોક્ષકા સાધક હૈ ડસ પ્રકાર કા નિશ્ચય હી તાપ શુદ્ધિ હૈ ।
જિસ પ્રકાર અગ્નિ મે તપાને સે સ્વર્ણ કા યથાવસ્થિત સ્વરૂપ પ્રકટ હોતા
હૈ । ડસી પ્રકાર પ્રવચન કથિત તત્ત્વોં કે અનુમન્થાન સે ધર્મ કે સ્વરૂપ
કા અવિર્ભાવ હોતા હૈ ડસ પ્રતિમાપૂજન મે વર્મતત્ત્વકે અવિર્ભાવ કરને

અજ્ઞાનનો જ લાભરો છે પ્રાણિવધ શાસ્ત્રનિષિદ્ધ છે બધા વિધિ અને પ્રતિષેધ
આ બંને કોઈ પણ વખતે પોતાના સ્વરૂપથી વિપરીતાવસ્થામાં પરિવર્તિત થતા
નથી ત્યાં છેદથી શુદ્ધિ માનવામાં આવે છે જેમ સ્વાધ્યાય અને અધ્યયન
વગેરે શુભ કાર્યોમાં નિયમથી શાસ્ત્રમાં પ્રવૃત્તિ બતાવવામાં આવી છે અને
હિંસા વગેરે કાર્યોથી તેમાં નિયમથી નિવૃત્તિ બતાવવામાં આવી છે પ્રતિમા
પૂજનમાં આ છેદ શુદ્ધિ નથી કેમકે આમાં પ્રતિષેધથી પરિશુદ્ધિનો અભાવ છે
આનું કારણ આ પ્રમાણે છે કે તે પદ્મકાયના ભવેના ઘાતથી સાધ્ય કાર્ય છે
પ્રવચનમાં ભવ અને અભવ વગેરે તત્ત્વોના યથાવસ્થિત સ્વરૂપનું વર્ણન જ
મોક્ષનું સાધક છે આ બંનેનો નિશ્ચય જ તાપ શુદ્ધિ છે જેમ અગ્નિમાં તથા
વવાથી સોનાનું યથાવસ્થિત સ્વરૂપ પ્રકટ થાય છે તેમજ પ્રવચન કથિત તત્ત્વોના
અનુમન્થાનથી ધર્મના સ્વરૂપનો અવિર્ભાવ થાય છે આ નિ । ધર્મ

एभिः कृपादिभिः परिशुद्धस्यैव र्मत्वं समरति तादृशस्यैव धर्मफल जनयत्यात् ।

यथा-आयुर्मादिदोषदृष्टिताहारादिदाने धर्मशुद्ध्या त्रियमाणे धर्म-
व्याघातः, यथा या इन्द्रादिपूजादीं र्मव्याघातः, तथैव धर्मशुद्ध्या प्रतिमापूजनेऽपि
धर्मव्याघातः स्यात्, तस्य जीवोपघातहेतुत्वात् ।

“ प्रतिमापूजा-धर्मव्याघातवती, जागमोक्तन्यायनिगृह्यतत्वात्, अयोग्य-
प्रव्रज्यादानयत्, इन्द्रादिपूजावद् वा ” इत्याद्यनुमानेनापि प्रतिमापूजाया धर्म-
व्याघातो भवतीति विश्वमनीयम् । उक्तं च—

की योग्यता तक्र भी नहीं है । कारण कि यह प्रवचन कथित मन्त्र
और निर्जरा तत्त्व के लक्षण से युक्त नहीं है-अतः उसमें तत्र शुद्धि
भी नहीं है । इन कृपादिभो द्वारा परिशुद्ध हुई वस्तु में ही र्मता
आती है और वही यथार्थ में धर्म के फलका प्रदान होता है । प्रतिमापू
जन में यह घात नहीं है-अतः वह धर्मरूप नहीं है ।

किंच-धर्मशुद्धि से बनाये गये, परन्तु आयुर्कर्म आदिदोषों से
दूषित ऐसे आहार के दान में तथा इन्द्र आदिको का पूजन करने में जिस
प्रकार र्म का व्याघात माना गया है, उसी प्रकार धर्मशुद्धि से की गई
प्रतिमा का पूजन में भी जीवो का घात होने से धर्म का व्याघात होता
है । इसलिये आगम कथित सिद्धान्त के अनुसार यह प्रतिमापूजन उपो-
देय कोटि में नहीं आना है । फिर भी जो इसे करते हैं-कराते हैं-वे
आगम कथित सिद्धान्त से सर्वथा वार्य ह-और धर्म का व्याघात कर-

तत्त्वने आविर्भूत करवा सुधीनी पणु क्षमता नहीं, डेभडे आ प्रवचन उचित
सवर अने निर्जरा तत्त्वना लक्षणीयुक्त नहीं अटला भाटे आमा ताप
शुद्धि पणु नहीं आ उष वगेरे वडे परिशुद्ध थयेली वस्तुमा न धर्मता आवे
छे अने ते न मात्रा स्वइपमा धर्मना इणने आपनार छे प्रतिमा पूजनमा
आ वात नहीं अथी ते धर्म इप नहीं

धर्मशुद्धिथी तैयार करवामा आवेला, पणु आधाडर्म वगेरे दोषो वडे
दूषित अेवा आहारना दानमा तेम न इन्द्र वगेरेनी पूज करवामा लेम धर्मने
व्याघात मानवामा आव्यो छे, तेम न धर्मशुद्धि राणीने करवामा आवेला
प्रतिमा पूजनमा पणु अवेना घात डोवाथी धर्मने व्याघात डोय छे अटला
भाटे आगम उचित सिद्धान्त मुल्लण आ प्रतिमा पूजन उपादेय डोन्निमा
आवतु नहीं छता ये न आने करे छे, करावे छे तेओ आगम उचित सिद्धा
तथी सर्वथा आछ छे अने धर्मना व्याघात छे अथी अथोग्यने आपेवी

“ પ્રવ્રજ્યાદિવિધાને ચ, શાસ્ત્રોક્તન્યાયવાધિતે ।

દ્રવ્યાદિભેદતો જ્ઞેયો, ધર્મ-વ્યાયાત ઇવ હિ ” ॥ દારિમદ્રાપ્ટકમ્

યત્નુ-જિનપ્રતિમાયા દર્શન ચન્દન ચાવશ્યમંત્ર માધુનામિતિ ચન્દનાદ્યક્રત્વા
મક્તપાન ન વત્તવને તેવામિત્યાદૃસ્તર્ધર્મલમ્—

અઠોરાત્રક્રુન્યેપુ માધુરલ્પેપુ જિનપ્રતિમાર્શનાદેરનુક્તત્વાત્ । શૃણુ તાવઠોરાત્ર-
ક્રત્ય માધુનામ્—

નેવાલે છે અતઃ અયોગ્ય કો દીક્ષા દાન કી તરહ જવયા હન્દ્રાદિક ક
પૂજન કી તરહ યદ પ્રતિમાપૂજન આગમોક્ત ન્યાય સે નિરાકૂન હોને સે
ધર્મ કા વ્યાઘાન કરનેવાલા હં જેમા ત્રિ-ગ્રામ્ કરના ચાલિયે । ત ગ ચ
અનુમાનપ્રયોગોડય-પ્રતિમાપૂજા ધર્મવ્યાઘાતવતી આગમોક્તન્યાયનિરાકુ
તત્વાત્ અયોગ્યપ્રવ્રજ્યાદાનવત્ હન્દ્રાદિપૂજનવદ્વા । ડમ અનુમાન મેં દિયા
ગયા હેતુ અસ્તિદ્ર નથી હૈ-મયો કિ “ પ્રવ્રજ્યાદિવિગ્રાને ચ શાસ્ત્રોક્તન્યા
યવાધિતે - દ્રવ્યાદિભેદતો જ્ઞેયો ધર્મવ્યાઘાત ઇવ હિ ” દૃષ્ટાન્ત મેં ડસ
હેતુ કા ડસ શ્લોક દ્વારા કથિત પ્રકાર સે સદ્ભાવ પાંચા હી જાતા હૈ ।

જો યદ ક્રતા જાનો હૈ કિ જિનપ્રતિમા કે દર્શન ચન્દન ક્રિયે વિના
સાધુઓં કો આહાર પાની કરના કલ્પનીય નથી હૈ-અતઃ. ડસકા દર્શન
ચન્દન કરના સાધુઓં કે લિયે આવશ્યક હૈ વદ ચિલકુલ નિર્મૂલ હૈ-
કારણ કિ દિનરાત સવધી જિતને મી સાધુઓં કે કલ્પ હં ડન મેં ડસ
વાત કા કહી મી કથન કિયા હુઆ નથી મિલતા હૈ-દિનરાત સવધી
સાધુઓં કે યે કૃત્ય હૈ—

દીક્ષાની જેમ અથવા તેા ઇન્દ્ર વગેરેની પૂજાની જેમ આ પ્રતિમાપૂજન આગમ
કથિત ન્યાયથી નિરાકૃત હોવા બદલ ધર્મને નાશ કરનાર છે આમ માની જ
લેણુ બેબંધે “ તથા ચ અનુમાનપ્રયોગોડય પ્રતિમાપૂજા ધર્મવ્યાઘાતવતી આગમો
ક્તન્યાયનિરાકૂનત્વાત્ અયોગ્ય-પ્રવ્રજ્યાદાનવત્ હન્દ્રાદિપૂજનવદ્વા । આ અનુમાનમા
આપેલ હેતુ અસિદ્ધ નથી, કારણ કે-પ્રવ્રજ્યાદિવિધાને ચ શાસ્ત્રોક્તન્યાયવાધિતે
-દ્રવ્યાદિભેદતો જ્ઞેયો ધર્મવ્યાઘાત ઇવ હિ । દૃષ્ટાન્તમા આ હેતુનેા આ શ્લોક
વડે જે કથિત પ્રકાર છે તેનેા સદ્ભાવ મળે છે

જે એમ કહેવામા આવે છે કે જીન પ્રતિમાના દર્શન કર્યા વગર સાધુ
ઓને આહાર પાણી કરણુ યોગ્ય નથી એથી તેના દર્શન વન્દન કરવા સાધુ
ઓના માટે આવશ્યક છે તે માવ જોટી વાત છે કેમકે દિવસ અને રાત્રિને
લગતા સાધુઓને માટે જેટલા કટપ છે તેમા આ વાતનુ કથન કયાયે નથી
દિવસ અને રાત્રિના સાધુઓના આ નીચે લખ્યા મુજબ કૃત્યે

पढम पोरिसि सज्जायं, नीए ज्ञाण झियायण ।
तइयाए भिक्खायरिय, चउत्थीए पुणो वि सज्जाय ॥
पढम पोरिमि सज्जाय, नीए ज्ञाण झियायए ।

तइयाए निहमोस्ख च, चउत्थीए पुणो वि सज्जाय ॥ इति,
(उत्तराध्ययनसूत्रे २६ अ)

किं च-सामायिकाद्यापश्यकेऽपि प्रतिमादर्शनादेरनुक्तत्वाद् जिनाज्ञाया एव च धर्ममूलत्वात्तस्य धर्मत्व न सि यति ।

यत्तु-पुष्पादिसमभ्यर्चनरक्षणो द्रव्यस्तवः सागुना हेय एव श्रावकेण तु उपादेयोऽपि तथा चाह-भाष्यकारः-

अकसिणपवत्तगाण, विरयाविरयाण एस खलु जुत्तो ।
ससारपयणुकरणो दब्बत्थए ऋवदिट्ठतो (भाष्यकारः ४२)

पढम पोरिसि सज्जाय बीए ज्ञाण झियायए ।
तइयाए भिक्खायरिय चउत्थीए पुणो वि सज्जाय ॥
पढम पोरिसि सज्जाय बीए ज्ञाण झियायए ।
तइयाए निहमोस्ख च चउत्थीए पुणो वि सज्जाय ॥
(उत्तरा सूत्र २६ अ-)

अर्थस्पष्ट है । इसी प्रकार सागुओं के जो सामायिक आदि आवश्यक कृत्य हे, उनमें भी प्रतिमा के दर्शन आदि करना नहीं कहा है । धर्म का मूल तो जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा की आश्रयना करने में है इसलिये दर्शन वगैरह ये धर्म के मूल नहीं हैं । भाष्यकारने जो इस गाथा द्वारा " अकसिण पवत्तगाण विरयोविरयाण एस खलु जुत्तो । ससार पयणुकरणो दब्बत्थए ऋवदिट्ठतो " (भाष्यकार ४२) यह कहा है कि

पढमे पोरिसि सज्जाय बीए ज्ञाण झियायए ।
तइयाए भिक्खायरिय चउत्थीए पुणो वि सज्जाय ॥
पढमे पोरिसि सज्जाय बीए ज्ञाण झियायए ।
तइयाए निहमोस्ख च चउत्थीए पुणो वि सज्जाय ॥ (उत्तरासूत्र-२६ अ)

अर्थ अरण्य छे आ रीते साधुओंना के सामायिक वगेरे आवश्यक कृत्यो के तेमनामा पणु प्रतिमाना दर्शन वगेरे करवानी बात ठही नथी धर्मनु मूल तो जिनेन्द्र भगवाननी आज्ञाने आश्रयवामा आवे के भाटे दर्शन वगेरे आ अधा धर्मना मूल नथी भाष्यकारे ने आ गाथा पडे- (अकसिण पवत्तगाण विरयाविरयाण एस खलु जुत्तो । ससारपयणुकरणो दब्बत्थए

अहृत्स्नप्रसक्तानां अहृत्स्नसयममट्टक्षिमाता विगताविरताना=देगविरतीना
 श्रावकाणाम् एष द्रव्यस्तव' तल्लु वृक्त एव । किंभूतोऽयमित्याह-सत्तार प्रतनु
 करणः=समारक्षयकारः इत्यर्थः । ननु द्रव्यस्तो हेय प्रकृत्येवासुन्दरः स कथ
 श्रावकाणा युक्त ? । इत्याशङ्क्याह-रूपदृष्टान्त इति-

यथा लोके केऽपि जलाभासतमृणाशुगः पिषामापनोऽनाध्वं रूप सनन्ति
 ते रूपसनका मृत्तिकासर्दपादिभिश्च मग्निना भ्रमन्ति, पश्चात् तदद्रव्येन जलेन
 तेषा तृष्णायास्तथा मृत्सर्दमग्नस्य च नाशो भवति तदनन्तरमपि ते तदन्ये च

श्रवणों के लिये उपादेय भी पुष्प आदिको द्वारा भगवान की प्रजा स्व
 रूप द्रव्यस्तव साधुओं के लिये हेय ही है । क्यों कि साधु नर्व आरभ
 और परिग्रह के सर्व ग त्यागी हैं-श्रावक नहीं वे देश विरति सपन्न हैं ।
 अतः उनके लिये द्रव्यस्तव ससार का क्षय कारक माना गया है कृप
 का दृष्टान्त देकर भाष्यकार ने इस ज्ञान का परिहार किया है कि जिस
 प्रकार जल के अभाव से पिपासा जो दूर करने के लिये कोई २ मनुष्य
 कृप को खोदते है और उसे खोदते समय मिट्टी और कीचड़ से मलिन
 भी हो जाते हैं परन्तु पश्चात् उस कृप में निकले हुए जल से वे उस
 कीचड़ और लगी हुई मिट्टी को साफ कर देते हैं और समय २ पर
 अपनी पिपासा की भी शांति करते रहते ह । दूसरे और भी लोक
 उससे लोभ उठाते है । इस प्रकार उस जलयुक्त कुँ से खोदने वाले
 व्यक्तियों को तथा और भी अन्यजनों को समय २ पर अनेक प्रकार से
 लाभ होता रहता है । ठीक इसी तरह इस द्रव्यस्तव में जो कि सयम

कृवद्विद्वतो ।) (भाष्यकार ४२) आ प्रभाष्ये ऽल्लु उ उ श्रावकाने माटे उ ।।
 हेय डोवा छता पुष्प वगेरे वडे लगवाननी पूल स्वरूप द्रव्यस्तव साधुओंना
 माटे तो त्याग्य न छे, कैमके साधु सर्व आरभ अने परिश्रद्धता स पूष्य पष्ये
 त्यागी डोय छे श्रावक नहीं, तेज्जा देश विरति स पन्न छे अटला माटे तेभने
 सामे राशीने विचार ऽरीअे तो द्रव्यस्तव ससारने क्षय ऽरनार मानवामा
 आन्थे छे रूपनु दंष्टात आपीने लाभकारे आ शाने द्वर करी छे उ लेभ
 पाषीना अलावने लीधे पीडाधने तरस मटाडवा माटे डेटलाक भाषुमे वाव
 जोहे छे अने ते वणते तेज्जा माटी अने कादवथी भरडाड नय छे पष्य त्यार
 पछी वावमाथी नीजणता पाषीथी न तेज्जा क्षीयड तेभन शरीरे चोटेली माटीने
 साक्ष करी नाथे छे अने वणतो वणत पोतानी तरस पष्य मटाडे छे जीन
 पष्य डेटलाक बोके तेनाथी लाभ भेगने छे आ रीते ते पाषी लरेवी वावथी

लोका जलेन क्षुत्विनो भवन्ति एव द्रव्यस्तवै तद्यप्यस्यमो मयति तथापि तत् एव सा परिणामशुद्धिर्भवति, या तद् असयमोपार्जितमन्यच्च निरप्रशेषं क्षपयति इति ।

“ तस्माद्द्विरताविरतैः श्रावकैरेव द्रव्यस्तव कर्तव्य ।

शुभानुवन्धी प्रभूतनिर्जराफल इति कृत्वा ” इत्युक्तम्-

तदसत्-अत्र हि कृपदृष्टान्तो न सघटते कृपवन्नेन जलमुत्पद्यते इति सरुल लोकरूप्यक्ष, किन्तु पदज्ञायच्च कुर्वत कारयतश्च वर्ममूलभूताया दयाया एव

की रक्षा नहीं होती है, तो भी यह कर्त्ता को परिणामों में शुद्धि का हेतु होता है । इससे कर्त्ता उस द्रव्यस्तव के करने में उद्भूत असयम द्वारा उपार्जित पापों का सम्पूर्णरूप से विनाश कर देता है । इसलिये विरताविरत (एकदेश सयम नी आराधना करनेवाले पञ्चमगुणस्थान-वर्ती श्रावको द्वारा यह द्रव्यस्तव कर्त्तव्य कोटि में आने से उपादेय है । कारण कि यह उनके लिये शुभानुवन्धी और कर्मों की अधिक निर्जरा रूप फल का प्रदाता होता है ” यह सब भाष्यकार का कथन ठीक नहीं है । कारण कि उन्हो ने जो कृप का दृष्टान्त देकर इस विषय की पुष्टि करनी चाहिये, उससे प्रकृत विषय की वास्तविक पुष्टि नहीं होती है । यह तो प्रत्येक लौकिक जन के प्रत्यक्ष अनुभव में आने जैसी बात है कि रूप के खोदने से जल निकलता है उसमें तो विवाद की कोई जरूरत ही नहीं है, किन्तु प्रतिभा की पूजा करने और करानेवालों से यह

जोहनार लोडोने तेमल भील पणु धणु भाणुमोने वणतो वणत धणुी रीते लाल थता रहे छे हीउ आ प्रभाणुे व द्रव्यस्तवमा ने के सयमनी रक्षा थती नथी, छता थ ते उर्ताना भाटे परिणाममा शुद्धितु जगुु डोय छे तेनाथी कर्ता ते द्रव्यस्तवना कृवामा उद्भूत असयम वडे भेणवेला पापोना म पूषु पणुे विनाश करी नाणे छे अथी विरताविरत (एकदेश सयमनी आराधना करनार पयम गुणुस्थानवर्ती) श्रावणे वडे आ द्रव्यस्तव उर्तव्य डोटिमा आववाथी उपादेय छे उरणु डे ते तेमना भाटे शुभानुवन्धी अने कर्मोनी वधारे निर्जरा कृणने आपनार छे लाध्यकागुु आ षधु उथन योग्य नथी, कारणु डे तेओओ ने वावतु दृष्टात आथीने आ विषयनी पुष्टि उरवा प्रयत्न करी छे, तेनाथी प्रकृत विषयनी वास्तविक रूपमा पुष्टि वती जेवामा आवती नथी हरेके हरेक भाणुसना भाटे आ तो ओउ प्रत्यक्ष अनुभव करी शकय तेवी हडिउत छे डे वाव जोहवाथी पाणुी नीउणे छे, आमा तो अर्थानी डोड वात वरुणुनी थती नथी पणु प्रतिभानी पूज करनार अने करवनाराओधी

काय के जीवो की रक्षा नहीं हो सकती है-उनसे उनकी विराधना होती है। ऐसी परिस्थिति में धर्म के मूलभूत सिद्धान्त का ही जय वहाँ अभाव है तब उस पूजन कार्य के उनके परिणामों में शुद्धि मानना यह कथन शास्त्र से विरुद्ध और प्रत्यक्ष आदि समस्त प्रमाणों से चाधित होता हुआ किसी भी समझदार व्यक्ति को मान्य नहीं हो सकता है प्रतिमा पूजनके पक्षपाती जो इस प्रकार अपने पक्षमें तर्क करते हैं कि-

सम्यक् स्नात्वोचिते काले सस्नाप्य च जिनान् क्रमात् ।
पुष्पाहारस्तुतिभिश्च पूजयेदिति तद्विधिः ॥

तथा-जिनप्रभसूरिकृतपूजाविधौ-सरससुगृहचदणेण अगेषु पूज काञ्चन पचगकुसुमेहिं गघनासेहिं च पृषड सद्गणे सुगधिभिः सरसैरभूपतितैर्विकाशिभिरसहितदलैः प्रत्यग्रैश्च प्रकीर्णैर्नानाप्रकारग्रथितैर्वा पुष्पैः पूजयेत्” इति-तथा-कुसुमकरपयगवपईवधूयनेवेज्जफलजलेहिं पुणो अट्टविहकम्मदलनी अट्टुपयारा इवड पूया” इति किञ्च-
जिनभवन जिनविम्ब जिनपूजा जिनमत च यः कुर्यात् ।
तस्य नरामरशिवसुखफलानि करपल्लवस्थानि ॥

पदकाय जीवो की रक्षा थई शकती नथी, ते कार्यथी तो तेमनी विराधना ज होय छे आवी परिस्थितिमा धर्मना भूणभृत सिद्धान्तोनो ज न्यारे अलाप छे त्यारे ते पूज इप कार्यथा तेमना परिष्ठाभोमा शुद्धि मानवी आ वात शास्त्रथी विरुद्ध अने प्रत्यक्ष वगेरे णीज्ज णथा प्रमाद्योधी णाधित थती कोई पणु समणु भाणुसना भाटे तो मान्य थई राके तेम नथी प्रतिमा पूजननी तरक्षदारी करनाराओ। पोतानी वातने पुष्ट करवा भाटे जे आ नतनी जोठी हवीलो सामे भूके छे इ-

सम्यक् स्नात्वोचिते काले सस्नाप्य च जिनान् क्रमात् ।
पुष्पाहारस्तुतिभिश्च पूजयेदिति तद्विधिः ॥

तथा-जिनप्रभसूरिकृतपूजाविधौ-सरस-सुगृहचदणेण अगेषु पूज काञ्चन पचगकुसुमेहिं गघनासेहिं य पूषड सद्गणे सुगधिभि सरसैरभूपतितैर्विकाशिभिरसहित दलैः प्रत्यग्रैश्च प्रकीर्णैर्नानाप्रकारग्रथितैर्वा पुष्पैः पूजयेत् । इति तथा कुसुमकरपयगवपईवधूयनेवेज्जफलजलेहिं पूणो अट्टविहकम्मदलनी अट्टुपयारा इवड पूया” इति किञ्च-

जिनभवन जिनविम्ब जिनपूजा जिनमत च यः कुर्यात् ।
तस्य नरामरशिवसुखफलानि करपल्लवस्थानि ॥

समुच्छेदात् परिणामशुद्धिरुत्पद्यत इति प्रवचनविरुद्ध कल्पन सर्पप्रमाणमाधित कस्यानुमत भवेत् । अपि तु न कस्यापि ।

(आचाराङ्गमूत्रे भगवताऽभिहितम् (ज १ उ १)

“ इमस्म चेव जीवियस्स परिवदणमाणणपूयणाए जाइमरणमोयणाए दुक्खप-
डिघायहेउ से सयमेव पुढविस्तथ समारभइ, अण्णेहिं वा पुढविस्तथ समारभावेइ,

भावार्थ—पूजक उचित समय में अच्छी तरह स्नान करके जिनेन्द्र का अभिषेक कर पुष्प आदिकों से उन की पूजा करे । जिनप्रभन्धुरि द्वारा विरचित पूजाविधि में भी पूजा के विषय में वही विधि प्रदर्शित की गई है सरस सुगधिन चदन से भगवान के नव अंगों में तिलरूप पूजन कर पूजक सुगधित, जमीन पर नहीं गिरे हुए, पत्र विनाके ताजे पत्र जाति ते पुष्पों द्वारा प्रभु की पूजा करें । पुष्प, अक्षत, गंध, प्रदीप, धूप, नैवेद्य फल और जल इन आठ द्रव्यों से आठ कर्मों को नाश कर नेवाली अष्टप्रकारी पूजा होती है । जिनमदिर, जिनप्रतिमा जिनपूजा और जिनमत को जो करता है, उस मनुष्य के हाथ में मनुष्यगति देव-गति और मोक्ष के सुख आ जाते हैं—अर्थात् वह मनुष्य इन गतियों के सर्वोत्तम सुख भोग कर मोक्षसुख का भोक्ता बन जाता है—सो इस प्रकार का यह पूजन विषयक समस्त कथन प्रवचन सिद्ध ही है क्योंकि आचारांगमूत्र में भगवान ने “इमस्स चेव जीवियस्स परिवदण माणण पयणाए जाइमरणमोयणाए दुक्खपरिघायहेउ से सयमेव पुढविस्त-

लावार्थ—पूजक स्नान योग्य समये सारी रीते स्नान करके जिनेन्द्रो-
अभिषेक करे तेमन् पुष्प वगैरेथी तेमनी पूज करे एतप्रभासुरि वडे विर-
चित पूजाविधिमा पणु पूजना विषयमा आ विधि न पताववामा आवी छे
सरस सुगधित चदनथी लगवानना नव अंगोमा तिलक रूप पूजन करी पूज
स्नान सुवासयुक्त, नभीन उपर पडेला नहिं, पत्र वगणा ताज, पाय नतिना
पुष्पोथी प्रभुनी पूज करे पुष्प, अक्षत, गंध, प्रदीप, धूप, नैवेद्य, इण अने
पाणी आ आठ द्रव्योथी आठ कर्मोनि नष्ट करनारी अष्ट प्रकारनी पूज होय
छे एत मदिर, एत प्रतिमा, एत पूज अने एत मतने न करे छे, ते
माणवनी पासे मनुष्य गति, देवगति अने मोक्षना सुभो आवी नय छे
अटके के ते माणुस आ गतिओना सर्वोत्तम सुभो लोगवीने मोक्ष सुभने
लोगवनार पनि नय छे, भाटे आ नतनु आ पूजनने लगतु पणु उधन
प्रवचन सिद्ध न छे, केभके आथागग सूत्रमा लगवाने—(इमस्स चेव जीवि-
यस्स परिवदण माणणपयणाए जाइमरणमोयणाए दुक्खपरिघायहेउ से

अण्णे वा पुढ्विसत्थं समारभते समणुजाणइ । त से अहियाण त से अणोहिण ।" इति-
 जीवः कस्मिं प्रयोजनाय पृथिवीजायस्य समारम्भ करोतीत्याह- " इमस्स
 चैव " इत्यादि । अस्मैय=क्षणभङ्गुरस्य, " जीवियस्स " जीवनस्य-जीवनस्यार्थे,
 तथा परिवन्दनमाननपूजनाय=परिव दन प्रशंसा, तदर्थं यथाऽऽथय्यगृहादिकरणे,
 मानन=सत्कारः तदर्थं, यथा कीर्तिस्त्वम्भादिकरणे, पूजन=स्वापूजा । प्रतिमापूजन
 च, तत्र स्वपूजन-वस्त्ररत्नादिपुरस्कारलाभस्तदर्थं, तथा-प्रतिमापूजनाय च प्रति
 मादिरचने तथा-जातिमरणमोचनाय, तथा दुःखप्रविधातरैतु-दुःखप्रि उगायं ।

इत्य समारभइ, अण्णेहिं वा पुढ्विसत्थं समारभावेइ, अण्णे वा पुढ्वि-
 सत्थं समारभते समणुजाणइ । त से अहियाण त से अणोहिण " इति-
 इस सूत्र में " जीव किस प्रयोजन के लिये पृथिवीजाय का समारभ
 करता है " इस प्रश्न का उत्तर देते हुए यह कहा है कि यह जीव इस
 क्षणभङ्गुर जीवन के लिये परिवन्दन-प्रशंसा के लिये-आश्चर्योत्पादक
 गृह आदि बनवाने के लिये मान-सत्कार के लिये कीर्तिस्त्वम्भा आदि कराने
 में, अपनी प्रतिष्ठा के लिये वस्त्र रत्नकुमाल आदि पुरस्कार में तथा
 प्रतिमापूजन के लिये प्रतिमादि बनवाने में तथा जाति-परलोक में सुख
 के लिये देवमन्दिर आदिके बनवाने में, मरण-जिनकी मृत्यु हो चुकी है
 ऐसे अपने पिता आदि की स्मृति के लिये स्तूप आदि की रचना कराने
 में, मोचन-मुक्ति प्राप्ति के लिये देव प्रतिमा आदि बनवाने में अथवा
 अनेक प्रकारके दुःखोंके विनाशके लिये वर्तमानकालमें स्वयं भी पृथिवी

सममेव पुढ्विसत्थं समारभइ, अण्णेहिं वा पुढ्विसत्थं समारभावेइ, अण्णेवा
 पुढ्विसत्थं समारभते समणुजाणइ त से अहियाण त से अणोहिण) इति-
 " एव शा माटे पृथिवीकायने समारभ उरे ऐ " के अवालेना जवाण
 आपता आ प्रभाळे कडेवामा आण्यु छे के आ एव आ क्षणुल गुण एवन
 माटे परिवहन-प्रशंसा माटे आश्चर्योत्पादक घर वगेरे बनाववामा, मान-सत्कार
 माटे कीर्तिस्त्वो वगेरे तैयार कराववामा, पोतानी प्रतिष्ठा माटे वस्त्र, रत्न,
 कामण वगेरे रूप पुरस्कार तेमज प्रतिमा पूजन माटे प्रतिमा वगेरे बना
 ववामा जाति परलोकमा सुख प्राप्ति थाय तेना माटे देव-मन्दिरा वगेरे तैयार
 कराववामा, मरण-जिनो मरण पाया छे तेना पोताना पिता वगेरेनी यादमा
 स्तूप, समाधि वगेरे बनाववामा, मोचन-मुक्ति भेजववा माटे देव-प्रतिमा
 वगेरे बनाववामा अथवा तो धरणी लतना दुःखोना विनाश माटे वर्तमान
 कालमा पोते पणु पृथिवीकायना विनाश स्वइय द्रव्यलाय

सः जीवन्परिन्दनमाननपूजनाद्यर्थं जनः स्वयमेव पृथिवीशस्त्र समारभते
 =पृथिव्युपमर्दं द्रव्यभाषशस्त्र व्यापारयति । अन्यैर्वा पृथिवीशस्त्र समारम्भयति
 =उयोजयति । पृथिवीशस्त्र समारभमाणान् अन्यान समनुजानाति अनुमोदयति ।
 एवमतीतानागताया, तथा मनोवाक्यैश्च पृथिवीशस्त्रसमारम्भभेदा अवगन्तव्याः ।
 पृथिवीशस्त्र समारभमाणः किं फल प्राप्नोतीत्याह—“ त से अद्वियाए ” इत्यादि ।
 “ त ’ तत्=पृथिवीकायसमारम्भण, “ से ” तस्य=पृथिवीशस्त्र समारभमाणस्य
 “ अद्वियाए ” अद्विताय=अकृपाणाय भवतीति शेषः । ‘ त ’ तत् = तदेव च
 पृथिवीकायसमारम्भणमेव च “ से ” तस्य पृथिवीशस्त्र समारभमाणस्य “ अयो-
 द्वीए ” अयोय्ये सम्यक्त्वालाभाय जिनर्मप्राप्त्यभावाय च भवति ।

पृथिवीकायसमारम्भण द्वि-कृतकारितानुमोदितभेदेन त्रिविधम्, तरयातीत-

काय के बिनाशस्वरूप द्रव्य भाव जस्तका व्यापार करता है, दूसरों से
 कराता है और इस शस्त्र का प्रयोग करने वाले प्राणियोंकी अनुमोदना
 करता है इसी प्रकार भूत और भविष्यत काल में मनवचन और काय
 से(त्रियोग और त्रिकरणके सवधसे) यह जीव पृथिवी कायका समारम्भ
 करने वाला हुआ है और होगा । अतः जिस प्रकार वर्तमान में त्रियोग
 और त्रिकरण के सवध से इस पृथिवी काय समारम्भ के भेद होते हैं
 उसी प्रकार भूत और भविष्यत काल में भी उनके सवध इसके भेद
 जानलेना चाहिये । यह पृथिवी काय का समारम्भ रूप शस्त्रका प्रयोग
 प्रयोक्ता जीवको कभी भी कल्याण एवं सम्पत्त्व के लाभ जिन र्म
 की प्राप्ति की प्राप्ति कराने वाला नहीं होता है ।

भावाथ—पृथिवीकाय का समारम्भ कृत, कारित और अनुमोदना

(जाय) करे छे, जीवको पाये करवे छे अने आ जन्मने प्रयोग करनार
 प्राणीकोनी अनुमोदना करे छे आ प्रमाणे भूत अने लविष्यत जाणमा मन,
 पयन अने जायथी (त्रियोग अने त्रिकरणना मणधथी) आ एव पृथिव
 कायने समारम्भ करनार थयो छे अने थये ज्येठला भाटे जेभ वर्तमानजाणमा
 त्रियोग अने त्रिकरणना मणधथी आ पृथिवीकाय समारम्भना भेद (प्रजा)
 छेय छे तेमज भूत अने लविष्यत जाणमा पणु तेमना मणध तेमज लेद
 लणी देवा जेठको आ पृथिवीकायना समारम्भ रूप शस्त्रने प्रयोग प्रयोक्ता
 एवना भाटे उदाय दृष्ट्याणु सम्यक्त्वने लाल तेमज अन धर्मनी प्राप्ति
 करनार थतो नथी

भावाथ—पृथिवीकायने समारम्भ कृत, कारित अने अनुमोदनाना लेदथी
 त्रयु प्रकारने छे अतीत अने अनागत काणना लेदोथी तेना जीव त्रयु त्रयु

अण्णे वा पुढ्विसत्थ समारभते समणुजाणइ । त से अहियाण त से अणोहिण ॥ इति
जीवः कस्मै प्रयोजनाय पृथिवीकायस्य समारम्भ करोतीत्याह—“ इमस्स
चेव ” इत्यादि । अस्सैय=क्षणभगुरस्य, “ जीयिस्सम ” जीवनस्य-जीवनम्यार्थे,
तथा परिवन्दनमाननपूजनाय=परिवन्दन प्रशंसा, तदर्थं यथाऽऽथर्येण्टहादिकरणे,
मानन=सत्कारः तदर्थं, यथा कीर्तिस्त्वम्भादिकरणे, पूजन=स्वपूजन प्रतिमापूजन
च, तत्र स्वपूजन-वस्त्ररत्नादिपुरस्कारलाभस्तदर्थं, तथा-प्रतिमापूजनार्थं च प्रति
मादिरचने तथा-जातिभरणमोचनाय, तथा दु सप्रविघाततेनु-दु राग्निमार्थं ।

त्य समारम्भ, अण्णेहिं वा पुढ्विसत्थ समारभावेऽ, अण्णे वा पुढ्वि
सत्थ समारभते समणुजाणइ । त से अहियाण त से अणोहिण ॥ इति—
इस सूत्र में “ जीव क्तिस्स प्रयोजन के लिये पृथिवीकाय का समारम्भ
करता है ” इस प्रश्न को उत्तर देते हुए यह कहा है कि यह जीव इस
क्षणभगुर जीवन के लिये परिवन्दन-प्रशंसा के लिये-आश्रयोत्पादक
गृह आदि बनवाने में मान-सत्कार के लिये कीर्तिस्त्वम्भा आदि कराने
में, अपनी प्रतिष्ठा के लिये वस्त्र रत्नकमल आदि पुरस्कार में तथा
प्रतिमापूजन के लिये प्रतिमादि बनवाने में तथा जाति-परलोक में सुख
के लिये देवमन्दिर आदिके बनवाने में, भरण-जिनकी मृत्यु हो चुकी है
ऐसे अपने पिता आदि की स्मृति के लिये स्तूप आदि की रचना कराने
में, मोचन-मुक्ति प्राप्ति के लिये देव प्रतिमा आदि बनवाने में अथवा
अनेक प्रकारके दुःखोंके विनाशके लिये वर्तमानकालमें स्वयं भी पृथिवी

सममेव पुढ्विसत्थ समारभइ, अण्णेहिं वा पुढ्विसत्थ समारभावेऽ, अण्णेवा
पुढ्विसत्थ समारभते समणुजाणइ त से अहियाण त से अणोहिण) इति—
“ एव शा भाटे पृथिवीकायने समारभा उरे ॐ ” अथे मवादाने न्वाथ
आपता आ प्रभाण्णे कडेवामा आण्यु छे के आ एव आ क्षणुल्लगुर एवन
भाटे परिवन्दन-प्रशंसा भाटे आश्रयोत्पादक घर वगेरे बनाववामा, मान-सत्कार
भाटे कीर्तिस्त्वम्भा वगेरे तैयार कराववामा, पोतानी प्रतिष्ठा भाटे वस्त्र, रत्न,
कामण वगेरे रूप पुरस्कार तेमळ प्रतिमा पूजन भाटे प्रतिमा वगेरे बना
ववामा नति परलोकमा सुख प्राप्ति थाय तेना भाटे देव-मन्दिर वगेरे तैयार
कराववामा, भरण-जिनकी मृत्यु पाभ्या छे तेवा पोताना पिता वगेरेनी यादमा
स्तूप, समाधि वगेरे बनाववामा, मोचन-मुक्ति भेजववा भाटे देव-प्रतिमा
वगेरे बनाववामा अथवा तो धण्णी नतना दु जेना विनाश भाटे वर्तमान
काणमा पोते पण्णु पृथिवीकायना विनाश स्वइय द्रव्यलाभ ॥ ५॥

मलभ्य, किं पुनस्तत्र पट्टकायसमारम्भणे स्वर्गापवर्गलाभस्य समभव । परिवन्दन-
माननपूजनार्थं जातिमरणमोचनार्थं दुःखप्रतिघातार्थं च ये जीवाः पृथिवीकायादि-
समारम्भं कुर्वन्ति, ते तत्काले विपरीतमेव लभन्ते यतोऽसौ समारम्भः अबोधिमहित
चोत्पादयतीत्युक्तं भगवता । परंतु तत्र प्रतिमापूजनां शास्त्रविरुद्धमेव कथयति-
प्रतिमापूजाया स्वाभ्युदयमोक्षार्थं क्रियमाणः पट्टकायसमारम्भः खलु अबोधिम-

जीव के लिये यह अकेला पृथिवीकाय का समारम्भ ही अहित का कर्त्ता
और मोक्ष के मार्ग से वंचित रखनेवाला कहा गया है तो भला किस
कार्य में पट्टकाय के जीवों का समारम्भ होता है, उस कार्य से अथवा
उस प्रकार के समारम्भ से जीवों को स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) का
लाभ कैसे हो सकता है ? अर्थात् किसी तरह नहीं हो सकता ।

जो मनुष्य परिवन्दन मानन और पूजन के निमित्त तथा जाति और
मरण के मोचन के निमित्त एव दुःखों के विनाश करने के निमित्त
पृथिवीकाय आदि का समारम्भ करते हैं, वे उसका विपरीत ही फल
भोगते हैं यह बात अच्छी तरह से प्रकट की जा चुकी है । क्यों कि
प्रतिमापूजा बोध एव त्रिं प्रतिमापूजा के लक्ष्य को लेकर के ही की जाती है
-परन्तु इस लक्ष्य की सिद्धि न होकर उससे उल्टा कर्त्ता जीव अबोध
एव अहित का प्रापक ही होता है ऐसा श्री महावीर प्रभु का कथन है ।
फिर भी इसके पक्षपाती जन इस बात पर ध्यान न देकर शास्त्र विरुद्ध
ही कथन करते हैं-वे यह कहते हैं " कि इस प्रतिमापूजन में माना कि

मार्गथी हर देही देनार अतापवामा आव्यो छे त्यारे कथा जार्थमा पट्टकायना
अवोना समारम्भ छाय छे, ते जार्थथी अथवा तो ते नतना समारम्भथी
अवने स्वर्ग अने अपवर्ग (मोक्ष) ने लाल देवी गीने सलवी शके तेम
छे ? अटवे के डोढ पण काणे अवने आ कायथी स्वर्ग के मोक्षने लाल
थर गकतो नथी

जे मणुष परिवन्दन, मानन अने पूजनना माटे तेमज नति अने
भगवना मोचन माटे अने दुःखोना विनाश माटे पृथिवीकाय वगेरेने सम
रल करे छे, तेजो तेनु उवट्टु इण लोगवे छे आ बात सारी गीते सम
अववामा आवी छे, उमके प्रतिमा पूजा बोध तेमज हित प्राप्तिना लक्ष्यने
लधने ज उरवामा आवे छे पण आ लक्ष्यनी सिद्धि न थता तेनाथी साव
विपरीत कता एव अबोध अने अहितने भणवे छे जेवु ज श्री महावीर
प्रभुजे कहु छे जनाय प्रतिमा पूजना उटवाड तरङ्गागीजो आ बातने लक्ष्यमा
न रापता शास्त्र विरुद्ध ज उचनने वणगी रहे छे तेजो आ प्रमाणे कडे छे

वर्तमानानागतभेदेन प्रत्येक त्रैविध्ये नवधा भवति । नवत्रिधस्यापि पृथिवीकाय समारम्भणस्य मनोवाक्याययोगभेदेन प्रत्येक त्रैवि ३ गुणविधिभिर्ज्ञा भवति । एव विधपृथिवीकायसमारम्भपट्टः सल्ल पट्टकायारम्भसंपातजन्यघोरतरगुरितार्जनन दुरन्तससारदावानलज्वालान्तःपात प्राप्यानतरकनिगोदादिदुःखमनुभवत् न कदाचित् कल्याण शाश्वतमृत्वमद मोक्षमार्गं प्राप्नोतीति भाव ॥

भगवता पृथिवीकायसमारम्भणपट्टकायादिसमारम्भणमप्यहितायागोषये च भवतीत्यपि तत्रैव प्ररूपितम् । यत्रैतस्य पृथिवीकायस्य समारम्भणे सम्यक्त्व के भेद से तीन प्रकार का है-इसके अतीत और अनागत काल के भेद से तीन ३ प्रकार का और हो जाते हैं इस प्रकार यह तीनों कालों की अपेक्षा से ९ प्रकार का है । इन नव प्रकारों के साव-मन वचन और काय इन तीनों का गुणा करने से यह २७ प्रकार का माना गया है इस प्रकार त्रिहरण और त्रियोग के सत्र से २७ प्रकार के इस पृथिवीकाय के समारम्भ में प्रवृत्त जीव पट्टकाय के आरम्भ के संपात जन्य घोरतर पापों के अर्जन से दुरन्त समार रूपी दावानल की ज्वाला के मध्य में निमग्न बन अत में अनन्त नरक निगोदादिकों के दुःखों का अनुभव करता हुआ कभी भी निज कल्याण का भोक्ता एव शाश्वत सुख को प्रदान करने वाले मोक्ष के मार्ग का पथिक नहीं बन सकता है पृथिवी काय के समारम्भ की तरह अपूजाय आदि का समारम्भ भी इस जीवात्मा को सदा अहितकारी और अवोध का दाता है यह बात भी वर्ण पर (आचाराग सूत्र में) भगवान ने कही है अब विचारिए-जब

लेहो यद्य जय ते आ रीते आ त्रष्टे काजोनी अपेक्षाये नव प्रकारेणो छे आ नव प्रकारेणी साथे भन, वचन अने काय अने त्रष्टेणो गुणुकार करवाथी आ २७ प्रकारेणो मानवाभा आये छे आ प्रभाष्टे त्रिकरण्य अने त्रियोगना स अथथी २७ प्रकारेणो आ पृथिवीकायना समारम्भेणो प्रवृत्त एव पट्टकायना आरम्भेणो संपात जन्म घोरतर (लयकर) पापेणो कारेणो दुरन्त ससार इपी दावानलना अग्निभा पडीने छेवटे अनन्त नरक निगोद वगेरे दुःखेणो अत्रु लवतो कइ पि पोताना ज्वालान्तो लोडता यधने अने शाश्वत-सुखने आपनार मोक्ष मार्गने पथिक (वटेभार्थ) अनी शकते नथी पृथिवीकायना समारम्भेणो अपूजाय वगेरेणो समारम्भेणो एवात्मा भाटे उभेशा अहितकारी अने अवोध (अज्ञान) आपनारे छे आ वात पणु आचाराग सूत्रभा भगवाने कही छे इवे आठलु तो आपणु पणु ममलु शकीये छीये के न्यारे एवना भाटे इक्षत पृथिवीकायने समारम्भेणो न्यारे अहित करनार अने मोक्षना

समारम्भमाणं अ-यान् अनेकरूपान् प्राणान् विद्विसति । एषः=पृथिवीशस्त्रसमारम्भः खलु निश्चयेन ग्रन्थः=ग्रन्थवते=ग्रन्थयते जीवोऽनेनेति ग्रन्थः, अष्टविधकर्मग्रन्थः, ग्रन्थजनकत्वाद् ग्रन्थ इत्युच्यते । तथा-एष मोहः त्रिपर्यासं वीपरीतज्ञानरूप इत्यर्थं तथा-एष मारः=निगोदादिमरणरूपः । तथा-एष खलु नरकः-नारकजीवानां दशविधयातनास्थानम् । इत्यर्थम्-एतदर्थं कर्मग्रन्थ-मोह मरण-नरकरूपं त्रारं दुःखफलं प्राप्य पुन पुनरेतदर्थमेव लोकः=अज्ञानप्रशस्ती जीवः गृह्यः-लिप्सुरस्ति । यद्यपि त्रिपर्यासोक्तो लोक शरीरादिपरिपोषणार्थं परिवन्दनमाननपूजनार्थं जातिमरणमोचनार्थं दुःखप्रतिघातार्थं च पृथिवीशस्त्रसमारम्भं करोति, तथापि तत्फलं कर्मग्रन्थमोहमरणनरकरूपमेव लभते, अतः पृथिवीकर्मसमारम्भस्य तदेव फलं भवतीति भावः । तदेव प्रवचनप्रिद्धप्ररूपण

कराने वाला होने से ग्रन्थस्वरूप, विपरीत ज्ञान का जनक होने से मोहरूप, निगोदादि जीवों का इसमें मरण होता है-इसलिये माग स्वरूप तथा नारकियों की दश प्रकार की यातना का हेतु होने से यह नरकरूप माना गया है । इस प्रकार यह जीव इस पृथिवीकाय के समारम्भरूप शस्त्र के फलस्वरूप कर्मग्रन्थ, मरण और नरकरूप घोरतर दुःखों को भोगता हुआ भी अज्ञान के आधीन होकर उसी शस्त्र के प्रयोग करने का फिर भी अभिलाषी हो रहा है । यद्यपि त्रिपर्यास में आसक्त बना हुआ यह जीव शरीर आदि की पुष्टि परिवदन, मानन, पूजन एवं जाति और मरण के मोचन के लिये तथा दुःखों के विनाश के लिये पृथिवीकाय के समारम्भरूप शस्त्र का प्रयोग करता है-परन्तु फिर भी इसका वह कर्मग्रन्थ, मोह, मरण, नरकरूप फल का ही भोक्ता बनता

ज्ञानावस्थायी वगेरे उर्ध्वोना अथ करावनार होवा अहल ग्रन्थ स्वरूप, विरुद्ध ज्ञानने उत्पन्न वरनाइ होवाथी मोह इप, निगोद वगेरे लोपोतु आभा मरण वाय छे भाटे मार स्वरूप तेमज नारकीओनी दश प्रकारनी यातनानु कारण इप होवाथी आ नरक इप मानवाभा आओयु छे आ रीते आ लव आ पृथिवीकायना समारम्भ इप शस्त्रना इण स्वरूप उर्ध्वअथ, मरण अने नरक इप घोरतर दु जोने लोगववा छता पणु अज्ञ नवरा थअने ते न शस्त्रना प्रयोग करवा भाटे इती तैयार थअ रह्यो छे जे ते त्रिपर्यास लोगोभा आभक्त अनेलो आ लव शरीर वगेरेनी पुष्टि परिवदन, मानन, पूजन अने जाति मरणना मोचन भाटे तेमज दु जोने इर कवा भाटे पृथिवीकायना समारम्भ इप शस्त्रना प्रयोग करे छे पणु छता ये ते उर्ध्वअथ, मोह, मरण अने नरक इप इणने लोगवनार न अने छे अटला भाटे आपणु बोझस कही शकीअे तेम छीअे

હિત નોત્પાદયતિ, પ્રત્યુત ચોધિં નરામરણિચ્છારરુપ દિત ચ સમ્યગ્ જનયતીતિ, વદેતત્ સાક્ષાત્ મરચનપ્રિચ્છમિતિ ।

ક્રિં ચ આચારાજ્ઞસુત્રે પૃથિવીકાયસમારમ્ભસ્ય ફન્નમુત્ત્યા મગરતા પુનરભિદિ તમ્- 'એમ સલ્લુ ગયે, એસ સલ્લુ મોહે એસ સલ્લુ મારે, એમ સલ્લુ નિરયે, ઇચ્ચત્ય ગઢિણ લોણ, જમિણ વિરુવરુવેહિં સત્થેહિં પુઢવિકમ્મસમારમ્ભેણ પુઢવિસત્થ સમા રમમાણે અણ્ણે અણેગરુવે પાણે વિહિંસહ ।' (આ૦ ૧ અ૦ ૨ ૩૦)

છાયા- એપ સલ્લુ ગ્રન્થઃ, એપ સલ્લુ મોહ, એપ સલ્લુ મારઃ, એપ સલ્લુ નરવ' ઇત્યર્થ મૃદ્ધો લોકઃ, યદિમ વિરુવરુવે' શત્તૈઃ પૃથિવીર્મમમારમ્ભેણ પૃથિવીશક્ત

પદ્ધકાય કા સમારમ હોતા હૈ-પરન્તુ યદ્દ મમારમ સ્વામ્યુદય યવ મુક્તિ પ્રાપ્તિ કે નિમિત્ત હી ક્રિયા જાતા હૈ-અતઃ યદ્દ કર્તા જીવોં કો ન અદિત કા હી ઉત્પાદક હોતા હૈ ઓર ન ચોધિ કે લાભ સે વચિત રલ્લતા હૈ પ્રત્યુત યદ્દ ઉન્નેં ચોધિ યવ નર અમર ઓર મોક્ષ કે સુખ સ્વરુપ દિત કા પ્રદાન કરને વાલા હી હોતા હૈ " સો હમ પ્રકાર કા ઉનકા યદ્દ કયન સાક્ષાત્ શાસ્ત્ર સે વિરુદ્ધ હી હૈ-યદ્દ વાન આચારાગ સુત્ર સે મલી માંતિ પુષ્ટ હોતી હૈ ઉમમેં પૂર્વોક્તરીતિ સે પૃથિવીકાય કે સમારમ કા ફલ કર કર ફિર યદ્દ કહા ગયા હૈ-" એમ સલ્લુ ગયે, એસ સલ્લુ મોહે, એસ સલ્લુ મારે, એમ સલ્લુ નરયે, એચ્ચત્ય ગઢિણ લોણ, જમિણ વિરુવરુવેહિં સત્થેહિં પુઢવિકમ્મસમારમ્ભેણ પુઢવિસત્થ સમારમમાણે અણ્ણે અણેગરુવે પાણે વિહિંસહ " (આ ૧ અ- ૨ ૩-) યદ્દ પૃથિવીકાય કા સમારમરુપ શક્ત નિશ્ચય સે જીવોં કો અષ્ટપ્રકાર કે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કા બંધ

કે-આપણે થોડા વખત માટે આમ પણ માની લઈએ કે આ પ્રતિમા પૂજ નમા પદ્ધકાયને સમારભ થાય છે-પણ આ સમારભ સ્વામ્યુદય અને મુક્તિની પ્રાપ્તિ માટે જ કરવામા આવે છે એટલા માટે આ કર્તા હોવાના માટે અહિં તને ઉત્પાદક પણ હોતો નથી અને જોધિના લાભથી પણ તેજોને વચિત રાખને નથી આ તો તેમને જોધિ અને નર અમર અને મોક્ષના સુખ સ્વરૂપ હિતને આપનાર જ હોય છે પણ તેમનુ આ ડયન પ્રત્યક્ષ રૂપમા શાસ્ત્રથી વિરુદ્ધ જ છે આ વાત આચારાગ સૂત્રથી સારી વેઠે પુઠ્ઠ થઈ જાય છે તેમા પૂર્વોક્ત રીતથી પૃથિવિકાયના સમારભનુ ક્ષણ ગતાવીને આ પ્રમાણે કહ્યુ છે-

'એસ સલ્લુ ગયે, એસ સલ્લુ મોહે, એસ સલ્લુ મારે એસ સલ્લુ નરયે, એચ્ચત્ય ગઢિણ લોણ જમિણ વિરુવરુવેહિં સત્થેહિં પુઢવિકમ્મસમારમ્ભેણ પુઢવિસત્થ સમારમમાણે અણ્ણે અણેગરુવે પાણે વિહિંસહ " (આ ૧ અ ૨ ૩)

આ પૃથિવિકાયનુ સમારભ રૂપ શક્ત થોક્ષસ હોવાના પ્રકારના

यत्तु—ब्राह्मीलिपिरिव प्रतिमा इन्द्रा, 'नमो वभीए लिवीए" इतिपद यद् व्याख्याप्रज्ञेरादातुपन्यस्त तत्र ब्राह्मीलिपिरक्षरविन्यास', सा यद्वि श्रुतज्ञानस्याऽऽ कारस्थापना, तदा तद्वन्धत्वे साकारस्थापनाया भगवत्प्रतिमाया. स्पष्टमेव बन्धत्वम् तुल्यन्यायादित्युक्तं, तन्मोहनोयकर्मोदयविलम्बितम्—

श्रुतज्ञानरूपस्य भावश्रुतस्य स्थापना—श्रुतज्ञानवत्, श्रुतपठनादिक्रियावत् सा वादेक्षित्रादिक भवति, श्रुततद्वतोरभेदोपचारात् सा वादि श्रुतमुच्यते । स्थापनात्रयकस्य स्थापनाश्रुतस्य च तयैवानुयोगद्वारे भगवता वर्णनात् । यदेव लिपिः श्रुतज्ञानस्य स्थापनारूपस्य न प्राप्नोति । तस्मात् प्रतिमाया ब्राह्मीलिपिदृष्टान्त प्रदर्शनमुत्प्रमृत्रप्ररूपणम् ।

किञ्च—प्रतिमापूजन की पुष्टि के लिये " नमो वभीए लिवीए " व्याख्याप्रज्ञप्ति की आदि में लिखे हुए उस सूत्र के बल पर जो उसके पक्षपाती जन यह कहते हैं—" कि अक्षर विन्यासरूप ब्राह्मीलिपि जिस प्रकार श्रुतज्ञान के आकार की स्थानरूप होकर बन्ध-बन्धनीय मानी गई है उसी प्रकार साकार स्थापनारूप भगवान की प्रतिमा में भी बन्धनीयता स्पष्ट ही है " सो यह कथन विचार करने पर ठीक नहीं बैठता है ।

तथाहि—श्रुतज्ञानरूप भावश्रुत की स्थापना—श्रुतज्ञानसपन्न, और श्रुत के पठन की क्रिया विशिष्ट ऐसे जो साधु आदिजन हैं उनके चित्र आदि स्वरूप पडती है अर्थात् श्रुतज्ञानी साधु आदि के चित्रस्वरूप ही श्रुतज्ञानरूप भावश्रुतकी स्थापना होती है । ब्राह्मीलिपि अक्षर विन्यास है । वह श्रुतज्ञान की स्थापना है । यहाँ श्रुतज्ञानी साधु आदि को जो

अने णीणु पणु के—प्रतिमा पूजननी पुष्टि भाटे " नमो वभीए-लिवीए " व्याख्या प्रज्ञप्तिनी गउआतमा आवेला आ सूत्र मुञ्ज के तेनी तरदहारी करनारा भाषुमे आम कडे छे के " अक्षर विन्यास इय प्राप्ति लिपि नेम श्रुतज्ञानना आकारनी स्थापना इय थछने बन्ध-बन्धनीय मानवामा आवी छे, तेमज आकार-स्थापना इय लगवाननी प्रतिमाभा पणु बन्धनीयता स्पष्ट देखीती वात न छे परतु आ कवनने पणु विचार ज्यो आह योग लागतु नथी तेमज श्रुतज्ञान इय भावश्रुतनी स्थापना—श्रुतज्ञान सपन्न अने श्रुतना पठननी क्रिया विशिष्ट जेवा ने साधु वगेरे दोडे छे तेमना चित्र वगेरे स्वरूप डोय छे अटवे के श्रुतज्ञानी साधु वगेरेना स्वरूप न श्रुतज्ञान इय भावश्रुतनी स्थापना डोय छे प्राप्ति-लिपि अक्षर विन्यास छे ते श्रुतज्ञाननी स्थापना छे अर्था श्रुतज्ञानी साधु वगेरेने ने भावश्रुत इय कडेवामा आव्ये छे ते श्रुतज्ञान

पराः सर्वदोषनिर्मुक्त भुद्रमद्वितीयमनत्र जैनधर्म सायप्रपूजोपदेशेन कुप्रावचनि
 कोपमेय कुर्वन्तः ससारदायानले जनान् पातयन्तः मय च मोहनीयकर्मोदयवशा
 दन्धा इव सन्मार्गतो निपतन्तः स्वात्मानमहितेन मिथ्यात्वेन च पुनः पुनः सयो
 जयन्ति । यदि मृगतृष्णाऽपि केषांश्चित् पिपासातृलानां स्वच्छजलपाराशहिनी
 भवेत्, तदा प्रतिमापूजापि तेषां द्रव्यलिङ्गिना परिणामशुद्धि सपादिनी अष्टवि
 धकर्मदलनी नरामरशिवसुखत्रिधायिनी भवेदिति शोऽयम् ।

है। अतः प्रतिमापूजन का उपदेश निश्चित है कि प्रयत्नमार्ग से विरुद्ध
 है। इस विरुद्ध प्ररूपणा करने में तत्पर मनुष्य सर्व दोषों से रहित, शुद्ध
 और अद्वितीय एव अनवद्य इस जैनधर्म को सायप्र पूजा के उपदेश
 से कुप्रावचनिक की तरह कलकित-सदोष कर ससाररूपी दावानल में
 भोले भाले प्राणियों को डाल रहे हैं और स्वयं भी मोहनीय कर्म के
 उदय से अन्ध की तरह घन कर सन्मार्ग से विमुख होते हुए अपनी
 आत्मा को अहित और मिथ्यात्त्व के कलक से कलुषित कर रहे हैं।
 अरे-कहीं मृगतृष्णा से भी प्यासे व्यक्तियों की प्यास बुझती है? यदि
 नहीं, फिर मृगतृष्णा तुल्य इस प्रतिमा पूजन से कर्त्ता की सम्यक्त्व
 और हित की प्राप्ति होने रूप प्यास कैसे बुझ सकती है-सोचो। हा।
 यदि ऐसा होता कि मृगतृष्णा स्वच्छजल की धारा चहाकर प्यासे
 प्राणियों की तृप्ता को शांत करती-तो यह प्रतिमा पूजन भी द्रव्यलिङ्गि
 यों के परिणामों में शुद्धि करती हुई उनके अष्टकर्मों को दलने वाली
 और उन्हें नर, अमर एव शिवसुख प्रदान करने वाली भी हो सकती।

के प्रतिमा पूजनने उपदेश प्रयत्न मार्गथी विरुद्ध छे आ नतनी विरुद्ध
 प्ररूपणा करवाभा तत्पर भाषुस अधा होषोथी रहित, शुद्ध अद्वितीय अने
 अनवद्य आ जैन धर्मने आवध पूजना उपदेशथी कुप्रावचनिकनी जेम कलकित
 होयशुद्ध अनावीने ससार रूपी दावानलमा बोणा प्राणीओने न भी रह्यो छे
 अने नते पणु मोहनीय कर्मना उदयथी आधजानी जेम यधने सन्मार्गथी
 हर यता पोताना आत्माने अहित अने मिथ्यात्वनं कलकथी कलुषित करी
 रह्यो छे मृगतृष्णाथी पणु कैर्य दिवसे तरस्या भाषुसोनी तरस मठी शकी छे ?
 ने आवुं नथी तो पछी मृगतृष्णा जेथी आ प्रतिमा पूजनथी कर्त्तानी सम्य
 कत्व अने हितनी प्राप्ति थवा रूय तरस डेवी रीने मठी शके तेम छे नेमृगतृष्णा
 निर्भण प्राणीने अरौ यधने तरस्या प्राणीओनी तरस मटाडी शकेत तो आ
 प्रतिमा पूज पणु द्रव्यलिङ्गिओना परिव्वाभोभा शुद्धि करनारी तेमना आड कर्मने
 नष्ट करनारी अने नर, अमर अने शिव-सुख आपनारी ?

चाराङ्गादिक प्रतिपूर्णोप ऋणोष्ठप्रिप्रमुक्त पठितवत् सा-यादेस्तदर्थज्ञानाभावे सति द्रव्यश्रुतत्व भवति, तथैवानुयोगद्वारे द्रव्यश्रुतस्य वर्णनात् । वर्णसंकेतरूपा लिपिन्तु न शब्दात्मिका, यतो वर्णस्यैरोच्चारणमुपपद्यते, न तु तत्संकेतस्य लिपिमत् पुस्तकादेस्तु श्रुत शिक्षित यावद् वाचनोपगत न भवितुमर्हति अतस्तस्य द्रव्यश्रुतत्व न सम्भवति अथ पुनस्तद्गतत्रिपेस्तत्संभवः ? कथमपि नहि ।

किं च—द्रव्यश्रुतस्य अन्वयत्वमेव नास्ति, अनुपयुक्तत्वाच्चरणगुणशून्यत्वान्च, तस्माद् भावश्रुतस्यैव वन्प्रत्ययात्तौ द्रव्यश्रुतनमस्काररूपेण भ्रान्तिमूलकमेव । 'नमो वभीए लिवीए' अस्यायमर्थ—वर्णात्मकभाषासंकेतरूपा लिपिवर्णात्मिलिपिः

प्रकार द्रव्यश्रुत का वर्णन अनुयोगद्वार में किया गया मिलता है । अकार आदि वर्णरूप से संकेतित लिपि में शब्दान्मकना आभी नहीं सकती है—क्यों कि वर्ण का ही उच्चारण होता है—उसके संकेत का नहीं । लिपियुक्त पुस्तकादि में भी वाचना आदि कुछ नहीं होता है । क्यों कि वह जड़ है—चेतन में ही ये वाचना पृच्छना आदि होते हैं । अतः उस में द्रव्यश्रुतता मानना सर्वथा अयुक्त है इसलिये यह निश्चित होता है कि अकार आदि वर्णरूप से संकेतित लिपि में और इस लिपि विशिष्ट पुस्तकादिक में द्रव्यश्रुतता किंचित मात्र भी सम्भवित नहीं है ।

किंच—अनुपयुक्त होने से और चरणगुण शून्य होने से द्रव्यश्रुत में वदता आ ही नहीं सकती है । भावश्रुत में ही उपयोग सहित और चरणगुण युक्तता होने से वदता आती है—अत द्रव्यश्रुत में नमस्कार करने की कल्पना करना केवल भ्रान्तिमूलक ही है “नमो वभीए

आ गीने द्रव्यश्रुततु वर्णन अनुयोग द्वारमा क्वामा आब्यु छे अउर वगेरे वर्णुडपथी स डेतित लिपिमा शब्दात्मकता आनी शके तेम नथी केभके उवा रण तो द्रव्यतु च थाय छे, तेना स डेततु नहि लिपि युक्त पुस्तके वगेरेमा पणु वाचना वगेरे उरु न डोतु नथी केभके ते नउ छे, चेतनमा न वाचना पृच्छना वगेरे थाय छे अथी तेमा द्रव्यश्रुतता मानवी भाव अयोग्य छे अथी अे वत बोद्धस थाय छे के अकार वगेरे वर्णुडपथी स डेतित लिपिमा अने आ लिपि विशिष्ट पुस्तक वगेरेमा द्रव्यश्रुतता बोडी पणु स भवित नथी अने नीणु पणु के—अनुपयुक्त होवाथी अने अरण्युणु शून्य होवाथी द्रव्यश्रुतमा वदता आवी न राउती नथी भावश्रुतमा न उपयोग सहित अने अरण्युणु युक्तता होवाथी वदना आवे छे अटला भाटे द्रव्यश्रुतमा नमस्कार करवानी उदपना करवी आतिमूलक च छे “नमो वभीए लिवीए” आने अर्थ

યત્-અભયદેવીયવૃત્તા સજ્ઞાક્ષરરૂપ દ્રવ્ય વ્રત નમઃસ્વર્ગનાટ- ' ણમો વમીષ લિવીષ ' ઇત્યુક્ત તદ્ ભ્રાન્તિમૂલકમ્ પુસ્તકવર્તિન્યા જનારાદિવર્ણક્રેતરૂપાયા લિપેદ્રવ્યશ્રુતત્વ ન સમવતિ યત શ્રુત નામ ઠાદશાગ્નીરૂપમર્હત્પ્રવચન શાસ્ત્ર યસ્વ કસ્વચિજ્ઞીવસ્વ ત્રિસિત સ્થિત જિત યાત્દ્ વાચનોપગત મવતિ ન જન્તુસ્તત્ર વાચનાપ્ચઠનાદિમિર્વર્તમાનોઽપિ શ્રુતોપયોગાભાયાદાગમમાશ્રિત્ય દ્રવ્યશ્રુતમ્, આ

ભાવશ્રુતરૂપ કહા ગયા છે-વહ શ્રુતજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન મેં અભેદ કે ઉપચાર સે હી કહા ગયા સમજાના ચાશિયે । ઠસી વ્પ સે હી મગજાન ને અનુયોગ દ્વાર મેં સ્થોપના આપઢ્યક ઓર સ્થાપના શ્રુત કા કથન કિયા હૈ । અત. લિપિ મેં ભાવશ્રુત કી રૂપના સે શ્રુતજ્ઞાન કી સ્થાપના માનના કથમપિ યુક્તિ સગત નહીં હૈ । ઠસી પ્રકાર લિપિ મેં દ્રવ્યશ્રુતતા મી નહીં આતી હૈ । કયો કિ ઠાદશાગ્નીરૂપ અર્હત પ્રવચન કા નામ શ્રુત હૈ । શ્રુતજ્ઞાન કા જ્ઞાના જવ ઉસમે અનુપયુક્ત અવસ્થાનવાલા હૈ । તત્ર વહી આગમ કી અપેક્ષા દ્રવ્યશ્રુત કહા જાના હૈ । સજ્ઞા અક્ષર રૂપ આકૃતિ કો દ્રવ્યશ્રુત નહીં કહા હૈ । ઇમ કથન સે ઇત્ત જ્ઞાત કી પુષ્ટિ હોતી હૈ કિ-અભયદેવ વિરચિત વૃત્તિ મે " ણમો વમીષ લિવીષ " ઇસ પદ કા અર્થ સજ્ઞા અક્ષરરૂપ દ્રવ્યશ્રુત પરક માનકર જો નમસ્કાર કિયા ગયા હૈ -વહ ભ્રાન્તિમૂલક હૈ, કયો કિ પુસ્તક મેં રહી હુઈ મકેતિત અકાર આદિ વર્ણ કી આકૃતિ મે દ્રવ્યશ્રુતતા સમવિત નહીં હોતી હૈ । વાચના, પૃચ્છના આદિ સે અધિગત શ્રુત મે અનુપયુક્તજ્ઞાતા હી દ્રવ્યશ્રુત હૈ ઇસી

અને શ્રુતજ્ઞાનમા અભેદોપચારથી જ કહેવાયેલા સમજવો જોઈએ આ રૂપથી જ લગવાને અનુયોગદ્વારમા સ્થાપના આવશ્યક અને સ્થાપના શ્રુતનુ કથન કર્યું છે એટલા માટે લિપિમા લાવશ્રુતની કટપનાથી શ્રુતજ્ઞાનની સ્થાપના માનવી કોઈ પણ રીતે યોગ્ય નથી આ પ્રમાણે જ લિપિમા દ્રવ્યશ્રુતતા પણ આતી નથી કેમકે દ્વાદશાગ્ની રૂપ અર્હત પ્રવચનનુ નામ શ્રુત છે આ શ્રુતજ્ઞાનને જ્ઞાતા જ્યારે તેમા અનુપયુક્ત અવસ્થાનાજો હોય છે ત્યારે તે આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યશ્રુત કહેવાય છે સજ્ઞા અક્ષર રૂપ આકૃતિને દ્રવ્યશ્રુત કહી નથી આ કથનથી આ વાતની પુઠી થાય છે કે અભયદેવ વિરચિત વૃત્તિમા " ણમો વમીષ લિવીષ " આ પંનો અર્થ સજ્ઞા અક્ષર રૂપ દ્રવ્ય શ્રુતપરક માનીને જે નમસ્કાર કરવામા આંવા છે તે પ્રાતિમય છે, કેમકે પુસ્તકમા રહેલી સ કેતિત અકાર વગેરે વર્ણની આકૃતિમા દ્રવ્યશ્રુતતા સમવિત નથી હોતી વાચના, પૃચ્છના વગેરેથી અધિગત શ્રુતમા અનુપયુક્ત જ્ઞાતા જ શ્રુત છે

भावलिपिं प्रति समुपजातभक्तिः श्रीसुधर्मा स्वामी लिपिज्ञानरय माहात्म्य प्रकट-
यन् भावश्रुत प्रति भावलिपे' कारणतयाऽभ्यर्हितत्वेन तत पूर्व भावलिपिवन्दन
कृतवान्, तत्पश्चाद् भावश्रुत नमस्कुर्वन्वादीत् ' नमः सुयस्म ' इति ।

यत्तु-अभयदेवसरिणा स्वकृतटीकायामुक्तम् ' जिणपडिमाण अच्चण करेड '
ति एतस्या वाचनायामेतावदेव दृश्यते । वाचनान्तरे तु-' ण्हाया जाव सञ्वाल
कारविभूसिया मज्जणघराओ पडिनिस्समई पडिनिस्समिच्चा जेणामेव जिणघरे
तेणामेव उवागच्छड उवागच्छत्ता जिणघर अणुपविसड २ चा, जिणपडिमाण
समहरूप श्रुत को लिपिवद्ध करने की इच्छा से श्री सुधर्मास्वामी कि
जिन की भक्ति श्रुतको एक भावलिपि के प्रति जागृत हुई है लिपिज्ञान
के माहात्म्य को प्रकट करते हुए भावश्रुत को नमस्कार करने के पहिले
भावलिपि को ही नमस्कार करते हे क्यों कि भावश्रुत के प्रति भाव
लिपि को ही कारणता है, और इसी निमित्त से यह उमकी अपेक्षा
पूज्य मानी गई है भावलिपि को नमस्कार करने के पश्चात् ही उन्हो ने
" नम -सुयस्स " भावश्रुत को नमस्कार इस सूत्र द्वारा किया
है। " जिणपडिमाण अच्चण करेड " उस पाठ को लेकर जो टीकाकार
अभयदेव सरि ने जिनप्रतिमा कि पूजन करने की वान कही हे-सो ठीक
नही है। क्यों कि मालूम होता है, कि उन्हें मूल पाठ का निश्चय ही
नही हुआ है-कारण कि एक वाचना मे तो यही पाठ मिलता है-तब
कि दूसरी वाचना में " ण्हाया जाव सञ्वालकारविभूसिया मज्जणघ
राओ पडिनिस्समई, २ जेणामेव जिणघरे तेणामेव उवागच्छड, २

प्रतिपादन करना शक्य है। समुद्धृत श्रुतने लिपिवद्ध उरवानी उच्छाथी श्रीसुधर्मा
स्वामी-के जेभनी श्रुतयोधड लावलिपि प्रत्ये लडित उत्पन्न थड डे-लिपि
ज्ञानना माहात्म्यने प्रकट करता लावश्रुतने नमस्कार करता पडेला लावलिपि
ने न नमस्कार कर्या छे डेभडे लावश्रुत प्रत्ये लावलिपि न काण्ठ्यता छे अने
आ डारण्ठ्यथी न आ तेना करता पूज्य मानवामा आवी छे लावलिपिने नम
स्कार कया णाड न तेमणे " नम सुयस्स " आ सूत्र वडे लावश्रुतने नम
स्कार कर्या छे " जिणपडिमाण अच्चण करेड " आ पाठना आधारे जे टीका-
कार अलवदेवसरिजे एनप्रतिमानी पूजनी वात उडी छे ते योज्य नथी डेभडे
तेमने भूण पाठने निश्चय न थयो नथी जेभ न्णुध आवे डे डारण्ठ्य डे जेक
वाचनामा तो जे न पाठ भजे छे त्यारे भीए वाचनामा -

(ण्हाया जाव सञ्वाल कारविभूसिया मज्जणघराओ पडिनिस्समई २ जेण
मेव जिणघरे तेणामेव उवागच्छई, २ जिणघर अणुपविसड, जिणपडिमाण आलोप

બ્રાહ્મીશબ્દસ્ય ભાષાર્થઋત્વાત્, ઉત્ત ચામરકોશ્ચે—‘બ્રાહ્મી તુ ભારતી ભાષા ગીર્વાણ્
 ચાણી સરસ્વતી’ ઇતિ । યદ્વા—અષ્ટાદશવકારા ઋષિ ધ્રીમન્નાભેયજિનેન બ્રાહ્મીના
 મિકા સ્વમુતા પદર્શિતા તસ્માત્ સા લિપિર્બ્રાહ્મીત્યુચ્યતે । ત્રિવિજ્ઞાનસ્ય શ્રુતજ્ઞા
 નોપયોગિતયા ભાવશ્રુતદેહુ ત્રિવિજ્ઞાનરૂપ ભાવલિપિ રન્દમાન શ્રીમુખર્મા સ્વા
 મી પ્રાદ—‘ નમો વમીષ્ લિવીષ્ ’ ઇતિ । શ્રુતજ્ઞાન પ્રતિ ત્રિવિજ્ઞાન કારણ, યતો
 લિપિજ્ઞાનેન વત્સકેતિતશબ્દસ્મરણ, તવસ્તદર્થજ્ઞાન જાયતે । તસ્માદ્ ભગવદુક્તા
 ર્થસ્ય પ્રતિબોધનાય તદ્બોધકશબ્દજાતરૂપ શ્રુત લિપિરઢ વર્તુન્નામ’ શ્રુતબોધિકા

લિવીષ્ ” હસકા અર્થ હસ પ્રકારસે સગન થૈટના હૈ—અક્ષર જાદિ વર્ણા
 ત્મક ભાષા કે સકેતરૂપ લિપિ કા નામ બ્રાહ્મી લિપિ હૈ—બ્રાહ્મી શબ્દ
 હસ અર્થ મેં પ્રયુક્ત હુઆ હૈ અમર કોષ મેં મી યદી યાત કહી હૈ—“ બ્રાહ્મી
 તુ ભારતી ભાષા ગીર્વાણ્ ચાણી સરસ્વતી ” । અથવા—શ્રી આદિનાથ
 પ્રભુ ને અપની બ્રાહ્મી નામ કી પુત્રી કો ૧૮ પ્રકાર કી લિપિ કહી યી
 હસલિયે મી ડસ લિપિ કા નામ બ્રાહ્મી લિપિ હસ પ્રકાર સે પડ ગયા
 હૈ । શ્રુતજ્ઞાન મેં ઉપયોગી હોને સે હમ લિપિ કે જ્ઞાન કો ભાવશ્રુત કા
 કારણ માના હૈ । હસલિયે લિપિ જ્ઞાનરૂપ ભાવ લિપિ કો વદન કરતે
 હુણ શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહતે હૈ “ નમો વમીષ્ લિવીષ્ ” । શ્રુતજ્ઞાન કે
 પ્રતિ લિપિ જ્ઞાન કારણ હૈ—વયોં કિ લિપિ કે જ્ઞાન સે અક્ષરાદિ વર્ણા
 ત્મક લિપિ રૂપ સે સકેતિત ડસ ડસ શબ્દ કા સ્મરણ હોતા હૈ ઓર
 ડસસે ડસકે અર્થ કા જ્ઞાન હોતા હૈ । અતઃ ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત
 અર્થ કો સમજાને કે લિયે ડસ અર્થ કા પ્રતિપાદન કરને વાલે શબ્દોં કે

આ પ્રમાણે સુસંગત બેસી શકે છે કે—અક્ષર વગેરે વર્ણાત્મક ભાષાના સ કેત
 રૂપ લિપિનું નામ બ્રાહ્મી લિપિ છે બ્રાહ્મી શબ્દ ‘ભાષા’ આ અર્થમાં પ્રયુક્ત
 થયો છે અમરકોશમાં પણ એ જ વાત કહેવામાં આવી છે કે “બ્રહ્મી તુ
 ભારતી ભાષા ગીર્વાણ્ચાણી સરસ્વતી” અથવા તે શ્રી આદિનાથ પ્રભુએ પોતાની
 બ્રાહ્મી નામની પુત્રીને અઢાર પ્રકારની લિપિઓ બતાવી હતી એટલા માટે
 પણ આ લિપિનું નામ બ્રાહ્મી લિપિ પડી ગયું છે શ્રુતજ્ઞાનમાં ઉપયોગી હોવાથી
 આ લિપિના જ્ઞાનને ભાવશ્રુતનું કારણ માનવામાં આવ્યું છે એથી લિપિજ્ઞાન
 રૂપ ભાવલિપિને વદન કરતા શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે કે “નમો વમીષ્ લિવીષ્”
 શ્રુતજ્ઞાનના પ્રતિ લિપિજ્ઞાન કારણ છે કેમકે લિપિના જ્ઞાનથી અક્ષર વગેરે વર્ણાત્મક
 લિપિ રૂપથી સ કેતિત તે શબ્દનું અમરણ થાય છે અને તેનાથી તેના અર્થનું જ્ઞાન
 થાય છે એટલા માટે ભગવાનદ્વારા પ્રતિપાદિત અર્થને સમજાવવા

तदनन्तर पुनः प्रतिमापूर्वकैः स्वीकृते-मूलपाठे-‘ तिस्रसुतो मुद्राण वरणि-
यन्सि नमेड ’ इति दृश्यते, ‘नमेड्’ इत्यत्र टीकाकारः-‘ निवेशेऽ’ इति लिखित्वा
निवेशयतीत्यर्थ उक्तः, तेनात्र-मूलपाठस्य स्वस्वरूपोल्लिखितत्व सि-यति, द्रौप-
द्याश्चरिते टीकाकृताऽभयदेवसूरिणा पुनरीदृशः पाठो लब्धः-

‘ईसि पञ्चुन्नमति रत्ता, करयल० जाव कद्दु एव वयासी-नमोत्थु ण अरि-
हताण भगवताण जाव सपत्ताण वदइ नमसइ २ जिणवराओ पडिनिस्समइ ’ इति
इम पाठ टीकाया त्रिलिरय टीकाकार प्राह-

‘तत्र वन्दते=चैत्यवन्दनप्रतिना प्रसिद्धेन, नमस्यति=पश्चात् प्रणि यानादियोगे-
नेति वृद्धा’ । न च द्रौपद्या प्रणिपातदण्ड रूपात्र चैत्यवन्दनमभिहित सूत्रे इति सूत्र-

में जैसा पाठ रचा है उमने उसी प्रकार मूल पाठ में जिन कल्पना का
पाठ प्रक्षिप्त करके पाठ भेद कर दिया है। अतः स्वकपोलकल्पित होने
से असली मूल पाठ का निश्चय ही नहीं होता है, द्रौपदी के चरित में
टीकाकार अभयदेवसूरि को इस प्रकार का पाठ उपलब्ध हुआ-ईसि
पञ्चुन्नमति १, करयल० जाव कद्दु एव वयासी-नमोत्थुण अरिहताणं
भगवताण जाव सपत्ताण वदइ, नमसइ २, जिणवराओ पडिनिस्समइ
इति” पाठ को लिखकर उन्हो ने टीका की। वन्दते-नमस्यति पद के
अर्थ का सुलाशा करते हुए वे कहते हैं कि प्रसिद्ध चैत्यवन्दन विधि के
अनुसार नमन करना वदता और इसके बाद प्रणिधान आदि के योग
से नमस्कार करना नमन हे ऐसा सिद्धान्त वृद्धों का है। सूत्र में जब
द्रौपदी का प्रणिपात दण्डरू मात्र चैत्यवन्दन कहा है-अर्थात् दण्ड की
तरह प्रणाम करने रूप चैत्यवन्दन कहा गया है-तो इसी से यह

कथं उभेरे। श्रीने पा० लेद श्री नाथ्ये। ये अटला भाटे स्वयोपातत्पित
डोवा गदल असल भूषपाठने। निश्चय न थथ गडे तेम नथी द्रौपदी चरितभा
टीकाकार अक्षयदेवसूरिने। आ लतने। पा० भूथ्ये। डे डे- (ईसि पञ्चुन्नमत्ति
२, करयल० जाव कद्दु एव वयासी-नमोत्थुण अरिहताण भगवताण जाव
सपत्ताण वदइ, नमसइ २, जिणवराओ पडिनिस्समइ इति) आ पाठने लभीने
तेमणु टीका कयी डे ‘ वन्दते ’ ‘ नमस्यति ’ पठना अर्थयु रूपटीकाणु कृता
तेमो उडे छे डे प्रसिद्ध चैत्य वन्दन विधि सुत्रण नमन करु वदना अने
त्यारपणी प्रणिधान वगेरेना योगथी नमस्कार करवो नमन छे, वृद्धोने। आ
लतने। सिद्धान्त छे सूत्रभा ल्यारे प्रणिपात दण्ड मात्र चैत्यवन्दन उछु डे
त्यारे अनाधी न आ पात सिद्ध थथ लय छे डे पीत त्रावकौने पछु आ

आलोण पणाम करेइ २ चा, लोमहृत्वय परामुसड २ चा, एव जहा सुरियामो जिणपडिमाओ अच्छेइ तहेव भाणियव्व जाव धूव डहइ ' ति । तेन मूत्पाठस्य निशयस्तस्य नाभूटिति विज्ञायते ।

अतः पर च- ' वाम जाणु अवेइ दाहिण जाणु धरणियलमि णिवेसेइ २ ' इति प्रतिमापूजके स्वीकृतो मूत्पाठस्तत्र वर्तते, टीकाकारस्तु- ' दाहिण जाणु धरणीतलसि निहद्दु ' इति पाठ टीकाया त्रिलिख्य निगदति- ' निहद्दु ' निहल्य स्थापयिन्नेत्यर्थः, ' णिवेसेइ ' इत्यत्र- ' निहद्दु ' इति पाठभेदः कृतः । तेनाप्येतद् विदितं भवति- यत्र यादृशं मनस्यभिरुचितं स तादृशमिह मूत्पाठं प्रकल्पयति स्म इति ।

जिणघर अणुपविसड जिणपडिमाण आलोण पणाम करेइ, २ लोमहृत्वय परामुसड, २ एव जहासुरियामो जिणपडिमाओ अच्छेइ तहेव भाणियव्व जाव धूव डहइ " ति यत्र पाठ मिलता है । इससे वाद " वाम जाणु धरणियलमि णिवेसेइ २ " ऐसा पाठ मिलता है- और यही पाठ प्रतिमा पूजको को समत है । परन्तु टीकाकार श्री अभयचरि ने " दाहिण जाणु धरणीतलसी निहद्दु ' ऐसा पाठ टीकामें रखकर ' निहद्दु ' इस पद की टीका " स्थापना करके " ऐसी की है । इस प्रकार " णिवेसेइ " की जगह ' निहद्दु ' ऐसा पाठ भेद किया गया है । इसी प्रकार प्रतिमा पूजको द्वारा स्वीकृत " तिस्रुत्तो मुद्धानं धरणियलसि नमेइ " इस मूल पाठ में भी परिवर्तन " नमेइ " क्रिया पद में " निवेशयति " इस रूप से कर दिया है । इससे यह बात निश्चित होती है कि जिस के मन

पणाम करेइ, २ लोमहृत्वय परामुसड, २ एव जहा सुरियामो जिणपडिमाओ अच्छेइ तहेव भाणियव्व जाव धूव डहइ) ति,

आ पाठ भणे छे त्थारपथी " वाम जाणु धरणियलसि णिवेसेइ २ " आ नतने पाठ भणे छे अने अने ज पाठ प्रतिमा पूजना तरइहारीअने माटे समत इय छे पणु टीकाकारश्री अणयहेवसुरिअने " दाहिण जाणु धरणीतलसी निहद्दु " आ नतने पाठ टीकामा कणीने " निहद्दु " आ पदनी टीका- स्थापना करीने आ प्रभाणु उणी छे आ रीते " णिवेसेइ " ना अथाने " निहद्दु " आ नतने पाठ लेइ करवामा आव्थे छे आ गीते ज प्रतिमा पूजना तरइहारीअने वडे स्वीकृत (तिस्रुत्तो मुद्धानं धरणीतलसि नमेइ) आ भूणपाठमा पणु " नमेइ " क्रियापदमा " निवेशयति " आ नतनु पणु वर्तन करी नाण्णु छे आथी आ वातनी आनी थय उ के अने मनमा अवे पाठ अथे तेणु ते प्रभाणु ज आवे तेम पोतानी उएय पाठमा

नानि विधिनिषेधसाधकानि भवन्ति अन्यथा सूर्यादेवादिवक्तव्यताया उहूनां शस्त्रादिस्तूनामर्चन श्रूयते इति तदपि विवेक स्यात् ।

अत्रेदं यो यम्—‘ न च द्रौपद्या प्रणिपातदण्डकमात्र चैत्यवन्दनमभिहित सूत्रे’ इत्यादि वाक्यसन्दर्भेण टीकाकारेणाभयदेवसूरिणा द्रौपद्या वन्दनमेव कृतं न तु पूजनादिकमिति बोध्यता तावानेय पाठः स्वीकृत इति । तस्माद् विधिरूपेण प्रतिमापूजनाय भगवतोऽर्हत आज्ञा न लभ्यते इति वादस्तावदास्ताम्, चरितानुवाद-रूपेणापि शास्त्रे भगवतोऽर्हत्प्रतिमापूजनं कापि नोक्तमिति सिद्धम् । एव चायमेवै चरितानुवादरूप वाक्ये में विधि और निषेध बोधकता सम्भवित नहीं होती है इसी व्येय से “ न च चरितानुवादवचनानि विधिनिषेध साधकानि भवन्ति ” ऐसा माना जाता है नहीं तो फिर, सूर्याभदेव द्वारा जिस प्रकार बहुत शस्त्र आदि वस्तुओं का पूजन करना सुना जाता है उसी प्रकार प्रतिमा पूजकों के लिये भी इनका पूजन विवेक मान लेना चाहिये ।

भावार्थ—“ न च द्रौपद्याः प्रणिपातदण्डकमात्र चैत्यवन्दनमभिहित सूत्रे ” इत्यादि वाक्य के द्वारा टीकाकार अभयसूरि ने इतना ही पाठ स्वीकृत किया है कि द्रौपदी ने सिर्फ वन्दना ही की है, प्रतिमापूजन नहीं इसलिये हमसे यह बात सिद्ध हो जाती है जब चरितानुवाद रूप से भी शास्त्र में कही भी भगवान ने अर्हत् की प्रतिमा का पूजन नहीं कहा है । तब विधिरूप से प्रतिमा पूजन के लिये भगवान अर्हत् की आज्ञा है ऐसी मान्यता को ही कल्पनामात्र ही है । इस प्रकार स्थानक-

काष्ठ पशु स्थाने उगी नहीं अर्हत्तानुवाद रूप वाक्यना विधि अने निषेध बोधकता सम्भवित यती नहीं आ व्येयथी (न च चरितानुवादवचनानि विधि निषेधसाधकानि भवन्ति) ऐम मानवामा आवे छे नखितर पछी सूर्याभदेव वडे ऐम धर्या शस्त्रो वगेरे वस्तुओंनी पूजा करेदी बात सलणाय छे तेमज प्रतिमा पूजकोना भाटे पशु ऐमनी पूजा विधेय रूपमा मानी लेवी लेधऐ

भावार्थ—“ न च द्रौपद्याः प्रणिपातदण्डकमात्र चैत्यवन्दनमभिहित सूत्रे ” वगेरे वाक्य द्वारा टीकाकार अभयदेवसूरिअे आटला पाठने ज नीकाउ कथे छे के द्रौपदीअे इकत वन्दना ज करी छे प्रतिमा पूजा नाछे ऐथी आ बात स्पष्ट रीते सिद्ध यध लय छे के जगरे चरितानुवाद रूपथी पशु शास्त्रमा कोठ पशु स्थाने भगवाने अर्हत्तनी प्रतिमाना पूजन विधे कछु नहीं त्यारे विधि रूपथी प्रतिमा पूजन भाटे भगवान अर्हत्तनी आज्ञा छे ऐवी मान्यता इकत के मात्र ज छे आ प्रभाणे स्थानकवासी सप्रदायनी आ मान्यता

प्रामाण्यादन्यस्यापि श्रावकादेस्तावदत्र तद्विति मन्तव्य, चरितानुवादरूपत्वादस्य, इति । न चैत्यस्य मन्तव्यमित्यत्रान्ययः । द्रौपदी प्रणिपातदण्डरुमात्र-दण्डरूपमात्र-प्रमाणरूप चैत्यरन्दन-प्रतिमा-रन्दन कृतवतीत्यर्थं पुद्गलाऽन्योपि श्रावक एतत्सूत्र-प्रमाणमाश्रित्य तावदेव तत् प्रणिपातदण्डरुमात्र रन्दन कृतवदिति न मन्तव्यम्, तत्र कारणमाह ' चरितानुवादरूपत्वादस्य ' इति । अन्य एतत्सूत्रस्य चरितानुवादरूपत्वात् ज्ञातप्रदर्शकतया यथावृत्तस्य तत्तन्वृत्तस्यानुवादरूपत्वात्, न तु भगवता ' जय चरे जय चिद्ध ' इत्यादिषु कचिदात्र प्रदत्ता ।

तस्मादस्य विधिनिषेधोपपत्त्य न समतीत्याह- ' न च चरितानुवादवच

वात भी सिद्ध हो जाती है कि अन्य श्रावकों को भी इसी प्रकार वन्दन नमन करना चाहिये-सो इस प्रकार का कथन ठीक नहीं है । कारण कि यह चरितानुवाद रूप है ।

भावार्थ-कोई अन्य श्रावक जन ऐसा समझकर कि सूत्रमें जत्र द्रौपदी ने दण्डकी तरह होकर चैत्यवन्दन किया है तो हमी सूत्रकी प्रमाणता लेकर हमें भी इसी तरहसे प्रणाम करना चाहिये सो इस प्रकार की मान्यता उनकी ठीक नहीं है कारण कि यह चरित का ही अनुवादक है । चरितका अनुवादक वाक्य विधेयरूप से मान्य नहीं होता है । यह सूत्र चरित का अनुवादक रूप है-इसका यह भाव है कि यह वाक्य ज्ञात अर्थ का प्रदर्शक होने से पहिले जो जो बातें २ जिस २ रूपमें हो चुकी हैं उन सब का अनुवादक रूप है । " जय चरे जय चिद्धे " इत्यदि सूत्र की तरह यह विधि वाक्य नहीं है । इसीलिये भगवान ने प्रतिमा के पूजन और वन्दना, नमन करने आदि की आज्ञा कही भी सूत्र में नहीं दी

प्रमाणे च वन्दन नमन करवा लेधये तो आ जतनु कथन योग्य नहीं, केमके आ चरितानुवाद इय छे

भावार्थ-गमे ते श्रावक आस समञ्जने के सूत्रमा ज्य रे द्रौपदीये दण्डकारे धधने चैत्य वन्दन कथुं छे तो आ सूत्रने च प्रमाणे स्वश्य भानीने आभारे पणु आ प्रमाणे च प्रणाम करवा लेधये तो तेमनी आ वात पणु ठीक उड़ी शक्य तेम नहीं, केमके आ चरितने च अनुवादक छे चरितनु अनुवादक वाक्य विधिय इयमा मान्य होतु नहीं आ सूत्र चरितने अनुवादक इय छे आने। भाव ये छे के आ वाक्य ज्ञात अर्थने प्रदर्शक होवाथी ने ने वातो ने इयमा यध सूत्री छे ते अघालु अनुवादक इय छे- ' जय चरे जय चिद्धे " इत्यादि सूत्रनी जेम आ विधिवाक्य

नानि विधिनिषेधसाधकानि भवन्ति अन्यथा सूर्यादेवादित्रक्तव्यताया बहूना
शस्त्रादिस्तूनामर्चन श्रूयते इति तदपि विधेय स्यात् ।

अत्रेदं यो यम्—‘ न च द्रौपद्या प्रणिपातदण्डकमात्र चैत्यवन्दनमभिहित सूत्रे’
इत्यादि वाक्यसन्दर्भेण टीकाकारेणाभयदेवसूरिणा द्रौपद्या वन्दनमेव कृतं न तु
पूजनादिकमिति बोध्यता तावानेन पाठः स्वीकृत इति । तस्माद् विधिरूपेण प्रति
मापूजनाय भगवतोऽर्हत आज्ञा न लभ्यते इति वादस्तावदास्ताम्, चरितानुवाद-
रूपेणापि शास्त्रे भगवतोऽर्हतप्रतिमापूजनं कापि नोक्तमिति सिद्धम् । एव चायमे-
हं चरितानुवादरूपं वाक्यं मे विधि और निषेध बोधकता सम्भवित
नहीं होती है इसी व्धेय से “ न च चरितानुवादवचनानि विधिनिषेध-
साधकानि भवन्ति ” ऐसा माना जाता है नहीं तो फिर, सूर्याभदेव
द्वारा जिस प्रकार बहुत शस्त्र आदि वस्तुओं का पूजन करना सुना
जाता है उसी प्रकार प्रतिमा पूजकों के लिये भी इनका पूजन विधेय
मान लेना चाहिये ।

भावार्थ—“ न च द्रौपद्या प्रणिपातदण्डकमात्र चैत्यवन्दनमभिहितं
सूत्रे ” इत्यादि वाक्य के द्वारा टीकाकार अभयसूरि ने इतना ही पाठ
स्वीकृत किया है कि द्रौपदी ने सिर्फ वदना ही की है, प्रतिमापूजन नहीं
इसलिये हमसे यह बात सिद्ध हो जाती है जब चरितानुवाद रूप से
भी शास्त्र में कही भी भगवान ने अर्हत की प्रतिमा का पूजन नहीं
कहा है । तब विधिरूप से प्रतिमा पूजन के लिये भगवान अर्हत की
आज्ञा है ऐसी मान्यता को ही कल्पनामात्र ही है । इस प्रकार स्थानक-

का] पशु स्थाने उरी नथी अर्गितानुवाद इप वाक्यना विधि अने निषेध
बोध ता सलवित थती नथी आ व्धेयथी (न च चरितानुवादवचनानि विधि-
निषेधसाधकानि भवन्ति) अेम मानवामा आवे छे नडितर पथी सूर्याभदेव
पठे नेम धष्या शस्त्रो वगेरे वस्तुओनी पून करेदी वात सलणाय छे तेमज
प्रतिमा पूजकोना माटे पशु अेमनी पून विधेय इपमा मानी लेवी नेधअे

भावार्थ—“ न च द्रौपद्या प्रणिपातदण्डकमात्र चैत्यवन्दनमभिहितं सूत्रे ”
वगेरे वाक्य द्वारा टीकाकार अभयदेवसूरिअे आठला पाठनो ज स्वीकार करेथी
उ के द्रौपदीअे इकृत वदना ज करी उ प्रतिमा पून नाड अेथी आ वात
स्पष्ट गीते सिद्ध थर नथ छे के न्यारे अरितानुवाद इपथी पशु शास्त्रमा
का] पशु स्थाने भगवाने अर्हतनी प्रतिमाना पूजन विधे कछु नथी त्यारे
विधि इपथी प्रतिमा पूजन माटे भगवान अर्हतनी आज्ञा छे अेथी मान्यता
इका कल्पना मात्र ज उ आ प्रमाणे स्थानकवासी सप्रदायनी आ मान्यता

તદ્વૃષ' સ્થાનકયાસિના મિદ્ધાન્તઃ શાઘ્યાનુકૂલઃ સત્ય ઇતિ નિર્ણયતામ્ । અહંઉન્દ
નમપિ દ્રૌપદા ન કૃતમિત્યગ્રે સપ્રમાણ નિગ્વપિગિવ્યામ' ।

કિં ચ-પ્રતિમાપૂજનાના પ્રમાણભૂતે મહાનિશીથગ્નેડવિ ' પ્રતિમાપૂજાયાઃ
સાવચ્ચતયા તદ્યં ઝિનાલયપ્રિધાન નાવચ્ચ મયગીતિ મત્વા દ્રવ્યલિગિમિઃ પૃષ્ટેન
કુવલયપ્રમનામ્નાડનગારેણ નિગ્વિતિ વાવચ્ચમિદ્ નાદ નાદમાત્રેણાપિ કુર્વે' ઇતિ ।
તદેવમનેન મળતાસતા તીર્થરનામગોત્ર કર્મનિતમ્ । ઇદમવાવગેષીકૃતચ્ચ
મયોદધિઃ । તતસ્તૈઃ સંવરેકમત કૃત્વા તસ્ય નાવચ્ચાચાર્ય ઇતિ નામ દત્ત પ્રસિ
દ્ધિનીત ચ । ઇતિ પ્રતિગોધિતમ્ ।

વાસી સપ્રદાય કી યદ માન્યતા નિર્દોષ ણ્ય શાસ્ત્રાનુકૂલ ઓર સત્ય હૈ
કિ અહંત કી પ્રતિમા વનારૂર પૂજના ગાત્ર હિનમાર્ગ સે વિપરીત માર્ગ
હૈ । અહંત કી પ્રતિમા કી વન્દના મી દ્રૌપદી ને નહી કી હૈ ડસ યાત
કો મી હમ આગે પ્રમાણ દેરૂર પુષ્ટ કરેમે ।

કિચ્ચ-પ્રતિમાપૂજકો દ્વારા પ્રમાણરૂપ સે સ્વીકૃત મહાનિશીથ સૂત્ર
મેં મી યહી સમજાયા ગયા હે કિ પ્રતિમાપૂજન સ્વય ણક સાવચ્ચકર્મ હૈ,
ઉસકે નિમિત્ત જનાલય આદિ વનવાના મી સાવચ્ચકર્મ હ । એસા સમ
જ્ઞકર-કુવલયપ્રમનામક આચાર્ય ને દ્રવ્ય લિગિયોં દ્વારા પૂઠે જાને પર
યહી ઉત્તર દિયા હૈ કિ યે સ્વ સાવચ્ચકર્મ હે, મે અપને વચનો સે મી
હસ વિષય કા જરા મી મહન નહીં કર સકના હ્' ડસ પ્રકાર કહને
વાલે ઉન કુવલયપ્રમનામક આચાર્યને તીર્થકર નામ ગોત્ર કર્મ ઉપાર્જન
કરકે ઇકમવાવતારી વને । સાવચ્ચકર્મ નિવેધ કરને વાલે હોને સે

નિર્દોષ તેમજ શાસ્ત્રાનુકૂલ અને સત્ય છે કે અહંતની પ્રતિમા બનાવીને પૂજવી
શાસ્ત્રનિહિત માર્ગથી ઉલટો માર્ગ છે અહંતની પ્રતિમાની વદના પણ દ્રૌપ
દીએ કરી નથી, આ વાતને પણ અમે આગળ સપ્રમાણસિદ્ધ કરવા પ્રયત્ન કરીશુ
અને ધીલુ પણ કે-પ્રતિમા પૂજકો વડે પ્રમાણ રૂપે સ્વીકૃત મહાનિશીથ
સૂત્રમા પણ એ જ વાત મમબલવવામા આવી છે કે પ્રતિમા પૂજન બંતે એક
સાવચ્ચ કર્મ છે તેના નિમિત્તે જનાલય વગેરે બનાવવા તે પણ સાવચ્ચ કર્મ છે
એમ બહુને જ કુવલયપ્રલ નામના આચાર્યે દ્રવ્યલિગિએ વડે પૂછાએલા
પ્રશ્નમા ઉત્તરમા આ પ્રમાણે જ કહ્યુ છે કે આ ણધુ સાવચ્ચકર્મ છે હું મારા
વચનોથી પણ આ વિષયનુ જરાય પણ મહન કરી શકુ તેમ નથી આ રીતે
કહેનાર તે કુવલયપ્રલ નામક આચાર્યે તીથ કર નામ ગોત્રકર્મ ઉપાર્જન કરીને
એક લવાવતારી બન્યા સાવચ્ચકર્મ નિવેધ કરનાર હોવાથી તે એ

भगवान् श्री वर्धमानस्वामी गौतम प्रति कथयति— 'अस्या ऋषभादिचतुर्विंशतिमायाः प्राक् अतीतकालेन याऽतीता चतुर्विंशतिका, तरया मत्सद्यः सप्तदशस्तनुर्धर्मशीनामा चरमतीर्थङ्करो यभून् तस्मिन् तीर्थङ्करो सप्ताश्रयाणि अभूवन् । असयतपूजाया मृत्तायापनेके श्राद्धेभ्यो वृहीतद्रव्येण स्वस्वकारितचैत्यनिवासिनोऽभून्, तत्रैको मरुत-उग्रिः कुवलयप्रभनामाऽनगारो महातपरवी उग्रविहारी विष्यगणपरिवृतः समागतः, तैर्नन्दितोक्तम्, तदेव तात्पर्यमकरणं प्रदर्शयते, तथा हि—महानिशीथमत्रे पञ्चमाययने—

जहा ण भयव । जड तुमहिहाः एगवानारत्तिय चाउम्पात्तिय पउजियताण-
मिन्त्राण अणेगे चेइयालया भवति नूण तज्जाणगचीए ता कीरउ अणुगहमम्हाण

उन चैत्यवासियो ने सिद्धर उनका नाम 'सावद्याचार्य' रख दिया, और प्रसिद्ध भी कर दिया । जैसे—भगवान् श्री वर्धमानस्वामी गौतम प्रति कहते हैं—इस ऋषभादि चौबीसी के पहले भूतकालमें जो चौबीसी होगई हे उस चौबीसीमे मेरे जैसा सात हाथप्रमाण शरीर वाला धर्म श्री नामका अतिम तीर्थंकर हो गया है, उस तीर्थंकर के सत्रयमे सात आश्रय हुए थे, उनमे "असयतपूजा" नामका एक आश्रय था । उस असयतपूजाकी प्रवृत्ति होनेपर बहुतसे साधु श्रावको के पैसो रो अपने अपने बनबाये जुवे चैत्योमें निवास करते थे अर्थात् चैत्यवासी हो गये थे, वहा पर एक उग्रम कांतिवाले कुवलयप्रभ नाम के मुनि महानपस्वी उग्रविहारी शिष्यपरिवार सहित पगरे थे, उनको उन चैत्यदासियो ने बदना कर के जो कहा सो इस प्रकार हे । जिस पाठ का यह कथानक है वह पाठ इस प्रकार है—

तेमनु नाम "सावद्याचार्य" ओ प्रभाणु राभ्यु अने प्रसिद्ध पणु उरुं
जेमडे लगवान् श्री वर्धमानस्वामी गौतमने उडे ठे ठे—आ ऋषभादि चौबी
शीना पडेला लूतकाणमा जे शेवीमी थउ गध छे ते शेवीमीमा भारा जेवा
सात हाथ प्रभाणु शरीरवाणा धर्मश्री नामना छेवता तीर्थंकर थय गया ठे
ते तीर्थंकरना समयमा मात आश्रयो थया हुता, तेमा "असयतपूजा"
नामनु ओउ आश्रय हुतु ते असयत पूजानी प्रवृत्ति थय त्यारे अनेक साधु-
श्रावकोना पैसाधी पोतपोताना भाटे अनावरावेला चैत्योमा वास करता हुता
अर्थात् चैत्यवासी थय गया हुता त्या ओउ ग्राम वलुवाणा कुवलयप्रभ
नामना मुनिमहागज के जेओ महा तपस्वी, उग्र विहारी हुता, तेओ पोताना
शिष्य परिवार सहित त्या पधार्या हुता तेमने ते चैत्यवासीजाओ बदना
करीने जे कहु ते आ प्रभाणु ठे—

इहेव चाउम्मासिय । ताहे भणिय तेण महाणुभागेण - गोयमा ! जहा भो भो पियवए ! जइ वि जिणालए तहा वि सावज्जमिण णाह वायामित्तेण पि आयरिज्जा । एव च समयसारपर तत्त जहट्टिय अविपरीत णीसक भणमाणेण तेसिं मिच्छदिट्ठिलिगीण साहुवेसधारीण मज्जे गोयमा ! आसकलिय तित्थयर नामरुग्गोय तेण कुवल्यप्पभेण, एगभववावसेसीकओ भवोयही ॥ इति ।

छाया-यथा खलु भगवन् ! यदि त्वमिहापि एकवर्षात्रिक चानुर्मासिक प्रयोक्तव्यमिच्छया अनेके चैत्यालया भवन्ति नून । तद्दृष्यानात्पत्या तस्मान् करोतु अनुग्रहमस्मान् इहेव चातुर्मासियम् । तदा भणित तेन महाणुभागेण - गौतम ! यथा भो भो पियवदा ! यद्यपि जिनालय , तथापि सावधमिदं नाहं तद्दाम्पत्येणापि आचरामि । एव च समयसारपर तत्त यथास्थितम् अविपरीत निःशङ्क भणता तेषा मिच्छादिट्ठिलिङ्गिणा साहुवेसधारीणा मध्ये गौतम ! आसकलित तीर्थकरनामरुग्गोत्र तेन कुवल्यप्पभेण एकभववावसेसीकृतो भवोदधिः ॥ इति

“ जहा ण भयव ? जइ तुममिहाइ एकवर्षात्रिक चानुर्मासिय पडजियताणमिच्छाए अणेगे चेइयालया भवति नून तज्झाणणत्तिए ता कीरउ अणुग्गहम्महाण इहेव चाउम्मासिय । ताहे भणिय तेण महाणुभागेण गोयमा ! जहा भो भो पियवए जइवि जिणालए तहा वि सावज्जमिण णाह वायामित्तेण पि आयरिज्जा । एव च समयसारपर तत्त जहट्टिय अविपरीत णीसक भणमाणेण तेसिं मिच्छदिट्ठिलिगीण साहुवेसधारीण मज्जे गोयमा ! आसकलिय तित्थयरनाम गोत्त तेण कुवल्यप्पभेण एगभववावसेसीकओ भवोयही । इति (महा निशीथ पञ्चम अध्ययन) इस सूत्रका भावार्थ इस प्रकार है-

हे भगवन् ! आप यहा एक वर्षात्रिक चारमहिने ठहरे

“ जहा ण भयव ? जइ तुममिहाइ एकवर्षात्रिक चानुर्मासिय पडजियताणमिच्छाए, अणेगे चेइयालया भवति नून तज्झाणत्तिए ता कीरउ अणुग्गहम्महाण इहेव चाउम्मासिय । ताहे भणिय तेण महाणुभागेण गोयमा । जहा भो भो पियवए जइवि जिणालए तहावि सावज्जमिण णाह वायामित्तेण पि आयरिज्जा । एव च समयसारपर तत्त जहट्टिय अविपरीत णीसक भणमाणेण तेसिं मिच्छदिट्ठिलिगीण साहुवेसधारीण मज्जे गोयमा ? आसकलिय तित्थयरनामगोत्त तेण कुवल्यप्पभेण एगभववावसेसीकृतो भवोयही । इति (महानिशीथ पञ्चम अध्ययन) आ सूत्रेणो भावार्थ आ प्रभावे छे ~ ~ ~ ।

हे भगवन् ! उह यदि यथा सलु त्वम् एरुवर्षारत्रिक चातुर्मासिक तिष्ठसि प्रयोक्तृणाम्=प्रवर्तमानाम् इत्या-आज्ञया अनेके चैत्यालया नून भवन्ति=भविष्यन्ति, तत् तस्माद् निवासार्यमाज्ञामुपादाय इहे चतुर्मासिक कुरु तावदस्माक मनुग्रह कुरु भवदीयाज्ञया वह्यश्चैत्यालया भविष्यन्ति। ततश्चास्माकमुपकारः क्रियतामिति भावः । तदा तेषा साञ्चपृजाया प्रवृत्ताना द्रव्यलिङ्गिना वचन श्रुत्या तेन महानुभावेन कुवलयप्रभनाम्नाऽनगारेण भणितम्=उक्तम्, यथा-भो भो प्रिय वदा । भो देवानुप्रिया । यद्यपि जिनालय, तथापि सावद्यमिदं जिनभवने कृते

-अर्थात् यही पर चौमासा व्यतीत करे । प्रवर्तकों की आज्ञा से यहां पर अनेक चैत्यालय बन जायेंगे । उस लिये आप यही पर चौमासा व्यतीत करने का अनुग्रह करें । हमारे ऊपर आपका बड़ा ही अनुग्रह होगा । आपके उपदेश से निश्चय समझिये अनेक चैत्यालयों का निर्माण हो जायगा । इन प्रकार से उन द्रव्यलिङ्गियों से प्रार्थित होने पर महानुभाव कुवलयप्रभ आचार्य ने कहा कि हे देवानुप्रिय ! यद्यपि तुम जिनालय के विषय में कहते हो-परन्तु-मैं इस कार्य को उरवाने में श्रेय नहीं देखता हूं-कारण कि वह सावद्यकार्य है जिन भवन बनवाना और उसके बनवाने की प्रेरणा करना इन दोनों प्रकार की प्रवृत्तियों में पृथिवीकाय आदि छह प्रकारके जीवों की विराधना होती है इसी प्रकार से पूजन करने में भी पट्टकाय के जीव निकायों का आरम्भ अवश्यभावी है । इसलिये अनेक प्रकार के पट्टकाय के जीवों के विघात का हेतु होने से पूजन के निमित्त भी जिन भवन का बनवाना सावद्यतर कार्य है ऐसे सावद्यतर कार्य का मैं किसी भी प्रकारसे उपदेश नहीं दूंगा । मैं कभी भीऐसा उपदेश नहीं दूंगा कि

तमे अर्द्धी ओरुवर्षारत्रिक-आर मास-देहाओ-ओटले के अर्द्धी तमे योमासु पुर करे प्रवर्तमाने अज्ञाथी अर्द्धी धर्या चैत्यालयो अनी नशे ओथी तमे अर्द्धी न योमासु पुर उरवानी कृपा उरो, अमारा उपर तमारो लारे अनुग्रह थशे तमारो उपदेशथी अमने ओकस पात्री छे के धर्या चैत्यालयोनु निर्माण थछे नशे आ रीते द्रव्य लिङ्गिओनी प्रार्थना सालणीने मडानुभाव कुवलयप्रभ आचार्ये धरु के छे देवानुप्रिय । ने के तमे जिनालयना विषे उडो छे, पणु मने आ काम करवनामा श्रेय लागतु नथी, उमके आ सावद्यकर्म छे उन लवन अनाववु अने तेने अनाववानी प्रेर्या आपवी आ अने नतनी प्रवृत्तिओमा पृथिवीकाय वगेरे छे नतना ओयोनी विराधना धाय छे आ रीते पूजा करवनामा पणु पट्टकायना अवनिकायोने आरल अवश्यभावी छे ओटला माटे धर्या नतना पट्टकायना ओयोना विघातना माटे उतुइप डोवा अडल पूजना माटे पणु अनभवन अनाववु सावद्यतर कार्य छे ओवा सावद्यतर कार्य

कारिते च पृथिवीकायाऽपि पृथ्वीरनिकायविभाषना, नैवेर जिनपूजायागपि तस्मात् पूजार्थस्त्याजिनभवनविधान सावधतर, अन्तरपट्टमायतीरोपघातहेतुत्वात् नाह वाह्मात्रेणाऽपि उपदेशदानरूपेण साम्योगमात्रेणापि आरगमि=तीर्था जिनाय चर्तु मुपदेश न करिष्यामीत्यर्थः । एव च=अनेन परकारेण, समयमारपर प्रातसिद्धात् साराऽशेषश्रेष्ठ तच्च त्रिकरणत्रियोग प्राणानिपातो वर्जनीय इत्यादिरूप यथास्थित यथावस्थितस्वरूप प्रमाणभूत, त्रिपरीत=त्रिपर्ययदानाविषय, त्रिगुण=संप्रयोजित वचन भणता=प्रयत्ना, तेषा मिथ्यादृष्टिद्विना मिथ्यादृष्टय. कुतीर्थिनामस्तद्वर्जो वोपघातकाग्नितासाधुप्रेषारिणा=मध्ये हे गौतम ! जामलितम्=सन्त्यक्त सट्ट हीतम् उपार्जितमित्यर्थ । त्रिमुपार्जितमित्याह-तीर्थाकरनामगो तत्र कुवलयप्र भेण, एकरुवाशेषी क्रतो भरोदधि । सुगममेतत् ।

जिस में जिनालय बनवाने का विधान हो । इस प्रकार प्रवचन सिद्धा न्त की सारभूत वस्तुस्थिति को यथार्थ रूप से चित्ता किसी सकोच के प्रकट करने वाले उन मुनिराज ने उन साधुप्रेष धारी द्रव्यलिंगियों के बीच कि जो मिथ्यादृष्टियों की तरह जीवों की हिंसा करने में प्रवृत्त थे उनके सामने इस प्रकार शुद्ध प्ररूपणा कानेसे हे गौतम ! तीर्थकर नाम गोत्र कर्म का वध किया-और सत्सार भी उनका एक भव मात्र बाकी रह गया इस उद्घरण से यती भवजना चाहिये-कि जब प्रतिमा पूजन के लिये भी मंदिर बनवाना सावध कर्म है और इस सावधकार्य का उपदेश देना भी साधु के लिये वर्जनीय है-इसी अभिप्राय से कुवलयप्रभ सूरि ने इस कार्य को निषेध किया-इस निषेध से उन्हें तीर्थकर नाम-गोत्र कर्म का वध हुआ और सत्सार भी उनका एकभव मात्र बाकी बचा-तो फिर सर्व प्रकार से सावध कर्मों का परित्याग

भाटे हु कोठ पञ्च रीते उपदेश आपना तैयार नथी, हु आ बनने उपदेश कोठपञ्च वधते आपना तैयार नथी डे जेभा अनुभव गताववानु विधान सरभुय डोय आ रीते प्रवचन सिद्धातनी सारभूत वस्तुस्थितिने माथा रुपमा वगर कोठ पञ्च जतना स डेये-प्रगट करनारा ते मुनिराजे ते माधु वेपधागी द्रव्य लिंगिजोनी सामे डे जेजे मिथ्यादृष्टिवाजाजोनी जेभ जेनी डिमा करवामा प्रवृत्त हुता-शुद्ध प्ररूपणा उरी आ जीने गुंघ प्ररूपणा करवाथी डे गौतम ! तीर्थकर नाम-गोत्रकर्मने वध उथी अने नमार पञ्च जेक लव जेटलो न शेष रह्यो आ उदाहरणथी आपणे जेज वात ममजवी जेधजे डे न्यारे प्रतिमा पूजन भाटे पञ्च मंदिर गताववु मावज्जम छे अने आ सावधकार्यने उपदेश करवो पञ्च साधुना भाटे तान्ये आ हेतुथी न कुवलयप्रभसूरीजे आ कार्यने निषेध कथी छे आ निषेधथी ते कर

અને પ્રોધ્યમ્-યન પ્રતિમાપૂજાર્થ ક્રિયામાપસ્ય જિનાલ્પસ્ય યાચોપદેશઋણ સામ્યગિતિ જાનતા તત્પરિવર્જને કૃતે તીર્થકર નામગોત્ર કર્મ મદ્યુપાર્જિત, તત્ત સર્વથા માવધમાર્ગ પરિવર્જયતા સર્વપ્રાણિરક્ષણાર્થમર્દિસામ્યં સર્વતઃ પ્રચારયતા પ્રવચન-સિદ્ધાન્તસાર વિજાનતાં સયમમાર્ગે પ્રવૃત્તિમતા સમ્યક્ત્વશુદ્ધિમતા પ્રતિ-માપૂજામકુર્ષતા તન્નિપેધયતા િં નામાત્મનઃ કલ્યાણકર કાર્યમગ્નિષ્ટમ્ . ઇતિ ।

અવ ચિવાહસમયે દ્રૌપદી સમ્યક્ત્વાતી નાસોદિતિ ણ્યર્થતે-જૈનાગમાના વિદ્વાસ =મમ્યગિદ્ વદન્તિ-સનિદાનમ્ય જીવસ્ય નિદાનફલપ્રાપ્તિર્ધાવન ભવતિ, તાવદસી સમ્યક્ત્વરશ્ચિતો જૈનવર્માદ્ દૂર ઇવાવતિષ્ઠતે ।

કરને વાલે, સમસ્ત પ્રાણિયો કો રક્ષા કે નિમિત્ત અહિંસાધર્મ કા પ્રચાર કરને વાલે, પ્રવચન સિદ્ધાન્ત કે સાર કો જાનને વાલે, સયમમાર્ગ મે પ્રવૃત્તિ વાલે, સમ્યક્ત્વ કી શુદ્ધિ સે વિગ્રિષ્ટ ઓર પ્રતિમા કી પૂજા નહી કરને વાલે ણવ ઉસકા નિપેય કરને વાલે ણેસે સયમિયોં કા અવ ઓર કૌનસા ણેસા કાર્ય યાકી રહા હૈ જો ડનકી આત્મા કે લિયે કલ્યાણ કા સાધન ન હો ।

અવ યહા હસ્ર વાન કા વર્ણન કિયા જાતા હૈ કિ ચિવાહ કે સમય દ્રૌપદી સમ્યક્ત્વવાલી નહી યી ।

જૈન આગમોં કા ભલીભાંતિ પરિશીલન કરને વાલે વિદ્વાન ઇસ યાકો અચ્છી તરહ જાતે હ કિ જિમ જીવ ને જો નિદાન કિયા હૈ-જવતક ઉસકે ફલ કી પ્રાપ્તિ ઉમ જીવ કો નહી હો જાતી-તવતક વહ જીવ સમ્યક્ત્વ સે વચિત રાકર જિનવર્મ સે દૂર હી રહતા હૈ ।

નામ-ગોત્ર ડર્મનેા બવ વયેા અને મસાર પશુ તેમને માટે એકલવ બેટ લોજ શેપ રહો હતો તે પછી સર્વ ઝીતે સાવધકર્મનેા પરિત્યાગ કરનાગ બધા પ્રાણીઓની રક્ષાના નિમિત્તે અહિંસા ધર્મનેા પ્રચાર ડગનારા પ્રવચન સિદ્ધાન્તના યારને બ્રાણનાગ, સયમ માગમા પ્રવૃત્તિ ડગનારા, સમ્યક્ત્વની શુદ્ધિથી વિશિષ્ટ અને પ્રતિમા પૂજા નહિ કરનારા અને તેને નિપેધ કરનારા એવા સયમીઓનુ એવુ ડયુ કામ શેપ રહુ છે કે જે તેમના આત્માના કલ્યાણનુ સાધનરૂપ ન હોય ?

હવે અહીં આ વાતનુ વર્ણન કરવામા આવે છે કે લક્ષના વખતે દ્રૌપદી સમ્યક્ત્વવાળી ન હતી

જૈન આગમોનુ સારી રીતે પરિશીલન કરનારા વિદ્વાનો આ વાતને માગી પેઠે બાપુ છે કે જે એવે જે નિદાન ડયુ છે-અથા સુધી તેના રણની પ્રાપ્તિ તે એવને થઈ જતી નથી ત્યા સુધી તે એવ સમ્યક્ત્વથી વચિત રહીને એવ ધર્મથી દૂર રહે છે

“ पुत्रकथनियामेण चोद्भज्यमानो २ जेणेव पच पडवा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता ते पच पडवे तेण दसद्वयणेण कुसुमदामेण आवेदियपरिवेदिय करेइ, करित्ता, एव वयासी-एएण मए पच पडवा वरिया । ’ इति सूत्रपाठ प्रामाण्याद् विवाहसमये पूर्वकृतनिदानाधीनतया सम्यक्त्वराहित्य द्रौपद्या आसीत् अतस्तस्यास्तदानीं श्राविकात् न सिध्यति युगपत् पश्चान्ना पत्नीनां वरणेन तस्योः पूर्वसंस्कारोदयशब्दाद् विपुलसुखभोगलालसाऽपि स्वाभाविकी, अतः सा कौमारे वयसि श्राविका नासीदिति युक्तिसिद्धस्यार्थस्यापलापः केन शक्यते कर्तुम् । द्रौपदी तस्य पूजनं कृतवतीति जिज्ञासाया निर्णयते—

“ पुत्रकथनियामेण चोद्भज्यमानो २ जेणेव पच पडवा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता ते पच पडवे तेण दसद्वयणेण कुसुमदामेण आवेदिय परिवेदिय करेइ । करित्ता एव वयासी-एएण मए पंच पडवा वरिया ” इस प्रकार के इस प्रमाणिक सूत्र पाठ से यह स्पष्टरीति से विदित हो जाता है कि विवाह के समय पूर्वकृत निदान के अधीन होने से द्रौपदी सम्यक्त्व रहित थी इसी लिये उस समय उस में श्राविकापना भी सिद्ध नहीं होता है । तथा एक ही साथ पात्र पांडवों को पतिरूप से वरण करने से उसके पूर्व संस्कार के उदय से विपुल सुख भोगने की लालसा भी स्वाभाविकी ज्ञात होती है इसलिये वह कुमार अवस्था में श्राविका नहीं थी इस युक्ति सिद्ध अर्थ का अपलाप कौन कर सकता है !

द्रौपदी ने किस की पूजा की इस प्रकार की जिज्ञासा होने पर

“ पुत्रकथनियामेण चोद्भज्यमानो २ जेणेव पच पडवा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता, ते पच पडवे तेण दसद्वयणेण कुसुमदामेण आवेदियपरिवेदिय करेइ । करित्ता एव वयासी-एएण मए पच पडवा वरिया ”

आ नतना आ प्राभाषिक सूत्रपाठथी आ २५०८ रूपमा माळुम थर्ध न्नाय छे के लक्षणा वअते पूर्वकृत निदानने स्वाधीन होवाने कारणे द्रौपदी अभ्यक्तव रहित छती अटला भाटे ते समये तेमा श्राविकापणु सिद्ध थर्ध शके तेम नथी तेमअ अेकी साथे पाये पाडवाने पतिरूपमा वरणु करवाथी तेना पूर्व संस्कारोना उदयथी विपुल सुख भोगववानी छअछा पणु स्वाला विकी माळुम थाय छे अेथी ते कुमार अवस्थाभा श्राविका छती नछि आ युक्ति अर्थनो परिहार कोणु करी शके तेम छे

द्रौपदीअे केनी पूजा करी ? आ नतनी अज्ञानने साथे

અલ્પકાલસૌભાગ્યપ્રચુરભોગકામનયા કામદેવસ્યૈવ પૂજન તદાનીમુપપદ્યતે ।
કામપૂજન વિવાદોત્સવે વિસ્તરતો ભવતીતિ લોકે પ્રસિદ્ધમસ્તીતિ પ્રતિમાપૂજનોઽપિ
શ્રી વર્ધમાનમૂરિઃ પ્રોક્તવાન । સ્પષ્ટ ચૈતત્ તદ્વિચિતે આચારદિનકરે દ્વિતીય-
વિભાગે—“ પરમમયે ગણપતિકર્ત્ત્વસ્થાપનમ્ । ગણપતિકર્ત્ત્વસ્થાપન સુગમ
લોકપ્રસિદ્ધમ્ । ” ઇતિ ।

ટીકાકાર નિર્ણય કરતે હે—

અલ્પકાલ સૌભાગ્ય એવ પ્રચુર ભોગ કી ઇચ્છા સે કામદેવ કા હી
પૂજન ઉમ સમય દ્રૌપદી ને ક્રિયા હૈ—યહી વાત સગત બૈઠતી હૈ । લોક
મેં બી યહી વ્યવહાર દેખા જાતા હૈ કિ વિવાહ કે સમય અચ્છી તરહ
ગાજે વાજે કે સાગ્ર કામ દેવકા પૂજન લોગ ક્રિયા કરતે હૈ । ઇસ વાત
કો વર્ધમાન મૂરિ બી જો પ્રતિમાપૂજન કે પક્ષપાતી હૈ સ્વીકાર કરતે
હૈ ઓર ણેસા હી કહતે હૈ । ઇમી વાત કા સ્પષ્ટીકરણ ઉન્હોં ને સ્વનિ-
ર્મિત આચારદિનકર કે દ્વિતીય વિભાગ મેં ક્રિયા હૈ—વે લિખતે હૈ કિ—
“ પરમમયે ગણપતિકર્ત્ત્વસ્થાપનમ્ । ગણપતિકર્ત્ત્વસ્થાપન સુગમ
લોકપ્રસિદ્ધમ્ ” ઇતિ ।

લૌકિક શાસ્ત્રમેં ગણપતિ એવ કર્ત્ત્વ (કામદેવ) કી સ્થાપના હોતી
હૈ અતઃ ગણપતિ ઓર કર્ત્ત્વસ્થાપન કરના સુગમ ઓર લોકપ્રસિદ્ધ હૈ ।

કાર નિર્ણય કરતા કહે છે કે—

અલ્પકાલ સૌભાગ્ય તેમજ પ્રચુર ભોગની ઇચ્છાથી જ તે સમયે દ્રૌપદીએ
કામદેવનું જ પૂજન કર્યું છે, આ વાત જ યોગ્ય લાગે છે લોકમાં પણ આ
બતનો જ વહેવાર જોવામાં આવે છે કે લગ્નના વખતે વાત જોની સાથે સારી
રીતે કામદેવનું પૂજન લોગે કરતા રહે છે આ વાતને વર્ધમાનમૂરિ પણ કે
તેઓ પ્રતિમા પૂજનના તરફદાર છે—સ્વીકાર કરે છે અને આ પ્રમાણે જ કહે
છે આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ તેમણે સ્વનિર્મિત આચાર દિનકરના બીજા વિભા
ગમાં કર્યું છે તેઓ લખે છે કે—

“ પરમમયે ગણપતિકર્ત્ત્વસ્થાપનમ્ । ગણપતિકર્ત્ત્વસ્થાપન સુગમ લોક
પ્રસિદ્ધમ્ ” ઇતિ ।

લૌકિક શાસ્ત્રમાં ગણપતિ અને કર્ત્ત્વ (કામદેવ) ની સ્થાપના થાય છે તેથી
ગણપતિ કર્ત્ત્વની સ્થાપના કરવી તેજ સુગમ અને લોકપ્રસિદ્ધ છે

“ जिनपट्टिमाण अन्वय करेइ ” अत्र जिनशब्द कामदेवपरः । जिनशब्दस्य बहवोऽर्थाः कोशादौ प्रसिद्धाः सन्ति । यथा—

अर्हन्नपि जिनश्चैव, जिन सामान्यकेवली ।

कन्दपोऽपि जिनश्चैव, जिनो नारायणो हरिः ॥ इति (हैमी नाममाला)

विजयगच्छीयः श्रीगुणसागरसूरिरपि द्वाल्पासागरनामके काव्ये षष्ठ्यण्डे द्रौपद्या पूज्यदेव निर्णीतवान् । उक्तं च तेन—

करि पूजा कामदेवनी भाखे दुषडी नार ।

देव ! दया करी मुझने भलो देजो भरतार ॥ १ ॥

अर्हन् सकलकर्म कषायमोहपरीपणान् जयतीति जिन उच्यते । सामान्य

“ जिनपट्टिमाण अन्वयण करेइ ’ इत्यत्र जिन शब्द जितेन्द्र भगवान् का वाचक नहीं है, किन्तु कामदेव का वाचक है क्यों कि जिन शब्द के अनेक अर्थ कोषादिक ग्रन्थों में प्रसिद्ध हैं— यथा—

अर्हन्नपि जिनश्चैव जिन सामान्यकेवली ।

कन्दपोऽपि जिनश्चैव जिनो नारायणो हरिः ॥

इति (हैमीय नाममाला)

विजय गच्छीय श्री गुणसागर सूरि ने भी “ दालसागर ” नाम के काव्य में उठवें खंड में द्रौपदी के आराध्य देव का निर्णय किया है । उन्होंने लिखा है—

करि पूजा कामदेव नी भाखे दुषडी नार ।

देव ! दया करी मुझने भलो देजो भरतार ॥ १ ॥

इस सूत्र में अर्हन्त भगवान् को ‘ जिन ’ इत्यधिके कहा गया है

“ जिनपट्टिमाण अन्वयण करेइ ”

आ सूत्रमा एत शब्द एतेद्र् लगवानने वाचक नशी यत्तु कामदेवने। वाचक छे केभके एत शब्दोना घणा अर्थो दोष वगेरे अन्योभा प्रसिद्ध छे नेभके— अर्हन्नपि जिनश्चैव जिन सामान्यकेवली ।

कन्दपोऽपि जिनश्चैव जिनो नारायणो हरिः ॥ इति (हैमीय नाममाला)

विजयगच्छीय श्री गुणसागरसूरिअे यत्तु ‘ दालसागर ’ नामना काव्यना छ्का षडभा द्रौपदीना आराध्यदेवने। निर्णय करता तेभखे कछु छे के—

करि पूजा कामदेवनी भाखे दुषदिनर ।

देव ! दया करी मुझने भलो देजो भरतार ॥ १ ॥

आ सूत्रमा अर्हन्त लगवानने ‘ एत ’ अेटला भाटे के तेभखे

केवली प्रनघातकरुर्मन्तुष्टय जयतीति जिन उच्यते । विष्णुः स्वभुजपलेन खण्ड-
त्रय जयतीति जिन उच्यते । जिनशब्दस्य नामदेवोऽर्थश्चापि मगतः, यतः ससा
रिणा कामदेवप्रवर्तिनेन लोकजगत्कारित्वाज्जिनत्व कामस्योपपद्यते । रूपरहित
स्यापि सिद्धम्य प्रतिमा पूजान्नेन शान्दानुक्तामपि प्रतिमापूजकाः प्रकल्पयन्ति,
तद्वदन्तस्यापि कामस्य लोकिरात्रप्रसिद्ध तद्वचानमनुसृत्य प्रतिमा प्रकल्पत इति

कि उन्होंने ने मनमन कषाय, कर्म, मोट और परीपहों को जीता है ।
सामान्य केवली 'जिन' इसलिये कहे गये हैं कि उन्होंने ने चार घनघो
निया कसो को अपनी आत्मा से सम्रल नष्ट कर दिया है । विष्णु
'जिन' इसलिये कहेलाये जि उनको ने अपने भुजपल से भरतरखड
के छह खडों में से तीन खडों को अपने बश किया है इनी लिये ये
अर्द्धचक्री भी कहलाते हैं । कामदेव को 'जिन' इस लिये कहा गया है
कि उसके बश समस्त त्रिलोक है त्रिलोक में कोई भी प्राणी ऐसा नहीं
बचा कि जिसे इस ने अपने बश में न किया हो ।

शका—द्रौपदी ने कामदेव की मूर्ति की पूजा की—आप की यह
वात उस समय मानी जा सकती—जब कि कामदेव की मूर्ति बन
सकती होती ? परन्तु कामदेव की मूर्ति तो बन नहीं सकती क्यों कि
यह तो असंतिरु-अशरीर-अगद है । अगवाले की भी मूर्ति बनती
है—अनग की नहीं ।

यवा वषाय कर्म, मोह अने परिषेहाने अत्या छे सामान्य देवती "अन"
अटला भाटे ठेवामा आव्या छे के तेमले चार धनपतिअना अमेने पोताना
आत्माथी मभण नष्ट करी नाथ्या छे विष्णु 'अन' अटला भाटे ठेववाय
छे के तेमले पोताना अरु गणथी अगतथअना छे अठामाथी अरु अठाने
पोताने वश अ्या छे अथा तेअो अर्द्धचक्री अरु ठेववाय छे कामदेवने 'अन'
अटला भाटे कडेनामा आव्या छे के तेना वशमा तते लोके छे अले लोकेमा
अरु अेउ प्राणी अरु नथी के अेने कामदेवे पोताना वशमा कथुं न डोय

शका—द्रौपदीअे कामदेवनी मूर्तिनी पूज करी ते तमागी आ वात त्यादेअ
अेअ अडी शकाय के अ्यारे कामदेवनी मूर्ति अनी अाअती छे अ ? अरु कामदेवनी
मूर्ति तो तैयार अर्थ शके तेम नथी अेअके ते तो अमूर्तिअ-अशरीर अन ग
के अगवाअानी अ मूर्ति अने छे, अनगनी नहि

नास्त्यत्र सशय । लक्ष्मीगौर्यादिदेव्या अपि स्वामीष्टपतिमाप्तियामनया पूजन
लोके मतिद्वग्मस्ति । लौकिकमन्त्रद्वारे मन्त्ररत्नमवज्रपाया कामदेवाराजस्याभी
ष्टपतिनाभहेतुत्वं निगदितम्—

“ कन्यामिष्टामवाप्नोति, सापीष्ट पतिमाप्नुयात् ॥ ” इति ।

अधुनाऽपि परिणयनमयमे कुरुदेवपूजन लोके क्रियमाणं दृश्यते । कामदेवोऽपि

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं है क्योंकि मूर्ति प्रजक जन अनङ्ग
-सिद्धों की भी तो मूर्ति बनाकर उनकी प्रजा क्रिया करते हैं । यद्यपि
सिद्धों की मूर्ति बनाने की आज्ञा शास्त्रों में नहीं मिली गई है—तो भी
मूर्तिप्रजक जन अपनी कल्पना से उनकी भी मूर्ति बनाकर पूजा
करते ही हैं—

उसी प्रकार लौकिकशास्त्र प्रसिद्ध अनङ्ग कामदेव की भी लोग अपनी
कल्पनासुर मूर्ति बनाकर पूजते हैं । इस में आपत्ति की कौनसी बात है ।

लक्ष्मी, गौरी आदि देवियों की भी पूजा लोक में अपने को अभि
लषिन पनि प्राप्ति की कामना से स्त्रियो द्वारा की ही जाती है । लौकिक
मन्त्र ज स्र में मन्त्ररत्नमजूपा में कामदेव का आराधन—“ कन्यामिष्टा
मवाप्नोति सापीष्ट पतिमाप्नुयात् ’ इस श्लोकार्धद्वारा उचित पति प्राप्ति
का कारण कहा गया है ।

वर्तमान समय में भी देखो ! विवाह के समय में लोक में कुल
देवता का पूजन किया ही जाता है यह कुल देवता का पूजन ही एक

उत्तर—आ बात योग्य नहीं, केमडे मूर्ति पूजा करनारा लोगे अनग
सिद्धोनी मूर्ति बनावीने तेनी पूजा करता रहे छे ले के शास्त्रोभा सिद्धोनी
मूर्ति बनाववानी आज्ञा करवामा आवी नहीं छताय मूर्ति पूजक लोको पोतानी
उत्पनाथी तेमनी पण मूर्ति बनावीने पूजा करे छे तेमज लौकिक शास्त्र
प्रसिद्ध अनग कामदेवनी पण लोको पोतानी कल्पना सुजण मूर्ति बनावीने
तेने पूजे छे, आमा वाधा लेवी केछ वात नहीं

लक्ष्मी, गौरी वगैरे देवीओनी पूजा लोकभा पोतानी धरुण सुजण पति
भेणववानी कामनाथी स्त्रीओ वडे करवामा आवे छे लौकिक मत्र शास्त्रभा
मत्र रत्न मजूपाभा कामदेवतु आराधन “ कन्यामिष्टामवाप्नोति सापीष्ट पति
माप्नुयात् ” आ अर्द्धश्लोक वडे धरुणत प्रतिप्राप्तिनु नरुण अताववामा आवु छे

वर्तमान समयभा पणु आपणु लेछओ तो लगना समये लोकभा कुण
देवतानु पूजन करवामा आवे छे आ कुणदेवतानु पूजन * रीते

रागवता गृहस्थाना कुलदेवत्वेन व्याख्ययमाण आसीत् । द्रौपद्याऽपि स्वकुलदेवः पूजित इति युक्तमुत्पश्याम ।

अत्र—“ नमोऽस्त्यु ण अरिहताण ” इति पाठस्तु प्रवचनविन्द एव वर्तते, लौकिककुलदेवप्रतिमाऽर्चनप्रकरणे लोकोत्तरस्य भगवतोऽर्हतः प्रमत्ताभावात् । पूर्वभक्तनिदानवत्या कामभोगानुरवत्या द्रौपद्या नामदेवार्चनसमये कामभोगविरतस्य वीतरागमार्गोपदेशकस्य वीतरागस्य भगवतोऽर्हतो वचन नैव शास्त्रानुकूलम् । अत्र परिणयासरे कुलदेवपूजनप्रसङ्गे भगवतोऽर्हतः प्रसङ्गएव नास्ति,

तरह से कामदेव का पूजन अनुसरण है । एक समय या कि जब कामदेव ही, रागशाली गृहस्थ जनो के लिये कुल देवता के रूप से वैवाहिक व्यवहार में मान्य होता था । द्रौपदीने भी उस समय जो कुल देवता का पूजन किया—वह कामदेव का ही पूजन किया यही युक्ति मगन बैठती है । इस पूजन के प्रकरण में जो “ नमोऽस्त्यु ण अरिहताण ” यह पाठ आता है वह प्रवचन विन्द ही है क्योंकि लौकिक कुलदेवता की प्रतिमा के अर्चन-प्रकरण में लोकोत्तर अर्हत भगवान के प्रकरण का संबंध ही क्या है । उस समय जब कि वह पूर्व भव में किये गये निदान से युक्त थी—और कामभोग में अनुरक्त हृदयवाली थी उस के लिये कामदेवका अर्चन (पूजन) करनेका समय ही स्पष्टरूपसे ज्ञात होता है कामभोगों से विरत वीतराग मार्ग के उपदेशक वीतरागप्रभु अर्हत भगवान की पूजन वचना का नहीं । यही सिद्धान्त शास्त्रानुकूल है—अन्य नहीं । अरे कहीं

कामदेवना पूजननु अनुसरणु छे अेक वधत अेवे। हतो के न्यारे कामदेव, रागशाली गृहस्थ लोकोत्तरे भाटे दुग देवताना इपभा लक्ष-सबधी व्यवहारमा मान्य गणाते। हतो। द्रौपदीअे पणु ते समये अे दुण देवतानु पूजन कथुं ते कामदेवनु अे पूजन कथुं हतु अे अे वात अरोणर लागे छे आ पूजनना प्रकरणमा अे “ नमोऽस्त्यु ण अरिहताण ” आ पाठ आवे छे ते प्रवचन विन्द अे छे केअेके लौकिक दुणदेवतानी प्रतिमाना अर्चन-प्रकरणमा लोकोत्तर अर्हत भगवानना प्रकरणमा सबध अे शी रीते योग्य कही शक्य ते वधते के न्यारे ते पूव लवभा करेवा निदानथी युक्त हती अने कामभोगमा अनु रक्त हृदयवाणी हती अेवी न्यतिमा ते। तेना भाटे कामदेवनी अर्चना कर वाने वधत अे स्पष्ट इये लखात आवे छे कामभोगाथी विरत वीतराग मार्गना उपदेशक वीतराग प्रभु अर्हत भगवाननी पूजा वचना भाटे ते वधत योग्य कही शक्य नहि आ सिध्दांत अे शास्त्रानुकूल छे पीले नहि युध्धमा

नास्त्यत्र तदयम् । लक्ष्मीगौर्यादिदेव्या अपि सामीप्यपतिप्राप्तिरामनया पूजन
लोके प्रसिद्धमस्ति । लाङ्किरमन्त्रशास्त्रे मन्त्ररत्नमञ्जुपात्रा कामदेवागधनस्यामी
प्यपतिरामभेदेतुत्र निगदितम्—

“ कन्यामिष्टामवाप्नोति, सापीष्ट पतिमाप्नुयात् ॥ ” इति ।

अमुनाऽपि परिणयनममये कुलदेवपूजन लोके क्रियमाणं दृश्यते । कामदेवोऽपि

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं है क्योंकि मूर्ति पूजक जन अनङ्ग-
-सिद्धों की भी तो मूर्ति बनाकर उसकी पूजा क्रिया करते हैं । यद्यपि
सिद्धों की मूर्ति बनाने की आज्ञा शास्त्रों में नहीं मिली गई है—तौ भी
मूर्तिपूजक जन अपनी कल्पना से उनकी भी मूर्ति बनाकर पूजा
करते ही हैं—

उसी प्रकार लौकिकशास्त्र प्रसिद्ध अनङ्ग कामदेव की भी लोग अपनी
कल्पनासुर मूर्ति बनाकर पूजते हैं । इस में आपत्ति की कौनसी बात है ।

लक्ष्मी, गौरी आदि देवियों की भी पूजा लोक में अपने को अभि-
लषित पति प्राप्ति की कामना से स्त्रियों द्वारा की गयी है । लौकिक
मन्त्र शास्त्र में मन्त्ररत्नमञ्जुपात्र में कामदेव का आराधन—“ कन्यामिष्टा
मवाप्नोति सापीष्ट पतिमाप्नुयात् ’ हम श्लोकार्धद्वारा इच्छित पति प्राप्ति
का कारण कहा गया है ।

वर्तमान समय में भी देखो ! विवाह के समय में लोक में कुल
देवता का पूजन किया ही जाता है यह कुल देवता का पूजन ही एक

उत्तर—आ बात योग्य नहीं, केमके मूर्ति पूज करनारा लोक आनग
सिद्धोनी मूर्ति बनावीने तेनी पूज करता रहे छे जे के शास्त्रोभा सिद्धोनी
मूर्ति बनाववानी आज्ञा करवामा आवी नहीं छताय मूर्ति पूजक लोक पोतानी
कल्पनाथी तेमनी पण मूर्ति बनावीने पूज करे छे तेमज लौकिक शास्त्र
प्रसिद्ध अनग कामदेवनी पण लोक पोतानी कल्पना मुज्जम मूर्ति बनावीने
तेने पूजे छे, आमा वाधा जेवी कोर्ध वात नहीं

लक्ष्मी, गौरी वगैरे देवीयोनी पूज लोकभा पोतानी धर्मज मुज्जम पति
मेणववानी कामनाथी स्त्रीयो वडे करवामा आवे छे लौकिक मन्त्र शास्त्रभा
मन्त्र रत्न मञ्जुपात्रा कामदेवतु आराधन “ कन्यामिष्टामवाप्नोति सामीष्ट पति
माप्नुयात् ” आ अर्द्धश्लोऽ वडे इच्छित प्रतिप्राप्तिनु कारण बनाववामा आव्यु छे

वर्तमान समयभा पण आपण्णे नेछये तो लक्ष्मी समये लोकभा कुण
देवतानु पूजन करवामा आवे छे आ कुणदेवतानु पूजन, रीते

रागवता गृहस्थाना कुलदेवत्वेन व्याप्तिमात्रेण आसीत् । द्रौपद्याऽपि स्वकुलदेवः पूजित इति युक्तमुत्पश्यामः ।

अत्र—“ नमोऽस्त्यु णं अरिहताण ” इति पाठस्तु प्रवचनविन्द एव वर्तते, लौकिककुलदेवप्रतिमाऽर्चनप्रकरणे लोकोत्तरस्य भगवतोऽर्हत प्रमत्ताभावात् । पूर्वभवकृतनिदानवत्या रामभोगानुरक्त्या द्रौपद्या रामदेवार्चनसमये कामभोग-विरतस्य वीतरागमार्गोपदेशकस्य वीतरागस्य भगवतोऽर्हतो वदन् नैव शास्त्रानु-कूलम् । अत्र परिणयावसरे कुलदेवपूजनप्रसङ्गे भगवतोऽर्हत प्रसङ्गएव नास्ति,

तरह से कामदेव का पूजन अनुसरण है । एक समय या कि जब काम-देव ही, रागशाली गृहस्थ जनो के लिये कुल देवता के रूप से वैवाहिक व्यवहार में मान्य होता था । द्रौपदीने भी उस समय जो कुल देवता का पूजन किया—वह कामदेव का ही पूजन किया यही युक्ति मगन बैठती है । इस पूजन के प्रकरण में जो “ नमोऽस्त्यु णं अरिहताण ” यह पाठ आता है वह प्रवचन विन्द ही है क्योंकि लौकिक कुल देवता की प्रतिमा के अर्चन-प्रकरण में लोकोत्तर अर्हत भगवान के प्रकरण का संबंध ही क्या है । उस समय जब कि वह पूर्व भव में किये गये निदान से युक्त थी-और कामभोग में अनुरक्त हृदयवाली थी उस के लिये कामदेवका अर्चन(पूजन) करनेका समय ही स्पष्टरूपसे ज्ञात होता है कामभोगों से विरत वीतराग मार्ग के उपदेशक वीतरागप्रभु अर्हत भगवान की पूजन वदना का नहीं । यही सिद्धान्त शास्त्रानुकूल है—अन्य नहीं । अरे कहीं

कामदेवना पूजननु अनुसरणु छे ओऽ वपत ओवेऽ इतो के न्यारे कामदेवऽ, रागराणी गृहस्थ लोकेने माटे दुग देवताना रूपमा लभ-स भधी व्यवहारमा मान्य गणातो इतो । द्रौपदीओ पणु ते समये ओ कुण देवतानु पूजन कथुं ते कामदेवनु ओ पूजन कथुं इतु ओ ओ वात परेणर लागे छे आ पूजनना प्रकरणमा ओ “ नमोऽस्त्यु णं अरिहताण ” आ पाठ आवे छे ते प्रवचन विन्दु छे केमके लौकिक कुणदेवतानी प्रतिमाना अर्चन-प्रकरणमा लोकोत्तर अर्हत भगवानना प्रकरणमा स भध ओ शी रीते योग्य कही शक्य ते वपते के न्यारे ते पूर्व भवमा करेला निदानथी युक्त इती अने कामभोगमा अनु रक्त हृदयवाणी इती ओवी न्यतिमा तो तेना माटे कामदेवनी अर्चना कर वाने वपत ओ स्पष्ट रूपे ओणात आवे छे कामभोगाथी विरत वीतराग मार्गना उपदेशक वीतराग प्रभु अर्हत भगवाननी पूजा वदना माटे ते वपत योग्य कही शक्य नहि आ सिद्धांत ओ शास्त्रानुकूल छे ओओ नहि युक्तमा

द्रौपद्याः पूर्वभयकृतनिदानफलप्राप्त्यभावेन सम्यक्तरहितत्वात् । यस्य पूजनं तस्यैव वन्दनं तु न्यायोपपन्नं भवति, अत्र पूजनं तुल्यदेवतायाः, वन्दनं तु वीतरागस्यार्हत इति लोकन्यायविरुद्धम् । तस्मात् द्रौपद्या वीतरागस्यार्हतो वन्दनमपि तदानीं न कृतमिति सर्वप्रमाणसिद्धम् ।

अत्राभयदेवमूर्तिणा स्मृतवृत्तौ यदुक्तम् पथम्यां राचनायामेतावदेव दृश्यते “जिणपडिमाण अच्चण करेड” इति ।

वीररसके सिवाय युद्धमें जानेवाले वीरके लिये मन्हारराग भी आनन्ददायी हो सकता है ?। कभी नहीं परिणय-विचारके अत्रसर में कुलदेवता की ही पूजा करने का प्रसंग होता है-न कि भगवान अर्हत की। अतः इस प्रकार का प्रसंग मानना एक मनगढ़त रूपना मात्र ही है। क्यों कि इस समय द्रौपदी पूर्वभव में किये हुए निदान की फल प्राप्ति के अभाव से सम्यक्त्व रहित थी, फिर उसे उस समय कामदेव की ही इच्छित फल प्राप्ति के लिये पूजा की सूझेगी, या उसके अभाव को करने वाले जिन भगवान की पूजा की। यह स्वयं विचारने जैसी बात है जिस का पूजन किया जाता है उसी की वदना की जाती है-पूजन तो ही कुलदेवतारूप कामदेव का और वदना की जाय वीतराग प्रभु श्री अरिहत देव की। इस प्रकार की मान्यता तो लौकिकरीति से भी विरुद्ध पडती है। इसलिये सर्व प्रमागों से यह सिद्ध होता है कि द्रौपदी ने जिनप्रतिमा का पूजन नहीं किया।

जनार लडवैया भाटे वीर रस सिवायने भदहार राग पञ्च शु आनन्द पमा उनार थछ शके छे ? नही न लगना समये तो लगवान अर्द्ध तनी पूजा करता तो कुणदेवतानी पूजा करवाने प्रसंग न योग्य वेभाय छे ओटला भाटे आ नतना प्रसंगनी वात मानवी ओ मनभानी कल्पना मात्र छे केभके आ समये द्रौपदी पूर्वभवमा करेला निदाननी इण प्राप्तिना अलावने लीधे सम्यक्त्वथी रहित छती अने ऐधी स्थितिमा धरिछत इण प्राप्ति भाटे तेने कामदेवनी पूजा करवानी धरिछा थाय छे तेनाथी विरुद्ध इण आपनार उन लगवाननी पूजानी ? आ नते विचार करवा योग्य वात छे केनी पूजा करवामा आवे छे तेने न वदना करवामा आवे छे पूजा तो कुण देवताइप कामदेवनी थाय अने वदना वीतराग प्रभु श्री अरिहत देवनी करवामा आवे आ नतनी मान्यता तो लौकिके रीतिथी पञ्च विरुद्ध छे आ प्रमाणे अधी रीते विचारता आ सिद्ध थाय छे के द्रौपदीके उन प्रतिमात पूजन कर्तुं नथी.

वाचनान्तरे तु 'पहाया' इत्यादि, तथा-द्रौपद्याः प्रणिपातदण्डकमात्र चेत्यवन्दनमभिहित सूत्रे इति, तदप्यत्र पाठे सिद्धान्तविरुद्धपाठप्रक्षेपसभावनां प्रयोजयति । अत्र यद्वाच्य तत्प्रागेव निगदितम् ।

मूलम्—तएण तं दोवइरायवरकन्नं अतेउरियाओ सन्वा-
लंकारविभूक्षिय करेति कि ते ? वरपायपत्तणेउरा जाव चेडिया-
चक्कवालमयहरगविदपरिक्खित्ता अतेउराओ पडिणिक्खमइ-
पडिनिक्खमित्ता जेणेव वाहिरिया उवट्टाणसाला जेणेव चाउ-
ग्घटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता किड्ढावियाए
लेहियाए सद्धि चाउग्घटं आसरह दुरूहइ, तएण से धट्टज्जुणे
कुमारे दोवईए कण्णाए सारत्थं करेइ, तएण सा दोवई राय-
वरकण्णा कंपिल्लपुरं नयर मज्झ मज्झेण जेणेव सयवरमडवे तेणेव
उवागच्छइ उवागच्छित्ता रह ठवेइ रहाओ पच्चोरुहइ पच्चोरु-

अभयदेव सूत्रि ने स्वरचित वृत्ति में जो यह कहा है कि एक वाचना
में "जिनपडिमाण अचवग करेइ" दूसरी अन्य वाचना में "पहाया
इत्यादि-तथाद्रौपद्याः प्रणिपात दण्डकमात्र चेत्यवन्दनमभिहित सूत्रे इति"
सो यह उनका करन इस बात की सम्भावना को प्रकट करता है कि इस
पाठ में सिद्धान्त से विरुद्ध पाठ का प्रक्षेप हुआ है। इस विषय में जो
कुछ हमें समझाना करना या वह हमने पहिले ही कर दिया है।

॥ द्रौपदी पूजाचर्चा समाप्त ॥

अभयदेवसूत्रिणे स्वरचित वृत्तिमा जे अहे छे के अहे पाथनामा
"जिनपडिमाण अचवग करेइ" भी पाथनामा 'पहाया इत्यादि-तथा द्रौपद्या
प्रणिपातदण्डकमात्र चेत्यवन्दनमभिहित सूत्रे इति ।" तो तेमतु आ कथन आ
पातने प्रकट करे छे के आ पाठमा सिद्धान्तधी विरुद्ध अथा पाठने प्रक्षेप
थयो छे आ वरे जे कछ योग्य स्पष्टीकरण करवानु छेतु ते अहे पडैला
करी दीधु छे

द्रौपदी पूजा चर्चा समाप्त

हित्ता किड्ढावियाए लोहियाण य सद्धि सयंवरमंडपं अणुप-
 विसड अणुपविसित्ता करयल तेसि वामुदेवपामुग्घाण वट्टुणं
 रायवरसहस्साणं पणाम करेइ, तएण सा दोवई रायवर० एग
 मह सिरिदामगंड किं ते ? पाडलमहियचपय जाव सत्तच्छया-
 ईहि गंधद्धाणि मुयत परमसुहफास दरिसणिज्जं गिण्हइ, तएण
 सा किड्ढाविया जाव सुख्वा जाव वामहत्थेणं चिह्णं दप्पण
 गहेऊण सललिय दप्पणसकतविचसदासिण य से दाहिणेण
 हत्थेण दरिसए पवररायसीहे फुडविसयविसुद्धरिभियगभीर महु-
 रभणिया सा तेसि सव्वेसिं पत्थिवाण अम्मापिऊण वससत्तसा
 मत्थगोत्तविक्रतिकंति बहुविह आगममाहप्परूवजोव्वणगुण
 लावणणकुलसीलजाणिया कित्तण करेइ, पढम ताव वणिहपुगवाणं
 दसदसारवीरपुरिसाण तेलोक्कवलवगाण सत्तुसयसहस्समाणा-
 वमह्गाण भवसिद्धिपवरपुडरीयाण चिह्णगाण वलवीरियरूव-
 जोव्वणगुणलावन्नकित्तिया कित्तण करेइ, ततो पुणो उग्गसेण-
 माईणं जायवाण, भणइ य—सोहग्गरूवकल्लिए वरेहि वरपुरिस-
 गधहत्थीणं । जो हु ते होइ हिययदइओ, तएणं सा दोवई
 रायवरकन्नगा वट्टुण रायवरसहस्साणं मज्झ मज्झेण समतिच्छ-
 माणी२ पुव्वकयणियाणेण चोइज्जमाणी २ जेणेव पच पडवा
 तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता ते पचपडवे तेण दसद्ववण्णेण
 कुसुमदामेण आवेढियपरिवेढिय करेइ करित्ता एव वयासी-
 एण मए पच पडवा वरिया, तएणं तेसि

बहूणि रायसहस्राणि मह्यारसद्वेणं उग्घोसेमाणाः एव वयति
 सुवर्गिय खलु भो । दोवइए रायवरकन्नाएः त्तिःट्टु सयवरमड-
 वाओ पडिनिक्खमति पडिनिक्खमिच्चा जेणेव सयाः आवासा
 तेणेऽ उवागच्छइ उवागच्छित्ता, तएण धट्टज्जुण्णे कुमारे पच
 पडवे दोवइं रायवरकण्ण चाउग्घट आतरह दुरूहइ दुरूहित्ता
 कपिल्लपुर मज्झ मज्झेण जाव सय भवण अणुपविसइ, तएणं
 दुवए राया पच पडव देवइ रायवरकन्न पट्थ दुरूहेइ दुरूहित्ता
 सेया पीएहि कलसेहि मज्जावेइ मज्जावित्ता अग्गिहोम कारवेइ
 पचण्ह पडवाण दोवईए य पाणिग्गण करावेइ तएण
 से दुवए राया दोवईए रायवरकण्णयाए इम एयाख्वं
 पीईदाण दलयइ, त जहा — अट्टु हिरण्णकोडीओ जाव अट्टु
 पेसणकारीओ दासचेडीओ, अण्ण च विउल धणकण्णग जाव
 दलयइ तएण से दुवए राया ताइ वासुदेवपामोक्खाणं विउ-
 लेणं असण्णं वत्थगय जाय पडिविसज्जेइ ॥ सू० २१ ॥

टीका—‘ तएण त ’ इत्यादि । ततस्तदनन्तर खलु ता द्रौपदी राजवरकन्यां
 ‘ अतेउरियाओ ’ आन्तः पुरिक्य’= अन्तःपुरवर्तिन्य स्त्रियः सर्वाङ्कारविभू-
 पितां कुर्वन्ति, ‘ किं ते ’ तन्-तत्सौन्दर्यं किं वर्णयामि तद् वाचाऽभिलषितु न

तए ण त दोवइ रायवरकन्न इत्यादि ।
 टीकार्थ—(तए ण) इसके बाद (त दोवइ रायवरकन्न) उस राजवर कन्या
 द्रौपदी को (अतेउरियाओ मन्वाङ्कारविभूस्त्रिय करेति) अतः पुर
 की स्त्रियो ने समस्त अलकारो से विभूषित किया । (किंते) उस समय

तएण त दोवइ रायवरकन्न इत्यादि—
 टीकार्थ—(तए ण) त्यागपत्नी (त दोवइ रायवरकन्न) ते राजवर कन्या
 द्रौपदीने (अते उरियाओ-मन्वाङ्कारविभूस्त्रिय करेति) श्रुत्यामनी श्रीमोऽथे
 समस्त अलकारो से विभूषिते (किंते) ते समयना तेना मोर्धन्यं पथुं

शक्यत इत्यर्थः । 'ररपायपत्तणेउरा' ररपाटमाप्तनूपुरा=ररणम्यापित प्रशस्त
 नूपुरा यात्-चेडियाचक्रवालमयहरगविन्दपरिक्रित्ता चेडिकाचक्रवालमहतरक
 घुन्देन-अनेकदासीमहत्तरममूहेन परिसिन्ना-परिट्टता, अन्तःपुरात् मतिनिष्कामति
 -निः सरति, मतिनिष्कम्य यज्ञीय गणा(=गदिः प्रदेशस्था 'उवट्टाणसाला' उप
 स्थानशाला=आस्थानमण्डप -सभामण्डप इत्यर्थः, यत्रैव चार्तुगटोऽश्वरथस्तत्रोपाग
 च्छति, उपागत्य 'किट्टावियाए' क्रीडिकया-क्रीडनधात्र्या कीट्टया कीडिकया
 इत्याह 'लेडियाए' इति लेखिकया=राजकुलगणनामादिपरिचारिक्या सार्थ

के उसके सौन्दर्य का हम क्या वर्णन करें । वह वाणी द्वारा कहने के
 योग्य नहीं है अर्थात् वाणी से उसका वर्णन नहीं हो सकता है । (वर
 पायपत्तणेउरा जात्र चेडियाचक्रवालमयहरगविन्दपरिक्रित्ता अते
 उराओ पडिणिस्त्रमड) चरणों में स्थापित किये गये हैं-परिराये गये
 हैं-प्रशस्तनूपुर जिसको ऐसी वह द्रौपदी यावत अनेक समझदार
 दासियों के महोमहिम समूह से परिक्षिप्त होकर-अत.पुर से बाहिर
 निकली । (पडिनिस्त्रमिन्ना जेणेव बाहिरिया उवट्टाणसाला जेणेव
 चाउग्घटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता किट्टावियाए लेरि
 याए सद्धि चाउग्घट आसरह दुरुहइ) बाहिर निकलकर वह जहाँ
 बाहिर में सभामण्डप और उसमें भी जहा चारघटो वाला अश्वरथ था
 वहा आई। वहा आकर वह अपनी क्रीडनधात्री के कि जो लेखिका
 राजकुल, वश नाम आदि की परिचायिका थी साथ उस चारघटोवाले

आपणु डेवी रीते करी शकीये वाणी वडे तेनु वणुन अशक्य छे अएने
 डे वाणीभा अएट्ठी रक्षित नथी डे तेना सौ धर्यनु सथोए वणुन करी शके
 (ररपायपत्तणेउरा जात्र चेडियाचक्रवालमयहरगविन्दपरिक्रित्ता अतेउराओ
 पडिणिस्त्रमड)

पणेभा नेणु सुहर नूपुर पडिया छे अेवी ते द्रौपदी धणी अतुर दासी
 अेथी वीट्टणाधने रणुवासथा णडार नीकणी
 (पडिनिस्त्रमिन्ना जेणेव बाहिरिया उवट्टाणसाला जेणेव चाउग्घटे आसरहे तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छिता किट्टावियाए लेडियाए सद्धि चाउग्घट आसरह दुरुहइ)

णडार नीकणीने ते न्या णडारना सला-म उपमा आर घटपाणे। अश्व
 रथ छतो त्या आवी त्या आवीने ते पोताथी क्रीडन धात्री-डे ने लेखिका
 राजकुल, वश नाम वगेरेनी परिचारिका छती-तेनी साथे ते आर घटपाणा
 अश्वरथ उपर सवार थई गइ

चातुर्घण्टमश्वरथं ' दुरुहड ' दूरोहति=आरोहति । ततस्तदनन्तरं धृष्टद्युम्नः कुमारे द्रौपद्याः कन्यायाः ' सारथ्य ' सारथ्य-सारथिर्म करोति, ततः खलु सा द्रौपदी राजवरकन्या काम्पिल्यपुरस्य नगरस्य मध्यमध्येन यत्रैव स्वयम्बरमण्डपस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य रथं स्थापयति रथात् प्रत्यग्रोहति प्रत्यग्रह्य क्रीडिकया लेखिकया च सार्धं स्वयवरमण्डपम् अनुप्रविशति, अनुप्रविश्य करतलपरिगृहीत दशनख शिरावर्तं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा तेषां वासुदेवप्रमुखाणा वृहण राजवरसह-

अश्वरथ में सवार हो गई । (तएण से धट्टज्जुण्णे कुमारे दोवईए कन्नाए सारथ्य करेइ, तएण सा दोवइ रायवरकण्णा कपिल्लपुर नयर मज्झ-मज्झेण जेणेव सयवरमंडवे तेणेव उवागच्छइ) उस के सवार होते ही धृष्टद्युम्न कुमार ने उस द्रौपदी कन्या का सारथ्य किया-उसके रथ पर सारथि का काम किया-द्रौपदी के रथ को हाका । इस तरह धृष्टद्युम्न के द्वारा हाके गये रथ पर बैठी हुई वह राजवर कन्या द्रौपदी कांपिल्य पुर नगर के बीच से होकर जहा स्वयवर-मंडप या उस ओर चल दी । (उवागच्छित्ता रह ठवेइ रहाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता किट्ठाविद्याण लेहियाण सद्धिं सयवरमंडव अणुपविसइ, अणुपविसित्ता करयल तेसिं वासुदेवपामुक्खाण वृहण रायवरसहस्साण पणाम करेइ) वहां पहुंचकर उसने रथ को खड़ा करवा दिया-रथके खड़े होते ही वह उससे नीचे उतरी, नीचे उतर कर वह उस लेखिका क्रीडन धात्री के साथ स्वयवर मंडप में प्रविष्ट हुई । प्रविष्ट होकर के उसने अपने दोनों हाथों को जोड़ कर उन वासुदेव प्रमुख हजारों राजाओं को प्रमाण

(तएण से धट्टज्जुण्णे कुमारे दोवईए कन्नाए सारथ्य करेइ, तएण सा दोवइ रायवरकण्णा कपिल्लपुर नगर मज्झ मज्झेण जेणेव सयवरमंडवे तेणेव उवागच्छइ)

कन्यादे ते सवार थई गइ त्यादे कुमार धृष्टद्युम्ने ते द्रौपदी राजवर कन्याना रथ उपर जेसीने सारथीनु काम सलाज्यु आ प्रभाणे धृष्ट मन वडे छाकवाभा आवेत्ता ते रथ उपर सवार थइने ते राजवर कन्या द्रौपदी कपिल्लपुर नगरनी वन्थे थइने कन्या स्वयवर मंडप इतो त्या राना थई

(उवागच्छित्ता रह ठवेइ रहाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता किट्ठाविद्याण लेहियाण सद्धिं सयवरमंडव अणुपविसइ, अणुपविसित्ता करयल तेसिं वासुदेव पामुक्खाण वृहण रायवरसहस्साण पणाम करेइ)

त्या पछोत्थीने तेजे रथने थोलावडाओये, कन्यादे रथ थोथेये त्यादे ते रथ उपरथी नीचे उतरी, नीचे उतरीने ते लेखिका क्रीडन धात्रीनी साथे स्वयवर मंडपमा प्रविष्ट थई प्रविष्ट थइने तेजे वासुदेव प्रमुख हजारों राजाओने थोताना जने छाथ जेसीने नभस्कार कया

सकृत्प्रियसदसि ए य ' दर्पणमक्रान्तविम्बसदृशितान्=दर्पणे संक्रान्तानि यानि
 राणा विम्बानि-प्रतिविम्बानि, तैः सदृशिताः=प्रतिबोधितास्ताश्च प्रवरराजसिंहान
 सिंहसदृशरान् श्रेष्ठनृपान् दक्षिणेन हस्तेन ' से ' तस्या ' द्रौपद्या ' दरिसि ए '
 दर्शयति इह वर्मणः सम्बन्धमात्रविवक्षाया पठ्ठी । तथा- ' फुडप्रिसयविसुद्ध-
 रिभियगभीरमहुरभणिया ' स्फुटप्रिशदविधुद्धरिभितगम्भीरमधुरमणिता= अर्थत'

हृत्पेण दरिसि ए पवरराजसीहे फुडप्रिसयविसुद्धरिभियगभीरमहुर-
 भणिया सा तेसि सव्वेसि पत्थिवाणं अम्मापिऊण वससत्तसामत्थ-
 गोत्तविक्कतिकतिवहुविहआगममहाप्परुवजोव्वणगुणलावणण कुल
 जाणिया कित्तण करेइ) इसके बाद उस क्रीडन धाय ने अपने हाथ
 में एक चमकता हुआ दर्पण लिया । यहा दर्पण के इन और विशेषणों
 का यावत् शब्द से ग्रहण हुआ है वे विशेषण ये हैं ' सामावियघसं
 चोद्धजणस्स उस्सुयकर विचित्तमणिरयणवद्धउरुह " इनका अर्थ इस
 प्रकार है-यह दर्पण स्वभावतः चिकना था । तथा तरुणजनों के चित्त
 में अपने को देखने की अभिलाषा का जनक था । मुष्टि से पकड़ने का
 जो इसका स्थान था वह विचित्र मणि-रत्नों से निर्मित था । उस
 दर्पण में जिन २ सिंह जैसे शूरी राजाओं के उस समय प्रतिविम्ब
 पड़े हुए थे उन प्रतिविम्बों को लेकर उस धायने उन श्रेष्ठ राजाओं को
 उस द्रौपदी के लिये अपने दक्षिण हाथ से बतलाया । बतलाते समय
 उन्हें दिखाते नमय-वह मात्री बिलकुल अर्थ की अपेक्षा स्फुट एव वर्ण

रायसीहे फुडप्रिसयविसुद्धरिभियगभीरमहुरभणिया सा तेसि सव्वेसि पत्थि
 वाण अम्मापिऊण वससत्तसामत्थगोत्तविक्कतिकतिवहुविहआगममहाप्परुवजोव्वण
 गुणलावणण कुलजाणिया कित्तण करेइ)

त्यारपथी ते डीडनधात्रीये पोताना हाथमा येक यमकतो अरीसो लीधो
 अर्ही ' अरीसा ' भाटे य वत् शब्दथी नीये लप्या मुञ्जण विशेषणोतु पणु
 अडणु सभणु जेधये (मामावियघस चोद्धजणस्स उस्सुयकर विचित्त
 मणिरयणवद्धउरुह) आ विगेरणोतु स्पष्टीकरणु आ प्रभाणु छे-ते अरीसो
 स्वाभाविक रीते लीयो हुतो, तेमज तरणु अरीयोना चित्तमा तेने जेवानी
 सडण लावे धञ्छा जअत थाय तेरो हुतो ते अगीसानो हाथो विचित्र
 मण्डीरनोथी जडेलो हुतो ते अरीसामा सिड जेवा शूरीर जे जे रानयो
 देभाया ते धात्रीये ते रानयोने पोताना जभणु हाथथी सकेत कनीने
 अताव्या अतावती वणने अने सभजवती वणते ते धाय अर्थनी अपेक्षाथी

भाविनी सिद्धिर्येषा, ते भवसिद्धिकास्तेषा मध्ये परपुण्डरीकाणीत्र ये श्रेष्ठास्ते तथा तेषा, तथा 'चिह्न्याणं' तेजसा देदीप्यमानाना 'चिह्न्य' इति देशी शब्दः । तथा- 'बलवीर्यरूपजोव्यणगुणलावणकित्तिया' बलवीर्यरूपयौवन-गुणलावण्य कीर्तिका=बल-कायिक, वीर्यम्-उत्साहः, रूप-सौन्दर्यं, यौवन-तारुण्य, गुणान्-औदार्यगाम्भीर्यादीन्, लावण्य-यौवनप्रयोजन्य कान्तिविशेष, कीर्तयति या सा तथा, सा क्रीडिकाधारी कीर्तन करोति स्मेत्यर्थ । अत्र पूर्वोक्तमपि विशेषण किंचिद् विशेषप्रोधनार्थं पुनः कथितम् ।

ततस्तदनन्तर पुनः सा क्रीडनधारी 'उगसेणमार्ईण जायवाण' अगसेना दीना यादयाना बलवीर्यादि कीर्तन करोति कृत्वा भणति च=सा धात्री द्रौपदी

गुणलावण्य कित्तियाकित्तणं करेइ) सबसे पहिले उस क्रीडन धात्री ने वृष्णिवश के पुत्रव समुद्रविजय आदिदश दशार्हों के कि जो त्रैलोक्य में भी विशिष्ट बलशाली माने जाते थे, लावण्य शत्रुओं के मान को मर्दन करने वाले थे, भवसिद्धिक पुरुषों में जो श्रेष्ठ कमल के जैसे माने गये हैं, और जो अपने स्वाभाविक तेज से सदा दमकते रहते थे बल का, वीर्य का, रूप का, यौवन का, गुणों का, लावण्य का, कीर्तिका होने के कारण कीर्तन-वर्णन किया । शारीरिक शक्तिका नाम बल, उत्साह का नाम वीर्य, सौन्दर्य का नाम रूप तारुण्य का नाम यौवन है । औदार्य गाम्भीर्य आदि गुण हैं । यौवन वय से जय जो कान्ति शरीर में आती है वह लावण्य है (तओ पुणो उगसेणमार्ईण जायवाण भणइ य सोहगगखकलिए वरेहि वर पुरिसगधहत्थीण जो हु ते होइ हिययदइओ, तण्ण सा दोवई रायवरकन्नगा चहणं रायवरसहस्साण मज्ज

जोव्यणगुणलावण्यकित्तिया कित्तण करेइ)

ते क्रीडन धात्रीअे सौ पहिला वृष्णि वशमा पुत्रव (श्रेष्ठ) समुद्र विजय वगेरे दश दशार्होनु-डे जेओ प्रबु लोकोमा पबु विशिष्ट गन्तिराणी गणुता डता, लाणो शत्रुओना माननु मर्दन करनारा डता, लवसिद्धिक पुत्रयोमा जेओ उमण ॥ जेम श्रेष्ठ गणुता डता अने जेओ पोताना स्वाभाविक तेजथी डमेसा प्रडाशता रडेता डता, गण, वीर्य, इप, यौवन, गुणो, लावण्य, कीर्ति वगेरेथी सपत्त डता-वर्णन कयु गारीरिड शक्तिनु नाम गण, उत्साहनु नाम वीर्य, सौन्दर्यनु नाम इप अने तारुण्यनु नाम यौवन छे औदार्य, गाम्भीर्य गुणो छे युवावन्थाभा जे शरीर कतिवाणु थाय छे तेने लावण्य डडेवाभा आवे छे

(तओ पुणो उगसेणमार्ईण जायवाण भणइ य सोहगगखकलिए वरेहि वरपुरिसगधहत्थीण जो हु ते होइ हिययदइओ तण्ण तं दोवई रायवरकन्नगा

पुनराह— 'सोहगस्त्रकल्पि' इत्यादि, एतन्मन्त्रयमुखेनव्याख्या— 'वस्पुरि
सगधहत्थीण' वीरपुरुषगन्धहस्तिना=हस्तिपु गन्धहस्तिन इय ये विशिष्टगुणसद्भा
वात् पुरुषेषु सर्वतः श्रेष्ठास्ते वरपुरुषगन्धहस्तिनस्तेषा म ये 'सोहगस्त्रकल्पि'
सौभाग्यरूपकल्पितः—अतिशयेन सौभाग्यमौन्दर्यसमन्वित, यः खलु न तत्र ह्य्य
दयित =हृदयप्रियः 'होह' भवति, त 'वरेहि' वर्य=पतिमायेन स्वीकुरु इत्यर्थे ।

ततस्तदनन्तर खलु द्रौपदी राजवरकन्या वदूना राजवरसहस्राणा मध्यमध्यन
'समच्छमाणी २' समतिक्रामन्ती=गच्छन्ती 'पुत्रकन्यागियाणेण' पूर्वकृतनि
दानेन=सुकुमारिकाभये भर्तृपञ्चक्रामिन्नापस्व निदान कृत तेन, 'चोद्वज्जमाणी २'
प्रेर्यमाणा २ यत्रोत्र पञ्च पाण्डवास्तत्रैरोपागच्छति, उपागत्य तान् दशार्धवर्णेन-
पञ्चवर्णेन कुसुमदाम्ना 'आवेदियपरिवेदिय' आवेष्टितपरिवेष्टितान् करोति,
मञ्ज्जेण समतिच्छमाणी २ पुत्रकन्यागियाणेण चोद्वज्जमाणी २ जेणेव
पचपडवा तेणेव उवागच्छत्त) इसके बाद उस क्रीडन धाय ने यादव
बशवाले उग्रसेन आदि यादवों के बलवीर्य आदि का वर्णन किया-
उसने द्रौपदी से कहा ये जैसे हाथियों में गधहस्ती श्रेष्ठ होता है उसी
तरह ये पुरुषों में विशिष्ट गुणोंके सद्भाव के कारण सर्व प्रकार से श्रेष्ठ
हैं—उनके बीच में जो तुझे सौभाग्यरूप सकल्पित प्रतीत हो और तेरे
हृदय को प्यारा लगे—उसे तू पतिरूप से चरले । इसके बाद वह राजवर
कन्या द्रौपदी उन हजारों राजाओं के बीच से होनी हुई सुकुमारिका के
भव में कृत निदान के प्रभाव से बार २ प्रेरित होकर जरा पाच पाडव
थे—वहा पहुँची—(उवागच्छित्ता ते पच पाडवे तेण दसद्वरणेण कुसुम
दामेण आवेदियपरिवेदिय करेइ, करित्ता एव वयासी, एएण मए पच

वदूण रायवरसहस्राणा मञ्ज्ज मञ्ज्जेण समतिच्छमाणी २ पुत्रकन्यागियाणेण चोद्व-
ज्जमाणी २ जेणेव पच पडवा तेणेव उवागच्छत्त)

त्यारपथी क्रीडन धारीजे उग्रसेन वगेरेतु वधुंन उरुं अने कछु डे-
डाथीओभा जेम गध हस्ती उत्तम गधुय ते तेमए पुत्रोभा सविशेष
गुणवान जेवा जेओ अधी रीते सारा ते, आ अधामा तने जे सौभाग्य
शाणी लागता होय अने तने जेओ गमता होय तेओने तु पति इयमा
स्त्रीकारी वे त्यारपथी ते राजवर कन्या द्रौपदी ते डलरो राजओनी वञ्चेशी
पसार थधने पोताना सुकुमारिकाना लवमा करेला अबिलापथी प्रेशधने न्या
पाथ पाडवे डता त्या पडोची

(उवागच्छित्ता ते पच पाडवे तेण दसद्वरणेण कुसुमदामेण आवेदिय
परिवेदिय करेइ, करित्ता एव वयासी, एएण मए पचपडवा

कृता एवमवादीत्-एते खलु पञ्च पाण्डवा मया वृता इति । ततः खलु ' ताड
वासुदेवपामोऽम्बाऽ बहूणि रायसहस्राणि ' तानि वासुदेवप्रभुवाणि बहूनि राज-
सहस्रसूर्यका वासुदेवप्रभुवा राजान इत्यर्थः । महता २ शब्देनोद्धोपयन्त एव
वदन्ति-सुवृत्त खलु भोः ! द्रौपद्या राजवरकन्यया इति कृत्वा-इत्युक्त्वा स्वयवर-
मण्डपात् प्रतिनिष्क्रामन्ति, निर्गच्छन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव स्वभा स्वका आवा-
साम्तत्रैवोपागच्छन्ति । ततः खलु धृष्टद्युम्नः कुमारः पञ्च पाण्डवान् द्रौपदीं
राजवरकन्या चातुर्घटमथरथ ' दुरूहः ' दूरोदयति=आरोहयति दूरोत्त काम्पि-

पडवा वरियो, तएण तेसि वासुदेवपामोऽम्बाण बहूणि रायसहस्राणि,
महया २ महेण उग्घोसेमाणा २ एव वयति, सुवरिय खलु भो ! दोव
इए रायवरकन्याए त्ति कइहु सयवरमडवाओ पडिनिक्खमति, पडि
निक्खमिक्खा जेणेव सया २ आवासा तेणेव उवागच्छइ) वहा पडव
कर उसने उन पाचो पाडवों को उस पचवर्णवाली माला से अवेष्टित
परिवेष्टित कर दिया । करके फिर वह इस प्रकार कहने लगी-ये पांच
पाडव मंने पतिरूप से वर लिये हैं । इसके बाद उन वासुदेव प्रभु
हजारो राजाओं ने बडे २ जोर के शब्दो से ऐसा कहा इस राजवर
कन्या द्रौपदीने बहुत अच्छे वर वरे ऐसा कहकर वे उस स्वयंवर मंडप
से बाहिर हो गये । बाहिर आकर फिर वे जहा अपने २ आवास स्थान
थे वहा चले आये । (उवागच्छिउत्ता तएण धट्टज्जुण्णे कुमारे पच पडवे
दोवइ रायवरकण्ण चाउग्घट आसरह दुरूहइ, दुरूहिक्खा कपिल्लपुर

तेसि वासुदेवपामोऽम्बाण बहूणि रायसहस्राणि, महया २ महेण उग्घोसेमाणा २
एव वयति, सुवरिय खलु भो ! दोवइए रायवरकन्याए २ त्ति इहु सयवरमड
वाओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमिक्खा जेणेव सया २ आवासा तेणेव उवागच्छइ)

त्या पडोत्थिने तेणे ते पाच पाडवोने पाच वरुवाणी भाणाथी अवे
ष्टित, परिवेष्टित उरी वीधा त्थारपणी तेणेने कडेवा लागी के डे पाच
पाडवो । मे तमने पति रूपमा वरी वीधा छे त्थारणाड ते वासुदेव प्रभु
हजारो राजाणेअये अहु भोटा सादथी आ प्रभाणे कहु के आ राजवर कन्या
द्रौपदीअये अहु अ सारा वरे पसह कथा छे आभ कडीने तेणे अवे स्वयंवर
मंडपमाथी अडार नीउणी गथा अडार नीउणीने तेणे अया पोताना आवास
स्थानो इता त्या अता रेखा

(उवागच्छिउत्ता तएण धट्टज्जुण्णे कुमारे पचपडवे दोवइ रायवरकण्णं चाउ
ग्घट आसरह दुरूहइ, दुरूहिक्खा कपिल्लपुर मज्झ मज्झे ण जाव सय भवण अणु-

त्यपुरस्य मध्यमभ्येन यावत् स्वयं भयनमनुपविशति, ततः गच्छ द्रुपदो राजा
 पञ्च पाण्डवान् द्रौपदीं राजवरकन्यां 'पट्टय' पट्टक=पट्टकोपरि 'दुरूहेड' दूरो
 हयति=भारोहयति, दूरोप भवेत्परितः कश्यपः 'मज्जावेड' मज्जयति=स्नपयति
 अग्निहोम विवाहविधिनाऽग्नौ होमं कारयति, पञ्चानां पाण्डवानां द्रौपद्याश्च पाणि
 गृहण कारयति, अत्र पञ्चानां पाण्डवानामिति सम्बन्धसामान्ये पण्ड्यौ । ततः खलु
 स द्रुपदो राजा द्रौपद्यां राजवरकन्यायाः इममेतद्रूपं मीतिदानं योतुम्दानं ददाति,
 मज्जं मज्ज्ज्ञेण जात्र सयभयण अणुपविसह, तण्णं द्रुवणं राया पच पडवे
 दोवड रापवरकन्न पट्टय दुरूहेड, दुरूहित्ता सेयापीण्हि कलसेहिं
 मज्जावेड, मज्जात्रित्ता अग्निहोम कारवेड, पचण्ह पडवाण दोवडण य
 पाणिगहणं करावेड,) इत्युक्ते पाद धृष्टद्युम्नकुमार ने उन पाच पाडवो
 को ग्व राजवर कन्या द्रौपदी को चारघटो से युक्त उस अश्वरथ पर
 बैठाया-बैठाकर कापिलपुर नगर के बीच से होता हुआ वह जहा
 अपना भवन था वहाँ आया वहाँ आकर वह उसमें उन सत्र के साथ
 प्रविष्ट हुआ । इसके बाद द्रुपद राजा ने उन पाँचों पाँडवों को और
 राजवर कन्या उस द्रौपदी को एक पट्टक पर बैठा दिया-बैठाकर फिर
 उसने उनका श्वेत पीत कलशों से चादी सोने के घड़ों से-अभिषेक
 करवाया अभिषेक करवा कर फिर उसने अग्नि होम करवाया-और
 उसकी साक्षी पूर्वक पाचो-पाडवो के साथ अपनी कन्या द्रौपदी का
 पाणि ग्रहण स्स्कार करवा दिया । (तण्णं से द्रुवणं राया दोवडणं राय

पविसह, तण्णं द्रुवणं राया पच पडवे दोवड रापवरकन्न पट्टय दुरूहेड, दुरूहित्ता
 सेयापीण्हि कलसेहिं मज्जावेड मज्जात्रित्ता अग्निहोम कारवेड, पचण्ह पडवाण
 दोवडणं य पाणिगहणं करावेड)

त्यारपणी धृष्टद्युम्न कुमारे ते पाच पाडवोने अने राजवर कन्या द्रौप
 हीने आर ध टवाणा ते अश्वरथ उपर जेसाउया अने जेसाडीने उ पि थपुर
 नगरनी पन्थे थडने ग्या चोतानु लवन डनु त्या गया त्या जडने तेओ
 सवे तेमा प्रविष्ट थना त्यारपणी उपर राजवे ते पाचे पाडवोने अने राज
 वर कन्या ते द्रौपहीने ओक पट्टक उपर जेसाडी हीधा अने जेसाडीने तेओ
 तेमने सहेड, अने पीणा डणथोथी-ओटवे के याही अने सोनाना डणथोथी
 अभिषेक करावडाओये अभिषेक करावीने तेओ अग्निहोम करावडाओये अने तेनी
 साक्षीमा चोतानी कन्या उ इस्तमेणाप तेओनी साथे करावी हीधि ।

तद् यथा-अष्ट हिरण्यकोटीः, यावत्=अष्ट रजतकोटी, अष्ट सुवर्णकोटी, अष्ट 'पेसणकारीओ' प्रेषणकारिणीः, आज्ञाकारिणीः दासचेटीः-दासपुत्री, अत्र च विपुल धनस्त्ररु-यावत् धन-गणिमादिक, कनकम् अघटितस्वर्ण, यावच्छब्देन-रत्ननि-कर्कतनादीनि, मणयश्चन्द्रकान्ताद्या' मौक्तिकानि च शहस्रथ प्रतीत एव शिलाप्रवालानि च विद्रुमाणि रक्तरत्नानि-पद्मरागादीनि तान्येव सद् विद्यमान यत् सार=प्रधान स्थापतेयं द्रव्यं तद् ददाति स्म ।

ततः खलु स द्रुपदो राजा तान् वासुदेवप्रमुखान् बहुसहस्रमरयकान् रातः विपुलेन अशनपानम्वाद्यस्वाद्येन भोजयति, भोजयित्वा बन्धगन्धादिभिर्यावत् सत्कारयति समानयति, सत्कार्यं समान्यं प्रतिविसर्जयति ॥ सू० २२ ॥

वक्रणणयाए इम ग्यास्व पीईटाण दलयइ, त जहा-अट्टहिरण्य कोडीओ जाव अट्टपेसणकारिओ दासचेडीओ, अण्ण च विउल वणकणग जाव दलयइ, तण्ण से दुवए राया ताइ वासुदेव पामोक्खाणं विउल्लेण असण४ वत्थगध जात्र पडिविसज्जेइ) इसके बाद द्रुपद राजाने राजवर कन्या उस द्रौपदी के लिये इतना इस प्रकार प्रीति दान दिया आठ हिरण्य कोटि-चादी के बने हुए आठ करोड आभूषण, सुवर्ण के बने हुए आठ करोड आभूषण यावत् आज्ञा कारिणी ८ आठ दासियों और भी बहुत सा गणिमादिक रूप धन, अघटित सुवर्ण, कर्कतनादि रत्न, चन्द्रकान्त आदि मणि, मौक्तिक, शंख, विद्रुम, पद्मरागादि रक्त रत्न । यह सब सारभूत द्रव्य उसके लिये प्रदान किया । इसके बाद द्रुपदराजा ने उन वासुदेव प्रमुख हजारों राजाओं को अशन, पान, खाद्य एवं स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार एवं वस्त्र गंध आदि से सत्कृत सम्मानित कर अपने यहाँ से बिदा कर दिया ॥ सू० २२ ॥

दलयइ, त जहा अट्ट हिरण्यकोडीओ जाव अट्ट पेसणकारीओ दासचेडीओ, अण्ण च विउल धणकणग जाव दलयइ, तण्ण से दुवए राया ताइ वासुदेव पामोक्खाण विउल्लेण अमण ४ वत्थ गध जाव पडिविसज्जेइ)

त्यारपठी द्रुपद रान्तये राजवर कन्या द्रौपदीने आ प्रभाणे प्रीतिदान आभ्यु के आ० हिरण्य-कोटि-आदीना आ० करेड आभूषणो यावत् आज्ञा मा रडेनारी आ० दासीओ अने णीण्डु पणु धणु गण्णिम वगेरे ३५ धन, अघटित सुवर्ण, कर्कतन वगेरे रत्न, चन्द्रकान्त वगेरे मणि, मौक्तिक, शंख, विद्रुम, पद्मराग वगेरे रक्त रत्नो आभ्या आ णधु सारभूत धन द्रौपदीने आभ्यु त्यारपठी द्रुपद रान्तये ते वासुदेव प्रमुख उल्लेखे रान्तयोने अशन, पान, खाद्य अने स्वाद्य रूप आरे नतना आहारो अने वस्त्र, गंध वगेरेथी स हत सम्मानित करिने पाताना नगरथी विहाय कथां ॥ सूत्र २२ ॥

ल्यपुरस्य मन्मथभ्येन यावत् स्वयं भयनमनुपविशति, ततः खलु द्रुपदो राजा
 पञ्च पाण्डवान् द्रौपदीं राजवरकन्या 'पट्टय' पट्टक=पट्टकोपरि 'दुरूहेइ' दूरो
 इयति=मारोहयति, दूरोय 'वेतर्पातैः कश्यपैः' 'मज्जावेइ' मज्जयति=मनपयति
 अग्निहोम विवाहविधिनाऽग्नी होम कारयति, पञ्चाना पाण्डवाना द्रौपद्याश्च पाणि
 ग्रहण कारयति, अत्र पञ्चाना पाण्डवानामिति सम्बन्धसामान्ये पण्टी । ततः खलु
 स द्रुपदो राजा द्रौपद्या राजवरकन्यायाः इममेतद्रूप प्रीतिदान यौतुम्दान दत्वाति,
 मज्ज मज्जेण जात्र सयभवण अणुपरिमइ, तण्णं दुवण राया पच पडवे
 दोवइ रायवरकन्न पट्टय दुरूहेइ, दुरूहित्ता सेयापीएहिं कलसेहिं
 मज्जावेइ, मज्जावित्ता अग्निहोम कारवेइ, पचण्ह पडवाण दोवइए य
 पाणिगगहणं करावेइ,) इसके पाद घृष्टधुम्नकुमार ने उन पाच पाडवो
 को ग्व राजवर कन्या द्रौपदी को चारघटो से युक्त उस अन्वरथ पर
 बैठाया-बैठाकर वापित्तपुर नगर के बीच से होता हुआ वह जहा
 अपना भवन में वहाँ आया वहाँ आकर वह उसमें उन सत्र के साथ
 प्रविष्ट हुआ । इसके बाद द्रुपद राजा ने उन पाचो पाडवों को और
 राजवर कन्या उस द्रौपदी को एक पट्टक पर बैठा दिया-बैठाकर फिर
 उसने उनका श्वेत पीत कलशों से चादी सोने के घड़ो से-अभिषेक
 करवाया अभिषेक करवा कर फिर उसने अग्नि होम करवाया-और
 उसकी साक्षी पूर्वक पाचो-पाटवो के साथ अपनी कन्या द्रौपदी का
 पाणि ग्रहण सस्कार करवा दिया । (तण्ण से दुवए राया दोवइए राय

पविसइ, तण्ण दुवए राया पच पडवे दोवइ रायवरकन्न पट्टय दुरूहेइ, दुरूहित्ता
 सेयापीएहिं कलसेहिं मज्जावेइ मज्जावित्ता अग्निहोम कारवेइ, पचण्ह पडवाण
 दोवइए य पाणिगगहण करावेइ)

त्यारपछी धृष्टधुम्न कुमारे ते पाच पाडवोने अने राजवर कन्या द्रौप
 दीने आर घटवाणा ते अन्वरथ उपर जेसाउया अने जेसाडीने उपि यपुर
 नगरनी पन्थे थधने ज्या पोतानु लवन छुत्ता गया त्या जडने तेओ
 सवे तेमा प्रविष्ट थया त्यारपछी दुपह राजवे ते पाच पाडवोने अने राज
 वर कन्या ते द्रौपदीने ओके पट्टक उपर जेसाडी दीधा अने जेसाडीने तेबे
 तेमने सहेइ, अने पीणा कणशोथी-ओटले के आदी अने सोनाना कणशोथी
 अलिषेक करावडाओये अलिषेक करावीने तेबे अग्निहोम करावराओये अने तेनी
 साक्षीमा पोतानी कन्या द्रौपदीने हस्तभेजाप तेओनी साथे करावी दीधो

(तण्ण से दुवए राया दोवइए रायवरकणथाए इम

सयाइं२ आवासाइ तेणेव उवा० तहेव जाव विहरंति, तएणं
से पंडुराया हत्थिणाउरणयरं अणुपविसइ अणुपविसित्ता
कोडुविय० सदावेइ सदावित्ता एव वयासी-तुब्भेण देवाणु-
प्पिया । विउल असण४ तहेव जाव उवणेति, तएण ने
वासुदेवपामोवखा वहवे राया पहाया कयवलिकम्मा तं
विउल असणं४ तहेव जाव विहरति, तएणं से पंडुराया
पच पडवे दोवडं च देवि पट्टयं दुरुहेइ दुरुहित्ता सेयपी-
एहिं कलसेहि पहावेति पहावित्ताकल्लाणकारि करेइ करित्ता
ते वासुदेवपामोवखे वहवे रायसहस्से विउलेण असण४
पुप्फवत्थेण राद्धारेइ सम्माणेइ जाव पडिविसज्जेइ, तएण ताइ
वासुदेवपामोवखाइ बहूहि जाव पडिगयाइ ॥ सू० २३ ॥

टीका- ' तएण से ' इत्यादि । ततस्तदनन्तर खलु पाण्डु राजा तेषां वासुदेव
प्रमुखानां बहूनां राजमहस्रानां करत्तलपरिगृहीत दशनख शिर आवर्तं मस्तकेऽञ्जलिं
कृत्वा एवमवादीत्-एव खलु हे देवानुप्पिया ! इस्तिनापुरे नगरे पञ्चानां पाण्ड-
वानां द्रौपद्याश्च देव्याः कल्याणकरो भविष्यति तत्-तस्मात् यूय खलु हे देवानु-
प्पियाः-मामनुगृह्यत, अकालपरिहीन=कालविलम्बरहित-शीघ्र समयसरत=आग-

' तएण से पंडुराया इत्यादि ।

टीकार्थ-(तएण) इसके बाद (से पंडुराया) उस पांडुराजा ने (तेतिं
वासुदेव पामोवखा ण) उन वासुदेव प्रमुख (घट्टण राय० करयल
एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पियां) । हात्थिणाउरे नगरे पचण्ह पडवाण
दोवडए देवीए कल्लाणकरे भविस्सइ त तुब्भे ण देवाणुप्पिया ! मम

तएण से पंडुराया इत्यादि—

टीकार्थ-(तएण) त्यापली (से पंडुराया) ते पांडु राजां (ते तिं
वासुदेवपामोवखाण) ते वासुदेव प्रमुख

(बहूण राय० करयल एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! हात्थिणाउरे
नगरे पचण्ह पडवाण दोवडए, देवीए कल्लाणकरे भविस्सइ त तुब्भेण देवाणु-
प्पिया ! मम अनुगृह्यमाणा अकालपरिहीणां समयसरत)

मूलम्—तएण से पड्डुराया तेसिं वासुदेवपामोक्खाण वहुणं
 राय० करयल एव वयासी- एवं खल्ल देवाणुप्पिया । हत्थि-
 णाउरे नयरे पंचण्ह पंडवाणं दोवइए य देवीए कल्लणकरे
 भविस्सइ तं तुब्भे णं देवाणुप्पिया । मम अणुगिण्हमाणा
 अकालपरिहीण समोसरह, तएण वासुदेवपामोक्खा पत्तेयर
 जाव पहारेत्थ गमणाए । तएणं से पंडुराया कोडुवियपुरिसे
 सदा० २ एव वयासी-गच्छहणं तुब्भे देवाणुप्पिया । हत्थि-
 णाउरे पचण्ह पडवाणं पच पासायवडिसए कारेह अब्भु-
 ग्गयमूसिय वण्णओजावपडिरुवे, तएण ते कोडुवियपुरिसा
 पडिसुणेति जाव करावेति, तएण से पंडुए पचहि पडवेहिं
 दोवईए देवीए सद्धिं ह्यगयत्तपरिवुडे कपित्तपुराओ पडि-
 निक्खमइ२ जेणेव हत्थिणाउरे तेणेव उवागए, तएणं से
 पडुराया तेसि वासुदेवपामोक्खाणं आगमण जाणित्ता
 कोडुंवि० सदावेड सदावित्ता एव वयासी-गच्छह ण तुब्भे
 देवाणुप्पिया । हत्थिणाउरस्स नयरस्स वहिया वासुदेवपा-
 मुक्खाणं वहुण रायसहस्साण आवासे कारेह अणेगखभसय
 तहेव जाव पच्चप्पिणत्ति, तएणं ते वासुदेवपामोक्खा वहवे
 रायसहस्सा जेणेव हत्थिणाउरे तेणेव उवागच्छइ, तएणं
 से पडुराया तेसि वासुदेवपामोक्खाण आगमण जाणित्ता
 हट्टतुट्टे णहाए कयवलि० जहा दुवए जाव जहारिह आवासे
 दलयइ, तएण ते वासुदेव पा० वहवे . . . जेणेव

मेघकुमार-प्रासादवद् वर्णनं विज्ञेयम् यावद् अनेकस्तम्भशतसन्निविष्टान् प्रति
रूपान्=शोभासौन्दर्यसम्पन्नान् । ततः खलु ते कौटुम्बिकपुरुषाः-‘ तथाऽस्तु ’
इत्युक्त्वा प्रतिशृण्वन्ति=आज्ञां स्वीकुर्वन्ति, प्रतिश्रुत्य हस्तिनापुरं गत्वा पञ्च
प्रासादावतसकान् यावत् कारयन्ति । ततस्तदनन्तरं पाण्डुराजा पञ्चभिः पाण्डवै
द्रौपद्या देव्या च सार्धं हयगजरथपदातिसपरिवृतः काम्पिल्यपुरात् प्रतिनिष्क्रामति-
प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव हस्तिनापुरं नगरं तत्रैवोपागतः ।

ततः खलु स पाण्डुराजा तेषां वासुदेवमुखानामागमनं ज्ञात्वा कौटुम्बिक-
पुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमनादीत्-गच्छत खलु यूय हे देवानुमियाः !

यहूत ऊंचे हो । इन प्रासादों का वर्णन प्रथम अभ्ययन में उक्त मेघ
कुमार के प्रासादों जैसा जानना चाहिये । यावत् ये प्रासाद अनेक स्त-
म्भशत से युक्त हो-शोभा सौन्दर्य से संपन्न हों । (तएण ते कोट्टुम्बिय
पुरिसा पडिसुणेति, जा करावेति) राजा की इस प्रकार की आज्ञा को
उन कौटुम्बिक पुरुषों ने मान लिया और हस्तिनापुर जाकर उन्होंने
पाच प्रासाद कथित रूपसे बनवा दिये । (तएण से पडुण पचहिं पडवेहि
दोवइए देवीए सद्धि ह्य गय सपरिवुडे कपिलपुराओ पडिनिक्खमइ २
जेणेव हत्थिणाउरे तेणेव उवागए) इसके बाद वे पांडुराजा पांडवों
और द्रौपदी देवी को साथ लेकर हय, गज, आदि चतुरगिणी सेना के
साथ २ काम्पिल्यपुर नगर से चल दिये-चलकर जहां हस्तिनापुर नगर
था-वहां आये (तएण से पडुराया तेसिं वासुदेवपामोक्खाण आगमणं

पाये पाडेवा भाटे पाथ उत्तम भडेव जनावडावे। भडेव जिया डोवा जेधये
आ भडेडोतु वरुण पडेला अव्ययनभा वरुणवामा आवेला मेघ कुमारेना
भडेडो जेवु जण्णी लेवु जेधये यावत् आ जधा भडेडो धरुा से उडे थालला
ओधी युक्त तेमज शोभा तथा सौंदर्य संपन्न डोवा जेधये (तएण ते
कोट्टुम्बियपुरिसा पडिसुणेति जाव करावेति) आ जतनी राजनी आज्ञाने
कौटुम्बिक पुरुषो जे भवीकारी लीधी अने हस्तिनापुर जग्ने तेओ जे डडेवा
मुज्ज ज पाथ भडेडो तैयार करावी दीधा

(तएण से पडुर पचहिं पडवेहिं दोवइए देवीए सद्धि हयगयसपरिवुडे
कपिलपुराओ पडिनिक्खमइ २ जेणेव हत्थिणाउरे तेणेव उवागए)

त्यारपधी ते पाडु राज पाये पाडेवा अने द्रौपदी देवीने लधने साथे
घोडा, हाथी वगेरेनी चतुरगिणी सेनानी साथे काम्पिल्यपुर नगरनी जहार
नीकज्या अने नीकगीने ज्या हस्तिनापुर नगर डतुं त्या पडेवा

(तएण से पडुराया तेसिं वासुदेवपामोक्खाण आगमणं जाणित्ता कोट्टुम्बिय०

मन कुम्भत । ततः खलु वासुदेवप्रमुखः प्रत्येक २ यावत् प्राधारयद् गमनाय= हस्तिनापुर नगर गतु मृत्ता इत्यर्थः ।

ततः खलु स पाण्डनामको राजा कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-गच्छत खलु गृय हे देवानुप्रियोः ! हस्तिनापुरे पञ्चानां पाण्डवानां पञ्च 'पासायवर्डिसए' प्रासादावतंसकान् कारयत । किं भूतानिन्याह-'अम्बु-गगयमूसिय' अम्बुद्गतोच्छ्रितान्-अत्युच्चानित्यर्थ' । वर्णक-प्रयमाध्ययनोक्त-

अणुगिण्ट्माणा अकालपरिहीण समोसरह) हजारों राजाओं से अपने दोनों हाथों की अजलि करके और उसे शिर पर रखकर के बड़ी नम्रता के साथ नमस्कार करके-इस प्रकार कहा हे देवानुप्रियो ! हस्तिनापुर नगर में पांच पाडवों और द्रौपदी देवी का कल्याणकारी उत्सव होगा इसलिये हे देवानुप्रियो ! आप सब मेरे ऊपर अनुग्रह करके शीघ्र से शीघ्र पधारें । (तण्ण वासुदेवपामोक्त्वा पत्तेय २ जाव पहारेत्थ गमणाए) इस के बाद वे वासुदेव प्रमुख प्रत्येक जन चर्हा हस्तिनापुर जाने के लिये प्रस्थित हो गये । (तण्ण से पडुराया कोडुम्बियपुरिस सदावेह २ एव वयासी-गच्छह ण तुब्भे देवाणुप्पिया हत्थिणाउरे पचण्ह पडवाण पच पासायवर्डिसए कारेह, अम्बुगगयमूसिय वण्णओ जाव पडिरुवे) इतने में पाडुराजा ने कौटुम्बिकपुरुषों को बुलाया ओर बुलाकर उनसे ऐसा कहा-हे देवानुप्रियो ! तुम लोग हस्तिनापुर जाओ वहा जाकर पाचों पाडवों के लिये पांच श्रेष्ठ प्रासाद बनवाओ । ये प्रासाद

इसके राजाओं ने चोताना भने डाथोनी अजलि जनापीने अने तेने भस्तके भूषीने भूषण नम्रपणु नमस्कार र्था अने आ प्रभाणु विनती करी के हे देवानुप्रियो ! हस्तिनापुर नगरमा पाचे पाडवो तेमज द्रौपदी देवीने कल्याणकारी उत्सव थये अथी हे देवानुप्रियो ! तमे सौ भारा उपर कृपा करीने सत्वरे त्या पधारो । (तण्ण वासुदेवपामोक्त्वा पत्तेय २ जाव पहारेत्थ गमणाए) त्थारपथी ते वासुदेव प्रमुख इरेक राजा त्याथी हस्तिनापुर जया उपडी गया

तण्ण से पडुराया कोडुम्बियपुरिस सदावेह २ एव वयासी-गच्छह ण तुब्भे देवाणुप्पिया हत्थिणाउरे पचण्ह पडवाण पच पासायवर्डिसए कारेह, अम्बुगगयमूसिय वण्णओ जाव पडिरुवे)

ते वधते पाडु राजाके कौटुम्बिक पुरुषोने जालाव्या अने जालाजने तेओने कहु के हे देवानुप्रियो ! तमे हस्तिनापुर जया

उपागत्य तथैव यात्रद् विहरन्ति । ततः खलु स पाण्डु राजा हस्तिनापुर नगर-
मनुपविशति, अनुपविश्य कौटुम्बिकपुरूपान् शङ्कयति, शङ्कयित्वा एतमवादीत्-
यूय खलु हे देवानुप्रियाः ! त्रिपुल्लम् अग्नपानपानखाद्यस्वाद्य, उपस्कारयत,
उपस्कार्य यत्रैव वासुदेवप्रमुखास्तत्रोपनयत । तथैव यात्रद् उपनयन्ति, ततस्ते
कौटुम्बिकपुरुपास्तथैव त्रिपुल्लमग्नादि चतुर्विधाऽऽहारमुपस्कारयन्ति उपस्कार्य
यात्रद् वासुदेवादीनामन्तिके-उपनयन्ति=उपस्थापयन्ति ।

नगरं था चहा आगये । (तएणं से पडुराराया तेसि वासुदेवपामोस्वा
ण आगमण जाणित्ता हट्टुट्टे ण्हाण कयउलिकम्मे जहा दुवण जाव जहा
रिह आवासे दलयति, तएण ते वासुदेव पा० उहवे रायमहस्सा जेणेव
सयाइ २ आयासाइ तेणेव उवाग० तहेव जाव विहरति) वासुदेव
प्रमुख उन हजारों राजाओं का आगमन जानकर पाडुराजाने हर्षित एवं
संतुष्ट होकर स्नान क्रिया वायसादि पक्षियों के लिये अन्नादि का देने
रूप उलिकर्म क्रिया- जिस प्रकार इपद् राजाने यथा योग्य आवास-
स्थान इन्हीं के लिये दिये थे उसी तरह पाडुराजा ने भी उन्हें जो जिस
के योग्य स्थान था वह आवासस्थान दियो । पश्चात् वे वासुदेव प्रमुख
हजारों राजा जहा अपने २ ठहरने के लिये आवासस्थान थे वहा गये
वहा जाकर वे उसी तरह से ठहर गये । (तएण से पडुराराया हत्थिणा
उर नयर अणुपविसइ, अणुपविसित्ता, कोडु विय० सदावेइ, सदावित्ता
एव वयासी-तुम्भेण देवाणुप्पिया ! विउल असण ४ तहेव जाव उव

(तएण से पडुराराया तेसि वासुदेवपामोस्वाण आगमण जाणित्ता हट्टुट्टे
ण्हाण कयउलिकम्मे जहा दुवण जाव उहारिह आवासे दलयति, तएण ते वासुदेव
पा० उहवे रायसहस्सा जेणेव सयाइ २ आयासाइ तेणेव उवाग० तहेव
जाव विहरति)

वासुदेव प्रमुख ते हुन्तरे राज्ञोऽनु आगमनं आलक्ष्मीने हर्षिते तेभ्य
संतुष्टं वर्धने पादु राज्ञो स्नानं कथं कागडा वगेरे पक्षीणोना भाटे अन्न
वगेरेना भाग अधीने षलिकर्मं कथुं इपद् गन्तये जेम ते राज्ञोऽने यथा
योग्य आवासं स्थाने रडिवा भाटे आभ्या हुता तेभ्य पादु राज्ञो पणु
तेभ्यो षधाने उचित आवासे आभ्या त्थारपणी तेभ्यो वासुदेव प्रमुख हुन्तरे
राज्ञो न्या पोतपोताना रेकावाना आवानो हुता त्या गया, त्या पडोऽग्निने
तेभ्यो त्या रेकाधं गया

(तएण से पाडुराराया हत्थिणाउर' नयर अणुपविसइ, अणुपविसित्ता,
कोडुविय० सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-तुम्भेण देवाणुप्पिया ! विउल असण

इस्तिनापुरस्य नगरस्य बहिः प्रदेशे वासुदेवप्रभुणाणां वृष्टना राजमास्रणाप्राणा
 सान् कारयत्, कीदृशानासासान् इ याह—' अणेगवभ ' इत्यादि । अनेकस्तम्भ
 शतमनिरिष्टान् , तथैव—यथाऽऽसासान् कारयितु पाण्डना कथित, तथैव कारयित्वा
 कौटुम्बिकपुराया यावत् प्रत्यर्पयन्ति=राज्ञे निवेदयन्ति स्म । नन' यत्तु वासुदेव
 प्रभुवा गृह सहस्रमण्यका राजानो यत्रैव स्वकाः स्वका आयमास्तत्रैवोपागच्छन्ति,
 जाणित्वा कौटुम्बिक० महावेह सदावित्ता एव घयासी-गच्छत् ए तुभे
 देवाणुप्पिया ! इत्थिणाउरस्त नगरस्त घटिया वासुदेवपामोकखाण
 वृष्टण रायसहस्माण आवासे करेह) यत्रां आकर उन पांडुगजा ने उन
 वासुदेव प्रभुव हजारों राजाओं का आगमन जानकर कौटुम्बिक पुरुषों
 को बुलाया और बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा—हे देवानुप्पियो ! तुम
 लोग जाओ और इस्तिनापुर नगर के वाहिर वासुदेव प्रभुव हजारों
 राजाओं को डरने के लिये आयासों को बनवाओ (अणेगवभसय
 तद्देव जाव पच्चप्पिणत्ति, तएण ते वासुदेवपामोरुत्ता गृहवे रायसहस्सा
 जेणेव इत्थिणाउरे तेणेव उवागच्छत्ति) ये आवास अनेक सेकडोंस्तभों
 से युक्त हो । इस प्रकार जैसे आचामों को बनवाने के लिये पांडु राजा
 ने उन कौटुम्बिक पुरुषों से कहा था—वैसे ही आयास उन कौटुम्बिक
 पुरुषों ने बनवादिये और बनवाकर पीछे उसकी नगर भी राजा को
 करदी । इसके बाद वे वासुदेव प्रभुव हजारों राजा जहा इस्तिनापुर

सदावेह, सदावित्ता एव वयासी-गच्छत् ए तुभे देवाणुप्पिया ! इत्थिगाउरस्त
 नगरस्त गटिया वासुदेवपामोकखाण वृष्टण रायसहस्माण आवासे करेह)

त्या आवीने ते पाडु रान्तये ते वासुदेव प्रभुण उल्लेखे रान्तयेने
 आवी गयेला जल्लिने पोताना कौटुम्बिक पुरुषोने जोलाव्या अने जोलावीने
 तेभने आ प्रभाञ्जे उल्लु के डे देवानुप्पियो । तमे जोला जल्ले अने इस्तिनापुर
 नगरनी अडार वासुदेव प्रभुण उल्लेखे रान्तयेने उडवा भाटे आवासे भनावे ।

(अणेगवभसय० तद्देव जाव पच्चप्पिणत्ति, तएण ते वासुदेवपामोकखा
 वृहवे रायसहस्सा जेणेव इत्थिणाउरे तेणेव उवागच्छत्ति)

आ अधा आवासे सेकडे स्तलोथी युक्त होवा जेष्ठये आ रीते पाडु
 रान्तये जे जतना आवासे भनावडाववाने हुकम कथो हुतो ते कौटुम्बिक
 पुरुषोये ते जे जतना आवासे भनावडावी हीथा अने भनावडावीने काम पुर
 थड भवानी रान्तने भयर आपी त्यारपडी ते वासुदेव प्रभुण उल्लेखे रान्तये
 त्या इस्तिनापुर नगर हुतु त्या आवी गया

स्नपयित्वा ' कल्याणकारि ' कल्याणकारि-शुभकारकं कर्म कारयति, कारयित्वा तान् वासुदेवप्रमुखान् बहुसहस्रसंख्यकान् राज्ञो विपुलेन अशनपानखाद्यस्वाद्येन भोजयति, भोजयित्वा पुष्पवस्त्रादिभिः सत्कारयति, समानयति, सत्कार्यं समान्य यावत् प्रतिविसर्जयति । ततः खलु ते वासुदेवप्रमुखा बहुसहस्रसंख्यका राजानो यावत् प्रतिगताः ॥ सू० २३ ॥

मूलम्—तएण ते पच पडवा दोवईए देवीए सद्धि कल्ला-
कल्लि वारवारेण ओरालाइ भोगभोगाइं जाव विहरति, तएण
से पडू राया अन्नया कयाइं पचहि पडवेहि कोंतीए देवीए

को और द्रौपदी देवी को एक पट्टक पर बैठाया-बैठाकर उन का श्वेत पीत कलशों से चादी और सोने के घड़ों से स्नान करवाया स्नान कर-
वाकर फिर उसने उनका शुभकारक कर्म करवाया । (करित्ता ते वासु-
देव पामोक्खे वहवे रायसहस्से विउलेण असण ४ पुष्पवत्थेण सक्कारेइ
सम्मणेइ जाव पडिविमज्जेइ, तएण ताइ वासुदेवपामोक्खाइ चहूहिं
जाव पडिगयाइ) शुभकारक कर्म करवाकर बाद में उन वासुदेव प्रमुख
हजारों राजाओं का उस पाटुगज ने विपुल अशन पान आदिरूप
चतुर्विध आहार से एवं पुष्प वस्त्रादि से खूब सत्कार किया सम्मान
किया । यावत् फिर उन्हें अपने यहाँसे अच्छी तरह से निदा कर दिया ।
इसके बाद वे वासुदेव प्रमुख हजारों राजा जहा २ से जो २ आये थे
वहा २ चले गये ॥ सू० २३ ॥

पाये पाउवे अने द्रौपदी देवीने अक पट्टक ७५० जेसाउया अने जेसाडीने
सद्धि तेमन् पीणा उणशेथी अटले के थादी अने सोनाना कणशेथी तेमने
स्नान उगव्यु स्नान कराव्या भाइ तेमणे तेमनी पासेथी शुल कर्मा करावडाव्या

(करित्ता ते वासुदेवपामोक्खे वहवे रायसहस्से विउलेण असण पुष्पवत्थेण
सक्कारेइ, सम्माणेइ जाव पडिविसज्जेइ तएण ताइ वासुदेवपामोक्खाइ चहूहिं
जाव पडिगयाइ)

शुल कर्मा कराव्या भाइ ते वासुदेव प्रमुष डल्लरो रान्त्थोने ते पाउ
रान्त्थे विपुल अशन-पान वगेरे ३५ चतुर्विध आहाव्या तेमन् पुष्प वस्त्र
वगेरेथीभूषण सत्कार कथो अने सम्मान कथुं यावत् त्थारपथी तेन्थोने त्थाथी
सारी रीते विदाय कथो वासुदेव प्रमुष डल्लरो रान्त्थो पणु न्थाथा आव्या
इता त्थान्ता रद्धा ॥ सूत्र २३ ॥

तत खलु ते वासुदेवप्रमुखा मह्यो राजानः स्नाताः कृतवल्किर्माजः =
काकादिजीवैभ्यः ऋताम्नादिसत्रिभागाः, तद् विपुलम् अशन पानं ग्राह्यं स्वाद्यं
तथैव-आस्राद्यन्तो विश्वाद्यन्त परिभुञ्जाना ग्राह्यं विहरन्ति=आसतेस्व ।
ततस्तदनन्तरं म पाण्डुराजा तान् पञ्च पाण्डवान् द्रौपदी च देवी 'पट्टय' पट्टक=
पट्टकोपरि 'दुरुहेड' दुरोहपत्ति=भारोहयति । आरोग्यं गतपीतैः कलशैः स्नपयति,

गैति, तण्ण ते वासुदेवपामोक्त्वा महवे राया ण्हाया कयवलिकम्मा त
विउल असण ४ तहेव जाव विहरति-तण्ण से पडुराया पचपडवे दोवई
च दोवि पट्टय दुरुहेड, दुरुहत्ता सेयपीण्हि ण्हावेति, ण्हाविस्ता कल्लण
कारि करेइ) इस के बाद पांडुराजा ने हस्तिनापुर नगर में प्रवेश किया
प्रवेश कर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया बुलाकर उनसे ऐसा कहा है
देवानुप्रियो ! तुम लोग विपुल मात्रामें अशनादि रूप चतुर्विध आहार
वनवाओ वनवाकर फिर उसे जहा वासुदेव प्रमुख राजा ठहरे हुए हैं
वहा लेजाओ । इस प्रकार की अपने राजाकी आज्ञानुसार उन्होने वैसा
ही किया-चतुर्विध आहार वनवाया और फिर उसे वासुदेव आदि
राजाओ के पास पहुँचा दिया । आहार के पहुँचने पर उन वासुदेव
प्रमुख राजाओं ने स्नान किया बलिर्कर्म किया-काक आदि जीवों के
लिये कून अन्नमें से विभाग देनेरूप कियाकी-बादमें उन्होंने उस चतु
र्विध आहार को किया । इसके पश्चात् पांडुराजा ने उन पाचों पांडवों

४ तहेव जाव उवणैति, तण्ण ते वासुदेवपामोक्त्वा महवे राया ण्हाया कयवलि
कम्मा त विउल असण ४ तहेव जाव विहरति-तण्ण से पडुराया पचपडवे दोवई
च देवि पट्टय दुरुहेड, दुरुहत्ता सेयपीण्हि कलसेहि ण्हावेति ण्हाविता
कल्लणकारि करेइ)

त्यारपछी पाडुराजल हस्तिनापुर नगरमा प्रविष्ट थया प्रविष्ट थधने
तेओओओ शौटु भिक पुइयोने ओलाओया अने ओलाओीने तेओओने आ प्रभाओे कल्ल
के डे हेवानुप्रियो ! तमे डोडो विपुल मात्रामा अशन वगेरे इप आर नतने
आहार पनापडावेओ पनापडावीने तमे ते आहारने न्या वासुदेव प्रमुख
राजलओे शक्या छे त्या लछ नओे, आ रीते पोताना राजनी आरा साल
पीने ते डोडोओे ते प्रभाओे न कथु तेओओे आर नतना आहारो पना
पडाओया अने त्यारपछी ते आहारोने वासुदेव प्रमुख राजलओेनी पासे पडो
आडी दीधा आहार पडोआडी दीधा भाड ते वासुदेव प्रमुख राजलओेओे स्नान
कथु अने कागडा वगेरे पक्षीओेने अन्न लाग अपीने भलिकभं कथु त्यार
पछी तेओओे ते आर नतना आहारने न्या त्यारभाड 'राजलओे ते

तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वदइ णमसइ महरिहेण
 आसणेणं उवणिमतेइ, तएण से कच्छुल्लनारए उदगपरिफासियाए
 दवभोवरिपच्चत्थुयाए भिसियाए णिसीयइ, णिसीयित्ता पडुरायं
 रज्जे जाव अतेउरेय कुसलोदतं पुच्छइ, तएण से पंडूराया कौंती-
 देवी पच य पडवा कच्छुल्लणारय आढति जाव पज्जुवासंति,
 तएणं सा दोवई कच्छुल्लनारय असजय अवरिय अपडिहयप-
 च्चक्खायपावकम्मे त्तिकट्टु नो आढाइ नो परिचाणइ नो अब्भु-
 ट्ठेइ नो पज्जुवासइ ॥ सू० २४ ॥

टीका—‘ तएण ते ’ इत्यादि । ततस्तन्वदनन्तर खलु ते पञ्चपाण्डवा
 द्रौपद्या देव्या सार्धं ‘ कल्लकल्लिं ’ कल्याकल्ये प्रतिदिवस वारवारेण उदारान्
 भोगभोगान् यावद् गुञ्जाना विहरन्ति । तत खलु स पण्डु राजाऽन्यदा कदाचित्
 पञ्चभिः पाण्डवैः कुन्त्या देव्या द्रौपद्या देव्या च सार्धं ‘ अतो अतेउरपरियाल ’

‘ तएण ते पच पडवा ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) हमके नाइ (ते पच पडवा) वे पांचों पांडव (दोवईए
 देवीए) द्रौपदी देवी के साथ—(कल्लकल्लिं वारवारेण ओरालाड भोग
 भोगाइ जाव विहरति—तए ण से पडूराया अन्नया कयाई पचई पडवेई
 कौंतीए देवीए दोवईए देवीए य सद्धिं अतेउरपरियालसद्धिं सपरिवुडे
 सीहासणवरगए यावि विहरट) प्रतिदिन घारी नारी से उदारकाम
 भोगों को भोगने लगे एक दिन की बात है—कि पांडु राजा किसी एक
 समय पांचों पांडवों एव अपनी पत्नी कुन्ती देवी और पुत्रवतु द्रौपदी

टीकार्थ—“ तएण ते पच पडवा इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्पारपत्री (ते पच पडवा) ते पाच पांडवो (दोवईए
 देवीए) द्रौपदी देवीनी साथे

(कल्लकल्लिं वारवारेण ओरालाड भोगभोगाइ जाव विहरति—तएण
 से पडूराया अन्नया कयाई पचई पडवेई कौंतीए देवीए दोवईए देवीए य
 सद्धिं अतेउरपरियालसद्धिं सपरिवुडे सीहासणवरगए यावि विहरइ)

इतिहास पाण्डवों की उदार भोग भोगवना लाग्या, अक दिनसनी बात

दोवइए देवीए य सद्धि अंतो अंतेउरपरियालसद्धि सपरिवुडे
 सीहासणवरगए यावि विहरइ, इम च ण कच्छुल्लणारए दस
 णेण अइभइए विणीए अतो२ य कल्लसहियाए मज्झन्थोवत्थिए
 य अह्छीणसोमपियदसणे सुख्खे अमइलसगलपरिहिए काल
 मियचम्मउत्तरासगरट्टयवच्छे दण्डकमण्डलुहरथे जडामउडदि-
 त्तिसिए जन्नोवइयगणेत्तियमुंजमेहलवागलघरे हत्थकयकच्छभीए
 पियगवत्थे धरणिगोयरप्पहाणे सुवरणावरणिओवयणिउप्पयणि
 लेसणीसु य सकामणिअभिओगपणत्ति गमणीथभणीसु य
 वहुसु विज्जाहरीसु विज्जासु विस्सुयजसे इट्ठे रामस्स य वेस
 वरस य पज्जुन्नपईवसवअनिरुद्धणिसद्ध-उम्मुयसारणगयसुमुह
 दुम्मुयहातीण जायवाणं अद्धुट्ठाण कुमारकोडीण हिययदइए
 सथवए कलहजुद्धकोलाहलप्पिए भडणाभिलासी वहुसु य सम
 रसयसपराएसु दसणरए समतओ कलहसदक्खण अणुगवेस
 माणे असमाहिकरे दसारवरवीरपुरिसत्तिलोक्कवलवगाणआम
 तेऊण त भगवई पक्कमणि गगणगमणदच्छ उप्पइओ गगणमभि
 लघयतो गामागरनगरनिगमखेडकब्बडमडवदोणमुहपट्टणासम
 सवाहमहस्समडिय थिमियमेइणीतल वसुह ओलोइतो रम्म हत्थि-
 णाउर उवागए पडुरायभवणपि अइवेगेण समोवइए, तएणं से
 पडुराया कच्छुल्लनारथ एज्जमाण पासइ पासित्ता पवहि पड-
 वेहि कुतीए य देवीए सद्धि आसणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता
 कच्छुल्लनारथ सत्तट्ठपयाइपच्चुगएइ ० ।

इयवच्छे' कालमृगचर्मोत्तरासगरचितवक्षाः-कृष्णमृगचर्मोत्तरासङ्गेन रचित शोभित वक्षो यस्य स तथा, कृष्णमृगचर्मोत्तरीपवस्त्रधारकः । तथा-'दण्डकमण्डलुहृत्ये' दण्डकमण्डलुहस्तः-'जडामण्डदित्तसिरए' जटामुकुटदीप्तशिरः, जण्णोवडयगणेत्तियमुजमेहलावागलधरे' यज्ञोपवीतगणेत्रिकासुज्जमेखलावलकलधरः-तत्र यज्ञोपवीत यज्ञसूत्र गणेत्रिका-रुद्राक्षकृत कलाचिकाभरण, मुज्जमेखला-मुज्जमय कटि बन्धनसूत्र वल्कल वृक्षत्वक्, तेषां धारकः स्कन्धोपरियज्ञसूत्रधारी, करमूले धृत रुद्राक्षमालः, मुज्जमयकटिसूत्रधारी, शरीरे परिधृत इत्यर्थः । 'इत्थकयकच्छभीए' इत्थकृतकच्छपिकाः-इस्ते कृता कच्छपिका-वीणा येन स तथा, 'पियगधन्वे' पियगन्धर्वः-गानप्रियः, 'धरणिगोयरप्पहाणे' धरणिगोचरप्रधान-धरणिगोचराणा-भूमिचारिणा जनाना मध्ये प्रधानस्तस्या काशेऽपि विहरणशीलत्वात्

चम्मउत्तरासगरइयवच्छे दण्डकमण्डलुहृत्ये, जडामण्डदित्तसिरए, जन्नो वडयगणेत्तिय मुजमेहलावागलधरे, इत्थकयकच्छभीए, पियगधन्वे, धरणिगोयरप्पहाणे, सवरणावरणिओवयणिउप्पयणी लेसणीसुयसकामणि अभिओगपण्णत्ति गमणीयभणीसु य बहुसु विज्जाहरीसु विज्जासु विस्सुयजसे) इनका वक्षस्थल काले मृग के चर्म रूप उत्तरासग से सुशोभित था । दण्ड और कमण्डलु इनके हाथोंमें था । जटारूपी मुकुट से इनका मस्तक दीप्त हो रहा था । यज्ञसूत्र-जनेऊ, गणेत्रिका कलाई का आभरण रूप रुद्राक्ष की माला, मुज्जमेखला-मुज का बना हुआ कटि बन्धन सूत्र, और वृक्ष की छाल इन्होंने धारण कररक्खी थी । हाथमें कच्छपिका-वीणा ले रक्खी थी । गान इन्हें बहुत प्रिय था । भूमि गोचरियों के बीच में ये प्रधान थे-ज्यो कि ये आकाश में भी विहार

(कालमियचम्मउत्तरासगरइयवच्छे दण्डकमण्डलुहृत्ये जडामण्डदित्तसिरए, जन्नोवडय गणेत्तियमुजमेहलावागलधरे, इत्थकयकच्छभीए पियगधन्वे, धरणिगोयरप्पहाणे, सवरणावरणिओवयणिउप्पयणिलेसणीसु य सकामणि अभिओगपण्णत्ति गमणीयभणीसुय बहुसु विज्जाहरीसु विज्जासु विस्सुयजसे)

तेमनु वक्षस्थल काणा डरखुना यर्मइय उत्तरासगथां शोभतु डतु डड अने कम उण तेमना हाथोभा डता जटा इपी मुकुटथी तेमनु मस्तक प्रकाशित थर्ध रक्षु डतु यज्ञ सूत्र-जनेऊ, गणेत्रिका-काडामा पडेरवानी आल रक्षु इय रुद्राक्षनी माला, मुज्ज-मेखला-मुजनु गनेतु डेडमा पडोवातु गधन सूत्र अने वृक्षकनी छाल तेज्याजे धारण करेली डता हाथमा तेज्याजे कच्छ पिका-वीणा धारण करेली डती सगीत तेमने थूमज गमतु डतु भूमि गोचरीज्यो तेज्या प्रधान डता डेमके तेज्या आकाशमा विथरणु डरता

अन्तः=अतःपुरस्य मासादमग्नये अतःपुरपरिवारेण 'परियाल' इति लुप्तवृत्ती
यान्त साधं सपरितृतः सिंहासनरगतश्चापि विहरति । ' इम च ' अस्मिन् समये
खलु ' कञ्जुल्लणारण ' कञ्जुल्लनाम्नामसिद्धो नारदः दर्शनेन ' अइमइए '
अतिभद्रकः=मद्रदर्शनः ' विणीण ' विनीतः=नम्रो राशत ' अतो य ' अन्तब-
कलुषदयः, ' मञ्जत्थोवत्थिए य ' माध्यस्थोपस्थित =राशतो मध्यस्थभाव प्राप्तः
' अल्लीणसोमपियदसणे ' आशीनमौम्यमियदर्शनः आलीनानामाश्रिताना सौम्यम्
=आहादकं, मिय = प्रीतिरारक दर्शन यस्य स तथा, मुख्यः - सुन्दराकृतिक,
तथा-' अमइलसगलपरिहिण ' अमलिनसफटपरिहित.=अमलिन सफलम्-अख
ण्डम् परिहित-खलुलसखरूप परिधान यस्य स तथा, ' कालमियचम्मउत्तरासण

के साथ अतःपुर के प्रासाद के भीतर अन्त पुरपरिवार के साथ
सिंहासन पर बैठे हुए थे-कि (इमच ण) इसी समय (कञ्जुल्लणारण
पडुरायभवणसि अइवेगेण समोवइए दसणे ण अइमइए, विणीए,
अतोय कलुसहियण मञ्जत्थोवत्थिए य, अल्लीणसोमपियदसणे सुखे
अमइलसगलपरिहिण) पाडुराजा के भवन में कञ्जुल्लनाम से प्रसिद्ध
नारद गगन-आकाश-मार्ग से बड़े वेगसे उतर कर आये। नारद देखने
में अति भद्र थे। ऊपर से बड़े विनीत थे। परन्तु भीतर में इनका
हृदय बहुत अधिक कलुषित था। केवल ऊपर से ये माध्यस्थ भाव
सपन्न थे। अपने आश्रित व्यक्तियों को इनका दर्शन आहादक एवं
प्रीति कारक होता था। आकृति उनकी बड़ी सुन्दर थी। इनका बल्कल
रूप परिधान अमलिन-सोफ स्वच्छ और खण्ड रहित था। (कालमिय

छे के ते पाडु राजा कोई ऐक वण्णते पाचे पाडवे, पोतानी पत्नी कुती देवी
अने पुत्र वधु द्रौपदीनी साथे रणुवासना भडेलनी अदर पोताना परिवारनी
साथे सिंहासन उपर जेठा हुता (इम च ण) ते वण्णते

(कञ्जुल्लणारण पडुरायभवणसि अइवेगेण, समोवइए दसणे ण अइमइए
विणीए अतोय कलुसहियण मञ्जत्थोवत्थिए य, अल्लीणसोमपियदसणे सुखे
अमइलसगलपरिहिण)

पाडु राजाना भवनमा कञ्जुल्ल नाम्नी पक्रायेला नारद गगन-आकाश
मार्गंथी अहुं ञ वेगंथी उतरिने आव्या नारद देभावमा अत्यत लद्र हुता
उपर उपरंथी तेज्जा ऐकदम विनम्र हुता पणु अतर तेमनु मन पूण ञ
कलुषित हुतु इकत उपर उपरंथी ञ तेज्जा माध्यस्थ भाव सपन्न हुता
आश्रित व्यक्तिज्जाने तेमनु दर्शन आहुलादक अने प्रीतिकारक हुतु तेमनी
आकृति पूण ञ सुन्दर हुती तेमनु बल्कल रूप परिधान, ऐकदम स्वच्छ-निर्माण
हुतु अने अउरहित हुतु

इयवच्छे' कालमृगचर्मोत्तरामगरचितवक्षाः-कृष्णमृगचर्मोत्तरासङ्गेन रचित शोभित
 वक्षो यस्य स तथा, कृष्णमृगचर्मोत्तरीयवस्त्रधारक' । तथा- 'दण्डकमण्डलुहस्त्ये'
 दण्डकमण्डलुहस्तः- 'जडामउडदित्तसिरए' जडामुकुटदीप्तशिरस्क', जण्णोवइयगणे-
 त्तियमुजमेहलवागलधरे ' यज्ञोपवीतगणेत्रिकासुज्जमेखलावलकलधरः-तत्र यज्ञो-
 पवीत यज्ञसूत्र गणेत्रिका-रुद्राक्षकृत कलाचिक्राभरण, मुज्जमेखला-मुज्जमय कटि
 बन्धनसूत्र वलकल वृक्षत्वक्, तेषां धारक. स्कन्धोपरियज्ञसूत्रधारी, करमूले धृत
 रुद्राक्षमालः, मुज्जमयकटिसूत्रधारी, शरीरे परिधृतवलकल इत्यर्थः । ' हन्थकयकच्छ
 भीए ' हस्तकृतकच्छपिकः-इस्ते कृता कच्छपिका-वीणा येन स तथा, ' पियग
 ण्वे ' प्रियगन्धर्वः-गानमिय., ' धरणिगोयरप्पहाणे ' धरणिगोचरप्रधान-
 धरणिगोचराणा-भूमिचारिणा जनाना मध्ये प्रधानस्तस्या काशेऽपि विहरणशीलत्वात्

चम्मउत्तरासगरइयवच्छे दण्डकमण्डलुहस्त्ये, जडामउडदित्तसिरए, जज्ञो
 वइयगणेत्तिय मुजमेहलवागलधरे, हन्थकयकच्छभीए, पियगण्वे, धर-
 णिगोयरप्पहाणे, सवरणावरणिओवयणिउप्पयणी लेसणीसुयसकामणि
 अभिओगपण्णत्ति गमणीयभणीसु य बहुसु विज्जाहरीसु विज्जासु
 विस्सुयजसे) इनका वक्षस्थल काले मृग के चर्म रूप उत्तरासग से
 सुशोभित था । दण्ड और कमण्डलु इनके हाथों में था । जडारूपी मुकुट
 से इनका मस्तक दीप्त हो रहा था । यज्ञसूत्र-जनेऊ, गणेत्रिका कलाई
 का आभरण रूप रुद्राक्ष की माला, मुज्जमेखला-मुज का बना हुआ
 कटि बन्धन सूत्र, और वृक्ष की छाल इन्होंने धारण कररक्खी थी ।
 हाथमें कच्छपिका-वीणा ले रक्खी थी । गान इन्होंने बहुत प्रिय था । भूमि
 गोचरियों के बीच में ये प्रधान थे-क्यों कि ये आकाश में भी विहार

(कालमियचम्मउत्तरासगरइयवच्छे दण्डकमण्डलुहस्त्ये जडामउडदित्तसिरए,
 जज्ञोवइय गणेत्तियमुजमेहलवागलधरे, हन्थकयकच्छभीए पियगण्वे, धरणि-
 गोयरप्पहाणे, सवरणावरणिओवयणिउप्पयणिलेसणीसु य सकामणि अभि-
 ओगपण्णत्ति गमणीयभणीसुय बहुसु विज्जाहरीसु विज्जासु विस्सुयजसे)

तेभनु वक्षस्थण काणा हरणुना यमंइय उत्तरामगथा शोभतु इतु
 इउ अने कमण्डण तेभना हाथेमा इता जटा इपी मुकुटथी तेभनु मस्तक
 प्रकाशित थर्ध रक्षु इतु यज्ञ सूत्र-जनेऊ, गणेत्रिका-काला मा पडेरवानी आल
 रक्षु इय इद्राक्षणी माला, सुज्ज-मेखला-मुज्जु मनेतु केडमा पडोवानु म धन
 सूत्र अने वृक्षकनी छाल तेओओ धारणु करेली इता हाथमा तेओओ कच्छ
 पिका-वीणा धारणु करेली इती संगीत तेभने प्रथम ज गमर्तु इतु भूमि
 गोचरीओने वस्त्रे-तेओओ प्रधान इता केमके तेओओ आकाशमा विथणु करता

“ सवरणावरणिओवयणिउप्यपणिलेसणीसु य ” मंरण्यारप्यवपतन्युत्पतनी
 श्लेषणीपु च ' सवरणी-सम्पान्तर्धानकारिणी विद्या, आवरणी-परम्यान्तर्धान
 कारिणी विद्या, अवपतनीअधोऽवतरणी विद्या, उत्पतनी-उत्तर्गमनकारिणी विद्या,
 श्लेषणी-वज्रलेपादिस्व मन्थानकारिणी विद्या, ताम्र, तथा- ' सक्रामणि अभि
 ओगपण्णत्ति गमणीथमणीसु य ' मक्रमण्यभियोगपण्णत्तिगमनीस्तम्भनीपु च-
 सक्रामणी-विद्या-विशेषः यया-परशरीरादौ प्रवेष्टु गन्नोति, सा विद्या, अभि
 योग, स्वर्णादिनिर्माणविद्या रशीकरणविद्या च, प्रज्ञप्ति.=अविदितार्थबोधिनी गमनी

करते थे। सवरणी, आवरणी अवपतनी, उत्पतनी, श्लेषणी इन विद्या
 ओ में तथा सक्रमणी, अभियोग, प्रज्ञप्ति, गमनी स्तम्भनी इन नाना
 प्रकार की विद्या पर सघन्धी विद्याओं में इनकी कीर्ति विख्यात थी।
 जिस विद्या के प्रभाव से अपने आपको अन्तर्धान कर दिया जाता
 जाता है उसका नाम सवरणी विद्या है। दूसरा जिस विद्या से अन्त
 र्धान करदिया जाता है उस विद्या का नाम आवरणी विद्या है। जिस
 विद्या के प्रभाव से ऊपर से नीचे उतरा जाता है उसका नाम अव
 पतनी और जिसके प्रभाव से उर्ध्व में गमन किया जाता है उसका
 नाम उत्पतनी विद्या है। वज्रलेप आदि की तरह जो चिपका देती है
 वह श्लेषणी विद्या है। जिस विद्या के बल से दूसरे के शरीरमें प्रविष्ट
 होना होता है-ऐसी परशरीरप्रवेशकारिणी विद्याका नाम सक्रमणी
 विद्या है। स्वर्ण आदि के बनाने की जो निपुणता है-एव परकी

इता सवरणी, आवरणी, अवपतनी, उत्पतनी, श्लेषणी आ षष्ठी विद्या
 ओमा तेमञ् सक्रमणी, अभियोग, प्रज्ञप्ति, गमनी, स्तम्भनी आ अनेक
 नतनी विद्याधर सषष्ठी विद्याओमा तेमनी कीर्ति चोभेर प्रसरेद्वी इती ने
 विद्याना प्रभावधी पोतानी नतने अहस्य करी शक्य छे ते सवरणी विद्या
 छे ने विद्याधी षीनने अहस्य करी शक्य छे ते आवरणी कडेवाय छे ने
 विद्याना प्रभावधी उपरधी नीचे उतरी शक्य छे ते अवपतनी अने नेना
 प्रभावधी उर्ध्व (आकाश) मा गमन करी शक्य छे ते विद्यानु नाम उत्प
 तनी छे व
 वगेरेनी नेम ने चोटाडी दे छे ते श्लेषणी विद्या छे ने
 विद्या । ना शरीरमा प्रवेशी शक्य ओवी परकाय प्रवेश करिणी
 दि । छे सोनु वगेरे षनाववामा ने- निपुणता छे
 ने शक्ति छे ते विद्या

-गमनपरुषसाधिका-आकाशगामिनी च विद्याविशेषः-स्तम्भनी-स्तम्भनकारिणी
 विद्या, तासु 'रुद्रमु विज्जाहरीसु विज्जासु' रुद्रपु-नानाविद्यासु विद्याधरीषु=विद्या-
 धर सम्प्रन्धिषु विद्यासु 'विस्मयजसे' विश्रुतयशा -विद्यासु नैपुण्या=विद्यातकीर्तिः,
 इष्ट =मियः, रामस्य=रुद्रदेवस्य केसरस्य=कृष्णवासुदेवस्य च पुन केपा प्रियड-
 त्याह-'पञ्जुन्नर्षैयस्य अनिरुद्धनिमदुस्सुयमारणगयसुमुहदुम्मुहाडण जायवाण'
 प्रद्युम्न प्रतीपशाम्बानिरुद्धनिपयोत्सुकसारणगजसुमुखदुर्मुखादीना यादवानाम्,
 प्रद्युम्नादीना सख्यामाह-प्रद्युम्न, प्रतीप, शाम्बः, अनिरुद्ध, निपयः, उत्सुकः,

वश मे करने कि जो शक्ति है उस विद्या का नाम अभियोग विद्या है।
 अविदित अर्थ जिस के प्रभाव से विदित हो जावे वह प्रज्ञप्ति विद्या
 गमन परुष की साधक तथा आकाश में गमन कराने वाली विद्या
 गमनी विद्या स्तम्भन कराने वाली विद्यास्तम्भनी विद्या है। (इष्टे
 रामस्य य केसरस्य य पञ्जुन्नर्षैयस्य अनिरुद्धणिसदुस्सुय सारण
 गयसुमुह दुम्मुहातीण जायवाण अनुद्वाण कुमारकोडीण हिययदइए
 सयवण कलहजुद्धकोलाहलपिण, भडणाभिलासी, बहुसु य समर
 सयसपराएसु दसणरण, समतओ कलहसदक्खण अणुगवेसमाणे,
 असमाहिकरे दमारवरवीरपुरिसतिलोक्कचलवगाण, आमतेऊण त
 भगवई पक्कमणि गगणगमणदच्छ उप्पइओ गगणमभिलघयतो
 गामागरनगरनिगमखेडकवडमडवदोणमुहपट्टणासम्मवाहसहस्समडिय
 धिमिणमेइणीतल वसुह आलोइतो रम्म हत्थिणाउर उवागण) बलदेव एव
 कृष्ण वासुदेव को ये इष्ट थे तथा साठे तीन करोड, प्रद्युम्न, प्रतीप,
 साम्ब, अनिरुद्ध निपथ उत्सुक, सारण, गज सुकुमाल सुमुख दुर्मुख

विद्या छे अविदित अर्थ जेना प्रलाब्धी लक्ष्मी शक्य ते प्रज्ञप्ति विद्या, गमन
 परुषनी साधिका तेमज आकाशमा गमन करानी विद्या गमनी विद्या छे
 वा १ छे स्तम्भन करानारी विद्या स्तम्भनी विद्या छे (इष्टे रामस्य य केस-
 यस्य य पञ्जुन्नर्षैयस्य अनिरुद्धणिसदुस्सुयसारणगयसुमुहदुम्मुहातीण जायवाण
 अनुद्वाणकुमारकोडीण हिययदइए सयवण कलहजुद्धकोलाहलपिण, भडणाभिलासी,
 बहुसयसमरसयसपराएसु दसणरण समतओ कलहसदक्खण अणुगवेसमाणे अस
 माहिकरे न्सारवरवीरपुरिसतिलोक्कचलवगाण, आमतेऊण त भगवई, पक्कमणि
 गगणगमणदच्छ उप्पइओ गगणमभिलघयतो गामागरनगरनिगमखेडकवडमडव दोण
 मुहपट्टणासम्मवाहसहस्सम डिय धिमिण मेइणीतल वसुह आलोइ तो रम्म हत्थिणाउर
 उवागण) अणदेव तेमज कृष्ण वासुदेवने तेज्यो इष्ट होता अने माहा त्रयु करोड प्रद्युम्न,
 प्रतीप, साम्ब, अनिरुद्ध, निपथ, उत्सुक, सारण, गज सुकुमाल, सुमुख दुर्मुख
 पदाय कुमाराने माटे तेज्यो हृदयहयित होता अटले के अणु ज प्रिय होता अटला

“सवरणावरणिओरपणिउप्पयणिछेसणीमु य ” मरण्यावरण्यवपतन्युत्पतनी
 श्लेषणीषु च 'सवरणी-स्वप्नान्तर्धानकारिणी विद्या, आवरणी-परस्यान्तर्धान
 कारिणी विद्या, अवपतनीअधोऽवतरणी विद्या, उत्पतनी-ऊर्ध्वगमनकारिणी विद्या,
 श्लेषणी-वज्रलेपादिपद्मन्धानकारिणी विद्या, ताम्र- 'सक्रामणि अभि
 ओगपण्णत्ति गमणीयमणीमु य ' सक्रामण्यभियोगमज्ञप्तिगमनीस्तम्भनीषु च-
 सक्रामणी-विद्या-विशेषः यथा-परशरीरादां प्रवेष्टुं शक्नोति, सा विद्या, अभि
 योगः स्वर्णादिनिर्माणविद्या यज्ञीकरणविद्या च, प्रज्ञप्ति-अभिदितार्थबोधिनी गमनी

कृते ये । सवरणी, आवरणी अवपतनी, उत्पतनी, श्लेषणी इन विद्या
 ओं में तथा सक्रमणी, अभियोग, प्रज्ञप्ति, गमनी स्तम्भनी इन नाना
 प्रकार की विद्याएँ सम्बन्धी विद्याओं में इनकी कीर्ति विख्यात थी ।
 जिस विद्या के प्रभाव से अपने आपको अन्तर्धान कर दिया जाता
 जाता है उसका नाम सवरणी विद्या है । दूसरा जिस विद्या से अन्त
 र्धान करदिया जाता है उस विद्या का नाम आवरणी विद्या है । जिस
 विद्या के प्रभाव से ऊपर से नीचे उतरा जाता है उसका नाम अव
 पतनी और जिसके प्रभाव से ऊर्ध्व में गमन किया जाता है उसका
 नाम उत्पतनी विद्या है । वज्रलेप आदि की तरह जो चिपका देती है
 वह श्लेषणी विद्या है । जिस विद्या के चल से दूसरे के शरीरमें प्रविष्ट
 होना होता है-ऐसी परशरीरप्रवेशकारिणी विद्याका नाम सक्रमणी
 विद्या है । स्वर्ण आदि के बनाने की जो निपुणता है-एव परकी

इता सवरणी, आवरणी, अवपतनी, उत्पतनी, श्लेषणी आ अधी विद्या
 ओमां तेमन् सक्रमणी, अभियोग, प्रज्ञप्ति, गमनी, स्तम्भनी आ अनेक
 लतनी विद्याधर सम्बन्धी विद्याओमां तेमनी कीर्ति ओमेर प्रसिद्धी इती ने
 विद्याना प्रभावथी चोतानी लतने अदृश्य करी शक्य छे ते सवरणी विद्या
 छे ने विद्याथी भीजने अदृश्य करी शक्य छे ते आवरणी कडेवाय छे ने
 विद्याना प्रभावथी उपरथी नीचे उतरी शक्य छे ते अवपतनी अने केना
 प्रभावथी उव्व (आकाश) मा गमन करी शक्य छे ते विद्यानु नाम उप
 तनी छे वज्र लेप वगेरेनी नेम ने चोटादी इ छे ते श्लेषणी विद्या छे ने
 विद्याना पणथी भीजना शरीरमा प्रवेशी शक्य अथी परकाय प्रवेश करिणी
 विद्यानु नाम सक्रमणी विद्या छे सोनु वगेरे पनाषवामा ने निपुणता छे
 अने भीजने परवर्ती करवानी ने शक्ति छे ते

वीराः पुरुपाञ्चैलोक्ये यत्नन्त नेमिनाथापेक्षया तेषाम्, 'आमतेज्जण त भगवई'
 आमन्व्य=प्रयुज्य ता भगवतीं-विद्या, कीदृशीं विद्यामिच्छाह—' पक्षमणि ' प्रक
 मणीं=प्रकृष्टगमनशक्ति शालिनीं 'गगणगमणदच्छ' गगनगमनदक्षाम्=आकाशे गमने
 समर्थाम् 'उपपडओ' उत्पतितः, गगनमभिलङ्घयन् उड्डीय गमनेनाकाशतलमुल्लङ्घयन्
 'ग्रामागरनगरनिगमखेटकर्षटमडवद्रोणमुखपत्तनाश्रमसवाहसहस्रमण्डित, तत्र अष्टादशरुद्राक्षो
 ग्रामः, आकरः=स्वर्णाद्युत्पत्तिभूमिः, अविद्यमानकरं नगर, निगम=वणिग्ग्राम खेट=
 धूलीप्रकार, कर्षट=कुत्सितनगर, यत्र योजनान्तराले ग्रामादिनास्ति तन्मडम्ब यत्र जल
 स्थलमार्गाभ्या, भाण्डान्यागच्छति तत् द्रोणमुख, पत्तन=द्वेषा-जलपत्तन स्थलपत्तन,
 यत्र पर्वतादिदुर्गे लोका धान्यानि संवहति स सवाह एतैः सहस्रैर्मण्डितं, स्तिमित-
 मेदिनीतल, ' वसुह' वसुधा भूमि ' ओलोइतो ' अवलोकयन्=पश्यन् रम्य हस्ति
 नापुर नगरमुपागत' पाण्डुराजभवनेऽतिवेगेन समुपेतः=गगनादवतीर्ण इत्यर्थः ।

तत सल्लु स पाण्डुराजा कच्छुल्लनारय ' कच्छुल्लनारदम् आगच्छन्त
 पश्यति-दृष्ट्वा पञ्चभि पाण्डवैः कुन्त्या च देव्यासार्धमासनादभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय
 दशार्हं ये उनके ये सदा चित्त के विक्षेप कारक बने रहते थे । गमन में
 विशिष्ट शक्ति प्रदान करने वाली एव आकाश में उठाकर ले चलने
 वाली उस भगवती प्रक्रमणी विद्या को प्रयुक्त करके ये आकाश में उड़ा
 करते थे । ये नारद, गमन से आकाशतल की उल्लंघन करते हुए ग्राम,
 आकर, नगर, निगम खेट, कर्षट, मडव, द्रोणमुख, पत्तन, सवाह इनके
 सहस्रों से मण्डित हुई ऐसी स्तिमितमेदनीतलवाली वसुधा-भूमि को
 देखते हुए रम्य हस्तिनापुर नगर में आये और वहा से गगनमार्ग से
 होकर फिर ये पाण्डुराज के भवन में पहुँचे । ऐसा सपथ यहाँ लगाना
 (तर्ण से पाण्डुराजा कच्छुल्लनारय एज्जमाण पासइ) इम के बोद
 पाण्डुराजा ने कच्छुल्ल इन नारद को आते हुए जब देखा (पामित्ता) तो

गमनभा विशिष्ट शक्ति आपनारी अने आकाशभा उडाडीने लध ननार ते
 भगवती प्रक्रमणी विद्याना गणथी तेज्जे आकाशभा उडता रहेता डता आ
 रीते आ नारद गमनथी आकाशने ज्ञाणगीने मडस्रो आम, आकर नगर,
 निगम खेट कर्षट, मडव, द्रोणमुख, पत्तन, सवाहोथी, मण्डित अने स्तिमित
 पृथ्वीने जेता ग्मणीय हस्तिनापुर नगरभा आव्या अने त्याथी आकाश
 मार्गभा धधने पाण्डुराजना भवनभा पडोन्था (तर्ण से पाण्डुराजा कच्छुल्ल
 नारय एज्जमाण पासइ) त्यारभाह पाण्डुराजजे कच्छुल्लनारदने न्यारे आवता जेथा
 (पामित्ता) त्यारे जेधने (पचहिं पडवेहिं कुवीए देवीए सदि आसणाओ

सारण', गजसुकुमाल', सुगुणः, दुर्गुण, इत्यादयो यादवकुमारास्तेषा 'अद्वुद्धाण
 कुमारकोटीण' अर्धचतुर्थीनां कुमारकोटीनां च सार्धत्रिकोटिममिताना यादव
 कुमाराणामित्यर्थः 'हिययदण' हृदयदयितः=हृदयमियः, 'सथाए' सस्ता
 यः-यादवाना प्रशसकः, तथा-कलहयुद्धकोलाहलमियः=रुद्धो=विवाद, युद्ध-
 शस्त्रादिभिः प्रहरण, कोलाहलो=जनाना महाध्वनिः, पते प्रियाः प्रमोदजनका
 यस्य स तथा, 'भट्टणामिलासी' भण्डनाभिलापी=भण्डन राटि-रुद्ध 'राइ'
 इति भाषाया तम्याभिलापी तथा-यहुपु च समरशतसग्रामेषु=समरशतसग्रामेषु
 दर्शनरत=दर्शनाऽऽसक्तः, 'समतभो' समन्ततः सर्वप्रकारेण-परस्पर च कलह
 'सदखण' सदाक्षण=सर्वस्मिन् क्षणे 'अणुगवेसमाणे' अनुगवेपयन्=अन्वेष
 यन्, 'असमाहिकरे' असमाधिकरः-चित्तविक्षेपकारकः चित्तस्यास्यैर्यकर केषा
 चित्तस्य विक्षेपकइत्याह- 'दसारवरवीरपुरिसतिलोकबलगाण' दशार्हवरवीर
 पुरुषवीलोक्यबलवाना-दशार्हा.-समुद्रविजयादयो दशसख्यका त एव वरा श्रेष्ठाः

इत्यादि यादवकुमारों के लिये ये हृदय दयित थे-अत्यन्त प्रिय थे। इसी
 कारण यादवोंके प्रशसक थे। कलहविवाद युद्ध एव मनुष्यों का कोलाहल
 ये सब इन्हें बहुत अधिक अच्छे लगते थे। आनन्द जनक होते थे। राइ
 (लडाई) के ये अभिलापी बने रहते थे। अर्थात् हर एक जगह किसी न
 किसी रूप में परस्पर में लोगों में तर्रार, कजिया कैसे उत्पन्न हो इस
 घात का इन्हें विशेष ध्यान रहता था। समर शतसग्राम के देखने में
 इन्हें विशेष हर्षोल्लास होता था। सब प्रकार से परस्पर में सब समय
 में ये कलह की गवेपणा करने में ही लगे रहते थे। नेमिनाथ की अपेक्षा
 त्रैलोक्य में विशिष्ट बलवाली जो श्रेष्ठ वीर पुरुष समुद्र विजयादि दश

भाटे न तेजो यादवोना वषाणु करनारा हुता कवड-ककास, विवाद, युद्ध
 अने भाषुसोना शौरणकार आ अणु तेमने अणु न गमतु हुतु आ अघाथी
 तेमने भूष न भण पडती हुती, कल्यो तेमने भूषन गमतो हुतो अेटके
 के हरेक स्थाने गमे ते कारणने लीधि वग्ने परस्पर कलह-ककान कल्यो
 केवी रीते शङ् थाय आ वातनी तेजो तक नेता रहेता हुता से कडो युद्धोना
 भीलत्स दृश्य नेवामा तेमने भूष न आनदने अनुभव थतो हुतो तेजो
 अधी रीते रात अने हिवस अेकभीअने लडाववानी शोधमा न बोटी रहेता
 हुता नेमिनाथनी अपेक्षा त्रैलोक्यमा सविशेष अणवान श्रेष्ठ वीर पुरुष समुद्र
 विजय वगेरे दश दशाहो हुता तेमना बित्तने तेजो कष्ट ता.

वीराः पुरुषास्त्रैलोक्ये वलवन्त नेमिनाथापेक्षया तेषाम्, 'आमतेज्जण त भगवई' आमन्व्य=प्रयुज्य ता भगवतीं-विद्या, कीदृशीं विद्यामित्याह—' प्रक्रमणी ' प्रक्रमणी=प्रकृतगमनशक्ति शालिनी 'गगणगमणदञ्च' गगनगमनदक्षाम्=आकाशे गमने समर्थाम् 'उप्पडओ' उत्पतितः, गगनमभिलङ्घयन् उड्डीय गमनेनाकाशतलमुल्लङ्घयन् 'गामागरनगरनिगमखेटकर्मण्डमडचद्रोणमुखपत्तनाश्रमसवाहसहस्रमण्डित' ग्रामाकरनगरनिगमखेटकर्मण्डमडचद्रोणमुखपत्तनाश्रमसवाहसहस्रमण्डित, तत्र अष्टादशकरग्राह्यो ग्रामः, आकरः=स्वर्णाद्युत्पत्तिभूमिः, अविद्यमानकरं नगर, निगम=वणिग्ग्राम खेट=धूलीप्रकार, कर्मण्ड=कुत्सितनगर, यत्र योजनान्तराले ग्रामादिनास्ति तन्मडचयत्र जलस्थलमार्गाभ्या, भाण्डान्यागच्छति तत् द्रोणमुख, पत्तनं=द्वधा-जल्पत्तन स्थलपत्तन, यत्र पर्यतादिदुर्गे लोका धान्यानि संवहति स संवाह एतैः सहस्रैर्मण्डित, स्तिमितमेदिनीतल, ' वसुह' वसुधा भूमि ' ओलोइतो ' अलोकयन्=पश्यन् रम्य हस्तिनापुर नगरमुपागतः पाण्डुराजभवनेऽतिवेगेन समुपेतः=गगनादवतीर्ण इत्यर्थः ।

तत सल्ल स पाण्डुराजा कच्छुल्लनारय ' कच्छुल्लनारदम् आगच्छन्त पश्यति-दृष्ट्वा पञ्चभिः पाण्डवैः कुन्त्या च देव्यासार्धमासनादभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय

दशार्हं ये उनके ये सदा चित्त के विक्षेप कारक बने रहते थे । गमन में विशिष्ट शक्ति प्रदान करने वाली एव आकाश में उठाकर ले चलने वाली उस भगवती प्रक्रमणी विद्या को प्रयुक्त करके ये आकाश में उड़ा करते थे । ये नारद, गमन से आकाशतल को उल्लंघन करते हुए ग्राम, आकर, नगर, निगम खेट, कर्मण्ड, मडच, द्रोणमुख, पत्तन, सवाह इनके सहस्रों से मण्डित हुई ऐसी स्तिमितमेदिनीतलवाली वसुधा-भूमि को देखते हुए रम्य हस्तिनापुर नगर में आये और वहा से गगनमार्ग से होकर फिर ये पांडुराज के भवन में पहुँचे । ऐसा सवध यहां लगाना (तर्ण से पांडुराजा कच्छुल्लनारय एज्जमाणं पासइ) इन के बोध पांडुराजा ने कच्छुल्ल इन नारद को आते हुए जब देखा (पामित्ता) तो

गमनमा विशिष्ट शक्ति आपनारी अने आकाशमा उडाडीने लध नारद ते भगवती प्रक्रमणी विद्याना गणथी तेओ आकाशमा उडता रडेता डता आरीते आ नाउह गमनथी आकाशने ओणगीने महओ आम, आकर नगर, निगम खेट कर्मण्ड, मडच, द्रोणमुख, पत्तन, सवाहोथी, मण्डित अने स्तिमित पृथ्वीने लेता मभलीय हस्तिनापुर नगरमा आओया अने त्याथी आकाशमार्गमा थधने पांडुराजना भवनमा पडोआया (तर्ण से पांडुराजा कच्छुल्लनारय एज्जमाण पासइ) त्यारणाह पांडुराजने कच्छुल्लनारदने न्यारे आवता लेया (पामित्ता) त्याउ नेधने (पचई पडवेदि कुवीए देवीए सद्धि आसणाओ

मारणः, गजसुकुमालः, सुगुप्तः, दुर्गुण, इत्यादयो यादवकुमारास्तेषा ' अद्भुद्गण
 कुमारकोटीण ' अर्धचतुर्षीनां कुमारकोटीनां च सार्धत्रिकोटिप्रमिताना यादव-
 कुमाराणामित्यर्थः ' हिययदक्ष ' इदयदयितः=हृदयप्रियः, ' सथावण ' सस्ता-
 वरुः-यादवाना प्रशसकः, तथा-फलहयुद्धकोलाहलप्रियः=कूटो=विवाद, युद्ध-
 शस्त्रादिभि' प्रहरण, कोलाहलो=जनाना महाप्रतिनिः, एते प्रियाः प्रमोदजनका
 यस्य स तथा, ' भण्डनामिलासी ' भण्डनामितापी=मण्डन राटि -कूटह. ' राह ' इति
 भाषाया तम्याभिलापी तथा-यद्गुपु च समरशतमपरायेपु=समरशतसग्रामेषु
 दर्शनरत =दर्शनाऽऽसक्तः, ' समतमो ' समन्ततः सर्वाप्रकारेण-परस्पर च कलह
 ' सदक्षण ' सदाक्षण=सर्वास्मिन् क्षणे ' अनुगवेममाणे ' अनुगवेपयन्=अन्वेष
 यन्, ' असमाहिकरे ' असमाधिकर-चित्तप्रिक्षेपकारकः चित्तस्यास्यैर्यकर. केषा
 चित्तस्य प्रिक्षेपकइत्याह—' दसारवरवीरपुरिसतिलोकप्रलयगाण ' दशार्हवरवीर
 पुरुषवीलोकप्रलयना-दशार्हा.-समुद्रविजयादयो दशसख्यका त एव वरा श्रेष्ठाः

इत्यादि यादवकुमारों के लिये ये हृदय दयित ये-अत्यन्त प्रिय थे। इसी
 कारण यादवोंके प्रशसक थे। कलहविवाद युद्ध एव मनुष्यों का कोलाहल
 ये सब इन्हें बहुत अधिक अच्छे लगते थे। आनन्द जनक होते थे। राह
 (लडाई) के ये अभिलापी बने रहते थे। अर्थात् हर एक जगह किसी न
 किसी रूप में परस्पर में लोगों में तकरार, कजिया कैसे उत्पन्न हो इस
 बात का इन्हें विशेष ध्यान रहता था। समर शतसग्राम के देखने में
 इन्हें विशेष हर्षोल्लास होता था। सब प्रकार से परस्पर में सब समय
 में ये कलह की गवेपणा करने में ही लगे रहते थे। नेमिनाथ की अपेक्षा
 त्रैलोक्य में विशिष्ट बलवाली जो श्रेष्ठ वीर पुरुष समुद्र विजयादि दश

भाटे न तेजो यादवोना वषाणु करनारा हुता कलह-ककास, विवाद, युद्ध
 अने भाषुसोना शौरणकोर आ षधु तेमने षधु न गमतु हुतु आ षधधी
 तेमने षूष न भन पडती हुती, कलुयो तेमने षूषन गमतो हुतो अये
 के हरेक स्थाने गमे ते कारबुने लीधि वये परस्पर कलह-ककाम कलुयो
 हवी रीते शरु थाय आ वातनी तेजो तक लेता रहेता हुता सेकडा युद्धोना
 षीलरस हश्य लेवामा तेमने षूष न आनदने अनुभव थतो हुतो तेजो
 षधी रीते रात अने हिवस अेकषीजने लडाववानी शोधमा न बोटी रहेता
 हुता नेमिनाथनी अपेक्षा त्रैलोक्यमा सविशेष षणवान श्रेष्ठ वीर पुरुष समुद्र
 विजय वगेरे दश दशाहो हुता तेमना बित्तने तेजो कध ता.

सयतस्तथा विधो न भवति यः सोऽसयतः=सयमरहित इत्यर्थः, अविरत=अतीत
कालिन्पापाञ्जुगप्सापूर्वम्, भविष्यति च सवरपूर्वकमुपरतो निवृत्तो विरतस्तथा
विधो न भवति नः सोऽविरतः, निरतिरहितः, अप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा
प्रतिहत=वर्तमानकाले स्थित्यनुभागहासेन नाशित तथा प्रत्याख्यात=पूर्वकृताति-

उनके लिये तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिण किया-करके उनको वंदनाकी
नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके फिर उन्होंने उनसे महान्
पुरुषों के बैठने योग्य आमन पर बैठने के लिये प्रार्थना की-इस के
बाद वे कञ्छुल्ल नारद जल के छीटो से सिक्त हुए आसन पर कि जो
दर्भ के ऊपर आस्तीर्ण या बैठ गये। बैठकर उन्होंने पांडु राजा से
राज्य की यावत् अतः पुर की कुशल वर्ता पूछी। उनके पूछने पर पांडु
राजाने कुन्ती देवी ने एव पाँचों पाडवों ने उन कञ्छुल्ल नारद को खूब
आदर किया यावत् अच्छी तरह से उनकी पर्युपासना की। द्रौपदी ने
उन्हें असयत, अविरत एव अप्रतिहत प्रत्याख्यतपापकर्मा जानकर
उनका आदर नहीं किया, उनके आगमन की अनुमोदना नहीं की
और न वह उनके आने पर उठी। वर्तमान कालिक सर्व सावद्य
अनुष्ठान से जो निवृत्त होता है वह सयत है-ऐसा सयत जो नहीं
होता है वह असयत कहलाता है। अतीत काल में हुए पापों से जुग-
प्सा पूर्वक और भविष्यकाल में उनसे सवर पूर्वक जो उपरत होता

सामे जेधने तेमणे त्रणुवार तेमनी जेभेर आदक्षिण प्रदक्षिण करी
त्यारपडी तेमणे वदन तेमजे नमन कर्या अने पडी तेमने पोताना करता
भोटा भाणुभोने जेभवा योग्य आसन उपर जेसवानी विनती करी त्यारभाद
ते कञ्छुल्ल नारद पाणीना छाटाजोथी लीना पाथरेला दर्भना आसन उपर
जेभी गया जेसीने तेजोजे पाडुराजने सान्यनी यावत् रणुवासनी कुशलवार्ता
पूछी पाडुराज, कुतीदेवी अने पाथे पाडवेजे कञ्छुल्ल नारदने भूषण आदर
कर्यो यावत् सारी रीते तेमनी पर्युपासना करी तेमने असयत, अविरत
अने अप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा लणीने द्रौपदीजे तेमने आदर कर्यो
नहि तेमना आगमननी अनुमोदना करी नहि अने न्यारे तेजो आख्या
त्यारे पणु ते जेभी थध नहि वर्तमानकालिक सर्व सावद्य अनुष्ठानथी जे
निवृत्त होय ते ते सयत छे, आ व्याख्या मुज्जण जे सयत नथी ते अस
यत कडेवाय ते लूतजाणमा थध गयेला पापजर्मोपी जुगुप्सापूर्वक अने भविष्य
लावमा तेमनाथी सवरपूर्वक जे उपरत होय छे ते विरत छे, जेथे जे
मनी ते अविगत छे, जेथे जे विगतिथी रहित छे वर्तमानकालमा जेमा

कच्छुल्लनारद सप्ताष्टपदानि प्रत्युत्सृजति, नारदाभिमुखमायाति, प्रत्युत्सृज्य 'तिसुतो'
 त्रि. कृत्वः - निवार, 'आयाहिणपयाहिण' आद्रिणप्रदक्षिण करोति, कृत्वा
 वन्दते, नमस्यति इदित्वा, नरया, महाह्येण-महता योग्येन आसनेन उपनिमन्त्र
 यति । उभवेशनार्थं प्रार्थयति । ततः खलु स कच्छुल्लनारदः 'उदगपरिफासियाण'
 उदकपरिस्पृष्टायां जलच्छटेन भिक्षायां 'दम्भोपरिपचत्तुयाए' दम्भोपरिपचत्तुयाए
 तायां कुशो पर्याग्तीर्णाया 'भिसियाए' वृष्या आमननिशेषे निपीदति=उपविशति,
 निपद्य पाण्डु राजान राज्ये यावदन्तः पुरे च कुशलोदन्त-कुशलवार्ता पृच्छति,
 ततः खलु स पाण्डुराजा कुन्तीं देवीं पञ्च च पाण्डवा, कच्छुल्लनारद 'आदति'
 आद्रियन्ते यावत् पर्युपासते=सेवन्ते स्म । तत खलु सा द्रौपदी कच्छुल्लनारदम्
 'असजयअचिरयअपडिहयपञ्चस्त्रयापवाकम्मे त्ति कट्टु' असजयत्तरितापतिहता
 प्रत्याख्यातपापकमेति कृत्वा, तत्र-अपगतः-वर्तमानकालिकसर्गमायानुष्ठाननिवृत्तः

देवकर (पचहिं पडवेहिं कुनीण देवीण सद्धि आसणाओ अब्भुट्टेह)
 ये पाचो पाडवो एव कुन्ती के साथ अपने आमन से उठे। (अब्भुट्टित्ता
 कच्छुल्लनारय सत्तद्वययाइ पच्चुगगच्छइ) और उठकर सात आठ पैर
 कच्छुल्लनारद के सामने स्वागत निमित्त गये (पच्चुगगच्छित्तो तिवखु
 त्तो आयाहिणपयाहिण करेइ, करित्ता वदइ नमसइ, महरिहेण आस
 णेण उवणिमतेइ तएण से कच्छुल्लनारण उदगपरिफासियाए दम्भोवरि
 पचत्तुयाए भिसियाए णिसीयइ, णिसीयित्ता पडुराय रज्जे जाव अते
 उरेय कुसलोदत पुच्छइ, तएण से पडुराया कौंतीदेवी पचय पडवा
 कच्छुल्लनारय आदति जाव पञ्जुवासति, तएण सा दोवई कच्छुल्ल
 नारय असजयअचिरयअपडिहयपञ्चस्त्रयापवाकम्मे त्ति कट्टु नो
 आदाइ नो परियाणइ नो अब्भुट्टेइ, नो पञ्जुवासइ) जाकर के इन्होंने

अब्भुट्टेइ) तेआ पाचे पाडवे आने कुतीनी साथे पोताना आसन उपरथी
 छिआ थया (अब्भुट्टित्ता कच्छुल्लनारय सत्तद्वययाइ पच्चुगगच्छइ) आने छिआ
 थयने कच्छुल्ल नारदना स्वागत भाटे सात आठ उगला साथे गया।

(पच्चुगगच्छित्तो तिवखुत्तो आयाहिणपयाहिण करेइ, करित्ता वदइ नमसइ,
 महरिहेण आसणेण उवणिमतेइ, तएण से कच्छुल्लनारण उदगपरिफासियाए
 दम्भोपरिपचत्तुयाए भिसियाए णिसीयइ, णिसीयित्ता पडुराय रज्जे जाव अते
 उरेय कुसलोदत पुच्छइ तएण से पडुराया कौंतीदेवी पचय पडवा कच्छुल्लनारय
 आदति जाव, पञ्जुवासति, तएण सा दोवई कच्छुल्लनारय असजयअचिरयअपडि-
 हयपञ्चस्त्रयापवाकम्मे त्ति कट्टु नो आदाइ नो परियाणइ नो अब्भुट्टेइ, नो
 पञ्जुवासइ)

सयतस्तथा विधो न भवति यः सोऽसयतः=संयमरहित इत्यर्थः, अविरत=अतीत कालिन्पापाञ्जुगुप्सापूर्वक, भविष्यति च समरपूर्वकमुपरतो निवृत्तो विरतस्तथा विधो न भवति यः सोऽविरतः, निरतिरहितः, अप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा प्रतिहत=वर्तमानकाले स्थित्यनुभागहासेन नाशित तथा प्रत्याख्यात=पूर्वकृताति-

उनके लिये तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिण किया-करके उनको बंदनाकी नमस्कार किया। वदना नमस्कार करके फिर उन्होंने उनसे महान् पुत्रों के बैठने योग्य आसन पर बैठने के लिये प्रार्थना की-इस के बाद वे कच्छुल्ल नारद जल के छीटों से सिक्त हुए आसन पर कि जो दर्भ के ऊपर आस्तीर्ण या बैठ गये। बैठकर उन्होंने पांडु राजा से राज्य की यावत् अतः पुर की कुशल वर्ता पूछी। उनके पूछने पर पांडु राजाने कुन्ती देवी ने एव पांचों पांडवों ने उन कच्छुल्ल नारद को खूब आदर किया यावत् अच्छी तरह से उनकी पर्युपासना की। द्रौपदी ने उन्हें असयत, अविरत एव अप्रतिहत प्रत्याख्यतपापकर्मा जानकर उनका आदर नहीं किया, उनके आगमन की अनुमोदना नहीं की और न वह उनके आने पर उठी। वर्तमान कालिक सर्व सावध अनुष्ठान से जो निवृत्त होता है वह सयत है-ऐसा सयत जो नहीं होता है वह असयत कहलाता है। अतीत काल में हुए पापों से जुगुप्सा पूर्वक और भविष्यकाल में उनसे सवर पूर्वक जो उपरत होता

आगे लड़ने तेमले त्रिषुवार तेमनी शोमेर आदक्षिषु प्रदक्षिषुा करी त्यारपछी तेमले वदन तेमल नमन कर्या अने पछी तेमने पोताना करता मोटा माणुमोने जेसवा योग्य आसन उपर जेसवानी विनती करी त्यारआद ते उच्छुल्ल नारद पाणीना छाटाजोथी लीना पाथरेला दर्भना आसन उपर जेभी गया जेसीने तेजोअे पाडुराजने राज्यनी यावत् रणुवामनी कुशणवार्ता पूछी पाडुराज, कुतीदेवी अने पाथे पाडवेअे उच्छुल्ल नारदने भूषण आदर ज्यो यावत् सागी रीते तेमनी पर्युपासना करी तेमने असयत, अविरत अने अप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा लक्ष्मीने द्रौपदीअे तेमने आदर कर्यो नहि तेमना आगमननी अनुमोदना करी नहि अने न्यारे तेजो आंव्या त्यारे पण ते जेसी थण नहि वर्तमानकालिक सर्व सावध अनुष्ठानथी जे निवृत्त होय छे ते सयत छे, आ व्याख्या मुजण जे सयत नथी ते असयत उडेवाय जे लूतक्षणमा थण गयेला पापजर्मोथी जुगुप्सापूर्वक अने भविष्य कालमा तेमनाथी सवरपूर्वक जे उपरत होय छे ते विरत छे, जेवे जे नथी ते अविरत छे, जेटवे जे विरतिथी रहित छे वर्तमानक्षणमा जेमा

कञ्जुल्लनारद सप्ताष्टपदानि प्रत्युद्गच्छति, नारदाभिमुखमायाति, प्रत्युद्गच्छति 'तिक्खुत्तो' नि. कृत्वः - निवारं, 'आयाहिणपयाहिण' आद्रिणप्रदक्षिण करोति, कृत्वा वन्दते, नमस्यति इदित्या, नरया, महारहेण-महती योग्येन आसनेन उपनिमन्त्रयति । उववेशनार्थं प्रार्थयति । ततः खलु स कञ्जुल्लनारदः 'उदगपरिफासियाए' उदकपरिस्पृष्टाया जलच्छटेन मिक्ताया 'दम्भोवरिपचत्थुयाए' दम्भोपरिप्रन्यस्तृताया कुशोपर्याग्तीर्णाया 'गिसियाए' वृष्णा आसनप्रदेशे निपीदति=उपविशति, निपद्य पाण्डुराजान राज्ये यादन्तः पुरे न कृशलोदन्त-कृशयार्तां पृच्छति, ततः खलु स पाण्डुराजा कुन्ती देवी पञ्च च पाण्डवा, कञ्जुल्लनारद 'आदति' आद्रियन्ते यावत् पर्युपासते=सेवन्ते स्म । तत खलु सा द्रौपदी कञ्जुल्लनारदम् 'असजयअविरयअपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे त्ति कट्टु' असयताप्रिताप्रतिहता प्रत्याख्यातपापकर्मैति कृत्वा, तत्र-अगयत'-रतमानकालिससर्मापधानुष्ठाननिवृत्तः

देवकर (पञ्चहिं पडवेहिं कुन्तीण देवीण सद्धि आसणाओ अब्भुद्धेइ) ये पाचो पाडवो एव कुन्ती के साथ अपने आसन से उठे। (अब्भुद्धित्ता कञ्जुल्लनारय सत्तद्वपयाइ पच्चुग्गच्छइ) और उठकर सात आठ पैर कञ्जुल्लनारद के सामने स्वागत निमित्त गये (पच्चुग्गच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिण करेइ, करित्ता वदइ नमसइ, महारिहेण आसणेण उवणिमतेइ तएण से कञ्जुल्लनारण उदगपरिफासियाए दम्भोवरिपचत्थुयाए भिसियाए णिसीयइ, णिसीयित्ता पडुराय रज्जे जाव अते उरेय कुसलोदत पुच्छइ, तएण से पडुराया कोतीदेवी पच्चय पडवा कञ्जुल्लनारय आदति जाव पञ्जुवासति, तएण सा दोवई कञ्जुल्लनारय असजयअविरयअपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे त्ति कट्टु नो आदाइ नो परियाणइ नो अब्भुद्धेइ, नो पञ्जुवासइ) जाकर के इन्होंने

अब्भुद्धेइ) तेओ पाचे पाडवो अने कुन्तीनी साथे पीताना आसन उपरधी ठीला थया (अब्भुद्धित्ता कञ्जुल्लनारय सत्तद्वपयाइ पच्चुग्गच्छइ) अने ठीला थधने कञ्जुल्लनारदना स्वागत भाटे सात आठ उगला सामे गया

(पच्चुग्गच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिण करेइ, करित्ता वदइ नमसइ, महारिहेण आसणेण उवणिमतेइ, तएण से कञ्जुल्लनारण उदगपरिफासियाए दम्भोपरिपचत्थुयाए भिसियाए णिसीयइ, णिसीयित्ता पडुराय रज्जे जाव अते उरेय कुसलोदत पुच्छइ तएण से पडुराया कोतीदेवी पच्चय पडवा कञ्जुल्लनारय आदति जाव, पञ्जुवासति, तएण सा दोवई कञ्जुल्लनारय असजयअविरयअपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे त्ति कट्टु नो आदाइ नो परियाणइ नो अब्भुद्धेइ, नो पञ्जुवासइ)

जाव सरीरा त इच्छामिण देवाणुप्पिया । दोवई देवीं इहमा-
 णिय, तएणं पुव्वसंगइए देवीए पउमनाभं एव वयासी - नो
 खलु देवाणुप्पिया ! एयं भूयं वा भव्व वा भविस्स वा जण्ण
 दोवई देवी पचपंडवे मोत्तूण अन्नेण पुरिसेणं सद्धि ओरालाईं
 जाव विहरिस्सइ, तथा वि य णं अह तव पियट्टतयाए दोवई
 देवि इहं हव्वमाणेमि त्तिरुट्टु पउमणाभं आपुच्छइ आपुच्छित्ता
 ताए उक्किट्ठाए जाव लवणसमुद्दे मज्झंमज्जेण जेणेव हत्थिणा-
 उरे णयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए । तेण कालेणं तेणं समएण
 हत्थिणाउरे जुहिट्टिल्ले राया दोवईएसद्धि उप्पि आगासतलंसि
 सुहपसुत्ते यावि होत्था, तएण से पुव्वसंगइए देवे जेणेव जुहि-
 ट्टिल्ले राया जेणेव दोवई देवी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 दोवईए देवीए ओसोवणियं दलयइ दलित्ता दोवईं देवीं
 गिण्हइ गिण्हित्ता ताए उक्किट्ठाए जाव जेणेव अमरकका जेणेव
 पउमणाभस्स भवणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पउमणा-
 भस्स भवणंसि असोगवणियाए दोवइ देवीं ठावेइ ठावित्ता
 ओसोवणि अवहरइ अवहरित्ता जेणेव पउमणाभे तेणेव उवा-
 गच्छइ उवागच्छित्ता एव वयासी-एसणं देवाणुप्पिया मए
 हत्थिणाउराओ दोवई इह हव्वमाणीया तव असोगवणियाए
 चिट्ठइ, अतो पर तुमं जाणसित्तिरुट्टु जामेव दिसि पाउब्भूए
 तामेव दिसि पडिगए ॥ सू० २५ ॥

एउजमाणं पासइ पासित्ता आसणाओ अबुद्धेइ अबुद्धित्ता
 अग्घेणं जाव आसणेणं उवणिमतेइ, तएण से कच्छुल्लनारए
 उदगपरिफासियाए दब्भोवरिपच्चत्थुयाए भिसियाए निसीयइ
 जाव कुसलोदंत आपुच्छइ, तएणं से पउमनाभे राया णियग
 ओरोहे जायविम्हए कच्छुल्लणारयं एं वयासी-तुब्भं देवाणु
 प्पिया । वहुणि गामाणि जाव गेहाइ अणुपविससि, त अतिव
 आइं ते कर्हिच्चि देवाणुप्पिया ! एरिसए ओरोहे दिट्ठपुब्बे जा
 रिसए ण मम ओरोहे ? , तएणं से कच्छुल्लणारए पउमनाभेण
 रत्ता एव बुत्ते समाणे ईसिं विहासियं करेइ करित्ता एव वयासी
 -सरिसे णं तुम पउमणाभा ! तस्स अगडदद्दुरस्स, के ण
 देवाणुप्पिया ! से अगडदद्दुरे ? , एव जहा मल्लिणाए एव खलु
 देवाणुप्पिया ! जंबूदीवे दीवे भारहेवासे हत्थिगाउरे दुवयस्स
 रण्णे धूया चूलणीए देवीए अत्तया पंडुस्स सुग्गहा पच्चण्हं पंड-
 वाणं भारिया दोवई देवी रूवेण य जाव उक्किड्ढसरीरा दोवईए
 णं देवीए छिन्नस्सवि पायंगुट्ठयस्स अथ तव ओरोहो सतिमंपि
 कल ण अग्घत्तिककट्टु, पउमणाभं आपुच्छइ आपुच्छित्ता जाव
 पडिगए, तएणं से पउमणाभे राया कच्छुल्लणारयस्स अंतिए
 एयमट्ठ सोच्चा णिसम्म दोवईए देवीए रूवे यइ मुच्छिए ४
 दोवइए अज्झोववन्ने जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छित्ता पोसहसाल जाव पुब्बसगइय देव एवं वयासी-
 एवं खलु देवाणुप्पिया ! जंबूदीवे दीवे भारहेवासे

जाव सगीरा त इच्छामिणं देवाणुप्पिया । दोवई देवीं इहमा-
 णिय, तएणं पुव्वसगइए देवीए पउमनाभं एवं वयासी - नो
 खलु देवाणुप्पिया । एयं भूयं वा भव्वं वा भविस्स वा जणं
 दोवई देवी पचपंडवे मोत्तूण अन्नेणं पुरिसेणं सद्धि ओरालाइ
 जाव विहरिस्सइ, तथा वि य ण अह तव पियट्टतयाए दोवई
 देवि इहं हव्वमाणेमि त्तिरुट्टु पउमणाभं आपुच्छइ आपुच्छित्ता
 ताए उक्किट्ठाए जाव लवणसमुद्दे मज्झंमज्जेण जेणेव हत्थिणा-
 उरे णयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए । तेण कालेणं तेणं समएणं
 हत्थिणाउरे जुहिट्टिल्ले राया दोवईएसद्धिं उप्पि आगासतलंसि
 सुहपसुत्ते यावि होत्था, तएणं से पुव्वसंगइए देवे जेणेव जुहि-
 ट्टिल्ले राया जेणेव दोवई देवी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 दोवईए देवीए ओसोवणियं दलयइ दलित्ता दोवइ देवीं
 गिणहइ गिण्हित्ता ताए उक्किट्ठाए जाव जेणेव अमरकका जेणेव
 पउमणाभस्स भवणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पउमणा-
 भस्स भवणंसि असोगवणियाए दोवइ देवीं ठावेइ ठावित्ता
 ओसोवणि अवहरइ अवहारित्ता जेणेव पउमणाभे तेणेव उवा-
 गच्छइ उवागच्छित्ता एव वयासी-एसणं देवाणुप्पिया मए
 हत्थिणाउराओ दोवई इह हव्वमाणीया तव असोगवणियाए
 चिट्ठइ, अतो पर तुंमं जाणसित्तिरुट्टु जामेव दिसि पाउव्भूए
 तामेव दिसि पडिगए ॥ सू० २५ ॥

टीका- 'तण तस्य' इत्यादि । नमः । तस्य कच्छुलनारयस्य अयमत
 रूपः आध्यात्मिकगिनित, प्रार्थितः कल्पितो मनोगत, मान्य समुत्पद्यत, अहो !
 खलु द्रौपदी देवी रूपेण यावत् 'अहो नो य पञ्चमि' पाण्डुरीरनुसद्मामनी मा नो
 आद्रियते यावत् नो पर्युपास्ते, तत्=तस्मात् नो य खलु मम द्रौपद्या दव्या ' वि
 प्रिय करित्तए' विप्रिय कर्तुम्, पाण्डुराह्वय-सायमानार्थिना विप्रियक्षिता जाता

-:तण तस्य कच्छुलनारयस्य इत्यादि ।

टीकार्थ-(तण) उसके बाद (तस्य कच्छुलनारयस्य) उन कच्छुल
 नारदको (इमेयाह्वये) यह उस रूप (अञ्जलित्विण, चिनिण, पत्विण, मणो
 गए, सरूप्ये समुत्पज्जित्या) आध्यात्मिक, चिन्तित, प्रार्थित, मनोगत
 सकल्प उत्पन्न हुआ । (अहो नो दोवई देवी रूपेण जाव लावण्येण य पचहिं
 पडवेहिं अणुवद्धा समाणी मम णो आडाड, जाव नो पज्जुवासइ त
 सेय खलु मम दोवईए देवीण विप्रिय करित्तए त्ति कट्टु एव सपेहेइ,
 सपेहिता पडुराय आपुच्छइ आपुच्छित्ता उप्पयणिं विज्ज आवाहेइ
 आवाहिता ताए उक्किट्ठाए जाव विज्जाहरगईए लगणसमुद्द मज्झ
 मज्झेण पुरत्याभिमुहे वीइवइउ पयत्ते यावि होत्वा) देखो-यह किनने
 आश्चर्य की बात है कि द्रौपदी देवी ने रूप यावत् लावण्य से पावों
 पाडवों के साथ भोगासक्त बनकर मेरा कोउ आदर नहीं किया है यावत्
 किसी भी प्रकार की पर्युपासना नहीं की है । इसलिये अब मुझे यही
 उचित- श्रेयस्कर है कि मैं इस द्रौपदी देवी का विप्रिय करूँ-अनिष्टकरूँ

तण तस्य कच्छुलनारयस्य इत्यादि ॥

टीकार्थ-(तण) त्थारपधी (तस्य कच्छुलनारयस्य) ते कच्छुल नारदने
 (इमेयाह्वये) आ नतने (अञ्जलित्विण, चित्तिण, पत्विण, मणोगए, सरूप्ये
 समुत्पज्जित्या) आध्यात्मिक, चिन्तित, प्रार्थित, मनोगत सकल्प उत्पन्न के
 (अहो नो दोवई देवी रूपेण जाव लावण्येण य पचहिं पडवेहिं अणुवद्धा
 समाणी मम णो आडाड, जाव नो पज्जुवासइ त सेय खलु मम दोवईए देवीए
 विप्रिय करित्तए त्ति कट्टु एव सपेहेइ, सपेहिता पडुराय आपुच्छइ आपुच्छिता
 उप्पयणिं विज्ज आवाहेइ आवाहिता ताए उक्किट्ठाए जाव विज्जाहरगईए लग
 समुद्द मज्झ मज्झेण पुरत्याभिमुहे वीइवइउ पयत्ते यावि होत्वा)

बुझो, आ देवी नवाधनी वात छे के द्रौपदी देवीअ इए यावत् लाव
 ष्यथी पावे पाडवानी साथे भोगासक्त थधने भारे केध पणु रीते आदर
 कर्यो नथी यावत् केध पणु नतनी पर्युपासना करी नथी अथी हवे भने
 अथे नथे योअ नथुअ छे के अने ते रीते द्रौपदीवुं व

तस्मान्मद्रापहरणेन अस्याः प्रतिफलचरणं श्रेयः इति भावः । इति कृत्वा=इति मनसि निधाय एव सगेक्षते=पर्यालोचयति, समेक्ष्य पाण्डु राजानमापृच्छ्य 'उप्य यणि विज्ज' उन्नतनीम्-विद्याम् 'आत्राहेड' जात्राहयति स्मरति आवाह्य, मत्वा तथा उत्कृष्टया यावद् विद्याधरगत्या लक्षणसमुद्भय मध्यमध्येन पौरस्त्याभिमुखः= पूर्वदिग्भिमुखः, 'वीड्यदु पयत्ते' व्यतिप्रजितु प्रवृत्तः=गमनतत्परश्चाप्यभवत् ।

तस्मिन् काले तस्मिन् समये 'धायईसडे' धातुकीपण्डे धातुकीपण्डनामके, द्वीपे 'पुरत्यिमद्वाहिण्डुभरहवासे' पौरस्त्यार्धदक्षिणार्ध-भारतपर्ये=पूर्वदिग्वर्तिनि दक्षिणार्धभरतक्षेत्रे अमरकका नाम राजधानी आसीत् । तत्र खलु अमरककाया राजधान्या पञ्चनाभो नाम राजाऽभवत् । स कीदृश इत्याह-'महया हिमधतमहतमलयमदग्महिंसारे' महा-हिमयन्ममामत्रयमन्दरमहेन्द्रसारः=महाहिमवानि तया-महामलयमन्दरमहेन्द्रवत् सार=प्रधान । अन्यनृपापेक्षयाऽधिकमहत्त्वादिगुणत्रिभैश्वर्यसम्पन्न इत्यर्थः, विस्तरतस्तु व्याख्यान प्रथमाध्ययने कृतम्,

यह इस समय पांडवों द्वारा कृत सत्कार सम्मान से गर्विष्ठ बनी हुई है-सो विवेक रहित बन गई है-इसलिये इसके मद को उतारना चाहिये अतः इसके प्रतिकूल आचरण करना यही मुझे श्रेयस्कर है । इस प्रकार मन में रखकर उन्होंने ने विचार क्रिया-विचार करके फिर उन्होंने ने पांडुराज से पूछा हे राजन् हम जाते हैं-पूछकर उन्होंने ने उत्पतनी नाम की विद्या का आह्वान किया स्मरण क्रिया-स्मरण कर के उस उत्कृष्ट यावत् विद्याधर सत्रन्धी गति से बटा से पूर्व दिशा की तरफ मुख कर के वे उड़ने में प्रवृत्त भी हो गये-(तेण कालेण तेण समणण धायईसडे दीवे पुरत्यिमद्वाहिण्डुभरहवासे अमरकका नामरायहाणी होत्वा-तएणं अमरककाण रायहाणीण पउमणाभे णाम राजा होत्वा, महया हिमधत०

ते आ पांडवो वडे मत्सृत तेभञ्ज मनमानीत वणि गर्विष्ठा णनी गड्ठे तेथी ते अविवेक्षी थध पडी छे, श्रेथी डवे शेना मद्दने उतारयो ज्जेऽब्बे, शेना विइद्ध आचरवु तेऽब्बे, आ प्रभाण्णे तेऽब्बेअने मनभा विचार कथो विचार ऽनीने तेभण्णे पांडुरायने पूच्छु डे डे गणन् । अग्गे ज्जे, अग्गे प्रभाण्णे पूथीने तेऽब्बेअने उत्पतनी नामनी विद्यानु आह्वानं कथुं, सम्गच्छं कथुं -भरणु ऽरीने ते उत्कृष्ट यावत् विद्याधर सत्रन्धी गतिवती त्याथी पूर्व दिशां भण्णी मुखं ऽरीने उडवा लाग्या (तेण कालेण तेण समणण धायईसडे दीवे पुरत्यिमद्वाहिण्डुभरहवासे अमरककाण रायहाणीण पउमणाभे णाम राया

वर्णक = वर्णनं पूर्वोक्तयद् रोध्यम्, तस्य खलु पद्मनामस्य राज्ञः 'सत्तदेवीसयाइ' सप्तदेवीशतानि=देवीनां राज्ञीनां शतानि-सप्तशतानिभार्याः 'ओरोहे' अवरोधे= अन्तःपुरे आसन् तस्य खलु पद्मनामस्य राज्ञः सुनामो नाम पुत्रो युवराजश्चाप्य भवत् । ततः खलु स पद्मनामो राजा अतः प्रदेशे 'अतेउरसि' अन्तःपुरे 'आरोहसंपरिवुडे' अवरोधसपरिवृतः - स्त्रीपरिवारमपरिवृत', सिंहासनवरगतो विहरति-आस्तेस्म ।

वण्णओ तस्सण पडमनाभस्स रण्णो सत्तदेवीसयाइ ओरोहे होत्था तस्स ण पडमनाभस्स रण्णो सुनामे नाम पुत्ते जुवराया यावि होत्था तएण से पडमणाभे राया अतो अतेउरसि ओरोहसपरिवुडे सिंहासण वरगण विहरइ) उस काल और उस समय में धातकी पड नाम के द्वीप में पूर्व दिग्बर्ती दक्षिणार्ध भरत क्षेत्र में अमरकका नाम की राजधानी थी। उस अमरकका नाम की राजधानी में पद्मनाभ नाम का राजा रहता था। यह राजा महा हिमवान् पर्वत की तरह तथा महा मलय, मन्दर एवं माहेन्द्र की तरह अन्य राजाओं की अपेक्षा अधिक महत्त्वादिगुणों से विभव से एवं ऐश्वर्य से सपन्न था। इन पदों का विस्तार पूर्वक वर्णन प्रथम मेघकुमार अध्ययन में किया जा चुका है। इस राजा का वर्णन पहिले की तरह जानना चाहिये। उस पद्मनाभ राजा के अतःपुर में ७०० सात सौ रानिया थीं। सुनाभ नाम का पुत्र था जो युवराज था, पद्मनाभ राजा के यहां एक दिन की बात है

होत्था, महया हिमवत० वण्णओ, तस्सण पडमनाभस्स रण्णो सत्तदेवी सयाइ ओरोहे होत्था तस्स ण पडमनाभस्स रण्णो सुनामे नाम पुत्ते जुवराया यावि होत्था तएण से पडमणाभे राया अतो अते उरसि ओरोहसपरिवुडे सिंहासणवरगण विहरइ)

ते क्षणे अने ते सभये धातडी पड नामे द्वीपमा पूर्वं दिशा तन्दिना दक्षिणार्ध भरत क्षेत्रमा अमरकका नामे राजधानी इती ते अमरकका नामे राजधानीमा पद्मनाभ नामे राजा रहतेते इतो ते राजा महा हिमायल पर्व तनी जेम तेमज महामलय, मन्दर अने महेन्द्रनी जेम धीला गलओ करता वधादे महत्तर वगेरे गुणोधी, वैभवधी अने ऐश्वर्यधी सपन्न इतो आ पढोतु सविस्तार वर्णन प्रथम मेघकुमार अध्ययनमा करवामा आओउ छे आ राजातु वर्णन पखु पढेदानी जेम ज सभजतु लोडओ ते पद्मनाभ राजाना रणुवासमा ७०० राणीओ इती, सुनाभ नामे तेने पुत्र इतो, जे युवराज इतो ओउ दिवसनी बात छे के ते पद्मनाभ राजा रणुवासमा श्री परिवारनी साथे सिंहा सन उपर ओडा इता

तत खलु स कच्छुल्लनारदो यत्रैवामरकृद्धाराजधानी यत्रैव पद्मनाभस्य भवन तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य पद्मनाभस्य राज्ञो भवने ' झत्ति ' झटिति वेगेन ' समोवइए ' समुपेत = आकाशादवतीर्णः । ततः खलु स पद्मनाभो राजा कच्छुल्लं नारद एजमानम्-आगच्छन्त पश्यति, दृष्ट्वा आसनादभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थायाद्यर्घ्येण यापदासनेन उपनिमन्त्रयति-जलमासन च ग्रहीतु प्रार्थयति । ततः खलु स कच्छुल्ल

कि अत पुर के भीतर स्त्री परिवार के साथ सिंहासन पर बैठे हुए थे । (तएण से कच्छुल्लनारए जेणेव अमरकृका रायहाणी जेणेव पउम नामस्स भवणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पउमणाभस्स रण्णो भवणंसि झत्तिवेगेणं समोवइए, तएण से पउमनाभे राया कच्छुल्ल नारय एज्जमाण पासइ, पामित्ता आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता अग्घेणं जाव आमणेण उवणिमतेइ, तएण से कच्छुल्लनारए उदग परिफासियाए दग्घोपरिपच्चत्तुयाए भिसियाए निसीयइ जाव कुसलोदत आपुच्छइ) वे कच्छुल्ल नारद जहा अमर कृका राजधानी थी, जहा पद्मनाभ का भवन था वहाँ आये । आकर के वे पद्मनाभ राजा के भवन में बहुत शीघ्र वेग से उतरे । पद्मनाभ राजा ने जैसे ही कच्छुल्ल नारद को आते हुए देखा तो देखकर के अपने आसन से उठे और उठकर के उन्हो ने उन्हे अर्घ्य यावत् आसन से आमन्त्रित किया ।

(तएण से कच्छुल्लनारए जेणेव अमरकृका रायहाणी जेणेव पउमनाभस्स भवणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पउमणाभस्स रण्णो भवणंसि झत्तिवेगेणं समोवइए, तएण से पउमनाभे राया कच्छुल्ल नारय एज्जमाण पासइ, पामित्ता आमणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता अग्घेणं जाव आसणेण उवणिमतेइ, तएण से कच्छुल्लनारए उदगपरिफासियाए दग्घोपरिपच्चत्तुयाए भिसियाए निसीयइ जाव कुसलोदत आपुच्छइ)

ते कच्छुल्ल नारद ज्या अमरकृका राजधानी हुती, ज्या पद्मनाभसु भवन हुतु त्या आव्या, आवीने ते पद्मनाभ राजना भवनमा शीघ्र वेगधी उतया पद्मनाभ राजन्हे ज्यारे कच्छुल्ल नारदने आपता जेया त्यारे तेज्जे पिताना आसन उपरधी जिला थया अने जिला थधने तेभजे तेज्जेने अर्घ्य यावत्

वर्णक = वर्णनं पूर्वेक्तान्दु रोध्यम्, तस्य खलु पद्मनाभस्य राज्ञः 'सप्तदेवीमया' सप्तदेवीशतानि = देवीनां राक्षिणां शतानि - सप्तशतानिभार्या 'ओरोहे' अवरोधे = अन्तःपुरे आसन् तस्य खलु पद्मनाभस्य राज्ञः सुनाभो नाम पुत्रो युवराजश्चाप्य भवत् । ततः खलु स पद्मनाभो राजा अतः प्रदेशे 'जतेउरसि' अतः पुरे 'ओरोहसंपरिवुडे' अरोधसपरिवृतः - स्त्रीपरिवारमपरिवृत, सिंहासनवरगतो विहरति - आस्तेस्म ।

चण्णओ तस्सण पडमनाभस्स रण्णो सत्तदेवीसयाइ ओरोहे होत्या तस्स ण पडमनाभस्स रण्णो सुनाभे नाम पुत्ते जुवराया यावि होत्या तएण से पडमणाभे राया अतो अतेउरसि ओरोहसपरिवुडे सिंहासणवरगए विहरइ) उस काल और उस समय में घातकी पड नाम के द्वीप में पूर्व दिग्बर्ती दक्षिणार्ध भरत क्षेत्र में अमरकका नाम की राजधानी थी। उस अमरकका नाम की राजधानी में पद्मनाभ नाम का राजा रहता था। यह राजा महा हिमवान् पर्वत की तरह तथा महा मलय, मन्दर एवं माहेन्द्र की तरह अन्य राजाओं की अपेक्षा अधिक महत्त्वादिगुणों से विभन्न से एवं ऐश्वर्य से संपन्न था। इन पदों का विस्तार पूर्वक वर्णन प्रथम मेघकुमार अध्ययन में किया जा चुका है। इस राजा का वर्णन पहिले की तरह जानना चाहिये। उस पद्मनाभ राजा के अतःपुर में ७०० सात सौ रानियां थीं। सुनाभ नाम का पुत्र था जो युवराज था, पद्मनाभ राजा के यहा एक दिन की बात है

होत्या, महया द्विगत० चण्णओ, तस्सण पडमनाभस्स रण्णो सत्तदेवी सयाइ ओरोहे होत्या तस्स ण पडमनाभस्स रण्णो सुनाभे नाम पुत्ते जुवराया यावि होत्या तएण से पडमणाभे राया अतो अते उरसि ओरोहसपरिवुडे सिंहासणवरगए विहरइ)

ते आणे अने ते समथे घातकी पड नामे द्वीपमा पूर्वं दिशा तन्दिना दक्षिणार्ध भरत क्षेत्रमा अमरकका नामे राजधानी इती ते अमरकका नामे राजधानीमा पद्मनाभ नामे राजा रहते। इतो ते राजा महा हिमायल पर्व तनी जेम तेमज महाभवय, मन्दर अने माहेन्द्रनी जेम धीज्ज गज्जो करता वधादे महत्तर पगेरे गुण्णोधी, वैलवथी अने ऐश्वर्यथो स पन्न इतो आ पटोतु सविस्तार वर्णन प्रथम मेघकुमार अध्ययनमा करवाभा आण्यु छे आ राजतु वर्णन पछु पडेलानी जेम ज समज्जु जेधये ते पद्मनाभ राजाना रज्जुवासमा ७०० राणीओ इती, सुनाभ नामे तेने पुत्र इतो, जे युवराज इतो जेउ द्विसनी वात छे के ते पद्मनाभ राजा रज्जुवासमा श्री परिवारनी साथे सिंहा सन उपर गेडा इता

देवानुप्रिय ! ईदृशोऽवरोधो दृष्टपूर्वो यादृशः खलु ममावरोधः ? ममान्तः पुरे यादृश्यः स्त्रियो र्तन्ते, तादृश्य स्त्रियः कुत्रापि भवता दृष्टा इति पृच्छतीत्यर्थः । ततः खलु स कञ्चुल्लनारदः पद्मनाभेन राजा एवमुक्त सन् ' ईपद् विद्वसित ' मन्दहास करोति, कृत्वा एवमवादीत्—हे पद्मनाभ ! सदृशस्त्वं खलु तस्य ' अगडददुर्दुरस्त ' अगडददुर्दुरस्त=कूपमण्डूरुस्त यथा कूपमण्डूरुः कूपाद् वहिः प्रदेशे त्रियमान न किमपि जानाति, तद्वत् त्वमपि स्वभवनाद् बहिरन्यत्राप्रस्थित किमपि वस्तु न वेत्सीति भावः । कञ्चुल्लनारदस्य वचन श्रुत्वा पद्मनाभः कञ्चुल्लनारद पृच्छति—'के ण देवाणुप्पिया ! से अगडददुर्दुरे ' इति । हे देवानुप्रिय ! कः खलु सोऽगडददुर्दुरः ? एव पद्मनाभेन राजा पृष्टः सन् कञ्चुल्लनारदः प्राह—' एव यथा मल्लिणाए ' यथा मल्लिज्ञाने वर्णितमेवमत्र गोध्यम् समुद्रददुर्दुरकूपददुर्दुरयोः परस्परवार्तालापो यथा सजातस्तथा कञ्चुल्लनारदेन कथित इत्यर्थः । पुनः कञ्चुल्ल-

कहा—हे देवानुप्रिय ! तुम अनेक ग्राम यावत् से घरों में आते जाते रहते हो—तो क्या हे देवानुप्रिय ! तुमने कहीं पर क्या ऐसा अतः पुर पहिले कभी देखा है—जैसा मेरा अन्तः पुर है ? पद्मनाभ राजा के द्वारा इस प्रकार पूछे गये वे कञ्चुल्ल नारद कुछ हँसने लगे—हँसकर तब उन्होंने ने उनसे इस प्रकार कहा—हे पद्मनाभ ! तुम उस कूपमण्डूरु के समान हो—जो अपने निवासस्थान भूत कुए से बाहिरी प्रदेश में विद्यमान कुछभी नहीं जानते हो । कञ्चुल्ल नारद के वचन सुनकर के पद्मनाभ ने उन कञ्चुल्ल नारद से पूछा—देवानुप्रिय ! वह अगडददुर्दुर का आख्यान कैसा है ? तब नारद ने उनसे कहा—मल्लि नाम के अध्ययन में कूपमण्डूरु और समुद्र मण्डूरु के परस्पर में वार्तालाप के रूप में यह आख्यान वर्णित किया हुआ है—सो नारद ने यह आख्यान जैसे का तैसा उन्हें सुना दिया— पुनः कञ्चुल्ल नारद उनसे

कोई पणु स्थाने अने कोई पणु द्विसे आवो भारा जेयो रणुवास जेयो छे ? पद्मनाभ राजा वडे आ रीते प्रश्न पूछाजेलो ते कञ्चुल्ल नारद डसवा लाग्या, डमीने तेजोअे तेभने आ प्रभाणु उछु डे डे पद्मनाभ ! तमे ते कूप मण्डूरु जेवा छे डे जे पोताना निवासस्थान कूपथी गडारना प्रदेश विषे थोडु पणु ज्ञान धरावतो नथी कञ्चुल्ल नारदना वचन सालणीने पद्मनाभे ते कञ्चुल्ल नारदने पूछथु डे डे देवानुप्रिय ! ते अगड ददुर्दुरकनु आख्यान डेवी रीते छे ? त्तारे नारद तेभने मल्लि नामे अध्ययनमा वणुववाभा आवेला कूप मण्डूरु अने समुद्र मण्डूरुना वार्तालाप इपे ते सपणु आख्यान तेभने कही सालणावु

नारदः उदरुपरिस्पृष्टायां-जन्ममिपित्तायां दर्भोपरि प्रत्यरत्नतायां वृष्याम् आस
 नशेपे निपीदति, यावत् कुशलोदन्त=कुशलवार्ताम् आपृच्छति=पुत्रोपविष्टं तं
 कच्छुल्लनारद पद्मनाभः कुशलवार्ता पृच्छतीत्यर्थ । तत्र खलु स पद्मनाभो राजा
 निजकामरोगे धीपरिवारे जातरिस्मयः=समुत्पन्नार्गः, कच्छुल्लनारदम् एव-
 पश्यमाणक्रमेण, अगदीत्-हे देवानुप्रिय । त्वं घृह्ण ग्रामान् यावत् गृहाणि अनु-
 प्रविशति, तत्=तस्माद् अस्ति ' आइ ' इति नाम्नाद्द्वारे ते=त्वया कुत्रचिद् हे

इसके बाद वे कच्छुल्लनारद जल के त्रोटो से सिंचित आसन पर जो
 दर्भ के ऊपर बिठा हुआ था बैठ गये-बैठकर उन्होंने ने पद्मनाभ राजा
 से कुशलवार्ता पूछा । पद्मनाभ राजा ने भी सुगम पूर्वक बैठे हुए उन
 कच्छुल्ल नारद से उन के कुशल समाचार पूछे । (तण्ण से पउमनाभे
 राया णियगओरो हे जायविम्हए कच्छुल्लणारयं एवं वयासी-तुम्भ
 देवाणुप्पिया ! बहूणि गामाणि जाव गेहाइ अणुपविससि त अत्थि आइ
 ते कर्हि चि देवाणुप्पिया ! एरिसए ओरोहे दिट्ठपुव्वे, जारिसए णं मम
 ओरोहे ? तण्ण से कच्छुल्लणारए पउमनाभेण रत्ता एव बुत्ते समाणे ईसिं
 विहसिय करेइ, करित्ता एव वयासी-सरिसेण तुम पउमणाभा ! तस्स
 अगड ददुदुरस्स, केणं देवाणुप्पिया ! से अगडददुदुरे ! एव जहा मल्लि
 णए एव खलु देवाणुप्पिया !) इसके बाद पद्मनाभ राजा ने अपने
 अतःपुर में विस्मित बनकर कच्छुल्लनारद से इस प्रकार

आसन उपर भेसवा भाटे विनती करी त्पारपथी ते कच्छुल्ल नारद पाणीना
 छाटाओथी सिंचित दर्भना उपर पाथरेला आसन उपर भेसीने पद्मनाभ राजने
 तेओना परिवारनी कुशलताना सभाआरो पूछया पद्मनाभ राजने पणु आसन
 उपर सुभेथी बैठेला ते कच्छुल्लनारदने कुशल सभाआरो पूछया

(तण्ण से पउमनाभे राया णियगओरोहे जायविम्हए कच्छुल्लणारय
 एवं वयासी-तुम्भ देवाणुप्पिया ! बहूणि गामाणि जाव गेहाइ अणुपविससि, त
 अत्थि आइ ते कर्हि चि देवाणुप्पिया ! एरिसए ओरोहे दिट्ठपुव्वे जारिसए णं मम
 ओरोहे ? तण्ण से कच्छुल्लणारए पउमनाभेण रत्ता एव बुत्ते समाणे ईसिं विह
 सिय करेइ, करित्ता एव वयासी-सरिसेण तुम पउमणाभा ! तस्स अगडददुदुरस्स
 केण देवाणुप्पिया ! से अगडददुदुरे ? एव जहा मल्लिणाए एव खलु देवाणुप्पिया !)

त्पारपथी पद्मनाभ राजने पोताना रणुवासना वैलवने नेधने आश्वथं
 यधने कच्छुल्ल नारदने आ प्रभाणु कधु के डे देवानुप्रिय ! तमे धणु ग्राम
 यावत् धरोभा आवण करता रहे छे तो हे देवानुप्रिय ! , पडेला

देवानुप्रिय ! ईदृशोऽवरोधो दृष्टपूर्वो यादृशः खलु ममावरोधः ? ममान्तः पुरे यादृश्यः स्त्रियो वर्तन्ते, तादृश्य स्त्रियः कुत्रापि भवता दृष्टा इति पृच्छतीत्यर्थः । ततः खलु स कञ्चुल्लनारदः पद्मनाभेन राज्ञा एवमुक्त सन् ' ईपद् विहसित ' मन्दहास करोति, कृत्वा एवमवादीत्—हे पद्मनाभ ! सदृशस्त्वं खलु तस्य ' अगडददुर्दुरस्स ' अगडददुर्दुरस्य=कूपमण्डूकस्य यथा कूपमण्डूकः कूपाद् वहिः प्रदेशे त्रिभ्रमान नकिमपि जानाति, तद्वत् त्वमपि स्वभवनाद् बहिरन्यत्रापस्थित किमपि वस्तु न वेत्सीति भावः । कञ्चुल्लनारदस्य वचन श्रुत्वा पद्मनाभः कञ्चुल्लनारदं पृच्छति—' के ण देवाणुप्पिया ! से अगडददुर्दुरे ' इति । हे देवानुप्रिय ! कः खलु सोऽगडददुर्दुरः ? एव पद्मनाभेन राज्ञा पृष्ठः सन् कञ्चुल्लनारदः प्राह—' एव यथा मल्लिणाए ' यथा मल्लिज्ञाने वर्णितमेवमत्र गोध्यम् समुद्रदुर्दुरकूपददुर्दुरयोः परस्परवार्तालापो यथा सजातस्तथा कञ्चुल्लनारदेन कथित इत्यर्थः । पुनः कञ्चुल्ल-

कहा—हे देवानुप्रिय ! तुम अनेक ग्राम यावत् से घरों में आते जाते रहते हो—तो क्या हे देवानुप्रिय ! तुमने कहीं पर क्या ऐसा अतः पुर पहिले कभी देखा है—जैसा मेरा अन्तः पुर है ? पद्मनाभ राजा के द्वारा इस प्रकार पूछे गये वे कञ्चुल्ल नारद कुछ हँसने लगे—हँसकर तब उन्होंने उनसे इस प्रकार कहा—हे पद्मनाभ ! तुम उस कूपम डूक के समान हो—जो अपने निवासस्थान भूत कुए से बाहिरी प्रदेश में विद्यमान कुछभी नहीं जानते हो । कञ्चुल्ल नारद के वचन सुनकर के पद्मनाभ ने उन कञ्चुल्ल नारद से पूछा—देवानुप्रिय ! वह अगडददुर्दुर का आख्यान कैसा है ? तब नारद ने उनसे कहा—मल्लि नाम के अध्ययन में कूपमडूक और समुद्र मडूक के परस्पर में वार्तालाप के रूप में यह आख्यान वर्णित किया हुआ है—सो नारद ने यह आख्यान जैसे का तैसा उन्हें सुना दिया— पुनः कञ्चुल्ल नारद उनसे

कोई पशु स्थाने अने कोई पशु द्विसे आवे मारा जेवा रणुवास जेयो छे ? पद्मनाभ राजा बडे आ रीते प्रश्न पूछाजेलो ते कञ्चुल्ल नारद इसवा लाग्या, हुम्मीने तेज्याजे तेमने आ प्रभाजे कछु के छे पद्मनाभ ! तमे ते कूप म डूक जेवा छे के जे पोताना निवासस्थान कूपथी पहारना प्रदेश विषे थोडु पशु ज्ञान धरावतो नथी कञ्चुल्ल नारदना वचन सालणीने पद्मनाभे ते कञ्चुल्ल नारदने पूछ्यु के छे देवानुप्रिय ! ते अगड ददुर्दुरतु आख्यान देवी रीते छे ? त्यारे नारद तेमने भक्ति नामे अध्ययनमा पशुववाभा आवेला कूप म डूक अने समुद्र-म डूकना वार्तालाप रूपे ते स पूछु आख्यान तेमने कही सालणाव्यु

नारदोवदति-एव प्रक्षयमाणमकारेण सलु हे देवानुप्रिय । जम्बूद्वीपे द्वीप भारते
 वर्षे हस्तिनापुरे नगरे द्रुपदस्य राज्ञो द्रुहिता गूलन्या देव्या आत्मजा पाण्डोः
 स्तुपा पश्चाना पाण्डवाना भार्या द्रौपदी देवी रूपेण च यावद् उत्कृष्ट शरीरा वर्तते
 द्रौपयाः खलु देव्याश्चित्रस्यापि पादाद्भुष्टस्याय तमारोह. तथा त.पुरवर्तिनी
 काचिदपि देवी 'सयतमपि कठ' शततमामपि कर्त्रा नार्हति, इति कृत्वा-एव
 ज्ञात्वा कथयामि-द्रौपदीसदृशी नास्ति काचिदपीति । ततः कञ्जुल्लनारदोगन्तुकाम.

फरते हैं कि हे देवानुप्रिय । सुनो-घात इस प्रकार है-(जबू द्वीपे द्वीपे
 भारते वासे हस्तिनापुरे द्रुपदस्य रण्णो धूया, चूलणीण देवीण अत्तया
 पडुस्स सुण्हा, पचण्ह पडवाण भारिया दोवई देवी रूपेण य जाव उक्किह
 सरीरा, दोवईण ण देवीण चित्रस्स वि पायगुट्टयस्स अय तव अवरोहो सय
 यमपिकल ण अग्वई त्ति कट्टु पउमणाभ आपुच्छइ आपुच्छित्ता जाव पडि
 गए, तएण से पउमणाभे राया कच्चुल्लणारयस्स अतिए णमट्ट सोच्चा
 णिसम्म दोवइए, देवीए रूपे य च्छिइए ४ दोवईण अज्जोववन्ने जेणेव पोस
 हसाला तेणेव उवागच्छइ) जम्बूद्वीप नाम के प्रथम द्वीप (मध्य जम्बूद्वीप
 में) में भारतवर्ष में, हस्तिनापुर नाम के नगर में द्रुपद राजा की पुत्री
 चुलनी देवी की आत्मजा, पांडु राजा की स्तुपा-पुत्रवधू-पाच पाडवों
 की भार्या द्रौपदी देवी है । यह रूप से यावत् उत्कृष्ट शरीर है । तुम्हारा
 यह अतःपुर उसके कटे हुए पैर के अगूठे के सौंवे अक्ष के बराबर

अने त्थारपथी कञ्जुल्ल तेभने कडेवा लाग्या के डे देवानुप्रिय । आलणो,
 वात अेवी छे के—

(जबू द्वीपे द्वीपे भारतेवासे हस्तिनापुरे द्रुपदस्य रण्णो धूया, चूलणीण
 देवीण अत्तया पडुस्स सुण्हा, पचण्ह पडवाण भारिया दोवई देवी रूपेण य जाव
 उक्किहसरीरा, दोवईण ण देवीण चित्रस्स वि पायगुट्टयस्स अय तव अवरोहो
 सयन्नमपि कल ण अग्वई त्ति कट्टु पउमणाभ आपुच्छइ, आपुच्छित्ता जाव पडि
 गए, तएण से पउमणाभे राया कच्चुल्लणारयस्स अतिए णमट्ट सोच्चा णिसम्म
 दोवईए, देवीए रूपेय मुच्छिइए ४ दोवईण अज्जोववन्ने जेणेव पोसहसाला
 तेणेव उवागच्छइ)

जम्बू द्वीप नामना प्रथम द्वीपमा भारत वर्षमा हस्तिनापुर नामे नग
 रमा द्रुपद राज्ञानी पुत्री चूलनी हेवीनी आत्मजा, पांडु राज्ञानी स्तुपा-पुत्रवधू
 पाच पाडवोनी पत्नी द्रौपदीदेवी छे ते इपथी यावत् उत्कृष्ट शरीरवाणी छे
 तमारो आ रजुवास तेना कथायेसा अज्ञाना सोमा लागनी अरोअर पञ्च
 नथी, आ अथु हु विचारपूर्वक कही रह्यो छे द्रौपदी देवी ' ' पञ्च

पद्मनाभमापृच्छति, पृष्ठा यावत् पद्मनाभेन राज्ञा सत्कार प्राप्य प्रतिगतः=उत्पतनी
विद्यया गगनमुद्गयन् प्रतिगत इत्यर्थः ।

तत खलु स पद्मनाभो राजा कञ्जुल्लनारदस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा=
आकर्ष्य निश्चय्य हृत्प्रधार्य द्रोपद्या देव्या रूपे च यौवने च लावण्ये च मूर्च्छितः=
आसक्तः, गृद्धः = लोलुपः, ग्रथितः=निवृत्तचित्तः, अयुपपन्न. = एकाग्रचित्त
सन् यत्रैव पौषधशाला तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य पौषधशाला प्रमार्ज्य यावदप्टम
मक्त कृत्वा ' पूर्वमगतिक ' पूर्वमित्र देवम् एव=यक्ष्यमाणप्रकारेण अरादीत् एव
खलु हे देवानुप्रिय ! जम्बूद्वीपे द्वीपे भारत वर्षे हस्तिनापुरे पाण्डवभार्या द्रोपदी
देवी यावत्-उत्कृष्टशरीरा वर्तते, तत्=तस्माद् इच्छामि खलु हे देवानुप्रिय !

भी नहीं है। ऐसा मैं जानकर ही कह रहा हूँ। द्रौपदी के जैसी कोई
भी नारी नहीं है। उस प्रकार कहकर वे कच्छुल्ल नारद वहाँ से चलने
के लिये अभिलाषी बन गये-तब उन्होंने पद्मनाभ राजा से जाने के
लिये पूछा पूछकर यावत् वे वहाँ से पद्मनाभ राजा से सत्कृत होकर
उत्पतनी विद्या के प्रभाव से गगन तल को उल्लंघन करते हुए वापिस
चले गये। इसके बाद वे पद्मनाभ राजा कच्छुल्ल नारद के मुख से
इस समाचार रूप अर्थ को सुनकर और उसे हृदय में धारण कर
द्रौपदी देवी के रूप, यौवन एव लावण्य में मूर्च्छित ४ बन गये, यावत्
उनका चित्त उन में विलकुल एकाग्र हो गया। इस तरह होकर, वे
जहाँ पौषधशाला थी वहाँ गये। (उवगच्छित्ता पौमहसालं जाव
पुव्वसगइय देव एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ! जव्वहीवे दीवे
भारहे वासे हत्थिणाउरे जाव सरीरा त इच्छामि ण देवाणुप्पिया !

नथी आ प्रभाणु क्खीने ते कच्छुल्ल नारद त्याधी आलवा भाटे तेरथा
थध गया तेमणु पद्मनाभ राजने जवा भाटे पूछयु, पूछीने यावत् त्याधी
तेओ पद्मनाभ राजनी पासैथी सत्कृत थधने उत्पतनी विद्याना प्रभावधी आका
शने ओणगता जता रद्धा त्यारपधी ते पद्मनाभ राज कच्छुल्ल नारदना
मुणधी आ समाचारने मालणीने अने तेने हृदयमा धारणु उरीने द्रौपदी
देवीना इप, यौवन अने लावण्यधी मूर्च्छित ४ थध गया, यावत् तेमनु मन
तेमा अेकदम थोटी गयु आ स्थितिमा तेओ न्या पौषधशाणा इती त्या गया

(उवागच्छित्ता पौमहसालं जाव पुव्वसगइय देव एव वयासी एव खलु
देवाणुप्पिया ! जव्व हीवे दीवे भारहे वासे हत्थिणाउरे जाव सरीरा त इच्छामि
ण देवाणुप्पिया ! दोबई देवी इहमाणिय तपण पुव्वसगइय देवे पद्मनाभ एवं

नारदोदति-एव रक्ष्यमाणमकारेण खलु हे देवानुमिय । जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते
 वर्षे हस्तिनापुरे नगरे द्रुपदस्य राज्ञो दृढिता चूलाया देव्या आत्मजा पाण्डोः
 स्तुपा पञ्चाना पाण्डवाना भार्या द्रौपदी देवी रूपेण च यावद् उत्कृष्ट शरीरा वर्तते
 द्रौपद्याः खलु देव्याश्चिन्नस्यापि पादानुष्टम्भस्याय तयामरोध' तयान्तःपुरवर्तिनी
 काचिदपि देवी 'सवतमपि कञ्च' शततमामपि कञ्चा नाहति, इति कृत्वा-एव
 ज्ञात्वा कथयामि-द्रौपदीसदृशी नास्ति काचिदपीति । ततः कञ्चुलनारदोगन्तुकामः

कहते हैं कि हे देवानुमिय । सुनो-यात इम प्रकार है-(जबू द्वीपे द्वीपे
 भारते वासे हस्तिनापुरे द्रुपदस्य रण्णो धूया, चूलणीण देवीण अत्तया
 पडुस्स सुण्हा, पचण्ह पडवाण भारिया दोवई देवी रूपेण य जाव उक्किह
 सरीरा, दोवईए ण देवीए चिन्नस्स वि पायगुट्टयस्स अय तत्र अवरोहो सय
 न्नमपि कल ण अग्वई च्चि कट्टु पउमणा न आपुच्छइ आपुच्छित्ता जाव पडि
 गए, तएण से पउमणाभे राया कञ्चुलणारयस्स अतिए एयमह सोच्चा
 णिसम्म दोवइए, देवीए रूपे य च्चिइए ष दोवईए अज्जोववन्ने जेणेव पोम
 हसाला तेणेव उवागच्छइ) जबूद्वीप नाम के प्रथम द्वीप (मध्य जबूद्वीप
 में) में भारतवर्ष में, हस्तिनापुर नाम के नगर में द्रुपद राजा की पुत्री
 चुलनी देवी की आत्मजा, पांडु राजा की स्तुपा-पुत्रवधू-पाच पाडवों
 की भार्या द्रौपदी देवी है । यह रूप से यावत् उत्कृष्ट शरीर है । तुम्हारा
 यह अतःपुर उसके कटे हुए पैर के अगूठे के सौंवे अश के बराबर

अने त्पारपछी कञ्चुल तेमने कडेवा लाग्या के डे देवानुमिय । आलणे,
 यात अेवी छे के—

(जबू द्वीपे द्वीपे भारतेवासे हस्तिनापुरे द्रुपदस्य रण्णो धूया, चूलणीण
 देवीए अत्तया पडुस्स सुण्हा, पचण्ह पडवाण भारिया दोवई देवी रूपेण य जाव
 उक्किहसरीरा, दोवईए ण देवीए चिन्नस्स वि पायगुट्टयस्स अय तत्र अवरोहो
 सयन्नमपि कल ण अग्वई च्चि कट्टु पउमणाभ आपुच्छइ, आपुच्छित्ता जाव पडि
 गए, तएण से पउमणाभे राया कञ्चुलणारयस्स अतिए एयमह सोच्चा णिसम्म
 दोवईए, देवीए रूपेय मुच्छिइए ष दोवईए अज्जोववन्ने जेणेव पोसहसाला
 तेणेव उवागच्छइ)

जबू द्वीप नामना प्रथम द्वीपमा भारत वर्षमा हस्तिनापुर नामे नग
 रमा द्रुपद राजानी पुत्री धूवनी देवीनी आत्मजा, पांडु राजानी स्तुपा-पुत्रवधू
 पाच पाडवोनी पत्नी द्रौपदीदेवी छे ते रूपथी यावत् उत्कृष्ट शरीरवाणी छे
 तमारो आ रञ्जवास तेना कथाकेला अगूठाना सोमा भागनी अरोपर पञ्च
 लथी, आ अधु हु विचारपूर्वक कडी रक्षी छे द्रौपदी देवी नारी केई पञ्च

पद्मनाभमापृच्छति, पृष्ठा यावत् पद्मनाभेन राज्ञा सत्कार प्राप्य प्रतिगतः=उत्पतनी विद्या गगनमुद्ग्रयन् प्रतिगत इत्यर्थः ।

तत खलु स पद्मनाभो राजा कञ्जुल्लनारदस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा= आकर्ष्य निशम्य हत्रवधार्य द्रौपद्या देव्या रूपे च यौवने च लावण्ये च मूर्च्छितः= आसक्तः, गृद्धः = लोलुपः, ग्रथितः=निवद्धचित्तः, ज युपपन्नः = एकाग्रचित्त सन् यत्रैव पोषधशाला तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य पोषधशाला प्रमार्ज्य यावदष्टम मक्त कृत्वा ' पूर्वसगतिक ' पूर्वमित्र देवम् एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण अरादीत् एव खलु हे देवानुप्रिय ! जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वर्षे हस्तिनापुरे पाण्डवभार्या द्रौपदी देवी यावत्-उत्कृष्टशरीरा वर्तते, तत्=तस्माद् इच्छामि खलु हे देवानुप्रिय !

भी नहीं है। ऐसा मैं जानकर ही कह रहा हूँ। द्रौपदी के जैसी कोई भी नारी नहीं है। उस प्रकार कहकर वे कञ्जुल्ल नारद वहा से चलने के लिये अभिलाषी बन गये-तब उन्होंने पद्मनाभ राजा से जाने के लिये पृष्ठा पूछकर यावत् वे वहा से पद्मनाभ राजा से सत्कृत होकर उत्पतनी विद्या के प्रभाव से गगन तल को उल्लंघन करते हुए वापिस चले गये। इसके बाद वे पद्मनाभ राजा कञ्जुल्ल नारद के मुख से इस समाचार रूप अर्थ को सुनकर और उसे हृदय में धारण कर द्रौपदी देवी के रूप, यौवन एव लावण्य मे मूर्च्छित ४ बन गये, यावत् उनका चित्त उन में विलकुल एकाग्र हो गया। इस तरह होकर, वे जहा पौषधशाला थी वहा गये। (उवागच्छित्ता पोमहसाल जाव पुष्वसगह्य देव एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ! जयुहीवे दीवे भारहे वासे हत्थिणाउरे जाव सरीरा त इच्छामि ण देवाणुप्पिया !

नथी आ प्रमाणे कहीने ते उच्छुद्ध नारद त्याथी जम्बूद्वीपे माटे तैरया
 थध गया तेमणु पद्मनाभ राजाने जवा माटे पूछयु यावत् त्याथी
 तेओ पद्मनाभ राजनी पासैथी सत्कृत थधने उत्पतनी (वथी आका
 शने ओणगता जता रह्या त्थारपथी ते पद्मनाभ
 मुणथी आ समाचारने सालणीने अने तेने हृदयम
 हेवीना इय, यौवन अने लावण्यथी मूर्च्छित ४ थध
 तेमा ओकहम थोटी गयु आ स्थितिमा तेओ न्या पो

(उवागच्छित्ता पोसहसाल जाव पुष्वसगह्य देव देवाणुप्पिया ! जयु हीवे दीवे भारहे वासे हत्थिणाउरे ण देवाणुप्पिया ! दोवई देवी इहमाणिय तपणं

द्वौपदीं देवीम् ' इह माणिय ' इच्छामेऽनुम् । ततः रात्रु पूर्णमगतिरु देवः पद्मनाभ
 नृपम् एवमवादीत्-हे देवानुप्रिय ! नो रात्रु एतद् भूत वा भवद् वा भविष्यद् वा,
 यत् खलु द्वौपदी देवी पञ्च पाण्डवान सुराणांऽन्येन पुरुषेण सार्धमुदागतं मोगान्
 यावद् विहरति, तथापि च रात्रु भद्रं तत्र प्रीत्यर्थं द्वौपदीं देवीमिह हव्यप्रानयामीति

दोवई देवीं इह माणिय तण्ण पुंयसगहण देवे पउमनाभ एव वयासी-नो
 खलु देवाणुप्पिया ! एव भूय वा भव्य वा भविस्स वा जग्ग दोवई
 देवी पच पडवे मोत्तुग अन्नेण पुरिसेण सद्धि ओरालाइ जाव विहरि
 स्सइ) वहां जाऊर उन्हों ने उम पोपध शाला को रजोहरण
 से साफ किया यावन् अष्टम भक्त कर के पूर्ण सगति देव का आवाहन
 किया देवों के आनेपर पूर्ण सगतिक देव से इस प्रकार कहा हे देवानु
 प्रिय ! जजूद्वीप नाम के द्वीप में भारत वर्ष में हस्तिनापुर नगर में
 पांडवों की भार्या द्वौपदी देवी हैं । यह यावत् उत्कृष्ट शरीर है । इसलिये
 हे देवानुप्रिय ! मैं उस द्वौपदी देवी को तुमसे यहा ले आने के लिये
 चाहता हूँ । पद्मनाभ की इस बात को सुनकर पूर्वभव के मित्र उस
 देव ने उस से तब ऐसा कहा-हे देवानुप्रिय ! ऐसी बात द्वौपदी के साथ
 न पहिले हुई है, न आगे होगी-और न अब वर्तमान में हो सकती है,
 जो द्वौपदी देवी पाच पांडवों को छोड़कर अन्य किसी दूसरे पुरुष के
 साथ उदार यावत् मनुष्य भव सपत्नी काम सुखों को भोगे (तदापि

वयासी नो खलु देवाणुप्पिया ! एव भूय वा भव्य वा भविस्स वा जग्ग दोवई
 देवी पच पडवे मोत्तुग अ नेण पुरिसेण सद्धि ओरालाइ जाव, विहरिस्सइ)

त्या जउने तेमहे ते पोपधशाणाने रणेडरवुथी साइ करी यावत् अष्टम
 लकत करीने पूर्ण सगति हेवतु आवाडन कथुं हेव जगरे आवी गये। त्यारे
 तेमहे पूर्णसगतिक हेवने आ प्रमाहे कहु के हे देवानुप्रिय । जजूद्वीप
 नामना द्वीपमा भारत वर्षमा हस्तिनापुर नगरमा पांडवोनी पत्नी द्वौपदीदेवी
 छे, ते यावत् उत्कृष्ट शरीरवाणी छे अथी हे देवानुप्रिय । ते द्वौपदी देवीने
 तमे अर्धी लध आवे। अथी भारी धन्ज छे पद्मनाभनी आ वातने सालणीने
 पूर्वलपना मित्र नेमने आ प्रमाहे कहु के हे देवानुप्रिय । द्वौपदी
 देवीनी साथे यरवु न पडेवा थयु छे न लविष्यमा थशे अने
 न वत् । छे द्वौपदी देवी पाचे पांडवो सिवाय धीज
 नव सभधी कामसुभो लोगवे आ

कृत्वा=उक्त्वा पद्मनाभम् आपृच्छति आपृच्छथ तथा उत्कृष्टया देवसम्पन्धिभ्या गत्या यावत् लवणसमुद्रस्य मध्यमभ्येन=उपरिभागेन गगनमार्गेण, यत्रैव हस्तिनापुर नगर तत्रैव प्राधारयद् गमनाय ।

तस्मिन् काले तस्मिन् समये हस्तिनापुरे नगरे युधिष्ठिरो राजा द्रौपद्या सार्धमुपरि आकाशतले=प्रासादादालिकोपरि सुरमसुप्तश्चाप्यासीत्, ततः खलु स पूर्वसगतिको देवो यत्रैव युधिष्ठिरो राजा यत्रैव द्रौपदीदेवी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य द्रौपद्यै

य ण अह तव पियद्वतयाण दोवई देवीं इह हव्वमाणेमि त्तिकट्टु पउमणाभ आपुच्छइ, आपुच्छित्ता ताए उक्किट्टाए जाव लवणसमुद्द मज्झं मज्झेणं जेणेव हत्थिणाउरे णयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) फिर भी मैं तुम्हारी प्रीति के निमित्त द्रौपदी देवी को चर्हा शीघ्र लेकर आता हूँ । ऐसा कहकर उसने जाने के लिये उन पद्मनाभ से पूजा, पूजकर फिर वह उस उत्कृष्ट देवभवसचन्धी गति से यावत् लवण समुद्र के बीच से होकर जहा हस्तिनापुर नगर था उस और चल दिया ! (तेण कालेण तेण समएण हत्थिणाउरे जुहिद्विले राया, देवईए सद्धिं उप्पि आगासतलसि सुहपसुत्ते यावि होत्था, तएण से पुव्वसगइए देवे जेणेव जुहिद्विले राया जेणेव दोवई देवी तेणेव उवागच्छइ) उस काल और उस समय में हस्तिनापुर नगरमें युधिष्ठिर राजाके साथ द्रौपदी आकाशतलमें-प्रासाद की अदालिका के ऊपर सोये हुए थे । वह पूर्व सगतिक देव जहा वे युधिष्ठिर राजा और जहां वह द्रौपदी देवी थी चर्हा आया-(उवागच्छित्ता

(तद्दामि य ण अह तव पियद्वतयाए दोवई देवीं इह हव्वमाणेमि त्ति कट्टु पउमणाभ आपुच्छइ, आपुच्छित्ता ताए उक्किट्टाए जाव लवणसमुद्द मज्झं मज्झेणं जेणेव हत्थिणाउरे णयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए)

छताये तमने भुश उरवा भाटे हु द्रौपदी देवीने शीघ्र उर्ही लध आबु छु आभ कडीने तेबे जवा भाटे पद्मनाभ राजने पूछथु पूशने ते चोतानी उत्कृष्ट देवभव सचन्धी गतिथी यावत् लवण समुद्रनी पन्थे धधने न्या हस्तिनापुर नगर इतुं ते तरश्च श्वाना थयो

(तेण कालेण तेण समएण हत्थिणाउरे जुहिद्विले राया, देवईए सद्धिं उप्पि आगासतलसि सुहपसुत्ते यावि होत्था तएण से पुव्वसगइए देवे जेणेव जुहिद्विले राया जेणेव दोवई देवी तेणेव उवागच्छइ)

ते काले अने ते समये हस्तिनापुर नगरमा युधिष्ठिर राजा अने द्रौपदी देवी मंडलनी अगाशी उपर सूता इता ते पूर्व सगतिक देव न्या ते युधिष्ठिर राजा अने न्या ते द्रौपदी देवी इती न्या आबेते

दौपदी देवीम् ' इह माणिय ' इहानेनुम् । ततः रात्रु पूर्णसगतिर्देवः पद्मनाभ
 नृपम् एवमादीत्-हे देवानुप्रिय ! नो रात्रु एतद् भूत वा भवद् वा भविष्यद् वा,
 यत् खलु द्रौपदी देवी पश्च पाण्डवान सुरत्याऽन्येन पुरुषेण सार्धमुदागतं भोगान्
 यावद् विहरति, तथापि च खलु अहं तत्र भीत्यर्गं द्रौपदी देवीमिदं हव्यपानयामीति

दोवई देवी इहमाणिय तण्ण पुंरसगहण देवे पडमनाभ एव वयासी-नो
 खलु देवाणुप्पिया ! एव भूय वा भव्य वा भविस्स वा जण्ण दोवई
 देवी पच पडवे मोत्तग अन्नेण पुरिसेण सद्धि ओरालाड जाव विहरि
 स्सइ) वहाँ जाकर उन्होंने ने उस पौषप शाला को रजोहरण
 से साफ किया यावत् अष्टम भक्त फर के पूर्व सगति देव का आवाहन
 किया देवी के आनेपर पूर्व सगतिक देव से इस प्रकार कहा हे देवानु
 प्रिय ! जंबूद्वीप नाम के द्वीप में भारत वर्ष में हस्तिनापुर नगर में
 पांडवों की भार्या द्रौपदी देवी है । यह यावत् उत्कृष्ट शरीर है । इसलिये
 हे देवानुप्रिय ! मैं उस द्रौपदी देवी को तुमसे यहा ले आने के लिये
 चाहता हूँ । पद्मनाभ की इस बात को सुनकर पूर्वभव के मित्र उस
 देव ने उस से तब ऐसा कहा-हे देवानुप्रिय । ऐसी बात द्रौपदी के साथ
 न पहिले हुई है, न आगे होगी-और न अब वर्तमान में हो सकती है,
 जो द्रौपदी देवी पांच पांडवों को छोड़कर अन्य किसी दूसरे पुरुष के
 साथ उदार यावत् मनुष्य भव संधी काम सुखों को भोगे (तदापि
 वयासी नो खलु देवाणुप्पिया ! एव भूय वा भव्य वा भविस्स वा जण्ण दोवई
 देवी पच पडवे मोत्तग अ नेण पुरिसेण सद्धि ओरालाड जाव, विहरिस्सइ)

त्या जने तेमहे ते पौषपशाणाने रणेडरबुधी साइ करी यावत् अष्टम
 लकत करीने पूर्व सगति देवतु आवाहन कथुं देव जगरे आवी गये । त्तारे
 तेमहे पूर्वसगतिक देवने आ प्रभाहे कथुं उे उे देवानुप्रिय ! जंबूद्वीप
 नामना द्वीपमा भारत वर्षमा हस्तिनापुर नगरमा पांडवोनी पत्नी द्रौपदीदेवी
 छे, ते यावत् उत्कृष्ट शरीरवाणी छे अथी उे देवानुप्रिय । ते द्रौपदी देवीने
 तमे अर्द्धी लध आवो अथी भारी धन्धा छे पद्मनाभनी आ वातने सालणीने
 पूर्वलवना मित्र ते देवे तेमने आ प्रभाहे कथुं उे उे देवानुप्रिय ! द्रौपदी
 देवीनी साथे आ जतनु आचरणु न पडेवा थधु छे न लविष्यमा थशे अने
 न वर्तमानमा थवाणी शकता छे द्रौपदी देवी पांचे पांडवे । मिवाथ भीम
 दार्ध पुंरपनी साथे उदार यावत् मनुष्यभव संधी कामसुखो भोगवे आ
 बात तदन असलवित छे.

यत्रैव पद्मनाभस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य एवमवादीत्-एषा खलु हे देवानुप्रिय ! मया हस्तिनापुराद् द्रौपदी इह हव्यमानीता तत्राशोक्त्रनिकाया तिष्ठति, अतः पर त्व जानासि ' इति कृत्वा=उक्त्वा, यस्या एव दिशः प्रादुर्भूतस्तामेव दिशं प्रतिगतः ॥ सू०२५ ॥

मूलम्-तएणं सा दोवई देवी तओ मुहुत्तरस्स पडिवुद्धा समाणी त भवणं असोगवणियं च अपच्चभिजाणमाणी एव वयासी-नो खलु अम्हं एसे सए भवणे णो खलु एसा अम्हं सगा असोगवणिया, तं ण णज्जइ णं अहं केणइ देवेण वा दाणवेण वा किं पुरिसेणवा महोरगेण वा गंधवेण वा अन्नस्स रणो असोगवणिय साहरियत्तिकहु ओहयमणसकप्पा जाव झियायइ, तएणं से पउमणाभे राया ण्हाए जाव सव्वालंकार विभूसिए अतेउरपरियालं संपरिवुडे जेणेव असोगवणिया जेणेव दोवई देवी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता दोवई देवीं ओहय० जाव झियायमाणी पासइ पासित्ता एव वयासी-किण्णं तुम देवाणुप्पिया । ओहय जाव झियाहि, एवं

दिया-गाढ निद्रा से रहित कर फिर वह वहाँ से जहा पद्मनाभ राजा थे वडा गया-वहा जाकर उसने उनसे ऐसा कहा-हे देवानुप्रिय ! मैं हस्तिनापुर नगर से द्रौपदी को यहा ले आया हूँ । वह तुम्हारी अशोक वाटिका में ठहरी है, अत अत्र तुम जानो । ऐसा कहकर वह देव जिस दिशा से प्रकट हुआ था-उसी दिशा की और वापिसचला गया । सू-२५

करीने ते न्या पद्मनाभ राजा हुता त्या गथे । त्या न्धने तेणे तेभने आ प्रभाणे उधु के डे देवानुप्रिय ! हस्तिनापुर नगरथी द्रौपदी देवीने हु अर्ही लज आये। छ ते तमारी अशोक-वाटिकाभा छे, अथी हवे तमे न्णो । आ प्रभाणे कहीने ते देव ने दिशा तरक्षथी प्रकट थये हुतो ते न् दिशा तरक्ष पाछे नतो रहो ॥ सूत्र २५ ॥

देव्यै 'आसोत्रणिय' अग्र्यापनीं निद्रां 'दलयड' ददाति सुप्रममुक्तां द्रौपदीं
गाढनिद्रयाऽऽक्रान्ता ह्यनानित्यर्थाः । दद्या-गाढनिद्रायती कृत्वा द्रौपदीं देवीं
गृहीत्वा तया उत्कृष्टया देवमन्त्रिन्धन्यागत्या यावत् यज्ञेयामरकका राजधानी
यज्ञेय पद्मनाभस्य भवन तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य पद्मनाभस्य भवने 'असोगव
णियाए' अशोकवनिनायाम् अगोरुवाटिकाया द्रौपदीं देवीं स्थापयति,
स्थापयित्वा 'आसोत्रणि अहरड' अग्र्यापनीं निद्रामपरति, अपहरत्य

दोषर्ष देवीए ओसोत्रणिय दलयड, दलित्ता दोषर्ष देवि गिण्डह, गिण्डहा
तीए उक्किट्टाए जाव जेणेव अमरकका जेणेव पउमणाभस्स भवणे
तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता पउमणाभस्स भवणसि असोगवणि
याए दोवह देवीं ठवेह ठावित्ता ओसोत्रणि अहरड, अवहरित्ता जेणेव
पउमणाभे तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता एव वयासी-एस ण देवाणु
प्पिया । मए हत्थिणाउराओ दोषर्ष इह हव्यमाणीया, तव असोगवणियाए
चिद्धह, अतोपुर तुम जाणिसि त्तिरूद्धुजामेव दिस्सि पाउब्भूए तामेव
दिस्सि पडिगण) वहा आकर उसने द्रौपदी देवी को गाढ निद्रा में सुला
दिया, सुलाकर फिर उसने उस द्रौपदी को वहा से उठाया-और उठा
कर फिर वह उस उत्कृष्ट देवभवसमन्धी गति से चलकर यावत् जहा
अमरकका नगरी और जहा पद्मनाभ राजा का भवन था वहा आया-
वहा आकर के उसने पद्मनाभ के भवन में अशोकवाटिका में द्रौपदी
देवी को रखदिया । रखकर के फिर उसने उसे गाढ निद्रा से रहित कर

(उवागच्छित्ता दोषर्ष देवीए ओसोत्रणिय दलयड, दलित्ता दोषर्ष देवि
गिण्डह, गिण्डित्ता ताए उक्किट्टाए जाव जेणेव अमरकका जेणेव पउमणाभस्स
भवणे-तेणेव उवागच्छह उवागच्छित्ता पउमणाभस्स भवणसि असोगवणियाए
दोवह देवीं ठवेह ठावित्ता ओसोत्रणि अहरड, अवहरित्ता जेणेव पउमणाभे तेणेव
उवागच्छह, उवागच्छित्ता एव वयासी-एसण देवाणुप्पिया मए हत्थिणाउराओ
दोषर्ष इह हव्यमाणीया, तव असोगवणियाए चिद्धह, अतोपुर तुम जाणिसि त्ति
वहु जामेव दिस्सि पाउब्भूए तामेव दिस्सि पडिगण)

त्या आधीने तेणे द्रौपदीने गाढ निद्रामा सुवाडी दीधी, सुवाडीने तेणे
ते द्रौपदीने त्याथी उवाधी अने उवाधीने ते उत्कृष्ट देवभव सन्धी गतिथी
यादीने यावत् त्या अमरकका नगरी अने त्या पद्मनाभ राजानु काभवन इतु
त्या आधीने त्या आधीने तेणे पद्मनाभना लवनमा अशोक-वाटिकाया द्रौपदी
देवीने भक्षी दीधी. भक्षीने तेणे गाढ निद्रा हर करी दी- ।

मेतद् भवन नो खलु एषाऽस्माक 'सगा' स्वका=स्वकीया, अशोकनिका, तद् न ज्ञायते खलु-अह केनापि देवेन वा दानवेन वा किं पुरुषेण वा किन्नरेण वा महोरगेण वा गर्ध्वेण वा अन्यस्य राज्ञोऽशोकनिकाया 'साहरिया' संहता-आनीताऽस्मि' इति कृत्वा=इति विचार्य, अपहतमनःसकल्पा=अनिष्टयोगेन भग्न-मनोरथा निपादप्रपगतैत्यर्थ. यावद् ध्यायति=आर्त-यान करोति ।

ततः खलु पद्मनाभो राजा स्नातो यावत् सर्वाङ्कारविभूषितोऽन्तःपुरपरि-
वारसपरिवृतो यत्रैवाशोकनिका यत्रैव द्रौपदी देवी, तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य

एसा अम्ह सगा असोगवणिघा, त ण णज्जइ, ण अह केणई देवेणवा
दाणवेण वा किं पुरिसेण वा किन्नरेण वा महोरगेण वा गर्ध्वेण वा
अन्नस्त रण्णो असोगवणिय साहरियत्ति कट्टु ओह्यमणसकप्पा
जाव झियायड) यह मेरा निज का भवन नहीं है, यह मेरी निज की
अशोक वाटिका नहीं है। तो पता नहीं पडता क्या मैं किसी दूसरे
राजा की अशोकवाटिका में किसी देव, दानव, किंपुरुष, किन्नर महो-
रग अथवा, गर्ध्व के द्वारा हरण कर लाई गई हूँ। इस प्रकार के विचार
से उस का मनः सकल्प अपहत हो गया-अनिष्ट के योग से उस का
मनोरथ भग्न हो गया और वह खेदखिन्न हो गई यावत् आर्त-यान
करने लगी। (तण्ण से पउमणाभे राया ण्हाए जाव सव्वालकारविभू-
सिए अतेउरपरियाल सपविबुडे, जेणेव असोगवणिघा जेणेव दोवई
देवी, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता दोवई देवी ओह्य० जाव झिया-

(नो खलु अम्ह एसे सएमवणे णो खलु एसा अम्ह सगा असोगवणिघा, त ण
णज्जइ ण अह केणई देवेण वा दाणवेण वा किंपुरिसेण वा किन्नरेण वा महो-
रगेण वा गर्ध्वेण वा अन्नस्त रण्णो असोगवणिय साहरियत्ति कट्टु ओह्यमण
सकप्पा जाव झियायड)

आ माइ लवन नथी, आ भारी अशोक वाटिका नथी कर्ध भभर
पडती नथी, शुंहु भीज्ज केर्ध रान्नी अशोक वाटिकाभा केर्ध देव, दानव,
किंपुरुष किन्नर, महोरग अथवा तो गर्ध्व वडे अपहृत थधने लर्ध ज्वाभा
आवी छु आ लतना विचारोथी तेनु भन उदाय थध गयु, अनिष्टना योगथी
तेना मनोरथ लज्ज थध गथे अने ते जेह-भिन्न थध गर्ध यावत् आर्तध्यान
करवा लागी

(तण्ण से पउमणाभे राया ण्हाए जाव सव्वालकारविभूसिए अतेउरपरियाल
सपविबुडे, जेणेव असोगवणिघा जेणेव दोवई देवी, तेणेव उवागच्छइ, उवाग-

खलु तुमं देवाणुप्पिया ! मम पुच्चसंगडएणं देवेणं जंबूदी-
वाओ २ भारहाओ वासाओ हृत्थिणापुराओ नयराओ जुहिद्धि
हृस्स रण्णो भवणाओ साहरिया त मा णं तुम देवाणुप्पिया !
ओहय० जाव झियाहि, तुमं मए सद्धिं विपुलाइं भोगभोगाईं
जाव विहराहि, तएणं सा दोवईं देवी पउमणाभं एव वयासी
-एव खलु देवाणुप्पिया ! जंबूदीये दीवे भारहे वासे बारवइए
णयरीए कण्हे णाम वासुदेवे ममप्पियभाउए परिवसइ, त णं
से छण्हं मासाण मम कूप्प नो हव्वमागच्छइ तएणं अह देवा
णुप्पिया ! जं तुम वदसि तस्स आणाओवायवयणाणिदेसेचिद्धि
स्सामि, तएणं से पउमे दोवईए एयमट्टं पडिसुणित्ता २ दोवईं
देवि कण्णंतेउरे ठवेइ, तएणं सा दोवईं देवी छट्टु छट्टेणं अनि
विखत्तेणं आयां विलपरिग्गहिणं तवोकम्मेषं अप्पाणं भावेमाणे
विहरइ ॥ सू० २६ ॥

टीका—‘ तएण सा ’ इत्यादि । तत खलु सा द्रौपदी देवी ततो मुहूर्त्तान्तरे
प्रतिबुद्धा=जागरिता सती तद् भवनम् अशोकवाटिका च ‘ अपञ्चभिजाणमाणी ’
अप्रत्यभिजानन्ती भवनादिकमपरिचित जानन्ती एवमवादीत्-नो खलु अरमाव

- तएण सा दोवईं देवी इत्यादि ॥

टीकार्थ-(तएण) इसके बाद (सा दोवईं देवी) वह द्रौपदी देवी (ताओ
मुहुत्तरस्स पडिबुद्धा समाणी) ? मुहूर्त्त के बाद जगी सो जग कर
उसने (त भवण असोगवाणिय च अपञ्चभिजाणमाणी एव वयासी)
उस भवन को एव उस अशोकवाटिका को अपरिचित जानकर अपने
मन में ऐसा विचार किया-(नो खलु अम्ह एसे सएभवणे, णो खलु

तएण सा दोवईं देवी इत्यादि ॥

टीकार्थ-(तएण) त्थारपथी (सा दोवईं देवी) ते द्रौपदी देवी (ताओ) मुहुत्तरस्स
पडिबुद्धा समाणी) ओऽ मुहुत्तं पथी जगी अने जगीने तेष्से (त भवण
असोगवाणिय च अपञ्चभिजाणमाणी एव वयासी) ते भवन अने ते अशोक
वाटिकाने अपरिचित जग्गीने पौताना भनमा आ जतने।

खलु त्व हे देवानुप्रिये ! अपहतमनःसकल्पा यावद् ध्याय, आर्त-यान मा कुरु
त्व मया सार्धं विपुलान् भोगभोगान् यावद् भुञ्जाना विहर=मदीयमासादे तिष्ठ' इति ।

तत खलु सा द्रौपदी देवी पद्मनाभमेवमयादीत्-एव खलु हे देवानुप्रिय !
जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते येषं द्वारवत्या नगर्यां कृष्णो नाम वासुदेवो मम प्रियभातृकृ'=
ममप्रियस्य भर्तुर्भ्राता परिव्रमति, तद् यदि खलु न पण्णा मामाना मध्ये 'मम' मा
'कृ' देशीशब्दोऽयम्, अन्वेयितुं ग्रहीतुं वा नो शीघ्रमागच्छति-तत खलु

गई हो । इमलिये हे देवानुप्रिये ! तुम आपहतमनःसकल्प बनकर
यावत् आर्तध्यान मत करो । तुम तो अब मेरे साथ विपुल कामभोगों
को भोगती हुई मेरे प्रासाद में रहो । (तएण सा दोवई देवी पउमणाभ
एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! जंजूद्वीवे दीवे भारहे वासे वारवइए
णयरीए कण्णे णामं वासुदेवे ममप्पियभाउए परिव्रमइ, त जइण से
छण्ह मासाण मम कूव णो हव्व मागच्छइ तएण अह देवाणुप्पिया !
ज तुम वदसि तस्स आणाओवायवयणणिहेसे चिट्ठिस्सामि तएण से
पउमे दोवईए एयमइ पडिसुणेइ २ दोवइ देवी कण्णतेउरे ठवेइ,
तएण सा दोवई देवी छट्ट छट्टेण अणिविखत्तेण आयविलपरिगहिएण
तवोकम्मणेण अप्पाण भावेमाणे विहरइ) इसके बाद उस द्रौपदी देवी
ने पद्मनाभ से इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय ! सुनो-जम्बूद्वीप नाम के
द्वीप में भारतवर्षमें द्वारावती नगरी में कृष्ण वासुदेव मेरे प्रिय पतिके
भ्राता रहते हैं । वे यदि छह मासके भीतर मुझे अन्वेयण करनेके लिये या

आवी छे अथी छे देवानुप्रिये ! तमे अपहतमन सकल्पा थधने यावत्
आर्तध्यान न करे। तमे मनुष्यत्व संधी काम ले गो लागता भार
भडेलभा रहे।

(तएण सा दोवई देवी पउमणाभ एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ! जंजू
द्वीवे दीवे, भारहे वासे वारवइए णयरीए कण्णे णामं वासुदेवे मम प्रियभाउए
परिव्रमइ, त जइण से छण्ह मामाण मम कूव णो हव्व मागच्छइ, तएण अह
देवाणुप्पिया ! ज तुम वदसि तस्स आणाओवायवयणणिहेसे चिट्ठिस्सामि
तएण से पउमे दोवईए एयमइ पडिसुणित्ता २ दोवई देवी कण्णतेउरे ठवेइ,
तएण सा दोवई देवी छट्ट छट्टेण अणिविखत्तेण आयविलपरिगहिएण तवोक-
म्मणेण अप्पाण भावे माणे विहरइ)

त्यारपछी द्रौपदी देवीके पद्मनाभने आ प्रभाषे उछु के देवानुप्रिय ।
सालेगो, जंजूद्वीप नामना द्वीपमा भारत वर्षमा द्वारावती नगरीमा कृष्ण
वासुदेव भारा प्रिय पतिना साथ रहे छे तेअो छ महीनानी अहर भारी तपास

द्रौपदीं देवीमपहतमन सरूपाम् यावद् ध्यायन्तीं=भार्तृभ्यान् कुर्यातीं पश्यति इष्ट्वा
एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण, अत्रादीत्-हे देवानुप्रिये ! किं खलु त 'ओहय० जाव
झियाहि' अपहतमनः सकल्पा यावद् ध्यायसि=प्रियेदसि एव खलु त्र हे देवानु
प्रिये ! मम पूर्वसगतिकेन देवेन जम्बूद्वीपाद् द्वीपाद् भारताद् रााद् हस्तिना
पुराद् नगराद् युधिष्ठिरस्य राज्ञो भवनात् संहता=अपहताऽसि, ततस्तस्माद् मा

धमाणी पासइ, पासित्ता एव वयासी, क्रिण तुम देवाणुप्पिया ! मम
पुत्रसगइण देवेण जम्बूद्वीपाओ २ भारहाओ वासाओ हत्थिणापु
राओ नगराओ जुहिष्ठिरस्स रण्णो भवणाओ साहरिया, त माण तुम
देवाणुप्पिया ! ओहय० जाव झियाहि तुम मए सद्धि विपुलाइ भोग
भोगाइ जाव विहराहि) इसके बाद वह पद्मनाभ राजा नहा धोकर
यावत् सर्वाङ्कारो से विभूषित हो अपने अतःपुर परिवार से सपरि
शृत होकर जहा वह अशोक वाटिका थी-और उसमें भी जहाँ वह
द्रौपदी देवी बैठी थी-वहा आया-वहा आकर के उसने द्रौपदी देवी से
अपहत मनः सकल्पवाली यावत् आर्त्तध्यान करती हुई देखकर इस
प्रकार कहा-हे देवानुप्रिये ! तुम क्यों अपहत मनः सकल्प होकर यावत्
भार्तृभ्यान् कर रही हो-खेद रिन्न हो रही हो तुम यहा हे देवानुप्रिय !
मेरे पूर्व भव के मित्र देव के द्वारा जम्बूद्वीप नाम के द्वीप से भारतवर्ष
के हस्तिनापुर नगर से युधिष्ठिर राजा के भवन से हरण कर ले आई

च्छित्ता दोवई देवी ओहय० जाव झियायमाणी पासइ, पासित्ता एव वयासी
क्रिण तुम देवाणुप्पिया ! ममपुत्रसगइण देवेण जम्बूद्वीपाओ २ भारहाओ
वासाओ हत्थिणापुराओ नगराओ जुहिष्ठिरस्स रण्णो भवणाओ साहरिया, त
माण तुम देवाणुप्पिया ! ओहय० जाव झियाहि तुम मए सद्धि विपुलाइ भोग
भोगाइ जाव विहराहि)

त्यारपधी ते पद्मनाभराज्ज स्नान करीने यावत् सर्वाङ्कारेण विभूषित
थधने पोताना रणुवास-परिवारने साथे लधने न्या अशोक वाटिका छती अने
तेमा पणु न्या ते द्रौपदी देवी जेठी छती त्या आये। त्या आवीने तेणु
द्रौपदी देवीने अपहतमन सकल्पवाणी यावत् आर्त्तध्यान करती जेधने आ
प्रभाणु कणु के छे देवानुप्रिये ! तमे शा भाटे अपहतमन सकल्पा थधने
यावत् आर्त्तध्यान करी रही छे ? जेह-पित्त थध रहा छे ? छे देवानुप्रिये !
भारा पूर्वभवना मित्र देव वडे तमे जम्बूद्वीप नामना द्वीपना, भारत वर्षना
हस्तिनापुर नगरना युधिष्ठिर राजाना भवनथी अपहृत थधने

दोवइ देवी ण णज्जइ केणइ देवेण वा दाणवेण वा किन्नरेण
 वा किं पुरिसेण वा महोरगेण वा गंधव्वेण वा हिया वा णीया वा
 अवक्खित्ता वा ? इच्छामि णं ताओ । दोवइए देवीए सब्बओ
 समता मग्गणगवेसणं कयं, तएण से पंडुराया कोडुंविपुुरिसे
 सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ।
 हत्थिणाउरे नयरे सिघाडगतियचउक्कचच्चरमहापहपहेसु महया२
 सद्देण उग्घोसेमाणा २ एवं वयासी-एवं खल्लु देवाणुप्पिया ।
 जुहिट्ठिहस्स रण्णो आगासतलगसि सुहपसुत्तस्स पासाओ दोवइ
 देवी ण णज्जइ केणइ देवेण वा दाणवेण वा किन्नरेण वा कि-
 पुरिसेण वा महोरगेण वा गंधव्वेण वा हिया वा नीया वा
 अवक्खित्ता वा तं जो णं देवाणुप्पिया । दोवइए देवीए सुइं
 वा जाव पवित्ति वा परिकहेइ तस्स णं पंडुराया विउल अत्थ-
 सपयाण दाणं दलयइ त्तिक्कट्टु घोसणं घोसावेहर एयमाणत्तिय
 पच्चप्पिणह, तएणं ते कोडुविपुुरिसा जाव पच्चप्पिणंति,
 तएणं से पडुराया दोवइए देवीए कत्थइ सुइ वा जाव अलभ-
 माणे कोती देवी सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी-गच्छह णं
 तुम देवाणुप्पिया । वारवइ णयरिं कण्हस्स वासुदेवस्स एयमट्टु
 णिवेदेहि कण्ह णं पर वासुदेवे दोवइए मग्गणगवेसणं करेज्जा
 अन्नहा न नज्जइ दोवइए देवीए सुती वा खुती वा पवती वा
 उवलभेज्जा, तएण सा कोती देवी पडुरण्णा एव वुत्ता समाणी
 जाव पडिसुणेइ पडिसुणित्ता ण्हाया कयवलिकम्मा हत्थिखध-

अह हे देवानुप्रिय । यत् त्वं वशति=वशिष्यति ' तस्य ' तत्र ' आणाओवायव्यणणिद्देसे ' आज्ञापतावचननिर्देशे स्याम्यामि, तयाज्ञाकारिणी वशवर्तिनी भविष्यामीत्यर्थ, आज्ञा-अवश्य विधेयतया आदेश', उपनातयान सेनायान, निर्देश-कायाणि प्रति प्रश्ने कृते यन्निपतर्गमुत्तरम्, एता समाहारद्वयः तत्र, ततः खलु स पद्मनाभो राजा द्रौपदीं एतमर्थं प्रतिश्रुत्य=श्रीकृत्य द्रौपदीं देवी ' वगतेउरे ' कन्यान्तः पुरे स्थापयति, ततः खलु सा द्रौपदीदेवी ' छद्म गृह्येण ' पृष्ठपठेन पृष्ठभक्तानन्तर पुनः पृष्ठभक्तेन, ' अनिषि यत्तेण ' अनिषि यत्तेन=विरामरहितान् अन्तरहितेनेत्यर्थ, ' आयविलपरिगृहीण ' आयविलपरिगृहीतेन तपः कर्मणा आत्मानं भाषयन्ती विहरति ॥ सू० २६ ॥

मूलम्-तएणं से जुह्वद्विष्टे रायातओ मुहुत्तंतरस्त पडिबुद्धे समाणे दोवइ देविपासे अपासमाणो सयणिज्जाओ उट्टेइ उट्टिता दोवईए देवीए सव्वओ समता मग्गणगवेसण करेइ करित्ता दोवईए देवीए कथइ सुइ वा खुइ वा पवत्ति वा अलभमाणे जेणेव पडुराया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पडुरायं एवंवयासी एवं-खलु ताओ । मम आगासतलगसि सुहपसुत्तस्त पासाओ

छेने के लिये यहा जल्दी से नहीं आयेगे तो उसके बाद हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम कहोगे वैसा मैं करूंगी-तुम्हारी आज्ञा कारिणी वशवर्तिनी बन जाऊंगी। ऐसा अर्थ " आणाओवायव्यणणिद्देसे " इन पदों का निकलता है। इसके बाद पद्मनाभ राजा ने द्रौपदी के इस कथन को स्वीकार करके उसे कन्या के अन्तः पुर में रखदिया। वहा वह द्रौपदी देवी आयविल परिगृहीत छद्म छद्म की अन्तर रहित तपस्या से अपने आप को भावित करती हुई रहने लगी। सू० २६

करता करता अर्धी नहिं आवी शक्ते तो त्यारपधी छे देवानुप्रिय । तमे नेम कडेशो तेम करीश, हु तमारी आज्ञाकारिणी वशवर्तिनी भनी नथश " अणा ओवायव्यणणिद्देसे " आ पदोथी आ नतनेो अर्थ नीकणे छे त्यारपधी पद्मनाभ राजाओ द्रौपदीना ते कथनने स्वीकारी लीधु अने तेने कयाना अन्त पुरमा भूडी हीधी त्या ते द्रौपदी देवी आयविल परिगृहीत छु छुट्टनी अन्तर रहित तपस्याथी पोतानी नतने भावित करती रहेश ल ॥

दोवइ देवी ण णज्जइ केणइ देवेण वा दाणवेण वा किन्नरेण
 वा किं पुरिसेण वा महोरगेण वा गंधव्वेण वा हिया वा णीया वा
 अवक्खित्ता वा ? इच्छामि णं ताओ । दोवईए देवीए सब्वओ
 समता मग्गणगवेसणं कय, तएण से पडुराया कोडुंविपुसिसे
 सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुव्वे देवाणुप्पिया ।
 हत्थिणाउरे नयरे सिघाडगतियचउक्खचच्चरमहापहपहेसु महया२
 सद्देण उग्घोसेमाणा २ एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया ।
 जुहिद्विहस्स रण्णो आगासतलगसि सुहपसुत्तस्स पासाओ दोवई
 देवी ण णज्जइ केणइ देवेण वा दाणवेण वा किन्नरेण वा कि-
 पुरिसेण वा महोरगेण वा गंधव्वेण वा हिया वा नीया वा
 अवक्खित्ता वा तं जो णं देवाणुप्पिया । दोवइए देवीए सुइं
 वा जाव पवित्ति वा परिकहेइ तस्स णं पडुराया विउल अत्थ-
 सपयाणं दाणं दलयइ त्तिक्कट्टु घासणं घासावेहर एयमाणत्तिय
 पच्चप्पिणह, तएणं ते कोडुविपुसिसा जाव पच्चप्पिणंति,
 तएणं से पडुराया दोवईए देवीए कत्थइ सुइ वा जाव अलभ-
 माणे कोती देवीं सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी-गच्छह णं
 तुम देवाणुप्पिया । वारवइ णयरिं कणहस्स वासुदेवस्स एयमट्टु
 णिवेदेहि कणह णं पर वासुदेवे दोवइए मग्गणगवेसणं करेज्जा
 अन्नहा न नज्जइ दोवइए देवीए सुतीं वा खुती वा पवत्तीं वा
 उवलभेज्जा, तएण सा कोती देवी पडुरण्णा एव वुत्ता समाणी
 जाव पडिसुणेइ पडिसुणित्ता पहाया कयवलिकम्मा हत्थिखध-

वरगया हृत्थिणाउरं मज्झमज्झेणं णिग्गच्छइ णिग्गच्छित्ता कुरु-
 जणवये मज्झमज्झेण जेणेव सुग्गजणए जेणेव वारवई णयरी
 जेणेव अग्गुज्जाणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता हृत्थिखधाओ
 पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एवं
 वयासी-गच्छह णं तुव्भे देवाणुप्पिया । जेणेव वारवई णयरी
 तेणेव अणुपविसह, अणुपविसित्ता कण्हं वासुदेव करयल० एव
 वयह-एवं खल्लु सामी । तुव्भं पिउच्छा कोती देवी हृत्थिणा
 उराओ-नयराओ इह हव्वमागया तुव्भ दसणं कंखइ, तएणं
 ते कोडुवियपुरिसा जाव कहेंति, तएणं कणहे वासुदेवे कोडुवि-
 यपुरिसाणं अतिए सोच्चा णिसम्म हृत्थिखंधवरगए हयगय
 वारवईए य मज्झमज्झेणं जेणेव कोती देवी तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छित्ता हृत्थिखधाओ पच्चोरुह पच्चोरुहित्ता कोतीए देवीए
 पायग्गहण करेइ करित्ता कोतीए देवीए सद्धि हृत्थिखंध दुरुहइ
 दुरुहित्ता वारावइए णयरीए मज्झमज्झेणं जेणेवसए गिहे तेणेव
 उवागच्छइ उवागच्छित्ता सय गिह अणुपविसइ । तएणं से
 कणहे वासुदेवे कोती देवि णहाय कयवलिकम्म जिमियभुत्त-
 रागय जाव सुहासणवरगय एव वयासी सदिसउ णं पिउच्छा ।
 किमागमणपओयणं ?, तएणं सा कोती देवी कणह वासुदेव
 एव वयासी-एव खल्लु पुत्ता । हृत्थिणाउरे णयरे जुहिद्धिस्स
 आगासतले सुहपसुत्तस्स पासोओ दोवई देवी ण णज्जइ केणइ
 अवहिया जाव अवक्खित्ता वा, त इच्छामि ण

देवीए मगणगवेसणं करित्तए, तएणं से कणहे वासुदेवे कौंती
पिउच्छि एव वयासी-जं णवरं पिउच्छा । दोवइए देवीए कत्थइ
सुइं वा जाव लभामि तो णं अहं पायालाओ वा भवणाओ
अद्धभरहाओ वा समंतओ दोवइं साहत्थि उवणेमित्तिकहु कौंती
पिउत्थि सकारेइ समाणेइ जाव पडिविसज्जेइ, तएणं सा कौंती
देवी कणहेणं वासुदेवेणं पडिविसज्जिया समाणी जामेव दिसि
पाउ० तामेव दिसिं पडिगया ॥ सू० २५ ॥

टीका— 'तएण से' इत्यादि । ततः खलु स युधिष्ठिरो राजा ततो मुहूर्त्वा-
न्तरे प्रतिबुद्धः सन् द्रौपदीं देवीं पार्श्वे 'अपासमाणो' अपश्यन्=अनवलोकयन्
शयनीयादुत्तिष्ठति, उत्थाय द्रौपद्या देव्या सर्वतः समन्ताद् मार्गणगवेपण करोति,
कृत्वा द्रौपद्या देव्या 'कत्थइ' कुत्रापि 'सुइ' श्रुतिं सामान्यवृत्तान्त वा,
'सुइ' श्रुतिं छिकादि शब्द वा 'पवत्ति' प्रवृत्तिं वा विशेषवृत्तान्त अलभमानो

तएण से जुहिठ्ठिल्ले राया इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से जुहिठ्ठिल्ले राया) वे युधिष्ठिर राजा
(तओ मुहुत्तरस्स) एक मुहूर्त्त के बाद (पडिवुद्धे समाणे) जगे-और
जगकर उन्होंने (दोवई देवीं) द्रौपदी देवी को (पासे अपासमाणो सयणि
ज्जाओ उट्टेइ, उट्टित्ता दोवईए सव्वओ समता मगणगवेसण करेइ)
अपने पास जय नहीं देखा तो वे अपनी शय्या से उठे और उठकर
द्रौपदी देवीकी सयओरसे उन्होंने मार्गणा गवेपणाकी (करित्ता दोवईए
देवीए कत्थइ सुइ वा खुइ वा पवत्ति वा अलभमाणे जेणेव पडुराया

'तएण से जुहिठ्ठिल्ले राया' इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएण) त्थारपथी (से जुहिठ्ठिल्ले राया) ते युधिष्ठिर राजा (तओ
मुहुत्तरस्स) अेक मुहुर्त्त आइ (पडिवुद्धे समाणे) जाग्या अने जाग्याने
तेभण्णे (दोवई देवी) द्रौपदी देवीने,

(पासे अपासमाणो सयणिज्जाओ उट्टेइ, उट्टित्ता दोवईए सव्वओ समता
मगणगवेसण करेइ)

न्यारे पोतानी पासे नेअ नहि त्यारे पोतानी शय्या उपरथी जिला
थया अने जिला थर्धने द्रौपदी देवीनी योअेर मार्गणा गवेपणा नरी

(करित्ता दोवईए देवीए कत्थइ सुइ वा सुइ वा पवत्ति वा अलभमाणे

वरगया हत्थिणाउरं मञ्जमञ्ज्रेणं णिग्गच्छइ णिग्गच्छित्ता कुरु-
 जणवधे मञ्जंमञ्ज्रेण जेणेव सुरट्टजणए जेणेव वारवई णयरी
 जेणेव अग्गुज्जाणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता हत्थिखंधाओ
 पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव
 वयासी-गच्छह णं तुव्भे देवाणुप्पिया ! जेणेव वारवई णयरी
 तेणेव अणुपविसह, अणुपविसित्ता कण्हं वासुदेवं करयल० एव
 वयह-एवं खल्ल सामी ! तुव्भं पिउच्छा कौती देवी हत्थिणा-
 उराओ नयराओ इह हव्वमागया तुव्भं दसणं कंखइ, तएणं
 ते कोडुवियपुरिसा जाव कहेंति, तएणं कणहे वासुदेवे कोडुवि-
 यपुरिसाणं अतिए सोच्चा णिसम्म हत्थिखंधवरगए हयगय
 वारवईए य मञ्जमञ्ज्रेणं जेणेव कौती देवी तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छित्ता हत्थिखंधाओ पच्चोरुह पच्चोरुहित्ता कौतीए देवीए
 पायग्गहण करेइ करित्ता कौतीए देवीए सद्धि हत्थिखंध दुरुहइ
 दुरुहित्ता वारावइए णयरीए मञ्जमञ्ज्रेण जेणेव सए गिहे तेणेव
 उवागच्छइ उवागच्छित्ता सयं गिहं अणुपविसइ । तएणं से
 कणहे वासुदेवे कौती देविं णहाय कयवलिकम्म जिमियभुत्त
 रागय जाव सुहासणवरगय एव वयासी सदिसउ णं पिउच्छा !
 किमागमणपओयणं ? तएणं सा कौती देवी कणह वासुदेव
 एव वयासी-एव खल्ल पुत्ता ! हत्थिणाउरे णयरे जुहिद्धिस्स
 आगासतले सुहपसुत्तस्स पासाओ टोवई देवी ण णज्जइ केणइ
 अवहिया जाव अवक्खित्ता वा, त इच्छामि णं

ततः खलु स पाण्डुराजा कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति शब्दयित्वा एवमवा-
दीत्-गच्छत खलु यूय हे देवानुप्रियाः ! हस्तिनापुरे नगरे शृङ्गाटकत्रिकचतुष्क-
चत्वरमहापथपथेषु महता महता शब्देनोद्दीपयन्त एव वदत-एव खलु हे देवानु-
प्रिया ! युधिष्ठिरस्य राज्ञ आकाशतलके सुखप्रसुप्तस्य पार्श्वेद् द्रौपदी देवी न
ज्ञायते केनापि देवेन वा दानवेन वा किं पुरुषेण वा किन्नरेण वा महोरगेण वा

और सब प्रकार से मार्गणा और गवेषणा करना चाहता हूँ । (तए ण
से पट्टराया कोडुप्रियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी गच्छहाण
तुम्हे देवाणुप्रिया ! हत्थिगाउरे नगरे, सिंघाडगतीय चउक्कचच्चर महा
पहपहेसु महया २ सदेण उग्घोसेमाणा २ एव वयासी-एव खलु देवा-
णुप्रिया ! जुहिठ्ठिल्लस्स रण्णो आगासतलगसि सुहपसुत्तस्स पासाओ
दोवई देवी ण णज्जइ, केणइ, देवेण वा दानवेण वा किन्नरेण वा किंपुरि-
सेण वा महोरगेण वा गंधव्वेण वा हिया वा नीया वा अवक्खित्ता वा)
इस बात को सुनकर के उन पाटुराजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया
और बुलाकर उनसे ऐसा कहा-हे देवानुप्रियो ! तुम लोग हस्तिनापुर
नगर में जाओ-और वहा के शृगाटक, त्रिक चतुष्क, चत्वर, महापथ
इन समस्त मार्गों में बडे जोर २ से ऐसी घोपणा चार २ करो कि हे
देवाणुप्रियो ! सुनो प्रासादकी अड्डालिका पर सुखपूर्वक सोये हुए युधिष्ठिर
राजा के पास से न मालूम किसी देवने, या दानवने, किसी, किन्नरने,

गवेषण कय) अथवा भाटे डे तात ! डु थोभेर णधी रीने द्रौपदी देवीनी
मार्गण्णु अने गवेषण्णु करवा धम्मू छु

(तए ण से पट्टराया कोडुप्रियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी गच्छह ण
तुम्हे देवाणुप्रिया ! हत्थिणाउरे नगरे, सिंघाडगतीयचउक्कचच्चरमहापह-
पहेसु महया २ सदेण उग्घोसेमाणा २ एव वयासी-एव खलु देवाणुप्रिया !
जुहिठ्ठिल्लस्स रण्णो आगासतलगसि सुहपसुत्तस्स पासाओ दोवई देवी ण
णज्जइ, केणइ देवेण वा दानवेण वा किन्नरेण वा किंपुरिसेण वा महोरगेण वा
गंधव्वेण वा हिया वा नीया वा अवक्खित्ता वा)

आ वातने सालणीने पाडु रान्णये कौटुम्बिक पुरुषेने जालाव्या अने
जालावीने तेभने आ प्रमाणु कल्लु के डे देवानुप्रियो ! तभे दोडे हस्तिनापुर
नगरमा न्णये अने त्याना शृगाटक, त्रिक, चतुष्क, चत्वर, महापथ आ णधा
मार्गोमा मोटा साडे आ नतनी घोषण्णु करे के डे देवानुप्रियो ! सालो,
भडेवणी अगाशी ढपर सुजेथी सूता युधिष्ठिर रान्णनी पासोथी न नल्ले कोड
देवे के दानवे अथवा तो कोड किन्नरे के किंपुरुषे अथवा कोड महोरगे के

यज्ञिय पाण्डुराजा तत्रोपागच्छति, उपागत्य पाण्डुराजानमेवमवादीत्— हे तात ! एव खलु ममाकाशतले प्रासादाद्यान्त्रिपरि 'सुहृत्सुत्तरस' सुहृत्सुत्तरस्य पार्श्वे द्रौपदी देवी 'ण गज्जइ' न ज्ञायते केनापि देवेन वा दानवेन वा किन्नरेण वा किंपुरुषेण वा गन्धर्वेण वा एता या नीता=अथवा प्रापिता वा अवक्षिप्ता वा= कूपगर्तादौ कुचित् पातित्वा या इत्यर्थः, तत्-तस्माद् इच्छामि खलु हे तातः ! द्रौपद्या देव्याः सर्वत समन्ताद् मार्गणगणेषु कर्तुम् ।

तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पडुराय एव वयामी एव खलु ताओ मम आगासतलगसि सुहृत्सुत्तरस पासाओ दोवई देवी ण गज्जइ, केणइ देवेण वा दानवेण वा किन्नरेण वा किंपुरिसेण वा महोरगेण वा गधव्वेण वा हिया वा णीया वा अवक्षिप्ता वा) मार्गणा गवेषणा करके जय उसने द्रौपदी देवी की कही भी शोध, सामान्य खबर को उस के चिह्नस्वरूप जिज्ञा आदि के शब्द को, अथवा प्रवृत्ति-विशेष वृत्तान्त को नहीं पाया तब वे जहाँ पांडुराजा थे वहाँ गये-वहा जाकर के उन्होंने पांडुराजा से इस प्रकार कहा-हे तात ! जय मैं प्रासाद की अट्टालिकाके ऊपर सुखसे सो रहा था-तब मेरे पाससे न मालूम द्रौपदी देवी को किसी देवने, दानवने, किन्नरने, किंपुरुषने, महोरगने, गधर्वने हरण कर कहां रख दिया है।-या उसे किसी कुए में या खड्डे में डाल दिया है (इच्छामि ण ताओ दोवईए देवीए सव्वओ समता मगगण गवेषण कय) इस लिए हे तात ! मैं द्रौपदी देवी की सब तरफ से

जेणेव पडुराया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पडुराय एव वयासी एव खलु ताओ मम आगासतलगसि सुहृत्सुत्तरस पासाओ दोवई देवी ण गज्जइ, केणइ देवेण वा दानवेण वा किन्नरेण वा किंपुरिसेण वा महोरगेण वा गधव्वेण वा हिया वा णीया वा अवक्षिप्ता वा)

मार्गणा गवेषणा कथां याद पण्य न्यारे तेमहे द्रौपदी देवीनी कोषपण्य रीते, सामान्य खबर अने चिह्न स्वरूप छीक वगेरे शब्दने अथवा तो प्रवृत्ति-विशेष वृत्तान्त-नी पण्य न्यारे थई नहि त्यारे तेओ न्या पाडुराज उता त्या गया, त्या न्धने तेमहे पाडुराजने आ प्रमाणे कहु के हे तात ! न्यारे हु महेलनी अगाशीमा सुई रथी उतो त्यारे भारी पासे न न्धे कोणे द्रौपदी देवीनु कोई देवे, दानवे के किन्नरे के किंपुरुषे के महोरगे के गधर्वे हरण कथुं छे अथवा तो द्रौपदी देवीने कोषे कृवामा के याडामा नापी दीधी छे (इच्छामि ण ताओ दोवईए देवीए सव्वओ मगगण-

ततः खलु स पाण्डू राजा द्रौपद्या देव्याः कुत्रापि श्रुतिं वा यावत् प्रवृत्तिम्
अलभमानः कुन्तीं देवीं शब्दयति शब्दयित्वा एवमवादीत्—गच्छ खलु त्वं हे
देवानुप्रिये ! द्वारावतीं नगरीं कृष्णस्य वासुदेवस्य एतमर्थं निवेदय=सुखप्रसुप्ता
द्रौपदी केनाऽपि हता नीता कृपादौ प्रक्षिप्ता वेति न ज्ञायते इत्येतद्रूप वृत्तान्त वधय,
कृष्णः खलु पर वासुदेवो द्रौपद्या मार्गणगवेपण कुर्यात् अन्यथा न ज्ञायते द्रौपद्या
देव्याः श्रुतिं वा प्रवृत्तिं वा क्षुत्तिं वा उपलभेत ।

पास भेजदी ! इसके बाद जब पांडुराजा ने द्रौपदी देवी की कही पर
भी श्रुती यावत् प्रवृत्ति नहीं पाई तब उन्हो ने कुत्ति देवी को बुलाया—
(सहावि० ए० वयासी) और बुलाकर उन से ऐसा कहा—(गच्छहण तुम
देवाणुप्पिया ! वारवद् नयरिं कण्हस्स वासुदेवस्स एयमद्द णिवेदेहि,
कण्हेण पर वासुदेवे दोवईए मग्गणगवेसण करेज्जा—अन्नहा न नज्जई,
दोवईए देवीए सुती वा खुती वा पवत्तीं वा उवलभेज्जा) हे देवानुप्रि
यो ! तुम द्वारावती नगरी में कृष्ण वायुदेव के पास जाओ—और उनसे
इस अर्थका निवेदन करो कि सुख प्रसुप्त द्रौपदी को किसी ने हरलिया
है । हरण कर उसे कहीं पहुँचा दिया है या किसी कुँ में या खड्डे में
डाल दिया है । पता नहीं पडता है । वे कृष्ण वासुदेव अवश्य र ही
द्रौपदी को मार्गणा गवेपणा करेंगे । नहीं तो द्रौपदी देवी की श्रुति, क्षुत्ति
अथवा प्रवृत्ति हमें प्राप्त हो जावेगी—यह नहीं कहा जा सकता है ।

श्रुति यावत् प्रवृत्ति भेजवी नडि त्थारे तेभञ्जे कुती देवीने ओलावी (सहा
वि० ए० वयासी) अने ओलावीने तेभने आ प्रभाञ्जे कथु—

(गच्छह ण तुम देवाणुप्पिया ! वारवद् नयरिं कण्हस्स वासुदेवस्स एयमद्द
णिवेदेहि, कण्हेण पर वासुदेवे दोवईए मग्गणगवेसण करेज्जा अन्नहा न नज्जई,
दोवईए देवीए सुती वा खुती वा पवत्तीं वा उवलभेज्जा)

हे देवानुप्रिये ! तमे द्वारावती नगरीमा कृष्णवासुदेवनी पासे लब्धे
अने तेभने आ प्रभाञ्जे विनती करे के सुभथी सुतेली द्रौपदीनु केअञ्जे
हरण करी लीधु छे हरण करीने तेने कथाक भूझी दीधी छे अथवा तो केअ
इवाभा के आउभा नाणी दीधी छे न लब्धे शु थण गथु छे ? कृष्णवासुदेव
भने आनी छे के आकस्स द्रौपदी देवीनी मार्गणा गवेपणा करे नडितर द्रौपदी
देवीनी श्रुति, क्षुत्ति अथवा प्रवृत्तिनी लब्ध अने धरे ओवी शक्यता लब्धाती नथी.

गन्धर्वेण वा हता वा नीता वा अग्रशिप्ता वा, तत्=तस्माद् यः खलु हे देवानु
प्रिया । द्रौपद्या देव्याः धृतिं वा धृतिं वा प्रवृत्तिं वा परिकल्पयति, तस्य खलु
पाण्डु राजा विपुलमर्थसम्पदानं दानं ददाति=इति कृत्या-इत्युक्त्वा घोषणां घोष-
यत, घोषयित्वा एतावदशक्तिका मत्पर्ययत । ततः खलु ते कौटुम्बिकपुरुषास्त
थैत्र घोषणा कृत्या यावदाहां मत्पर्ययन्ति=हे स्वामिन् । मरदाङ्गया घोषणा
कृताऽस्माभिरिति निवेदयन्ति ।

या किसी किंपुरुष ने या किसी महोरग ने या किसी गन्धर्व ने द्रौपदी
देवी को हरण कर लिया है-या हरणकर उसे कहीं रखा दिया है अथवा
किसी कुएँ में या पट्टे में डाल दिया है (त जो ण देवाणुप्पिया । दोव
ईए देवीण सुइ वा जाव पवत्ति वा परिकहेइ, तस्स ण पडुराया विउल
अत्थसपयाण दाण दलयइ, त्ति कट्टु घोमण घोसावेइ २ ह्यमाणत्तिय
पच्चप्पिणह, तएण ते कौटुम्बिय पुरिसा जाव पच्चप्पिणति-तएण से
पडुराया दोवईए देवीण कत्थइ सुइ वा जाव अलभमाणे कोतीं देवीं
सहावेइ) तो हे देवानुप्रियो ! जो कोई भी मनुष्य द्रौपदी देवी की शोध
करेगा यावत् उसके विशेषवृत्तान्त को लाकर देगा-हम से आकर
कहेगा, उसको पांडुराजा बहुत अधिक मात्रा में अर्थ सम्पदान-दान-
देगा । इस प्रकार की तुम घोसपणा करो, और घोषणा कर के फिर
हमें इसकी पीछे खबर दो । इस प्रकार राजा की आज्ञा पाकर उन
कौटुम्बिक पुरुषों ने इसी प्रकारकी घोषणा करके हम की खबर राजाके

गन्धर्वे द्रौपदी देवीनु अपहरणु कथुं छे के हरणु करीने तेने कथाक भूषी दीधी
छे के केइ इवाभा अथवा तो भाडाभा नाथी दीधी छे

(त जो ण देवाणुप्पिया । दोवईए देवीए सुइ वा जाव पवत्ति वा परिकहेइ,
तस्सण पडुराया विउल अत्थसपयाण दाण दलयइ, त्ति कट्टु घोमण घोसावेइ २
ह्यमाणत्तिय पच्चप्पिणह, तएण ते कौटुम्बियपुरिसा जाव पच्चप्पिणति-तएण से
पडुराया दोवईए देवीए कत्थइ सुइ वा जाव अलभमाणे कोतीं देवीं सहावेइ)

तो हे देवानुप्रियो ! जे केइ पणु भाणुस द्रौपदी देवीनी शोध करशे यावत्
तेना विषे सविशेष सभाथार न्णुनी अमने जणर आपशे, अमने कडेशे,
तेने पाडु शन्त भूष ज द्रव्य-धन आपशे आ रीते तमे घोषणु करे अने
घोषणु थर्ष जवानी अमने जणर पणु आपे आ रीते शन्तनी आज्ञा
सालणीने ते कौटुम्बिक पुरुषोअे आ प्रभाणु ज घोषणु करीने तेनी जणर
शन्तने आथी त्थारपधी ज्यारे पाडु शन्तअे द्रौपदी देवीनी केइ स्थाने

ततः खलु स पाण्डू राजा द्रौपद्या देव्याः कुत्रापि श्रुतिं वा यावत् प्रवृत्तिम्
अलभमानः कुन्तीं देवीं शब्दयति शब्दयित्वा एवमवादीत्-गच्छ खलु त्वं हे
देवानुप्रिये ! द्वारावतीं नगरीं कृष्णस्य वासुदेवस्य एतमर्थं निवेदय-सुखप्रसूता
द्रौपदी केनाऽपि हता नीता कूपादीं प्रक्षिप्ता वेति न ज्ञायते इत्येतद्रूप वृत्तान्त रुचय,
कृष्णः खलु पर वासुदेवो द्रौपद्या मार्गणगवेपण कुर्यात् अन्यथा न ज्ञायते द्रौपद्या
देव्याः श्रुतिं वा प्रवृत्तिं वा क्षुत्तिं वा उपलभेत ।

पास भेजदी ! इसके बाद जब पांडुराजा ने द्रौपदी देवी की कही पर
भी श्रुती यावत् प्रवृत्ति नहीं पाई तब उन्होंने ने कुत्ति देवी को बुलाया-
(सहावि० ए० वयासी) और बुलाकर उन से ऐसा कहा-(गच्छहण तुम
देवाणुप्पिया ! वारवड नयरिं कण्हस्स वासुदेवस्स एयमट्ट णिवेदेहि,
कण्हेण पर वासुदेवे दोवईए मग्गणगवेसण करेज्जा-अन्नहा न नज्जई,
दोवईए देवीए सुती वा खुतीं वा पवत्तीं वा उवलभेज्जा) हे देवानुप्रि
यो ! तुम द्वारावती नगरी में कृष्ण वासुदेव के पास जाओ-और उनसे
इस अर्थका निवेदन करो कि सुख प्रसूत द्रौपदी को किसी ने हरलिया
है। हरण कर उसे कही पट्टचा दिया है या किसी कुएँ में या खड्डे मे
डाल दिया है। पता नहीं पडता है। वे कृष्ण वासुदेव अवश्य २ ही
द्रौपदी की मार्गणा गवेपणा करेंगे। नही तो द्रौपदी देवी की श्रुति, क्षुत्ति
अथवा प्रवृत्ति हमें प्राप्त हो जावेगी-यह नही कहा जा सकता है।

श्रुति यावत् प्रवृत्ति भेजवी नडि त्थारे तेभल्ले कुती देवीने ज्वालवी (सहा
वि० ए० वयासी) अने ज्वालवीने तेभने आ प्रभाल्ले क्खु—

(गच्छहण तुम देवाणुप्पिया ! वारवड नयरिं कण्हस्स वासुदेवस्स एयमट्ट
णिवेदेहि, कण्हेण पर वासुदेवे दोवईए मग्गणगवेसण करेज्जा अन्नहा न नज्जई,
दोवईए देवीए सुती वा खुतीं वा पवत्तीं वा उवलभेज्जा)

हे देवानुप्रिये ! तमे द्वारावती नगरीमा वृष्णवासुदेवनी पासे लब्धा
अने तेभने आ प्रभाल्ले विनती करे के सुभथी सुतेली द्रौपदीनु जेधअ
हरल्लु करी वीधु छे हरल्लु करीने तेने कयाक भूडी हीधी छे अथवा तो केध
इवाभा के भाडामा नाणी हीधी छे न लल्ले शुं थध गथु छे ? वृष्णवासुदेव
भने आनी छे के चोळस द्रौपदी देवीनी मार्गणा गवेपणा करशे नडितर द्रौपदी
देवीनी श्रुति, क्षुत्ति अथवा प्रवृत्तिनी लल्लु अभने थशे जेवी शक्यता लल्लुती नथी.

गन्धर्वेण वा हता वा नीता वा अपक्षिप्ता वा, तन्=रम्भाद् यः खलु हे देवानु
मिया । द्रौपद्या देव्याः श्रुतिं वा ध्रुतिं वा प्रवृत्तिं वा परिकथयति, तस्य खलु
पाण्डु राजा विपुलमर्थसंप्रदानं दानं ददाति=इति कृत्या-इत्युक्त्वा घोषणां घोष
यत, घोषयित्वा एतामशक्तिं प्रत्यर्पयत । ततः खलु ते कौटुम्बिकपुरुषास्त
येन घोषणा कृत्या यावदाहां मत्यर्पयन्ति=हे स्वामिन् । भवदाज्ञया घोषणा
कृताऽस्माभिरिति निवेदयन्ति ।

या किसी किंपुरुष ने या किसी महोरग ने या किसी गधर्व ने द्रौपदी
देवी को हरण कर लिया है-या हरणकर उसे कहीं रखा दिया है अथवा
किसी कुएँ में या खड्डे में डाल दिया है (त जो ण देवाणुप्पिया । दोव
ईए देवीए सुइ वा जाव पवत्ति वा परिकहेइ, तस्स ण पडुराया विउल
अत्थसपयाणं दाण दलयइ, त्ति कट्टु घोसण घोसावेइ २ ह्यमाणत्तिय
पच्चप्पिणह, तएण ते कौटुम्बिय पुरिसा जाव पच्चप्पिणति-तएण से
पडुराया दोवईए देवीए कत्थइ सुइवा जाव अलभमाणे कौतीं देवीं
सहावेइ) तो हे देवानुप्रियो ! जो कोई भी मनुष्य द्रौपदी देवी की शोध
करेगा यावत् उसके विशेषवृत्तान्त को लाकर देगा-हम से आकर
कहेगा, उसको पाडुराजा बहुत अधिक मात्रा में अर्थ संप्रदान-दान-
देगा । इस प्रकार की तुम घोसपणा करो, और घोषणा कर के फिर
हमें इसकी पीछे खबर दो । इस प्रकार राजा की आज्ञा पाकर उन
कौटुम्बिक पुरुषों ने इसी प्रकारकी घोषणा करके इस की खबर राजाके

गधर्वे द्रौपदी देवीनु अपहरणु कथुं छे के हरणु करीने तेने कथाक भूडी हीधी
छे के केइ इवामा अथवा तो आइआ नापी हीधी छे

(त जो ण देवाणुप्पिया । दोवईए देवीए सुइ वा जाव पवत्ति वा परिकहेइ,
तस्सण पडुराया विउल अत्थसपयाणं दाण दलयइ, त्ति कट्टु घोसण घोसावेइ २
ह्यमाणत्तिय पच्चप्पिणह, तएण ते कौटुम्बिय पुरिसा जाव पच्चप्पिणति-तएण से
पडुराया दोवईए देवीए कत्थइ सुइ वा जाव अलभमाणे कौतीं देवीं सहावेइ)

तो हे देवानुप्रियो ! जे केइ पणु भाणुस द्रौपदी देवीनी शोध करशे यावत्
तेना विषे सविशेष समाचार लणीने अभने भअर आपशे, अभने कहेशे,
तेने पाडु राज भूण ज द्रव्य-धन आपशे आ रीते तभे घोषणा करे अभने
घोषणा थर जवानी अभने भअर पणु आपे आ रीते राजनी आज्ञा
सालणीने ते कौटुम्बिक पुरुषोअे आ प्रभाणे ज घोषणा करीने तेनी भअर
राजने आपी त्यारपडी न्यारे पाडु राजअे द्रौपदी देवीनी केइपणु स्थाने

देवानुप्रियाः । यत्रैव द्वारवती नगरी तत्रैवानुप्रविशत, अनुप्रविश्य कृष्णं वासुदेव
करतलपरिगृहीतदशनम् शिर आवर्तं मरतकेऽञ्जलिं कृत्वा एव वदत एव खलु हे
स्वामिन् ! युष्माकं पितृष्वसा हुन्ती देवी हस्तिनापुराद् नगराद् इह हव्यमागता
युष्माकं दर्शनं काङ्क्षति । ततः खलु ते कौटुम्बिकरूपया यावत् कथयन्ति=कृष्ण-
वासुदेवस्य समीपे कुन्तीकथितं वचनं निवेदयन्तीत्यर्थः । ततः खलु कृष्णो मायु-

बह हाथी से नीचे उतरी और उतर कर के उम्ने कौटुम्बिक पुरुषो
को बुलाया- बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा-(गच्छह ण तुम्हे देवानु
प्रिया ! जेणेव चारवईणयरी, तेणेव अणुपविसह, अणुपविसित्ता कण्ह
वासुदेव करयल० एव वयह, एवं खलु सामी ! तुम्भ पिउच्छा कौती
देवी हत्थिणाउराओ नयराओ इह हव्वमागया, -तुम्भ दंसण कखड,
तएण ते कोडुविय पुरिसाण जतिए सोच्चा णिसम्म हत्थिसववरगए
हयगयवारवईए य मज्झ मज्जेण जेणेव कौती देवी-तेणेव उवागच्छह)
हे देवानुप्रियो ! तुम द्वारावती नगरी में जाओ-वहा जाकर कृष्ण
वासुदेव को दोनो हाथोंकी अजलि बनाकर और उसे मस्तक पर रख-
कर शिर झुकाते हुए नमस्कार करना-वादमे उनसे ऐसा कहना-कि
हे स्वामिन् ! आपकी पितृष्वसा-सुआ-कुती देवी हस्तिनापुर नगर से
यहा अभी -आई है-चे आपके दर्शन करना चाहती है । उन कौटु-
म्बिक पुरुषोने कुती देवी की इस आज्ञा को शिरोधार्य कर श्री कृष्ण

शेकाथ त्या जठने ते हाथी उपरथी नीचे उतरी अने उतरीने तेणे
कौटुम्बिक पुरुषोने बोलाव्या अने बोलावीने तेमने आ प्रभाणु उहुं डे—

(गच्छह ण तुम्हे देवानुप्रिया ! जेणेव चारवई णयरी, तेणेव अणुपविसह,
अणुपविसित्ता कण्ह वासुदेव करयल० एव वयह एव खलु सामी ! तुम्भ पिउच्छा
कौती देवी हत्थिणाउराओ नयराओ इह हव्वमागया, तुम्भ दंसण कखड,
तए ण ते कोडुप्रियपुरिसा जाव कहे ति, तएण कण्ह वासुदेवे कोडुविय पुरि
साण अतिए सोच्चा णिसम्म हत्थिराधवरगए हयगयवारवईए य मज्झ
मज्जेण जेणेव कौती देवी-तेणेव उवागच्छह)

हे देवानुप्रियो ! तमे द्वारावती नगरीमा ज्ञेया, त्या जठने कृष्णवासु
देवने अने हाथोनी अजलि बनावीने अने तेने मन्तडे मृद्धीने मायु नीचे
नभावीने नमस्कार करणे त्यारपथी तेमने आ प्रभाणु विनती करणे डे डे
स्वामिन् ! तमारी पितृष्वसा-इहा कुती देवी हस्तिनापुर नगरया अत्यादे
अर्धी आण्णा छे तेज्जा तमने जेवा भागे छे ते कौटुम्बिक पुरुषोञ्जे कुती
देवीनी आ आज्ञाने स्वीकारिने श्रीकृष्ण वासुदेवने आ नभायाग्नी जणर आधी

तत खलु सा कृती देवी पाण्डुना गता पाण्डुका मयी यान् प्रतिश्रुतोक्ति-
 पाण्डुपस्यातां स्वीकरोति, प्रतिश्रुत्या-स्वीकृत्य म्नाया कृतवन्निमो हस्तिस्कन्ध
 रगता हस्तिनापुरम् म यमथा निर्गच्छति, निर्गत्य कुरुनगपदस्य=कुरुनाम
 कस्य देशस्य म यमेन यौर सौराष्ट्रजनपदः, यत्रैव द्वारवती नगरी, यत्रैवाग्रो
 धान=यत्रान्पस्यानादागतानां स्थिर्यमायानो स्थिते तादाय तदि प्रत्यागन्त्युपव
 नम्, तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य हस्तिस्कन्धात् प्रत्ययरोहति=प्रत्ययतरति, प्रत्य
 यरुह्य सौहृद्विस्मयपुष्पान् शब्दयति, शब्दयित्वा पाण्डुनाशीद्-गच्छत खलु यूय हे

(तण्ण सा कौंती देवी पण्डुरण्णा एव बुत्ता समानी जाव पडिसुणेइ,
 पडिसुणित्ता, ण्हाया कयउलिकम्मा हत्थियधवरगया हत्थियणाउर मज्झ
 मज्जेण णिगच्छइ णिगच्छित्ता कुरुजणवय मज्झ मज्जेण जेणेव सुरइ
 जणघण जेणेव धारवई णयरी जेणेव अग्गुज्जाणे तेणेव उवागच्छइ उवा
 गच्छित्ता हत्थियराओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुत्ता कोडुधियपुरिसे सहा
 वेइ, सहावित्ता एव वयासी) इन् के बाद पाण्डुराजा द्वारा इस प्रकार
 कही गई कृती देवी ने पाण्डुराजा की आज्ञा को स्वीकार कर लिया-और
 स्वीकार कर के उसने स्नानक्रिया-कारु आदि पक्षियों के लिये अन्नदेने
 रूप बलि कर्म किया। बाद में वह हाथी के ऊपर बैठकर हस्तिनापुर
 नगर के बीच से होकर निकली-निकलकर वह कुरुदेश के बीच से
 होती हुई जहां सौराष्ट्र जनपद था और उसमें भी जहा द्वारावती
 नगरी थी-वहा पर भी जहां वह अग्रउद्यान था कि जिसमें बाहरसे
 आये हुए पथिक विश्राम के लिये ठहर जाते थे-वहां गई। वहा जाकर

(तण्ण सा कौंती देवी पण्डुरण्णा एव बुत्ता समानी जाव पडिसुणेइ,
 पडिसुणित्ता, ण्हाया कयउलिकम्मा हत्थियधवरगया हत्थियणाउर मज्झ मज्जेण
 णिगच्छइ, णिगच्छित्ता कुरुजणवय मज्झ मज्जेण जेणेव सुरइजणघण जेणेव
 धारवई णयरी जेणेव अग्गुज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता हत्थियराओ
 पच्चोरुहइ, पच्चोरुत्ता कोडुधियपुरिसे सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी)
 त्थारपथी पाण्डुराज वडे आ प्रभाण्णे आज्ञापित थयेती कुती देवीअ
 पाण्डुराजनी आज्ञाने स्वीकारी लीधी अने स्वीकारीने तेण्णे स्नान कर्त्तुं कागडा
 वगेरे पक्षीअने अन्नलाग अपांने पल्लिउमं कर्त्तुं त्थारपथी ते हाथी उपर
 सवार थधने हस्तिनापुर नगरनी वच्चे थधने नीकणी नीकणीने ते कुइदेशनी
 वच्चे थधने न्था सौराष्ट्र जनपद इत्तु अने तेमा पण्ण न्था अग्र उद्यान
 इत्तु-डे नेमा अहास्थी आपनारा पथिके विश्राम भाडे -तेमा

ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः कुन्ती देवी स्नाता कृतवलिर्माण काकादिभ्यः
कृतान्नसविभागा जिमित्तशुक्तोत्तरागता जिमिता-भोजन कृतवती शुक्तोत्तरागता-
शुक्तोत्तरकाल-भोजनोत्तरकालम्-आगता, ता तथा, यावत् सुखामनवरगता=सुख
पूर्वक विधिघ्रासनोपविष्टाम् एवमवादीत्-हे पितृप्यसः । सदिगन्तु किमागमनप्रयो-
जनम् ? ततः खलु सा कुन्ती देवी कृष्ण वासुदेवमेवमवादीत्-एव खलु हे पुत्र !
हस्तिनापुरे नगरे युधिष्ठिरस्याकाशतले सुवप्रसुप्तस्य पार्श्वे द्रौपदी देवी न
ज्ञायते केनापि अहता यावद् अवक्षिप्ता वा, तत् तस्माद् इच्छामि खलु हे पुत्र !

चले गये । कुन्ती ने वहा जाकर स्नान किया बलिर्कर्म किया । बाद में
चतुर्विध आहार को जीमकर जब वे सुखपूर्णक बैठ गई तब कृष्ण
वासुदेव ने उनसे कहा (सदिंसड ण पिउच्छा ! किमागमणपओयण ?
तएण सा कोती देवी कण्ह वासुदेव एव वयासी एव खलु पुत्ता ! हत्थि
णाउरे जुहिद्विहस्स अगासतले सुहपसुत्तस्स पासाओ दोवई देवी ण
णञ्जइ, केणइ अवहिया जाव अवक्खित्ता वा त इच्छामि ण पुत्ता ! दोवई
ए देवीए मगणगवेसण करित्तए) हे भुआजी ! कहिये-किस कारण
से आप यहा पवारी हैं ? इस प्रकार कृष्ण वासुदेव के पूछने पर उस
कुन्तीने उन कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा-पुत्र ! सुनो-आने का
कारण इस प्रकार है-हस्तिनापुर नगरमें प्रासाद की अट्टालिका के
ऊपर सुखके साथ सोये हुए युधिष्ठिर के पास से द्रौपदी देवी न मालूम
किसीने हरण करली है-यावत् किसी कुए मे या खड्डे में डाल दी है ।

अहर गया कुन्तीने त्या पडोयीने स्नान कर्युं अने णलित्तर्भं उर्युं त्थार
पडी त्थार नतना आहारो ज्जमीने त्थारे ते सुपेथी स्वस्थ थधने जेनी
गया त्थारे कृष्ण वासुदेवे तेभने कळु डे —

(सदिंसड ण पिउच्छा ! किमागमणपओयण ? तएण सा कोती देवी
कण्ह वासुदेव एव वयासी एव खलु पुत्ता ! हत्थिणाउरे णयरे जुहिद्विहस्स
आगासतले सुहपसुत्तस्स पासाओ दोवई देवीण णञ्जइ, केणइ अवहिया जाव
अवक्खित्ता वा त इच्छामि ण पुत्ता ! दोवईए मगणगवेसण करित्तए)

उडो, शा उरपुथी तमे अडी आव्या छे ? आ रीते कृष्ण वासुदेवना
प्रश्नने साभणीने कुन्ती देवीने कृष्ण वासुदेवने आ प्रभावे कळु डे छे पुत्र !
साभणो, हु ओटला भाटे अडी आवी छु डे हस्तिनापुर नगरमा भडेवनी
अगाशी उपरथी सुपेथी सूतेला युधिष्ठिरनी पासेथी न नळे डोळे द्रौपदी देवीनु
हरथु करी लीधु छे यावत डोळ दूवामा अडे के पाडामा नाभी हीधी छे अथी
छे पुत्र । ५ १२० ७ डे — द्रौपदी देवीनी शोधणेण थवी जेईअे

देवः कौटुम्भिकपुरुषाणामतिके श्रुत्या निशम्य हस्तिरकन्धारागतो ह्यगत्राय
 पदातिसपरिश्रितो द्वारवत्या नगर्या मध्यमध्येन यत्रैव कुन्ती देवी तत्रैवोपागच्छति,
 उपागत्य हस्तिरकन्धारात् प्रत्यवरोहति, प्रत्यवरोह्य कुन्त्या देव्याः पादग्रहण करोति,
 कृत्वा कुत्या देव्या सार्धं हस्तिरकन्ध ' दुरुहः दुरोहति-आरोहतीत्यर्थः । दूष्य
 द्वारवत्या नगर्या मध्यमध्येन यत्रैव स्वक गृहं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य स्वक
 गृहमनुप्रविशति ।

वासुदेव के लिये हम समाचार की खबर करदी कृष्ण वासुदेव कौटु
 म्भिक पुरुषों के पास से इस समाचार को सुनकर और उसे हृदय में
 धारण कर हाथी पर बैठ, ह्यगत्र, रथ एव पदातिगो के साथ २ द्वारा
 वती नगरी के घाँच से होते हुए जहाँ कुन्तीदेवी की चर्या आये । (उवा
 गच्छित्ता हस्तिरकन्धारात् पचचोरुहः, पचचोरुहित्ता कौन्तीए देवीए पाद
 ग्रहण करेह, करित्ता कौन्तीए देवीए सन्धि हस्तिरकन्ध दुरुहः, दुरुहित्ता
 चारवईए णयरीए मज्झ मज्झेण जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छह,
 उवागच्छित्ता सय गिह अणुपविसह, तण्ण से कण्हे वासुदेवे कौन्तीदेवी
 ण्हाय कयवलिकम्म जिमिषभुत्तारागय जाव सुहासणवरगय एव
 वयासी) वहा आकर वे हाथी पर से नीचे उतरे और उनरकर कुन्ती
 देवी के चरणों में नमन क्रिया-चरण स्पर्श करके कुन्तीदेवी के साथ २
 हाथी पर बैठ गये-बैठ कर के द्वारावती नगरी के ठीक भीतर से होकर
 जहाँ अपना गृह-प्रासाद-था वहाँ आये-वहा आकर प्रासाद के भीतर

हीथी कृष्णवासुदेवे कौटुम्भिक पुत्रोपानी पासेथी आ समाचारे सालीने तेने
 उदयभा धारण कराने, हाथी उपर सवार थधने, घोडा, हाथी, रथ अने पाथ
 ह्योनी साथे द्वारावती नगरीनी वन्धे थधने न्या कुन्ती देवी इतर त्या आन्ना
 (उवागच्छित्ता हस्तिरकन्धारात् पचचोरुहः पचचोरुहित्ता कौन्तीए देवीए पादग्रहण
 करेह, करित्ता कौन्तीए देवीए सन्धि हस्तिरकन्ध दुरुहः, दुरुहित्ता चारवईए णयरीए
 मज्झ मज्झेण जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता, सय गिह अणु
 पविसह, तण्णसे कण्हे वासुदेवे कौन्ती देवी ण्हाय कयवलिकम्म जिमिषभुत्त
 रागय जाव सिहासणवरगय एव वयासी)

त्या पछोथीने तेज्जो हाथी उपरथी नीचे उतर्या अने उतरिने कुन्ती
 देवीने पगे लाग्या अने पगे लागीने कुन्ती देवीनी साथे हाथी उपर सवार
 थया सवार थधने न्या पोतानु लवन इत त्या आन्ना, त्या

ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः कुती देवीं स्नाता कृतवल्किर्माण काकादिभ्यः
कृतान्नसविभागा जिमित्तभुक्तोत्तरागता जिमिता-भोजन कृतवती भुक्तोत्तरागता-
भुक्तोत्तरकाल-भोजनोत्तरकालम्-आगता, ता तथा, यावत् सुखामनवरगता=सुख-
पूर्वक विगिष्टासनोपविष्टाम् एवमवादीत्-हे पितृपुत्रसः ! सदिसन्तु किमागमनप्रयो-
जनम् ? ततः खलु सा कुन्ती देवी कृष्ण वासुदेवमेवमवादीत्-एव खलु हे पुत्र !
हस्तिनापुरे नगरे युधिष्ठिरस्याकाशतले सुखप्रसुप्तस्य पार्थाद् द्रौपदी देवी न
ज्ञायते केनापि अपहता यावद् अवक्षिप्ता वा, तत् तस्माद् इच्छामि खलु हे पुत्र !

चले गये । कुती ने बहा जाकर स्नान किया बलिकर्म किया । बाद में
चतुर्विध आहार को जीमकर जब वे सुखपूर्वक बैठ गई तब कृष्ण
वासुदेव ने उनसे कहा (सदिसउ ण पिउच्छा ! किमागमणपभोयण ?
तएणं सा कोती देवी कण्ह वासुदेव एवं वयासी एव खलु पुत्ता । हत्थि
णाउरे जुहिद्विहस्स अगासतले सुइपसुत्तस्स पासाओ दोवई देवी ण
णज्जइ, केणइ अवहिया जाव अवक्खित्ता वा त इच्छामिण पुत्ता । दोवई
ए देवीए मग्गणगवेसण करित्तए) हे भुआजी ! कहिये-किस कारण
से आप यहा पवारी हैं ? इस प्रकार कृष्ण वासुदेव के पूछने पर उस
कुतीने उन कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा-पुत्र ! सुनो-आने का
कारण इस प्रकार है-हस्तिनापुर नगरमें प्रासाद की अट्टालिका के
ऊपर सुखके साथ सोये हुए युधिष्ठिर के पास से द्रौपदी देवी न मालूम
किसीने हरण करली है-यावत् किसी कृण मे या खड्डे में डाल दी है ।

अहर गया कुतीके त्या पडोचीने स्नान क्युं अने णविकर्म क्युं त्यार
पथी आर जातना आडारे जभीने ज्यारे ते सुभेथी स्वन्थ थधने जेनी
गया त्यारे कृष्ण वासुदेवे तेमने कछु के —

(सदिसउ ण पिउच्छा ! किमागमणपभोयण ? तएणं सा कोती देवी
कण्ह वासुदेव एव वयासी एव खलु पुत्ता । हत्थिणाउरे णयरे जुहिद्विहस्स
आगासतले सुइपसुत्तस्स पासाओ दोवई देवीण णज्जइ, केणइ अवहिया जाव
अवक्खित्ता वा त इच्छामिण पुत्ता । दोवईए मग्गणगवेसण करित्तए)

कडो, शा कारणुथी तमे अर्धी आन्था छे ? आ रीते कृष्ण वासुदेवना
प्रश्नने सावणीने कुती देवीके कृष्ण वासुदेवने आ प्रभाते कछु के छे पुत्र !
सावणो, हु अटला माटे अर्धी आवी छु के हस्तिनापुर नगरमा भडेवनी
अगाशी उपरधी सुभेथी सूतेला युधिष्ठिरनी पासेथी न जेठे डोठे द्रौपदी देवीनु
हरण करी दीछु छे यावत् डोठे इवामा अ के आडामा नाथी दीधी छे अथी
छे पुत्र ! हु धन्धु छु के —द्रौपदी देवीनी शोधभोग थवी जेधअ

द्रौपद्या देव्या मार्गणागरेण 'परित्याग' कर्तुम इति । ततः सप्त रा कृष्णो वासु
 देवः कुन्ती 'पितृच्छि' पितृपुत्राग्नेयमारीन्-या नरं ? पिठपम' । यदि
 द्रौपद्या देव्या कृतापि श्रुतिं वा धृतिं वा मरुतिं वा या-न् लभे, 'तो ण' तर्हि
 खलु, अह पातालान् भ्रमनाद् वा अर्धभरताद् वा-गण्डत्रयमप्यात् समन्तान्-सर्वतः
 स्थानाद्, द्रौपदीं देवीं 'साहस्य' साहस्येन 'उपणेमि' उपनयामि, इति
 कृता-इत्युक्त्वा कुन्ती 'पितृच्छि' पितृपुत्राग्नेयमारीन्-या नरं ? पिठपम' ।

इस लिये हे पुत्र ! मैं चाहती हूँ कि द्रौपदी की मार्गणा एव गवेपणा
 होनी चाहिये । (तरण से कण्ठे वासुदेवे कौन्ती पितृच्छि एव वयासी-
 ज णवर पितृच्छी दोवडण देवीण कत्थइ सुइ वा जाव लभामि तो ण अह
 पायालाओ वा भवणाओ अह भरहाओ वा, समतओ दोवड साहस्यि
 उवणेमि त्ति कट्टु कौन्ती पितृच्छि सफारेइ सम्माणेइ, जाव पडिविस
 ज्जेइ, तरणं सा कौन्ती देवी कण्ठेण वासुदेवेण पडिविसज्जिया, समा
 णी जामेव दिसि पाउ० तामेव दिसि पडिगया) तत्र कृष्ण वासुदेव ने
 अपनी भुआ कुन्ती देवी से इस प्रकार कहा-हे भुआ ! मैं और अधिक
 तो क्या कहूँ-द्रौपदी देवी की यदि मैं कही पर भी श्रुतिधृति, और
 प्रवृत्ति पा लेता हूँ तो मैं चाहे वह पाताल में हो, या किसीके भवन में
 हो, या अर्ध भरत क्षेत्र में से कही पर भी क्यों न हो-उस द्रौपदी देवी
 को सब जगह से अपने हाथों से ला कर दूँगा । इस प्रकार कहकर
 उन कृष्ण वासुदेव ने अपनी पितृवसा कुन्ती देवी का सत्कार किया ।

(तरण से कण्ठे वासुदेवे को त पितृच्छि एव वयासी ज णवर पितृच्छि
 दोवडइ देवीण कत्थइ सुइ वा जाव लभामि तो ण अह पायालाओ वा भवणाओ
 अह भरहाओ वा, समतओ दोवड साहस्यि उवणेमि त्ति कट्टु कौन्ती पितृच्छि
 सफारेइ सम्माणेइ, जाव पडिविसज्जेइ, तरणं सा कौन्ती देवी कण्ठेण वासुदेवेण
 पडिविसज्जिया समाणी जामेव दिसि पाउ० तामेव दिसि पडिगया)

त्यारे कृष्ण वासुदेवे चोत्ताना श्रेष्ठ कुन्ती देवीने आ प्रभावे कळु के डे
 श्रेष्ठ । हु पधारे शुं भु, द्रौपदी देवीनी जे हु केष्ठ पथ स्थाने श्रुति, धृति
 अने प्रवृत्ति भेजवी लक्ष तो लहे ते पातालाओ वा, केष्ठना लवनमा डोय
 के अर्ध भरत क्षेत्रमा गमे त्या उमे न डोय ते द्रौपदी देवीने गमे त्याथी हु
 लावी आपने आपीश तेम छु आ प्रभावे कळीने ते कृष्ण वासुदेवे चोत्ताना श्रेष्ठ
 पितृवसा-कुन्तीदेवीने सत्कार कर्था अने सन्मान कर्था सत्कार ने

समान्य यावत्-प्रतिविसर्जयति । ततः खलु सा कुन्ती देवी कृष्णेन वासुदेवेन प्रतिविसर्जिता सती यस्या एव दिश' प्रादुर्भूता तामेव दिश प्रतिगता । सू०२७ ॥

मूलम्-तएणं से कणहे वासुदेवे कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एवं वयासी-गच्छह ण तुवभे देवाणुप्पिया । वार-वइ एवं जहा-पडू तहा घोसणं घोसावेति जाव पच्चप्पिणंति, पंडुस्स जहा तएण से कणहे वासुदेवे अन्नया अतो अंतेउ-रणए ओरोहे जाव विहरइ, इमं च णं कच्छुल्लए जाव समो-वडए जाव णिसीइत्ता कणह वासुदेवं कुसलोदत पुच्छइ, तएणं से कणहे वासुदेवे कच्छुल्ल एवं वयासी-तुम ण देवा-णुप्पिया । वडूणि गामा जाव अणुपविससि, त अत्थि याइं ते कहिं वि दोवडए देवीए सुती वा जाव उवलद्धा ?, तएणं से कच्छुल्ले कणहं वासुदेव एवं वयासी-एव खलु देवाणु-प्पिया । अन्नया कयाइं धायर्डसंडे दीवे पुरत्थिमद्धं दाहिण-डुभरहवास अवरककारायहाणिं गए, तत्थ णं मए पउमना-भस्स रत्तो भवणसि दोवई देवी जारिसिया दिट्ठपुव्वा यावि होत्था तएण कणहे वासुदेवे कच्छुल्ल एव वयासी-तुवभ चैव ण देवाणुप्पिया । एव पुव्वकम्म, तएणं से कच्छुल्ल-नारए कणहेण वासुदेवेणं एव वुत्ते समाणे उप्पयणि विज्जं

सन्मान क्रिया, सत्कार सन्मान कर यावत् उन्हें प्रति विसर्जित कर दिया । इसके बाद वे कुन्ती देवी वहा से प्रतिविसर्जित होकर जिस दिशा से प्रकट हुईं वी-उसी दिशा की ओर चली गईं ॥ सू०२७ ॥

धरीने तेभने विदाय उर्या, त्यारपथी ते कुतीदेवी त्याथी विदाय मेणवीने ने दिशा तरइथी आव्या हुता ते व तरइ पाछा रवाना थया ॥ सूत्र २७ ॥

तएण से कणहे वासुदेवे इत्यादि ॥ सूत्र २८ ॥

आवाहेइ आवाहिता जामेव दिसि पाउवभूए तामेव दिसि
 पडिगए, तएणं से कण्हे वासुदेवे दूयं सदावेइ सदावित्ता
 एववयासी-गच्छहणं तुम देवाणुप्पिया । हत्थिणाउरपंडुस्स
 रत्तो एयमट्ट निवेदेहि एवं सल्लु देवाणुप्पिया । धायइसंडे
 दीवे पुरच्छिमडे अवरकंकाए रायहाणीए पउमणा भवणंसि
 दोवइए देवीए पउत्ती उवलच्चा, त गच्छंतु पंच पडवा
 चाउरणिणीए सेणाए सद्धिं सपरिवुडा पुरत्थिमवेयालीए
 मम पडिवालेमाणा चिट्टतु, तएण से दूए जाव भणइ,
 पडिवालेमाणा चिट्टह ते वि जाव चिट्टति, तएणं से कण्हे
 वासुदेवे कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एवं वयासी-
 गच्छहणं तुम्हे देवाणुप्पिया । सन्नाहियं भेरिताडेह, ते वि
 -तालेति, तएणं तेसि सण्णाहियाए भेरीए सह सोच्चा
 समुद्विजयपामोक्खा दसदसारा जाव छप्पणं वलवयसा-
 हस्सीओ सन्नद्धवद्ध जाव गहियाउहपहरणा अप्पेगइया
 हयगया गयगया जाव वग्गुरापरिक्खित्ता जेणेव सभा सु-
 हम्मा जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 करयल जाव वच्चावेति, तएण कण्हे वासुदेवे हत्थिखधवर-
 गए सकोरटमल्लदामेण छत्तेण० सेयवर० हयगय० महया
 भडचडगरपहकरेण वारवईए णयरीए मज्झ मज्जेण णिग्ग-
 च्छइ, जेणेव पुरत्थिमवेयाली तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 पचहि पडवेहि सद्धि एगयओ मिलित्ता एव १२ १० करेइ

करित्ता पोसहसाल अणुपविसइ अणुपविसित्ता सुद्विय देवं
मणसि करेमाणेर चिट्ठइ, तएण कणहस्स वासुदेवस्स अट्ठ-
मभत्तंसि परिणममाणसि सुट्ठिओ आगओ, भणदेवाणु-
प्पिया । ज मए कायव्व, तएण से कणहे वासुदेवे सुद्विय
एवं वयासी-एव खल्ल देवाणुप्पिया । दोवई देवी जाव पउ-
मनाभस्स भवणसि साहरिया तणं तुमं देवाणुप्पिया । मम
पंचहि पंडवेहि सद्धि अप्पच्छट्ठस्स छण्ह रहाणं लवणसमुद्दे
मगं वियरोहि, जणण अह अमरकंकारायहाणा दोवईए कूवं
गच्छामि, तएण से सुट्ठिए देवे कण्ह वासुदेव एव वयासी-
किण्ह देवाणुप्पिया । जहा चेव पउमणाभस्स रत्तो पुव्वसं-
गइएणं देवेण दोवई जाव सहरिया तथा चेव दोवई देविं
धायइसंडाओ दीवाओ भारहाओ जाव हत्थिणापुर साह-
रामि, उदाहु पउमणाभ राय सपुरवल्वाहण लवणसमुद्दे
पक्खिवामि १, तएण कणहे वासुदेवे सुद्विय देव एव वयासी
-मा ण तुम देवाणुप्पिया । जाव साहराहि तुम णं देवा-
णुप्पिया । लवणसमुद्दे अप्पच्छट्ठस्स छण्ह रहाण मगं विय-
राहि, सयमेव ण अह दोवईए कूव गच्छामि, तएण से
सुट्ठिए देवे कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव होउ, पचहिं
पडवेहिं अप्पच्छट्ठस्स छण्ह रहाण लवणसमुद्दे मगं वियरइ,
तएण से कणहे वासुदेवे चाउरगिणासिेण पडिविमज्जेइ-पडिवि-
सज्जित्ता पचहि पंडवेहि सद्धि अप्पच्छट्ठे छहि रहेहि लवणसमुद्दे

आवाहेइ आवाहिता जामेव दिसि पाउवभूए तामेव दिसि
 पडिगए, तएण से कण्हे वासुदेवे दूयं सदावेइ सदावित्ता
 एववयासी-गच्छह ण तुम देवाणुप्पिया ! हत्थिणाउरपंडुस्त
 रत्तो एयमटुं निवेदेहि एवं खलु देवाणुप्पिया ! धायइसंडे
 दीवे पुरच्छिमडे अवरककाए रायहाणीए पउसणाभभरणंसि
 दोवइए देवीए पउत्ती उवलळा, त गच्छंतु पंच पंडवा
 चाउरगिणीए सेणाए सद्धिं सपरिवुडा पुरत्थिमवेयालीए
 मम पडिवालेमाणा चिट्ठतु, तएण से दूए जाव भणइ,
 पडिवालेमाणा चिट्ठह ते वि जाव चिट्ठति, तएणं से कण्हे
 वासुदेवे कोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एवं वयासी-
 गच्छह णं तुम्हे देवाणुप्पिया ! सन्नाहियं भेरिताडेह, ते वि
 -तालेति, तएण तेमि सण्णाहियाए भेरीए सद्धं सोच्चा
 समुद्विजयपामोक्खा दसदसारा जाव छप्पणं वलवयसा
 हस्सीओ सन्नद्धवद्ध जाव गहियाउहपहरणा अप्पेगइया
 हयगया गयगया जाव वग्गुरापारिक्खित्ता जेणेव सभा सु-
 हस्मा जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 करयल जाव वच्चावेति, तएण कण्हे वासुदेवे हत्थिखंधवर-
 गए सकोरटमल्लदामेण छत्तेण० सेयवर० हयगय० महया
 भडचडगरपहकरेण चारवईए णयरीए मज्झं मज्झेण णिग-
 च्छइ, जेणेव पुरत्थिमवेयाली तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 पचहि पडवेहि सद्धि एगयओमिलित्ता . १५ ~ करेइ

वासुदेवस्स दोवई, एसणं अहं सयमेव जुञ्जसज्जो णिग्गच्छामि
त्तिकट्टु दारुयं सारहि एव वयासी-केवलं भो ! रायसत्थेसु दूये
अवज्जे त्तिकट्टु असक्कारिय असम्माणिय अवहारेणं णिच्छुभा-
वह, तएणं से दारुए सारही पउमणाभेणं असक्कारिय जाव
णिच्छूढे समाणे जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ उवा-
गच्छित्ता करयल० कण्हं जाव एव वयासी--एवं खल्लु अह
सामी ! तुव्वम वयणेण जाव णिच्छुभावेइ ॥ सू० २८ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततः खल्लु स कृष्णो वासुदेवः कौटुम्बिकपु-
रुपान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमभादीत् गच्छत खल्लु पूय हे देवानुप्रिय ! द्वार-
वर्ती नगरीम्, ‘एव यथा पाण्डुस्तथा घोषणां प्रोपयत’-यथा पाण्डु राजा हस्ति
नापुरे घोषणा कारितवान् तद्वदित्यर्थः । तेषु कौटुम्बिकपुरुपास्तथैव घोषणा

—तएण से कण्हे वासुदेवे इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से कण्हे वासुदेवे) उन कृष्ण वासुदेव
ने (कोट्टुवियपुरिसे सदावेइ) कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया (सदावित्ता)
बुलाकर (एव वयासी) उन से ऐसा कहा (गच्छइ ण तुव्वमे देवाणुप्पिया
वारवह) हे देवानुप्रियों ! तुम द्वारावती नगर में जाओ (एव जहा पड्डु
तहा घोसण घोसावेति जाव पच्चप्पिणति पड्डुस्स जहा) वहा पाण्डु
राजाकी तरह घोषणा करो—अर्थात् पाण्डु राजाने जिस प्रकार द्रौपदी की
खबर लानेवाले के लिये अर्थ प्रदान का घोषणा अपने कौटुम्बिक पुरुषों
द्वारा हस्तिनापुर नगर में करवाई थी—इसी प्रकार की घोषणा करने के

‘तएण से कण्हे वासुदेवे’ इत्यादि

टीकार्थ—(तएण) त्थारपथी (से कण्हे वासुदेवे) ते कृष्ण वासुदेवे (कोट्टु विय
पुरिसे सदावेइ) कौटु णिउ पुरुषेने जालात्था (सदावित्ता) जालावानी (एव
वयासी) तेभने आ प्रभावे उल्लु उ—(गच्छइ ण तुव्वमे देवाणुप्पिया वारवई)
हे देवानुप्रियो ! तमे द्वारावती नगरीमा ज्ञेयो (एव जहा पड्डु तहा घोसण
घोसावेति जाव पच्चप्पिणति पड्डुस्स जहा) त्था पाण्डु राजानी जेम ज घोषणा
करो अट्टे के पाण्डु राजन्ने जेम द्रौपदीनी शोध क्कवा भाटेनी द्रव्य आप
वानी घोषणा इस्तिनापुर नगरमा करावी इती ते प्रभावे ज घोषणा करवा

मज्झमज्झेणं वीइवयइ वीइवउत्ता जेणेव अमरकंका राय
 हाणी जेणेव अमरकंकाण अणुजाणे तेणेव उवागच्छइ उवा
 गच्छित्ता रह ठवेइ ठवित्ता दारुयं सारहिं सदावेइ सदावित्ता
 एवं वयासी-गच्छह णं तुम देवाणुप्पिया ! अमरकंकारायहाणीं
 अणुपविसाहिं पउमणाभस्स रण्णो वामेण पाएणं पायपीढ
 अक्कमित्ता कुतग्गेणं लेहं पणामेहि तिवलिय भिउडिं निडाले
 साहट्टु आसुरुत्ते रुट्टे कुट्टे कुविए चाडिक्किए एव वयासी-हं भो
 पउमणाहा ! अपत्थियपत्थिया दुरतपंतलक्खणा हीणपुन्नचा
 उइसा सिरीहिरिधी परिवज्जिया अज्ज ण भवसि किन्न तुम ण
 याणासि कण्हस्स वासुदेवस्स अहव णं जुद्धसजे णिग्गच्छाहि
 एस ण कण्हे वासुदेवे पंचहि पडवेहि अप्पच्छट्टे दोवई देवीए
 कूवं हव्वमागए, तएणं से दारुए सारही कण्हेणं वासुदेवेण
 एवं बुत्ते समाणे हट्टुत्तुट्टे जाव पडिसुणेइ पडिसुणित्ता अमरकका
 रायहाणि अणुपविसइ अणुपविसित्ता जेणेव पउमनाहे
 तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता करयल जाव वद्धावेत्ता एव
 वयासी-एस ण सामी ! मम विणयपडिवित्ती इमा अन्ना मम
 सामिस्स समुहाणत्तित्तिक्कट्टु आसुरुत्ते वामपाएणं पायपीढ
 अणुक्कमइ अणुक्कमित्ता कौतग्गेणं लेह पणामइ पणामित्ता
 जाव कूव हव्वमागए, तएणं से पउमणाभे दारुणेणं सारहिणा
 एव बुत्ते समाणे आसुरुत्ते तिवलि भिउडि निडाले साहट्टु
 एव वयासी-णो अप्पिणामि णं अह देवाणुप्पिया !

वासुदेवस्स दोवई, एसणं अहं सयमेव जुज्झसज्जो णिग्गच्छामि
त्तिकट्ठु दारुय सारहि एव वयासी-केवलं भो । रायसत्थेसु दूये
अवज्झे त्तिकट्ठु असक्कारिय असम्माणिय अवहारेणं णिच्छुभा-
वइ, तएणं से दारुए सारही पउमणाभेणं असक्कारिय जाव
णिच्छूढे समाणे जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ उवा-
गच्छित्ता करयल० कण्हं जाव एव वयासी-एवं खलु अहं
सामी । तुव्वम वयणेण जाव णिच्छुभावेइ ॥ सू० २८ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः कौटुम्बिकपु-
रुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमादीत् गच्छत खलु यूय हे देवानुप्रिय । द्वार-
वतीं नगरीम्, ‘एव यथा पाण्डुस्तथा प्रोषणां प्रोषयत’-यथा पाण्डु राजा हस्ति
नापुरे घोषणा कारितवान् तद्वदित्यर्थः । तेषु कौटुम्बिकपुरुषास्तथैव घोषणा

—:तएण से कण्हे वासुदेवे इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से कण्हे वासुदेवे) उन कृष्ण वासुदेव
ने (कौटुम्बिकपुरिसे सदावेइ) कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया (महावित्ता)
बुलाकर (एव वयासी) उन से ऐसा कहा (गच्छइ ण तुव्वमे देवाणुप्पिया
वारवइ) हे देवानुप्रियो । तुम द्वारावती नगर में जाओ (एव जहा पडु
तहा घोसण घोसावेति जाव पच्चप्पिणति पडुस्स जहा) वहा पाण्डु
राजाकी तरह घोषणा करो—अर्थात् पाण्डु राजाने जिस प्रकार द्रौपदी की
खबर लानेवाले के लिये अर्थ प्रदान का घोषणा अपने कौटुम्बिक पुरुषों
द्वारा हस्तिनापुर नगर में करवाई थी—इसी प्रकार की घोषणा करने के

‘तएण से कण्हे वासुदेवे’ इत्यादि

टीकार्थ—(तएण) त्थारपथी (से कण्हे वासुदेवे) ते कृष्ण वासुदेवे (कौटु विय
पुरिसे सदावेइ) कौटुम्बिक पुरुषोने आलाय्था (सदावित्ता) आलायिने (एव
वयासी) तेभने आ प्रभावे उल्लु ठे—(गच्छइ ण तुव्वमे देवाणुप्पिया वारवई)
हे देवानुप्रियो । तमे द्वारवती नगरीमा लल्लो (एव जहा पडु तथा घोसण
घोसावेति जाव पच्चप्पिणति पडुस्स जहा) त्था पाण्डु राजानी नेम व घोषणा
करो अटवे ठे पाण्डु राजने नेम द्रौपदीनी शोध क्त्वा माटेनी द्रव्य आप
वानी घोषणा हस्तिनापुर नगरमा करावी इती ते प्रभावे व घोषणा करवा

कृष्ण वासुदेवं कुशलोदन्त=कुशलवार्ता पृच्छति, ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः कच्छुल्ल
नारदमेवमवादीत्-हे देवानुप्रिय ! त्व खलु बहूनि ग्रामाकरादीनि परिभ्राम्यसि,
तत्र बहूनि गृहाणि यावदनुप्रविशसि तत् तस्मादस्ति 'आइ' इति वाग्यालकारे ते
त्वया यदि कुत्रचिद् द्रौपद्यादेव्या श्रुतिर्वा यावद् उपलब्धा=वाता ? तर्हि कथय'
इति भावः । ततः खलु स कच्छुल्लनारद कृष्ण वासुदेवमेवमवादीत्-एव खलु
हे देवानुप्रियाः जहमन्यदाकृदाचिद् धातकीपण्डे द्वीपे पौरस्त्यार्थे=पूर्वदिग्भागत्र
वर्तिनि, दक्षिणार्धभरतवर्षे-अमरककानाम्नी राजधानी गत । तत्र खलु मया

उत्तरकर वहा आये-(जाव णिसी इत्ता कण्ह वासुदेव कुसलोदत पुच्छइ,
तएणं से कण्हे वासुदेवे कच्छुल्ल एव वयासी-तुम ण देवाणुप्पिया !
बहूणि गामागर जाव अणुपविससि त अत्थि आइ ते कहिं वि दोवईए
देवीए सुतीवा जाव उवलद्धा तएण से कच्छुल्ले कण्ह वासुदेव एव
वयासी) यावत् बैठकर उन्हो ने कृष्ण वासुदेव से कुशल वृत्तान्त पूछा
-कृष्णवासुदेव ने तब कच्छुल्ल नारद से ऐसा कहा-हे देवानुप्रिय !
तुम अनेक ग्राम आकर आदिस्थानों में परिभ्रमण करते रहते हो-अनेक
गृहादिको में आते जाते रहते हो तो करो-कहीं पर क्या तुम्हें द्रौपदी
देवी की श्रुति उपलब्ध हुई है-उसकी तुम्हें किसी प्रकार की कोई खबर
मिली है-उसका किसी भी प्रकार का कोई चिन्ह उपलब्ध हुआ है ?
इस प्रकार कृष्ण वासुदेव के पूछने पर कच्छुल्ल नारद ने उन कृष्ण
वासुदेव से इस प्रकार कहा-(एव खलु देवाणुप्पिया ! अन्नया कयाइ

आव्या (जाव णिसीइत्ता कण्ह वासुदेव कुसलोदत पुच्छइ, तएण से कण्हे
वासुदेवे कच्छुल्ल एव वयासी, तुम ण देवाणुप्पिया ! बहूणि गामागर जाव अणु
पविससि त अत्थि आइ ते कहिं वि दोवईए देवीए सुती वा जाव उवलद्धा-
तएण से कच्छुल्ले कण्ह वासुदेव एव वयासी) त्या आवीने भेडा अने भेमीने
तेभण्णे कृष्ण वासुदेवने कुशल वार्ता पूछी वासुदेवे त्पारे कच्छुल्ल नारदने आ
प्रभाण्णे कहुं दे देवानुप्रिय ! तमे धण्णा ग्राम, आकर वगेरे स्थानेमा परि
भ्रमण्ण करता रडेा छे, धण्णा धरेा वगेरेमा आवण्ण करता रडेा छे तो कडेा,
डेाध पण्ण स्थाने तमने द्रौपदी देवीनी श्रुति भणी छे-तेना तमने डेाध पण्ण
गतना भमात्थारे भव्वा छे, तेनु डेाध पण्ण गतनु विह तमने भण्णु छे ?
आ रीते कृष्ण वासुदेवना प्रश्नने आभाणीने कच्छुल्ल नारदे ते कृष्ण वासुदेवने
आ प्रभाण्णे कहुं दे -

(एव खलु देवाणुप्पिया ! अन्नया कयाइ धायईसडे दीवे पुरत्थिमद्ध

पद्मनाभस्य राज्ञो भवने द्रौपदीदेवी यादृशी ऋष्यां चाप्यगन्, अय भावः-
 काचिद्द्रौपदीमदृशी दृशी पद्मनाभस्य राज्ञो भवने दृष्टा स्मिन् ता मया न सम्पद्य
 शाक्ता नापि सम्पद्यपरिचिता, इति । तत गच्छ कृष्णो वासुदेवः कच्छुल्लनारदमेव
 मयादीत्-हे देवानुभिराः युष्माकमेव गच्छ 'पयम्' इदं 'पुत्रकर्म' पूर्वकर्म
 -पूर्वकृत कर्म, युष्मागिरेवेत्या कर्म पूर्वं कृतमित्यर्थ । ततः गच्छ म कच्छुल्लनारदः
 कृष्णेन वासुदेवेनैवमुक्तं मन उच्यतेना विप्रामायादयति । आगत्य यस्याः एवदिव्यः
 मादुर्भूतस्तामेव दिशि प्रतिगतः । ततः गच्छ स कृष्णो वासुदेवो दत्त शब्दयति-

धायईसत्ते दीवे पुरत्थिमद्व दक्षिणद्वभरहवास अमरकका रायहाणि गर
 तत्थ ण मए पडमनाभस्स रण्णो भवणस्सि दोषई देवी जारिमिया दिद्व
 पुब्बा याचि होत्था, तएण कण्हे वासुदेवे कच्छुल्ल एव वयासी-तुम्भ
 चेष ण देवाणुप्पिया ! एव पुत्रकम्म-तएणं से कच्छुल्लनारए कण्हेणं
 वासुदेवेण एव वुत्ते समाणे उप्पयणि विज्ज आवाहेइ, आवाहिता
 जामेव दिस्सि पाठभुए तामेव दिस्सि पडिगए) सुनो मं तुम्हं वताता हं
 -हे देवाणुप्रिय ! मैं किसी एक समय द्वितीय धातकी खड्ग छीप में पूर्व
 दिग्भागवती दक्षिणार्ध भरतक्षेत्र में अमरकका नाम की राजधानी में
 गया हुआ था वहाँ मैंने पद्मनाभ राजा के भवन में द्रौपदी देवी जैसी
 एक नारी देखी थी-परन्तु मैं उसे अच्छी तरह नहीं जान सका-और
 न उससे परिचित ही हो सका-। नारद की ऐसी बात सुनकर कृष्ण
 वासुदेव ने उनसे कहा हे देवानुप्रिय ! आपने ही ऐसा कार्य सय से
 पहिले किया है-इसके बाद उन कच्छुल्ल नारदने कृष्ण वासुदेवके द्वारा

दक्षिणद्वभरहवास अमरकका रायहाणि गर, तत्थण मए पडमनाभस्स रण्णो
 भवणस्सि दोषई देवी, जारिमिया दिद्वपुब्बा याचि होत्था, तएण कण्हे वासुदेवे
 कच्छुल्ल एव वयासी-तुम्भ चेषण देवाणुप्पिया ! एव पुत्र कम्म-तएण से कच्छुल्ल
 नारए कण्हेण वासुदेवेण एव वुत्ते समाणे उप्पयणि विज्ज आवाहेइ, आवाहिता
 जामेव दिस्सि पाठभुए तामेव दिस्सि पडिगए)

साक्षणी, तमने हु अधी विगत भतावुं छु हे देवानुप्रिय ! कोठं अेक
 वभते हु धातकी पडदीपभा, पूर्वं दिशा तरक्षना दक्षिणार्धं भरत क्षेत्रभा,
 अमरकका नामे राजधानीभा गये हुते त्या मे पद्मनाभ राजना भवनभा
 द्रौपदी देवी नारी नेई हुती पक्षु हु तेने सारी येठं अेकभी
 शक्ये नरि परिचित थई शक्ये नारदनी आ वात साक्षणीने
 कृष्णवा नयि । सौ पडेला तमे न आ काम कथुं छे
 त्याशं नेनी आ वात साक्षणीने

आह्वयति, शब्दयित्ना-एवमवादीत्-गच्छ खलु त्व हे देवानुप्रियाः ! हस्तिनापुर
पाण्डोराज्ञ एतमर्थं निवेदय-एव खलु हे देवानुप्रिय ! धातकीपण्डे द्वीपे ' पुर-
त्थिमद्वे ' पौरस्त्यार्थे पूर्वदिग्भागवर्तिनि अमरककाया राजधान्या पद्मनाभभवने
द्रौपद्या देव्याः प्रवृत्तिरूपलब्धा, तत्-तस्मात् गच्छन्तु पञ्च पाण्डवाश्चतुरङ्गिण्या
सेनया सारं सपरिवृता ' पुरत्थिमवेयालीए ' ' पौरस्त्यवेलायां-पूर्वदिग्वर्तिनि
लवणसमुद्रे मा ' पडिवालेमाणा ' प्रतिपालयन्तः-प्रतीक्षमाणा स्तिष्ठन्तु, ततस्त
दनन्तर स दूतो यावत् पाण्डोरग्रे गत्वा कृष्णवासुदेवोस्त उचन भणति=ऋथयति=
' पडिवालेमाणा चिद्वह ' अय भागः- ' धातकीपण्डे द्वीपे पूर्वदिग्भागवर्तिनि अम-
रककाया राजधान्या पद्मनाभभवने द्रौपद्या ' प्रवृत्तिरूपलब्धा, तस्मात् पञ्च पाण्ड-

इस प्रकार कहे जाने पर अपनी उत्पत्तनीविद्याका स्मरण किया। स्मरण
करके फिर वे जिस दिशा से प्रकट हुए थे उसी दिशा की ओर चले
गये। (तएण से कण्ठे वासुदेवे दूय सद्वावेइ सद्वावित्ता एवं वयासी
गच्छण तुम देवाणुप्पिया ! हत्थिणाउर पडुरस रण्णो एयमट्ट निवेदेहि)
इसके बाद उन कृष्ण वासुदेव ने दूत को बुलाया-बुलाकर उससे ऐसा
कहा-हे देवानुप्रिय ! तुम हस्तिनापुर नगर जाओ-वहाँ पाण्डु राजा से
ऐसा कहना-(एव खलु देवाणुप्पिया ! धायइमडे दीवे पुरत्थिमद्वे
अमरककाए रायहाणीए पडमणाभभवणसि दोवईए देवीए पउत्तीं
उचलद्धा-त गच्छतु पच पडवा चाउरगिणीए सेणाए सद्धि सपरिवुडा
पुरत्थिमवेयालीए मम पडिवालेमाणा चिद्वतु) हे देवानुप्रिय ! वह वक्तव्य
विषय यह है-धातकी पंड नाम के द्वीप में पूर्व दिग्भागवर्ती दक्षिणार्ध
भरत क्षेत्र में वर्तमान अमरकका नाम की राजधानी में पद्मनाभ राजा

विधातु स्मरथु कथुं स्मरथु करिने पञ्ची तेओ ने दिशा तरइथी आओया
छता ते न दिशा तरइ पाछा खाना थइ गया (तएण से कण्ठे वासुदेवे दूय
सद्वावेइ, सद्वावित्ता एव वयासी-गच्छण तुम देवाणुप्पिया ! हत्थिणाउर पडुरस
रण्णो एयमट्ट निवेदेहि) त्थारपथी ते कथु वासुदेवे इतने ओलाओया अने
ओलावीने तेने आ प्रभाओे कथु के छे देवानुप्रिय ! तमे छन्तिनापुर नगरमा
लओ-अने त्या पाडु राजने आ प्रभाओे कछे के-

(एव खलु देवाणुप्पिया ! धायइमडे दीवे पुरत्थिमद्वे अमरककाए राय
हाणीए पडमणाभा भवणसि दोवईए देवीए पउत्तीं उचलद्धा-त गच्छतु पच पडवा
चाउरगिणीए सेणाए सद्धि सपरिवुडा पुरत्थिमवेयालीए मम पडिवाले माणा
चिद्वतु) छे देवानुप्रिय ! धातकी पंड नामे द्वीपमा पूर्व दिशा तरइना दक्षिणार्ध
भरत क्षेत्रमा विद्यमान अमरकका नामनी राजधानीमा पद्मनाभ राजाना जय

पद्मनाभस्य राज्ञो भवने द्रौपदीदेवी यादृशी ऋष्यशर्मा चाप्यभाम्, अयं मावः-
 काचिद्द्रौपदीमदृशी दृशी पद्मनाभस्य राज्ञो भवने दृष्टा हि नृणां मया न सम्पद्य
 शाता नापि सम्पद्यपरिचिता, इति । तत्र गच्छ कृष्णो वासुदेवः कच्छुल्लनारदमेव
 मवादीत्-हे देवानुभिः युष्माकमेव गच्छ 'पश्य' उच्यते 'पुत्रकर्म' पूर्वकर्म
 -पूर्वकृत कर्म, युष्माभिरवेद्य कर्म पूर्वं कृतमित्यर्थः । तत्र, गच्छ स नृदुल्लनारदः
 कृष्णेन वासुदेवेनेऽमुक्तं गच्छ उच्यते विद्यामाराद्यनि । आत्राय यस्याः एवदिसः
 प्रादुर्भूतस्तामेव दिशि प्रतिगतः । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवो दत्त शब्दयति-

घायईसखे दीवे पुरत्थिमद्व दारिणद्वभरत्ताम अमरकका रायहाणि गए
 तत्थ ण मए पडमनाभस्स रण्णो भवणसि दोषई देवी जारिसिया दिट्ठ
 पुब्बा यावि होत्था, तएणं कण्हे वासुदेवे कच्छुल्ल एव वयासी-तुभ
 चेव ण देवाणुप्पिया ! एव पुत्रकम्म-तएण से कच्छुल्लनारए कण्हेणं
 वासुदेवेण एव वुत्ते समाणे उप्पयणि विज्ज आवाहेइ, आवाहिता
 जामेव दिसि पाउञ्जुए तामेव दिसि पडिगए) सुनो मं तुहं यताता हं
 -हे देवाणुप्रिय ! मैं किसी एक समय छितीय धातकी खड छीप में पूर्व
 दिग्भागवती दक्षिणार्ध भरतक्षेत्र में अमरकका नाम की राजधानी में
 गया हुआ था वहाँ मैंने पद्मनाभ राजा के भवन में द्रौपदी देवी जैसी
 एक नारी देखी थी-परन्तु मैं उसे अच्छी तरह नहीं जान सका-और
 न उससे परिचित ही हो सका-। नारद की ऐसी बात सुनकर कृष्ण
 वासुदेव ने उनसे कहा हे देवानुप्रिय ! आपने ही ऐसा कार्य सब से
 पहिले किया है-इसके बाद उन कच्छुल्ल नारदने कृष्ण वासुदेवके द्वारा

दारिणद्वभरत्ताम अमरकका रायहाणि गए, तत्थ ण मए पडमनाभस्स रण्णो
 भवणसि दोषई देवी, जारिसिया दिट्ठपुब्बा यावि होत्था, तएणं कण्हे वासुदेवे
 कच्छुल्ल एव वयासी-तुभ चेव ण देवाणुप्पिया ! एव पुत्र कम्म-तएण से कच्छुल्ल
 नारए कण्हेण वासुदेवेण एव वुत्ते समाणे उप्पयणि विज्ज आवाहेइ, आवाहिता
 जामेव दिसि पाउञ्जुए तामेव दिसि पडिगए)

साभणो, तमने हु णधी विगत गताहुं छु हे देवानुप्रिय ! कौछं ओक
 वपथे हु धातकी पडद्वीपमा, पूर्व दिशा तरइना दक्षिणार्ध भरत क्षेत्रमा,
 अमरकका नामे राजधानीमा गये हुते त्या मे पद्मनाभ राजना भवनमा
 द्रौपदी देवी जैसी ओक नारी जेई हुती पथु हु तेने सारी चेठे ओणधी
 शकथे नहिं अने न तेनाथी परिचित थई शकथे नारदनी आ वात साभणीने
 कृष्णवासुदेवे तेमने कहुं के हे देवानुप्रिय ! सौ पडेला तमे न आ काम कथुं छे
 त्थारपथी ते कच्छुल्लनारदे कृष्ण वासुदेवनी आ वात साभणीने ?

शब्दयित्वा एवमवादीत्-गच्छत खलु यूय हे देवानुप्रिया सानाहिकी सैनिकानां सज्जीभवनार्थं नादो यस्यास्ता भेरीं ताडयत तेऽपि ताडयन्ति, ततः खलु तस्या सानाहिक्या भेर्याः शब्द श्रुत्वा समुद्रविजयप्रमुखा दश दशार्हा यावत् 'उष्ण वलवयसाहस्तीओ' पट्ट पञ्चाशद् बलवत्साहस्रथाः=पट्टपञ्चाशत्सहस्रप्रमिता बलवन्त इत्यर्थः 'सन्नद्धबद्ध-जाव गाहियाउहपहरणा' अत्र यावत्-उब्देनैव द्रष्टव्यम्-सन्नद्धबद्धवर्मितकवचा उत्पीडितशरासनपट्टकाः पिनद्धग्रैवेयकवद्धाविद्धविमल वरचिह्नपटाः शृहीतायुप्रहरणा इति । व्याख्याऽस्मिन्नेवा ययने पूर्वमुक्ता अप्ये-क्रिकाः=केचिद् हयगताः केचिद् गजगता यावद् वागुरापरिक्षिप्ताः=मनुष्यवृन्दैः परिवृताः, यत्रैव कृष्णो वासुदेवस्तत्रैवोपागच्छन्ति उपागत्य करतल० यावद् जयेन विजयेन वर्धयन्ति । ततः खलु कृष्णो वासुदेवो हस्तिस्कन्धवरगतः सको

उनसे ऐसा कहा-हे देवानुप्रियों ! तुम सुधर्मा सभा में जाओ वहाँ जाकर तुम सानाहिकी भेरी बजाओ-। कौटुम्भिक पुरुषोने ऐसा ही क्रिया सुधर्मा सभामें जाकर उस सानाहिकी भेरीको बजाया-। इस सानाहिकी भेरीकी गर्जनाको सुनकर समुद्रविजय आदि दश दशार्ह यावत् ५६, हजार प्रमित बलवीर पुरुष सन्नद्ध बद्धर्मितकवच होकर, यावत् आयुव प्रहरणों को लेकर तैयार सुसज्जित हो गये । यहाँ यावत् शब्द से उत्पीडितशरासन पट्टकाः, " पिनद्धग्रैवेयकवद्धाविद्धविमलवरचिह्नपटाः " इस पाठ का संग्रह हुआ है । इन शब्दों की व्याख्या इसी अ ययन मे पहिले की जा चुकी है । इनमें कितनेक घोड़ों पर, कितनेक हाथियों पर, बैठकर अन्य मनुष्यों के समूह से परिवृत्त हो जहा वह सुधर्मा सभा और जहा वे कृष्णवासुदेव थे वहाँ आये । (उवागच्छित्ता करतल जाव

हे देवानुप्रियो ! तमे सुधर्मा सभामा लब्धो, त्या लब्धने तमे सानाहिकी लेरी वगाडो, ते कौटुम्भिक पुरुषोऽपि पक्षु ते प्रभाणु न आशानु पादन कथु' सुधर्मा सभामा लब्धने तेऽप्ये सानाहिकी लेरी वगाडी सानाहिकी लेरीने अवा न सालणीने समुद्रविजय वगेरे दश दशार्हो यावत् ५६ हजार प्रमित वलवीर पुरुषो ऽप्ये वगेरेथी सुसज्ज यथने यावत् आयुध प्रहरणोने लब्धने तैयार यथ गथा अर्हो यावत् शब्दथी " उत्पीडितशरासनपट्टका, पिनद्ध ग्रैवेयक वद्धाविद्धविमलवरचिह्नपटा " आ पाठने संग्रह थये छे आ शब्दोनी व्याख्या आ अध्ययनमा न पडेला करवामा आवी छे आमा उटलाक घोडोऽपि उपर, उटलाक हाथीऽपि उपर जेमीने तेम न उटलाक माणुसोना समूहोथी परिवृत्त यथने नना ते सुधर्मा, सभा अने नना कृष्ण-वासुदेव इता त्या आव्या

शश्वतुरक्षिप्या सेनया सार्धं सपरिहृताः पौरस्त्यनेत्राया मां प्रतिपालयन्वसि
 षन्तु' इति । एव दूतमुत्वात् कृष्णवासुदेवोक्तं यत्र श्रुत्वा तेऽविपश्च पाण्डवा
 यास्तु तिष्ठन्ति । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः कौटुम्बिकपुरात् शब्दयति,

के भवन में द्रौपदी देवी की स्मरण मिली है-इमलिये पाचो पाण्डव
 चतुरगिणी सेना के साथ युक्त होकर लवण समुद्र की पूर्व दिग्भाग
 वर्तिनी बेला पर जाकर वहाँ मेरी प्रतीक्षा करें । (तण्ण से दूए जाव
 भणइ, पडिवालेमाण चिट्ठह, ते वि जाव चिट्ठति, तण्ण से कण्हे वासु
 देवे कोट्टुचियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव ययासी-गच्छह ण तुभे
 देवाणुप्पिया । सन्नाहिय भेरिं ताडेह ते वि ताडति, तण्णं तीसे सण्णा
 हियाए भेरिण सद्द सोच्चा विजयपामोक्खा, दस दसारा जाव छप्पण
 वलवयसाहस्तीओ सन्नद्धजव जाव गहियाउट्ठपरहणा अप्पेगइया
 हयगया, गयगया, जाव वगुरा परिक्खित्ता जेणेव सभा सुहम्मा जेणेव
 कण्णे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ) इस प्रकार अपने राजा कृष्णवासु
 देव की आज्ञा लेकर वह दूत हस्तिनापुर गया वहाँ जाकर उसने इस
 समाचार को पांडुराजा से कह दिया । वे पाचों पाण्डव इस समाचार को
 दूत के मुख से सुनकर चतुरगिणी सेना के साथ लवण समुद्र के पूर्व
 दिग्भागवर्ती तट पर जाकर कृष्ण वासुदेव की प्रतीक्षा में ठहर गये-
 इसके बाद कृष्ण वासुदेव ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया-बुलाकर

नमा द्रौपदी देवीना वावड भज्या छे तो डवे पाये पाडवे अतुर गिणी सेनानी
 साथे प्रयाण करीने लवण समुद्रना पूर्व किनारा उपर पडोथीने भारी प्रतीक्षा करे

(तण्ण से दूए जाव भणइ, पडिवाले माणा चिट्ठह ते वि जाव चिट्ठति,
 तण्ण से कण्हे वासुदेवे कोट्टुचिय पुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव वयासीं गच्छ
 ण तुभे देवाणुप्पिया । सन्नाहिय भेरिं ताडेह ते वि ताडेति, तण्ण से सण्णा
 हियाए भेरिण सद्द सोच्चा समुहविजयपामोक्खा, दस दसारा जाव छप्पण बल वय
 साहस्तीओ सन्नद्धजव गहियाउट्ठपरहणा अप्पेगइया हयगया, गयगया, जाव
 वगुरापरिक्खित्ता जेणेव सभा सुहम्मा जेणेव कण्णे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ)

आ रीते पोताना राजा कृष्ण वासुदेवनी आज्ञा भोगवीने ते दूत हस्ति
 नापुर तरङ्ग स्वाना थये त्या पडोथीने तेछे पाडु राजने अधा सभायासे
 कही सलणोव्या पाये पाडवे इतना सुभधी आ सभाचार सलणीने पोतानी
 अतुर गिणी सेना साथे त्याथी प्रयाण करीने लवण समुद्रना पूर्व किनारा उपर
 पडोथीने त्या कृष्ण वासुदेवनी प्रतीक्षा करता देकाठ गया तारापडी कृष्ण
 वासुदेवे कौटुम्बिक पुरुषोने जोलाव्या अने जोलावीने तेभे

एकतः एकस्मिन् स्थाने मिलति, मिलित्वा स्कन्धावारनिवेशः सैनिकानामावास
करोति कृत्वा पौषधशालामनुप्रविशति, अनुप्रविश्य "सुद्विय देव" सुस्थित-
सुस्थितनामान देव लवणसमुद्राधिष्ठित मनसि कुर्वन्=स्मरन् तिष्ठति, ततः खलु
कृष्णस्य वासुदेवस्याष्टमभवते परिणममाणे सुस्थितो देव जागतः, जागत्य वदति-
हे देवानुप्रियाः ! भणन्तु कथयन्तु चन्मया कर्तव्यमिति ततः खलु स कृष्णो
वासुदेव सुस्थितदेवमेवमवादीत्-एव खलु हे देवानुप्रिय ! द्रौपदी देवी यावत्
पद्मानभस्य भवने सहता, तत्=तस्मात् खलु त्व हे देवानुप्रिय ! मम पञ्चभिः
पाण्डवै, सार्ध 'अप्पउट्टस्स' आत्मपण्डस्य-आत्मा-अह पण्डो यत्र तस्य समुदा-
यस्य-अस्माकं पण्णामित्यर्थः, पण्णा रवाना लवणसमुद्रे मार्ग वितर=देहि,
येनाहममरकङ्का राजधानीं द्रौपद्या देव्याः 'कूव' प्रत्यानयनकर्तुं गच्छामि ।

वहा पहुँचकर वे पाँच पांडवों के साथ एक स्थान पर सम्मिलित हुए ।
सम्मिलित होकर उन्होंने अपनी सेना को ठहरने का स्थान नियत
किया-स्थान नियतकर के फिर वे पौषधशाला में प्रविष्ट हो गये वहाँ
प्रविष्ट होकर उन्हो ने लवण समुद्र के अधिपति सुस्थित देव का स्मरण
किया-। इसके बाद जब कृष्णवासुदेव का अष्टमभक्त समाप्त हो रहा
था-तब वह सुस्थित देव उनके पास आया-और कहने लगा-हे देवा-
नुप्रिय ! कहिये-मेरे लायक क्या काम है ? (तण्ण से कण्हे वासुदेवे
सुद्विय एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया । दोवई देवी, जात्र पउमना-
भस्स भवणसि साहरिया, तएण तुम देवाणुप्पिया मम पवहि पडवेहि
सद्धिं अप्पउट्टस्स जण्ह रहाण लवणसमुदे मग्गं वियरेहि, जण्ण अह
अमरककारायहाणी दोवईण कूवं गच्छामि, तएण से सुद्विए देवे कण्हं

इतो त्या पडोन्था त्या पडोन्थीने तेज्जो पाथे पाडवोन्ती साथे जेक स्थाने
जेकत्र थया जेकत्र थधने तेमण्णे पोताना सैन्यना पडावणु स्थान नक्की कथुं
स्थान नक्की करीने तेज्जो पौषधशाणामा प्रविष्ट थया त्या जधने तेज्जो जे लवण
समुद्रना अधिपति सुस्थित देवणु स्मरण कथुं त्यारणाह न्यारे कृष्णवासुदेवने।
अष्टम लकृत पूरे थध रह्यो इतो, त्यारे ते सुस्थित देव तेमनी पाने आण्ये
अने कडेवा लाग्ये के डे देवानुप्रिय ! ओलो, मारा लायक शुं काम छे ?

(तण्ण से कण्हे वासुदेवे सुद्विय एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ।
दोवईदेवी, जात्र पउमनाभस्स भवणसि साहरिया, तएण तुम देवाणुप्पिया मम
पवहि पडवेहि सद्धिं अप्पउट्टस्स जण्ह रहाण लवणसमुदे मग्ग वियरेहि, जण्ण
अह अमरकका रायहाणीं दोवईण कूव गच्छामि, तएण से सुद्विए देवे कण्हं

रष्टमात्पदात्मना छत्रेण धार्यमाणेन श्रेतरत्नार्मरेकमुभयमानैः, ह्यग्नरथपदाति
सपरिवृतो महाभट्टाट्टपरप्रकरण द्वारपत्या नगर्या म यम यन निगच्छति,
यज्ञैव पौरस्त्यवेला तत्रोपागच्छति उपागत्य पञ्चभिः पाण्डुः सह 'एग्यओ'

घट्वावेति, तण्ण कण्ठे वासुदेवे इत्थिग्वधरण मकोरटमन्लदामेण
छत्तेण० सेयवर० लयगय० महया भडचडगरपहकरण वारबईण णयरीण
मज्झ मज्जेण णिगच्छइ, जेणेय पुरतिमवेयाली तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छत्ता पचहिं पडवेहिं सद्धि एग्यओ मिलइ, मिलित्ता खधावा
रणिवेस करेइ, करित्ता पोमहसाल अणुपविसइ, अणुपविसित्ता सुट्ठिय
देव मणसि करेमाणे २ चिट्ठइ, तण्ण कणम्मस वासुदेवस्स अट्टमभत्तसि
परिणममाणसि सुट्ठिओ आगओ भण देवाणुप्पिया ! ज मए कायव्व)
वहा आकर उन समयने कृष्णवासुदेव को दोनो हाथ जोड़कर बड़े विनय
के साथ नमस्कार करते हुए जय विजय शब्दों द्वारा बधाई दी। इसके
बाद वे कृष्णवासुदेव हाथी पर सवार हुए। नदार होते ही छत्र धारियों
ने उन पर कोरट पुष्पों की माला से विराजित छत्र ताना, चोमर ढोरने
वालों ने उनपर श्वेत चामर ढोरना प्रारंभ कर दिया। इस प्रकार ह्य,
गज, रथ, एवं पैदलसेना से घिरे हुए वे कृष्णवासुदेव महाभटों के
समूह के साथ २ द्वारावती नगरी के बीच से होकर निकले, निकलकर
जहा वह लवणसमुद्र की पूर्व दिग्भागवर्तिनी वेला थी वहा पहुँचे।

(उवागच्छत्ता करयल जाय उद्धावेति, तण्ण कण्ठे वासुदेवे इत्थि खध
वरण सकोरटमल्लदामेण छत्तेण० सेयवर० ह्यगय महया भडचडगरपहकरण
वारबईण णयरीण मज्झ मज्जेण णिगच्छइ जेणेय पुरतिमवेयाली तेणेव उवा
गच्छइ, उवागच्छत्ता पचहिं पडवेहिं सद्धि एग्यओ मिलइ, मिलित्ता खधावा
णिवेस करेइ, करित्ता पोमहसाल अणुपविसइ, अणुपविसित्ता, सुट्ठिय देव मणसि
करेमाणे २ चिट्ठइ, तण्ण कणम्मस वासुदेवस्स अट्टमभत्तसि परिणममाणसि सुट्ठिओ
आगओ भणदेवाणुप्पिया ! ज मए कायव्व)

त्या पडोथीने ते अधाञ्जे अने हाथ जोडीने णहुं व विनम्रताथी नम
स्कार करता न्यविन्य राण्ठोथी तेमने वधामणी आपी त्थारपथी ते कृष्ण
वासुदेव हाथी उपर सवार थया सवार थया व छत्रधारीओञ्जे तेमनी उपर
कोरट पुष्पोनी भाणाथी शोलातु छत्र ताण्णु तेमव्व आभर ढाणनाराओञ्जे
आभर ढाणवानी शब्दात् करी आ प्रभाञ्जे घोडा, हाथी, रथ अने पायदण्ठी
परिवृत्त थयेला ते कृष्ण-वासुदेव महालटोना समूहनी साथे चाथे द्वारावती
नगरीनी वञ्जे थधने पसार थया अने न्या ते लवणु

मवादीत-मा खलु त्व हे देवानुप्रिय । यावत् सहर, त्व खलु हे देवानुप्रिय ।
लवणसमुद्रे आत्मपण्ठस्य पण्णा रवानां मार्गं ' त्रियराहि ' वितर=देहि, स्वयमेव
खल्वह द्रौपद्या देव्या ' क्रव ' प्रत्यानयनकृतं गच्छामि, ततः खलु स सुस्थितो

अथवा-आपत्नी आज्ञा हो तो नगर, सैनिक, और वाहन सहित पद्म
नाभ राजा को लवण समुद्र में डुबा दे सकती हूँ (तण्ण कण्हे वासुदेवे
सुद्विय देव एव वयासी) जब कृष्णवासुदेव ने उस स्वस्तिक देव से इस
प्रकार कहा-(माण तुम देवाणुप्पिया ! जाव साहराहि तुम ण देवाणु
प्पिया ! लवणसमुद्रे अप्पउट्टस्स उण्ह रहाण लवणसमुद्रे मग्ग विघ-
राहि सयमेव ण अह दोवईए क्रव गच्छामि, तण्ण से सुद्विए देवे कण्ह
वासुदेव एव वयासी, एव होउ, पचहिं पडवेहिं सद्धिं अप्पउट्टस्स उण्ह
रहाणं लवणसमुद्रे मग्ग विघरइ तण्ण से कण्हे वासुदेवे चाउरगिणी
सेणं पडिविसज्जेइ, पडिविसज्जित्ता पचहिं पडवेहिं मद्धिं अप्पउट्टे छहिं
रहेहिं लवणसमुद मज्झ मज्झेण वीइवयइ, वीइवइत्ता जेणेव अमर
कका रायहाणी, जेणेव अमरककाए अग्गुज्जाणे तेणेव उवागच्छइ) हे
देवानुप्रिय ! तुम ऐसा मत करो-अर्थात् पद्मनाभ के भवन से द्रौपदी
देवी को हरण मत करो, और न पद्मनाभ राजा को नगर,
सैनिक एव वाहन सहित लवणसमुद्र में प्रक्षिप्त करो, तुम तो केवल
हे देवानुप्रिय ! हमारे छहों रथों को लवणसमुद्र में मार्ग दे दो । मैं

तमारी आज्ञा होय तो नगर, सैनिक अने वाहन सहित पद्मनाभ राजाने
लवणसमुद्रमा डुमाडी सकु तेम छु (तण्ण कण्हे वासुदेवे सुद्विय देव एव
वयासी) त्वारे कृष्ण-वासुदेवे ते स्वस्तिक देवने आ प्रभाणु कहु डे-

(माण तुम देवाणुप्पिया ! जाव साहराहि तुम ण देवाणुप्पिया ! लवण-
समुद्रे अप्पउट्टस्स उण्ह रहाण लवणसमुद्रे मग्ग त्रियराहि सयमेव ण अह दोवईए
क्रव गच्छामि, तण्ण से सुद्विए देवे कण्ह वासुदेव एव वयासी, एव होउ,
पचहिं पडवेहिं सद्धिं अप्पउट्टस्स उण्ह रहाण लवणसमुद्रे मग्ग त्रियरइ, तण्ण से
कण्हे वासुदेवे चाउरगिणी सेण पडिविसज्जेइ, पडिविसज्जित्ता पचहिं पडवेहिं
सद्धिं अप्पउट्टे छहिं रहेहिं लवणसमुद मज्झ मज्झेण वीइवयइ, वीइवइत्ता जेणेव
अमरकका रायहाणी, जेणेव अमरककाए अग्गुज्जाणे तेणेव उवागच्छइ)

हे देवानुप्रिय ! तमे आ प्रभाणु करवानी तस्सी लेा नहिं उट्टे डे
पद्मनाभना लवणमाथी द्रौपदी देवीनु उरएु करे नहिं तेमअ पद्मनाभ गन्तने
नगर, सैनिक अने वाहन सहित लवण समुद्रमा डे डेा पशु नहिं तमे तो
हे देवानुप्रिय ! इत्त अमारा छमे रथेा भाटे लवण समुद्रमा मार्ग आपेा

तत खलु स सुस्थितो देवः कृष्ण वासुदेवमेवमादीत्—हे देवानुप्रिय । किं लब्ध
यथैव पद्मनाभस्य राज्ञः पूर्वसगतिकेन देवेन द्रौपदी यावत् गहता, तथैव द्रौपदी
देवीं धातकीपण्डाद् द्वीपाद् भारताद् यावद् हस्तिनापुरं सदरामि । 'उदाहृ'
उताहो ! =अथवा. यथय, पद्मनाभ गजान गपुरगलगाहनं=नगरसंनिक्ताह
सहित लज्जणसमुद्रे पश्चिपामि ? ततः रात्रु ऋगो वासुदेवः सुस्थित देवम् एव

वासुदेव एव वयासी किण्ह देवाणुप्पिया । जहा चेव पउमणाभस्स रत्तो पुव्व
पुव्वसगइण्ण देवेण दोवई जाय सहरिया, तथा चेव दोवई देविं धायईसडाओ
दीवाओ भारहाओ जाय हत्थिणापुरं साहरामि, उदाहृ पउमणाभं
रायसपुरवत्ताहण लज्जणसमुदे पश्चिपामि ?) तत्र कृष्णवासुदेव ने
उस सुस्थित देव से इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय ! सुनो—द्रौपदी देवी
यावत् पद्मनाभ के भयन में हरण कर रगी गई है इमलिये हे देवानु
प्रिय ! तुम आत्मपष्ठ मेरे पाच पाडवो के साथ उहाँ रथों को लवण
समुद्र में मार्ग प्रदान करो । अर्थात् पाच पाडवों के और छटे मेरे इस
प्रकार हमारे उह रथों को जाने के लिये रास्ता दो—कि जिससे मैं अम
रकका राजधानी में द्रौपदीदेवी को वापिस ले आने के लिये जा सकू ।
तप सुस्थित देव ने उन कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा—हे देवानु
प्रिय ! जिस प्रकार पद्मनाभ राजा के पूर्व सगतिक देवने द्रौपदीदेवी का
यावत् हरण किया है, उसी तरह मैं भी द्रौपदी देवी को धातकी खड
द्वीप के भरत क्षेत्र से यावत् हस्तिनापुर में हरणकर ला सकता हूँ—

वासुदेव एव वयासी किण्ह देवाणुप्पिया ! जहा चेव पउमणाभस्स रत्तो पुव्व
सगइण्ण देवेण दोवई जाय सहरिया, तथा चेव दोवई देविं धायईसडाओ
दीवाओ भारहाओ जाय हत्थिणापुरं साहरामि, उदाहृ पउमणाभं राय सपुरवत्
वाहण लज्जणसमुदे पश्चिपामि ?)

त्यारे कृष्ण-वासुदेवे ते सुस्थित देवने आ प्रभाणु कळु के हे देवानु
प्रिय ! सालणे, द्रौपदी देवी यावत् पद्मनाभना लवनभा हरणु कराने राभ
वामा आवी छे अटला माटे हे देवानुप्रिय ! तमे 'आत्मपष्ठ' मारा तेमज
पाथे पाडवोना छ रथोने लवणु समुद्रमा थधने पसार थवा माटे मार्ग आवी
अटले के पाथे पाडवोना अने छुा मारा आम छअे रथोने पसार थवा
माटे रस्ते आवी जेथी हु द्रौपदी देवीने पाछा लाववा माटे अमरकका
राजधानीमा जई शकु त्यारे सुस्थित देवे ते कृष्ण-वासुदेवने आ प्रभाणु कळु
के हे देवानुप्रिय ! पद्मनाभ राजना पूर्वसगतिक देवे जेम द्रौपदी देवीनु
यावत् हरणु कथुं छे, तेमज हु पणु द्रौपदी देवीने धातकी खडद्वीपना भरत
क्षेत्रमाथी यावत् हस्तिनापुरमा हरणु करने लावी शकु अने जे

मवादीत्—मा खलु त्व हे देवानुप्रिय । यावत् सहर, त्व खलु हे देवानुप्रिय । लवणसमुद्रे आत्मपण्ठस्य पण्णा रवानां मार्गं ' पियराहि ' वितर=देहि, स्वयमेव खल्वह द्रौपद्या देव्या ' क्रव ' प्रत्यानयनकृतं गच्छामि, ततः खलु स सुस्थितो

अथवा—आपकी आज्ञा हो तो नगर, सैनिक, और वाहन सहित पद्मनाभ राजा को लवण समुद्र में डुबा दे सकता हूँ (तण्ण कण्हे वासुदेवे सुट्ठिय देव एव वयासी) जब कृष्णवासुदेव ने उस स्वस्तिक देव से इस प्रकार कहा—(माण तुम देवाणुप्पिया ! जाव साहराहि तुम ण देवाणुप्पिया ! लवणसमुद्रे अप्पउट्टस्स उण्ह रहाण लवणसमुद्रे मग्ग वियराहि सयमेव ण अह दोवईए क्रव गच्छामि, तण्ण से सुट्ठिए देवे कण्ह वासुदेव एव वयासी, एव होउ, पचहिं पडवेहिं सद्धिं अप्पउट्टस्स उण्ह रहाणं लवणसमुद्रे मग्ग वियरइ तण्ण से कण्हे वासुदेवे चाउरगिणी सेण पडिविसज्जेइ, पडिविसज्जिता पचहिं पडवेहिं मद्धिं अप्पउट्टे छहिं रहेहिं लवणसमुद मज्झ मज्जेण वीइवयइ, वीइवइत्ता जेणेव अमरकका रायहाणी, जेणेव अमरककाए अग्गुज्जाणे तेणेव उवागच्छइ) हे देवानुप्रिय ! तुम ऐसा मत करो—अर्थात् पद्मनाभ के भवन से द्रौपदी देवी को हरण मत करो, और न पद्मनाभ राजा को नगर, सैनिक एव वाहन सहित लवणसमुद्र में प्रक्षिप्त करो, तुम तो केवल हे देवानुप्रिय ! हमारे छहों रथों को लवणसमुद्र में मार्ग दे दो । मैं

तमारी आना डोय तो नगर, सैनिक अने वाहन सहित पद्मनाभ राजाने लवणसमुद्रमा डुमाडी गइ तेम छु (तण्ण कण्हे वासुदेवे सुट्ठिय देव एव वयासी) त्तारे कृष्ण-वासुदेवे ते स्वस्तिक देवने आ प्रभाळे कछु ठे—

(माण तुम देवाणुप्पिया ! जाव साहराहि तुम णं देवाणुप्पिया ! लवणसमुद्रे अप्पउट्टस्स उण्ह रहाण लवणसमुद्रे मग्ग वियराहि सयमेव ण अह दोवईए क्रव गच्छामि, तण्ण से सुट्ठिए देवे कण्ह वासुदेव एव वयासी, एव होउ, पचहिं पडवेहिं सद्धिं अप्पउट्टस्स उण्ह रहाण लवणसमुद्रे मग्ग वियरइ, तण्ण से कण्हे वासुदेवे चाउरगिणी सेण पडिविसज्जेइ, पडिविसज्जिता पचहिं पडवेहिं सद्धिं अप्पउट्टे छहिं रहेहिं लवणसमुद मज्झ मज्जेण वीइवयइ, वीइवइत्ता जेणेव अमरकका रायहाणी, जेणेव अमरककाए अग्गुज्जाणे तेणेव उवागच्छइ)

हे देवानुप्रिय ! तमे आ प्रभाळे करवानी तस्सी तो नहिं सोट्ये ठे पद्मनाभना भवनमाथी द्रौपदी देवीनु डरलु करे। नहिं तेमअ पद्मनाभ गजने नगर, सैनिक अने वाहन सहित लवण समुद्रमा डेके पशु नहिं तमे तो हे देवानुप्रिय ! छमे रथो भाटे लवण समुद्रमा मार्ग आपो।

तत खलु स सुस्थितो देवः कृष्ण वासुदेवमेवमाश्रीत्—ह देवानुप्रिय । किं लब्ध
 यथैव पद्मनाभस्य राज्ञः पूर्वसगतिकेन त्वेन द्रौपदी यावत् मंहुता, तथैव द्रौपदी
 देवीं धातकीपण्डाद् द्वीपाद् भारताद् यावद् हस्तिनापुर संहरामि । 'उदाहृ'
 उताहो ! =अथवा, कथय, पद्मनाभ राजान मपुरवल्वाहन=नगरमनिकवाहन
 सहित लवणसमुद्रे पश्चिमामि ? तत' रात्रु कृष्णो वासुदेवः सुस्थित देवम् एव
 वासुदेव एव वयासी किण्हा देवाणुप्पिया । जहा चैव पउमणाभस्स रत्तो पुव्व
 पुव्वमगइण्ण देवेण दोवई जाय महरिया, तहा चैव दोवई देविं धायईसडाओ
 दीवाओ भारहाओ जाव हत्थिणापुर साहरामि, उदाहृ पउमणाभ
 रायसपुरवल्वाण लवणसमुदे पश्चिमामि ?) तप कृष्णवासुदेव ने
 उस सुस्थित देव से इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय ! सुनो—द्रौपदी देवी
 यावत् पद्मनाभ के भयन में हरण कर रगी गई है इमलिये हे देवानु
 प्रिय ! तुम आत्मपष्ठ मेरे पांच पाडवों के साथ उठो रथों को लवण
 समुद्र में मार्ग प्रदान करो । अर्थात् पांच पाडवों के और छठे मेरे इस
 प्रकार हमारे उह रथों को जाने के लिये रास्ता दो—कि जिससे मैं अम
 रकका राजधानी में द्रौपदीदेवी को वापिस ले आने के लिये जा सकू ।
 तप सुस्थित देव ने उन कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा—हे देवानु
 प्रिय ! जिस प्रकार पद्मनाभ राजा के पूर्व सगतिक देवने द्रौपदीदेवी का
 यावत् हरण किया है, उसी तरह मैं भी द्रौपदी देवी को धातकी खड
 द्वीप के भरत क्षेत्र से यावत् हस्तिनापुर में हरणकर ला सकता हूँ—

वासुदेव एव वयासी किण्हा देवाणुप्पिया ! जहा चैव पउमणाभस्स रत्तो पुव्व
 सगइण्ण देवेण दोवई जाय महरिया, तहा चैव दोवई देविं धायईसडाओ
 दीवाओ भारहाओ जाव हत्थिणापुर साहरामि, उदाहृ पउमणाभ राय सपुरवल्
 वाहण लवणसमुदे पश्चिमामि ?)

त्यारे कृष्ण-वासुदेवे ते सुस्थित देवने आ प्रभाणु कळु के हे देवानु
 प्रिय ! सालणे, द्रौपदी देवी यावत् पद्मनाभना लवनमा हरणु कराधने राभ
 वामा आवी छे ओटला भाटे हे देवानुप्रिय ! तमे 'आत्मपष्ठ' भारा तेमज्
 पाचे पाडवेना छ रथेने लवणु समुद्रमा थधने पसार थवा भाटे मार्ग आपो
 ओटले के पाचे पाडवेना अने छुटा भारा आम छओ रथेने पसार थवा
 भाटे रस्ते आपो जेथी हु द्रौपदी देवीने पाछा लाववा भाटे अमरक का
 राजधानीमा जई शकु त्यारे सुस्थित देवे ते कृष्ण-वासुदेवने आ प्रभाणु कळु
 के हे देवानुप्रिय ! पद्मनाभ राजना पूर्वसगतिक देवे जेम द्रौपदी देवीउ
 यावत् हरणु कर्तु छे, तेमज् हु पणु द्रौपदी देवीने धातकी पडद्वीपना भरत
 क्षेत्रमाथी यावत् हस्तिनापुरमा हरणु करिने लावी शकु

प्रविश्य पद्मनाभस्य राज्ञो वामेन पादेन ' पायपीठ ' पादपीठम् सिंहासनसलग्न-
सोपानम् जाक्रम्य कुन्ताग्रेण लेख प्रत्रिका ' पणामेहि ' अर्पय=देहि अर्पयित्वा
' त्रिवलिय ' त्रिवलिकां रेखात्रययुक्ता ' भिउडिं ' भ्रुकुटिं- ' गिडाळे ' ललाटे
' साहदुदु ' संहृत्य-उन्नीय ' आसुरुत्ते ' आशुरुत्तः=शीघ्र क्रोधाविष्टः ' रुष्ट'
रुष्टः ' क्रुद्रे ' क्रुद्धः ' कुपिए ' कुपितः चडिकिए ' चाण्डिकियतः-रोपयुक्तः,
एवमवादीत्-ह भो ! पद्मनाभ ! ' आत्थियपत्थिया ' अप्रार्थितप्रार्थित !-मर-
णवाळुक ! ' दुरतपतलखण ! ' दुरन्तप्रान्तलक्षण ! !पूर्वं व्याख्यातमेतत् ,

पायपीठ अक्कमित्ता कुन्ताग्रेण लेह पणामेहि, त्रिवलियं भिउडिं गिडाळे
साहदुदु आसुरुत्ते रुष्टे क्रुद्रे कुपिए चडिकिए एव वयासी ह भो पउमणाहा
अपत्थियपत्थिया ! दुरतपतलखणा ! हीणपुण्णचाउदसा ! सिरिहिरि
धी परिवज्जिया ! अज्ज ण भवसि किन्न तुम ण याणासि, कण्हस्स
वासुदेवस्स अहवण जुद्धसज्जे णिगच्छाहि) रथ को रोककर वहां
स्थापित कर-दारुक सारथि को बुलाया बुलाकर के उससे ऐसा कहा-
हे देवानुप्रिय तुम जाओ-अमरकका राजधानी में जाओ वहां जाकर
पद्मनाभ राजाके पादपीठको वाम पादसे आक्रमित कर, कुन्त (भाला)के
अग्रभाग से उसे पत्रिका दो देकर के अपनी भ्रुकुटी को भालपर चढा-
कर, इकदम गुस्से में आकर, रुष्ट, कुपित एव क्रुद्ध होकर क्रोध के
आवेश से तम तमाते हुए तुम उससे ऐसा कहों-अरे ओ पद्मनाभ !
अप्रार्थित प्रार्थित ! मरणवाळुक-! दुरतप्रान्त लक्षण ! मोलुम होता है

पाएण पायपीठ अक्कमित्ता कुन्ताग्रेण लेह पणामेहि, त्रिवलियं भिउडिं गिडाळे
साहदुदु आसुरुत्ते रुष्टे क्रुद्रे कुपिए चडिकिए एव वयासी ह भो पउमणाहा !
अपत्थियपत्थिया ! दुरतपतलखणा ! हीणपुण्णचाउदसा ! सिरि हिरिधी
परिवज्जिया ! अज्ज ण भवसि किन्न तुम ण याणासि, कण्हस्स वासुदेवस्स
अहवण जुद्धसज्जे णिगच्छाहि)

रथने लक्ष्मणे राणीने, त्या न रथने भूषिने दारुके सारथिने जोलाव्यो
अने जोलावीने तेने आ प्रभाषे कष्टु के डे देवानुप्रिय ! तमे अमरकका
राजधानीमा लक्ष्मणे अने त्या लक्ष्मणे पद्मनाभ राजाना पादपीठने उभा पगथी
आक्रमित करिने कुतना अत्र लागथा तेने पत्रिका आपो पत्रिका आपीने
तमे पोतानी लक्ष्मणे यदावीने, अकदम लालचोण थधने रुष्ट, कुपित अने
क्रुद्ध थधने कोधना आवेशमा आवीने तेने आ प्रभाषे उडो के अरे ओ
पद्मनाभ ! अप्रार्थित प्रार्थित ! मरण वाळुक ! दुरत प्रात लक्षण ! (नीच

देव कृष्णवासुदेवमेवमादीत्—एव भावुः शि, ततोऽर्गो पञ्चमिः पाण्डवः सार्धम्
 आत्मपण्डस्य पण्णा रथानां चरगममुद्रे मार्गं विनरति तत यदु म कृष्णो वासु
 देवश्चतुरङ्गिणीं सेना मतिभिर्मर्जयति, प्रनिमित्त्यै पञ्चमिः पाण्डवः मार्गमात्म
 पण्ड पद्मीरथेणममुद्र मध्मधेन ' शीघ्रयः ' यतिव-वि-गन्तति. व्यति
 प्रज्य यत्रोत्तमरङ्गा राजधानी, यत्रोत्तमरङ्गाया अग्रोत्तम नत्रोत्तमगन्तति,
 उपागत्य रथ स्थापयति, स्थापयन्ता प्ररुह सारहिं गच्छयति, गच्छयित्वा एव
 मवादीत्—गच्छ खलु त्व हे देवानुमिय । अमरककाराजधानीमनुभवति, अनु

स्वय ही द्रौपदी देवी को वरा से चापिस ले आऊंगा । अब्बा मैं स्वय
 ही द्रौपदी देवी को लेने के लिये जाऊँगा तब उस सुस्थित देव ने कृष्ण
 वासुदेव से इस प्रकार कहा-अच्छा ऐसा ही हो-इस प्रकार कह
 कर उसने आत्म पण्ड के छहों रथों को लवणसमुद्र में मार्ग विनरित
 कर दिया । तब कृष्णवासुदेव ने अपनी चतुरङ्गिणी सेना को वरा से
 वापिस करदिया चापिस कर फिर वे पांच पाण्डवों के साथ उहाँ रथों
 को-१ एक अपने रथको और पांच पाण्डवोंके रथोंको-लेकर लवणसमुद्रके
 भीतरसे होकर चलने लगे । चलते २ वे जहाँ अमरककाराजधानी थीं-
 और उसमें भी जहाँ वह अशोधान था वहाँ पहुँचे । (उवागच्छित्ता रह
 ठवेइ) वहा पहुँच कर उन्होंने अपने रथ को रोक दिया-(ठवित्ता दारुय
 सारहिं सद्वावेइ, सद्वाचित्ता एव वयासी गच्छइ ण तुम देवाणुप्पिया !
 अमरककारायहाणी अणुपविसाहि २, पउमणाभस्स रण्णो वामेण पाएण

त्यां लधने हु लते व द्रौपदी देवीने त्याथी पाथी लध आथीश जेदले के
 हु लते व द्रौपदी देवीने देवा भाटे लधश त्यारे ते सुस्थित देवे कृष्ण-
 वासुदेवने कहु के साइ, आभ व करे आ प्रभावे कहीने तेबे आत्मपधना
 छये रथोने लवणु समुद्रमा रस्ने आथ्ये त्यारपथी कृष्ण-वासुदेवे पोतानी
 चतुरङ्गिणी सेनाने त्याथी पाथी वणावी हीधी अने पाथी वणावीने तेजे पाथे
 पाउवेानी साथे छये रथोने-जेक पोताना रथने अने पाथ पाउवेना रथोने-
 लधने लवणु समुद्रनी वये थधने पसार थवा लाग्या आभ पसार थता तेजे
 न्या अमरकका राजधानी अने तेमा पणु न्या ते अशोधान हुतु त्या पडेअथा
 (उवागच्छित्ता रह ठवेइ) त्या पडेअथीने तेभजे पोताना रथने जिलो राभ्ये.

(ठवित्ता दारुय सारहिं सद्वावेइ, सद्वाचित्ता एव वयासी, गच्छइ ण तुम
 देवाणुप्पिया ! अमरकका रायहाणीं अणुपविसाहि २ वामेण

प्रविश्य पद्मनाभस्य राज्ञो वामेन पादेन ' पायपीठ ' पादपीठम् सिंहासनसलग्न-
सोपानम् आरुम्य कुन्ताप्रेण लेख प्रत्रिका ' पणामेहि ' अर्पय=देहि अर्पयित्वा
' तिवलिय ' त्रिवलिका रेखात्रययुक्ता ' भिउडिं ' भूकुटिं- ' गिडाळे ' लडाटे
' साहदुडु ' सहस्य-उन्नीय ' आसुरुत्ते ' आशुरुप्तः=शीघ्र क्रोधाविष्टः ' रुट्ट
रुष्टः ' कुट्टे ' कुट्टः ' कुविण ' कुपितः चडिकिए ' चाण्डिकियतः-रोषयुक्तः,
एवमवादीत्-ह भो ! पद्मनाभ ! ' आत्थियपत्थिया ' अप्रार्थितप्रार्थित !-मर-
णवाडुक्क ! ' दुरतपतलखण ! ' दुरन्तप्रान्तलक्षण ! ' पूर्व व्याख्यातमेतत् ,

पायपीठ अक्कमित्ता कुत्तग्गेण लेह पणामेहि, तिवलिय भिउडिं गिडाळे
साहदुडु आसुरुत्ते रुट्टे कुट्टे कुविण चडिकिए एव वयासी ह भो पउमणाहा
अपत्थियपत्थिया ! दुरतपतलखण ! हीणपुण्णचाउदसा ! सिरिहिरि
धी परिवज्जिया ! अज्ज ण भवसि किन्न तुम ण याणासि, कण्हस्स
वासुदेवस्स अहवण जुद्धसज्जे णिगच्छाहि) रव को रोककर वहां
स्थापित कर-दासक सारथि को बुलाया बुलाकर के उससे ऐसा कहा-
हे देवानुप्रिय तुम जाओ-अमरकका राजधानी में जाओ वहां जाकर
पद्मनाभ राजाके पादपीठको वाम पादसे आक्रमित कर, कुन्त (भाला)के
अग्रभाग से उसे पत्रिका दो देकर के अपनी भूकुटी को भालपर चढा
कर, इकदम गुस्से में आकर, रुष्ट, कुपित एव कुट्ट होकर क्रोध के
आवेश से तम तमाते हुए तुम उससे ऐसा कहों-अरे ओ पद्मनाभ !
अप्रार्थित प्रार्थित ! मरणवाडुक्क-! दुरतप्रान्त लक्षण ! मालुम होता है

पाएण पायपीठ अक्कमित्ता कुत्तग्गेण लेह पणामेहि, तिवलिय भिउडिं गिडाळे
साहदुडु आसुरुत्ते रुट्टे कुट्टे कुविण चडिकिए एव वयासी ह भो पउमणाहा !
अपत्थियपत्थिया ! दुरतपतलखण ! हीणपुण्णचाउदसा ! सिरि हिरिधी
परिवज्जिया ! अज्ज ण भवसि किन्न तुमं ण याणासि, कण्हस्स वासुदेवस्स
अहवण जुद्धसज्जे णिगच्छाहि)

रथने जेको राणीने, त्या व रथने भूमीने दाइत सारथिने जेलाव्यो
अने जेलावीने तेने आ प्रभाणे कछु के डे देवानुप्रिय ! तमे अमरकका
राजधानीमा जेव्यो अने त्या वधने पद्मनाभ राजाना पादपीठने दाया पगथी
आक्रमित करीने उतना अत्र लागथा तेने पत्रिका आपो पत्रिका आपीने
तमे पोतानी लम्भदा यदावीने, अकडम लालचोण धधने इष्ट, कुपित अने
इष्ट धधने क्रोधना आवेशमा आवीने तेने आ प्रभाणे उडे के अरे ज्यो
पद्मनाभ ! अप्रार्थित प्रार्थित ! मरथु पाछे ! दुरत प्रात लक्षण ! (नीय

देव कृष्ण वासुदेवमेवमासीत्-एव भाव इति, ततोऽसौ पञ्चमि पाण्डुः सार्धम्
 आत्मपण्डस्य पण्णा रथाना उग्रगममुद्रे मार्गं विनरति। तत नन्द स दृणो वासु
 देवश्चतुरङ्गिणीं सेना प्रतिरिगर्जयति, प्रतिविसर्ज्य पञ्चमिः पाण्डुः, सार्धमात्म
 पण्ड पद्मीरथेणममुद्र मध्मध्वेन 'वीरयय' -पतिघ्न=वि-गच्छति, व्यति
 व्रज्य यज्ञीशमररुद्रा राजधानी, यज्ञीशमररुद्राया अग्रोधान नर्त्तनोपागच्छति,
 उपागत्य रथ स्वापयति, स्थापयित्वा दारुक सारहिं गच्छयति, गच्छयित्वा एव
 मवादीत्-गच्छ खलु त्व हे देवानुपिय । अमरककाराजधानीमनुपयिय, अनु

स्वय ही द्रौपदी देवी को वहा से वापिस ले आऊंगा । अबत्रा मैं स्वय
 ही द्रौपदी देवी को लेने के लिये जाऊंगा तब उस मुस्विन देव ने कृष्ण
 वासुदेव से इस प्रकार कहा-अच्छा ऐसा ही हो-इस प्रकार कह
 कर उसने आत्म पण्ड के चहों रथो को लवणसमुद्र में मार्ग विनरित
 कर दिया । तब कृष्णवासुदेव ने अपनी चतुरगिणी सेना को वहा से
 वापिस करदिया वापिस कर फिर वे पांच पाण्डुओं के साथ चहो रथों
 को-१ एक अपने रथको और पांच पाण्डुओंके रथोंको-लेकर लवणसमुद्रके
 भीतरसे होकर चलने लगे । चलते २ वे जहा अमरककाराजधानी थीं-
 और उसमें भी जहा वह अग्रोधान था वहा पहुँचे । (उवागच्छित्ता रह
 ठवेइ) वहा पहुँच कर उन्होंने अपने रथ को रोक दिया-(ठवित्ता दारुक
 सारहिं सद्वावेइ, सद्वावित्ता एव वयासी गच्छइ ण तुम देवाणुपिया !
 अमरककाराजधानी अणुपविसाहि २, पउमणाभस्स रणो वामेण पाण्ण

त्यां जघने हु लते ज द्रौपदी देवीने त्याथी पाणी लध आपीश जेठवे के
 हु लते ज द्रौपदी देवीने लेवा भाटे जघश त्यारे ते मुस्थित देवे कृष्ण-
 वासुदेवने कहु के साइ, आभ ज करे आ प्रभावे कहीने तेवे आत्मपण्डना
 छे रथाने लवण समुद्रमा रसेना आये त्यारपछी कृष्ण-वासुदेवे पोतानी
 चतुरगिणी सेनाने त्याथी पाणी वजावी दीधी अने पाणी वजावीने तेजे पाथे
 पाउवानी साथे छे रथाने-अक पोताना रथने अने पाथ पाउवोना रथाने-
 लधने लवण समुद्रनी वर्ये थधने पसार थवा लाग्या आभ पसार थता तेजे
 न्या अमरकका राजधानी अने तेमा पणु न्या ते अग्रोधान हुतु त्या पडोव्या
 (उवागच्छित्ता रह ठवेइ) त्या पडोव्यीने तेमापो पोताना रथने जेठो राभ्ये

(ठवित्ता दारुक सारहिं सद्वावेइ, सद्वावित्ता एव वयासी, गच्छइ ण तुम
 देवाणुपिया ! अमरककाराजधानी अणुपविसाहि २ वामेण

ततः खलु स दारुक सारथिः कृष्णेन वासुदेवेनैवमुक्तः सन् हृष्टतुष्टो
यावत् प्रतिश्रुणोति ' तयाऽस्तु ' इति कृत्वाऽऽज्ञां स्वीकरोति प्रतिश्रुत्य=अमर-
कङ्काराजधानीमनुप्रविशति, अनुप्रविश्य यत्रैव पद्मनाभसन्वैवोपागच्छति, उपागत्य
करतलपरिवृहीतदशनम् शिरआप्तं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा यावद् वर्धयति-जवेन
विजयेन चाभिनन्दयति । वर्धयित्वा-अभिनन्द एवमवादीत्-एषा खलु हे
स्वामिन् ! मम विनयप्रतिपत्तिः इयमन्या मम स्वामिनो विनयप्रतिपत्तिः, " समु-

समाणे दृष्टुद्वे जाव पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता, अमरकका रायट्ठणि अणु
पविसइ, अणुपविसित्ता जेणेव पउमनाहे तेणेव उवागच्छइ, उवाग-
च्छित्ता, करयल जाव वद्धावेत्ता एव वयासी-एसण सामी मम विण
यपडिवित्ती, इमा अन्ना मम सामिस्स समुहाणत्ति त्ति कट्टु असुरुत्ते
नाम पाएण पायपीढ अणुकमड) पाच पाडवों के साथ आत्म पष्ठ होकर
द्रौपदी देवी को लेने के लिये अभी अभी आये हुए है । इस प्रकार
कृष्णवासुदेव के द्वारा कहे गये उस दारुक सारथि ने हृष्ट तुष्ट होकर
कृष्णवासुदेव की आज्ञा स्वीकार करली । स्वीकार कर के फिर वह
अमरकका राजधानी में प्रवेश किया वहा प्रवेश कर वह वहा पहुँचा
जहा पद्मनाभ राजा थे । उनके समीप जाकर उस ने पहिले उन्हें दोनों
हाथों की अजलि बना कर और उसे मस्तक पर रखकर नमस्कार
किया-जय विजय शब्दों से उन्हें बधाया-वाद में उसने इस प्रकार
कहना प्रारम्भ किया-हे स्वामिन् ! यह तो मेरी विनय प्रतिपत्ति है-दूत

सारथी ऋण्णेण वासुदेवेण एव युक्ते समाणे दृष्टुद्वे जाव पडिसुणेइ पडिसुणित्ता,
अमरकका रायट्ठणि अणुपविसइ, अणुपविसित्ता जेणेव पउमनाहे तेणेव उवाग-
च्छइ, उवागच्छित्ता, करयल जाव वद्धावेत्ता एव वयासी-एसण सामी मम विणय-
पडिवित्ती, इमा अन्ना मम सामिस्स समुहाणत्ति त्ति कट्टु आसुरुत्ते वामपाएण
पायपीढ अणुकमड)

पाथे पाडवोनी साथे आत्मपष्ठ यधने द्रौपदी देवीने लेवा भाटे अत्यारे
आवी गया छे आ प्रभाण्णे कृष्ण-वासुदेव वडे कडेवामा आवेला वयने।
सालणीने हृष्ट-तुष्ट थउने ते दारुक सारथीअे तेमनी आज्ञा स्वीकारी लीधी।
स्वीकारीने ते अमरकका राजधानीमा प्रविष्ट थये। प्रविष्ट यधने ते ज्या पद्म
नाभ राजा हुता तेमनी पासे जधने नी पडेला तेण्णे अने हाथोनी अजलि
बनावीने अने तेने भन्तडे भूकीने नमस्कार उर्थो अने जय विजय शब्दोथी
राजने वधामणी आपी त्थारपणी तेण्णे आ प्रभाण्णे कडेवानी राजात्त करी
के छे स्वामी ! आ तो भारी विनय प्रतिपत्ति छे इतनी करण अभावता मे

‘ हीणपुत्रचाउदसा ! ’ हीनपुत्रप्रातुर्दशिकः — अलब्धपुत्रप्रातुर्दशिकजन्मा, चतुर्दशीजातो हि भाग्यवान् भवति । तथा—‘ गिरी गिरि धी परिवर्जिता ! ’ श्री गी धी परिवर्जित ! लक्ष्मी उज्जा युद्धि रहित !, अय न भवति, किं स्वल्प न जानासि, कृष्णस्य वासुदेवस्य भगिनी द्रौपदी देवीमिदं ‘ दृष्ट आणमाणे ’ इव्यमानयत्, ‘ त ’ तन्-तस्मान् ‘ एवमपि ’ एतामपि=आनीतामपि आहू पूर्वं काद् इण्गती ’ इत्यस्मात् क्त प्रत्ययः, ‘ अद्य ’ अयया खलु ‘ जुद्ध सन्जे ’ युद्ध सज्जः-युद्धाय सज्जः=सन्नद्धः सन् ‘ गिगन्नादि ’ निर्गन्त-वर्दिनि.मर एष खलु कृष्णो वासुदेवः पद्मभिः पाण्डवै. मह ‘ अप्यउद्वे ’ आत्मपण्ड =आत्मा षष्ठो यत्र स समूहे, द्रौपदी देव्या. ‘ ह्य ’ प्रत्यानयन कर्तुं इव्यमागत ।

तू अलब्ध पुत्र्य चातुर्दशिक जन्म वाला है-तू-चतुर्दशी में उत्पन्न हुआ नहीं है-क्यों कि चतुर्दशी के दिन उत्पन्न हुआ व्यक्ति भाग्यशाली होता है किन्तु तू ऐसा नहीं है अर्थात् अभाग्य है तू श्री गी, बुद्धि से रहित है । याद रख-या तो आज तू नहीं है या मैं नहीं हूँ तुझे यह ख्याल नहीं है-कि यह द्रौपदी देवी कृष्ण वासुदेव की बहिन है जिसे तूने यहा हरण करवा कर मगवाई है । अतः यदि अपनी कुशल चाहता है, तो तू इस हरण करवा कर अपने यहा मगवाई गई द्रौपदी देवी को कृष्ण वासुदेव के पास जाकर पीछे वापिस पहुँचा दे । नहीं तो युद्ध के लिये सज्जित होकर घर से बाहर निकल आ । (एसण कण्हे वासुदेवे) ये कृष्ण वासुदेव (पचहिं पडवेहिं अप्पउद्वे दोवई देवीए कूव इव्वमागण, तएण से दारुए सारही कण्हे ण वासुदेवे ण एव बुत्ते

विचारो तेभ्य नीत्य लक्षणे युक्त) अमने ऐम लागे छे के तुं अलब्ध पुत्र्य चातुर्दशिक जन्मवाणो छे, ऐटले के तुं चौदशने द्विवसे जन्मयो नथी केमके चौदशने द्विवसे उत्पन्न थनारी व्यक्तित्वाद्यशाणी डोय छे तु श्री, श्री अने बुद्धि वगरनो छे भरोणर सालणी ले के आणे का तो तुं नहिं के म डुं नहिं तने ऐटली पणु भ मर नथी के आ द्रौपदी देवी कृष्ण-वासुदेवनी भडेन छे-के नेने ते डरणु करवीने अहो भगवी छे डवे ने तुं पोतातु ललु धिच्छतो डोय तो तु आ डरणु करवीने पोताने त्या राकी राजेवी द्रौपदी देवीने कृष्ण-वासुदेवनी पासे जधने पाछी सोपी हे नडितर युद्धना माटे तैयार थधने भडार मेदानमा आवी न (एस ण कण्हे वासुदेवे) आ कृष्णवासुदेव

(पचहिं पडवेहिं अप्पउद्वे दोवई देवीए कूव इव्व

दारुए

दारुक सारथिमेवमवादीत्—

केवल भोः ! ' रायसत्येसु ' राजशास्त्रेषु-राजनीतिषु दूतः ' अवज्ज्ञे ' अवध्यः= न हन्तव्यः, इत्युक्तमस्ति तस्मात् त्वा मुञ्चामि इति कृत्वा=इत्युक्त्वा त दूतम् असत्कार्यं, असम्मान्य अपहारेण ' णिच्छुभावेइ ' निक्षोभयति-निष्कासयति, तत् खलु म दारुकः सारथिः पद्मनाभेनासत्कार्यं यावत्-' णिच्छुदे ' निक्षोभितः- निःसारितः समाणे ' सन्, यत्रैव कृष्णो वासुदेवस्तत्रोपागच्छति, उपागत्य करतलपरिमृष्टीतदशनख शिरावर्तं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा कृष्णं यावद् एवमवादीत्—

जुद्धसज्जो णिगच्छामि, त्ति कट्टु दारुय सारथ एव वयासी-केवल भो रायसत्येसु दूये अवज्ज्ञे त्ति कट्टु असत्कारिण्य असम्मानिण्य अवहारेण णिच्छुभावेइ) तस्य वद पद्मनाभ जय दारुक सारथि ने इस प्रकार कहा तो इकदम क्रोधित होकर त्रिवलि युक्त भ्रुकुटि को माथे पर चढा कर इस प्रकार कहने लगा हे देवानुप्रिय ! मैं द्रौपदी को कृष्णवासुदेव के लिये अर्पित नहीं करता हूँ-पीजी नहीं देना हूँ—। इसके लिये मैं अभी स्वय ही युद्ध करने को तैयार हूँ—। इस प्रकार कहकर फिर उसने उस दारुक सारथि से ऐसा कहा अरे ! राजनीति के शास्त्रों में दूत अवध्य कहा गया है-इस लिये तुझे छोड़ देना हूँ । इस तरह कहकर उसने दूत को असत्कृत और असमानित कर पीछे के दरवाजे से बाहिर निकलवा दिया । (तएण दारुण सारथी पउमणाभे ण असत्कारिण्य जाव णिच्छुदे समाणे जेणेव कृष्णे वासुदेवे तेणेव उवा

कण्डस्स वासुदेवस्स दोवई, एसण अह सयमेव जुद्धसज्जो णिगच्छामि त्ति कट्टु दारुय सारहिं एव वयासी-केवल भो ! रायसत्येसु दूये अवज्ज्ञे त्ति कट्टु असत्कारिण्य असम्मानिण्य अवहारेण णिच्छुभावेइ)

दारुक सारथिना आ प्रभाञ्जे वयने साक्षणीने पद्मनाभ ओकदम क्रोधमा लालशोण थर्षं गथे अने लम्भरे अढावीने आ प्रभाञ्जे कडेवा लाञ्छे के डे देवानुप्रिय ! हु कृष्ण-वासुदेवने द्रौपदी कोषपण्य स्थितिमा सोपवा तैयार नथी अना माटे हु अत्यारे पण्य युद्ध करवा तैयार छु आ प्रभाञ्जे कडीने तेञ्जे दारुक सारथीने वहु के अरे ! राजनीतिना शास्त्रोमा दूत अवध्य कडेवामा आञ्छे छे अथी तने नतेा कर छु आ प्रभाञ्जे कडीने तेञ्जे इतने अमत्कृत अने असमानित करीने पाछवा भारोज्जेथी अढार कढावी भूकथे।

(तएण दारुण सारथी पउमणाभेण असत्कारिण्य जाव णिच्छुदे समाणे जेणेव कृष्णे वासुदेवे तेणेव उपागच्छइ, उपागच्छिता करयल० कण्ड जाव एव

एव वयासी- ह भो दारगा । किन्न तुव्भे पउमनाभेण सद्धिं
जुञ्झहिह उयाहु पेच्छहिह ? , तएण ते पंच पंडवा कण्ह
वासुदेव एवं वयासी--अम्हे णं सामी । जुञ्झामो तुव्भे पेच्छह
तएणं पंच पंडवे सण्णद्ध जाव पहरणा रहे दुरुहति दुरुहत्ता
जेणेव पउमनाभे राया नेणेव उवागच्छह उवागच्छत्ता एव
वयासी--अम्हे वा पउमणाभे वा रायत्तिकट्टु पउमनाभेणं सद्धिं
सपलगा यावि होत्था, तएण से पउमनाभे राया तं पंच पडवे
खिप्पामेव हयमहिय पवर निवडिय चिन्धद्धूयपडागा जाव
दिसोदिसि पडिसेहेइत्ति, तएणं ते पंच पंडवा पउमनाभेण रत्ता
हयमहियपवरनिवडिय जाव पडिसेहिया समाणा अत्थामा
जाव आधारणिज्जत्तिकट्टु जेणेव कणहे वासुदेवे तेणेव उवा०,
तएण से कणहे वासुदेवे ते पच पडवे एवं वयासी--कहणं
तुव्भे देवाणुप्पिया । पउमणाभेण रत्ता सद्धिं संपलगा ? ,
तएण ते पच पडवा कण्हं वासुदेव एव वयासी- एवं खल्ल
देवाणुप्पिया । अम्हे तुव्भेहि अब्भणुत्ताया समाणा सन्नद्ध०
रहे दुरुहामो२ जेणेव पउमनाभे जाव पडिसेहेइ, तएणं से
कणहे वासुदेवे तं पच पडवे एवं वयासी- जइ णं तुव्भे देवाणु
प्पिया । एव वयता अम्हे णो पउमणाभे रायत्तिकट्टु पउमना-
भेण सद्धिं सपलगा ताओ णं तुव्भे णो पउमणाहे हयमहिय
पवर जाव पडिसेहेते, त पेच्छह ण तुव्भे देवाणुप्पिया । अहं
नो पउमणाभे रायत्तिकट्टु पउमनाभेण रत्ता सद्धिं जुञ्झामि रहं

एव खलु अह हे स्वामिन् । युष्माकं यत्नेन यावत् 'णिच्छुभावेऽ' निष्शोभयति-
पद्मनाभः क्रोधाग्निः ता द्रौपदी न दास्यामीत्युक्त्या दूतो न हन्तव्य इति कृत्वा
माममत्कार्ये, जमनान्यापहारैर्ग निःगास्यति सा ' इत्यर्थः ॥ २८ ॥

मूलम्—तएण से पउमणाभे चलवाउय सदावेइ सदावित्ता
एवं वयासी--खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया । आभिसेक्क हत्थिर-
यणं पडिकप्पेह, तयाणंतर च ण से चलवाउए छेयायरियउव
देममइविकप्पणा विगप्पेहिं निउणेहिं जाय उवणेइ, तएणं से
पउमनाहे सन्नद्धं अभिसेयं दूरुहइ दूरुहिता हयगय जेणेव
कण्हे वासुदेवे तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तएण मे कण्हे वासु
देवे पउमणाभं रायाण एज्जमाण पासइ पासित्ता त पंच पडवे

गच्छइ उयागच्छित्ता करयलं ऋणं जाय एव ययासी—एव खलु अह
सामी ? तुवम ययणेण जाय णिच्छुभावेइ) इस प्रकार जब वह दारुक
सारथि पद्मनाभ के द्वारा असत्कृत यावत् होकर बाहिर निलगा दिया,
तब वह वरा से चलकर जहाँ कृष्णवासुदेव थे वहाँ आया । वरा आकर
उसने दोनों हाथों की अजलि बनाकर और उसे मस्तक पर रखकर
कृष्णवासुदेव से इस प्रकार कहा—हे स्वामिन् ? मैंने पद्मनाभ राजा से
आपके वचन जैसे ही कहे वैसे ही उसने “ क्रोध में आकर ” मैं नहीं
दूंगा दूतमारने योग्य नहीं होता है—इत्यादि कहकर मुझे असत्कृत एव
असमानित कर अपने यहाँ से पीछे के दरवाजे से बाहिर निकलवा
दिया है ॥ सूत्र २८ ॥

वयासी—एव खलु अह सामी ! तुवम ययणेण जाय णिच्छुभावेइ)

आ प्रभाषे न्यारे ते हाउक सारथि पद्मनाभ राज वडे असत्कृत यावत
अस मानित थधने अहार कडावी भूकथे त्यारे ते त्याथी अहार आवीने न्या
कृष्ण-वासुदेव इता त्या आव्ये त्या आवीने तेले अने हाथीथी अजलि अनावीने
अने तेने मस्तके भूकीने कृष्ण-वासुदेवने आ प्रभाषे कहु के छे स्वाभी ! पद्म
नाभ राजने मे न्यारे तमारो स देश कही सलणाव्ये त्यारे सालणतानी
साथे अ ते क्रोधमा लराउने “ हु द्रौपदी देवी पछी आपीश नछि, यावत इत
अवध्य होय छे ” वगेरे वचनोथी असत्कृत तेमअ अस मानित करीने अने
तेले पोताना लवतना पाछला आरवेथी अहार कडावी भूकथे ”

एवं वयासी--ह भो दारगा ! किन्न तुव्भे पउमनाभेण सद्धिं
जुज्झहिह उयाहु पेच्छहिह ? तएण ते पंच पंडवा कण्ह
वासुदेवं एवं वयासी--अम्हे णं सामी ! जुज्झामो तुव्भे पेच्छह
तएणं पंच पंडवे सण्णद्ध जाव पहरणा रहे दुरुहति दुरुहिता
जेणेव पउमनाभे राया नेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता एव
वयासी--अम्हे वा पउमणाभे वा रायत्तिकट्टु पउमनाभेणं सद्धिं
संपलगा यावि होत्था, तएण से पउमनाभे राया त पंच पडवे
खिप्पामेव हयमहिय पवर निवडिय चिन्धद्धूयपडागा जाव
दिसोदिसि पडिसेहेइत्ति, तएणं ते पंच पंडवा पउमनाभेण रत्ता
हयमहियपवरनिवडिय जाव पडिसेहिया समाणा अत्थामा
जाव आधारणिज्जत्तिकट्टु जेणेव कणहे वासुदेवे तेणेव उवा०,
तएण से कणहे वासुदेवे ते पंच पंडवे एवं वयासी--कहणं
तुव्भे देवाणुप्पिया । पउमणाभेण रत्ता सद्धिं संपलगा ?,
तएण ते पच पडवा कण्ह वासुदेव एव वयासी- एवं खल्ल
देवाणुप्पिया । अम्हे तुव्भेहि अब्भणुत्ताया समाणा सन्नद्ध०
रहे दुरुहामो२ जेणेव पउमनाभे जाव पडिसेहेइ, तएणं से
कणहे वासुदेवे तं पच पडवे एव वयासी--जइ णं तुव्भे देवाणु
प्पिया । एव वयता अम्हे णो पउमणाभे रायत्तिकट्टु पउमना-
भेण सद्धिं संपलगं ताओ णं तुव्भे णो पउमणाहे हयमहिय-
पवर जाव पडिसेहते, त पेच्छह णं तुव्भे देवाणुप्पिया । अहं
नो पउमणाभे रायत्तिकट्टु पउनाभेण रत्ता सद्धिं जुज्झामि रहं

दुरुहइ दुरुहिता जेणेव पउमनाभे गया तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छिता सेय गोपीरत्तारधवल तणतांठियसिंदुवारकुदेंदुम
 न्निगासं निययनलस्त हरिसजणणं रिउमेणणविणासुकर पथ
 जणणं सख परामुसइ परामुसिता मुहवात्रपुरिय करेइ, तएण तस्त
 पउमणाहस्त तेणं सखसद्वेणं वलइभाए हयजाव पडिसेहिए, तएण
 से कणहे वासुदेवे धणु परामुसइ वेढो धणु पूरेइ पूरिता धणुसद्वं करेइ,
 तएण तस्त पउमनाभस्त दोच्चे वलइभाए तेण धणुसद्वेण
 हयमहिय जाव पडिसेहिए, तएण से पउमणाभेराया तिभाग
 वलावसेसे अत्थामे अवले अवीरिए अपुरिसक्कारपरक्कमे
 अधारणिज्जत्तिकट्टु सिग्धं तुरिय जेणेव अमरकका तेणेव उवा-
 गच्छइ उवागच्छिता अमरकक रायहाणि अणुपवित्तइ अणुप
 विसिता दाराइ पिहेइ पिहिता रोहसज्जे चिट्टइ, तएण से कणहे
 वासुदेवे जेणेव अमरकका तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता रह
 ठवेइ ठवित्ता रहाओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहिता वेउव्वियसमु
 ग्घाएणसमोहणइ, एगं मह णरसीहरूव विउव्वइ विउव्वित्ता महया
 महया सदेणं पादद्वरयं करेइ, तएण से कणहेण वासुदेवेण
 महया महया सदेणं पादद्वरणेण कएण समाणेणं अमरकका
 रायहाणी सभग्गपागारगोपुराट्टालयच्चरियतोरणपल्हत्थियपव-
 रभवणासिरिघरा सरस्तरस्त धरणियले सन्निवइया, तएण
 से पउमणाभे राया अमरकक रायहाणि सभग्ग जाव
 पासित्ता भीए दोवईए देवीए सरणं उवेइ

दोवईदेवी पउमनाभ रायं एव वयासी—किण्णं तुम देवा-
 णुप्पिया ! न जाणसि कण्हस्स वासुदेवस्स उत्तमपुरिसस्स
 विप्पियं करेमाणे मम इहं हव्वमाणेसि, तं एवमवि गए
 गच्छह ण तुम देवाणुप्पिया ! ण्हाए उल्लपडसाडए अवचूलग-
 वत्थणियत्थे अतेउरपरियालसपरिवुडे अग्गाइ वराइं रयणाइं
 गहाय मम पुरओ काउं कण्ह वासुदेवं करयलपायपडिए सरणं
 उवेहि, पणिवइयवच्छला ण देवाणुप्पिया ! उत्तमपुरिसा, तएणं
 से पउमनाभे, दोवइए देवीए एयमट्ट पडिसुणेइ पडिसुणित्ता
 ण्हाए जाव सरणं उवेइ उवित्ता करयल० एवं वयासी—दिट्ठाण
 देवाणुप्पियाण इड्डी जावपरक्कमे तं खामेमि णं देवाणुप्पिया !
 जाव खमंतु णं जाव णाह भुज्जोर एवं करणयाएत्तिकट्टु पंज-
 लिवुडे पायवडिए कण्हस्स वासुदेवस्स दोवइ देवि साहत्थि
 उवणेइ, तएण से कण्हे वासुदेवे पउमणाभ एव वयासी—ह
 भो पउमणाभा ! अप्पत्थियपत्थिया४ किण्ण तुम ण जाणसि
 मम भगिणि दोवइदेवी इह हव्वमाणमाणे त एवमवि गए णत्थि
 ते ममाहितो इयाणि भयमत्थि त्तिकट्टुपउमणाभं पडिविसज्जेइ
 पडिविसज्जित्ता दोवइ देवि गिण्हइ गिण्हित्ता रहदुरूहेइ दुरूहित्ता
 जेणेन पच पडवे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पचण्हं पडवाणं
 दोवइ देवि साहत्थि उवणेइ, तएण से कण्हे पचहि पंडवेहि सट्ठि
 अप्पच्छे छहि रहेहि लवणसमुद्द मज्झ मज्जेण जेणेव जवूदीवे
 दीवे जेणेव भारहे वासे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥ सू० २९ ॥

टीका—'तण से' इत्यादि। ततः गलु सा पञ्चनामः 'बलवाउप' बलवा-
पृत-सैन्यनायक शब्दयति, शब्दयित्वा एवमसादीन्—क्षिप्रमेव-शीघ्रमेव भो
देवानुप्रिय ! 'आभिसेक' आभिसेक्य प्रमान हस्तिरत्न 'पडिकप्पेह' प्रतिक
ल्पय सुसज्जित करु, तदनन्तर च स बलवाउप गलु "छेयायरियउवदेसमह
विकल्पणाविगप्पेहि" छेकाचार्योपदेशमतिविद्वन्पनाविकल्पैः—तत्र छेरुः—निपुणः,
आचार्य—कलाशिक्षक, तस्योपदेशाद् या मति 'द्विस्तस्या विद्वन्पना-विवाणा,
तज्जनितो विद्वत्प.-विशिष्ट रचनाशक्तिर्येषां तः, 'जाउ उरणेइ' यावद् उपत-

—तण से पउमणामे इत्यादि ॥

टीका—(तण) इसके बाद (से पउमणामे) उन पञ्चनाम राजा ने
(बलवाउप सदावेह) अपने सैन्य नायक को गुलाया (सदावित्ता) और
घुलाकर फिर उनसे (एव बयासी) इस प्रकार कहा—(विष्णामेव भो
देवानुप्रिय ! आभिसेक हस्तिरयण पडिकप्पेह) हे देवानुप्रिय ! तुम
शीघ्र ही प्रधान हस्तिरत्न को सुसज्जित करो। (तयाणतर च ण से
बलवाउप छेयायरिय उवदेसमह विकल्पणा विगप्पेहि निउणेहि जाव
उवणेइ) इसके बाद उस सैन्य नायक ने निपुणकला शिक्षक के उपदेश
से प्राप्त बुद्धि की कल्पना से उत्पन्न हुई है विशिष्ट रचना की शक्ति
जिन्हों को ऐसे मनुष्य से कि जो जोभा करनेमें अत्यन्त निपुण थे उस
हस्तिरत्न को सुसज्जित करवाया। जब उन्हो ने उस हस्तिरत्न को चम
कीले निर्मल वेप से शीघ्र परिवस्त्रित-करदिया। बल्लाच्छादन द्वारा

तण से पउमणामे इत्यादि—

टीका—(तण) त्पारपछी (से पउमणामे) ते पञ्चनाम राजा (बलवाउप
सदावेह) पोताना सैन्य नायकने ओलाव्यो (सदावित्ता) अने ओलावीने तेने
(एव बयासी) आ प्रभावे कछु के (विष्णामेव भो देवानुप्रिय ! आभिसेक
हस्तिरयण पडिकप्पेह) हे देवानुप्रिय ! तने सत्तरे प्रधान हस्तिरत्नने
सुसज्ज करे। (तयाणतर च ण से बलवाउप छेयायरियउवदेसमहविकल्पणा
विगप्पेहि निउणेहि जाव उरणेइ) त्पारपछी ते सैन्य नायकने निपुण कलाशिक्ष
कना उपदेशधी जेभवे विशिष्ट रचना भाटे बुद्धि तेमज्ज कल्पना शक्ति जेजवी
छे, तेमज्ज श्रृंगार कलाभा जेओ। अतीर अतुर उ तेवा भावुसे। वडे
हस्तिरत्नने सुसज्जित करव्यो। ज्यारे सत्तरे तेमवे ते हस्तिरत्नने अमकता
निर्माण वेपधी परिवस्त्रित करी दीधो—बल्लाच्छादन वडे आच्छादित गने सुथो।

यति—अत्र यात्रच्छब्देनैव बोध्यम्—सुनिउणेहिं नरेहिं हस्तिरयण परिकल्पेऽ, उज्ज्वलनेवत्थ ह्ववपरिवस्थिय सुसज्ज इत्यादि परिकल्पित्ता ' इति सुनिपुणैः=शोभाकरणचतुरैः, नरेहंस्तिरत्न परिकल्पयति—शोभयति किं भूतं हस्तिरत्न—उज्ज्वलनेपथ्यहव्यपरिस्मित उज्ज्वलनेपथ्येन-द्युतिमन्निर्मलवेपेण शीघ्र परिवर्द्धितः वस्त्राच्छादनसुशोभितः, तथा—सुसज्ज-घण्टाभरणादिभिः समलङ्कृत, एव परिकल्प्य सप्रलम्बापृतः पद्मनाभनृपस्यान्तिके त हस्तिरत्नमुपनयति, आनयति । तत खलु स पद्मनाभः सन्नद्धवद्धवर्मितकवच - आभिषेय्य हस्तिरत्न दूरोहति—आरोहति दूरुह्य ह्यगजरथपदातिपरिवृत यत्रैव कृष्णो वासुदेवस्तत्रैव प्रापारयद्गमनाय ।

तत खलु स कृष्णो वासुदेवः पद्मनाभ राजानम् एजमानम्=आगच्छन्त पश्यति । दृष्ट्वा च तान् पञ्च पाण्डवान् एवमवदत्—ह भो ! दारकाः भो वत्सा !

आच्छादित कर सुशोभित करदिया—अर्थात्—झूल वगैरह डालकर उसे घृत्त अच्छी तरह सजा दिया, तथा घटा आभरण आदि से उसे अलंकृत करदिया, तत्र वह सैन्य नायक उस हस्ति रत्न को लेकर पद्मनाभ राजा के पास पहुँचा (तएण से पउमणाभे सन्नद्ध० अभिसेय० दूरुहइ, दूरुहत्ता ह्यगज जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तएण से कण्हे वासुदेवे पउमणाभरायाण एजमाण पासइ पासित्ता ते पच पडवे एव वयासी) इसके बाद वह पद्मनाभ राजा सन्नद्ध, वद्ध, वर्मित कवच वाला होकर उस प्रधान हस्तिरत्न पर आरूढ हो गया और आरूढ होकर हय, गज, रथ, एव पैदल सैन्य को साथ लेकर जहा कृष्णवासुदेव थे उस और चल दिया । जब कृष्णवासुदेव ने पद्मनाभ राजा को आता हुआ देखा तो देखकर उन्हो ने पाच पाण्डवो से ऐसा कहा—(ह भो

लित करी दीधो अटले के अत्र वगेरे नाभीने णडुल सरस रीते सुसन्निवृत्त करी दीधो तेमञ्च घट, आलेश्छो वगेरेथी तेने अलङ्कृत करी दीधो त्यारे ते सैन्य नायक ते हस्तिरत्नने लधने पद्मनाभ राजानी पासि गये।

(तएण से पउमणाभे सन्नद्ध० अभिसेय० दूरुहइ दूरुहत्ता ह्यगज जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तएण से कण्हे वासुदेवे पउमणाभरायाण एजमाण पासइ, पासित्ता ते पच पडवे एव वयासी)

त्यारपधी ते पद्मनाभ राजा कवच तेमञ्च धीन राओथी सञ्च थधने ते प्रधान हस्तिरत्न उपर सवार थध गये। अने सवार थधने घोडा, डायी, रथ अने पायदण मेनाने साथे लधने कृष्ण-वासुदेव हुता ते तरइ स्वाना थये। कृष्ण-वासुदेवे न्यादे पद्मनाभ राजाने आवतो जेथे त्यारे तेने जेधने साथे

टीका—'तण से' इत्यादि। ततः गलु स पञ्चानामः 'बलवाउय' बलवाउय-
 पृत-सैन्यनायक शब्दयति, शब्दयित्वा पयमराठीन्—शिममेव-शीघ्रमेव भो
 देवानुप्रिय ! 'आभिसेक' आभिसेक प्रमान हस्तिरत्न 'पडिकप्पेह' प्रतिक
 लपय सुसज्जित करु, तदनन्तर च स बलवाउय गलु "देवायरियउवदेसमह
 विरुप्पणाविगप्पेहि" छेकाचार्योपदेशमतिप्रिक्ल्पनाप्रिक्ल्पे.—तत्र छेकः—निपुणः,
 आचार्यः—कलाशिक्षक, तस्योपदेशाद् या मति 'द्विस्तस्या प्रिक्ल्पना-विचारणा,
 तज्जनितो प्रिक्ल्प-प्रिशिष्ट रचनाशक्तियेपा तः, 'जाव उरणेइ' यावद् उपत

- तण से पउमणामे इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तण) उसके बाद (से पउमणामे) उन पञ्चानाम राजा ने
 (बलवाउय सदावेइ) अपने सैन्य नायक को बुलाया (सदावित्ता) और
 घुलाकर फिर उनसे (ण्य बयासी) इस प्रकार कहा—(विष्णामेव भो
 देवानुप्रिया ! आभिसेक हस्तिरयण पडिकप्पेह) हे देवानुप्रिय ! तुम
 शीघ्र ही प्रधान हस्तिरत्न को सुसज्जित करो। (तयाणतर च ण से
 बलवाउय छेयायरिय उवदेसमह विरुप्पणा विगप्पेहि निउणेहि जाव
 उवणेइ) इसके बाद उस सैन्य नायक ने निपुणकला शिक्षक के उपदेश
 से प्राप्त बुद्धि की कल्पना से उत्पन्न हुई है विशिष्ट रचना की शक्ति
 जिन्हों को ऐसे मनुष्य से कि जो जोभा करने में अत्यन्त निपुण थे उस
 हस्तिरत्न को सुसज्जित करवाया। जब उन्हों ने उस हस्तिरत्न को बम
 कीले निर्मल वेप से शीघ्र परिवस्त्रित-करदिया। बलवाउयद्वारा

तण से पउमणामे इत्यादि—

टीकार्थ—(तण) त्पारपछी (से पउमणामे) ते पञ्चानाम राजाये (बलवाउय
 सदावेइ) पोताना सैन्य नायकने पोलाव्ये (सदावित्ता) अने पोलावीने तेने
 (ण्य बयासी) आ प्रभाछे कछु के (विष्णामेव भो देवानुप्रिया ! आभिसेक
 हस्तिरयण पडिकप्पेह) छे देवानुप्रिय ! तमे सत्वरे प्रधान हस्तिरत्नने
 सुसज्ज करे। (तयाणतर च ण से बलवाउय छेयायरियउवदेसमहविरुप्पणा
 विगप्पेहि निउणेहि जाव उवणेइ) त्पारपछी ते सैन्य नायके निपुण कलाशिक्ष
 कना उपदेशथी जेमछे विशिष्ट रचना माटे बुद्धि तेमज्ज कल्पना शक्ति भेजवी
 छे, तेमज्ज श्रृंगार उलाभा जेज्यो अतीव यतुर छे तेवा भावसे वडे
 हस्तिरत्नने सुसज्जित कराव्ये। ज्यारे सत्वरे तेमछे ते हस्तिरत्नने बमकता
 निर्माण वेपथी परिवस्त्रित करी दीथी—बलवाउयद्वारा वडे आशुद्धित - सुशे

यति—अत्र यावच्छब्देनैव बोध्यम्—सुनिउणेहिं नरेहिं हस्तिरयण परिकल्पेत्, उज्ज-
लनेवत्थ इवपरिवस्थिय सुसज्ज इत्यादि परिकल्पित्ता ' इति सुनिपुणैः=शोभा
करणचतुरैः, नरैर्हस्तिरत्न परिकल्पयति—शोभयति किं भूत हस्तिरत्न—उज्ज्वल-
नेपथ्यहव्यपरिवस्थित उज्ज्वलनेपथ्येन—द्युतिमन्निर्मलवेपेण शीघ्र परिवस्त्रितः
वस्त्राच्छादनसुशोभितः, तथा—सुसज्ज—ग्रन्थामरणादिभिः समलङ्कृत, एव परि-
कल्प्य सज्जव्यापृतः पद्मनाभनृपस्यान्तिके त हस्तिरत्नमुपनयति, आनयति ।
तत खलु स पद्मनाभः सन्नद्धवद्धवर्मितकवच - आभिषेक्य हस्तिरत्न दूरोहति—
आरोहति दूरुह्य ह्यगजरथपदातिपरिवृत्त यत्रैव कृष्णो वासुदेवस्तत्रैव प्राणायद्
गमनाय ।

तत खलु स कृष्णो वासुदेवः पद्मनाभं राजानम् एजमानम्=आगच्छन्त
पश्यति । दृष्ट्वा च तान् पञ्च पाण्डवान् एवमवदत्—हं भो ! दारकाः शो वत्सा !

आच्छादित कर सुशोभित करदिया—अर्थात्—झूल वगैरह डालकर उसे
घट्टत अच्छी तरह सजा दिया, तथा घटा आभरण आदि से उसे अल-
कृत करदिया, तब वह सैन्य नायक उस हस्ति रत्न को लेकर पद्मनाभ
राजा के पास पहुँचा (तएण से पउमणाभे सन्नद्ध० अभिसेय० दूरुहइ,
दूरुहत्ता ह्यगय जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तएण
से कण्हे वासुदेवे पउमणाभरायाण एज्जमाण पासइ पासित्ता ते पच पडवे
एव वयासी) इसके बाद वह पद्मनाभ राजा सन्नद्ध, वद्ध, वर्मित कवच
वाला होकर उस प्रधान हस्तिरत्न पर आरूढ हो गया और आरूढ
होकर रथ, गज, रथ, एव पैदल सैन्य को साथ लेकर जहाँ कृष्णवासुदेव
थे उस और चल दिया । जब कृष्णवासुदेव ने पद्मनाभ राजा को आता
हुआ देखा तो देखकर उन्हो ने पाच पाण्डवो से ऐसा कहा—(हं भो

भित करी दीधो अटले के जुद्ध वगेरे नाभीने गहुण सरत्त रीते सुसज्जित
करी दीधो तेमज घट, आभरणा वगेरेथी तेने अलङ्कृत करी दीधो त्यारे ते
सैन्य नायक ते हस्तिरत्नने लधने पद्मनाभ राजानी पाने गये।

(तएण से पउमणाभे सन्नद्ध० अभिसेय० दूरुहइ दूरुहत्ता ह्यगय जेणेव
कण्हे वासुदेवे तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तएण से कण्हे वासुदेवे पउमणाभरायाण
एज्जमाण पासइ, पासित्ता ते पच पडवे एव वयासी)

त्यारपडी ते पद्मनाभ राज कवच तेमज भीत राओथी सन्न थउने
ते प्रधान हस्तिरत्न उपर सवार थइ गये अने सवार थउने घोडा, डायी,
रथ अने पायदण येनाने माये लधने दृष्यु—वासुदेव उता ते तरइ स्वाना
थये। दृष्यु—वासुदेवे न्यारे पद्मनाभ राजने आवतो नेथे त्यारे तेने ओधने पाये

किं खलु गृय पद्मनाभेन सार्धं ' जुञ्जिहिह ' गुपय । ' उयाहृ ' उताहो-अपवा
 ' पेच्छिहिह ' मेक्ष मे, ? ततः गडु त पञ्च पाडवा ऋग वासुदेवमेवमवा
 दीत्-अय खलु हे स्वामिन् । गुपयाम., गृय मेक्ष तम् । ततः खडु पञ्च पाण्डवाः
 सन्नद्धवद्वर्मितकवचा यावत् शूरीतायुधमहाणाः रथान्=म्य स्य रथोपरि दूरो
 हन्ति=आरोहति दूरीय यज्ञेय पद्मनाभो गजा तज्ञेयोपागन्'उन्ति, उपागत्य एव
 मयदन्-'अम्हे वा पडमणाभे वा गया ' वय वा गयाम' पद्मनाभो वा राजा, इति

दारगा ! किन्न तुम्हे पडमनाभेण सद्धि जुञ्जिहिह उयाह पेच्छिहिह ?
 तएण ते पडवा कण्ठं वासुदेव एव ययामी) हे वत्सो ! क्या तुमलोग
 पद्मनाभ के साथ युद्ध करोगे-या युद्ध को देखोगे ? तब उन पाण्डवों ने
 कृष्णवासुदेव से इस प्रकार कहा-(अम्हेण सामी ! जुञ्जामो, तुम्हे
 पेच्छह, तएण पच पडवे सन्नद्ध जाव पहरणा रहे दुरूहति, दुरूहिता
 जेणेव पडमणाभे राया तेणेव उवागच्छति उवागच्छिता एव वयासी,
 अम्हे वा पडमणाभे वा रायत्ति कद्दु पडमणाभेण सद्धि सपलगा यावि
 होत्या) हे स्वामिन् ! हम तो युद्ध करेंगे-आप उस का निरीक्षण करें ।
 इसके बाद वे पाचों पाण्डव सन्नद्धवद्वर्मित कवचवाले होकर यावत्
 आयुध प्रहरणों को ले २ कर अपने २ रथों पर सवार हो गये । सवार
 होकर फिर वे जहा पद्मनाभ राजा थे-उस और गये-वहाँ जाकर वहाँ
 ने पद्मनाभ राजा से इस प्रकार कहा-या तो आज हम नहीं या पञ्च

पाडवाने आ प्रभाणे कळु-(ह भो दारगा ! किन्न तुम्हे पडमनाभेण सद्धि
 जुञ्जिहिह उयाह पेच्छिहिह ? तएण ते पच पडवा कण्ठं वासुदेव एव वयासी)
 हे वत्स ! शु तमे पद्मनाभ राजानी साथे मेदाने उतरशो ? हे शूरा युद्धने
 लेशो ? त्यारे ते पाडवांजे कृष्ण-वासुदेवने आ प्रभाणे कळु के:-

(अम्हेण सामी ! जुञ्जामो, तुम्हे पेच्छह, तएण पच पडवे सन्नद्ध जाव
 पहरणा रहे दुरूहति, दुरूहिता जेणेव पडमणाभे राया तेणेव उवागच्छति, उवा
 गच्छिता एव वयासी, अम्हे वा पडमणाभे वा रायत्ति कद्दु पडमणाभेण सद्धि
 सपलगा यावि होत्या)

हे स्वामी ! अमे तो युद्ध जेडीशु, तमे अमारा युद्धने लुओ त्यार
 पछी ते साथे पाडवा उवयथी सुसन्न थडने आयुध प्रहरणेने लडने पोत
 पोताना रथे उपर सवार थड गया सवार थडने तेओ पद्मनाभ राज तरई
 श्वाना थया पद्मनाभ राजानी पासो पडोन्थीने तेणे आ प्रभाणे कळु के-
 ' आजे का तो अमे नडि अने का पद्मनाभ नडि " आभ कळीने तेओ
 पद्मनाभ राजानी साथे युद्ध करवा लाग्या

कृत्वा=इत्युक्त्वा-पद्मनाभेन सार्धं योद्धुः संपलग्नाश्चाप्यभवन्, तत खलु स पद्मनाभो राजा तान् पञ्च पाण्डवान् क्षिप्रमेव 'हयमहियपवरनिवडियचिन्धद्यपङ्गागा' हयमथितप्रवरनिपत्तितचिह्नध्वजपताकान्-तत्र हया'-अथ्वा मथिता-पीडिताः, प्रवराः-प्रशस्ताः, चिह्न-ध्वजपताका निपातिता येषां तान्, शस्त्रास्त्रप्रहारजनित प्राप्तान् इत्यर्थः, यावद् दिशो दिशः=सर्वतः 'पडिसेहेइ' प्रतिपेययति=प्रतिनिवर्तयति स्मेत्यर्थः । ततः खलु ते पञ्च पाण्डवाः पद्मनाभेन राजा हयमथितप्रवरनिपत्तित यावत् प्रतिपेधिताः सन्तः 'अथ्यामा' अस्थामानः-प्रलरहिता, 'जाव अधारणिज्जा' अत्र यावच्छब्देन-'अवला अशीर्या' इत्यनयोः समग्रहः । अत्रलाः-

नाम राजा ही नहीं" ऐना कहकर वे पद्मनाभ राजा के साथ युद्ध करने में सलग्न हो गये । (तएण से पउमनाभे राया ते पच पडवे खिप्पामेव हयमहियपवर निवडिय जाव पडिसेहिया, समाणा, अथ्यामा जाव अधारणिज्ज त्ति कट्टु जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवा०, तएण से वासुदेवे ते पच पडवे एवं वयासी कट्टणं तुम्भे देवाणुप्पिया ! पउमनाभेण रत्ता सद्धि सपलग्गा ? तएण ते पच पडवा कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया । अम्हे तुम्भेहिं अब्भणुन्नाया समाणा सन्नद्ध० रहे दुरुहामो २ जेणेव पउमनाभे जाव पडिसेहेइ) तब पद्मनाभ राजा ने उन पांचो पांडवों को बहुत जल्दी पीडित घोडों वाला एव निपातित प्रशस्त चिह्नध्वज पताका वाला कर दिया । यावत् एक दिशा से दूसरी दिशा में जाने से भी उन्हें रोक दिया अथवा-एक दिशा से दूसरी दिशा में खदेड दिया । इस तरह वे पांचो पांडव पद्मनाभ राजा के द्वारा पीडित घोडोवाले, एव निपातित प्रशस्त चिह्न ध्वज पताका वाले बन गये और एक दिशा से दूसरी दिशा में जाने से रोक दिये गये-अथवा खदेड़ दिये गये तब बलरहित बनकर यावत्

(तएण से पउमनाभे राया ते पच पडवे खिप्पामेव हयमहियपवर निवडिय जाव पडिसेहिया समाणा, अथ्यामा जाव अधारणिज्ज, त्ति कट्टु जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवा०, तएण से कण्हे वासुदेवे ते पच पडवे एव वयासी कट्टणं तुम्भे देवाणुप्पिया । पउमनाभेण रत्ता सद्धि सपलग्गा ? तएण ते पच पडवा कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया । अम्हे तुम्भेहिं अब्भणुन्नाया समाणा सन्नद्ध० रहे दुरुहामो २ जेणेव पउमनाभे जाव पडिसेहेइ)

त्यारपछी पद्मनाभ राजाये ते पाचे पउमने थोडा वणनमाळ पीडित थोडायेवाणा तेमळ निपातित प्रशस्त चिह्नध्वज पताकावाणा पनावी दीधा यावत अेक दिशाभाथी थीलु दिशा तरइ अर्थ शके नडि तेम तेओये व्स्ता रेडी दीधा अथवा तो अेक दिशाभाथी थीलु दिशा तरइ लग्गाडी भूक्या आवी

सन्पहीना' अभीषेक-आन्तरिकगतिरहिताः, उरसाह्वीनात्पर्यः, तथा-अघा
रणीयाः=आत्मानं रणभूमौ भाग्यिणुमजक्ताः, इति ऋता-इति विचार्य, यत्रैव
कृष्णो वासुदेवस्त्वर्गैरोगागन्तव्यः । ततः सन्तु म ऋणो वासुदेवस्तान् पञ्च
पाण्डवान् एव उदयमाणप्रकारेण, आसीन्-'कृष्ण' कथं सन्तु यूप हे देवानु
प्रियाः ! पञ्चनाभेन रात्रौ सार्धं योऽयुः समञ्जसाः ? ततः सन्तु ते पञ्च पाण्डवाः
कृष्ण वासुदेवोऽसमरात्मेन्-एव सन्तु हे देवानुप्रिया ! त्वं युष्माभिरभ्यनुज्ञाताः
सतः सन्नद्धमद्वर्षितकृपायाः रथान् 'दूरोक्षामो' दूरोक्षामः-आरोहामः आरूढो,
आरूढ्य यत्रैव पञ्चनाभस्तर्जयं गन्त्या युद्धाय सपञ्जनाः ततः पराजयं प्राप्ता यावत्
प्रतिपेक्षिता' इति । ततः सन्तु स कृष्णो वासुदेवस्तान् पञ्च पाण्डवान् एवमवा

रणभूमि में अपने आपको दीक्षा ने मैं भी असमर्थ जानकर जहा कृष्ण
वासुदेव थे जहा भावे । वहा पहुँच तेही कृष्णवासुदेवने उनसे-उन पाँचो
पाण्डवों से-उन प्रकार कहा- जब आपलोग पराजित हो गये तो पञ्च
नाभ राजा के साथ युद्धरत हुए-लड़े-तब उन पाँचो पाण्डवों ने कृष्ण
वासुदेव से इस प्रकार कहा, हे देवानुप्रिय ! हमलोगो ने आप से अभ्य
नुज्ञात होकर ही कयच आदि से सुसज्जित हो रथों पर आरोहण
किया, और आगेहग कर जहा पञ्चनाभ राजा था वहाँ हमलोग पहुँचे ।
वहा पहुँचकर हमलोग उनके साथ युद्धरत हो गये । बाद में पराजित
हो गये । और पराजित होकर फिर ऐसे घन गये जो उसने हमें एक
दिशा से दूसरी दिशा में खदेड़ दिया या जाने से रोक दिया । (तएण
से कण्हे वासुदेवे ते प प) तब कृष्णवासुदेव ने उन पाँचो पाण्डवों से

परिस्थितिमां लाचारं यधने यावत् युद्धभूमिमां योतानी नतने टकावी शक
वामा पञ्च असमर्थं नष्टीने पाये पाउवो न्या कृष्ण-वासुदेव हुता त्या
आव्या त्या पडोयता न कृष्ण-वासुदेवे पाये पाउवोने आ प्रभाषे कछु के
तमे दोके पञ्चनाभ राजनी साथे युद्धरत यधने पराजित यध गया छे ? तयारे
ते पाये पाउवोने कृष्ण-वासुदेवने आ प्रभाषे कछु के हे देवानुप्रिय ! अमे
अधा आपनी आसा भेजनीने कयच वगेरेशी सुसज्जित यधने रथो छपर
सवार थया सवार यधने अमे न्या पञ्चनाभ राज हुतो त्या गये त्या
पडोचीने अमे अधा तेनी साथे युद्ध करवा लाग्या अने तेने परिव्रामे अमे
हारी गया छीअे हार पाभीने अमे अेवी लय कर परिस्थितिमा सपडाए
गया हुता के नेथी अेक दिशा तरकथी नील दिशा तरक नवामा पञ्च असमर्थ
यध गया अथया तो तेले अमने अेक दिशाभाथी नील दिशा तरक भगाडी
भूकया छे (तएण से कण्हे वासुदेवे ते प प) तयारे कृष्ण-वासुदेवे ते पाय
पाउवोने आ प्रभाषे कछु के-

दीत्-यदि खलु यूय हे देवानुप्रियाः ! पूर्वमेव वक्तारो भवत, 'अम्हे, ' णो पउमाभे राया ' इति ' उय भवामः, नो पडनाभो राजा ' इति " वयमेवजेण्यामो न तु पडनाभो राजा ' इत्यर्थः तथा-यदि पूर्वम्-इति कृत्वा=हृष्येव निश्चय मनसि निवाय, पउमाभेन सार्व ' सपल्लगता ' युद्धाय सपल्लगता भवत, ' तो ण तर्हि खलु ' तुम्हे, णो पउमणाहे ' यूय नो पडनाभ =यूयमेव जेतारो भवेत, न तु पडनाभः, तथा यूय त हयमर्थतश्रवरनिपतित चिह्न उज्जपताक यावत्-पडनाभ ' पडिसेहते ' प्रतिपेयेत=प्रतिनिवर्तयेत । तत्=तस्मात् ' पेच्छह ' प्रेक्षध्व, खलु

इस प्रकार कहा-(जडण तुम्हे देवाणुप्पिया ! एव वयता अम्हे णो पउमणाभे राय त्ति कद्दु पउमनाभेण सद्धि सपल्लगताओ ण तुम्हे णो पउमणाहे, हय-महिय-पवर-जाव पडिसेहते, त पेच्छह ण तुम्हे देवाणुप्पिया ! अह णो पउमणाभे राय त्ति कद्दु पउमनाभेण रन्ना सद्धि जुज्झामि, रह दुरुहइ, दुरुहत्ता जेणेव पउमणाभे राया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छत्ता सेय गोपीरहारधवलतणसोल्लियसिंदुवारकुदेदु सन्निगास निययवलरम हरिसजणण रिउसेण्णविणासकर पचजण्ण सख परामुसइ) हे देवानुप्रिय ! तुम तो पहिले ऐसा कहते थे कि हम जीतेंगे, पद्मनाभ राजा नहीं जीतेगा-और ऐसा ही मन में विचार कर-निश्चय कर-तुम लोगों ने पद्मनाभ राजा के साथ युद्ध करना प्रारभ किया-तो तुम लोगों को ही जीतना चाहिये था । पद्मनाभ राजा को नहीं-और तुम्हीं लोग उसे पीड़ित घोड़े वाला एव निपातितप्रग-

(जडण तुम्हे देवाणुप्पिया ! एव वयता अम्हे णो पउमणाभे राय त्ति कद्दु पउमनाभेण सद्धि सपल्लगताओ ण तुम्हे णो पउमणाहे, हयमहियपवर जाव पडिसेहते, त पेच्छह ण तुम्हे देवाणुप्पिया ! अह णो पउमणाभे रायत्ति कद्दु पउमनाभेण रन्ना सद्धि जुज्झामि, रह दुरुहइ, दुरुहत्ता जेणेव पउमणाभे राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छत्ता सेय गोपीरहारधवलतणसोल्लियसिंदुवार कुदेदु सन्निगास निययवलरम हरिमजणण रिउसेण्णविणासकर पचजण्ण सख परामुसइ)

हे देवानुप्रिय ! तमे तो पडेवेथी ~ आ प्रमाणे छेता छता हे अमेण्ण लतीशु, पडनाभ राजा लतथे नहि अने आ प्रमाणे विचार करीने ~ तमे बोडोअे पडनाभ राजा नी आये युद्धनी शङ्कात ठरी हती, आवी परिस्थिभा तो तमादे लत मेणववी नेथअे पडनाभ राजा नी लत नहि थवी नेथअे तमे बोडो तेने पीडित बोडाओवाणे णनावत, तमने ते नहि पणु आ णथी तमाजी मननी धञ्ज सक्ष थर्ष शरी नहि अेथी हे देवानुप्रियो ! तमे शुओ,

पुत्र हे देवानुप्रियाः । ' अहं नो पद्मनाभ राजा ' ' अहं नो पद्मनाभो राजा ' = अहमेव जेता भवामि, न तु पद्मनाभो राजा, इति ज्ञाना पद्मनाभेन राजा सार्धं युष्यामि, इत्युक्त्वा २५ ' दुरुद्ध ' दुरोधनि-आरोहि-गं रुग्णं वासुदेवः पद्मनाभेन सह योद्धुं रथमान्द्रयान इत्यर्थः । आरुण्यैः पद्मनाभो राजा तत्रैव पागच्छति, उपागत्य ' मेव ' श्वेत-गोभीगद्दारधवल=गोदुग्धात्-शारव धवल शुक्ल ' तगमोद्धिपनिदुसारहरेदुमनिगास ' ' तगमोद्धिया ' मल्लिका अयं देशीयः शब्दः मित्कुरारो=निर्गुण्ठी, कुन्द-कुन्दनाम्ना ममिदुः श्वेतपुष्पविशेषः इन्दुश्रन्स्नहत् सनिकाश-प्रभा यस्य स तं, नियमालम्प ' निजकृतम्य मकी यसेनाय ' हरिगजग ' हर्षनन-हर्षोत्पादक, ' रिउमेण विनासकर ' रिपुमेन्य विनासकर=शत्रुसैन्यलहारक पाञ्चनन्य शत्रु पाञ्चरथनामक शत्रु ' परामुसिन्ता मृशति हस्ते गुह्यति, परामुश्रय ' मुहवायपूरिय करेइ ' मुहवायपूरितमुपमानेन-मात करोति-त्रादयतीत्यर्थः । ततः खलु तस्य पद्मनाभस्य तेन शत्रुशब्देन ' वज्र

स्त चिह्नध्वज पताका चाला घनाति-वह तुम्हें ऐसा नहीं बनाता-परन्तु ऐसा तुम लोगों का मन में धारा विचार सकली भूत नहीं हुआ अतः देवानुप्रियो । अब देवों-में उमके साथ युद्धरत होता हूँ इसमें मैं ही जीतूंगा पद्मनाभ राजा नहीं । ऐसा कहकर वे कृष्णवासुदेव रथपर सवार हो गये । और सवार होकर वे वहा पहुँचे जहा पद्मनाभ राजा था । वहाँ पहुँच कर उन्होंने ने अपने पाचजन्य श्वेतशख को जो अपनी सेनाको हर्ष का जनक एव शत्रु सेना का संहारक था एव गोक्षीर तथा हार के जैसा धवल वर्णवाला था उठाया । इसकी प्रभा मल्लिका निर्गुठी कुदपुष्प एव चन्द्रमाके जैसी उज्ज्वल थी । (परामुसिन्ता मुहवायपूरिय करेइ) उसे उठाकर उन्होंने ने मुँह से बजाया-(तण्ण तस्स पडमणाहस्स तेण सखसद्देण बलहभाए हय जाव पडिसेहिण) तत्र उम पद्मनाभ की सेना

तेनी साथे हु डवे मेदाने पडु छु आभा विजय भने व प्राप्त थये, पद्मनाभ राजने नडि आभ कहीने कृष्ण-वासुदेव रथ उपर सवार थु गथा अने सवार थधने नया पद्मनाभ राज हुतो त्या पडोअथा त्या पडोअथिने तेमणु पोताना पाचजन्य सद्देइ श अने-के ने तेमनी सेना माटे डयोत्याडके तेमण शत्रुआनी सेना माटे सडार इप हुतो तथा गायना ह्थ अने डारना जेवे सद्देइ हुतो-डाथभा लीधो ते श अनी कति भट्टिका निर्गुठी कुद पुष्प अने चन्द्र जेवी हुती (परामुसिन्ता मुहवायपूरिय करेइ) लधने तेमणु मुभथी वगाडथो (तस्स पडमणाहस्स तेण सखसद्देण जाव पडिसेहिण ते राजनी सेना)

तिभाए हते ' वलत्रिभागो हत-सैन्यस्य तृतीयाशो हतमथित यावत् दिशोदिश प्रतिपेप्रित -प्रतिनिवृत्तः पलायित इत्यर्थः । ततस्तदनन्तर खलु स कृष्णो वासु- देवो धनु परामृशति गृह्णाति, परामृश्य ' वेढो ' वेष्ट वर्णकः धनुर्विपयक वर्णन जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिवो विज्ञेयमित्यर्थः, ' धणु पूरेड ' धनुः पूरयति धनुपि गुणमारो- पयति पूरयित्वा वनुः शब्द करोति तत खलु तस्य पद्मनाभस्य द्वितीयवार ' वल तिभाए ' वलत्रिभाग उलस्य सैन्यस्य तृतीयोभागस्तेन धनुः शब्देन ' ह्यमहिय पत्रनिगडिय विन्द्वयपडागे ' ह्यमथितप्रत्रनिपतितचिह्न-वज्रपताको यावद्

का त्रिभाग उस शाख के शब्द से हत हो गया मथित हो गया यावत् एक दिशा से दूसरी दिशा की तरफ भाग गया । तएण से कण्हे वासु- देवे धणु परामुसइ, वेढोवणु पूरेड, पूरित्ता धणुसइ करेइ) इसके बाद कृष्ण वासुदेवने धनुप को उठाया । इस धनुप को वर्णन जम्बूद्वीप प्रज्ञ- सि में किया गया है । सो वहा से जानना चाहिये उठाकर उन्होंने उस पर ज्या का आरोपण किया फिर उसे चढाया-सो उससे शब्द हुआ (तएण तस्स पडमनाभस्स दोच्चे उलडभाए तेण धणुसइण ह्यमहिय जाव पडिसेहिए, तएण से पडमणाभे राया तिभागवलावसेसे अत्था मे अण्णे, अवीरिण अपुरिसक्कारपरक्कमे अधारणिज्जत्ति कट्टु सिग्घ तुरिय जेणेव अमरकंका तेणेव उवागच्छइ) तब उस पद्मनाभ राजा की सैन्य का तृतीयभाग उस धनुप के शब्द से हत हो गया, मथित हो गया, उस की प्रवर चिह्न स्वरूप ध्वजापताकाएँ सब गिर गई यावत्

शब्दधी न हत थई गयो, मथित थई गयो यावत् अेक दिशा तरइधी भीलु शिशा तरइ नायी गयो (तएण से कण्हे वासुदेवे धणु परामुसइ, वेढो धणु पूरेइ, पूरित्ता धणुसइ करेइ) त्थारपधी कृष्णु-वासुदेवे धनुप उठाव्थु आ धनुपधु वरुण न जम्बूद्वीप प्रज्ञप्तिभा करवाभा आव्थु छे जिज्ञासुओओ त्थाधी लणी लेवु लेथओ उठावीने तेओओ तेनी उपर प्रत्यथा अढावी त्थारपधी धनुपने अढाव्थु अने तेनाधी शब्द थयो—

(तएण तस्स पडमनाभस्स दोच्चे वलडभाए तेण धणुसइण ह्यमहिय जाव पडिसेहिए, तएण से पडमणाभे राया तिभागवलावसेसे अत्थामे अण्णे, अवीरिण अपुरिसक्कारपरक्कमे अधारणिज्जत्ति कट्टु सिग्घ तुरिय जेणेव अमर- कंका तेणेव उवागच्छइ)

ते पद्मनाभ राजनी मेनाने त्रीने लाग ते धनुपना शब्दधी न हत थई गयो, मथित थई गयो, तेनी प्रवर चिह्न-स्वरूप ध्वजा पताकाओ अधी पडी

युय हे देवानुप्रियाः । ' अह नो पउमणांभं राया ' ' अह नो पन्ननाभो राजा ' =
 अहमेव जेता भवामि, न तु पन्ननाभो राजा, इति राजा पन्ननाभेन राजा मां
 युयामि, इत्युक्त्वा रथ ' द्रुमद ' द्रोहति-आरोहति-म रुष्ण रामुदेवः पन्न
 नाभेन सह योद्धुं रथमाह्वयान इत्यर्थः । आह्वय यन्मै पन्ननाभो राजा तत्रैवो
 पागच्छति, उपागत्य ' सेय ' श्वेत-गोभीग्दाभयल=गोदृग्वान्-दास्वच्च धवल
 शुक्ल ' तगमोल्लिखतिद्वारकृद्धेदुग्निगात् ' ' तणमोल्लिखा ' मल्लिका अथ
 देशीयः शब्द. सिन्दुरारो=निर्गुण्ठी, कुन्द-कुन्दनाम्ना प्रमिदः श्वेतपुष्पविशेषः,
 इन्दुश्वन्द्रस्तद्वन् सनिकात् -प्रभा यम्य स त, निययलम्प ' निजकरस्य स्त्री
 यसेनाय ' हरिमज्जण ' हर्षननन-हर्षोत्पादक, ' रिउमेण विणासर' रिपुमेन्य
 विनाशकर=शत्रुसेन्यवलहारक पाञ्चनन्यशः, पाञ्चनन्यनामक शब्द ' परामुसः परा
 मृशति हस्ते गृह्णाति, परामृश्य ' मुद्रायपूरिय करेइ ' मुद्रायतपूरितमुद्रयानेन मात
 करोति-त्रादयतीत्यर्थः । ततः खलु तस्य पन्ननाभस्य तेन शब्दशब्देन ' वउ

स्त चिह्नध्वज पताका घाला घनाते-वह लुम्हे ऐसा नली घनाता-परन्तु
 ऐसा तुम लोगो का मन में धारा विगार सकली भूत नहीं हुआ अतः
 देवानुप्रियो । अब देखो-में उसके साथ युद्धरत होता हूँ इसमें मैं ही
 जीतूंगा पद्मनाभ राजा नहीं । ऐसा कहकर वे कृष्णवासुदेव रथपर
 सवार हो गये । और सवार होकर वे वहा पहुँचे जहा पद्मनाभ राजा
 था । वहाँ पहुँच कर उन्होंने ने अपने पाचजन्य श्वेतशस्त्र को जो अपनी
 सेनाको हर्ष का जनक एव शत्रु सेना का सहारक था एव गोक्षीर तथा
 हार के जैसा धवल वर्णवाला था उठाया । इसकी प्रभा मल्लिका निर्गुठी
 कुदपुष्प एव चन्द्रमाके जैसी उज्ज्वल थी । (परामुसिन्ता मुहवायपूरिय करेइ)
 उसे उठाकर उन्होंने ने मुँह से बजाया-(तएण तस्स पउमणाहस्स तेण
 सखसहेण बलहभाए हय जाव पडिसेहिए) तब उस पद्मनाभ की सेना

तेनी साथे छु डवे नेहाने पडु छु आभा विजय भने न प्राप्त थरे, पन्न
 नाभ राजने नडि आभ कडीने कृष्ण-वासुदेव रथ उपर सवार थु गया
 अने सवार थधने न्या पन्ननाभ राज डतो त्या पडोन्था त्या पडोन्थीने
 तेमछे पोताना पाचजन्य सहेइ शभने-के ने तेमनी सेना भाटे डरोत्पाडके
 तेमज शत्रुओनी सेना भाटे सडार इप डतो तथा गायना हूध अने डारना
 नेवे सहेइ डतो-डायभा लीधे ते शभनी काति मल्लिका निर्गुठी कुद पुष्प
 अने चन्द्र नेथी डती (परामुसिन्ता मुहवायपूरिय करेइ) लधने तेमछे
 मुभथी वगाडथे (तएण तस्स पउमणाहस्स तेण सखसहेण बलहभाए हय
 जाव पडिसेहिए) ते वभते ते पन्ननाभ राजनी सेताने ।

वासुदेवो यत्रैवामरुद्धा तत्रोपोपागच्छति, उपागत्य रथ स्नापयति, रथात् प्रत्यव
 रोहति प्रत्यवरुह्य, ' वेउव्वियसमुग्घाएण ' वैक्रियसमुद्घातेन वैक्रियशरीर निर्मातु
 मात्मप्रदेशाना उद्विर्नि सारणेन खलु ' समोहणइ ' समुद्घात करोति समुद्घान्ति
 एक महत् ' णरसिहरुव्व ' नरसिंहरूप ' विउव्वइ ' विकुर्वते दिव्यसामर्थ्येन
 करोति विकुर्व्य महता २ शब्देन ' पादददरय ' पादददररु=भूमौ चरणाघात
 करोति, ततः खलु स कृष्णेन वासुदेवेन महता २ शब्देन पादददररुकेण=भूमौ
 चरणाघातेन कृतेन सता अमररुद्धाराजानी ' सभग्गपागारगोपुराट्टालयचरिय-
 तोरणपल्हत्थियपवरभवणसिरिधरा ' सभग्गनपाकारगोपुराट्टालरुचरिकातोरणपर्य-
 स्तितपवरभवनश्रीगृहा=तत्र सभग्गानि-प्राकारश्च गोपुराणि च अट्टालकाश्च चरिका

जहावह अमरकका श्री वहा गये (उवा०) वहा जाकर के (रह ठवेइ,
 ठवित्ता रहाओ पचोरुहइ, पचोरुहित्ता वेउव्वियसमुग्घाएण समोह-
 णइ) उन्होंने अपने रथको खडा किया-खडा करके फिर वे उससे नीचे
 उतरे । नीचे उतर कर वैक्रिय समुद्घात किया । वैक्रियशरीरको निर्माण
 करने के लिये जो आत्मप्रदेशों का बाहिर निकालना होना है-उन्को
 नम वैक्रिय समुद्घात है । (एग मह णरसिहरुव्व विउव्वइ विउव्वित्ता
 महया २ सहेण पादददरण कएण समाणेण अमरकका रायहाणी सभग्ग
 पागारगोपुराट्टालचरियतोरण पल्हत्थियपवरभवणसिरिधरा सरस्स
 रस्स धरणियले सन्निवइया) इस समुद्घातके द्वारा उन्होंने एक विशाल
 काय नरसिंहरूप की विकुर्वणा की नरसिंहरूप की विकुर्वणा करके
 अपनी भयकर गर्जना से भूमि पर चरणों द्वारा आघात किया । इस
 तरह गर्जना पूर्वक किये गये चरणाघात से अमरकका राजधानी की

गया (उवा०) त्या जधने (रह ठवेइ, ठवित्ता रहाओ पचोरुहइ, पचोरुहित्ता
 वेउव्वियसमुग्घाएण समोहणइ) तेमणे पोताना रथने जेओ राअये, जेओ
 राअीने तेओ तेमाधी नीचे उतया नीचे उतरीने तेमणे वैक्रिय समुद्घात कथी
 वैक्रिय शरीरने जनाववा भाटे जे आत्मप्रदेशीने जडार डाढवाभा आवे छे ते
 वैक्रिय समुद्घात कडेवाय छे

(एग मह णरसिहरुव्व विउव्वइ, विउव्वित्ता महया २ सहेण पादददरण
 कएण समाणेण अमरकका रायहाणी सभग्गपागारगोपुराट्टालयचरियतोरण
 पल्हत्थियपवरभवणसिरिधरा सरस्सरस्स धरणियले सन्निवइया)

आ समुद्घात वडे तेमणे जेक विशाल काय नरसिंह रूपनी विकुर्वणा
 करी नरसिंह रूपनी विकुर्वणा करीने पोतानी लय कर गर्जनाधी भूमि उपर
 अरछे।ने आघात कथी आ रीते गर्जनापूर्वक करायेला अरछाघातधी अमर-

दिशो दिश प्रतिपेधितः, तत गच्छ म पद्मनाभो राजा ' त्रिभागवत्प्रवृत्तौ ' त्रिभागवत्प्रवृत्तौः तृतीयाद्याप्रतिपत्तिर्गमान् मत् अस्थामा, अमरकः, अर्वायः, अस्थामेत्पाद्रि मान्यारयातम् अष्टरूपकारपराक्रम'-पौरुषपराक्रमरहितः, अथारणीयः-प्राणान् धारायितुमशक्त', इति कृत्या=इति विचार्य शीघ्र त्वरित यत्रैवा मरकता तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य अमरकता राजधानीमनुप्रविशति, अनुप्रविश्य द्वाराणि ' पिहेइ ' पिधत्ते, रोधमञ्ज' = दुर्ग निगम्य तिष्ठति, ततः गच्छ स कृष्णो

वह एकदिशा से दूसरी दिशा में भाग गया अथवा भागने में असमर्थ बन गया। इस के बाद तृतीयाशावशिष्ट सेना चला होकर वह पद्मनाभराजा बल रहित हो गया, पर्याप्त सैन्य रहित हो गया एवं अन्तरिक शक्ति-उत्साह हीन हो गया। अतः वह पौरुष पराक्रम से रहित होने के कारण रणभूमि में ठहरने के योग्य नहीं रहा। अथवा प्राणों को धारण करने में भी असमर्थ बन गया। इसलिये वह वहाँ से शीघ्र चढ़ी उतावली से जहाँ अमरकको नगरी थी वहाँ आ गया। (उवागच्छित्ता अमरकक रायहाणि अणुपविसिड, अणुपविसित्ता दाराइ पिहेइ पिहित्ता रोहसज्जे चिट्ठइ, तएण से कण्हे वासुदेवे, जेणेव अमरकका तेणेव उवागच्छइ) वहाँ आकर वह अमरकका राजधानी में गया। जाकर उसने दरवाजोंको बंद करवा दिया। बंद करवाकर फिर वह अपने दुर्ग (किल्ला)की रक्षा करता हुआ वहाँ ठहरा। इसके बादकृष्णवासुदेव

गर्ध यापत् ते येनानो लाग ओक दिशा तरुधी पीअदिशा तरु नाशी गये अथवा तो ते नाशी लवाभा पणु असमर्थ थछ गये। त्यारपधी नील भाग जेटली सेना ल लेनी पासे रही छे जेवो ते पद्मनाभ राजा साव निजण थछ गये, पर्याप्त सैन्य रहित थछ गये अने आतरिक शक्ति-उत्साह रहित थछ गये। ते पौरुष पराक्रम वगरनो थछ ते रणभूमिमा टकी शके तेम पणु रह्यो नहि अथवा तो ते प्राणाने धारणु करवामा पणु असमर्थ थछ गये। जेथी ते सत्वरे ज्या अमरकका नगरी छती त्या आवी गये।

(उवागच्छित्ता अमरकक रायहाणि अणुपविसिड, अणुपविसित्ता-दाराइ पिहेइ, पिहित्ता रोहसज्जे चिट्ठइ, तएण से कण्हे वासुदेवे, जेणेव अमरकका तेणेव उवागच्छइ)

त्या आवीने ते अमरकका राजधानीमा गये, त्या जधने तेण्हे दरवाजांको बंद करावी दीधा अथ उरावीने ते याताना दुर्गानी रक्षा करता त्या शक्यो। त्यारपधी कृष्ण-वासुदेव ज्या ते अमरकका नाचे न

वासुदेवो यत्रैवामरुद्धा तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य रथं स्थापयति, रथात् प्रत्यवरोहति प्रत्यवरुह्य, 'वेडव्वियसमुग्घाएण' वैक्रियसमुद्घातेन वैक्रियशरीरं निर्मातुं मात्मप्रदेशानां वद्विर्निं सारणेन खल्लु 'समोहणइ' समुद्घातं करोति समुद्घन्ति एकं महत् 'णरसीहरूव' नरसिंहरूपं 'विउव्वइ' विकुर्वते दिव्यसामर्थ्येन करोति विकुर्व्यं महता २ शब्देन 'पादददरय' पादददररू=भूमौ चरणाघातं करोति, ततः खल्लु स कृष्णेन वासुदेवेन महता २ शब्देन पादददरकेण=भूमौ चरणाघातेन कृतेन सता अमररुद्धाराजवानी 'संभगपागारगोपुराट्टालयचरियतोरणपल्लहत्थियपवरभवणमिरिधरा' संभगनाकारगोपुराट्टालकचरिकातोरणपर्यस्तितपवरभवनश्रीगृहा=तत्र संभगानि-प्राकारश्च गोपुराणि च अट्टालकाश्च चरिका

जहावह अमरकका श्री वहा गये (उवा०) वहा जाकर के (रह ठवेइ, ठवित्ता रहाओ पचोरुहइ, पचोरुहित्ता वेडव्वियसमुग्घाएण समोहणइ) उन्होंने अपने रथको खडा किया-खडा करके फिर वे उससे नीचे उतरे । नीचे उतर कर वैक्रिय समुद्घात किया । वैक्रियशरीरको निर्माण करने के लिये जो आत्मप्रदेशों का बाहिर निकालना होना है-उनको नम वैक्रिय समुद्घात है । (एग मह णरसिहरूवं विउव्वइ विउव्वित्ता महया २ सदेण पादददरण कएण समाणेण अमरकका रायहाणी संभगपागारगोपुराट्टालचरियतोरण पल्लहत्थियपवरभवणसिरिधरा सरस्सरस्स धरणियले सन्नियइया) इस समुद्घातके द्वारा उन्होंने एक विशालकाय नरसिंहरूप की विकुर्वणा की नरसिंहरूप की विकुर्वणा करके अपनी भयकर गर्जना से भूमि पर चरणों द्वारा आघात किया । इस तरह गर्जना पूर्वक किये गये चरणाघात से अमरकका राजवानी की

गया (उवा०) त्या ऋधने (रह ठवेइ, ठवित्ता रहाओ पचोरुहइ, पचोरुहित्ता वेडव्वियसमुग्घाएण समोहणइ) तेभल्ले पोताना रथने ळिलो रापथे, ळिलो राणीने तेओ तेमाथी नीचे उतया नीचे उतरीने तेभल्ले वैक्रिय समुद्घात कथे वैक्रिय शरीरने जनाववा भाटे जे आत्मप्रदेशेने जडार डाढवामा आवे छे ते वैक्रिय समुद्घात कडेवाय छे

(एग मह णरसिहरूव विउव्वइ, विउव्वित्ता महया २ सदेण पादददरण कएण समाणेण अमरकका रायहाणी संभगपागारगोपुराट्टालयचरियतोरण पल्लहत्थियपवरभवणसिरिधरा सरस्सरस्स धरणियले सन्नियइया)

आ समुद्घात वडे तेभल्ले ओक विशालकाय नरसिंह अपनी विकुर्वणा करी नरसिंह अपनी विकुर्वणा करीने पोतानी लथकर गर्जनाथी भूमि उपर बरखोना आघात कथे आ रीते गर्जनापूर्वक कथेता बरखुआघातथी अमर-

च तोरणानि च यस्यां सा तथा, तत्र गोपुराणि-मतोत्पः अट्टाकका'-प्राकारो-
परिस्थान् विशेषाः, चरिका-नगरमारगन्तरऽष्टास्तोमार्गः । तथा-पर्यन्तितानि-
सर्वतः क्षिप्तानि मयस्मानानि श्रीगृहाणि-भाडागाराणि कोशागाराणि च यस्यां सा
तथा, ततो द्विपदः कर्मधारय । कृष्णसामुद्रेण भूमौ चरणाघातशब्देन अमर-
ककाराजधान्याः मासारगोपुरादिक विनमितमित्यर्थः, तथा-'सरस्सरस्स'
अनुरुणशब्दोऽयम् निपतनक्रियाविशेषण धरणितले सनिपतिता=अमरककां
राजधानी मरस्सरस्सेति शब्द कृपांणा भूमौ पतितेत्यर्थः । ततः सखु स पद्मनाभो
राजा अमरककां राजधानीं सभग्नमाकारादिसा यान्-धरणितले सनिपतिता
दृष्ट्वा भीतः व्रस्त, उद्विग्नः, सजातभय, द्रौपद्या देव्या शरणमुपैति प्राप्नोति,
ततः खलु सा द्रौपदी देवी पद्मनाभ राजानमेवमादीत्-किं खलु स्व हे देवात्
प्रिय ! न जानासि कृष्णस्य सामुद्रस्योत्तमपुरुषस्य विप्रिय कुर्वन् मामिह अत्र

गलियों को अटारियों को, चरिकाओं को, श्री गृहों को कोशागारों को
श्री कृष्ण ने ध्वस्त कर दिया। तथा वह अमरकका राजधानी भी मरसर
शब्द करती हुई उस गर्जना पूर्वक क्रिये गये चरणाघात से जमीन पर
गिर पड़ी। (तण्ण से पडमणाभे राया, अमरकका रायहार्णि सभग्न
जाव पासित्ता, भीण दोवईण देवीण सरण उवेइ) तत्र पद्मनाभ राजा
अमरकका राजधानी को प्राकार गोपुर आदि की ध्वस्त अवस्थावाली
देखकर अत्यन्त भीत हुआ व्रस्त हुआ, उद्विग्न हुआ। और सजात
भय सपन्न होकर द्रौपदी देवी की शरण में पहुँचा। (तण्ण सा दोवई
देवी, पडमनाभ राय एव वयासी) तत्र उस द्रौपदी देवी ने पद्मनाभ
राजा से इस प्रकार कहा-(किण्ण तुम देवाणुप्पिया ! न जानासि कण्ह

कका राजधानीनी शेरीञ्जाने, अगरीञ्जाने चरिकाञ्जाने, श्रीगृहोने, कोशा
गादोने श्रीकृष्णे नष्ट उरी नाभ्या तेमञ्ज ते अमरकका राजधानी पखु स सर
शब्द करती गर्जनापूर्वक करवाभा आवेला चरणाघातधी न्भीनहोस्त थर्ध गर्ध
(तण्ण से पडमणाभे राया, अमरकका रायहार्णि सभग्न जाव पासित्ता,
भीण दोवईण देवीण सरण उवेइ)

पद्मनाभ राजा अमरकका राजधानीना प्राकार, गोपुर वगेरेने विनाश
लेधने भूञ्ज न्ज न्यलीत थर्ध गयो, व्रस्त थर्ध गयो तेमञ्ज उद्विग्न थर्ध गयो
अने समतलय सपन्न थधने द्रौपदी देवीनी शरणे पडोअयो (तण्ण सा
दोवई देवी पडमनाभ राय एव वयासी) त्यारे ते द्रौपदी देवीअे पद्मनाभ
राजाने आ प्रभाण्णे कल्लु डे-

हव्य-शीघ्रम् आनयमि-आनीतवानसि तत्-तम्मात्-‘ एवमपि गए ’ एवमपि गते-इत्थंममापहरणे कृतेऽपि, गच्छ खलु त्व हे देवानुप्रिय ! स्नातः ‘ उल्लपडसाडए ’ आर्द्रपट्टसाटरुः स्नानेनाऽऽर्द्धीकृतोत्तरीयपरिधानवस्त्रपारी ‘ अचल्वगवत्यणियत्ये ’ अवचूलरुवस्त्रणियत्यः=अचूलरुम्-अगोमुग नीचैर्लम्बमान चूल-वस्त्राञ्चल-रुस्त्रमासु यथा भवति तथा ‘ णियत्ये ’ परिहित वस्त्र येन स तथा-स्त्रीणा परिवानमिव चरणपर्यन्तलम्बितवस्त्रान्त यथास्यात्तथा परिहितवस्त्र इत्यर्थः । ‘ अतेउरपरियालसपरिवुडे ’ अन्त पुरपरिवारमपरिवृतः=स्त्री परिवारेण सहितः, ‘ अग्गाइ ’ अग्र्याणि वराणि रत्नानि गृहीत्वा मा पुरतः ‘ काउ ’ कृत्वा कृष्ण

स्स वा सुदेवस्स उत्तमपुरिसस्म विप्पि य करेमाणे मम इह हव्वमाणेसि) हे देवानुप्रिय ! क्या तुम उत्तम पुरुष कृष्णवासुदेव को नहीं जानते हो जो उनको अनिष्ट कर तुम मुझे यहां ले आये हो । (त एवमविगए गच्छहण तुम देवानुप्पिया ! ण्हाए उल्लपडसाडए अवचल्वगवत्यणियत्ये अतेउरपरियालसपरिवुडे, अग्गाइ वराइ रयणाइ गहाय, मम पुरओ, काउ कण्ह वासुदेव करयलपायपडिए सरण उवेहि) खैर अय इस घात को जाने दो-हे देवानुप्रिय ! तुम स्नान करो, और गीले वस्त्र पहिने हुए ही श्री कृष्णवासुदेव की शरण में जाओ । जाते समय तुम स्त्रियों के परिवान के समान चरण पर्यन्त लटकते हुए वस्त्र पहिनकर जाना । अकेले मत जाना किन्तु अपने अंत पुर की समस्त स्त्रियों को साथ में ले जाना । रीते हाथ भी मत जाना किन्तु भेट निमित्त वेश कीमती रत्नों को लेकर और मुझे आगे करके चलना ।

(णिण तुम देवाणुप्पिया ! न जाणासि कण्हस्स वासुदेवस्स उत्तमपुरिसस्स विप्पिय करेमाणे मम इह हव्वमाणेसि)

हे देवानुप्रिय ! शु तमे उत्तम पुरुष कृष्ण-वासुदेवने ओणभता नथी भने अर्द्धी लापीने तमे तेमनु न अनिष्ट कथुं छे

(त एवमविगए गच्छहण तुम देवाणुप्पिया ! ण्हाए उल्लपडसाडए अवचल्वगवत्यणियत्ये अतेउरपरियालसपरिवुडे अग्गाइ वराइ रयणाइ गहाय, मम पुरतो, काउ कण्ह वासुदेव करयलपायपडिए सरण उवेहि)

ओर, छोडो ओ वातने हे देवानुप्रिय ! तमे हवे स्नान करो अने भीना वस्त्रोधी न श्रीकृष्ण वासुदेवनी शरणा नओ नती वभते तमे श्रीओना परिधान (अस्त्रिया) नी नेमन पग सुधी लटकता वसो पडेरने तमे ओकला नता नडि परतु रक्षुवासनी षधी ओओने साथे लधने नने तमे थाली हाये तेमनी पाये नता नडि पणु कथुं सेट स्वइप किमती वओने लधने

वासुदेव ' करयलपायपट्टिण ' करतलपादपतिः—संगोजितकरतलद्वयः, पादयोः पतितः मन्तरण उपैदि—त्रायम्यमामितिपदर उपगमो भवेत्यर्थः । हे देवानुप्रिय ! ' पणिउडयउल्ला ' पणिपतितमन्त्रा-चानोपगिनिपतितानां वत्मनाः स्नेहान्त खलु उत्तमपुरुषा भवन्ति प्रणाममात्रेण महापुरुषाः प्रसीदन्तीत्यर्थः । ततस्तदनन्तर म प्रसनाभो राजा द्रौपद्या दद्या एतमर्थं=उक्तकथनरूपमर्थ प्रतिश्रुति-स्वीकृति, प्रतिश्रुत्य स्नातो यावत् शरणमुपैति द्रौपदीवचनमनुसृत्य प्रसनाभो राजा कृष्णवासुदेवस्य शरणमुपगत इत्यर्थः । उपेत्य करतलपरिगृहीत दशनव गिर आरतं मन्त्रकेऽजलिं कृत्वा पा=१-प्रणामप्रकारेण, जगदीश=इष्टा

घटा पहुँच कर तुम दोनों हाथ जोड़ कर उनके चरणों में गिर जाना (पणिउडयउल्ला ण देवाणुप्पिया उत्तमपुरिसा तण्ण से पउमनाभे दोउईण देवीण एयमट्ट पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाए जाव सरण उवेइ, उवित्ता, करयलपायवयासी दिट्ठाण देवानुप्पियाण इड्डी, जाव परक्कमे त खामेमि ण देवाणुप्पिया ।) हे देवाणुप्रिय ! उत्तम पुरुष जो हुआ करते हैं वे प्रणिरतितवत्सल हुआ करते हैं—प्रणाममात्रसे महापुरुष प्रसन्न हो जाया करते हैं—अर्थात् नमन करनेवालेको वे नहीं मारते तब प्रसनाभ राजाने द्रौपदी देवीके इस शिक्षाप्रद कथनरूप अर्थको स्वीकार कर लिया । स्वीकार कर बादमें उसने स्नान क्रिया, यावत् वह द्रौपदीके कहे अनुसार कृष्णवासुदेव की शरणमें पहुँच गया । शरण में पहुँच कर उसने अपने दोनों हाथों को जोड़कर अजलि बनाई और आदक्षिण प्रदक्षिण करके उसे शिरपर रखा । फिर इस प्रकार बोला—आप देवानुप्रियकी मैंने ऋद्धि

तेमन्न भने आगण राणीने खालले त्या पडोथीने तमे णने हाथ जेडीने तेमना पगे पडले

(पणिउडय वच्छलाण देवाणुप्पिया उत्तमपुरिसा, तण्ण से पउमनाभे दोउईण देवीण एयमट्ट पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाए जाव सरण उवेइ, उवित्ता करयलपायवयासी, दिट्ठा ण देवाणुप्पियाण इड्डी जाव परक्कमे त खामेमि ण देवाणुप्पिया ।)

हे देवानुप्रिय ! उत्तम पुरुषों तेमनी सामे विनम्र थयेला भावसे प्रत्ये ओकदम वत्सल थर्ष लय छे इच्छा नमस्कार करवाथीज तेओ प्रसन्न थर्ष लय छे आ णधु सालणीने पक्षनाल राजजे द्रौपदीना आ शिक्षाप्रद कथन रूप अर्थने स्वीकारी लीधे। स्वीकार करीने तेओ स्नान कथुं यावत् ते द्रौपदीना कथा सुश्रवण ज कृष्ण-वासुदेवनी शरणमा भये। शरणमा जधने तेओ चेताना णने हाथ जेडीने अजलि णनावी अने आदक्षिण प्रदक्षिण। उपर भूडी अने त्पारणाइ ते आ प्रभाओ कडेवा लाग्ये।

खलु देवानुप्रियाणाम् ऋद्धिर्यात् पराक्रमः—तत्=तस्मात् क्षमयामि खलु हे देवानुप्रियाः ! यावत् क्षमन्तु खलु यावत् नाह भूयो भूयः एव करणतया=पुनरेव न ररिष्यामि, इति कृत्वा—इत्युक्त्वा—‘पजल्लिबुडे’ प्राञ्जलिपुट—सयोजित—करणतद्वयः पादपतितः कृष्णस्य वासुदेवस्य द्रौपदीं ‘साहस्यि’ स्पहस्तेन, उपनयति । ततः खलु स कृष्णो वासुदेव पञ्चनाभमेवमयादीत्—ह भोः ! पञ्चनाभ ! अप्रार्थितमार्थित !—हे मरणवाञ्छरु ! ४ किं खलु त्व न जानासि मम भगिनीं द्रौपदी देवीमिहहव्यमानयन्, ‘त’ तत्—तस्मात् ‘एवमपि गए’ एवमपिगते अनेनप्रकारेण शरण प्राप्ते सति, नास्ति ते तव मद्भयमिदानीमिति कृत्वा प्रति विसर्जयति । प्रतिविसृज्य द्रौपदीं देवीं गृह्णाति, गृहीत्या रथ दूरोढति=आरोहयति

देखली, यावत् पराक्रम देव लिया । हे देवानुप्रिय ! मैं अपने अपराध की क्षमा मांगता हूँ । (जाव खमतु) यावत् आप मुझे क्षमा दें । (ण जाव णा ह भुज्जो २ एव करणाए) अय मै पुनः ऐसा नहीं करूंगा । (त्ति कइहु पजल्लिबुडे पायवडिए कणहस्स वासुदेवस्स दोवइ देविं सा हस्यि उवणेइ) इस प्रकार कहकर वह दोनों हाथ जोड़ उन कृष्णवासुदेव के पैरों पर गिर पडा और अपने हाथ से ही उसने फिर उनके लिये द्रौपदी सौ पदी । (तएण से कण्हे वासुदेवे पउमणाभ एव वयासी—ह भो ! पउमणाभा ! अपत्थियपत्थिया ४ किण्ण तुम ण जाणासि मम भगिणि दोवइ देवि इह हव्व माणमाणे त एवमपि गए, णत्थि ते ममार्हितो इयाणि भयमत्थि त्ति कइहु पउमणाभ पडिविसज्जेइ, पडि विसज्जित्ता दोवइ देविं गिण्हइ, गिण्हित्ता रह दुरुहेइ, दुरुहित्ता जेणेव

मे ऋद्धि लोभ लीधी छे, यावत् तमाइ पराक्रम पणु मे लोभ लीधु छे हे देवानुप्रिय ! हु भाग अपराध बढल क्षमा मागु छु (जाव खमतु) यावत् तमे भने क्षमा करे । (ण जान णाह भुज्जो २ एव करणाए) उवे इरी हु आधु कदापि नहि उर (त्ति कइहु पजल्लिबुडे पायवडिए कणहस्स वासुदेवस्स दोवइ देवि साहस्यि उवणेइ) आ प्रभाणु कहीने ते भने हाथ लेडीने इण्णु—वासुदेवना पणेभा आणेटी गये। अने त्थारपधी तेणु पोताना हाथथीण द्रौपदी तेभने सोपी हीधी

(तएण से कण्हे वासुदेवे पउमणाभ एव वयासी—ह भो ! पउमणाभा ! अपत्थियपत्थिया ४ किण्ण तुम ण जाणासि मम भगिणि दोवइ देवि इह, हव्व माणमाणे त एवमपि गए, णत्थि ते ममार्हितो इयाणि भयमत्थि त्ति कइहु पउमणाभ पडिविसज्जेइ पडिविसज्जित्ता दोवइ देविं गिण्हइ, गिण्हित्ता रह दुरुहेइ,

वासुदेव ' करयलपायपट्टिण ' करतउपादपनिव'-गंगोनिताकरतल्लयः, पादयोः पतितः मन् शरण उपैदि-त्रायस्वमामितिपश्न् उपगता भवेत्यर्थः । हे देवानु प्रिय । ' पणिउइयउच्छला ' मणिपनितायमत्रा-चाणोपरिनिपतिगाना यत्मनाः स्नेहयन्त खलु उत्तमपुरुषा भरति मणाममात्रेण महापुरुषाः प्रसीदन्तीत्यर्थः । ततस्तदनन्तर म प्रसनाभो राजा द्रौपद्या देव्या एतमर्थं=उक्तकथनरूपमर्थ प्रति-धृगोति-स्वीकरोति, प्रतिश्रुत्य स्नातो यावत् शरणमुपैति द्रौपदीयनमनुसृत्य पद्मनाभो राजा कृष्णवासुदेवस्य शरणमुपगत इत्यर्थः । उपेत्य करतपरिगृहीत दशनव गिर आरत मन्मकेऽञ्जलिं कृ ता ए=१-यमागप्रकारेण, जादीइ=दृष्ट्वा

घटा पहुँच कर तुम दोनों हाथ जोड़ कर उनके चरणों में गिर जाना (पणिउइयउच्छला ण देवाणुप्पिया उत्तमपुरिसा तण्ण से पउमनाभे दोवइए देवीए एयमट्ट पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाए जाव सरण उवेइ, उवित्ता, करयल०णववयासी दिट्ठाण देवानुप्पियाण इड्डी, जाव परक्कमे त खामेमि ण देवाणुप्पिया ।) हे देवाणुप्रिय ! उत्तम पुरुष जो हुआ करते हैं वे प्रणि रतितवत्सल हुआ करते हैं-मणाममात्रसे महापुरुष प्रसन्न हो जाया करते हैं-अर्थात् नमन करनेवालेको वे नहीं मारते तब पद्मनाभ राजाने द्रौपदी देवीके इस शिक्षाप्रद कथनरूप अर्थको स्वीकार कर लिया । स्वीकार कर बादमें उसने स्नान किया, यावत् वह द्रौपदीके ऊँ अनुसार कृष्णवासुदेव की शरणमें पहुँच गया । शरण में पहुँच कर उसने अपने दोनों हाथों को जोड़कर अजलि बनाई और आदक्षिण प्रदक्षिण करके उसे शिरपर रखा । फिर इस प्रकार बोला-आप देवानुप्रियकी मैंने ऋद्धि

तेमन् भने आगण राणीने आलणे त्या पडोशीने तमे णने हाथ नेडीने तेमना पजे पडणे

(पणिउइय उच्छलाण देवाणुप्पिया उत्तमपुरिसा, तण्ण से पउमनाभे दोवइए देवीए एयमट्ट पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाए जाव सरण उवेइ, उवित्ता करयल० एय वयासी, दिट्ठा ण देवाणुप्पियाण इड्डी जाव परक्कमे त खामेमि ण देवाणुप्पिया ।)

हे देवानुप्रिय ! उत्तम पुरुषों तेमनी सामे विनम्र थयेला भाषुसो प्रत्ये अकदम वत्सल थर्ष णय छे इत्ता नमस्कार करवाथीण तेजो प्रसन्न थर्ष णय छे आ णधु सालणीने पद्मनाभ राजाजे द्रौपदीना आ शिक्षाप्रद कथन इय अर्थने स्वीकारी लीधो स्वीकार करीने तेजे स्नान कथुं यावत् ते द्रौपदीना कथा सुण्ण ण कृष्ण-वासुदेवनी शरणुमा गथो शरणुमा णधने तेजे पोताना णने हाथ नेडीने अजलि णनावी अने आदक्षिण प्रदक्षिणु करी-
उपर भूडी अने त्यारणाइ ते आ प्रभाणे कडेवा लाग्यो

खलु देवानुप्रियाणाम् ऋद्धिर्यावत् पराक्रमः—तत्=तस्मात् क्षमयामि खलु हे देवानुप्रियाः ! यावत् क्षमन्तु खलु यावत् नाह भूयो भूय' एव करणतया=पुनरेव न वरिष्यामि, इति कृत्वा—इत्युक्त्वा—'पञ्चलिबुडे' प्राञ्जलिपुट—सयोजित—करतलद्वयः पादपतितः कृष्णस्य वासुदेवस्य द्रौपदीं 'साहस्यि' स्वहस्तेन, उपनयति । ततः खलु स कृष्णो वासुदेव पञ्चनाभमेवमनादीत्—ह भोः ! पञ्चनाभ ! अप्रार्थितमार्थित ! =हे मरणवाञ्छुक ! ४ किं खलु त्व न जानासि मम भगिनीं द्रौपदीं देवीमिहदृश्यमानयन्, 'त' तत्—तस्मात् 'एवमपि गए' एवमपिगते अनेनप्रकारेण शरण प्राप्ते सति, नास्ति ते तव मद्भयमिदानीमिति कृत्वा प्रति विसर्जयति । प्रतिपिच्छज्य द्रौपदीं देवीं गृह्णाति, गृहीत्वा रथ दूरोदति=आरोहयति

देखली, यावत् पराक्रम देव्य लिया । हे देवानुप्रिय ! मैं अपने अपराध की क्षमा मांगता हँ । (जाव खमत्) यावत् आप मुझे क्षमा दें । (ण जाव णा ह् मुञ्जो २ एव करणाए) अत्र मैं पुनः ऐसा नहीं करूंगा । (त्ति कद्दु पञ्चलिबुडे पायवडिण कण्हस्स वासुदेवस्स दोवइ देविं सा हस्यि उवणेइ) इस प्रकार कहकर वह दोनों हाथ जोड़ उन कृष्णवा सुदेव के पैरों पर गिर पड़ा और अपने हाथ से ही उसने फिर उनके लिये द्रौपदी सौपदी । (तएण से कण्हे वासुदेवे पउमणाभ एव वयासी—ह भो ! पउमणाभा ! अपत्थियपत्थिया ४ किण्ण तुम ण जाणासि मम भगिणि दोवइ देविं इह हव्व माणमाणे त एवमपि गए, णत्थि ते ममार्हितो इयाणि भयमत्थि त्ति कद्दु पउमणाभ पडि विसज्जेइ, पडि विसज्जित्ता दोवइ देविं गिण्हइ, गिण्हित्ता रह् दुरुहेइ, दुरुहित्ता जेणेव

मे ऋद्धि लेधं लीधी छे, यावत् तमाइ पराक्रम पणु मे लेधं लीधु छे हे देवानुप्रिय ! हु भारा अपराध भद्ल क्षमा मागु छु (जाव खमत्) यावत् तमे अने क्षमा करे । (ण जाव णाह् मुञ्जो २ एव करणाए) उवे इरी हु आवु उदपि नद्धि उर (त्ति कद्दु पञ्चलिबुडे पायवडिण कण्हस्स वासुदेवस्स दोवइ देविं साहस्यि उवणेइ) आ प्रभाषे कहीने ते अने हाथ लेडीने कृष्ण—वासुदेवना पणोभा आणोटी गयो अने त्यारपळी तेणे पोताना हाथथीज द्रौपदी तेअने मोपी हीधी

(तएण से कण्हे वासुदेवे पउमणाभ एव वयासी—ह भो ! पउमणाभा ! अपत्थियपत्थिया ४ किण्ण तुम ण जाणासि मम भगिणि दोवइ देविं इह, हव्व माणमाणे त एवमपि गए, णत्थि ते ममार्हितो इयाणि भयमत्थि त्ति कद्दु पउमणाभ पडि विसज्जेइ पडि विसज्जित्ता दोवइ देविं गिण्हइ, गिण्हित्ता रह् दुरुहेइ,

वासुदेव ' करयलपायपटिण ' करतउपादपतिः-मयो जितकरतउदयः, पादयोः पतितः मन् शरण उपैति-त्रायस्यमामितिपदन उपगतो भवेत्पर्य' । हे देवानु प्रिय । ' पणिउडयउच्छला ' पणिपतितममत्रा-चणोपरिपितिताना वत्मलाः स्नेहएत खलु उत्तमपुरुषा भवति मणाममात्रेण महापुरुषा प्रसीदन्तीत्यर्थः । ततस्तदनन्तर म प्रगनाभो राजा द्रौपद्या देव्या एवमर्थ=उत्तमपुरुषमर्थ पति-श्रुगोति-स्त्रीरुगोति, प्रतिश्रुत्य स्नातो यावत् शरणमुपैति द्रौपदीयानमनुसृत्य पद्मनाभो राजा कृष्णवासुदेवस्य शरणमुपगत इत्यर्थः । उपेत्य करतउपरिगृहीत दशनव गिर आरतं मन्मकेऽञ्जति कृ रा एव=१/२यमागप्रकारेण, आदीद्=दृष्ट्वा

वहा पहुँच कर तुम दोनों हाथ जोड़ कर उनके चरणों में गिर जाना (पणिउडयउच्छला ण देवाणुप्पिया उत्तमपुरिमा तण्ण से पउमनाभे दोवइए देवीए एयमट्ट पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाए जाव सरण उवेइ, उवित्ता, करयल०एययासी दिट्ठाण देवानुप्पियाण इड्डी, जाव परक्कमे त खामेमि ण देवाणुप्पिया ।) हे देवाणुप्रिय । उत्तम पुरुष जो हुआ करते हैं वे प्रणि रतितवत्सल हुआ करते हैं-मणाममात्रसे महापुरुष प्रमन्न हो जाया करते हैं-अर्थात् नमन करनेवालेको वे नहीं मारते तब पद्मनाभ राजाने द्रौपदी देवीके इस शिक्षाप्रद कथनरूप अर्थको स्वीकार कर लिया । स्वीकार कर बादमें उसने स्नान किया, यावत् वह द्रौपदीके कहे अनुसार कृष्णवासुदेव की शरणमें पहुँच गया । शरण में पहुँच कर उसने अपने दोनों हाथों को जोड़कर अजलि बनाई और आदक्षिण प्रदक्षिण करके उसे शिरपर रखा । फिर इस प्रकार बोला-आप देवानुप्रियकी मैंने ऋद्धि

तेमन् भने आगण राणीने आलले त्या पडोथीने तमे णने हाथ लेडीने तेमना पगे पडले

(पणिउडय उच्छलाण देवाणुप्पियो उत्तमपुरिमा, तण्ण से पउमनाभे दोवइए देवीए एयमट्ट पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाए जाव सरण उवेइ, उवित्ता करयल० एय यासी, दिट्ठा ण देवाणुप्पियाण इड्डी जाव परक्कमे त खामेमि ण देवाणुप्पिया ।)

हे देवानुप्रिय । उत्तम पुरुषो तेमनी साभे विनम्र थयेला भाव्यसे प्रत्ये अेकदम वत्सल थर्ध न्य छे इष्ट नमस्कार करवाथीने तेओ प्रसन्न थर्ध न्य छे आ षधु सालणीने पद्मनाभ राजाओ द्रौपदीना आ शिक्षाप्रद कथन इय अर्थने स्वीकारी लीथे। स्वीकार करीने तेओ स्नान कथुं यावत् ते द्रौपदीना कहेला सुश्रवण न कृष्ण-वासुदेवनी शरणुमा गथे। शरणुमा न्धने तेओ पोताना णने हाथ लेडीने अञ्जलि णनावी अने आदक्षिण प्रदक्षिणा करीने । भाथा उपर मूडी अने तयारणाइ ते आ प्रभाओ कडेवा लाग्ये ।

मूलम्-तेणं कालेण तेणं समएणं धायइसडे दीवे पुरत्थि-
 मिळे भारहे वासे चंपाणामं णयरी होत्था, पुण्णभदे चेइए, तत्थ
 णं चंपाए नयरीए कविले णामं वासुदेवे राया होत्था, महिया
 हिमवंत० वण्णओ, तेण कालेणं तेणं समएणं मुणिसुव्वए
 अरहा चपाए पुण्णभदे समोसडे, कपिले वासुदेवे धम्म सुणेइ
 तएण से कविले वासुदेवे मुणिसुव्वयस्स अरहओ धम्म सुणे-
 माणे कण्हस्स वासुदेवस्स सखसद्धं सुणेइ, तएण तस्स कवि-
 लस्स वासुदेवस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए समुप्पज्जित्था - किं
 मण्णे धायइसडे दीवे भारहे वासे दोच्चे वासुदेवे समुप्पण्णे ?
 जस्स ण अय संखसद्धे ममपिव मुहवायपूरिए वीय भवइ, तएण
 मुणिसुव्वए अरहा कविल वासुदेवं एवं वयासी-से णूण ते
 कविला वासुदेवा । मम अतिए धम्म णिसामेसाणस्स सखसद्ध
 आकण्णित्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए कि मन्ने जाव वीय भवइ, से
 णूण कविला वासुदेवा । अयमट्ठे समट्ठे ? हता । अत्थि, नो
 कविला । एव भूय वा३ जन्न एगे खेत्ते एगे जुगे समए दुवे
 अरहता वा चक्कवट्ठी वा वलदेवा वा वासुदेवा वा उप्पज्जिसु
 उप्पज्जित्ति उप्पज्जिस्सति वा, एव खलु वासुदेवा । जवूहीवाओ
 भारहाओ वासाओ हत्थिणाउरणयराओ पंडुस्स रण्णो पुव्व-

धीच हो जहा जवूद्वीप नाम का द्वीप, जहा भरतक्षेत्र नाम का क्षेत्र था
 उस ओर चल दिये ॥ सू० २९ ॥

स्थाने लक्ष्मि लवणु समुद्रनी पश्चि धर्षिने न्या ज वूद्वीप नामे द्वीप, अने
 तेमा पणु न्या लारतवर्ष नामे क्षेत्र छुत्ते ते तरइ स्वाना धया ॥ सूत्र २६ ॥

आरोग यज्ञ पञ्च पाण्डवास्तर्जोपोग छति, उपागय पञ्चाना पाण्डवानां द्रौपदी
 देरीं 'माहर्षि' म्वदग्नेन, उपनयति=इदामि । तत' सतु ग ऋणाः पञ्चभि'
 पाण्डवै माधेमात्मपणु पद्मभीरुपैर्लगागमुद्रम्य म यम'येन यज्ञीव जम्बूद्वीपो
 द्वीपः, यज्ञीव भारत पर्ष तज्ञीव मापागयद् गमनाय=गत्तु मयतः ॥ म० २०॥

पच पडवे तेणेव उवागच्छद्, उवागच्छिता पचण्ड पडवाण दोवद् देवि
 साहसि उवाणेह) तय ऋणवासुदेव ने पद्मनाभ से इस प्रकार कहा
 अरे ओ पद्मनाभ ! तुम इस तरह से अकाल में ही मरण के अभिलाषी
 क्यों बने प्रकृत तुझे यह पना नहीं था कि द्रौपदी मेरी बहिन है । क्यों तू
 इस को यहाँ ले आया ! पर-जब तू इस रूप में मेरी शरण में आचुका
 है-तो अब तुझे किसी भी प्रकार का मेरी तरफ से भय नहीं रहा-ऐसा
 कहकर ऋणवासुदेव ने उसे त्रिमूर्ति कर दिया-अपने स्थान पर उसे
 जाने की आज्ञा देदी-। पाद में द्रौपदी को साथ में लिया और लेकर वे
 रथ पर आरूढ हुए । आरूढ होकर फिर वे, यहाँ आये-जहाँ पाचों
 पाण्डव थे वहाँ आकर उन्होंने ने द्रौपदी को अपने हाथों से पाँचो पाण्डवों
 के सुपुर्त कर दिया । (तण्ण कण्ठे पचेहि पटवेहि सद्धि अप्पउट्टे छहि
 रहेहि लवणसमुद्द मज्झ मज्जेण जेणेव जव्वुद्धीवे दीवे जेणेव भारहे
 वासे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इसके बाद वे ऋणवासुदेव पाँचों
 के साथ आत्मपष्ट होकर उहाँ रथों को ले लवण समुद्र से बीचों

५ पडवे तेणेव उवागच्छद् उवागच्छिता पचण्ड पडवाण दोवद्
)

मदेवे पद्मनाभने आ प्रभावे कछु के अरे ओ ! पद्मनाभ !
 मयभा न भरलना अलिवापी केम जनी गया छो, शु
 के द्रौपदी भारी जडेन छे तु अने अर्धी शा भाटे लर्ष
 अरे आ स्थितिमा भारी पासे आव्यो छे तो डवे तारे
 जतने लय राधवे जेधअे नहि आभ कडीने कृष्ण
 ते त्यारपछी द्रौपदीने साथे लधने तेओ रथ उपर
 तेओ न्या पावे पडवे डता त्या आव्या त्या
 ते द्रौपदीने पावे पाउवेने सोपी दीधी

५ सद्धि अप्प छट्टे छहि रहेहि लवणसमुद्द
 जेणेव भारहेवासे तेणेव पहारेत्थ गमणाए)

५ पाउवेनी साथे आत्थ धने छवे

मूलम्-तेणं कालेण तेणं समएण धायइसंडे दीवे पुरत्थि-
 मिद्धे भारहे वासे चंपाणामं णयरी होत्था, पुण्णभदे चेइए, तत्थ
 णं चपाए नयरीए कविले णामं वासुदेवे राया होत्था, महिया
 हिमवंत० वण्णओ, तेण कालेण तेण समएण मुणिसुव्वए
 अरहा चपाए पुण्णभदे समोसडे, कपिले वासुदेवे धम्म सुणेइ
 तएणं से कविले वासुदेवे मुणिसुव्वयस्स अरहओ धम्म सुणे-
 माणे कण्हस्स वासुदेवस्स सखसइं सुणेइ, तएण तस्स कवि-
 लस्स वासुदेवस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए समुप्पजित्था - किं
 मण्णे धायइसंडे दीवे भारहे वासे दोच्चे वासुदेवे समुप्पण्णे ?
 जस्स णं अय संखसइे ममंपिव मुहवायपूरिए वीयं भवइ, तएणं
 मुणिसुव्वए अरहा कविल वासुदेवं एव वयासी-से णूण ते
 कविला वासुदेवा । मम अतिए धम्म णिसामेमाणस्स सखसइ
 आकण्णिन्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए किं मन्ने जाव वीयं भवइ, से
 णूणं कविला वासुदेवा । अयमट्ठे समट्ठे ? हता । अत्थि, नो
 कविला । एव भूय वाइ जन्न एगे खेत्ते एगे जुगे समए दुवे
 अरहता वा चक्कवट्ठी वा वलदेवा वा वासुदेवा वा उप्पजिसु
 उप्पज्जित्ति उप्पज्जिस्सति वा, एवं खलु वासुदेवा । जवूदीवाओ
 भारहाओ वासाओ हत्थिणाउरणयराओ पडुस्स रण्णो पुव्व-

वीच हो जहा जवूद्वीप नाम का द्वीप, जहा भरतक्षेत्र नाम का क्षेत्र था
 उस ओर चल दिये ॥ सू० २९ ॥

रथेने लज्जे लवणु समुद्रनी वच्चे थर्धने न्या जवूद्वीप नामे द्वीप, अने
 तेभा पणु न्या भारतवर्ष नामे क्षेत्र इत्तु ते तरइ रवाना थया ॥ सूत्र २६ ॥

आरोग यत्रैव पञ्च पाण्डवास्तत्रैवोपागच्छति, उपागय पञ्चानां पाण्डवानां द्रौपदी
 देवीं 'साहस्यि' स्वहस्तेन, उपनयति=इदाति । ततः गतु स कृष्णः पञ्चभिः
 पाण्डवैः मार्धमात्मपद्य पद्मभीरथैर्लज्जणसमुद्रस्य मन्थमन्थेन यत्रैव जम्बूद्वीपौ
 द्वीपः, यत्रैव भारत वर्ष तत्रैव प्राधारयद् गमनाय=गतु मरुतः ॥ ४०२९॥

पंच पडवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता पचण्ह पडवाण दोवइ देवि
 साहस्यि उचणेइ) तथ कृष्णवासुदेव ने पद्मनाभ से इस प्रकार कहा
 अरे ओ पद्मनाभ ! तुम इस तरह से अकाल में ही मरण के अभिलाषी
 क्यों बने ४४पातुझे यह पता नहीं था कि द्रौपदी मेरी यज्ञिन है । क्यों तू
 इस को यहाँ ले आया ! रौर-जय तू इस रूप में मेरी शरण में आचुका
 है-तो अब तुझे किसी भी प्रकार का मेरी तरफ से भय नहीं रहा-ऐसा
 कहकर कृष्णवासुदेव ने उसे विसर्जित कर दिया-अपने स्थान पर उसे
 जाने की आज्ञा देदी-। घाद में द्रौपदी को साथ में लिया और लेकर वे
 रथ पर आरूढ हुए । आरूढ होकर फिर वे, वहाँ आये-जहाँ पांचों
 पांडव थे वहाँ आकर उन्होंने ने द्रौपदी को अपने हाथों से पांचो पांडवों
 के सुपुर्द कर दिया । (तण्ण कण्हे पचेहिं पडवेहिं सद्धि अप्पछट्टे छहिं
 रहेहिं लवणसमुद्द मज्झ मज्जेण जेणेव जंबूद्वीवे दीवे जेणेव भारहे
 वासे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इसके बाद वे कृष्णवासुदेव पांचों
 पांडवों के साथ आत्मपद्य होकर छहो रथों को ले लवण समुद्र से बीचों

दुरुहिता जेणेव पच पडवे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता पचण्ह पडवाण दोवइ
 देवि साहस्यि उचणेइ)

त्यारे कृष्ण-वासुदेवे पद्मनाभने आ प्रभाषे कहु के अरे ओ ! पद्मनाभ !
 तमे आ प्रभाषे असमयमा न मरुणा अखिलापी केम अनि गया छे, तु
 तमने अणर नछोती के द्रौपदी भारी अडेन छे तु अने अडी शा माटे लध
 आब्यो ? जेर, तु न्यारे आ स्थितिमा भारी पासे आब्यो छे तो हवे तारे
 भारा तरुथी केध पणु नतनेो लय राणवेो न्नेधअे नहिं आभ कडीने कृष्ण
 वासुदेवे तेने विहाय कथो त्यारपछी द्रौपदीने साथे लधने तेओ रथ उपर
 सवार थया सवार थधने तेओ न्या पाये पाउवेो हता त्या आब्या त्या
 आवीने तेभणे भेताना छायथी द्रौपदीने पाये पाउवेोने ओपी हीधी

(तण्ण से कण्हे पचेहिं पडवेहिं सद्धि अप्प छट्टे छहिं रहेहिं लवणसमुद्द
 मज्झ मज्जेण जेणेव जंबूद्वीवे दीवे जेणेव भारहेवासे तेणेव पहारेत्थ गमणाए)
 त्यारआह ते कृष्ण-वासुदेव पाये पाउवेोनी साथे आत्मपद्य थधने छअे

मायारि करेइ, तएण से कविले वासुदेवे जेणेव अमरकका तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अमरककं रायहाणि सभग्गतोरणं जाव पासइ पासित्ता पउमणाभं एवं वयासी—किन्नं देवाणुप्पिया। एसा अमरकका सभग्ग जाव सन्निवइया ?, तएण से पउमणाहे कविलं वासुदेवं एवं वयासी—एव खलु सामी। जबूद्धी-वाओ दीवाओ भारहाओ वासाओ इह हव्वमागम्म कणहेणं वासुदेवेणं तुव्वे परिभूए अमरकका जाव सन्निवाडिया, तएण से कविले वासुदेवे पउमणाहस्स अंतिए एयमट्ट सोच्चा पउमणाह एव वयासी हं भो! पउमणाभा! अपत्थियपत्थिया किन्न तुम न जाणसि मम सरिसपुरिसस्स कणहस्स वासुदेवस्स विप्पियं करेमाणे ?, आसुरुत्ते जाव पउमणाहं णिव्विसयं आणवेइ, पउमणाहस्स पुत्ते अमरकंका रायहाणीए महया महया रायाभिसेएण अभिसिचइ जाव पडिगए ॥ सू० ३० ॥

टीका—' तेणं कालेण ' इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये धातकी-पण्डे द्वीपे पौरस्त्यार्थे भारते वर्षे चम्पा नाम नगरी आसीत् । तस्या बहिर्भागे पूर्णभद्र नाम चैत्यम्=उद्यानम्, आसीत् । तत्र=तस्या खलु चम्पानगर्या

' तेण कालेण तेण समएण ' इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) उस कालमें और उस समयमें (घायइसडे दीवे, पुरत्थिमद्धे भारहेवासे चपा णाम णयरी होत्था, पुण्ण भदे चेइए) धातकी षड द्वीप मे पूर्व दिग्भागवर्ती भरत क्षेत्र में चपा

' तेण कालेण तेण समएण ' इत्यादि—

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) ते काले अने ते समये (घायइ सडे दीवे, पुरत्थिमद्धे भारहेवासे चपा णाम णयरी होत्था, पुण्णभदे चेइए) धातकी षड द्वीपभा पूर्वं दिग्भागवर्ती भरतक्षेत्रभा च पा नगरी छती, तेभा पूर्णभद्र नामे उद्यान छत्तु

संगइएणं देवेण अमरकंकाणयरिं साहरिया, तएणं से कणहे
वासुदेवे पंचहि पंडवेहिं सद्धिं अप्पच्छे छहिं रहेहि अमरककं
रायहाणि दोवईए देवीए कूवं हव्वमागए, तएण तस्स कणहस्स
वासुदेवस्स पउमणाभेण रण्णा सद्धिं सगामे सगामेमाणस्स
अय संखसद्दे तव मुहवाया० इव वीइ भवद्द, तएण से कविले
वासुदेवे मुणिसुव्वयं वदइए एवं वयासी-गच्छामि णं अह
भंते । कणहे वासुदेवे उत्तमपुरिस सरिसपुरिस पासामि, तएण
मुणिसुव्वए अरहा कविले वासुदेवे एव ययामी - नो सल्ल
देवाणुप्पिया । एव भूय वाइ जण्ण अरहतो वा अरहतं पासइ
चक्खवट्ठी वा चक्खवट्ठि पासइ वलदेवा वा वलदेव पासइ वासु
देवो वा वासुदेव पासइ, तहविय ण तुम कणहस्स वासुदेवस्स
लवणसमुद्द मज्झमज्झेण वीइवयमाणस्स सेयापीयाइ धयग्गाइ
पासिहिसि, तएण से कविले वासुदेवे मुणिसुव्वय वदइ नमसइ
वंदित्ता नमंसित्ता हत्थिखध दुरूहइ दुरूहित्ता सिग्घर जेणेव वेला
उले तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता कणहस्स वासुदेवस्स लवण
समुद्द मज्झमज्झेण वीइवयमाणस्स सेयापीयाइ धयग्गाइ पासइ
पासित्ता एवं वयइ एसण मम सरिसपुरिसे उत्तमपुरिसे कणहे वासु
देवे लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीइवयइत्तिकट्टु पचजन्न सख
परामुसइ परामुसित्ता मुहवायपूरिय करेइ, तएण से कणहे
वासुदेवे कविलस्स वासुदेवस्स सखसद्द आयत्तेइ आयत्तित्ता
पचजन्न जाव पूरियं करेइ, तएण दोवि

मायारि करेइ, तएण से कविले वासुदेवे जेणेव अमरकका तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता अमरकंकं रायहाणिं संभग्गतोरणं जाव पासइ पासित्ता पउमणाभं एव वयासी—किन्न देवाणुप्पिया । एसा अमरकंका संभग्ग जाव सन्निवइया ? , तएणं से पउमणाहे कविलं वासुदेवं एव वयासी—एव खलु सामी । जंबूद्वीवाओ दीवाओ भारहाओ वासाओ इहं हव्वमागम्म कणहेणं वासुदेवेण तुब्भे परिभूए अमरकंका जाव सन्निवाडिया, तएणं से कविले वासुदेवे पउमणाहस्स अंतिए एयमट्ट सोच्चा पउमणाह एवं वयासी ह भो ! पउमणाभा ! अपत्थियपत्थिया किन्न तुम न जाणसि मम सरिसपुरिसस्स कणहस्स वासुदेवस्स विप्पियं करेमाणे ? , आसुरुत्ते जाव पउमणाहं णिव्विसय आणवेइ, पउमणाहस्स पुत्ते अमरकंका रायहाणीए महया महया रायाभिसेएण अभिसिंचइ जाव पडिगए ॥ सू० ३० ॥

टीका—‘ तेण कालेण ’ इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये धातकी-पण्डे द्वीपे पौरस्त्यार्थे भारते वर्षे चम्पा नाम नगरी आसीत् । तस्या वट्टिर्भागे पूर्णभद्र नाम चैत्यम्=उद्यानम्, आसीत् । तत्र=तस्यां खलु चम्पानगर्यां

‘ तेण कालेण तेण समएण ’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तेणं कालेण तेण समएणं) उस कालमें और उस समयमें (वायइसडे दीवे, पुरत्थिमद्धे भारहेवासे चपा णाम णयरी होत्था, पुण्ण भद्दे चेइण) धातकी पड द्वीप मे पूर्व दिग्भागवर्ती भरत क्षेत्र में चपा

‘ तेणं कालेण तेण समएण ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) ते काले अने ते समये (वायइ स डे दीवे, पुरत्थिमद्धे भारहेवासे चपा णाम णयरी होत्था, पुण्णभद्दे चेइण) धातकी पडद्वीपभा पूर्व दिग्भागवर्ती भरतक्षेत्रभा अथा नगरी इती, तेभा पृथुंलद्र नामे उद्यान इत्तु

संगइएणं देवेण अमरकंकाणयरिं साहरिया, तएणं से कण्हे
वासुदेवे पंचहि पडवेहिं सद्धिं अप्पच्छे छहिं रहेहि अमरकक
रायहाणि दोवईए देवीए कूवं हव्वमागए, तएण तस्स कण्हस्स
वासुदेवस्स पउमणाभेणं रणणा सद्धिं संगामे सगामेमाणस्स
अय सखसद्दे तव मुहवाया० इव वीइ भवद्द, तएणं से कविले
वासुदेवे मुणिसुव्वय वंदइए एवं वयासी-गच्छामि णं अहं
भते । कण्हे वासुदेवे उत्तमपुरिस सरिसपुरिस पासामि, तएण
मुणिसुव्वए अरहा कविले वासुदेवे एव वयासी - नो खलु
देवाणुप्पिया । एव भूय वाइ जण्ण अरहंतो वा अरहत पासइ
चक्खट्ठी वा चक्खट्ठि पासइ वलदेवा वा वलदेव पासइ वासु
देवो वा वासुदेव पासइ, तहविय ण तुम कण्हस्स वासुदेवस्स
लवणसमुद्द मज्झमज्झेण वीइवयमाणस्स सेयापीयाइ धयग्गाइ
पासिहिसि, तएण से कविले वासुदेवे मुणिसुव्वय वंदइ नमसइ
वदित्ता नमसित्ता हत्थिखध दुरूहइ दुरूहित्ता सिग्घर जेणेव वेला
उले तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता कण्हस्स वासुदेवस्स लवण
समुद्द मज्झमज्झेण वीइवयमाणस्स सेयापीयाइ धयग्गाइ पासइ
पासित्ता एवं वयइ एसण मम सरिसपुरिसे उत्तमपुरिसे कण्हे वासु
देवे लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीइवयइत्तिकट्टु पचजन्न सख
परामुसइ परामुसित्ता मुहवायपूरिय करेइ, तएण से कण्हे
वासुदेवे कविलस्स वासुदेवस्स सखसद्द आयन्नेइ आयन्नित्ता
पचजन्नं जाव पूरियं करेइ, तएण दोवि ५३२

समुत्पन्न ? यस्य वासुदेवस्य खलु अयं शङ्खशब्दो ममेव मुखयातपूरित -मद्वादित-
 शङ्ख-वनिरिवेत्यर्थः, 'रीय भवद्' द्वितीयो भवति । तत खलु मुनिसुव्रतोऽहं
 कपिल वासुदेवम् एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण, अवादीत्-'से' पूण इत्यादि—'से'
 नून ते तत्र हे कपिल वासुदेव ! ममान्तिके धर्म 'णिसामेमाणस्स' निशामयतः=
 शृण्वतः, शङ्खशब्दम् 'आकणित्ता' आकर्ष्य=श्रुत्या 'इमेयारुवे' अयमेतद्रूपः
 आयात्मिकः सख्यो विचारः समुदपद्यत-किमन्यो वासुदेवः समुत्पन्नः, यस्याय
 शङ्खशब्दो यावद् द्वितीयो भवति 'से' अथ नून हे कपिलवासुदेव ! अयमर्थः
 समर्थ=किं सत्य ? कपिल वासुदेवः प्राह-हता ! अत्थि इति दन्त ! हे प्रभो !
 अयमर्थः सत्योऽस्ति । मुनिसुव्रतो भगवानाह-हे कपिल वासुदेव ! नो खलु एवम्=
 ईदृश, 'भूय वा' भूत वा=अतीत वा, भवद् वा=वर्तमान वा भविष्यद् वा अना-
 गत वा कालत्रयेऽप्येव न भवतीत्यर्थः, 'जन्न' यत् खलु एकस्मिन् क्षेत्रे, एक

भवद्) उनके पास वे कपिल वासुदेव धर्मका उपदेश सुन रहे थे । सो उस
 कपिल वासुदेवने मुनि, सुव्रतप्रभुके पास धर्मका उपदेश सुनते हुए कृष्ण
 वासुदेवकी शखध्वनि सुनि । तब उस कपिल वासुदेवको इस प्रकार
 आध्यात्मिक यावत् मनोगत विचार उत्पन्न हुआ-क्या वातकीपड नामके
 द्वीपमें वर्तमान भरतक्षेत्र में कोई और दूसरा वासुदेव उत्पन्न हुआ है ?
 कि जिसके शखका यह शब्द मेरे द्वारा बजाये गये शखके शब्द जैसा
 हुआ है ? (तएण मुणि सुव्वण अरहा कविल वासुदेव एव वयासी-से पूणं
 ते कविला वासुदेवा ! मम अत्तिए धम्म णिसामेमाणस्स सखसद् आक-
 णित्ता इमेयारुवे अज्जत्थिए किं मण्णे जाव वीय भवद् से पूण कविला
 वासुदेव ! अयमद्दे समद्दे ? हता अत्थि, नो खलु कविला एय भूय वा ३ जन्नं

तेभनी पासे ते कपिल वासुदेव धर्मोपदेश सालणी रद्धा हता ते कपिल
 वासुदेवे मुनिसुव्रत प्रभुनी पासे धर्मोपदेश स लणता न् इच्छुवासुदेवना श थने।
 ध्वनि स लण्ये। त्यारे ते कपिल वासुदेवने आ नतने। आध्यात्मिक यावत्
 मनोगत स कथ्य उत्पन्न थये के शुं घातकी पड नामना द्वीपमा विद्यमान
 भरतक्षेत्रमा कोष्ठ थिने वासुदेव उत्पन्न थये छे ? केमडे तेना श थने। आ
 ध्वनि भाश वडे वगाडनामा आवेला श थना ध्वनि जेवे। न् छे

(तएण मुणि सुव्वण अरहा कविल वासुदेव एव वयासी-से पूण ते कवि
 लावासुदेवा ! मम अत्तिए धम्म णिसामेमाणस्स सखसद् आकणित्ता इमेयारुवे
 अज्जत्थिए किं मण्णे जाव वीय भवद्, से पूण कविला वासुदेवा ! अयमद्दे
 समद्दे ? हता, अत्थि, नो खलु कविला एय भूय वा ३ जन्न एगखेत्ते एगे जुगे

‘ कविले णाम’ कपिलो नाम वासुदेवो राजाऽऽसीत् ‘ महया हिमवत० ’ वण्णओ’ महाहिमवानित्यादि वर्णकः=वर्णन पूर्वोक्तम् नो यम् ।

तस्मिन् काले तस्मिन् समये मुनिमुव्रतोऽर्हत् चम्पाया नगर्या पूर्णभद्रे नास्मिन् चैत्ये समसृष्टः । तस्य ममीपे कपिलो नाम वासुदेवो धर्मं शृणोति । ततः खलु स कपिलो वासुदेवः मुनिमुव्रतस्यार्हतोऽन्तिके धर्मं शृण्वन् कृष्णस्य वासुदेवस्य शङ्खशब्दं शृणोति ततः खलु तस्य कपिलस्य वासुदेवस्य अयोगतद्वपः=वक्ष्यमाणस्वरूपः, ‘ अञ्जलित्थिए ’ आध्यात्मिकः=आत्मगतः सत्त्वो=विचारः, यावद् समुद्रपयत-किम्-अन्यो धातुकोपण्डे द्वीपे भारते र्षे द्वितीयो वासुदेव

नामकी नगरी यी) उसमें पूर्णभद्र नाम का उद्यान था। (तत्पण चपाण नयरीए कपिले नाम वासुदेवे राया होत्था, महया हिमवत वण्णओ तेण कालेण तेण समएण मुणिसुव्वए अरहा, चपाए पुण्णभदे समोसडे) उस चपानगरीमें कपिल नाम के वासुदेव राज्य करते थे। ये महा हिमवान् परंतु जैसे गुणोंसे पूर्ण थे। पहिले जैसा वर्णन राजाओंका भिन्न २ जगह क्रिया गया है वैसा ही वर्णन इसका भी जानना चाहिये। उस काल और उस समय में मुनि सुव्रत तीर्थ कर चपा नगरी में इस पूर्ण भद्र उद्यान में आये हुए थे (कविले वासुदेवे धम्म सुणेइ, तएण से कविले वासुदेवे मुणिसुव्वयस्स अरहाओ धम्म सुणेमाणे कण्हस्स वासुदेवस्स सखसह सुणेइ, तएण तस्स कविलस्स वासुदेवस्स इमेयारूवे अञ्जलित्थिए समुप्पज्जित्था-किं मण्णे, धायइसडे दीवे भारहे वासे दोच्चे वासुदेवे समुप्पण्णे ? जस्स ण अय सखसहे ममपिव मुहवायपूरिए वीय

(तत्पण चपाए नयरीए कपिले नाम वासुदेवे राया होत्था, महया हिमवत वण्णओ, तेण कालेण तेण समएण मुणिसुव्वए अरहा, चपाए पुण्णभदे समोसडे)

ते चपा नगरीमा कपिल नामे वासुदेव राज करता हुता तेओ महा हिमवान वगेरे वेवा अजवान हुता पडेदा बुदा बुदा राजओनु ने प्रभाणे वर्णन करवामा आओउ छे ते प्रभाणे आ राजनु पणु वर्णन नाणी देउ लेअओ ते कणे अने ते समये मुनिमुव्रत तीर्थ कर चपा नगरीमा ते पूर्व-लेइ उद्यानमा पधार्या हुता

(कविले वासुदेवे धम्म सुणेइ, तएण से कविले वासुदेवे मुणि सुव्वयस्स अरहाओ धम्म सुणेमाणे, कण्हस्स वासुदेवस्स सखसह सुणेइ, तए ण तस्स कविलस्स वासुदेवस्स इमेयारूवे अञ्जलित्थिए समुप्पज्जित्था-किं मण्णे धायइसडे दीवे भारहेवासे दोच्चे वासुदेवे समुप्पण्णे ? जस्स ण अय सखसहे मम पिव मुहवाय पूरिए वीय भवइ)

समुत्पन्न ? यस्य वासुदेवस्य खलु अयं शङ्खशब्दो ममेव मुखनातपूरित-मद्वादित-
 शङ्ख-अनिरिवेत्यर्थः, 'वीय भवइ' द्वितीयो भवति । तत खलु मुनिसुव्रतोऽहं
 कपिल वासुदेवम् एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण, अयादीत्- 'से पूण इत्यादि—' से '
 नून ते तव हे कपिल वासुदेव ! ममान्तिके धर्म 'णिसामेमाणस्स' निशामयतः=
 शृण्वत', शङ्खशब्दम् 'आकणित्ता' आकर्ष्य=श्रुत्या 'इमेयारुवे' अयमेतद्रूपः
 आयात्मिकः सखलो विचारः समुदपद्यत-किमन्यो वासुदेवः समुत्पन्नः, यस्याय
 शङ्खशब्दो यावद् द्वितीयो भवति 'से' अथ नून हे कपिलवासुदेव ! अयमर्थः
 समर्थ=किं सत्य ?, कपिल वासुदेवः प्राह-इता ! अत्थि इति हन्त ! हे प्रभो !
 अयमर्थः सत्योऽस्ति । मुनिसुव्रते भगवानाह-हे कपिल वासुदेव ! नो खलु एवम्=
 ईदृश, 'भूय वा' भूत वा=अतीत वा, भवद् वा=वर्तमान वा भविष्यद् वा अना-
 गत वा कालत्रयेऽप्येव न भवतीत्यर्थः, 'जन्न' यत् खलु एरुस्मिन् क्षेत्रे, एक

भवत्) उनके पास वे कपिल वासुदेव धर्मका उपदेश सुन रहे थे । सो उस
 कपिल वासुदेवने मुनिसुव्रतप्रभुके पास धर्मका उपदेश सुनते हुए कृष्ण
 वासुदेवकी शख-ध्वनि सुनि । तब उस कपिल वासुदेवको इस प्रकार
 आध्यात्मिक यावत् मनोगत विचार उत्पन्न हुआ-क्या धातकीपड नामके
 द्वीपमें वर्तमान भरतक्षेत्र में कोई और दूसरा वासुदेव उत्पन्न हुआ है ?
 कि जिसके शखका यह शब्द मेरे द्वारा बजाये गये शखके शब्द जैसा
 हुआ है ? (तएण मुणि सुव्वए अरहा कविल वासुदेव एव वयासी-से पूण
 ते कविला वासुदेवा ! मम अत्तिण धम्म णिसामेमाणस्स सखसइ आक-
 णित्ता इमेयारुवे अज्झत्थिए किं मण्णे जाव वीय भवइ से पूण कविला
 वासुदेव ! अयमट्ठे समट्ठे ? इता अत्थि, नो खलु कविला एय भूय वा ३ जन्न

तेमनी पास ते कपिल वासुदेव धर्मोपदेश सालणी रह्या इता ते कपिल
 वासुदेवे मुनिसुव्रत प्रभुनी पास धर्मोपदेश स लणता ७ कृष्णवासुदेवना श धने
 ध्वनि स लण्ये । त्तारे ते कपिल वासुदेवने आ नतने आध्यात्मिक यावत्
 मनोगत स कल्प उत्पन्न थये के शुं धातकी पड नामना द्वीपमा विद्यमान
 भरतक्षेत्रमा केअ धीजे वासुदेव उत्पन्न थये छे ? केमके तेना श धने आ
 ध्वनि मारा वडे वगाउवामा आवेला श धना ध्वनि लेवे ७ छे

(तएण मुणि सुव्वए अरहा कविल वासुदेव एव वयासी-से पूण ते कवि
 लावासुदेवा ! मम अत्तिण धम्म णिसामेमाणस्स सखसइ आकणित्ता इमेयारुवे
 अज्झत्थिए किं मण्णे जाव वीय भवइ, से पूण कविला वासुदेवा ! अयमट्ठे
 समट्ठे ? इता, अत्थि, नो खलु कविला एय भूय वा ३ जन्न एगखेत्ते एगे जुगे

स्मिन् युगे, एस्मिन् समये द्वारहन्ती वा चक्रवर्तिनी वा चलदेवी वा वासुदेवी वा 'उष्पज्जिसु' उदपत्रेताम्, 'उपज्जिति' उत्पत्रेते 'उपज्जिस्सति' उत्पत्स्येते वा, एव खलु हे वासुदेव ! जम्बूद्वीपाद् भारताद् वर्षाद् दक्षिणापुरनगरात् पाण्डो रातः 'सुण्हा' स्तुरा=पुत्रपधुः, पञ्चाना पाण्डवानां भार्या श्रीपदी देवी तत्र पद्य

एगे खेत्ते एगे जुगे एगे समए दुवे अरहता वा, चक्रवर्ती वा, चलदेवा वा, वासुदेवा वा उष्पज्जिसु, उष्पज्जिति, उष्पज्जिस्सति वा,) तत्र मुनिसुव्रत तीर्थं कर प्रभुने उन कपिल वासुदेव से इस प्रकार कहा है कपिल वासु देव ! मेरे पास धर्म को सुनते समय तुम्हें शम्भ शब्द श्रवण कर इस प्रकार का यह आध्यात्मिक सकल्प-विचार उत्पन्न हुआ है, कि क्या कोई दूसरा वासुदेव उत्पन्न हो गया है-जिसके शम्भ का उद्देश्य सुनाई दिया है। कहो कपिल वासुदेव ! यही बात है न ? तब कपिल वासुदेवने कहा-हा प्रभो ! यही बात है-ऐसा ही विचार उत्पन्न हुआ है-तत्र मुनिसुव्रत भगवान्ने कपिल वासुदेवसे कहा-हे कपिल वासुदेव ऐसी बात न भूतकाल में हुई है और न भविष्यकाल में होगी-न वर्तमान् में होती है कि जो एक ही क्षेत्रमें एक ही युगमें एक ही समय में दो अर्हंत प्रभु, दो चक्रवर्ती, दो चलदेव, दो वासुदेव, उत्पन्न हो रहे हों, उत्पन्न हुए हो और आगे उत्पन्न हो ! (एव खलु वासुदेवा ! जम्बूद्वीवा ओ भारहाओ वाम्नाओ हत्थिणाउरणयाओ, पडुस्सरण्णो सुण्हा

एगे समए दुवे अरहता वा चक्रवर्ती वा, वासुदेवा वा उष्पज्जिसु, उष्पज्जिति, उष्पज्जिस्सति वा)

त्यारे मुनिसुव्रत तीर्थं कर प्रभुणे ते कपिल वासुदेवने आ प्रभाणु कल्लु के डे कपिलवासुदेव भारी पासे धर्मने सालगता शम्भ-शम्भ सालणीने तमने आ जतने आध्यात्मिक सकल्प-विचार उत्पन्न थयो छे के, शु केडं भीजे वासुदेव उत्पन्न थयो छे-जेना शम्भो ध्वनि मने सालगार्थ रह्यो छे जालो, कपिल वासुदेवे कल्लु के डो प्रभु ! जे ज वात छे भारा मनमा जे ज जतने विचार उद्भव्यो छे त्यारे मुनिसुव्रत भगवाने कपिल वासुदेवने कल्लु के डे कपिल वासुदेव ! आवी वात भूतकालमा थर्थ नथी अने भविष्यकालमा थर्थे नहि अने वर्तमानकालमा सबवी शक्रे तेम पणु नथी के जे जेक ज क्षेत्रमा, जेक ज युगमा, जेक ज समयमा जे अर्हंत प्रभु, जे चक्रवर्ती, जे चलदेव, जे वासु देव उत्पन्न थया होय, उत्पन्न थर्थ रह्या होय अने आगए उत्पन्न थवाना होय

(एव खलु वासुदेवा ! जम्बू द्वीवाओ भारहाओ वाम्नाओ हत्थिणाउरणया राओ, पडुस्सरण्णो, सुण्हा पचण्ह पडवाण भारिया दोवई देवी तत्र

नामस्य राज्ञः पूर्वसगतिकेन देवेनामरकङ्कानगरीं ' साहरिया ' सहता=आनीता,
ततः खलु सः कृष्णो वासुदेवः पञ्चभिः पाण्डवैः सधं आत्मपष्ठः पङ्कभीरथैरमर-
कङ्का राजधानीं द्रौपद्या देव्याः ' क्व ' देशी शब्दोय प्रत्यानयनार्थकः प्रत्या-
नयनं कर्तुं ह्यव्यमागतः, ततः खलु तस्य कृष्णस्य वासुदेवस्य पद्मनाभेन राज्ञा
सार्धं ' सगाम ' संग्राम=युद्ध ' सगामेमाणस्स ' युभ्यत, अयं शङ्खशब्दस्तवमु
खवातपूरित इव द्वितीयो भवति । ततः खलु सः कपिलो वासुदेवो मुनिसुव्रत
वन्दते, नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्-गच्छामि खलु अहं हे

पचण्ह पडवाण भारिया दोवईदेवी तव पउमनाभस्स रण्णो पुव्वसगई-
ण्ण देवेण अमरकका नयरिं साहरिया, तएण से कण्हे वासुदेवे
पचहिं पडवेहिं सद्धिं अप्पउट्ठे छहिं रहेहिं अमरकक रायहाणिं दोवईए
देवीए क्व हव्वमागए, तएण तस्स कण्णस्स वासुदेवस्स पउमणाभेण
रण्णा सद्धिं सगाम, सगामेमाणस्स अयं सखसहे तव मुहवाया० इव-
धीयं भवइ) सुनो वात इम प्रकार है जवूद्रीप के भरत क्षेत्र में वर्तमान
हस्तिनापुर नगर से पांडुराजा की पुत्रवधू पाच पांडवो की पत्नी द्रौपदी
देवी को तुम्हारे पद्मनाभ राजा को पूर्व भवीय मित्र कोई देव हरण
कर अमरकका नगरी में ले आया । तत्र भरत क्षेत्र के वासुदेव कृष्ण
पाच पांडवों के साथ आत्मपष्ठ होकर छह रथों से उस अमरकका
नगरी में द्रौपदी देवी को वापिस ले जाने के लिये बहृत जल्दी आये ।
तव उन कृष्ण वासुदेव के, पद्मनाभ राजा के साथ युद्ध करते समय
शंख का यह शब्द तुम्हारे शंख के शब्द जैसा हुआ है । (तएण से
कविले वासुदेवे मुणिसुव्वय वदति, २ एव वयासी गच्छामि ण

रण्णो पुव्वसगइण्ण देवेण अमरकका नयरिं साहरिया तएण से कण्हे वासुदेवे
पचहिं पडवेहिं सद्धिं अप्पउट्ठे छहिं रहेहिं अमरकक रायहाणिं दोवईए देवीए
क्व हव्वमागए, तएण तस्स कण्णस्स वासुदेवस्स पउमणाभेण रण्णा सद्धिं सगाम,
सगामे माणस्स अयं सखसहे तव मुहवाया० इव धीयं भवइ)

स लणो, विगतं ज्येवी छे के ७ षूद्रीपना भरतक्षेत्रमा विद्यमानं हस्ति
नापुर नगरथी पांडुराजानी पुत्रवधू पाचे पांडवोनी पत्नी द्रौपदी देवीने तभारा
पद्मनाभ राजाना पूर्वभवने मित्र कोई देव हरीने अमरकका नगरीमा लई
आव्ये हतो त्यारपछी भरतक्षेत्रना वासुदेव कृष्ण पाचे पांडवोनी साथे आत्म
पष्ठ थरिने छ रथो उपर सवार थया अने सत्वरें द्रौपदी देवीने पाछा भेण
पवा भाटे त्या पडोथी गया पद्मनाभ राजानी साथे युद्ध करता कृष्णवासुदेवे
ने शंखध्वनि कथो छे ते तभारा शंखना ध्वनि जेवो छे

(तएण से कविले वासुदेवे मुणिसुव्वय वदति, २ एव वयासी, गच्छामि

સ્મિન્ યુગે, એસ્મિન્ સમયે દ્વાર્ષન્તી યા ચક્રવર્તિની યા ચલદેવી યા વાસુદેવી યા ' ઉપ્પજ્જિસુ ' ઉદપન્નેતામ્ , ' ઉપ્પજ્જિવતિ ' ઉત્પન્નેતે ' ઉપ્પજ્જિસ્સતિ ' ઉત્પસ્સ્યેતે વા, એ સ્વલુ છે વાસુદેવ ! જમ્બૂદ્વીપાદ્ મારતાદ્ સ્પાંદ્ હસ્તિનાપુરનગરાત્ પાણ્ડો રાજ્. ' સુઘ્ઠા ' સ્તુરા=પુત્રપૃઃ, પશ્ચાના પાણ્ડયાના માર્યાં દ્રૌપદી દેવી તવ પથ

એગે સ્વેત્તે એગે જુગે એગે સમણ દુવે અરહતા વા, ચક્રવટ્ટી વા, ચલદેવા વા, વાસુદેવા વા ઉપ્પજ્જિસુ, ઉપ્પજ્જિવતિ, ઉપ્પજ્જિસ્મતિ વા,) તથ મુનિસુવ્રત તીર્થ કર પ્રમુને ઉન કપિલ વાસુદેવ સે હસ પ્રકાર કલા છે કપિલ વાસુ દેવ ! મેરે પાસ ધર્મ કો સુનતે સમય તુમ્હ શાગ્ શાઢ શ્રવણ કર હસ પ્રકાર કા યદ્ આધ્યાત્મિક સકલ-વિચાર ઉત્પન્ન હુઆ છે, કિ કયા કોઈ દૂસરા વાસુદેવ ઉત્પન્ન હો ગયા છે-જિસકે શાગ્ કા ડાદ મુક્કે સુનાઈ દિયા છે . કહો કપિલ વાસુદેવ ! યહી વાત છે ન ? તથ કપિલ વાસુદેવને કહા-હા પ્રમો ! યહી વાત છે-એસા હી વિચાર ઉત્પન્ન હુઆ છે-તથ મુનિસુવ્રત મગવાન્ને કપિલ વાસુદેવસે કહા-હે કપિલ વાસુદેવ એસી વાત ન મ્હૂતકાલ મેં હુઈ છે ઓર ન મ્હવિષ્ણકાલ મેં હોગી-ન વર્ત માન્ મે હોતી છે કિ જો ંક હી ક્ષેત્રમેં એક હી યુગમેં એક હી સમય મેં દો અર્હત પ્રમુ, દો ચક્રવર્તી, દો ચલદેવ, દો વાસુદેવ, ઉત્પન્ન હો રહે હોં, ઉત્પન્ન હુએ હો ઓર આગે ઉત્પન્ન હો ! (એ સ્વલુ વાસુદેવા ! જમ્બૂદ્વીવા ઓ મારહાઓ વામાઓ હત્થિણાઠરણયરોઓ, પહુસ્મરણ્ણો સુઘ્ઠા

એગે સમણ દુવે અરહતા વા ચક્રવટ્ટી વા, વાસુદેવા વા ઉપ્પજ્જિસુ, ઉપ્પજ્જિવતિ, ઉપ્પજ્જિસ્સતિ વા)

ત્યારે મુનિસુવ્રત તીર્થ કર પ્રમુએ તે કપિલ વાસુદેવને આ પ્રમાણે કહ્યું કે હે કપિલવાસુદેવ મારી પાસે ધર્મને સાલળતા શખ-શખ્ક સાલળીને તમને આ જાતનો આધ્યાત્મિક સકલ-વિચાર ઉત્પન્ન થયો છે કે, શુ કોઈ ખીને વાસુદેવ ઉત્પન્ન થયો છે-એના શખનો ધ્વનિ મને સાલળાઈ રહ્યો છે જોલો, કપિલ વાસુદેવે કહ્યું કે હા પ્રમુ ! એ જ વાત છે મારા મનમા એ જ જાતનો વિચાર ઉદ્ભવ્યો છે ત્યારે મુનિસુવ્રત ભગવાને કપિલ વાસુદેવને કહ્યું કે હે કપિલ વાસુદેવ ! આવી વાત ભૂતકાળમા થઈ નથી અને ભવિષ્યકાળમા થશે નહિ અને વર્તમાનકાળમા સભવી શકે તેમ પણ નથી કે જે એક જ ક્ષેત્રમા, એક જ યુગમા, એક જ સમયમા જે અર્હત પ્રમુ, જે ચક્રવર્તી, જે બળદેવ, જે વાસુ દેવ ઉત્પન્ન થયા હોય, ઉત્પન્ન થઈ ગયા હોય અને આગળ ઉત્પન્ન થવાના હોય

(એ સ્વલુ વાસુદેવા ! જમ્બૂ દ્વીવાઓ મારહાઓ વામાઓ હત્થિણાઠરણયા રાઓ, પહુસ્મરણ્ણો, સુઘ્ઠા પચ્છ પહ્ઠાણ મારિયા દોવઈ દેવી તવ

नाभस्य राज्ञः पूर्वसगतिकेन देवेनामरकङ्कानगरी ' साहरिया ' सहता=आनीता,
ततः खलु सः कृष्णो वासुदेवः पञ्चभिः पाण्डवैः सः आत्मपष्ठः पद्मभीरयैरमर-
कका राजधानीं द्रौपद्या देव्याः ' ऋव ' देशी शब्दोयं प्रत्यानयनार्थकः प्रत्या-
नयनं कर्तुं ह्यवमागतः, ततः खलु तस्य कृष्णस्य वासुदेवस्य पद्मनाभेन राज्ञा
सार्धं ' सगाम ' संग्राम=युद्ध ' सगामेमाणस्स ' यु यत्, अयं शब्दशब्दस्तवमु
खवातपूरित इव द्वितीयो भवति । ततः खलु सः कपिलो वासुदेवो मुनिसुत्रत
वन्दते, नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्-गच्छामि खलु अहं हे

पचण्ह पडवाण भारिया दोवईदेवी तव पउमनाभस्स रण्णो पुव्वसगई-
एण देवेण अमरकका नयरिं साहरिया, तएण से कण्हे वासुदेवे
पचहिं पडवेहिं सद्धिं अप्पउट्ठे उहिं रहेहिं अमरकक रायहाणिं दोवईए
देवीए कूव हव्वमागए, तएण तस्स कण्णस्स वासुदेवस्स पउमणाभेण
रण्णा सद्धिं सगाम, सगामेमाणस्स अयं सखसदे तव मुहवाया० इव-
धीयं भवइ) सुनो वात इत्थं प्रकारं हे जवूद्रीप के भरत क्षेत्र में वर्तमान
हस्तिनापुर नगर से पांडुराजा की पुत्रवधू पाच पांडवो की पत्नी द्रौपदी
देवी को तुम्हारे पद्मनाभ राजा का पूर्व भवीय मित्र कोई देव हरण
कर अमरकका नगरी में ले आया । तव भरत क्षेत्र के वासुदेव कृष्ण
पाच पांडवों के साथ आत्मपष्ठ होकर छह रथों से उस अमरकका
नगरी में द्रौपदी देवी को वापिस ले जाने के लिये बहुत जल्दी आये ।
तव उन कृष्ण वासुदेव के, पद्मनाभ राजा के साथ युद्ध करते समय
शख का यह शब्द तुम्हारे शख के शब्द जैसा हुआ है । (तएण से
कविले वासुदेवे मुणिसुव्वय वदति, २ एव वयासी गच्छामि णं

रण्णो पुव्वसगइएण देवेण अमरकका नयरिं साहरिया तएण से कण्हे वासुदेवे
पचहिं पडवेहिं सद्धिं अप्पउट्ठे उहिं रहेहिं अमरकक रायहाणिं दोवईए देवीए
कूव हव्वमागए, तएण तस्स कण्णस्स वासुदेवस्स पउमणाभेण रण्णा सद्धिं सगाम,
सगामे माणस्स अयं सखसदे तव मुहवाया० इव धीयं भवइ)

स लणो, विगतं ज्येवी छे के कृष्णद्रीपना भरतक्षेत्रभा विद्यमान इस्ति
नापुर नगरथी पांडुराजनी पुत्रवधू पाच पांडवोनी पत्नी द्रौपदी देवीने तभारा
पद्मनाभ राजाना पूर्वभवने मित्र केछ देव इरीने अमरकका नगरीभा लध
आये इतो त्यारपठी भरतक्षेत्रना वासुदेव कृष्ण पाच पांडवोनी साथे आत्म
पष्ठ थरने छ रथो उपर सवार थया अने सत्वरें द्रौपदी देवीने पाछा भेण
पवा भाटे त्या पडोयी गया पद्मनाभ राजनी साथे युद्ध करता कृष्णवासुदेवे
के शपथनि कथो छे ते तभारा शपना ध्वनि जेयो छे

(तएण से कविले वासुदेवे मुणिसुव्वय वदति, २ एव वयासी, गच्छामि

સ્મિન્ યુગે, એસ્મિન્ સમયે દ્વાપરંતી યા ચક્રવર્તિની યા ચલદેવી યા વાસુદેવી યા
' ઉપ્પજ્જિસુ ' ઉદપપ્પેતામ્ , ' ઉપ્પજ્જિતિ ' ઉત્પપ્પેતે ' ઉપ્પજ્જિસ્સતિ ' ઉત્પપ્પેત્તે
વા, એ સ્વલ્લુ હે વાસુદેવ ! જમ્બૂદ્વીપાદ્ ભારતાદ્ વર્ષાદ્ હસ્તિનાપુરનગરાત્ પાણ્ડો
રાજ્ઞઃ ' સુપ્પઠ્ઠા ' સ્તુયા=પુનયધુઃ, પશ્ચાના પાણ્ડયાનાં માર્યાં દ્રૌપદી દેવી તય પથ

એગે લેત્તે એગે જુગે એગે સમણ દુવે અરહતા યા, ચક્રવર્તી વા, ચલદેવા વા,
વાસુદેવા વો ઉપ્પજ્જિસુ, ઉપ્પજ્જિતિ, ઉપ્પજ્જિસ્સતિ વા,) તય મુનિસુવત
તીર્થ કર પ્રસુને उन ऋषिल वासुदेव से इस प्रकार कहा हे ऋषिल वासु
देव ! मेरे पास धर्म को सुनते समय तुम्हें शंभु शब्द श्रवण कर इस
प्रकार का यह आध्यात्मिक सकल्प-विचार उत्पन्न हुआ है, कि क्या
कोई दूसरा वासुदेव उत्पन्न हो गया है-जिसके शंभु का शब्द मुझे
सुनाई दिया है । कहो ऋषिल वासुदेव ! यही बात है न ? तय कपिल
वासुदेवने कहा-हा प्रभो ! यही बात है-ऐसा ही विचार उत्पन्न हुआ
है-तय मुनिसुवत भगवान्ने कपिल वासुदेवसे कहा-हे कपिल वासुदेव
ऐसी बात न भूतकाल में हुई है और न भविष्यकाल में होगी-न वर्त
मान् मे होती है कि जो एक ही क्षेत्रमें एक ही युगमें एक ही समय में
दो अर्हंत प्रभु दो चक्रवर्ती, दो चलदेव, दो वासुदेव, उत्पन्न हो रहे हों,
उत्पन्न हुए हो और आगे उत्पन्न हों । (एव સ્વલ્લુ વાસુદેવા ! જમ્બૂદ્વીવા
ઓ મારહાઓ વાસાઓ હત્થિણાઝરણયરોઓ, પહુસ્સરણ્ણો સુપ્પઠ્ઠા

એગે મમણ દુવે અરહતા યા ચક્રવર્તી વા, વાસુદેવા વા ઉપ્પજ્જિસુ, ઉપ્પજ્જિતિ,
ઉપ્પજ્જિસ્સતિ વા)

ત્યારે મુનિસુવત તીર્થ કર પ્રભુએ તે કપિલ વાસુદેવને આ પ્રમાણે કહ્યું
કે હે કપિલવાસુદેવ મારી પાસે ધર્મને સાબળતા શખ-શખ્ડ સાબળીને તમને
આ જાતનો આધ્યાત્મિક સકલ્પ-વિચાર ઉત્પન્ન થયો છે કે, શુ કોઈ બીજો
વાસુદેવ ઉત્પન્ન થયો છે-જેના શખનો ધ્વનિ મને સાબળાઈ રહ્યો છે બોલો,
ઋષિલ વાસુદેવે કહ્યું કે હા, પ્રભુ ! એ જ વાત છે મારા મનમા એ જ જાતનો
વિચાર ઉદ્ભવ્યો છે ત્યારે મુનિસુવત ભગવાને કપિલ વાસુદેવને કહ્યું કે હે
કપિલ વાસુદેવ ! આવી વાત ભૂતકાળમા થઈ નથી અને ભવિષ્યકાળમા થશે
નહિ અને વર્તમાનકાળમા સાબલી શકે તેમ પણ નથી કે જે એક જ ક્ષેત્રમા,
એક જ યુગમા, એક જ સમયમા બે અર્હંત પ્રભુ, બે ચક્રવર્તી, બે બગદેવ, બે વાસુ
દેવ ઉત્પન્ન થયા હોય, ઉત્પન્ન થઈ રહ્યા હોય અને આગળ ઉત્પન્ન થવાના હોય

(એવ સ્વલ્લુ વાસુદેવા ! જમ્બૂદ્વીવાઓ મારહાઓ વાસાઓ હત્થિણાઝરણયા
રાઓ, પહુસ્સરણ્ણો, સુપ્પઠ્ઠા પચ્છ પહ્વણ મારિયા દોવેઈ દેવી તય

कृष्णस्य वासुदेवस्य लवणसमुद्रस्य मध्यमध्येन व्यतिव्रजत श्वेतपीतानि-ध्वजा-
 ग्राणि 'पासिहिसि' द्रक्ष्यसि । ततः खलु स कपिलो वासुदेवो मुनि सुप्रत वन्दते,
 नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा इस्तिस्कन्ध दूरोहति=आरोहति आरुह्य शीघ्र २
 यत्रैव 'वेलाउले' वेलाकूलं=समुद्रवेला तट वर्तते, तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य
 कृष्णस्य वासुदेवस्य लवणसमुद्रस्य मध्यमध्येन 'वीड्यमाणस्स' व्यतिव्रजत =
 गच्छत, श्वेतपीतानि ध्वजाग्राणि पश्यति, दृष्ट्वा एव वदति एसण मम सदृशपुरुषः
 उत्तमपुरुषः कृष्णो वासुदेवो लवणसमुद्रस्य मध्यमध्येन 'वीड्ययइ' व्यतिव्रजति=
 गच्छति, इति कृत्वा पाञ्चजन्यं शङ्खं परामृशति=गृह्णाति, गृहीत्वा मुख्यातपूरित
 करोति=कपिलवासुदेवः स्वशङ्खं वादयति । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः कपि

चक्रवर्ती का दूसरे और चक्रवर्ती से बलदेव का दूसरे और किसी बल-
 देव से, वासुदेव का दूसरे और वासुदेव से कभी भी मिलाप नहीं होता
 है । (तद् विद्यण तुम कणहस्स वासुदेवस्स लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण
 वीड्यमाणस्स सेया पीयाइ धयग्गाइ पासिहिसि) हा, इतना हो सकता
 हैं कि जब वे कृष्णवासुदेव लवणसमुद्रके बीचसे होकर जा रहे हों तब
 तुम उनकी श्वेत पीत ध्वजाओंके अग्र भाग को देख सकते हो । (तएण
 से कविळे वासुदेवेमुणिसुव्वय वदइ, नमसइ, वंदित्ता, नमसित्ता, हत्थि-
 खव दुरुहइ, दुरुहित्ता सिग्घ २ जेणेव वेलाउले, तेणेव उवागच्छइ, उवा
 गच्छित्ता कणहस्स वासुदेवस्स लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीड्यमाणस्स
 सेयापीयाहिं धयग्गाइ पासइ, पासित्ता एव वयइ-एसण मम सरिसपुरिसे
 उत्तमपुरिसे कण्हे वासुदेवे लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीड्ययइत्ति कट्टु

तीर्थं करणी साथे भील तीर्थं करणे । भेजाप केअं पणु स जेगेभा थतो नथी
 अेक अकवर्तीना भील अकवर्तीनी साथे, अेक णणहेवने भील णणहेवनी साथे
 तेभअ अेक वासुदेवने भील केअं पणु वासुदेवनी साथे क्हापि भेजाप थतो
 नथी (तद् विद्यण तुम कणहस्स वासुदेवस्स लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीड्य
 यमाणस्स सेयापीयाइ धयग्गाइ पासिहिसि) हा, अेभ थअं शके छे के न्यारे
 ते कृष्णवासुदेव लवणु समुद्रनी मध्ये थधने पसार थना छेथ त्यारे तमे तेभ नी
 सकेइ, पीणी ध्वजज्योना अग्रभागने जेअं शके छे । (तएण से)

कविळे वासुदेवे मुणिसुव्वय वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता हत्थिखव दुरुहइ,
 दुरुहित्ता सिग्घ २ जेणेव वेलाउले, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कणहस्स
 वासुदेवस्स लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीड्यमाणस्स सेयापीयाहिं धयग्गाइ
 पासइ, पासित्ता एव वयइ, एसण मम सरिसपुरिसे उत्तमपुरिसे कण्हे वासुदेवे

भदन्त ! कृष्ण वासुदेयमुत्तमपुरुष पश्यामि तत खलु मुनिसुव्रतोऽर्हन् कपिलं
वासुदेयम् एवमवादीत्—नो खलु हे देवानुप्रिय ! एव भूत वा, भवति वा
भविष्यति वा यत् खलु अर्हन् अर्हन्त पश्यति, चक्रवर्ती वा चक्रवर्तिन पश्यति
बलदेवो वा बलदेव पश्यति वासुदेवो वा वासुदेव पश्यति, तथा ऽपि च खलु त्व

अह भते ! कण्ह वासुदेव उत्तमपुरिस सरिसपुरिस पासामि)
इस प्रकार सुनकर उस कपिल वासुदेव ने मुनि सुव्रत प्रभु को बदना
की-नमस्कार किया बदना नमस्कार करके फिर उनसे इस प्रकार कहा
—हे भदत ! मैं जाता हूँ और उत्तम पुरुष उन कृष्णवासुदेव से कि जो
मेरे जैसे पुरुष हूँ—वासुदेव पद के धारक है—जाकर मिलता हूँ । (तपण
मुनि सुव्वए अरहा कविल वासुदेव एव वयासी) तब मुनि सुव्रत प्रभु
ने उस कपिल वासुदेव से इस प्रकार कहा—(नो खलु देवानुप्पिया !
एव भूय वा ६ जण्ण अरहतो, वा अरहंत पासइ, चक्रवट्टी वा चक्रक
वट्टि पामइ, बलदेवो वा, बलदेव पासइ, वासुदेवो वा वासुदेव पासइ)
हे देवानुप्रिय ! ऐसी बात न हुई है, वर्तमानमें न होती है और न भवि
ष्यत्काल में होनेवाली है कि जो एक तीर्थंकर दूसरे तीर्थंकर से मिलें,
एक चक्रवर्ती दूसरे चक्रवर्ती से मिले, एक बलदेव दूसरे बलदेव से मिले,
एक वासुदेव दूसरे वासुदेव से मिले । ऐसा सिद्धान्त का नियम है
कि एक तीर्थंकर का दूसरे तीर्थंकर से कभी भी मिलाप नहीं होता है ।

णं अहभते ! कण्ह वासुदेव उत्तमपुरिस सरिसपुरिस पासामि)

आ प्रभाणुे साअणीने ते कपिलवासुदेवे मुनिसुव्रत प्रभुने वदन तेभअ
नभन कर्या वदन अने नभन करीने तेभनी आमे आ प्रभाणुे विनती करता
कधु के डे लहत । हु लउ छु अने जधने मारा जेवा ते उत्तम पुरष कृष्ण
वासुदेव के जेआ वासुदेव पदने शोभावे छे—तेभने भणु छु (तपण मुनि
सुव्वए अरहा कविल वासुदेव एव वयासी) त्यारे मुनिसुव्रत प्रभुअे ते कपिल
वासुदेवने आ प्रभाणुे कधु के—

(नो खलु देवानुप्पिया ! एव भूय वा ३ जण्ण अरहतो वा अरहत पासइ,
चक्रवट्टी वा चक्रवट्टि पासइ, बलदेवो वा, बलदेव पासइ, वासुदेवो वा
वासुदेव पासइ)

हे देवानुप्रिय ! जेवी बात डोर्ध पणु दिवसे सलवी नथी, वर्तमानमा
पणु सलवी शके तेभ नथी अने भविष्यकाणमा पणु सलवी शकेशे नडि के
अेक तीर्थंकर णीअ तीर्थंकरने भजे, अेक चक्रवर्ती णीअ चक्रवर्तीने भजे,
अेक अणदेव णीअ अणदेवने भजे आ अतने सिद्धान्तने छे के अेक

कृष्णस्य वासुदेवस्य लवणसमुद्रस्य मध्यमध्येन व्यतिव्रजत श्वेतपीतानि-ध्वजा-
ग्राणि ' पासिहिसि ' द्रक्ष्यसि । ततः खलु स कपिलो वासुदेवो मुनि सुप्रत वन्दते,
नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा हस्तिस्कन्ध दूरोहति=आरोहति आरह्य शीघ्र २
यत्रैव ' वेलाउले ' वेलाकूलं=समुद्रवेला तट वर्तते, तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य
कृष्णस्य वासुदेवस्य लवणसमुद्रस्य मध्यमध्येन ' वीडवयमाणस्स ' व्यतिव्रजत =
गच्छत, श्वेतपीतानि ध्वजाग्राणि पश्यति, दृष्ट्वा एव वदति एसण मम सदृशपुरुषः
उत्तमपुरुषः कृष्णो वासुदेवो लवणसमुद्रस्य मध्यमध्येन ' वीडवयइ ' व्यतिव्रजति=
गच्छति, इति कृत्वा पाञ्चजन्य शङ्ख परामृशति=गृह्णाति, गृहीत्या मुग्धयातपूरित
करोति=कपिलनासुदेवः स्वशङ्ख वादयति । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः कपि

चक्रवर्ती का दूसरे और चक्रवर्ती से बलदेव का दूसरे और किसी बल-
देव से, वासुदेव का दूसरे और वासुदेव से कभी भी मिलाप नहीं होता
है। (तह वि य ण तुमं कणहस्स वासुदेवस्स लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण
वीडवयमाणस्स सेया पीयाइ धयग्गाइ पासिहिसि) हा, इतना हो सकता
हैं कि जन वे कृष्णवासुदेव लवणसमुद्रके बीचसे होकर जा रहे हों तब
तु मउनकी श्वेत पीत ध्वजाओके अग्र भाग को देख सकते हा। (तएण
से कविळे वासुदेवेमुणिसुव्वय वदइ, नमसइ, वदित्ता, नमसित्ता, हत्थि-
खध दुरूहइ, दुरुहित्ता सिग्घ २ जेणेव वेलाउले, तेणेव उवागच्छइ, उवा
गच्छित्ता कणहस्स वासुदेवस्स लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीडवयमाणस्स
सेयापीयाहिं धयग्गाइ पासइ, पासित्ता एव वयइ-एसण मम सरिसपुरिसे
उत्तमपुरिसे कण्हे वासुदेवे लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीडवयइत्ति कट्टु

तीर्थ करने साथे भील तीर्थ करने मेलाप कोष पणु सल्लोभा यतो नथी
अेक अकवर्तीना भील अकवर्तीनी साथे, अेक णणदेवने भील णणदेवनी साथे
तेमअ अेक वासुदेवने भील कोष पणु वासुदेवनी साथे कदापि मेलाप यतो
नथी (तह वि य ण तुम कणहस्स वासुदेवस्स लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीड
वयमाणस्स सेयापीयाइ धयग्गाइ पासिहिसि) हा, अेम थं यके छे के न्यारे
ते कृष्णवासुदेव लवण समुद्रनी वच्चे थंने पसार थना डोय त्यारे तमे तेम नी
सइइ, पीगी ध्वजज्जोना अग्रभागने लोथ शके छे (तएण से)

कविले वासुदेवे मुणिसुव्वय वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता हत्थिखध दुरूहइ,
दुरुहित्ता सिग्घ २ जेणेव वेलाउले, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कणहस्स
वासुदेवस्स लवणसमुद्द मज्झ मज्झेण वीडवयमाणस्स सेयापीयाहिं धयग्गाइ
पासइ, पासित्ता एव वयइ, एसण मम सरिसपुरिसे उत्तमपुरिसे कण्हे वासुदेवे

भदन्त ! कृष्ण वासुदेवमुत्तमपुरुष पश्यामि तत खलु मुनिमुव्रतोऽर्हन् कपिलं
वासुदेवम् एवमादीत्—नो खलु हे देवानुप्रिय ! एव भूत वा, भवति वा
भविष्यति वा यत् खलु अर्हन् अर्हन्त पश्यति, चक्रवर्ती वा चक्रवर्तिन पश्यति
बलदेवो वा बलदेव पश्यति वासुदेवो वा वासुदेव पश्यति, तथा ऽपि च खलु त्व

अह भते ! कण्ठं वासुदेव उत्तमपुरिसं सरिसपुरिस पासामि)
इस प्रकार सुनकर उस कपिल वासुदेव ने मुनि सुव्रत प्रभु को बदना
की-नमस्कार किया बदना नमस्कार करके फिर उनसे इस प्रकार कहा
—हे भदत ! मैं जाता हूँ और उत्तम पुरुष उन कृष्णवासुदेव से कि जो
मेरे जैसे पुरुष हैं—वासुदेव पद के धारक हैं—जाकर मिलता हूँ । (तण्ण
मुणि सुव्वए अरहा कविल वासुदेव एव वयासी) तब मुनि सुव्रत प्रभु
ने उस कपिल वासुदेव से इस प्रकार कहा—(नो खलु देवाणुप्पिया !
एव भूय वा ६ जण्ण अरहतो, वा अरहत पासइ, चक्कवट्ठी वा चक्क
वट्ठि पामइ, बलदेवो वा, बलदेव पासइ, वासुदेवो वा वासुदेव पासइ)
हे देवानुप्रिय ! ऐसी बात न हुई है, वर्तमानमें न होती है और न भवि
ष्यत्काल में होनेवाली है कि जो एक तीर्थंकर दूसरे तीर्थंकर से मिलें,
एक चक्रवर्ती दूसरे चक्रवर्ती से मिले, एक बलदेव दूसरे बलदेव से मिलें,
एक वासुदेव दूसरे वासुदेव से मिलें । ऐसा सिद्धान्त का नियम है
कि एक तीर्थंकर का दूसरे तीर्थंकर से कभी भी मिलाप नहीं होता है ।

ण अहभते ! कण्ठं वासुदेव उत्तमपुरिस सरिसपुरिस पासामि)

आ प्रभाणु सालणीने ते कपिलवासुदेवे मुनिसुव्रत प्रभुने वदन तेमण
नमन कर्या वदन अने नमन करीने तेमनी आमे आ प्रभाणु विनती करता
कण्ठु के हे भदत ! हु णउ छु अने ण्ठने भारा जेवा ते उत्तम पुरुष कृष्ण
वासुदेव के जेआ वासुदेव पदने शोभावे छे—तेमने भणु छु (तण्ण मुणि
सुव्वए अरहा कविल वासुदेव एव वयासी) त्पारे मुनिसुव्रत प्रभुजे ते कपिल
वासुदेवने आ प्रभाणु कण्ठु के—

(नो खलु देवाणुप्पिया ! एव भूय वा ३ जण्ण अरहतो वा अरहत पासइ,
चक्कवट्ठी वा चक्कवट्ठि पासइ, बलदेवो वा, बलदेव पासइ, वासुदेवो वा
वासुदेव पासइ)

हे देवानुप्रिय ! जेवी बात कौई पणु दिवसे स भवी नहीं, वर्तमानमा
पणु स भवी शके तेम नहीं अने भविष्यत्कालमा पणु स भवी शकेशे नहि के
जेक तीर्थंकर भीज तीर्थंकरने भजे, जेक चक्रवर्ती भीज चक्रवर्तीने भजे,
जेक बलदेव भीज बलदेवने भजे आ जतने सिद्धान्तने नियम छे के जेक

ततस्तदनन्तर स कपिलो वासुदेवो यत्रैग्रामरकङ्काराजधानी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्यामरकङ्कां राजधानी सभग्नतोरणां यावत् पश्यति, दृष्ट्वा पद्मनाभमेवमवा दीत्-किं-कस्मात् खलु हे देवानुप्रिय ! एषा अमरकका सभग्नतोरणा यावत्-सन्निपतिता ? ततः खलु स पद्मनाभः कपिल वासुदेवमेवमवादीत्-एव खलु हे स्वामिन् ! जम्बूद्वीपाद् द्वीपाद् भारताद् उपाद् इह हव्यमागत्य कृष्णेन वासुदेवेन 'तुम्हे परिभूए' युष्मान् परिभूय=जनादृत्य कपिलवासुदेवेन मम काऽपि हानिर्न शक्यते ऋतुमिति मनमि निधायेत्यर्थः, अमरकका यावत् सन्निपतिता ।

से कविले वासुदेवे जेणेव अमरकका तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अमरककं रायहाणि सभग्नतोरण जाव पामइ, पासित्ता पउमणाभ एव वयासी) तत्र कृष्ण वासुदेव ने कपिल वासुदेव के शख शब्द को सुना सुनकर उन्हो ने भी पांचजन्य शख को अपने मुख की वायु से पूरित किया-यजाया-इस तरह वे दोनों वासुदेव साक्षात् रूप में न मिलकर शख के शब्द से परस्पर में मिले । अब वे कपिल वासुदेव जहा वह अमरकका नगरी थी वहां आये । वहां आकर उन्होंने अमरकका राजधानी को सभग्न तोरण आदि वाला देखा । देखकर तत्र पद्मनाभ राजा से इस प्रकार कहा-(कृष्ण देवानुप्रिया ! एषा अमरकका सभग्न जाव सन्निवहया ? तएण से पउमणाहे कविलं वासुदेव एव वयासी-एव खलु सामी ? जंबूद्वीवाओ दीवाओ भारहाओ वासाओ इह हव्यमागम्म कण्हेण वासुदेवेण तुम्हे परिभूए अमरकका जाव सन्निवाडिया) हे देवानुप्रिय ! यह अमरकका नगरी क्या कारण है-जो

अमरककारायहाणि सभग्नतोरण जाव पासइ, पासित्ता पउमणाभ एव वयासी)

न्यारे कृष्णवासुदेवे कपिल वासुदेवना शयने ध्वनि सालये। त्यारे तेमछे पछे पोताना पाचजन्य शयने सुभना पवनथी पूरित कर्यो अने पगाडये आ रीते तेओ अने वासुदेव प्रत्यक्ष रीते नडि पछे शयना ध्वनिथी परस्पर मळ्या तयारपछी ते कपिल वासुदेव न्या ते अमरकका नगरी डती त्या आव्या त्या आवीने तेमछे अमरकका राजधानीने धनयो वगे रेथी नष्ट थयेली जेथ, जेथने तेमछे पद्मनाभ राजने आ प्रभाछे कछु के-

(कृष्ण देवानुप्रिया एषा अमरकका सभग्न जाव सन्निवहया ? तएण से पउमणाहे कपिल वासुदेव एव वयासी-एव खलु सामी ! जंबूद्वीवाओ दीवाओ भारहाओ वासाओ इह हव्यमागम्म कण्हेण वासुदेवेण तुम्हे परिभूए अमरकका जाव सन्निवाडिया)

लस्य वासुदेवस्य शङ्खशब्दम् ' आयन्नेइ ' आशर्णपति=शृणोति, आशर्ण्य पाञ्च
जन्य यावत् मुखयातपूरित करोति=कृष्णो वासुदेव स्वकीय शङ्ख वादयति, तत'
खलु द्वात्रिंशत् वासुदेवौ ' संखसहसामायारि ' शङ्खशब्दमामाचारि=शङ्खशब्देन
परस्परामिलन कुरुतः ।

पचयन्न सख परामुसह, परामुसित्ता मुहवायपूरिय करेइ) इस प्रकार
प्रभु का आदेश सुनकर उन कपिलवासुदेव ने उन प्रभु मुनिसुव्रत
भगवत को वदना की, नमस्कार किया । वदना नमस्कार करके फिर वे
अपने प्रधान हस्ती पर आरूढ हुए । और आरूढ होकर शीघ्र जहाँ
लवणसमुद्र का वेलातट था -वहाँ पहुँचे । वहाँ पहुँचकर उन्होंने लवण
समुद्र के बीच से होकर जाते हुए कृष्णवासुदेव की श्वेत पीत ध्वजाओं
के अग्रभाग को देखा देखकर तब मनमें विचार-क्रिया ये ही मेरे जैसे
उत्तम पुरुष कृष्णवासुदेव लवणसमुद्र के बीच से होकर जा रहे हैं-
ऐसा विचार कर उन्होंने अपने पाचज व शख को उठाया और उठा
कर उसे अपने मुख की वायु से पूरित किया (तएण से कण्हे वासुदेवे
कविलस्स वासुदेवस्स सखसह आयन्नेइ, आयन्नित्ता, पचजन्ने, जाव
पूरिय करेइ, तएण दो वि वासुदेवा सखसहसामायारिं करेइ, तएण

लवणसमुद्र मज्झ मज्झेण वीइवयइत्ति ऋडु पचजन्न सख परामुसइ परामुसित्ता
मुहवायपूरिय करेइ)

आ रीते प्रभुनी आज्ञा साधनीने ते कपिल वासुदेवे ते प्रभु मुनिसुव्रत
भगवतने वदन् अने नमस्कार कर्था वदन् अने नमस्कार करीने तेओ पोताना
प्रधान हाथी उपर सवार थया अने सवार थधने ऋद्धी न्या लवण समु
द्रने किनारे हतो त्या पडोअ्या त्या पडोअीने तेभणे 'लवणसमुद्रनी वच्चे
थधने पसार थता कृष्णवासुदेवनी संश्ले-पीणी ध्वजयोना अग्रलागने जेयो
अने जेधने मनमा विचार कथे के मारा जेवा उत्तम पुरुष कृष्णवासुदेव
ये ऋ छे के जेओ लवण-समुद्रनी वच्चे थधने पसार थर् रद्धा छे आभ
विचार करीने तेभणे पाथ अन्य श अने उठाओये अने उठावीने पोताना मुपना
पवनथी तेने पूरित कर्था

(तएण से कण्हे वासुदेवे कविलस्स वासुदेवस्स सखसह आयन्नेइ, आय
न्नित्ता, पचजन्ने जाव पूरिय करेइ तएण दो वि वासुदेवा सखसह सामायारिं
करेइ, तएण से कविले वासुदेवे जेणेअ अमरकका तेणेव

ततस्तदनन्तर स कपिलो वासुदेवो यत्रैवामरकङ्काराजधानी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्यामरकङ्कां राजधानी सभग्नतोरणां यावत् पश्यति, दृष्ट्वा पद्मनाभमेवमवादीत्-किं-कस्मात् खलु हे देवानुप्रिय ! एषा अमरकका सभग्नतोरणा यावत्-सन्निपतिता ? ततः खलु स पद्मनाभः कपिल वासुदेवमेवमवादीत्-एव खलु हे स्वामिन् ! जम्बूद्वीपाद् द्वीपाद् भारताद् उर्पाद् इह हव्यमागत्य कृष्णेन वासुदेवेन 'तुम्हे परिभूए' युग्मान् परिभूय=अनादृत्य कपिलवासुदेवेन मम काऽपि हानिर्न शक्यते कर्तुमिति मनसि निधायेत्यर्थः, अमरकङ्का यावत् सनिपतिता ।

से कविले वासुदेवे जेणेव अमरकका तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता अमरककं रायहाणि सभग्नतोरण जाव पामह, पासित्ता पउमणाभ एव वयासी) तत्र कृष्ण वासुदेव ने कपिल वासुदेव के शख शब्द को सुना सुनकर उन्होंने ने भी पांचजन्य शख को अपने मुख की वायु से पूरित किया-यजाया-इस तरह वे दोनों वासुदेव साक्षात् रूप में न मिलकर शख के शब्द से परस्पर में मिले । अत्र वे कपिल वासुदेव जहा वह अमरकका नगरी थी वहाँ आये । वहा आकर उन्होंने अमरकका राजधानी को सभग्न तोरण आदि वाला देखा । देखकर तब पद्मनाभ राजा से इस प्रकार कहा-(कृष्ण देवाणुप्पिया ! एसा अमरकका सभग्न जाव सन्निवडया ? तएण से पउमणाहे कविल वासुदेव एव वयासी-एव खलु सामी ? जम्बूद्वीवाओ दीवाओ भारहाओ वासाओ इह हव्यमागम्म कण्हेण वासुदेवेण तुम्हे परिभूए अमरकका जाव सन्निवाडिया) हे देवानुप्रिय ! यह अमरकका नगरी क्या कारण है-जो

अमरककारायहाणि सभग्नतोरण जाव पासइ, पासित्ता पउमणाभ एव वयासी)

न्यारे कृष्णवासुदेवे कपिल वासुदेवना शब्दने ध्वनि साधयेत्त्यारे तेमहे पण्ये चोताना पाचजन्य शब्दने सुभना पवनथी पूरित करीं अने वगाउथे आ रीते तेओ अने वासुदेव प्रत्यक्ष रीते नडि पण्ये शब्दना ध्वनिथी परस्पर भल्या त्पारपछी ते कपिल वासुदेव न्या ते अमरकका नगरी छती त्या आन्या त्या आवीने तेमहे अमरकका राजधानीने धनयो वगे रेथी नष्ट थयेली न्नेध, न्नेधने तेमहे पद्मनाभ राजने आ प्रभावे कहु के-

(कृष्ण देवाणुप्पिया ऐसा अमरकका सभग्न जाव सन्निवडया ? तएण से पउमणाहे कविल वासुदेव एव वयासी-एव खलु सामी ! जम्बूद्वीवाओ दीवाओ भारहाओ वासाओ इह हव्यमागम्म कण्हेण वासुदेवेण तुम्हे परिभूए अमरकका जाव सन्निवडिया)

તતઃ खलु स कपिलो वासुदेवः पद्मनाभस्यान्तिके एतमयं श्रुत्वा पद्मनाभम् एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण, अयादीत्-ह भो ! पद्मनाभ । अप्रार्थितं प्रार्थित ! =मरण वाञ्छक !, किं खलु ख न जानासि मम सदशपुरुषस्य वासुदेवस्य विप्रिय=विरुद्धं कुर्वत् , इत्युक्त्वा आशुक्लः=शीघ्र क्रोधाऽऽक्रान्त , यावत् पद्मनाभं ' णिव्विसयं ' निर्विषय=विषयात् स्वराज्याद् निर्गत-निष्कामित कर्तुम् ' आणवेइ ' आज्ञापयति पद्मनाभस्य पुत्रममरकङ्काराजधान्या महता महता राज्याभिषेकेण अभिषिञ्चति,

સમગ્ર તોરણ આદિ વાલી હોકર ભૂમિસાત્ હો ગઈ છે । તથ પદ્મનાભ રાજા ને उस कपिल वासुदेव से इस प्रकार कहा-हे स्वामिन् ! इसका कारण इस प्रकार है-जबूद्रीप नाम के प्रथम द्वीप से भरतक्षेत्र में यहाँ घट्ट ही शीघ्र आकर कृष्ण वासुदेव ने आपकी कुछ भी परवाह न करके-कपिल वासुदेव हमारी कुछ भी हानि नहीं कर सकते हैं-ऐसा अपने मन में समझ करके-अमरकका में आकर-उसे पहिले सभग्न तोरण वाली किया-और बाद में विध्वस्तकर दिया । (तएण से कविले वासुदेवे पउमणाहस्स अतिए एयमट्ट सोच्चा पउमणाह एव वयासी) तथ पद्मनाभ राजा के मुख से इस समाचार को सुनकर के उस कपिल वासुदेव ने उस पद्मनाभ राजा से इस प्रकार कहा-(हे भो ! पउमणाभा ! अपत्थियपत्थिया ! किन्न तुम न जाणासि मम सरिसपुरिसस्स कणहस्स वासुदेवस्स विप्पिय करेमाणे ? असुरुत्ते जाव पउमणाह णिव्विसय आणवेइ, पउमणाहस्स पुत्त अमरकका रायहाणीए महया

હે દેવાનુપ્રિય ! શા કારણથી આ અમરકકા નગરીની ધન્યતા વગેરે પણ તૂટી ગઈ છે અને સ પૂર્ણ નગરી વિનષ્ટ થઈ ગઈ છે ! ત્યારે પદ્મનાભ રાજાએ તે કપિલ વાસુદેવને આ પ્રમાણે કહ્યું કે હે સ્વામી ! વાત એવી છે કે જ બૂદ્રીપ નામના પ્રથમ દ્વીપના ભરતક્ષેત્રથી અહીં બહુ જ જલ્દી આવીને કૃષ્ણવાસુદેવે તમારી જરાએ ઠરકાર કર્યા વગર “ કપિલ વાસુદેવ અમારૂં કંઈજ કરી શકશે નહિ ” આ જાતનો પોતાના મનમાં વિચાર કરીને પહેલા તે અમરકકાના તોરણો નષ્ટ કર્યા અને ત્યારપછી આ નગરીને પણ જમીનહોસ્ત કરી નાખી છે (તएण से कविले वासुदेवे पउमणाहस्स अतिए एयमट्ट सोच्चा पउमणाह एव वयासी) ત્યારે પદ્મનાભ રાજાના મુખથી આ બધી વિગત સાબળીને તે કપિલવાસુદેવે તે પદ્મનાભ રાજાને આ પ્રમાણે કહ્યું કે—

(हे भो ! पउमणाभा ! अपत्थियपत्थिया ! किन्न तुम नजाणासि मम सरिसपुरिसस्स कणहस्स वासुदेवस्स विप्पिय करेमाणे ? असुरुत्ते जाव

यावत् प्रतिगत = पद्मनाभस्य पुत्र राज्येऽभिषिच्य कपिलवासुदेवो यस्यादिशः
मादुर्भूतस्ता दिश प्रतिगत इति भाव ॥ सू० ३० ॥

मूलम्—तए णं से कण्हे वासुदेवे लवणसमुद्द मज्झं मज्झेणं
वीइवयइ, त पच पडवे एवं वयासी-गच्छह ण तुब्भे देवानु-
प्पिया । गंगामहानइं उत्तरह जाव ताव अह सुट्ठियं लवणा-
हिवइं पासामि, तए णं त पंच पंडवा कण्हेणं वासुदेवेणं एवं
वुत्ता समाणा जेणेव गंगामहानइं तेणेव उवागच्छति उवाग-
च्छित्ता एगट्ठियाए णावाए मग्गणगवेसणं करोति करित्ता एग-
ट्ठियाए नावाए गंगामहानइ उत्तरति उत्तरित्ता अण्णमण्णं एवं
वयंति—पहू णं देवाणुप्पिया । कण्हे वासुदेवे गंगामहाणइं वाहाहि
उत्तरित्ते उदाहु णो पभू उत्तरित्तेत्ति कट्ठु एगट्ठियाओ नावाओ

महया रायाभिसेएण अभिसिंचइ जाव पडिगए) अरेओ मरणवाञ्छक
पद्मनाभ ! मेरे जैसे पुरुष कृष्ण वासुदेव का विप्रिय-अनिष्ट-करते हुए
तुमने मेरा कुछभी ख्याल नहीं किया ? इस प्रकार कह कर वे उस पर
बहुत अधिक कुपित हो गये । यावत् उस पद्मनाभ राजा को उन्हीं ने
अपने देश से बाहिर भी निकाल दिया । तथा-उसका जो पुत्र सुनाभ
था । उस को बड़े भारी उत्सवके साथ राज्य में अभिषिक्त किया । इस
प्रकार पद्मनाभ के पुत्र को राज्य में अभिषिक्त करके वे कपिल वासु-
देव जिस दिशासे आये थे उस दिशाकी ओर वापिस चले गये ॥ सू० ३० ॥

सय आणवेइ, पउमणाहस्स पुत्त अमरकका रायहाणीए महया महया रायाभिसे-
एण अभिसिंचइ, जाव पडिगए)

अरे, ओ मृत्युने धञ्छनार पद्मनाभ ! मारा जेवा पुरुष कृष्णवासुदेव
पुत्र करता ते भारी पणु दरकार करी नहि ? आ प्रभावे कहीने तेओ भूण
क्षोधित थछ गया यावत् ते पद्मनाभ राजने पोताना देशथी अहार पणु नसाडी
भूकथे । त्थारपछी तेना पुत्र सुनाभने लारे उत्सवनी साथे राज्याभिषेक करी
आ रीते पद्मनाभना पुत्रने राज्यासने अभिषिक्त करीने कपिल वासुदेव जे
दिशा तरइथी आव्या हुता ते दिशा तरइ पाछा जाता रहा ॥ सूत्र ३० ॥

णूर्मेति णूमित्ता कण्हं वासुदेवं पडिवालेमाणार चिट्टंति, तएणं
 से कणहे वासुदेवे सुट्टियं लवणाहिवइं पासइ पासित्ता जेणेव
 गंगामहाणई तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता एगट्टियाए सव्वओ
 समता मग्गणगवेसणं करेइ करित्ता एगट्टियं अपासमाणे एगाए
 वाहाए रहं सत्तुरगं ससारहिं गेणहइ एगाए वाहाए गंगं महाणइं
 वासट्ठिं जोयणाइ अद्धजोयणं च विच्छिन्न उत्तरिउ पयत्ते यावि
 होत्था, तएण से कणहे वासुदेवे गंगामहाणईए वहुमज्झदेस-
 भागं सपत्ते समाणे सते तते परितते वद्धसेए जाए यावि होत्था
 तएण कणहस्स वासुदेवस्स इमे एयारूवे अज्झत्थिए जाव
 समुप्पज्जित्था अहो ण पंच पंडवा महाबलवगा जेहि गंगा-
 महाणई वासट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च विच्छिण्णा वाहाहिं
 उत्तिण्णा, इत्थ भूएहि णं पचहि पंडवेहि पउमणाभे राया जाव
 णो पडिसेहिए, तएण गगादेवी कणहस्स वासुदेवस्स इम एया-
 रूव अज्झत्थिय जाव जाणित्ता थाह वितरइ, तएण से कणहे
 वासुदेवे मुहुत्ततर समासासइ समासासित्ता गंगामहाणइं वावट्ठिं
 जाव उत्तरइ उत्तरित्ता जेणेव पच पडवा तेणेव उवागच्छइ उवा-
 गच्छित्ता पच पडवे एव वयासी—अहो णं तुब्भे देवाणुप्पिया ।
 महाबलवगा जेण तुब्भेहिं गंगामहाणई वासट्ठिं जाव उत्तिण्णा,
 इत्थ भूएहि तुब्भेहि पउम जाव णो पडिसेहिए, तएण ते पच
 पडवा कणहेण वासुदेवेणं एव वुत्ता समाणा कण्हं वासुदेव एव
 वयासी—एव खल्ल देवाणुप्पिया । अम्हे तुब्भेहि विसजिया समाणा

जेणेव महाणई तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता एगट्टियाए
 मग्गणगवेसण त चेव जाव णूमेमोलुब्भे पडिवालेमाणा चिट्ठामो
 तएण से कण्हे वासुदेवे तेसि पंचण्हं पांडवाणं एयमट्टु सोच्चा
 णिसम्म आसुरुत्ते जाव तिवालियं एव वयासी—अहो णं जया
 मए लवणसमुद्धं दुवे जोयणसयसहस्ता विच्छिण्ण वीइवइत्ता
 पउमणाभ हयमहिय जाव पडिसेहित्ता अमरकका संभग्गं दोवई
 साहत्थिं उवणीया तथा ण तुब्भेहि मम महप्पं ण विण्णायं
 इयाणि जाणिस्सहत्तिकट्टु लोहदंडं परामुसइ, पंचण्हं पंडवाणं
 रहे चूरेइ चूरित्ता णिव्विसए आणवेइ आणवित्ता तत्थ ण रह
 मइणे णाम कोड्ढे णिव्विट्ठे, तएण से कण्हे वासुदेवे जेणेव सए
 खधावारे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता सएणं खधावारेणं सद्धिं
 अभिसमन्नागए यावि होत्था, तएण से कण्हे वासुदेवे जेणेव चार-
 वई णयरी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता अणुपविसइ ॥सू०३१॥

टीका—‘ तएण से इत्यादि । ततस्तदनन्तर खलु स कृष्णो वासुदेवो लवण
 समुद्रस्य मध्यमध्येन व्यतिप्रजति=गच्छति व्यतिप्रज्य तान् पञ्च पाण्डवान् एव
 मवादीत्—गच्छत खलु यूय हे देवानुप्पिया ! गङ्गामहानदीमुत्तरत्त=उतीर्णा भवत,

तएण से कण्हे वासुदेवे इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से कण्हे वासुदेवे) उन कृष्णवासुदेवने
 (लवणसमुद्ध) जब लवण समुद्र में (मज्झ मज्जेण वीइवयइ) बीच से
 होकर वे चले जा रहे थे । (ते पच पडवे एव वयासी) तब पाच पांडवों
 से ऐसा कहा—(गच्छहण तुब्भे देवाणुप्पिया ! गंगामहानइ उत्तरह जाव

तएण से कण्हे वासुदेवे इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारपणी (से कण्हे वासुदेवे) ते कृष्णवासुदेवे (लवणसमुद्र)
 के म्यारे तेओ लवण समुद्रनी (मज्झ मज्जेण वीइवयइ) मध्ये थधने पसार
 थता उता त्यारे (ते पच पडवे एव वयासी) पाये पाउवाने आ प्रभाणे
 थधु (गच्छहण तुब्भे देवाणुप्पिया ! गंगा महानदि उत्तरह जाव ताव अह सुट्टिय

यावत् तावद्दह सुस्थित देव लवणाधिपतिं पश्यामि, सुस्थितेन देवेन सह मिलित्वा तमापृच्छ्यागच्छामि, ततः खलु ते पञ्चपाण्डवा रूपेण वासुदेवेन एवमुक्ताः सन्तो यत्रैव गङ्गामहानदी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य ' एगट्टियाए ' एकार्थि कायाः=महानौकासमानकार्यकारिण्या ' नावाए ' नावः=नौकाया मार्गणगवेषण कुर्वन्ति । कृत्वा=मार्गणगवेषण कृत्वा नौकायामारुह्य ते पञ्च पाण्डवा एकार्थि-कया नावा गङ्गामहानदी मुत्तरन्ति, उत्तीर्य अन्वोन्यम्=परस्परमेव वदन्ति—' पहु ' प्रभु.=समर्थ , खलु हे देवानुप्रियाः ! कृष्णो वासुदेवो गङ्गामहानदी ' बाहार्हि ' बाहुभ्याः=भुजाभ्याम् ' उत्तरित्तेए ' उत्तरीतुम् ' उदाहु ' उताहो-अथवा नो

ताव अह सुष्टिय लवणाहिवड पासामि) हे देवानुप्रिया ! तुमलोग जाओ-और गगानदी को पार करो तयतक मैं लवणसमुद्राधिपति सुस्थित देव से मिलकर और उनकी आज्ञा लेकर आता हूँ । (तएण ते पच पडवा कण्हेण वासुदेवेण एव वुत्ता समाणा जेणेव गगा महानई तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता एगट्टियाए नावाए मग्गणगवेषण करेत्ति, करित्ता एगट्टियाए गगामहानइ उत्तरति) इस तरह कृष्ण वासु देव द्वारा कहे गये वे पाचों पाण्डव जहाँ गगा महानदी थी-वहा आये । वहा आकर के उन्होंने एकार्थिक-महानौकासे जैसी कार्य साधक-नौका मार्गणा एव गवेषणा की, मार्गणा गवेषणा कर के वे पाचो पाण्डव नौका पर चढ गगा महानदीसे पार हो गये । (उत्तरित्ता अण्णमण्ण एव वयति पहुण देवाणुप्पिया ! कण्हे वासुदेवे गगा महानई बाहार्हि उत्तरि-

लवणाहिवड पासामि) हे देवानुप्रियो ! तमे लोक्रे हवे नन्था अने गगा नदीने आणगे त्यासुधी हु लवण समुद्रना अधिपति सुस्थित देवने मणीने अने तेमनी आज्ञा प्राप्त करीने आवुं हु

(तएण ते पच पडवा कण्हेण वासुदेवेण एव वुत्ता समाणा, जेणेव गगा महानई तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता एगट्टियाए नावाए मग्गणगवेषण करेत्ति, करित्ता एगट्टियाए नावाए गगा महानइ उत्तरति)

आ रीते कृष्णवासुदेव वडे आज्ञापित थयेला ते पाचे पाडवो न्या गगा मडा नदी छती त्या आल्या त्या आवीने तेमणे आकारिक मडानौका नेवी काममा आवी शके तेवी नौकानी मार्गणा तेमणे गवेषणा करी मार्गणा तेमणे गवेषणा करीने ते पाचे पाडवो नौका उपर सवार थयने गगा मडा नदीने पार छतरी गया

(उत्तरित्ता अण्णमण्ण एव वयति पहुण देवाणुप्पिया ! कण्हे वासुदेवे गगा-

प्रभुः=समर्थ उत्तरीतुम्, इति कृत्वा गङ्गामहानया वाहुभ्यामुत्तरणे कृष्णवासु-
वदेस्य सामर्थ्यमस्ति, नास्ति वा तद् विजानामीति विचार्य एकार्थिका नाव=
नौका 'णूमेति' गोपयन्ति । गोपयित्वा कृष्ण वासुदेव 'पडिवालेमाणा' प्रति-
पालयन्त =प्रतीक्षमाणाः तिष्ठन्ति । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः सुस्थित देव
लवणाधिपति पश्यति=सुस्थितेन साक मिलति दृष्ट्वा तमापृच्छथ यत्रैव गङ्गामहा-
नदी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य एकार्थिकाया नावः=नौकाया मार्गणगवेपणं
करोति, कृत्वा, एकार्थिकां नावमपश्यन् एकेन वाहुना रथ सतुरग=सहाश्व,

त्तए उदाहृणो पभू उत्तरित्तए त्तिकट्टु एगट्टियाओ णावाओ णूमेति,
णूमित्ता कण्हं वासुदेव पडिवाले माणा २ चिद्धति, तएण से कण्हे वासु-
देवे सुद्विय लवणाहिवइ, पासइ, पासित्ता जेणेव गगा महाणई तेणेव
उवागच्छइ) जय पार होकर वे तट पर पहुँच चुके-तब परस्पर में
उन्होंने ने ऐसा विचार किया-हे देवानुप्रियों ! देखो कृष्ण वासुदेव गंगा
महानदी को हाथों से तैरकर पार करने में समर्थ हो सकते हैं
या नहीं हो सकते हैं ? इस प्रकार विचार करके उन्होंने ने उस एकार्थि
नौका को कृष्ण वासुदेव के आने के लिये वापिस उस पार भेजा नहीं
वहीं पर छिपा दिया । और छिपाकर कृष्ण वासुदेव की प्रतीक्षा करते
वे वही ठहरे रहे । उधर-कृष्ण वासुदेव लवणसमुद्राधिपति सुस्थित
देव से जाकर मिले और उसकी आज्ञा लेकर जहाँ गंगा नदी थी वहाँ
आये । (उवागच्छित्ता एगट्टियाए सव्वओ समता मग्गणगवेसण करेई,
करित्ता एगट्टिय अपासमाणे एगाए वाहाए रह सतुरगं ससारहिं गेण्हइ

महानई वाहाहिं उत्तरित्तए, उदाहु णो पभू उत्तरित्तए त्तिकट्टु एगट्टियाओ णावाओ
णूमेति, णूमित्ता कण्हं वासुदेव पडिवालेमाणा २ चिद्धति, तए ण से कण्हे वासुदेवे
सुद्विय लवणाहिवइ, पासइ, पासित्ता जेणेव गगा महाणई तेणेव उवागच्छइ)

पार उतरिने न्यारे तेओ किनारे पडोथी गया त्यारे तेभणे परस्पर
विचार करी के हे देवानुप्रियो ! कृष्णवासुदेव गंगा महानदीने हाथो वडे
तरिने पार करी शके के नहि ? आम विचार करिने तेभणे ते 'अकार्थि'
नौकाने कृष्णवासुदेवने लाववा भाटे पाथी मोडली नहि पथु त्याज छुपावी
दीधी अने छुपावीने तेओ त्याज कृष्णवासुदेवनी प्रतीक्षा करता रोकाई गया
कृष्णवासुदेव लवण समुद्राधिपति सुस्थितदेवने भज्या अने तेनी आज्ञा प्राप्त
करिने ननां गगा नदी इती त्या आण्य।

(उवागच्छित्ता एगट्टियाए सव्वओ समता मग्गणगवेसण करेई, करित्ता
एगट्टिय अपासमाणे एगाए वाहाए रह सतुरगं ससारहिं गेण्हइ, एगाए वाहाए

ससारथिं शृण्वति एकेन गङ्गाना गङ्गा महानदीं ' वासुद्वि ' द्वापष्टिं योजनानि
अर्धयोजनं च ' विस्तीर्ण ' विस्तीर्णाम्, उत्तरितुं प्रवृत्तथाप्यभयत्, ततः खलु
स कृष्णो वासुदेवो गङ्गामहानद्या उद्गमभयदेशभागं संप्राप्तः सन् ' सते ' श्रान्तः=
श्रमप्राप्तः, ' तते ' तान्तः=खिन्न ' परितते ' परितान्तः=पर्यथा खिन्नः ' बद्ध-
सेए ' संप्राप्तस्वेदः, जातथाप्यभयत् ।

ततः खलु कृष्णस्य वासुदेवस्यापमेतद्रूपं आभ्यात्मिको यावत् मनोगत
सरूपः समुदपद्यत-अहो खलु पञ्च पाण्डवा महाप्रलयन्त', यैर्गङ्गामहानदी द्वापष्टिं
योजनानि अर्धयोजनं च विस्तीर्णा-विस्तीर्णा गङ्गामुत्तीर्णा, ' इत्यभूएहि ' इत्यभूतैः-
ईदृशपराक्रमशालिभिः खलु पञ्चभिः पाण्डवैः पद्मनाभो राजा यावत् नो

एगाए वाहाए गग महानह वासुद्वि ज्योणाइ अद्भज्योण च विच्छिन्न उत्त
रिपयत्ते यावि होत्था) वहा आकर के उन्होंने ने एकार्थिक नौका की सब
तरफ सब प्रकारसे मार्गणा गवेपणा की 'मार्गणागवेपण करके जय उनके
देखने में एकार्थिक नौका नहीं आई, तय सारथि और घोड़ों से युक्त
रथ को उन्होंने ने एक हाथ से पकड़ा और एक हाथ से दूर, माटे
वासठ, योजन विस्तीर्ण उस गगा महानदी को तैरकर पार करना
प्रारभ किया । (तएण से कण्हे वासुदेवे गगा महानह्णैए बहुमज्झदेस
भाग सपत्ते समाणे सते, तते, परितते, बद्धसेए जाए यावि होत्था,
तएण कण्हस्स वासुदेवस्स इमे एयाख्वे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था
-अहोण पच पडवा महावलवगा, जेहिं गगामहानह्णै वासुद्वि ज्योणाइ
अद्भज्योण च विच्छिण्णा वाहाहिं उत्तिण्णा इत्यभूएहिं ण पचहिं पड

गग महानह्णै वासुद्वि ज्योणाइ अद्भज्योण च विच्छिन्न उत्तरिपयत्ते यावि होत्था)
त्या आवीने तेमण्णे ' ऐकार्थिक ' नौकानीं योमेर अधी रीते मार्गणा
गवेपणा करी मार्गणा तेमण्णे गवेपणा करीने न्यारे ' ऐकार्थिक ' नौका तेमना
नेवाभा आवी नहिं त्यारे सारथिं अने घोडाथी युक्त रथने तेमण्णे ऐक
हाथमां उपाडथे अने ऐक हाथ वडे दूर" योजन विस्तीर्ण ते गगा महान
नदीने तरीने पार करवा लाग्या

(तएण से कण्हे वासुदेवे गगा महानह्णैए बहुमज्झदेस भाग सपत्ते समाणे
सते, तते, परितते, बद्धसेए जाए यावि होत्था, तएण कण्हस्स वासुदे वस्स
इमे एयाख्वे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-अहोण पच पडवा महावलवगा जेहिं
गगा महानह्णै वासुद्वि ज्योणाइ अद्भज्योण च विच्छिण्णा वाहाहिं

प्रतिपेधितः=नो पराजितः, इदमाश्चर्यम्, ततः खलु गङ्गादेवी कृष्णस्य वासुदेवस्य इमपेतद्रूपमाध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प ज्ञात्वा 'थाह' स्ताघ-गाधवितरति,=ददाति । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवो मुहूर्तान्तरे 'समासासइ' समाश्वसिति-विश्राम प्राप्नोति समाश्वस्य गङ्गामहानदीं द्वापण्डिं यावद् उत्तरति, उत्तीर्य

वेहिं पद्मनाभे राया जाव णो पडिसेहिए-तएण गंगादेवी कण्हस्स वासुदेवस्स इम एयारुव अज्झत्थिए जाव जाणित्ता थाह वितरइ) तैरते २ जम वे कृष्णवासुदेव गंगा महानदी के ठीक मज्झ-मध्य भाग में आये-तब वहा तक आते २ वे श्रम प्राप्त हो गये, खेदखिन्न बन गये, और सर्वथा थक गये । यहा तक कि उनके शरीर भर में धकावट की घजह से पसीना २ हो गया । तब उन कृष्णवासुदेव को इस प्रकार का यह आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उत्पन्न हुआ । देखो-ये पाचो पाडव घड़े बलिष्ठ है-जिन्होंने ने ६२॥, योजन विस्तीर्ण इस गंगा महानदी को हाथों से तैरकर पार कर दिया परन्तु यह बड़े आश्चर्य की बात हैं-कि ऐसे पराक्रम से युक्त होते हुए भी इन पाडवों से वह पद्मनाभ राजा प्रतिपेधित नहीं हो सका-जीता नहीं जा सका । इस प्रकार के उन कृष्णवासुदेव के इस रूप इस आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प को गंगादेवी ने जानकर उन्हें थाह दे दी (अधार दिया) । (तएण से कण्हे वासुदेवे मुहुत्ततर समासासइ) थाह प्राप्त कर कृष्णवासुदेव ने वहा

भूएहिं ण पचहिं पडवेहिं पडमणाभे राया जाव णो पडिसेहिए-तएण गंगादेवी कण्हस्स वासुदेवस्स इम एयारुव अज्झत्थिए जाव जाणित्ता थाह वितरइ)

तरता तरता त्यारे कृष्णवासुदेव गंगा महानदीना अेकइम मध्यमा आन्था-त्यासुधी आवता आवता तो तेओ थाडी गया, जेदणित्त थर्ध गया, अने अेकइम थाडी गया थाकने लीधे तेमनु सपूष्ण शरीर परसेवाथी तरणेण थर्ध गयु त्यारे ते कृष्णवासुदेवने आ जतने आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उद्भवये के लुओ आ पाये पाउवो केटला मधा मलिष्ठ छे के जेमणे ६२" योजन विस्तीर्ण आ गंगा महानदीने हाथो वडे तरीने पार उरी छे णे अेनी साथे आ पणु अेक नवाध जेवी वात छे के अेवा पराकभी होवा छताओ आ पाउवोथी ते पद्मनाभ राजा यावत् पराजित करी सकाये नहि कृष्णवासुदेवना गंगा महानदीअे आ जतना आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प जण्णीने तेमना माटे थाड आपी (तएण से कण्हे वासुदेवे मुहुत्ततर समासासइ) थाड जेणवीने कृष्णवासुदेवे थोडीवार त्या विश्राम कर्यो (समासा०) विश्राम कर्यो णाड तेमणे

यत्रैव पञ्च पाण्डवास्तर्कयोगागच्छति, उपागत्य पञ्च पाण्डवान एवमवादीत्—
अहो खलु यूय हे देवानुप्रियाः ! महावद्वत्त येन युष्माभिर्गङ्गा महानदी द्वापष्टि
योजनानि अर्धयोजन च विस्तीर्णा यावद् उत्तीर्णा, इत्थभूतैर्युष्माभिः पद्म-
नाभो यावत् नो मत्तिपेधित पराजय न प्रापितः, ततः खलु ते पञ्च पाण्डवाः

थोड़ी देर तक विश्राम किया (समासा०) विश्राम करके फिर उन्होंने (गंगा
महाण्ड्र धावट्टि जाव उत्तरइ, उत्तरित्ता जेणेव पच पडवा तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता पच पडवे एव वयासी-अहोण तुम्हे देवाणुप्पिया ! महा
बलवगा जेण तुम्हेहिं गंगा महाण्ड्र वासट्टि जाव उत्तिण्णा, इत्थभूएहिं
तुम्हेहिं पउम जाव णो पडिसेहिण, तएण ते पचपडवा कण्हे ण वासु
देवेण एव वुत्ता समाणा कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु देवाणु-
प्पिया ! अम्हे तुम्हेहिं विसज्जिया समाणा जेणेव गंगा महाण्ड्र तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एगट्टियाए मग्गणगवेसणं त चेव जाव
णूमेमो तुम्हे पडिवाले माणा चिट्ठामो) साठे वासठ योजन विस्तीर्ण
उस गंगा महानदी को तैरकर पार कर दिया। पार करके फिर वे वहाँ
आये-जहाँ ये पांचो पाडव थे। वहाँ आकर उन्होंने ने उन पांचो पाडवों
से इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रियों ! तुमलोग बहुत ही अधिक बलशाली
हो जो तुमलोगों ने ६२॥ योजन विस्तीर्ण इस गंगा महानदी को बाहुओं
से तैरकर पार कर दिया। परन्तु यह आश्चर्य की बात है कि इतने बल
शाली होकर भी जो तुम से पद्मनाभ राजा पराजित नहीं हो सका।

(गंगा महाण्ड्र वावट्टि जाव उत्तरइ, उत्तरित्ता जेणेव पच पडवा तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पच पडवे एव वयासी-अहोण तुम्हे देवाणुप्पिया !
महाबलवगा जेण तुम्हेहिं गंगा महाण्ड्र वासट्टि जाव उत्तिण्णा इत्थ भूएहिं तुम्हेहिं
पउम जाव णो पडिसेहिण, तएण ते पच पडवा कण्हे ण वासुदेवेण एव वुत्ता
समाणा कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे तुम्हेहिं विस
ज्जिया समाणा जेणेव गंगा महाण्ड्र तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एगट्टियाए
मग्गण गवेसण त चेव जाव णूमेमो तुम्हे पडिवाले माणा चिट्ठामो)

६२" योजन विस्तीर्ण ते गंगा महानदीने तरिने पार पडोथी गया
पार पडोथीने तेओ नरा पाथे पाडवो छता त्या आव्या त्या आवीने तेमणे
पाथे पाडवोने आ प्रभाणे कण्हु के डे देवानुप्रियो ! तमे अणु न अणवान छे
हेमके तमे दोडोअे ६२" योजन विस्तीर्ण आ गंगा महानदीने छथे वडे
तरिने पार करी छे पण्णे अनी साथे आ अेक नवाध नेवा वल ते ते त्मे
आटला अथा अणवान छेवा छता पण्णे पद्मनाभ राजने २

कृष्णेन वासुदेवेनैरमुक्ताः सन्तः कृष्ण वासुदेवमेवमवादीत्—एव खलु हे देवानु-
प्रियाः ! वयं युष्माभिर्विसर्जिताः सन्तो यत्रैव गङ्गा महानदी तत्रैवोपागच्छामः,
उपागत्य 'एगद्वियाए' एकार्थिकाया नावो मार्गणगवेपण कृत्वा 'तं चेव
जाव णूमेमो' तदेव=यदुक्तं पूर्वं तदेवात्र बोध्यमित्यर्थः—ता नावमधिरुह्य वयं
गङ्गामहानदीमुत्तीर्णाः, ततः खलु हे देवानुप्रियाः ! गङ्गा महानदीं बाहुभ्या-
मृत्तरितुं भवन्तः शक्नुवन्ति नमः, इति ज्ञातुं वयमेकार्थिका नौका यावद् 'णूमेमो'
गोपयामः, युष्मान् 'पड्डियालेमाणा' प्रतिपालयन्तः—प्रतीक्षमाणा वयं तिष्ठामः ।

ततः खलु स कृष्णो वासुदेवस्तेषां पञ्चानां पाण्डवानाम् एतमर्थं श्रुत्वा
आकर्ष्य निशम्य हृद्यवधार्य आशुरुताः—शीघ्रं सजातकोप, यावत् त्रिवलिकां=रेखा

इस प्रकार जब कृष्णवासुदेवने उन पांचों पांडवों से कहा तब उन्हों ने
कृष्णवासुदेव से ऐसा कहा हे देवानुप्रिय ! सुनिये—चात इस प्रकार है
जब हमलोगों को आपने वहां से विसर्जित कर दिया—तब हमलोग
जहां गंगा महानदी थी—वहां आये—वहां आकर हमलोगों ने एकार्थिक
नौका की मार्गणा गवेपणा की—नाव के मिलते ही हमलोग उसपर चढ़-
कर यहाँ गंगा नदी को पार कर आये हैं। हमलोगों ने यहाँ आकर
फिर हे देवानुप्रिय ! ऐसा विचार किया - कि - कृष्णवासुदेव गंगा
महानदी को हाथों से पार कर सकते हैं या नहीं—इसी बात को जानने
के लिये हमलोगों ने उस एकार्थिक नौका को यही डिपा कर रख दिया
है। और आपकी प्रतीक्षा में यहाँ ठहरे हुए हैं। (तएण से कण्हे वासु-
देवे तैसि पचण्हं पाडवाण एयमद्व सोच्चा णिसम्म आसुरुत्ते जाव तिव-

आ रीते न्यारे कृष्णवासुदेवे ते पाथे पाडवोने कहुं त्थारे तेभण्णे कृष्णवासु
देवने आ प्रभाण्णे कहुं के हे देवानुप्रिय ! सालणा, वात जेवी छे के अभने
पधाने तमे न्यारे विहाय कथो त्थारे अमे लोको न्या गंगा महानदी छती
त्था आन्था त्था आवीने पधाजे अकार्थिक नौकानी मार्गणा गवेपणा करी
नौका प्राप्त थता न अमे पधा तेमा जेसीने गंगा महानदीने पार करीने आ
तरङ्ग आवी गया आ तरङ्ग आवीने हे देवानुप्रिय ! अमे लोकोजे आ प्रभाण्णे
विचार करी के—कृष्णवासुदेव गंगा महानदीने हाथो वठे तरीने पार करी शकथे
के केम ? आ वात जणुवा भाटे न अमे लोकोजे ते अकार्थिक नौकाने छुपावीने
तमादी प्रतीक्षा करता अमे अही न जेसी रक्षा छता

(तएण से कण्हे वासुदेवे तैसि पचण्हं पाडवाण एयमद्व सोच्चा णिसम्म
आसुरुत्ते जाव तिवलिय एव वयासी—अहोण जया मए खवणसमुद्द दुवे जोयण

यत्रैव पञ्च पाण्डवास्तर्जोपागच्छति, उपागत्य पञ्च पाण्डवान् एवमवादीत्—
अहो खलु यूय हे देवानुप्रियाः । महाबलवत् येन युष्माभिर्गङ्गा महानदी द्वावृष्टि
योजनानि अर्धयोजन च विस्तीर्णा यावद् उत्तीर्णा, इत्थंभूतैर्युष्माभिः पद्म-
नाभो यावत् नो प्रतिपेधित पराजय न प्रापितः, ततः खलु ते पञ्च पाण्डवाः

थोड़ी देर तक विश्राम किया (समासा०) विश्राम करके फिर उन्होंने (गंगा
महाण्ड वावृष्टि जाव उत्तरइ, उत्तरित्ता जेणेव पच पडवा तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता पच पडवे एव वयासी-अहोण तुम्हे देवाणुप्पिया । महा-
बलवगा जेण तुम्हेहिं गंगा महाणइ वासट्टि जाव उत्तिण्णा, इत्थंभूएहिं
तुम्हेहिं पउम जाव णो पडिसेहिए, तएण ते पच पडवा कण्हे ण वासु
देवेण एव वुत्ता समाणा कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु देवाणु
प्पिया । अम्हे तुम्हेहिं विसज्जिया समाणा जेणेव गंगा महाणइ तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एगट्टियाए मग्गणगवेसण त चेव जाव
णूमेमो तुम्हे पडिवाले माणा चिट्ठामो) साठे वासठ योजन विस्तीर्ण
उस गंगा महानदी को तैरकर पार कर दिया । पार करके फिर वे वहाँ
आये-जहाँ ये पाचो पाडव थे । वहाँ आकर उन्होंने उन पांचो पाडवों
से इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रियों ! तुमलोग बहुत ही अधिक बलशाली
हो जो तुमलोगों ने ६२॥ योजन विस्तीर्ण इस गंगा महानदी को बाहुओं
से तैरकर पार कर दिया । परन्तु यह आश्चर्य की बात है कि इतने बल
शाली होकर भी जो तुम से पद्मनाभ राजा पराजित नहीं हो सका ।

(गंगा महाण्ड वावृष्टि जाव उत्तरइ, उत्तरित्ता जेणेव पच पडवा तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पच पडवे एव वयासी-अहोण तुम्हे देवाणुप्पिया !
महाबलवगा जेण तुम्हेहिं गंगा महाणइ वासट्टि जाव उत्तिण्णा इत्थं भूएहिं तुम्हेहिं
पउम जाव णो पडिसेहिए, तएण ते पच पडवा कण्हे ण वासुदेवेण एव वुत्ता
समाणा कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे तुम्हेहिं विस-
ज्जिया समाणा जेणेव गंगा महाणइ तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एगट्टियाए
मग्गण गवेसण त चेव जाव णूमेमो तुम्हे पडिवाले माणा चिट्ठामो)

६२" योजन विस्तीर्ण ते गंगा महानदीने तरीने पार पडोथी गथा
पार पडोथीने तेओ नरा पाचे पाडवो छता त्या आओया त्या आवीने तेभओ
पाचे पाडवोने आ प्रभाओ कछु के छे देवानुप्रियो । तमे णहु न् अणवान छे
केभके तमे दोकोओ ६२" योजन विस्तीर्ण आ गंगा महानदीने छथो वडे
तरीने पार करी छे पछु ओनी साथे आ ओक नवाछ नेना वात छे के तमे
आटवा अधा अणवान छोवा छता पछु पद्मनाभ राजने ।

प्रतिषे-य-इतमथितप्रररीरघातितनिपतितचिह्नत्रजपताक यावत् प्रतिषेध्य =
 सग्रामात् प्रतिनिरत्य-पन्ननाभ त्रिगिन्येत्यर्थः, अमरकका राजधानी सभग्नतोरणा
 यावद् विनिपातिता-विध्वसिता, तथा-द्रौपदी स्वहस्तेनोपनीता=मन्त्रद्वयः प्रदत्ताः,
 'तयाण' तदा=तस्मिन् समये खलु युष्माभिर्मम 'माहृष्य' माहात्म्य=महत्त्वं
 चर्त्त, 'ण विष्णाय' न विज्ञातम् 'इयार्णि' इदानीम्-अस्मिन् समये 'जाणि-
 स्सह' ज्ञास्यथ, इति कृत्वा=इत्युक्त्वा, लोहदण्ड 'परामुसइ' परामृशति-मृह्णाति
 पञ्चाना पाण्डवाना रथान् चूर्णयति, चूर्णयित्वा 'णिविसए आणवेइ' निर्विष-
 यान् आज्ञापयति-विषयात् स्वदेशतो निर्गताः बहिर्याता इति निर्विषयास्तान्,
 यूय मम देशात् निर्विषञ्छत, इत्याज्ञापयति स्म' इत्यर्थः । आज्ञाप्य तत्र खलु
 'रहमदणे णाम क्रोठे णिविद्वे' रथमर्दननामा कोष्ठो निविष्ट'-रथमर्दनपुर नाम
 नगर स्थापितम् ।

ततस्तदनन्तर स कृष्णो वासुदेवो यत्रैव स्वक =निज, 'स्वधावारे' स्कन्धा-
 वारः-सेनानिवेशस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य स्वकेन स्कन्धावारेण-सोपकरण-
 सैनिकेन सार्वम् अभिममन्वागतः=मिलितश्चाप्यभवत् । ततः खलु स कृष्णो वासु-
 देवो यत्रैव द्वारवती नगरी, तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य, अनुप्रविशति ॥मृ० ३१॥

प्रशस्त ध्वजा पताकाओं को जमीन में मिलादिया-उस की राजधानी
 अमरकका नगरी को ध्वस्त कर दिया, तथा उससे द्रौपदी को अपने
 हाथ से लाकर तुम लोगों को दिया उस समय तुम लोगो ने मेरे बल को
 नहीं जाना ? जो अत्र जानोगे-ऐसा कहकर उन वासुदेव कृष्ण ने लोह
 दंडे को उठाया-और उससे पांचो पाण्डवों के रथों को चूर २ कर दिया।
 चूर २ कर के फिर उन्हें देश से बाहिर हो जाने की आज्ञा देदी । आज्ञा
 देकर उन कृष्ण वासुदेव ने वहीं पर एक रथमर्दन नाम का नगर बसा
 दिया । इस के बाद वे कृष्ण वासुदेव जहाँ अपना स्कधावार था वहाँ

जमीनदोस्त उरी नाभी तेनी राजधानी अमरकका नगरीने नष्ट उरी नाभी
 अने तेनी पात्रेथी द्रौपदीने लावने तमने सोपी दीधी ते पणते तमे लोका
 मारा अणने नाणी शक्या नडि तो हवे मारा अणने तमे बुज्या-आम कडीने
 ते कृष्णवासुदेवे लोहदण्डने हाथमा लीधा अने तेनाथी तेमणे पाचे पाडवोना
 रथोना भूकेभूका उडापी दीधा रथोने नष्ट उरीने तेमणे पाचे पाडवोने देशथी
 अडार जता नडेवानी आज्ञा आपी आज्ञा आपीने ते कृष्णवासुदेवे ते रथोने
 अके रथमर्दन नामे नगर बसाण्यु त्यारपडी ते कृष्णवासुदेव जया पोताना
 सैन्यनी धावणी छती त्या आण्यो त्या आपीने तेज्या पोताना सैनिकोने

प्रयुक्ता भृकुटि ललाटे उन्नीय मदशर्य, एवमादीत-अहो-आश्रय स्वसु ' जया ' यदा-यस्मिन् समये, मया लवणसमुद्र ' दुवे जोयणसयसहस्मा त्रिषिण्णं ' द्वियो जनशतसहस्रिस्तीणं द्विलभ्योयजनपरिमित प्रिस्तीणं ' वीइवहत्ता ' व्यतिव्रज्य-समुल्लह्य, पद्मनाभ राजान ' ह्यमहिय-जात्र पडिसेहिता ' हतमथित-यावत्

लिय एव वयासी-अहोण जया मण लवणसमुद्र दुवे जोयणसयसहस्मा विच्छिन्न वीइवहत्ता पउमणाभ ह्यमहिय जात्र पडिसेहिता अमरकका सभग० दोवई साहर्त्थि उवणीया तथा ण तुम्भेहिं मम माहप्प ण विण्णाय इयाणिं जाणिस्सह, त्ति कट्टु लोहदड परामुसइ, पचण्ह पडवाणं रहे चूरेइ, चूरित्ता णिव्विसण आणवेइ आणवित्ता तत्थ ण रहमहणे णाम कोइडे णिवेडे, तएण से कण्हे वासुदेवे जेणेव सण खधावारे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सएण खधावारेण सद्धि अभिसमन्नागए यावि होत्था, से कण्हे वासुदेवे जेणेव बारवईण णयरी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अणुपविसइ) उन पाचो पाडवों के मुख से इस कथन रूप अर्थ को सुनकर और उसे अपने हृदय में अवधारित कर उन कृष्णवासुदेव को इकदम क्रोध आ गया। त्रिवलियुक्त उनकी दोनों भृकुटिधा ललाटतट पर चढ़ गई। उसी समय उन्होंने ने उन पाडवों से कहा यह षडे आश्रय की बात है-जिस समय मैंने २ दो लाख योजन विस्तारवाले लवणसमुद्र को उल्लधन कर पद्मनाभ राजा को सग्राम में जीता-उस की सेना को हत मथित किया-राजचिन्हस्वरूप उसकी

सयसहस्मा विच्छिन्न वीइवहत्ता पउमणाम ह्य महिय जात्र पडिसेहिता अमरकका सभग० दोवई साहर्त्थि उवणीया तथाण तुम्भेहिं मम माहप्प ण विण्णाय इयाणिं जाणिस्सह, त्ति कट्टु लोहदड परामुसइ, पचण्ह पडवाण रहे चूरेइ, चूरित्ता णिव्विसण आणवेइ आणवित्ता तत्थण रहमहणे णाम कोइडे णिवेडे, तएण से कण्हे वासुदेवे जेणेव सण खधावारे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सएण खधावारेण सद्धि अभिसमन्नागए यावि होत्था तएण से कण्हे वासुदेवे जेणेव बारवई तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अणुपविसइ)

ते पांचे पाडवोना सुभधी आ कथनरूप अर्थने साबणीने अने तेने पोताना इहयमा अवधारित करीने ते कृष्णवासुदेव अकडम क्रोधाविष्ट थय गया त्रिवलियुक्त तेमना जने लभभरे वड थय गया तेमणे ते ल सभये पाडवोने आ प्रभाणे कडु के आ परेपर नवाध लेवी वात छे के न्यारे मे २ लाख योजन विस्तीर्ण लवण समुद्रने ओणजीने पद्मनाभ राजाने मुद्रमा छुट्यो, तेनी सेनाने मथी नाभी, राजचिह्न स्वरूप तेनी प्रशस्त भवण पताकाओने

प्रतिपे य-इत्तमथितमररीरघातितनिपतितचिह्नभ्रजपताक यावत् प्रतिपेध्य =
सग्रामात् प्रतिनिवर्त्य-पक्षनाभ विजिन्येत्यर्थः, अमरकका राजधानीं सभग्नतोरणा
यावद् विनिपातिता-विध्वंसिता, तथा-द्रौपदी स्वहस्तेनोपनीता=भवद्भ्रजः प्रदत्ता.,
'तयाण' तदा=तस्मिन् समये खलु युष्माभिर्मम 'माहृष्य' माहात्म्य=महत्त्वं
बल, 'ण विष्णाय' न विज्ञातम् 'इयार्णि' इदानीम्-अस्मिन् समये 'जाणि
स्सह' ज्ञास्यथ, इति कृत्वा=इत्युक्त्वा, लोढण्ड 'परामुसइ' परामुशति-गृह्णाति
पञ्चाना पाण्डवाना रयान् चूर्णयति, चूर्णयित्वा 'णिविसए आणवेइ' निर्विप
यान् आज्ञापयति-प्रिपयात् स्वदेशतो निर्गताः चहिर्याता इति निर्विपयास्तान्,
यूय मम देशात् निर्विगच्छत, इत्याज्ञापयति स्म' इत्यर्थः । आज्ञाप्य तत्र खलु
'रथमर्दणे णाम कोष्ठे णिविष्टे' रथमर्दननामा कोष्ठो निविष्ट.-रथमर्दनपुर नाम
नगर स्थापितम् ।

ततस्तदनन्तर स कृष्णो वासुदेवो यत्रैव स्वक =निज, 'खधावारे' स्कन्धा-
वारः-सेनानिवेशस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य स्वकेन स्कन्धावारेण-सोपकरण-
सैनिकेन सार्वम् अभिममन्वागतः=मिलितश्चाप्यभनत् । ततः खलु स कृष्णो वासु-
देवो यत्रैव द्वारवती नगरी, तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य, अनुमविशति ॥मृ० ३१॥

प्रशस्त ध्वजा पताकाओं को जमीन में मिलादिया-उस की राजधानी
अमरकका नगरी को ध्वस्त कर दिया, तथा उससे द्रौपदी को अपने
हाथ से लाकर तुम लोगों को दिया उस समय तुम लोगों ने मेरे बल को
नहीं जाना ? जो अब जानोगे-ऐसा कहकर उन वासुदेव कृष्ण ने लोह
दंडे को उठाया-और उससे पांचो पांडवों के रथों को चूर २ कर दिया।
चूर २ कर के फिर उन्हें देश से बाहिर ही जाने की आज्ञा देदी । आज्ञा
देकर उन कृष्ण वासुदेव ने वहीं पर एक रथमर्दन नाम का नगर बसा
दिया । इस के बाद वे कृष्ण वासुदेव जहाँ अपना स्कन्धावार था वहाँ

जमीनहोस्त करी नाभी तेनी राजधानी अमरकका नगरीने नष्ट करी नाभी
अने तेनी पानेथी द्रौपदीने लावने तमने सोपी दीधी ते वणते तमे लोका
भारा षणने लक्ष्मी गक्या नडि तो डवे मारा षणने तमे जुञ्जो-आम कहीने
ते कृष्णवासुदेवे लोडण्डने डायमा दीधी अने तेनाथी तेमणे पाचे पाडवोना
रथोना भूकैभूभ उडावी दीधा रथोने नष्ट करीने तेमणे पाचे पाडवोने देशथी
षडार जता रडेवानी आज्ञा आपी आज्ञा आपीने ते कृष्णवासुदेवे ते स्थणे
अक रथमर्दन नामे नगर वसाव्यु त्यारपडी ते कृष्णवासुदेव ज्या पोताना
सैन्यनी धावणी इती त्या आ-या त्या आपीने तेज्या पोताना सैनिकेने

मूलम्—तएणं ते पंच पडवा जेणं हृदियणाउरे तेणेव उवा-
 गच्छति उवागच्छिता जेणेत्र पट्ट तेणेत्र उवागच्छति उवाग-
 च्छिता करयल एवं वयासी—एव खलु ताओ । अम्हे कण्हेणं
 णिव्विसया आणत्ता, तएणं पडुराया ते पंच पडवे एव वयासी-
 कहणण पुत्ता । तुम्हे कण्हेण वासुदेवेण णिव्विसया आणत्ता,
 तएण ते पंच पडवा पडुराय एव वयानी—एव खलु ताओ ।
 अम्हे अमरककाओ पडिणियत्ता लवणसमुद्द दोन्नि जोयणसय-
 सहस्साइ वीइवउत्ता तएण से कण्ह अम्हे एव वयासी—गच्छह
 णं तुम्हे देवाणुप्पिया । गंगामहाणत्त उत्तरह जाव चिट्ठह ताव
 अहं एवं तद्देव जाव चिट्ठामो, तएण से कण्हे वासुदेवे सुट्ठियं
 लवणाहिवइं दट्ठण त चेव सव्वं नव्वं कण्हस्स चिंता ण जुज्जइ
 जाव अम्हे णिव्विसए आणवेइ, तएणं से पंडुराया ते पंच पडवे एव
 वयासा—दुट्ठु णं पुत्ता । कय कण्हस्स वासुदेवस्स विप्पिय करेमा-
 णेहिं, तएण से पडुराया कोत्ति देवि सदावेइ सदावि ता एव
 वयासी गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया । वारवइ कण्हस्स वासुदे-
 वस्स णिवेदेहि—एव खलु देवाणुप्पिया । तुम्हे पंच पडवा णिव्वि-
 सया आणत्ता तुम च णं देवाणुप्पिया । दाहिणद्धमरहस्स सामी
 त सदिसतुण देवाणुप्पिया पंच पडवा कयर दिस्सि वा विदिस

भाये । वहाँ आकर वे अपने सैनिकों के साथ मिले । याद में जहाँ
 द्वारावती नगरी थी उस ओर चल दिये वहाँ पहुँच कर वे द्वारावती
 नगरी में प्रविष्ट हुए ॥ सु० ३१ ॥

अथा, त्याग्नाह तेजो जे तश्च द्वारावती नगरी इती ते तश्च स्वाना थया
 त्या पडोन्निने तेजो द्वारावती नगरीमा प्रविष्ट थया ॥ २

वा गच्छंतु ? तएण सा कोती पंडुणा एवं वुत्ता समाणी हत्थि-
 खंध दुरुहइ दुरुहित्ता जहा हेट्टा जाव सदिसत्तु णं पिउत्था ।
 किमागमणपओयणं ? तएण सा कोती कण्ह वासुदेव एवं
 वयासी-एव खलु पुत्ता । तुम पच पंडवा णिविसया आणत्ता
 तुम च णं दाहिणइभरह जाव विदिस वा० गच्छतु ? तएण
 से कण्हे वासुदेवे कोति देवि एव वयासी-अपूर्इवयणाण पिउ-
 तथा । उच्चमपुरिसा वासुदेवा बलदेवा चक्रवट्ठी त गच्छतु ण
 देवाणुप्पिया । पंच पडवा दाहिणिछ वेलाऊल तत्थ पडुमहुर
 णिवेसंतु मम अदिट्टसेवगा भवतु त्तिकट्टु कोति देवि सक्करेइ
 सम्माणेइ जाव पडिविन्नजेइ, तएण सा कोती देवी जाव पडुस्त
 एयमट्ट णिवेदेइ, तएणं पडू पच पडवे सदावेइ सदावित्ता एव
 वयासी गच्छह ण तुब्भे पुत्ता । दाहिणिछ वेलाऊल तत्थ ण
 तुब्भे पडुमहुरं णिवेसेह, तएण पच पडवा पडुस्त रण्णो जाव
 तहात्ति पडिसुणेति सवलवाहणा हयगय० हरिथणाउराओ पडि
 णिमखमति पडिणिक्खमित्ता जेणेव ददिखणिछे वेयाली तेणेव उवा-
 गच्छइ उवागच्छित्ता पडुमहुर नगरि निवेसेति निवेसित्ता तत्थ
 णं तेविपुलभोगसमिति समणणागया यावि होत्था ॥ सू० ३२ ॥

टीका—‘ तएण ते इत्यादि । तत्रतदनन्तर खलु ते पञ्च पाण्डवा यत्रैव
 हस्तिनापुर नगर तत्रैवोपागच्छन्ति, उपगत्य यत्रैव पाण्डू राजा तत्रैवोपागच्छन्ति,

- तएण ते पच पडवा इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (ते पच पडवा) वे पांच पांडव (जेणेव
 हरिथणा उरे) जहा हस्तिनापुर नगर मा (तेणेव उवागच्छति) वहां

तएण ते पच पडवा इत्यादि—

, टीकार्थ—(तएण) त्थारपछी (ते पच पडवा) ते पांच पांडव (जेणेव हरिथणा
 उरे) त्या हस्तिनापुर नगर उतु (तेणेव उवागच्छति) त्या गा० ॥ (तथा

उपागत्य करतलपरिष्ठीतदशनख शिरआवर्त मस्तकेऽर्जलि कृत्वा, एव=वक्ष्य
माणमकारेण, अयादिपुः-एव खलु हे तात ! यय ऋणेन निर्दिपयाः=त्रिपयाद्
मम देशाद् वहिर्निर्गताः आहृताः=कृष्णोऽस्मान् देगाद् वहिर्निगन्तुमाहृतवानि
त्यर्थः । ततः खलु पाण्डु राजा तान् पञ्च पाण्डवार् एवमयादीन्- 'कहण्ण' कथ
केन कारणेन खलु हे पुत्र ! यूय ऋणेन निर्दिपया आहृताः ? ततः खलु ते
पञ्च पाण्डवाः पाण्डु राजानम् एवमयाद्-एव खलु हे तात ! ययममरकङ्कातः प्रति
निवृत्ता लवणसमुद् 'दोन्निनोयणसय सहस्ताड' द्वियोजनशतसहस्राणि द्विलक्ष
योजनपरिमित 'वीइवइत्ता' व्यतिप्रजिताः-उल्लङ्घिताः । ततः खलु स ऋणो

आगए (उवागच्छित्ता) वहा आकर के (जेणेव पडू) वे जहा पांडु
राजा थे (तेणेव उवागच्छति) वहां गये (उवागच्छित्ता) वहा जाकर
(करयल० एव वयासी) उन्होंने ने अपने २ दौनों हाथों को जोड़कर उनसे
इस प्रकार कहा-(एव खलु ताओ !) हे पिताजी ! सुनो-(अम्हे कण्हे
ण णिव्विसया आणत्ता) हमलोगों को कृष्ण वासुदेव ने देश से निकल
जाने को कहा है (तएण पडुराया पच पडवे एव वयासी) तब पांडु राजा
ने उन पांचों पांडवों से इस प्रकार कहा-(कहण्ण पुत्ता तुभे कण्हेण
वासुदेवेण णिव्विसया आणत्ता) हे पुत्रो ! किम कारण को लेकर कृष्ण
वासुदेव ने तुमलोगों को देश से बाहर निकल जाने को कहा है (तएण
ते पच पडवा पडुराया एव वयासी) तब उन पांचों पांडवों ने पांडु
राजा से इस प्रकार कहा-(एव खलु ताओ ! अम्हे अमरककाओ पडि
णियत्ता लवणसमुद् दोन्नि जोयणसयसहस्ताइ वीइवइत्ता) हे तात !

गच्छित्ता) त्या आवाने (जेणेव पडू) तेथो त्या पांडु राजा होता (तेणेव
उवागच्छति) त्या गये (उवागच्छित्ता) त्या जधने (करयल० एव वयासी)
तेमणु पौतपौताना जने हाथे जोडीने तेमने त्या प्रमाणे विनती करी के
(एव खलु ताओ) हे पिता ! साबणो, (अम्हे कण्हेण णिव्विसया आणत्ता)
कृष्णवासुदेवे अमने देशाथी अडार जता रडेवानी आसा आपी छे (तएण पडु
राया पच पडवे एव वयासी) त्यारे पांडु राजाये पांचे पांडवोंने त्या प्रमाणे कळु
के-(कहण्ण पुत्ता तुभे कण्हेण वासुदेवेण णिव्विसया आणत्ता) हे पुत्रो !
कृष्णवासुदेवे शा कारुथी तेमने देशमाथी अडार जता रडेवानी आसा आपी
छे ? (तएण ते पच पडवा पडुराया एव वयासी) त्यारे ते पांचे पांडवोंने
पांडु राजाने त्या प्रमाणे कळु के-(एव खलु ताओ ! अम्हे अमरककाओ पडि
णियत्ता लवण-समुद् दोन्नि जोयणसयसहस्ताइ वीइवइत्ता) हे ' साबणो,

ऽस्मान् एवमवादीत्-गच्छत खलु यूय हे देवानुप्रियाः ! गङ्गामहानदीमुत्तरत,
यावत् तिष्ठत । ताव अह एव तद्देव ' जाव चिद्दामो ' एवं यथा कृष्णवासुदेवस्य
वास्य पूर्वमुक्त तथैवात्र बोध्यम्-तावद्दह सुस्थित लवणाधिपतिं पश्यामीति ।
' जाव चिद्दामो ' यावत्तिष्ठामः-अत्र यावच्छब्देनैवं योजनीयम्-ततः खलु वय
कृष्णवासुदेवेनैवमुक्ताः-सन्तो नौरुपा गङ्गामहानदीमुत्तीर्य, कृष्णो बाहुभ्यां गङ्गा
महानदीमुत्तरितु समयो न वेति विज्ञातु ता नौका समोपितयन्त, ततः कृष्ण
प्रतीक्षमाणास्तिष्ठाम इति । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः सुस्थित लवणाधिपतिं
दृष्ट्वा, ' त चेव सब्व ' तदेव सर्व-गङ्गामहानद्यास्तटे समागत्य, एकार्थिका नाव-

सुनो-जान इस प्रकार है-जब हमलोग अमरकका नगरी से पीछे आकर
२, दो लाग्व योजन विस्तार वाले लवणसमुद्र को पार कर चुके (तएण)
तब (से कण्हे अम्हं एव वयासी) उन कृष्ण वासुदेव ने हमलोगों से
इस प्रकार कहा-(गच्छह ण तुब्भे देवाणुप्पिया ! गगा महाणइ उत्तरह
जाव चिद्दह-ताव-अह एव तद्देव जाव चिद्दामो) हे देवानुप्रियो ! तुम
लोग चलो और गगा महानदी को पारकरो-तब तक मैं सुस्थित देव से
मिलकर और आज्ञा प्राप्तकर आता हूँ । कृष्ण वासुदेव द्वारा इस प्रकार
आज्ञप्त हुए हमलोगों ने नौका से गगा महानदी को पार करके वही
पर उस नौका को छुपा दिया-इस अभिप्रायसे कि देखें कृष्ण वासुदेव
अपने हाथों से तैर कर इस गगा महानदी को पार कर ने में सम-
र्थ हो सकते हैं या नहीं । नौका को छिपाकर हमलोग वही पर उनकी
प्रतीक्षा करते हुए ठहरे । (तएण से कण्हे वासुदेवे सुद्विय लवणाहिवइ

वात आ प्रभाणु छे के न्यारे अमे अमरकका नगरीवी पाछा वगता २ लाण
योजन नेटला विस्तारवाणा लवणु समुद्रने पार करी थूकया (तएण) त्यारे
(से कण्हे अम्हं एव वयासी) ते कृष्णवासुदेवे अमने आ प्रभाणु कथु के-
(गच्छहण तुब्भे देवाणुप्पिया ! गगा महाणइ उत्तरह जाव चिद्दह-ताव अह एव
तद्देव जाव चिद्दामो) छे देवानुप्रियो ! तमे जत्थो अने गगा महानदीने पार
करो तेटलाभा हु सुस्थित देवने भणीने अने तेमनी पासैथी आज्ञा भेणवीने
आवु छु आ प्रभाणु कृष्णवासुदेव वडे आज्ञापिन थयेला अमे नौका वडे
गगा महानदीने पार करीने त्या न ते नौकाने छुपावी दीधी नौकाने छुपा-
ववा पाछण अमारो अ जेतने आशय इतो के कृष्णवासुदेव पोताना हाथोथी
तरीने गगा महानदीने पार करी शके छे के नछि ? नौकाने छुपावीने अमे
त्या न तेमनी प्रतीक्षा करता शैकार्थ गया (तएण से कण्हे वासुदेवे सुद्विय

उपागत्य ऋतलपरिमृहीतदशनख शिरआर्त मस्नकेऽल्लिं रुन्वा, पय=अथ
माणमकारेण, अरादिपुः-एव खलु हे तात ! यय कृष्णेन निर्निपयाः=निपयाद
मम देशाद् वदिर्निर्गताः आहृताः=कृष्णोऽस्मात् देशाद् वदि निर्गन्तुमाहृत्तवानि
त्यर्थः । ततः खलु पाण्डु राजा तान् पञ्च पाण्डवाः एवमयादीत- ' कृष्ण' रुथ
केन कारणेन खलु हे पुत्र ! यूय कृष्णेन निर्निपया आहृताः ? ततः खलु ते
पञ्च पाण्डवाः पाण्डु राजानम् एवमयाद-एव खलु हे तात ! ययममरकद्वातः प्रति
निवृत्ता लवणसमुद्र ' दोन्निनोयणसय सहस्साइ ' द्वियोजनगतसहस्राणि द्विलक्ष
योजनपरिमित ' वीइवइत्ता ' व्यतिप्रजिताः-उल्लङ्घिताः । ततः यलु स कृष्णो

आगए (उवागच्छित्ता) वहा आकर के (जेणेव पडू) वे जहा पांडु
राजा थे (तेणेव उवागच्छति) वहा गये (उवागच्छित्ता) वहा जाकर
(करयल० एव वयासी) उन्होंने ने अपने २ दोनों हाथों को जोड़कर उनसे
इस प्रकार कहा-(एव खलु ताओ !) हे पिताजी ! सुनो-(अम्हे कण्हे
ण णिव्विसया आणत्ता) हमलोगों को कृष्ण वासुदेव ने देश से निकल
जाने को कहा है (तएण पडुराया पच पडवे एव वयासी) तब पांडु राजा
ने उन पाचों पांडवों से इस प्रकार कहा-(कृष्ण पुत्ता तुभे कण्हेण
वासुदेवेण णिव्विसया आणत्ता) हे पुत्रो ! किस कारण को लेकर कृष्ण
वासुदेव ने तुमलोगों को देश से याहिर निकल जाने को कहा है (तएण
ते पच पडवा पडुराया एव वयासी) तब उन पाचो पांडवों ने पांडु
राजा से इस प्रकार कहा-(एव खलु ताओ ! अम्हे अमरककाओ पडि
णियत्ता लवणसमुद्द दोन्नि जोयणसयसहस्साइ वीइवइत्ता) हे तात !

गच्छित्ता) त्या आवीने (जेणेव पडू) तेओ त्या पांडु राजा डता (तेणेव
उवागच्छति) त्या गया (उवागच्छित्ता) त्या अर्धने (करयल० एव वयासी)
तेमणे पोतपोताना अने हाथो नेडीने तेमने आ प्रमाणे विनती करी के
(एव खलु ताओ) हे पिता ! साभणे, (अम्हे कण्हेण णिव्विसया आणत्ता)
कृष्णवासुदेवे अभने देशथी अहार जता रडेवानी आशा आपी छे (तएण पडु
राया पच पडवे एव वयासी) त्यारे पांडु राजाये पाथे पाडवोने आ प्रमाणे कथु
के-(कृष्ण पुत्ता तुभे कण्हेण वासुदेवेण णिव्विसया आणत्ता) हे पुत्रो !
कृष्णवासुदेवे शा अरथी तमने देशमाथी अहार जता रडेवानी आशा आपी
छे ? (तएण ते पच पडवा पडुराया एव वयासी) त्यारे ते पाथे पाडवोये
पांडु राजाने आ प्रमाणे कथु के-(एव खलु ताओ ! अम्हे अमरककाओ पडि
णियत्ता लवण-समुद्द दोन्नि जोयणसयसहस्साइ वीइवइत्ता) हे पिता ! साभणे,

नगरीं, कृष्णम्य वामुदेवम्य निवेदय, एव खलु हे देवानुप्रियाः ! यु०माभिं पञ्च पाण्डवा निर्विपयाः देशनिष्ठासिता आज्ञप्ताः, यूय च खलु हे देवानुप्रियाः ! दक्षिणार्धभरतस्य स्वामिन । ' त ' तन्=तस्मात् सद्विगन्तु=ऋथयन्तु हे देवानुप्रिया । ते पञ्च पाण्डवाः कनरा दिश विदिश या गच्छन्तु ? भवतामेव सर्वे देशाः, तर्हि इमे कुा गमिष्यन्तीति ऋथयन्तु भवन्त । ततः खलु एषा कुन्ती पाण्डुना गत्रैरमुक्ता सती हस्तिस्कन्ध दूरोदति-आरोढयति-दूय ' जहाहेडा '

देवानुप्रिया ! वारवड कण्हस्स वामुदेवस्स निवेदेहि एव खलु देवानुप्रिया ! तुम्हे पंच पडवा णिव्विसया आणत्ता, तुम च ण देवानुप्रिया ! दाहिणडुभरहस्स सामी, त सदिसतु ण देवानुप्रिया ! ते पच पडवा कयर दिसि वा विदिस वा गच्छतु ?) तत्र पाण्डु राजा ने उन पाचों पांडवों से इस प्रकार कहा तुम लोगो ने यह सुन्दर काम नहीं किया जो इस प्रकार से कृष्ण वामुदेव का अनिष्ट किया-उहें नहीं रुचने वाला काम किया इस प्रकार कहकर पाण्डु राजा ने उसी समय कुन्ती देवी को बुलाया-बुलाकर उससे ऐसा कहा-हे देवानुप्रिये ! तुम द्वारावती नगरी में कृष्ण वामुदेव के पास जाओ और उनसे निवेदन करो-कि आपने पाच पांडवो को देश से बाहर निकल जानेके लिये आज्ञा दी है-तो हे देवानुप्रिय ! आप दक्षिणार्ध भरत क्षेत्र के अधिपति हैं-अतः कहें कि वे कौनसी दिशा अथवा विदिशा की ओर जावें । जब आपके ही सर्व देश हैं-तो ये कहाँ जावें आप कहें । (तण्ण सा कोती

वित्ता एव वपासी-गच्छहइ ण तुम देवानुप्रिया ! वारव कण्हस्स वामुदेवस्स निवेदेहि एव खलु देवानुप्रिया ! तुम्हे पच पडवा णिव्विसया आणत्ता, तुम च ण देवानुप्रिया ! दाहिणडुभरहस्स सामी, त सदिसतु ण देवानुप्रिया ! ते पच पडवा कयर दिसि वा विदिस वा गच्छतु ?)

त्यारे पाडु राज्ञे ते पाये पाडवोने आ प्रभाण्णे उल्लु उे तमे लोकेण्णे कृष्णवामुदेवतु पुइ करीने साइ उथुं नथी तेभने अणुगमतु नाम तमे कथुं छे आ प्रभाण्णे कहीने पाडु राज्ञे ते ञ वपते कुती देवीने ज्वालवी ज्वालवीने तेभने आ प्रभाण्णे कल्लु उे छे देवानुप्रिये ! तमे द्वारावती नगरीमा कृष्णवामुदेवनी पामे ज्ञेणे अने तेभने विनती उरे उे तमे पाये पाडवोने देशथी ज्वाल नीकणी ज्वालानी आज्ञा आपी छे छे देवानुप्रिय ! तमे दक्षिणार्ध भरतक्षेत्रना अधिपति छे तो जतावे उे तेण्णे कथं दिशा उे विदिशा तरइ ज्ञथ ज्ञथारे अधा देशे तभारा ञ छे त्यारे जतावे के आ लोके कथा ज्ञथ ?

महदा एकेन प्राहुना रथ मरुग सारथिं गृहीत्वा, एकेन प्राहुना गङ्गामहानदीं
 सुतीर्य, समागतः । ' नरः कण्डस्त चिन्ता न जुञ्जति ' नरः कृष्णस्य चिन्ता न
 सुभ्यते नरः=विशेषस्तु हे तात ! नौकाया समोपिताया सत्या कृष्णः केनोपायेन
 गङ्गामहानदीं तरिष्यति इति चिन्ताऽस्माभिर्न दुष्यते=न क्रियतेस्म, अनेनापरा
 धेन ' जाव अम्हे णिव्विसए आणवेइ ' यावत्-रथाश्रुणीं हत्वाऽम्मार निर्विषयात्
 आज्ञापयति । ततस्तदनन्तरं स पाण्डू राजा तान् पञ्चपाण्डवानामनादीन्-
 ' दुदुहण ' दुदुह=भगोमन गल्ल हे पुत्राः । क्वत्तुमाभिः कृष्णस्य चासुदेवस्य
 विष्णिय ' विष्णियम्-अनिष्टम् कुर्वन्ति, तत गल्ल स पाण्डू राजा कुन्तीं देवीं
 शब्दयति, शब्दयित्वा, एवमनादीन्-गच्छ गल्ल त्व हे देवानुग्रिये ! द्वारवतीं

ददुहण तच्चेव सव्य-नरः कण्डस्त चिन्ता न जुञ्जति जाव अम्हे णिव्वि
 सये आणवेइ) नाद में कृष्ण चासुदेव लवणसमुद्राधिपति सुस्थित देव
 से मिलकर जो ही गंगा महानदी के तट पर आये-तो उन्हें वह नौका
 नहीं मिली-इस कारण वे ? एक हाथ से मरुग एव सारथि युक्त रथ
 को ठे दूसरे हाथ से गंगा महानदी को तैर कर जहा हमलोग थे-वहा
 आ गये । " कृष्णजी किस तरह गंगा महानदी को पार करेंगे " यह
 विचार हमयोगो ने नौका को छिपाते समय नहीं किया । इसी अपराध
 से उन्होंने ने हमारे रथों को चकना चूर कर देश से बाहिर निकल जाने
 के लिये आज्ञा दी है । (तण्ण से पडुराया ते पच पडवा एव वयासी-
 दुदुहण पुत्ता ! कय कण्डस्त चासुदेवस्त विष्णियं करेमाणेहिं-तण्ण से
 पडुराया कोत्तिं देविं सदावेइ सदावित्ता एव वयासी-गच्छह ण तुम

लवणाहिवइ ददुहण तच्चेव सव्य-नरः कण्डस्त चिन्ता न जुञ्जति जाव अम्हे
 णिव्विसये आणवेइ) त्थारपथी वृष्णुवासुदेव लवण समुद्रना अधिपति सुस्थित
 देवने भणीने व्थारे गंगा महानदीना किनारा उपर आव्था त्थारे तेभने नौका
 नदी नदि त्थारे तेव्वा अक हाथमा घोडा अने सारथि सद्धित रथने उथ
 छीने भीअ हाथथी गंगा महानदीने तरीने व्था अमे उता त्था आव्थी गथा
 " वृष्णुवासुदेव केवी रीते गंगा महानदीने पार करथे " नौकाने छुपावता
 अमे व्था विथे विचार न उथी नडोतो व्था अपराधथी तेभणे अमाश रथोने
 नष्ट करी नाञ्चअ अने अमने देशनी गडार वता रडेवानी आज्ञा करी छे

(तण्ण से पडुराया ते पच पडवे एव वयासी-दुदुहण पुत्ता ! कय कण्डस्त
 चासुदेवस्त विष्णिय करेमाणेहिं-तण्ण से पडुराया कोत्तिं देविं सदावेइ, सदा

नगरीं, कृष्णम्य वासुदेवम्य निवेदय, एव खलु हे देवानुप्रियाः ! युष्माभिः पञ्च पाण्डवा निरिपयाः देशनिष्क्रान्तिताः आत्सनाः, यूय च खलु हे देवानुप्रियाः ! दक्षिणार्धभरतम्य स्यामिन । ' त ' तत्=तस्मात् सदिसन्तु=कथयन्तु हे देवानुप्रिया ! ते पञ्च पाण्डवाः कतरा दिश विदिश या गच्छन्तु ? भवतामेव सर्वे देशाः, तर्हि इमे कुत्र गमिष्यन्तीति ज्ञयन्तु भवन्त । ततः खलु सा कुन्ती पाण्डुना गङ्गायमुक्ता सती हस्तिस्कन्ध दूरोहति-आरोहति-दूष्य ' जहाहेडा '

देवानुप्रिया ! पारवह कण्वस्त वासुदेवस्त निवेदेहि एव खलु देवानुप्रिया ! तुम्हे पच पडवा णिन्विसया आणत्ता, तुम च ण देवानुप्रिया ! दाहिणडुभरहस्त सामी, त सदिसत्तु ण देवानुप्रिया ! ते पच पडवा कयर दिस्सि वा विदिसि वा गच्छतु ?) तच्च पाण्डु राजा ने उन पाचो पाउवो से इस प्रकार कहा तुम लोगो ने यह सुन्दर काम नहीं किया जो इस प्रकार से कृष्ण वासुदेव का अनिष्ट किया-उहे नहीं रुचने वाला काम किया इन प्रकार कहकर पाण्डु राजा ने उसी समय कुन्ती देवी को बुलाया-बुलाकर उससे ऐसा कहा-हे देवानुप्रिये ! तुम द्वारावती नगरी में कृष्ण वासुदेव के पास जाओ और उनसे निवेदन करो -कि आपने पाच पाउवो को देश से बाहर निकल जानेके लिये आज्ञा दी है-मो हेदेवानुप्रिय ! आप दक्षिणार्ध भरत क्षेत्र के अधिपति हैं-अतः कहें कि वे कौनसी दिशा अथवा विदिशा की ओर जावें । जब आपके ही सर्व देश हैं-तो ये कहाँ जावें आप कहें । (तण्ण सा कोली

वित्ता एव प्रयासी-गच्छहड ण तुम देवानुप्रिया ! पारव कण्वस्त वासुदेवस्त निवेदेहि एव खलु देवानुप्रिया ! तुम्हे पच पडवा णिन्विसया आणत्ता, तुम च ण देवानुप्रिया ! दाहिणडुभरहस्त सामी, त सदिसत्तु ण देवानुप्रिया ! ते पच पडवा कयर दिस्सि वा विदिसि वा गच्छतु ?)

त्यारे पाण्डु राजांछे ते पाच्ये पाउवोने आ प्रभाण्णे क्खु के तमे लोकोंछे दृष्टुवासुदेवत्तु सुइ उरीने साइ उयुं नथी तेमने अणुगमतु काम तमे क्युं छे आ प्रभाण्णे क्खीने पाण्डु राजांछे ते न वपते कुती देवीने भोलावी भोलावीने तेमने आ प्रभाण्णे क्खु, उ छे देवानुप्रिये ! तमे द्वागवती नगरीमा दृष्टुवासुदेवानी पासे न्त्थो अने तेमने निनती उरो उ तमे पाच्ये पाउवोने देशथी भडार नीकणी न्त्थानी आज्ञा आपी उ छे देवानुप्रिय ! तमे दक्षिणार्ध भरतक्षेत्रना अधिपति उे तो भतावो के तेन्ना कथं दिग्गा के विदिशा तरइ नथ न्त्थारे भधा देशो तभारा न छे त्यारे भतावो के आ लोको कथा नथ ?

यथा अधः, यथापूर्वं द्वारवतीमागता तथाऽत्रापि चो यम् यावत् सदिशन्तु-अत्र यावदित्यनेनैव बोध्यम्-द्वारवतीं नगरीमागत्य ऋष्णेन गच्छता स्नाता कृतमोजना सुवासनपरगताऽभवत् इति, ततस्तां ऋष्ण पृच्छति सदिशन्तु=स्थयन्तु खलु हे

पड्डणा एव बुत्ता समाणी, इत्थिखध दुरुहइ, दुरुहिता जहा हेट्टा जाव सदिसतु ण पिउत्था । किमागमणपभोगण ? तएण सा कौती कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु पुत्ता ! तुमे पच पडवा णिचिसया आणत्ता, तुम च ण दाहिणड्ढु भरह जाव विदिस वा गच्छतु ? तएण से कण्हे वासुदेवे कौतीदेवि एव वयासी अपूर्इ वयणा ण पिउत्था ! उत्तम पुरिसा वासुदेवा, वलदेवा, चक्रवट्टी त गच्छतु ण देवाणुप्पिया ! पच पडवा दाहिणिल्ल वेलाउल तत्थ पडुमहुर णिवेसतु मम अदिट्ठसेवगा भवतु त्ति कट्टु कौतीदेवि सकारेइ, सम्माणेइ, जाव पडिविसज्जेइ) पाडु के द्वारा इस प्रकार कही गई वह देवी राधी पर चढी और चढ कर जिस प्रकार पहिले यह द्वारवती आई थी उसी तरह अब भी यह वटा पहुँची । यहा यावत् शब्द से इस प्रकार पाठका सखन्व लगा लेना चाहिये-जब कुन्ती द्वारावती नगरी में आई-तब कृष्ण वासुदेवने उनका खूब मनमाना सत्कार क्रियो । वडे ठाट चाट से उनका प्रवेशोत्सव मनाया-। कुन्तीने स्नान आदि दैनिक कार्यों से निवट कर आनन्द के साथ चतुर्विध आहार क्रिया बाद में विश्राम के निमित्त सुवासन पर

(तएण सा कौती पड्डणा एव बुत्ता समाणि, इत्थिखध दुरुहइ, दुरुहिता जहा हेट्टा जाव सदिसतु ण पिउत्था । किमागमणपभोगण ? तएण सा कौती कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु पुत्ता ! तुमे पच पडवा णिचिसया आणत्ता, तुम च ण दाहिणड्ढु भरह जाव विदिस वा गच्छतु ? तएण से कण्हे वासुदेवे कौती देवि एव वयासी-अपूर्इ वयणा ण पिउत्था उत्तमपुरिसा देवा, वलदेवा, चक्रवट्टी त गच्छतु ण देवाणुप्पिया ! पच पडवा दाहिणिल्ल वेलाउल तत्थ पडुमहुर णिवेसतु मम अदिट्ठसेवगा भवतु त्ति कट्टु कौती देवि सकारेइ, सम्माणेइ, जाव पडिविसज्जेइ)

आ प्रभाञ्जे पाडु वडे आज्ञापित थयेली कुन्ती देवी हाथी उपर सवार थई अने सवार थईने पडेला जेभ ते द्वारावती नगरी गई हती तेभअ अत्यारे पणु पडेयाई अही यावत् शब्दथी आ लतनेा पाठ समज्जेा जेईअे के अत्यारे कुन्ती द्वारावती नगरीमा आवी त्यारे कृष्णवासुदेवे तेभनेा पूम अ सत्कार क्येाे णडु अ हाईथी तेभनेा प्रवेशोत्सव उज्जयेा कुन्तीअे पणु स्नान वगेरे नित्यकर्मथी परवारीने सुजेथी अतुर्विध आहार क्येाे त्य

पितृव्यसः ! किमागमनप्रयोजनम् ? ततः खलु सा कुन्ती कृष्णं वासुदेवमेवमवा-
दीत्—एव खलु हे पुत्र ! त्वया पञ्च पाण्डवा निर्विपया आज्ञताः त्व च खलु
दक्षिणार्धभरतस्य यावत् स्वामी, तत् कथय ते पञ्च पाण्डवाः कतरा दिश विदिश
वा गच्छन्तु ? । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवः कुन्तीं देवीमेवमवादीत्—‘अपू-
वयणा ण’ अपूतिवचनाः=सकृद्वचनाः खलु हे पितृव्यसः ! उत्तमपुरुषाः वासु
देवा बलदेवाश्चक्रवर्तिनः, ‘त’ तत्-तस्मात् गच्छन्तु खलु हे देवानुप्रिये ! पञ्च
पाण्डवाः ‘दाहिणिल्ल’ वेलाञ्जल ‘दाक्षिणात्य वेलाञ्जल-दक्षिणसमुद्रतटम्, तत्र
‘पडुमहुर’ पाण्डुमथुरा नगरीं ‘णिवेसतु’ निवेगयन्तु, ममादृष्टसेवका भवन्तु,

उन्होंने आराम किया । इतने में कृष्ण वासुदेव ने जब वे वि प्राम कर
चुकीं उन से पूछा-कहिये भुआ जी ! किस प्रयोजन को लेकर यहां
आपका आगमन हुआ है तब कुन्ती ने कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा
हे पुत्र ! आनेका प्रयोजन इस प्रकार है-तुमने जो पाचों पांडवों को
अपने देश से बाहर निकल जाने की आज्ञा दी है-सो इस विषय में
यह पूछना है कि तुम तो दक्षिणार्ध भरत के अधिपति हो अतः हमें
समझाहये कौनसी दिशा या विदिशा में जायें ? इस प्रकार कुन्तीदेवीके
मुखसे सुनकर कृष्ण वासुदेव ने उससे ऐसा कहा-हे भुआ जी-उत्तम
पुरुष, वासुदेव, बलदेव, एव चक्रवर्ती ये सब अपूतिवचन वाले होते
हैं-जो कुछ कहते हैं वह एक ही बार कहते हैं-उसमें परिवर्तन नहीं
होता है-इसलिये हे देवानुप्रिय ! पाचों पांडव दक्षिणसमुद्र पर जावे और
वहां पांडु मथुरा नगरी को बसायें-स्थापित करें-और मेरे अदृष्ट सेवक

भाटे तेभाळे सुष्मासान उपर आराम कर्यो न्यारे तेज्यो सारी रीने विश्राम
करी खुज्या त्यारे तेभने कृष्णवासुदेवे पूछ्यु के-जोबा, शैधभा, शा नरखुधी
तमे अर्द्धा पधार्था छे ! त्यारे कुतीज्ये कृष्णव सुदेवने आ प्रभाणे कळु के छे
पुत्र ! हु अेटला भाटे आवी छु के तमे पाचे पाडवेने पोताना देशमाथी
भक्षार नीकणी नवानी आज्ञा करी छे तो आ विचे भारे आ वातनु अपधी
करणु करणु छे के तमे तो दक्षिणार्ध भरतना अधिपति छे, तो आवी परि
स्थितिमा तमे न् अमने भतावे के तेज्यो कथ दिशा के विदिशा तरङ् नय ?
आ प्रभाणे कुती देवीना मुखशी गंधी वान साखणीने कृष्णवासुदेवे तेभने
आ प्रभाणे वळु के छे शैधभा । वासुदेव, भणदेव अने चक्रवर्ती आ गंधा
उत्तम पुत्र्यो अपति वचनवाणा छे-तेज्यो न् कथ पळु कळे छे ते अेक-
वार कळे छे तेमा केअ पळु नतने इरक्षार थई शकतो नथी अेटला भाटे
छे देवानुप्रिये ! पाचे पाडवे दक्षिण समुद्र तरङ् नय अने त्या पाडु मथुरा

यथा अधः, यथापूर्व द्वारवतीमागता तथाऽत्रापि चो यम् यावत् सदिसन्तु-अत्र यावदित्यनेनैव रोभ्यम्-द्वारवतीं नगरीमागत्य कृष्णेन गच्छता स्नाता कृतभोजना सुवासनप्रगताऽभवत् इति, ततस्ता कृष्ण पृच्छति सदिसन्तु=अथयन्तु खलु हे

पड्डणा एव बुत्ता समाणी, इत्थिखध दुरुहड, दुरुहत्ता जहा हेट्टा जाव सदिसतु ण पिउत्था । किमागमणपभोयण ? तएण सा कौती कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु पुत्ता ! तुमे पच पडवा णिविसया आणत्ता, तुम च ण दाहिणडु भरह जाव विदिस वा गच्छतु ? तएण से कण्हे वासुदेवे कौतीदेवि एव वयासी अपूर्ह्वयणा ण पिउत्था ! उत्तम पुरिसा वासुदेवा, बलदेवा, चक्रवट्टी त गच्छतु ण देवाणुप्पिया ! पच पडवा दाहिणिल्ल वेलाउल तत्थ पडुमहुर णिवेसतु मम अदिट्टसेवगा भवतु त्ति कट्टु कौतीदेवि सकारेइ, सम्माणेइ, जाव पडिविसज्जेइ) पाडु के द्वारा इस प्रकार कही गई वह देवी हाथी पर चढ़ी और चढ़ कर जिस प्रकार पहिले यह द्वारवती आई थी उसी तरह अथ भी यह वहा पहुँची । यहा यावत् शब्द से इस प्रकार पाठका सन्ध लगा लेना चाहिये-जत्र कुनी द्वारावती नगरी में आई-तत्र कृष्ण वासुदेवने उनका खूब मनमाना सत्कार किया । बडे ठाट घाट से उनका प्रवेशोत्सव मनाया-। कुतीने स्नान आदि दैनिक कार्यों से निवट कर आनन्द के साथ चतुर्विध आहार किया बाद में विश्राम के निमित्त सुवासन पर

(तएण सा कौती पड्डणा एव बुत्ता समाणि, इत्थिखध दुरुहड, दुरुहत्ता जहा हेट्टा जाव सदिसतु ण पिउत्था । किमागमणपभोयण ? तएण सा कौती कण्ह वासुदेव एव वयासी-एव खलु पुत्ता ! तुमे पच पडवा णिविसया आणत्ता, तुम च ण दाहिणडु भरह जाव विदिस वा गच्छतु ? तएण से कण्हे वासुदेवे कौती देवि एव वयासी-अपूर्ह्वयणा ण पिउत्था उत्तमपुरिसा देवा, बलदेवा, चक्रवट्टी त गच्छतु ण देवाणुप्पिया ! पच पडवा दाहिणिल्ल वेलाउल तत्थ पडुमहुर णिवेसतु मम अदिट्टसेवगा भवतु त्ति कट्टु कौती देवि सकारेइ, सम्माणेइ, जाव पडिविसज्जेइ)

आ प्रभाणे पाडु वडे आरापित थयेली कुती हेवी हाथी उपर सवार थई अने सवार थईने पडेला जेभ ते द्वारावती नगरी गई हती तेभअ अत्यारे पणु पडेथी अही यावत् शण्ठथी आ नतने पाठ समज्जेने जेथजे के न्यारे कुती द्वारावती नगरीमा आवी त्यारे कृष्णवासुदेवे तेभने पूमअ सत्कार कये अहुं अ हांथी तेभने प्रवेशोत्सव उज्जये कुतीजे पणु स्नान वगेरे नित्यकर्मथी परवारीने सुणेशी चतुर्विध आहार कये । र विश्राम

इति कृत्वा कुन्ती देवीं सत्कारयति समानयति, सत्कार्यं, समान्य यावद् विमर्जयति । ततः खलु सा कुन्ती देवी हस्तिनाममारय्य धरितनापुममागता यावत् पाण्डो राज्ञ एतमर्थं निवेदयति । ततः खलु पाण्डु राजा पञ्च पाण्डवान् शब्दयति शब्दयित्वा एतमप्यदीत्-गच्छत खलु यूय हे पुत्रा ! ' दार्दिणिल्ल वेलाऊल ' दार्दिणात्यवेलाऊल-दक्षिणसमुद्रतट, ता खलु यूय पाण्डमथुरा नगरी निवेशयत ।

होकर रहें । इस प्रकार कफकर उन्हीं ने कुन्तीदेवी का सत्कार किया सम्मान किया । सत्कार सम्मान करके फिर उन्हीं अपने गद्दा से विदा दिया । (तण्ण सा कौंती देवी जाय पडुस्स एयमट्ट निवेदेइ, तण्ण पडू पच पडवे सदावेइ, सदावित्ता एव चयासी-गच्छह ण तुब्भे पुत्ता ! दार्दिणिल्ल वेलाऊल तत्थण तुब्भे पडुमहुर निवेसेह तण्ण पच पडवा पडुस्स रण्णो जाय तहत्ति पडिसुणेंति, सबलवाइणा हय गय० इत्थिणाउराओ पडिणिकखमति, पडिणिक्खमित्ता जेणेव दक्खिणिल्ले वेयाली तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पडुमहुर नगरिं निवेसेंति, निवेसित्ता तत्थ ण ते विउलभोगसमितिसमण्णागया यावि होत्था) वहा से दाधी के ऊपर बैठ कर कुन्तीदेवी हस्तिनापुरमें आगई, यावत् पाण्डुराजासे कृष्णवासुदेव के कथितआदेश को उन्हीं ने सुना दिया । इसके बाद पाण्डु राजा ने पाँचों पाण्डवों को बुलाया-और बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा-हे पुत्रों-तुम गद्दा से दक्षिण दिग्दर्शी समुद्र तट पर जाओ और वहा पाण्डु मथुरा

नगरीने वसाये अने भारा अदृष्ट सेरठो थधने त्या निवास करे आ प्रभाण्णे कडीने तेभण्णे कुती देवीने सत्कार कथे अने सम्मान कथुं सत्कार तेभण्ण सम्मान करीने तेभण्णे कुतीदेवीने त्याथी विहाय कथो

(तण्ण सा कौंती देवी जाय पडुस्स एयमट्ट निवेदेइ, तण्ण पडू पच पडवे सदावेइ, सदावित्ता एव चयासी-गच्छह ण तुब्भे पुत्ता ! दार्दिणिल्ल वेलाऊल तत्थण तुब्भे पडुमहुर निवेसेह तण्ण पच पडवा पडुस्स रण्णो जाय तहत्ति पडिसुणेंति, सबलवाइणा हय गय० इत्थिणाउराओ पडिणिकखमति, पडिणिकखमित्ता जेणेव दक्खिणिल्ले वेयाली तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पडुमहुर नगरिं निवेसेंति निवेसित्ता, तत्थण ते विउलभोगसमितिसमण्णागया यावि होत्था) त्याथी हाथी ऊपर सवार थधने कुतीदेवी हस्तिनापुर आवी गरा यावत् कृष्णवासुदेवनी ने कथ आशा कती ते पाण्डु राजाने कडी सबलावी त्यारपथी पाण्डु राजाने पाथे पाडवेने जोलाव्या अने जोलावीने तेभने आ प्रभाण्णे कडु के छे पुत्रो ! तमे अर्द्धीथी दक्षिण दिशा तरङ्गना समुद्रना तिनारा उपा० नन्वो अने त्या पाण्डु-मथुरा नगरीने वसाओ पिता पाण्डु र आ प्रभाण्णे

तत खलु पञ्च पाण्डवाः पाण्डो राजो वचन यावत्-‘ तद्वत्ति ’ तथाऽस्तु ’ इति कृत्वा प्रतिशृण्वन्ति = स्वीकुर्वन्ति, प्रतिश्रुत्य सवलवाहनाः-सैन्ययानसहिताः, हयगजरूपदातिसपरिवृताः, हस्तिनापुरात् प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रनिनिष्क्रम्य यत्रैव ‘ दाहिणिल्लं वेलाऊल ’ दाक्षिणात्य वेलाकूल तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य पाण्डुमथुरा नगरीं निवेशयन्ति निवेश्य तत्र खलु ते त्रिपुलभोगममिति ममत्या-गताश्चाप्यभवन् ॥ सू०३२ ॥

मूलम्-तएणं सा दोवई देवी अन्नया कयाइ आवणसत्ता जाया यावि होत्था, तएण सा दोवई देवी णवणहं मासाणं जाव सुरुव दारगं पयाया सूमालणिव्वत्तवारसाहस्स इमं एयाह्व गुणनिष्फन्न नामधिज्ज करेति जम्हाण अम्हं एस दारए पचणह पडवाणं पुत्ते दोवईए अत्तए त होउ अम्हं इमस्स दारगस्स णमधेज्ज पडुसेणे, तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णामधेज्ज करेति पडुसेणत्ति, वावत्तरिं कलाओ जाव भोगसमत्थे जाए जुवराया जाव विहरइ, थेरा समो-सढा परिसा निग्गया पडवा निग्गया धम्म सोच्चा एव ज णवर देवाणुप्पिया । दोवई देवि आपुच्छामो पडुसेण च

नगरी को वसाओ । पिता पांडु राजा की इस आज्ञा को उन पाचों पांडवों ने “ तद्वत्ति ” कहकर स्वीकार कर लिया । स्वीकार करके फिर वे हय, गज, रथ, एव पदातिरूप चतुरगिणी सेना से परिवृत्त होकर हस्तिनापुर नगर से निकले और निकलकर जहा दाक्षिणात्य वेलाकूल था वहां आये-वहां आकर उन्हो ने पांडु मथुरा नगरी को वसाया । वसाकर वहा के त्रिपुल भोगों को भोगते हुए रहने लगे ॥ सू०३२ ॥

आज्ञाने ते पांचे पांडवोऽपि “ तद्वत्ति ” कहीने स्वीकारी लीधी स्वीकार करीने तेऽपि घोडा, हाथी, रथ अने पायदणवाणी चतुरगिणी सेनानी साथे हस्तिनापुर नगरथी गडदार नीकल्या-अने नीकलीने ल्या दक्षिण दिशाने समुद्रने किनारे छेते त्या पडोऽप्या, त्या पडोऽप्याने तेमणे पांडु-मथुरा नगरी वसावी वसावीने तेऽपि त्या पुंज्ज कामसोऽगो भोगवता रडेवा लाग्या ॥ सूत्र ३२ ॥

इति कृत्वा कुन्ती देवीं सत्कारयति संमानयति, सन्कार्यं, संमान्य यावद् विमर्जयति । ततः खलु सा कुन्ती देवी हस्तिनापुरमागत्य हस्तिनापुरमागता यात्र् पाण्डो राज्ञ एतमर्थं निवेदयति । ततः खलु पाण्डु राजा पञ्च पाण्डवान् शन्ययति शन्ययित्वा एवमवादीत्-गच्छत खलु यूय हे पुत्राः ! ' दाहिणिल्ल वेलाऊल ' दाहिणात्यवेलाऊलं-दक्षिणसमुद्रतट, ता खलु यूय पाण्डुमथुरा नगरी निवेदयत ।

होकर रहें । इस प्रकार कहकर उन्होंने ने कुन्तीदेवी का सत्कार किया सम्मान किया । सत्कार सम्मान करके फिर उन्हें अपने यहा से विदा दिया । (तएण सा कौंती देवी जाव पटुस्स एयमट्ट निवेदेइ, तएण पट्ट पच पडवे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-गच्छह ण तुम्हे पुत्ता ! दाहिणिल्ल वेलाऊल तत्थण तुम्हे पट्टमहुर निवेसेह तएणं पच पडवा पट्टस्स रण्णो जाव तहत्ति पट्टिसुणेति, सवलवाइणा ह्य गज० हत्थिणाउराओ पडिणिक्खमति, पडिणिक्खमित्ता जेणेव दक्खिणिल्ले वेयाली तेणेव उवा गच्छह, उवागच्छित्ता पट्टमहुर नगरिं निवेसेति, निवेसित्ता तत्थ णं ते विउलभोगसमितिसमण्णागया यावि होत्था) वहा से हाथी के ऊपर बैठ कर कुन्तीदेवी हस्तिनापुरमें आगई, यावत पाण्डुराजासे कृष्णवासुदेव के कथितआदेश को उन्होंने ने सुना दिया । इसके बाद पाण्डु राजा ने पांचों पाण्डवों को बुलाया-और बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा-हे पुत्रों-तुम यहा से दक्षिण दिग्बर्नी समुद्र तट पर जाओ और वहा पाण्डु मथुरा

नगरीने वसावे अने मारा अट्ट सेवके थउने त्या निवास करे आ प्रभावे कहीने तेभणे कुन्ती देवीने सत्कार कथे अने संमान कथुं सत्कार तेभण संमान करीने तेभणे कुन्तीदेवीने त्याथी विहाय कथां

(तएण सा कौंती देवी जाव पट्टस्स एयमट्ट निवेदेइ, तएण पट्ट पच पडवे सदावेइ, सदावित्ता एव वयासी-गच्छह ण तुम्हे पुत्ता ! दाहिणिल्ल वेलाऊल तत्थण तुम्हे पट्टमहुर निवेसेह तएण पच पडवा पट्टस्स रण्णो जाव तहत्ति पडि सुणेति, सवलवाइणा ह्य गज० हत्थिणाउराओ पडिणिक्खमति, पडिणिक्खमित्ता जेणेव दक्खिणिल्ले वेयाली तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता पट्टमहुर नगरिं निवेसे ति निवेसित्ता, तत्थण ते विउलभोगसमितिसमण्णागया यावि होत्था) त्याथी हाथी उपर सवार थउने कुन्तीदेवी हस्तिनापुर आवी गता यावत कृष्णवासुदेवनी ले कथ आजा कती ते पाण्डु राजाने कही सबगवी त्थारपथी पाण्डु राजाने पावे पाउवोने जोलाव्या अने जोवावीने तेभने आ प्रभावे कथुं हे हे पुत्रो ! तमे अहीथी दक्षिण दिशा तरङ्गना समुद्रना उगारा उपर जाओ अने तना पाण्डु-मथुरा नगरीने वसाओ पिता पाण्डु र आ प्रभावे

टीका— 'तएण सा' इत्यादि । ततः खलु सा द्रौपदीदेवी अन्यदा कदाचित् 'आवणसत्ता' आपन्नसत्ता=गर्भवती जाता चाप्यभवत् । ततः खलु सा द्रौपदीदेवी नवसु मासेषु संपूर्णेषु सार्धाष्टमदिवसेषु व्यतिक्रान्तेषु सत्सु यावत्सुरूप सुन्दर दारक=गलक 'पयाया' प्रजाता=प्रजनितवती, किं भूत दारक=सूमाल=सुकुमारपाणिपाद, 'णिव्वत्तवारसाहस्स' निर्द्वत्तद्वादशाहस्स-समाप्तद्वादशदिवसस्य दारकस्य इदमेतद्रूप गुणनिष्पन्न नामधेय कुर्वन्ति यस्मात् खलु अस्माकमेव दारकः पञ्चानां पाण्डवानां पुत्रो द्रौपद्या आत्मजः, 'त' तत्-तस्माद्

—:तएण सा दोवई देवी इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (सा दोवई देवी) वह द्रौपदीदेवी (अन्नया कयाइ) किसी एक समय (आवणसत्ता जाया यावि होत्या) गर्भावस्थासे सपन्न हुई । (तएण सा दोवई देवी) णवण्ह मासाण जाव सुख्व दारगं पयाया) जब गर्भ ९ नौमास ७॥ दिन का हो गया तब उस द्रौपदी देवी ने पुत्र को जन्म दिया । यह बालक बहुत ही अधिक सुन्दर था । (सूमालणिव्वत्तवारसाहस्सइम एयाख्व गुणनिष्पन्न नामधिज्ज करेति जम्हाण अम्हं एस दारए पचण्ह पडवाण पुत्ते दोवईए अत्तए तं होउ अम्हं इमस्स दारगस्स णामधेज्ज पडुसेणे) इसके करचरण आदि अवयव सब ही अधिक सुकुमार थे । जब चारहवां दिन लगा-तय माता पिताओ ने इस पुत्र का गुणनिष्पन्न होने से यह नाम रक्खा यस्मात्-यह पुत्र हम पाचो पाडवो का है तथा द्रौपदी की कुक्षि से

तएण सा दोवई देवी इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्पारपधी (सा दोवई देवी) ते द्रौपदी देवी (अन्नया कयाइ) केई अेक वधते (आवणसत्ता जाया यावि होत्या) सगलां थध (तएण सा दोवई देवी) णवण्ह मासाण जाव सुख्व दारग पयाया) न्यादे गलं नव मास ७॥ दिवसनेो थध गये। त्यादे ते द्रौपदी देवीअे पुत्रने जन्म आयेो, ते आणक भूण व सुन्दर इतु

(सूमालणिव्वत्तवारसाहस्स इम एयाख्व गुणनिष्पन्न नामधिज्ज करेति, जम्हाण अम्हं एसदारए पचण्ह पडवाणं पुत्ते दोवईए अत्तए त होउ अम्ह इमस्स दारगस्स णामधेज्जे पडुसेणे)

तेना हाथ पग वगेरे गधा अवयवो भूण व सुकोमण इता न्यादे भाशेो दिवस आयेो त्यादे माता-पिताअे ते पुत्रतु नाम तेना शुष्ो विधे विचार करता आ प्रभावे राष्ट्रु के आ पुत्र अमांरा पाये पाडेवोने छे,

कुमार रज्जे ठावेमो तओ पच्छा देवाणुप्पिया ! अतिए मुडे
 भवित्ता जाव पव्वयामो, अहासुहं देवाणुप्पिया !, तएणं
 ते पंच पंडवा जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवाग-
 च्छित्ता दोवइ देविं सदावेति सदावित्ता एवं वयासी-एवं
 खल्ल देवाणुप्पिया ! अम्हेहिं थेराणं अंतिए धम्मं गिसंते
 जाव पव्वयामो तुमं देवाणुप्पिए ! किं करेसि ?, तएण सा
 दोवई देवी ते पंच पडवे एव वयासी-जइणं तुव्भे देवाणु-
 प्पिया ! संसारभउव्विग्गा पव्वयह मम के अण्णे आलवे
 वा जाव भविस्सइ ?, अहपि य णं संसारभउव्विग्गा देवा-
 णुप्पिएहिं सद्धिं पव्वइस्सामि, तएण ते पच पडवा पडुसे-
 णस्स अभिसेओ राया जाए जाव रज्जे पसाहेमाणे विहरइ,
 तएण ते पच पडवा दोवई य देवी अन्नया कयाइ पडुसेणं
 रायाण आपुच्छति, तएण से पडुसेण रायाकोडुवियपुरिसे
 सदावेइ सदावित्ता एव वयासी—खिप्पामेव भो ! देवाणु-
 प्पिया ! निक्खमणाभिसेय जाव उवट्टवेह पुरिससहस्सवाहि-
 णीओ सिवियाओ जाव पच्चोरुहति पच्चोरुहित्ता जेणेव थेरा
 तेणेव० आलित्ते णं जाव समणा जाया चोइस्स पुव्वाइ अहि-
 ज्जंति अहिज्जित्ता वट्ठूणि वासाणि छट्टट्टमदसमदुवालसेहिं
 मासद्धमासखमणेहिं अप्पाण भावेमाणा

टीका—‘तएणं सा’ इत्यादि । ततः खलु सा द्रौपदीदेवी अन्यदा कदा चित् ‘आवणसत्ता’ आपन्नसत्ता=गर्भरती जाता चाप्यभवत् । ततः खलु सा द्रौपदीदेवी नवसु मासेषु सपूर्णेषु सार्धाष्टमदिनसेषु व्यतिक्रान्तेषु सत्सु यावत् सुखं सुन्दर दारक=गालकं ‘पयाया’ प्रजाता=प्रजनितवती, किं भूत दारक=सूमाल=सुकुमारपाणिपाद, ‘णिव्वत्तवारसाहस्स’ निर्द्वत्तद्वादशाहस्स=सप्ताह द्वादशदिवसस्य दारकस्य इदमेतद्रूप गुणनिष्पन्न नामधेयं कुर्वन्ति यस्मात् खलु अस्माकमेव दारकः पञ्चाना पाण्डवाना पुत्रो द्रौपद्या आत्मजः, ‘त’ तत्-तस्माद्

—तएण सा दोवई देवी इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (सा दोवई देवी) वह द्रौपदीदेवी (अन्नया कयाह) किसी एक समय (आवणसत्ता जाया याचि होत्या) गर्भावस्थासे सपन्न हुई । (तएणं सा दोवई देवी णवण्ह मासाण जाव सुख्व दारग पयाया) जब गर्भ ९ नौमास ७॥ दिन का हो गया तब उस द्रौपदी देवी ने पुत्र को जन्म दिया । यह बालक बहुत ही अधिक सुन्दर था । (सूमालणिव्वत्तवारसाहस्सइम एयाख्व गुणनिष्पन्नं नामधिज्ज करेति जम्हाण अम्हं एस दारए पचण्हं पडवाण पुत्ते दोवईए अत्तए त होउ अम्हं इमस्स दारगस्स णामवेज्ज पडुसेणे) हमके करचरण आदि अवयव सब ही अधिक सुकुमार थे । जब चारहवां दिन लगा—तय माता पिताओ ने इस पुत्र का गुणनिष्पन्न होने से यह नाम रखवा यस्मात्—यह पुत्र हम पाचो पाडवो का है तथा द्रौपदी की कुक्षि से

तएण सा दोवई देवी इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्पारपठी (सा दोवई देवी) ते द्रौपदी देवी (अन्नया कयाह) कौं अेक पभते (आवणसत्ता जाया याचि होत्या) सगली थध (तएण सा दोवई देवी णवण्ह मासाण जाव सुख्व दारग पयाया) न्यारे गली नव भास ७॥ दिवसनेो थध गयेो त्पारे ते द्रौपदी देवीअे पुत्रनेो न्ज्म आयेो, ते णाणक भूण न सुख्व डतु

(सूमालणिव्वत्तवारसाहस्स इम एयाख्व गुणनिष्पन्न नामधिज्ज करेति, जम्हाण अम्ह एसदारए पचण्ह पडवाण पुत्ते दोवईए अत्तए त होउ अम्ह इमस्स दारगस्स णामधेज्जे पडुसेणे)

तेना हाथ पग वगेरे भधा अवयवो भूण न सुकोभण डता न्यारे आरनेो दिवस आयेो त्पारे माता-पिताअे ते पुत्रनु नाम तेना शुश्रो विधे विचार करता आ प्रभाअे राअु के आ पुत्र अभांरा पाये पाडवोनेो छे,

कुमार रज्जे ठावेमो तओ पच्छा देवाणुप्पिया ! अतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वयामो, अहासुह देवाणुप्पिया !, तएणं ते पंच पडवा जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता दोवइं देविं सदावेति सदावित्ता एवं वयासी—एवं खल्ल देवाणुप्पिया ! अम्हेहिं थेराणं अतिए धम्मे णिसंते जाव पव्वयामो तुम देवाणुप्पिए ! कि करेसि ?, तएण सा दोवई देवी ते पंच पडवे एवं वयासी—जइणं तुव्वमे देवाणुप्पिया ! ससारभउट्ठिग्गा पव्वयह मम के अण्णे आलवे वा जाव भविस्सइ ?, अहपि य णं संसारभउट्ठिग्गा देवाणुप्पिएहिं सद्धि पव्वइस्सामि, तएण ते पच पडवा पडुसेणस्स अभिसेओ राया जाए जाव रज्जे पसाहेमाणे विहरइ, तएण ते पच पडवा दोवई य देवी अन्नया कयाइ पडुसेणं रायाण आपुच्छंति, तएण से पंडुसेण रायाकोडुवियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एव वयासी—खिप्पामेव भो ! देवाणुप्पिया ! निक्खमणाभिसेय जाव उवट्ठवेह पुरिससहस्सवाहिणीओ सिवियाओ जाव पच्चोरुहति पच्चोरुहित्ता जेणेव थेरा तेणेव० आलित्ते णं जाव समणा जाया चोदस्स पुव्वाइ अहिज्जति अहिज्जित्ता वट्ठुणि वासाणि छट्ठमदसमदुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं अप्पाण भावेमाणा १२१ ।

अथ रुद्रावित् दत्त- ' येरा समोसङ्गा ' स्वयिगः समसृताः, परिपन्निगता, पाण्डवा अपि स्वयिराणा रुद्रनार्थं निर्गताः, धर्मं श्रुत्वा ते पाण्डवा प्रतिनुद्रा-
सन्त एवमदन्-यत् नर हे देवानुप्रिया. द्रौपदी देवीमापृच्छामः, पाण्डुमेव च
कुमार राज्ये स्थापयाम, ततः पश्चात् देवानुप्रियाणामन्तिके मुण्डाभूत्वा यावत्
प्रव्रजामः प्रव्रज्या गृह्णीमः, तदा स्वविरा उचुः- ' अहासुह देवानुप्रिया ! ' हे
देवानुप्रिया ययासुख=सुख यया भवति तथा कुरुत, अल विलम्बेन इति भाव ।
तत खलु ते पञ्च पाण्डवा यत्रैव स्वरु गृह तत्रैवापागच्छन्ति, उपागत्य द्रौपदी
देवीं शब्दयन्ति, शब्दयित्वा, एवमदन्-एव खलु हे देवानुप्रिये ! वय स्वयिरा-

व्यतीत करने लगा। एक समय की बात है कि पाण्डु मथुरा नगरी में
स्वयिरो का आगमन हुआ। स्वयिरो का आगमन सुनकर नगरी का
समस्त जन उनकी बढना एव धर्मोपदेश सुनने के निमित्त अपने-
घर से निकले पाचों पांडव भी निकले- परिपद को आयी हुई देवकर
स्वयिरो ने उसे धर्म का उपदेश दिया। उपदेश श्रवण कर परिपद पीठे
चली गई। पांडव लोग उस धर्म के उपदेश का पानकर प्रतिबोध को
प्राप्त हो गये-उसी समय उन्होंने उन स्वयिरो से कहा-हे देवानुप्रियो !
हमलोग द्रौपदी देवी को पूजकर और पाण्डुमेव कुमार को राज्य में स्था-
पित कर आप देवानुप्रियो के समीपमुडित होकर यावत् प्रव्रज्या अगी
कार करना चाहते हैं। पांडवों की इस प्रकार हार्दिक भावना देखकर
उन स्वयिरो ने पांडवों से इस प्रकार कहा-(अहासुह देवानुप्रिया !
तएण ते पच पडवा जेणेव सएगिहे, तेणेव उवागच्छह, उवागच्छित्ता
दोवह देवि सदावेति, सदावित्ता एव वयासी एवं खलु देव गुप्पिया !

स्वयिरो पधार्या स्वयिरोना आगमननी जणु यता नगरीना अधा लोके तेमनी
पढना तेमज तेमनी पासेथी धर्मोपदेश सालणवा भाटे पोतपोताना वेरथी
निकल्या, पाचे पाडवो पणु त्या पडोवना परिपदने आवेनी जेधने स्वयिरोजे
धर्मने उपदेश आव्हे। उपदेश सालणीने परिपद जती रही पाडवो ते
धर्मने उपदेश सालणीने प्रतिपोधत थध गया तेमणे तेज मभये स्ववि-
रोने विनती करता कछु के हे देवानुप्रियो ! अमे द्रौपदी देवीने पूथी तेमज
पाण्डुमेव कुमरने राज्यासने अलिपिष्ठ जरीने तमारी पाने मुडित थधने
यावत् प्रव्रज्या अहणु करवानी अलिवाथा राभीजे धीजे पाडवोनी आ जतनी
छादिक धरुण जणुने ते स्वयिरोजे ते पाचे पाडवोने आ प्रभाहे कछु उ-

(अहासुह देवानुप्रिया ! तएण ते पच पडवा जेणेव सए गिहे, तेणेव
उवागच्छह, उवागच्छित्ता दोवह देवि सदावेति, सदावित्ता एव वयासी, एव

पुत्रु अस्माकमस्य दारकस्य नामधेय ' पाण्डुमेन ' इति । ततः खडु तस्य दार
कस्याम्भारितरी नामधेय कुर्यन्ति- ' पाण्डुसेन ' इति । ' वासत्तरि कलाओ ' द्वाभ
वर्ति कलाः शिसिताः, यावद् भोगममर्थो जातः, राजकन्या परिणीय युवराजो
यावत् मानुष्यकान् भोगान् गुञ्जानो विहरति-जोग्ते ।

उत्पन्न हुआ है-अतः हमारे हम पुत्र का नाम पाण्डुसेन होना चाहिये
(तएण तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्ज करेति पडुसेणत्ति)
इस ख्याल से उन्होंने ने उस नवजात पुत्र का नाम पाण्डुसेन रख दिया ।
(यावत्तरि कलाओ जाव भोगसमत्थे जाण जुवराया जाव विहरइ थेरा
समोसढा, परिसा निग्गया, पडवा निग्गया, धम्म सोच्चा एव वयासी ज णवर
देवानुप्पिया ! दोवइ देवि आपुच्छामो पडुसेणं च कुमार रज्जे
ठावेमो तओ पच्छा देवानुप्पिया ! अतिए मुडे भवित्ता जाव पव्वयामो)
पाण्डुसेन कुमार को ७२ कलाओं में निपुण बनाने के लिये माता पिताने
उसे कलाचार्य के पास भेज दिया । धीरे २ वह ७२, कलाओं में
निष्णात बन गया । यावत् भोग भोगने के लायक अवस्था सपन्न भी
हो गया । राजकन्याओं के साथ हमका वैवाहिक सम्बन्ध कर के पिताओं
ने इसे युवराज पद प्रदान भी कर दिया-यावत् यह मनुष्यभव सबन्धी
काम सुखो दो अनुभव करता हुआ अपने समय को आनन्द के साथ

तेमज्झ द्रौपदी देवीना गलथी तेना जन्म थयो छे, अट्टला भाटे अमारा आ
पुत्रु नाम पाण्डुसेन होवु जेधये

(तएण तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्ज करेति पडुसेणत्ति)
आ विथारथी तेमञ्जे ते नवज्जन पुत्रु नाम पाण्डुसेन राब्धु

(वासत्तरि कलाओ जाव भोगसमत्थे जाण जुवराया जाव विहरइ, थेरा
समोसढा, परिसा निग्गया, पडवा निग्गया धम्म सोच्चा एव वयासी ज णवर
देवानुप्पिया ! दोवइ देवि आपुच्छामो पडुसेणं च कुमार रज्जे ठावेमो तओपच्छा
देवानुप्पिया ! अतिए मुडे भवित्ता जाव पव्वयामो)

पाण्डुसेन कुमारने ७२ कलाओंमा निपुण बनानेवा भाटे मातापिताओंजे
कलाचार्यनी पास भेजदथे । आभ धीमे धीमे ते ७२ कलाओंमा निष्णात बनी
गथे । यावत् ते स सारना लोगो लोगववा योग्य अवस्थावाणो पणु थय गथे ।
राजकन्याओंनी साथे लग्नो करवीने पिताओंजे तेने युवराज पद पणु सोपी
दीधु । यावत् ते मनुष्य-भव सबन्धी कामसुखोने अनुभवने । पिताना वधतने
सुखेथी पन्नार करवा लाग्ये । अक वधतनी बात छे के पाण्डु-भोग नगरीमा

अथ रुदाधित् दत्त- ' येरा समोसद्दा ' स्वविराः समवष्टताः, परिपन्निर्गता, पाण्डवा अपि स्वविराणा यन्दनार्थं निर्गताः, धर्मं श्रुत्वा ते पाण्डवा प्रतिमुद्राः सन्त एवमदन्-यत् नवर हे देवानुप्रियाः द्रौपदी देवीमापृच्छामः, पाण्डुमेव च कुमार राज्ये स्थापयाम, ततः पश्चात् देवानुप्रियाणास्तिके मुण्डाभूत्वा यावत् प्रव्रजामः प्रव्रज्या गृह्णीमः, तदा स्वविरा ऊचुः- ' अहासुह देवानुप्रिया ! ' हे देवानुप्रिया यथासुख=सुख यथा भवति तथा कुरुत, अल विलम्बेन इति भाव । तत खलु ते पञ्च पाण्डवा यत्रैव स्वरु गृह तत्रैवापागच्छन्ति, उपागत्य द्रौपदी देवीं शब्दयन्ति, शब्दयित्वा, एवमदन्-एव खलु हे देवानुप्रिये ! वयं स्वविरा-

व्यतीत करने लगा । एक समय की बात है कि पाण्डु मथुरा नगरी में स्वविरों का आगमन हुआ । स्वविरों का आगमन सुनकर नगरी का समस्त जन उनकी बढना एव धर्मोपदेश सुनने के निमित्त अपने-अपने घर से निकले पाचों पाण्डव भी निकले- परिपन्न को आयी हुई देखकर स्वविरों ने उसे धर्म का उपदेश दिया । उपदेश श्रवण कर परिपन्न पीछे चली गई । पाण्डव लोग उस धर्म के उपदेश का पानकर प्रतिबोध को प्राप्त हो गये-उसी समय उन्होंने उन स्वविरों से कहा-हे देवानुप्रियो ! हमलोग द्रौपदी देवी को पूजकर और पाण्डुसेन कुमार को राज्य में स्थापित कर आप देवानुप्रियों के समीपमुद्रित होकर यावत् प्रव्रज्या अंगीकार करना चाहते हैं । पाण्डवों की इस प्रकार हार्दिक भावना देखकर उन स्वविरों ने पाण्डवों से इस प्रकार कहा-(अहासुह देवानुप्रिया ! तएण ते पञ्च पडवा जेणेय सण गिहे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता दोवइ देविं सदावेत्ति, सदावित्ता एव वयासी एवं खलु देव णुप्पिया !

स्वविरों पधार्या स्वविराना आगमननी जणु यता नगरीना अधा लोका तेमनी बढना तेमज्ज तेमनी पासेथी धर्मोपदेश सालणवा भाटे पोतपोताना वेश्ठी निकल्या, पाचे पाडवे पणु त्या पडोवना पण्णिहने आवेत्ती जेधने स्वविरोंजे धर्मने उपदेश आवेथे । उपदेश सालणीने परिपन्न जती रही पाडवे ते धर्मने उपदेश सालणीने प्रतिभाधित थध गया तेमणे तेज्ज मभये स्वविराने विनती उरता कणु के डे देवानुप्रियो ! अजे द्रौपदी देवीने पूज्ठी तेमज्ज पाण्डुसेन कुमारने राज्यासने अब्बिपिच्छत णीने तभारी पाचे मुडित थधने यावत् प्रव्रज्या अङ्गु करवानी अब्बिवापा राभीजे धीजे पाडवेनी आ लतनी हार्दिक धम्मणा जणुने ते स्वविरोंजे ते पाचे पाडवेने आ प्रभावे कणु जे-

(अहासुह देवानुप्रिया ! तएण ते पञ्च पडवा जेणेय सण गिहे, तेणेय उवागच्छइ, उवागच्छित्ता दोवइ देविं सदावेत्ति, सदावित्ता एव वयासी, एव

णामन्तिके धर्मं श्रुतवन्तो यावत् प्रव्रजामः, त्व हे देवानुप्रिये ! किं करोषि किं करिष्यमि ? । ततः खलु सा द्रौपदी तान् पञ्च पाण्डवान् परममादीन्-यदि खलु यूय हे देवानुप्रियाः ! ससारभयोद्विग्ना-जन्ममरणादि इत्याद् भीताः सन्तो यावत् प्रव्रजथ, मम सोऽन्य आश्रमो वा यावद् भविष्यति ?, अहमपि च खलु ससारभयोद्विग्ना देवानुप्रिये साधं प्रव्रजिष्यामि, तत खलु ते पञ्च पाण्डवाः पाण्डुसेनस्य अभियेः=रा-याभिपेकृ ऋत्या स्वराज्ये स्थापितवन्तः, यावद् राजा जातः, यावद् राज्य प्रमाथयन्=यावत् पिहरति=आस्तेस्म ।

अम्हेहिं धेराण अतिण धम्मि णिसते जाव पव्वयामो-तुम देवाणुप्पिण ! किं करेसि) हे देवानुप्रियो ! जिस प्रकार तुम्हें सुग मिले बैसा तुम को ! अच्छे काम में बिलम्ब मत करो । इसके बाद-वे पांचों पांडव जहा अपना घर था वहा आये-वना आरु के उन्हीं नं द्रौपदी देवी को बुलाया-जुलाकर उससे ऐसा कहा-हे देवानुप्रिये ! सुनो जान इस प्रकार है-हमलोगो ने स्वधर्मके पास धर्मका श्रवण किया है । अन हमलोगों की भावना सुद्धिन होकर उनके पास प्रव्रजित होने की है । अब-तुम्हारी भावना क्या है-हे देवानुप्रिये कृपे तुम हमारे बाद क्या करोगी-(तएणं सा दोवई देवी ते पच पडवे एव वयासी-जइ ण तुव्भे देवाणुप्पिया ! ससारभउव्विग्गा पव्वयह मम के अण्णे आलवे वा जाव भविस्सइ ? अह पि य ण ससारभउव्विग्गा देवाणुप्पिएहिं सद्धिं पव्वइस्सामि, तएण ते पच पडवा पडुसेणस्स अभिसेओ जाव राया जाण, जाव रज्ज पसाहे

खलु देवाणुप्पिया ! अम्हेहिं धेराण अतिण धम्मि णिसते जाव पव्वयामो तुम देवाणुप्पिए ! किं करेसि)

हे देवानुप्रिये ! जेभ तमने सुण भणे तेभ करे। सारा काममा भोडु करे नहिं त्थारपणी तेओ पावे पाडवे। न्था पे तानु धर उतुं त्या आन्था त्या आवीने तेभणे द्रौपदी देवीने बोलावी बोलावीने तेने आ प्रभाणे कहुं के हे देवानुप्रिये ! सालणे, वात अेची छे के अमेओ स्वधरिणी पासेथी धर्मनु श्रवणुं क्युं छे, अेटला भाटे अमारी धरुं सुडित यधने तेभनी पासेथी प्रवन्था अहणुं करवानी छे। हवे तमारी शी धरुं छे ? हे देवानु प्रिये ! अमने कडे। अमे प्रवन्था अहणुं करी लधुं त्थारणाह तमे शुं करथे ?

(तएण सा दोवई देवी ते पच पडवे एव वयासी-जइ ण तुव्भे देवाणुप्पिया ! ससारभउव्विग्गा पव्वयह, मम के अण्णे आलवे वा जाव भविस्सइ ? अह पि य ण ससारभउव्विग्गा, देवाणुप्पिएहिं सद्धिं पव्वइस्सामि, तएण ते पच पडवा पडुसेणस्स अभिसेओ जाव राया जाण, जाव रज्ज पसाहेमाणे विहरइ)

ततः खलु ते पञ्च पाण्डवा द्रौपदी च देवी अन्यदा कदाचित् पाण्डुसेन राजा-
नमापृच्छन्ति, तत खलु स पाण्डुसेनो राजा कौटुम्भिकपुरुषान् शब्दयति, शब्द-
यित्वा, एवमवादीत्-सिप्रमेव भो ! देवानुप्रियाः ! निष्क्रमणाभिपेक=दीक्षोपयोग
वस्तूनि यावद् उपस्थापयत, पुरुषसहस्रवाहिनीः शिविका उपस्थापयत, ' यावत्
प्रत्यवरोहन्ति=अत्र यावच्छब्देनेद बोध्यम्, तत पाण्डुसेनस्य राज्ञोवचनमारुर्ण्य ते

माणे विहरइ) इस प्रकार पांडवों का कहना सुनकर द्रौपदी देवी ने
उन पांचों पांडवों से इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रियों ! तुमलोग यदि
ससार भय में उद्विग्न होकर प्रव्रजित होना चाहते हो, तो फिर मेरे
लिये आप के सिवाय और कौन दूसरा आलवन अथवा आधार होगा ।
अतः मैं भी आप देवानुप्रियों के साथ ससार भय से उद्विग्न होकर
दीक्षित होऊँगी । इस प्रकार द्रौपदी देवी का कथन सुनकर उन पांचों
पांडवों ने पाण्डुसेन कुमार का राज्याभिषेक करके उसे राज्यपद में स्था-
पित किया । इस तरह पाण्डुकुमार राजा हो गया । यावत् राज्य का वह
अच्छी तरह पालन करने लगा । (तएण ते पच पडवा दोवईय देवी
अन्नया कयाइ पडुसेणरायाण आपुच्छति, तएण से पडुसेणे राया कोडुं-
पिय पुरिसे सदावेह, सदावित्ता, एव वयासी खिप्पामेव भो देवाणु-
पिया । निक्खमणाभिसेयं जाव उवडुवेह, पुरिससहस्समाहणीओ
सिवियाओ उवडुवेह, जाव पच्चोरुहति, पच्चोरुहत्ता जेणेव थेरा उवा-

आ प्रभाषे पाडवोनु कथन सावणीने द्रौपदी देवीञ्जे ते पाये पाडवोने
आ प्रभाषे कडु ते डे देवानुप्रियो ! तमे न्यारे ससारभयथी उद्विग्न थधने
प्रपन्त्या अडलु करवा धुठो छे त्यारे तमारा पगर भारा भाटे आ ससारभा
णीणु क्यु आलजन अथवा तो णीञ्जे क्ये आधार थथे ? ज्येटला भाटे डु
पणु तमारी साथे ससारभयथी उद्विग्न थधने दीक्षा अडलु करवा धुठु छु
आ प्रभाषे द्रौपदी देवीनु कथन सावणीने ते पाये पाडवोञ्जे पाडुसेन कुमारने
रान्याभिषेक करीने तेने रान्यामने जेसाडी दीधे आ प्रभाषे पाडुसेन कुमार
रान्त थध गथे यावत् ते रान्यनु सारी रीते रक्षणु करवा लाज्ये ।

(तएण ते पच पडवा दोवईय देवी अब्बया कयाइ पडुसेणरायाण आपुच्छति,
तएण से पडुसेणे राया कोडु वियपुरिसे सदावेह, सदावित्ता एव वयासी, खिप्पामेव
भो देवाणुपिया ! निक्खमणाभिसेयं जाव उवडुवेह, पुरिससहस्समाहणीओ
सिवियाओ उवडुवेह, जाव पच्चोरुहति, पच्चोरुहत्ता जेणेव थेरा तेणेव उवाग०
आलित्तेण जाव समणा जाया, चोदस्सपुव्वाइ अहिज्जति, अहिज्जित्ता पहणि

कौटुम्बिकपुम्पास्तथास्तु' इत्युक्त्वा तथैव यावदुपस्थापयन्ति, तदा ते पञ्च पाण्डवा पुरुषसहस्रवाहिनीः शिबिका आम्ना, पाण्डुमथुराया नगर्या मध्यमन्वेन निर्गच्छति, निर्गत्य शिबिकाभ्यः प्रत्यररोहति=प्रत्यतरति । प्रत्यवरुष, 'जेजेव' यत्रै स्थविरास्तत्रैपोपागच्छन्ति, उपागत्य एवमादिपुः- 'आलिजे ण जाव समणा

गच्छह आलिजेण जाव समणा जाया, चोदसपुत्राह अहिज्जति, अहिज्जित्ता, पट्टणि यासाह छट्टमदसमदुवालसेहिं मामदमासवमणेहिं अप्पाण भावेमाणा विहरति) इसके बाद पांचो पांडवों ने और द्रौपदी देवी ने किसी एक समय पाण्डुसेन राजा से दीक्षित होने के लिये पूछा। तत्र पाण्डुसेन राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया बुलाकर उनसे ऐसा कहा-भो देवानुप्रियो ! तुमलोग शीघ्र ही दीक्षा में उपयोग आनेवाली वस्तुओं को लाकर उपस्थित करो-तथा पुरुष सहस्रवाहिनी शिबिकाओं को भी उपस्थित करो-इस प्रकार पाण्डुसेन राजा के बचन सुनकर उन कौटुम्बिक पुरुषों ने " तथास्तु " कहकर उनकी आज्ञा को स्वीकार कर लिया-और दीक्षा में उपयोगी समस्त सामग्री को एक पुरुष सहस्रवाहिनी शिबिकाओं को लाकर उपस्थित कर दिया। तब वे पांचो पांडव उन पुरुष सहस्रवाहिनी शिबिकाओं पर आरूढ होकर पाण्डु मथुरा नगरी के बीच से होकर निकले। वहा से निकलकर वे जहां स्थविर ठहरे हुए थे-वहां-आये-वहा आकर सबके सब शिबिकाओं से

वासाह छट्टमदसमदुवालसेहिं मासदमासखमणेहिं अप्पाण भावेमाणा विहरति)

त्यारपछी पांचे पांडवोञ्जे अने द्रौपदी देवीञ्जे डोहं अेक वपते पाण्डुसेन राजाने दीक्षा अडेषु करवा भाटे पूछथु तयारे पाण्डुसेन राजाञ्जे कौटुम्बिक पुरुषोने जोलाव्या जोलावीने तेभने आ प्रभाणे कछु के डे देवानुप्रियो । तमे जोडो दीक्षा वपते उपयोगमा आवनारी णधी वस्तुञ्जे वल्दी लध आवो तेमञ् पुरुष सहस्रवाहिनी पालणी पणु लध आवो आ प्रभाणे पाण्डुसेन राजाना वयन सावणीने ते कौटुम्बिक पुरुषोञ्जे ' तथास्तु ' कहीने तेमनी आज्ञा स्वीकारी लीधी अने दीक्षा भाटे उपयोगी अेवी णधी वस्तुञ्जे तेमञ् पुरुष-सहस्रवाहिनी पालणी लध आव्या तयारपछी ते पांचे पांडवो ते पुरुष सहस्रवाहिनी पालणीञ्जे उपर सवार थधने पांडु-मथुरा नगरीनी वन्ने थधने नीकल्या तयाथी नीकणीने तेञ्जे न्यां स्थविर हता त्यां पडोव्या, त्या पडोव्याने तेञ्जे णधा पालणीञ्जाभाथी नीचे उतथी, नीचे उतरी-स्थविरानी

जाया ' आदीप्तोऽयं लोक खलु इत्यादि । यावद् श्रमणा जाताः, चतुर्दशपूर्वाणि अधीयते स्म, अधीत्य बहूनि वर्षाणि पष्ठाष्टमदशम द्वादशैर्मासार्धमासक्षपणैस्तपोभिरात्मान भावयन्तो विहरन्ति ॥ सू० ३३ ॥

मूलम्—तएणं सा दोवई देवी सीयाओ पच्चोरुहइ जाव पव्वइया सुव्वयाए अज्जाए सिस्सिणीयत्ताए दलयइ, इक्कारस अंगाइ अहिज्जइ बहूणि वासाणि छट्ठट्टमदसमदुवालसेहि जाव विहरइ ॥ सू० ३४ ॥

टीका—' तएणं सा ' इत्यादि । ततस्तदनन्तर खलु सा द्रौपदी देवी शिविकातः प्रत्यवरोहति प्रत्यवतरति, प्रत्यवतीर्य यावत् प्रव्रजिता—दीक्षा गृहीतवती । ' सुव्वयाए ' सुत्रतायै=सुव्रतानामधेयायै ' अज्जाए ' आर्यायै ' सिस्सिणीयत्ताए'

नीचे उतरे । नीचे उतरकर स्थविरो के पास पहुँचे । वहाँ पहुँचकर उन्होंने ने स्थविरो से इस प्रकार कहा—हे भद्रत ! यह समस्त लोक आदीप्त-हो रहा है इत्यादिरूप से अपनी भावना प्रदर्शित कर यावत् वे श्रमण हो गये । चौदह पूर्वों का उन्होंने ने अध्ययन किया । अध्ययन करके अनेक वर्षों तक पष्ठ, अष्टम, दशम, द्वादश, मास अर्धमास की तपस्याओं को वे करते हुए विचरने लगे ॥ सू० ३३ ॥

' तएण सा दोवई ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (दोवई देवी) द्रौपदीदेवी (सीयाओ पच्चोरुहइ) अपनी शिविका से नीचे उतरी—(जा पव्वइया, सुव्वयाए अज्जाए सिस्सिणीयत्ताए दलयइ, इक्कारसअगाइ अहिज्जइ, बहूणि वासाइ

पासे पडोइया त्या पडोइयिने तेमहे स्थविरोने विनती करता आ प्रभाहे कहु के डे लदन्त ! आ स पूरुं जगत सणगी रहु छे वगेरे रुपथी पोतानी भावना प्रकट करिने यावत् तेओ श्रमणु थरु गथा चौद पूर्वोनु तेमहे अध्ययन कथुं, अध्ययन करिने धणुा वर्षो सुधी तेओ पष्ठ, अष्टम दशम, द्वादश, मास अर्धमासगी तपस्याओ करता रथा ॥ सूत्र ३३ ॥

तएण सा दोवई इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्पारपठी (दोवई देवी) द्रौपदी देवी (सीयाओ पच्चोरुहइ) पोतानी पादपीमा नीचे उतरी

(जा पव्वइया, सुव्वयाए अज्जाए सिस्सिणीयत्ताए दलयइ, इक्कारसअगाइ

कौटुम्बिकपुरुषास्तथास्तु' इत्युक्त्वा तथैव यावदुपस्थापयन्ति, तदा ते पञ्च पाण्डवा पुरुषसहस्रवाहिनीः शिबिका आम्ना, पाण्डुमथुराया नगर्या मध्यमयेन निर्गच्छति, निर्गत्य शिबिकाभ्यः प्रत्यवरोदति=प्रत्ययतरति । प्रत्यवरोद, 'जेणेव' यत्रैव स्थविरास्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य एवमादिगुः—' आलिते णं जाव समणा

गच्छह आलित्तेण जाव समणा जाया, चोदसपुत्राह अरिजति, अहिजित्ता, पृणि यामाह छट्टमदसमदुवालसेहि मासद्वमासन्वमणेहि अप्पाण भावेमाणा विहरति) इसके बाद पाचो पांडवों ने और द्रौपदी देवी ने किसी एक समय पांडुसेन राजा से दीक्षित होने के लिये पूछा। तब पांडुसेन राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया बुलाकर उनसे ऐसा कहा—भो देवानुप्रियो ! तुमलोग शीघ्र ही दीक्षा में उपयोग आनेवाली वस्तुओं को लाकर उपस्थित करो—तथा पुरुष सहस्रवाहिनी शिबिकाओं को भी उपस्थित करो—इस प्रकार पांडुसेन राजा के बचन सुनकर उन कौटुम्बिक पुरुषों ने " तथास्तु " कहकर उनकी आज्ञा को स्वीकार कर लिया—और दीक्षा में उपयोगी समस्त सामग्री को एव पुरुष सहस्रवाहिनी शिबिकाओं को लाकर उपस्थित कर दिया। तब वे पाचो पांडव उन पुरुष सहस्रवाहिनी शिबिकाओं पर आरूढ होकर पांडु मथुरा नगरी के बीच से होकर निकले। वहाँ से निकलकर वे जहाँ स्थविर ठहरे हुए थे—वहाँ—आये—वहाँ आकर सबके सब शिबिकाओं से

वासाह छट्टमदसमदुवालसेहि मासद्वमासखमणेहि अप्पाण भावेमाणा विहरति)

त्यारपधी पाचे पाउवोञ्जे अने द्रौपदी देवीञ्जे कोर्धेञ्जे वण्ठते पाउसेन राजने दीक्षा अडणु करवा माटे पूछथु त्यारे पाउसेन राजञ्जे कौटुम्बिक पुरुषोने जोलाव्या जोलावीने तेमने आ प्रभाणु कण्ठु के डे देवानुप्रियो ! तमे जोको दीक्षा वण्ठते उपयोगमा आवनारी णधी वस्तुञ्जे न्हदी लध आवो तेमञ् पुरुष सहस्रवाहिनी पालणी पणु लध आवो आ प्रभाणु पाउसेन राजना वयन साभणीने ते कौटुम्बिक पुरुषोञ्जे ' तथास्तु ' कहीने तेमनी आज्ञा स्वीकारी लीधी अने दीक्षा माटे उपयोगी ञ्जेवी णधी वस्तुञ्जे तेमञ् पुरुष—सहस्रवाहिनी पालणी लध आव्या त्यारपधी ते पाचे पाउवो ते पुरुष सहस्रवाहिनी पालणीञ्जे उपर सवार यधने पांडु—मथुरा नगरीनी वण्ठे यधने नीकल्या त्याधी नीकणीने तेञ्जे न्या स्थविर हता त्यां पडोव्या, त्या पडेञ्जेने तेञ्जे णधा पालणीञ्जेमाधी नीचे हतयां, नीचे उतरिने स्थविराणी

अन्नमन्नस्स एयमट्टं पडिसुणेंति पडिसुणित्ता जेणेव थेरा
 भगवंतो तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता थेरं भगवंतं वंदंति
 णमंसंति वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-इच्छामो णं तुव्भेहिं
 अब्भणुन्नाया संमाणा अरहं अरिट्टनेमि जाव गमित्तए,
 अहासुहं देवाणुप्पिया । तएणं ते जुहिट्टिल्लपामोक्खा पंच
 अणगारा थेरेहिं भगवंतेहिं अब्भणुन्नाया समाणा । थेरे
 भगवंते वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता थेराणं अतियाओ
 पडिणिक्खमंति मासंमासेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मणं गा-
 माणुगाम दूईज्जमाणा जाव जेणेव हत्थिकप्पे नयरे तेणेव
 उवा० हत्थिकप्पस्स वहिया सहसववणे उज्जाणे जाव विह-
 रति, तएणं ते जुहिट्टिलवज्जा चत्तारि अणगारा मासख-
 मणपारणए पढमाए पोरिसीए सज्जायं करेंति वीयाए एव
 जहा गोयमसामी णवरं जुहिट्टिल्लं आपुच्छंति जाव अड-
 माणा बहुजणसहं णिसामेंति, एव खल्ल देवाणुप्पिया ।
 अरहा अरिट्टनेमी उज्जितसेल्लसिहरे मासिएणं भत्तेणं
 अपाणएणं पंचहि छत्तीसेहि अणगारसएहि सद्धि कालगए
 जाव पहीणे, तएणं ते जुहिट्टिलवज्जा चत्तारि अणगारा
 बहुजणस्स अतिए एयमट्टं सोच्चा हत्थिकप्पाओ पडिणि-
 क्खमति पडिणिक्खमित्ताजेणेवसहसववणे उज्जाणे जेणेव
 जुहिट्टिल्ले अणगारे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता भत्तपाणं
 पच्चक्खंति पच्चक्खित्ता गमणागमणस्स पडिक्खमति पडि-

शिष्यातया ददाति पाण्डसेनो राजा द्रौपदी सुव्रताये शिष्यारूपेण दत्तवानिति भाव । एकादशाह्नानि अधीते, बहूनि वर्षाणि पष्टाऽष्टमदशमद्वादशैस्तपोभिर्वाच दात्मान भावयन्ती विहरति ॥ सू० ३४ ॥

मूलम्—तएण थेरा भगवंतो अन्नया कयाई पडुमदुराओ णयरीओ सहसंचवणाओ उज्जाणाओ पडिणिस्खमंति पडि-
णिक्खमित्ता वहिया जणवयविहारं विहरति, तेण कालेण
तेणं समएण अरिहा अरिट्टनेमी जेणेषु सुरट्टाजणवए तेणेव
उवागच्छइ उवागच्छित्ता सुरट्टाजणवयंसि संजमेणं तवसा
अप्पाण भावेमाणे विहरइ, तएणं बहुजणो अन्नमन्नस्स
एवमाइक्खइ०—एवं खलु देवाणुप्पिया । अरिहा अरिट्टनेमी
सुरट्टाजणवए जाव वि०, तएणं ते जुहिद्विह्लपामोक्खा पच
अणगारा बहुजणस्स अतिए एयमट्ठं सोच्चा अन्नमन्न
सदावेति सदावित्ता एव वयासी—एव खलु देवाणुप्पिया ।
अरहा अरिट्टनेमी पुब्बाणु० जाव विहरइ, त सेयं खलु
अम्ह थेरा आपुच्छित्ता अरह अरिट्टनेमि वदणाए गमित्तए

छट्टमदसमदुवालसेहिं जाव विहरइ) नीचे उतरकर यावत् वह भी प्रव्रजित हो गई । पाण्डसेन राजा ने उसे—द्रौपदी को सुव्रता नाम की साध्वी के शिष्यारूप से प्रदान किया । द्रौपदी आर्या ने ग्यारह अर्गों का अध्ययन किया । बाद में अनेक वर्षों तक छट्ट अष्टम, दशम, द्वादश तपस्याओं से अपने आपको उसने भावित किया ॥ सू० ३४ ॥

अद्विज्जइ, बहूणि वासाइ छट्टमदसमदुवालसेहिं जाव विहरइ)

नीचे उतरीने यावत् ते पणु प्रव्रजित थर्ध गथ पाण्डसेन राजाये द्रौपदीने सुव्रता नामनी साध्वीने शिष्याना रूपमा अपिंन करी द्रौपदी आर्याये अगियार अ गोलु अध्ययन कथुं त्यारपथी घण्टा वर्षो सुधी छट्ट, अष्टम, दशम, द्वादश तपस्याओथी पोताना आत्माने तेहे लावित गे ॥ सू ३४ ॥

तस्मिन् काले तस्मिन् समयेऽर्हन् अरिष्टनेमिर्यत्रैव सौराष्ट्रजनपदस्तत्रैवोपा-
गच्छति, उपागत्य सौराष्ट्रजनपदे संयमेन तपसाऽऽत्मान भावयन् विहरति । ततः
खलु बहुजनोऽन्योन्यमेवमाख्याति=वक्ति, एव भाषते, एव प्ररूपयति एव प्रज्ञाप-
यति-एव खलु हे देवानुप्रिय ! अर्हन् अरिष्टनेमि सौराष्ट्रजनपदे यावद् विहरति ।
ततः खलु ते युधिष्ठिरप्रभुवा पञ्चानगारा बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वाऽन्योन्य
शब्दयन्ति, शब्दयित्वा एवमादन्, एव खलु हे देवानुप्रिय ! अर्हन् अरिष्टनेमिः पूर्वा

णाओ) उद्यान से (पडिणिक्खमति) विहार किया (पडिणिक्खमित्ता)
विहार करके (वहिया जणवयविहार विहरति) बाहिर के जनपदों
में विचरने लगे (तेण कालेण तेणं समएण अरिहा अरिष्टनेमी जेणेव
सुरट्ठा जणवए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सुरट्ठा जणवयंसि
सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणे विहरइ, तएण बहुजणो अन्नमन्नस्स
एवमाइक्खइ) उस काल में और उस समय में अर्हन् अरिष्टनेमि
प्रभु विहार करते हुए जहाँ सौराष्ट्र जनपद था-वहाँ आये वहाँ आकर
के वे उस सौराष्ट्र जनपद में समय और तप से अपने आत्मा को
भावित करते हुए विचरने लगे । जब वहाँ के अनेक लोगो को इसकी
खबर हुई तब वे परस्पर में इस प्रकार कहने लगे (एव खलु देवाणु-
प्पिया ! अरिहा । अरिष्टनेमी सुरट्ठा जणवए जाव वि० तएण ते जुहि-
ट्टिल्लपामोक्खा पच अणगारा बहुजणस्स अतिए एयमट्ठं सोच्चा अन्न-

णिकसम ति) विहार कथे (पडिणिक्खमित्ता) विहार करीने तेओ (वहिया
जणवयविहार विहरति) अडारना जनपदोभा विहार करवा लाग्या

(तेण कालेण तेणं समएण अरिहा अरिष्टनेमी जेणेव सुरट्ठा जणवए
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सुरट्ठा जणवयंसि सजमेण तवसा अप्पाण भावे-
माणे एवमाइक्खइ)

ते काले अने ते समये अर्हन् अरिष्टनेमि प्रभु विहार करता करता न्या
सौराष्ट्र जनपद इतो त्या आव्या त्या आवीने तेओ ते सौराष्ट्र जनपदभा
सयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता विचरथु करवा लाग्या
न्यारे त्याना धरुा दोडोने आ वातणी नधु थर्ध त्यारे तेओ परस्पर आ
प्रभाषे कडेवा लाग्ये हे—

(एव खलु देवाणुप्पिया ! अरिहा अरिष्टनेमी सुरट्ठाजणवए जाव वि० तएण
ते जुहिट्टिल्लपामोक्खा पच अणगारा बहुजणस्स अतिए एयमट्ठं सोच्चा अन्नमत्तं
सहावेति, सहावित्ता एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ! अरिहा अरिष्टनेमी

कमिता एसणमणेसणं आलोपंति आलोइत्ता भत्तपाणं
 पडिदसेंति पडिदंसित्ताएवं वयासी-एवं खल्ल देवाणुप्पिया ।
 जाव कालगए तं सेयं खल्ल अम्ह देवाणुप्पिया ! इमं
 पुव्वगहियं भत्तपाणं परिट्टवेत्तासेत्तुंजं पव्वयं सणियं सणियं
 दुरूहित्तए 'संलेहणा झूसणा झूसियाणं' कालं अणवकख-
 माणाणं विहरित्तएत्तिकु अणमण्णस्स एयमट्ठ पडिसुणेति
 पडिसुणित्ता तं पुव्वगहियं भत्तपाणं एगंते परिट्टवेति परि-
 ट्टवित्ता जेणेव सेत्तुजे पव्वए तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता
 सेत्तुजं पव्वय दुरूहंति दुरूहित्ता जाव कालं अणवकखमाणा
 विहरति । तएण ते जुहिट्टिल्लपामोक्खा पच अणगारा
 सामाइयमाइयाइ चोइसपुव्वाइ० वड्डुणिं वासाणि० दोमा-
 सियाए संलेहणाए अत्ताण झोसित्ता जस्सट्टाए कीरइणग्ग-
 भावे जाव तमट्टमाराहेति तमट्टमाराहित्ता अणते जाव
 केवलवरणाणदंसणे समुप्पन्ने जाव सिद्धा ॥ सू० ३३ ॥

टीका—' तएण थेरा ' इत्यादि । ततस्तदनन्तर खल्ल स्थविरा भगवन्तोऽ
 न्यदाकदाचित् पाण्डुमथुरातो नगरीतो सहस्राव्रवणाडुयानात् प्रतिनिष्क्रामन्ति-
 निर्गच्छन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य निर्गत्य, वहिर्जनपदविहार विहरन्ति ।

—:तएण थेरा भगवता इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (थेरा भगवतो) उन स्थविर भगवतोने
 (अन्नया कयाइ) किसी एक समय (पडुमथुराओ) पाडु मथुरा (णय
 रीओ) नगरी से (सहस्रववणाओ) सहस्राव्रवन नाम के (उज्जा

तएण थेरा भगवता इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्याख्याइ (थेरा भगवतो) ते स्थविर भगवतोऽपि (अन्नया
 कयाइ) के।थे ओक वधते (पडु मथुराओ) पाडु मथुरा (णयरीओ) नगरीथी
 (सहस्रववणाओ) सहस्राव्रवन नामना (उज्जाणाओ) उजा 'वधि

तस्मिन् काले तस्मिन् समयेऽर्हन् अरिष्टनेमिर्मयत्रैव सौराष्ट्रजनपदस्तत्रैवोपा-
गच्छति, उपागत्य सौराष्ट्रजनपदे संयमेन तपसाऽऽत्मान भावयन् विहरति । ततः
खलु बहुजनोऽन्योन्यमेवमारुयाति=वक्ति, एव भावते, एव प्ररूपयति एव प्रज्ञाप-
यति-एव खलु हे देवानुप्रिय ! अर्हन् अरिष्टनेमि सौराष्ट्रजनपदे यावद् विहरति ।
ततः खलु ते युधिष्ठिरप्रभुत्वा पञ्चानगारा बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वाऽन्योन्य
शब्दयन्ति, शब्दयित्वा एवमयदन्, एव खलु हे देवानुप्रिय ! अर्हन् अरिष्टनेमिः पूर्वा

णाओ) उद्यान से (पडिणिक्खमति) विहार क्रिया (पडिणिक्खमित्ता)
विहार करके (वहिया जणवयविहार विहरति) बाहिर के जनपदों
में विचरने लगे (तेण कालेण तेणं समएण अरिहा अरिष्टनेमी जेणेव
सुरट्ठा जणवए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सुरट्ठा जणवयसि
सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणे विहरइ, तएण बहुजणो अन्नमन्नस्स
एवमाइक्खइ) उस काल में और उस समय में अर्हन् अरिष्टनेमि
प्रभु विहार करते हुए जहाँ सौराष्ट्र जनपद था-वहा आये वहाँ आकर
के वे उस सौराष्ट्र जनपद में समय और तप से अपने आत्मा को
भावित करते हुए विचरने लगे । जब वहाँ के अनेक लोगो को इसकी
खबर हुई तब वे परस्पर में इस प्रकार कहने लगे (एव खलु देवाणु-
प्पिया ! अरिहा । अरिष्टनेमी सुरट्ठा जणवए जाव वि० तएण ते जुहि-
ट्टिल्लपामोक्खा पच अणगारा बहुजणस्स अतिए एयमट्ठं सोच्चा अन्न-

णिकयमति) विहार कथे (पडिणिक्खमित्ता) विहार करीने तेओ (वहिया
जणवयविहार विहरति) अडारना जनपदोभा विहार करवा लाग्या

(तेण कालेण तेणं समएण अरिहा अरिष्टनेमी जेणेव सुरट्ठा जणवए
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सुरट्ठा जणवयसि सजमेण तवसा अप्पाण भावे-
माणे एवमाइक्खइ)

ते काले अने ते समये अर्हन् अरिष्टनेमि प्रभु विहार करता करता न्या
सौराष्ट्र जनपद हुतो त्या आत्मा त्या आधीने तेओ ते सौराष्ट्र जनपदभा
सथम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता विचरणु करवा लाग्या
न्यारे त्याना धणु लोकेने आ वातनी नधु थई त्यारे तेओ परस्पर आ
प्रभाणु कडेवा लाग्ये हे—

(एव खलु देवाणुप्पिया ! अरिहा अरिष्टनेमी सुरट्ठाजणवए जाव वि० तएण
ते जुहिट्टिल्लपामोक्खा पच अणगारा बहुजणस्स अतिए एयमट्ठं सोच्चा अन्नमन्नं
सदावेति, सदावित्ता एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ! अरिहा अरिष्टनेमी

नुपूर्व्या=तीर्थकराणां मर्यादया यावद् विहरति, 'त' तत्-तस्माद् 'सेय' श्रेयः खलु
 अस्माकं यत् स्थविरान् आपृच्छ्याहन्तमरिष्टनेमिं वन्दनायै गन्तुम् । अन्योन्यस्य
 =परस्परस्यैतमर्थं सर्वे पञ्चानगाराः प्रतिशृण्वन्ति, स्वीकृष्यन्ति प्रतिश्रुत्य यत्रैव स्य
 विरा भगवन्तस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य तान् स्थविरान् भगवतो वन्दन्ते नम-
 स्यन्ति च वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमयादिषु -इच्छामः खलु युष्मामिरभ्यनुज्ञाताः
 सन्तोऽहन्तमरिष्टनेमिं यावद् गन्तुम् । स्थविरा ऊचुः ययामुख हे देवानुप्रिया ।

मन्न सहावेति, सहावित्ता एवं वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया । अरिहा
 अरिष्टनेमी पुष्वाणु जाव विहरइ, त सेय खलु अम्ह धेरा आपुच्छित्ता
 अरह अरिष्टनेमिं वदणाण गमित्तए) हे देवानुप्रियो ! सुनो-अहंत अरि
 ष्टनेमि प्रभु तीर्थकर परम्परानुसार विहार करते हुए यावत् सौराष्ट्र जन
 पद में आये हुए हैं । लोगों के मुख से इस बात को उन पाँच युधिष्ठिर
 आदि अनगारो ने सुना-तब आपस में एक दूसरे को-धुलाया-और
 धुलाकर इस प्रकार कहा-देवानुप्रियो ! सौराष्ट्र जनपद में तीर्थकर पर-
 म्परा के अनुसार भगवान् अरिष्टनेमि विहार कर रहे हैं-अतः हमलोगों
 को स्थविरो की आज्ञा लेकर अहंत अरिष्टनेमि को वदना करने के लिये
 चलना बहुत अच्छा है-उचित है-(अन्नमन्नस्स एयमट्ठ पडिसुणेंति,
 पडिसुणित्ता जेणेव धेरा भगवतो, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धेरे
 भगवते वदति णमसति, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी-इच्छामो ण

पुष्वाणु० जाव विहरइ, त सेय खलु अम्ह धेरा आपुच्छित्ता अरह अरिष्टनेमिं वद-
 णाण गमित्तए)

हे देवानुप्रियो ! साक्षणी, अर्द्धत अरिष्टनेमि प्रभु तीर्थ कर परपरा
 सुश्रुत विहार करता यावत् सौराष्ट्र जनपदमा पधारिता छे लोकाना सुभधी
 आ वातने ते पाये युधिष्ठिर वगेरे अनगारोअे साक्षणी त्यारे तेओअे
 परस्पर अेक भीलओाने ओलाओ्या अने ओलावीने आ प्रभाओे कळु के हे
 देवानुप्रियो ! सौराष्ट्र जनपदमा तीर्थ कर परपरा सुश्रुत लगवान अरिष्टनेमि
 विहार करी रक्षा छे ओथी स्थविशैनी आज्ञा भेजवीने अरिष्टनेमिने वदन
 करवा भाटे अभादे जपु नेधअे

(अन्नमन्नस्स एयमट्ठ पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव धेरा भगवतो, तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धेरे भगवते वदति णमसति, वदित्ता णमसित्ता एव
 वयासी-इच्छामो ण तुम्हेहिं अब्भणुञ्जाया समाणा अरह अरिष्टनेमिं जाव गमित्तए

ततः खलु ते युगिष्ठिरप्रमुखाः पञ्चानगाराः स्थविरैर्भगवद्भिरभ्यनुज्ञाताः सन्त
स्थविरान् भगवतो वन्दन्ते नमस्यन्ति, वन्दित्वा, नमस्यित्वा स्थविराणामन्तिक्रातु
प्रतिनिष्क्रामन्ति, माम-मासेन 'अणिक्खित्तेण' अनिक्षित्तेन=अन्तररहितेन तपः

तुम्हेहि अब्भणुन्नाया समणा अरह अरिद्वेनेमि जाव गमित्ताए अहासुह
देवानुप्पिया ! तएण ते जुहिद्विल्लपामोक्खा पच अणगारा थेरेहि भग
वतेहि अब्भणुन्नाया समणा येरे भगवते वदइ णममइ वदित्ता णम-
सित्ता थेराण अतियाओ पडिणिक्खमति, मास मासेण अणिक्खित्ते
ण त । कम्मणेण गामाणुगाम दूईज्जमाणा जाव जेणेव हत्थिरुप्पे नयरे
तेणेव उवा० हत्थिरुप्पस्स वहिया सहस्रवणे उज्जाणे जाव
विहरति-तएण ते जुहिद्विल्लपज्जा चत्तारि अणगारा मासखमणपार-
णए पढमाण पोरसीए सज्जाय करेति, वीयाए जहा गोयमसामी,
णवर जुहिद्विल आपुच्छति जाव अडमाणा बहुजणसइ णिसामेति) इस
प्रकार का परस्पर का यह विचार उन्होंने ने स्वीकार कर लिया-स्वीकार
करके फिर वे जहा स्थविर भगवत थे-वहा गये-वहा जाकर उन्होंने
उन स्थविर भगवतो को वंदना की नमस्कार किया । वदना नमस्कार
कर फिर उनसे इस प्रकार कहा हमलोग आप भगवतो से आज्ञा प्राप्त
कर अहंत नेमिनाथ प्रभु को वदना करने के लिये सौराष्ट्र जनपद जाना
चाहते हैं । तब उन स्थविर भगवतो ने उनसे कहा हे देवानुप्रियो !
यथासुखम्-तुम्हें जैसे सुख हो-वैसा करो इस प्रकार उनस्थविर भग

अहासुह देवानुप्पिया ! तएण ते जुहिद्विल्लपामोक्खा पच अणगारा, थेरेहि भग
वतेहि अब्भणुन्नाया समणा येरे भगवते वदइ णममइ, वदित्ता णममित्ता थेराण
अतियाओ पडिणिक्खमति, मासमासेण अणिक्खित्तेण तवो कम्मणेण गामाणुगाम
दूईज्जमाणा जाव जेणेव हत्थिरुप्पे नयरे तेणेव उवा० हत्थिरुप्पस्स वहिया सह
स्रवणे उज्जाणे जाव विहरति तएण ते जुहिद्विल्लपज्जा चत्तारि अणगारा मास
खमणपारणए पढमाण पोरसीए सज्जाय करेति, वीयाए एव जहा गोयमसामी,
णवर जुहिद्विल आपुच्छति जाव अडमाणा बहुजणसइ णिसामेति)

आ गीते तेओओ ओउथीणना विद्यादाने स्वीकारी लीधा, स्वीकारीने
तेओ न्या स्थविर भगवत उता त्या गया त्या नधने तेमणे ते स्थविर
भगवतोने वदन अने नमस्कार उर्या वदन अने नमस्कार करीने तेमने आ
प्रभाणे विनती करी के अमे आप भगवतनी आज्ञा भेणवीने अहंत नेमि
नाथ प्रभुना वदन भाटे सौ । ष्ट्र जनपदमा नवा धरतीओ छीओ त्थार ते
स्थविर भगवतोओ तेमने आ प्रभाणे आज्ञा करी के हे देवानुप्रियो ! ' यथा
सुखम् ' तमने ने काममा आनंद प्राप्त थाय ने करे आ प्रभाणे ते स्थविर

नुपूर्व्या=तीर्थकराणां मर्यादया यावद् विहरति, 'त' तत्-तस्माद् 'सेय' श्रेय' खलु
 अस्माकं यत् स्वयिरान् आपृच्छ्याहन्तमरिष्टनेमिं रन्दनायै गन्तुम् । अन्योन्यस्य
 =परस्परस्यैतमर्थं सर्वे पञ्चानगाराः प्रतिशृण्वन्ति, स्वीकुर्यन्ति प्रतिश्रुत्य यत्रैव स्व
 यिरा भगवन्तस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य तान् स्वयिरान् भगवतो वन्दन्ते नम-
 स्यन्ति च रन्दित्वा नमस्यित्वा एयमादिषु -इच्छामः खलु युष्मामिरभ्यनुज्ञाताः
 सन्तोऽहन्तमरिष्टनेमिं यावद् गन्तुम् । स्वयिरा ऊचुः यथामुख हे देवानुप्रिया ।

मन्न सद्वावेति, सद्वाचित्ता एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया । अरिहा
 अरिष्टनेमी पुन्वाणु जाव विहरइ, त सेय खलु अम्ह थेरा आपुच्छित्ता
 अरह अरिष्टनेमि वदणाण गमित्तए) हे देवानुप्रियो । सुनो-अहंत अरि-
 ष्टनेमि प्रभु तीर्थकर परम्परानुसार विहार करते हुए यावत् सौराष्ट्र जन-
 पद में आये हुए हैं । लोगों के मुख से इस यात को उन पाँच युधिष्ठिर
 आदि अनगारो ने सुना-तब आपस में एक दूसरे को-बुलाया-और
 बुलाकर इस प्रकार कहा-देवानुप्रियो । सौराष्ट्र जनपद में तीर्थकर पर-
 म्परा के अनुसार भगवान् अरिष्टनेमि विहार कर रहे हैं-अतः हमलोगों
 को स्वयिरो की आज्ञा लेकर अहंत अरिष्टनेमि को वदना करने के लिये
 चलना बहुत अच्छा है-उचित है-(अन्नमन्नस्स एयमट्ट पडिसुणेति,
 पडिसुणित्ता जेणेव थेरा भगवतो, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता थेरे
 भगवते वदति णमसति, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी-इच्छामो ण

पुन्वाणु० जाव विहरइ, त सेय खलु अम्ह थेरा आपुच्छित्ता अरह अरिष्टनेमि वद
 णाए गमित्तए)

हे देवानुप्रियो ! साधजो, अहंत अरिष्टनेमि प्रभु तीर्थ कर पर परा
 मुज्ज्म विहार करता यावत् सौराष्ट्र जनपदमा पधारता छे वोडोना मुज्ज्मी
 आ वातने ते पाथे युधिष्ठिर वगेरे अनगारोअजे साधणी त्थारे तेओअजे
 परस्पर ओक पीलओने ओलाओया अने ओलावीने आ प्रभाजे कहुं हे हे
 देवानुप्रियो ! सौराष्ट्र जनपदमा तीर्थ कर पर परा मुज्ज्म भगवान् अरिष्टनेमि
 विहार करी रक्षा छे ओथी स्वयिरोनी आज्ञा भेजवीने अरिष्टनेमिने वदन
 करवा भाटे अमारै ज्जु नेधअजे

(अन्नमन्नस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता जेणेव थेरा भगवतो, तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता थेरे भगवते वदति णमसति, वदित्ता णमसित्ता एव
 वयासी-इच्छामो ण तुन्नेहिं अन्नमणुभाया समाणा अरह अरिष्टनेमिं जाव गमित्तए

हस्तिरूपे नगरे उच्चनीचमध्यमकुलानि ' अडमाणा ' अटन्त बहुजनशब्द निशा मयन्ति-श्रृण्वन्ति=किं श्रृण्वन्तीत्याह- ' एव खलु हे देवानुप्रियाः ! अर्हन् अरिष्ट नेमिः ' उज्जितसेलसिहरे ' उज्जयन्तशैलशिखरे-गिरनारपर्वतोपरिभागे मासि केन भक्तेन भक्तप्रत्यारपानेन पानकेन-पानीयरहितेन चतुर्विवाहारपरित्यागेने त्यर्थः ' पञ्चहिं उत्तीसेहिं अणगारसर्पहिं ' पञ्चभि पद्त्रिंशताऽनगारशतैः=शट्त्रिंशदधिकपञ्चशतसख्यकैरनगारैः सार्धं कालगतो यावत्-सिद्धोबुद्धः परिनिर्वृत सर्वदुःखप्रहीणो जात ' ।

' तण ' ति ' तत खलु ते युधिष्ठिरवर्जाश्चत्वारोऽनगारा बहुजनस्यातिके एतमर्थं श्रुत्वा हस्तिरूपाद् नगरात् प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव सहस्रा-

करप नगर में उच्च, नीच एव मध्यम कुलों में गोचरी के लिये आये। उस समय इन्होंने अनेक मनुष्यों के मुख से इस प्रकार समाचार सुने (एव देवाणुप्पिया ! अरहा अरिष्टनेमी उज्जितसेलसिहरे मासिएण भक्तेण अपाणएण पचहिं उत्तीसेहिं अणगारसर्पहिं सर्द्धि कालगए जाव पहीणे, तण ते जुहिद्विद्विज्जा चत्तारि अणगारा बहुजणस्स अंतिए एयमद्ध सोच्चा हत्थिरुप्पाओ पडिणिक्खमति) देवानुप्रियों ! अर्हत अरिष्टनेमि ऊर्जयतशैल शिखर पर-गिरनार पर्वत के ऊपर एक मास के चतुरविध आहार के परित्यागरूप भक्तप्रलाख्यान से ५३६ अनगारों के साथ कालगत यावत् सिद्ध, बुद्ध, परिनिर्वृत हो कर सर्व दुखों से रहित हो गये हैं। इस प्रकार अनेक मनुष्यों के मुख से इस समाचार को सुनकर वे युधिष्ठिर वर्ज चारों अनगार उस हस्तिरूपनगर से निकले (पडिनिक्खमिन्ता जेणेव सहस्रवणे उज्जाणे जेणेव

अने मध्यम कुलोभा गोचरी भाटे आ०या ते सभये तेमण्णे धण्णा भाणुमेना सुभथी ये नतना सभाथारेः सालण्या के—

(एव देवाणुप्पिया ! अरहा अरिष्टनेमी उज्जितसेलसिहरे मासिएण भक्तेण अपाणएण पचहिं उत्तीसेहिं अणगारसर्पहिं सर्द्धि कालगए जाव पहीणे, तण ते जुहिद्विद्विज्जा चत्तारि अणगारा बहुजणस्स अंतिए एयमद्ध सोच्चा हत्थिरुप्पाओ पडिणिक्खमति)

हे देवानुप्रियो ! अर्हन् त अरिष्टनेमिऊर्जयत शैलशिखर ऊपर-गिरनार पर्वत ऊपर-अेऽ मासना गारे नतना आहारना परित्याग रूप लक्ष्य प्रत्याभ्यानथी ५३६ अनगारोनी साथे काणभत यावत् सिद्ध, बुद्ध, परिनिर्वृत धर्मे सर्व दुःखोशी मुक्त थय गया छे आ प्रभाण्णे धण्णा भाणुमेना सुभथी आ नतना सभाथारेः सालणीने ते युधिष्ठिर वगरना थारे अनगारे ते हस्तिरूपे नगरथी नीऽण्या

कर्मणा ग्रामानुग्राम 'दृष्टममाणा' इत्यन्तः=गन्तव्यः, यावत् यत्रैव 'इत्थिकल्पे नयरे' इतिरूपेण नगर तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य इत्थिकल्पस्य इति: सहस्राश्रयणे उद्याने यावद् विहरन्ति। ततः यत्र ते युधिष्ठिरवर्जित्पारोडनगारा मासक्षपणपारणके प्रथमाया पौरुष्या स्वाध्यायं कुर्वन्ति, 'शीयाए' द्वितीयाया पौरुष्या ध्यानं ध्यायन्ति तृतीयाया पौरुष्यामत्प्रतिप्रचपलमभ्रान्तसदोरकमुखवस्त्रिका प्रतिलेखयन्ति, भाजनवस्त्राणि प्रतिलेखयन्ति, भाननानि च-पात्राणि प्रमार्जयन्ति, भाजनान्यपगृह्णन्ति, गृहीत्या एव यथा गौतमस्वामी श्रमण महावीरमापृच्छति नगर-अयमत्र विशेषः अत्र पत्तारोडनगाराः युधिष्ठिरमापृच्छन्ति यावत्

वर्तों से आज्ञा प्राप्त कर वे युधिष्ठिर प्रमुख पांच अनगर उन स्थिर भगवत को वंदना नमस्कार करके उनके पास से चले आये और निरन्तर मास मास रमण करते हुए एक एक ग्राम से दूसरे ग्राम में विहार करने लगे। इस तरह ग्रामानुग्राम विहार करते हुए वे पांचो अनगर जहा इत्थिकल्पनाम का नगर था वहा आये। वहा आकर वे इत्थिकल्प नगर के बाहिर सहस्राश्रयण उद्यान में जाकर ठहर गये। इसके बाद वे युधिष्ठिर के सिवाय चारो अनगर मासक्षपण के दिन प्रथम पौरुषी में स्वाध्याय करते, द्वितीय पौरुषी में ध्यान करते, और तृतीय पौरुषी में अत्वरित, अचपल एव असभ्रान्त होकर सदोरकमुखवस्त्रिकाकी प्रतिलेखना करते, भाजन और वस्त्रोंकी प्रतिलेखना करते-फिर उन्हें उठाते-और लेकर जिस प्रकार गौतम स्वामी श्रमण महावीर स्वामी से पूछकर गोचरी के लिये निकलते उसी प्रकार ये भी युधिष्ठिर से पूछ कर इत्थि

लगवतोनी आज्ञा भेजवीने ते युधिष्ठिर प्रमुख पांच अनगारे। ते स्थिर भगवतोने वदन तेभञ्ज नमस्कार करीने तेभनी।पासेधी आवता रक्षा अने सतत मास अभयु करता ओक गाभथी जीने गाभ विहार करवा लाग्या आरीते ग्रामानुग्राम विहार करता ते पांचे अनगारे। न्या इत्थिकल्प नामे नगर इत्तु त्या आव्या त्या आवीने तेओ इत्थिकल्प नगरनी गहार सहस्राश्रयण उद्यानमा जधने मुकाम कर्षी त्यारणाद ते युधिष्ठिर सिवायना यादे अनगारे। मासक्षपण पारणाना द्विसे प्रथम पौडधीमा स्वाध्याय करता, द्वितीय पौडधीमा ध्यान करता अने तृतीय पौडधीमा गोचरी भाटे नीकणती वधते पणु अयपण असभ्रात थधने सहोरजमुखवस्त्रिकानी प्रतिलेखना करता, लाजन अने वस्त्रोनी प्रतिलेखना करता, त्यारणाद तेभने उपाठता अने उपाडीने जेभ गौतम स्वामी श्रमणु भगवान महावीर स्वामीनी आज्ञा भेजवीने गोचरी भाटे नीकणता तेभञ्ज तेओ पणु युधिष्ठिरनी आज्ञा भेजवीने इत्थिकल्प नगरमा उच्य, नीय,

हस्तिकल्पे नगरे उच्चनीचम यमकुलानि ' अडमाणा ' षटन्त बहुजनगण्ड निशा-
मयन्ति-मृषन्ति=किं मृषन्तीत्याह- ' एव खलु हे देवानुप्रियाः ! अर्हन् अरिष्ट-
नेमिः ' उज्जितसेलसिहरे ' उज्जयन्तगेलशिखरे-गिरनारपर्वतोपरिभागे मासि-
केन भक्तेन भक्तप्रत्याख्यानं पानकेन-पानीयरहितेन चतुर्विधाहारपरित्यागेने-
त्यर्थः ' पञ्चहिं छत्तीसेहिं अणगारसर्हिं ' पञ्चभि पट्त्रिंशताऽनगारशतैः=शट्त्रिं
शदधिरूपञ्चशतसन्त्यकैरनगारैः सार्धं कालगतो यावत्-सिद्धोबुद्धः परिनिर्वृत
सर्वदुःखप्रहीणो जात ' ।

' तएण ' ति ' तत् खलु ते युधिष्ठिरवर्जाश्चत्तरोऽनगारा बहुजनस्यान्तिके
एतमर्थं श्रुत्वा हस्तिकल्पाद् नगरात् प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव सहस्रा-
कल्प नगर में उच्च, नीच एव मध्यम कुलों में गोचरी के लिये आये।
उस समय इन्होंने अनेक मनुष्यों के मुख से इस प्रकार समाचार सुने
(एव देवानुप्रिया ! अरहा अरिष्टनेमी उज्जितसेलसिहरे मासिएण
भक्तेण अपाणएण पचहिं छत्तीसेहिं अणगारसर्हिं सद्धिं कालगए जाव
पहीणे, तएण ते जुहिद्विल्लवज्जा चत्तारि अणगारा बहुजणस्स अतिए
एयमट्ठ सोच्चा हत्थिकप्पाओ पडिणिस्सममति) देवानुप्रियों ! अर्हत
अरिष्टनेमि ऊर्जयतशैल शिखर पर-गिरनार पर्वत के ऊपर एक मास
के चतुरविध आहार के परित्यागरूप भक्तप्रत्याख्यान से ५३६ अनगा-
रों के साथ कालगत यावत् सिद्ध, बुद्ध, परिनिर्वृत हो कर सर्व
दुःखों से रहित हो गये हैं। इस प्रकार अनेक मनुष्यों के मुख से इस
समाचार को सुनकर वे युधिष्ठिर वर्ज चारों अनगार उस हस्तिकल्पन
गर से निकले (पडिनिक्खमित्ता जेणेव सहससवणे उज्जाणे जेणेव

अने मध्यम कुलोभा गोचरी भाटे आणा ते सभये तेभणु धणा भाणुणेना
मुभथी ये नतना सभायारे सालण्या डे—

(एव देवानुप्रिया ! अरहा अरिष्टनेमी उज्जितसेलसिहरे मासिएण भक्तेण
अपाणएण पचहिं छत्तीसेहिं अणगारसर्हिं सद्धिं कालगए जाव पहीणे, तएण ते
जुहिद्विल्लवज्जा चत्तारि अणगारा बहुजणस्स अतिए एयमट्ठ सोच्चा हत्थिकप्पाओ
पडिणिस्सममति)

हे देवानुप्रियो ! अर्हत अरिष्टनेमिऊर्जयत शैलशिखर ऊपर-गिरनार
पर्वत ऊपर-अेव मासना यारे नतना आहारना परित्याग रूप लक्ष प्रत्या
भ्यानथी प३६ अनगारोनी साथे कालगत यावत् सिद्ध, बुद्ध, परिनिर्वृत
धर्मे सर्व दुःखोधी मुक्त थण गया छे आ प्रभाणु धणा भाणुणेना मुभथी
आ नतना सभायारे सालणीने ते युधिष्ठिर वगरना यारे अनगारो ते
हस्तिकल्प नगरथी नीकण्या

अरण्यमुद्यान यत्रैव युधिष्ठिरोऽनगरस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य भक्तपानं पंच
 क्ववति ' प्रत्याख्यान्ति=प्रत्याख्याय ' गमनागमनस्त ' गमनागमनं प्रतिक्रामन्ति
 ईर्यापथिकीं कुर्वन्ति प्रतिक्रम्य ' एषणमनेषण ' एषणामनेषणाम् आलोचयन्ति,
 आलोच्य भक्तपानं-प्रतिदर्शयन्ति-युधिष्ठिरस्य पुरोऽयस्थाप्य प्रतिदर्शयन्ति, प्रति
 दर्शय एवमवादिषुः-एव खलु हे देवानुप्रिय ! यावत् कालगतः=अर्हन् अरिष्टनेमि
 मोक्षमाप्तः, ' त ' तस्मात् श्रेयः खलु अस्माक हे देवानुप्रियाः ! इमं पूर्ववृष्टीत

जुहिद्विल्ले अणगारे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता भक्तपाण पंच
 क्ववति, पंचक्वित्ता गमणागमणस्त पडिक्रमति पडिक्रमित्ता एषणम
 नेषण आलोचति, आलोचत्ता भक्तपाण पडिदसेति पडिदसित्ता एव
 वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! जाव कालगत त सेय खलु अम्ह देवा
 णुप्पिया ! इमं पुव्वगहिय भक्तपाण परिट्टवेत्ता सेत्तुज पव्वय सणिय
 सणिय दुरुहित्तण) निरुलकर वे जहा सहस्राअवन नाम का उद्यान था
 और उस में भी जहा युधिष्ठिर अनगर विराजमान थे, वहा आये।
 वहां आकर उन्होंने ने उनकी साक्षी से भक्त प्रत्याख्यान करदिया और
 भक्त प्रत्याख्यान करके फिर उन्होंने ईर्यापथ शुद्धि की। शुद्धि करके
 एषणा अनेषणा की आलोचना करके फिर उन्होंने लाये हुए उस
 आहार को युधिष्ठिर अनगर के समक्ष रख कर दिखलाया। दिखलाकर
 फिर वे इस प्रकार कहने लगे। हे देवानुप्रिय ! अर्हन् अरिष्टनेमि मुक्ति
 को प्राप्त हो चुके है-इसलिये हे देवानुप्रिय ! हमको अब यही उचित

(पडिनिरुलमित्ता जेणेव सहस्रमवणे उज्जाणे जेणेव जुहिद्विल्ले अणगारे
 तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता भक्तपाण पंचक्ववति पंचक्वित्ता गमणागमणस्त
 पडिक्रमति, पडिक्रमित्ता एषणमनेषण आलोचति, आलोचत्ता भक्तपाण पडिदसेति
 पडिदसित्ता एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! जाव कालगत त सेय खलु
 अम्ह देवाणुप्पिया ! इमं पुव्वगहियभक्तपाण परिट्टवेत्ता सेत्तुज पव्वय सणिय
 सणिय दुरुहित्तण)

नीकणीने तेणो न्या सहस्राअवन नामे उद्यान હતુ અને તેમા પણ
 ન્યા યુધિષ્ઠિર અનગાર હતા ત્યા આવ્યા ત્યા આવીને તેમણે તેમની સામે
 ભક્ત પાનનું પ્રત્યાખ્યાન કરી દીધું પ્રત્યાખ્યાન કરીને તેમણે ઈર્યાપથની શુદ્ધિ
 કરી શુદ્ધિ કરી અને અનેષણા કરી, આલોચના કરી આલોચના
 કરીને તેમણે । તે આહારને યુધિષ્ઠિર અનગારની સામે મૂકીને
 ખતાવ્યો । પ્રમાણે કહેવા લાગ્યા કે હે હે !
 અહં ત છે એટલા માટે

भक्तपान परिष्ठाप्य 'सेत्तुज' शत्रुजय-शत्रुजयनामक पर्वत शनैः शनैर्दूरोहितुम् = आरोहितुम्, तथा- 'सलेहणा झूसणा झूसियाण' सलेखना जोषणा जुष्टाना = सलेखनाया कषायशरीरकृपीकरणे या जोषणा-भीतिः सेवा वा तथा जुष्टा-सेवितास्तेषा = सलेखनातपःकारिणामित्यर्थः - कालम्-अनवकाङ्क्षमाणानाम् - अनिच्छताम् विहरन्तुम्, इति कृत्वाऽन्योन्यस्यैतमर्थं प्रतिशृण्वन्ति = स्त्रीकुर्वन्ति, प्रतिश्रुत्य तद् पूर्वगृहीत भक्तपानम् एकान्ते = प्रासुके स्थाने परिष्ठापयन्ति, परिष्ठाप्य यत्रैव शत्रुजयः पर्वतस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य शत्रुजय पर्वत शनैः शनैर्दूरोहन्ति आरोहन्ति, दूरुह्य यावत्-कालमनवकाङ्क्षमाणा विहरन्ति ।

है कि हम इस पूर्व गृहीत भक्त पान का परिष्ठापन कर शत्रुजय नामके पर्वत पर धीरे धीरे चढ़े (सलेहणा झूसणा झूसियाण काल अणवकखमाणान विहरित्तए त्तिकट्टु अणमणस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता तं पुव्वगहिय भत्तपाण एगते परिट्ठ्वेति, परिट्ठवित्ता जेणेव सेत्तुज पव्वए तेणेव उवागच्छति) और वहाँ काय और कषाय को कृश करनेवाली सलेखना मरणाशसा से रहित होकर प्रीति पूर्वक धागण करे इस प्रकार विचार करके उन्हीं ने परस्पर के इस विचार रूप अर्थ को स्वीकार कर लिया । स्वीकार करके फिर उस पूर्व गृहीत भक्त पान को उन्होंने एकान्त स्थान में परिष्ठापित कर दिया और परिष्ठापित करके वे सब जहाँ शत्रुजय पर्वत या वहाँ चले गये (उवागच्छित्ता) वहाँ जाकर के (सेत्तुज पव्वय दुरुहति, दुरुहित्ता जाव काल अणव-

हवे अभ० अ० वात योग्य लागे छे के अमे आ पूर्वगृहित भक्तपाननु परिष्ठापन करीने शत्रुजय नामना पर्वत उपर धीमे धीमे चढ़ीये

(सलेहणा झूसणा झूसियाण काल अणवकखमाणान विहरित्तए त्तिकट्टु अणमणस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता तं पुव्वगहिय भत्तपाण एगते परिट्ठ्वेति, परिट्ठवित्ता जेणेव सेत्तुज पव्वए तेणेव उवागच्छति)

अने त्या काय अने कषायने कृश करनारी सलेखनाने भरषुशा साथी रहित थधने त्रेमपूर्वक धारणु ठरीये आ प्रभाणु विचार करीने तेमणु अेक भीमना आ विचार रूप अर्थने स्वीकारी लीधे स्वीकार करीने तेमणु ते पूर्वगृहीत भक्तपानने अेकान्त स्थाने परिष्ठापित ठरी दीधु अने परिष्ठापित करीने तेअो सवे' न्या शत्रुजय पर्वत हतो त्या आख्या गया (उवागच्छित्ता) त्यां नधने—

(सेत्तुज पव्वय दुरुहति, दुरुहित्ता जाव काल अणवकखमाणा विहरन्ति,

अरण्यमुद्यान यत्रैव युधिष्ठिरोऽनगारस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य भक्तपानं पच्य-
 क्वति ' प्रत्याख्यान्ति=प्रत्याख्याय ' गमनागमनस्त ' गमनागमन प्रतिक्रामन्ति
 ईर्यापथिकीं कुर्वन्ति प्रतिक्रम्य ' एषणमनेषण ' एषणामनेषणाम् आलोचयन्ति,
 आलोच्य भक्तपान-प्रतिदर्शयन्ति-युधिष्ठिरस्य पुरोऽयथाप्य प्रतिदर्शयन्ति, प्रति-
 दर्श्य एषमगादिपुः-एव खलु हे देवानुप्रिय । यात् कालगतः=अर्हन् अरिष्टनेमि
 मोक्षमाप्तः, ' त ' तस्मात् श्रेयः खलु अस्माक हे देवानुप्रिया । इम पूर्वगृहीत

जुहिष्ठिल्ले अणगारे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छिता भक्तपाण पच्य-
 क्वति, पच्यक्वित्ता गमणागमनस्त पडिक्रमति पडिक्रमित्ता एषणम-
 नेषण आलोचति, आलोचिता भक्तपाण पडिदसेति पडिदसित्ता एव
 वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! जात् कालगतं त सेय खलु अम्ह देवा-
 णुप्पिया । इम पुव्वगहिय भक्तपाणं परिद्वेत्ता सेत्तुज पव्वय सणिय
 सणिय दुरुहत्तए) निरुलरु वे जहां सहस्राअवन नाम का उद्यान था
 और उस में भी जहा युधिष्ठिर अनगार विराजमान थे, वहा आये ।
 वहां आकर उन्हो ने उनकी साक्षी से भक्त प्रत्याख्यान करदिया और
 भक्त प्रत्याख्यान करके फिर उन्हो ने ईर्यापथ शुद्धि की । शुद्धि करके
 एषणा अनेषणा की आलोचना करके फिर उन्होंने लाये हुए उस
 आहार को युधिष्ठिर अनगार के समक्ष रख कर दिखलाया । दिखलाकर
 फिर वे इस प्रकार कहने लगे । हे देवानुप्रिय ! अर्हन् अरिष्टनेमि मुक्ति
 को प्राप्त हो चुके है-इसलिये हे देवानुप्रिय ! हमको अब यही उचित

(पडिनिस्वमित्ता जेणेव सहस्रअवणे उज्जाणे जेणेव जुहिष्ठिल्ले अणगारे
 तेणेव उवागच्छति उवागच्छिता भक्तपाण पच्यक्वति पच्यक्वित्ता गमणागमनस्त
 पडिक्रमति, पडिक्रमित्ता एषणमनेषण आलोचति, आलोचिता भक्तपाण पडिदसेति
 पडिदसित्ता एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया । जात् कालगतं त सेय खलु
 अम्ह देवाणुप्पिया ! इम पुव्वगहियभक्तपाणं परिद्वेत्ता सेत्तुज पव्वय सणिय
 सणिय दुरुहत्तए)

नीकणीने तेओ न्या सहस्राअवन नामे उद्यान हुतु अने तेमा पणु
 न्या युधिष्ठिर अनगार हुता त्या आव्या त्या आवीने तेमणे तेमनी सामे
 लकत पानतु प्रत्याख्यान करी दीधु प्रत्याख्यान करीने तेमणे धर्यापथनी शुद्धि
 करी शुद्धि करीने अनेषणा अने अनेषणा करी, आलोचना करी आलोचना
 करीने तेमणे लध आवेला ते आहारने युधिष्ठिर अनगारनी सामे भूझीने
 अताओ अताओ भाइ तेओ आ प्रभाणे उडेवा लाग्या डे डे ।
 अर्हन् अरिष्टनेमि प्रभुओ मुक्ति भेजनी छे अटला भाटे ।

भक्तपान परिष्ठाप्य 'सेत्तुज' शत्रुजय-शत्रुजयनामकं पर्वत शनैः शनैर्दूरोहितुम् = आरोहितुम्, तथा- 'सलेहणाञ्जसणाञ्जसियाण' संलेखना जोषणाजुष्टाना=सलेखनाया कपायशरीरकृपीकरणे या जोषणा-प्रीतिः सेवा या तथा जुष्टा-सेवितास्तेषा=सलेखनातपःकारिणामित्यर्थ'-कालम्-अनवकाङ्क्षमाणानाम् - अनिच्छताम् विद्वर्त्तुम्, इति कृत्वाऽन्योन्यस्यैतमर्थं प्रतिशृण्वन्ति=स्वीकुर्वन्ति, प्रतिश्रुत्य तद् पूर्वगृहीत भक्तपानम् एकान्ते=प्रासुके स्थाने परिष्ठापयन्ति, परिष्ठाप्य यत्रैव शत्रुजयः पर्वतस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य शत्रुजय पर्वत शनैः शनैर्दूरोहन्ति आरोहन्ति, द्रुह्य यावत्-कालमनवकाङ्क्षमाणा विद्वरन्ति ।

है कि हम इस पूर्व गृहीत भक्त पान का परिष्ठापन कर शत्रुजय नामके पर्वत पर धीरे धीरे चढे (सलेहणाञ्जसणाञ्जसियाण काल अणवकख-माणान विहरित्तए त्तिकट्टु अणमणस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसु-णित्ता तं पुञ्जगहिय भक्तपाणं एगते परिद्वेवेति, परिद्ववित्ता जेणेव सेत्तुज पञ्चए तेणेव उवागच्छति) और वहाँ काय और कपाय को कृश करनेवाली सलेखना मरणाशसा से रहित होकर प्रीति पूर्वक धारण करे इस प्रकार विचार करकेउन्होंने परस्पर के इस विचार रूप अर्थ को स्वीकार कर लिया । स्वीकार करके फिर उस पूर्व गृहीत भक्त पान को उन्होंने एकान्त स्थान मे परिष्ठापित कर दिया और परिष्ठापित करके वे सत्र जहाँ शत्रुजय पर्वत या वहाँ चले गये (उवागच्छित्ता) वहा जाकर के (सेत्तुज पञ्चय दुरुहति, दुरुहित्ता जाव काल अणव-

डवे अमं ए व वात योअ्य लागे छे के अमे आ पूर्वगृहित लडतपाननु परिष्ठापन करीने शत्रुजय नामना पर्वत उपर धीमे धीमे चढीअे

(सलेहणाञ्जसणाञ्जसियाण काल अणवकखमाणान विहरित्तए त्तिकट्टु अणमणस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता त पुञ्जगहिय भक्तपाण एगते परिद्वेवेति, परिद्ववित्ता जेणेव सेत्तुज पञ्चए तेणेव उवागच्छति)

अने त्या जाय अने कपायने कृश करनारी सलेखनाने मरणाशसा साथी रहित धधने प्रेमपूर्वक धारण करीअे आ प्रभावे विचार करीने तेमळे अेक भीतना आ विचार रूप अर्थने स्वीकारी लीधे स्वीकार करीने तेमळे ते पूर्वगृहीत लडतपानने अेजांत स्थाने परिष्ठापित करी लीधु अने परिष्ठापित करीने तेअे अवे न्या शत्रुजय पर्वत डते त्या आख्या गया (उवागच्छित्ता) त्यां वधने—

(सेत्तुज पञ्चय दुरुहति, दुरुहित्ता जाव काल अणवकखमाणा विद्वरति,

ततः खलु ते युधिष्ठिरप्रभृताः पश्चानगाराः 'सामाह्वयमाह्वयाः' सामायि
कादीनि चतुर्दशपूर्वाणि अरीत्य ऋणि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायपालयिा षष्ठाष्ट
मादितपः कृत्वा द्विमासिकया सलेह्यनयाऽऽत्मान 'ज्ञोसित्ता' जुष्टा सेवित्वा
यस्यार्थाय क्रियते नग्नभासो=निर्ग्रन्थभास यावत् तमर्षमाराग्यति, आराध्य
अनन्तम् अनन्तार्थविषयकं यावत् 'केवलवरणाणदसणे' केवलवरज्ञानदर्शनं समु
त्पन्नं यावत् सिद्धा=गिद्धिगतिं प्राप्ता इत्यर्थः ॥ सू० ३५ ॥

कखमाणा विहरति, तण्ण ते जुहिष्ठिल्लपामोक्खा पच अणगारा सामा
ह्वयमाह्वयाऽ चोदसपुब्बाऽ ऋणि वामाणि० दो मासियाण सलेहणाए
अत्ताण ज्ञोसित्ता जस्सट्ठाए कीरइ, णग्गभावे जाव तमट्टमारोहति,
तमट्टमारहित्ता अणते जाव केवलवरणादसणे समुत्पन्ने जाव सिद्धो)
वे शत्रुजय पर्वत पर चढे चढकर के उन्होंने मरणागसा से रहित होकर
सलेहना धारण करली । इस तरह उन युधिष्ठिर प्रभुव पच अनगारोंने
सामायिक आदिचतुर्दश पूर्वोका अध्ययन करके अनेक वर्षों तक श्राम
ण्य पर्याय का पालन करके तथा षष्ठ, अष्टम, आदि तपस्याओ को
करके अन्त में दो मास की सलेहना से अपने आप की प्रीति पूर्वक
सेवित किया और जिस निमित्त नग्न भाव-निर्ग्रन्थ अवस्था धारण की
थी उस अर्थ को उन्होंने सिद्ध कर लिया । सिद्ध करके-आराधित कर
के अनन्त अर्थ को विषय करने वाले केवलवरज्ञानदर्शन को उत्पन्नकर
यावत् वे सिद्धि गति को प्राप्त हो गये ॥ सूत्र ३५ ॥

तण्ण ते जुहिष्ठिल्लपामोक्खा पच अणगारा सामाह्वयमाह्वयाऽ चोदसपुब्बाऽ
ऋणि वामाणि० दोमासियाए सलेहणाए अत्ताणे ज्ञोसित्ता जस्सट्ठाए कीरइ,
णग्गभावे जाव तमट्टमारोहति, तमट्टमारहित्ता अणते जाव केवलवरणाण
दसणे समुत्पन्ने जाव सिद्धो)

तेज्जे शत्रुजय पर्वत उपर चढया अने चढीने तेमहे मरणास साथी
रहित थधने सलेहना धारण करी लीधी आ प्रभाहे ते युधिष्ठिर प्रभु
पाथे अनगारोत्ते सामायिक वगेरे चतुर्दश पूर्वोत्तु अध्ययन करीने घण्टा वर्षो
सुधी श्रामण्य-पर्यायतु पालन करीने तेमज पछ अष्टम वगेरे तपस्याओने
करीने छेवटे जे भासनी सलेहनाथी प्रेमपूर्वक चोतानी जतने सेवित करी
अने जे निमित्तने लधने नग्नभाव-निर्ग्रन्थ अवस्था धारण करी छती ते
अर्थने तेमहे सिद्ध करी लीधी सिद्ध करीने आराधित करीने अनन्त अर्थने
विषयरूप भनावनार देवज्ञान दर्शनने उत्पन्न करीने यावत् तेज्जे सिद्धगति
मेजधी लीधी ॥ सूत्र ३५ ॥

मूलम्—तएणं सा दोवई अज्जा सुव्वयाण अज्जियाण अंतिए
सामाइयमाइयाइं एकारसअंगाइ अहिज्जइ अहिज्जिता वहूणि
वासाणि० मासियाए सलेहणाए० आलोइयपडिक्कता कालमासे
कालं किच्चा वंभलोए उव्वन्ना, तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं
दस सागरोवमाइं ठिई पणत्ता तत्थ णं दुवयस्स देवस्स दस
सागरोवमाइं ठिई पन्नत्ता, से णं भत्ते । दुवए देवे ताओ जाव
महाविदेहे वासे सिज्जइ जाव काहिइ । एवं खलु जंबू । सम
णेणं जात्र सपत्तेणं सोलमस्स णायज्जयणस्स अयमट्ठे पणत्ते
त्तिवेमि ॥ सू० ३४ ॥ सोलसमं नायज्जयणं समत्त ॥ १६ ॥

टीका—‘तएण मा’ इत्यादि । ततस्तदनन्तर खलु मा द्रौपदी आर्या
साध्वी सुव्रतानामार्यिक्रानामन्तिके सामायिक्रानिक्रानि एकादशाङ्गानि अधीते,
अधीत्य वहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्याय पालयित्वा मासिक्या सलेखनया आलोचित
प्रतिक्रान्ता कालमासे काल कृत्वा ‘वंभलोए पचमे ब्रह्मलोके देवत्वेन’ उव्वन्ना’

‘तएणं सा दोवई’ इत्यादि ।

टीकार्य—(तएण) इसके बाद (सा दोवई अज्जा) उस द्रौपदी आर्यानि
(सुव्वयाण अज्जियाण अतिए सामाइयमाइयाइ एकारसअगाइ अहि
ज्जइ) सुव्रता आर्या के पास सामायिक्र आदि ११ अंगों का अ ययन
किया (अहिज्जिता वहूणि वासाणि० मासियाए सलेहणाए० आलोइय
पडिक्कता कालमासे काल किच्चा वंभलोए उव्वन्ना) अभ्ययन करके
अनेक वर्ष तक श्रामण्य पर्याय का पालन कर एक मास की सलेखना

तएण सा दोवई इत्यादि—

टीकार्य—(तएण) त्थारपथी (सा दोवई अज्जा) ते द्रौपदी आर्याये (सुव्व
याण अज्जियाण अ तिए सामाइयमाइयाइ एकारसअगाइ अहिज्जइ) सुव्रता
आर्यानी पासे आमायिक्र वगेरे ११ अंगोनु अध्ययन कथुं

(अहिज्जिता वहूणि वासाणि० मासियाए सलेहणाए० आलोइय पडिक्कता
कालमासे कालकिच्चा वंभलोए उव्वन्ना)

अध्ययन करीने धृष्टा वर्षो सुधी श्रामण्य पर्यायनु पालन कथुं त्थार

ઉત્પન્ના, તત્ર તસ્મિન્ દેવઓક્રે-વલ્લ અત્યેક્રેપા=ક્રેપાવિદ્યાનામ્ દશસાગરોપ
માનિ સ્થિતિ પ્રજ્ઞતા, તત્ર ચલુ દ્રૌપદેયમ્યમ્ય દશસાગરોપમાનિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞતા તત્ર
ચલુ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદ્રન્ત । સ ચલુ દ્રૌપદો દેવ આયુર્મરન્થિતિક્ષયેણ 'તાઓ'
તસ્માદ્ દેવલોકાન્ન્યુત્પા કુત્રગમિષ્યતિ કુત્રોત્પત્સ્યતે ? ભગવાન્ પ્રાહ-'જાવ'
ઈતિ યાવન્મહાવિદેહે ર્ષે સેત્સ્યતિ, યાવત્ સર્વદુઃસ્વાનામન્ત કરિષ્યતિ ।

સે આલોચિત પ્રતિક્રાન્ત વન વે કાલ અવસર કાલ કર કે પાચર્ષે બ્રહ્મ
લોક મેં દેવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હુઈ । (તત્થ ણ અત્યે ગઢયાણ દેવાણ
દસ સાગરોવમાહ ઠિઈ પળ્લતા, તત્થ ણ દુવયસ્સ દવસ્મ દસ સાગરો
વમાહ ઠિઈ પળ્લતા, સેણ ભત્તે ! દુવણ દેવે તાઓ જાવ મહાવિદેહે વાસે
સિજ્ઞહ, જાવ કાહિહ । ઇવ ચલુ જવૂ । સમણેણ જાવ સપત્તેણ સોલસમ
સ્સ ણાયજ્ઞયણસ્સ અયમદ્દે પળ્લત્તે ત્તિવેમિ) ઉસ દેવલોક મેં કિતનેક
દેવોં કી દશ સાગર કી સ્થિતિ પ્રજ્ઞસ હુઈ હૈ । સો વહા દ્રૌપદી દેવ કી
દશ સાગર કી સ્થિતિ હુઈ । અવ ગૌતમ પૂચ્છતે હે હે ભદ્રત ! વહ દ્રૌપદી
દેવ આયુ ઇવ ભવસ્થિતિ કે ક્ષય હોને પર વહા સે ચવ કર કહાં જાવે
ગા-કહા ઉત્પન્ન હોગા ? ઉત્તર મેં ભગવાન કહતે હૈં-હે ગૌતમ ! વહ
દ્રૌપદી દેવ વહાં સે ચવ કર મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં ઉત્પન્ન હોગા ઓર વહીં
સે સિદ્ધ વનેગા યાવત્ સમસ્ત દુઃખોં કા અત કરેગા ।

પછી એક માસની સલેખનાથી આલોચિત પ્રતિકાત બનીને તેઓ કાળ અવ
સરે કાળ કરીને પાચમા બ્રહ્મલોકમા દેવના પર્યાયથી જન્મ પામી

(તત્થ ણ અત્યેગઢયાણ દેવાણ દસ સાગરોવમાહ ઠિઈ પળ્લતા, તત્થ ણ
દુવયસ્સ દેવસ્સ દસ સાગરોવમાહ ઠિઈ પળ્લતા, સેણ ભત્તે ! દુવણ દેવે તાઓ
જાવ મહાવિદેહે વાસે સિજ્ઞહ, જાવ કાહિહ । ઇવ ચલુ જવૂ । સમણેણ જાવ
સપત્તેણ સોલસમસ્સ ણાયજ્ઞયણસ્સ અયમદ્દે પળ્લત્તે ત્તિવેમિ)

તે દેવલોકમા કેટલાક દેવે ની દશ સાગરની સ્થિતિ પ્રજ્ઞસ થઈ છે આ
પ્રમાણે દ્રૌપદી દેવીની ત્યા દશ સાગરની સ્થિતિ પ્રજ્ઞસ થઈ

હવે ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન કરે છે કે હે ભદ્રન્ત ! તે દ્રૌપદી દેવીની આયુ
અને ભવસ્થિતિ પૂરી થયા બાદ ચવીને જ્યા જશે ? કયા ઉત્પન્ન થશે ?

તેના ઉત્તરમા ભગવાન કહેવા લાગ્યા કે હે ગૌતમ ! તે દ્રૌપદી દેવ
ત્યાથી ચવીને મહાવિદેહ ક્ષેત્રમા ઉત્પન્ન થશે અને ત્યાંથી જ સિદ્ધ બનશે
યાવત્ તેઓ પોતાના સમસ્ત દુઃખોને અત કરશે

सुधर्मास्वामी कथयति—‘ एव खलु ’ इत्यादि । एव खलु हे जम्बू ! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनामत्रेय स्थान संप्राप्तेन षोडशस्य ज्ञाता अध्ययनस्यार्थं=पूर्वकथितः अर्थः=द्रौपदीदृष्टान्तरूपो भावः प्रज्ञप्तः, प्ररूपितः, इति व्रतीमि व्याख्यापूर्ववत् ॥ ३४ ॥

इति श्री-विश्वप्रख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचरूपश्चदशभाषाकलितललितरू-
लापालापक-प्रविशुद्रगद्यपद्यनैकरन्थनिर्मापक-यादिमानमर्दक-श्री गार्हस्थ्य-
त्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त-‘ जैनशास्त्राचार्य ’ पदभूषित-कोल्हापुरराज-
गुरु-बालप्रह्लादचारि-जैनाचार्य-जैन र्मदिवाकरपूज्यश्री घासीलाल-
प्रतिविरचिताया ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रस्या, नगारधर्माभृतवर्षि-
ण्यारयाया व्याख्याया षोडशमध्ययन समाप्त ॥ १६ ॥

सुधर्मा स्वामी कहते हैं हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर ने जो सिद्धि गतिनामक स्थान को प्राप्त हो चुके हैं इस षोडश ज्ञानाध्ययन का यह पूर्वोक्त द्रौपदी दृष्टान्त रूप भाव अर्थ प्ररूपित किया है । ऐसा मैं उन्हीं श्रमण भगवान महावीर के द्वारा कहे श्रुत उपदेश के अनुसार कहता हूँ ॥ सूत्र ३६ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराज कृत्
“ ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्र ” की अनगारधर्माभृतवर्षिणी व्याख्याका
सोलहवा अध्ययन समाप्त ॥ १६ ॥

सुधर्मा स्वामी कहे छे छे छे जम्बू ! श्रमणु भगवान महावीरे के ज्ञेयो सिद्धिगति नामक स्थानने भेजरी चुकना छे आ सोणमा ज्ञाताध्ययनने आ पूर्वे वर्षुवेके द्रौपदी दृष्टान्त उपलाव अर्थ प्ररूपित कथे छे ते श्रमणु भगवान महावीर वडे कडेवाकेला श्रुत उपदेश सुजण ज तमने छु कही हो छु ॥ सूत्र ३६ ॥
श्री जैनाचार्य घासीलालजी महाराज कृत् ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रनी अनगारधर्माभृतवर्षिणी व्याख्यानु सोणसु अध्ययन समाप्त ॥ १६ ॥

नाए जाव उवायमाणा२ चिट्टति, तएण से णिज्जामए तओ मुहुत्तरस्स लद्धमइए३ अमूढदिसाभाए जाए यावि होत्था, तएणं से णिज्जामए ते वहवे कुच्चिधारा य ४ एवं वयासी-एव खल्ल अह देवाणुप्पिया । लद्धमइए जाव अमूढदिसाभाए जाए, अम्हे ण देवाणुप्पिया । कालियदीवे तेणं सबूढा एसण कालियदीवे आलोक्कइ, तएणं ते कुच्चिधारा य४ तस्स णिज्जामगस्स अतिए एयमट्ट सोच्चा हट्टुट्टा पयस्सिखणाणुकूलेण वा-एणं जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छति उवागच्छत्ता पोय वहणं लवेति लवित्ता एगट्टियार्हि कालियदीव उत्तरति, तत्थ ण ते वहवे हिरण्णागरे य सुवण्णागरे य रयणागरे य बइरागरे य वहवे तत्थ आसे पासति, कि ते ?, हरिरेणुसोणिसुत्तगा आइण्णवेढा, तएण ते आसा ते वाणियए पासति पासित्ता तेसि गंध अग्घायंति अग्घायित्ता भीया तत्था उव्विग्गमणा तओ अणेगाइ उव्वमति, तेण तत्थ पउरतणपाणिया निव्वभया निरुव्विग्गा सुह सुहेण विहरति ॥ सू० १ ॥

टीका—जम्बूस्वामी पृच्छति—यदि खल्ल भदन्त ! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनामत्रेय स्थान सम्प्राप्तेन पोडशस्य ज्ञाताध्ययनस्यायमर्थः—

—जइण भते ! इत्यादि ।

टीकार्थ—(भते ! हे भदन्त ! (जइण समणेण भगवता महावीरेण जाव संपत्तेण) यदि श्रमण भगवान् महावीरने किजो सिद्धिगति नामकस्थान को प्राप्तकर चुके हैं (सोलसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्टे पणत्ते सत्तर-

जइण भते ! इत्यादि—

टीकार्थ—(भते !) हे भदन्त ! (जइण समणेण भगवता महावीरेण जाव संपत्तेण) ने श्रमणु भगवान् महावीरे के-लेओ सिद्धिगति नामना स्थानने भेणवी थूक्या छे

पूर्वोक्तो भावः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मास्वामीप्राह—एव खलु हे जम्त्रः ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये हस्तिशीर्षं नाम नगरमासीत् । ' वण्णओ ' वर्णकः=' ऋद्धे ' त्यादि-नगरवर्णनम् पूर्ववद् विज्ञेयम् । तत्र खलु कनककेतुर्नाम राजाऽऽसीत् ' वण्णओ ' वर्णकः—' महयाहिमवते ' त्यादि राजवर्णन पूर्ववद् बोध्यम् । तत्र खलु हस्तिशीर्षे

मस्स ण भते ! णायज्जयणस्स समणेण भगवया महावीरेण जाव सप-त्तेण के अट्ठे पणत्ते) सोलहवें जाताध्ययन का यह पूर्वोक्तरूप से अर्थ प्ररूपित किया है—तो सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए उन्हीं श्रम-ण भगवान् महावीर ने सत्रहवें जाताध्ययन का क्या अर्थ प्ररूपित किया है (एव खलु जवू !) इस प्रकार जवू स्वामी के पूछने पर सुध-र्मा स्वामी अब उन्हें समझाते हैं—वे कहते हैं हे जवू ! तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है—

(तेण कालेण तेण समएण हत्थिसीसे नयरे होत्था, वण्णओ, तत्थ, ण कणगकेज्जगाम राया होत्था, वण्णओ, तत्थ, ण हत्थिसीसे णयरे बह्वे सज्जत्ता णावा वाणिगया परिवसत्ति, अट्ठ्ठा जाव बहुजणस्स अपरिभूया यावि होत्था) उस काल और उस समय मे हस्तिशीर्ष नाम का नगर था । " ऋद्ध " इत्यादि रूपसे पूर्व अध्ययनों में वर्णित पाठ की तरह इस नगर का वर्णन जानना चाहिये । उस नगर मे कनक केतु नामका राजा रहता था । इसका भी वर्णन " महया हिमवत " इत्यादिरूप से पहिले के अध्ययनोंमे वर्णित राजाओंके वर्णन जैसा ही जानना चाहिये । उस

(सोलसमस्स णायज्जयणस्स अयमट्ठे पणत्ते सत्तरमस्स ण भते ! णायज्ज यणस्स समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते)

सोणमा जाताध्ययननेा पूर्वोक्त इपे अर्थ प्ररूपित कर्था छे त्त्यारे सिद्ध गति स्थानने भेजणी चूकेला ते ज्ज श्रमणु लगवान भडावीरे सत्तरमा जाता ध्ययननेा शेा अर्थ प्ररूपित कर्था छे

(एव खलु जवू) आ सीते ज्ज भूना प्रश्नने सालणीने तेभने सभन्तवत्ता सुधर्मा स्वामी कडेवा लाग्या के डे ज्ज भू ! तभारा प्रश्ननेा ज्जवाण आ प्रभाणु छे के —

(तेण कालेण तेण समएण हत्थिसीसे नयरे होत्था, वण्णओ, तत्थयण कण-गकेज्जगाम राया होत्था, वण्णओ, तत्थयण हत्थिसीसे णयरे बह्वे सज्जत्ता णावा वाणियगा परिवसत्ति, अट्ठ्ठा जाव बहुजणस्म अपरिभूया यावि होत्था)

ते जणे अने ते सभये हुन्तिशीर्षं नामे नगर हुनु " ऋद्ध " वगेरे इपमा पडेलाता अध्ययनोमा वर्णन उरवामा आवेला पाठनी जेभ आ नगरनु वर्णन पणु जण्णी वेवु जेधये ते नगरमा कनककेतु नामे राजा रहेतो हुतो

नाए जाव उवायमाणार चिट्ठंति, तएण मे णिज्जामए तओ मुहुत्तरस्स लद्धमइएअमूढदिसाभाए जाए यात्रि होत्था, तएण से णिज्जामए ते वहवे कुच्छिधारा य ४ एवं वयासी-एव खल्ल अह देवाणुप्पिया । लद्धमइए जाव अमूढदिसाभाए जाए, अम्हे णं देवाणुप्पिया । कालियदीवे तेण सवूढा एसण कालियदीवे आलोकइ, तएण ते कुच्छिधारा य ४ तस्स णिज्जामगस्स अतिए एयमट्ट सोच्चा हट्टुट्टा पयस्खिणाणुकूलेण वाएणं जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छति उवागच्छिता पोय वहण लवेति लवित्ता एगट्ठियाहिं कालियदीव उत्तरति, तत्थ ण ते वहवे हिरण्णागरे य सुवण्णागरे य रयणागरे य वइरागरे य वहवे तत्थ आसे पासति, कि ते ?, हरिरेणुसोणिसुत्तगा आइणवेढा, तएणं ते आसा ते वाणियए पासति पासित्ता तेसि गंध अग्घायति अग्घायित्ता भीया तत्था उव्विग्गमणा तओ अपेगाइ उव्वमति, तेणं तत्थ पउरतणपाणिया निव्वभया निरुव्विग्गा सुह सुहेण विहरति ॥ सू० १ ॥

टीका—जम्बूस्वामी पृच्छति—यदि खल्ल भदन्त ! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनामयेय रथान सम्प्राप्तेन षोडशस्य ज्ञाताध्ययनस्यायमर्थः ॥

—जइण भते ! इत्यादि ।

टीकार्थ—(भते ! हे भदत ! (जइण समणेण भगवता महावीरेण जाव संपत्तेण) यदि श्रमण भगवान् महावीरने किजो सिद्धिगति नामकस्थान को प्राप्तकर चुके हैं (सोलसमस्स णायज्जयणस्स अयमट्टे पण्णत्ते सत्तर-

जइण भते ! इत्यादि—

टीकार्थ—(भते !) हे भदन्त ! (जइण समणेण भगवता महावीरेण जाव सपत्तेण) ने श्रमणु लगवान महावीरे के-लेओ सिद्धगति नामना स्थानने भेणवी थुकेया छे

माना 'सखोद्विज्जमाणी २' सक्षोभ्यमाणा २ पुनः पुनः क्षोभ प्राप्यमाणा सती तत्रैव=एषस्थान एवेतस्ततः परिभ्राम्यति किन्तु ततः पर गन्तु न प्रभवतीति भावः। ततः खलु स नियामकः=नाविक 'णट्टमइए' नष्टमतिक -मतिज्ञानरहितः 'णट्टसुइए' नष्टश्रुतिक -विस्मृतनियामकरासन्नः दिग्निर्णय कर्तुमशक्तत्वात् 'णट्टसण्णे' नष्टसब्धः=मार्गज्ञानरहितः 'मूढदिसाभाए' मूढदिग्भागः=पूर्वदि दिग्निर्णयज्ञानरहितः जातश्चप्यासीत्, पुनश्च स न जानाति यत् कतर=क देश

२ तत्त्वेव परिभ्रमइ, तएण से णिज्जामए णट्टमइए णट्ट सुइए णट्ट सण्णे मूढदिसभाए जाए यावि होत्था) एक दिनकी बात है कि जब ये सायात्रिक पोत वणिक एक जगह मिलकर बैठे हुए थे तब अष्टम अभयन में वर्णित अरहन्क सेठ की तरह इनका लवण समुद्रसे होकर परदेश में व्यापार निमित्त जाने का विचार हुआ। विचार स्थिर होते ही ये जब नौका द्वारा लवण समुद्र में सैकड़ों योजन तक निकल चुके तब इनके लिये जिन रक्षित और जिनपालितकी तरह आकस्मिक अनेक उत्पातशत (सैकड़ों) हुए। उस समय प्रलय कालकी तरह प्रचण्ड वायु उठी। उससे उनकी नौका बार २ डगमगा ने लगी इधर से उधर फिर ने लगी। बार २ चञ्चल होकर बार २ क्षुब्धित होकर एक ही स्थान पर नीची ऊँची होने लगी-उससे आगे वह नहीं बढ़ी। इससे नियामिक-नाविक-मतिज्ञान से रहित हो गया। दिशाओं का निर्णय करने का ज्ञान उसका जाता रहा। वह मार्ग ज्ञान रहित होकर दिग्मूढ बन गया। (ण जोणइ

२ सखोद्विज्जमाणी १ तत्त्वे उपरिभमइ, तएण से णिज्जामए णट्टमइए णट्टसुइए णट्टसण्णे मूढ दिसाभाए जाए यावि होत्था)

एक द्विपत्नी वात छे डे न्यारे तेओ। सर्वे सायात्रिक पोतवणिके ओड स्थाने ओकत्र थधने ओडा डता त्तारे आठमा अध्ययनमा वर्णित अरहन्क शेडनी नेम तेमने। पणु लवण समुद्रमा थधने परदेशमा वेपार भाटे न्वाने। विचार थयो विचार स्थिर थता न तेओ न्यारे नौडा वडे लवण समुद्रमा सेकडे योजन सुधी पडोथी गया त्तारे अनपालित अने अनरक्षितनी नेमन तेमना भाटे पणु सेकडे ओचितता उपद्रवे। उत्पन्न थया ते वधते प्रलय नाणना नेवे। प्रथउ वायु कुकावा लाग्ये। तेथी तेमनी नौका बार बार उग भगवा लागी, आभथी तेम इरवा लागी वारेधडीओ अचण थधने, बार बार क्षुब्धित थधने ओक न स्थान उपर नीचे उपर थवा लागी, तेनाथी आगण वधी नडि तेथी नियामिक-नाविक मतिज्ञानथी रहित वड गये। दिशा ओने लणुवातु तेतु ज्ञान नतु रह्यु मार्गज्ञानथी रहित थधने दिग्मूढ पनी

नगरे पश्यः 'सजजाणायागणियगा' सयात्रानौकावाणिजका' = स = सज्जा
यात्रा = देशान्तरगमन सयात्रा, तत्प्रधाना नौकावाणिजकाः = पोतवाणिज. - सयात्रा
नौका वाणिजकाः परिरसति कीदृशाः ? इत्याह - आद्या यात्र 'बहुजनस्म'
बहुजनस्य सम्बन्धमामान्ये पण्डितनममुदायेनेत्यर्थः 'आरिभूया' अपरिभूताः =
पराभवरहिता चाप्यासन् । तत खलु तेषा सयात्रानौका वाणिजकानाम् अन्यदा =
अन्यस्मिन् कस्मिंश्चित्समये 'एगयाओ' एकत्र एकत्र मिलित्वा 'जहा अरहणओ'
यथा अर्हन्नरु = अत्रेणाष्टमा ययनोक्ता अर्हन्नरु यात्र लवणसमुद्रमनेकानि योजन
शतानि 'ओगाडा' अगाडाः = उचीर्णाथप्यागन् । तत = तत्र खलु तेषा यात्र
वहूनि 'उप्पाइयसयाइ' औत्पातिकशतानि = आकस्मिरोत्पातशतानि यथा माक
न्दिकदाररुयोः - जिनरक्षितजिनपालितयोः सजातानि तथैवास्यापि यात्र 'कालि
यवाए' कालिकरातः प्रलयकालिकरत्नचण्डरातश्च तत्र समुत्थितः । तत = तदन
न्तर खलु सा नौका तेन कालिकरातेन 'आघोलिज्जमाणी २' आघूर्ण्यमाना
२ पुनः पुनर्भ्राम्यन्ती 'सचालिज्जमाणी २' सचाल्यमाना २ पुनः पुनश्चाल्य

हस्तिशीर्षं नगरमें अनेक पोत वाणिज (नाचसे व्यापार करने वाले) रहते
थे । ये एक साथ मिलकर ही परदेश में जाकर व्यापार किया करते थे ।
इनकी उस नगर में अच्छी प्रतिष्ठा थी - कारण ये सब के सब लक्ष्मीदेवी
के विशेष रूप से कृपापात्र थे । (तएण तेसि सजजा णावा वाणियगाणं
अन्नया एगयाओ जहा अरहणाओ जात्र लवणसमुद्द अणेगाड जोयण
सयाइ ओगाडा यावि होत्था, तएण तेसि जाव वहूणि उप्पाइयसयाइ
जहा मागदियदारगाण जाव कालियवाए य तत्थ समुत्थिए, तएण सा
तेण कलियवाएण आघोलिज्जमाणी २ सचालिज्जमाणी २ सखोहिज्जमाणी

आ शब्दतु वर्षुं न पथु " महया हिमवत " वगेरे रूपमा पडैलाना अथ
यनोभा वरुणित शब्दोना वर्षुं न जेवु न नणी लेवु जेधये ते हस्तिशीर्षं
नगरमा धरुा पोतवाणिजो (वडाथु वडे वेपार करनारा) रहेता हुना तेओ
सवे ओडी साथे भणीने परदेशमा जाता अने त्या वेपार करता हुता ते
नगरमा तेभनी सारी ओवी प्रतिष्ठा हुती उभडे भास करीने तेओ सवे
लक्ष्मीना कृपापात्र हुता

(तएण तेसि सजजा णावा वाणियगाण अन्नया एगयाओ जहा अरहणाओ
जात्र लवणसमुद्द अणेगाड जोयणसयाइ ओगाडा यावि होत्था, तएण तेसि जाव
वहूणि उप्पाइयसयाइ जहा मागदियदारगाण जाव कालियवाए य तत्थ समु
त्थिए तएण सा णावा तेण कलियवाएण आघोलिज्जमाणी २)

प्रविशन्ति, अनुप्रविश्य यत्रैव मनस्केतु राजा तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य यावत्
तत्प्राभृतम् ' उपवेति ' उपनयन्ति भूपसमीपे स्थापयन्ति ॥ सू० २ ॥

मूलम्—तएणं से कणगकेऊ राया तेसि सजत्ताणावावाणि-
यगाण त महत्थ जाव पडिच्छइ पडिच्छित्ता त सजत्ताणावा-
वाणियगा एवं वयासी तुव्भेणं देवाणुप्पिया । गामागार जाव
अहिंडह लवणसमुद च अभिक्खणर पोयवहणेणं ओगाहह
तं अत्थि आइं केइ भे कहिन्नि अच्छेरए दिट्ठुपुव्वे ? तएणं ते
सजत्ताणावावाणियगा कणगकेऊ एव वयासी—एव खलु अम्हे
देवाणुप्पिया । इहेव हत्थिसीसे नयरे परिवसामो त चेव जाव
कालियदीव तेणं सवूढा, तत्थ ण वहवे हिरण्णागरा य जाव

कणगकेऊ राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जाव उववेति) वहाँ
भाकर के वे लोग उस हस्तिशीर्ष नगर के बाहर के प्रधान उद्यान में
ठहर गये वहाँ ठहर उन्हो ने वहाँ पर शकटी-गाडी शाकटो-गाडों की
ढील-ठहरा दिया । ढीलकर के राद में महार्थ-महाप्रयोजन साधक भूत
-यावत् प्राभृत भेट को उन्हों ने अपने २ हाथो मे लिया-और लेकर के
वे हस्तिशीर्ष नगर में प्रविष्ट हुए नगर में प्रविष्ट होकर वे जहा कनक
केतु राजा थे वहा पहुँचे । वहा पहुँचकर उन्हो ने उस महाप्रयोजन साधक
भूत प्राभृत को राजा के पास रख दिया ॥ सू० २ ॥

हत्थिसीस नगर अणुपविसत्ति, अणुपविसित्ता, जेणेव कणगकेऊ राया तेणेव उवा
गच्छइ, उवागच्छित्ता जाव उववेति)

त्या आवीने तेज्जो णधा ते हस्तिशीर्ष नगरणी णडारना मुप्य उधा
नमा रेकाध गया, त्या रेकाधने तेमज्जे त्या न शकटी-गाडी अने शाकटो-
गाडाज्जोने छोडी भूडया त्थारणाइ तेमज्जे महार्थ-महाप्रयोजन साधक भूत
यावत् लेटने पोतपोताना छाथोमा वीधी अने एजिने तेज्जो हस्तिशीर्ष नग
रमा प्रविष्ट थया नगरमा प्रविष्ट थधने तेज्जो न्या कनकेतु राजा इतो त्या
पडोअ्या त्या पडोअीने तेमज्जे ते महाप्रयोजन साधक इप लेटने सान्ती
साभे भूडी वीधी ॥ सूत्र २ ॥

वा दिश वा विदिश वा प्रति मे पोतमदनम् नौकायान 'अग्रिष्' अपहतम् महा
 यातेन नीतम्, इति । इति ऋत्या=इतिमनि निधाय अपहतमनः सकन्पो यावत्
 भ्यायति=भार्त्तभ्यान करोति । तत खलु ते उहयः कुक्षिधाराश्च=गार्भतो नौका
 चालकाः कर्णधाराश्च=नाविका । 'गन्धिहृत्गाय' गार्भयकाश्च नीमध्ये यथाव
 सर कर्मकराः, सयात्रानौका राणिजकाः=भाण्डवतयश्च यज्ञीय म निर्यामयः=नौका
 धिपतिरतज्ञोपागच्छन्ति, उवागत्य एवमादिपुः-किं खलु यूय हे देवानुप्रियाः ।
 अपहतमन'सरूपाः निरत्माहमनस्था यावत् 'झियायह' भ्यायथ आर्त्तध्यान
 कुरुथ, आत्रार्थे बहुवचनम् । तत खलु म निर्यामस्तान उहन् कुक्षिधाराश्च ४

कयर देम वा दिम वा विदिस वा पोयवहणे अवहित्ति कद्दु) अतः
 जप उसे इस बात का भी ज्ञान नहीं रहा कि यह महावात मेरी नौका
 को किस दिशा अथवा विदिशा की ओर ले गया है-तब इस प्रकार
 मन में विचार कर के वह (ओहयमणसरूपे जाव झियायह) अपहत
 मन. सकल्पवाला बनकर यावत् आर्त्तध्यान करने लगा । (तएण ते
 बहवे कुच्छिधारा य कण्णधारा य गन्धिभल्लगा य सजत्ता णावा वाणि
 यगा य जेणेव से णिज्जामए तेणेउ उवागच्छइ) इतने में अनेक कुक्षि
 धर-पार्श्व में बैठकर नौका चलाने वाले कर्णधार-नाविक, गार्भयक-नौका
 के भीतर यथावसर काम करने वाले और सांयात्रिक पौन वणिक जहा
 वह निर्यात्रिक या-वहा आये । (उवागच्छित्ता एव वयासी-किन्न तुम
 देवाणुप्पिया ओहयमणसरूपो जाव झियायह-तएण से णिज्जामए

गथे । (ण जाणइ कयर देस वा दिम वा विदिस वा पोयवहणे अवहित्ति कद्दु)
 अथी न्यारे तेने आ वातनी पणु अमर रही नहि के आ महावात अमारी
 नौकाने कछ दिशा अथवा तो विदिशा तरइ लई गथे छे त्यारे मनभा आ
 वातने विचार करीने ते (ओहयमणसरूपे जाव झियायह) अपहतमन
 सकल्पवाणे थधने यावत् आर्त्तध्यान करवा लाग्ये ।

(तएण ते बहवे कुच्छिधारा य कण्णधारा य गन्धिभल्लगा य सजत्ता
 णावा वाणियगा य जेणेव से णिज्जामए तेणेउ उवागच्छइ)

अटलाभा धणु कुक्षिधर-पार्श्वभा जेसीने नौका खलावनारा, कर्णधार
 नाविक, गार्भयक-नौकाभा यथा समर काम करनारा अने सायात्रिको-पोत
 वणिके न्या ते निर्यामके हते। त्या गथा ।

(उवागच्छित्ता एव वयासी-किन्न तुम देवाणुप्पिया ओहयमणसरूपो
 जाव झियायह-तएण से णिज्जामए ते बहवे कुच्छिधारा य ४ एव वयासी-

य पावरणाण य नवतयाण य मलयाण य मसूराण य सिला-
 वट्टाण य जाव हंसगव्भाणय अन्नेसि च फासिदिय पाउग्गाणं
 दव्वाणं सगडीसागड भरेति भरित्ता सगडीसागडं जोएति
 जोइत्ता जेणेव गंभीरए पोयट्टाणे तेणेव उवागच्छति उवाग-
 च्छित्ता सगडीसागडं मोएति मोइत्ता पोयवहणं सज्जेति सज्जित्ता
 तेसि उक्किट्टाणं सदफरिसरसरूवगंधाणं कट्टुस्स य तणस्स य
 पाणियस्स य तदुलाण य समियस्स य गोरसस्स य जाव अन्नेसि
 च बहूण पोयवहणपाउग्गाण पोयवहणं भरेति भरित्ता दक्खि
 णाणुकूलेणं वाएणं जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छइ उवा-
 गच्छित्ता पोयवहणं लवेति लंवित्ता ताइ उक्किट्टाइ सदफरिसरस
 रूवगधाडं एगट्टियाहि कालियदीवे उत्तारेति । जहि २ च णं
 ते आसा आसायति वा सयति वा चिट्ठति वा तुयट्टति वा
 तहि २ च णं ते कोडुं वियपुरिसा ताओ वीणाओ य जाव वित्त
 वीणाओ य अन्नाणि य बहूणि सोइदियपाउग्गाणि य दव्वाणि
 समुदीरेमाणा चिट्ठंति तेसि परिपरंतेण पासए ठवेति ठवित्ता
 णिच्चला णिप्फदा तुसिणीया चिट्ठंति, जत्थ २ ते आसा आसयंति
 वा जाव तुयट्टति वा तत्थ तत्थ णं ते कोडुवियपुरिसा बहूणि
 किण्हाणि य ५ कट्टकम्माणि य जाव सघाइमाणि य अन्नाणि
 य बहूणि चक्खिदियपाउग्गाणि य दव्वाणि ठवेति तेसि परि-
 परेतेण पासए ठवेति ठवित्ता णिच्चला णिप्फदा तुसिणीया
 चिट्ठति जत्थ २ ते आसा आसयति ४ तत्थ २ ण तेसि बहूणं

बहवे तत्थ आसा किं ते ?, हरिरेणु जाव अणेगाइं जोयणाइ
 उव्वमंति, तएणं सामी अन्हेहिं कालियदीवे ते आसा अच्छे-
 रए दिट्टपुव्वे, तएण से कणगकेऊ राया तेसिं सजत्तगाणं
 अंतिए एयमट्टं सोच्चा ते सजत्तए एवं वयासी-गच्छहणं तुव्वमे
 देवाणुप्पिया मम कोडुंवियपुरिसेहि सद्धिं कालियदीवाओ ते
 आसे आणेह, तएण ते संजत्ताणावावाणियगा कणगकेऊ रायं
 एवं वयासी-एवं सामि त्तिरुद्धु आणाए पडिसुणेति,
 तएणं कणगकेऊ राया कोडुवियपुरिमे सद्दावेड सद्दावित्ता
 एवं वयासी-गच्छह णं तुव्वमे देवाणुप्पिया ! संजत्तिएहि सद्धिं
 कालियदीवाओ मम आसे आणेह, ते वि पडिसुणेति, तएणं
 ते कोडुविय० सगडीसागडं सज्जेति सज्जित्ता तत्थ ण बहूणं
 वीणाण य वल्लकीण य भामरीण य कच्छभीण य भंभाण य
 छब्भामरीण य वित्तवीणाण य अन्नेसि च बहूण सोतिदिय-
 पाउग्गाण दव्वाण सगडीसागड भरेति भरित्ता बहूणं किणहाण
 य जाव सुक्किलाण य कट्टकम्माण य ४ गंधिमाण य ४ जाव
 सघाइमाण य अन्नेसिं च बहूणं चक्खिदियपाउग्गाणं दव्वाणं
 सगडीसागड भरेति बहूणं कोट्टपुडाण य केयईपुडाण य जाव
 अन्नेसि च बहूणं घाणिदियपाउग्गाणं दव्वाण सगडीसागड
 भरेति बहुस्स खडस्स य गुलस्स य सक्कराए य मच्छंडियाए
 य पुप्फुत्तर पउमुत्तराण य अन्नेसि च जिब्भिदियपाउग्गाणं
 दव्वाणं सगडीसागड भरेति । बहूण कोयवियाण य कवलाण

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततः खलु स कणकेतु राजा तेषा सयात्र नौकावाणिजकाना तन्महार्थं यावत् प्राभृत ‘पडिच्छड’ प्रतीच्छति=स्वीकरोति प्रतीप्य तान् सयात्रनौकावाणिजकान् एवमप्रादीत्-यूय खलु ह देवानुप्रियाः ! गामागर जात्र अहिंडह’ ग्रामाकर यावत् - ग्रामाकरनगरादिषु आहिण्डथ= गच्छत, लवणसमुद्र च अभीक्षण २ पोतवहनेन अवगाहने ‘त’ तत्=तर्हि अस्ति ‘आड’ इतिवाक्यालङ्कारे किमपि ‘भे’ युष्माभिः ‘कहिंचि’ कुत्रचिद् ‘अच्छेए’ आश्चर्यकर्म=आश्चर्यजनकवस्तु ‘दिट्ठपुव्वे’ दृष्टपूर्वम् ? यदि दृष्टमस्ति तर्हि कथयतेतिभावः । ततः खलु ते सयात्रनौकावाणिजका कणकेतुमेवमव

—तएण से कणकेतु राजा इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से कणकेतु राजा) उस कणकेतु राजा ने (तेसिं सजत्ता णाया वाणियगाण त महत्थ जात्र पडिच्छड, पडिच्छत्ता—ते सजत्ता णाया वाणियगा एव वयासी—तुव्वेण देवानुप्पिया ! गामागर जात्र अहिंडह लवणसमुद्र च अभिक्खण २ पोयवहणेण ओगाहह त अत्थिआड केड भे कहिंचि अच्छेए दिट्ठपुव्वे ?) उन सायात्रिक पोतवणिक जनो की उस महार्थसाधक भेट को स्वीकार कर लिया और स्वीकार करके फिर उन सायात्रिक पोतवणिक जनो से इस प्रकार कहा हे देवानुप्रियो तुमलोग अनेक ग्राम आकर नगर आदि स्थानो में जाते रहते हो और बार २ पोतवहन द्वारा लवणसमुद्र में अवगाहन करते रहते हो तो करो कही पर तुम ने यदि कोई आश्चर्यकारी वस्तु देखी हो तो कहो—(तएण ते सजत्ता णाया वाणियगा कण

तएण से कणकेतु राजा इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारपथी (से कणकेतु राजा) ते कणकेतु राजा

(तेसिं सजत्ता णाया वाणियगाण त महत्थ जात्र पडिच्छड, पडिच्छत्ता—ते सजत्ता णाया वाणियगा एव वयासी—तुव्वेण देवानुप्पिया ! गामागर जात्र अहिंडह लवणसमुद्र च अभिक्खण २ पोयवहणेण ओगाहह त अत्थि आड केड भे कहिंचि अच्छेए दिट्ठपुव्वे ?)

ते सायात्रिक पोतवणिकजनोनी ते महार्थ साधक भेटने स्वीकारी लीधी अने स्वीकारीने ते सायात्रिक पोतवणिकजनोने आ प्रभाषे कल्लु के डे देवानु प्रियो । तमे लोको धण्णा गाम, आकर, नगर वगेरे स्थानोभा आवण करता रहे छे अने वडाणु वडे लवण समुद्रनी बारबार यात्रा करता रहे छे तो अभने कडो के तमे कडो नवाँ प्रभाडे तेवी अद्भुत वस्तु लेथ छे ?

कोट्टुपुडाण य जाव अन्नेसि च व्हूणं घ्राणिदियपाउग्गाणं
 दव्वाणं पुंजे य णियरे य करेति करित्ता तेसिं परिपेरंतेणं जाव
 चिट्ठति जत्थ २ णं ते आसा आसयति ४ तत्थ २ णं गुलस्स
 जाव अन्नेसि च व्हूणं जिर्विभदियपाउग्गाय दव्वाणं पुंजे य
 निकरे य करेति करित्ता विचरणं खणंति खणित्ता गुलपाणगस्स
 खंडपाणगस्स जाव अन्नेसि च व्हूण पाणगाण वियरे भरेति
 भरित्ता तेसिं परिपेरंतेण पासए ठवेति जाव चिट्ठंति, जहिं २
 च णं ते आसा आस० तहिं २ च णं ते व्हवे कोयविया य
 जाव हसगव्भा य अण्णाणि य व्हूणि फासिंदिय पाउग्गाइं
 अत्थुयपच्चत्थुयाइ ठवेति ठवित्ता तेसिं परिपेरंतेणं जाव चिट्ठति,
 तएणं ते आसा जेणेव एते उक्किट्टा सदफरिसरसरूवगंधा तेणेव
 उवागच्छति उवागच्छित्ता तत्थण अत्थेगइया आसा अपुव्वा
 णं इमे सदफरिसरसरूवगंधा इतिकट्टु तेसु उक्किट्टेसु सदफरिस-
 रसरूवगंधेसु अमुच्छिया ४ तेसिं उक्किट्टाण सद जाव गंधाणं
 दूरदूरेणं अवक्कमति, तेणं तत्थ पउरगोचरा पउरतणपाणिया
 णिब्भया णिरुव्विग्गा सुहसुहेणविहरति, एवामेव समणाउसो!
 जो अम्ह णिग्गथो वा णिग्गथी वा जाव सदफरिसरसरूवगंधेसु
 णो सज्जइ णो रज्जइ णो गिज्जइ, णो मुज्जइ णो अज्जोववज्जेइ
 से णं इहलोए चेव व्हूण समणाण ४ अच्चणिजे जाव वीइ-
 वइस्सइ ॥ सू० ३ ॥

कनककेतु राजा तेषा 'सजत्तिगाण' सायात्रिकाणामन्तिके एतमर्थं श्रुत्वा तान् सायात्रिकान् एवमवदत्-गच्छत खलु यूय हे देवानुप्रियाः ! मम कौटुम्बिक-पुरुषैः सार्द्धं कालिकद्वीपात्तानश्वानानयत । ततः खलु ते सयानानौशात्राणिजका कनककेतु राजानमेवमवादिषुः हे स्वामिन् ! एवमस्तु 'त्ति कट्टु' इति कृत्वा= इत्युक्त्वा 'आणाए' आज्ञायाः=आज्ञामित्यर्थः,—'पडिसुणेति' प्रतिश्रुयन्ति=

कर वहासे कह योजन दूरतक जगलमें भाग गये । अनः हे देवानुप्रिय "कालिकद्वीप में हमलोगों ने उन घोड़ों रूपी आश्चर्य को देखा है । (तएण से कणगकेऊ राया तेसिं सजत्तिगाण अतिए एयमद्व सोच्चा ते सजत्तए एवं वयासी-गच्छह णं तुव्भे देवाणुप्पिया ! मम कोडुविय पुरिसेहिं सद्धिं कालियदीवाओ ते आसे आणेह तएण ते सजत्ता णावा वाणियगा कणगकेऊ राय एव वयासी एव सामित्ति कट्टु आणाए पडिसुणेति, तएण कणगकेऊ राया कोडुवियपुरिसे सहावेह, सहावित्ता एव वयासी-गच्छह णं तुव्भे देवाणुप्पिया ! सजत्तिएहिं सद्धिं कालिय दीवाओ मम आसे आणेह, ते वि पडिसुणेति) हमके बाद कनक केतु राजा ने उन सायात्रिक पोतवणिकजनो के मुख से इस अर्थ को सुनकर वन सायात्रिकों से इस प्रकार कहा हे देवानुप्रियो ! तुमलोग जाओ और मेरे कौटुम्बिक पुरुषों के साथ कालिकद्वीप से उन अश्वों को लाओ । इस प्रकार सुनकर पोतवणिक जनो ने कनक केतु राजा से ऐसा कहा

वनमा नासी गया हे देवानुप्रिय ! अन्नेत्थे कालिक द्वीपमा ते अश्व इप्पी अद्रुत्त वस्तुने जेधं छे

(तएण से कणगकेऊ राया तेसिं सजत्तिगाण अतिए एयमद्व सोच्चा ते सजत्तए एव वयासी-गच्छहण तुव्भे देवाणुप्पिया ! मम कोडुवियपुरिसेहिं सद्धिं कालियदीवाओ ते आसे आणेह, तएण ते सजत्ता णावा वाणियगा कणग केऊ राय एव वयासी एव सामी त्ति कट्टु आणाए पडिसुणेति, तएण कणगकेऊ राया कोडुवियपुरिसे सहावेह, सहावित्ता एव वयासी-गच्छहण तुव्भे देवाणुप्पिया ! सजत्तिएहिं सद्धिं कालियदीवाओ मम आसे आणेह, ते वि पडिसुणेति)

त्याख्याद कनककेतु राजन्ने ते सायात्रिक पोतवणिकजनाना मुखी आ वातने साक्षणीने ते सायात्रिकाने आ प्रभाणु कट्टु के हे देवानुप्रियो ! तमे दोडे मारा कौटुम्बिक पुरुषोनी साथे कालिक द्वीपमा जन्ने अने त्याधी ते अश्वोने लावो आ प्रभाणु कनककेतुनी आशा साक्षणीने ते पोतवणिकजनोन्ने तेमने आ प्रभाणु कट्टु के हे स्वामी ! तमारी आशा अमारा भाटे प्रभाणु स्वइध छे आम कक्षीने तेमणु कनककेतु राजन्नी आशा स्विकारी लीधी त्याद

दन्-एव खलु वय हे देवानुप्रियाः । इहेव हस्तिशीर्ष नगरे परिरसामः, 'तंवेव'
 तदेव पूर्वोक्तवर्णन सर्वमत्र गान्यम् 'जात्र' यात्रु कालिकद्वीपान्ते=कालिक
 द्वीपगमीपे खलु 'सवृद्धा' सवृद्धाः-माताः, तत्र खलु मह्यो हिरण्याकराश्च यावद्
 वहवस्तत्राश्याः सन्ति, किंते' किम्भूतास्ते ? इत्याह-'हरिरेणु जात्र' हरिरेणु शोषि
 सुत्रज्ञाः यावद्-तेऽस्मद्गन्धमात्राय भीताः सन्तः अनेकानि योजनानि द्रुम् 'उन्म
 मति' उद्भ्रमन्ति पलायन्ते स्म, तत्र खलु हे स्वामिन् ! अस्माभि " कालिक-
 द्वीपे तेऽश्याः सन्ति " तदेव 'अच्छेरए' आश्रयंक दृष्टपूर्वमिति । ततः खलु स

गकेऊ एव वयामी एत्र खलु अम्हे देवाणुप्पिया । इहेव हस्तिशीसे नयरे
 वसामो त चेव जात्र कालियदीव तेण सवृद्धा तत्थ ण वहवे हिरण्णागरा
 य जात्र वहवे तत्थ आसा किंते ? हरिणेणु जात्र अणेगाइ जोयणाइ उन्म
 मति-तएण सामी अम्हे हि कालियदीवे ते आसा अच्छेरए दिट्ठपुन्वे)
 इस प्रकार राजा की बात सुनकर उन सायात्रिक पोतवणिगजनों ने
 उन कनककेतु राजा से कहा हे देवानुप्रिय ! हमलोग इसी हस्तिशीर्ष
 नगर में रहते हैं । हमलोग यहा से लवणसमुद्र में होकर व्यापार के
 निमित्त बाहर परदेश गये हुए थे-। मार्ग में हमलोगो को अनेक प्रकार
 के सैकड़ो उपद्रव हुए-उनसे जिस किसी तरह सुरक्षित हो हमलोग
 कालिकद्वीप के समीप पहुँच गये । वहाँ हमने अनेक हिरण्य आदि की
 खानों को एव अनेक अश्यों को कि जिनका कटिभाग हरिद्वर्णवाली धूलि
 से रचित कटिसूत्रसे चिन्हित था देखा, वे हमलोगों की गध को सूघ

(तएण ते सज्जा णामा वाणियगा कणगकेऊ एव वयामी-एव खलु
 अम्हे देवाणुप्पिया ! इहेव हस्तिशीसे नयरे वसामो त चेव जात्र, कालिय दीव
 तेण सवृद्धा, तत्थ ण वहवे हिरण्णागरा य जात्र वहवे तत्थ आसा किं ते ? हरि-
 रेणु जात्र अणेगाइ जोयणाइ उन्ममति-तएण सामी अम्हेहि कालियदीवे ते
 आसा अच्छेरए दिट्ठपुन्वे)

आ प्रभाषे राजनी वात सावणीने ते सायात्रिक पोतवणिगजनों ने
 कनककेतु राजने कहु के हे देवानुप्रिय ! अमे जधा आ हस्तिशीर्ष नगर
 भा ज रहीअे छीअे अमे जधा व्यापार जेउवा भाटे अर्द्धीधी लवणु समुद्रभा
 थधने जहार परदेशमा गया हुता रस्तामा धएी जातना सेकडा उपद्रवो
 धया उनटे गमे तेभ करीने सुरक्षित रुपमा अमे जधा कालिकद्वीपनी पास
 गया त्या अमेअे धएी हिरणु वगेरे ॥ भाषोने अने धएा अश्योंने-के
 जेभना कटिभागो लीला राजनी भाटीथी जनावेला कटिसूत्रथी चिन्हित हुता-
 जेथो अभासी गधने सूधीने ते अश्यों त्थाथी कटलाक थे ॥ इर सुधी

'वित्तवीणाणय' वृत्तवीणाना=गोलाकार वीणाना च-अन्येषा च बहूनां नानाविधानां
'सोडदियपाउग्माण' श्रोत्रेन्द्रिय प्रायोग्याणा=कर्णेन्द्रियसुखजनकाना द्रव्याणां=
तन्व्यादिरूपाणा शकटीशाकट भरन्ति तैर्वीणादिभिरित्यर्थ, भृत्वा बहूना 'किण्हा-
णय जाव मुकाणय' कृष्णाना यावत्-नीलाना पीताना रक्ताना शुक्लानां च
कृष्णादिपञ्चवर्णयुक्ताना 'कट्टकम्माणय' काष्ठकर्मणा=काष्ठनिर्मितपुत्तलिकादी-
नाम्, 'पोत्थकम्माणय' पुस्तपु कर्मणा-पुस्तपु=उखताडपत्रकर्मलादिषु कर्माणि=
लेखनकर्मणि, तेषाम्, 'चित्तकम्माणय' चित्रकर्मणा=पट्टकादिषु चित्ररूपा-
णाम्, 'लेप्पकम्माणय' लेप्पकर्मणा=मृत्तिकासेटिकादिना बल्ल्याद्याकाररचना
विशेषरूपाणाम्, तथा-'गथिमाणय' ग्रन्थिमाना=कौशलातिशयेन ग्रन्थिसमु-
दायनिष्पादितानाम्-यावत्-'वेढिमाणय' वेष्टिमाना=लतादि वेष्टनतो निष्पा-
दितानाम्, 'पूरिमाणय' पूरिमाणा=कनकादिषु पुत्तलिकावत् डिद्रादिपूरणेन

के आकार जैसी वीणाओं को, भभाओं भेरियो-को, पड् भ्रामरियों को
-गोलाकार वीणाओं को, तथा और भी अनेक विधश्रोत्रेन्द्रिय सुखज-
नक तंत्री आदिरूप द्रव्यों को, भरा-भर करके फिर नीले, पीले, रक्त,
शुक्ल और कृष्ण रंग से रगे हुए काठ के बने हुए खिलौनों को, पुस्त-
कर्मों को-बस्त्र, ताडपत्र एवं कागज आदि पर लिखे विविध प्रकार के
लेखों को, निग्रन्धों को उपदेश पूर्ण-दोहे चौपाइ आदि में लिखी हुई
कविता आदि को को-चित्रकर्मों को-पटिया आदि पर उकेरे गये विविध
चित्रों को-लेप्पकर्मों को-मृत्तिका सेटिका आदि से बल्ली आदि रूप में
बनाये गये चित्रों को, ग्रन्थियों को विशेष चतुराई के साथ गांठों से
बनाये गये खिलौनों को, लताओं आदि द्वारा वेष्टित करके २ रचीं गई
चीजों को,-टोपियों को, हाथों की पैरों की अगुलियों में पहिरने योग्य

वेवी वीणुओ, ललाओ-लेरीओ (नगाराओ) पड्-भ्रामरीओ, गोण आकार
वाणी वीणुओ तेमञ्ज भील पणु धणु कणुेन्द्रियने सुभ आये तेवा तत्री
वगेरे साधेनेने लर्या लरीने लीला, पीणा, राता, सङ्केद अने काणा रगेथी
रगाओला लाकडाना भनेला रभकडाने, पुस्तकर्मोने-वस्त्र ताडपत्र अने कागण
वगेरे उपर लणाओला नतनतना लेणेने, निभघेने, दूडा, थोपाठ वगेरेमा
लणाओली उपदेशक कविताओ वगेरेने, चित्र कर्मोने-इलड वगेरे उपर चित्रित
करीला धणु चित्रोने लेप्प कर्मोने, माठी सेटिका वगेरेथी लता वगेरे रुपमा
भनाववामा आवेला चित्रोने, अथिओने-विशे। आतुर्थी गाठोथी भनाववामा
आवेला रभकडाने, लताओ वगेरे वडे वेष्टित करीने भनाववामा आवेली वस्तु

स्वीकृतंति । ततः खलु कनककेतु राजा कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा
 एवमवादीत्-गच्छत खलु युष हे देवानुमियाः । मांयात्रिकैः माद्रेः काञ्चिद्दीपात्
 मायम् अधानानयत । तेऽपि=कौटुम्बिकपुरुषाः 'पट्टिगुणेति' प्रतिगृह्यति 'तथास्तु'
 इत्युक्त्वा राजाज्ञा स्वीकृतंति । ततः खलु ते कौटुम्बिकपुरुषाः शकटीशाकटे
 'सज्जेति' सज्जयन्ति=कालिन्दीपे गमनार्थं मज्जीकृतंति, सज्जयित्वा तत्र खलु
 शकटीशाकटे गृह्णा च गच्छन्तीनां च, आमरीणां च 'कच्छभीण य' कच्छभीणा च-
 'कच्छभी' इति कच्छवाकारनीणाभिधेयः, भमाना=भेरीणा च, पद्भ्रामरीणां च,

हे-स्वामिन् । हमें आपकी आज्ञा प्रमाण है-ऐसा कहकर उन्होंने ने कनक
 केतु राजा की आज्ञा को स्वीकार कर लिया । इसके बाद कनक केतु
 राजा ने अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया-और बुलाकर उनसे ऐसा
 कहा-हे देवानुमियों ! तुम मायात्रिक पोतत्रिक जनों के साथ जाओ
 -और कालिन्दीप से मेरे लिये घोड़ों को ले आओ । राजा की इस
 आज्ञा को उन लोगों ने भी स्वीकार कर लिया । (तपण ते कौटुम्बियपु
 रिसा सगडीसागड सज्जेति, सज्जित्ता तत्पण वट्टण वीणाण य वल्ल
 कीण य भामरीण य कच्छभीण य भमाण य छ्भामरीण य वित्तवीणाण
 य अन्नेसि च वट्टण सोइदिय पाउग्माण दव्वाण सगडी सागड भरेति,
 भरित्ता वट्टण किण्हाण य जाव सवाइमाण य अन्नेसि च वट्टण
 चक्खिदियपाउग्माण दव्वाण सगडीसागड भरेति) इसके बाद उन
 कौटुम्बिक पुरुषों ने गाड़ी और गाड़ों को सज्जित किया-सज्जित करके
 उनमें उन्होंने ने अनेक वीणाओं को, वल्लकियों को, भ्रामरियों को, कच्छप

भाद कनककेतु नामके पोताना कौटुम्बिक पुरुषोंने बुलाव्या अने बुलावनी
 तेमने आ प्रभावे कहु के हे देवानुमियो ! तमे सायात्रिक पोतत्रिकजनानी
 साथे लख्ये अने कालिन्दीपभाथी भारा भाटे घोडाखेने लावे राखनी
 आ आज्ञाने ते लोकैके पद्य स्वीकारी लीधी

(तपण ते कौटुम्बियपुरिसा सगडीसागड सज्जेति, सज्जित्ता तत्पण
 वट्टण वीणाण य वल्लकीण य भामरीणय कच्छभीणय भमाण य छ्भामरीण य
 वित्तवीणाण य अन्नेसि च वट्टण सोइदियपाउग्माण दव्वाण सगडीसागड
 भरेति, भरित्ता वट्टण किण्हाण य जाव सवाइमाण य अन्नेसि च वट्टण चक्खि
 दियपाउग्माण दव्वाण सगडीसागड भरेति)

त्यारपडी ते कौटुम्बिक पुरुषोके जाडी अने गाडाखेने नेतया नेत
 रीने तेमा तेमले धली वीथुखे, वल्लकीके, भ्रामरीके, कायणाना आकार

‘चित्तवीणाणय’ वृत्तवीणाना=गोलाकार वीणाना च-अन्येषा च बहूनां नानाविधानां
 ‘सोऽदियपाउग्गाण’ श्रोत्रेन्द्रिय प्रायोग्याणा=कर्णेन्द्रियसुखजनकाना द्रव्याणां=
 तन्व्यादिरूपाणा शकृटीशाकृट भरन्ति तैर्वीणादिभिरित्यर्थ , भृत्वा बहूना ‘क्विहा-
 णय जाव मुक्काणय’ कृष्णाना यावत्-नीलाना पीताना रक्ताना शुक्लानां च
 कृष्णादिपञ्चवर्णयुक्ताना ‘वट्टकम्माण य’ काष्ठकर्मणा=काष्ठनिर्मितपुत्तलिकादी-
 नाम्, ‘पोत्थकम्माणय’ पुस्तपु कर्मणा-पुस्तपु=खन्नाडपत्रकर्मणादिषु कर्माणि=
 लेखनकर्मणि, तेषाम्, ‘चित्तकम्माण य’ चित्रकर्मणा=पट्टकादिषु चित्ररूपा-
 णाम्, ‘लेप्यकम्माणय’ लेप्यकर्मणा=मृत्तिकासेटिकादिना बल्ल्याद्याकाररचना
 विशेषरूपाणाम्, तथा-‘गथिमाण य’ ग्रन्थिमाना=कौशलातिशयेन ग्रन्थिसमु-
 दायनिष्पादितानाम्-यावत्-‘वेट्ठिमाण य’ वेष्टिमाना=लतादि वेष्टनतो निष्पा-
 दितानाम्, ‘पूरिमाण य’ पूरिमाणा=मनकादिषु पुत्तलिकावत् उद्गादिपूरणेन

के आकार जैसी वीणाओं को, भभाओं भेरियो-को, पड् भ्रामरियों को
 -गोलाकार वीणाओं को, तथा और भी अनेक विधश्रोत्रेन्द्रिय सुखज-
 नक तंत्री आदिरूप द्रव्यों को, भरा-भर करके फिर नीले, पीले, रक्त,
 शुक्ल और कृष्ण रंग से रगे हुए काठ के बने हुए खिलौनों को, पुस्त-
 कर्मों को-बख्त्र, ताडपत्र एव कागज आदि पर लिखे विविध प्रकार के
 लेखों को, निबन्धों को उपदेश पूर्ण-दोहे चौपाइ आदि में लिखी हुई
 कविता आदि को को-चित्रकर्मों को-पट्टिका आदि पर उकेरे गये विविध
 चित्रों को-लेप्यकर्मों को-मृत्तिका सेटिका आदि से बल्ली आदि रूप में
 बनाये गये चित्रों को, ग्रन्थियों को विशेष चतुराई के साथ गाठों से
 बनाये गये खिलौनों को, लताओं आदि द्वारा वेष्टित करके र रचीं गई
 चीजों को,-टोपियों को, हाथों की पैरों की अगुलियों में पहिरने योग्य

जेवी वीणाओ, ललाओ-लेरीओ (नगाराओ) पड्-भ्रामरीओ, गोण आकार
 वाणी वीणाओ तेमज् षीण पड् घण्ण कर्णेन्द्रियने सुथ् आये तेवा तंत्री
 वगेरे साधेनेने लयां लरीने लीला, पीणा, राता, सङ्केह अने काणा रगोथी
 रगाओला लाकडाना अनेला रमडडाने, पुस्तकर्मोने-बख्त्र ताडपत्र अने कागज
 वगेरे उपर लप्पाओला नतनतना लेणेने, निबधेने, इडा, चोपाड वगेरेमा
 लप्पाओली उपदेशक कविताओ वगेरेने, चित्र कर्मोने-इलक वगेरे उपर चित्रित
 करेला घण्ण चित्रोने लेप्य कर्मोने, भाटी सेटिका वगेरेथी लता वगेरे रुपमा
 अनाववाभा आवेला चित्रोने, अशिमोने-विशेश आतुर्यथी गाठोथी अनाववाभा
 आवेला रमकडाने, लताओ वगेरे वडे वेष्टित करीने अनाववाभा आवेला वस्तु

निष्पादितानाम्, 'सघाटमाण य' सहातिमानां=लोहकाष्टादिमी तथादिक् वस्तु-
समूहैर्निष्पादितानाम्, तथा-अन्येषा च वहूना ' चार्णिदियपाउग्गाण ' चक्षुरि-
न्द्रियमायोग्याणा=नयनान्-रजनकाना द्रव्याणा शस्त्रीशास्त्र भरन्ति । तथा
वहूना ' कोट्टपुडाण य ' कोट्टपुटाना = सुगन्धिद्रव्यविशेषाणां च केतमीपुटानां
च यावत्-एलापुटानां च, ष्टुमपुटानां च, उगीरपुटानां='रम' इतिभाषा
प्रसिद्धसुगन्धिद्रव्याणा च, लयङ्गपुटाना चेत्यादि । अन्येषां च वहूना घ्राणेन्द्रिय
प्रायोग्याणा द्रव्याणा शस्त्रीशास्त्र भरन्ति । तथा वहोः खण्डस्य च गुडस्य च
शर्करायाश्च ' मिसरी ' इति भाषा प्रसिद्धाया, ' मच्छडियाण य ' मत्स्यण्डिकायां=
' कालपीमिसरी ' इति भाषा प्रसिद्धाया, पुष्पोत्तर-पद्मोत्तराणां=गुलकन्द ' इति
प्रसिद्धाना च, अन्येषा च जिह्वेन्द्रियमायोग्याणा द्रव्याणा शस्त्रीशास्त्र भरन्ति ।
तथा वहूना ' कोयवियाण य ' कोयविकाना = स्तूपूरितपावरणविशेषाणां
' रजाई ' इति प्रसिद्धानाम्, कम्बलानां=रत्नकम्बलानाम्, पावरणानां=गाटिकानां
' चहर ' इति प्रसिद्धानाम्, ' नवतयाण य ' नवतयानाम्=ऊर्णामयपर्याणानां

आभूषण आदि कों को-पुत्तलिका की तरह जो सुवर्ण आदि के पतरों
पर कृत छिद्रादिकों के पूरने से चित्र बनाये जाते हैं वे पूरिम हैं इन
पूरिमों को और सघातिमों को-लोहकाष्ट आदि की तरह अनेक वस्तुओं
के समुदाय से निष्पादित चित्रों को तथा और भी नेत्र इन्द्रिय को
सुहावने लगने वाले द्रव्यों को भरा । (वहूण कोट्टपुडाण य, केयई पुडा-
ण य जाव अन्नेमि च वहूण चार्णिदियपाउग्गाण दव्वाणं सगडीसागड
भरेति, बहुस्स खडस्स य गुलस्स सक्कराए य मच्छडियाए य पुष्फुत्तर
पउमुत्तराणय अन्नेसिं च जिर्विभदिय पाउग्गाण दव्वाण सगडीसागड
भरेति वहूण कोयवियाण य केवलाणय पावरणाण य नवतयाण य

आने-टोपीकाने, डायो, पगो अने आगणीआमा पडेरवाना आभूषण वगे
रेने पूतणीनी जेम जे सुवर्ण वगेरेना पतरा उपर काष्ठा पाडीने तेभने
पूरीने बनाववामा आवेला चित्रो अटके डे पूरिमेने अने सघ तिमेने
बोणड, काष्ठ वगेरेथी बनाववामा आवेला रथ वगेरेनी जेम धणी वस्तुआने
अकत्रित करीने तेभना वडे बनाववामा आवेला चित्रोने तेभज णीण पणु
धणु नेत्र इन्द्रियने गभे तेवा द्रव्येने लया

(वहूण कोट्टपुडाण य, केयई पुडाण य जाव अन्नेसिं च वहूण चार्णिदिय
पाउग्गाण दव्वाणं सगडीसागड भरेति, बहुस्स खडस्स य गुलस्स सक्कराए य
मच्छडियाए य पुष्फुत्तपउमुत्तराण य अन्नेसिं च जिर्विभदियपाउग्गाण दव्वाण
सगडीसागड भरेति वहूण कोयवियाण य केवलाण य पावरणाण

‘जीन’ इति प्रसिद्धानाम्, मलयाना च=मलयदेशोत्पन्नवस्त्रविशेषाणाम्, ‘मसूराण य’ मसूरकाणा=रस्त्रादिनिर्मित वृत्ताकारासनविशेषाणाम्, ‘सिलावट्टाण य’ शिलापट्टानां=पट्टाकारचिकणशिलाना यावत् हसगर्भाणां=हसः=चतुरिन्द्रियकृमि-विशेषः, गर्भः=तन्निर्वर्तित कोसिहारोरुतरूपः, तन्मयस्त्राण्यपि हंसगर्भाणीत्यु-

मलयाण य मसूराण य सिलावट्टाण य जाव हसगव्भाण य अन्नेसिं च फार्सिदियपाउग्गाण दव्वाण सगडीसागड भरेति) इसी तरह अनेक कोष्ठपुटो को-सुगंधित द्रव्य विशेषों को केतकीपुटो को-सुगंधित पुष्पों यावत् एलापुटो को-इलायचियों को, उखीरपुटों को, खश के समुदाय को-कुङ्कुमपुटों को तथा और भी अनेक, घ्राणेन्द्रिय को तृप्ति कारक द्रव्यों को उन लोगो ने गाड़ी और गाडों में भरा। बहुत सी खाड, बहुत से गुड बहुत सी शर्करा-मिनरी-बहुत सी मत्स्यण्डी-कालपी मिसरी बहुत से गुलकद, बहुतसे पद्मपाक को तथा और भी जिह्वाह-न्द्रिय को तृप्ति करने वाले द्रव्यों को उन लोगों ने गाड़ी और गाडों में भरा। इसी तरह स्पर्शन इन्द्रिय को आनददेने वाले कोयविको को-रूई कपास-से भरे हुए प्रावरण विशेषों को-रजाहयो को-कम्पलों को-रत्न कम्पलों को-प्रावरणो को-चदरो को-नवलको को-ऊन के बने हुए पल्लेचों को-जीनो को-मलयदेश के बने हुए वस्त्रों को, मसूरकों को-वस्त्रों से बनाये हुए गोलाकार आसनों को-शिलापट्टो को-पट्टाकार चिकनी

य मलयाण य मसूराण य सिलावट्टाण य जाव हसगव्भाण य अन्नेसिं च फार्सि-दियपाउग्गाण दव्वाण सगडीसागड भरेति)

आ प्रभाणु धत्ता जेष्ठ पुटोने-सुगंधित द्रव्य-विशेषाने, केतकी पुटोने डेवडाना पुष्पाने यावत् ऐलापुटोने, ऐलायचीअने, उखीर पुटोने-पशना समु-थिने, कुङ्कुम पुटोने तेमज भीज पञ्च धत्ता घत्ता घ्राणेन्द्रिय (नाड) ने तृप्ति प्रभाउतारा द्रव्येने तेअने गाडी अने गाडाअेभा लया - षडु ७ पुष्पण प्रभाणुभा भाड, गोज, साकर मिश्री, मत्स्य डी कालपी मिश्री, (उची जतनी आकर) गुलकद, पद्मपाक तेमज भीज पञ्च धत्ता अहार्ध इन्द्रिय (अम) ने तृप्ति आप नार द्रव्येने ते लोकेअे गाडी अने गाडाअेभा लया आ प्रभाणु स्पर्शेन्द्रियने सुभ आपतारी जेयविकोने इथी लदेला प्रावरण विशेषाने-रत्नअेने, काम जेने, रत्न कामजेने, प्रावरणेने, आदरोने, नवलकोने, जिनयी जनाववामा आवेला धवेअेअेने-अेनेने-मलय देशाना वस्त्रोने, मसूरकोने-वस्त्रो वडे जनाववामा आवेला गोज आकार आसनेने, शिलापट्टोने-पट्टना आदरुनी

निष्पादितानाम्, 'संघाटमाण य' सहातिमानां=लोम्काष्टादिमी तथादिग् वस्तु-
समूहनिष्पादितानाम्, तथा-अ येषा च वहना 'चिदिदियपाउग्गाण' चक्षुरि
न्द्रियप्रयोग्याणा=नयनानन्दजनकाना द्रव्याणा शस्त्रीशास्त्र भ्रन्ति । तथा
वहना 'कोट्टपुडाण य' कोट्टपुडाना = सुगन्धिद्रव्यविशेषाणां च केतरीपुडानां
च यामत्-एलापुडाना च, कुकुमपुडानां च, उशीरपुडानां='खम' इतिभाषा
प्रसिद्धसुगन्धिद्रव्याणां च, लवङ्गपुडाना चेत्यादि । अन्येषां च वहना घ्राणेन्द्रिय
प्रयोग्याणा द्रव्याणा शस्त्रीशास्त्र भ्रन्ति । तथा उद्योः खण्डस्य च गुडस्य च
शर्करायाश्च 'मितरी' इति भाषा प्रसिद्धाया 'मच्छडियाण य' मत्स्यष्टिकायाः=
'काल्पीमितरी' इति भाषा प्रसिद्धाया, पुष्पोत्तर-पद्मोत्तराणां=गुल्फन्द' इति
प्रसिद्धाना च, अन्येषा च जिह्वेन्द्रियप्रयोग्याणा द्रव्याणां शस्त्रीशास्त्र भ्रन्ति ।
तथा वहना 'कोयत्रियाण य' कोयत्रिकाना = रूतपूरितपावरणविशेषाणा
'रजाई' इति प्रसिद्धानाम्, कम्बलाना=रत्नकम्बलानाम्, पावरणाना=शाटिकाना
'चदर' इति प्रसिद्धानाम्, 'नवतयाण य' नवतयानाम्=ऊर्णामयपर्याणानां

आभूषण आदि कौ को-पुत्तलिका की तरह जो सुवर्ण आदि के पतरों
पर कृत छिद्रादिकों के पूरने से चित्र बनाये जाते हैं वे पूरिम हैं इन
पूरिमों को और सघातिमों को-लोहकाष्ठ आदि की तरह अनेक वस्तुओं
के समुदाय से निष्पादित चित्रों को तथा और भी नेत्र इन्द्रिय को
सुहावने लगने वाले द्रव्यों को भरा । (वहूण कोट्टपुडाण य, केयई पुडा
ण य जाव अन्नेसि च वहूण घाणिदियपाउग्गाण दव्वाणं सगडीसागड
भरेति, बहुम्स खडस्स य गुल्स्स सक्कराए य मच्छडियाए य पुष्फुत्तर
पउमुत्तराणय अन्नेसि च जिदिभदिय पाउग्गाण दव्वाण सगडीसागड
भरेति वहूण कोयत्रियाण य केवलाणय पावरणाण य नवतयाण य

ओने-टोपीओने, डोथो, पगो अने आगणीओमा पडेवना आभूषण वगे
रेने पूतणीनी नेम के सुवर्ण वगेरेना पतरा उपर काष्ठा पाडीने तेभने
पूरीने बनावनामा आवेला चित्रो ओटले के पूरिभोने अने सघ तिभोने
लोणड, काष्ठ वगेरेथी बनावनामा आवेला रथ वगेरेनी नेम धल्ली वस्तुओने
ओकनित करीने तेभना वडे बनावनामा आवेला चित्रोने तेभने भीज पथु
धल्लु नेत्र इन्द्रियने गभे तेवा द्रव्योने लया

(वहूण कोट्टपुडाण य, केयई पुडाण य जाव अन्नेसि च वहूण घाणिदिय
पाउग्गाण दव्वाण सगडीसागड भरेति, बहुम्स खडस्स य गुल्स्स सक्कराए य
मच्छडियाए य पुष्फुत्तपउमुत्तराण य अन्नेसि च जिदिभदियपाउग्गाण दव्वाण
सगडीसागड भरेति वहूण कोयत्रियाण य केवलाण य पावरणाण य नवतयाण

गोधूमादीनामदृक्स्य ' आटा ' इति प्रमिद्धस्य, ' गोरसस्म य ' गोरसस्म=घृता-
दिकस्य च यावत् अन्येषा च बहूना पोतवहनप्रायोग्याणां द्रव्याणां पोतवहन
भरन्ति, भृत्वा ' दक्षिणाणुकूलेण ' दक्षिणानुकूलेन=सानुकूलेन वातेन यत्रैव
कालिकद्वीपस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य तत्र पोतवहन ' लपेति ' लम्पयन्ति=
तीक्ष्णपित्तशुद्धिं पुत्रन्ति, उद्ध्वा तान्=नौकास्थितान् उत्कृष्टान्=उत्तमोत्तमान्
शब्दस्पर्शरसरूपग धान् ' एगद्वियार्हि ' एगार्थिकाभिः=लघुनौकाभिः ' कालिय-
दीवे ' कालिकद्वीपे ' उत्तारेति ' उत्तारयन्ति=नारातो निस्सार्य भूमौ स्थापयति ।

यावत् और अनेक पोतवहन प्रायोग्य द्रव्यो को उस नौका में भरदिया ।
(भरित्वा दक्षिणाणुकूलेण वाएण जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छड
उवागच्छित्ता पोयवहण लपेति, लपित्ता ताड उक्किट्ठाइ सद्दफरिसरस
रूप गधाइं एगद्वियार्हि कालियदीवे उत्तारेति । जहिं २ च ण ते आसा
आसायति वा सयति वा चिट्ठति वा तुयट्ठति वा तहिं २ च ण ते कोडु
वियपुरिसा ताओ वीणाओ य जाव वित्तवीणाओ य अन्नाणि य वहूणि
सोइदिय पाउग्गाणि समुदीरेमाणा चिट्ठति) भर करके फिर ये लोग जन
पीछे से आनेवाला अनुकूल वायु वहा तब वहा से चलकर जहा
कालिक द्वीप था वहा आये-वहा आकर के इन लोगों ने
लगर डाल दिया-लगर डालकर पोत में से शब्द के साधन भूत वीणा
आदिको को, अच्छे स्पर्श के साधनभूत रूई से भरे हुए रजाई आदि
वस्त्रों को रसनाइन्द्रिय को सुहावने लगनेवाले खाड आदि पदार्थों को

धडना डोटने, गोरस धी वगेरेने यावत् पीत्त पणु धणु पडाणु यात्रामा
धाम लागे तेवा द्रव्येने ते नौकाभा लया

(भरित्वा दक्षिणाणुकूले ण वाएण जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छड,
उवागच्छित्ता पोयवहण लपेति, लपित्ता ताड उक्किट्ठाइ सद्दफरिसरस
एगद्वियार्हि कालियदीवे उत्तारेति । जहिं २ च ण ते आसा आसायति वा
सयति वा चिट्ठति वा तुयट्ठति वा तहिं २ च ण ते कोडुवियपुरिसा ताओ
वीणाओ य जाव वित्तवीणाओ य अन्नाणि य वहूणि सोइदिय पाउग्गाणि य
दव्वाणि समुदीरेमाणा चिट्ठति)

भरीने तेव्वा अधा न्यारे पाछजधी वडेते अनुकण पवन वडेवा लाग्ये
त्यारे त्याधी रवाना थधने न्या कालिक द्वीप छते। त्या आव्या त्या आवीने
ते लोडोव्हे लगर नाप्यु लगर नापीने पडाणुमाथी शण्णा साधन ३प
वीणा वगेरेने, कामण स्पर्शना साधनभूत इथी लरेला रगत वगेरे वस्त्रोने,
रसना (लल) इन्द्रियने गमता पाड वगेरे पदाथोने, नेत्र इन्द्रियने आनड

च्यन्ते, तेषां कौशेययक्षाणां ' रेशमीवस्त्र ' इति भाषा प्रसिद्धानां च, तथा-
 अन्येषां च स्पर्शेन्द्रियपायोग्याणां द्रव्याणां शकटीशाकट भ्रन्ति, भृत्वा शकटीशाकटं
 योजयन्ति, योजयित्वा यज्ञैव गम्भीरम् = गम्भीरनामकं पोतस्थानं तत्रैवोपागच्छन्ति,
 उपागत्य शकटीशाकटं मोचयन्ति, मोचयित्वा ' पोयवहणं ' पोतवहनं = नौकां
 सज्जयन्ति, सज्जयित्वा तेषाम् ' उक्लिष्टाण ' उक्लिष्टानां = श्रेष्ठानां शकटस्पर्शरसरूप
 गन्धानां काष्ठस्य च पानीयस्य च तन्दुलानां च ' सामियस्म य ' समीतस्य =

शिलाओं को, हस गभों को-रेशमी वस्त्रों को, तथा और भी स्पर्शन
 इन्द्रिय को आनन्द देने वाली वस्तुओं को उन लोगो ने गाड़ी और
 गाडों में भरा। (भरित्वा सगढीसागढ जोएति, जोइत्ता जेणेव गभी-
 रए पोयवहणे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता सगढीसागढ मोएति,
 मोइत्ता पोयवहणे सज्जेति, सज्जित्ता तैसि उक्लिष्टाण सदफरिसरस-
 रूवगधाण कट्टस्स य तणस्स य पाणियस्स य तदुलाणय समियस्स
 य गोरसस्स य जाव अन्नेसि च वहूण पोयवहणपाउग्गा ण पोयवहण
 भरेति) भरकर के फिर उन लोगों ने गाड़ी और गाडों को जोत दिया।
 जोतकर के फिर वे वहाँ आये-जहाँ गभीर नाम का पोतस्थान था-बद-
 रगाह था। वहा आकर के उन लोगों ने गाड़ी और गाडों को ढील-रोक
 दिया। और फिर नौकाओंको सजाया-तैयार किया। और तैयार करके
 बादमें उन्होंने उन श्रेष्ठ शब्द, स्पर्श, रस, रूप, एव गंधोंको काष्ठको तृण
 को पानीय द्रव्य को तदूलों को, गोहूँ के आटे को, गोरस घृतादिक-को

वीसी शिलाओंने, हस गभोंने-रेशमी वस्त्रोंने तेमञ्ज भीष्ण पञ्च धष्ठी स्पर्शे
 न्द्रियने सुभ पभाडे तेवी धष्ठी वस्तुओंने ते बोडोअे गाडी अने गाडाओंभा भरी

(भरित्वा सगढीसागढ जोएति, जोइत्ता जेणेव गभीरए पोयवहणे तेणेव
 उवागच्छति, उवागच्छित्ता सगढीसागढ मोएति मोइत्ता पोयवहण सज्जेति,
 सज्जित्ता तैसि उक्लिष्टाण सदफरिसरसरूपगधाण कट्टस्स य तणस्स य पाणि
 यस्स य तदुलाण य समियस्स य गोरसस्स य जाव अन्नेसि च वहूण पोयवहण
 पाउग्गाण पोयवहण भरेति)

भरीने ते बोडोअे गाडी अने गाडाओंने जेतर्था जेतरीने तेअे।
 त्याथी न्या गभीर नामे पोतस्थान (बहर) इतुं त्या आंवा त्या आवीने
 ते बोडोअे गाडी अने गाडाओंने छोडी भूक्या अने त्यारपणी नौकाओंने
 सुसज्जित करी सुसज्जित करी आढ तेमञ्जे ते उत्तम शब्द, स्पर्श, रस,
 रूप अने गंधाने, काष्ठने, धासने, पाष्ठीवाणा द्रव्येने, तदुलो (तूला) ने,

गोधूमादीनामदृक्स्य ' आटा ' इति प्रमिद्धस्य, ' गोरसस्त य ' गोरसस्य=घृता-
दिकस्य च यावत् अन्येषा च बहूना पोतवहनप्रायोग्याणा द्रव्याणां पोतवहन
भरन्ति, भृत्ना ' दक्खिणाणुकूलेण ' दक्षिणानुकूलेन=मानुकूलेन वातेन यत्रैव
कालिकद्वीपस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य तत्र पोतवहन ' लपेति ' लम्पयन्ति=
तीरस्थापितशङ्कुषु चरन्ति, यद्ध्या तान्=नीकास्थितान् उत्कृष्टान्=उत्तमोत्तमान्
शब्दस्पर्शरूपरसगंधान् ' एगद्धियाहिं ' एकार्थिकाभिः=लघुनौकाभिः ' कालिय-
दीवे ' कालिकद्वीपे ' उत्तारेति ' उत्तारयन्ति=नारुतो निस्सार्य भूमौ स्थापयति ।

यावत् और अनेक पोतवहन प्रायोग्य द्रव्यो को उस नौका में भरदिया।
(भरित्ता दक्खिणाणुकूलेण वाएण जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छड
उवागच्छित्ता पोयवहन लपेति, लवित्ता ताइ उक्किट्ठाइ सदफरिसरस
रूप गधाइ एगद्धियाहिं कालियदीवे उत्तारेति । जहिं २ च ण ते आसा
आसायति वा सयति वा चिट्ठति वा तुयट्ठति वा तहिं २ च ण ते कोट्टु
वियपुरिसा ताओ वीणाओ य जाव वित्तवीणाओ य अन्नाणि य वट्ठणि
सोइदिय पाउग्गाणि समुदीरेमाणा चिट्ठति) भर करके फिर ये लोग जव
पीछे से आनेवाला अनुकूल वायु वहा तत्र वहा से चलकर जहा
कालिक द्वीप था वहा आये-वहा आकर के इन लोगों ने
लगर डाल दिया-लगर डालकर पोत में से शब्द के साधन भूत वीणा
आदिको को, अच्छे स्पर्श के साधनभूत रूई से भरे हुए रजाई आदि
वस्त्रों को रसनाइन्द्रिय को सुहावने लगनेवाले खाड आदि पदार्थों को

धडना डोढने, गोरस घी वगेरेने यावत् पीला पणु धणु वडाणु यात्रामा
धाम लागे तेवा द्रव्येने ते नौकाभा लया

(भरित्ता दक्खिणाणुकूले ण वाएण जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छड,
उवागच्छित्ता पोयवहन लपेति, लवित्ता ताइ उक्किट्ठाइ सदफरिसरमरूपगधाइ
एगद्धियाहिं कालियदीवे उत्तारेति । जहिं २ च ण ते आसा आसायति वा
सयति वा चिट्ठति वा तुयट्ठति वा तहिं २ च ण ते कोट्टुवियपुरिसा ताओ
वीणाओ य जाव वित्तवीणाओ य अन्नाणि य वट्ठणि सोइदिय पाउग्गाणि य
दब्बाणि समुदीरेमाणा चिट्ठति)

भरीने तेन्ना गधा न्यारे पाछणधी वडेते अनुकण पवन वडेवा लाग्ये
त्यारे त्याधी रवाना धडने न्या कालिक द्वीप डते त्या आव्या त्या आवीने
ते डोकोन्ने लगर नाण्यु लगर नाणीने वडाणुमाधी शण्डना साधन रुप
वीणु वगेरेने, डोमण स्पर्शना साधनभूत इधी लरेला रजई वगेरे वस्त्रोने,
रसना (लल) इन्द्रियने गभता भाड वगेरे पदार्थोने, नेत्र इन्द्रियने आन ड

च्यन्ते, तेषां कौशेयसखाणां ' रेणुमीश्वर ' इति माया प्रमिद्वानां च, तथा-
अन्येषां च स्पर्शेन्द्रियमायोग्याणां द्रव्याणां शकटीशाकट भ्रन्ति, भृत्वा शकटीशाकटं
योजयन्ति, योजयित्वा यत्रैव गम्भीरक=गम्भीरनामकं पोतस्थानं तत्रैवोपागच्छन्ति,
उपागत्य शकटीशाकटं मोचयन्ति, मोचयित्वा ' पोयवहण ' पोतवहन=नौकां
सज्जयन्ति, सज्जयित्वा तेषाम् ' उक्किट्टाण ' उत्कट्टानां=श्रेष्ठानां शब्दस्पर्शरूप
गन्धानां काष्ठस्य च पानीयस्य च तन्दुलानां च ' समियस्स य ' समीतस्य=

शिलाओं को, हस गभों को-रेशमी वस्त्रों को, तथा और भी स्पर्शन
इन्द्रिय को आनन्द देने वाली वस्तुओं को उन लोगो ने गाडी और
गाडों में भरा। (भरित्ता सगडीसागड जोएति, जोइत्ता जेणेव गभी-
रण पोयवहणे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता सगडीसागड मोएति,
मोइत्ता पोयवहणे सज्जेति, सज्जित्ता तेसि उक्किट्टाण सदफरिसरस
रुवगधाण कट्टस्स य तणस्स य पाणियस्स य तदुलाणय समियस्स
य गोरसस्स य जाव अन्नेसि च वहण पोयवहणपाउग्गा ण पोयवहण
भरेति) भरकर के फिर उन लोगों ने गाडी और गाडों को जोत दिया।
जोतकर के फिर वे वहाँ आये-जहाँ गभीर नाम का पोतस्थान था-बद-
रगाह था। वहाँ आकर के उन लोगों ने गाडी और गाडों को डील-रोक
दिया। और फिर नौकाओंको सजाया-तैयार किया। और तैयार करके
घाटमें उन्होंने उन श्रेष्ठ शब्द, स्पर्श, रस, रूप, एवं गंधोंको काष्ठको तृण
को पानीय द्रव्य को तदुलों को, गेहूँ के आटे को, गोरस घृतादिक-को

वीसी शिलाओंने, हस गभोंने-रेशमी वस्त्रोंने तेमञ्च भीष्ट पञ्च धर्मी स्पर्श
न्द्रियने सुख पभाडे तेवी धर्मी वस्तुओंने ते बोडोअे गाडी अने गाडाओंआ लरी

(भरित्ता सगडीसागड जोएति, जोइत्ता जेणेव गभीरण पोयवहणे तेणेव
उवागच्छति, उवागच्छित्ता सगडीसागड मोएति मोइत्ता पोयवहण सज्जेति,
सज्जित्ता तेसि उक्किट्टाण सदफरिसरसरूपगधाण कट्टस्स य तणस्स य पाणि
यस्स य तदुलाण य समियस्स य गोरसस्स य जाव अन्नेसि च वहण पोयवहण
पाउग्गाण पोयवहण भरेति)

लरीने ते बोडोअे गाडी अने गाडाओंने जेतर्था जेतरीने तेअे।
त्याथी न्या गभीर नामे पोतस्थान (जहर) छंतु त्या आअ्या त्या आवीने
ते बोडोअे गाडी अने गाडाओंने छोडी भूक्या अने त्थारपणी नौकाओंने
सुसज्जित करी सुसज्जित करी आह तेमञ्चे ते उत्तम शब्द, स्पर्श, रस,
रूप अने गंधोने, काष्ठने, घासने, पाणीवाजा द्रव्योने, तदुलो (गेहूँ) ने,

गोधूमादीनामदृक्स्य 'आटा' इति प्रमिद्धस्य, 'गोरसस्मय' गोरसस्मय=घृता-
दिकस्य च यावत् अन्वेपा च गहूना पोतवहनप्रायोग्याणा द्रव्याणा पोतवहन
भरन्ति, भृत्वा 'दक्षिणाणुकूलेण' दक्षिणाणुकूलेण=सानुकूलेण वातेन यत्रैव
कालिकद्वीपस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य तत्र पोतवहन 'लभेति' लभ्यन्ति=
तीरस्थापितगङ्गुपु भरन्ति, उद्ध्वा तान्=नौकासितान् उत्कृष्टान्=उत्तमोत्तमान्
शब्दस्पर्शरूपग धान् 'एगड्डियाहिं' एगड्डियाभिः=लघुनौकाभिः 'कालिय-
दीवे' कालिकद्वीपे 'उत्तारेति' उत्तारयन्ति=नौकातो निस्सार्य भूमौ स्थापयति ।

यावत् और अनेक पोतवहन प्रायोग्य द्रव्यो को उम नौका में भरदिया।
(भरित्ता दक्षिणाणुकूलेण वाएण जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छइ
उवागच्छित्ता पोयवहण लभेति, लवित्ता ताइ उक्किट्ठाइ सहफरिसरस
रूप गधाइ एगड्डियाहिं कालियदीवे उत्तारेति । जहिं २ च ण ते आसा
आसायति वा सयति वा चिट्ठति वा तुयट्ठति वा तहिं २ च ण ते कोडु
त्रियपुरिसा ताओ वीणाओ य जाव वित्तवीणाओ य अन्नाणि य वहूणि
सोइदिय पाउग्गाणि समुदीरेमाणा चिट्ठति) भर करके फिर ये लोग जन
पीछे से आनेवाला अनुकूल वायु वहा तब वहा से चलकर जहा
कालिक द्वीप था वहा आये-वहा आकर के इन लोगों ने
लगर डाल दिया-लगर डालकर पोत में से शब्द के साधन भूत वीणा
आदिको को, अच्छे स्पर्श के साधनभूत रूई से भरे हुए रजाई आदि
वस्त्रों को रसनाइन्द्रिय को सुहावने लगनेवाले खाड आदि पदार्थों को

धडना डोटने, गोरस धी वगेरेने यावत् णीण पणु धणा वडाणु यात्रामा
धाम लागे तेवा द्रव्येने ते नौकाभा लया

(भरित्ता दक्षिणाणुकूले ण वाएण जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता पोयवहण लभेति, लवित्ता ताइ उक्किट्ठाइ सहफरिसरमरूपगधाइ
एगड्डियाहिं कालियदीवे उत्तारेति । जहिं २ च ण ते आसा आसायति वा
सयति वा चिट्ठति वा तुयट्ठति वा तहिं २ च ण ते कोडुत्रियपुरिसा ताओ
वीणाओ य जाव वित्तवीणाओ य अन्नाणि य वहूणि सोइदिय पाउग्गाणि य
दव्वाणि समुदीरेमाणा चिट्ठति)

लरीने तेन्ना गधा न्यारे पाछणधी वडेते अनुकूल पवन वडेवा लाग्ये।
त्यारे त्याधी रवाना यधने न्या डालिक द्वीप डते। त्या आव्या त्या आवीने
ते डोडोअे लगर नाण्यु लगर नाणीने वडाणुमाथी शणुना साधन उप
वीणा वगेरेने, डोभण स्पर्शना साधनभूत इथी लरेला रजध वगेरे वस्त्रेने,
रसना (लल) इन्द्रियने गभता आड वगेरे पदाथेने, नेत्र इन्द्रियने आन ड

च्यन्ते, तेषां कौशेयस्त्राणां 'रेशमीवद्य' इति भाषा पसिद्धानां च, तथा-
 अन्येषां च स्पर्शेन्द्रियमायोग्याणां द्रव्याणां शकटीशाकट भ्रन्ति, भृत्वा शकटीशाकटं
 योजयन्ति, योजयित्वा यत्रैव गम्भीरम्=गम्भीरनामकं पोतस्थानं तत्रैवोपागच्छन्ति,
 उपागत्य शकटीशाकटं मोचयन्ति, मोचयित्वा 'पोयवहण' पोतवहन=नौकां
 सज्जयन्ति, सज्जयित्वा तेषाम् 'उक्किट्टाण' उक्किट्टानां=श्रेष्ठानां शकटम्पर्शरूप
 गन्धानां काष्ठस्य च पानीयस्य च तन्दुलानां च 'सामियस्स य' समीतस्य=

शिलाओं को, हस गभों को-रेशमी वस्त्रों को, तथा और भी स्पर्शन
 इन्द्रिय को आनन्द देने वाली वस्तुओं को उन लोगो ने गाड़ी और
 गाड़ों में भरा। (भरित्ता सगडीसागडं जोएति, जोइत्ता जेजेव गभी-
 रए पोयवहणे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता सगडीसागडं मोएति,
 मोइत्ता पोयवहणे सज्जेति, सज्जित्ता तेसि उक्किट्टाण सहफरिसरम
 रूवगधाण कट्टस्स य तणस्स य पाणियस्स य तदुलाणय सामियस्स
 य गोरसस्स य जाव अन्नेसि च वहूण पोयवहणपाउग्गा ण पोयवहण
 भरेति) भरकर के फिर उन लोगों ने गाड़ी और गाड़ों को जोत दिया।
 जोतकर के फिर वे वहाँ आये-जहाँ गभीर नाम का पोतस्थान था-बद-
 रगाह था। वहाँ आकर के उन लोगों ने गाड़ी और गाड़ों को ढीठ-रोक
 दिया। और फिर नौकाओंको सजाया-तैयार किया। और तैयार करके
 बादमें उन्होंने उन श्रेष्ठ शब्द, स्पर्श, रस, रूप, एव गंधोंको काष्ठको तृण
 को पानीय द्रव्य को तदुलों को, गेहूँ के आटे को, गोरस घृतादिक-को

लीथी शिलाओंने, हस गभोंने-रेशमी वस्त्रोंने तेमज्ज णीत्थ पद्य धष्ठी स्पर्शे
 न्द्रियने सुभ पभाडे तेवी धष्ठी वस्तुओंने ते ढोकेओ गडी अने गाडाओमा लरी
 (भरित्ता सगडीसागडं जोएति, जोइत्ता जेजेव गभीरए पोयवहणे तेणेव
 उवागच्छति, उवागच्छित्ता सगडीसागडं मोएति मोइत्ता पोयवहण सज्जेति,
 सज्जित्ता तेसि उक्किट्टाण सहफरिसरसूरूपगधाण कट्टस्स य तणस्स य पाणि
 यस्स य तदुलाण य सामियस्स य गोरसस्स य जाव अन्नेसि च वहूण पोयवहण
 पाउग्गाण पोयवहण भरेति)

लरीने ते ढोकेओ गडी अने गाडाओने जेतर्था जेतरीने तेओ
 त्याथी न्या गभीर नामे पोतस्थान (भ्रर) इतुं त्या आओया त्या आवीने
 ते ढोकेओ गडी अने गाडाओने छोडी भूक्या अने त्थारपछी नौकाओने
 सुसज्जित करी सुसज्जित करी भाड तेमछे ते उत्तम शब्द, स्पर्श, रस,
 रूप अने गंधने, काष्ठने, घासने, पाष्ठीवाणा द्रव्येने, तदुलो (~ आ) ने,

कर्माणि यावत् स प्रातिमानि च अन्यानि च ऋणि चक्षुरिन्द्रियमायोग्याणि च द्रव्याणि स्थापयति=एरुगी कुर्वन्ति, तेषामश्वाना परिपर्यन्तेन=सर्वतः समन्तात् पार्श्वे स्थापयन्ति च, स्थापयित्वा ते निश्चलाः, निस्पन्दाः, तूष्णीकास्तिष्ठन्ति? ।

तथा-यत्र यत्र तेऽश्वा आसते स्वपन्ति तिष्ठन्ति त्वग्वर्त्तयन्ति च तत्र तत्र खलु तेषा ऋणा फोडपुटाना च यावद् अन्येषा च बहूनां घ्राणेन्द्रियमायोग्याणा

जाव सघाडमाणि य अन्नाणि य ऋणि चक्खिदिय पाउग्गाणि य दब्बाणि ठवेत्ति, ठवित्ता तेसि परिपेरतेण पासए ठवेत्ति, ठवित्ता णिच्चला णिप्फदा तुसिणीया चिट्ठति) उस के चारों तरफ चारो दिशाओं में- वीणा आदिको को स्थापित करते रहे। स्थापित करके फिर वे वही पर निश्चल-चलन क्रिया से रहित होकर हस्तादि अवयव को कपित किये बिना ही चुपचाप बैठ गये।

इस तरह-जिसर घनमें वे अश्व बैठते थे, सोते थे, ठहरते थे, छेदते थे, वहा र उन कौटुम्बिक पुरुषों ने उस आनीत बहुतसी कृष्ण, नील, पीत, रक्त, शुक्ल वर्णवाली काष्ठकर्म आदि सघातिम पर्यंत की सामग्री को जो चक्षुइन्द्रिय को आनन्दप्रद थी, तथा और भी चक्षुइन्द्रि को सुहावनी लगनेवाली जो वस्तुएँ थी उन को एकत्रित किया और उन्हें उन अश्वो की चारो दिशाओ मे रख दिया। रखकर के फिर वे निश्चल, निस्पन्द होकर चुपचाप बैठ गये। (जत्थ २ ते आसा आसयति ४ तत्थ

विय पुरिसा बहूणि ऋणाणि य ५ कट्टकम्माणिय जाव सघाडमाणि य अन्नाणि य ऋणि चक्खिदिय पाउग्गाणि य दब्बाणि ठवेत्ति, ठवित्ता तेसि परिपेरतेण पासए ठवेत्ति ठवित्ता णिच्चला, णिप्फदा तुसिणीया चिट्ठति)

तेमनी चोभेर, आरे आर दिशाओमा वीणाओ वगेरे भूरी भूरीने तेओ ता न निश्चल-डवन चलननी क्रियाथी रहित थधने अ गेने डलाणा वगर चुपचाप त्या भेती गया आ प्रभाणे ले ले वनमा अश्वो (घोडाओ) भेसता डता, सूता डता, रडेता डता, आराम डरता डता ते ते वनमा ते कौटुम्बिक पुरुषोओ साथे लावेली धणी डानी, नीली, पीणी राती, सदेह र गनी डारुभं वगेरे सघातिम सुधीनी अधी वस्तुओने डे लेओ थधु (आण) धन्द्रियने सुभ आपनारी डती तेम न पीछ पणु थधु धन्द्रियने सुभ आप नारी डेटली सारी वस्तुओ डती तेमने लेगी डरी अने अश्वोनी चोभेर तेमने गोडवी डीधी गोडवीने तेओ त्या न निश्चल, निस्पन्द थधने चुपचाप त्या न भेती गया

(जत्थ २ ते आसा आमयन्ति ४ तत्थ २ ण तेसि ऋण फोडपुटान य जाव अन्नेसि च बहूण घाणिदियपाउग्गाण दब्बाण पुजेय णियरे य करेति,

‘ जर्हि २ च ण ’ यत्र यत्र च रने खलु ते ‘ आमा ’ अघ्राः=जात्या अघ्राः
 ‘ आसयति या ’ आसते=उपशिशन्ति ‘ सयंति या ’ शेरतेस्सयन्ति वा ‘ चिद्वृत्ति वा ’
 तिष्ठन्ति या, ‘ तुयद्वृत्ति या ’ त्वग्रस्यन्ति=शरीर प्रसार्य स्वपन्ति वा ‘ तर्हि २
 तत्र तत्र च खलु ते कौटुम्भिकपुरुषाः ‘ ताम्रो ’ ताः=दृग्गति-गीर्षनगरादानीता
 गीगाश्र यात्-वृत्तगीणाश्र, तथा अन्यानि च गृह्णि श्रोत्रेन्द्रियप्रायोग्याणि च
 द्रव्याणि ‘ समुदीरेमाणा ’ समुदीरयन्त=मधुरध्वनिना प्रादयतः तिष्ठन्ति, तेषा
 मश्वाना ‘ परिपेरतेण ’ परिपर्यन्तेन=सर्वतः सम तात् चतुर्दिशु इत्यर्थ ‘ पासए ’
 पार्श्वे समीपे गीणादीनि स्थापयन्ति, स्थापयित्वा ते पुरुषाः ‘ निच्चला ’
 निश्चलाः=चलनक्रियारहिताः ‘ गिष्फदा ’ निः स्पन्दा =हस्ताग्रयवमचाररहिताः
 ‘ तुसिणीया ’ यत्र व्यापाररहिताः ‘ चिद्वृत्ति ’ तिष्ठन्ति ।

तथा-यत्र यत्र तेऽश्वानाः आसते वा यात् त्वग्रस्यन्ति=लुठन्ति तत्र तत्र खलु
 ते कौटुम्भिकपुरुषाः गृह्णि कृष्णानि च ५=कृष्णनीलपीतरक्तगृष्णानि काष्ठ-

नेत्र इन्द्रिय को आनन्द देनेवाले नीले पीले आदि रंगवाले चित्रों को एव
 घ्राणइन्द्रियों को सुखकारक काष्ठपुत्र आदि सुगन्धित द्रव्यों को छोटी २
 नौकाओं द्वारा पोत में से उतार कर कालिक द्वीप में रख दिया । बाद
 में जहा २ वे जाति अश्व बैठते थे सोते थे, ठहरते थे, छेदते थे, वहा २
 वे कौटुम्भिक पुरुष उन हस्तिशीर्ष नगर से लाये हुए वीणा से लेकर
 वृत्तवीणा पर्यन्त के साधनों को तथा और भी श्रोत्र इन्द्रिय को सुहा
 वनी लगनेवाली साधन सामग्री को मधुर ध्वनि से बजाते हुए ठहर
 गये । और (तेसिं परिपेरतेण पासए ठवेति, ठवित्ता गिच्चला, गिष्फदा,
 तुसिणीया चिद्वृत्ति, जत्य २ ते आसा आसयति वा जाव तुयद्वृत्ति वा
 तत्य २ ण ते कौटुम्भिक पुरिसा गृह्णि कृष्णाणि य ५ कष्टकम्माणि य

पमाडनार नीला, पीला वगैरे रंगना चित्राने अने घ्राण (नाक) इन्द्रियने
 सुगन्धितेवा काष्ठपुत्र वगैरे सुगन्धित द्रव्योने वहाणुमाथी नानी नानी
 छोटीओमा भूझीने कालिक द्वीप उपर भूझी द्वीपी त्वापरणी न्या ते जाति
 अश्वो भेसता हुता, सूता हुता, रडेता हुता, आराम करता हुता त्या ते
 कौटुम्भिक पुरुषो ते हस्तिशीर्ष नगरथी लक्ष आवेला वीणाथी भाडीने वृत्त
 वीणा सुधीना साधनेने तेमत्र गीण पणु श्रोत्र (कान) इन्द्रियने गमे
 तेवी साधन सामग्रीने मधुर ध्वनिथी बगाडता त्या शैकाई गया अने—

(तेसिं परिपेरतेण पासए ठवेति, ठवित्ता गिच्चला, गिष्फदा, तुसिणीया
 चिद्वृत्ति, जत्य २ ते आसा आसयति वा जाव तुयद्वृत्ति वा तत्य २ - कौटु-

कर्माणि यावत् सत्प्रतिमानि च अन्यानि च बहूनि चक्षुरिन्द्रियप्रायोग्याणि च द्रव्याणि स्थापयन्ति=एकरी कुर्वन्ति, तेषामश्नाना परिपर्यन्तेन=सर्वतः समन्तात् पार्श्वे स्थापयन्ति च, स्थापयित्वा ते निश्चलाः, निस्पन्दाः, तूष्णीकास्तिष्ठन्ति २ ।

तथा-यत्र यत्र तेऽश्वा आसते स्वपन्ति तिष्ठन्ति त्वग्वर्त्तयन्ति च तत्र तत्र खलु तेषां गृह्णाता कोष्ठशृङ्गानां च यावद् अन्येषां च बहूनां घ्राणेन्द्रियप्रायोग्याणां

जाव संघाडमाणि य अन्नाणि य गृह्णि चर्त्विखदिय पाउग्गाणि य दव्याणि ठवेति, ठवित्ता तेसि परिपेरतेण पासए ठवेति, ठवित्ता णिचत्ता णिप्फदा तुसिणीया चिट्ठति) उस के चारों तरफ चारों दिशाओं में- वीणा आदिको को स्थापित करते रहे । स्थापित करके फिर वे वही पर निश्चल-चलन क्रिया से रहित होकर हस्तादि अवयव को कपित किये बिना ही चुपचाप बैठ गये ।

इस तरह-जिस २ वनमें वे अश्व बैठते थे, सोते थे, ठहरते थे, छेदते थे, घरा २ उन कौटुम्बिक पुरुषों ने उस आनीत बहुतसी कृष्ण, नील, पीत, रक्त, शुक्ल वर्णवाली काष्ठकर्म आदि संघातिम पर्यंत की सामग्री को जो चक्षुइन्द्रिय को आनन्दप्रद थी, तथा और भी चक्षुइन्द्रि को सुहावनी लगनेवाली जो वस्तुएँ थीं उन को एकत्रित किया और उन्हें उन अश्वों की चारों दिशाओं में रख दिया । रखकर के फिर वे निश्चल, निस्पन्द होकर चुपचाप बैठ गये । (जत्य २ ते आसा आसयति ४ तत्थ

विय पुरिसा बहूणि क्किण्हाणि य ५ कट्टकम्माणिय जाव सगारमाणि य अन्नाणि य गृह्णि चर्त्विखदिय पाउग्गाणि य दव्याणि ठवेति, ठवित्ता तेसि परिपेरतेण पासए ठवेति ठवित्ता णिचत्ता, णिप्फदा तुसिणीया चिट्ठति)

तेमनी चोभेर, आरे आर दिशाओमा वीणाओ वगेरे भूमी भूमीने तेओ त्या न निश्चल-डवन चलननी क्रियाथी रहित थधने अ गाने डलावा वगर सुपथाप त्या भेसी गया आ प्रभाळे ने ने वनमां अश्वो (घोडाओ) भेसता डता, सूता डता, रहता डता, आराम करता डता ते ते वनमा ते कौटुम्बिक पुरुषोओ साथे लावेली घण्टी डानी, नीली, पीली राती, सदेह २ गनी काष्ठकर्म वगेरे संघातिम सुधीनी भधी वस्तुओने डे नेओ अथु (आभ) धन्द्रियने सुभ आपनारी डती तेम न पीछ पणु अशु धन्द्रियने सुभ आप नारी जेटली सारी वस्तुओ डती तेमने लेगी करी अने अश्वोनी चोभेर तेमने गोडवी सीधी गोडवीने तेओ त्या न निश्चल, निस्पन्द थधने सुपथाप त्या न भेसी गया

(जत्य २ ते आसा आमयति ४ तत्थ २ ण तेसि गृह्ण फोट्टुपुडाण य जाव अन्नेसि च गृह्ण घागिदियपाउग्गाण दव्याण पुजेय णियरे य परेति,

'जर्हि २ च ण' यत्र यत्र च गने खलु ते 'आमा' अघाः=जात्या अघाः
 'आसयति वा' आसते=उपविशन्ति 'सयंति वा' शेरतेस्यपनि वा' चिद्धति वा'
 तिष्ठन्ति वा, 'तुयद्वति वा' त्वग्गतयन्ति=शरीर मत्तार्य स्यपन्ति वा 'तर्हि २
 तत्र तत्र च खलु ते कौटुम्भिकपुरुषाः 'तामो' ताः=दृष्टिशीर्षनगरादानीता
 वीणाश्च यावत्-वृत्तवीणाश्च, तथा अन्यानि च गृह्णि श्रोत्रेन्द्रियप्रायोग्याणि च
 द्रव्याणि 'समुदोरेमाणा' समुदीरयन्तः=मधुरध्वनिना ग्राहयन्तः तिष्ठन्ति, तेषां
 मन्थानां 'परिपेरतेण' परिपर्यन्तेन=सर्पतः समन्तात् चतुर्दिशु इत्यर्थ 'पासए'
 पार्श्वे समीपे वीणादीनि स्थापयन्ति, स्थापयित्वा ते पुरुषाः 'निच्चला'
 निश्चलाः=चलनक्रियारहिताः 'णिप्फदा' निःस्पन्दा =दस्ताद्ययवमचाररहिताः
 'तुसिणीया' यत्र व्यापाररहिताः 'चिद्धति' तिष्ठन्ति ।

तथा-यत्र यत्र तेऽश्वाः आसते वा यावत् रम्यत्तपन्ति=लुठन्ति तत्र तत्र खलु
 ते कौटुम्भिकपुरुषाः गृह्णि कृष्णानि च ५=कृष्णनीलपीतरक्तशुभ्रवर्णानि काष्ठ-

नेत्र इन्द्रिय को आनन्द देनेवाले नीले पीले आदि रंगवाले चित्रो को एव
 घ्राणइन्द्रियों को सुखकारक काष्ठपुट आदि सुगन्धित द्रव्यों को छोटी २
 नौकाओं द्वारा पोत में से उतार कर कालिक द्वीप में रख दिया। बाद
 में जहा २ वे जाति अश्व बैठते थे मोते थे, ठहरते थे, छेदते थे, बहा २
 वे कौटुम्भिक पुरुष उन इस्तिशीर्ष नगर से लाये हुए वीणा से लेकर
 वृत्तवीणा पर्यन्त के साधनों को तथा और भी श्रोत्र इन्द्रिय को सुरा
 वनी लगनेवाली साधन सामग्री को मधुर ध्वनि से बजाते हुए ठहर
 गये। और (तेसिं परिपेरतेण पासए ठवेति, ठवित्ता णिच्चला, णिप्फदा,
 तुसिणीया चिद्धति, जत्थ २ ते आसा आसयति वा जाव तुयद्वति वा
 तत्थ २ ण ते कौटुम्भिक पुरिसा गृह्णि किण्हाणि य ५ कट्टकम्माणि य

पनाडनार नीला, पीला वगैरे रंगना चित्राने अने घ्राण्यु (नाक) इन्द्रियने
 सुगन्ध आये तेवा काष्ठपुट वगैरे सुगन्धित द्रव्योंने वहाण्युभाथी नानी नानी
 छोटीओभा भूझीने कालिक द्वीप उपर भूझी द्वीपी त्वापरपछी न्या ते जाति
 अश्वो जेसता हुता, सूता हुता, रडेता हुता, आराम करता हुता त्या ते
 कौटुम्भिक पुरुषो ते इस्तिशीर्ष नगरथी लर्छ आवेली वीणाथी भाझीने वृत्त
 वीणा सुधीना साधनाने तेमञ्ज भीञ्ज पञ्च श्रोत्र (कान) इन्द्रियने गमे
 तेवी साधन सामग्रीने मधुर ध्वनिथी वगाडता त्या रोकार्छ गया अने—

(तेसिं परिपेरतेण पासए ठवेति, ठवित्ता णिच्चला, णिप्फदा, तुसिणीया
 चिद्धति, जत्थ २ ते आसा आसयति वा जाव तुयद्वति वा तत्थ २ कौटु-

कर्माणि यावत् स प्रातिमानि च अन्यानि च गृह्णन्ति चक्षुरिन्द्रियप्रायोग्याणि च द्रव्याणि स्थापयन्ति=एकत्री कुर्वन्ति, तेषामध्याना परिपर्यन्तेन=सर्वत्र. समन्तात् पार्श्वे स्थापयन्ति च, स्थापयित्वा ते निश्चलाः, निस्पन्दाः, तूष्णीं चास्तिष्ठन्ति २ ।

तथा-यत्र यत्र तेऽथा आसते स्वपन्ति तिष्ठन्ति त्वग्वर्चयन्ति च तत्र तत्र खलु तेषां गृह्णाणां कोष्ठपुटानां च यावद् अन्येषां च गृह्णाणां घ्राणेन्द्रियप्रायोग्याणां

जाव सघाटमाणि य अन्नाणि य गृह्णन्ति चर्षिखदिय पाउग्गाणि य दन्त्राणि ठवैति, ठवित्ता तेसिं परिपेरतेर्ण पासए ठवैति, ठवित्ता णिचरला णिफ्फदा तुसिणीया चिट्ठति) उस के चारों तरफ चारो दिशाओं में-वीणा आदिको को स्थापित करते रहे । स्थापित करके फिर वे वही पर निश्चल-चलन क्रिया से रहित होकर हस्तादि अवयव को कपित किये बिना ही चुपचाप बैठ गये ।

इस तरह-जिसर वनमें वे अश्व बैठते थे, सोते थे, ठहरते थे, लेटते थे, वहा २ उन कौटुम्बिक पुरुषों ने उस आनीत बहुतसी कृष्ण, नील, पीत, रक्त, शुक्ल वर्णवाली काष्ठकर्म आदि सघातिम पर्यंत की सामग्री को जो चक्षुइन्द्रिय को आनन्दप्रद थी, तथा और भी चक्षुइन्द्रि को सुहावनी लगनेवाली जो वस्तुएँ थीं उन को एकत्रित किया और उन्हें उन अश्वो की चारो दिशाओ मे रख दिया । रखकर के फिर वे निश्चल, निस्पन्द होकर चुपचाप बैठ गये । (जत्थ २ ते आसा आसयति ४ तत्थ

विय पुरिसा वहुणि ऋग्हाणि य ५ ऋडुकम्माणिय जाव सघाटमाणि य जन्नाणि य गृह्णन्ति चर्षिखदिय पाउग्गाणि य दन्त्राणि ठवैति, ठवित्ता तेसिं परिपेरतेर्ण पासए ठवैति ठवित्ता णिचरला, णिफ्फदा तुसिणीया चिट्ठति)

तेमनी शोभेर, आरे आर दिशाओमा वीणाओ वगेरे भूमी भूमीने तेओ त्या ७ निश्चल-डवन चलननी क्रियाथी रहित थधने अ गेने हलाया वगर चुपचाप त्या भेसी गया आ प्रभाणे जे जे वनमा अश्वो (घोडाओ) भेसता हता, सूता हता, रहता हता, आराम करता हता ते ते वनमा ते कौटुम्बिक पुरुषोओ साथे लावेली घण्टी काणी, नीली, पीली राती, सदेह र गनी काष्ठकर्म वगेरे सघातिम सुधीनी षष्ठी वस्तुओने के जेओ अश्व (आष) इन्द्रियने सुभ आपनारी हती तेमज भील पणु अशु इन्द्रियने सुभ आप नारी जेटली सारी वस्तुओ हती तेमने लेगी करी अने अश्वोनी शोभेर तेमने गोठवी दीधी गोठवीने तेओ त्या ७ निश्चल, निस्पन्द थधने चुपचाप त्या ७ भेसी गया

(जत्थ २ ते आसा आमयति ४ तत्थ २ ण तेसिं गृह्णन्ति कोष्ठपुटानां य जाव अन्नेसिं च वहुण घ्राणिदियपाउग्गाणां दन्त्राणां पुजेय णियरे य करन्ति,

‘ जर्हि २ च णं ’ यत्र यत्र च गने खलु ते ‘ आमा ’ अघ्राः=वात्सा अघ्राः
 ‘ आसयति वा ’ आसते=उपविशन्ति ‘ सयति वा ’ शेरतेऽप्यपनि वा ‘ चिद्धति वा ’
 तिष्ठति वा, ‘ तुयद्धति वा ’ त्स्मरत्तयति=शरीर प्रसार्य म्यपनि वा ‘ तर्हि २
 तत्र तत्र च खलु ते कौटुम्बिकपुरुषाः ‘ ताम्रो ’ ताः=दृष्टिशीर्षनगराक्षणीता
 गीगाश्च यावत्-वृत्तरीणाश्च, तथा अन्यानि च गृह्णन्ति श्रीनेन्द्रियमायोग्याणि च
 द्रव्याणि ‘ समुक्षरेमाणा ’ मधुरध्वनिना वादयन्तः तिष्ठन्ति, तेषां
 मध्वाना ‘ परिपेरतेण ’ परिपर्यन्तेन=सर्वतः समन्तात् चतुर्दिशु इत्यर्थे ‘ पासए
 पार्थे समीपे गीणादीनि स्थापयन्ति, स्थापयित्वा ते पुरुषाः ‘ निच्चला
 निश्चलाः=चलनक्रियारहिताः ‘ गिष्फंदा ’ निःस्पन्दा =हस्ताद्ययत्रमचाररहिताः
 ‘ तुसिणीया ’ यत्र व्यापाररहिता. ‘ चिद्धति ’ तिष्ठन्ति ।

तथा-यत्र यत्र तेऽघ्राः आसते वा यावत् त्स्मरत्तयन्ति=लुठन्ति तत्र तत्र खलु
 ते कौटुम्बिकपुरुषाः गृह्णन्ति कृष्णानि च ५=कृष्णनीलपीतरक्तशुक्लवर्णानि काष्ठ

नेत्र इन्द्रिय को आनन्द देनेवाले नीले पीले आदि रंगवाले चित्रों को एव
 घ्राणहृद्दियों को सुखकारक काष्ठपुट आदि सुगन्धित द्रव्यों को छोटी २
 नौकाओं द्वारा पोत में से उतार कर कालिक द्वीप में रख दिया। बाद
 में जहा २ वे जाति अश्व बैठते थे मोते थे, ठहरते थे, लेटते थे, बहा २
 वे कौटुम्बिक पुरुष उन हस्तिशीर्ष नगर से लाये हुए वीणा से लेकर
 वृत्तवीणा पर्यन्त के साधनों को तथा और भी ओत्र इन्द्रिय को सुहा
 घनी लगनेवाली साधन सामग्री को मधुर ध्वनि से बजाते हुए ठहर
 गये। और (तेसिं परिपेरतेण पासए ठवेति, ठवित्ता गिच्चला, गिष्फंदा,
 तुसिणीया चिद्धति, जत्य २ ते आसा आसयति वा जाव तुयद्धति वा
 तत्य २ ण ते कौटुम्बिक पुरिसा बहूणि किण्हाणि य ५ कट्टकम्माणि य

पमाडनार नीला, पीला वगैरे २ गना चित्राने अने घ्राण (नाक) इन्द्रियने
 सुख आये तेवा काष्ठपुट वगैरे सुगन्धित द्रव्योने वहाणुमाधी नानी नानी
 छोटीओमा भूझीने कालिक द्वीप उपर भूझी दीधी त्यारपछी न्या ते जाति
 अश्वो भेसता डता, सूता डता, रडेता डता, आराम करता डता त्या ते
 कौटुम्बिक पुरुषो ते हस्तिशीर्ष नगरथी लघ आवेली वीणाथी माडीने वृत्त
 वीणा सुधीना साधनेने तेमन् पीज्ज पणु श्रोत्र (कान) इन्द्रियने गने
 तेवी साधन सामग्रीने मधुर ध्वनिथी बजाडता त्या शकथ गथा अने—

(तेसिं परिपेरतेण पासए ठवेति, ठवित्ता गिच्चला, गिष्फंदा, तुसिणीया
 चिद्धति, जत्य २ ते आसा आसयति वा जाव तुयद्धति वा तत्य २ = कौटु-

ए' त्रिवराणि=गर्त्तानि खनन्ति, खनित्या गुडपानकस्य खण्डपानकस्य यावद् अन्येषा च बहूना पानकाना त्रिवराणि भरन्ति, भृत्वा तेषा परिपर्यन्तेन पार्श्वे स्थापयन्ति यावत् तूष्णीकास्तिष्ठन्ति ४ ।

यत्र यत्र च खलु तेऽथा आसते ४ तत्र तत्र च खलु ते=कौटुम्बिकपुरुषाः बहून् क्रोयविकान्=रूतपूरितप्रावरणविशेषान् यावत् हसगर्भान्=शैशेयवस्त्रविशेषान् अन्यानि च बहूनि स्पर्शेन्द्रियप्रायोग्याणि वस्त्रादीनि 'अत्युय पञ्चयुयाट्' आस्तुतप्रत्यवस्तुतानि=श्लक्ष्णप्रावरणप्रावृतानि कृत्वा स्थापयन्ति, स्थापयित्वा तेषा परिपर्यन्तेन यावत् तूष्णीकास्तिष्ठन्ति ५ ।

ततः खलु तेऽथा यत्रैव एते उत्कृष्टाः शब्दस्पर्शरसरूपगन्धास्तत्रैवोपागच्छन्ति,

द्रव्योक्ते पुत्र एव निकर लगाकर खड़े कर दिये । एक ही वस्तुओंकी जो राशि होती है उसका नाम पुत्र तथा भिन्न वस्तुओं की राशि का नाम निकर है । बाद में वही पर उन्हीं ने अनेक गर्त खड़े किये । गर्त करके उनमें गुडपानक खण्डपानक यावत् और भी अनेक पानक भर दिये । बाद में वहा पर उनकी चारो दिशाओं में निश्चल-निस्पन्द होकर चुपचाप बैठ गये । इसी तरह जिन २ वनो में वे घोड़े बैठते थे, सोते थे, टहरते थे, एव लेटते थे, वहा २ उन कौटुम्बिक पुम्पो ने अनेक रूई के भरे हुए प्रावरणों को यावत् हसगर्भों को-रेशमी वस्त्रों को तथा-और भी अनेक स्पर्शनहन्द्रिय को सुखदायक वस्त्रों को चिकने प्रावरणों से ढककर रख दिया । बाद में वे उनके चारों ओर यावत् चुपचाप बैठ गये (तपण ते आसा जेणेव एए उक्किट्टा सदफरिसरसरुवगंधा तेणेव उवा-

भिक पुरुषोऽप्ये गोणना यावत् भीज्ज धण्डा रसनेन्द्रिय (७७) ने सुभ प्रमाडे तेवा द्रव्येयाना पुन्ने अने निकरेः लगावीने भड्डी दीधा अेऽए वस्तुना ढगलाने पुंए तेमए गुद्दी गुद्दी वस्तुओना ढगलाओने निकर उडे छे त्याएपथी ते बोडोऽप्ये त्या ए धण्डा भाडाओ तैयार उर्या ते भाडाओमा तेओऽप्ये गोण पानक, भाडपानक, यावत् भीज्ज पणु धण्डा जतना पानका बरी दीधा त्थार भाड तेओ त्या ए तेमनी थारे तरक निश्चल-निस्पन्द थअने चुपचाप जेसी गया आ प्रमाडे जे जे वनोमा ते घोडाओ जेमता उता, सूता उता, रडेता उता अने आराम उरता उता त्या त्या ते कौटुभिक पुरुषोऽप्ये धण्डा इना प्राव षोने यावत् उ सगर्भेनि, रेशमी वस्त्रोने तेमए भीज्ज पणु धण्डा स्पर्शेन्द्रियने सुभ आये तेना वस्त्रोने लीमा प्रावण्णोथी आऽऽहित करी दीधा त्थारपथी तेओ अधा सुपचाप तेनी थारे तरक जेनी गया

(तपण ते आसा जेणेव एए उक्किट्टा सदफरिसरसरुवगंधा तेणेव उवाग-

द्रव्याणां पुत्राश्च एरुयन्तुममृहस्त्वान निगरांश्च नानाशिव्यामुराशिरूपान कुर्वन्ति,
कृत्वा तेषामश्वानां परिपर्यन्तेन=सर्वांश्चि यान् तूष्णीकाम्निवृन्ति ३ ।

यत्र यत्र च ग्लु तेऽश्वा आगते ४ तत्र तत्र ग्लु गृहस्य यावद् अन्येषां च
ग्रहणा जिह्वेन्द्रियमायोग्याणा द्रव्यणा पुत्रांश्च निगरांश्च कुर्वन्ति. कृत्वा ' विय

२ ण तेमि चङ्गण कोट्टपुट्टाणं य जाय अन्नेमि च चङ्गण घाणिदिय पाउ
ग्गाण दव्याण पुजेय गियरे य करंति करित्ता तेमि परिपेरतेण जाव
चिद्वति, जत्थ जत्थ ण ते आसा आसयति ४ तत्थ २ णं गुलस्स जाव
अन्नेमि च चङ्गण जिह्विभदिय पाउग्गाण दव्याण पुजे य गियरे य करंति,
करित्ता त्रियरेण खणति, खणित्ता गुलपाणगस्स खडपाणगस्स जाव
अन्नेमि च चङ्गण पाणगाण त्रियरे भरंति-भरित्ता तेमि परिपेरतेण
पासए ठवेंति जाय चिद्वति जहिं २ च ण ते आसा आस० तहिं २ ण ते
वहवे कोयविद्या य जाय गवभाय अण्णाणि य ग्रहणि फासिदियपाउ
ग्गाइ अत्थुय पच्चत्थुयाइ ठवेंति, ठवित्ता तेमि परिपेरतेण जाव
चिद्वति) जहा जहा वे घोडे वैठते थे, सोते थे, ठहरते थे, छेटते थे, वहा
२ उन कौटुम्बिक पुरुषों ने उन अनेक कोष्ट पुटों के यावत् अन्य और
घ्राणेन्द्रिय प्रायोग्य द्रव्यो, के पुत्रों को निकरो को एकात्रित कर दिया
और करके फिर वे उन अश्वों की चारों दिशाओं में यावत् चुपचाप बैठ
गये । जहा २ वे घोडे वैठते थे, सोते थे, ठहरते थे, छेटते थे, वहा २ उन
कौटुम्बिक पुरुषो ने गुड़ के यावत् दूसरे और रसनेन्द्रिय आलहादक

करित्ता तेमि परिपेरतेण जाय चिद्वति, जत्थ जत्थ णते आसा आसयति ४
तत्थ २ ण गुलस्स जाय अन्नेमि च चङ्गण जिह्विभदिय पाउग्गाण दव्याण पुजे य
गियरे य करंति, करित्ता त्रियरेण खणति, खणित्ता गुलपाणगस्स खडपाणगस्स
जाव अ नेमि च चङ्गण पाणगाण त्रियरे भरंति-भरित्ता तेमि परिपेरतेण पासए
ठवेंति जाय चिद्वति जहिं २ च ण ते आसा आस० तहिं २ च ण ते वहवे कोय
विद्या य जाय गवभाय अण्णाणि य ग्रहणि फासिदिय पउग्गाइ अत्थुयपच्चत्थु
याइ ठवेंति, ठवित्ता तेमि परिपेरतेण जाय चिद्वति)

न्या न्या ते घोडाओ गेसता हुता सूता हुता रडेता हुता, आराम
करता हुता त्या त्या ते कौटु जिह्वेन्द्रिय पुरुषोओ ते धरुा केऽथ पुटकेने यावत् पील
पथ धरुी घ्राणेन्द्रिय (नाक) ने सुप्प पमाडे तेवी वस्तुओने पुष्कण प्रमा
खमा त्या गेडवी हीधी, ओकडी करी हीधी अने ओकडी करीने तेओ ते घोडा
ओने आरे तरइ यावत् सुपथाप थधने गेभी गया ते घोडाओ न्या न्या
गेसता हुता, सूता हुता, रडेता हुता, आराम करता हुता त्या त्या ते कौटु

ए' विवराणि=गर्त्तानि स्रजन्ति, खनित्या गुडपानकस्य खण्डपानकस्य यावद् अन्येषा च बहूना पानकाना विवराणि भरन्ति, भृत्वा तेषा परिपर्यन्तेन पार्श्वे स्थापयन्ति यावत् तृष्णीकास्तिष्ठन्ति ४ ।

यत्र यत्र च खलु तेषु आसते ४ तत्र तत्र च खलु ते=कौटुम्बिकपुरुषाः बहून् क्रोयिकान्=रूतपूरितप्रावरणविशेषान् यावत् हसगर्भान्=शौशेयवस्त्रविशेषान् अन्यानि च बहूनि स्पर्शेन्द्रियमायोग्याणि वस्त्रादीनि 'अत्युय पञ्चयुयाड' आस्तृतप्रत्यवस्तृतानि=श्लक्ष्णप्रावरणप्रावृतानि कृत्वा स्थापयन्ति, स्थापयित्वा तेषा परिपर्यन्तेन यावत् तृष्णीकास्तिष्ठन्ति ५ ।

ततः खलु तेषु यत्रैव एते उत्कृष्टाः शब्दस्पर्शरूपगन्धास्त्रैवोपागच्छन्ति,

द्रव्योक्ते पुत्र एव निकर लगाकर खड़े कर दिये । एक ही वस्तुओकी जो राशि होती है उसका नाम पुत्र तथा भिन्न वस्तुओं की राशि का नाम निकर है । बाद में वही पर उन्हीं ने अनेक गर्त खड़े किये । गर्त करके उनमें गुडपानक खण्डपानक यावत् और भी अनेक पानक भर दिये । बाद में वहा पर उनकी चारो दिशाओं में निश्चल-निस्पन्द होकर चुपचाप बैठ गये । इसी तरह जिन २ वनों में वे घोड़े बैठते थे, सोते थे, टहरते थे, एच लेटते थे, वहा २ उन कौटुम्बिक पुत्रों ने अनेक रुई के भरे हुए प्रावरणो को यावत् हसगर्भों को-रेशमी वस्त्रों को तथा-और भी अनेक स्पर्शेन्द्रिय को सुखदायक वस्त्रों को चिकने प्रावरणों से ढककर रख दिया । बाद में वे उनके चारो ओर यावत् चुपचाप बैठ गये (तपण ते आसा जेणेव एण उक्किट्ठा सदफरिसरसख्वगधा तेणेव उवा-

जिक पुरुषोच्चे गोणना यावत् भीज्ज धण्णा रसनेन्द्रिय (अल) ने सुप्प प्रमाडे तेवा द्रव्येना पुञ्जे अने निउरे। लगावीने अडकी द्वीधा अेउ अ वस्तुना ढगलाने पुञ्ज तेमज्ज बुद्धी बुद्धी वस्तुओना ढगलाओने निकर उडे छे त्थारपथी ते लोकोच्चे त्या अ धण्णा आडाओ त्थार उर्या ते आडाओमा तेओच्चे गोण पानक, आडपानक, यावत् भीज्ज पणु धण्णी जतना पानको भरी द्वीधा त्थार आद तेओ त्या अ तेमनी चारे तरक्क निश्चल-निस्पन्द थधने सुपत्थाप जेसी गया आ प्रमाणु जे जे वनेमा ते घोडाओ जेसता उता, सूता उता, रडेता उता अने आराम उरता उता त्या त्या ते कौटुमिक पुरुषोच्चे धण्णा इना प्रावरणोने यावत् उसगर्भोने, रेशमी वस्त्रोने तेमज्ज भीज्ज पणु धण्णा स्पर्शेन्द्रियने सुप्प आपे तेवा वस्त्रोने वीसा प्रावरणोथी आच्छादित करी द्वीधा त्थारपथी तेओ अथा सुपत्थाप तेनी चारे तरक्क जेनी गया

(तपण ते आसा जेणेव एण उक्किट्ठा सदफरिसरसख्वगधा तेणेव उवाग-

उपागत्य तत्र खल-‘अत्येगःया’ अत्येके=केचिद् अथा -‘ अपूर्वाः=अदृष्टपूर्वाः खल इमे शब्दस्पर्शरसरूपगन्धाः सन्ति’ इति श्रुत्या=इति विचित्य तेषु उत्कृष्टेषु= आकर्षकेषु शब्दस्पर्शरसरूपगन्धेषु ‘अगुञ्जिया’ अमूर्जिता=मूर्जारहिता, मातृहेयोपादेयविशेषाः अष्टा=अमक्तिरहिताः, अपथिताः=शोभतन्तुभिरचट्टाः, अनध्युपपन्ना=तदेवप्रतारहिताः किञ्चिन्मात्रमपि तेष्यासक्तिमकृपाणाः सन्तः तेषामुत्कृष्टानां ‘सद् जात्र गंधाण’ शब्दस्पर्शरसरूपगन्धानां दूरदूरेण=अतिदूरत एव ‘अयममति’ अपक्रामन्ति=पलायते स्म । ते च सद्यु तत्र प्रचुरगोचराः= प्रचुरचरणभूमयः प्रचुरनृणपानीया, निर्भयाः, निरुद्विग्नाः ‘सुह मुहण’ मुख सुखेन=सुखपूर्वकं विहरन्ति ।

गच्छति, उपागच्छिता तत्थ ण अत्थे गइया आसा अपुव्वा ण इमे सदफरिसरसरुवगघाइ ति कइइ तेषु उक्किट्टेषु सदफरिसरसरुवगघेसु अमुच्छिया ४ तेषि उक्किट्टाण सद् जात्र गंधाण दूरं दूरेण अयकमति) घादमे वे अश्व जरा ये पूर्वोक्त उत्कृष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप गंध और स्पर्शवाले पदार्थ ये वहा पर आये वहा आकर के इनमें कितनेक अश्व “ ये शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध अदृष्टपूर्व हैं ” ऐसा विचार कर उन आकर्षक शब्द रूप, रस, स्पर्श एवं गंधों में—उन पदार्थों में—मूर्च्छित नहीं बने । हेय उपादेय के विवेक से युक्त बने हुए वे कितनेक अश्व उन में आसक्ति से रहित ही रहे लोभतन्तु से बन्धे नहीं । तथा किञ्चिन्मात्र भी उनमें आसक्ति नहीं करते हुए वे उन शब्द, स्पर्श रूप, और गंधों को बहुत ही दूर से छोड़कर चल दिये । (तेष तत्थ पउरगोचरा

च्छति, उपागच्छिता तत्थण अत्येगःया आसा अपुव्वा ण इमे सदफरिसरसरुव ति कइइ तेषु उक्किट्टेषु सदफरिसरसरुवगघेसु अमुच्छिया ४ तेषि उक्किट्टाण सद् जात्र गंधाण दूरं दूरेण अयकमति)

त्यारपथी ते घोडाओ आ अथा पूवे भूकेला उत्कृष्ट शब्द, स्पर्श, रस रूप अने गंधवाणा पदार्थो हुता त्या आओया त्या आवीने तेओभाथी डेट लाक घोडाओ ‘ आ शब्द स्पर्श, रस, रूप अने गंध अदृष्टपूर्व छे ” आम विचार करीने ते आकर्षक शब्द, रूप, रस, स्पर्श अने गंधवाणा ते पदा र्थोभा मूर्च्छित (मोडाध-बोडुप) थरा नडि हेय अने उपादेयना विवेकथी सावध बनेला डेटलाक घोडाओ ते पदार्थोभा निरासक्त न रह्या तेओ बोध रूपी दारीथी अथाया नडि थोडी पणु आसक्ति पाताव्या वगर तेओ ते शब्द, स्पर्श, रस, रूप अने गंधवाणा पदार्थोभा भूय इरथी न छोडीने जाता रह्या (तेष तत्थ पउरगोचरा पउरत्तणराणिया गिन्धया गिरुच्चिग्गा सुह

अथोपनय प्रदर्शयति,—‘एवामेव’ एवमेव=शब्दाद्यमूर्च्छिताकीर्णाश्वत् ‘सम
 णाउसो’ हे आयुष्मन्त श्रमणा ! योऽस्माक निर्ग्रन्थी वा यावत्-आचार्योपा-
 ध्यायानामन्तिके प्रव्रजितः सन् शब्दस्पर्शरसरूपगन्धेषु ‘नो सज्जइ’ नो सज्जते=
 आसक्तिमान् न भवति ‘नो रज्जइ’ नो रज्जते अनुरक्तो न भवति, नो गृ यति,
 न वाञ्छति, नो मुद्यति=न मूर्च्छति, नो अ युपपद्यते=न तल्लीनो भवति, स खलु
 इह लोक एव गृह्णा श्रमणादीना चतुर्विधसङ्घस्य अर्चनीयः=संमाननीय. यावत्
 चातुरन्तससारकान्तर ‘वीडइस्मइ’ व्यतिप्रजिष्यति=उल्लङ्घयिष्यति-पारं
 गमिष्यतीत्यर्थ ॥ सू० ३ ॥

पउरत्तणपाणिग्या णिग्भया णिरुव्विग्गा सुह सुहेण विहरति) और
 जगल में ही जो प्रचुरचरने की जमीन थी-जिममें अधिक से अधिक
 मात्रा से तृण और पानी भरा हुआ रहता था उसमें ही निर्भय, निरु-
 द्विग्न होकर सुखपूर्वक रहे। अब इस दृष्टान्त का उपनय प्रदर्शिन करने
 के लिये सूत्रकार कहते हैं-। (एवामेव समणाउसो ! जो अम्ह णिग्गथो
 वा णिग्गथी वा जाव सह फरिसरसरुवगघेसु णो सज्जइ णो
 णो रज्जइ, जो गिज्जइ, णो मुज्जइ, णो अज्झोववज्जेइ, से ण इह
 लोए चेव बहूण समणाण ४ अच्चणिज्जे जाव वीडइस्सइ) हे आयु-
 ष्मन्त श्रमणो ! इसी तरह जो हमारा निर्ग्रन्थ साधुजन एव निर्ग्रन्थी
 साध्वी जन आचार्य उपा-धय के पास प्रव्रजित होकर शब्द स्पर्श, रस,
 रूप, और गंध इन पांचो इन्द्रियो के विषयो में आसक्ति युक्त नहीं
 होता है, अनुरक्त नहीं बनता है, उन्हें चाहता नहीं है, उनमें मूर्च्छित
 नहीं होता है, उनमें तल्लीन नहीं होता है, वह इस लोक में ही अनेक

सुहेण विहरति) अने वनभा ७ प्रचुर चरवानी ७भीन डती, ग्या पधारेभा
 पधारे धास अने पाणी डता त्या ७ निर्भय, निद्विग्न यधने सुभथी रहेवा
 लाग्या डवे आ दृष्टान्तने उपनय स्पष्ट करवा माटे सूत्रकार डडे छे डे —

(एवामेव समणाउसो जो अम्ह णिग्गथो वा णिग्गथी वा जाव सहफरिस-
 रसरुवगघेसु णो सज्जइ णो रज्जइ, जो गिज्जइ, णो मुज्जइ, णो अज्झोववज्जेइ,
 से ण इहलोए चेव बहूण समणाण ४ अच्चणिज्जे जाव वीडइस्सइ)

हे आयुष्मन्त श्रमणो ! आ प्रमत्ति ७ ने अमारा निर्ग्रन्थ साधुयो
 के निर्ग्रन्थ साध्वीयो आचार्य के उपाध्यायनी पासे प्रव्रजित यधने शब्द,
 स्पर्श, रस, रूप अने गंध आ पांचे इन्द्रियोना विषयोभा आसक्त यता
 नथी अनुरक्त यता नथी, तेमने धच्छता नथी, तेओभा भूर्च्छित यताओ

शब्दस्पर्शरसस्वगन्धार ' आसेवमाणा ' आसेवमानाः तत्पुण्यानुभव कुर्याणाः तैर्ब्रह्मि कूटेश्च यन्धनविशेषैः, पाशैश्च रज्ज्वादिरूपैः गलपपु=गलेपु=कण्ठेषु पाठेषु च ' यज्जति ' वयन्ते-ते कौटुम्बिकपुरुषास्तान्भान वयन्ति स्मेत्यर्थः । तत्र

घोड़ों में से कितनेक घोड़ों में से भी थे जो जरा थे उत्कृष्ट शब्द स्पर्श रस, रूप एव गंध ये पांचो इन्द्रियों के आरुप्यक विषय थे जरा आकर उन उत्कृष्ट शब्द स्पर्श आदि विषयों में मूर्च्छित यात्र तल्लीन बनगये। और उन्हें सेवन करने में प्रवृत्त भी हो गये। (तएण ते आसा ते उक्किट्टे सद् ५ आसेवमाणा तेसि बहूहि कूडेहि य पासेहि य गलएसु य पाएसु य यज्जति, तएण ते कोडुवियपुरिसा ते आसे गिण्हति गिण्हिता एगट्टियाहिं य पोयवहणे सचारेंति, सचारित्ता तणस्स कट्टस्स जाव भरेंति, तएण ते सजत्ता णावा वाणियगा दक्खिणाणुकूलेण वाएण जेणेव गभीरपोयपट्टणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोयवहण लभेंति-लवित्ता ते आसे उत्तारेंति) इसके बाद वे घोड़े उन उत्कृष्ट शब्द स्पर्श रस, रूप, एव गंध इन पांचों इन्द्रियों के विषयों को सेवन करते हुए रज्ज्वादिरूपयन्धन विशेषों द्वारा कठों और पैरोंमें बांध लिये गये। अर्थात् उन कौटुम्बिक पुरुषों ने इन घोड़ों को उस समय रस्सियों द्वारा बांध लिया। बांध करके फिर उन कौटुम्बिक पुरुषोंने उन्हें पकड़ लिया पकड़

न्या ते उत्कृष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप एव गंध आ पांचे इन्द्रियोना आक्षर्यं विषयो उता त्या आधीने ते उत्कृष्ट शब्द, स्पर्श वगेरे विषयोभा मूर्च्छित (आसकत) यावत् तद्वीन थर्ध गया एव तेभना सेवनभा प्रवृत्त पणु थर्ध गया

(तएण ते आसा ते उक्किट्टे सद् ५ आसेवमाणा तेसि बहूहि कूडेहि य पासेहि य गलएसु य पाएसु य यज्जति, तएण ते कोडुवियपुरिसा ते आसे गिण्हति गिण्हिता एगट्टियाहिं य पोयवहणे सचारेंति, सचारित्ता तणस्स कट्टस्स जाव भरेंति, तएण ते सजत्ता णावा वाणियगा दक्खिणाणुकूलेण वाएण जेणेव गभीरपोयपट्टणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोयवहण लभेंति-लवित्ता ते आसे उत्तारेंति)

त्यारपणी ते घोडाओ उत्कृष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप एव गंध आ पांचे इन्द्रियोना विषयानु सेवन करता होरडाओ वगेरे रूप गंधन विशेषधी डाके एव पगोभा लघार्ध गया अटले के ते कौटुम्बिक पुरुषोओ ते घोडा ओने होरडाओधी आधी बीधा आधीने ते कौटुम्बिक पुरे

खलु ते कोटुम्बिकपुरुपास्तानश्वान् गृह्णन्ति, गृहीत्वा 'एगद्वियाहिं एकार्थिनाभि' = लघुनौकाभि पोतवहने = वृहन्नौकाया 'सचारैति' सञ्चारयन्ति = आगोहयन्ति सञ्चार्य तृणस्य काष्ठस्य च यावत् पोतवहन भरति तृणकाष्ठादिभिरिति भावः । ततः खलु ते सयात्रनौकावाणिजकाः दक्षिणानुकूलेन = स्वानुकूलेन यातेन यत्रैव गभीरपोतपत्तन = पोतवहनस्थान तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य पोतवहन 'लपेति' लम्बयन्ति = शकुपु वद्ध्वा स्थापयन्ति, लम्बयित्वा तान् = अध्वान् 'उत्तारैति' उत्तारयन्ति, उत्तार्य यत्रैव हस्तिशीर्षं नगरं यत्रैव कनककेतू राजा तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य 'करयल जाव' करतलपरिगृहीत शिरआयत्तं दशनख मस्तके-

कर फिर उन्हें छोटी २ नौकाओ द्वारा लाकर बड़ी नौका में चढाया-चढा करके फिर उसमें तृण और काष्ठ आदि को भरा। इसके बाद वे सांयात्रिक पोतवणिक दक्षिणानुकूल वायु के चलने पर जहा गभीर नामका पोतवहन (चन्द्रगाह) था वहा आये। वहां आकर के उन्होंने ने अपने पोत को लगर डालकर ठहरा दिया। ठहरा कर उन अश्वों को उस पोत से फिर उन्होंने ने नीचे उतार लिया। (उत्तारित्ता जेणेव हत्थिसीसे णयरे जेणेव कणगकेऊ राया तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता करयल जाव वद्धावेति, वद्धावित्ता ते आसे उवणेति, तएण से कणगकेऊ तेसिं सजत्ता णावावाणिजगाण उस्सुक्क वियरइ, वियरित्ता सक्कारेइ समाणेइ सक्कारित्ता समाणित्ता पडिविसज्जेइ) उतार कर फिर वे वहां उन्हें ले गये जहा हस्तिशीर्षं नगर और उसमें भी

पकडी लीधा पकडीने तेभल्ले नानी नानी डोडीओ वडे भोग वडाल्लुभा यडाल्ल्या यडाल्ल्या णाड तेओओ तेभा धाम ओने ङअ लया ल्यारपथी ते सायात्रिक पोतवणिके दक्षिणने अनुकूल पवन वडेवा लाग्ये त्यारे त्याधी रवाना थधने न्या गभीर नामे पोतवहण (अडर) इतु त्या आल्या त्या आवीने तेभल्ले पोताना वडाल्लुने लगर नाणीने डोड्यु त्य रणाड तेभल्ले घोडाओने वडाल्लु भाथी नीचे उतार्या

(उत्तारित्ता जेणेव हत्थिसीसे णयरे जेणेव कणगकेऊ राया तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता करयल जाव वद्धावेति, वद्धावित्ता ते आसे उवणेति, तएण से कणगकेऊ तेसिं सजत्ता णावा वाणिजगाण उस्सुक्क वियरइ, वियरित्ता सक्कारेइ, समाणेइ, सक्कारित्ता, समाणित्ता पडिविसज्जेइ)

नीचे उतारीने तेओ ते घोडाओने हस्तिशीर्षं नगरभा न्या कनककेतु राज इतो त्या लड गया त्या अधिने पडेवा तेभल्ले णने डोडीने राज

ऽञ्जलिं कृत्वा 'चत्वारिंशति' पदं यति जयविजयशब्देनाभिनन्दन्ति, वर्द्धयित्वा तान् अध्वान् राज्ञः समीपे 'उच्यते' उपनयन्ति । ततः खलु स कनककेतु राजा तेषां सयाग्रनौकायाणिराजानाम् 'उत्सृष्ट' उत्सृष्टम्='पश्य केनापि परो न ग्राह्य' इत्येवम्पमाज्ञापत्रं वितरति=ददाति, विनीय सत्कारोति-मधुर वचनोदिभिः, सुमानयति-वद्यादिभिः, सत्कार्यं सम्मान्य प्रतिविसर्जयति ।

ततः खलु स कनककेतु राजा 'आसमह्य' अश्वमर्दकान्=अश्वशिक्षकान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमयादीत्-यूय खलु हे देवानुमियाः ! ममाध्वान् 'विण एह' विनयत=शिक्षयत-गत्यादिकृशाकुशकान् कुरुतेत्यर्थः । ततः खलु तेऽश्वमर्दकाः 'तदति' तथेति 'तथाऽस्तु' इत्युक्त्वा पतिश्रृण्वन्नि=वृषाणां स्त्रीकृन्ति,

जहा कनककेतु राजा थे। वहा जाकर उन्होंने पहिले दोनों हाथ जोड़ कर राजा कनककेतु को नमस्कार किया-जय विजय शब्दों द्वारा उन्हें बधाई दी-बधाई देकर पाद में उन घोड़ों को उनके समक्ष उपस्थित करदिया इसके बाद कनककेतु राजा ने उन सांघात्रिक पोतवणिकूजनों के लिये निःशुल्क (कररहित) अग्रस्था वितरित की इन्हों से कोई भी राज्यकर्मचारी टैक्स न लेवे इस प्रकार का आज्ञापत्र उन्हें लिखकर दे दिया। आज्ञापत्र लिखकर देने के बाद राजाने उनका मधुर वचनों द्वारा नत्कार किया। वस्त्रादि प्रदान पूर्वक उनका सम्मान किया। फिर सत्कार म मान करके उन्हें विसर्जित कर दिया। (तएण से कणककेऊ कोडुत्रियपुरिसे सहावेइ, सहावित्ता सक्कारेति० पडिविसज्जेइ, तएण से कणगकेऊराया आसमह्य सहावेइ सहावित्ता एव वयासी तुम्भेण देवानुप्पिया ! मम आसे विणएह) इस के बाद कनककेतु राजाने कौड

कनककेतुने नमस्कार कर्ना अने जय-विजय शब्दों वडे तेमने वधाभणी आपी वधाभणी आपीने तेमण्णे ते अधा घोटाओने तेमनी सामे उपस्थित कर्था त्थारपथी कनककेतु राजाणे ते सांघात्रिक पोतवणिकूजने भाटे कर भाडी करी आपी तेमनी पासैथी कोइ पणु राज्या कर्मचारी कर (टैक्स) ले नहिं तेउ आज्ञापत्र तेमने लणी आण्यु आज्ञापत्र आपीने राजाणे तेमने मधुर वचनो वडे सत्कार कर्था अने वस्त्रो वजोरे आपीने तेमनु सम्मान कर्था त्थारपथी तेमने विहाय कर्था

(तएण से कणगकेऊ कोडुत्रियपुरिसे सहावेइ, सहावित्ता सक्कारेति० पडिविसज्जेइ, तएण से कणगकेऊ राया आसमह्य सहावेइ सहावित्ता एव वयासी तुम्भेण देवानुप्पिया ! मम आसे विणएह)

प्रतिश्रुत्य तान् अध्वान् बहुभिर्मुखान्धैश्च कर्णवधैश्च नासान्धैश्च बालान्धैश्च
 केशान्धैरित्यर्थः खुरान्धैश्च 'खल्लिणवधेहि य' खलीनान्धैः 'लगाम' इति
 प्रसिद्धान्धैः, 'अहिलाणेहि य' अभिलानैः='जीन' इति प्रसिद्धैः, पडिया-
 णेहि 'पर्याणकैः='तग' इति प्रसिद्धैश्चर्ममयैरश्वोपकरणविशेषैः, 'अरुणाहि य'
 अङ्गनाभिः='तप्तलोहशलाकादिभिरङ्गनकरणैश्च 'वित्तप्पहारेहि य' वेत्रप्रहारैश्च

भ्यिक पुरुषो को बुलाया, बुलाकर उनका आदर सत्कार किया। फिर
 उन्हें विसर्जित कर दिया। इसके पश्चात् कनककेतु राजा ने अश्वशिक्ष
 कों को बुलाया और बुलाकर उनसे ऐसा कहा—हे देवानुप्रियों! तुम
 इन हमारे इन घोड़ों को शिक्षित बनाओ—गन्यादिकला में निपुण करो।
 (तएण ते आसमद्दगा तहत्ति पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता ते आसे वह्हि
 मुह वधेहि य रुण्णवधेहि णासा वधेहि य बालवधेहि य खुरवधेहि य
 खल्लिणवधेहि य अहिलाणेहि य पडियाणेहि य अरुणाहि य वित्तप्पहारेहि
 य रुसप्पहारेहि य छिवप्पहारेहि य विणयति) राजा कनककेतु की इस
 आज्ञा को उन अश्वमर्दकों ने "तहत्ति" कहकर स्वीकार कर लिया।
 स्वीकार करके फिर उन्होंने ने अनेक विध मुख बधनों से, कर्णबधनों से
 नासाबधनों से लगामरूप बधनों से अभिलानों से—पलेचाओ से—पर्या
 णकों से तगों के कत्तों से—अरुनों से—तप्त हुई लोहकी शलाकाओं
 द्वारा डाम लगाने से वेत्र के प्रहारों से, लताओंके प्रहारोंसे, चाबुकों के

त्यारपणी कनककेतु राजाके डोटु भिक पुरुषोने बोलाव्या, बोलावानी
 तेभने सत्कार ज्यो अने पश्री तेभने विहाय कर्था त्यारणाह उनकेतु राजाके
 अश्वशिक्षकेने बोलाव्या अने बोलावानी तेभने आ प्रभाणु कहु के डे देवा
 नुप्रियो। तमे अमारा आ बोडाओने शिक्षित बनावे, बोडवा वगेरेनी कणा-
 ओमा निपुण बनावे।

(तएण ते आसमद्दगा तहत्ति पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता ते आसे वह्हि मुह
 वधेहि य रुण्णवधेहि णासा वधेहि य बालवधेहि य खुरवधेहि य खल्लिण
 वधेहि य अहिलाणेहि य पडियाणेहि य अरुणाहि य वित्तप्पहारेहि य लयप्पहारे-
 हि य करुप्पहारेहि य छिवप्पहारेहि य विणयति)

राज उनकेतुनी आशाने ते अश्वमर्दकेओ "तहत्ति" कहीने स्वीकारी
 लीधी स्वीकार करीने तेभणु धणी नतना भुण्ण अधनोथी, ज्यु अधनोथी,
 नासा अधनोथी, वाण अधनोथी, खुर अधनोथी, लगाम रूप अधनोथी,
 अबिलानोथी, पदेयाओथी, पर्याणुकोथी, तगोने कसवाथी, अज्जोथी, तथा
 चवामा आवेदी बोणउनी शणीओ वडे डामवाथी, वेतोना आधातोथी लता

‘ लयप्पहारेहि य ’ लनाप्रहारैश्च, ‘ वगप्पहारेहि य ’ वगामहारैश्च ‘ वशा ’-
चायुक् ’ इति भाषायाम्, ‘ त्रिगप्पहारेहि य ’ त्रिगामहारैश्च = तर्ममयचिक्कणकशा
प्रहारैश्च ‘ त्रिणयंति ’ त्रिनयंति = शिक्षयन्ति, त्रिनीय = शिक्षयिन्वा कनककेतु राज्ञ
उपनयन्ति । ततः रालु सः कनककेतु राजा तान् अश्वमर्दकान् मत्करोति मग्ना
नयति, सकृत्य सम्मान्य प्रविशितर्जयति । ततः रालु तेऽवाः बहुभिर्मुग्गयन्त्यैश्च
यावत्-त्रिगामहारैश्च बहुनि शरीरमानसाणि दुग्गानि प्राप्नुवन्ति ।

‘ एवामेव ’ एवमेव = शब्दादिप्रियमूर्च्छित्वाकीर्णाश्वयत् ‘ समणाउसो ’ हे
आयुष्मन्तः श्रमणा । योऽस्माकं निर्ग्रन्थो वा निर्ग्रन्थी वा आचार्योवा पायानाम-
न्तिके मव्रजितः सन् इष्टेषु शब्दपरिसररूपण येषु ‘ मज्जइ ’ सज्जते = आसक्तो

प्रहारो से, त्रिगाम-चर्म की घनी हुई चिकनी कजाओं के प्रहारों से उन
घोड़ों को शिक्षित बना दिया । (त्रिगयित्ता कणगकेज्जम रणणे उवणेति
तएण से कणगकेज्जराया ते आसमदए सक्कारेइ सक्कारित्ता पडिविस
ज्जेइ, तएण ते आसा वृहहि मुहवधेहि जाव त्रिगप्पहारेहि य वृहणि
सारीरमानसाणी दुक्खवाइ पावेति) शिक्षित बनाकर फिर वे उन
घोड़ों को कनककेतु राजा के पाम ले गये । चारमे राजा कनककेतु ने
उन अश्वमर्दको का सत्कार सम्मान किया । सत्कार सम्मान करके फिर
उन्हें विसर्जित कर दिया । वे घोड़े लेकर अनेक विध उन मुग्ग वधनों
से यावत् चर्ममय चिक्कणकशाओ के प्रहारों से नाना प्रकार के शा-
रीरिक एवं मानसिक दुग्गो को पाने लगे । (एवामेव समणाउसो !
जो अम्ह निग्गयो वा निग्गयी वा पव्वण समाणे इष्टेषु सद्धफरिसरस

ओना प्रहारेथी आयुक्कना प्रहारेथी, त्रिगाम आभडाना अनेवा वीसा आयु
केना प्रहारेथी ते घोडाओने केणवा

(त्रिगयित्ता कणगकेज्ज राया ते आसमदए सक्कारेइ, सक्कारित्ता पडिविस
ज्जेइ तएण ते आसा वृहहि मुहवधेहि जाव त्रिगप्पहारेहि य वृहणि सारीर-
मानसाणि दुक्खवाइ पावेति)

केणवाणे-शिक्षित बनावीने ते घोडाओने तेओ कनककेतु राजा पासे
लक्ष गया त्थारपणी कनककेतुओ ते अश्वमर्दकेओ सत्कार तेभञ्ज सम्मान उयुं
सत्कार अने सम्मान करीने तेभने विसर्जित उथी ते घोडाओ वधुा मुग्ग
अधनोथी यावत् आभडाना वीसा आयुकेना प्रहारेथी अनेक नतना शारी
रिक अने मानसिक दुग्गो को पाने लाग्या

(एवामेव समणाउसो ! जो अम्ह निग्गयो वा निग्गयी वा पव्वण समाणे
इष्टेषु सद्धफरिसरसखुवधेषु य सज्जइ, रज्जइ, गिज्जइ, मुज्जइ,

भवति, ' रज्जइ ' रज्यते=अनुगतो भवति, ' गिज्जइ ' गृध्यति=तद्वाञ्छासक्तो भवति, ' मुज्जइ ' मुद्यति=मूर्च्छितो भवति, ' अज्जोववज्जइ ' अ-युपपद्यते=सर्वथा तल्लीनो भवति, स खलु इह लोके एव बहूना श्रमणाना च यावत्-श्रमणीनां श्रावकाणा श्राविकाणा च ' हीलणिज्जे ' हीलनीय यावत् चतुरन्तससारकान्ता-रम् ' अणुपरियट्टिस्सइ ' अनुपर्यट्टियति=भ्रमिष्यतीति भावः ॥सू०४॥

मूलम्—कलरिभियमहुर ततीतलतालवंसकउहाभिरामेसु ।

सहेसु रजाणा रमति सोइंदियवसट्ठा ॥ १ ॥

सोइदियदुहन्तत्तणस्स अह एत्तिओ हवइ दोसो ।

दीविगरुयमसहसो बहवध तित्तिरो पत्तो ॥ २ ॥

टीका—अयेन्द्रियासरणदोषान् गाथाभिः प्रदर्शयति—' कलरिभिय० ' इत्यादि कलरिभितमपुरतन्त्री तल तालवसककुदाभिरामेषु ।

रुवगधेसु य सज्जइ, रज्जइ, गिज्जइ, मुज्जइ, अज्जोववज्जइ, सेणं इहलाहे चेय वहुण समाणाण य जाव सावियाण य हीलणिज्जे जाव अणुपरियट्टिस्सइ) इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! जो हमारा निर्ग्रन्थ साधुजन अथवा साध्वीजन आचार्य उपाध्याय के पास प्रव्रजित होता हुआ इष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध इन पाचों इन्द्रियों के विषयों में आसक्त होता है, अनुरक्त होता है, उनकी चाह से बचता है, उनमें मूर्च्छित बनता है, सर्व प्रकार से उनमें तल्लीन होता है वह इस लोक में ही अनेक श्रमणजनों द्वारा श्रमणी, श्रावक और श्राविकाओं द्वारा हीलनीय-निन्दा का पात्र-होता है यावत् वह चतुर्गतिरूप इस ससार कान्तार में भटकता है ॥ सू०४ ॥

सेण इहलोए चेय वहुण समाणाण य जाव सावियाण य हीलणिज्जे जाव अणु परियट्टिस्सइ)

आ प्रभाषे हे आयुष्मन् श्रमणो ! ते अमारा निर्ग्रन्थ साधुजनो हे साध्वीजनो आचार्य अथवा उपध्यायनी पासे प्रव्रजित थजने धट्टे, शण्डे, स्पर्श, रस, रूप अने गंध आ पासे इन्द्रियोना विषयोमा आसक्ता होय छे, अनुरक्त होय छे, तेमनी धट्टा करीने तेओमा पार्थ नय छे, तेओमा भूर्छित णनी नय छे, पधी रीते तेओमा तल्लीन णनी नय छे ते आ लोकमा न धव्वा श्रमणो वडे तेमज धव्वा श्रमणी, श्रावक अने श्राविकाओ वडे हीलनीय-निन्दनीय-होय छे यावत् ते चतुर्गति रूप आ ससार-कान्तारमा भटकते रहे छे ॥ सूत्र ४ ॥

शब्देषु रज्यमाना, रमन्ते श्रोत्रेन्द्रियशार्त्ता ॥ १ ॥

श्रोत्रेन्द्रियदुर्दान्तत्वस्य अथ एतावान् भवति दोषः ।

द्वीपिकाकृतमसहमानो, -वधग्रन्थ तित्तिर प्राप्तः ॥ २ ॥

श्रोत्रेन्द्रियशार्त्ताः=कर्णेन्द्रियशार्त्तिन. यत्राः श्रवणमुन्मत्ताः रिभिताः स्वर

घोलनाविशेषयुक्ता मधुराः-मिषाः कलरिभितमपु-ध्वनिजनकत्वात् तद्व्याये तन्त्री-

तलतालवशा -वीणा-करताल वेणवस्ते समुद्गावितत्वात्-प्रदृष्ट-प्रयानाः, अभि

रामाः-मनोहरास्तेषु-शब्देषु रज्यमानाः=अनुक्ताः सन्तः रमन्ते=मोदन्ते ॥ १ ॥

‘सोइदिये’ त्पादि । ‘सोइदियदुइतत्तणम्म’ श्रोत्रेन्द्रियदुर्दान्तत्वस्य श्रोत्रेन्द्रिय

दुर्दान्त यस्य स श्रोत्रेन्द्रियदुर्दान्त =श्रोत्रेन्द्रियस्य जेतुमश्रयतया तद्वशवर्तीत्यर्थः,

तस्य भावस्तत्र, तस्य, श्रोत्रेन्द्रियाधीनतायाः, ‘एत्तिओ’ एतावान्=वक्ष्यमाण

प्रकारकः दोषो भवति । त सहष्टान्तं मदर्शयति-‘दीभिग्रहयमसहतो’ द्वीपिकाक

तमसहमान-द्वीपिका=व्याध पञ्जरस्थतित्तिर, तस्याः क्त शब्दम् असहमान =

‘कलरिभिय’ इत्यादि ।

अथ सूत्रकार, इन्द्रियों के असंवरण से जो दोष उत्पन्न होते हैं उन्हें इन गाथाओं द्वारा प्रदर्शित करते हैं-कर्णेन्द्रिय के वशवर्ती बने हुए प्राणी फल-श्रवण सुन्वद, रिभित-स्वरों के घोलना विशेष से युक्त ऐसे मधुरप्रिय, तन्त्री-वीणा, तलताल-करताल, वशावासुरी इन से उत्पन्न होने की वजह से रुक्कद-अत्यन्न, अभिराम-मनोहर ऐसे शब्दों में अनुरक्त होते हुए यद्यपि मुदितमन होते हैं परन्तु श्रोत्रेन्द्रिय उनकी दुर्दमन होनेके कारण-श्रोत्रेन्द्रिय उनकी जितनेमें अशक्य होनेके कारण तद्वशवर्ती बने हुए वे प्राणी जिस तरह व्याध के पजर में रही हुई तित्तिरी के शब्द को सुनकर तीतरपक्षी-कामराग के वश से आकृष्ट

‘कलरिभिय’ इत्यादि—

सूत्रकार ऊँचे इन्द्रियोना अस वरवृथी जे दोषो उत्पन्न थाय छे तेमने आ गाथाओ वडे प्रदर्शित करे छे कर्णेन्द्रियना वशमा थयेला प्राणीओ कव-

श्रवण सुन्वद, रिभित स्वराने विशेष रूपमा भेगववाथी उत्पन्न थयेला ध्वनि,

मधुर-प्रिय, तन्त्री-वीणा, तलताल-करताल, वश-वासणी ऐमनाथी उत्पन्न होवा पहल रुक्कद-अत्यन्न, अभिराम-मनोहर जेवा शब्दोमा अनुरक्त थता

जे के तेओ मुदितमन-प्रसन्न थाय छे परन्तु तेमनी श्रोत्रेन्द्रिय (कान) दुर्दमनीय होवा पहल जेउले के मश्रोत्रेन्द्रिय उपर कायु भेगववानु काम तेमना

भाटे अशक्य होवा पहल तेने वश थयेला प्राणीओ जेम व्याध-शिकारीना थीन्वामा सपडाथ गयेली तित्तिरीना शब्दने सालणीने तीतर पक्षी

तित्तिर वध=मरण बन्ध=पञ्जरादि मन्थन प्रापः—प्राप्नोतीत्यर्थः 'अथ'
वाक्यालङ्कारे ॥ २ ॥

मूलम्—थणजहणवयणकरचरणणयणगविवयविलासियगईसु ।

रूवेसु रज्जमाणा रमंति चक्खिदियवसट्ठा ॥ ३ ॥

चक्खिदियदुद्धतत्तणस्स अह एत्तिओ भवइ दोसो ।

जं जलणंमि जलते पडइ पयंगो अबुद्धीओ ॥ ४ ॥

टीका—स्तनजघनप्रदनरुचरणनयगर्वितविलासितगतिषु ।

रूपेषु रज्यमाना,—रमन्ते चक्षुरिन्द्रियवशात्तः ॥ ३ ॥

चक्षुरिन्द्रियदुर्दान्तत्तस्य अथ एतावान् भवति दोषः ।

यदुज्वलने ज्वलति, पतति पतद्भः अनुद्धिकः ॥ ४ ॥

'थणे' त्यादि । चक्षुरिन्द्रियवशात्तः स्त्रीणा स्तनजघनादि रूपेषु रज्यमानाः
=अनुरक्ता रमन्ते ॥ ३ ॥

ज्वलने=अग्नौ । शेष सुगमम् ॥ ४ ॥

होकर वध और वधन को पाता है उसी तरह नाना प्रकार के वध वधनो
को पाया करते हैं ॥ गा० १-२ ॥

'थणजहण, चक्खिदिय' इत्यादि ।

यद्यपि चक्षुन्द्रिय के विषय की प्राप्ति करने में व्याकुल हुए प्राणी
उस विषय की प्राप्ति होने पर आनन्दमग्न बन जाया करते हैं—वे स्त्रियों
के स्तन, जघन, वदन, कर, चरण, नयन, गर्वित विलासयुक्त गमना
दिरूप चक्षुन्द्रिय के विषय को बार बार देखकर आसक्त होते हैं—
परन्तु यह इन्द्रिय जय दुर्दान्त बन जाया करती है—तब ऐसे प्राणी जिस

आवेशमा आवाने भूत्यु तेमज्ज षधनने प्राप्त करे छे, तेम ज्ज अनेक जतना
वधवधनो भेजवे छे " गा १-२ "

थण जहण चक्खिदिय इत्यादि—

जे के चक्षुन्द्रियोना विषयोने भेजववा भाटे अत्यत उत्सुक भनेला
प्राणीओ ते विषयोनी प्राप्ति थध ज्जरा भाह आनन्दमग्न थध जय छे—तेओ
स्त्रीओना स्तन, जघन, मुष्, छाथ, चरण, नयन गर्वित विलास-युक्त गमन
वगेरे इप थमु इन्द्रियोना विषयोने बार बार लेधने आमज्ज थ जय छे, परतु आ
धन्द्रिय न्यारे दुर्दांत जनी जय छे त्यारे ओवा प्राणीओ अज्ञानी पतगनी

मूलम्—अगुरुवरपवरधूपण उउय मल्लानुलेपणविहीसु ।

गंधेषु रज्यमाना रमति घाणिदियवसट्टा ॥ ५ ॥

घाणिदियदुद्धतत्तणस्स अहं एत्तिओ हग्ग दोसो ।

ज ओसहिगधेणं विलाओ निट्ठावड उरगो ॥ ६ ॥

टीका—अगुरुवरपवरधूपन ऋतुजमालयानुलेपनविधिषु ।

गंधेषु रज्यमाना,—रमन्ते घ्राणेन्द्रियवशार्त्ताः ॥ ५ ॥

घ्राणेन्द्रियदुर्दान्तस्व जय एतासां भवति दोषः ।

यद् औपधिगन्धेन विलाद् निर्धावति उरग' ॥ ६ ॥

घ्राणेन्द्रियवशार्त्ता अगुरुवरः=कृष्णागुरुः, पवरधूपन=दशाङ्गादिरूपो धूपः,
' उउयमल्ल ' ऋतुजमालयानि=उत्तद्ऋतुनामेषु पाणि, अनुलेपनानि=चन्दनकुङ्कु
मादिरूपाणि, तेषा विधयः=प्रकारा येषु गन्धेषु तत्र रज्यमाना'=अनुरक्ता. सन्तो
रमन्ते ॥ ५ ॥

' ओसहिग्रेण ' औपधिगन्धेन=केतक्यादिमनस्पतिसुगन्धानुरागवशेन

प्रकार अज्ञानी पतंग अपने प्राणों को अग्नि में डाल देता है उसी प्रकार
उसी विषय में अपने प्राणों का नाश करते हैं ॥ गा० ॥ ३-४ ॥

अगुरुवर, घ्राणिद्य इत्यादि ।

घ्राणइन्द्रिय के चशवर्ती बने हुए प्राणी अगुरुवर-कृष्णागुरु, प्रवर,
धूपन,—दशाङ्गादिरूप धूप, ऋतुजमा-ये-तत्तद्ऋतु के पुष्प, अनुलेपन-
चन्दन कुङ्कुम आदि के विविध लेप रूप गंध में अनुरक्त होते हुए हर्षित
मन होते हैं, परन्तु वे इस इन्द्रिय की दुर्दमनता का कुछ भी विचार
नहीं करते हैं। जब यह इन्द्रिय दुर्दमन बन जाती है—तब ऐसे प्राणी

जैसे पोताना प्राणोने अग्निमा छोडी दे छे, तेमज ते पणु ते विषयमा ज
पोताना प्राणोने नष्ट करी नाजे छे " गा ३-४ "

अगुरुवर, घ्राणिदिय इत्यादि ।

घ्राणइन्द्रियना वशमा पडैला प्राणीओ अगुरुवर-कृष्णागुरु, प्रवर, धूपन
दशाङ्गादि रूप धूप ऋतु ज मात्थ-तत्तद् ऋतुना पुष्पो, अनुलेपन अह्न-कुङ्कुम
पगेरेना जतजतना लेपना गधमा अनुरक्त थडने हर्षित थड जार छे, परतु
हुडीकनमा तो तेओ ते इन्द्रियनी दुर्दमता विधेना डोड पणु जतना विचार
करता ज नथी न्यारे ते इन्द्रिय दुर्दम जनी जय छे

उरग = सर्पः मिलात् 'निधावई' निर्धावति = निस्सरति, ततो वय न्यन च प्राप्नो-
तीति भावः । शेष स्पष्टम् ॥ ६ ॥

मूलम्—तिक्तकडुय कसायं वमहुखज्जपेज्जलेज्जेसु ।

आसाएसु य गिच्छा रमति जिर्विभदियवसट्टा ॥ ७ ॥

जिर्विभदिय दुद्धतत्तणस्स अह एत्तिओ हवइ दोसो ।

ज गललगुक्खित्तो फुरइ थरविरह्खित्तो मच्छो ॥ ८ ॥

उाया—तिक्तकटुकफाया म्लमधुग्बहुखाद्यपेयलेह्येषु ।

आस्वादेपु च गृह्णा, रमते जिह्वेन्द्रियवशात् ॥ ७ ॥

जिह्वेन्द्रियदुर्दान्तत्वस्य, अथ एतावान् भवति दोषः ।

यद् गललग्नोत्क्षिप्तः, स्फुरति स्थलं रलितो मत्स्यः ॥ ८ ॥

टीका—जिह्वेन्द्रियवशात् —तिक्त=मरीचादिक, कटुक=मारवेलादिक, कपाय.=
आमलकादिकम्, अम्ल=काम्पादिक, मधुर=मोदकादिक, मधु=अनेकनिव 'खज्ज'
खाद्य-कदलीकादिक, 'पेज्ज' पेय=दुग्धादिक, 'लेज्ज' लेह्य=दशिशर्करादि-

केतकी आदि की गंध से आकृष्ट बनकर जिम प्रकार चिल से निबला
सर्प वधन धन आदि कष्टा को पाता है वैसे कष्ट पाते हैं ॥ गा० ५-६ ॥

' तिक्तकडुय जिर्विभय ' इत्यादि ।

जो प्राणी जिह्वाइन्द्रिय के वशवर्ती बना रहता है वह मरीच आदि
के जैसे तिक्त स्वाद में करेला के जैसे कटुक स्वाद में, आमल आदि के
जैसे कपायस में काम्पादिके जैसे अम्ल-खट्व रस में, मोदकादि के
जैसे मधुर स्वाद में तथा विचित्र प्रकार के कदली फलादिक त्वाग्य पदार्थों
में, दुग्धादि पेयपदार्थों में, एव दधि और शक्कर आदि से निपन्न हुए

उेतकी वगेरेनी गधथी आइए थउने नेम हरमाथी नीउणेवे साप वधमधन
वगेरे कप्टेने प्राप्त करे उे तेमए उए प्राप्त करे छे ॥ गा ५-६ ॥

तिक्तकडुय जिर्विभय इत्यादि ।

जे प्राणी लुड्वा इन्द्रिय (लुल) ने वरा थयेवे डोय उे, ते मग्गु
वगेरेना जेवा तीभा स्वादमा, करेला जेवा कडवा स्वादमा, आमली वगेरेना
जेवा ज्पाय रसमा करेवादिना जेवा अन्न-भाटा रसमा, लाडवा वगेरेना
जेवा मधुर स्वादना तेमए जतजतना केणा वगेरेना पाद्य पदार्थोमा, इध
वगेरे जेवा पेय पदार्थोमा, अने दडी तेमए भाउ वगेरेवी तैयार वयेला

નિષ્પન્ન શ્રીલ્પ્ઠાદિકમ્, પતેષા ઝન્ઠ', તેષુ આસ્વાદપુ=આસ્વાગ્રન્તે इति
આસ્વાદાઃ રસાસ્તેષુ મૃદ્ધાઃ=આસક્તાઃ સન્ત. રિમ-તે ॥ ૭ ॥

' જિર્ણિમદિયે ' ત્યાદિ । પૂર્વ ગલ્લે=મત્સ્યવેધને મ્હાન, મત્સ્યવેધનેન મુલ્લે
વિદ્ધ ઇત્યર્થઃ, પશ્યાદ્ ઉત્તિમ્મ =ત્ત્વ્વાડુદ્વૃત્તઃ इति ધર્મધારયઃ, એવમ્ભૂતો મત્સ્ય
સ્થલ્પરિરલ્લિતઃ=સ્થલે નિપાતિત' સન સ્ફુરતિ વ્યાદુઝો મૂમ્વા મૂમી સ્થુઠિ ।
શેષ સ્પષ્ટમ્ ॥ ૮ ॥

મૂલ્પ્-ઉત્તમયમાણા સુહેસુ ય પવિભવહિયમણનિવ્વુઙ્કરેસુ ।

ફાસેસુ રજ્જમાણા રમંતિ ફાસિંદિયવસદ્ધા ॥ ૯ ॥

ફાસિદિય દુદ્ધતત્તણસ્સ અહ્ એત્તિઓ હવઙ્ક દોસો ।

જ્જ ખણઙ્ક મત્થય કુંજરસ્સ લોહકુસો તિવ્વલ્લો ॥ ૧૦ ॥

છાયા-ઋતુમ્હ્યમાનમુલ્લેષુ ચ, સરિમઃહૃદયમનોનિર્વૃત્તિરુરેષુ ।

સ્પર્શેષુ રજ્જમાના, રમન્તે સ્પર્શેન્દ્રિયવશાર્તા. ॥ ૯ ॥

સ્પર્શેન્દ્રિય દુર્દાન્તત્વસ્ય, અહ્ એતામાન્ ભવતિ દોષ. ।

યત્ સ્વનતિ મસ્તક કુંજરસ્ય લોહાદ્ધુશસ્તીક્ષ્ણઃ ॥ ૧૦ ॥

ટીકા-'ઉત્તમયે' ત્યાદિ । સ્પર્શેન્દ્રિયવશાર્તા - 'ઉત્તમયમાણમુહેસુ ય' ઋતુમ્હ્ય
માનમુલ્લેષુ ઋતુપુ=હેમન્તાદિપુ મ્હ્યમાનાનિ=સેવ્યમાનાનિ મુલ્લાનિ, યેષુ તે,

શ્રી લ્પ્ઠ ઓદિ લેલ્પ પદાર્થો મેં આસક્તમતિ હોકર ઘડા હર્ષ મનાયા
કરતે હેં । પરન્તુ જષ્ હનકી ઘહ્ હન્દ્રિય દુર્દાન્ત વન જાતી હે તલ્ એસે
પ્રાણી જૈસે મત્સ્યવેધન સે-મછલી પકડને કે ફાટે-વશી-સે મુલ્લ મેં
વિદ્ધ હુઆ મત્સ્ય જલ મેં સે લ્વીચકા ઘાહર મૂમિપર ઢાલ દિયા જાતા
હે ઓર વહ મૂમિપર તડ્પૂ ૨ કર મર જાતા હે ઉસ હન્દ્રિય કે વિષય
મેં ફેલકર તડ્પૂ ૨ કર મર જાયા કરતે હેં ॥ ગા૦ ૭-૮ ॥

શ્રીખડ વગેરે લેલ્પ (આટીને ખાઈ શકાય તેવા) પદાર્થોમા આસક્ત
થઈને મૂખ જ હર્ષિત થતા રહે છે પરન્તુ જ્યારે તેમની આ ઈન્દ્રિય દુર્દાન્ત
બની જાય છે, ત્યારે એવા પ્રાણી જેમ મત્સ્યવેધનથી-માછલી પકડવાના
કાટાથી મુખમા વિદ્ધ થયેલુ માછલુ પાણીમાથી બહાર જોચીને બહાર જમીન
ઉપર નાખવામા આવે છે અને તે જમીન ઉપર તડપી તડપીને મૃત્યુવશ
થાય છે, તેમજ તે ઈન્દ્રિયના વિષયમા ક્ષમાઈને તડપી તડપીને મૃત્યુવશ
થાય છે ॥ ગા ૭-૮ ॥

તેષુ તયોક્તેષુ તથા સપ્તિશાલિના હૃદયસ્ય મનસથ નિર્વૃત્તિકરેષુ
સુખકરેષુ । एव भूतेषु स्पर्शेषु रज्यमानाः=अनुरक्ताः रमन्ते ॥ ९ ॥

‘ફાર્સિદિયે’ ત્યાદિ । કુઝરસ્ય=કરિણીસ્પર્શલુઘ્ધસ્ય હસ્તિનો મસ્તક તીક્ષ્ણો-
લોદ્દાકુશઃ સ્વનતિ=વિદારવતિ । શેષ સુગમમ્ ॥ ૧૦ ॥ ૫ ॥ સૂ૦ ॥

મૂલ્મ-કલરિભિય મહુરતંતીતલતાલવસકઠહાભિરામેસુ ।

સદેસુ જં ન ગિદ્ધા વસટ્ટમરણં ન તે મરણ ॥ ૧૧ ॥

થળજહળવયળકરચરણનયળગઠિવયવિલાસિયર્ગૈસુ ।

રૂવેસુ ન રત્તા વસટ્ટમરણ ન તે મરણ ॥ ૧૨ ॥

અગુરુવરપવરધૂવળ ઉડયમહ્ણણુલેવળવિહીસુ ।

ગધેસુ જે ન ગિદ્ધા વસટ્ટમરણં ન તે મરણ ॥ ૧૩ ॥

તિત્તકહુયકસાયવમહુરવહુલ્લજ્જપેજ્જલેજ્જેસુ ।

આસાણસુ ન ગિદ્ધા વસટ્ટમરણ ન તે મરણ ॥ ૧૪ ॥

(ઉડમયમાણ, ફાર્સિદિયદુહત ઇત્યાદિ,

ટીકાર્થ-જો પ્રાણી સ્પર્શન ઇન્દ્રિયકે વશવર્તી હોતે હૈં વે અપની સ્પર્શ-
નેન્દ્રિયની લોલુપતાસે હેમન્ત આદિ પ્રત્યેક ઋતુ સઘન્ધી સુખ ભોગતે હૈં ।
તથા સપત્તિશાલિયોં કે હૃદય મેં ઓર મન સુખકર સ્પર્શોં મેં અનુરક્ત
ઘને રહતે હૈં । ઇસ તરહ કાતે ૨ જવ ઇનકી યહ સ્પર્શન ઇન્દ્રિય દુર્દાન્ત
વન જાતી હૈ તત્ર વે પ્રાણી જિસ પ્રકાર તીક્ષ્ણ લોહ કો અકુશ કરિણી
(હસ્તિની) કે સ્પર્શ કરને મેં લુઘ્ધક ઘને હુણ મત્ત ગજરાજ કે મસ્તક
કો વિદાર દેતા હૈ ઁસી તરહ ઇસ સ્પર્શન ઇન્દ્રિય કે દ્વારા વિનષ્ટ કર
દિયે જાતે હૈ ॥ ગા૦ ૯-૧૦ ॥

ઉ ચ મયમાણ, ફાર્સિદિયદુહત ઇત્યાદિ ।

જે પ્રાણીઓ સ્પર્શેન્દ્રિયને વશ થાય છે, તેઓ પોતાની સ્પર્શેન્દ્રિયની
લોલુપતાથી હેમત વગેરે દરેકે દરેક ઋતુઓના સુખો ભોગવે છે તેમજ
સપત્તિવાળાઓના હૃદય અને મનસુખદ સ્પર્શોમા આસક્ત બનીને રહે છે
આમ જન્તા કરતા જ્યારે તેમની આ સ્પર્શેન્દ્રિય દુર્દાત બની જાય છે ત્યારે
તે પ્રાણીઓ (હાથિણી) ને સ્પર્શવામા લુઘ્ધ બનેલા મત્ત ગજગજના
મસ્તકને વિદીર્ણ કરી નાખે છે તેમજ આ સ્પર્શેન્દ્રિય વડે વિનષ્ટ કરી
નાખવામા આવે છે ॥ ગા ૯-૧૦ ॥

उडभयमाणसुहेसु य सत्रिभवहियत्रमणनिव्वुइकरेसु ।

फासेसु जे न गिद्धा वसट्टमरणं न ते मरण ॥ १५ ॥

टीका—शब्दादिष्वियेषामनामक्तानां वशात्तमरणं न भवतीति पञ्चभिर्गाथाभिः प्राह—‘ कलरिभिय ’ इत्यादि ।

कलरिभिनमधुरतन्नीतलतावशकुरुदाभिरामेषु ।

शब्देषु ये न गृह्णा, -वशात्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ ११ ॥

स्तनजघनपदनपरचरणनयनगर्भितविन्यासिनगतिषु ।

रूपेषु ये न रक्ता, -वशात्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १२ ॥

अगुरुपरप्रवरधूपन, -ऋजुजमात्पानुलेपनविधिषु ।

गन्धेषु ये न गृह्णा, -वशात्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १३ ॥

तिक्तकटुककृपायाम्ल, मधुरमृदाघपेय लक्ष्येषु ।

आस्वादेषु न गृह्णा, -वशात्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १४ ॥

ऋजुभज्यमानसुखेषु च, सत्रिभव हृदयमनोनिर्दृष्टिकरेषु ।

स्पर्शेषु ये न गृह्णा -वशात्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १५ ॥

आसाम् व्याख्या सुगमा ॥ १५ ॥ सू० ६ ॥

(कलरिभिय, यणजहण, अगुरुवरपवर, तिक्तकटुक्य, उडभयमाण, इत्यादि ।

इन गाथाओं द्वारा सूत्रकार यह प्रदर्शित करते हैं कि जो शब्दादि पांच इन्द्रियों के विषयो में आमक्त नहीं बनते हैं उनका वशात्तमरण नहीं होता है । इन गाथाओं की व्याख्या सुगम है ।

जो प्राणी कर्णइन्द्रिय के विषयभूत शब्द में, चक्षुइन्द्रिय के विषयभूत रूप में नासिका इन्द्रियके विषयभूत गंध में जिह्वाइन्द्रिय के विषयभूत रस में, तथा स्पर्शन इन्द्रिय के विषयभूत स्पर्श में आसक्त-गृह्य-नहीं होते हैं ॥ गा० ११-१५ ॥

कलरिभिय, यणजहण, अगुरुवरपवर, तिक्त कटुक्य उडभयमाण, इत्यादि ।

आ गाथाओं में वडे सूत्रकार आ वात स्पष्ट करवा भागे छे के के शब्द वगेरे पाये धन्द्रियेना विषयोभा आसक्त थता नथी, तेमनु वशात्तमरणं थतुं नथी, आ गाथाओंनी व्याख्या सरण छे

के प्राणी कर्णइन्द्रियेना विषयभूत शब्दमा, नासिका धन्द्रियेना, विषयभूत गंधमा, जिह्वा धन्द्रियेना विषयभूत रसमा तेमनु स्पर्शन धन्द्रियेना विषयभूत स्पर्शमा अत्यंत आसक्त-गृह्य थता नथी, तेओ वशात्तमरणं प्राप्नोति नथी ॥ गा ११-१५ ॥

मूलम्—सद्देशु य भद्रपावणसु सोयविसयं उवागणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्वं ॥ १६ ॥

रूवेसुय भद्रपावणसु चक्खुविसय उवगणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्व ॥ १७ ॥

गंधेसु य भद्रपावणसु घाणविसयं उवागणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्वं ॥ १८ ॥

रसेसु य भद्रपावणसु जिबभविसय उवगणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्व ॥ १९ ॥

फासेसु य भद्रपावणसु कायविसय उवगणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्व ॥ २० ॥

एव खलु जंबू । समणेण भगवया महावीरेण जाव संपत्तेणं
सत्तरसमस्त नायज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्तिवेमि ।

॥ सत्तरसम नायज्झयणं समत्त ॥ १७ ॥

टीका—अनुकूल प्रतिकूलशब्दादिषु रागद्वेषवर्जन पञ्चभिर्गाथ्याभिः प्रतिबोध
यति—'सद्देशु य' इत्यादि ।

शब्देषु च भद्रकपापकेषु श्रोत्रविषयगुणगतेषु ।

तुष्टेन वा रुष्टेन वा, समणेन सदा न भवितव्यम् ॥ १६ ॥

सद्देशुय, फासेसुय इत्यादि ।

एव खलु जंबू । समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण सत्त
रसमस्त नायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते त्तिवेमि ॥

अत्र सूत्रकार इति पाच गाथाओं द्वारा अनुकूल प्रतिकूल शब्दादि
विषयों में श्रमणजन को कभी भी रागद्वेष नहीं करना चाहिये—इस

सद्देशुय, फासेसुय इत्यादि

एव खलु जंबू । समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण सत्तरसमस्त
नायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते त्ति वेमि ॥

सूत्रकार इति या पाच गाथाओं वडे को वात स्पष्ट करवा छुट्टे छे
के अनुकूल-प्रतिकूल शब्दादि विषयोभा श्रमणजनोने कदापि राग-द्वेष नहि

उडभयमाणसुहेसु य सविभयहिययमणनिव्युइकरेसु ।

फासेसु जे न गिद्धा वसट्टमरणं न ते मरण ॥ १५ ॥

टीका—शब्दादिविषयैरनामक्ताना वशार्त्तमरण न भवतीति पञ्चभिर्गाथाभिः ग्राह—' कलरिभिय ' इत्यादि ।

कलरिभिनमधुरतन्त्रीतत्तात्त्विकशकृदाभिरामेषु ।

शब्देषु ये न गृह्या, -वशार्त्तमरण न ते म्रियन्ते ॥ ११ ॥

स्तनजघनपदनररचरणनपनगर्भितत्रिलसितगतिषु ।

रूपेषु ये न रक्ता, -वशार्त्तमरण न ते म्रियन्ते ॥ १२ ॥

अगुरुवरप्रवरधूपन, -ऋतुजमाल्यानुलेपनत्रिधिषु ।

गन्धेषु ये न गृह्या, -वशार्त्तमरण न ते म्रियन्ते ॥ १३ ॥

तिक्तकटुकुरुपायाम्ल, मधुररज्जुताघपेय लेखेषु ।

आस्वादेषु न गृह्या, -वशार्त्तमरण न ते म्रियन्ते ॥ १४ ॥

ऋतुभज्यमानसुतेषु च, सविभय हृदयमनोनिर्दृतिकरेषु ।

स्पर्शेषु ये न गृह्या-वशार्त्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १५ ॥

आसाम् व्याख्या सुगमा ॥ १५ ॥ सू० ६ ॥

(कलरिभिय, धणजहण, अगुरुवरपवर, तिक्तकटुक्य, उडभयमाण, इत्यादि ।

इन गाथाओं द्वारा सूत्रकार यह प्रदर्शित करते हैं कि जो शब्दादि पांच इन्द्रियों के विषयों में आमक्त नहीं बनते हैं उनका वशार्त्तमरण नहीं होता है । इन गाथाओं की व्याख्या सुगम है ।

जो प्राणी कर्णइन्द्रिय के विषयभूत शब्द में, चक्षुइन्द्रिय के विषयभूत रूप में नासिका इन्द्रियके विषयभूत गंध में जिह्वाइन्द्रिय के विषयभूत रस में, तथा स्पर्शन इन्द्रिय के विषयभूत स्पर्श में आसक्त-गृह्य-नही होते हैं ॥ गा० ११-१५ ॥

कलरिभिय, धणजहण, अगुरुवरपवर, तिक्त कटुक्य व उडभयमाण, इत्यादि ।

आ गाथाओं वडे सूत्रकार आ वात स्पष्ट करवा भागे छे के ले शब्द वगेरे पाये धन्द्रियोना विषयोभा आसक्त यथा नथी, तेमनु वशार्त्तमरण्य थर्त नथी, आ गाथाओंनी व्याख्या सरण छे

ले प्राणी कर्णइन्द्रियना विषयभूत रूपमा, नासिका धन्द्रियना, विषयभूत गंधमा, जिह्वा धन्द्रियना विषयभूत रसमा तेमन् स्पर्शन धन्द्रियना विषयभूत स्पर्शमा अत्यंत आसक्त-गृह्य यथा नथी, तेओ वशार्त्तमरण्ये प्राप्ति करता नथी ॥ गा ११-१५ ॥

उडभयमाणसुहेसु य सविभवाहिययमणनिव्वुडकरेसु ।

फासेसु जे न गिद्धा वसट्टमरणं न ते मरण ॥ १५ ॥

टीका—शब्दादिप्रियेयनामक्ताना वगार्त्तमरण न भवतीति पञ्चमिणां
याभिः प्राह—‘ कलरिभिय ’ इत्यादि ।

कलरिभिनमधुरतन्त्रीतन्तावशकृदाभिरामेषु ।

शब्देषु ये न गृह्णा, -वगार्त्तमरण न ते म्रियन्ते ॥ ११ ॥

स्तनजघापरदनररचरणनपनगर्भितप्रित्तिगतितगतिषु ।

रूपेषु ये न रक्ता, -वगार्त्तमरण न ते म्रियन्ते ॥ १२ ॥

अगुरुवरप्रवरधूपन, -ऋतुमाल्यानुलेपनप्रिधिषु ।

गन्धेषु ये न गृह्णा, -वगार्त्तमरण न ते म्रियन्ते ॥ १३ ॥

तिक्तकटुकरूपायाम्ल, मधुरमृदाघपेय लेयेषु ।

आस्त्रादेषु न गृह्णा, -वगार्त्तमरण न ते म्रियन्ते ॥ १४ ॥

ऋतुभज्यमानसुरेषु च, सविभवा हृदयमनोनिर्गतिकरुषु ।

स्पर्शेषु ये न गृह्णा-वगार्त्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १५ ॥

आसाम् व्याख्या सुगमा ॥ १५ ॥ सू० ६ ॥

(कलरिभिय, धणजहण, अगुरुवरपदर, तिक्तकटुक्य, उडभयमाण,
इत्यादि ।

इन गाथाओं द्वारा सूत्रकार यह प्रदर्शित करते हैं कि जो शब्दादि
पांच इन्द्रियों के विषयों में आसक्त नहीं बनते हैं उनका वशात्तमरण
नहीं होता है । इन गाथाओं की व्याख्या सुगम है ।

जो प्राणी कर्णइन्द्रिय के विषयभूत शब्द में, चक्षुइन्द्रिय के विष-
यभूत रूप में नासिका इन्द्रियके विषयभूत गंध में जिह्वाइन्द्रिय के विष-
यभूत रस में, तथा स्पर्शन इन्द्रिय के विषयभूत स्पर्श में आसक्त-
गृह्ण-नही होते हैं ॥ गा० ११-१५ ॥

कलरिभिय, धणजहण, अगुरुवरपदर, तिक्त कटुक्य उ ड भयमाण, इत्यादि ।

आ गाथाओं वडे सूत्रकार आ वात स्पष्ट करना भागे छे के के शब्द
वगेरे पाये धन्द्रियेना विषयेभा आसक्त यता नथी, तेभनु वशात्तमरण्य भर्तु
नथी, आ गाथाओंनी व्याख्या सरण छे

के प्राणी जर्णधन्द्रियेना विषयभूत रूपमा, नासिका धन्द्रियेना, विषयभूत
गंधमा, जिह्वा धन्द्रियेना विषयभूत रसमा तेभन स्पर्शन धन्द्रियेना विषय
भूत स्पर्शमा अत्यंत आसक्त-गृह्ण यता नथी, तेओ वशात्तमरण्ये प्राप्त
करता नथी ॥ गा ११-१५ ॥

मूलम्—सद्देशु य भद्रयपावणसु सोयविसयं उवागणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्वं ॥ १६ ॥

रूवेसुय भद्रपावणसु चक्खुविसय उवगणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्व ॥ १७ ॥

गधेसु य भद्रपावणसु घाणविसयं उवागणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्व ॥ १८ ॥

रसेसु य भद्रयपावणसु जिम्भविसय उवगणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्व ॥ १९ ॥

फासेसु य भद्रयपावणसु कायविसय उवगणसु ।

तुष्टेण व रुष्टेण न समणेण सया ण होयव्वं ॥ २० ॥

एव खलु जंजू ! समणेण भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेणं
सत्तरसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्तिवेमि ।

॥ सत्तरसमं नायज्झयण समत्त ॥ १७ ॥

टीका—अनुकूल प्रतिकूलशब्दादिषु रागद्वेषवर्जन पञ्चभिर्गायामिः प्रतिबोध
यति-‘ सद्देशु य’ इत्यादि ।

शब्देषु च भद्ररूपापकेषु श्रोत्रविषयगुणमतेषु ।

तुष्टेन वा रुष्टेन वा, समणेण सदा न भवितव्यम् ॥ १६ ॥

सद्देशुय, फासेसुय इत्यादि ।

एव खलु जंजू ! समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेणं सत्त
रसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते त्तिवेमि ॥

अत्र सूत्रकार इन पाच गायत्री द्वारा अनुकूल प्रतिकूल शब्दादि
विषयो मीं श्रमणजन को कभी भी रागद्वेष नहीं करना चाहिये—इस

सद्देशुय, फासेसुय इत्यादि

एव खलु जंजू ! समणेणं भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण सत्तरसमस्स
नायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते त्ति वेमि ॥

सूत्रकार इन पाच गायत्री वडे ये वात २५४८ करवा छिछे छे
के अनुद्वेष-प्रतिकूल शब्दादि विषयोमा श्रमणजनोने कदापि राग-द्वेष नहि

उडभयमाणसुहेसु य सविभ्रवहिययमणनिव्वुडकरेसु ।

फासेसु जे न गिद्धा वसट्टमरणं न ते मरण ॥ १५ ॥

टीका—शब्दादिप्रियेष्वनामक्तानां वशार्त्तमरणं न भवतीति पञ्चमिर्गा
धामिः प्राह—‘ कलरिभिय ’ इत्यादि ।

कलरिभियमधुरतन्त्रीतन्तावशकृदाभिरामेषु ।

शब्देषु ये न गृह्या, -वशार्त्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ ११ ॥

स्तनजघनयदनररचरणनयनगरितविगसितगतिषु ।

रूपेषु ये न रक्ता, -वशार्त्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १२ ॥

अगुरुवरप्रवरधूपन, -ऋतुजमाल्यानुलेपनत्रिधिषु ।

गन्धेषु ये न गृह्या, -वशार्त्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १३ ॥

तिक्तकटुककृपायाम्ल, मधुरवहुराघपेय लेशेषु ।

आस्वादेषु न गृह्या, -वशार्त्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १४ ॥

ऋतुभज्यमानसुखेषु च, सविभ्रव हृदयमनोनिर्दृष्टिकरेषु ।

स्पर्शेषु ये न गृह्या-वशार्त्तमरणं न ते म्रियन्ते ॥ १५ ॥

आसाम् व्याख्या सुगमा ॥ १५ ॥ सू० ६ ॥

(कलरिभिय, धणजहण, अगुरुवरपवर, तिक्तकटुक, उडभयमाण,
इत्यादि ।

इन गाथाओं द्वारा सूत्रकार यह प्रदर्शित करते हैं कि जो शब्दादि
पांच इन्द्रियों के विषयों में आसक्त नहीं घनते हैं उनका वशार्त्तमरण
नहीं होता है । इन गाथाओं की व्याख्या सुगम है ।

जो प्राणी कर्णइन्द्रिय के विषयभूत शब्द में, चक्षुइन्द्रिय के विष-
यभूत रूप में नासिका इन्द्रियके विषयभूत गंध में जिह्वाइन्द्रिय के विष-
यभूत रस में, तथा स्पर्शन इन्द्रिय के विषयभूत स्पर्श में आसक्त-
गृह्य-नहीं होते हैं ॥ गा० ११-१५ ॥

कलरिभिय, धणजहण, अगुरुवरपवर, तिक्त कटुक उडभयमाण, इत्यादि ।

आ गाथाओं वडे सूत्रकार आ वात स्पष्ट उरवा भागे छे के के शब्द
वजेरे पावे इन्द्रियोना विषयोभा आसक्त यता नथी, तेमनु वशार्त्तमरणं यत्
नथी, आ गाथाओंनी व्याख्या सरण छे

के प्राणी ज्येष्ठइन्द्रियोना विषयभूत रूपमा, नासिका इन्द्रियोना, विषयभूत
गंधमा, जिह्वा इन्द्रियोना विषयभूत रसमा तेमन्व स्पर्शन इन्द्रियोना विषय
भूत स्पर्शमा अत्यंत आसक्त-गृह्य यता नथी, तेज्यो वशार्त्तमरणं प्राप्
करोता नथी ॥ गा ११-१५ ॥

मूलम्—सद्देशु य भद्रयपावणसु सोयविसयं उवागणसु ।
 तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्वं ॥ १६ ॥
 रूवेसुय भद्रपावणसु चक्खुविसय उवगणसु ।
 तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्वं ॥ १७ ॥
 गधेसु य भद्रपावणसु घाणविसयं उवागणसु ।
 तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्वं ॥ १८ ॥
 रसेसु य भद्रयपावणसु जिब्भविसय उवगणसु ।
 तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्वं ॥ १९ ॥
 फासेसु य भद्रयपावणसु कायविसय उवगणसु ।
 तुष्टेण व रुष्टेण व समणेण सया ण होयव्वं ॥ २० ॥
 एव खलु जवू । समणेण भगवया महावीरेण जाव संपत्तेणं
 सत्तरसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्तिवेमि ।

॥ सत्तरसम नायज्झयणं समत्त ॥ १७ ॥

टीका—अनुकूल प्रतिहूलशब्दादिषु रागद्वेषवर्जनं पञ्चभिर्गाथाभिः प्रतिबोध
 यति—'सद्देशु य' इत्यादि ।

शब्देषु च भद्ररूपपक्षेषु श्रोत्रविषयमुपगतेषु ।

तुष्टेन वा रुष्टेन वा, समणेन सदा न भवितव्यम् ॥ १६ ॥

सद्देशुय, फासेसुय इत्यादि ।

एव खलु जवू । समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेणं सत्त
 रसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते त्तिवेमि ॥

अत्र सूत्रकार इति पाच गाथाओ द्वारा अनुकूल प्रतिहूल शब्दादि
 विषयो मे श्रमणजन को कभी भी रागद्वेष नहीं करना चाहिये—इस

सद्देशुय, फासेसुय इत्यादि

एव खलु जवू । समणेणं भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण सत्तरसमस्स
 नायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते त्ति वेमि ॥

सूत्रकार इति आ पाच गाथाओ वडे ओ वात स्पष्ट करवा छिछे छे
 हे अनुकूल-प्रतिहूल शब्दादि विषयोमा श्रमणजनोने कदापि राग-द्वेष नहि

उडभयमाणसुहेसु य सविभवाहिययमणनिव्वुइकरेसु ।

फासेसु जे न गिद्धा वसट्टमरणं न ते मरण ॥ १५ ॥

टीका—शब्दादिविषयेयनामक्ताना वशात्तमरणं न भवतीति पञ्चभिर्गा
यभिः प्राह—‘ कलरिभिय ’ इत्यादि ।

कलरिभिनमधुरतन्त्रीतत्रतावशकरुदाभिरामेषु ।

शब्देषु ये न गृह्णा, -वशात्तमरणं न ते त्रियन्ते ॥ ११ ॥

स्वनजघनरदनररचरणनयनगरितभिरासितगतिषु ।

रूपेषु ये न रक्ता, -वशात्तमरणं न ते त्रियन्ते ॥ १२ ॥

अगुरुवरप्रवरधूपन, -ऋजुजमाट्यानुलेपनत्रिधिषु ।

गन्धेषु ये न गृह्णा, -वशात्तमरणं न ते त्रियन्ते ॥ १३ ॥

तिक्तकडुककपायाम्ल, मधुरमहुत्साधपेय लेह्येषु ।

आस्वादेषु न गृह्णा, -वशात्तमरणं न ते त्रियन्ते ॥ १४ ॥

ऋजुभज्यमानसुसेषु च, सविभवा हृदयमनोनिर्दृतिकरेषु ।

स्पर्शेषु ये न गृह्णा -वशात्तमरणं न ते त्रियन्ते ॥ १५ ॥

आसाम् व्याख्या सुगमा ॥ १५ ॥ सू० ६ ॥

(कलरिभिय, धणजहण, अगुरुवरपवर, तिक्तकडुय, उडभयमाण, इत्यादि ।

इन गाथाओं द्वारा सूत्रकार यह प्रदर्शित करते हैं कि जो शब्दादि पांच इन्द्रियों के विषयो में आमक्त नहीं बनते हैं उनका वशात्तमरण नहीं होता है । इन गाथाओं की व्याख्या सुगम है ।

जो प्राणी कर्णइन्द्रिय के विषयभूत शब्द में, चक्षुइन्द्रिय के विषयभूत रूप में नासिका इन्द्रियके विषयभूत गंध में जिह्वाइन्द्रिय के विषयभूत रस में, तथा स्पर्शन इन्द्रिय के विषयभूत स्पर्श में आसक्त-गृह्य-नहीं होते हैं ॥ गा० ११-१५ ॥

कलरिभिय, धणजहण, अगुरुवरपवर, तिक्त कडुय उ ड भयमाण, इत्यादि ।

आ गाथाओं वडे सूत्रकार आ वात स्पष्ट करवा भागे छे के के शब्द वगेरे पाये धन्द्रियोना विषयोमा आसक्त यता नथी, तेमनु वशात्तमरणं यत्तु नथी, आ गाथाओंनी व्याख्या सरण छे

के प्राणी कर्णइन्द्रियोना विषयभूत रूपमा, नासिका धन्द्रियोना, विषयभूत गंधमा, जिह्वा धन्द्रियोना विषयभूत रसमा तेमनु स्पर्शन धन्द्रियोना विषयभूत स्पर्शमा अत्यंत आसक्त-गृह्य यता नथी, तेओ वशात्तमरणं प्राप्त करता नथी ॥ गा ११-१५ ॥

‘सदेष्टु य’ इत्यादि, गाथा पञ्चरु सुगमम् ॥

सुधर्मास्वामी पाह-‘एव खलु हे खम्बूः ! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्समाप्तेन मत्तदस्य ज्ञाताध्ययनस्य अयमर्थः,=पूर्वोक्तो भावः प्रज्ञप्तः=प्ररूपितः । इति त्रयीमि-व्याख्या पूर्ववत् ॥ सू० ७ ॥

इति श्री विश्वप्रख्यात - जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचरूपञ्चदशभाषाकल्पित-
ललितकलापालापक - प्रविशुद्धगयपत्रनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक
श्रीशाहू उत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ‘जैनशास्त्राचार्य’ पदभूषित-
कोल्हापुरराजगुरु-वालब्रह्मचारि जैनाचार्य जैनधर्मदिनाकरपूज्यश्री
घासीलालव्रतिविरचिताया श्री ज्ञाताधर्मकथाद्भूमनस्यानगारधर्माभृ-
तवर्षिण्यारयाया व्याख्याया सप्तदशमध्ययन समाप्त ॥ १७ ॥

८ आठ प्रकार का स्पर्श चाहे वह अनुकूल हो चाहे प्रतिकूल हो-
जब २ स्पर्शन इन्द्रिय का विषय हो उसमें साधु को किसी भी तरह से
कभी भी तुष्ट एव रुष्ट नहीं होना चाहिये ॥ २० ॥

इस प्रकार हे जंबू ! श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो सिद्धिगति
नामक स्थान को प्राप्त कर चुके हैं इस सत्रहवें ज्ञाताध्ययन का यह
पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्ररूपित किया है । ऐसा मैं उन्हीं के कहे अनुसार
कह रहा हूँ ।

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराज कृत “ज्ञाता
धर्मकथाद्भूमन” की अनगार धर्माभृतवर्षिणी व्याख्या का सत्रहवा
अध्ययन समाप्त ॥ १७ ॥

८ ज्ञातनेा स्पर्श-—जवे ते अनुकूल के प्रतिकूल गमे तेवे केम न होय
न्यारे न्यारे ते स्पर्शन इन्द्रियनेा विषय होय तेमा साधुनेा डोर्ध पणु रीते
कदापि तुष्ट अने इष्ट धवु न्हेके नहि ॥ गा २० ॥

आ प्रभावे डे जणू ! श्रमणु भगवान् महावीरे डे जेभणु सिद्धगति
नामक स्थाननेा मेणुंयु छे-आ सत्तरमा ज्ञाताध्ययननेा आ पूर्वोक्त रूपमा
अर्थ प्ररूपित कर्यो छे आणु डु तेमना कथा सुजणु ज तमने कही रह्यो छु
श्री जैनाचार्य घासीलाल महाराज कृत ज्ञाताभृतनी अनगारधर्माभृतवर्षिणी
व्याख्यानु सत्तरमु अध्ययन समाप्त ॥ १७ ॥

रूपेषु च भद्ररूपापकेषु, चतुर्विषयमुपगतेषु ।

तुष्टेन वा रुष्टेन वा, श्रमणेन सदा न भवितव्यम् ॥ १७ ॥

१-भद्ररूपापकेषु=अनुकूल-प्रतिकूलेषु ।

ग घेषु च भद्ररूपापकेषु, घ्राणविषयमुपगतेषु ।

तुष्टेन वा रुष्टेन वा, श्रमणेन सदा न भवितव्यम् ॥ १८ ॥

रसेषु च भद्ररूपापकेषु, जिह्वाविषयमुपगतेषु ।

तुष्टेन वा रुष्टेन वा, श्रमणेन सदा न भवितव्यम् ॥ १९ ॥

स्पर्शेषु च भद्ररूपापकेषु, कायविषयमुपगतेषु ।

तुष्टेन वा रुष्टेन वा, श्रमणेन सदा न भवितव्यम् ॥ २० ॥

विषय को समझाते हैं यहाँ भद्रक शब्द का अर्थ अनुकूल और पापक शब्द का अर्थ प्रतिकूल है । जब शब्द रूप विषय श्रोत्रेन्द्रिय का हो तो उस समय चाहे वह मनोज्ञ हो या अमनोज्ञ हो कैसा ही क्यों न हो उसमें श्रमण-साधु-को कभी भी तुष्ट अधवा रुष्ट नहीं होना चाहिये ॥ गा० ॥ १६ ॥

चक्षुहन्द्रिय का विषयभूतरूप जब उस इन्द्रिय द्वारा ग्रहण करने में आवे-तब वह चाहे मनोज्ञ हो या अमनोज्ञ हो उसमें श्रमण जन को कभी भी हर्ष विषाद-तुष्ट रुष्ट-नहीं होना चाहिये ॥ गा० १७ ॥

मनोज्ञ एव अमनोज्ञ गंध जब घ्राणइन्द्रिय का विषय हो तब साधु को उस विषय में कभी भी तुष्ट रुष्ट नहीं होना चाहिये ॥ गा० १८ ॥

मनोज्ञ अधवा अमनोज्ञ रस जिह्वाइन्द्रिय का विषय हो-तब उसमें श्रमण जन को कभी भी तुष्ट और रुष्ट नहीं होना चाहिये ॥ गा० १९ ॥

करवो लोभ्ये अर्हो लद्रक शण्डनो अर्थ अनुकूल अने पापक शण्डनो अर्थ प्रतिकूल छे न्यारे शण्डरूप विषय श्रोत्र इन्द्रियनो होय तो लोभे ते मनोज्ञ होय के अमनोज्ञ होय, गमे तेवो केम न होय, तेमा श्रमण-साधु-ने कदापि तुष्ट के इष्ट थवु लोभ्ये नहि ॥ गा १६ ॥

अक्षु इन्द्रियना विषयभूत रूप न्यारे ते इन्द्रिय वडे अहंशु करवामा आवे त्यारे ते मनोज्ञ होय के अमनोज्ञ होय, श्रमणने कदापि तेमा हर्ष विषाद-तुष्ट-इष्ट नहि थवु लोभ्ये ॥ गा १७ ॥

मनोज्ञ अने अमनोज्ञ गंध न्यारे घ्राण इन्द्रियनो विषय होय त्यारे साधुने ते विषयमा कदापि तुष्ट के इष्ट नहि थवु लोभ्ये ॥ १८ ॥

मनोज्ञ अधवा तो अमनोज्ञ रस न्यारे जिह्वा इन्द्रियनो विषय होय त्यारे तेमा श्रमण-जनने कदापि तुष्ट अने इष्ट थवु लोभ्ये नहि ॥ १९ ॥

‘सदेष्टु य’ इत्यादि, गाथा पञ्चरु सुगमम् ॥

सुधर्मास्वामी पाठ-‘एव सलु हे खम्बूः । अमणेन भगवता महावीरेण यात्रसंप्राप्तेन सप्तदशस्य ज्ञाताभ्ययनस्य अपमर्थः=पूर्वोक्तो भावः प्रज्ञप्तः=प्ररूपितः । इति त्रीमि-व्याख्या पूर्ववत् ॥ सू० ७ ॥

इति श्री विश्वविख्यात - जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचरूपञ्चदशभाषाफलित-
ललितकलापालापरु - प्रशिद्धगयत्रयनैकग्रन्थनिर्मापरु-वादिमानमर्दरु
श्रीशाह उत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ‘जैनशास्त्राचार्य’ पदभूषित-
कोल्हापुरराजगुरु-वालब्रह्मचारि जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री
घासीलालप्रतिविरचिताया श्री ज्ञाताधर्मकथाद्गमूत्रस्यानगारधर्माभृ-
तवर्षिणीव्याख्याया व्याख्याया सप्तदशमध्ययन समाप्त ॥ १७ ॥

८ आठ प्रकार का स्पर्श चाहे वह अनुकूल हो चाहे प्रतिकूल हो-
जब २ स्पर्शन इन्द्रिय का विषय हो उसमें साधु को किसी भी तरह से
कभी भी तुष्ट एवं रुष्ट नहीं होना चाहिये ॥ २० ॥

इस प्रकार हे जन्म ! भ्रमण भगवान् महावीर ने कि जो सिद्धिगति
नामक स्थान को प्राप्त कर चुके हैं इस सत्रहवें ज्ञाताभ्ययन का यह
पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्ररूपित किया है । ऐसा मैं उन्हीं के कहे अनुसार
कह रहा हूँ ।

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराज कृत “ज्ञाता
धर्मकथाद्गमूत्र” की अनगार धर्माभृतवर्षिणी व्याख्या का सत्रहवा
अध्ययन समाप्त ॥ १७ ॥

८ जतनेो स्पर्श—लये ते अनुकूल के प्रतिकूल गमे तेवो केम न डोय
न्यारे न्यारे ते स्पर्शन इन्द्रियेनो विषय डोय तेमा साधुने केई पणु रीते
कहापि तुष्ट अने इष्ट थवु जेईजे नहि ॥ गा २० ॥

आ प्रभाणु डे जणू ! अमणु भगवान महावीरे डे जेभणु सिद्धगति
नामक स्थानने जेणंयु छे—आ सत्तरमा ज्ञाताभ्ययनने आ पूर्वोक्त रूपमा
अर्थ प्ररूपित ज्यो डे आणु डु तेमना कहा मुजण ज तमने कही ग्हो डु

श्री जैनाचार्य धामीलाल महाराज कृत ज्ञातासूत्रनी अनगारधर्माभृतवर्षिणी
व्याख्यानु सत्तरमु अध्ययन समाप्त ॥ १७ ॥

॥ अथाष्टादशमध्ययनम् ॥

अथाष्टादशमारभ्यते, अस्य च पूर्वेण महायममिगम्यन् - पूर्वस्मिन् अध्ययने इन्द्रियप्रशक्तिनाम् वशीकृतेन्द्रियाणां च अनर्थार्थी प्रोक्ता, इह तु लोभाविष्टानां लोभरहितानां च तावेवोच्येते, इत्येव पूर्वेण सह संप्रद्वमिदमध्ययनम्, तस्येदमादिम सूत्रम्— 'जइण भते' इत्यादि—

मूलम्—जइ णं भंते । समणेण जाव सपत्तेणं सत्तरसमस्स णाय-
ज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, अट्ठारमस्स ण भंते । णायज्झय-
णस्स समणेण जाव संपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जंबू ।
तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहं णामं णयरे होत्था ।
वण्णओ० । तत्थ णं धण्णे णाम सत्थवाहे । भद्दाभारिया तस्स
ण धण्णस्स सत्थवाहस्स पुत्ता भद्दाए अत्तया पंचसत्थवाह-

अठारहवां अध्ययन प्रारंभ

सुसमाहारिका का वर्णन

सत्रहवां अध्ययन समाप्त हो चुका है। अब १८ वा अध्ययन प्रारंभ होता है। इस अध्ययन का पूर्व अध्ययन के साथ इस प्रकार से संबंध है—कि पूर्व अध्ययन में इन्द्रियवशवर्ती तथा वशकृत इन्द्रियवाले जीवों को अर्थ की प्राप्ति होना कहा गया है। अब इस अध्ययन में सूत्रकार यह कहेंगे कि जो लोभ कषायसे युक्त तथा लोभ कषाय से रहित जीव होते हैं वे अनर्थ और अर्थ प्राप्ति से योग्य होते हैं। इस अध्ययन का सर्व प्रथम सूत्र यह है— 'जइण भते' इत्यादि।

अठारमा अध्ययनना प्रारंभ

सुसमाहारिकानु वर्णन

सत्तरमं अध्ययन पुइ थयु छे डवे अठारमा अध्ययननी शइआत थाय छे आ अध्ययनना पडेला अध्ययननी साथे आ नतना संध छे के पडेवा अध्ययनमा इन्द्रिय वशवर्ती तेमज वशीकृत इन्द्रियोवाणा एणेने अर्थनी प्राप्ति थाय छे, ते विषे डडेवामा आओयु छे सूत्रकार डवे आ अध्ययनमा आ वाततु स्पष्टीकरण करे के ने एवे डोभकषायथी तेमज डोभकषायथी श्रुत डोय छे तेओ अनर्थ अने अर्थ प्राप्तिने लायक करे छे आ अध्ययनतु पडेलु सूत्र आ छे—जइण भते समणेण महावीरेण इत्यादि—

दारगा होत्था, तं जहा—धण्णे धणपाले, धणदेवे, धणगोत्रे, धणर-
 खिए । तस्स णं धण्णस्स सत्थवाहस्सधूया भद्दाए अत्तया
 पंचणहं पुत्ताण अणुमग्गजातीया सुंसुमाणामं दारिया होत्था,
 सूमालपाणिपाया, तस्स णं धण्णस्स सत्थवाहस्स चिलाए नाम
 दासचेडे होत्था, अहीणपचिदियसरीरे मसोवचिए बालकीलाव-
 णकुसले यावि होत्था। तएणं से चिलाए दासचेडे सुसुमाए दारियाए
 बालग्गाहे जाए यावि होत्था । सुंसुम दारिय वडीए गिण्हइ,
 गिण्हत्ता, बहूहिं दारएहि य दारियाहि य बालेहि बालियाहि य
 डिभएहि य डिंभियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहि य सद्धि
 आभिरममाणे २ विहरइ । तएणं से चिलाए दासचेडे तेसि बहूणं
 दारियाण य जाव अप्पेगइयाणं खुल्लए अवहरइ, एव वट्टइ
 आगेलियाओ, तेदुसए, पोतुल्लए, साडोब्लए, अप्पेगइयाणं
 आभरणमल्लालकारं अवहरइ अप्पेगइए आउस्सइ, एव अवहसइ
 निच्छोडेइ, निब्बच्छेइ तज्जेइ, अप्पेगइए तालेइ । तएणं ते
 वहवे दारगा य ६ जाव रोयमाणा य कदमाणा य साण २
 अम्मापिऊण णिवेदेति । तएणं तेसि बहूणं दारगाणय ६
 जाव अम्मापियरो जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छति,
 उवागच्छत्ता धन्ने सत्थवाहे बहूहिं खिज्जणाहि य स्टणाहि
 य उवलभणाहि य खिज्जमाणाहिय रुटमाणाहि य उवलभमाणा
 य धण्णस्स एयमट्ट णिवेदेति ॥ सू० १ ॥

॥ अथाष्टादशमध्ययनम् ॥

अथाष्टादशमारभ्यते, अस्य च पूर्वेण महायमभिगम्यन्त्र-पूर्वमिन् अय-
यने इन्द्रियवशवर्तिनाम् वशीकृतेन्द्रियाणां च अनर्थार्थो प्रोक्तौ, इह तु लोभादि-
ष्टाना लोभरहितना च तापेरोच्येते, इत्येव पूर्वेण सह संपद्विदमययनम्,
तस्वेदमादिम सूत्रम्—' जइण भते' इत्यादि—

मूलम्—जइ णं भते । समणेणं जाव संपत्तेणं सत्तरसमस्स णाय-
ज्झयणस्स अयमट्टे पणणत्ते, अट्टारमस्स ण भंते । णायज्झय-
णस्स समणेणं जाव संपत्तेण के अट्टे पणणत्ते ? एव खलु जंबू ।
तेणं कालेणं तेण समणं रायगिहं णाम णयरे होत्था ।
वणणओ० । तत्थ णं धणणे णाम सत्थवाहे । भद्दाभारिया तस्स
ण धणणस्स सत्थवाहस्स पुत्ता भद्दाए अत्तया पच्चमत्थवाह-

अठारहवा अध्ययन प्रारभ

सुसमाहारिका का वर्णन

सत्रहवा अध्ययन समाप्त हो चुका हैं। अब १८ वा अध्ययन
प्रारभ होता है। इस अध्ययन का पूर्व अध्ययन के साथ इस प्रकार से
संबंध है—कि पूर्व अध्ययन में इन्द्रियवशवर्ती तथा वशकृत इन्द्रियवाले
जीवों को अर्थ की प्राप्ति होना कहा गया है। अब इस अध्ययन में
सूत्रकार यह कहेंगे कि जो लोभ कषायसे युक्त तथा लोभ कषाय से
रहित जीव होते हैं वे अनर्थ और अर्थ प्राप्ति से योग्य होते हैं। इस
अध्ययन का सर्व प्रथम सूत्र यह है—' जइण भते ' इत्यादि।

अठारहा अध्ययनना प्रारभ

सुसमाहारिकानु वर्णन

सत्तरनु अध्ययन पुइ थयु छे डवे अठारहा अध्ययननी शउआत थाय
छे आ अध्ययनना पडेला अध्ययननी साथे आ नतने। स भ थ छे के पडेवा
अध्ययनमा इन्द्रिय वशवर्ती तेमज वशीकृत इन्द्रियोवाणा एणेने अथनी
प्राप्ति थाय छे, ते विषे कडेवाभा आओयु छे सूत्रकार डवे आ अध्ययनमा
आ वातनु स्पण्टीकरषु कररे के वे एवे। दोलकषायथी तेमज दोलकषायथी
इदित होय छे तेओ अनर्थ अने अर्थ प्राप्तिने लायक ठरे छे आ अध-
यननु पडेलु सूत्र आ छे—जइण भते समणेण महावीरेण इत्यादि—

धनः १ धनपाल २ धनदेवः ३ धनगोपः ४ धनरक्षितः ५ इति । तस्या खलु धन्यस्य सार्थवाहस्य दुहिता भद्रायाः सार्थवाहा आत्मजा धनादीना पञ्चाना पुत्राणाम् 'अणुमगजाइया' अनुमार्गजातिका=जाता एव जातिका, अनुमार्ग जातिका=अनुमार्गजातिका=पश्चाज्जाता सुसुमा नाम दारिद्र्या आसीत् । कीदृशी सा ?—'सूमालपाणिपाया' सुकुमार पाणिपादा=कोमलचरणवर्णा । तस्य खलु धन्यस्य सार्थवाहस्य चिलातो नाम दासचेटः=दासपुत्र आसीत् । योहि 'अहिण-

धण्णे २- धणपाले-२ धणदेवे ३, धणगोवे-४ धणरक्षिण-५) उस काल और उस समयमें राजगृह नाम का नगर था । इसका वर्णन पहले जैसा ही जानना चाहिये । उस नगर में धन्य नामका सार्थवाह रहता था । इसकी पत्नी का नाम भद्रा था । उस भद्रा भार्या से उत्पन्न हुए धन्य सार्थवाह के ये पाँच पुत्र थे-धन-१ धनपाल-२ धनदेव-३ धन-गोप-४ और धनरक्षित-५ ।

(तस्मिन् धणस्स सत्यवाहस्स धूया भद्राए अत्तया पचण्ह पुत्ताणं अणुमगजातीया सुसुमा णाम दारिया, होत्था, सूमालपाणिपाया, तस्स ण धणस्स सत्यवाहस्स चिलाएणाम दासचेडे होत्था, अह ण पचेदिय सरीरे मसोवचिए, बालकीलावणकुसले यावि होत्था) इस धन्य सार्थवाह के भद्रा भार्या की कुक्षि से उत्पन्न एक सुसुमा नामकी पुत्री थी- जो धनादिक पाँच पुत्रों के पीछे उत्पन्न हुई थी । इसके कर, चरण बड़े कोमल थे । इस धन्य सार्थवाह का एक दासचेट-दास पुत्र-था-जिस

अत्तया पच सत्यवाहदारगा होत्था, त जहा-१ण्णे १, धणपाले २, धणदेवे ३, धणगोवे-४, धणरक्षिण-५)

ते काणे अने ते सभये राजगृह नामे नगर इत्तु तेनु वरुणं पडेलानी जेम सभल्ले लेबु जेष्ठे ते नगरमा धन्य नामे सार्थवाह रडेते इत्ते तेनी पत्नीनु नाम भद्रा इत्तु तेभद्रा लार्थाना गर्भंथी जन्म पमेला पाय पुत्रो इत्ता, तेमना नाम आ प्रमाहे छे-धन-१, धनपाल-२, धनदेव-३, धनगोप-४, अने धनरक्षित-५

(तस्मिन् धणस्स सत्यवाहस्स धूया भद्राए अत्तया पचण्ह पुत्ताणं अणुमगजातीया सुसुमा णाम दारिया, होत्था, सूमालपाणिपाया, तस्मिन् धणस्स सत्यवाहस्स चिलाएणाम दासचेडे होत्था, अह ण पचेदिय सरीरे मसोवचिए, बालकीलावणकुसले यावि होत्था)

ते धन्य सार्थवाहनी भद्रा-लार्थाना गर्भंथी जन्म पामेली सुसुमा नामे एक पुत्री इत्ती ते धन वगेदे पोताना लार्थेओ वाह उत्पन्न थई इत्ती तेना हाथ-पग अहु जे कामण इत्ता ते धन्यसार्थवाहनेओ एक दासीपुत्र इत्ते तेनु

टीका—' जडण भन्ते ! ' इत्यादि । जम्बूस्वामीपुत्र-यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन याग्नमोक्ष सम्प्राप्तेन सप्तदशस्य ज्ञानाध्ययनस्य अयमर्थः नितेन्द्रियाञ्जितेन्द्रियाणामर्थनिर्वमप्तिरूपो भावः प्रज्ञप्तः=प्ररूपितः, अष्टादशस्य तु ज्ञानाध्ययनस्य श्रमणेन याग्नमोक्ष सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मास्वामी प्राह—एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नाम नगरमासीत्, ' वण्णओ ' वर्णकः=नगरवर्णन पूर्वमद् विशेषम् । तत्र खलु धन्वो नाम मार्थग्राहः परिरसति । तस्य भद्रा नाम भार्याऽसीत् । तस्य खलु प्रथमस्य सार्थग्राहस्य पुत्राः, भद्राया आत्मजाः पञ्च सार्थग्राहदारका आसन् । तेषां नामान्प्राह—' त जहा ' तद्यथा—

टीकार्थ—जम्बू स्वामी श्री सुधर्मास्वामीसे पूछते हैं कि—(जडण भन्ते ! समणेण जाव सपत्तेण सत्तरसमस्स णायज्झयणस्स अयमद्वे पणत्ते अट्टारसमस्स ण भन्ते णायज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अद्वे पणत्ते ?) हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीर ने जो कि सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त कर चुके हैं मन्त्रह्वये ज्ञानाध्ययन का यह पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्रज्ञप्त किया है—तो उन्होंने सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान महावीर ने १८ वें ज्ञानाध्ययन का क्या अर्थ प्ररूपित किया है ? (एव खलु जम्बू !) इस प्रकार जम्बू स्वामी के पूछने पर सुधर्मास्वामी उनसे कहते हैं कि जम्बू ! सुनो—तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है—(तेण कालेण तेण समणेण रायगिहे णाम णयरे होत्था । वण्णओ० तत्थण धण्णे णाम सत्थग्राहे—भद्राभारिया—तस्सण धण्णस्स सत्थवाहस्स पुत्ता भद्राण अत्तया पच्च सत्थवाहदारका होत्था, त जहा—

टीकार्थ—जम्बू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे डे—

(जडण भन्ते ! समणेण जाव सपत्तेण सत्तरसमस्स णायज्झयणस्स अयमद्वे पणत्ते अट्टारसमस्स ण भन्ते णायज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अद्वे पणत्ते ?)

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीर ने—वेओ सिद्धिगति नामक स्थानने भेणवी युक्था छे—मत्तरमा ज्ञानाध्ययनने आ पूर्वोक्त रूपे अर्थ निरूपित कथो छे तो ते जम्बू सिद्धिगति नामका स्थानने भेणवी युक्थेला श्रमण भगवान महावीर १८ वा ज्ञानाध्ययनने शो अर्थ प्ररूपित कथो छे ?

(एव खलु जम्बू !) आ प्रभाण्णे जम्बू स्वामीओ प्रश्न पूछथे त्थारभाड श्री सुधर्मा स्वामी तेभने कडे छे डे डे जम्बू ! साण्णो, तमार प्रश्नने जवाप आ प्रभाण्णे छे—

(तेण कालेण तेण समणेण रायगिहे णाम णयरे होत्था । वण्णओ० तत्थण धण्णे णाम सत्थग्राहे—भद्रा भारिया—तस्स ण धण्णस्स सत्थवाहस्स पुत्ता भद्राण

धनः १ धनपाल २ धनदेवः ३ धनगोपः ४ धनरक्षितः ५ इति । तस्या खलु धन्यस्य सार्थवाहस्य दुहिता भद्रायाः सार्थवाहा आत्मजा धनादीना पञ्चाना पुत्राणाम् 'अणुमगजाइया' अनुमार्गजातिका=जाता एव जातिका, अनुमार्ग जातिका=अनुमार्गजातिका=पश्चाज्जाता सुसुमा नाम दारिका आसीत् । कीदृशी सा ?—'सूमालपाणिपाया' सुकुमार पाणिपादा=कोमलचरचरणा । तस्य खलु धन्यस्य सार्थवाहस्य चिलातो नाम दासचेटः=दासपुत्र आसीत् । योहि 'अहिण-

धण्णे २- धणपाले-२ धणदेवे ३, धणगोवे-४ धणरक्खिण-५) उस काल और उस समयमें राजगृह नाम का नगर था । इसका वर्णन पहले जैसा ही जानना चाहिये । उस नगर में धन्य नामका सार्थवाह रहता था । इसकी पत्नी का नाम भद्रा था । उस भद्रा भार्या से उत्पन्न हुए धन्य सार्थवाह के चार पाँच पुत्र थे-धन-१ धनपाल-२ धनदेव-३ धन गोप-४ और धनरक्षित-५ ।

(तस्स ण धणस्स सत्थवाहस्स धूया भद्दाए अत्तया पचण्ह पुत्ताणं अणुमगजातीया सुसुमा णाम दारिया, होत्था, सूमालपाणिपाया, तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स चिलाणाम दासचेडे होत्था, अह ण पचेदिय सरीरे मसोवचिए, बालकीलावणकुसले यावि होत्था) इस धन्य सार्थवाह के भद्रा भार्या की कुक्षि से उत्पन्न एक सुसुमा नामकी पुत्री थी- जो धनादिक पाच पुत्रों के पीछे उत्पन्न हुई थी । इसके कर, चरण बड़े कोमल थे । इस धन्य सार्थवाह का एक दासचेट-दास पुत्र-था-जिस

अत्तया पच सत्थवाहदारगा होत्था, त जहा-धण्णे १, धणपाले २, धणदेवे ३, धणगोवे-४, धणरक्खिण-५)

ते क्षणे अने ते समये राजगृह नामे नगर इत्तु तेनु वरुणं पडेलानी जेमं समञ्ज लेवुं जेठं अने ते नगरमा धन्य नामे सार्थवाह रडेतो इतो तेनी पत्नीत्तु नाम भद्रा इत्तु ते भद्रा भार्यानां गर्भंथी जन्म प मेला पाच पुत्रो इत्ता, तेमना नाम आ प्रमाणे छे-धन-१, धनपाल-२, धनदेव-३, धनगोप-४, अने धनरक्षित-५

(तस्स ण धणस्स सत्थवाहस्स धूया भद्दाए अत्तया पचण्ह पुत्ताणं अणु-मगजातीया सुसुमा णाम दारिया, होत्था, सूमालपाणिपाया, तस्स ण धणस्स सत्थवाहस्स चिलाणाम दासचेडे होत्था, अह ण पचेदिय सरीरे मसोवचिए, बालकीलावणकुसले यावि होत्था)

ते धन्य सार्थवाहनी भद्रा-भार्यानां गर्भंथी जन्म पायेथी सुसुमा नामे अेक पुत्री इती ते धन वगेरे पोताना लोभंथे भाद उत्पन्न थई इती तेना इत्थ-पग पडुं ज डेमण इत्ता ते धन्यसार्थवाहने अेक दासीपुत्र इतो तेनु

पंचिदियसरीरे ' अहीनपञ्चेन्द्रियशरीरः=पतिपूर्णतर्येन्द्रियशरीरः, ' मसोषचिप ' मांसोपचितः=मांसरूपचित', पुष्टशरीर इत्यर्थः, पुनः ' बालक्रीडावणकुसले ' बालक्रीडनकुशलथापि आसीत् । तत खलु स दासचेट' सुसुमाया दारिकायाः ' बालगाहे ' बालग्राहः यो हि बालक्रीडयितु निपुक्तो भृत्यः स ' बालग्राहः ' इत्युच्यते जाताथाप्यभवत् । स हि चिलातः सुसुमां दारिका कट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा, बहुभिर्दारिकैश्च दारिकाभिश्च वार्यैश्च बालिकाभिश्च, डिम्भकैश्च डिम्भिकाभिश्च कुमारैश्च कुमारिकाभिश्च सार्द्धम्=दारकडिम्भकबालककुमाराणां अल्प, बहु, बहुतर कालकृतमेदो विज्ञेयः, अभिरममाणः २ = पुनः पुनः क्रीडन् विहरति । ततः खलु स चिलातो दासचेट' तेषां बहूनां ' दाराण जात्र ' दारकाणां यावत्=दारकाणां दारिकाणां डिम्भकानां डिम्भिकानां कुमारानां कुमारिकानां

का नाम चिलात था । जो प्रमाणोपेत पार्श्वे इन्द्रियो से परिपूर्ण शरीर वाला था । मांसोपचित था पुष्ट देहवाला था । यह बालकों को खिलाने में विशेष कुशल था । (तएण से चिलाए दासचेडे सुसुमाए दारियाए बालगाहे जाए यावि होत्था सुसुमदारियं कडीए गिण्हइ, गिण्हित्ता बहूहिं, दारएहिं य दारियाहिं य विहरइ-तेसिं बहूण दारियाण य जाव अप्पेगइयाण खुल्लए अवहरइ, एव वइए आडोलियाओ तेदुरुए पोत्तुल्लए साडोल्लए, अप्पेगइयाण आभरणमल्लालकार अवहरइ, अप्पेगइयाए आउत्सइ, एव अवहरइ, निच्छेडेइ, निब्भच्छेइ तज्जेइ अप्पेगइए ताळेइ) इसलिये वह दासचेट सुसुमा दारिकाके खिलाने के लिये नियुक्त हो गया । अतः वह चिलान दास चेटक सुसुमादारिका को गोदी में लेकर अनेक दारक दारिकाओं के साथ बालक बालिकाओं के साथ डिम्भक डिम्भिकों के साथ और कुमार कुमारिकों

नाम चिलात इत्तु ते सप्रभाषु पाथे धन्द्रियोधी परिपूर्णा शरीरवाणे इतो ते भासल तेमञ्च पुष्ट शरीरवाणे इतो ते आणकाने रमाडवाभा सविशेषयत्तुर इतो

(तएण से चिलाए दासचेडे सुसुमाए दारियाए बालगाहे जाए यावि होत्था सुसुम दारिय कडीए गिण्हइ, गिण्हित्ता बहूहिं, दारएहिं य दारियाहिं य विहरइ तेसिं बहूण दारियाण य जाव अप्पेगइयाण खुल्लए अवहरइ, एव वइए आडोलि याओ तेदुरुए पोत्तुल्लए, साडोल्लए, अप्पेगइयाण आभरण मल्लालकार अवहरइ, अप्पेगइए, आउत्सइ, एव अवहरइ, निच्छेडेइ, निब्भच्छेइ, तज्जेइ, अप्पेगइए ताळेइ)

तेथी ते दासचेर सुसुमा दारिकाने रमाडवा भाटे नियुक्त करवाभा आये आ प्रभाषे ते चिलात दास चेटक सुसुमा दारिकाने आणवाभा जेसा दिने धष्ठा दारक दारिकाओनी साथे आणक तेमञ्च आणवाओनी

च मध्ये 'अप्येगइयाण' अप्येकेपाम् 'सुल्लए' सुल्लकान्=कपर्दकविशेषान् 'कोडी' इति भाषा प्रसिद्धान् अपहरति=चोरयति। एव 'वट्टए' वर्तकान्=जत्वादिमयगोलकान् 'आडोलियाओ' आडोलिका इति नाम्नाप्रसिद्धान् बाल क्रीडनवस्तुविशेषान् 'तेदूसए' देशीशब्दोऽयम्-गेन्दुकान् 'पोत्तुल्लए' वस्त्रमयपुत्तल्लिकाः, 'साडोल्लए' उत्तरीयवस्त्राणि चोरयति । तथा अप्येकेपाम् आभरणमाल्यालङ्कारान् अपहरति । अनन्तरम् 'अप्येगइए' अप्येरुकान् 'आउस्सड' आकुश्यति=निष्ठुरवचनेन 'एव' अवहमइ' अपहसति=अपशब्दमुच्चार्य हास्यं करोति, 'निच्छोडेइ' निच्छोटयति= 'यदि त्व किमपि वदिष्यसि तदा त्वा वदिनिष्काशयिष्यामीत्यादि शब्दैस्तान् भीषयति, तथा 'णिम्मच्छेइ' निर्भर्त्सयति=तेषा निर्भर्त्सना करोति, एव 'तर्ज्जेइ' तर्जयति 'मया कृत किमपिकार्यं यदि स्व मातापितृभ्यो यूय वदिष्यथ

के साथ वार २ खेलने में लगा रहता। खेलते २ वह चिलात दास चेटक उन अनेक दारक दारिका, डिम्भका, डिम्भिका, कुमार कुमारिकाभ्रां में से कितनेक बच्चे के खेलने के साधन भूत कपर्दक विशेषों को कौडियो को चुरा लेता कितनेक के जतुके बने हुए चपेटो को, कितनेक के अडोलिक नाम से प्रसिद्ध खिलोनों को, कितनेक बच्चों की गेंदों को कितनेक बच्चे की वस्त्र के बनी हुई गुडियो को, तथा कितनेक बच्चे के उत्तरीयवस्त्रों-को फरियो को चुरालेता या। कितनेक बच्चों के आभरणों को मालाओं को और अलकारों को भी चुरालिया करता था कितनेक बच्चे को गाली देता कितनेक बच्चे की वह निष्ठुर वचनों को उच्चारण कर हँसी मजाक करने लग जाता था। यदि तू कुछ कहेगातां मैं तुझे यहाँ से बाहिर निकाल दूगा इत्यादि शब्दों से कितनेक बच्चों को वह डरा दिया करता था। कितनेक बच्चों को

अने डिम्भिकाओ साथे अने कुमार कुमारिकाओनी साथे वारवार रमवाना व चोटी रहते। हुते ते चिलात दासचेर रमता रमता धष्ठा दारक-दारिक, डिम्भ-डिम्भिक, कुमार-कुमारिकाओमाथी डेटलाड भाणकेना रमवाना साधन कपर्दक विशेषोने-कोडीओने चोरी लेतो, डेटलाकना लाभना अनेला चपेटाओने, डेटलाकना अडोलिक नामथी प्रसिद्ध ओवा रमकाओने, डेटलाक भाणकेनी वडीओने, डेटलाक भाणकेनी वस्त्रथी अनेली हींगडीओने तेमव डेटलाक भाणकेना उत्तरीय वस्त्रोने चोरी जतो हुते। ते डेटलाक भाणकेना आभरणोने, भाणाओने अने धरेष्ठाओने पणु चोरी जतो हुते। ते डेटलाक भाणकेने गाणो देतो अने डेटलाक भाणकेनी निष्ठुर वचनो जेवलीने कडा-अशकरी करवा लागतो हुते। "जे तुं कर्ष पणु जेवथे तो हु तने अर्धीथी अडार कादी

पचिदियसरीरे ' अहीनपञ्चेन्द्रियशरीरः=मतिपूर्णसर्वेन्द्रियशरीरः, ' मसोपचिप ' मांसोपचितः=मांसरूपचितः, पुष्टशरीर इत्यर्थः, पुनः ' बालक्रीडानकुसले ' बालक्रीडनकुशलथापि आसीत् । तत खलु स दासचेष्ट' सुसुमाया दारिकायाः ' बालग्राहे ' बालग्राहः यो हि बालक्रीडपितु निवृत्तो भृत्यः स ' बालग्राहः ' इत्युच्यते जाताश्राप्यभवत् । स हि चित्रातः सुसुमा दारिका वट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा, बहुभिर्दारिकैश्च दारिकामिथ गाल्यैश्च गालिकामिथ, डिम्भकैश्च डिम्भिकाभिश्च कुमारैश्च कुमारिकाभिश्च सार्द्धम्=दारकडिम्भकाल्यकुमाराणां अल्प, बहु, बहुतर कालकृतभेदो विज्ञेय', अभिरममाणः २ = पुनः पुनः क्रीडन् विहरति । ततः खलु स चिलातो दामचेष्ट' तेषां बहूना ' दाराण जाव ' दारकाणा यावत्=दारकाणा दारिकाणा डिम्भकाना डिम्भिकाना कुमाराणां कुमारिकाणां

का नाम चिलात था । जो प्रमाणोपेत पाचो इन्द्रियो से परिपूर्ण शरीर वाला था । मांसोपचित था पुष्ट देहवाला था । यह बालकों को खिलाने में विशेष कुशल था । (तएण से चिलाए दासचेष्टे सुसुमाए दारियाए बालग्राहे जाए यावि होत्था सुसुमदारियं कडीए गिण्हइ, गिण्हत्ता बहूहिं, दारएहिं य दारियाहिं य विहरइ-तेसिं बहूण दारियाण य जाव अप्पेगइयाण खुल्लए अवहरइ, एव बहए आडोलियाओ तेदुरुए पोतुल्लए साडोल्लए, अप्पेगइयाण आभरणमल्लालकार अवहरइ, अप्पेगइयाण आउस्तइ, एव अवहरइ, निच्छेडेइ, निब्भच्छेइ तज्जेइ अप्पेगइए ताछेइ) इसलिये वह दासचेष्ट सुसुमा दारिकाके खिलाने के लिये नियुक्त हो गया । अतः वह चिलान दास चेष्टक सुसुमादारिका को गोदी में लेकर अनेक दारक दारिकाओं के साथ बालक बालिकाओं के साथ डिम्भक डिम्भिकों के साथ और कुमार कुमारिकों

नाम चिलात इतु ते सप्रमाण पाचे इन्द्रियोथी परिपूर्ण शरीरवाणे इतो ते भासव तेमञ्च पुष्ट शरीरवाणे इतो ते पाणकाने रमाउवाभा सविशेषयत्तुर इतो ।

(तएण से चिलाए दासचेष्टे सुसुमाए दारियाए बालग्राहे जाए यावि होत्था सुसुम दारिय कडीए गिण्हइ, गिण्हत्ता बहूहिं, दारएहिं य दारियाहिं य विहरइ तेसिं बहूण दारियाण य जाव अप्पेगइयाण खुल्लए अवहरइ, एव बहए आडोलियाओ तेदुरुए पोतुल्लए, साडोल्लए, अप्पेगइयाण आभरण मल्लालकार अवहरइ, अप्पेगइए, आउस्तइ, एव अवहरइ, निच्छेडेइ, निब्भच्छेइ, तज्जेइ, अप्पेगइए ताछेइ)

तेथी ते दासचेर सुसुमा दारिकाने रमाउवा भाटे नियुक्त करवाभा आण्ये आ प्रमाणे ते चिलात दास चेष्टक सुसुमा दारिकाने पाणामा जेसा दिने धरुा दारक दारिकाओनी साथे पाणक तेमञ्च पाणाओनी डिम्भक

कादीना अम्मापितर यत्रैव धन्य सार्थवाहस्तत्रैव उपागच्छन्ति, उपागत्य धन्य सार्थवाह बहुभिः ' खिज्जणाहि य ' खेदनाभिश्च=खेदजनकवाग्भिः ' रुटणाहि य ' रोदनाभिः माश्रुरुदितवाग्भिः, ' उल्लभणाहि ' उपालम्भनाभिः=स्मिमेतचित्तम् ? भवान्शाम् ? इत्यादि वाग्भिश्च ' खेज्जमाणा ' खेदयन्तः स्वखेद ' प्रकाशयन्तः ' रुटमाणा य ' रुदन्त उल्लभमाणा य ' उपालम्भयन्तश्च धन्याय सार्थवाहाय एतमर्थं=चिलातकृताऽपरावरूपमर्थं निवेदयन्ति ॥ सू० १ ॥

मूलम्-तएणं से धणणे सत्थवाहे चिलाय दासचेड एय-
मट्टु भुज्जो भुज्जो णिवारेइं, णो चैव णं चिलाए दासचेडे
उवरमइ । तएण से चिलाए दासचेडे तेसिं वड्ढणं दारगाण
य ६ अप्पेगइयाणं खुल्लए अवहरइ जाव तालेइ । तएणं ते
वहवे दारगा य जाव रोयमाणा य जाव अम्मापिउणं जाव
णिवेदेति । तएणं ते आसुरुत्ता जेणेव धणणे सत्थवाहे तेणेव

की शिक्षायत करने लगे । अपने २ घालकों के मुख से इस प्रकार की दामचेटरु यी हरकत सुनकर उन दारक आदि को के माता पिता जहा धन्य सार्थवाह होता या वहा आते और आकर के धन्य सार्थवाह को अनेक खेदजनक वचनों द्वारा रोते २ उपालभ=उलहना दिया करते-क्या आप जैसे व्यक्तियों को यह उचित-है-इस तरह से उससे कहा करते । इस तरह वे खेदजनक तथा अश्रु भरकर कही गई वाणियों द्वारा अपना खेदप्रकाशित करते हुए रोते हुए एव उलहना देते हुए धन्यसार्थवाह के लिये चिलातकृत अपराध रूप अर्थ की निवेदना करते ॥सू० १॥

मुपेथी आ प्रभाणु दाम चेटकनी पशाम वर्तल्लुक विपेनी विगत सालणीने ते दारक वगेरेना मातापिता न्य धन्यसार्थवाह डणे त्या आवता अने आवीने धन्यसार्थवाहने धणु डडोर वयनेथी रडता रडता ठपके आपता रडेता डता ' शु तभारी नेथी अज्जिने आ वात शोले डे ? ' आ प्रभाणु ते कड्डा करता डता आ प्रभाणु तेओ खेदजनक तेमज्ज अश्रुलीनी डालतमा डडेती वाणीओ वडे पोतानु डु प प्रकट करता, रडता तेमज्ज ठपके आपता धन्य सार्थवाहने चिलाते ने कड्ड, पशाम वर्तल्लुक करी डोय ते पडल इरियाडो करता रडेता डता ॥ सूत्र १ ॥

तेदायुष्माक प्राणान् अहरिष्यामीत्येवंप्रयागैरहुलिनिर्दग्धैर्क तेषु मीतिवृत्त्या
 दयति । तथा अप्येकान् बालकान् 'तालेइ' ताडयति चपेटादिभि । तत एव
 ते बहवो दारकश्च यावत्-कुमारिकाश्च सर्वे याला ' रोयमाणा य ' रुदन्तश्च ' कद
 माणा य ' क्रन्दन्तश्च=उच्चैः स्वरेण चीत्कार कुर्वन्त ' माण २ ' स्वेषाम् २
 ' अम्मापिऊण ' अम्मापितृभ्यः इदमर्थं निवेदयन्ति । ततः सखु तेषा बहूनां=दार-

घह निर्भस्सित कर देता " मेरा क्रिया हुआ कुछ भी काम यदि तुम
 लोग अपने माना पिता से कहोगे-तो याद रखना मैं तुम्हारे प्राणों को
 ले लूंगा-तुम्हें जान से मार डालूंगा " इस तरह किननेक बालको को
 वह अगुलि दिवा २ कर मथभीत कर दिया करता। किननेक बालको
 को वह थप्पह आदि भी मार देता। (तएण ते बहवे दारगा-
 य जाव रोयमाणा य कदमाणा य ४ साय २ अम्मापिऊण णिवेदेति,
 तएण तेसि बहूण दारगाण य ६ जाव अम्मापितरो जेणेव धण्णे सत्थ-
 वाहे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता धण्ण सत्थवाह बह्वहि खिज्ज-
 णाहि य रुटणाहि य उवल्लभणाहि य खिज्जमाणाय रुटमाणाय उवल
 भेमाणा य धण्णस्स एयमट्ट णिवेदेति) इस तरह वे अनेक दारक यावत्
 कुमारिकाँ सच ही रो रो कर के आक्रुदन करके-उच्चस्वर से चीत्
 कार करके-अपने २ माता पिताओं से उस दामचेटक की इस बर्ताव

भूषीश वगेरे वअनेथी डेटवाड भाणकेने ते भीवडावी हेतो डेतो डेटलाक
 भाणकेनी ते लस्सना पणु वरतो डेतो-मागी डेअ पणु वात तमे तभार
 मातापिताने डडेथो तो याद राअजे हु तभने लुवता नडि छेडु तभने हु
 वतनथी भारी नाभीश " आ प्रभाणु डेटलाक भाणकेनी सामे ते आगणीओ
 थी धी थी धीने भीवडावी हेतो डेतो डेटलाक भाणकेने ते तभाओ वगेरे पणु
 लग्गावी हेतो डेतो

(तएण ते बहवे दारगा य ६ जाव रोयमाणा य कदमाणा य ४ साय २
 अम्मापिऊण णिवेदेति, तएण तेसि बहूण दारगाण य ६ जाव अम्मापितरो जेणेव
 धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता धण्ण सत्थवाह बह्वहि खिज्ज
 णाहि य रुटणाहि य उवल्लभणाहि य खिज्जमाणा य रुटमाणा य उवल्लभेमाणा य
 धण्णस्स एयमट्ट णिवेदेति)

आ प्रभाणु ते धणु दारक यावत् कुमारिकाओ रडता रडता, आकड
 न डरता डरता, भाग सामे थीलार करीने पोतपोताना मातापिताने ते दास
 चेटकनी अशाभ वतल्लुके विषे डेरियोडा करवा लाग्या पोताना

कादीना म ये अप्येकेपा 'खुल्लए' खुल्लकान्=रुपर्दकविशेषान् अपहरति
 'जाव तालेइ' यावत्ताडयति=पूर्वोक्तक्रमेण एव रुपर्दकाद्यपहरण यावत्तर्जनं
 ताडनं च करोति । ततः खलु वहवो दारकाश्च दारकादयो रुदन्तश्च यावत् स्वेपा
 २ अम्वापितृभ्यो निवेदयन्ति । ततः खलु ते आशुरुत्ताः=स्व पुत्रवचन श्रुत्वा झटिति
 क्रोधाविष्टमानसा यत्रैव धन्य सार्थवाहः तत्रैव उपागच्छन्ति उपागत्य बहूभिः
 'खेज्जणाहि जाव एयमट्ट' खेदनाभिर्यावत् एतमर्थम्=खेदसमूचनाभिर्यावत्
 उपालम्भनयुक्ताभिर्वाग्भिः चिलातदासचेटक कृताऽपराधलक्षणम् अर्थम् निवेदयन्ति ।
 ततः खलु धन्यः सार्थवाहो बहूना 'दारगाण' दारकाणा ६=दारकादीनाम्
 अम्वापितृणामन्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य आशुरुत्तः चिलात दासचेटम् 'उच्चा-
 वचाभिः=अनेकविधाभिः 'आउमणाहि' आक्रोशनाभिः=क्रोपजनवैर्बचनैः
 'आउसइ' आक्रुश्यति=भक्षिपति 'उद्धसइ' उद्धर्यति=नामगोत्रादिनाऽधः
 पातयति-निन्दतीत्यर्थः । नेत्रमुखवादि वक्रीकमणेन 'णिम्भच्छेइ' निर्भर्त्सयति=

अप्येगहयाण खुल्लए अवहरइ जाव तालेइ, तएण ते वहवे दारगा य
 जाव रोयमाणा य जाव अम्मापिऊण जाव णिवेदेति) इस तरह सम-
 ज्ञाने पर भी वह चिलात दासचेट उन अनेक दारको आदि में से
 कितनेक दारक आदिको के कपर्दक (कौड़ी) विशेषों को चुराता रहा
 यावत् उन्हें ताडित करता रहा-मारता पीटता रहा । और वे बालक
 आदि भी रोते हुए अपने २ माता पिताओं से उस के अपराध को जा
 २ कर कह देते रहे । (तएण ते आशुरुत्ता जेणेव धण्णे सत्यवाहे तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, बहूहिं खेज्जणाहिं जाव एयमट्ट णिवेदेति,
 तएण से धण्णे सत्यवाहे बहूण दारगाण अम्मापिऊण अतिए एयमट्ट
 सोच्चा आशुरुत्ते चिलायदासचेड उच्चावयाहिं आउमणाहिं आउसइ
 उद्धसइ णिम्भच्छेइ,) इस प्रकार अपने २ बालकों के मुख से चार २

खुल्लए अवहरइ जाव तालेइ, तएण ते वहवे दारगा य जाव रोयमाणा य जाव
 अम्मापिऊण जाव णिवेदेति)

आ प्रभाषे समन्वयवा छताये ते चिलात दासचेटक धणा दारके वगे
 रेभा डेटलाक दारके वगेरेनी डीडीयेने येरतेो न रक्षो यावत् ते ण जाकेने
 ताडित करतो रक्षो, तेमन भारतेो पीटतेो रक्षो अने ते णाजकेो वगेरे पणु
 रडता रडता पोतपोताना मातापिताने आनी इरियादो करता न रक्षा

(तएण ते आशुरुत्ता जेणेव धण्णे सत्यवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
 बहूहिं खेज्जणाहिं जाव एयमट्ट णिवेदेति, तएण से धण्णे सत्यवाहे बहूण दार
 गाण अम्मापिऊण अतिए एयमट्ट सोचा आशुरुत्ते चिलाय दासचेड उच्चावयाहिं
 आउमणाहिं आउसइ उद्धसइ, णिम्भच्छेइ)

उवागच्छइ, उवागच्छिता बहूहिं खेज्जणाहिं जाव एयमट्टं
 णिवेदेति । तएणं से धण्णे सत्थवाहे बहूणं दारगाणं ६
 अम्मापिउण अंतिए एयमट्ट सोच्चा आसुरुत्ते चिलाय दासचेडं
 उच्चावयाहि आउसणाहिं आउसइ, उडसइ, णिब्भच्छेइ
 निच्छोडेइ, तजेइ उच्चावयाहि तालणाहिं तालेइ, साओ
 गिहाओ णिच्छुभइ । तएणं से चिलाए दासचेडे साओ
 गिहाओ निच्छूढे समाणे रायगिहे णयरे सिंघाडग जाव
 पहेसु देवकुलेसु य सभासु य पवासु य जूयखलएसु य
 वेसाघरेसु य पाणघरेसु य सुहं सुहेणंपरिवड्ढइ ॥सू० २॥

टीका—‘ तएणं से ’ इत्यादि । ततः खलु धन्य सार्थवाह, चिलात दास
 चेटम् ‘ एयमट्ट ’ एतमर्थम्=एतस्मादर्थात् दारकादीनां कपर्दकापहरणादिरूपाद
 र्थात् भूयोभूयो निवारयति । नो चैव खलु दासचेट एतस्माद्दुःकृत्यादुपरमते ।
 ततः खलु स चिलातो दासचेटः तेषां बहूना ‘ दारगाण य ’ दारकाणां च=दार

तएण से धण्णे सत्थवाहे इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण से धण्णे सत्थवाहे) इसके बाद उस धन्यसार्थवाहने
 (चिलाय दासचेड) चिलात दास पुत्र को (एयमट्ट भुज्जो २ णिवारेइ)
 घालको के कपर्दक आदि चुराने रूप अर्थ से चार २ मना किया, परन्तु
 (णो चैव ण चिलाए दासचेडे उवरमइ) वह चिलात दारक उस काम
 से विरक्त नहीं हुआ । (तएण से दासचेडे तेसिं बहूण दारगाण य ६

तएणं से धण्णे सत्थवाहे इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण से धण्णे सत्थवाहे) त्याख्याडे ते धन्य सार्थवाडे (चिलाय दास
 चेट) चिवात दासपुत्रने (एयमट्ट भुज्जो २ णिवारेइ) भाणकेनी केडीओ
 वगेरेने थोरी जवा भदल वारवार मनाई करी परतु (णो चैव ण चिलाए
 दासचेडे उवरमइ) ते चिवात दारक पोतानी अर अवतंलुकु छेडीने सुधर्यो नडे

(तएण से चिलाए दासचेडे तेसिं बहूण दारगाण य -

प्रपासु=पानीयशालासु च 'जूय खलएसु' घृतखलकेषु=घृतक्रीडनस्थानेषु च 'वेसाघरेसु' वेद्यागृहेषु च पाणघरेसु' पानगृहेषु=मद्यपानगृहेषु च सुख सुखेन परिवड्ढु' परिवर्द्धते=वृद्धिं प्राप्नोति ॥ सू० २ ॥

मूलम्—तएणं से चिलाए दासचेडे अणोहट्टिए अणिवा-
रिए सच्छदमई सइरप्पयारी मज्जप्पसगी चोज्जप्पसंगी मस-
पसगी जुयप्पसंगी वेसापसंगी परदारप्पसगी जाए यावि

य पवासु य जूयखलएसु य वेसाघरेसु य पाणघरेसु य सुहसुहेण परि-
चड्ढुइ) और यहाँ तक हुआ कि कभी २ वह उसे छोड़ भी देता रहा
और कभी २ तू मेरे घर मे से निकल जा नहीं तो मैं तुझे मारूँगा इस
तरह के वचनों से उस को निरस्कार भी कर देते थे। परन्तु जब इस
की शिक्षाओं का या भय प्रदर्शक चाक्यों का उस चिलात दासचेटक
पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा तब अन्त में धन्य सार्थवाह ने हताश
होकर उसे अनेक विध यष्टि मुष्टि आदिकी ताडनाओं से ताडित कर
अपने घर से बाहिर निकाल दिया। इस तरह जब धन्य सार्थवाह ने
इसे अपने घर से बाहिर निकाल दिया—तब यह राजगृह नगरमें शृगा-
टक आदि मार्गोंमें अवारा (स्वच्छन्दगामी) फिरने लगा और देवकुलों
में सभास्थानों में, पानीय शालाओं में—प्याऊ घरो में, जुआ खेलने के
स्थानों में वेद्याओं के घरोंमें, और शराव पीने की जगहों में घूम फिर
कर जिस किसी भी तरह से अपना पालन पोषण करने लगा ॥सू० २॥

अने छेवटे आ वात त्या सुधी पडोअी के केई केई वणते ते तेने
णहार पणु कादी भूकतेो हुतेो अने केई केई वणते तेने आ नतना वय-
नेधी कपकेो पणु आपतेो रडेतेो हुतेो के तुं मारा धरमाथी नीकणी न नडि
तर तने हु मारी नाभीश परतु न्यारे आ नतनी शिक्षाओनी के अय
प्रदर्शननी ते दास चेटक उपर कशी असर थर नडि त्यारे छेवटे धन्यसाथ
वाडे हुताश थधने तेने लाकडी, मुक्क'ओ वगेरेथी ताडित करीने पोताना घेरथी
णहार कादी भूकथेो आ प्रमाणे न्यारे धन्य सार्थवाडे तेने पोताना घेरथी
णहार कादी भूकथेो त्यारे ते राजगृह नगरना शृगाटक वगेरे रस्ताओमा
रपडेलेनी जेम अटकवा लाग्येो अने देवकुणोमा, मवास्थानोमा, परणोमा,
लुगारना अहाओमा, वेद्याओना घरोमा अने शराणणानाओमा अटकीने
जेम तेम करीने पोतानु पालन-पोषणु करवा लाग्येो ॥ सूत्र २ ॥

तिरस्करोति, 'निच्छोडेइ' निच्छोटयति=त्यजति, 'तज्जेइ' तज्जयति= 'निस्तर मग गृहान् नोवेत्तां ताडयिष्यामि' इत्यादि वानेन भर्तृयति 'उच्चा चयाहिं तालणाहिं' उच्चावचाभिर्यष्टिगृह्यायनेन विधाभिस्ताडनाभिः 'तालेइ' ताडयति 'साओ गिहाओ' स्वस्माद् गृहात् 'णिच्छुमइ' निक्षिपति-नि. सारु यति । ततः खलु स चिन्ता दासचेटः तेन सार्वगदेन स्वस्माद् गृहात् 'णिच्छुदे' निक्षिप्त =नि. सारितः गन् राजगृहे नगरे सिंघाडग जाव गहेसु श्रृङ्गाटक यातमहापरापयेषु चतुष्पथादिषु सर्वत्र स्थलेषु, देवकुलेषु च सभासु च

चिलात दासचेटक की पूर्वोक्त अपराधों को जय २ वे सुना करते तब वे गुस्से में भर २ कर जहाँ धन्यसार्थवाह होता वहा चले जाते रहे । और वहा जाव र घडे खेद के साथ रोते हुए अपने २ दु.खों को प्रकट करते रहे इस तरह धार २ उन दारक आदि के माता पिताओं के मुख से इस दासचेटक के दुष्कृत्य को सुनकर वह धन्य सार्थवाह क्रोध में आकर उस दासचेटक चिलात को अनेक विधकोप जनक ऊँचे नीचे शब्दों से धिक्कार ने लगते थे उसका नाम गोत्र आदि की निंदा करने लग जाते थे । नेत्र, सुख, आदि को टेढ़ा करके उसका निरस्कार भी करते थे । (णिच्छोडेइ, तज्जेइ, उच्चावयाहिं तालणाहिं तालेइ, साओ गिहाओ णिच्छुमइ, तण्ण से चिलाण दासचेडे साओ गिहाओ निच्छुदे समाणे रायगिहे णयरे सिंघाडग जाव पहेसु देवकुलेसु जाव सभासु

आ प्रभाणु पोतपोताना णाणजेने मुण्णेथी वारवार चिलात दासचेटकनी इरियादे न्यारे न्यारे तेओ साभणता त्यारे त्यारे तेओ गुस्से थरने न्यथ धन्यसार्थवाह डता त्यां नता डता अने त्ता न्धने तेओ णडुण्ण दु णनी साथे रडता रडना पोतपोताना दु णे ने प्रकट करता रडता डता आ प्रभाणु वारवार ते दारक वगेरेना मातापिताना मुण्णथी ते दासचेटकनी पराणं वर्तल्लु विघेनी विगत साभणाने ते धन्यसार्थवाह क्रोधमा बराधने ते दास चेटक चिलातने घेणु क्रोध उत्पन्न करे-तेवा पराण वयनोधी धिक्कारवा लागतो डतो तेमअ तेना नाम गोत्र वगेरेनी निंदा करवा लागतो डतो, आओ मुण्ण वगेरे अगोडीने तेने तिरस्कार पुण्ण करता रडता डता) (णिच्छोडेइ, तज्जेइ, उच्चावयाहिं तालणाहिं तालेइ, साओ गिहाओ णिच्छुमइ, तण्ण से चिलाण दासचेडे साओ गिहाओ निच्छुदे समाणे रायगिहे णयरे सिंघाडग जाव पहेसु देवकुलेसु जाव सभासु य पवासु य जूय रलणसु य वेसा धरेसु य पाणधरेसु य सुइ वडेण परिवद्धइ)

प्रपासु=पानीयशालासु च 'जूय रलएसु' द्यूतखलकेषु=द्यूतक्रीडनस्थानेषु च 'वेसाघरेसु' वेश्यागृहेषु च पाणघरेसु 'पानगृहेषु=मद्यपानगृहेषु च सुख सुखेन परिवृद्ध' परिवर्द्धते=वृद्धिं प्राप्नोति ॥ सू० २ ॥

मूलम्—तएणं से चिलाए दासचेडे अणोहट्टिए अणिवारिए सच्छदमई सइरप्पयारी मज्जप्पसगी चोज्जप्पसंगी मसप्पसगी जुयप्पसंगी वेसापसगी परदारप्पसंगी जाए यावि

य पवासु य जूयखलएसु य वेसाघरेसु य पाणघरेसु य सुहसुहेण परिवृद्ध) और यहाँ तक हुआ कि कभी २ वह उसे छोड़ भी देता रहा और कभी २ तू मेरे घर में से निकल जा नहीं तो मैं तुझे मारूंगा इस तरह के वचनों से उस को तिरस्कार भी कर देते थे। परन्तु जब इस की शिक्षाओं का या भय प्रदर्शक वाक्यों का उस चिलात दासचेटक पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा तब अन्त में धन्य सार्थवाह ने हताश होकर उसे अनेक विध यष्टि मुष्टि आदिकी ताडनाओं से ताडित कर अपने घर से बाहिर निकाल दिया। इस तरह जब धन्य सार्थवाह ने इसे अपने घर से बाहिर निकाल दिया—तब यह राजगृह नगरमें श्रृगाटक आदि मार्गोंमें अचारा (स्वच्छन्दगामी) फिरने लगा और देवकुलों में सभास्थानों में, पानीय शालाओं में—प्याऊ घरों में, जुआ खेलने के स्थानों में वेश्याओं के घरोंमें, और शराब पीने की जगहों में घूम फिर कर जिस किसी भी तरह से अपना पालन पोषण करने लगा ॥सू० २॥

अने छेवटे आ वात त्या सुधी पडेअथी के केअ केअ वअते ते तेने अहार पणु काढी भूकतेो हतेो अने केअ केअ वअते तेने आ नतना पयनोथी कपकेो पणु आपतेो रडेतेो हतेो के तुं भारा घरमाथी नीकणी न नहि तर तने हु भारी नाभीश परतु न्यारे आ नतनी शिक्षाओनी के अय प्रदर्शननी ते दास चेटक उपर करी असर थर नहि त्यारे छेवटे धन्यसार्थवाडे हताश थधने तेने लाकडी, मुक्कीओ वगेरेथी ताडित करीने पोताना घेरथी अहार काढी भूकथेो आ प्रभाणे न्यारे धन्य सार्थवाडे तेने पोताना घेरथी अहार काढी भूकथेो त्यारे ते राजगृह नगरना श्रृगाटक वगेरे रस्ताओमा रण्डेलनी जेम लटकवा लाग्येो अने देवकुणोमा, मलास्थानोमा, परणोमा, लुगारना अक्राओमा, वेश्याओना घरोमा अने शराणणानाओमा लटकीने जेम तेम करीने पोतानु पालन-पोषण करवा लाग्येो ॥ सूत्र २ ॥

होत्था । तएणं रायगिहस्स नयरस्स अट्टुरसामंते दाहिण-
 पुरत्थिमे दिसीभाए सीहगुहा नाम चोरपट्टी होत्था, विसम-
 गिरिकडगकोडवसंनिविट्ठा, वसी कलंरूपागारपरिक्खित्ता
 छिण्णसेलविसमप्पत्रायफलिहोवगूढा एगदुवारा अणेग-
 खंडी विदियजणणिग्गमपवेसा अट्ठिभतरपाणिया सुदुल्ल
 भजलपेरंता सुवहुस्स वि कुवियवलस्स आयगस्स दुप्पहंसा
 यावि होत्था । तत्थ सीहगुहाए चोरपट्टीए विजए णामं
 चोरसेणावई परिवसइ अहम्मिंए जाव अधम्मकेऊ समुट्टिए
 बहुणगरणिग्गयजसे सूरे दट्ठप्पहारी साहसिए सद्वेही । से
 णं तत्थ सीहगुहाए चोरपट्टीए पंचणह चोरसयाणं आहेव-
 च्च जाव विहरइ । तएणं से विजए तक्करे चोरसेणावई
 वहुणं चोराण य पारदारियाण य गंठिभेयगाण य सधि-
 च्छेयगाण य खत्तखणगाण य रायात्रगारीण य अणधारगाण
 य वालघायगाण य विसभघायगाण य जूयकाराण य
 खडरक्खाण य अत्तेसि च वहुणं छिन्नभिन्नवहिराययाण
 कुडगे यावि होत्था । तएणं से विजए तक्करे चोर-
 सेणावई रायगिहस्स दाहिणपुरत्थिमे जणवय वहुहि
 गामघाएहि य नगरघाएहि य गोग्गहणेहि य वदिग्गहणेहि
 य खत्तखणणेहि य पथकुट्टणेहि य उर्विलेमाणे २ विद्धंसे
 माणे २ णित्थाणं णिद्धणं करेमाणे विहरइ । तएणं से
 चिलाए दासचेडे रायगिहे बहुहि अत्थाभि सकीहि चोज्जामि

संकीर्णिय दाराभिसकीहि य धणिण्हि य जूइकरेहि य पर-
 च्चवमाणेर रायगिहाओ नगराओ णिगगच्छइ, णिगच्छित्ता,
 जेणेव सीहगुहा चोरपल्ली तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 विजय चोरसेणावइ उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ॥ सू०३ ॥

टीका—‘तएण से इत्यादि । तत’ खलु स चिलातो दासचेटः ‘अणोह-
 ट्टिए’ अनपघटितः, यो हि दुष्कृतौ प्रवर्तमान कमपि हस्तो धृत्वा निवारयति,
 सोऽपघट्टकः, निवार्यमाणस्तु अपघटितः, अयं हि निवारयितुरभावात् अनपघटितः=
 निरङ्कुश ‘अणिवारिए’ अनिवारितः, हितोपदेशरूपाभावात् अनिवारितः,

‘तएण से चिलाए दासचेडे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से चिलाए दासचेडे) वह चिलात दासचे
 टक (अणोहट्टिए अणिवारिए सच्छदमई सइरप्पयारी मज्जप्पसंगी चोज्ज-
 प्पसंगी मसप्पसंगी, जूयप्पसंगी, वेसापसंगी, परदारप्पसंगी जाए यावि
 होत्था) अनपघटित—निरङ्कुश बन गया—जो दुष्कर्म में प्रवर्तमान किसी
 को भी हाथ पकड़कर उससे निवारित कर देता है उसका नाम अपघट्टक
 और जो दूर किया जाता है वह अपघटित कहलाता है । निवारण कर
 नेवाले का अभाव होने से यह चिलात दासचेटक अनपघटित इसी
 कारण से बन गया । हितोपदेशक कोई उसका रहा नहीं अतः यह
 कुत्सित काम करने से पीछे नहीं हटता—इसलिये यह अनिवारित होकर
 जो मन में आता उसे कर डालता—अतः उदण्ड बन गया । स्वच्छन्द

तएण से चिलाए दासचेडे इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारपथी (से चिलाए दासचेडे) ते चिलात दास चेटक
 (अणोहट्टिए अणिवारिए सच्छदमई, सइरप्पयारी मज्जप्पसंगी, चोज्जप्पसंगी मस
 प्पसंगी, जूयप्पसंगी, वेसापसंगी, परदारप्पसंगी, जाए यावि होत्था)

अनपघटित—स्वरच्छद मनी गयो, दुष्कर्ममा पडला गये तेने के हाथ
 पकडीने तेमाथी तेने हर करे छे तेतु नाम अपघट्टक अने के हर
 करवाभा आवे छे ते अपघटित कडेवाय छे चिलात दासचेटकने योगा कामाथी
 हर लथ बनार—तेने निवारण करनार कोथ हुतु नहि अथी ते अनपघटित
 थथ गयो हुतो तेने कोथ हितोपदेशक हुने नहि तेथी ते कुत्सित काम कर
 वाभा पथ पीछेहुड उरतो न हुतो, अराज कामाथी तेने शकनार नहि होवाने
 कारण ते मनमा आवे तेम उरतो हुतो अथी ते उदण्ड मनी गयो हुतो ते

‘सच्छदमई’ स्वच्छदमतिः=स्वाभिषापरर्षी-उद्दण्डउत्तर्यः, अतएव ‘सहरष्य-
 यारी’ स्वैरपचारी = स्वच्छदविहारी ‘मञ्जुपसंगी’ मद्यममङ्गी मद्यपायी,
 ‘चोज्जपसगी’ चौर्यमसङ्गी=चौर्यकर्मणि परायण, ‘ममपसंगी’ मांसमसङ्गी=
 मांसभक्षणशीलः, ‘जूयपसगी’ घृतमसङ्गी घृतक्रीडामसक्तः, ‘वेसापसगी’
 वेद्यालम्पटः, एव ‘परदारपसंगी’ परदारमसङ्गी=परदाररतो जातश्चापि आसीत् ।
 ततः खलु राजगृहस्य नगरस्य अदूरसामन्ते दक्षिणपौरस्त्ये दिग्भागे अग्निकोणे
 सिंहगुहानाम चोरपल्ली आसीत्, या हि पल्ली ‘विसमगिरिकूडगकोडवसन्नि-
 विद्धा’ त्रिपमगिरिकूटकूडगकोडवसन्निविष्टा=त्रिपमो निम्नोन्नतो यो गिरिकूटकः=
 पर्वत मध्यभागः, तस्य यः कूडम्यः प्रान्तभाग, तत्र सन्निविष्टा=स्थिता आसीत् ।
 पुनः ‘वसीकलकपागारपरिक्खत्ता’ वसीकलकपाकारपरिसिप्ता=वसीकलक
 वंशजालमयी वृत्तिः, सैव प्राकारः, तेन परिदिप्ता=परिवेष्टिता=वशनिर्मितजाल
 मयप्राकारैः समन्तात्-परिवेष्टिता, ‘छिण्णसेलविसमपपत्रायफालिहोवगूढा’=
 छिन्नशैलविपमपपातपरिखोपगूढा=छिन्नोऽप्यथा तरापेक्षया विभक्तो य. शैलः=
 पर्वतः, तत्सम्बन्धिनो ये त्रिपमाः प्रपाता गताः, त एव परिखा. तथा उपगूढा=
 आश्लिष्टा परिवेष्टिता विभक्तशैलाऽयत्रनिर्गतविपमप्रपातरूपपरिखापरिवेष्टितेत्यर्थः
 ‘एगदुवारा’ एगद्वारा=एक द्वार=प्रवेशनिर्गमरूप यस्या सा=एकप्रवेशनिर्गमा,
 ‘अणेगखडी’ अनेकखण्डा=अनेकानि खण्डानि=विभागा रक्षाहेतोर्यस्यां सा
 अनेकखण्डा, यत्र=स्वरक्षार्थं अनेकानि स्थानानि सन्ति, ‘विदियजणणिग्गमपवेसा’

विहारी हो गया-मद्यप्रसंगी हो गया-मदिरा पीने लग गया। मांस
 खाने लग गया, चोरी करने लगा, जूभा खेलने लगा, वेद्यासेवन करने
 लगा, और परदार सेवन करने में भी लपट हो गया। (तएणं राय-
 गिहस्स नयरस्स अदूरसामन्ते दाहिणपुरत्थिमे दिसीभाए सीहगुहा
 नाम चोरपल्ली होत्या-विसमगिरिकूडगकोडवसन्निविद्धा वसीकलक
 पागारपरिक्खत्ता छिण्णसेलविसमपपत्रायफालिहोवगूढा रग्गदुवारा,
 अणेगखडी, विदियजणणिग्गमपवेसा अर्धिततरपाणिद्या सुदुल्लभजल

स्वच्छद विहारी यथं गथो हतो, दाड् पिनारे यथं गथो हतो। ते मांस
 खावालागथो, चोरी करवा लागथो, जुगार रमवा लागथो, वेद्या-सेवन करवा
 लागथो अने परचोरी सेवनमा पणु लपट् यथं गथो हतो।
 (तएण रायगिहस्स नयरस्स अदूरसामन्ते दाहिणपुरत्थिमे दिसीभाए सीहगुहा नाम
 चोरपल्ली होत्या-विसमगिरिकूडगकोडवसन्निविद्धा वसीकलकपागारपरिक्खत्ता, छिण्णा
 सेल एगदुवारा, अणेगखडी, विदियजणणिग्गमपवेसा

विदितजननिर्गमप्रवेशा=विदितजनानामेव=विश्वासवतामेव निर्गमप्रवेशौ यस्या सा= विश्वस्तजननिर्गमप्रवेशवती ' अर्धितरपाणिया ' अभ्यन्तरपानीया=मध्यस्थित-

पेरता, सुग्रहस्त विकूचियवलस्त आगयस्त दुप्पहसा, यावि होत्था तत्थ सीहगुहाए चोरपट्टीए विजए णाम चोरसेणावई परिवसई, अहम्मिय जाव अहम्मकेऊसमुट्टिए बहणगरणिगयजसे, सूरु दढप्पहारी साहसिए सहवेही-सेण तत्थ सीहगुहाए चोरपट्टीए पचण्ह चोर सयाण आह्वेवच्च जाव विहरइ) उसी राजगृह नगर के न अधिक दूर पर और न अधिक पास में दक्षिण पौरस्त्य दिग्बिभाग में-अग्निकोण में-सिंहगुहा नाम की एक चोर पल्ली थी-यह चोरपट्टी विषम गिरिकटक के प्रान्त भाग में-निम्नोन्नतपर्वत के मध्यभाग के अन्त भाग में स्थित थी। इसके चारों ओर वासों की घाड़ थी-यह घाड़ ही इसका प्राकार (किला) था-उससे यह घिरी हुई थी। अवयवान्तरों की अपेक्षा से विभक्त जो पर्वत तत्सन्धी जो विषम प्रपात खड़ा उन विषम खड्डेरूप परिखा से यह परिवेष्टित थी। निकलने का और आने का इस में एक ही द्वार था। इसमें रक्षा के निमित्त चोरोने अनेक स्थान बना रखे थे। परिचित-विश्वासवाले-व्यक्ति ही इसमें आ जा सकते थे।

अर्धितरपाणिया, सुट्टभनलपेर ता, सुग्रहस्त वि कूचियवलस्त आगयस्त दुप्पहसा, यावि होत्था तत्थ सीहगुहाए चोरपट्टीए विजए णाम चोरसेणावई परिवसई, अहम्मिय जाव अहम्मकेऊसमुट्टिए बहणगरणिगयजसे, सूरु दढप्पहारी, साहसिए सहवेही सेण तत्थ सीहगुहाए चोरपट्टीए पचण्ह चोरसयाण अह्वेवच्च जाव विहरइ)

ते राजगृह नगरथी धणु इइ पणु नडि अने धणु नल्लु पणु नडि ओवी, दक्षिण पौरस्त्य दिग्बिभागमा अग्निकोणमा-सिंहगुहा नामे ओक चोरपट्टी इती ते चोरपट्टी ओथी नीथी गिरिभागाओना प्रात लागमा निम्नोन्नत पर्वतना मध्यभागमा अतलागमा आवेली इती तेनी ओमेर वानोनी वाड इती ते वाड न तेना कोट (डिवा) इतो तेनाथी ते घेरा ओली इती अवयवातरेनी अपेक्षाओ विलक्षत ओ पर्वत अने तत्सन्धी ओ विषम प्रपात-आठा-ते विषम आठाइथी परिआथी ते परिवेष्टित इती आववा अने नवा माटे तेमा ओक न दरवाने इतो चोरोओ पानानी रक्षा माटे धणु स्थाने अनावेला इता परिचित विश्वासु माणुसे न तेमा आवज करी शकता इता पाणु माटे तेनी वन्ने ओक नजाशय इतु, तेनी अडार

जलाशया 'सुदुर्लभजलपेरंता' सुदुर्लभजलपर्यन्ता=सुदुर्लभ जलं पर्यन्ते=मान्-
 भागे=वहिर्भागे यस्या सा=जलरहितवहिर्भागा 'सुबहुस्स वि' सुबहोरपि
 कृषियत्सस' कृषिकृतस्य=चोरगवेपकसैन्यस्य 'आगयस्स' आगतस्य 'दुष्
 हंसा' दुष्पञ्चमा दुर्धर्पणीया चापि आसीत् । तत्र खलु सिंहगुहाया चोरपत्न्या
 विजयो नाम चोरसेनापति=चोरनायकः परिवमति यो हि 'अधम्मि ए जाव'
 अधार्मिको यावत्=अभ्रमेण चरति अधार्मिकः अधर्माचरणशीलः-अत्र यावत्पदेन-
 इतभारभ्य 'घायाए वहाए अच्चायणाए' इत्यन्तः पाठो ग्राह्यः, तथाहि-'अध-
 म्मिहे' अधर्मिष्ठ=सर्वथा धर्मरहितः, 'अधम्मयत्वाहं' अधर्मरूपायी-अधर्मक
 यक, 'अधम्माणुगे' अधर्मानुग=अधर्मानुगामी 'अधम्मपलोई' अधर्मप्रलोकी=
 अधर्मदर्शी 'अधम्मवलज्जणे' अधर्मप्ररञ्जन=अधर्मानुरक्तः, 'अधम्मशीलसमु
 दायारे' अधर्मशीलसमुदाचार=अधर्म एव शील स्वभाव समुदाचारश्च यस्य स,

पानी के लिये इसमें बीच में एक जलाशय था-इसके आरिरी भाग में
 जल नहीं था। अनेक भी चोर गवेपक सेनाजन यहा आजावे तो भी
 वे इस पत्नी का नाश नहीं कर सकते थे। इस सिंहगुहा नामकी चोर
 पत्नी में विजय नाम का एक चोर सेनापति रहता था। यह अधार्मि
 क यावत् अधर्म केतुग्रह जैसा उदित हुआ था। यहां यावत् शब्द से
 "घायाए वहाए अच्चायणाए" यहां तक का पाठ ग्रहण किया गया
 है-इस का खुलाशा भाव इस प्रकार है-अधार्मिक शब्द का अर्थ होता
 है अधर्माचरणशील-यह विजय नामका चोर अधर्माचरणशील था। अध
 मिष्ठ था-सर्वथा धर्मसे रहित था, अधर्मरूपायी था-अधर्मका कथन कर
 नेवाला था, अधर्मानुग था-अधर्म का अनुगामी था, अधर्मप्रलोकी था-
 अधर्म का ही देखने वाला था-अधर्मप्ररञ्जन था अधर्म में अनुरक्त था

पाणी હતું નહિ ઘણા ચોરાની શોધ કરતા મૈનિકે ત્યા આવે છતાંયે તે
 પત્નીનો નાશ કરી શકતા ન હતા તે સિંહગુહા નામની ચોરપત્નીમા વિજય
 નામે એક ચોર સેનાપતિ રહેતો હતો તે અધાર્મિક યાવત્ અધર્મ કેતુઅર્ધની
 જેમ ઉદય પામ્યો હતો અહીં યાવત્ શબ્દથી "ઘાયાએ વહાએ અચ્ચાયણાએ"
 અહીં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવામા આવ્યો છે તેનુ સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે
 છે-અધાર્મિક શબ્દનો અર્થ-અચરણશીલ હોય છે તે વિજય નામે ચોર
 અધર્માચરણશીલ હતો, અધર્મિષ્ઠ હતો, સાવ ધર્મરહિત હતો, અધર્મરૂપાથી
 હતો, અધર્મની વાત કહેનાર હતો, અધર્માનુગામી હતો, અધર્મનો અનુગામી
 એટલે કે અધર્મને અનુસરનાર હતો, અધર્મપ્રલોકી હતો, અધર્મને જ જ્ઞાનાર
 હતો, અધર્મપ્રરજન હતો, અધર્મમા આસક્ત હતો, અધર્મશીલ

अधर्मशीलोऽधर्माचरणश्चेत्यर्थः, 'अधर्मेण चेत् विवृतिं कल्पे माणे विहरइ' अधर्म-
 णैव वृत्तिं कल्पयन् विहरति=अधर्मणैव सावधानुष्ठानेनैव, वृत्तिं कल्पयन्=जीविका-
 मुपार्जयन् 'विहरइ' विहरति=आस्ते । पुनः 'हण' उद्भिद्विचयत्तए 'जहिछिन्धि
 भिन्धि विरुत्तकः=' हण ' जहि=मारय यष्ट्यादिना ' उद्भिद ' छिन्धि=छेदय-
 खड्गादिना, ' भिद ' भिन्धि=भेदय भल्लादिना, इतिशब्दै स्नानुयायिन प्रेरयन्
 प्राणिनो विक्रन्तति यः सः, जहि छिन्धिभिन्धि विरुत्तकः, इति, ' लोहियपाणी '
 लोहितपाणिः=लोहितौ पाणी यस्य सः, रक्तरञ्जितकरयुगलः 'चढे' चण्ड उत्कटरोपः
 ' रुदे ' गौद्रः=भयानकः ' छुल्ले ' छुद्र =छुद्र कर्मचारी ' उक्कचणवचणमायानिय-
 डिकवडकूडसाइसपयोगरहुले ' उत्कञ्चनवञ्चनमायानिकृतिरूपटकूटमाइसपयोग-

अधर्मशील समुदाचारवाला या-अर्थात् इसका स्वभाव और आचरण
 दोनों अधर्ममय थे-अधर्म ही इस का स्वभाव था और अधर्म ही इस
 का आचरण था । अतः अपनी जीविका का निर्वाह सावध अनुष्ठानों
 (अधर्म) द्वारा ही किया करता था । यष्ट्यादि द्वारा इसे मारो, खड्गादि
 द्वारा इसे छेदो भल्लादि द्वारा इसे भेदो इस प्रकार के शब्दों से यह
 अपने अनुयायियों को सदा प्रेरित करता हुआ स्वयं जीवों का छेदन
 भेद न किया करता था । इसके दोनों हाथ रक्त से रञ्जित रहते थे ।
 इस का क्रोध घट्टन प्रचंड था देखने में यह बड़ा भयानक दिग्बता था ।
 छुद्र कर्मकारी था । " उक्कचणवचणमायानियडिकवडकूडसाइसपओग
 वहुले " उत्कचन, वचन, माया, निकृति, कपट, कूट, साइ, इनका व्यव-

इतो-अेतले के तेनो स्वभाव अने आचरण अने अधर्मभय इतो अधर्म अ
 तेनो स्वभाव इतो अने अधर्म अ तेनु आचरण इतु अथी ते पोतानु
 एवन सावध अनुष्ठानो वडे अेतले के अधर्मनु आचरण करीने पुइ उरतो
 इतो लाडकी वगेरथी अने भारो, तरवार वगेरथी अने डापी नाओ, बालाओ
 वगेरथी अने लेही नाओ आ नतना शण्ढेथी ते पोताना अनुयथीअने
 इभेशा हुकम करतो रडेतो इतो ते पोते पणु एवोतु छेदन-लेदन करतो
 रडेतो इतो तेना अने डाथो लोहीथी भरडाअेला रडेता इता तेना क्रोध
 अत्यंत प्रचंड इतो देभावमा ते पूण अ भयानक लागतो इतो, ते छुद्र
 कर्म करनार इतो

(उक्कचणवचणमायानियडिकवडकूडसाइसपओगवहुले) उत्कचन, वचन,
 माया, निकृति, कपट, इट, साई आ अधानो वडेवार तेना एवनमा

जलाशया 'सुदुर्लभजलपेरता' सुदुर्लभजलपर्यन्ता=सुदुर्लभं जल पर्यन्ते=पान्त-
 भागे=वहिर्भागे यस्या सा=जलरहितवहिर्भागा 'गुवद्गुम् त्रि' गुवद्गोरपि
 कृषियत्नस्त 'कृषिकृष्यत्नस्य=चोरगवेपकस्य यस्य 'आगयस्त' आगतस्य 'दुष्-
 हंसा' दृग्पञ्चमा दुर्धर्षणीया चापि आसीत् । तत्र खलु मिहगुहाया चोरपत्न्या
 विजयो नाम चोरसेनापति=चोरनायकः परिवसति यो हि 'अधर्मिण जाव'
 अधार्मिको यावत्=अधर्मेण चरति अधार्मिकः अधर्माचरणशीलः-अत्र यावत्पदेन-
 इत आरभ्य 'घायाए वहाए अञ्जायणाए' इत्यन्तः पाठो ग्राह्यः, तथाहि-'अध-
 म्मिहे' अधर्मिष्ठ=सर्वथा धर्मरहितः, 'अधम्मवत्ताई' अधर्माख्यायी-अधर्मक
 यक, 'अधम्माणुमे' अधर्मानुग=अधर्मानुगामी 'अधम्मपलोई' अधर्मप्रलोकी=
 अधर्मदर्शी 'अधम्मपलञ्जणे' अधर्मप्रञ्जन=अधर्मानुरक्तः, 'अधम्मशीलसमु-
 दायारे' अधर्मशीलसमुदाचार=अधर्म एव शील स्वभाव समुदाचारस्य यस्य स,

पानी के लिये इसमें बीच में एक जलाशय था-इसके बाहिरि भाग में
 जल नहीं था। अनेक भी चोर गवेपक सेनाजन यहां आजावे तो भी
 वे इस पत्नी का नाश नहीं कर सकते थे। इस सिंहगुहा नामकी चोर
 पत्नी में विजय नाम का एक चोर सेनापति रहता था। यह अधार्मि-
 क यावत् अधर्म केतुग्रह जैसा उदित हुआ था। यहां यावत् शब्द से
 "घायाए वहाए अञ्जायणाए" यहां तक का पाठ ग्रहण किया गया
 है-इस का खुलाशा भाव इस प्रकार है-अधार्मिक शब्द का अर्थ होता
 है अधर्माचरणशील-यह विजय नामका चोर अधर्माचरणशील था। अध-
 मिष्ठ था-सर्वथा धर्मसे रहित था, अधर्माख्यायी था-अधर्मका कथन कर
 नेवाला था, अधर्मानुग था-अधर्म का अनुगामी था, अधर्मप्रलोकी था-
 अधर्म का ही देखने वाला था-अधर्मप्रञ्जन था अधर्म में अनुरक्त था

पाणी इतुं नडि धणु योरानी शोध करता सैनिको त्या आवे छान्ने ते
 पत्नीना नाश करी शकता न इता ते सिंहगुहा नामनी चोरपत्नीमा विजय
 नामे एक चोर सेनापति रहेतो इतो ते अधार्मिक यावत् अधर्म केतुग्रहनी
 नेम उच्य पागे इतो अर्द्धी यावत् शब्दधी "घायाए वहाए अञ्जायणाए"
 अर्द्धी सुधीना पाठ अडणु करवामा आव्ये छे तेनु स्पष्टीकरणु आ प्रभाणु
 छे-अधार्मिक शब्दने अधर्मा-चरणशील होय छे ते विजय नामे चोर
 अधर्माचरणशील इतो, अधर्मिष्ठ इतो, साव धर्मरहित इतो, अधर्माख्यायी
 इतो, अधर्मनी वात कडेनार इतो, अधर्मानुशगी इतो, अधर्मने अनुगामी
 अटवे के अधर्मने अनुसरनार इतो, अधर्मप्रलोकी इतो, अधर्मने न जनार
 इतो, अधर्मप्रञ्जन इतो, अधर्ममा आसकत इतो, अधर्मशील समुदाचारी

विशेषप्रकारेण नाशाय, उत्पादनाय=द्विपदादिमकलजीवानां सर्वथा नाशाय च, 'अधर्मकेतुः समुत्थितः' अधर्मकेतुः समुत्थितः—अधर्म पापप्रधानो यः केतुः=केतुग्रहः, अधर्मकेतुः=उत्पातरूपधूमकेतुमहाग्रहः तद्वत् समुत्थितः। बहुणगर-णिगयजसे 'बहुनगरनिर्गतयशाः, बहुनगरेषु निर्गत जनमुखान्निःसृत यशः ख्याति र्यस्य सः, प्रसिद्ध इत्यर्थः, सूरः 'दृढपहारी' दृढपहारी=दृढमहरण शीलः 'साहसिए' साहसिक=अविमृश्यकारी 'सद्वेधी' शब्दवेधी=शब्दश्रवणेन लक्ष्यवेधी च आसीत्। 'से' सः = विजयधोर खलु तत्र सिंहगुहार्या चोरपत्न्या पञ्चानाम् चोरशतानाम् 'आहेमच्च जाव' आधिपत्य यावत्=स्वामित्वं कुर्वन् विहरति। ततः खलु स विजयस्तस्करः चोरसेनापति बहूना चोराणां च 'पारदारियाणय' पारदारिकाणां=परस्त्रीगामिना च 'गंठिभेयगाणय' ग्रन्थिभेदकानां 'संधिच्छेयगाणय' सन्धिच्छेदकानां=भित्तिसंधिं छित्वा ये धनमपहरन्ति ते संधिच्छेदका उच्यन्ते, तेषाम्, 'खत्तखणगाणय' क्षात्र-खनकानां=सधिरहितभित्ति खनकानाम्, 'रायावगारीणय' राजाऽपकारिणां=

पशु, पक्षी, सरीसृप आदि प्राणिघोंके घातके लिये, वधके लिये, तथा उनके सर्वथा विनाशके लिये, यह अधर्मकेतुग्रह जैसा उदित हुआ था। अनेक नगरों में यह क्रुख्यात होचुका था। बडा शूरवीर था। इसका प्रहार बहुत महरा होता था। विना विचारे काम करना ही इसका स्वभाव था शब्द श्रवण कर यह अपने लक्ष्य के वेधने में बडा निपुण था। वह विजय चौर सिंहगुफा नाम की उस चोरपत्नी में पाचसौ चोरों का आधिपत्य यावत् स्वामित्व करता हुआ रहता था। (तएण से विजय तस्करे चोरसेणावई बहूण चोराण य पारदारियाण य गंठिभेयगाण य संधिच्छेयगाण य खत्तखणगाण य, रायावगारीण य अणधारगाण य

धषा द्विपद, अतुप्पद, भृग, पशु, पक्षी, सरीसृप (साप) वगेरे प्राणीओना घात भाटे, वध भाटे तेमज्ज तेमना सर्वनाश भाटे ते अधर्म केतुग्रहनी जेमज्ज उदय पाभ्ये हुते। धषा नगरैमा ते कुख्यात यधं युक्थे हुते। ते लारे शूरवीर हुते, तेना प्रहार भूण ज्ज लारे थते हुते। वगर विचार्या काम करवाभा ज्ज तेना स्वभाव हुते। शब्द श्रवण करीने ते पोताना लक्ष्यने वेधी नाभवामा भूण ज्ज निपुण हुते। ते विजय चौर सिंह गुफा नामनी ते चौर पक्षीमा पाचसौ चोरैना स्वाभी-यावत् स्वामित्वं लोणवते। रहते हुते।

(तएण से विजयतस्करे चोरसेणावई बहूण चोराण य पारदारियाण य गंठिभेयगाण य संधिच्छेयगाण य खत्तखणगाणय, रायावगारीण य ऋण

વહુલ; તત-ઉત્તરજનમ્ મુખ્યજનવજનમટ્તસ્ય સમીપાગતવિવક્ષણમયાત્ તન્મત્સે
 વજ્જનાકારણમ્ વજ્જન=પ્રતારણમ્, ગાયા=પરવજનપુદ્ગિઃ, નિકૃતિઃ=માયાપ્રજ્ઞાદ-
 નાર્થ માયાન્તરકરણમ્, કપટમ્=વેપાદિરિપર્યયકરણમ્, કૃટમ્=તુલનાતોલનકા
 દીનામન્યયાકરણમ્, ' સાહ ' દેશી શબ્દોઽયમ્, ત્રિશ્વાસામાય, ઈપાં સમયોગો
 વ્યવહારઃ સ ઈવ વહુલઃ પ્રચુરો યસ્ય સાઃ, ' નિસ્તોલે ' નિઃશીલ=શીલરહિતઃ,
 ' નિર્વણ ' નિર્વૃત્તઃ=અણુવ્રતરહિત, ' નિર્ગુણે ' નિર્ગુણ=ગુણવ્રતરહિતઃ, ' નિપ
 ચ્ચક્ષાણપોસદ્દોષવાસે ' નિપ્રત્યાખ્યાન પૌષધોપવાસઃ = પ્રત્યાખ્યાનપૌષધોપ
 વાસરહિતઃ ' વહૂણ દુપયચત્પયમિયપસુપન્નિલસરીસિવાળ ધાયાઈ વહાઈ ઉચ્ચાય
 ણાઈ ' વહૂના દ્વિપદચતુષ્પદમૃગપશુપન્નિસરીસિવાળા ઘાતાય, વધાય=સામાન્ય

હાર इसके पास प्रचुर था। भोलेजनों के वचन करने में प्रवृत्त हुआ
 वचक जन जय पास में आये हुए जनको भय से नहीं ठगता है इस
 का नाम उत्कृचन है। प्रतारण (ठगना) करना इसका नाम वचन है।
 दूसरों को वचन करने की धुद्धि का नाम माया है। अपनी मायाचारी
 को छिपा ने के लिये जो दूसरी मायाचाररूप क्रिया करनी होती है इस
 का नाम निकृति है। वेप आदि के परिवर्तन करने का नाम कपट है।
 तराजू एव तोलने आदि के घाटों को कमती बढती रखना इसका नाम
 कृट है। " साह " यह देशीय शब्द है। इसका अर्थ विश्वास का
 अभाव होता है। यह निःशील था-शीलरहित था-निर्वृत था-व्रत
 रहित था, निर्गुण था-गुण रहित था, " प्रत्याख्यान और पौषधोपवास
 से वर्जित था " बहूण दुपयचतपयमिपसुपन्निखसरीसिवाण घायाए
 वहाए उच्छायणाए अधम्मकेज समुट्टिए " अनेक द्विपद, चतुष्पद, मृग,

પુષ્કળ પ્રમાણમાં હોના ભોળા માણસોના વચનમાં પ્રવૃત્ત થયેલો વચક ન્યાયે
 પાસે આવેલા માણસને ખીકથી ઠગતો નથી તેનું નામ ઉત્કચન છે પ્રતારણ
 નામ વચન છે ખીલ માણસને ઠગવાની ધુદ્ધિનું નામ માયા છે પોતાની
 માયાચારીને છુપાવવા માટે જે ખીલ માયાચાર રૂપ ક્રિયા કરવામાં આવે છે
 તેનું નામ નિકૃતિ છે વેશ વજેરે બદલવું તે કપટ કહેવાય છે ત્રાજવા તેમજ
 જોખવાના વજનોને હલકા અને ભારે કરવા તેનું નામ કૃટ છે " સાહ " એ
 એ દેશીય શબ્દ છે તેનો અર્થ વિશ્વાસને અભાવ હોય છે તે નિશીલ
 હતો, -શીલ રહિત હતો, નિર્વૃત્ત વ્રત રહિત હતો નિર્ગુણ હતો-ગુણ રહિત
 હતો પ્રત્યાખ્યાન અને પૌષધોપવાસથી વર્જિત હતો " વહૂણ દુપયચત્પય
 મિયપસુપન્નિલસરીસિવાળ ધાયાઈ વહાઈ - ઉચ્ચાયણાઈ "

विशेषप्रकारेण नाशाय, उत्सादनाय=द्विपदादिमकलजीवाना सर्वथा नाशाय च,
 'अधम्मकेऊ समुट्टिए' अधर्मकेतुः समुत्थितः—अधर्म पापप्रधानो यः केतुः=
 केतुग्रहः, अधर्मकेतुः=उत्पातरूप मूढकेतुमहाग्रहः तद्वत् समुत्थितः । बहुणगर-
 णिगयजसे 'बहुनगरनिर्गतयशाः, बहुनगरेषु निर्गत जनमुखान्निःसृत यशः
 ख्याति र्यस्य सः, प्रसिद्ध इत्यर्थः, सूरः 'दृढपहारी' दृढपहारी=दृढमहरण
 शीलः 'साहसिए' साहसिक=अविमृश्यकारी 'सद्वेधी' शब्दवेधी=शब्दश्रव-
 णेन लक्ष्यवेधी च आसीत् । 'से' सः = विजयश्चौर खलु तत्र सिंहगुहार्था
 चोरपत्न्या पञ्चानाम् चोरशतानाम् 'आहेवच्च जाव' आधिपत्य यावत्=
 स्वामित्व कुर्वन् विहरति । ततः खलु स विजयस्तस्कर. चोरसेनापति बहूना
 चोराणा च 'पारदारियाणय' पारदारिकाणा=परस्त्रीगामिना च 'गठिभेय
 गाणय' ग्रन्थिभेदकानां 'सधिच्छेयगाणय' सन्धिच्छेदमाना=मित्तिसर्धि छित्त्वा
 ये धनमपहरन्ति ते सधिच्छेदका उच्यन्ते, तेषाम्, 'खत्तखणगाण य' क्षात्र-
 खनकाना=सधिरहितभित्ति खनकानाम्, 'रायावगारीणय' राजाऽपकारिणां=

पशु, पक्षी, सरीसृप आदि प्राणिघोके घातके लिये, बधके लिये, तथा उनके
 सर्वथा विनाशके लिये, यह अधर्मकेतुग्रह जैसा उदित हुआ था । अनेक
 नगरों में यह कुख्यात होचुका था । बडा शूरवीर था । इसका प्रहार
 बहुत गहरा होता था । विना विचारे काम करना ही इसका स्वभाव था
 शब्द श्रवण कर यह अपने लक्ष्य के वेधने में बडा निपुण था । वह
 विजय चौर सिंहगुफा नाम की उस चोरपत्नी में पाचसौ चोरों का
 आधिपत्य यावत् स्वामित्व करता हुआ रहता था । (तएण से विजय
 तस्करे चोरसेणावई बहूण चोराण य पारदारियाण य गठिभेयगाण य
 सधिच्छेयगाण य खत्तखणगाण य, रायावगारीण य अणधारगाण य

धष्ठा द्विपद, अतुप्पद, मृग, पशु, पक्षी, सरीसृप (साप) वगेरे प्राणीओना
 घात भाटे, बध भाटे तेमञ्ज तेमना सर्वनाश भाटे ते अधर्म केतुग्रहनी
 नेमञ्ज उदय पाभ्यो हुतो धष्ठा नगराभा ते कुख्यात यध् युक्तयो हुतो ते
 लारे शूरवीर हुतो, तेना प्रहार भूषण लारे थतो हुतो वगर विचार्या काम
 करवाभा न्ज तेना स्वभाव हुतो शब्द श्रवणु उरीने ते पोताना लक्ष्यने वधी
 नाभवाभा भूषण निपुण हुतो ते विजय चौर सिद्ध शुद्ध नामनी ते चौर
 पदवीभा पाचसे चोरानेना स्वामी-यावत् स्वामित्व लोगवतो रहुते हुते

(तएण से विजयतस्करे चोरसेणावई बहूण चोराण य पारदारियाण य
 गठिभेयगाण य सधिच्छेयगाण य खत्तखणगाणय, रायावगारीण य ऋण

बहुलः, तत्र-उत्तरञ्चनम् मुग्धजनवञ्चनप्रवृत्तस्य समीपागतविनक्षणमयात् तन्मन्त्रे
 वञ्चनाकरणम् वञ्चन=प्रतारणम्, गाया=परवञ्चनपुट्टिः, निःकृतिः=मायाप्रच्छाद
 नार्थे मायान्तरकरणम्, कपटम्=वेपादिविपर्ययकरणम्, कूटम्=वृत्तातोलनका
 दीनामन्वयाकरणम्, 'साह' देशी शब्दोऽयम्, विश्वासाभावात्, यथा सप्रयोगो
 व्यवहारः स एव बहुलः प्रचुरो यस्य स', 'निःशीले' निःशीलः=शीलरहित',
 'निर्व्यय' निर्वर्तः=अणुप्रतरहित, 'निर्गुणे' निर्गुण=गुणव्रतरहितः, 'निप
 च्चवखाणपोसहोचत्वासे' निःप्रत्याख्यान पौषधोपवास. = प्रत्याख्यानपौषधोप
 वासरहितः 'बहूण दुपयचउप्यमियपसुपन्निखसरीसिवाण घायाए वहाए उच्छाय
 णाए' बहूना द्विपदचतुष्पदगुणपशुपत्तिसरीसिवाणा घाताय, वहाय=सामान्य

हार इसके पास प्रचुर था। भोलेजनों के वचन करने में प्रवृत्त हुआ
 वचक जन जय पास में आये हुए जनको भय से नहीं ठगता है इस
 का नाम उत्कचन है। प्रतारण (ठगना) करना इसका नाम वंचन है।
 दूसरों का वचन करने की युद्धि का नाम माया है। अपनी मायाचारी
 को छिपा ने के लिये जो दूसरी मायाचाररूप क्रिया करनी होती है इस
 का नाम निःकृति है। वेप आदि के परिवर्तन करने का नाम कपट है।
 तराजू एव तोलने आदि के घाटों को कमती बढ़ती रखना इसका नाम
 कूट है। "साह" यह देशीय शब्द है। इसका अर्थ विश्वास का
 अभाव होता है। यह निःशील था-शीलरहित था-निर्वर्त था-व्रत
 रहित था, निर्गुण था-गुण रहित था, "प्रत्याख्यान और पौषधोपवास
 से वर्जित था " बहूण दुपयचउप्यमियपसुपन्निखसरीसिवाण घायाए
 वहाए उच्छायणाए अधम्मकेऊ समुद्धिए " अनेक द्विपद, चतुष्पद, मृग,

पुष्कण प्रमाणमा हने। लोणा भाष्यसेना वचनमा प्रवृत्त थयेवे। वचक न्याये
 पासे आवेला भाष्यसने णीकथी उगतो नथी तेनु नाम उत्कचन छे प्रतारणु।
 नाम वचन छे णील भाष्यसने उगवानी युद्धिनु नाम माया छे चोतानी
 मायाचारीने छुपाववा भाटे ले णील मायाचार रूप किया करवाभा आवे छे
 तेनु नाम निःकृति छे-वेश वगेरे षड्वपु ते कपट कडेवाय छे त्राज्वा तेमज्
 लेणवाना वचनोने उवका अने लारे करवा तेनु नाम कूट छे "साह"
 आ देशीय शब्द छे तेना अर्थ विश्वासने अभाव होय छे ते निःशील
 हुतो, शील रहित हुतो, निर्वर्त व्रत रहित हुतो निर्गुण हुतो-गुण रहित
 हुतो प्रत्याख्यान अने पौषधोपवासथी वर्जित हुतो " बहूण दुपयचउप्य
 मियपसुपन्निखसरीसिवाण घायाए वहाए - उच्छायणाए "

विशेषप्रकारेण नाशाय, उत्सादनाय=द्विपदादिमकलजीवाना सर्वथा नाशाय च,
 'अधम्मकेऊ समुट्टिए' अधर्मकेतुः समुत्थितः-अधर्म पापप्रधानो यः केतुः=
 केतुग्रहः, अधर्मकेतुः=उत्पातरूपधूमकेतुमहाग्रहः तद्वत् समुत्थितः । बहुणगर-
 णिगयजसे 'बहुनगरनिर्गतयशा', बहुनगरेषु निर्गत जनमुखान्निःसृत यशः
 ख्याति र्यस्य सः, प्रसिद्ध इत्यर्थः, शूरः 'दढप्पहारी' दढप्रहारी=दढप्रहरण
 शीलः 'साहसिए' साहसिक=अविमृश्यकारी 'सहवेही' शब्दवेधी=शब्दश्रव-
 णेन लक्ष्यवेधी च आसीत् । 'से' सः = विजयश्वोर खलु तत्र सिंहगुहायां
 चोरपत्न्या पञ्चानाम् चोरशतानाम् 'आहेउच्च जाव' आधिपत्य यावत्=
 स्वामित्व कुर्वन् विहरति । ततः खलु स विजयस्तस्कर, चोरसेनापति बहूना
 चोराणा च 'पारदारियाणय' पारदारिकाणा=परस्त्रीगामिना च 'गठिभेय
 गाणय' ग्रन्थिभेदकानां 'सधिच्छेयगाणय' सन्धिच्छेदकानां=मित्तिसर्धि छित्त्वा
 ये धनमपहरन्ति ते सधिच्छेदका उच्यन्ते, तेणाम्, 'खत्तखणगाण य' क्षात्र-
 खनकानां=सधिरहितभित्ति खनकानाम्, 'रायावगारीणय' राजाऽपकारिणां=

पशु, पक्षी, सरीसृप आदि प्राणियोंके घातके लिये, वधके लिये, तथा उनके
 सर्वथा विनाशके लिये, यह अधर्मकेतुग्रह जैसा उदित हुआ था । अनेक
 नगरों में यह कुख्यात होचुका था । पडा शुरवीर था । इसका प्रहार
 बहुत गहरा होता था । विना विचारे काम करना ही इसका स्वभाव था
 शब्द श्रवण कर यह अपने लक्ष्य के वेधने में बडा निपुण था । वह
 विजय चौर सिंहगुफा नाम की उस चोरपत्नी में पाचसौ चोरों का
 आधिपत्य यावत् स्वामित्व करता हुआ रहता था । (तएण से विजय
 तस्करे चोरसेणावई बहूण चोराण य पारदारियाण य गठिभेयगाण य
 सधिच्छेयगाण य खत्तखणगाण य, रायावगारीण य अणधारगाण य

धृष्टा द्विपद, यतुष्पद, मृग, पशु, पक्षी, सरीसृप (नाय) वगैरे प्राणीयोना
 घात भाटे, वध भाटे तेमज तेमना सर्वनाश भाटे ते अधर्म उेतुग्रहनी
 जेमज उद्य पाभ्यो हुतो धृष्टा नगराभा ते कुख्यात थर्छ युक्तयो हुतो ते
 लारे शूरवीर हुतो, तेना प्रहार भूष ज लारे थतो हुतो वगर विशार्या काम
 करवाभा ज तेना स्वभाव हुतो शब्द श्रवण करीने ते पोताना लक्ष्यने वीधी
 नाभवाभा भूष ज निपुण हुतो ते विजय चोर सिद्ध शुद्ध नामनी ते चोर
 पत्नीभा पाचसो चोरानो स्वाभी-यावत् स्वामित्व लोभवतो रहतेो हुतो

(तएण से विजयतस्करे चोरसेणावई बहूण चोराण य पारदारियाण य
 गठिभेयगाण य सधिच्छेयगाण य खत्तखणगाणय, रायावगारीण य कण

વહુલ; તત્ર-ઉત્પન્નનમ્ મુખ્યજનેચ્ચનમટ્તસ્ય સમીપાગતવિવક્ષણમયાન્ તન્મણે
 વચ્ચનાકારણમ્ વચ્ચન=પ્રતારણમ્, ગાયા=પરચ્ચનવુદ્ધિ; નિકૃતિ.=માયાપચ્છાદ
 નાર્થ માયાન્તરકરણમ્, કપટમ્=વેપાદિવિપર્યયકરણમ્, કૂટમ્=તુલાતોલનકા
 દીનામન્વયાકરણમ્, 'સાહ' દેશી શબ્દોચ્ચમ્, વિશ્વાસમાય., ઘર્ષાં સમયોગો
 વ્યવહારઃ સ ઇવ વહુઃ પ્રચુગે યસ્ય સ', 'નિસ્તોત્તે' નિઃશીલ =શીલરહિત;
 'નિવ્યપ' નિર્વૃત્તઃ=અણુવ્રતરહિત, 'નિર્ગુણે' નિર્ગુણ =ગુણવ્રતરહિત; 'નિવ
 ચ્ચક્ષાણપોસહોવ્રતસે' નિપ્રત્યાખ્યાન પૌષધોપવાસ = પ્રત્યાખ્યાનપૌષધોપ
 વાસરહિત; 'વહૂણ દુપયચ્ચઉપ્પયમિયપસુપન્નિલસરીસિવાણ ઘાયાપ વહાપ ઉચ્ચાય
 ણાપ' વહૂના દ્વિપદચ્ચતુષ્પદમ્મૃગપશુપન્નિલસરીસિવાણ ઘાતાય, વહાપ=સામાન્ય

હાર इसके पास प्रचुर था। भोलेजनों के वचन करने में प्रवृत्त हुआ
 वचक जन जब पास में आये हुए जनको भय से नहीं ठगता है इस
 का नाम उत्कचन है। प्रतारण (ठगना) करना इसका नाम वचन है।
 दूसरों का वचन करने की युद्धि का नाम माया है। अपनी मायाचारी
 को छिपा ने के लिये जो दूसरी मायाचाररूप क्रिया करनी होती है इस
 का नाम निकृति है। वेप आदि के परिवर्तन करने का नाम कपट है।
 तराजू एव तोलने आदि के चाटों को कमती बढ़ती रखना इसका नाम
 कूट है। "साह" यह देशीय शब्द है। इसका अर्थ विश्वास का
 अभाव होता है। यह निःशील था-शीलरहित या-निर्वृत था-व्रत
 रहित था, निर्गुण था-गुण रहित था, "प्रत्याख्यान और पौषधोपवास
 से वर्जित था " वहूण दुपयचउपपयमियपसुपन्निखसरीसिवाण घायाप
 वहाप उच्छायणाण अधम्मकेज समुट्टिए " अनेक द्विपद, चतुष्पद, मृग,

પુષ્કળ પ્રમાણમાં હતો. ભોળા માણસોના વચનમાં પ્રવૃત્ત થયેલા વચક ન્યારે
 પાસે આવેલા માણસને ખીકથી કગતો નથી તેનું નામ ઉત્કચન છે. પ્રતારણ
 નામ વચન છે. ખીજા માણસને કગવાની યુદ્ધિનું નામ માયા છે. પોતાની
 માયાચારીને છુપાવવા માટે જે ખીજા માયાચાર રૂપ ક્રિયા કરવામાં આવે છે
 તેનું નામ નિકૃતિ છે. વેશ વગેરે બદલવું તે કપટ કહેવાય છે. ત્રાજવા તેમજ
 ભોખવાના વજનોને હલકા અને ભારે કરવા તેનું નામ કૂટ છે. "સાહ"
 આ દેશીય શબ્દ છે તેનો અર્થ વિશ્વાસનો અભાવ હોય છે તે નિશીલ
 હતો, -શીલ રહિત હતો, નિર્વૃત્ત વ્રત રહિત હતો. નિર્ગુણ હતો-ગુણ રહિત
 હતો. પ્રત્યાખ્યાન અને પૌષધોપવાસથી વર્જિત હતો. "વહૂણ દુપયચઉપ્પય
 મિયપસુપન્નિલસરીસિવાણ ઘાયાપ વહાપ - ઉચ્ચાયણાણ

विशेषप्रकारेण नाशाय, उत्सादनाय=द्विपदादिमकलजीवना सर्वथा नाशाय च, 'अधर्मकेतुः समुत्थितः' अधर्मकेतुः समुत्थितः—अधर्म पापप्रधानो यः केतुः=केतुग्रहः, अधर्मकेतुः=उत्पातरूपमूमेकेतुमहाग्रहः तद्वत् समुत्थितः । बहुनगर-णिगयजसे 'बहुनगरनिर्गतयशाः, बहुनगरेषु निर्गत जनमुखाभिःसृत यशः ख्याति र्यस्य सः, प्रसिद्ध इत्यर्थः, शूरः 'दृढप्रहारी' दृढप्रहारी=दृढप्रहरण शीलः 'साहसिण' साहसिक=अत्रिमृश्यकारी 'सद्वेधी' शब्दवेधी=शब्दश्रवणेन लक्ष्यवेधी च आसीत् । 'से' सः = विजयश्वोर खलु तत्र सिंहगुहार्या चौरपल्ल्या पञ्चानाम् चौरशतानाम् 'जाहेपच्च जाव' आधिपत्य यावत्=स्वामित्व कुर्वन् विहरति । ततः खलु स विजयस्तस्करः चोरसेनापति बहूना चोराणा च 'पारदारियाणय' पारदारिकाणा=परस्त्रीगामिना च 'गठिभेयगाणय' ग्रन्थिभेदकानां 'सधिच्छेयगाणय' सन्धिच्छेदमाना=भित्तिसर्धि छित्त्वा ये धनमपहरन्ति ते संधिच्छेदका उच्यन्ते, तेनाम्, 'खत्तखणगाणय' क्षात्र-खनकाना=सधिरहितभित्ति खनकानाम्, 'रायावगारीणय' राजाऽपकारिणां=

पशु, पक्षी, सरीसृप आदि प्राणियोंके घातके लिये, बधके लिये, तथा उनके सर्वथा विनाशके लिये, यह अधर्मकेतुग्रह जैसा उदित हुआ था । अनेक नगरों में यह कुख्यात होचुका था । बडा शूरवीर था । इसका प्रहार बहुत गहरा होता था । विना विचारे काम करना ही इसका स्वभाव था शब्द श्रवण कर यह अपने लक्ष्य के वेधने में बडा निपुण था । वह विजय चौर सिंहगुफा नाम की उस चौरपल्ली में पाचसौ चोरों का आधिपत्य यावत् स्वामित्व करता हुआ रहता था । (तएण से विजय तस्करे चोरसेणावई बहूण चोराण य पारदारियाण य गठिभेयगाण य सधिच्छेयगाण य खत्तखणगाण य, रायावगारीण य अणधारगाण य

घणा द्विपद, अतुष्पद, भृग, पशु, पक्षी, सरीसृप (साप) वगैरे प्राणीजाना घात भाटे, बध भाटे तेभज तेभना सर्वनाश भाटे ते अधर्म केतुग्रहनी जेभज उदय पाभ्यो हुतो घणा नगरेभमा ते कुख्यात थऽ युक्तयो हुतो ते भादे शूरवीर हुतो, तेना प्रहार भूज न लारे थतो हुतो वगर विद्यायां काम करवाभा ज तेना स्वभाव हुतो शब्द श्रवणु करीने ते पोताना लक्ष्यने वीधी नाभवामा भूज न निपुण हुतो ते विजय चौर सिद्ध गुफा नामनी ते चौर पक्षीभा पाचसो चोरानो स्वामी—यावत् स्वामित्व लोकावतो रहतेो हुतो

(तएण से विजयतस्करे चोरसेणावई बहूण चोराण च पारदारियाण य गठिभेयगाण य सधिच्छेयगाण य खत्तखणगाणय, रायावगारीण य ऊण

राजद्रोहिणां 'अणधारणाण्य' ऋणधारणाणाम् चाण्यतकानां 'वीसभवायगाण्य
 य' विधम्भवातकानां=विश्वापयतिना घृतकाण्यकाणां 'गडकवाण्य य' लण्डर
 क्षाणां=राजविरोधेन भूमिसण्डधारिणां गण्यम् अन्येषां च गृह्णां 'छिन्नभिन्नघ
 राहयाण्य' छिन्नभिन्नघहिराण्यतानाम्-छिन्ना=छिन्नदस्तादिका', भिन्नाः=भिन्नक
 र्णनासिकादिकाः, गहिराहता=राजापराधेन देशनिकासिताः, एतेषां दण्डः, तेषां
 च 'कुटुगे' कुटङ्कः=कुटङ्क इव कुटङ्क - यण्येन रक्षार्थमाश्रयणीयत्वसाम्यात्

वालघायगाण्य य वीसभवायगाण्य य जूयकाराण्य य रडरक्खाण्य य अ
 न्नेसिं बहूण्य छिन्नभिन्न घहिरायगाण्य कुटुगे याचिहोत्या) यह विजय
 तस्कर चोर सेनापति अनेक चोरों का अनेक परस्त्री लपटों का ग्रन्थि
 भेद को का, सधिच्छेदको का-मकान को भीन फोड़कर धनका अपह
 रण करनेवालो का, क्षात्रघ्नको का सधि रहित भीत को फोड़कर
 चोरी करनेवालों का, राजा का अपकार करने वालों का-राजद्रोहियों
 का, ऋण करने वालों का घाल हत्या करने वालों का विश्वासघात करने
 वालों का जुआ खेलनेवालों का, राजा की आज्ञा लिये विना ही कुछ
 जमीन को अपने अधिकार में करनेवालो का, तथा और भी अनेक
 छिन्न, भिन्न घहिराहत व्यक्तियों का यह कुटङ्क जैसा या। जिन के हाथ
 आदि काटदिये गये हैं ऐसे प्राणी, छिन्न शब्द से जिनकी नाक आदि
 काट दी गई है ऐसे प्राणी भिन्न शब्द से एवं राजापराय के कारण जो
 देश से घाहिर निकाल दिये गये हैं ऐसे मनुष्य यहाँ घहिर आहत शब्द

धारणाण्य य वालघायगाण्य य वीसभवायगाण्य य जूयकाराण्य य रडरक्खाण्य य
 अन्नेसिं बहूण्य छिन्नभिन्नघहिरायगाण्य कुटुगे याचि होत्या)

ते विजय तस्कर चोर सेनापति घथु चोरो, घथु परस्त्री लपटो,
 अघिलेहको, सघिच्छेदको-भाकोइ पाडीने धनु अपहरण्य करनाराओ, क्षात्र
 भनको-सघिलाग वगरनी लीतमा भाकोइ पाडीने चोरी करनाराओ, राजनी
 अपकारको-राजद्रोहीओ, ऋण्य करनाराओ (देवाहारे) आणडत्या करनाराओ,
 आणडत्या करनाराओ, विश्वासघात करनाराओ, लुगार रभनाराओ, राजनी
 आशु लीधा वगर न्य चोडी नभीनने पोताना अधिन्नरमा लेनाराओ तेमन्य
 भीन पथु घथु छिन्न, भिन्न अडिराहत दोकोना भाटे ते कुङ्क न्येओ डने।
 न्येमना हाथ पग वगेरे कापी नाभनमा आओया छे ओवा प्राणीओ, छिन्न
 शण्ड वडे न्येमना नाक वगेरे कापवामा आओया छे ओवा प्राणीओ, भिन्न शण्ड
 वडे अने राजापराध गहल न्ये देशमाथी अडार-काडी भूकवामा आओया छे
 ओवा भाषुसो अडि- "अडि आडत" शण्ड वडे सओपि । आओया

चापि अभूत् । ततः खलु स विजयस्तस्करः चोरसेनापतिः राजगृहस्य । दाहिणं पुरत्थिमं ' दक्षिणपौरस्त्य अग्निकोणस्थित जनपद बहुभिः ' गामघाएहिं ' ग्रामघातै = गामविनाशैश्च, नगरघातैश्च, ' गोग्रहणेहिय ' गो ग्रहणै = गवां लुण्ठनैः, वदिग्रहणेहिय ' वन्दिग्रहणै = लुण्ठने ये जना गृहीतास्ते वन्दिन उच्यन्ते, तेषां ग्रहणैः = स्वकाराया स्थापनैः, ' खत्तखणणेहिय ' क्षात्रखननैश्च एवं विधैषु कृत्यै

से प्रतिबोधित किये गये हैं । रक्षणार्थ आश्रयणीय होने की समानता से इसे कुटक-वशवन-जैसा कहा गया है । (तएण से विजए तस्करे चोरसेणावई रायगिहस्स दाहिणपुरत्थिमं जणवय बहूहिं गामघाएहिं य नगरघाएहिं य गोग्रहणेहि य वदिग्रहणेहि य खत्तखणणेहिय, पथकुएणेहि य उवीले माणे २ विद्धसणे माणे २ णित्थाण, णिद्धण करेमाणे विहरइ, तएण से चित्ताए दासचेडे रायगिहे बहूहिं अत्थामिसकीहि य चोज्जाभिसकीहि य दाराभिसकीहि य धणिएहि य जूयकरेहि य परवभवमाणे २ रायगिहाओ नगराओ णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव सीहगुहा चोरपल्ली तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता विजय चोरसेणावइ उवसपज्जित्ताण विहरइ) चोरों का सेनापति वह विजय तस्कर राजगृह नगर के अत्रिकोण में स्थित जनपदों को, अनेक ग्रामों के विनाश से नगरों के घात से, गावों के लूटने से, लूटते समय पकड़े गये मनुष्यों को अपने कारागार में बंद करने से, क्षत्रखनन से-मकानों में खातदेने

छे रक्षण भाटे आश्रयणीय होवाना साभ्यथी तेने कुटक-वासनावत'नी जेम भताववाभा आये छे

(तएण से विजए तस्करे चोरसेणावई रायगिहस्स दाहिणपुरत्थिमं जणवय बहूहिं गामघाएहिं य नगरघाएहिं य गोग्रहणेहि य वदिग्रहणेहि य खत्तखणणेहि य पथकुएणेहि य उवीले माणे २ विद्धसणे माणे २ णित्थाण, णिद्धण करेमाणे विहरइ, तएण से चित्ताए दास चेडे रायगिहे बहूहिं अत्थामिसकीहि य चोज्जाभिसकीहि य धणियेहि य जूयकरेहि य परवभवमाणे २ रायगिहाओ नगराओ णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव सीहगुहा चोरपल्ली तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता विजय चोरसेणावइ उवसपज्जित्ताण विहरइ)

चोरोंको सेनापति ते विजय तस्कर राजगृह नगरना अतिकोणना जनपदोंके, घण्टा आगोंको विनाश करीने नगरोंको घात करीने गावोंके लूटीने लूटीने वधते पकडी पाडेना भाषुसोने पोताना कारागारभा पूरी धरने, क्षत्र खनन करीने, मकानोंको खातर पाडीने अने भुसाइरोंके भारीने निरंतर

पयकुटणेदिय ' पान्थगृहनेः=पथिकजनमागौत्र ' उशीलेमाणे २ ' उत्पीडयन्
 २=सन्ततमुत्पीडन कुर्वन्, ' रिद्धसेमाणे २ ' विभ्रमयन् २-सर्वदा विध्वंस
 कुर्वन्, ' गिस्थाण ' निः स्यान्=गृहरहित, ' गिदूषण ' निर्धनम्=धनरहित कुर्वन्
 वेहरति । ततः खलु स चिन्तातो दासचेष्टः राजगृहे बहुभिः ' अथाभिसकीडिय'
 अर्थाभिशङ्किभिः=अथ चिलातो मदीयमर्थं गृहीतवान्, ग्रहीत्यति वा इत्यभिशङ्कन
 शीलै ' चोज्जाभिसकीडिय ' चौर्याभिशङ्किभिः=अथ मम गृहे चौर्यं कृतवान्
 करिष्यति वेत्यभिशङ्कन शीलैश्च ' दारामिसकीडि ' दारामिशङ्किभिः=' अथ मम
 दारान् दूषितवान् दूषयिष्यति वेत्यभिशङ्कनशीलै तथा धनिकैश्च द्यूतकरैश्च परा
 भूयमाणः २= पुनः पुनः पराभव प्राप्यमाणो राजगृहात् नगराद् बहिर् निर्गच्छति,
 निर्गत्य, यत्रैव सिंहगुहा चोरपल्ली तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य विजय चोरसेना
 पतिम् उपसपद्य=प्राप्य विहरति ॥ सू० ३ ॥

से, एव पथिकजनो के माने से, निरन्तर पीडित करता विध्वंस करता
 करता और गृह विहिन करता रहता था । इस के पश्चात् वह दासचेष्टक
 चिलात राजगृह नगर में अनेक अर्थाभिशक-इस चिलात ने हमलोगों
 के द्रव्य को हरण किया है तथा इसी तरह से यह आगे भी करेगा-
 प्रकार की शका करने वाले, चौर्याभिशकी इसने हमलोगों के घर में
 घुसकर पहिले चोरी की है-तथा इसी तरह यह आगे भी करेगा-इस
 प्रकार की आशका करने वाले, दारामिशकी-इसने पहिले हमारी स्त्रियों
 के साथ बलात्कार किया है-इसी तरह से यह आगे भी करेगा इस
 तरह की अपनी स्त्रियों के साथ बलात्कार करने की आशकावाले पुरुषों
 के द्वारा तथा धनिक व्यक्तियों के द्वारा, जुआ खेलने वाले ज्वारियों
 के द्वारा पुनः पुनः पराभूत होता हुआ राजगृह नगर से बाहर निकला

पीडित करने, विध्वंस करने अने गृहविहीन अनाथी भूकतो हुतो त्पारपथी
 ते दासचेष्टक चिलाते राजगृह नगरमा धन्या अर्थाभिशक-आ चिलाते अमारा
 द्रव्यनु हरण कर्तुं छे तेमज आ प्रभाणे लविष्यमा पणु हरण करशे, आ
 नतनी शका करनाशयो वडे, चौर्याभिशकी-अण्णे अमारा धरोमा पेसीने
 पडेलो चोरी करी हुती तेमज लविष्यमा पणु ते चोरी करशे ज-आ नतनी
 चोरीनी आशका करनाशयो वडे, दारामिशकी-अण्णे पडेलो अमारी स्त्रीयो
 उपर अलात्कार कर्यो छे, आ प्रभाणे लविष्यमा पणु ते चोच्छस आवु कर
 शे ज, आ रीते पोतानी स्त्रीयो उपर अलात्कारनी आशकावाणा पुर्यो वडे
 तेमज धनवानो वडे, जुगार रमनारा जुगारीयो वडे, वार वार

मूलम्—तएणं से चिलाए दासचेडे विजयस्स चोरसेणा-
वइस्स अग्गे असिलट्टुग्गाहे जाए यावि होत्था, जाहे त्रियणं
से विजए चोरसेणावई गामघायं वा जाव पंथकोट्टि वा काउं
वच्चइ ताहे त्रियणं से चिलाए दासचेडे सुवहुपि हु कुवियवल
हयविमहिय जाव पडिसेहेइ । पुणरवि लद्धेट्ठे कयकज्जे अणह
समग्गे सीहगुह चोरपल्लि हव्वमागच्छइ । तएणं से विजए
चोरसेणावई चिलायं तक्कर वहुईओ चोरविज्जाओ य चोरमते
य चोरमायाओ चोरनिगडीओ य सिक्खावेइ । तएणं से
विजए चोरसेणावई अन्नया कयाइ कालधम्मुणा सजुत्ते यावि
हांत्था । तएणं ताइं पंचचोरसयाइ विजयस्स चोरसेणावइस्स
महयार इट्ठीसक्करसमुदएणं णीहरणं करेति, करित्ता वहुइ
लोइयाइं मयकिच्चाइ करेति, करित्ता जाव विगयसोया जाया
यावि होत्था । तएणं ताइ पच चोरसयाइं अन्नमन्नं सहावेति,
सहावित्ता एव वयासी—एव खलु अम्ह देवाणुप्पिया । विजए
चोरसेणावई कालधम्मुणा संजुत्ते, अय च ण चिलाए तक्करे
विजएण चोरसेणावइणा वहुईओ चोरविज्जाओ य जाव सिक्खा
विए, त सेय खलु अम्ह देवाणुप्पिया । चिलाय तक्कर सीह-
गुहाए चोरपल्लीए चोरसेणावइत्ताए अभिसिचित्तए त्तिकहु
अन्नमन्नस्स एयमट्ठ पडिसुणेति, पडिसुणित्ता चिलाय तीए
सीहगुहाए चोरसेणावइत्ताए अभिसिचित्ति । तएणं से चिलाए

और निकल कर जहा वह सिंहगुहा नाम की चोरपत्नी थी वहाँ आया
घटा आकर वह चोर सेनपति के बाद रहने लगा ॥ सूत्र-३ ॥

शङ्खुड नगरधी बडार नीकुर्ये अने नीकणीने न्या ते सिंदगुडा नामे चोरपत्नी
हुती त्या आये, त्या आणीने चोर सेनापतिनी साथे रहेवा लाग्ये ॥ सू०३॥

‘पयकुट्टणेदिय’ पान्यकुट्टनैः=पथिकजनमागैश्च ‘उवीलेमाणे २’ उत्पीडयन्
 २=सन्ततमुत्पीडनं कुर्वन्, ‘विद्वसेमाणे २’ विध्वमयन् २=सर्वदा विध्वंस
 कुर्वन्, ‘णित्थाणं’ निः स्यान्=गृहरहित, ‘जिदुधणं’ निर्धनम्=धनरहित कुर्वन्
 विहरति । ततः खलु स चिन्ततो दासचेटः राजगृहे बहुभिः ‘अन्याभिस कीदिय’
 अर्थाभिशङ्किभिः=अप्य विलातो मदीयमर्थं गृहीतवान्, ग्रहीष्यति वा इत्यभिशङ्कन
 शीलै ‘चोज्जाभिस कीदिय’ चौर्याभिशङ्किभिः=अप्य मम गृहे चौर्यं कृतवान्
 करिष्यति चेत्पभिशङ्कन शीलैश्च ‘दारामिम कीदि’ दाराभिशङ्किभिः=‘अप्य मम
 दारान् दूषितवान् दूषयिष्यति’ ऐत्यभिशङ्कनशीलै तथा धनिकैश्च घृतकरैश्च परा
 भूयमाणः २=पुनः पुनः पराभव प्राप्पमाणो राजगृहात् नगराद् वहि निर्गच्छति,
 निर्गत्य, यत्रैव सिंहगृहा चोरपल्ली तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य विजय चोरसेना
 पतिम् उपसपद्य=प्राप्य विहरति ॥ सू०३ ॥

से, एव पथिकजनों के मारने से, निगन्तर पीडित करता विध्वंस करता
 करता और गृह विहिन करता रहता था । इस के पश्चात् वह दासचेटक
 चिलात राजगृह नगर में अनेक अर्थाभिशक-इस चिलात ने हमलोगों
 के द्रव्य को हरण किया है तथा इसी तरह से यह आगे भी करेगा-
 प्रकार की शका करने वाले, चौर्याभिशकी इसने हमलोगों के घर में
 घुसकर पहिले चोरी की है-तथा इसी तरह यह आगे भी करेगा-इस
 प्रकार की आशका करने वाले, दाराभिशकी-इसने पहिले हमारी स्त्रियों
 के साथ बलात्कार किया है-इसी तरह से यह आगे भी करेगा इस
 तरह की अपनी स्त्रियों के साथ बलात्कार करने की आशकावाले पुरुषों
 के द्वारा तथा धनिक व्यक्तियों के द्वारा, जुआ खेलने वाले ज्वारियों
 के द्वारा पुनः पुनः पराभूत होता हुआ राजगृह नगर से बाहर निकला

पीडित करने, विध्वंस करने और गृहविहीन बनावी मूकतो डतो त्पारपछी
 ते दासचेटक चिलाते राजगृह नगरमा घण्टा अर्थांलिश क-आ चिलाते अमारा
 द्रव्यनु हरण कर्तुं छे तेमज्ज आ प्रभाणु लविण्यमा पणु हरणु करेशे, आ
 नतनी शका करनाराओ वडे, और्थांलिश डी-ओणु अमारा धरोमा पेसिने
 पडेवा थोरी करी डती तेमज्ज लविण्यमा पणु ते थोरी करेशे ज्-आ नतनी
 थोरीनी आशका करनाराओ वडे, दाराभिश डी-ओणु पडेवा अमारी स्त्रीओ
 उपर बलात्कार कर्तुं छे, आ प्रभाणु लविण्यमा पणु ते थोळ्ळस आणु कर
 शे ज्, आ रीते पोतानी स्त्रीओ उपर बलात्कारनी आशकावाणा पुर्षो वडे
 तेमज्ज धनवानो वडे, जुगार् रमनारा जुगारीओ वडे, बार बार

मूलम्—तएणं से चिलाए दासचेडे विजयस्स चोरसेणा-
वइस्स अग्गे असिलट्टुगाहे जाए यावि होत्था, जाहे वि य णं
से विजए चोरसेणावई गामघायं वा जाव पथकोट्टि वा काउं
वच्चइ ताहे वि य ण से चिलाए दासचेडे सुवहुपि हु कुवियवल
हयविमहिय जाव पडिसेहेइ । पुणरवि लद्धट्टे कयऊज्जे अणह
समग्गे सीहगुह चोरपल्लि हव्वमागच्छइ । तएण से विजए
चोरसेणावई चिलायं तक्कर वहुईओ चोरविजाओ य चोरमते
य चोरमायाओ चोरनिगडीओ य सिक्खावेइ । तएणं से
विजए चोरसेणावई अन्नया कयाइ कालधम्मुणा संजुत्ते यावि
होत्था । तएण ताईं पंचचोरसयाइ विजयस्स चोरसेणावइस्स
महयार इड्डीसक्कारसमुदएणं णीहरणं करेति, करित्ता वहुइ
लोइयाइ मयकिच्चाइ करेति, करित्ता जाव विगयसोया जाया
यावि होत्था । तएण ताइ पंच चोरसयाइं अन्नमन्नं सदावेति,
सदावित्ता एव वयासी—एव खल्लु अम्हं देवाणुप्पिया । विजए
चोरसेणावई कालधम्मुणा संजुत्ते, अयं च णं चिलाए तक्करे
विजएणं चोरसेणावइणावहुईओ चोरविजाओ य जाव सिक्खा
विए, त सेयं खल्लु अम्ह देवाणुप्पिया । चिलाय तक्करं सीह-
गुहाए चोरपल्लीए चोरसेणावइत्ताए अभिसिचित्तए त्तिकट्टु
अन्नमन्नस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता चिलाय तीए
सीहगुहाए चोरसेणावइत्ताए अभिसिचति । तएण से चिलाए

और निकल कर जहा वह सिंहगुहा नाम की चोरपल्ली थी वहाँ आया
वहाँ आकर वह चार सेनपति के राद रहने लगा ॥ सूत्र-३ ॥

शङ्खुड नगरधी भडार नीकुर्ये अने नीकणीने न्या ते सिङ्गुडा नामे चोरपल्ली
डती त्या आये, त्या आणीने चार सेनापतिनी साथे रहेवा लाग्ये ॥ सू० ३ ॥

'पथकुटणेदिय' पान्यकुटनेः=पथिकजनमागैश्च 'उतीलेमाणे २' उत्पीडयन्
 २=सन्ततमुत्पीडन कुर्वन्, 'विद्धसेमाणे २' विध्वमयन् २-सर्वदा विध्वम
 कुर्वन्, 'णित्थाण' निः स्थान=गृहरहित, 'णित्थणं' निर्धनम्=धनरहित कुर्वन्
 विहरति । ततः खलु स चिन्तातो दासचेट. राजगृहे घट्टुमिः 'अथाभिमकीदिय'
 अर्थाभिशङ्किभिः=अथ तिलातो मदीयमर्थं गृहीतवान्, गृहीप्यति वा इत्यभिशङ्कन
 शीलै 'चोञ्जाभिसकीदिय' चौर्याभिशङ्किभिः=अथ मम गृहे चौर्यं कृतवान्
 करिष्यति वेश्यभिशङ्कन शीलैश्च 'दारामिसकीदि' दाराभिशङ्किभिः='अथ मम
 दारान् दूषितवान् दूषयिष्यति वेश्यभिशङ्कनशीलै तथा धनिकैश्च घूतकरैश्च परा
 भूयमाणः २= पुनः पुन पराभव प्राप्पमाणो राजगृहात् नगराद् बहिर् निर्गन्तति,
 निर्गत्य, यत्रैव सिंहगुहा चोरपल्ली तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य विजय चोरसेना
 पतिम् उपसपद्य=माप्य विहरति ॥ सू० ३ ॥

से, एव पथिकजनो के मारने से, निरन्तर पीडित करता विध्वस करता
 करता और गृह विहिन करता रहता था । इस के पश्चात् वह दासचेटक
 चिलात राजगृह नगर में अनेक अर्थाभिशङ्क-इस चिलात ने हमलोगों
 के द्रव्य को हरण किया है तथा इसी तरह से यह आगे भी करेगा-
 प्रकार की शका करने वाले, चौर्याभिशङ्की इसने हमलोगों के घर में
 घुसकर पहिले चोरी की है-तथा उसी तरह यह आगे भी करेगा-इस
 प्रकार की आशका करने वाले, दाराभिशङ्की-इसने पहिले हमारी स्त्रियों
 के साथ बलात्कार किया है-इसी तरह से यह आगे भी करेगा इस
 तरह की अपनी स्त्रियों के साथ बलात्कार करने की आशकावाले पुनर्षो
 के द्वारा तथा धनिक व्यक्तियों के द्वारा, जुआ खेलने वाले ज्वारियों
 के द्वारा पुनः पुनः पराभूत होता हुआ राजगृह नगर से बाहर निकला

पीडित करने, विध्वस करने अने गृहविहीन बनावी भूकतो हुतो त्पारपछी
 ते दासचेटक चिलाते राजगृह नगरमा घण्टा अर्थाभिशङ्क-आ चिलाते अमारा
 द्रव्यतु हरण कर्युं छे तेमज्ज आ प्रमाणे लविष्यमा पणुं करणुं करशे, आ
 नतनी शका करनाराओ वडे, चौर्याभिशङ्की-ओणुं अमारा धरोमा पेशीने
 पडैला चोरी करी हुती तेमज्ज लविष्यमा पणुं ते चोरी करशे ज्-आ नतनी
 चोरीनी आशका करनाराओ वडे, दाराभिशङ्की-ओणुं पडैला अमारी स्त्रीओ
 उपर बलात्कार कर्यो छे, आ प्रमाणे लविष्यमा पणुं ते चोक्रस आपुं कर
 शे ज्, आ रीते चोतानी स्त्रीओ उपर बलात्कारनी आशकापाणा पुत्र्यो वडे
 तेमज्ज धनवानो वडे, जुगार रमनारा जुगारीओ वडे, बार बार

मूलम्—तएणं से चिलाए दासचेडे विजयस्त चोरसेणा-
वइस्त अग्गे असिलट्टुग्गाहे जाए यावि होत्था, जाहे वि य ण
से विजए चोरसेणावई गामघायं वा जाव पंथकोट्टि वा काउं
वच्चइ ताहे वि य ण से चिलाए दासचेडे सुवहुपि हु कुवियवल
हयविमहिय जाव पडिसेहेइ । पुणरवि लद्धेट्ठे कयऊज्जे अणह
समग्गे सीहगुह चोरपल्लि हव्वमागच्छइ । तएण से विजए
चोरसेणावई चिलायं तक्कर वहुईओ चोरविज्जाओ य चोरमते
य चोरमायाओ चोरनिगडीओ य सिक्खावेइ । तएणं से
विजए चोरसेणावई अन्नया कयाइ कालधम्मुणा सजुत्ते यावि
होत्था । तएण ताइं पचचोरसयाइं विजयस्त चोरसेणावइस्त
महयार इड्डीसक्कारसमुदएणं णीहरणं करेति, करित्ता वहुइं
लोइयाइं मयकिच्चाइं करेति, करित्ता जाव विगयसोया जाया
यावि होत्था । तएणं ताइ पंच चोरसयाइ अन्नमन्न सदावेति,
सदावित्ता एव वयासी—एव खल्लु अम्हं देवाणुप्पिया । विजए
चोरसेणावई कालधम्मुणा संजुत्ते, अयं च णं चिलाए तक्करे
विजएणं चोरसेणावइणा वहुईओ चोरविज्जाओ य जाव सिक्खा
विए, तं सेयं खल्लु अम्ह देवाणुप्पिया । चिलायं तक्कर सीह-
गुहाए चोरपल्लीए चोरसेणावइत्ताए अभिसिचित्तए त्तिकट्ठु
अन्नमन्नस्त एयमट्ठ पडिसुणेति, पडिसुणित्ता चिलाय तीए
सीहगुहाए चोरसेणावइत्ताए अभिसिचति । तएण से चिलाए

और निकल कर जहा वह सिंहगुहा नाम की चोरपल्ली थी वहाँ आया
वहाँ आकर वह चार सेनपति के घाद रहने लगा ॥ सूत्र-३ ॥

राजगृह नगरधी बहार नीकल्ये अने नीकणीने ल्या ते सिद्धगुहा नामे चोरपल्ली
हुती त्या आये, त्या आधीने चोर सेनापतिनी साथे रहेवा लाग्ये ॥सू०३॥

चोरसेणावई जाण अहम्मिण जाव विहरइ । तएणं से चिलाए
 घोरसेणावई चौराणय जाव कुटंगे यावि हांर्या । से ण तस्य
 सीहगुहाए चौरपल्लीए पचपहं चोरसयाण य एवं जहा विजओ
 तहेव सव्वं जाव रायगिहस्स दाहिणपुरदियमिल्ल जणवयं
 जाव नित्थाणं निज्जण करमाणे विहरइ ॥ सू० ४ ॥

टीका—' तएण ' इत्यादि । ततः खलु स चिलातो दासचेटो विजयस्य
 चोरसेनापतेरस्यः=प्रधान ' असिन्दुग्गाहे ' अभियष्टिग्राहः=असि=करवाल,
 यष्टि=वदण्डः, तौ गृह्णातीति, असियष्टिग्राहः=असियष्टिग्राहिसंचालनचतुरो
 जातश्चापि अभूत् । ' ताहे वि यण ' यदाऽपि च खलु स विजयश्चोर सेनापतिः

तएण से चिलाण दासचेडे इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से चिलाण दासचेडे) वह दासचेटक
 चिलात (विजयस्य चोरसेणावइस्य) चोर सेनापति उस विजय तस्कर
 का (अगो यावि हो०) सय से प्रधान असि, यष्टि, ग्रह-तलवार
 और लाठी के चलाने में चतुर-यत्न गया । (जाहे वि य ण से विजए
 चोरसेणावईगामघाय वा जाव पथकोट्टि वा काउ वच्चइ, ताहे वि य णं
 से चिलाण दासचेडे सुवहु पि हु क्वियवल ह्यविमहिय जाव पडिसेहेइ,
 पुणरवि लद्धे कयकज्जे अणहसमग्गे सीहगुह चोरपल्लि हव्वमाग
 च्छइ) जब वह चोर सेनापति विजय, ग्रामो का घात करने के लिये,

(तएण स चिलाए दासचेडे इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्पारपथी (से चिलाए दासचेडे) ते दास चेटक चिलात
 (विजयस्य चोरसेणावइस्य) चोर सेनापति ते विजय तस्करने । (अगो
 यावि हो०) सौथी प्रधान आसि, यष्टि (लाठी) आळ, तस्वार अने लाठी
 थलापवाभा चतुर भनी गये।

(जाहे वि य ण से विजए चोरसेणावई गामघाय वा जाव पथकोट्टि वा
 काउ वच्चइ, ताहे वि य ण से चिलाए दासचेडे सुवहु पि हु क्वियवल ह्यविम
 हिय जाव पडिसेहेइ, पुणरवि लद्धे कयकज्जे अणहसमग्गे सीहगुह चोरपल्लि
 हव्वमागच्छइ)

अथै ते चोर सेनापति विजय ग्रामोना घात भाटे थावत् पडिडेने
 लुट्वा भाटे नीकणतो डतो त्पारै ते दास चेटक चिलात चोरै ॥ ४ ॥

ग्रामयात वा यावत् 'पथकोट्टि' पान्यकुट्टिम्=पथिकजनलुण्ठन वा 'काउ' कर्तुं 'वच्चइ' प्रजति=गच्छति 'ताहेवि य' तदाऽपि च खलु स चित्रातो दासवेदः सुग्रहो अपि 'हु' इति शक्यालङ्कारे कृत्रियन्त्र 'कूपिकानल=चोरगवेपकसैन्य 'हयविमहिय जाव' हतविमथित यावत्-सर्वथा विध्वस्त कृत्या 'पडिसेहेइ' प्रतिपेधयति=निवारयति । पुनरपि 'लह्ण्टुठे' लब्धार्थ =लब्धः प्राप्तः, अर्थ =स्वामिलपित येन स=प्राप्तस्वामिलपितः, अत एव 'कयकञ्जे' कृतकार्यः=कृत कार्यं येन स, कृतनिजकृत्यः 'अणहममग्गे' अनयसमग्रः=अनयम्=अक्षतम्-अन्तराले केनाप्यनपहत समग्र=समस्त चौर्षाद्यपहतवस्तुजात यस्य सः=अलुण्ठित सर्वस्यः सिंहगुहा चोरपल्लि 'ह्व' शीघ्रमागच्छति । ततः खलु स विजयश्चोर-सेनापति, चिलात तस्कर वहीः चोरविद्याश्च चोरमन्त्राश्च चोरमायाश्चोरनिकृतीश्च मायायाः प्रच्छादनार्थं वा माया सा 'निकृतिः' उच्यते ता 'सिक्खावेड'

यावत् पथिक जनो को लूटने के लिये चलता था-तब वह दास चेटक चिलात भी चोर गवेपक सैन्य को हत, विमथित यावत् सर्वथा वि-वस्त करके पीछे भगा देता था-और स्वामिलपित अर्थ को प्राप्तकर अपने कार्य में सफलता प्राप्त कर लिया करता था । इस तरह वह चोरी में मिले हुए द्रव्य को सुरक्षित रखता हुआ-बीच में किसी के भी द्वारा द्रव्य की छीना छपटी से रहित होता हुआ उस सिंहगुहा नाम के चोरपल्ली में बहुत जल्दी लौट आता था । (तएण से विजण चोर सेनावई चिलाय तस्कर बहूईओ चोरविज्जाओ य चोरमते य चोर मायाओ चोर निगडीओ य सिक्खावेड) उस चोर सेनापति विजय तस्कर ने चिलात चोर के अनेक चोर विद्याओ को, अनेक चोरमन्त्रो को अनेक विध चोर सम्बन्धी मायाचारी को और मायाओ को छिपाने के

आवेला सैन्यने हत, विमथित यावत् सपूर्व रीते विध्वस्त उरीने लगाडी भूकते हते अने पोताना छन्दित अर्थने प्राप्त करीने पोताना जरमा सङ्गता भेजवते हते आ प्रमाणे ते चोरीमा भेजवेला द्रव्यने सुरक्षित राखते। पश्चे कोर्ष पण्णी भोजन वडे द्रव्यनी लुट-पाट न थाय-तेम पोतानी मतने सुरक्षित राखते ते शीघ्र सिद्धशुद्धा नामे चोरपल्लीमा पाछे आवते रहते हते।

(तएण से विजण चारसेनावई चिलाय तस्कर बहूईओ चोरविज्जाओ य चोरमते य चोरमायाओ चोरनिगडीओ य सिक्खावेड)

ते चोर सेनापति विजय तस्करे चिलात चोरने धरुी चोर विद्याओने, धरुी चोरमन्त्रोने, धरुी चोर सम्बन्धी मायाचारीओने अने मायाने छुपाववा भाटे भोजन मायाचारीओ शीघ्रवाडी

चोरसेणावई जाण अहम्मिण जाण विहरइ । तण्णं से चिलाए
 चोरसेणावई चोराणय जाव कुटंगे यावि होत्या । से णं तरय
 सोहगुहाए चोरपट्टीए पचण्ह चोरसयाण य एवं जहा विजओ
 तहेव सव्वं जाव रायगिहस्स दाहिणपुरत्थिभिल्ल जणवयं
 जाव निरथाणं निद्धणं करेमाणे विहरइ ॥ सू० ४ ॥

टीका—' तण्ण ' इत्यादि । ततः खलु स विगतो दामचेटो विजयस्य
 चोरसेनापतेरभ्यः=प्रधान ' असिउट्टगाहे ' अमियट्टिग्राहः=असि=करवालः,
 यट्टि=अशदण्डः, तौ गृह्णातीति, अमियट्टिग्राहः=असियट्ट्यादिप्रचालनचतुरो
 जातश्चापि अभूत् । ' ताहे वि यण ' यदाऽपि च खलु स विजयश्चोर सेनापतिः

तण्ण से चिलाए दामचेडे इत्यादि ।

टीकार्थ—(तण्ण) इसके घाट (से चिलाए दासचेडे) वह दासचेटक
 चिलात (विजयस्स चोरसेणावइस्स) चोर सेनापति उस विजय तस्कर
 का (अगो यावि हो०) सय से प्रधान असि, यट्टि, ग्रह-तलवार
 और लाठी के चलाने मे चतुर-यन गया । (जाहे वि य णं से विजए
 चोरसेणावईगामघाय वा जाव पथकोट्टि वा काउ वच्चइ, ताहे वि य ण
 से चिलाए दासचेडे सुवहु पि हु कूवियवल ह्यविमहिय जाव पडिसेहेइ,
 पुणरवि लद्धे कयऊजे अणहसमगो सीहगुह चोरपल्लि हव्वमाग
 चउइ) जय वह चोर सेनापति विजय, ग्रामो का घात करने के लिये,

(तण्ण से चिलाए दासचेडे इत्यादि—

टीकार्थ—(तण्ण) त्थारपथी (से चिलाए दासचेडे) ते दास चेटक चिलात
 (विजयस्स चोरसेणावइस्स) चोर सेनापति ते विजय तस्करने (अगो
 यावि हो०) सौथी प्रधान आसि, यट्टि (लाठी) आळ, तरवार अने लाठी
 थलाववाभा यतुर भनी गथे

(जाहे वि य ण से विजए चोरसेणावई गामघाय वा जाव पथकोट्टि वा
 काउ वच्चइ, ताहे वि य ण से चिलाए दासचेडे सुवहु पि हु कूवियवल ह्यविम
 हिय जाव पडिसेहेइ, पुणरवि लद्धे कयऊजे अणहसमगो सीहगुह चोरपल्लि
 हव्वमागच्छइ)

अथारे ते चोर सेनापति विजय आभेना घात भाटे यावत् पधिकेने
 लुट्वा भाटे नीकणतो हुते त्थारे ते दास चेटक चिलात चोरो

खलु अस्माक हे देवानुप्रियाः । विजयश्वोरसेनापति कालधर्मेण संयुक्तः=मृत इत्यर्थः । अय च खलु चिलातः तस्करो विजयेन चोरसेनापतिना ' बहूर्द्धो चोर-विज्जाओ जाव ' बह्व्यः चोरविद्या यावत्-चोरविद्यादि चोरनिकृतिपर्यन्तासु सरुलचोरशिक्षासु ' मित्रिन्वए ' शिदितः=पारङ्गमितः, ' त ' तरमात् कारणात् ' सेय ' श्रेयः खलु अस्माक हे देवानुप्रियाः ! चित्रात तस्कर मिहगुहायाश्वीर-पल्लयाश्वोरसेनापतितयाऽभिपिश्चितुम्, अर्थात् अय चिलात तस्करोऽम्माभिः चोर सेनापतिपदे नियोज्य, ' तिकट्टु ' इति कृत्या=इति मनसि विधाय ' अन्नमन्नस्स ' अन्योऽन्यस्य ' एयमट्ट ' एतमर्थम्=चिलातस्य चोरसेनापतिपदे नियोजनरूपमर्थम्

किया-(एव खलु अम्ह देवाणुप्पिया ! विजण चोरसेणावई कालधम्मु णा सजुत्ते, अय च ण चिलाण तस्करे विजणण चोरसेणावइणा बहूर्द्धो चोरविज्जाओ य जाव सिक्खाविण, त सेय खलु अम्ह देवाणुप्पिया ! चिलाय तस्कर सीहगुहाए चोरपट्टीण चोरसेणावइत्ताए अभिसिचित्तए त्तिकट्टु अन्नमन्नस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता चिलाय तीसे सीहगुहाए चोरसेणावइत्ताए अभिसिचित्ति) देवानुप्रियो ! देखो-हमारे नायक चोर सेनापति विजय तो अब मर चुके हैं । उन्होंने इस चिलात चोर को अनेक चोर विद्याएँ आदि सब कुछ सिखलायी दिया है । अत हमलोगों को अब गरी उचित है कि हमलोग चिलात चोर को सिंह गुहा नामकी इस चोर पट्टी का चोर सेनापति के रूप में नियुक्त करले अर्थात् चोरसेनापति के पद पर इस चिलात चोर को नियुक्त करलें इस प्रकार विचार करके उन्होंने एक दूसरे के विचार रूप अर्थ को

(एव खलु अम्ह देवाणुप्पिया ! विजण चोरसेणावई कालधम्मुणा सजुत्ते, अय च ण चिलाण तस्करे विजणण चोरसेणावइणा बहूर्द्धो चोरविज्जाओ य जाव सिक्खाविण, त सेय खलु अम्ह देवाणुप्पिया ! चिलाय तस्कर सीह गुहाए चोरपट्टीण चोरसेणावइत्ताए अभिसिचित्तए त्तिकट्टु अन्नमन्नस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता, चिलाय तीसे सीहगुहाए चोरसेणावइत्ताए अभिसिचित्ति)

हे देवानुप्रियो ! तुमको, अमारा नायक चोर सेनापति विजय तो हुवे भरलु पाभ्या ठे तेमहे आ चिलात चोरने धरुी चोर विद्याओ वगेरे अधु शीभन्धु न ठे अत्ता माटे हुवे अभने अ न थोग्य लागे छे हे अभे दोके चिलात चोरने आ सिंहगुहा नामनी चोरपट्टीने। चोर सेनापति बनावी लथओ चोर सेनापतिना न्याने आ चिलात चोरनी नीम लु कट्टी लथओ आ प्रमाहे विचार करीने तेमहे अक भीलना विचार इप

शिक्षयति । ततः खलु म विजयो चोरसेनापतिः अन्यदा कदाचिन् 'कालधम्मणा'
 कालधर्मैग=मृ-युना सयुक्तथापि अभयत् मृतइत्यर्थः । ततः खलु तानि पञ्चचोर
 शतानि=पञ्चशतवर्ग्यकाशोरा, विजयस्य चोरसेनापतेः महता २ इड्डिसकार
 समुदण्ण 'ऋद्धिमत्कारसमुदयेन 'णीहरण' निर्हण्ण=श्मशानभूमिनयन 'करंति'
 कुर्वन्ति, कुन्वा गृह्णि लौकिकानि मृतगृह्णयानि कुर्यन्ति, कुन्वा यात् विगत
 शोभा जाताथापि अमयन् । ततः खलु तानि पञ्चचोरशतानि अन्योऽन्यं शब्द
 यति शब्दयित्वा एवमवादिषु'-सर्वे मिच्छिन्वा परस्परमेव विचारितवन्तइत्यर्थ एव

लिये दूसरी और माया चारी को सिंगला दिया। (तण्ण से विजण
 चोरसेणावई अत्रया कयाइ कालधम्मणा सजुत्ते यावि होत्था, तण्ण
 ताइ पचचोरसयाइ विजयस्स चोरसेणावइस्स महया २ इड्डी सकार
 समुदण्ण णीहरण करंति करित्ता बहूइ लोइयाइ मयकिच्चाइ करंति,
 करित्ता जाव विगयसोया जाया यावि होत्था। तण्ण ताइ पच चोर
 सयाइ अन्नमन्न सहावेति, सहावित्ता एव वयासी) इस से बाद वह
 चोर सेनापति विजय किसी एक दिन कालधर्मगत हो गया। तब उन
 पांच सौ चोरो ने चोर सेनापति विजय तस्कर को बड़े ठाट बाट के
 साथ अर्थी-श्मशान यात्रा निकाली बादमें उन्होंने ने भूल्यसबन्धी जितने
 भी लौकिक कृत्य होते हैं वे सब क्रिये। लौकिक कृत्य करके सबके सब
 धीरे २ शोक रहित जप बन चूके-तब उन पांच सौ चोरो ने परस्पर में
 एक दूसरे को बुलायो-और बुलाकर उन से इस प्रकार कहा-विचार

(तण्ण से विजण चोरसेणावई अत्रया कयाइ कालधम्मणा सजुत्ते
 यावि होत्था, तण्ण ताइ पच चोरसयाइ विजयस्स चोरसेणावइस्स महया
 २ इड्डी सकारसमुदण्ण णीहरण करंति करित्ता बहूइ लोइयाइ मयकिच्चाइ
 करंति, करित्ता जाव विगयसोया जाया यावि होत्था। तण्ण ताइ पच चोर
 सयाइ अन्नमन्न सहावेति, सहावित्ता एव वयासी)

त्यारपणी ते चोर सेनापति विजय केअं ओउ विवसे भृत्यु पाभ्यो त्यारे
 ते पायसेो चोरोओ चोर सेनापति विजय तस्करनी लारे ठाठथी श्मशानयात्रा
 काठी त्यारपणी तेमणे तेना भृत्यु स मधी लौकिक कृत्यो कथो लौकिक कृत्यो
 पूरा कथो बाद धीमे धीमे त्यारे भधा शोक रहित तथा त्यारे ते पायसेो
 चोरोओ परस्पर ओकधीमने ओवाओया अने ओउ स्थाने ओउत्र थधने तेमणे
 आ प्रभाणे विचार कथो हे—

खलु अस्माक हे देवानुप्रियाः ! विजयशोरसेनापति काव्यभेण संयुक्तः=मृत इत्यर्थः । अय च खलु विगतः तस्करो विजयेन चोरसेनापतिना ' बहूर्द्धो चोर-विज्जाओ जाव ' वदव्यः चोरविद्या यास्त-चोरविद्यादि चोरनिकृतिपर्यन्तासु सरुलचोरशिक्षामु ' मित्रिणव ' शिक्षितः=पारङ्गमितः, ' त ' तरमात् कारणात् ' सेय ' श्रेय ' खलु अस्माक हे देवानुप्रिया ! चित्रात तस्कर मिहगुहायाश्चौर-पल्लयाश्चोरसेनापतितयाऽभिपिश्चितुम्, अर्गात् अय चिलात तस्करोऽम्माभिः चोर सेनापतिपदे नियोज्य, ' तिकट्टु ' इति कृत्वा=इति मनसि विधाय ' अन्नमन्नस ' अन्योऽन्यस्य ' एयमट्ट ' एतमर्थम्=चिलातस्य चोरसेनापतिपदे नियोजनरूपमर्थम्

किया-(एव खलु अम्ह देवाणुप्पिया ! विजए चोरसेणावई कालवम्मु णा सजुत्ते, अय च ण चिलाए तक्करे विजएण चोरसेणावइणा बहूर्द्धो चोरविज्जाओ य जाव सिक्खाविण, त सेय खलु अम्ह देवाणुप्पिया ! चिलाय तस्कर सीहगुहाए चोरपट्टीए चोरसेणावइत्ताए अभिसिंचित्तए त्ति कट्टु अन्नमन्नस एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता चिलाय तीसे सीहगुहाए चोरसेणावइत्ताए अभिसिंचति) देवानुप्रियो ! देखो-हमारे नायक चोर सेनापति विजय तो अब मर चुके हैं । उन्होंने इस चिलात चोर को अनेक चोर विद्याए आदि सब कुछ सिखलाही दिया है । अत हमलोगों को अब यही उचित है कि हमयोग चिलात चोर को सिंह गुहा नामकी इस चोर पट्टी का चोर सेनापति के रूप में नियुक्त करले अर्थात् चोरसेनापति के पद पर इस चिलात चोर को नियुक्त करले इस प्रकार विचार करके उन्होंने एक दूसरे के विचार रूप अर्थ को

(एव खलु अम्ह देवाणुप्पिया ! विजए चोरसेणावई कालवम्मुणा सजुत्ते, अय च ण चिलाए तक्करे विजएण चोरसेणावइणा बहूर्द्धो चोरविज्जाओ य जाव सिक्खाविण, त सेय खलु अम्ह देवाणुप्पिया ! चिलाय तस्कर सीह गुहाए चोरपट्टीए चोरसेणावइत्ताए अभिसिंचित्तए त्ति कट्टु अन्नमन्नस एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता, चिलाय तीसे सीहगुहाए चोरसेणावइत्ताए अभिसिंचति)

हे देवानुप्रियो ! तुम्हो, अमारा नायक चोर सेनापति विजय तो हुवे भरव पाभ्या छे तेभणे आ चिलात चोरने धरुी चोर विद्याओ वगेरे अधु शीभन्धु ७ छे अन्ना भाटे हुवे अभने अन्ना योग्य लागे ७ के अभे लोके चिलात चोरने आ सिंहगुहा नामनी चोरपट्टीना चोर सेनापति बनानी लछओ चिलात चोर सेनापतिना भ्दाने आ चिलात चोरनी नीम लुछ करी लछओ आ प्रभाणे विचार करीने तेभणे अन्ना चिलात विचार रूप

‘ पट्टिसुभेति ’ प्रतिभृश्रन्ति=स्त्रीतृषन्ति, प्रतिभृय, चिन्नात तस्कर चोरसेना पतिवया अर्थात् चोरसेनापतिपदे भगिनिश्रानि । तत्र ग्वत्तु म चिन्नातः चोरसेना पतिर्जातः, फीदृशः ? इत्याह—‘ अहम्मिए गात्र ’ अधार्मिको यावत्-विजयचोर सेनापतिवदधार्मिको यावदधर्मकेतुर्भवत विहरणि । ततः ग्वत्तु स चिन्नातः चोर सेनापति ‘ चोराण य जात्र ’ चोराणा च यावत्=चोरपारदारिकादीनां च ‘ कुडगे ’ कुडङ्गः आश्रयस्थान चाऽपि आसीत् । स खत्तु तत्र सिंहगुहायां चोर पल्ल्या पञ्चाना चोरशताना च एव यथा विजयस्तथैव सर्वा यावत्=विजयवत् पञ्च-शताना चोराणामुपरि आधिपत्यं कर्तुं, राजगृहस्य दक्षिणपौरस्तम्भम्=अग्निकोणस्थ

स्वीकार कर लिया । और स्वीकार करके उस चिलात चोर को अन्त में उस सिंहगुहा नामकी चोर पल्ली का उन्होंने ने चोर सेनापति के रूप में अभिषेक कर दिया । (तएण से चिलाण चोरसेणावई जाण अहम्मिए जाव विहरइ तएण से चोर से० चोराण य जाव कुडगे यावि होत्था, से ण तत्थ सीहगुहाण चोरपल्लीण पचण्ह चोरसयाण य एवं जहा विजओ तहेव सव्व जाव रायगिहस्स दाहिणपुरत्थिमिल्ल जणवय जाव णित्थाण निद्वण करेमाणे विहरइ) इस तरह वह चिलात चोर सेनापति बन गया । चोरसेनापति बनकर वह विजय चोर सेनापति की तरह अधार्मिक यावत् अधर्मकेतु जैसा हो गया । अतः वह चिलात चोर सेनापति चोरों का यावत् पारदारिक आदिकों का कुडग की तरह वासों के बन के समान-आश्रयस्थान बन गया और उस सिंहगुहा नामकी पल्ली में पाचसौ चोरों का आधिपत्य करता हुआ विजय तस्कर

अर्थने स्वीकारी दीधे अने स्वीकारीने छेवटे ते चिलात चोरने। ते सिंहगुहा नामनी चोरपल्लीने। तेभहे चोर सेनापतिना इपभा अलिषेक करी दीधे।

(तएण से चिलाण चोरसेणावई जाण अहम्मिए जाव विहरइ तएण से चोर से० चोराण य जाव कुडगे यावि होत्था, सेण तत्थ सीहगुहाण चोरपल्लीण पचण्ह चोरसयाण य एव जहा विजओ तहेव सव्व जाव रायगिहस्स दाहिण पुरत्थिमिल्ल जणवय जाव णित्थाण निद्वण करेमाणे विहरइ)

आ प्रभाहे ते चिलात चोर चोर सेनापति थध गथे। चोर सेनापति णनीने ते विजय चोर सेनापतिनी नेम अधार्मिक यावत् अधर्मकेतु नेवे। थध गथे। तेथी ते चिलात चोर सेनापति चोरने। यावत् पारदारिक-वगेदेने। कुडगनी नेम-वासोना बननी नेम-आश्रयस्थान णनी गथे।

जनपद 'निस्थान निदण' निस्थान निर्धन गृहरहित धनरहित च कुर्वन्
विहरति ॥ सू०४ ॥

मूलम्—तएणं से चिलाए चोरसेणावई अन्नया कयाइ विउल
असणपाणखाइमसाइम उवक्खडावेत्ता पचचोरसए आमतेइ ।
तओ पच्छा पहाए कयवलिकम्मे भोयणभंडवंसि तेहि पचहि
चोरसएहि सद्धि विउल असणं पाणं खाइमं साइम सुर च
जाव पसण्ण च आसाएमाणे४ विहरइ, जिमिय भुत्ततरागए
ते पच चोरसए विउलेण धूवपुप्फगंधमल्लालकारेणं सक्कारेइ,
सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता एव वयासी—एवं खलु देवा-
णुप्पिया । रायगिहे णयरे धण्णे णाम सत्थवाहे अड्ढे०, तस्स
णं धूया, भद्दाए अत्तया पचण्ह पुत्ताणं अणुमग्गजाइया सुसुमा
णाम दारिया यावि होत्था, अहीण जाव सुरूवा, त गच्छामो
णं देवाणुप्पिया । धण्णस्स सत्थवाहस्स गिह विलुंयामो, तुव्वं
विउले धणकणग जाव सिलप्पवाले मम सुसुमा दारिया । तएणं ते
पंच चोरसया चिलायस्स चोरसेणावइस्स एयमट्ठं पडिसुणेति ।
तएणं से चिलाए चोरसेणावई तेहि पचहि चोरसएहि सद्धि
अल्लचम्म दुरूहइ, दुरूहित्ता पुव्वावरण्हकालसमयसि पंचहि
चोरसएहि सद्धि सण्णद्ध जाव गहियाउहपहरणे माइयगोमु-
हिण्हि फलएहि णिकट्टाहि असिलट्टीहि असगएहि तोणेहि

की तरह राजगृह नगर के बाहिर के अग्निक्वणस्य जनपदो को गृह
रहित और धन रहित करने लग गया । सूत्र ४ ॥

नाभनी चोरपट्टीमा पायसे। ओरोनो अधिपति धधने विजय तस्करनी नेम
राजगृह नगरनी षडारना अग्निक्वण तरुना जनपदोने गृहरहित अने धन
रहित ओटले के अरणाह वरवा वाग्या ॥ सूत्र ४ ॥

'पट्टिगुणंति' प्रतिश्रुयन्ति=स्त्रीकुर्यन्ति, प्रतिश्रुयन्त्य, चिन्नात् तस्कर चोरसेनापतिवया अर्थात् चोरसेनापतिपदे अगिपिश्चति । ततः खलु म चिन्नात् चोरसेनापतिर्जातः, कीदृशः ? इत्याह—'अहम्मिए जाव' अधार्मिको यावत्—विजयचोरसेनापतिवदधार्मिको यावदधर्मकेतुर्भवेत् विहरति । ततः खलु त चिन्नात् चोरसेनापति 'चोराण य जाव' चोराणा च यावत्=गोरपारदारिकादीनां च 'कुडगे' कुडङ्गः आश्रयस्थान चाऽपि गामीत् । स खलु तत्र सिंहगुहायां चोरपत्न्या पञ्चाना चोरशताना च एव यथा विजयस्तथैव मरुं यावत्=विजयवत् पञ्चशताना चोराणामुपरि आधिपत्यं कुर्यात्, राजगृहस्य दक्षिणपौरस्तम्=ज्मिकोणस्य

स्वीकार कर लिया। और स्वीकार करके उस चिन्नात् चोर को अन्त में उस सिंहगुहा नामकी चोर पट्टी का उन्होंने ने चोर सेनापति के रूप में अभिषेक कर दिया। (तएण से चिन्नात् चोरसेणावई जाए अहम्मिए जाव विहरइ तएण से चोर से० चोराण य जाव कुडगे यावि होत्था, से ण तत्थ सीहगुहाए चोरपट्टीए पचण्ह चोरसयाण य एव जहा विजओ तहेव सब्ब जाव रायगिहस्स दाहिणपुरत्थिमिहल जणवय जाव गित्थाण निद्वण करेमाणे विहरइ) इस तरह वह चिन्नात् चोरसेनापति बन गया। चोरसेनापति बनकर वह विजय चोर सेनापति की तरह अधार्मिक यावत् अधर्मकेतु जैसा हो गया। अतः वह चिन्नात् चोर सेनापति चोरों का यावत् पारदारिक आदिकों का कुडग की तरह वासों के वन के समान-आश्रयस्थान बन गया और उस सिंहगुहा नामकी पट्टी में पाचसौ चोरों का आधिपत्य करता हुआ विजय तस्कर

अर्थने स्वीकारी दीधे। अने स्वीकारीने छेवटे ते चिन्नात् चोरने। ते सिंहगुहा नामनी चोरपट्टीने। तेभण्णे चोर सेनापतिना इपमा अलिषेक करी दीधे।

(तएण से चिन्नात् चोरसेणावई जाए अहम्मिए जाव विहरइ तएण से चोर से० चोराण य जाव कुडगे यावि होत्था, सेण तत्थ सीहगुहाए चोरपट्टीए पचण्ह चोरसयाण य एव जहा विजओ तहेव सब्ब जाव रायगिहस्स दाहिण पुरत्थिमिहल जणवय जाव गित्थाण निद्वण करेमाणे विहरइ)

आ प्रभाण्णे ते चिन्नात् चोर चोर सेनापति थए गये। चोर सेनापति णनीने ते चिन्त्य चोर सेनापतिनी जेम अधार्मिक यावत् अधर्मकेतु जेवे। थए गये। तेथी ते चिन्नात् चोर सेनापति चोरसेना यावत् पारदारिक वगेसेने। कुडगनी जेम-वासोना बननी जेम-आश्रयस्थान णनी गये।

ध्रुत्तरागए' जिमितध्रुत्कोत्तरागत = जिमितः = कृतभोजनः ध्रुत्कोत्तरकालमागत यावत् परमशुचिभूत. सुवासनपरगतः सन् तानि पञ्च चोरशतानि विपुलेन = अत्यर्थेन 'ध्रुवपुष्पगधमल्लालकारेण' = धूप पुष्पगन्धमाल्यालकारेण = धूपः = सुगन्धित द्रव्येण उत्पन्नो धूमः, पुष्प = कुसुमम्, गन्धः = चन्दनादि माल्यम् = माला, अलङ्काराणि = आभरणानि, एतेषा च समाहारद्वन्द्वः, तेन सत्करोति, सम्मानयति, सत्कृत्य सम्मान्य एवम्-अवदत्-एव खलु हे देवानुमिया' ! राजशृङ्गे नगरे धन्यो

ल्लालकारेण सत्कारेण, सम्माणेन, सत्कारित्वा सम्माणित्वा एव दयासी) विपुल मात्रो मे, अज्ञान पान, खादिम एव स्वादिमरूप चारो प्रकार का आहार बनवा कर उन पांचसौ चोरो को आमंत्रित किया। जब वे सब आचुके-तब उस चिलात चोर ने स्नान से निवृत्त कर और वाग्रसादि को अन्नादिका भाग देनेरूपवलिकर्म आदि कर भोजन मंडपमें बैठकर उन पांच सौ चोरो के साथ उस विपुलमात्रा में निष्पन्न हुए अशन, पान, खादिम, एव स्वादिमरूप चारो प्रकार के आहार को तथा सुरा, यावत् प्रसन्न मदिरा को खूद मनमाने रूप में पिया खाया जब वे सब के सब अच्छी तरह भोजन कर उत्तर काल में परमशुचिभूत होकर आनन्द के साथ एक स्थान पर आकर बैठचुके तब उस चिलात चोर सेनापति ने उनका धूप से-सुगन्धित द्रव्य से निष्पन्न हुए धूप से, पुष्पो से, चंदन आदि से, मालाओ से, और आभरणो से सत्कार किया सम्मान किया। सत्कार सम्मान करके फिर उनसे उसने इस प्रकार

पुष्पगन्धमाल्यालकारेण अशन, पान, खादिम अने स्वादिम चारो प्रकारको आहार बनावडावीने ते पाचसो चोराने आमंत्रित कर्या न्यारे तेजो अधा आवी गया त्यारे ते चिलात चोर स्नान कर्युं अने त्यारपछी तेजो डागडा वगेरे पक्षीजोने अन्न वगेरेने लाग अर्पाने वलिकर्म वगेरे कर्युं त्यारभाड तेजो लोअन मंडपमा भेसीने ते पाचसो चोरानी साथे ते पुष्पगन्धमाल्यालकारेण अशन, पान, खादिम अने स्वादिम रूप चारो प्रकारको आहार बनावडावेला, अशन, पान, खादिम अने स्वादिम रूप चारो प्रकारको आहार रने तेमज सुरा यावत् प्रसन्न मदिराने पूण धराध धराधने पाधा-पीधा न्यारे तेजो अधा सारी रीते जमीने परमशुचीभूत धधने आनन्दपूर्वक एक स्थान उपर आवीने एकठा थया-भेसी गया, त्यारे ते चिलात चोर सेनापतिजे तेमनो धूपधी, पुष्पोधी, चंदन वगेरेधी, मालाजोधी अने आभर जोधी सत्कार कर्यो अने सम्मान कर्युं सत्कार तेमज सम्मान करीने तेजो तेमने आ प्रभाजे नृक्षुं हे-

सजीवेहि धणूहि समुन्निरात्तेहि सरैहि समुत्तालियाहि दीहाहि
 ओसारियाहि उरुघंटयाहि छिप्पतुरेहि वजमाणेहि महया महया
 उक्किट्ठसीहणायचोरकलकलरव समुद्धरवभूय करेमाणे सीहगु-
 हाओ चोरपल्लीओ पडिणिम्ममइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव राय-
 गिहे नयरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता रायगिहस्स नयरस्स
 अदूरसामते एग महं गहण अणुपणिसइ, अणुपणिसित्ता, दिवस
 खवेमाणे चिट्ठइ ॥ सू० ५ ॥

टीका—' तएण से ' इत्यादि । ततः सल्ल म चिगतथोरसेनापतिः अन्यदा
 कदाचित् त्रिपुलम् अशनपानखादिमन्वादिमम् ' उरुखवेत्ता ' उपस्नार्य=निष्पाप
 पञ्च चोश्शतानि आमन्त्रयति । ततः पश्चात् स्नात् ' कयवलिकम्मे ' कृतवृत्ति
 कर्मा=कृत वलिकर्म येन सः, कारादीना कृतेदत्त भोजनोपहारो भोजनमण्डपे तैः
 पचमि चोरशतैः सार्धं ' विउल ' त्रिपुलम्=अत्यर्थम्, अशन पान खाद्यस्वाद्य सुरा
 च यावत् प्रसन्ना च ' आसाएमाणे ' आस्वादयन् विहरति । पुनश्च ' जिमिय

' तएण से चिलाए चोरसेणावई ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (चोर सेणावई चिलाए) चोर सेना
 पति चिलात चोर ने (अन्नया कयाइ) किसी एक समय (विउल असण
 पाणखाइमसाइम उवक्खडावेत्ता पचचोरसए आमतेइ - तओ पच्छा
 ण्हाए कयवलिकम्मे, भोजणमडवसि तेहिं पचहिं चोरसएहिं सद्धिं विउल
 असण पाण खाइम साइम सुर च जाव पसण्ण च आसाए माणे ४
 विहरइ, जिमियभुत्तुरागए ते पच चोरसए विउलेण धूवपुक्कगधम

तएण से चिलाए चोरसेणावई इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्था२५४ (चोरसेणावई चिलाए) ये २ सेनापति
 चिलात थोरे (अन्नया कयाइ) कैर्ध थोरे वभते (विउल असणपाणखाइमसाइम
 उवक्खडावेत्ता पच चोरसए आमतेइ-तओ पच्छा ण्हाए कयवलिकम्मे, भोजण
 मडवसि तेहिं पचहिं चोरसएहिं सद्धिं विउल असण पाण खाइम साइम सुर
 च जाव पसण्ण च आसाए माणे ४ विहरइ, जिमिय भुत्तुरागए ते पच चोरसए विउ
 लेण धूवपुक्कगधमल्लालकारेण सकारेइ, सम्माणेइ, सकारित्ता सम्माणित्ता वयासी)

यावत् शिलप्रवाल., मम सुसुमा दारिका-लुण्ठितेषु वस्तुषु मध्ये धनकनकमणि-
मौक्तिकशिलाप्रवालादि वस्तुजातानि युष्माक भवन्तु, मम तु एका सुसुमा दारिका
भविष्यति । तत खलु तानि पञ्च चोरशतानि चिलातस्य चोरसेनापतेः एतमर्थं
प्रतिशृण्वन्ति=स्वीकृवन्ति । ततः खलु स चिलातश्चोरसेनापतिः तै पञ्चभिः
चोरशतैः साद्धं ' अल्लचम्म ' आर्द्रचर्मं दूरोदति, लुण्ठकाहि लुण्ठनप्रस्थानात्
पूर्वं माङ्गल्यार्थमार्द्रचर्मप्यारोहन्तीति तेषा व्यवहार, दूरुह, ' पुष्पावरणकालसम
यसि ' पूर्वापराहकालसमये '=दिनस्य चतुर्थप्रहरे पञ्चमिश्चोरशतैः साद्धं
' सण्णद्ध जाव गहियाउहपहरणे ' सन्नद्ध यावत् गृहीतायुधप्रहरण.=मन्त्रद्वयद्व
वर्मितकवचः=सनद्ध'=सज्जीकृतः, वद्धः=ऋशावन्धनेन सजद्धः, वर्मितः=ऋजे परि
द्वितः कवचो येन स तथोक्तः, ' गृहीतायुधप्रहरण ' गृहीतानि आयुधप्रहरणानि

लूट-जो वस्तु हम तुम लूटेंगे उनमें से तुम्हारी तो धन, कनक, मणि,
मौक्तिक शिलाप्रवाल आदि चीजें होगी-और मेरी केवल एच वह सुम
मादारिका होगी-। इस तरह उन पांचसौ चोरों ने अपने सेनापति
चिलात चोर की इस बात को मान लिया । इसके बाद यह चोर सेना-
पति चिलात, उन पांचसौ चोरों के साथ गीले चमड़े पर बैठ गया ।
लुटेरे लूटने के लिये जय प्रस्थान करते हैं तब वे पहिले गीले चमड़े पर
शुभ शकुन मानने के निमित्त बैठते हैं ऐसा उनमें व्यवहार है बैठकर
फिर वह दिन के चतुर्थप्रहर में पांचसौ चोरों के साथ (सीहगुहाओ
चोरपल्लीओ पडिनिक्खमइ) उस मिहगुहा नाम की चोरपल्ली से
निकला । (सण्णद्ध जाव गहियाउहपहरणे माइयगोमुहिएहिं फलएहिं

येटला भाटे आलो तैयार थाओ, डे देवानुप्रियो ! आपणे षधा त्या नधओ
अने धन्य साधवाडना धरने लुटी लधओ, ने वस्तुओ आपणे षधा लुटीशु
तेमाथी धन, कणुड, मण्णि, मौक्तिक, शिलाप्रवाल वगेरे वस्तुओ तभारी थगे
अने इकत ते सुसुमा दारिका भारी थगे आ प्रभाणे ते पाथसे चोरओ
पोताना सेनापति चिलात चोरनी आ बात स्वीकारी लीधी त्थारपणी ते चोर
सेनापति चिलात, ते पाथसे चोरानी साथे साथे लीना आभडा उपर जेनी
गयो लुटाराओ लुटवा भाटे न्यारे घेरथी नीकणे छे त्तारे तेओ पहिला शुभ
शकुन भाटे लीना आभडा उपर जेसे छे, आ नतने तेओमा शिवाज छे
लीना आभडा उपर जेसीने ते दिवमना थोथा पडोरमा पाथसे चोरानी
साथे (सीहगुहाओ चोरपल्लीओ पडिनिक्खमइ) ते सिडगुडा नामनी
चोरपल्लीमाथी नीकओये।

नाम सार्थवाह आश्रयोऽस्ति । तस्य ग्वलु दृढिता मद्राया श्रान्तजा पञ्चानां पुत्रा
णामनुनागजातिता=पञ्चाना पुत्राणा जननान्तर समुत्पन्ना सुसुमा नाम दारिका
चापि अस्ति, कीदृशी मा ? ' जडोण जाव सुख्या ' अहीन यावत् सुख्या=अहीन
पञ्चेन्द्रियशरीरा यावत् सुख्यापती, ' त ' तत्=तस्माद् गन्धामः त्वलु हे देवानु
प्रियोः । धन्यस्य सार्थवाहस्य गृह विलुप्त्याम' = दुःशामः, पुत्रमाक धनरुक्क

कहा-(एव खलु देवाणुप्पिया । रायगिहे णयरे धण्णे णाम सत्थवाहे
अड्डे० तस्स ण धूया भदाए अत्तया पचण्ह पुत्ताण अणुमग्गजाइया
सुसमा णाम दारिया यात्रि होत्था, अहीण जाव सुख्या त गच्छामोण
देवाणुप्पिया । धणस्स सत्थवाहस्स गिह विलुप्त्यामो तुब्भ विउले
धणकणग जाव सिलप्पवाले, मम सुसुमा दारिया ! तएण ते पच
चोरसया चिलायस्स चोरसेणवईस्स एयमट्ट पडिसुणेंति । तएण से-
चिलाए चोरसेणावई तेहिं पचहिं चोरसहिं सद्धि अल्लचम्म दुरूहइ,
दुरूहत्ता पुग्वावरण्हकालसमयसि पचहिं चोरसएहिं सद्धि) हे देवानु
प्रियो ! सुनो-एक बात कहना है-वह इस प्रकार है-राजगृह नगर में
धन्य नाम का एक धनिक एव सर्वजन मान्य सार्थवाह रहता है । इस
की एक लड़की है । जिसका नाम सुसमा है । यह उसकी पत्नी भद्रा
भार्या से पांच पुत्रों के बाद उत्पन्न हुई है । यह अहीन पाचों इन्द्रियों से
युक्त शरीरवाली है तथा बहुत अधिक सुकुमार एव सुन्दर है । इसलिये
-चलो हे देवानुप्रियो ! हम सब चलो और धन्य सार्थवाह के घर को

(एव खलु देवाणुप्पिया । रायगिहे णयरे धण्णे णाम सत्थवाहे अड्डे०
तरसण धूया भदाए अत्तया पचण्ह पुत्ताण अणुमग्गजाइया सुसमा णाम दारिया
यात्रि होत्था अहीण जाव सुख्या त गच्छामो ण देवाणुप्पिया । धणस्स सत्थ
वाहस्स गिह विलुप्त्यामो, तुब्भ विउले धणकणग जाव सिलप्पवाले, मम सुसमा
दारिया ! तएण ते पच चोरसया चिलायस्स चोरसेणावइस्स एयमट्ट पडि
सुणे ति । तएण से चिलाए चोरसेण वई तेहिं पचहिं चोरसएहिं सद्धि अल्ल चम्म
दुरूहइ, दुरूहत्ता पुग्वावरण्हकालसमयसि पचहिं चोरसएहिं सद्धि)

हे देवानुप्रियो ! सावणो, तमने भारे ओक बात कडेवी छे ते आ
प्रभावे छे के राजगृह नगरमा धन्य नामे ओक धनिक अने सर्वजनमान्य
सार्थवाह रहे छे तेने ओक पुत्री छे, तेनु नाम सुसमा छे धन्यनी पत्नी
भद्राभार्याना गर्भेथी ते पुत्रा पाये लाछये आइ जन्म पायी छे ते अहीन
पाये इन्द्रियेथी युक्त शरीरवाणी छे तेमज्ज अमज्ज सुक

यावत् शिलाप्रवालः, मम सुसुमा दारिका-लुण्ठितेषु वस्तुषु मध्ये धनकनकमणि-
मौक्तिकशिलाप्रवालादि वस्तुजातानि युष्माक भवन्तु, मम तु एका सुसुमा दारिका
भविष्यति । तत खलु तानि पञ्च चोरशतानि चिलातस्य चोरसेनापतेः एतमर्थं
प्रतिशृण्वन्ति=स्वीकुर्वन्ति । ततः खलु स चिलातश्चोरसेनापतिः तै पञ्चभिः
चोरशतैः सादं 'अलुचम्प' आद्रवम् दूरोहति, लुण्ठकाहि लुण्ठनप्रस्थानात्
पूर्वं माङ्गल्यार्थमाद्र्वचर्मण्यारोहन्तीति तेषा व्यवहार, दूरह्य, 'पुञ्जवरणकालसम
यसि' पूर्वापरारणकालसमये '=दिनस्य चतुर्थप्रहरे पञ्चमिश्चोरशतैः सादं
'सण्णद्ध जाव गहियाउहपहरणे' सन्नद्ध यावत् गृहीतायुधप्रहरणः=सन्नद्धवद्ध
वर्मितरुवचः=सन्नद्ध'=सञ्जीकृतः, वद्धः=रुशावन्धनेन सन्नद्धः, वर्मितः=अग्ने परि-
हितः कवचो येन स तयोक्तः, 'गृहीतायुधप्रहरणः' गृहीतानि आयुधप्रहरणानि

लूट-जो वस्तु हम तुम लूटेंगे उनमें से तुम्हारी तो धन, कनक, मणि,
मौक्तिक शिलाप्रवाल आदि चीजें होगी-और मेरी केवल एव वह सुस-
मादारिका होगी-। इस तरह उन पांचसौ चोरों ने अपने सेनापति
चिलात चोर की इस बात को मान लिया । इसके बाद यह चोर सेना-
पति चिलात, उन पाचसौ चोरों के साथ गीले चमड़े पर बैठ गया ।
लुटेरे लूटने के लिये जय प्रस्थान करते हैं तब वे पहिले गीले चमड़े पर
शुभ शकुन मानने के निमित्त बैठते हैं ऐसा उनमें व्यवहार है बैठकर
फिर वह दिन के चतुर्थप्रहर में पाचसौ चोरों के साथ (सीहगुहाओ
चोरपल्लीओ पडिनिक्खमइ) उस सिंहगुहा नाम की चोरपल्ली से
निकला । (सण्णद्ध जाव गहियाउहपहरणे माइयगोमुट्टिण्हि कलएहि

अटला भाटे आलो तैयार थाओ, छे देवानुप्रियो ! आपणे षधा त्या ञ्छओ
अने धन्य सार्थवाडना धग्ने लुगि लध्छओ, ने वस्तुओ आपणे षधा लुटीशुं
तेभाथी धन, उल्लुक, मणि, मौक्तिक, शिलाप्रवाल वगेरे वस्तुओ तभारी थशे
अने इक्ष्ण ते सुसुमा दारिका भारी थशे आ प्रभाणे ते पायसेओ चोरेशे
पोताना सेनापति चिलात चोरनी आ वात स्वीकारी लीधी त्थारपणी ते चोर
सेनापति चिलात, ते पायसेओ चोरानी साथे साथे लीना आभडा उपर जेनी
गथे। लुटाराओ लुटवा भाटे न्थारे घेरथी नीकणे छे त्थारे तेओ पळेला शुभ
शकुन भाटे लीना आभडा उपर जेसे छे, आ न्तने तेओमा शिवाज छे
लीना आभडा उपर जेनीने ते दिवसना थोथा पडोरभा पायसेओ चोरानी
साथे (सीहगुहाओ चोरपल्लीओ पडिनिक्खमइ) ते सिंहगुहा नामनी
चोरपल्लीभाथी नीकणे।

वज्रमाणेहि ' क्षिप्रतूर्यैः पाघमानैः=द्रुत गायमानैः तूर्यैः उपलक्षितः सन् ' महया-
महया उक्किट्टसीहणाये चोरकलकलरव ' महामहोत्कृष्टसि हनादचोरकलकलरव-
अत्यन्तोत्कृष्टसिहनादचोरकलकलशब्दं समुद्रवभूत=समुद्रवेलावृद्धिसमये ध्वनि
मिवकुर्वन्, यद्वा मन्ता महता उत्कृष्टसिहनादेन-' लुप्तवृतीयान्त पदम् '
स्वकृतोत्कृष्टसिहनादेनेत्यर्थः, शेष पूर्ववत् । सिहगुहातश्चोरपल्लीतः प्रतिनिष्क्रा-
म्यति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव राजगृह नगर तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य राजगृहस्य
नगरस्य अदूरसामन्ते एक महद् ' गहण ' गहनम्=वनम् अनुप्रविशति, अनुप्रविश्य,
दिवसम्=शेषदिवसभाग क्षपयन्=व्यतियन् तिष्ठति ॥ सू०५ ॥

शब्दायमान-वहे २ घटों से जल्दी २ वजते हुए बाजोंसे वह उपलक्षित
-युक्त था । तथा उसके निरुलने पर जो चोरों का कलकल रव हुआ-वह
सिंह की गर्जना के जैसा महान उच्चस्वर था-। तथा जिस समय समुद्र
बढ़ता है उस समय जैसा उसका शब्द होता है-वैसा ही वह कल २
रव गर्भीर था । (पडिनिक्खमिच्चा जेणेव रायगिहे नयरे तेणेव उवाग
च्छइ, उवागच्छित्ता रायगिहस्स नयरस्स अदूर सामन्ते एगं मह गहण
अणुपविसइ, अणुपविसित्ता दिवस खवेमाणे चिट्ठइ) चोरपल्ली से
निकलकर वह जहा राजगृह नगर या वहां आया-वहां आकर के वह
राजगृह नगर के अदूरसामन्त-न अति दूर न अति समीप रहे हुए एक
महान जगल मे छिप रहे वहा छिपकर उसने अपना वह दिवस वही
पर ठहर कर समाप्त कर दिया ॥ सू०५ ॥

जल्दी जल्दी वागता वाज्योर्था ते युक्त इतो तेभञ्ज न्यारे ते नीकज्ये।
त्यारे चोशाने जे घोघाट थये ते सिंङ्गी गर्जना जेवे महा ध्वनि दतो
तेभञ्ज न्यारे समुद्रमा लरती आवे छे अने त्यारे जेवे तेने ध्वनि होय
छे, ते भाषणेने ध्वनि पणु तेवे ज गली० इतो (पडिनिक्खमिच्चा जेणेव
रायगिहे नयरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता रायगिहस्स नयरस्स अदूरसामन्ते
एगं मह गहण अणुपविसइ, अणुपविसित्ता दिवस खवेमाणे चिट्ठइ) चो०प०लीभाथी
नीकणीने न्या शङ्खगृह नगर इतुं त्या ते आव्ये त्या आवीने ते शङ्खगृह
नगरथी धवे इर पणु नडि अने धषा नलक पणु नडि जेवा जेक भोटा वनमा
छुपाधने रह्या त्या छुपाधने तेजे चोताने ते दिवस त्या ज पसार करी दीधे ॥सू०५॥

मूलम्—तएण से चिलाए चोरसेणावई अउरत्तकालसमयसि
 निसत पडिनिसतसि पचहिं चोरसएहिं सडिं माइयगोमुहिएहि
 फलएहि जाव मृदआहि उरुघंटियाहि जेणेव रायगिहस्स
 नयरस्स पुरत्थिमिल्ले दुवारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छत्ता
 उदगवत्थिं परामुसइ, आयते चोक्खे सुइभूए ताळुग्घाडणिविज्जं
 आवाहेइ, आवाहित्ता, रायगिहस्स दुवारकवाडे उद-
 एण अच्छोडेइ, कवाड विहाडेइ विहाडित्ता रायगिह अणुप-
 विसइ, अणुपविसित्ता, महयार सदेणं उग्घोसेमाणेए एवं वयासी
 -एव खलु अह देवाणुप्पिया । चिलाए णाम चोरसेणावई
 पचहि चोरसएहि सद्धि सीहगुहाओ चोरपट्ठीओ इह हव्वमागए
 धणस्स सत्थवाहस्स गिह घाउकामे, त जोणं णवियाएमाउ
 याएदुद्ध पाउकामे से णं णिगच्छउ त्तिकट्टु जेणेव धणस्स सत्थ
 वाहस्स गिह तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छत्ता धणस्स गिह विहा
 डेइ। तएण से धणणे चिलाएणं चोरसेणावइणा पचहि चोरसएहि
 सद्धि गिह घाइज्जमाण पासइ, पासित्ता भीए तत्थेए पचहि
 पुत्तेहि सद्धि एगंत अवक्कमइ । तएणं से चिलाए चोरसेणावई
 धणस्स सत्थवाहस्स गिह घाएइ घाइत्ता, सुबहु धणकणग
 जाव सावएज्ज सुसुम च दारिय गेण्हइ, गेण्हित्ता, रायगिहाओ
 पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता, जेणेव सीहगुहा तेणेव
 पहारेत्थ गमणाए ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘ तएण से ’ इत्यादि । ततः खलु स चिलातश्चोरसेनापतिः ‘ अद्द
रत्तकालसमयमि ’ अर्धरात्रकालसमये=मध्यरात्रे, कीदृशे ‘ निसतपडिनिसते ’ निशान्त-
प्रतिनिशान्ते=निशान्त=जन अनिरहित प्रतिनिशान्त=प्रत्येकगृह यस्मिन् तस्मिन्,
जने प्रसुप्ते सतीत्यर्थः, पञ्चभिश्चोरशतै सार्द्धम् ‘ माइयगोमुहिएहिं ’ माइयगोमु-
खितैः, उदररक्षार्थं भल्लूकरोमावृतैर्गोमुखाकारैः ‘ फलएहिं ’ फलकै = पट्टकैः उदरव-
द्धकाष्ठफलकैरित्यर्थः, यावत् ‘ मूइआहिं उरुवटियाहिं ’ मूकिताभिरुख्यंण्टिकाभिः=
निः शब्दी कृताभि विशालघटाभिर्युक्तः यत्रैव राजगृहस्य नगरस्य पौरस्य द्वार
तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य, ‘ उदगवत्थिं ’ उदकवस्ति=चर्ममयजलपात्रम्, ‘ ममक’
इति प्रसिद्धम् ‘ परामुसइ ’ परामृशति=गृह्णाति, अनन्तरम् ‘ आयते ’ आचान्त =
कृतमुखादि प्रक्षालनः ‘ चोक्खे ’ चोक्षः=स्वच्छः अतएव ‘ तालुग्घाडणिं विज्ज ’

‘ तएण से चिलाण चोरसेणावई ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (चोरसेणावई से चिलाए) चोरसेनापति
वह चिलात चोर (निसतपडिनिसते अद्दरत्तकालसमयसि) जयजन
ध्वनिरहित प्रत्येक घर हो गया ऐसे मध्यरात्रिके समयमें (पचहिं चोर
सएहिं सद्धि) उन पांचसौ चोरों के साथ (माइय गोमुहिएहिं फलएहिं
जाव मूइआहिं उरुवटियाहिं जेणेव रायगिहस्स नयरस्स पुरत्थिमिल्ले
दुवारे तेणेव उवागच्छइ) अपने उदर की रक्षा के निमित्त बद्धभल्लूक
के रोमों से आवृत हुए गोमुखाकार काष्ठफलको से यावत् निःशब्दीभूत
विशाल घटिकाओं से युक्त होकर जहा राजगृह नगर का पूर्वदिशा का
द्वार था वहा आया । (उवागच्छित्ता उदगवत्थिं परामुसइ, आयते,
चोक्खे, सुइभूए, तालुग्घाडणिंविज्ज आवाहेइ, आवाहित्ता रायगिहस्स

‘ तएण से चिलाण चोरसेणावई ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारभाइ (चोरसेणावई से चिलाए) चोर सेनापति ते
चिलात चोर (निसतपडिनिसते अद्दरत्तकालसमयसि) त्थारे दरेके दरेके
घरभा भाणुसेना अवाण् अउदम णध थऽ गथे, अवेा ते मध्यरात्रिना
समये (पचहिं चोरसएहिं सद्धि) ते पाथणे चोरेनी साथे

(माइय गोमुहिएहिं फलएहिं जाव मूइआहिं उरुवटियाहिं जेणेव राय
गिहस्स नयरस्स पुरत्थिमिल्ले दुवारे तेणेव उवागच्छइ)

चोताना चेटनी रक्षा भाटे रीछना सेमोथी आवृत्त थयेला गोमुभाजर
काष्ठ इल्लेकेथी यावत् यात थऽ गथेदी मोठी घटिकाओथी युक्त थऽने त्थ्या
राजगृह नगरु पूर्व दिशानु द्वार इत्तु त्थ्या आव्या (उवागच्छित्ता उदगवत्थिं
परामुसइ आयते चोक्खे सुइभूए, तालुग्घाडणिं विज्ज आवाहेइ, आवाहित्ता

मूलम्-तण्णं से चिलाण चोरसेणावई अडरत्तकालसमयांसि
 निसत पडिनिसतंसि पचहिं चोरसएहि सडिं माइयगोमुहिणहि
 फलएहि जाव मृदआहि उरुणटियाहि जेणेव रायगिहस्स
 नयरस्स पुरत्थिमिल्ले दुवारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
 उदगवत्थि परामुसइ, आयंते चोक्खे सुइमूए तालुग्घाडणिविज्जं
 आवाहेइ, आवाहित्ता, रायगिहस्स दुवारकवाडे उद-
 ण अच्छोडेइ, कवाड विहाडेइ विहाडित्ता रायगिह अणुप-
 विसइ, अणुपविसित्ता, महयार सदेणं उग्घोसेमाणेर एव वयासी
 -एव खलु अहं देवाणुप्पिया । चिलाए णामं चोरसेणावई
 पचहि चोरसएहि सद्धि सीहगुहाओ चोरपल्लीओ इह हव्वमागए
 धणस्स सत्थवाहस्स गिह घाउकामे, त जोण णवियाएमाउ
 याएदुद्धं पाउकामे से णं णिगच्छउ त्तिकट्टु जेणेव धणस्स सत्थ
 वाहस्स गिह तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धणस्स गिह विहा-
 डेइ। तण्णंसे धण्णे चिलाएणं चोरसेणावइणा पचहि चोरसएहि
 सद्धि गिह घाइज्जमाण पासइ, पासित्ता भीए तत्थेऽ पचहि
 पुत्तेहि सद्धि एगंत अवक्कमइ । तण्णं से चिलाए चोरसेणावई
 धणस्स सत्थवाहस्स गिह घाएइ घाइत्ता, सुवहु धणकणग
 जाव सावएज्ज सुसुम च दारिय गेणहइ, गेणित्ता, रायगिहाओ
 पडिणिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता, जेणेव सीहगुहा तेणेव
 पहारेत्थ गमणाए ॥ सू० ६ ॥

शीघ्रम् आगतः धन्यस्य सार्धवाहस्य गृह 'घाउकामे' गानयितुकामः=लुण्ठयितुकामः
 हे देवानुप्रियाः । यूयं शृणुत, पञ्चशतचौरैः सदाह चिलातश्चोरमेनापतिरत्रान्यस्य
 सार्धवाहस्य गृह लुण्ठयितुमागतोऽस्मीति भावः, 'त' तत्=तस्मात् कारणात्
 'जो ण' यः खलु 'णवियाए माउयाए' नव्याया मातृकाया 'दुद्ध पाउकामे'
 दुग्ध पातुकाम =यः खलु मदीयद्वस्तान्मृत्यु प्राप्य पुनर्भाविभवभाविन्या नूतनाया
 मातृदुग्धाभिलापीभवेत् 'सेण' स खलु 'णिगगच्छउ' निर्गच्छतु मम समुख
 मागच्छतु 'त्तिकदूड' इतिकृत्वा=इत्यमुक्त्वा यत्रैव अन्यस्य सार्धवाहस्य गृह तत्रैव

पाचसौ चोरों के साथ यहा सिंहगुहा नाम की चोरपत्ली से आया हुआ
 हूँ। मेरी इच्छा अन्यसार्धवाह के घर को लूटने की है—(त) इसलिये
 —(जो ण णवियाए, माउयाए, दुद्ध पाउकामे सेण णिगगच्छउ, त्तिकदूड
 जेणेव धण्णस्स सत्यवाहस्स गिहे तेणेव उगागच्छइ, उवागच्छित्ता
 गिह विहाडेइ । तएण से धण्णे चिलाएण चोरसेणावडणा पचहिं चोर-
 सएहिं सद्धिं गिह घाइज्जमाण पासइ, पासित्ता भीए तत्ये ४ पचहिं
 पुत्तेहिं सद्धिं एगत अवक्कमइ, । तएण से चिलाए चोरसेणावई वण्णस्स
 सत्यवाहस्स गिह घाएइ, घाइत्ता सुवहुधण्णकणग जाव सावएज्ज सुसमं
 च दारिय गेण्हइ, गेण्हित्ता रायगिहाओ पडिणिकखमइ, पडिणिकखमित्ता
 जेणेव सीहगुहा तेणेव पहारेत्थ गमणाए) जो नवीन माता का दूध
 पीना चाहता हो—मेरे हाथ से मृत्यु को प्राप्त कर पुनः भाविभव में
 होनेवाली जननी का दुग्ध पान करने का जो अभिलापी बन रहा हो

चिलात नामे चोर छु डमण्णा ७ डु पांचसो चोदानी साथे अहीं सिद्धगुडा
 नामनी चोरपहलीथी आये छु धन्य सार्धवाहना घरने लूटवानी भारी
 धरु छे (त) भाटे

(जोण णवियाए, माउयाए, दुद्ध पाउकामे सेण णिगगच्छउ, त्ति कदू
 जेणेव धण्णस्स सत्यवाहस्स गिहे तेणेव उगागच्छइ, उवागच्छित्ता वण्णस्स गिह
 विहाडेइ, तएण से धण्णे चिलाएण चोरसेणावडणा पचहिं चोरसएहिं सद्धिं गिह
 घाइज्जमाण पासइ, पासित्ता भीए तत्ये ४ पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं एगत अवक्कमइ ।
 तएण से चिलाए चोरसेणावई वण्णस्स सत्यवाहस्स गिह घाएइ, घाइत्ता सुवहु
 धण्णकणग जाव सावएज्ज सुसमं च दारिय गेण्हइ, गेण्हित्ता रायगिहाओ पडि
 णिकखमइ, पडिक्खमित्ता जेणेव सीह गुहा तेणेव पहारेत्थ गमणाए)

ये नवी मातातु दुध पीवा धरु छे छे अटके के भारा हाथवी मृत्यु
 पाभीने इरी जील भवभा बनारी मातातु दुध पीवा ये धरुतो होय ते

तालोद्घाटिनी विद्याम् ' जागदेः ' जागह्यति=स्मरति ' आगान्ति ' आवाह= स्मृत्वा राजगृहस्य द्वारकपाटानि उदकेन ' आन्त्रोदेः ' आन्त्रोटयति=अग्निपि श्रुति, ' आच्छोडित्ता ' आच्छोटय=अग्निपि=प, कपाट ' विहादेः ' विघाटयति= उद्घाटयति, विघाटय सकृत्चौरैः सहितः राजगृहमनुपविशति, अनुप्रविश्य महता महता=अतिमहता शब्देन ' उग्योसेमाणे २ ' उद्रोपयन २=सुदृग्दृग्घोषणा कुर्वन् एवमवदत्, घोषणामकारमाह-एव खलु अह हे देवानुप्रिया ! चिलातो नाम चोरसेनापतिः पञ्चभिः चोरशतैः सार्द्धम् सिहगुहातथोरपल्लीत इह ' ह्य ' ह्य=

दुवारे कवाडे उदण्ण अच्छोडेइ कवाड विहाडेइ, विहाडित्ता रायगिह अणुपविसह अणुपविसित्ता महया २ महेण उग्योसेमाणे २ एव वयासी -एव खलु अह देवानुप्रिया चिलाण नाम चोरसेणावेई पचहिं चोरस एहिं सद्धिं सिहगुहाओ चोरपल्लीओ इह ह्यवमागण घण्णस्स सत्थवा हस्स गिह घाडकामे) वहां आकर के उसने चर्मनय जलपात्र को-मसक को-अपने हाथ में लिया-और उसके जल से आचमन किया-आचमन करके जब वह शुद्ध परमशुचीभूत हो चुका-तब उसने तालोद्घाटिनी विद्या का आवाहन किया-स्मरण किया-और स्मरण करके राजगृह के द्वार कपाटों को उदक के छीटों से सिञ्चित किया। सिञ्चित करके फिर उसने उन फिवाडों को खोला और खोल करके फिर वह समस्त चोरों के साथ राजगृह नगर के भीतर प्रविष्ट हो गया। प्रविष्ट होकर के उसने वहां बड़े-ओवाजसे वार-वार घोषणा करते हुए इस प्रकार कहा-है देवानुप्रियों ! सुनो-मैं चोरसेनापति चिलात नाम का चोर हूँ-अभी २

रायगिहस्स दुवारकवाडे उदण्ण अच्छोडेइ कवाड विहाडेइ, विहाडित्ता रायगिह अणुपविसह, अणुपविसित्ता महया २ सहेण उग्योसेमाणे २ एव वयासी-एव खलु अह देवानुप्रिया चिलाण नाम चोरसेणावेई पचहिं चोरसएहिं सद्धिं सिहगुहाओ चोरपल्लीओ इह ह्यवमागण घण्णस्स सत्थवाहस्स गिह घाडकामे)
 त्या आचीने तेणे आभडानी थेली-मशक-ने पोताना हाथमा लीधी अने तेना पाणीथी आचमन कयु आचमन करीने ज्यारे ते शुद्ध परम शुचीभूत थर्ध चूकथे त्यारे तेणे तालोद्घाटिनी विद्यानु आवाहन कयुं-स्मरण कयुं, अने स्मरण करीने राजगृहना दरवाजना कमाडोने पाणीथी सिञ्चित करीने तेणे ते कमाडोने उघाडया उघाडीने ते जथा चोरानी साथे राजगृह नगरनी अहर प्रविष्ट थर्ध गयो प्रविष्ट थर्धने तेणे त्या मोटा साडे वार-वार घोषणा करता आ प्रभाणे कहु के हे देवानुप्रियो ! सालणे चोर सेनापति

शीघ्रम् आगतः धन्यस्य सार्थवाहस्य गृह 'घाउकामे' पानयितुकामः=लुण्ठयितुकामः हे देवानुमियाः । यूय भृणुत, पञ्चशतचौरैः सहाह चिलातश्चोरसेनापतिरत्रधन्यस्य सार्थवाहस्य गृह लुण्ठयितुमागतोऽस्मीति भावः, 'त' तत्=तस्मान् कारणात् 'जो ण' यः खलु 'णवियाए माउआए' नव्याया मातृकाया 'दुद्ध पाउकामे' दुग्ध पातुकाम =यः खलु मदीयदस्तान्मृत्यु प्राप्य पुनर्भाविभवभाविन्या नूतनाया मातृदुग्धाभिलाषीभवेत् 'सेण' स खलु 'णिग्गच्छउ' निर्गच्छतु मम समुख मागच्छतु 'त्ति कट्टु' इतिकृत्वा=इत्यमुक्त्वा यत्रैव धन्यस्य सार्थवाहस्य गृह तत्रैव

पाचसौ चोरों के साथ यहां सिंहगुहा नाम की चोरपत्नी से आया हुआ हूँ। मेरी इच्छा धन्यसार्थवाह के घर को लूटने की है-(त) इसलिये -(जो ण णवियाए, माउयाए, दुद्ध पाउकामे सेण णिग्गच्छउ, त्तिकट्टु जेणेव धण्णस्स सत्थवाहस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गिह विहाडेइ। तण्ण से धण्णे चिलाएण चोरसेणावड्ढणा पचहिं चोर-सण्हिं सद्धिं गिह घाइज्जमाण पासइ, पासित्ता भीए तत्थे ४ पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं एगतं अवक्कमइ,। तएणं से चिलाए चोरसेणावई धण्णस्स सत्थवाहस्स गिहं घाएइ, घाइत्ता सुवट्टुधणकणग जाव सावएज्ज सुसम च दारिय गेण्हइ, गेण्हित्ता रायगिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव सीहगुहा तेणेव पहारेत्थ गमणाए) जो नवीन माता का दूध पीना चाहता हो-मेरे हाथ से मृत्यु को प्राप्त कर पुनः भाविभव में होनेवाली जननी का दुग्ध पान करने का जो अभिलाषी बन रहा हो

चिलात नामे चोर छु डमण्णा ७ छु पांयसेा चोरानी साथे अर्ही सिद्धगुहा नामनी चोरपत्नीथी आये छु धन्य सार्थवाहना घरने लूटवानी मारी धच्छा छे (त) भाटे

(जोण णवियाए, माउयाए, दुद्ध पाउकामे सेण णिग्गच्छउ, त्ति कट्टु जेणेव धण्णस्स सत्थवाहस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धण्णस्स गिह विहाडेइ, तण्ण से धण्णे चिलाएण चोरसेणावड्ढणा पचहिं चोरसण्हिं सद्धिं गिह घाइज्जमाण पासइ, पासित्ता भीए तत्थे ४ पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं एगतं अवक्कमइ । तएण से चिलाए चोरसेणावई धण्णस्स सत्थवाहस्स गिह घाएइ, घाइत्ता सुवट्टु धण्णकणग जाव सावएज्ज सुसम च दारिय गेण्हइ, गेण्हित्ता रायगिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव सीह गुहा तेणेव पहारेत्थ गमणाए)

ये नवी मातानु दूध पीवा धच्छे छे अट्ठे के मारा डायथी मृत्यु पाभीने इरी णील भवमा वनारी मातानु दूध पीवा ये धच्छतो डाय ते

उपागच्छति, उपाग प धन्यस्य गृह ' विहाडेः ' विघाटयति=उद्घाटयति । तत खलु स धन्यः सार्थवाहः विघनेन चोरसेनापतिना पञ्चभिः चोरशतैः सार्धं गृहं ' घाड्जमाण ' घात्यमान=उण्ठयमान पश्यति इन्द्रा, गीतः=भय प्राप्तः, व्रस्तः=प्रासगतः, व्रसितः=विशेषतया प्रासः ' उद्विग्नो ' उद्विग्नः=भयमम्पाक सर्वस्व मपहरति अहमस्य किमपि कर्तुं न शक्नोमीति हेतोः परमविन्तामापन्नः, पञ्चभिः पुत्रैः सार्धम् ' एगत ' एरान्तम्=भयरहित स्थानम् ' अरण्यम् ' अपक्राम्यति=अपगच्छति । ततः खलु स चिन्तात. चोरसेनापतिः धन्यस्य सार्थवाहस्य गृह घातयति=लुण्ठयति घातयित्वा लुण्ठयित्वा गुराह ' गणम्पग जाव सात्रपज्जं ' धनरुनरु यावत् स्वापतेयम्=धनरुनरु मणिमौक्तिकरूढिक द्रव्य सुगुमा च दारिका गृह्णाति, गृहीत्वा राजगृहात् प्रतिनिष्क्राम्यति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव सिंहगृहा तत्रैव प्राधारयद् गमनाय=गन्तुमुद्यतोऽभूत् ॥ सू०६ ॥

-वही मेरे सम्मुख आवे-इस प्रकार कहकर वह जहा धन्यसार्थवाह का घर था वहा गया-वहा जाकर उसने धन्यसार्थवाह के घर को खोला जब धन्यसार्थवाह ने पाचसौ चोर के साथ चोरों सेनापति चिलात के द्वारा अपने घर को लुटता हुआ देखा-तो देखकर वह भय को प्राप्त हो गया-और व्रस्त एव व्रसित-विशेष त्रास को प्राप्त होकर अन्त में वह उद्विग्न बन गया यह हमारा सर्वस्व हरण कर रहा है और मैं इसका कुछ भी नहीं कर सकता हूँ-इस खान से वह चिन्ताकुल हो गया-और चिन्ताकुल होकर अपने पाचो पुत्रों के साथ वहा से निर्भय स्थान में चला गया । चौर सेनापति चिलात ने धन्य सार्थवाह को खून मनमाना लूटा और लूट करके उसमेंसे बहुत सा धन रुनक, मणि, मौक्तिक आदि द्रव्यो को एव सुसमादारिका को ले लिया-। लेकर वह राजगृह नगर से

भारी सामे आवे आ प्रमाणे कहींने ते न्या धन्य सार्थवाहनु घर डंतु त्या गये। त्या जधने तेले धन्य सार्थवाहना घरने उधाड्यु न्यारे धन्य सार्थवाहे पाचसो चोरानी साथे चोर सेनापति चिलात वडे पोताना घरने लुटातु ज्ये त्यारे जेधने ते लयणीत थध गये। अने व्रस्त तेमज व्रसित (विशेष त्रास) प्राप्त करीने छेवटे उद्विग्न थध गये। आ अमाइ सर्वस्व हरण करी रह्यो छे अने हु ज्येनु कधेज जगाडी शकते। नथी आ जतने। विचार करीने ते चिंताकुल थध गये। अने चिंताकुल थधने ते पोताना पाचे पुत्रोनी साथे त्याथी निर्भय स्थानमा जतो रह्यो चोर सेनापति चिलाते धन्य सार्थवाहना घरने पूण धरणा मुजण लूट्यु अने लूटीने तेमाथी धणु धन, रुनक, मणि, मोती वगेरे द्रव्यो तेमज सुसमा दारिकाने लधे लीधी गृह

मूलम्—तएण से धन्ने सत्थवाहे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सुवहुं धणकणगं सुसुमं च दारियं अवहरियं जाणित्ता, महत्थ महग्घं महरिह पाहुड गहाय जेणेव णगरगुत्तिया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, त महत्थं महग्घं महरिह पाहुड जाव उवणेति, उवणित्ता, एवं वयासी—एवखल्लु देवाणुप्पिया । चिलाए चोरसेणावई सीहगुहाओ चोरपल्लीओ इह हव्वमागम्म पचहि चोरसएहि सद्धि ममगिह घाएत्ता धणकणगं सुंसुमं च दारिय गहाय जाव पडिगए । त इच्छामो ण देवाणुप्पिया । सुसुमा दारियाए कूव गमित्तए, तुब्भ णं देवाणुप्पिया । से विउले धणकणगे, ममं सुंसुमा दारिया । तएणं ते णगरगुत्तिया धणस्स एयमट्ठं पडिसुणेति, पीडसुणित्ता संनद्ध जाव गहियाउहपहरणा महया२ उक्किट्ठं जाव समुद्धरवभूयं पिव करेमाणा रायगिहाओ णिग्गच्छति, णिग्गच्छित्ता, जेणेव चिलाए चोरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता, चिलाएणं चोरसेणावइणा सद्धि संपलग्गा यावि होत्था । तएणं ते णगरगुत्तिया चिलायं चोरसेणावइ हयमहिय जाव पडिसेहेति । तएण ते पच चोरसया णयरगोत्तिएहि हयमहिय जाव पडिसेहिया समाणा त विउल धणकणगं विच्छड्ढेमाणा य विप्पकिरेमाणा य सव्वओ

घापिम निकला—और निकल करके जहा सिंहगुहा नाम की चोरपल्ली थी—उस ओर चलने के लिये उद्यत हो गया ॥ सू० ६ ॥

नगरभाथी पाछे णडार आन्थे। अने आवीने न्या सिद्धगुडा नामे चोरपल्ली छती ते तरइ रवाना थवा तैयार थछ गथे ॥ सूत्र ६ ॥

समंता विष्पलाइत्था । तएणं ते णगरगुत्तिया ते विउलं धण
 कणगं गेणहति, गेणित्ता जेणेव रायगिहे तेणेव उवागच्छंति ।
 तएण से चिलाए त चोरसेणं तेहि णयरगुत्तिएहि हयमहिय
 जाव भीए तत्थे सुसुम दारियं गहाय एगं महं अग्गामियं दीह-
 मद्ध अडवि अणुप्पविट्ठे । तएणं धण्णे सत्थवाहे सुंसुमं दारिय
 चिलाएणं अडवीमुह अवहीरमाणि पासित्ताणं पचहि पुत्तेहि
 सद्धि अप्पउट्ठे सन्नद्धवद्ध० चिलायस्स पदमग्गवीहि अणुगच्छ-
 माणे अभिगज्जते हक्कारेमाणे पुक्कारेमाणे' अभितज्जेमाणे
 अभितासेमाणे पिट्ठओ अणुगच्छइ । तएण से चिलाए तं धणं
 सत्थवाहं पंचहि पुत्तेहि सद्धि अप्पउट्ठं सन्नद्धवद्ध० समणुगच्छ
 माण पासइ, पासित्ता अत्थामे अवले अवीरिए अपुरिसक्कार-
 परक्कमे जाहे णो सचाएइ सुसुम दारिय णिव्वाहित्तए, ताहे
 सते तते परितते नीलुप्पल० असि परामुसइ, परामुसित्ता
 सुसुमाए दारियाए उत्तमगं छिदइ, छिदित्ता, त गहाय त
 अग्गामियं अडवि अणुप्पविट्ठे । तएण से चिलाए तीसे अगा-
 मियाए अडवीए तण्हाए अभिभूए समाणे पम्हुट्ठ दिसाभाए,
 सीहगुह चोरपल्लि असपत्ते अतरा चेव कालगए ।

एवामेव समणाउसो । जाव पव्वइए समाणे इमस्स ओ-
 रालियसरीरस्स वतासवस्स जाव विद्धसणधम्मस्स वण्णहेउ
 जाव आहार आहारेइ, से णं इहलोए चेव वहुणं समणाणं४
 हिलणिज्जे ३ जाव अणुपरियट्ठिस्सइ, जहा व से चिलाए
 तक्करे ॥ सू० ७ ॥

टीका— 'तएण से' इत्यादि । तत' खलु स धन्य' सार्थवाहो यत्रैव स्वक
 गृह तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य सुवहु धनकनक सुसुमा च दारिकाम् अपहृता
 ज्ञात्वा 'महत्थ महग्घ महरिह' महार्थं महार्घं महार्हम्=महानर्थः प्रयोजन यस्मिन्
 तत्=महार्थं=महाप्रयोजनम्, बहुमूल्य पुनः महता योग्यम् 'पाहुडं' प्राभृत=
 उपायन गृहीत्वा यत्रैव 'णगरगुत्तिया' नगरगोप्तृकाः=नगररक्षका' कोट्टपाला-
 दयः तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य तत् महार्थं यावत्=महार्घं महार्हं प्राभृतम्
 'उण्णोड' उण्णयति=समर्पयति, उपनीय=समर्प्य एवमदत्-एव खलु हे देवानु-

'तएण से धन्ने सत्थवाहे' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (से धन्ने सत्थवाहे) वह धन्य
 सार्थवाह (जेणेव सएगिहे तेणेव उवागच्छइ) जहा अपना घर था वहाँ
 आया (उवागच्छित्ता सुवहु धणकणग सुसम च दारिय अवहरियं
 जाणित्ता महत्थं महग्घ महरिय पाहुड गहाय जेणेव नगर गुत्तिया
 तेणेव उवागच्छइ) वहा आकरके उसने अपने घरमें से बहुत सा धन
 कनक एव सुसमा दारिका को हरण किया हुआ जब जाना तब वह
 महार्थ बहुमूल्य एव महापुरुषो के योग्य भेंट लेकर जहाँ नगर रक्षक
 -कोट्टपाल-आदि थे वहा गया-(उवागच्छित्ता त महत्थ महग्घ महरिह
 पाहुड जाव उवण्णोति, उवणित्ता एव वयासी) वहा जाकर उसने उस
 महाप्रयोजन साधक भूत बहुमूल्य तथा महापुरुषों के योग्य भेंट को
 उनके समक्ष रख दिया-और रखकर उनसे उसने इस प्रकार कहा-(एव

'तएण से धन्ने सत्थवाहे' इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारपणी (से धन्ने सत्थवाहे) ते धन्य सार्थवाह
 (जेणेव सएगिहे तेणेव उवागच्छइ) तथा पोतानु घर डंतु त्या आये।

(उवागच्छित्ता सुवहु धणकणग सुसम च दारिय अवहरिय जाणित्ता महत्थ
 महग्घ महरिय पाहुड गहाय जेणेव नगर गुत्तिया तेणेव उवागच्छइ)

त्या आवीने तेत्ते पोताना घरभायी पुष्कण प्रभाषुमा धन, कनक अने
 सुसमा दारिकानु डरखु करवाभा आवेल्लु जण्णीने ते महार्थं, अहु किमती
 अने महापुरुषोने योग्य लेट दधने ज्ञा नगर-रक्षक-कोट्टपाल-वगेरे डता त्या
 गये। (उवागच्छित्ता त महत्थ महग्घ महरिह पाहुड जाव उवण्णोति, उवणित्ता
 एव वयासी) त्या जधने तेत्ते ते महाप्रयोजन साधकभूत अहु किमती तेभज
 महा पुरुषोने ये य लेटने तेमनी आने भूरी दीधी अने भूरीने तेभने तेत्ते
 आ प्रभात्ते विनती करवा कथु डे—

મિયા : ! ચિલાતશોરસેનાપતિઃ સિંહગુહાયાશોરવન્યાઃ ઃઃ જ્યમાગમ્ય પચ્ચમિશોર
 ગતૈઃ સાર્દ્ધમ્ મમ ગૃહ ' ઘાણ્તા ' ઘાતપિત્તા=ડુઠ્ઠિયા ગુરુ ધનકનક સુસમા
 ચ દારિકા ગૃહીત્યા ' જાવ પડિગણ ' યાવ્ પ્રતિગતઃ=પચ્ચમિશોરશ્ચતૈઃ સાર્ધ
 સિંહગુહા ચોરવલ્લી પ્રતિનિગૃહ ડર્યર્થ , ' ત ' તન્=તસ્માન્ કારણાત્ ડગ્રામઃ
 સ્વલુ હે દેવાનુમિયા . ! ' સુસમા દારિયાણ સુસમા દારિયાયા ' કૂવ ' પ્રત્યાન
 યને ' ગમિત્તણ ' ગન્તુમ્ . ! ' તુગ્મેણ દેવાણુપ્પિયા ' ! ' યુપ્માક મ્વલુ હે દેવાનુ
 મિયા ! તન્=અપહત ત્રિપુલ ધનકનકમ્=હે દેવાનુમિયાઃ ! ચોરાડપહત ધનકના
 દિક સર્વે યુપ્માક મ્વનુ, મમ સુસમા દારિકા મ્વનુ . તતઃ સ્વલુ તે નગરગોપ્ત્રકા

સ્વલુ દેવાણુપ્પિયા ! ચિલાણ ચોરસેનાવર્ડ સીંહગુહાઓ ચોરવલ્લીઓ
 હ્ર જ્યમાગમ્મ પચ્ચિં ચોરસર્ણિં સર્દિં મમ ગિહ ઘાણ્તા, સુવહુ ધન
 કણગ સુસમ ચ દારિય ગહાય જાવ પડિગણ-ત ડચ્છામો ણ દેવાણુ
 પ્પિયા ! સુસમા દારિયાણ કૂવગમિત્તણ-તુગ્મ ણ દેવાણુપ્પિયા . ! સે વિડલે
 ધણકણગે મમ સુસમા દારિયા) હે દેવાનુપ્રિયો સુનો ચોર સેનાપતિ
 ચિલાત ચોર ને સિંહગુહા નામ કી ચોરવલ્લી સે યહાં ડીઘ આકર
 પાંચસૌ ચોરોં કે સાથ મેરે ઘર પર ડાકા ડાલા હૈ . ડસમેં ડસને બહુત
 સા ધન, કનક ણ્વ સુસમા દારિકા કો લૂટા હૈ ઓર-લૂટકર વહ વહાં
 વાપિસ અપને સ્થાન પર ચલા ગયા હૈ . અતઃ હે દેવાનુપ્રિયો ! મૈ ચાહતા
 હૈં કિ આપ લોગ ડસ સુસમા દારિકા કો હેને કે લિયે જાવેં, મિલને પર
 વહ હુન ધનકનક આદિ મ્વ આપકા રહે-ઓર સુસમા દારિકા મેરી

(ઇવ સ્વલુ દેવાણુપ્પિયા ! ચિલાણ ચોરસેનાવર્ડ સીંહગુહાઓ ચોરવલ્લીઓ
 હ્ર જ્યમાગમ્મ પચ્ચિં ચોરસર્ણિં સર્દિં મમ ગિહ ઘાણ્તા, સુવહુ ધનકણગ સુસમ
 ચ દારિય ગહાય જાવ પડિગણ ત ડચ્છામો ણ દેવાણુપ્પિયા ! સુસમા દારિયાણ
 કૂવ ગમિત્તણ-તુગ્મ ણ દેવાણુપ્પિયા ! સે વિડલે ધણકણગે મમ સુસમા દારિયા)

હે દેવાનુપ્રિયો ! સાલજો, ચોર સેનાપતિ ચિલાત ચોરે સિંહગુહા નામની
 ચોરવલ્લીઓ એકદમ અહીં આવીને પાચસો ચોરોની સાથે મારા ઘરમા ધાડ
 પાડી છે તેમા તેણે ઘણું ધન, કનક અને સુસમા દારિકાની લૂટ કરી છે
 લૂટ કરીને તે પાછો પોતાના સ્થાને જતો રહ્યો છે એથી હે દેવાનુપ્રિયો !
 મારી ઈચ્છા છે કે તમે સુસમા દારિકાને પાછી લેવા માટે જાઓ અને તેને
 મેળવી લીધા બાદ તે અપહૃત કરાયેલુ ધન કનક વગેરે બધુ તમે રાખજો અને
 સુસમા દારિકાને મને મોપી દેજો

पुरुषा धन्यस्य एतमर्थं प्रतिश्रुवन्ति=स्वीकृत्यन्ति, प्रतिश्रुत्य=स्वीकृत्य 'सन्नद्ध जाव गहियाउहपहरणा' सन्नद्ध यावत् गृहीतायुधप्रहरणाः=सन्नद्धपद्धर्मितकवचा यावद् गृहीतायुधप्रहरणा इत्यस्य व्याख्या पूर्ववद् गो-या, 'महया २ उक्किद्ध जाव समुद्रवभूयपिव' महा महोत्कृष्ट यावत् समुद्रवभूतमिव, वेलावृद्धिसमये समुद्रध्वनिमिव महाध्वनि 'करेमाणा' कुर्वन्तो राजगृहात् निर्गच्छन्ति, निर्गत्य

रहे। (तएण ते णगरगुत्तिया धणस्स सत्थवाहस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडिसुणित्ता सन्नद्ध जाव गहियाउहपहरणा महया २ उक्किद्ध० जाव समुद्रवभूयं पिवकरेमाणा रायगिहाओ णिग्गच्छति णिगच्छित्ता जेणेव चिलाए चोरे-तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता चिलाएण चोरसेणाव-इणा सद्धिं सपलग्गा यावि होत्था तएण ते णगरगुत्तिया चिलाय चोरसे णावह ह्यमहिय जाव पडिसेहेति, तएणं ते पच चोरसया णयरगोत्ति एहिं ह्यमहिय जाव पडिसेहिया समाणा त विउल धणकणग विच्छ-ड्डेमाणा य विप्पकिरेमाणा य सन्वओ समता विप्पलाइत्था) धन्य सार्यवाह की इस बात को सुनकर उन नगर रक्षकों ने स्वीकार कर लिया। और स्वीकार करके उसी समय उन्हो ने अपने २ शरीरपर कवच को सजित करके कशाधन से बाध लिया यावत् आयुध और प्रहरणो को छे लिया-। वेलावृद्धिके समय में जिस प्रकार समुद्र की ध्वनि होती है-उसी प्रकार की महाध्वनि करते हुए फिर वे राजगृह नगर

(तएण ते णगरगुत्तिया धणस्स सत्थवाहस्स एयमट्ट पडिसुणेति, पडि सुणित्ता सन्नद्ध जाव गहियाउहपरणा महया २ उक्किद्ध० जाव समुद्रवभूय पिवकरेमाणा रायगिहाओ णिग्गच्छति, णिगच्छित्ता जेणेव चिलाए चोर-तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता चिलाएण चोरसेणावइणा सद्धिं सपलग्गा यावि होत्था-तएण ते णगरगुत्तिया चिलाय चोरसेणावड ह्यमहिय जाव पडिसेहेति, तएण ते पच चोरसया णयरगोत्तिएहिं ह्यमहिय जाव पडिसेहिया समाणा त विउल धणकणग विच्छड्डेमाणा य विप्पकिरेमाणा य सन्वओ समता विप्पलाइत्था)

धन्य साथवाहनी ते वातने मालणीने नगर रक्षकोंने तेने स्वीकारी लीधी अने स्वीकारीने तेभण्णे तरत ज पोतपोताना शरीरे उपर वच्यो पडे रीने उशा धधनेथी पाध्या यावत् आयुध अने प्रहरणोने साथे लध लीधा भरतीना समथे जेवे समुद्रने ध्वनि डोय छे तेवे ज महाध्वनि उरता तेणो राजगृह नगरभाथी पडार नीकण्था अने नीकणीने ल्या चोर मेनापति ते

मियाः । चिलातशोरसेनापतिः सिंहगुहायाशोरपत्याः इह हृवमागम्य पञ्चमिशोर
 शतैः मारुद्गु मम गृह 'घाएत्ता' घानपित्या=लुण्ठयित्वा सुबहु धनकनक सुसुमा
 च दारिका गृहीत्वा 'जाव पडिगण' यान् प्रतिगताः=पञ्चमिशोरशतैः साथै
 सिंहगुहा चोरपत्नीं प्रतिनिवृत्त इत्यर्थ, 'त' तत्=तस्मात् कारणात् इच्छामः
 खलु हे देवानुमियाः । 'सुसुमा दारियाण सुसुमा दारियाया' 'रुव' प्रत्यान
 यते 'गमित्तण' गन्तुम् । 'तुम्भेण देवाणुप्पिया ।' युष्माक खलु हे देवानु
 मिया ! तत्=अपहत त्रिपुल धनकनकम्=हे देवानुमियाः ! चोराऽपहत धनकना
 दिक सर्व युष्माक भवन्, मम सुसुमा दारिका भवतु । तत. खलु ते नगरगोप्तका

खलु देवाणुप्पिया ! चिलाण चोरसेणावई सीहगुहाओ चोरपल्लीओ
 इह हृवमागम्म पचहिं चोरसण्हिं सद्धिं मम गिह घाएत्ता, सुबहु धन
 कणग सुसम च दारिय गहाय जाव पडिगण-त इच्छामो ण देवाणु
 प्पिया ! सुसमा दारियाण कूव गमित्तण-तुम्भेण देवाणुप्पिया । से विउले
 धणकणगे मम सुसमा दारिया) हे देवानुप्रियो सुनो चोर सेनापति
 चिलात चोर ने सिंहगुहा नाम की चोरपल्ली से यहां ग्रीध आकर
 पाचसौ चोरों के साथ मेरे घर पर टाका डाला है । उसमें उसने बहुत
 सा धन, कनक एव सुसमा दारिका को लूटा है और-लूटकर वह वहा
 वापिस अपने स्थान पर चला गया है । अतः हे देवानुप्रियों ! मैं चाहता
 हूँ कि आप लोग उस सुसमा दारिका को छेने के लिये जावें, मिलने पर
 वह हून धनकनक आदि सब आपका रहे-और सुसमा दारिका मेरी

(एव खलु देवाणुप्पिया ! चिलाए चोरसेणावई सीहगुहाओ चोरपल्लीओ
 इह हृवमागम्म पचहिं चोरसण्हिं सद्धिं मम गिह घाएत्ता, सुबहु धनकणग सुसम
 च दारिय गहाय जाव पडिगण त इच्छामो ण देवाणुप्पिया ! सुसमा दारियाए
 कूव गमित्तण-तुम्भेण देवाणुप्पिया ! से विउले धणकणगे मम सुसमा दारिया)

हे देवानुप्रियो ! सालणो, चोर सेनापति चिलात चोरे सिंहगुहा नामनी
 चोरपल्लीथी अकडम अडीं आवीने पाचसेा चोरानी साथे मारा घरमा धाड
 पाडी छे तेमा तेछे धलुं धन, उनके अने सुसमा दारिकानी लूट करी छे
 लूट करीने ते पाछे पोताना स्थाने जने रह्यो छे अथी हे देवानुप्रियो ।
 मारी धच्छा छे हे तेमे सुसमा दारिकाने पाडी देवा माटे लअो अने तेने
 मेणवी लीधा जाह ते अपहृत करायेलु धन कनक वगेरे अथु तेमे राभजे अने
 सुसमा दारिकाने भने सोपी हेजे

नगरगोप्तृकाः=नगररक्षकाः=त विपुल धनरुनक०=अननकादिक गृह्णन्ति, गृहीत्वा, यत्रैव राजगृह नगर तत्रैव उपागच्छन्ति । ततः खलु स चिन्तातः ता चोरसेना ' हयमहिय जाव ' हतमथित यावत्=हतमथितप्रवरपीरघातितनिपतित चिह्नवजपताकाम् यावद् दृष्ट्वा भीतस्त्रस्तः सुसुमा दारिका गृहीत्वा एका मःतीम् ' अगामिय ' अग्रामिकाम्=ग्रामरहिताम् ' दीहमद्र ' दीर्घां=दीर्घमार्गाम् ' अडवि ' अटवीम्-अनुप्रविष्टः । ततः खलु वन्य सार्थवाह. सुसुमा दारिका चिलातेन ' अडवीमुह ' अटवीमुखम्=अरण्यमम्मुखम् ' अचहीरमार्णि ' अपहिय माणाम्-नीयमाना ' पासित्ता ' दृष्ट्वा पञ्चभि पुत्रै साद्र्म ' अप्पछट्टे ' आत्तपण्ठ. ' सन्नद्धवद्ध० ' सन्नद्धवद्धवर्मितकनचः चिन्तातस्य ' पदमग्गवीहि ' पद

गेण्हति, गेण्हित्ता, जेणेव रायगिहे तेणेव उवागच्छन्ति । तण्ण से चिलाए त चोरसेणं तेहिं णयरगुत्तिएहिं हयमहिय जाव भीए तत्थे सुसम दारिय गहाय एग मह अगामिय दीहमद्र अडविं अणुप्पविट्ठे) उन नगर रक्षको ने उस विपुल धन कनक आदिको ले लिया और लेकर राजगृह नगर में वापिस आ गये । इस के बाद वह चिलात चोर अपनी उस सेना को नगर रक्षकों द्वारा हत मथित प्रवल वीरवाली एव घातित तथा निपतित चिह्न वज पताका वाली देखकर त्रस्त हो गया और सुसुमादारिका को लेकर एक बड़ी भारी ग्रामरहित अटवी में घुस गया (तण्ण धण्णे सत्थवाहे सुसम दारियं चिन्ताएण अडवीमुह अचहिरमार्णि पासित्ता ण पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पछट्टे सन्नद्धवद्ध चिलायस्स पदमग्गवीहिं अणुगच्छमाणे अभिगज्जते हाक्कारेमाणे अभितज्जेमाणे

(तण्ण ते णयर गुत्तिया त विपुल धनरुणग गेण्हति, गेण्हित्ता, जेणेव रायगिहे तेणेव उवागच्छन्ति । तण्ण से चिलाए त चोरसेणं तेहिं णयरगुत्तिएहिं हयमहिय जाव भीए तत्थे सुसम दारिय गहाय एग मह अगामिय दीहमद्र अडविं अणुप्पविट्ठे)

ते नगर रक्षकोंके ते पुच्छण प्रमाणुमा पडेला धन, कनक वगैरेने लध लीधु अने लधने राजगृह नगरमा पाछा आवी गया त्थारपछी ते चिलात चोरे चोतानी ते चोरे सेनाने नगर रक्षकों वडे डत, मथित तेमन् घातित अने निपतित चिह्नवज पताकाओवाणी लेधने त्रस्त थर्न गयो अने सुसमा दारिकाने लधने अेक लारे मोठी आभरडित अटवीमा पेशी गयो।

(तण्ण धण्णे सत्थवाहे सुसम दारिय चिलाएण अडवीमुह अचहीरमार्णि पासित्ता ण पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पछट्टे सन्नद्धवद्धचिलायस्स पदमग्गवीहिं अणुगच्छमाणे अभिगज्जते हाक्कारेमाणे पुक्कारेमाणे अभितज्जेमाणे अभिहासे-

यत्रैव चिलातशोर', तत्रैव उपागन्गति, उपागन्ग्य चिलातेन चोरसेनापतिना
 सार्धं 'सपञ्चगा' सप्रञ्चनाः=युद्धं कर्तुं प्रवृत्ताश्चापि भ्रमन् । तत खलु नगर
 गोप्तृकाः चिलात चोरसेनापति ' इयमहियं जाय ' इतमथित यावत्=इतम
 थित प्रवरगीरघातितनिपतितचिह्नपत्रपताङ्क=इता=गारिता', मथिताः=निदर्शयता
 प्राप्तिताः, प्रवरगीरा=श्रेष्ठगीरा यस्यामी इतमथितप्रवरगीर., घातितः=घातः
 शस्त्रादिप्रहारेण क्षतिः, म सजागोऽस्य घातितः क्षय इत्यर्थः, निपतितः=भूमौ
 पतितः चिह्नध्वज पताका' यस्याऽसा, निपतितचिह्नपत्रपताङ्कः, एतेषा कर्म
 धारयः, तम्, यावत् प्रतिषेधयन्ति=नियाम्यन्ति । ततः खलु ते ' पञ्चचोरसया'
 पञ्चशतचौरा ' णगरगोत्तिष्टि ' नगरगोष्ठकै =नगररक्षकैः पुरुषैः ' इयमहिय
 जाय पडिसेहिया ' इतमथितयावत्प्रतिषेधिताः=प्रतिषेधिता' सन्तः तद् त्रिपुल
 धनकनक=धनकनकमणिमौक्तिकादिक ' विच्छेदमागा ' विच्छेदयन्त=प्रक्षिपन्तः
 ' विष्पकिरेमाणा य ' विष्पकिरन्तश्च=उत्तस्ततो विस्फिरण कुर्वन्तः 'सन्वओ समता'
 सर्वतः समन्तात्=चतुर्दिशु ' विष्पलाऽत्या ' विष्पलायन्त =पगयिताः ततः खलु ते

से घाहर निकले-और निकलकर जहा चोर सेनापति वह चिलात चोर
 था वहा गये-वहा पहुँचते ही उनका चोर सेनापति उस चिलात चोर
 के साथ युद्ध होना प्रारम्भ हो गया-उस युद्ध में उन्होंने ने उस चिलात
 के सैन्य को पहिले खून मारा-पीटा-याद में उन्हें विलकुल नष्ट भ्रष्ट कर
 दिया । कितनेक चोरो को उन्होंने ने क्षत किया । उसकी चिह्न ध्वजपता
 काओं को जमीन पर डाल दिया । इस प्रकार उसे हरतरह परास्त कर
 दिया । जब वे पाचसौ चोर नगररक्षक पुरुषो द्वारा हर प्रकारसे इतमथित
 यावत् प्रतिषेधित हो चुके तब वे उस त्रिपुल धनकनक मणिमौक्तिक
 आदिको छोडकर तथा इधर उधर डालकर सर्व प्रकारसे चारो दिशाओंमें
 इधर उधर भाग गये । (तएण ते णयरगुत्तिया त विउल धणकणग

शिलात चोर इतो त्या गया त्या जतानी साथे चोर सेनापति शिलातनी
 साथे तेमनु युद्ध शङ्क थर्ष गयु युद्धमा तेमणु पडेला तो शिलातनी सेना
 साथे प्रथम मार-पीट करी अने तयारपणी तेने नष्ट-भ्रष्ट करी नाणी डेटलाक
 चोराने तो तेमणु क्षत (घवायेला) कर्था तेमनी शिह्लभूत ध्वज पताकाओंने
 जमीनदोस्त करी नाणी आ प्रभाणु तेने अधी गीते डरावी दीधे ज्यारे ते
 पांचसो चोर नगर रक्षक पुरुषो वडे सर्व रीते इत, मथित यावत् प्रतिषेधित
 थर्ष गया तयारे तेणो ते युष्कण धन, कनक, मणुी, मोती वगैरेने त्या च
 भूडीने आभतेम नाणीने तयारे दिशाओंमा आभतेम पदायन ।

पुरुषकारः=पौरुषम्, पराक्रमः=मामथ्यं, तद्रहितः सन् 'जाहे' यदा नो शक्नोति
सुसुमा दारिका 'णिन्वाहित्त्ण' निर्वाहयितु=बोद्धुम्, 'ताहे' तदा 'सते'
श्रान्तः=परिश्रम गतः, 'तते' तान्तः=ग्लानिं प्राप्तः, 'परितते' परितान्तः=
सर्वतोभावेन खिन्नतामुपगतः, 'नीलुप्पल०' नीलोत्पल०=नीलोत्पगवलगुलि
कादि विशेषणविशिष्टमतितीक्ष्णम् 'असिं' करवालं 'परामुसइ' परामृशति=
कोशान्निःसारयति, परामृश्य, सुसुमाया दारिकायाः 'उत्तमग' उत्तमाङ्ग=शिरः

अवीरिण अपुरिसकारपरक्रमे जाहे णो सचाणइ सुसम दारिय णिन्वा
हित्त्ण, ताहे सते तते पणितते निलुप्पल० असिं परामुसइ, परामुसित्ता
सुसमाए दारियाए उत्तमग छिदइ, छिंदित्ता, त गहाय त अग्गामिय
अटविं अणुपविट्ठे, तएण से, चिलाए तीसे आग्गामियाए अडवीए
तण्हाए अभिभूए समाणे पम्हुट्ठदिसाभाए सीह गुहं चोरपल्लिं अस
पत्ते अतराचेव कालगए) जव चिलात चोर ने उस वन्यसार्थवाह को
पाचो पुत्रों के साथ आत्मपथ होकर एव कवच आदि से सुसज्जित
होकर अपने पीछे २ आता हुआ देखा-तब वह देख कर आत्मबल
रहित हो गया। इस तरह सैन्य रहित, उत्साह रहित तथा पौरुष और
पराक्रम रहित बना हुआ वह जब सुसुमा दारिका को अपने पास रखने
के लिये शक्तिशाली नहीं हो सका तब उसने श्रान्त, तान्त-ग्लानि
युक्त और परितात सर्वतोभावेन खिन्नता को प्राप्त होकर नीलोत्पल,
गवलगुलिका, आदि विशेषणो वाली अपनी तलवार को उठाया-म्यान

परक्रमे जाहे णो सचाणइ सुसम दारिय णिन्वाहित्त्ण, ताहे सते तते परितते
नीलुप्पल० असिं परामुसइ, परामुसित्ता सुसमाए दारियाए उत्तमग छिदइ,
छिंदित्ता, त गहाय त अग्गामिय अटविं अणुपविट्ठे, तएण से, चिलाए तीसे
आग्गामियाए अडवीए तण्हाए अभिभूए समाणे पम्हुट्ठदिसाभाए सीहगुह
चोरपल्लिं असपत्ते अतरा चेव कालगए)

न्यारे चिलात चारे ते धन्य सार्थवाहने पाचे पुत्रेणी साथे आत्मपथ
थधने तेमज्ज कवच वगेरेथी सुसन्निवृत्त थधने पोतानी पाळण पाळण आवतो
जेथो त्यारे ते जेधने आत्मभग्न वगरनेो थउ गथेो आ प्रभाण्णे सेना रद्धित
उत्साह रद्धित तेमज्ज पौरुष अने पराक्रम रद्धित थउ गथेो ते न्यारे सुसुमा
दारिकाने पोतानी पासे राभवामा पणु अस्समर्थ थध गथेो त्यारे तेण्णे श्रात,
तात, ग्लानि युक्त अने पणितत तेमज्ज णधी रीते खिन्नता प्राप्त करीने
नीलोत्पल, गवल गुलिका वगेरे विशेषणोवाणी पोतानी तरवारने उपाडी अने
म्यानमाथी णडार काटी अने णडार काटीने सुसुमा दारिकानु माधु कापी

मार्गविधि=पदमार्गप्रचारम्=रणचिह्नम् 'अणुगच्छमाणे' अनुगच्छन्=पृष्ठतो धावन्
 'अणुगच्छमाणे' अनुगच्छन्=मेघराजगर्जना द्वारा 'ह्यारेमाणे' 'हो' 'हुष्ट'
 तिष्ठ-तिष्ठ' इत्यादि, वाक्यैः एकारयत्=आमारयन् 'पुटारेमाणे' पूत्कारयन्
 'तिष्ठ २, नोचेरया हनिष्यामीत्यादिवाक्यैः' तमाह्वयन् 'अमितज्जेमाणे' अमि
 तर्जन्='रे निर्लज्ज' इत्यादि वाक्यैस्त्वर्जनां कृत्वा, 'अमितासेमाणे' अमि
 त्रासयन्=भस्त्रशस्त्रादिदर्शनेन त्रासमुत्पादयन् 'पिट्टाओ' पृष्ठतः=चिलातचोरस्य
 पृष्ठदेशतः अनुगच्छति=पथाद्भावति । तत्र. खलु स चिलातः त घण्य सार्थवाह
 पञ्चभिः पुत्रैः सादूर्ध्वम् 'अप्पउट्ट' आत्माण्ट 'मन्मद्वद्वद्वमितकवच यावत्
 समणुगच्छत=पथाद्भावन्त पश्यति, दृष्ट्वा 'अत्थामे ४' अस्थामा=आत्मबल
 रहितः, अण्डः=सैन्यरहितः, अरीर्य' = उत्साहरहितः, अपुरुषकारपराक्रम सन्

अमितासेमाणे पिट्टाओ अणुगच्छह) घण्यसार्थवाह ने जब सुसमा
 दारिका को चिलात चोर द्वारा अटवी के मध्य में हरणकर ले जाई गई
 जब जाना-तब वह अपने पाचों पुत्रों के साथ आत्मपष्ट होकर कवच
 घाघ उस चिलात के पीछे २ पद चिह्नों का अनुसरण करता हुआ, मेघ
 के जैसी गर्जना करता हुआ, अरे ओ हुष्ट ! ठहर ठहर इस प्रकार से
 कहता हुआ, पुकार करता हुआ ठहर जा ठहर जा-नहीं तो मैं तुझे
 मार डालूंगा इस प्रकार के वाक्यों से उसे बुलाता हुआ रे निर्लज्ज !
 इस प्रकार से उसे तर्जित करता हुआ, तथा अस्त्र शस्त्र आदि के
 दिखाने से उसे त्रास उत्पन्न करता हुआ चला ।

(तण्ण से चिलाए त घण्ण सत्यवाह पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं
 अप्पउट्ट अन्नद्वद्व० समणुगच्छमाण पासह, पासित्ता अत्थामे अबले

माणे पिट्टाओ अणुगच्छह)

न्यारे घण्य सार्थवाहे सुमभा दारिकाने चिलात चोर वडे अटवीमा
 हरण करीने लई ज्जायेकी जणी, न्यारे ते चोताना पाये पुत्रोनी साथे आत्म
 पष्ट थधने कवच घाघाने ते चिलात चोरनी पाछण तेना पद चिह्नोंतु अणु
 सरण करतो मेघना जेवी ध्वनि करतो "अरे ओ हुष्ट ! जेबोरे, जेबोरे,"
 आ प्रभाणे कडेतो "जेबोरे, जेबोरे, नडितर भरी गयेयो जेबोरे" आ
 प्रभाणे डाकल करतो, तेने गोलावतो 'अरे निर्लज्ज !' आभ तर्जित करतो
 तेभज शस्त्र अस्त्र वगेरेने गतावीने तेने त्रसित करतो आदये।

(तण्ण से चिलाए त घण्ण सत्यवाह पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पउट्ट सन्नद्व
 द्व० समणुगच्छमाण पासह, पासित्ता अत्थामे अबले)

पुरुषकारः=पौरुषम्, पराक्रमः=मामर्ष्यं, तद्रहितः सन् 'जाहे' यदा नो शक्नोति
सुसुमा दारिकां 'णिन्वाहित्तए' निर्वाहयितु=बोद्धुम्, 'ताहे' तदा 'सते'
श्रान्तः=परिश्रम गतः, 'तते' तान्तः=ग्लानिं प्राप्तः, 'परितते' परितान्तः=
सर्वतोभावेन खिन्नतामुपगतः, 'नीलुप्पल०' नीलोत्पलः=नीलोत्पगवलगुलि
कादि विशेषणविशिष्टमतितीक्ष्णम् 'असिं' करवाल 'परामुसइ' परामृशति=
कोशान्निःसारयति, परामृश्य, सुसुमाया दारिकायाः 'उत्तमग' उत्तमाङ्ग=शिरः

अवीरिण अपुरिसकारपरक्रमे जाहे णो सचाण्ह सुसम दारिय णिन्वा
हित्तए, ताहे सते तते पग्गितते निलुप्पल० असिं परामुसइ, परामुसित्ता
सुसमाए दारियाए उत्तमग छिदइ, छिंदित्ता, त गहाय त अग्गामिय
अडविं अणुपविट्ठे, तएण से, चिलाए तीसे आग्गामियाए अडवीए
तण्हाए अभिभूए समाणे पम्हुट्ठदिसाभाए सीह गुहं चोरपल्लिं अस
पत्ते अतराचेव कालगए) जज चिलात चोर ने उअ वन्यसार्थवाह को
पाचो पुत्रो के साथ आत्मपष्ठ होकर एव कवच आदि से सुसज्जित
होकर अपने पीछे २ आता हुआ देखा-तब वह देव कर आत्मबल
रहित हो गया। इस तरह सैन्य रहित, उत्साह रहित तथा पौरुष और
पराक्रम रहित बना हुआ वह जब सुसुमा दारिका को अपने पास रखने
के लिये शक्तिशाली नहीं हो सका तब उसने श्रान्त, तान्त-ग्लानि
युक्त और परितात सर्वतोभावेन खिन्नता को प्राप्त होकर नीलोत्पल,
गवलगुलिका, आदि विशेषणों वाली अपनी तलवार को उठाया-म्यान

परक्कमे जाहे णो सचाएइ सुसम दारिय णिन्वाहित्तए, ताहे सते तते परितते
नीलुप्पल० असिं परामुसइ, परामुसित्ता सुसमाए दारियाए उत्तमग छिदइ,
छिंदित्ता, त गहाय त अग्गामिय अडविं अणुपविट्ठे, तएण से, चिलाए तीसे
आग्गामियाए अडवीए तण्हाए अभिभूए समाणे पम्हुट्ठदिसाभाए सीहगुह
चोरपल्लिं अमपत्ते अतरा चेव कालगए)

न्यारे चिलात चोरे ते धन्य साथवाडने पाचे पुत्रोनी साथे आत्मपष्ठ
थधने तेमज्ज कवच वगेरेथी सुमज्जित थधने पोतानी पाळण पाळण आवतो
जेथे त्यारे ते जेधने आत्मभण वगरने थई गये। आ प्रभाणु सेना रद्धित
उत्साह रद्धित तेमज्ज पौरुष अने पराक्रम रद्धित थध गये। ते न्यारे सुसुमा
दारिकाने पोतानी पासे राभवामा पणु असमर्थ थई गये। त्यारे तेणु श्रात,
तात, ग्लानि युक्त अने परितात तेमज्ज अधी रीते खिन्नता प्राप्त करीने
नीलोत्पल, गवल गुलिका वगेरे विशेषणोवाणी पोतानी तरवारने उपाडी अने
म्यानमाथी गडार डाडी अने गडार डाडीने सुसुमा दारिकानु माथु कापी

मार्गत्रिधि=पदमार्गप्रचारम्=रणचिह्नम् 'अणुगच्छमाणे' अनुगच्छन्=पृष्ठतो यावत्
 'अणुगज्जेमाणे' अनुगर्जन्=गेवपदगर्जनां कर्तुम् 'द्वारमाणे' 'दमो' दुष्ट !
 तिष्ठ-तिष्ठ ' इत्यादि, वाक्यैः द्वारयत्=आचारयन् 'द्वारमाणे' पूष्कारयन्
 'तिष्ठ २, नोचेत्वा दनिष्यामीत्यादिवाक्यैः तमाह्वय 'अमितज्जेमाणे' अमि
 तर्जन्='रे निर्लज्ज' इत्यादि वाक्यैस्तर्जनां कर्तुम्, 'अमितासेमाणे' अमि
 त्रासयन्=अस्त्रशस्त्रादिदर्शनेन त्रासमुत्पादयन् 'पिट्टाओ' पृष्ठतः=चिलातचोरस्य
 पृष्ठदेशतः अनुगच्छति=यथाद्वावति । तत्र यत्तु म चित्रातः त धन्य सार्थवाह
 पञ्चभि पुत्रै सादूर्ध्वम् 'अप्पउट्ट' आत्मपट्ट 'मन्नद्वयद्ववर्मितकवच यावत्
 समनुगच्छन्त=यथाद्वावन्त पश्यति, इट्ठा 'अत्थामे ४' अस्थामा=आत्मवल
 रहितः, अरलः=सैन्यरहितः, अरीर्यः = उत्साहरहितः, पुरुषपरपराक्रम सन्

अमितासेमाणे पिट्टाओ अणुगच्छइ) धन्यसार्थवाह ने जय सुसमा
 दारिका को चिलात चोर द्वारा अटवी के मध्य में हरणकर ले जाई गई
 जय जाना-तब वह अपने पांचों पुत्रों के साथ आत्मपट्ट होकर कवच
 बाध उस चिलात के पीछे २ पद चिह्नों का अनुसरण करता हुआ, मेघ
 के जैसी गर्जना करता हुआ, अरे ओ दुष्ट ! ठहर ठहर इस प्रकार से
 कहता हुआ, पुकार करता हुआ ठहर जा ठहर जा-नहीं तो मैं तुझे
 मार डालूंगा इस प्रकार के वाक्यों से उसे बुलाता हुआ रे निर्लज्ज !
 इस प्रकार से उसे तर्जित करता हुआ, तथा अस्त्र शस्त्र आदि के
 दिखाने से उसे त्रास उत्पन्न करता हुआ चला ।

(तण्ण से चिलाए त धण्ण सत्थवाह पवहिं पुत्तेहिं सद्धिं
 अप्पउट्ट अन्नद्वयद्वं समणुगच्छमाण पासइ, पासित्ता अत्थामे अबले

माणे पिट्टाओ अणुगच्छइ)

ज्यारे धन्य सार्थवाहे सुमभा दारिकाने चिलात चोर वडे अटवीमा
 हरण करीने लथ जयायेली नाली, त्यारे ते पोताना पाये पुत्रोनी साथे आत्म
 पट्ट थधने कवच बाधीने ते चिलात चोरनी पाछण तेना प२ चिह्नोतु अनु
 सरणु करतो मेघना जेवी ध्वनि करणे "अरे ओ दुष्ट ! जिलोरे, जिलोरे,"
 आ प्रभाणु कहेतो "जिलोरे, जिलोरे, नडितर भरी गयेयो नालुणे" आ
 प्रभाणु डाकल करतो, तेने जोलावतो 'अरे निर्लज्ज !' आभ तर्जित करतो
 तेभज शस्त्र अस्त्र वजोरेने णतावीने तेने त्रसित करतो थाल्ये।

(तण्ण से चिलाए त धण्ण सत्थवाह पवहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पउट्ट सन्नद्व
 वद्वं समणुगच्छमाण पासइ, पासित्ता अत्थामे अबले)

बलहेतु=शरीरबलवर्धनार्थम्, 'मीरियहेउ' वीर्यहेतुम्=आन्तरिकशक्तिसम्पादनार्थम्, आहारम् आहारयति, स गच्छ इह लोके एव बहूना श्रमणानां श्रमणीनां श्रावकाणां श्राविकाणां च 'हीलणिज्जे जाव' हीलनीयो यावत्, यावत्पदेन, निन्दनीय, खिसनीय गर्हणीयो भवेत्, परलोकेऽपि दुःखं प्राप्नोति, यावत्-चातुरन्तससारकान्तारम् 'अणुपरियट्टिस्सइ' अनुपर्यट्टिष्यति=भ्रमिष्यति, यथा स चिलातस्तस्करः-चिलाततस्करवदिति भावः ॥५०७॥

मूलम्-तएण से धणणे सत्थवाहे पचहिं पुत्तेहि सद्धि अप्प-छट्टे चिलाय परिधाडेमाणेर तण्हाए लुहाए य सत्ते तते परितंते

पाण ४ हीलणिज्जे ३ जाव अणुपरियट्टिस्सइ जहाव से चिलाए तकरे) अन प्रभु इस चिलात के दृष्टान्त से निर्ग्रन्थ आदिको को संबोधित कर प्रतिबोधित करते हैं-हे आयुष्मन्त श्रमणों! इसी तरह जो हमारा निर्ग्रन्थ श्रमण अथवा श्रमणीजन आचार्य उपाध्याय के पास प्रव्रजित होकर वातास्रववाले यावत् विध्वंसन धर्मवाले इस औदारिक शरीर में कान्ति विशेष प्राप्ति के लिये सौन्दर्य आदिरूप विशेष के लिये, बलवर्धन के लिये तथा आन्तरिक शक्ति वृद्धिके लिये आहार को लेता है-करता है - वह इस लोक में अनेक श्रमण श्रमणी, श्रावक तथा श्राविका जनों द्वारा हीलनीय यावत् निन्दनीय, खिसनीय गर्हणीय तो होता ही है-परन्तु पर भवमें भी वह दुःखो कोही पाता है। यावत् ऐसा जीव इस चतुर्गतिरूप ससार कान्तार में चिलात चोर की तरह परिभ्रमण ही करता रहना है ॥ सूत्र ७ ॥

चेव बहूण समणान् ४ हीलणिज्जे २ जाव अणुपरियट्टिस्सइ, जहाव से चिलाए तकरे) डवे प्रभु ते चिलातना दृष्टान्तने सामे राणीने निर्ग्रन्थ वगेरेने म बोधित करीने जाना करे छे के छे छे आयुष्मन्त श्रमणो! आ प्रमाणे जे अभास निर्ग्रन्थ श्रमण अथवा श्रमणीजन आचार्य के उपाध्यायनी पामे प्रव्रजित थरने वातास्रववाणा यावत् विध्वंसन धर्मवाणा आ औदारिक शरीरमा कान्ति विशेषनी प्राप्ति माटे, सौन्दर्य वगेरे उप विशेषना माटे, अणवर्धन माटे तेमज आन्तरिक शक्तिने वधाग्वा माटे आहार अडणु करे छे ते आ बोधमा धणु श्रमण, श्रमणी, श्रावक तेमज श्राविकाओ वडे हीलनीय यावत् निन्दनीय, खिसनीय अने गर्हणीय तो होय ज छे पणु साथे साथे ते परलवमा पणु दुःख ज भेजवे छे यावत् जेवो जव आ चतुर्गति उप ससार कान्तारमा चिलात चोरनी जेम सट्कते ज रहै छे ॥ सूत्र ७ ॥

लिनचि, त्रिरा, 'त' त्=उत्तमाद् एधीया ताम् अप्रामिराम्=जनानामरि-
 ताम् अटरीमनुपरिष्ट' =पवेत करान । तनः गलु निगत तस्यामप्रामिकाया
 मट्ठ्या 'तण्ठाए' तृष्णाया=पिपासया अभिभूत स 'विन्दूद्रिगामाए' विस्-
 तदिग्भागः=पूर्वादिदिशाविरेरविरल. सत् सिद्धगुडा चोरपटीम् 'अगपते' अस-
 म्यासः 'अराचेय' अन्तरा एर=म प एर 'कालाण' कागत' =अमौ चोरो
 मृत्यु प्राप्तवान् । अस्य शेरचरितं ग्रन्थातरादवसेयम्, शास्त्रेण-उपयोगि चरित
 तान्मात्र भगवतोपदिष्टम् ।

अथ चिलातट्टान्तेन मगवान निर्ग्रन्थादीन् सरोप्य प्रतिप्रोधयति — 'एवा
 मेव' एवमेव=अनेन प्रकारेण 'समणाउसो' आयुन्तः व्रमणाः । 'जाव पव्व
 इए समाणे' यासु मवजितः सन्=योऽस्माक निर्ग्रन्थो वा निर्ग्रन्थी वा आचार्यो
 पाध्यायानां समीपे मवजितः सन् 'इमस्स' अस्य 'ओरालियसरीरस्स'
 औदारिसरीरस्य वान्तासवस्स यासद् विवसनपर्मस्य 'वण्णहेउ' वर्णहेतु =
 कान्तिविशेषमाप्त्यर्थम्, यासु- 'ह्वहेउ' रूपहेतु=तौन्दर्यायर्थम्, 'वड्ढेउ'

से बाहर किया और उठाकर सुम्मा दारिका के मस्तक को काट डाला।
 उस कटे हुए मस्तक को लेकर फिर निर्जन अटवी में प्रवेश कर गया।
 उस अटवी में पिपासा से व्याकुल होकर वह पूर्वादि दिशाओं के
 विवेक से रहित हो गया—इस तरह वह पुनः वहाँ से पीछे वापिस
 अपनी सिद्धगुडा नामकी चौर पटी में नहीं आ सका—और बीच ही में
 फाल कवलित बन गया। इनका अवशिष्ट चरित्र ग्रन्थान्तर से जान
 लेना चाहिये। यहाँ तो भगवान् ने जितना चरित्र इसका उपयोगी
 जाना उतनाही उपदिष्ट किया है।—(एवामेव समणाउसो ! जाव पव्व
 इए समाणे इमस्स ओरालियसरीरस्स वतासवस्स जाव विद्धसण
 धम्मस्स वण्णहेउ जाव आहार आहारेइसे ण इहलोए चेव बहण सम

नाप्यु ते क्पाञ्जला माधाने लधने ते निजान-स्य कर अटवीमा चेसी गयो
 अटवीमा ते तरयथी व्याकुण थधने पूर्ण वगेरे दिशाञ्जाना विवेकथी रहित
 थध गयो अने आ प्रमाणे ते इनी त्याथी ते चोतानी सिद्धगुडा नामनी चौर
 पट्टीमा केध पणु द्विमे पाछो आची शउथो नद्धि अने वड्ढे ण मृत्यु पाग्थो
 तेनु पाकीनु अरित्र जीन अथमाथी नाणी लेवु जेधञ्जे, अर्द्धो तो लगवाने
 जेट्लु अरित्र तेनु उपयुक्त नाणु तेट्लु उड्ढु छे

(एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे इमस्स ओरालियसरीरस्स
 वतासवस्स जान विद्धसणधम्मस्स वण्णहेउ जाव आहार

तुम्हे ममं देवाणुप्पिया । जीवियाओ ववरोवेह, मंसं च सोणिय
च आहारेइ, आहारित्ता, तेण आहारेणं अविद्धत्था समाणा
तओ पच्छा इम अग्गामिय अडवि णित्थरिहिह, रायगिह च
संपावेहिह, मित्तणाइ० य अभिसमागच्छिहिह, अत्थस्स य
धम्मस्स य पुण्णस्स य आभागी भविस्सह । तएण से जेट्ठपुत्ते
धण्णेणं सत्थवाहेण एवं तुत्ते समाणे धण्ण सत्थवाहं वयासी-
तुब्भे ण ताओ । अम्हे पिया गुरुजण य देवभूया ठावगा पइ-
ट्ठावगा सरक्खगा सगोवगा तं कहण्णं अम्हे ताओ । तुब्भे जीवि-
याओ ववरोवेमो, तुब्भे णं मस च सोणिय च आहारेमो ? त
तुब्भे ण तातो । मम जीवियाओ ववरोवेह, मंसं च सोणिय च
आहारेह, अग्गामिय अडवि णित्थरह, त चेव सव्व भणइ जाव
अत्थस्स जाव पुण्णस्स आभागी भविस्सह । तएण धण्ण सत्थ-
वाह दोच्चे पुत्ते एव वयासी-मा णं ताओ । अम्हे जेट्ठ भायर
गुरुदेवयं जीवियाओ ववरोवेमो, तुब्भे ण ताओ । मम जीवि-
याओ ववरोवेह जाव आभागी भविस्सह । एव पचमेपुत्ते तएण
से धण्णे सत्थवाहे पचण्ह पुत्ताण हियइच्छिय जाणित्ता, त पच
पुत्ते एव वयासी-मा ण अम्हे पुत्ता । एगमाविजीवियाओ वव-
रोवेमो, एसण सुसुमाए दारियाए णिप्पाणे णिच्चेट्ठे जाव विप्प-
जडे, त सेयं खलु पुत्ता । अम्हे सुसुमाए दारियाए मस च
सोणिय च आहारेत्तए । तएण अम्हे तेण आहारेण अविद्ध,
त्थासमाणा रायगिह सपाउणिस्सामो । तएण त पंच पुत्ता

नो संचाएइ चिलाय चोरसेणावडं साहरिय गिण्हित्तण । से णं
 तओ पडिनियत्तइ, पडिनियत्तित्ता जेणेव सा सुसुमा दारिया
 चिलाएण जीवियाओ ववरोविया तेणेव उवागच्छइ, उवाग-
 च्छित्ता, सुसुमं दारिय चिलाएणं जीवियाओ ववरोवियं पासइ,
 पासित्ता परसुनियत्तेव चपगवरपायवे धसत्तिधरणियलसि निव-
 डइ । तएण से धण्णे सत्थवाहे पंचहि पुत्तेहि सडिं अप्पच्छे
 आसत्थे कूयमाणे कदमाणे विलवमाणे महयार सदेणं कुहूर
 सुपरुत्ते सुचिर काल वाहमोक्ख करेइ । तएणं से धण्णे सत्थवाहे
 पंचहि पुत्तेहिं सडिं अप्पच्छे चिलायं तीसे अग्गामियाए अडवीए
 सव्वओ समंता परिधाडेमाणे तण्हाए लुहाए य परिभूए समाणे
 तीसे अग्गामियाए अडवीए सव्वओ समता उदगस्स मग्गण-
 गवेसण करेइ, करित्ता सत्ते तत्ते परितत्ते, णिव्विन्ने, तीसे अग्गा-
 मियाए अडवीए उदगस्स मग्गणगवेसण करेमाणे नो चेव णं
 उदग आसादेइ । तएणं से धण्णे सत्थवाहे अप्पच्छे उदग
 अणासाएमाणे जेणेव सुसुमा जीवियाओ ववरोविया तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जेठ पुत्त धणदत्त सद्दावेइ, सद्दावित्ता
 एव वयासी-एव खलु पुत्ता । अम्हे सुसुमाए दारियाए अट्टाए
 चिलाय तक्कर सव्वओ समता परिधाडेमाणा तण्हाए लुहाए
 य आभिभूया समाणा इमीसे अग्गामियाए अडवीए उदगस्स
 मग्गणगवेसण करेमाणा णो चेव ण उदगं आसादेमो, तएणं
 उदग, अणासाएमाणा णो संचाएमो रायगिह सपात्ति तएण

तुम्हे ममं देवाणुप्पिया ! जीवियाओ ववरोवेह, मसं च सोणियं
च आहारेइ, आहारित्ता, तेणं आहारेणं अविद्धत्था समाणा
तओ पच्छा इमं अग्गामियं अडवि णित्थरिहिह, रायगिह च
संपावेहिह, मित्तणाड० य अभिसमागच्छिहिह, अत्थस्स य
धम्मस्स य पुण्णस्स य आभागी भविस्सह । तएण से जेट्टुपुत्ते
धण्णेणं सत्थवाहेण एवं वुत्ते समाणे धण्ण सत्थवाहं वयासी—
तुव्भे ण ताओ । अम्हे पिया गुरुजण य देवभूया ठावगा पइ-
ट्ठावगा सरक्खगा सगोवगा तं कहण्णं अम्हे ताओ । तुव्भे जीवि-
याओ ववरोवेमो, तुव्भे ण मसं च सोणियं च आहारेमो ? त
तुव्भे णं तातो । मम जीवियाओ ववरोवेह, मसं च सोणियं च
आहारेह, अग्गामिय अडवि णित्थरह, त चेव सव्व भणइ जाव
अत्थस्स जाव पुण्णस्स आभागी भविस्सह । तएण धण्ण सत्थ-
वाह दोच्चे पुत्ते एव वयासी—मा णं ताओ । अम्हे जेट्ट भायर
गुरुदेवय जीवियाओ ववरोवेमो, तुव्भे णं ताओ । मम जीवि-
याओ ववरोवेह जाव आभागी भविस्सह । एव पचमेपुत्ते तएण
से धण्णे सत्थवाहे पचण्ह पुत्ताण हियइच्छिय जाणित्ता, त पच
पुत्ते एव वयासी—मा ण अम्हे पुत्ता । एगमाविजीवियाओ वव-
रोवेमो, एसण सुसुमाए दारियाए णिप्पाणे णिच्चेट्ठे जाव विप्प-
जडे, त सेय खलु पुत्ता । अम्हे सुसुमाए दारियाए मस च
सोणियं च आहारेत्तए । तएण अम्हे तेण आहारेण अविद्ध,
त्थासमाणा रायगिह सपाउणिस्सामो । तएण त पंच पुत्ता

धण्णेणं सत्थवाहेणं एव बुत्ता समाणा एयमट्ठं पडिसुणेंति ।
 तएणं धण्णे सत्थवाहे पंचहिंपुत्तेहिं सद्धिं अरणिं करेइ, करित्ता,
 सरगं च करेइ, करित्ता, सरएणं अरणिं महेइ, महित्ता अग्गि-
 पाडेइ, पाडित्ता, अग्गिं संधुस्खेइ, सवुम्भित्ता दारुयाइ परि-
 क्खेवेइ, परिवखेवित्ता, अग्गिपज्जालेइ, पज्जालित्ता, सुंसुमाए
 दारियाए मंस च सोणियं च आहारेंति । ते णं आहारेण अवि-
 छत्था समाणा रायगिहं नयर संपत्ता मित्तणाइ० अभिसमणा-
 गया तस्स य विउलस्स धणकणगरयण जाव आभागी जाया
 यावि होत्था । तएण से धण्णे सत्थवाहे सुंसुमाए दारियाए
 वहुइ लोइयाइ जाव विगयसोए जाए यावि होत्था ॥ सू०८ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततः खलु स धन्य’ सार्थवाहः पञ्चभिः पुत्रै
 सह आत्मपट्टः चिलात् ‘परिधाडेमाणे २’ परिधावन् २=चिलात् ग्रहीतुकामस्त
 स्पृष्टतोऽनुधावन् ‘तण्हाए छुहाए य’ तृणया क्षुषया च ‘सते’ श्रान्त, =मनसा
 खिन्नः, ‘तते’ तान्त =शरीरेण क्लृप्त’, ‘परितते’ परितान्तः=मनसा शरीरेण च

—:तएण से धण्णे सत्थवाहे । इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पछट्टे से
 धण्णे सत्थवाहे) पांचो पुत्रों के साथ उठा बना हुआ वह धन्यसार्थवाह
 (चिलाय परिधाडेमाणे २) चिलातचोर को पकड़ ने की इच्छा से उस
 के पीछे २ बार बार दौड़ता हुआ, (तण्हाए छुहाए य सते तते परितते
 नो सचाइए चिलाय चोरसेणावई साहत्थिं गिण्हत्तए) पिपासा और

‘तएण से धण्णे सत्थवाहे’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्यारपछी (पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पछट्टे से धण्णे
 सत्थवाहे) पांचे पुत्रोनी साथे छट्टो ते धन्य सार्थवाह (चिलाय परिधाडेमाणे २)
 चिलात चोरनी पाछण पाछण तेने पकडी पाउवा भाटे वारवार दोडता दोडता
 (तण्हाए छुहाए य सते तते परितते नो सचाइए चिलाय चोरसेणावई साहत्थिं
 गिण्हत्तए) तस्स अने लूभथी श्रात थई गये, भिन्न भनी गये थई

खिन्नः, ' नो सचाण्ड ' नो शक्नोति चिलात चोरसेनापति ' साहसि ' स्वह स्तेन ग्रहीतुम् । तदा स खलु ' तओ ' तत =चिलातग्रहणव्यापारात्, ' पडि- नियत्तइ ' प्रति निवर्तते, प्रतिनिवृत्त्य, यत्रैव सा सुसुमा दारिका चिलातेन जीवि- ताद् ' ववरोपिया ' व्यपरोपिता=पृथक्कृता=मारिता सती पतिता आसीत् तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य सुसुमा दारिका चिलातेन जीविताद् व्यपरोपिता पश्यति, दृष्ट्वा ' परसुनियत्तेव ' परशुनिकृत् इव=परशुच्छिन्नो यथा चम्पकवरपादपस्तद्वत्

ध्रुवा से भ्रान्त हो गया-खिन्न बन गया, तान्त हो गया-शरीर से सुरझा गया-परितान्त हो गया-इकदम उत्साह रहित बन गया-सो वह उसे अपने हाथ से पकड़ने के लिये शक्तिशाली नहीं हो सका-(सेण तओ पडिनियत्तइ, पडिनियत्तित्ता जेणेव सा सुसुमा दारिया चिलाएण जीवियाओ ववरोविया-तेणेव उवागच्छइ) अतः-वह वहा से लौट आया-और लौटकर वहाँ गया जहाँ वह अपनी पुत्री सुसुमा चिलातचोर के द्वारा-जीवन से रहित की गई पड़ी थी। (उवागच्छित्ता सुसुमा दारिय चिलाएण जीवियाओ ववरोविय पासइ, पासित्ता परसुनियत्तेव चपगवरपायवे धसत्ति धरणियलसि निवडइ-तएण से धण्णे सत्थवाहे पवहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पउट्ठे आसत्थे कूयमाणे कदमाणे विलवमाणे महया २ सद्देण कुहू २ सुपरुन्ने सुचिर कालवाहमोक्ख करेइ) वहा जाकर उसने सुसुमा दारिका को चिलातचोर के द्वारा जीवन से रहित की गई देखा। देखते ही वह पुत्रों सहित परशु से काटे गये उत्तम

गयो-शरीर तेनु विभडाए गयु परितात थए गयो-साव निइत्साडी णनी गयो अेवी हाइतमा ते पोताना हाथथी तेने पउडी पाउवाभा भमर्थ थए शकथे नडि (सेण तओ पडिनियत्तइ, पडिनियत्तित्ता जेणेव सा सुसुमा दारिया चिलाएण जीवियाओ ववरोविया तेणेव उवागच्छइ) तेथी ते त्याथी पाछे इरी गयो अने पाछे इरीने ते न्या विहात चोर वडे उष्वाथेवी पोतानी पुत्री सुसुमा दारिका पडी इती त्या गयो

(उवागच्छित्ता सुसुमा दारिय चिलाएण जीवियाओ ववरोविय पासइ पासित्ता परसुनियत्तेव चपगवरपायवे धसत्ति धरणियलसि निवडइ,-तएण से धण्णे सत्थवाहे पवहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पउट्ठे आसत्थे कूयमाणे कदमाणे विलव माणे महया २ सद्देण कुहू २ सुपरुन्ने सुचिर काल वाहमोक्ख करेइ)

त्या अने तेछे सुसुमा दारिकाने विहात चोर वडे उष्वाथेवी नेध नेतानी साथे अ ते पुत्रोनी साथे परशु वडे कपाअेला उत्तम अ पउ वृक्षनी

धण्णेणं सत्थवाहेण एत्तं वुत्ता समाणा एयमट्ठं पडिसुणेति ।
 तएणं धण्णे सत्थवाहे पचहिंपुत्तेहिं सद्धिं अरणिं करेइ, करित्ता,
 सरगं च करेइ, करित्ता, सरएणं अरणिं महेइ, महित्ता अग्गि-
 पाडेइ, पाडित्ता, अग्गि संधुम्येइ, संधुमियत्ता दारुयाइ परि-
 क्खेवेइ, परिवसेवित्ता, अग्गिपज्जालेइ, पज्जालित्ता, सुंसुमाए
 दारियाए मंसं च सोणियं च आहारोति । ते णं आहारेण अवि-
 च्छत्था समाणा रायगिहं नयरं सपत्ता मित्तणाइ० अभिसमणा-
 गया तस्स य विउलस्स धणक्कणगरयणं जाव आभागी जाया
 यावि होत्था । तएणं से धण्णे सत्थवाहे सुंसुमाए दारियाए
 वहुइ लोइयाइ जाव विगयसोए जाए यावि होत्था ॥ सू०८ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहः पञ्चभिः पुत्रैः सह आत्मपटुः चिलात् ‘परिधाडेमाणे २’ परिधात् २=चिलात् प्रहीतुकामस्त स्पृष्टतोऽनुधावन् ‘तण्हाए छुहाए य’ तण्णया भुधया च ‘सते’ श्रान्तः, =मनसा खिन्नः, ‘तते’ तान्तः=शरीरेण क्लान्तः, ‘परितते’ परितान्तः=मनसा शरीरेण च

—तएण से धण्णे सत्थवाहे । इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पछट्ठे से धण्णे सत्थवाहे) पांचो पुत्रों के साथ उठा बना हुआ वह धन्यसार्थवाह (चिलाय परिधाडेमाणे २) चिलात्चोर को पकड़ने की इच्छा से उस के पीछे २ बार बार दौड़ता हुआ, (तण्हाए छुहाए य सते तते परितते नो सचाइए चिलाय चोरसेणावई साहत्थिय गिण्हत्तए) पिपासा और

‘तएण से धण्णे सत्थवाहे’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारपणी (पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पछट्ठे से धण्णे सत्थवाहे) पांचे पुत्रोनी साथे छोडे ते धन्य सार्थवाह (चिलाय परिधाडेमाणे २) चिलात् चोरनी पाछण पाछण तेने पकडी पाडवा भाटे वारवार होउता होउता (तण्हाए छुहाए य सते तते परितते नो सचाइए चिलाय चोरसेणावई साहत्थिय गिण्हत्तए) तस्स अने भूषथी श्रात् थछ गथे, भिन्न अनी थछ

माणे ' परिधावन् तृष्ण्या क्षुधया च ' परिभूए ' परिभूतः सन् तस्यामग्रामि
 कायामटव्या सर्पत. समन्तात्=चतुर्दिक्षु ' उदगस्स ' उदकस्य=जलस्य ' मगण-
 गवेसण ' मार्गणगवेपणम्=अन्वेपण करोति, कृत्वा श्रान्तः, तान्त, परितान्त
 ' णिव्विन्ने ' निर्णिण्ण=औदासीन्य प्राप्तः । तस्यामग्रामिकायामटव्यामुदकस्य
 मार्गणगवेपणं कुर्वन् नो चैव खलु उदकम् ' आसादेइ ' आसादयति=प्राप्नोति ।
 ततः खलु स धन्यः सार्धं वाह आत्मपष्ठ उदकमनासादयन् पानीयमप्राप्नुवन्
 यत्रैव सुसुमा जीविताद् व्यपरोपिता मारिता सती पतिताऽऽसीत् तत्रैव उपाग-
 च्छति, उपागत्य ज्येष्ठ पुत्र धनदत्त शब्दयति, शब्दयित्वा, एवमवदत्-एव खलु
 में चारो दिशाओ में जल की मार्गणा और गवेपणा करने लगा (करिन्ता
 सते तते परितते णिव्विन्ने तीसे अगामियाए अडवीए उदगस्स मगण
 गवेसण करेमाणे णो चैव ण उदग आसाएइ) मार्गणा गवेपणा करके
 वह श्रान्त, मन से खिन्न, तान्तशरीर से खिन्न और परितान्त-बन
 गया शरीर एव मन इन दोनों से खिन्न हो गया इस तरह उस अग्रा-
 मवाली अटवी में उदकपानी की मार्गणा और गवेपणा करते हुए भी
 उसे जल नहीं मिला (तएण से धण्णे सत्थवाहे अप्पच्छे उदग अणा-
 साणमाणे जेणेव सुसुमा दारिया जीवियाओ ववरोविद्या-तेणेव उवाग-
 च्छइ) तब आत्मपष्ठ बना हुआ वह धन्यसार्धंवाह उदक प्राप्त नहीं
 करता हुआ जहाँ सुसुमादारिका का शव पड़ा हुआ-या वहा आया
 -(उवागच्छित्ता जेइ पुत्त धणदत्त सद्दावेइ, सद्दावित्ता एव वयासी)

अने क्षुधा (तरस अने भूख) थी पीछाधने ते गाभ वगरनी अटवीमा
 शोभेर पाष्णीनी भार्गष्ठा अने गवेपष्ठा करवा लाग्यो

(करिन्ता सते तते परितते णिव्विन्ने तीसे अगामियाए अडवीए उदगस्स
 मगणगवेसण करेमाणे णो चैव ण उदग आसाएइ)

भार्गष्ठा तेमन् गवेपष्ठा करीने ते श्रात, मनथी णित्त, तात शरीरथी
 णित्त अने परितात अनी गथे शरीर तेमन् मन आ अनेथी ते णित्त थर्ध
 गथे आ प्रभाष्णे ते गाभ वगरनी अटवीमा उदक-पाष्णी-नी भार्गष्ठा गवे
 पष्ठा करता तेने पाष्णी मज्जु नडि

(तएण से धण्णे सत्थवाहे अप्पच्छे उदग अणासाएमाणे जेणेव सुसुमा
 दारिया जीवियाओ ववरोविद्या तेणेव उवागच्छइ)

त्यारे आत्मपष्ठ अनेलो ते धन्य सार्धंवाह पाष्णी न भेजवता न्या
 सुसुमा दारिकानु भउइ पउयु इतु त्या आग्ये (उवागच्छित्ता जेइ पुत्त धण
 दत्त सद्दावेइ सद्दावित्ता एव वयासी) त्या आवीने तेष्से पीताना भोटा पुत्र
 धनदत्तने भोलाथे अने भोलावीने तेष्से आ प्रभाष्णे कक्षु उ-

सपुत्रो धन्यः सार्थवाहः ' धमसि ' धम ' इति शब्दपूर्वक धरणीतले निपतति । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहः आत्मपष्ट ' आश्वस्त्ये ' आश्वस्त=उच्छ्वास इत्यत्र सचेष्टः सन् ' रुवमाणे ' रुवन् = अ-यक्त-अष्ट कृत् ' कंमाणे ' कन्दन् उचस्त्रेण, पुनः ' विलापमाणे ' विलापन्=विलाप कृत् ' महया महया संदेण ' महतामहता शब्देन=प्रत्युचैः शब्देन ' कुह २ सुपरुन्ने ' कुह २ सुपरुन्-कुह कुह इति शब्दगुच्छसार्थत्यर्थ रुदितः सा सुगिरि शाल=यहुका उपर्यन्त ' वाहमोक्त्वा ' वाष्पमोक्षम्=प्रश्रुमोचन करोति । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहः पञ्चभिः पुत्रैः सह आत्मपष्ट, चिलात तस्यामग्रामिण्याम् अटव्या सर्वत समन्तात् ' परिधाटे

चपक वृक्ष के समान " धम " इम शब्द पूर्वक भूमिपर गिर पडा । बाद मे पांच अपने पुत्रो के साथ आत्मपष्ट बना हुआ वह धन्यसार्थवाह आश्वस्त, उच्छ्वास छोड़ता हुआ सचेष्ट-हो गया सो अव्यक्त शब्द करता हुआ खूप जोर २ से रोने लगा, विलाप करने लगा । एव बहुत ऊंचे २ शब्दों से कुह कुह करता हुआ-हाथ सासे लेता हुआ-बहुत देरतक रोता रहा-अश्रुमोचन पूर्वक आक्रन्दन करता रहा-(तण से धण्णे सत्थवाहे पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पउट्टे चिलाय तीसे अग्गामियाए अडवीए सव्वओ समता परिधाटेमाणे तण्हाण छुहाए य परिभूए समाणे तीसे अग्गामियाए अडवीए सव्वओ समता उदगस्स मग्गणगवेसण करेइ) इसके बाद पाचो पुत्रों के साथ आत्मपष्ट बना हुआ वह धन्यसार्थवाह उस अग्रामवाली अटवी में चिलातचोर के पीछे पीछे बार २ दौड़ता हुआ तृषा और क्षुधा से पीड़ित होकर उस अग्रामवाली अटवी

जेम " धम " शब्दनी साथे जमीन उपर पडी गयो त्थारपछी पाये पुत्रो तेमज छडो ते धन्यसार्थवाह आश्वस्त-उच्छ्वास छोडतो-निसासा नाभतो सचेष्ट थरि गयो अने अव्यक्त शब्द करतो धूसके धूसके भूष जेरथी रडवा लाग्यो, विलाप करवा लाग्यो अने णहु मोटा सादे ' कुह कुह ' करतो हाथ हाथ करीने थ्यासो लेने। धण्णीवार सुधी रडने रह्यो तेमज आसू पाडतो आकड करतो रह्यो

(तण से धण्णे सत्थवाहे पचहिं पुत्तेहिं सद्धिं अप्पउट्टे चिलाय तीसे अग्गामियाए अडवीए सव्वओ समता परिधाटेमाणे तण्हाण छुहाए य परिभूए समाणे तीसे अग्गामियाए अडवीए सव्वओ समता उदगस्स मग्गणगवेसण करेइ)

त्थारभाह पाये पुत्रोनी साथे छडो ते धन्यसार्थवाह ते गाम वगरनी निर्वन अटवीमा चिलात चोरनी पाछण पाछण वारवार ... ने तृषा

मद्वीं ' णित्थरिहिह ' निस्तरिप्यथ=पारङ्गमिप्यथ, राजगृह च ' सपात्रिहिह ' समाप्स्यथ ' मित्ताणाइ० य ' मित्रज्ञातिश्च=मित्रज्ञातिस्वजनसम्बन्धिपरिजनानि ' अभिसमागच्छिहिह ' अभिसमागमिप्यथ=मित्रज्ञातिप्रभृतिभिः सह सगता भविष्यथ, तथा च ' अत्थस्म ' अर्थस्य=धनस्य च धर्मस्य च पुण्यस्य च ' आभागी ' आभागिनो = भोक्तारो भविष्यथ । ततः खलु स ज्येष्ठपुत्रो धन्येन सार्थवाहेन एव मुक्तः = अनेन प्रकारेण कथितः सन् धन्यं सार्थवाहमेव मवदत्-हे तात ! यूय खलु अस्माक पिता ' गुरुजणदेवयभूया ' गुरुजन-देवतभूताः=देवगुरुजनसदृशाः ' ठावका ' स्थापकाः नीतिधर्मादौ ' पइट्ठावका ' प्रतिष्ठापका = राजादिसमक्ष स्वपदस्थापनेन प्रतिष्ठाकारकाः तथा ' संरक्खगा '

रिहिय रायगिह च सपावेहिह) इसलिये हे देवानुप्रियो ! तुम मुझे मारडालो और मेरे मांस और रक्त से तुम अपने प्राणोंकी रक्षाकर शरीर के विनाश होने से उचाकर इस अग्रामिक अटवी से पार हो जाओगे-एव राजगृह नगर पहुँच जाओगे । (मित्ताणाइ० य अभिसमागच्छिहिह अत्थस्स य धम्मस्स य पुण्णस्स य आभागी भविस्सह, तएण से जेट्ठे पुत्ते) वहा पहुँचकर तुम अपने मित्र, ज्ञाति, स्वजन, सबन्धी परिजनो के साथ मिलोगे तथा धन, धर्म और पुण्य के भोक्ता भी बनोगे-इसके बाद उस ज्येष्ठ पुत्र धनदत्त ने (धण्णेण सत्थवाहेण एव वुत्ते समाणे धण्ण सत्थवाह एव वयासी) धन्यसार्थवाह के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर उन अपने पिता धन्यसार्थवाह से इस प्रकार कहा (तुब्भे ण ताओ ! अहं पिया गुरुजणयदेवभूया ठावगा

अड्विं णित्थरिहिह रायगिह च सपावेहिह)

अथी हे देवानुप्रिय ! तमे मने भारी नाणो अने भारा मास अने रक्तने आवो, पीवो आधा पीधा पधी तमे शरीरना विनाशथी उगरी जशो अने तृप्ति भेजवीने आ गामवगरनी अटवीने पार करी जशो अने छेवटे राजगृह नगरमा पहुँची जशो ।

(मित्ताणाइ य अभिसमागच्छिहिह अत्थस्स य धम्मस्स य पुण्णस्स य आभागी भविस्सह, तएण से जेट्ठे पुत्ते)

त्या पहुँचीने तमे पो । ना मित्र, ज्ञाति, स्वजन, सबन्धी परिजनोनी साथे भजशो तेमज धन, धर्म अने पुण्योनी उपभोग करशो त्थारपधी मोटा पुत्र धनदत्ते

(धण्णेण सत्थवाहेण एव वुत्ते समाणे धण्ण सत्थवाह एव वयासी

धन्य सार्थवाह वडे आ प्रभाणु कडेवाया आह पोताना पिता धन्य सार्थवाहने आ प्रभाणु कहु डे—

हे पुत्राः ! त्वं तुमुमाया दारिकायाः ' अट्टाण ' अर्थात्=निमित्तं चिकानं तत्करं
 मति ' सव्वओ समता ' सर्वाः समन्तान्=अट्टाणां चतुर्दिक्षु ' परिधाडेमाणा '
 परिधायन्तः ' तण्हाण ' तण्णया=पिपामया, ' लुहाण ' श्रुभया च अभिभूतो
 सन्तः अस्यामग्रामिकायामट्टयामुदगम्य मार्गणगत्रेण कूर्वातो नो चैव खलु
 उदकमासादयाम', तत खलु उदकम् अनोमादयन्तः=असममानाः नो शक्नुमो
 राजगृह समाप्तुम्, ' तण्ण ' तत्पट्ट=नरमात् फारणात् खलु ग्य मा हे देवानु
 प्रियाः ! जीविताद् व्यपरोपयत, मास च सोणित च ' आहारेह ' आहारयत,
 आहार्य=भुवन्ता, ' तेण आहारेण ' तेन आहारेण ' अविद्धत्या ' अविध्वस्ताः=
 शरीरनाशममाप्ता' सन्तः तस्मा सतः ' तओपच्छा ' तत पश्चात् इमामग्रामिका

वहा आकर के उसने अपने जेष्ठ पुत्र धनदत्त को बुलाया-और बुलाकर
 उससे इस प्रकार कहा-(एव खलु पुत्ता ! अम्हे सुसमाण दारियाए
 अट्टाए चिलाय तक्कर सव्वओ समता परिधाडेमाणा तण्हाण लुहाए य
 अभिभूया समाणा इमी से अग्गामियाए अट्टणीण उदगस्स मग्गण
 गवेसण करेमाणा णो चैव ण उदग आसाएमो-तण्ण उदग अणासा
 एमाणा णो सचाएमो रायगिह सपावित्ताण) हे पुत्र सुनो अपने लोग
 सुसमा दारिका के निमित्त चिलातचोर के पीछे २ सब तरफ सब प्रकार
 से दौड़ते २ प्यास और भूख से दुःखी हो गये हैं हमने इस अग्राम
 वाली अट्टी में पानी की मार्गणा और गवेसणा भी की-परन्तु वह मिला
 नहीं अतः पानी की प्राप्ति के अभाव में अब राजगृह नगर में पहुँचने
 के लिये हम असमर्थ बन चुके हैं । (तएण तुम्हे मम देवाणुप्पिया !
 जीवियाओ ववरोवेह मस च सोणिय च आहारेह, आहारित्ता तेण
 आहारेण अविद्धत्या समाणा तओ पच्छा इम अग्गामिय अड्विणित्थ

(एव खलु पुत्ता ! अम्हे सुसमाए दारियाए अट्टाए चिलाय तक्कर सव्वओ
 समता परिधाडेमाणा तण्हाण लुहाए य अभिभूया समाणा इमीसे अग्गामियाए
 अड्वीए उदगस्स मग्गणगवेसण करेमाणा णो चैव ण उदग आसाए मो-तएण
 उदग अणासाएमाणा णो सचाएमो रायगिह सपावित्ताण)

हे पुत्र ! साधन, अमे सुसमा दारिकाने भेजववा भाटे चिलात चोरनी
 पाछण पाछण आभतेम थारे तरइ लटकता लटकना तरस अने लूथथी डू थी
 थई गया छीअे अमेअे आ गाभ वगरनी अट्टीमा पाछीनी भागंछुअने
 गवेसणु पर करी छे, पणु अमे डलु भेजनी शक्या नथी अेथी डवे पाछीनी
 अभावमा अमे राजगृह नगरमा पडेथी शक्यु तेम लागतुं नथी

(तएण तुम्हे मम देवाणुप्पिया ! जीवियाओ ववरोवेह, मस च सोणिय च
 आहारेह, आहारित्ता तेण आहारेण अविद्धत्या समाणा तओ अग्गामियं

मटत्री ' गित्थरिहिह ' निस्तरिप्यथ=पारङ्गमिप्यथ, राजगृह च ' सपाविहिह ' समाप्स्यथ ' मित्तणाई० य ' मित्रज्ञातिश्च=मित्रज्ञातिस्वजनसम्बन्धिपरिजनान ' अभिसमागच्छिहिह ' अभिसमागमिप्यथ=मित्रज्ञातिप्रभृतिभिः सह सगता भविष्यथ, तथा च ' अत्थस्म ' अर्थस्य=जनस्य च धर्मस्य च पुण्यस्य च ' आभागी ' अभागिनो = भोक्तारो भविष्यथ । ततः खलु स ज्येष्ठपुत्रो धन्येन सार्थवाहेन एव मुक्तः = अनेन प्रकारेण कथितः सन् धन्य सार्थवाहमेव भवदत्-हे तात ! यूय खलु अस्माक पिता ' गुरुजनदेवयभूया ' गुरुजनदेवतभूताः=देवगुरुजनसदृशाः ' ठावका ' स्थापकाः नीतिधर्मादौ ' पइट्ठावका ' प्रतिष्ठापका = राजादिसमक्ष स्वपदस्थापनेन प्रतिष्ठाकारकाः तथा ' सरक्खगा

रिहिह रायगिह च सपावेहिह) इसलिये हे देवानुप्रियो ! तुम मुझे मारडालो और मेरे मांस और रक्त से तुम अपने प्राणोंकी रक्षाकर शरीर के विनाश होने से उचाकर इस अग्रामिक अटवी से पार हो जाओगे-एव राजगृह नगर पहुँच जाओगे । (मित्तणाइ० य अभिसमागच्छिहिह अत्थस्स य धम्मस्स य पुण्णस्स य आभागी भविस्सह, तएण से जेट्ठे पुत्ते) वहा पहुँचकर तुम अपने मित्र, ज्ञाति, स्वजन, सयन्धी परिजनो के साथ मिलोगे तथा धन, धर्म और पुण्य के भोक्ता भी बनोगे-इसके बाद उस ज्येष्ठ पुत्र धनदत्त ने (धण्णेण सत्थवाहेण एव वुत्ते समाणे धण्ण सत्थवाह एव वयासी) धन्यसार्थवाह के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर उन अपने पिता धन्यसार्थवाह से इस प्रकार कहा (तुम्हे ण ताओ ! अहं पिथा गुरुजणयदेवभूया ठावगा

अडविं गित्थरिहिह रायगिह च सपावेहिह)

अथी छे देवानुप्रियो । तमे भने भारी नाणेो अने भारा भास अने रक्तने आवेो, पीवेो आधा-पीधा पधी तमे शरीरना विनाशथी उगरी जशेो अने तृप्ति भेजवीने आ गामवगरनी अटवीने पार करी जशेो अने छेवटे राजगृह नगरमा पडेोथी जशेो ।

(मित्तणाइ य अभिसमागच्छिहिह अत्थस्स य धम्मस्स य पुण्णस्स य आभागी भविस्सह, तएण से जेट्ठे पुत्ते)

त्या पडेोथीने तमे पो । ना मित्र, ज्ञाति, स्वजन, सयन्धी परिजनोनी साथे भजशेो तेमज धन, धर्म अने पुण्योनेो उपभोग करशेो त्यारपधी भोटा पुत्र धनदत्ते

(धण्णेण सत्थवाहेण एवे वुत्ते समाणे धण्ण सत्थवाह एव वयासी

धन्य सार्थवाह वडे आ प्रभाणेु कडेवाया आह पोताना पिता धन्य सार्थवाहने आ प्रभाणेु कछु डे—

हे पुत्राः । यय मुंमुमाया दारिद्र्यायाः ' अट्टाण ' अर्थात्=निमित्तं विनात तन्करं प्रति ' सन्नओ समता ' गर्वाः गमन्तान्=मट्टया चनुर्दिभु ' परिधाडेमाणा ' परिधारन्तः ' तण्हाण ' तण्हाया=पिपायया, ' गृहाण ' यथा च अभिभूतो सन्तः अस्यामग्रामिषायामट्टव्यामुदकस्य मार्गणगवेपण कुर्वन्तो नो चैव खलु उदकमासादयाम', तत खलु उदकम् अनोसादयन्त'=मणभमानाः नो अकनुभो राजगृह समाप्तुम्, ' तण्ण ' तण्णल्लु=नरमान् वारणात् खलु गृय मा हे देवानु प्रियाः ! जीरिताद् व्यपरोपयत, माम च सोणित च ' आहारेह ' आहारयत, आहार्य=भुज्या ' तेण आहारेण ' तेन आहारेण ' अविद्धत्या ' अविध्वस्ताः=शरीरनाशममाप्ता' सन्तः उप्ता सतः ' तओपच्छा ' तत पश्चात् इमामग्रामिका

वहा आकर के उसने अपने जेष्ठ पुत्र धनदत्त को बुलाया-और बुलाकर उससे इस प्रकार कहा-(एव खलु पुत्ता ! अम्हे सुसमाण दारियाए अट्टाण चिलाय तक्कर सन्नओ समता परिधाडेमाणा तण्हाण छुहाण य अभिभूया समाणा इमी से अग्गामियाए अडवीण उदगस्स मगण गवेसण करेमाणा णो चैव ण उदग आसाएमो-तण्ण उदग अणासा एमाणा णो सचाएमो रायगिह सपावित्तए) हे पुत्र सुनो अपने लोग सुसमा दारिका के निमित्त चिलातचोर के पीछे २ सब तरफ सब प्रकार से दौड़ते २ प्यास और भूख से दुःखी हो गये हैं हमने इस अग्राम वाली अटवी में पानी की मार्गणा और गवेपणा भी की-परन्तु वह मिला नहीं अतः पानी की प्राप्ति के अभाव में अब राजगृह नगर में पहुँचने के लिये हम असमर्थ बन चुके हैं। (तण्ण तुम्हे मम देवाणुप्पिया ! जीवियाओ ववरोवेह मस च सोणिय च आहारेह, आहारित्ता तेण आहारेण अविद्धत्या समाणा तओ पच्छा इम अग्गामिय अडवीणित्थ

(एव खलु पुत्ता ! अम्हे सुसुमाए दारियाए अट्टाए चिलाय तक्कर सन्नओ समता परिधाडेमाणा तण्हाए छुहाए य अभिभूया समाणा इमीसे अग्गामियाए अडवीए उदगस्स मगणगवेसण करेमाणा णो चैव ण उदग आसाए मो-तण्ण उदग अणासाएमाणा णो सचाएमो रायगिह सपावित्तए)

हे पुत्र ! सावण, अमे सुसमा दारिकाने मेणववा भाटे चिलात चोरनी पाछण पाछण आभतेम यारे तरक्क लटकता लटकना तरस अने लूअथी डुणी थध गया छीअे अमेअे आ गाम वगरनी अटवीमा पाछीनी मार्गण्णा अने गवेपण्णा पर करी छे, पण्ण अमे डल्ल मेणवी शक्या नथी अथी डवे पाछीनी अभावमा अमे राजगृह नगरमा पडेअी शक्रीशु तेम लागर्हु नथी

(तण्ण तुम्हे मम देवाणुप्पिया ! जीवियाओ ववरोवेह, मस च सोणिय च आहारेह, आहारित्ता तेण आहारेण अविद्धत्या समाणा तओ पच्छा अग्गामिय

रह' निस्तरत=पारगच्छत, 'तत्रैव सञ्च भणइ' तदेवसर्वं भणति=यथा धन्य सार्थवाहो ज्येष्ठ पुत्रमवदत्, तथैवायमपि तदेव सर्वं ज्ञयति, यावत् अर्थस्य र्म-स्य पुण्यस्य च आभागिनो भविष्यथ । ततः खलु धन्य सार्थवाह 'दोच्चे' द्वितीय' पुत्रधनपालनामा एवमवदत्-मा खलु हे तात ! अस्माक ज्येष्ठ भ्रातर 'गुरु देवय' गुरुदेवत=देव-गुरुसदृशम्, जीविताद् न्यपरोपयाम्.=मारयाम्, यूय खलु हे तात ! 'मम' मा=धनपालनामान जीविताद् व्यपरोपयत यावत् अर्था-दिफलभाजो भविष्यथ । 'एव =अनेन प्रकारेण 'जाय पचमेपुत्ते' यावत्

पहुच कर कहा अपने मित्रादि परिजनों के साथ मिल सके । तथा धन धर्म एव पुण्य के भोक्ता बन सके । "तत्रैव सञ्च भणइ" इसका तात्पर्य यही है कि जिस प्रकार धन्यसार्थवाह ने अपने ज्येष्ठ पुत्र, धन-दत्त से कहा-उसी प्रकार धनदत्त ने भी अपने पिता से वैसाही कहा- (तएण धण्ण सत्थवाह दोच्चे पुत्ते एव वयासी-माणं ताओ ! अग्हे जेट्ठे भायर गुरुदेवय जीवियाओ ववरोवेमो-तुब्भेण ताओ ! मम जीवि याओ ववरोवेह, मस च सोणिय च आहारेह, अग्गामिय अडडिं णित्थरह तत्रैव सञ्च भणइ जाव अत्थस्स जाव पुण्णस्स आभागी भविस्सह) इसके बाद धन्यसार्थवाह से उसके द्वितीय पुत्र ने इस प्रकार कहा-हे तात ! आप हमारे गुरु देवनातुल्य ज्येष्ठ भाई को जीवन से रहित मत कीजिये किन्तु आप तो हे तात ! मुझे ही जीवितसे रहितकर दीजिये-और मेरे ही रक्त एव मांस को आप खाईये पीईये-ताकि इस अग्रामिक अटवी से पार हो सके इत्यादि पहिले जैसा ही इसने

पोताना मित्रो वगेरे परिजनोनी साथे भणी गइके । तेभज धन धर्म अने पुण्यना बोक्ता अनी शके । "तत्रैव सञ्च भणइ" आने अर्थ आम साथ छे के जेभ धन्य साथवाहे पोताना भेटा पुत्र धनदत्तने कइते तेभज धनदत्ते पइते पोताना पिताने कइते

(तएण धण्ण सत्थवाहं दोच्चे पुत्ते एवं वयासी-माणं ताओ ! अग्हे जेट्ठे भायर गुरुदेवय जीवियाओ ववरोवेमो, तुब्भेण ताओ ! मम जीवियाओ ववरोवेह, मस च सोणिय च आहारेह, अग्गामिय अडडिं णित्थरह तत्रैव सञ्च भणइ जाव अत्थस्स जाव पुण्णस्स आभागी भविस्सह)

त्यारपछी धन्य सार्थवाहने तेना भीम पुत्रे आ प्रमाणे कइते के छे तात ! तमे अमार गुरुदेवता जेव भोग लाधने अवन रहित न करे । पइते छे तात ! तमे अने न मारी नाणे अने मारा न बोली अने मासने तमे आओ पीओ जेथी तमे आ गाभ पगरनी अटरीने पार करी शके, आम

सरक्षकाः यहन्त्रापट्टोः 'सगोपगा' सगोपका दृशरितप्रवृत्तेः, 'तं' तत्=तस्मात् कारणात् 'कण्ठणं' कथं स्वलु=नेन प्रकारेण स्वलु हे तात ! वयं युमान् जीवि ताव् व्यपरोपयामः=मारयामः, युमाकं स्वलु मांम च शोणित च कथम् आहार- याम ? 'त' तत्=तस्माद् युप स्वलु हे तात ! मां धनदत्तनामान जीविताद् व्य परोपयत=मारयत मम मांस च शोणित च आहारयत. अप्रामिशामट्टीं ' गित्थ

पहट्टायगा संरक्खयागा सगोपगा तं कण्ठण अम्हे ताओ ! तुब्भे जीवियाओ ववरोवेमो तुब्भ ण मस च सोणिय च आहारेमो अगगमिय अडवि गित्थरह त चेव सव्व भणइ जाव अत्थस्स जाव पुण्णस्स आभागी भवि स्सह) हे नात ! आप हमारे पिता है इसलिये आप मेरे लिये देव, गुरु जन के स्थान भूत हैं। नीति धर्म आदि में मुझे स्थापित करते रहते हैं। राज आदि समक्ष आप अपने पद पर मुझे बैठाते हैं इसलिये आप मेरे लिये स्थापक एवं प्रतिष्ठापक हैं यथेच्छ प्रवृत्ति से आप हमारी सदा रक्षा करते रहते हैं इसलिये आप मेरे सरक्षक हैं, दृशरित-प्रवृत्ति से आप हमें रोकते रहते हैं इसलिये आप मेरे सगोपक हैं, तो कैसे मैं हे तात ! आप को जीवन से रहित कर सकता हूँ। और कैसे आप के शोणित और मांस को खा सकता हूँ। इसलिये हे तात ! आप ही मुझे जीवन से रहित कर दीजिये और मेरे खून और मांस को आप खाइये ताकि आप इस अग्रामिक अट्टी को पार कर सके और राजगृह नगर

(तुब्भेण ताओ ! अम्ह पिया गुरुजनयदेवभूया ठावगा पट्टायगा सरक्खया सगोपगा त रुहण्ण अम्हे ताओ ! तुब्भे जीवियाओ ववरोवेमो तुब्भ ण मस च सोणिय च आहारेमो अगगमिय अडवि गित्थरह त चेव सव्व भणइ जाव अत्थस्स जाव पुण्णस्स आभागी भविस्सह)

हे तात ! तमे अमारा पिता छे, अथी तमे अमारा देव अने गुइना स्थाने छे। तमे मने नीति धर्म वगेरेमा प्रवृत्त पथु करता रहे छे। राज वगेरेनी सामे तमे पोताना स्थाने मने जेसाओ छे। अथी तमे मारा स्थापक अने प्रतिष्ठापक छे। यथेच्छ प्रवृत्तिथी तमे भारी रक्षा करता रहे छे। अथी तमे मारा सरक्षक छे, दृशरित प्रवृत्तिथी तमे मने रोकता रहे छे, अथी तमे मारा सगोपक छे। तो आवी परिस्थितिमा हे तात ! हे तमने डेवी रीते एवन रहित जनावी शकु अने डेवी रीते तमारा शोणित अने मांसनु लक्षणु करी शकु ? अथी हे तात ! तमे सुज धनदत्तने ज एवन रहित जनावी हो अने मारा खून अने मांसनु तमे लक्षणु करी अथी तमे आ गाम वगरनी अट्टीने पार करी शके अने राजगृह नगरमा

रह ' निस्तरत=पारगच्छत, ' तचेव सव्व भणइ ' तदेवसर्वं भणति=यथा धन्य सार्थवाहो ज्येष्ठ पुत्रमवदत्, तथैवायमपि तदेव सर्वं ज्ञयति, यावत् अर्थस्य वर्मस्य पुण्यस्य च आभागिनो भविष्यथ । ततः खलु धन्य सार्थवाह ' दोच्चे ' द्वितीय ' पुत्रधनपालनामा एवमवदत्-मा खलु हे तात ! अस्माकं ज्येष्ठ भ्रातर ' गुरु देवय ' गुरुदैवत=देव-गुरुसदृशम्, जीविताद् व्यपरोपयाम.=मारयाम', यूय खलु हे तात ! ' मम ' मा=धनपालनामान जीविताद् व्यपरोपयत यावत् अर्थादिफलभाजो भविष्यथ । ' एव =अनेन प्रकारेण ' जाय पचमेपुत्ते ' यावत्

पहुच कर वहा अपने मित्रादि परिजनों के साथ मिल सके । तथा धन धर्म एव पुण्य के भोक्ता बन सके । " त चेव सव्व भणइ " इसका तात्पर्य यही है कि जिस प्रकार धन्यसार्थवाह ने अपने ज्येष्ठ पुत्र, धनदत्त से कहा-उसी प्रकार धनदत्त ने भी अपने पिता से वैसाही कहा-(तएण धण सत्थवाह दोच्चे पुत्ते एव वयासी-माण ताओ ! अम्हे जेट्ठे भायर गुरुदेवय जीवियाओ ववरोवेमो-तुब्भेण ताओ ! मम जीवियाओ ववरोवेह, मस च सोणिय च आहारेह, अग्गामिय अडडिं गित्थरह त चेव सव्व भणइ जाव अत्थस्स जाव पुण्णस्स आभागी भविस्सह) इसके बाद धन्यसार्थवाह से उसके द्वितीय पुत्र ने इस प्रकार कहा-हे तात ! आप हमारे गुरु देवनातुल्य ज्येष्ठ भाई को जीवन से रहित मत कीजिये किन्तु आप तो हे तात ! मुझे ही जीवितसे रहितकर दीजिये-और मेरे ही रक्त एव मांस को आप खाईये पीईये-ताकि इस अग्रामिक अटवी से पार हो सके इत्यादि पहिले जैसा ही इसने

पोताना मित्रा वगेरे परिजनोनी साथे भणी शके । तेभज धन धर्म अने पुण्यना लोडता अनी शके । " त चेव सव्व भणइ " आने अर्थ आम साथ छे डे जेभ धन्य साथवाडे पोताना भोटा पुत्र धनदत्तने कछु तेभज धनदत्ते पछु पोताना पिताने कछु

(तएण धण सत्थवाहं दोच्चे पुत्ते एवं वयासी-माण ताओ ! अम्हे जेट्ठे भायर गुरुदेवय जीवियाओ ववरोवेमो, तुब्भेण ताओ ! मम जीवियाओ ववरोवेह, मस च सोणिय च आहारेह, अग्गामिय अडडिं गित्थरह त चेव सव्व भणइ जाव अत्थस्स जाव पुण्णस्स आभागी भविस्सह)

त्यारपछी धन्य सार्थवाहने तेना भीज पुत्रे आ प्रभाणु कछु डे डे तात ! तमे अमारा गुरुदेवता जेवा भोग लोडने अवन रहित न करे । पछु डे तात ! तमे अने ज भारी नाभे अने मारा ज लोडी अने मासने तमे भाओ पीओ जेथी तमे आ गाम वगैरनी अटवीने पार करी शके, आम

पञ्चमः पुत्रः=तृतीयो धनदेवगतुर्थो धनगोप', पञ्चमो धनगणितश्चाऽप्यवदत् । ततः
इत्य तेषां रचनश्रवणानन्तरं, खलु स धन्यः सार्थवाहः पञ्चपुत्राणां ' हियश्चिञ्चय'
हृदयेष्टम्=हृदयेषित ग्रात्वा तान् पुत्रान् एवमादीत्-मा खलु वयं हे पुत्राः ।
एकमपि अस्माकं मध्येएकमपि जीरिताद् व्यपरोपयाम एतत् खलु मुमुमाया
दारिकायाः शरीर ' निष्पाण ' निष्पाण=माणरहितम्, ' निश्चेष्ट ' निश्चेष्टं=
चेष्टारहितम् ' जीवविष्पजडे ' जीवविप्रत्यक्तम्=जीवहीनम्, सर्वया मृतमस्ती
त्यर्थः, तच्चेष्ट्य =उचित खलु हे पुत्राः ' अम्ह ' अस्माकम् मुमुमाया दारिकाया
मास च शोणित च आहर्षुम्, ततः=तदनन्तर च खलु मय तेन आहारेण ' अ

सय कहा (एव पचमे पुत्ते) इसी तरह उससे तृतीय धनदेवने चतुर्थ
धनगोपने एव पाचवे धनरक्षित ने भी कहा-(तएण से धण्णे सत्थवाहे
पचण्ह पुत्ताण हियश्चिञ्चय जाणित्ता त पचपुत्ते एव वयासी) इस के
बाद उस धन्यसार्थवाह ने पाचों पुत्रों के अभिप्राय को जानकर उन
अपने पाचों ही पुत्रों से इस प्रकार कहा-(माण अम्हे पुत्ता ! एगमवि
जीवियाओ ववरोवेमो एसण सुसमाण दारियाए सरीरए निष्पाण नि-
श्चेष्टे जीवविष्पजडे-त सेय खलु पुत्ता ! अम्ह सुसमाण दारियाए मस
च सोणिय च आहारेत्तए) हे मेरे पुत्रों ! मैं एक को भी जीवन से
रहित नहीं करना चाहता हूँ किन्तु यह सुसमादारिका का शरीर जो
कि निष्पाण, निश्चेष्ट, और जीवन से रहित बन गया है-इसलिये हमें
उचित है कि हे पुत्रों ! हम इस सुसमादारिका का मास एव शोणित

तेषु पडेलानी जेम ज् अथु क्खु (एव पचमे पुत्ते) आ प्रभाण्णे ज् तेने
त्रील धनहेवे, योथा धनगोचे अने पाचमा धनरक्षिते पथु क्खु
(तएण से धण्णे सत्थवाहे पचण्ह पुत्ताण हियश्चिञ्चय जाणित्ता त पच पुत्ते एव वयासी)
त्याश्रयी ते धन्य सार्थवाडे पाचे पुत्रोनी हृदयनी अलिदापा जण्णीने
योताना ते पाचे पुत्रोने आ प्रभाण्णे क्खु के—

(माणं अम्हे पुत्ता ! एगमवि जीवियाओ ववरोवेमो एसण सुसमाण दारि-
याए सरीरए निष्पाणे निश्चेष्टे जीवविष्पजडे-त सेय खलु पुत्ता ! अम्ह सुम
माण दारियाए मस च सोणिय च आहारेत्तए)

हे मारा पुत्रो ! तमाराभाथी अेकने पथु हुं मारवा भागतो नथी
परतु आ सुसमा दारिकानु शरीर के जे निष्पाण, निश्चेष्ट अने निश्चैव
जनी गथु छे-अेवला भाटे अमारा भाटे हे पुत्रो ! अे ज् योअ्य छे के आपण्णे
आ सुसमा दारिकाना मास अने शोणितने पाथंअे

विद्वत्था समाणा ' अवि-यस्ताः=शरीरनाशमप्राप्ताः सन्त राजगृह ' सपाउणि
स्सामो ' सप्राप्त्याम । ततः खलु ते पञ्चपुत्रा धन्येन सार्थवाहेन एवमुक्ताः
सन्तः ' एयमद्व ' एतमर्थम् पूर्वोक्तवृत्तम् ' पडिसुणेंति ' प्रतिश्रुष्वन्ति=स्वीकु
र्वन्ति । तत खलु स धन्यः सार्थवाहः पञ्चभिः पुत्रै सार्द्धम् ' अरणिं ' अरणिं
यस्मिन् मध्यमानेऽग्निरुत्पद्यते तत्काष्ठम् ' करेड ' करोति=सगृह्णाति, कृत्वा ' सरग'
सरगम्=निर्मन्थनकाष्ठ करोति=आनयति कृत्वा, सरकेण अरणिं मन्नाति=घर्षयति
गथित्वा, ' अरिं पाडेइ ' पातयति=मन्थनवशादग्निसुत्पादयति ' पाडित्ता ' पात

खावें । (तएण अम्हे तेण आहारेण अविद्वत्था समाणा रायगिह सपाउ-
णिस्सामो-तएण ते पच पुत्ता धणणेण सत्थवाहेण एववुत्ता समाणा
एयमद्व पडिसुणेति) इस से हमलोग उस आहार से शरीर नाश को
अप्राप्त होकर राजगृह नगर में पहुँच जावेंगे । इस प्रकार धन्यसार्थवाह
के द्वारा कहे गये उन पाचों पुत्रों ने धन्यसार्थवाह के इस कथन को स्वी
कार कर लिया । (तएण धणणे सत्थवाहे पचहिं पुत्तेहिं सद्धि अरणिं क-
रेइ, करित्ता सरगच करेइ, करित्ता सरणण अरणिं महेइ, महित्ता अ
रिं पाडेइ, पाडित्ता अरिं सधुक्खेइ, सधुक्खित्ता दारुयाइ परिकखवेइ
परिकखवित्ता अरिं पज्जाळेइ पज्जालित्ता सुसमाए मस च सोणिय
च आहारेति) इस के बाद धन्यसार्थवाह ने पांचों पुत्रों के साथ मिल-
कर अरणिकाष्ठ को एकत्रित किया । एकत्रित कर के फिर वह सरक
काष्ठ को निर्मन्थनकाष्ठ को ले आया-उसे लेकर के उसने उससे अरणि
का घर्षण किया । इस तरह घषण से अग्नि उत्पन्न हो गई । अग्नि के

(तएण अम्हे तेण आहारेण अविद्वत्था समाणा रायगिह सपाउणिस्सामो
तएण ते पच पुत्ता धणणेण सत्थवाहेण एव वुत्तासमाणा एयमद्व पणिसुणेंति)

अथी आप्पे षध आ आडारथी शरीर नाशथी ळिगरी ळधने रा-
गृह नगरमा पडोत्थी ळधथ आ प्रभाए धन्य सार्थवाह वडे ळडेवायेवा पाथे
पुत्रेअे धन्य सार्थवाहनी ते वातने स्वीजारी लोधी

(तएण धणणे सत्थवाहे पचहिं पुत्तेहिं सद्धि अरणिं करेइ, करित्ता, सरग च
करेइ, करित्ता सरणण अरणिं महेइ, महित्ता अरिं पाडेइ, पाडित्ता अरिं सधु
क्खेइ, सधुक्खित्ता दारुयाइ परिकखवेइ, परिकखवित्ता अरिं पज्जाळेइ, पज्जा
लित्ता सुसमाए दारियाए मस च सोणिय च आहारेति)

त्यारपथी धन्य सार्थवाडे पाथे पुत्रेानी साथे भणीने अरणिं काधने
अेकडुं कथुं अेकडुं करीने तेअे सरक काधने-निर्भथन काधने लध आव्या
तेने लधने तेअे तेथी अरणिका काधनु धर्षण कथुं आ प्रभाए धर्षणथी अग्नि

पञ्चमः पुत्रः=तृतीयो धनदेरगतुर्थो धनगोपः, पञ्चमो धनरक्षितश्चाऽप्यवदत् । ततः इत्थं तेषां त्रयनश्रयणानन्तर, खलु स धन्यः सार्थवाहः पञ्चपुत्राणां ' हियश्चिञ्चय' हृदयेष्टम्=हृदयेऽस्तिव ज्ञात्वा तान् पुत्रा एवमासीत्-मा खलु वय हे पुत्रा ! एकमपि अस्माक मध्ये एकमपि जीरिताद् व्यपरोपयाम एतत् खलु सुसुमाया दारिकायाः शरीर ' जिष्पाण ' निष्प्राण=माणरहितम्, ' णिच्चेष्ट' निश्चेष्टं=चेष्टारहितम् ' जीवविष्पजडे ' जीवविप्रत्यक्तम्=जीवहीनम्, सर्वथा मृतमस्तीत्यर्थः, तच्चेष्टय =उचित खलु हे पुत्राः ' अम्ह ' अस्माकम् सुसुमाया दारिकाया मास च शोणित च आहर्तुम्, ततः=तदनन्तर च खलु वय तेन आहारेण ' अ

सय कहा (एव पचमे पुत्ते) इसी तरह उससे तृतीय धनदेवने चतुर्थ धनगोपने एव पांचवे धनरक्षित ने भी कहा-(तएण से धण्णे सत्थवाहे पचण्हं पुत्ताण हियश्चिञ्चय जाणित्ता त पचपुत्ते एव वयासी) इस के बाद उस धन्यसार्थवाह ने पाचों पुत्रों के अभिप्राय को जानकर उन अपने पाचों ही पुत्रों से इस प्रकार कहा-(माण अम्हे पुत्ता ! एगमवि जीवियाओ ववरोवेमो एसण सुसमाण दारियाए सरीरए जिष्पाण णिच्चेष्टे जीवविष्पजडे-त सेय खलु पुत्ता ! अम्ह सुसमाण दारियाए मस च सोणिय च अहारेत्तए) हे मेरे पुत्रों ! मैं एक को भी जीवन से रहित नहीं करना चाहता हूँ किन्तु यह सुसमादारिका का शरीर जो कि निष्प्राण, निश्चेष्ट, और जीवन से रहित बन गया है-इसलिये हमें उचित है कि हे पुत्रों ! हम इस सुसमादारिका का मास एव शोणित

तेषु पडेलानी जेम ज गधु कधु (एव पचमे पुत्ते) आ प्रभाणु ज तेने त्रीण धनदेवे, योथा धनगोपे अने पायभा धनरक्षिते पणु कधु (तएण से धण्णे सत्थवाहे पचण्हं पुत्ताण हियश्चिञ्चय जाणित्ता त पच पुत्ते एव वयासी) त्थारपणी ते धन्य सार्थवाडे पाथे पुत्रोनी ह्यनी अलिलाया लण्णीने योताना ते पाथे पुत्रोने आ प्रभाणु कधु के—

(माण अम्हे पुत्ता ! एगमवि जीवियाओ ववरोवेमो एसण सुसमाण दारियाए सरीरए जिष्पाणे णिच्चेष्टे जीवविष्पजडे-त सेय खलु पुत्ता ! अम्ह सुसमाण दारियाए मस च सोणिय च आहारेत्तए)

हे मारा पुत्रो ! तभाराभाथी जेकने पणु हु मारवा भागते। नधी परतु आ सुसमा दारिकानु शरीर के जे निष्प्राणु, निश्चेष्ट अने निर्लवणी गधु छे-जेगला भाटे अभारा भाटे डे पुत्रो ! जे ज योव्य छे के आपणु आ सुसमा दारिकाना मास अने शोणितने आधजे

मृतकृत्यानि कृत्वा कालान्तरे ' विगयसोगे ' विगतशोक = सुसुमामरणजनितशोक-
रहितो जातश्चास्यभूत् ॥ सू० ८ ॥

मूलम्—तेण कालेणं तेणं समएणं समणे भगव महावीरे
गुणसिलए चेइए समोसढे । से णं धणणे सत्थवाहे सपुत्ते धम्मं
सोच्चा पव्वइए, एक्कारसंगवी । मासियाए संलेहणाए सोहम्मे
उववण्णो, महाविदेहे वासे सिज्झहिइ । जहा वि य णं जम्बू ।
धण्णेण सत्थवाहेणं णो वण्णहेउ वा नो रूवहेउ वा नो वलहेउ
वा नो विसयहेउ वा सुसुमाए मससोणिए आहारिए, नन्नत्थ
एगाए रायगिहं सपावणट्टयाए । एवामेव समणाउसो । जो
अम्हं निगंथो वा निगंथी वा इमस्स ओरालियसरीरस्स वता-
सवस्स पित्तासवस्स सुक्कासवस्स सोणियासवस्स जाव अवस्सं
विप्पजहियव्वस्स वा नो वण्णहेउ वा नो रूवहेउ वा नो वल-
हेउ वा नो विसयहेउ वा आहारे आहारेइ, नन्नत्थ एगाए
सिद्धिगमणसपावणट्टयाए, से णं इहभवे चेव वड्डुणं समणाणं
वड्डुणं समणीणं वड्डुणं सावयाणं वड्डुणं सावियाण अच्चणिजे
जाव वीइवइस्सइ ।

एव खलु जम्बू । समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं
अट्टारसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्टे पण्णत्ते त्तिवेमि ॥सू०९॥

॥ अट्टारसम अज्झयण समत्तं ॥

टीका—' तण कालेण ' इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो
भगवान् महावीरो गुणशिलके चेत्ये ' समोसढे ' समस्यत = तीर्थकरपरम्परया

सुसुमा दारिका के मरणोत्तर काल में जो भी लौकिक कृत्य किये जाते
—वे सब भी उन्होंने किये और धीरे २ विगत शोक भी हो गए ॥सू०८॥

लौकिक कृत्यो करवा लेधये ते सवे तेभल्ले पताव्या अने धीमे धीमे तेअ
शेकरहित पक्षु अनी गया ॥ सू० ८ ॥

यित्या=उत्पाद्य अग्नि 'सधुनरो' गगुसयति=उद्दीपयति, सगुह्य=उद्दीप्य 'दा-
याई' दारुणाणि=इन्धनानि तथ 'परिनिगयद्' परिनिगति, परिनिप्य, कर्मि
मज्जालयति, मज्जान्य, सुमुमाया दारिकाया भजित मांस च शोणित च 'आहा
रेड' आहारयति । अन तर तेन आहारेण 'अविद्धत्या' अविध्वस्ताः=शरीरना
शममाप्ताः सन्तो राजगृह नगर समाप्ताः 'मितणाई० अभिसमणागया' मित्र-
ज्ञाति=मित्रज्ञातिमजनसम्यन्त्रिपरिजने मह 'अभिसमणागया' अभिसमन्नागता=
समिकिताः सन्तः तस्य च त्रिपुत्रस्य 'धनकणगरयण जात्र' जनकनकरत्न याक्त्
=धनकरनकरत्नादिकस्य 'आभागी जाया यावि होत्या' आभागीनो जाताभा
प्यभयन् । तत. खलु स धन्य' सार्थगाढ सुमुमाया दारिकाया बहूनि लौकिकानि

उत्पन्न होने पर उसने फिर उसे धौंका-उद्दीपित किया-जब वह उद्दी
पित हो चुकी-तब उसने उसमें लकड़ियों को लगाया-। इस तरह की
क्रिया से जब अग्नि अच्छी तरह प्रज्वलित हो चुकी-तब उसमें सुसमा
दारिका के मांस को और खून को भूजा-भूजकर उसे सबने खाया
पीया (तेण आहारेण अविद्धत्या समाणा रायगिह नयर सपत्ता मित्त
णाई० अभिसमणागया तस्स य विउलस्स वणकणगरयण जाव
आभागी-जाया यावि होत्या तण्ण से धण्णे सत्थवाहे सुसमाण दारिया
ए बहूइ लोइयाइ जाव विगयसोए याविहोत्या) इस प्रकार उस आहार
की सहायता से अविध्वस्त शरीर होकर वे वहाँ से चल कर राजगृह
नगर में आ गये । वहाँ अकार वे अपने मित्रजाति आदि परिजनों से
खूब हिले मिले । एवं धनकनक आदि द्रव्य के भोक्ता भी बन गये ।

उत्पन्न थछ गये। अग्नि उत्पन्न थया आठ तेछे तेने उद्दीपित जये ज्यादे ते
उद्दीपित थछ गये। त्यादे तेछे तेभा लाकडीओ भूडी आ रीते ज्यादे सारी
रीते अग्नि प्रज्वलित थछ गये। त्यादे तेभा सुसमा दारिकाना भासने अने
लोड्डीने शेक्या, शेक्या आठ तेने अधाअे आधा-पीधा

(तेण आहारेण अविद्धत्या समाणा रायगिह नयर सपत्ता, मित्तणाई०
अभिसमणा गया, तस्स य विउलस्स धनकणगरयण जाव आभागीजाया यावि
होत्या तण्ण से धण्णे सत्थवाहे सुसमाण दारियाए बहूइ लोइयाइ जाव विगय
सोए यावि होत्या)

आ प्रभाछे ते आहारनी सहायताथी अविनष्ट शरीरवाणा थधने तेओ
त्याथी रवाना थधने राजगृह नगरभा आवी गया त्या आवीने तेओ पोताना
मित्र ज्ञाति वगेरे परिजनानी साथे भूष आनठ-पूर्वक भज्या, अने धन,
कनक वगेरे द्रव्योने लोगववा लाग्या सुसमा दारिकाना ५ । बेटला

मृतकृत्यानि कृत्वा कालान्तरे ' विगयसोगे ' विगतशोक = सुसुमामरणजनितशोक-
रहितो जातश्चास्यभूत् ॥ सू० ८ ॥

मूलम्—तेण कालेणं तेणं समएणं समणे भगव महावीरे
गुणासिलए चेइए समोसढे । से णं धणणे सत्थवाहे सपुत्ते धम्मं
सोच्चा पव्वइए, एक्कारसंगवी । मासियाए संलेहणाए सोहम्मे
उववण्णो, महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ । जहा वि य णं जम्बू ।
धण्णेण सत्थवाहेणं णो वण्णहेउ वा नो रूवहेउं वा नो वलहेउ
वा नो विसयहेउ वा सुसुमाए मससोणिए आहारिए, नन्नत्थ
एगाए रायगिहं सपावणट्टयाए । एवामेव समणाउसो । जो
अम्हं निगंथो वा निगंथी वा इमस्स ओरालियसरीरस्स वंता-
सवस्स पित्तासवस्स सुक्कासवस्स सोणियासवस्स जाव अवस्सं
विप्पजहियव्वस्स वा नो वण्णहेउ वा नो रूवहेउ वा नो वल-
हेउ वा नो विसयहेउ वा आहारि आहारेइ, नन्नत्थ एगाए
सिद्धिगमणसपावणट्टयाए, से णं इहभवे चेव वट्ठणं समणाणं
वट्ठणं समणीणं वट्ठणं सावयाणं वट्ठणं सावियाण अच्चणिज्जे
जाव वीडवइस्सइ ।

एव खलु जम्बू । समणेणं भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेणं
अट्टारसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्टे पण्णत्ते त्तिवेमि ॥सू०९॥

॥ अट्टारसम अज्झयण समत्तं ॥

टीका—' तण कालेण ' इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो
भगवान् महावीरो गुणशिलके चेत्ये ' समोसढे ' सममृत' = तीर्थंकरपरम्परया

सुसुमा दारिका के मरणोत्तर काल में जो भी लौकिक कृत्य कियेजाते
-वे सब भी उन्होंने किये और धीरे २ विगत शोक भी हो गए । सू०८।

लौकिक कृत्यो करवा लेधञ्जे ते सवे तेमहे पताव्या अने धीमे धीमे तेञ्जा
शोकरहित पद्यु णनी गया ॥ सू० ८ ॥

समागतः । अनन्तर स धन्यः सार्धं गृह संपुत्रो धर्मं श्रुत्वा प्रव्रजितः, प्रव्रज्यान्-
न्तरम् 'एकारसगरी' एकादशाह्वयिन्=एकादशाह्वयिन्नामिन्द्रो जानः 'मासियाए'
मासियाए सलेखनया कालं क्रुत्या 'सोहम्मे' सौधर्मं कल्पे 'उपपन्नः' । पुनः तत
श्च्युतः महाविदेहर्षे 'सिञ्जिहिह' सेत्स्यति-मुक्तिं प्राप्स्यति । सम्प्रति धन्यसार्ध
वाहदृष्टान्तेन जम्बूद्वीपेन सम्प्रोष्य श्रीसुधर्मास्वामीप्राह 'जहा वि इत्यादिना-

'तेण कालेण तेण समण्ण इत्यादि ।

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समण्ण) उस काल और उस समय
में (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर (गुणशिलए
चेइए समोसडे, से ण धण्णे सत्थवाहे सुपुत्ते धम्म सोच्चा पव्वइए-एका
रसगवी-मासियाए सलेहणाए सोहम्मे उववण्णे, महाविदेहे वासे सि
ञ्जिहिह) गुणशिलक उद्यान में आये । उनसे धर्म का उपदेश सुनकर
वह धन्यसार्धगोह अपने पाचों पुत्रों सहित उनके पास प्रव्रजित हो
गया । प्रव्रजित होकर धीरे २ वह एकादशाह्वयों का ज्ञाता भी हो गया ।
अन्न समय में उसने एक मास की सलेखना धारणकर काल अवसर
काल किया-तो उसके प्रभाव से वह सौधर्म कल्प में उत्पन्न हो गया-
वहा से चव कर अब वह महाविदेह क्षेत्र में मुक्ति को प्राप्त करेगा ।
इस धन्यसार्धवाह के दृष्टान्त से जम्बू स्वामीको संबोधितकर के श्री

तेण कालेण तेण समण्ण' इत्यादि—

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समण्ण) ते काले अने ते समये (समणे
भगव महावीरे) श्रमणु भगवान् महावीर

(गुणशिलए चेइए समोसडे । सेण धण्णे सत्थवाहे सुपुत्ते धम्म सोच्चा
पव्वइए-एकारसगवी-मासियाए सलेहणाए सोहम्मे उववण्णे, महाविदेहे वासे
सिञ्जिहिह)

शुशिलक उद्यानमा आन्या तेमनी पासेधी धर्मोपदेशे सावणीने ते
धन्य सार्धवाह चेताना पाये पुत्रेानी साथे तेमनी पासे प्रव्रजित थध गथे।
प्रव्रजित थधने ते धीमे धीमे अेकादश (अजियार) अगेने ज्ञाता पणु
थध गथे छेवटे मृत्यु समये अेक मासनी सलेखना धारण करीने काल अव
सरे तेबे काल कथे ते तेना प्रभावथी सौधर्म उत्पन्ना उत्पन्न थध गथे।
त्याथी यथीने हवे ते महाविदेह क्षेत्रमा मुक्ति प्राप्त करथे आ धन्य सार्ध
वाहना दृष्टान्तेने साथे राभीने श्री सुधर्मा स्वामीअे २ पू स्वामीने संबोधित

जहाचि य ण' यथाऽपि च खलु=येन प्रकारेण खलु हे जम्बूः ! धन्येन सार्थवाहेन नो वर्णहेतोः = नो रूपहेतोः बलहेतोः=नो विषयहेतोः सुसुमाया दारिकाया मास-शोणितमाहारितम्, एगाए रायगिहसंपावणद्वयाए' एकस्य राजगृहसंप्रापणार्थताया अन्यत्र न, किन्तु-अह राजगृहसमाप्नुगाम् इति हेतोरेव तेन पुत्रैः सह तद् आहारितमिति भावः ।

भगवानाह—' एवामेव ' एवमेव=भनेन प्रकारेणैव ' समणाउसो ' हे आयुष्मन्तः श्रमणाः योऽस्माकं निर्ग्रन्थो वा निर्ग्रन्थी वा अस्य वान्तास्रवस्य पित्ता-

सुधर्मा स्वामी ने उनसे कहा—(जहां वि य ण जवू ! धण्णेण सत्थवाहेण णो वण्णहेउ वा नो रूवहेउ वा नो बलहेउ वा नो विसयहेउ वा सुसुमाए मंससोणिए आहारिए नन्नत्थ एगाए रायगिहं संपावणद्वयाए-एवामेव समणाउसो ! जो अम्ह निग्गयो वा निग्गंथीवा इमस्स ओरालियसरीरस्स वत्तासवस्स पित्तासवस्स सुक्कासवस्स सोणियासवस्स जाव अवस्स विप्पजहियव्वस्स नो वण्णहेउ वा नो रूवहेउ वा नो बलहेउ वा नो विसयहेउ आहार अहारेइ, नन्नत्थ एगाए सिद्धिगमणसंपावणद्वयाए) हे जवू ! जिस तरह धन्यसार्थवाह ने अपने शरीर में कान्ति विशेष बढ़ाने के लिये, बल बढ़ाने के लिये, अथवा विषय सेवन की शक्ति बढ़ाने के लिये सुसुमा दारिका का मास एव शोणित नहीं खाया । किंतु मैं पुत्रों के सहित राजगृह नगर में पहुँच जाऊँ इसी एक अभिप्राय से सुसुमा दारिका का अपने पुत्रों सहित मास शोणित सेवन किया—इसी तरह हे आयुष्मत श्रमणो ! जो हमरा निर्ग्रन्थ श्रमण जन अथवा श्रमणी जन है—वह इस वान्तास्रववाले, पित्तास्रववाले, शुक्रास्र-

शरीने आ प्रभाणु कळुं डे—

(जहा चि य ण जवू ! धण्णेण सत्थवाहेण णो वण्णहेउ वा नो रूवहेउ वा नो बलहेउ वा नो विसयहेउ वा सुसुमाए मंससोणिए आहारिए नन्नत्थ एगाए रायगिहं, संपावणद्वयाए एवामेव समणाउसो ! जो अम्ह निग्गयो वा निग्गंथी वा इमस्स ओरालियसरीरस्स वत्तासवस्स पित्तासवस्स सुक्कासवस्स सोणियासवस्स जाव अवस्से विप्पजहियव्वस्स नो वण्णहेउ वा नो रूवहेउ वा नो बलहेउ वा नो विसयहेउ वा आहार आहारेइ, नन्नत्थ एगाए सिद्धिगमणसंपावणद्वयाए)

हे जवू ! जेम धन्य सार्थवाडे पोताना शरीरमा कान्ति विशेषनी वृद्धि करवा भाटे अजानी वृद्धि भाटे अथवा विषय सेवननी शक्तिना वर्धन भाटे सुसुमा दारिकाना मास अने शोणित नडि पाधा, पणु पुत्रो सहित हु राजगृह नगरमा पहुँचथी जडि आ ओक ज भतलमथी पोताना पुत्रोनी साथे सुसुमा दारिकाना मास-शोणित सेवन जयी आ प्रभाणु डे आयुष्मत श्रमणो ! जे अमारा निर्ग्रन्थ श्रमणजन अथवा श्रमणीजनो छे तेओ आ वाता

समागतः । अनन्तर स धन्यः सार्धयाह' सपुत्रो धर्मं श्रुत्वा प्रव्रजितः, प्रव्रजान-
न्तरम् ' एकारसगरी ' एकादशाह्वयिन्=एकादशाह्वयिन्नामिदो जातः ' मासियाए'
मासियाए सलेखनया कालं कृत्वा ' सोहम्मे' सौधर्मं कल्पे 'उपपन्न.' । पुनः तत
श्च्युतः महाविदेहे वर्षे ' सिञ्जिह्विह्वि' सेत्स्यति-मुक्तिं प्राप्स्यति । सम्प्रति धन्यसार्ध-
चाहृष्टान्तेन जम्बूस्वामिन सम्बोध्य श्रीसुधर्मास्वामीप्राह ' जहा त्रि इत्यादिना-

' तेण कालेण तेण समणं इत्यादि ।

टीकार्थ—(तेण कालेणं तेण समणं) उस काल और उस समय
में (समणे भगव महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर (गुणसिलए
चेइए समोसडे, से णं धण्णे सत्थवाहे सुपुत्ते धम्म सोच्चा पव्वइए-एक्का
रसगवी-मासियाए सलेहणाए सोहम्मे उववण्णे, महाविदेहे वासे सि
ञ्जिह्विह्वि) गुणशिलक उग्यान में आये । उनसे धर्म का उपदेश सुनकर
वह धन्यसार्धवाह अपने पाचों पुत्रों सहित उनके पास प्रव्रजित हो
गया । प्रव्रजित होकर धीरे २ वह एकादशाहों का ज्ञाता भी हो गया ।
अन्न समय में उसने एक मास की सलेखना धारणकर काल अवसर
काल किया-तो उसके प्रभाव से वह सौधर्म कल्प में उत्पन्न हो गया-
वहा से चत्र कर अब वह महाविदेह क्षेत्र में मुक्ति को प्राप्त करेगा ।
इस धन्यसार्धवाह के दृष्टान्त से जम्बू स्वामीको संबोधितकर के श्री

तेण कालेण तेण समणं' इत्यादि—

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समणं) ते काले अने ते समये (समणे
भगव महावीरे) श्रमणु लगवान भडावीर

(गुणसिलए चेइए समोसडे । सेण धण्णे सत्थवाहे सुपुत्ते धम्म सोच्चा
पव्वइए-एक्कारसगवी-मासियाए सलेहणाए सोहम्मे उववण्णे, महाविदेहे वासे
सिञ्जिह्विह्वि)

शुशुशिलक उधानमा आया तेमनी पासिधी धर्मोपदेश सालणीने ते
धन्य सार्धवाह पे.ताना पाये पुत्रेानी साथे तेमनी पासे प्रव्रजित थधं गये।
प्रव्रजित थधने ते धीमे धीमे अेकादश (अजियार) अगेनेना ज्ञाता पणु
थधं गये छेवटे मृत्यु समये अेक मामनी सलेखना धारणु करीने काल अब
सरे तेबे काल कथे ते तेना प्रभावथी सौधर्म कल्पमा उत्पन्न थधं गये।
त्याथी अथीने डवे ते भडाविदेह क्षेत्रमा मुक्ति प्राप्त करथे आ धन्य सार्ध
वाहना दृष्टान्तने साथे राणीने श्री सुधर्मा स्वामीअे ० पू स्वामीने-सु-अेधित

सुधर्मास्यामीप्राह— एव ' अनेन पूर्वोक्तप्रकारेण खलु हे जम्बू ! श्रमणेन भगवता महावीरेण 'जाव सपत्तेण ' यावत् सप्राप्तेन=मोक्षगतेन अष्टादशस्य ज्ञाता-
ध्ययनस्य ' अयमद्वे ' अयमर्थ =पूर्वोक्तरूपोऽर्थः प्रज्ञप्तः=प्ररूपितः, ' त्ति वेमि ' इति ब्रवीमि=अस्य व्याख्या पूर्ववत् ॥ सू० ९ ॥

इति श्री-विश्वविरयात्-जगद्बलभ-प्रसिद्धवाचरूपश्चदशभाषा कलितललितरू-
लापालापक-प्रविशुद्भगव्यनैकरग्रन्थनिर्मापक-त्रादिमानमर्दक-श्रीशाहू-च्छ
त्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-कोल्हापुरराज-
गुरु-वालत्रल्लवारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-घासीलाल-
प्रतिप्रिचिताया-ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रस्यानंगारधर्माभृतवर्षि
ण्याख्याया व्याख्यायामष्टादशम अयन समाप्तं ॥ १८ ॥

जम्बू ! समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण अट्टारसमस्स णाय-
ज्झयणस्स अयमद्वे पणणतेत्तिवेमि) इस प्रकार से हे जम्बू ! श्रमण भग-
वान् महावीरने जो सिद्धि गति नमक स्थान को प्राप्त हो चुके है इस
अठारहवें ज्ञाताध्ययन का यह पूर्वोक्तरूप से अर्थ प्ररूपित किया है ।
ऐसा जो मैंने कहा है वह उन्हीं के श्री मुख निर्गतवाणी को सुनकर
ही कहा है-अपनी और से इसमें कुछ भी मिलाकर नहीं कहा है ॥ सू० ९ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराज कृत

“ ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्र ” की अनंगारधर्माभृतवर्षिणी व्याख्याका

अठारहवां अध्ययन समाप्त ॥ १८ ॥

एव खलु जम्बू ! समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण अट्टारसमस्स
णायज्झयणस्स अयमद्वे पणणतेत्तिवेमि)

आ प्रभाषे डे जम्बू ! श्रमणु भगवान् महावीरे-के जेआ सिद्धगति
नामक स्थानने भेजणी युक्क्या छे-आ अठारवा ज्ञाताध्ययनने आ पूर्वोक्त
इपथी अर्थ प्ररूपित कर्थो छे आबु जे मे उल्लु छे, ते तेमना ज श्रीमुअधी
नीकणेसी वाणीने साबणीने ज कलु छे पोताना तरकथी उभेरीने मे
कलु नथी ॥ सूत्र ९ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराज कृत

“ ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्र ” नी अनंगारधर्माभृतवर्षिणी व्याख्यानु

अठारवु अध्ययन समाप्त ॥ १८ ॥

मूलम्—जङ्गलं भते । समणेणं भगवया महावीरेणं जाव
संपत्तेणं अट्टारसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्टे पणत्ते, एगूण
वीसइमस्स णायज्झयणस्स के अट्टे पणत्ते ? एवं खलु जंवू ।
तेणं कालेणं तेण समएण इहेव जवूदीवे दीवे पुव्वविदेहेवासे
सीयाए महाणईए उत्तरिह्ले कूले नीलवंतस्स दाहिणेण उत्तरि-
ह्लस्स सीयामुहवणसंडस्स पच्चत्थिमेणं एगसेलगस्स वक्खारपव्व-
यस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं पुक्खलावई णाम विजए पन्नत्ते ।
तत्थ ण पुडरिगिणी णाम रायहाणी पन्नत्ता णवजोयणवित्थि
ण्णा दुवालसजोयणायामा जावपच्चवख देवलोगभूया पासार्इया
दरसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा । तीसेण पुडरिगिणीए णयरीए
उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए णलिणिवणे णाम उज्जाणे । तत्थ णं
पुंडरिगिणीए रायहाणीए महापउमे णाम राया होत्था, तस्स
ण पउमावई णाम देवी होत्था । तस्स णं महापउमस्स रत्तो
पुत्ता पउमावईए देवीए अत्तया दुवे कुमारा होत्था, त जहा—
पुडरीए य कडरीए य, सुकुमालपाणिपाया० । पुडरीए जुव-
राया । तेणं कालेणं तेणं समएण थेरागमणं, महापउमे राया
णिग्गए धम्म सोच्चा, पोंडरीयं रज्जे ठवेत्ता पव्वइए पोडरीए
राया जाए, कडरीए जुवराया, महापउमे अणगारे चोइसपुव्वाइं
अहिज्जइ, तएण थेरा वहिया जणवयविहार विहरति, तएण
से महापउमे वहुणि वासाइं जाव सिद्धे ॥ सू० १ ॥

અથ ઇકોનવિંશતિતમમધ્યયનમ્—

ગતમષ્ટાદશમધ્યયનમ્, સામ્યતમેકોનવિંશતિતમ વ્યાખ્યાયતે, અસ્ય ચ પૂર્વેણ સહ અપમભિસમ્યન્નઃ-પૂર્વસ્તિન્નમધ્યયને અમૃતાસ્રાસ્ય તદિતરસ્ય ચ અનર્થાર્થો ઉક્તો, इदत्तु चिर सवृतास्ररोऽपि यः पश्चादपथा स्यात्तस्य अल्पकाल सवृतास्रस्य च अनर्थार्थो मोच्येत, इत्येव सम्यन्धेनायातस्यास्येदमादिमૂत्रम्-‘जङ्ग भते’ इत्यादि ।

॥ पुण्डरीक-कण्ठीक नाम का उन्नीसवा अल्पयन प्रारम्भ ॥

અઠારહવાં અધ્યયન સમાપ્ત હો ચુકા-અવ ૧૦, વાં અધ્યયન પ્રારમ્ભ હોતા હૈ-इस अध्ययन का पूर्व अध्ययन के साथ इस प्रकार का सम्बन्ध है पूर्व अध्ययन में असवृतास्रव अथवा सवृतास्रव वाले प्राणी को अर्थ एव अनर्थ की प्राप्ति होना समर्थित किया गया है-अर्थात् असवृतास्रव वालेको अनर्थ की प्राप्ति होती है और सवृतास्रव वाले को इष्ट अर्थ की प्राप्ति होती है । अब इस अध्ययन में सूत्रकार यह प्रदर्शित कर रहे हैं कि जिस प्राणी ने चिरकाल से आस्रवको सवृत कर दिया है-‘परन्तु यदि वह पीठे से असवृतास्रव वाला बन जाता है तो उसके अनर्थ की प्राप्ति तथा अल्प काल भी जिसने आस्रव को सवृतकर दिया है उसके अर्थ की प्राप्ति होती है । इस संबंध को लेकर प्रारम्भ किये गये इस अध्ययन का यह सर्व प्रथम सूत्र है ।

पुण्डरीक-कण्ठीक नामे ज्योगिषुसमु अध्ययन प्रारम्भ

અઠારમુ અધ્યયન પુરૂં થઈ ગયુ છે હવે જ્યોગિષુસમુ અધ્યયન શરૂ થાય છે આ અધ્યયનને એના પૂર્વના અધ્યયનની સાથે આ જાતનો સબંધ છે કે પૂર્વ અધ્યયનમાં અસવૃતાસ્રવ અથવા સવૃતાસ્રવવાળા પ્રાણીને અર્થ અને અનર્થની પ્રાપ્તિ થાય છે, તે વાતનું સમર્થન કરવામાં આવ્યું છે એટલે કે અસવરવાળાએને અનર્થની પ્રાપ્તિ હોય છે અને સવરવાળાએને ઇષ્ટ-અર્થની પ્રાપ્તિ હોય છે હવે આ અધ્યયનમાં સૂત્રકાર આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ કરી રહ્યા છે કે જે પ્રાણીએ ચિરકાળથી એટલે કે ખુબ લાંબા વખતથી આસ્રવને સવૃત કરી દીધો છે, પરંતુ જો તે પાછળથી એટલે કે ભવિષ્યમાં અસવૃતાસ્રવવાળો બની જાય છે તો તેને અનર્થની પ્રાપ્તિ તેમજ થોડા વખત સુધી પણ જેણે આસ્રવને સવૃત કરી દીધો છે તેને અર્થની પ્રાપ્તિ થાય છે આ વાતને લઈને આરભાએલા આ અધ્યયનનું આ પહેલું સૂત્ર છે —

पाश्चात्ये=पश्चिमेभागे 'एगसेलगस्स' एगशैलकस्य=मध्यजम्बूद्वीपमेरुपर्वतसमीप
 स्थस्य एग शैलकनामकस्य 'वक्खारपच्चयस्स' वक्षस्कारपर्वतस्य 'पुरत्थिमेण'
 पौरस्त्ये=पूर्वस्या दिशि 'एत्थण' अत्र खलु पुष्कलावती नाम विजयः प्रज्ञप्तः ।
 तत्र खलु पुण्डरीविणी नाम राजधानी प्रज्ञप्ता, सा 'णवजोयणवित्थिणा'
 नवयोजनविस्तीर्णा = नवयोजनविस्तारवती 'दुवालसजोयणायामा' द्वादश
 योजनायामा=द्वादशयोजनानि आयामो दैर्घ्वं यस्याः सा=द्वादशयोजनदीर्घेत्यर्थ,
 पुन 'जाव पच्चक्ख देवलोयभूया यात्तु प्रत्यक्षदेवलोकभूता=साक्षात् स्वर्गसदृशा
 पुनः पासादीया, दर्शनीया, अभिरूपा, प्रनिरूपा । तस्या खलु पुण्डरीविण्याः

पुरत्थिमेण एत्थण पुष्कलावतीनाम विजय पणत्ते) इस प्रकार जम्बूद्वीप
 के पूछने पर सुधर्मा स्वामी उनसे कहते हैं-सुनो-तुम्हारे प्रश्न का
 उत्तर इस प्रकार है उस काल-और उस समय में इस जम्बूद्वीप नाम के
 द्वीप में पूर्व विदेह क्षेत्रमें, शीत महानदी के उत्तरदिग्वर्ती तीर पर स्थित
 नील पर्वत के दक्षिण दिग्भाग में, तथा उत्तर दिग्वर्ती शीतामुखवनपड
 के पश्चिम भाग में, तथा एक शैलक नाम वाले वक्षस्कार पर्वत की पूर्व
 दिशा में पुष्कलावती इस नाम का विजय है । शीतामुखवनपड
 का तात्पर्य यह है-कि जहां से जीतानदी नीकली है उस उद्गमस्थान
 पर एक वनपड है । मध्य जम्बूद्वीप और मेरुपर्वत के समीप में रहा
 हुआ एक शैलक नाम का वक्षस्कार पर्वत है ।-(तण्ण पुडरिगिणीणाम
 रायहाणी पन्नत्ता, णवजोयणवित्थिणा दुवालसजोयणायामा, जाव पच्च
 क्ख देवलोयभूया पासाईया, दरसणिज्जा अभिरूपा पडिरूवा) उस

सीयामुद्गमसडस्त पच्चत्थिमेण एगसेलगस्स वक्खारपच्चयस्स पुगत्थिमेण
 एत्थण पुष्कलावती नाम विजय पणत्ते)

आ प्रभाणे ञ भू स्वाभीना प्रश्नने सालणीने श्री सुधर्मा तेभने कडेवा
 लाग्या के डे ञ भू ! सालणो, तभारा सवालनो ञवाण आ प्रभाणे छे के
 ते काणे अने ते समये आ ञ भूद्वीप नामक द्वीपमा पूर्व विदेह क्षेत्रमा,
 शीता महा नदीना उत्तर दिशा तरङ्गना किनारा उपर आवेला नील पर्वतना
 दक्षिण दिग्भागमा तेभण उत्तर दिशाभा आवेला सीता मुखवनपडना पश्चिम
 भागमा, तेभण ओक शैलक नामवाणा वक्षस्कार पर्वतती पूर्व दिशाभा पुष्
 लावती नामे ओक विजय छे सीता मुखवन-पडने अर्थ आम समयेवा
 नेधंछे के न्याथी शीता नदी नीकणी छे, ते उद्गम स्थान उपर ओक वनपड छे
 मध्य ञ भूद्वीप अने मेरुपर्वतनी पासे आवेला ओक शैलक नामे वक्षस्कार पर्वत छे

(तत्थण पुडरिगिणीणाम रायहाणी पन्नत्ता, णव जोयणवित्थिणा दुवालसजो
 यणायामा, जाव पच्चक्ख देवलोयभूया पासाईया, दरसणिज्जा अभिरूपा पडिरूवा)

टीका—‘ जङ्गण भते ’ इत्यादि। यदि खलु हे भदन्त ! श्रवणेन भगवता महावीरेण यास्तसमाप्तेन अष्टादशस्य ज्ञाताऽध्ययनस्य अयमर्थः प्रकृतः, पुनः खलु हे भदन्त ! एकोनविंशतितमस्य ज्ञाताऽध्ययनस्य कोऽर्थः प्रकृतः ? इति जम्बूस्वामी प्रश्नान्तरं सुधर्मास्वामी कथयति—एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये इहैव ‘ जम्बूद्वीपे दीवे ’ जम्बूद्वीपे द्वीपे=मध्यजम्बूद्वीपे ‘ पुत्रविदेदेवासे ’ पूर्वविदेदे वपे शीताया महानद्याः ‘ उत्तरीये=उत्तरदिक् स्थिते कूले=तीरे ‘ नीलवतस्त दाहिणेन ’ नीलवतो दक्षिणे=नीलवतः परतस्य दक्षिणेभागे ‘ उत्तरिल्लस्त ’ उत्तरीयस्य=उत्तरदिक् स्थितस्य ‘ सीतामुहवणसण्डस्त ’ सीतामुहवणसण्डस्य=शीताया नद्या यन्मुखमुहमस्थान, तत्र यद् वनपण्डम् तस्य, ‘ पच्चत्थिमेण ’

‘ जङ्गण भते ! समणेण भगवया महावीरेण ’ इत्यादि ।

टीकार्थ —जम्बू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं कि (जङ्गण भते समणेणं भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेण अट्टारसमस्त णायज्झयणस्त अयमट्ठे पणत्ते एगुणवीसइमस्त णायज्झयणस्त के अट्ठे पणत्ते ?) हे भदन्त ! यदि श्रमण भगवान् महावीरने कि जो सिद्धि गति नामक मुक्तिस्थान को प्राप्त कर चुके हैं अठारहवें ज्ञाताध्ययन का यह पूर्वोक्तरूप से अर्थ निरूपित किया है—तो उन्हीं श्रमण भगवान् महावीरने १९ वें ज्ञाताध्ययन का क्या भाव-अर्थ निरूपित किया है ? (एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समणेण इहेव जम्बूद्वीपे दीवे पुत्रविदेदेवासे सीयाए महाणईए उत्तरिल्ले कूले नीलवतस्त दाहिणेण उत्तरिल्लस्त सीयामुहवणसण्डस्त पच्चत्थिमेण एगसेलगस्त वक्कवारपव्वयस्त

‘ जङ्गण भते ! समणेण भगवया महावीरेण —

टीकार्थ—जम्बू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे-के

(जङ्गण भते ! समणेण भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेण अट्टारसमस्त णायज्झयणस्त अयमट्ठे पणत्ते एगुणवीसइमस्त णायज्झयणस्त के अट्ठे पणत्ते ?)

हे भदन्त ! जे श्रमणुं लगवान महावीरे-के जेभणु सिद्धिगति नामक मुक्तिस्थानने भेणवी वीधु छे-अठारमा ज्ञाताध्ययनने आ पूर्वोक्त रूपमा अर्थ निरूपित कथे छे त्यारे ते जे श्रमणुं लगवान महावीरे ओगणीसमा ज्ञाताध्ययनने शो भाव-अर्थ निरूपित कथे छे ?

(एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समणेण इहेव जम्बू दीवे दीवे पुत्रविदेदेवासे सीयाए महाणईए उत्तरिल्ले कूले नीलवतस्त उत्तरिल्लस्त

पाश्चात्ये=पश्चिमेभागे ' एगसेलगस्स ' एण्शैलकस्य=मध्यजम्बूद्वीपमेरुपर्वतसमीप
स्यस्य एक शैलकनामकस्य ' वक्खारपच्चयस्स ' वक्षस्कारपर्वतस्य ' पुरत्थिमेण '
पौरस्त्ये=पूर्वस्या दिशि ' एत्थण ' अत्र खलु पुण्ड्रावती नाम विजयः प्रज्ञप्तः ।
तत्र खलु पुण्डरीविणी नाम राजधानी प्रज्ञप्ता, सा ' णवजोयणवित्थिण्णा '
नवयोजनविरतीर्णा = नवयोजनविस्तारवती ' दुवालसजोयणायामा ' द्वादश
योजनायामा=द्वादशयोजनानि आयामो दैर्घ्यं यस्याः सा=द्वादशयोजनदीर्घ्यार्थं,
पुन ' जाव पच्चक्ख देवलोयभूया यापत् प्रत्यत्तदेवल्लोकभृता=साक्षात् स्वर्गसदृशा-
पुनः पासादीया, दर्शनीया, अभिरूपा, प्रतिरूपा । तस्या खलु पुण्डरीविण्याः

पुरत्थिमेण एत्थण पुक्खलाहणाम विजण पण्णत्त) इम प्रकार जम्बूस्वामी
के प्रश्ने पर सुधर्मा स्वामी उनसे कहते हैं-सुनो-तुम्हारे प्रश्न का
उत्तर इस प्रकार है उस काल और उस समय मे इस जम्बूद्वीप नाम के
द्वीप में पूर्व विदेह क्षेत्रमें, शीत महानदी के उत्तरदिग्वर्ती तीर पर स्थित
नील पर्वत के दक्षिण दिग्भाग में, तथा उत्तर दिग्वर्ती शीतामुखवनपड
के पश्चिम भाग में, तथा एक शैलक नाम वाले वक्षस्कार पर्वत की पूर्व
दिशा में पुण्ड्रावती इस नाम का विजय है । शीतामुखवनपड
का तात्पर्य यह है-कि जहा से शीतानदी निकली है उस उद्गमस्थान
पर एक वनपड है । मध्य जम्बूद्वीप और मेरुपर्वत के समीप में रहा
हुआ एक शैलक नाम का वक्षस्कार पर्वत है ।-(तण्ण पुडरिगिणीणाम
रायदाणी पच्चत्ता, णवजोयणवित्थिण्णा दुवालसजोयणायामा, जाव पच्च
क्ख देवलोयभूया पासाईया, दरसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा) उस

सीयामुहवणसडस्स पच्चत्थिमेण एगसेलगस्स वक्खारपच्चयस्स पुरत्थिमेण
एत्थण पुक्खलाहणाम विजण पण्णत्त)

आ प्रभाण्णे ञ्जू स्वामीना प्रश्नने सालणीने श्री सुधर्मा तेभने कडेवा
लाग्था के डे ञ्जू ! सालणो, तभारा सवालनो ञ्वाण आ प्रभाण्णे छे के
ते काण्णे अने ते सभये आ ञ्जूद्वीप नामक द्वीपमा पूर्व विदेह क्षेत्रमा,
शीता महा नदीना उत्तर दिशा तरङ्गना किनारा उपर आवेला नील पर्वतना
दक्षिण दिग्भागमा तेभञ्ज उत्तर दिशाभा आवेला सीता मुणवनपडना पश्चिम
भागमा, तेभञ्ज ओक शैलक नामवाणा वक्षस्कार पर्वतती पूर्व दिशाभा पुण्ड
रावती नामे ओक विजय छे सीता मुणवन-पडने अर्थ आभ सभञ्जेवा
नेधछे के न्याथी शीता नदी निकली छे, ते उद्गम स्थान उपर ओऽ वनपड छे
मध्य ञ्जूद्वीप अने मेरुपर्वतनी पासे आवेला ओकशैलक नामे वक्षस्कार पर्वत छे

(तत्थण पुडरिगिणीणाम रायदाणी पच्चत्ता, णव जोयणवित्थिण्णा दुवालसजो
यणायामा, जाव पच्चक्ख देवलोयभूया पासाईया, दरसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा)

नगर्याः उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे नलिनीवनं नाम उद्यानम् । तत्र खलु पुण्डरीकिण्यां राजधान्यां महापद्मे नाम राजाऽऽसीत् । तस्य खलु पद्मावती नाम देवी आसीत् । तस्य खलु महापद्मस्य राज्ञः पुत्रो पद्मास्या देव्या आत्मज्ञो द्वौ कुमारी आस्ताम् । 'तं जहा' तद्यथा तयोर्नामरूपे, तदाह—'पुडरीए य कडरीए य सुकुमालपाणिपाया' पुण्डरीकश्च कण्डरीकश्च सुकुमारपाणिपादौ कोमलकरचरणी । तयोर्मध्ये पुण्डरीको गुरुराजाऽऽसीत् । तस्मिन् काले तस्मिन् समये 'शेरागमण'

पुष्कलावती चिजय में पुडरी किनी नाम राजधानी थी । यह नव योजन विस्तारवाली तथा १२ योजन की लंबी है यह साक्षात् स्वर्ग जैसी प्रतीत होती है । प्रासादीयचिह्न एव अन्तःकरण को यह प्रमत्त करने वाली है, दर्शनीय-नेत्रों को तृप्ति करने वाली है, अभिरूप-असाधारण रचना से युक्त हैं एव प्रतिरूप है—इसके जैसी और दूसरी कोई नगरी नहीं है ऐसी । (तीसेण पुडरिगिणीण णयरीण उत्तरपुरस्थिमे दिसिभाए णल्लिणिवणे णाम उज्जाणे-तत्थ ण पुडरिगिणीण रायहाणीए महापउमे णाम राया होत्था-तस्सण पउमावईणाम देवी होत्था, तस्स ण महापउ मस्स रण्णो पुत्ता पउमावईए देवीए अत्तया दुवे कुमारा होत्था) उस पुडरीकिणी नगरी के उत्तर पौरस्त्य दिग्भाग में नलिनीवन नाम का एक उद्यान था । उस पुडरीकिणी राजधानी में महापद्मनाम का एक राजा रहता था । उसकी देवी का नाम पद्मावती था । उस महापद्म राजा के यहा पद्मावती की कुक्षि से उत्पन्न हुए दो कुमार थे (तं जहा पुडरीण य, कडरीए य-सुकुमालपाणि पाया० । पुडरीए जुवराया तेण कालेण

ते पुष्कलावती विजयमा पुडरीकिनी नामे राजधानी इती ते नव योजन जेटला विस्तारवाणी तेमज्जार योजन जेटली लाणी छे ते प्रत्यक्ष स्वर्ग जेवी ज लागे छे ते प्रासादीयचिह्न अने अन्त करणने ते प्रमत्त करनारी छे, दर्शनीय-आणोने ते तृप्त करनारी छे, अभिरूप ते असाधारण (अपूर्व) रचनावाणी छे, अने प्रतिरूप-अेना जेवी जीलु डोई नगरी नहीं जेवा छे

(तीसेण पुडरिगिणीण णयरीए उत्तरपुरस्थिमे दिसिभाए णल्लिणिवणे णाम उज्जाणे-तत्थण पुडरिगिणीण रायहाणीए महापउमे णाम राया होत्था-तस्सण पउमावईणाम देवी होत्था, तस्सण महापउमस्स रण्णो पुत्ता पउमावईए देवीए अत्तया दुवे कुमारा होत्था)

ते पुडरीकिणी नगरीना उत्तर पौरस्त्य दिग्विभाजना नलिनीवन नामे एक उद्यान इती ते पुडरीकिणी राजधानीमा महापद्म नामे एक राजा रहती इती तेनी राणीनु नाम पद्मावती इती ते महापद्म राजाने त्यां पद्मवती देवीना गर्भस्थी उत्पन्न थयेला छे राजकुमार इती

स्थविरागमन=तस्या राज गन्या नलिनीने उद्याने स्थविराणामागमनमभूत् । महापद्मो राजा धर्म श्रोतु निर्गतः, धर्म श्रुत्या सजातवैराग्यः पुण्डरीक राज्ये स्थापयित्वा प्रव्रजितः । अनन्तर पुण्डरीको राजा जातः, कण्डरीको युवराजः । महापद्मऽनगार चतुर्दशपूर्वाणि अरीते । ततः खलु स्थविरा वहिर्जपदविहार विहरन्ति । ततः खलु स महापद्मो ऋणि वर्षाणि श्रामण्यपर्याय पालयित्वा यावद् सिद्धः॥सू० १॥

तेण समण्ण थेरागमण, महापउमे राया णिग्गए, धम्म सोच्चा पोंडरीय रज्जे ठवेत्ता पव्वइए । पोंडरीए राया जाए, कडरीए जुवराया । महापउमे अणगारे चोद्दसपुव्वाइ अहिज्जइ, तएण थेरा ऋहिया जणवयविहार विहरति, तएण से महापउमे ऋणि वामाइ जाव सिद्धे) उनके नाम इस प्रकार है-१ पुडरीक और दूसरा कडरीक-ये दोनों पुत्र सुकुमार करचणवाले थे । पुडरीक को पिता ने युवराज पदप्रदान किया था । उस काल में और उस समय में वहां स्थविरों का आगमन हुआ । महापद्मराजा धर्म का व्याख्यान सुनने के लिये अपने महल से निकलकर नलिनीवन उद्यान में आये । वहां धर्म का उपदेश सुनकर उन्हें वैराग्यभाव उत्पन्न हो गया-सो वे पुडरीक को राज्य में स्थापितकर दीक्षित हो गये । पुडरीक राजा बन गया-और कडरीक युवराज हो गया । महापद्मराजर्षि ने चौदह पूर्वों का अध्ययन कर लिया । इसके बाद वहां से स्थविरो ने

(त जहा-पुडरीए य, कडरीए य-सुकुमालपाणिपाया० । पुडरीए जुवराया तेण ऋलेण तेण समण्ण थेरागमण, महापउमे राया णिग्गए, धम्म सोच्चा पोंडरीय रज्जे ठवेत्ता पव्वइए । पोंडरीए राया जाए, कडरीए जुवराया । महापउमे अणगारे चोद्दसपुव्वाइ अहिज्जइ, तएण थेरा ऋहिया, जणवयविहार विहरति, तएण से महापउमे ऋणि वामाइ जाव सिद्धे)

तेमना न भो आ प्रभावे छे-१ पुडरीक, अने २ कडरीक आ यने पुत्रो सुकुमारण डाय-पगवाणा हुता राज्ञे पुडरीकने युवराजपद प्रदान कर्तुं छत्तुं ते काले अने ते समये त्या स्थविराणु आगमन थयु महापद्म राज्ञे धर्मनु व्याख्यान सालणवा भाटे पोताना भडेलथी नीकणीने नलिनीवन उद्यानमा आये । त्या धर्मापदेश सालणीने तेने वैराग्यभाव उत्पन्न थय गये छेवटे पुडरीकने राज्यासने स्थापित करीने तेओ दीक्षित थय गया पुडरीक राज्ञे थय गये अने कडरीक युवराज थय गये । महापद्म राजर्षिके ओ पूर्वोनु अध्ययन करी लीधु त्यारपछी स्थविरा त्याथी गडार जनपदोमा विहार

नगर्याः उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे नलिनीवन नाम उद्यानम् । तत्र खलु पुण्डरीकिण्यां राजधान्यां महापद्मो नाम राजाऽऽसीत् । तस्य खलु पद्मावती नाम देवी आसीत् । तस्य खलु महापद्मस्य राज्ञः पुत्रो पद्मावत्या देव्या आत्मजौ द्वौ कुमारौ आस्ताम् । 'त जहा' तद्यथा तयोर्नामरूपे, तदाह—'पुडरीए य कडरीए य सुकुमाल पाणिपाया' पुण्डरीकश्च कण्डरीकश्च सुकुमारपाणिपादौ कोमलकरचरणा । तयो र्मध्ये पुण्डरीको युराणाऽऽसीत् । तस्मिन् काले तस्मिन् समये 'थेरागमण'

पुष्कलावती विजय में पुडरी किनी नाम राजधानी थी । यह नव योजन विस्तारवाली तथा १२ योजन की लंबी है यह साक्षात् स्वर्ग जैसी प्रतीत होती है । प्रासादीयचित्त एव अन्तःकरण को यह प्रसन्न करने वाली है, दर्शनीय-नेत्रों को तृप्ति करने वाली है, अभिरूप-असाधारण रचना से युक्त है एव प्रतिरूप है—इसके जैसी और दूसरी कोई नगरी नहीं है ऐसी । (तीसेण पुडरिगिणीण णयरीण उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए णलिणिवणे णाम उज्जाणे-तत्थ ण पुडरिगिणीण रायहाणीए महापउमे णामं राया होत्था-तस्सण पउमावईणाम देवी होत्था, तस्स ण महापउ मस्स रण्णो पुत्ता पउमावईए देवीए अत्तया दुवे कुमारा होत्था) उस पुडरीकिणी नगरी के उत्तर पौरस्त्य दिग्भाग में नलिनीवन नाम का एक उद्यान था । उस पुडरीकिणी राजधानी में महापद्मनाम का एक राजा रहता था । उसकी देवी का नाम पद्मावती था । उस महापद्म राजा के यहा पद्मावती की कुक्षि से उत्पन्न हुए दो कुमार थे (त जहा पुडरीए य, कडरीए य-सुकुमालपाणि पाया० । पुडरीए जुवराया तेण कालेण

ते पुष्कलावती विजयमा पुडरीकिनी नामे राजधानी इती ते नव योजन जेटला विस्तारवाणी तेभञ्ज पार योजन जेटली लाणी छे ते प्रत्यक्ष स्वर्ग जेवी ज लागे छे ते प्रासादीयचित्त अने अन्त करणने ते प्रसन्न करनारी छे, दर्शनीय-आजोने ते तृप्त करनारी छे, अभिरूप ते असाधारण्य (अपूर्व) रचनावाणी छे, अने प्रतिरूप-अने जेवी णीणु कोई नगरी नथी जेवी छे

(तीसेण पुडरिगिणीए णयरीए उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए णलिणिवणे णाम उज्जाणे-तत्थण पुडरिगिणीए रायहाणीए महापउमे णाम राया होत्था-तस्सण पउमावईणाम देवी होत्था, तस्सण महापउमस्स रण्णो पुत्ता पउमावईए देवीए अत्तया दुवे कुमारा होत्था)

ते पुडरीकिणी नगरीना उत्तर पौरस्त्य दिग्दिशागमा नलिनीवन नामे ओक उद्यान इतो ते पुडरीकिणी राजधानीमा महापद्म नामे ओक राजा रहतेता इतो तेनी राज्यानु नाम पद्मावती इतु ते महापद्म राजने त्या पद्मवती देवीना गर्लथी उत्पन्न थयेला जे राजकुमार इता

स्थविरागमन=नस्या राज्ञान्या नलिनीवने उयाने स्थविराणांमागमनमभूत् । महा-
पद्मो राजा धर्मं श्रोतुं निर्गतः, धर्मं श्रुत्वा सजातवैराग्यः पुण्डरीक राज्ये स्थाप-
यित्वा प्रव्रजितः । अनन्तर पुण्डरीको राजा जातः, कण्डरीको युवराजः । महा-
पद्मस्यनगरं चतुर्दशपूर्वाणि असीते । ततः खलु स्थविरा बहिर्जपद्विहारं विहरन्ति ।
ततः खलु स महापद्मो नृनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयित्वा यावद् सिद्धः॥सू० १॥

तेणं समएण थेरागमण, महापउमे राया णिग्गए, धम्म सोच्चा पोंडरीय
रज्जे ठवेत्ता पव्वइए । पोंडरीए राया जाए, कडरीए जुवराया । महाप
उमे अणगारे चोद्दसपुव्वाइ अहिज्जइ, तएण थेरा बहिया जणवयविहार
विहरति, तएणं से महापउमे वृहणि वासाइ जाव सिद्धे) उनके नाम
इस प्रकार है-१ पुडरीक और दूसरा कडरीक-ये दोनों पुत्र सुकुमार
करचणवाले थे । पुडरीक को पिता ने युवराज पदप्रदान किया था । उस
काल में और उस समय में वहाँ स्थविरों का आगमन हुआ । महाप-
द्मराजा धर्म का व्याख्यान सुनने के लिये अपने महल से निकलकर
नलिनीवन उद्यान में आये । वहाँ धर्म का उपदेश सुनकर उन्हें वैराग्यभाव
उत्पन्न हो गया-सो वे पुडरीक को राज्य में स्थापित कर दीक्षित हो गये ।
पुडरीक राजा बन गया-और कडरीक युवराज हो गया । महापद्मराजर्षि
ने चौदह वर्षों का अध्ययन कर लिया । इसके बाद वहाँ से स्थविरो ने

(त जहा-पुडरीए य, कडरीए य-सुकुमालपाणिपाया० । पुडरीए जुव-
राया तेणं कालेण तेण समएण थेरागमण, महापउमे राया णिग्गए, धम्म सोच्चा
पोंडरीय रज्जे ठवेत्ता पव्वइए । पोंडरीए राया जाए, कडरीए जुवराया । महा
पउमे अणगारे चोद्दसपुव्वाइ अहिज्जइ, तएण थेरा बहिया, जणवयविहार विह-
रति, तएण से महापउमे वृहणि वासाइ जाव सिद्धे)

तेमना नामो आ प्रमाळु छे-१ पुडरीक, अने २ कडरीक आ णने
पुत्रो सुकुमारो जाय-पगवाणा इता राज्ञे पुडरीकने युवराजपद प्रदानं कर्तुं
छर्तुं ते काले अने ते समये त्या स्थविरानु आगमनं थयु महापद्मं राज्ञं
धर्मं तु व्याख्यानं साधयत्वा माटे पोतानां महिलथी नीकणीने नलिनीवन उद्या-
नमा आण्ये । त्या धर्मावृत्तेश साधयन्तीने तेने वैराग्यलाभ उत्पन्नं थयं गये
छेवटे पुडरीकने राज्यासने स्थापितं उरीने तेणो दीक्षितं थयं जया पुडरीक
राजं थयं गये अने कडरीक युवराजं थयं गये । महापद्मं राजर्षिणे चो-
पूर्वतु अध्ययनं करी लीधु त्पारपथी स्थविरा त्याथो णडारे जतपद्दोमा विहार

पूग्-तर्पणं थेरा अक्षया कथाइं पुगरत्रि पुंडरिगिणीए
 रायहाणीए णलिणिवणे उज्जाणे समोसटा, पोंडरीए राया
 णिग्गए । कंडरीए महाजणसइ सोच्चा जहा महावलो जाव
 पज्जुवासइ । थेरा धम्म परिक्खेति पुडरीए समणोवासए जाए
 जाव पडिग्गए । तएण से कडरीए उट्टाए उट्टेइ, उट्टाए उट्टिता
 जाव से जहेयं तुच्चे वदह जं णवर पुण्डरीय रायं आपुच्छामि,
 जाव पव्वयामि । अहासुह देवाणुप्पिया । तएण से कडरीए
 जाव थेरे वदइ णमसइ वंदित्ता णमसित्ता थेराण अंतियाओ
 पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता तमेव चाउग्घट आसरह दुरु
 हइ जाव पच्चोरुहइ, जेणेव पुण्डरीए राया तेणेव उवागच्छइ
 करयल जाव पुंडरीयं एव वयासी-एवं तल्ल देवाणुप्पिया । मए
 थेराण अतिए जाव धम्मे निससते से धम्मे जाव अभिरुइए
 तर्पणं देवाणुप्पिया । जाव पव्वइत्तए । तएण से पुडरीए कड-
 रीए एवं वयासी-माणं तुम देवाणुप्पिया । इयाणि मुडे जाव
 पव्वयाहि, अह णं तुमं महयार रायाभिसेएणं अभिसिंचामि ।
 तएण से कडरीए पुडरीयस्स रण्णो एयमट्ट णो आढाइ णो
 परिजाणइ तुसिणीए सच्चिट्ठइ । तएण पुण्डरीए राया कडरीय
 दोच्चपि तच्चपि एव वयासी-जाव तुसिणीए सच्चिट्ठइ । तएणं
 पुण्डरीए कडरीय कुमार जाहे नो सचाएइ, वट्ठीहिं आघवणाहि
 याहिर जनपदों में विहार कर दियो । महापद्म अनगार ने अनेक वर्षों तक
 श्रामण्य पर्याय का पालन कर योवत् सिद्धपद को प्राप्त कर लिया ॥ सू० १ ॥

भाटे नीकणी पडया मडापद्म अनगारे धरुा वषी सुधी श्रामण्य पर्यायतु
 पालन करीने यावत् सिद्धपदने प्राप्त करी दीधु ॥ सू० १

य पणवणाहि यष्ट ताहे अकामए चैव एयमट्ट अणुमन्नित्था
जाव णिक्खमणाभिसेएण अभिसिचइ जाव थेराण सीसभिक्खं
दलयइ । पव्वइए अणगारे जाए एगारसगविऊ । तएण थेरा
भगवंतो अन्नया कयाइं पुडरिगिणीओ नयरीओ णलिणीवणाओ
उज्जाणाओ पडिणिक्खमति पडिणिक्खमित्ता वहिया जणवय-
विहारं विहरति ॥ सू० २ ॥

टीका—‘ तएण ते ’ इत्यादि । ततः खलु ते स्वविरा अन्यदा कदाचित्
पुण्डरीकिण्या राजधान्या नलिनीवने उद्याने समग्रता-समगताः । तेषा समा-
गमन श्रुत्वा पुण्डरीको राजा तान् वन्दितु निर्गतः । अनन्तरम्-कण्डरीको ‘ महा-
जणसद् ’ महाजनसद-स्थविरान् वन्दितु कामाना गच्छता बहूना जनाना
कोलाहल श्रुत्वा ‘ जहा महात्रलो जाव पणज्जुवासइ ’ यथामहात्रलो यावत्पर्यु-
पास्ते । महात्रल इव स्वविराणा समीपे गत्वा तान् वन्दित्वा नमस्यित्वा सेवते ।
स्वविरा धर्मं ‘ परिक्रहेति ’ परिक्रययन्ति=उपदिशन्तीत्यर्थः । तेरुपदिष्ट धर्मं श्रुत्वा
पुण्डरीकः श्रमणोपासको जातः ‘ जाव पडिगए ’ यावत्प्रतिगतः=स्थविरान् वन्दित्वा

‘ तएण ते थेरा अन्नया कयाइ ’ इत्यादि ।

टीकार्थः—(तएण) इसके बाद (ते थेरा) वे स्वविर (अन्नया
कयाइ किसी एक समय (पुणरवि) फिर से (पुडरिगीणीए रायहाणीए
णलिणिवणे उज्जाणे समोसदा, पोंडरीए रायाणिग्गए) पुडरीकिणी राज-
धानी में आये । वहा वे नलिनीवन उद्यान में ठहरे । पुडरीक राजा
उनका आगमन सुनकर धर्म सुनने की इच्छा से वहा जाने के लिये
अपने महल से निकले । (कडरीए महाजणसद् सोचा जहा महत्त्रलो
जाव पण्जुवासइ, थेरा धम्म परिक्रहेति, पुडरीए समणोवासए जाए जाव

‘ तएण ते थेरा अन्नया कयाइ ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्याशपडी (ते थेरा) ते स्वविर (अन्नया कयाइ)
केरि अके वभते (पुणरवि) इटी (पुडरिगीणीए रायहाणीए णलिणिवणे उज्जाणे
समोसदा, पोंडरीए रायाणिग्गए) पुडरीकिणी राजधानीमा आल्या त्या तेओ
नलिनीवन उद्यानमा राजाया पुडरीक राज तेमनु आगमन सालणीने धर्मनु
व्याख्यान सालणवानी उच्छाथी त्या जवा माटे पोताना महेत्थी नीकल्या
(कडरीए महाजणसद् सोचा जहा महात्रलो जाव पण्जुवासइ, थेरा धम्म परि

मूलम्—तएण थेरा अज्जया कयाइ पुणरत्रि पुडरिगिणीए
 रायहाणीए णलिणिवणे उज्जाणे समोसढा, पोंडरीए राया
 णिग्गए । कंडरीए महाजणसइ सोच्चा जहा महावलो जाव
 पज्जुवासइ । थेरा धम्म परिकहेति पुडरीए समणोवासए जाए
 जाव पडिगए । तएण से कंडरीए उट्टाए उट्टेइ, उट्टाए उट्टिता
 जाव से जहेयं तुवभे वदह ज णवर पुण्डरीय राय आपुच्छामि,
 जाव पव्वयामि । अहासुहं देवाणुप्पिया । तएणं से कडरीए
 जाव थेरे वंदइ णमसइ वंदित्ता णमसित्ता थेराण अंतियाओ
 पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता तमेव चाउग्घट आसरह दुरु
 हइ जाव पच्चोरुहइ, जेणेव पुण्डरीए राया तेणेव उवागच्छइ
 करयल जाव पुंडरीय एवं वयासी—एवं खल्ल देवाणुप्पिया । मए
 थेराण अतिए जाव धम्मे निसंते से धम्मे जाव अभिरुइए
 तएणं देवाणुप्पिया । जाव पव्वइत्तए । तएण से पुडरीए कड-
 रीए एव वयासी—माणं तुम देवाणुप्पिया । इयाणि मुंडे जाव
 पव्वयाहि, अह णं तुमं महयार रायाभिसेएणं अभिसिंचामि ।
 तएण से कडरीए पुडरीयस्स रण्णो एयमट्ट णो आढाइ णो-
 परिजाणइ तुसिणीए सचिट्ठइ । तएण पुण्डरीए राया कडरीय
 दोच्चपि तच्चपि एव वयासी—जाव तुसिणीए सचिट्ठइ । तएणं
 पुण्डरीए कडरीय कुमार जाहे नो सचाएइ, वहुहि आघवणाहि

बाहिर जनपदों में विहार कर दियो। महापद्म अनगार ने अनेक वर्षों तक
 श्रामण्य पर्याय का पालन कर योवत् सिद्धपद को प्राप्त कर लिया ॥ सू० १ ॥

भाटे नीकणी पड्या महापद्म अनगारे धरुा वर्षो सुधी श्रामण्य पर्यायतु
 पालन करीने यावत् सिद्धपदने प्राप्त करी दीधु ॥ सू० १ ॥

य पणवणाहि यश्च ताहे अकामए चैव एयमट्ट अणुमन्नित्था
जाव णिक्खमणाभिसेएणं अभिसिचइ जाव थेराणं सीसभिव्ख
दलयइ । पव्वइए अणगारे जाए एगारसंगविऊ । तएण थेरा
भगवतो अन्नया कयाइं पुंडरिगिणीओ नयरीओ णलिणीवणाओ
उज्जाणाओ पडिणिक्खमति पडिणिक्खमित्ता वहिया जणवय-
विहारं विहरंति ॥ सू० २ ॥

टीका—‘तएण ते’ इत्यादि । ततः खलु ते स्थविरा अन्यदा कदाचित्
पुण्डरीकिण्या राजधान्या नलिनीवने उद्याने समस्रता-समगताः । तेषा समा-
गमन श्रुत्वा पुण्डरीको राजा तान् वन्दितु निर्गतः । अनन्तरम्—पुण्डरीको ‘महा-
जणसद्’ महाजनसद्=स्थविरान् वन्दितु कामाना गच्छता बहूना जनाना
कोलाहल श्रुत्वा ‘जहा महाजलो जाव पञ्जुवामइ’ यथामहाजलो यावत्पर्यु-
पास्ते । महाबल इव स्थविराणा समीपे गत्वा तान् वन्दित्वा नमस्थित्वा सेवते ।
स्थविरा धर्मं ‘परिकरंति’ परिकथयन्ति=उपदिशन्तीत्यर्थः । तैरुपदिष्ट धर्मं श्रुत्वा
पुण्डरीकः श्रमणोपासको जातः ‘जाव पडिगए’ यावत्प्रतिगतः=स्थविरान् वन्दित्वा

‘तएण ते थेरा अन्नया कयाइ’ इत्यादि ।

टीकार्थः—(तएण) इसके बाद (ते थेरा) वे स्थविर (अन्नया
कयाइ किसी एक समघ (पुणरवि) फिर से (पुंडरिगिणीए रायहाणीए
णलिनिवणे उज्जाणे समोसढा, पौंडरीए रायाणिग्गए) पुंडरीकिणी राज-
धानी में आये । वहा वे नलिनीवन उद्यान में ठहरे । पुंडरीक राजा
उनका आगमन सुनकर धर्म सुनने की इच्छा से वहा जाने के लिये
अपने महल से निकले । (कडरीए महाजणसद् सोचा जहा महजलो
जाव पञ्जुवासद्, थेरा धम्म परिकरंति, पुंडरीए समणोवासए जाए जाव

‘तएण ते थेरा अन्नया कयाइ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्पारपठी (ते थेरा) ते स्थविरा (अन्नया कयाइ)
के।धं अेक वपते (पुणरवि) इंगी (पुंडरिगिणीए रायहाणीए णलिनिवणे उज्जाणे
समोसढा, पौंडरीए रायाणिग्गए) पुंडरीकिणी राजधानीमा आऽव्या त्या तेऽप्यो
नलिनीवन उद्यानमा देवाया पुंडरीक राजा तेभनु आगमन सालणीने धर्मनु
व्याख्यान सालणवानी धरंथायी त्या जवा भाटे पानाना भडेदथी नीकऽव्या
(कडरीए महाजणसद् सोचा जहा महाजलो जाव पञ्जुवासद्, थेरा धम्म परि

नमस्वित्वा प्रतिनिवृत्तः । ततः खलु कडरीकः ' उट्टाण ' उत्थया=उत्थानशक्त्या उत्तिष्ठति, उत्थया उत्थाय ' जाव ' यावत् स्थयितान् प्रन्दित्या नमस्वित्वा एव मन्वदत्- ' से जहेय तुब्भे वदह ' तद्यवेदं पुय वदथ=हे देवानुमियाः ! पूय यथा यद् वदथ, तत्तथैव, ' ज णवर ' यणवर=यो विशेष सत्त्वैवम्-यदहं पूर्वं पुण्डरीक राज्ञानम् आपुच्छामि । तत खलु ' जाव पव्वयामि ' पावन् प्रव्रजामि ।

पडिगण) इसके बाद कडरीक युवराज स्वयं को वदना करने के लिये जानेवाले अनेक मनुष्यों का कोलाहल सुनकर महाबल राजा की तरह स्वयं के पास गया-वहा जाकर उसने उनकी वदना की-नमस्कार किया । वदना नमस्कार कर फिर उसने उनकी पर्युपासना की । स्वयं ने धर्म का उपदेश दिया । उस उपदेश को सुनकर पुडरीक श्रमणोपासक बन गया । बाद में वह स्वयं को वदना और नमस्कार कर अपने स्थान पर वापिस वहा से लौट आया । (तण्ण से कडरीण उट्टाए उट्टेह, उट्टाए उट्टित्ता जाव से जहेय तुब्भे वदह, ज णवर पुडरीय राय आपुच्छामि, तण्ण जाव पव्वयामि-अहासुह देवाणुप्पिया । तण्ण से कडरीए जाव थेरे वदह, नमसह, वदित्ता नमसित्ता थेराण अतियाओ पडिनिक्खमह) इसके बाद कडरीक उत्थानशक्ति से उठा-उत्थानशक्ति-उठने की शक्ति से उठकर उसने स्वयं को वदना की-नमस्कार किया । वदना नमस्कार करके फिर उसने उनसे इस प्रकार कहा-हे

कहेत्ति, पुडरीए समणोवासए जाए जाव पडिगण) त्थारपथी कडरीक युवराज स्वयं को वदना करवा भाटे उपडेवा अनेक भाणुसेने वाधाट सालणीने महाबल राजनी नेम स्वयं को पास गये त्या वधने तेणे तेमने वदन अने नमस्कार कर्या वदना अने नमस्कार करीने तेणे तेमनी पर्युपासना करी स्वयं को धर्मोपदेश आण्ये, ते उपदेशने सालणीने पुडरीक श्रमणोपासक णनी गये त्थारपथी ते स्वयं को वदन तेमन् नमन करीते योताना निवास-स्थाने पाछे आवतो रहो

(तण्ण से कडरीए उट्टाए उट्टेह, उट्टाए उट्टित्ता जाव से जहे य तुब्भे वदह ज णवर पुडरीय राय आपुच्छामि, तण्ण जाव पव्वयामि-अहासुह देवाणुप्पिया ! तण्ण से कडरीए जाव थेरे वदह, नमसह, वदित्ता, नमसित्ता थेराण अतियाओ पडिनिक्खमह)

त्थारपथी कडरीक उत्थान शक्ति वडे जिलो थयो, उत्थान शक्ति-जिमा थवानी शक्ति वडे जिलो थधने तेणे स्वयं को वदन तेमन् नमस्कार कर्या वदना अने नमस्कार करीने तेणे तेमने आ प्रभाणे विनती

इति तद् वचन श्रुत्वा ते स्थविरा' प्रोचुः, 'अहासुह देवाणुप्पिया' यथासुख हे देवानुप्रिया । हे देवानुप्रिय । यथा तव सुखरुर भवेत् तथा कुरु । ततः खलु स कण्डरीको यावत् स्थविरान् नन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा स्थविराणामन्तिकत्=ममीपात् प्रतिनिष्क्राम्यति, प्रतिनिष्क्रम्य, तमेव 'चाउग्घट' चतुर्घट=चतस्रो घण्टा यस्मिन् स तम्=घण्टा चतुष्टयोपेतम् अश्वस्थ दूरोहति, यावत् प्रत्यश्वरोहति=रथादवतरति । अवतरणानन्तर यत्रैव पुण्डरीको राजा तत्रैव उपागच्छति, 'करयल जाव' करतल यावत्=करतलपरिगृहीत शिर आवत्तं दशनख मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा पुण्डरीकमेवमवादीत्-एव खलु हे देवानुप्रिय ! मया स्थविराणामन्तिके यावद् धर्मो निशान्त =श्रुत', स धर्मः=स्थविरप्रोक्तो धर्मः यावत् अभिरुचित' । तत् खलु हे देवानुप्रिय ! 'जाव पञ्चउत्तए' यावत् प्रप्रजितुम्=हे देवानुप्रियाः ! भवद्भिरभ्यनुज्ञातो स्थविराणामन्तिके प्रप्रजितुमिच्छामीतिभावः ।

देवानुप्रियो ! आप जैसा कहते हैं-वह वैसा ही है-मेरी भावना उसे सुनकर सयम लेने की हो गई है-अतः सयम धारण करने के पहिले मैं पुडरीक राजा से इस विषय में पूछ आता हूँ उसके बाद सयम धारण करना चाहता हूँ । इस प्रकार उसके वचन सुनकर उन स्थविरों ने उससे कहा-हे देवानुप्रिय ! तुम्हे जैसे सुख हो-तुम वैसा करो-इसके बाद कंडरीक ने स्थविरों को वदना की-नमस्कार किया और वदना नमस्कारकर वह उनके पास से चला आया (पडिनिक्खमिच्चा) आकर के (तमेवचाउग्घट आसरह दुरुहइ, जाव पञ्चोरुहइ, जेणेव पुडरीए राया तेणेव उवागच्छइ, करयल जाव पुडरीय एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ! मए थेराण अतिए जाव धम्मे निसते से धम्मे जाव अभिरुइए

हे देवानुप्रियो ! तमे जेम कडे छे ते भरेणर तेम छे आ भधु सालणीने सयम अडणु करवानी मारी धञ्छा थर् गध ठे अेटवा भाटे सयम धारणु करता पडेवा हु पुडरीक राजने आ विषे पूछी आवु छु त्थारपछी हु सयम धारणु करवा आवु छु आ प्रभाणु तेना पथनेा सालणीने ते स्थविदेअे तेने कल्लु के हे देवानुप्रिय ! तमने जेमा सुण भजे तेम करे त्थारपछी उडरीके स्थविदेने वदन तेमअ नमस्कार करीने ते तेमनी पासेथी आवतो रद्धो (पडिनिक्खमिच्चा) आवीने,

(तमेव चाउग्घट आसरह दुरुहइ, जाव पञ्चोरुहइ, जेणेव पुडरीए राया तेणेव उवागच्छइ, करयल पुडरीय एव वयासी एव खलु देवाणुप्पिया ! मए थेराण अतिए जाव धम्मे निसते से धम्मे जाव अभिरुइए-तण्ण देवाणुप्पिया !

ततः पुण्डरीकः पुण्डरीकमेवमासीत्-मा गच्छ तं हे देवानुप्रिय ! भ्रातः इदानीं
 गुण्डो यावत् प्रव्रज अहं गच्छुः त्वा मह्यता २ ' रायाभिसेरण ' राजाभिषेक
 ' अभिसिंचामि=ममिषेचयामि । ततः गच्छुः तं पुण्डरीकं युवाजः पुण्डरीकस्य
 राज्ञ एतमर्थं नो जादिपते=तस्य राज्याभिषेकरूपमर्थं नो मनुते,
 ' नो परिजाणइ ' नो मतिमानानि=न स्त्री स्त्रीति ' तुमिणीष सविद्वइ ' तूष्णीकः

-तण्ण देवाणुप्पिया ! पव्वइत्ताण । तण्ण से पुडरीए कडरीए एव वयासी
 -माण तुम देवाणुप्पिया ! इयाणिं मुढे जाव पव्वयाहि-अहं ण तुम
 महया २ रायाभिसेरणं अभिसिंचामि) वइ वइ आया-जइ चतुर्थदो
 पेत भपना अश्वरथ रग्गा इआ ३ । वइ आकर वइ उमपर चइ गया
 -चइकर वइ जइ पुडरीक राजा थे वइ आया-जइ आते ही वइ रथ
 से नीचे उतरा । नीचे उतरकर पुडरीक राजा के पास गया-
 वइ जाकर उसने पुडरीक राजा को दोनों हाथ (जोडकर नम
 स्कार किया-वाइ में इस प्रकार कतने लगा-हे देवानुप्रिय मैंने स्थ
 विरो के पास धर्म का उपदेश सुना है-वइ मुझे बहुत रुचा है इसलिये
 हे देवानुप्रिय ! मैं आपसे आज्ञापित होकर उन स्थविरो के पास समय
 लेना चाहता हूँ-इस प्रकार कडरीक की बात सुनकर पुडरीकने उससे
 इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय ! तुम इस समय मुडित होकर स्थविरो
 के पास समय धारण मतकरा मैं बड़े जोर शोर के उत्सव के साथ
 तुम्हारा राज्याभिषेक करना चाहता हूँ । (तण्ण से कडरीए पुडरीयस्स

जाव पव्वइत्ताण । तण्ण से पुडरीए कडरीए एव वयासी-माण तुम देवाणुप्पिया ।
 इयाणिंमुढे जाव पव्वयाहि अहं ण तुम महया २ रायाभिसेरणं अभिसिंचामि)

ते त्या आये न्या यतुर्घटाणे पोताने अश्वरथ इतो त्या आवीने
 ते तेभा जेसी गये, अने जेसीने ते न्या पुडरीक राजा इतो त्या गये त्या
 पडोयता २ ते रथ उपरथी नीचे उतर्यो, नीचे उतरने पुडरीक राजानी पास
 गये त्या न्येने तेले णने हाथ जेडीने पुडरीक राजने नमस्कार क्यो अने
 त्यारपछी तेले तेमने विनती करता आ प्रभाणे कछु के हे देवानुप्रिय ! मे
 स्थविरोनी पासैथी धर्मोपदेश साल्ल्यो छे ते मने पूज्ज गभी गये छे
 जेथी हे देवानुप्रिय ! हु तमारी आसा मेजवीने स्थविरोनी पासैथी समय
 अडळु करवा धम्म छु आ प्रभाणे कडरीकनी बात साल्लोने पुडरीके तेने आ
 प्रभाणे कछु के हे देवानुप्रिय ! तमे डमळु मुडित थंने स्थविरोनी पासैथी समय
 धारण करो नहि हु मोटा उत्सव जावे तमारे राज्याभिषेक करवा ३

सतिष्ठते=तमर्थं न स्वीकृतवान् केवल मौनमवलम्ब्य स्थितः । ततः खलु पुण्ड-
रीको राजा कण्डरीक भ्रातर द्वितीयमपि तृतीयमपि वारम् ' एव 'पूर्वोक्तरूपेण
अवादीत्-' जात्र तुसिणीए सचिद्ध ' यावत्-तुष्णीकः सतिष्ठते । ततः खलु
पुण्डरीकः कण्डरीक यदा ' नो सचाण्ड ' नो ज्ञोति = न समर्थो भवति
बहुभि ' आघवणाहि य ' आख्यापनाभिश्च-आख्यापनाभि -प्रज्याविगेविभि
राख्यानैः ' पणवणाहि य ' वनापनाभिश्च ' अह तव ज्येष्ठभ्राताऽस्मि, तव हितं
येन भवति, तदेव कथयामि, इत्यादि रूपैः प्रजापनवाक्यैः एव ' विणवणाहि य '
विज्ञापनाभिः विनितगृह्यवचनावलिरुपवाक्यप्रबन्धैः, तथा ' सणवणाहि य '
सज्ञापनाभिः ' प्रज्याया महान् कष्टो भवति ' इत्यादि स्वाभीप्सितसज्ञापकैर्वाक्यैश्च

रणो एयमदृ णो आढाइ, णो परिजाणइ, तुसिणीए सचिद्धइ, तएण पुड-
रीए राया कडरीयं दोच्चपि तच्चपि एव वयासी जात्र तुसिणीए सचि-
द्धइ, तएण पुडरीए कडरीय कुमार जाहे नो सचाण्ड, उहहिं आघवणाहि
य पणवणाहि य ४ ताहे अकामए चेव एयमदृ अणुमन्नित्या जात्र
णिक्खमणाभिसेएण अभिसिचइ जात्र येराण सीसभिक्ख दलयइ)
कडरीक कुमारने पुडरीक राजा की इस बात को आदर की दृष्टि से
नहीं देखा-नही माना-और न उसे स्वीकार ही किया-केवल चुपचाप
ही रहा । पुडरीक राजा ने जब कडरीक कुमार को चुपचाप देखा-तब
उसने द्वारा और तिवारा भी उससे ऐसा ही कहा-परन्तु उमने इस
बात पर बिलकुल ही ध्यान नहीं दिया केवल चुपचाप ही रहा-। अतः
जब पुडरीक राजा कडरीक कुमार को उसके ध्येय से विचलित करने

(तएण से कडरीए पुडरीयस्स रणो एयमदृ णो आढाइ, णो परिजाणइ,
तुसिणीए सचिद्धइ, तएण पुडरीए राया कडरीय दोच्चपि तच्चपि एव वयासी
जात्र तुसिणीए सचिद्धइ, तएण पुडरीए कडरीय कुमार जाहे नो सचाण्ड, उहहिं
आघवणाहि य पणवणाहि य ४ ताहे अकामए चेव एयमदृ अणुमन्नित्या जात्र
णिक्खमणाभिसेएण अभिसिचइ जात्र येराण सीसभिक्ख दलयइ)

कडरीक कुमारे पुडरीक राजानी आ वाततु सम्मान कर्तुं नहि-मानी
नहि अने तेना स्वीकार पणु कर्तो नहि, इत्त ते भूगे थधने जेमी न रहो
पुडरीक राजाये न्यादे कडरीक कुमारेने भूगे भूगे जेमी रहोले जेथो त्यादे
तेभणु भील वार अने त्रील वार पणु तेने आ प्रभाणु न कहु परतु तेणु
आ वातनी सहन पणु दरकार उरी नही, इत्त भूगे थधने जेमी न रहो
जेवटे न्यादे पुडरीक राजा कडरीक कुमारेने तेना ध्येयथी मक्कम विचारथी

'आयचित्तर' आग्न्यापयितु ष=गर्भधापनिरोधयितु न शनोतीति पूर्वण सम्बन्ध',
 'ताहे' तदा 'अगमण चेत्' अगमणः एव=अनिरुद्ध एव 'एयमद्' एत-
 र्थम्-पुण्डरीकाग्निलपित प्रव्रज्यात्पम्, 'जणुमन्निरथा' अत्रमन्यत=स्वीकृत
 चान्, 'जाय गिरुचमणाभिसेण' यायन् निरुपगाभिपेकेण 'स्वीकरणानन्तर
 निष्क्रमणोपयोगि वस्तुजातगुपनीय सविधि दीक्षाभिपेकेण अभिसिञ्चति, 'जाय
 येराण सीमभिरव दलयड' यायत्-स्थविरेभ्य शिष्यभिक्षाम्=अभिपेकानन्तर स
 पुण्डरीको राजा पुण्डरीक शिषिकाया समुपदेश्य महता समारोहेण सह नलिनी
 यने उद्याने समायाति, तत्र स्थितेभ्य' स्थविरेभ्यः स्यत्पुत्रात् शिष्यभिक्षा
 ददाति । अनन्तर स पुण्डरीकः प्रव्रजित सन् अनगारो जातः । तथा 'एका
 रसगविज्' एकादशाह्नयित्=एकादशाह्नयानयान् जातः । तत' खलु स्थविरा भग

के लिये आर्यापनाओं द्वारा, प्रज्ञापनाओं द्वारा विज्ञापनाओं द्वारा
 सज्ञापनाओं द्वारा, समर्थ नहीं हो गये-तत्र उन्होंने बिना इच्छा के ही
 कडरीक कुमार को दीक्षा ग्रहण करने रूप अर्थ की स्वीकृति देने के
 बाद निष्क्रमणोपयोगी समस्त वस्तुओं को उन्होंने मंगवाया-जब वे आ
 चुकी-तब उन्होंने उसका सविधि दीक्षाभिपेक से अभिसिञ्चन किया ।
 अभिपेक के बाद पुण्डरीक राजा कडरीक को शिषिका में बैठाकर बड़े
 समारोह के साथ नलिनीवन में आये । वहाँ आकर उन्होंने स्थविरों के
 लिये अपने लघुभाई को शिष्य की भिक्षा रूप से प्रदान किया । इसके
 बाद कडरीक (पव्वइए अणगारेजाए) प्रव्रजित होकर अनगारावस्था
 सरत्र हो गये । (एगारसगविज्, -तएण थेरा भगवतो अन्नया कयाइ
 पुडरिगिणीओ नयरीओ णलिणीवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमति,

वियलित करत्ता माटे आभ्यापनाओ, प्रज्ञापनाओ, विज्ञापनाओ, सज्ञाप
 नाओ वडे पणु समर्थ थध शक्या नहि त्यारे तेमण्णु ध्विष्ठा न षुडोवा छताओ
 उडरीक कुमारने दिक्षाग्रहणु करवानी स्वीकृति आपी दीधी स्वीकृति आभ्या
 आह तेमण्णु निष्क्रमणुने लगती गधी वस्तुओ भ गावी न्यारे वस्तु ओ आपी
 गध त्तारे तेमण्णु तेनु विधिसर दीक्षाभिपेक वडे अभिसिञ्चन कयुं अभिपेक
 कथा आह पुण्डरीक राजा उडरीकने पालणीमा जेसाडीने आरे समारोहनी साथे
 नलिनी वनमा आन्या त्या आवीने तेमण्णु स्थविराने पोताना नाना लाधने
 शिष्यना इपमा आपी दीधो त्यारपठी उडरीक (पव्वइए अणगारे जाए)
 प्रव्रजित थधने अनगारावस्था स पक्ष थध गये।

(एगारसगविज्-तएण थेरा भगवतो अन्नया कयाइ पु नय

वतो ज्यदा रुदाचित् पुण्डरीकिण्या नगर्यां नलिनीप्रतात् उद्यानात् प्रतिनिष्क्राम्यन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य तद्विर्जनपदविहारं विहरन्ति ॥ सू० २ ॥

मूलम्-तएणं तस्स कंडरीयस्स अणगारस्स तेहि अतेहि य पंतेहि य जहा सेलागस्स जाव दाहवक्कतिए यावि विहरइ । तएणं थेरा अन्नया कयाइ जेणेव पोंडरिगिणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, णलिणिव्रणे समोसढा, पोंडरीए णिग्गए धम्मं सुणेइ । तएणं पोंडरीए राया धम्मं सोच्चा जेणेव कडरीए अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कडरीय अणगार वंदइ णमसइ वदित्ता णमंसित्ता कडरीयस्स अणगारस्स सरीरगं सव्वावाहं सरोय पासइ, पासित्ता, जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, थेरे भगवते वंदइ, णमंसइ, वदित्ता णमंसित्ता एव वयासी-अहण्णं भते । कडरीयस्स अणगारस्स अहा पवत्तेहि ओसहभेसज्जेहि जाव तेइच्छं आउट्टामि, त तुव्भे ण भते । सम जाणसालासु समोसरह । तएण थेरा भगवतो पुंडरीयस्स पडिसुणेति, पडिसुणित्ता, जाव उवसपज्जित्ताणं

पडिणिक्खमित्ता वहिया जणवयविहारं विहरति) धीरे २ वे ग्यारह अर्गोंके पाठी भी जनगये इसके बाद उन स्थविर भगवतों ने किसी एक दिन पुंडरीकिणी नगरी के उम नलिनीवन नामके उद्यान से विहार किया सो विहार कर वे बाहिर के जनपदों में विचरने लगे ॥ सू० २ ॥

रीओ णलिणीव्रणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमिति, पडिणिक्खमित्ता वहिया जणवयविहारं विहरति)

धीमे धीमे तेमणे अगियाअ गोनु अधयन करी वीधु त्थारणाइ ते स्थविर लगवतोअे केअे अेअे द्विसे पुंडरीकिणी नगरीना ते नलिनीवन नामना उद्यानथी विहार उयो, विहार करीने तेओे अडारना जनपदोभा विचरणु करवा लाग्या ॥ सूत्र २ ॥

‘आयचित्’ आग्यापयितु ष=मर्षयापनिरोधयितु न शक्नोतीति पूर्वेण मन्त्रन्धः,
 ‘ताहे’ तदा ‘अरामण चैत्र’ अरामण एव=अभिनन्द एव ‘पयमद्’ एतम-
 र्थम्-कण्डरीकामिलपित मन्त्रज्यारूपम्, ‘अणुमन्निस्था’ अत्रमन्त्रत=स्वीकृत
 वान्, ‘जात्र निरुत्वमणामिमेण्ण’ यात्रन् निरुत्वमणामिपकेण’ स्वीकरणानन्तर
 निष्क्रमणोपयोगि वस्तुजातगुणनीय सविधि दीक्षामिपेकेण अभिषिञ्चति, ‘जात्र
 थेराण सीमभित्तल दलयड’ यात्रन्-स्थविरेभ्य शिष्यमिक्षाम्=अभिषेकानन्तर स
 पुण्डरीको राजा कण्डरीक शिषिकाया समुपपेक्ष्य महता समारोहेण सह नलिनी
 वने उद्याने समायाति, तत्र स्थितेभ्यः स्थविरेभ्यः स्वच्छुभ्रातर शिष्यमिक्षा
 ददाति । अनन्तर स कण्डरीकः प्रव्रजित सन अनगारो जातः । तथा ‘एग
 रसगविऊ’ एकादशाह्वित्=एकादशाह्वानयान् जातः । ततः सल्ल स्थवित्रा भय

के लिये आर्यापनाओं द्वारा, प्रज्ञापनाओं द्वारा विज्ञापनाओं द्वारा
 सज्ञापनाओं द्वारा, समर्थ नहीं हो गये-तब उन्होंने बिना इच्छा के ही
 कडरीक कुमार को दीक्षा ग्रहण करने रूप अर्थ की स्वीकृति देने के
 बाद निष्क्रमणोपयोगी समस्त वस्तुओं को उन्होंने मंगवाया-जब वे आ
 चुकी-तब उन्होंने उसका सविधि दीक्षाभिषेक से अभिसिंचन किया।
 अभिषेक के बाद पुडरीक राजा कडरीक को शिषिका में बैठाकर बड़े
 समारोह के साथ नलिनीवन में आये। वहाँ आकर उन्होंने स्थविरों के
 लिये अपने लघुभाई को शिष्य की भिक्षा रूप से प्रदान किया। इसके
 बाद कडरीक (पञ्चइए अणगारेजाए) प्रव्रजित होकर अनगारावस्था
 सप्त हो गये। (एगारसगविऊ, -तएण थेरा भगवतो अन्नया कयाइ
 पुडरिगिणीओ नयरीओ णलिणीवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमति,

वियलित करवा माटे आख्यापनाओ, प्रज्ञापनाओ, विज्ञापनाओ, सज्ञाप
 नाओ वडे थल्लु समर्थं थल्लु शक्या नद्धि त्त्यारे तेमल्ले छिच्छा न पुडोवा छताओ
 कडरीक कुमारने दिक्षाग्रहण करवानी स्वीकृति आपी दीधी स्वीकृति आया
 आद तेमल्ले निष्क्रमणुने लगती थधी वस्तुओ मगावी न्यारे वस्तुओ आवी
 गधं त्त्यारे तेमल्ले तेनु विधिसर दीक्षाभिषेक वडे अभिसिंचन कयुं अभिषेक
 कया आद पुडरीक राजा कडरीकने पालपीमा जेसाडीने लारे समारोहनी साथे
 नलिनी वनमा आया त्था आवीने तेमल्ले स्थविरेने पोताना नाना लार्हने
 शिष्यता रूपमा आपी दीधे त्त्यारपणी कडरीक (पञ्चइए अणगारे जाए)
 प्रव्रजित थधने अनगारावस्था सपत्त थध गये।

(एगारसगविऊ-तएण थेरा भगवतो अन्नया कयाइ पु ६ नय-

टीका—‘ तएण तस्स ’ इत्यादि । तत खलु तस्य कण्डरीकस्य अनगारस्य तैः ‘ अतेहि य ’ अन्तैश्च=वल्लचणकादिभिः, ‘ पतेहि य ’ प्रान्तैश्च=पर्युपिते, नीरसैः स्यादवर्जितैर्वा अशनादिभिः यथा शैलकस्य राजर्षितया ज्ञ्याऽपितथा-विवमाहार कुर्वतो यावत्प्रकृतिमुकुमारस्य सुगोपचितस्य शरीरे वेदना प्रादुर्भूता, कीदृशीत्याह - उज्ज्वला यावद् दुरधिसया = सोढुमशक्या पुन सुखलेशरहिता कण्डरीकः ‘ दाहवक्त्रिण ’ दाहव्युत्क्रान्तिक = दाहस्य शरीरसन्तापरूपरोगस्य व्युत्क्रान्ति = उत्पत्तिर्यस्यासौ दाहव्युत्क्रान्तिक = करचणादिज्वलनवान् चापि विहरति । तत खलु स्थयिरा अन्यदा कदाचित् यत्रैव पुण्डरीकिणी नगरी तत्रैव उपागच्छन्ति, उपागत्य, नलिनीवने समवसताः । पुण्डरीकस्तद्दर्शनार्थं स्वभवना-

‘ तएण तस्स कडरीयस्स ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (तस्स कडरीयस्स अनगारस्स तेहि अतेहि पतेहि य जहासेलगस्स जाव दाहवक्त्रिण यापि विहरइ) उस कडरीक अनगारके वल्लचणक आदि रूप अन्ताहार करनेसे तथा पर्युपित अथवा नीरस आहाररूप प्रान्तोहार करनेसे शैलक राजर्षिकी तरह प्रकृतिसे सुकुमार सुखोपचित होने के कारण शरीरमें वेदना उत्पन्न हो गई । जो उज्ज्वला एव सोढुमशक्या थी । इस तरह शरीर सन्तापरूप रोग की उत्पत्ति से वे कडरीक अनगार कर चरण आदि में जलन होने के कारण सुख के लेश से भी वर्जित हो गये । (तएण येण अन्नया कयाइ जेणेव पोडरिगिणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छत्ता णलिणिवणे समोसदा पोडरीए

तएण तस्स कडरीयस्स इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारपछो,

(तस्स कडरीयस्स अनगारस्स तेहि अतेहि पतेहि य जहा सेलगस्स जाव दाहवक्त्रिण यापि विहरइ)

ते कडरीक अनगारना शरीरमा णल्लयणुऽ वगेरे इप अताहार करवाथी तेमअ पर्युपित अथवा नीरस आहार इप प्रान्ताहार करवाथी येवअ राजर्षिनी जेम प्रकृतिथी सुकुमार अने सुगोपचित होवा णल्ल वेदना उत्पन्न थई गइ ते वेदना अत्यंत उअ अने असह्य हत्ती आ प्रभाणु गरीअ सताप इप शिगनी उ पत्तिथी ते कडरीक अनगार हाथ पयमा णगतशने लीधे थोडी सुभशाति पणु भेगवी शक्या नहि

(तएण येण अन्नया कयाइ जेणेव पोडरिगिणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छत्ता णलिणिवणे समोसदा पोडरीए निगए धम्म सुणेइ, तएण पोडरीए राया

विहरन्ति। तएणं पुंडरीण राया जहा मडुण सेलागस्स जाव
 वलियसरीरे जाए । तएणं थेरा भगवतो पोंडरीय राय पुच्छंति,
 पुच्छित्ता वहिया जणवयविहारं विहरति । तएण से कंडरीए
 ताओ रोयायंकाओ पिप्पमुक्के समाणे तंसि मणुण्णांसि अस-
 णपाणखाइमसाइमसि मुच्छिण गिद्धे गडिए अज्जोववण्णे णो
 संचाएइ पोंडरीय रायं आपुच्छित्ता वहिया अब्भुज्जएण जण
 वयविहारं विहरित्तए । तत्थेव ओसण्णे जाए । तएण से पोंड-
 रीए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे णहाए अतेउरपरियालसंप
 रिबुडे राया जेणेव कंडरीए अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवा
 गच्छित्ता, कंडरीयं अणगार तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिण
 करेइ करित्ता वदइ णमसइ वदित्ता णमंसित्ता, एवं वयासी-
 धन्नेसि णं तुमं देवाणुप्पिया । तव माणुस्सए जम्मजीवियफले
 जे णं तुम रज्ज च जाव अतेउर चावि छड्डयित्ता जाव विगो
 वइत्ता जाव पव्वइए । अहण्णं अहण्णे अकयपुन्नं रज्जे जाव
 अन्तेउरे य माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए जाव अज्झो
 ववन्ने नो सचाएमि जाव पव्वइत्तए । त धन्नेसि णं तुमं देवा
 णुप्पिया । जाव जीवियफले । तएणं से कंडरीए अणगार पुड-
 रीयस्स एयमट्ठ णो आढाइ जाव सच्चिट्ठइ । तएणं कटरीए पोंड-
 रीएणं दोच्चपि तच्चंपि एव बुत्ते समाणे अकामए अवस्सवसे
 लड्जाए गारवेणय पोंडरीय राय आपुच्छइ, आपुच्छित्ता थेरेहि
 सद्धिं वहिया जणवयविहारं विहरइ ॥ सू०३ ॥

अनंगारस्य 'अहापवत्तेहि' यथा प्रवृत्तैः=प्रासुकैरित्यर्थः 'ओसहभेसज्जेहि' औप-
धभैषज्यैः 'जावतेइच्छ' यावत् चिकित्साम् 'आउट्टामि' आवर्तयामि=कारयामि,
'त' तत्=तस्मात् कारणात् यूयं खलु हे भद्रत ! मम यानशालासु समवसरत=
आगच्छत । ततः खलु स्थविरा भगवन्त पुण्डरीकस्य एतमर्थं प्रतिश्रुयन्ति=एत-
द्वचनं स्वीकुर्वन्ति, प्रतिश्रुत्य=स्वीकृत्य यावत्-उपसपद्य=यानशाला समाश्रित्य
विहरति । ततः खलु पुण्डरीको राजा 'जहा मडुए सेलगस्स जाव
वलियसरीरे जाए' यथा मण्डकः शौलकस्य यावद् उलिहसरीरो जातः =

कडरीयस्स अणंगारस्स अहापवत्तेहि ओसहभेसज्जेहि जाव तेइच्छ
आउट्टामि-त तुब्भे णं भते ! मम जाणशालासु समोसरह-तएण थेरा
भगवतो पुण्डरीयस्स पडिसुणेति, पडिसुणिता जाव उपसपज्जित्ताण
विहरति) देखकर जहा स्थविर भगवत विराजमान थे-वहा पर वे आये
वहा आकर उन्होंने ने स्थविर भगवतों को वदना एव नमस्कार किया-
वदना नमस्कार करके फिर उन्होंने ने उनसे इस प्रकार कहा हे भद्रत !
मैं कडरीक अनंगार की यथा प्रवृत्त-प्रासुक-औपध, भैषज्यों द्वारा
यावत् चिकित्सा करवाऊंगा-अतः हे भद्रत ! आपलोग मेरी यानशाला
में यहा से विहार कर पधारें-वही ठहरें-। इस प्रकार पुण्डरीक राजा की
प्रार्थना को उन स्थविर भगवतो ने स्वीकार कर लिया-और वहा से
विहार कर वे पुण्डरीक राजा की यानशाला में आकर ठहर गये । (तएण
पुण्डरीए राया जहामडुए सेलगस्स जाव वलियसरीरे जाए तएण थेरा

गारस्स अहापवत्तेहि ओसहभेसज्जेहि जाव तेइच्छ आउट्टामि त तुब्भेण भते
मम जाणशालासु समोसरह-तएण थेरा भगवतो पुण्डरीयस्स पडिसुणेति, पडि
सुणिता जाव उपसपज्जित्ताण विहरति)

ज्ञेधने तेज्जे न्था स्थविर भगवत विराजमान होता त्या आंगा त्या
आवीने तेमणे इतिर भगवतोने वदन अने नमस्कार कर्या वदन अने
नमस्कार करीने तेमणे तेमने आ प्रभाणे विनती करी के डे लहन्त । हुं
कडरीक अनंगारनी यथा प्रवृत्त-प्रासुक-औपध-लैषज्ये (इवाज्जे) वडे यावत्
चिकित्सा (उलाज्) करवा मायु छु अेटवा भाटे डे लहन्त ! तमे सौ
अधीधा विहार करीने मारी यानशाणामा आवो अने त्याज् जेकाज्जे आ
प्रभाणे पुण्डरीक राजनी विनतीने ते स्थविर भगवतो जे स्वीकार करी लीधा
अने त्याधी विह २ करीने तेज्जे पुण्डरीक राजनी यानशाणामा आवीन जेकाध गमा

(तएण पुण्डरीए राया जहामडुए सेलगस्स जाव वलियसरीरे जाए तएण थेरा

निर्गत तत्र गत्वा धर्म भ्रजोति । तत्र गत्वा पुण्डरीको राजा धर्मं श्रुत्वा यत्रैव कण्डरीकोऽनगारस्तत्र उपागच्छति, उपागत्य, कण्डरीकं पश्यते नमस्यति, पश्यन्निदृश्या नमस्यित्वा कण्डरीकस्य अनगारस्य शरीरं 'संवागह' सन्वावाध= पीडासहित 'सरोय' सारोग=रोगसहित 'पासइ' पश्यति, श्रुत्वा यत्रैव स्थित्वा भगव तस्त्रोत्र उपागच्छति, उपागत्य स्थित्वा भगवतो पश्यन् नमस्यति, पश्यन्निदृश्या नमस्यित्वा णमसादीत्- 'अहण भते !' अहं यत्र ह्ये भवन्त । कण्डरीकस्य

निर्गत धम्म सुणेइ, तण्ण पौडरीए राया धम्म सोच्चा जेणेव कडरीए अणगारे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता कडरीय अणगार वदइ नमसइ, वदित्ता नमसित्ता कडरीयस्स अणगारस्स सरीरग सन्वावाह सरोय पासइ) किसी एक समय वे स्थविर पुडरीकिणी नगरी में विहार करते हुए आये। वहा आकर वे नलिनीवन नाम के उद्यान में ठहर गये। आगमन सुनकर पुडरीक राजा उन को वदना एव उनसे धर्मश्रवण करने की भावना से अपने राजमहल से निकलकर उस नलिनीवन उद्यान में आये-स्थविरों ने उन्हें धर्म का उपदेश दिया। धर्म का उपदेश श्रवण कर फिर वे जहा कडरीक अनगार थे उनके पास आये। वहा आकर उन्होंने ने उनको वदना की नमस्कार किया-। वदना नमस्कार करके उन्होंने कडरीक अनगारके शरीर को पीडासहित एव रोगसहित देखा-(पासित्ता जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता थेरे भगवते वदइ णमसइ, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी-अहण भते !

धम्म सोच्चा जेणेव कडरीए अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कडरीय अणगार वदइ नमसइ, वदित्ता नमसित्ता कडरीयस्स अणगारस्स सरीरग सन्वावाह सरोय पासइ)

कै।धं अेक वधते ते स्थविर पुडरीकिणी नगरीम विहार करता करता आव्या त्या आवीने तेणे नलिनीवन नामना उद्यानमा रोकथा तेमनु आगमन सावणीने पुडरीक राजा तेमने वदन करवा भाटे तः। तेमनी पासिथी धर्मो पदेश आवणवा भाटे पोताना राजमहलथी नीकणीने ते नलिनीवन उद्यानमा आव्या स्थविराये तेमने धर्मोपदेश आव्यो, धर्मोपदेश सावणीने तेणे न्या उडरीक अनगार छता तेमनी पासि गथा त्या ज्ठने तेमणे तेमने वदन अने नमस्कार कथा वदन अने नमस्कार करीने तेमणे उडरीक अनगारना शरीरने पीडा सहित अने रोगयुक्त जेथु

(पासित्ता जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता थेरे भगवते वदइ, णमसइ, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी-अहण भते ' १५ अण

अनंगारस्य 'अहापत्रत्तेहि' यथा प्रवृत्तेः=प्रासुमैरित्यर्थः 'ओसहभेसज्जेहि' औप-
प्रभैपज्यैः 'जावत्तेच्छ' यावत् चिकित्साम् 'आउट्टामि' आवर्तयामि=कारयामि,
'त' तत्=तस्मान् कारणात् यूय खलु हे भद्र ! मम यानशालासु समवसरत=
आगच्छत । ततः खलु स्थविरा भगवन्त पुण्डरीकस्य एतमर्थं प्रतिश्रणन्ति= एत
द्वचन स्वीकुर्वन्ति, प्रतिश्रुत्य=स्वीकृत्य यावत्-उपसपद्य=यानशाला समाश्रित्य
विहरति । ततः खलु पुण्डरीको राजा 'जहा मडुए सेलगस्स जाव
वलियसरीरे जाए' यथा मण्डूकः शौलकस्य याम्दु वलिकशरीरो जातः =

कडरीयस्स अणंगारस्स अहापत्रत्तेहि ओसहभेसज्जेहि जाव तेच्छ
आउट्टामि-त तुब्भे ण भते ! मम जाणसालासु समोसरह-तण्ण थेरा
भगवतो पुण्डरीयस्स पडिसुणेति, पडिसुणित्ता जाव उपसपज्जित्ताण
विहरति) देखकर जहा स्थविर भगवत विराजमान थे-वहा पर वे आये
वहा आकर उन्होंने ने स्थविर भगवतों को वदना एव नमस्कार किया-
वदना नमस्कार करके फिर उन्होंने ने उनसे इस प्रकार कहा हे भद्र !
मैं कडरीक अनंगार की यथा प्रवृत्त-प्रासुक-औपध, भैपज्यों द्वारा
यावत् चिकित्सा करवाऊंगा-अतः हे भद्र ! आपलोग मेरी यानशाला
में यहा से विहार कर पधारें-वहीं ठहरें-। इस प्रकार पुण्डरीक राजा की
प्रार्थना को उन स्थविर भगवतो ने स्वीकार कर लिया-और वहा से
विहार कर वे पुण्डरीक राजा की यानशाला में आकर ठहर गये । (तण्ण
पुण्डरीए राया जहामडुए सेलगस्स जाव वलियसरीरे जाए तण्ण थेरा

गारस्स जहापत्रत्तेहि ओसहभेसज्जेहि जाव तेच्छ आउट्टामि त तुब्भेण भते
मम जाणसालासु समोसरह-तण्ण थेरा भगवतो पुण्डरीयस्स पडिसुणेति, पडि
सुणित्ता जाव उव्वत रज्जित्ताण विहरति)

जोधने तेजो न्या स्थविर भगवत विराजमान होता त्या आंग्रा त्या
आवीने तेभेले स्थविर भगवतोने वदन अने नमस्कार कर्या वदन अने
नमस्कार करीने तेभेले तेभने आ प्रभाले विनती करी के डे लहन्त । हुं
कडरीक अनंगारनी यथाप्रवृत्त-प्रासुक-औपध-लैपज्ये (दवाज्ये) वडे यावत्
चिकित्सा (उद्यान) करवा भाग्य छु ज्येत्ता भाटे डे लहन्त । तमे सौ
अधीथा विहार करीने भागी यानशाणाभा आवो अने त्याज देकाज्ये आ
प्रभाले पुण्डरीक राजनी विनतीने ते स्थविर भगवतोअे स्वीकार करी लीधी
अने त्याथी विह र करीने तेजो पुण्डरीक राजनी यानशाणाभा आवीन देकाध गरा

(तण्ण पुण्डरीए राया जहा मडुए सेलगस्स जाव वलियसरीरे जाए तण्ण थेरा

निर्गत तत्र गत्वा धर्म भ्रजोति । तत्र गत्वा पुण्डरीको राजा धर्म भ्रुम्वा यत्रैव
कण्डरीकोऽनगारस्तत्रोऽ उपागच्छति, उपागत्य, वृण्डीक रन्दते नमस्यति,
वन्दित्वा नमस्यित्वा वृण्डीकस्य अनगारस्य शरीर 'स'साहाह ' मन्वावाह=
पीडासहित 'सरोय ' सरोय=रोगमन्ति ' पाणः ' पश्यति, दृष्ट्वा यत्रैव स्थित्वा
भगवत्सत्रोऽ उपागच्छति, उपागत्य स्थित्वा भगवतो रन्दते नमस्यति, वन्दित्वा
नमस्यित्वा एवमवासीत्- 'अहण भते !' अह गत्वा हे भद्रन्त ! कण्डरीकस्य

निर्गत धम्म सुणेइ, तण्ण पौडरीण राया धम्म सोच्चा जेणेव कडरीण
अणगारे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता कडरीय अणगार वदइ नम
सइ, वदित्ता नमसित्ता कडरीयस्स अणगारस्स सरीरग सव्वावाह
सरोय पासइ) किसी एक समय वे स्थविर पुडरीकिणी नगरी में विहार
करते हुए आये। यहा आकर वे नलिनीवन नाम के उद्यान में ठहर
गये। आगमन सुनकर पुडरीक राजा उन को वदना एव उनसे धर्मश्र
वण करने की भावना से अपने राजमहल से निकलकर उस नलिनीवन
उद्यान में आये-स्थविरों ने उन्हें धर्म का उपदेश दिया। धर्म का उप
देश श्रवण कर फिर वे जहा कडरीक अनगार थे उनके पास आये।
वहा आकर उन्होंने उनको वदना की नमस्कार किया-। वदना नमस्कार
करके उन्होंने कडरीक अनगारके शरीर को पीडासहित एव रोगसहित
देखा-(पासित्ता जेणेव येरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
थेरे भगवते वदइ णमसइ, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी-अहण भते !

धम्म सोच्चा जेणेव कडरीण अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कडरीय
अणगार वदइ नमसइ, वदित्ता नमसित्ता कडरीयस्स अणगारस्स सरीरग सव्वा
वाह सरोय पासइ)

कैथ एक वयते ते स्थविर पुडरीकिणी नगरीम विहार करता करता आव्या
त्या आवीने तेओ नलिनीवन नामना उद्यानमा शैकाया तेमनु आगमन
सावणीने पुडरीक राजा तेमने वदन उरवा भाटे तण्ण तेमनी पासैथी धर्मो
पदेश सावणवा भाटे पोताना राजमहलथी नीकणीने ते नलिनीवन उद्यानमा
आव्ये स्थविरेशेओ तेमने धर्मोपदेश आप्येओ, धर्मोपदेश सावणीने तेओ
न्त्या उडरीक अनगार छता तेमनी पासै गथा त्या अर्थने तेमणे तेमने वदन
अने नमस्कार कया वदन अने नमस्कार करीने तेमणे उडरीक अनगारता
शरीरने पीडा सहित अने शैकयुक्त जेथु

(पासित्ता जेणेव येरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता थेरे भग
वते वदइ, णमसइ, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी-अहण भते !) अण

अनगरस्य 'अहापवत्तेहि' यथा प्रवृत्तैः=प्रासुकैरित्यर्थः 'ओसहभेसज्जेहि' औप-
धभैपज्यैः 'जावतेइच्छ' यावत् चिकित्सां 'आउट्टामि' आवर्तयामि=कारयामि,
'त' तत्=तस्मात् कारणात् यूय खलु हे भद्रन्त ! मम यानशालासु समोसरत=
आगच्छत । ततः खलु स्थविरा भगवन्त पुण्डरीकस्य एतमर्थं प्रति-शृण्वन्ति= एत
द्वचन स्वीकुर्वन्ति, प्रतिश्रुत्य=स्वीकृत्य यावत्-उपसपद्य=यानशाला समाश्रित्य
विहरति । ततः खलु पुण्डरीको राजा 'जहा मडुए सेलगस्स जाव
वलियसरीरे जाए' यथा मण्डकः शौलकस्य यानद् उल्लिख्यरीरो जातः =

कडरीयस्स अणगारस्स अहापवत्तेहि ओसहभेसज्जेहि जाव तेइच्छ
आउट्टामि-त तुव्भे ण भते ! मम जाणशालासु समोसरह-तएण थेरा
भगवतो पुडरीयस्स पडिसुणेति, पडिसुणित्ता जाव उपसपज्जित्ताण
विहरति) देखकर जहा स्थविर भगवत विराजमान थे-वहा पर वे आये
वहा आकर उन्होंने ने स्थविर भगवतों को वदना एव नमस्कार किया-
वदना नमस्कार करके फिर उन्होंने ने उनसे इस प्रकार कहा हे भद्रन्त !
मैं कडरीक अनगर की यथा प्रवृत्त-प्रासुक-औपध, भैपज्यों द्वारा
यावत् चिकित्सा करवाऊंगा-अतः हे भद्रन्त ! आपलोग मेरी यानशाला
में यहा से विहार कर पधारें-वही ठहरें-। इस प्रकार पुडरीक राजा की
प्रार्थना को उन स्थविर भगवतों ने स्वीकार कर लिया-और वहा से
विहार कर वे पुडरीक राजा की यानशाला में आकर ठहर गये । (तएण
पुडरीए राया जहामडुए सेलगस्स जाव वलियसरीरे जाए तएण थेरा

गारस्स अहापवत्तेहि ओसहभेसज्जेहि जाव तेइच्छ आउट्टामि त तुव्भेण भते
मम जाणशालासु समोसरह-तएण थेरा भगवतो पुडरीयस्स पडिसुणंति, पडि
सुणित्ता जाव उपसपज्जित्ताण विहरति)

नेधने तेओ न्या स्थविर भगवत विराजमान हुता त्या आणा त्या
आवीने तेभण्णे स्थविर भगवतोने वदन अने नमस्कार कर्था वदन अने
नमस्कार करीने तेभण्णे तेभने आ प्रभाण्णे विनती करी के हे लदन्त ! हु
कडरीक अनगरनी यथाप्रवृत्त-प्रासुक-औपध-लैषण्ये (इवाओ) वडे यावत्
चिकित्सा (उवाओ) करवा भाशु छु अटला भाटे हे लदन्त ! तमे सौ
अधीधा विहार करीने भारी यानशाणाभा आवो अने त्याओ रोकाओ आ
प्रभाण्णे पुडरीक राजनी विनतीने ते स्थविर भगवतोअे स्वीकार करी लीधा
अने त्याथी विहर करीने तेओ पुडरीक राजनी यानशाणाभा आवीन रोकाध गरा
(तएण पुडरीए राया जहा मडुए सेलगस्स जाव वलियसरीरे जाए तएण थेरा

यथा मण्डूको राजा शौलकस्य रात्रौ मासुरीरात्रभैषज्यैश्चिकित्सामाकारवत्,
 तथैव पुण्डरीकोऽपि कण्डरीरस्यानगरस्य यथा योग्यगीतयभैषज्यैश्चिकित्सा
 कारयतिस्म यावत् कनिषदैर्दिने कण्डरीको रञ्जितशरीर = निरामयो जातः । ततः
 खलु स्थविरा भगवन्तः पुण्डरीक राजा आपृच्छन्ति, आपृच्छथ बहिर्जनपद्वि
 हार विहरन्ति । तत खलु स कण्डरीकः तस्मान् 'रोगायकाओ' रोगात्कृत्वा
 विषमुक्तः सन् तस्मिन् 'मनुगमि' मनोज्ञे = मणीये अशनपानवायस्वाये चतु
 र्विधे आहारे 'मुच्छिष्ट' मूर्च्छितः = मूर्च्छा प्राप्तः = आमक इत्यर्थः, 'गिद्धे' गृद्धः =
 आकाङ्क्षावान्, 'गद्वि' ग्रन्थितः = रसासाटे निरुद्धमानसः, 'अञ्जोववण्णे'

भगवतो पौंडरीय राय पुच्छति, पुच्छित्ता बहिया जणवयविहार विह
 रति, तण्ण से कडरीण ताओ रोगायकाओ विषमुक्के समाणे तसि
 मणुण्णसि असणपाणग्वाइमसाइमसि मुच्छिष्ट गिद्ध गद्विण अञ्जोववण्णे
 णो सचाएण पौंडरीय राय आपुच्छित्ता बहिया अब्भुज्जण्ण जणवय
 विहार विहरित्ताण) इसके बाद मद्रक ने जिस प्रकार शौलकराजर्षि की
 प्रासुक औषध, भैषज्यों द्वारा चिकित्सा करवाई थी उसी प्रकार पुंडरीक
 राजा ने भी कडरीक अनगर की यथायोग्य औषध भैषज्यों द्वारा
 चिकित्सा करवाई—इस से वे बलितशरीर निरोग हो गये । इसके अन
 न्तर उन स्थविर भगवतो ने वहा से विहार करने के लिये पुंडरीक राजा
 से पूछा— बाद मे वे वहा से बाहिर जनपदों में विहार कर गये । कड
 रीक अनगर कि जो रोगातकसे निर्मुक्त हो चुके थे मनोज्ञ अशन, पान,
 खाद्य, पच स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार में इतने अधिक आसक्त हो गये

भगवतो पौंडरीय राय पुच्छति, पुच्छित्ता बहिया जणवयविहार विहरति, तण्ण
 से कडरीण ताओ रोगायकाओ विषमुक्के समाणे तसि मणुण्णसि—असणपाण
 खाइमसाइमसि मुच्छिष्ट गिद्धे गद्विण अञ्जोववण्णे णो सचाएण पौंडरीय राय
 आपुच्छित्ता बहिया अब्भुज्जण्ण जणवयविहार विहरित्ताण)

त्यारपणी मडूके जेम शौलक राजर्षिनी प्रासुक, औषध अने लैपन्थे
 वडे चिकित्सा करावडावी डती तेमज पुंडरीक राज्जे पळु कडरीक अनगारनी
 उचित औषध-लैपन्थे (दवाये) वडे चिकित्सा करावडावी तेथी तेजे
 निरोग-सण्ण गनी गया त्यारपणी ते स्थविर भगवतोजे त्याथी विहार
 करवा भाटे पुंडरीक राज्जेने पूछ्यु त्यारवाह तेजे उडारना जनपदोभा विहार
 करी गया रोगातगोथी निर्मुक्त थध गथेला कडरीक अनगार ते मनोस,
 अशन, पान, भाद्य अने स्वाद्यरूप यार नतना आहारभा खेटला अधा
 आसक्त थध गया-गृद्ध गनी गया, अथित-रसना आस्वाहनभा निषक्त मान

अधुपपन्नः=सर्वथा आसक्तः सन् नो शक्नोति पुण्डरीके राजानमापृच्छ्य 'वहिया'
 वहि 'अभ्युज्जएण' अभ्युद्यतेन=उग्रविहारेण खलु विहर्तुम्, कित्तु 'तत्थेव'
 तत्रैव=यानशालायामेव 'ओसण्णे' अपसन्नः,=शिक्षितसाधुसमाचारीवान् जातः।
 तत खलु स पुण्डरीको राजा 'इमीसे कहाए' अस्या, कथायाः=कण्डरीकोऽनगारो-
 ऽवसन्नो जातः ' इति वृत्तान्तस्य लब्धार्थः सन् स्तातः ' अतेउरपरियालसपरि-
 वुडे ' अन्तःपुरपरिवारसपरिवृतः, यत्रैव कण्डरीकोऽनगारस्तत्रैव उपागच्छति,
 उपागत्य, कण्डरीक त्रिः कृत आदक्षिण प्रदक्षिण करोति, कृत्वा, वन्दते नमस्यति,
 वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्-धन्योऽसि खलु त्व हे देवानुमिय ! यतस्ताम्
 ' कयट्ठे ' कृतार्थः=विहितजीवनकृत्य ' कयपुन्ने' कृतपुण्यः=विहितप्रजितपेपः।
 पुनः सुलद्धे ' सुलद्धं=सुष्ठुतया प्राप्त खलु हे देवानुमिय ! ' तव ' त्वया ' माणु-
 स्सए ' मानुष्यक=मनुष्यसम्बन्धि, ' जम्मजीवियफले ' जन्मजीवितफलम्-जन्म-

-गृह्य धन गये ग्रथित-रसास्वाद मे निवद्धमानसवाले हो गये, और
 अधुपपन्न धन गये-अर्थात् सर्वथा आसक्त धन गये कि वहाँ से बाहिर
 उग्र विहार करने के लिये उनका मन ही नहीं हुआ-अतः उन्हो ने
 पुण्डरीक नरेश से विहार करने की कोई बात ही नहीं पूछी किन्तु
 (तत्थेव-ओसन्ने जाण) वही पर वे रहते २ शिथिल साधुसमाचारीवाले
 धन गये । (तएण से पौंडरीए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे ण्हाए अंते
 उरपरियालसपरिवुडे राया जेणेव कडरीए अणगारे तेणेव उवागच्छइ,
 उवागच्छित्ता कडरीय अणगार त्तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिण करेइ,
 करित्ता वदइ, णमसइ, वदित्ता णमसित्ता एव वयासी-धन्नेसिण तुम
 देवानुप्पिया ! कयत्थे कयपुन्ने कयलक्खणे सुलद्धेण देवानुप्पिया ! तव
 माणुस्सजन्मजीवियफले जेण तुम रज्ज च जाव अतेउर चावि छड्डित्ता

सवाणा धध गया अने अधुपपन धनी गया अेटदे डे तेओ अेकडम आसक्त
 धध गया डे त्यामी णडार उग्र विहार करवा भाटे पणु तेओ तैय २ धया
 नडि अेथी तेमणे पुडरीड राकने विहार करवानी आअतमा धधअ पूछथु
 नडि पणु (तत्थेव ओसन्ने जाए) त्या अ गडेता रडेता तेओ शिथिल साधु
 समाचारी धध गया अेटदे डे साधुओना आआरभा तेओ शिथिन धध गया

(तएण से पौंडरीए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे ण्हाए अतेउरपरियाल-
 सपरिवुडे राया जेणेव कडरीए अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कडरीय
 अणगार त्तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिण करेइ, करित्ता वदइ णमसइ, वदित्ता
 णमसित्ता एव वयासी-धन्नेसि ण तुम देवानुप्पिया ! कयत्थे कयपुन्ने कयलक्खणे

यथा मण्डको राजा शौलकस्य राजर्षे प्राचुरीण रभेणज्यैश्चिकित्सामकारयत्,
 तथैव पुण्डरीकोऽपि कण्डरीकस्यानगरस्य यथा योग्यैर्गोपथमैवज्यैश्चिकित्सां
 कारयतिस्म यावत् कनिषथैर्दिने कण्डरीको यन्त्रिगरीर = निरामयो जातः । ततः
 खलु स्थविरा भगवन्तः पुण्डरीक राजा प्राचुरन्ति, आपृच्छय बहिर्जनपदवि
 हार विहरन्ति । तत खलु स कण्डरीकः तन्माय 'रोगायकाओ' रोगातङ्काद्
 विप्रमुक्तः सन् तस्मिन् 'मनुग्गमि' मनोज्ञे = मणीये अशनपानवाद्यस्वाद्ये चतु
 र्विधे आहारे 'मुच्छिष्ट' मूर्च्छितः = मूर्च्छा प्राप्तः = आसक्त इत्यर्थः, 'गिद्धे' गृद्धः =
 आकाङ्क्षावान्, 'गद्वि' ग्रन्थितः = रसास्वादो निरुद्धमानसः, 'अज्ज्ञोववण्णे'

भगवतो पौंडरीय राय पुच्छति, पुच्छित्ता वह्निया जणवयविहार विहर
 रति, तएण से कडरीए ताओ रोगायकाओ विप्पमुक्के समाणे तसि
 मणुण्णसि असणवाणग्माइमसाइमसि मुच्छिष्ट गिद्ध गद्वि अज्ज्ञोववण्णे
 णो सचाएइ पौंडरीय राय आपुच्छित्ता वह्नियो अब्भुज्जएण जणवय
 विहार विहरित्ताए) इसके बाद महरू ने जिस प्रकार शौलकराजर्षि की
 प्रासुक औषध, भैषज्यों द्वारा चिकित्सा करवाई थी उसी प्रकार पुंडरीक
 राजा ने भी कडरीक अनगर की यथायोग्य औषध भैषज्यों द्वारा
 चिकित्सा करवाई-इस से वे बलितशरीर निरोग हो गये । इसके अन
 न्तर उन स्थविर भगवतो ने वहा से विहार करने के लिये पुंडरीक राजा
 से पूछा- बाद मे वे वहा से बाहिर जनपदो में विहार कर गये । कड
 रीक अनगर कि जो रोगातकसे निर्मुक्त हो चुके थे मनोज्ञ अशन, पान,
 स्वाद्य, एव स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार में इतने अधिक आसक्त हो गये

भगवतो पौंडरीय राय पुच्छति, पुच्छित्ता वह्निया जणवयविहार विहरति, तएण
 से कडरीए ताओ रोगायकाओ विप्पमुक्के समाणे तसि मणुण्णसि-असणवाण
 खाइमसाइमसि मुच्छिष्ट गिद्धे गद्वि अज्ज्ञोववण्णे णो सचाएइ पौंडरीय राय
 आपुच्छित्ता वह्निया अब्भुज्जएण जणवयविहार विहरित्ताए)

त्यारपछी महुके जेम शैलक राजर्षिनी प्रासुक, औषध अने लैपन्थो
 वडे चिकित्सा करावडावी हुती तेमन् पुंडरीक राजाओ मणु कडरीक अनगरनी
 उचित औषध-लैपन्थो (इवाओ) वडे चिकित्सा करावडावी तेथी तेओ
 निरोग-समण णनी गमा त्यारपछी ते स्थविर लगवतोओ त्याथी विहार
 करवा माटे पुंडरीक राजा ने पूछ्यु त्यारभाइ तेओ कडरीक अनपदोमा विहार
 करी गया रोगात गोथी निमुक्त थछ गयेला कडरीक अनगर ते मनोज्ञ,
 अशन, पान, भाद्य अने स्वाद्यरूप चार जतना खाहारमा छेटला अथा
 आसक्त थछ गया-गृद्ध णनी गया, अचित-रसना आस्वाहनमा निणद्ध मान

कारणात् खलु व्रयीमि यन् धन्योऽमि त्व हे देवानुप्रिय ! ' जात्र सुलब्ध जन्म जीवितफलम् , ततः खलु स कण्डरीकोऽनगार' पुण्डरीकस्य एतमर्थं=विहारामि प्रायकमर्थं, नो आत्रियते यावत् तूष्णीः सतिष्ठते मौनमवलम्ब्य तिष्ठति । ततः खलु कण्डरीकः पुण्डरीकेण द्वितीयमपि तृतीयमपि=द्वित्रिगारम्, एव=पूर्वोक्त-प्रकारेण, उक्तः सन् ' अकामए ' अकामक' =कामनारहितः ' अवस्सवसे ' अप-

देवाणुप्पिया ! जात्र जीवियफले तण्ण से कडरीए अणगारे पुडरीयस्स एयमद्व णो आहाइ जात्र सच्चिदइ, तण्ण कडरीए पौडरीएण दोच्चपि तच्चपि एवं वुत्ते समाणे अकामए अवस्सवसे लज्जाए गारवेण य पौडरीय आपुच्छइ, आपुच्छित्ता थेरेहिं सद्धिं वहिया जणवयविहार विहरइ) मैं अधन्य हूँ अकृतपुण्य हूँ । जो राज्य मे यावत् अन्तःपुर में तथा मनुष्य सजधी कामभोगों में मूर्च्छित यावत् अध्युपपन्न बना हुआ हूँ । इसीलिये प्रव्रज्या ग्रहण करने में अस्मर्थ हो रहा हूँ । इसी कारण से मैं यह कह रहा हूँ कि तुम धन्य हो, हे देवानुप्रिय ! तुमने ही जन्म और जीवन का फल जो प्रव्रज्या का ग्रहण करना है—वह अच्छी तरह पा लिया है । पुडरीक राजा की विहार करने के अभिप्रायवाली इस बात को सुनकर कडरीक अनगार ने उस पर कुछ ध्यान नहीं दिया—उसे आदर की दृष्टि से नहीं देखा—किन्तु वे उसे सुनकर भी चुपचाप बैठ रहे । कडरीक अनगार की इस स्थिति को देखकर पुडरीक ने दूसरी चार और तीसरी

तुम देवाणुप्पिया ! जात्र जीवियफले तण्ण से कडरीए अणगारे पुडरीयस्स एयमद्व णो आहाइ, जात्र सच्चिदइ, तण्ण कडरीए पौडरीएण दोच्चपि तच्चपि एववुत्ते समाणे अकामए अवस्सवसे लज्जाए गारवेण य पौडरीय राय आपुच्छइ, आपुच्छित्ता थेरेहिं सद्धिं वहिया जणवयविहार विहरइ)

हु तो अधन्य अने अकृतपुण्य हु केमडे हु तो अनग्गमा यावत् रणुवासमा तेमग्ग मनुष्यलवना जमल्लोगोमा भूर्छित यावत् अध्युपपन्न णनी रहो हु, अग्गमा माटेग्ग प्रमग्गना अडणु करवामा असमर्थं थधं रहो हु अथीग्ग हु आ कड्डी रहो हु—डे तमे णग्गपर धन्य ठो हे देवानुप्रिय ! तमेग्ग अग्ग अने एवमनु इण केग्गे प्रमग्गना अडणु करना इय छे—ते सारी रीते मेणवी लीधु छे तेज्जे त्याथी विहार करी नथ ते आशयथी कडेवा ते पुडरीकना वयमे सासणीने कडरीक अनगारे तेनी कशीग्ग हरकार करी नहि ते वातने तेमग्गे सम्माननी दृष्टिजे स्वीकारी नहि आ णधु सासणीने पणु तेज्जे त्याग्ग मूणा थधने जेभीग्ग रह्या कडरीक अनगारनी आ स्थिति जेधने

मानसयोगां उत्तमिः, जयिाम्=नीचनम्=माणधारणम्, तथा' फलम्=जन्मजीवि
 तफलम्=प्रव्रज्याग्रहणमेव मनुष्यजन्मसारः, तदा स्पष्टगति-यः मनु त्वं राज्य च
 यावन्तः पुर च छद्दत्ता ' उर्ध्वित्या=वर्त्या ' विगोयत्ता ' विगोप्य=तिर-
 र्कृत्य यावत् प्रव्रजितः अह मनु अपन्यः अरुतपुण्यो राज्ये यावत् अन्तः
 पुरे च मानुष्यकेषु च कामभोगेषु मूर्च्छितो यावत् श्रेयुषप-तो नो श्रुमि
 यावत् प्रव्रजितुम् = राज्येऽन्त = पुरे मानुष्यकेषु च कामभोगेषु निमग्न
 मानसोऽह न श्रुमि प्रव्रज्या श्रहीनुम् इति भावः । ' त ' तत् = तस्मात्

विगोयत्ता जाव पञ्चदश) जय पुडरीक राजा को " कडरीक अनगार
 अवसन्न हो गये हैं " यह समाचार जान हुआ-तो वे स्नान कर अपने
 अन्त पुर परिवार को साथ लेकर जहा कडरीक अनगार थे वहाँ आये
 वहा आकर उन्होंने कडरीक अनगार को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिण
 करके उदना की नमस्कार किया। उदना नमस्कार करके फिर उनसे वे
 इस प्रकार कहने लगे-हे देवानुप्रिय ! तुम धन्य हो, तुम कृतार्थ हो, तुम
 कृतलक्षण हो। हे देवानुप्रिय ! तुमने मनुष्यभव सबधी जन्म और
 जीवन का फल अच्छी तरह पालिया है। जो तुम राज्य यावत् अन्तःपुर
 का परित्याग एव तिरस्कार कर प्रव्रजित हो गये हो। (अहण्ण अहण्णे
 अकयपुन्ने रज्जे जाव अतेउरे य माणुस्सपसु य कामभोगेसु मुच्छिए
 जाव अज्झोववन्ने नो सचाएमि जाव पव्वइत्तए । त धन्नेसि ण तुम
 सुल्लेण देवाणुप्रिया ! तव माणुस्सए जम्म जीवियफले जेण तुम रज्ज व जाव
 अतेउर चावि छद्दत्ता विगोयत्ता जाव पञ्चइए)

जयारे पुडरीक राजाने कडरीक अनगारना अवसन्न थई जवाना सभा
 थारे मज्जा थारे तेज्जे स्नान करीने पोताना रणवासना परिवारने साथे
 लधने जया कडरीक अनगार हुता त्या आब्बा त्या आवीने तेमजे कडरीक
 अनगारने त्रणु वधन आ-क्षिणु प्रदक्षिणु करीने वदन तेमज नमस्कार
 कर्या वदन अने नमस्कार करीने तेज्जे तेमने आ प्रभाजे कडेवा जाया के
 डे देवानुप्रिय ! तमे धन्य छे, कृतार्थ छे, कृत-लक्षण छे डे देवानुप्रिय !
 मनुष्य भवना जन्म अने जिवनना क्षणने सारी पेटे भोगी लीधु छे डेमके
 तमे धरेधरे सन्ध्य यावत् रणवासने त्यज्जे तेने तिरस्कृत करीने प्रव्रजित
 थई गया छे।

(अहण्ण अहण्णे अकयपुन्ने रज्जे जाव अतेउरे य माणुस्सपसु य काम
 भोगेसु मुच्छिए जाव अज्झोववन्ने नो सचाएमि जाव पव्वइत्तए । त धन्नेसि ण

कारणात् खलु व्रगीमि न् धन्योऽमि त्व हे देवानुप्रिय ! ' जाव सुलब्धं जन्म-
जीवितफलम् , ततः खलु स ऋण्डरीकोऽनगार' पुण्डरीकस्य एतमर्थं=विहाराभि
प्रायकमर्थं , नो आद्रियते यावत् तृणीकः सतिष्ठते मौनमवलम्ब्य तिष्ठति । ततः
खलु ऋण्डरीकः पुण्डरीकेण द्वितीयमपि तृतीयमपि=द्वित्रियारम् , एव=पूर्वोक्त-
प्रकारेण, उक्तः सन् ' अकामए ' अकामरु=कामनारहितः ' अवस्वसे ' अप-

देवाणुष्विया ! जाव जीवियफले तण्ण से कडरीण अणगारे पुडरीयस्स
एयमद्व णो आढाइ जाव सच्चिद्दइ, तण्ण कडरीण पौडरीण दोच्चपि
तच्चपि एवं वुत्ते समाणे अकामए अवस्मवसे लज्जाण गारवेण य पौड-
रीय आपुच्छइ, आपुच्छित्ता थेरेहिं सद्धिं वहिया जणवयविहार विहरइ)
मैं अवन्ध हूँ अकामपुण्य हूँ । जो राज्य में यावत् अन्तःपुर में तथा मनुष्य
सन्धी कामभोगों में मग्नित यावत् अधुपपन्न बना हुआ हूँ । इमीलिये
प्रव्रज्या ग्रहण करने में अन्मर्थ हो रहा हूँ । इसी कारण से मैं यह कह
रहा हूँ कि तुम धन्य हो, हे देवानुप्रिय ! तुमने ही जन्म और जीवन
का फल जो प्रव्रज्या का ग्रहण करना है-वह अच्छी तरह पा लिया है ।
पुडरीक राजा की विहार करने के अभिप्रायवाली इस बात को सुनकर
कडरीक अनगार ने उस पर झुठ पान नहीं दिया-उसे आदर की दृष्टि
से नहीं देखा-किन्तु वे उसे सुनकर भी चुपचाप बैठ रहे । कडरीक
अनगार की इस स्थिति को देखकर पुडरीक ने दूसरी चार और तीसरी

तुम देवाणुष्विया ! जाव जीवियफले तण्ण से कडरीए जगगारे पुडरीयस्स
एयमद्व णो आढाइ, जाव सच्चिद्दइ, तण्ण कडरीए पौडरीएण दोच्चपि तच्चपि
एववुत्ते समाणे अकामए अवस्मवसे लज्जाण गारवेण य पौडरीय राय आपुच्छइ,
आपुच्छित्ता थेरेहिं सद्धिं वहिया जणवयविहार विहरइ)

६ तो अधन्ध अने अकृतपुण्य छु कैमडे छु तो शन्नमा यावत्
रक्षुवासमा तेमन् मनुष्यलवना जमलोओमा भूर्धित यावत् अ युपपन्न णनी
रह्यो छु, ओला माटे न प्रव्रज्जा अडणु उरवामा असमर्थ यध रह्यो छु
ओथी न छु आ ढडी रह्यो छु-डे तमे भउअर धन्ध ओ छे देवानुप्रिय !
तमे न नन्म अने एवतनु इण के ने प्रनन्त्या अडणु करना इप छे-ते सारी
रीते भेणवी लीधु े तेओ त्याथी विहार करी जय ते आशयथी कडेवा ते
पुडरीकना वयने साभानीने कउरीक अनगारे तेनी कशी न दरकार करी नडि
ते वातने तेमणे सन्माननी दृष्टिओ स्वीकारी नडि आ णधु साभानीने पणु
तेओ त्या न भूगा यधने जेमी न रह्या कउरीक अनगारनी आ स्थिति जेधने

स्वयंशः=अपगतम्प्रातः-ज्य. सन् ' लज्जाम् ' लज्जया, ' गारवेण ' गौरवेण=साधुत्वगौरवेण च पुण्डरीक गमानमापृच्छति, आपृच्छत स्थविरैः मार्द्वं बहिर्जनमदविहार विहरति ॥ सू० ३ ॥

मूलम्- तएणं से कंडरीए थेरेहिं सद्धिं किंचिकाल उग्गं उग्गेणं विहरइ । तओ पच्छा समणत्तणपरितंतंते समणत्तण णिव्विण्णे समणत्तणणिव्वभच्छिए समणगुणमुक्कजोगी, थेराणं अतियाओ सणियर पच्चोसद्धइ, पच्चोसक्कित्ता, जेणेव पुंडरिगिणी णयरी जेणेव पुंडरीयस्स भवणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, असोगवणियाए असोगवरपायवस्स अहे पुढविसिलापट्टयासि णिसीयइ णिसीइत्ता, ओहयमणसकप्पे जाव झियायमाणे संचिट्ठइ । तएण तस्स पोंडरीयस्स अम्म- धाई जेणेव असोगवणिया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कंडरीय अणगार असोगवरपायवस्स अहे पुढविसिलावट्ट- यसि ओहयमणसकप्प जाव झियायमाणं पासइ, पासित्ता जेणेव पोंडरीए राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोंडरीय राय एव-वयासी-एव खल्लु देवाणुप्पिया । तव पिउभाउए कंडरीए अणगारे असोगवणियाए असोगवर

वार जब उनसे पूर्वोक्त प्रकारसे कहा-तब उन्हो ने नहीं इच्छा होने पर भी स्ववशताका अभाव होनेके कारण लज्जावश होकर साधुत्वके गौरवके ख्याल से-पुंडरीक राजा से विहार करनेकी बात पूछी-पूछकर फिर वे वहा से स्थविरोके साथ बाहिरके जनपदों मे विहार कर गये ॥सू० ३ ॥

पुंडरीके भील्ल अने त्रील्ल वार पणु न्यारे पडेया सुज्जण न वात कही त्यारे तेभल्ले पोतानी छिच्छा नहि होवा छताये लायार थधने, लज्जित थधने, साधुत्वता गौरवने लक्ष्यभा राभीने पुंडरीक राजने विहार करवानी वात पूछी पूछीने तेय्यो त्याथी स्थविरोनी साथे गहारता जनपदोभा विहार करी गया ३ ३

पायवस्स अहे पुढविसिलावट्टे ओहयमणसंकप्पे जाव झिया-
यइ । तएणं पौंडरीए अम्मधाईए एयमट्ट सोच्चा णिसम्म
तहेव संभते समाणे उट्टाए उट्टइ, उट्टित्ता, अंतेउरपगियाल-
सपरिवुडे जेणेव असोगवणिथा जाव कडरीयं तिव्वुत्तो
आयाहिणं पयाहिणं करेइ करित्ता, एव वयासी-धण्णेसि णं
तुम देवाणुप्पिया । जाव पव्वइए । अहण्णं अधण्णेइ जाव
नो पव्वइत्तए । त धन्नेसि णं तुमं देवाणुप्पिया । जाव
जीवियफले । तएणं कडरीए पुडरीएणं एवं वुत्ते समाणे
तुसिणीए संचिट्टइ, दोच्चपि तच्चपि जाव संचिट्टइ । तएणं
पोडरीए कडरीय एव वयासी अट्टो भते । भोगेहि ? हंता
अट्टो तएण से पोण्डरीए राया कोडुवियपुरिसे सदावेइ,
सदावित्ता, एव वयासी-खिप्पामेव भो देवानुप्पिया । कंड-
रीयस्स महत्थ जाव रायाभिसेअ उवट्टवेह जाव रायाभिसे-
एणं अभिसिचइ ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘ तएण से ’ इत्यादि । तत् ग्वल्ल स कण्डरीक स्थविरैः साधं
किंचित् कालम् ‘ उग्ग उग्गेण ’ उग्रोग्रेण-अत्युग्रेण विहारेण विहरति । तत्
पश्चात् ‘ समणत्तणपरितते ’ श्रमणत्तपरितान्तः=श्रमणधर्मपरिपालने खिन्नः पुनः

‘ तएण से कडरीए थेरेहि सद्धि ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (से कडरीए) वे कडरीक (थेरेहि
सद्धि) स्वविरो के साथ (किंचिकाल) कुछ काल पर्यन्त (उग्ग उग्गेण)
अत्युग्रविहार करने में (विहरइ) लग गये (तओपच्छा समणत्तण

‘ तएण से कडरीए थेरेहि सद्धि ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) त्यारपथी (से कडरीए) ते कडरीक (थेरेहि सद्धि)
स्थविरैणी साधं (किंचिकाल) थोडा वधत सुधी तो (उग्गउग्गेण) अतीव
उग्र विहार करवाभा (विहरइ) प्रवृत्त तथा (तओ पच्छा समणत्तण परितते)

'समणत्तणनिव्विण्णे' भ्रमणत्रनिर्विण्ण = साधुभावे औदासीन्य प्राप्तः 'समणत्तणनिव्विण्ण' भ्रमणत्रनिर्विण्ण = भ्रमणत्र निर्मर्त्तित येन म = साधुभावा नादरपरायणः, अतएव 'समणगुणमुत्तमोगी' भ्रमणगुणमुक्तयोगी = भ्रमणगुणोभयो मुक्तः = रहितो योग' योगः = मनोवाकायस्य, सोऽस्यास्तीति तयक्तभ्रमणगुणइत्यर्थः, स्थविराणामन्तिक्रात् शनैः शनैः प्रत्ययवस्करने = पश्चादागच्छति, प्रत्ययवस्वरूप, यत्रैव पुण्डरीकिणी नगरी यत्रैव पुण्डरीकस्य भवनं तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य अशोकानिकाया = अशोकवाटिकाया अशोकवृक्षादप्यत्र ज. पृ. चोत्थितापट्टके निपीडति = उपविशति, निपद्य, 'ओह्यमणसकप्पे' अरहतमनः सकल्पः = अवहता मन सकल्प = मनोव्यापारो यस्य सः = भ्रमणतमानसिक्रव्यापार, 'जाव श्रियाय

परितते) बाद में वे भ्रमणधर्म के परिपालन करने में विन्न चित्त बन गये (समणत्तणनिव्विण्णे समणत्तणनिव्विण्ण समणगुणमुक्तजोगी थेराण अतियाओ सणिय २ पच्चोसकइ, पच्चोसकित्ता जेणेव पुडरिगिणी णयरी जेणेव पुडरीयस्स भरणे तेणेव उवागच्छइ) साधुभाव के निर्वाह करने में उदासीनता को प्राप्त हो गये - साधुभाव के प्रति उनमें अनादर भाव आ गया अत एव वे भ्रमण गुणों से मुक्त योगवाले बन गये - भ्रमण के गुणों का उन्होंने ने परित्याग कर दिया। इस तरह वे धीरे २ स्थविरों के पास से तिसककर एक दिन जहाँ पुडरीकिणी नगरी थी और उसमें भी जहाँ पुडरीक राजा का भवन था वहाँ पर आ गये - (उवागच्छित्ता असोगवणियाण असोगवरपायवस्स अहे पुडविसिला पट्टयसि णिसीयइ, णिसीइत्ता ओह्यमणसकप्पे जाव श्रियायमाणे

त्यारपछी तेओ भ्रमण धर्मना पालनमा भिन्नचित्त-उदास भनी गया

(समणत्तणनिव्विण्णे समणत्तणनिव्विण्ण समणगुणमुक्तजोगी थेराण अतियाओ सणिय २ पच्चोसकइ, पच्चोसकित्ता जेणेव पुडरिगिणी णयरी जेणेव पुडरीयस्स भरणे तेणेव उवागच्छइ)

तेओ साधुभावने नभाववामा उदास भनी गया साधुभाव प्रत्ये तेम नामा अनादर भाव उत्पन्न थई गयो, ओथी तेओ भ्रमण-गुणोथी मुक्त योगवाणा भनी गया ओटले के भ्रमणना गुणोने तेमले त्यहे दीधा आ प्रभावे तेओ धीमे धीमे स्थविरोंने पासैथी युपथाप नीकणीने ओकदिवस न्या पु उरिक्खी नगरी छती अने तेमा पणु न्या पु उरीक राजन्तु लवन छर्तु, त्या आवी गया

(उवागच्छित्ता असोगवणियाण असोगवरपायवस्स अहे पुडविसिलापट्टयसि, णिसीयइ, णिसीइत्ता ओह्यमणसकप्पे जाव श्रियायमाणे च्चिइइ, तपण

माणे ' यावद्ध्यायन्=आर्चयानं कुर्वन् सतिष्ठते । तत एव तस्य पुण्डरीकस्य राज्ञोऽम्बधात्री यत्रैव अशोकवनिना तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य कण्डरीकमन गारम् अशोकवरपादपस्य अधः पृथिवीशिलापट्टकेऽपहतमनःसकल्प यावद् ध्यायन्त पश्यति, दृष्ट्वा, यत्रैव पुण्डरीको राजा तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य पुण्डरीक राजानमेवमवादीत्-एव खलु देवानुप्रिय । तत्र ' पिउभाउए ' प्रियभ्राता कण्डरीकोऽनगारोऽशोकवनिनाया अशोकवरपादपस्य अधः पृथिवीशिलापट्टके अपहतमनः सकल्पो यावद्-यायति । तत खलु पुण्डरीकः अम्बधात्र्या एतमर्थं=कण्डरीकस्य

सचिद्वद्, तएण तस्स पौंडरीयस्स अम्मधाई जेणेव असोगवणिया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कडरीय अणगार असोगवरपायस्स अहे पुढविस्सिलावट्टयसि ओह्यमणसकप्प जाव झियायमाण पासइ, पासित्ता जेणेव पौंडरीय राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पौंडरीय राय एव वयासी) वहा आकर वे अशोक वाटिका मे अशोक वृक्ष के नीचे पृथिवीशिला पट्टक पर बैठ गये । बैठकर अपहत मानसिक व्यापारवाले होकर वे वहा आर्त्तध्यान करने लगे । इनने मे पुण्डरीक राजा की अम्बधात्री-धायमाता उस अशोक वाटिका मे आई-वहा आकर उसने कडरीक अनगार को अशोक पादप के नीचे पृथिवीशिला पट्टक पर चिन्तामग्न देखा-देखकर वह जहा पुण्डरीक राजा थे वहा आई-वहा आकर उसने पुण्डरीक राजा से इस प्रकार कहा-(एव खलु देवानुप्रिया ! तव पिउभाउए कडरीए अणगारे असोगवणियाए असोगवरपायवस्स अहे पुढविस्सिलावट्टे ओह्यमणसकप्पे जाव झियायइ) हे देवानुप्रिय !

तस्स पौंडरीयस्स अम्मधाई जेणेव असोगवणिया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कडरीय अणगार असोगवरपायवस्स अहे पुढविस्सिलावट्टयसि ओह्यमणसकप्प जाव झियायमाण पासइ, पासित्ता जेणेव पौंडरीय राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पौंडरीय राय एव वयासी)

त्या आवीने तेज्जे अशोक वाटिकाभा अशोक वृक्षनी नीचे पृथिवशिला पट्टक उपर भेसी गया त्या भेसीने तेज्जे अपहत मानसिक व्यापारवाणा (उदास) थडने आर्त्तध्यान करवा लाग्या अटलाभा पुंडरीक राजानी अम्बधात्री धायमाता-अशोक वाटिकाभा आवी त्या आवीने तेज्जे कडरीक अनगारने अशोक वृक्षनी नीचे पृथिवशिला उपर आर्त्तध्यान करता जेथा जेधने ते जेथा पुंडरीक राजा हुता त्या आवीने तेज्जे पुंडरीक राजाने आ प्रभावे कहु के (एव खलु देवानुप्रिया ! तव पिउभाउए कडरीए अणगारे असोगवणियाए असोगवरपायवस्स अहे पुढविस्सिलावट्टे ओह्यमणसकप्पे जाव झियायइ)

अशोकप्रतिकामपगताशोरुक्षाभः स्थितम्यार्तं पानरूपमर्थं श्रुत्वा निरुद्ध-
 वधार्य 'तद्देव' तर्था=ययास्थितात्तये 'समते समाणे' मन्त्रान्ताः सन्-
 'कृप पुनरसौ समागत' इति गङ्गितः मन् उत्थाय उत्तिष्ठति=प्रति उत्तिष्ठी-
 त्यर्थः, उत्थाय अतः पुणपरिवारसपरिवृत यदीय शान्ताधर्मिका यदीय कण्डरीको-
 ऽनगारस्तत्रोप उपागच्छति, उपागत्य 'निवाप्तो' त्रि कृत्वः=वारत्रयम् आद-
 क्षिणप्रदक्षिण करोति, कृत्वा एवमवादीत्- 'धण्येसि ण तुमं देवाणुप्पिया । जाव
 पव्वइए' धन्योऽसि खलु त्व हे देवानुप्पिय ! यात् प्रजित । अह खलु
 'अधण्ये' ३ अधन्यः ३ यात् नो गत्तोमि प्रजितुम् । 'त' तस्मात्कारणात्
 'धन्नेसि' धन्योऽमि खलु त्व हे देवानुप्पिय ! 'जाव जीवियफले' यात्
 जीवितफलम्=तस्या जन्मजीवितफल सुखम् इति भावः। ततः खलु कण्डरीकेण
 एव=वशात्परवचनेनैकः सन् तूष्णीरुः सतिष्ठते, 'दोच्चपि तच्च ति' द्वितीय-
 मपि तृतीयमपि तार पूर्वप्रकारेण उक्तः सन् 'जाव सच्चिद्दह' यात् सतिष्ठते=
 मौनमवलम्ब्य स्थित इति भाव । ततः खलु कण्डरीकः कण्डरीकमेवमवादीत्-अद्यो

सुनिये-तुम्हारे प्रिय भाई कडरीक अनगार अशोक वाटिका में अशोक
 वृक्षके नीचे पृथिवीशिलापट्टक पर अपहतमनःसकल्प होकर यावत् चिन्ता
 मग्न बैठे हुए हैं (तएण पौडरीए अम्मधाईए एयमइ सोच्चा णिसम्म
 तद्देव समते समाणे उट्टाए उट्टेइ, उट्टित्ता अतेउरपरियालसपरिवुडे
 जेणेव असोगवणिया जाव कडरीय त्तिखुत्तो आयाहियणपयाहियण करेइ,
 करित्ता एव वयासी धण्येसि ण तुम देवाणुप्पिया ! जाव पव्वइए
 अहण्ण अधण्ये ३ जाव नो पव्वइत्तए त धन्नेसि ण तुम देवाणुप्पिया !
 जाव जीवियफले-तएण कडरीए पुडरीएण एव बुत्ते समणे तुसिणीए
 सच्चिद्दह, दोच्चपि तच्चपि जाव सच्चिद्दह, तएण पौडरीए कडरीय एव
 वयासी अद्यो भते ! भोगेहि ! हता अद्यो ! तएण से पौडरीए राया कोड्ड

डे देवानुप्पिय । सासणे, तभाश प्रिय लार्थ कडरीक अनगार अशोक
 वाटिकाभा अशोक वृक्षनी नीचे पृथिवीशिला पट्टक उपर अपहतमन सकल्प
 धर्मे थावत् चिन्तामग्न धर्मे भेसा रह्या छ

(तएण पौडरीए अम्मधाईए एयमइ सोच्चा णिसम्म तद्देव समते समाणे
 उट्टाए उट्टेइ, उट्टित्ता अतेउरपरियालसपरिवुडे जेणेव असोगवणिया जाव कड-
 रीय त्तिखुत्तो आयाहियणपयाहियण करेइ, करित्ता एव वयासी धण्येसि ण तुम
 देवाणुप्पिया ! जाव पव्वइए अहण्ण अधण्ये २ जाव नो पव्वइत्तए त धनेसिणि
 तुम देवाणुप्पिया ! जाव जीवियफले तएण कडरीए पुडरीएण एव बुत्ते समणे
 तुसिणीए सच्चिद्दह, दोच्चपि तच्चपि जाव सच्चिद्दह, तएण पौडरीए कडरीय एव
 वयासी, अद्यो / ता अद्यो ! तएण से १०२ - या कोड्डिय

विद्यपुरिसे महावेह, सहावित्ता एव वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! कडरीयस्स महत्थ जाव रायाभिसेअ उवट्टवेह, जाव रायाभिसेएण अभिसिंचइ) इस प्रकार अम्बाधाय के मुख से इस घांत को सुनकर और उसे चित्त में जमाकर जैसे बैठे हुए थे उसी तरह सभ्रान्त होते हुए-ये क्यों आये हैं-इस प्रकार शक्ति चित्त होते हुए-उत्थानशक्ति से उठे बहून जल्दी सुनते ही प्रमाण-उठे और उठकर अन्तःपुर के परिवार को साथ लेकर जहा अशोक वनिका यी-वहा पर आये-वहां आकर कडरीक अनगार के पास पहुँचे-वहां पहुँच कर उन्हो ने उन्हें तीन वार आदक्षिण प्रदक्षिण किया बाद में वे कहने लगे-हे देवानुप्रिय ! तुम्हें धन्यवाद है-जो तुम राज्य एव अन्तःपुर का परित्याग कर प्रव्रजित हो गये हो इत्यादि जिम प्रकार पहिले उनसे कहा था इसी प्रकार अब भी कहा मैं अधन्य हूँ-३-जो चावत् दीक्षित होने के लिये शक्तिशाली नहीं हो रहा हूँ। इसलिये हे देवानुप्रिय ! आपके लिये धन्यवाद है-आपने जन्म और जीवन का फल अच्छी तरह प्राप्त कर लिया है। इस तरह प्रशंसा परक वचनों से पुडरीक राजा द्वारा कहे गये वे कडरीक अनगार कुछ भी नहीं बोले-किन्तु चुपचाप ही बैठे रहे-। जब पुडरीक राजा ने उनकी इस प्रकार की स्थिति देखी-तब दुवारा तिवारा भी उन्हो ने

पुरिसे सहावेइ, सहावित्ता एव वयासी खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! कडरीयस्स महत्थ जाव रायाभिसेअ उवट्टवेह, जाव रायाभिसेएण अभिसिंचइ)

आ प्रभाणु अम्बाधायना सुभधी आ वात सावणीने अने तेने मनमा धारणु करीने जेवी स्थितिमा तेज्जा जेका डता तेवी ज स्थितिमा स्तण्ण थधने " तेज्जा केम आव्या छे " आ प्रभाणु शक्युक्ता थता-उत्थान शक्ति वडे तेज्जा जेमा थया अने जेला थधने जट्टी रणुवासना परिवारने सावे लधने जया अशोक वाटिका डती त्या अज्या त्या आवीने कडरीक अनगारनी पास पडोव्या त्या पडोवणीने तेमणु तेमने त्रलवार आदक्षिणु प्रदक्षिणु कर्या गाड कडेवा लाग्गा ठे डे देवानुप्रिय ! तमने भरिपर धन्यवाद धटे छे के जे तमे राज्य अने रणुवासने त्याग करीने प्रव्रजित थर्ध गया छे, वगेरे जेम पडोला कणु डतु तेमज ते वणने पणु कणु हु तो अधन्य ३-३-जे यावत् दीक्षा अडणु करवानु पणु सामर्थ्य धरावतो नथी जेथी डे देवानुप्रिय ! तमने धन्य छे तमेज्जे भरिपर पोताना जन्म अने जवननु क्षण सारी रीने प्राप्त करी क्षीणु छे आ प्रभाणु प्रशसाजनक वचनेथी पुडरीक राज वडे सज्जाधित करायेवा ते कडरीक अनगार कठपणु जेव्या नहि, तेज्जा भूगा थधने जेमीज

अशोकानिकामपयताशोऽक्षायः स्थितस्यार्तं यानरूपमर्थं श्रुत्वा निश्चयः—व्य-
 घर्थाय 'तद्देव' तर्ध्व=यथास्थितातर्ध्वेय 'समते समाणे' मन्त्रान्तः सन्-
 'यव पुनरसी समागत' इति गदितः सन् उच्यते उच्यते उच्यते इति उच्यते-
 त्यर्थः, उच्यते अतः पुनरिमारसपरिचरुत यदीय अशोकानिका यदीय कण्डरीको-
 ऽनगारस्तत्रैव उपागन्त्रति, उपागत्य 'निश्चुतो' त्रि हृत्वा=वारत्रयम् आद-
 क्षिणप्रदक्षिण करोति, त्रया एवममादीन्—'धणोसि ण तुम देवाणुप्पिया ! जाव
 पव्वइए' धन्योऽसि खलु न्व हे देवानुप्पिय ! यावत् प्रजित । अह खलु
 'अधणो ३ अधन्य' ३ यावत् नो गक्रोमि प्रजितुम् । 'त' तम्मात्कारणा
 'धन्नेसि' धन्योऽमि खलु त्व हे देवानुप्पिय ! 'जाव जीवियफले' यावत्
 जीवितफल्मू=त्वया जन्मजीवितफल मुत्त्वम् इति भावः। ततः खलु कण्डरीकेण
 एव=वशात्परवचनैरुक्तः सन् तूष्णीरुः सतिष्ठते, 'दोच्चपि तच्च वि' द्वितीय-
 मपि तृतीयमपि तार पूर्वप्रकारेण उक्तः सन् 'जाव सच्चिद्दइ' यावत् सतिष्ठते=
 मौनमवलम्ब्य स्थित इति भावः । ततः खलु पुण्डरीरुः कण्डरीरुमेवममादीन्—अद्वो

सुनिये—तुम्हारे प्रिय भाई कण्डरीक अनगार अशोक वाटिका में अशोक
 वृक्षके नीचे पृथिवीशिलापट्टक पर अपहृतमनःसकत्प होकर यावत् चिन्ता
 मग्न बैठे हुए हैं (तएणं पोंडरीए अम्मधाईए एयमइ सोच्चा णिसम्म
 तद्देव समते समाणे उट्टाए उट्टेइ, उट्टित्ता अतेउरपरियालसपरिवुडे
 जेणेव असोगवणिया जाव कडरीय ति त्खुत्तो आयाहिणपयाहिण करेइ,
 करित्ता एव वयासी धणोसि ण तुम देवाणुप्पिया ! जाव पव्वइए
 अहणण अधणो ३ जाव नो पव्वइत्तए त धन्नेसि ण तुम देवाणुप्पिया !
 जाव जीवियफले—तएण कडरीए पुडरीएण एव बुत्ते समाणे तुसिणीए
 सच्चिद्दइ, दोच्चपि तच्चपि जाव सच्चिद्दइ, तएण पोंडरीए कडरीय एव
 वयासी अद्वो भते ! भोगेहिं ! हता अद्वो ! तएण से पोंडरीए रायां कोडु

हे देवानुप्पिय ! साधुणा, तभाश प्रिय लार्थ कडरीक अनगार अशोक
 वाटिकाभा अशोक वृक्षनी नीचे पृथिवीशिला पट्टक उपर अपहृतमन सकत्प
 थधने यावत् चिन्तामग्न थधने जेसी रह्या छ

(तएण पोंडरीए अम्मधाईए एयमइ सोच्चा णिसम्म तद्देव समते समाणे
 उट्टाए उट्टेइ, उट्टित्ता अतेउरपरियालसपरिवुडे जेणेव असोगवणिया जाव कड-
 रीय तिखुत्तो आयाहिणपयाहिण करेइ, करित्ता एव वयासी धणोसि ण तुम
 देवाणुप्पिया ! जाव पव्वइए अहणण अधणो ३ जाव नो पव्वइत्तए त धन्नेसि
 तुम देवाणुप्पिया ! जाव जीवियफले तएण कडरीए पुडरीएण एव बुत्ते समाणे
 तुसिणीए सच्चिद्दइ, दोच्चपि, तच्च वि जाव सच्चिद्दइ, तएण पोंडरीए कडरीय एव
 वयासी, अद्वो भते ! भोगेहिं ? हता अद्वो ! तएण से पोंडरीए रायां कोडु विव

बियपुरिसे महावेह, सदावित्ता एव वयासी-ग्विप्पामेव भो देवानुप्पिया ! कडरीयस्स महत्थ जाव रायाभिसेअ उवट्टवेह, जाव रायाभिसेएण अभिसिचइ) इस प्रकार अम्बाधाय के मुख से इस बात को सुनकर और उसे चित्त में जमाकर जैसे बैठे हुए थे उसी तरह सभ्रान्त होते हुए-ये क्यों आये हैं-इस प्रकार शक्ति चित्त होते हुए-उत्थानशक्ति से उठे बहुत जल्दी सुनते ही प्रमाण-उठे और उठकर अन्तःपुर के परिवार को साथ लेकर जहाँ अशोक बनिका थी-वहाँ पर आये-वहाँ आकर कडरीक अनगार के पास पहुँचे-वहाँ पहुँच कर उन्होने उन्हें तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिण किया बाद में वे कहने लगे-हे देवानुप्रिय ! तुम्हें धन्यवाद है-जो तुम राज्य एव अन्तःपुर का परित्याग कर प्रव्रजित हो गये हो इत्यादि जिस प्रकार पहिले उनसे कहा था इसी प्रकार अब भी कहा मैं अधन्य हूँ-३-जो यावत् दीक्षित होने के लिये शक्तिशाली नहीं हो रहा हूँ । इसलिये हे देवानुप्रिय ! आपके लिये धन्यवाद है-आपने जन्म और जीवन का फल अच्छी तरह प्राप्त कर लिया है । इस तरह प्रज्ञासा परक वचनो से पुण्डरीक राजा द्वारा कहे गये वे कडरीक अनगार कुछ भी नहीं बोले-किन्तु चुपचाप ही बैठे रहे-। जब पुण्डरीक राजा ने उनकी इस प्रकार की स्थिति देखी-तब दुवारा तिवारा भी उन्होने

पुरिसे सदावेह, सदावित्ता एव वयासी रिप्पामेव भो देवानुप्पिया ! कडरीयस्स महत्थ जाव रायाभिसेअ उवट्टवेह, जाव रायाभिसेएण अभिसिचइ)

आ प्रभाणु अभाधायना भुभथी आ वात सालणीने अने तेने मनभा धारणु करीने नेवी स्थितिभा तेओ षेहा डता तेवी अ स्थितिभा स्तण्ण थधने " तेओ केम आव्या छे " आ प्रभाणु शकयुक्त यता-उत्थान शक्ति वडे तेओ जभा थया अने जला थधने उट्टी रणुवासना परिवारने सावे लधने न्या अशोक वाटिका डती त्या अ व्या त्या आपीने कडरीक अनगारनी पासो पडोथ्या त्या पडोथीने तेमणु तेमने त्रणुवार आदक्षिणु प्रदक्षिणु कर्था भाड कडेवा लाग्गा के छे देवानुप्रिय ! तमने षरेणर धन्यवाद धटे छे के ने तमे राज्य अने रणुवासनेा त्याग करीने प्रनलत थर्ष गया छे, वगेरे नेम पडेलो कहु डतु तेमण ते वभते पणु कहु हु तो अधन्य उ-उ-ने यावत् दीक्षा अडणु करवानु पणु सामर्थ्य धरावतो नथी अथी छे देवानुप्रिय ! तमने धन्य छे तमेओ षरेणर चोताना जन्म अने जवनतु क्षण सारी रीने प्राप्त करी स्वीधु छे आ प्रभाणु प्रशसाजनक वचनेथी पुण्डरीक राजा वडे सओधित कथेवा ते कडरीक अनगार कथिणु गोत्था नहि, तेओ भूगा थधने जेमीण

मंते ' भोगेहि ' अर्थात् हे भद्रन्त ! भोगे ? = किं भोगेः प्रयोजनमस्ति ? इति, कण्डीकः प्राह- ' हता ! अट्टो ' = हन्त ! अर्थः = भोगप्रपन्नोस्तुमानमोऽस्मीति भावः । ततः खलु = कण्डीकामिषायानानन्तरमित्यर्थः, स पुण्डरीको राजा कौटुम्बिकपुरुषान् गच्छयति = प्राहयति, गच्छयित्वा, पञ्चमवदत् - क्षिप्तमेव भो देवानुप्रियो ! कण्डीकस्य महार्थम् = अत्यर्थम् ' जात्र रायाभिसेय ' यावत् राजा भिषेकम् ' उगट्टयेइ ' उपस्थापयत = परिष्कपयत, ' जात्र रायाभिसेएण अभिसि चइ ' यावत् राज्याभिषेकेण अभिषिञ्चति स पुण्डरीको राजा कण्डीक राजपदे स्थापयति ॥ सू० ४ ॥

मृग-तण्डुलं पुण्डरीकं सयमेव पञ्चमुद्विष्यं लोय करेइ,

उनसे ऐसा ही कहा परन्तु फिर भी उन्होंने ने कुछ नहीं ध्यान दिया केवल मौन धारण कर ही बैठे रहे-तब पुनः पुण्डरीकने उन कण्डीक अनगार से इस प्रकार कहा-हे भद्रन्त ! क्या आप को भोगों से तात्पर्य है ? तब कण्डीक ने कहा हा-मेरा मन भोगों को उपभोग करने के लिये हो रहा है । इस तरह कण्डीक का अभिप्राय जानने के बाद पुण्डरीक राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और बुलाकर उनसे ऐसा कहा-भो देवानुप्रियो तुम लोग कण्डीक के लिये राज्याभिषेक योग्य सामग्री एकत्रित कर लेआओ पुण्डरीक राजा की इस आज्ञा के अनुसार, उनलोगों ने वैसा ही किया-जब राज्याभिषेक सामग्री उपस्थित हो चुकी-तब पुण्डरीकने कण्डीक का राज्याभिषेक कर दिया-कण्डीक को राजपद में स्थापित कर दिया ॥ सूत्र ४ ॥

रथ्या पुण्डरीक राज्ञे तेमनी आवी स्थिति जेधने भील अने त्रील वभत पणु आ प्रभाणु ज कहु पणु तेमले तेनी कर्ध दरकार करी नहि तेआ इक्षत भूगा थधने जेसी ज रथ्या त्त्यारे इरी पुण्डरीके ते कण्डीक अनगारने आ प्रभाणु उहु के डे लगवन् । तमने शु डल ' लोग उपभोगोनी ध्वंश छे ? त्त्यारे कण्डीके कहु के डा, जरेअर भाइ मन लोग उपभोगमा उक्त थवा मच्छे छे आ प्रभाणु कण्डीकनी ध्वंश जालीने पुण्डरीक राज्ञे कौटुम्बिक पुरुषोने जोलाव्या अने जोलावीने तेमने आ प्रभाणु कहु के डे देवानुप्रियो । तमे लोको कण्डीक माटे-राज्याभिषेक योग्य सामग्री लेगी करे पुण्डरीक राज्ञनी आ प्रभाणु आज्ञा साबणीने ते लोकोअे तेमज कथुं न्त्यारे राज्याभिषेकनी अधी वस्तुअे अेकत्रित थध गर्धत्त्यारे पुण्डरीके कण्डीकने राज्याभिषेक करी दीधे अेटले के कण्डीकने राज्यासने जमाडी दीधे ॥ सूत्र ४ ॥

करित्ता, सयमेव चाउज्जाम धम्म पडिवज्जइ, पडिवज्जित्ता कडरीयस्स सतिय आयारभडय गेण्हइ, गेण्हित्ता, इम एयारुव अमिग्गह अमिगिण्हइ-कप्पइ मे थेरे वंदित्ता णमंसित्ता थेराणं अतिए चाउज्जाम धम्म उवसपज्जित्ताणं तओ पच्छा आहार आहरित्तए त्तिकट्टु, इम च एयारुव अमिग्गह अमिगिण्हित्ता णं पोडरिगिणीए पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता, पुव्वाणुपुत्विचरमाणे गामाणुगाम दूइज्जमाणे जेणेव थेरा भगवतो तेणेव पहारेत्थ गमणाए॥सू०५॥

टीका—‘तएण पुडगीए’ इत्यादि । ततः खलु पुण्डरीकः स्वयमेव पञ्च मुष्टिक लोच करोति, तथा स्वयमेव ‘चाउज्जाम’ चातुर्याम=चतुर्महाव्रतलक्षण धर्म प्रतिपद्यते, प्रतिपद्य, ‘कडरीयस्स सतिय’ कण्डरीकस्य सत्कर्म=कण्डरीक सम्बन्धि इत्यर्थः, ‘आयारभटय’ आचारभाण्डक आचाराय=माधोः पञ्चविधा चारपरिपालनाय यद्भाण्डक=स्त्रपात्रमदोकमुखवस्त्रिकारजोहरणादिरूपम् तद्

‘तएण पुडगीए सयमेव पचमुट्टिय’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (पुडगीए) पुडरीक ने (सयमेव) अपने आप (पचमुट्टिय लोच करेइ) अपना पचमुष्टिक लोच किया—(करित्ता सयमेव चाउज्जाम धम्म पडिवज्जइ पडिवज्जित्ता कडरीयस्स सतिय आयारभडय गेण्हइ) और लोच करके स्वय ही उन्होंने—चातुर्याम=चतुर्महाव्रत रूप धर्म को धारण कर लिया । एवं कडरीक के अनगार अवस्था मन्धी आचार भाण्डक को—वस्त्र, पात्र सदोरक मुख वस्त्रिका, रजोहरण आदिरूप साधु चिह्नों को—ले लिया । (गेण्हित्ता) इम एयारुव अमिग्गह अमिगिण्हइ, कप्पइ मे थेरे वंदित्ता णमंसित्ता

‘तएण पुडगीए सयमेव पचमुट्टिय’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) त्पारपधी (पुडगीए) पुडरीके (सयमेव) पोतानी लोते च (पचमुट्टिय लोच करेइ) पोतानु पचमुष्टिके लुत्थन कट्टु

(करित्ता सयमेव चाउज्जाम धम्म पडिवज्जइ, पडिवज्जित्ता कडरीयस्स सतिय आयारभडय गेण्हइ)

अने लुत्थन कराने लोते च तेमणे चातुर्याम=चतुर्महाव्रत रूपधर्मे धारण करी लीधा अने कडरीकनी अनगार अवस्था मन्धी आचार लाउके—वस्त्र, पात्र, सदोरक मुखवस्त्रिका, रजोहरण वगेरे साधु चिह्नों ले लीधा

मंते ' भोगेहि ' अर्थात् हे भद्रन् ! भोगीः ?=किं भोगीः प्रयोजनमस्ति ? इति, कण्ठरीर' माह- ' हता । अहो ' =हन्त । अर्थः=भोगमपभोक्तुमानमोऽस्मीति भाः । ततः खलु=कण्ठरीरामिषाययानानन्तरमित्यर्थः, स पुण्डरीको राजा कौटुम्बिकपुरुषान् गन्धयति=माहयति, गन्धयित्वा, पत्रमवदत् - शिपमेव भो देवानुमिषा । कण्ठरीकस्य महार्थम्=अत्यर्थम् ' जात्र राजाभिसेय ' यात्र राजा भिषेकम् ' उगृह्येड ' उपस्थापयत=परिस्थापयत, ' जात्र राजाभिसेयण अभिसि चड ' यात्र राज्याभिषेकेण अभिषिञ्चति स पुण्डरीको राजा कण्ठरीकं राजपदे स्थापयति ॥ सू० ४ ॥

मृगम-तण्ठां पुडरीए सयमेव पचमुट्टिय लाय करेइ,

उनसे ऐसा ही कहा परन्तु फिर भी उन्होंने ने कुछ नहीं ध्यान दिया केवल मौन धारण कर ही बैठे रहे-तब पुनः पुडरीकने उन कडरीक अनगार से इस प्रकार कहा-हे भद्रन् ! क्या आप को भोगों से तात्पर्य है ? तब कडरीक ने कहा हा-मेरा मन भोगों को उपभोग करने के लिये हो रहा है । इस तरह कडरीक का अभिप्राय जानने के बाद पुडरीक राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और बुलाकर उनसे ऐसा कहा-भो देवानुमिषो तुम लोग कडरीक के लिये राज्याभिषेक योग्य सामग्री एकत्रित कर लेआओ पुडरीक राजा की इस आज्ञा के अनुसार, उनलोगों ने वैसे ही किया-जब राज्याभिषेक सामग्री उपस्थित हो चुकी-तब पुडरीकने कडरीक का राज्याभिषेक कर दिया-कडरीक को राजपद में स्थापित कर दिया ॥ सूत्र ४ ॥

रक्षा पुडरीक राज्याभिषेक तेमनी आवी स्थिति लेधने भील अने त्रील वपत पल्लु आ प्रभाळे ज कहु पल्लु तेमले तेनी कर्ध दरकार करी नहि तेआ इकल भू गा यधने जेसी ज रक्षा त्यारे करी पुडरीके ते कडरीक अनगारने आ प्रभाळे कहु के डे लगवन् । तमने शु डल ' भोग उपभोगानी धन्धा छे ? त्यारे कडरीके कहु के डा, परेपर भाइ मत लोग उपभोगमा प्राप्त थवा मच्छे छे आ प्रभाळे कडरीकनी धन्धा लळीने पुडरीक राज्याभिषेक कौटुम्बिक पुरुषाने जोलाव्या अने जोलावीने तेमने आ प्रभाळे कहु के डे देवानुमिषो । तमे दोडो कडरीक माटे-राज्याभिषेक योग्य सामग्री लेगी करी पुडरीक राज्याभिषेक आ प्रभाळे आज्ञा साजणीने ते दोडोअे तेमज कथुं न्नारे राज्याभिषेकनी अधी वस्तुआ ऐकत्रित थध गर्ध त्यारे पुडरीके कडरीकने राज्याभिषेक करी दीयो अेटवे के कडरीकने राज्याभिषेकने जेमाडी दीयो ॥ सूत्र ४ ॥

करित्ता, सयमेव चाउज्जाम धम्म पडिवज्जइ, पडिवज्जित्ता कंडरीयस्स सतिय आयारभडय गेण्हइ, गेण्हित्ता, इम एयाह्व अभिग्गहं अभिगिण्हइ-कप्पइ मे थेरे वंदित्ता णमंसित्ता थेराणं अतिए चाउज्जाम धम्म उवसपज्जित्ताणं तओ पच्छा आहार आहरित्तए त्तिकट्टु, इम च एयाह्व अभिग्गह अभिगिण्हित्ता णं पोडरिगिणीए पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता, पुव्वाणुपुव्वि चरमाणे गामाणुगाम दूइज्ज-माणे जेणेव थेरा भगवतो तेणेव पहारेत्थ गमणाए॥सू०५॥

टीका—‘तएण पुडगीए’ इत्यादि । ततः खलु पुण्डरीकः स्वयमेव पञ्च मुष्टिक लोच करोति, तथा स्वयमेव ‘चाउज्जाम’ चातुर्याम=चतुर्महाव्रतलक्षण धर्मं प्रतिपद्यते, प्रतिपद्य, ‘कंडरीयस्स सतिय’ कण्डरीकस्य सत्कर्म=कण्डरीक सम्बन्धि इत्यर्थः, ‘आयारभडय’ आचारभाण्डक आचाराय=माधोः पञ्चविधा चारपरिपालनाय यद्भाण्डकं=यत्तपात्रसदो मुखवस्त्रिकारजोहरणादिरूपम् तद्

‘तएण पुडगीए सयमेव पचमुट्टिय’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (पुडगीए) पुडगीक ने (सयमेव) अपने आप (पचमुट्टिय लोच करेइ) अपना पचमुष्टिक लोच किया—(करित्ता सयमेव चाउज्जाम धम्म पडिवज्जइ पडिवज्जित्ता कंडरीयस्स सतिय आयारभडय गेण्हइ) और लोच करके स्वय ही उन्होंने—चातुर्याम=चतुर्महाव्रत रूप धर्म को धारण कर लिया । एव कंडरीक के अनगार अवस्था सम्बन्धी आचार भाण्डक को—वस्त्र, पात्र, सदोरक मुख वस्त्रिका, रजोहरण आदिरूप माधु चिह्नों को—ले लिया । (गेण्हित्ता) इम एयाह्व अभिग्गह अभिगिण्हइ, कप्पइ मे थेरे वंदित्ता णमंसित्ता

‘तएण पुडगीए सयमेव पचमुट्टिय’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) त्पारपधी (पुडगीए) पुडगीके (सयमेव) पोलानी लते व (पचमुट्टिय लोच करेइ) पोलानु पचमुष्टिक लुचन कट्टु

(करित्ता सयमेव चाउज्जाम धम्म पडिवज्जइ, पडिवज्जित्ता कंडरीयस्स सतिय आयारभडय गेण्हइ)

अने लुचन कराने लने व तेमणे चातुर्याम=चतुर्महाव्रत रूपधर्मने धारण करी लीधा अने कंडरीकनी अनगार अवस्था सम्बन्धी आचार भाण्डके—वस्त्र, पात्र, सदोरक मुखवस्त्रिका, रजोहरण वगेरे साधु चिह्नोंने लई लीधा

गृह्णाति, गृहीत्या, इममेतद्रूप=रक्षमाणमभिग्रह=प्रतिज्ञाविशेषम् अभिगृह्णाति=
 करोति अभिग्रह=रूपमाह-इत्यते मे स्थिरिगत रन्दित्र्या नमस्थित्वा स्थविराणा
 मन्तिके चातुर्याम धर्मम् ' उपसपञ्जित्ताण ' उपसपय=स्वीकृत्य, ततः पञ्चात्-
 आहारमाहर्तुम् इति कृत्वा निश्चित्य, इम च एतद्रूपम् अभिग्रहम्, अभिगृह्ण खलु
 पुण्डरीकिण्या प्रतिनिष्क्राम्यति निम्परति, प्रतिनिष्क्रम्य ' पुण्ड्राणुपुर्व्वि ' पूर्व्वानु
 पूर्व्व्या चरन्, गामानुग्राम द्रवन् यत्र स्थिरिग भगवन्तस्तत्रैव प्राधारयन्=गम
 नाय गन्तु प्रस्थित ॥ सु०५ ॥

थेराण अतिण चाउज्जाम धम्म उपसपञ्जित्ताण, तओ पच्छा आहार
 आहरित्ताण) घाद में उन्होंने इस प्रकार अभिग्रह धारण किया कि
 जयतकमें स्थिरि भगवतो को उदना नमस्कार कर उनके पाससे चातुर्याम
 धर्मको धारण नहीं कर लूंगा, तयतक में आहार पानी ग्रहण नहीं
 करूंगा उनके पास चातुर्याम धर्म धारण करके ही आहार ग्रहण करूंगा
 (त्ति कद्दु इमच एयाह्व अभिग्रह अभिगिण्हित्ता ण पोडरिगिणीए
 पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता पुण्ड्राणुपुर्व्वि चरमाणे गामाणुगाम द्द
 उज्जमाणे जेणेव थेरा भगवतो तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इस प्रकार का
 यह अभिग्रहण कर वे उस पुण्डरीकिणी नगरी से निकले-और निकल
 कर तीर्थकर परम्परानुसार विहार करते हुए एव एक ग्राम से दूसरे
 ग्राम में विचरण करते हुए वे उस ओर प्रस्थित हुए कि जहा स्थविर
 भगवत चिराजमान थे ॥ सूत्र ५ ॥

(गेण्हित्ता इम एयाह्व अभिग्रह अभिगिण्हइ, कपइ, मे थेरे वदित्ता
 णमसित्ता थेराण अतिण चाउज्जाम धम्म उपसपञ्जित्ताण तओपच्छा आहार आहरित्ताए)
 त्थारमाह तेमहे आ ज्ञानेना अभिग्रह धारणु करीं डे न्था सुधी हु
 स्थविर लगवतोने वदना तेमञ्च नमस्कार करीने तेमनी पासथी चातुर्याम
 धर्मने धारणु नडि कर त्था सुधी हु आहार पाणी ग्रहणु करीश नडि
 तेमनी पासथी चातुर्याम धर्मने धारणु करीने न हु आहार ग्रहणु करीश
 (त्ति कद्दु इम च एयाह्व अभिग्रह अभिगिण्हित्ताण पोडरिगिणीए
 पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता पुण्ड्राणुपुर्व्वि चरमाणे गामाणुगाम द्दउज्जमाणे
 जेणेव थेरा भगवतो तेणेव पहारेत्थ गमणाए)

आ प्रभाहे ते अलिग्रहने मनभा धारणु करीने तेओ ते पुण्डरीकिणी
 नगरीनी अहार नीकल्या अने नीकणीने तीर्थ कर पर परा गुण्य विहार करता
 करता अने आ प्रभाहे ओक गामथी थीजे गाम विचरणु करता करता तेओओ
 न्था स्थविर लगवतो विराजमान हुता ते तरइ प्रस्थान कथु ॥सू०५॥

मूलम्--तएणं तस्स कडरीयस्स रण्णो त पणीय पाण-
भोयणं आहारियस्स समाणस्स अतिजागरिण य अइ
भोयणप्पसगेण य से आहारे णो सम्मं परिणमइ । तएणं
तस्स कडरीयस्स रण्णो तस्सि आहारस्सि अपरिणममाणंस्सि
पुव्वरत्तावरत्तकालसमयस्सि सरीरस्सि वेयणा पाउव्वभूया
उज्जला विउला पगाढा जाव दुरहियासा पित्तज्जरपरिगय-
सरीरे दाहवक्कतीए यावि विहरइ । तएणं से कडरीए राया
रज्जे य रट्टे य अत्तेउरे य जाव अज्जोववन्ने अट्टुदुहट्टवसट्टे
अकामए अवस्सवसे कालमासे काल किञ्चा अहे
सत्तमाए पुढवीए उक्कोसकाल ट्टिइयस्सि नरयस्सि नेरइयत्ताए
उव्ववण्णे । एवासेव समणाउत्तो । जाव पव्वइए समाणे
पुणरवि माणुस्सए कामभोगे आसाए जाव अणुपरियट्टि-
स्सइ, जहा व से कडरीए राया ॥ सू० ६ ॥

टीका—'तएणं तस्स' इत्यादि । तत खलु तस्य कण्डरीकस्य राज्ञस्त
'पणीय' प्रणीतम् = सरस गरिष्ठ च पानभोजनम् 'आहारियस्स ममाणस्स'
आहारित्तस्य सत=आहार कुर्वतः सत 'अज्जागरियेण य' अतिजागरितेन च=

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (तस्स कडरीयस्स रण्णो) उस कड
रीक राजा के (त पणीय पाणभोयण आहारीयस्स समाणस्स अतिजा
गरिणय अइभोयणप्पसगेणय से आहारे णो सम्म परिणमइ) इस
प्रणीत-सरस-गरिष्ठ पान भोजन के खाने से तथा विपत्तों की अधिक
आसक्ति के कारण अतिजागरण करने से एव प्रमाणाधिक भोजन के

'तएणं तस्स कडरीयस्स रण्णो' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) त्थारपथी (तस्स कडरीयस्स रण्णो) ते कडरीक राजाने

(त पणीय पाणभोयण आहारियस्स समाणस्स अतिजागरिण य अइभो
यणप्पसगेण य से आहारे णो सम्म परिणमइ)

ते प्रणीत-सरस-गरिष्ठ पान भोजनता आहारथी तेभ-र विधेयता
वधारे पडती आसक्तिता दीधे, वधारे नगरणु करवाधी, अने प्रमाणु उरता

त्रिपयामन्तेरतिजागरणया ' अमोयणप्प-मग ' अतिभोजनमसङ्गेन=प्रमाणाधिक
 भोजनेन स आहारो नो सम्पक् परिणमति=यथापदाहारस्य परिपाको न भवति ।
 ततः सल्ल तस्य कण्ठरीयस्य राशः ' तसि ' आहारसि ' तम्मिन् आहारे ' अप
 रिणममाणंसि ' अपरिणमति=परिपाममग=त्रिति तसि ' पुन्वरत्तावरत्तकालसम
 यसि ' पूर्वरात्रापररात्रका रूपममे=रात्रोर्मध्यभागे ' मरीरसि ' शरीर वेदना प्रादु
 र्भूता, कोदशीवेदना ? उज्ज्वला=सुखलेशरहिता, विपुत्रा=त्रिषाला-सर्वशरीरव्याप्त
 ' पगादा ' पगादा ' जाय दुरहियासा ' यावद् दुरधिसद्या=सोढुमशक्या, पुनः
 स कण्ठरीको राजा ' पित्तज्वरपरिगयसरीरे ' पित्तज्वर परिगतशरीर =पित्तज्वरेण
 परिगत=व्याप्त शरीर यस्य म.=पित्तज्वरपरिध्याप्तशरीर. ' दाहवक्तीए ' दाह
 व्युत्क्रान्तिः=दाहज्वरव्याप्तसमाक्रान्त चापि विहरति=आस्ते । ततः सल्ल स
 कण्ठरीको राजा राज्ये च राट्ठे च अन्नपुरे च ' जाय अज्जोवक्कने ' यावत्

प्रसंग से कृत्त आहार का परिपाक ठीक २ नहीं होता रहा-(तएण
 तस्स कण्ठरीयस्स रण्णो तसि आहारसि अपरिणममाणंसि पुन्वरत्तावर
 त्तकालसमयसि सरीरसि वेयणा पावब्भुया उज्जला विडला पगादा जाव
 दुरहियासा पित्तज्वरपरिगयसरीरे दाहवक्तीए यावि विहरइ)
 इसलिये एक दिन की घात है कि उन कडकीक राजा के जब वह कृत्त
 सरस गरिष्ठ आहार अच्छी तरह नहीं पचा तब उनके शरीर में रात्रि
 के मध्यभागमें वेदना प्रादुर्भूत हुई । जिस वजह से वह वेदना सुख
 के लेश से वर्जित थी उनके समस्त शरीर भर में व्याप्त हो रही थी
 बहुत अधिक थी-यावत् वह उन्हें दुरधिसद्य हो रही थी । पित्तज्वर
 से व्याप्त है शरीर जिन का ऐसे वे कडकीक राजा दाहज्वर की इवाला

पणु वधादे भोजन प्रस गोभा करेला आडरतु पायन अराअर थतु नडोतु
 (तएण तस्स कण्ठरीयस्स रण्णो तसि आहारसि अपरिणममाणंसि पुन्व
 रत्तावरत्तकालसमयसि सरीरसि वेयणा पावब्भुया उज्जला विडला पगादा जाव
 दुरहियासा पित्तज्वरपरिगयसरीरे दाहवक्तीए यावि विहरइ)

अथी अेक दिवसनी वात छे डे ते कडकीक राजने व्यादे भोजन रूपमा
 लीधेला ते सरस अने गरिष्ठ आडरतु सारी रीते पायन थयु नडि त्यादे
 रात्रिना मध्य भागमा तेमना शरीरमा वेदना थवा भाडी, तेथी तेओ भूण व
 हु थी थया आ वेदनामा मात्र ड्राण व थतु डतु, ते वेदना तेमना स पूणु
 शरीरमा व्याप्त थती प्रमाणुमा ते अहु व वधादे डती यावत् ते
 तेमना भाटे डुरा (सद्य) थपडी डती पित्तज्वरथी व्याप्त थयेला
 शरीरवाणा ते
 .. व्याणाओथी सजगी डडया

अध्युपपन्नः—मूर्च्छितो गृद्धः प्रथित अप्युपपन्नः राज्यादिषु सर्वथासक्त इत्यर्थः,
 ' अट्टदुहृद्वसट्टे ' आर्तदुःखार्तवशार्तः=तत्र=आर्त्तः=मनसा दुःखितः, दुःखार्तः=
 देहदुःखयुक्तः, वशार्तः=राज्यराष्ट्रान्तः पुराद्यासभतेन्द्रियरशेन विषयशुभद्वियोग-
 सम्भाजनया पीडित=आर्त्तध्यानोपगत इत्यर्थः । ' अकामए ' अकामकः=अनि-
 च्छक -मरणवाञ्छारहित, ' अवस्सवसे ' अपस्ववश =अपगतस्वातन्त्र्यः परा-
 धीनः सन् कालमासे काल कृत्वा ' अहे सत्तमाए ' अधः सप्तम्या पृथिव्याम्
 तमस्तमः प्रभाख्ये सप्तमे नरके ' उक्कोसकालट्टिइयसि ' उत्कृष्टकालस्थितिके नरके

से भी युक्त हो गये । (तएण से कडरीए राया रज्जे य रट्टे य अतेउरे य जाव अज्झोववन्ने अट्टदुहृद्वसट्टे अकामए अवस्सवसे कालमासेकाल किच्चा अहे सत्तमाए पुढवीए उक्कोसकालट्टिइयसि नरयसी नेरइयत्ताए उववण्णे) इस तरह दुःखित बने हुए वे कडरीक राजा राज्य राष्ट्र, एव अन्तपुर में अव्युपपन्न हो गये इस प्रकार राज्यादिको में सर्वथा आसक्तिभाव से बंधे हुए वे राजा मन से दुःखित होकर, देह के दुःख से एकक्षण अर्तध्यान में पड़ गये । अन्त में वे, ये नहीं चाहते थे कि मेरी मृत्यु हो जावे-तौ भी नासारिक स्थिति से बन्धे हुए होने के कारण या वेदनाओं से पीडित होने के कारण वे स्ववश नहीं थे परतत्र थे, इसलिये काल अवसरकाल करके मर कर नीचे तमस्तम प्रभा नाम के सातवे नरक में कि जो उत्कृष्ट काल स्थिति प्रमाण है—अर्थात् ३३ सा

(तएण से कडरीए राया रज्जे य रट्टे य अतेउरे य जाव अज्झोववन्ने अट्टदुहृद्वसट्टे अकामए अवस्सवसे कालमासे काल किच्चा अहे सत्तमाए पुढवीए, अक्कोसकालट्टिइयसि नरयसि नेरइयत्ताए उववण्णे)

आ प्रभाए दुःखित थयेला ते कडरीक राज्ञे राज्ञ्य, राष्ट्र अने रज्य पासमा अध्युपपन्न थर्ष गया अट्टे के वधारे पडता आनकृत थर्ष गया। आ प्रभाए गन्ध वगेरेमा स पूर्णपणे आसक्त लावथी अ धायेला ते राज्ञे मनथी दुःखित थधने, शारीरिक कष्टथी अेक क्षण भाटे पण मुक्ति नहि थवाने कारणे विषय सुषोना वियोगनी सलापना अ ल तेमत्र राज्ञ्य, राष्ट्र, रज्यपास वगेरेमा आसक्त धन्द्रियेना वशमा होवाने कारणे आर्तध्यानमा भक्ष थर्ष गया छेरेटे तेज्जा मृत्युने धञ्जिता नहोता छताअे सामारिक वातावरणमा अ धायेला होवाने कारणे अथवा वेदनाअेथी पीडित होवाने कारणे तेज्जा स्ववश हुता नहि, परवश-परतत्र हुता, अेथी काण अवमरे काण करीने,— मृत्यु पाग्नीने—नीचे तमस्तमप्रला नामना सातमा नरकमां के अे उत्कृष्ट काल

त्रिपयामरतेरतिजागरणया ' आभोजनपचनग ' अतिभोजनमर्कन=प्रमाणाधिक
 भोजनेन स आहारो नो मन्परु परिणमति=यथादाहारस्य परिपाको न भवति ।
 ततः खलु तस्य कण्ठीरस्य रासः ' तसि ' आहारसि ' तस्मिन् आहारे ' अप
 रिणममाणसि ' अपरिणमति=परिपाकमगच्छति सति ' पुच्छरत्तावरत्तकालसम
 यसि ' पूर्वरात्रापररात्रकाक्रममे=रात्रोर्मध्यमामे ' मरीरसि ' शरीरे वेदना प्रादु
 र्भूता, कीदृशीवेदना ? उज्ज्वला=सुखलेशरहिता, विपुत्रा=विश्रान्त-मर्शशरीरव्याप्त
 ' पगादा ' पगादा ' जात्र दुरहियासा ' यात्रद् दुरधिसया=सोढुमशक्या, पुनः
 स कण्ठीरको राजा ' पित्तज्वरपरिगयसरीरे ' पित्तज्वर परिगतशरीर =पित्तज्वरेण
 परिगत=व्याप्त शरीर यस्य स.=पित्तज्वरपरिघ्याप्तशरीरः ' दाहवक्रतीए ' दाह
 व्युत्क्रान्तिक'=दाहज्वरज्वालासमाक्रान्त चापि विहरति=आस्ते । ततः खलु स
 कण्ठीरको राजा राज्ये च राष्ट्रे च अन्नःपुरे च ' जात्र अज्जोवन्ने ' यावत्

प्रसंग से कृत्त आहार का परिपाक ठीक २ नहीं होता रहा-(तएण
 तस्स कट्टीयस्स रण्णो तसि आहारसि अपरिणममाणसि पुच्छरत्तावर
 त्तकालसमयसि सरीरसि वेयणा पाञ्चभुया उज्जला विउला पगादा
 जाव दुरहियासा पित्तज्वरपरिगयसरीरे दाहवक्रतीए यावि विहरइ)
 इसलिये एक दिन की घात है कि उन कण्ठीरक राजा के जब वह कृत्त
 सरस गरिष्ठ आहार अच्छी तरह नहीं पचा तब उनके शरीर में रात्रि
 के मध्यभागमें वेदना प्रादुर्भूत हुई। जिस वजह से वह वेदना मुख
 के लेश से वर्जित थी उनके समस्त शरीर भर में व्याप्त हो रही थी
 बहुत अधिक थी-यावत् वह उन्हें दुरधिसय हो रही थी। पित्तज्वर
 से व्याप्त है शरीर जिन का ऐसे वे कण्ठीरक राजा दाहज्वर की ज्वाला

पशु वधारे भोजन प्रसंगोभा करेला आहारतु पाचन भराभर थतु नडेातु
 (तएण तस्स कट्टीयस्स रण्णो तसि आहारसि अपरिणममाणसि पुच्छ
 रत्तावरत्तकालसमयसि सरीरसि वेयणा पाञ्चभुया उज्जला विउला पगादा जाव
 दुरहियासा पित्तज्वरपरिगयसरीरे दाहवक्रतीए यावि विहरइ)

अथी अथे द्विपसनी वात छे के ते कट्टीरक राजने व्यारे भोजन रूपमा
 लीधिला ते सरस अने गरिष्ठ आहारतु सारी रीते पाचन थतु नडि त्यारे
 रात्रिना मध्य भागमा तेभना शरीरमा वेदना थवा भाडी, तेथी तेअा भूषण
 दु भी थया आ वेदनामा मात्र दुःख व थतु इतु, ते वेदना तेभना सपुण्ण
 शरीरमा व्याप्त थथ रही इती प्रमाणुमा ते अहु व वधारे इती यावत् ते
 तेभना भाटे दुरधिसय (असय) थक पडी इती पित्तज्वरथी व्याप्त थयेला
 शरीरवाणा ते कट्टीरक राज हाहज्वरनी व्याणाअथी सण्णी उठया

अध्युपपन्नः—मूर्च्छितो वृद्धः प्रयित् अध्युपपन्नः राज्यादिषु सर्वथासक्त इत्यर्थः,
 'अट्टदुहृद्वसट्टे' आर्तदुःखार्तवशोर्तः=तत्र=आर्तः=मनसा दुःखितः, दुःखार्तः=
 देहदुःखयुक्तः, प्रशार्तः=राज्यराष्ट्रान्तः पुराद्यासक्तेन्द्रिययशेन विषयश्रुतवियोग-
 सम्भाजनया पीडित=आर्तध्यानोपगत इत्यर्थः । 'अकामए' अकामकः=अनि-
 च्छक-मरणवाञ्छारहितः, 'अवस्सवसे' अपस्ववश=अपगतस्वातन्त्र्यः परा-
 धीनः सन् कालमासे काल कृत्वा 'अहे सत्तमाए' अयः सप्तम्या पृथिव्याम्
 तमस्तमः प्रभाख्ये सप्तमे नरके 'उक्कोसकालट्टिइयसि' उत्कृष्टकालस्थितिके नरके

से भी युक्त हो गये । (तएण से कडरीए राया रज्जे य रट्टे य अतेउरे
 य जाव अज्झोववन्ने अट्टदुहृद्वसट्टे अकामए अवस्सवसे कालमासे काल
 किञ्चा अहे सत्तमाए पुढवीए उक्कोसकालट्टिइयसि नरयसी नेरइयत्ताए
 उववण्णे) इस तरह दुःखित बने हुए वे कडरीक राजा राज्य राष्ट्र, एव
 अन्तपुर में अध्युपपन्न हो गये इस प्रकार राज्यादिको में सर्वथा आस-
 क्तिभाव से बंधे हुए वे राजा मन से दुःखित होकर, देह के दुःख से
 एकक्षण अर्तध्यान में पड़ गये । अन्त में वे, ये नहीं चाहते थे कि मेरी
 मृत्यु हो जावे—तौ भी नासारिक स्थिति से बन्धे हुए होने के कारण
 या वेदनाओं से पीडित होने के कारण वे स्ववश नहीं थे परतत्र थे,
 इसलिये काल अवसरकाल करके मर कर नीचे तमस्तम प्रभा नाम के
 सातवे नरक में कि जो उत्कृष्ट काल स्थिति प्रमाण है—अर्थात् ३३ सा

(तएण से कडरीए राया रज्जे य रट्टे य अतेउरे य जाव अज्झोववन्ने
 अट्टदुहृद्वसट्टे अकामए अवस्सवसे कालमासे काल किञ्चा अहे सत्तमाए
 पुढवीए, अक्कोसकालट्टिइयसि नरयसि नेरइयत्ताए उववण्णे)

आ प्रमाणे दुःखित थयेला ते कडरीक राजा राज्य, राष्ट्र अने रणु
 वासभा अध्युपपन्न थई गया अट्टे के वधारे परता आसक्त थई गया।
 आ प्रमाणे राजा वगेरेमा सपूर्णपणे आसक्त लावथी वधायेला ते राजा
 मनथी दुःखिन थइने, शारीरिक कष्टथी अेक क्षणु माटे पणु मुक्ति नहि थवाने
 कारणे विषय सुभोना वियोगनी सलावना अफल तेमत्र राज्य, राष्ट्र, रणुवास
 वगेरेमा आसक्त धन्दियेना वशमा होवाने कारणे आर्तध्यानमा भइ थई
 गया छेवटे तेजो मृत्युने धिच्छता नहोता छताअे सामारिक वातावरणुमा
 वधायेला होवाने कारणे अथवा वेदनाअोथी पीडित होवाने कारणे तेजो
 स्ववश हुता नहि, परवश—परतत्र हुता, अेथी काण अवसरे काण करीने,—
 मृत्यु पाभीने—नीचे तमस्तमप्रभा नामना सातमा नरकमां के अे उत्कृष्ट काल-

नैरयिकतया उपपन्नः। एतद् दृष्टान्तन भगवान् महावीर' साधुनुपदिशति-एवमेव
 =अने नैवमकारेण हे आयुष्मतः ! श्रमणाः यः पत्रिदस्माक श्रमणो वा श्रमणी वा
 आचार्योपाध्यायागमतिके यात्रमत्रजितः सन पुरारपि मानुष्यमान् कामभोगान्
 ' आसाण्ड ' आसादयति । स ' जाव अणुपरियट्टिस्मइ ' यावदनुपर्यट्टिप्यति-
 यावत्-यावन्तससाकान्तार परिभमिष्यति । ' जहेव से कडरीए राया ' यथैव
 स कण्डरीओ राजा ॥ मू०६ ॥

मूलम्-तएणं से पौडरीए अणगारे जेणेय थेरा भगवंतो
 तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता येरे भगवते वदइ नमसइ,
 वदित्ता नमंसित्ता थेराण अंतिए दोच्चपि चाउज्जाम धम्मं
 पडिवज्जइ, छट्टवखमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झाय
 करेइ, करित्ता जाव अडमाणे सीयट्टुखं पाणभोयणं पडि-
 गाहेइ, पडिगाहित्ता, अहापज्जत्तमिति कट्टु पडिणियत्तइ

गर की जहा उत्कृष्ट स्थिति है-नारकी की पर्याय से उत्पन्न हो
 इसी बात को दृष्टान्त से श्री भगवान् महावीर प्रभु साधुओं को
 बताते हैं-(एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे पुणरवि
 स्सए कामभोगे आसाए जाव अणुपरियट्टिस्मइ, जहा व से कड
 राया) इसी तरह हे आयुष्मत श्रमणो ! जो कोई हमारा श्रमण अथवा
 श्रमणीजन आचार्य उपाध्याय के पास में दीक्षित होकर के पुन मनुष्य
 भव सन्धी कामभोगों को भोगता है वह कडरीक राजा की तरह
 यावत् इस चतुर्गति रूप ससार कान्तार में परिभ्रमण कयेगा ॥सूत्र६॥

स्थिति प्रभाषु छे-अेटवे के उउ सागरनी न्या उत्कृष्ट स्थिति छे-नारकीनी
 पर्यायथी न्म पाभ्या अे न वातने श्री भगवान् महावीर प्रभु दृष्टात रूपमा
 साधुओने समजवे छे के-

एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे पुणरवि माणुस्सए कामभोगे
 आसाए जाव अणुपरियट्टिस्मइ, जहा व से कडरीए राया)

आ प्रभाषु छे आयुष्मत श्रमणो ! जे कोछ अमारा श्रमण अथवा
 श्रमणीजन आचार्य के उपाध्यायनी पास में दीक्षित थछने करी जे ते मनुष्य
 लवना कामभोगोने भोगवे छे, ते कडरीक राजनी जेभ यावत् आ चतुर्गति
 रूप ससार कान्तारमा परिभ्रमणु करथे ॥ सूत्र ६ ॥

जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता, भक्त-
पाणं पडिदसेइ पडिदसित्ता, थेरेहि भगवतेहि अब्भणुत्ताए
समाणे अमुच्छिए अगिद्धे अगट्टिए अणज्झुववण्णे विल
मिन्न पण्णगभूएणं अप्पाणेण तं फासुएसणिज्ज असणपा-
णखाइमस्ताइम सरीरकोट्टुंगंसि पक्खिवइ । तएणं तस्स
पुडरीयस्स अणगारस्स त कालाइकतं अरस विसर सीय-
ल्लुक्ख पाणभोयण आहारियस्स समाणस्स पुव्वरत्तावरत्तकाल-
समयंसि धम्मजागरिय जागरमाणस्स सेआहारे णो सम्मं
परिणमइ । तएणं तस्स पुडरीस्स अणगारस्स सगीरगंसि
वेयणा पाउव्वभूया उज्जला जाव दुरहियासा, पित्तज्जरप-
रिगयसरीरे दाहवक्कंतिए विहरइ । तएणं से पुडरीए अण-
गारे अत्थामे अवलं अवीरिए अपुरिसक्कारपरक्कमे करयल
जाव एव वयासी-णमोऽत्थुणं अरिहताणं जाव सपत्ताणं
णमोत्थुणं थेराण भगवताण मम धम्मायरियाणं धम्मोव-
एसयाण पुव्वि पि य ण मए थेराण अतिए सव्वे पाणाइ-
वाए पच्चक्खाए जाव मिच्छादसणसुल्ले णं पच्चक्खाए जाव
आलोइयपडिक्कते कालमासे काल किच्चा सव्वट्टसिद्धे उव-
वन्ने । तओ अणत्तर उव्वट्टित्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ
जाव सव्वदुक्खाणमत काहिइ । एवामेव समणाउसो । जाव
पव्वइए समाणे माणुस्सएहि कामभोगेहि णो सज्जइ णो रज्जइ,
जाव विप्पडिघायमावज्जइ, से ण इह मवे चेव वहुण सावगाणं०

नैरपिकृतया उपपन्नः। एतद् दृष्टान्तेन भगवान् महावीर माधुन्यपदिशति—एवमेव
 =अने नैवमकारेण हे आयुष्मत ! श्रमणाः यः पश्चिदस्माक श्रमणो वा श्रमणी वा
 आचार्योपाध्यायानामतिके यात्रमव्रजितः सन् पुनरपि मानुष्यकान् कामभोगान्
 'आसाण्ड' आसादयति । स 'जाव अणुपरियट्टिस्मइ' यात्रदनुपर्वट्टिष्यति—
 यावत्—चातुरन्तससाकान्तार परिभ्रमिष्यति । 'जहेर से कडरीए राया' यथैव
 स कडरीको राजा ॥ सू०६ ॥

मूलम्—तएणं से पोंडरीए अणगारे जेणेव थेरा भगवंतो
 तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ताथेरे भगवते वदइ नमसइ,
 वदित्ता नमंसित्ता थेराणं अंतिए दोच्चपि चाउज्जाम धम्मं
 पडिवज्जइ, छट्टक्खमणवारणगंसि पढमाए पारिसीए सज्जाय
 करेइ, करित्ता जाव अडमाणे सीयल्लक्ख पाणभोयणं पडि
 गाहेइ, पडिगाहित्ता, अहापज्जत्तमिति कट्टु पडिणियत्तइ,

गर की जहा उत्कृष्ट स्थिति है—नारकी की पर्याय से उत्पन्न हो गये ।
 इसी बात को दृष्टान्त से श्री भगवान् महावीर प्रभु साधुओं को सम
 क्षाते है—(एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे पुणरवि माणु
 स्सए कामभोगे आसाए जाव अणुपरियट्टिस्मइ, जहा व से कडरीए
 राया) इसी तरह हे आयुष्मत श्रमणो ! जो कोई हमारा श्रमण अथवा
 श्रमणीजन आचार्य उपा याय के पाम मे दीक्षित होकर के पुनः मनुष्य
 भव स्वन्धी कामभोगो को भोगता है वह कडरीक राजा की तरह
 यावत् इस चतुर्गति रूप ससार कान्तार में परिभ्रमण कयेगा ॥सूत्र६॥

स्थिति प्रमाणु छे—अेटवे के उउ सागरनी न्या उत्कृष्ट स्थिति छे—नारकीनी
 पर्यायथी न्म पाभ्या अे न वातने श्री भगवान् महावीर प्रभु द्ध्यात इपभा
 साधुओने समजाये छे के—

एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे पुणरवि माणुस्सए कामभोगे
 आसाए जाव अणुपरियट्टिस्मइ, जहा व से कडरीए राया)

आ प्रमाणु छे आयुष्मत श्रमणो ! जे कोठ अमार श्रमणु अथवा
 श्रमणीजन आचार्य के उपाध्यायनी पास दीक्षित थधने इरी जे ते मनुष्य
 भवना कामभोगोने लोगवे छे, ते कडरीक राजनी जेभ यावत् आ चतुर्गति
 रूप ससार क्षातारभा परिभ्रमणु करेथे ॥ सूत्र ६ ॥

पौरुष्या=प्रथमे प्रहरे स्वाध्याय करोति, कृत्वा 'अडमाणे' यानत् अटन् उच्चनीच-
मध्यमकुलेषु भिक्षार्थं परिभ्राम्यन् 'सीयलुक्ख' शीतरूक्ष-शीत=पर्युषित, रूक्ष
घृतादिरहित पान भोजन प्रतिगृह्णाति, प्रतिगृह्य 'अहापज्जत्तमितिकट्टु' यथापर्या-
प्तमिति कृत्वा=उदरभरणपर्याप्तमिदमन्नमिति मनसि कृत्य 'पडिणियत्तइ' प्रति-

पडिवज्जइ, छट्टुक्खमणपारणगसि पढमाण पोरिसीण सज्जाय करेइ
करित्ता जाव अडमाणे सीयलुक्ख पाणभोगण पडिगाहेइ, पडिगाहित्ता
अहापज्जत्तमि त्ति कट्टु पडिनियत्तइ-जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवा
गच्छइ, उवागच्छित्ता भत्तपाणं पडिदसेइ, पडिदसित्ता थेरेहिं भगवतेहिं
अवभणुन्नाए समाणे अमुच्छिअ अगिद्धे अगडिए अणज्जुववण्णे विल
मिव पणगभूएण अप्पाणेण त फासुएसणिज्ज असणपाणखाइम
साइम सरीरकोट्टुगसि पक्खिवइ) वहाँ आकर के उन्हो ने स्थविर भग-
वतों को वदना नमस्कार किया। वदना नमस्कार करके बाद में उन्हो
ने उनसे दुवाराचातुर्याम-चतुर्मात्रतरूप धर्म को धारण किया। जब
पष्ठक्षपण की पारणा का समय आया उस समय वे प्रथम पौरुषी में
स्वाध्याय करते-और स्वाध्याय करके फिर वे उच्च नीच मध्यम कुलों
में भिक्षा के लिये परिभ्रमण करते उस समय जो उन्हें शीत-पर्युषित,
रूक्ष-घृतादिरहित पान भोजन मिलता-वह वे ले लेते-और यह अन्न-
सामग्री उदरभरण के लिये पर्याप्त है ऐसा मन में विचार कर वहा से

पारिस्सीए सज्जाय करेइ करित्ता जाव अडमाणे सीयलुक्ख पाणभोगण पडिगाहेइ
पडिगाहित्ता अहापज्जत्तमि त्ति कट्टु पडिनियत्तइ-जेणेव थेरा भगवतो तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भत्तपाणं पडिदसेइ, पडिदसित्ता थेरेहिं भगवतेहिं,
अवभणुन्नाए समाणे अमुच्छिअ अगिद्धे अगडिए अणज्जुववण्णे विलमिव पणगभूएण
अप्पाणेण त फासुएसणिज्ज असणपाणखाइमसाइम सरीरकोट्टुगसि पक्खिवइ)

त्या आधीने तेमळे स्थविर भगवताने वदना अने नमस्कार कर्था
वदना अने नमस्कार कॄरीने तेमळे तेमनी पासैथी णीअव र चातुर्याम-अतु
महात्रत इय धर्मने धारण कर्था न्यारे पष्ठ क्षपणुनी पारणानो वअत
आळ्यो त्यारे तेज्यो प्रथम पौड्धीमा स्वाध्याय करता अने स्वध्याय कर्गीने
तेज्यो उच्च, नीच अने मध्यम कुणोमा भिक्षा भाटे परिभ्रमण करता ते
सभये तेमने शीत-पर्युषित, रूक्ष-धी वगरनो, पान आहार भणो तो तेने
तेज्यो स्वीकारी वेता अने 'आटलो आहार उदर-पोषण भाटे पूरतो छे'
आवो मनमा विचार कर्गीने त्याथी पाछा इरी नता पाछा आधीने भिक्षाभा

अच्छणिऽजे घदणिऽजे पूयणिऽजे सशकारणिऽजे सम्माणणिजे
 कक्षाण मगलदेवय चेडय पञ्जुवासणिऽजेत्तिकहु परलोप
 वि य णं णो आगच्छइ घहूणि दडणाणि य मुंडणाणि य
 तज्जणाणि य ताडणाणि य जाव चाउरत ससारकतारं
 जाव वाडवइस्सइ जहावसे पोंडरीए अणगारे । एवं खलु
 जंबू । समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरंणं तिथ्यगरंणं
 जाव सिद्धिगइणामधेज्ज ठाण मपत्तेण एगुणवीसइमस्स
 नायज्झयणस्स अयमट्टे पन्नत्ते । एव खलु जंबू । समणेणं
 भगवया महावीरेणं जाव सिद्धिगइणामधेज्ज ठाण संपत्तेणं
 छट्टस्स अंगरस पढमस्स सुयक्खधस्स अयमट्टे पण्णेत्ते
 त्तिवेमि ॥ सू० ७ ॥

टीका—‘तएण से’ इत्यादि । तत’ खलु स पुण्डरीकोऽनगारो यत्रैव
 स्थविराभगवन्तस्तत्रैव उवागच्छति, उवागत्य स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति,
 वन्दित्वा नमस्यित्वा स्थविराणामन्तिके ‘दोच्चपि’ द्वितीयमपिचारम् चातुर्यामि-
 चतुर्महावतरूपधर्मं प्रतिपद्यते । तथा पष्ठक्षपणपारणाया सभाप्ताया प्रथमाया

‘तएण से पोंडरीए अणगारे’ इत्यादि ।

टीकार्थः—(तएण) इसके बाद (से पोंडरीए अणगारे) वे पुण्डरीक
 अनगार (जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ) जहा स्थविर भग
 वन विराजमान थे वहा आ गये । (उवागच्छित्ता थेरे भगवते वदइ,
 नमसइ, वदित्ता, नमसित्ता थेराणं अतिए दोच्चपि चाउज्जाम धम्म

(तएण से पोंडरीए अणगारे) इत्यादि ।

टीकार्थः—(तएण) त्पराभाइ (से पोंडरीए अणगारे) ते पुण्डरीक अन
 गार (जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ) जहा स्थविर भगवत विरा
 जमान छता त्या गया

(उवागच्छित्ता थेरे भगवते वदइ, नमसइ, वदित्ता, नमसित्ता थेराण
 अतिए दोच्चपि चाउज्जाम, धम्म पडिबज्जइ,

पौरुष्या=प्रथमे प्रहरे स्वाध्याय करोति, कृत्वा 'अडमाणे' यावत् अटन् उच्चनीच-
मध्यमकुलेषु भिक्षार्थं परिभ्राम्यन् 'सीयलुक्ख' शीतरूढ-शीत=पर्युषित, रुक्ष
घृतादिरहित पान भोजन प्रतिगृह्णाति, प्रतिगृह्य 'अहापज्जत्तमितिऋट्टु' यथापर्या-
प्तमिति कृत्वा=उदरभरणपर्याप्तमिदमन्नमिति मनसि कृत्य 'पडिणियत्तइ' प्रति-

पडिवज्जइ, छट्टुक्खमणपारणगसि पढमाण पोरिसीण सज्जाय करेइ
करित्ता जाव अडमाणे सीयलुक्ख पाणभोगण पडिगाहेइ, पडिगाहित्ता
अहापज्जत्तमि त्ति ऋट्टु पडिनियत्तइ-जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवा-
गच्छइ, उवागच्छित्ता भत्तपाणं पडिदसेइ, पडिदसित्ता थेरेहिं भगवतेहिं
अवमणुत्ताण समाणे अमुच्छिउण अगिद्धे अगटिण अणञ्जुवणणे विल-
मिव पणगभूएण अप्पाणेण त फासुएसणिज्ज असणपाणखाइम
साइम सरीरकोट्टगसि पक्खिवइ) वहाँ आकर के उन्हो ने स्थविर भग-
वतों को वदना नमस्कार किया। वदना नमस्कार करके वाद में उन्हो
ने उनसे द्वुवाराचातुर्याम-चतुर्महाव्रतरूप धर्म को धारण किया। जब
षष्ठक्षपण की पारणा का समय आया उस समय वे प्रथम पौरुषी में
स्वाध्याय करते-और स्वाध्याय करके फिर वे उच्च नीच मध्यम कुलों
में भिक्षा के लिये परिभ्रमण करते उस समय जो उन्हें शीत-पर्युषित,
रुक्ष-घृतादिरहित पान भोजन मिलता-वह वे ले लेते-और यह अन्न-
सामग्री उदरभरण के लिये पर्याप्त है ऐसा मन में विचार कर वहाँ से

परिसीए सज्जाय करेइ करित्ता जाव अटमाणे सीयलुक्ख पाणभोगण पडिगाहेइ
पडिगाहित्ता अहापज्जत्तमि त्ति ऋट्टु पडिनियत्तइ-जेणेव थेरा भगवतो तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भत्तपाणं पडिदसेइ, पडिदसित्ता थेरेहिं भगवतेहिं,
अवमणुत्ताण समाणे अमुच्छिउण अगिद्धे अगटिण अणञ्जुवणणे विलमिव पणगभूएण
अप्पाणेण त फासुएसणिज्ज असणपाणखाइमसाइम सरीरकोट्टगसि पक्खिवइ)

त्या आरीने तेमहे स्थविर भगवतोने वदना अने नमस्कार कर्था
वदना अने नमस्कार करीने तेमहे तेमनी पासेथी णीउवर आतुर्याम-अतु
भँडान्त इय धर्मने धारण कर्था न्यारे पछ क्षपणनी पारणानो वधत
आण्यो त्यारे तेओ प्रथम पौरुषीमा स्वाध्याय करता अने स्वाध्याय करीने
तेओ उच्च, नीच अने मध्यम कुलोमा भिक्षा माटे परिभ्रमण करता ते
समये तेमने शीत-पर्युषित, रुक्ष-धी वगरनो, पान आहार भणनो तो तेने
तेओ स्वीकरी लेता अने 'आटवो आहार उदर-पोषण माटे पूरतो छे'
आवे मनमा विचार करीने त्याथी पाछा करी जता पाछा आपीने भिक्षामा

अच्छणिऽजेवदणिज्जे पूयणिज्जे सक्कारणिऽजे सम्माणणिजे
 कङ्काण मगलदेवय चेइय पज्जुवासणिज्जेत्तिकहु परलोए
 वि य णं णो आगच्छइ वहुणि दडणाणि य मुंडणाणि य
 तज्जणाणि य ताडणाणि य जाव चाउरत ससारकतारं
 जाव वाइवइस्सइ जहावसे पोंडरीए अणगारे । एव खलु
 जंबू । समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं तित्थगरेणं
 जाय सिद्धिगइणामधेज्ज ठाण मपत्तेण एगुणवीसइमस्स
 नायज्जयणस्स अयमट्टे पन्नत्ते । एव खलु जंबू । समणेणं
 भगवया महावीरेणं जाव सिद्धिगइणामधेज्ज ठाणं सपत्तेणं
 छट्टस्स अंगरस पढमस्स सुयक्खधस्स अयमट्टे पण्णेत्ते
 त्तिवेमि ॥ सू० ७ ॥

टीका—‘तण्ण से’ इत्यादि । ततः खलु स पुण्डरीकोऽनगारो यत्रैव
 स्थविराभगवन्तस्तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति,
 वन्दित्वा नमस्यित्वा स्थविराणामन्तिके ‘दोच्चपि’ द्वितीयमपित्रारम् चातुर्याम=
 चतुर्महाव्रतरूपधर्मं प्रतिपद्यते । तथा पष्ठक्षपणपारणाया सभाप्ताया प्रथमाया

‘तण्ण से पोंडरीए अणगारे’ इत्यादि ।

टीकार्थः—(तण्ण) इसके बाद (से पोंडरीए अणगारे) वे पुंडरीक
 अनगार (जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ) जहा स्थविर भग
 वन विराजमान थे वहा आ गये । (उवागच्छित्ता थेरे भगवते वदइ,
 नमसइ, वदित्ता, नमसित्ता थेराणं अतिए दोच्चपि चाउज्जाम धम्म

(तण्णं से पोंडरीए अणगारे) इत्यादि ।

टीकार्थः—(तण्ण) त्थारणाइ (से पोंडरीए अणगारे) ते पुंडरीक अन
 गार (जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ) जहा स्थविर भगवत त्रिश
 न्मानं वतां त्या गया

(उवागच्छित्ता थेरे भगवते वदइ, नमसइ, वदित्ता, नमसित्ता थेराण
 अतिए दोच्चपि चाउज्जाम, धम्म पडिक्कइ, छट्टस्समणपारणाया पढमाय

समयमुल्लङ्घय प्राप्तम्, अरस विरस शीतरूक्ष पान भोजनम् 'आहारियस्स' आहारितस्य सत पूर्वरात्रापररात्रकालसमये 'धम्मजागरियं जागरमाणस्स' धर्म जागारिका जाग्रत = धर्मचिन्तनार्थं जागरणा कुर्वतः स आहारो नो सम्यक् परिणमति = नो परिपाक गच्छति । ततः खलु तस्य पुण्डरीकस्य अनगारस्य शरीरे वेदना प्रादुर्भूता 'उज्जला जाव दुरहियासा' उज्ज्वला यावत् दुरजिसहा, एषा व्याख्यापूर्ववत्, तथा स पुण्डरीकोऽनगारः पित्तज्वरपरिगतशरीरो दाहव्युत्क्रान्तिरुः = दाहज्वरसमाकुलश्चापि विहरति । ततः खलु स पुण्डरीकोऽनगार 'अस्थामे' अस्थामा = शक्तिरहितः, अवले = शारीरिकबलरहितः, 'अवीरिए' अवीर्यः = उत्साहरहितः, अपुरुषकारपराक्रमः = पुरुषार्थपराक्रमरहितः 'करयल जाव' करतल यावत् = करतलपरिगृहीतं दशनख मस्तके अञ्जलिं कृत्वा एवमवादीत् - नमोऽस्तु खलु अर्हद्भ्यो यावत्सेप्राप्तेभ्यः = मोक्ष गतेभ्यः, नमोस्तु खलु स्थविरेभ्यो भगवद्भ्यो मम धर्माचार्येभ्यो धर्मोपदेशकेभ्यः, पूर्वमपि च खलु मया स्थविराणा

भोग्येण आहारियस्स समाणस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि धम्मजागरिय जागरमाणस्स से आहारे णो सम्मं परिणमइ) उस तरह उन पुडरीक अनगार का कालातिक्रम से खाया हुआ वह अरस, विरस, शीत, रूक्ष, पानभोजन रात्रि के मध्यभाग में धर्मचिन्तन निमित्त जागरण करने के कारण अच्छी तरह से नहीं पचता था (तएण तस्स पुडरीयस्स अणगारस्स सरीरगसि वेयणा पाउवभूया उज्जला जाव दुरहियासा, पित्तज्वरपरिगतशरीरे दाहव्युत्क्रान्तिरु विहरइ, तएण से पुडरीए अणगारे अस्थामे, अवले, अवीरिए अपुरिसक्कारपरिक्कमे करयल जाव, एव वयासी-णमोत्थुण अरिहताण जाव सपत्ताण णमोत्थुण थेराण भगवताण मम धम्मायरियाण धम्मोवएसयाण पुण्वि पि य ण मए

लुस्य पाणभोग्येण आहारियस्स समाणस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि धम्मजागरिय जागरमाणस्स से आहारे णो सम्मं परिणमइ)

आ प्रभावे ते पुडरीक अनगारने। कालातिक्रमथी करेवे। ते अरस, विरस, शीत, रूक्ष पान आहारतु रात्रिना मध्य भागमा धर्मचिन्तन भाटे करेला। अनगारने लीये सारी राते पाचन थतु न छंतु।

(तएण तस्स पुडरीयस्स अणगारस्स सरीरगसि वेयणा पाउवभूया उज्जला जाव दुरहियासा, पित्तज्वरपरिगतशरीरे दाहव्युत्क्रान्तिरु विहरइ, तएण से पुडरीए अणगारे अस्थामे, अवले, अवीरिए अपुरिसक्कारपरिक्कमे करयल जाव, एव वयासी-णमोत्थुण अरिहताण जाव सपत्ताण थेराण भगवताण मम धम्मायरियाण

निर्वर्तते=प्रत्यागच्छति, प्रनिनिगच्छ यत्रैव स्थितिर्भगवन्तस्तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य, भक्तपान प्रतिदर्शयति, प्रतिदर्श्य, स्थविरेर्मगत्रिभ्यनुद्वातः सन् अमूर्च्छित अगृह्य अग्रथित' अनध्युपपन्नः=भामक्तिपगिर्जित इति भाव', ' विल मित् पन्नागभूषण अप्पाणेण ' विलमित् पन्नगभूनेन आत्मना इय=यथा पन्नग भूतेन=पन्नगभवमागतेन आत्मना=नीयेन विल प्रविश्यते, तथा त ' कामुएस णिज्जं ' प्राप्तुकैपणीय=हाचत्तारिण्णुपेयान्जितम् अशन पानं खाद्यं स्वाद्य 'सरीर कोट्टुगसि' शरीरकोष्ठके=उदरे प्रक्षिपति, यथा भुजङ्गो विगम्य पार्श्वभागद्वयमसम्पृ शन् म यभागत एवात्मानं विले प्रवेशयति तथा स मुगम्य पार्श्वद्वयस्पर्शरहित माहार कण्ठनालाभिमुख प्रवेश्य आहारयतीति भाव' । तत खलु तस्य पुण्डरी कस्य अनगारस्य ' कालाङ्कत ' कालातिक्रान्त=कायगतिक्रम्य प्राप्तम्-बुभुक्षा

वापिस आ जाते-वापिस आकर फिर प्राप्त भिक्षान्न को दिखाने के लिये वे जहा स्थविर भगवत विराजमान होते वहाँ आते-वहाँ आकर प्राप्त भिक्षान्न को उन स्थविर भगवतो को दिखलाते-दिखालकर जब वे उस आहार को खाने की आज्ञा देते-तब वे अमूर्च्छित भाव से अगृह्य चित्तवृत्ति से, एव आसक्ति रहित परिणति से उस प्राणुक प्पणीय-४२ दोषों से रहित अशन, पान, खाद्य, एव स्वाद्यरूप-आहार को जिस तरह सर्प-विल में प्रविष्ट होता है उसी तरह से शरीर कोष्ठक में-उदर में डाल देते थे । कारण इसका इस प्रकार है-जैसे भुजग विल के पार्श्वद्वय नहीं छूता हुआ सीधे मध्यभाग से अपने को विल में प्रविष्ट कराता है उसी तरह वे मुनिराज मुख के पार्श्वद्वय के स्पर्श से रहित आहार को सीधे कण्ठनाल में धर कर आहार करते थे (तएण तस्स पुण्डरीयस्स अणगारस्स त कालाङ्कत अरसविरस सियलुक्ख पाण

प्राप्त आहारने भताववा भाटे न्या ते स्थविर भगवत विराजमान इता त्या आवता त्या आवीने जेणवेवा आहारने ते स्थविर भगवतोने भतावता अने भतावीने न्यारे तेओ ते आहारने अहणु करवानी आज्ञा करता त्यारे तेओ अमूर्च्छित-भावथी, अगृह्य-चित्तवृत्तिथी अने आसक्ति रहित परिणुतिथी ते प्राप्तुक जेपणीय-४२ दोषोथी रहित अशन, पान, खाद्य अने स्वाद्यरूप आहा रने जेम साप दरमा प्रवेशे छे तेमज्ज शरीर कोष्ठकमा-पेटमा नाथी इता इता जेम साप दरना अने पार्श्वने स्पर्श न करता सीधो वच्चे धरने पोतानी मतने दरमा प्रविष्ट करावी ले छे तेमज्ज ते मुनिराज पणु भुभना अने पार्श्वना स्पर्शथी रहित आहारने सीधो कठनालमा भूङ्गीने उदरस्थ उरता इता (तएण तस्स पुण्डरीयस्स अणगारस्स त कालाङ्कत अरसविरस सिय

समयमुल्लङ्घ्य प्राप्तम्, अरस विरस शीतरुक्ष पान भोजनम् 'आहारियस्स' आहारितस्य सत पूर्वरात्रापररानकालसमये 'धम्मजागरियं जागरमाणस्स' धर्म जागारिका जाग्रत = र्मचिन्तनार्थं जागरणा कुर्वतः स आहारो नो सम्यक् परिणमति = नो परिपाक गच्छति । ततः खलु तस्य पुण्डरीकस्य अनगारस्य शरीरे वेदना प्रादुर्भूता 'उज्जला जाव दुरहियासा' उज्ज्वला यावत् दुरधिसत्त्वा, एषा व्याख्यापूर्ववत्, तथा स पुण्डरीकोऽनगारः पित्तज्वरपरिगतशरीरो दाहव्युत्क्रान्तिरुः = दाहज्वरसमाकुलथापि विहरति । ततः खलु स पुण्डरीकोऽनगार 'अस्थामे' अस्थामा = शक्तिरहितः, अवले = शारीरिकवलरहितः, 'अवीरिए' अवीर्यः = उत्साहरहितः, अपुरुषकारपराक्रमः = पुरुषार्थपराक्रमरहितः 'करयल जाव' करतल यावत् = करतलपरिगृहीतं दशनख मस्तके अञ्जलि कृत्वा एवमवादीत् - नमोऽस्तु खलु अर्हद्भ्यो यावत्सप्राप्तेभ्यः = मोक्ष गतेभ्यः, नमोस्तु खलु स्थविरेभ्यो भगवद्भ्यो मम धर्माचार्येभ्यो धर्मोपदेशकेभ्यः, पूर्वमपि च खलु मया स्थविराणा-

भोयण आहारियस्स समाणस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि धम्मजागरिय जागरमाणस्स से आहारे णो सम्मं परिणमइ) उस्स तरह उन पुडरीक अनगार का कालातिक्रम से खाया हुआ वह अरस, विरस, शीत, रुक्ष, पानभोजन रात्रि के मध्यभाग में धर्मचिन्तन निमित्त जागरण करने के कारण अच्छी तरह से नहीं पचता था (तएण तस्स पुडरीयस्स अणगारस्स सरीरगसि वेयणा पाडब्भूया उज्जला जाव दुरहियासा, पित्तज्वरपरिगतशरीरे दाहवक्कतिए विहरइ, तएण से पुडरीए अणगारे अस्थामे, अवले, अवीरिए अपुरिसक्कारपरिक्रमे करयल जाव, एव वयासी-णमोत्थुण अरिहताण जाव सपत्ताण णमोत्थुण येराण भगवताण मम धम्मायरियाण धम्मोवएसयाण पुब्बि पि य ण मए

लुक्क पाणभोयण आहारियस्स समाणस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि धम्मजागरिय जागरमाणस्स से आहारे णो सम्मं परिणमइ)

आ प्रभाषे ते पुडरीक अनगारो काणातिक्रमथी ढरेत्ते ते अरस, विरस, शीत, रुक्ष पान आहारतु रात्रिना मध्य भागमा धर्मचिन्तन भाटे ढरेत्ता नगरणुने लीधे सारी राते पायन थतु न इतुं

(तएण तस्स पुडरीयस्स अणगारस्स सरीरगसि वेयणा पाडब्भूया उज्जला जाव दुरहियासा, पित्तज्वरपरिगतशरीरे दाहवक्कतिए विहरइ, तएण से पुडरीए अणगारे अस्थामे, अवले, अवीरिए अपुरिसक्कारपरिक्रमे करयल जाव, एव वयासी-णमोत्थुण अरिहताण जाव सपत्ताण येराण भगवताण मम धम्मायरियाण

मन्तिके सर्व प्राणानिपातः प्रत्याग्यात यावत् मिथ्यादर्शनमन्यं खलु प्रत्याख्या-
तम्=अष्टादशपापम्यानानि प्रत्याख्यातानि इति भार, इतानीमपि तेषामेव
धेरार्ण अति सव्ये पाणाइवाए पञ्चम्याए जात्र मिच्छादमणसन्ले णं
पञ्चम्याए जात्र आलोइयपडिक्कते कालमासे काल किच्चा सव्वड-
सिद्धे उववन्ने) इस कारण पुढरीक अनगोर के शरीर में वेदना प्रकट
हो गइ। जिसके कारण उन्हें क्षणभंग भी जाता नहीं मिलती। धीरे र
यह समस्त शरीर में भी व्याप्त हो गई। यावत् यह उनके लिये सहन
हो सके पेसी नहीं रही-वे उसे घड़ी कठिनता से सहते। दाहज्वर ने
भी इनके शरीर पर अपना प्रभाव जमा लिया। इस तरह ये दाहज्वर
को ज्वाला से भी आकुल व्याकुल रहने लगे। धीरे र इनका शरीर
शक्ति रहित हो गया। शारीरिक बल भी इनका जाता रहा। उत्साह
रहित एव पुरुषार्थ पराक्रम से विहीन जब ये हो गये तब करतल परि-
गृहीत दशनखोंवाली अजलि को इन्होंने अपने मस्तक पर रखकर इस
प्रकार का पाठ बोलना प्रारंभ किया यावत् मुक्ति प्राप्त अर्हत भगवतों के
लिये मेरा नमस्कार हो, मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक स्थविर भगवतों के
लिये मेरा नमस्कार हो। मैंने पहिले भी स्थविर भगवतों के निकट सम-
स्त प्राणानिपात प्रत्योख्यान कर दिया है-यावत् मिथ्यादर्शन शल्य

धम्मोवसयाण पुत्तिं पि य ण मए धेरार्ण अति सव्वे पाणाइवाए पञ्चम्याए
जात्र मिच्छादमणसन्लेण पञ्चम्याए जात्र आलोइयपडिक्कते कालमासे काल
किच्चा सव्वड सिद्धे उववन्ने)

अथी ते पुढरीक अनगारना शरीरमा वेदना प्रकट थर्ध गइ तेथी तेभने
अेक क्षण भाटे पणु शाता भणती नडोती धीमे धीमे आ वेदना सपूर्थ
शरीरमा प्रसरी गइ यावत् ते तेमना भाटे असह्य थर्ध गइ, लारे मुश्केलीथी
तेओ तेने भमता डता दाहज्वरे पणु तेमना शरीर उपर पोताने प्रभाव
जभायी लीधी डतो, अथी तेओ दाहज्वरनी जवाणाओथी पणु आकुण-व्याकुण
रडेवा लाग्या धीमे धीमे तेमनु शरीर अशक्त थर्ध गयु शारीरिक भण पणु
तेमनु नष्ट थर्ध गयु डतु आ प्रमाणे ज्यारे तेओ उत्साह रहित अने
पुर्णार्थ पराक्रम विहीन थर्ध गया त्यारे करतल-परिगृहीत दशन नजोवाणी
अजलिने तेमणे पोताना मस्तके भूझिने आ प्रमाणेने पाठ बोलवा लाग्या
के यावत् मुक्ति प्राप्त अर्हत भगवतोने मारा नमस्कार छे, मारा धर्माचार्य,
धर्मोपदेशक स्थविर भगवतोने मारा नमस्कार छे मे पडेवा पणु भगवतोनी
पासे समस्त प्राणानिपात करी दीधु छे यावत् मिथ्यादर्शन

अन्तिके प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शनशल्य प्रत्याख्यामि, एव 'जाव आलो-
इय पडिकते' यावदालोचितप्रतिक्रान्त' कालमासे काल कृत्वा सर्वार्थसिद्धे
उपपन्नः । ततोऽनन्तरम्=तत्पश्चात् सर्वार्थसिद्धात् 'उव्वट्टित्ता' उव्वट्टित्य=सर्वार्थ-
सिद्धेर्निर्गत्य महाविदेहे वर्षे सेत्स्यति यावत् सर्वदुःखानामन्त करिष्यति । पुण्डरी-
कानगरचरित दृष्टान्तेनोपदर्श्य श्रमणानुपदिशति भगवान् महावीरः—' एवामेव '
अनेनैवप्रकारेण हे आयुधन्तः श्रमणाः 'जाव पव्वइए' यावत्प्रव्रजितः=योऽस्माक
श्रमणो वा श्रमणी वा आचार्योपाध्यायानामन्तिके प्रव्रजितः सन् मानुष्यकेषु
कामभोगेषु नो सज्जते नो असक्तिमाश्रयते 'नो रज्जते' नो रज्यते=नो अनु-
रागवान् भवति, 'जाव नो विप्पडिघायमावज्जइ' यावत् नो विप्रतिघातमाप-
द्यते=सयमनाश न प्राप्नोति, स खलु इह भवे एव वहूना श्रमणाना वहूना श्रम-
णीना वहूना श्रावकाणा वहूना श्राविकाणाम् अर्चनीयो वन्दनीयः पूजनीयः
सत्कारणीयः सम्माननीयो भवति, तथा च-स सर्वेषा 'कल्लाण' कल्याण=
कल्याणरूपम् 'मगल' मङ्गलम्=मङ्गलरूपम्, 'देवय' देवत=धर्मदेवरूपः,
'चेइय' चैत्यम्=ज्ञानरूप पर्युपासनीयश्च भवति 'त्तिकट्टु' इति कृत्वा इति

का अष्टादश पापस्थानो का, मैंने प्रत्याख्यान कर दिया है । और अब
भी उन्ही के साक्षी से प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शन शल्य का प्रत्या-
ख्यान करता हूँ । इस तरह आलोचित प्रतिक्रान्त होकर वे कालअवसर
कालकर सर्वार्थ सिद्ध नामके अनुत्तर विमान में उत्पन्न हो गये ।
(तओ अणतर उव्वट्टित्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, जाव सव्वडुक्खा
णमत काहिइ, एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे माणुस्स
एहिं कामभोगेहिं णो सज्जइ, णो रज्जइ, जाव नो विप्पडिघायमावज्जइ
सेण इह भवे चेव वहूण सावियाण अच्चणिज्जे, वदणिज्जे, पूयणिज्जे,
सत्कारणिज्जे सम्माणणिज्जे, कल्लाण मगल देवय चेइय पज्जुवास-

पापस्थानानु मे प्रत्याख्यान करी दीधु छे अने हुवे तेमनी न साक्षीमा
प्राणुतिपात यावत् मिथ्यादर्शन शल्यनु प्रत्याख्यान कर छु आ प्रभाणु
आलोचित प्रतिक्रान्त थधने तेओ काण अवसरे काण उरीने सर्वार्थसिद्ध नामना
अनुत्तर विमानमा उत्पन्न थध गया अने त्या तेमनी उउ सागरोपमनी स्थिति छे

(तओ अणतर उव्वट्टित्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, जाव सव्वडुक्खाण-
मत काहिइ, एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे माणुस्सएहिं काम
भोगेहिं णो सज्जइ, णो रज्जइ, जाव नो विप्पडिघायमावज्जइ से ण इह भवे
चेव वहूण सावियाण अच्चणिज्जे, वदणिज्जे, पूयणिज्जे, सत्कारणिज्जे, सम्माणणि-
ज्जे, कल्लाण मगल देवय चेइय पज्जुवासणिज्जे ति कट्टु परलोए वि य णं णो

मन्तिके मर्षः प्राणान्तिपातः प्रत्याग्यातः यावत् मिथ्यादर्शनमन्य खलु प्रत्याख्या-
 तम्=भ्रष्टादशपापस्थानानि प्रत्याग्यातानि इति भाव, इदानीमपि तेषामेव
 धेरार्ण अतिग सव्ये पाणाइघाण पचचक्राण जात्र मिच्छादमणसल्ले णं
 पचचक्राण जाव आलोइयपडिक्कते कालमासे काल किच्चा सव्वड्ड
 सिद्धे उववन्ने) इम कारण पुढरीक अनगार के शरीर में वेदना प्रकट
 हो गइ। जिसके कारण उन्हें क्षणभर भी शांता नहीं मिलती। धीरे २
 यह समस्त शरीर में भी व्याप्त हो गई। यावत् यह उनके लिये सहन
 हो सके ऐसी नहीं रही-वे उसे घड़ी कठिनता से महते। दाहज्वर ने
 भी इनके शरीर पर अपना प्रभाव जमा लिया। इस तरह ये दाहज्वर
 को ज्वाला से भी आकुल व्याकुल रहने लगे। धीरे २ इनका शरीर
 शक्ति रहित हो गया। शारीरिक बल भी इनका जाता रहा। उत्साह
 रहित एव पुरुषार्थ पराक्रम से विहीन जत्र ये हो गये तत्र करतल परि
 गृहीत दशनखोंवाली अजलि को इन्होंने अपने मस्तक पर रखकर इस
 प्रकार का पाठ बोलना प्रारंभ किया यावत् मुक्ति प्राप्त अर्हत भगवतों के
 लिये मेरा नमस्कार हो, मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक स्थविर भगवतों के
 लिये मेरा नमस्कार हो। मैंने पहिले भी स्थविर भगवतों के निकट सम
 स्त प्राणान्तिपात प्रत्योख्यान कर दिया है-यावत् मिथ्यादर्शन शल्य

धम्मोवएसयाण पुब्बिं पि य ण मए धेराण अतिग सव्ये पाणाइघाण पचचक्राण
 जाव मिच्छादमणसल्लेण पचचक्राण जाव आलोइयपडिक्कते कालमासे काल
 किच्चा सव्वड्ड सिद्धे उववन्ने)

अथी ते पुढरीक अनगारना शरीरमा वेदना प्रकट थर्ध गधं तेथी तेभने
 अेक क्षण भाटे पणु शाता भणती नडोती धीमे धीमे आ वेदना स पूणु
 शरीरमा प्रसरी गधं यावत् ते तेभना भाटे असइ थर्ध गधं, लारे मुश्केलीथी
 तेओ तेने अमता डता दाहज्वरे पणु तेभना शरीर उपर पोताने प्रलाव
 नभावी लीधा डतो, अथी तेओ दाहज्वरनी न्वाणाअथी पणु आकुण-व्याकुण
 रडेवा लाग्था धीमे धीमे तेभनु शरीर अशक्त थर्ध गयु शारीरिक भण पणु
 तेभनु नष्ट थर्ध गयु डतु आ प्रभाणु न्यारे तेओ उत्साह रहित अने
 पुरुषार्थ पराक्रम विहीन थर्ध गया त्यारे करतल-परिगृहीत दश नभोवाणी
 अजलिने तेभणु पोताना मस्तके भूझीने आ प्रभाणुने पाठ बोलवा लाग्था
 डे यावत् मुक्ति प्राप्त अर्हत भगवतोने मारा नमस्कार छे, मारा धर्माचार्य,
 धर्मोपदेशक स्थविर भगवतोने मारा नमस्कार छे मे पहिला पणु भगवतोनी
 पासै समस्त प्राणान्तिपात करी दीधु छे यावत् मिथ्यादर्शन

अन्तिके प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शनशल्य प्रत्याख्यामि, एव 'जाव आलो-
इय पडिकते' यात्रदालोचितप्रतिक्रान्तः कालमासे काल कृत्वा सर्वार्थसिद्धे
उपपन्नः । ततोऽनन्तरम्=उत्पन्नात् सर्वार्थसिद्धात् 'उव्वट्टित्ता' उद्वृत्य=सर्वार्थ-
सिद्धेर्निर्गत्य महाविदेहे वर्षे सेत्स्यति यावत् सर्वदुःखानामन्त करिष्यति । पुण्डरी-
कानगरचरित दृष्टान्तेनोपदर्श्य श्रमणानुपदिशति भगवान् महावीरः- 'एवामेव'
अनेनैवप्रकारेण हे आयुष्मन्तः श्रमणाः 'जाव पव्वइए' यावत्प्रव्रजितः=योऽस्माक
श्रमणो वा श्रमणी वा आचार्योपाध्यायानामन्तिके प्रव्रजितः सन् मानुष्यकेषु
कामभोगेषु नो सज्जते नो असक्तिमाश्रयते 'नो रज्जते' नो रज्यते=नो अनु
रागवान् भवति, 'जाव नो विप्पडिघायमावज्जइ' यावत् नो विप्रतिघातमाप-
द्यते=सयमनाश न प्राप्नोति, स खलु इह भवे एव वहूना श्रमणाना वहूना श्रम-
णीना वहूना श्रावकाणा वहूना श्राविकाणाम् अर्चनीयो वन्दनीयः पूजनीयः
सत्कारणीयः सम्माननीयो भवति, तथा च-स सर्वेषा 'कल्लाण' कल्याण=
कल्याणरूपम् 'मगल' मङ्गलम्=मङ्गलरूपम्, 'देवय' देवत=धर्मदेवरूपः,
'चेइय' चैत्यम्=ज्ञानरूप पर्युपासनीयश्च भवति 'त्तिकट्टु' इति कृत्वा इति

का अष्टादश पापस्थानो का, मैने प्रत्याख्यान कर दिया है । और अब
भी उन्हीं के साक्षी से प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शन शल्य का प्रत्या
ख्यान करता हूँ । इस तरह आलोचित प्रतिक्रान्त होकर वे कालअवसर
कालकर सर्वार्थ सिद्ध नामके अनुत्तर विमान में उत्पन्न हो गये ।
(तओ अणतर उव्वट्टित्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, जाव सव्वदुक्खा
णमत काहिइ, एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे माणुस्स
एहिं काम भोगेहिं णो सज्जइ, णो रज्जइ, जाव नो विप्पडिघायमावज्जइ
सेण इह भवे चेव वहुण सावियाण अच्चणिज्जे, वदणिज्जे, पूयणिज्जे,
सक्कारणिज्जे राम्माणणिज्जे, कल्लाण मगल देवय चेइय पज्जुवास-

पापस्थानानु मे प्रत्याख्यान करी दीधु छे अने हवे तेभनी न साक्षीभा
प्राणतिपात यावत् मिथ्यादर्शन शल्यनु प्रत्याख्यान करे छु आ प्रभाणु
आलोचित प्रतिक्रान्त थधने तेओ काण अवसरे जाण उरीने सर्वार्थसिद्ध नामना
अनुत्तर विमानभा उत्पन्न थणं गया अने त्या तेभनी उउ सागरोपभनी स्थिति छे

(तओ अणतर उव्वट्टित्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, जाव सव्वदुक्खाण-
मत काहिइ, एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे माणुस्सएहिं काम
भोगेहिं णो सज्जइ, णो रज्जइ, जाव नो विप्पडिघायमावज्जइ से ण इह भवे
चेव वहुण सावियाण अच्चणिज्जे, वदणिज्जे, पूयणिज्जे, सक्कारणिज्जे, सम्माणणि
ज्जे, कल्लाण मगल देवय चेइय पज्जुवासणिज्जे त्ति कट्टु परलोप वि य णं णो

हेतोः पग्लोकेऽपि च ग्लु ता नो आगच्छति= न प्राप्नोति बहूनि=बहुविधाणि
दण्डनानि च मुण्डनानि च तर्जनानि च ताडनानि च यावत् चतुरन्त संसार
कान्तर 'रीइउममड' व्यति मनिप्यति=उद्धृत् रयिप्यति, यथा स पुण्डरीकोऽनगार

णिज्जे त्ति कट्टु परलोण वि य ण णो आगच्छइ, बहूणि दडणाणि य
मुडणाणि य तज्जणाणि य ताडणाणि य जाव चाउरतससारकत्तार
जाव वीइवइस्सइ) इमके पाद वे उस सर्वार्थ सिद्ध विमान से चव कर
महाविदेहक्षेत्र में जन्म धारण कर वहाँ से सिद्धपद के भोक्ता बनेगे-
यावत् समस्त दुःखों का अन्त करेंगे। इस तरह पुण्डरीक अनगार के
चरित्र को दृष्टान्त रूप से ऋकर भगवान् महावीर प्रभु श्रमणजनों को
उपदेश करते हैं कि इसी प्रकार से हे आयुष्मत श्रमणो ! जो हमारा
श्रमण या श्रमणीजन आचार्य उपाध्याय के पास प्रव्रजित होकर मनु
ष्यभव सयधी कामभोगों में आसक्त नहीं बनता है, रज्जित-अनुराग
भाव सपन्न-नहीं होना है, यावत् अपने समय को नष्ट नहीं करता है,
वह इस भव में ही अनेक श्रमण श्रमणी, श्रावक एव श्राविकाओं
द्वारा अर्चनीय वदनीय पूजनीय सत्करणीय एव सन्माननीय होता है।
तथा जगत के लिये कल्याणरूप, मंगलरूप, धर्म देवरूप, और ज्ञानरूप
बन जाता है। लोग उसकी उपासना करते हैं। वह परलोक में भी
अनेक प्रकार के दडनरूप, दु खों को, मुडनों को तर्जनों को, ताडनाओं

आगच्छइ, बहूणि दडणाणि य मुडणाणिय तज्जणाणि य ताडणाणि य जाव
चाउरतससारकत्तार जाव वीइवइस्सइ)

त्यारपणी तेओ ते सर्वार्थसिद्ध विमानमाथी यवीने मडाविदेह क्षेत्रमा
जन्म धारण करीने त्याथी ज सिद्धपद भेगवशे यावत् समस्त दु खोना अत
करशे आ रीते पुडरीक अनगारना चरित्रने दृष्टात इपे कडीने महावीर प्रभु
श्रमणजनोने उपदेश करता कडे छे के आ प्रमाणे ज छे आयुष्मत श्रमणो !
जे अमारा श्रमण के श्रमणीजोने आचार्य उपाध्यायनी पासे प्रव्रजित यधने
मनुष्य लवना कामलोगोभा आसक्त यता नथी रज्जित-अनुरक्त यता नथी,
यावत् पोताना सयमने नष्ट करता नथी ते आ लवमा ज धणु श्रमण-
श्रमणी अने श्रावक मा वडे अर्थनीय, वदनीय, पूजनीय, सत्करणीय
अने सन्माननीय जगतना माटे कल्याणरूप, मंगलरूप, धर्म
देवरूप अने के तेनी उपासना करे छे, ते परलोकमा
पणु धणी नोने, तर्जने

सुधर्मास्वामी कथयति—एव खलु हे जम्बू ! श्रमणेन भगवता महावीरेण आदिकरेण तीर्थकरेण यावत् सिद्धिगतिनामधेय स्थान संप्राप्तेन एकोनविंशतितमस्य ज्ञाताध्ययनस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः । ज्ञातश्रुतस्कन्ध समापयन् सुधर्मा पुनः कथयति—एव खलु हे जम्बू ! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनामधेय स्थान संप्राप्तेन पष्ठस्य अङ्गस्य=पष्ठाङ्गसम्बन्धिन प्रथमस्य श्रुतस्कन्धस्य अयमर्थः=पूर्वोक्तरूपो भावः प्रज्ञप्तः=भगवता कथितः । ' त्ति वेमि ' इति व्रवीमि, व्याख्या पूर्ववत् ॥ सू०७ ॥

को नहीं पाता है और चतुर्गतिवाले इस समार कान्तार को पुंडरीक अनगर की तरह पार करनेवाला हो जाता है । (एव खलु जम्बू ! समणेण भगवया महावीरे ण आङ्गरेण तित्यगरेण जाव सिद्धि गई नामधेज्ज ठाणं सपत्तेण एगूणवीसइमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, एव खलु जम्बू ! समणेण भगवया महावीरे ण जाव सिद्धिगइणामधेज्ज ठाणं सपत्ते णं छट्ठस्स अगस्स पढमस्स सुयक्खधस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्तिवेमि) अब श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि हे जम्बू ! आदिकर तीर्थकर यावत् सिद्धि गति नामक स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान महावीर ने १९ वे ज्ञाताध्ययन का यह पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्ररूपित किया है । इस तरह हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर ने कि जो सिद्धिगति नामक स्थान को अच्छी तरह प्राप्त कर चुके हैं, उठे अग के प्रथम श्रुतस्कन्ध का यह पूर्वोक्त रूप से भाव प्रतिपादित किया है । ऐसा मैंने प्रभु के कहे अनुसार ही यह हे जम्बू ! तुमसे निवेदित किया है ।

प्राप्त करते नहीं अने चतुर्गतिवाला आ ससार कान्तारने पुंडरीक अनगरानी जेभ पार करनार थई जाय छे

(एव खलु जम्बू ! समणेण भगवया महावीरेण आङ्गरेण तित्यगरेण जाव सिद्धिगई नामधेज्ज ठाण सपत्तेण एगूणवीस इमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, एव खलु जम्बू ! समणेण भगवया महावीरेण जाव सिद्धिगइणामधेज्ज ठाणं सपत्तेण छट्ठस्स अगस्स पढमस्स सुयक्खधस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्तिवेमि)

इसे श्री सुधर्मा स्वामी कहे छे डे डे डे जम्बू ! आदिकर तीर्थकर यावत् सिद्धिगति नामक स्थानने भेजनी चुकेला श्रमण भगवान महावीर आगणीसमा ज्ञाताध्ययनने आ पूर्वोक्त रीते अर्थ प्ररूपित कर्यो छे आ प्रभावे डे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर डे जेभवे सिद्धिगति नामक स्थानने सारी रीते प्राप्त करी लीधु छे—छट्ठा अंगना प्रथम श्रुतस्कन्धने आ पूर्वोक्त उपमा भाव प्रतिपादित कर्यो छे डे जम्बू ! आपु मे प्रभुना कइया सुजण ज तमने उद्धु छे

हेतोः परलोकेऽपि च खलु सा नो आगच्छति= न प्राप्नोति बहूनि=बहुविधाणि
दण्डनानि च मृण्डनानि च तर्जनानि च ताडनानि च यावत् चतुरन्तं संसार
कान्तर 'रीडरडमड' व्यति घमिग्यति=उडट् रयिग्यति, यथा म पुण्डरीकोऽनगर

णिज्जे त्ति कट्टट्ट परलोण थि य ण णो आगच्छइ, बहूणि दडणाणि य
मुडणाणि य तज्जणाणि य ताडणाणि य जाव चाउरतससारकनारं
जाव धीइवइस्सइ) इसके बाद वे उस सर्वार्थ सिद्ध विमान से सब कर
महाविदेहक्षेत्र में जन्म धारण कर वहीं से सिद्धपद के भोक्ता बनें-
यावत् समस्त दुःखों का अन्त करेंगे। इस तरह पुंडरीक अनगर के
चरित्र को दृष्टान्त रूप से ऋककर मगवान् महावीर प्रभु श्रमणजनों को
उपदेश करते हैं कि इसी प्रकार से हे आयुष्मत श्रमणो ! जो हमारा
श्रमण या श्रमणीजन आचार्य उपाध्याय के पास प्रव्रजित होकर मनु
ष्यभव सयधी कामभोगों में आसक्त नहीं बनता है, रज्जित-अनुराग
भाव सपन्न-नहीं होना है, यावत् अपने सयम को नष्ट नहीं करता है,
वह इस भव में ही अनेक श्रमण श्रमणी, श्रावक एव श्राविकाओं
द्वारा अर्चनीय वदनीय पूजनीय सत्करणीय एव सन्माननीय होता है।
तथा जगत के लिये कल्याणरूप, मंगलरूप, धर्म देवरूप, और ज्ञानरूप
बन जाता है। लोग उसकी उपासना करते हैं। वह परलोक में भी
अनेक प्रकार के दंडनरूप, दुःखों को, मुडनों को तर्जनों को, ताडनाओं

आगच्छइ, बहूणि दडणाणि य मुडणाणिय तज्जणाणि य ताडणाणि य जाव
चाउरतससारकतार जाव वीइवइस्सइ)

त्यारपछी तेओ ते सर्वार्थसिद्ध विमानभाथी यचीने महाविदेह क्षेत्रमा
जन्म धारण करीने त्याथी ज सिद्धपद भेजचरी यावत् समस्त दुःखोना अत
करसे आ रीते पुंडरीक अनगारना यस्त्रिने दष्टात इपे कडीने महावीर प्रभु
श्रमणुजनेने उपदेश करता कडे छे के आ प्रभाणु ज डे आयुष्मत श्रमणो !
जे अमारा श्रमणु के श्रमणुजनेने आचार्य उपाध्यायनी पासे प्रव्रजित धधने
मनुष्य लवना कामलोओमा आसक्त थता नथी रज्जित-अनुरक्त थता नथी,
यावत् पोताना सयमने नष्ट करता नथी ते आ लवमा ज धणु श्रमणु-
श्रमणी अने श्रावक-श्राविकाओ वडे अर्थनीय, वदनीय, पूजनीय, सत्करणीय
अने सन्माननीय होय छे तेमज जगतना माटे कल्याणरूप, मंगलरूप, धर्म
देवरूप अने ज्ञानरूप अनी जय छे लोको तेनी उपासना करे छे, ते परलोकमा
पणु धणु जतना दंडन रूप, दुःखोने, मुडनोने, तर्ज

सुधर्मास्वामी कथयति-एव खलु हे जन्वुः ! श्रमणेन भगवता महावीरेण आदिकरेण तीर्थकरेण यावत् सिद्धिगतिनामधेय स्थान समाप्तेन एकोनविंशतितमस्य ज्ञाताध्ययनस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः । ज्ञातश्रुतस्कन्ध समापयन् सुधर्मा पुनः कथयति-एव खलु हे जन्वुः ! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनामधेय स्थान समाप्तेन पष्ठस्य अङ्गस्य=पष्ठठाङ्गसम्बन्धिनः प्रथमस्य श्रुतस्कन्धस्य अयमर्थः=पूर्वोक्तरूपो भावः प्रज्ञप्तः=भगवता कथितः । 'त्ति वेमि' इति ब्रवीमि, व्याख्या पूर्ववत् ॥ सू०७ ॥

को नहीं पाता है और चतुर्गतिवाले इस समार कान्तार को पुंडरीक अनगर की तरह पार करनेवाला हो जाता है । (एवं खलु जन्वु ! समणेण भगवया महावीरे ण आङ्गरेण तित्थगरेण जाव सिद्धि गई नामधेज्ज ठाण संपत्तेण एगूणवीसइमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, एव खलु जन्वु ! समणेण भगवया महावीरे ण जाव सिद्धिगइणामधेज्ज ठाण सपत्ते णं छट्ठस्स अगस्स पढमस्स सुयस्सवधस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्तिवेमि) अब श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि हे जन्वु ! आदिकर तीर्थकर यावत् सिद्धि गति नामक स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान महावीर ने १९ वे ज्ञाताध्ययन का यह पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्ररूपित किया है । इस तरह हे जन्वु ! श्रमण भगवान महावीर ने कि जो सिद्धिगति नामक स्थान को अच्छी तरह प्राप्त कर चुके हैं, उठे अग के प्रथम श्रुतस्कन्ध का यह पूर्वोक्त रूप से भाव प्रतिपादित किया है । ऐसा मैंने प्रभु के कहे अनुसार ही यह हे जन्वु ! तुमसे निवेदित किया है ।

प्राप्त करते नहीं अने चतुर्गतिवाला आ स सार कान्तारने पुंडरीक अनगारनी जेभ पार उरनार धरु जाय छे

(एवं खलु जन्वु ! समणेण भगवया महावीरेण आङ्गरेण तित्थगरेण जाव सिद्धिगई नामधेज्ज ठाण सपत्तेण एगूणवीस इमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, एव खलु जन्वु ! समणेण भगवया महावीरेण जाव सिद्धिगइणामधेज्ज ठाण सपत्तेण छट्ठस्स अगस्स पढमस्स सुयस्सवधस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्तिवेमि)

हवे श्री सुधर्मा स्वामी कहे छे हे जे जे जे जे जे ! आदिकर तीर्थकर यावत् सिद्धिगति नामक स्थानने भेजरी चुकेला श्रमण भगवान महावीरे जोगछीमभा जाताध्ययनने आ पूर्वोक्त रीते अर्थ प्ररूपित उर्यो छे आ प्रभावे छे जे जे ! श्रमण भगवान महावीरे जे जे जे सिद्धिगति नामक स्थानने सारी रीते प्राप्त करी लीधु छे-छट्ठा अगना प्रथम श्रुतस्कन्धने आ पूर्वोक्त रूपभा भाव प्रतिपादित उर्यो छे हे जे जे ! आबु मे प्रभुना कइया सुखण जे तमने उछु छे

‘ તસ્સે ’ ત્યાદિ, તસ્ય ક્લુ પ્રથમસ્ય શ્રુતસ્કથમ્ય ષ્કોનર્વિશ્વતિર યયનાનિ
‘ ઇમમરગાણિ ’ ષ્કસ્સગ્ગાનિ=વમાનો-ગારણાનિ=મ તથાલે ઉદ્દેશરગ્ગિતાનિ ષ્કોન
વિશતિ દિવસેષુ સમાપ્યમે ॥ મૂ૦ ૭ ॥

મગલ મગતાન યોઃ મગત ગૌતમ’ પ્રશુ’ ।

સુધર્મા મગલ, જવૃર્જનધર્મશ્ર મગલમ્ ॥ ૧ ॥

ઈતિ શ્રી-વિશ્વનિ-પાત-જગદ્ગુહમ-મસિદ્ધગાચરુપશ્ચદશમાપાકલિતકલિતક
લાપાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યધૈનેરુગ્રન્યનિર્માપક-ત્રાદિમાનમર્દક-શ્રીશાહુચ્છ
ત્રપતિશોલ્લાપુરરાજમદત્ત-‘ જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય ’ પદ્મૃષિત-શોલ્લાપુરરાજ
ગુરુ-ગાલત્તચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી-ગાસીલા-
ત્રતિરિરચિતાયા ‘ જ્ઞાતાધર્મકથાજ્ઞ ’ મૂત્સ્યાનગારધર્મામૃતવ-
વિંધ્યાગ્યાયા વ્યાર્યાયા પ્રથમશ્રુતસ્કથ સમાપ્ત ॥

इस कथन में मैंने अपनी तरफ से कोई भी कल्पना मिश्रित नहीं
की है किन्तु प्रभु के मुख से जैसा मैंने इसे सुना है वैसा ही यह तुम
से मैंने कहा है । “ तस्से ” त्यादि इस प्रथम श्रुतस्कथ के अन्तराल में
उद्देश रहित १९ अध्यायन हैं । ये अध्यायन १९ दिनोंमें समाप्त होते हैं ।

टीकाथः— सासारिक समस्त जीवों के लिये यदि मगलकारी पदार्थ
है-तो ये हैं मगतान् महावीर प्रभु गौतमगणधर, सुधर्मास्वामी, जव
स्वामी और जैनधर्म ।

इस तरह ज्ञाताधर्मकथाज्ञ सूत्रके प्रथम श्रुतस्कथ संपूर्ण ।

આ કથનમા મે મારા તરફથી કોઈપણ ભલની કલ્પના મિશ્રિત કરી નથી,
પણ પ્રભુના મુખથી જેણે મે સામળ્યુ છે તેણે મે કહ્યુ છે “ તસ્સે ” ત્ય દિ
આ પ્રથમ શ્રુત-સ્કથના અતરાલમા ઉદ્દેશ રહિત ઓગણીસ અધ્યાયનો છે
આ અધ્યાયનો ઓગણીસ દિવસોમા સમાપ્ત હોય છે

ટીકાથ — જધા સાસારિક જીવોના માટે જે મગલકારી પદાર્થો છે તે
તે ઓજ છે-ભગવાન મહાવીર પ્રભુ, ગૌતમ ગણધર, સુધર્મા સ્વામી, જવ
સ્વામી અને જૈન ધર્મ

“ આ પ્રમાણે જ્ઞાતાધર્મ કથાગનો જ્ઞાતા-નામે પ્રથમ શ્રુતસ્કથ સમાપ્ત થયો ”

॥ अथ ज्ञातासूत्रे द्वितीयश्रुतस्कन्धविवरणम् ॥

मङ्गलाचरणम्-

(वसन्ततिलकावृत्तम्)

आद्ये श्रुते भगवता रुचिरैरनेकैः-

ज्ञातैरदायि सकलार्त्तिहरः सुबोध' ।

स्मन्ने द्वितीयइह धर्मस्था च माक्षाद् ,

विज्ञापिता तमनिश वरद स्मरामि ॥ १ ॥

(मालिनीछन्द')

गणधरगुणार, प्राप्तमसारपारम् ,

भयिजनहितकार, दत्तसम्यक्त्वसारम् , ।

हृतसकलविरार भव्यचित्तैरुदार ,

गियसुखपदवार, नीमि चारित्रसारम्, ॥ २ ॥

-:द्वितीयश्रुतस्कन्धप्रारम्भ:-

आद्येश्रुते इत्यादि'—प्रथम श्रुतस्कन्धमे भगवान् सूत्रकार ने अनेक सुन्दर दृष्टान्तों द्वारा सकल आर्त्ति (दुःख) हारक सुबोध प्रदान किया है अथ वे इस द्वितीय श्रुतस्कन्ध में साक्षात् धर्मकथाएँ प्रकट करेंगे—अतः ऐसे भगवान को मैं कि जो भव्यजीवों को कल्याण करनेवाले होते हैं उनको निरन्तर नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

गणधरइत्यादि—जो गणधरो के गुणों को धारण करनेवाले हैं ससार को पार करनेवाले हैं, जो भव्यजनों को हितकारक है, सम्यक्त्वरूपी गुणके बोधक हैं—सकल विकारों से रहित है, इसलिए जो भव्यजीवों

द्वितीय श्रुतस्कन्ध प्रारम्भ

आद्ये श्रुतेत्यादि—प्रथम श्रुतस्कन्धमे भगवान् सूत्रकारे धर्या सुन्दर दृष्टान्तो वडे समस्त आर्त्ति (दुःख) हारक सुबोध प्रदान कर्यो छे इवे तेज्यो आभीन श्रुतस्कन्धमे साक्षात् धर्मकथाज्यो प्रकट कर्यो छेटला भाटे ज्येवा भगवानने—क ज्येज्यो भव्य ज्येज्यो कल्याण करनारा छे—हु निरन्तर नमस्कार कर छु १

गणधर इत्यादि—ज्येज्यो गणधरोना गुणोने धारण करनारा छे, मसा रने पार करनारा छे ज्येज्यो भव्यजनोना हितकारक छे, सम्यक्त्व रूपी गुणना बोधक छे, आ लधा विकारोधी रहित छे, छेटला भाटे ज्येज्यो भव्य ज्येज्यो

'तस्से' त्यादि, तस्य ऋतु प्रथमस्य श्रुतस्कथस्य एकोनविंशतिरध्यायानि
'एगमरगाणि' एतस्य ऋतुनि=प्रधानोत्तराणानि=भ तराले उद्देशरहितानि एकोन
विंशति दिरसेषु समाप्यते ॥ सू० ७ ॥

मगलं भगवान् गौरः मगलं गौतमं प्रभुं ।

सुधर्मा मगल, जवूर्जनधर्मश्च मगलम् ॥ १ ॥

इति श्री-विश्वनिष्पात-जगद्गुरु-पसिद्धराचरुपञ्चदशभाषाकलितकलितक
लापालापरु-प्रविशुद्गघपद्यैनेकग्रन्थनिर्मापरु-त्रादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छ
त्रपतिशोलापुरराजमदच-'जैनशास्त्राचार्य' पद्मभूषित-कोल्हापुरराज
गुरु-मालत्रल्लचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिनाकर पृज्यश्री-शासीलाच-
प्रतिरिचिताया 'ज्ञाताधर्मकथाङ्ग' सूत्रस्यानगारधर्ममृतव-
दिण्यान्याया व्याख्याया प्रथमश्रुतस्कथ समाप्तः ॥

इस कथन में मैंने अपनी तरफ से कोई भी कल्पना मिश्रित नहीं
की है किन्तु प्रभु के सुत्र से जैसा मैंने इसे सुना है वैसा ही यह तुम
से मैंने कहा है। "तस्से" त्यादि इस प्रथम श्रुतस्कथ के अन्तराल में
उद्देश रहित १९ अध्यायन हैं। ये अध्यायन १९ दिनोंमें समाप्त होते हैं।

टीकाथं - सासारिक समस्त जीवों के लिये यदि मगलकारी पदार्थ
है-तो ये हैं भगवान् महावीर प्रभु गौतमगणधर, सुधर्मास्वामी, जव
स्वामी और जैनधर्म।

इस तरह ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रके प्रथम श्रुतस्कथ संपूर्ण।

आ कथनमा मे भारा तरकथी डोद्यपद्यु नतनी कल्पना मिश्रित करी नहीं,
पद्यु प्रभुना सुधर्मी तेषु मे सागज्यु छे तेषु ज मे कथ्यु छे "तस्से" त्यादि
आ प्रथम श्रुत-स्कथना अतरालमा उद्देश रहित आगणीस अध्यायनो छे
आ अध्यायनो आगणीस दिवनेमा समाप्त होय छे

टीकाथं - अथा सासारिक लोकेना भाटे जे भगणकारी पदार्थो छे तो
ते ज्ये छे-भगवान् महावीर प्रभु, गौतम गणधर, सुधर्मा स्वामी, जव
स्वामी अने जैन धर्म

"आ प्रभाषे ज्ञाताधर्म कथागने ज्ञाता-नामे प्रथम श्रुतस्कथ समाप्त थये"

नगारशतैः सार्द्धं सपरिवृताः ' पुष्पाणुपुष्पि ' पूर्वानुपूर्व्या=तीर्थङ्करपरम्परया
 ' चरमाणा ' चरन्त =विहरन्तः ग्रामानुग्राम एरुग्रामादव्यवधानेनान्य ग्रामम् ' दूइ
 उजमाणा ' द्रवन्तः=स्पृशन्त ' सुह सुहेण ' सुख सुखेन=सुखपूर्वक यथावसर-
 मित्यर्थः विहरन्तो यत्रैव राजगृह नगर यत्रैव गुणशिलक चैत्य यावत्-सयमेन
 तपसा आत्मान भावयन्तो विहरन्ति । अत्र आदरार्थं गृहचनम् । परिपन्निर्गता ।
 धर्मः कथितः । परिपद् यस्या एव दिशः प्रादुर्भूता तामेव दिशं प्रतिगता ।
 तस्मिन् काले तस्मिन् समये आर्यसुधर्मणोऽनगारस्यान्तेवासी आर्य जम्बूनामान

उजमाणा सुहसुहेण विहरमाणा जेणेव रायगिहे णयरे जेणेव गुणसिलए
 चेइए जाव सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणा विहरति) उस काल
 और उम समय में श्रमण भगवान महावीर के अतेवामी आर्य सुधर्मा
 नाम के स्थविर भगवत कि जो विशुद्ध मातृवशवाले थे विशुद्ध पितृ-
 वशवाले थे, यावत् बल, रूप, विनय, ज्ञान, दर्शन, चारित्र्य एव लाघव
 सपन्न थे, चौदहपूर्व के पाठी थे-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान एव
 मन पर्यव ज्ञान इन चारों ज्ञानों के धारक थे-पाचसौ अनगारों के साथ
 तीर्थंकर परपरा के अनुसार विहार करते २ एक ग्राम से दूसरे ग्राम में
 विना किसी व्यवधानके विचरण करते हुए सुख पूर्वक समय पर-जहा
 राजगृह नगर और उस में भी जहां वह गुणशिलक चैत्य था आये ।
 वहा वे समय एव तप से आत्मा को भावित करते हुए उनरे (परिसा
 निग्गया धम्मो कहिओ परिसा जामेव दिस पाउब्भूया तामेव दिसि
 पडिगया, तेण कालेण तेण समएण अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स अते-

उजमाणा सुहसुहेण विहरमाणा जेणेव रायगिहे णयरे जेणेव गुणसिलए चेइए
 जाव सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणा विहरति)

ते डाणे = ते ते समये श्रमणु लगवान महावीरना अतेवासी आर्य
 सुधर्मा नामना स्थविर लगवत के जेओ विशुद्ध मातृवशवाणा हुता-विशुद्ध
 पितृवशवाणा हुता, यावत् बल, रूप, विनय, ज्ञान, दर्शन, चारित्र्य अने
 लाघव-सपन्न हुता थौड पूर्वना पाठी हुता, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान
 अने मन पर्यवज्ञान अने आरे ज्ञानेना धारक हुता पाचसौ अनगारोनी साथे
 तीर्थंकर परपरा सुजण विहार करता करता अेक गामथी धीरे गाम कोष्ठपणु
 जातना व्यवधान वगर सुजेथी यथा समय न्या राजगृह नगर अने तेमा
 पणु न्या ते शुशुशिलक चैत्य हुतु त्या आव्या त्या तेओ समय अने तप
 द्वारा पोटाना आत्माने भावित उरता रोकया

(परिसा निग्गया धम्मो कहिओ परिसा जामेव दिस पाउब्भूया तामेव
 दिसि पडिगया, तेण कालेण तेण समएण अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स अतेवासी

टीका—तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नाम नगरमासीत्, 'वण्णओ' वर्णकः—नगरवर्णन सर्वमत्र विज्ञेयम् । तस्य गन्तु राजगृहस्य नगरस्य बहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे तत्र खलु गुणसिलक नाम चैत्यमासीत्, 'उगओ' वर्णकः=चैत्यवर्णन प्रकारः सर्गोऽत्र वाच्यः । तस्मिन् काले तस्मिन् समये भ्रमणस्य भगवतो महावीर स्यान्तेवासिन आर्यगृधर्माणो नाम स्थविरा भगवन्तः 'जाइसपन्ना' जातिस पन्नाः=सुत्रिष्ठमावृशः, कुलमपन्नाः=प्रिथुद्विषयशः, 'जाव' यावत्-बल-रूप-विनय-ज्ञान-दर्शन-चारित्र-आचर-सम्पन्ना, इत्यादि यावत्-चतुर्दशपूर्णिः 'चउणाणोवगया' चतुर्ज्ञानोपगता =मतिश्रुतावधिमन. पर्यवज्ञानयुक्ताः पञ्चभिर

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समण्ण) उस काल और उस समय में (रायगिहे नामं नयरे होत्था) राजगृह नाम का नगर था। (वण्णओ) नगर का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित चपा नगरी के समान जानना चाहिये। (तस्स ण रायगिहस्स णयरस्स वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए तत्थणं गुणसिलए णाम चेइए होत्था, वण्णओ) उस राज गृह नगर के बाहिर उत्तर पौरस्त्यदिग्भाग की ओर (ईशानकोण में) एक गुणसिलक नाम का चैत्य-उद्यान-था। यहा पर भी सब चैत्यवर्णन औपपातिक सूत्र की तरह जानना चाहिये—(तेण कालेण तेण समण्ण भमणस्स भगवओ महावीरस्स अतेवासी अज्ज सुहम्माणाम थेरा भगवतो जाइ सपन्ना कुल सपन्ना जाव चउइसपुव्वी चउणाणोवगया पंचहि अणगारसण्हिं सद्धिं सपरिवुटा पुव्वाणुपुच्चिं चरमाणा गामाणुगाम दूइ

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समण्ण) ते काले अने ते समये (रायगिहे नाम नयरे होत्था) राजगृह नामे नगर इत्तु (वण्णओ) आ नगरत्तु वर्णन औपपातिक सूत्रमा वर्णववाभा आवेत्ता यथा नगरीता वर्णननी जेम ज्ज न्णुपु वेवु जेधजे

(तस्स ण रायगिहस्स णयरस्स वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए तत्थणं गुणसिलए णाम चेइए होत्था, उण्णओ)

ते राजगृह नगरनी षडार उत्तर पौरस्त्य दिग्-भागनी तरइ जेधजे के ईशान कोणमा जेक गुणसिलक नामे चैत्य-उद्यान-इते। अही चैत्य विषेत्तु अत्तु वर्णन औपपातिक सूत्रनी जेम न्णुपु जेधजे

(तेण कालेण तेण समण्ण भमणस्स भगवओ महावीरस्स अतेवासी अज्ज सुहम्माणाम थेरा भगवतो जाइसपन्ना कुलसपन्ना जाव चउइस पुव्वी चउणाणो वगया पंचहिं अणगारसण्हिं सद्धिं सपरिवुटा पुव्वाणुपुच्चिं चरमाणा गामाणुगाम दूइ

नगारशतैः सार्द्धं सपरिवृताः 'पुष्पाणुपुर्वि' पूर्वाणुपूर्व्या=तीर्थङ्करपरम्परया 'चरमाणा' चरन्त =विहरन्तः ग्रामानुग्राम एकग्रामादव्यवधानेनान्य ग्रामम् 'दू-
ज्जमाणा' द्रवन्तः=स्पृशन्त 'सुह सुहेण' सुख सुखेन=सुखपूर्वक यथावसर-
मित्यर्थः विहरन्तो यत्रैव राजगृह नगर यत्रैव गुणशिलक चैत्य यावत्-सयमेन
तपसा आत्मान भावयन्तो विहरन्ति । अत्र आदरार्थं बहुवचनम् । परिपन्निर्गता ।
धर्मः कथितः । परिपद् यस्या एव दिशः प्रादुर्भूता तामेव दिश प्रतिगता ।
तस्मिन् काले तस्मिन् समये आर्यसुधर्मणोऽनगारस्यान्तेवासी आर्य जम्बूनामान

ज्जमाणा सुहसुहेण विहरमाणा जेणेव रायगिहे णयरे जेणेव गुणसिलए
चेहए जाव सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणा विहरति) उस काल
और उस समय में श्रमण भगवान महावीर के अतेवामी आर्य सुधर्मा
नाम के स्थविर भगवत कि जो विशुद्ध मातृवशवाले थे विशुद्ध पितृ-
वशवाले थे, यावत् बल, रूप, विनय, ज्ञान, दर्शन, चारित्र एव लाघव
सपन्न थे, चौदहपूर्व के पाठी थे-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान एव
मन पर्यव ज्ञान इन चारों ज्ञानों के धारक थे-पाचसौ अनगारों के साथ
तीर्थंकर परपरा के अनुसार विहार करते २ एक ग्राम से दूमरे ग्राम मे
बिना किसी व्यवधानके विचरण करते हुए सुख पूर्वक समय पर-जहां
राजगृह नगर और उस में भी जहां वह गुणशिलक चैत्य था आये ।
वहा वे सद्यत एव तप से आत्मा को भावित करते हुए उतरे (परिसा
निग्गया धम्मो कहिओ परिसा जामेव दिस पाउब्भूया तामेव दिसि
पडिगया, तेण कालेण तेण समएण अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स अते-

ज्जमाणा सुह सुहेण विहरमाणा जेणेव रायगिहे णयरे जेणेव गुणसिलए चेहए
जाव सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणा विहरति)

ते काणे = ते ते मध्ये श्रमणु भगवान महावीरना अतेवासी आर्य
सुधर्मा नामना स्थविर भगवत के जेणे विशुद्ध मातृवशवाला हुना-विशुद्ध
पितृवशवाला हुता, यावत् बल, रूप, विनय, ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने
लाघव-सपन्न हुता चौदह पूर्वना पाठी हुना, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान
अने मन पर्यवज्ञान अने आरे ज्ञानेना धारक हुता पाचसौ अनगारानी साथे
तीर्थंकर परपरा सुज्ज विहार करता करता अके गामथी भीरे गाम डोएपणु
जतना व्यवधान वगर सुजेथी यथा समय न्या राजगृह नगर अने तेमा
पणु न्या ते सुखशिलक चैत्य हुतु त्या आव्या त्या तेजे सयम अने तप
दाग पोताना आत्माने भावित करता शक्या

(परिसा निग्गया धम्मो कहिओ परिसा जामेव दिस पाउब्भूया तामेव
दिसि पडिगया, तेण कालेण तेण समएण अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स अतेवासी

टीका—तस्मिन् काले तस्मिन् समय राजगृह नाम नगरमासीत्, 'वण्णओ' वर्णकः—नगरवर्णन सर्वत्र विद्येयम् । तस्य सन्तु राजगृहस्य नगरस्य बहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे तत्र खलु गुणशिलक नाम चैत्यमासीत्, 'वण्णओ' वर्णकः=चैत्यवर्णन प्रकारः सर्वोऽत्र थायः । तस्मिन् काले तस्मिन् समये भगवतो महावीरस्यान्तेवासिन आर्यगृधर्माणो नाम स्थविरा भगवन्त 'जाइसपन्ना' जातिसपन्नाः=धुविशुद्धमावृत्ता, कुलसपन्नाः=विशुद्धपितृशः, 'जाव' यावत्-बलरूप-विनय-ज्ञान-दर्शन-चारित्र-आचर-सम्पन्नाः, इत्यादि यावत्-चतुर्दशपूर्विणः 'चउणाणोवगया' चतुर्हानोपगता =मतिश्रुतायधिमनः पर्ययज्ञानयुक्ताः पञ्चभिर

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समण्ण) उस काल और उस समय में (रायगिहे नाम नयरे होत्था) राजगृह नाम का नगर था। (वण्णओ) नगर का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित चपा नगरी के समान जानना चाहिये। (तस्स ण रायगिहस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए तत्थणं गुणसिलए णाम चेइए होत्था, वण्णओ) उस राजगृह नगर के बाहिर उत्तर पौरस्त्यदिग्भाग की ओर (ईशानकोण में) एक गुणशिलक नाम का चैत्य-उद्यान-था। यहा पर भी सब चैत्यवर्णन औपपातिक सूत्र की तरह जानना चाहिये—(तेण कालेण तेण समण्ण समणस्स भगवओ महावीरस्स अतेवासी अज्ज सुहम्माणाम थेरा भगवतो जाइ सपन्ना कुल सपन्ना जाव चउइसपुव्वी चउणाणोवगया पंचहि अणगारसएहिं सद्धिं सपरिवुटा पुव्वाणुपुव्वि चरमाणा गामाणुगाम इइ

टीकार्थ—(तेण कालेण तेण समण्ण) ते काले अने ते समये (रायगिहे नाम नयरे होत्था) राजगृह नामे नगर इत्तु (वण्णओ) आ नगरत्तु पव्वुत्तं औपपातिक सूत्रमा पव्वुत्तंवा मा आवेत्ता च पा नगरीना पव्वुत्तनी जेम जे नणी देवु जेधये

(तस्स ण रायगिहस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए तत्थण गुणसिलए णाम चेइए होत्था, वण्णओ)

ते राजगृह नगरनी भडार उत्तर पौरस्त्य दिग्-भागनी तरइ ओइ के ईशान कोणमा ओक गुणशिलक नामे चैत्य-उद्यान-इत्तो अही चैत्य विवत्तु अधु पव्वुत्तं औपपातिक सूत्रनी जेम नणुवु जेधये

(तेण कालेण तेण समण्ण समणस्स भगवओ महावीरस्स अतेवासी अज्ज सुहम्माणाम थेरा भगवतो जाइसपन्ना कुलसपन्ना जाव चउइस पुव्वी चउणाणो वगया पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं सपरिवुटा पुव्वाणुपुव्वि चरमाणा गामाणुगाम इइ

श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन धर्मकृत्याना द्वावर्गाः प्रज्ञप्ताः, तत्रथा तानेव दर्शयति-
 'चमरस्म चमरस्य=चमरेन्द्रस्य दाभिणात्यासुरकुमारेन्द्रस्य अग्रमहिषीणा प्रथमो-
 वर्गः १ । 'वल्गिस्स' वल्गिनाम्नः 'वडरोयणिदस्स' वैरोचनेन्द्रस्य=वि=विधि
 प्रकारैः रोचन्ते=दीप्यन्ते दाक्षिणात्यासुरकुमारेभ्यो विशिष्टद्वीप्तिमत्त्वात् इति विरो
 चना, त एव वैरोचनाः=औदीन्यासुरकुमारास्तेषामिन्द्रः वैरोचनेन्द्रस्तस्य 'वडरो-
 यणरन्नो' वैरोचनराजस्य=वैरोचनाधिपतेः अग्रमहिषीणा द्वितीयो वर्गः २ । असुर-
 रेन्द्रवर्जिताना 'दाहिणिल्लाण' दाभिणात्याना=दक्षिणद्विक्सम्बन्धिना भवन-
 वासिनामिद्राणामग्रमहिषीणा तृतीयो वर्गः ३ । 'उत्तरिल्लाण' उत्तरीयाणामसु-
 रेन्द्रवर्जिताना भवनवासिनामिद्राणामग्रमहिषीणा चतुर्थो वर्गः ४ । दाक्षिणात्याना
 वानव्यन्तराणामिन्द्राणामग्रमहिषीणा पञ्चमो वर्गः ५ । उत्तरीयाणां वानव्यन्तरा-
 णामिन्द्राणामग्रमहिषीणा षष्ठो वर्गः ६ । चन्द्रस्याग्रमहिषीणा सप्तमो वर्गः ७ ।

स्वामी ने उनसे कहा-हे जन्म । सुनो-यावत् मुक्तिस्थान को प्राप्त हुए
 श्रमण भगवान् महावीर ने धर्मकृत्यों के दश वर्ग प्रज्ञप्त किये हैं-(त
 जहा) वे इस प्रकार हैं-(चमरस्स अग्रमहिषीणं पढमेवग्गे ? वल्गिस्स
 वडरोयणिदस्स वडरोयणरन्नो अग्रमहिषीण वीओ वग्गो २ असुरिद-
 वज्जियाण दाहिणिल्लाण भवणवासीण इदाण अग्रमहिषीणं तडओ
 वग्गो ३ उत्तरिल्लाण असुरिदवज्जियाण भवणवासीण इदाण अग्रम-
 हिषीण चउट्यो वग्गो ४ दाहिणिल्लाण वाणमतराण-इदाण अग्रमहि-
 सीण पचमो वग्गो, उत्तरिल्लाण वाणमतराण इदाण अग्रमहिषीण उट्टो
 वग्गो ६, चदस्स अग्रमहिषीण सत्तमो वग्गो, सरस्म अग्रमहिषीण
 अट्टमो वग्गो सक्कस्स अग्रमहिषीण णवमो वग्गो, ईसाणस्स अग्रम
 हिषीण दसमो वग्गो) चमरेन्द्र की-दाक्षिणात्य असुरकुमारेन्द्र की-

तेभने ऽह्णु डे डे ञ्णु । आलणे। यावत् मुक्तिस्थानने प्राप्त करी थुवेला
 श्रमणु भगवान् महावीरे धर्मकृत्याना दश वर्गो प्रज्ञप्त उथा डे (तजहा)
 तेओ आ प्रभाणु डे-

(चमरस्स अग्रमहिषीण पढमेवग्गे वल्गिस्स वडरोयणिदस्स वडरोयणरन्नो
 अग्रमहिषीण वीओ वग्गो २ असुरिदवज्जियाण दाहिणिल्लाण भवणवासीण
 इदाण अग्रमहिषीण तडओ वग्गो ३, उत्तरिल्लाण असुरिदवज्जियाण भवण-
 वासीण इदाण अग्रमहिषीण चउट्यो वग्गो ४ दाहिणिल्लाण वाणमतराण-
 इदाण अग्रमहिषीण पचमो वग्गो, उत्तरिल्लाण वाणमतराण इदाण अग्रमहि-
 सीण उट्टो वग्गो ६, चदस्स अग्रमहिषीण सत्तमो वग्गो, सरस्म अग्रमहिषीण अट्टमो
 वग्गो, सक्कस्स अग्रमहिषीण णवमो वग्गो, ईसाणस्स अग्रमहिषीण दसमो वग्गो)

गार. यावत्-‘पञ्जुवासमाणे’ पर्युपासीनः=संभ्रान. परमरदत्-यदि खलु
 ‘भते’ भदन्त=हे भगवन् । श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्-मोक्ष सम्प्राप्तेन
 पण्डस्याङ्गस्य प्रथमस्य श्रुतस्क्रन्धस्य ‘णायाण’ ज्ञानानाम्=उदाहरणानाम् अयमर्थ
 मज्ञप्तः द्वितीयस्य खलु हे भदन्त ! श्रुतस्क्रन्धस्य धर्मकथायां श्रमणेन यावत्सम्प्रा
 प्तेन=मोक्ष गतेन भगवता कौड्यं प्राप्तं ? । सुधर्मास्वामीमाह-एव खलु हे जम्बू !

वासी अञ्ज जम्बूणाम अणगारे जाव पञ्जुवासमाणे एव वयासी-जम्बूणं
 भते समणेण जाव सपत्तेण उट्टस्स अगस्स पढमस्स सुयस्सधस्स
 णायाण अयमट्ठे पन्नत्ते दोच्चस्स ण भते ! सुयस्सधस्स धम्मकहाणं
 समणेणं जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते ? एव खलु जम्बू ! समणेण जाव
 सपत्तेणं धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता) राजगृह नगर से परिषद
 वदन करने के लिये आई । सुधर्मास्वामी धर्म का उपदेश दिया । उपदेश
 सुनकर परिषद अपने २ स्थान पर पीछे बसा से चली गई । उस काल में
 और उस समय में आर्य सुधर्मास्वामी के अतेवासी आर्य जम्बू नामके
 अनगार ने यावत् उनकी पर्युपासना करते हुए उनसे इस प्रकार पूछा
 हे भदत् । यावत् मुक्तिको प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीरने उठेअगके
 ज्ञानासूत्र प्रथम श्रुतस्क्रन्ध के उदाहरणोक्ता यह पूर्वोक्तरूप से अर्थ निरूप
 पित किया है-तो हे भदत् । द्वितीय श्रुतस्क्रन्धकी धर्मकथाओं का उन्हीं
 श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो मुक्तिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं क्या
 अर्थ निरूपित किया है ? इस प्रकार जम्बू के प्रश्न को सुनकर श्री सुधर्मा

अञ्जजम्बू णाम अणगारे जाव पञ्जुवासमाणे एव वयासी-जम्बूणं भते समणेण
 जाव सपत्तेण उट्टस्स अगस्स पढमस्स सुयस्सधस्स णायाण अयमट्ठे पन्नत्ते
 दोच्चस्स ण भते ! सुयस्सधस्स धम्मकहाणं समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे
 पणत्ते ? एव खलु जम्बू ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता)

राजगृह नगरी परिषद वदन करवा भाटे त्या आची सुधर्मा स्वामीजे
 धर्मने उपदेश आये। उपदेश साबणीने परिषद पोताना स्थाने पाछी जाती
 रही ते काणे अने ते समये अर्थ सुधर्मा स्वामीना अतेवासी (शिष्य)
 आर्य जम्बू नामना अनगारे यावत् तेमनी पर्युपासना करता तेमने आ
 प्रभाळे पूछ्यु के हे भदन्त ! यावत् मुक्ति प्राप्त करेला श्रमण भगवान् महा
 वीरे छडा अगना प्रथम श्रुतस्क्रन्धना उदाहरणेने आ पूर्वोक्त रूपे अर्थ
 निरूपित किये छे तो हे भदन्त ! ते ज श्रमण भगवान् महावीर-के जेभळे
 मुक्तिस्थानने भेजवी वीछु छे-द्वितीय श्रुतस्क्रन्धनी धर्मकथाओंने शे अर्थ
 निरूपित किये छे आ प्रभाळे जम्बूना प्रश्नने साबणीने

राईरयणी विज्जू मेहा, जडणं भते ! समणेणं जाव सपत्तेण
 पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता पढमस्स णं भते !
 अज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते ? एव खलु
 जवू ! तेणं कालेण तेण समएणं रायगिहे णयरे गुणासिलए
 चेइए सेणिए राया चेह्णणा देवी सामी समोसरिए परिसा
 णिग्गया जाव परिसा पज्जुवासइ, तेणं कालेणं तेणं समएणं
 काली नाम देवी चमरचचाए रायहाणीए कालवडिसगभवणे
 कालसि सीहासणसि चउहि सामाणियसाहस्सीहि चउहि मह-
 त्तरियाहि सपरिवाराहि तिहि परिसाहि सत्तहि अणिएहि सत्तहिं
 अणियाहिवईहि सोलसहि आयरक्खदेवसाहस्सीहि अण्णेहि
 बहुएहि य कालवडिसयभवनवासीहि असुरकुमारेहि देवीहि
 य सद्धिं सपरिवुडा महया हय जाव विहरइ, इमं च णं केवल-
 कप्प जवुदीव दीवं विउलेणं ओहिणा आभोएमाणीर पासइ,
 तत्थ समण भगव महावीर जवुदीवे दीवे भारहे वासे रायगिहे
 नगरे गुणासिलए चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हत्ता संज-
 मेण तवसा अप्पाणं भावेमाणं पासइ पासित्ता हट्टुत्तुच्चित्तमा-
 णंदिया पीइमणा जाव हियया सीहासणाओ अब्भुट्टेइ अब्भु-
 ट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता पाउयाओ ओमुयइ
 ओमुइत्ता तित्थगराभिमुहा मत्तट्टुपयाइ अणुगच्छइ अणुग-
 च्छित्ता वाम जाणु अचइ अचित्ता दाहिणं जाणु धरणियलसि
 निहट्टु तिक्खुत्तो मुट्ठाणं धरणियलसि निवेसेइ निवेसित्ता ईसिं

सूरस्स=सूर्यस्याग्रमहिषीणामष्टमो वर्गः ८ । शक्रस्याग्रमहिषीणां नवमो वर्गः ९ ।
ईशानस्याग्रमहिषीणां दशमो वर्गः १० ॥ ४० १ ॥

मूलम्—जह् णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेण धम्मकहाणं
दसवग्गा पणत्ता पढमस्स ण भंते । वग्गस्स समणेणं जाव
सपत्तेण के अट्टे पन्नत्तं ?, एवं खल्लु जवू । समणेणं जाव सप
त्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता त जहा—काली

अग्रमहिषियों का—पट्टदेवियों का—प्रथम वर्ग, बलि नामक वैरोचनेन्द्र की
अग्रमहिषियोंका द्वितीय वर्ग, असुरेन्द्रको छोड़कर दक्षिण दिशा सबधी
भवनवासियों के इन्द्रों की अग्रमहिषियों का तृतीय वर्ग, उत्तर दिशा
सबधी भवनवासियों के इन्द्रों की कि जिन में असुरेन्द्र छोड़ दिये गये
हैं अग्रमहिषियों का ४ चतुर्थ वर्ग, दक्षिण दिशा सबधी वानव्यन्तरो के
इन्द्रों की अग्रमहिषियोंका पंचम वर्ग, उत्तर दिशा सबधी वानव्यन्तरोके
इन्द्रों की अग्रमहिषियों का षष्ठा वर्ग, चन्द्र की अग्रमहिषियों का ७ वा
वर्ग, सूर्यकी अग्रमहिषियोंका आठवा वर्ग, शक्र की अग्रमहिषियों का
नवमां वर्ग, और ईशानकी अग्रमहिषियों का दशमां वर्ग । वैरोचन उत्तर
दिशाके असुरकुमार हैं । ये दक्षिण दिशासबधी असुरकुमारोंकी अपेक्षा
विशिष्ट दीप्तिपन्न होते हैं इसलिये इन्हें वरोचन कहा गया है ॥ सू० १ ॥

अभरेन्द्रनी—दक्षिणुना असुरकुमारैन्द्रनी—अग्रमहिषीञ्चानो—पट्टदेवीञ्चानो
पडेवो वर्ग, बलि नामे वैरोचनेन्द्रनी अग्रमहिषीञ्चानो णीले वर्ग, असुरेन्द्रने
णाह करता दक्षिणु दिशाना भवनवासीञ्चाना इन्द्रोनी अग्रमहिषीञ्चानो त्रीले
वर्ग, उत्तर दिशा सबधी भवनवासीञ्चाना इन्द्रोनी के लेञ्चामाथी असुरेन्द्रोने
णाह करी दीधा छे अग्रमहिषीञ्चानो चोथो वर्ग, दक्षिणु दिशा सबधी वान
व्यन्तरोना इन्द्रोनी अग्रमहिषीञ्चानो पाचमो वर्ग, उत्तर दिशा सबधी वान
व्यन्तरोना इन्द्रोनी अग्रमहिषीञ्चानो सातमो वर्ग, सूर्यनी अग्रमहिषीञ्चानो
आठमो वर्ग, शक्रनी अग्रमहिषीञ्चानो नवमो वर्ग अने ईशाननी अग्रमहि
षीञ्चानो दशमो वर्ग वैरोचन उत्तर दिशाना असुरकुमार छे अने दक्षिणु दिशा
सबधी असुरकुमारो करता विशिष्ट दीप्ति—स पन्न डार छे अथी न अने
वैरोचन कडेवामा आव्या छे ॥ सूत्र १ ॥

राईरयणी विज्जू मेहा, जइणं भते। समणेणं जाव सपत्तेण
 पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता पढमस्स णं भते।
 अज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते?, एव खलु
 जवू। तेणं कालेण तेण समएणं रायगिहे णयरे गुणासिलए
 चेइए सेणिए राया चेह्णणा देवी सामी समोसरिए परिसा
 णिग्गया जाव परिसा पज्जुवासइ, तेणं कालेण तेणं समएणं
 काली नामं देवी चमरचचाए रायहाणोए कालवडिसगभवणे
 कालसि सीहासणसि चउहि सामाणियसाहस्सीहि चउहि मह-
 त्तरियाहि सपरिवाराहि तिहि परिसाहि सत्तहि अणिएहि सत्तहिं
 अणियाहिवईहि सोलसहि आयरक्खदेवसाहस्सीहि अण्णेहि
 बहुएहि य कालवडिसयभवणवासीहि असुरकुमारेहि देवीहि
 य सद्धिं सपरिवुडा महया हय जाव विहरइ, इमं च णं केवल-
 कप्प जवुदीव दीव विउलेणं ओहिणा आभोएमाणी२ पासइ,
 तत्थ समण भगव महावीर जंजुदीवे दीवे भारहे वासे रायगिहे
 नगरे गुणासिलए चेइए अहापडिरूवं उग्गह उग्गिण्हत्ता संज-
 मेण तवसा अप्पाणं भावेमाणं पासइ पासित्ता हट्टुत्तुत्तमा-
 णंदिया पीडमणा जाय हियया सीहासणाओ अब्भुट्टेइ अब्भु-
 ट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता पाउयाओ ओमुयइ
 ओमुइत्ता तित्थगराभिमुहा मत्तट्टपयाइ अणुगच्छइ अणुग-
 च्छित्ता वाम जाणु अचइ अचित्ता दाहिणं जाणुं धरणियलंसि
 निट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणियलसि निवेसेइ निवेसित्ता ईसिं

सुरस्त=मूर्धस्याग्रमहिषीणामष्टमो वर्गः ८ । अग्रस्याग्रमहिषीणां नवमो वर्गः ९ ।
ईशानस्याग्रमहिषीणा दशमो वर्गः १० ॥ सू० १ ॥

मूलम्—जह णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेण धम्मकहाणं
दसवग्गा पणत्ता पढमस्स ण भते ! अग्गस्स समणेणं जाव
सपत्तेण के अट्टे पत्तत्ते ? एवं खल्लु जव्वु ! समणेणं जाव संप
त्तेण पढमस्स अग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता त जहा—काली

अग्रमहिषियों का—पट्टदेवियों का—प्रथम वर्ग, पलि नामक वैरोचनेन्द्र की
अग्रमहिषियों का द्वितीय वर्ग, असुरेन्द्रको छोड़कर दक्षिण दिशा सप्तमी
भवनवासियों के इन्द्रों की अग्रमहिषियों का तृतीय वर्ग, उत्तर दिशा
सप्तमी भवनवासियों के इन्द्रों की कृति जिन में असुरेन्द्र छोड़ दिये गये
हैं अग्रमहिषियों का चतुर्थ वर्ग, दक्षिण दिशा सप्तमी वानव्यन्तरो के
इन्द्रों की अग्रमहिषियों का पंचम वर्ग, उत्तर दिशा सप्तमी वानव्यन्तरो के
इन्द्रों की अग्रमहिषियों का षष्ठी वर्ग, चन्द्र की अग्रमहिषियों का ७ वा
वर्ग, सूर्यको अग्रमहिषियों का आठवा वर्ग, शक्र की अग्रमहिषियों का
नवमा वर्ग, और ईशानकी अग्रमहिषियों का दशमा वर्ग । वैरोचन उत्तर
दिशाके असुरकुमार हैं । ये दक्षिण दिशासप्तमी असुरकुमारोंकी अपेक्षा
विशिष्ट दीप्तिपन्न होते हैं इसलिये इन्हें वैरोचन कहा गया है ॥ सू० १ ॥

अभरेन्द्रनी—दक्षिणुना असुरकुमारैन्द्रनी—अग्रमहिषीणो—पट्टदेवीणो
पडेडेा वर्ग, पलि नामे वैरोचनेन्द्रनी अग्रमहिषीणो षीले वर्ग, असुरेन्द्रने
याद करता दक्षिणु दिशाना भवनवासीणोना इन्द्रोनी अग्रमहिषीणोनी त्रीले
वग, उत्तर दिशा सप्तमी भवनवासीणोना इन्द्रोनी के लेणोमाथी असुरेन्द्रोने
याद कनी दीधा छे अग्रमहिषीणोना शोथो वर्ग, दक्षिणु दिशा सप्तमी वान
व्यन्तरोना इन्द्रोनी अग्रमहिषीणोना पाथमो वर्ग, उत्तर दिशा सप्तमी वान
व्यन्तरोना इन्द्रोनी अग्रमहिषीणोना सातमो वर्ग, सूर्यनी अग्रमहिषीणोना
आठमो वर्ग, शक्रनी अग्रमहिषीणोना नवमो वर्ग अने ईशाननी अग्रमहि
षीणोना दशमो वर्ग वैरोचन उत्तर दिशाना असुरकुमार छे ये दक्षिणु दिशा
सप्तमी असुरकुमारो करता विशिष्ट दीप्ति—सपत्त छे ये अथी न ये
वैरोचन कडेवामा आया छे ॥ सूत्र १ ॥

प्रथमस्य खलु हे भदन्त ! वर्गस्य श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मास्वामीप्राह-एव खलु हे जम्बू ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-काली १, रात्रि २, रजनी ३, विद्युत् ४, मेधा ५ । जम्बूस्वामी पृच्छति-यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तत्र प्रथमस्य खलु भदन्त ! अययनस्य श्रमणेन यावत् सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । सुधर्मा स्वामी कथयति-

एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगर गुणशिलक चैत्यम्, श्रेणिको राजा, चेष्टना देवी आसीत् । सामी=त्वामी श्रीमहावीरस्वामी

सुधर्मास्वामी से पृच्छते ह कि (भते) हे भदत ! (जइण) यदि (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता) श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्तिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथा के दश वर्ग प्ररूपित किये हैं तो (ण भते) हे भदत ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्टे पन्नत्ते) उन्ही श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो मोक्ष में विराजमान हो चुके हैं प्रथम वर्ग का क्या अर्थ प्रज्ञप्त किया है ? (एव खलु जवू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता, त जहा-काली राई रयणी विज्जू मेहा जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणापणत्ता पढमस्स ण भते अज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते ? एव खलु जवू ! तेण काळेण तेण समण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सेणिए राया चेल्लणादेवी) इस प्रकार जवू स्वामी के प्रश्न को सुनकर सुधर्मास्वामी ने

जवू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के (भते) हे भदन्त ! (जइण) जे (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता) श्रमण भगवान् महावीर के जेभले मुक्तिस्थान भगवी वीधु छे धर्मकथाओना दश वर्गो प्ररूपित करी छे तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स क अट्टे पन्नत्ते) ते ज श्रमण भगवान् महावीर के जेओ मोक्षमा विराजमान थछ सूक्या छे-पडेवा वर्गोना शेा अर्थ प्रज्ञप्त करी छे ?

(एव खलु जवू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता, त जहा-काली राई रयणी विज्जू मेहा जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता । पढमस्स ण भते, अज्झयणम् समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते ! एव खलु जवू ! तेण काळेण तेण समण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सेणिए राया चेल्लणा देवी)

पच्युणमइ पच्युणमिन्ना कडयतुडियथंभियाओं भुयाओ
 साहरइ साहरित्ता करयल जाय कहु एव वयासी-णमोऽथुणं
 अरहत्ताणं जाव सपत्ताणं नमोऽथुणं समणस्स भगवओ महा
 वीरस्स जाव सपाविडकामस्स वंदामि ण भगवंतं तत्थगयं
 इह गया पासउ म भगव तत्थ गए इह गयत्तिऽहु वंदइ
 नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरसि पुरत्थाभिमुहा निस-
 ण्णा, तएणं तीसे कालीएदेवीए इमेयारूवे जाव समुप्पजित्था
 -सेयं खल्ल मे समणं भगवं महावीरं वदित्ता जाव पज्जुवा-
 सित्तएत्तिकहु एव सपेहंइ सपेहित्ता आभिओगिए देवे सदावेइ
 सदावित्ता एवं वयासी-एव खल्ल देवाणुप्पिया । समणे भगव
 महावीरे एव जहा सूरियाभो तहेव आणत्तियं देइ जाव दिव्व
 सुरवराभिगमणजोगं जाणविमाणं करेह करित्ता जाव पच्च
 प्पिणह, तेवि तहेव करेत्ता जाव पच्चप्पिणंति, णवर जोयण
 सहस्सवित्थिणं जाणविमाण सेस तहेव, तहेव णामगोय
 साहेइ तहेव नट्टविहि उवदंसेइ जाव पडिगया ॥ सू० २ ॥

टीका—‘जइण भते’ इत्यादि । जम्बूस्वामीपृच्छति—यदि खलु ‘भते’
 भदन्त !—हे भगवन् ! श्रमणेन यावत्सपाप्तेन धर्मकथाना दशवर्गा प्रवृत्ताः

—जइणं भते । इत्यादि ।

टीकार्थ—(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेणं धम्मकहाण दसवग्गा
 पणत्ता पढमस्स ण भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे
 पणत्ते ? एव खल्ल जवु ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स) जम्बूस्वामी ओ

जइण भते । इत्यादि—

(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता पढमस्स
 णं भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते ? एव खल्ल जवु ! सम
 णेण जाव सपत्तेण पढमस्स०)

प्रथमस्य खलु हे भदन्त ! वर्गस्य श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मास्वामीप्राह-एव खलु हे जम्बू ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रवृत्तानि, तद्यथा-काली १, रात्रि २, रजनी ३, विद्युत् ४, मेघा ५ । जम्बूस्वामी पृच्छति-यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रवृत्तानि, तत्र प्रथमस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य श्रमणेन यावत् सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । सुधर्मा स्वामी कथयति—

एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगर गुणशिलक चैत्यम्, त्रेणिकी राजा, चेष्टना देवी आसीत् । सामी=त्वामी श्रीमहावीरस्वामी

सुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि (भते) हे भदन्त ! (जङ्घण) यदि (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता) श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्तिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथा के दश वर्ग प्ररूपित किये हैं तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्ठे पन्नत्ते) उन्हीं श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो मोक्ष में विराजमान हो चुके हैं प्रथम वर्ग का क्या अर्थ प्रज्ञप्त किया है ? (एव खलु जवू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता, त जहा-काली राई रयणी विज्जू मेहा जङ्घण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता पढमस्स ण भते अज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते ? एव खलु जवू ! तेण कालेण तेण समणेण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेडए सेणिए राया चेल्लणादेवी) इस प्रकार जवू स्वामी के प्रश्न को सुनकर सुधर्मास्वामी ने

जवू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के (भते) हे भदन्त ! (जङ्घण) जे (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता) श्रमणु भगवान् महावीरे के जेभण्णे मुक्तिस्थान भेगवी लीधु छे धर्मकथाञ्चोना दश वर्गो प्ररूपित कर्या छे तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्ठे पन्नत्ते) तेज श्रमणु भगवान् महावीरे के जेञ्चो भोक्षमा विराजमान थज बुद्ध्या छे-पडेना वर्गोना शे अर्थ प्रज्ञप्त कर्या छे ?

(एव खलु जवू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता, त जहा-काली राई रयणी विज्जू मेहा जङ्घण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता । पढमस्स ण भते, अज्झयण स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते ! एव खलु जवू ! तेण कालेण तेण समणेण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेडए सेणिए राया चेल्लणा देवी)

पच्युण्णमइ पच्युण्णमित्ता कडयतुडियथंभियाओ भुयाओ
 साहरइ साहरित्ता करयल जाव कट्टु एवं वयासी-णमोऽथुणं
 अरहंताणं जाव सपत्ताणं नमोऽथुणं समणस्स भगवओ महा
 वीरस्स जाव सपाविउकामस्स वंदामि णं भगवंत तत्थगयं
 इह गया पात्तउ म भगव तत्थ गए इह गयत्तिऽट्टु वंदइ
 नमसइ वदित्ता नमंसित्ता सीहासणपरंसि पुरत्थाभिमुहा निस-
 षणा, तएणं तीसे कालीएदेवीए इमेयारूवे जाव समुप्पजित्था
 -सेयं खलु मे समणं भगवं महावीर वदित्ता जाव पज्जुवा-
 सित्तएत्तिकट्टु एव सपेहंइ सपेहित्ता आभिओगिए देवे सहावेइ
 सहावित्ता एव वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! समणे भगव
 महावीरे एवं जहा सूरियाभो तहेव आणत्तिय देइ जाव दिव्वं
 सुरवराभिगमणजोग्गं जाणविमाणं करेह करित्ता जाव पच्च
 प्पिणह, तेवि तहेव करेत्ता जाव पच्चप्पिणंति, णवर जोयण
 सहस्सविट्थिणं जाणविमाण सेस तहेव, तहेव णामगोय
 साहेइ तहेव नट्टविहि उवदसेइ जाव पडिगया ॥ सू० २ ॥

टीका—'जइणं भते' इत्यादि । जम्भुस्वामीपृच्छति—यदि खलु 'भते'
 भदन्त ! = हे भगवन् ! श्रमणेन यावत्समाप्तेन धर्मकथाना दशवर्गाः प्रश्नाः

—:जइण भते । इत्यादि ।

टीकार्थः—(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा
 पणत्ता पढमस्स ण भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे
 पणत्ते ? एव खलु जवू ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स) जवूस्वामी ओ

जइण भते । इत्यादि—

(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता पढमस्स
 णं भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते ? एव खलु जवू ! सम
 णेण जाव सपत्तेण पढमस्स०)

प्रथमस्य खलु हे भदन्त ! उर्गस्य श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मास्वामीप्राह—एव खलु हे जम्बू ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—काली १, रात्रि २, रजनी ३, विद्युत् ४, मेघा ५ । जम्बूस्वामी पृच्छति—यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तत्र प्रथमस्य खलु भदन्त ! अ ययनस्य श्रमणेन यावत् सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । सुधर्मा स्वामी कथयति—

एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगर गुणशिलक चैत्यम्, श्रेणिहो राजा, चेष्टना देवी आसीत् । स्वामी=त्वामी श्रीमहावीरस्वामी

सुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि (भते) हे भदन्त ! (जइण) यदि (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता) श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्तिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथा के दश वर्ग प्ररूपित किये हैं तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्ठे पन्नत्ते) उन्हीं श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो मोक्ष में विराजमान हो चुके हैं प्रथम वर्ग का क्या अर्थ प्रज्ञप्त किया है ? (एव खलु जम्बू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता, त जहा—काली राई रयणी विज्जू मेहा जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता पढमस्स ण भते अज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते ? एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सेणिए राया चेल्लणादेवी) इस प्रकार जम्बू स्वामी के प्रश्न को सुनकर सुधर्मास्वामी ने

जम्बू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे थे के (भते) हे भदन्त ! (जइण) ने (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता) श्रमण भगवान् महावीर ने के नेभत्ते मुक्तिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथाओं का दश वर्गों प्ररूपित किये हैं तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स क अट्ठे पन्नत्ते) तेने श्रमण भगवान् महावीर ने के नेओ मोक्षमा विराजमान थय थूक्या थे—पडेया वर्गाना शे अर्थ प्रज्ञप्त कर्थे थे ?

(एव खलु जम्बू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता, त जहा—काली राई रयणी विज्जू मेहा जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता । पढमस्स ण भते, अज्झयण म समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते ! एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सेणिए राया चेल्लणा देवी)

पच्युण्णमड पच्युण्णमित्ता कडयत्तुडियथभियाओं मुयाओं
 साहरइ साहरित्ता करयल जाव कट्टु एवं वयासी-णमोऽत्थुणं
 अरहत्ताणं जाव सपत्ताणं नमोऽत्थुणं समणस्स भगवओ महा-
 वीरस्स जाव सपाविडकामस्स वंदामि णं भगवत तत्थगयं
 इह गया पासउ म भगव तत्थ गए इह गयत्तिऱट्टु वंदइ
 नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरत्ति पुग्त्थाभिमुहा निस-
 ण्णा, तएणं तीसे कालीणदेवीए इमेयारूवे जाव समुप्पजित्था
 -सेयं खल्ल मे समणं भगवं महावीरं वदित्ता जाव पज्जुवा-
 सित्तएत्तिकट्टु एव सपेहंइ सपेहित्ता आभिओगिए देवे सहावेइ
 सहावित्ता एवं वयासी-एव खल्ल देवाणुणिया । समणे भगव
 महावीरे एव जहा सूरियाभो तहेव आणत्तियं देइ जाव दिव्वं
 सुरवराभिगमणजोगं जाणविमाणं करेह करित्ता जाव पच्च
 प्पिणह, तेवि तहेव करेत्ता जाव पच्चप्पिणंति, णवर जोयण
 सहस्सवित्थिण्णं जाणविमाण सेस तहेव, तहेव णामगोय
 साहेइ तहेव नट्टविहि उवदंसेइ जाव पडिगया ॥ सू० २ ॥

टीका—'जइण भते' इत्यादि । जम्बूस्वामीपृच्छति—यदि खलु 'भते'
 भदन्त !—हे भगवन् ! भ्रमणेन यावत्समाप्तेन धर्मकथाना दशवर्गाः प्रवृत्ताः

—जइण भते ! इत्यादि ।

टीकार्थ—(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा
 पणत्ता पढमस्स ण भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे
 पणत्ते ? एव खल्ल जइ ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स) जम्बूस्वामी श्री

जइण भते ! इत्यादि—

(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता पढमस्स
 णं भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते ? एव खल्ल जइ ! सम
 णेण जाव सपत्तेण पढमस्स०)

प्रथमस्य खलु हे भदन्त । वर्गस्य श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मास्वामीप्राह-एव खलु हे नम्न' । श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-काली १, रात्रि २, रजनी ३, विद्युत् ४, मेघा ५ । जम्बूस्वामी पृच्छति-यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तत्र प्रथमस्य खलु भदन्त ! अ ययनस्य श्रमणेन यावत् सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । सुधर्मा स्वामी कथयति—

एव खलु हे जम्बू' । तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगर गुणशिलक चैत्यम्, श्रेणिको राजा, चेठना देवी आसीत् । सामी=त्वामी श्रीमद्वागीरस्वामी

सुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि (भते) हे भदन्त ! (जइण) यदि (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पण्णत्ता) श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्तिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथा के दश वर्ग प्ररूपित किये हैं तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्ठे पन्नत्ते) उन्ही श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो मोक्ष में विराजमान हो चुके हैं प्रथम वर्ग का क्या अर्थ प्रज्ञप्त किया है ? (एव खलु जवू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता, त जहा-काली राई रयणी विज्जू मेहा जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता पढमस्स ण भते अज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ? एव खलु जवू ! तेण कालेण तेण समण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सेणिए राया चेल्लणादेवी) इस प्रकार जवू स्वामी के प्रश्न को सुनकर सुधर्मास्वामी ने

जवू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के (भते) हे भदन्त ! (जइण) जे (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पण्णत्ता) श्रमण भगवान् महावीरे के जेभत्ते मुक्तिस्थान भगवी लीधु छे धर्मकथाओना दश वर्गो प्ररूपित करी छे तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्ठे पन्नत्ते) ते ज श्रमण भगवान् महावीरे के जेओ मोक्षमा विराजमान थछ चुक्या छे-पडेना वर्गोना शेो अर्थ प्रज्ञप्त करी छे ?

(एव खलु जवू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता, त जहा-काली राई रयणी विज्जू मेहा जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता । पढमस्स ण भते, अज्झयण म समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ! एव खलु जवू ! तेण कालेण तेण समण रायगिहे णयरे सिलए चेइए सेणिए राया चेल्लणा देवी)

पच्चुण्णमइ पच्चुण्णमित्ता कडयतुडियथंभियाओ भुयाओ
 साहरइ साहरित्ता करयल जाव कट्टु एव वयासी-णमोऽत्थुणं
 अरहताणं जाव सपत्ताणं नमोऽत्थुणं समणस्स भगवओ महा
 वीरस्स जाव सपाविउकामस्स वंदामि णं भगवत तत्थगयं
 इह गया पासउ म भगव तत्थ गए इह गयत्तिऽहु वंदइ
 नमसइ वदित्ता नमंसित्ता सीहासणप्ररत्ति पुरत्थाभिमुहा निस-
 ण्णा, तएणं तीसे कालीएदेवीए इमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था
 -सेयं खलु मे समणं भगवं महावीरं वदित्ता जाव पज्जुवा
 सित्तएत्तिकट्टु एव सपेहेइ सपेहित्ता आभिओगिए देवे सदावेइ
 सदावित्ता एवं वयासी-एव खलु देवाणुप्पिया ! समणे भगव
 महावीरे एव जहा सूरियाभो तहेव आणत्तिथं देइ जाव दिव्वं
 सुरवराभिगमणजोग्गं जाणविमाणं करेह करित्ता जाव पच्च
 प्पिणह, तेवि तहेव करेत्ता जाव पच्चप्पिणंति, णवर जोयण
 सहस्सवित्तिठणं जाणविमाण सेस तहेव, तहेव णामगोय
 साहेइ तहेव नट्टविहि उवदंसेइ जाव पडिगया ॥ सू० २ ॥

टीका—'जइण भते' इत्यादि । जम्भुस्वामीपृच्छति—यदि खलु 'भते'
 भदन्त !—हे भगवन् ! भ्रमणेन यावत्सपाप्तेन धर्मकथाना दशवर्गाः प्रवृत्ताः

—:जइण भते । इत्यादि ।

टीकार्थ—(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा
 पणत्ता पढमस्स ण भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे
 पणत्ते ? एव खलु जवू ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स) जवूवामी ओ

जइण भते ! इत्यादि—

(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता पढमस्स
 णं भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते ? एव खलु जवू ! सम
 णेण जाव सपत्तेण पढमस्स०)

प्रथमस्य खलु हे भदन्त । वर्गस्य श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मास्वामीप्राह—एव खलु हे नम्बू । श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्राप्तानि, तद्यथा—काली १, रात्रि २, रजनी ३, विद्युत् ४, मेघा ५ । नम्बूस्वामी पृच्छति—यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तत्र प्रथमस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य श्रमणेन यावत् सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मा स्वामी कथयति—

एव खलु हे जम्बू । तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगर गुणशिलक चैत्यम्, त्रेणिहो राजा, चेष्टना देरी आसीत् । सामी=त्वामी श्रीमहावीरस्वामी

सुधर्मास्वामी से पृच्छते है कि (भते) हे भदत ! (जइण) यदि (समणेण जाव सपत्तेण वम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता) श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्तिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथा के दश वर्ग प्ररूपित किये हैं तो (ण भते) हे भदत ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्टे पन्नत्ते) उन्ही श्रमण भगवान् महावीर ने कि-जो मोक्ष में विराजमान हो चुके हैं प्रथम वर्ग का क्या अर्थ प्रज्ञप्त किया है ? (एव खलु जम्बू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच्च अज्झयणा पणत्ता, त जहा—काली राई रयणी विज्जू मेहा जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच्च अज्झयणा पणत्ता पढमस्स ण भते अज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते ? एव खलु जम्बू ! तेण काळेण तेण समण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेडए सेणिए राया चेल्लणादेरी) इस प्रकार जम्बू स्वामी के प्रश्न को सुनकर सुधर्मास्वामी ने

जम्बू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे थे के (भते) हे भदन्त ! (जइण) जे (समणेण जाव सपत्तेण वम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता) श्रमण भगवान् महावीरे के जेभल्ले मुक्तिस्थान मेगवी लीधु छे धर्मकथाओना दश वर्गो प्ररूपित किये छे तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्टे पन्नत्ते) तेज श्रमण भगवान् महावीरे के जेओ मोक्षमा विराजमान थथ चुक्या छे—पडेया वर्गोना शेो अर्थ प्रज्ञप्त किये छे ?

(एव खलु जम्बू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच्च अज्झयणा पणत्ता, त जहा—काली राई रयणी विज्जू मेहा जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच्च अज्झयणा पणत्ता । पढमस्स ण भते, अज्झयणम् समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते ! एव खलु जम्बू ! तेण काळेण तेण समण रायगिहे णयरे मिलए चेडए सेणिए राया चेल्लणा देरी)

पच्चुण्णमइ पच्चुण्णमित्ता कडयत्तुडियथंभियाओ भुयाओ
 साहरइ साहरित्ता करयल जाव कट्टु एवं वयासी-णमोऽस्थुणं
 अरहत्ताणं जाव सपत्ताणं नमोऽस्थुण समणस्स भगवओ महा-
 वीरस्स जाव सपाविउकामस्स वंदामि णं भगवत्त तत्थगयं
 इह गया पासउ म भगवं तत्थ गए इह गयत्तिऽट्टु वंदइ
 नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरत्ति पुरत्थाभिमुहा नित्त-
 ण्णा, तएणं तीसे कालीएदेवीए इमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था
 -सेयं खल्ल मे समणं भगवं महावीर वदित्ता जाव पज्जुवा-
 सित्तएत्तिकट्टु एव संपेहेइ सपेहित्ता आभिओगिए देवे सद्दावेइ
 सद्दावित्ता एव वयासी-एव खल्ल देवाणुत्तरिया । समणे भगव
 महावीरे एवं जहा सूरियाभो तहेव आणत्तियं देइ जाव दिव्वं
 सुरवराभिगमणजोग्गं जाणविमाणं करेह करित्ता जाव पच्च
 प्पिणह, तेवि तहेव करेत्ता जाव पच्चप्पिणंति, णवर जोयण
 सहस्सवित्थिण्णं जाणविमाण सेस तहेव, तहेव णामगोय
 साहेइ तहेव नट्टविहि उवदसेइ जाव पडिगया ॥ सू० २ ॥

टीका—'जइण भते' इत्यादि । जम्बुस्वामीपृच्छति—यदि खलु 'भते'
 भदन्त इहे भगवन् ! भ्रमणेन यावत्संप्राप्तेन धर्मकथाना दशवर्गा, प्रज्ञाः॥

—:जइण भते ! इत्यादि ।

टीकार्थ—(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवगा
 पणत्ता पढमस्स ण भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे
 पणत्ते ? एव खल्ल जवू ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स) जम्बुस्वामी ओ

जइण भते ! इत्यादि—

(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवगा पणत्ता पढमस्स
 ण भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते ? एव खल्ल जवू ! सम
 णेण जाव सपत्तेण पढमस्स०)

प्रथमस्य खलु हे भदन्त ! वर्गस्य श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मास्वामीप्राह-एव खलु हे नम्नू ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रवृत्तानि, तद्यथा-काली १, रात्रि २, रजनी ३, विद्युत् ४, मेरा ५ । जम्बूस्वामी पृच्छति-यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्रवृत्तानि, तत्र प्रथमस्य खलु भदन्त ! अ-य-नस्य श्रमणेन यावत् सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मा स्वामी कथयति—

एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगर गुणशिलक चैत्यम्, त्रेणिहो राजा, चेलना देवी आसीत् । सामी=त्वामी श्रीमहावीरस्वामी

सुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि (भते) हे भदन्त ! (जहण) यदि (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पण्णत्ता) श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्तिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथा के दश वर्ग प्ररूपित किये हैं तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्ठे पन्नत्ते) उन्हीं श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो मोक्ष में विराजमान हो चुके हैं प्रथम वर्ग का क्या अर्थ प्रज्ञप्त किया है ? (एव खलु जम्बू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता, त जहा-काली राई रयणी विज्जू मेहा जहण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता पढमस्स ण भते अज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ? एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सेणिए राया चेल्लणादेवी) इस प्रकार जम्बू स्वामी के प्रश्न को सुनकर सुधर्मास्वामी ने

जम्बू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के (भते) हे भदन्त ! (जहण) जे (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पण्णत्ता) श्रमण भगवान् महावीरे के जेभन्ने मुक्तिस्थान मेगवी लीधु छे धर्मकथाओना दश वर्गो प्ररूपित कर्या छे तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्ठे पन्नत्ते) तेज श्रमण भगवान् महावीरे के जेओ मोक्षमा विराजमान थय बुद्धया छे-पडेना वर्गोना शेो अर्थ प्रज्ञप्त कर्या छे ?

(एव खलु जम्बू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता, त जहा-काली राई रयणी विज्जू मेहा जहण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता । पढमस्स ण भते, अज्झयण म समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ! एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सेणिए गया चेल्लणा देवी)

पच्चुण्णमइ पच्चुण्णमित्ता कडयतुडियथभियाओं भुयाओ
 साहरइ साहरित्ता करयल जाव कट्टु एव वयासी-णमोऽस्थुणं
 अरहत्ताणं जाव सपत्ताणं नमोऽस्थुणं समणस्स भगवओ महा-
 वीरस्स जाव सपाविउत्तामस्स वदामि णं भगवंत तत्थगयं
 इह गया पासउ म भगव तत्थ गए इह गयत्तिऽट्टु वंदइ
 नमसइ वदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरंसि पुग्त्थाभिमुहा निस-
 षणा, तएणं तीसे कालीएदेवीए इमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था
 -सेयं खल्लु मे समणं भगवं महावीर वदित्ता जाव पज्जुवा-
 सित्तएत्तिकट्टु एव संपेहेइ सपेहित्ता आभिओगिए देवे सद्दावेइ
 सद्दावित्ता एवं वयासी-एव खल्लु देवाणुप्पिया । समणे भगव
 महावीरे एव जहा सूरियाभो तहेव आणत्तियं देइ जाव दिव्व
 सुरवराभिगमणजोग्गं जाणव्विमाणं करेह करित्ता जाव पच्च
 प्पिणह, तेवि तहेव करेत्ता जाव पच्चप्पिणंति, णवर जोयण
 सहस्सव्वित्थिण जाणविमाण सेस तहेव, तहेव णामगोय
 साहेइ तहेव नट्टविहि उवदंसेइ जाव पडिगया ॥ सू० २ ॥

टीका—'जइण भते' इत्यादि । जम्बूस्वामीपूत्रति-यदि खल्लु 'भते'
 भदन्त ! = हे भगवन् ! श्रमणेन यावत्संपाप्तेन धर्मकथाना दशवर्गाः प्रवृत्ताः ।

—:जइण भते । इत्यादि ।

टीकार्थ—(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा
 पणत्ता पढमस्स ण भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे
 पणत्ते ? एव खल्लु जव्वु ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स) जम्बूस्वामी ओ

जइण भते । इत्यादि—

(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता पढमस्स
 ण भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्टे पणत्ते ? एव खल्लु जव्वु ! सम
 णेण जाव सपत्तेण पढमस्स०)

प्रथमस्य खलु हे भदन्त ! वर्गस्य श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मास्वामीप्राह—एव खलु हे चम्पू ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्राप्तानि, तद्यथा—काली १, रात्रि २, रजनी ३, विद्युत् ४, मेघा ५ । जम्बूस्वामी पृच्छति—यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य पञ्च अध्ययनानि प्राप्तानि, तत्र प्रथमस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य श्रमणेन यावत् सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? सुधर्मा स्वामी कथयति—

एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगर गुणशिल्पक चैत्यम्, श्रेणिको राजा, चेष्टना देवी आसीत् । सामी=त्वामी श्रीमहावीरस्वामी

सुधर्मास्वामी से पृच्छते है कि (भते) हे भदन्त ! (जहण) यदि (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पण्णत्ता) श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्तिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथा के दश वर्ग प्ररूपित किये हैं तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्ठे पन्नत्ते) उन्ही श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो मोक्ष में विराजमान हो चुके हैं प्रथम वर्ग का क्या अर्थ प्रज्ञप्त किया है ? (एव खलु जम्बू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता, त जहा—काली राई रयणी विज्जू मेहा जहण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणापण्णत्ता पढमस्स ण भते अज्झयणस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ? एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेडए सेणिए राया चेल्लणादेवी) इस प्रकार जम्बू स्वामी के प्रश्न को सुनकर सुधर्मास्वामी ने

जम्बू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के (भते) हे भदन्त ! (जहण) जे (समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पण्णत्ता) श्रमण भगवान् महावीर के जेभणे मुक्तिस्थान भगवी दीधु छे धर्मकथाओना दश वर्गो प्ररूपित किये छे तो (ण भते) हे भदन्त ! (समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स के अट्ठे पन्नत्ते) तेज श्रमण भगवान् महावीर के जेओ मोक्षमा विराजमान थछे बुझया छे—पडेया वर्गोना शेा अर्थ प्रज्ञप्त किये छे ?

(एव खलु जम्बू समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता, त जहा—काली राई रयणी विज्जू मेहा जहण भते ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता । पढमस्स ण भते, अज्झयणम् समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ! एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेडए सेणिए राया चेल्लणा देवी)

पच्चुण्णमइ पच्चुण्णमित्ता कडयत्तुडियथंभियाओ भुयाओ
 साहरइ साहरित्ता करयल जाय कट्टु एवं वयासी-णमोऽत्थुणं
 अरहताणं जाव सपत्ताणं नमोऽत्थुणं समणस्स भगवओ महा-
 वीरस्स जाव सपाविउत्तामस्स वंदामि णं भगवत तत्थगयं
 इह गया पासउ म भगव तत्थ गए इह गयत्तिःट्टु वंदइ
 नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता सीहासणपरसि पुरत्थाभिमुहा निस-
 ण्णा, तएणं तीसे कालीएदेवीए इमेयारूवे जाव समुप्पजित्था
 -सेयं खल्ल मे समणं भगवं महावीर वदित्ता जाव पज्जुवा
 सित्तएत्तिकट्टु एव संपेहेइ सपेहित्ता आभिओगिए देवे सद्दावेइ
 सद्दावित्ता एवं वयासी-एव खल्ल देवाणुप्पिया ! समणे भगव
 महावीरे एवं जहा सूरियाभो तहेव आणत्तिर्यं देइ जाव दिव्वं
 सुरवराभिगमणजोगं जाणविमाणं करेह करित्ता जाव पच्च
 प्पिणह, नेवि तहेव करेत्ता जाव पच्चप्पिणंति, णवर जोयण
 सहस्सविट्थिणं जाणविमाण सेस तहेव, तहेव णामगोय
 साहेइ तहेव नट्टविहि उवदंसेइ जाव पडिगया ॥ सू० २ ॥

टीका—‘जइण भते’ इत्यादि । जम्भूस्वामीपृ० उति-यदि खल्ल ‘भते’
 भदन्त ! = हे भगवन् ! भ्रमणेन यावत्समाप्तेन धर्मकथाना दशवर्गा प्रवृत्ता’।

—जइण भते ! इत्यादि ।

टीकार्थ—(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेणं धम्मकहाण दसवग्गा
 पणत्ता पढमस्स ण भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे
 पणत्ते ? एव खल्ल जवु ! समणेण जाव सपत्तेण पढमस्स) जवुवामी ओ

जइण भते ! इत्यादि—

(जइण भते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण दसवग्गा पणत्ता पढमस्स
 णं भते ! वग्गस्स समणेण जाव सपत्तेण के अट्ठे पणत्ते ? एव खल्ल जवु ! सम
 णेण जाव सपत्तेण पढमस्स०)

‘ સમોસરિણ ’ સમસ્યતઃ સમાગતમાન । ‘ પરિમા ’-પરિપત્=રાજગૃહનગર
 યાસ્તવ્યો જનસમૂહ ‘ ણિગયા ’ નિર્ગતા=મગરદ્રન્ડનાથં સ્વ સ્વસ્થાનાન્નિસ્સૃતા,
 મગરતા ધર્મરૂપા કથિતા યાવદ્ પરિપદ્ મગરત ‘ પઞ્જુવાસઙ ’ પર્યુપાસ્તે=
 સેવતે, તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સગયે કાલી નામ દેવી ચમરવચ્ચાયા રાજધાન્યાં
 ઉન્ને ઉત્તર દેને કે અભિપ્રાય સે કરા ક્ષિ (૧૪ સ્લુ જૂ) હે જૂ !
 તુમ્હારે પ્રદન કા ઉત્તર હસ પ્રકાર હૈ સુનો યાસ્ત સપ્રાપ્ત શ્રમણ મગ
 વાન્ મહાવીર ને પ્રથમ વર્ગ કે પાચ અધ્યયન પ્રજ્ઞસ કિયે હૈ વે યે હૈ-
 કાલી ૧, રાત્રિ ૨, રજની ૩, ત્રિષ્ટુ ૪, ઓર મેત્રા ૫। અથ પુનઃ જૂ
 સ્વામી પ્રદન કરતે હૈ કિ હૈ મદત ! યાવન્ મુક્તિધ્યાન કો પ્રાપ્ત હુવ
 શ્રમણ મગવાન્ મહાવીર ને પ્રથમ વર્ગ કે પાચ અધ્યયન નિરૂપિત કિયે
 હૈ તો મ આપસે પૂછના હૈ કિ મદત યાવન્ મોક્ષ તો સપ્રાપ્ત ઉન્ની શ્રમણ
 મગવાન્ મહાવીરને પ્રથમ અધ્યયનકા વ્યા, અર્થ નિરૂપિત કિયા હૈ ? હસકા
 ઉત્તર ઉન્ને સુધર્માસ્વામી હસ પ્રકાર વેતે હૈ-હે જૂ ! ઉસ કાલ ઓર
 ઉસ સમય મેં રાજગૃહ નામકી નગરી થી-ઉમ મેં ગુણશિલક નામ કા
 ઉવાન થા-નગરી કે રાજા કા નામ શ્રેણિક યા । ઉસકી રાની કા નામ
 ચેલ્લના થા । (સામી સમોસરિણ પરિસા ણિગયા જાવ પરિસા પઞ્જુ
 વાસઙ-તેણ કાલેણં તેણં સમણ્ણકાલી નામ દેવી, ચમરવચ્ચાવ રાયહાણીવ

આ પ્રમાણે જૂ સ્વામી । પ્રશ્નને સાલણીને તેમને ઉત્તર આપવાના
 ઉદ્દેશથી શ્રી સુધર્મા સ્વામીએ કહ્યું કે (૧૪ સ્લુ જૂ) હે જૂ ! તમારા
 પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે સાલણો, યાવત્ સપ્રાપ્ત શ્રમણુ લગવાન મહા
 વીર પહેલા વર્ગના પાચ અધ્યયનો પ્રજ્ઞસ કર્યા છે તેઓ આ પ્રમાણે છે—
 ૧ કાલી, ૨ રાત્રિ, ૩ રજની, ૪ વિષ્ટુ, અને ૫ મેત્રા

હવે ફરી જૂ સ્વામી પ્રશ્ન કરે છે કે હે ભદ્રન્ત ! યાવત્ મુક્તિસ્થાનને
 પ્રાપ્ત કરી ચુકેલા શ્રમણુ લગવાન મહાવીર પહેલા વર્ગના પાચ અધ્યયનો
 નિરૂપિત કર્યા છે તો હું તમને ફરી પૂછવા માગુ છું કે હે ભદ્રન્ત ! યાવત્
 મોક્ષને પ્રાપ્ત કરી ચુકેલા તે જ શ્રમણુ લગવાન મહાવીર પહેલા અધ્યયનનો
 શો અર્થ નિરૂપિત કર્યો છે ? શ્રી સુધર્મા સ્વામી તેને ઉત્તર આપતા કહેવા
 લાગ્યા કે જૂ ! તે કાળે અને તે વખતે રાજગૃહ નામે એક નગરી હતી
 તેમાં શુભશિલક નામે ઉગ્રાન હતું નગરીના રાજાનું નામ શ્રેણિક હતું તેની
 રાણીનું નામ ચેલ્લના હતું

(સામી સમોસરિણ પરિસા ણિગયા જાવ પરિસા પઞ્જુવાસઙ-તેણ કાલેણં
 તેણ સમણ્ણકાલી નામ દેવી, ચમર વચ્ચાવ રાયહાણીવ

‘कालवर्डिसगभवणे’ कालावतसकभवने काले=कालाख्ये सिंहासने चतसृभिः सामानिकसाहस्रीभिः, चतसृभिर्महत्तरिकाभिः, सपरिवाराभिस्तिसृभिः=गङ्गाभ्यन्तरमध्यरूपाभिः ‘परिसाहिं’ परिपद्धिः पारिवारिकरूढेवीरूपाभिः, सप्तभिः ‘अणिर्णहिं’ अनीरैः=हयगजरथपदातिवृषभगन्धर्वनाट्यरूपैः, अत्राप विवेकः-

कालवर्डिसगभवणे कालसि, सीहासणसि चउर्हिं सामाणियसाहस्सीहिं चउर्हिं महूरियाहिं, सपरिवाराहिं तिहिं परिसाहिं सत्तहिं अणिर्णहिं सत्तहिं अणियाहिर्वईहिं सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अण्णेहिं यद्दुएहिं कालवर्डिसगभवणवासिहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं देवीहिं य सद्धिं संपरिवुडा महयाहय जाव विहरइ) वहा पर श्री महावीर शामी का आगमन हुआ। लोगों को जब इनके आगमन की खबर लगी-तब समस्त राजगृह निवासी जन इन का वदना करने के अभिप्राय से गुणशिलक उद्यान में आये। भगवान् ने धर्मकथा कही-यावत् परिपदने भगवान् की पर्युपासना की। उम काल में और उस समय ये काली नाम की देवी चमरचपा नाम की राजधानी में रहती थी। उसके भजन का नाम कालावतसक था। जिस सिंहासन पर यह बैठती थी उसका नाम काल था। यह उस भवन में चार हजार सामानिकों की परिपदा के साथ, चार हजार महत्तरिकाओं के साथ, अपने २ परिवारवाली तीन हजार पारिवारिक देवियों के साथ, मान अनीकोंके-हय, गज, रथ, पदाति, वृषभ, गंधर्व एव नाट्यरूपसैय के-

कालसि, सीहासणसि चउर्हिं सामाणियसाहस्सीहिं चउर्हिं महूरियाहिं, सपरिवाराहिं तिहिं परिसाहिं सत्तहिं अणिर्णहिं सत्तहिं अणियाहिर्वईहिं सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अण्णेहिं यद्दुएहिं कालवर्डिसगभवणवासिहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं देवीहिं य सद्धिं संपरिवुडा महयाहय जाव विहरइ)

त्या श्री महावीर स्वामीनु आगमन थयु न्गारे लोकेने तेमना आगमननी न्णु थर्ध त्यारे राजगृहना गधा लोके तेमने वदन कराना अलि प्रायथी शुभशिलक उद्यानमा आग्या लगवाने धर्मकथा कही सलगानी यावत् परिषदे लगवाननी पर्युपासना कनी ते कणे अने ते समथे कणी नामनी देवी अमरथ आ नामनी राजधानीमा रहेती छती तेना लवनदुं नाम कालावतसक छतु ने सिद्धामन उर ते जेसती छती तेतु नाम काल छतु ते लवनमा ते चार हजार सामानिकानी परिषदानी साथे, चार हजार महत्तरिकाओं के साथ, चार हजार पारिवारिक देवीओंनी साथे मान अनीकोंके-होडा, हाथी, रथ, पायदण, वृषभ, गंधर्व अने नाट्य

आद्यपद्यकानि सङ्ग्रामाय, गन्धर्वनाट्ये पुनरुपयोगावेति, सप्तभिरनीकाधिप-
 तिभिः, षोडशभिः आत्मरक्षणदेवतादेवोभिः, अन्यैरेतद्भिश्च कात्यायनसकृमन्त्रवाक्त्रि-
 भिरसुरकुमारदेवैरेतैरीभिश्च साहसं सपरिहृता ' महयाहय जात्र विहर ' महताऽहव
 यायद् विहरति- ' महयाऽऽहयनदृगीययाहयतनीतत्रालतुडिययगमुडगपदृष्पाहय
 वेणं ' महताऽऽहतनाट्यगीतयादित तन्त्रीतल ताल श्रुदित घनमृदङ्गपदुप्रवादितवेण,
 तत्र- ' महता ' रवेणेतिसम्भन्व, आहतानि=भङ्गाहतानि यानि नाट्यगीतानि,
 तथा-वादितानि-तन्त्री=गीता, तला=हस्तताल, तालाः=हास्यतालः, श्रुदि-
 तानि=शेषाणि तृषादिवाद्यानि, तथा घन इव मृदङ्गः=घनघनिमाहृष्याद् घनमृदङ्गः=
 स चासौ पदु प्रवादितश्चेति घनमृदङ्गपदुप्रवादितः, ततस्त्रिपदो इन्द्रः, तेषा यो
 रस्तेन-उपलक्षितान् दिव्यान् भोगभोगान् श्रुदादीन् श्रुजाना विहरति । ' इम
 च ण ' अस्मिन्नरसरे खलु केवलरूप=सपूर्णम् जम्बूद्वीप नाम द्वीप=म-पञ्चद्वीप
 विपुलेन ' ओहिगा ' अग्निना=अग्निज्ञानेन 'अभोग्यमाणी २' अभोग्यमाना २
 पश्यन्ति पुनः पुनरुपयोग ददती सती पश्यति । किं पश्यति ? इत्याह-'तथ' तत्र=
 अग्निज्ञानोपयोगे श्रमण भगवन्त महावीर जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वर्षे राजपुद्गे

साथ अनीकाधिपतियों के साथ, सोलह हजार आत्मरक्षरु देवों के साथ,
 तथा और भी बहुत से कालावतसक भवन में निवास करनेवाले असु-
 रकुमार देवों के एव देवियों के साथ परिवृत्त होकर रहा करती थी ।
 अव्यारत (सतत) नाट्यगीतों के एव वादिन तन्त्री, हस्त, ताल, कास्य ताल,
 श्रुदित आदि तृषादिवाद्यों के एव मेघ की ध्वनि जैसे अच्छी तरह
 धजाये गये मृदगों के सुन्दर २ शब्दों से उपलक्षित दिव्य भोगों को
 भोगती हुई अपने समय को आनन्द के साथ व्यतीत किया करती थी ।
 (इम च ण केवलरूप जम्बूद्वीप द्वीप विपुलेण ओहिगा आभोग्यमाणी २
 पासइ, तथ समण भगव महावीर जम्बू द्वीपे द्वीपे भारते वासे राघभिहे

इय मै-यनी साथे अनीकाधिपतिओनी साथे, सोण छंजर आत्मरक्षर देवोनी
 साथे तेमञ्ज वील पञ्च धरुा कालावतसक भवनोमा निवास करतारा अखुर
 कुमारदेवो अने देवीओनी साथे परिवृत्त थधने रहती छती ते अमाहृत
 (सतत) नाट्य गीतो वादित त त्री, हस्तताल, कास्यताल, श्रुदिन वगेर तूर्य पवेदे
 वाधो, मेघना ध्वनिनी जेम सारी चेठे वगाडवामा आवेला श्रुदोनी सुर
 शब्दोथी उपलक्षित दिव्य भोगोने उपयोग करती पोताना समयने सुभेथी
 पसार करती रहती छती

(इम च ण केवलरूप जम्बूद्वीप द्वीप विपुलेण ओहिगा आभोग्यमाणी २
 पासइ, तथ समणभगर महावीर जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वासे राघभिहे

नगरे गुणशिलके चैत्ये यथाप्रतिरूप-यथाकल्पम् ' उग्गह ' अग्रह=प्रसतेराज्ञाम्
 ' उग्गिण्हित्ता ' अवगृह्य समयेन तवसा आत्मान भावयन्त पश्यति, दृष्ट्वा हृष्ट
 तुष्टचित्तानन्दिता ' पीडमणा ' प्रीतिमनाः=प्रसन्नमनस्काः ' जावहियया ' यावन्-
 हर्षशशिसर्पदहृदया=हर्षवशादुल्लसितहृदया सिंहासनाद् अभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय

णयरे गुणसिलए चेइए अहापडिख्वं उग्गह उग्गिण्हित्ता सजमेण
 तवसा अप्पाण भावेमाण पासइ, पासित्ता इद्वतुद्वचित्तमाणदिया
 पीडमणा जाव हियया सीहानणाओ अब्भुद्वेइ, अब्भुद्वित्ता पायपीढाओ
 पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता पाउयाओ ओमुयइ, ओमुइत्ता तित्थगराभि-
 मुही सत्तद्वपयाइ अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता वाम जाणु अचेइ, अचित्ता
 दाहिण जाणु धरणिगलसि निद्वट्टु त्तिक्खुत्तो मुद्दाण धरणिगलसि निवे-
 सेइ, निवेसित्ता कट्टु एव वयासी) इस अवसर में उसने
 केवल कल्प-सम्पूर्ण-जंबूद्वीप नामके द्वीपको-मध्यजंबूद्वीप को-विपुल
 अवधिज्ञान के द्वारा वार २ उपयोग देकर देखा-। उस समय उसने
 श्रमण भगवान् महावीर को जंबूद्वीपान्तर्गत भरत क्षेत्र में राजगृह
 नगर मे गुणशिलक चैत्य में यथाकल्प वसति की आज्ञा लेकर संयम
 एव तप से आत्मा को भावित करते हुए स्थित देखा। देव्यकर वह बहुत
 अधिक हृष्ट एव तुष्ट हुई । उसका मन प्रीति से भर आया। हर्ष
 के वश से हृदय उल्लसित हो उठा । वह उसी समय अपने सिंहासन

गुणसिलए चेइए अहापडिख्वं उग्गह उग्गिण्हित्ता सजमेण तवसा अप्पाण भावे
 माण पासइ, पासित्ता इद्व-तुद्व चित्तमाणदिया पीडमणा जाव हियया सीहा
 सणाओ अब्भुद्वेइ, अब्भुद्वित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता पाउयाओ
 ओमुयइ, ओमुइत्ता तित्थगराभिमुही सत्तद्वपयाइ अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता, वाम-
 जाणु अचेइ, अचित्ता दाहिण जाणु धरणिगलसि निद्वट्टु त्तिक्खुत्तोमुद्दाण धरणिग-
 लसि निवेसेइ निवेसित्ता कट्टु एव वयासी)

ते समये तेण्णु केवलकल्प-संपूर्ण-जंबूद्वीप नामना द्वीपने मध्य जंबू
 द्वीपने विपुल अवधिज्ञानना उपयोग्धी वारवार ज्ञेयो ते समये तेण्णु श्रमण
 भगवान् महावीरने जंबूद्वीपमा आवेला भरतक्षेत्रना राजगृह नगरना शुभ
 शिलक चैत्यमा यथाकल्प वसतीनी आज्ञा लधने समये अने तप द्वारा पोताना
 आत्माने भावित करता रहता ज्ञेया ज्ञेधने ते पूज्य जं हृष्ट अने तुष्ट थर
 गर्ध तेनु मन प्रेमथी तरणोण वर्ध गयु हर्षातिरेकवी हृदय उल्लसित थर
 गयु ते ते जं वप्यते पोताना सिंहासन उपरथी उठी अने उठीने ते पादपीड

आद्यपञ्चकानि सद्ग्रामाय, गन्धर्वानामपि पुनरुपयोगायेति, सप्तमिरनीकाधिप-
 तिमिः, पौलस्तमिः आत्मरक्षणदेवताहर्षाभिः, अन्यैर्देवैर्भिक्ष कालावतसक भवनवाक्कि-
 मिरगुरुकुमारदेवैर्देवीभिश्च तादृशं सपरिष्ठा ' महयाह्वय जान विहति ' महताऽह्व-
 याद् विहरति- ' महयाऽऽह्वयनदृगीयसाह्वयतवीतन्तालतुडिषयगमुङ्गपदुष्पत्राऽऽ-
 चेषं ' महताऽऽह्वयनाट्यगीतवादिव तन्त्रीताल ताल श्रुटिन घनमृदङ्गपदुष्पत्रादितान्कम,
 तत्र- ' महता ' रणेणेतिसम्भन्त, आह्वयानि=भग्पाह्वयानि यानि नाट्यगीतानि,
 तथा-वादितानि-तन्त्री=रीणा, ताला =हस्तताल, तालाः=कास्यतालः, तुडि-
 तानि=शेषाणि तूर्पादिवाद्यानि, तथा घन इव मृदङ्गः=प्रनधरनिमाहस्याद् घनमृदङ्गः=
 स चासौ पदु प्रवादितश्चेति घनमृदङ्गपदुष्पत्रादितः, तत्रस्त्रियदो इन्द्रः, तथा यो
 रस्तेन-उपलक्षितान् दिव्यान् भोगभोगान् शब्दादीन् श्रुजाना विहरति । ' इम
 च ण ' अरिमन्त्रसररे खलु कैवल्यरूप-सपूर्णम् जम्बूद्वीप नाम द्वीप=मध्यजम्बूद्वीप
 विपुलेन ' ओहिणा ' अरधिना=अधिज्ञानेन 'अभोष्मानी २' अभोग्यमाना २
 पश्यन्ति पुनः पुनरुपयोग ददती मती पश्यति। किं पश्यति ? उत्पाह-'तत्थ' तत्र=
 अधिज्ञानोपयोगे श्रमण भगवन्त महावीर जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वर्षे राजशुद्धे

साथ अनीकाधिपतिर्यो के साथ, सोलह हजार आत्मरक्षक देवों के साथ,
 तथा और भी बहुत से कालावतसक भवन में निवास करनेवाले असु-
 रकुमार देवों के एव देवियों के साथ परिवृत्त होकर रहा करती थी।
 अव्याहत (सतत) नाट्यगीनों के एव वादित तन्त्री, हस्त, ताल, कास्य ताल,
 श्रुटित आदि तूर्पादिवाद्यो के एव मेघ की ध्वनि जैसे अच्छी तरह
 बजाये गये मृदंगो के सुन्दर २ शब्दों से उपलक्षित दिव्य भोगो को
 भोगती हुई अपने समय को आनन्द के साथ व्यतीन किया करती थी।
 (इम च ण कैवल्यरूप जम्बूद्वीप दीव विपुलेण ओहिणा आभोष्मानी २
 पासइ, तत्थ समण भगव महावीर जम्बू द्वीपे द्वीपे भारते चासे रायमिहे

इय सैन्यनी साथे अनीकाधिपतिज्योनी साथे, सोण हजार आत्मरक्षक देवोनी
 साथे तेमन्त्र जीन पथु धञ्जा कालावतसक लवनोमा निवास करनारा असुर
 कुमारदेवो अने देवीज्योनी साथे परिवृत्त यधने रहैती छती ते अत्राडव
 (सतत) नाट्य गीनो, वादित त त्री, छन्दताल, कास्यताल, श्रुटिन वगेरे तूर्पा वगेरे
 वाद्यो, मेघना ध्वनिनी जेम सारी पेडे पशाउतामा आवेला मृदगीता सुने
 श्रुद्धोथी उपलक्षित दिव्य भोगोने उपभोग करती पोताना समयने सुभेथी
 पसार करती रहैती छती

(इम च ण कैवल्यरूप जम्बूद्वीप दीव विपुलेण ओहिणा आभोष्मानी २
 पासइ, तत्थ समणभगव महावीर जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते चासे रायमिहे

नगरे गुणशिलके चैत्ये यथाप्रतिरूप-यथाफल्यम् ' उगह ' अग्रद्वार-वसतेराज्ञाम्
 ' उगिणित्ता ' अग्रद्वार समयेन तपसा आत्मान भावयन्त पश्यति, दृष्ट्वा हृष्ट
 तुष्टचित्तानन्दिता ' पीडमणा ' प्रीतिमनाः=प्रसन्नमनस्काः ' जाग्रद्वियया ' यात्र-
 हर्षवशात्सर्पदहदया=हर्षवशादुल्लसितहृदया सिंहासनाद् अभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय

गगरे गुणसिलके चेहए अहापडिह्वं उगह उगिणित्ता सजमेण
 तवसा अप्पाण भावेमाण पासइ, पासित्ता हृष्ट-तुष्ट चित्तमाणदिया
 पीडमणा जाव हियया सीहासणाओ अब्भुट्टेइ, अब्भुट्टित्ता पायपीढाओ
 पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता पाउयाओ ओमुयइ, ओमुइत्ता तित्थगराभि-
 मुही सत्तद्वपयाइ अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता वाम जाणु अचेइ, अचित्ता
 दाहिण जाणु धरणियलसि निहइत्तु च्चिक्खुत्तो मुद्राण धरणियलसि निवे
 सेइ, निवेसित्ता कइत्तु एव वयासी) इस अवसर में उसने
 केवल कल्प-सम्पूर्ण-जवूद्रीप नामके द्वीपको-मध्यजवूद्रीप को-विपुल
 अधिज्ञान के द्वारा वार २ उपयोग देकर देखा-। उस समय उसने
 श्रमण भगवान् महावीर को जवूद्रीपान्तर्गत भरत क्षेत्र में राजगृह
 नगर मे गुणशिलक चैत्य में यथाकल्प वसति की आज्ञा लेकर समय
 एव तप से आत्मा को भावित करते हुए स्थित देखा। देखकर वह बहुत
 अधिक हृष्ट एव तुष्ट हुई। उसका मन प्रीति से भर आया। हर्ष
 के वश से हृदय उल्लसित हो उठा। वह उसी समय अपने सिंहासन

गुणसिलके चेहए अहापडिह्वं उगह उगिणित्ता सजमेण तपसा अप्पाण भावे
 माण पासइ, पासित्ता हृष्ट-तुष्ट चित्तमाणदिया पीडमणा जाव हियया सीहा
 सणाओ अब्भुट्टेइ, अब्भुट्टित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता पाउयाओ
 ओमुयइ, ओमुइत्ता तित्थगराभिमुही सत्तद्वपयाइ अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता, वाम
 जाणु अचेइ, अचित्ता दाहिण जाणु धरणियलसि निहइत्तु च्चिक्खुत्तो मुद्राण धरणिय
 लसि निवेसेइ निवेसित्ता कइत्तु एव वयासी)

ते समये तेष्से डेवलकल्प-सं पूर्ण-जवूद्रीप नामना द्वीपने मध्य जवू
 द्वीपने विपुल अधिज्ञानना उपयोगथी वारवार ज्ञेये। ते समये तेष्से श्रमण
 भगवान् महावीरने जवूद्रीपमा आवेत्ता भरतक्षेत्रना राजगृह नगरना शुभ
 शिलक चैत्यमा यथाकल्प वसतीनी आज्ञा लधने समये अने तप द्वारा पोताना
 आत्माने लावित करता रहता ज्ञेया ज्ञेधने ते पूण ज हृष्ट अने तुष्ट व
 गर्ध तेनु मन प्रेमथी तरणेण थर्ध गयु हर्षातिरेकवी हृदय उल्लसित थर्ध
 गयु ते ते ज वषते पोताना सिंहासन उपरथी उठी अने उठीने ते पादपीठ

आद्यपश्चानि सहस्राणाम्, गन्धर्वाणां पुनश्चमोगायेति, सप्तभिरनीकाधिप-
 तिभिः, पौंड्रभिः आत्मरक्षरदेवगह्वीभिः, अन्यैरेकमिश्र कालावतमकमवनवाकि-
 भिरसुरकुमारैर्देवीभिश्च साहसं सपरिहृता ' महयाहय जात्र विहाय ' महताऽह
 यायद् विहरति- ' महयाऽऽहयनशुगीयशायतवीतत्रालतुडिपघगमुगपडुपपात्पर
 वेण ' महताऽऽहतनाट्यगीतयादित तन्त्रीतत्राल घुडित घनमृदङ्गपटुपवादितवेम,
 तत्र- ' महता ' रणेणेतिसम्बन्ध, आहतानि=भ्रूपाहतानि यानि नाट्यगीतानि,
 तथा-वादितानि-तन्त्री=गीता, ताला=हस्तताल, तालाः=कास्यतालः, घुडि
 तानि=शेषाणि तूर्यादियाद्यानि, तथा घन इव मृदङ्गः=घनघनिमादस्याद् घनमृदङ्गः=
 स चासौ पटु प्रवादितश्चेति घनमृदङ्गपटुप्रवादितः, ततस्त्रिपदो ङुङ्गः, तेषा यो
 रस्तेन-उपलक्षितान् दिव्यान् भोगभोगान् शब्दादीन् भुञ्जाना विहरति । ' इम
 च ण ' अस्मिन्नसरे खलु केवलरूप=सपूर्णम् जम्बूद्वीप नाम द्वीप=मध्यजम्बूद्वीप
 त्रिपुलेन ' ओहिणा ' अग्निना=अग्निज्ञानेन 'अभोग्यमाणी २' अभोग्यमाना २
 पश्यन्ति पुनः पुनरुपयोग ददती सती पश्यति । किं पश्यति ? इत्याह-'तत्र' तत्र=
 अग्निज्ञानोपयोगे श्रमण भगवन्त महावीर जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वर्षे राजपुत्रे

साथ अनीकाधिपतियों के साथ, सोलह हजार आत्मरक्षक देवों के साथ,
 तथा और भी बहुत से कालावतसक भवन में निवास करनेवाले असुर
 कुमार देवों के एव देवियों के साथ परिवृत होकर रहा करती थी ।
 अव्याहत (सतत) नाट्यगीतों के एव वादित तन्त्री, हस्त, ताल, कास्य ताल,
 घुडित आदि तूर्यादियाद्यों के एव मेघ की ध्वनि जैसे अच्छी तरह
 बजाये गये मृदंगों के सुन्दर २ शब्दों से उपलक्षित दिव्य भोगों को
 भोगती हुई अपने समय को आनन्द के साथ व्यतीत किया करती थी ।
 (इम च ण केवलरूप जम्बूद्वीप दीव त्रिपुलेण ओहिणा आभोग्यमाणी २
 पासइ, तत्थ समण भगव महावीर जम्बू द्वीपे दीपे भारते वासे रायगिहे

इम नैन्यनी साथे अनीकाधिपतिओनी साथे, सोलह हजार आत्मरक्षक देवोनी
 साथे तेमत्र भीज पञ्च धनु कालावतसक भवनोमा निवास करनास असुर
 कुमारदेवो अने देवीओनी साथे परिवृत थधने रहेती डती ते अत्राडत
 (सतत) नाट्य गीतो, वादित त त्री, हुन्तताल, कास्यताल, घुडित पगेरे तूर्य पगेरे
 पाधो, मेघना ध्वनिनी जेम सारी पेठे पगाउतामा आवेला मृद गीना सुन्दर
 शब्दोथी उपलक्षित दिव्य भोगोना उपलोग करती पोताना समयने सुभेथी
 पसार करती रहेती डती

(इम च ण केवलरूप जम्बूद्वीप दीव त्रिपुलेण ओहिणा आभोग्यमाणी २
 पासइ, तत्थ समण भगव महावीर जम्बूद्वीपे दीपे भारते वासे रायगिहे)

खलु श्रमणाय भगवते महावीराय यावत् सिद्धिगतिनामधेय स्थान संप्राप्तुकामाय,
 वन्दे खलु भगवन्त ' तत्थ गय ' तत्रगत=जम्बूद्वीपे राजगृहनगरस्य गुणशिलको
 धाने समप्रसृतम् ' इह गता ' इह गता=चमरवञ्चाराजधानी स्थिताऽहम्, पश्यतु
 मा भगवान् तत्रगत इहगतम्, ' त्ति कट्टु ' इति कृत्वो=इत्थुवत्वा वन्दते नमस्यति,
 वन्दित्वा नमस्यित्वा सिंहासनवरे ' पुरत्याभिमुही ' पौरस्त्याभिमुही पूर्वदिशाभि
 मुही ' निमण्णा ' निमण्णा=उपविष्टा । ततः खलु तस्या काल्या देव्या अयमेत-

जाव संपाचिउकामस्म वदामि ण भगवत तत्थ गय इह गया पासउ म
 भगव तत्थ गए इह गय त्तिरुट्टु वदइ नममइ, वदित्ता नमसित्ता
 सीहामणवरसि पुरत्याभिमुही निसण्णा तएण तीसे कालीए देवीए
 इमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था) यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त
 हुए अहंत भगवतो के लिये मेरा नमस्कार हो। सिद्धिगति नामक
 स्थान को प्राप्त करने की कामनावाले श्रमण भगवान महावीर को मैं
 नमस्कार करती हूँ। जम्बूद्वीप में राजगृह नगर के गुणशिलक उद्यान में
 इस समय विराजमान उन भगवान को मैं इस चमर चपा नाम की
 राजधानी में रही हुई नमस्कार कर रही हूँ। वहा पर रहे हुए वे प्रभु
 मुझे यहा पर रही हुई देखे। इस प्रकार कहकर उसने उनको वदना की
 -नमस्कार क्रिया-वदना नमस्कार करके फिर वह अपने उत्तम सिंहा-
 सन पर आकर पूर्व दिशाकी ओर मुँह करके बैठ गई। इसके बाद उस
 काली देवी के यत् इस प्रकार का यावत् मनः सकल्प उत्पन्न हुआ-
 (सेय खलु मे समण भगव महावीर वदित्ता जाव पज्जुवासित्तए त्ति

तत्थ गए इह गय त्ति कट्टु वदइ नममइ, वदित्ता, नमसित्ता सीहामणवरसि
 पुरत्याभिमुही निसण्णा-तएण तीसे कालीए देवीए इमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था)
 यावत् सिद्धगति नामक स्थानने प्राप्त थयेवा अर्द्धत लगवतोने भारा
 नमस्कार छे सिद्धगति नामक स्थानने भेणववानी जामनावाणा श्रमणु लगवान
 मडावीरने हु नमस्कार कर छु जम्बू द्वीपना राजगृह नगरना शुणुशिलक
 उद्यानमा अत्यादे विराजमान ते लगवानने हु आ अमरयथा नामनी राज
 धानीमा रहेती नमस्कार करी रही छु त्या विराजमान ते प्रभु अर्द्धी रहेती
 भने लुब्धे आ प्रभाए कडीने तेछे तेभने वदन कथा अने नमस्कार कथा
 वदन अने नमस्कार करीने ते चोताना उत्तम सिंहासन उपर आवीने पूर्व
 दिशा तरइ मुण करीने जेनी गर्ध त्थारपणी ते काणी देवीने आ नतने।
 यावत् मन सकल्प उत्पन्न थये के—

पादपीठान् 'पशोर्हृद्' प्र-पशोर्हृदि=भयतरति, प्रहयप्रहृद्=अवनोर्य 'पाउयातो'
 पादुके 'ओमुपद्' अममुश्रुति=गित्याति, मुस्ता तीर्थकरामिषुष्वी सतीमप्ता
 एपदानि 'अणुग-उद्' अनुग-उति=गम्युप ग-उति, अनुगम्य वाम जानुं
 'अचेद्' अश्रुति=उर्ध्वीररोनि, अश्रुत्या=उर्ध्वीरुह्य दक्षिण जानु धरणीतले
 'निहृद्' निहृत्य=स्थापयित्वा 'त्रिसप्तुचो' त्रिः कृत्य =त्रिवारम् 'मुदाण'
 मूर्धान=मस्तक धाणितले निवेशयति=उगयति, निवेश्य ईसि प-चुण्णमह' इय
 मत्ययनमति=स्तोत्र शिरोनामयति, मत्ययनम्य 'कडपनुडियथमिशाओ' कटकमुटित
 स्तम्भिते कटके=करभूपणे तुत्रिते=पादुभूरणे तै' म्भिमने=अष्ट-प्रे 'भुयाओ'
 भुजे 'गाहरद्' सदरनि=एकत्रोरुतोडि, सह्य 'करयन् जाव कट्टु' करतन्परि
 गृहीत शिर आर्च मस्तकेऽञ्जलिं कृ या एमनादीत्-'नमोत्थुण' इत्यादि-
 नमोऽस्तु खलु अर्हद्भ्यः यावद् सिद्धिगतिनामयेव स्थान सम्पाप्तेभ्यः, नमोऽस्तु

से उठी-और उठकर वह पादपीठ से होकर नीचे आई-नीचे आकर
 उसने दोनों पादुकाओं को पैरों में से उतार दिया। उतार कर फिर वह
 तीर्थकराधिष्ठित दिशा की ओर सात आठ पद आगे गई। वहा आकर
 उसने अपने वाम जानु को ऊंचा किया-ऊंचा कर के फिर दक्षिण जानु
 को नीचे धरणीतल मे रखा-रखकर फिर तीन बार अपने मस्तक को
 नीचे भूमिपर लगाया-लगाकर फिर वह कुछ झुकी-शिर को नीचे-
 नवाया। याद में कटक और मुटित से भूपित भुजाओ को एकत्रित
 किया-एकत्रित करके फिर उसने उन दोनों हाथोंकी अजलि बनाई-और
 उरो मस्तक पर आदक्षिण प्रदक्षिण कर इस प्रकार कहा (नमोत्थुण
 अरहताण जाव सपत्ताण नमोत्थुण समणस्स भगवओ महावीरस्स

उपर थधने नीचे आवा नीचे आवाने तेहे अने पादुकाओने पशोभाथी
 उतारी हीथी उतारीने ते तीर्थ कर ले दिशा तरक्ष विरज्जमान उता ते दिशा
 तरक्ष सात-आठ उगला आगण गछ त्या अधने तेहे चोताना उआ दीचयुने
 जायो थयो जायो करीने पथी तेहे जभया रीचयुने नीचे पृथ्वी उपर टेकव्ये
 टेकवाने तेहे तथ पथत चोताना अ तयो नीचे पृथ्वी उपर टेकव्ये, टेकवीने
 ते थोडी नगी-मस्तकने नीचे नमाव्यु त्थारपथी तेहे कटक अने मुटितथी
 विभूपित भुजओने लेगी करी, लेगी करीने तेहे तेओ अनेनी अजलि
 बनावी अने तेने मस्तक उपर आदक्षिण प्रदक्षिण-पूव ऽ दैरवीने आ प्रभाहे कछु

(नमोत्थुण अरहताण जाव सपत्ताण नमोत्थुण समणस्स भगवओ महा-
 वीरस्स जाव सपाविकामस्स पदामि ण भगवत तत्थगय ह गय म भगव

खलु श्रमणाय भगवते महावीराय यावत् सिद्धिगतिनामवेय स्थान संप्राप्तुकामाय, वन्दे खलु भगवन्त ' तत्पगय ' तत्रगत=जम्बूद्वीपे राजगृहनगरस्य गुणशिलको धाने समप्रसृतम् ' इहगता ' इहगता=चमरवञ्चाराजधानी स्थिताऽहम्, पश्यतु मा भगवान् तत्रगत इहगतम्, ' त्ति रुद्र ' इति कृत्वो=इत्युक्त्वा वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा सिंहासनवरे ' पुरत्याभिमुही ' पौरस्त्याभिमुखी पूर्वदिशाभि मुखी ' निमण्णा ' निपण्णा=उपविष्टा । ततः खलु तस्या काल्या देव्या अयमेत-

जाव सपाचिउकामस्म वदामि ण भगवत तत्थ गय इह गया पासड म भगव तत्थ गए इह गय त्ति रुद्रु वदइ नममइ, वदित्ता नमसित्ता सीहामणवरसि पुरत्याभिमुही निसण्णा तएण तीसे कालीए देवीए इमेयारूवे जाव समुप्रज्जित्था) यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए अर्हत भगवतो के लिये मेरा नमस्कार हो। सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त करने की कामनावाले श्रमण भगवान महावीर को मैं नमस्कार करती हूँ। जम्बूद्वीप में राजगृह नगर के गुणशिलक उद्यान में इस समय विराजमान उन भगवान को मैं इस चमर चपा नाम की राजधानी में रही हुई नमस्कार कर रही हूँ। वहा पर रहे हुए वे प्रभु मुझे यहा पर रही हुई देखे। इस प्रकार कहकर उसने उनको वदना की -नमस्कार क्रिया-वदना नमस्कार करके फिर वह अपने उत्तम सिंहासन पर आकर पूर्व दिशाकी ओर मुँह करके बैठ गई। इसके बाद उस काली देवी के यह इस प्रकार का यावत् मनः सकल्प उत्पन्न हुआ- (सेय खलु मे समण भगव महावीर वदित्ता जाव पज्जुवासित्ता त्ति

तत्थ गए इह गय त्ति रुद्रु वदइ नममइ, वदित्ता, नमसित्ता सीहामणवरसि पुरत्याभिमुही निसण्णा-तएण तीसे कालीए देवीए इमेयारूवे जाव समुप्रज्जित्था)

यावत् सिद्धिगति नामक स्थानने प्राप्त थयेता अर्हत भगवतोने मारा नमस्कार छे सिद्धिगति नामक स्थानने भेणववानी कामनावाणा श्रमणु भगवान मंडावीरने हु नमस्कार करे छु जम्बू द्वीपना राजगृह नगरना गुणशिलक उद्यानमा अत्यारे विराजमान ते भगवानने हु आ अमरयथा नामनी राज धानीमा रहेती नमस्कार करी रही छु त्या विराजमान ते प्रभु अर्हा रहेती भने लुण्णे आ प्रभाणे छुडिने तेणे तेमने वदन कर्या अने नमस्कार कर्या वदन अने नमस्कार करीने ते पोटाना उत्तम सिंहासन उपर आवीने पूव दिशा तरफे मुख करीने जेणी गज त्थारपत्री ते काणी देवीने आ जतने। यावत् मन सकल्प उत्पन्न थये। के—

पादपीठान् 'पञ्चोद्घा' प्र यरगोदति=अरतरति, प्रयपरुद्र=अरतोय 'पाउयातो'
 पादुके 'ओष्ठुय' अरमुश्रति=अरिपति, मुस्ता तीर्थरामिपुत्री सतीमना
 एषदानि 'अणुग-उड' अनुगच्छति=सम्पुत्रं गच्छति, अनुगम्य वाम जानु
 'अवेइ' अश्रति=उर्वीरगेति, अश्रिता=उर्वीरुत्प दक्षिण जानु धरणितले
 'निदृष्टु' निदृश्य=म्यापवित्या 'विदग्गुनो' त्रिः कृत्यः=त्रिपारम् 'मुद्राण'
 मूर्धान=मस्तक धरणितले निवेशयति=लगयति, निवेश्य ईमि पञ्चुणमइ 'ईप
 स्तत्ययनमति=स्तोक शिरोनामयति, मत्ययनम्य 'कडपवृद्धियथभियाश्रो' ऋद्रुद्रित
 स्तम्भिते ऋदके=करभूपणे तुत्रिते=गद्भूपणे तैः स्तम्भिते=अष्टव्ये 'भुयाओ'
 भुजे 'साहरइ' सहरति=एरुत्रोरुति, सह्य 'करयल जाय कडु' करतलपरि
 गृहीत गिर आर्च मस्तकेऽञ्जलिं कृ या एमनादीत्-'नमोत्पुण' इत्यादि-
 नमोऽस्तु खलु अर्द्धम्प' यायद् सिद्धिगतिनामधेय स्थान सम्पाप्तेभ्यः, नमोऽस्तु

से उठी-और उठकर वह पादपीठ से होकर नीचे आई-नीचे आकर
 उसने दोनों पादुकाओं को पैरों में से उतार दिया। उतार कर फिर वह
 तीर्थकराधिष्ठित दिशा की ओर मात आठ पद आगे गई। वहाँ आकर
 उसने अपने वाम जानु को ऊँचा किया-ऊँचा कर के फिर दक्षिण जानु
 को नीचे धरणीतल में रखा-रखकर फिर तीन बार अरने मस्तक को
 नीचे भूमिपर लगाया-लगाकर फिर वह कुछ झुकी-शिर को नीचे-
 नवाया। राद् में रुद्रक और घुद्रित से भूषित भुजाओं को एकत्रित
 किया-एकत्रित करके फिर उसने उन दोनों हाथोंकी अञ्जलि बनाई-और
 उसे मस्तक पर आदक्षिण प्रदक्षिण कर इस प्रकार कहा (नमोत्पुण
 अरहताणं जाव सपत्ताण नमोत्पुण समणस्स भगवओ महावीरस्स

उपर थधने नीचे आना नीचे आने तेहे जने पाहुकाओने पगोमाथी
 उतारी छीधी उतारीने ते तीर्थ कर ले दिशा तरङ्ग विराजमान होता ते दिशा
 तरङ्ग सात-आठ उगला आगण गध त्या गधने तेहे चो-नाना उाणा दीयवने
 उाओ धर्यो उाओ करीने पछी तेहे जमणा दीयवने नीचे पृथ्वी उपर टेकव्यो
 टेकवने तेहे त्रय वपत चोताना म तउने नीचे पृथ्वी उपर टेकव्यो, टेकवने
 ते थोडी नमी-मन्तउने नीचे नमोत्पुण त्पारपछी तेहे रुद्रक अने घुद्रितथी
 विलुपित भुनओने लेगी करी, लेगी करीने तेहे तेओ जनेनी अञ्जलि
 बनावी अने तेने मस्तक उपर आदक्षिण प्रदक्षिण-पूर्व ऽ देरनीने आ प्रभाउ उछु

(नमोत्पुण अरहताण जाव सपत्ताण नमोत्पुण समणस्स भगवओ महा
 वीरस्स जाव सपाविउरामस्स वदामि ण भगवत् तत्थगय ह गय १०० म भगव

प्रत्यर्पयन्ति=तदाज्ञानुसारेण कार्यं कृत्वा निवेदयन्ति । 'णर' नरं=विशेष
स्त्वयम्-यत्-सूर्याभस्य यानविमान योजनगतसहस्रविस्तीर्णमस्ति, अस्यास्तु-
योजनसहस्रविस्तीर्ण यानविमानमस्ति, शेष तथैव विवेच्यम् । तथैव-सूर्याभदेवदेव
काली देवी स्वस्य नामगोत्र साधयति=इत्यति । तथैव=सूर्याभदेवदेव च नाट्य-
विधिम् उपदर्शयति, उपदर्श्य यावत् प्रतिगता=यत्र आगता तत्रैव प्रतिनिवृत्ता ॥ सू० २ ॥

मूलम्-भतेत्ति भगव गोयमे समण भगव महावीर वदइ
णमसइ वदित्ता णमसित्ता एव वयासी कालिए णं भंते ।
देवीए सा दिव्वा देविद्धीइ कहि गया० कूडागारसालादिट्टतो,

कि जय वह विमान उनरर तैयार हो जावे-तत्र उसकी पीछे हमें खबर
कर देना । सो उन आभियोगिक देवो ने वैसा ही किया-और पीछे
इसकी खबर उसे कर दी । इसमें (जोयणसहस्रवित्तिण जाणविमाण
सेस तहेव) विशेषता इतनी रही कि सूर्याभदेव का यान विमान एक
लाख योजन का विस्तारवाला था । तत्र कि इसका यह यान विमान १
हजार योजन का विस्तारवाला था । याकी सब रचना इसकी उसी
सूर्याभ विमान की तरह जानना चाहिये । (तहेव णामगोय साहेइ,
तहेव नाट्यविहिं उवटसेइ जाव पडिगया) सूर्याभ देव की तरह काली
देवी ने अपने नाम गोत्र का रथन किया और सूर्याभ देव की तरह ही
नाट्यविधि को दिखलाया दिखलाकर फिर वह जहा से आई थी वही
पर पीछे गई सूत्र २ ॥

विमान तैयार थर्ध जय त्पारे तेनी भने जणु क्वामा आने त्पारपछी ते
आलियोगिक देवोअे तेमज क्युं अने विमान तैयार थर्ध जवानी भणर
देवीनी पासे भेकलावी दीध्री आ विमानभा (जोयणसहस्रवित्तिण जाण
विमाण सेस तहेव) विशेषता आटली ज इती के ज्यारे सूर्याभदेवनु यान-
विमान अेक लाख योजन जेटु विस्तारवाणु इतु त्पारे तेनु आ यान-विमान
अेक हजार योजन जेटु विस्तारवाणु इतु भाकी रथना समध्री तेनी भधी
विगत सूर्याभ-विमाननी जेम ज जणुनी जेधअे (तहेव णामगोय साहेइ,
तहेव नाट्यविहिं उवटसेइ जाव पडिगया) सूर्याभदेवनी जेम काणी देवीअे
पोताना नाम-गोत्रनु रथन क्युं अने सूर्याभदेवनी जेम ज नाट्यविधि भत्तावी
अने भत्तावने ते जनाधी आवी इती त्पार पाछी जती रही ॥ सूत्र २ ॥

मूपः यावत् मनः-सङ्कल्प समुद्राया-श्रेयः गन्तु यम श्रमणं भगवन् महावीरं
 पन्दिता यावत् ' पञ्जुवासित्तए ' पर्युपासितुम्=संविदुम्, इति कृत्वा=इतिमनसि-
 निधाय एवम्=उक्तरीत्या ' सपेहेइ ' सम्प्रेषते=विचारयति सप्रेष्य=विचार्य
 ' आभिभोगिन्देवे ' आभियोगिकान् देवान् भू-वदेया द्रव्यति=आह्वयति,
 श्रद्धयित्वा=आह्वय एवमदत्-एव एतद् हे देवानुपियाः ! श्रमणो भगवान् महा
 वीरः एव यथा सूर्यामस्त्यैव आजापित्ता ददाति यावत् दिव्य सुरवराभिगमन
 योग्य ' जाणविमाण ' यानविमान=यानाय गमनाय विमान कुरुत, कृत्वा यावत्-
 ममाज्ञा ' पचप्पिणह ' पचर्षया=मद्य निरेक्षयत । तेऽपिदेवाः तथैव कृत्वा यावत्

कदद् एव सपेहेइ सपेहिता आभिभोगिण देवे सदावेइ, महाविता एव
 घयासी एव एतद् देवानुपिया । समणे भगव महावीरे एव जहा सूरि
 याभो तहेव आणत्तिय देइ जाव दिव्य सुरवराभिगमणजोगं जाण
 विमाण करेइ, करित्ता जाव पचप्पिणह) सुद्धे भव यही उचित-श्रय
 स्कर है-कि मैं श्रमण भगवान् महावीर को वदना करके यावत् उनकी
 पर्युपासना करूँ इस प्रकार उसने पूर्वीक्तरूप से विचार किया । विचार
 करके उसने उसी समय आभियोगिक देवों को बुलाया-और बुलाकर
 उंससे इस प्रकार कहा-हे देवानुपियों ! श्रमण भगवान् महावीर राज
 गृह नगर के गुणशिलक उद्यान में पधारे हुए हैं-मैं उनको वदना करने
 के लिये जाना चाहती हूँ-अतः तुमलोग मेरे लिये दिव्य सुरवराभिग
 मन योग्य एकायान-विमान तैयार करो इस प्रकार की उसने उन्हें
 सूर्याभ देव की तरह आज्ञा दी । और स्थान में उनसे यह भी कह दिया

(सेय खलु मे समण भगव महावीर वदिता जाव पञ्जुवासित्तए तिकद् एव
 सपेहेइ, सपेहिता आभिभोगिण देवे सदावेइ, सदापित्ता एव ययासी एव खलु
 देवानुपिया ! समणे भगव महावीरे एव जहा सूरियाभो तहेव आणत्तिय देइ
 जाव दिव्य सुरवराभिगमणजोग जाणविमाण करेइ, करित्ता जाव पचप्पिणह)

भारा माटे हुवे अे ७ वात योग्य छे ई हु श्रमणु लगवान भडा
 वीरने वदना करीने यावत् तेभनी पर्युपासना कर, आ प्रभाणु तेणे विचार
 करी विचार करीने तेणे तर ७ आभियोगिइ देवाने ओलाव्या अने ओला
 वीने तेभने आ प्रभाणु कहु के डे देवानुपियो । श्रमणु लगवान भडावीर
 राजगृह नगरना शुषुशिलक उद्यानमा पधारेला छे तेभने वदन करवा माटे
 हु त्या ७वा धिण्डु छु अेथी तमे अधा भारा माटे दिव्य सुरवराभिगमन
 योग्य अेक यान-विमान तैयार करो आ प्रभाणु ते ओलाव्याने तेणे सूर्याभदेवनी
 जेभ आज्ञा दी, अने साथे साथे तेओने तेणे आ प्रभाणु कहु के व्यादे

तएणं सा कालिया दारिया अम्मापिईहि अब्भणुन्नाया
समाणी हट्ट जाव हियया पहाया कयवलिकम्मा कायकोउय
मगलपायच्छित्ता सुद्धप्पवेसाइ मगल्लाइं वत्थाइ पवर परिहिया
अप्पमहाग्घाभरणाळंकियसरीरा चेडियाचक्कवालपरिकिण्णा साओ
गिहाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव वाहिरिया उव-
ट्टाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ उवा-
गच्छित्ता धम्मिय जाणपवरं दूरुढा, तएण सा काली दारिया
धम्मिय जाणपवरं एवं जहा दौवइ जाव पज्जुवासइ, तएणं
पासे अरहा पुरिसादाणीए कालीए दारियाए तीसे य महइ-
महालयाए परिसाए धम्म कहेइ, तएणं सा काली दारिया
पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्म अतिए धम्म सोच्चा णिस-
म्म हट्ट जाव हियया पास अरहं पुरिसादाणीयं तिक्खुत्तो
वदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता एववयासी-सदहामि ण भते !
णिग्गंथ पावयण जाव से जहेय तुब्भं वयह, जं णवरं देवाणु-
प्पिया । अम्मापियरो आपुच्छामि, तएण अह देवाणुप्पियाण
अतिए जाव पव्वयामि, अहासुह देवाणुप्पिए !, तएण सा
काली दारिया पासेण अरहया पुरिसादाणीएण एववुत्ता समाणी
हट्ट जाव हियया पास अरह वदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता
तमेव धम्मियं जाणपवर दूरुहइ दूरुहित्ता पासस्स अरहओ पुरि-
सादाणीयस्स अतियाओ अवसालवणाओ चेइयाओ पडिनि-
क्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव आमलकप्पा नयरी तेणेव

अहो णं भंते ! काली देवी महिद्रियाः कालिए ण भंते ! देवीए
सा दिव्वा देविद्वीः किण्णा लद्धा किण्णा पत्ता किण्णा अभि
समण्णागया ? एव जहा सूरियाभस्स जाव एव खलु गोयमा !
तेण कालेणं तेणं समएण इहेव जञ्जूद्वीवे दीवे भारहे वासे आम
लकप्पा णाम णयरी होत्था वण्णओ अंबसालवणे चेइए जिय
सत्तू राया तत्थ ण आमलकप्पाए नयरीए काले नामं गाहा
वइ होत्था अइए जाव अपरिभूए, तस्स णं कालस्स गाहावइस्स
कालसिरी णामं भारिया होत्था, सुकुमाल जाव सुरूवा, तस्स
ण कालस्स गाहावइस्स धूया कालसिरीए भारियाए अत्तया काली
णाम दारिया होत्था, बुद्धा बुद्धकुमारी जुण्णा जुण्णकुमारी पडि
यपुयत्थणी णिव्विन्नवरा वरपरिवज्जिया यावि होत्था, तेणं कालेणं
तेण समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए आइगरे जहा वद्धमा-
णसामी णवरं णवहत्युस्सेहे सोलसहिं समणत्ताहस्सीहि अट्टत्ती-
साए अज्जियासाहस्सीहि सद्धि सपरिवुडे जाव अंबसालवणे
समोसडे परिसा णिग्गया जाव पज्जुवासइ, तएणं सा काली
दारिया इमीसे कहाए लद्धट्टा समाणी हट्ट जाव हियया जेणेव
अम्मपियरो तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता करयल जाव एवं
वयासी एव खलु अम्मयाओ ! पासे अरहा पुरिसादाणीए
आइगरे जाव विहरइ, तं इच्छामि ण अम्मयाओ ! तुब्भेहि
अब्भणुन्नाया समाणी पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स पाय-
वदिया गमित्तए ? अहासुह देवाणुप्पिया ! मा पडिबध् करेहि,

तएणं सा कालिया दारिया अम्मापिर्द्धिहि अब्भणुन्नाया
समाणी हट्ट जाव हियया पहाया कयवलिकम्मा कायकोउय
मंगलपायच्छित्ता सुद्धप्पवेसाइ मगल्लाइ वत्थाइ पवर परिहिया
अप्पमहाग्घाभरणालकियसरीराचेडियाचक्कवालपरिकिण्णा साओ
गिहाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव वाहिरिया उव-
ट्टाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ उवा-
गच्छित्ता धम्मिय जाणपवर दूरुढा, तएण सा काली दारिया
धम्मिय जाणपवर एव जहा दौवइ जाव पञ्जुवासइ, तएणं
पासे अरहा पुरिसादाणीए कालीए दारियाए तीसे य महइ-
महालयाए परिसाए धम्मं कहेइ, तएण सा काली दारिया
पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्म अतिए धम्म सोच्चा णिस-
म्म हट्ट जाव हियया पास अरहं पुरिसादाणीयं तिक्खुत्तो
वदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता एववयासी-सइहामि ण भते ।
णिग्गंथ पावयण जाव से जहेय तुब्भ वयह, ज णवरं देवाणु-
प्पिया । अम्मापियरो आपुच्छामि, तएणं अह देवाणुप्पियाण
अतिए जाव पठवयामि, अहासुह देवाणुप्पिए !, तएण सा
काली दारिया पासेण अरहया पुरिसादाणीएण एव बुत्ता समाणी
हट्ट जाव हियया पास अरह वदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता
तमेव धम्मिय जाणपवर दूरुहइ दूरुहित्ता पासस्स अरहओ पुरि-
सादाणीयस्स अतियाओ अवसालवणाओ चेइयाओ पडिनि-
क्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव आमलकप्पा नयरी तेणेव

अहो णं भते । काली देवी महिद्वियाऽ कालिण ण भते । देवीए
 सा दिव्वा देविद्वीऽ किण्णा लद्धा किण्णा पत्ता किण्णा अभि
 समण्णाग्या ? एव जहा सूरियाभस्स जाव एवं खलु गोयमा ।
 तेण कालेणं तेणं समण्ण इहेव जत्रुद्वीत्रे दोत्रे भारहे वासे आम
 लकप्पा णाम णयरी होत्था वण्णओ अंवसालवणे चेइए जिय
 सत्तू राया तत्थ णं आमलकप्पाए नयरीए काले नाम गाहा
 वइ होत्था अइए जाव अपरिभूए, तस्स णं कालस्स गाहावइस्स
 कालसिरी णाम भारिया होत्था, सुकुमाल जाव सुरूवा, तस्स
 ण कालस्स गाहावइस्स धूया कालसिरीए भारियाए अत्तया काली
 णामं दारिया होत्था, बुद्धा बुद्धकुमारी जुण्णाजुण्णकुमारी पडि-
 यपुयत्थणी णिव्विन्नवरा वरपरिवज्जियायावि होत्था, तेणं कालेणं
 तेण समण्णं पासे अरहा पुरिसादाणीए आइगरे जहा वद्धमा-
 णसामी णवर णवहत्थुस्सेहे सोलसहि समणसाहस्सीहि अट्टत्ती-
 साए अज्जियासाहस्सीहि सद्धि सपरिवुडे जाव अंवसालवणे
 समोसडे परिसा णिग्गया जाव पज्जुवासइ, तएणं सा काली
 दारिया इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ट जाव हियया जेणेव
 अम्मपियरी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता करयल जाव एवं
 वयासी-एव खलु अम्मयाओ । पासे अरहा पुरिसादाणीए
 आइगरे जाव विहरइ, तं इच्छामि ण अम्मयाओ । तुब्भेहि
 अब्भणुन्नाया समाणी पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स पाय-
 वदिया गमित्तए ? अहासुह देवाणुप्पिया । मा पडिवध करेहि,

तएण सा कालिया दारिया अम्मापिईहि अब्भणुन्नाया
समाणी हट्ट जाव हियया पहाया कयवलिकम्मा कायकोउय
मंगलपायच्छित्ता सुद्धप्पवेसाइ मगल्लाइं वत्थाइ पवर परिहिया
अप्पमहाग्घाभरणालकियसरीराचेडियाचक्कवालपरिकिण्णा साओ
गिहाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव वाहिरिया उव-
ट्टाणसाला जेणेव धम्मिय जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ उवा-
गच्छित्ता धम्मिय जाणपवरं दूरूढा, तएण सा काली दारिया
धम्मिय जाणपवर एवं जहा दोवइ जाव पज्जुवासइ, तएणं
पासे अरहा पुरिसादाणीए कालीए दारियाए तीसे य महइ-
महालायाए परिसाए धम्मं कहेइ, तएणं सा काली दारिया
पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्म अतिए धम्म सोच्चा णिस-
म्म हट्ट जाव हियया पास अरहं पुरिसादाणीयं तिक्खुत्तो
वदइ नमंसइ वदित्ता नमसित्ता एववयासी—सइहामि णं भते ।
णिग्गंथ पावयण जाव से जहेय तुब्भ वयह, ज णवरं देवाणु-
प्पिया । अम्मापियरो आपुच्छामि, तएण अह देवाणुप्पियाणं
अतिए जाव पठ्वयामि, अहासुह देवाणुप्पिए !, तएण सा
काली दारिया पासेण अरहया पुरिसादाणीएण एववुत्ता समाणी
हट्ट जाव हियया पास अरह वदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता
तमेव धम्मिय जाणपवर दूरूहइ दूरूहित्ता पासस्स अरहओ पुरि-
सादाणीयस्स अंतियाओ अवसालवणाओ चेइयाओ पडिनि-
क्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव आमलकप्पा नयरी तेणेव

उवागच्छइ उवागच्छिता आमलकूपं नयरि मज्झमज्जेणं जेणेव
 वाहिरिया उवट्टाणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता ध
 म्मियं जाणपवर ठवेइ ठवित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ
 पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता जेणेव अम्मापियरा तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छिता करयल० एव वयासी-एव खलु अम्मयाओ ।
 मए पासस्स अरहओ अंतिए धम्म णिसते सेऽत्रि य मे धम्मे
 इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए, तएणं अह अम्मयाओ । ससार
 भउविग्गा भीया जम्मणमरणाणं इच्छामि णं तुव्वेहि अब्भ
 णुन्नाया समाणी पासस्स अरहओ अंतिए मुडा भवित्ता अगा
 राओ अणगारिय पव्वइत्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया । मा पडि-
 वध करेह, तएण से काले गाहावई विपुलं असणं उवक्ख
 डावेइ उवक्खडावित्ता मित्तणाइ णियगसयणसंबधिपरियण
 आमतेइ आमत्तित्ता तओ पच्छा पहाए जाव विपुलेणं पुप्फव
 त्थगंधमल्लालंकारेण सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता तस्सेव मित्तणाइणि
 यगसयणसंबधिपरियणस्स पुरओ कालिय दारिय सेयापीएहि
 कलसेहि पहावेइ पहावित्ता सव्वालकारविभूसिय करेइ करित्ता
 पुरिससहस्सवाहिणिय सीय दुरोहेइ दुरोहित्ता मित्तणाइणियग
 सयणसंबधिपरियणेणं सद्धिं सपरिवुडे सन्विड्डीए जाव रवेणं
 आमलकूप नयरि मज्झ मज्जेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छिता
 जेणेव अबसालवणे चेइए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता
 छत्ताइए तित्थगराइसए पासइ पासित्ता सीय ठावित्ता

कालियं दारिय सीयाओ पञ्चोरुहइ तएणं त कालिय दारिय अम्मा-
 पियरो पुरओ काउ जेणेव पासे अरहा पुरिसा० तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छित्ता वदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-
 एव खल्लु देवाणुप्पिया ! काली दारिया अम्ह धूया इट्ठा कता
 जाव किमग पुण पासणयाए ? एसणं देवाणुप्पिया ! ससार
 भउव्विगा इच्छइ देवाणुप्पियाणं अतिए मुडा भवित्ता जाव
 पव्वइत्तए, त एय णं देवाणुप्पियाणं सिस्सिणिभिवख, दल-
 यामो पडिच्छत्तु णं देवाणुप्पिया ! सिस्सिणिभिवख, अहासुह
 देवाणुप्पिया ! मा पडिवधं करेह तएणं काली कुमारी पास
 अरह वदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता उत्तरपुरत्थिम दिसिभागं
 अवक्कमइ अवक्कमित्ता सयमेव आभरणमट्टालकार ओमुयइ
 ओमुइत्ता सयमेव लोय करेइ करित्ता जेणेव पासे अरहा पुरि-
 सादाणीए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पास अरह तिक्खुत्तो
 वंदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-आलित्ते ण
 भते ! लोए एव जाव सयमेव पव्वाविया, तएण पासे
 अरहा पुरिसादाणीए कालिं सयमेव पुप्फचूलाए अज्जाए
 सिस्सिणियत्ताए दलयइ, तएण सा पुप्फचूला अज्जा कालि
 दारिय सयमेव पव्वावेइ, जाव उवसपज्जित्ताण विहरइ, तएणं
 सा काली अज्जा जाया ईरियासमिया जाव गुत्तवभयारिणी,
 तएण सा काली अज्जा पुप्फचूलाए अज्जाए अतिए सामाइय-
 माइयाइ एक्कारसअगाइ अहिज्जइ वहूहि चउत्थ जाव विहरइ॥सू०३॥

कालियं दारिय सीयाओ पञ्चोरुहइ तएणं त कालिय दारिय अम्मा-
पियरो पुरओ काउ जेणेव पासे अरहा पुरिसा० तेणेव उवागच्छइ
उवागच्छित्ता वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एवं वयासी-
एव खल्ल देवाणुप्पिया । काली दारिया अम्ह धूया इट्ठा कता
जाव किमग पुण पासणयाए ? एसणं देवाणुप्पिया । संसार
भउव्विगा इच्छइ देवाणुप्पियाणं अंतिए मुडा भवित्ता जाव
पव्वइत्तए, त एय णं देवाणुप्पियाणं सिस्सिणिभिव्वख, दल-
यामो पडिच्छत्तु णं देवाणुप्पिया । सिस्सिणिभिव्वख, अहासुह
देवाणुप्पिया । मा पडिवधं करेह तएणं काली कुमारी पास
अरह वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं
अवक्कमइ अवक्कमित्ता सयमेव आभरणमल्लालकार ओमुयइ
ओमुइत्ता सयमेव लोय करेइ करित्ता जेणेव पासे अरहा पुरि-
सादाणीए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पास अरह तिव्वखुत्तो
वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एव वयासी-आलित्ते ण
भते । लोए एवं जाव सयमेव पव्वाविया, तएण पासे
अरहा पुरिसादाणीए कालि सयमेव पुप्फचूलाए अज्जाए
सिस्सिणियत्ताए दलयइ, तएण सा पुप्फचूला अज्जा कालि
दारिय सयमेव पव्वावेइ, जाव उवसपज्जित्ताण विहरइ, तएणं
सा काली अज्जा जाया ईरियासमिया जाव गुत्तवभयारिणी,
तएणं सा काली अज्जा पुप्फचूलाए अज्जाए अतिए सामाइय-
माइयाइ एक्कारस अगाइं अहिज्जइ वहूहि चउत्थ जाव विहरइ ॥सू०३॥

उवागच्छइ उवागच्छिता आमलकप्य नयरि मज्झमज्झेणं जेणेव
 वाहिरिया उवट्टाणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता ध
 म्मिथं जाणपवर ठवेइ ठवित्ता धम्मियाओ जाणपवराओ
 पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता जेणेव अम्मापियरा तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छिता करयल० एव वयासी-एवं एत्थु अम्मयाओ ।
 मए पासस्स अरहओ अतिए धम्म णिसंते सेऽवि य मे धम्मे
 इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए, तएणं अह अम्मयाओ । संसार
 भउविग्गा भीया जम्मणमरणणं इच्छामि णं तुव्भेहि अब्भ-
 णुन्नाया समाणी पासस्स अरहओ अंतिए मुडा भवित्ता अगा
 राओ अणगारियं पव्वइत्तए, अहासुह देवाणुप्पिया । मा पडि
 वध करेह, तएण से काले गाहावई विपुलं असणं४ उवक्ख
 डावेइ उवक्खडावित्ता मित्तणाइ णियगसयणसंबधिपरियणं
 आमंतेइ आमत्तित्ता तओ पच्छा पहाए जाव विपुलेणं पुक्कव
 त्थगंधमल्लालकारेण सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता तस्सेव मित्तणाइणि
 यगसयणसंबधिपरियणस्स पुरओ कालिय दारिय सेयापीएहि
 कलसेहि पहावेइ पहावित्ता सव्वालकारविभूसियं करेइ करित्ता
 पुरिससहस्सवाहिणिय सीय दुरोहेइ दुरोहित्ता मित्तणाइणियग-
 सयणसंबधिपरियणं सद्धिं संपरिवुडे सन्निवड्डीए जाव रत्तेणं
 आमलकप्य नयरि मज्झ मज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छिता
 जेणेव अवसालवणे चेइए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता
 छत्ताइए तित्थगराइसए पासइ पासित्ता सीय ७ ठावित्ता

कालिय दारिय सीयाओ पञ्चोरुहइ तएणं त कालिय दारिय अम्मा-
 पियरो पुरओ काउ जेणेव पासे अरहा पुरिसा० तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छित्ता वंदइ नमंसइ वदित्ता नमसित्ता एवं वयासी-
 एव खल्ल देवाणुप्पिया । काली दारिया अम्ह धूया इट्ठा कता
 जाव किमग पुण पासणयाए ?, एसणं देवाणुप्पिया । ससार
 भउठ्विगा इच्छइ देवाणुप्पियाणं अतिए मुडा भवित्ता जाव
 पव्वइत्तए, त एयं णं देवाणुप्पियाणं सिस्सिणिभिवख, दल-
 यामो पडिच्छत्तु णं देवाणुप्पिया । सिस्सिणिभिवख, अहासुहं
 देवाणुप्पिया । मा पडिवधं करेह तएणं काली कुमारी पास
 अरह वदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता उत्तरपुरत्थिस दिसिभागं
 अवक्कमइ अवक्कमित्ता सयमेव आभरणमल्लालकार ओमुयइ
 ओमुइत्ता सयमेव लोय करेइ करित्ता जेणेव पासे अरहा पुरि-
 सादाणीए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पास अरह तिक्खुत्तो
 वदइ नमंसइ वदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-आलित्ते ण
 भते । लोए एवं जाव सयमेव पव्वाविया, तएण पासे
 अरहा पुरिसादाणीए कालि सयमेव पुप्फचूलाए अज्जाए
 सिस्सिणियत्ताए दलयइ, तएण सा पुप्फचूला अज्जा कालि
 दारिय सयमेव पव्वावेइ, जाव उवसपज्जित्ताण विहरइ, तएणं
 सा काली अज्जा जाया ईरियासमिया जाव गुत्तवभयारिणी,
 तएणं सा काली अज्जा पुप्फचूलाए अज्जाए अतिए सामाइय-
 माइयाइ एक्कारस अगाइ अहिज्जइ वहूहि चउत्थ जाव विहरइ ॥सू०३॥

टीका—कालीदेवीगमनानन्तर गौतमः पृच्छति—' भवेति ' इत्यादि ।
' भवेति ' हे भदन्त । इति मन्त्रो य भगवान् गौतमः श्रमण भगवन्त महावीर
वन्दते नमस्यति यद्विद्या नमस्विपत्या एवमरात्रीन्—काल्या गलु हे भदन्त ! देव्या
सा=या साम्प्रत दर्शिता सा दिव्या ' देविड्डी ' देविड्डी = विमानपरिवारादिरूपा,
' देवज्जुई ' देवगुति.=शरीरभण्णादीनां दीप्तिरूपा ' देवगुभावे ' देवानुभावः=
शक्तिप्रभावादिस्य, कुत्रगता ? कुत्र प्रतिष्ठा ? भगवानाह—शरीरगता, शरीरमनु

' भवेति भगव गोयमे ' इत्यादि ।

टीकार्थः—कालीदेवी के चले जाने के बाद (भगव गोयमे) भग
वान गौतम ने (भवेति) हे भदन्त । इस प्रकार सशोधित कर (समण
भगव महावीर वदइ णमसइ) श्रमण भगवान् को वदना की-नमस्कार
क्रिया (वदित्ता णमसित्ता एव वयासी) वदना नमस्कार करके फिर
उन्हीं ने उनसे इस प्रकार पूछा—(कालिण भते । देवीए सा दिव्वा
देविड्डी ३ कर्हि गया० कूडागारन्नालादिद्वतो, अहोण भते । कालीदेवी
महड्डिया ३, कालिण भते । देवीए सा दिव्वा देविड्डी ३ किण्णा लद्धा,
किण्णा पत्ता, किण्णा अभिसमण्णा गया ? एव जहा सूरियाभस्स जाव)
हे भदन्त ! कालीदेवी ने जो इस समय दिव्य विमान-परिवार आदिरूप
ऋद्धि दिखलाई, शरीर, आभरण आदि की दीप्तिरूप जो देवगुति एव
शक्ति प्रभाव आदिरूप जो देवानुभाव दिग्बलाया-यह सब कहा चला

' भवेति भगव गोयमे ' इत्यादि—

टीकार्थः—शुणी देवीना जता रथा णाह (भगव गोयमे) भगवान गौतमे
(भवेति) हे भदन्त ! आ प्रभावे सशोधित करीने (समण भगव महावीर
वदइ णमसइ) श्रमण भगवान महावीरने वदत अने नमस्कार कर्था (वदित्ता
णमसित्ता एव वयासी) वदना अने नमस्कार करीने तेमए तेओश्रीने पूछयु के
(कालिण भते ! देवीए सा दिव्वा देविड्डी ३ कर्हि गया० कूडागार
सालादिद्वतो, अहोण भते । काली देवी महड्डिया ३, कालिण भते । देवीए सा
दिव्वा देविड्डी ३ किण्णा लद्धा, किण्णा पत्ता, किण्णा अभिसमण्णा गया ? एव
जहा सूरियाभस्स जाव)

हे भदन्त ! शुणी देवीओ अत्यारे के दिव्यविमान, परिवार वगेदनी
ऋद्धि पतावी, शरीर, आभरण वगेदनी दीप्तिनी के देवगुति तेमए शक्ति,
प्रभाव वगेदेने के देवानुभाव पताओये ते अधो कथा अद्वय थर्ध गयो ?
कथा प्रविष्ट थर्ध गयो ?

प्रविष्टा, 'कूटाकारशालादिद्वतो' अत्र कूटाकारशाला दृष्टान्तो बोद्धव्यः ।
 'अहो' आश्चर्ये खलु हे भदन्त ! कालीदेवी महर्द्धिका महाद्युतिका महानुभाववा
 वर्तते काल्या खलु हे भदन्त ! देव्या सा दिव्या देवर्द्धिः ३ 'किष्णा' कथ=
 केन प्रकारेण 'लद्धा' लब्धा=अर्जिता, 'किष्णा' कथ=केन प्रकारेण 'पत्ता'
 प्राप्ता=स्वाधीनीकृता 'किष्णा' कथ=केन प्रकारेण 'अभिममन्नागया' अभि
 समन्वागता=उपभोगविषयतया समागता ? एव 'जहामूरियाभस्त जाव' यथा-
 सूर्याभस्य यावत्=यथा सूर्याभदेवविषये गौतमस्वामिना प्रश्न कृतस्तथैवात्रापि
 विज्ञेयः । अथ भगवान् कालीदेवीपूर्वभववृत्तान्त वर्णयति- 'एव खलु' इत्यादि ।
 एव खलु हे गौतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये इहेव=अस्मिन्नेव जम्बूद्वीपे
 द्वीपे भारते वर्षे आमलकल्या नाम नगरी आसीत् । 'वण्णओ' वर्णकः=नगरी
 वर्णनग्रन्थऔपपात्तिमुत्रादवसेय' । तत्र आम्रशालवन चैत्यं, जितशत्रू राजा

गया-? कहा प्रविष्ट हो गया? इस प्रकार गौतम का प्रश्न सुनकर
 भगवान् ने उनसे कहा-शरीर में चला गया-शरीर में प्रविष्ट हो गया ।
 इस विषय में कूटाकारशाला का दृष्टान्त जानना चाहिये । हे भदन्त ! काली-
 देवी महर्द्धिक, महाद्युतिक एव महानुभाववाली है । इस कालीदेवी ने वह
 देवर्द्धि ३ किस प्रकार प्राप्त की अर्जित की किस प्रकार उसे अपने
 आधीन किया ? और किस प्रकार से उसने उसे अपने भोग की विष-
 यभृत बनाई ? इस तरह गौतमस्वामी ने सूर्याभदेव के विषय में जिस
 तरह से प्रश्न किया उसी तरह से यहां पर भी जानना चाहिये-। अब
 भगवान् कालीदेवी के पूर्वभव के वृत्तान्त का वर्णन करते हैं-(एवं खलु
 गोयमा ! तेण कालेण तेण समएण-इहेव जजुद्दीवे दीवे भारहे वासे
 आमलकप्पा णाम णयरी होत्या-वण्णओ-अवसालवणे चेइए जियसत्तू

आ प्रभाण्णे गौतमने प्रश्न सालणीने भगवाने तेमने कल्लु के शरीरमा
 प्रविष्ट थध गथे-शरीरमा अतो रह्यो आ विषे कूटाकार शाणानु दृष्टान्त जल्लु
 जेधञ्जे हे भदन्त ! जगती देवी महर्द्धिक महाद्युतिक अने महानुभाववाणी हे
 आ काणी देवीञ्जे ते देवर्द्धि उ देवी रीते प्राप्त करी छे, अर्जित करी छे,
 देवी रीते स्वाधीन बनावी छे, अने तेण्णे तेने देवी रीते पोताना उपलोगणी
 विषयभूता बनावी छे ? आ प्रभाण्णे गौतम स्वामीञ्जे सूर्याभदेवना विषे जेम
 प्रश्न कर्यो हुतो तेमञ्ज अर्द्धो पल्लु जल्लुयो जेधञ्जे भगवान् हुवे काणी देवीना
 पूर्वभवना वृत्तान्तनु वर्णन करे छे-

(एवं खलु गोयमा ! तेण कालेण तेण समएण इहेव जजुद्दीवे दीवे भारहे
 वासे अमलकप्पा णाम णयरी होत्या-वण्णओ-अंसालवणे चेइए जियमत्तू राया

टीका—कालीदेवीगमनानन्तर गौतमः पृच्छति—‘ भतेति ’ इत्यादि ।
 ‘ भतेति ’ हे भदन्त । इति नम्यो य भगवान् गौतमः श्रमण भगवन्त महावीर
 वन्दते नमस्पति रन्दिता नमस्विता एवमयादीन्—काल्या रलु हे भदन्त । देव्या
 सा=या साम्प्रत दर्शिता सा दिव्या ‘ देविडु ’ देविदि = विमानपरिवारादिरूपा,
 ‘ देवज्जुई ’ देवघुतिः=शरीरागणादीना दीप्तिरूपा ‘ देवणुभावे ’ देवानुभाव=
 शक्तिप्रभावादिरूपा, कुत्रगता ? कुत्र प्रविष्टा ? भगवानाह—शरीरगता, शरीरमनु

‘ भते ति भगव गोयमे ’ इत्यादि ।

टीकार्थः—कालीदेवी के चले जाने के बाद (भगव गोयमे) भग
 वान गौतम ने (भते ति) हे भदन्त । इस प्रकार सघोषित कर (समर्ण
 भगव महावीर वदइ णमसइ) श्रमण भगवान् को वंदना की—नमस्कार
 किया (वदित्ता णमसित्ता एव वयासी) वदना नमस्कार करके फिर
 उन्हो ने उनसे इस प्रकार पूछा—(कालिण भते ! देवीए सा दिव्या
 देविडु ३ कहिं गया० कूडागारसालादिद्वतो, अहोण भते ! कालीदेवी
 महड्डिया ३, कालिण भते ! देवीए सा दिव्या देविडु ३ किण्णा लद्धा,
 किण्णा पत्ता, किण्णा अभिसमण्णा गया ? एव जहा सूरियाभस्स जाव)
 हे भदन्त ! कालीदेवी ने जो इस समय दिव्य विमान-परिवार आदिरूप
 ऋद्धि दिखलाई, शरीर, आभरण आदि की दीप्तिरूप जो देवगुति एव
 शक्ति प्रभाव आदिरूप जो देवानुभाव दिग्बलाया—वह सब कहा चला

‘ भतेसि भगव गोयमे ’ इत्यादि—

टीकार्थ—शान्ती देवीना जता रद्धा णाह (भगव गोयमे) भगवान गौतमे
 (भतेसि) हे भदन्त ! आ प्रभावे सघोषित करीने (समण भगव महावीर
 वदइ णमसइ) श्रमण भगवान् महावीरने वदन् अने नमस्कार कया (वदित्ता
 णमसित्ता एव वयासी) वदना अने नमस्कार करीने तेभणे तेआश्रीने पूछथु ३

(कालिण भते ! देवीए सा दिव्या देविडु ३ कहिं गया० कूडागार-
 सालादिद्वतो, अहोण भते ! काली देवी महड्डिया ३, कालिण भते ! देवीए सा
 दिव्या देविडु ३ किण्णा लद्धा, किण्णा पत्ता, किण्णा अभिरामण्णा गया ? एव
 जहा सूरियाभस्स जाव)

हे भदन्त ! शान्ती देवीके अत्यारे ने दिव्यविमान, परिवार वगेरनी
 ऋद्धि पतावी, शरीर, आभरण वगेरनी दीप्तिनी ने देवघुति तेभण शक्ति,
 प्रभाव वगेरनेने के देवानुभाव पताव्ये ते अधो कया अदन्थ थर्ध गये ?
 कया प्रविष्ट थर्ध गये ?

पतितपूतस्तनी-ज्वनतनितम्बस्तनी, ' णिविन्नवरा ' निर्विण्णवरा=वररणे
विरक्ता, अतएव ' वरपरिवर्जिता ' वरपरिवर्जिता=पतिरहिता चाप्यासीत् ।
तस्मिन् काले तस्मिन् समये पार्श्वोऽर्हन् पुरुषादानीय =पुरुषश्रेष्ठ. आदिकरः
यथा बद्धमानसोमी तथैव पार्श्वप्रभुरपि ' णवर ' नवरम्-अय विशेषः-श्रीवर्द्ध-
मानसोमी समस्तोच्छ्रेयः, पार्श्वप्रभुः ' णवहृत्युस्सेहे ' नवहस्तोत्सेधः=नवहस्त-
परिमितशरीरावगाहन, स षोडशभिः श्रमणसाहस्रीभिः, अष्टत्रिंशता आर्थिका-

ज्जिया यावि होत्था) इस काल गाथापति की कालश्री नाम भार्या थी।
इसके हाथ पैर आदि समस्त अंग उपांग विशेष सुकुमार थे। देखने में
यह बड़ी सुन्दर थी काल गाथापति के इस काल श्री की कुक्षि से
उत्पन्न हुई एक काली नाम की दारिका भी थी। जो बहुत बयस्का हो
चुकी थी-इसका विवाह भी नहीं हुआ था। इसलिये कुमारी अवस्था
में ही यह बृद्धा जैसी बहु उमरवाली हो गई थी। शरीर भी बहु अव-
स्था सपन्न होने के कारण इसका जीर्ण हो चुका था। अतः
अपरिणीतावस्था में ही यह जीर्ण कुमारी बन गई थी। इसके नितम्ब
और स्तन दोनों ही बिलकुल ढीले हो गये थे नीचे झुक आये थे।
वरके वरण करने रूप कार्य से यह विरक्त बन चुकी थी अतः यह वर-
परिवर्जित थी-पति से सर्वथा रहित थी। (तेण कालेण तेण समएणं
पासे अरहा पुरिसादाणीए आइगरे जहा बद्धमाणसामी णवर णवह-
त्युस्सेहे सोलसहि समणसाहस्सीहि अट्टत्तीसाए अज्जिया साहस्सीहि

णिविन्नवरा, वरपरिवर्जिता यावि होत्था)

ते काल गाथापतिनी कालश्री नामे लायीं हुनी तेना हाथ-पग वगेरे
अने भधा अगे। तेमअ उपागे। सविशेष सुकोमण हुता देणावभा ते अहुं अ
सुदर हुती काल गाथापतिनी आ कालश्रीना गर्भथी अन्म पाभेली अके काली
नामे दारिका (पुत्री) पणु हुती ते मोठी उमरनी थर्धं थूरी हुती तेनु
लअ पणु थयु नहोतु अथी कुमारिकानी अवस्थाभा अ ते उगी नेवी अहुं
उमरे पडोयेली थर्धं गर्धं हुती अहुं उमरे पडोयेनी होवा अहल तेनु शरीर
पणु अणु थर्धं थूक्यु हुतु अथी कुमारिकानी अवस्थाभा अ ते अणु कुमारिका
अनी गर्धं हुती तेना नित अ अने स्तने। अने आव दीला थर्धं गया हुता,
नीचे लटकावा लाग्ना हुता वरने वरणु करवा रूप कार्यथी ते विरक्ता अनी
गर्धं हुती अथी ते वर परिवर्जित हुती ते अकेअम पति वगरनी हुती

(तेणं कालेण तेण समएण पासे अरहा पुरिसादाणीए आइगरे जहा बद्ध
माणसामी णवरं णवहृत्युस्सेहे सोलसहिं समणसाहस्सीहि अट्टत्तीसाए अज्जिया

पासीत् । तत्र खलु आमलक-रायां काशो नाम गाथापतिगर्मात् कीदृशः ? इत्याह-
 'अद्वे' आद्वयः=धनधान्यादि समृद्धि-समृद्धः, 'जात्र' यात्र 'अपरिभूष'
 अपरिभूतः=बहुजनैरपि परामत्रिमुमदाय । तस्य खलु कालस्य गाथापतेः काश
 श्रीर्नाम भार्याऽऽसीत्, कीदृशीत्याह-सुकुमारपाणिपादा गात्र् सुरूवा । तस्य
 खलु कालस्य गाथापतेर्दृहिता कालश्रियं भार्याया आत्मजा काशी नाम
 दारिका=पुत्री आसीत् । सा कीदृशी ? त्याह-'बुद्धा' वृद्धा=बहुयस्करत्वात्,
 वृद्धकुमारी=अपरिणीतत्वात्, 'जुण्णा' जीर्णा=जीर्णशरीरत्वात्, 'जुण्णकुमारी'
 जीर्णकुमारी=अपरिणीतास्थायामेव समातजीर्णशरीरत्वात्, 'पडियपूयत्यणी'

राया तस्य णं आमलकप्पाण नयरीण काळे नाम गाहावई होत्था, अद्वे
 जात्र अपरिभूष) वे कहते हैं-गौतम सुनो-तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर इस
 प्रकार है-उस काल और उस समय में इसी जत्रूद्वीप नामके द्वीप में
 भारतवर्षमें आमलकल्पा नामकी नगरी थी । नगरीका वर्णन करनेवाला
 पाठ यहां पर औपपातिक सूत्र से योजित करलेना चाहिये । उस नगरी
 में उद्यान था जिसका नाम आम्रशालावन था । इस नगरी के राजा का
 नाम जितशत्रु था । इस आमलकल्पा नगरी में काल नाम का गाथापति
 रहता था । यह धन धान्यादिसे विशेष समृद्ध था और लोगोंमें भी इस
 की अच्छी प्रतिष्ठा थी । (तस्स ण कालस्स गाहावइस्स कालसिरी णाम
 भारिया होत्था, सुकुमाल जात्र सुरूवा, तस्स ण कालस्स गाहावइस्स
 धूया कालसिरीए भारियाए अत्तया काली णाम दारिया होत्था बुद्धा
 बुद्धकुमारी, जुण्णा जुण्णकुमारी, पडियपूयत्यणी णिविन्नवरा वरपरिव

तस्यण आमलकप्पाए नयरीए काळे . नाम गाहावई होत्था अद्वे जात्र अपरिभूष)

तेज्जा कळे छे के डे गौतम । सालणे, तमारा प्रश्नोने उत्तर आ
 प्रभाणे छे-के ते काणे अने ते अभये आ जत्रूद्वीप नामना द्वीपमा भारत
 वर्षमा आमलकल्पा नामनी नगरी હતી नगरीना वर्णन विधेने पाठ अर्धी
 औपपातिक सूत्र वडे णवणी देवेने लेखणे ते नगरीमा अेक उद्यान હતુ
 તેનુ નામ આમ્રશાલ વન હતું , તે નગરીના રાજાનુ નામ જિતશત્રુ હતું
 તે આમલકલ્પા નગરીમા કાલા નામે ગાથાપતિ રહેતો હતો તે ધનધાન્ય
 વગેરેથી સવિશેષ સમૃદ્ધ હતો અને સમાજમા તે ઠી સારી એવી પ્રતિષ્ઠા હતી

(તસ્સ ણ કાલસ્સ ગાહાવઇસ્સ કાલસિરીણામ 'ભારિયા હોત્યા, સુકુમાલ
 જાત્ર સુરુ વા, તસ્સ ણ કાલસ્સ ગાહાવઇસ્સ ધૂયા કાલસિરીએ ભારિયાએ અત્તયા
 કાલી ણામ દારિયા હોત્યા બુદ્ધા બુદ્ધકુમારી, જુણા જુણકુમારી, પઠિ

हंतः पुरुपादानीयस्य पादवन्दिक्का=पादवन्दनाशया गन्तुम् । अम्मापितरौ कथं यतः—हे देवानुग्रिभे ! पुत्रि यथा सुख तथा कुरु किन्तु अस्मिन् शुभकार्ये प्रतिबन्ध=पमाद मा कुरु । ततः खलु सा कालिका दारिका अम्मापितृभ्यामभ्यनुज्ञाता सती हृष्टयापद्दहृदया स्नाता कृतमलिकर्मा कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ता शुद्ध-

अव्भणुन्नाया समाणी पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स पायवदिया गमित्तए ?) लोगो को ज्योही पार्श्व प्रभु के आम्रशालवन में आने की खबर लगी—त्योहीँ सब जनता प्रभु को वदना के लिये अपने २ स्थान से निकलकर उस आम्रशालवन में आने लगी। वहा आकर प्रभु का धार्मिक उपदेश सुन वह प्रभु की पर्युपासना करने लगी। इसके अनन्तर जब यह समाचार काली दारिका को मिला तो वह बहुत अधिक हर्षित एव सतुष्ट चित्त हुई। बाद में वह जहा अपने माता पिता ये वहा पहुँची वहा जाकर उसने माता पिता को दोनो हाथ जोडकर चरण वदना की—और इस प्रकार कहा—हे माततात ! पुरुषश्रेष्ठ, आदिकर, ऐसे पार्श्वनाथ अर्हत प्रभु आम्रशालवन में पधारे हुए हैं—इसलिये मैं आपसे आज्ञापित होकर उन पुन्पश्रेष्ठ अर्हत प्रभु पार्श्वनाथ को वदना करने के लिये जाना चाहती हूँ। (अहासुह देवाणुप्पिया ! मा पडिअव करेहि, तएण सा कालिया दारिया अम्मापिईहि अव्भणुन्नाया समाणी इट्टुट्ट जाव हियया ण्हाया कयमलिकुम्मा कयकोउयमगलपायच्चित्ता

णुनाया समाणी पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स पायवदिया गमित्तए ?)

पार्श्व प्रभुना आम्रशालवनमा पधारेवानी लल्लु यता ए णधा लोके प्रभुने वदन करवा माटे पोतपोताना स्थानेथी नीडणीने ते आम्रशाल वनमा आववा लाग्ना त्या आवीने प्रभुने धार्मिक उपदेश सामग्रीने तेओ प्रभुनी पर्युपासना करवा लाग्या त्थारणाह डाली दारिकाने आ समाचारे मज्जा त्थारे ते भूअ ए हर्षित तेमज सतुष्ट चित्तवाणी थर्ध गर्थ त्थारपथी ते न्ना तेना माता—पिता हुता त्या पडोथी त्या वर्धने तेणे माता—पिताने एने हाथ नेडीने अरल्लु वदना करी अने त्थारपथी आ प्रमाणे चिन्ती करी डे डे माता पिता ! पुरुष श्रेष्ठ, आदिकर ओवा पार्श्वनाथ अर्हत प्रभु आम्रशाल वनमा पधारे छे ओटला माटे हु तमारी आसा भेगवीने ते पुरुष श्रेष्ठ अड त प्रभु पार्श्वनाथने वदन करवा माटे न्वा धंउ धु

(अहा सुह, देवाणुप्पिया ! मा पडिअव करेहि, तएण सा कालिया दारिया अम्मापिईहि अव्भणुन्नाया समाणी इट्टुट्ट जाव हियया ण्हाया कयमलिकुम्मा कय

साहस्रीमि सार्द्धं सपरिवृतः यावत् आम्रशालघने समामृतः । परिषन्निर्गता यावत् पर्युवास्ते । ततः खलु सा काली दारिका अस्याः भगवत्पार्श्वमभ्युसमागमन रूपायाः कथायाः=शार्नायाः ' लद्धट्टा ' लब्धार्था भगवान्प्रसमव्रतः, इत्येव स्वार्थमाप्ता ' हृद्दु जाव हियया ' हृद्दु यावद्दहदया-हृद्दुष्टुष्टुचित्तानन्दिता प्रीतमनस्का हर्षशरिसर्पदहदया सती यत्रैव अम्मापियरो तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य ' करयल जाव ' करतल्पपरिवृहीत शिर आरर्त दशनल मन्तकेऽञ्जति कृत्वा एवमत्रादीव- एव खलु हे अम्न ताती । पार्श्वेऽर्द्धन् पुरुषादानीयः आदिकरो यावत्-आम्रशाल घने चैत्ये यथा-प्रतिरूपमग्रहमगृण्ण रायमेन तपमाऽऽमान मावयन् विहरति= आस्ते, तद्गण्डामि खलु हे अम्नताती । युग्माभिरभ्यनुज्ञाता सती पार्श्वस्था

सर्द्धि सपरिवुडे जाव अषलसालघणे समोसडे) उस काल में और उस समय में पुरुषादानीय पुरुषश्रेष्ठ-आदिकर पार्श्वनाथ अर्हत प्रभु जो श्री वर्द्धमान स्वामी जैसे थे-सोलह हजार श्रमणों के तथा ३८, हजार आर्यिकाओं के साथ तीर्थकर परपरानुसार विहार करते हुए उस आम्रशालघन में आये। भगवान् महावीर और पार्श्वनाथ प्रभु की शरी रावगाहना में विशेषता केवल इतनी ही थी कि उनका शरीर सात हाथ ऊँचा था और पार्श्व प्रभु का शरीर ९ हाथ ऊँचा था। (परिसा णिग्गया, जाव पञ्जुवासड, तण्णं सा दारिया इमीसे क्हाण लद्धट्टा समाणी हृद्दु जाव हियया जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव एव वयासी-एव खलु अम्मयाओ पासे अरहा पुरिसा दाणीए आइगरे जाव विहरइ, त इच्छामि ण अम्मयाओ ! तुम्भेहि

साहस्रीहिं सर्द्धि सपरिवुडे जाव अषलसालघणे समोसडे)

ते काले अने ते समये पुरुषादानीय-पुरुष श्रेष्ठ-आदिकर पार्श्वनाथ- अर्हत प्रभु-श्रेष्ठो श्री वर्द्धमान स्वामी जेवा उता-सोण उन्तर श्रमणो तेमज्ज उट उन्तर आर्यिकाओनी साथे तीर्थकर पर परा सुखेण विहार करता ते आम्रशाल घनमा आन्था भगवान् महावीर अने पार्श्वनाथ प्रभुनी शरी रावगाहनामा विशेषता इत्त आटली ज छे के तेमनु शरीर सात हाथ जेठु ठियु उटु अने पार्श्व प्रभुनु शरीर नव हाथ ठियु उटु

(परिसा णिग्गया, जाव पञ्जुवामइ, तण्णं सा काली दारिया इमीसे क्हाण लद्धट्टा समाणी हृद्दु जाव हियया जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव एव वयासी-एव खलु अम्मयाओ ! पासे अरहा पुरिसादाणीए आइगरे जाव विहरइ, त इच्छामि ण अम्मयाओ !

‘जहा दोवई जाय’ यथा द्रौपदी यावत्-द्रौपदीन्तु छात्रादीन् तीर्थङ्करातिशयान् दृष्ट्वा धार्मिकाद् यानप्रवरोदवतरति, पञ्चाभिगमपूर्वक भगवत्समीपे गत्या वन्दित्वा नमस्यित्वा च भगवन्त ‘पञ्जुपासड’ पर्युपास्ते । तत खलु पार्श्वोऽर्हन् पुस्पादानीयः काल्यै दारिकायै तस्या च महातिमहालयाया पर्षदि धर्म कथयति ततः खलु सा काली दारिका पार्श्वस्वार्हत पुरुपादानीयस्यान्तिके धर्मं श्रुत्वा निश्चय्य हृष्ट यावद् हृदया पार्श्वमर्हन्त पुरुपादानीय त्रिकृतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा

वह उस पर आरूढ हो गई । आरूढ होकर वह वहाँ से चली । ज्योही उसने द्रौपदी की तरह तीर्थकरातिशयरूप छात्रादि विभूति को देखा तो वह देखकर उस धार्मिक यानप्रवर से नीचे उतरी । और पञ्च अभिगमन पूर्वक भगवान् के पास जाकर उसने उनको वदना की, उन्हें नमस्कार किया-वदना नमस्कार करके फिर उसने उनकी पर्युपासना की । (तएण पासे अरहा पुरिसादाणीए कालीए दारियाए तीसे य महइमहालयाए परिसाए धम्मो कहिओ) पुरुपादानीय अर्हत प्रभु पार्श्वनाथने उस काली दारिकाको उस विशाल परिषदाके बीचमें धर्मकथा सुनाई । (तएण सा काली दारिया पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म इट्ठ जाव हियया पास अरह पुरिसादाणीय तिकखुत्तो वदइ नमसइ) पुरुपादानीय उन अर्हत पार्श्वनाथ प्रभु से धर्म को सुनकर और हृदय मे अवधारण कर वह काली दारिका बहुत अधिक हर्षित

त्याधी स्वाना थर्ध द्रौपदीनी जेम तेणे न्यारे तीर्थ उरातिशय इय छत्र वगेरे विभूतिने जेध के जेतानी साथे ज ते धार्मिक यान-प्रवरभाथी नीचे उतरि पडी अने पञ्च अभिगमनपूर्वक भगवाननी पासे जधने तेभने वदना करी, तेभने नमस्कार कर्या वदना अने नमस्कार करीने तेणे तेभनी पर्युपासना करी त्यारपधी

(तएण पासे अरहा पुरिसादाणीए कालीए दारियाए तीसे य महइमहा लयाए परिसाए धम्मो कहिओ)

पुरुपादानीय अर्हत प्रभु पार्श्वनाथे ते काली दारिकाने ते विशाल परिषदानी साथे धर्मकथा सलजायी

(तएण सा काली दारिया पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म इट्ठ जाव हियया पास अरह पुरिसादाणीय तिकखुत्तो वदइ नमसइ)

पुरुपादानीय ते अर्हत पार्श्वनाथ प्रभुनी पासेथी धर्मने सालणीने अने तेने हृदयभा अवधारित करीने ते काली दारिका बहु ज वधारे हर्षित

प्रदेशयानि माङ्गलानि यत्राणि प्रवरपरिहिता भव्यमहायां भरणालक्रियसरीरा चेदिक्र
चक्रवालपरिणीतां स्वकार्मुक्याद् प्रतिनिष्कामति, प्रतिनिष्काम्य यत्रैव वाङ्मय
उपस्थानशाला यत्रैव धार्मिको यानप्रवरस्तैरोपागच्छति, उपागत्य धार्मिकं यान
प्रवर दृष्ट्वा=भास्वा । ततः खलु सा काली दारिका धार्मिकं यानप्रवरम्, एवं

सुद्वप्पवेसाद् भगलाइ वत्याइ पवरपरिहिया अप्पमहग्वाभरणालक्रिय
सरीरा चेदिया चक्रवालपरिक्रिणा साओ गिहाओ पडिनिक्खमह,
पडिनिक्खमिच्छा जेणेव याहिरिया उवट्टाणसाला जेणेव धम्मिय जाण
प्पवरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिच्छा धम्मिय जाणप्पवर दुरुद्धा,
तएण सा काली दारिया धम्मिय जाण पवर जहा दोवई जाव पज्जुवासइ)
तय माता पिता ने उअसे गेसा कहा-हे देवानुप्रिये । तुझे जिस प्रकार
सुर्य मिळे उस प्रकार तू कर-इस शुभकार्य में प्रतिषय-प्रमाद मत
कर । इस प्रकार माता पितासे अभ्यनुज्ञात हुई उस दारिका ने इष्ट तुष्ट
चित्त होकर स्नान क्रिया वायसादि के लिये अन्नका भागरूप-बलिकर्म
क्रिया कौतुक, भगल एव प्रायश्चित्त करके शुद्ध प्रवेश योग्य, भगलकारी
घन्नों को अच्छी तरह पहिरा, और अल्पभार बहुमूल्य आभरणों से
अलङ्कृत शरीर होकर वह चेदिका चक्रवाल से युक्त हो अपने घर से
निकली । निकलकर वह वहाँ गई-जहाँ बाह्य उपस्थान शाला थी-उसमें
जाकर वह जहाँ धार्मिक यानप्रवर रक्खा था-वहाँ पहुँची-वहाँ जाकर

को उपमगलपापच्छिच्छा सुद्वप्पवेसाद् भगलाइ वत्याइ पवरपरिहिया अप्पमहग्वा
भरणालक्रियसरीरा चेदियाचक्रवालपरिक्रिणा साओ गिहाओ पडिनिक्खमह,
पडिनिक्खमिच्छा जेणेव याहिरिया उवट्टाणसाला जेणेव धम्मिय जाणप्पवरे
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिच्छा, धम्मिय जाणप्पवर दुरुद्धा तएण सा काली
दारिया धम्मिय जाणप्पवर एव जहा दोवई जाव पज्जुवासइ)

त्याहे मातापिताअे तेने आ प्रभाअे कहु के हे देवानुप्रिये । तने अेम
धुअ भणे तेभ तु कर आ शुभ कार्यमा प्रतिअध-प्रमाद नर नहि आ
प्रभाअे मातापिता वडे आज्ञापिन थयेली ते दारिकाअे लुण्ट-लुण्ट चित्त थधने
स्नान कथुं कागडा वगेरेने अन्नलाग आपीने बलिकर्म कथुं कौतुक, भगल
अने प्रायश्चित्त करीने शुद्ध प्रवेश योग्य, भगलकारी वस्त्रोने सारी राते पहिया
अने वजनमा लुद्धा पणु किमतमा अहु लारे अेवा आलखोअी शरीरने
अल कृत करीने दासीअोना समूद्धथी परिवेष्टित थधने पोताना वस्त्रथी नीकणी
नीकणीने ते त्या पडोअी अथा बाह्य उपस्थान शाला लती तेमा अधने ते
अथा धार्मिक यानप्रवर अिलु' लुतु तेमा आइठ थर् अर् अर्

‘जहा दोवई जाय’ यथा द्रौपदी यावत्-द्रौपदीन्तु छात्रादीन् तीर्थङ्करातिशयान् दृष्ट्वा धार्मिकाद् यानप्रवरोदवतरति, पञ्चाभिगमपूर्वक भगवत्समीपे गत्वा वन्दित्वा नमस्यित्वा च भगवन्त ‘पञ्जुपासड’ पर्युपास्ते । तत खलु पाश्वोऽर्हन् पुस्पा- दानीयः काल्यै दारिकायै तस्या च महातिमहालयाया पर्षदि धर्मं कथयति ततः खलु सा काली दारिका पार्श्वस्यार्हत पुरुपादानीयस्यान्तिके धर्मं श्रुत्वा निश्चय्य हृष्ट यावद् हृदया पार्श्वमर्हन्त पुरुपादानीय त्रिकृतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा

बह उस पर आरूढ हो गई । आरूढ होकर वह वहाँ से चली । ज्योती उसने द्रौपदी की तरह तीर्थकरातिशयरूप छात्रादि विभूति को देखा तो वह देखकर उस धार्मिक यानप्रवर से नीचे उतरी । और पञ्च अभिगमन पूर्वक भगवान् के पास जाकर उसने उनको वदना की, उन्हें नमस्कार किया-वदना नमस्कार करके फिर उसने उनकी पर्युपासना की । (तएण पासे अरहा पुरिसादाणीए कालीए दारियाए तीसे य महद्महालयाए परिसाए धम्मो कहिओ) पुरुपादानीय अर्हत प्रभु पार्श्वनाथने उस काली दारिकाको उस विशाल परिषदाके बीचमें धर्मकथा सुनाई । (तएण सा काली दारिया पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म दृष्ट जाव हियया पास अरह पुरिसादाणीय तिक्रुत्तो वदह नमसह) पुरुपादानीय उन अर्हत पार्श्वनाथ प्रभु से धर्म को सुनकर और हृदय में अवधारण कर वह काली दारिका बहुत अधिक हर्षित

त्याधी खाना थर्ध द्रौपदीनी जेभ तेहे न्यारे तीर्थ उरातिशय रूप छत्र वगेरे विभूतिने जेध के जेतानी साथे ज ते धार्मिक यान-प्रवरभाथी नीचे उतरी पडी अने पञ्च अभिगमनपूर्वक भगवाननी पासे जधने तेभने वदना उरी, तेभने नमस्कार कर्या वदना अने नमस्कार करीने तेहे तेभनी पर्युपासना करी त्यारपधी

(तएण पासे अरहा पुरिसादाणीए कालीए दारियाए तीसे य महद्महा लयाए परिसाए धम्मो कहिओ)

पुरुपादानीय अर्हत प्रभु पार्श्वनाथे ते काली दारिकाने ते विशाल परि षदानी साथे धर्मकथा सलणापी

(तएण सा काली दारिया पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म दृष्ट जाव हियया पास अरह पुरिसादाणीय तिक्रुत्तो वदह नमसड)

पुरुपादानीय ते अर्हत पार्श्वनाथ प्रभुनी पासेथी धर्मने सालणीने अने तेने हृदयमा अवधारित करीने ते काली दारिका बहु ज वधारे हर्षित

नमस्यत्या एवमादीन्-श्रद्धामि गन्तु हे भवन्त । निर्ग्रन्थ प्रवचनं यावत् तद्
 तथैतद् गुण वदथ नवर-विशेषोऽयम्-यन्-भगम् अम्हापितरौ आपुञ्जामि, तत =
 मातापितरौ प्रष्टा सन्त अह देवानुप्रियाणामन्तिके यावत् प्रवजामि । भगवानाह-
 यथासुख हे देवानुप्रिये । । ततः गन्तु मा काली दारिया पार्श्वेन अर्द्धता पुरुषा

हृद्य हृद् । उभने उन पुन्यादानीय पार्श्वनाथ अर्द्धत प्रभु को तीन बार
 वंदना नमस्कार किया । याद में (वदित्ता नमसित्ता एव वयासी सह
 हामि ण भते ! जिग्गथ पात्रयण जाव से जहेय तुम्हे वयह, ज णवर
 देवानुप्पिया ! अम्हापियरो आपुञ्जामि, तण्ण अह देवानुप्पियाण अतिए
 जाव पव्वयामि, अहासुह देवानुप्पिए ! तण्ण सा काली दारिया पासेण
 अरहया पुरिसादाणीणं एव वुत्ता समाणी हह जाव हियया पास
 अरह वदह, नमसह, वदित्ता नमसित्ता तमेव धम्मिय जाणपवर दुरु
 हह, दुरूहित्ता पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स अतियाओ अबसा
 लवणाओ वेइयाओ पडिनिक्खमह, पडिनिक्खमित्ता जेणेअ आमलरुप्पा
 नयरी, तेणेव उवागच्छइ) वंदना नमस्कार करके उसने उन प्रभु से
 ऐसा कहा-हे भवन्त ! मैं आपके द्वारा प्रतिपादित निर्ग्रन्थ प्रवचन को
 विशेष श्रद्धा की दृष्टि से देखनी हूँ आपने जैसा यह प्रतिपादित किया
 है वह वस्तुतः वैसा ही है । यह मुझे बहुत रुचा है । अतः मैं माता
 पिता से पूछती हूँ । उनसे पूछकर फिर आप देवानुप्रिय के पास आकर

हृद्य थड तेहे ते पुरुसादानीय पार्श्वनाथ अर्द्धत प्रभुने त्रुषु बार वदना
 अने नमस्कार कर्या त्थारमाह

(वदित्ता नमसित्ता एव वयासी सहहामिण भते ! जिग्गथ पात्रयण जाव
 से जहेय तुम्हे वयह, ज णवर देवानुप्पिया ! अम्हापियरो आपुञ्जामि, तण्ण
 अह देवानुप्पियाण अतिए जाव पव्वयामि, अहा सुह देवानुप्पिए ! तण्ण सा
 काली दारिया पासे ण अरहया पुरिसादाणीणं एव वुत्ता समाणी हह जाव हियया
 पास अरह वदह, नमसह, वदित्ता नमसित्ता तमेव धम्मिय जाणपवर दुरुहह
 दुरूहित्ता पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स अतियाओ अरसालवणाओ वेइयाओ
 पडिनिक्खमह, पडिनिक्खमित्ता जेणेअ आमलरुप्पा नयरी तेणेअ उवागच्छइ)

वदना नमस्कार करीने तेहे ते प्रभुने आ प्रभाहे कहु उ हे लहन्त ।
 तभारा वडे प्रतिपादित निर्ग्रन्थ प्रवचनने हु विशेष श्रद्धानी दृष्टिअे लेठ
 छु तमे लेखु आ प्रतिपादिनि कथुं उ अरेअर ते तेखु अ छे भने आ
 भूष अ गभी गनु उ अेथी हु मातापिताने पूछी लठ छु तेभने पूछीने

दानीयेन एतद्भुक्ता सती हृष्ट यावद् हृदया पार्श्वमर्हन्त वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा
नमस्यत्या तदेव धार्मिक यानप्रवर दूरोहति, दूरुह्य पार्श्वस्यार्हत पुरुषादानीय
स्यान्तिरुद् आश्रशालानात् चैत्यात् प्रतिनिष्कामति, प्रतिनिष्काम्य यत्रैव आमल-
कल्पा नगरी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य आमलकल्पाया नगर्या मध्य-मध्येन
यत्रैव वाह्या उपस्थानशाला तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य धार्मिक यानप्रवर स्थोप-
यति, स्थापयित्वा धार्मिक्याद् यानप्रवरात् प्रत्यवरोहति, प्रत्यवरुह्य यत्रैव अम्मा
पितरो तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य ' करतल० ' करतलपरिगृहीत मस्तकेऽञ्जलिं

दीक्षित होना चाहती हूँ। काली दारिका के इस अभिप्राय को सुनकर
प्रभुने उससे कहा देवानुप्रिये! यथासुखम्। इस प्रकार वह काली
दारिका पुरुषादानीय उन अर्हत प्रभु पार्श्वनाथ से अनुमोदित होकर
चित्त में बहुत अधिक प्रसन्न हुई। उसने अर्हन्त पार्श्वनाथ प्रभु को
वन्दना नमस्कार किया-और वन्दना नमस्कार करके वहा से आकर बह
उसी अपने धार्मिक यान पर चढ गई चढकर वह फिर पुरुषादानीय,
अर्हत प्रभु पार्श्वनाथ के पास से और उस आम्रशालवन नामके उद्यान
से बाहिर चली आई। बाहिर आकर वह जहा आमलकल्पा नगरी थी
-वहा पर आ गई। (उवागच्छित्ता आमलकल्पं णयरिं मज्झं मज्झेण
जेणेव बाहिरिया उवट्टाणसाला-तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
धम्मिय जाणपवर ठवेइ, ठवित्ता धम्मियाओ जाणपवरोओ पच्चोरुहेइ,
पच्चोरुहित्ता जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कर-

आप देवानुप्रियनी पाने आवीने दीक्षित थवा आहु छु काली दारिकाना आ
अलिप्रायने सालणीने प्रभुअे तेने कहु के डे देवानुप्रिये। ' यथासुखम् ' आ
प्रभाणु ते काली दारिका पुरुषादानीय ते अर्हन्त प्रभु पार्श्वनाथ वडे अनुमे
हित थधने चित्तमा भूमं प्रसन्न थध तेणु अर्हन्त पार्श्वनाथ प्रभुने वदना
नमस्कार उयो अने वदना नमस्कार करीने त्याथी आवीने ते तेण पोताना
धार्मिक यातमा जेमी गध अने जेमीने ते पुरुषादानीय अर्हन्त प्रभु पार्श्व
नाथनी पासैथी अने ते आम्रशाल वन नामना उद्यानथी भडार आवी गध
भडार आवीने ते त्या आमलकल्पा नगरी हुती त्या आवी गध

(उवागच्छित्ता आमलकल्पं णयरिं मज्झं मज्झेण जेणेव बाहिरिया उवट्टाण-
साला-तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मिय जाणपवर ठवेइ, ठवित्ता धम्मि
याओ जाणपवरोओ पच्चोरुहेइ, पच्चोरुहित्ता, जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवाग-
च्छइ, उवागच्छित्ता करतल० एव वयासी-एवं खलु अम्मयाओ ! मए पासस्स

नमस्यत्या एवमादीन्-श्रद्धामि गच्छ हे भद्रन्त । निर्ग्रन्थ प्रवचनं यावत् तद्
 तथैतद् युयु इत्य नवर=विशेषोऽयम्-यन्-श्रद्धम् अम्मापितरौ आपुञ्जामि, तत्र=
 मातापितरौ पृष्ठा खड्ड अह देवानुप्रियाणामन्तिके यावत् प्रव्रजामि । भगवानाह-
 यथासुख हे देवानुप्रिये । । ततः खड्ड मा काली दारिया पार्श्वेन अर्हता पुष्पा

हृदय हुई । उसने उन पुण्यादानीय पार्श्वनाथ अर्हत प्रभु को तीन बार
 वदना नमस्कार किया । याद में (वदित्ता नमसित्ता एव वयामी सह
 हामि ण भते ! णिग्गथं पावयण जाव से जहेय तुम्हे वयह, ज णवर
 देवाणुप्पिया ! अम्मापियरो आपुञ्जामि, तण्ण अह देवाणुप्पियाण अतिए
 जाव पव्वयामि, अहासुह देवाणुप्पिए ! तण्ण सा काली दारिया पासेण
 अरहया पुरिसादाणीणं एव बुत्ता समाणी हट्ट जाव हियया पास
 अरह वदह, नमसह, वदित्ता नमसित्ता तमेव धम्मिय जाणपवर दुरु
 हट्ट, दूरुहित्ता पासस्स अरहओ पुरिमादाणीयस्स अतियाओ अबसाल
 वणाओ चेइयाओ पडिनिक्खमह, पडिनिक्खमित्ता जेणेव आमलकप्पा
 नयरी, तेणेव उवागच्छइ) वंदना नमस्कार करके उसने उन प्रभु से
 ऐसा कहा-हे भद्रन्त ! मैं आपके द्वारा प्रतिपादित निर्ग्रन्थ प्रवचन को
 विशेष श्रद्धा की दृष्टि से देवती हूँ आपने जैसा यह प्रतिपादित किया
 है वह वस्तुतः वैसा ही है । यह मुझे बहुत रुचा है । अतः मैं माता
 पिता से पूजती हूँ । उनसे पूजकर फिर आप देवानुप्रिय के पास आकर

हृदय यथ तेष्से ते पुरुषादानीय पार्श्वनाथ अर्हत प्रभुने त्रयु वार वदना
 अने नमस्कार कर्था त्थारमाह

(वदित्ता नमसित्ता एव वयामी सहहामिण भते ! णिग्गथं पावयण जाव
 से जहेय तुम्हे वयह, ज णवर देवाणुप्पिया ! अम्मापियरो आपुञ्जामि, तण्ण
 अह देवाणुप्पियाण अतिए जाव पव्वयामि, अहा सुह देवाणुप्पिए ! तण्ण सा
 काली दारिया पासे ण अरहया पुरिसादाणीणं एव बुत्ता समाणी हट्ट जाव हियया
 पास अरह वदह, नमसह, वदित्ता नमसित्ता तमेव धम्मिय जाणपवर दुरुह
 दूरुहित्ता पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स अतियाओ अबसालवणाओ चेइयाओ
 पडिनिक्खमह, पडिनिक्खमित्ता जेणेव आमलकप्पा नयरी तेणेव उवागच्छइ)

वदना नमस्कार करीने तेष्से ते प्रभुने आ प्रमाणे कड्ड उ हे भद्रन्त !
 तभारा वडे प्रतिपादित निर्ग्रन्थ प्रवचनने हु विशेष श्रद्धानी दृष्टिअे लेठ
 छु तमे लेखु आ प्रतिपादित कर्था उ अन्तर ते तेवुं अ छे भने आ
 भुअ अ गभी गजु उ अथी हु मातापिताने पूजी वडि छु तभने पूछीने

भ्यनुज्ञाता सती पार्श्वन्याहृतोऽतिके मुण्डाभूत्वा आगाराद् अनगारिता मव्रजितुम् =
 स्वीकर्तुम् । मातापितरौ कथयत-यथानुस्य हे देवानुमिषे ! = यथा रोचते तथा-
 कुरु किन्तु अस्मिन् कार्ये प्रतिमन्य = प्रमाद मा कुरु । ततः = स्वपुत्र्या दीक्षानिश्चया-
 न तर खलु स कालो गायापतिर्विपुलम् अशनम् ४ अशनादि चतुर्विधमाहारम्
 उपस्कारयति, उपस्कार्य मित्रज्ञातिनिजकस्वजनमम्यन्त्रिपरिजनम् आमन्त्रयति,
 आमन्त्र्य ततः पश्चात् स्नातः यायुं विपुलेन पुण्यपुत्रगन्धमाल्यालङ्कारेण सत्कृत्य
 सम्मान्य तस्यैव मित्रज्ञातिनिजकस्वजनमम्यन्त्रिपरिजनस्य पुरतः = भ्रष्टे कालिका
 दारिका श्वेतपीतैः = रजतमुर्णमयै क्लृप्तैः स्नपयति, स्नपयित्वा सर्वालङ्कारविभू-
 पिता करोति, कृत्वा पुन्यमहस्यगङ्गानिका शिविका दूरोहयति = आरोहयति, दूरोह
 मित्रज्ञातिनिजकस्वजनमम्यन्त्रिपरिजनेन सार्द्धं सपरिवृतः सर्वैर्दद्यां यायत्-वाद्य

के भय से उद्विग्न होकर जन्ममरण से भयभीत हो चुकी हूँ-अतः मैं
 चाहती हूँ कि मैं आप से आज्ञा प्राप्त कर उन अर्हत पार्वनाथ प्रभु के
 समीप मुडित होकर अगारावस्था से अनगारावस्था स्वीकार कर लूँ ।
 इस प्रकार अपनी काली दारिका की बात सुनकर माता पिता ने उससे
 कहा-(अहामुह देवाणुप्पिया । मा पडिबध करेह, तएण से काले गाहा
 वई विपुल असण ४ उवखडावेइ, उवखडावित्ता मित्तणाह गियग
 सयणसवधिपरियण आमतेइ आमत्तिता तओ पच्छा ण्हाए जाव
 विउलेण पुप्फवत्थगधमल्लालकारेण सक्कारेत्ता मम्मणात्ता तस्सेव
 मित्तणाइणियगसयणसवधिपरिजणस्स पुरओ कालिय दारिय सेया
 पीएहि कलसेहि ण्हावेइ ण्हावित्ता सव्वालकारविभूसिय करेइ, करित्ता
 पुरिससहस्सत्राहिणीय सीय दुरोहेइ, दुरोहित्ता मित्तणाइणियगसयण

अपलुधी हु आ ससारना लयथी उद्विग्न थधने जन्म-मग्लुधी लयलीत थर्ध
 गर्ध छु अथी भारी धन्डो छे के हु तभारी आशा भेगवीने ते अडं त
 पार्श्वनाथ प्रभुनी पासो मुडित थउने अगारावस्था त्यछने अनगारावस्था
 स्वीकारी लउ आ प्रभाछे पोतानी काली दारिकानी वात सालीने
 मातापिताअे तेने कछु -

(अहामुह देवाणुप्पिया । मा पडिबध करेह, तएण से काले गाहावई
 विपुल असण ४ उवखडावेइ, उवखडावित्ता मित्तणाइणियगसयणसवधिपरि-
 यण आमतेइ आमत्तिता तओ पच्छा ण्हाए जाव विपुलेण पुप्फवत्थगमल्लालकारेण
 सक्कारेत्ता सम्मानेत्ता तस्सेव मित्तणाइणियगसयणसवधिपरिजणस्स पुरओ कालिय
 दारिय सेयापीएहि कलसेहि ण्हावेइ ण्हावित्ता सव्वालकारविभूसिय करेइ, करित्ता

कृत्वा एवमवादीत्-एव खलु हे अम्मयाओ ! मया पार्श्वग्यार्हवोऽन्तिके धर्मः
' गिसंते ' निशान्तः=श्रुत', सोऽपि च धर्म ' मे ' मम ' इच्छिण् ' इष्टः=
इच्छाधिपयीभूत, ' पडिच्छिण् ' मनीष्टः=पुन पुनरमिलपित ' अभिरुण्ण '
अभिरुचितः=भास्वाद्यवस्तुत्सर्वाभियः, तत्र.=उम्मात् कारणात् खलु अह हे
अम्मयाओ ! ससारभउव्विग्गा भीया जम्मणमरणाण-इच्छामि खलु युष्माभ्याम

चल० एवं वयासी-एव खलु अम्मयाओ ! मए पासस्म अरहओ अतिए
धम्मए गिसंते से वि य मे धम्मए इच्छिण् पडिच्छिण् अभिरुण्ण-तएण
अहं अम्मयाओ ! ससारभउव्विग्गा भीया जम्मणमरणाण-इच्छामि
णं तुव्वेहिं अब्भणुन्नाया समाणी पासस्म अरहओ अतिए मुंडा भविस्सा
अगाराओ अणगारिय पव्वइत्तए) वहाँ आकर के वह आमलकल्प
नगरी के धीचों धीच से होकर जहाँ वह पाया उपरगन शाला थी-वहाँ
आई-वहाँ आकर वह उस धार्मिक यानप्रचर से नीचे उतरी-नीचे
उतर कर फिर घाट में वह जहाँ अपने माता पिता थे-वहाँ गई-वहाँ
जाकर उसने अपने दोनों हाथों की अजलि बनाकर और उसे मस्तक
पर रखकर उनसे इस प्रकार कहा-हे मात तात ! सुनो मैंने अर्हत प्रभु
पार्श्वनाथ के मुख से धर्म सुना है-वह धर्म मुझे बहुत अच्छा लगा है,
बार बार उस धर्म को सुनने की अभिलाषा हो रही है । जिस प्रकार
आस्वाद्य वस्तु प्रिय लगती है उसी प्रकार वह धर्म मेरे लिये सब
प्रकार से प्रिय लगा है । उसके सुनने से मैं हे मात तात ! इम ससार

अरहओ अतिए धम्मए गिसंते से वि य मे धम्मए इच्छिण् पडिच्छिण् अभिरुण्ण-तएण
अहं अम्मयाओ ! ससारभउव्विग्गा भीया जम्मणमरणाणी-इच्छामि ण तुव्वेहिं
अब्वणुन्नाया समाणी पासस्म अरहओ अतिए मुंडा भविस्सा अगाराओ अणगा-
रिय पव्वइत्तए)

त्या आवीने ते आभलकट्टपा नगरीनी वरुथे यएने न्यां ते आह्व उप-
स्थान शाणा इती त्या आवी त्या आवीने ते ते धार्मिक जान प्रवसमाथी
नीचे उतरी, नीचे उतरीने ते न्या तेना मातापिता इतां त्या गर्त्तना न्येने
पोताना णेने हाथेनी अब्बि णवावीने अने तेने मस्तके भूकीने तेमने आ
प्रभावे कहुं के हे मातापिता ! सामणो, अर्हत प्रभु पार्श्वनाथना सुअथी
मे धर्मं श्रवणुं कयुं छे, ते मने अहुं न गभी गयु छे ते धर्मने बार बार
सामणवानी धम्मि यथ रती छे जेम आस्वाद्य वस्तु प्रिय लागे ते तेमने
ते धर्मं भारा भाटे पधी रीते प्रिय यथ पउथो छे हे मातापिता ! तेना

भ्यनुज्ञाता सती पार्श्वम्याहृतोऽतिके मुण्डाभूत्या आगाराद् अनगारिता मव्रजितुम् =
स्वीकृतुम् । मातापितरौ रुधयत. - य ग्रामुख हे देवानुभिधे ! = यथा रोचते तथा-
कुरु किन्तु अस्मिन् कार्ये प्रतिग्रन् = प्रमाद मा कुरु । ततः = स्वपुत्र्या दीक्षानिश्चया
नतर खलु स कालो गायपतिर्विपुलम् अशनम् ४ अशनादि चतुर्विधमाहारम्
उपस्कारयति, उपस्कार्य मित्रज्ञातिनिजकस्वजनमम्बन्धिपरिजनम् आमन्त्रयति,
आमन्त्र्य ततः पश्चात् स्नातः यावत् विपुलेन पुष्पवत्तगन्त्रमालवालङ्कारेण सत्कृत्य
सम्मान्य तस्यैव मित्रज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धिपरिजनस्य पुरतः = भ्रष्टे कालिका
दारिका श्वेतपीतैः = रजतमुष्णमयै कलशैः स्नपयति, स्नपयित्वा सर्वालङ्कारविभू
षिता करोति, कृत्वा पुरुषमहस्रवाहिनिका शिपिका दूरोहयति = आरोहयति, दूरोह्य
मित्रज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धिपरिजनेन सार्द्धं सपरिवृतः सर्वैर्दर्या यावत् - वाद्य

के भय से उद्विग्न होकर जन्ममरण से भयभीत हो चुकी हूँ - अतः मैं
चाहती हूँ कि मैं आप से आज्ञा प्राप्त कर उन अर्हत पार्वनाथ प्रभु के
समीप मुडित होकर अगारावस्था से अनगारावस्था स्वीकार कर लूँ ।
इस प्रकार अपनी काली दारिका की यात सुनकर माता पिता ने उससे
कहा - (अहासुह देवाणुष्पिया ! मा पडिय करेह, तएण से काले गाहा
वई विपुल असण ४ उवक्खडावेइ, उवक्खडावित्ता मित्तणाइ णियग
सयणसवधिपरिणण आमतेइ आमत्तिता तओ पच्छा ष्हाए जाव
विउलेण पुष्पवत्तगधमत्लालकारेण सक्कारेत्ता मम्माणेत्ता तस्सेव
मित्तणाइणियगसयणसवधिरिजणस्स पुरओ कालिय दारिय सेया
पीएहि कलसेहिं ष्हावेइ ष्हावित्ता सव्वालकारविभूसिय करेइ, करित्ता
पुरिससहस्सवाहिणीय सीय दुरोहेइ, दुरोहित्ता मित्तणाइणियगसयण

अवशुधी हु आ ससारना लयथी उद्विग्न यधने जन्म-मरणथी लयभीत यध
गध धु अथी भारी ध्विञ्छ छे डे हु तभारी आज्ञा भेगवीने ते अर्हत
पार्श्वनाथ प्रभुनी पासि मुडित यधने अगारावस्था त्यञ्छने अनगारावस्था
स्वीकरी लउ आ प्रभाञ्छे पोतानी डाली दारिकानी वात सालगिने
मातापिताञ्छे तेने डहु -

(अहासुह देवाणुष्पिया ! मा पडिय करेह, तएण से काले गाहावई
विपुल असण ४ उवक्खडावेइ, उवक्खडावित्ता मित्तणाइणियगसयणसवधिपरि-
णण आमतेइ आमत्तिता तओ पच्छा ष्हाए जाव विपुलेण पुष्पवत्तगधमत्लालकारेण
सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता तस्सेव मित्तणाइणियगसयणसवधिरिजणस्स पुर-ओ कालिय
दारिय सेयापीएहिं कलसेहिं ष्हावेइ ष्हावित्ता सव्वालकारविभूसिय करेइ, करित्ता

मानानेकरिषादिप्रवेण मह आमलकन्याया नगर्या मध्यमध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य यथैराप्रगालयते चेत्य तत्रैवोपागच्छति, उपागम्य उत्रादिकान तीर्थकराणि

सपथिपरियणेण सद्धिं सपरिवुडे सन्निवृणीण जात्र र्वेण आमलकण नगरिं मज्झ मज्जेणं णिगच्छइ) हे देवानुप्रिये ! तुझे जिस तरह अच्छा लगे वैसे तू कर-इस कार्य में प्रमाद न कर। इस तरह उस काल गाथापति ने अपनी पुत्री को दीक्षा ग्रहण करने में दृढ़ निश्चयवाली जानकर त्रिपुल मात्रा में अग्नादि रूप चतुर्विध आहार निष्पन्न कर घाया-घाद में मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सखन्धी परिजनों को आमंत्रित किया आमंत्रित करके घाद में उसने स्नात होकर त्रिपुल पुष्प, वस्त्र, गन्ध माल्य, गन्ध अलकारों से सत्कार सन्मान करके उन मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सखन्धी, परिजनों के साथ काली दारिका का श्वेत पीत कलशों द्वारा अभिषेक किया-घाद में उसे समस्त अलकारों से विभूषित किया-फिर पुरुष सदस्रवाहिनी शिथिका पर उसे चढवाया। चढवाकर फिर उन मित्र, ज्ञाति निजक, स्वजन सखन्धी परिजनों से घिरा हुआ होकर वह अपनी समस्त ऋद्धि के अनुसार, वाद्यमान अनेक विध वाजों की ध्वनि के साथ २ आमलकलया नगरी के ठीक बीचों बीच से होकर निकला। (णिगच्छिउत्ता जेगेव अवगालवणे चेइए

पुरिससहस्सवाहिणीय सीय दुरोहेइ, दुरोहिता मित्तणाइ, णियगसयणसपथि परियणेण सद्धिं सपरिवुडे सन्निवृणीण जात्र र्वेण आमलकण नगरिं मज्झ मज्जेणं णिगच्छइ)

हे देवानुप्रिये ! तने जेभ साइ लागे तेभ कर आ कामभा प्रमाद करीश नहि आ प्रमाहे ते डालगाथापतिअे पोतानी पुत्रीने दीक्षा अर्द्ध करवाने अर्द्धम विचार लएने पुञ्जण प्रमाद्युभा अशन वगेरे चार नतना आडावे तैचार करावडाया त्थारमाइ मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सखन्धी परिजनेने आमंत्रित कथा आमंत्रित करीने तेहे स्नात करीने पुञ्जण पुष्प, वस्त्र, गन्ध, माल्य अने अलकाशे वडे सत्कार तेभज सन्मान करीने ते मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सखन्धी, परिजनेनी साथे काली दारिकाने सहेइ, अने पीणा कणशे वडे अलिषेक कथे त्थारणाइ तेने समस्त अलकाशे वडे विभूषित करी अने त्थारपथी पुरुष सदस्रवाहिनी पावथी उपर तेने चढावी चढावीने तेहे मित्र ज्ञाति, निजक, स्वजन सखन्धी, परिजनेनी साथे परि वेष्टित थधने पोतानी समस्त ऋद्धिनी साथे, धन्या वाज अना ध्वनिनी साथे साथे आमलकलया नगरीनी परापर पथे थधने नीकथे।

शयान् पश्यति, दृष्ट्वा शिविका स्थापयति, स्थापयित्वा कालिका दारिका शिविकातः प्रत्यवरोहयति । ततः खलु ता कालिका दारिकाम् अम्मापितरो पुरत कृत्वा यत्रैव पार्श्वोर्द्ध्वं पुरुपादानीयस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य वन्देते नमस्यतः, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमत्रादिष्टाम्—एव खलु हे देवानुप्रियाः ! काली दारिका आवयोर्द्ध्विता इष्टा कान्ता यावत् उदुम्बरपुष्पमिव श्रवणायापि दुर्लभा किमद्ग ! पुनः

तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता उत्ताइए तित्थगराइसए पासइ) निरु-
लकर वह वहा गया कि जहा वह आम्रशालवन नाम का उद्यान था ।
वहां जाकर उसने तीर्थरु प्रकृति के उदय से होनेवाले छायादिक अति
शयों को देखा । (पासित्ता सीय ठावेइ, ठावित्ता कालियदारिय सीयाओ
पच्चोरुहइ, तएण त कालीय दारिय अम्मापियरो पुरओ काउ जेणेव
पासे अरहा पुरिसा० तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वदइ, नमसइ,
वदित्ता नमसित्ता एव वयासी) देखकर उसने उस पुष्प सहस्रवाहिनी
शिविका को खटी कर दिया । खड़ी करके उसमें से काली दारिका को
नीचे उतारा बाद में वे माना पिता उस कालिक दारिका को आगे करके
जहा पुष्पादानीय अर्हत प्रभु पार्श्वनाथ विराजमान थे वहा गये । वहा
जाकर उन्होंने उनको वदना की-नमस्कार किया । वदना नमस्कार करके
बाद में उन्होंने इस प्रकार प्रभु से कहा—(एव खलु देवानुप्पिया !
काली दारिया अम्ह धूया इट्ठा कता, जाव किमगपुणपासणयाण ! एस

(णिगच्छित्ता जेणेव असालरणे चेइए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
छत्ताइए तित्थगराइसए पासइ)

नीकणीने ते त्या गथे हे न्या ते आम्रशाल वन नामे उद्यान इतु
त्या न्धने तेणे तीर्थंर प्रकृतिना उदयथी अस्तित्वमा आवता छत्र वगेरे
अतिशयेने लेया

(पासित्ता सीय ठावेइ, ठावित्ता कालियदारिय सीयाओ पच्चोरुहइ, तएणं
त कालिय दारिय अम्मापियरो पुरओ काउ जेणेव पासे अरहा पुरिसा० तेणेव
उवागच्छइ उवागच्छित्ता वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता एव वयासी)

न्धने तेणे ते पुरुष सहस्रवाहिनी पालणीने शैत्री शैत्रीने तेभाथी
क्षत्री दारिकाने नीचे उतारी त्यापत्री ते मातापिता ते क्षत्रीक दारिकाने
आगण करीने न्या पुरुषदानीय अर्हत प्रभु पार्श्वनाथ विराजमान इता त्या
गया त्या न्धने तेभणे तेभने वदना करी, नमस्कार करी वदना तेभन नमस्कार
करीने तेभणे प्रभुने विनती करता आ प्रभाणे कथु डे—

(एव खलु देवानुप्पिया ! कालीदारिया अम्ह धूया इट्ठा कता, जाव किमग-

मानानेकप्रिधयादिव्रवेण सह आमलकलयाया नगर्या मध्यमध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैयाम्रशालवन चैत्य तत्रैयोपागच्छति, उपागत्य उत्राद्रिकान् तीर्थकराति

सधधिपरियणेण सद्धिं सपरिवुढे सन्विद्धीण जाव रवेण आमलकल्प नयरिं मज्झ मज्झेण णिगच्छइ) हे देवानुप्रिये ! तुझे जिस तरह अच्छा लगे वैसा तू कर-इस कार्य में प्रमाद न कर। इस तरह उस काल गाथापति ने अपनी पुत्री को दीक्षा ग्रहण करने में दृढ निश्चयवाली जानकर विपुल मात्रा में अग्नादि रूप चतुर्विध आहार निष्पन्न कर घाया-घाद में मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सधन्धी परिजनों को आमंत्रित किया आमंत्रित करके घाद में उसने स्नात होकर विपुल पुष्प, वस्त्र, गंध माल्य, एवं अलकारों से सत्कार सन्मान करके उन मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सधन्धी, परिजनों के साथ काली दारिका का श्वेत पीत कलशों द्वारा अभिषेक किया-घाद में उसे समस्त अलकारों से विभूषित किया-फिर पुरुष सहस्रवाहिनी शिथिका पर उसे चढवाया। चढवाकर फिर उन मित्र, ज्ञाति निजक, स्वजन सधन्धी परिजनों से घिरा हुआ होकर वह अपनी समस्त ऋद्धि के अनुसार, वाद्यमान अनेक विध वाजों की श्वनि के साथ २ आमलकलया नगरी के ठीक बीचों बीच से होकर निकला। (णिगच्छत्ता जेजेव अवमालवणे चेइए

पुरिससहस्रवाहिणीय सीय दुरोहेइ, दुरोहिता मित्तणाइ, णियगसयणसधधि परियणेण सद्धिं सपरिवुढे सन्विद्धीण जाव रवेण आमलकल्प नयरिं मज्झ मज्झेण णिगच्छइ)

हे देवानुप्रिये ! तने जेभ साइ लागे तेभ कर आ कामभा प्रमाद करीश नहि आ प्रमाहे ते कालगाथापतिअे पोतानी पुत्रीने दीक्षा अडधु करवाने मज्झ विचार जालीने पुञ्ज प्रमाधुभा अशन वगेरे आर नतना आहारो तैयार करावडाना त्थारमाद मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सधन्धी परिजनोने आमंत्रित करी आमंत्रित करीने तेहे स्नान करीने पुञ्ज पुष्प, वस्त्र, गंध, माल्य अने अलकारो वडे सत्कार तेभज्ज सन्मान करीने ते मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सधन्धी, परिजनोनी साथे काली दारिको सइइ, अने पीणा कणशो वडे अलिषेक करी त्थारमाद तेने समस्त अलकारो वडे विभूषित करी अने त्थारपथी पुरुष सहस्रवाहिनी पावथी उपर तेने अढावी अढावीने तेहे मित्र ज्ञाति, निजक, स्वजन सधन्धी, परिजनोनी साथे परि वेष्टित थधने पोतानी समस्त ऋद्धिनी साथे, धनुा वाज्जोना ध्वनिनी साथे साथे आमलकलया नगरीनी अराअर वन्धे थधने नीकएथे।

शयान् पश्यति, दृष्ट्वा शिविका स्थापयति, स्थापयित्वा कालिका दारिकां शिवि
 कातः प्रत्यग्रोहयति । ततः खलु ता काञ्चिका दारिकाम् अम्मापितरो पुरत
 कृत्वा यत्रैव पार्श्वोर्द्ध्वं पुरुपादानीयस्तत्रैयोपागच्छति, उपागत्य वन्देते नमस्यतः,
 वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमयादिष्टाम्—एव खलु हे देवानुप्रियाः । काली दारिका
 आवयोर्दुहिता इष्टा कान्ता यावत् उदुम्बरपुष्पमिव श्रवणायापि दुर्लभा किमद्ग ! पुनः

तेणेव उवागच्छद्, उवागच्छित्ता उत्ताइए तित्त्यगराइसए पासइ) निरू-
 लकर वह वहा गया कि जहा वह आम्रशालवन नाम का उद्यान था ।
 वहाँ जाकर उसने तीर्थरु प्रकृति के उदय से होनेवाले छात्रादिक अति-
 शयो को देखा । (पासित्ता सीय ठावेइ, ठावित्ता कालियदारियं सीयाओ
 पच्चोरुहइ, तएण त कालीय दारिय अम्मापियरो पुरओ काउ जेणेव
 पासे अरहा पुरिसा० तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वदइ, नमसइ,
 वदित्ता नमसित्ता एवं वयासी) देखकर उसने उस पुरुष सहस्रवाहिनी
 शिविका को खड़ी कर दिया । खड़ी करके उसने से काली दारिका को
 नीचे उतारा बाद में वे माना पिता उस कालिक दारिका को आगे करके
 जहा पुरुपादानीय अर्हत प्रभु पार्श्वनाथ विराजमान थे वहाँ गये । वहा
 जाकर उन्होंने उनको वदना की—नमस्कार किया । वदना नमस्कार करके
 बाद में उन्होंने ने इस प्रकार प्रभु से कहा—(एव खलु देवाणुप्पिया !
 काली दारिया अम्ह धूया इट्ठा कता, जाव किमगपुणपासगयाण ! एस

(णिमाच्छित्ता जेणेव अणसालरणे चेइए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
 छत्ताइए तित्त्यगराइसए पासइ)

नीक्षणीने ते त्या गये के जहा ते आम्रशाल वन नामे उद्यान छतु
 त्या जेधने तेणे तीर्थरु प्रकृतिना उदयथी अस्तित्वमा आपता छत्र वगेरे
 अतिशयोने जेया

(पासित्ता सीय ठावेइ, ठावित्ता कालियदारियं सीयाओ पच्चोरुहइ, तएणं
 त कालिय दारिय अम्मापियरो पुरओ काउ जेणेव पासे अरहा पुरिसा० तेणेव
 उवागच्छइ उवागच्छित्ता वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता एवं वयासी)

जेधने तेणे ते पुरुष सहस्रवाहिनी पालणीने शशी शशीने तेमाथी
 काथी दारिकाने नीचे उतारी त्थारपथी ते मातापिता ते काथीक दारिकाने
 आगण करीने त्या पुरुपदानीय अर्हत प्रभु पार्श्वनाथ विराजमान छता त्या
 गया त्या जेधने तेभणे तेभने वदना करी, नमस्कार कथा वदना तेभजे नमस्कार
 करीने तेभणे प्रभुने विनती करता आ प्रभाणे कहु डे—

(एव खलु देवाणुप्पिया ! कालीदारिया अम्ह धूया इट्ठा कता, जाव किमग

‘पासणयाए’ दर्शनाय ? एषा खलु हे देवानुप्रियाः । समारभयोद्धिग्ना इच्छति देवानुप्रियाणामन्तिके मुण्डाभूत्वा यावत्प्रमित्तु, तद् एता खलु देवानुप्रियाणा शिष्याभिक्षा दशः, ‘पडिच्छतु’ प्रतीच्छन्तु=स्वीकृत्यन्तु खलु हे देवानुप्रियाः । शिष्याभिक्षाम् । भगवानाह—ययासुख हे देवानुप्रियो ! मा प्रतिवन्द्य उच्यते । ततः खलु काली कुमारी पार्श्वमर्हन्त उदते नमस्यति, रन्दित्वा नमस्यित्वा उत्तरपौरस्य

ण देवाणुप्पिया ! समारभउच्चिग्गा, इच्छइ, देवाणुप्पियाण ! अतिए मुटा भवित्ता जाव पवइत्तए, त एय ण देवाणुप्पियाण सिस्सिणिमिक्ख दलयामो पडिच्छतु ण देवाणुप्पिया ! सिस्सिणिभिरय) हे देवानुप्रिय ! यह हमारी काली दारिका नामकी पुत्री है । यह हमें बहुत अधिक इष्टा, कान्ता यावत् उद्भर पुष्प के समान सुनने के लिये भी दुर्लभा है—तो फिर हे अग ! इसके दर्शन की तो चान ही क्या कहना है । हे देवानु प्रिय ! यह समारभय से उद्धिग्ना हो रही है अतः आप देवानुप्रिय के पास मुडित होकर यावत् सयम लेना चाहनी है । इस लिये हम दोनों आपके लिये शिष्या की भिक्षा दे रहे हैं—आप देवानुप्रिय ! हमारी इस शिष्यारूप भिक्षा को स्वीकार करें (अहासुह देवाणुप्पिया ! मा पडिबध करेह) इस प्रकार उन दोनों का कथन सुनकर प्रभु ने उनसे कहा हे देवानुप्रियो ! आप को जैसा सुख हो—वैसा आप करो—इसमें विलम्ब करने से लाभ नहीं हैं । (तएण) इसके बाद (काली कुमारी पास

पुण पासणयाए ? एमण देवाणुप्पिया ! समारभउच्चिग्गा, इच्छइ, देवाणुप्पियाण ! अतिए मुटा भवित्ता जाव पवइत्तए, त एय ण देवाणुप्पियाण सिस्सिणि मिक्ख दलयामो पडिच्छतु ण देवाणुप्पिया ! सिस्सिणिमिक्ख)

हे देवानुप्रिय ! आ अमारी काली दारिका नामे पुत्री छे अमारा भाटे आ भहु व वधारे धिया, काता यावत् उद्भर पुष्पनी नेम नाम श्रवणुमा पणु दुर्लभा छे तो पछी जेना दर्शननी तो वात व शी करवी ? हे देवा नुप्रिय ! आ समार भयथो उद्धिग्ग थध रही छे जेथी आप देवानुप्रिय पासेथी मुडित थधने यावत् सयम अहणु करवा धउछे छे जेथी अमे जने आपना भाटे आशिष्यानी लिक्षा अर्पणु करीजे छीजे आप देवानुप्रिय अमारी आ शिष्यारूपी लिक्षानो स्वीकार करे । (अहासुह देवाणुप्पिया ! मा पडिबध करेह) आ प्रभाणु तेजे जनेनु कथन सालणीने प्रणुजे तेमने कणु के हे देवानुप्रियो ! तमने जेम सुण प्राप्त थाय तेम करे आमा विलज करवाथी लाल नथी (तएण) त्थारपछी

दिग्भागम् अग्रक्रामति, अग्रक्राम्य स्वयमेव=स्वहस्तेनैव आभरणमाल्यालङ्कारम्
 अग्रमुञ्चति=अपतारयति, अग्रमुच्य स्वयमेव=स्वहस्तेनैव लोच=क्रेगलुञ्चन करोति,
 कृत्वा यत्रैव पार्श्वोऽर्हन् पुरुषादानीयस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य पार्श्वमर्हन्त त्रिः
 कृत्वो वन्दते नमस्यति, त्रिन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्-आदीप्तः खलु हे भद
 न्त ! लोक एवम्=अनेन प्रकारेण यायत्-एपाऽपि स्वयमेव पार्श्वप्रभुणा प्रव्राजिता ।

अरह वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता, उत्तरपुरत्थिम दिसिभागं
 अवक्कमड, अवक्कमित्ता सयमेव आभरणमल्लालकार ओमुयइ,
 ओमुइत्ता, सयमेव लोच करेइ, करित्ता जेणेव पासे अरिहा पुरिसादा-
 णीए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पास अरह तिव्खुत्तो वदइ,
 नमसइ, वदित्ता नमसित्ता एव वयासी) काली कुमारी ने पार्श्वनाथ
 अरिह त प्रभु को वदना एव नमस्कार किया-। वदना नमस्कार करके
 फिर वह उत्तर पौरस्त्य दिग्भाग ईशान कोण की ओर गई। वहा जाकर
 उसने अपने आप आभरण माल्य एव अलकारों को उतार दिया।
 उतार कर अपने हाथों से उसने बालों का लुचन किया-लुचन करके
 फिर वह जहां पुरुषादानीय पार्श्वनाथ प्रभु बिराजमान थे वहां आई-
 वहां आकर उसने पार्श्वनाथ अर्हत को तीनवार वदन एव नमस्कार
 किया और वदना नमस्कार कर फिर वह उनसे इस प्रकार कहने लगी
 -(आलिच्छेण भते ! लोए एव जहा देवाणदा जाव सयमेव पन्वाविया-

(काली कुमारी पास अरह वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता, उत्तरपुरत्थिम
 दिसिभाग अवक्कमड, अवक्कमित्ता, सयमेव आभरणमल्लालकार ओमुयइ, ओमुइत्ता
 सयमेव लोच करेइ, करित्ता जेणेव पासे अरिहा पुरिसादाणीए तेणेव उवागच्छइ,
 उवागच्छित्ता पास अरह तिव्खुत्तो वदइ, नमसइ, वदित्ता नमसित्ता एव वयासी)

काली कुमारीने पार्श्वनाथ अरिह त प्रभुने वदना अने नमस्कार कर्था
 वदना अने नमस्कार करीने ते उत्तर पौरस्त्य दिग्भाग ईशान कोण की तरफ
 गइ, त्या वरुने तेणे पोतानी भेणे व आभरण, माल्य अने अवजारीने
 उतारी उतारीने पोतानी हाथे वडे व तेणे बाजोतु लुचन कर्था लुचन करीने
 ते न्या पुरुषादानीय पार्श्वनाथ प्रभु बिराजमान छता त्या आवी त्या आवीने
 तेणे पार्श्वनाथ अर्हतने त्रण वार वदन अने नमस्कार कर्था वदना अने
 नमस्कार करीने ते तेभने आ प्रभाणे विनती करवा लागी छे-

(आलिच्छेण भते ! लोए एव जहा देवाणदा जाव सयमेव पन्वाविया-तएण

ततः खलु पार्श्वोऽर्हन् पुरुषादानीयः काली सयमेव पुष्पचूलायै आर्यायै शिष्यात्वेन ददाति । ततः खलु सा पुष्पचूला आर्या काली दारिका स्वयमेव प्रव्राजयति यावत्-सा काली तदानाम् उपसम्पद्य खलु विहरति । ततः सा काली-आर्या जाता, क्रीदशी ? त्याह-ईयाममिता यावत्-गुप्तव्रतचारिणी । तत खलु सा काली अर्या पुष्पचूलाया आर्याया अन्तिके सामायिकादीनि एकादशाङ्गानि अशीते,

तण्णं पासे अरहा पुरिसादाणीए कालिं सयमेव पुष्पचूलाए अज्जाए सिस्सिणियत्ताए दलयइ, तण्णं सा पुष्पचूला अज्जा कालिं दारिय सयमेव पन्वावेइ-जाव उवसपजित्ताण विहरइ) हे भदत ! यह लोक आदीप्त हो रहा है-इस प्रकार से पार्श्वनाथ प्रभु के द्वारा स्वय ही दीक्षित की गई । इसके बाद उन पुरुषादानीय पार्श्व प्रभु ने काली को दीक्षित करके पुष्पचूला आर्या को शिष्याणीरूप से प्रदान कर दिया । पुष्पचूला आर्या ने उसे काली को इस प्रकार दीक्षित करवा कर अपनी शिष्याणीरूप में उसे स्वीकार कर लिया-यावत् वह काली उस आर्या की आज्ञानुसार अपनी प्रवृत्ति करने लग गई । (तण्णं सा काली अज्जा जाव) इस तरह वह काली अब आर्या हो गई । (ईरिया समिया जाव गुत्तवभयारिणी तण्णं सा काली अज्जा पुष्पचूलाए अज्जाए अतिए

पासे अरहा पुरिसादाणीए कालिं सयमेव पुष्पचूलाए अज्जाए सिस्सिणियत्ताए दलयइ, तण्णं सा पुष्पचूला अज्जा कालिं दारिय सयमेव पन्वावेइ-जाव उवसप-जित्ताण विहरइ)

हे भदन्त ! आ लोक आदीप्त थर्ध रह्यो छे आ प्रभाळो आ पथु पार्श्वनाथ प्रभु वडे जते न दीक्षित करवाभा आवी त्यारपछी ते पुरुषादानीय पार्श्व प्रभुओे कालीने दीक्षित करीने पुष्पचूला आर्याने शिष्याना इपमा आपी दीधी पुष्पचूला आर्याओे ते कालीने आ प्रभाळो दीक्षित करवांनि पोतानी शिष्याना इपमा तेना स्वीड र डरी लाधो यावत् ते काली ते आर्यानी आज्ञा मुज्जम पोतानी प्रवृत्ति करवा लागी (तण्णं सा काली अज्जा जाव) आ रीते ते काली हवे आर्या थर्ध गथ

(ईरिया समिया जाव गुत्तवभयारिणी, तण्णं सा काली अज्जा पुष्पचूलाए अज्जाए अतिए समाइयमाइयाद एकरासअगाइ अहिज्जइ, वहुई चउ विहरइ)

बहुभिः चतुर्थं यावत्-पष्ठाष्टमदशमद्वादशभिस्तपःकर्मभिरात्मानं भावयन्ती
विहरति ॥ सू० ३ ॥

मूलम्-तएणं सा काली अजा अन्नया कयाइं सररीवाउ-
सिया जाया यावि होरथा, अभिक्खणं२ हत्थे धोवइ पाए धोवइ
सीसं धोवइ मुहं धोवइ थणतराइं धोवइ कक्खं तराणि धोवइ
गुज्झंतराइं धोवइ जत्थ२ त्रि य णं ठाणं वा सेज्जं वा णिसी-
हियं वा चेइए त पुव्वामेव अवभुक्खेत्ता तओ पच्छा आसयइ
वा सयइ वा, णिसीहइ वा, तएणं सा पुप्फचूला अज्ज कालि
अज्जं एव वयासी-नो खल्लुकप्पइ देवाणुप्पिया । समणीणं णिगं
थीणं सररीवाउसियाण होत्तए तुमं च णं देवाणुप्पिया । सररी-
वाउसिया जाया अभिक्खणं२ हत्थे धोवसि जाव आसयाहि
वा सयाहि वा णिसीहियाहि वा त तुमं देवाणुप्पिए । एयस्स
ठाणस्स आलोएहि जाव पायच्छित्त पडिवजाहि, तएणं सा काली

सामाह्यमाह्याह एक्कारसअगाइ अहिज्जह, वह्हिं चउत्थ जाव विह-
रइ) उसका रहन शयन आदि सब व्यवहार नियमित एव सीमित हो
गया। चलती तो वह ईर्या समिति से मार्ग का संशोधन कर चलती।
यावत् वह गुप्त ब्रह्मचरिणी बन गई। ९ नौ कोटी से ब्रह्मचर्यव्रत की
सरक्षिका हो गई। इसके बाद उस काली आर्या ने पुष्पचूला आर्या के
पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया-और अनेक
चतुर्थ, पष्ठ, अष्टम दशम, द्वादश, तपस्याओं की आराधना से अपने
आपको भावित किया ॥ सूत्र ३ ॥

तेनु रडेवुं, सुबु वगेरे णधु काम नियमित अने सीमित थछ गयु
-यालती त्पारे ते धर्या-समित्थी मार्गनु संशोधन ठरीने यालती यावत् ते
शुभ अक्षयारिणी णनी गछ ८ कोटिथी अक्षयर्थं व्रतनी ते सरक्षिका थछ
गछ त्पारपछी ते काली आर्यांणे पुष्पचूला आर्या । पात्ते सामायिक वगेरे
अगियार अंगोनु अध्ययन कयुं अने घष्ठा यतुर्थं, पष्ठ, अष्टम, दशम,
द्वादश तपस्याओनी आराधनाथी चेतानी जतने भावित ठरी ॥ सूत्र ३ ॥

अजा पुष्फचूलाए अज्जाए एयमट्ट नो आढाइ जाव तुसिणीया
 संचिट्टइ, तएणं ताओ पुष्फचूलाओ अज्जाओ कार्लिं अज्जंअभि-
 क्खणं२ हीलेंति णिंदंति खिसंति गरिहंति अवमण्णांति अभि-
 क्खणं२ एयमट्ट निवारेंति, तएणं तीसे कार्लीए अज्जाए सम-
 णीहिं णिग्गंथीहिं अभिक्खणं२ हीलिज्जमाणीए जाव वारिज्ज-
 माणिए इमेयारूवे अज्जात्थिए जाव समुप्पज्जितथा जया-
 णं अह अगारवासमज्जे वसितथा तथा णं अह सयवसा जप्पि-
 भिइं च णं अह मुंडा भवित्ता अगाराओ अणगारिय पव्वइया
 तप्पभिइं च णं अहं परवसा जाया, त सेयं खल्ल मम कल्लं
 पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलते पाडिक्का उवस्सय उवसप-
 ज्जित्ताणं विहरित्तएत्तिकट्टु एवसपेहेइ सपेहित्ता कल्ल जाव जलते
 पाडिक्कं उवस्सयं गिण्हइ, तत्थ णं सा अणिवारिया अणोहट्टिया
 सच्छदमई अभिक्खणं२ हत्थे धोवइ जाव आसयइ वा सयइ वा,
 णीसेहेइ वा, तएण सा कार्ली अज्जा पासत्था पासत्थविहारी
 ओसण्णा ओसण्णविहारी कुसीला कुसीलविहारी अहाल्लदा अहा-
 ल्लदविहारी संसत्ता ससत्तविहारी बहूणि वासाणि सामन्नपरियागं
 पाउणइ पाउणित्ता अद्धमसियाए सलेहणाए अत्ताण झूसेइ वूसित्ता
 तीसंभत्ताइ अणसणाए छेएइ छेइत्ता तस्स ठाणस्स अणालोइय
 अपडिक्कता कालमासे काल किच्चा चमरचपाए रायहाणीय कालव-
 डिंसए भवणे उववायसभाए देवसयणिज्जसि देवदूसतरिए अगुल-
 स्स असखेज्जइ भागमेत्ताए ओगाहणाए कार्लीं वण्णा,

तएणं सा कालीदेवी आहुणोत्रवण्णा समाणी पंचविहाए पज्जत्तीए
जहा सूरियाभो जाव भासामण पज्जत्तीए० । तएणं सा काली-
देवी चउण्हंसामाणियसाहस्तीण जाव अणोसि च वहुणं काल-
वडंसगभवणवासीण असुरकुमाराण देवाण य देवीण य आहेवच्च
जाव विहरइ, एवं खलु गोयमा । कालीए देवीए सा दिव्वा
देविड्डीइ लद्धा पत्ता अभिसमण्णागया, कालीए णं भते । देवीए
केवइय काल ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा । अड्डाइज्जाइ पलिओवमाई
ठिई पन्नत्ता, काली णं भते । देवी ताओ देवलोगाओ अणंतर
उव्वट्ठित्ता कहि गच्छिहिइ कहि उव्वज्जिहिइ ?, गोयमा । महा-
विदेहे वासे सिज्झिहिइ, एव खलु जवू । समणेणं जाव संपत्तेणं
पढमस्स वग्गस्स पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्तिवेमि ।
धम्मकहाणं पढमज्झयणं समत्त ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘ तएण सा ’ इत्यादि—ततः खलु सा काली आर्या अन्यदा कदा-
चित् ‘ सरीरवाउसिया ’ शरीरा वाक्कुशिका=शरीरसस्करणशीला जाता चाप्या-
सीत् । अथ सा किं करोती ? त्याह—अभीक्षण २ वारवार हस्तौ धावति, पादौ धावति,

‘ तएण सा काली अज्जा अन्नया कयाइ, ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (सा काली अज्जा) वह काली
आर्या (अन्नया कयाइ) किसी एक समय (सरीरवाउसिया) शरीर को
संस्कारित करने के स्वभाववाली बन गई इसलिये वह (अभीक्षण २

‘ तएण सा काली अज्जा अन्नया कयाइ ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(तएण) त्थारपथी (सा काली अज्जा) ते काली आर्या
(अन्नया कयाइ) केअ ओक वण्णते (सरीरवाउसिया) शरीरने संस्कारित
करवाना स्वभाववाणी णनी गध, ओट्ठला भाटे ते—

(अभीक्षण २ हथे धोवइ, पाए धोवइ सीस धोवइ, मुह धोवइ, थणतराइ धोवइ,

अज्जा पुप्फचूलाए अज्जाए एयमट्टं नो आढाइ जाव तुसिणीया
संचिट्ठइ, तएण ताओ पुप्फचूलाओ अज्जाओ कालिं अज्जंअभि-
क्खणं२ हीलेंति णिंदंति खिसंति गरिहंति अवमण्णांति अभि-
क्खणं२ एयमट्टं निवारेंति, तएणं तीसे कालीए अज्जाए सम-
णीहिं णिग्गंथीहिं अभिक्खणं२ हीलिज्जमाणीए जाव वारिज्ज-
माणिए इमेयारूवे अज्जातिथिए जाव समुप्पज्जितथा जया-
णं अहं अगारवासमज्झे वसितथा तथा णं अहं सयवसा जप्पि-
भिइं च णं अहं मुंडा भवित्ता अगाराओ अणगारिय पव्वइया
तप्पभिइं च णं अहं परवसा जाया, त सेय खलु मम कल्ल-
पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलते पाडिक्का उवस्सय उवसंप-
ज्जित्ताणं विहरित्तएत्तिकट्टु एवंसपेहेइ सपेहित्ता कल्ल जाव जलते
पाडिएक्क उवस्सयं गिण्हइ, तत्थ णं सा अणिवारिया अणोहट्टिया
सच्छदमई अभिक्खणं२ हत्थे धोवइ जाव आसयइ वा सयइ वा,
णीसेहेइ वा, तएण सा काली अज्जा पासत्था पासरधविहारी
ओसण्णा ओसण्णविहारी कुसीला कुसीलविहारी अहाछदा अहा-
छंदविहारी संसत्ता ससत्तविहारी बहूणि वासाणि सामन्नपरियागं
पाउणइ पाउणित्ता अद्धमसियाए सलेहणाए अत्ताण झूसेइ झूसित्ता
तीसंभत्ताइ अणसणाए छेएइ छेइत्ता तस्स ठाणस्स अणालोइय
अपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा चमरचपाए रायहाणीए कालव-
डिसए भवणे उववायसभाए देवसयणिज्जसि देवदूसतरिए अगुल-
स्स असखेज्जइ भागमेत्ताए ओगाहणाए कालीदेि च उववण्णा,

निर्ग्रन्थीना शरीरवाक्शुक्रा जाताऽसि, यतन्वम्-अभीक्षण २ हृत्तो धावसि
यावत् ' आसयाहि वा ' आस्ते=उपविगमि, ' सयाहि वा ' शेषे=अयनं करोपि
' नीमीहियाहि वा ' निपेयसि=स्वाध्याय करोपि, ' व ' तत्=तस्मात् कार-
णात् त्व हे देवानुप्रिये ! एतत् स्थानम्-' आलोएहि ' आलोचय यावत् प्राय-
श्चित्त प्रतिपद्यस्व । मूले-सम्बन्धमामान्ये पप्ती । ततः खलु सा काली आर्या

देवाणुप्पिया ! समणी ण गिग्गयीण शरीरवाउसियाणं होत्तए-तुम च
ण देवाणुप्पिया ! शरीरवाउसिया जाया-अभिक्खणं २ हत्थे धोवसि,
जाव आसयाहि वा सयाहि वा णिसीहियाहि वा त तुमं देवाणुप्पियाए !
एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव पायच्छित्तं पडिज्जाहि) हे देवानुप्रिये !
निर्ग्रन्थ श्रमणियों को शरीरवक्कुश होना कल्पित नहीं हैं । परन्तु तुम
तो हे देवानुप्रिये ! शरीरवक्कुश बन रही हो । बार २ हाथों को धोती हो
यावत् जहाँ तुम्हें उठना बैठना होता है, शयन करना होता है, स्वाध्याय
करना होता है उस स्थान को पहिले से ही सिंचित कर लेती हो तज
जाकर वहाँ उठती बैठती हो, शयन करती हो, स्वाध्याय करती
हो । इसलिये हे देवानुप्रिये ! तुम इस स्थान की आलोचना करो यावत्
प्रायश्चित्त ग्रहण करो । (तएण सा काली अज्जा पुप्फचूलाए अज्जाए
एयमट्ट नो आढाइ, जाव तुसिणीया सच्चिट्ठइ, तएण ताओ पुप्फचूलाओ

(नो खलु कप्पइ, देवाणुप्पिया ! समणीण गिग्गयीण शरीरवाउसियाणं
होत्तए-तुम च ण देवाणुप्पिया ! शरीर वाउसिया जाया अभिक्खणं २ हत्थे धोवसि,
जाव आसयाहि वा सयाहि वा, णिसीहियाहि वा त तुमं देवाणुप्पियाए ! एयस्स
ठाणस्स आलोए हि जाव पायच्छित्तं पडिज्जाहि)

हे देवानुप्रिये ! निर्ग्रन्थ श्रमणीयोंने शरीरवक्कुश थलु कल्पित नहीं,
परन्तु तमे तो हे देवानुप्रिये ! शरीरवक्कुश थलु रही छे । बार बार हाथोने
धुओ छे यावत् न्या तमारे उठवा भेसवानु डोय छे, सवानु डोय छे,
स्वाध्याय करवा डोय छे ते स्थानने पडेवा तमे पाणीथी सिंचित करी लेा छे,
अने त्यारपडी तमे त्या उठो-भेसो छे, सूवो छे अने स्वाध्याय करे छे
अथी हे देवानुप्रिये ! तमे आ स्थाननी आलोचना करे यावत् प्रायश्चित्त ग्रहण करे।

(तएण सा काली अज्जा पुप्फचूलाए अज्जाए एयमट्ट नो आढाइ जाव
तुसिणीया सच्चिट्ठइ, तएण ताओ पुप्फचूलाओ अज्जाओ कालिं अज्ज अग्नि-

शीर्षं धावति, मुखं धावति स्तनान्तराणि धावति, कक्षान्तराणि धावति, गुह्या-
न्तराणि धावति, यत्र यत्रापि च खलु ' टाण सा ' स्थानम्=उपवेशनस्थलम्
' सेज्ज सा ' शय्या=शयनभूमिम्, ' गिस्सीहियं वा ' नैपधिका=स्वाध्यायभूमिम्
' चेएइ ' चेतयते=करोति ' त ' तत्=स्थानादिक ' पु-गामेव ' पूर्वमेव=उपवेश-
नादि क्रियाया पूर्ण ' आसयइ वा ' आस्ते=उपविशति, ' सयइ वा ' शेते=
शयनं करोति, ' गिस्सीहइ वा ' निपेधयति=स्वाध्याय करोति वा । ततः खलु सा
पुष्पचूलाऽऽर्या कालीमार्यामेवमादीत्-नो खलु कल्पते हे देवाणुमिये । श्रमणीनां

हृत्वे धोवइ पाण धोवइ, सीम धोवइ मुह नोत्रइ धणतराइ धोवइ,
कम्पतराणि धोवइ, गुज्जतराइ धोवइ, जत्यर वि य ण टाणं वा सेज्ज
वा गिस्सीहिय वा चेएण-त पुव्वामेव अब्भुख्खेत्ता तओपच्छा आसयइ,
वा सयइ वा गिस्सीहइवा) पार २ हायों को धोने लग गई, पैरों को धोने
लग गई, शिर को धोने लग गई, मुँह को धोने लग गई, स्तनान्तरों
को-स्तनों के मध्यभाग को-धोने लग गई, कक्षान्तरों को-कालो के
मध्यभाग को-धोने लग गई, गुह्यभागों को-गुहागों को धोने लग गई ।
जहा २ वह बैठने का स्थान, शयन, स्थान, स्वा घाय करने का स्थान
नियत करती उसे पहिले से ही वह पानी से सिंचित कर देती-बाद में
वह वहा बैठती शयन करती, स्वाध्याय करती, (तण्ण सा पुष्पचूला
अज्जा कालिं अज्ज एव वयासी) उस काली आर्या की इस स्थिति को
देखकर पुष्पचूला आर्या ने उसे इस प्रकार कहा-(नो खलु कल्पइ,

कम्पतराणी धोवइ, गुज्जतराइ धोवइ, जत्यर वि य ण टाण वा सेज्ज वा गिस्सी
हिय वा चेएइ त पुव्वामेव अब्भुख्खेत्ता तओपच्छा आसयइ, वा सयइ वा गिस्सीहइ वा)

बार बार हाथोने धोवा लागी, पगोने धोवा लागी, माथाने धोवा लागी,
मुपने धोवा लागी, स्तनान्तरने-स्तनना वग्घेना स्थानने धोवा लागी, कक्षा
तशेने-अगलोना मध्य लागने धोवा लागी, गुह्य लागोने-गुह्यागोने धोवा
लागी न्या न्या तेने जेसवानु स्थान, शयनस्थान, स्वाध्याय करवानु स्थान
नच्छी करती तो तेने पडेवेथी न ते पाल्हीथी सिंचित करी देती, त्यारपछी ते
त्या जेसती, शयन करती, स्वाध्याय करती (तण्ण सा पुष्पचूला अज्जा कालिं
अज्ज एव वयासी) ते काली आर्यानी आची स्थिति जेधने पुष्पचूला आर्याजे
तेने आ प्रभावे कछु के-

निर्ग्रन्थीना शरीरवाकुशिका जाताऽसि, यतस्त्वम्-अभीक्षणं २ इस्ती धावसि यावत् ' आसयाहि वा ' आस्ते=उपविशसि, ' सयाहि वा ' शेषे=शयन करोपि ' णीसीहियाहि वा ' निषेधयसि=स्वाध्याय करोपि, ' त ' तत्=तस्मात् कारणात् त्व हे देवानुप्रिये ! एतत् स्थानम्-' आलोएहि ' आलोचय यावत् प्रायश्चित्त प्रतिपद्यस्व । मूले-सम्बन्धमामान्ये पन्ठी । ततः खलु सा काली आर्या

देवाणुप्पिया ! समणी ण णिग्गयीण शरीरवाउसियाण होत्तए-तुम च ण देवाणुप्पिया ! शरीरवाउसिया जाया-अभिकखणं २ इत्ये धोवसि, जाव आसयाहि वा सयाहि वा णिसीहियाहि वा त तुम देवाणुप्पियाए ! एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव पायच्छित्तं पडिवज्जाहि) हे देवानुप्रिये ! निर्ग्रन्थ श्रमणियों को शरीरवकुश होना कल्पित नहीं हैं । परन्तु तुम तो हे देवानुप्रिये ! शरीरवकुश बन रही हो । बार २ हाथों को धोती हो यावत् जहाँ तुम्हें उठना बैठना होता है, शयन करना होता है, स्वाध्याय करना होता है उस स्थान को पहिले से ही सिंचित कर लेती हो तत्र जाकर चर्हा उठती बैठती हो, शयन करती हो, स्वाध्याय करती हो । इसलिये हे देवानुप्रिये ! तुम इस स्थान की आलोचना करो यावत् प्रायश्चित्त ग्रहण करो । (तएण सा काली अज्जा पुप्फचूलाए अज्जाए एयमट्ट नो आढाइ, जाव तुसिणीया सच्चिद्दह, तएण ताओ पुप्फचूलाओ

(नो खलु कप्पइ, देवाणुप्पिया ! समणीण णिग्गयीण शरीरवाउसियाणं होत्तए-तुम च ण देवाणुप्पिया ! शरीर वाउसिया जाया अभिकरणं २ हाथे धोवसि, जाव आसयाहि वा सयाहि वा, णिसीहियाहि वा त तुम देवाणुप्पियाए ! एयस्स ठाणस्स आलोए हि जाव पायच्छित्तं पडिवज्जाहि)

हे देवानुप्रिये ! निर्ग्रन्थ श्रमणीओने शरीरवकुश थनु कल्पित नहीं, परतु तमे तो हे देवानुप्रिये ! शरीरवकुश थथ रही हो बारबार डायोने धूओ हो यावत् ज्या तभारे उठवा भेसवानु डोय हो, सूवानु डोय हो, स्वाध्याय करवा डोय हो ते स्थानने पडेला तमे पाएणीथी सिंचित करी ले हो, अने त्यारपणी तमे त्या उठो-भेसो हो, सूवो हो अने स्वाध्याय करे हो ओथी हे देवानुप्रिये ! तमे आ स्थाननी आलोचना करे यावत् प्रायश्चित्त ग्रहण करे ।

(तएण सा काली अज्जा पुप्फचूलाए अज्जाए एयमट्ट नो आढाइ जाव तसिणीया सच्चिद्दह, तएण ताओ पुप्फचूलाओ अज्जाओ कालिं अज्ज भमि

पुष्पचूलाया आर्याया एतमर्थं 'नो भाडाइ' नो आद्रियते=न मन्वते यावत्
 'तुसिगीया' तुष्णीका=समौना सतिष्ठते। ततः त्वल्ल ताः पुष्पचूला आर्याः
 कालीमार्याय् 'अभिक्षण' अमीक्षण=रार चार 'हीलेंति' तिन्दन्ति=जन्मकर्मो-
 द्घाटनपूर्वकं निर्मत्सन्ति गिदति' तिन्दन्ति=कृत्स्नतश्च पूर्वक दोषोद्घाटनेन अना-
 द्रियन्ते, 'खिसति' खिसन्ति=हस्तगुवादिप्रकारपूर्वकमपमन्यन्ते, अपमान कुर्वन्ती
 त्यर्थः 'गरिहति' गर्हन्ते=गुरोदिममक्ष दोषाप्रकारणपूर्वकं तिरस्कुर्वन्ति, 'अवमण-
 ति' अपमन्यन्ते=रुक्षवचनादिभिरपमान कुर्वन्ति, तथा-अमीक्षणममीक्षणम् धारत्वार
 एतमर्थं=शरीरसस्करणरूपं निवारयन्ति। ततः ग्वलु तस्याः काल्या आर्यायाः भ्रम

अज्जाभो कालि अज्ज अभिक्षण २ हीलेंति, णिदति, खिसति, गरि-
 हति अवमणन्ति, अभिक्षण २ एयमद्द निधारेति, तण्णं तासे कालीए
 अज्जाए समणीहिं णिग्गधीहिं अभिक्षण २ हील्लिज्जमाणीए जाव
 वारिज्जमाणीए इमेयारूवे अज्जत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) उस काली
 आर्याने पुष्पचूला आर्याके इस कथन रूप अर्थको नहीं माना। केवल बह
 यावत् चुपचाप ही रही। उत्तरमें जब उसने उनसे कुछ नहीं कहा-तब उस
 पुष्पचूला आर्या 'हीलति' काली आर्याकी वार २ जन्मकर्म उद्घाटन पूर्वक
 भर्त्सना (तिरस्कार) करना प्रारंभ कर दिया। 'निदति' कुत्सित शब्दोच्चारण
 पूर्वक दोषोद्घाटन करते हुए वे उसकी वार २ निंदा करने लगीं।
 'खिसति' हस्त, मुख, आदि के विकार प्रदर्शन पूर्वक वे उसका
 अपमान करने लग गईं। 'गरिहति' गुरु आदिजनों के समक्ष दोषों
 को प्रकट करके वे उसका तिरस्कार करने लगीं। तथा "अवमणन्ति"
 रुक्षवचन आदि बोल २ कर उसका अपमान भी करने लग गईं।

क्षण २ हीलेंति णिदति, खिसति, गरिहति अवमणन्ति, अभिक्षण २ एय
 मद्द निधारेति, तण्णं तीसे कालीए अज्जाए समणीहिं णिग्गधीहिं अभिक्षण २
 हील्लिज्जमाणीए जाव वारिज्जमाणीए इमेयारूवे अज्जत्थिए जव समुप्पज्जित्था)

ते काली आर्याये पुष्पचूला आर्याना आ कथन इय अर्थने। स्वीकार
 कर्षो नहि इत्त ते भूगी यधने न्ण ऐसी रही न्णवापमा न्णारे तेण्ण तेमने
 कर्षण्ण क्खु नहि त्थारे पुष्पचूला आर्याये काली आर्यानी वारवार न्णम,
 कर्म, उद्घाटनपूर्वकं भर्त्सना करवा भाडी कुत्सित शब्दोच्चारण्युथी दोषोद्घाटन
 करती ते तेनी वारवार निंदा करवा लागी छाय, सुण वगेरेने विकृत करीने
 ते तेमनु अपमान करवा लागी शुद्ध वगेरेनी सामे दोषोने प्रकट करीने ते
 तेमने तिरस्कार करवा लागी तेमन् रुक्ष वचनो वगेरे कालीने तेनु अप-
 मान पणु करवा लागी अने साथे साथे ते आर्या तेने वारवार शरीर-संस्कार
 करवानी भनाई पणु करती रही आ प्रमाणे निर्ग्रन्थ श्रमणांको वडे वारवार

शीभिः निर्ग्रन्थीभिः भभीक्ष्णमभीक्ष्ण दिश्यमानायाः यावत्-वार्यमाणाया अय-
 मेतद्रूप 'अञ्जत्थिष्' आध्यात्मिकः=आत्मगतविचारः यावत्-मनोगतः सकल्पः
 स्रष्टुवपद्यत यदा खलु अहम् अगारवासमध्ये 'वसित्था' उपिवा=न्यवस तदा खलु
 अह 'सयवसा' स्वयंशशा=स्वतन्त्रा आसम्, वत्प्रभृति च खलु अह गृण्ठाभृत्वा
 भगात् अनगारितां प्रत्रजिताऽभन तत्प्रभृति च खलु अह परवशा जाताऽस्मि
 'त' तत्=तस्मात् श्रेयः खलु मम कल्पे प्रादुर्भ्रमातायां रजन्या यावत् सूर्ये ज्व-
 लति=सूर्योदये सति 'पाडिक' प्रत्येकम्=एकमात्र मिनमित्यर्थः, उपाभ्रयमुपमं-
 पय खलु विहर्तुम्, 'तिक्दृष्ट' इति कृत्वा=इति मनसि निगम एव सम्प्रेक्षते,

साथ २ में वे आर्या वसे घर २ शरीर सस्कार करने से मना भी
 करती रही। इस प्रकार उस काली आर्या के निर्ग्रन्थ श्रमणियों द्वारा
 घर २ भस्मित आदि होने पर तथा शरीर सस्कार करने से निपिद्ध होने
 पर, वसे यह इस प्रकार का आ यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उत्पन्न
 हुआ। (जयाणं अह अगारवासमञ्जे वसित्या तथा ण अह सयवसा,
 जप्पिभिइ च ण अह मुडा भवित्ता अगाराओ, अणगारिय पव्वइया
 तप्पभिइ च ण अह परवसा जाया, त सेयं खलु मम कल्ल पाउप्पभायाए
 रयणीए जाव जलते पाडिककावस्सय उवसपज्जित्ता ण विहरित्तेए
 तिक्दृष्ट एव सपेइइ सपेहित्ता कल्लं जाव जलते पाडिएक्क उवस्सय
 गिण्हइ) जब मैं अपने घर के बीच में रहती थी-वस समय मैं स्वतन्त्र
 थी। परन्तु जिस दिन से मुडित होकर अगार अवस्था से इस अनगार
 अवस्था में आई हूँ उस दिन से मैं परवश-पराधीन बन चुकी हूँ। अतः
 मुझे वही श्रेयस्कर है कि मैं दूसरे दिन प्रातः काल होते ही जब सूर्यो

भसित वगेरे भवाथी तेभञ् शरीर सस्कारनी भनाथ डोवा अदल ते कादी
 आर्याने आ नतने आध्यात्मिक यावत् मनोगत सकल्प उद्भूतये। डे—

(जयाणं अह अगारवासमञ्जे वसित्या तथा ण अह सयवसा जप्पिभिइ
 च ण अह मुडा भवित्ता अगाराओ अणगारिय पव्वइया तत्पभिइ च ण अह
 परवसा जाया त सेयं खलु मम कल्ल पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलते पाडिका
 वस्सय उवसपज्जित्ता ण विहरित्तेए तिक्दृष्ट एव सपेइइ, सपेहित्ता कल्लं जाव
 जलते पाडिएक्क उवस्सय गिण्हइ)

न्यारे हु घरमा रहती होती त्यारे हु स्वतन्त्र होती परन्तु न्यारवी मे
 मुडित यथने अगार अवस्थाने त्यथने अनगार अवस्था स्वीकारी छे त्यारथी
 हु परवश-पराधीन यथ गथ छे कोथी भारा भाटे हुवे अे अेयस्कर
 पीने दिक्से सवार यता अ न्यारे सूर्य उदय पामरी त्यारे

सम्प्रेक्ष्य कल्पे यावत् सूर्ये ज्वलति 'पाडिणं' प्रत्येकम्-उपाश्रय गृह्णाति । तत्र खलु सा 'अणिवारिया' अनिवारिता-निवारकाभावात्, 'अणोहृदिया' अनवधट्टिका यद्वञ्जा प्रवृत्तिप्रतिरोधकाभावात्, अतएव 'सच्छन्दमई' स्वच्छन्दमतिः अभीक्षणमभीक्षण हस्तौ धारति यावत्-आस्ते वा शेते या निषेधयति वा । ततः खलु सा काली आर्या 'पासत्था' पार्थस्या-गाढकारणंविना नित्यपिण्डभोक्त्री, अतएव पार्थस्थविहारिणि, 'ओसण्णा' अग्रमन्ना समाचारीपालनेऽवसी

दय हो जावेगा-दूसरे उपाश्रय में चली जाऊँ। इस प्रकार का उसने अपने मन में विचार किया। विचार करके फिर वह दूसरे दिन प्रातः काल होते ही सूर्योदय होने पर दूसरे उपाश्रय में चली गई। (तत्थणं सा अणिवारिया अणोहृदिया सच्छन्दमई अभिक्खण २ हत्थे धोवेइ, जाव आसयइ वा सयइ वा णीसेहेइ वा-तएण सा काली अज्जा पासत्था पासत्थविहारी ओसण्णा ओसण्णविहारी, कुसीला कुसीलविहारी, अहाउदा अहाउदविहारी, ससत्ता ससत्तविहारी बहूणि वासाणि सा माण्णपरियागं पाडणइ) वहाँ वह बिना रोक टोक, यद्वञ्जा प्रवृत्ति करने लग गई। इच्छानुसार चार २ हाथ पैर आदि धोने लग गई। उठने बैठने एव सोने के स्थान को तथा स्वाध्याय भूमि को पहिले से ही पानी से सिञ्चित कर वहाँ उठने बैठने एव स्वाध्याय करने लगी। इस तरह की स्वच्छन्द प्रवृत्ति से वह काली आर्या पासत्था-गाढकारण के बिना नित्य पिण्ड भोक्त्री-बन गई, पार्थस्थ विहारिणी हो गई। समाचारी

णीअ उपाश्रयभा जती रहु आ प्रभाणु तेणु मनभा विचार करी विचार करीने ते णीने द्विसे सवार थता ज सूर्योदय थया णाड णीअ उपाश्रयभा जती रहुी
(तत्थण सा अणिवारिया अणोहृदिया सच्छन्दमई अभिक्खण २ हत्थे धोवेइ, जाव आसयइ वा सयइ वा णीसेहेइ वा तएण सा काली अज्जा पासत्था पासत्थविहारी ओसण्णा ओसण्णविहारी कुसीला कुसीलविहारी अहा दा अहाउद विहारी ससत्ता ससत्तविहारी बहूणि वासाणि माण्णपरियाग पाडणइ)

त्या ते शैक-टोक विना स्वच्छन्द यद्यने प्रवृत्ति करवा लागी धम्मो भुञ्ज वारवार हाथ-पग धोवा लागी, उठवा-बैसवा अने सूवाना स्थानने तेमज्ज स्वाध्याय भूमिने पहिलेथी ज पाण्णी वडे सिञ्चित करीने त्या उठवा बैसवा तेमज्ज स्वाध्याय करवा लागी आ नतनी स्वच्छन्द प्रवृत्तिथी ते काली आर्या पासत्था-गाढ कारण वगर नित्य पिंड भोक्त्री

दन्ती, अतएव अवसन्नविहारिणी, 'कुशीला' कुशीला=उत्तरगुणसेवया संज्वलन-
कपायोदये प्रवृत्ता, अतएव कुशीलविहारिणी, 'अहाच्छदा' यथाच्छन्दा=
स्वाभिप्रायपूर्वरूपमति कल्पितमार्गे प्रवृत्ता, अतएव यथा छन्दविहारिणी, 'ससक्ता'
ससक्ता गृहस्थादिप्रेमबन्धनेन शिथिलमामाचारीप्रवृत्ता सती बहूनि वर्षाणि श्रामण्य
पर्याय पालयति, पालयित्वा अर्द्धमासिया संलेखनयाऽऽत्मान 'झूसेइ' जोप-
यति=सेवते, झूसित्ता=जोपयित्वा त्रिंशद् भक्तानि 'अणसणाए' अनशनया 'छेएइ'
छिनत्ति, छित्ता तस्य रथानस्य अनालोचिताऽ प्रतिक्रान्ता कालमासे
काल कृत्वा चमरचञ्चया राजधान्या कालावतसके भवने उपपातसभाया
देवशयनीये देवदूष्यान्तरिते = देवदूष्यवह्नाच्छादिते अङ्गुलस्याऽसख्येयभाग-
मात्रायामवगाहनाया कालीदेवीतया उपपन्ना । ततः खलु सा कालीदेवी अधुनो-

पालन करने में शिथिलता दिखलाने लगी-अवसन्न विहारिणी हो गई ।
कुशीला बन गई-संज्वलन कपाय के उदय होने से उत्तरगुणों की
विराधना करने लगी-कुशील विहारिणी हो गई और अपनी इच्छानु-
सार मार्ग की कल्पना कर उसमें प्रवृत्त रहने लग गई-इसलिये वह
यथाच्छन्द विहारिणी भी बन गई । गृहस्थ आदि जनों के अधिक परि-
चयजन्य प्रेमबन्धन से अपने आचार पालन में शिथिल बनी हुई उसने
इस तरह होकर अनेक वर्षों तक श्रामण्य पर्याय का पालन किया-और
(पाउणिक्ता) पालन कर (अर्द्धमासियाए सलेहणाए अत्ताण झूसेइ,
झूसित्ता तीस भक्ताइ अणसणाए छेएइ, छेइत्ता, तस्स ठाणस्स अणा
लोइय अपडिक्कत्ता कालमासे काल किच्चा चमरचचाए रायहाणीए
कालवडिंएस जवणे उचवायसभाए देवसयणिज्जसि देवदूसतरिण अगुल-

विहारिणी यथ गध सम थारी पालन करवामा शिथिलतावाणी गतानवा लागी-
अवसन्न विहारिणी यथ गध कुशीला थ) गध, संज्वलन कपायने उदय
होवाथी उत्तर गुणोनी विराधना करवा लागी, कुशील विहारिणी यथ गध
अने पोतानी छन्द गुण मार्गनी कल्पना करीने तेमा प्रवृत्त थवा लागी
अथी ते यथाच्छन्द विहारिणी पणु अनी गध गृहस्थ वगेरे लोकोना वधारे
परता परिचयजन्य प्रेमबन्धनथी पोताना आचार पालनमा शिथिल यथ गध
तेणे आ प्रभाणे धणा वर्षो सुधी श्रामण्य-पर्यायनु पालन कथुं अने
(पाउणिक्ता) पालन करीने

(अर्द्धमासियाए सलेहणाए अत्ताण झूसेइ, झूसित्ता तीस भक्ताइ अणसणाए
अणालोइयअपडिक्कत्ता कालमासे काल किच्चा चमर-

सम्प्रेक्ष्य कल्पे यावत् सूर्ये ज्वलति 'पाटिपकं' प्रत्येकम्-उपाश्रयं गृह्णाति । तत्र खलु सा 'अणिवारिया' अनिवारिता-निवारकाभायात्, 'अणोहृद्विया' अनवधट्टिका यद्वत्ता प्रवृत्तिप्रतिरोधकाभायात्, अतएव 'सच्छन्दमई' स्वच्छन्दमतिः अभीक्षणमभीक्षण हस्तौ धारति यावत्-आस्ते वा शेते वा निषेधयति वा । ततः खलु सा काली आर्या 'पासत्था' पार्श्वस्था-गाढकारणविना 'नित्यपिण्ड' भोक्त्री, अतएव पार्श्वस्थविहारिणि, 'ओसण्णा' अयमन्ना समाचारीपालनेऽवसी

द्य हो जावेगा-दूसरे उपाश्रय में चली जाऊँ। इस प्रकार का उसने अपने मन में विचार किया। विचार करके फिर वह दूसरे दिन प्रातः काल होते ही सूर्योदय होने पर दूसरे उपाश्रय में चली गई। (तत्थण सा अणिवारिया अणोहृद्विया सच्छन्दमई अभिक्खण २ हत्थे धोवेइ, जाव आसयइ वा सयइ वा णीसेहेइ वा-तएण सा काली अज्जा पासत्था पासत्थविहारी ओसण्णा ओसण्णविहारी, कुसीला कुसीलविहारी, अहाछदा अहाउदविहारी, ससत्ता ससत्तविहारी बहूणि वासाणि सा माण्णपरियागं पाउणइ) चर्हा चह विना रोक टोक, यद्वत्ता प्रवृत्ति करने लग गई। इच्छानुसार चार २ हाथ पैर आदि धोने लग गई। उठने बैठने एव सोने के स्थान को तथा स्वाध्याय भूमि को पहिले से ही पानी से सिञ्चित कर वहा उठने बैठने एव स्वाध्याय करने लगी। इस तरह की स्वच्छन्द प्रवृत्ति से वह काली आर्या पासत्था-गाढकारण के विना नित्य पिण्ड भोक्त्री-बन गई, पार्श्वस्थ विहारिणी हो गई। समाचारी

णील उपाश्रयमा जती रहु आ प्रमाणे तेणे मनमा विचार कर्यो विचार करीने ते णीने द्विसे सचार यथा ज सूर्योदय थया णाढ णील उपाश्रयमा जती रही (तत्थण सा अणिवारिया अणोहृद्विया सच्छन्दमई अभिक्खण २ हत्थे धोवेइ, जाव आसयइ वा सयइ वा णीसेहेइ वा तएण सा काली अज्जा पासत्था पासत्थविहारी ओसण्णा ओसण्णविहारी कुसीला कुसीलविहारी अहा दा अहाउदविहारी ससत्ता ससत्तविहारी बहूणि वासाणि सामण्णपरियाग पाउणइ)

त्या ते शक-टोक विना स्वच्छन्द थधने प्रवृत्ति करवा लागी धम्मो मुञ्जण वारवार डाय-पग धोवा लागी, उठवा-बेसवा अने सूवाना स्थानने तेमज्ज स्वाध्याय भूमिने पडेलेथी ज पाण्णी वडे सिञ्चित करीने त्या उठवा बेसवा तेमज्ज स्वाध्याय करवा लागी आ जतनी स्वच्छन्द प्रवृत्तिथी ते शकली आर्या पासत्था-गाढ कारणे वगर नित्य पिण्ड भोक्त्री

दन्ती, अतएव असन्नविहारिणी, 'कुशीला' कुशीला=उत्तरगुणसेवया संज्वलन-
कपायोदये प्रवृत्ता, अतएव कुशीलविहारिणी, 'अहाच्छदा' यथाच्छन्दा-
स्वाभिप्रायपूर्वकस्वमति कल्पितमार्गे प्रवृत्ता, अतएव यथा छन्दविहारिणी, 'ससत्ता'
ससक्ता गृहस्थादिप्रेमयन्त्रनेन शिथिलमामाचारीप्रवृत्ता सती बहूनि वर्षाणि श्रामण्य
पर्याय पालयति, पालयित्वा अर्द्धमासिभ्या सलेखनयाऽऽत्मान 'झूसेइ' जोप-
यति=सेवते, झूसित्ता=जोपयिता त्रिंशद् भक्तानि 'अणसणाए' अनशनया 'छेण्ड'
छिनत्ति, छित्ता तरय रथानस्य अनालोचिताऽ प्रतिक्रान्ता कालमासे
काल कृत्वा चमरचञ्चाया रानधान्या कालावतसके भवने उपपातसमाया
देवशयनीये देवदूष्यान्तरिते = देवदूष्यवस्त्राच्छादिते अङ्गुलस्याऽपङ्ख्येयभाग-
मात्रायामवगाहनाया कालीदेवीतया उपपन्ना । ततः खलु सा कालीदेवी अधुनो-

पालन करने में शिथिलता दिखलाने लगी-अवसन्न विहारिणी हो गई ।
कुशीला बन गई-संज्वलन कपाय के उदय होने से उत्तरगुणों की
विराधना करने लगी-कुशील विहारिणी हो गई और अपनी इच्छानु-
सार मार्ग की कल्पना कर उसमें प्रवृत्त रहने लग गई-इमलिये वह
यथाच्छन्द विहारिणी भी बन गई । गृहस्थ आदि जनों के अधिक परि-
चयजन्य प्रेमबधन से अपने आचार पालन में शिथिल पनी हुई उसने
इस तरह होकर अनेक वर्षों तक श्रामण्य पर्याय का पालन किया-और
(पाउणिक्ता) पालन कर (अर्द्धमासिभ्या सलेहणाण अत्ताण झूसेइ,
झूसित्ता तीस भक्ताइ अणसणाए छेण्ड, छेइत्ता, तस्स ठाणस्स अणा
लोइय अपडिक्कत्ता कालमासे काल किच्चा चमरचच्चाए राग्रहाणीए
कालवडिण्णस भवणे उववायम भाण देवसयणिज्जसि देवदूसतरिण अगुल-

विहारिणी यथं गच्छ सम चारी पालन करवाभा शिथिलतावाणी गताववा लागी-
अवसन्न विहारिणी यथं गच्छ कुशीला थ १ गच्छ, संज्वलन कपायने उदय
डोवाथी उत्तर गुणोनी विराधना करवा लागी, कुशील विहारिणी यथं गच्छ
अने पोतानी छच्छा सुत्थ भागोनी कल्पना करीने तेभा प्रवृत्त थवा लागी
अधी ते यथाच्छन्द विहाण्णि पणु गनी गच्छ गृहस्थ वगेरे डोडोना वधाइ
परता परिचयजन्य प्रेमबधनी पोताना आचार पालनभा शिथिल यथं गच्छ
तेणे आ प्रभाणे धणु वर्षो सुधी श्रामण्य-पर्यायनु पालन कथुं अने
(पवणिक्ता) पालन करीने

(अर्द्धमासिभ्या सलेहणाण अत्ताण झूसेइ, झूसित्ता तीस भक्ताइ अणसणाए
छेण्ड छेइत्ता, तस्स ठाणस्स अणालोइयअपडिक्कत्ता कालमासे काल किच्चा चमर-

सम्प्रेक्ष्य कल्पे यावत् सूर्ये ज्वलति 'पाटिण्यं' प्रत्येकम्-उपाश्रयं गृह्णाति । तत्र खलु सा 'अणिवारिया' अनिवारिता-निवारकाभावात्, 'अणोहृदिया' अनवधट्टिका यदृच्छा प्रवृत्तिप्रतिरोधकाभावात्, अतएव 'सच्छन्दमई' स्वच्छन्दमतिः अभीक्षणमभीक्षण हस्तौ धारति यावत्-आस्ते वा शेते वा निषेधयति वा । ततः खलु सा कात्री आर्या 'पासत्या' पार्श्वस्था-गाढकारणं विना नित्यपिण्ड भोक्त्री, अतएव पार्श्वस्थविहारिणि, 'ओसणा' अत्रमन्ना समाचारीपालनेऽवसी

दय हो जावेगा-दूसरे उपाश्रय में चली जाऊँ। इस प्रकार का उसने अपने मन में विचार किया। विचार करके फिर वह दूसरे दिन प्रातः काल होते ही सूर्योदय होने पर दूसरे उपाश्रय में चली गई। (तत्पणं सा अणिवारिया अणोहृदिया सच्छन्दमई अभिक्खण २ हत्थे धोवेइ, जाव आसयइ वा सयइ वा णीसेहेइ वा-तएण सा काली अज्जा पासत्या पासत्थविहारी ओसणा ओसणविहारी, कुसीला कुसीलविहारी, अहाउदा अहाउदविहारी, ससत्ता ससत्तविहारी बहूणि वासाणि सा माणणपरियागं पाउगइ) वहाँ वह विना रोक टोक, यदृच्छा प्रवृत्ति करने लग गई। इच्छानुसार चार २ हाथ पैर आदि धोने लग गई। उठने बैठने एव सोने के स्थान को तथा स्वाध्याय भूमि को पहिले से ही पानी से सिञ्चित कर वहाँ उठने बैठने एव स्वाध्याय करने लगी। इस तरह की स्वच्छन्द प्रवृत्ति से वह काली आर्या पासत्या-गाढकारण के विना नित्य पिण्ड भोक्त्री-बन गई, पार्श्वस्थ विहारिणी हो गई। समाचारी

णील उपाश्रयभा जती रहु आ प्रभाळे तेळे मनभा विचार कर्थे विचार करीने ते णीले द्विसे सवार यता ज सूर्योदय तथा णाह णील उपाश्रयभा जती रहु

(तत्पणं सा अणिवारिया अणोहृदिया सच्छन्दमई अभिक्खण २ हत्थे धोवेइ, जाव आसयइ वा सयइ वा णीसेहेइ वा तएण सा काली अज्जा पासत्या पासत्थविहारी ओसणा ओसणविहारी कुसीला कुसीलविहारी अहा दा अहाउद विहारी ससत्ता ससत्तविहारी बहूणि वासाणि सामणपरियाग पाउणइ)

त्या ते शोक-टोक विना स्वच्छन्द यधने प्रवृत्ति करवा लागी छच्छा भुक्खण वारवार हाथ-पग धोवा लागी, उठवा-बैसवा अने सूवाना स्थानने तेमज स्वाध्याय भूमिने पडेलेधी ज पाळी वडे सिञ्चित करीने त्या उठवा बैसवा तेमज स्वाध्याय करवा लागी आ नतनी स्वच्छन्द प्रवृत्तिथी ते काली आर्या पासत्या-गाढ कारण वगर नित्य पिंड भोक्त्री

दन्ती, अतएव अवसन्नविहारिणी, 'कुशीला' कुशीला=उत्तरगुणसेवया संज्वलन-
 कपायोदये प्रवृत्ता, अतएव कुशीलविहारिणी, 'अहाच्छदा' यथाच्छन्दा=
 स्वाभिप्रायपूर्वकस्वमति कल्पितमार्गे प्रवृत्ता, अतएव यथा छन्दविहारिणी, 'ससत्ता'
 ससक्ता गृहस्थादिप्रेमबन्धनेन शिथिलमामाचारीप्रवृत्ता सती गृह्णीतु वर्पाणि श्रामण्य
 पर्याय पालयति, पालयित्वा अर्द्धमासिया संश्रयनयाऽऽत्मान 'झूसेइ' जोप
 यति=सेवते, झूसित्ता=जोपरिजा त्रिशद् भक्तानि 'अणसणाए' अनशनया 'छेएइ'
 छिनत्ति, छित्ता तरय रथानम्य अनालोचिताऽ प्रतिक्रान्ता कालमासे
 काल कृत्वा चमरचञ्चाया राजधान्या कालावतसके भवने उपपातसभाया
 देवशयनीये देवदूष्यान्तरिते = देवदूष्यवह्नाच्छादिते अङ्गुलस्याऽनखयेयभाग-
 मायापत्रगाहनाया कालीदेवीतया उपपन्ना । ततः खलु सा कालीदेवी अधुनो-

पालन करने में शिथिलता दिखलाने लगी-अवसन्न विहारिणी हो गई ।
 कुशीला बन गई-संज्वलन कपाय के उदय होने से उत्तरगुणों की
 विराधना करने लगी-कुशील विहारिणी हो गई और अपनी इच्छानु-
 सार मार्ग की कल्पना कर उसमें प्रवृत्त रहने लग गई-इसलिये वह
 यथाच्छन्द विहारिणी भी बन गई । गृहस्थ आदि जनों के अधिक परि-
 चयजन्य प्रेमबन्धन से अपने आचार पालन में शिथिल बनी हुई उसने
 इस तरह होकर अनेक वर्षों तक श्रामण्य पर्याय का पालन किया-और
 (पाउणिक्ता) पालन कर (अर्द्धमासियाए सछेहणाए अत्ताण झूसेइ,
 झूसित्ता तीस भक्ताइ अणसणाए छेएइ, छेइत्ता, तस्स ठाणस्स अणा
 लोइय अपडिक्कत्ता कालमासे काल किच्चा चमरचचाए राघहाणीए
 कालवडिणस भवणे उववायम माए देवसयणिज्जसि देवदूमतरिए अगुल-

विहारिणी यह गद्य सभ थारी पालन ठरवाभा शिथिलतावाणी गताववा लागी-
 अवसन्न विहारिणी यह गद्य कुशीला थउ गद्य, संज्वलन उपायने उदय
 होवाथी उत्तर गुणोनी विराधना करवा लागी, कुशील विहारिणी यह गद्य
 अने पोतानी छच्छा मुज्ज मारगनी कल्पना करीने तेमा प्रवृत्त थवा लागी
 अथी ते यथाच्छन्द विहारिणी पणु गनी गद्य गृहस्थ वगेरे लोकोना वधाइ
 पशता परिचयजन्य प्रेमबन्धनी पोताना आचार पालनमा शिथिल थय गद्य
 तेछे आ प्रभाछे घण्टा वर्षो सुधी श्रामण्य-पर्यायनु पालन उयु' अने
 (परणिक्ता) पालन करीने

(अर्द्धमासियाए सछेहणाए अत्ताण झूसेइ, झूसित्ता तीस भक्ताइ अणसणाए
 छेएइ, छेइत्ता, तस्स ठाणस्स अणालोइयअपडिक्कत्ता कालमासे काल किच्चा चमर-

पपन्ना=तरकालसमुत्पन्नासती पञ्चविधयापर्याप्त्या यथामूर्धामः=मूर्धामदेववत्,
 'जाव भासामणपञ्जतीण' भावामन पर्याप्त्या-यावत्-आहारपर्याप्त्या १,
 शरीरपर्याप्त्या २, इन्द्रियपर्याप्त्या ३, आनमाणपर्याप्त्या ४, भावामन पर्याप्त्या
 ५, पर्याप्तिभाव गच्छति । पर्याप्तिग्रन्थशाले देवानामाहारशरीरादिपर्याप्तिसमाप्ति
 कालान्तरापेक्षया भावामन पर्याप्त्योः स्तोत्रकालान्तरतया तयोरेकत्वेन विवक्ष
 णात् पर्याप्तीनां पञ्चविधत्वम् । ततः खलु सा काली देवी चतसृणा सामानिक-
 साहस्रीणां यावत्-अन्येषा च गृह्णा कालावतसकमनवासिनामसुरकुमारणा

रस असखेज्जइ, भागमेत्ताण ओगाहणाण कालीदेवीत्ताण उववण्णा)
 अर्द्धमास की सलेखना से उसने अपनी आत्मा को युक्त किया । इस
 प्रकार उसने अनशनों द्वारा ३० भक्तोंका छेदन करने पर भी उस स्थानकी
 आलोचना नहीं की और न वह उन अतिचारों से पीछे ही र्टी-अतः
 अनालोचित अप्रतिक्रान्त बनकर वह जय उस काल अवसर-काल कर
 चमरचपा नाम की राजधानी में, कालावतसक भवनमें, उपातातसभामें
 देवदृष्यवस्त्रसे आच्छादितदेवशयनीय'शय्या' ऊपर अगुलके असख्यातवे
 मात्र की अवगाहना से काली देवी के रूप में उत्पन्न हो गई (तएण सा
 कालीदेवी अहुणोववण्णा समाणी पचविहाए पज्जत्तीए जहा मूरियाभो
 जाव भासामणपज्जत्तीए ०। तएण सा कालीदेवी चउण्हं समाणि य
 साहस्सी ण अण्णेसि च गृह्ण कालवडेसकभवणवासीण असुरकुमाराण

चचाए रायहाणीए कालवडिसए भवणे उवायसभाए देवसयणिज्जसी देवदूस
 तरिए अगुलस एखेज्जइ, भागमेत्ताए ओगाहणाए कालीदेवीत्ताए उववण्णा)
 तेष्से अर्द्धमासनी सलेखनाथी चोत्ताना आत्माने युक्त करी आ प्रभाण्णे
 तेष्से अनशने वडे ३० लक्षतोनु छेदन करीने पण्णु ते स्थाननी आवोयना करी
 नहि अने ते अतिथारेना आयरण्णुथी पण्णु अट्ठी नहि अथी अनालोचित
 अप्रतिक्रान्त थधने ते न्यारे काण अवसरै काण करीने अभरय आ नामनी
 राजधानीमा कालावतसक भवनमा, उपातातसभामा देवदृष्य वस्त्रथी आच्छादित
 देवशनीय उपर आगणीअाना अम भ्यातमा भावनी अवगाहनागी काली देवीना
 रूपमा उत्पन्न थधं गधं

(तएण सा काली देवी अहुणोववण्णा समाणी पचविहाए पज्जत्तीए
 जहा मूरियाभो जाव भासामणपज्जत्तीए० । तएण सा काली देवी चउण्हं समा
 णिवस.हस्सीण जाव अण्णेसि च गृह्ण कालवडेसकभवणवासी ण असुरकुमा
 राण देवाण य देवीणय आहेवच जाव विहरइ)

દેવાના ચ દેવીના ચ ' આહેવચ્ચ ' આધિપત્ય=સ્વામિત્વ કુર્વન્તીપાલયન્તી યાવદ્ વિહરતિ ।

एवम्=उक्तप्रकारेण खलु हे गौतम ! काल्या देव्या सा दिव्या देवर्द्धिः ३, लव्या, प्राप्ता, अभिसमन्वागता ।

गौतमः पृच्छति-काल्या खलु हे भदन्त ! देव्यास्तत्र ' केवइय ' क्रियन्त

દેવાણ ય દેવીણ ય આહેવચ્ચ જાવ વિહરઈ) इस प्रकार वह काली देवी अभी अभी उत्पन्न होकर पाच प्रकार की पर्याप्तियों से पर्याप्त बनी है । पर्याप्तिया ६ होती हैं परन्तु यहा पर जो वे पाच की सख्या में निर्दिष्ट हुई हैं—उसका कारण यह है कि पर्याप्ति के बधकाल में देवों के आहार, शरीर आदि पर्याप्तियों के समाप्तिकाल की अपेक्षा भाषा और मनः पर्याप्त का साथ साथ बध होता है, इसलिये इन दोनों को एक रूप से यहा विवक्षित किया गया है । वे पर्याप्तियां इस प्रकार हैं—(१) आहारपर्याप्ति (२) शरीर पर्याप्ति (३) इन्द्रियपर्याप्ति (४) श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति (५) भाषा एवं मनः पर्याप्ति । वह काली देवी चार हजार सामानिक देवोंका यावत् और दूसरे अनेक कालावतसक भवनवासी असुरकुमार देवों का देवियों का आधिपत्य कर रही है । (एव खलु गोयमा । कालीए देवीए सा दिव्या देवर्द्धी ३ लद्धापत्ता अभिसमण्णा गया,

આ પ્રમાણે તે કાલી દેવી હમણા જ ઉત્પન્ન થઈને પાચ પ્રકારની પર્યાપ્તિઓથી પર્યાપ્ત બની છે પર્યાપ્તિઓ છ હોય છે પણ અહીં જે પાચની સખ્યામાં જ બતાવવામાં આવી છે તેનું કારણ આ પ્રમાણે છે કે પર્યાપ્તિના બધકાલમાં દેવોના આહાર, શરીર વગેરે પર્યાપ્તિઓના સમાપ્તિકાળની અપેક્ષા ભાષા અને મન પર્યાપ્તિનું એકી સાથે બધ હોય છે એથી આ બંનેને અહીં એક રૂપમાં જ બતાવવામાં આવી છે તે પર્યાપ્તિઓ આ પ્રમાણે છે— (૧) આહાર પર્યાપ્તિ, (૨) શરીર પર્યાપ્તિ, (૩) ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિ, (૪) શ્વાસોચ્ચ્વાસ પર્યાપ્તિ, (૫) ભાષા અને મન પર્યાપ્તિ તે કાલી દેવી ચાર હજાર સામાનિક દેવો ઉપર યાવત્ બીજા પણ ઘણા કાલાવત સક ભવનવાસી અસુર કુમાર દેવો, દેવીઓ ઉપર શાસન કરી રહી છે

(एव सउ गोयमा ! कालीए देवीए सा दिव्या देवर्द्धी ३ लद्धापत्ता अभिसमण्णागया, कालीए ण भते ! देवीए केवइय काल ठिई पण्णत्ता ? गोयमा

इत्थाइ पल्लोवमाई ठिई पण्णत्ता)

पपन्ता=तद्वत्समुत्पन्तासती पञ्चविधयापर्याप्त्या यथामूर्यामः=मूर्यामदेवव्रत,
 'जाव भासामणपञ्जतीण' भापामन पर्याप्त्या-यावत्-आहारपर्याप्त्या १,
 शरीरपर्याप्त्या २, इन्द्रियपर्याप्त्या ३, आनमाणपर्याप्त्या ४, भापामन पर्याप्त्या
 ५, पर्याप्तिभाव गच्छति । पर्याप्तिवन्धकाले देवानामाहारशरीरादिपर्याप्तिसमाप्ति
 कालान्तरापेक्षया भापामन पर्याप्त्योः स्तोत्रकालान्तरतया तयोरेकत्वेन विवक्ष
 णात् पर्याप्तीना पञ्चविधत्वम् । ततः खलु सा काली देवी चतसृणा सामानिक-
 साहस्रीणां यावत्-अन्येषा च गृह्णां कालावतसकभवणवासिनामसुरकुमारणा

स्स असखेज्जइ, भागमेत्ताण ओगाहणाण कालीदेवीत्तए उववण्णा)
 अर्द्धमास की सलेखना से उसने अपनी आत्मा को युक्त किया । इस
 प्रकार उसने अनशनों द्वारा ३० भक्तोंका छेदन करने पर भी उस स्थानकी
 आलोचना नहीं की और न वह उन अतिचारों से पीछे ही हटी-अतः
 अनालोचित अप्रतिक्रान्त चक्रर वह जय उस काल अवसर-काल कर
 चमरचपा नाम की राजधानी में, कालावतसक भवनमें, उपातातसभामें
 देवदृष्यवस्त्रसे आच्छादित देवशयनीय 'शय्या' ऊपर अगुलके असव्यातवे
 मात्र की अवगाहना से काली देवी के रूप में उत्पन्न हो गई (तएण सा
 कालीदेवी अहुणोववण्णा समाणी पचविहाण पञ्जतीए जहा सूरियाभो
 जाव भासामणपञ्जतीए ०। तएण सा कालीदेवी चउण्ह समाणि य
 साहस्सी ण अण्णेसिं च गृह्णां कालवड्डेसकभवणवासीण असुरकुमाराण

चचाए रायहाणीए कालवड्डिस्सए भवणे चउवायसभाए देवसयणिज्जघ्णी देवदूस
 तरिए अगुलसस असखेज्जइ, भागमेत्ताए ओगाहणाए कालीदेवीत्तए उववण्णा)
 तेण्णे अर्द्धमासनी सलेखनाथी पोताना आत्माने युक्तं कुर्या आ प्रभाण्णे
 तेण्णे अनशने। वडे उ० लक्ष्मिणु छेदन करीने पणु ते स्थाननी आयोयना करी
 नडि अने ते अतिचारेना आचरणुथी पणु अट्टी नडि अथी अनालोचित
 अप्रतिक्रान्त थधने ते न्यारे काण अवसरं काण करीने अभरय आ नामनी
 राजधानीमा कालावतसक भवनमा, उपातातसभामा देवदृष्य वस्त्रथी आच्छादित
 देवशनीय उपर आगणीओना असव्यातमा मात्रनी अवगाहनागी काली देवीना
 रूपमा उत्पन्न थधं गधं

(तएण सा काली देवी अहुणोववण्णा समाणी पचविहाए पञ्जतीए
 जहा सूरियाभो जाव भासामणपञ्जतीए० । तएण सा काली देवी चउण्ह सामा
 णिवसहस्सीण जाव अण्णेसिं च गृह्णां कालवड्डेसकभवणवासी ण असुरकुमा
 राण देवाण य देवीणय आदेवच जाव बिहरइ)

श्रीसुधर्मास्वामी प्राह-एव सलु हे जम्बू ! श्रमणेन यावत्-मोक्ष सम्प्राप्तेन प्रथमस्य वर्गस्य प्रथमाध्ययनस्य अयमर्थ = पूर्वोक्तो भावः प्रज्ञप्तः । त्तिनेमि ' इति व्रयीमि, व्याख्या पूर्ववत् ॥ सू०४ ॥

॥ धर्मकृत्याना प्रथमवर्गस्य प्रथमाध्ययनं समाप्तम् ॥

विदेह क्षेत्र में उत्पन्न होगी और वहीं से सिद्ध होगी। अब सुधर्मा स्वामी श्री जम्बू ! स्वामी से कहते हैं कि हे जम्बू ! मुक्ति को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर ने प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह पूर्वोक्त अर्थ प्रज्ञप्त किया है। ऐसा मैंने उन्हीं के मुख से सुनकर यह तुमसे कहा है ॥ सूत्र ४ ॥

-:प्रथम वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त -

महाविदेह क्षेत्रमा उत्पन्न थये अने त्यावी ज सिद्ध थगे हवे सुधर्मा स्वामी श्री जम्बू ! स्वामीने कहे छे के छे जम्बू ! मुक्तिप्राप्त श्रमण भगवान् महावीरे प्रथम वर्गना प्रथम अध्ययनना आ पूर्वोक्त इये अर्थ प्रज्ञप्त कथे छे आवु हु तेमना श्री भुष्यथी सालणीने तमने कही गयो छु ॥ सूत्र ४ ॥

“ प्रथम वर्गनु प्रथम अध्ययन समाप्त ”

काल स्थिति प्रज्ञप्ता ? भगवान्पाह-हे गौतम ! ' अद्वाइज्जाड ' अर्द्धवृत्तीये=सादे
हे पत्योपमे स्थितिः प्रज्ञप्ता ।

गौतमः पृच्छति-काली हे भदन्त ! देवी तस्माद्देवलोकाद् अनन्तरम्=आयु
भवंस्थितिक्षयानन्तर ' उव्वट्टिता ' उद्गृत्य=निष्कृत्य कुत्र गमिष्यति कुत्र-
उत्पत्स्यते ? ।

भगवानाह-हे गौतम ! सा काली देवी देवलोकाच्च्युत्वा महाविदेहे बवं
उत्पद्य सेत्स्यति, ।

कालीए ण भते ! देवीए केवइय काल ठिई पणत्ता ? गोयमा अद्वाइ
ज्जाह पलिओवमाई ठिईपणत्ता) इस तरह से हे गौतम ! काली देवी
ने वह दिव्य देवर्द्धि ३, अर्जित की है स्वाधीन की है और उसे अपने
उपभोग के योग्य बनाया है । अब गौतम पुन प्रभु से पूछते हैं-कि हे
भदत ! कालीदेवी की कितनी स्थिति है ? उत्तर में प्रभु ने उनसे कहा-हे
गौतम ! कालीदेवी की स्थिति अढाई पत्य की (प्रज्ञप्त हुई) है (काली
ए ण भते ! देवी ताओ देवलोगाओ अणंतर उव्वट्टिता कहि गच्छहिइ, कहि
उव्वज्जिहिइ, ? गोयमा ! महाविदेहेवासे सिज्जिहिइ एव खलु जवू !
समणेणं जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते
त्तिवेमि, धम्मकहाण पढमज्झयण समत्त) हे भदत ! कालीदेवी उस
देवलोक से आयु एवं भवस्थिति के क्षय के अनन्तर निकलकर कहा
जावेगी, कहा उत्पन्न होगी ? इस गौतम के प्रश्न का उत्तर प्रभु ने उ
इस प्रकार दिया-गौतम ! वह काली देवी देवलोक से चव कर म

आ प्रभाणु हे गौतम ! काली देवीअ ते दिव्य देवर्द्धि ३ प्राप्त क
छे स्वाधीन बनायी छे अने तेने पोताने भाटे उपलोग योग्य बनायी
छे गौतम इरी प्रभुने पूछे छे के हे भदन्त ! काली देवीनी स्थिति के
ववाभमा प्रभुअ तेमने कहु के हे गौतम ! काली देवीनी स्थिति अदी पत्य
(प्रज्ञप्त थर्) छे

(कालीए ण भते ! देवी ताओ देवलोगाओ अणंतर उव्वट्टिता कहि गच्छि
हिइ, कहि उव्वज्जिहिइ ? गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्जिहिइ, एव खलु
जवू ! समणेणं जाव सपत्तेण पढमस्स वग्गस्स पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते
त्ति वेमि, धम्मकहाण पढमज्झयण समत्त)

हे भदन्त ! काली देवी ते देवलोकथी आयु अने भवस्थितिने पूरी
करीने क्या वशे ? क्या उत्पन्न थशे ? आ प्रभाणु गौतमना प्रश्नने सावणीने
प्रभुअ उत्तरमा तेने कहु के हे गौतम ! ते काली देवी

श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनाममधेयं स्थान सम्प्राप्तं धर्मकथाना प्रथमस्य वर्गस्य प्रथमाध्ययनस्यायमर्थः=पूर्वोक्तो भावः प्रज्ञप्तः, द्वितीयस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् मोक्ष सम्प्राप्तेन कोऽर्थः=को भावः प्रज्ञप्तः ?

सुधर्मास्वामीमाह—एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राज-गृह नगरम् । गुणशिलक चैत्यम् । स्वामी भगवान् महावीरः समवसतः । परिप

पढस्स वग्गस्स पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते विडयस्स ण भत्ते ! अज्झयणस्स समणेण भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सामी समोसडे) यदि श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्ति स्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथाके प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्ररूपित किया है—तो हे भदन्त ! द्वितीय अध्ययन का उन्ही श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्ति को प्राप्त कर चुके हैं क्या भाव अर्थ प्रतिपादित किया है ? इस प्रकार जम्बू स्वामी के पूछने पर सुधर्मा स्वामी उनसे कहते हैं कि हे जम्बू ! सुनो—तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है—उस काल और उस समय में राजगृह नाम का नगर था । उसमें गुणशिलक नाम का उद्यान था । उसमें महावीर स्वामी समवसरे ।—(परिस्ता निग्गया—जाव पज्जुवासइ,

वग्गस्स पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते विडयस्स ण भत्ते ! अज्झयणस्स समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण के० अट्ठे पण्णत्ते ? एव खलु जम्बू ? तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सामी समोसडे)

जे श्रमण भगवान् महावीरे—के जेमण्णे मुक्तिस्थान भेगवी वीधु छे धर्मकथाना प्रथम वर्गना प्रथम अध्ययननो आ पूर्वोक्त रूपमा अर्थ प्ररूपित कथो छे तो हे भदन्त ! ते जे श्रमण भगवान् महावीरे—के जेमण्णे मुक्ति स्थान भेगवी वीधु छे भीम अध्ययननो शे भाव—अर्थ प्रतिपादित कथो छे आ प्रमाणे जम्बू स्वामीना प्रश्नने सालणीने श्री सुधर्मा स्वामी तेभने कडे छे के छे जम्बू ! सालणो, तमारा प्रश्ननो उत्तर आ प्रमाणे छे के ते कथे अने ते समये राजगृह नामे नगर छेतु तेमा गुणशिलक नामे उद्यान छेतु तेमा महावीर स्वामी पधार्या

(परिस्ता निग्गया—जाव पज्जुवासइ, तेण कालेण तेण समएण राई देवी

अथ द्वितीयमध्ययनं प्रारभ्यते—

मूलम्—जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेण जाव संपत्तेणं धम्मकहाणं पढमस्स वग्गस्स पढमज्झयणस्स अय-
मट्ठे पणणत्ते विइयस्स णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं भग-
वया महावीरेणं जाव संपत्तेणं के० अट्ठे पणणत्ते ?, एव खलु
जंबू । तेणं कालेण तेणं समएणं रायगिहे नयरे गुणसिलए
चेइए सामी समोसठे परिसा निग्गया जाव पज्जुवासइ, तेण
कालेण तेण समएणं राई देवी चमरचचाए रायहाणीए एव
जहा काली तहेव आगया णट्टविहि उवदसेत्ता पडिगया
भंतेत्ति भगवं गोयमा । पुव्वभवपुच्छा, एवं खलु गोयमा ।
तेण कालेण तेणं समएण आमलकप्पा णयरी अबसालवणे
चेइए जियसत्तू राया राई गाहावई राईसिरी भारिया राई
दारिया पासस्स समोसरण राई दारिया जहेव काली तहेव
निक्खंता तहेव सरीरवाउसिया तं चेव सव्वं जाव अत
काहित्ति । एवं खलु जंबू । विइयज्झयणस्स निक्खेवओ ॥

॥ पढमवग्गस्स वीयज्झयण समत्त ॥ सू० ५ ॥

टीका—' जइण भंते ' इत्यादि । जम्बूस्वामीपृच्छति—यदि खलु हे भदंत ।

—:द्वितीय अध्ययन प्रारभः—

—:जइणं भंते ! समणेण इत्यादि ।

टीकार्थ—जंबू स्वामी श्री सुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि (भंते) हे भदंत ! (जइण समणेण भगवया महावीरेण जाव संपत्तेण धम्मकहाण

शीलु अध्ययन प्रारभ —

जइण भंते ! समणेण इत्यादि—

टीकार्थ—जंबू स्वामी श्री सुधर्मास्वामीने पूछे छे के (भंते) हे भदंत !
(जइण समणेण भगवया महावीरेण जाव संपत्तेण पढमस्स

श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनाममधेय स्थान सम्प्राप्तन धर्मकथाना प्रथमस्य वर्गस्य प्रथमाध्ययनस्यायमर्थः=पूर्वोक्तो भावः प्रज्ञप्तः, द्वितीयस्य खलु भदन्त ! अययनस्य श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् मोक्ष सम्प्राप्तेन कोऽर्थः= को भावः प्रज्ञप्तः ?

सुधर्मास्वामीभाह-एव खलु हे जम्बू ! तरिमन् काले तरिमन् समये राज-गृह नगरम् । गुणशिलक चैत्यम् । स्वामी भगवान् महावीरः समवसतः । परिप

पढमस्स बग्गस्स पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते चिड्ढयस्स ण भत्ते ! अज्झयणस्स समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जवू ! तेण कालेण तेण समएण रावगिहे णयरे गुण सिलए चेइए सामी समोसढे) यदि श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्ति स्थान को प्राप्त हो चुके हे धर्मकथाके प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्ररूपित किया है-तो हे भदन्त ! द्वितीय अध्ययन का उन्हीं श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्ति को प्राप्त कर चुके हैं क्या भाव अर्थ प्रतिपादित किया है ? इस प्रकार जब स्वामी के पूछने पर सुधर्मा स्वामी उनसे कहते हैं कि हे जवू ! सुनो -तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है-उस काल और उस समय में राजगृह नाम का नगर था । उसमें गुणशिलक नाम का उद्यान था । उसमें महावीर स्वामी समवसते ।-(परिस्ता निग्गया-जाव पज्जुवासइ,

बग्गस्स पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते चिड्ढयस्स ण भत्ते ! अज्झयणस्स समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण के० अट्ठे पण्णत्ते ? एव खलु जवू ? तेण कालेण तेणं समएण रावगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सामी समोसढे)

ने श्रमण भगवान् महावीरे-के नेमणे मुक्तिस्थान भेगवी लीधु छे धर्मकथाना प्रथम वर्गना प्रथम अध्ययनना आ पूर्वोक्त रूपमा अर्थ प्ररूपित कथो छे तो हे भदन्त ! ते न श्रमण भगवान् महावीरे-के नेमणे मुक्ति स्थान भेगवी लीधु छे गीत्त अध्ययनना शे भाव-अर्थ प्रतिपादित कथो छे आ प्रभाणे न्णू स्वामीना प्रश्नने सालणीने श्री सुधर्मा स्वामी तेमने कडे छे हे हे न्णू ! सालणा, तमार प्रश्नना उत्तर आ प्रभाणे छे हे ते कथे अने ते समये राजगृह नामे नगर हंतु तेमा शुण्णशिलक नामे उद्यान हंतु तेमा महावीर स्वामी पधार्या

(परिस्ता निग्गया-जाव पज्जुवासइ, तेण कालेणं तेण समएण राई देवी

अथ द्वितीयमध्ययनं प्रारभ्यते—

मूलम्—जइ षं भते ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेणं धम्मकहाणं पढमस्स वग्गस्स पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते विइयस्स षं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं के० अट्ठे पणत्ते ? एव खलु जंबू । तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नयरे गुणसिलए चेइए सामी समोसढे परिसा निग्गया जाव पज्जुवासइ, तेण कालेणं तेणं समएणं राई देवी चमरचचाए रायहाणीए एव जहा काली तहेव आगया णट्टविहिं उवदसेत्ता पडिगया भंतेत्ति भगवं गोयमा ! पुव्वभवपुच्छा, एव खलु गोयमा । तेण कालेण तेणं समएण आमलकप्पा णयरी अवसालवणे चेइए जियसत्तू राया राई गाहावई राईसिरी भारिया राई दारिया पासस्स समोसरण राई दारिया जहेव काली तहेव निक्खंता तहेव सरीरवाउसिया तं चेव सव्वं जाव अत काहिति । एवं खलु जंबू । विइयज्झयणस्स निक्खेवओ ॥

॥ पढमवग्गस्स वीयज्झयण समत्त ॥ सू० ५ ॥

टीका—' जइण भते ' इत्यादि । जम्बूस्वामीपृच्छति—यदि खलु हे भदंत ।

—:द्वितीय अध्ययन प्रारभः—

—:जइणं भते ! समणेण इत्यादि ।

टीकार्थ.—जंबू स्वामी श्री सुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि (भंते) हे भदंत ! (जइण समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण

णीज्जु' अध्ययन प्रारभ —

जइण भंते ! समणेण इत्यादि—

टीकार्थ—जंबू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के (भंते) हे भदंत ।
(जइण समणेणं भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण पढमस्स

श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् सिद्धिगतिनाममधेय स्थान सम्प्राप्तं धर्मकथाना प्रथमस्य वर्गस्य प्रथमाध्ययनस्यायमर्थः=पूर्वोक्तो भावः प्रज्ञप्तः, द्वितीयस्य खलु भदन्त ! अययनस्य श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् मोक्ष सम्प्राप्तेन कोऽर्थः=को भावः प्रज्ञप्तः ?

सुधर्मास्वामीप्राह-एव खलु हे जम्बू ! तरिमन् काले तरिमन् समये राज-गृह नगरम् । गुणशिलक चैत्यम् । स्वामी भगवान् महावीरः समवसतः । परिप

पदमस्त वगस्त पदमज्जयणस्त अयमद्वे पण्णत्ते विडयस्स ण भत्ते ! अज्जयणस्त समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण के अद्वे पण्णत्ते ? एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सामी समोसडे) यदि श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्ति स्थान को प्राप्त हो चुके हैं धर्मकथाके प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह पूर्वोक्त रूप से अर्थ प्ररूपित किया है-तो हे भदन्त ! द्वितीय अध्ययन का उन्ही श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि मुक्ति को प्राप्त कर चुके हैं क्या भाव अर्थ प्रतिपादित किया है ? इस प्रकार जम्बू स्वामी के पूछने पर सुधर्मा स्वामी उनसे कहते हैं कि हे जम्बू ! सुनो-तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है-उस काल और उस समय में राजगृह नाम का नगर था । उसमें गुणशिलक नाम का उद्यान था । उसमें महावीर स्वामी समवसरे ।-(परिसा निग्गया-जाव पज्जुवासइ,

वगस्त पदमज्जयणस्त अयमद्वे पण्णत्ते विडयस्स ण भत्ते ! अज्जयणस्त समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण के० अद्वे पण्णत्ते ? एव खलु जम्बू ? तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सामी समोसडे)

जे श्रमणु भगवान् महावीरे-के जेमण्णे मुक्तिस्थान भेणवी लीधु छे धर्मकथाना प्रथम वर्गना प्रथम अध्ययनना आ पूर्वोक्त रूपमा अर्थ प्ररूपित कथो छे तेण हे भदन्त ! ते ज श्रमणु भगवान् महावीरे-के जेमण्णे मुक्ति स्थान भेणवी लीधु छे जीण्ण अध्ययनना शे भाव-अर्थ प्रतिपादित कथो छे आ प्रभाण्णे जम्बू स्वामीना प्रश्नने सालणीने श्री सुधर्मा स्वामी तेभने कडे छे के छे जम्बू ! सालणो, तमारो प्रश्नना उत्तर आ प्रभाण्णे छे के ते कथे अने ते समये राजगृह नामे नगर छतु तेमा गुणशिलक नामे उद्यान छतु तेमा महावीर स्वामी पधार्या

(परिसा निग्गया-जाव पज्जुवासइ, तेण कालेण तेण समएण राई देवी

अथ द्वितीयमध्ययन प्रारभ्यते—

मूलम्—जइ णं भते ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेणं धम्मकहाणं पढमस्स वग्गस्स पढमज्झयणस्स अय-
मट्टे पण्णत्ते विइयस्स णं भते ! अज्झयणस्स समणेणं भग-
वया महावीरेणं जाव संपत्तेणं के० अट्टे पण्णत्ते ?, एवं खलु
जवू । तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नयरे गुणसिलए
चेइए सामी समोसढे परिसा निग्गया जाव पज्जुवासइ, तेण
कालेण तेण समएण राई देवी चमरचचाए रायहाणीए एव
जहा काली तहेव आगया णट्टविहि उवदसेत्ता पडिगया
भंतेत्ति भगवं गोयमा । पुढ्वभवपुच्छा, एव खलु गोयमा ।
तेण कालेण तेण समएण आमलकप्पा णयरी अंवसालवणे
चेइए जियसत्तू राया राई गाहावई राईसिरी भारिया राई
दारिया पासस्स समोसरण राई दारिया जहेव काली तहेव
निक्खंता तहेव सरीरवाउसिया तं चेव सव्वं जाव अत
काहिति । एव खलु जवू । विइयज्झयणस्स निक्खेवओ ॥

॥ पढमवग्गस्स वीयज्झयण समत्तं ॥ सू० ५ ॥

टीका—' जइण भते ' इत्यादि । जम्बूस्वामीपृच्छति—यदि खलु हे भदत ।

—द्वितीय अध्ययन प्रारभः—

—जइणं भते ! समणेण इत्यादि ।

टीकार्थ —जवू स्वामी श्री सुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि (भंते) हे
'भदंत ! (जइण समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण

धीनु अध्ययन प्रारभ —

जइण भते ! समणेण इत्यादि—

टीकार्थ—जवू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के (भते) हे भदंत ।

(जइण समणेण भगवया महावीरेण जाव सपत्तेण

पढमस्स

रात्रिर्दारिकाऽऽनीत् । पार्श्वम् = पार्श्वप्रभो ममवमरणम् । रात्रिर्दारिका यथैव
काली तथैव निष्क्रान्ता=तथैव शरीरवाङ्मिता, तदेव सर्वं यावन्-सर्वदुःखाना-
मन्त ऋत्पति ।

दारिया पामस्म नयोमरणं राई दारिया जहेव काली- तहैव निष्क्रान्ता,
तहेवमरीर घाउनिगा त चेव सव्व जाव अत काहिड एव खल्लु जवू ।
विडयज्जयणस्स निक्खेवओ) उसके चले जाने के बाद श्रमण भगवान्
महावीर से गौतम ने रात्रिदेवी का पूर्वभव पूजा-प्रभु ने उनसे इस
प्रकार कहा-हे गौतम ! उसकाल और उस समयमें आमलकल्पा नामकी
नगरी थी । उसमें आम्रगालवन नामका उद्यान था । नगरीके राजा का
नाम जितगन्धु था । वहां रत्रि नामका एक गाथापति रहता था । उस
की भार्या का नाम रात्रिश्री था । इन दोनों के रात्रि नाम की एक
पुत्री थी जिस प्रकार काली प्रभु का उपदेश सुनकर प्रतिबोध को
प्राप्त हो गई थी ।-उसी प्रकार पार्श्वनाथ के वहां उद्यान में आने पर
भी उनसे धर्मोपदेश सुनकर प्रतिबोध को प्राप्त हो गई । अतः वह
माता पिता से आज्ञा लेकर काली की तरह बड़े टाठ घाट के साथ
शिविका में बैठकर प्रभु के समीप माता पिता ले गये । वहां वह
दीक्षित हो गई । वीरे २ वह शरीर वाङ्मिता बन गई । जिस प्रकार

जहेव काली-तहेव निष्क्रान्ता, तहेव शरीरवाउमिया त चेव सव्व जाव अत
काहिड एव खल्लु जवू ! विडयज्जयणस्स निक्खेवओ)

तेना गया आऽ श्रमणु लगवान भडावीरने गौतमे रात्रि देवीना पूर्व
भवनी विगत पृथी प्रभुओ तेमने आ प्रभाणु कधुं के डे गौतम ! ते काणे
अने ते अभये आमलकल्पा नामे नगरी इती तेमा आम्रशाववन नामे
उद्यान इतु नगरीना राजनु नाम जितगन्धु इतुं त्या रात्रि नामे ओक
गाथापति रहेतो इतो तेनी पत्नीनु नाम रात्रिश्री इतुं तेओ जनेने रात्रि
नामे ओक पुत्री इती जेम काली प्रभुने उपदेश श्रवणु कर्णने प्रतिबोधने
प्राप्त थधं तेमज्ज त्या उद्यानमा पधारेवा पार्श्वनाथनी पासैथी धर्मोपदेश
सांभणीने ते पणु प्रतिबोधित थधं गधं ओथी कालीनी जेमज्ज तेने पणु
पैताना मातापितानी पासैथी आज्ञा भेजवी अने त्यारपणी तेना मातापिताओ
तेने पादणीमा जेसाडीने प्रभुनी पासै लधं गया, त्या ते दीक्षित थधं गधं
धीने धीने ते पणु शरीर वाङ्मिता अनी गधं जेम काली दारिका पणु आर्या
थधंने शरीर वाङ्मिता अनी गधं इती त्यारपणी जेवी स्थिति काली आर्यानी

निर्गता यास्तु भगवन्त पर्युपास्ते । तस्मिन् काले तस्मिन् समये ' राई ' रात्रिः-
रात्रिनाम्नी देवी चमरचत्रायां राजधान्याम्, एव यथा काली तथैव-आमता,
नाट्यविधिप्रपदस्य प्रतिगता । ' भते त्ति ' हे भदन्त ! इति सम्बोध्य भगवान्
गौतमः ' पुञ्जभवपुञ्जा ' पूर्वभवपुञ्जा रात्रि देव्या पूर्वभव पृच्छति । भगवान्
प्राह-एव खलु हे गौतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये आमलकल्या नगरी,
आम्रशालवन चैत्यम्, जितशत्रू राजा, रात्रिर्गाथापतिः, रात्रिर्भ्रीर्मार्या, तयोः

तेण कालेण तेण समएणं राई देवी चमरचत्राण रायहाणीण एव जहा
काली-तहेव आ गया नट्टविहिं उवदसेत्ता पडिगया) प्रभु का आगमन
सुनकर नगर निवासिनी समस्त जनता उन प्रभु के दर्शन करने और
उनसे धर्मोपदेश सुनने के लिये उस गुणशिलक उद्यान में आई।
प्रभु ने सब को धर्म का उपदेश दिया। सत्रने प्रभु की पर्युपासना
की। उस काल में और उस समय में रात्रिनाम की देवी चमर-
चचाराजधानी में रहती थी-जैसे वहां काली देवी रहती थी। सो
वह भी प्रभु का आगमन सुनकर वहा आई। वहां आकर उसने नाट्य
विधि दिखलाई-और दिखलाकर फिर वह वहा से वापिस अपने स्थान
पर चली गई। (भते त्ति भगव गोयमा ! पुञ्जभवपुञ्जा-एव खलु
गोयमा ! तेण कालेण तेण समएण आमलकल्या णयरी अबसाल
वणे चेइए-जियसत्तू राया-राई गाहावई, रायसिरी भारिया, राई

चमरचत्राण रायहाणीण एव जहा काली-तहेव आगया नट्टविहिं उवदसेत्ता
पडिगया)

प्रभुनु आगमन सांलणीने नगरना षधा नागरिकेणने ते प्रभुना दर्शन
करवा भाटे तेभञ्ज तेभनी पासेयी धर्मेपडेया सालगवा भाटे ते गुणशिलक
उद्यानमा आवाया प्रभुजे षधाने धर्मेने उपदेश आयेया षधाजे प्रभुनी
पर्युपासना करी ते काणे अने ते समये रात्रि नामे देवी चमरचत्रायां रात्रि-
धानीमा काळी देवीनी नेम रहेती हुती ते प्रभुनु आगमन सांलणीने त्या
आवी त्या आवीने तेणे नाट्यविधि षतावी अने षतावीने ते त्याथी
पाठी ळती रही

(भते त्ति भगव गोयमा ! पुञ्जभवपुञ्जा-एव खलु गोयमा ! तेण कालेण
तेण समएण आमलकल्या णयरी अबसालवणे चेइए-जियसत्तू राया-राई
गाहावई, रायसिरी भारिया, राई दारिया, पासस्त दारिया

रात्रिर्दारिकाऽऽसीत् । पार्श्वस्य = पार्श्वप्रभोः समनमरणम् । रात्रिर्दारिका यथैव काली तथैव निष्क्रान्ता=तथैव शरीरवाकुशिका, तदेव सर्वं यावत्-सर्वदु खानामन्त करिष्यति ।

दारिया पासस्स सघोमरण राई दारिया जहेव काली- तहैव निक्खता, तहेवसरीर घाउसिया त चेव सव्व जाव अत काहिइ एव खलु जवू । विइयज्झयणस्स निक्खेवओ) उसके चले जाने के बाद श्रमण भगवान् महावीर से गौतम ने रात्रिदेवी का पूर्वभव पूठा-प्रभु ने उनसे इस प्रकार कहा-हे गौतम ! उसकाल और उस समयमें आमलकल्पा नामकी नगरी थी । उसमें आम्रशालवन नामका उद्यान था । नगरीके राजा का नाम जितशत्रु था । वहां रात्रि नामका एक गाथापति रहता था । उसकी भार्या का नाम रात्रिश्री था । इन दोनों के रात्रि नाम की एक पुत्री थी जिस प्रकार काली प्रभु का उपदेश सुनकर प्रतिबोध को प्राप्त हो गई थी ।-उसी प्रकार पार्श्वनाथ के वहां उद्यान में आने पर भी उनसे धर्मोपदेश सुनकर प्रतिबोध को प्राप्त हो गई । अतः वह माता पिता से आज्ञा लेकर काली की तरह बड़े टाठ वाट के साथ शिबिका में बैठकर प्रभु के समीप माता पिता ले गये । वहां वह दीक्षित हो गई । धीरे २ वह शरीर वाकुशिका बन गई । जिस प्रकार

जहेव काली-तहेव निक्खता, तहेव सरीरघाउसिया त चेव सव्व जाव अत काहिइ एव खलु जवू ! विइयज्झयणस्स निक्खेवओ)

तेना गया णाढ श्रमणु भगवान् महावीरने गौतमे रात्रि देवीना पूर्व-भवनी विगत पूछी प्रभुअये तेमने आ प्रभाणु कहुं के डे गौतम । ते काणे अने ते समये आमलकल्पा नामे नगरी હતી તેમા આમ્રશાલવન નામે ઉદ્યાન હતુ નગરીના રાજાનુ નામ જિતશત્રુ હતું ત્યા રાત્રિ નામે એક ગાથાપતિ રહેતો હતો તેની પત્નીનુ નામ રાત્રિશ્રી હતું તેઓ જ નેને રાત્રિ નામે એક પુત્રી હતી જેમ કાલી પ્રભુને ઉપદેશ શ્રવણ કરીને પ્રતિબોધને પ્રાપ્ત થઈ તેમજ ત્યા ઉદ્યાનમા પધારેલા પાર્શ્વનાથની પાસેથી ધર્મોપદેશ સાંભળીને તે પણ પ્રતિબોધિત થઈ ગઈ એથી કાલીની જેમજ તેને પણ પોતાના માતાપિતાની પાસેથી આજ્ઞા મેળવી અને ત્યારપછી તેના માતાપિતાએ તેને પાલખીમા બેસાડીને પ્રભુની પાસે લઈ ગયા, ત્યા તે દીક્ષિત થઈ ગઈ ધીમે ધીમે તે પણ શરીર વાકુશિકા બની ગઈ જેમ કાલી દારિકા પણ આર્યા થઈને શરીર વાકુશિકા બની ગઈ હતી ત્યારપછી જેવી સ્થિતિ કાલી આર્યાની

निर्गता यावत् भगवन्तं पर्युपास्ते । तस्मिन् काले तस्मिन् समये ' राई ' रात्रिः-
रात्रिनाम्नी देवी चमरचञ्चाया राजधान्याम्, एवं यथा कान्ती तथैव-आगता,
नाट्यविधिप्रदृश्यं प्रतिगता । ' भते त्ति ' हे भदन्त ! इति सम्बोध्य ममवान्
गौतमः ' पुण्वभवपुच्छा ' पूर्वभवपुच्छा रात्रि देव्या पूर्वभव पृच्छति । ममवान्
माह-एव खलु हे गौतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये आमलकल्या नगरी,
आम्रशालवन चैत्यम्, जितशू राजा, रात्रिर्गाथापतिः, रात्रिश्रीभार्या, तयोः

तेण काळेण तेण समएण राई देवी चमरचञ्चाए रायहाणीए एव जहा
काली-तहेव आ गया नट्टविहिं उवदसेत्ता पडिगया) प्रभु का आगमन
सुनकर नगर निवासिनी समस्त जनता उन प्रभु के दर्शन करने और
उनसे धर्मोपदेश सुनने के लिये उस गुणशिलक उद्यान में आई।
प्रभु ने सब को धर्म का उपदेश दिया। सबने प्रभु की पर्युपासना
की। उस काल में और उस समय में रात्रिनाम की देवी चमर-
चचाराजधानी में रहती थी-जैसे वहां काली देवी रहती थी। सो
वह भी प्रभु का आगमन सुनकर वहा आई। वहा आकर उसने नाट्य
विधि दिखलाई-और दिखलाकर फिर वह वहा से वापिस अपने स्थान
पर चली गई। (भते त्ति भगव गोयमा ! पुण्वभवपुच्छा-एव खलु
गोयमा ! तेण काळेण तेण समएण आमलकल्या णयरी अबसाल
चणे चेइए-जियसत्तू राया-राई गाहावई, रायसिरी भारिया, राई

चमरचञ्चाए रायहाणीए एव जहा काली-तहेव आगया नट्टविहिं उवदसेत्ता
पडिगया)

प्रभुनु आगमन सालणीने नगरना गधा नागरिकज्जेने ते प्रभुना दर्शन
करवा भाटे तेभज्जे तेमनी पासेथी धर्मोपदेश सालणवा भाटे ते शुभुशिलक
उद्यानमा आव्या प्रभुञ्जे गधाने धर्मो उवदशे आव्या गधाञ्जे प्रभुनी
पयुपासना करी ते काणे अने ते समये रात्रि नामे देवी चमरचञ्चा राज-
धानीमा कावी देवीनी जेम रडेती छती ते प्रभुनु आगमन सालणीने त्या
आवी त्या आवीने तेहे नाट्यविधि गतावी अने गतावीने ते त्याथी
पाछी जाती रही

(भते त्ति भगव गोयमा ! पुण्वभवपुच्छा-एव खलु गोयमा ! तेण कालेण
तेण समएण आमलकल्या णयरी अबसालणे चेइए-जियसत्तू राया-राई
गाहावई, रायसिरी भारिया, राई दारिया, पासस दारिया

रात्रिर्दारिकाऽऽसीत् । पार्श्वस्य = पार्श्वभोः समनमरणम् । रात्रिर्दारिका यथैव काली तथैव निष्क्रान्ता=तथैव शरीरवाकुशिका, तदेव सर्वं यावत्-मर्वदु खानामन्त करिष्यति ।

दारिया पासस्स समोमरण राई दारिया जहेव काली- तहैव निक्खंता, तहेवसरीर घाउसिया त चेव सव्व जाव अत काहिइ एव खल्लु जवू । विइयज्झयणस्स निक्खेवओ) उसके चले जाने के बाद श्रमण भगवान् महावीर से गौतम ने रात्रिदेवी का पूर्वभव पृथा-प्रभु ने उनसे इस प्रकार कहा-हे गौतम ! उसकाल और उस समयमें आमलकल्पा नामकी नगरी थी । उसमें आम्रशालवन नामका उद्यान था । नगरीके राजा का नाम जितशत्रु था । वहां रत्रि नामका एक गाथापति रहता था । उसकी भार्या का नाम रात्रिथ्री था । इन दोनों के रात्रि नाम की एक पुत्री थी जिस प्रकार काली प्रभु का उपदेश सुनकर प्रतिबोध को प्राप्त हो गई थी ।-उसी प्रकार पार्श्वनाथ के वहां उद्यान में आने पर भी उनसे धर्मोपदेश सुनकर प्रतिबोध को प्राप्त हो गई । अतः वह माता पिता से आज्ञा लेकर काली की तरह बड़े टाठ वाट के साथ शिनिका में बैठकर प्रभु के समीप माता पिता ले गये । वहां वह दीक्षित हो गई । धीरे २ वह शरीर वाकुशिका बन गई । जिस प्रकार

जहेव काली-तहेव निक्खता, तहेव सरीरघाउसिया त चेव सव्व जाव अत काहिइ एव खल्लु जवू ! विइयज्झयणस्स निक्खेवओ)

तेना गथा णाढ श्रमणु लगवान भडावीरने गौतमे रात्रि देवीना पूर्व-लवनी विगत पूछी प्रलुब्धे तेमने आ प्रमाब्धे ष्णु के डे गौतम ! ते काणे अने ते समथे आमलकल्पा नामे नगरी इती तेमा आम्रशावन नामे उद्यान इतु नगरीना राजनु नाम जितशत्रु इतु त्या रात्रि नामे ओक गाथापति रहतेता इतो तेनी पत्नीनु नाम रात्रिथ्री इतु तेओ अनेने रात्रि नामे ओक पुत्री इती जेम काली प्रलुब्धे उपदेश श्रवणु करीने प्रतिबोधने प्राप्त थध तेमज त्या आनमा पधारेता पार्श्वनाथनी पासैथी धर्मोपदेश सावणीने ते पणु प्रतिबोधित थध गध ओथी कालीनी जेमज तेने पणु येताना मातापितानी पासैथी आज्ञा मेणवी अने त्थारपछी तेना मातापिताअे तेने पालणीमा जेसाडीने प्रलुब्धी पासै लध गया, त्या ते दीक्षित थध गध धीमे धीमे ते पणु शरीर वाकुशिका अनी गध जेम काली दारिका पणु आर्या थधने शरीर वाकुशिका अनी गध इती त्थारपछी जेवी स्थिति काली आर्यानी

‘ एवं खलु जम्भू ! ’ इत्यादि द्वितीयाध्ययनस्य निक्षेपकः=उपसंहार= समाप्तिसाक्ष्यप्रयत्नोऽत्र घोष्य ॥ सू०५ ॥

इति प्रथमवर्गस्य द्वितीयाध्ययन समाप्तम् ॥-१-२ ॥

काली दारिका आर्या होकर शरीर वाक्कुशिका बन गई थी। इसके बाद जैसी स्थिति काली आर्या की हुई-वही सद्य स्थिति इस रात्रि दारिका की भी हुई-इस प्रकार सद्य सयन्ध यहाँ पर इसके विषय में लगावना चाहिये और वह सयन्ध “महाविदेह में उत्पन्न होकर यह समस्त दुःखों का अन्त करेगी” यहाँ तक जानना चाहिये। इस प्रकार हे जन्म! यह प्रथमवर्ग के द्वितीय अध्ययन का उपसंहार है ॥ सू० ५ ॥

प्रथमवर्ग का द्वितीय अध्ययन समाप्त ॥

यद्यं तेवीर्यं स्थिति ते रात्रिदारिकानी पञ्च यद्यं अर्द्धी आ प्रभावे कालिदारिकानो
अधो स अध आना विषे समञ्च देवे। नोद्यञ्जे अने ते स अध “महाविदेहमा
उत्पन्न यद्यने ते अधा हुञ्जोने अत करणे” अर्द्धी सुधी समञ्चो नोद्यञ्जे.
आ प्रभावे हे जम्भू! प्रथम वर्गना पीता अध्ययनने आ उपसंहार छे सू ५

“प्रथम वर्गनु पीत्यु अध्ययन समाप्त”

अथ तृतीयमध्ययनम्

मूलम्—जइ णं भंते । तइयज्झयणस्स उक्खेवओ, एवं खल्लु जंबू । रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए एवं जहेव राई तहेव रयणी वि, णवरं आमलकप्पा नयरी रयणी गाहावई रयणी-सिरी भारिया रयणी दारिया सेस तहेव जाव अंत काहिइ ३ । एवं विज्जू वि आमलकप्पा नयरी विज्जुगाहावई विज्जु-सिरीभारिया विज्जुदारिया सेस तहेव । ४ एव मेहा वि आम-लकप्पाए नयरीए मेहे गाहावई मेहसिरी भारिया मेहा दारिया सेसं तहेव ५ । एवं खल्लु जंबू । समणेणं जाव सपत्तेणं धम्म-कहाणं पढमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पणत्ते ॥ सू० ६ ॥

टीका—' जइण भते ' इत्यादि । यदि खल्लु भदन्त ! इत्यादि तृतीयाध्ययनस्य उत्क्षेपकः=जम्बूप्रश्नादिरूपः पारम्भवाग्यप्रश्नोऽत्राच्यः । सुधर्मास्वामी कथ

॥ तृतीय अध्ययन प्रारभ ॥

(जइण भते ! तइयज्झयणस्स उक्खेवओ) इत्यादि ॥

टीकार्थः—(जइण भते ! तइयज्झयणस्स उक्खेवओ) अथ जंबू स्वामी पुनः पूछते हैं कि हे भदन्त ! यदि श्रमण भगवान् महावीर ने द्वितीय अध्ययन का यह पूर्वोक्तरूप से अर्थ निरूपित किया है—तो तृतीय अध्ययन का उन्होंने क्या अर्थ प्रतिपादित किया है ? इस तरह से इस तृतीय अध्ययन का जंबू स्वामी का यह प्रश्न आदिरूप वाक्य प्रथम उत्क्षेपक है—प्रारभक है—इस प्रश्न का उत्तर श्री सुधर्मा स्वामी

श्रील्ल अध्ययन प्रारभ —

' जइण भते ! तइयज्झयणस्स उक्खेवओ ' इत्यादि—

टीकार्थ—(जइण भते ! तइयज्झयणस्स उक्खेवओ) ऊंचे जंबू स्वामी इसी पूछे छे के छे लदन्त ! जे श्रमण भगवान महावीर नील अध्ययनने आ पूर्वोक्त इधे अर्थ निरूपित किये छे तो श्रील्ल अध्ययनने तेमले शे अर्थ प्रतिपादित किये छे ? आ प्रभाले आ श्रील्ल अध्ययनने जंबू स्वामीने आ प्रश्न वगेरे इधे वाक्य प्रथम उत्क्षेपक छे—प्रारभ छे आ प्रश्नने उत्तर श्री सुधर्मास्वामी आ प्रभाले आये छे के—

‘ एवं खलु जम्भू ! ’ इत्यादि द्वितीयाध्ययनस्य निक्षेपकः—उपसंहारः—
समाप्तिवाक्यप्रसन्नोऽत्र घोष ॥ सू० ५ ॥

इति प्रथमवर्गस्य द्वितीयाध्ययन समाप्तम् ॥—१—२ ॥

काली दारिका आर्या होकर शरीर चाकुण्डिका बन गई थी। इसके बाद
जैसी स्थिति काली आर्या की हुई—वही सब स्थिति इस रात्रि दारिका
की भी हुई—इस प्रकार सब सवन्ध यहां पर इसके विषय में लगाठेना
चाहिये और वह सवन्ध “महाविदेह में उत्पन्न होकर यह समस्त दुःखों
को अन्त करेगी” यहा तक जानना चाहिये। इस प्रकार हे जन्म ! यह
प्रथमवर्ग के द्वितीय अध्ययन का उपसंहार है ॥ सू० ५ ॥

प्रथमवर्ग का द्वितीय अध्ययन समाप्त ॥

यद्यं तेवीज स्थिति ते रात्रिदारिकानी पञ्च यद्यं अर्द्धी आ प्रभाञ्चे कालिदारिकानो
जधा स जध आना विधे समञ्च देवे नोधञ्चे अने ते स जध “ महाविदेहमां
उत्पन्न यधने ते जधा हुञ्चोने अत करणे ” अर्द्धी सुधी समञ्च देवे नोधञ्चे
आ प्रभाञ्चे डे ज्जु ! प्रथम वर्गना जीना अध्ययननो आ उपसंहार छे सू ५

“ प्रथम वर्गनु जीञ्च अध्ययन समाप्त ”

अथ तृतीयमध्ययनम्

मूलम्—जइ णं भंते । तइयज्झयणस्स उक्खेवओ, एव खल्लु जंघू । रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए एवं जहेव राई तहेव रयणी वि, णवरं आमलकप्पा नयरी रयणी गाहावई रयणी-सिरी भारिया रयणी दारिया सेस तहेव जाव अंत काहिइ ३ । एव विज्जू वि आमलकप्पा नयरी विज्जुगाहावई विज्जु-सिरीभारिया विज्जुदारिया सेस तहेव । ४ एव मेहा वि आम-लकप्पाए नयरीए मेहे गाहावई मेहसिरी भारिया मेहा दारिया सेसं तहेव ५ । एव खल्लु जवू । समणेणं जाव सपत्तेणं धम्म-कहाणं पढमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पणत्ते ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘ जइण भते ’ इत्यादि । यदि खल्लु भदन्त ! इत्यादि तृतीया ययनस्य उत्क्षेपकः=जम्बूप्रश्नादिरूपः पारम्भवाक्यप्रवन्तोऽत्रयाच्यः । सुधर्मास्वामी-कथ

॥ तृतीय अध्ययन प्रारभ ॥

(जइण भते ! तइयज्झयणस्स उक्खेवओ) इत्यादि ॥

टीकार्थः—(जइण भते ! तइयज्झयणस्स उक्खेवओ) अथ जंघू स्वामी पुनः पूछते हैं कि हे भदन्त ! यदि श्रमण भगवान् महावीर ने द्वितीय अध्ययन का यह पूर्वोक्तरूप से अर्थ निरूपित किया है—तो तृतीय अध्ययन का उन्होंने क्या अर्थ प्रतिपादित किया है ? इस तरह से इस तृतीय अध्ययन का जंघू स्वामी का यह प्रश्न आदिरूप वाक्य प्रथम उत्क्षेपक है—प्रारभक है—इस प्रश्न का उत्तर श्री सुधर्मा स्वामी

श्रील्ल अध्ययन प्रारभ —

‘ जइण भते ! तइयज्झयणस्स उक्खेवओ ’ इत्यादि—

टीकार्थः—(जइण भते ! तइयज्झयणस्स उक्खेवओ) ७वे जंघू स्वामी इरी पूछे छे के छे लदन्त ! जे श्रमण भगवान महावीरे णिल्ल अध्ययनने आ पूर्वोक्त इपे अर्थ निरूपित कर्यो छे तो त्रील्ल अध्ययनने तेमल्ले शे अर्थ प्रतिपादित कर्यो छे ? आ प्रमाळ् आ त्रील्ल अध्ययनने जंघू स्वामीने आ प्रश्न वगेरे इप वाक्य प्रथम उत्क्षेपक छे—प्रारभ छे आ प्रश्नने उत्तर श्री सुधर्मास्वामी आ प्रमाळ् आये छे के —

यति-एव खलु हे जम्बुः । राजगृहं नगरं, गुणशिलक चैतयम् । एव यथैव रात्रि
स्त्वथैवरजनी अपि, नगरम् आमलकल्या नगरी, रजनीगाथापति, रजनीश्रीर्भाषा,
रजनी दारिका । शेष तथैव । यावत्-सर्वदुःखानामन्त करिष्यति ॥

॥ इति प्रथममार्गस्य तृतीयाध्ययनम् ॥ १-३ ॥

इस प्रकार से देते हैं-(एव खलु जम्बु ! रात्रिगिहे ण्यरे गुणशिलक
चेइए एवं जहेव राई तहेव रयणी वि, णवर आमलकल्या नगरी, रयणी
गाहावई रयणीसिरी भारिया रयणी दारिया सेस तहेव जाव अत
काहिइ ३) जम्बु ! सुनो-उस काल में और उन्न समय में राजगृह नाम
का नगर था । उसमें गुणशिलक नामका उद्यान था । जिस प्रकार रात्रि
प्रभु का आगमन सुनकर, गुणशिलक उद्यान में गई थी उसी तरह
रजनी भी वहाँ गई उसने प्रभु के मुख से धर्म का उपदेश सुना । सुन
कर ससार शरीर और भोगों से वह विरक्त हो गई । दीक्षा लेने का
अपना भाव उसने प्रभु से निवेदित किया । प्रभुने यथासुख देवानुप्रि
ये कहकर उसके भाव की सराहना करतेहुए 'शुभस्य शीघ्र' करने की
अपनी अनुमति प्रकट की-तब यह घर आई और मातासे अपना
दीक्षा लेने का विचार प्रकट किया-इत्यादि सत्र सन्ध काली दारिका
के कथानक अनुसार रजनी के साथ लगालेना चाहिये । जब रजनी
देवी प्रभु को वदना करनेके लिये गुणशिलक उद्यान में आई और वहाँ

(एव खलु जम्बु ! रात्रिगिहे ण्यरे गुणशिलक चेइए एवं जहेव राई तहेव
रयणी वि णवर आमलकल्या नगरी, रयणी-गाहावई रयणीसिरी भारिया रयणी
दारिया सेस तहेव जाव अत काहिइ ३) ।

हे जम्बु ! सांख्यो, ते काले अने ते समये राजगृह नामे नगर इत्तु
तेमा गुणशिलक नामे उद्यान इत्तु जेम रात्रि प्रभुनु आगमन सांख्योने
गुणशिलक उद्यानमा गछ इती तेमञ्च रजनी पणु त्या गछ तेणु प्रभुना
शुभधी धर्मने उपदेश सांख्योः सांख्योने ते ससार, शरीर अने लोकोत्थी
विरक्त थरु गछ तेणु पोताने दीक्षा अडणु करवाने लाव प्रभुनी सामे
प्रकट करी प्रभुणे 'यथासुखम्' देवानुप्रिये । उठिने तेना लावनी सराहना
करी अने शुभ कार्यमा विलज करे नहि अेवी पोतानी अनुमती इधारी
त्यारे ते पोताने घेर आवी अने मातापितानी सामे दीक्षा अडणु करवाने
विचार प्रकट करी-वगेरे णधी विगत काली दारिकानी जेमञ्च रजनीनी सामे
पणु समणु देवी लोभणे न्यारे रजनीदेवी प्रभुने वदना करवा भाटे शुभ
शिलक उद्यानमा आवी अने त्या तेणु नाटयविधित्तु प्रदर्शनं त्यारणाइ

‘एव विञ्जूवि’ इत्यादि । एव विद्युदपि । आमलकल्पा नगरी, विद्युद्
गाथापति, विद्युत् श्रीभार्या, विद्युदारिका । शेष तथैव ।

इति प्रथमवर्गस्य चतुर्थां ययनम् ॥ १-४ ॥

उसने नाट्यविधिका प्रदर्शन किया बाट में वह जब वहा से प्रभु की
पर्युपासना कर वापिस अपने स्थान पर चली गई-तब प्रभु से गौतम
गणधर ने उसके पूर्वभव पृष्ठे तब प्रभु ने उनसे इस प्रकार कहा-उस
काल और उस समय में आमलक कल्पा नामकी नगरी थी-उसमें
रजनी नामका गाथापति रहता था । रजनी श्री उसकी भार्या का नाम
था ।इन दोनों के एक पुत्री जिसका नाम रजनी था । उसके विषय का
अवशिष्ट कथानक “समस्त दुःखो का यह अन्त करेगी” यहां तक का
काली दारिका के जैसा ही जानना चाहिये ॥ सू० ६ ॥

॥ प्रथम वर्ग का तीसरा अध्ययन समाप्त ॥

एव विञ्जूवि आमलकल्पा नगरी विञ्जू गाहावई ॥

विञ्जुसिरीभार्या विञ्जुदारिया, सेस तहेव ॥ ४ ॥

एव मेहावि आमलकल्पाए नयरीए मेहे गाहावई ॥

मेहासिरी भारिया मेहा दारिया सेस तहेव ॥ ५ ॥

(एव खलु जव् ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण पढमस्स वग्ग

प्रभुनी पर्युपासना करीने पाठी पोताना स्थाने जती रही त्यारे गौतम गण
धरे प्रभुने तेना पूर्वभवे पृष्ठना त्यारे प्रभुअे तेने आ प्रभाणे कहु के ते
काणे अने ते समये आमलकल्पा नामे नगरी હતી, તેમા રજની નામે
गाथापति रहतेो હતો, રજની શ્રી તેની પત્નીનુ નામ હતું તેઓ બનેને એક
પુત્રી હતી-જેનુ નામ રજની હતુ એના વિષેની બાકીની બધી વિગત
“સમસ્ત દુ ખોનો તે અન્ત કરશે” અહીં સુધીની ગલી દારિકાની જેમજ
સમજી લેવી જોઈએ ॥ સૂત્ર ૬ ॥

“ પ્રથમ વર્ગનુ ત્રીજુ અધ્યયન સમાપ્ત ॥

(એવ વિજ્જૂવિ આમલકળ્પા નયરી વિજ્જુ ગાહાવઈ ।

વિજ્જુસિરીભાર્યા વિજ્જુદારિયા, સેસ તહેવ ॥ ૪ ॥

એવ મેહા વિ આમલકળ્પાએ નયરીએ મેહે ગાહાવઈ ।

મેહાસિરી ભારિયા મેહા દારિયા સેસ તહેવ ॥ ૫ ॥

(એવ ખલુ જવ્ ! સમણેણ જાવ સંપત્તેણ ધમ્મકહાણ પઢમસ્સ વગ્ગસ્સ અય-

મહે પપ્પત્તે ૬)

‘ एष मेदारि ’ इत्यादि । एष मेघाऽपि । आमलकल्पायां नगर्यां मेघो गाथापतिः, मेघश्रीभार्या, मेघा दारिका । दोष तथैव ।

श्रीसुधर्मास्वामीमाह—एष खलु हे जम्बू ! श्रमणेन यावत् मोक्ष सम्प्राप्तेन धर्मकथानां प्रथमस्य वर्गस्यायमर्थं प्रशस्तः ॥ सू०६ ॥

॥ इति मयमवर्गस्य पञ्चमाध्ययनम् ॥ १-५ ॥

अथ द्वितीयो वर्गः प्रारभ्यते—‘ जडण भते ’ इत्यादि ।

मूलम्—जडणं भंते । समणेण जाव संपत्तेणं दोब्बस्स वग्गस्स उक्खेवओ, एव खल्लुजंबू । समणेणं जाव संपत्तेणं दोब्बस्स

સ્સ અયમઠ્ઠે પળ્ળત્તે ૬) ઇસી તરહ કા કથાનક વિદ્યુતકે વિષય મેં ખી જાનના ચાહિયે । આમલકલ્પા નગરી વિદ્યુત ગાથાપતિ વિદ્યુત શ્રી ભાર્યા ઇન દોનોં કે યહાં વિદ્યુત દારિકા । ઇસ તરહ નામ આદિ મે હી પરિવર્તન હુઆ હૈ । અભિધેય વિષય મેં કુઝ અન્તર નહીં હૈ । મેઘ કે વિષય મેં ખી યહી ઘાત જાનની ચાહિયે । આમલકલ્પ નગરી, મેઘ ગાથાપતિ, મેઘ શ્રી ભાર્યા, મેઘા દારિકા—ઇસ પ્રકાર ઇસ કથાનક મેં ઇન નામોં મેં પરિવર્તન હુઆ હૈ—અભિધેય વક્તવ્ય—વિષય મેં નહીં । ઇસ પ્રકાર યહા તક પ્રથમ વર્ગ કે ૫, અધ્યયન સમાપ્ત હો જાતે હૈ । વિદ્યુદારિકા કા અધ્યયન ૪ ચૌથા, એવ મેઘા દારિકા કા અધ્યયન ૫ પચમ હૈ । ઇસ તરહ હે જબૂ । શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર ને કિ જો મુક્તિ સ્થાન કે અધિપતિ વન ચુકે હૈ ધર્મકથા કે પ્રથમવર્ગ કા યહ અર્થ પ્રરૂપિત કિયા હૈ ?

આ પ્રમાણેનુ જ કથાનક વિદ્યુતતા વિષે પણ સમજી લેવું જોઈએ આમલકલ્પા નગરી, વિદ્યુત ગાથાપતિ અને વિદ્યુત શ્રી ભાર્યા આ બંનેને ત્યા વિદ્યુત દારિકા આ પ્રમાણે ક્ષત નામ વગેરેમા પરિવર્તન થયું છે અભિધેય વિષયમા કોઈ પણ જાતનો તફાવત નથી મેઘના વિષે પણ એ જ વાત સમજી લેવી જોઈએ આમલકલ્પા નગરી, મેઘ ગાથાપતિ, મેઘ શ્રી ભાર્યા, મેઘ દારિકા આ પ્રમાણે આ કથાનકમા પણ નામોમા જ પરિવર્તન થયું છે—અભિધેય વક્તવ્ય વિષયમા નહિ આ પ્રમાણે અહીં સુધી પ્રથમ વર્ગના પાચ અધ્યયનો પૂરા થઈ જાય છે વિદ્યુદારિકાનું અધ્યયન થાયું, અને મેઘ દારિકાનું અધ્યયન પાચમું છે આ પ્રમાણે હે જ બૂ ! શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે—કે જેઓ મુક્તિ સ્થાનના અધિપતિ થઈ ચૂક્યા છે—ધર્મકથાના પ્રથમ વર્ગનો આ અર્થ પ્રરૂપિત કર્યો છે. ॥ ૬ ॥

वग्गस्स पंच अज्झयणा पणत्ता, तं जहा—सुभा निसुंभा रंभा
 निरभा मयणा, जइ ण भते । समणेणं जाव सपत्तेणं धम्मक-
 हाणं दोच्चस्स वग्गस्स पंच अज्झयणा पणत्ता, दोच्चस्स णं
 भंते । वग्गस्स पढमज्झयणस्स के अट्टे पणत्ते ? एव खलु
 जवू । तेण कालेण तेण समएण रायगिहेणयरे गुणासिलए चेइए
 सामी समोसढे परिसा णिग्गया जाव पज्जुवासइ, तेणं कालेण
 तेणं समएणं सुभादेवी वल्लिचंचाए रायहाणीए सुभवडेसए
 भंवणे सुभसि सीहासणसि कालीगमएणं जाव णट्टविहि उव-
 दसेत्ता जाव पडिगया, पुव्वभवपुच्छा, सावत्थी णयरी कोट्टए
 चेइए जिघसन्तू राया सुभेगाहावई सुंभसिरी भारिया सुभा
 दारिया सेसं जहा कालीए णवर अद्धुट्टाइ पलिओवमाईं ठिईं
 एवं खलु जवू । निक्खेवओ अज्झयणस्स एव सेसावि चत्तारि
 अज्झयणा सावत्थीए नवरं मात्ता पिया सरिसनामया, एवं
 खलु जवू । निक्खेवओ विईयवग्गस्स२ ॥ सू० ७ ॥

॥ वीओ वग्गो समत्तो ॥

टीका—जम्बूस्वामीपृच्छति—यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन
 द्वितीयस्य वर्गस्य उत्क्षेपकः । सुधर्मास्वामीप्राह—एव खलु हे जम्बूः श्रमणेन यावत्

—:द्वितीयवर्गप्रारभः—

‘ जइण भते ! समणेण ’ इत्यादि ।

टीकार्थे.—जवू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं कि (भते !
 जइण समणेण जाव सपत्तेण दोच्चस्स वग्गस्स उक्खेवओ—एव खलु

भीजे वर्ग प्रारभ—

‘ जइण भते ! समणेण ’ इत्यादि—

टीकार्थे—जवू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामी से पूछे छे है—

(भते ! जइण समणेण जाव सपत्तेण दोच्चस्स वग्गस्स उक्खेवओ—एव खलु

‘ એવ મેઢાત્રિ ’ ઇત્યાદિ । ણવ મેઘાડપિ । આમલકલ્પાયાં નગર્યાં મેઘો ગાથા-
પતિઃ, મેઘશ્રીભાર્યા, મેઘા દારિકા । ણેપ તથૈવ ।

શ્રીસુધર્માસ્વામીમાહ-એવ સ્વલુ હે જન્મુઃ । શ્રમણેન યાત્વ મોક્ષ સમ્પ્રાપ્તેન
ધર્મકથાનાં પ્રથમસ્ય વર્ગસ્થાયમર્થ મણ્વતઃ ॥ ૬૦૬ ॥

॥ ઇતિ પ્રથમવર્ગસ્ય પચ્ચમાધ્યયનમ્ ॥ ૧-૬ ॥

અથ દ્વિતીયો વર્ગઃ પ્રારભ્યતે-‘ જડ્ઞ મતે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-જડ્ઞ મતે । સમણેણં જાવ સપત્તેણ દોઢ્ઢસ્સ વગ્મ-
સ્સ ઉક્ખેવઓ, એવ સ્વલુ જંબૂ । સમણેણં જાવ સપત્તેણ દોઢ્ઢસ્સ

સ્સ અયમઢ્ઢે પળ્ણત્તે ૬) ઇસી તરહ કા કથાનક વિદ્યુતક્રે વિષય મેં ભી
જાનના વ્યાહિયે । આમલકલ્પા નગરી વિદ્યુત ગાથાપતિ વિદ્યુત શ્રી ભાર્યા
હન દોનોં કે યહાં વિદ્યુત દારિકા । ઇસ તરહ નામ આદિ મેં રી પરિવ
ર્તન હુઆ હૈ । અભિધેય વિષય મેં કુઢ અન્તર નહી હૈ । મેઘ કે વિષય
મેં ભી યહી ઘાત જાનની વ્યાહિયે । આમલકલ્પ નગરી, મેઘ ગાથાપતિ,
મેઘ શ્રી ભાર્યા, મેઘા દારિકા-ઇસ પ્રકાર ઇસ કથાનક મેં હન નામોં મેં
પરિવર્તન હુઆ હૈ-અભિધેય વક્તવ્ય-વિષય મેં નહી । ઇસ પ્રકાર યહા
તક પ્રથમ વર્ગ કે ૬, અધ્યયન સમાપ્ત હો જાતે હૈં । વિદ્યુદારિકા કા
અધ્યયન ૪ ચૌથા, એવ મેઘા દારિકા કા અધ્યયન ૫ પચમ હૈ । ઇમ
તરહ હે જન્મુ । શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર ને ક્રિ જો મુક્તિ સ્થાન કે અધિ
પતિ યન ચુકે હૈં ધર્મકથા કે પ્રથમવર્ગ કા યહ અર્થ પ્રરૂપિત કિયા હૈ ?

આ પ્રમાણેનુ જ કથાનક વિદ્યુતતા વિષે પણ સમજી લેવું જોઈએ
આમલકલ્પા નગરી, વિદ્યુત ગાથાપતિ અને વિદ્યુત શ્રી ભાર્યા આ બંનેને ત્યા
વિદ્યુત દારિકા આ પ્રમાણે ક્રૂત નામ વગેરેમા પરિવર્તન થયું છે અભિધેય
વિષયમા કોઈ પણ જાતનો તફાવત નથી મેઘતા વિષે પણ એ જ વાત સમજી
લેવી જોઈએ આમલકલ્પા નગરી, મેઘ ગાથાપતિ, મેઘ શ્રી ભાર્યા, મેઘ દારિકા
આ પ્રમાણે આ કથાનકમા પણ નામોમા જ પરિવર્તન થયું છે-અભિધેય
વક્તવ્ય વિષયમા નહિ આ પ્રમાણે અહીં સુધી પ્રથમ વર્ગના પાચ અધ્યયનો
પૂરા થઈ જાય છે વિદ્યુદારિકાનુ અધ્યયન ચોથું, અને મેઘ દારિકાનુ અધ્યયન
પાચમું છે આ પ્રમાણે હે જન્મુ ! શ્રમણુ ભગવાન મહાવીર-કે જેઓ મુક્તિ
સ્થાનના અધિપતિ થઈ ચૂક્યા છે-ધર્મકથાના પ્રથમ વર્ગનો આ અર્થ
પ્રરૂપિત કર્યો છે. ॥ ૬ ॥

वग्गस्स पंच अज्झयणा पणत्ता, तं जहा—सुभा निसुंभा रंभा
 निरंभा मयणा, जइ ण भंते । समणेणं जाव सपत्तेण धम्मक-
 हाण दोच्चस्स वग्गस्स पंच अज्झयणा पणत्ता, दोच्चस्स णं
 भंते । वग्गस्स पढमज्झयणस्स के अट्ठे पणत्ते ?, एवं खलु
 जवू । तेण कालेण तेण समएण रायगिहेणयरे गुणासिलए चेइए
 सामी समोसठे परिसा णिग्गया जाव पज्जुवासइ, तेणं कालेण
 तेणं समएणं सुंभादेवी वलिचंचाए रायहाणीए सुंभवडेसए
 भवणे सुभंसि सीहासणंसि कालीगमएणं जाव णट्टविहि उव-
 दसेत्ता जाव पडिगया, पुठ्वभवपुच्छा, सावत्थी णयरी कोट्टए
 चेइए जियसत्तू राया सुभेगाहावई सुंभसिरी भारिया सुंभा
 दारिया सेसं जहा कालीए णवर अद्धुट्टाइ पलिओवमाइं ठिई
 एवं खलु जवू । निक्खेवओ अज्झयणस्स एव सेसावि चत्तारि
 अज्झयणा सावत्थीए नवर माबा पिचा सरिसनामया, एवं
 खलु जवू । निक्खेवओ विईयवग्गस्सर ॥ सू० ७ ॥

॥ वीओ वग्गो समत्तो ॥

टीका—जम्बूस्वामीपृच्छति—यदि खलु हे भदन्त । श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन
 द्वितीयस्य वर्गस्य उत्क्षेपकः । सुधर्मास्वामीप्राह—एव खलु हे जम्बूः श्रमणेन यावत्

—:द्वितीयवर्गप्रारभः—

‘ जइण भते ! समणेण ’ इत्यादि ।

टीकार्थः—जवू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामी से पृच्छते हैं कि (भते !
 जइण समणेण जाव सपत्तेण दोच्चस्स वग्गस्स उक्खेवओ—एव खलु

भीजे वर्ग प्रारभ—

‘ जइण भते ! समणेण ’ इत्यादि—

टीकार्थ—७ थू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे हे—

(भते ! जइण समणेण जाव सपत्तेण दोच्चस्स वग्गस्स उक्खेवओ—एव खलु

‘ एष मेघानि ’ इत्यादि । एष मेघाऽपि । आमलकल्पायां नगर्यां मेघो गाथापतिः, मेघश्रीभार्या, मेघा दारिका । शेष तथैव ।

श्रीसुधर्मास्वामीप्राह-एष खलु हे जम्बू ! श्रमणेन यावत् मोक्ष सम्प्राप्तेन धर्मकथानां प्रथमस्य वर्गस्यायमर्थः प्रशस्तः ॥ सू०६ ॥

॥ इति प्रथमवर्गस्य पञ्चमाध्ययनम् ॥ १-५ ॥

अथ द्वितीयो वर्गः प्रारभ्यते-‘ जड्ण भते ’ इत्यादि ।

मूलम्-जड्णं भंते । समणेण जाव संपत्तेण दोब्बस्स बग्गस्स उक्खेवओ, एवं खल्लु जवू । समणेणं जाव संपत्तेणं दोब्बस्स

स्स अयमष्टे पण्णत्ते ६) इसी तरह का कथानक विद्युत्के विषय में भी जानना चाहिये। आमलकल्पा नगरी विद्युत् गाथापति विद्युत् श्री भार्या इन दोनों के यहां विद्युत् दारिका। इस तरह नाम आदि में ही परिवर्तन हुआ है। अभिधेय विषय में कुछ अन्तर नहीं है। मेघ के विषय में भी यही बात जाननी चाहिये। आमलकल्प-नगरी, मेघ गाथापति, मेघ श्री भार्या, मेघा दारिका-इस प्रकार इस कथानक में इन नामों में परिवर्तन हुआ है-अभिधेय वस्तु-विषय में नहीं। इस प्रकार यहाँ तक प्रथम वर्ग के ५, अध्ययन समाप्त हो जाते हैं। विद्युद्दारिका का अध्ययन ४ चौथा, एव मेघा दारिका का अध्ययन ५ पंचम है। इस तरह हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो मुक्ति स्थान के अधिपति बन चुके हैं धर्मकथा के प्रथमवर्ग का यह अर्थ प्ररूपित किया है ?

आ प्रभाषेणु ज कथानक विद्युत्तना विषे पणु समल्ले वेवु नेधये आमलकल्पा नगरी, विद्युत् गाथापति अने विद्युत् श्री भार्या। आ अनेने त्या विद्युत् दारिका आ प्रभाषे इत्त नाम वगेरेमा परिवर्तनं थयु छे अभिधेय विषयमा केधं पणु जतने तक्षवत् नथी मेघता विषे पणु अे ज वात् समल्ले वेवी नेधये आमलकल्पा नगरी, मेघ गाथापति, मेघ श्री भार्या, मेघ दारिका आ प्रभाषे आ कथानकमा पणु नामोमा ज परिवर्तनं थयु छे-अभिधेय वस्तु-विषयमा नहि आ प्रभाषे अर्धी सुधी प्रथम वर्गना पाय अध्ययने। पूरा थधं जय छे विद्युद्दारिकानु अध्ययनं थयु, अने मेघ दारिकानु अध्ययनं पायमु छे आ प्रभाषे हे जम्बू ! श्रमणु भगवान् महावीरे-के जेओ मुक्ति स्थानना अधिपति थधं थुका छे-धर्मकथाना प्रथम वर्गने आ अर्थं प्ररूपितं कथे छे ॥ ६ ॥

खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगरम् । गुणशिलकं चैत्यम् । स्वामी=वर्द्धमानस्वामी सभवत् । परिपन्निर्गता यावत्पर्युपास्ते । तस्मिन् काले तस्मिन् समये शुम्भा देवी वलिचञ्चाया राजधान्या शुम्भावतमके भवने शुम्भे सिंहासने ' कालीगमण ' कालीगमेन=काली देवी सदृशपाठेन यावत्-नाट्यविधिमुपदर्श्य यावत्-प्रतिगता । ' पुव्वभवपुच्छा ' पूर्वभवपुच्छा=गौतम-स्वामी शुम्भा देव्या पूर्णाय पृच्छति । भगवान् ऋषयति-श्रावस्ती नगरी । कोष्ठक चैत्यम् । जितशत्रू राजा । शुम्भो गाथापतिः । शुम्भश्रीभार्या । शुम्भा दारिका । शेष यथा काल्या =काली दारिकाया वर्णनं तथात्रापि वित्तेयम् , नगर=विशेस्त्व-

के पांच अध्ययन प्ररूपित किये हैं-तो हे भदत ! द्वितीयवर्ग के प्रथम अध्ययन का उन्होंने क्या अर्थ प्रतिपादित किया है ? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिये सुधर्मा स्वामी उनसे इस प्रकार कहते हैं कि-हे जम्बू !-उस काल और उस समय में राजगृह नाम का नगर था-उसमें गुणशिलक नाम का उद्यान था-। उसमें वर्द्धमान स्वामी आये । प्रभु का आगमन सुनकर वहां की समस्त जनता उन्हें वदन के लिये अपने २ स्थान से चल कर उस गुणशिलक उद्यान में आई । प्रभु ने सबको धर्म का उपदेश दिया परिपद् उपदेश सुनकर प्रभु की यावत् पर्युपासना की । (तेण कालेण तेण समण्ण) उसी काल और उसी समय मे (सुभादेवी वलिचचाए राघहाणीए सुभवडेंसए भवणे सुभसि सीहासणसि कालीगमण जात्र नट्टविहिं उवदसेत्ता जात्र पडिगया पुव्वभव पुच्छा, सावत्थी णयरी, कोट्टए चेइए जियसत्तू राया, सुभे गाहावई सुभ

स्थानने प्राप्त करेला श्रवणु भगवान् भडावीरे षील वर्गना पाय अध्ययने प्ररूपित कर्था छे, तो हे लहन्त ! षील वर्गना प्रथम अध्ययनने तेमण्णे शे अर्थ प्रतिपादित थो डे ?

आ प्रश्नना उत्तरमा श्री सुधर्मा स्वामी तेमने आ प्रमाण्णे कडे छे डे छे जम्बू ! ते काले अने ते समये राजगृह नामे नगर छेनु तेमा गुणशिलक नामे उद्यान छेत्तु तेमा वर्द्धमान स्वामी पधार्या प्रभुनु आगमन सालणीने त्याना यथा नागरिके तेमने वदना करवा माटे चोतपोताने स्थानेथी नीकणीने ते गुणशिलक उद्यानमा आया प्रभुणे यधाने धर्मने उपदेश आये परिपदे धर्मोपदेश सालणीने प्रभुनी यावत् पर्युपासना करी (तेण कालेण तेण समण्ण) ते काले अने ते समये

(सुभा देवी वलिचचाए राघहाणीए सुभवडेंसए भवणे सुभसि सीहासणसि काली गमण जात्र नट्ट विहिं उवदसेत्ता जात्र पडिगया, पुव्वभवपुच्छा सावत्थी णयरी, कोट्टए चेइए जियसत्तू राया, सुभे गाहावई, सुभसिरी भारिया, सुभा-

मोक्ष सम्प्राप्तेन द्वितीयस्य वर्गस्य पञ्चाध्ययनानि मङ्गलानि, तद्यथा-शुम्भा १, निशुम्भा २, रम्भा ३, निरम्भा ४, मदना ५, । यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन योवत्सम्प्राप्तेन द्वितीयस्य वर्गस्य पञ्च-अ-ध्ययनानि मङ्गलानि, द्वितीयस्य खलु हे भदन्त । वर्गस्य प्रथमा पयनस्य कोऽर्थः मङ्गलः ? । सुप्रमात्सामी प्राह-एव

जबू ! समणेण जाव सपत्तेण दोच्चस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता) हे भदत ! मुक्ति स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान महावीर ने द्वितीय वर्ग का उत्क्षेपक प्रारम्भ किस रूप से प्ररूपित किया है-तब सुधर्मा स्वामी ने उनसे कहा-हे जबू ! सुनो यावत् मुक्तिस्नान को प्राप्त हुए उन श्रमण भगवान् महावीर ने इस द्वितीय वर्ग के पांच अध्ययन प्ररूपित किये हैं-(त जहा) वे इस प्रकार हैं-(सुभा, निशुभा, रभा, निरभा मयणा, जहण भंते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाणं दोच्चस्स वग्ग स्स पच अज्जयणा पण्णत्ता, दोच्चस्सण भते वग्गस्स पढमज्झयणस्स के अट्टे पण्णत्ते ? एव खलु जबू ! तेण कालेण तेण समण्ण रायगिहे णयरे, गुणसीलए चेइए-सामी समोसढे परिमा णिग्गया जाव पज्जुवा सइ) (१) शुम्भा, (२) निशुभा (३) रम्भा, (४) निरभा (५) मदना । अब जबू स्वामी पुनः सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं कि हे भदत ! यदि यावत् मुक्ति स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान महावीरने द्वितीयवर्ग

जबू ! समणेण जाव सपत्तेण दोच्चस्स वग्गस्स पचअज्झयणा पण्णत्ता)

हे भदन्त ! मुक्तिस्थानने प्राप्त करेला श्रमणु भगवान महावीरे भील वर्गने। उत्क्षेपक-प्रारम्भ-तथा रूपथी प्ररूपित करीं छे ? त्यारे सुधर्मा स्वामीजे, तेमने कछु के हे जू ! सालणे, यावत् मुक्तिस्थानने वरेला ते श्रमणु भगवान महावीरे आ भील वर्गना पाय अध्ययने प्ररूपित कर्या छे (तजहा) ते आ प्रभाणे छे—

(सुभा, निशुभा, रभा, निरभा, मयणा, जहण भंते ! समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाणं दोच्चस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पण्णत्ता, दोच्चस्स ण भते वग्गस्स पढमज्झयणस्स के अट्टे पण्णत्ते ! एव खलु जबू ! तेण कालेण तेण समण्ण रायगिहे णयरे, गुणसीलए चेइए-सामी समोसढे परिमा णिग्गया जाव पज्जुवासइ)

(१) शुभा, (२) निशुभा, (३) रभा, (४) निरभा, (५) मदना हे जू स्वामी इरी सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के हे भदन्त ! जे यावत् मुक्ति

खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगरम् । गुणशिलकं चैत्यम् । स्वामी=वर्द्धमानस्वामी सप्तवसुत । परिपन्निर्गता यावत्पर्युपास्ते । तस्मिन् काले तस्मिन् समये शुम्भा देवी उलिचञ्चाया राजधान्या शुम्भावतसके भवने शुम्भे सिंहासने ' कालीगमण ' कालीगमेन=काली देवी सदृशपाठेन यावत्-नाट्यविधिमुपदर्श्य यावत्-प्रतिपता । ' पुण्ड्रभवपुञ्जा ' पूर्वभवपुञ्जा=गौतम-स्वामी शुम्भा देव्याः पूर्वाय पृच्छति । भगवान् कथयति-श्रावस्ती नगरी । कोष्ठक चैत्यम् । जितशत्रू राजा । शुम्भो गाथापतिः । शुम्भश्रीभार्या । शुम्भा दारिका । शेष यथा काल्या =काली दारिकाया वर्णन तथात्रापि विज्ञेयम् , नरर=विशेस्त्व-

के पांच अध्ययन प्ररूपित किये हैं-तो हे भदत ! द्वितीयवर्ग के प्रथम अध्ययन का उन्होंने क्या अर्थ प्रतिपादित किया हैं ? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिये सुधर्मा स्वामी उनसे इस प्रकार कहते हैं कि-हे जंबू !-उस काल और उस समय में राजगृह नाम का नगर था-उसमें गुणशिलक नाम का उद्यान था-। उसमें वर्द्धमान स्वामी आये । प्रभु का आगमन सुनकर वहाँ की समस्त जनता उन्हें वदन के लिये अपने २ स्थान से चल कर उस गुणशिलक उद्यान में आई । प्रभु ने सबको धर्म का उपदेश दिया परिपद् उपदेश सुनकर प्रभु की यावत् पर्युपासना की । (तेण कालेण तेण समण) उसी काल और उसी समय में (सुभादेवी उलिचञ्चाए रायदाणीए सुभवडेसए भवणे सुभसि सीहा सणसि कालीगमण जाव नट्टविहि उवदसेत्ता जाव पडिगया पुण्ड्रभव पुञ्जा, सावत्थी णयरी, कोट्टए चेइए जियमत्तू राया, सुभे गाहावई सुभ

स्थानने प्राप्त करेला श्रवणु भगवान् भडावीदि णीम वर्गना पाय अध्ययने। प्ररूपित कर्था छे तो हे भदन्त ! णीम वर्गना प्रथम अध्ययनने तेमणे शे अर्थ प्रतिपादित कर्था छे ?

आ प्रश्नना उत्तरमा श्री सुधर्मा स्वामी तेमने आ प्रभाणु कडे छे कडे जणू ! ते काले अने ते समये राजगृह नामे नगर छतु तेमा गुणशिलक नामे उद्यान छतु तेमा वर्द्धमान स्वामी पधार्या प्रभुनु आगमन सालणीने त्याना अधा नागरिके तेमने वदना करवा भाटे पोतपोताने स्थानेथी नीकणीने ते गुणशिलक उद्यानमा आण्या प्रभुअे अधाने धर्मने। उपदेश आये। परिपदे धर्मोपदेश सालणीने प्रभुनी यावत् पर्युपासना करी (तेण कालेण तेण समण) ते काले अने ते समये

(सुभा देवी उलिचञ्चाए रायदाणीए सुभवडेसए भवणे सुभसि सीहासणसि काली गमण जाव नट्ट विहि उवदसेत्ता जाव पडिगया, पुण्ड्रभवपुञ्जा सावत्थी णयरी, कोट्टए चेइए जियमत्तू राया, सुभे गाहावई, सुभसिरी भारिया, सुभा-

मोक्ष सम्प्राप्तेन द्वितीयस्य र्गस्य पञ्चाध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-शुम्भा १, निशुम्भा २, रम्भा ३, निरम्भा ४, मदना ५, । यदि खलु हे भदन्त ! श्रमणेन योऽस्मिन्सम्प्राप्तेन द्वितीयस्य र्गस्य पञ्च-अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, द्वितीयस्य खलु हे भदन्त । र्गस्य मथगा-यनस्य कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । सुधर्मास्वामी प्राह-एव

जबू । समणेण जात्र सपत्तेण दोच्चस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता) हे भदन्त ! मुक्ति स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर ने द्वितीय वर्ग का उत्क्षेपक प्रारम्भ किस रूप से प्ररूपित किया है-तब सुधर्मा स्वामी ने उनसे कहा-हे जबू । सुनो यात्रत् मुक्तिस्थान को प्राप्त हुए उन श्रमण भगवान् महावीर ने इस द्वितीय वर्ग के पांच अध्ययन प्ररूपित किये हैं-(तं जहा) वे इस प्रकार हैं-(सुभा, निशुभा, रभा, निरभा मयणा, जहण भते । समणेण जात्र सपत्तेण धम्मकहाण दोच्चस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता, दोच्चस्सण भते वग्गस्स पढमज्झयणस्स के अट्ठे पणत्ते ? एव खलु जबू ! तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे, गुणसीलए चेइए-सामी समोसट्ठे परिसा गिग्गया जात्र पज्जुवा सह) (१) शुम्भा, (२) निशुभा (३) रम्भा, (४) निरभा (५) मदना, । अब जबू स्वामी पुनः सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं कि हे भदन्त ! यदि यावत् मुक्ति स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीरने द्वितीयवर्ग

जबू ! समणेण जात्र सपत्तेण दोच्चस्स वग्गस्स पचअज्झयणा पणत्ता)

हे भदन्त ! मुक्तिस्थानने प्राप्त करेला श्रमणु भगवान् महावीरिणी जीव वर्गाना उत्क्षेपक-प्रारम्भ-उया इपथी प्ररूपित कथी छे ? तयारे सुधर्मा स्वामीने तेभने कथु के हे जू ! सावणे, यावत् मुक्तिस्थानने वरेला ते श्रमणु भगवान् महावीरिणी आ जीव वर्गाना पाथ अध्ययने प्ररूपित कथी छे (तजहा) ते आ प्रभावे छे—

(सुभा, निशुभा, रभा, निरभा, मयणा, जहण भते । समणेण जात्र सपत्तेण धम्मकहाण दोच्चस्स वग्गस्स पच अज्झयणा पणत्ता, दोच्चस्सण भते वग्गस्स पढमज्झयणस्स के अट्ठे पणत्ते । एव खलु जबू ! तेण कालेण तेण समएण रायगिहे णयरे, गुणसीलए चेइए-सामी समोसट्ठे परिसा गिग्गया जात्र पज्जुवासइ)

(१) शुभा, (२) निशुभा, (३) रभा, (४) निरभा, (५) मदना हे वे जू स्वामी इरी सुधर्मा स्वामीने पूछे छे के हे भदन्त ! जे यावत् मुक्ति

‘एव सेसात्रि’ इत्यादि—एव शेषाण्यपि=निशुम्भा १-रम्भा २-निरम्भा ३-मदना ४ नामकानि चत्वारि अध्ययनानि श्रावस्त्या नगर्या विज्ञेयानि, नत्र रम्-एतावान् विशेषः—मातर पितरः सदृशनामानः दारिकासदृशनामानः, तथाहि—निशुम्भाया माता निशुम्भश्री, पिता निशुम्भः । रम्भाया माता रम्भश्रीः, पिता रम्भः । निरम्भाया माता निरम्भश्रीः, पिता निरम्भः । मदनाया माता मदनश्रीः पिता मदनः । एते सर्वे गाथापतयः आसन् ।

एव खलु हे जम्बू ! निक्षेपको द्वितीयवर्गस्य ॥ ७ ॥

॥ इति धर्मस्थाना द्वितीयो वर्गः समाप्तः ॥ २ ॥

कालीदेवी का है वैसा ही जानना चाहिये । उसमें और इसमें केवल अन्तर इतना ही है कि कालीदेवी की स्थिति २॥ पत्य की यी और इस शुभादेवी की ३॥, पत्य की यी । इस प्रकार हे जम्बू ! इस द्वितीय वर्ग के प्रथम अ अध्यन का यह निक्षेपक है । इसी तरह निशुभा, रम्भा निरम्भा और मदना नाम के चार अध्ययन भी जानना चाहिये । इनमें विशेषता केवल इतनी ही है कि यहाँ जो माता पिता हैं वे दारिका सदृश नामवाले हैं—जैसे निशुभा के पिता का नाम निशुम, माता का नाम निशुभश्री, रम्भाके पिता का नाम रम्भ, माताका नाम रम्भश्री, निरम्भा के पिता नाम निरम्भ माता का नाम निरम्भश्री, मदना के पिता का नाम मदन, और माताका नाम मदनश्री । ये सब ही गाथापति हैं । इस तरह यह द्वितीयवर्ग का निक्षेपक—उपसहार—ह ।

॥ द्वितीयवर्ग समाप्त ॥

श्री ७ छे डे काली देवीनी स्थिति २॥ पत्यनी डती अने आ शुभा देवीनी स्थिति ३॥ पत्यनी डती आ प्रभाषे छे ७ ७ । आ भील वर्गना प्रथम अध्ययनने आ निक्षेपक छे आ प्रभाषे ७ निशुभा, रम्भा, निरम्भा अने मदना नामना चार अध्ययनने पत्य नीली देवा जेधये अमनामा विशेषता इका अटली ७ छे डे अर्डी जे मातापिता छे ते पुत्रीना जेवा ७ नामवाजा छे जेभके निशुभाना पितातु नाम निशुभ, मातातु नाम निशुभश्री, रम्भा ना पितातु नाम रम्भ, मातातु नाम रम्भश्री निरम्भाना पितातु नाम निरम्भ, मातातु नाम निरम्भश्री, मदनाना पितातु नाम मदन अने मातातु नाम मदनश्री, आ अथा गाथापतिअे छे आ प्रभाषे भील वर्गने निक्षेपक उपसहार छे

॥ भील वर्ग समाप्त ॥

यम्-अस्याः शुभादेव्याः ' अद्भुद्वाइ ' अर्धं चातुर्गानि=साद्वंत्रयाणि पत्न्योपमानि स्थितिरस्ति । सुधर्मास्वामीमाह-हे जम्बू ! निक्षेपकः=उपहारोऽययनस्य वाच्यः ॥
॥ इति द्वितीयवर्गस्य प्रथमा ययनम् ॥

सिरि भारिया सुंभादारिया, सेस जहा कालीण नवर अद्भुद्वाइ पलिओव माई ठिई, एव खलु जंबू ! निक्खेवओ अज्झयणस्स एव सेसा वि चत्तारि अज्झयणस्स सावत्थीए नवर माया पिया सरिस नामया एव खलु जंबू । निक्खेवओ निर्ईयवग्गस्स वीओ वग्गो समत्तो) शुभादेवी जो बलिचचा नामकी राजधानी में शुभावतसक नामके भवन में रहती थी-और शुभनाम के सिंहासन पर बैठी थी-वह काली देवी के प्रकरण में वर्णित पाठ के अनुसार प्रभु के समीप उनको बटना करने के लिये आई । वहाँ उसने नाट्यविधिका प्रदर्शन किया था-उमें फिर वहाँ से पीछे अपने स्थान पर चली गई । उसके चले जाने के बाद गौतमस्वामी ने प्रभु से उस शुभादेवी के पूर्वभव की पृच्छा की-तब भगवान् ने उन से इस प्रकार कहा-श्रावस्ती नामकी नगरी थी । उसमें कोष्ठक नामका उद्यान था, । नगरी के राजा का नाम जितशत्रु था उसमें गाथा पति रहता था । जिसका नाम शुभ था । इसकी शुभ श्री नाम की भार्या थी । दारिका का नाम शुभा था । इसके बाद का इसका वर्णन

दारिया, सेस जहा कालीण नवर अद्भुद्वाइ, पलिओवमाइ ठिई । एव खलु जंबू ! निक्खेवओ अज्झयणस्स एव सेसा वि चत्तारि अज्झयणस्स सावत्थीए नवर माया-पिया सरिसनामया, एव खलु जंबू ! निक्खेवओ-निर्ईयवग्गस्स एव अज्झयणा समत्ता वीओ वग्गो समत्तो)

शुभा देवी-के जे बलियथा नामे राजधानीमा शुभावतसक नामना लवनमा रहेती छती अने शुभ नामे सिंहासन उपर बैसनी छती-काली देवीना प्रकरणमा वषुंवेला पाठ मुज्जम प्रभुनी पासि तेभने बटना करवा माटे आवी त्या तेहे नाट्यविधितु अर्शन कथुं त्याग्गां ते त्याथी पाछी पोताना स्थाने जाती रही तेभना जता गहा माह गौतम स्वामीजे प्रभुनी शुभा देवीना पूर्व लवनी पृच्छा करी त्तारे लगवाने तेभने आ प्रभाजे कहुं के-श्रावस्ती नामे नगरी छती, तेमा कोष्ठक नामे उद्यान छतु नगरीना राजद्रु नाम जितशत्रु छतु तेमा शुभ नामे गाथापति रहते छते शुभश्री नामे तेनी पत्नी छती, तेनी पुत्रीनु नाम शुभा छतु त्यारपणीनु तेतु शेष वषुंन काली देवीनी जेभज समल्ल वेवु जेधजे तेमा अने आमा तक्षपत जेट

‘एव सेसावि’ इत्यादि—एव शेषाण्यपि=निशुम्भा १—रम्भा २—निरम्भा ३—मदना ४ नामकानि चत्वारि अध्ययनानि श्रावस्त्या नगर्यां विज्ञेयानि, नव-रम्—एतावान् विशेषः—मातरः पितरः सदृशनामानः दारिकासदृशनामानः, तथाहि—निशुम्भाया माता निशुम्भश्री, पिता निशुम्भः । रम्भाया माता रम्भश्रीः, पिता रम्भः । निरम्भाया माता निरम्भश्रीः, पिता निरम्भः । मदनाया माता मदनश्रीः, पिता मदनः । एते सर्वे गाथापत्यः आमन् ।

एव खलु हे जम्बू ! निक्षेपको द्वितीयवर्गस्य ॥ ७ ॥

॥ इति धर्मश्रयाना द्वितीयो वर्गः समाप्तः ॥ २ ॥

कालीदेवी का है वैसा ही जानना चाहिये । उसमें और इसमें केवल अन्तर इतना ही है कि कालीदेवी की स्थिति २॥ पत्य की थी और इस शुभादेवी की ३॥, पत्य की थी । इस प्रकार हे जम्बू ! इस द्वितीय वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह निक्षेपक है । इसी तरह निशुभा, रम्भा निरम्भा और मदना नाम के चार अध्ययन भी जानना चाहिये । इन में विशेषता केवल इतनी ही है कि यहाँ जो माता पिता है वे दारिका सदृश नामवाले हैं—जैसे निशुभा के पिता का नाम निशुभ, माता का नाम निशुभश्री, रम्भाके पिता का नाम रम्भ, माताका नाम रम्भश्री, निरम्भा के पिता नाम निरम्भ माता का नाम निरम्भश्री, मदना के पिता का नाम मदन, और माताका नाम मदनश्री । ये सब ही गाथापति हैं । इस तरह यह द्वितीयवर्ग का निक्षेपक—उपसहार—है ।

॥ द्वितीयवर्ग समाप्त ॥

लो ७ छे डे ङली देवीनी स्थिति २॥ पत्यनी छती अने आ शुला देवीनी स्थिति ३॥ पत्यनी छती आ प्रभाछे छे ७ भू । आ भील वर्गना प्रथम अध्ययनने आ निक्षेपक छे आ प्रभाछे ७ निशुला, रला, निरला अने मदना नामना आर अध्ययने पञ्च लक्ष्मी देवा लेश्चि अमनामा विशेषता इक्ष्ता अटली ७ छे डे अर्डी ७े मातापिता छे ते पुत्रीना ७ेवा ७ नामवाणा छे ७ेभके निशुलाना पितानु नाम निशुल, मातानु नाम निशुलश्री, रला ना पितानु नाम रल, मातानु नाम रलश्री निरलाना पितानु नाम निरल, मातानु नाम निरलश्री, मदनाना पितानु नाम मदन अने मातानु नाम मदनश्री, आ अथा गाथापतिअे छे आ प्रभाछे भील वर्गना निक्षेपक उपसहार छे

॥ भीले वर्ग समाप्त ॥

यम्-अस्याः शुभादेव्याः ' अद्भुद्वाइ ' अर्द्धं चतुर्धा नि=साद्भवयागि पत्न्योपमानि
स्थितिरस्ति । सुधर्मास्वामीमाह-हे जन्म्युः ! निक्षेपकः=उपहारोऽध्ययनस्य वाच्यः ॥

॥ इति द्वितीयवर्गस्य प्रथमा ययनम् ॥

सिरी भारिया सुभादारिया, सेस जहा कालीए णवर अद्भुद्वाइ पलिओव
माई ठिई, एव खलु जन्वू ! निक्खेवओ अज्झयणस्स एवं सेसा वि चत्तारि
रिअज्झयणा सावत्थीए नवर माया पिया सरिस नामया एव खलु जन्वू ।
निक्खेवओ विईयवग्गस्स बीओ वग्गो समत्तो) शुभादेवी जो बलिच्च
नामकी राजधानी में शुभावतसरु नामके भवन में रहती थी-और
शुभनाम के सिंहासन पर बैठी थी-वह काली देवी के प्रकरण में
वर्णित पाठ के अनुसार प्रभु के समीप उनको वदना करने के लिये
आई । वहाँ उसने नाटयविधिका प्रदर्शन किया बादमें फिर बहू बहा से
पीछे अपने स्थान पर चली गई । उसके चले जाने के बाद गौतमस्वामी
ने प्रभु से उस शुभादेवी के पूर्वभव की पृच्छा की-तब भगवान् ने
उन से इस प्रकार कहा-श्रावस्ती नामकी नगरी थी । उसमें कोष्ठक
नामका उद्यान था, । नगरी के राजा का नाम जितशत्रु था उसमें गाथा
पति रहता था । जिसका नाम शुभ था । इसकी शुभ श्री नाम की
भार्या थी । दारिका का नाम शुभा था । इसके बाद का इसका वर्णन

दारिया, सेस जहा कालीए णवर अद्भुद्वाइ, पलिओवमाई ठिई । एव खलु जन्वू ।
निक्खेवओ अज्झयणस्स एव सेसा वि चत्तारि अज्झयणस्स सावत्थीए नवर माया-
पिया सरिसनामया, एव खलु जन्वू ! निक्खेवओ-विईयवग्गस्स एव अज्झ
यणा समत्ता बीओ वग्गो समत्तो)

शुभा देवी-डे के अतिथिया नामे राजधानीमा शुभावतसरु नामना
भवनमा रहेती હતી અને शुभ नामे सिंहासन ઉપર બેસની હતી-કાલી
દેવીના પ્રકરણમા વર્ણવેલા પાઠ મુજબ પ્રભુની પાસે તેમને વદના કરવા માટે
આવી ત્યા તેણે નાટયવિધિનું પ્રદર્શન કર્યું ત્યારબાદ તે ત્યાથી પાછી પોતાના
સ્થાને જતી રહી તેમના જતા રહ્યા બાદ ગૌતમ સ્વામીએ પ્રભુની શુભા
દેવીના પૂર્વ ભવની પૃચ્છા કરી ત્યારે ભગવાને તેમને આ પ્રમાણે કહ્યું કે-
શ્રાવસ્તી નામે નગરી હતી, તેમા કોષ્ઠક નામે ઉદ્યાન હતું નગરીના રાજાનું
નામ જિતશત્રુ હતું તેમા શુભ નામે ગાથાપતિ રહેતો હતો શુભશ્રી નામે
તેની પત્ની હતી, તેની પુત્રીનું નામ શુભા હતું ત્યારપછીનું તેનું શેષ વર્ણન
કાલી દેવીની જેમજ સમજી લેવું જોઈએ તેમા અને આમા તથાવત એટ

‘एव सेसात्रि’ इत्यादि—एव शेषाण्यपि=निशुम्भा १—रम्भा २—निरम्भा ३—मदना ४ नामक्रानि चत्वारि अभ्ययनानि श्रावस्त्या नगर्या विज्ञेयानि, नव-
रम्—एतानान् विशेषः—मातर पितरः सदृशनामानः दारिकासदृशनामानः, तथाहि—
निशुम्भाया माता निशुम्भश्री, पिता निशुम्भः । रम्भाया माता रम्भश्रीः, पिता
रम्भः । निरम्भाया माता निरम्भश्री, पिता निरम्भः । मदनाया माता मदनश्रीः
पिता मदनः । एते सर्वे गाथापतयः आसन् ।

एव खलु हे जम्बू । निक्षेपको द्वितीयवर्गस्य ॥ ७ ॥

॥ इति धर्मस्थाना द्वितीयो वर्गः समाप्तः ॥ २ ॥

कालीदेवी का है वैसा ही जानना चाहिये । उसमें और इसमें केवल
अन्तर इतना ही है कि कालीदेवी की स्थिति २॥ पत्य की श्री और
इस शुभादेवी की ३॥, पत्य की श्री । इस प्रकार हे जम्बू ! इस द्वितीय
वर्ग के प्रथम अभ्ययन का यह निक्षेपक है । इसी तरह निशु भा, रंभा
निरम्भा और मदना नाम के चार अध्ययन भी जानना चाहिये । इन
में विशेषता केवल इतनी ही है कि यहाँ जो माता पिता हे वे दारिका
सदृश नामवाले हैं—जैसे निशु भा के पिता का नाम निशु भ, माता का
नाम निशु भ श्री, रभाके पिता का नाम रम्भ, माताका नाम रम्भश्री,
निरभा के पिता नाम निरभ माता का नाम निरभश्री, मदना के
पिता का नाम मदन, और माताका नाम मदनश्री । ये सब ही गाथा-
पति हैं । इस तरह यह द्वितीयवर्ग का निक्षेपक—उपसहार—हे ।

॥ द्वितीयवर्ग समाप्त ॥

लो ७ छे के काली देवीनी स्थिति २॥ पत्यनी इती अने आ शु ला देवीनी
स्थिति ३॥ पत्यनी इती आ प्रमाळे छे ७ भू । आ भील वर्गना प्रथम
अध्ययनने आ निक्षेपक छे आ प्रमाळे ७ निशु ला, २ ला, निर ला अने
मदना नामना आर अध्ययने पणु लणी लेवा लेऽञ्जे अमनाभा विशेषता
इकत अटली ७ छे के अर्डी ७े मातापिता छे ते पुत्रीना लेवा ७ नामवाणा
छे ७ेभके निशु लाना पितातु नाम निशु ल, मातातु नाम निशु लश्री, २ ला
ना पितातु नाम २ ल, मातातु नाम २ लश्री निर लाना पितातु नाम निर ल,
मातातु नाम निर लश्री, मदनाना पितातु नाम मदन अने मातातु नाम
मदनश्री, आ अथा गाथापतिञ्जे छे आ प्रमाळे भील वर्गने निक्षेपक
७पम ७१० छे

॥ भीले वर्ग समाप्त ॥

यम्-अस्याः शुम्भादेव्याः ' अद्भुद्वाइ ' अर्द्ध चतुर्गोभिः=साद्व्रजयागि पत्योपमानि स्थितिरस्ति । सुधर्मास्वामीमाह-हे जम्बू ! निक्षेपकः=उपहारोऽभ्ययनस्य ग्राह्यः ॥

॥ इति द्वितीयवर्गस्य प्रथमा ययनम् ॥

सिरी भारिया सुंभादारिया, सेस जहा कालीए णवर अमुद्वाइ पलिओव माई ठिई, एव खल्लु जंबू ! निक्खेवओ अज्झयणस्स एव सेसा वि चत्तारि अज्झयणा सावत्थीए नवर माया पिया सरिस नामया एव खल्लु जंबू । निक्खेवओ विईयवग्गस्स वीओ वग्गो समत्तो) शुभादेवी जो बलिचच्चा नामकी राजधानी में शुभावतसक नामके भवन में रहती थी-और शुभनाम के सिंहासन पर बैठी थी-वह काली देवी के प्रकरण में वर्णित पाठ के अनुसार प्रभु के समीप उनको वदना करने के लिये आई । वहाँ उसने नाट्यविधिका प्रदर्शन किया बादमें फिर बहू बहा से पीछे अपने स्थान पर चली गई । उसके चले जाने के बाद गौतमस्वामी ने प्रभु से उस शुभादेवी के पूर्वभव की पृच्छा की-तब भगवान् ने उन से इस प्रकार कहा-श्रावस्ती नामकी नगरी थी । उसमें कोष्ठक नामका उद्यान था, नगरी के राजा का नाम जितशत्रु था उसमें गाथा पति रहता था । जिसका नाम शुभ था । इसकी शुभ श्री नाम की भार्या थी । दारिका का नाम शुभा था । इसके बाद का इसका वर्णन

दारिया, सेस जहा कालीए णवर अद्भुद्वाइ, पलिओवमाइ ठिई । एव खल्लु जंबू ! निक्खेवओ अज्झयणस्स एव सेसा वि चत्तारि अज्झयणस्स सावत्थीए नवर माया पिया सरिसनामया, एव खल्लु जंबू ! निक्खेवओ-विईयवग्गस्स एव अज्झयणा समत्ता वीओ वग्गो समत्तो)

शुभा देवी-के जे अस्सिया नामे राजधानीमा शुभावतसक नामना भवनमा रहैती छती अने शुभ नामे सिंहासन उपर बैसनी छती-काली देवीना प्रकल्पमा वल्लुवेला पाठ मुज्जम प्रभुनी पासै तेभने वदना करवा माटे आवी त्या तेहे नाट्यविधितु प्रदर्शन करुं त्थारणां ते त्थाथी पाछी पीताना स्थाने जती रही तेभना जता रह्या णाड गौतम स्वामीजे प्रभुनी शुभा देवीना पूर्व भवनी पृच्छा करी त्तारे भगवाने तेभने आ प्रभाहे कहुं के-श्रावस्ती नामे नगरी छती, तेमा कोष्ठक नामे उद्यान छतु नगरीना राजतु नाम जितशत्रु छतु तेमा शुभ नामे गाथापति रहैतो छतो शुभश्री नामे तेनी पत्नी छती, तेनी पुत्रीनु नाम शुभा छतु त्तारपत्नीनु तेनु शेष वल्लुं न काली देवीनी जेभज समल्लु वेवुं जेधजे तेमा अने आमा त्थवत्तु जेट

अद्वपलिओवम ठिई सेस तहेव, एव खलु णिखेवओ पढमज्जयणस्स)
 उस काल और उस समय में राजगृह नाम का नगर था। वहाँ गुण-
 शिलक नाम का उद्यान था। उसमें तीर्थंकर परपरानुसार विहार करते
 हुए श्रमण भगवान् महावीर आकर ठहरे हुए थे। नगर की परिपदा
 प्रभु को बदना के लिये अपने २ घर से निकलकर उस उद्यान में आई
 प्रभु ने सबको धर्म का उपदेश दिया। सुनकर लोगो ने यावत् प्रभु की
 पर्युपासना की। उसी समय वहा पर धरणेन्द्र की अग्रमहिषी अलादेवी
 जो धरणा राजधानी में अलावतसक इस नाम के भवन में रहती थी-
 और जिसके बैठने के सिंहासन का नाम अला या प्रभु को बदना आदि
 करने के निमित्त आई। वहाँ आकर उस ने नाटयविधि दिखलाई।
 दिखलाकर वह फिर वहा से पीछे अपने स्थान पर गई। उसके आते ही
 गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर से उसका पूर्वभव पूछा तब
 भगवान् ने उनसे इस प्रकार कहा वाणारसी नामकी नगरी थी-उसमें
 काम महावन नाम का उद्यान था। उसमें अलनाम का गाथापति रहता
 था। उसकी भार्या "अल श्री" इस नामकी थी। इसकी एक पुत्री थी
 जिसका नाम अला या। इसका-अला का शेष कथानक, कालीदेवी का

वाओ, साइरेग अद्वपलिओवम ठिई सेस तहेव, एव खलु णिखेवओ पढमज्जयणस्स)
 ते काणे अने ते सभये राजगृह नामे नगर इत्तु तेमा गुणशिलक
 नामे उद्यान इत्तु तेमा तीर्थंकर परपरा सुज्जण विहार करतां पधारीने
 श्रमणु भगवान महावीरे मुकाम कर्यो इतो नगरनी परिषद प्रभुने वदन
 करवा माटे पोतपोताने घेस्थी नीकणीने ते उद्यानमा आवी प्रभुअे सौने
 धर्मने उपादेश आय्ये उपादेश सासणीने लोकोअे यावत् प्रभुनी पर्युपासना
 करी, ते वपते त्या धरणेन्द्रनी अग्रमहिषी (पग्राणी) अलादेवी के के
 धरणा राजधानीमा अलावतसक आ नामना लवनमा रहेती इती, अने नेने
 जेमवाना सिंहासनतु नाम अला इत्तु-प्रभुने वदना करवा माटे आवी त्या
 आवीने तेणे नाटयविधितु प्रदर्शन कयुं, प्रदर्शन करीने ते त्याथी पाछी
 पोताना स्थाने जाती रही तेना गया पछी तरत ज गौतम स्वामीअे श्रमणु
 भगवान महावीरने तेना पूर्वभव पूछ्ये त्यारे लगवाने तेमने आ प्रभाणे
 कथु के वाणारसी नामे नगरी इती, तेमा काममहावन नामे उद्यान इत्तु,
 तेमा अल नामे गाथापति रहेतो इतो तेनी भार्यातु नाम अलश्री इत्तु
 तेनी पुत्री इती तेनु नाम अला इत्तु अला विषेनु शेष कथानक पडेला

भदन्त ! श्रमणेन यावत् मोक्ष सम्प्राप्तेन धर्मरूपाणा तृतीयस्य वर्गस्य चतुष्पञ्चा
शद् अययनानि प्रज्ञप्तानि, तेषु प्रथमस्य खलु हे भदन्त ! अययनस्य श्रमणेन
यावत् मोक्ष सम्प्राप्तेन क्रोडर्थः प्रज्ञप्तः ? गुधर्मस्वामी कथयति—

एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नगरम्, गुण
शिलरू चैत्यम्, स्वामी समग्रता, परिपन्निर्गता यावत्-भगवन्त पर्वुपास्ते ।
तस्मिन् काले तस्मिन् समये अलादेवी=परणेन्द्रस्याग्रमहिषी धरणाया राजान्याम्
आलापतसके भरणे अले सिंहासणे, एव ' कालीगमण ' कालीगमेन=काली
सदृशपाठेन यावत् नाट्यविधमुपदर्शय प्रतिगता । ' पुण्ड्रभवपुच्छा ' पूर्वभवपुच्छा-
गोतमस्वामी अलादेव्याः पूर्वभवपुच्छति, भगवान् कथयति-वाणारसी नगरी ।
काममहावण चैत्यम् । ' अले ' अलनामा गायापतिः । अश्रीभार्या । अला
दारिका । शेष ' जहाकालीए ' यथा काल्याः=कालीदेव्या वर्णन तस्यै अला
देव्या वर्णन विज्ञेयम्, नवरम्-रणस्याग्रमहिषीतयाऽस्या उपपातः, सातिरेक=

यावत् मुक्ति को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर ने धर्मकथा के
तृतीयवर्ग के ५४ अध्ययन प्रज्ञप्त किये हैं तो उनसे ही भदन्त !
उन्हीं यावत् मुक्ति प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर ने प्रथम अध्ययन
का क्या अर्थ प्ररूपित किया है ? इस प्रश्न के समाधान निमित्त सुधर्मा
स्वामी उनसे कहते हैं कि—(एव खलु जम्बू !) हे जम्बू ! तुम्हारे प्रश्न का
उत्तर इस प्रकार है (तेण कालेण तेण समएण अलादेवी धरणाए राय
हाणीए अलावडसए भवणे अलसि सीहासणसि एव कालीगमण
जाव णट्टविहिं उवदसेत्ता पडिगया, पुण्ड्रभवपुच्छा, वाणारसी णयरी,
काममहावणे चेइए अल गाहावई, अलासिरी भारिया, अलादारियासेस
जहा कालीए णवर धरणस्म अग्गमहिसित्ताए उववाओ, साइरेग

छे के छे लहन्त ! यावत् मुक्ति प्राप्त करेला श्रमणु लगवान् महावीरे धर्मक
थाना त्रीण वर्गाना ५४ शोपनअध्ययने प्रज्ञप्त कथां छे, तो तेजोभाथी छे लहन्त !
ते ज यावत् मुक्ति प्राप्त श्रमणु लगवान् महावीरे पडेला अध्ययनने शो
अर्थ प्ररूपित कथीं छे ? आ प्रश्नना समाधानमा श्री सुधर्मा स्वामी तेमने
कडे छे के (एव खलु जम्बू !) छे जम्बू ! तमारा प्रश्नने उत्तर आ प्रभाणु छे के

(तेण कालेण तेण समएण अलादेवी धरणाए रायहाणीए अलावडसए
भवणे अलसि सीहासणसि एव काली गमण जाव णट्टविहिं उवदसेत्ता पडिगया,
पुण्ड्रभवपुच्छा, वाणारसी णयरी, काममहावणे चेइए, अल गाहावई, अलासिरी
भारिया, अलादारिया सेस जहा कालीए णवर धरणस्म

एव यावत् घोपस्यापि=घोपेन्द्रस्यापि, एतान्येव पङ् अययनानि सन्ति । एवमे
तानि दाक्षिणात्यानामिन्द्राणा चतुष्पञ्चाशद् अध्ययनानि भवन्ति । सर्वा अपि पूर्वो
क्तादेव्य पूर्वभवे वाणारस्या जाताः काममहावने चैत्ये भगवतः पार्श्वस्यार्हतः
समीपे प्रव्रजिताः, तृतीयवर्गस्य निक्षेपकः=समाप्तिवाक्यप्रबन्धो विज्ञेयः ॥ सू०८ ॥

॥ इति धर्मकथाना तृतीयो वर्गः समाप्तः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थो वर्ग प्रारभ्यते—' चउत्थस्म ' इत्यादि ।

मूलम्—चउत्थस्स उक्खेवओ, एवं खलु जंवू । समणेणं जाव
संपत्तेणं धम्मकहाणं चउत्थवग्गस्स चउप्पणं अज्झयणा
पणत्ता, त जहा—पढमे अज्झयणे जाव चउपणणइमे अज्झयणे
पढमस्स अज्झयणस्स उक्खेवओ एव खलु जवू । तेणं कालेणं
तेण समएण रायगिहे समोसरणं जाव परिसा पज्जुवासइ, तेणं
कालेण तेण समएणं रूया देवी रूयाणदा रायहाणी रूयगव-
वडिसए भवणे रूयगंसि सीहासणसि जहा कालीए तहा नवरं
पुठ्वभवे चंपाए पुण्णभदे चेइए रूयगे गाहावई रूयगसिरी
भारिया रूया दारिया सेस तहेव, णवर भूयाणदअग्गमहिसि-

वर्णन भी धरणेन्द्र के वर्णन जैसा ही है । घोपेन्द्रके भी ये ही ६ अध्य-
यन इसी तरह के हैं । इस तरह दक्षिण दिशा सन्धी इन्द्रों के ० ५४
अध्ययन हो जाते हैं । ये सब देवियां पूर्वभवमें वाणारसी में उत्पन्न हुईं
और काममहावन उद्यानमें भगवान् प्रार्थनाय अर्हत प्रभुके समीप दीक्षित
हुईं । इस तरहसे धर्मकथाना यह “ तृतीय वर्ग समाप्त हुआ है । ”

वर्णनं जेषु न छे घोपेन्द्रता पणु आ नतता न ६ अध्ययनो छे आ
प्रभाण्णे दक्षिणु दिशा सन्धी इन्द्रोना ५४ अध्ययनो थ' नतय छे आ नधी
देवीओ पूर्वभवमा वाणारसीमा उत्पन्न थ' हुती अने काममहावन उद्यानमा
भगवान् पार्श्वनाथ अर्हत प्रभुनी पासो दीक्षित थ' आ प्रभाण्णे धर्मकथानो
आ नील्लो वर्ग पूरा थयो छे

साधिरुग् अर्द्धपल्योपम स्थिति । शेष तथैव । एष सत्यु निक्षेपकः प्रथमाध्ययनस्य ।
एव क्रमात् शक्रा २, सतेरा ३, सौदामनी ४, इन्द्रा ५, घनविद्युत् ६ । सर्वा
एता धरणस्य=धरणेन्द्रस्य अग्रमहिष्य एव । एतानि पद्म अभ्ययनानि वेणुदेव-
स्यापि । ' अविसेसिया ' अविशेषितानि=निर्दिशेषानि सदृशानि भणितव्यानि ।

जैसा कथानक पीठे वर्णित किया जा चुका है वैसा ही जानना चाहिये ।
उसके वर्णन में और इसके वर्णन में केवल अन्तर इतना ही है कि यह
धरणेन्द्र की अग्रमहिषी के रूप में उत्पन्न हुई और इसकी स्थिति १॥
पल्प से कुछ अधिक है । चाकी का इसका घृत्तान्त कालीदेवी के जैसा
ही है । इस तरह यह द्वितीयवर्ग के प्रथम अध्ययन का निक्षेपक-उप-
सहार-है ।-(एव कमा सक्का, सतेरा, सोयामणी, इदा, घणविज्जुया
वि, सब्बओ एयाओ धरणस्त अग्गमहिमीओ, एए, एते ६ अज्झयणा
वेणुदेवस्स वि अविसेसिया भाणियव्वा, एव जाव घोसस्स वि एए चैव
६ अज्झयणा, एवमेते दाहिणिरलाण इदाण-चउप्पण्ण अज्झयणा
भवति, सब्बओ वि चाणारसीए काममहावणे चैएण तइयवग्गस्स
णिकखेवओ ८ ॥

(तइओ वग्गो समत्तो) इसी क्रम से शक्रा २, सतेरा ३, सौदा
मनी ४, इन्द्रा ५, घनविद्युत् ६, ये सब देविया धरणेन्द्र की ही अग्र
महिषिया थीं । इस तरह के ६ अध्ययन वेणुदेव के भी हैं । और इनका

वर्णन काली देवीना कथानकनी जेमज्ज समत्तु लेवु जेधओ तेना अने
आना वर्णनमा तक्षवत इत्त ओट्ठो ज्जे के आ धरणेन्द्रनी अग्रमहिषीना
रूपमा उत्पन्न थं अने आनी स्थिति १॥ पल्प करता कथं वधारे छे
आनु णाकीनु वर्णन काली देवी जेवु ज्जे आ प्रभावे आ णीज वर्गना
पडेला अध्ययनना निक्षेपक उपसहार छे

(एव कमा सक्का सतेरा, सोयामणी, इदा, घणविज्जुया वि, सब्बओ
एयाओ धरणस्त, अग्गमहिमीओ एए एते ६ अज्झयणा वेणुदेवस्स वि अविसे
सिया भाणियव्वा, एव जाव घोसस्स वि एए चैव ६ अज्झयणा, एवमेते दाहिणि
रलाण इदाण-चउप्पण्ण अज्झयणा भवति, सब्बओ वि चाणारसीए काम महा
वणे चैएण तइयवग्गस्स णिकखेवओ ॥ ८ ॥ तइओ वग्गो समत्तो)

आ अनुकम प्रभावे ज्जे शक्रा २, सतेरा ३, सौदामनी ४, इन्द्रा ५,
घनविद्युत् ६, आ अधी देवीओ धरणेन्द्रनी ज्जे अग्रमहिषीओ करी आ
प्रभावे ज्जे ६ अध्ययनो वेणु देवीना पद्यु ते अने ओमत्तु वर्णन धरणेन्द्रना

वसरण=भगवतः श्री महावीरस्वामिनः समागमन सजात, यावत् परिपद् भगवन्त
पर्युपास्ते । तस्मिन् काले तस्मिन् ममये रूपादेवी=भूतानन्देन्द्रस्वाग्रमहिषी रूप
कावतसके मयने रूपके सिंहासने यथा काल्याः=कालीदेव्या वर्णनं तथा=तद्वत्

समण्ण रायगिहे समोसरण जाव परिमा पज्जुवामइ, तेण कालेण तेण
समण्ण रूया देवी, रूयाणदा रायहाणी रूयगवडिसण भवणे रूयगसि
सीहासणंसि जहा कालीए तथा नवर पुव्वभवे चपाए पुण्णभदे चेइए
रूयगे गाहावई रूयगसिरी भारिया, रूया दारिया, सेस तहेव, णवर
भूयाणद अगमहिसित्ताए उववाओ देसूणं पलिओवम ठिई निक्खेवओ,
एव सुरूयया वि, रूयसावि, रूयगाहावई वि रूयकता वि रूयप्पभावि,
एयाओ चेव उत्तरिल्लाण इदाण भाणियव्वाओ, जाव महाघोसस्स
णिक्खेवओ चउत्थवग्गस्स चउत्थो वग्गो समत्तो)

प्रथम अध्ययन का हे जन्म ! उत्क्षेपक इस प्रकार है-उसकाल में
और उस समय में राजगृह नगर में महावीर स्वामी का आगमन हुआ।
परिपद प्रभु को वदना करने के लिये अपने २ स्थान से निकलकर जहा
प्रभु विराजमान थे वहाँ आई। प्रभु ने धर्म का उपदेश दिया। यावत्
समने प्रभु की पर्युपासना की। उस काल और उस समय में भूतानन्द
इन्द्र की अग्रदेवी जिसका नाम रूपादेवी था वह प्रभु को वदना के लिये

(पढमस्स अज्झयणस्स उक्खेवओ-एव खलु जन्म ! तेण कालेण तेण समण्ण
रायगिहे समोसरण जाव परिमा पज्जुवामइ, तेण कालेण तेण समण्ण रूयादेवी,
रूयाणदा, रायहाणी रूयगवडिसण भवणे रूयगसि सीहासणंसि जहा कालीए
तथा नवर पुव्वभवे चपाए पुण्णभदे चेइए रूपगे गाहावई रूयगसिरी भारिया,
रूया दारिया, सेस तहेव, णवर भूयाणद अगमहिसित्ताए उववाओ देसूणं पलि
ओवम ठिई निक्खेवओ, एव सुरूयया वि, रूयसावि, रूयगाहावई, वि रूयकता
वि रूयप्पभावि, एयाओ चेव उत्तरिल्लाण इदाण भाणियव्वाओ, जाव महाघोसस्स
णिक्खेओ चउत्थवग्गस्स ॥ ९ ॥ चउत्थो वग्गो समत्तो)

हे जन्म ! पहले अध्ययनने उत्क्षेपक आ प्रमाणे छे-ते जाणे अने
ते समये राजगृह नगरमा महावीर स्वामीतु आगमन थयु प्रभुने वदना
करवा भाटे परिपद योतपोताने स्थानेथा नीकणीने तथा प्रभु विराजमान हुता
त्या आवी, प्रभुजे धर्मने उपदेश आप्थे यावत् सौजे प्रभुनी पर्युपासना
करी, ते जाणे अने ते समये भूतानन्द इन्द्रनी अग्रदेवी (पदराशि) जेतु
नाम इया देवी हुतु-प्रभुने वदना करवा भाटे आवी तेना रवेवाना सवनवु

त्ताए उववाओ देसूणं पालिओवम ठिई णिक्खेवओ एव सुरु-
यावि रूयसावि रूयगावईवि रूयकतापि रूयप्पभावि, एयाओ
चेव उत्तरिच्छाणं इंदाणं भाणियव्वाओ जाय महाघोसस्स,
णिक्खेवओ चउत्थवग्गस्स ॥ सू० ९ ॥

॥ चउत्थो वग्गो समत्तो ॥ ४ ॥

टीका—‘चउत्थस्स-चतुर्थवर्गस्य ‘उक्खेवओ’ उत्क्षेपक = प्रारम्भवाक्य
पाठोऽत्रान्य । सुधर्मस्वामी प्राह-एव खलु जम्भू ! श्रमणेन यावत्सम्पा-
प्तेन धर्मकथाना चतुर्थवर्गस्य चतुष्पञ्चाशत् अययनानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा प्रथम
मध्ययन यावत्-चतुष्पञ्चाशत्तममययनम् । तेषु प्रथमस्याययनस्य उत्क्षेपक ।
सुधर्मस्वामीप्राह-एव खलु हे जम्भू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहे सम

-:चतुर्थ वर्ग प्रारभ:-

‘चउत्थस्स उवक्खेवओ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(चउत्थस्स उवक्खेवओ) चतुर्थ वर्ग का प्रारभ किस
तरह से हुआ है-इस प्रकार-जम्भूस्वामी के पूजने पर श्री सुधर्मस्वामी
उनसे कहते हैं कि (एव खलु जम्भू) हे जम्भू ! सुनो-(समणेण जाव
सपत्तेण धम्मकहाण चउत्थवग्गस्स चउप्पण्ण अज्झयणा पण्णत्ता त
जहा पढसे अज्झयणे जाव चउपण्णइ मे अज्झयणे) यावत् मुक्तिस्थान
को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर ने धर्मकथा के चतुर्थ वर्ग के ५४
अध्ययन प्रज्ञप्त किये हैं-वे प्रथम अध्ययन से लेकर ५४ वें अध्ययन तक
हैं-(पढमस्स अज्झयणास्स उक्खेवओ एव खलु जम्भू ! तेण कालेण तेण

शेथा वर्ग प्रारभ

‘चउत्थस्स उवक्खेवओ’ इत्यादि—

टीकार्थ—(चउत्थस्स उवक्खेवओ) शेथा वर्गनी शङ्खात् केनी रीते
थई छे ! आ नतनेा जम्भू स्वागीये प्रश्न कर्था गाइ श्री सुधर्मा स्वामी
तेभने कडे छे के (एव खलु जम्भू) के जम्भू ! साणणे,

(समणेण जाव सपत्तेण धम्मकहाण चउत्थवग्गस्स चउप्पण्ण अज्झयणा
पण्णत्ता त जहा पढसे अज्झयणे जाव चउपण्णइ मे अज्झयणे)

यावत् मुक्तिस्थानने पावेवा श्रमणु लगवान महावीरे धर्म कथाना शेथा
वर्गनी ५४ अध्ययनेा प्रज्ञप्त कर्था छे तेओ पडेला अध्ययनथी भाडीने ५४
भा अध्ययन सुधी छे

वसरण=भगवतः श्री महावीरस्वामिनः समागमन सजात, यावन् परिपद् भगवन्त
पर्युपास्ते । तस्मिन् काले तस्मिन् समये रूपादेवी=भूतानन्देन्द्रस्याग्रमहिषी रूप
कावतसके भवने रूपके सिंहासने यथा काल्याः=कालीदेव्या उर्णन तथा=तद्वत्

समर्णं रायगिहे समोसरण जाव परिसा पञ्जुयामड, तेण कालेण तेण
समर्णं रूया देवी, रूयाणंदा रायहाणी रूयगवर्डिसण भवणे रूयगमि
सीहासणसि जहा कालीए तथा नवर पुव्वभवे चपाए पुण्णभदे चेइए
रूयगे गाहावई रूयगसिरी भारिया, रूया दारिया, सेस तहेव, णवर
भूयाणद अग्गमहिसित्ताए उववाओ देमूणं पलिओवम ठिई निक्खेवओ,
एव सुरूयया वि, रूयसावि, रूयगाहावई वि रूयकता वि रूयप्पभावि,
एयाओ चेव उत्तरिल्लाण इदाण भाणियव्वाओ, जाव महाघोसस्म
णिक्खेवओ चउत्थवग्गस्स चउत्थो वग्गो समत्तो)

प्रथम अध्ययन का हे जन्म । उत्क्षेपक इस प्रकार हैं-उसकाल में
और उस समय में राजगृह नगर में महावीर स्वामी का आगमन हुआ ।
परिपद प्रभु को चढ़ना करने के लिये अपने २ स्थान से निकलकर जहा
प्रभु विराजमान थे वहाँ आई । प्रभु ने धर्म का उपदेश दिया । यावत्
सबने प्रभु की पर्युपासना की । उस काल और उस समय में भूतानद
इन्द्र की अग्रदेवी जिसका नाम रूपादेवी था वह प्रभु को चढ़ना के लिये

(पढमस्स अज्झयगस्स उक्खेवओ-एव खलु जन्म ! तेण कालेण तेण समर्ण
रायगिहे समोसरण जाव परिसा पञ्जुयासइ, तेण कालेण तेण समर्ण रूयादेवी,
रूयाणदा, रायहाणी रूयगवर्डिसए भवणे रूयगसि सीहासणसि जहा कालीए
तथा नवर पुव्वभवे चपाए पुण्णभदे चेइए रूपगे गाहावई रूयगसिरी भारिया,
रूया दारिया, सेस तहेव, णवर भूयाणद अग्गमहिसित्ताए उववाओ देमूण पलि
ओवम ठिई निक्खेवओ, एव सुरूयया वि, रूयसावि, रूयगाहावई, वि रूयकता
वि रूयप्पभावि, एयाओ चेव उत्तरिल्लाण इदाण भाणियव्वाओ, जाव महाघोसस्स
णिक्खेवओ चउत्थवग्गस्स ॥ ९ ॥ चउत्थो वग्गो समत्तो)

हे जन्म ! पड़ेला अध्ययनने उत्क्षेपक आ प्रभावे छे-ते काले अने
ते समये राजगृह नगरमा महावीर स्वामीतु आगमन थयु प्रभुने वदना
करवा भाटे परिपद यातयाताने स्थानेथा नीकणीने जना प्रभु विराजमान हुता
त्या आवी, प्रभुजे धर्मने उपदेश आये यावत् सौजे प्रभुनी पर्युपासना
करी ते काले अने ते समये भूतानद इन्द्रनी अग्रदेवी (पटशाली) नेतु
रूपा देवी हुतु-प्रभुने वदना करवा भाटे आवी तेना रडेवाना लवनतु

रूपादेव्या अपि विज्ञेयम्, नवर=विशेषोऽन्नायम्-पूर्वमे चम्पाया नगर्या पूर्ण
भद्र चैत्यम्, रूपको गाथापतिः, रूपश्रीभार्या, रूपादारिका, ग्रैप तथैव नवर
भूतानन्दाग्रमहिपीतया तस्या उपपातः जन्म । देशोन पत्योपम स्थितिः । निक्षे
पकः=समाप्तिराक्यरूपः प्रमथोऽत्र विज्ञेय' । एव सुरुपाऽपि २, रूपाशाऽपि ३,
रूपकावत्यपि ४, रूपकान्तापि ५, रूपप्रभापि ६ । एतांश्च उत्तरीयाणामिन्द्राणां

आई । इसके रहने के भवन का नाम रूपकावतसक था । और जिस
सिंहासन पर यह बैठती थी उसका नाम रूपक था । पीछे जिस प्रकार
का वर्णन कालीदेवी का किया गया है—उसी प्रकार का इनका भी वर्णन
जानना चाहिये । उसके पूर्वभव का वर्णन इस प्रकार है—यह पूर्वभव में
घना नामकी नगरी में कि जिसमें पूर्णभद्र नाम का उद्यान था और
रूपक गाथापति जिस में रहता था उस गाथापति की यह रूपश्री भार्या
से "रूपा दारिका" इस नाम से पुत्री उत्पन्न हुई थी । बाद में प्रभु का
उपदेश सुनकर यह प्रतिबोध को प्राप्त हो गई और कालीदेवी की तरह
यह आर्या बन गई इसके आगे जिस तरह का काली देवी का वृत्तान्त
घना इसी तरह से इसका भी जानना चाहिये । जब यह काल अवसर
काल कर गई तब यह भूतानद इन्द्र की अग्रमहिपीरूप से उत्पन्न हुई ।
वहाँ इसकी कुञ्जकम १, पत्य की स्थिति है । इस प्रकार रूपा देवी के
कथानक का यह निक्षेपक है । इसी तरह से (२) सुरूपा (३) रूपाशा
(४) रूपकावती (५) रूपकान्ता और ६ रूपप्रभा का भी वर्णन जानना

नाम रूपकावतसक હતુ અને જે સિંહાસન ઉપર તે બેસતી હતી તેનુ નામ
રૂપક હતુ જેમ પહેલા કાલી દેવીનુ વર્ણન કરવામા આવ્યુ છે તેમજ આનુ
વર્ણન પણ સમજી લેવુ જોઈએ તેના પૂર્વભવનુ વર્ણન આ પ્રમાણે છે—
આ પૂર્વભવમા એ પા નામની નગરીમા—કે જેમા પૂર્ણભદ્રા નામે ઉદ્યાન હતુ
અને રૂપકે ગાથાપતિ જેમા રહેતો હતો તે ગાથાપતિની આ રૂપશ્રી ભાર્યાથી
'રૂપાદારિકા' આ નામથી પુત્રી રૂપે ઉત્પન્ન થઈ હતી ત્યારપછી પ્રભુને
ઉપદેશ સાંભળીને એ જોધને પ્રાપ્ત થઈ અને કાલી દેવીની જેમ આર્યા થઈ
ગઈ એના પછીની વિગત કાલી દેવીની હતી તેવી જ એની પણ સમજી લેવી
જોઈએ ત્યારે તેણે કાળ અવસરે કાળ કર્યો ત્યારે આ ભૂતાનદ ઇન્દ્રની
અગ્રમહિષી (પટરાણી) ના રૂપમા ઉત્પન્ન થઈ ત્યાં તેની થોડી ઝાંઘી
એક પત્નની સ્થિતિ છે આ પ્રમાણે રૂપાદેવીના કથાનકને આ નિષેપક છે
આ પ્રમાણે જ (૨) સુરૂપા, (૩) રૂપાશા, (૪) રૂપકાવતી, (૫) રૂ અને

मणितव्या' = अग्रमहिष्यो वक्तव्या यावत् महाघोषस्य । महाघोषेन्द्रस्य । निक्षेप-
कश्चतुर्थवर्गस्य ॥ सू० ९ ॥

॥ इति धर्मरूयाना चतुर्षो वर्ग समाप्तः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमो वर्गः प्रारभ्यते—पंचमवर्गस्य ' इत्यादि ।

मूलम्—पंचमवर्गस्य उक्त्वेवओ, एव खलु जव् । जाव
वत्तीसं अञ्जयणा पण्णत्ता, तजहा—कमला? कमलप्पभा
चेव, उप्पला३ य सुदसणा४ । रुववई५ वहरूवा६, सुरूवा७
सुभगाविय८ ॥ १ ॥ पुण्णा९ वहुपुत्तिया१० चेव, उत्तमा११
तारयाविय१२ । पउमा१३ वसुमती१४ चेव, कणगा१५ कण-
गप्पभा१६ ॥२॥ वडेसा१७ केउमई१८ चेव, वइरसेणा१९
रइप्पिया२० । रोहिणी२१ नवमिया२२ चेव, हिरी२३ पुप्फ-
वईइय २४ ॥३॥ भुयगा२५ भुयगवई२६ चेव, महाकच्छो-
पराइया२८ । सुघोसा२९ विमला३० चेव, सुस्सरा३१ यसर-
सवई३२ ॥४॥ उक्त्वेवओ पढमञ्जयणस्स, एव खलु जव् ।
तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहेसमोसरण जाव परिसा
पञ्जुवासइ, तेण कालेण तेण समएण कमलादेवी कमलाए
रायहाणीए कमलवडेसए भवणे कमलसि सीहासणासि सेसं
जहा कालीए तहेव णवरं पुव्वभवे नागपुरे नयरे सहसव

चाहिये । ये देविया भूतानद इन्द्र की तरह उत्तरीय इन्द्रो की भी अग्र-
महिषिया हैं । और ये ही महाघोषेन्द्र की भी हैं । इस प्रकार यह चतुर्थ
वर्ग का निक्षेपक (स्वरूप) है ।

॥ चतुर्थवर्ग समाप्त ॥

(१) इपप्रलातु वरुणं पणु समलु देवु जेधओ आ अधी देवीओ भूतानद
धन्द्रनी जेम उत्तरीय धन्द्रोनी पणु अग्रमहिषीओ (पटराणीओ) छे अने
महाघोषेन्द्रनी पणु तेओअ पटराणीओ छे आ प्रभावे आ बोथा वर्गना
निक्षेपक छे

उत्क्षेपकः प्रथमाध्ययनम्य । जम्बूस्वामिना पृष्टे सुधर्मास्वामीप्राह-एव खलु हे जम्बूः ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहे 'समोसरण' समवसरण=भग

३१, सरस्वती ३२, । (उवखेवओ पढमज्झयणस्स एव खलु जन्तु । तेण कालेण तेण समएण रायगिहे समोसरणं जात्र परिस्ता पज्जुवामइ, तेण कालेण तेण समएण कमला देवी, कमलाए रायहाणीए कमलवडेंसए भवणे कमलसि सीहासणमि सेस जहा कालीए तहेव णवर पुव्वभवे नागपुरे नयरे सहसववणे उज्जाणे कमलस्स गाहावड्ढस्स कमलसिरीए भरियाए कमला दारिया पासस्स० अतिए निक्खता कालस्स पिसायकुमारिंदस्स अग्गमहिंसी अद्दपलिओवम ठिई, एव सेसा वि अज्झयणा दाहिणिल्लाण वाणमतर्दिदाण भाणियव्वाओ, सव्वाओ णागपुरे सहसववणे उज्जाणे माया पिया धूया सरिसनामया, ठिई अद्दपलिओवम) इसके बाद जंबूस्वामी ने श्री सुधर्मास्वामी से पूछा कि इनमें से कमला नामका जो प्रथम अध्ययन है उसका उत्क्षेपक किस तरह से है-इस प्रकार जंबूस्वामी के पूछने पर उनसे सुधर्मास्वामी ने कहा-कि हे जंबू ! सुनो-तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है-उस काल में और उस समय में राजगृह नामका नगर था। उसमें भगवान् महावीर का आगमन हुआ। यावत् वहा की परिपद प्रभु को वदना करने के लिये आई।

(उवखेवओ पढमज्झयणस्स, एव खलु जन्तु । तेण कालेण तेण समएण रायगिहे समोसरणं जात्र परिस्तापज्जुवासइ, तेण कालेण तेण समएण कमला देवी कमलाए रायहाणीए कमलवडेंसए भवणे कमलसि सीहासणमि सेस जहा कालीए तहेव णवर पुव्वभवे नागपुरे नयरे सहसववणे उज्जाणे कमलस्स गाहा वड्ढस्स कमलसिरीए भरियाए कमला दारिया पासस्स० अतिए निक्खता कालस्स पिसाय कुमारिंदस्स अग्गमहिंसी अद्दपलिओवम ठिई, एव सेसा वि अज्झयणा दाहिणिल्लाण वाणमतर्दिदाण भाणियव्वाओ, सव्वाओ णागपुरे सहसववणे उज्जाणे मायापिया धूया सरिसनामया, ठिई अद्दपलिओवम)

त्यारपणी जंभू स्वामींशे श्री सुधर्मा स्वामीने पूछ्यु के आ णधामा कमला नामे के पड्ढेडु अध्ययन छे तेने। उत्क्षेपक देवी गीते छे ?

आ प्रभाण्णे जंभू स्वामींशे प्रथं वर्यां णाह तेमने श्री सुधर्मा स्वामींशे कड्ढु के छे जंभू ! सालणो, तमासा प्रश्नने। उत्तर आ प्रभाण्णे छे के ते काले अने ते समये राजगृह नामे नगर छतु तेमा लगवान भडावीरतु आगमन थयु यावत् नगरनी परिपद तेमने वदना करवा भाटे आवी प्रभुंशे सीने

चन् महावीरस्वामी समागमन सजात, यावत् परिपद् भगवन्त पर्युपास्ते। तस्मिन् काले तस्मिन् समये कमला देवी कमलाया राजधान्यां, कमलावतमके भवने कमले सिंहासने, शेष यथा-काल्या-कालीदेव्या वर्णन तथैवाऽस्या अपि, नगर-विशेषोऽयम्-पूर्वभवे नागपुर नगर, सहस्राभवनमुद्यानम्, कमलस्य गाथापतेः कमलत्रियो भार्यायाः कमला दारिका पार्श्वस्यार्हतः पुरुपादानीयस्य अन्तिके 'निखलता' निष्क्रान्ता-प्रव्रजिता, कालस्य पिशाचकुमारेन्द्रस्य अग्रमहिषी। अर्द्धपल्योपम स्थितिः। एष शेषाण्यपि कमलप्रभादिनामकान्यपि एकत्रिंशद् अर्ध-

प्रभु ने सत्रको धर्म का उपदेश दिया। परिपदे ने प्रभु की पर्युपासना की। उस काल में और उस समय में कमला नाम की देवी, कमला राजधानी में कमलावतसक भवन में रहती थी। उस के सिंहासन का नाम कमला था। इसके आगे का समस्त वर्णन कालीदेवी के वर्णन जैसा ही जानना चाहिये। परन्तु हममें जो विशेषता है वह इस प्रकार है-जब गौतमस्वामी ने उसके-अर्थात् देवी के चले जाने के बाद उसके पूर्वभव का वृत्तान्त पूछा-तब प्रभु ने उनसे इस प्रकार कहा-पूर्वभव के इसके नगर का नाम नागपुर था-उसमें सहस्राभवन नाम का उद्यान था। उस नगर में कमल नामका गाथापति रहता था।-उसकी भार्या का नाम कमला थी था। इनके एक पुत्री थी जिस का नाम कमला था। वह काललब्धि के आनेपर पुरुपादानीय-पुरुष श्रेष्ठ-पार्श्वनाथ अर्हत प्रभु के समीप प्रव्रजित हो गई। बाद में मरने पर वह काल नाम के पिशाच कुमारेन्द्र की अग्रमहिषी बनी। वहा इसकी स्थिति अर्द्धपल्य की है।

धर्मने उपदेश आये। परिपदे प्रभुनी पर्युपासना करी ते काले अने ते समये कमला नामनी देवी, कमला राजधानीमा कमलावतसके भवनमा रहेती હતી तेना सिंहासनतु नाम कमला હતું એના પછીતુ અધુ વર્ણન કાલી દેવીના વર્ણનની જેમ જ સમજી લેવું જોઈએ પરતુ આમા જે કે જે વિશેષતા છે તે એ પ્રમાણે છે-કે વ્યારે ગૌતમ સ્વામીએ દેવીના ગણ પછી તેના પૂર્વ ભવ વિષેની વિગત પૂછી ત્યારે પ્રભુએ તેમને આ પ્રમાણે કહ્યું-કે આના પૂર્વ ભવના નગરનું નામ નાગપુર હતું તેમા સહસ્રાભવન નામે ઉદ્યાન હતું તે નગરમા કમલ નામે ગાથાપતિ રહેતો હતો તેની પત્નીતુ નામ કમલાશ્રી હતું એમને એક દિકરી હતી તેનું નામ કમલા હતું, તે યોગ્ય કાળલબ્ધિના અવસરે પુરુપાદાનીય-પુરુષ શ્રેષ્ઠ-પાર્શ્વનાથ અર્હત પ્રભુની પાને પ્રવ્રજિત થઇ ગઈ ત્યારપછી મૃત્યુ થયા બાદ તે કાલ નાગના પિશાચ કુમારેન્દ્રની અગ્ર

યજ્ઞાનિ દાક્ષિણાત્યાનાં વાનવ્યતરેન્દ્રાણામગ્રમહિષીણા મ્જિતશ્યાનિ । સર્વાશ્રેતાઃ
પૂર્વભવે નાગપુરે નગરે સજાતાઃ, સહસ્રામ્રવને ઉદ્યાને મગવત્પાર્શ્વમ્નોઃ સમીપે પ્રવ્ર-
જિતાઃ । માતાપિતા દુહિતા સદશનામરુઃ । આસા સ્થિતિરર્ધપલ્યોપમમ્ ॥સૂ૦ ૧૦॥

॥ इति धर्मकथानां पञ्चमो वर्गः समाप्तः ॥ ५ ॥

મૂલમ્—છટ્ટોવિ વગ્ગો પંચમવગ્ગસરિસો, ણવરં મહાકાલા-
દીણં ઉત્તરિહ્યાણં ઇદાણં અગ્ગમહિસીઓ પુઠ્ઠવભવે સાગેય-
નયરે ઉત્તરકુરુ ઉજ્જાણે માયા પિયા ધૂયા સરિસણામયા
સેસં તં ચેવ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ छट्टो वग्गो समत्तो ॥ ६ ॥

બાકી જો ૩૧, કમલપ્રભા નામકે અધ્યયન હૈં વે દક્ષિણ દિશા સબન્ધી
વાનવ્યતરેન્દ્રોં કી અગ્રમહિપિયોં કે હૈં એસા જાનના ચાહિયે । યે સબ
હી પૂર્વભવ મેં નાગપુર નગર મેં ઉત્પન્ન હુઈ-ઓર સહસ્રામ્રવન નામકે
ઉદ્યાન મેં મગવાન્ પાર્શ્વનાથ કે સમીપ પ્રવ્રજિત હુઈ । इन अध्ययनों में
माता पिता तथा पुत्री ये सब एक सरीखे नामवाली है । जैसे कमलप्रभा
नामक अध्ययन में माता का नाम कमलप्रभा श्री, पिता का नाम कम-
लप्रभ एव पुत्री का नाम कमलप्रभा है-इसी तरह से और अध्ययनों में
भी जानना चाहिये । इन सब देवियों की स्थिति अर्धपल्य की है ॥सू१०॥

-:पञ्चमवर्ग समाप्त:-

મહિષી (પટરાણી) બની ત્યા તેની સ્થિતિ અર્ધપલ્યની છે શેષ જે ૩૧
કમલપ્રભા નામના અધ્યયનો છે તે દક્ષિણ દિશા સબધી વાનવ્યતરેન્દ્રોની
અગ્રમહિષીઓ (પટરાણીઓ) ના સમજવા નેઈએ આ બધી પૂર્વભવના
નાગપુર નગરમાં ઉત્પન્ન થઈ અને સહસ્રામ્રવન નામના ઉદ્યાનમાં લગવાન
પાર્શ્વનાથની પાસે પ્રવ્રજિત થઈ ગઈ આ બધા અધ્યયનોમાં માતાપિતા તેમજ
પુત્રી આ સર્વે એક સરખા નામવાળા છે જેમકે કમલપ્રભા નામના અધ્યય-
નમાં માતાનું નામ કમલપ્રભાશ્રી, પિતાનું નામ કમલપ્રભ અને પુત્રીનું નામ
કમલપ્રભા છે એ પ્રમાણે બીજા અધ્યયનો વિષે પણ બાણી લેવું નેઈએ આ
બધી દેવીઓની સ્થિતિ અર્ધપલ્યની છે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

પાંચમો વર્ગ સમાપ્ત

टीका—‘ छट्टोवि ’ इत्यादि षष्ठोऽपि वर्गः पञ्चमवर्गसदृशः । नवरम्—एता वान् विशेष—अत्र महाकालादीनाम् उत्तरीयाणामिन्द्राणामयमहिष्यः । एताः सर्वाः पूर्वभवे साकेतनगरे उत्तरकुरुघाने पार्श्वप्रभुसमीपे प्रव्रजिताः मातरः पितरो दुहितरः सदृशनामकाः । शेष तदेव सर्वं वाच्यम् ॥ सू० ११ ॥

इति धर्करूथाना षष्ठो वर्गः समाप्तः ॥ ६ ॥

—ःषष्ठवर्ग प्रारम्भः—

‘ छट्टो वि वगो पचमवग्गसरिसो ’ इत्यादि ।

टीकार्थ —(छट्टो वि वगो पचमवग्गसरिसो, णवर महाकालादीण उत्तरिल्लाण इदाण अग्गमहिसीओ पुव्वभवे सागेयनयरे उत्तरकुरुउ ज्जाणे माया पिया धूया सरिसणामया सेस त चेव ११) छठा वर्ग भी पचमवर्ग के जैसे ही है । परन्तु इसमें जो उसकी अपेक्षा विशेषता है—वह इस प्रकार है—इस अभ्ययन में उत्तर दिशा के इन्द्र महाकाल आदिकों की अग्रमहिषियों का वर्णन है । ये सब अग्रमहिषिया पूर्वभव में साकेत नगर (अयोध्या) में उत्तर कुरु नामके उद्यान में पार्श्वप्रभु के समीप प्रव्रजित हुई हैं । माता पिता एव पुत्रिया ये सब एक जैसा नामवाले हैं । घाकी का इनके विषय का समस्त कथन कालीदेवी के वर्णन जैसा जानना चाहिये ।

—ःषष्ठवर्ग समाप्तः—

छट्टो वर्ग प्रारम्भ —

‘ छट्टो वि वगो पचम वग्गसरिसो ’ इत्यादि—

(छट्टो विवग्गो पचमवग्गसरिसो, णवर महाकालादीण उत्तरिल्लाण इदाणं अग्गमहिसीओ पुव्वभवे सागेय नयरे उत्तरकुरु उज्जाणे मायापिया धूया सरिस णामया सेस त चेव ११)

छट्टो वर्ग षष्ठ पाचमा वर्गना जेवो न छे परतु आमा जे तेना करता विशेषता छे, ते जे प्रभाषे छे के आ अध्ययनमा उत्तर दिशाना इन्द्र मडाकाल वगेरेनी अग्रमहिषीओ (पटशष्ठीओ) तु वर्युन छे आ षष्ठी अग्रमहिषीओ पूर्वभवमा साकेत नगरमा उत्तरकुरु नामना उद्यानमा पार्श्व प्रभुनी पासे प्रव्रजित थछे मातापिता अने पुत्रीओ षष्ठा जेके सरथा नामवाणा छे जेमना विषेनु भाडीतु षष्ठु कथन काली देवीना वर्युन जेवु षष्ठुनु जेधजे

छट्टो वर्ग समाप्त,

यनानि दाक्षिणात्यानां वानव्यन्तरेन्द्राणामग्रमहिषीणां भणितव्यानि । सर्वाश्चैता
पूर्वभवे नागपुरे नगरे संजाताः, सहस्राभ्रवने उद्याने भगवत्पार्श्वप्रभोः समीपे प्रव्र-
जिताः । मातापिता दुहिता सदृशनामकः । आसा स्थितिरर्द्धपत्न्योपमम् ॥ सू० १० ॥

॥ इति धर्मकथानां पञ्चमो वर्गः समाप्तः ॥ ५ ॥

मूलम्—छट्टोवि वग्गो पचमवग्गसरिसो, णवरं महाकाला-
दीणं उत्तरिह्हाणं इदाणं अग्गमहिसीओ पुव्वभवे सागेय-
नयरे उत्तरकुरु उज्जाणे माया पिया धूया सरिसणामया
सेसं तं चेव ॥ सू० ११ ॥

॥ छट्टो वग्गो समत्तो ॥ ६ ॥

धात्री जो ३१, कमलप्रभा नामके अध्ययन हैं वे दक्षिण दिशा सबन्धी
वानव्यतरेन्द्रों की अग्रमहिषियों के हैं ऐसा जानना चाहिये । ये सब
ही पूर्वभव में नागपुर नगर में उत्पन्न हुई—और सहस्राभ्रवन नामके
उद्यान में भगवान् पार्श्वनाथ के समीप प्रव्रजित हुई । इन अध्ययनों में
माता पिता तथा पुत्री ये सब एक सरीखे नामवाली हैं । जैसे कमलप्रभा
नामक अध्ययन में माता का नाम कमलप्रभा श्री, पिता का नाम कम-
लप्रभ एव पुत्री का नाम कमलप्रभा है—इसी तरह से और अध्ययनों में
भी जानना चाहिये । इन सब देवियों की स्थिति अर्द्धपत्न्य की है ॥ सू० १० ॥

—:पचमवर्ग समाप्तः—

महिषी (पटशाली) अनी त्या तेनी स्थिति अर्द्धपत्न्यनी छे शेष जे उ१
कमलप्रभा नामना अध्ययनो छे ते दक्षिण दिशा स अधी वानव्यतरेन्द्रोनी
अग्रमहिषीओ (पटशालीओ) ना समज्वा नोछंओ आ अधी पूर्वभवमा
नागपुर नगरमा उत्पन्न थछं अने सहस्राभ्रवन नामना उद्यानमा लगवान
पार्श्वनाथनी पासो प्रव्रजित थछं गछं आ अथा अध्ययनोमा मातापिता तेमज्ज
पुत्री आ सर्वे ओक सरथा नामवाणा छे जेभके कमलप्रभा नामना अध्यय-
नमा मातातु नाम कमलप्रभाश्री, पितातु नाम कमलप्रभ अने पुत्रीतु नाम
कमलप्रभा छे ओ प्रभाछे जीव्वा अध्ययनो विषे पञ्च बाली लेवुं नोछंओ आ
अधी देवीओनी स्थिति अर्द्धपत्न्यनी छे ॥ सू० १० ॥

पाचमो वर्ग समाप्त

यथासूरप्रभा १, आतपा २, अर्चिर्मालि ३, प्रभङ्गकरा ४ । प्रथमाध्ययनस्योत्क्षेपकः । सुधर्मस्वामीप्राह-एव खलु हे जम्बू । तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहे समवसरणम्=भगवद्वर्धमानस्वामिसमागमनम् यावत् परिपत् पर्युपास्ते । तस्मिन् काले तस्मिन् समये सूरप्रभादेवी, सूरविमाने, सूरप्रभे सिंहासने, शेष

भगवान् महावीर ने इस सातवें वर्ग के चार अध्ययन प्ररूपित किये हैं - (त जहा-सूरप्पभा, आयवा, अच्चिमाली, पभकरा, पढमज्जयणस्स, उक्खेवओ एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समण्ण रायगिहे समोसरण जाव परिमा पज्जुवासइ, तेण कालेण तेण समण्ण सूरप्पभा देवी, सूरसि विमाणसि सूरप्पमसि सीहासणसि सेस जहा कालीए तहा) वे चार अध्ययन इस प्रकार हैं सूरप्रभा १, आतपा २, अर्चिमाली ३, प्रभङ्गकरा ४, इनमें प्रथम अध्ययन का उत्क्षेपक हे जम्बू ! इस प्रकार है- उस काल और उस समय में राजगृह नाम के नगर में भगवान् वर्धमानस्वामी का आगमन हुआ था-प्रभु का आगमन सुनकर वरा की परिपद उनको वदना करने के लिये उनके समीप गई-प्रभु ने सबको धर्म का उपदेश दिया । उपदेश सुनकर सबने प्रभु की पर्युपासना की । उस काल और उस समय में सूरप्रभा नाम की एक देवी जो सूरविमान में रहती थी-और सूरप्रभ सिंहासन पर बैठती थी प्रभु को वदना करने के लिये आई । इसके बाद का इसका वृत्तान्त जैसा पहिले कालीदेवी

(त जहा-सूरप्पभा, आयवा, अच्चिमाली, पभकरा, पढमज्जयणस्स, उक्खेवओ एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समण्ण रायगिहे समोसरण जाव परिमा पज्जुवासइ, तेण कालेण तेण समण्ण सूरप्पभादेवी, सूरसि विमाणसि सूरप्पमसि सीहासणसि सेस जहा कालीए तहा)

ते चार अध्ययनो आ प्रभाणु छे -सूरप्रभा १, आतपा २, अर्चिमाली ३, प्रभङ्गकरा ४, हे जम्बू ! आ पधामा पडेला अध्ययनो उत्क्षेपक आ प्रभाणु छे के ते काले अने ते समये राजगृह नामना नगरमा लगवान वर्धमान स्वामीनु आगमन थयु प्रभुनु आगमन सालणीने त्यानी परिपद तेभने वदना करवा भाटे तेभनी पासे गथ प्रभुणे सौने धर्मो उपदेश आये। उपदेश सालणीने सौणे प्रभुनी पर्युपासना करी ते काले अने ते समये सूरप्रभा नामनी ओक देवी-जे सूर विमानमा रहेती छती अने सूरप्रभ सिंहासन उपर भेसती छती-प्रभुनी वदना करवा भाटे आवी, ओना पछीनु'

अथ सप्तमो वर्गः प्रारभ्यते—' सत्तमस्से ' इत्यादि ।

मूलम्—सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ, एवं खलु जवू । जाव चत्तारि अज्झयणा पण्णत्ता, त जहा—सूरप्पभा आयवा अच्चिमाली पभकरा, पढमज्झयणस्स उक्खेवओ, एव खलु जवू । तेणं कालेणं तेण समएणं राचगिहे समोत्तरणं जाव परिसा पज्जुवासइ, तेणं कालेणं तेण समएणं सूरप्पभा देवी सूरसि विमाणंसि सूरप्पभसि सीहासणंसि सेस जहा कालीए तहाणवर पुव्वभवे अरक्खुरीए नयरीए सूरप्पभस्स गाहाव इस्स सूरसिरीए भारियाए सुरप्पभा दारिया सूरस्स अग्ग-महिंसी ठिई अद्धपलिओवम पचहि वाससएहिं अव्वभहिय सेसं जहा कालीए, एव सेसाओवि सव्वाओ अरक्खुरीए णयरीए ॥ सू० १२ ॥ ॥ सत्तमो वग्गो समत्तो ॥ ७ ॥

टीका—' सत्तमस्से ' ति—सत्तमस्य वर्गस्य उल्लेपकः । सुधर्मस्वामीरुथ यति—एव खलु हे जम्भूः ! यान्त् चत्वारि अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—तानि

—:सप्तमवर्ग प्रारभः—

' सत्तमस्सवग्गस्स उक्खेवओ ' इत्यादि ।

टीकार्थः—(सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ एव खलु जवू ! जाव चत्तारि अज्झयणा पण्णत्ता) हे भदत ! सातवें वर्ग का उल्लेपक किस प्रकार है ? इस जवूस्वामी के प्रश्न करने पर शौतमस्वामी उनसे कहते हैं—'कि हे जवू ! सुनो, तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है—श्रमण

सातमो वर्ग प्रारभ—

' सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ ' इत्यादि—

टीकार्थः—(सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ एव खलु जवू ! जाव चत्तारि अज्झयणा पण्णत्ता) हे भदन्त ! सातमो वर्गो उल्लेपक देवी रीते छे ?

७७७ स्वाभीना आ प्रश्नने साअणीने गीतम देवाभी तेमने कडे छे, के छे ७७७ ! साअणी, तभारा प्रश्नने उत्तर आ प्रमाछे छे के श्रमणु लगवान भडावीरे आ सातमो वर्गो आर अध्ययने प्रइपित कथा छे

यथासूरप्रभा १, आतपा २, अर्चिर्मालिः ३, प्रभङ्करा ४ । प्रथमा ययनस्योत्क्षे
पकः । सुधर्मस्वामीप्राह-एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राज
गृहे समवसरणम्=भगवद्वर्धमानस्वामिसमागमनम् यावत् परिपत् पर्युपास्ते ।
तस्मिन् काले तस्मिन् समये सूरप्रभादेवी, सूरविमाने, सूरप्रभे सिंहासने, शेष

भगवान् महावीर ने इस सातवें वर्ग के चार अध्ययन प्रकृत किये हैं
-(तं जहा-सूरप्पभा, आयवा, अच्चिमाली, पभकरा, पढमज्जयणस्स,
उम्खेवओ एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समण्ण रायगिहे समोस-
रण जाव परिमा पज्जुवासइ, तेण कालेण तेण समण्ण सूरप्पभा देवी,
सूरसि विमाणसि सूरप्पभमि सीहासणसि सेम जहा कालीए तथा) वे
चार अध्ययन इस प्रकार है सूरप्रभा १, आतपा २, अर्चिमाली ३,
प्रभङ्करा ४, इनमें प्रथम अध्ययन का उत्क्षेपक हे जम्बू ! इस प्रकार है-
उस काल और उस समय में राजगृह नाम के नगर में भगवान् वर्ध
मानस्वामी का आगमन हुआ या-प्रभु का आगमन सुनकर वहा की
परिपद उनको वदना करने के लिये उनके समीप गई-प्रभु ने सबको
धर्म का उपदेश दिया । उपदेश सुनकर सबने प्रभु की पर्युपासना की ।
उस काल और उस समय में सूरप्रभा नाम की एक देवी जो सूरविमान
में रहती थी-और सूरप्रभ सिंहासन पर बैठती थी प्रभु को वदना करने
के लिये आई । इसके बाद का इसका वृत्तान्त जैसा पहिले कालीदेवी

(तं जहा-सूरप्पभा, आयवा, अच्चिमाली, पभकरा, पढमज्जयणस्स,
उम्खेवओ एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समण्ण रायगिहे समोसरण जाव
परिमा पज्जुवासइ, तेण कालेण तेण समण्ण सूरप्पभादेवी, सूरसि विमाणसि
सूरप्पभमि सीहासणसि सेम जहा कालीए तथा)

ते चार अध्ययने आ प्रभाञ्जे छे -सूरप्रभा १, आतपा २, अर्चिमाली
३, प्रभङ्करा ४, हे जम्बू ! आ पधामा पडेलो अध्ययनने उत्क्षेपक आ
प्रभाञ्जे छे के ते काले अने ते समये राजगृह नामना नगरमा लगवान
वर्धमान स्वामीतु आगमन थयु प्रभुतु आगमन आलणीने त्यानी परिपद
तेमने वदना करवा भाटे तेमनी पासे गथ प्रभुञ्जे सौने धर्मने उपदेश
आप्ये उपदेश आलणीने सौञ्जे प्रभुनी पर्युपासना करी ते काले अने ते
समये सूरप्रभा नामनी ओक देवी-जे सूर विमानमा रहेती छती अने सूरप्रभ
सिंहासन उपर भेसती छती-प्रभुनी वदना करवा भाटे आवी अना पधीनु'

अथ सप्तमो वगः प्रारभ्यते—' सत्तमस्से ' इत्यादि ।

मूलम्—सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ, एव खलु जवू । जाव चत्तारि अज्झयणा पणत्ता, त जहा—सूरप्पभा आयवा अच्चिमाली पभकरा, पढमज्झयणस्स उक्खेवओ, एव खलु जवू । तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे समोत्तरणं जाव परिसा पज्जुवासइ, तेणं कालेण तेण समएणं सूरप्पभा देवी सूरसि विमाणंसि सूरप्पभंसि सीहासणंसि सेस जहा कालीए तहाणवर पुव्वभवे अरक्खुरीए नयरीए सूरप्पभस्स गाहाव इस्स सूरसिरीए भारियाए सुरप्पभा दारिया सूरस्स अग्ग-महिसी ठिई अद्धपलिओवम पचहि वाससएहि अव्वमहिय सेसं जहा कालीए, एव सेसाओवि सव्वाओ अरक्खुरीए णयरीए ॥ सू० १२ ॥ ॥ सत्तमो वग्गो समत्तो ॥ ७ ॥

टीका—' सत्तमस्से ' ति—सप्तमस्य ' वर्गस्य उत्क्षेपकः । सुधर्मस्वामीकथयति—एव खलु हे जम्भू ! यावत् चत्वारि अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—तानि

—:सप्तमवर्ग प्रारभः—

' सत्तमस्सवग्गस्स उक्खेवओ ? ' इत्यादि ।

टीकार्थः—(सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ एव खलु जवू । जाव चत्तारि अज्झयणा पणत्ता) हे भदत्त ! सातवें वर्ग का उत्क्षेपक किस प्रकार है ? इस जवूस्वामी के प्रश्न करने पर गौतमस्वामी उनसे कहते हैं—कि हे जवू ! सुनो, तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है—श्रमण

सातमो वर्ग प्रारभ—

' सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ ' इत्यादि—

टीकार्थः—(सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ एव खलु जवू । जाव चत्तारि अज्झयणा पणत्ता) हे भदन्त ! सातमो वर्गने उत्क्षेपक केवी रीने छे ?

जम्भू स्वामीना आः प्रश्नने, सालणीने गौतमस्वामी तेभने उडे छे, उडे जम्भू ! सालणो, तभारा प्रश्नने उत्तर आ प्रमाणे छे उडे श्रमणु भगवान भडावीरे आ सातमो वर्गना आर अध्ययने प्रज्ञपित कथो

अथाष्टमो वर्गः प्रारभ्यते—' अट्टमस्ते ' त्यादि ।

मूलम्—अट्टमस्स उक्खेवओ, एवं खलु जम्बू । जाव चत्तारि अज्झयणा पणत्ता, त जहा—चंदप्पभा दोसिणाभा अच्चि-
माली पभंकरा, पढमस्स अज्झयणस्स उक्खेवओ, एवं
खलु जवू । तेणं कालेणं तेण समएणं रायगिहे समोसरणं
जाव परिसा पज्जुवासइ, तेणं कालेणं तेणं समएणं चंद-
प्पभा देवी चदप्पभंसि विमाणसि चदप्पभंसि सीहासणंसि
सेस जहा कालीए, णवर पुव्वभवे महुराए णयरीए भंडीर-
वडेसए उज्जाणे चदप्पभे गाहावई चंदसिरी भारिया चंद-
प्पभा दारिया चंदस्स अग्गमहिंसी ठिई अद्धपलिओवमं
पण्णासाए वाससहस्सेहिं अब्भहिय सेस जहा कालीए,
एवं सेसाओवि महुराए णयरीए मायापियरोवि धूयासरि-
सणामा ॥ सू० १३ ॥ अट्टमो वर्गो समत्तो ॥ ८ ॥

टीका—' अट्टमस्ते ति—अष्टमस्य उत्क्षेपकः । सुधर्मास्वामी प्राह—एव खलु
हे जम्बू ! यावत् चत्वारि अ-ययनानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा=तानि यथा—चन्द्रप्रभा १,
ज्योत्स्नाभा २, अर्चिर्मालिः ३, प्रभङ्करा ४ । प्रथमस्या-ययनस्योत्क्षेपक । एव

—:अष्टमवर्गं प्रारभ—:

' अट्टमस्स उक्खेवओ ' इत्यादि ।

टीकार्थ—'(अट्टमस्स उक्खेवओ—एव खलु जवू । जाव चत्तारि
अज्झयणा पणत्ता त—जहा—चदप्पभा, दोसिणाभा, अच्चिमाली, पभंकरा,

आठमो वर्ग प्रारभ

' अट्टमस्स उक्खेवओ, इत्यादि—

(अट्टमस्स उक्खेवओ—एव खलु जवू । जाव चत्तारि अज्झयणा पणत्ता—तं
जहा—चदप्पभा, दोसिणाभा, अच्चिमाली, पभंकरा, पढमस्स अज्झयणस्स उक्खे-

યથા કાલ્યા' = કાલી દેવ્યા વર્ણન તથા ધિનંયમ્ , નરમ્ = મય વિશેષઃ = પૂર્વભવે
 અરક્ષુર્યા નગર્યા સૂરપ્રભસ્ય ગાથાપતેઃ, સૂરશ્રિયો માર્યાયાઃ સૂરપ્રમા દારિકા,
 સૂરસ્ય અગ્રમહિપી સ્થિતિરદ્વપલ્યોપમ પન્નમિર્ષપશૈરભ્યધિકમ્ । શોષ યથા કાલ્યા ।
 એવ શોષા અપિ = આતપાદિકાઃ દેવ્યો યાન્યા । સર્વા પૂર્વભવે અરક્ષુર્યા
 નગર્યામાસન્ ॥ સુ૦૧૨ ॥

॥ इति धर्मकथाना सप्तमो वगः समाप्तः ॥ ७ ॥

કા વૃત્તાન્ત લિલા જા ચુકા હૈ-વૈસા હી હૈ । ઉસમેં કુછ અન્તર નહોં હૈ
 (જવર) પરન્તુ જિન ગાતોં મેં અન્તર હૈ-વહ હસ પ્રકાર હૈ-(પુઁવભવે)
 યહ પૂર્વભવ મેં (અરક્ષુરીય નયરીય સૂરપ્પભસ્સ ગાઠાવહસ્સ સૂરસિરીય
 મારિયાય સૂરપ્પમા દારિયા સૂરસ્સ અગ્ગમહિસી ઠિઈ અદ્દપલિઓવમ
 પચહિં વાસસણ્હિં અબ્મહિય સેસ જહા કાલીય એવ સેસાઓ વિ સઁવાઓ
 અરક્ષુરીય જયરીય ૧૨) અરક્ષુર નામકી નગરી મેં નિવાસ કરનેવાલે
 સૂરપ્રમા ગાથાપતિ કી સૂર શ્રી માર્યા કી કુક્ષિ સે અવતરી થી । હસકા
 નામ સૂરપ્રમા યા । યહ સૂર કી અગ્રમહિપી હુઈ । હસકી વહા પાંચસૌ
 વર્ષ સે અધિક અર્ધપલ્ય કી સ્થિતિ હૈ । ઓર હસકા હસ અવસ્થા કા
 સમસ્ત વર્ણન કાલી સમાન હી હૈ । હસી તરહ કા આતપાઆદિક ૩
 દેવિયોં કા મી જીવન વૃત્તાન્ત હૈ । યે ૩ તીનોં હી દેવિયાં અપને ૨પૂર્વ
 ભવ મેં અરક્ષુર નગરી મેં જન્મી થી ॥ સુ૦૧૨ ॥

- સસમવર્ગ સમાસ:-

આતુ વર્ણન કાલી દેવીના વર્ણન જેવું જ સમજી લેવું જોઈએ, તેમા કોઇ
 પણ જાતનો તક્ષવત નથી (જવર) પરતુ જે વાતમા તક્ષવન છે, તે આ
 પ્રમાણે છે (પુઁવભવે) આ પૂર્વભવમા

(અરક્ષુરીય નયરીય સૂરપ્પભસ્સ ગાઠાવહસ્સ સૂરસિરીય મારિયાય સૂરપ્પમા
 દારિયા સૂરસ્સ અગ્ગમહિસી ઠિઈ અદ્દપલિઓવમ પચહિં વાસસણ્હિં અબ્મહિય
 સેસ જહા કાલીય, એવ સેસાઓ વિ સઁવાઓ અરક્ષુરીય જયરીય ૧૨)

અરક્ષુરી નામની નગરીમા રહેનારી સૂરપ્રમા ગાથાપતિની સૂરશ્રીમાર્યાના
 ગર્ભથી જન્મ પામી હતી, તેનું નામ સૂરપ્રમા હતું તે સૂરની અગ્રમહિપી
 (પટરાણી) થઈ તેની ત્યા પાચસો વર્ષ કરતા વધારે અર્ધપલ્યની સ્થિતિ
 છે તેનું આ અવસ્થા વિષેનું પણ વર્ણન કાલીના જેવું જ છે એ પ્રમાણે જ
 આતપા વગેરે ૩ દેવીઓનું પણ જીવનવૃત્તાંત છે આ ત્રણે દેવીઓ પોત
 પોતાના પૂર્વભવમા અરક્ષુર નગરમા જન્મ પામી હતી ॥સુ૦૧૨॥

સાતમે વર્ગ સમાપ્ત

विज्ञेयम्, नरर=विशेषस्तनयम्-पूर्वभवे मथुराया नगर्या भण्डीरावतसकमुग्रानम्, चन्द्रप्रभो गाथापतिः, चन्द्रश्रीभार्या, चन्द्रप्रभा दारिका, चन्द्रस्याग्रमहिषी, स्थितिरद्धपत्योपम पञ्चाशद्विर्षपदसैम्भयत्रिकम् । शेष यथा काल्याः । एव

चद्रप्रभ विमान मे रहती थी और चद्रप्रभ सिंहासन पर बैठती थी-
श्रमण भगवान् महावीर को वदना करने एव उनसे धर्म का उपदेश
सुनने के लिये उनके निकट आई- इसके बाद का इसका वृत्तान्त
कालीदेवी के वृत्तान्त जैसा ही है । उसमें कोई अन्तर नहीं है । जहाँ
अन्तर है-उसका खुलासा इस प्रकार है-पूर्वभवे मे यह मथुरा नगरी
में जन्मी थी । वहा भडीरावतसक उद्यान था । उस नगरी में चद्रप्रभ
नाम का गाथापति रहता था । उसकी भार्या थी जिसका नाम चद्रश्री
था । उनके यहां यह चद्रप्रभा नामकी पुत्री थी । यह चन्द्र की अग्रम-
हिषी रानी । (ठिई अद्धपलिओत्रम, पण्णासाए वाससहस्सेहिं अब्भहिय
सेस जहा कालीए एव सेसाओवि चदस्स अग्गमहिसी) पचास हजार
वर्ष से अधिक इसकी स्थिति आधेपत्य की है । इसके बाद का इसका
जीवन वृत्तान्त काली दारिका के जीवन वृत्तान्त जैसा ही जानना
चाहिये । इसी तरह ज्योत्स्नाभा आदिशेष ३ देवियों के सन्ध को
लेकर जो अध्ययन कहे गये हैं-वे जानना चाहिये ये सब ज्योत्स्नाभा

विमानमा रहती હતી અને ચદ્રપ્રભ વિમાનમા બેસતી હતી-શ્રમણ
મહાવીરની વદના કરવા માટે અને તેમની પાસેથી ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળવા
માટે તેમની પાસે આવી તેના પછીતુ તેનું વૃત્તાંત કાલી દેવીના વૃત્તાંત
જેવું જ છે તેમા કોઈ પણ જાતનો તકાવત નથી જ્યા તકાવત છે-તેનું
અપીકરણ આ પ્રમાણે છે કે પૂવભવમા તે મથુરા નગરીમા જન્મી હતી,
ત્યા ભડીરાવતસક ઉદ્યાન હતું તે નગરીમા ચદ્રપ્રભનામે ગાથાપતિ રહેતો
હતો ચદ્રશ્રી તેની ભાર્યાતુ નામ હતું તેને ચન્દ્રપ્રભા નામે પુત્રી હતી
આ ચન્દ્રની અગ્રમહિષી (પટરાણી) થઈ

(ઠિઈ અદ્ધપલિઓત્રમ, પણ્ણાસાએ વાસમહસ્સેહિં અબ્ભહિય સેસ જહા
કાલીએ એવ સેસાઓવિ ચદસ્સ અગ્ગમહિસી)

પચાસ હજાર વર્ષ કરતા આની સ્થિતિ અડધા પટ્યની છે એના
પછીતુ આનું જીવન વિષેનું વર્ણન કાલી દારિકાના જીવન જેવું જ સમજ
લેવું જોઈએ આ પ્રમાણે જ્યોત્સ્નાભા વગેરે બાકી ત્રણ દેવીઓના મળધને
જોઈએ અધ્યયનો કહેવામા આવ્યા છે તેમને પણ સમજ લેવા જોઈએ

खलु हे जन्तूः । तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहे श्रीमहावीरस्वामिनः समन
सरण, यावत्-परिपत् पर्युपास्ते । तस्मिन् कात्रे तस्मिन् समये चन्द्रप्रभा देवी
चन्द्रप्रभे विमाने चन्द्रप्रभे विहासने शेष यथा काल्याः=कालीदेव्या वर्णनं तद्वद्

પદ્મસ્સ અજ્ઞયણસ્સ ઉચ્ચોચ્ચો-એવ જનુ જન્ન ! તેણ કાલેણ તેણ
સમણ રાયગિદ્દે સમોસરણ-જાવ પરિસા પજ્જુવામહ, તેણ કાલેણ તેણ
સમણ ચદપ્પભાદેવી ચદપ્પભસિ વિમાણસિ સીઠાસણમિ સેસ જહા
કાલીણ, ણવર પુવ્વભવે મહુરાણ ણયરીણ મહીરવહેમણ ઉજ્જાણે ચદ-
પ્પભે ગાહાવર્ઘે ચદસિરી મારિયા ચદપ્પભા દારિયા) દે મદત ! આઠવે
વર્ગ કા ઉલ્લેપક કૈસા હૈ ? હસ પ્રકાર જન્મ્વામી કે પૂછને પર સુધર્મા-
સ્વામી ને ડનસે કહા-હે જન્ન ! સુનો તુમ્હાને પ્રહન કા ઉત્તર હસ પ્રકાર
હૈ-શ્રમણ મગવાન્ મહાવીર ને હસ વર્ગ કે ચાર અધ્યયન પ્રજ્ઞસ ક્રિયે હૈ
-વે હસ પ્રકાર સે હૈ-ચદ્રપ્રભા ૧, જ્યોત્સ્નાભા ૨, અર્ચિમાલી ૩, પ્રભ-
કરા ૪, । હનમે હે જન્ન ! પ્રથમ ચન્દ્રપ્રભા અધ્યયન કા ઉલ્લેપક હસ પ્રકાર
સે હૈ-ડસ કાલ મે ઓર ડસ સમય મેં રાજગૃહ નામકે નગર મેં શ્રી
મહાવીર સ્વામી કા આગમન હુઆ થા- । ડનસે ધર્મ કા ઉપદેશ પ્રાપ્ત
કરને કે લિયે વહા કી સમસ્ત ધાર્મિક જનતા ડનકે પાસ આઈ ધી પ્રભુ
ને સત્ર કે લિયે ધર્મ કા ઉપદેશ સુનાયા-સુનાકર સવો ને ડનકી યાવત્
પર્યુપાસના કી । ડસ કાલ ઓર ડસ સમય મેં ચન્દ્રપ્રભા દેવી જો કિ

વઓ-એવ खलु जन्तू ! तेण कालेण तेण समण रાયगिद्वे समोसरण-जाव
परिसा पज्जुवासइ, तेण कालेण तेण समण चदप्पभादेवी चदप्पभसि विमाणसि
चदप्पभसि सीठासणसि सेस जहा कालीए, णवर पुव्वभवे महुराए णयरीए
महीरवहेमए उज्जाणे चदप्पभे गाहावर्घे चदसिरी मारिया चदप्पभा दारिया)

डे लदन्त ! आठमा वर्गना उल्लेपक केवो छे ?

આ પ્રમાણે જન્મ સ્વામીના પ્રશ્ન કર્યા બાદ સુધર્મા સ્વામીએ તેમને
ઠહુ કે હે જન્મ ! સાબળો તમારા પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે કે શ્રમણ
ભગવાન મહાવીરે આ વર્ગના ચાર અધ્યયનો પ્રજ્ઞ કર્યા છે, તે આ પ્રમાણે
છે-ચદ્રપ્રભા ૧ જ્યોત્સ્નાભા ૨, આર્ચિમાલી ૩, પ્રભકરા ૪ હે જન્મ !
આ ચારેમા પહેલા ચન્દ્રપ્રભા નામે અધ્યયનનો ઉલ્લેપક આ પ્રમાણે છે કે તે
કાળે અને સમયે રાજગૃહ નામના નગરમા શ્રી મહાવીર સ્વામીનું આગમન
થયુ તેમની પાસેથી ધર્મકથા સાંભળવા માટે ત્યાની બધી ધાર્મિક જનતા ત્યા
આવી પ્રભુએ ધર્મનો ઉપદેશ સંભળાવ્યો. સાબળીને બધાએ તેમની યાવત્
પર્યુપાસના કરી તે કાળે અને તે સમયે ચદ્રપ્રભા દેવી-કે પ્રભ

विज्ञेयम्, नरर=विशेषस्तनयम्-पूर्वभवे मथुराया नगरी भण्डीरावतसकमुद्यानम्, चन्द्रप्रभो गाथापतिः, चन्द्रश्रीभार्या, चन्द्रप्रभा दारिका, चन्द्रस्याग्रमहिषी, स्थितिरद्वैपत्योपम पञ्चाशद्विर्वर्षवत्सैरभ्यगिरुम् । शेष यथा काल्याः । एव

चन्द्रप्रभ विमान मे रहती थी और चन्द्रप्रभ सिंहासन पर बैठती थी-
श्रमण भगवान् महावीर को वदना करने एव उनसे धर्म का उपदेश
सुनने के लिये उनके निकट आई-। इसके बाद का इसका वृत्तान्त
कालीदेवी के वृत्तान्त जैसा ही है। उसमें कोई अन्तर नहीं है। जहा
अन्तर है-उसका खुलाजा इस प्रकार है-पूर्वभव मे यह मथुरा नगरी
में जन्मी थी। वहा भडीरावतसक उद्यान था। उस नगरी में चन्द्रप्रभ
नाम का गाथापति रहता था। उसकी भार्या थी जिसका नाम चन्द्रश्री
था। उनके घर पर यह चन्द्रप्रभा नामकी पुत्री थी। यह चन्द्र की अग्रम-
हिषी रानी। (ठिई अद्वैपलिओवम, पण्णासाए वाससहस्सेहिं अब्भहिय
सेस जहा कालीए एव सेसाओवि चदस्स अग्गमहिसी) पचास हजार
वर्ष से अधिक इसकी स्थिति आधेपत्य की है। इसके बाद का इसका
जीवन वृत्तान्त काली दारिका के जीवन वृत्तान्त जैसा ही जानना
चाहिये। इसी तरह ज्योत्स्नाभा आदिशेष ३ देवियों के सबन्ध को
लेकर जो अध्ययन कहे गये हैं-वे जानना चाहिये ये सब ज्योत्स्नाभा

विमानमा रहेती હતી અને ચદ્રપ્રભ વિમાનમા બેસતી હતી-શ્રમણુ લગવાન
મહાવીરની વદના કરવા માટે અને તેમની પાસેથી ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળવા
માટે તેમની પાસે આવી તેના પછીનુ તેનુ વૃત્તાત ઠાલી દેવીના વૃત્તાત
જેવુ જ છે તેમા કોઈ પણ બતનો તક્ષવત નથી જ્યા તક્ષવત છે-તેનુ
અપીરણુ આ પ્રમાણે છે કે પૂર્વભવમા તે મથુરા નગરીમા જન્મી હતી,
ત્યા ભડીરાવતસક ઉદ્યાન હતુ તે નગરીમા ચદ્રપ્રભનામે ગાથાપતિ રહેતો
હતો ચદ્રશ્રી તેની ભાર્યાનુ નામ હતુ તેને ચન્દ્રપ્રભા નામે પુત્રી હતી
આ ચન્દ્રની અગ્રમહિષી (પટરાણી) થઈ

(ઠિઈ અદ્વૈપલિઓવમ, પણ્ણાસાએ વાસમહસ્સેહિં અબ્બહિય સેસ જહા
કાલીએ એ સેસાઓવિ ચદસ્સ અગ્ગમહિસી)

પચાસ હજાર વર્ષ કરતા આની સ્થિતિ અડધા પર્યની છે એના
પછીનુ આનુ જીવન વિષેનુ વર્ણન ઠાલી દારિકાના જીવન જેવુ જ સમજી
લેવુ જોઈએ આ પ્રમાણે જ્યોત્સ્નાભા વગેરે બાકી ત્રણ દેવીઓના સળધને
લખે-જે અધ્યયનો કહેવામા આવ્યા છે તેમને પણ સમજી લેવા જોઈએ

ચલુ હે જામ્બુ ! તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ મમયે રાજગૃહે શ્રીમાઘીરસ્વામિનઃ સમવ
સરણ, યાવત્-પરિપત્ પર્યુપાસ્તે । તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ મમયે ચન્દ્રપ્રમા દેવી
ચન્દ્રપ્રમે વિમાને ચન્દ્રપ્રમે તિહાસને શેષ યથા કાલ્યાઃ=કાળીદેવ્યા ણન તદ્વ

પદમસ્સ અજ્ઞપણસ્સ ઉચ્ચેવઓ-વવ ચલુ જન્ ! તેણ કાલેણ તેણ
સમણ રાયગિદે સમોસરણ-જાવ પરિસા પજ્જુવાસદ, તેણ કાલેણ તેણ
સમણ ચદપ્પમાદેવી ચદપ્પમસિ વિમાણસિ સીહાસણસિ સેસ જઠા
કાલીણ, ણવર પુવ્વમવે મહુરાણ ણયરીણ મઠીરવડેસણ ઉજ્જાણે ચદ-
પ્પમે ગાહાવર્ઘે ચદસિરી મારિયા ચદપ્પમા દારિયા) દે મદત ! આઠવે
વર્ગ કા ઉત્તેપક કૈસા હે ? હસ પ્રકાર જન્સ્વામી કૈ પૂઠને પર સુધર્મા-
સ્વામી ને ડનસે કહા-દે જન્ ! સુનો તુમ્હાને પ્રઠન કા ઉત્તર હસ પ્રકાર
હે-શ્રમણ મગવાન્ મહાવીર ને હસ વર્ગ કૈ ચાર અધ્યયન પ્રજ્ઞ કિયે હે
-વે હસ પ્રકાર સે હે-ચન્દ્રપ્રમા ૧, જ્યોત્સ્નામા ૨, અર્ચિમાલી ૩, પ્રમ-
કરા ૪, । હનમે હે જન્ ! પ્રથમ ચન્દ્રપ્રમા અધ્યયન કા ઉત્તેપક હસ પ્રકાર
સે હે-હસ કાલ મે ઓર હસ સમય મે રાજગૃહ નામકે નગર મે શ્રી
મહાવીર સ્વામી કા આગમન હુઆ થા- । ડનસે ધર્મ કા ઉપદેશ પ્રાપ્ત
કરને કૈ લિયે વહા કી સમસ્ત ધાર્મિક જનતા ડનકે પાસ આઈ થી પ્રમુ
ને સવ કૈ લિયે ધર્મ કા ઉપદેશ સુનાયા-સુનાકર સમો ને ડનકી યાવત્
પર્યુપાસના કી । હસ કાલ ઓર હસ સમય મે ચન્દ્રપ્રમા દેવી જો કિ

વઓ-વવ ચલુ જન્ ! તેણ કાલેણ તેણ સમણ રાયગિદે સમોસરણ-જાવ
પરિસા પજ્જુવાસદ, તેણ કાલેણ તેણ સમણ ચદપ્પમાદેવી ચદપ્પમસિ વિમાણસિ
ચદપ્પમસિ સીહાસણસિ સેસ જઠા કાલીણ, ણવર પુવ્વમવે મહુરાણ ણયરીણ
મઠીરવડેસણ ઉજ્જાણે ચદપ્પમે ગાહાવર્ઘે ચદસિરી મારિયા ચદપ્પમા દારિયા)

હે ભદન્ત ! આઠમા વર્ગનો ઉત્તેપક કેવો છે ?

આ પ્રમાણે જન્ સ્વામીના પ્રશ્ન કર્યા બાદ સુધર્મા સ્વામીએ તેમને
બહુ કે હે જન્ ! સાબળો, તમારા પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે કે શ્રમણ
ભગવાન મહાવીરે આ વર્ગના ચાર અધ્યયનો પ્રજ્ઞ કર્યા છે, તે આ પ્રમાણે
છે-ચન્દ્રપ્રમા ૧ જ્યોત્સ્નામા ૨, અર્ચિમાલી ૩, પ્રમકરા ૪ હે જન્ !
આ ચારેમા પહેલા ચન્દ્રપ્રમા નામે અધ્યયનનો ઉત્તેપક આ પ્રમાણે છે કે તે
કાળે અને સમયે રાજગૃહ નામના નગરમાં શ્રી મહાવીર સ્વામીનું આગમન
થયુ તેમની પાસેથી ધર્મકથા સાંભળવા માટે ત્યાની બધી ધાર્મિક જનતા ત્યા
આવી પ્રભુએ ધર્મનો ઉપદેશ સંભળાવ્યો । સાંભળીને બધાએ તેમની યાવત્
પર્યુપાસના કરી તે કાળે અને તે સમયે ચન્દ્રપ્રમા દેવી-ઠે જે પ્રમા

विनेयम्, नर-विशेषस्त्वयम्-पूर्वभवे मथुराया नगर्या भण्डीरावतसकमुग्रानम्, चन्द्रप्रभो गाथापतिः, चन्द्रश्रीर्भाषा, चन्द्रप्रभा दारिका, चन्द्रस्याग्रमहिषी, स्थितिरर्द्धपल्योपम पञ्चाशद्विर्षपत्रैस्त्र्यम्बिकम् । शेष यथा काल्याः । एव

चद्रप्रभ विमान में रहती थी और चद्रप्रभ सिंहासन पर बैठती थी-
 अग्रम भगवान् महावीर को वदना करने एव उनसे धर्म का उपदेश
 सुनने के लिये उनके निकट आई-। इसके बाद का इसका वृत्तान्त
 कालीदेवी के वृत्तान्त जैसा ही है। उसमें कोई अन्तर नहीं है। जहा
 अन्तर है-उसका खुलाशा इस प्रकार है-पूर्वभवे मे यह मथुरा नगरी
 में जन्मी थी। वहां भडीरावतसक उद्यान था। उस नगरी में चद्रप्रभ
 नाम का गाथापति रहता था। उसकी भार्या थी जिसका नाम चद्रश्री
 था। उनके यहा यह चद्रप्रभा नामकी पुत्री थी। यह चन्द्र की अग्रम-
 हिषी बनी। (ठिंडे अर्द्धपलिओवम, पण्णासाए वाससट्सेहिं अम्भहिय
 सेस जहा कालीए एव सेसाओवि चद्रस्स अग्गमहिसी) पचास हजार
 वर्ष से अधिक इसकी स्थिति आधेपल्य की है। इसके बाद का इसका
 जीवन वृत्तान्त काली दारिका के जीवन वृत्तान्त जैसा ही जानना
 चाहिये। इसी तरह ज्योत्स्नाभा आदिशेष ३ देवियों के सन्ध को
 लेकर जो अध्ययन कहे गये हैं-वे जानना चाहिये ये सब ज्योत्स्नाभा

विमानमा गेहती इती अने चद्रप्रभ विमानमा जेसती इती-अग्रम लगवान
 महावीरनी वदना करवा भाटे अने तेमनी पासैथी धर्मने उपदेश सावणवा
 भाटे तेमनी पासै आवी तेना पछीनु तेनु वृत्तात जाली देवीना वृत्तात
 जेवु न छे तेमा कोछ पणु ज्ञातने तक्षवत नथी न्यां तक्षवत छे-तेनु
 अर्द्धीकरषु आ प्रभाणु छे के पूव लवमा ते मथुरा नगरीमा जन्मी इती,
 त्या लडीरावतसक उद्यान इतु ते नगरीमा चद्रप्रभनामे गाथापति रहते
 इते चद्रश्री तेनी भार्यानु नाम इतु तेने चन्द्रप्रभा नामे पुत्री इती
 आ चन्द्रनी अग्रमहिषी (पटशाणी) थई

(ठिंडे अर्द्धपलिओवम, पण्णासाए वाससट्सेहिं अम्भहिय सेस जहा
 कालीए एव सेसाओवि चद्रस्स अग्गमहिसी)

पचास हजार वर्ष करवा आनी स्थिति अउधा पट्यनी छे अना
 पछीनु आनु एवन विषेनु वधुंन जाली दारिकाना एवन जेवु न समण
 वेवु जेधजे आ प्रभाणु ज्योत्स्नाभा वगेरे आक्षी त्रण देवीअना सधधने

शेषाः=ज्योत्स्नामादि देव्योऽपि त्रिगैया । सर्गाः पूर्वभवे मथुरायां नगरीं
जाताः, पार्श्वमधुसमीपे च प्रजिता । मातापितरोऽपि दुहितृसदृशनामानः ॥ सू० १३ ॥

इति धर्मकथानामाष्टमो वर्गः समाप्तः ॥ ८ ॥

अथ नवमो वर्गः प्रारभ्यते—' णवमम् ' इत्यादि ।

मूलम्—णवमस्त उक्खेवओ, एवं खलु जंबू ! जाव अट्ट-
अज्झयणा पणत्ता, त जहा—पउमा सिवा सई अंजु रोहिणी
णवमिया, अचला अच्छरा, पढमज्झयणस्स उक्खेवओ, एवं
खलु जंबू । तेषां कालेण तेषां समएण रायगिहे समोसरणं
जाव परिसा पज्जुवासइ, तेषां कालेण तेषां समएणं पउमावई
देवी सोहम्मै कप्पे पउमवडेंसए विमाणे सभाए सुहम्माए
पउमंसि सीहासणंसि जहा कालीए एव अट्टवि अज्झयणा
कालीगमएण नायव्वा, णवर सावत्थीए दो जणीओ हत्थिणा-
उरे दोजणीओ कपिल्लपुरे दोजणीओ सागेयनयरे दोजणीओ
पउमे पियरो विजया माचराओ सव्वाओऽवि पासस्स अंतिए
पव्वइयाओ सक्कस्स अग्गमहिसीओ ठिई सत्त पलिओवमाइं
महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अत काहिति ॥ सू० १४ ॥

॥ णवमो वर्गो समन्तो ॥ ९ ॥

आदि देविया पूर्वभव में (महुराए णयरीए) मथुरा नगरी में उत्पन्न
हुई और पार्श्वनाथ प्रभु के समीप दीक्षित हुई । (माया पियरो वि० धूया
सरिसणामा) इन पुत्रियों का नाम वैसा ही नाम इनके माता पिता का है ।

—' अष्टमवर्ग समाप्तः—

आ णधी ज्योत्स्नाया वगेरे देवीओ पूर्वभवमा (महुराए णयरीए) मथुरा
नगरीमा उत्पन्न थई अने पार्श्वनाथ प्रभुनी पासिधी दीक्षित थई (मायापियरो
विठ धूया सरिसणामा) आ पुत्रीओना नामे जेवा ज तेभना मातापिताओना
नामे पणु छे

आठमो वर्ग समाप्त

टीका—'णवमस्से' ति-नवमस्य वर्गस्योत्क्षेपकः । एष खलु हे जम्बू ! यावत्-अष्ट-अध्ययनानि प्रवृत्तानि, तद्यथा-पद्मा १, शिवा २, शची ३ अञ्जू ४, रोहिणी ५, नवमिका ६, अचला ७, अप्सरा ८ । एष प्रथमाध्ययनस्योत्क्षे-

-:नवमवर्ग प्रारम्भ -

णवमस्स उक्खेवओ इत्यादि ।

टीकार्थ—(णवमस्स उक्खेवओ-एव खलु जम्बू ! जाव अट्ट अज्झयणा पणत्ता-त जहा-पडमा, सिवा, सई, अजू, रोहणी, णवमिया, अचला, अच्छरा,-पढमज्झयणस्स उक्खेवओ-एव खलु जम्बू ! तेण कालेणं तेणं समएण रायगिहे समोसरण जाव परिसा पज्जुवासइ, तेण कालेणं तेण समएण पडमावई, देवी सोहम्मे कप्पे पडमवडेंसए विमाणे सभाए सुहम्माए पडमसि-सीहासणसि जहा कालिए एव अट्टवि अज्झयणा कालीगमण नायव्वा) हे भदत ! नौवे वर्ग का उत्क्षेपक किस प्रकार से है ? इस प्रकार जम्बू स्वामी के प्रश्न करने पर सुधर्मा स्वामी उनसे कहते हैं कि हे जम्बू ! सुनो-तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस तरह से है-श्रमण भगवान् महावीर ने इस वर्ग के यावन् आठ अध्ययन प्ररूपित किये-वे इस प्रकार से हैं-पद्मा १, शिवा, २, शची ३, अजू ४, रोहिणी ५, नवमिका ६, अचला ७, और अप्सरा । इनमें हे जम्बू ! प्रथम

नवमो वर्ग प्रारम्भ

(णवमस्स उक्खेवओ-एव खलु जम्बू ! जाव अट्ट अज्झयणा पणत्ता-त जहा पडमा, सिवा, सई, अजू, रोहिणी, णवमिया, अचला, अच्छरा, पढमज्झयणस्स उक्खेवओ-एव खलु जम्बू ! तेण कालेण तेण समएण रायगिहे समोसरण जाव परिसा पज्जुवासइ, तेण कालेण तेण समएण पडमावई देवी सोहम्मे रूपे पडम वडेंसए विमाणे सभाए सुहम्माए पडमसि-सीहासणसि जहा कालिए एव अट्ट वि अज्झयणा काली गमण नायव्वा)

हे भदत ! नवमो वर्गको उत्क्षेपक कौन सी है ?

आ प्रभाण्डे जम्बू स्वामीना प्रश्न कर्था षाड सुधर्मा स्वामी तेभने कडे छे के छे जम्बू ! सावणो, तमारो प्रश्नको उत्तर आ प्रभाण्डे छे-श्रमण भगवान् महावीर आ वर्गना यावत् आठ अध्ययनो प्ररूपित कर्था छे, ते आ प्रभाण्डे छे-पद्मा १, शिवा २, शची ३, अजू ४, रोहिणी ५, नवमिका ६, अचला ७ अने अप्सरा ८

पुरुः । एव खलु हे जम्बूः ! तस्मिन् काले तस्मिन् नमये राजगृहे समप्रसरणम्= भगवतो महावीरस्य समागमनमभूत्, यावत् परिपत् पर्युपास्ते । तस्मिन् काले तस्मिन् समये पद्मावती देवी, सौधर्म कल्पे पद्मावतसक्रे विमानेसभाया सुधर्माया पद्मे सिंहासने, यथा काल्याः । एवम् अष्टापि अध्ययनानि कालीगमक्रेन=काली-देवीसदृशपाठेन ज्ञातव्यानि, नगर=त्रिगोपन्त्ययम्-पूर्वभवे श्रावस्त्या नगर्या 'दोज-

अध्ययन का उत्प्रेष क इस प्रकार से है—उस काल में और उस समय में राजगृह नगर में भगवान् महावीर का अगमन हुआ था । लोगों को जब इनके शुभागमन की खबर पड़ी तो वे सब के सब उनको बदना करने के लिये और उनसे धर्मोपदेश का काम लेने के लिये उनके समीप पहुँचे । प्रभु ने आये हुए परिपद् को शुनचारित्ररूप धर्म का उपदेश दिया । उपदेश सुनने के बाद उसने प्रभु की यावत् पर्युपासना की । उस काल में और उस समय में पद्मावती देवी जो कि सौधर्मकल्प में पद्मावतसक्रे विमान में, सुधर्मा सभामें रहती थी और जिसके सिंहासन का नाम पद्म या श्रमण भगवान् महावीर को बदना करने और उनसे धर्म का उपदेश सुनने के लिये वहाँ आई । इसके बाद का सम्बन्ध कालीदेवी का जैसा वर्णन पहिले किया गया है वैसे ही जानना चाहिये । इसी तरह से अवशिष्ट सात अध्ययन भी जानना चाहिये । इन आठों ही अध्ययनों का पाठ जैसा कालीदेवी का पाठ है वैसे ही है । कोई अन्तर नहीं है (णवर) परन्तु जहाँ अन्तर है वह—

हे जम्बू ! आभा पड़ेला अध्ययननो उत्प्रेषक आ प्रभाणु छे—ते क्षणे अने ते समये राजगृह नगरमा लगवान महावीरनु आगमन थयु लोकेने तेमना शुभागमननी न्यारे जणु थरु त्यारे तेअो सर्वे तेमने वदन करवा भाटे अने तेमनी पासेथी धर्मनो उपदेश सालणवा भाटे तेमनी पासे गया । प्रभुअे आवेला सर्व लोकेने श्रुतचारित्र रूप धर्मनो उपदेश सालणाव्ये । उपदेश सालणीने लोकेअे प्रभुनी यावत् पर्युपासना करी ते क्षणे अने ते समये पद्मावती देवी—के जे सौधर्म कल्पमा, पद्मावतसक्रे विमानमा सुधर्मा सभामा रहैती छती अने जेना सिंहासननु नाम पद्म छंतु—श्रमणु लगवान महावीरने वदन करवा अने तेमनी पासेथी धर्मनो उपदेश सालणवा त्या आवी जेना पछीनु वणुन पड़ेला करवाभा आवेला काली देवीना वणुननी जेभ समलु लेवु जेधअे आ प्रभाणु ज भाकीना सात अध्ययनो विषे पणु जणु लेवु जेधअे अे आठे आठ अध्ययननो पाठ काली देवीना जेवो ज

णीओ ' द्वे जन्यौ=पद्मा-शिवाभिदे द्वे दारिके सजाते । एव हस्तिनापुरे द्वे जन्यौ
श्रुतिः-अञ्जुः चेति, काम्पिल्यपुरे द्वे जन्यौ रोहिणीनवमिकानाम्न्यौ, साकेतनगरे
द्वे जन्यौ अचला-अप्सरा इति सजाते । सर्वेषाम् ' पउमे ' पद्मः पद्मेति नामानः
पितरः, विजया=विजयानाम्नो मातर आसन् । सर्वा अपि पार्श्वस्य=पार्श्वप्रभोर-
न्तिके प्रव्रजिताः, शक्रस्याग्रमहिष्यो जाता । तासा स्थितिः सप्तपल्योपमानि ।
एताः सर्वा महाविदेहे र्षे सेत्स्यन्ति यावत्सर्वदुःखानामन्त करिष्यन्ति ॥सू० १४॥

॥ इति र्मरुथाना नवमो वर्गः समाप्तः ॥ ९ ॥

इस प्रकार से है-(सावत्यीए दोजणीओ) पद्मा और शिवा ये दो
कन्याएँ पूर्व भवमे श्रावस्ती नगरी में उत्पन्न हुई (हत्यिणाउरे दोजणी
ओ, काम्पिल्लपुरे दो जणीओ सागेयनगरे दो जणीओ पउमे पियरो
विजयाभायराओ सव्वाओवि पासस अतिए पव्वइयाओ सक्कस अग्ग-
महिस्सीओ ठिई सत्तपलिओवमाइ महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव
अत काहिति '१४') श्रुति और अज्जू ये दो हस्तिनापुरमें, रोहिणी,
नवमिका ये दो काम्पिल्यपुरमें, अचला एव अप्सरा ये दो साकेत नगर
में, उत्पन्न हुई । इन सब कन्याओके पिता का नाम पद्म और माता का
नाम विजया था । ये सब कन्याएँ पार्श्वनाथ प्रभु के पास प्रव्रजित हुई
है । शक्र की अग्रमहिषिया बनी है । इन की स्थिति सातपल्य थी । ये

छे तेम समञ्ज लेवु नेधओ तेमा डोअ पणु जतनेा तक्षवत नथी (नगर)
परतु न्या तक्षवत छे-ते आ प्रभाणु छे (सावत्यीए दोजणीओ) पद्मावती
अने जिवा आ अने अन्याओ पूर्वभवमा श्रावस्ती नगरीमा उत्पन्न थध

(हत्यिणाउरे दो जणीओ, कपिल्लपुरे दो जणीओ सागेय नगरे दो जणीओ
पउमे पियरो विजया भायराओ सव्वाओवि पासस अतिए पव्वइयाओ सक्कस
अग्गमहिस्सीओ ठिई, सत्त पलिओवमाइ महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अत
काहिति " १४ " ।)

श्रुति अने अज्जू आ अने हस्तिनापुरमा, रोहिणी अने नवमिका आ
अने काम्पिल्यपुरमा, अचला अने अप्सरा आ अने साकेत नगरमा उत्पन्न
थध आ अधी अन्याओना पितानु नाम पद्म अने मातानु नाम विजया हुतु
आ अधी अन्याओ पार्श्वनाथ प्रभुनी पासे प्रव्रजित थध छे अने शक्रनी
अग्रमहिषीओ (पट्टराणीओ) अनी छे अनेमनी स्थिति सात पल्य नेटली

अथ दशमो वर्गः प्रारभ्यते-दसमस्त ' इत्यादि ।

मृत्-दसमस्त उक्खेवओ, एव खलु जवू । जाव अट्ट
अज्झयणा पणत्ता, त जहा-कण्हा य कण्हराई रामा तहराम-
रक्खिया वसू य । वसुगुत्ता वसुमिन्ता वसुधरा चेव ईसाणे ॥१॥
पढमज्झयणस्त उक्खेवओ, एवं खलु जवू । तेणं कालेणं तेणं
समएणं कण्हादेवी ईसाणे कप्पे कण्हवडेंसए विमाणे सभाए
सुहम्माए कण्हसि सीहासणंसि सेस जहा कालीए एवं अट्टवि
अज्झयणा कालीगमएणं णेयव्वा, णवर पुव्वभवे वाणारसीए
नयरीए दो जणीओ रायगिहे नयरे दो जणीओ सावत्थीए
नयरीए दो जणीओ कोसवीए नयरीए दो जणीओ, रामे
पिया धम्मा माया सव्वओऽवि पासस्त अरहओ अंतिए पव्व-
इयाओ पुप्फचूलाए अज्जाए सिस्सिणीयत्ताए ईसाणस्त अग्ग-
महिसीओ ठिई णव पलिओवमाइं महाविदेहे वासे सिज्झि-
हिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति सव्वदुक्खाणं अत काहिति । एवं
खलु जवू । णिक्खेवओ दसमवग्गस्त ॥ सू० १५ ॥

॥ दसमो वर्गो समाप्तो ॥ १० ॥

टीका—' दसमस्ते ' ति दशमस्य उत्क्षेपकः । एव खलु हे जम्बू । यावत्
अष्ट-अभयनानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-तानि गायया प्रदर्शयन्ते ' कण्हे ' इत्यादि ।

सद्य महाविदेह क्षेत्र से सिद्ध अवस्था प्राप्त करेगी-यावत् सर्व दुःखों
का अन्त करेगी ॥ सू० १४ ॥

॥ नवमवर्ग समाप्त ॥

छे आ णधी महाविदेह क्षेत्रभाथी सिद्ध अवस्था प्राप्त करेये यावत् सर्व
दुःखोना अत करेये ॥ सू० १४ ॥

नवमो वर्ग समाप्त

“ कृष्णा १ च कृष्णराजिः २, रामा ३ तथा रामरक्षिका ४ वसू ५ वसुगुप्ता ६, वसुमित्रा ७, वसुधरा ८ चैव ईशाने ॥ १ ॥ ”

तत्तन्नामभिरध्ययनानि प्रसिद्धानि । तत्र प्रथमाध्ययनस्योत्क्षेपकः । एव खलु हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहे नगरे भगवत श्रीमहावीर-

॥ दशमवर्गं प्रारभ ॥

‘ दसमस्त उक्खेवओ ’ इत्यादि० “ १५ ”

टीकार्थ—(दसमस्त उक्खेवओ—एवं खलु जम्बू ! जाव अट्टअज्झयणा पणत्ता—त जहा कण्हाय कण्हराई, रामा, तह रामरक्खिया वसू य । वसुगुत्ता वसुमित्ता वसुधरा चैव ईसाणे “ १ ”—पढमज्झयणस्त उक्खेवओ—एव खलु जम्बू !) हे भदन्त श्रमण भगवान महावीर ने दशवें वर्गका उत्क्षेपक किस प्रकार से कहा है ? इस तरह का जम्बू ! स्वामी के प्रश्न का समाधान करने के निमित्त सुवर्मा स्वामी उनसे कहते हैं कि हे जम्बू ! सुनो तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है—श्रमण भगवान् महावीरने इस दशवें वर्ग के आठ अध्ययन प्रज्ञप्त किये हैं—वे ये हैं—कृष्णा १, कृष्णराजि २, रामा ३, रामरक्षिका ४, वसू ५, वसुगुप्ता ६, वसुमित्रा ७, और वसुधरा । इन २ नामों द्वारा इन २ नाम वाले अध्ययन प्रसिद्ध हुए हैं । इनमें प्रथम अध्ययन का हे जम्बू ! उत्क्षेपक

दशमो वर्गं प्रारभ—

‘ दसमस्त उक्खेवओ ’ इत्यादि—

(दसमस्त उक्खेवओ—एव खलु जम्बू ! जाव अट्ट अज्झयणा पणत्ता—त जहा—कण्हा य कण्हराई, रामा तह रामरक्खिया वसू य । वसुगुत्ता वसुमित्ता वसुधरा चैव ईसाणे ॥ १ ॥ पढमज्झयणस्त उक्खेवओ—एव खलु जम्बू !)

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने दशमो वर्गना उत्क्षेपक उक्खेवओ की रीते कहा है ?

आ प्रमाणेना जम्बू स्वामीना प्रश्नने सालणीने तेना समाधान माटे श्री सुवर्मा स्वामी तेमने कहे छे कहे छे जम्बू ! सालणो, तभारा प्रश्नने उत्तर आ प्रमाणे छे श्रमण भगवान महावीरने आ दशमो वर्गना आठ अध्ययनो प्रज्ञप्त कया छे, ते आ प्रमाणे छे—कृष्णा १, कृष्णराजि २, रामा ३, रामरक्षिका ४, वसू ५, वसुगुप्ता ६, वसुमित्रा ७ अने वसुधरा ८

आ उक्त लुदा लुदा नामो वजे ओ ज नामना लुदा लु । अध्ययनो प्रसिद्ध थया छे कहे जम्बू ! आ गधामाथी पडेवा अ अध्ययनो उत्क्षेपक

स्यामिनः समयमरणं यावत् परिपत् पर्युषान्ते, तस्मिन् काले तस्मिन् समये कृष्णा देवीईशाने कल्पे कृष्णावतसके विमाने सभायां सुयर्माया, कृष्ण सिंहामने, शेष

इस तरह से है—(तेण कालेण तेण समणण रायगिहे समोसरण जात्र परिसा पञ्जुवासइ) उस काल एव उम समयमें राजगृह नगरमें भगवान् महावीर का शुभागमन हुआ था । परिपद् उन को बदना आदि करने के लिये उनके समीप पहुँची । प्रभुने सबके लिये धर्म का उपदेश सुनाया । लोगोंने उपदेश सुनकर प्रभु की पर्युषामना की (तेण कालेण तेण समणण कण्हा देवी ईसाणे कप्पे कण्हवडेंसए विमाणे सभाए सुहम्माए कण्हसि सीहासणसि सेस जहा कालिण एव अविट्ठाअज्जयणा कालीगमणण जेयव्वा, णवर पुव्वभवे वाणारसीण नयरीण दो जणीओ रायगिहे नयरे दो जणीओ, सावत्थीण नयरीण दो जणीओ, कोसरीए नयरीण दो जणीओ रामे पिया धम्मा माया सव्वओऽवि पासस्स अरहओ अतिए पव्वइयाओ पुप्फाचूलाए अज्जाण सिस्सिणीयत्ताए ईसाणस्स अग्गमहिसीओ ठिई, णवपालिओवमाइ, महाविदेहे वासे सिज्जिहिंति, बुज्जिहिंति, मुच्चिहिंति, सव्वदुक्खाण, अतकार्हिंति, एव खलु जन्तू ! णिक्खेवओ दसमवग्गस्स) उसी काल और उसी समय वहा कृष्णादेवी जो ईशान कल्प में कृष्णावतसक विमान में रहती थी—और

आ प्रभाषे छे (तेण कालेण तेण समणण रायगिहे समोसरण, जात्र परिसा पञ्जुवासइ) ते काले अने ते समये त्या कृष्णा देवी—के जे ईशान—के पमा कृष्णावतसक विमानभा रहती छती अने जेनी सबानु नाम तेभन्ने सिंहासनतु नाम कृष्णा छतु—आवी अने पछीने

(तेण कालेण तेण समणण कण्हा देवी ईसाणे कप्पे कण्हवडेंसए विमाणे सभाए सुहम्माए कण्हसि सीहासणसि सेस जहा कालीए एव अविट्ठा अज्जयणा कालीगमणण जेयव्वा, णवर पुव्वभवे वाणारसीए नयरीए दो जणीओ रायगिहे नयरे दो जणीओ, सावत्थीए नयरीए दो जणीओ, कोसरीए नयरीए दो जणीओ रामे पिया धम्मा माया सव्वओऽवि पासस्स अरहओ अतिए पव्वइयाओ पुप्फाचूलाए अज्जाण सिस्सिणीयत्ताए ईसाणस्स अग्गमहिसीओ ठिई, णवपालि ओवमाइ, महाविदेहे वासे सिज्जिहिंति बुज्जिहिंति, मुच्चिहिंति, सव्वदुक्खाण, अतकार्हिंति एव खलु जन्तू ! णिक्खेवओ दसमवग्गस्स)

ते काले अने ते समये त्या कृष्णा देवी—के जे ईशान—के पमा कृष्णावतसक विमानभा रहती छती अने जेनी सबानु नाम तेभन्ने सिंहासनतु नाम कृष्णा छतु—आवी अने पछीने

यथा कार्याः । एवमष्टा कृष्णराजिप्रभृतीनि अध्ययनानि कालीगमकेन=काली-
देवीसदृशपाठेन ज्ञातव्यानि नवर=विशेष यत्-पूर्वभवे वाणारस्या नगर्या द्वे=
कृष्ण-कृष्णराजिनाम्न्यौ ज्ञ्यौ=दारिके सजाते । एव राजगृहे नगरे द्वे=वसु-
वसुगुप्ता नाम्न्यौ ज्ञ्यौ, कौशाब्ध्या नगर्या द्वे=वसुमित्रा-वसुधरा नाम्न्यौ
ज्ञ्यौ=दारिके समुत्पन्ने । सर्वासा रामः=रामाभिधः पिता, धर्मा=धर्माऽभिधा
माता । सर्वा अपि पार्श्वस्यार्हतोऽन्तिके प्रव्रजिताः, पुष्पचूलाया आर्यायाः शिष्या-
स्त्वेन पार्श्वप्रभुणा स्वय प्रदत्ता । ईशानस्य=ईशानेन्द्रस्य अग्रमहिष्यो जाताः । तत्र
तासा स्थितिर्नव पत्योपमानि वर्त्तते । तत्र च्युत्वा महाविदेहे वर्षे समुत्पद्य सेस्स्यन्ति,

जिसकी सभा का नाम सुधर्म तथा सिंहासन का नाम कृष्ण था आई।
इस के आगे का पाठ कालीदेवी के वर्णन में जैसा पाठ कहा गया है
वैसा ही है। इसी तरह से कृष्णराजि प्रभृति-अध्ययन भी-कालीदेवी
वर्णन में पठित पाठ के सदृश ही जानना चाहिये। कालीदेवी के पाठ
में और इन आठ अध्ययनोक्त पाठों में जो अन्तर है वह इस प्रकार
से है-पूर्वभव में वाणारसी नगरीमें कृष्णा और कृष्णराजि ये दो जनी
-उत्पन्न हुई, राजगृहनगर में रामा और रामरक्षिका आवस्ती नगरी में
वसु, वसुगुप्ता और कौशाब्धी नगरी में वसुमित्रा एवं, वसुधरा उत्पन्न
हुई। इन सब के पिता का नाम राम और माताओं का नाम धर्मा था।
ये सबकी सब पार्श्वनाथ प्रभु के पास प्रव्रजित हुई। प्रभुने इन सब
को दीक्षित करके पुष्पचूला आर्या की शिष्यारूप से दिया। ये सब
इस ईशानेन्द्रकी अग्रमहिषी हुई। वहां इनकी स्थिति नौ पत्योपम की
है। वहां से चक्कर ये महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होंगी और वहीं से

वर्षुनमा जे प्रभाषे पाठ कडेवाये। छे ते प्रभाषे ज समञ्ज देवे।
जेथजे आ प्रभाषे ज कृष्णराजि वगेरे अध्ययने पद्य काली देवीना
पाठमा अने आ उक्त आठ अध्ययनेना पाठोमा जे कर्ष तक्षवत छे ते
आ प्रभाषे छे-पूर्वभवमा वाणारसी नगरीमा कृष्णा अने कृष्णराजि
आ अने उत्पन्न थर्ष, राजगृह नगरमा रामा अने रामरक्षिका आवरती
नगरीमा वसु, वसुगुप्ता अने कौशाब्धी नगरीमा वसुमित्रा अने वसुधरा
उत्पन्न थर्ष जेभना पितानु नाम राम अने मातानु नाम धर्मा इतुं जे
अधीजे पार्श्वनाथ प्रभुनी पासे प्रव्रज्या अडवु करी इती प्रभुजे सर्वेने
दीक्षित करीने पुष्पचूला आर्याने शिष्याज्येना इयमा सोपी इती जे अधी
ईशानेन्द्रनी अग्रमहिषीज्ये थर्ष त्या तेभनी स्थिति नव पत्योपमनी छे
त्याथी यवीने जे अधी महाविदेह क्षेत्रमा उत्पन्न थये अने त्याथी ज सिद्ध

भोत्स्यन्ति, मोक्षयन्ति सर्वं दुःखानामन्त करिष्यन्ति । एव मन्त्र हे जम्बू ! निक्षे-
पको दशमवर्गस्य ॥ सू० १५ ॥

॥ इति धर्मकथानां दशमो वर्गः समाप्त ॥ १० ॥

मूलम्--एवं खलु जंबू समणेणं भगवया महावीरेणं आदि-
गरेणं सयंसबुद्धेणं पुरिसोत्तमेण जाव सपत्तेण धम्मकहाणं
अयमद्वे पणत्ते ॥

॥ धम्मकहासुयक्खधो समत्तो दसहि वग्गेहिं ॥

॥ णायाधम्मकहाओ समत्ताओ ॥

टीका—सुधर्मास्वामी कथयति—‘ एव खलु ’ इत्यादि । एव खलु हे जम्बू !
श्रमणेन भगवता महावीरेण आदिकरेण तीर्थकरेण स्वय सम्बुद्धेन पुरुषोत्तमेन

सिद्ध पद की भोक्ता बनेंगी केवलज्ञानरूप आलोक से ममस्त चराचर
पदार्थों की ज्ञाता बनेगी । द्रव्य एव भावरूप समस्त कर्मों से छूटजावेगी
इस तरह ये वही से समस्त दुःखों का अन्त करने वाली होगी । इस
प्रकार हे जंबू ! यह दशवेवर्ग का निक्षेपक है ।

॥ दसमवर्ग समाप्त ॥

एव खलु जंबू ! इत्यादि ।

टीकार्थ—(एव खलु जंबू ! समणेण भगवया महावीरेणं आदि-
गरेण तित्थगरेण सयंसबुद्धेणं पुरिसोत्तमेणं जाव सपत्तेणं धम्मकहाणं
अयमद्वे पणत्ते) अथ जंबूस्वामी से श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं कि हे

पद भोजवशे ये अधी देवज्ञान इय आलोकथी समस्त यर अने अन्यर
पदार्थानु ज्ञान भोजवशे द्रव्य अने लावरूप यथा कर्मेथी सुकत यथ वशे
आप्रभाषे ये अधी त्याथी व यथा हु जाने अत करनारी यशे आ प्रभाषे
हे जंबू ! आ दशमा वर्गने निक्षेपक छे

दशमा वर्ग समाप्त

एव खलु जंबू ! इत्यादि—

(एव खलु जंबू ! समणेण भगवया महावीरेणं आदिगरेण तित्थगरेणं सय-
सबुद्धेण पुरिसोत्तमेण जाव सपत्तेण धम्म कहाण अयमद्वे पणत्ते)

-:शास्त्रमशस्ति:-

काठियावाडदेशेऽस्ति, राजकोटपुरे शुभे

कोठारीहरगोविन्द काकानाम मसिद्धिमान् ।

तस्यास्तिभार्यापरमा सुशीला, धर्मानुक्तागृहकार्यदत्ता ।

शान्तिप्रिया दीनदयार्द्रिभावो, नाम्ना प्रसिद्धा किञ्चनविभवीसा ॥ १ ॥

- दिनेशचन्द्रस्तनयोऽस्ति यस्य, कुलस्य दीपः सरलस्वभावः ।-

कन्या सुशीला सरला जितुश्च-सदा-प्रमोदाय चकारिद्विप्रोः ॥ ३ ॥

व्याख्यानभवने तस्य, ज्ञाताधर्मकथाङ्कके ।

घासीलाछेन मुनिना कृता टीका सतां मुदे ॥ ४ ॥

द्विसहस्रचतु सख्ये, विक्रमान्दे रवीं दिने ।

माघे शुक्ले च पञ्चम्यां, सम्पूर्णा धर्मवर्षिणी ॥ ५ ॥

- काठियावाडदेश में राजकोट नामका अच्छा नगर है। उसमें कोठारी हरगोविन्दकाका रहते हैं। इनका सुशीलभार्याका नाम रक्षिणी है। यह गृहकार्य में बहुत चतुर है। धर्मात्मा है, शान्ति प्रिया है एवं दीन दुःखियों के ऊपर सदा दया भाव रखती है। काका का कुल दीपक, एक दिनेशचन्द्र नाम का पुत्र और जितु नाम की-कन्या है। ये दोनों माता पिता के प्रमोद के स्थान भूत हैं।

मुझ घासीलाल मुनिराज ने उन्हीं के व्याख्यान भवन में ठहर कर विक्रम संवत् २००४ दिन रविवार माघशुक्ला पंचमी के दिन ज्ञात धर्मकथाङ्क, सूत्र की यह टीका रचकर समाप्त की है।

काठियावाड प्रांतमा राजकोटानामे अक सस्य रम्य नगर छे, तेअ कोठारी हरगोविंद काका रहे छे तेमनी सुशील पत्नीतु नाम, रक्षिणी के तेअ गृहकार्यमा अहुं च चतुर छे, धर्मात्मा तेमज्ज शान्ति प्रियापणु छे तेअ गरीम इ भीआना उपर हमेशा दयाभाव राखे छे काकाने कुलदीपक अक दिनेशचन्द्र नामे पुत्र अने जितु नामे अक कन्या छे आ अने माता पिताना प्रमोदना आश्रयस्थाने छे।

मे घासीलाल मुनिराजे तेमना ज व्याख्यान भवनमा रहीने विक्रम संवत् २००४ रविवार माघ शुक्ला पंचमीना दिवसे ज्ञाताधर्मकथाङ्क सूत्रनी आ टीका रचीने पूरी करी छे

